रंगनाथ रामायण

तेलुगु

भुवनवाणी ट्रस्ट

लखनऊ-३

श्री रंगनाथ रामायणमु

(तेलुगु द्विपद काव्य)

रचयिता

गोन बुद्धा रेड्डी

अनुवाद एवं लिप्यन्तरण

डॉ० भीमसेन 'निर्मल'

एम० ए०, पीएच०डी०

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चोपटियाँ रोड, लखनऊ-२२६००३

प्रथम संस्करण—

१९७८-७९ ई०

पृष्ठसंख्या— $\frac{१८\times२२}{८}$८+१३२८=१३३६

मूल्य— ६०·०० रुपया

मुद्रक —

वाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ-२२६००३

राजकीय संग्रहालय, लखनऊ
क्रमसंख्या 5716
प्राप्ति तिथि.........
विभाग.........
श्रेणी.........
STATE MUSEUM, LUCKNOW.

विषय-सूची

विषय पृष्ठसंख्या

तेलुगु देवनागरी वर्णमाला चार्ट घ

उपोद्घात— डॉ० एम० चेन्ना रेड्डी ङ-च

प्रकाशकीय परिशिष्ट छ-ज

भूमिका—डॉ० आई० पाण्डुरंगराव १-५

अनुवादकीय परिशिष्ट— डॉ० भीमसेन निर्मल ६-८

ग्रन्थ की विषयानुक्रमणिका ९-१६

प्रकाशकीय (१९७१ ई०) १८

अनुवादक एवं लिप्यन्तरणकार का वक्तव्य (१९७१ ई०) १९

तेलुगु भाषा और लिपि २०-२१

ग्रन्थारम्भ २३-१३२७

देवनागरी अक्षयवट १३२८

भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रयुक्त

तेलुगु वर्णमाला का देवनागरी रूपान्तर

तेलुगु-देवनागरी वर्णमाला

అअ ఆआ ఇइ ఈई ఉउ
क का कि की कु
ఊऊ ఋऋ ౠॠ ఌऌ ౡॡ
कू कृ कॄ
ఎऎ ఏए ఐऐ ఒऒ ఓओ
कॆ के कै कॊ को
ఔऔ అంअं అఃअः
कौ कं कः

కक ఖख గग ఘघ ఙङ

చच ఛछ జज ఝझ ఞञ

టट ఠठ డड ఢढ ణण

తत థथ దद ధध నन

పप ఫफ బब భभ మम

యय రर లल వव శश

షष సस హह క్షक्ष ఱऱ,ऱ

ళळ

उपोद्घात

आध्यात्मिकता भारतीय राष्ट्र की प्राण-शक्ति है। सुदूर वैदिक काल से लेकर महात्मा गांधी के आधुनिक युग तक अनेक रूप-रूपान्तरों और प्रकारान्तरों में यही शक्ति हमारे राष्ट्र को स्पन्दित और नियंत्रित करती रही है। हमारे जीवन का प्रत्येक अंग, व्यक्तिगत अथवा सामूहिक, राजनैतिक अथवा आर्थिक, और जीवन का छोटे से छोटा पहलू, यहाँ तक कि भोजन और स्थान तक, ऐसी नैतिक संहिता से मर्यादित है, जिसका स्रोत आध्यात्मिकता है। इतिहास के निविड़ अन्धकार और भीषण उत्पीडन के क्षणों में भी इसी संजीवनी शक्ति ने हमें जीवन ही नहीं प्रदान किया, बल्कि विकास और सौष्ठव से अभिषिक्त भी किया। हमारा यह दायित्व है कि हम इस प्राण-शक्ति को पहचानें तथा उसे वर्तमान और भविष्य के सन्दर्भ में नवीन आकार-प्रकार प्रदान करें। जो व्यक्ति अथवा समुदाय इस शाश्वत सन्देश तथा तथ्य को द्वार-द्वार तक पहुँचाता है, वह राष्ट्र की अनन्यतम सेवा करता है।

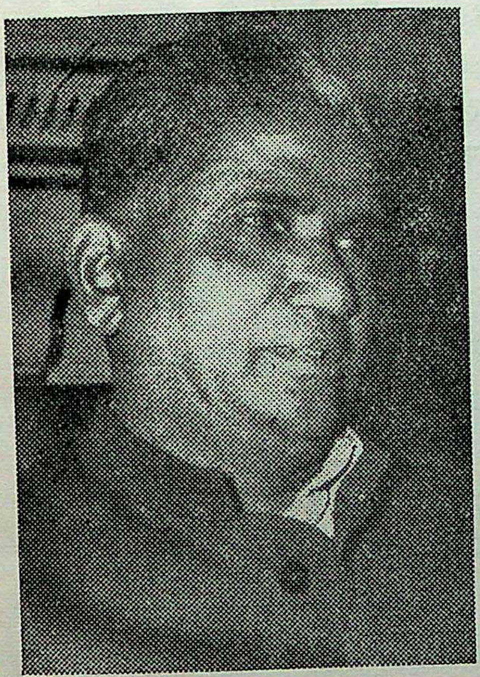

भगवान राम का जीवन और कृतित्व हमारी आध्यात्मिक संस्कृति का मूलाधार है। उनका शैशव, उनका विद्यार्थी जीवन, उनका यौवन व उनका दाम्पत्य जीवन और उनका राजस, वैयक्तिक विलास के लिए नहीं, बल्कि कठोर धार्मिक मर्यादाओं तथा उच्च नैतिक मूल्यों की वेदी पर आहुति मात्र हैं। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का समय-समय पर अनेक ऋषियों, मुनियों और समर्पित व्यक्तियों ने अपनी-अपनी दृष्टि से आंकलन किया है। मुझे यह कहने में गौरव है कि आन्ध्र प्रदेश और तेलुगु भाषा में राम-काव्य की जितनी प्रचुरता व बहुलता है, वह दूसरे क्षेत्र अथवा भाषा में उपलब्ध नहीं।

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ ने 'रंगनाथ रामायण' का नागरी लिप्यन्तरण सहित हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया है। तेलुगु के राम-काव्यों में 'रंगनाथ रामायण' कालक्रम से और काव्यसौंदर्य की दृष्टि से भी प्रथम स्थान का अधिकारी है। इस सुप्रसिद्ध काव्य का प्रकाशन कर, भुवन वाणी ट्रष्ट ने देश का महोपकार किया है। अनुवादक विद्वान् डॉ० भीमसेन निर्मल का योगदान भी प्रशंसनीय है।

भुवन वाणी ट्रस्ट ने अभी गत वर्ष ही तेलुगु के मोल्ल रामायण का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण प्रकाशित किया था। आज दूसरा विशाल ग्रन्थरत्न श्री रंगनाथ रामायण नागरी कलेवर में विद्यमान है। भुवन वाणी ट्रस्ट का यह कार्य राष्ट्रीय संस्कृति के परिपोषण में निस्सन्देह स्तुत्य एवं श्लाघनीय है। इस सत्प्रयत्न के लिए मैं ट्रस्ट के प्रतिष्ठाता श्री नन्दकुमार अवस्थी तथा ट्रस्ट के अन्य कार्यकर्ताओं को हार्दिक बधाई देता हूँ।

(डॉ०) एम० चेन्ना रेड्डी
(मुख्यमन्त्री, आन्ध्र प्रदेश)

प्रकाशकीय परिशिष्ट

विश्ववाङ्मय से प्रवहित अगणित भाषाई धारा,
पहन नागरी पट सबने अब भूतल-भ्रमण विचारा।
अमर भारती सलिला की शुचि 'तॆलुगु' सुमञ्जुल धारा-
की नागरी-सुमण्डित छवि से अब जगमग जग सारा।।

विषयवस्तु—भुवन वाणी ट्रस्ट के माध्यम से नागरी लिपि का मञ्च, विना किसी भेदभाव के प्रत्येक भाषा और मान्यता के लिए खुला है। भुवन की भाषाओं का सत्साहित्य नागरी लिपि में उद्‌भूत होकर अखिल भूतल की सामग्री बने; ज्ञानमात्र अविभाज्य रूप से सबको सुलभ होकर सबकी समान सम्पत्ति हो;—यह ट्रस्ट का सर्वोपरि उद्‌देश्य है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में, पृष्ठ १८-१९ पर क्रमशः प्रकाशकीय और अनुवादकीय वक्तव्य अवलोकनीय हैं। इनके रहते, आज ग्रन्थ-समाप्ति के समय परिशिष्ट रूप में दुबारा प्रकाशकीय, और अनुवादक महोदय डॉ० भीमसेन निर्मल द्वारा दुबारा एक अनुवादकीय वक्तव्य देने की आवश्यकता पड़ी; क्यों? इस विवर्णता के पीछे ग्रन्थोदय का क्रमिक इतिहास है। संकल्प, श्रम; और उसका सुफल 'श्री रंगनाथ रामायण' का सानुवाद लिप्यन्तरण का मुर्तिमान होना, विवर्ण को सुवर्ण बना देता है।

ज्ञातव्य है कि सन् १९६९ ई० के उत्तरार्द्ध में भुवन वाणी ट्रस्ट की स्थापना हुई। भाषाई सेतुवन्ध के अनेक सानुवाद लिप्यन्तरण-ग्रन्थों में तॆलुगु के प्रसिद्ध महाकाव्य श्री रङ्गनाथ रामायण का लेखन आरम्भ होकर, सर्वप्रथम वाणीसरोवर के अक्तूबर, ७१ अंक में, उसके कुछ पृष्ठ प्रकाशित होकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत हुए। प्रायः सभी ग्रन्थों की पृष्ठ संख्या सहस्रों में थी। मनोरथ गगनस्तर पर होते हुए भी यह आशा अनपेक्षित-सी ही थी कि इतने अल्प समय में ये वृहत्कलेवर ग्रन्थ मूर्तिमान हो सकेंगे। सुतरां, उस समय वाणीसरोवर त्रैमासिक में ग्रन्थ-परिचय, प्रकाशकीय और अनुवादकीय पाठकों की जानकारी के लिए सामान्य रूप में आरम्भ में देना उचित समझा गया।

किन्तु भगवान् की कृपा से वह अनपेक्षित आशा आज इतना शीघ्र फलवती हो गई। श्री रंगनाथ रामायण (१३३६ पृष्ठ) का सानुवाद लिप्यन्तरण संपूर्णतः प्रकाशित हो गया। पुरी में, भगवान् जगन्नाथ के दर्शन से पूर्व, साक्षीगोपाल का दर्शन-लाभ होता है। ब्रजयात्रा, विना मथुराधाम के भगवान् भूतनाथ के दर्शन किये सफल नहीं होती। 'रङ्गनाथ' के प्रकाशन से पूर्व ही तॆलुगु की लोकप्रिय 'मॊल्ल रामायण' प्रकाशित हो गई। वीणापाणि सरस्वती के अवतरित होने से पूर्व मानो वीणा प्रकट

हुई। जनपद की एक सामान्य महिला भगवदर्पिता कुम्हारिन 'मोल्ल' से लेकर, गोनवंशाधिराज बिठ्ठलनाथ के सुपुत्र रेड्डिराज बुद्धनाथ द्वारा विरचित रामायण— राममय आन्ध्रप्रदेश के सामान्य से सम्भ्रान्त तक की तेलुगु-रामरचना हिन्दी जगत् के सम्मुख प्रस्तुत हो सकी।

ऐसी परिस्थिति में परिशिष्ट-स्वरूप दुबारा अनुवादकीय और प्रकाशकीय देने की आवश्यकता का एहसास हुआ। प्रकाशन के इस इतिहास से जनित इस विवर्णता को उदार पाठकवृन्द क्षमा करते हुए अलौकिक तेलुगु-काव्य से रामरसामृत पान करें।

उपोद्घात्— डॉ० एम० चेन्ना रेड्डी, माननीय मुख्यमंत्री, आन्ध्र-प्रदेश ने ग्रन्थ पर उपोद्घात लिखकर ट्रस्ट को गौरवान्वित किया है। उत्तरप्रदेश के राज्यपाल पद पर जब वे सुशोभित थे, तब से ट्रस्ट के भाषाई सेतुकरण के संकल्प और श्रम पर वे कृपालु हैं। हम उनके संरक्षण से सदैव सहायता प्राप्त करते रहे हैं।

पृष्ठ १—५ पर डॉ० आई० पाण्डुरङ्गराव (विशेषाधिकारी लोक सेवा आयोग) ने ग्रन्थ पर एक संक्षिप्त किन्तु सर्वाङ्गीण भूमिका लिखने की कृपा की है। अकिञ्चन एवं ट्रस्ट उनका अतिशय आभारी है। अनुवादक एवं लिप्यन्तरणकार डॉ० भीमसेन निर्मल का परिचय पृष्ठ १८ पर सुलभ है। डॉ० निर्मल भुवन वाणी ट्रस्ट की विद्वत् परिषद के वरिष्ठ सदस्य हैं और वे अपर न्यासी पद को भी सुशोभित करते हैं। उनकी व्यवस्था में तेलुगु का एक अन्य अद्भुत महाकाव्य 'पोतन्न कृत महाभागवतमु' का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण तैयारी में है, जिसको ट्रस्ट-कार्यक्रम में तेलुगु भाषा का तृतीय ग्रन्थरत्न समझा जाय।

आभार प्रदर्शन— ट्रस्ट को, उदार सदाशयों, विद्वानों, एवं उत्तर-प्रदेश शासन से प्राप्त सहायता से बड़ा सहारा मिलता रहा है। अन्य भाषाई ग्रन्थों के साथ, तेलुगु 'श्री रंगनाथ रामायण' भी अपनी सहज गति से प्रकाशित होती रहती। सौभाग्य से केन्द्रीय राज्यशिक्षामन्त्री माननीया श्रीमती रेणुका देवी बरकटकी, भारत सरकार के राजभाषा सलाहकार बहुभाषामर्मज्ञ श्री रमाप्रसन्न नायक और शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय के भाषानिदेशक श्री के० के० सेठी जी की अनुकम्पा हुई। इसके परिणाम-स्वरूप, ग्रन्थ १९७८-७९ ई० में परिपूर्णता को प्राप्त हुआ। हम उनके अतिशय अनुग्रहीत हैं। हम विश्वास के साथ निवेदन करते हैं कि भुवन वाणी ट्रस्ट की भाषाई सेतुकरण की विशाल और अद्वितीय योजना उत्तरोत्तर फलवती होकर शासन और जनता को संतुष्ट करती रहेगी।

नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

भूमिका

राम नाम रमणीय है, राम परम अभिराम।
राम कथा नवनीत है, राम सुधा रसधाम ॥

राम का नाम, राम का रूप और राम की लीला—ये तीनों किसी लोकोत्तर राग-रंजित रमणीयता को पल भर में धरातल पर प्रत्यक्ष कर देते हैं। राम का नाम सुनते ही अंतरंग का प्रेमधाम बोल उठता है। श्याम मनोहर राम की रूप-कल्पना उत्कृष्ट कला को जन्म देती है। रामचरित का एक-एक अक्षर लक्ष-लक्ष कृतियों का अक्षरकोष बन जाता है। राम-काव्य की इसी निसर्ग रमणीयता ने उसे देश-काल की नर-कल्पित सीमाओं से मुक्त कर उसे सार्वदेशिक, सार्वकालिक और सार्वजनिक रूप दिया है। आज संसार में, और विशेष कर भारत में, कोई ऐसी समृद्ध भाषा नहीं है जिसमें रामकथा किसी न किसी रूप में विद्यमान न हो। आंध्र-भारती ने भी इस अमरकथा को आत्मीयता के साथ अपना लिया है। आज से लगभग सात सौ वर्ष पहले रंगनाथ रामायण की रचना के साथ तेलुगु में रामकथा-साहित्य का आरम्भ हुआ था। तब से अब तक भास्कर रामायण, अध्यात्म रामायण, मोल्ल रामायण, अच्च तेलुगु रामायण, धर्मसार रामायण, उत्तर रामायण, रमणीय रामायण, रामायण कल्पवृक्ष आदि अनेक राम-काव्य लिखे जा चुके हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं। अभी-अभी छह, सात वर्ष पहले कविसम्राट् विश्वनाथ सत्यनारायण के "रामायण कल्पवृक्षम्" ने भारतीय ज्ञानपीठ का सर्वोच्च साहित्यिक सम्मान पाया है। आंध्र की कवयित्रियों ने भी रामकथा को रसात्मक काव्य में उतारने का स्पृहणीय प्रयास किया है। "मोल्ल रामायण" इसी रमणीय काव्यधारा का अनमोल रत्न है जिसे हाल ही में भुवन वाणी ट्रस्ट ने रामायण जगत् के सामने प्रस्तुत किया है। इस कांता-सम्मत कमनीय काव्य की प्रस्तुति के बाद तेलुगु साहित्य के क्षेत्र में भुवन वाणी का यह दूसरा उपक्रम है।

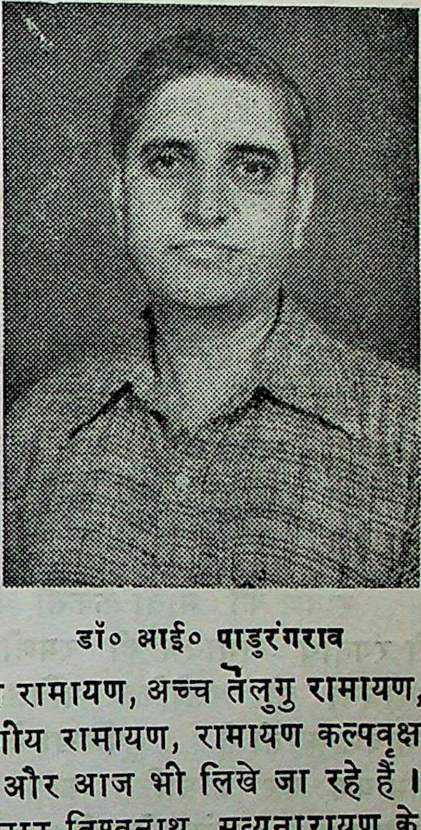

डॉ० आई० पाडुरंगराव

'रंगनाथ रामायण' तेलुगु का शायद सबसे पहला राम-काव्य है। आंध्र महाभारत के तीन प्रणेताओं में परिगणित तिक्कन सोमयाजी की "निर्वचनोत्तर रामायण" निश्चय ही इससे पहले की रचना है। पर वह

सम्पूर्ण रामकाव्य नहीं है, केवल उत्तरकांड की कथा पर आधारित है। इसलिए रंगनाथ रामायण ही तेलुगु का सर्वप्रथम रामकाव्य है। सर्वप्रथम होते हुए भी कलात्मक सौष्ठव, रचना कौशल, लोकप्रियता और आपात रमणीयता में यह बड़ी उच्चकोटि की रचना है। तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध या चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की यह रचना गोनवंश के राजा विठ्ठलनाथ के पुत्र बुद्धनाथ या बुद्धा रेड्डी ने अपने पिता की इच्छा पर संपन्न की। उनके पिता की इच्छा थी कि यह रामायण उनके नाम से प्रसिद्ध हो। “निपुणमति” और “निखिलशब्दार्थ-मर्मज्ञ” कविकुमार ने अपनी रचना का नाम रंगनाथ रामायण रखकर पिता की इच्छा भी पूरी की और साथ ही अयोध्या के आराध्य देव रंगनाथ को भी काव्य में शीर्षस्थ स्थान दिया। अतः काव्य के नामकरण में भी कवि की उदात्त कल्पना और सहज ध्वन्यात्मकता का परिचय मिल जाता है।

आदि कवि की आर्ष रचना पर आधारित इस अनर्घ रचना में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जिनमें कवि की मौलिकता का प्रमाण मिलता है। “मानस” से तीन सौ वर्ष पहले की रचना होते हुए भी इसमें सेतुबंधन के बाद राम के द्वारा शिवजी की प्रतिष्ठा का वर्णन मिलता है। धार्मिक सामरस्य और सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से यह रचना बहुत ही महत्वपूर्ण है। मानसकार की भाँति बुद्धनाथ ने भी अपने आराध्य राम में हरि-हर का सम्मिलित रूप देखा है।

रावण की माता कैकसी और इंद्रजित की पत्नी सुलोचना की सृष्टि भी रंगनाथ रामायण की रमणीय कल्पना है। कैकसी की ममता और सुलोचना की अलौकिक पवित्रता राक्षस-परिवार में भी सहृदयता का समावेश करती है। शूर्पणखा के पुत्र जंबुमाली का चित्रण भी आनन्द रामायण पर आधारित कल्पना है। सेतुबंधन के समय का एक प्रसंग विशेषरूप से उल्लेखनीय है। समुद्र पर सेतु बांधने में जब सारी वानर-सेना बड़े-बड़े पहाड़-पत्थर लाने में जुटी हुई होती है, तब एक छोटी सी गिलहरी यथाशक्ति अपना भी सहयोग अर्पित करने के प्रयत्न में अपनी पूँछ पर सिकता के कण उठा-उठाकर समुंदर पर डाली जानेवाली चट्टानों पर डालने की कोशिश करती है। गिलहरी के इस प्रयास के पीछे जो भोली-भाली भक्ति-भावना है, उस पर राम प्रसन्न होते हैं और अपनी करांगुलियों से उसकी पीठ को अंकित कर देते हैं। राम की यह प्रेमभरी मुद्रा इतनी अमिट होती है कि आज भी गिलहरियों की पीठ पर हाथ की उँगलियों की छाप दिखाई देती है। रंगनाथ रामायण का यह प्रसंग तेलुगु-भाषी जनता में इतना लोकप्रिय हो चुका है कि “गिलहरी की यत्किंचित् भक्ति” कहावत सी हो गई है। रामकथा की मार्मिक मंजुलता को उभारनेवाले ऐसे अनेक

प्रसंग रंगनाथ रामायण में मिलते हैं जिनका रसास्वादन भुवन वाणी की इस विराट योजना ने सबको सुलभ कर दिया है।

"प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी।
संपूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ॥"

भुवन वाणी ट्रस्ट का यह ध्येय अखिल मानव-महामानस को महिमान्वित करनेवाला महनीय मंत्रराज है। अब तक भुवन वाणी के माध्यम से जो काम संपन्न हुआ है, उसे देखकर हम आशान्वित हो जाते हैं कि इस ध्येय की सिद्धि उनके लिए कोई कठिन कार्य नहीं है। असल में भारत-भारती विभिन्न भाषाओं की विशिष्ट पद-विधि में एक ही पद-निधि को प्रतिपादित करती है। पर जब तक भाषा और लिपि का आवरण हटाकर भाव जगत् की इस एकात्मकता को प्रत्यक्ष न कर लिया जाए तब तक हमारे यहाँ की सांस्कृतिक समरसता का सही-सही बोध नहीं हो पाता। यह तभी संभव है जब सारा सुरुचिपूर्ण साहित्य एक ही भाषा और लिपि के माध्यम से सबके सामने प्रस्तुत किया जा सके। इस दिशा में भुवन वाणी ट्रस्ट के मुख्यन्यासी सभापति कविमनीषी नंदकुमार अवस्थी का यह प्रयास सराहनीय क़दम है।

आजकल भारत का लगभग हर शिक्षित नागरिक नागरी लिपि और हिन्दी भाषा से परिचित है। इसलिए संतवाणी को सार्वजनिक रूप देने के लिए भुवन वाणी ने इस माध्यम को ठीक ही अपना लिया है। इन ग्रंथों के सहारे जिज्ञासु पाठक मूल पाठ को भी पढ़ सकते हैं और हिन्दी के माध्यम से उसका मंतव्य भी ग्रहण कर सकते हैं। पर कठिनाई केवल यही है कि ग्रंथ का आकार लगभग दुगुना हो जाता है और आजकल मोटी किताबें देखकर ही लोग घबरा जाते हैं। पर जिनमें सच्ची जिज्ञासा हो और उच्च संस्कार हों, उनके लिए कोई समस्या नहीं है। अगर शासन की ओर से भी अनुदान के रूप में कुछ सहयोग मिल जाय तो इनका मूल्य भी सर्वसुलभ रखा जा सकता है। वास्तव में यह निष्ठा और दीक्षा का काम है, जिसमें सबका सहयोग अपेक्षित है। तटस्थभाव से देखने पर किसी भी भाषा के सत्साहित्य का लिप्यंतरण और अनुवाद प्रस्तुत करना साधारण कार्य-सा प्रतीत होता है। पर गहराई में पैठकर गोते लगानेवालों को ही इसकी गरिमा और मधुरिमा का वास्तव में पता चलता है।

उदाहरण के लिए प्रस्तुत रचना "रंगनाथ रामायण" को ही लें। एक तो इतने प्राचीन ग्रंथ का सही पाठ तैयार करने में ही काफ़ी श्रम और सावधानी अपेक्षित होती है। फिर जब प्रामाणिक पाठ तैयार हो जाए तो उसे नागरी लिपि में रूपांतरित करना भी कम कठिन नहीं है। तेलुगु भाषा समास-बहुला है। प्रायः सभी शब्द एक दूसरे से जुड़े हुए होते हैं।

उनको अलग-अलग लिखा जाए या मिलाकर लिखा जाए, यह लिप्यंतरण के पग-पग पर उठनेवाली समस्या है। सन्धि-विच्छेद से शब्दों को समझने में सुगमता होती है, पर यह हमेशा संभव नहीं है। इसलिए लिप्यंतरकार को विवेक और प्रसंगोचित विवक्षा से काम लेना पड़ता है। इसके अलावा, तेलुगु में ह्रस्व एकार, ह्रस्व ओकार, अर्द्धानुस्वार, अलघु लकार, अलघु रकार जैसे कई ध्वनि-संकेत हैं जिनके पर्याय नागरी मे नहीं मिलते। इसके लिए एक लिप्यंतरण संहिता बनानी पड़ती है। लिप्यंतरण का प्रयोजन तभी सिद्ध होता है जब नागरी में लिखा हुआ मूलपाठ पढ़ते समय हिन्दी-भाषी या तेलुगु से अनभिज्ञ कोई अन्य-भाषी मूलपाठ को उसी प्रकार उच्चारण कर सकें जैसे तेलुगु-भाषी करता है। इस ध्येय को प्राप्त करने में प्रस्तुत रचना का लिप्यंतरण बहुत कुछ सफल हुआ है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

लिप्यंतरण से भी कठिन और जटिल समस्या भाषांतरण या अनुवाद की है। वैसे ही अनुवाद का कार्य अपने में एक साधना है। अनुवाद का मतलब केवल शब्दों के रूपांतर से नहीं, बल्कि शब्दों के माध्यम से होनेवाले भावबोध को दूसरी भाषा के माध्यम से प्रस्तुत करने से होता है। पहले मूल भाषा के विचारतत्त्व को आत्मसात् करना और उसे बारीकी के साथ दूसरी भाषा के परिधान में सहज, सुबोध और सुस्वाद्य शैली में प्रस्तुत करना कोई मामूली काम नहीं है। यह तो सामान्य अनुवाद की बात है जिसमें मूल पाठ अनुवाद के साथ नहीं दिया जाता। प्रस्तुत रचना "रंगनाथ रामायण" में अनुवाद का कार्य और भी जटिल और श्रमसाध्य इसलिए हो चुका है क्योंकि उसमें मूलपाठ के साथ ही अनुवाद भी दिया गया है। इस अनुवाद को पढ़नेवाले न केवल मूल ग्रंथ का रसास्वादन करते हैं, बल्कि क़दम-क़दम पर अनुवाद को मूल से मिलाकर चलते हैं। ऐसी स्थिति में अनुवादक को काफ़ी सतर्क और समर्थ होकर चलना पड़ता है। यही "असिधाराव्रत" (तलवार की नोक पर चलने) जैसा काम कहा जाता है। जहाँ मूल पाठ के बिना अनुवाद छप जाता है, वहाँ अनुवादक काफ़ी स्वतंत्र होता है। मूल का पूरा-पूरा आनंद लाने के लिए कहीं कुछ जोड़कर कहीं कुछ तोड़कर अनुवाद को अंततः आपातरमणीय बनाना ही उसका ध्येय होता है। पर इस स्वतंत्रता या सुविधा से प्रस्तुत ग्रंथ का अनुवाद एकदम वंचित है। इसलिए यह साधना बहुत ही जटिल और प्रज्ञापेक्षी होती है।

मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि इस ग्रंथ का लिप्यंतरण और अनुवाद प्रस्तुत करनेवाले सुयोग्य विद्वान् डॉ० भीमसेन निर्मल ने इस महान् कार्य को बड़ी दक्षता के साथ संपन्न किया है। जहाँ तक हो सके, उन्होंने मूल के संस्कृत शब्दों का ज्यों का त्यों प्रयोग किया है और जहाँ ये शब्द कुछ

दुरूह या कठिन प्रतीत हों, वहाँ कुंडली में उनके सरल पर्याय भी दिए हैं। अनुवाद में प्रत्येक अक्षर पर, प्रत्येक शब्द पर और प्रत्येक भाव-भंगिमा पर पूरा-पूरा ध्यान दिया गया है। तेलुगु में एक पंक्ति पढ़कर फिर हिन्दी में उसके अनुवाद से मिलाते जाएँ तो न केवल मूल का आशय समझ में आता है, बल्कि मूल की भाषा 'तेलुगु' सीखने में भी सुविधा होती है। सफल अनुवादक प्रायः अपने अनुवाद के संबंध में दावा करते हैं कि उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं कही जो मूल में न हो और न ही कुछ ऐसी बात जोड़ दी जो अपेक्षित नहीं है—"नामूलम् लिख्यते किंचित् नानपेक्षितमुच्यते"। यह बात अन्यान्य अनुवादकों के बारे में सही निकले या नहीं, पर डॉ० निर्मल ने इस नियम का पूरा-पूरा पालन किया है। इससे उनका यह अनुवाद न केवल रामायण-बोधिनी का काम देता है, बल्कि तेलुगुभाषा-बोधिनी के रूप में भी उपयोगी सिद्ध होता है। सारी पुस्तक पढ़ने के बाद पाठक को तेलुगु भाषा का कार्यसाधक ज्ञान अवश्य मिलता है और कम से कम तेलुगु भाषा के माधुर्य से वह परिचित हो जाता है।

यह महान् सांस्कृतिक अनुष्ठान भुवन वाणी ट्रस्ट के प्रतिष्ठाता श्री नंदकुमार अवस्थी और हिन्दी-तेलुगु के जाने-माने विद्वान् डॉ० भीमसेन निर्मल के मणि-कांचन संयोग से सुसंपन्न हो सका है। डॉ निर्मल को मैं वर्षों से जानता हूँ। हिन्दी और तेलुगु के मर्मज्ञ विद्वान् होने के कारण उन्होंने साहित्यिक आदान-प्रदान के कार्य में महत्वपूर्ण योग दिया है। शरीर से दुबले-पतले, पर मन से निर्मल और आत्मा के आलोक से चिर-प्रफुल्ल उनका व्यक्तित्व पल भर में पराये को अपना बना लेता है। "रंगनाथ रामायण" की शैली और डॉ० निर्मल के व्यक्तित्व में भी बहुत कुछ साम्य है—सहज सात्विक सरलता कृतित्व और कर्तृत्व को जोड़ देती है। मुझे पूरी आशा है कि नागरी जगत् इस सांस्कृतिक अनुष्ठान का सहर्ष स्वागत करेगा। कविमनीषी श्री नंदकुमार अवस्थी के लगाए गए इस 'नंदन वन' में रंगनाथ रामायण के यशस्वी लेखक गोन बुद्धा रेड्डी की यह मंगलकामना निरंतर गूंजती रहेगी:—

अघनायकभवबंधविमोचक, दिव्य भव्य रचना श्रीकारक।
रामायण रमणीय कथा यह, भावुकजन-तारक पुण्यावह ॥
जब तक भूधर, जब तक सागर, जब तक शशि, नक्षत्र, दिवाकर।
जब तक चार वेद, यह वसुधा, जब तक जग आलोकित बहुधा।
तब तक रामकथा यह मंजुल, बरसे नित आनंद रसोज्ज्वल ॥

॥ इति शम् ॥

विशेष कार्याधिकारी,
संघ लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली

(डॉ०) आई० पाण्डुरंगराव

अनुवादकीय

श्रीरामचन्द्र आन्ध्रजाति के प्रियतम भगवान हैं, परम आराध्य हैं। दैनिक जीवन में हो अथवा साहित्य में हो, जहाँ सुनिए, वहीं पवित्रनाम प्रतिध्वनित होता सुनाई पड़ेगा। श्रीराम के वनवास के चौदह वर्षों में अधिक भाग दंडकारण्य में आन्ध्रप्रान्त में— गोदावरी के तीरस्थ प्रदेशों में ही व्यतीत हुआ था। उस पावन स्मृति को जाग्रत करनेवाले अनेक स्थान और चिह्न आन्ध्रप्रान्त में विद्यमान हैं। अतः यह स्वाभाविक है कि मर्यादापुरुषोत्तम की पवित्र कथा के श्रवण से मैं बचपन से ही आसक्त रहा। बचपन में हरिकथाओं के श्रवण तथा चर्म-पुत्तलिका-नृत्यों के दर्शन से राम के कर्त्तव्यपरायण-शीलता की हृदय पर अमिट छाप पड़ गई। लेखन कार्य में रत होने के बाद रामकथा संबंधी तथा रामभक्तों संबंधी कई लेख भी लिखे थे।

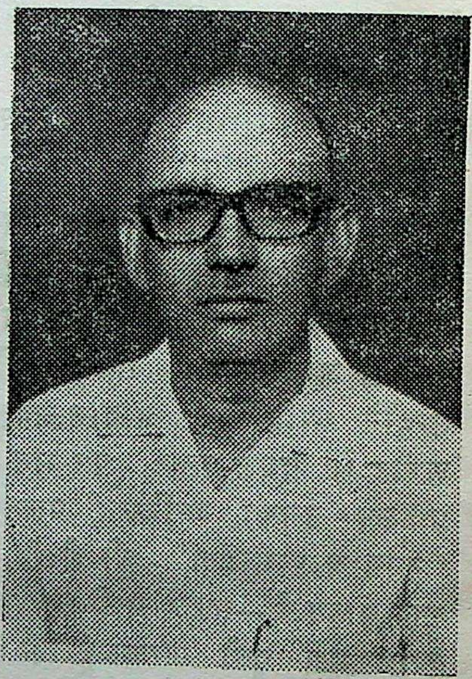

डॉ० भीमसेन निर्मल
(उस्मानिया वि०वि० हैदराबाद)

सन् १९६९-७० में हैदराबाद में संपन्न हिन्दीतर हिन्दी लेखक सम्मेलन के सुअवसर पर आदरणीय बन्धुवर डॉ० गजानन नरसिंह साठे जी से भेंट हुई थी। प्रथम दर्शन में ही मेरे प्रति उनके हृदय में अपनत्व उत्पन्न हुआ। उन्होंने भुवन वाणी ट्रस्ट के लिए तेलुगु भाषा के किसी रामायण का अनुवाद कर देने के लिए मुझे प्रेरित किया। तदनन्तर श्रद्धेय पद्मश्री नन्दकुमारजी अवस्थी के साथ पत्राचार प्रारंभ हुआ। स्व० ए० सी० कामाक्षीरावजी-कृत रंगनाथ रामायण का स्वच्छन्द गद्यानुवाद बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना द्वारा प्रकाशित हुआ था। वह अनुवाद ट्रस्ट के सिद्धान्तों के अनुरूप और मूलपाठ सहित न होने के कारण, अवस्थी जी ने रंगनाथ रामायण का नागरी लिप्यन्तरण सहित हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने का आदेश दिया। उनके आदेशानुसार इस पुनीत कार्य का श्रीगणेश किया। प्रारंभ में मन में यह विचार घर कर गया था कि त्रैमासिक 'वाणीसरोवर' में प्रकाशित होने के पश्चात् ही मेरा

अनुवाद ग्रन्थरूप प्राप्त करेगा। बद्धमूल बनी इस धारणा के कारण, कार्य की गति प्रारंभ में पर्याप्त मंद रही। किन्तु श्री अवस्थीजी के बार-बार स्मरण दिलाते रहने पर तथा मेरे शिष्य डॉ० सीएच्० रामुलु कृत 'मोल्लरामायण' के प्रकाशित होने पर अनुवाद कार्य शीघ्रगति से हुआ और भगवान की असीम कृपा से इस पवित्र कार्य को इस वर्ष के श्रीरामनवमी के दिन पूर्ण कर सका।

तेलुगु भाषा में उपलब्ध रामायणों में रंगनाथ रामायण प्रथम तथा अत्यन्त लोकप्रिय रचना है। पाठ्य तथा गेय दोनों रूपों में सुमधुर यह रचना पण्डित और पामर को प्रसन्न करनेवाली है। यह द्विपद शैली में लिखा गया प्रथम विशालकाय महाकाव्य है। इस काव्य में अनेक अवाल्मीकीय प्रसंग हैं जो काव्यरसिक को भाव-विभोर कर देते हैं। ये प्रसंग मूलकथा की घटनाओं को अधिक तर्कसंगत-मनोवैज्ञानिक सिद्ध करते हैं और काव्यसौंदर्य में चार-चाँद लगा देते हैं। 'असमान ललित शब्दार्थ संगतियों' तथा 'अलंकार-भावनाओं' से युक्त इस काव्य में मनोहर वर्णनों की शोभा, प्रकृति वर्णन की छटा पाठक को मुग्ध कर देती है। उक्ति-वैचित्र्य एवं अर्थ-गौरव से युक्त इस काव्य में संस्कृतबहुल समासयुक्त मधुर गंभीर भाषा के साथ ठेठ तेलुगु भाषा के मुहावरे का हृदयंगम सम्मेलन है। यह कवि के उभयभाषा पांडित्य का ज्वलन्त प्रमाण प्रस्तुत करता है। तेलुगु भाषा के रामकाव्यों में भाव-प्रौढ़ता तथा काव्य-माधुरी के कारण इस काव्य का अद्वितीय स्थान है। इस अप्रतिम काव्य को हिन्दी के सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मैं अतीव आत्मतोष का अनुभव कर रहा हूं।

तेलुगु लिपि तथा ध्वनि चिह्नों की विशिष्टता के बारे में अन्यत्र विस्तार से लिख चुका हूं। लिप्यन्तरण में जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, उन्हें पूज्य अवस्थीजी के परामर्श द्वारा सुलझा सका। तेलुगु के 'ఁ' (अर्द्धानुस्वार का प्रतीक) जिसका उच्चारण तो होता ही नहीं है। यह लुप्त अनुस्वार (अरसुन्न) लुप्त 'न्' का चिह्न है और इसके कारण परवर्ती सरल अक्षर (क, च, ट, त, प) परुष अक्षर (ग, ज, ड, द, ब) बन जाते हैं। इसे लिप्यन्तरण में छोड देना पड़ा। आशंका इस बात की थी कि उस चिह्न को नागरी-लिपि में देने के कारण नागरी के पाठक पसोपेश में पड़ जाएँगे।

रंगनाथ रामायण १३-१४वीं शती की रचना है, जिसमें क्लिष्ट संस्कृत समास-शैली के साथ, ऐसे ठेठ तेलुगु शब्दों का प्रयोग किया गया है जो आज प्रचार में नहीं हैं। ऐसे शब्दों तथा शब्द-प्रयोगों का अर्थ लगाने में बन्धुवर डा० जी० वी० सुब्रह्मण्यम् (रीडर, तेलुगु विभाग,

उस्मानिया विश्वविद्यालय) तथा डा० पी० श्रीरामचंद्रुडु (रीडर, संस्कृत विभाग, उ० वि० वि०) ने मेरी सहायता की है। मैं इन दोनों विद्वानों का हृदय से आभारी हूँ।

अनुवाद में मूल काव्य की कथन शैली एवं भावाभिव्यक्ति की पद्धति का यथासंभव अनुसरण किया है। इस कारण से हो सकता है कि अनुवाद की भाषा, वाक्य-रचना अथवा शब्द-प्रयोग आदि किंचित् अटपटे लगें। मूल तेलुगु काव्य में मात्रापूर्ति के प्रयुक्त संज्ञाओं, क्रियाओं तथा सर्वनामों का भी यथावत् रूप से अनुवाद कर दिया है। जो हो, मेरे इस अनुवाद से हिन्दी के रसज्ञ पाठक तेलुगु की लोकप्रिय रामायण के काव्य-गौरव से यत्किंचित् भी परिचित हो जाएं तो मैं अपने प्रयास को सार्थक मानूंगा।

भाषाई सेतुकरण, एक भाषा के साहित्य का दूसरी भाषा में प्रतिबिंबीकरण द्वारा राष्ट्रीय भावात्मक समन्वय के पुनीत कार्य में विगत २० वर्षों से लगे हुए भुवन वाणी ट्रस्ट के कर्मठ साधक पद्मश्री नन्दकुमारजी अवस्थी तथा श्री विनयकुमारजी अवस्थी के अथक परिश्रम के कारण भारतीय भाषाओं के साहित्य परस्पर नैकट्य का अनुभव कर रहे हैं और नागरी लिपि प्रचार के द्वारा भारतीय साहित्यों को तथा भारतीय जनमानस को एकसूत्र में निबद्ध करते जा रहे हैं। पिछले वर्ष हैदराबाद में उन दोनों मौन तपस्वियों के साक्षात्कार का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनके कर्मठ व्यक्तित्व एवं मौन तपस्या की भावना ने मुझे अत्यधिक प्रभावित किया था। उनके द्वारा संपन्न हो रहे इस महान् यज्ञ में अपना अल्पतर योगदान प्रस्तुत करने का मुझे जो सुअवसर प्राप्त हुआ है, तदर्थ मैं उनका हृदय से आभार मानता हूँ। इस कार्यक्रम को सफल बनाना मैं अपना कर्त्तव्य मानता हूँ।

डा० ए० पांडुरंगराव (विशेष अधिकारी, लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली) का मैं अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने इस ग्रन्थ को अपनी भूमिका से समलंकृत किया है। अन्त में अन्य सभी सुहृदजनों का आभार मानता हूँ जिन्होंने मेरे प्रयास को सफल बनाया है।

॥ इति शम् ॥

रीडर, उस्मानिया विश्वविद्यालय,
हैदराबाद

बुधजनविधेय,
(डॉ०) भीमसेन 'निर्मल'

विषयानुक्रमणिका

विषय पृष्ठ

बालकाण्ड २३-२१६

देवता स्तुत्यादिक २३
ग्रंथ रचना का कारण २६
कथा प्रारंभ ३१
अयोध्या का वर्णन ४०
दशरथ का वैभव ४०
दशरथ का पुत्रकामेष्टि विचार ४२
ऋष्यश्रृंग वृत्तांत ४४
रोमपाद के घर ऋष्यश्रृंग का आगमन ४९
दशरथ का यागदीक्षा लेना ५४
ब्रह्माजी से देवताओं की गुहार ५६
देवताओं का विष्णु की स्तुति करना ५८
दशरथ को यज्ञपुरुष का दिव्य पायस देना ६०
देवताओं से वानरों के रूप में जन्म-लेने के लिए ब्रह्मा का कहना ६२
श्रीराम का अवतार (जन्म) ६४
दाशरथियों का बाल्य (बचपन) ६६
विश्वामित्र का दशरथ के पास आना ६८
यज्ञरक्षा के लिए राम को भेजने के लिए कहना ६९
वसिष्ट मुनि का धीरज बँधाना ७२
दशरथ का कौशिक के साथ राम-लक्ष्मण को भेजना ७४
विश्वामित्र का राम-लक्ष्मण को साथ ले जाना ७५
अंगदेश का वृत्तांत ७७
विश्वामित्र का ताड़का का वृत्तांत सुनाना ८०
ताड़का का वध ८२
श्रीराम को विश्वामित्र का अस्त्र-शस्त्र देना ८४
श्रीराम से विश्वामित्र का सिद्धाश्रम का विषय बताना ८८
विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा ९०

विषय पृष्ठ

मिथिलानगर को प्रयाण ९३
कौशांबी की कथा ९४
विश्वामित्र का वंशक्रम ९८
कुमारस्वामी का जन्म-वृत्तांत १०३
गंगा नदी का वृत्तांत १०८
सागरों का वृत्तांत ११०
अंशुमान का यज्ञाश्व लाना ११५
गंगा का अवतरण ११६
भगीरथ का गंगा को लाना ११९
अमृतमंथन की कथा १२६
मरुतों की कथा १२९
वैशालिकों का वृत्तांत १३२
सुमति और विश्वामित्र का समागम १३२
विश्वामित्र का सुमति को राम-लक्ष्मण के बारे में बताना १३३
गौतम-आश्रम का वृत्तांत १३५
अहिल्या-शाप-बिमोचन १३७
श्रीराम-लक्ष्मण का विश्वामित्र के साथ मिथिला पहुँचना १३९
विश्वामित्र का प्रभाव १४२
विश्वामित्र का बसिष्ठ की कामधेनु को ले जाने का प्रयत्न १४५
विश्वामित्र का ईश्वर से अस्त्र आदि प्राप्त कर वसिष्ठ के साथ युद्ध १४७
ब्रह्मर्षिपद के लिए विश्वामित्र का तप १४९
त्रिशंकु के लिए बिश्वामित्र का यज्ञ १५३
अंबरीष का शुनश्शेप को यज्ञपशु के रूप में ले जाना १५७
विश्वामित्र का मेनका से मिलना १६०
शिवधनु का वृत्तांत १६६
शिवधनुभंग १७२
दशरथ को निमंत्रण १७४
दशरथ का मिथिला-प्रयाण १७६
ऊर्मिला आदियों का विवाह-प्रयत्न १७८
दशरथ का वंशक्रम १८१

विषय पृष्ठ
युवनाश्व का वृत्तांत १८१
जनक का वंशक्रम १८६
नगर को सजाना १८९
दशरथ-पुत्रों का अलंकरण १९१
श्रीसीता-कल्याण १९६
राम और परशुराम का समागम २००
परशुराम गर्वभंग २०१
अयोध्या में प्रवेश २०९

अयोध्याकाण्ड २१७-३५८

श्रीराम के राजतिलक का संकल्प २१७
वसिष्ठ आदि से दशरथ की मंत्रणा २१८
राज्य-पालन करने के लिए दशरथ का श्रीराम से प्रार्थना करना २२३
मंथरा का दुष्ट विचार २२७
दशरथ का कैकेयी के घर जाना २३३
कैकेयी का दशरथ से वर माँगना २३६
राम के राजतिलक की तैयारी २४२
सुमंत्र का कैकेयी के महल जाना २४३
सुमंत्र का राम के निकट जाना २४४
श्रीराम का कैकेयी के नगर जाना २४५
कैकेयी का अपनी इच्छा राम को बतलाना २४६
श्रीराम का कौसल्या की नगरी जाना २४९
श्रीराम के वनवास पर कौसल्या का दुख २५०
लक्ष्मण का क्रोध २५३
श्रीराम का लक्ष्मण के आवेश को दूर करना २५६
श्रीराम का कौसल्या को सान्त्वना देना २५८
श्रीराम का सीता को अभिषेक-भंग सुनाना २६१
रामानुगमन के लिए सीता और लक्ष्मण का निश्चय २६२
सीता और लक्ष्मण के अनुगमन के लिए श्रीराम का राज़ी होना २६७
श्रीराम का त्रिजट को दान देना २७२
श्रीराम का सीता-लक्ष्मण के साथ दशरथ के दर्शन के लिए जाना २७४
विषय पृष्ठ
सीता-राम का वल्कल पहनना २८१
वसिष्ठ का कैकेयी को खरी-खोटी सुनाना २८२
दशरथ का कैकेयी की निंदा करना २८४
श्रीराम का दशरथ को सान्त्वना देना २८५
कौसल्या का सीता को पतिधर्म बताना २८६
रामादि का वनगमन २८९
रथ को रोकने के लिए दशरथ का सुमंत्र को बुलाना २९२
गुह के दर्शन २९७
जटाधारी होकर राम का सुमंत्र को बिदा देना २९९
रामादि का गंगा को पार कर जंगलों में जाना ३०१
चित्रकूट में पर्णशाला-निवास ३०५
काकासुर की कथा ३०५
अयोध्या को सुमंत्र का पुनरागमन ३०६
दशरथ का कौसल्या को अपना शापवृत्तांत बताना ३०९
दशरथ का निर्वाण (स्वर्गवास) ३१९
भरत को बुलाना ३२३
भरत का अयोध्या में प्रवेश करना ३२४
भरत का कौसल्या के पास जाना ३२७
भरत का राम के पास जाना ३३३
भरत का भरद्वाजाश्रम पहुँचना ३३५
भरत को देख लक्ष्मण का संदेह करना ३४०
भरत का मुनिवेषधारी राम-लक्ष्मण को देखना ३४२
दशरथ की मृत्यु के बारे में भरत का श्रीराम को बताना ३४६
श्रीराम को जाबालि का उपदेश ३५२
पादुका-प्रदान ३५४

अरण्यकाण्ड ३५९-४७९

अत्रि के आश्रम को आना ३५९
दंडक-अरण्य में प्रवेश ३६१
विराध का वध ३६१
शरभंग के आश्रम में जाना ३६५

विषय	पृष्ठ
सुतीक्ष्ण मुनि के दर्शन	३६७
सीतादेवी का धर्मसंशय	३६८
मंदकर्णी का वृत्तांत	३७०
अगस्त्य का वृत्तांत	३७२
अगस्त्य के दर्शन	३७५
जटायु से मैत्री	३७६
पंचवटी-प्रवेश	३७६
हेमंत-वर्णन	३७७
जंबुमालि का वृत्तांत	३७९
पुत्र की मृत्यु पर शूर्पणखा का शोक	३८६
शूर्पणखा का राम पर मोहित होना	३८९
खरदूषण आदि का संहार	३९४
खर की सेनाओं का राम का सामना करना	४००
श्रीराम के साथ खरदूषणों का युद्ध	४०३
खर का श्रीराम का सामना करना	४०९
लंका में अकंपन और रावण का संवाद	४१०
मारीच का हितबोध	४१२
रावण से शूर्पणखा का आर्त्त-निवेदन	४१३
शूर्पणखा का सीताराम का रूपातिशय बताना	४१५
रावण का फिर से मारीच के पास जाना	४१७
मारीच का रावण को श्रीराम का प्रभाव बताना	४२०
मारीचरूपी-मायामृग	४२३
राम का मायामृग का पीछा करना	४२८
मायामृग का राम के हाथ मरना	४२९
सीतापहरण	४३३
जानकी का विलाप	४३९
जटायु का रावण का सामना करना	४४२
रावण से जटायु का युद्ध	४४५
सीता का ऋष्यमूक पर्वत पर आभरण डाल देना	४४७
सीता को रावण का अशोक वन में रखना	४४८
श्रीराम का आश्रम में लौट आना	४५०
सीता को न देख श्रीराम का दुख	४५४
लक्ष्मण का राम को सान्त्वना देना	४६०

विषय	पृष्ठ
जटायु का मरण	४६३
कबंध-संहार	४६६
शबरी का सत्कार	४७०
ऋष्यमूक-गमन	४७३

किष्किंधाकाण्ड ४८०-५८२

विषय	पृष्ठ
पंपा सरोवर का वर्णन	४८०
सुग्रीव से मित्रता	४८४
हनुमान का राम-लक्ष्मण के निकट आना	४८६
हनुमान का जन्म-वृत्तांत	४८८
सुग्रीव का राम को सीता के आभूषण देना	४९७
वालि और सुग्रीव के कलह की कथा	५००
वालि और मायावी का युद्ध	५०२
वालि और दुंदुभि का युद्ध	५०५
वालि-सुग्रीव का द्वन्द्व-युद्ध	५११
तारा का वालि को मना करना	५१५
राम के अस्त्र से वालि का गिरना	५१९
वालि और राम का संवाद	५२१
तारा का विलाप	५२६
वालि का सुग्रीव को सीख देना	५३०
श्रीराम का सुग्रीव को किष्किंधा का राजा बनाना	५३३
श्रीराम का माल्यवंत पहुंचना, वर्षाऋतु वर्णन	५३५
शरत् का आगमन	५३९
लक्ष्मण का क्रुद्ध हो किष्किंधा जाना	५४१
लक्ष्मण का सुग्रीव को मानना	५४५
सुग्रीव का कपिसमूहों के साथ माल्यवंत पहुँचना	५४६
सीता को खोजने सुग्रीव का वानरों को भेजना	५५०
राम का हनुमान को अभिज्ञान के रूप में अंगूठी देना	५५३
अंगद आदियों का विचित्र गुफा में प्रवेश	५५७
हनुमान आदि को स्वयंप्रभा का सत्कार	५५९

विषय पृष्ठ
सीता के न दिखाई पड़ने पर वानरों का विलाप ५६२
कपियों का प्रायोपवेश ५६४
संपाति-दर्शन ५६५
संपाति का वानरों को सीता का पता बताना ५६७
वानर वीरों का अपना-अपना सत्त्व बताना ५७१
समुद्र लाँघने के लिए जांबवान का हनुमान को प्रोत्साहन ५७३
हनुमान का समुद्र पार करना ५७५
हनुमान को मैनाक का आतिथ्य प्रदान करना ५७७

सुन्दरकाण्ड ५८३-६७०

लंका-प्रवेश ५८३
लंकिणी का हनुमान को रोकना ५८६
हनुमान का समस्त लंका में खोजना ५८८
हनुमान का रावण के अंतःपुर में प्रवेश ५९०
हनुमान का उद्यानवन देखना ५९४
रावण के उपवन में सीता को खोजना ५९४
सीता के न दीखने पर हनुमान का दुःख ५९६
हनुमान का सीता को देखना ५९९
सीता के पास रावण का प्रलाप ६०२
जानकी का रावण की निंदा करना ६०५
मंदोदरी का रावण को उपदेश ६१०
राक्षस स्त्रियों का सीता को धमकाना ६१२
सीता का शोक ६१२
त्रिजटा का स्वप्न ६१४
राक्षस स्त्रियों के पीड़ित करने पर जानकी का विलाप ६१५
हनुमान का राघवों का वृत्तांत सीता को बताना ६१७
अंगूठी प्रदान करना ६१९
हनुमान का सीता को अपना वृत्तांत बताना ६२०

विषय पृष्ठ
हनुमान का सीता को श्रीराम-लक्ष्मण का कुशल बताना ६२४
सीता का प्रतिसंदेश ६२६
चूड़ामणि प्रदान करना ६२८
अशोक वन का विध्वंस ६३०
सामना करने आए राक्षसों का संहार ६३२
हनुमान पर रावण का रक्तरोम आदि को भेजना ६३५
अक्षकुमार का हनुमान पर आक्रमण करना ६४१
इंद्रजीत से हनुमान का बंधित होना ६४४
हनुमान का रावण को अपना आगमन बताना ६४८
विभीषण का रावण से कहना कि दूत को नहीं मारना चाहिए ६५०
हनुमान की पूँछ में आग लगाना ६५१
लंका-दहन ६५३
हनुमान की अंगद आदियों से भेंट ६५८
मधुवन में अंगद आदियों का विहार ६६०
हनुमान का सीता की कुशल राम को बताना ६६३

युद्धकाण्ड ६७३-१३२७

श्रीराम का हनुमान की प्रशंसा करना ६७३
हनुमान का श्रीराम को लंका का वैभव बताना ६७६
सुग्रीव का कपिसेनाओं का प्रस्थान कराना ६७९
श्रीराम का महेंद्राद्रि पहुँचना ६८३
सायं-संध्या आदि का वर्णन ६८५
रावण का मंत्रियों से विचार-विमर्श करना ६८९
राक्षस-सैनिकों की वीरोक्तियाँ ६९२
विभीषण का राक्षसवीरों को हितोपदेश ६९४
विभीषण का रावण के पास जाना ६९७
रावण को विभीषण का हितोपदेश ६९८
रावण का कुंभकर्ण को राम का आगमन बताना ७०२

विषय	पृष्ठ
इन्द्रजित का विभीषण को अपना पराक्रम बताना	७०६
इंद्रजित के दंभी वाक्यों द्वारा विभीषण की निंदा	७०८
रावण-विभीषण-संवाद	७०९
रावण का विभीषण को लात मारकर नगर से निकाल देना	७१३
विभीषण का माता के पास जाना	७१४
विभीषण की शरणागति	७१९
विभीषण की योग्यता के बारे में आंजनेय का राम को बताना	७२१
विभीषण का श्रीराम की नुति करना	७२३
श्रीराम का विभीषण को अनुगृहीत करना	७२५
विभीषण का राम को लंका की उत्पत्ति के बारे में बताना	७२६
विभीषण का रावण का वैभव राम को बताना	७२७
श्रीराम का विभीषण को लंका का राजा बनाना	७३१
शुक-संदेश	७३२
श्रीराम का दर्भ-शयन	७३५
श्रीराम का समुद्र पर ब्रह्मास्त्र चलाना	७४१
समुद्र का राम से प्रार्थना करना	७४२
सेतु बाँधने के लिए श्रीराम का सुग्रीव को आज्ञा देना	७४५
सेतु-बंधन	७४७
चंद्रोदय का वर्णन	७५०
श्रीराम के प्रति गिलहरी की भक्ति	७५५
श्रीराम का सेतु को देखकर प्रसन्न होना	७५७
राम-लक्ष्मण का सुवेलाद्रि जाना	७५९
कैकेशी की व्यथा	७६१
रावण को कैकेशी का हितबोध	७६५
कैकेशी का रावण को राम की महिमा बताना	७७१
कैकेशी का रावण को जलप्रलय (के बारे में) बताना	७७३
रावण को अतिकाय का हित कहना	७८०
शुकसारणों का राम की सेनाओं को देख आना	७८१
सारण का कपि-पुंगवों के बारे में बताना	७८४
शुक का श्रीराम का तेजोविशेष बताना	७९१
राम का माया-शिर दिखाकर रावण का सीता को डराना	७९५
रावण को माल्यवान का हितोपदेश	८०१
श्रीराम का लंकापुर के वैभव को देखना	८०४
रावण और सुग्रीव का द्वन्द्व-युद्ध	८०७
श्रीराम का वानरों से लंका का घेरा डलवाना	८११
अंगद का दूतकार्य	८१४
रावण का अंगद से अपने पराक्रम के बारे में बताना	८२०
अंगद को पकड़-बाँधने के लिए रावण का आदेश	८२८
रावण का अपने वैभव का प्रदर्शन	८३०
श्रीराम द्वारा रावण के छत्र-चामरों का खंडन	८३४
रावण द्वारा राम के धनुर्विद्या-कौशल की प्रशंसा	८३६
वानरों का लंका को ध्वंसपटल करना	८३८
वानर और राक्षसों का द्वन्द्व-युद्ध	८४२
युद्धभूमि का वर्णन	८४६
सायंकाल तथा रात्रि का वर्णन	८४९
इंद्रजित का मायायुद्ध	८५२
रामलक्ष्मण का नागपाशों से बद्ध हो जाना	८५५
नागपाश-बद्ध रामलक्ष्मण को देख सीता का दुखी होना	८५८
त्रिजटा का सीता को सान्त्वना देना	८६२
राम का होश में आकर लक्ष्मण के लिए विलाप	८६३
विभीषण तथा अंगद का वानरों को धैर्य देना	८६६
नारद का आगमन	८६८

विषय	पृष्ठ
गरुड़ के आगमन पर राघवों की नागपाशों से विमुक्ति	८७०
धूम्राक्ष का युद्ध के लिए आना	८७४
अकंपन का युद्ध के लिए आना	८७८
महाकाय का युद्ध के लिए आना	८८२
वानर और राक्षसों का भीकर समर	८८३
महानाद का अंगद से लड़कर मरना	८९०
महाकाय का अंगद से मल्लयुद्ध करके मर जाना	८९५
प्रहस्त का युद्ध	८९७
नील का प्रहस्त को मार डालना	९०२
रावण को मंदोदरी का हितोपदेश	९०४
मंदोदरी के हितोपदेश को रावण का तिरस्कार	९०७
रावण का प्रथम युद्ध	९०८
विभीषण का दनुज नायकों का अलग-अलग से परिचय कराना	९१२
हनुमान का रावण से युद्धकर मूर्च्छित होना	९१८
नील का रावण से युद्ध करना	९२०
रावण का ब्रह्मशक्ति से लक्ष्मण को गिरा देना	९२२
लक्ष्मण की मूर्च्छा	९२३
राम-रावण का प्रथम युद्ध	९२५
रावण का खिन्न हो लंका को लौटना	९२७
राक्षसों का कुंभकर्ण को नींद से जगाना	९२९
राघवों की युद्ध-यात्रा को सुन, कुंभकर्ण का कोप	९३४
कुंभकर्ण का शापवृत्तांत	९३८
रावण को कुंभकर्ण का हितोपदेश	९४२
रावण का कुंभकर्ण के हितवचनों का तिरस्कार	९४६
कुंभकर्ण के प्रगल्भ-वचन	९५०
कुंभकर्ण का युद्ध के लिए निकल पड़ना	९५३
कुंभकर्ण को दुःशकुन दिखाई पड़ना	९५५
वानरों और कुंभकर्ण का युद्ध	९५६
हनुमान और कुंभकर्ण का युद्ध	९६३
सुग्रीव का कुंभकर्ण से लड़ते मूर्च्छित होना	९६६
मूर्च्छित सुग्रीव को कुंभकर्ण का लंका ले जाना	९६८
सुग्रीव का होश में आकर कुंभकर्ण को विरूप करना	९७०
कुंभकर्ण का वानरों द्वारा सत्यानाश	९७१
विभीषण-कुंभकर्ण का संवाद	९७५
श्रीराम के हाथ कुंभकर्ण का मरना	९७९
कुंभकर्ण के मरण पर रावण का शोक	९८४
अतिकाय, महोदर आदि का युद्ध के लिए निकलना	९८७
अंगद, नरांतक का द्वन्द्वयुद्ध	९९४
देवांतक और त्रिशिर का अंगद से जूझ पड़ना	९९६
हनुमान आदि का त्रिशिर आदि राक्षस वीरों को मारना	९९८
अतिकाय का युद्ध करना	१००१
विभीषण का श्रीराम को अतिकाय का प्रभाव बताना	१००३
लक्ष्मण और अतिकाय का द्वन्द्व-युद्ध	१००९
अतिकाय का लक्ष्मण के हाथ मरना	१०१३
इंद्रजित का दूसरी बार युद्ध के लिए निकलना	१०१५
इंद्रजित का ब्रह्मास्त्र से राम आदियों को मूर्च्छित करना	१०२०
हनुमान और विभीषण का ब्रह्मास्त्र का शिकार न बनकर, सेना का निरीक्षण करना	१०२१
आंजनेय का ओषधीशैल लाकर मूर्च्छा दूर करना	१०२५
वानरों का लंका जलाना	१०२९
कुंभ-निकुंभ का युद्ध के लिए निकलना	१०३४
कुंभ और निकुंभ का युद्ध	१०३८
मकराक्ष का युद्ध के लिए निकल पड़ना	१०४२
मकराक्ष का संहार	१०४४
इंद्रजित का तीसरी बार युद्ध के लिए जाना	१०४६

विषय	पृष्ठ
इंद्रजित का होम करके कृत्ति नामक शक्ति की प्राप्ति	१०४७
श्रीराम का आग्नेयास्त्र से इंद्रजित की माया को दूर करना	१०५२
इंद्रजित का होम करके शस्त्र समेत रथ की प्राप्ति	१०५६
इंद्रजित का माया-सीता को लाकर सिर काट देना	१०६२
इंद्रजित का निकुंभिल याग करना	१०६६
लक्ष्मण-शोक	१०६८
विभीषण का इंद्रजित की माया श्रीराम को बताना	१०७१
लक्ष्मण का युद्ध के लिए निकल पड़ना	१०७५
लक्ष्मण-इंद्रजित का परस्पर अधिक्षेपण	१०७८
इंद्रजित-लक्ष्मण का द्वन्द्वयुद्ध	१०८१
लक्ष्मण के हाथ इंद्रजित का मरना	१०९१
इंद्रजित के मरण पर रावण का शोक	१०९५
रावण का सीता को मार डालने के लिए जाना	१०९९
इंद्रजित की पत्नी सुलोचना का शोक	११०२
सुलोचना का श्रीराम की स्तुति करना	११०६
सुलोचना का सहगमन करना	१११३
रावण का युद्ध के लिए निकल पड़ना	१११४
मूलबल का युद्ध	१११६
श्रीराम का मूलबल पर मोहनास्त्र चलाना	११२०
राक्षस स्त्रियों का रावण की निंदा करना	११२४
रावण का दूसरी बार युद्ध के लिए निकलना	११३१
सुग्रीव के हाथ विरूपाक्ष आदि राक्षस वीरों का मरना	११३५
रावण का राम-लक्ष्मण से लड़ना	११४१
रावण की शक्ति से लक्ष्मण की मूर्च्छा	११४७

विषय	पृष्ठ
रावण का विभीषणादि की बातें सोचकर चिंतित होना	११५०
लक्ष्मण की मूर्च्छा पर श्रीराम का शोक	११५४
संजीवकरणि के लिए हनुमान का द्रोणाद्रि जाना	११५८
कालनेमि का वृत्तांत	११५९
हनुमान को मकरी का निगल जाना	११६६
धान्यमालिनी का अपना शाप-विधान हनुमान को बताना	११६८
कालनेमि का हनन	११७२
चित्रसेनादियों का हनुमान को रोकना	११७६
भरत का स्वप्न	११७७
माल्यवन्त का हनुमान से पूछना	११७९
श्रीराम का लक्ष्मण के लिए परिताप	११८२
हनुमान का द्रोणाद्रि ले आना	११८७
संजीवकरणि से लक्ष्मण को होश	११८९
रावण का शुक्र से निवेदन	११९४
रावण का पाताल में होम करना	११९६
अंगद का मन्दोदरी को रावण के पास खींच लाना	१२००
मन्दोदरी का रावण को श्रीराम मा माहात्म्य बताना	१२०५
रावण का तीसरी बार युद्ध के लिए निकलना	१२०९
खड्गरोम आदि राक्षसों का वानर-वीरों से पतन	१२१६
इन्द्र का मातालि द्वारा श्रीराम के लिए रथ भेजना	१२२०
रावण के वाणों का राम द्वारा प्रतिवाण चलाना	१२२३
रावण का श्रीराम पर शूल चलाना	१२२५
श्रीराम को अगस्त्य का आदित्य-हृदय उपदेश	१२२७
राम-रावण का परस्पर आधिक्षेपण	१२३१
रावण का मूर्च्छित होना	१२३२

विषय	पृष्ठ
श्रीराम द्वारा रावण के कर-शिर विखण्डित करना	१२३९
रावण के कर-शिरों के पुनः उग आने पर श्रीराम चिंतित	१२४३
ब्रह्मास्त्र से रावण का मरना	१२४८
गिर पड़े हुए पति के पास रावण की आंगनाओं का आगमन	१२५१
मन्दोदरी का विलाप	१२५५
श्रीराम का विभीषण को सान्त्वना देकर रावण के लिए प्रेतकृत्य (उत्तर क्रियाएँ) करबाना	१२५९
विभीषण का लंका पर पट्टाभिषेक	१२६१
राम की आज्ञा से विभीषण का सीता को ले आना	१२६६
सीता का अग्नि-प्रवेश	१२७१
अग्निदेव का सीता को श्रीराम को सौंपना	१२७४
श्रीराम का पुष्पक विमान पर चढ़कर अयोध्या को जाना	१२८२
श्रीराम का सीता को राक्षस वीरों का विक्रम बताना	१२८४
श्रीराम का लिंग प्रतिष्ठा करना	१२८८
श्रीराम का सेतु-महिमा बताना	१२९३
भरद्वाज का आतिथ्य	१२९८
हनुमान का भरत को राघवों का कुशल बताना	१३०३
भरत का वसिष्ठादियों के साथ श्रीराम की अगवानी करना	१३०९
श्रीराम का आयोध्या पहुँचना	१३१४
श्रीराम का पट्टाभिषेक	१३१८

श्री रंगनाथ रामायणमु

(तॅलुगु द्विपद काव्य)

मूलः

गोन बुद्धारेड्डी

देवनागरी लिप्यन्तरण तथा अनुवादः

डॉ० भीमसेन 'निर्मल' एम० ए०, पीएच्० डी०

प्र० उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद

प्रकाशकीय

श्री भण्डारम भीमसेन जोस्युलु साहित्य-जगत् में भीमसेन 'निर्मल' के नाम से प्रख्यात हैं। एम. ए., पीएच्. डी. (हिन्दी), एम. ए. (तॅलुगु), राष्ट्रभाषा-प्रवीण, हिन्दी-प्रचारक, साहित्य-रत्न, साहित्यसुधाकर आदि विभिन्न उपाधियों से समलंकृत इन विद्वान् का जन्म ३० नवंबर, १९३० ई० में मेदक (आन्ध्र) में हुआ। तॅलुगु तथा हिन्दी के अनेक ग्रंथों के सफल अनुवादक, नाटककार, कवि, निबन्धकार—इस प्रकार राष्ट्र-भाषा हिन्दी तथा आन्ध्र-भाषा तॅलुगु के समानरूपेण अनन्य सेवी और राष्ट्र की भावनात्मक एकता के लिए सतत प्रयत्नशील इन विभूति के द्वारा आज कल रामचरितमानस के सन् १८५० ई० के पूर्व रचित तॅलुगु-अनुवाद का सम्पादन हो रहा है।

'भुवन वाणी ट्रस्ट', लखनऊ के माध्यम से राष्ट्र के सम्मुख प्रस्तुत गत बाईस वर्षीय विविध भाषाओं के हिन्दी अनुवाद सहित देवनागरी लिप्यन्तरण के विशाल कार्यक्रम में तॅलुगु के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रंगनाथ-रामायण' का हिन्दी अनुवाद सहित देवनागरी लिप्यन्तरण का भार इन्हीं विद्वान् ने अपने ऊपर लिया है।

श्री रंगनाथ रामायण तथा तॅलुगु भाषा के सम्बन्ध में श्री निर्मल की लेखनी से निःसृत विवरण आगे दिया जा रहा है। आशा है इस विवरण तथा आरंभ में दिये हुए 'तॅलुगु-देवनागरी' वर्णमाला चार्ट की सहायता से अखिल राष्ट्र के रसज्ञ पाठक तॅलुगु भाषा और उसके अनुपम काव्य द्वारा रामचारितामृत का सरलता से रसास्वादन कर सकेंगे।

—नन्दकुमार अवस्थी

—सम्पादक

अनुवादक एवं लिप्यन्तरणकार का वक्तव्य

१—रंगनाथ रामायण

श्रीराम की कथा परम पवित्र है। उस पवित्र गाथा को लेकर तॅलुगु भाषा में अनेक काव्य, नाटक, गेयपद, यक्षगान आदि रचे गए हैं। उन सब में रंगनाथ रामायण का अपना विशिष्ट स्थान है। यह तॅलुगु के अपने देशी छन्द 'द्विपद' में लिखा गया है जो गाये जाने के अत्यन्त अनुकूल है।

रंगनाथ रामायण के कर्ता (लेखक) तथा समय के बारे में विभिन्न मत हैं। फिर भी अन्तःसाक्ष्य के आधार पर गोन बुद्ध भूपति इस काव्य के कवि माने जाते हैं। इन्हें रेड्डीवंशज और इनका जन्म सन् १२७० ई० माना जाता है। विद्वानों के मत से इस काव्य का रचनाकाल सन् १३१० अथवा १३२० ई० है। जो हो, रंगनाथ रामायण को अधिकतर विद्वान् चौदहवीं शताब्दी के अन्तिम दशकों की रचना मानते हैं। रंगनाथ रामायण का उत्तरकांड बुद्ध भूपति के पुत्रों द्वारा रचा गया है।

इस काव्य का 'रंगनाथ रामायण' के नाम से प्रचलित होने का कोई कारण उपलब्ध नहीं है। इस काव्य की अनेक पांडुलिपियों का संकलन कर, शुद्ध पाठ के निर्णय करने का कार्य, सर सी० पी० ब्राउन महोदय ने सन् १८४० ई० में किया था। उनका कथन है कि This translation of the Ramayana is always attributed to a poet named Ranganatha, but his name is nowhere mentioned in the book; while it is asserted in each volume that the author was Budha Raj, who wrote it at the desire of his father Vithal Raj...................This Ramayana is vulgarly attributed to Ranganatha; but I can not discover the reason अस्तु,

रंगनाथ रामायण यद्यपि वाल्मीकि रामायण के आधार पर रचा गया है किन्तु इस काव्य में कई अवाल्मीकीय प्रसंग हैं। पता नहीं इस काव्य के लेखक ने वाल्मीकि रामायण की किस प्रति को अपना आधार बनाया था।

यह काव्य तॅलुगु के द्विपद काव्यों में श्रेष्ठ माना जाता है। शैली, अर्थ-गाम्भीर्य, शब्द और अर्थालंकार के प्रयोग, रस और भाव के अनुकूल रचनाशिल्प में यह काव्य अनुपम है। संस्कृत के साथ तॅलुगु पर कवि का समान अधिकार है। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि इस काव्य में प्रसंगानुकूल रसभरे वर्णन प्रचुरमात्रा में हैं।

२—तॅलुगुभाषा और लिपि

तॅलुगु मूलतः द्राविड़ भाषा-परिवार से सम्बद्ध भाषा है, किन्तु वह संस्कृत से इतनी प्रभावित है कि कुछ विद्वान् उसे संस्कृत-जन्य ही मानते हैं। उत्तर और दक्षिण के सन्धिस्थल पर स्थित होने के कारण यह स्वाभाविक ही है कि तॅलुगु अथवा आन्ध्र भाषा संस्कृत भाषा तथा साहित्य से अत्यधिक प्रभावित हो जाय।

अन्य भारतीय भाषाओं के समान ही तॅलुगु ने भी नागरी-वर्णमाला को अपनाया है। किन्तु नागरी-वर्णमाला की अपेक्षा तॅलुगु में ॠ (दीर्घ), ह्रस्व ए (ऍ) और ह्रस्व ओ (ऑ), च और ज के दन्त्य रूप, घर्षण ध्वनि वाला र (ऱ) और ळ अधिक हैं।

Italian of the East मानी गई तॅलुगु की विशेषता 'अजन्त' (स्वरान्तता) होना है। अर्थात् प्रत्येक शब्द के अन्त में कोई न कोई स्वर (अधिकतर 'उ' या 'इ') होता है और उसका पूरा-पूरा उच्चारण होता है। शब्द के मध्य में आने वाले स्वर का भी पूरा-पूरा उच्चारण होता है। अतः नागरी लिपि में दिए गए तॅलुगु शब्दों को पढ़ते समय, उनके स्वरान्त ऊच्चारण पर अवश्य ध्यान रखना चाहिए। 'जल' लिखकर हिन्दी की भाँति उसे 'जल्' न पढ़कर 'ल' को सस्वर पढ़ना चाहिए।

'ॠ' का उच्चारण बहुधा 'रु' के समान होता है। यथा 'ॠण', 'कृष्ण', 'गृह' आदि का उच्चारण 'रुण', 'क्रुष्ण', 'ग्रुह' के समान होता है।

'ए' और 'ओ' के ह्रस्व रूप भी प्रचलित हैं। उनके लिए 'ऍ' और 'ऑ' तथा उनकी मात्राओं के लिए ॅ और ॉ का उपयोग किया गया है।

'लृ' और 'लॄ' सिखाए तो जाते हैं पर उनका प्रयोग न के बराबर होता है।

'च' और 'ज' के दन्त्य और तालव्य दोनों प्रकार के उच्चराण तॅलुगु में विद्यमान हैं। दन्त्य उच्चारण को सूचित करने के लिए अक्षर के नीचे '.' चिह्न लगाया गया है।

तॅलुगु में सरल 'र' के अतिरिक्त घर्षण ध्वनि वाला 'ऱ' का भी प्रयोग होता है।

तॅलुगु में बहुधा 'थ' का उच्चारण 'ध' के समान किया जाता है। यथा 'रथमु' को 'रधमु' और 'ग्रंथ' को 'ग्रंध' कहा जाता है। इसका कारण दोनों अक्षरों का रूपसाम्य माना जाता है।

संस्कृत के कई लकारान्त शब्दों में 'ल' के स्थान पर 'ळ' का प्रयोग होता है। यथा कला=कळा, मंगल=मंगळ, गरल=गरळ, मुरली=' मुरळी, सरल=सरळ आदि।

तालव्य 'श' और मूर्धन्य 'ष' के उच्चारण में अन्तर स्पष्ट है।

तॅलुगु के कुछ शब्दों में अर्धानुस्वार का प्रयोग होता है। यह उस स्थान पर प्राचीन काल में प्रयुक्त अनुस्वार का बचा हुआ रूप है। इसका न तो उच्चारण होता है, न आधुनिक काल में प्रयोग ही होता है। उस चिह्न को लिप्यन्तरण में छोड़ दिया गया है।

तॅलुगु में वर्गान्त अनुनासिक के स्थान पर सर्वथा अनुस्वार का ही प्रयोग किया जाता है। किन्तु देवनागरी लिप्यन्तरण में ह्रस्य ऍ और ऑ की मात्राओं के 'पश्चात्-अनुनासिक' को मुद्रण की सुविधा के लिए वर्गान्त अनुनासिक ढंग पर लिखना अपनाया गया है यथा रॅण्ट, रॅण्डु, बॉन्दुटयु आदि।

साधारणतया तॅलुगु के शब्द दीर्घान्त नहीं होते। अतः संस्कृत के दीर्घान्त शब्द तॅलुगु में ह्रस्वान्त रूप में ही प्रयुक्त होते हैं। यथा पिता=पित, कमला=कमल, पार्वती=पार्वति, गौरी=गौरि, अपराधी=अपराधि आदि।

तॅलुगु वाक्य के मध्य में स्वर का कदापि प्रयोग नहीं होता। वह स्वर अपने से पूर्व के व्यंजन से जुड़ जाता है। बहुधा क, च, ट, त, प ये व्यंजन (इन्हें सरलाक्षर कहते हैं) ग, ज, ड, द, ब में बदल जाते हैं। इस नियम को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए। यथा कृत्य=गृत्य, प्रणव=ब्रणव, परिचित=बरिचित, चंड=जंड आदि।

कुछ शब्दों के अन्त में नकार (हलन्त) होता है। सन्धि के नियमों के अनुसार वह पश्चात्-स्वर में मिल जाता है। यथा, विदूरुन्+अकृत्रिम=विदूरुनकृत्रिम, अरुदुगान्+इन्द्रिय=अरुदुगानिन्द्रिय आदि।

संस्कृत के शतप्रतिशत शब्दों का प्रयोग तॅलुगु में होता है। हाँ, कुछ शब्दों के अर्थ हिन्दी से भिन्न हैं।

तॅलुगु काव्य में लंबे-लंबे समासों का प्रयोग बहुधा होता है। यह तॅलुगु की अपनी विशिष्टता है। 'समास-बहुला' भाषा है।

तॅलुगु के नागरी लिप्यन्तरण को पढ़ते समय उपरोक्त नियमों को ध्यान में रखने से, हिन्दी और तॅलुगु में भाषागत समानता के दर्शन होंगे।

देवनागरी लिप्यन्तरण में तॅलुगु द्विपद काव्य को दस-दस पंक्तियों में पाठकों की सुबिधा के लिए बाँट कर १०, २०, ३०—इस प्रकार संख्या दे दी गई है। किन्तु किसी कथा-शीर्षक की समाप्ति पर यदि १० पंक्ति पूरी नहीं होतीं तो वहीं तक की संख्या उदाहरणार्थ १९, २९, १०३ आदि देकर अगले पंक्ति-विराम पर क्रमशः ३०, ४०, ११० संख्या ही अंकित की गई है।

इसी अनुसार अनुवाद में संख्या दी गई हैं। किन्तु संख्या-समाप्ति पर यदि विषय समाप्त नहीं हुआ है, तो संख्या के बाद नया पैरा — डैश से आरंभ किया गया है, जिसका आशय है कि विषय में नया पैरा अपने पूर्ववर्त्ती पैरा से संलग्न (जुड़ा हुआ) है। देखिए पृष्ठ ३०-३१।

—[*]—

श्रीराम-पञ्चायतन

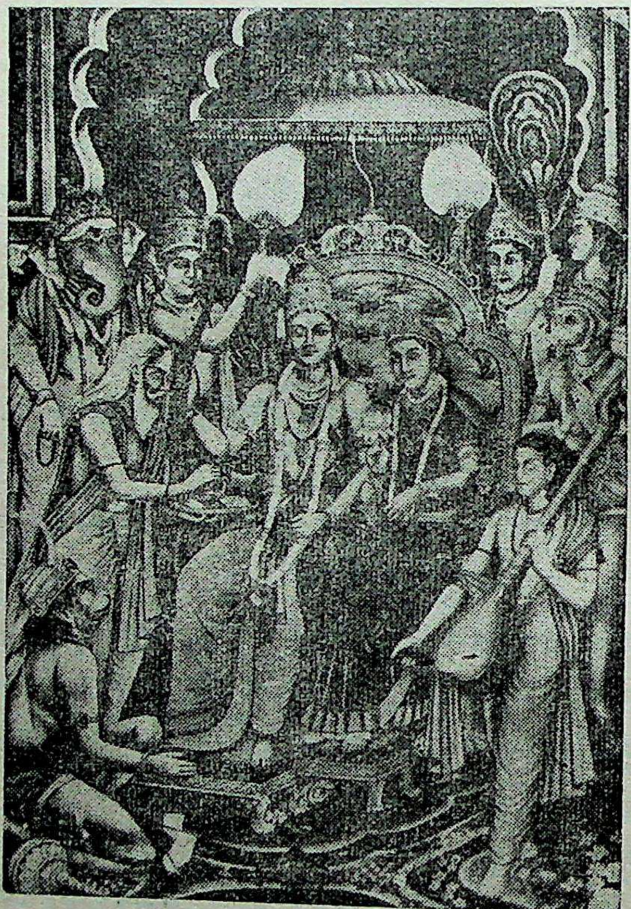

श्री रंगनाथ रामायणमु

बाल - काण्डमु

श्लोक ।। चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम्,
एकैकमक्षरं प्रोक्तं महापातकनाशनम्,
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे,
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ।।

देवतास्तुत्यादिकमु

श्री कामिनीनाथु, जितदैत्यनाथु । लोकरक्षणकृत्यु, लोकैकनित्यु
नित्यचिदानन्द निर्वाणकृत्यु । गृत्यविदूरु, नकृतिमाधारु
नाधारकमल - मध्यामोदभेद । साधनक्रमसमाचरण षट्चरणु
सिन्धुर वरदु, नाश्रितलोकबन्धु । बन्धमोचनु, बलिबन्धनोदग्रु
नारूढ - पंचाशदक्षर प्रसव । पारिजाताकारु, ब्रणवानुकारु
नग्राम्य - गोपिकाभ्यन्तरव्यग्रु । नग्रेसराकारु, नाकार रहितु
योगिमानस - लसदोंकारदीप्तु । योगसंदर्शिताभ्युदय - प्रचारु

श्री लक्ष्मीनाथ, राक्षस राजाओं को जीतने वाले, लोक-रक्षा को ही अपना कर्त्तव्य मानने वाले, लोकैकनित्य, सदा चिदानन्द से युक्त, मोक्षदायक, कर्मरहित, स्वयंभूत आधार, आधार-कमल के मध्यस्थित सुगंध के भेद (रहस्य) को जानने या प्राप्त करने की साधना के अनुष्ठान में भ्रमर समान, गजेन्द्र को मोक्ष देने वाले, आश्रित जनों के बन्धु, (संसार के) बन्धनों से मुक्ति प्रदान करने वाले, बलि को बाँधने में दृढ़, वह पारिजात वृक्ष जिसपर पंचाशत अक्षर (वर्ण माला) रूपी प्रसून विकसित हुए हों, प्रणवस्वरूप, अग्राम्य गोपिकाओं के हृदय में विहार करने में व्यग्रचित्त वाले, अबोध-गम्य आकार वाले, निराकार, योगियों के मानस में स्थित ओंकार-रूप में दीप्त, योगियों से संदर्शित अभ्युदय के प्रचारक, श्रुतियों के सिरमौर,

श्रुतिशिरोभागविशुद्ध चैतन्यु । नतिलोकु, सर्वलोकाश्रयश्लोकु
नखिलांड मौक्तिकायत नित्यसूत्नु । नखिलतत्त्वातीतु, नाद्यन्तरहितु
नमलात्मु, नक्षरु, नाम्नायकमल । कमलाप्तु, नक्षीणकल्याणसदनु १०
शंकाविनिर्मुक्त - सद्भक्तवर्य । कैंकर्यवत्सलु, गारुण्यसिन्धु
बोधकुंडै वच्चि, बोध्यमै तोचि । बोधमै वीक्षिचु पूर्णस्वरूपु
नादितत्त्वमु, 'तत्त्वम' स्यादि वाक्य। भेदाति - रूपु, नभेद्यप्रतापु
गड्कॉनि नियतुलै कर्मबन्धमुलु ।गडचि, येकतमुन गदलक निलिचि
यरुदुगा निन्द्रिय व्याप्तुल मऱचि । विरचितासनबद्ध विन्यासिलील
बरिच्चितासनमुन बदिलमै निलिचि। सरवितो मदिलोन सरसत निल्पि
वॅलय डॅब्बदि रॅण्डु वेल नाड्लनु ।गलय विवेकिंचि, कसटु वो दुडिचि
यॉक रॅडुं त्रोवल नॉकटिगा मॅलगि। यकलंकमतितोड नतिसूक्ष्ममुगनु
नवयवंबुलयंदु नानन्दमैन । पवनु निरोधिंचि, पश्चिमवीथि
जॉनिपि, कोणत्रय शुद्धि गविंचि ।मनसुतोडनॅकूड मरपिंचितॅच्चि२०
कुंडलिनिजशक्ति गूर्चि, संप्रीति ।नॉण्डॉण्ड गमलंबु लॉगि नारु गडचि

विशुद्ध-चैतन्य स्वरूप वाले, अलौकिक, समस्त लोकों के आश्रयस्वरूप, (पुण्य) श्लोक, अखिलांड रूपी मुक्ता के आयतन, नित्यसूत्र, अखिल तत्त्वों से अतीत, आदि एवं अन्त-रहित, निर्मल-आत्मा, अनश्वर, वेदरूपी कमल के लिए सूर्य सम, अक्षीण कल्याणों के आकर, ।। १० ।।

—शंकाओं से विमुक्त सद्भक्त श्रेष्ठों की सेवाओं के कारण वात्सल्य-भाव से पूर्ण, करुणा-सिन्धु, बोधक, बोध्य तथा बोध—इन तीनों रूपों में अभिव्यक्त पूर्ण-स्वरूप वाले, आदि तत्त्व, 'तत्त्वमसि' आदि वाक्यों के अनुसार भेदातीत रूप वाले, अभेद्य, प्रताप से युक्त परमात्मा का (भक्ति-भाव से ध्यान करने के लिए) निष्ठा से नियमों का पालन कर, कर्म के बन्धनों को पारकर, एकान्त में स्थिर भाव से रहकर, इन्द्रिय-व्यापारों को भुलाकर, योगासन में सुस्थिर होकर परिचित आसन में स्थित (अचंचल) रहकर, मन को सरस (भक्तिरसपूर्ण) बनाकर, (शरीर के भीतर की) बहत्तर नाड़ियों का विवेकपूर्ण विचार कर, उनका परिमार्जन कर, दोनों मार्गों (इड़ा और पिंगला) को एक बनाकर, अकलंक मति से, अवयवों में अतिसूक्ष्म हो आनन्द-रूप से व्याप्त पवन का निरोध कर, (उसे) पश्चिम वीथि (ऊपर) की ओर लगाकर, कोण-त्रय (त्रिकुटी अथवा मूलाधार) की शुद्धि कर, मन के साथ ही उसे लाकर, ।। २० ।।

—कुंडलिनी को अपनी शक्ति से संयुक्त बनाकर, सम्यक् आह्लाद से क्रमशः षट्कमलों को पार कर, उस (प्राण-पवन) को चन्द्र-मण्डल में पहुँचाया।

यट जन्द्रमंडलंबल्लन जेर्चि । यट बरम व्योममै तम्मु मऱचु
परमयोगीन्द्रुल भावम्मुकीलु । परिकिंप दानैन ब्रह्मस्वरूप
मॉगि रॅण्ट बॅरयक मूट नेर्पडक । तगिलि नाल्गव त्रोव तत्त्वमैयुंडि
यैंदिटिकादियै, याऱिंटि गडचि । यादिकिनादियै यमरिन देवु
दनुतरनिर्मलान्तर्नाडि यूप । मनुरूपमगु मनं बाबद्धपशुवु
निष्ठाभिरति वेदि,निखिलेंद्रियमुलु। काष्ठमु, बोधमखंडपावकुडु
योगामृतमु घृतमुज्ज्वलानन्द । योगंबु फलमुगा, नॉगि जॅल्लुचुन्न
यभिमतान्तर्य नित्यामोद कर्म । विभवंबु कडपट विलसिल्लु परमु
बरमेशु, नव्ययु, बरमकल्याणु । बरमात्मु, नपरोक्षु,ब्रक्षीणकर्मु ३०
मादेवु, गमलाक्षु, मम्मेलु देवु । नादिनारायणु, नखिल लोकेशु
भाविंचि,कीर्तिंचि,प्रार्थिंचि,म्रॉक्कि। सेविंचि, यभिमतसिद्धि गाविंप
हार कर्पूर नीहार गोक्षीर । तारकाकृति शारदादेवि गॉलिचि,
चारु रामायण चन्द्राब्धि यगुचु ।वारक विलसिल्लु वाल्मीकिदलचि
भारतमंजरी पारिजातम्बु । सारमानसु बराशरसूनु गॉलिचि,

वहाँ परम-शून्य बनकर, अपने आपको (परमात्मा में लीन होकर अपने अस्तित्व को) भूलने वाले परमयोगियों के हृदय के रहस्य को परखने के लिए स्थित ब्रह्मस्वरूप जो दो (प्रकृति-पुरुष अथवा द्यावा-पृथ्वी) में न समाते हुए, तीन (त्रिगुण अथवा उत्पत्ति, स्थिति, लय) में सम्बद्ध न होकर, चतुर्थ (तुरीय) तत्त्व रूप होकर, पाँच (महाभूतों) का आदि होकर, छः (षड्-ऊर्मियों) को पार कर, ऐसे परमात्मा का जो आदि का आदि है (ध्यान करूँगा)। अत्यन्त निर्मल अन्तर-नाड़ी को यूपस्तम्भ, अनुरूप मन को (उस यूपस्तम्भ से बंधे) यज्ञपशु, निष्ठा के प्रति अभिरक्ति को (बलि) वेदी, समस्त इन्द्रियों को काष्ठ, बोध (ज्ञान) को अखण्ड पावक, योगामृत को घृत और उज्ज्वल आनन्द (योग) को ही फल मानते हुए, अपने अन्तर के इच्छित नित्य-आनन्द की प्राप्ति के अनुकूल कर्मों की पराकाष्ठा के रूप में शोभित (मोक्षरूपी) परम, परमेश्वर, अव्यय, परमकल्लाण-प्रद परमात्मा, अगोचर, कर्मरहित, ॥ ३० ॥

—अपने भगवान्, कमलनेत्र, हमारे पालनहार, आदिनारायण, तथा अखिल लोकेश की भावना कर, प्रशंसा कर, प्रार्थना कर, वन्दना कर, सेवा कर अपने अभिमत (इच्छा) की पूर्ति करने के लिए हार, कर्पूर, नीहार, गोक्षीर तथा तारकों के सदृश (श्वेतवर्ण वाली) शारदा देवी की अर्चना कर, चारु-रामायण रूपी चन्द्र के जन्मस्थान के रूप में विलसित होने वाले वाल्मीकि का स्मरण कर, (महा) भारत-रूपी मञ्जरी के

यतनि तनूभवु ना शुकब्रह्म । नतिभक्तियुक्तिमै नभिनुति चेसि,
ये कथ सॅप्पिन नॅल्ल सज्जनुलु । सेकॉनि कीर्तनल् सेयुचु नुंदु;
रे कथ सॅप्पिन निहपरोन्नतुलु । प्राकटंबुग बेॅचिफलयिंचु ब्रीति;
ने कथ सॅप्पिन नीप्सितार्थमुल ।गैकॉनि पुण्यमुल् गडगि कान्पिञ्चु
ननु विचारमुलु ना यंतरंगमुन ।गॉनकॉनि कृतिसेय गोरुचुन्नंत; ४०

ग्रन्थरचनकु गारणमु

श्रीरमणीयुलै कृष्टिसत्तमुलु । गोरि वर्णनसेयु गोनवंशमुन
फलित सदाचार भानुडै तोचि । कलिकालदोषान्धकारंबु द्रोलि,
गुरुधर्मपथमुल कॉलदुलु दॅलिसि । परनृपनक्षत्रपंक्तुल नणचि,
नित्यपुण्योदयनियति बॅम्पॉन्दु । नत्युन्नत - प्रतापाभिरामुनकु
गरदीप्तिनिजखड्ग गंगाप्रवाह । परधरणीपाल फालाक्षरमुल
गलपूर्वगर्वपंकमु लॉप्पगडुगु । नलवुमै नसमानुडगु सत्यनिधिकि
शरणार्थि राजन्यषट्पदाधार । करपद्मुनकु गोनकाटभूपतिकि,

पारिजात एवं सारमानस (तत्त्ववेत्ता) पराशर-पुत्र (वेदव्यास जी) का ध्यान कर, उनके पुत्र शुकदेव की बड़ी भक्ति से स्तुति कर (ने के बाद), किस कथा के कहने से सभी सज्जन मेरा कीर्तिगान करेंगे, किस कथा के कहने से इहलोक और परलोक दोनों ही प्रकट रूप से, प्रीतियुक्त रूप से, सफल होंगे, किस कथा के कहने से इच्छित अर्थ (कामनाएँ) सिद्ध होंगे और साथ ही साथ पुण्य भी प्राप्त होगा—ऐसे विचार मेरे अन्तरंग में उठ रहे थे और मैं किसी कृति (ग्रन्थ) की रचना करना चाह रहा था, उस समय—।। ४० ।।

ग्रन्थ रचना का कारण

—श्री (शोभा) से (संयुक्त होने से) रमणीय, तथा पंडितगण जिस गोनवंश का, सानन्द वर्णन करते हैं, उस गोनवंश में सदाचार के पुण्य के फलस्वरूप सूर्य के समान प्रतिभासित होकर, कलिकाल के दोषरूपी अन्धकार को दूर कर, श्रेष्ठ धर्मपथ के महत्त्व को जानकर, शत्रुराजा-रूपी नक्षत्र-पंक्तियों को तेजोहीन कर, नित्य पुण्योदय की नियति को विस्तृत करने वाले, अत्युन्नत प्रताप से अभिराम तथा कर में दीप्तिमान निज खड्ग के गंगाप्रवाह से अन्य राजाओं के फालभाग में लिखित पूर्व-गर्व-पंक को धो डालने वाले, दृढ़ एवं अद्वितीय बलशाली, सत्यनिष्ठा वाले, शरण में आने वाले राजा-रूपी भ्रमरों के लिए आधारभूत करपद्म वाले तथा नित्य नय, विनय तथा दया का आगार

नय नयोदय दयायत नित्यमतिकि । ब्रियतनूजन्मुडै पृथिवि बॅम्पॉन्दु
रुद्र प्रतापुंडु रुद्रनिर्मलुडु । रुद्रात्मुडगु गोन रुद्र नरेंद्रु
पौत्रु, डभंगु, डप्रतिम विक्रमुडु । गोत्रधीरुडु, कुलगोत्रवर्धनुडु ५०
दिविजेन्द्रविभवुंडु, धीरवर्तनुडु । भुवनविख्यातुंडु, बुद्धभूपालु
ननुजन्मु, डक्षीणदाक्षिण्यधनुडु । धनधान्यधनदुंडु, धर्मधर्मजुडु
अतिपुण्य सौजन्यु, डरिभीमजन्यु । डतिशौर्यशरजन्मु, डाजन्मशुभुडु
कामिनीकामु, डखंडविक्रमुडु । रामत्रयोदार रणविशारदुडु
चन्दनमन्दार चन्द्रिकाहार । कन्दळत्कुन्देंदु घनकीर्तिधनुडु
परगु गोनान्वयपारिजातमुन । बरिपक्वफलरीति बरगिनवाडु
पॉलुचु गोनान्वयपूर्वाद्रियंदु । वॅलयु भानुडु वोले विलसिल्लुवाडु,
दॉरयु गोनान्वयदुग्धांबुराशि । बरिपूर्णचन्द्रुडै भासिल्लुवाडु
निक्कि यंतंतकु निर्मलंबगुचु । दिक्कुल दन पेर्मि दीपिंचुवाडु
दानधर्म - क्रियातात्पर्यकेळि । दानयै विनतुल दनरारुवाडु ६०
मगटिमि नसमानमहिम दीपिंप । बगतुऱ नवलील भंजिचुवाडु
बलितोग्रराजन्य बलवज्रपाणि । ललिनॉप्पु वासवु ललिबोलुवाडु

सदृश मति वाले, गोन (वंशज) काटभूपति के प्रिय और पृथ्वीवल्लभ-सुवन (महाराज) गोन रुद्रनरेन्द्र रुद्रप्रताप, रुद्रनिर्मल, रुद्रात्म, अभंग, अप्रतिभ विक्रमवाले, गोत्रधीर (पर्वतसमान धैर्यशाली) [आदि उपाधियों से विभूषित थे।] उनके पौत्र तथा बुद्धभूपाल के पुत्र [महाराज विट्ठलनरेश थे ।] ।।५०।। —कुल और गोत्र के संवर्द्धक, देवेन्द्र के समान वैभव वाले, धीर, भुवनविख्यात, अक्षीण-दाक्षिण्य-धनी (अक्षीण कृपा के धनी), धन-धान्य में कुबेर, धर्म (-निर्वाह) में धर्मराज (युधिष्ठिर), अतिपुण्य-सौजन्य-शीलवान, शत्रुओं के लिए अति भयंकर, शौर्य के अतिशय में कुमार कार्त्तिकेय, जन्म से शुभ (कल्याण) करने वाले, कामिनियों के लिए कामदेव, अखंड विक्रमी, परशुराम, राम और बलराम के समान रण-विशारद, चन्दन, मन्दार, चन्द्रिका, हार, कुन्द, इन्दु सम उज्ज्वल धनकीर्ति के धनी, गोन-वंश-रूपी पारिजात के परिपक्व फल स्वरूप शोभित, शोभायुक्त गोनवंश-रूपी पूर्वाद्रि पर भानु-समान प्रकाशित, गोनवंश-रूपी क्षीरसागर के लिए परिपूर्ण चन्द्र के समान प्रतिभासित, अत्युच्च एवं क्रमशः निर्मल बननेवाली अपनी कीर्ति को दसों दिशाओं में व्याप्त करने वाले, अपने दान-धर्म आदि क्रियाओं की प्रचुरता के कारण सबकी प्रशंसाएँ प्राप्त करने वाले, ।। ६० ।। —पौरुष में असमान दीप्ति से और सरलता से शत्रुओं का नाश करने वाले, बली एवं उग्र राजाओं के लिए वज्रपाणि (इन्द्र) के समान दीखने वाले,

प्रत्यक्ष नृपवनपावकोज्ज्वलुडु । सत्यंबुचेतनु सरिदगुवाडु
बलवदुग्रारति बलसमुदमुल । गलचुचो मंथाद्रिगति बेर्चुवाडु
विमलोग्रराजन्य विपुलान्धकार । कमलाप्तबिंब खड्ग प्रभाविभव
विलसितामरवधू विमलास्यकमल। मुल वीरमधुकरंबुल गूर्चुवाडु
अरिनृपप्राणानिलाहारभुजग । वरभुजस्थापितावनि गलवाडु
कुरुकेरळावन्ति कुन्तल द्रविळ । मरुमत्स्यककरूश मगध पुळिंद
सरस सुपांड्य कोसल बर्बरमुल । नरनाथसभल वर्णनकॅक्कुवाडु
आतत सामभेदादुल नॉप्पु । नीतिक्रमंबुल नॅगडॅडुवडु ७०
रमणमै नादिमराजन्यरीति । नमितवैभवमुल नमरिनवाडु
विनयनयोपाय विजयसुस्थिरुडु । घनकीर्ति विट्ठल क्ष्मापालवरुडु
राजसर्वज्ञुंडु राजसिंहुंडु । राजशिरोमणि, राजपूजितुडु
सकल जगद्धित चातुर्यधुर्यु । डॉकनडु कॉलुवुन नुन्नतुंडगुचु
बहुपुराणज्ञुलु बहुशास्त्रविदुलु । बहुकाव्यनाटक प्रौढमानसुलु
हितुलु मन्त्रुलु पुरोहितुलु नाश्रितुलु। सुतुलु राजुलु बहुश्रुतुलनु गॉल्व

उत्साह से युक्त, सौन्दर्य में देवेन्द्र के समान विराजमान, प्रत्यक्ष नृपवन के लिए पावक के समान उज्ज्वल, सत्यनिष्ठ, बलशाली एवं उग्र शत्रुसेना-रूपी समुद्रों को मथने में मंदर पर्वत का रूप धारण करने वाले, विमल उग्र राजाओं के विपुल (गर्वरूपी) अन्धकार के लिए कमलाप्त (सूर्य) बिम्ब के समान, अपने खड्ग की प्रभा से प्राप्त शोभायमान देवाङ्गनाओं के विमल मुखकमलों को (अपने हाथ रूपी) वीर मधुकरों से अलंकृत करने वाले, शत्रुओं के प्राण-रूपी अनिल का सेवन करने वाले श्रेष्ठ भुजरूपी भुजंगों (सर्परूपी भुजाओं) पर राज्य-भार वहन करने वाले, कुरु, केरल, अवन्ती, कुन्तल, द्रविड़, मरु, मत्स्यक, करूश, मगध, पुलिन्द, सरस, सुपाड्य, कोसल, बर्बर (देशों) की राजसभाओं में प्रशंसाएँ प्राप्त करने वाले, साम (दाम) भेद आदि से युक्त अत्यधिक नीतिक्रम से सुशोभित, ॥ ७० ॥

—प्राचीन वैभववान राजाओं के समान अमित वैभवों से युक्त, नय, विनय आदि उपायों से अपनी विजय को सुस्थिर करने वाले, धनकीर्तियुक्त (यही महाराज) विट्ठल नरेश, (जो) राजाओं में सर्वज्ञ, राजसिंह, राजशिरोमणि, राजपूजित एवं सकल-जगद्धित चातुर्यधुरीण (हैं), एक समय (अपनी) राजसभा में विराजमान थे। (उस समय) बहुपुराणों को जानने वाले, बहुशास्त्रविद्, बहुकाव्य-नाटकों (के अध्ययन) से प्रौढ मन वाले, हितू, मंत्री, पुरोहित, आश्रित, पुत्र, (सामंत) राजा और बहुश्रुत (व्यक्ति)

दीपिंचि भूलोक देवेंद्रु पगिदि । नेपारियुन्नचो निंपु सॉम्पॉन्द
रसिकुलु भारतरामायणादि । रसगोष्ठि जॅल्लिप रसिकशेखरुड्
रामकथासुधारस रक्तुडगुचु । नामहासभलोन नंदर जूचि
रमणमै दॅनुगुन रामायणंबु ।क्रममॉप्पजॅप्पॅडिघनकाव्यशक्ति८०
गलकवुलॅव्वारु गलरुविननुचु । तलपोय विट्ठल धरणिपालुनुकु
नुन्नतमूर्तिकि नुर्वियशोनिधिकि ।विन्नविंचिरि वेड्क विबुधुलुगडिगि
नी तनूजन्मुंडु निपुणमानसुडु । धूतकल्मषुडु बंधुरनीतियुतुड्
सर्वज्ञुडनघुंडु चतुरवर्तनुडु । सर्वपुराण विचार तत्परुड्
कमनीय बहुकळाविचक्षणुडु । सुमनीषि पोषणोत्सुकोन्नतुड्
कविसार्वभौमुंडु कविकल्पतरुवु । कविलोकभोजुंडु कविपुरंदरुड्
प्रत्यर्थिराजन्य बलवज्रपाणि । प्रत्यर्थिनृपदावपावकोज्ज्वलुड्
भीकरनिजखड्ग बिंबित स्वर्ग । लोकानुरक्त त्रिलोक दुर्दमुड्
वरसाधुजलजात वनजातहितुड् । पुरुषचिन्तामणि बुद्धयाह्वयुड्
नीकतिभक्तुंडु निखिलशब्दार्थ । पाकज्ञुडत्यन्त पांडित्य धनुड् ९०

उनकी सेवा में उपस्थित थे। (राजा) भूलोक के देवेन्द्र के समान बड़े उत्साह से दीप्त थे। सभा मनोरम बनी हुई थी। रसिक जनों द्वारा भारत, रामायण आदि की रसगोष्ठी में रस को जान सकने वाले वह रसिकशेखर (राजा) रामकथा-सुधा के प्रति अनुरक्त होकर, उस महासभा में उपस्थित सभी को देखकर यों बोले, 'सुन्दर ढंग से तॅनुगु (तॅलुगु) में रामायण (की कथा) को क्रम से कहने की उत्तम कविता-शक्ति— ॥ ८० ॥

—रखने वाला कवि इस संसार में कौन है ?' तब ऐसा सोचने वाले उस उन्नतमूर्ति वाले तथा महायशोनिधि विट्ठल नरेश से विबुधों ने (इस प्रकार) सोत्साह विनति की—'(हे महाराज !) आपके पुत्र, निपुण मन वाले, पापरहित, अति नीतियुक्त, सर्वज्ञ, अनघ, चतुरवर्तन (व्यवहार) से युक्त (शिष्टाचार-सम्पन्न), सर्वपुराणों के ज्ञाता, अनेक सुन्दर कलाओं तथा आगमों के मर्मज्ञ, सुमनीषियों का पोषण करने में उत्सुक तथा उसी में उन्नत सुख का अनुभव करने वाले, कवि-सार्वभौम, कवि-कल्पतरु, कवि-कुलभोज, कवीन्द्र, शत्रु राजाओं के लिए वज्रपाणि, शत्रुराजारूपी वन के लिए प्रचंड पावक, (अपने) भयंकर खड्ग में प्रतिबिम्बित स्वर्ग वाले (जिनका खड्ग शत्रुओं को स्वर्ग का मार्ग बताता है), लोकप्रिय, त्रिलोकदुर्दम, श्रेष्ठ साधुजन-रूपी कमल (समूह) के लिए सूर्यसम, पुरुषश्रेष्ठ, आपके परमभक्त, निखिल शब्द, अर्थ, गुण आदि के ज्ञाता, अत्यन्त पंडित, ॥ ९० ॥

मऱियु रामायणमर्म मातंड । येऱुगु नातनि बिल्वु मीकथ सॅप्प
ननिन मज्जनकुडुदात्त वर्तनुडु ।ननु नर्थि बिलिपिंचि ननु गारविंचि
भूमिगवींद्रुलु बुधुलुनु मॅच्च । रामायणंबु पुराणमार्गंबु
तप्पक नापेर दगनन्ध्रभाष । जॅप्पि प्रख्यातंबु सेयिंपु मुर्वि
ननियानतिच्चिन नामृदूक्तुलकु । ननियंबु हर्षिंचि यट्ल काविंप
बनिपूनि यरिगंड भैरवुपेर । घनुपेर मीसरगंडाकुं पेर
ललितसद्गुण गणालंकारुपेर । नलघु निश्चल दयायबुद्धि पेर
नाततकृति पेर लतिपुण्यु पेर । मातंड्रि विट्ठल क्ष्मानाथुपेर
राजुलु बुधुलुनु रसिकुलु सुकवि । राजुलु गोष्टिनि रागिल्लि पॉगड़
बदमुलर्थंबुलु भावमुलगतुलु ।पदशय्यलर्थ-सौभाग्यमुल् यतुलु१००
रसमुलु गुंभनल् प्रास संगतुलु । नसमानरीतुल नन्नियु गलुग
नादिकवीश्वरुडैन वाल्मीकि । यादरंबुन बुण्युलंदरु मॅच्च
चॅप्पिन तेऱगुन श्रीरामचरित । मॉप्प जॅप्पॅद गथाभ्युदयमेट्लनिन१०३

—बुद्ध नरेश ही रामायण के मर्म को जानते हैं। आप (तदर्थ) उन्हीं को बुलावें'। ऐसा कहने पर उदात्त चरित्र वाले मेरे पिता ने मुझे बड़े प्रेम से बुलाकर, सम्मान कर, यह आदेश दिया—'रामायण की कथा को पुराणों के ढंग पर तॅलुगु भाषा में, मेरे नाम पर लिखकर (मुझे समर्पित कर) प्रख्यात करो जिससे संसार के कवि तथा पंडित उसकी प्रशंसा करें'। उनके मृदु वचनों से अत्यन्त हर्षित होकर, उसी प्रकार करने का (उनके आदेश का पालन करने का) निश्चय कर, शत्रुओं के लिए भयंकर मूर्ति वाले, महान्, रोबीले गलमुच्छों से सुशोभित, ललित-सद्-गुणालंकार वाले, महान् और निश्चल दया से युक्त बुद्धि वाले, अविरल पुण्य कर्म करने वाले, पुण्यात्मा मेरे पिता विट्ठल नरेश के नाम पर, श्रीरामचन्द्र के चरित्र को मैं इस ढंग से लिखूँगा कि राजा, पंडित, रसिक, सुकवि श्रेष्ठ, गोष्ठियों में (उस कथा को सुनकर) हर्षित होकर उसकी (उस रचना की) प्रशंसा करेंगे और जिसमें शब्द, अर्थ, भाव, गति, पदशय्या (रीति), अर्थ-गाम्भीर्य, यति, ॥ १०० ॥

—रस, निर्माण, प्रास (प्रत्येक चरण के द्वितीयाक्षर का समान रहना) आदि सभी को अद्वितीय रीति से संयुक्त करूँगा, आदिकवि वाल्मीकि की कृपा से सभी पुण्यात्मा मेरी प्रशंसा करेंगे। कथा का प्रारम्भ इस प्रकार है— ॥ १०३ ॥

कथाप्रारंभु

घनतपस्वाध्यायकमनीय शीलु । मुनिनाथु नारदु मुनिलोक वन्द्यु
ननघतपोनिधियैन वाल्मीकि । गनुगॉनि यॉकनाडु करमर्थिनडिगे
यॅव्वडु श्रीमन्तुडॅव्वडु शान्तु । डॅव्वडु घनपुण्यु डॅव्वडुन्नतुडु ?
यॅव्वडु नीतिज्ञुडॅव्वडु ब्राज्ञु । डॅव्वडु दुर्दमुडॅव्वडुत्तमुडु ?
यॅव्वडु जितकामुडॅव्वडजेयु । डॅव्वडु निरसूयुडॅव्वडाढ्युंडु ?
यॅव्वडु सुव्रतुं डॅव्वडुदारु । डॅव्वडु सुचरित्रु डॅव्वडु समुडु
यॅव्वनिकिन्ककुर्निद्रादि सुरलु ।दव्वुदव्वुलनुंडितलकुचुंडुदुरु? ११०
अट्टिवाडिलबुट्टि यरिगॅनो इप्डु । पुट्टॅनो यिकमीद बुट्टनुन्नाडो ?
यनिन त्रिलोकज्ञुडैन नारदुडु । तनबुद्धिनॅन्तयु तलपोसि चूचि
ईमहि श्रीविष्णुडिपुडॅ जन्मिचे । रामुडै दशरथराजुनकतडु
नियतात्मुडतिशौर्यनिधि कृपाजलधि।जयशालिस्वजनरक्षण विचक्षणुडु
कंबुकंधरुडु चक्कनि मेनिवाडु । बिम्बारुणोष्टुंडु पीनवक्षुंडु
वॅडद कन्नुलवाडु विपुलांसतलुडु । निडुदचेतुलवाडु नियतवर्तनुडु

कथा-प्रारम्भ

—एक दिन महान् तपस्वाध्याय से कमनीय, महान् शील से सम्पन्न, मुनिश्रेष्ठ तथा मुनिलोक-वन्द्य नारद को देखकर, अनघ तपोनिधि वाल्मीकि ने अत्यन्त प्रार्थनापूर्वक पूछा—"(हे मुने ! इस संसार में) कौन श्रीमन्त (श्री से युक्त) है ? कौन शान्त (क्षमाशील) है ? कौन अधिक पुण्यात्मा है ? कौन उन्नत है ? कौन नीतिज्ञ है ? कौन प्राज्ञ है ? कौन दुर्दम है ? कौन उत्तम है ? कौन जितकाम (काम को जीतने वाला) है ? कौन अजेय है ? कौन ईर्ष्या-रहित है ? कौन आढ्य (सम्पन्न) है ? कौन सुव्रती है ? कौन उदार है ? कौन सुचरित्र है ? कौन सम-बुद्धि है ? किसके क्रोध से इन्द्रादि देवता भय से दूर-दूर रहते हैं ? ॥ ११० ॥

ऐसा व्यक्ति (क्या) भूमि पर पैदा होकर गुजर गया है ? क्या अब पैदा हुआ है ? आगे पैदा होने वाला है ?" ऐसा कहने पर त्रिलोकज्ञ नारद ने अपनी बुद्धि से देर तक सोचकर (कहा)—"इस पृथ्वी पर श्रीविष्णु ने अब जन्म लिया है, दशरथराज के (यहाँ) राम बनकर। वे नियतात्मा, अतिशौर्यनिधि, कृपा-जलधि, जयशाली, स्वजनरक्षण में विचक्षण हैं। वे कंबुकंधर, सुन्दर शरीर, बिम्बारुण सम ओठ, पीन (विशाल) वक्ष, विशाल नेत्र, विशाल कंधों से युक्त और आजानुबाहु वाले हैं। वे नियत-वर्तन, वेद-वेदांगों में कोविद, कोदंडवेद

वेदवेदांग कोविदुडु कोदंड । वेदविदुंडु विवेकभूषणुडु
कमलाप्तुतेजंबु कडलि गांभीर्य । ममराद्रि धैर्यंबु नवनिसैरणयु
धनुदुनि त्यागंबु दनयंदु मिगुल । ननुवॉन्दु नित्य कल्याण विग्रहुडु
कौसल्यकानन्दकरुडु श्रीकरुडु । भासुर त्रैलोक्य पावन मूर्ति१२०
रामुडै पुट्टि या राजर्षि वच्चि । रामुनिम्मनि वेड राजु पंपगनु
मौनि वॅन्टनु बोयि मखमुनु गाचि । दानविनटु कूल्चि दैत्युनि द्रुंचि
राति नातिनि जेसि रामुडु वेग । सीतचेगॉनुटकु शिवुविल्लु विऱचि
ख्यातिगा सीतनु कडु बॅन्ड्लियाडि। सीततोडनु गूडि चॅलगि ययोध्य
केतॅञ्चु चोटनु गॅरलुचु । डेतॅञ्चि निलचिन नेपुन गदिपि
वापोव नातनि बलुविल्लु दिगिचि । कोपंबु तो मुनु गॉमरॉप्प दीसि
येपुन नंदऱ यॅद वेड्क मीऱ । नापट्टुननॅ वच्चि यप्पुरि जेरि
यासक्ति यौवराज्याभिषिक्तुनिगा। जेसॅदननि तंड्रि चॅलगि ययोध्य
बट्टंबु गट्ट भूपति समकट्ट । मट्टुमीऱिन यट्टि मंथर यपुडु
नॅट्टिन गैकतो नॅऱिनाट जेप्प । गट्टडि गैक संगरमुन दॉल्लि१३०

(धनुर्विद्या) के विद्वान्, विवेक-भूषण हैं। सूर्य का तेज, समुद्र का गाम्भीर्य, अमराद्रि (सुमेरु) का धैर्य, अवनि (भूमि) की क्षमा, धनद (कुबेर) का त्याग—इन गुणों को अपने में समाए हुए नित्य-कल्याण (प्रद) विग्रह (मूर्ति) वाले हैं। वह कौसल्या को आनन्द देने वाले, श्रीकर, त्रिलोक को पावन करने वाली दीप्तिमान मूर्ति वाले हैं॥ १२० ॥

—"(ऐसे भगवान्) राम के रूप में पैदा हुए, उस राजर्षि (विश्वामित्र) के आकर राम को माँगने पर, राजा के उनको भेजने पर (वे ही राम) मुनि के साथ जाकर, यज्ञ की रक्षा कर, दानवी (ताड़का) को वहां (मार) गिराकर, दैत्य (सुबाहू) का संहार कर, पत्थर को नारी बनाकर, सोत्साह सीता जी को ग्रहण करने के लिए शिवधनु तोड़कर, सीता जी से विवाह कर ख्यातिवान्, सीता जी के साथ सोत्साह अयोध्या लौटते समय, गर्वीले विप्र (परशुराम) के आ खड़े होने पर (रास्ता रोकने पर) उत्साह से सामना कर, उनके विशाल धनुष को उतरवा कर, क्रोध से उनके अहंकार को क्षीण कर, सबके हृदयों में आनन्द भरते हुए, उसी समय आकर, नगर (अयोध्या) पहुँचे। 'आसक्ति (इच्छा) से युवराज बनाऊँगा' ऐसा कहकर पिता जब सोत्साह (राम को) अयोध्या का राज देने को उद्यत हुए तब मर्यादा का उल्लंघन करने वाली मन्थरा ने हृदय को प्रभावित करने वाले ढंग से कैकेयी के कान भरे। तब क्रूर कैकेयी ने युद्ध में पहले से ही—॥ १३० ॥

रॅण्डु वरंबुलर्थिंचिनदौंट । जंडिचि काननस्थलिकि राघवुनि
बनिचिन जनकुनि प्रतिनकै बूनि । जनकजालक्ष्मण सहितुडै वॅडलि
तेवनंबुननु नेंतेवनंबुननु । बावनमुनिचर्य बरगु संयमुल
गरुणमै गापाडि खरदूषणादि । शिरमुलु शरमुल जॅण्डु चॅण्डाडि
ऋश्यमूकंबुन निनुजु जेपट्टि । वश्यतनॉक कोल वालि दूलिंचि
सीतकै चॅलपट्टि सेतुवुगट्टि । पातकि दशकंठु पदतलल्गॉट्टि
सीततो गूडि याश्रितलोकपालि । जातंबु वनचरजातंबु गॉलुव
निन्द्रादि विनुतुडै येतॅञ्चि राम । चन्द्रुंडु निजपूज्य साम्राज्यलक्ष्मि
बालिंचु चुन्नाडु प्रजलकु वेड्क । गीलिचुचुनु गृतकृत्युडै यनुचु
नारामु चरित माद्यान्तंबु जॅप्पि ।नारदमुनिपोयँ नलिनजुपुरिकि १४०
मुनिपति वाल्मीकि मुदमॉप्यनंत । दनशिष्युडगु भारद्वाजुंड दानु
ब्रकटिप सज्जनभावंबु पोलॅ । नकलुष जीवनंबै करंबलरु
तमसानदिकि पोयि तन्नदीवारि । दमयनुष्ठानमुल्दग जेयुचुंडि
यायेटि दरि ग्रौंचयमळंबु प्रेम । गायजुकेळिमै गवयुचो नॉकटि

—(दशरथ से) दो वर प्राप्त कर चुकने के कारण, क्रुद्ध होकर. राघव को कानन भेज दिया; पिता की प्रतिज्ञा (पूर्ति) के लिए (वे) जनक-जा (सीता) और लक्ष्मण के साथ (वन की ओर) निकल पड़े। (उन्होंने) पवित्र मुनिचर्या (तपस्या) में लगे हुए संयमी मुनियों की सकरुण हो रक्षा की, खर-दूषण आदि के सिरों को शरों से काट डाला। ऋश्यमूक (पर्वत) पर सूर्यपुत्र (सुग्रीव) का हाथ पकड़ कर (मित्रता कर), आसानी से एक बाण से वालि का संहार कर, सीता (को पुनः प्राप्त करने) के लिए दृढ़-होकर सेतु बांधा, पापी दशकण्ठ (रावण) के दसों सिर काट डाले। उसके बाद सीता के साथ, आश्रित (जनों) के कल्पवृक्ष हो, वनचर-समूह की सेवाएँ लेते हुए, इन्द्रादि से स्तुतियाँ प्राप्त करते हुए (अयोध्या) आकर श्री रामचन्द्र, प्रजा को सोत्साह आनन्द पहुँचाते हुए तथा कृतकृत्य होते हुए निज-पूज्य-साम्राज्य-लक्ष्मी का पालन कर रहे हैं।" (ऐसा) कहकर उन राम के चरित्र (कहानी) को आदि से अन्त तक कहकर, नारदमुनि नलिनजपुरी (ब्रह्मलोक) को गए ॥ १४० ॥

मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकि हर्षित हो कर, अपने शिष्य भरद्वाज सहित, स्वयं सज्जन भाव की प्रकटमूर्ति, अकलुष जीवनयुक्त अति मनोरम तमसा नदी (के पास) जाकर, उस नदी के जल से अपने अनुष्ठान (स्नान, सन्ध्या-वन्दन आदि) का पालन करते रहे। उस नदी के पास क्रौंच (पक्षियों का) जोड़ा सप्रेम मन्मथकेलि में रत था।

नॉकबोय संपिन नुन्नया क्रौंचि। प्रकटशोकंबुन बनवुट जूचि
दगवुनु धर्मंबु तलपोसि मौनि। पगदायनब्बोय पै नल्कवॉडमि
योरि निषादुंड ! योरि पापात्म। योरि नीकॅग्गेमि योनर्रिंचेरोरि!
कार्मिंचि क्रौंचमुल् गवयुचो नॉकटि।नेमिटिकै चंपितिभ्भंगि गडगि
ईपातकमुन ननेकदुःखमुलु। प्रापिंचि तिरुगुमु बहुवत्सरंबु
लनिबोय शर्पयिंचि यंत वाल्मीकि।तनशिष्युडग भारद्वाजुनि जूचि १५०
पलिकॅनु श्लोकंबुपद्धतिगानु। पलिकिन बल्कुनु पलुमारु चूड़
छन्दोनिबद्धमै समवर्णपंक्ति। बोंदि नालुगु पदंबुल हृद्यमगुनु
निंदि चाल विस्मय मीशाप वाक्य। पदमुलु दमयंत पद्यमै निलिचे
ननिन भारद्वाजुडादिगा शिष्यु। लनुरक्ति बठियिंचिरापद्यमंत
ननघुडा वाल्मीकि याश्रमंबुनकु। जनियुन्नचो ब्रह्म चनुदॅञ्चुटयुनु
नॅदुरेगि पदमुलकेरगि तॉड्तॅच्चि। कुदुरुगा गुशपीठि कूर्चुंड जेसि
करमर्थि बूजिंचि करमुलु मॉगिचि। परग शापाक्षरपद्यंबु जदुव
विनि ब्रह्म नगि पद्यविषयमै वाणि। यनघ नीमुखमुन नवर्तरिंचिनदि

(तो उनमें से) एक को (किसी) एक निषाद के मार डालने पर, (जीवित) बची उस क्रौंची को प्रकट शोक से विलाप करते देख, न्याय और धर्म का विचार कर मुनि ने उस निषाद पर क्रुद्ध हो कर कहा—'अरे! निषाद! रे पापात्मा! अरे! (उन्होंने) तुम्हारा क्या बिगाड़ा है! कामासक्ति से क्रौंचों के रति-क्रीड़ा करते समय, इस प्रकार उद्यत होकर एक को क्यों मार डाला ? इस पाप के कारण अनेक दुःख प्राप्त करते हुए अनेक वर्षों तक भटकते रहो।' इस प्रकार निषाद को शाप देकर, वाल्मीकि अपने शिष्य भरद्वाज को देख, ॥ १५० ॥

—श्लोक के ढंग से (छन्दोबद्ध रूप में) यों बोले—'(मेरे द्वारा) कहे गए वचनों को बार-बार देखने पर (विचार करने पर) विदित होता है कि छन्दोनिबद्धता और समवर्ण पंक्तित्व को प्राप्त कर चारों पंक्तियाँ हृद्य (बन पड़े) हैं। यह अत्यन्त आश्चर्यप्रद है। शापवाक्य के ये चरण अपने आप (एक) पद्य वन (कर रह) गए'। (ऐसा) कहने पर भरद्वाज आदि शिष्यों ने अनुरक्ति से उस पद्य को पढ़ा, तब अनघ वाल्मीकि आश्रम में चले गए। (एक दिन वहाँ) ब्रह्माजी का आगमन हुआ। (वाल्मीकि ने) आगे वढ़कर, चरणवन्दना की, साथ लिवा लाकर अच्छे सत्कार से कुशासन पर बिठाया, बड़ी भक्ति से पूजा की, (फिर-) हाथ जोड़, शापाक्षरयुक्त पद्य को पढ़-सुनाया; इस पर ब्रह्माजी हँस पड़े (मुस्कुराए) (और) कहा, 'हे अनघ ! पद्य के रूप में वाणी आपके मुख से

श्रीरामचरित मशेषंबु नीकु । गोरि नारदुडु संकोचिंचि चॅप्पॅ
नदि विस्तरिंचि नीवखिलंबु चॅप्पु।मदिसर्वमुनुदोचुननिचॅप्पि पोये १६०
नी रीति गृप वरंबिच्चि मन्निंचि । सारसगर्भु ंडुस निन पिम्मटनु
मरि निर्मल ध्यानमति बूनि मौनि । तङिगोनि सकलंबु दलपोसि चूचि
रघुचरित्रमु दशरथु चरित्रंबु । रघुरामु जन्मंबु रामु वर्तनमु
दाटकवधयु नुद्दंड राक्षसुल । याटोपहरणंबु यज्ञरक्षणमु
दनरु गंगामहत्त्वंबु गौतममुनि । वनितनु शापंबु वलन बापुटयु
धनुवु द्रुंचुटयु सीताविवाहंबु । जनुचोट जमदग्निजातु नाग्रहमु
रामाभिषेक संरंभंबु दुष्ट । कामिनि कैकेयि कष्टभाषणमु
नभिषेक विघ्नंबु नडविकि राम । विभुडु वोवुटयु भूविभुनि शोकंबु
दशरथमरणंबु दशरथरामु । गुशलसंभाषियै गुहुडु गांचुटयु
नुरुपुण्युलट गंगनुत्तरिंचुटयु।वरतपोनिधि भरद्वाजु गांचुटयु१७०
नरिगि या चित्रकूटाद्रि नॅक्कुटयु । भरतुंडु रघुरामु पज्ज जेरुटयु
नन्नचे बादुक लर्थिमै बडसि । मन्ननलिपार मगुडि पोवुटयु
दंडकागमनंबु तगिलि विराधु । जंडविक्रमु नंदु संहरिंचुटयु

अवतरित हुई है। श्रीराम का चरित्र अशेष (अपार) है। उसे नारद ने आपको प्रिय मानकर संक्षेप में बता दिया है। उसका विस्तार कर, आप सब कुछ (पूर्ण रूप से) कह सुनाइए। (आपको) मन में सब कुछ—(अपने आप) सूझ जाएगा।' ऐसा कहकर (ब्रह्मा) चले गए ॥ १६० ॥

—इस प्रकार वर देकर, समादृत कर, सारसगर्भ (ब्रह्मा) के जाने के बाद, फिर निर्मल ध्यान से युक्त मति वाले मुनि ने सब कुछ सोच-विचार कर देखा। रघु-चरित्र, दशरथ का चरित्र, रघुराम का जन्म, राम का आचरण, ताड़का का वध, उद्दण्ड राक्षसों की कुचेष्टाओं का अपहरण (ध्वंस), यज्ञ-रक्षा, विलसित गंगा का महत्त्व, गौतम की स्त्री को शाप से मुक्त करना, धनुष को तोड़ना, सीता से विवाह, लौटते समय जमदग्नि के पुत्र का क्रोध, राम के राजतिलक की तैयारी, दुष्ट स्त्री कैकेयी के कटु वचन, राजतिलक में विघ्न, प्रभु राम का वनगमन, राजा (दशरथ) का शोक, दशरथ का मरण, दाशरथी राम की निषादराज से भेंट एवं मधुरालाप, महान् पुण्यात्माओं का (वहाँ) गंगा पार करना, श्रेष्ठ तपोनिधि भरद्वाज का दर्शन, ॥ १७० ॥

—जाकर उस चित्रकूट पर्वत पर चढ़ना, भरत का रघुराम के पास पहुँचना, अग्रज से प्रार्थना कर पादुकाएँ प्राप्त कर, समादृत हो (भरत का) वापस जाना, दण्डक वन में जाना, चण्डविक्रम विराध का वहाँ संहार करना,

बरम पुण्युनि शरभंगु गांचुटयु । बरुवडि मुनुलकु ब्रतिनलिच्चुटयु
जनि यय्यगस्त्युनाश्रममु चोच्चुटयु । मुनिचेत दिव्यास्त्रमुलु वडयुटयु,
मुनि चॅप्पगा वारु मुदमुन वेग । चनि पर्णशाललो सरग नुंडुटयु
मोहिंचि राक्षसि मॉनसि वच्चुटयु । नूहिंचि दानितो नॉगि बल्कुटयुनु
स्रुक्कर रामानुजुंडु शूर्पणख । मुक्कुनु जॅवुलनु म्रोडु सेयुटयु
नदिवोयि खरदूषणादि रक्कसुल । कदि सॅप्प वारंत नलिगि वच्चुटयु
नुरवडि रघुरामुडॉक्कडे कडगि । खरदूषणादुल खंडिचुटयुनु १८०
नट रावणुनि बुद्धि नलुकवुट्टुटयु । गुटिल मारीचुंडु क्रॉव्वि चच्चुटयु
नसुराधिपति सीतनपहरिंचुटयु । विसुवक रामुडुविलपिंचुटयुनु
ननि जटायुवु चावु, नवल गबंधु । गनुटयु, मरि पंपकडकु बोवुटयु
गरमर्थि ऋष्यमूकमुन सुग्रीवु । डरुदॅञ्चि कनुटयु, नतनि सख्यंबु
वालिसुग्रीवुल वैरंबु तेऱगु । जालंग रामुंडु सप्ततालमुल
नेलगूलगनॅचि नॅम्म मॅप्पिंचि । वालि नॉक्कम्मुन वधियिंचुटयुनु
दाराविलापंबु दशरथसूनु । डा रविसूनु राज्यमुनु निल्पुटयु,
मानवपति यंत माल्यवंतमुन । वानाकालंबॅल्ल वसियिंचुटयुनु,
गाकुत्स्थु कोपंबु, गपिसमागममु । नेकतंबुन मुद्रिकिच्चिपुच्चुटयु,

परम-पुण्य से युक्त शरभंग के दर्शन, मुनियों को वचन देना, अगस्त्याश्रम में प्रवेश करना, मुनि से दिव्यास्त्र प्राप्त करना, मुनि के कहने पर उनका आनन्द से शीघ्र जाकर पर्णशाला में सुख से रहना, (राम पर) मोहित राक्षसी (शूर्पणखा) का आगे आना, उसके राक्षसी-रूप की कल्पना करके उसके साथ बातें करना, चिन्तित हो रामानुज का शूर्पणखा की नाक और कानों को काट डालना, उसका जाकर खरदूषणादि राक्षसों को वह हाल बताना और उनका तब क्रुद्ध होना, आगे बढ़ रघुराम का अकेले ही उद्यत होकर खरदूषणादिकों का नाश कर देना, ॥ १८० ॥

—वहाँ (लंका में) रावण की बुद्धि का कुपित हो जाना, कुटिल बुद्धि वाले मारीच का मत्त होकर मरना, असुराधिपति (रावण) द्वारा सीता का अप-हरण, अविराम राम का विलाप, युद्ध में जटायु की मृत्यु, उसके बाद कबन्ध से साक्षात्, फिर पम्पा (नदी) के पास जाना, बड़ी अभिलाषा से ऋश्यमूक से सुग्रीव का आकर (उनके) दर्शन करना, उससे मैत्री, वालि और सुग्रीव के बैर के कारण को जानकर राम का सप्तताल (वृक्षों) को जमीन पर गिरा देकर उस (सुग्रीव) को आश्वस्त करना, बालि का एक बाण से वध करना, तारा का विलाप, दशरथ के पुत्र का उस रविपुत्र (सुग्रीव) को राजगद्दी पर बिठाना, नृपति (राजा राम) का तब माल्यवन्त

नलयक कपुलु सीतान्वेषणंबु । सलुपुटयुनु, बिलसंदर्शनंबु, १९०
ना क्षणंबुन महेन्द्राद्रि नॅक्कुटयु । बक्षींद्रुडैन संपातिदर्शनमु,
वनधिलंघनमुनु, वनधिमध्यमुन । जनुचोट मैनकसंदर्शनंबु,
मदमेत्ति सिंहिक मारुतसूनु । गदिसि चच्चुटयु, लंकाप्रवेशंबु,
लंकनु नॉप्पिचि ललनचे नचट । लंकत्रोवयुगनि लंक जॉच्चुटयु
नंत:पुरंबुन करिगि चूचुटयु । नंत नशोकवनावलोकनमु
देऱगॉप्प नंदु वैदेहि गांचुटयु । नॅरुककु नानवालिच्चि तेर्चुटयु
भूनाथुकुशलमिपुग देल्पुटयुनु ।मानिनीमणिशिरोमणि निच्चुटयुनु
बॅनचि या वनमॅल्ल बॅरिकि वैचुटयु। हनुमंतुडत्तऱि नक्षु जंपुटयु
बवनुजुडट बट्टुवडि पोवुटयुनु । गविसि लंकापुरि गलय गाल्चुटयु
मानितात्मुंडब्धि मरल दाटुटयु । मानुग गपुलतो मरल गूडुटयु२००
मधुवन हरणंबु मणि प्रीति नॉसग । नधिपति मारुति नग्गळिंचुटयु
निनुकुलाधिपुडु दंडॅत्तिपोवुटयु । वनधितीरंबुन वच्चि निल्चुटयु
वनराशि त्रोव इव्वक क्रॉव्वुटयुनु । गॉनकॉनि रामुंडु गोपिंचुटयुनु

(पर्वत) में समस्त वर्षाकाल बिताना, काकुत्स्थ (राम) का कोप, कपि (हनुमान जी) से समागम (भेंट), एकान्त में मुद्रिका देकर भेजना, अथक हो कपियों का सीतान्वेषण करना, गुफ़ा के दर्शन, ॥ १९० ॥

—उसी क्षण महेन्द्रगिरि पर चढ़ना, पक्षीन्द्र सम्पाती के दर्शन, वनधि (समुद्र) को पार करना, वनधि के मध्य जाते समय मैनाक के दर्शन, उन्मत्त सिंहिका की मारुतपुत्र (हनुमान) से मुठभेड़ और प्राण-विसर्जन, लंका-प्रवेश, लंका (नामक) राक्षसी को सताकर, उस स्त्री (राक्षसी) के द्वारा लंका का मार्ग जानकर, लंका में प्रवेश करना, अन्त:पुर में जाकर देखना, तब अशोक वन को देखना, वहाँ सीता जी के दर्शन, विश्वास (दिलाने) के लिए निशानी में अंगूठी देकर सान्त्वना देना, भूनाथ (राम) के कुशल (समाचार) को सुन्दर ढंग से बताना, मानिनीमणि (सीता) का (अपनी) शिरोमणि देना, घेरकर उस वन को उखाड़ डालना, हनुमान जी का उस समय अक्ष (रावण के पुत्र) को-मार डालना, हनुमान का वहाँ पकड़ा जाना, व्याप्त हो (हनुमान का) लंकापुरी को सम्पूर्ण रूप से जला देना, मान्यवर (हनुमान) का समुद्र को फिर से पार करना, कपियों के साथ भेंटना, ॥ २०० ॥

—मधुवन का हरण, प्रेम से मणि देने पर अधिपति (राम) का मारुति को गले लगाना, सूर्यकुलाधिप (राम) का (शत्रु पर) आक्रमण के लिए निकल पड़ना, समुद्र के किनारे आकर खड़े हो जाना, समुद्र का मार्ग न देकर गर्व दिखाना, (यह) सोच राम का क्रुद्ध होना, तब विभीषण का

नंत विभीषणुडधिपु गांचुटयु। जिंतिचुटयु मऱि सेतबंधनमु
जडधि दाट्टुटयुनु, जनि लंक मीद। विडिसि पेर्चुटयु, दुर्वीरंबु मेऱसि
करमुग्रुलगु कुंभकर्णादि वीर। वरुल द्रुंचुटयु रावणुनि जंपुटयु
ना विभीषणुनि लंकाधिनायकुनि। गाविंचि पट्टंबु करुण गट्टुटयु
ननुपमशुद्धि ब्रह्ममादुलु मॅच्च। जनकज रघुरामचंद्रु बॅन्दुटयु
नॅलमि बुष्पकमॅक्कि यॅल्लरु जनुचु। जॅलगि यंबोनिधि सेतुवु मीद
दॅलिसि श्रीकंठु ब्रतिष्ठ सेयुटयु। वॅलय नयोध्यकु वेग वच्चुटयु२१०
भरतुगांचुटयु, बट्टाभिषेक। मरुदार रघुरामु डवधरिंचुटयु
गपिसैन्यपतुल नर्कज विभीषणुल। विपुल संपदलिच्चि वीड्कॉल्पुटयु
बरिकिंचि ब्रजलकापदलॉदंकुंड। गरुण ब्रोचुटयनु कथलॅल्ल दॅलिपि
वॅलय निर्वदिनाल्गुवेल श्लोकमुलु। गलिगि येनूरु सर्गल विस्तरिल्लि
कांडमुलाऱिट गरमोप्प मिगिलि। युंड रामायणमोलि गाविंचि
यॉनर दक्किन कथलुत्तरकांड। मुन जॅप्पि वाल्मीकि मुनिनाथुडंत
नी कथ पठियिंप नॅव्वरु नेर्तु। री कथ जगमुल नॅब्भंगि वॅलयु

अधिप (राम) के दर्शन करना, (राम का उसके दुःख से) दुखी होना, फिर सेतु बांधना, जलधि को पार करना, जाकर लंका पर डेरा डालना, पराक्रम से प्रकाशित अति उग्र हो कर कुम्भकर्ण आदि वीर-श्रेष्ठों का संहार करना, रावण का वध, उस विभीषण को लंका का अधिनायक बनाकर, करुणा के साथ उसका राजतिलक करना, अनुपम शुद्धि (अग्नि-प्रवेश) से ब्रह्मादियों द्वारा प्रशंसित हो सीता जी का रघुरामचन्द्र को प्राप्त करना, शोभित पुष्पक विमान पर चढ़कर सबके जाते समय, समुद्र पर बने सेतु के पास, श्रद्धापूर्वक (ब्रह्महत्यादोष के निवारण के लिए) श्रीकंठ (शिवजी) की प्रतिष्ठा कर, सानन्द अयोध्या को शीघ्र गति से लौटना, ॥ २१० ॥

—भरत-मिलन, अद्वितीय ढंग से रघुराम का पट्टाभिषिक्त होना, कपिसेनापतियों, अर्कज (सुग्रीव), विभीषण (आदि) को विपुल सम्पदाएँ देकर बिदा करना, परिशीलन करते हुए प्रजा को (किसी प्रकार का) कष्ट न हो—इस प्रकार करुणा से उनका पालन करना आदि सभी कथाओं को जानकर, शोभायुक्त (रूप से) चौबीस हज़ार श्लोक-युक्त, पाँच सौ सर्गों में व्याप्त, छः कांडों में अति सौन्दर्य-विधान-युक्त रामायण (इतिहास) को रचकर, शेष कथाओं को उत्तरकांड में कहकर तब वाल्मीकि मुनिनाथ सोचने लगे कि इस कथा को कौन पढ़ (सुना) सकते हैं, यह कथा जगत् में किस प्रकार सुशोभित होगी। तब कुश-लवने, जो अनघ (निष्पाप) मन वाले, मनसिज (कामदेव के समान)

ननुचुंड गुशलवुलनघमानसुलु । मनसिजाकारुलु, मंजुभाषणुलु,
जननुतुल्, संगीतसाहित्यनिधुलु ।मुनिवेषधारुलिम्मुलवच्चिम्रोक्कि,
"यनघ ! रामायणंबर्थितो जदुव । जनुदॆञ्चितिमि मम्मुजदिविंप-
-वलयु" २२०

ननिन संतोषिंचि यम्मुनीश्वरुडु । "तन मनोरथमॆल्ल दलकूडे" ननुचु
गेयमै पाठ्यमै केवल पुण्य । दायकंबगु रघूत्तमु चरित्रंबु
ननुपम - तन्त्रीलयान्वित - फणिति ।मुनुकॉनिचदिविंपमुदमॉप्प जदिवि,
रमण श्रृंगारादिरसमुलेर्पडग । समवृत्तभेदमुल् संधि समास
समधिक शब्दार्थ संगतुलॆरिगि । क्रममोप्प बाडुचु गवगूडि वारु
मुनिजनसभल निम्मुल बूजनमुलु । गॉनिविनोदिंप,गाकुत्स्थवल्लभुडु
वेलय दम्मुलु दानु वेड्कलिपॉन्द । गोलुवुंडि वारल गोरि राविंचि
वारि रूपंबुलु, वारि निल्कडलु । वारि निर्मलतर वाग्विशेषमुलु
तनकु निंपॉनरिंप दत्कथाक्रममु । विनुचुंडॆ रामुडव्विधमॆट्टिदनिन२२९

आकार वाले, मञ्जुभाषी, जन (-जन) से स्तुति प्राप्त करने वाले, संगीत और साहित्य के वेत्ता और मुनिवेषधारी थे, आकर चरणस्पर्श किया (और बोले)—'हे अनघ ! रामायण को बड़े उत्साह के साथ पढ़ने के लिए आए हैं। (आपको) हमें पढ़ाना चाहिए' ॥ २२० ॥

—(ऐसा) कहने पर हर्षित होकर उस मुनीश्वर ने (यह) सोचते हुए, कि मेरा मनोरथ पूरा हो गया; गेय, पाठ्य और पुण्यदायक रघूत्तम के चरित्र को, अनुपम तंत्रीलयान्वित रीति से सप्रयत्न उन्हें पढ़ाया; तो हर्षित हो उन्होंने पढ़ लिया। रमणीय श्रृंगारादि रसान्वित, समवृत्त भेद, सन्धि-समास, समधिक शब्द और अर्थ की संगतियों को जानते हुए, क्रम से, एक साथ होकर गाते हुए वे (कुश-लव) मुनिजन की सभाओं में नित्य प्रशंसाएँ प्राप्त कर हर्षित होते रहे। काकुत्स्थ-वल्लभ (राम) स्वयं अनुजों के साथ सभा में सुशोभित थे, उन्हें कुतूहल से बुलाया (और) उनके रूप, उनके आचरण, उनके निर्मलतर वाक्‌विशेष (वाक्‌चातुर्य) आदि उनके मन को सुख दे रहे थे। उस समय, श्रीराम उस कथा-क्रम को सुनने लगे। वह विधान ऐसा था— ॥ २२९ ॥

अयोध्या वर्णनमु

द्वादशयोजन व्यायतंबगुचु । नैदुयोजनमुलनदि वॅडल्पगुचु
निपुणत मयुनिचे निर्मितंबगुचु । नॅपुडु शात्रवकोटिकॅंदुरुचुक्कगुचु
कॉलदि मीऱिन भानुकुलजुलकॅल्ल । गुलराजधानियै कॉनियाड बरगि
सरयुवु पॉतं गोसलदेशमुननु । धरणिकि दॉड वयोध्यापुरंबॉप्पु
मणिगोपुरंबुल मणितोरणमुल । मऱिचट्टिमंबुल मणिगवाक्षमुल
गेळिकागृहमुल गृतकशैलमुल । बालानिलंबुल बटहानादमुल
महितवारणमुल मानिताश्वमुल । बहुरथप्रततुल भटकदंबमुल
विमलसौधंबुल विपणिमार्गमुल । गमनीय वनमुल गमलाकरमुल
जेऱुवुल बावुल जेऱुकुदोटलनु । दऱुचैन शालिकेदारवारमुल
बरिखल गोटल बसिडि माडवुल ।गरमॉप्पि लोकविख्यातमै परगु२३९

दशरथ वैभवमु

नापुरि दशरथुंडनु महाराजु । चापविद्यापरशैलकार्मुकुडु
चतुरुपायज्ञुंडु षाड्गुण्यशालि । सतत शक्तित्रयसंधानकर्त

अयोध्या का वर्णन

—बारह योजन लंबा, पाँच योजन चौड़ा, मय (शिल्प-निपुण) द्वारा निपुणता से निर्मित, सदा शत्रुसमूह के लिए प्रतिकूल (अजेय), अद्वितीय भानु-वंशियों के लिए (परम्परागत) कुल-राजधानी, प्रशंसित विलसित—(इस प्रकार) सरयू (नदी) के किनारे, कोसलदेश में, पृथ्वी के लिए आभूषण स्वरूप अयोध्या नगर सुशोभित था। मणिगोपुर, मणितोरण, मणिमय कुट्टिम (फ़र्श), मणिमय गवाक्ष (झरोखे), क्रीडागृह, कृतकशैल (बनावटी पर्वत), बालानिल, पटह-नाद (नगाड़े की आवाज़), बड़े-बड़े हाथी, मान्य (श्रेष्ठ) घोड़े, अनेक (प्रकार के) रथ-समूह, भट-(सैनिक) समूह, विमल सौध (भवन), विपणि-मार्ग (बाज़ार), कमनीय उपवन, कमलाकर (सरोवर), तालाब, बावड़ी, ईख के खेत, (जगह-जगह) पर्याप्त (मात्रा में) धान के खेत, परिखाएँ (खाइयाँ), कोठे (ड्योढ़ी), सुवर्णप्रासाद (महल आदि से अति) अधिक शोभायमान और लोक विख्यात, वह (महानगर) विलसित था ।। २३९ ।।

दशरथ का वैभव

—उस पुर में दशरथ नामक महाराज, (जो) धनुर्विद्या में अपर शैलकार्मुक (शिवजी) के समान, चार उपायों (साम, दाम, दण्ड, भेद) के ज्ञाता, षड्गुणों से युक्त, सतत (सदा) शक्ति-त्रय (इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया) के सन्धानकर्ता थे।

धर्मोत्तरुड्डु, गृताध्वरुड़ु, श्रीकरुडु । धर्मशास्त्रपुराण तात्पर्यपरुडु
अजुनि नंदनुडु बाल्यादिगा नियति । ब्रजल बालिंचिन परमपावनुडु
जंभारिकै पोयि शंबरासुरुनि । दंभंबणगिंचि सुत्रमुनिचेत
मंदारपुष्पदामंबु गैकॉन्न । यिंदुमतीपुत्रु डिनुकुलाधिपुडु
तेजंबु गांतियु दॅगुवयु नेर्पु । राजसंबुनु नुदारतयु धैर्यंबु
मॉदलैन सद्गुणंबुल प्रोदियगुचु । नुदयार्कुगति दन युग्रतेजंबु
दीपितंबै येडुदीवुल बर्व । भूपालतिलकमै पॉलुपॉन्द नेलु
नन्नरनाथु कुलांगनामणुलु । मुन्नूटयेबंड्रु; मुख्यलैयंदु
नचलित सौशील्ययैन कौसल्य । कुचकुंभ निर्जितकोक यौकैक २५०
यनघचरित्रयौ ना सुमित्रयुनु । विनुतिकॅक्किरि द्रयीविद्यलोयनग
निलमीद नतनिकि हितपुरोहितुलु । पॉलचु वसिष्टादि पुण्यसंयमुलु
अनघात्मुडु धृष्टि यनुवाडु विजयु । डनुवाडु सिद्धार्थुडनुवाडु मऱियु
नर्थसाधकुडु जयंतुडु नीति । थीर्तु डशोकुंडु धीमंतुडैन
मंत्रपालकुडु सुमंत्रुडु ननग । मंत्रुलुगलरॅनमंड्रु नातनिकि
नामंत्रुलंदरु नन्योन्यहितुलु । स्वामिकार्य विचार चतुर मानसुलु

(वे) धर्मविरत या श्रेष्ठ, कृताध्वर (जिसने यज्ञ किए हों), श्रीकर, धर्मशास्त्र-पुराणों के तात्पर्य के ज्ञाता, अज के पुत्र, बाल्यावस्था से ही नियमानुसार प्रजा पर शासन करनेवाले परम पावन (स्वभाव वाले), इन्द्र के काम पर जाकर, शंबरासुर के दम्भ का भंग कर, सुत्राम (इन्द्र) से मन्दार-पुष्पों की माला को प्राप्त करने वाले थे। वे इन्दुमती के पुत्र और इस (प्रख्यात) सूर्य-कुल के अधिप थे। वे तेज, कान्ति, साहस, चातुर्य, राजस (रजोगुण), उदारता, धैर्य आदि सद्‌गुणों के भण्डार, उदयार्क (उदयकालीन सूर्य) की भाँति अपने उग्र तेज से प्रदीप्त, सप्तद्वीपों में यशस्वी, भूपाल-तिलक (राजाओं के शिरोमणि)—इस प्रकार शोभायमान होकर शासन करते थे। उस नरनाथ (राजा) के कुल-स्त्रियाँ (धर्मपत्नियाँ) साढ़े तीन सौ थीं। उनमें मुख्य थीं, अचलित सौशील्य वाली कौसल्या, कुचकुम्भ-निर्जित परिधान वाली कैकेयी, ।। २५० ।। —अनघ चरित्र वाली वह सुमित्रा। —वे (तीनों) मानों विख्यात त्रयीविद्याएँ हों। इस पृथ्वी पर उनके हितैषी पुरोहित वसिष्ठ आदि पुण्यसंयमी थे। पुण्यात्मा धृष्टि, विजय, सिद्धार्थ और अर्थसाधक, जयन्त, नीतिवेत्ता अशोक, धीमन्त और मन्त्रपालक सुमन्त्र नामक उनके आठ मन्त्री थे। वे सभी मन्त्री परस्पर हितू, स्वामी-कार्य के विचार में चतुर मन वाले, दूसरों (शत्रुओं) के मर्म के भेदन करने के उपायों

परमर्म भेदनोपायधौरेयु । लरसि प्रजारक्ष याचरिपुदुरु
नट्टिवारॅनमंड्रु नखिलकार्यमुल । बट्टुन दिद्द दीर्पनु जालिकॉलुव
नष्टाक्षरमुल बाहाष्टकंबुननु । स्रष्टयै वॅलयु नारायणुकरणि
दशरथुंडलरॅ नातनिदेशमुननु । गृशुडु गॉण्डीडु रोगियु दरिद्रुंडु२६०
जारुंडु मऱियु ननाचारुंडु बुण्य । दूरुंडु ग्रूरुंडु दुच्छुंडु शठुडु
मंदुडु मऱिलेरु मंदुनकैन । नंदरु मणिकुंडलाद्यलंकृतुलु
नंदऱु धर्मपरायणचित्तु । लंदऱु विहितकुलाचाररतुलु
नंदऱु सकलशास्त्रादि पारगुलु । नंदऱु श्रीविष्णु नतिभक्तिपरुलु
श्रीचंदनमुन राज्यमेपु दीपिंप । भूचक्रमॅल्ल नेर्पुन नेलियेलि
प्रकट राज्यांगसंपद देलि तेलि । योकनाडु दशरथुंडुल्लंबुलोन२६६

दशरथुडु पुत्रकामेष्टि चेय नालोचिंचुट

दनकु संततिलेमि दलपोसि वगचि। तनकु नायुवु वेग तगबोवु ननुचु
मनमुन गुंदुचु मऱियु नात्वॅण्ट । दन मंत्रिवरुल नंदऱनु रप्पिंचि
घनमुग गॉलुविच्चि घनत गूर्चुण्डि। तन मंत्रिवरुल नंदऱ जूचि पलिकॅ:

में निपुण थे। वे विचारपूर्वक प्रजा की रक्षा करते थे। समस्त कार्यों को उचित रूप में संभाल सकनेवाले ऐसे आठ (मंत्रि-) जनों द्वारा सेवा-प्राप्त, अष्टाक्षर और अष्ट भुजाओं से युक्त स्रष्टा के समान नारायण की तरह विलसित महाराज दशरथ (सर्व-प्रकार) सुशोभित थे। उनके देश में दुर्बल, चुगलखोर, रोगी, दरिद्र—॥ २६० ॥

—व्यभिचारी, और अनाचारी, पुण्य-रहित (पापी), क्रूर, हीन (नीच), शठ, (अथवा) मंद एक भी व्यक्ति नहीं था। सभी मणिकुण्डल आदि से अलंकृत, सभी धर्मपरायण चित्त वाले, सभी विहित (निर्दिष्ट) कुलाचार-निरत, सभी सकल शास्त्र-रूपी समुद्र के पारंगत, सभी श्रीविष्णु के अनन्य भक्त थे। इस प्रकार प्रकट-उत्साह के साथ, समस्त राज्य और भूचक्र (भूमण्डल) का कुशलता के साथ शासन कर, अधिक राज्य-सुख भोग कर, एक दिन दशरथ मन में—॥ २६६ ॥

दशरथ का पुत्र कामेष्टि करने के लिए विचार करना

—अपनी सन्तान-हीनता के बारे में विचार कर, दुखी होकर, अपनी आयु शीघ्र ही ढल जाएगी—यह सोचकर, मन में क्षुब्ध हुए और उसके बाद अपने सभी मन्त्रि-श्रेष्ठों को बुलवाया। सम्भ्रान्त रूप से उन्हें सभा में आसन देकर, शोभायुत आसनासीन होकर, अपने सभी मंत्रिवरों की ओर

'बॅक्कु दानंबुलु बॅक्कु धर्ममुलु । बॅक्कु यागंबुलु बॅक्कुव जेसि ७०
पॅक्कॅंड्लु मंटि; शोभितकीर्ति गंटि; । मक्कुव मी वंटि मंत्रुलु गलुग
गॉंदुवलेदेमिट, गॉड्डुकुलु लेनि । कॉंदवयॉक्कटि गानि; कुलमुद्धरिंचु
कॉड्डुकुलु लेकुन्न गोटि पुण्यमुल । बडयरुत्तमलोक पदवुलॅव्वरुनु;
गान पुत्रुल गानगा नाकु वलयु । गान येनिक लोकमुलॅल्ल मॅच्च
दलकॉनि यश्वमेधमु सेसि, पिदप । नॅलमि तो बुत्रकामेष्टि वेल्चॅंदनु
ई यागमुलचेत हितमु रंजिल्ल । बायक पुत्रुल वडसॅद नेनु'
अनि चॅप्प वारलु नतिसंभ्रममुन । मनमुन संतोषमग्नुलैयुन्न
ना मंत्रिवर्युल नंदऱ जूचि । ता मदि नूहिंचि तगवॉप्प बलिके;
'ननुपमंबुग नेनु नश्वमेधंबु । विनयंबुनं जेसि विबुधुलु मॅच्च
बुत्रुलकॉऱकुनै पुत्रकामेष्टि । नेत्रोत्सवंबुग ने जेयुवाड २८०
ननि तगु पनुलकु नंदऱ बनुप । ननघुलु मऱि वसिष्टादुलु वच्चि
निलचिन म्रॉक्कुचु नॅलमि दोड्तॅच्चि । पलिकॅनु वारितो बार्थिवोत्तमुड्डु

देखकर (वे) बोले, 'अनेक दान, अनेक धर्म (-कार्य), अनेक यज्ञ प्राचुर्य से करते हुए ॥ २७० ॥

—(मैं) अनेक वर्ष जीवित रहा। बड़ी कीर्ति पाई, आप जैसे स्नेही मन्त्रियों के होने पर (मुझे) केवल पुत्र होने के अभाव के सिवा और किसी बात का अभाव नहीं है। कुल का उद्धार करनेवाले पुत्रों के बिना कोई भी (व्यक्ति) पुण्यवानों की कोटि और उत्तम लोक में स्थान प्राप्त नहीं कर सकता। अस्तु, मेरे भी पुत्र उत्पन्न होने चाहिए। इसलिए मैं, संसार में प्रशंसित होने की इच्छा से अश्वमेध (यज्ञ) करूँगा। बाद में सोत्साह पुत्र-कामेष्टि हवन करूँगा (यज्ञ करूँगा)। इन यज्ञों के कारण (मेरा) हित-रंजन होगा, मैं अवश्य पुत्रों को प्राप्त करूँगा'। ऐसा कहने पर उनके (अर्थात् मंत्रियों के) अति सम्भ्रम के साथ मन में संतोषमग्न रहते समय, उन सभी मंत्रिवर्यों की ओर देखकर, (राजा ने) स्वयं मन में विचार किया और न्याय (बुद्धि)-युक्त हो बोले—'अनुपम रूप से मैं अश्वमेध (यज्ञ) को—विनीत भाव से करूँगा, जिसकी विबुध लोग प्रशंसा करेंगे। पुत्रों के लिए पुत्रकामेष्टि को नेत्रोत्सव (दर्शनीय) रूप में मैं करूँगा'। ॥ २८० ॥

ऐसा कहकर उचित (आवश्यक) कार्यों के लिए सबको भेजने के बाद पुण्यात्मा वसिष्ठ आदि आकर खड़े हो गए। (तो राजा) साष्टांग प्रणाम कर, आनन्द के साथ (उन्हें) लिवा लाये, उनसे पार्थिवोत्तम (राजाओं में श्रेष्ठ दशरथ) यों बोले—'हे अनघ (पुण्यात्मा) वसिष्ठ !

‘अनघ! वसिष्ट! संयमुलार! यिपुडु। घनमैन हयमेधकंबु ना चेत
जेयिंचि पुत्रैकसिद्धि नोंदुटकु । जेयिंपुडी यिष्टि जॅच्चॅऱ्’ नन्न
नलवड नी चेयु हयमेधमखमु । नॅलकॉनि येमिक निर्वहिंचॅदमु
मदि नॅन्न शक्यमॅ मखराज महिम । यिदिगाक पुत्रकामेष्टियु जेय
दनयुल गांचॅदु धन्यमानसुल, । ननवुडु हर्षिंचि यवनिनायकुडु
नंदऱ् बनचि शुद्धातंबु सॉच्चि । सुंदरीमणुल का शुभवार्त जॅप्पि
यनुरक्ति नेकांतमैयुन्न वेळ ।ननघुंडु सूतुडिट्लनियॅ भूपतिकि२८९

ऋश्यश्भृंग वृतांतमु

‘धरणीश ! नीकु संतानसंप्राप्ति ।वॅरवैन कथ मुन्नु विन्नाड नेनु२९०
भूमिश ! विनुमंगभूमीशु कॉडुकु । रोमपादुडु गुणारूढुंडु दॉल्लि
यॅमि पापमुननो यॅरुग जॉप्पडक । यामहिलो वर्षमु कुर्वदय्यॅ
दानेलि पालिंचु धरणिपैनॅन्दु । वानलुलेकुन्न वगलनु जॅन्दि
वरमुनींद्रुल चेत वर्षहोममुलु । परुवडि सेयिंचि पडियराकुन्न

हे संयमियो (मुनियो)! अब महान् हयमेध (यज्ञ) को मुझसे सम्पन्न करवाकर, एक पुत्र की प्राप्ति के लिए इस यिष्टि (यज्ञ) को शीघ्र करवाइए’। ऐसा (राजा के) कहने पर (उन्होंने) कहा—‘युक्तविधि से तुम्हारे द्वारा सम्पन्न हयमेध यज्ञ का उचित रीति से हम अब निर्वाह करेंगे। यज्ञों में श्रेष्ठ उस (हयमेध) की महिमा का वर्णन क्या सम्भव है? (नहीं है)। यही नहीं, पुत्रकामेष्टि भी करने पर धन्य-मन वाले पुत्रों को प्राप्त करोगे’। ऐसा (मुनियों के) कहने पर हर्षित होकर अवनीश्वर (राजा) ने सबको बिदाकर, अन्तःपुर में प्रवेश किया और सुन्दरी मणियों (रानियों) को वह शुभ-समाचार कह सुनाया। सप्रेम एकान्त में (अकेले) रहते समय, अनघ सूत ने भूपति से इस प्रकार कहा—॥ २८९ ॥

ऋष्यश्रृंग वृत्तान्त

—‘हे महाराज! आपको सन्तान-प्राप्ति का साधन किस प्रकार होगा, इस सम्बन्ध में एक कथा पहले ही मैंने सुनी है॥ २९० ॥

—हे भूमीश! उसे सुनिए। अंगराज के पुत्र गुणवान् रोमपाद के राज्य में, न जाने किस पाप से, वर्षा नहीं हुई। अपनी परिपालित-शासित धरणी (पृथ्वी) पर कहीं वर्षा के न होने से दुखी होकर, (उन्होंने) श्रेष्ठ मुनीन्द्रों से वर्षाहोम (वर्षा के निमित्त अनेक हवन) करवाये। किन्तु फिर भी वर्षा के न होने से राजा को अतिशोक से व्यथित देखकर वे

भूरिशोकंबुन बॉगुलुचुनुन्न । याराजु गनुगॉनि यम्मुनुलनिरि
'यो महीपालक ! यो राजचंद्र । यी महिपै वानलिट बर्वुटकुनु
नॉक युपायंबु मेमॉगि जॅप्पुवार । मकलंकमति तोड ननुवॉन्द जेयु
परहितोन्नतुड़ु विभांडक सुतुड़ु । चिरपुण्यनिधि ऋश्यश्रृंगुडनुवाड़ु
नगधैर्य! पुट्टिननाटिनुंडियु । नगरराष्ट्रंबुलॅन्नड़ु नॅऱुंगमिनि
नतडॅन्दु नाड़ुवारनु पेरु नॅऱुग । डतड़ु दापसवृत्ति नडवुलनुंड़ु ३००
वसुधेश! यतडिदु वच्चिन जालु; । वॅसबायु नी यनावृष्टि दोषंबु'
नावुड़ु 'मुनिनाथु नगरि केरीति । रावितु' ननि विचारमु सेसि तॅलिसि
यतड़ु वच्चुटकुनु नात्म जिंतिचि । मतिमंतुलगुनट्टि मंत्रुल बिलिचि
मुनुलनु रप्पिंचि मुदमॉप्प नड़ुग । मुनुलुनु मंत्रुलु मुदमुतो जॅप्प
मनमुन संतोष महिमशोभिल्ल । मनुलमाटलु विनि मोदंबु मीऱ
नुंडॅनु भूकांतुडॉगि मौनुलनिरि । 'दंडिग नो राज! तलपोसि यिपुड़ु
वारकांतलनॅल्ल वसुधेश! पंपु । वारक वॅन्टने वनमुनकिपुड़ु
दंडिग भक्ष्यमुल् दगमदिमॅच्च । मॅण्ड़ुग धनमुल मेटि वस्तुवुलु
बॅट्टि पंपुमु नीवु पॅम्पुतो नंत । गट्टिग गांतलु गड़ु ब्रौढ सतुलु

मुनि बोले, 'महीपालक ! हे राजचन्द्र ! इस पृथ्वी पर, यहाँ वर्षा होने के लिए एक उपाय हम क्रमशः बताएँगे। अकलंकमति से (उस उपाय को) संगत रूप से करो। हे नगधैर्य, (पर्वत के समान धैर्य वाले !) पर-हितकरने में उन्नत विभाण्डक का पुत्र, चिरपुण्य-निधि ऋष्यश्रृंग, जन्म से (आज तक) नगर और राष्ट्र के बारे में कभी कुछ जानकारी न रखने के कारण, स्त्रियों के नाम तक से अनभिज्ञ है। वह तापसी वृत्ति में जंगलों में (ही) रहता है ॥ ३०० ॥

हे वसुधेश ! उसका यहाँ आना पर्याप्त है, (उसके आते ही) यह अनावृष्टि का दोष तुरन्त दूर हो जायगा'। इसे (कहने) पर (राजा) सोचने लगा, 'मुनिनाथ को नगरी में कैसे बुलाऊँ ?' उसके (ऋश्यश्रृंग के) आने की बात मन में सोचकर, (राजा ने) मतिमंत (बुद्धिमान) मंत्रियों और मुनियों को बुलाकर, प्रसन्न चित्त से (उपाय) पूछा। मुनियों (और) मंत्रियों ने अति प्रसन्नता से (उपाय) बताया। मुनियों की बातें सुनकर भूकान्त (महाराज) मन में अत्यधिक हर्षित हुए। मुनियों ने कहा, 'हे राजन् ! यत्नपूर्वक अभी वार-वनिताओं को तुरन्त वन में भेज दो। हे वसुधेश ! मन को प्रसन्न करनेवाले विविध खाद्य (मिष्टान्न), पर्याप्त धन (और) श्रेष्ठ वस्तुएँ देकर तुम उन (वेश्याओं) को सहर्ष भेजो।

दिन्नगनटुपोयि तॅऱ्रगॉप्प गांचि ।मन्ननचे मौनि महिम वीक्षिचि३१०
तिय्यनिभक्ष्यमुल् तॅऱ्रगॉप्पनिच्चि । नॅय्यंबुचे मदि नॅऱि गरगिंचि
याटल बाटल देट माटलनु । बाटलगंधुलु बदिलुलै निलचि
मनसॅल्ल गरगिंचि मऱिवॅण्ट नंटि । मनसिजाकारुलु मऱि मायवन्नि
यॅच्चुग निटुराग नतडु वॅन्दगिलि । वच्चुनु निंदुकु वसुधेश! विनुमु'
अनि चॅप्पि मुनिवर्युलटु चनिरंत । घनमुगा ना राजु गरुण ना रात्रि
मनमलरग नुंडि मऱुनाडु लेचि । मुनुलनु दलचुचु मुदमॉप्प नंत
ननुरक्ति गडुन्नोडलगु वारसतुल । विनुत यौवनरूप विभ्रमवतुल
मनसिजमोहन - मंत्र - देवतल । बनिचॅ नॉप्पॅडु वारि बार्टिचियतडु
अतिवलम्मुनियुन्नयडविकि बोयि । यतनि याश्रमभूमि कल्लन जेरि
चतुर नर्तन कळा संगीत गतुल ।नतनिकि दम यॉप्पुलर्थि जूपुटयु२०
नापुण्यनिधि वारुलाडुवारगुट । रूपिंप नेरक रुचुल जॉप्पडक
यलसयानमुल नी यडविलो नॉप्प । मॅलिगॅडु निवि वितमृगमुलो काग

तब वे अति प्रौढ़ सुन्दरियाँ सीधे वहाँ जाकर, उपाय से (उस मुनि को) देखकर, मुनि की गरिमामयी महिमा को देखकर—॥ ३१० ॥

—यत्न से मधुर मिष्टान्न देकर, प्रेम से (उनके) मन को सकौशल विचलित करेंगी। क्रीडाओं (विविध विलास-चेष्टाओं), गीतों और स्वच्छ (मोहक) वचनों से (वे) पाटलगंधियाँ (रमणियाँ) सावधानी से (उनके) मन को पूरी तरह से रसमय बना देंगी। फिर उनका पीछाकर, मनसिजाकार (मनसिज मन्मथ के सदृश रूप वाली) वे कामिनियाँ (अपना) मायाजाल फैलाकर, यहाँ वापिस आएँगी, (तो) वे (ऋष्यश्रृंग) भी उनके पीछे-पीछे यहाँ आएँगे। हे वसुधेश ! सुनो (हमारी बात)'। ऐसा कहकर मुनिश्रेष्ठ चले गए। तब वह राजा उस रात को स्निग्ध और अति प्रसन्नचित्त रहा। दूसरे दिन (प्रातः) उठते ही उसने मुनियों का स्मरण करते हुए बड़ी प्रसन्नता और अनुरक्ति के साथ अत्यन्त प्रौढ वार-वनिताओं (वेश्याओं) को, जो अनुपम यौवन, रूप और छल-छन्द से युक्त, कामदेव के मोहनमन्त्र के सदृश मोहक, और अत्यंत चतुरा थीं, उनको (वन में) भेजा। वे युवतियाँ वन में गईं जहाँ वह मुनि था। उसके आश्रमस्थल के निकट पहुँचकर, चतुर नर्तन-कला, संगीत की गतियों और अपने विलास (हाव-भाव) द्वारा उसको आकर्षित किया ॥ ३२० ॥

—वे पुण्यनिधि (ऋष्यश्रृंग) यह न जान सके कि वे स्त्रियाँ हैं, (और संगीतादि से भी) परिचित न होने के कारण सोचने लगे कि (सम्भवतः) वे इस वन में मनोहर गति से मंद विचरण करनेवाले अनोखे मृग हैं।

यनुचुंड नॉक्कनाडतिवलु ब्रीति । दनुजेर वच्चिन दप्पक चूचि
चन्नुल पेरड्गि चन्नुल मीद । नुन्न हारमुल नुद्देश मडिगि
'माकु गॉम्मॉकटि मस्तकमुननु । मीकु गॉम्मुल रॅण्डु मॅऱसॅ रॉम्मुननु
नॅवृक्षमुल गलगॅ निवि यपूर्वमुलु । नीवल्कलमुलतिमृदुलंबुलरय
मा जटाबंधंबु माट्किवि गावु । मी जटाबंधमु ल्मॅऱुगुल बॉदलॅ
मेनि बूडिदपूत मेल्तावि बोट्टु । वीनुलविंदु मी वेदनादमुलु
कनिविनि यॅऱुग मिक्काननभूमि । मुनुलकु मी वेषमुलु गलवॉक्कॉ
यॅक्कडि मुनु' लन्न नितुलाघनुडु ।चिक्कुट भाविंचि चॅलगि नव्वुचुनु ३०
'नानुपूर्विग श्रुतिहारियै साम । गानंबु वाडि चक्कग बदक्रममु
शुद्ध मार्गंबुन जूपंग नेतुं । मिद्धरमा चर्य लॅऱुग मी तरमॅ ?'
यनि नेपुं माटल ना मुनिस्वामि । गनुब्रामि मऱियु नक्कन्यकामणुलु
'यॅव्वरितनयुड ? वॅव्वड ? वेल । यिव्वनंबुन नुंडु? टॅऱिंगिपु' मनुडु
अमलकीर्तुल बुण्युडगु विभांडकुनि। कॉमरुंड ऋश्यशृंगुडु ना पेरु
विपुल मनोनिष्ट वॅलय नीयडवि । दपमुसेयुटकुनै दगिल वर्तितु

एक दिन (उन) युवतियों के प्रेमयुक्त हो अपने पास आने पर उन्हें ध्यानपूर्वक देखा; स्तनों के नाम पूछकर, स्तनों पर स्थित हारों के उद्देश्य (प्रयोजन) के बारे में पूछा (और बोले—) 'हमारे तो सिर पर एक ही शृंग (सींग) है। (परन्तु) आपके तो उर पर दो शृंग शोभायमान हैं। आपके वल्कल (वस्त्र) अति मृदुल प्रतीत होते हैं। ये अपूर्व (वल्कल) किस वृक्ष से प्राप्त हुए हैं? आपके जटाजूट हमारी जटाओं के समान नहीं हैं, (वे तो) चमक रहे हैं। (आपके) शरीर पर मली हुई राख श्रेष्ठ सुगन्ध दे रही है। आपके वेदनाद (वेदपाठ) कानों को मधुर लगते हैं। इस कानन-भूमि में (ऐसा दृश्य) न देखा है, न सुना है। कहीं मुनियों के भी ऐसी वेषभूषा होती है? आप कहाँ के मुनि हैं? (ऐसा) कहने पर (उन) स्त्रियों ने उस महान् व्यक्ति को (अपने जाल में) फँसते देखकर, सोत्साह मुस्कुराते हुए कहा—॥ ३३० ॥

—'परम्परा से (प्राप्त) श्रुतिमधुर (कर्णप्रिय) सामगान गाते हुए, शुद्ध रीति से पदन्यास करके (हम) दिखा सकती हैं। इस पृथ्वी पर हमारी चेष्टाएँ (कौशल) जानना क्या आपके वश की बात है? (नहीं है)।' (ऐसा) कहकर अपने चतुर वचनों से उस मुनिनाथ को भ्रम में डालकर फिर उन कन्या-मणियों (सुन्दरियों) ने पूछा, (आप) 'किसके पुत्र हैं? कौन हैं? क्यों इस वन में रहते हैं? बताइए'। तब (मुनि ने कहा—) 'अमल कीर्तियुक्त पुण्यात्मा विभांडक का मैं पुत्र हूँ। मेरा

भागीरथी स्नानपरत मा तंड्रि। योगिपुंगवुलतो नॉगि नेगिनाडु
ऑण्डु देशमुल नॅरुगक यिचट। दंडिमै दपमुलुदगनॉप्प जेसि
कदलकयुन्नाडु घनत मा तंड्रि। सदमलचित्तुडै सद्भक्तिनिपुडु
विनुडु मीरिचटिकि विच्चेयुकतन। ननघुंडनैति गृतार्थुडनैति ३४०
मा तंड्रि गृपचेत मरियु निच्चटनु। नाततंबुग तपमनुवॉन्द नॅपुडु
सेसि यिच्चट नुंदु जतुरततोड। वासिगा वनमुलवरुस मिम्मुलनु
गनिनयप्पुडु नाकु गडु जोद्यमय्यॅ। ननुवॉन्द बोदमा याश्रममुनकु ?’
ननि मुनुलनि वारि नाश्रमंबुनकु। गॉनिपोयि ऋश्यश्रृंगुडु बूजिचॅ
नॅलनाग लम्मुनि यिच्चिन पूज। ललरुचु गैकॉनि, यतनि वीक्षिचि
‘मुनिवर! मा वनंबुन दॅच्चिनार। मनुपमफलराजि’ यनुचु लड्वमुलु
नतिरसंबुल मनोहरमुलैनट्टि। यतिरसंबुलु, वड, ललरुमंडॅगलु
सारमौ रसमुल चवुलग्गलिप। बेरु सॅप्पगरानि पॅक्कु भक्ष्यमुलु
निच्चिन नमलुचु नॅडनॅड जवुल। मॅच्चुचु दनिसि या मॅलतल जूचि
ग्रुक्किळ्ळु म्रिगुचु गॉसरि यड्गुचुनु। जॉक्कुचु नंदंद सॉरिदि जेचाचि ५०

नाम ऋष्यश्रृंग है। अत्यधिक मनोनिष्ठा-युक्त हो इस वन में तप करने में निरत होकर रहता हूँ। मेरे पिताजी भागीरथी में स्नान करने की इच्छा से योगिपुंगवों के साथ गए हुए हैं। अन्य देशों को न जानकर (न जाकर वे) बड़ी तपस्याएँ करते हुए, सदमलचित्त तथा सद्भक्तियुक्त हो, यहीं अचल निवास करते हैं। सुनिए, आपके यहाँ पधारने के कारण मैं पापरहित हुआ, कृतार्थ हुआ ॥ ३४० ॥

—अपने पिता जी की कृपा से सुविधापूर्वक निरन्तर तप करते हुए मैं (भी) यहीं रहता हूँ। इन वनों में आप जैसे मनोरमों को देखने पर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। सुविधा हो तो आश्रम में चलें!’ (ऐसा) कहकर (उन्हें) मुनि समझकर, अपने आश्रम में ले जाकर, ऋष्यश्रृंग ने उनकी पूजा की (आदर-सत्कार किया)। उन युवतियों ने उस मुनि की पूजाएँ (आतिथ्य) प्रसन्नता से स्वीकार कीं और उसे निहार कहा, ‘हे मुनिवर! अपने वन से (हम यह) अनुपम फल-राशि लाए हैं’। यह कहकर लड्डू, मनोहर अतिरस, बड़े, स्वादिष्ट मंडेग (गेहूँ से बनी एक प्रकार की मिठाई), स्वादिष्ट लगनेवाले अनेकानेक भक्ष्य (मिठाइयाँ) उनको दीं। (उन्हें) खाते और बीच-बीच में स्वाद की प्रशंसा करते हुए, मुग्ध होकर, उन सुन्दरियों की ओर देखते, लार की घूँट पीते हुए (लार टपकाते हुए), बार-बार माँगते, परवश होकर हाथ फैलाते हुए (कहते—) ॥ ३५० ॥

‘मुन्निट्टि फलमुल मुनिवरुलार । यॆन्नडॆ नॆरुगनु नेवनंबुलनु
मी तपंबॆ तपंबु मी तपोवनमॆ । यी तपोवनमुल कॆक्कुडु तलप’
ननि पल्क नय्यितुलल्लन नगुचु । ननुवार दनुलत लरसोक गदिसि
तावि नूर्पुलचेत दालिमिदूलि । पोव नॊय्यन मुखांबुरुहंबुलॊत्ति
पलुकुल दळुकुल बाटलाटलनु । बिलुपुल सॊलुपुल बॆल्लिचि यतनि
हृदयंबु गरगंग निरि चन्नुगवलु । गदियिंचि बिगियार गौगिळ्ळ मरपि
‘यनघ पोयॆदमिक नाश्रमंबुनकु’ । ननि विभांडकुदॆस नडरिन भीति
नरिगि चेरुवनुंडि रावनंबुनकु । नरविंद-लोचनलरिगिन पिदप
वारिक नॆन्नडु वत्तुरो यनुचु । ना ऋश्यश्रृंगुंडु नटनिद्रलेक
या रात्रि वेगिंचि या मरुनाडु । ना रमणुलगन्न यचटिकेतेर ३६०

रोमपादुनि यिंटिकि ऋश्यश्रृंगुनि राक

नंदिय लमॊरयंग नसदु गौदीगॆ । लंदंद वडक रायंचल नडल
मगुवलु वच्चिच या महितात्मु गांचि । नगुमॊगंबुल तोड नलुदट्ल जेरि

—‘हे मुनिवर ! इससे पूर्व ऐसे फलों को मैंने किसी वन में, कभी नहीं जाना (देखा) । आपका तप ही (श्रेष्ठ) तप है। आपका तपोवन ही, विचार करने पर (प्रतीत होता है कि) इन तपोवनों से श्रेष्ठ है’ । ऐसा कहने पर वे स्त्रियाँ मन्द-मन्द मुस्काती हुई, अवसर पा, अपनी तनुलताओं को उन (ऋष्यश्रृंग) के शरीर से थोड़ा-थोड़ा स्पर्श करातीं, सुगंधित उच्छ्वासों से उनके धैर्य को डिगातीं, धीरे-धीरे अपने मुखकमलों को (उनके मुख से) सटातीं, मधुर वचनों, मृदुल संगीत, क्रीडाओं (हाव-भाव) तथा मदभरे कटाक्षों से मोहित करतीं हुई उनके हृदय को रसाद्र करने लगीं; अपने पीन (उन्नत) कुचों से आलिंगन-पाश में कसकर उन्हें विमूढ़ करती हुई बोलीं, ‘हे अनघ ! अब हम (अपने) आश्रम में जाएँगी ।’ विभांडक के आगमन के भय से वे चली गईं और उस वन के निकट ही रहीं । उन कमलनयनी कामिनियों के जाने के बाद, ऋष्यश्रृंग ने, यह सोचते हुए कि अब न जाने वे (मुनि) पुनः कब आएँगे, सारी रात आँखों में ही (जागकर) बिता दी । उसके दूसरे दिन (वह) उस स्थान पर गये जहाँ उन सुन्दरियों को (पहले दिन) देखा था ।। ३६० ।।

रोमपाद के घर ऋष्यश्रृंग का आगमन

पायलों की झंकार करती हुई, क्षीण (दुबली-पतली) लता के समान हिलतीं-डुलतीं, राजहंसों की गति से (वे) सुन्दरियाँ उस महितात्म

‘मुनिवर! मा वनंबुनकु रावलयु’ । ननिपल्क राककु ननुमतिंचुटयु
गनि चाल वॆलदुलु घनमुनि जूचि । मनसुलु गरगंग मऱि मऱि पलिकि
दम युपायंबुल दम विलासमुल । दमकंबु पुट्टिंचि, तरलाक्षुलंत
विस्तारपथमनि वॆऱचि पोवमिकि। हस्तपल्लवमुल नांदोळिक गनु
नॊनर दीमंबुल नॊक वितमृगमु ।गॊनितॆच्चु तॆऱगुनु गॊनि वच्चिरतनि
नतडु सॊच्चुटयुनु नय्यंगदेश । मतुलवर्षमुल, सस्यंबुल नॊप्पे
सकलसौभाग्यमुलसललितंबुगनु । नकलंकमति तोड ना नृपुडुंडि
या मौनि गनुगॊनि यतिभक्तियुक्ति । नेमंबुतो बूज नॆम्मि गाविंचि ३७०
यनघुंडु दनकूतु ना राजु शांत । यनुदानि निच्चिन ना राजुनिंट
नतडुंडु दशरथुंडम्मुनि दॆच्चि । हितमति बुत्रकामेष्टि ना बरगु
ऋतुवम्मुनींद्रुचे गाविंचॆनेनि । सुतुल नल्वुर बहुश्रुतुल नुन्नतुल
नाततोन्नति गांचु, ‘ननि चॆप्पॆ दॊलिय। नातोड दॊल्लि सनत्कुमारुंडु
अटुगान नीविंक ना ऋश्यशृंगु । बटुभक्तियुक्तिमै ब्रार्थिंचि तॆम्मु’
अनि चॆप्पि या सूतुडरिगिन पिदप । मनमुन संतोष ममतलु सॆलग

(महात्मा) को देखकर आईं और हँसती-विहँसती चारों ओर से (उन्हें) घेरकर बोलीं, ‘हे मुनिवर ! हमारे वन में पधारिए’। ऐसा कहकर, (मुनि के) आने के लिए तत्पर होने पर, (वे) स्त्रियाँ उस श्रेष्ठ मुनि के मन को द्रवित करने वाली बातें बार-बार करके, अपने उपायों तथा हाव-भावों से, मुग्ध करने लगीं। इसके बाद, विस्तृत पथ को पार करने के भय से, (अपने) करपल्लवों की पालकी बनाकर, अनेक उपायों से एक अजनबी मृग को जिस प्रकार (एक शिकारी) लाता है, उसी प्रकार वे चंचल नयन वाली उन्हें (अंगदेश में) ले आईं। उनके प्रवेश करते ही उस अंगदेश में अतुल वर्षा होने लगी और शस्य की वृद्धि हो गई। सकल सौभाग्यों से संयुक्त होने पर सुललित ढंग से, अकलंकमति (वाला) राजा (रोमपाद) ने, उस मौनि का साक्षात् होने पर, बड़ी भक्ति और प्रीति से समुचित और सुचारु ढंग से उसकी पूजा की ॥ ३७० ॥

—निष्पाप (अंग-) नरेश ने शान्ता नामक अपनी पुत्री उन्हें दान की (और) उस राजा के घर (पर ही) वह (मुनि अब) रहते हैं। यदि दशरथ उस मुनि को (अपने यहाँ) लाकर, कल्याण के लिए पुत्रकामेष्टि नामक क्रतु (यज्ञ) को उस मुनीन्द्र के द्वारा करायें तो (वे) चार बहुश्रुत और महान् पुत्र एवं समृद्धि को प्राप्त करेंगे। ऐसा ही मुझसे पूर्वकाल में सनत्कुमार ने कहा था। ऐसा है न, इसलिए तुम अब उस ऋष्यश्रृंग को विनय-भक्ति से प्रार्थना कर यहाँ ले आओ’।

ननुवरि दशरथुंडारोमपाद । जननाथु वीटिकि जनि ऋश्यश्रृंग
मुनिपतिगनिम्रोंक्किमुदमुतोननियें 'विनवय्य! मुनिचंद्र! विमलमानसुड!
यनुवंद बुत्तुल नडुगुट केनु । मनमुन दलपोसि ममत नीकडकु
गौंनकौंनि वच्चिचति; गौंनुमु नी'वनुचु। घनमुन गृपवुट्ट मरि नुतिसेसि ८०
क्रतुवुन काचार्युगा वरियिंचि । यतुलित चतुरंतयानाढ्यु जेसि
यतनि विरोध्यसाध्यकु नयोध्यकुनु। जतुरुडै तोड्तेंच्चे शांततोगूड
वच्चुचो दूतलवलनु वीक्षिंचि । पुच्चिच मुंदर वारि 'बुरमुनु नगरु
वासवुपुरितोड वैभवंबौंप्प । गैसेयवलयुनु गडुवेग मीर'
लनिपल्क वारुनु नरिगि पौरुलकु । विनिर्पिप, जेसिरि विविधशिल्पमुलु
दुंदुभिशंखादितुमुल नादंबु । लंदंद म्रोयग नंत भूपतियु
मुंदुगा रथमेंक्कि मुदमु सित्तमुन । जेंन्दि शांतयु ऋश्यश्रृंगुंडु नडव
बुरमुनकेतेंञ्चे बुरजनुल्सेयु । परममंगळततुलपरगगैकौंनुचु
नीरीति ना ऋश्यश्रृंगुनि देंच्चि । भूरमणुंडंतिपुरमुन नुनिचि

ऐसा कहकर उस सूत के जाने के बाद, मन में प्रसन्नता और ममता के उमड़ आने पर, उपायज्ञ दशरथ उस रोमपाद जननाथ (राजा) के घर गये और मुनिपति ऋष्यश्रृंग का दर्शन कर उन्हें दण्डवत् प्रणाम करके प्रसन्नता से बोले, 'हे मुनिचन्द्र ! विमलमानस ! मेरी विनय सुनिए। मैं मन में पुत्रों की कामना लेकर करुण भाव से आपके पास (बड़ी आशा लेकर) आया हूँ। (मेरी प्रार्थना को) आप अंगीकार कीजिए। ऐसा कहकर (मुनि के मन में) कृपा पैदा हो, (तदर्थ) और अधिक स्तुति करके--॥ ३८० ॥

--यज्ञ के लिए (उन्हें) आचार्य (के रूप में) वरण किया। फिर अतुलित चतुरन्तयान (पालकी) में बैठा कर, शान्ता के साथ उन्हें, विरोधियों के लिए असाध्य अयोध्या को कौशल से (राजा दशरथ) ले आए। इसीबीच, उन्होंने दूतों के द्वारा (अयोध्या में) यह आदेश भेज दिया कि पुर (और) नगर को वासव (इन्द्र) की नगरी के समान वैभव-युक्त सजाया जाय। उन (दूतों) से नगरवासियों को (यह आदेश) मिलने पर, उन लोगों ने (नगर-वासियों ने) विविध शिल्पों से (नगर को) सजाया। दुन्दुभि, शंख आदि के तुमुलनाद जगह-जगह ध्वनित होने लगे। तब भूपति भी, आगे-आगे रथ पर आरूढ़, मन में मोद भरे, शान्ता और ऋष्यश्रृंग को साथ लिए पुर में पधारे और नागरिकों के द्वारा किए गये (स्वागतार्थ) परम-मंगल कार्यों को उन्होंने प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। इस प्रकार उस ऋष्यश्रृंग को लाकर, भूरमण (राजा) ने अन्तःपुर में ठहराया और

वितताघ्र्य पाद्यादि विधुलबूजिंचि। यतिकृतार्थुडनैतिननिसंतसिंचे ९०
नासमयंबुन ना राजसतुलु । कौसल्य मोदलुगा गलवारु वेड्क
नलुवोन्द रेनियानति बूनि चाल । नलरि संतसमुन नाशांतकपुड्डु
महितभूषण वस्त्रमाल्यादुलिच्चि । बहुविधंबुल वारि ब्रार्थिचिरंत
गोन्तकालमुनकु गुवलयजनुलु । संतोषमेसग वसंतमेतेर
नडरेडु वेड्क ना ऋश्यशृंगु । कडकु भूपति वच्चि कडुभक्ति म्रोक्कि
'सन्नुतस्थिति नन्नु संयमिप्रवर! । चेन्नोन्द जन्नंबु सेयिंपवलयु'
ननि विन्नविंचिन 'नौगाक' यनुचु ।निनकुलोत्तमु जूचि यिट्लनि पलिके
'वेगंबे तेप्पिंपु विहितंबुलैन । यागसंभारंबुलन्नियु नधिप !'
यनवुडु दगुवारि 'नय्यै तेरंगु । लोनर्रिंपु' डनुचु नियोगिंप बनिचि
यखिलसंभारंबुलन्नियु देप्पिंचि । मखमुसूचुटकु सुमंत्रुनि बंपि४००
केकय क्ष्मानाथु गीर्तिसनाथु । ना काशिराजु नव्याहततेजु
जनकांगराजादि जननाथवरुल । ननघचरित्रुल नर्थि रप्पिंचि
मनुजनायकुडु सुमंत्रुतो ननियें । 'ननघुल वेदवेदांगपारगुल
गृहमेधुलगुवारि गृततंत्रभाष्य । महितार्थ निश्चयमतुल भूसुरुल

अर्घ्य-पाद्य आदि के द्वारा सविधि उनका पूजन कर अपने को अति कृतार्थ (सफल) माना और प्रसन्न हुए ।। ३९० ।।

—उस समय कौसल्या आदि महारानियों ने बड़े उत्साह से, राजा की आज्ञा लेकर, बड़े हर्ष के साथ उस शान्ता को श्रेष्ठ भूषण, वस्त्र, माला आदि देकर, नानाविधि से उसकी अभ्यर्थना की। कुछ दिनों के बाद संसार के प्राणियों को प्रफुल्लित करनेवाले वसन्त ऋतु का आगमन हुआ। तब बड़े उत्साह से, उस ऋष्यशृंग के पास भूपति ने आकर, अनन्य भक्ति से प्रणाम किया और विनय की, 'हे संयमिप्रवर (मुनि श्रेष्ठ)! आप श्रेष्ठ यज्ञ को मुझसे करवाएँ'। निवेदन करने पर 'ठीक है (ऐसा ही हो)' कहकर रविकुलश्रेष्ठ (दशरथ) से (मुनिवर) इस प्रकार बोले, 'हे अधिप ! यज्ञ के लिए निर्दिष्ट (आवश्यक) सारी सामग्री शीघ्र मंगवाइए'। ऐसा कहने पर (राजा ने) (आवश्यक) सभी प्रकार के कार्य पूरे करने के लिए सुयोग्य व्यक्तियों को नियोजित किया और सभी वस्तुएँ मंगवाईं। (पश्चात्) सुमंत्र को भेजकर——।। ४०० ।।

—कीर्त्तिमान केकयराज, अतुल तेजस्वी काशिराज, जनक, अंगराज आदि पुण्यचरित्र वाले जननाथवरों (श्रेष्ठ राजाओं) को यज्ञ देखने के लिए आमन्त्रित किया। मनुजनायक ने सुमन्त्र से कहा—'पुण्यात्मा वेदवेदांग-पारंगत, गृहस्थ, कृततन्त्रभाष्य के महितार्थों में निश्चय बुद्धि (रखने)

बरगु सुयज्ञु जाबालि गश्यपुनि । सुरुचिरात्मुनि वसिष्टुनि वामदेवु
रयमुन दोड्कॊनिरम्मु नी' वनिन । ब्रियमुन नातंडु बॆम्पार नरिगि
युरुभक्ति नंदऱ नॊगि दोडितेर । बरुवडि दा नर्घ्य पाद्यादुलिच्चि
निर्मलव्रतनिधि नियतार्थमतमु । धर्मार्थयुतमु गादगुमाट बलिकॆ
'मुनुलार! कॊडुकुलु मुनु नाकु लेमि। मनमुन दलपोसि ममत रॆट्टिंचि
मित्रसूक्तुल नश्वमेधयागंबु । बुत्रुलकॊऱकुनै पुत्रकामेष्टि ४१०
जेयंग नी ऋश्यश्रृंगु दोड्तॆंच्चि । मी यनुग्रहमु गामिंचियुन्नाड'
ननवुडु ना वसिष्टादि संयमुलु । जननाथुमाटकु संतोषमंदि
'यिनकुलोत्तम! लोकहितमाचरिंप। दनयुलगोरु नीतलपॊप्पु निंक
नश्वंबु विडुवु मी यश्वमेधमुन । विश्वरक्षकुलैन विक्रमोज्ज्वलुलु
नलुवुरु कॊडुकुलु नरनाथ! नीकु ।गलिगॆद' रनि पल्क गडु संतसिल्लि
सवनयोग्यंबैन जवनाश्वमरसि । भुवनपावनमूर्ति पूजिंचि नॊसट
ब्रकटित बिरुदांक पट्टिकगट्टि । यॊकयेडु दनयिच्चच नुर्वि जरिंप
समकट्टि विडिचॆ नश्वंबु रक्षिप । विमतोग्रुलगु सैन्यविभुलतो गूड

वाले भूसरों (ब्राह्मणों) को, सुयज्ञ जाबालि, कश्यप, सुरुचिरात्म वसिष्ठ और वामदेव आदि को तुम शीघ्र ही लिवा लाओ'। (आदेश मिलते ही) तब वह (सुमंत्र) प्रसन्न मन से गये और बड़ी भक्ति के साथ उन सभी को शीघ्रता से लिवा लाये। (राजा ने) शीघ्र ही स्वयं अर्घ्य-पाद्य आदि देकर (उनका स्वागत किया।) निर्मल व्रत-विधि के अनुसार तथा धर्मार्थ युक्त हो (वह) बोले, 'हे मुनियो! (इससे) पूर्व पुत्रहीन होने की चिन्ता से प्रेरित (और) पुत्र-प्राप्ति की प्रबल कामना से उत्कण्ठित होने पर शुभचेता मित्रों की सलाह से अश्वमेधयाग तथा पुत्रों की प्राप्ति के लिए पुत्र-कामेष्टि यज्ञ करने के लिए—॥ ४१० ॥

—इन ऋष्यश्रृंग को मैं लिवा लाया हूँ और आपके अनुग्रह की कामना कर रहा हूँ"। ऐसा कहने पर वे वसिष्ठ आदि मुनि जननाथ (दशरथ) की बातों से प्रसन्न होकर बोले, 'हे भानुकुलोत्तम! लोकहित करने के लिए पुत्रों की इच्छा का तुम्हारा विचार सर्वथा संगत है। अब अश्व को छोड़ दो। हे नरनाथ! इस अश्वमेध से विश्वरक्षक, विक्रम में उज्ज्वल तुम्हारे चार पुत्र होंगे'। ऐसा कहने पर अत्यंत संतुष्ट होकर (राजा ने) यज्ञ के लिए योग्य जवनाश्व (तेज जानेवाले घोड़े) को चुनकर, उस भुवन-पावन-मूर्ति की पूजा करके, उस (घोड़े) के ललाट पर अपनी बिरुदांकित पट्टिका बाँधकर, एक वर्ष तक अपनी इच्छा से पृथ्वी पर विचरण करने के लिए, छोड़ दिया। (उस) अश्व की रक्षा

नंत वसिष्टादुलनुमतिसेय । वितगा शिल्पकोविदुल रावि‍ंचि
सरयुवुनुत्तरस्थलि यागशाल ।विरचिंपगा बंचॆ वेदोक्तसरिण४२०
मऱियु नानादेश मनुजवल्लभुल । वऱलु विप्र नृपाल वैश्य शूद्रुलनु
रप्पिंचॆ नंत वर्षमु पूर्णमैन । नॆप्पटिमधुमासमेतेर नृपुडु
चिरतपोनिधि ऋश्यश्रृंगुसम्मतियु। गुरुनियानतियु गैकॊनि मंचिवेळ
स्पृहानु शांता ऋश्यश्रृंगुलतोड । निहित संभार वर्णित होमकुंड
सहितमै येकविंशति रम्ययूप । महितमै श्रौतधर्मक्रियाचार
विहितमै मायाप्रवीण दैतेय । रहितमै सकलाघ रहितमै यॊप्पु४२६—

दशरथुडु यागदीक्ष वहिंचुट

यागवाटमु सॊच्चि, हयमु वच्चुटयु। यागदीक्ष वहिंचि यतिशुद्धि बॊन्दि
मुनु वसिष्ठादुल मुनिजनोत्तमुल । घनुल ऋत्विक्कुलुगा वरियिंचि
सवनत्रयं बभीष्टवमु नॊनर्चि । प्रविमल यूपाग्रबंधंबुलैन
जलचरंबुलरण्यचरमुलु विहग । मुलु नुरगंबुलु मॊदलुगा नॊप्पु४३०

के लिए अति पराक्रमी सेनापतियों को (नियुक्त किया)। (उसके बाद) वसिष्ठ आदि मुनियों की अनुमति से सरयू (नदी) की उत्तर दिशा में वेद-विधि के अनुसार यज्ञशाला का निर्माण करने के लिए (राजा ने) अनुपम शिल्पकारों को नियुक्त कर दिया । ।। ४२० ।।

—फिर नाना देशों के मनुज-वल्लभों (राजाओं), (वहाँ के) विप्र, नृपाल (क्षत्रिय), वैश्य और शूद्रों को (भी) निमन्त्रित किया । इतने में वर्ष पूरा हुआ और फिर से मधुमास (वसन्त) आ गया । तब राजा ने चिरतपोनिधि ऋष्यश्रृंग की सम्मति (अनुमति) तथा गुरु की आज्ञा लेकर, अच्छी-वेला (अच्छे मूहूर्त) में, बड़े उत्साह से शान्ता और ऋष्यश्रृंग के साथ, निर्दिष्ट यज्ञोपकरणों तथा हवन-कुण्ड से युक्त, इक्कीस सुन्दर यूपों (स्तम्भों) से शोभायमान, श्रौत-धर्म-क्रियाचार विहित, माया-प्रवीण राक्षसों से रहित तथा समस्त पापों से रहित होकर शोभायमान—।। ४२६ ।।

दशरथ का याग-दीक्षा लेना

—(उपरोक्त गुणों से युक्त) यज्ञभूमि में (दशरथ ने) प्रवेश किया । (यज्ञ के) अश्व के आते ही, यज्ञदीक्षा धारण कर, अति पवित्र होकर प्रथमतः वसिष्ठ आदि मुनिजन-श्रेष्ठों को, महात्माओं को, ऋत्विकों के रूप में वरण कर, प्रशस्त (सराहनीय) सवनत्रय (तीन यज्ञों) को पूरा किया (और) प्रविमल यूपस्तम्भों से बंधे हुए जलचर, वनचर, विहग, उरग (रेंगने वाले प्राणी) आदि— ।। ४३० ।।

पशुवुल मुन्नूटि व्रथिताश्वमोंकटि । विशसिंचि क्रतुकर्मवेदुलु व्रीति
नेमंत्रमुलतोड ने पललमुलु । गार्मिचि व्रेलुवगा जेप्पुश्रुतुलु
नामंत्रमु तोड ना पललमुलु । गार्मिचि वेल्चिरि कडगि ऋत्विजुलु
अनलुंडु सप्तजिह्वल व्रज्वरिल्लॅ । ननिमुषुल् दनिसिराहविरादिकमुल
ना यागदिनमुल नार्कोन्नवाडु । नायासपडिन वाडरसिन लेडु
सारमृष्टान्न वस्त्रपटीरकनक । हीरभूषादि संतृप्तुले गानि
ये क्रियलंदुनु नेंडपडकुंड । नीक्रिय हयमेध मीडेरुटयुनु
वेंनुक ज्योतिष्टोमविश्वजिदादि । घनयागततुलु सांगमुगा नोंनर्चि
यप्पुडु दशरथुंडाऋत्विजुलकु । नोंप्पुगा दक्षिणलोंसगंग दलचि
यध्वर दक्षिणकै पूर्वदेश । मध्वर्युनकुनु ब्रह्मकु दक्षिणंबु४४०
बोंनरंग बश्चिमभूमि होतकुनु । दनर नुत्तरमु नुद्गातकु निच्चॅ
निल नयोध्ययु दक्क नेल्ल देशमुल । नलरि यिच्चिन मुदमंदि ऋत्विजुलु
'नेंप्पुडेलुदुमु नीविच्चन देश । मेंप्पुडनुष्ठानमेमु सल्पुदुमु
येमेड देशंबुलेलुट लेड । भूमिकि वेंलयिम्मु भूमीश! माकु'

—तीन सौ पशुओं तथा प्रख्यात यज्ञाश्व का वध किया। श्रुतियों में जिन-जिन मंत्रों के साथ जिन-जिन पललों (मांस) को प्रीतिपूर्वक आहुति देने की विधि बताई गई है, क्रतुकर्म को जानने वाले ऋत्विकों ने उन-उन मंत्रों के साथ उन-उन मांसों का, प्रेम के साथ हवन किया। अनल (अग्निदेव) सप्त-जिह्वाओं से प्रज्वलित हुए। देवता (उन) आहुतियों से तृप्त हुए। उस यज्ञ के दिनों में ढूँढने पर भी न कोई भूखा दीखा, न कोई संत्रस्त। सभी सारयुक्त मिष्ठान्न, वस्त्र, चन्दन, स्वर्ण, हीरे, भूषण आदि से (पाकर) संतृप्त थे। किसी भी कार्य में विघ्न के बिना, इस रूप में अश्वमेध (यज्ञ) के पूर्ण होने पर, दशरथ ने ज्योतिष्टोम, विश्वजित् आदि महान् यज्ञ-क्रियाओं को सांग रूप से पूर्ण किया और उन ऋत्विजों को श्रेष्ठ रूप से यज्ञ-दक्षिणाएँ देने का विचार किया। अध्वर्यु को अध्वर-दक्षिणा के रूप में (अपने राज्य का) पूर्वभाग, ब्रह्मा को दक्षिण देश, ॥ ४४० ॥

—होता को पश्चिम का भाग, उद्गाता को उत्तर भाग दे दिया। अयोध्या को छोड़ बाक़ी सभी देशों को प्रसन्नतापूर्वक देने पर ऋत्विज प्रसन्न हुए और बोले—'आपके दिए देश पर शासन कब करें और कब (हम) अपने अनुष्ठान (आचरणीय कर्त्तव्य) का पालन करें? हम कहाँ और देश पर शासन करना कहाँ? हे राजन्, हमें इस भूमि का मूल्य दे दें'। ऐसा कहने पर (राजा ने) दस करोड़ स्वर्ण (मुद्राएँ), स्वर्ण की चौगुनी

ननवुड्डु बदिकोट्टुलगु सुवर्णमुलु । गनकंबु नलुमडि गलधौतचयमु
गोरंगदगु लक्षगोवुलनिच्चॆ । ना ऋश्यश्रृंगादुलैन ऋत्विजुलु
नवि वंचुकॊनि मुदमंदिरि मरियु । ब्रविमलाध्वरकर्म परिचारकुलकु
नरनायकुड्डु सुवर्णमुलु गोटियुनु । वरभूषणंबुलु वलयु वारलकु
गामितार्थंबुलु गामिंचु वारि । केमि वाक्रुच्चिचन निंपारनिच्चि
परग भूसुरुलकु भक्तितोम्रॊक्कि । वरुस वारिच्चु दीवनलु गैकॊनुच४५०
ब्रकट दिव्यांबराभरणादुलॊसगि । यकलंकचित्तुडै यवभृथंबाडि
श्रीमहितुड्डु ऋश्यश्रृंगुचे बुत्र । गामेष्टि जेयिंपगा नंत वच्चि
क्रममॊप्प यागभागमुलु गैकॊन्न । यमरुलारावणु नात्मलो दलचि४५३

ब्रह्मकु देवतल मॊर

ब्रह्म गनुंगॊनि प्रणमिल्लि निलिचि । ‘ब्रह्म नी वरशक्ति बंक्तिकंधरुड्डु
ब्रविमलाचारुल ब्रह्मर्षिवरुल । दिविजुल मुनुल बाधिंचु चुन्नवाड्डु
दारुण वरशक्ति दगिलि मा चेत । वारिजासन ! वाड्डु वारिंपबडड्डु
सुरगणंबुलतोड सुत्रामु बट्टि । परिभविंचुचु नेचु बाहुदर्पमुन
गन्धर्व यक्षादिगणमुल मुनुल । बंधिंचु साधुल बट्टि बाधिंचु

चाँदी और स्पृहणीय एक लाख गाएँ (उन्हें) दीं। ऋष्यश्रृंग आदि वे ऋत्विज उन्हें (अर्थात् उस धन को आपस में) बाँटकर सन्तुष्ट हुए। उस विमल यज्ञकर्म में प्रवृत्त परिचारकों (सेवकों) को नरनायक (राजा) ने करोड़ स्वर्णमुद्राएँ दीं। माँगने वालों को श्रेष्ठ आभूषण दिए। जिसने जो कुछ माँगा (जिस वस्तु की कामना की) राजा ने प्रेम से उन्हें वे वस्तुएँ दीं। सभी ब्राह्मणों को भक्तियुक्त हो प्रणाम किया और उनके आशीर्वाद प्राप्त करते हुए ॥ ४५० ॥

—उन्हें श्रेष्ठ दिव्य वस्त्र (और) आभरण देकर, अकलंक चित्त हो अवभृथ (यज्ञांत का) स्नान किया। (उधर) श्रीमहित (शोभा-सम्पन्न) हो (राजा के) ऋष्यश्रृंग के द्वारा पुत्रकामेष्टि करने पर, वहाँ आकर क्रमशः अपने-अपने यज्ञभाग प्राप्त करनेवाले देवताओं ने रावण के बारे में अपने मन में विचारा। ॥ ४५३ ॥

ब्रह्माजी से देवताओं की गुहार

—ब्रह्मा को देख, प्रणाम कर, खड़े हो, (देवताओं ने कहा)—‘हे ब्रह्माजी ! आप के वर की शक्ति से पंक्तिकंधर (रावण) प्रविमल आचार-सम्पन्न (निष्ठावान्) व्यक्तियों, ब्रह्मर्षियों, देवताओं तथा मुनियों को सता रहा है।

वाडन्न गुलगिरुल्वडवड वडकु। वॆडिमि सूपग वॆऱचु भास्करुडु
वीकतो ननलुंडु वॆलग शंकिचु।दॆकुव सॆडिगालि दिरुगंग वॆऱचु४६०
नन्निशाचरु गन्न नाटोपमॆसग। मुन्नीरु कडलॆत्ति म्रोयंग वॆरचु
नेपुन गन्नप्पुडॆल्ल मम्मेचु। बापात्मुडगुनट्टि पंक्तिकंधरुनि
नंतंबु नॊन्दिचु ना युपायंबु। जिंतिपवलयु नी चित्तंबुलोन'
ननवुडु ना तॆऱंगंतरंगमुन। गनि ब्रह्म मुनिदेवगणमुनीक्षिंचि
'यमरुलचे जावडसुरुलचेत। समयडु गंधर्व समितिचे जॆडडु
रजनीचरुलचेत ग्रागडॆन्नडुनु। भुजगसंघमुलचे बॊलियडॆन्नडुनु
यक्षुलचे नीलगडालंबुलोन। बक्षियूधंबुचे बडडु वानिकिनि
वरमिच्चुनपुडु वाक्रुव्वडय्यॆ। नरुल गावुन वाडु नरुलचे जच्चु
विशदंबुगा निंक विनुडु हिरण्य। कशिपुडु लोकमुल् गारिंचु नाडु
नरसिह रूपंबु नारायणुंडु। धरियिंचि वानि निदारिंचिनाडु४७०

(आपके द्वारा प्रदत्त) दारुण वर-शक्ति के कारण, हे कमलासन ! वह दुर्निवार बना हुआ है। (वह) देवताओं के साथ इन्द्र को पकड़कर, उन्हें अपमानित करते हुए, बाहुदर्प (बाहुबल के गर्व) के कारण सताता है। गन्धर्व, यक्ष आदि (देव) गणों (और) मुनियों को बन्धनों में डाल देता है, साधुओं को पकड़कर कष्ट देता है। उसके नाम से समस्त पर्वत थर-थर काँपते हैं। ताप दिखाने में सूर्य डरता है। दर्प (औद्धत्य) के साथ जलने में अनल आगे-पीछे देखता है (शंकाकुल रहता है)। पूरी शक्ति के साथ चलने में पवन डरता है ॥ ४६० ॥

—उस निशाचर को देख सम्भ्रमयुक्त हो, समुद्र पूरी तरह से गर्जन करने के लिए भी डरता है। जब कभी (हमें) देखता है, उद्धत हो हमें सताता है। ऐसे पापात्मा पंक्तिकंधर (रावण) का अन्त करने के (उपयुक्त) उपाय (को) आपको मन में सोचना चाहिए।' ऐसा कहने पर उस विधान को (रावण के अत्याचारों को) अन्तरंग में देखकर (हृदयंगम कर) ब्रह्मा ने मुनि और देवगण को देखकर (कहा) '(रावण) अमरों के हाथ नहीं मरेगा, राक्षसों के हाथ नहीं मरेगा। गन्धर्वों की समिति (समूह) से नहीं मिटेगा। कभी (किसी दिन) रजनीचरों के हाथ समाप्त नहीं होगा। किसी भी-दिन भुजंगों (सर्पों) के समूह से नहीं मरेगा। युद्ध में यक्षों के हाथ नहीं मरेगा। पक्षिसमूह से नहीं गिरेगा (पराजित नहीं होगा)। (मेरे) वर देते समय उसने नर का नाम नहीं लिया इसलिए वह नरों से ही मरेगा। अब विशद रूप से सुनो। हिरण्यकशिपु के लोकों को सताते समय नारायण ने नरसिंह का रूप धारण कर, उसे चीर डाला था ॥४७०॥

वाडे वीडै विश्रवसुनकु बुट्टि । नाडु गावुन नेडु नारायणुंडु
वीनि निर्जिचु नव्विष्णुनि नभय । दानंबिक दगवेडवलयु'
ननि देवतलतोड ना ब्रह्म वलुक । ननुवॊन्द नंदऱु नप्पुडे कदलि
यमृताब्धिकडकेगि यच्युतुनि गांचि । विमलचित्तुलुनयि विनयमेपार
गरमुलु मुकुळिंचि कडु भक्ति म्रॊक्कि । यरुदुग सुरलप्पुडाविष्णु गूर्चि ४७५

देवतलु विष्णुवुनु नुतिंचुट

विनयसंभ्रममुलु वॆलयनिट्लनिरि । 'कनकाक्षशिक्ष! लोकत्रयाध्यक्ष!
वनजालयवक्ष! वसुमतीरक्ष! वनजाक्ष! माकु नॆव्वरु लेरु दिक्कु
नीवॊक्कडवुदक्क निक्कमीमाट । गोविंद! परिपूर्णगुण! चिदानंद!
देव! जगन्मय! देवादिदेव! । देवनिस्तारक ! दिव्यावतार !
शुभमूर्ति! शरणंबु सॊच्चिन माकु । नभयमिच्चितिगादॆ यमृताब्धि
दॊलि ४८०
तलपोय दानवदळन ! नी बाहु । बलविक्रमंबुल बरुगु लोकमुलु
भक्तवत्सल! निन्नु बरिकिंप दरमॆ । भक्तियोगमुदक्क बयलु माटलनु

—वही (हिरण्यकशिपु) यह (रावण) बनकर विश्रवसु के यहाँ पैदा हुआ है। इसलिए आज नारायण ही इसको निर्जित (पराजित) करेंगे। उस विष्णु के अभयदान को अब हमें अच्छी तरह से माँगना चाहिए।' ऐसा उस ब्रह्मा के देवताओं से कहने पर, उचितरूप से सभी (देवता) तभी निकलपड़े (और) अमृताब्धि (क्षीरसागर) के पास जाकर, अच्युत को देख, विमल चित्त से, अति विनयपूर्वक हाथ जोड़कर, अतिभक्ति से प्रणाम कर वे देवता विष्णु के प्रति—॥ ४७५ ॥

देवताओं का विष्णु की स्तुति करना

—विनय और संभ्रम को प्रकट करते हुए बोले:—'हे हिरण्याक्ष को दंडित करनेवाले ! त्रिलोकीनाथ ! वक्षस्थल में लक्ष्मी को धारण करने वाले ! वसुमती (पृथ्वी) के रक्षक ! वनजाक्ष (कमलनयन) ! आपके अतिरिक्त हमारा कोई शरण (सहायक) नहीं है। यह बात सत्य है। हे गोविन्द ! हे परिपूर्णगुण ! चिदानन्द ! देव ! जगन्मय ! देवाधिदेव ! देवों के रक्षक ! दिव्यावतार ! शुभमूर्ती ! पूर्वकाल में क्षीरसागर में आपकी शरण में आए हुए हमको (आपने) अभयदान दिया था ॥ ४८० ॥

—हे दानवदलन (राक्षसों का नाश करने वाले) ! आपके बाहुबल (और) विक्रम से (ही) (ये) लोक अवस्थित हैं। हे भक्तवत्सल !

मधुसूदनुड! निन्नु मदिलोन नम्मु । नधिक पुण्युलकैन्दु नापदलगलवै
जगदुद्भवस्थितिसंहारकृतुलु । दगविनोदंबुलै तनरु नी माय
नाधारभूतमै यखिललोकमुल । माधव ! ताल्चु नी महनीय तनुवु
अहिराजतल्प! नीयलरु वैभवमु । महिमसूडग नवाङ्मानसगोचरमु
शरणागतत्राण ! सर्वलोकेश ! । शरणार्थुलगु मम्मु जनुगाव नीकु
गावुन द्रैलोक्य कंटकुंडैन । रावणु बौलियिंचि रक्षिपु मम्मु
माकौक कार्यंबु मसलक चेसि । लोककीर्तुल बौन्दु लोकैकविनुत!
निर्मलचित्तुंडु निश्चलव्रतुडु । धर्यशीलुंडु नुत्तमगुणान्वितुडु४९०
नगुचुन्न दशरथुडश्वमेधंबु । दगजेसि मऱि शुचित्वमुन नुन्नाडु
काकुत्स्थवंशुनि कांतल दलप । नेकांतलनु वारिकैनसेयराडु
नरमूर्तुलौप्पंग नालुगंशमुल । सरिसजोदर! नीवु जनियिंपवलयु
वरशक्तिसुरल कवध्युडै लोक । परितापकरुडैन पंक्तिकंधरुनि
मुनुल, गंधर्व किंपुरुषुल, सुरल । बनिवडि नौञ्चिन पापात्मु जंपि

भक्तियोग के अतिरिक्त अन्य बातों (उपायों) से आपको देख (पहचान) सकना क्या सम्भव है ? (नहीं है।) हे मधुसूदन ! आप पर मन में विश्वास करने वाले महान् पुण्यात्माओं को कहीं विपत्तियाँ होती हैं ? (नहीं)। आपकी माया के कारण जगत् की सृष्टि, स्थिति, संहार के कार्य (आपके लिए) लीला मात्र ही तो हैं। हे माधव ! आपका महनीय तन अखिललोकों को आधारभूत हो कर धारण करता है। हे शेषशायी ! आपके विलसित वैभव (और) महिमा, ध्यान देने पर, आवाङ्मानसगोचर (वाक् और मन से अतीत) हैं। हे शरणागतत्राण ! (शरणागतों की रक्षा करने वाले) ! सर्वलोकेश ! हम शरणार्थियों की रक्षा आपको करनी चाहिए। अतः त्रिलोक-कंटक बने रावण का वध करके हमारी रक्षा कीजिए। हे लोकैकविनुत (स्तुत्य) ! हमारा एक कार्य अविलम्ब करके लोक (में) कीर्ति पाइए। निर्मलचित्त, निश्चलव्रती, धर्मात्मा, उत्तमगुणसमन्वित—॥ ४९० ॥

—दशरथ अश्वमेध यज्ञ पूरा करके परमशुचि (पवित्रता को प्राप्त) हुआ है। (उस) काकुत्स्थ-वंशी (दशरथ) की स्त्रियों का विचार करें तो कोई भी स्त्री उनकी बराबरी नहीं कर सकती। हे सरसिजोदर ! (कमलगर्भ) आपको चार अंशों में नरमूर्तियों (श्रेष्ठ नर) के रूप में जन्म लेना चाहिए। वर (की) शक्ति से जो देवताओं के लिए अवध्य है, जो लोक-परिताप-कर (लोक को दुख देनेवाला) है, जिस पापात्मा ने मुनियों, गन्धर्व, किंपुरुष, देवताओं को रुचिपूर्वक सताया है, उस पंक्तिकंधर (रावण) का वध करके,

सवनमुल् सेयिंपु संयमिवरुल । भुवनमुल् रक्षिपु पुंडरीकाक्ष !'
यनि विन्नपमुसेयु नमरुल जूचि । वनदगर्जितगति वनजाक्षुडनियॆ
'सुरलार! मीरिक सुखमुन नुंडु । डरिगि मर्त्यमुन ने नवतारमंदि
यादट बंधुमित्नामात्यपौत्न । सोदरयुतु दशास्युनि गीटडंचि
निंडार नेलॆद नियतितो बदुनॊ । कंडु वेलॆड्डुलु गुंभिनीतलमु५००
नजुनि वरंबुन नवनीतलमुन । रजनीचरेंद्रुंडु राजिल्ल गलिगॆ'
ननुचु वरंबिच्चि यजुनि वीड्कॊल्पि । यनिमिषुलनु बंपि यसुरारि
सनियॆ ५०२

दशरथुनकु यज्ञपुरुषुडु दिव्यपायसमॊसगुट

नप्पुडु विमल होमाग्नि लो नुंडि । यॊप्पॆडु पुण्यात्मु डॊक दिव्यमूर्ति
हरिनील नीलांगुडरुणांबरुंडु । तरुणार्कतेजु डुदग्रविक्रमुडु
परग बायसमुतो बसिडिपात्नंबु । गरमुन धरियिंचि ग्रक्कुन वॆडलि
तनु जूचि यद्भुतादरमुन लेचि । विनयाढ्युडै युन्न विभुनि वीक्षिंचि

संयमिवरों (मुनियों) से सवन (यज्ञ) करवाइए; और हे पुंडरीकाक्ष, (कमलनयन)! भुवनों (लोकों) की रक्षा कीजिए।' ऐसा कहकर विनती करने वाले अमरों को देखकर, घन-गरज के समान (गम्भीर स्वर में) वनजाक्ष (कमलनयन) ने कहा—'हे देवताओ! तुम लोग जाकर अब से सुखी रहो। मर्त्य (लोक) में मैं अवतार लूँगा और तब बन्धु, मित्न, अमात्य (मंत्री), पौत्न, सोदर (सहोदर-) युत हो दशास्यु (दशानन) का नाश करके, कुंभिनी (पृथ्वी-) तल पर ग्यारह हजार वर्ष तक, नियमपूर्वक परिपूर्ण रूप से, शासन करूँगा।॥ ५०० ॥

—अज (ब्रह्मा) के वर से (ही) अवनीतल (पृथ्वी) पर रजनीचरेन्द्र (यह राक्षसराज) विराजमान हो सका है।' यों कहते हुए वर प्रदानकर अज को विदाकर, अनिमिषों (देवताओं) को भेजकर असुरारि (दैत्यों के शत्नु, विष्णु) चले गए।॥ ५०२ ॥

दशरथ को यज्ञपुरुष का दिव्य पायस देना

तब विमल होम की अग्नि से शोभायमान, पुण्यात्मा-स्वरूप एक दिव्य मूर्ति जो हरिनील नीले (श्यामल) अंगवाला, अरुण अंबर (लाल रंग के वस्त्र) वाला, तरुणसूर्य के समान तेज वाला, उदग्र विक्रमी था, शोभा से पायस (खीर) से (भरे) स्वर्ण-पात्न को हाथ में धारण कर, अकस्मात् बाहर आया। उस (दिव्यमूर्ति) को देख, राजा (दशरथ) अद्भुत

‘भूनाथ! विनु यज्ञपुरुषुंड सुतुल । ने नीकु नीगोरि येतेंञ्चिनाड
नादट नी पायसान्नंबु पंचि । नी देवुलकु बेंट्टुनिष्ठतो’ ननिन
ननुरागमुनु बोंन्दि यवनीशुडतनि । ननयंबु बूजिंचि या पायसंबु
दा नंदुकोंनियें सुधाकलशंबु । जेनंदुकोंन्न शचीपति माड्कि५१०
नंत ब्राजापत्युडट्टु मायमैन । नंत:पुरंबुनकरिगि भूविभुड्डु
रमणुलेंदुर्कोंनि प्रमदाब्धि देल । नमर निर्मितमैन या पायसंबु
सगमु गौसल्यकु सगमुलो बुच्चि । सगमु सुमित्रकासगमुलो सगमु
गैककु निच्चि युत्कंठ नासगमु । ब्राकटबुंग सुमित्रकु निच्चें मर्रियु
नप्पायसान्नंबु लर्थि भुजियिंचि । यप्पुड्डु गर्भिणुलैरि वारेंलमि
दगिलि वारल जूचि दशरथेश्वरुड्डु । मिगुल नानंदिंचि मेंरसें जूपर्‌कु
मोंगि ऋश्यश्रृंगादि मुनुल भूपतुल।दगुनर्चनमु लिच्चि तग वीड्कोंलिपि
परमानुरागुडै पडतुलु दानु । धरणीशुडपुडयोध्यकु नेगुदेंञ्चें
दम यागभागमुल् दगिलि कैकोंन्न । यमरुलु दमलोकमरिगेंड्डु चोट५१९

(आश्चर्य और) आदर भाव से उठ खड़े हुए, विनय से सम्पन्न राजा को देख वे बोले—‘हे भूनाथ! सुनो, मैं यज्ञपुरुष हूँ। तुम्हें पुत्रप्रदान करने की इच्छा से आया हूँ। प्रीति के साथ यह पायसान्न (क्षीरान्न) अपनी देवियों में बाँट दो।’ ऐसा कहने पर राजा ने अनुराग पाकर (सन्तुष्ट होकर) उन (दिव्य पुरुष) की अतिशय पूजा की (और) उस पायस को यों ग्रहण किया जैसे शचीपति (इन्द्र) ने सुधाकलश को ग्रहण किया था। ॥ ५१० ॥

—तब प्राजापत्य (अग्निदेव) के अन्तर्द्धान हो जाने पर राजा अन्त:पुर में गए; रमणियों (रानियों) ने (उनका) स्वागत किया और (सभी) आनन्द में मग्न हो गए। (तब राजा ने) अमर-निर्मित उस पायस का आधा भाग कौसल्या को, (और) शेष आधे में आधा भाग सुमित्रा को दिया, बचे हुए भाग का आधा कैकयी को और आधा सुमित्रा को, फिर उत्कंठा के साथ, दिया। फिर उस पायसान्न को इच्छा से खाने (ग्रहण करने) के बाद, वे (रानियाँ) संतृप्त हो, गर्भवती हुईं। अनुरक्ति के साथ उन्हें देखकर दशरथेश्वर (राजा दशरथ) बहुत प्रसन्न हुए और देखने वालों को शोभायमान दिखाई पड़े। निदान (राजा ने) ऋष्यश्रृंगादि मुनियों (और) भूपतियों को उचित रूप से अर्चन (सम्मान) कर, समुचित रूप से विदा कर दिया। तब परमानुरक्त हो राजा स्वयं और (अपनी) स्त्रियों के साथ अयोध्या में आए। अपने अपने यज्ञ-भाग को प्रेम से लेकर अमरों के अपने लोक में जाते समय—॥ ५१९ ॥

ब्रह्म देवतलनु वानरुलुगा बुट्टुडनुट

नाकंजगर्भु डिंद्रादुल जूचि । 'लोकरक्षणकळालोलुडै शौरि५२०
धारुणि पै नवतारंबु सेय । मीरुनु दोड्पाटु मेकोनवलयु
नटुगान लोकहितार्थवर्तनुल । बटुपराक्रम रूप बल पयोनिधुल
बलगर्वमुल मिम्मु ब्रतिवोल्प जालु । बलियुर वानरपतुल बेक्कंड्र
गिन्नर गंधर्व खेचर यक्ष । पन्नगामर सिद्ध भामिनुलंदु
बुट्टिंपुडे मुन्नु पुट्टिंचिनाड । नेट्टन बलपयोनिधि जांबवंतु
नदियेट्टिदनिन ने नावुलिचुटयु । नुदयिंचे जिरतरायुष्मंतुंडतडु'
ननि ब्रह्म दमतोड नानतिच्चुटयु । विनि संतसिल्लि या वेल्पुलंदरुनु
अनिमिषपति वालि, ननलुंडु नीलु । निनुडु सुग्रीवु, सुरेज्युंडु दारु,
सिंधुवल्लभुडु सुषेणु गुह्यकुडु । गंधमादनु विश्वकर्मयु नलुनि
दिविजवैद्ययुगंबु द्विविदमैदुंलनु । दिविरि पर्जन्याधिदेवत शरभु५३०
गरुवलि हनुमंतु गडगि पुट्टिंप । धरणि बुट्टिंचिरि दक्किन सुरलु
दमतम यंशमुल् दगबुच्चि पेंचि । यमितशौर्युल वानराधीशवरुल

देवताओं को वानरों के रूप में जन्म लेने के लिए ब्रह्मा का कहना

—वह कंजगर्भ (ब्रह्मा) इंद्र आदि (देवताओं) को देखकर यों बोलेः— 'लोकरक्षण-कला में आसक्त होकर शौरी (विष्णु) के ।। ५२० ।।

—धारुणी (धरती) पर अवतार लेते समय, आपको भी (उनकी) सहायता के लिए तैयार हो जाना चाहिए। ऐसा हो, (इसलिए) तुम लोकहितार्थ वर्तन वाले, अत्यधिक पराक्रम, रूप, बल के पयोनिधि (समुद्र) के सम, बलगर्व (अत्यधिक बल) में अपने समान बलवान् कई वानरों को किन्नर, गन्धर्व, खेचर, यक्ष, पन्नग, अमर (तथा) सिद्ध स्त्रियों (के गर्भ) से उत्पन्न करो। मैं पहले ही बल-सिन्धु जाम्बवान् को जन्म दे चुका हूँ। वह कैसे ? मेरे जम्भाई लेने से उस चिरतर आयुष्मान ने जन्म लिया है।' इस तरह ब्रह्मा के अपने को आदेश देने पर, (उस आदेश को) सुनकर, वे सब देवता प्रसन्न हुए। (तब) इन्द्र ने वालि को, अग्नि ने नील को, सूर्य ने सुग्रीव को, बृहस्पति ने तारु को, वरुण ने सुषेण को, कुवेर ने गंधमादन को, विश्वकर्मा ने नल को, अश्वनीकुमारों ने द्विविद और मयंद को, पर्जन्य ने शरभ को, ।। ५३० ।।

—(और) वायु ने हनुमान् को उपक्रम कर जन्म दिया। (तब) अन्य देवताओं ने अपने अपने अंश (तेज) देकर, अमित शौर्य से युक्त श्रेष्ठ वानराधीशों को उत्पन्न किया। वे (सभी) वानर जगत् के आप्त-वर्तन

नावानरुल् जगदाप्त वर्तनुलु । दावाग्नि - तुल्युलुदग्र - विक्रमुलु
पर्वताकारुलै भासिल्लुवारु । सर्वलोकमुलंदु सरिलेनिवारु
भीमसाहसिकुलै पॆम्पारुवारु । गामरूपंबुल गरमॊप्पुवारु
दऱिमि यब्धुलैन दाटॆडुवारु । मॆऱमि कॊण्डलनैन मीटॆडुवारु
नखदंष्ट्रहेतुलै नलिग्रालुवारु । नखिल लोकोत्तरुलै यॊप्पुवारु
धारुणिनैन निदारिंचुवारु । नै रूढिकॆक्कि युदात्तुलै मिंचि
कॊन्दऱु सुग्रीवु गॊन्दऱु वालि । गॊन्दऱु हनुमंतु गॊन्दरु नीलु
गॊन्दऱु नलमैंदकुमुदुल गॊलिचि । यॆन्दु नभेद्युलै येपु दीपिंप५४०
मलयदर्दुर गंधमादन विंध्य । मुलु मॊदलगु शैलमुल, गाननमुल
बहुजल नदनदीप्रांत देशमुल । विहरिंचुचुंडिरि वेड्कतोनंत५४२
महनीय पायस महिमचे जेसि । यहिमांशुकुलु पत्नुलंदु गर्भंबु
ललवड नाधानमैनदि मॊदलु । कलिमि गैकॊनॆ बेदकौनुलॆन्तयुनु
नमृतान्नरुचि लोन नडगक वॆलिकि । गर्मकिंचॆनन देहकळ वॆल्लवारे,
रावणसाम्राज्य रम मुक्कु नल्पु । गाविंचुटकु सूचकमुलिवियनग

(शुभकारी), दावाग्नि तुल्य, उदग्र विक्रमी, आकार में पर्वत के समान, सर्वलोकों में असमान, भयंकर साहस से युक्त, शोभायमान, कामरूपी, आज्ञा पाकर समुद्रों को भी पार कर जाने वाले, (अपनी) शक्ति से पहाड़ों को भी उखाड़ फेंकने वाले, नख और दांत रूपी हथियारों से अतिशय शक्ति वाले, अखिल लोकोत्तर (अलौकिक) शक्तिशाली, पृथ्वी तक को चीर-फाड़ डालने वाले, उदात्त (वे वानर) प्रसिद्ध हुए। (उनमें) कुछ लोग सुग्रीव की, कुछ वालि की, कुछ हनुमान् की, कुछ नील की, कुछ नल, मयंद, कुमुद की सेवा करते रहे। वे (वानर) सर्वत्र अभेद्य हो, (अपनी) श्रेष्ठता से प्रकाशित होते हुए, ॥ ५४० ॥

—मलय, दर्दुर, गन्धमादन, विन्ध्य आदि पर्वतों (और) काननों तथा बहुजल से युक्त नद-नदी प्रान्तों में, बड़े आनन्द के साथ विहार करते रहे थे। ॥ ५४२ ॥

—तब उस महनीय पायस की महिमा से उस हिमांशुकुल (चन्द्रवंशी?) राजा की पत्नियों ने गर्भ धारण किया। तब से (गर्भधारण के बाद) लेकर उनकी (रानियों की) क्षीण कटियाँ पुष्ट होने लगीं। देह की कान्ति श्वेत पड़ने लगी मानों अमृतान्न (दिव्य पायस) की कान्ति भीतर ही भीतर न समा सकी, बाहर भी व्याप्त हुई। रावण की साम्राज्य-लक्ष्मी की नाक को कालिख लगाने की सूचनाएँ ये हैं, ऐसा कहने के लिए और समस्त

ननपत्यतादोषमंतयु वॆडल । मॊनसॆनादगे जनु मुक्कुल नल्पु
चॆक्कुलु पलुकॆक्कॆ जिट्टुमुलु बलिसॆ। निक्कॆ नाभुलु वळुल् नॆरुलकुवासॆ
दलचूपॆ गोर्कुलंतट ग्रमंबुननु । नॆललु दॊम्मिमदियु निंडिनपिदप ५४९

श्री रामावतारमु

वर्णित मधुमासवरशुक्लपक्ष । पूर्णयौ नवमिनि बुधवासरमुन ५५०
महि बुनर्वसुतार मध्याह्नवेळ । ग्रहपंचकमु नुदग्रस्थिति दनर
दॊलगक गुरुडु जंद्रुडु गूडियुंड । ललितकर्काटकलग्नंबुनंदु
सर्वलोकाधारु जगदेकवीरु । शर्वादि देवता संस्तूयमानु
दिव्यलक्षणकळा देदीप्यमानु । नव्ययु नसमानु नार्तार्तिहरणु
भव्यु जिदानंदु बरमकल्याणु । दिव्युल रक्षिचु दीनार्तिहरणु
गुणगणालंकारु गुरुकीर्तिहारु । फणिराजशयनु श्रीपति हृषीकेशु
ना कमलोदरु नर्द्धांशमुन । काकुत्सकुलु रामु गनियॆं गौसल्य
यदिति यिंद्रुनिगन्न यनुवुन दूर्पु । सुदति चंद्रुनि गन्न चॊप्पुन नंत
भूलोकविनुतमौ पुष्यनक्षत्र । लालितंबगु मीन लग्नंबुनंदु
गमलाप्तसमतेजु गमलाप्तवंशु । गमलाक्षि भरतुनि गनियॆं गैकेयि ५६०

अनपत्यता-(सन्तान-हीनता का) दोष मानों शरीर से निकल रहा हो, उनके कुचाग्र काले होने लगे। कपोल पतले पड़ गए। थूक ज्यादा आने लगी। नाभियाँ उभरने लगीं। त्रिवलियों की रेखाओं की कुटिलता दूर हो गईं। (अनेक वस्तुओं को पाने की) इच्छाएँ उत्पन्न हुईं। इस प्रकार धीरे-धीरे नौ महीनों के समाप्त होने पर, ॥ ५४९ ॥

श्रीराम का अवतार (जन्म)

—प्रशंसनीय मधुमास (चैत्रमास) के श्रेष्ठ शुक्लपक्ष में, पूर्ण नवमी तिथि, बुधवार को, ॥ ५५० ॥

—पुनर्वसु नक्षत्र में, मध्याह्न के समय, ग्रह-पंचकों के उच्चस्थिति में शोभायमान रहते समय, गुरु और चन्द्र के अचंचल योग के रहते हुए, ललित कर्क लग्न में, सर्वलोकाधार, जगदेकवीर, शर्व (इन्द्र) आदि देवताओं से स्तुत्य, दिव्य लक्षणों से देदीप्यमान, अव्यय, असमान, आर्तजनों की आर्ति को हरने वाले, भव्य, चिदानन्द, परमकल्याण (प्रद), देवताओं के रक्षक, दीनार्तिहरण, गुणसमूह से अलंकृत, महान् कीर्ति से युक्त, शेषशायी, श्री (लक्ष्मी के) पति, हृषीकेश, उस कमलगर्भ (विष्णु) के अर्द्धांश के रूप में, काकुत्स्थवंशी श्रीराम को कौसल्या ने जन्म दिया।

प्रणुतिंपदगुनट्टि फणितार यंदु । गणितकर्कटकलग्नंबुन गवल
धवळलोचन सुमित्रादेवि मित्र । चरितुल लक्ष्मण शत्रुघ्नुल गनें
दिविम्रोसें नपुडु देवदुंदुभुलु । दिविनाडिरपुडु देवकामिनुलु
सॊंरिदि बुव्वुलवान सोनलै कुरिसें । बरितोषमंदिरि ब्रह्मादि सुरलु
गलय नयोध्यलो गलवारलेंल्ल । वेंलसिरुत्सवमुल वीरु वारनक
अप्पुडु दशरथुडनघु वसिष्ठु । रप्पिंचि जातकर्ममुल सेयिंचि
पुत्रोत्सवंबुनु बॊंरयिंचें नेंलमि । नेत्रोत्सवंबुगा निखिल पौरुलकु
बुरुडु दीऱिन यंत बुण्याहवेळ । 'वरुस ना सुतलकु वंशोन्नतुलकु
नामकरणमुलु नलुवुरकिप्पु । डेमरकीवु सेयिंपु वसिष्ठ'
यनवुडु 'नौगाक' यनि तन मदिनि । गनुगॊंनियतडुनु गौसल्यसुतुकु ५७०
रमुक्रीडयनि धातु राजिल्लुचुंड । रमयति यननॊंप्पु रामनामंबु
कैकेयि तनयुंडु घन बलान्वितुडु । सुकुमार तनुडु सुश्लोकुंडु गान
भरतनामंबुन बरुगु, सुमित्र । किरवैन सुतुलकु निपुसॊंम्पसग

जिस प्रकार अदिति ने इन्द्र को और प्राच्य (दिशा)-सती ने चन्द्र को जन्म दिया था, उसी प्रकार भूलोक-विनुत (प्रख्यात) पुण्य नक्षत्र युक्त मीन लग्न में कमलाप्त (सूर्य) सम तेज वाले सूर्यवंशी भरत को, कमलनेत्रों वाली कैकयी ने जन्म दिया। ।। ५६० ।।

—स्तुत्य फणितारा (आश्लेषा नक्षत्र) युक्त कर्क लग्न में तरल लोचनों वाली सुमित्रा ने समान चरित्र वाले जुड़वे लक्ष्मण और शत्रुघ्न को जन्म दिया। तब आकाश में देवदुंदुभियाँ बज उठीं, स्वर्ग में देवस्त्रियों ने नृत्य किया, पुष्पों की अत्यधिक वृष्टि धाराओं के रूप में होने लगी, ब्रह्मादि देवता परितुष्ट हुए, अयोध्या में रहने वाले सभी लोगों ने उत्सव मनाया। तब दशरथ ने पुण्यात्मा वसिष्ट को बुलाकर, जातकर्म करवाए। समस्त पौरजनों को नेत्रोत्सव प्राप्त हो, इस प्रकार आनन्द से पुत्रोत्सव मनाया। जात शौच के समाप्त होते ही एक पुनीत दिन को (राजा ने वसिष्ट से कहा) 'हे वसिष्ट ! क्रम से मेरे पुत्रों को, वंशोद्धारकों को, इन चारों को अविलम्ब आप नामकरण करवाइए।' (राजा के) ऐसा कहने पर, हामी भरकर, अपने मन में सोचकर उन्होंने (वसिष्ट ने) कहा कि कौसल्या के पुत्र को, ।। ५७० ।।

—'रम्' अर्थात् 'क्रीडा' नामक धातु के विराजमान होते देख, 'रमयति' अर्थ देने वाला रामनाम उचित रहेगा। कैकयी का पुत्र अधिक बलान्वित सुकुमार शरीर वाला, कीर्तिवान् होने से भरत के नाम से प्रवर्तित होगा। सुमित्रा के योग्य पुत्रों के सुन्दर तथा श्रेष्ठ गुणों का विचार करने से उनके

लक्ष्यंबु गुणमुलु लक्षिंचि चूड । लक्ष्मण शत्रुघ्नुलनु नाममॊदवु
गान वीरुलु महाघनपुण्यमहिमु । लीनलुवुरकुनु निवि नाममुलन
लक्ष्मी समन्वितुलकु रामभरत । लक्ष्मणशत्रुघ्न ललिताख्यलॆसग
नॊगि नामकरणंबुलॊप्प गाविंचि । तग नर्द्धकोटुलु दानंबुलिच्चॆ५७७

दाशरथुल बाल्यमु

वारुनु दल्लुलु वरुस दादुलुनु । बॊरामि दमु नर्थि बॊषिप बॆरिगि
कल्लरि नगवुल गन्नुलु दॆऱचि । यल्लनल्लन दप्पुटडुगुलु वॆट्टि
मल्लडिगॊनु त्रॊक्कुमाटलु नेर्चि । यॆल्लवारिकि जाल निपु लॊनर्चि५८०
कॊद्दिगा मुत्तॆम्पु गॊनबुवज्राल । मद्दिकायल डालु मलय जॆक्किळ्ळ
ब्राकटंबुग फालबालेंदु कळल । श्रीकराकृति राविरेकलल्लाड
बॊगडॊन्दु मगराल पुलिगॊळ्ळ गॊलुसु । जिगि डॆन्दमुलयंदु जिंदुलु द्रॊक्क
नॆडनॆड बलुपच्चले यड्डिगलुग । गडुनॊप्पु मॊलनूगंटलु मॊरय
मुव्वलंदॆलु पदंबुल रॊदल् सेय । नव्वुलाटल बाल्यनटनलेपंडग
विद्दॆलु नॆऱपुचु विभुनि मुंदऱनु । मुद्दलुगुलुकुचु मोहनाकृतुल

लिए लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न नाम (उपयुक्त) होंगे। इसलिए वीर, महाघनपुण्यमहिमा से युक्त इन चारों के ये नाम होंगे।' उन लक्ष्मी-समन्वित (राजकुमारों) को राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न आदि ललित नाम देकर (राजा ने) नामकरण-संकस्कार सम्पन्न किया और अर्द्ध कोटि (धन) दान में दिया। ।। ५७७ ।।

दाशरथियों का बाल्य (बचपन)

वे (बालक) माताओं तथा धाइयों के स्नेह और इच्छा से पालन-पोषण के कारण बढ़ने लगे। वे कृतक (भोली-भाली) हँसी के साथ आँखें खोलने लगे, धीरे-धीरे अटकटाते हुए चरण धरने लगे, बालोचित तुतली बोली सीखकर सभी लोगों को अत्यन्त आनन्द प्रदान करने लगे। ।। ५८० ।।

—कतिपय मोती (और) मनोहर वज्रों से बने कर्णालंकार की छबि (उनके) कपोलों पर प्रतिबिम्बित हो रही थी। स्पष्ट रूप से भालरूपी चन्द्रकला पर श्रीकर, पत्ते के आकार वाला आभूषण शोभा दे रहा था। श्रेष्ठ मणियों से खचित बघनखाओं के हार की शोभा वक्षस्थल पर विराज रही थी। स्थान-स्थान पर (बीच-बीच में) हरे रंग की मणियों से युक्त कंठहार था। अति सुन्दर करधनी के घुंघुरू बज रहे थे। घुंघुरूदार नूपुर चरणों में मुखरित हो रहे थे। हँसते-खेलते वे बालक्रीड़ाएँ करते

नंतना नलुवुरु नभिवृद्धि बॊन्दि । संततपुण्युलु समसत्त्वुलगुचु
दमलोन गवगूडि दशरथात्मजुलु । रमणीयमूर्तुलु रामलक्ष्मणुलु
भरतशत्रुघ्नुलु पायक चॆलिमि । निरतुलैयुंडिरि नॆगडि यॊकनाडु
मायाविनोदमुल्मरिगि याडगनु । नायॆड रघुरामुडाप्तुलु दानु५९०
निंडारु प्रेमतो नॆट्टलु गट्टि । चॆन्डुनु दंडंबु चॆलुवॊप्प बट्टि
तरमिडि याडॆडुतऱिनि गैकेयि । वरवुडामंथर वडि नेगुदॆञ्चि
चिट्टंटु चेतल जॆन्डु दट्टुटयु । गट्टल्क रामुडाकाष्टंबुचेत
नडचिन नॊक्क कालप्पुडे विऱिगॆ । दडयक यंदंद दमकिंचि रामु
नडरॆडु वेड्कतो नाडंग जूचि । दडयक रामुपै दगग्रूरमुंचि
विरिगिन कालितो वॆस गैकनगरि । करिगि तद्वृत्तांतमंतयु दॆलुप
दरमिडि कैकेयि दशरथाधिपुन । कॆऱिगिप नंतयु नॆऱिगि भूविभुडु
अलवसिष्ठुनि नयोध्यकु रार्विचि ।वलगॊनि म्रॊक्कि ‘यो वरमुनिचंद्र!
वीरिकि वेदादि विद्यलन्नियुनु । नेरुपु’ डनुचु ना नृपुडप्पगिंप
ननघुंडम्मुनिनाथु डट्ल कार्विचॆ ।जननाथु तनयु लासंयमि करुण६००

हुए राजा के सामने अतिप्रिय रूप में, मनोहर आकृतियों के साथ अपनी विद्याएँ प्रदर्शित करते थे। इस प्रकार विकास को प्राप्तकर, सतत पुण्यवान (और) सम सत्त्व (शक्ति) वाले होते हुए दशरथ के वे चारों पुत्र आपस में जोड़ियां बना लेते। रमणीय आकार वाले राम और लक्ष्मण तथा भरत (और) शत्रुघ्न (जोड़ी बनाकर) निरन्तर प्रेम भाव में मग्न रहते। वे एक दिन माया-बिनोद में मग्न होकर खेल रहे थे। उस समय रघुराम आप्त मित्रों और स्वयं, ॥ ५९० ॥

—बड़े प्रेम से जोड़ियाँ बनाकर, गेंद तथा डंडे को सुन्दर रूप से हाथ में लेकर अतीव प्रीति से खेल रहे थे। उस समय कैकयी की दासी मंथरा वेग से वहाँ आई और कुतूहलवश गेंद को रोक लिया। (इस पर) राम ने अत्यन्त क्रोध से उस डंडे से (उस पर) प्रहार किया, (जिससे) उसी समय उसकी टाँग टूट गई। (इसके पश्चात् भी) वह (मंथरा) वहीं रुक कर राम को अधिक उत्साह से खेलते देखकर उन पर क्रुद्ध हुई, (और तब) देरी न करके राम पर मन में क्रोध रखकर, टूटी टाँग से कैकयी की नगरी (महल) में जाकर, (उसने) वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया। कुतूहल से कैकयी ने दशरथ राजा को सुनाया। (यह) सब कुछ जानकर राजा ने उन वसिष्ट को अयोध्या में बुलाकर, भक्तिभाव से प्रणाम कर बोले, ‘हे श्रेष्ठ मुनिचन्द्र ! (आप) इनको वेद आदि सारी विद्याएँ सिखाएँ।’ यह

गरिहयारोहण क्रममुलॆंऱिंगि । वररथारोहण वैखरुल्दॆलिसि
यखिलवेदंबुलु नखिलशास्त्रमुलु । नखिल शस्त्रास्त्रविद्यलु नेर्चिरॊप्प
वारिलो रामुडवार्यशौर्यमुन । सारविवेकादि सद्गुणावळुल
देजरिल्लुचु विष्णुदेवुंडुगान । राजिल्लॆ ना दशरथुडुनु नंत६०४

विश्वामित्रुडु दशरथुनिकडकु वच्चुट

गॊडुकुल पॆण्ड्लिड्लु कॊमरॊप्प जेय । नडरि चिंतिप विश्वामित्र मौनि
वच्चि निल्चुटयु दौवारिकुल्दॆलिसि । वच्चि या दशरथवरु नर्थि जूचि
‘यवधारु देव ! विश्वामित्रमौनि । दिविरि वाकिट नेगुदॆञ्चियुन्नाडु’
अनवुडु दशरथुंडाप्तुल तोड । मुनि वसिष्टुडु दानु मुदमुतो नपुडु
परमेष्टि कॆदुरेगु पाकशासनुनि । करणि नॆदुर्कॊनि कडुभक्ति नॆऱगि
यम्मुनि गॊनिपोयि यर्घ्यपाद्यमुल ।नॆम्मि बूजिचिन नृपु जूचि यतडु६१०
‘कुशलमे प्रजलकु? गुशलमे नीकु? । गुशलमे नी मुद्दु कॊडुकु गुऱ्ऱलकु?

कहकर राजा ने बालकों को सौंप दिया, उस पुण्यात्मा मुनिवर ने वैसा ही किया। राजकुमारों ने उस संयमी की करुणा से, ॥ ६०० ॥

—हाथी-घोड़े की सवारी के क्रम को जानकर, श्रेष्ठ रथ के आरोहण की प्रक्रिया को जानकर, अखिल वेद, अखिल शास्त्र, अखिल शस्त्र-अस्त्र विद्याओं को उचित रीति से सीख लिया। उनमें राम अवार्य शौर्य, सार-विवेक आदि सद्गुणावलि से तेजस्वी बन, स्वयं विष्णुदेव होने से विराजमान हुए। उस (समय) दशरथ, ॥ ६०४ ॥

विश्वामित्र का दशरथ के पास आना

—(अपने) पुत्रों के विवाह मनोहर (उत्तम) रूप से करने के चिन्तन में प्रवृत्त हुए, (तो एक दिन) विश्वामित्र मुनि आकर (द्वार पर) खड़े हुए। द्वारपालों ने (उस बात को) जानकर उस दशरथ-वर की ओर इच्छा (प्रेम) से देखकर विनय की, ‘हे देव (प्रभू)! विश्वामित्र मुनि कुतूहलपूर्वक (कोई इच्छा लेकर) द्वार पर आए हुए हैं।’ तब दशरथ ने आप्त जन तथा मुनि वसिष्ट के साथ प्रसन्न भाव से, परमेष्ठी ब्रह्मा का स्वागत करने के लिए जाने वाले पाकशासन (इन्द्र) के समान, (विश्वामित्र की) अगवानी की। अति भक्ति से प्रणामकर, उस मुनि को ले जाकर, अर्घ्य-पाद्य (आदि) से सप्रेम पूजा की। राजा (दशरथ) को देखकर वे (विश्वामित्र) बोले, ॥ ६१० ॥

—‘(हे राजन्) तुम्हारी प्रजा सकुशल है न? तुम कुशलता से हो

विशदव्रताचार विनुत ! वसिष्ट!। कुशलमे ? मुनुलार ! कुशलमे ?’
यनिन
‘नेमिट गॊऽत लेदेमु धन्युलमु । ना मंदिरमु पावनम्मु चॆन्नोंद
भावितमूर्ति ! यो परम मुनींद्र! । नीवु विच्चेसिति नेडु माकडकु
गान लोकमुल ब्रख्यातुडनैति । मानवाधिपुललो मान्युंडनैति
वच्चिन कार्यँबु वलनॊप्प जॆप्पु । डिच्चमै जेसॆद ने कार्यमैन’
ननिन विश्वामित्त्रु डाराजु जूचि।‘जननाथ! दशरात्रसवनंबु दॊंडरि६१७

यज्ञरक्षणार्थमै रामुनि बंपुमनुट

कोरि ये जेयुचो ग्रूर राक्षसुलु । दारुणाकारुलिद्दरु वच्चि वच्चि
मा यागशाललो मांसरक्तमुलु । पायक कुरियुचु ब्रबल विघ्नमुलु
सेयुचुनुन्नारु क्षितिपाल ! माकु । ना यागमध्यंबुनं दलगरादु ६२०
अट्टु गान नी पुत्त्रु नभिरामु रामु । बटुसत्त्वु ग्रतुवॊप्प बालिचु कॊऽकु
गॊनिपोव वच्चिति ग्रूरुलद्दनुजु । लनि जाव रॊरुलचे नतनिचे गानि

न ? तुम्हारे लाड़ले पुत्र कुशल हैं न ? हे विशद व्रताचारविनुत ! (विशद व्रताचार के कारण विनुत (सराहनीय) हे वसिष्ट ! आप कुशल से तो हैं न ? हे मुनि ! आप (सब लोग) कुशल से हैं न ?’ (तब राजा ने कहा)- ‘हमें किसी बात का अभाव नहीं है। हम धन्य हैं। हे भावित मूर्ति ! हे परम मुनीन्द्र ! हमारे यहाँ आकर, (आपने) हमारे मन्दिर (घर) को पवित्र किया, इससे मैं (समस्त) लोकों में प्रख्यात (प्रसिद्ध) हुआ हूँ, (और) सभी राजाओं में आदरणीय बन गया हूँ। अपने आगमन का कारण सप्रेम बताइए। जो भी कार्य हो, इच्छा से उसकी पूर्ति करूँगा।’ राजा के ऐसा कहने पर विश्वामित्र ने उस राजा को देखकर कहा—‘हे जननाथ ! सप्रयत्न मैं दशरात्र-सवन (दसदिन वाला यज्ञ), ॥ ६१७ ॥

यज्ञ रक्षा के लिए राम को भेजने के लिए कहना

—करने का विचार कर (जब भी) मैं (आरंभ) करता हूँ तो भयंकर आकार वाले दो क्रूर राक्षस आ-आकर, हमारी यज्ञशाला में निरन्तर मांस (और) रक्त बरसा कर प्रबल विघ्न डालते हैं। हे क्षितिपाल (राजा) ! हम (ऋषियों) को यज्ञ-मध्य में (यज्ञ की सफलता के लिए) क्रोधित नहीं होना चाहिए। ॥ ६२० ॥

इसलिए तुम्हारे पुत्र अभिराम (मनोहर), महाबली राम को यज्ञ-रक्षा के लिए ले जाने आया हूँ। वे क्रूर राक्षस सिवाय राम के, युद्ध में और

नितनि महत्त्व मे नॆऱुगुदु ब्रह्म । सुतुडैन यी वसिष्टुडुनु नॆऱुगु
ननघ ! रामुडु बालुडनु बुद्धिमानु । मनघ ! नी पुत्रकुंडनु लोभमुडुगु
क्रतुकर्त क्रतुमूर्ति क्रतुभागभोक्त । यतडु लोकाराध्यु डतनि बुत्तॆम्पु
मतुल शस्त्राशस्त्रंबु लतनि केनित्तु । नतनिचे ग्रतुरक्ष यगुमाकु' ननुडु ६२६
बॆलुकुऱि मूर्च्छिल्लि पेद्द ब्रॊद्दुनकु । दॆलसि वॆल्वॆल बाऱि दीनुडै मिगुल
गलगि कंपिंचि गद्गद कंठुडगुचु । बलिकॆ विश्वामित्रु ब्रार्थिंचि नृपुडु
'रामुडु मुग्धुंडु रामुडु निसुवु । रामुडॆऱुंगडु रणकळाकेळि
बदियुनु नैदेंड्ल प्रायंबुवाडु ।कदलॆडि चिप्प कूकटि गलवाडु ६३०
परिकिंचि तनयंदु बगवारियंदु । नुरु बलाबलगतु लूहिंपलेडु
इट्टुवंटि पसिबिड्ड नॆट्लु वेडितिवि । कटकट घनदयाकलितुंडवय्यु
बहुचित्र शस्त्रास्त्रपरुलु राक्षसुलु । महित मायोपायमतुलु राक्षसुलु
निपुण संगरकळानिधुलु राक्षसुलु । विपुल बाहाटोपविभुलु राक्षसुलु
वारितॊ बोराड वशमॆ रामुनकु । वारॆड यितडॆड वरमुनिचंद्र

किसी से नहीं मारे जाएँगे । इनके (राम के) महत्त्व को मैं जानता हूँ (और) ब्रह्मा के पुत्र ये वसिष्ट भी जानते हैं । हे अनघ (पाप-रहित) ! 'राम बालक हैं' यह विचार छोड़ दो । हे अनघ ! 'मेरा पुत्र है' इस लोभ को छोड़ दो । वे (स्वयं) क्रतु (यज्ञ)-कर्ता, क्रतुमूर्ति, क्रतुभागभोक्ता हैं, लोकारध्य हैं । उन्हें भेज दो । मैं उन्हें अतुल शस्त्र-अस्त्र दूँगा । उनसे हमारे यज्ञ की रक्षा होगी ।' ॥ ६२६ ॥

(मुनि के ऐसा) कहने पर (राजा) विह्वल हो मूर्च्छित हो गए (और) बड़ी देर के बाद होश में आए । वे विवर्ण हो गए, दीन हो गए, अत्यधिक व्याकुल हुए, (शरीर-) कंपित हो गए, गद्गद-कंठ से, विश्वामित्र की प्रार्थना करते हुए राजा बोले, 'राम मुग्ध (नादान) है । राम (अभी) शिशु है । राम रण-कला-केलि (युद्ध-विद्या) को नहीं जानता । वह पन्द्रह साल का ही है । हिलते हुए (अभी सुदृढ़ नहीं बने) छोटे-छोटे बालों वाला है । ॥ ६३० ॥

—अपने तथा शत्रुओं के बल-अबल की परीक्षा कर सकने की शक्ति नहीं है । हाय ! बड़े दयालु होते हुए भी (आप) ऐसे छोटे बच्चे को क्यों माँग रहे हैं? राक्षस तो बहुचित्र (अनेक प्रकार के) शस्त्र-अस्त्रों से युक्त हैं । राक्षस तो महित (अधिक) माया-उपाय-मति वाले हैं । राक्षस तो निपुण-संगर (समर) कला के निधि हैं । राक्षस तो विपुल बाहुशक्ति के विभु (श्रेष्ठ) हैं । उनसे लड़ने की शक्ति राम में कहाँ है ? हे श्रेष्ठ मुनिचन्द्र ! वे कहाँ और राम कहाँ ? साठ हजार साल पृथ्वी पर शासन करने के बाद

इऱुवदिवेलेडु लवनि बालिंचि । तऱिदप्पि मुदसि यीतनि गंटि नेनु
इतनि बुत्तॆञ्चुट के जालनय्य । क्रतुरक्षकै विचारमुलेल मीकु ?
नेनु सेनलगूडि यीप्रॊद्दॆ कदलि । पूनि वच्चॆद निदॆ पॊंददु मी वॆनुक
मुनिनाथ ! मी यागमुन विघ्नकर्त । लगु राक्षसुल शक्तुलवि यॆन्तगलवु?
वारॆव्वरॆव्वरु ? वारिपेरेमि । यी राघवुडु वारि नॆभ्भंगि गॆलुचु?' ६४०
ननिन विश्वामित्रुडनियॆ भूपतिकि । 'मनु पुलस्त्यब्रह्म मनुमंडु खलुडु
आविश्रवसु कॊडुकखिलकंटकुडु । रावणु डुग्रसंरंभुडै पनुप
बलिसि मारीच सुबाहुलव्वारु । नलिरेगि यागविघ्नमुलु सेयुदुरु
रामुडॊक्कडु दक्क रणभूमि वारि । नॆमिचंदंबुन नॆदुरलेरॊरुलु' ६४४
अनिन नम्मक्कनि यधिपित मऱियु। मुनिनाथु तो बल्कॆ मोमोट लेक
'ब्रह्म नालववाडु परम साहसुडु । ब्रह्म चे वरमुलु वडसिनवाडु
अट्टि रावणुचेत नट्टु पंपु वडसि । नट्टि वारल गॆल्व नतडेमि चालु?
वारिलावॆऱुगक वच्चॆदननुचु ।मीऱि पल्किति ; निंक मॊल्लन जनुडु'

असमय, वृद्धावस्था में मैंने इसे जन्म दिया (प्राप्त किया) है। मैं इसे भेज नहीं सकता। आपको यज्ञरक्षा की चिन्ता क्यों ? मैं सेनाओं के साथ आज ही निकलकर सप्रयत्न आपके पीछे-पीछे चलूँगा। आप चलिए ! हे मुनिनाथ ! आपके यज्ञ में विघ्न डालने वाले राक्षसों की शक्तियाँ ही कितनी हैं ? (मेरे सामने तुच्छ हैं।) वे कौन-कौन हैं ? यह राघव उन्हें किस प्रकार जीत सकेगा ? ।। ६४० ।।

—(राजा ने) ऐसा कहा। विश्वामित्र ने भूपति से कहा, 'मानव रूप में पुलस्त्य ब्रह्मा का पोता, विश्रवसु का पुत्र, खल (दुष्टात्मा), अखिल (लोक का) कंटक (रूपी) उस रावण की भयंकर प्रेरणा पर, प्रोत्साहन प्राप्त करके, मारीच (और) सुबाहु नामक (राक्षस) अति ही उद्धत हो यज्ञ में विघ्न डाल रहे हैं। एक राम के सिवा रणभूमि में, किसी भी तरह से अन्य कोई उनका सामना नहीं कर सकता।' ।। ६४४ ।।

ऐसा कहने पर आश्चर्य चकित हो राजा बिना हिचकिचाए मुनिनाथ से बोले, 'वह (रावण) चौथा ब्रह्मा है। परम साहसी है। उसने ब्रह्मा से वर प्राप्त किए हैं। ऐसे रावण से भेजे गए उन लोगों को जीतने में यह (राम) कैसे समर्थ होगा ? उन (राक्षसों) की शक्ति न जानकर, (मैंने अपनी) शक्ति से बाहर (काम के लिए स्वयं अपने भी) आने की बात कही थी। अब (आप) धीरे से चले जाइए।' ऐसा कहने पर, रोषपूर्ण लाल आँखों से (विश्वामित्र ने राजा की ओर) देखा। रुष्ट बने उनके गाल उत्कट रूप

नपुडु रोषताम्राक्षुडै चूचि । कनलुचु गटमुलुत्कटमुलै यदर
नॊडलॆल्ल गंपिप नुदरुचु बलिकॆ ।नडरि विश्वामित्रु डा राजु जूचि६५०
'काकुत्स्थ कुलजुल गति विचारिंप । कीकष्टदुर्भाषलेल भाषिंप ?
नेनु वच्चिन पनि येऱिंगिपुमंटि । पूनि चेसॆदनंटि बॊन्कॆदविपुडु
क्रतुरक्षकै रामुगडगि वेडुटयु । ध्रुतिमालि यीननि तॆग पल्कॆदीवु
सूनृतेतर निन्नु जूडगारादु । कान पोयॆद'नंचु गडगि पल्कुटयु
जलनिधुलिंकॆ भूचक्रंबु ग्रुंगॆ । गलगॆ लोकमुलु दिग्गजमुलु म्रॊग्गॆ
दिविजुलु वेरचिरि दिशलु गीड्वडियॆ । नवशमुल् गाजॊच्चॆ
नखिलभूतमुलु
अपुडु मौनि कोपाटोपवृत्ति । दप्पक भाविंचि दशरथु जूचि६५७

वसिष्टमुनि धैर्यमु चॆप्पुट

या वसिष्टुडु वल्कॆ 'नर्कवंशजुलु । भूवलयंबुन बॊन्करॆन्नडुनु
मिन्नंदु नी कीर्ति मीवारि कीर्तु । लन्नियु जॆडु गल्ललाडितिवेनि;

से हिलने लगे। सारा शरीर काँपने लगा। डाँटते हुए, रुष्ट विश्वामित्र ने राजा को देख कर यों कहा, ।॥ ६५० ॥

—'काकुत्स्थ-वंशजों की रीति पर विचार किए बिना ऐसे कटुवचन क्यों कह रहे हो ? (तुमने) आगमन का कारण बताने के लिए कहा था। (यह भी) कहा था, कमर बाँधकर आपका काम करूँगा। अब (उसी बात को) झुठला रहे हो। यज्ञ-रक्षा के लिए मैंने राम को चाहा (और भेजने के लिए) प्रार्थना की थी। (तुम) हिम्मत हारकर, निर्लज्ज हो, कहते हो कि नहीं भेजूँगा। हे असत्यभाषी ! तुम्हारा (तो) मुँह (तक) नहीं देखना चाहिए। इसलिए मैं (यह) जा रहा हूँ।' (मुनि के) इस प्रकार इच्छा प्रकट करके कहने पर जलनिधि (समुद्र) सूख गये। भूचक्र (पृथ्वी) धँस गया। (समस्त) लोक व्याकुल हो उठे। दिग्गजों ने घुटने टेक दिए। देवता भयभीत हो गए। दिशाएँ हतप्रभ हो गईं। सभी भूत (पंचभूत) अवश हो गए। तब मुनि के क्रोधावेश की कल्पना करके (परिणाम के बारे में सोच), दशरथ को देखकर, ॥ ६५७ ॥

वसिष्ट मुनि का धीरज बँधाना

—(मुनि) वसिष्ट यों बोले, "सूर्यवंशी (इस) संसार में कभी असत्य नहीं बोलते। यदि असत्य कहोगे तो आकाश को चूमने वाली (अति उन्नत) तुम्हारी कीर्ति और तुम्हारे लोगों (पूर्वजों) की कीर्ति नष्ट हो जाएगी।

‘निच्चॆद’ननि पलिक यीकुन्न बॊंलियु। नच्चुगा जेसिन यखिल धर्ममुलु ६६०
‘दशरथाधीशुंडु धर्मात्मु ‘डनग । विशद कीर्तुल नीवु विन ब्रसिद्धुडवु
पुडमिलो नवनीश! भुवनरक्षणमु । गडवंग धर्ममुल् गलवॆ राजुलकु
गान रामुनिनिच्चि गाधिनंदनुनि । माननीयुनि बंपु मानवाधीश !
‘घन बलोन्नतुलु राक्षसुली कुमारु । डनिकि दक्षुंडुगा’ डनुचु नीकॊंडुकु
शैशवंबुन किंत शंकिपनेल । कौशिकुडुंडंग गलुगुने भयमु
अधिप! विश्वामित्रु नत्युग्रतपमु । लधिकसामर्थ्यंबु लतिविचित्रमुलु
भूनाथ ! ई महापुण्युंडु देव । दानव गंधर्व दैत्युलकंटॆ
नॆऱुगु दिव्यास्त्रंबुलिम्महाभागु । डॆऱुगनि विषयंबुलॆन्दुनुलेवु
जनलोकनायक जययु सुप्रभयु । ननगदक्षुनिकूतु ला जयवलन
सुप्रभवलन रक्षोवधार्थमुग । सुप्रभुंडगु भृशाश्वुंडु वेर्वेर ६७०
नस्त्राकृतुल बुत्रु लरय नेबंड्र । शस्त्राकृतुल दनूजन्मुलेबंड्र
गामरुपंबुलु गलवारि गांचि । भूमीश ! यिच्चे नी पुण्यात्मुनकुनु

‘दूँगा’ ऐसा कहकर (वचन देकर), नहीं देने से, शुद्ध रूप से किए गए सभी धर्म (पुण्य) नष्ट हो जाएँगे। ॥ ६६० ॥

—‘दशरथ महाराज धर्मात्मा हैं’—ऐसी विशद कीर्ति से तुम प्रख्यात हो। हे अवनीश (राजन्) ! पृथ्वी में लोकरक्षा के सिवा राजाओं का अन्य (कौन-सा) धर्म (कर्त्तव्य) है ? इसलिए हे मानवाधीश ! राम को देकर माननीय गाधिपुत्र के साथ भेज दो। ‘राक्षस महाबल में उन्नत हैं, यह कुमार (राम) युद्ध के लिए समर्थ नहीं है’ ऐसा (कह कर) अपने पुत्र के शैशव के बारे में इतनी शंका क्यों ? कौशिक (विश्वामित्र) के रहते क्या कोई भय हो सकता है ? हे अधिप (राजन्) ! विश्वामित्र का अति उग्र तप और प्रबल सामर्थ्य अति विचित्र हैं। हे भूनाथ ! ये महापुण्यात्मा देव, दानव, गन्धर्व तथा दैत्यों की अपेक्षा अधिक दिव्यास्त्रों को (उनके प्रयोग को) जानते हैं। कोई भी ऐसा विषय कहीं भी नहीं है जिसे ये महाबाहु (महाबली) न जानते हों। हे जनलोक नायक ! दक्ष (प्रजापति) के जया (तथा) सुप्रभा नामक दो पुत्रियाँ थीं। उन जया से और सुप्रभा से (के द्वारा), राक्षसों के वध के लिए सुप्रभ हो भृशाश्व ने अलग-अलग ॥ ६७० ॥

—अस्त्र की आकृतियों में पचास, (और) शस्त्र की आकृतियों में पचास पुत्रों को, जो कामरूपधारी थे, प्राप्तकर, हे राजन्! इस पुण्यात्मा (विश्वामित्र) को दिया। उस कारण से ये मुनि अखिल शस्त्रास्त्रों के ज्ञाता हैं। तुम्हें डरना नहीं चाहिए। इस मुनि की महिमा के आधिक्य को, हाय! तुम समझ

नदिगारणंबुगा नखिलशस्त्रास्त्र । विदुडिम्मुनियु नीवु वेऱवंगवलव
दीमुनि महिम पेॅम्पेॅरुगलेवकट । यीमुनितो नाडि येल तप्पेॅदवु ?
यीमुनिचंद्रुतो नेग रामुनकु । सेमंबु जयमुनु सिद्धम्मु सुम्मु
इतडु रक्कसुल जयिंपगालेडे । हितमति नीपुत्रु निद्धचारित्रु
नलघु शस्त्रास्त्रविद्यल बेॅद्द सेय । वलसि यिच्चटिकि भूवर! वच्चेॅ गाक
कान रामुनि बंपु क्रतुवु रक्षिंप ।नी निर्मलात्मुनि किच्चुट मेलु'६७८

दशरथुडु कौशिकुनि वेॅन्ट रामलक्ष्मणुल बंपुट

अनि वसिष्टुडु पल्क·नात्मलो नम्मि । जननाथुडारामचंद्रुनि बिलचि,
बालभावमु जूचि बाष्पमुल् निंचि ।यालिंगनमुसेसि यर्थि दीविंचि,६८०
चिप्पकूकटि दुव्वि, चेॅक्किलि पुडिकि । तप्पक यॉक्किंत दडवु सिंतिंचि,
पुण्याहवाचनपूर्वंबुगाग । बुण्यव्रतंबुलु बुण्यहोममुलु
ग्रहपूजनलु सेसि, कमनीयवस्त्र । महितभूषणमुलु मनमारनिच्चि,
यॉगि दानु गौसल्ययुनु वसिष्टुंडु । दगिनदीवनलिच्चि, दशरथेश्वरुडु

नहीं सकते हो। इस मुनि को वचन देकर क्यों टालते हो ? इस मुनिचन्द्र के साथ जाने पर राम की भलाई (कुशल) और विजय अवश्य ही होगी। क्या ये विश्वामित्र राक्षसों को जीत नहीं सकते थे ? हित-चिन्तन के कारण, तुम्हारे पुत्र उज्ज्वल चरित्रवान् (राम) को महती शस्त्रास्त्र विद्याओं में बड़ा (श्रेष्ठ) बनाने (के उद्देश्य से ही) हे भूवर (राजन्) ! (वे) इतनी दूर आए हैं। इसलिए यज्ञ-रक्षा के लिए राम को भेजो। इस निर्मल आत्मा वाले (विश्वामित्र) को (राम को) देना ही कल्याणप्रद है ॥ ६७८ ॥

दशरथ का कौशिक के साथ रामलक्ष्मण को भेजना

इस प्रकार वसिष्ठ के कहने पर, मन में विश्वास कर, जननाथ (राजा) ने रामचन्द्र को बुलाया, उन्हें बालभाव से (बालक मानकर) देख, आँसू भरकर, गले लगा, हार्दिक रूप से आशीर्वाद दिया ॥ ६८० ॥

—उनकी लटों पर हाथ फेरकर, कपोलों को प्यार से स्पर्श कर, थोड़ी देर सोचते रहे। (फिर) पुण्याहवाचन पूर्वक, पुण्यव्रत, पुण्यहोम (हवन), (और) ग्रह पूजाएँ करके, मन को संतोष होने तक सुन्दर वस्त्र, महति भूषण दिए। क्रमशः स्वयं (राजा), कौसल्या और वसिष्ठ ने उचित आशीर्वाद दिए। दशरथेश्वर ने पुण्य मुहूर्त के समय पुत्ररत्न को, पुण्यात्मा गाधिसुत को दे (सौंप) दिया। प्रेम और साहस—इन दोनों भावों के

पुण्यलग्नंबुन बुत्ररत्नंबु । बुण्यात्मुडगु गाधिपुत्रुनकिच्चि,
नॆम्मियु दॆगुवयु नॆऱि बिरिगॊनग । 'नम्मुनि गॊलिचि पॊम्म'नि
वीडुकॊलिपॆ ६८६

विश्वामित्रुडु रामलक्ष्मणुल दोड्कॊनि पोवुट

नप्पुडु लक्ष्मणुं डा रामु गॊलिचि । तप्पनि भक्तितो दानुनु जनियॆ ।
बॊदिवि पुव्वुलवान बोरन गुरिसॆ;। वदलक यनुकूल वायुवुल्वीचॆ;
वरघोषमंगळ वाद्यमुल्म्रोसॆ;।सुरलाकसमु निंडि चूचिरि प्रीति; ६८९
नक्षीणतूण गोधांगुळित्राण । कक्षलंबिकृपाण कलितुलै दिव्य
शरचापहस्तुलै संयमिपिऱुद । गरमुसंप्रीतिमै गदलि राघवुलु
ना वनजाप्तुनि नर्थितो गॊलिचि । पोवु नाश्विनुलन बोवुचो वॆड्क ।
नुरुपुण्यमतु लर्धयोजनंबरिगि । सरयुवडग्गऱि श्रममु बॊन्दुटयु
रामसौमित्रुल रम्मनि यपुडु । दा मुन्नु दारुणतपमुचे गन्न
कनकगर्भुनि पुत्रिकल सर्वमंत्र । जननुल सर्वदा सौख्यदायिनुल
बल यतिबल यन बरगु मंत्रमुल । नॆलमिमै वारलकिच्चॆ गौशिकुडु

मन को अधिक घेर लेने पर (भी) 'उस मुनि की सेवा करते जाओ' ऐसा कह कर विदा किया । ॥ ६८६ ॥

विश्वामित्र का राम-लक्ष्मण को साथ ले जाना

तब लक्ष्मण उस राम की सेवा कर (प्रार्थना कर) अमित भक्ति (भाव) से स्वयं भी उनके साथ गए । (उस समय) घेरकर (चारों ओर से) पुष्पवृष्टि झड़ी लगाकर हुई, निरन्तर अनुकूल वायु चलने लगा, श्रेष्ठ ध्वनि से मंगलवाद्य बज उठे, आकाश में (झुंड) भरकर, प्रीति से देवताओं ने (उस दृश्य को) देखा । ॥ ६८९ ॥

—अक्षय तूणीर, गोधा, अंगुली-त्राण, कमर में लटकते हुए कृपाण से कलित (सुन्दर) बने, दिव्य शर (और) चाप (धनुष) हाथ में ले, संयमी (विश्वामित्र) के पीछे, अधिक संप्रीति से (बड़े उत्साह से) राघव (रघुवंशी) इस प्रकार जा रहे थे मानों अश्विनी (कुमार) वनजाप्त (सूर्य) की प्रीति से सेवा कर (उनके) पीछे जा रहे हों । अधिक पुण्यचरित्र वाले वे आधा योजन जाकर, सरयू (नदी) के निकट पहुँच (पहुँचते-पहुँचते) थक गए । तब राम (और) सौमित्र को बुलाकर, प्रसन्न हो, उन्हें कौशिक ने बला, अतिबला नाम से अभिहित मंत्रों का उपदेश दिया तथा सर्वमंत्रों की जननियाँ

आ रामलक्ष्मणुलामंत्रशक्ति । नारूढ रवितेजुलै सॊम्पुमिगिलि
नाकलि नीरुवट्टादिगा रुजलु । सोकक बलवृद्धि शोभिल्लिरंत
सरयूनदीतटस्थलि नाटि रात्रि । दरुणकोमल दर्भतल्पंबुलंदु
गौशिकुचे बुण्यकथलॊप्प विनुचु । दाशरथुलु प्रमोदमुन निद्रिंप,७००
ना गाधितनयुंडु ना प्रभातमुन । वेगंबॆ मेल्कनि वेड्क चित्तमुन
दनरंग नट दृणतल्पंबुलयंदु । गनुमोड्चियुन्न राघवुल वीक्षिंचि
'यरुणोदयंबय्यॆ ननघात्मुलार ! । निरुपम पूर्वाह्ण नित्यकृत्यमुलु
वलयु नेमंबुलु वरुस गाविंप । वलयुट मेल्कनवलयु मी' रनिन
दॆलिसि सन्ध्याविधुल् दीर्चि कौशिकुन । कलरु चित्तमुलतो नतिभक्ति
म्रॊक्कि
तरणिवंशोत्तमुल् दार्थि जनुचु । सरयू - सूरापगा - संगमंबुनु
बहुसहस्राब्दमुल् पायनि नियति । बहुतपंबुलु सेयु परमसंयमुल७०८
गनुगॊनि संतोषकलितुलै गाधि । तनयुतो बलिकिरा दशरथात्मजुलु;

(आधारभूत) तथा सर्वदा सौख्यदायी कनकगर्भ (ब्रह्मा) की पुत्रियों (शस्त्रास्त्रों) को दिया, जिन्हें उन्होंने पहले दारुण (घोर) तपस्या करके प्राप्त किया था। वे रामलक्ष्मण उस मंत्रशक्ति से सूर्य (के समान) तेजस्वी हो, सुन्दरता से अधिक सम्पन्न हो, भूख, प्यास आदि रुजाओं (संकट) से मुक्त हो, बलवृद्धि से शोभायमान हुए। तब सरयू नदी के किनारे, तरुण कोमल कुश-शय्याओं पर, कौशिक से पुण्यकथाएँ अच्छी तरह सुनते हुए, प्रमोद से दाशरथी (दशरथ के पुत्र) सो गए। ॥ ७०० ॥

—वह गाधितनय उस (दिन) प्रभात-समय तड़के ही जागकर, मन में प्रसन्नता अधिक होने पर, तृणशय्याओं पर, आँखें बंद किए हुए (सोए हुए) राघवों को देखकर बोले, 'हे अनघात्माओ (पुण्यात्माओ)! अरुणोदय हो गया है। निरुपम पूर्वाह्ण (प्रातःकाल) के नित्यकर्म, आवश्यक नियम क्रमानुसार करने चाहिए। इसलिए आप लोगों को जागना चाहिए।' ऐसा कहने पर वे जगे और सन्ध्याविधियों से निवृत्त होकर, प्रसन्नचित्त से, अतिभक्ति से कौशिक को प्रणाम किया। (उसके बाद) तरणीवंशोत्तम (सूर्यवंश के उत्तम जन, राम-लक्ष्मण) बड़ी इच्छा से जाते हुए, सरयू और सुरापगा (गंगानदी) के संगम-स्थल पर पहुँचे। (वहाँ) कई सहस्राब्दियों से अनवरत नियम से बहुतप करने वाले परम संयमी (मुनि) जनों को देखकर, अत्यन्त प्रसन्न हो, दशरथ के उन पुत्रों ने गाधितनय से कहा, ॥ ७०८ ॥

अंगदेश वृत्तांतमु

'ऎव्वरि याश्रमंबिदि संयमींद्र ! । यॆव्वरुंडुदुरय्य ! यी तपोभूमि ?'
ननवुडु 'राम! यनंगाश्रममन । विनबडु निदि लोकविख्यातमगुचु ७१०
नी याश्रमंबुन नॆलमितो दपमु । सेयुचु लीलमै शिवुडुन्न जूचि
कंदर्पु डतिदर्प गर्वितुंडगुचु । निंदुशेखरु मीद नेयंग जूचि
यडरि महादेवु डधिकरोषमुन । तडयक फालनेत्रमु विच्चिचूड
वडिचॆंडि भस्ममै वसुमति बडियॆ; । बडुट ननंगाख्य बरगॆ लोकमुल ।
नंगसंगति ददीयाश्रम भूमि । यंगदेशंबय्यॆ नंतनुंडियुनु
अरुदार दपमुलीयाश्रमभूमि । जरियिंचु पुण्युलु चरितार्थुलॆन्दु ।'
ननुचु विश्वामित्रु डत्तॊरंगॆल्ल । विनुपिंचि या रघुवीरुलु दानु
निलिचि नाडावाहिनी संगममुन । विलसित स्नानादि विधुलनुष्टिंप
नानंदमंदि रय्याश्रमवासु । लैन मुनीश्वरु; लात्मल नॆरिगि
रमणीयमूर्तुल रामलक्ष्मणुल । नमिततपोधनुडैन कौशिकुनि ७२०
गॊनिपोयि वेड्कलु गॊनलॊत्तनपुडु । विनुतार्घ्य पाद्यादिविधुल बूजिंचि

अंगदेश का वृत्तांन्त

—'हे संयमीन्द्र ! यह किनका आश्रम है ? इस तपोभूमि में कौन रहते हैं ?' ऐसा कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)-'हे राम ! यह अनंगाश्रम के नाम से लोकविख्यात है । ॥ ७१० ॥

—इस आश्रम में संतृप्ति के साथ तप करते हुए, विलास (प्रसन्नता) से रहने वाले शिवजी को देखकर, कंदर्प (मन्मथ) ने अतिदर्प (अहंकार) से गर्वित हो, इंदुशेखर (चंद्रशेखर) पर (पुष्पबाण) चलाया था । (उसे) देख, रुष्ट हो महादेव ने अधिक रोष से, अविलम्ब भाल-नेत्र को खोलकर देखा । (उस अग्नि से कामदेव) शौर्य को खोकर भस्म हो पृथ्वी पर गिर पड़ा । (ऐसा) गिरकर वह लोकों में अनंग के नाम से प्रचलित हुआ । (उसके) अंग की संगति से वह आश्रमभूमि तब से अंगदेश हो गया (कहलाया) । अपूर्व इस आश्रम भूमि में तपस्या करते रहने वाले पुण्यात्मा चरितार्थ (कृतार्थ) हो जाते हैं ।' इस तरह विश्वामित्र ने वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया । उन रघुवीरों के साथ स्वयं भी वहाँ रुककर उस नदी-संगम में विलसित स्नानादि विधियों के अनुष्ठान पूरा कर आनन्दित हुए । उस आश्रम के वासी मुनीश्वरों ने (इस समाचार को) अपनी दिव्य दृष्टि से जानकर, रमणीय रूप वाले राम-लक्ष्मण (तथा) अमित तपोधनी कौशिक को, ॥ ७२० ॥

पुण्यकथागोष्टि बॊंदलि या रात्रि । पुण्यरात्रमु जेसि पुण्य संयमुलु
मऱुनाडु नित्यकर्मंबुलायेट । देरगॊप्प नंदऱु दीर्चिनमीद
'नी नाविकुडु नेर्चु नी येऱु गडप; भानुवंशजुलकु बदिलमी नाव'
यनुचु विश्वामित्रु डलरंग बलुक । मुनिवर्युलॆल्लरु मुदितात्मुलगुचु
सरसोक्ति संसार जलधि दाटिंचु । परतारक ब्रह्मभाव नाविकुन
करुदैन सरयुवु नर्थि दाटिंप । गरकौशलमु चाल गल्गु नाविकुल
वारक नियमिंप वसुधेशसुतुलु । वारिकि ब्रणमिल्लि वारि दीवनलु
वारक कैकॊनि वारु दम्मनुप । ना ऋषितो गूड ना नाव यॆक्कि
सरयुवु दाटुचो सरयुवु नडुम । गरमु विस्मयमंदि कौशिकु जूचि७३०
'यिवे महाध्वनुलु वॆल्लेसगुचुन्नवियु । दिवि नुब्बि, यिदियेमि तॆलुपवे'
यनुडु
'गर मॊप्पुमीऱुचु गैलासशिखरि । सरयुवु मानससरसि जन्मिंचि
पॊन्गारि साकेतपुरिचुट्टु गविसि । गंगतो गूडेडु करडुल स्रोत'
यनि मुनि सॆप्पिन नर्थितो स्रोक्कि । यनघुलन्नदि दाटि यरुगुचो द्रोव

—(अपने आश्रम) ले गये, (और) अत्यन्त आनन्द (उत्साह) के साथ विनुत (श्रेष्ठ) अर्घ्य-पाद्य आदि विधियों से (उनका) पूजन किया। पुण्यकथा की गोष्ठियों में मन लगाकर उस रात्रि को उन पुण्य संयमियों ने पुण्यरात्रि बना दी। दूसरे दिन उस नदी के किनारे सभी लोगों के निश्चित विधान से नित्यकर्मों से निवृत्त होने के बाद विश्वामित्र ने प्रमुदित होते हुए कहा कि 'यह नाविक (रामचन्द्र) (हमें) इस नदी (जीवन या संसार) को पार कराने में समर्थ है। यह नाव सूर्यवंशियों के लिए उपयुक्त है।' विश्वामित्र के इन सरस वचनों से सभी मुनिवर प्रमुदित हुए। भवसागर को पार करने वाले पर-तारक-ब्रह्मभाव-युक्त नाविक (राम) को सरयू पार कराने के लिए (मुनियों ने) अति कुशल नाविकों को नियमित किया। (तब) राजकुमारों ने उन (मुनियों) को प्रणाम किया और निरन्तर उनके आशीर्वादों को ग्रहण कर उनके बिदा करने पर उस ऋषि (विश्वामित्र) के साथ उस नाव पर चढ़कर सरयू पार करने लगे। (तब) सरयू के मध्य (मंझधार) (में पहुँचने पर) अत्यधिक आश्चर्य से (राम ने) कौशिक को देखकर (पूछा)—॥ ७३० ॥

—'ये (कुछ) महाध्वनियाँ आकाश तक व्याप्त हो रही हैं। बताइए यह क्या है?' ऐसा कहने पर विश्वामित्र ने कहा, 'बड़ी शोभा से कैलास शिखर पर, मानससरोवर में जन्म लेकर समृद्ध हो, साकेत नगर को चारों तरफ़ से घेरकर, गंगा नदी में मिलने वाली सरयू नदी की लहरों की यह

गरुलु सूकरमुलु गासरंबुलुनु । हरिणमुल् शरभंबुलजगरंबुलुनु
बुलुलु भल्लुकमुलु बॊदलु सिगमुलु ।गल महाटवि जॊच्चि घनुड्ड राघवुड्डु
'खदिर तिंदुक पूग खर्जूर निंब । बदरी वट प्लक्ष पाटली तरुलु
बहुळ कंटक लता परिवृत वृक्ष । सहितंबु निर्मानुष्यंबुनु नैन
यिव्वनभूमि मुनीश्वरचन्द्र ! । यॆव्वरियाश्रमं ? बॆऱिंगिपु' मनुचु
नडुग विश्वामित्रु डंतयु जॆप्प । दॊडगि या रामुनितो निट्टुलनियॆ७४०
'नलुक निंद्रुंडु वृत्रासुरु जंपि । मलकलुष प्राप्ति मलिनांगुडैन
सुरलुनु मुनुलुनु सुत्रामु निटकु । दुरितमुक्तुनि जेय दोड्कॊनि वच्चि
पुण्योदकंबुल बुण्यमंत्रमुल । बुण्याभिषेकमुल् पॊलुपार जेय
नामलकलुषंबु लनघ ! यी रॆन्डु । भूमुल निडि शुद्धि बॊन्दे वासवुड्डु;
मलयुक्तमैनदि मलदंबु, गलुष । कलितमैनदि यॊप्पुगा गरूशंबु
ननियु, बापघ्नंबुलनियु बॆरॊसगि । जनपदंबुन दॊल्लि जंभारि दनकु
नल वृत्रुवधपापमंदु दीऱुटयु । विलसित धनधान्य विभवमुल् बॊदल

गर्जना है ।' इस पर उन्होंने प्रेम से प्रणाम किया और (वे) अनघ उस नदी को पार करते जा रहे थे (तो) मार्ग में करि (हाथी), सूकर (सुअर), कासर (भैंसा), हिरन, शरभ, अजगर, बाघ, रीछ, श्रेष्ठ सिंहों से युक्त महाटवी (घोर जंगल) में प्रवेश किया । तब महापुरुष राघव (राम) ने पूछा, 'हे मुनीश्वरचन्द्र ! खदिर (कत्था), तिंदुक, पूग, निंब, बदरी, वट, प्लक्ष (पीपल), पाटल (आदि) तरुओं (तथा) बहुकंटक लता परिवेष्टित वृक्षों से युक्त यह निर्जन वन-भूमि किसका आश्रम है ? बताइए ।' ऐसा पूछने पर विश्वामित्र राम से सारा वृत्तान्त (यों) कहने लगे—॥ ७४० ॥

—(किसी समय) 'क्रोध से इन्द्र, वृत्रासुर का संहार कर, मल (पाप), कलुष-प्राप्ति से मलिनांग हुए । देवता (और) मुनि सुत्राम (इन्द्र) को पाप-मुक्त करने के लिए (यहाँ) ले आए (और) पुण्योदक (पवित्र जल), पवित्र मन्त्र (तथा) पुण्याभिसेचन, सुघड़ता से करने पर हे अनघ ! उन मल (और) कलुष को, इन दोनों भूमियों (प्रदेश) पर छोड़कर वासव (इन्द्र) शुद्ध हुए । जो मल-युक्त है वह मलद, जो कलुष-कलित है वह करूश कहलाया । उन जनपदों को पापघ्न (पापों को दूर करने वाले) नाम देकर, पूर्वकाल में जंभारि (इन्द्र) वृत्रासुर वध के पाप से वहाँ मुक्त हुए, इस कारण, उन नगरियों को विलसित धन-धान्य-वैभवों से युक्त

बॊलुपार वरमुला पुरमुलकिच्चि । वॆलयिंचॆ; निकनॊण्डु विनु
रघुराम ; ७४८

विश्वामित्रुडु रामुनकु दाटक वृत्तान्तमु देलुपट

धरणि दाटक यनु दानवुरालु । करुलु वेयिंटिकि गल लावु गलिगि
पॊलुपॊन्दु नी रॆण्डु पुरमुलु सॊच्चि।यलवुमै बाधिंचु' ननुडु राघवुडु७५०
'ऎव्वरु लाविच्चिरी यिंति किंत ?। यॆव्वरि निजपुत्रि यी दुष्टबुद्धि ?
यी पुरंबुलु रॆण्डु नेल कारिंचु । नी पापकर्मुरा ? लेऱिगिंपु' मनुडु
'नवनि सुकेतुडन् यक्षुंडु दॊल्लि । तविलि पद्मजु गूर्चि तपमाचरिंचि
यडरॆण्डु निष्ठमै नतनि मॆप्पिंचि । कॊडुकु वेडुटयुनु 'गॊडुकु नीकीनु;
वॆलसिन गजमुल वेयिंटि लावु । गल कूतु निच्चॆति गनुमु पॊम्मनिन
ना वरंबुन दानि नातंडु गांचि । भाविंचि सुंदुनि भार्यगा जेसॆ;
नतडव्वधूटि यंदतिघोर - सत्त्व । पतुल मारीच सुबाहुलन् सुतुल
बडसि लोकांतरप्राप्तुडौटयुनु । गॊडुकुलु दानुनु गूडि गर्वमुन

रहने का वर दे कर शोभायुक्त किया था। हे रघुराम ! एक और (बात) सुनो।' ।। ७४८ ।।

विश्वामित्र का राम को ताड़का का वृत्तान्त सुनाना

—'(इसी) पृथ्वी पर ताडका नामक (एक) दानवी, हज़ार हाथियों का बल रखती हुई, शोभायमान इन दो नगरों में प्रवेश कर, अपनी सारी शक्ति से (सब को) सताती रहती है।' ऐसा कहने पर राघव ने पूछा, ।। ७५० ।।

—'इस स्त्री को इतनी शक्ति किसने दी है ? दुष्ट बुद्धि वाली यह (स्त्री) किसकी पुत्री है ? यह पापिन इन नगरों को क्यों तंग कर रही है ?' ऐसा पूछने पर (विश्वामित्र ने कहा), 'प्राचीनकाल में (इस) पृथ्वी पर सुकेत नामक यक्ष ने आसक्त हो, पद्मज (ब्रह्मा) के प्रति तपस्या की थी। अतिशय निष्ठा से उसे प्रसन्न कर, पुत्र माँगा। (तब ब्रह्मा ने कहा) तुम्हें पुत्र (तो) नहीं दूँगा। विलसित हजार हाथियों का बल रखनेवाली पुत्री का वर देता हूँ। जाओ, उसे जन्म दो। (ब्रह्मा के) ऐसा कहने पर, उस वर से उसने उस पुत्री को प्राप्त किया। विचार करके, उसे सुन्द (नामक व्यक्ति) की पत्नी किया (विवाह किया)। उस (सुन्द) ने उस स्त्री से अति घोर शक्ति के स्वामी (भयंकर शक्तिशाली) मारीच (और) सुबाहु नामक दो पुत्रों को प्राप्त किया।

नार्यिति मऱि यगस्त्याश्रमंबुनकु । बोयि मौनुल सारॆ बॉंदिवि कारिंप
गलशुडापापकर्मुल जूचि । यलिगि 'राक्षसुलुगं' डनि शापमिच्चॆ७६०
नदियादिगा राक्षसाकृतुल् वूनि । यदयत मानवाहारमुन् गॊनुचु
दा निंदु वसियिंचि धरणि गारिंचु । दीनि जंपगलेरु तॆगुव नॆव्वरुनु,
नीवॊक्कडवु दक्क; नीचेतगानि । चाव; दाडुदि यनि चंपगादनकु;
मॆनय गोब्राह्मण हितमैन जालु । जनु जंप गामिनीजनुल राजुलकु;
दॊल्लि धारुणियॆल्ल द्रुंप जिंतिंचु । प्रल्लदुरालैन पडति मंथरनु
संपन्नमति विरोचनु कूतु वज्रि । चंपडॆ? यिदि प्रशस्तमु गादॆ यॆन्दु?
नॆऱय लोकंबु लनिद्रमुल् गाग । जॆऱुप जित्तंबुन जिंतिंचुटयुनु
नलिगि दृढव्रतयगु भृगुपत्नि । जलमॊप्प विष्णुंडु संपडे तॊल्लि?
यदिगान लोकहितार्थमै सतुल । बॊंदिवि चंपुटयुनु बुण्यंबॆ यनघ! "७६९

ताटक वध

यनिन विश्वामित्नु नतुल वाक्यमुलु । दन तंड्रि पनुपुनु दलचि
राघवुडु७७०

(तदनन्तर) वह लोकान्तर को प्राप्त हुआ (मर गया।) (तब) वह (सुकेत की पुत्री) (अपने) पुत्रों के साथ, गर्व से, अगस्त्य के आश्रम में जाकर, मुनियों को बार-बार तंग करने लगी। कलशज (अगस्त्य) ने उन पापकर्म वालों को देखकर, क्रुद्ध हो, शाप दिया कि राक्षस बन जाओ। ॥ ७६० ॥

—तब से शुरू करके राक्षस रूप धारण कर, निर्दयता से मानवाहार (मानवों को आहार रूप में) ग्रहण करती हुई, वह यहीं रहकर पृथ्वी को (लोगों को) कष्ट देती है। तुम्हारे सिवा इसे साहसकर कोई मार नहीं सकता। यह सिवाय तुम्हारे हाथ के, नहीं मरेगी। यह मत कहो कि (यह) स्त्री है, अतः नहीं मारना चाहिए। यदि गो-ब्राह्मणों का हित हो तो राजा लोग स्त्रियों को मार डाल सकते हैं। पूर्वकाल में सारे संसार को मार डालने का विचार करने वाली, मंथरा नामक प्रगल्भा स्त्री को, जो संपन्नमति (मतिमान) विरोचन की पुत्री थी, क्या इन्द्र ने नहीं मार डाला था? क्या यह कर्म जहाँ-कहीं प्रशस्त (स्तुत्य) नहीं माना गया है? (पूर्व में) दृढ व्रत वाली भृगुपत्नी ने लोकों को अनिद्र (अशान्त) बनाकर, नष्ट करने के लिए मन में विचार किया, (तो) क्या विष्णु ने स्वयं ईर्ष्यालु हो (उसको) नहीं मारा था? यही नहीं, हे अनघ! लोक-हित के लिए स्त्रियों को घेर कर (पकड़कर) मार डालना भी पुण्य ही है।' ॥ ७६९ ॥

'हाटकगर्भाभुडगु मौनिमाट । दाटक ताटक दंडितु' ननुचु
घनधनुर्घोषंबु गगनंबुनिंड । निनुचुटयु विनि निंड गॊपिंचि
कर्णकठोरमौ कार्मुकध्वनिकि । घूर्णितारुणनेत्रकुटिलास्य यगुचु
रॆन्डु हस्तमुलॆत्ति ऱॆक्कलतोडि । कॊन्ड ऱिव्वुन वच्चु कॊमरु दीपिप
विदिताट्टहासंबु वॆलिदंष्ट्ररुचुलु । वॆदसल्ल दिवियॆल्ल वॆस वॆल्लगिल्ल
जरणघट्टनमुल जटुलसत्त्वंबु । धरणिकि दॆलुपुचु दऱिमि यॆतॆन्चु
ताटक गनुगॊनि दशरथरामु । डाटोपमुप्पॊन्गननियॆ दम्मुनिकि;
"जूचिते लक्ष्मण! चूचिते दीनि?। नी चंद मीयंद मी युग्रदृष्टि !
दीनि जूचिन गुंडॆ दिगुलॆरिकैन । मानुने ? यटुगाक मर्दितु दीनि ।"
ननुचुंड गर्जन नाकसं बगल ।जनुदॆन्चु पदधूळि सकलंबु गप्प७८०
नलि मीऱि घोर दानवुरालु ऱालु । गलगॊनि कुऱिय राघवुडु गॊपिंचि
यनुपमास्त्रंबुल नम्महाशिललु । दुनुमाडि दानि चेतुलु रॆन्डु द्रुंचॆ;

ताड़का का वध

ऐसा (विश्वामित्र के कहने पर) विश्वामित्र के अतुलनीय वाक्यों का (और) अपने पिता की आज्ञा का स्मरण कर राघव ने, ।। ७७० ।।

—'हाटकगर्भ (ब्रह्मा) की आभा वाले मुनि के वचन को न टालते हुए, 'ताडका को दण्डित करूँगा' ऐसा कहते हुए (अपने) महान् धनुष की टंकार से सारे आकाश को गुंजरित कर दिया। (उसे) सुन (ताड़का) अत्यधिक रुष्ट हो, कर्णकठोर हो कार्मुक (धनुष) की ध्वनि के कारण चंचल और अरुण नेत्र तथा विकृत मुख वाली हुई। (वह) अपने दोनों हाथों को (ऊपर) उठाकर, (मानों) पंखोंवाले पर्वत के बड़े वेग से आने वाली शोभा के समान (झपटती हुई) प्रकट अट्टहास से, श्वेत दंष्ट्राओं की कान्ति को बिखेरती हुई, समस्त आकाश को, शीघ्रता से, उन्मूलित करती हुई, पदाघातों से अपनी प्रबल शक्ति का परिचय धरणी को देती हुई, दौड़ती हुई, आनेवाली (उस) ताड़का को देख, दाशरथी-राम संभ्रम से मन के उमड़ आने पर, भाई से (यों) बोले, 'देखा लक्ष्मण! देखा इसे? यह ढंग, यह रूप (और) यह उग्रदृष्टि (देखी)? इसको देखने पर किसके हृदय का भय कम होगा (किसे भय न होगा)? इसलिए मैं इसका वध करूँगा।' ऐसा कहते समय, (अपने) गर्जन से आकाश को फोड़ती हुई, आते समय चरण-धूलि से समस्त (संसार) को ढाँकती हुई, ।। ७८० ।।

—वह घोर दानवी, अधिक (भयंकरता को) पार कर, संक्षुब्ध होकर,

नप्पुडु लक्ष्मणुंडसुरेशु चॆलिय । कप्पाटु गावितुं ननि यन्न करणि
मुक्कुनु जॆवुलुनु मॊदलंट गोसॆ । नक्कामरुपिणि कक्कजं बॊदव;
मायलु धरियिंचि मऱियु बॆक्कम्मु । लायिंति गुरिय विश्वामित्रुडनियॆ;
‘ननघ, संध्याकालमगुचुनुन्नदियु । दनुजुल नॆन्दु संध्यल गॆल्वरादु;
नीविंक गृपमालि नॆलकॊनि दीनि । नी विश्वहितमुगा निट संपु’ मनुडु
गाधेय मुनि माट गडपक शब्द । वेधि बाणमुल नव्वॆड मायलडचि
पॆडपॆड नार्चुचु बिडुगुचंदमुन । नडतॆन्चुचुन्न दानविनि वीक्षिंचि
महितास्त्रमॊकटि सन्मऱगाडनेय । बहुरक्तधारलु पर्व ना वनित ७९०
यसुरशिक्षारंभमंददि रामु । डॊसगॆनो शरमुलकुपहारमनग,
ब्रळयमारुतमुन बगिलि संध्याभ्र । मिलगूलु तॆऱगुन निलगूलॆ दूलि;
यप्पुडानंदिंचॆ नखिलभूतमुलु; । नप्पुडानंदिचिरमरुलु मुनुलु;
ना रामु दीविंचि यालिंगनंबु । गारवबुंन जेसॆ गौशिकुडंत,

पत्थरों की वर्षा करने लगी। (तब) राघव ने क्रुद्ध हो, अनुपम अस्त्रों से उन महाशिलाओं को काट डाला, उसके (ताड़का के) दोनों हाथ काट डाले। तब लक्ष्मण ने उसकी नाक और कान जड़ से काट डाले, मानों वे यह बतलाना चाहते हों कि (आगे) मैं असुरेश (रावण) की बहन की भी यही दुर्दशा करूँगा। तब वह कामरूपिणी स्त्री, आश्चर्य को उत्पन्न करती हुई, माया-रूप धारण कर अनेक अस्त्रों की वर्षा करने लगी। (तब) विश्वामित्र ने कहा, ‘हे अनघ! संध्याकाल (निकट) आ रहा है (सन्ध्या होने वाली है)। सन्ध्या समय राक्षसों को जीता नहीं जा सकता। अब तुम दया (भाव) छोड़कर, दृढ़ हो कर इसे, इस विश्व के हित के लिए, यहीं मार डालो।’ ऐसा कहने पर गाधेय की बात को न टालते हुए, शब्दवेधी बाणों से उन तुच्छ मायाओं का दमन कर, भयंकर गर्जन करती हुई, बिजली (गाज) के समान आनेवाली राक्षसी को देखकर, एक महान् अस्त्र को (उसके) कुचाग्र पर चलाया। तब वह वनिता (अपने शरीर से) बहती हुई बहु रक्तधाराओं में, ॥ ७९० ॥

—[ऐसी लगी] मानों असुरों को दण्ड देने का उपक्रम करते समय वह (ताड़का) राम के शरों को (रक्त का) उपहार दे रही हो। वह (ताड़का) ऐसे पृथ्वी पर गिर पड़ी मानों प्रलय-मारुत से टूटकर सन्ध्या का आकाश धरती पर गिरा हो। तब अखिल भूत (समस्त प्राणी) आनन्दित हुए। तब देवता (और) मुनि आनन्दित हुए। उस राम को गले लगाकर कौशिक ने सम्मानित किया। तब देव, गन्धर्व आदि दिविजों के साथ देवेन्द्र (स्वयं) वहाँ आए; भगवान् श्रीराम के दर्शन कर, प्रार्थना की,

देवगंधर्वादि दिविजुलतोड । देवेंद्रुडचटिकेतॆन्चि, श्रीराम
देवुनि गांचि प्रार्थिचि पूजिचि । देवविधेयु गाधेयु वीक्षिचि,
'मम्मु रक्षिप निम्महि बुट्टिनट्टि । यिम्महात्मुनकु नीविम्म भृश्वाश्वु
संतानमैन यस्त्रमुलु शस्त्रमुलु । नंतयु' ननि चॆप्पि यरिगॆनु दिविकि;
नितुडंत ग्रुंकॆ; नय्यॆडनु नाडुंडि । मुनि मऱुनाडु रामुनि ब्रेम जीरि७९९

श्रीरामुनकु विश्वामित्रुडस्त्रशस्त्रमुलिच्चुट

'राम ! नी विक्रमरणकेळि सूचि । येमु मॆच्चितिमि; नीकिच्चॆदमिक
८००
नमरोरगासुर यक्षयुद्धमुल । समधिकमगु नस्त्रशस्त्रंबु' लनुचु
दनुशुद्धितोड सुस्थलिनि गूर्चुण्डि । मुनिपति रामु ब्राङ्मुखुनि गाविंचि
यमलमनस्कुडै यखिलंबु दलचि । क्रममुन दंडचक्रंबुनु धर्म
चक्रंबु मऱि कालचक्रंबु विष्णु । चक्रंबु शुक्रु वज्रंबनु नसियु
बाशिपाशमु धर्मपाशंबु गाल । पाशंबु नीशानु भयदशूलंबु
नॊगि शक्तियुग्मंबु नुग्रमै मिगुल । नॆगडु नुष्णानुष्णनिर्मिताशनुलु

पूजा की (और) देवविधेय (देवताओं की बात मानने वाले) गाधेय को देख, यह कह कर स्वर्ग को (लौट) गये कि 'हमारी रक्षा करने के लिए इस मही (धरती) पर जन्म लेने वाले इस महात्मा को आप भृशाश्व की सन्तान रूपी सभी अस्त्र-शस्त्रों को दीजिए ।' तब (इतने में) सूर्यास्त हो गया । वहाँ उस दिन रहकर, दूसरे दिन मुनि ने राम को प्रेम से (अपने पास) बुलाया और कहा—॥ ७९९ ॥

श्रीराम को विश्वामित्र का अस्त्र-शस्त्र देना

—'(हे) राम ! तुम्हारी विक्रम (युक्त) रणकेलि देखकर, हम ने सराहा है (प्रसन्न हुए हैं ।) । अब तुमको—॥ ८०० ॥

—अमर, उरग (नाग), असुर, यक्ष (के साथ) युद्धों में समधिक (श्रेष्ठ सिद्ध होने वाले) अस्त्र-शस्त्र देंगे ।' (ऐसा) कहते हुए तन-शुद्धि के साथ (शरीर को पवित्र बनाकर), सुस्थलि पर बैठकर मुनिपति (विश्वामित्र) ने राम को प्राङ्मुख (पूर्वाभिमुख) बैठाया । अमलमनस्क हो, अखिल (सबकुछ, सर्वेश्वर) का ध्यान करके, क्रमशः दंडचक्र, धर्मचक्र फिर कालचक्र, विष्णुचक्र, शक्र (इन्द्र) का वज्र और असि (तलवार), पाशिपाश (वरुणपाश), धर्मपाश, कालपाश, ईशान

नखिल दारुणमैन यमरमोदकियु । शिखरियु नन नुल्लसिल्ल गदल् रेन्डु
गंकाळमुनु घोरकपाल मुसल । कंकणाख्यंबुलु ग्रौंचबाणादि
शस्त्रंबु लोंगिनिच्चि सम्मदंबडर । नस्त्रंबु लाग्नेय मन नोप्पुनदियु
ब्राह्मंबु तेज:प्रभंबु नैंद्रंबु । ब्रह्मशिरंबुनु ब्रस्वापनंबु ८१०
नारायणंबु बैनाकंबु शिखर । दारुण सौर सुदामनंबुलुनु
ब्रशमननमुनु विलापनमु सत्यंबु । विशदप्रभल बोल्चु विद्याधरंबु
वायव्य सौम्य संवर्तास्त्रमुलुनु । मायाधरास्त्रंबु मानवमथन
शामन पैशाच संतापनमुलु । दामस मौसल धर्षणास्त्रमुलु
हयशिरंबुनु मायलर्डारिंचि चाल । जयमिच्चु गांधर्व सम्मोहनमुलु
सोरिदि नैषिकमुनु शोषणास्त्रंबु । नरुदुग नाग्नेयमनु सायकंबु
गरुड बाणंबुनु गौबेरशरमु । नारसिंहास्त्रंबु नागबाणंबु
वारिंपरानट्टि वैष्णवास्त्रंबु । वारक नुतिकेक्कु वैद्याधरंबु
रौद्रबाणंबुनु राक्षसास्त्रंबु । भद्रप्रदंबैन पाशुपतास्त्र
मोंगि गर्तरी चक्रमुलुनु मेघास्त्र । मगणितंबैनट्टि यस्त्रजालमुल८२०
नेलमि निच्चिन वानिनेल्ल गैकोनुचु। नलरि रामुंडम्महात्मुनि जूचि

(परमशिव) का भयद शूल, (और) क्रम से शक्तियुग्म (विष्णु-शक्ति और शिव-शक्ति), उग्र (और) अति प्रबल उष्ण-अनुष्ण निर्मित अशनियाँ (शुष्काशनि और आर्द्राशनि), सबसे दारुण अमर मोदकी, (और) शिखरी नाम से विराजमान दो गदाएँ, कंकाल, घोर कापाल, मुसल और कंकण नाम वाले, क्रौंच बाण आदि शस्त्रों को क्रम से दिया। सम्मोद के अधिक होने पर (शस्त्रों को देने के बाद) आग्नेय नाम से विराजित अस्त्र, ब्राह्म, तेज:प्रभ, ऐन्द्र, ब्रह्मशिर, प्रस्वापन, ।। ८१० ।।

—नारायण, पैनाक, शिखर, दारुण, सौर, सुदामन, प्रशमन, विलापन, सत्य, विशद प्रभाओं से युक्त विद्याधर, वायव्य, सौम्य, संवर्त (आदि) अस्त्र, (और) मायाधरास्त्र, मानवमथन, शामन, पैशाच-संतापन, तामस, मौसल, धर्षणास्त्र, हयशिर, मायाओं का प्रयोग कर, अधिक विजय दिलाने वाले गान्धर्व-सम्मोहन (नामक अस्त्र), क्रम से ऐषिक, शोषण, अद्वितीय आग्नेय नामक बाण, ।। ८१६ ।।

—गरुड़बाण, कौबेरशर, नारसिंहास्त्र, नागबाण, अवार्य (दुर्निवार) वैष्णवास्त्र, स्तुत्य वैद्याधर, रौद्रबाण, भद्र (कल्याण)-प्रद पाशुपतास्त्र (और) क्रम से कर्तरीचक्र, मेघास्त्र, अगणित अस्त्रजाल, ।। ८२० ।।

—(उपरोक्त सभी अस्त्रशस्त्रों को) प्रेम से देने पर, उन सबको ग्रहण

'मुनिनाथ! सकलास्त्रमुलु भवत्करुण ।गनि कृतार्थुडनैति ; गावुन निक
सललितंबुग नुपसंहरणास्त्र । मुल नॊसंगु' मटन्न मुदमंदि यतडु
सत्यवंतमु रभसमु बराङ्मुखमु । सत्यकीर्तियु दशाक्षमु नवाङ्मुखमु
ब्रतिहारतरमु मारणमुनु शुचियु । शतवक्त्रदैत्य धृष्टमुलु लक्ष्यमुलु
ग्रशनंबु गर वीरकनिकामरुचियु । दशशीर्षमुनु शतोदरमु ज्योतिषमु
विमलंबु मकरंबु विरुचि निष्कुलियु। ब्रमथनंबुनु सुनाभंबुनु सर्व
नाभंबु मऱि दुंदुनाभंबु बद्म । नाभंबु दृढनाभ नैराश्यमुलुनु
गायरूपंबु यौगंधरावरण । सौमनस विनिद्र संधानमुलुनु
मोहन विषमाक्षमुलु महानाभ । बाहुविधूत जृम्भकमुलु धान्य ८३०
धनमुलु वृत्तिमंतमु रुचिरंबु । नॆनय नर्चिर्मालि धृतिमालियनग
गामरूपंबुलुगल महास्त्रमुलु । भूमीशुनकु जॆप्पि पॊलुपाऱ मऱियु
निवियुनुगाक यनेकशस्त्रास्त्र । निवहमुल् रघुवंशनेतकु नॊसगि
तत्प्रभावंबुलु दन्मंत्रमुलुनु । दत्प्रयोगंबुलु ददुपसंहृतुलु
विलसिल्लु शस्त्रास्त्र विद्या रहस्य । मुलु सर्वमुनु दॆल्प मॊगि रामुनॆदुट
नंगारसदृशंबुलै कॊन्नि घोर । भंगुल धूमनिभंबुलै कॊन्नि
यनुपमदीप्तिरम्यंबुलै कॊन्नि । तनरारु बहुदिव्यतनुवुलै कॊन्नि

करते हुए, सन्तुष्ट होकर राम उस महात्मा को देखकर (बोले), 'हे मुनिनाथ ! सकल अस्त्रों को भवत् (आपकी) करुणा (कृपा) से प्राप्त कर, कृतार्थ हुआ हूँ। अतः अब इच्छा (प्रेम) से उपसंहरणास्त्रों को दीजिए। (ऐसा) कहने पर प्रसन्न हो उन्होंने (विश्वामित्र ने) सत्यवन्त, रभस, पराङ्मुख, सत्यकीर्ति, दशाक्ष, नवाङ्मुख, प्रतिहारतर, मारण, शुचि, शतवक्त्र, दैत्य, धृष्ट, लक्ष्य, ऋशन, करवीरक, निकामरुचि, दशशीर्ष, शतोदर, ज्योतिष, विमल, मकर, विरुचि, निष्कुलि, प्रमथन, सुनाभ, सर्वनाभ और दुन्दुनाभ, पद्मनाभ, दृढनाभ, नैराश्य, कामरूप, यौगन्धर, आवरण, सौमनस, विनिद्र, सन्धान, मोहन, विषमाक्ष, महानाभ, बाहुविधूत, जृंभक, ॥ ८३० ॥

—धान्य धन, वृत्तिमन्त, रुचिर, श्रेष्ठ अर्चि, मालि, धृति-मालि नामक कामरूप वाले महास्त्रों को शोभायुक्त विधान से भूमीश (राजा राम) को कहकर (देकर) और इनके अतिरिक्त अनेक शस्त्र-अस्त्र निवहों (समूहों) को रघुवंश-नेता को देकर, उनके प्रभाव, उनके मन्त्र, उनके प्रयोग, उनकी उपसंहृतियाँ (उपसंहरण के विधान), शस्त्रास्त्र-विद्या के शोभायमान रहस्यों को, सबकुछ (राम को) बताने पर, क्रम से राम के

परुवडि जन्द्रप्रभंबुलै कौन्नि । परिकिंप भानुदीप्तंबुलै कौन्नि
बहुळांधकार विभ्रममुलै कौन्नि । महितट्टाहासभीमंबुलै कौन्नि
यकलंकमूर्तलिट्मर नेतेंन्चि । मुकुळित करयुग्ममुललोड निलिचि ८४०
'ये कार्यमोंनरिंतु? मेमिट वनुपु? । माकेमियानति ? मनुजलोकेश !'
यनुडु 'ने दलचिनयप्पुडु मीरू । चनुदेंन्डु, पोंन्ड'न्न सकलास्त्रमुलुनु
वलगोंनि भक्ति नव्वसुमतीपतिकि। नेंलमितो म्रोंक्कुचु नेगें; नंतटनु,
मुनिनाथु जूचि केल्मोंगिचि राघवुडु। विनयंबु भक्तियु विश्वासमेंसग
'ननघ! कृतार्थुडनैति नी करुण!'। ननि विनुतिंचि विश्वामित्रु वेंन्ट
नरुगुचो नट वामनाश्रमभूमि । गरमोंप्पुटयु जूचि काकुत्स्थकुलुडु
'ई पर्वतमुचेंन्त निदियोंक्क वनमु । चूपुल किंपारि सोंम्पुल नलरि
पोंलुचु नानामृगंबुलु गलध्वनुलु । गल पक्षिकुलमुलु गलगि चेंन्नगुचु
नुन्नदि याश्रमंबो संयमींद्र ! । येंन्ननेंव्वरिदि ? यिदेंल्ल जंतुवुलु
सुखलील नुन्नवि चूड; निक्कडिकि । निलज्ञ! येंक्कडनी यज्ञभूमि? ८५०

समक्ष कुछ तो अंगार सदृश, कुछ घोर-भंगिमाओं में धूम सदृश, अनुपम-दीप्तिरम्य हो कुछ, कुछ बहुदिव्य शरीरों से विराजमान, उनके बाद चन्द्रप्रभा के समान कुछ, कुछ देखने पर भानुदीप्त, कुछ बहुलान्धकार-विभ्रम, कुछ महित-अट्टहास से भीम (भयंकर) अकलंक मूर्ति वाले (अस्त्र, शस्त्र), क्रम से आकर, मुकुलित कर-युग्मों से खड़े होकर बोले, ॥ ८४० ॥

—'हे मनुजलोकेश ! कौन-सा कार्य करें ? क्या आदेश है ?' (ऐसा) कहने पर 'मैं जब तुम्हारा स्मरण करूँ, तभी तुम लोग आ जाओ । (अब) चले जाओ ।'—ऐसा (राम के) कहने पर सभी अस्त्र भक्ति से उस वसुमती-पति की प्रदक्षिणा कर, प्रेम से चरण-स्पर्श कर चले गए । तब, मुनिनाथ को देख, हाथ जोड़, विनय, भक्ति, विश्वास से प्रकाशमान राघव बोले 'हे अनघ ! तुम्हारी करुणा (कृपा) के कारण मैं कृतार्थ हो गया हूँ ।' ऐसा (विश्वामित्र की) विनुति कर, विश्वामित्र के साथ चल पड़े । वहाँ (मार्ग में) वामनाश्रम भूमि को, अधिक सुन्दरता से विलसित होते देख, काकुत्स्थ कुलज (राम) ने पूछा—'इस पर्वत के पास यह एक वन है । यह देखने में सुन्दर, सौन्दर्य से पूर्ण, शोभायमान, नाना प्रकार के मृगों (पशु), कलध्वनियों से युक्त, पक्षि-कुल से समायुक्त, यह आश्रम शोभा दे रहा है । हे संयमीन्द्र ! यह किसका है ? यहाँ सभी जन्तु सुखलीला से हैं, यहाँ से हे सर्वज्ञ ! आपकी यज्ञभूमि कहाँ है ? ॥ ८५० ॥

यॆटनुंडि चनुदॆन्तु रेचि राक्षसुलु । चटुलोद्धतुलु नीदु जन्नंबु सॆऱुप ?
यागरक्षणमुगा नखिलराक्षसुल । वेगंवॆ निर्जितु विशिखाळि' ननिन
नक्कौशिकुडु जगदभिरामु रामु । जॆक्किलि वुणिकि संस्नेहुडै पलिकॆ;
'ननघ ! नी वॆऱुगनि यर्थंबुगलदॆ? । विनुमु नाचे विन वेडुकयेनि ;

श्रीरामुनकु विश्वामित्रुडु सिद्धाश्रम विषयमॆऱिंगिचुट

मुनु विष्णुदेवुडु मुदमुतो दपमु । गॊनकॊनि काविंचुकॊऱकुनै यिचट
युगमुलनेकंबु लुंडगा ननघ । मगु वामनाश्रममंदुरु दीनि ;
मऱियुनु सिद्धाश्रमंबुनु ननग । वऱलु नी याश्रमवनमु लोकमुल ;
जननाथ ! बलि विरोचनतनूजुंडु । घनराज्यमदमुन गर्वंबुमिगिलि
येचि मरुत्तुल निंद्रादिसुरुल । वेचि कारिंपंग विबुधुलु मुनुलु
नी याश्रमंबुन केतॆन्चि म्रॊक्कि । तोयजनाभुनितो निट्टुलनिरि;
८६०
'शरणागतप्रिय ! सर्वलोकेश ! । सरसिजोदर! माकु शरणंबु नीव;
पन्नुगा मम्मेचु बलि यनुवाडु: । चॆन्नॊन्द जन्नंबु सेयुचुन्नाडु ;

—आपके यज्ञ को बिगाड़ देने के लिए चटुल-उद्धत राक्षस कहाँ से दुर्निवार रूप (अतिशयता) से आते हैं ? याग-रक्षण के लिए सभी राक्षसों को, शीघ्र ही, विशिखाली (बाण-समूह) से मार डालूँगा ।' (राम के) ऐसा कहने पर, उस कौशिक ने जगदभिराम राम के गालों का स्पर्श करके, संस्नेह (भाव) युक्त हो कहा—'हे अनघ ! ऐसा कौन-सा अर्थ (विषय) है, जिसे तुम नहीं जानते हो? मुझसे (ही) सुनने का शौक है तो सुनो ।' ॥ ८५४ ॥

श्रीराम को विश्वामित्र का सिद्धाश्रम का विषय बताना

—'पूर्वकाल में विष्णुदेव मोद से, श्रद्धायुक्त हो, तपस्या करने के लिए यहाँ अनेक युगों तक रहे । अनघ हो (निष्पाप) इसे वामनाश्रम कहते हैं । और यह आश्रम-वन संसार में सिद्धाश्रम के नाम से भी प्रचलित है । हे जननाथ ! विरोचन का पुत्र बलि अपने घन (महान्) राज्य-मद के गर्व से प्रबल हो मरुत्, इन्द्र आदि देवताओं को अतिशयता से सताने लगा । (तब) विबुध और मुनि लोग इस आश्रम में आकर, प्रणाम कर तोयजनाभ से इस प्रकार बोले ॥ ८६० ॥

—'हे शरणागतप्रिय ! सवलोकेश ! सरसिजोदर । तुम्हीं हमारी शरण हो । हमें सताने वाला बलि नामक (व्यक्ति) शोभा से यज्ञ कर रहा है ।

अव्वारि दानमय्यज्ञवाटमुन ; । नेव्वरेमडिगिन निच्चुचुन्नाडु ;
क्रतुवु दीऽकमुन्ने काविंपु माकु । हित'मंचु ब्रार्थिंचि रेल्ल देवतलु ;
ना समयंबुन नदितो गूड । भासुर व्रतनिष्ठ बरगु कश्यपुडु
इम्मुल दपमु वेय्येडुलु सेय । सम्मदंबुन विष्णु साक्षात्करिंचे ।
ना वेळ गश्यपुडानंदमंदि । वेवेग नुतुलु गाविंचि 'सर्वेश !
नी महातनुवुन निखिललोकमुलु । सोमार्कलोचन ! चूचुचुन्नाड ;
नाद्यंतरहितुंडवगु निन्नु वेद । वेद्युनि शरणंबु वेडेद' ननिन
गरुण ना विष्णुंडु गश्यपु जूचि । 'वरमु नीकिच्चेद; वांछितंबेद्दि ?
८७०
यडुगुदुगा'कन्न नलरि कश्यपुडु । गडुभक्तितो गरकमलमुल् मोगिचि
'यतिबलोद्धति नाकु नदितिकि नीवु। सुतुडवै जन्मिचि सुरल रक्षिपु:
-मिदि कोर्कि नाकुनु नी देवतलकु; । मदिलो मन्निपु मम्मुनंदऱनु'
अनवुडु ना विष्णु वदितिगर्भमुन- । ननुपमंबगु तेजमडर जन्मिचि
वामनत्वमु दाल्चि वच्चि यद्दनुजु । भूमि मूडडुगुलु पोसगंग नडिगि
रेन्डडुगुलने धरित्रियु दिवियु । दंडिमै गोलिचि या दैत्यु बंधिचि

उस प्रसंग में यज्ञभूमि में जो कोई भी जो कुछ मांगता है, उसे वह दे रहा है। यज्ञ के समाप्त होने से पहले ही हमारा हित करो।' ऐसा कहते हुए सभी देवताओं ने प्रार्थना की। उस समय अदिति के साथ शोभायमान व्रतनिष्ठा में निमग्न कश्यप के सुन्दर ढंग से हजार-वर्ष तपस्या करने पर प्रसन्न होकर विष्णु ने (उन्हें) दर्शन दिए। उस समय कश्यप प्रसन्न होकर शीघ्रता से सन्नुति करके बोले—'हे सर्वेश ! हे सोमार्कलोचन वाले ! तुम्हारे महाशरीर में मैं समस्त लोक देख रहा हूँ। तुम आद्यन्तरहित और वेद-वेद्य हो। तुम्हारी शरण मांग रहा हूँ।' (ऐसा) कहने पर उस विष्णु ने करुणा से कश्यप को देख कहा—'तुम्हें वर दूँगा। इच्छा क्या है ? ।। ८७० ।।

—माँग लो।' (ऐसा) कहने पर प्रसन्न हो, कश्यप अतिभक्ति से कर-कमल जोड़कर बोले—'मेरे और अदिति के तुम अति-बलोद्धति से पुत्र रूप में जन्म लो और देवताओं की रक्षा करो। यह मेरी और देतवाओं की इच्छा है। हम सब का मन से सम्मान (इच्छापूर्ति) करो।' ऐसा कहने पर उस विष्णु नें अदिति के गर्भ से अनुपम तेजोयुक्त होकर जन्म लिया। वामनत्व को धारण कर, आकर, उस दनुज से अनुकूलता से तीन चरणों की धरती माँगी। दो पगों से ही पृथ्वी तथा आकाश को

'लोलत नी मूडु लोकमुल् वॆलय । नेलुमु नी' वंचु निद्रनकिच्चॆ ;
नदिमॊदलिदि वामनाश्रमंबय्यॆ; । निदि मदीयाश्रमं; बी पुण्यभूमि
सिद्धिंचु निट्टुतपस्सिद्धुलु गान । सिद्धाश्रमंबु ना जल्लु नॆल्लॆडल ;
नीवॆ वामनुडवै नॆगडि त्रिविक्र । मावतारमु दाल्चिनट्टि विष्णुडवु: ८८०

नाडुनु निदि नीवनंबु श्रीराम ! । नेडुनु ना रीति नीवनंबय्यॆ' ।
ननुचु गौशिकुडु निजाश्रमंबुनकु । जनि यंदु रामलक्ष्मणुल बूजिचॆ ;
नच्चटि मुनिजनंबंतयु मदिनि । मुच्चट मीऱ रामुनि बूजसेसे ;

विश्वामित्र यज्ञ रक्षणमु

नंतराघवुडु विश्वामित्रु जूचि । संतसंबुन 'मुनीश्वर ! नेडु मीरु
यागदीक्षकु जॊरुंडनुमानमुडिगि; । यागशत्रुलनॆल्ल नडचॆद नेनु ;
अनिन विश्वामित्रुडंत हर्षिंचि । मुनुल रप्पिंचि यिम्मुल दीक्षवडसि
यागवेदुल मुनुलर्थिगाविंप । यागांगमुलु पूर्णमयि वेदियॊप्पॆ;

गुरुता से नाप लिया, उस दैत्य को बाँध कर, 'सुन्दरता से इन तीनों लोकों पर शोभा से शासन करो' ऐसा कहते हुए इन्द्र को (लोकाधिपत्य) दिया। तब से लेकर यह वामनाश्रम प्रसिद्ध हुआ। यह मेरा आश्रम है। इस पुण्यभूमि में तप की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। अतः सर्वत्र यह सिद्धाश्रम कहलाता है। वामन रूप में अतिशयता से त्रिविक्रमावतार धारण करने वाले विष्णु तुम्हीं हो ॥ ८८० ॥

—उस दिन भी यह वन तुम्हारा ही था। हे श्रीराम ! आज इस प्रकार यह वन तुम्हारा हुआ।' ऐसा कहते हुए कौशिक ने अपने आश्रम में जाकर (पहुँचकर) राम-लक्ष्मण की पूजा की। वहाँ के सभी मुनि-जनों ने मन में बड़े प्रेम के साथ राम की पूजा की।

विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा

—तब राघव विश्वामित्र को देख, प्रसन्न हो बोले—'हे मुनीश्वर ! आज आप सन्देह छोड़कर (निश्चन्त हो कर) यज्ञ-दीक्षा ले लीजिए। मैं यज्ञ के शत्रुओं का दमन करूँगा।' (ऐसा) कहने पर, तब विश्वामित्र हर्षित हुए और मुनियों को बुलाकर, प्रसन्नता से (यज्ञ) दीक्षा ले ली। मुनियों ने चाहकर (मन लगाकर) यज्ञ की वेदियों का निर्माण किया। यज्ञ के (आवश्यक) अंगों से परिपूर्ण वेदी शोभायमान हुई। अंचित (शोभित) आज्य (घी) की आहुतियों के यहाँ-वहाँ (जगह-जगह पर होम कुण्ड में)

नंचिताज्याहुतुलंदंद दॊरुग । मिंचि यग्नुलु मंडि मिंटिकि ब्राक
होमाग्नि ब्रभविंचु नुन्नतध्वनुलु । सामादि वेद प्रसंग घोषमुलु
नातत देवताह्वानरावमुलु । होतल पुण्यमंत्रोरु नादमुलु ८९०
दिक्कुलॆल्लनु निंडि तिविरि घोषिंप। नक्कजमयि यागमटु चॆल्लुचुंड
रामभद्रुडु धनुर्धरुडनै मैत्रि । सौमित्रियुनु दानु जागरूकतनु
रक्कसुल् वच्चु मार्गमु मुन्नॆ यॆऱिंगि । यक्कौशिकुनि मौनियैयुन्न वानि
विश्वमंतयु दमोवृतमु गाकुंड । शश्वत्प्रभल गाचु चंद्रार्कुलनग
गाचिरि कंटिकि गनुऱॆप्पकरणि । नेचिन भक्ति नय्यॆड नैदुनाळ्ळु;
नलवुमै गव गूडि याऱवनाडु । बलिमि मारीच सुबाहुलेतॆन्चि
मेलिखड्गद्युतुल् मॆऱुगुलु गाग । ग्रालु कालांबुदोत्करमुलो यनग
बलमुलु दारु नुद्भट वृत्तिमिट । निलिचि गर्जनमुलु निगुडिंचि मिंचि
वदलक यय्यज्ञवाटंबुलोन । मदमुन नुप्पॊन्गि मांसरक्तमुलु
गुरियुचो होतल कोलहलंबु । गरिम सदस्युल कलकलध्वनियु
९००

पड़ने पर अग्नि (की ज्वालाएँ) अतिशयता से प्रज्वलित होकर आकाश तक फैल उठीं। होमाग्नि से उद्भूत उन्नत ध्वनियाँ, साम आदि वेदपाठ के घोष, निरन्तर देवताओं के आह्वान (निमन्त्रण) के रव, होताओं के पुण्यमन्त्रों के उरु (विशाल) नाद, ॥ ८९० ॥

—(उपरोक्त ध्वनियों के) सभी दिशाओं में (व्याप्त) होने पर, अधिक घोषित (मुखरित) होने पर, आश्चर्य के साथ यज्ञ के कार्य होते रहे तो धनुर्धारी राम स्वयं तथा भाई सौमित्री (लक्ष्मण) सावधानी से, राक्षसों के आने के मार्ग को पहले से ही जानकर, उस कौशिक के, जो मौन धारण किए हुए थे (यज्ञ की रक्षा करते रहे। मानों वे) समस्त विश्व को तमोवृत होने से, (अपनी) शश्वत्प्रभाओं से रक्षा करने वाले चन्द्र-सूर्य के समान थे। अत्यधिक भक्ति से वहाँ (उस यज्ञ भूमि में) पाँच दिन तक (उन्होंने वैसे ही) रक्षा की जैसे (नेत्र की) पलकें पुतली की रक्षा करती हैं। सबल हो, जोड़ी बांधकर, छठवें दिन जबरदस्ती मारीच (और) सुबाहु आए। श्रेष्ठ खड्ग-द्युतियों की चपला के समान (दिखाई देने वाले), वे बड़े-बड़े कालांबुद के समान लग रहे थे। बलयुक्त हो वे उद्भट वृत्ति (उद्धतगति) से आकाश में खड़े रहकर, अधिक गर्जन करते हुए, उद्धत होकर, (अपने प्रयत्न को) न छोड़कर, मद से फूलकर, यज्ञवाट (भूमि) में माँस और रक्त को बरसाने लगे। (तब) होताओं का कोलाहल, सदस्यों की बढ़ी हुई कलकल ध्वनि, ॥ ९०० ॥

बरिचारकुल दीनभाषणध्वनियु । बरिकिंचि विनि, रामभद्रुंडु वॊन्गि
'लक्ष्मण ! चूडु ना ला' बंचु विजय । लक्ष्मी धनुर्घोषलक्षणं बॆसग
नॆलकॊनि विनुवीथि निजदृष्टि निलिपि । बलुविडि वायव्यबाणमेयुटयु
नुरुवडि मारीचु नुव्वॆत्तुगाग । सरभसवृत्तिमै शतयोजनमुलु
गॊनिपोयि यऱिमुऱि ग्रूर राक्षसुनि । वनधि लोपल बारवैचॆ ना शरमु;
अडरि वज्रमुनकु नळिकि यंबोधि । बडिन मैनाकमै पडिन यय्यसुर
यॊकरीति दरि जेरि युग्रांशुकुलुनि । यकलंक विक्रमं बंदंद पॊगडि
दनुजुल बासि यातततनिष्ठतोड । ननयंबु ना सुचंद्राश्रम भूमि
शूरत विडिचि यासुर वृत्ति नडिचि । घोरतपंबु गैकॊनि सेयुचुंडॆ;
नऱिमुऱि रघुरामु डग्निबाणमुन । नुऱक सुबाहुनि नुरमेसि चंपॆ; ९१०
दक्किन राक्षसदळमुल नॊकट । जक्काडॆ मानवशरमहत्त्वमुन;
सुरलुमोदिंचि यच्चो बुष्पवृष्टि । गुरिसिरि; मुनिकोटि गॊनियाडॆ नतनि;
मुन्नु वृत्रासुरु मुनुमिडि चंपि । सन्नुतिपग देवसंघंबु गूडि
वॆलुगॊन्दु देवताविभुनि चंदमुन । बलुविडि रामुडु बाहुशौर्यमुन

—परिचारकों की दीन पुकारों की ध्वनि को देख सुनकर, रामभद्र ने झुक कर कहा—'हे लक्ष्मण ! देख लो मेरी शक्ति ।' (ऐसा) कहते हुए विजयलक्ष्मी की धनुष टंकार कर, दृढता से आकाशवीथि पर अपनी दृष्टि रख (एकाग्र कर) उसी क्षण उनके वाव्ययबाण के छोड़ते ही, उस (उस बाण) ने सफलता के साथ द्रुतगति से, सरभस-वृत्ति (शीघ्रगति) से शतयोजन ले जाकर (उस) क्रूर राक्षस मारीच को वनधि (समुद्र) में डाल दिया। वज्र (के आघात) से अंबोधि (समुद्र) में गिरे मैनाक (पर्वत) के समान, (समुद्र में) गिरा वह असुर किसी रीति से तट पर पहुँचकर, जगह-जगह उग्रांशु (सूर्य)-कुल (वाले, राम) के अकलंक विक्रम की सराहना करता हुआ, दनुजों को छोड़, आतत-निष्ठा से, निरन्तर उस सुचन्द्राश्रम भूमि में, शूरत्व की प्रवृत्ति को छोड़, आसुर-प्रवृत्ति का दमन कर, घोर तप करने लगा। शीघ्र ही रघुराम ने अग्निबाण से सुबाहु का संहार किया ॥ ९१० ॥

—शेष राक्षस-दल का, एकसाथ, एक मानव-शर से संहार कर दिया। सुर (देवता) मुदित हुए (और) वहाँ पुष्पवृष्टि की। (राम की) मुनिकोटि ने सराहना की। पूर्वकाल में वृत्रासुर का संहार करने के बाद, देवता-समूह के एकत्र होकर स्तुति करने पर, विराजमान देवताविभु (इन्द्र) के समान, उस क्षण राम बाहुशौर्य से यज्ञ के शत्रुओं को दंडित कर महान्-वैभव से विलसित हुए। अतिनिष्ठा के शोभित होने पर, विश्वामित्र तब समस्त क्रतुकर्म को सम्पूर्ण कर आए (और)

गडगि यज्ञारुल गडगि शिक्षिंचि । विलसिल्लॆ घनमैन विभवंबुतोड;
नतिनिष्ठ वॆलय विश्वामित्रुडंत । क्रतुकर्ममंतयु गडतेर्चि वच्चि,
‘नॆलकॊनि रघुराम! नी प्रसादमुन। गलगक चॆल्लिपगंटि नी क्रतुवु’
ननि‘कृतार्थुडनैति’ ननि कौगलिंचि। विनुतिंचि रामुदीविंचि हर्षिंचॆ;
ननघमानसुडु विश्वामित्रमौनि । यनुरागमुनु बॊन्दि यच्चोट दामु
भूवरुलारात्रि बुच्चि यिम्मुलनु । वेविन पूर्वाह्णविधुलाचरिंचि९२०
मुनुलकु ब्रणमिल्लि मुनुपडि गाधि । तनयुनि गनुगॊनि ‘तापसप्रवर !
यिक नॆय्यदि कार्य? मॆऱिंगिपु; नीकु । गिंकरुलमु; नीदु कृपकु बात्रुलमु’
अनिन नच्चटि मौनुलंदऱु गाधि । तनयु मुन्निडिकॊनि तामिट्टुलनिरि

मिथिलानगर प्रयाणमु

“जलजाप्तकुलवर्य! जनक भूविभुडु। चॆलुवॊप्प जन्नंबु चेयुचुन्नाडु
मनमंदुबोद मम्मनुजेशुनिंट । त्रिनयनु पाटिंचु दिव्यकार्मुकमु
गंधादिपूजल गरमॊप्पु देव । गंधर्वयक्ष राक्षस वीर वरुलु
मॊदलैन वारिकि मुन्ननेकुलकु । नदियॆत्त नॊक्किड नलविकाकुंडु

बोले—‘हे रघुराम ! तुम्हारे प्रसाद (कृपा) से, बिना क्षुब्ध हुए, इस क्रतु को सम्पन्न कर सका । मैं कृतार्थ हुआ हूँ ।’ ऐसा कह (राम को) गले लगा, स्तुति कर, राम को आशीर्वाद देकर, (वे) हर्षित हुए । अनघमानस उन विश्वामित्र मुनि के अनुराग को प्राप्त कर, वहाँ उस रात को राम ने अच्छे ढंग से बिता दिया । प्रातः पूर्वाह्न् विधियों से निवृत्त हो, मुनियों को प्रणाम कर, पहले गाधितनय को देख बोले—‘हे तापस-प्रवर । अब कौन-सा कार्य है (करना होगा) ? बता दो । (हम) तुम्हारे किंकर (दास) हैं । तुम्हारी कृपा के पात्र हैं ।’ (ऐसा) कहने पर, वहाँ के सभी मुनियों ने गाधितनय विश्वामित्र को आगे कर स्वयं यों कहा, ॥ ९२३ ॥

मिथिला नगर को प्रयाण

—“हे जलजाप्त (सूर्य)-कुल (वंश)-वर ! महाराजा जनक बड़ी शोभा के साथ यज्ञ कर रहे हैं । हम वहाँ चलेंगे । उस मनुजेश (राजा) के यहाँ त्रिनयन (शिवजी) की आज्ञा मानने वाला दिव्य कार्मुक (धनुष) है । गंध आदि पूजाओं से वह अति शोभायुक्त है । देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस आदि अनेक श्रेष्ठ वीरों द्वारा इससे पहले उठाकर चढ़ाते समय यह उनकी शक्ति के बाहर रहा है (वे वीर असमर्थ रहे हैं ।) ‘ऐसे धनुष को

नट्टि विल्लुनु बट्टि येट्टुलेक्कुपेट्टि । गट्टिगा नेत्तिन घनुनकु नतडु
तन कूतु निच्चेद दप्पक यनुचु । ननुचुन्नवाडनि यंदरु नपुडु
जननाथ ! याशरासन ललामंबु । जनकुनि जन्नंबु जनु जूड नीकु" ९३०
ननुचु विश्वामित्रुडादिगा सकल । मुनुलु ना वीरोत्तमुल दाशरथुल
ललितपुण्युल मिथिलापुरंबुनकु । जेलुवार बयनंबु सेसि सम्मदमु
नोन्दि भागीरथि युत्तरतटमु । जेन्दि हिमाद्रियु सिद्धाश्रमंबु
वलपट निडि यक्षवल्लभु दिशकु । बोलुपार जागिन भूरिमार्गमुन
मूडु योजनमुलु मूडु जामुलकु । नाडेगि यट शोणनदमु तीरमुन
विडिसि तीर्थस्नान विहितकर्ममुलु। नडपि रम्यस्थलि नरनाथसुतुलु
संतोषमुन मुनीश्वरुलतो नुंडि ; ।रंत गौशिकु जूचि या रामुडनिये ९३७

कौशांबि वृत्तांतमु

'गरमु प्रजावृद्धि गलुगु नी देश । मरय नेव्वरिदेश? मानति'म्मनिन
"भूनाथ ! विनु ब्रह्मपुत्रुंडु कुशुडु ।ना नोक्क मुनि महोन्नतकीर्ति गलडु;
अतडुनु वैदर्भियनु निति वलन । सुतुल नल्वुरगांचे सुरुचिराकृतुल ९४०

पकड़कर, (प्रत्यंचा) चढ़ाकर, सुचारु रूप से उठाने वाले महानुभाव को मैं अवश्य अपनी पुत्री दूँगा, ऐसा वह (जनक) कह रहा है।' ऐसा कहकर सब ने तब (कहा), 'हे जननाथ! उस शरासन (धनुष) ललाम (श्रेष्ठ) को (और) जनक के यज्ञ को तुम्हें देखना चाहिए।' ॥ ९३० ॥

(ऐसा)—कहते हुए विश्वामित्र आदि सभी मुनियों ने उन वीरोत्तम, ललित-पुण्य वाले दशरथ के पुत्रों को मिथिलानगर की शोभा-यात्रा के लिए प्रस्थान करवाया। बड़े हर्ष से (वे सब) भागीरथी के उत्तर तट पर पहुँचे। (वहाँ से) हिमाद्रि (और) सिद्धाश्रम को दक्षिण पार्श्व में छोड़कर, यक्षवल्लभ (कुबेर) की दिशा (उत्तरदिशा) की ओर सुन्दर सुरम्य मार्ग पर तीसरे पहर तक तीन योजन चलकर उस दिन शोण नदी के किनारे ठहरे। तीर्थ-स्नान (आदि) विहित कर्मों से निवृत्त हुए। (उस) रम्यस्थल पर (वे) राजकुमार मुनीश्वरों के साथ आनन्द के साथ रहे। तब कौशिक (विश्वामित्र) की ओर देखकर वे राम बोले, ॥ ९३७ ॥

कौशांबी की कथा

—'अत्यधिक प्रजा-समृद्ध यह देश, किसका है? निर्देश कीजिए।' राम के ऐसा कहने पर (विश्वामित्र ने कहा,) 'हे भूनाथ! सुनो, (प्राचीनकाल में)

ब्रशमितात्मुल धूर्तरजसु गुशांबु ।गुशनाभु वसुवु; नक्कोंमरुलु मिगिलि
यनिवार्य शौर्युलै यनुपमलील । दनरु महाक्षत्रधर्मंबु नडप
गोंडुकुल चरितंबु गुणमुलु जूचि । यडरु संतसमुतो ना कुशुंडनियें,
'निल ब्रजापालनं बेंलमि गाविंपु । डलघुकीर्तुलु गल्गु' नन मुदमंदि
कौशलंबुन नोंप्पु ना कुशांबुंडु । कौशांबि यनु पेर गाविंचें बुरमु ;
दशरथात्मज ! महोदयमनुपुरमु । गुशनाभुडोंनरिंचें गुशलुडै धरणि ;
शूरुंडु धूर्तरजुंडु निर्मिंचें । नारंगबुरमु धर्मारण्यमनग ;
वसुवु निम्मुल गिरिव्रजमनुपेर । बसनुग निर्मिंचें बट्टणंबोंकटि ;
यिदि प्रीति नव्वसुवेलुदेशंबु । मुदमंद गिरुलैदु मुंदऱ नोंप्पु,
ना नगमध्यंबुनंदुनु माग । धानाममुन नोंकतटिनि सेंन्नोंन्दु ; ९५०
जालि यम्मगधदेशंबेंल्ल वसुबु । पालिचुचुंडुनु बरमधर्ममुन ;
नच्चेंरु वडरंग ना कुशनाभु । डच्चरलेम घृताचि यंदेंलमि
गन्नुलु मरुनंपगमुलु ना नोंप्पु । कन्नेंल नूर्वुर गड्डु रूपवतुल

ब्रह्मा का पुत्र कुश नामक महान् कीर्तिवाला एक मुनि था। उसने वैदर्भी नामक स्त्री से सुरुचिर आकृति वाले, ।। ९४० ।।

—शान्त-आतमा धूर्तरज, कुशांबु, कुशनाभ और वसु नामक चार पुत्रों को प्राप्त किया। अतिशय शौर्य और पराक्रम से युक्त इन पुत्रों के अनुपम लीला-युक्त महाक्षत्रधर्म का आचरण करने पर, पुत्रों के चरित्र और गुणों को देखकर, कुश ने अति प्रसन्न होकर कहा—'(इस) पृथ्वी पर प्रजा का पालन सहर्ष करो, (उससे तुम लोग) अत्यन्त यशस्वी होगे।' ऐसा कहने पर प्रसन्न होकर, कुशल कुशांबु ने कौशांबी के नाम से एक नगर (का निर्माण) किया। हे दशरथात्मज। (इस) धरती (पर) कुशल कुशनाभ ने महोदय नामक पुर (का निर्माण) किया। शूर धूर्तरज ने धर्मारण्य नामक सुन्दर नगर का निर्माण किया (और) वसु ने गिरिव्रज नामक (अत्यंत) रमणीक पट्टण (नगर) बसाया। यह वही देश है, (जिस पर) वह वसु प्रेम के साथ शासन करता है। यह पाँच सुरम्य पर्वतों से सुशोभित है। उन पर्वतों के मध्य मागधा नाम की एक (नदी) बहती है ।। ९५० ।।

—समर्थ हो उस समस्त मगध देश (पर) वसु परम धर्म के साथ (प्रजा का) पालन करता है। आश्चर्य अधिक हो, (इस रूप में) उस कुशनाभ ने अप्सरा स्त्री घृताची में (के द्वारा) प्रसन्नता से, अत्यन्त रूपवती सौ कन्याओं को जन्म दिया, जिनकी (उन कन्याओं की) आँखें कामदेव के बाणों के समान शोभायमान थीं। वे तरुणियाँ कमनीय कान्ति

गनियॆ ; नत्तरुणुलु गमनीयकांति । विनुत यौवनकळा विस्फूर्तुलमर
मंजीर मेखलामधुर वाचाल । मंजुल कंकण मणिशिंजितमुलु
गरमॊप्पगा दाळगतुलनगूडि । मॊरय लीलालास्यमुलु सल्पुवारु
मुरिपॆम्बुलिपार मॊगि मृदंगादि । वर वाद्यमुलु वेड्क वायिंचुवारू
बाणिपल्लवलघुस्फारितलील । वीणामृदुक्वणविततंबुगाग
माकंद मंजुल मधुपानमत्त । कोकिलध्वनि गूडिकॊनि पाडुवारु
नॆऱिकप्पु गॊप्पुलु निटलंबुलॊप्पु । मऱिवालु जूपुलु भाटतीपुलनु९६०
निक्किनमुक्कुलु निग्गु जॆक्कुलुनु । जक्कॆर मोवुलु जारु नीवुलुनु
जक्कव कवनव्वु चन्नुल क्रॊव्वु । जुक्करायल गोमुसॊबगु नॆम्मोमु
दब्बऱ कौनुलु दळुकु मेनुलुनु । अब्बुरंबगु तॊडलंचलनडलु
नगुचु नुद्यानंबुनंदु ग्रीडिंप । दगिलि या चॆलुवल दप्पक चूचि
कामंधुडै सर्वगतुडैन पवनु । डा मानिनुल जूचि यर्थितो बलिकॆ;
‘मानिनीमणुलार! मऱि विनुडिंक। बूनि चॆप्पॆद मीकु बॊसगंग निपुडु

(और) विनुत (प्रख्यात) यौवन-कला की विस्फूर्ति से युक्त हो, उद्यान में गईं। (वहाँ कुछ अपने) मंजीर, मेखला की मधुर ध्वनियों (और) मंजुल कंकणों की मणियों की ध्वनियों के साथ, परम सुन्दरता से ताल-गति के साथ, नाट्यानुगुण-शब्द-गुम्फन से युक्त लीला-लास्य करने लगीं। (कुछ) अपने गमन-विलास की शोभा के साथ, क्रम से मृदंग आदि वर (श्रेष्ठ) वाद्यों को शौक से बजा रही थीं। कुछ पाणि-पल्लवों (कर-पल्लव) को शीघ्र गति से चलातीं हुईं, वीणाओं को मृदु रूप से ध्वनित कर (बजा) रही थीं। कुछ (युवतियाँ) आम्रमंजरी के मंजुल मधुपान से मत्त कोकिल के स्वर के समान गा रही थीं। सुन्दर जूडाओं के सिर पर सुशोभित होने पर, बाँकी चितवन (और) वचनों की मधुरता, ॥ ९६० ॥

—ऊँची नासिका, चिकने गाल, मधुर ओष्ठ, ढीली पड़ती नीवी, चक्रवाक की जोड़ी का उपहास करने वाले स्तनों का दर्प, चन्द्रमा के सौकुमार्य से युक्त सुन्दर मुख, अस्ति-नास्ति का भाव पैदा करने वाली कमर, चमकीले शरीर, आश्चर्य चकित करने वाली जाँघ, हँसगमन (आदि) से युक्त हो वे (युवतियाँ) उद्यान में क्रीड़ाएँ करने लगीं, तो उन सखियों पर आसक्त हो (उन्हें) अनिवार्यतः देखकर, काम से अन्धा बन, सर्वंगत (सर्वत्र गतियुक्त) पवनदेव उन मानिनियों को देख, प्रीति से (यों) बोले—‘हे मानिनीमणियो, अब सुनो! आपके अनुकूल हो (ऐसी) बात का उपक्रम कर कहता हूँ। हे नलिनाक्षियो! (कमलनेत्रियो!) मेरा वरण करो (और) शोभा से अमरत्वसिद्धि को प्राप्त करो।

नन्नु वरिंपुडु नलिनाक्षुलार ! । चेॅन्नार नमरत्वसिद्धि गैकोॅनुडु;
अेॅन्नडु जरलेनि येॅलजव्वनंबु । नुन्नतयशमु मी कोॅप्पारगलुगु"
ननिन नल्लन नव्वि 'यनिलुंड! सकल । जनहृदयंबुल जरिंयितु वीवु;
नी वेऱुंग्वे मम्मु? नी महत्त्वंबु । भाविंपकिदियेमि पलिकेॅद वकट ९७०
नियतुडै वर्तिचु निर्मलधर्म । नयशीलुडगु कुशनाभु कूतुलमु;
ओडक मा तंड्रि युंड मायंत । गूडुने यिट्टु सेय ? गुलहानिगादे ?
यिरवार मा तंड्रि येॅव्वरिकिच्चु । वरिंकिप नातडे पति माकु' ननिन
बवनुडु गोपंबु पट्टलेकप्पु । डवयवंबुल जोॅच्चि या तलोदरुल
गुदियंग दिविचिन गुब्जलै तंड्रि । कदियेॅल्ल नेॅऱिंगिप नंदऱु वच्चि
विन्ननि वदनारविंदमुल् वांचि । सन्निधिनिलिचि बाष्पमुलु निंचुटयु
गुशनाभुडप्पुडाकूतुलकैन । दश जूचि वेॅऱगंदिता वारिकनियेॅ;
'निट्टिरूपमुलु मीकेॅलनागलार ! । येॅट्टु वाटिलेॅ? नेॅव्वडिट्टु सेसेॅमिम्मु?
मीरेल पलुकरु? मीकिंत केमि । कारणं ?' बनवुडु गरमुलु मोॅगिचि
तमतंड्रि तोड ना धवळाक्षुलनिरि । 'ममु जूचि पवनुंडु मानंबु
विडिचि ९८०

आप को शोभायुक्त रूप से जरा-हीन नवयौवन (और) उन्नत यश प्राप्त होगा।' ऐसा कहने पर, (वे) मुस्कुरा कर बोलीं—'हे अनिल! तुम सब के हृदयों में संचार करते हो। (फिर भी) तुम हमें नहीं जानते हो ? अपने महत्त्व के बारे में सोचे बिना हाय, यह क्या कह रहे हो ? ॥ ९७० ॥ —(हम) नियम के अनुसार आचरण करने वाले निर्मल-धर्म तथा नीतिशील कुशनाभ की पुत्रियाँ हैं। पराभूत हुए बिना हमारे पिता के रहते, हम स्वयं ऐसा (तुम्हें वरण) कैसे कर सकेंगी ? (इससे क्या) कुल-हानि (वंश का अपमान) नहीं होगी ? स्थिरभाव से हमारे पिताजी हमें जिसे देंगे (जिसके साथ विवाह करेंगे), विचार कीजिए वही हमारा पति होगा।' ऐसा कहने पर पवनदेव (अपने) क्रोध को दबा न सके। तब उन तलोदरियों (तरुणियों) के अवयवों में प्रवेश कर, (उन्हें) ह्रस्वीकृत करने पर, वे कुब्जाएँ हो गईं। पिता को वह सब बताने के लिये जाकर, खिन्न बने वदन-अरविन्दों (मुख-कमलों) को झुकाकर, (पिता के) समक्ष खड़े हो, उन्होंने आँखें भर लीं (आँसू बहाने लगीं)। कुशनाभ ने तब उन पुत्रियों को प्राप्त दशा देख स्तम्भित हो, स्वयं उनसे कहा—'हे युवतियो ! ऐसे रूप तुम्हें कैसे प्राप्त हुए ? किसने तुम्हारे साथ ऐसा किया ? तुम लोग बोलती क्यों नहीं हो ? ऐसा होने का क्या कारण है ?' ऐसा कहने पर हाथ जोड़कर, अपने पिता से वे धवलाक्षियाँ (सफ़ेद नेत्रों वाली इस प्रकार)

‘नन्नु वरिंपुडु नलिनाक्षुलार!’। यन्नना माटकु ‘नौगाक’ यनक
‘मा तंड्रि नडुगु मी माट नी’वनिन। नातंडु कामांधुडै यलिग मम्मु
गुब्जलगा जेसॆ ग्रूरात्मु’डनिन। नब्जलोचनलतो नातडिट्लनियॆ ;
‘दगवुनु धर्मंबु दलपोसि मीरु। तगदनि शीलंबु दाट नोडितिरि ;
कन्नियलार! मी गौरवंबुननु। नुन्नत सत्कीर्ति नॊन्दॆ ना कुलमु ;
देवताविषयमै तॆगि यलगरैति। रीविधि मीरु सहिंचुटॆ लॆस्स ;
क्षमयॆ सत्यंबुनु, क्षमयॆ शीलंबु। क्षमयॆ तपंबुनु, क्षमयॆ कीर्तियुनु
क्षमयॆ धर्मंबुनु, क्षमयॆ लोकंबु। नमरंग रक्षिचु’ ननि वारि बंचि
तन मंत्रिवरुलतो दग विचारिंचि। यनघात्मुडगु चूळि यनु मुनींद्रुनकु
९८९

विश्वामित्रुनि वंशक्रमसु

दनुजन्मुडगु गुणोत्तरु ब्रह्मदत्तु। ननुवार रप्पिंचि या महात्मुनकु
९९०

बोलीं—‘हमें देखकर पवन ने लज्जा त्याग कर, (निर्लज्ज बन)—।। ९८० ।।

—कहा ‘हे नलिनाक्षियो! मेरा वरण करो’ (तो) हमने उसकी बात को स्वीकार नहीं किया और कहा ‘यह बात तुम हमारे पिता से पूछो’। तब कामान्ध हो, क्रुद्ध उस क्रूर-आत्मा वाले (निर्दयी) ने हमें कुब्जाएँ बना दिया।’ ऐसा कहने पर उसने (कुशनाभ ने), उन अब्जलोचनाओं (कमलनेत्रियों) से कहा—‘न्याय और धर्म का ध्यान रखकर, अनुचित समझकर, तुम लोगों ने अपने शील को खोना नहीं चाहा। हे कन्याओ! तुम्हारे गौरव (पूर्ण कार्य) से मेरा वंश उन्नत एवं सत्कीर्ति को प्राप्त हुआ। देवता के विषय में, साहस करके तुम लोग क्रुद्ध नहीं हुईं। इस प्रकार तुम लोगों का सहन कर जाना ही उत्तम है। क्षमा ही सत्य है, क्षमा ही शील है, क्षमा ही तप है, क्षमा ही कीर्ति है, क्षमा ही धर्म है। क्षमा ही प्रीति से (समुचित रूप से समस्त) लोगों की रक्षा करता है।’ ऐसा कहकर (सान्त्वना देकर) (राजा ने) उन्हें भेज दिया (विदा किया)। (तब) अपने श्रेष्ठ मंत्रियों से उचित रीति से विचार कर, अनघात्मा (पुण्यात्मा) हो चूली नामक मुनिवर के ।। ९८९ ।।

विश्वामित्र का वंशक्रम

—पुत्र, गुणोत्तम (गुणों में श्रेष्ठ) ब्रह्मदत्त को समुचित रीति से निमन्त्रित किया। उस महात्मा को ।। ९९० ।।

धर्मपत्नुलु गाग दनदु कन्नियल । निर्मल बुद्धिमै नॅम्मि निच्चुटयु
जूळि पुत्नुडु वारि जूचि कैकॉनग । व्रीलॅ ना नूर्वुर विकृतरूपमुलु:
अवनीश ! यदि मॉदलापुरोत्तममु। ननिन गन्याकुब्जमनु पेर बरगॅ ।
ना कुशनाभुंडु नप्पुडॉप्पारु । नाकृतुल् गल तनयुल गनुंगॉनुचु
नलरिया कूतुल नल्लुनि ननिचि । यॅलमिमै बुत्रकामेष्टि गाविप
गॉडुकैन कुशनाभु गुशुडु वीक्षिचि । पडसॅदु पुत्नुनि बरमधार्मिकुनि
विनुत निर्मल कीर्तिविख्यातु गाधि। यनुपेरु गल पुण्यु ननि यॅरिगिचि
परम प्रियंबुन ब्रह्मलोकमुन । करिगॅ ना कुशु मन्मडै गाधि वुट्टॅ
दशरथात्मज ! गाधितनयुंड नेनु । गुश वंशमनि कौशिकुंडंड्रु नन्नु;
मति धर्मनिष्णात मा यक्क सत्य । वति भक्तिमै सुरेश्वर लोकमुनकु
१०००
वेडुक दन प्राणविभुडैन रुचिकु । तोड शरीरंबुतोड दा नरिगि
यी लोकमुन लोकहितमाचरिंप । ब्रालेय पर्वत प्रान्त देशमुन
नलि गौशिकी नामनदि यय्यॅ दानु । वॅलय नन्नदि चॅन्त विहरिंतु नेनु
सिद्धाश्रममु ब्रवेशिचिन कतन । सिद्धंबुगा दपस्सिद्धुंडनैति

निर्मल बुद्धि और प्रेम के साथ अपनी कन्याओं को धर्मपत्नियों के रूप में प्रदान किया । चूली-पुत्र के उन्हें देखकर स्वीकार करने पर, उन सौ (कन्याओं) के विकृत रूप दूर हो गये । हे अवनीश (राजा) ! तब से लेकर वह श्रेष्ठ नगर, (इस) अवनि पर कन्याकुब्ज के नाम से प्रसिद्ध हुआ । वह कुशनाभ तब सुन्दर आकृतियों से युक्त पुत्रियों को देखकर प्रसन्न हुए (और) उन पुत्रियों को (तथा) जामाता को विदा कर, हर्ष के साथ पुत्र-कामेष्टि किया । (तब अपने) पुत्र कुशनाभ को देखकर कुश बोले—'परमधार्मिक, विनुत (प्रख्यात) निर्मलकीर्तिविख्यात गाधि नामक पुण्यात्मा को पुत्र रूप में तुम प्राप्त करोगे ।' ऐसा बताकर परमप्रिय भाव से वे (कुश) ब्रह्मलोक को गए । उस कुश के पौत्र होकर गाधि पैदा हुए । हे दशरथात्मज ! मैं गाधितनय हूँ । कुशवंश में होने से मुझे कौशिक (भी) कहते हैं । अति-धर्मनिष्णाता हो मेरी बड़ी बहन सत्यवती भक्ति के कारण, सुरेश्वरलोक (स्वर्ग) को, ॥ १००० ॥

—हर्षयुक्त हो, अपने प्राणविभु (पति) रुचिक के साथ सशरीर गई । इस लोक में लोकहित करने (की भावना से) के लिए, प्रालेय (हिम) पर्वत-प्रान्त-देश में, समुचित रूप से, स्वयं कौशिकी नामक नदी बन गई । शोभायमान उस नदी के पास मैं विहार करता हूँ । सिद्धाश्रम में प्रवेश करने के कारण वास्तव में मैं तपःसिद्ध हुआ हूँ । आदि से मेरे वंश की

नादिनुंडियु मदीयान्वयस्थितियु । नीदेशविधमुनु नेर्पडविटि
नडुरात्रियरुदॆन्चे नरलोकनाथ ! । कडु डस्सिनाडवु कनुमोड्तु गाक
चलियिंपकुन्नवि सकल वृक्षमुलु । मॆलगवु वनभूमि मृगसमूहमुलु
नॆरि विहंगमुलु नीडमुल् सेरि । मरचियुन्नवि तम मंजुल ध्वनुलु
यामिनी चरुलैन यक्षराक्षसुलु ।भूमि विच्चलविडि बोरि चरिंचॆदरु
दीटुगा जीकटि दॆसलु नाकसमु । गाटुक बूसिन करणि नुन्नदियु ;
१०१०

नीलांबरंबुन निंडु मुत्तॆमुलु । गीलिंचि ब्रह्मांड गेह गोळमुन
गड्डु नॊप्पुगा मेलुकट्लॆत्तिनट्टु । लुडुगणंबुलतोड नुन्नदि निगि ;
यडरंग जनुलकु नानंदमॊदव । नुडुराजु वॊडतॆन्चुचुन्ना'डटन्न
ना माटलकु मॆच्चि यखिलसंयमुलु। ना मुनींद्रुनितोड ननिरप्पुडलरि;
"नॆऱय नी वंशंबु निर्मलंबनघ! । गुऱिलेनि महिम नी कुलमु वारॆल्ल
ब्रह्मसमानुलु परिकिंप; नीदु । ब्रह्मवर्चसमुनु ब्रणुतिप नॊप्पु ;
ना कौशिकियु नी निजान्वयंबुनकु। दीकॊनि ता वन्नॆ दॆच्चॆ नी जगति"

स्थिति (और) इस (प्र) देश के बनने के सम्बन्ध में यह (वृत्तान्त) सुना है। हे नरलोकनाथ ! आधीरात हो गई है। बहुत थक गए हो (तुम), (अतः) आँखें मूँद लो (सो जाओ)। सभी वृक्ष अचल हो गए हैं (हिल नहीं रहे हैं), वनभूमि में मृगसमूह विचरण नहीं कर रहा है, सुन्दर विहंग (अपने-अपने) नीड़ों में पहुँचकर, अपनी मंजुल-ध्वनियों को भूले हुए हैं, यामिनी (निशा–) चर यक्ष (और) राक्षस स्वेच्छा से (स्वच्छन्द होकर) विचरण करेंगे, अंधकार पूर्णरूप से दिशाओं तथा आकाश में फैल गया है मानों काजल पोत दिया गया हो। ॥ १०१० ॥

—ब्रह्माण्ड रूपी गृह में बड़े सुन्दर ढंग से बड़े-बड़े मोतियों से युक्त चंदोवा सजाया गया हो, इस विधि से नीले आकाश में नक्षत्र-समूह शोभायमान है। लोगों के आनन्द में वृद्धि करते हुए उडुराज (नक्षत्रपति) (चन्द्र) उदित हो रहा है।" ऐसा कहने पर, उन बातों की स्तुति कर, सभी (मुनियों) ने प्रसन्न होकर तब उस मुनीन्द्र से कहा—'हे अनघ ! विचार कर देखने पर तुम्हारा वंश निर्मल है। तुम्हारे वंश वाले अचूक (अतुलनीय) महिमा वाले हैं। परिशीलन करने पर (वे) ब्रह्म समान हैं। तुम्हारा ब्रह्मवर्चस् (ब्रह्मतेज) स्तुत्य है। उस कौशिकी ने भी, इस जगत् में तुम्हारे वंश को सप्रयत्न उज्ज्वल कर दिया है।' ऐसा कहते हुए उन मुनीश्वरों ने विश्वामित्र की विनुति (स्तुति) की। तब भूविभु

ननुचु विश्वामित्रु नम्मुनीश्वरुलु । विनुतिंचि; रंत भूविभुलु, संयमुलु
ना रात्रि निद्रिंप ना प्रभातमुन । ना ऋषिपुंगवु ला गाधिसुतुडु
'जननाथ ! निद्रलु सालिपु'डनिन । विनि तेऱि पूर्वाह्णविधुला-
चरिंचि १०२०

कौशिकु जूचि 'यगाधमै चूड । नी शोणनदरत्नमित यॊप्पगुनॆ ?
याकीर्णमीनंबु नतिरमणीय । सैकतंबुनु सुप्रसन्नतोयंबु
बरिचित हंसादि पक्षिसंघंबु । दरुणानिलोच्चलत्तरळतरंग
मैयुन्न दीयेऱु ; ननघात्मक ! मन । मॆयॆड दाटुद ? मॆत्तॆऱं ?' गनिन
'दऱचुगा मुनुलॆल्ल दाटॆडु मार्ग । मॆऱिगिपोद' मटंचु नॆडदव्वुबोव
गलहंस सारस कारंडवादि । जलपक्षिरवमुलु सरिदम्मु बिलुचु
विधमुन जॆलगंग वीनुलिपार । नधिपुडालिंचि,मध्याह्न कालमुन
सिद्ध मुनींद्र संसेव्यतीरमुनु । शुद्ध पुण्योदक सुप्रवाहमुनु
गलिगि नदीतिलकंबै धरित्रि । बॊलुपारु जाह्नवि बॊडगांचि, म्रॊक्कि
'गाधेय ! चूड नगाधमै तोचु । नाधुनीरत्नंबु नट दाटिपोंव १०३०

उस रात को सो गए । राम-लक्ष्मण और मुनिजन प्रभात समय (हो जाने पर) उन ऋषिपुंगवों (और) उस गाधिसुत के 'जननाथ, (अब) निद्रा छोड़ो' कहने पर, (उन बातों को) सुन, स्वस्थ हो (जागकर) प्रातःकाल की क्रियाओं का आचरण कर, ॥ १०२० ॥

—(राम-लक्ष्मण) कौशिक को देखकर बोले—'अगाध दीखने वाली यह श्रेष्ठ शोण नदी कितनी सुन्दर लग रही है! मीनों (मछलियों) से आकीर्ण (पूर्ण), अतिरमणीय सैकत (स्थल), सुप्रसन्न (निर्मल या मधुर) तोय (जल), परिचित हंस आदि पक्षिसंघ (समूह), तरुण अनिल से उछलने वाली तरल तरंगों से युक्त है यह नदी । हे अनाघत्मक! हम कहाँ (पर इस नदी को) पार करें ? (और) किस विधि से ?' ऐसा कहने पर, (विश्वामित्र) ने कहा कि प्रायः मुनिलोग जिस स्थान से (इस नदी को) पार करते हैं, उसे जानकर, (वहीं से) पार करेंगे । वे बहुत दूर तक (नदी के किनारे-किनारे) गए । (वहाँ) कलहंस, सारस, कारंडव आदि जलपक्षियों के (कल-रव) ऐसे कर्णमधुर सुनाई पड़ रहे थे, मानों वे उनका स्वागत कर रहे हों । अधिप (राजा) ने उन्हें सुनकर, मध्याह्न के समय, सिद्ध-मुनीन्द्रों द्वारा संसेवित तीर-स्थली पर, शुद्ध, पुण्य-उदक सुप्रवाह से युक्त हो, धरित्री पर नदीतिलक स्वरूपा विराजमान जाह्नवी (गंगा) को देखकर, (उसे) प्रणाम कर, कहा—'हे गाधेय ! देखने में अगाध लगने वाली इस श्रेष्ठ नदी को पार कर जाने का मार्ग

दॆरुविक नॆय्यदि ? तॆलुपवे' यनिन । 'नरनाथ ! यी शोणनदमुत्तरिंचि
मॊगि मूडु योजनम्मुलु दाटिपोव । नगु नम्महानदि ; यंदाक मनकु
दोयफलादुलु द्रोव बॆ' क्कनुचु । ना येरु दाटि वारटु पोवुचोट
जॆलगु सारसगणसेव्यमै पुण्य । सलिलमै युत्फुल्ल जलजमै विमल
फेनमै नित्यगंभीरमै चारु । मीनमै यतिपुण्य मिळितमै यॊप्पु
गंगातटंबुन घनलताकुंज । संगतंबगु समस्थलमुन विडिसि
मनुजेंद्रतनयुलु माध्याह्निकंबु । लॊनरिंचि मुदमंदि युचित भोज्यमुल
नोजमै मुनिगोष्ठि नॊप्पुचुन्नंत, । राजन्यतिलक मा रामचंद्रुंडु
राजहंसोद्धूत राजीवरेणु । राजीविराजितरंगत्तरंग
गंग नालोकिंचि, कौशिकु जूचि । 'गंग यी वसुध के क्रममुन वच्चॆ ?
१०४०
ने तॆऱंगुन बोयॆ निट नाकमुनकु? । बाताळमुनकु नॆऽभंगि दा नरिगॆ?
नेचि पारवार मेगति जॊच्च ? । ने चंदमुन बुट्टॆ निम्महातटिनि ?
चॆप्पवे' यनवुडु श्रीरामु जूचि । यप्पुण्यधनुडु विश्वामित्रुडनियॆ:

कहाँ है ? बताइए ।' (ऐसा) कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)—'हे नरनाथ ! इस शोण नदी को पार कर, ॥ १०३० ॥

—सप्रयत्न तीन योजन जाने पर, वह महानदी (गंगा) मिलेगी (वहाँ तक पहुँचेंगे) । तब तक हमारे लिए मार्ग में जल और फल बहुत मिलेंगे ।' ऐसा कहकर वे शोण नदी को पार कर जाने लगे । सारस-गण (समूह) से सेवित, पुण्यसलिल, उत्फुल्ल (विकसित) जलज, विमल फेन से संयुक्त, नित्यगम्भीर, सुन्दर मीनों से युक्त, अतिपुण्यमयी हो विराजमान गंगा के तट पर, घन-लता-कुंज-संगत (युक्त) एक सम (तल) स्थल पर (वे) ठहर गए । (वहाँ) राजकुमारों ने मध्याह्न समय के (उचित) कार्यों से निवृत्त हो, प्रसन्न-मन से उचित आहार ग्रहण किया (और) मुनियों की गोष्ठि (संगति) में विराजमान हुए । राजन्यतिलक (राजाओं में श्रेष्ठ) उन रामचन्द्र ने राजहंसों से उड़ाए गए (हिलाए गए) राजीव-रज के समूह (आधिक्य) से विराजित सुन्दर तरंगों वाली गंगा को देखा । (वे) कौशिक को देखकर बोले—'गंगा इस वसुधा पर किस क्रम (विधान) से आई ? ॥ १०४० ॥

—यहाँ से किस विधि से नाकलोक (स्वर्ग) को गई ? पाताल को किस तरह वह गई ? अतिशयता से उसने पारावार (समुद्र) में कैसे प्रवेश किया ? यह महातटिनी (नदी) किस तरह से पैदा हुई ? कह दो न ।' ऐसा

'गमनीयकांतुलु गल रूपवतुलु । हिमवंतुनकु गूतुलिरुवुरु गलरु;
अमरुलंदरुगूडि यागंबु कोरकु । हिमवंतु वेडि या यिरुवुरिलोन
गुरुपुण्ययगु पेद्दकूतुरु गंग ।नरुदार गोनिपोयि रमरलोकमुन;
कटमीद बार्वतियनु पिन्नकूतु । बट्टुतपोनिष्ठिकु बरितृप्तुडगुचु
फाललोचनुनकु बत्निगा निच्चे । ना लोललोचन ना नगाधिपुडु ।
सुरुचिरगति गंग सुरलोकमुनकु । नरिगि ता सुरनदि यनुपेर बरगे'
ननि चेप्पि मुनिनाथुडवनीशु जूचि । 'विनुमु वृत्तांतंबु वेन्डियु नोकटि
१०५०

कुमारस्वामि जन्म वृत्तांतमु

पार्वति वरियिंचि परमानुरक्ति । सार्वकालंबुनु जंद्रशेखरुडु
नतिलोक गति लोलुडै दिव्य वर्ष । शतमु दा रतिकेळि सलुपुचुन्नेडनु
गमलासनुंडादिगा सर्वसुरलु । दमलोन नेन्तयु दारु सिंतिंचि
'वेलय नी यिरुवुर विषमतेजंबु ।दलप नेव्वरिकैन धरियिंप वशमे ?

पूछने पर श्रीराम को देखकर, वे पुण्यधनी विश्वामित्र बोले—'हिमवान् के कमनीय कान्ति से युक्त, रूपवती दो पुत्रियाँ हैं। सभी अमरों ने मिलकर, याग (यज्ञ) के लिए, हिमवान् से प्रार्थना की (और) उन दोनों में से गुरु (महान्) पुण्य वाली बड़ी पुत्री गंगा को, प्रेम से (ठाठ-बाट से) अमर-लोक ले गए। उसके बाद पार्वती नामक छोटी पुत्री की पट्टु-तपोनिष्ठा से परितृप्त होकर, उस नगाधिप (पर्वतराज) ने उस लोल-लोचनों वाली को, फाल-लोचन (शिवजी) को पत्नी के रूप में दिया। सुरुचिरगति से गंगा सुरलोक में जाकर, सुरनदी के नाम से विख्यात हुई।' ऐसा कहकर मुनिनाथ अवनीश (राजा) को देखकर बोले—'सुनो, एक और वृत्तान्त है। ॥ १०५० ॥

कुमारस्वामी का जन्म-वृत्तान्त

—'पार्वती का वरण कर, परम अनुरक्ति से चन्द्रशेखर (शिवजी) अतिलोकगति में लीन हो एक सौ दिव्य वर्षों तक सदा रतिक्रीड़ा करते रहे। तब कमलासन (ब्रह्मा) आदि सभी सुर (देवता) अपने-आप में अधिक सोच-विचार करने लगे कि 'इन दोनों के विषम तेज को धारण करना किसी के वश की बात नहीं है।' ऐसा कहते हुए (सोचते हुए) सभी उन महादेव के पास आए, विनीत हो सद्भक्ति से प्रणाम किया

यनुचु नंदरु नम्महादेवु कडकु ।जनुदेँन्चि विनतुलै सद्भक्ति ग्रोक्कि
देवदेव ! महेश ! देव! सर्वेश ! । देवनिस्तारक ! देव ! नी महिम
सर्व गीर्वाणुलु सन्नतिचेँदरु; । सर्वज्ञ ! माकु ब्रसन्नुंडवगुम ;
येपारु नी तेज मेँव्वरु दालप । नोपुद्रु ? रट्टुगान युड्गु मीविधमु;
करुण दपोवृत्ति गैकोँनि मीरु । सरि ब्रह्मचर्यंबु जरियिंप वलयु;
ननवुडु 'नौगाक' यनुचु ना सुरल । गनुगोँनि मुदमुतो गौरीशुडनियेँ;
१०६०

'जलियिंचिनदि निजस्थानंबु वलन; । नेँलकोँनि मीलोन निर्जरुलार !
येँव्वरु दाल्चेँदरीतेज' मनिन । 'निव्वसुंधर दाल्चु निपार' ननिरि
हरुडु ना सुरलतो 'नौगाक' यनुचु। धरणिपै गाविंचेँ दद्विमोक्षणमु ।
दिविजुलय्येँड नग्निदेवु नीक्षिंचि । 'पवनुनितोगूडि पावक ! नीवु
इलमीद बडियुन्न इम्महातेज । मेँलमि ग्राशिंपुमि यिंपार' ननिन
स्ववशंबु गानट्टि शर्वुतेजंबु । पवनपावकुलुनु भरियिंपलेक
यंगजहरु वीर्यमप्पुडु वेग । गंग लोगोँननिच्चेँ गरमर्थितोड़;

(और) कहा—'हे देवदेव! हे महेश! हे देव ! सर्वेश! देवनिस्तारक! देव ! तुम्हारी महिमा की सभी गीर्वाण (देवता) सन्नुति (संस्तुति) करते हैं। हे सर्वज्ञ ! हमपर प्रसन्न हो जाओ। तुम्हारे अतिशय तेज को कौन धारण कर सकेंगे? (कोई धारण) नहीं कर सकता अतः यह क्रम (रतिक्रीड़ा) छोड़ दो। (हम पर) करुणा (भाव) से तपोवृत्ति ग्रहण कर, (तुम) दोनों को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।' ऐसा कहने पर, 'ऐसा ही हो' (तथास्तु) कहकर उन देवताओं को देख, प्रसन्न हो गौरीश बोले, ।। १०६० ।।

—'अपने स्थान से (वीर्य) विचलित हो चुका है। तुम में से हे निर्जरो! इस तेज को कौन स्थिरता से धारण कर सकेंगे?' (ऐसा) कहने पर (उन्होंने) कहा—'यह वसुन्धरा शोभायुक्त होकर धारण करेगी।' हर (शिव) ने 'ऐसा ही हो' कहते हुए तत्क्षण (उस वीर्य का) विमोक्षण (विमोचन) धरती पर कर दिया। दिविजों ने उस समय अग्निदेव को देखकर कहा—'पवन से मिलकर हे पावक! तुम धरती पर पड़े हुए इस महातेज को हर्ष के साथ पान करो।' (ऐसा) कहने पर, अपने वश में न आने वाले शर्व (शिव) के तेज को, पवन और पावक वहन न कर सके। (अतः) अंगजहर (शिव) के वीर्य को तब गंगा ने बड़ी इच्छा से (उस वीर्य को) अपने में आने दिया। तब उस स्त्री (गंगा) ने स्थिरता से, प्रेम के द्विगुणित होने पर उसे धारण किया।

निच्चिन नायिंति यिरवॊन्दगानु । मच्चिक धरियिंचॆममत रॆट्टिप
दन विभु तेजमत्तऱि दाल्पलेक । तन मदि भयमंदि तत्तऱ्पडुचु
गंगातरंगमुल् गरमु भीतिल्लि । पॊन्गॆल्ल नडगुचु बॊदलुचु
नपुडु१०७०
चित्तसंक्षुभितयै शीघ्रंबुगानु । दत्तीरदेशंबु दा जॆर्चुटयुनु
शरवणंबुनयंदु जय्यन जॊच्चि । चिरतरंबुग नंदु जॆल्वॊन्दुचुंडॆ;
नप्पुडु ऋषिपत्नुलंदऱु गूडि । यॊप्पुगा दमतम युचितकृत्यमुलु
तप्पक तीर्पंग दा मॆगुदॆन्चि ; । रप्पुडु नार्यलु नागंग जॊच्चि
तोयंबुलाडुचु दॊडरि वेवेग । 'पायक शरवणभव्यस्थलमुन
द्रेताग्नुलनु बोलि तेजरिल्लुचुनु । ब्रातिगा ब्रचुरमै परगुचु लॆस्स
नुन्नवि यीयग्नु लॊन्डॊरुल् मनमु । चॆन्नार जलिचेत जिक्कि
स्रुक्कितिमि ।
मन्ननर्लिपॊन्द मनमु निच्चटनु । ग्रन्नन चॆकॊन गडगुद' मनिन
नीश्वरतेजंबु निरवॊंद बुच्चि । शाश्वतंबुग धर सत्कीर्ति वॆलय
जातवेदुनि जेर जनिन यितुलकु ।नाततंबुग जूचिनट्टि यितुलकु१०८०
निर्भर वृत्तिमै निलिचॆ गर्भमुलु । गर्भिणुलै वारु करमॊप्पुचुन्न

(किन्तु) अपने विभु (स्वामी) के तेज को उस समय धारण न कर सकने पर, (वह) अपने मन में भीत होकर, घबरा गई। गंगा की तरंगें अत्यन्त भयभीत हो गईं, (उनका) उफान कम हो रहा।॥ १०७० ॥

—चित में संक्षुभित होकर उसने शीघ्रता से उसे तीर-प्रदेश पर पहुँचा दिया (छोड़ दिया)। वह (तेज) झट से शरवण (सरकंडों के वन) में प्रवेश कर चिरकाल तक शोभायमान रहा। तब (एक दिन) ऋषिपत्नियाँ सब मिलकर, सुन्दरता से अपने-अपने उचित कार्यों को अवश्य निर्वाह करने के लिए स्वयं वहाँ (उस तीर-स्थल पर) आईं। तब वे नारियाँ उस गंगा में प्रवेश कर, स्नान करती हुईं, आसक्त हो शीघ्रता से बोली—'शरवण के भव्य-स्थल में त्रेताग्नियों के समान प्रज्वलित होती हुई, अविरल (एवं) प्रचुरता से विराजमान होती हुई ये अग्नियाँ बहुत श्रेष्ठ (लग रही) हैं। हम लोग अधिक ठंड से ठिठुर रही हैं। वहाँ जाकर, शीघ्र ही सुख प्राप्त करेंगी।' (ऐसा) कहकर, धरती पर शाश्वत रूप से सत्कीर्ति से विराजमान होकर, इस रूप में ईश्वर-तेज को स्थिरता से प्राप्त करने, जातवेद (अग्नि) के पास गईं। उन स्त्रियों को, आतत रूप से (उस तेज को) देखने वाली उन स्त्रियों को, ॥ १०८० ॥

बहुभीतुलगुचु ना भामिनुलपुडु । तहतहपडि मरि तन्मयत्वमुन
दमतम यिड्लकु दार्रथि नरुग । शमितात्मुलगु मुनिसंघंबु लप्पु
डंत ना वृत्तान्त मायोगदृष्टि । जिंतिंचि मुनुलल चेलुवलकनिरि:
'मी सत्यशीलत मीदु गर्वंबु । मी सौख्यमिप्पुडु मिम्मित चेसें',
ननुचु नाग्रहमुन नवनि गंपिंप । वनितल मीद नवार्य कोपमुन
'मति हीनुलरु मिम्मु मन्निपनेल? । पतिदूरलगु' डंचु बल्किन विनुचु
मगुड जाह्नवि जेरि मगुवलंदरुनु ।दगुनम्म! नीकिदि तगुनंचु बलिकि
तमतम बाहुल ताडनंबुलुनु । दम गर्भमुल मीद दग जेसि
रोंगिनि ।
गरताडनंबुल गलगि कंपिंचि । करमोप्प गर्भमुल् गरगि विच्छिन्न
१०९०
गर्भंबुलै यप्डु कांतलवलन । निर्भयंबुन जारि नेरयंग नप्पु
डारुखंडंबुलै यवनिपै बडियें । जारिन या खंड चयमु ग्रहिंचि
शरवणंबुनयंदु जप्यन बेंट्टि । यरुदलरग लेचि या तलोदरुलु

—निर्भर वृत्ति से (अतिशयता से) गर्भ ठहर गए (वे गर्भवतियाँ हुईं)। गर्भिणी होकर वे अति ही शोभायमान हुईं। वे भामिनियाँ (स्त्रियाँ) तब बहुत ही भीत होती हुईं, घबराती हुईं, फिर तन्मयता से, इच्छा से अपने-अपने घर पहुँचीं। शमित आत्मा वाले (शान्त चित्त वाले) मुनियों ने तब उस समस्त वृत्तान्त को योगदृष्टि से जानकर, उन स्त्रियों से कहा—'तुम्हारी सत्यशीलता, तुम्हारे गर्व, तुम्हारे सुख (की इच्छा) ने तुम्हें ऐसा (दोषी) कर दिया है।' (ऐसा) कहते हुए, क्रोध के कारण अवनि (धरती) काँप उठे, ऐसा (उन) वनिताओं (स्त्रियों) पर अवार्य (दुर्निवार वचन) क्रोध से कह दिया—तुम 'मतिहीनाओं को क्षमा क्यों करें ? (तुम लोग) पतियों से दूर हो जाओ।' ऐसा कहने पर, सुनकर फिर से जाह्नवी के पास पहुँचकर, (उन) सभी स्त्रियों ने कहा—'हे (गंगा) माई ! क्या यही तुम्हें करना चाहिए था ? यह उचित है ?' (ऐसा) कहकर, अपने गर्भों पर अपने-अपने बाहुओं से, क्रम से, ताड़न करने लगीं। कर-ताड़न से विचलित-कम्पित हो, अधिक शोभायमान वे गर्भ पिघलकर, विच्छिन्न होकर, ॥ १०९० ॥

—निर्भयता से लुढ़ककर, छः खण्ड होकर, अवनि पर गिर गए। लुढ़के हुए उन खण्डों को उठा कर, तुरन्त उन्हें शरवण में रखकर, आश्चर्य से वे तलोदरियाँ (स्त्रियाँ) बड़ी प्रीति से तपस्या करने चली गईं। वह अति उग्र तेज एक जगह एकत्र होकर अत्यधिक बढ़ा और वही इस अवनि

तपमुन करिगिरि तद्दयु ब्रीति । नुपमिप नट जाल नुग्रवीर्यंबु
कवगूडि वृद्धियुं गडुगलग जाल । नवनिपै श्वेताद्रि यन गडु नॊप्पॆ;
नरय ना शैलंबुनंदु गुमारु । डरुदार जन्मिचॆं हरुनि तेजमुन ;
जननप्रदेशंबु शरवणंबगुट । जननाथ! यतडॊप्पॆ शरजन्मुडनग;
निल गृत्तिकलु सन्नुलिच्चुट जेसि । यलरुचु गार्तिकेयाख्य जॆन्नॊन्दॆ ;
नारय नम्मातलार्वुरुगान । वारु संतोषिप वदनंबुलारु
धरियिंचि समुचित स्तन्यपानंबु । सरिनॊप्प जेयुट षण्मुखुंडय्यॆ;
११००
दरुणेंदुमौळिरेतस्स्कंदमुननु । नरुदारगा स्कंदुडन नॊप्पॆ; नंत
बरुवडि दमु सुरल् प्रणुतिप नॆऱिगि । गिरिपुत्रि कन्नुलु गॆम्पार जूचि,
'सुरलार ! संतानशून्यत मीकु । निरवन्द धरणिकि नॆल्लकालंबु
बहुनायकत्वंबु बाटिल्लनिम्मु । बहुविधंबुल' ननि पलिकॆ गोपिंचि;
कलगिरि सुर; लंत गौरितो दपमु । सलुप हिमाद्रिकि जनियॆ नीश्वरुडु ।
नमरेंद्रुडादिगा नखिलदेवतलु । गमलसंभवुडुन्नकडकु दामेगि,
'जलजसंभव ! भुजासत्त्वसंपन्नु । नॆलमि सेनापति निम्मु मा' कनिन,

पर श्वेताद्रि कहलाया । उस शैल पर शिव के तेज से, आश्चर्य रूप से कुमार (स्वामी) का जन्म हुआ । हे जननाथ ! जन्मस्थान शरवण था, अतः वह शरजन्मा (शरवण-भव) कहलाए । पृथ्वी पर कृत्तिकाओं के स्तन्य-पान कराने से वह कार्तिकेय के नाम से विख्यात हुए । विचार करने पर (जानिए कि) वे (कृत्तिकाएँ) माताएँ छः थीं । उन्हें सन्तुष्ट करने के लिए छः वदन धारण कर समुचित रूप से, शोभायुक्त रूप से, स्तन्यपान करने से वे षण्मुख (छः मुखवाले) हुए । ॥ ११०० ॥

—तरुण-इन्दु-मौलि (शिव) के रेत-स्कन्दन (पतन) के कारण, वे स्कन्द कहलाए । तब क्रम से देवताओं को अपनी-स्तुति करते जानकर, गिरिपुत्री (पार्वती) ने आँखें लाल करके (क्रुद्ध होकर) कहा—'हे देवताओ ! तुम लोगों को सन्तानहीनता और इस धरणी को सदा अनेक प्रकार से बहुनायकत्व प्राप्त होगा ।' ऐसा क्रुद्ध होकर वे बोलीं । (तब) देवता क्षुब्ध हुए । उसके पश्चात् गौरी के साथ तपस्या करने ईश्वर (शिव) हिमाद्रि को चले गए । अमरेन्द्र आदि अखिल देवता, कमल संभव (ब्रह्मा) के यहाँ गए (और) (कहा)—'हे जलजसंभव ! शोभा से भुजासत्त्वसम्पन्न (इस) सेनापति को हमें दे दो ।' (ऐसा) कहने पर वारिजभं ने उन्हें देखकर (कहा)—'गौरी और ईश (शिव) का पुत्र कार्तिकेय, तुम्हारे लिए

वारिजगर्भुंडु बारि वीक्षिंचि । 'गौरीशु सुतुडैन कार्तिकेयुंडु
सेनाधिपत्यंबु सेयु मी' कनिन । ना निर्लिपुलु वेड्क 'नौगाक' यनुचु
जेकोॅन नातडु सेनानियय्यॆ । नाकनायकुनकुन्नत सौख्य मॆसग'
१११०

ननिपल्क रघुरामु डधिक संतोष । मुनु बोॅंदि मरियु नम्मुनिनाथु जूचि
'यी महानदि संयमीश्वर ! त्रिपथ । गामिनि यगुटेमिकारणं' बनिन
ननघुंडु कौशिकु डारामु जूचि । विनुमनि या कथ विवरिंपदोॅडगॆ;
१११३

गंगानदि वृत्तांतमु

'ननघुडयोध्यकु नधिपुडु सगरु । डनु चक्रवर्ति युद्धतकीर्ति गलडु ।
अतडु संततिलेमि कनिशंबु वगचि । मतिलोन दलपोसि मंत्रुल नुनिचि
हिमवंतमुन केगि यिंतुलु दानु । दमकिंचि भृगुगूर्चि तपमाचरिंप
नंत ना भृगुडुनु ना तपंबुनकु । संतुष्ट हृदयुडै सगरुनीक्षिंचि,
'पृथिवीश ! कोॅडुकुलु पॆक्कंड्रु नीकु । ब्रथितोरुकीर्तुलु परग बुट्टॆदरु;

सेनापतित्व करेगा ।' (ऐसा) कहने पर वे निर्लिप (देवता) हर्षामोद से 'ऐसा ही हो' बोले । उनके ग्रहण करने पर नाक-नायक (स्वर्गपति इन्द्र) को उन्नतसुख सम्पन्न कराते हुए वह (कार्तिकेय) सेनानी हुए ।' ॥ १११० ॥

—ऐसा (विश्वामित्र के) कहने पर रघुराम अधिक प्रसन्न हुए और उस मुनिनाथ को देखकर बोले—'हे संयमीश्वर ! इस महानदी के त्रिपथ-गामिनी होने का क्या कारण है ?' (ऐसा) कहने पर निष्पाप कौशिक राम को देखकर बोले, 'सुनो' और उस कथा का विवरण देने लगे:— ॥ १११३ ॥

गंगानदी का वृत्तान्त

—'अनघ (पुण्यवान्) सगर नामक चक्रवर्ती अयोध्या के अधिप (राजा) उद्धत कीर्ति वाले थे । वे सन्तान के अभाव से व्याकुल हो, (अपने) चित्त में विचारकर, मन्त्रियों को राज्य का भार सौंप कर, स्त्रियों के साथ हिमायल पर्वत पर गए । (वहाँ) बड़ी तन्मयता से भृगु के आश्रम में तपस्या की । तब उस तपस्या से सन्तुष्ट होकर भृगु ने सगर से कहा 'हे पृथ्वीश ! तुम्हें प्रख्यात कीर्ति वाले कई पुत्र प्राप्त होंगे । सम्मान्य

अंचित कीर्ति नी यतिवलंदोकतें । गांचु नोक्कनि वंशकरुडैन पुत्रु;
मरि योक्क सतिगांचु मानुगा सुतुल। नरुवदिवेवुर नमित विक्रमुल'
११२०
ननि वरंबिच्चिन ना राजसतुलु । विनि करंबुलु मोड्चि विनयंबुतोड
मुनिनाथुनकु म्रोक्कि मुदमंद'नोक्क। तनयुडेसति? कुन्न तनयुलेसतिकि?'
ननवुडु 'मी कोरिनट्लये पुत्र । जननंबु' लनि पल्क संतोषमंदि,
यंदग्रमहिषि निजान्वयकरुनि । नंदनु नोक्कनि नरनाथ ! कोरें ।
मरि कोरें ना युन्न मगुवयु सुतुल । नरुवदि वेवुर नधिकमोदमुन ।
सगरुंडु भृगुनकु सतुलतोड गूड । नोंगि ब्रदक्षिणमंत नोनरिंचि
म्रोक्कि
पुरमुन केतेंन्चि पोलुपार नंत । गरमु वेडुक गोन्तकालंबु सनग
मानुगा दन यग्रमहिषि केशिनियु । सूनुनि नसमंजसुंडनुवानि
गनियें ; ना सुमतियन् कांतकु बुट्टे। घनतरंबैनट्टि गर्भतुंबंबु ।
करकैन या सोरकायलो बुट्टि । ररुवदि वेवुरत्यद्भुत लील ११३०
नंत दादुलु वारि नाज्य भांडमुल ।गोन्तकालमु वेम्प गोमरारि वारु

कीर्ति वाली इन स्त्रियों में से एक (स्त्री) वंशकर (वंशोद्धारक) पुत्र को जन्म देगी । दूसरी स्त्री अमित विक्रम वाले साठ हज़ार पुत्रों को जन्म देगी ।। ११२० ।।

—ऐसा वर देने पर, उन रानियों ने हाथ जोड़, विनय के साथ, मुनिनाथ को प्रणाम कर, प्रसन्न हो पूछा—'हम दोनों में किसके एक पुत्र होगा और किसके साठ हज़ार पुत्र उत्पन्न होंगे ?' ऐसा पूछने पर मुनि ने कहा—'तुम लोगों की इच्छा के अनुसार पुत्र जन्म (पुत्रोत्पत्ति) होगा ।' ऐसा कहने पर प्रसन्न होकर, उनमें से अग्रमहिषी (पटरानी) ने निजान्वयकर (अपने वंश के उद्धारक) एक नन्दन (पुत्र) की इच्छा प्रकट की तथा दूसरी स्त्री ने अधिक मोद के साथ, साठ हज़ार पुत्रों की इच्छा प्रकट की । सगर, रानियों के साथ, क्रम से भृगु को प्रदक्षिणा कर, पुर में शोभा के साथ आए । इस प्रकार कुछ समय अत्यन्त आनन्द के साथ बीता । कुछ समय बाद राजा सगर की अग्रमहिषी (पटरानी) केशिनी ने असमंजस नामक पुत्र को जन्म दिया । और उस सुमती नामक रानी से एक गर्भतुम्ब (लौकी) पैदा हुआ । उस कठिन लौकी में से, अतिअद्भुतलीला से साठ हज़ार (पुत्र) पैदा हुए । ।। ११३० ।।

—तब धाइयों ने उन्हें कुछ समय तक आज्यभांडों (घी के पात्रों) में रख

रूपयौवनमुल रूढ़िमै बॆरिगि ; । रा पॆद्दवाडंदुदग्रदर्पमुन
वापोव दम्मुल वडि बट्टि पट्टि । चापलंबुन गट्टि सरयुवुलोन
वैचुचु नव्वुचु वच्चिन मगुड । द्रोचुचु नुंडु; ना दुष्टात्मुडैन
यसमंजसुन कंत नंशुमंतुंडु । दॆसल देजंबुलु दीपिंप बुट्टॆ ।
नायसमंजसु डतिदुष्टचित्तु । डैयुन्न नतनि बोनडचि या राजु
शाश्वतधर्मनिष्ठापरुं डगुचु । नश्वमेधमु सेय ननुरक्ति दॊडगॆ"
ननिन गौशिकु जूचि या रामुडनियॆ । 'मुनिनाथ! मा वंशमुन वारि कथलु
विन वेड्क पुट्टॆडु ; विवरिंपु माकु' । ननिन विश्वामित्रुडनियॆ रामुनकु

सगरुल वृत्तान्तमु

'विडुवक हिमशैल विन्ध्यशैलमुल । नडुम ना सगरु जन्नंबु वर्तिप ११४०
यागंबु चेरुव नंशुमंतुंडु । रागिल्लि यश्वंबु रक्षिचुनॆडनु,
ननिमिषपति दैत्युडै म्रुच्चिलिंचि । कॊनिपोयि पाताळकुहरंबु सॊच्चि

कर पाला-पोसा । वे सभी पुत्र मनोज्ञ रूप से, रूप और यौवन को अत्यधिक रूप से प्राप्त कर बड़े हुए । उनमें से असमंजस नामक वह ज्येष्ठ पुत्र उदग्र दर्प से अपने छोटे भाइयों को झट से पकड़-पकड़ उन्हें रुलाते हुए, चपलता से उन्हें रस्सियों से बाँध, सरयू में डाल देता और हँसता । वे (नदी में से) लौट आते तो फिर ढकेलता रहता । उस दुष्टात्मा असमंजस के अंशुमान् (नामक पुत्र) दिशाओं को दीप्त करता हुआ पैदा हुआ । उस असमंजस के अतिदुष्ट होने के कारण राजा सगर ने उसे निर्वासित कर दिया और शाश्वत धर्म-निष्ठा में तत्पर हो प्रेम-पूर्वक अश्वमेध (यज्ञ) करने का प्रयत्न करने लगा ।' यह सुनकर कौशिक की ओर देखकर राम ने कहा—'हे मुनिनाथ ! मुझे अपने वंश के लोगों (पूर्वजों) की कथाएँ सुनने की इच्छा हो रही है । अतः आप (उन्हें) विवरण (विस्तार) से कहिए ।' ऐसा कहने पर विश्वामित्र राम से यों बोलेः—

सगरों का वृत्तान्त

—(राजा सगर) हिमशैल और विन्ध्यशैल के मध्य (मध्यभूमि में, आर्यावर्त में) निरन्तरता से यज्ञ करने लगा । ॥ ११४० ॥

—यज्ञ स्थल के निकट ही अंशुमान् प्रेमपूर्वक (यज्ञ के) अश्व की रखवाली कर रहा था । उस समय देवराज इन्द्र ने दैत्य (राक्षस) का रूप बना कर (अश्व को) चुरा लिया और पातालकुहर में प्रवेश कर, कपिल मुनि

कपिलसंयमि वॆन्क गडकतो गट्टि । यपरिमितानंदुडै येगॆ दिविकि ।
भूपालु डश्वंबु बॊडगान किच्च । गोपिंचि मंडुचु गॊडुकुल बिलिचि
'यिट गान मश्वंबु; नॆव्वडो वच्चि । कुटिलुडै म्रुच्चिलि कॊनिपोयिनाडु
मूडु लोकंबुलु मुनुमिड वॆदकि । वाडॆव्वडैननु वानि निर्जिंचि
तॆन्डु गुऱ्ऱमु वेग तॆगुवमै मीरुः । पॊन्ड'न्न सगरुलु भुजशक्ति मॆरसि
नॆऱसि ब्रह्मांडंबु निंड गर्जिंचि । यरुवदि वेवुरु ना प्रॊद्दे कदलि
या नाकलोकंबु नवनियु वॆदकि । कानक धरणि व्रक्कलु सेयगडगि,
'यॊक्कॊक्क डॊक्कॊक्क योजनं बुर्वि। नक्कजंबुग द्रव्वु' डनि येर्पऱिचि
'परुवडि पूर्वदिग्भागंबु दॊडरि । धर ब्रदक्षिणमुगा द्रव्वुद' मनुचु
बॊरि बॊरि गुद्दाल भूरिशूलमुल । धर रसातलमुनंदाक द्रव्वुचुनु
बाताळवासुल ब्रकटसत्त्वमुल । भूतसंततुल जंपुचु जॆलंगुचुनु
वॆस नप्पुडऱुवदि वेल योजनमु । लसमुन द्रव्वि रा यसमानबलुलु ।
भूरिसत्त्वमुन जंबूद्वीपमिट्लु । वारिक तिरिगि रा वडि द्रव्वुटॆऱिगि,
यमरगंधर्वसिद्धादुलु बॆदरि । कमलगर्भुं डुन्नकड केगि म्रॊक्कि,

के पीछे, सप्रयत्न (उस अश्व को) बाँधकर, अपरिमित आनन्द से दिवि (स्वर्ग) को लौट गए। भूपाल ने अश्व का पता न लगने पर, अतिक्रुद्ध होकर, जलते (क्रुद्ध होते) हुए, पुत्रों को बुलाकर कहा—'यहाँ अश्व का पता नहीं है। कोई कुटिलात्मा आकर उसे चुरा ले गया है। तीनों लोकों में क्रमशः ढूँढकर, जिस किसी ने घोड़े को चुराया हो, उसका वध करके, शीघ्र अश्व ले आओ। साहस के साथ तुम लोग जाओ।' ऐसा कहने पर अतिशय भुज-बल का प्रदर्शन करते हुए, ब्रह्माण्ड काँप उठे, ऐसा गरज कर, उसी समय सगर के साठ हज़ार पुत्र निकल पड़े। नाकलोक (स्वर्ग) (और) अवनि (धरती) पर ढूँढने पर भी जब अश्व न दिखाई पड़ा तो वे धरणी के टुकड़े-टुकड़े करने लगे। 'हममें से प्रत्येक एक-एक योजन भर उर्वी (धरती) को, चकित करने वाले ढंग से, खोद डालें', ऐसी योजना (सगर के पुत्रों ने) बनाई। ॥ ११५० ॥

—'क्रम से पूर्व दिग्भाग से प्रारम्भ करके, धरा को प्रदक्षिणा रूप से खोदेंगे' ऐसा कहते हुए, गुद्धाल (कुदाल) तथा बड़े बड़े शूलों से धरा को, बार-बार रसातल तक खोदते हुए, प्रकट पराक्रम वाले पाताल-वासियों (और) भूत-संततियों (प्राणी-समूह) को मारते हुए, उत्साहपूर्वक, उन असमान बलशालियों ने शीघ्रता से साठ हज़ार योजन भूमि को दर्प के साथ खोद डाला। भूरि सत्त्व (अधिक शक्ति) के साथ जम्बूद्वीप को (सगरपुत्रों द्वारा) पुनः पुनः दुर्निवार रूप से तथा शीघ्रता से खोदते

'वनपर्वत द्वीपवतियैन भूमि । चनि तव्वुचुन्नारु सगरनंदनुलु;
बलुवडि सत्त्वसंपन्नंबुलैन । जलचरंबुल बट्टि चंपुचु, मरियु
'वीडु यज्ञमुनकु विघ्नंबु जेसें' । 'वीडश्वहरु' डंचु वीडु वाडनक
बलियुलै तम दृष्टि बडुवारि नेल्ल । जलजसंभव ! पट्टि चंपुचुन्नारु
११६०
तलचि नीविदि समाधानंबु सेय । वलयु'नन्ननु ब्रह्म वारितो ननियें;
'गपिलमुनींद्रुडै कैकोन्नवाडु । तपमु नव्ययुडैन दामोदरुंडु ।
अम्मुनि कोपाग्नि यंदंद वारि । ग्रम्मिन भस्मंबुगा गलवार
लनि पल्क सुरलेल्ल 'नौगाक' यनुचु। जनि ; रंत नक्कड सगर नंदनुलु
पिडुगुल बोलेंडि भीकरध्वनुलु । कॅडम्रोय निल ब्रदक्षिणमुगा गलय
जुट्टुनु द्रव्वि येंच्चोट घोटकमु । पट्टु गानक तंड्रिपालि केतेंन्चि,
'यश्वंबु बोंडगान मखिलंबु वेंदकि; । यश्वचोरुनि गानमैति मेक्कडनु;
नेमेमि सेयुदु मिट मीद' ननिन । भूमीशुडलगि या पुत्रुल कनियें;
'विश्वंबु गलयंग वेंदकि ना येंदुटि । कश्वंबुदेक मीररुदेर वलव'

देख कर, अमर, गन्धर्व, सिद्ध आदि घबरा उठे और जहाँ कमलगर्भ (ब्रह्मा) थे, वहाँ जाकर, प्रणाम कर बोले—'वन, पर्वत तथा द्वीपों से युक्त भूमि को सगरनन्दन सप्रयत्न खोद रहे हैं। इच्छानुसार पराक्रम-सम्पन्न जलचरों को पकड़-पकड़ कर मारे डाल रहे हैं। 'इसने यज्ञ में विघ्न पहुँचाया है', 'यह अश्वहर (अश्व का चोर) है' ऐसा कहते हुए, अपनी दृष्टि में आने वाले सभी को सगर के बली पुत्र पकड़-पकड़ कर मारे डाल रहे हैं। ।। ११६० ।।

—इस पर विचार करके तुम्हें इसका समाधान करना चाहिए।' ऐसा कहने पर ब्रह्मा ने उनसे कहा—'अव्यय दामोदर (विष्णु) कपिल मुनीन्द्र के रूप में पाताल में तपस्या कर रहे हैं। उनकी कोपाग्नि के उन पर छा जाने से वे भस्म हो जाने वाले हैं।' ऐसा कहने पर सभी देवता 'तथास्तु' कह-कर चले गए। तब वहाँ सगर-नन्दनों ने वज्र के समान भयंकर ध्वनियों के साथ धरती को प्रदक्षणा-पूर्वक, पूरी तरह से, चौतरफ़ खोद डाला, किन्तु कहीं भी घोड़े के न मिलने पर, पिता के पास आकर, बोले—'अखिल (लोक) को खोजने पर भी हम लोग अश्व का पता न लगा सके, कहीं भी अश्वचोर को देख नहीं सके। इसके बाद हम अब क्या करें।' ऐसा कहने पर राजा सगर क्रुद्ध हो उन पुत्रों से बोले—'(समस्त) विश्व में पूरी तरह से खोजो, बिना अश्व के तुम लोगों को मेरे समक्ष नहीं आना चाहिए।'

दनि पल्क ‘नौगाक’ यनुचु ना सगर। तनयुलुद्धति रसातलमुन करिगि
११७०
येलमि शिर:कंप मलुक गाविंचि । तलकोंनि यंदंद धरणि कंपिंप
‘बरुवडि पूर्व दिग्भागंबु दोंडगि । धर ब्रदक्षिणमुगा द्रव्वुद’मनुचु
दोरकोंनि यंदरु दूर्पुदिक्केल्ल । नरसि गुर्रमु गान कच्चोट सकल
धारुणीमंडलोद्धरणमुकुंद । चारु भुजादंड समदंतकांड
चतुरग्रमुल धराचक्रंबु मोव । जतुरत गल शुभ्रसामजेंद्रंबु
बोंडगांचि वलगोंनि पूजिंचि यचट। दडयक मरि बृहद् भानुदिक्कुनकु
बोयि नाना विधंबुल नंदु वेंदकि । या यश्वरत्नंबु नरय जोप्पडक
सततदानच्छटा सम्मदामोद । भृतशिलीमुख पुंडरीकाख्य गजमु
गनुगोंनि पूजिंचि कड्डुवेड्कतोड । विनुतिंचि यव्वल वेदकुचु याम्य
भागंबुनकु नेगि परिकिंचि हयमु । लागोंकितैननु लक्षिपलेक ११८०
घनतरत्वमु द्रिविक्रमु नाक्रमिंचु । नन मिंचु वामनंबनु दंति गांचि
यर्चिंचि यव्वलि करिगि नैरृतिनि । जर्चिंचि यंदु नश्वंबु गान लेक

ऐसा कहने पर, ‘ऐसा ही करेंगे’, यह कहकर, वे सगर-तनय उद्धत-गति से रसातल में गए । ॥ ११७० ॥

—वहाँ क्रोध से शिर:कंपन कर, सप्रयत्न धरणी के कंपित होने पर बोले--‘क्रम से पूर्वदिग्भाग से प्रारम्भ करके, धरा को प्रदक्षिणा-पूर्वक खोदेंगे ।’ उस प्रयत्न में लगकर, सभी ने समस्त पूर्वदिशा को छान मारा, पर घोड़े को देख न पाए । वहाँ धरणीमंडल का उद्धार करने वाले मुकुन्द के चारु भुजादंड के समान (शोभायमान) दन्तकाण्डों के चतुरग्रों पर धराचक्र को सम्हालने की चतुरता (नैपुण्य) से युक्त शुभ्र (पवित्र) दिग्गज को देखा । इच्छानुसार उसकी पूजा करके, वहाँ विलम्ब न करके आग्नेय दिशा की ओर गए । नाना विधियों से वहाँ ढूँढकर उस अश्व-रत्न का पता लगा नहीं पाए । वहाँ निरन्तर स्रवित होने वाले मदजल की मदभरी सुगंध से आकृष्ट भ्रमरों से युक्त ‘पुंडरीक’ नामक दिग्गज को देखकर उसकी पूजा की । बड़ी प्रसन्नता के साथ उसकी विनति कर, आगे ढूँढते हुए, दक्षिण दिशा में जाकर, ढूँढ़ने पर भी वे अश्व का पता न लगा सके । ॥ ११८० ॥

वहाँ घनतरत्व में त्रिविक्रम को भी मात करने वाले, शोभायुक्त ‘वामन’ नामक दिग्गज को देखकर उसकी अर्चना की । आगे जाकर नैऋत्य दिशा खोज डाली पर वहाँ भी अश्व को देख न सके । वहाँ कुमुद के समान

कुमुद मार्दवमुन गुमुदवर्णमुन । गुमुदंबु ना नॊप्पु कुंजरेंद्रंबु
गनि नमस्कारंबु गाविंचि यवल । जनि चनि पश्चिमाशाप्रदेशमुन
शोधिंचि तुरगंबु चॊप्पितयैन । साधिपलेक यंजनशैलमनग
रंजित मद निर्झरंबुलु गलिगि । यंजनंबनु नेन्गु नच्चोट गांचि
विविधसत्कृतुलु गाविंचि या मीद । बवनुनि दॆस केगि बहुविधंबुलनु
नेमकि गुर्रमु गाननेरक यचट । नमुचि संहर वारण प्रतिमान
दंतमय्युनु बुष्पदंताख्य बरगु । दंति नीक्षिंचि मोदमुन बूजिंचि
यट वासि चनि कुबेराशांतरमुन । दट्टुकुन नरसि सैंधवमु गानंग ११९०
लेक यच्चट नॊक्क लेखाधिनाथ । लोकगजाधिप लोकैकसार्व
भौममो यन सार्वभौमाभिधान ।सामजेंद्रमु गांचि सद्भक्ति म्रॊक्कि
सार्वभौमुनि पुत्रसंघंबु गदलि । शर्वुनि दॆस केगु समयंबुनंदु
ननतिदूरमुन हुताग्नि निबोलि । कनुगव मोड्चि येकतम कूर्चुंडि
तन निष्ठ पॆम्पुन दपमाचरिंचु । ननघात्मु गपिलमहामुनि गांचि
यतनि चॆन्गट नुन्न हयमु नीक्षिंचि । यतनि भर्जिंचिन, नतडुग्रदृष्टि

कोमल, कुमुदवर्ण वाले, कुमुद के समान शोभायमान (दिग्गज) को देखकर उसे नमस्कार किया। आगे जा कर, पश्चिमदिशा के प्रदेश को खोज कर तुरंग का तनिक भी पता न लगने पर, काजल के पर्वत के समान, सुन्दर मदजल के निर्झरों से युक्त, 'अंजन' नामक गज को देखकर, उसका विविध प्रकार से सत्कार किया और उसके बाद पवन की दिशा (वायव्य दिशा) में जाकर, बहुविधियों से खोजकर, अश्व को पाने में असमर्थ हुए। वहाँ 'नमुचि' (नामक राक्षस) के संहार करने योग्य दाँतों वाले और 'पुष्पदन्त' के नाम से प्रसिद्ध दिग्गज को देखकर, प्रसन्नतापूर्वक उसकी पूजा की। वहाँ से निकलकर तुरन्त उत्तर दिशा में गये, पर वहाँ भी घोड़े को नहीं पाया। ॥ ११९० ॥

--वहाँ एक लेखाधिनाथ, लोक गजाधिप के एकैक सार्वभौम (चक्रवर्ती) के समान विराजमान 'सार्वभौम' नामक दिग्गज को देख उसे सद्भक्ति-पूर्वक प्रणाम किया। चक्रवर्ती राजा सगर के साठ हज़ार पुत्र वहाँ से निकलकर जब शंकर की दिशा (ईशान दिशा) में जा रहे थे, तब थोड़ी ही दूर पर, यज्ञ की अग्नि के समान जाज्वल्यमान और अपने दोनों नेत्र बन्द करके एकान्त में बैठकर अधिक निष्ठापूर्वक तपस्या करने वाले पुण्यात्मा कपिल मुनि को देखा और उनके निकट विद्यमान घोड़े को देखकर जब उन्हें सताया तो तपस्या के भंग होने पर व्यग्र हो

नऱिमुऱि सगरुल नलिगि चूचुटयु । नरुवदि वेवुरु नट भस्मैरि ।

अंशुमंतुडु अध्वराश्वमु दॆच्चुट

कॊडुकु लय्यश्वंबु गॊनिराक चाल । दडसिन सगरुंडु दापंबु नॊन्दि
मनुमनि नय्यंशुमंतु बंपुटयु । जनि यंशुमंतुडाजाडने पोयि
यमरॆंदु दॆस विरूपाक्षंबु गांचि । कॊमरु मीऱग वलगॊनि वच्चि
म्रॊक्कि १२००
'मातंगपुंगव ! मा तंड्रुलिचिटि । केतॆंन्चि; रॆंटुवोयि? रॆन्दुन्नवारॊ?
तुरगचोरकडॆन्दु दूऱिनवाडॊ ? । वरुस नी वॆऱिगिंपवलयु ना' कनिन
ना दिग्गजाधीशु डा यंशुमंतु । नादरंबुन जूचि यप्पुडिट्लनियॆं;
'ब्रियमार नॊक्कॆड बृथिवीशतनय! । हयमु गांचॆद' वन्न नौगाक यनुचु
तुन्नदिक्करुलनु नॊगि नेगि वानि । नन्निटि निब्भंगि नडुगंग नवियु
बरुवडि ना पल्कॆ पलुकंग विनुचु । नरिगि या मुंदर नध्वराश्वंबु
नरयुचु गपिलसंयमिपॊन्त गनियॆ । सरिप्रोवुलै युन्न सगरभस्मुलु ;
कनि चाल शॊकिंचि कडगि तंड्रुलकु । बॊनर दिलोदकंबुलु वोय दलचि

कपिल मुनि के, उग्रदृष्टि से, क्रोधपूर्वक देखते ही, सगर के साठ हज़ार पुत्र वहीं जलकर भस्म हो गए ।

अंशुमान् का यज्ञाश्व लाना

—उस अश्व को लाने में अपने पुत्रों के अधिक विलम्ब कर देने पर, सगर दुखी हुए और अपने पौत्र अंशुमान् को भेजा । अंशुमान् उसी मार्ग से गए । पूर्वदिशा में 'विरूपाक्ष' नामक हाथी को देख, शोभायुक्त हो, इच्छापूर्वक, उसके पास जा प्रणाम किया । ।। १२०० ।।

—'हे गजेन्द्र ! हमारे पिता यहाँ आकर कहाँ गए हैं, तुरगचोर कहाँ छिपा हुआ है ? क्रमसे आपको मुझे बताना होगा ।' ऐसा कहने पर उस दिग्गजाधीश ने उस अंशुमान् को सादर देखा, और कहा—'हे राजकुमार ! एक स्थान पर तुम सप्रेम घोड़े को देखोगे ।' ऐसा कहने पर 'ऐसा ही हो' कहते हुए, क्रम से सभी दिग्गजों के पास जाकर, उन सबसे उसी प्रकार पूछा । उन्होंने भी क्रम से उसी प्रकार से कहा । उनकी बातें सुनते हुए यज्ञाश्व को ढूँढते हुए आगे गया । वहाँ कपिल मुनि के निकट ढेर के ढेर पड़े हुए सगर पुत्रों के भस्म को पाया । यह देख अति शोक कर पिताओं को उचित रीति से तिलोदक प्रदान करने की बात सोची । किन्तु वहाँ

युदकंबु गानक युन्न नय्यॆडकु । सदयुडै गरुडुंडु सनुदॆन्चि पलिकॆ;

गंगावतरणमु

‘गपिलुनि नलुकमै गलचि यम्मौनि । कुपिताग्नि सगरुलु गूलि नीरॆरि ; १२१०
यिदियेल शोकिंप? निटु शोकमंद । निदि वेळगा; दॊक्कटेर्पड विनुमु;
सरसिजासनवंद्य चरणारविंदु । डरविंददळनेत्रु डादिपूरुषुडु
बलिदानवेश्वरु बंधिचुनप्पु । डलुक द्रिविक्रमुडै निंड बॆरिगि,
यगणित शक्ति रॆन्डडुगुलयंदु । जगतीतलंबॆल्ल सरि नाक्रमिंचि,
जलजात जलचर शंखचक्रम्मु । ललवडुनट्टि मूडव पदांबुजमु
गडुकॊनि ब्रह्मलोकमुदाक जाप । गडुवेगमुन वच्चि कमलसंभवुडु
तलकॊन्न भक्तितो दन कमंडलुवु । जलमुल दत्पादजलजंबु गडुग
बॊगडॊन्दु दज्जलंबुलु नभोवीथि । दगिलि वर्तिंचु मंदाकिनि यनग;
गावुन नीविक गमलसंभवुनि । भाविंचि तपमति भक्ति गाविंचि
कडकमै नाकाशगंग दॊड्तॆच्चि । तडयक भस्मुल् दडपिनगानि १२२०

कहीं उदक (जल) दिखाई नहीं पड़ा। उसी समय उस स्थान पर गरुड़जी सदय (दयालु) होकर आए और बोले--

गंगा का अवतरण

--‘कपिल को क्रोधपूर्वक सताने के कारण उनकी क्रोधाग्नि से सगर के सभी पुत्र पानी-पानी (नष्ट) हो गए। ॥ १२१० ॥

--यह क्यों शोक करते हो ? यह समय इस प्रकार दुखी होने का नहीं है। एक बात ध्यान से सुनो। ब्रह्मा से वन्दित चरणारविन्द वाले, कमल के दल के समान नेत्र वाले, आदिपुरुष विष्णु ने दानवेश्वर बलि को बाँधते समय, क्रोध के कारण त्रिविक्रम रूप लेकर, तीनों लोकों के परिमाण के अनुसार बढ़कर, अगणित शक्ति से दो चरणों से समस्त जगत् को पूर्णरूप से आक्रान्त करने के बाद, कमल, मीन, शंख-चक्र आदि चिह्नों से युक्त तीसरे चरण को अतिशयता के साथ, ब्रह्मलोक तक फैलाया। तब बड़ी शीघ्रता से आकर ब्रह्मा ने बड़ी भक्ति से अपने कमंडल के जल से उस चरण-कमल को धोकर अपने कमंडल में ही वह जल रख लिया। वही प्रसिद्ध जल आकाश मार्ग में मंदाकिनी के नाम से वर्तमान है। अतः तुम अब ब्रह्माजी का ध्यान करके अति भक्तिपूर्वक तपस्या करो। (इस प्रकार) सप्रयत्न आकाशगंगा को लाकर, बिना विलम्ब भस्मों को सींचे बिना ॥ १२२० ॥

परलोकसुखमुलु वडयरु वीरु ; । गुरुबुद्धि दुरगंबु गॊनि येगु'मनिन
दुरगंबु गॊनिपोयि तॊडरि यंतयुनु । दरमिडि यातडु दम ताततोड
जॆप्पिन शोकिंचि चेय गैकॊन्न । यप्पुण्यमखमु समाप्तंबु सेसि
कामिंचि याकाशगंग नी युर्वि । केमॆंयि दॆत्तुनो येनंचु नतडु
विडुवक मुप्पदिवेलेंड्लु दपमु ।पुडमि नॆन्तयु जेसि पोयॆनु दिविकि।
ना राजु मनुमडय्यंशुमंतुंडु । धारुणि गंगकु दपमॊप्प बूनि,
वरुस मुप्पदिवेल वर्षमुल् सलिपि । परलोकगतुडय्यॆ बदपडि यतडु;
नतनि पुत्रुडु दिलीपावनीनाथु । डतिनिष्ठतोड जाह्नवि दॆत्तुननुचु
विडुवक मुप्पदिवेलेंड्ल तपमु । गडिपियु नतडु रोगमुलचे जच्चॆ ।
ननघुडातनि पुत्रुडगु भगीरथुडु । तन राज्यमरय ब्रधानुल निलिप १२३०
सारधर्मज्ञुलु सद्गुणोज्ज्वलुलु । शूरुलुनगुनट्टि सुतुलनु गोरि,
यॆल्लपापंबुल निलमीद बाप । दॆल्लंबुगा गंग दॆच्चॆद ननुचु
गरमर्थि दपमु गोकर्णाश्रममुन । नरुदुगा बदिवेलयब्दमुल् सेय
ननुपमंबगुचुन्न या तपंबुनकु । वनजसंभवुडंत वरदुडॆ वच्चि

—ये सगर-पुत्र परलोक के सुखों को प्राप्त नहीं कर सकेंगे। सुबुद्धि से तुरग को लेकर जाओ।' ऐसा कहने पर जब तुरग को ले जाकर, सप्रत्यन सब कुछ, क्रम से उसने अपने दादा को बताया, तो सगर बहुत दुखी हुए और प्रारम्भ किए उस पुण्य मख (यज्ञ) को समाप्त किया। कामना कर आकाश गंगा को इस पृथ्वी पर किस विधि से लाऊँ, ऐसा सोचते हुए अविच्छिन्न रूप से तीस हजार वर्ष, पृथ्वीपर घोर तपस्या कर स्वर्ग गए। इसके बाद उस राजा का पोता वह अंशुमान् भी धरणी पर गंगा को लाने के लिये क्रम से तीस हज़ार वर्ष तक तपस्या में रत होकर परलोकगत हुआ। उसका पुत्र राजा दिलीप भी अतिनिष्ठा के साथ 'जाह्नवी लाऊँगा' यह कहते हुए लगातार तीस हज़ार वर्ष तप में बिताकर, रोगों के कारण मर गया। उसके पुत्र पुण्यात्मा भगीरथ ने विचार कर अपने राज्य को मन्त्रियों के हाथों में सौंप कर, ।। १२३० ।।

—धर्म के सार को जानने वाले, सद्गुणों से उज्ज्वल, शूर-भाव-युक्त पुत्रों की इच्छा कर, 'धरती पर के सभी पापों को दूर करने के लिए स्वच्छ रूप से (स्पष्टता से, निश्चयही) गंगा को लाऊँगा' ऐसा कहते एहु, बड़ी इच्छा से गोकर्ण-आश्रम में, आश्चर्यचकित कर देने वाले ढंग से दस हज़ार वर्ष तक तप किया। उस उग्र तप से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी आए

'यडुगुमु वर' मन्न ना भगीरथुडु ।कडुभक्ति ब्रह्मकु गरमुलु मॉगिचि
'भारतीनेत ! प्रपंचनिर्मात ! । सौरलोकत्रात ! सत्यसंधात !
धात ! मा तातलुग्रुलै वच्चि । यातत कपिल कोपाग्निचे गालि,
नूरु वेलेंड्लु सन्नुतगति लेक । याऽडि पडि भस्मै युन्नवारु:
कडगि या भस्मंबु गंगोदकमुल । दडुपक गतिलेदु ; दयसेयु' मनिन
'हरुडॉक्करुडु दक्क नन्यु ला गंग । धरियिंपनेररु दविलि यॆव्वरुनु ;
१२४०
नीविंक हरुनकु निष्ठमै दपमु । गाविंचि प्रार्थिपु गंग धरिंप'
ननि पल्कि मदिलोन नातडर्थिंचु । तनयुल निच्चि यद्धरणीशु कॉऽकु
दनरंग ना गंग 'धर केगु' मनुचु । जनियॆ बद्मजु ; डंत जनि भगीरथुडु
अंगुष्ठ मॉक्कटि यवनिपै मोपि । यंगजहरुनकु नतिघोरतपमु
दलकॉनि चेय ब्रत्यक्षमै शिवुडु । 'तलदाल्तु दॆम्मु मंदाकिनि' ननियॆ;
नंत भगीरथुंडर्थि ब्रार्थिप । नंतरिक्षंबुनयंदुंडि गंग
गगनमंडलमु नक्षत्रमंडलमु । बगुल लोकमुलॆल्ल बगुल म्रोयुचुनु

और कहा--'वर माँग लो' ऐसा कहने पर उस भगीरथ ने अतिभक्तिपूर्वक ब्रह्मा को हाथ जोड़ कर कहा--'हे भारती नेता ! प्रपंचनिर्माता ! हे सौरलोक-त्राता ! हे सत्यसंधाता ! धाता ! हमारे दादा, कपिल की भयंकर कोपाग्नि से जलकर, सौ हज़ार वर्षों से सन्नुत-गति के बिना, निन्दित हो भस्म बने पड़े हुए हैं। सप्रयास उस भस्म को गंगाजल से सींचे बिना, उन्हें मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। अत: आप उस गंगाजल को प्रदान कीजिए।' तब 'शंकर के अतिरिक्त कोई उस गंगा को प्रयत्न करने पर भी धारण नहीं कर सकता, ।॥ १२४० ॥

--अत: अब तुम निष्ठापूर्वक शंकर के प्रति तप करके उनसे गंगा को धारण करने की प्रार्थना करो।' ऐसा कहकर (भगीरथ के मन की इच्छा के अनुसार) पुत्र प्रदान कर, शोभापूर्वक उस गंगा से 'धरा पर जाओ' यह कहकर, ब्रह्माजी चले गए। तब जाकर भगीरथ एक अंगूठे को पृथ्वी पर टेक कर (एक अंगूठे पर खड़े होकर), शिव के प्रति अति घोर तपस्या करने लगे। तब शिवजी प्रत्यक्ष (प्रकट) होकर बोले--'लाओ, मैं मंदाकिनी को सिर पर धारण करूँगा।' तब भगीरथ के द्वारा प्रार्थना करने पर, गगनमंडल तथा नक्षत्रमंडल को फोड़ती हुई, समस्त लोकों को फाड़ देने वाली ध्वनि से, कुलपर्वतों तथा पृथ्वीयुक्त बली बने महादेव तक को पाताल तक ले जाने के भाव में, घोरता से

गुल पर्वतमुलतो गुंभिनितोड । बलिसि महादेवु बाताळमुनकु
गॊनिपोवु तॆऱगुन घोरमै पर्वि । चनुदॆन्चु भंगिकि जगमुलु बॆदर
वच्चु ना गंगगर्वमडंप शिवुडु । निच्चच जूटमु बॆन्चॆ-नितलो गंग १२५०
वच्चि महादेवु वर जूट वीथि । जॊच्चि वॆल्वडु त्रोव सॊप्पडकुन्न

भगीरथुडु गंगनु दॆच्चुट

हरु जटा जूटमहाटवि जिक्कि । तिरुगुडु वडुचु वर्तिचुचुनुंडॆ;
नंत भगीरथुं 'डतुल प्रवाह । मंतयु निप्पुडॆन्दरिगॆनॊ ?' यनुचु
वॆऱगंदि वॊण्डियु विषकंधरुनकु । दरिगॊनि यत्युग्रतपमाचरिंप
नपरिमित प्रीति ना भगीरथुनि । तपमिच्च मॆच्चि कंदर्पसंहरुडु
लोलत दन मौळिलो नुन्न गंग । 'भूलोकमुनकिक बॊ'म्मनि यनुप
वलनॊप्पु जूटंबु वाकिलि वॆडलि । पॊलुपॊन्द चाताळमुन जूपु निलिपि
तन दिव्यदृष्टि मंदाकिनि कपिलु । गनि मुनिमहिमकु गडु भीति गलगि
'तगिलि निन्नलचिन दारुणात्मकुल। सुगतिकि बुच्चच वच्चु चुनुन्नदान:

दौड़ती हुई, पृथ्वी पर आती हुई, अपने आगमन की पद्धति से जगत् को भयभीत करती हुई, गंगा अंतरिक्ष से (पृथ्वी की ओर) आने लगी। उस गंगा के गर्व का दमन करने के लिए शिव ने इच्छानुसार अपने जटाजूट को बढ़ा लिया। इतने में ही गंगा आकर महादेव के श्रेष्ठ जटासमूह में पैठकर बाहर निकलने के मार्ग के न दीखने पर—॥ १२५१ ॥

भगीरथ का गंगा को लाना

हर के जटाजूट रूपी महारण्य में फँसकर, (गंगा) परिभ्रमण करती रही। तब भगीरथ यह सोचकर भयभीत हुए कि 'वह समस्त अतुल प्रवाह अब कहाँ चला गया है ?'। फिर से भगीरथ ने शिवजी के प्रति अति उग्र तप किया। उस भगीरथ के तप से सन्तुष्ट होकर, अपरिमित प्रीति से कंदर्पसंहर (शिवजी) ने आसक्ति से अपने जूड़े में स्थित गंगा को आज्ञा दी कि 'अब भूलोक में जाओ'। (तब) दक्षिण भाग से, जूट रूपी द्वार से निकलकर, स्थिरता से पाताल पर दृष्टि डालकर, अपनी दिव्य दृष्टि से मंदाकिनी ने कपिल को देखा, मुनि की महिमा से अतिभय से क्षुब्ध हुई। उस गंगा के प्रवाह में स्थित पद्म-मुकुल दर्शकों को ऐसे प्रतीत हुए मानों वह (कपिल मुनि के) हाथ जोड़ रही है (और कह रही है कि) 'मैं जान

गिनियकुमा' यनि केलर्थि मॊगिचॆ । नन बद्ध मुकुळंबुलमर जूपऱकु
१२६०

नडरु नम्मुनिकिन्क कटुवोव वॆऱचि। सुडिवडु तॆऱगुन सुडुलॊप्प मिगुल
'मा मीद जनुदॆन्चॆ मलयुचु गंग । येमॆक्कडिकि बोदु मिटमीद' ननुचु
बऱतॆन्चि सगरुलु पालि पापमुलु । मॊऱपॆट्टुचुन्नवि मुक्कंटि कनग
नोलि पंकजमुल नुंडराकुन्न । दूलि याकसमुन दुम्मॆदल् म्रोय
भूताधिपति जूटमुन नुंडि धरणि । केतॆन्चु गंगकु नॊण्डराकुंड
गॊडुगुलुवट्टिन कॊमरुन नंच । लुडुवीथि सुडिवडि यॊप्पारुचुंड
दॊडरि या सगरुल दोषोत्करमुलु । गडकमै बोद्रोचु करमुलो यनग
गमनीयतरमुलै घन तरंगमुल । गमुलंतकंतकु गरमॊप्पुमिगुल
दनवारिलोपल दग भगीरथुन । कनुपमसितकीर्तुलंदंद पुट्टि
नॆऱसि भूतलमॆल्लनिंड नेतॆन्चु । पऱुसुन नुरुवुलु परगंग, गंग
यप्पटिकप्पट कतुलघोषंबु । लुप्पॊन्गि युप्पॊन्गि युडुवीथि निंडॆ
१२७१

बूझकर तुम्हें सताने वाले, दुष्टात्मा व्यक्तियों को सुगति प्रदान करने के लिए आ रही हूँ, (आप मुझ पर) क्रोध न करें' । ।। १२६० ।।

—उस प्रवाह में अधिकता से पड़ने वाले भँवर ऐसे लग रहे थे मानों उस मुनि के अतिशय क्रोध के कारण, उधर जाने में डरकर, वह क्षुब्ध हो रही हो । धारा में स्थित पंकजों पर बैठ न सकने के कारण क्रम से आकाश में व्याप्त हो गुंजार करने वाले भ्रमर ऐसे लग रहे थे मानों सगर (-पुत्रों) के पाप यह कहते हुए कि 'गंगा बड़े वेग से परिभ्रमण करती हुई हमारे पास आ रही है । अब हम कहाँ जाएँ ?' और दौड़े-दौड़े आकर त्रिनयन (शिवजी) से विनति कर रहे हों । आकाश में हंस ऐसे मँडरा रहे थे मानों भूताधिपति (शिवजी) के जूट से (निकलकर) धरणी पर आने वाली गंगा को धूप से बचाने के लिए धारण किए गए छत्र हों । उस नदी के पल-पल सुन्दर बनते हुए घनी तरंगों के समूह ऐसे लग रहे थे मानों उन सगर-पुत्रों के उत्कट दोषों को सोत्साह और सप्रयत्न दूर करने वाले (नदी के) हाथ हों । फेन इस प्रकार फैला था मानों अपने वंश वालों में उचित रीति से भगीरथ की अनुपम धवल कीर्तियाँ समस्त भूतल में व्याप्त हो रही हों । उस गंगा का अतुल घोष बढ़-बढ़कर आकाश में भर गया ।। १२७१ ।।

ब्रह्मांड भांडमुल् वगुल बॆल्लुब्बि । ब्रह्मादि देवतल् भक्तितो बॊगड;
शिवुडु धरिंचिन श्रीगंग यपुडु । भुवि बामरुलकॆल्ल बुण्यंबुनीय
वच्चिति ननि तानु वरुसगा जॆप्प । वच्चिनविधमुन वरुस घोषिंचि,
सुरलु खेचरुलुनु सुमुखुलै चूड । गरुडगंधर्वुलु गरमु भूषिंप
जनुदॆन्चि बिंदुवन् सरसिलो जॊच्चि। यॆनय ब्रवाहंबुलेडयि पारॆ ।
ननघात्म! पावनि ह्लादिनि नलिनि। यनु प्रवाहमुलु मूडरिगॆ दूर्पुनकु;
सीत सुचक्षुवु सिंधुवु नाग । भातिगा मूडेगॆ बडुमटिदॆसकु;
नडरुचु नुप्पॊन्गि यंदुलो नॊकटि । कडगि भगीरथ क्ष्मापालु पिरुद
घनतर विशदोदक प्रवाहंबु । विनुवीथि शरदभ्र विभ्रमंबॊलय १२८०
दिविकेग मदिलोन दिवुरुभूजनुल । कविरळनिश्श्रेणुलमरु चंदमुन
निलयु निंगियु म्रोगुनॆड ब्रवाहंबु । ग़लय नानामालिका वीचु लमर
'नी भंगि द्रिप्पुदु नॆल्ल पापमुल । ना भंगि जूडुडु' ना सुडुलमर
जॆलिमि दारलतोड जेयजन् करणि। बॆलुच निंगिकि नंबुबिंदुवुलॆगय

—व्रह्मादि देवताओं द्वारा भक्ति-पूर्वक स्तुति करते समय वह गंगा ऐसे बढ़ गई मानों ब्रह्माण्डों को फोड़ देगी । तब वह श्रीगंगा, जिसे शिव ने धारण किया था, मानों यह घोषित कर रही थी कि इस पृथ्वी के सभी पापी जनों को क्रमशः पुण्य प्रदान करने के लिए मैं स्वयं आई हूँ । सभी सुर और आकाशचारी जीव प्रसन्न मुख से देख रहे थे, गरुड और गन्धर्व अधिक प्रशंसा कर रहे थे । ऐसे समय में गंगा ने, बिन्दु नामक सरोवर में प्रवेश किया, तथा शोभायुक्त हो वहाँ से गंगा का प्रवाह सात धाराओं में बहा । हे पुण्यात्मा ! पावनी, ह्लादिनी, नलिनी नामक तीन धाराएँ पूर्व दिशा की ओर गईं । सीता, सुचक्षु, सिन्धु नामक तीन धारायें पश्चिम दिशा की ओर गईं । उनमें से सातवीं धारा उत्साह से उमड़ती हुई राजा भगीरथ के पीछे-पीछे, घनतर-विशद-उदक-प्रवाह के विनुवीथि (आकाश) में शरत्कालीन मेघ का भ्रम फैलाती हुई बहने लगी ॥ १२८० ॥

—वह धारा ऐसी थी. मानों स्वर्ग को जाने की इच्छा रखने वाले भूलोक-वासियों के लिए अविरल (घनी) निसेनी (सीढ़ी) सँवारी गई हो । सुन्दर और तरह-तरह की तरंग-मालिकाओं के बनने से, धारा की ध्वनि धरती और आकाश में गूँज रही थी । (उस धारा में) भँवर ऐसे पड़ रहे थे, मानों वह यह बताना चाह रही थी कि 'मैं इस प्रकार (पृथ्वी के) समस्त पापों को लौटा दूँगी (ध्वस्त कर दूँगी), मेरे ढंग को देखो' । जल की बूँदें अतिशयता से आकाश की ओर उछल रही थीं, मानों वे नक्षत्रों

‘धर्मात्मुलगुवारि धर्मकीर्तुलकु । निर्मलसारमै नॆऱि बॊल्तु’ ननुचु
गेलि नन्यापगाकीर्तुल नव्वु । लील डिंडीरमालिक लुल्लसिल्ल
‘बॆक्कु गन्नुल गांतु बृथिवि पॆम्पॆल्ल । मक्कुव’ ननुभंगि मत्स्यमुल् वॊलय
जरियिंचु मकरादि जलचरावळुलु । पॊरिनॊप्प नॆतॆन्चे भूलोकमुनकु ।
नंत शतार्कमै यमरुचंदमुन । गांतिमद्बहुरत्नखचितंबुलैन
निजभूषणंबुल नॆऱि निंगि वॆलुग । गजविमानादुलु गरमर्थि नॆक्कि
१२९०
यमरगंधर्व सिद्धादुलु सूड । नमरंग नेतॆन्चि; रजुडु नेतॆन्चॆ ।
नट महानागंबु ला प्रवाहंबु । चटुलवेगमु जूचि सरिम्रॊग्गुटयुनु
नंतयु ना निर्जरावळि सूचि । चिंतिंचि जपमुलु सेसि यालोन
ना नदि लोपल नवगाहमंदि । यानंदमुनु बॊन्दि; राडिरच्चरलु;
नमरमुनींद्रादुलात्म संतोष । ममरगा बुव्वुल नर्चिंचि रॆलमि;
ना पुण्यनदि लोन नति पापरतुलु । शापदग्धुलु गृतस्नानुलै दिविकि
जनुचुंड सुरलु नच्चरलु गंधर्व । दनुजपन्नग यक्ष दैत्यराक्षसुलु
गिन्नरादुलु ना भगीरथु रथमु । वॆन्नाडि कनुगॊन्चु वेड्क नेतेर

से मित्रता करने जा रही हैं। (उस धारा में) फेन-समूह ऐसा सुशोभित हो रहा था मानों वह गंगा अन्य नदियों की कीर्ति की अवहेलना करती हुई कह रही है कि ‘मैं धर्मात्माओं की धर्मकीर्तियों का निर्मलसार बन कर सदा शोभित रहूँगी’। (उस धारा में) मछलियाँ इस प्रकार शोभित हो रही थीं मानों वह कह रही हो कि ‘मैं अपने अनेक नेत्रों से पृथ्वी की श्रेष्ठता को अति प्रेम से देखूँगी’। मकर आदि जलचर-समूहों के विचरण से युक्त हो (वह गंगा) क्रमशः भूलोक में आई। तब सौ सूर्य के समान प्रकाशित होने वाले बहु-रत्न-खचित अपने कान्तिमान् आभूषणों की कान्ति से आकाश को दीप्तिमान बना कर, गज, विमान आदि में आरूढ़ होकर ॥ १२९० ॥

—अमर, गन्धर्व, सिद्ध आदि बड़े कौतुक से (उस दृश्य को) देखने आए। ब्रह्मा भी आए। उस धारा के चंचल वेग को देख, महादिग्गजों ने भी घुटने टेक दिए। सभी देवों ने यह सब देखकर, चिन्तन किया, जप किया और उस नदी में स्नान कर, आनन्दित हुए। अप्सराओं ने नृत्य किया। अमर, मुनीन्द्र आदि ने आत्म-सन्तुष्ट होने पर, बड़ी प्रसन्नता पूर्वक, पुष्पों द्वारा उस नदी की पूजा की। अति पाप-रत, और शाप-दग्ध जन उस नदी में स्नान कर स्वर्ग जाने लगे। तब सुर, अप्सराएँ, गन्धर्व, दनुज, **पन्नग** (सर्प), यक्ष, दैत्य, राक्षस, किन्नर आदि उत्साह से उस भगीरथ के

बॆरिगि पर्वतमुलु भेदिंचुकॊनुचु । नरुग जह्नुडु जन्न मा त्रोव जेय
वरदगा नट्टुवच्चिच वलगॊनि गंग । सरिचुट्टुमुट्टिन सरगुन नपुडु
१३००
यागोपकरणंबु लवि वॆल्लिवोयि । यागविघ्नंबैन नम्मुनीश्वरुडु
निंगिकि नुप्पॊंगि नॆऱि नेगुदॆंचु । गंग नाकर्षिंचि कलुषिंचि क्रोलॆ;
अनिमिषुल् मुनिवरु ला भगीरथुनि। गनुगॊनि पल्किरि करमर्थि मीऱि
'नी महागंग निट्ली मुनीश्वरुडु । ई माड्कि ग्रोलॆने ! यिप्पुडॆ नीवु
कोपंबुलेकुंड गोरि यी मौनि । नी पट्ल वेडिन निच्चुनु गंग'
यनि यिट्लु देवतलंदऱु जॆप्प । विनयंबुतो बोयि वेड्क नम्मौनि
गनुगॊनि म्रॊक्कुचु गरमुलु मॊगिचि। विनयसंभरितुडै वेड्क निट्लनियॆ;
'विनवय्य मुनिचंद्र! विमलचारित्र!। घनमैन गंगनु घनमैन तपमु
चेसि युर्विकि ठीवि जॆलगुचु निपुडु । वासिमै दॆच्चिति वरुस; निच्चटनु
मोसमै नीचेत मॊनसि कोल्पडिति;। नो संयमीश्वर ! यो परब्रह्म !
१३१०
दयचेसि विडिपिंपु धन्यचारित्र! । दयचेयु संयमी ! दयचेयु' मनुचु

रथ के पीछे-पीछे चलने लगे। वह नदी बढ़-बढ़कर, पर्वतों को बेधती हुई उस मार्ग से जाने लगी जहाँ जह्नु (मुनि) यज्ञ कर रहे थे। गंगा ने बाढ़ के रूप में उधर आकर उस मुनि के आश्रम को घेर लिया। तब बड़ी शीघ्रता से, ॥ १३०० ॥

—याग-उपकरणों के बह जाने पर यज्ञ-भंग हो गया। तब वह मुनीश्वर आकाश तक उमड़कर शीघ्रता से आने वाली गंगा पर क्रुद्ध हो, (उसको) आकर्षित कर पी गए। तब देवता और मुनिवरों ने उस भगीरथ को देख बड़े उत्साह से कहा—'यह मुनीश्वर इस महागंगा को इस प्रकार पी गए! इसलिए तुम अभी उनसे क्रोध को त्यागने की प्रार्थना करो। तुम्हारे निवेदन करने से इस समय वह मुनि गंगा को दे देंगे'। सब देवताओं के ऐसा कहने पर, विनय के साथ जाकर, प्रसन्नता से उस मुनि को देखकर, प्रणाम कर, हाथ जोड़, विनय-युक्त हो, प्रसन्नता-पूर्वक (भगीरथ) इस प्रकार बोले—'हे मुनिचन्द्र! सुनिए, आप विमल चरित्र वाले तथा महान् हैं। मैं, घोर तपस्या कर, वैभव के साथ, वरिष्ठ रूप में, क्रमशः गंगा को पृथ्वी पर लाया हूँ। यहाँ धोखा खाकर, आपके द्वारा उसे खो दिया है। अतः हे संयमीश्वर! हे परब्रह्मा! ॥ १३१० ॥

—हे धन्यचारित्र! आप दया करके उसे मुक्त कर दीजिए। हे संयमी!

विनयंबुतो बल्क विनि मौनिवरुडु। मनमुन गृपवुट्ट मड़ियु निट्लनियॆ;
‘नो भगीरथचंद्र! यो महाराज!। यी भंगि गंगनु निलकु दॆच्चुटकु
नी महत्त्वंबुनु नी तपोमहिम। नेमनि चॆप्पुदु निक नीदु कीर्ति?
विडिचॆद गंगनु, विडिचॆद निपुडु।पुडमिलो ना कीर्ति पॊलुपॊन्दु’ ननुचु
नुमिसि यॆन्गिलि सेय नॊल्लक यतडु। रमणमै दन कर्ण रंध्रंबुनंदु
वॆंडलिप नॆप्पटि विधमुन गंग। यडरुचु जाह्नवि यनुपेर बरगॆ;
बुरुष पुराकृत पुण्यंबु वलन। दॊरकॊन्न विघ्नंबु द्रोचि येतॆन्चु
वॆरवुन ना राजु वॆनुक नेतॆन्चि। शरनिधि जॊच्चि या जाह्नवीदेवि
दिगि रसातलमुन दिरिगि यंदुन्न। सगरुल भस्मुल् सर्रिनिड बारॆ १३२०
नंत नंबुजगर्भु डा भगीरथुनि। संतसंबुन जूचि ‘जननाथ! विनुमु
जलनिधि नॆन्दाक सलिलंबुलंडु। दलप मी सगरुनि तनयुलंदाक
दिव्यभूषणमुलु दिव्यांबरमुलु। दिव्यमाल्यंबुलु दिव्यगंधमुलु
दिव्यमूर्तुलु नॊप्पि दिविजलोकमुन। दिव्यभोगमुल वर्तिचुचु नंदु;
रडरंग निदि मॊदलनघ! नी पेर। नडचु भागीरथी नाम मी नदिकि;

(उसे) प्रदान कर दीजिए, प्रदान कर दीजिए’। विनय के साथ राजा को ऐसा कहते सुनकर मुनिवर के मन में दया उत्पन्न हो गई और उन्होंने कहा—‘हे भगीरथचन्द्र! हे महाराज! इस प्रकार गंगा को पृथ्वी पर लाना तुम्हारे महत्त्व और तुम्हारी महिमा का द्योतक है। अब तुम्हारी कीर्ति का वर्णन कहाँ तक करूँ? मैं गंगा को छोड़ दूँगा, अभी छोड़ दूँगा। पृथ्वी पर मेरी कीर्ति शोभायमान हो जाएगी’। ऐसा कहते हुए मुँह से उगल कर उसे जूठा करना न चाहकर, उन्होंने उसे अपने कर्णरन्ध्र (कान के छेद) से सुन्दर ढंग से निकाल दिया। तब सदा की तरह, उमड़ती हुई वह नदी जाह्नवी के नाम से प्रसिद्ध हुई। उस राजा के पीछे चल कर वह जाह्नवी देवी समुद्र में इस प्रकार पैठ गई मानों पुराकृत पुण्य (के बल) से, आए हुए विघ्नों को दूर कर मनुष्य आगे बढ़ता है। इस प्रकार समुद्र में उतर कर, रसातल में घूमकर, वहाँ स्थित सगर-पुत्रों के भस्मों को बहाकर वह नदी बहने लगी।॥ १३२० ॥

—तब उस भगीरथ को हर्ष-पूर्वक देखकर (कमलसंभव) ब्रह्माजी बोले—‘हे राजन्! सुनो। जब तक सागर में जल रहेगा, तब तक तुम्हारे पूर्वज सगर के पुत्र, दिव्यभूषण, दिव्य वस्त्र, दिव्य मालाएँ, दिव्य-गन्ध तथा दिव्य-मूर्तियों से सुशोभित हो, स्वर्गलोक में दिव्यभोगों का अनुभव करते रहेंगे। हे पुण्यात्मा! अब से यह नदी तुम्हारे नाम पर भागीरथी के नाम से अतिशय शोभा पाएगी। हे नृप! त्रिपथगा, सरिद्वरा (सरिताओं में

द्रिपथग यनम, सरिद्वरयनग, । नृप! जाह्नवि यनंग नेगडु नी गंग;
तग बिताळ्ळकु दिलोदकमुलु नडपि । जगमुलन्निट सत्यसंधुंडवगुमुः
अनघ! मी सगरुंडु नंशुमंतुंडु । घनुडु दिलीपुडु गैकोन्न प्रतिन
नेऱप जालरु; नीवु नेऱपंग दिविरि । तेऱगोप्प नी गंग देच्चिचति कान
गंगांबु निर्मलकमनीय परम । मंगळसितकीर्तिमहितुंडवगुमु; १३३०
काकुत्स्थकुलजुल गौरवश्रील । काकरंबगु तनयावळि गनुमु;
ललितधर्ममुल मूलस्तंभमैति; । पोलुपार नीविक बुण्योदकमुल
वेलय दीर्थस्नानविधि सल्पि पुण्य । फलमु गैकोनु' मंचु बह्मसंभवुडु
तनलोकमुन केगे; ददनंतरंब । तनर ना गंग गृतस्नानुडगुचु
नरुवदि वेवुर का भगीरथुडु ।नेऱि दिलोदकमुलु निष्ठ तो निच्चे;
ना तिलोदकमुल नमरुलै सगरु । लातनि दीविंचि यरिगिरि दिविकि;
ननघुडै मऱि ययोध्यापुरंबुनकु । जनिभगीरथुडु राज्यमु सेयुचुन्डे ।
गलुषघ्न मी युपाख्यानंबु भक्ति । चेलुवार जदिविन जेप्पगा विनिन
नोनर बुण्यमुल नायुष्मंतुलगुचु । धनधान्यचयमुल दनरुचु नुंदु
रेप्पुडु वारल केल्लदेवतलु । नोप्प ब्रसन्नुलै युंडुदुरेलमि; १३४०

श्रेष्ठ), जाह्नवी के नामों से भी यह गंगा प्रख्यात होगी। समुचित रूप से पितरों को तिलोदक प्रदान कर, सभी लोकों में सत्यसन्ध बनो। हे निष्पाप! तुम्हारे पूर्वज सगर, अंशुमान् और महान् दिलीप आदि ने जो प्रतिज्ञा की थी, उसे वे पूरा नहीं कर पाए। पर तुम उस प्रतिज्ञा को पूरा करने का प्रयत्न कर, अच्छे विधान से इस गंगा को लाए। अतः गंगाजल के समान निर्मल, कमनीय और परममंगल श्वेत कीर्ति से युक्त हो कर, तुम संसार में अत्यन्त महान् बन जाओगे ॥ १३३० ॥

—तुम काकुत्स्थ वंशवालों की गौरव-श्री की निधि के समान पुत्र-समूह को जन्म दोगे। तुम सुन्दर धर्मों के आधार बन गए हो। अब तुम शोभायुक्त हो गंगा के पवित्र जल में विधिवत् स्नान करके पुण्य-फल को प्राप्त करो'। ऐसा कहकर ब्रह्माजी अपने लोक को गए। उसके बाद, समुचित रूप से उस गंगा में स्नान करके भगीरथ ने साठ हज़ार सगर-पुत्रों को, निष्ठा के साथ तिलोदक प्रदान किये। उन तिलोदकों के कारण अमर बनकर सगर-पुत्रों ने भगीरथ को आशीर्वाद दिया और स्वर्ग को चले गए। फिर निष्पाप होकर भगीरथ अयोध्यापुरी गए और वहाँ (बहुत समय तक) राज्य करते रहे। पापों का नाश करनेवाले इस उपाख्यान को भक्ति-पूर्वक पढ़ने पर, कहने पर या सुनने पर (सभी मनुष्य) पुण्यों को प्राप्त कर, आयुष्मान (लंबी आयु वाले) बन, धन-धान्य के समूह से

नमरंग सिद्धिंचु नखिल कार्यमुलु; समकॊनु संचित स्वर्गभोगमुलु;
पनुपार नट वारि पितृगणंबुलकु । ननुपमसद्गतुलनिशंबु गलुगु'
ननिन राघवुडु गंगावतारंबु । विनि कौशिकुनि जूचि विनुतुलु सेसि
'नेडु विश्वामित्र! नी चेत विंटि । बोडिमि नी गंग भूलोकमुनकु
वच्चिन तॆऱगुनु, वारि तॆऱंगु । नच्चॆरुवडरंग' ननि मुदंबंदि
या रात्रि यंदुंडि यखिल लोकमुल । नारूढि कैक्किन या नदि ग्रुंकि
याह्निनक कृत्यंबु लन्नियु दीर्चि । जाह्नवि दाटिविश्वामित्रु तोड
नुत्तरतटमुनंदुन्न संयमुल । जित्तंबुललर बूजिंचि, वीड्कॊनुचु
जनि चनि यॆदुट विशालयन् पुरमु । गनि गाधिनंदनु गनुगॊनि पलिकॆ:
१३४९

अमृतमथन-कथा

'यी पुरि पेरेमि ? ये राजवंश्यु । डेपुमै बालिंचु ? नॆरिंगिपु' मनिन
१३५०
घनुडु कौशिकुडु राघवु जूचि पलिकॆ । 'विनु मिंद्रुकड मुन्नु विन्नाड नेनु;

युक्त हो, सुख से रहेंगे । उनके लिए सभी देवता सदा सन्तोष के साथ प्रसन्न हो जायेंगे । ॥ १३४० ॥

—उनके लिए सभी काम सिद्ध होंगे, संचित स्वर्ग-भोग प्राप्त होंगे । उनके पितृगणों को अतिशयता से सदा अनुपम सद्गतियाँ प्राप्त होंगी' । (विश्वामित्र के) मुख से, राम ने इस प्रकार गंगावतरण की कथा को सुनकर, उनकी स्तुति की और कहा 'हे विश्वामित्र ! आज तुम्हारे मुख से गंगा के भूलोक में आने के बारे में, उन (सगर-पुत्रों) के बारे में, सुन्दरता से, साश्चर्य सुना है' । ऐसा कह वे प्रसन्न हुए । वह रात वहाँ बिताई और अखिल लोकों में विख्यात उस नदी में गोते लगाकर, सभी दैनिक कार्यों से निपट कर, विश्वामित्र के साथ जाह्नवी को पार कर चित्त के प्रसन्न होने पर, उस नदी के उत्तर तट पर विराजमान संयमियों की पूजा की । (उनसे) बिदा लेकर, आगे जाकर, सामने 'विशाला' नामक पुरी को देखकर, गाधिनन्दन (विश्वामित्र) से पूछने लगे ॥ १३४९ ॥

अमृतमंथन की कथा

—'इस पुरी का क्या नाम है ? किस राजवंश का, राजा पराक्रम के साथ यहाँ शासन करता है ? बता दो' । ऐसा कहने पर ॥ १३५० ॥

—महर्षि विश्वामित्र राम को देखकर बोले—'सुनो (यह कथा) मैंने इन्द्र के द्वारा

दितिसुतुलैन दैतेयुलु नदिति । सुतुलैन सुरलु भासुरलील दॊल्लि
नॊलि रसंबुलु नोषधुल् निंचि । पालसमुद्रंबु बलुविडि द्रच्चि
क्रममॊप्प नमृतंबु गैकॊन्दमनुचु । सममैत्रि ना सुधाजलराशि डासि
कव्वंबु दरित्राडुगा मंदरंबु । नव्वासुकिनि जेसि यमृताब्धि दरुव
वॆलयंग नट बुट्टि विषमुग्रमगुचु । गलय लोकंबुल गारिंचि मिंच
बरग रोषानल परुषंबुनैन । हरुडदिगॊनि म्रिंगॆ; नंत नुमियुट
नुरगमुल् धरियिंचॆ नोलि दद्विषमुः । मऱि मऱि तरुवंग मऱियुनु बुट्टॆ
वंचन मन्सथवार्धि लोकमुल । मुंचियॆत्तगजालु मुरिपॆम्बुलमर
गांचीझणत्कारघननितंबुमुलु । निंचुकनडुमुलु निरियु जन्गवलु १३६०
जंचलतनुलतल् सरि दंतचयमु । मिंचु कन्गवयु मॆऱयु मोवियुनु
गोमल भ्रूलताकोदंडुडैन । कामुनि विलुविद्यगति जूड नॊप्पु
कडगंटि चूपुलु गक्षदीधितुल । वॆडलिंचु भुजलताविक्षॆपणमुलु
नमर नूतनयौवनाभिराममुल । नमरु नरुवदिकोट्ल यप्सरोगणमु;
१३६४
लीलमै नच्चरलेमलनॊल्ल । नॊलि देवतलु दैत्युलुनु गैकोनिरि;

बहुत पहले सुनी थी। दिति के सुत दैतेय और अदिति के सुत सुर दोनों ने सोचा कि पहले प्रकट रूप से क्रमशः रस और ओषधियाँ भरकर क्षीर-सागर को सप्रयत्न मथकर, सुचारु रूप से अमृत को ग्रहण करें। सममैत्री से वे उस क्षीरसागर के पास गए और मंदर-पर्वत और वासुकि को क्रम से मथानी और रस्सी बनाकर, क्षीरसागर को मथने लगे। तब वहाँ विष (हलाहल) उत्पन्न हुआ, (जो) उग्र होता हुआ सर्वत्र लोकों को अधिक रूप से सताने लगा.। तब रोषानल से परुष बन हर (शिव) उसे लेकर निगल गए। तब उसे थूक देने से क्रम से उरगों (सर्पों) ने उस विष को धारण किया। पुनः (सागर का) मंथन करने से साठ करोड़ अप्सराएँ पैदा हुईं जो कृत्रिम काम-रूपी समुद्र में लोकों को डुबा सकने योग्य श्रृंगार-चेष्टाओं से युक्त थीं, ॥ १३६० ॥

—और क्वणित (मुखरित) होनेवाली करधनी से युक्त गुरु नितंबों, क्षीण कटियों, घने कुचों, चंचल तनुलताओं, सुन्दर दन्त-पंक्तियों, श्रेष्ठ नयनों, कान्तिमान अधरों, कोमल भ्रूलता-रूपी कोदण्डवाले कामदेव की शरविद्या के समान दिखाई पड़ने वाले कटाक्षों, भुजमूलों के प्रकाश को प्रकट करने वाले भुजलता-विक्षेपों से तथा अमर नूतन यौवन के सौन्दर्य से युक्त थीं। ॥ १३६४ ॥

वारक दरुव ना वरुणात्मजात । वारुणि प्रभविंचॆ वैभवंबलर;
नासुर दितिसुतुलपुडॊल्लकुन्न । नसुरुलै वर्तिल्लिरवनि नॆल्लॆडल;
सुर नादितेयुलु सॊरिदि गैकॊनग । सुरलन ब्रख्याति शोभिल्लिरपुडु;
संतसंबुन रमासति दुरंगंबु । गांति मिन्नगु दंति कौस्तुभमणियु
नमृतांशुडुनु बुट्टॆ; नमृतंबु सुरभि । यमरु सुधापूर्णमगु कमंडलुवु
गलिगि धन्वंतरि करमॊप्प बुट्टॆ; । वॆलयंग मऱि पुट्टॆ विषमुग्रमगुचु; १३७१

नंत सुरासुरुलमृतंबु कॊऱकु । नॆन्तयु दमलोन नेचि दर्पमुन
ननुपमस्थिति बोर, नसुरुल सुरल । गनुगॊनि सुरलपै गरुणिंचि यपुडु
मानिनि रूपमै मधुमर्दनुंडु । ता नमृतमु बंचि तगनिच्चु वेळ
राहुकेतुवुलनु राक्षसुलप्पु । डूहिंचि पंक्तिलो नॊगि गूरुचुंडि
चॆयि जाचि पट्टिन जॆलगुचु सुधनु । मॆयिचाय जूडक मॆलत यिच्चुटयु
रविचंद्रुलप्पुडा रमणिनि जूचि । कवगूडि यिद्दऱु गळवळंबंदि
कनुसैग नट्टु चूप गनलुचु विष्णु । वनुवॊन्द जक्रंबु नट्टु प्रयोगिंचि
शिरमुलु खंडिंचि सृष्टिलोपलनु । कऱकु राक्षसुतलल् कडुग्रहंबुलुग

—उन समस्त अप्सराओं को प्रसन्नता से क्रम से देवताओं और दैत्यों ने ले लिया। (फिर) रुके बिना पुन: मंथन करने पर, वैभव-युक्त रूप से वरुण की पुत्री वारुणी (मदिरा) का जन्म हुआ। उस सुरा को दिति पुत्रों ने अस्वीकार कर दिया अत: अवनि पर सब जगह वे असुर कहलाए। उस सुरा को क्रम से देवताओं ने ग्रहण किया अत: वे सुर की प्रख्याति से शोभित हुए। तब प्रसन्नता के साथ सबको प्रसन्न करतें हुए लक्ष्मी, उच्चै:श्रवा नामक अश्व, कान्ति में श्रेष्ठ ऐरावत नामक गज, कौस्तुभ-मणि और चन्द्र का जन्म हुआ। इसके बाद अमृत, कामधेनु और शोभायमान सुधापूर्ण कमण्डल से युक्त धन्वन्तरि अति शोभा से पैदा हुए। फिर से उग्र होता हुआ विष उत्पन्न हुआ। ॥ १३७१ ॥

—तब अमृत के लिए सुर और असुर आपस में विजृंभित हो, अहंकार के साथ अनुपम रूप से लड़ पड़े। असुरों और सुरों को देखकर, सुरों पर करुणा करके मानिनी-रूप से मधुमर्दन (विष्णु) स्वयं अमृत बाँटने आए। उस समय राहु और केतु नामक दो राक्षस भी कल्पना के द्वारा विष्णु के माया-विधान के बारे में सोचकर पंक्ति में क्रम से बैठ गए और हाथ फैलाया। उनके शरीर की कान्ति देखे बिना उत्साह से उस नारी ने उन्हें भी सुधा दे दी। तब रवि और चन्द्र दोनों उस रमणी को देख अधिक घबराए और आँख के इशारे से उधर उन दोनों राक्षसों को दिखाया।

ना मिंट निलिपॆनु; नमृतंबु द्राव। नॆमियु जॆडकुंड नॆप्पुडु वारु१३८०
नादिगा नप्पुडय्यादित्यु जंद्रु । बाधिंचुचुंदुरु पर्वंबुलंदु;
नसुरुल गनुब्रामि यमृतंबु सुरल । कॊसगि वारिकि जयंबॆसग माधवुडु
दैतेयकोटि यंदऱ द्रुंचि यिंद्रु । डातऱि द्रिजगंबु लर्थि बालिंप१३८३

मरुत्तुल कथ

दितियंत दनसुतुल् देगुटकु नॊगिलि। पतियैन कश्यपु ब्रार्थिंचि, 'यिंद्रु
जंपजालिन महासत्त्वप्रताप । संपन्नु नॊकनि ब्रसादिंपु' मनिन
नंगीकऱिंचि 'सहस्रवर्षंबु । लंगन! घनशुचिव युंडगलुग
मूडु लोकंबुलु मॊगि गल्चुवानि । वाडिमिमै निंद्रु वधियिंचुवानि
गनियॆद वॊक पुत्रु गांत! ना वलन' । ननि पल्कि दितिमेनु हस्तांबुजमुन
नयमार परिमार्जनमु सेसि मऱियु । दयजूचि यतडेगॆ दपमाचरिंप;
जनियॆ ना दितियुनु सम्मदंबॆसग;। जनि युग्रतपमाप्प सल्पुचुनुंड
१३९०

तब क्रुद्ध होते हुए विष्णु ने अवसर पाकर, उनके ऊपर चक्र का प्रयोग कर, उनके सिर काट डाले। इस सृष्टि में उन भयंकर राक्षसों के सिर आकाश में ग्रहों के रूप में प्रतिष्ठित हुए। अमृत का पान करने से वे सदा के लिए अमर बन गए।॥ १३८० ॥

—उस समय से लेकर वे पर्व (अमावस तथा पूर्णिमा) के समय सूर्य और चन्द्र को सदा सताते रहते हैं। असुरों की आँख बचाकर विष्णु ने देवताओं को अमृत देकर, उन्हें जय प्रदान किया। तब समस्त दैतेय कोटि (समूह) का वध करके बड़ी प्रसन्नता से इन्द्र तीनों लोकों पर शासन करने लगा।

मरुतों की कथा

अपने पुत्रों की मृत्यु से दुखी होकर दिति ने अपने पति कश्यप से प्रार्थना की और कहा—'इन्द्र का संहार कर सकने वाले महाबल से सम्पन्न एक पुत्र प्रदान कीजिए'। उसकी प्रार्थना को स्वीकार करते हुए, 'हे नारी! अगर सहस्र वर्ष तक अत्यन्त पवित्रता से रह सकोगी तो क्रम से तीनों लोकों को जीतनेवाले तथा पराक्रम से इन्द्र का वध कर सकनेवाले एक पुत्र को मुझसे प्राप्त कर सकोगी', ऐसा कहकर दिति के शरीर को अपने करकमल से सप्रेम सहला कर, और उस पर कृपा करके कश्यप तप करने

नंतट मघवंतुडत्तॆऱंगॆऱिगि । चिंतिंचि दिति जेरि शिष्युंडु वोलॆ
पायक कुशसमित्फलमूल भव्य । तोयादुलतिभक्तितोड दॆच्चुचुनु
जरणंबुलॊत्तुचु सत्कृतुल् मऱियु । बरिपाटिसेयुचु बरिचर्य सेय
नेवेळ नॆच्चट नेमि गावलयु । गावलसिनवॆल्ल गनुसन्न दॆच्चि
युपचरिंपुचु वेड्क नुंडॆबॆक्कॆंड्लु । नपुडॊक्कनाडिद्रु नादिति चूचि
कडचन्नयेड्लु गणनंबु सेय । बडितॊम्मनूट तॊम्बदियु निंड्डटनु
नलरुचु मदि रहस्यमु दापलेक । ‘बलभेदि! विनुमु ना पल्कु नीवॊकटि
तनयुनि गोरि मी तंड्रि नेनडुग । ‘विनुमु वॆय्येड्लु वॆडलिन पिदप
निच्चिचति सुतु’ नंचु निपारनाकु । नच्चुगा वरमिच्चॆ; नट्टुगान नीकु
१३९९
निटमीद बदियेड्लु लेगिनपिदप । बटुशक्ति दम्मुडु प्रभविंपगलडु;
अलरंग नीवुनु नातंडु गूडि । पॊलुपार नेलुडु भुवनत्रयंबु
विनुतकीर्तुल मीरु विलसिल्लुचुंडु’। डनिपल्कि यंत माध्याह्नकालमुन

चले गए तथा वह दिति भी प्रसन्नता-पूर्वक चली गई और जाकर उग्र तपस्या करने लगी । ॥ १३९० ॥

—तब इन्द्र उस वृत्तान्त को जानकर, चिन्तित हुए। वे दिति के पास पहुँच, शिष्य के समान सदा कुश, समिधाएँ, फल, मूल, जल आदि अति-भक्ति से लाकर देते हुए, चरण दबाते हुए, और अनेक सत्कार्य करते हुए, सुचारु रूप से परिचर्याएँ करते हुए, जिस समय जिस स्थान पर जो चाहिए, उन सभी आवश्यक वस्तुओं को आँख के इशारे भर से लाकर, सेवा करते हुए अनेक वर्षों तक दिति के पास उत्साह से रहे। तब एक दिन इन्द्र को देखकर, दिति ने गत वर्षों की गणना की तो नौ सौ निन्यानवे वर्ष पूरे हो गए थे। प्रसन्न होती हुई दिति अपने मन के रहस्य को छिपा न सकी, और इन्द्र से बोली—‘हे बलभेदी! मेरी एक बात तुम सुनो। पुत्र को चाहकर तुम्हारे पिता से मैंने प्रार्थना की तो उन्होंने शोभायमान रूप से स्पष्ट शब्दों में मुझे यह वर दिया कि ‘एक हज़ार वर्षों के बाद तुम्हारे एक पुत्र होगा’। इसलिए अब से दस वर्षों के बीतने पर अपार शक्ति वाला तुम्हारा अनुज पैदा होगा। ॥ १३९९ ॥

—तुम और वह मिलकर शोभायमान रूप से तीनों भुवनों पर शासन करो, प्रसिद्ध कीर्ति के साथ विराजित होते रहो’। ऐसा कहकर वह मध्याह्न के समय, केश बिखेर कर, खाट पर पायताने को सिरहाना बनाकर, थकावट के कारण सो गई। (इस प्रकार) सोती हुई दिति को देखकर इन्द्र

दलवीडि कालगड दलयंपिगाग । नलतमै निद्रिंचु ना दिति जूचि
शतमन्युडेन्तयु संतोषमंदि । विततवैखरि 'निदिवेळ' नाकनुचु
दितिगर्भ मतियोग धीशक्ति जोच्चि । शतकोटिचे दन शत्रुवौ शिशुवु
नेडु दुनकलु सेय नेलुगेत्ति बालु । डेडुव, दितियु नय्येड मेलुकांचे
मघवुडु 'मारुद! मारुद! ' यनुचु । लघुरीति बलुक 'बालकु जंपवलदु
वल' दनियेडु दितिवाक्य मालिंचि । वेलुवडि गर्भमव्वेळवासवुडु
करमुलु मुकुळिंचि करमु जित्तमुन। दिरमैन भक्तिचे दितितोड बलिकें
१४०९
'दनरंग गालगड दलयंपि गाग । गोनि मुक्तकेशिवै कूर्कुट जेसि
यार्य! नीवशुचिवै; तटुगान तेगुव । गार्यंबुकोऽकेनु कडुपुलो जोच्चि
गोनकोनि ननु जंपगोरु गर्भंबु । दुनिमिति ने नेडु तुनियलु गाग;
सन्नकु सन्न शत्रुंडु गान । जिन्नि पापनि बरिच्छिन्नु जेसितिनिः
जननि ! धर्मज्ञवै सैरिंपवलयु' । ननिन दुःखिचुचु ना यिन्द्रु जूचि
'ना नेरमितयु नाकलोकेश ! । नी नेरमदिलेदु निक्कुवंबरय'
ननि पल्कि 'मरुदाख्यलमर देजंबु । लेनयंग खंडंबु लेड्वुरु नगुचु

अत्यधिक प्रसन्न हुए और सोचा 'यही मेरे लिए सुअवसर है'। ऐसा सोचकर योगशक्ति से दिति के गर्भ में प्रवेश कर, शतकोटि (वज्रायुध) से जब इन्द्र ने अपने शत्रु (गर्भस्थ) शिशु के सात टुकड़े किए तो वह बालक ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा और दिति भी जाग गई। गर्भ के भीतर से इन्द्र ने धीमे स्वर में कहा—'मा रुद; मा रुद (मत रो, मत रो)'। 'बालक को मत मार डालो, मत मार डालो' कहने वाली दिति के वाक्यों को सुनकर, उसी समय गर्भ से निकलकर इन्द्र ने हाथ जोड़कर, चित्त में अधिक स्थिर भक्तिभाव-युक्त हो दिति से यों कहा— ।। १४०९ ।।

—'शोभा से पायताने को सिरहाना बनाकर, बाल बिखेर कर सो जाने के कारण हे आर्ये ! तुम अपवित्र हो गई हो। ऐसा होने पर, साहस करके, अपने कार्य के लिए गर्भ में प्रवेश कर, मुझे मार डालना चाहनेवाले गर्भ के मैंने सप्रयत्न सात टुकड़े कर दिए हैं। नन्हे से नन्हा होने पर भी शत्रु होने के कारण ही मैंने छोटे शिशु का वध किया है। हे जननी ! तुम धर्मज्ञ हो, धर्म का विचार करके मुझे क्षमा कर देनी चाहिए'। इन्द्र के ऐसा कहने पर दुखी होती हुई दिति इन्द्र को देख यों बोली—'सब कुछ मेरा दोष है। हे स्वर्गलोक के स्वामी इन्द्र ! यदि सच्चाई से देखा जाय तो इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है'। ऐसा कहकर दिति ने निवेदन किया—'ये सात खण्ड अमर तेज से शोभित हैं। प्रसन्न हो (इन) मेरे पुत्रों को मरुत्

निम्मुल ना पुत्रुलॆलमि नॆल्लॆडल । सम्मदमिंपार जरियिंपनिम्मुः सप्तखंडंबुलै सरिनॊप्पु वीरि । सप्तमारुतगणस्कंधनायकुल गाविंपु' मनि वेडगा नट्लु चेसि । देवेन्द्रुडमरावतिकि बोयॆ; नंत वारुनु देवतावल्लभु चॆलिमि । मारुतगणसंज्ञ मऱि दिव्युलैरि । १४२०

वैशालिकुल वृत्तांतमु

देवेंद्रुडतिभक्ति दितिकि शुश्रूष । गाविंचॆ नी पुण्यगण्य देशमुन; नी पुण्यधरणि मुन्निक्ष्वाकुडनॆडु । भूपवर्युं डलंबुस यंदु गन्न कॊडुकु विशालुडन् कुवलयाधिपुडु । पुडमिनेलि विशालपुरियिंदॊनर्चॆ । ना विशालुनि पुत्रुडै हेमचंद्रु । डाविर्भविंचॆनु; नतडु सुचंद्रु, नतडु धूम्राश्वुनि, नतडु सृंजयुनि । नतडंत सहदेवु, नतडु कुशाश्वु, नातंडु सोमदत्ताख्यु, गकुत्स्थु । नातडु, सुमतिनि नतडुनु गनिरि;

सुमति विश्वामित्र समागममु

भाविंप नॆप्पुडु परम धर्ममुल । नी विशालापुरंबेलॆडि राजु

नाम से सर्वत्र प्रसन्नता-पूर्वक विचरण करने दो । सप्तखण्ड हो विराजमान इन्हें सप्तमारुतगणों (मरुद्गणों) के स्कंधनायक बना दो' । ऐसा निवेदन करने पर देवेन्द्र ने वैसा ही किया और अमरावती चले गए । तब वे भी इन्द्र की मित्रता से मारुतगण (मरुद्गण) संज्ञा (नाम) पाकर दिव्य बन गए । ॥ १४२० ॥

वैशालिकों का वृत्तान्त

—इस पुण्यदेश में देवेन्द्र ने अतिभक्ति से दिति की शुश्रूषा की थी । इस पवित्र धरणी पर पूर्वकाल में इक्ष्वाकु नामक राजा ने अलंबुषा नामक पत्नी से विशाल नामक पुत्र को प्राप्त किया था । उस राजा ने पृथ्वी पर शासन करके यहाँ विशालापुरी को बनाया । उस विशाल के पुत्र के रूप में हेमचन्द्र आविर्भूत हुए; हेमचन्द्र ने सुचन्द्र को, सुचन्द्र ने धूम्राश्व को, धूम्राश्व ने सृंजय को, सृंजय ने सहदेव को, सहदेव ने कुशाश्व को, कुशाश्व ने सोमदत्त को, सोमदत्त ने ककुत्स्थ को और ककुत्स्थ ने सुमति (नामक पुत्र) को जन्म दिया । वह सुमति अभी इस नगर में अति धर्मयुक्त होकर शासन कर रहा है ।

सुमति और विश्वामित्र का समागम

—विचार करने (देखने) पर सदा परमधर्म (बुद्धि) से इस विशालपुर

लनघ! वैशालिकुलन वीरु जगति ।विनुतिकेक्किरि धर्मविभवसंपदल;
निच्चट रघुराम! यी रात्रि मनमु। बुच्चि वेगिन जूडबोदमु जनकु'
ननुनंत गाधेयुडट वच्चुटेऱिगि । मनमुन संतोषमग्नुडै सुमति १४३०
तन पुरोहितुलुनु दन बंधुजनुलु । दनतोड जनुदेर दन पट्टणंबु
वेलुवडि चनुदेन्चि विहितमार्गमुन। नेलमितो ना संयमींद्रु बूजिचि
करमुलु मुकुळिंचि कडुभक्ति बलिके । 'धरणिलो नेडु ने धन्युडनैति
जरितार्थमय्ये ना जन्मं' बटंचु । बरमप्रियंबुलु बलिकि यॊन्डॊरुलु
नमरंग गुशलंबुलडिगिन पिदप । सुमति विश्वामित्रु जूचिताननियें:

सुमतिकि विश्वामित्रुडु श्रीरामलक्ष्मणुलनु गूर्चि तेलुपुट

'मुनिनाथ! यसमानमूर्तुलीघनुलु । घनभुजुलनिमिष क्रम पराक्रमुलु
करिराजगमनमुल् कंठीरवमुल । बुरुडिप जालिन भूरिसत्त्वमुलु
ललितयौवनमुलुल्लसितारविंद । दळमुल देगडु नेत्रमुलु जेन्नोन्द
गरवालमुलु गार्मुकंबुलु दोनलु । धरियिंचि दमदु पदन्यासमुलनु

पर शासन करनेवाले ये राजा, हे अनघ! धर्म तथा वैभवसम्पन्न हो, जगत् में वैशालिक के नाम से विख्यात हुए। हे रघुवंशी राम! यहाँ हम आज की रात बिताएँगे (और) प्रातःकाल जनक को देखने जाएँगे'। (विश्वामित्र ने) ऐसा कहा। तब वहाँ गाधेय के आगमन (का समाचार) जानकर, मन में प्रसन्न होकर, सुमति ।। १४३० ।।

—अपने पुरोहित (और) अपने बन्धुजनों को अपने साथ लेकर, अपने पट्टण से निकलकर, आकर, विहितमार्ग से (विधिवत्), हर्ष के साथ उस संयमीन्द्र की पूजा कर, हाथ जोड़, अति भक्ति से बोले—'धरणी में मैं धन्य हो गया हूँ। मेरा जन्म चरितार्थ (सार्थक) हो गया है'। ऐसा कहते हुए परमप्रिय (वचन) बोले। सुचारु रूप से परस्पर कुशल-प्रश्न करने के बाद, सुमति ने विश्वामित्र को देखकर, (यों) कहा—

विश्वामित्र का सुमति को राम-लक्ष्मण के बारे में बताना

—'हे मुनिनाथ! असमान मूर्ति (रूप) वाले ये महान् (पुरुष जो) विशाल बाहु वाले, देवताओं के समान पराक्रमशाली, गज के समान गति वाले, सिंह के समान अमित शक्ति वाले, ललित यौवन वाले, प्रफुल्ल अरविन्द के दलों का तिरस्कार करनेवाले नेत्रों से युक्त शोभायमान (और) तलवार, धनुष, तरकस धारण कर, सूर्य-चन्द्र की गति से सुशोभित आकाश

जगति ना रविचंद्र संचार कलित । मगु नाकसंबुना नलरिंचुवारु;
१४४०
निरुवुरु दमलोन नॆल्लचंदमुल । सरियगुचुन्नारु जनुल चूड्कुलकु:
नीकुमारकु लॆव्व? रॆव्वरि सुतुलु?। नाकु नॆपॆंड गाधिनंदन ! चॆपुम'
यनिन विश्वामित्रुडातनि जूचि । विनिर्पिप दॊडगॆनु वीनुलुब्बंग
'नो राजकुलचंद्र! यो सुगुणाब्धि!। वीरि वृत्तांतंबु विनुमु दॆल्पॆदनु:
सरयुवुपोंत गोसल देशमुननु । नरुदॊप्पग नयोध्य यनु पुरि योप्पु;
ना पुरि नेलुचु ना दशरथुडु । नेपुमै मनुजुल नॆल्ल बालिंचु;
नातनि वरपुत्रुडैन रामुंडु । नितनिकि ननुजातुडी लक्ष्मणुंडु
मखमु सेयुटकुनै मऱि नेनु वेड । सुखमुन निच्चॆनु सुतुल निद्दऱिनि;
मा वॆन्ट वॆंचॆसि मखमुनु गाचि । वेवेग दाटक, वॆस सुबाहुवुनु
आटोपमॊप्पंग ननिलोन गूल्चि । माटमात्रंबुन मारीचु दोलि१४५०
या गंग नट दाटि यटु मिथिलकुनु । नेगंग दलचुचु निटकु वच्चितिमि;
ई राजशीतांशु लिनवंशकुलुलु; । वीरि सामर्थ्यंबु विनग जोद्यंबु'
ननिन विश्वामित्रुनतुल वाक्यमुलु । विनि विस्मयंबंदि वेड्क ना सुमति

के समान, अपने चरणों के स्पर्श से धरती को प्रसन्न (अलंकृत) कर रहें हैं, ।। १४४० ।।

—(एवं) जनता की दृष्टि में दोनों सब प्रकार समान दीख रहे हैं, ये कुमार कौन हैं ? किनके पुत्र हैं ? हे गाधिनन्दन ! मुझे समझाकर बताइए'। ऐसा कहने पर विश्वामित्र उसे (सुमति को) देखकर, जिससे कान आनंदित हो सकें, इस प्रकार का वृत्तान्त सुनाने लगे। 'हे राजकुल-चन्द्र ! हे सद्‌गुण-सागर ! इनका वृत्तान्त सुनो, मैं बता रहा हूँ। सरयू (नदी) के निकट (किनारे), कोसलदेश में आश्चर्यप्रद अयोध्या नामक पुर विराजमान है। उस नगर पर राज्य करते हुए वह दशरथ पराक्रम के साथ समस्त मानवों पर शासन करते हैं। उनका वर पुत्र है राम, उसका अनुज है यह लक्ष्मण। यज्ञ करने के लिए मेरे द्वारा प्रार्थना करने पर, (राजा ने) दोनों पुत्रों को प्रसन्नता से दे दिया है। हमारे साथ पधारकर, यज्ञ-रक्षा कर, अतिशीघ्रता से ताड़का और सुबाहु को युद्ध में पराक्रम के साथ, मार गिराया। बात की बात में मारीच को भगाया। ।। १४५० ।।

—गंगा को पार कर, मिथिला को जाने के उद्देश्य से यहाँ आए हैं। ये चन्द्रवंश के हैं। इनकी सामर्थ्य सुनने में आश्चर्यप्रद है'। इस प्रकार

या राघवुल नप्पुडर्थि बूंजिप । वारु ना पूजलु वरुस गैकोनुचु
ना रात्रियंदुंडि या प्रभातमुन । नाराजु दमु बंप नर्थितो जनिरि ।

गौतमाश्रम वृत्तांतमु

चनि चनि गौतमाश्रममु राघवुडु । गनुगोनि पलिकॆ ना गाधिनंदनुनि:
‘सललित पल्लव संपदल् गलिगि । वॆलयु मामिळ्ळुनु वेऱु पनसलु
नारंग जंबीर नारिकेळमुलु । बारिभद्रंबुलु बदरिकाततुलु
मातुलुंग लवंग मंजीरतरुलु । श्रीतरु चंपक सिंधुवारमुलु
बॊन्नलु बॊगडलु बोकम्राकुलुनु । नॆन्नंग नरटुल नॆऱयु पुप्पॊळ्ळु १४६०
जित्तजांबकमुलै चलगु नशोक । लत्तुक दाडिम ललित मल्लिकलु
तिंदुकंबुलु शिवतिलक शाल्मलुलु । चंदन कर्पूर सहकारमुलुनु
भल्लात गुग्गुलु ब्रह्मकौशिकमु । लॆल्लचो नल्लिन येलकीलतलु
अल्लिन मॊल्ललु नलरु चेमंति । चल्लनि पुष्प वासनल जॆन्नॊन्दु
कासारमुल चेत गडुरम्य मगुचु । भासिल्लु पक्षुल पटुरवंबुलुनु
समधिकमिट्टि याश्रमभूमि सकल । रमणीयमय्यु निर्जनमेटिकय्य ?

विश्वामित्र के अनुपम वाक्यों को सुनकर, आश्चर्यचकित होकर, उस सुमति ने प्रीति से उन राघवों की हृदय से पूजा की। उन्होंने उन पूजाओं को क्रम से ग्रहण किया। उस रात को वहाँ रहकर, प्रभात समय उस राजा के बिदा करने पर प्रसन्नता से चल पड़े।

गौतम आश्रम का वृत्तान्त

—चलते-चलते राघव ने गौतम-आश्रम को देखकर, उस गाधिनन्दन से कहा—‘सुललित-पल्लव-सम्पदा से युक्त होकर, शोभायमान आम्र, कटहल, नारंगी, नींबू, नारियल, देवदारु, बेर, मातुलुंग, लवंग, मंजीर के वृक्ष, श्रीतरु, चंपक, सिन्धुवार, नागकेसर, मौलसिरी, सुपारी और केले के पेड़, (उपरोक्त वृक्षों पर) शोभायमान पुष्परज से युक्त, ॥ १४६० ॥

—चित्त को प्रसन्न करते हुए शोभायमान अशोक, लाख, अनार, ललित मल्लिका, तिन्दुक, शिवतिलक, शालमल, चन्दन, कर्पूर, आम, भल्लात, गुग्गुल, ब्रह्मकौशिक, सर्वत्र फैली हुई एला (इलायची) की लताएँ, मोल्ल (कुन्द), सुन्दर चमेली (आदि) के शीतल पुष्पसौरभ से शोभायमान होते हुए, कासारों (सरोवरों) से अतिरम्य बनते हुए, पक्षियों के कूजन से युक्त यह आश्रमभूमि सभी तरह से रमणीय होते हुए भी निर्जन क्यों हुई ? पहले यहाँ तपस्या करनेवाले मुनिवर कौन थे ? सब कुछ बताइए’।

मुन्निदु दपमुन्न मुनिवरुडॆव्व ? ।डन्नियु नॆऱिंगिपु' मनिन निट्लनियॆ;
'गौतमुडिक्कड गडकतो दॊल्लि । यातत निष्ठ नहल्यतो गूडि
यतिघोरतपमुसेयग निंद्रुडॆऱिगि । यतनितपंबु दा नंतयु जॆऱुप
गुक्कुटंबै पोयि कुटजंबु सेरि । कॊक्कॊरोको यनि कॊमरॊप्प गूय
१४७०

मनमुन जिंतिंचि मऱि वेगॆननुचु । मुनि निजानुष्ठानमुनकु बोवुटयु
गौतमाकारंबु गैकॊनिवच्चि । यातनि सति नहल्यादेवि गदिसि
'ऋतुकालमनरु कोरिक गलवारु: । मतिदलंपग ब्रॊद्दु मऱि चालगलदु:
पॊलतुक! नी तोडि भोगेच्छ नाकु । वलयुट दलपोसि वच्चिति' ननिन
नॆऱिगि यहल्य 'नीविंद्रुंडवगुट । यॆऱुगुदु; नौगाक! यिदु र' म्मनुचु
जलजाक्षि तम पर्णशाल लोपलिकि। बलभेदि गॊनिपोयि परग ग्रीडिंचॆ।
सुरनाथुडप्पुडु स्रुक्कुचु भीति । नरुगुचो गौतमु डंतलो वच्चि
'योरि पापात्मक ! युचितमे नीकु?। ना रूपु गैकॊनि ना पत्नि गवय?

(ऐसा) कहने पर (विश्वामित्र ने) यों कहा—'पूर्वकाल में निरन्तर निष्ठा के साथ, अहिल्या-युक्त हो गौतम यहाँ सप्रयत्न अतिघोर तप करने लगे। (यह) जानकर इन्द्र ने, उनके समस्त तप को बिगाड़ देने के लिए कुक्कुट (मुर्गा) बनकर पर्णशाला (के पास) पहुँचकर मनोहरता के साथ बाँग दी। ॥ १४७० ॥

—मन में यह सोचकर कि प्रातःकाल हो गया, मुनि (गौतम) अपने अनुष्ठान (साधना) करने के लिए (नदी किनारे) गए। (तब इन्द्र ने) गौतम का आकार धारण कर, उस (गौतम) की सती अहिल्या के पास जाकर कहा—'जिनके मन में इच्छा (काम-वासना) है, वे ऋतुकाल की प्रतीक्षा नहीं करते। सोचने पर अभी रात बहुत है। हे वनिता! तुम्हारे साथ भोग (रति) की इच्छा से आया हूँ'। (ऐसा) कहने पर, (उसे) जानकर अहिल्या ने कहा—'तुम इन्द्र हो। यह मैं जानती हूँ। ठीक है, इधर आ जाओ'। (ऐसा) कहती हुई वह कमलनेत्री (उसे) अपनी पर्णशाला में ले गई और शोभा से (उसके साथ) रतिक्रीडा की। (रतिक्रीडा के बाद जब) देवराज संकोच और भय के साथ जा रहे थे कि इतने में गौतम आए और शाप दिया—'रे पापात्मा! मेरा रूप धारण कर, आकर मेरी पत्नी के साथ सम्भोग करना तुम्हारे लिए कहाँ तक उचित है? अपने पापफल से तुम अमुष्क (अंडकोश-रहित) हो जाओ। जाओ'। गौतम के शाप से, उसके अण्ड उसी क्षण गिर पड़े। ॥ १४८० ॥

नी पापफलमुन नी वमुष्कुंड । वै पॊम्मुपॊ' म्मनि यट शपिंचुटयु
गौतमु शापमखंडमै ताकि । यातनि यंडंबु लंतलो दॆगियॆ १४८०

अहल्या शापमोचनमु

नडरि गौतमुडहल्यादेवि जूचि । 'पडति! पाषाणमै पडियुंडु मीवु
करमुग्रमगु नॆण्ड गालि, पॆन्धूळि । बॊरलुचुंडुमु नीवु पॊडगान बडक'
यनिन 'शापमुन कॆय्यदि तुदि नाकु'। ननिन नहल्यकिट्लनियॆ गौतमुडु:
'वैकुंठधामु डवाप्तकामुंडु । लोकरक्षणकळालोलमानसुडु
रामुडै वच्चि पुराणपूरुषुडु । भूमिपै जन्मिंचि पॊगडु दीपिंप
जनुदॆन्चि कौशिकु जन्नंबु गाचि । यिनकुलाधीश्वरुडीत्रोव वच्चि
तॊलगिपोवक निन्नु द्रॊक्किन जालु । जलजलोचन! नीदुशापंबु दीऱु'
ननि चॆप्पि शीताद्रि करिगॆ गौतमुडु; । मुनिपत्नि ऱारूपमुननुंडॆ; नंत
सुरराजु दनपाटु सुरलतो दॆल्प । दरमिडि पितृदेवतल वारु वॆडि
वॆरवरुलै मेषवृषणमुल् दॆच्चि । सुरलु सँधिचिरि सुरलोकपतिकि:
१४९०

अहिल्या-शाप-विमोचन

—(उसके पश्चात्) रोषावेश से गौतम ने अहिल्या को देखकर कहा—'हे नारी! तुम पाषाण हो पड़ी रहो। अति उग्र हो धूप में तपते हुए अधिक धूल में लोटती रहो जिससे तुम्हारा स्वरूप (किसी को) दिखाई न पड़े'। (ऐसा) कहने पर (अहिल्या ने) कहा—'मेरे लिए इस शाप का अन्त कब होगा'? (तब) गौतम ने अहिल्या से कहा—'वैकुण्ठधाम, अवाप्तकाम, लोकरक्षण कला-लोलमानस (लोक-रक्षा की कला में लीन मन वाले) (और) पुराण-पुरुष (विष्णु) राम के रूप में भूमि पर जन्म लेंगे। अत्यन्त प्रशंसनीय रूप में आकर, कौशिक के यज्ञ की रक्षा कर, (वे) इनकुल के अधीश्वर (राम) इस मार्ग से आकर, मार्ग से न हटकर तुम्हें चरणों से स्पर्श-भर करेंगे तो बस हे कमललोचने! तुम शाप-मुक्त हो जाओगी'। ऐसा कहकर गौतम शीताद्रि को चले गए और मुनि-पत्नी (अहिल्या) पाषाण के रूप में पड़ी रही। तब देवराज ने अपनी दुर्गति के बारे में देवताओं को बताया। क्रम से उन्होंने पितृदेवताओं से प्रार्थना की। देवताओं ने समर्थ हो भेड़ के अण्डकोश लाकर सुरलोकपति के शरीर में जोड़ दिये। ॥ १४९० ॥

नतुलपुण्यात्मकु लदियादिगाग । ग्रतुवुल जंपुदुर्कडगि मेषमुल:
नाडादिगा मुनिनाथु शापमुन । बोडिमि सॊडि यी तपोवनि नुन्न
या यहल्य नतुल्य हतमनश्शल्य । जेयवे श्रीराम! श्रितपुण्यनाम!'
यनि चॆप्पि गौतमुनाश्रमंबुनकु । जनुदेर श्रीरामचरणमुल् सोक
मॊगुलॆल्ल विरिय सोमुनि कळ वोलॆ । बॊग यडंगिन हव्यभुक्कीलवोलॆ
गलक दॊलंगिन कमलिनि वोलॆ । बलुमसट्टुडिगिन बंगारु वोलॆ
श्रीरामपादराजीवपराग । दूरीकृताघसंदोहयै यपुडु
वॆलदि यंतट शिलावेषंबु मानि । तिलकिंचि तन तॊण्टिदेहंबु बूनि
मुनिपति चेत रामुनि महत्त्वंबु । विनिनदि गान ना वेदंडायान
या महामहुनकु नातिथ्यमॊसगि । 'श्रीमीऱ निटकु विच्चेसिति गान
१५००
जरितार्थनैति नी चरणपद्ममुलु । दर्शिसिचि श्रीराम! त्रैलोक्यनाथ!
मी पादतीर्थमौ मिन्नेरु भुवन । पापंबुलॆडबाप बाल्पडॆननग,
निलयॆल्ल नॊकट मिन्नॊक्कट गॊलिचि। बलिमॆट्टि ब्रह्मांडभांडंबु मुट्टि

—(इसी कारण से) तब से लेकर अतुल पुण्यात्मक (अति पुण्यवान्) लोग ऋतु (यज्ञ) के समय सप्रयत्न भेड़ों का वध करते हैं। उस दिन से लेकर मुनिनाथ (गौतम) के शाप के कारण, मनोज्ञता को खोकर इस तपोवन में स्थित उस अहिल्या को जो अतुल्य (असमान) है, (उसे) हतमनशल्य (मन के दुख से मुक्त) करो न, हे श्रीराम! हे श्रितपुण्यनाम (वाले)!' ऐसा कहकर गौतम के आश्रम पहुँचने पर, श्रीराम के चरण के स्पर्श से, सभी मेघों के छँट जाने पर चन्द्र की कला के समान, धुएँ के कम होने पर हवनकुण्ड की अग्नि-ज्वाला के समान, कलंक से मुक्त कमलिनी के समान, मलिनता के कम होने पर सुवर्ण के समान, श्रीराम के पादराजीव के पराग से दूरीकृत अघ-संदोह (पाप-समूह) वाली होकर, (वह) नारी तब शिलारूप को छोड़, अपने पूर्वदेह को धारण कर, मुनिपति (गौतम) द्वारा राम के महत्त्व को सुन चुकने के कारण, उस वेदंडयाना (गजगामिनी) ने उस महामह (महापुरुष) को आतिथ्य दिया और यह कहकर राम की विनुति (स्तुति) की कि 'श्री (शोभा) की अतिशयता से (आप) यहाँ आए हैं इसलिए ॥ १५०० ॥

—आपके चरण कमलों के दर्शन कर, हे श्रीराम! त्रैलोक्यनाथ! मैं चरितार्थ हुई हूँ। मानों आपका चरणोदक होकर आकाशगंगा (समस्त) भुवनों के पापों को दूर करने के लिए निकल पड़ी है। एक (चरण) से समस्त पृथ्वी को और अन्य (चरण) से आकाश को नापकर, पराक्रम

वेदशिरोवीथि विहरिंचुनीदु । पादमुल् नादुशापमु बापुटरुदे?'
यनि रामु विनुतिंचे; नंतगौतमुडु । सनुदेंन्चि रघुरामचंद्रु बूजिचि
प्राकट जन्मसाफल्य नहल्य; । गैकोनि तोंलिलटिगति विलसिल्ले;
ग्रोंव्विरि जडिवान कुंभिनि गुरिसें। नव्वेळ; देवतूर्यंबुलु मोंरसें;

श्रीरामलक्ष्मणुलु विश्वामित्रुतो मिथिल जेरुट

घनपुण्युलंदुंडि कदलि मिन्नंटि । तनरु प्राकारसौधमुल यूथमुल
नमरिन रत्नगेहमुल वाहमुल । रमणीय राजमार्गमुल दुर्गमुल
वलनोंप्पु श्रृंगार वनुल जव्वनुल । बोंलुचु संततशुभंबुल निभंबुलनु
१५१०
ननुवोंन्दु वैरिवर्गाशिथिलकुनु । जनकुनि मिथिलकु जनुदेंन्चि; रंत
गार्ळिग नेपाळ कर्नाट लाट । माळव सौवीर मगध पांचाल
कुरु पांड्य बर्बर कुंतलावंति । मरु तुरुष्काभीर मनुज वल्लभुल
घनतर यागोपकरणभागमुल । ननुरूप पशुगणायतन यूपमुल

से ब्रह्माण्डभाण्ड में व्याप्त होकर, वेद-शिरोवीथि (उपनिषद् रूपी मार्ग) में विहार करनेवाले आपके चरणों के लिए, मेरे शाप को दूर करने में आश्चर्य ही क्या है?' इतने में गौतम आए (और) रघुवंशी रामचन्द्र की पूजा की। जन्म की सफलता के प्रकट-रूप अहिल्या को ग्रहणकर पूर्ववत् (पहले जैसे) विराजमान हुए। उस समय ताजे फूलों की कुम्भवृष्टि हुई, देवतूर्य बज उठे।

श्रीराम-लक्ष्मण का विश्वामित्र के साथ मिथिला पहुँचना

—वे घन (महान्) पुण्यवान् वहाँ से चलकर जनक की (राजधानी) मिथिला पहुँचे जो गगन को स्पर्शकर सुशोभित प्राकार सौध-समूहों, सुनिर्मित रत्न (खचित) गृहों, वाहनों, रमणीय राजमार्गों, दुर्गों, शोभायमान श्रृंगारोद्यानों, युवतियों, निरन्तर मांगलिक पदार्थों तथा हाथियों से शोभित, विलसित थी। ॥ १५१० ॥

—वह (नगर) वैरिवर्ग के लिए अशिथिल था। तब कलिंग, नेपाल, कर्नाट, लाट, मालव, सौवीर, मगध, पांचाल, कुरु, पांड्य, बर्बर, कुन्तल, अवन्ति, मरु, तुरुष्क, आभीर (आदि देशों के) राजाओं, (और) घनतर (श्रेष्ठतर) याग-उपकरण भागों के अनुरूप पशुगण से युक्त यूपों, भूरि (अधिक) दधि-क्षीर-पूर्ण कुम्भों, सार (श्रेष्ठ) समिधाओं से भरे सुन्दर स्थलों, उचित रूप से पंक्तियों में (सजे हुए) दर्भासनों (कुश के आसनों),

भूरि दधिक्षीरपूर्णकुंभमुल । सारसमिद्भार चारुदेशमुल
दगुपंक्तुलैयुन्न दर्भासनमुल । दगु पीठमुल नुन्न तापसोत्तमुल
ललिग्रालु रत्नपल्लवतोरणमुल । मलगि पै चेसाचु मदवारणमुल
नडरि घोषिंचु सामादि वेदमुल । नुडुगक चनुदॆन्चु चुन्न तापसुल
नुडुवीथि नुप्पॊन्गु होमधूममुल । नडरॆडु देवताह्वानरावमुल
बूजलु गैकॊनु पुण्यसंयमुल । बूजिप सॊलयनि भूसुरोत्तमुल १५२०
नरुदारु जनकुनि यज्ञवाटंबु । गरमर्थि जॊच्चॆ नग्गाधिनंदनुडु ।
अंत ना जनक महाराजवर्यु । डॆन्तयु ब्रियमुतो नॆदुरुगा वच्चि
मुनिनाथुनकु म्रॊक्कि मुदमॊप्प दोडु।कॊनिपोयि पूजिंचि कुशलंबुलडिगि
'नीवु विच्चेसिति, नेडु ने मिगुल । बावनात्मुडनैति; ब्रबलॆ ना क्रतुवु'
ननि चाल गॊनियाडि यम्मुनिचंद्रु । वॆनुकनॆ विनतुलै विलसिल्लुचुन्न
गुरुतरस्फीतवक्षुल गाकपक्ष । धरुल महाधनुर्धरुल श्रीकरुल
गोमलांगुल नभंगुरयशोनिधुल । भूमि जरिंचु वेल्पुल बोलु घनुल
सदयांतरंगुल सततप्रसन्न । वदनुल भुवनपावनचरित्रुलनु

(और अन्य) उचित आसनों पर स्थित उत्तम तपस्वियों, उत्साह से शोभित रत्नपल्लव-तोरणों (बन्दनवारों), भ्रमण करते हुए (तथा) सूँड ऊपर उठाए मत्तगजों, सामादि वेद-पाठ की समधिक ध्वनियों, निरन्तर आते हुए तपस्वियों, आकाशवीथि में परिव्याप्त होम-धूमों, अधिकता से विलसित देवताओं के निमन्त्रण की ध्वनियों, पूजाएँ ग्रहण करनेवाले पवित्र संयमियों, पूजा करने पर न थकने (सन्तुष्ट न होने) वाले भूसुरोत्तमों (ब्राह्मणों)— ॥ १५२० ॥

—से युक्त जनक की यज्ञभूमि आश्चर्यजनक थी। उस गाधिनन्दन ने बड़ी प्रसन्नता से उस यज्ञवाट (भूमि) में प्रवेश किया। तब उस महाराज-श्रेष्ठ जनक ने अत्यधिक प्रेम से (उनकी) अगवानी की, मुनिनाथ को प्रणाम किया, प्रसन्नता के साथ (उन्हें) लिवा ले गए, पूजा की, कुशल-प्रश्न किए (और कहा)—'आप आए, आज मैं अधिक पवित्र बन गया हूँ। मेरा यज्ञ समृद्ध हो गया'। इस प्रकार बहुत प्रशंसा करके, उस मुनिचन्द्र के पीछे ही विनयशील हो विलसित राम-लक्ष्मण को देखा जो गुरुतर (विशाल) स्फीत वक्षवाले, काकपक्ष (अलक) धारी, महाधनुर्धर, श्रीकर (शोभाकर) कोमल शरीरवाले, अभंगुर (शाश्वत) यशोनिधि, पृथ्वी पर संचार करनेवाले देवताओं के समान दीखनेवाले महापुरुष, सदयान्तरंग (दया से युक्त अन्तरंग वाले), सतत प्रसन्न वदन वाले, भुवन-पावन-चरित्र वाले, चारु प्रभा से युक्त भानु

जारुप्रभाभानु चंद्र सन्निभुल । धीरुल नाश्विनदेवताकृतुल
नाजानुबाहुल नतुलविक्रमुल । राजीवनेत्रुल रामलक्ष्मणुल १५३०
जूचि 'यी शरचापशोभितहस्तु । ली चतुरात्मकुलेव्वरिवार ?
लीपल्लवारुण मृदपादपद्मु । ले पगिदिनि वच्चिरिचटिकि नडचि?'
यनिन विश्वामित्रु 'डनघुलु वीरु । जननाथ! दशरथ जनपालसुतुलु;
नायतशक्ति ना यागंबु गाचि । या यहल्यनु ब्रोचि यनुकंप नेंचि,
निरुपमतरशक्ति नी यिंटनुन्न । हरुनि चापमु जूडनरुदेंन्चि' रनुडु
मुनिनाथु माटकु मुदमंदि जनकु । डनुनयंबुन वारि नर्थि बूजिचें ।
गौशिकु गनुगोंनि गौतमसूनु । डाशतानंदु डिट्लनियें रागिल्लि:
'नीवु रामुनि देंच्चि नेंम्मि मम्मेलि: । ती विश्वविभु देर नेंव्वरितरमु?
अडरि मा तल्लि यहल्यपापमुलु । गडिगें रामुनि पादकमलरेणुवुलु;
गौतमशापदुर्गति निस्तरिंचि । गौतमु ग्रम्मर गलसें मा तल्लि; १५४०
रामचंद्रुनि पाद राजीव महिम । लेमंदु' ननि रामु नीक्षिंचि पलिकें:

(सूर्य) (और) चन्द्र के समान दीखनेवाले, धीर, अश्विनीकुमार नामक देवताओं की आकृतियों वाले, आजानु (घुटनों तक लंबे) बाहु वाले, अतुल विक्रम वाले और राजीव नेत्र (कमलनेत्र) थे । ॥ १५३० ॥

—(देखकर) पूछा—'धनुष-बाण से शोभित हाथों वाले, ये चतुरात्मक कौन हैं ? ये पल्लव के समान लाल तथा कोमल चरण-कमलों वाले किस प्रकार यहाँ (तक) पैदल आए हैं' ? (तब) विश्वामित्र ने कहा—'हे अनघ जननाथ ! ये (बालक) जनपाल दशरथ के पुत्र हैं। आयत (व्याप्त) शक्ति से मेरे यज्ञ की रक्षा कर, उस अहिल्या का उद्धार कर, अनुकम्पा से (अब) तुम्हारे घर में रखे हुए हर (शिव) के निरुपमतरशक्ति वाले धनुष को देखने आए हैं' । मुनिनाथ के वचन से आनन्दित होकर, जनक ने अनुनय-पूर्वक (और) हृदय से उनकी पूजा की । कौशिक को देखकर गौतम के पुत्र शतानन्द प्रेम से यों बोले—'राम को (यहाँ) लाकर, प्रसन्नता-पूर्वक हमें धन्य किया है । (वरन्) इस विश्व-व्यापक को ला सकने की सामर्थ्य किसमें है ? मेरी माता अहिल्या के पापों को राम के चरणकमल के रेणुओं ने, प्रबल होकर, धो डाला । गौतम के शाप की दुर्गति से पार होकर (शाप से मुक्त होकर) मेरी माता फिर से गौतम से मिल गई हैं। ॥ १५४० ॥

—रामचन्द्र के चरणकमलों की महिमा का वर्णन कैसे करूँ ?' । (ऐसा) कहकर राम को देखकर बोले—'सुनते हैं, ये कौशिक जो पुण्यात्मा हैं, इस

'नी कौशिकुडु पुण्युडीक्षोणिमीद । नीकु रक्षकुडट! नीकेमि कॊदव ?

विश्वामित्र प्रभावमु

यरय विश्वामित्रु नतुल प्रभाव । मरिदि प्रस्तुतिसेय; नैननु विनुमु;
दशरथात्मज! ब्रह्मतनयुंडु गुशुडु । गुशुडर्थि तोडुत गुशनाभु गनियॆ;
गुशनाभुनकु गाधिकॊडुकय्यॆ; नट्टि । कुशपवित्रुडु गाधिकॊडुकय्यॆ नीतः
डतिधर्मनिरतुडै यतुलसत्त्वमुन । नितडु महीचक्रमेलुचुनुंडि
यॊलसिन वेडुक नॊकनाडु दन्नु । बलसि यक्षौहिणि बलमुलु गॊल्व
वॆडलि काननमुल वेटलु सल्पि । पुडमियंतयु जरिंपुचु जाल बडलि
बहुगंधबंधुर प्रसवमंजरुल । बहुफलंबुल नॊप्पु पादपावळुल
बहुपक्षिरवमुल ब्रह्मघोषमुल । बहुसरोवरमुल बहुवेदिकलनु १५५०
नलरुचु जाति वैरादुलुलेक । मॆलगु नानाविध मृगमुलु गलिगि
यनिलांबु जीर्णपर्णाशुलै तपमु । नॊनरिंचु मुनुलचे नुल्लसिल्लुचुनु

क्षोणि (पृथ्वी) पर तुम्हारे रक्षक हैं। (तब) तुम्हें किस (बात) की कमी हो सकती है ?

विश्वामित्र का प्रभाव

—विचार करने पर कोई विरला ही विश्वामित्र के अतुल प्रभाव की प्रशंसा करने में समर्थ हो सकता है। तब भी (आप) सुनिए। हे दशरथात्मज! ब्रह्मा के पुत्र हैं कुश। कुश ने प्रेम से कुशनाभ को जन्म दिया। कुशनाभ के गाधि (नामक) पुत्र हुए। ऐसे कुश-पवित्र गाधि के पुत्र हुए ये (विश्वामित्र)। अति-धर्म-निरत हो (और) अतुल सत्त्व (शक्ति-पराक्रम) से ये महीचक्र पर शासन कर रहे थे। एक दिन अतिशय रुचि से, अक्षौहिणी सेना से अपने को परिवेष्ठित कर, सेवा करते समय, काननों की ओर आखेट के लिए निकल पड़े। (देर तक) शिकार खेलते हुए समस्त प्रदेश में घूम-घूमकर बहुत थक गए (और) वसिष्ठ के आश्रम में पहुँचे। (वह वसिष्ठ-आश्रम) बहु (प्रकार की) (सु) गन्ध से बन्धुर पुष्पमंजरियों (और) बहु (प्रकार के) फलों से सुशोभित पादप (वृक्ष) समूहों से भरा था, बहु-पक्षि-रव (ध्वनियों), ब्रह्म-घोष (वेदध्वनियों), बहु सरोवर, बहु वेदिकाओं (यज्ञ की वेदियों) से सम्पन्न था॥ १५५० ॥ —जाति (गत) वैर आदि के बिना विचरण करनेवाले नानाविध मृगों से युक्त था, अनिल (पवन), अंबु (जल) पर्ण (पत्ते) खाते हुए तप करनेवाले मुनियों से विलसित था। पन्नग, सिद्ध, सुपर्व, गन्धर्व, किन्नर

बन्नग सिद्ध सुपर्व गंधर्व । किन्नरादुल वालखिल्यादि मुनुल
गडुनोप्पि ब्रह्मलोकमु बोलि घनत। नडरु वसिष्ठुनि याश्रमंबुनकु
नतिमुदंबुन वच्चि या वसिष्ठुनकु । नतिभक्ति म्रोक्किन नतडु दीविंचि
युचितासनंबुन नुनिचि पूजिंचि । प्रचुररसस्वादु फलमूलततुल
वरुसतो निच्चिन वानि गैकोनुचु । गरमुलु मुकुळिंचि कडुभक्ति बलिके:
'ननघात्म! तपसुलु नग्निहोत्रमुलु । जनलोकनुतमुलै जरुगुचुन्नविये ?
मीरु मी शिष्युलु मी याश्रममुन । नारय वीरु वारनकेल्लवारु
मुदमुन नुन्नारे? मुनिनाथ! 'यनिन। 'नोदवुसम्मदमुन नुन्नार मेमु;
१५६०
नीतितो जेयुदे नीवु राज्यंबु ? । ब्रीतिमै भरियिंते भृत्यवर्गमुल ?
मुदमोप्प राज्यांगमुलु परीक्षिंते?। वदलक निर्जिंते वालु शात्रवुल?
गुशलमे सर्वंबु ? गुशलमे नीकु । गुशलमे नी पुत्रकुलकु, बत्नुलकु?'
ननि पल्क 'मी कृप नखिलंबु गुशल'। मनियॆ गौशिकु; डंत नव्वसिष्ठुंडु
'करमर्थि ना यिंटिकड विंदु गुडिचि। यरुगुम यी' वनि यतनि ब्रार्थिप
नंदकु गौशिकुंडनुमतिंचुटयु । विंदु सेयुटकुनै वेगंब यतडु

आदि से (और) वालखिल्यादि मुनियों से अति मनोहर (वह) बन ब्रह्मलोक के समान महानता से शोभायमान था। वसिष्ठ के उस आश्रम में अति प्रसन्नता से (जाकर विश्वामित्र ने) उस वसिष्ठ को अति भक्ति से प्रणाम किया। उसने (वसिष्ठ ने) आसीस देकर, उचित आसन पर बिठाकर, (विश्वामित्र की) पूजा (सत्कार) की (और) क्रम से प्रचुर रस (और) स्वाद से युक्त फल (और) मूल-समूह दिए। उन्हें ग्रहण करते हुए, हाथ जोड़कर अतिभक्ति से (विश्वामित्र) बोले—'हे अनघात्म! तपस्याएँ (और) अग्निहोत्र (आदि) जनलोकनुत (लोकसम्मत) रूप से हो रहे हैं न? हे मुनिनाथ! आप (और) आपके शिष्य (और), आपके आश्रम के सभी लोग प्रसन्नता (सुख) से हैं न?' (ऐसा) कहने पर वसिष्ठ ने कहा—'हम सब बड़े सुख से हैं ॥ १५६० ॥
—तुम नीति के साथ राज्य करते हो न? भृत्यवर्ग का प्रीति से पालन कर रहे हो न? राज्यांगों का (राज्य के सात अंग माने गए हैं) मोद से पर्यवेक्षण कर रहे हो न? क्रूर शत्रुओं को, न छोड़कर, हरा देते हो न? सभी कुशल तो है न? तुम कुशलता से हो न? तुम्हारे पुत्र (और) पत्नियाँ कुशलपूर्वक हैं न? (ऐसा) कहने पर कौशिक ने कहा—'आपकी कृपा से सभी कुशल से हैं'। तब वसिष्ठ ने उनसे प्रार्थना की—'बड़े प्रेम से मेरे घर पर भोजन कीजिए'। उसके लिए कौशिक ने अनुमति दी (स्वीकार किया)। (तब) भोजन

तन होमधेनुवु दलचि रप्पिंचि । 'जननाथवरुनकु सकलसेनलकु
विविधभक्ष्यंबुलु विविधभोज्यमुलु । विविधभंगुल विंदु वेड्क गाविंप
वलयु गावुन नीवुवलयु वस्तुवुलु । गलिगिंपु' मनवुडु गामधेनुवुनु
गलमान्नततुलु शाकमुलु भक्ष्यमुलु । गलवंटकमु लूरुगायलंबळ्ळु१५७०
फलविशेषंबुल पायसान्नमुलु । जिलुगु पालुनु वॆन्न चीनि चक्कॆरलु
सद्योघृतंबु रसायनंबुलुनु । मद्यविशेषमुल् मांसभेदमुलु
वाविरि मऱियु नॆव्वारि केमेमि । कावलॆ नवि यॆल्ल गलिंपप नपुडु
ना धेनु महिम कत्याश्चर्यमॊन्दि । गाधेयुडप्पुडु कडिमाडसेय
गुडिचि सेनलु दानु गोर्कि दीपिंप । गडु दृप्ति नॊन्दि, या गाधितनूजु
'डी कामधेनुवु नॆँभंगिनैन । जेकॊन्दु' ननुचु वसिष्ठुनि जेरि
'लक्षगुऱ्ऱंबुलु लक्षधेनुवुलु । लक्षयेनुगुलु वेलक्षलु मणुलु
निच्चॆद नी धेनुविम्मु ना' कनिन । निच्चलो मुनिनाथुडॆन्तयु वगचि
'यिदि नाकु जीवनंबिदि नाकु ब्राण। मिदि ना तपंबुलकॆल्ल साधनमु;
हव्यकव्यंबुलु नतिथिसत्कार । मव्याहतमुग नी यावुचे नडचु१५८०

(दावत) (की तैयारी) करने के लिए वशिष्ठ ने स्मरण करके शीघ्रता से अपनी कामधेनु को बुलाया (और) कहा—'जननाथ-वर (राजश्रेष्ठ विश्वामित्र) (और) समस्त सेना को विविध भक्ष्य (और) विविध भोज्यों से विविध प्रकार से प्रेम से भोजन कराना है। अतः तुम आवश्यक वस्तुओं को उत्पन्न करो'। (ऐसा) कहने पर कामधेनु ने महीन और सुगंधित अन्न के समूह, शाक (साग), भक्ष्यों से युक्त रसोई, अचार, काँजी, ॥ १५७० ॥

—विविध फल, खीर, गाढ़ा दूध, मक्खन, चीनी, सद्यो (ताजा) घृत, रसायन, कई प्रकार के मद्य और मांस (आदि) जिसको जो चाहिए क्रम से उन सभी का प्रबन्ध किया। तब उस धेनु की महिमा पर अति आश्चर्य-चकित होते हुए गाधेय (विश्वामित्र) ने स्वयं, सेनाओं के साथ भरपेट भोजन किया। इच्छाओं के प्रदीप्त होने पर, अत्यन्त सन्तुष्ट होकर, उस गाधि-तनूज (विश्वामित्र) ने सोचा—'किसी भी प्रकार से इस कामधेनु को प्राप्त करूँगा'। (यह सोचते हुए) वसिष्ठ के पास जाकर कहा—'लाख घोड़े, लाख धेनु, लाख हाथी (और) हज़ार लाख (कई) मणियाँ दूँगा। यह धेनु मुझे दे दो'। (ऐसा) कहने पर मुनिनाथ मन में अत्यन्त दुखी हुए और बोले—'यह मेरे लिए जीवन है, यह मेरा प्राण है। यह मेरी सभी तपस्याओं का साधन है। हव्य-कव्य, अतिथिसत्कार (आदि) इस धेनु के कारण अव्याहत (निर्विघ्न) रूप से चलते हैं। ॥ १५८० ॥

नी पुण्यधेनुवु नी जाल' ननिन । ना पूर्णबलुडु विश्वामित्रुडलिगि

विश्वामित्रुडु वसिष्ठुनि कामधेनुवु गॊम्पोजूचुट

'यिम्मनि बतिमालि ये वेडनेल? । र'म्मनि भटसहस्रंबुलु दानु
गोवु नुद्धति बट्टिकॊंनिपोव बोव । बोवक यदि मुनिपुंगवु जूचि
'यनघ! वसिष्ठ संयमिचंद्र! नन्नु ।गॊंनिपोवुचुन्नाडु ग्रॊव्वि कौशिकुडु;
वारिंपवकट! दुर्वारुंडवय्यु; । नूरक तगुनय्य! यॊप्पिप नन्नु?'
ननघात्म! नीयॆड नपराधिगानु;। ननु नुपेक्षिंचुट नायमे नीकु ?'
ननुडु धेनुवुमाट का वसिष्ठुंडु । मनमुन गृपवुट्टि मरुमाट वलिकॆ:
'ने नेल विडुतु निन्नॆन्तयु बलिमि । भूनायकुडु गॊंनिपोयॆडु गानि;
क्षत्रियुलुद् - दंडचारित्रुलैन । धात्रीसुरोत्तमुल् दारॆंतवार ?
ली क्षोणिकधिपति यी गाधितनयु। डक्षौहिणीबलंबमरु नीतनिकि:
१५९०
ने विधंबुन गॆल्तु नितनि ने' ननिन । ना वसिष्ठुनितोड ना धेनुवनियॆ;

इस पुण्यधेनु को नहीं दे सकूँगा'। (ऐसा) कहने पर वे पूर्ण बलवान् विश्वामित्र रुष्ट हो गये।

विश्वामित्र का वसिष्ठ की कामधेनु को ले जाने का प्रयत्न करना

—बोले—'गाय दीजिए, इस प्रकार मैं अनुनय कर प्रार्थना क्यों करूँ' ? (यह कहकर) अपने हज़ारों सैनिकों के साथ उद्धतभाव से गाय को पकड़ कर ले जाने का प्रयत्न किया। वह (गाय) उनके साथ न जाकर, मुनिपुंगव को देखकर बोली—'हे अनघ ! संयमिचन्द्र ! वसिष्ठ ! मत्तभाव से कौशिक मुझे ले जा रहा है। दुर्वार होते हुए भी हाय ! (आप उसे) रोकते नहीं। आपका चुप रहना (और) मुझे सौंप देना क्या उचित है ? हे अनघात्मा ! मैं आपके प्रति अपराधी नहीं हूँ। मेरी उपेक्षा करना क्या (आपके लिए) न्यायसंगत है' ? (ऐसा) कहने पर धेनु के वचनों से मन में कृपा के उत्पन्न होने से उन वसिष्ठ ने उत्तर दिया—'मैं तुम्हें क्यों छोड़ दूँगा ? तुम्हें तो बलपूर्वक भूनायक (राजा) ले जा रहा है। यदि क्षत्रिय उद्दंड चरित्रवाले बन जाएँ तो धात्रीसुरोत्तम (ब्राह्मणश्रेष्ठ) (उनके समक्ष) किस गिनती के हैं ? यह गाधितनय इस क्षोणि (पृथ्वी) का अधिपति है। इसके पास अक्षौहिणी सेना है। ॥ १५९० ॥

—मैं इसे कैसे हरा सकूँगा'। ऐसा कहने पर उस वसिष्ठ से वह धेनु यों बोली—'हे मुनिनाथ ! नृपतेज की अपेक्षा सराहनीय विप्रतेज ही अधिक

'मुनिनाथ! नृपतेजमुनकंटॆ नॆन्दु । विनुतिंप नॆक्कुडु विप्रतेजंबुः
गावुन नीकंटॆ गौशिकुंडॆक्कु । डॆवॆन्ट गाकुंडुटे नॆरुंगुदुनुः
बनुपुमु ननु; वीनि बलमुलनॆल्ल । मुनुमिडि द्रुंचॆद मुनिनाथ! यनिन
ना वसिष्ठुडु धेनु नपुडु 'सैन्यमुल । गाविंपु; बलमुल खंडिपुमुऱक'
यन विनि हुंकार मडरिंचुटयुनु । गनुकनि धेनुहुंकारमात्रमुन
घनवाललतयंदु गर्णंबुलयंदु । दनुरुहंबुलयंदु दंतंबुलयंदु
खुरमध्यमुलयंदु गॊम्मुलयंदु । नुरुलोचनमुलयंदु नूर्पुलयंदु
मॊनय जंघलयंदु मोकाळ्ळयंदु । ननुवॊन्द दॊडलंदु नधरंबुनंदु
गाढतरंबैन गंगडोलयंदु । रूढिगा गूडिन रोमकूपमुल १६००
गेरलु रंकॆलनु सक्थिप्रदेशमुन । बॊरि नुद्भविंचिरि भुवनभीकरुलु
कैरात पल्लव कांभोज यवन । वीरुलु पॆक्कंड्रु विषमविक्रमुलुः
चित्ररूपाढ्युलु चित्रायुधुलुनु । जित्रविलोचनुल् चित्रहुंकृतुलु
नै वीरुलै धीरुलै महोदारु । लै वारु सेनासहायुलै मऱियु
हरुलतो गरुलतो नंदंद गडिमि । बरगि विश्वामित्रु बलमुल द्रुंप
जूचि या कौशिकु सुतुलु नूर्वुरुनु । नेचि नानाहेतिहतुलु निगुड

(महत्त्वपूर्ण) है। अतः आपसे किसी भी रूप में गाधेय अधिक (श्रेष्ठ) नहीं है, इस बात को मैं जानती हूँ। मुझे भेज दीजिए। हे मुनिनाथ! सामना करके इसकी समस्त सेना का वध कर दूँगी'। (ऐसा) कहने पर उस वसिष्ठ ने तब धेनु से कहा—'सेना उत्पन्न करो, (शत्रु-) सेना का संहार कर दो, भगा दो'। यह सुनकर (कामधेनु ने) हुँकार भर दिया। इच्छा से किये गये धेनु के हुँकार मात्र से (उसकी) घन (बड़ी) वाल-(पूँछ रूपी) लता से, कानों से, रोंगटों से, दाँतों से, खुर के मध्य भाग से, सींगों से, उरु (बड़े) नेत्रों से, श्वासों से, अतिशयता के साथ जाँघों से, घुटनों से, उचित रूप से जांघों से, अधरों से, घने गलकंबल से, प्रशस्त रोमकूपों से ॥ १६०० ॥

—विजृंभित हुँकारों से, ऊरुप्रदेश से क्रमशः भुवनभीकर और विषम-विक्रम हो अनेक कैरात, पल्लव, काम्भोज, यवनवीर उत्पन्न हुए। चित्ररूपाढ्य, चित्रायुध वाले, चित्रविलोचन वाले, चित्रहुँकार वाले वीर हो, धीर हो, महोदार हो, वे सेना की सहायता से युक्त हो, घोड़े, हाथियों के साथ रणोत्साह से परिव्याप्त होकर विश्वामित्र के बल (सेना) का संहार करने लगे। यह देख उस कौशिक के सौ पुत्र अतिशयता से नाना प्रकार के आयुधों से लैस हो आकर वसिष्ठ का वध करने का प्रयत्न कर, उसकी हुँकार मात्र से भस्म हो गए। तब (विश्वामित्र अपनी) अखिल

वच्चि वसिष्ठुनि वधियिंप गडगि । यच्चट भस्मैरतनि हुंकृतिकि;
नंत विश्वामित्त्रु डखिल सैन्यमुलु । नंतकु वीटिकि नरिगिन वगचि
यतुलपराक्रमुलगुचुन्न तनदु । सुतुल चावुनु जूचि शोकिंचि यंत
दनराज्यमुन नोक्कतनयुनि नुनिचि।चनि हिमाचलमुन ज्ञलमुन निलिचि
१६१०
त्रिपुरारि गूर्चि यतिप्रयत्नमुन । दपमोनरिंप ब्रत्यक्षमौटयुनु

विश्वामित्रुडीश्वरुनिचे नस्त्रादुलु वडसि वसिष्ठुनितो बोरुट

हरुचेत विविध शस्त्रास्त्रमुल् वडसि। युरुवडि जनुदेन्चि युग्रुडै कडगि
मोगि वसिष्ठाश्रमंबुन वह्निशिखलु। नेगय बेल्लेसे नाग्नेय बाणमुन;
नप्पुडा बाणाग्नुलाश्रमंबेल्ल । गप्पि मंडुटयुनु गनि वसिष्ठुंडु
गालदंडमु गोन्न कालुडो यनग । गेलदंडमु दाल्चि किनुकतो वेडलि
'योरि विश्वामित्र! योरि पापात्म! । भूरिपुण्याश्रमंबुलु गाल्पदगुने ?
येनय नीवेक्कड ने नेक्क' डनिन । घनरोषचित्तुडै कौशिकुंडडरि
यतनि पै रौद्रंबु नैंद्रंबु बाशु । पतमु नैषिकमु जृंभणमु शोषणमु
जटुल मोहनमुनु संतापनंबु । बटुतर वज्रंबु ब्रह्मपाशंबु

(समस्त) सेना के अन्तक (यम) के घर जाने पर दुखी हुए, अतुल पराक्रम सम्पन्न अपने पुत्रों की मृत्यु पर शोक किया। तब अपने राज्य में एक पुत्र को रख (राज्य का भार सौंपकर) हिमाचल जाकर, जलमध्य में खड़े होकर ॥ १६१० ॥

—त्रिपुरारि (शिवजी) के प्रति अति प्रयास से युक्त तपस्या करने पर वे प्रत्यक्ष हुए,

विश्वामित्र का ईश्वर से अस्त्र आदि प्राप्त कर वसिष्ठ के साथ युद्ध करना

—हर (शिव) से विविध शस्त्र-अस्त्र प्राप्त कर, शीघ्रता से आकर, उग्र होकर सप्रयत्न संरम्भ के साथ वसिष्ठाश्रम पर अधिक वेग से आग्नेय बाण चलाया जिससे अग्नि की शिखाएँ उठीं। तब उन बाणाग्नियों से समस्त आश्रम को जलते देख वसिष्ठ हाथ में दण्ड लेकर क्रोध से यों निकल पड़े मानों कालदण्ड हाथ में लिए कालपुरुष हों। (वसिष्ठ ने) कहा—'अरे विश्वामित्र! रे पापात्मा! भूरि पुण्याश्रमों को जला देना उचित है ? तुलना करने पर तुम कहाँ और मैं कहाँ ?' (ऐसा) कहने पर घन (अधिक) रोष से भरे चित्त वाले कौशिक ने विजृम्भित होकर उस पर (वसिष्ठ पर) रौद्र, ऐन्द्र, पाशुपत, नैषिक, जृम्भण, शोषण, चटुल मोहन,

गनलु पैशाचंबु गालपाशंबु । घनविष्णुचक्रंबु गालचक्रंबु १६२०
वारुण गांधर्व वायव्य सौर । घोरास्त्रमुलु कोटिकोट्लॆयुटयु
गलयंग विस्फुलिंगंबुलु सॆंदर । बलुवडि नुग्गाडॆ ब्रह्मदंडमुन ।
नलुक विश्वामित्रुडंत ब्रह्मास्त्र । मलवड संधिंचि यार्चि येयुटयु
सकल गीर्वाणुलु सकलसंयमुलु । सकल गंधर्वुलु सकल पन्नगुलु
सकल भूतंबुलु सकल दिक्पतुलु । सकल तारकमुलु जंद्रसूर्युलुनु
सकल लोकंबुलु जलनंबु नॊन्द । सकल दिक्कुलु मंड जट्टुल वेगमुन
ब्रह्मांड मद्रुवंग बलुवडि नॆगडि । ब्रह्मदंडमु दाटि पऱतेर जूचि
ब्रह्मादुलकु नड्डुपडरानियट्टि । ब्रह्मास्त्र मवलील बट्टुक म्रिंगॆ ।
सुरुचिर ब्रह्मतेजोमूर्ति वॆलुग । नरुदार नम्मुनियंग रोममुल
नॆऱमंटलॆगय ननेक बाणंबु । लऱिमुऱि वॆडलि विश्वामित्रु दाकि १६३०
चुऱुपुच्च दॊडगिन स्रुक्कि कौशिकुडु। नॆऱिसॆडि यॆन्तयु निजसत्त्वमॆडलि
‘तऱमिडि या ब्रह्मदंड मॊक्कटनॆ । वरशस्त्रकोट्लु वम्मुलै पॊलिसॆ;
नत्रस्त, मचल मीयन ब्रह्मबलमु । क्षत्रबलंबिदि काल्पने’ यनुचु

सन्तापन, पटुतर वज्र, ब्रह्मपाश, उग्र पैशाच, कालपाश, घन विष्णु चक्र, कालचक्र ।। १६२० ।।

—वारुण, गान्धर्व, वायव्य, सौर (आदि) घोर अस्त्र करोड़ों की संख्या में प्रयोग किया। वसिष्ठ ने (उन सभी को) ब्रह्मदण्ड से तत्क्षण विध्वस्त किया जिससे सर्वत्र विस्फुलिंग (चिनगारियाँ) बिखर पड़े। तब विश्वामित्र ने क्रोध के मारे उद्यत होकर, सिंहनाद करके ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। (तब) सकल गीर्वाण (देवता), सकल संयमी, सकल गन्धर्व, सकल पन्नग, सकल भूत, सकल दिक्पति, सकल तारक, चन्द्र-सूर्य, सकल लोक कम्पित हो उठे, सकल दिशाएँ प्रज्वलित हो उठीं, ब्रह्माण्ड काँप उठा, समधिक प्रकाश से उस ब्रह्मास्त्र को ब्रह्मदण्ड को पारकर आते देख, उस ब्रह्मास्त्र को जिसे ब्रह्मादि (देवता) भी रोक नहीं सकते, (वसिष्ठ) आसानी से पकड़ निगल गए। सुरुचिर ब्रह्म तेजोमूर्ति (वसिष्ठ) प्रदीप्त हो उठी। विस्मयकारी रूप से उस मुनि के अंगरोमों से प्रदीप्त ज्वालाओं के साथ अनेक बाण शीघ्रता से निकलकर, विश्वामित्र को लगे ।। १६३० ।।

—(और) उसे जलाने लगे (तो) कौशिक डर गए, कमज़ोर हो गए, अपने सत्त्व से हीन हो गए। (यह) कहते हुए कि ‘क्रम से उस एक ब्रह्मदण्ड से ही वर शस्त्र समूह व्यर्थ हो, नष्ट हो गया। उनका ब्रह्मबल अत्रस्त (और) अचल है। यह क्षत्रबल जलाने योग्य है। (अर्थात् बेकार है।)’

ब्रह्मर्षिपदमुनकै विश्वामित्रुनितपमु

जॆनटियै मगुडि कौशिकुडालु दानु । जनि घोरतपमर्थि जलुपुचुनुंडॆ ।
नटमीद सुतुल विश्वामित्रमौनि । पटुसत्त्ववंतुल बडसॆ नल्वुरनु
विनु मधुष्यंद हविष्यंद नामु । लन दृढनेत्र महारथुलनग;
ग्र्लमुडिपक वॆक्कु संवत्सरम्मु । ललघुनिष्ठनु दपंबटुसेय मॆच्चि,
वनजसंभवुडंत वच्चि कौशिकुनि । गनुगॊनि यॆन्तयु गरुणिंचि पलिकॆ;
'नीतपंबुन मॆच्चि यिच्चिति नीकु । ब्रीतिमै निट राजऋषिपदंबनघ!"
यनि पोव गाधेयुडतिदीनुडगुचु । 'नॆनयंग ने दपंबॆन्तसेसिननु १६४०
गडपट ब्रह्मर्षि गानेरनैति; । नॆडपडि चॆडिपोयॆ नी युग्रतपमु;
नी राजऋषिपदंबॆनॊल्ल' ननुचु । घोरतपंबु गैकॊनि सेयुचुंडॆ ।
नंत निक्ष्वाकु कुलाग्रणियैन । संततकीर्ति त्रिशंकुडन् राजु
तनुवुतोडनु गूडि ता नाकमुनकु । नॊनरंग जन जन्नमॊनर्रिप दलचि
भक्ति वसिष्ठुनि पालि केतॆन्चि । युक्तमार्गंबुन नुपचरिंचुचुनु
'दिविज लोकमुन की देहंबुतोड । जवरगा जन नॊक्क सवनंबु मीर

ब्रह्मर्षि पद के लिए विश्वामित्र का तप

—कुत्सित भाव से फिर से कौशिक अपनी पत्नी के साथ जाकर, उत्साहपूर्वक घोर तप करने लगे। उसके बाद मौनी विश्वामित्र ने पटु सत्त्वशाली चार पुत्रों को प्राप्त किया। सुनो, उनके नाम हैं, मधुष्यन्द, हविष्यन्द, दृढनेत्र (और) महारथ। हठ न छोड़कर अनेक वर्ष अलघु निष्ठा से तपस्या की। उससे प्रसन्न हो वनजसम्भव (ब्रह्मा) आकर, कौशिक को देख अधिक करुणा (कृपा) से बोले--'तुम्हारे तप से प्रसन्न होकर हे अनघ! तुम्हें प्रेम से राजर्षि का पद दिया है'। (यह) कह (ब्रह्मा) चले गए (तो) गाधेय ने अतिदीन होते हुए सोचा--'साधना कर, मैं कितना भी तप करूँ ॥ १६४० ॥

—तब भी अन्त में ब्रह्मर्षि न बन सका। यह उग्रतप बिगड़ (विफल हो) गया है। मैं रार्जषि के इस पद को नहीं चाहता'। (ऐसा) सोचकर वे घोर तपस्या में लीन हो गए। तब (उस समय) इक्ष्वाकु कुलाग्रणी (कुल में श्रेष्ठ) (और) सन्तत कीर्तिशाली त्रिशंकु नामक राजा ने शरीर के साथ नाक (स्वर्ग) को अतिशयता से जाने में समर्थ कराने वाला यज्ञ करना चाहा। भक्ति (भाव) से वसिष्ठ के पास पहुँचकर (जाकर), समुचित रूप से उपचार (सेवा) करते हुए कहा--'हे अनघ! स्वर्गलोक को इस देह के साथ मनोज्ञ रूप से जाऊँ, ऐसा एक यज्ञ आप मुझसे प्रेम के

लनुरक्ति गाविंपुडनघ! ना चेत;। मुनुल रप्पिंपुडु मुदमोप्प' ननिन
'नरनाथ! योंडलितो नाकलोकमुन। करुग नसाध्य मी यवनीशुलकु'।
अनवुडु राजन्युडट दक्षिणमुन। घननिष्ठ दपमोप्प गविंचुचुन्न
चिरपुण्युलैन वसिष्ठपुत्रुलकु। गरमर्थि ब्रणमिल्लि करमुलु मोगिचि
१६५०

'देवलोकमुन कीदेहंबुतोड। बोवच्चु यागंबु बूनि ना चेत
जेयिंपु'डनिन 'वसिष्ठु' 'डी तेरगु। सेयुडि' यननेनि जेयितु 'मनुडु
ना राजचंद्रुडिट्लनियें:' वसिष्ठु। 'डे राजुलुनु जेयरी क्रतु' वनुडु
मीकड किट्टु राक; मीरैन नन्नु। जेकोंनि जन्नंबु सेयिंपवलयु;
नरय बुरोहितुलगुवारु गारे। धरणीशुलकु सर्वधर्मसाधकुलु'।
अनिन वासिष्ठुलायवनीशु जूचि। 'घनुडु वसिष्ठुंडु गादन्न तेरगु
निर्मलमति नोरुल् नेर्तुरे सेय ?। दुर्मतिवगु नीकु दोपदु गाक'।
यनि पल्क निर्विण्णुडै संयमींद्रु। तनयुलनीक्षिंचि धरणीशुडनियें;

साथ कराइए। (तदर्थ) आनन्द से मुनियों को बुलाइए'। ऐसा कहने पर (वसिष्ठ) ने जवाब दिया--'हे नरनाथ! इन राजाओं के लिए शरीर के साथ स्वर्गलोक जाना असाध्य है'। (ऐसा वसिष्ठ के) कहने पर वह राजन्य वहाँ से दक्षिण में घन (बड़ी) निष्ठा के साथ श्रेष्ठ तप करनेवाले चिरपुण्यशाली वसिष्ठपुत्रों के पास जाकर अधिक इच्छा से प्रणाम कर, हाथ जोड़कर ॥ १६५० ॥

—ब्रोले--'इस देह से देवलोक को (पहुँचाने वाला) यज्ञ मुझसे प्रयत्नशील हो कराइए'। (ऐसा) कहने पर (उन्होंने) कहा--'यदि वसिष्ठ इस प्रकार से करने के लिए कहें (आदेश दें) तो कराएँगे'। तब उस राजचन्द्र ने इस प्रकार कहा--'वसिष्ठ के यह कहने पर कि 'कोई भी राजा इस क्रतु (यज्ञ) को नहीं करता (कर सकता)' मैं आपके पास आया हूँ। (कम से कम) आपको तो मुझे ग्रहण कर (मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर) यज्ञ कराना चाहिए। विचार कर देखें तो राजाओं के लिए पुरोहित ही तो सर्वधर्मसाधक हैं'। (ऐसा) कहने पर वासिष्ठों (वसिष्ठ के पुत्रों) ने उस अवनीश को देखकर कहा--'महान् वसिष्ठ के नकार देने पर, इस ढंग से अन्य कौन निर्मलमति वाला (इस यज्ञ को) करा सकता है? दुर्मति होने के कारण यह बात तुम्हें सूझती नहीं'। ऐसा कहने पर निर्विण्ण होकर संयमीन्द्र के तनयों को देखकर राजा (त्रिशंकु) ने कहा--'आपके पिता ने निराश (अस्वीकार) कर दिया। आप भी किसी भी प्रकार से यह यज्ञ नहीं करा रहे हैं। मेरे हित की बुद्धि

‘मी तंड्रि निरसिंचॆं; मीरुनु जेय । रैति रे तॆंऽगुननैन नी क्रतुवु;
हितबुद्धि लेनि मीरेल नाकिक ? । नितरुलचेत जेयिंचॆदगाक’ ।१६६०
यनिन ‘जंडालुंड वगु’ मंचु नलुक । गनुगॊनि पलिक राघनपुण्यु; लंत
भासुरंबगु भूमिपालु तेजंबु । वासिष्ठ कोपाग्नि वडि गालॆं ननग
नारय नीलदेहंबुनु नीलि । चीरयु जुंजुरुशिखयुनु दनर
नंटिन शुद्धंबुनैन मालिन्य । मंटिचु नी रूपमनुभंगि दोप
ब्रणुतवर्णस्फूर्ति बरंगिन कनक । मणिभूषणमु लयोमयमुलै तनर
नोजमै गष्टनामोक्तिभेदमुल । ना जाति कनुरूपमैन रूपमुन
जननाथुडतिघोरचंडालभाव । मॊनरंग जेड्पडियुन्न वीक्षिंचि
पौर भृत्यामात्यबंधुवर्गंबु । ला राजु वर्जिंचि; रंत ना राजु
नॊदविन भयमुन नॊय्यमॆट्टुचुनु । नॊदुगुचु जनुलकु नोसरिंचुचुनु
जनि महामहुनि विश्वामित्रु गनिन । गनिकरंबॊदव ना गाधि तनूजु
१६७०
‘डिल नयोध्यापुरंबेलॊडि नीकु । नॆलमि जंडालत्वमेल वाटिल्लॆं ?

न रखने वाले आप से मेरा क्या सम्बन्ध ? अब मैं दूसरों से (यज्ञ) कराऊँगा । ॥ १६६० ॥

—(ऐसा) कहने पर क्रोध से उसे देख उन घनपुण्य वाले (वसिष्ठ के पुत्रों) ने कहा—‘तुम चण्डाल बन जाओ’। तब मानों वह प्रकाशमान राजतेज वासिष्ठों की कोपाग्नि से जल गया, वह राजा नीलीदेह, नीले वस्त्र, और बिखरे केशों वाला हो गया। ऐसा लगा मानों मनोहरता से स्पर्श करने पर शुद्ध (वस्तु) को भी यह रूप मलिन कर देगा। प्रसिद्ध वर्णस्फूर्ति से प्रवर्तित कनक-मणि के भूषण अयोमय (लोहे के) हो गए। क्रम से कष्ट नाम, उक्ति भेद से, उस जाति (चण्डाल जाति) के अनुरूप रूप (धारण कर) (वह) जननाथ अतिघोर चण्डाल भाव को प्राप्त हुआ। ऐसे उस राजा को देखकर पौर (नागरिक) भृत्य, अमात्य बन्धु वर्गों ने वर्जित कर (त्याग) दिया। तब उस राजा ने प्राप्त भय से धीरे से कदम रखते हुए, संकोच करते हुए, प्रजा से दूर हटते हुए, जाकर महातेजस्वी विश्वामित्र को देखा। (उस पर) करुणा के उत्पन्न होने पर उस गाधितनूज ने (कहा) ॥ १६७० ॥

—‘(इस) पृथ्वी पर अयोध्यापुर पर शासन करनेवाले तुम्हें चण्डालत्व

नॆतॆऱंगुन वच्चॆ? नॆऱिंगिपु' मनिन । नातंडु मुकुळितहस्तुडै पलिकॆ;
'निरवॊन्द बॊंदितो निंद्रलोकमुन । करुग जॊप्पडुनट्टि यागंबु नन्नु
जेयिंपुडनिन वसिष्ठुडत्तॆऱगु । सेयिंपरादनि चॆप्पॆ नुत्तरमु ।
ना वसिष्ठुनिपुत्रुलगुवारु-'नतडु । गाविंपरादन्न गा' दनि पलिकि;
रितरुलचेत जेयितु नन् माट । कतिरोषमुन 'माल वगु' मन्न नैति;
ननघ ! ने जॆसॆद नन्न मध्वरमु । नॊनरिंतु; बॊन्कने नुर्वि नॆन्नडुनु
नॆट्टियापदलंदु; निटमीदनैन । नॆट्टन सत्यंबु नगड बालिंतु;
बॆक्कुधर्मंबुलु बॆक्कु जन्नमुलु । बॆक्कुवतो जेसि पम्पु गैकॊन्टि;
गुरुल बूजिंचिति; गुरुलु ना वलन । गरुणसालमि धर्मकार्यंबु निलिचॆ;
१६८०

बौरुषंबदि दैव बलमु लेकुन्न । नेरमि वाटिंचु; निक्कुवंबरय;
ने विधंबुननैन नीवु ना पालि । दैवमै रक्षिंप दगुदु ना कनघ !'
यनिन विश्वामित्रुडतनि वीक्षिंचि । 'जननाथ! नीविंक संतापमुडुगु;'

कैसे प्राप्त हुआ? बता दो'। कहने पर उसने हाथ जोड़ कर कहा--'मैंने वसिष्ठ से कहा था कि सफलता के साथ, इसी देह के साथ इन्द्रलोक जाने में समर्थ करनेवाला यज्ञ मुझसे कराइए। वसिष्ठ ने उत्तर दिया कि उस प्रकार (यज्ञ) नहीं कराना चाहिए। उस वसिष्ठ के पुत्रों ने कहा--'यदि वे (वसिष्ठ) इनकार कर दें तो (हमसे) नहीं होगा'। (तब मैंने कहा) दूसरों से कराऊँगा। उस बात पर अति रुष्ट होकर (उन्होंने) कहा 'चण्डाल हो जाओ'। वैसे ही मैं (चण्डाल) हो गया। हे अनघ! मैंने जिस यज्ञ को करने की बात कही थी, वह यज्ञ करूँगा। (क्योंकि) कितनी ही आफ़तें क्यों न हों, इस पृथ्वी पर मैं कभी झूठ नहीं बोलता। आगे भी अनिवार्यता से (और) अतिशय इच्छा से सत्य का पालन करूँगा। अनेक धर्म (कार्य), अनेक यज्ञ अतिशयता से करके उन्नति (सुख-समृद्धि) प्राप्त की है। गुरुओं की पूजा की है। गुरुओं के मुझपर करुणा के न होने से धर्मकार्य रुक गया है।॥ १६८० ॥

--दैवबल के न होने पर पौरुष (पुरुषार्थ) में दोष आ जाता है। विचार कर देखने पर यही तथ्य है। हे अनघ! किसी भी प्रकार से, आप मेरे लिए ईश्वर बनकर मेरी रक्षा कीजिए'। (ऐसा) कहने पर विश्वामित्र ने उसे देख (कहा)--'हे जननाथ! अब सन्ताप (दुख) को छोड़ दो।

त्रिशंकुनिकै विश्वामित्रुनि यज्ञमु

दीनुनि जेपट्टितिनिः द्रिशुद्धिगनु । मौनुल रप्पिंचि मखमु सेयिंचि
देहंबुतोडने तिविऱि नीपलुक । पोहंबु गाकुंड बुच्चेद दिविकि;
विनु, निन्नु बरमपवित्रु गाविंतु’ । ननि पलिक शिष्युल नंदऱजूचि
‘मुनुकोनि मीरेल्ल मुनुल ऋत्विजुल । गोनिरंडु, वे त्रिशंकुनि यागमुनकु’
ननि नियोगिंचिन नट्ल वारेगि । मुनिवरेण्युल नेल्ल मोगि दोडिकोनुचु
गदिय विश्वामित्रुकड केगुदेन्चि ।‘मुदमंद ननघात्म! मुनुल देच्चितिमि;
रारु वसिष्ठुनाश्रममु वारेल्ल; । वारलु दक्कंग वच्चिरंदऱुनु; १६९०
आ वसिष्ठुनि पुत्रुलाडिरि गोन्नि; । या वाक्यमुलु विनु’मंचु वारनिरि :
‘मति विचारिंपक मखमु सेयिंचु । नतडु राजट! मालडट सेयुवाडु!
चंडालु मखमुन सकल मुनींद्रु । लुंडि भोजनमुलेयुक्ति जेसेदरु ?
आड केमोगमुल नरुगुदेन्चेदरु । वेडुक सुरलु हविर्भागमुलकु ?
बरग विश्वामित्र पालितुंडैन । नरुडेट्टुलोन्देडु नाकलोकंबु ?

त्रिशंकु के लिए विश्वामित्र का यज्ञ

—दीन का हाथ पकड़ लिया है (शरण दी है)। त्रिकरण-शुद्धि (मन, वचन, कर्म) से मुनियों को बुलवाकर, यज्ञ करवाकर, देह के साथ ही तुम्हें दिवि (स्वर्ग) को भेजूंगा, (जिससे) तुम्हारा वचन असत्य न हो। सुनो, मैं तुम्हें परम पवित्र बना दूंगा’। ऐसा कहकर सभी शिष्यों को देखकर (वे यों) बोले—‘तैयार होकर तुम लोग सभी मुनियों तथा ऋत्विजों को त्रिशंकु के यज्ञ में भाग लेने के लिए शीघ्र ही ले आओ’। ऐसी आज्ञा पाकर वे (शिष्य) उसी प्रकार गए (और) सभी मुनि-वरेण्यों को संरम्भ के साथ ले आए (और) सब मिलकर विश्वामित्र के पास आए—‘हे अनघात्म! प्रसन्नता के साथ मुनियों को ले आए हैं। (किन्तु) वसिष्ठ के आश्रम के सभी लोग नहीं आये। उन्हें छोड़ शेष सभी लोग आ गये हैं। ॥ १६९० ॥

उस वसिष्ठ के पुत्रों ने कुछ वचन कहे हैं। उन वाक्यों को सुन लीजिए’। ऐसा उन्होंने (शिष्यों ने) कहा—सुनते हैं, बुद्धि से न सोचकर मख (यज्ञ) करानेवाला राजा है! (और) करनेवाला चण्डाल है! चण्डाल के द्वारा किये जाने वाले यज्ञ में सभी मुनीन्द्र किस विधि भोजन करेंगे? वहाँ किस मुख से देवता हविर्भाग लेने के लिए प्रसन्न-मन आयेंगे? विश्वामित्र से पालित एक नर (मनुष्य) स्वर्गलोक को कैसे प्राप्त करेगा? यह (सब) सुनने में आश्चर्यप्रद है’। ऐसा कहकर उन लोगों

विन विस्मयं' बनि वेलय दूषिंच्रि' । रनिन विश्वामित्तु डग्नियै मंडि
'कडुनिष्ठ दपमिट्लु गाविंचु नन्नु । नडरि दूषिंचु पापात्मुलंदरुनु
नूतनगति नेडुनूरु जन्ममुल । भातिगा ग्रव्यादभावंबु दाल्चि
मानुगा शुनकादि मांसमुल् दिनुचु । हीनुलै चरियिंप निम्मु लोकमुल;
नसमुन नन्नाडु ना महोदयुडु । वसुध निषाधुडै वर्तिपनिम्मु' १७००
अनि शपियिंचि संयमुल वीक्षिंचि । 'मुनुलार ! यी राजमुख्युद्रिशंकु
नुन्नत कुलशीलु नुरुकीर्तिलोलु । सन्नुत धर्मज्ञु सत्यप्रतिज्ञु
ग्रतुवु सेयिंपुडु गात्रंबुतोड । नितडिंद्रपुरि केग निरवोंप्प'ननिन
'गाधिसूनुनिमाट गादंटिमेनि । ग्रोधिंचि शपियिंचु घोर वाक्यमुल;
गान जेयिंतमु क्रतुवु गौशिकुडु । मानुगा जेप्पिन महितमार्गमुन'
ननि पल्कि मुनुलेल्ल नध्वरकर्म । मोंनरिंप मंत्रप्रयोगादुलमर
ना गाधितनयुंडु याजकुंडगुचु । यागभागमुलकु नमरुल बिलिचें;
बिलिचिन 'रा' मंचु बेरेलुंगेत्ति । पलिकरि सुर; लट्टु पलुक गौशिकुडु

ने प्रकट (स्पष्ट) रूप से निन्दा की है।' (शिष्यों की बातें सुन) विश्वामित्र अग्नि के समान (क्रोध से) जल उठे। (और) कहा—'अधिक निष्ठा के साथ इस प्रकार तप करनेवाले मुझे अतिशय रूप से निन्दा करनेवाले सभी पापात्मा नूतनगति से सात सौ जन्म राक्षस-रूप धारणकर, शुनक आदि के माँस खूब खाते हुए, हीन बनकर लोकों में विचरण करते रहें। दर्प (अहंकार) के साथ मेरी निन्दा करनेवाला वह महोदय (वसिष्ठ) वसुधा पर निषाद बनकर विचरण करे।॥ १७०० ॥

ऐसा शाप देकर, संयमियों को देखकर कहा—'हे मुनियो! यह राजमुख्य (श्रेष्ठ) त्रिशंकु उन्नत कुलशील वाला, उरुकीर्तिलोल, सन्नुत धर्मज्ञ, सत्य-प्रतिज्ञ है। इसी शरीर के साथ यह स्थिरता से इन्द्रपुरी जा सके, तदर्थ उचित यज्ञ कराइए'। ऐसा कहने पर उस ऋषि की बातों पर उन महामुनियों ने विचार कर आपस में कहा—'यदि हम विश्वामित्र की बातों को इनकार कर दें तो यह क्रुद्ध होकर घोर वचनों में शाप दे देंगे। इसलिए विश्वामित्र के बताए श्रेष्ठ मार्ग से मनोहर रूप से क्रतु (यज्ञ) करायेंगे'। ऐसा कह सभी मुनियों ने मन्त्र-प्रयोग आदि के समुचित ढंग से जुड़ने पर यज्ञकर्म किया। (तब) उस गाधितनय ने याजक होते हुए, याग-भागों को (ग्रहण करने के लिए) अमरों (देवताओं) को बुलाया। बुलाने पर देवताओं ने उच्चस्वर से कहा 'नहीं आयेंगे'। (उनके) ऐसा कहने पर कौशिक ने दिशाओं में अत्यन्त प्रचण्डता से अपने क्रोध की

दिशल रोषानलदीप्तुलु निगुड । गुशपवित्रमु चेत गौनि स्रुवंबेत्ति
१७१०
'नाकेंद्र लोकंबुनकु द्रिशंकुंड; । नीकोरिनट्ल ने निन्नु बुच्चेदनु
नडरंग ने बाल्यमादिगा नियति । विडुवक तपमु गाविंचितिनेनि
बौन्दितोडनै कूड बोयि स्वर्गंबु । नंदुमु पो' म्मन्न ना त्रिशंकुंडु
तत्तपोबलमुन दडयक येल्ल । सत्त्वमुलेगोंडि सरणि बोवुटयु,
'जंडालुडवु नीवु; स्वर्गलोकमुन । नुंड नी'ननि यिंद्रुडुदरि त्रोचुटयु,
गडक 'विश्वामित्र ! काववे'यनुचु । वडि दलक्रिंदुगा वच्चु बलुक
शरणार्थियगु ना त्रिशंकुनि जूचि । करुणाविधेयुडै गाधेयुडपुडु
'जननाथ! नी वाकसमुनंदे निलुवु' । मनि पलिक निलुपुचु नट दत्क्षणमुन
नलुक द्रिशंकुन कमरेंद्रुतोडि । च्रलमुन वेरोक्क स्वर्गंबु सेसि
ललि नंदु सप्तर्षुलनु दारकमुल । नलवड गल्पिचि या नाकमुनकु
१७२०
वेरु देवतल गाविंप, निंद्रुनकु । मारिंद्रु गल्पिप मदि दलंचुटयु,

---

ज्वाला को फैलाकर, कुश का पवित्र (पैंती) हाथ में लेकर, स्रुव को उठाकर कहा, ॥ १७१० ॥

—'हे त्रिशंकु ! तुम्हारी इच्छा के अनुसार मैं तुम्हें स्वर्गलोक को भेज दूँगा। यदि मैंने बाल्यकाल से लेकर अतिशयता से, नियम को न छोड़ कर, तप किया हो तो शरीर के साथ ही जाकर स्वर्ग को प्राप्त करो, जाओ'। (ऐसा) कहने पर वह त्रिशंकु उस तपोबल के आधार पर, बिना विलंब के, सभी प्राणियों के जाने के विधान से ही (स्वर्ग को) गया। 'तुम चण्डाल हो। (तुम्हें) स्वर्गलोक में रहने नहीं दूँगा' (ऐसा) कहकर इन्द्र ने कम्पित होकर उसे ढकेल दिया।

—'हे विश्वामित्र ! बचाओ', तेजी से उल्टे ढंग से (नीचे की ओर) आते हुए त्रिशंकु ने कहा। उस शरणार्थी त्रिशंकु को देख, करुणा-विधेय (करुणभाव से भरकर) गाधेय ने तब कहा—'हे जननाथ ! तुम आकाश में ही ठहर जाओ'। ऐसा कह (उसे वहीं) ठहराते हुए वहाँ उसी क्षण क्रोध से, हठपूर्वक त्रिशंकु के लिए देवराज इन्द्र की होड़ पर एक दूसरा स्वर्ग बनाया, प्रसन्नता से उस (स्वर्ग) में सप्तर्षियों को, तारकों को उचित ढंग से बनाकर, उस स्वर्ग के लिए, ॥ १७२० ॥

—अलग से देवताओं का, इन्द्र के बदले दूसरे इन्द्र का सृजन् करने के

जाल भीतिलि सर्वसंयमुल् सुरलु । नॊलि विश्वामित्रु नॊद्द केतॆन्चि
‘यिललोन मुनिनाथ ! यी त्रिशंकुंडु । दलपोय गुरुशापदग्धुंडु गान
दग नाकमुन नुंड दग’दन्नमाट । दगवुगा गॊनि गाधितनयुंडु वलिकॆ;
‘सुरलार ! यीतनि सुरलोकमुनकु । नरिगितु मेनितो’ननि पल्किनाड :
ना माट निजमुगा नौट की नाक । मी महीनाथुन किट सॆल्लनिंडु;
प्रभनॊप्प लोकमुल् परगुनंदाक । नभमुन बॊल्चु नी नक्षत्रपंक्ति
गलसि यच्चरवीथि कंटॆनु मीद । दॊलगनि तेजंबुतो जॆलुवॊन्दि
बृंदारक स्फूर्ति बॆम्पॊन्दि शिरमु । क्रिंदै त्रिशंकुंडु कृतपुण्युडगुचु
गरमॊप्प नी तारकंबुल नडुम । नुरुतरकीर्तिमै नुंडनि’ डनिन १७३०
ननुमतिंचुचु नप्पुडायनुग्रहमु । गॊनियाडि, मुनि वीडुकॊनि सुरल् मुनुलु
ललि निजस्थानंबुलकु नेगि; रंत । नॆलमि गौशिकुडु मुनींद्रुल जूचि
‘यिम्मुगादिटमीद निदि दपंबुनकु । सम्मर्थमिक्कड जालंग गलिगॆ;
मुनुलार ! मनमिक मुदमु सित्तमुन । दनर नॊक्कॆडकु बोदमुरं’डटंचु
गडक नक्कड बासि कदलि विशाल । कडकेगि यंदु बुष्करतीर्थमुनतु

लिए मन में सोचा । (उस पर) अति भीत होकर सभी संयमी, देवता पंक्ति बाँधकर विश्वामित्र के पास आये और कहा—‘हे मुनिनाथ! इस पृथ्वी पर यह त्रिशंकु, विचार यदि किया जाय तो, गुरु के शाप से दग्ध (व्यक्ति) है। इसलिए स्वर्ग में रहने योग्य नहीं है’। इस बात को न्यायसंगत मानकर गाधितनय ने कहा—‘हे देवताओ ! मैंने कहा था कि इसे शरीर के साथ सुरलोक में भेज दूँगा’। मेरी बात सत्य हो, तदर्थ इस स्वर्ग को इस महीनाथ (राजा) के लिए रहने दीजिए। प्रकाश के साथ लोकों के रहने तक, नभ में स्थित इस नक्षत्र पंक्ति (और) आकाशवीथि से भी ऊपर, शाश्वत तेज से शोभायमान हो, बृन्दारक-स्फूर्ति (देवताओं के समान शोभा) से उन्नत होकर, शिर को उलटा (नीचे) किये हुए, त्रिशंकु को कृतपुण्य होते हुए, उरुतर (अधिक) कीर्ति-युक्त हो, अधिक शोभा के साथ इन तारकों के मध्य रहने दीजिए’। (ऐसा) कहने पर ॥ १७३० ॥

—(उसके लिए) अनुमति देते हुए, और उस अनुग्रह की प्रशंसा करते हुए, मुनि (विश्वामित्र) से बिदा लेकर, सुर (और) मुनि प्रेम के साथ अपने-अपने स्थान को गए। तब सस्नेह हो कौशिक ने मुनीन्द्रों को देखकर कहा—‘आगे से यह स्थान तप के लिए योग्य नहीं है। यहाँ भीड़ अधिक हो गई है। हे मुनियो ! अब हम प्रसन्न मन से और कहीं जाएँगे। आइये’। प्रयत्न से उस स्थान को छोड़, विशाला के पास जाकर, वहाँ पुष्कर तीर्थ में—

अंबरीषुडु शुनश्शेपुनि यज्ञपशुवुगा गॊनिपोवुट

अंबुफलाहारि यगुचु बॆक्कॆंड्लु । पंबिन निष्ठ दपंबु गाविंप,
नंबरीषुं डयोध्यापुरविभुडु । शंबररिपु - मूर्तिसमुडट्टियॆडनु
वॆलयंग ग्रतुवु गाविंपगा बूनि । बलभेदिचे यागपशुवु गोल्पोयि
यरसि लेकुन्न ब्रायश्चित्तविधिकि । नरपशुवडुगुचु नानाश्रममुल
नरयुचु नंदंद नट नॊक्क मौनि । वरु निंटिकडकु भूवरु डेगुदॆन्चि १७४०
भृगुतुंगवासियै पेदयै नियति । दगनुन्न रुचिकु नॊद्दकु बोयि म्रॊक्कि,
'करुणाढ्य ! येनु यागमु सेय बूनि । परिकिंपनेरक पशुवु गोल्पडिति:
गॊनकॊनि यॊक लक्ष गोवुल नित्तु । गॊनि यागपशुवुगा गॊडुकु नाकिम्मु'
नावुडु नत 'डेनु ना पॆद्दकॊडुकु । पै वेड्क सेयुदुः बशुत्रुगा नीनु'
नावुडु मुनिपत्नि 'ना पिन्नकॊडुकु । पै वेड्क सेयुदुः बशुवुगा नीनु'
अनि पूनि यिरुवुरु नाडु वाक्यमुलु । विनि शुनश्शेपुडुर्वीपालु जूचि
'तन पॆद्द कॊडुकु मा तंड्रि वाटिंचु । दन पिन्नकॊडुकु मातल्लि वाटिंचु

अंबरीष का शुनश्शेप को यज्ञपशु के रूप में ले जाना

—जल और फल का आहार करते हुए अधिक निष्ठा के साथ अनेक वर्ष तप किया। उसी समय अयोध्यापुर के स्वामी तथा कामदेव के समान सुन्दर शरीरवाले राजा अंबरीष ने शोभायुक्त रूप से यज्ञ करने की तैयारी की, तब इन्द्र के द्वारा उनके यज्ञ का पशु हर लिया गया। ढूँढने पर भी (यज्ञपशु के) न मिलने पर, प्रायश्चित्त-विधि के लिए नरपशु की माँग करते हुए नाना आश्रमों में खोज की। इधर-उधर घूमते हुए भूनाथ कहीं एक मौनिवर के घर पहुँचे ॥ १७४० ॥

—पहाड़ी मोथे से बनी चटाई पर निवास करते हुए, ग़रीब होते हुए नियम से उचित रूप से रहनेवाले रुचिक नामक मुनि के पास जाकर, दण्डप्रणाम कर बोले—'हे करुणाढ्य ! मैं यज्ञ करने का यत्न करके, सावधानी बरत न सकने के कारण (यज्ञ) पशु को खो बैठा। मैं एक लाख गायों को प्रसन्नता से दूँगा। उन्हें लेकर यज्ञपशु के रूप में अपने पुत्र को दो'। यह कहने पर उसने कहा—'मैं अपने बड़े पुत्र पर प्रेम रखता हूँ। अतः उसे पशु के रूप में नहीं दूँगा'। (ऐसा मुनि के) कहने पर मुनिपत्नी ने कहा—'मैं अपने छोटे पुत्र पर प्रेम रखती हूँ। अतः उसे पशु के रूप में नहीं दूँगी'। उन दोनों के ऐसे हठ भरे वाक्य सुन (उनके मँझले पुत्र) शुनश्शेप ने राजा को देखकर कहा—'अपने बड़े पुत्र को मेरे पिता मानते (चाहते) हैं। अपने छोटे पुत्र को मेरी

वारेल नी? केनु वच्चॆद: निन्नु । गोरि वारलकिम्मु गोसहस्रमुल’
ननिन-नट्ल यॊनर्चि .यम्मुनिपुत्रु ।गॊनि रथंबॆक्किचुकॊनि शीघ्रवृत्ति
जननाथु डॆन्तयु संतोषमॊप्प । जनिचनि पुष्कराश्रमभूमि जेरॆ १७५०
नचट शुनश्शेपुडति तपोनिष्ठ । नचलुडैयुन्न विश्वामित्रु गांचि
तन मेनमाम यातडु गान ब्रेम । ननलॊत्त रचित प्रणामुडै पलिकॆ:
‘ननु दलिदंड्रु ली नरवराग्रणिकि ।ननघात्म! पशुवुगा नम्मि पॊम्मनिरि;
चॆलुवॊप्प नी राजुसेयु जन्नंबु । फलियिंप जेसि ना प्राणमुल् गावु;
तल्लियु दंड्रियु दैवंबु गुरुवु । नॆल्लचुट्टमुलु नाकीवेळ नीव!’
यनि दैन्यमॊन्द विश्वामित्र मौनि । दन तनूभवुल नंदऱ् जूचि पलिकॆ:
‘ब्राकटंबुग दम परलोकमुनकु । नै कदा सुतुल बुण्यात्मुलु गनुट:
परलोकमिदिय ना पालिकि; नन्नु । शरणंबु सॊच्चॆ नी संयमिपुत्रु:
डितडु ना मेनल्लुडितनि रक्षिपु ।डितनिकै प्राणंबु लिड्डु मीरॊकरु;
नडिगॆद मि’म्मन्न नट्टु सेय गॊडुकु । लोडबडकुन्न नत्युग्रुडै मंडि १७६०

माता मानती हैं। उनसे तुम क्यों वादविवाद करते हो? मैं तुम्हारे साथ चलूँगा। मुझे लेकर उन्हें हजार गायें दे दो’। ऐसा सुनकर राजा ने वैसा ही किया और उस मुनिपुत्र को रथ पर बिठाकर, शीघ्रता से, अत्यन्त प्रसन्न हो, जाते-जाते पुष्कर-आश्रम में पहुँचे। ॥ १७५० ॥

वहाँ अति तपोनिष्ठा से अचल बने हुए विश्वामित्र को देख, उनके (विश्वामित्र के) अपने मामा (माता के भाई) होने के कारण (हृदय में) प्रेम के पल्लवित होने पर प्रणाम कर शुनश्शेप बोला—‘हे अनघात्मा! मुझे मेरे माता-पिता ने इस नरवर-अग्रणी (राजाओं में श्रेष्ठ) के हाथ पशु के रूप में बेचकर, भेज दिया है। (किसी प्रकार) इस राजा के यज्ञ को शोभा से सफल बनाकर मेरे प्राण बचाइए। इस समय मेरे (लिए) माता, पिता, दैव, गुरु, समस्त बन्धु आप ही हैं’। दीन भाव को प्राप्त होकर ऐसा कहने पर मुनि विश्वामित्र ने अपने सभी पुत्रों को देखकर कहा—‘प्रकट रूप से अपने परलोक (स्वर्ग-प्राप्ति) के लिए ही तो पुण्यात्मा लोग पुत्रों को जन्म देते हैं। यही (शुनश्शेप की रक्षा करना) मेरे लिए परलोक (स्वर्ग) है। इस संयमिपुत्र ने मेरी शरण ली है। यह मेरा भानजा है। इसे बचाइए। इसके लिए (इसके बदले) आप लोगों में से कोई एक अपने प्राण दे दे। (यह) तुम लोगों से माँगता (चाहता) हूँ’। ऐसा कहने पर, पुत्रों के वैसा करने के लिए राज़ी न होने पर, उस (विश्वामित्र) ने अत्युग्र हो, क्रुद्ध होकर, ॥ १७६० ॥

'शुनकमांसमु दिंचु सॊरिदि वेयेडु । लनुभविंपुडु दुःख'मनि शापमिच्चि
कौशिकुडत्यंत कारुण्य बुद्धि । ना शुनश्शेपु नॊय्यन जेर बिलिचि
'येनु मंत्रमुलु रॆन्डिच्चॆद नीकु; । वानि ननुष्ठिंपु वदलक नीवु,
अवि निनु रक्षिंचु; नंबरीषुनकु । सवनतंत्रंबुनु सफलंबु सेयु'
ननि चॆप्पि मंत्रंबु ला रॆन्डु निच्चॆ; । ननुपमभक्तितो नतडु गैकॊनियॆ ।
मऱुनाडु वच्चि यम्मुनुज वल्लभुडु । वऱलॆडु निजयज्ञवाटंबु जॊच्चि
विशसिंप बूनि या विमलात्मु दॆच्चि । पशुपूज सेसि यूपमुन बंधिचॆ ।
नंत शुनश्शेपुडम्मन्त्रयुगमु । शांतुडै जपियिंचि चलियिंपकुन्न,
नचटि किंद्रोपेंद्रुलर्थितो वच्चि । सुचरित्रु नंबरीषु जेर बिलिच्चि
क्रतुपूर्णफलमिच्चि कडनुन्न रुचिकु । सुतु जिरायुवु चेसि सुरलतो जनिरि
१७७०
यरुदैन तपमुन नंत वेयेंड्लु । जरिपिन ब्रह्म विश्वामित्रु गदिसि
'नीकु ऋषित्वंबु नी तपश्शक्ति । जेकूडॆ' ननि यॊप्प जॆप्पि विच्चेसॆ
नंतट दनियक यत्युग्रतपमु । संततनियतितो जलुपुचु नुंड

—'शुनक (कुत्ते) का मांस खाते हुए क्रम से हज़ार वर्ष दुख भोगो' ऐसा शाप दिया। अत्यन्त करुणाभाव से उस शुनश्शेप को धीरे से (अपने) पास बुलाकर कौशिक ने कहा—'मैं तुम्हें दो मन्त्र दूँगा। उनका निरन्तर जप करते रहो। वे तुम्हारी रक्षा करेंगे (और) अम्बरीष के यज्ञ को (भी) सफल बनायेंगे'। ऐसा कहकर उनको दो मन्त्र दिए। उसने अनुपम भक्ति से ग्रहण किया। दूसरे दिन उस राजा ने अपने शोभायमान यज्ञवाट (यज्ञभूमि) में प्रवेश किया और बलि देने की (बात) सोचकर, उस विमलआत्मावाले (शुनश्शेप) को लाकर, पशु (के समान) पूजा कर यूप (स्तम्भ) से बाँध दिया। तब शुनश्शेप शान्त हो उस मन्त्रयुग्म का जप करते हुए निश्चल रहा। (तब) वहाँ इन्द्र (और) उपेन्द्र प्रेमपूर्वक आये और सुचरित्र अम्बरीष को निकट बुलाकर (उन्हें) क्रतु का पूर्णफल देकर, निकट स्थित रुचिक के पुत्र को चिरायु बनाकर, (अन्य) देवताओं के साथ चले गए।॥ १७७० ॥

जब अपूर्व (घोर) तपस्या करते हुए एक हजार वर्ष बीत गये तब ब्रह्मा विश्वामित्र के पास आकर मनोहरता पूर्वक बोले—'तुम्हारी तपःशक्ति से तुम्हें ऋषित्व प्राप्त हो गया'। (ऐसा कहकर) वे चले गए। तब (उस वरदान से) तृप्त न होकर (विश्वामित पुनः) निरन्तर अत्युग्र तप

गाऽरूपमु लील गैकोननेर्चु । कामुनि बाणंबु कमनीयकंबु

विश्वामित्रुडु मेनकनु गूडुट

चेलुवोन्द नप्सरस्स्त्रीमूर्ति दाल्चि । मेलगेडु गति दोप मेनक यपुडु
ललित यौवन कळालावण्यगण्य । जलकेळि देल ना सति जारुकोप्पु
जिकिलि चूपुलु नुनु जेक्कुलु मुद्दु । मोकमु गेम्पुलमोवि मोलकनव्वुलुनु
बोन्गारु कुचकुंभमुलु बदावन्ने । बंगारुपोडि रालु बाहुमूलमुलु
जिन्नारि नूगारु सिगंपु गौनु । बोन्न पूपोक्किलि बोदलेडु पिरुदु
लूरुलतीरु नोरूरगा जूचि । पेरु वाडि मरुंडु पेळपेळ नार्व १७८०
ध्यानंबु मौनंबु दपमु बोकार्चि । मेन गळल् ग्रम्म मेनक जूचि
'नन्नु गायजु केळि नलिनाक्षि! पोन्दु'। मन्न ना माटकु नंगीकरिंचि
पदियेड्लु मदिसोलि भावजुकेळि । सदमदंबुग सौख्यसरसि देलिंचें;
मरि विवेकमु पूनि मौनि येन्तेनि । दरुगनि तन तपोधनमु वोवुटकु
वरितपिंचुचु, मदि बदिलंबु सेसि । सुरलोकमुनकु ना सुदति वीड्कोलिपि,

---

करते रहे । तब कामदेव के कमनीय बाण ने मानों कामरूप ग्रहण किया हो,

विश्वामित्र का मेनका से मिलना

—मेनका का रूप ऐसा था । वह मानों मनोहरता से अप्सरा स्त्री की मूर्ति धारण कर विचर रही हो । तब (मेनका) जो ललित-यौवनकला-लावण्य में गण्य (गणनीय) थी, जलक्रीडा में मग्न हुई । उस स्त्री के शिथिल पड़े जूड़े को, मनोहर चितवन, स्निग्ध कपोल, प्यारा मुख, माणिक्य के-से ओंठ, मंद-मुस्कान, उभरते कुचकुम्भ (कलश के समान स्तन), सोलह कलाएँ (कलाओं से पूर्ण शरीर कान्ति), स्वर्ण-चूर्ण बिखेरने वाले (श्वेतकमल) बाहुमूल, सुन्दर रोमराजि, सिंह की-सी कमर, पुन्नाग की-सी नाभि, उत्कर्ष को प्राप्त नितंब, (और) ऊरुभाग की शोभा को (विश्वामित्र ने ऐसा) देखा जिससे लार टपकने लगी । देखकर अपनी प्रतिष्ठा को खोकर, (मन में) कामदेव के प्रबल हो जाने पर, ॥ १७८० ॥

—ध्यान, मौन (और) तप को छोड़कर, शरीर पर कलाओं के छा जाने पर, मेनका को देख (यों) बोले—'हे कमलनयनी ! मुझे कायज-केलि (रतिक्रीड़ा) में प्राप्त करो'। इस बात को स्वीकार कर, दस वर्ष, सब कुछ भुलाकर, भावजकेलि (रतिक्रीड़ा) में, अधिक प्रेम से (उसे) सौख्यसरसि (सुखसागर) में ऊभ-चूभ किया (सन्तुष्ट किया) ।

यिंद्रुनि यत्नंबुलिवि यंचु दॆलिसि । 'यिंद्रिय जयसिद्धि' ये गांतु ननुचु
शीताद्रि करिगि कौशिकि चॆन्त जेरि। या तपंबुननु महातपंबपुडु
वर्षमुल् पॆक्कैन वच्चि विरिंचि । हर्षिंचि 'नीवु महर्षिवै' तनिन
'नीरजासन! नन्नु नीवु नी चित्त । मारंग ब्रह्मर्षि वन्नंतदाक
जरियिंतु दप'मन्न 'जरियिंपु' मनुचु । नरविंदभवुडेगॆ; नंत गौशिकुडु
१७९०
ब्रह्मदेवुडुं वोव 'बरम पावनत । ब्रह्मर्षितन मेनु बड़सॆद' ननुचु
नूरुपु पुच्चक यूर्ध्वबाहुंडु । मारुताहारुंडु मौनियु नगुचु
बनिवडि वेसवि बंचाग्निमध्य । मुन वानकालमिम्मुल बट्टबयट
मंचुकालंबुन मडुगुलयंदु । नंचितगति जेसॆ नत्युग्रतपमु:
नंत नातपमुन कमरवल्लभुडु । चिंतिपिचुनु रंभ जेरंग बिलिचि
'यॆलमिमै देवता हितकार्यमॊकटि । चॆलुवार ने नीकु जॆप्पॆद विनुमु:
कामगोचरु जेसि कौशिकु तपमु । वामलोचन्न ! नीवु वारिंपु'मनिन

तब विवेक को प्राप्तकर मौनि ने अपने अनन्त तपोधन के कम हो जाने पर परिताप किया, मन को स्वस्थ (दृढ) करके, उस सुंदरी (नारी) को सुरलोक भेज दिया। ये सब (मेरे तप में विघ्न डालने के लिए) इन्द्र के प्रयत्न हैं, यह जानकर, 'मैं इन्द्रियजयसिद्धि (इन्द्रियों पर जय) प्राप्त करूँगा' (यह निश्चयकर), शीताद्रि (पर) जाकर, कौशिकी (नदी)के पास पहुँच, (कौशिक ने) बड़ी निष्ठा से महातप किया। (इस प्रकार) अनेक वर्षों के बीत जाने पर, विरिंचि (ब्रह्मा) हर्षित हो बोले—'तुम महर्षि हो गए हो'। (ऐसा) कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)—'हे कमलासन! तुम जब तक मुझे हृदय से ब्रह्मर्षि नहीं कहोगे, तब तक मैं तप करूँगा'। तब 'तप करते ही रहो' ऐसा कहकर अरविन्दभव (ब्रह्मा) चले गए। तब कौशिक ने, ॥ १७९० ॥

—ब्रह्माजी के चले जाने पर कहा—'परमपावनता से मैं ब्रह्मर्षित्व को प्राप्त करूँगा'। (ऐसा निश्चय कर) श्वास रोककर, ऊर्ध्वबाहु होकर, मारुत-(हवा) आहार करते हुए, मौन होकर, ग्रीष्म में पंचाग्नियों के मध्य, वर्षाकाल में खुली जगह में, शीतकाल में सरोवरों में रहकर, श्रेष्ठगति से अतिउग्रतप किया। तब उस तप पर चिन्ताकर (व्याकुल होकर) अमर-वल्लभ (इन्द्र) ने रम्भा को पास बुलाकर कहा—'स्नेह के साथ एक देवताहित-कार्य मनोज्ञरूप से मैं तुम्हें बताऊँगा। सुनो, हे वामलोचने (बाँके नेत्रवाली)! कौशिक को काममोहित करके (उसके) तप को रोक दो (विघ्न डालो)'। (ऐसा) कहने पर (रम्भा ने)

'ग्रूरतपंबु गैकॊनियुन्न यतनि । जेर ना तरमॆ शचीनाथ ! नीकु
म्रॊक्कॆद; नम्महामूर्खुनि दिक्कु । निक्कि चूडगनोप; नी पादमान!
नाकेश ! कोपिंचु; नन्नु शपिंचु । ना कौशिकुडु; सैप; डटुगान वॆऱतु
१८००
नॆऱिगियॆऱिंगि ता रॆट्टि वॆन्गलुलु । गॊऱविता दलगोकुकॊनुवारु गलरॆ?'
यन विनि 'यिंत भयंबेनि नीकु । मनसिज माधवुल् मऱि सहायमुग
वत्तुरु चनु'मन्न वनितयु नतनि । चित्तमॆऱिंगि चॆच्चॆऱ भूमि करिग;
गाधिसूनुंडुन्न घनतपोवनमु । माधवमन्मथुल् मऱि सहायमुग
गीर कोकिल समाकीर्ण मयूर । शारिका निजसखी सहितयै चॊच्चि,
या रंभयुनु मनोहरलास्यगरिम । नारंभमॊनरिंप नलिगि कौशिकुडु
'पदिवेल वर्षमुल् पाषाणभाव । मॊदवंग गैकॊनियुंडि या मीद
नुरुतपोविधियैन यॊक विप्रुवलन । सरसिजानन ! पॊन्दु शापमोक्षंबु'
ननि पल्क बाषाणमय्यॆ ना रंभ; । मनसिजुंडुनु नेगॆ मदि भीति नॊन्दि;
तन तपंबॊक्किंत दऱिगिन नॆऱिगि । तनलोन नग्गाधितनयु डूहिंचि
१८१०

कहा—'हे शचीनाथ ! क्रूर (उग्र) तप को ग्रहण किये हुए उसके पास पहुँचना क्या मेरी सामर्थ्य में है ? (मैं) तुम्हें दण्डप्रणाम करूँगी । उस महामूर्ख की ओर आँख उठाकर देख भी नहीं सकती । तुम्हारे चरणों की सौगन्ध । हे नाकेश ! (वह) क्रुद्ध होगा, वह कौशिक मुझे शाप देगा, सहन नहीं करेगा, अतः (मैं उससे) डरती हूँ । ।। १८०० ।।

जान-बूझकर क्या कोई ऐसा मूर्ख होगा जो जलती हुई लकड़ी से सिर खुजला ले ?' (ऐसा उसका) कहना सुन, (इन्द्र ने) कहा—'यदि इतना भय है तो तुम्हारी सहायता के लिए मनसिज (मन्मथ) (और) माधव (वसंत) आयेंगे, चलो'। वह नारी भी उसके (इन्द्र के) मन की बात को समझकर, तुरन्त पृथ्वी (की ओर) चल पड़ी। उसने (रम्भा ने) माधव (वसंत) (और) मन्मथ की सहायता ले (और) कीर-कोकिल-समाकीर्ण-मयूर-सारिका (और) निजसखी-सहिता (युक्त) होकर, उस घन-तपोवन में प्रवेश किया, जहाँ गाधिसून थे। उस रम्भा ने मनोहर (और) गरिमा (युक्त) लास्य (नृत्य) का आरम्भ किया तो कौशिक क्रुद्ध हुए और कहा—'दस हजार वर्ष पाषाणभाव को प्राप्त कर पड़ी रहो (और) उसके बाद उरु-तपोनिधि हो एक ब्राह्मण के द्वारा हे सरसिजानने ! शापमोक्ष को प्राप्त करो'। ऐसा कहने पर वह रम्भा पाषाण बन गई, मनसिज भी मन में डरकर चला गया। अपने तप के थोड़ा कम हो

'यपुडु कामंबुन नडगॆ ना तपमु; । निपुडु क्रोधंबुन किच्चिति' ननुचु
मदिलोन वगचि 'कामंबु ग्रोधंबु । वदलि निराहारवंतुडै नियति
विजितेंद्रियुंडुनै वेयुवत्सरमु । लजुडु मॆच्चग दपंबतिनिष्ठ जेसि
यनयंबु ब्रह्मर्षि ननिपिंचुकॊन्दु' । ननि युत्तरमु वासि यट दूर्पु दॆसकु
नॆनसि वॊन्डियुनु देवेंद्रुडु सेयु । घनविघ्नकोट्लकु गलगक निलिचि
यरुदॆन्चि यंत सिद्धाश्रमभूमि । नुरुघोरतपमु सेयुचु नुंडदॊडगॆ;
वरतपोनियतिमै वर्ष सहस्र । मरुग बारणसेतुनननि युन्नचोट
निव्वरि विय्यंबु नॆरि नॊरि दॆच्चि । यव्वियन्नियु बाकयत्नंबु सेसि
यारय देवतार्हणमुगा जेसि । वारक भुजियिंप वडि दलंचुटयु
बलभेदि यॊक मुदि बापडै वच्चि । निलिचि ग्रासमु वेड नॆम्मितो निच्चॆ १८२०
ना यमराधीशु डडरि भोजनमु । सेयुचो नन्नंबु शेषिंपकुन्न

जाने की बात को जानकर, अपने (मन) में उस गाधितनय ने सोचा, ।। १८१० ।।

—'तब काम (भाव) से मेरा तप नष्ट हुआ, अब उसे (तपको) क्रोध को दिया (क्रोध के कारण तप नष्ट हुआ)'। ऐसा मन में दुखी होते हुए (उन्होंने) कहा—'काम और क्रोध को छोड़कर, निराहार को ग्रहण कर (बिना आहार के रहते हुए), नियम से, विजितेन्द्रिय होकर, हज़ार वर्ष अतिनिष्ठा से (ऐसा) तप करूँगा जिसकी अज (ब्रह्मा) प्रशंसा करें। (मैं) सदा (के लिए) ब्रह्मर्षि कहलाऊँगा'। उत्तर (दिशा) को छोड़, पूर्वदिशा को प्राप्त कर, पुन: देवेन्द्र के द्वारा किये गए घन (अधिक) विघ्न-कोटि (समूहों) से विकल न बनकर, (वे) सिद्धाश्रमभूमि में पहुँचकर उरु (महा) घोरतप करते रहे। वर तपोनियति से सहस्रवर्षों के बीत जाने पर, पारण करने की बात सोची (और) जहाँ थे वहीं अच्छे ढंग से नीवार-धान्य (बिना जोते-बोये उपजने वाले तिन्नी पसाई के चावल) लाये (और) उन सबको मिलाकर (एकत्र कर) पाक-यत्न (पकाने का कार्य) किया, उन्हें देवतार्हण (देवताओं के योग्य) किया या देवताओं को नैवेद्य चढ़ाया (और) रुके बिना झट से खाने की बात सोची, (तब) बलभेदी (इन्द्र) एक वृद्ध ब्राह्मण का रूप धरकर आये, (सामने) खड़े हो गए और ग्रास (आहार) माँगा (तो) प्रेम से (विश्वामित्र ने उन्हें) दे दिया। ।। १८२० ।।

उस अमराधीश के अतिशयता से भोजन करने पर अन्न बचा नहीं। तब फिर हज़ार वर्ष मौन रहकर, अत्यन्त निष्ठा से तप किया। तब

मऱियुनु वेयेंड्लु मौनियै निलिचि । तरुगनि निष्ठतो दपमाचरिंप,
नप्पुडम्मुनिनाथु नौदल बुट्टि । कप्पें लोकमुल नुत्कटमैन पौगलु;
गलगं बयोधुलु; गंपिचें धरणि । कुलगिरुलदरें; दिक्कुलु व्रक्कलय्यें;
नमरुलु गंधर्वुलखिलसंयमुलु ।गमलगर्भुनि भक्ति गनि म्रोक्कि यनिरि;
‘यायतचित्तुडै यत्युग्रतपमु । सेयुचुनुन्नाडु सेलगि कौशिकुडु;
अतनि मनोरथंबर्थि सिद्धिंप । मतिनिच्चि तपमिंक मान्पकयुन्न
ननघ! विश्वामित्रु नत्युग्रमैन । घनतपोवह्निचे गालु लोकम्मु’
लनवुडु वारितो नप्पुड कदलि । वनजासनुडु वच्चि वरदुडै निलिचि
‘विनुमु कौशिक! यिक विपरीततपमु । पनिलेदु; चालिंपु; ब्रह्मर्षिवैति’
१८३०

वनिन गौशिकुडु ब्रह्मादि देवतल । गनुगोनि पल्कें नक्कजमैन भक्ति;
‘ब्रह्मर्षितन मेनु पडसितिनेनि । ब्रह्मपुत्रुडु लोकपावनमूर्ति
चिरपुण्यशालि वसिष्ठुंडु वच्चि । यरसि नन् ‘ब्रह्मर्षि’ वनकुन्न नम्म’
ननिन वसिष्ठुनि नब्जसंभवुडु । ननिमिषुलुनु विल्व नतडेगुदेंन्चि

उस मुनिनाथ के सिर के मध्यभाग से पैदा होकर उत्कट धुआँ (समस्त) लोकों पर छा गया। पयोधियाँ (समुद्र) क्षुब्ध हो गईं, धरणी कम्पित हो गई, कुलपर्वत थर्रा उठे, दिशाएँ टूक-टूक हो गईं। तब अमर, गन्धर्व (और) सभी संयमी, कमलगर्भ (ब्रह्मा) को भक्तिपूर्वक देख (दर्शनकर) दण्डवत् प्रणाम कर बोले—‘आयत (वशीकृत) चित्त हो, कौशिक विजृम्भित होकर, अत्युग्रतप कर रहा है। उसके मनोरथ की, प्रीति के साथ पूर्तिकर, उसके तप को रोक नहीं देंगे (तो) हे अनघ ! विश्वामित्र के अत्युग्र (और) घन-तपोवह्नि (तप की आग) से लोक जल (भस्म हो) जायेंगे’। ऐसा कहने पर उनके साथ उसी समय चलकर, वनजासन (ब्रह्मा) वरद (प्रसन्न) होकर, आकर (सामने) खड़े हो गए (और) बोले—‘हे कौशिक ! सुनो, अब विपरीत (उग्र) तप (करने) की आवश्यकता नहीं है। (अब) बस कर दो। (तुम) ब्रह्मर्षि हो गए हो’। ॥ १८३० ॥

(ऐसा) कहने पर कौशिक ने ब्रह्मादि देवताओं को देखकर आश्चर्य-जनक भक्ति से कहा—‘यदि मैंने ब्रह्मर्षित्व को प्राप्त किया हो तो ब्रह्मा के पुत्र, लोकपावन मूर्तिवाले (और) चिरपुण्यशाली वसिष्ठ आकर, (सब कुछ) विचार कर, मुझे जब तक ‘ब्रह्मर्षि’ न कहेंगे, तब तक इस बात पर विश्वास नहीं करूँगा’। (ऐसा) कहने पर अब्जसम्भव (ब्रह्मा) (और) अनिमिष के (देवताओं द्वारा) बुलाये जाने पर वसिष्ठ आये।

‘बलितंपु दपमुन ब्रह्मर्षिवैति; । तॆलिसिति; मिदु संदेहंबु वलदु
मुदमॊप्प जनु’मन्न मुनि वसिष्ठुनकु।बदिलुडै म्रॊक्कि सद्भक्ति बूजिचॆ;
नंत विश्वामित्रु नखिल देवतलु । नॆन्तयु दीविंचि येगिरि दिविकि,
नारूढपदुडु विश्वामित्रु महिम । लारय निट्टि महाद्भुतक्रममु’
लनि पल्क रघुरामु डा लक्ष्मणुंडु । जनकादुलुनु सभासदुलु मोदिलिरि,
‘यिल्लड जनकुनि यिंट नुग्राक्षु । डॆल्लरॆऱुंग मुन्निडिन चापंबु १८४०
कडकमै विऱिचि राघवुडेपु मिगिलि । कडुमोदमुन सीत गैकॊनु नॆल्लि’
यनि रसातलमुन कंतयु जॆप्प । जनिन चंदमुन भास्करुडस्तमिचॆ:
जनकु वीड्कॊनि गाधिसंभवुडॊक्क । युनिकिपट्टुन राम युक्तुडै युंडॆ;
ननुपमप्रीतिमै ना रात्रि गडपि । यिनुपॊडुपुन नित्यकृत्यमुल् दीर्चि
जनकु चॆन्नकु रामसहितुडै पोयि । यनियॆ विश्वामित्रुडंदऱु विनग;
‘निनकोटि समतेजुली दिव्यमूर्तु । लनघकीर्तुलु वीरनन्यगोचरुलु;
ई पुण्यधनुलु नी यिंटिलोनुन्न । चापंबु सूडंग जनुदॆन्चिवारु;

‘बली तप से ब्रह्मर्षि बन गए। (यह) मैं जान गया हूँ। इसमें कोई सन्देह नहीं है। प्रसन्न होकर (अब) जाओ’। ऐसा कहनेवाले मुनि वसिष्ठ को (विश्वामित्र ने) सावधानी से दण्डप्रणाम कर, सद्भक्ति से पूजा की। तब अखिल देवताओं ने विश्वामित्र को बहुत-बहुत आशीर्वाद दिया, (और) दिवि (स्वर्ग) को चले गए। लब्धप्रतिष्ठ बने विश्वामित्र की महिमाएँ, विचार कर देखने पर, इस प्रकार महाअद्भुत क्रम वाली हैं’। (ऐसा शतानन्द के) कहने पर रघुराम, लक्ष्मण, जनक आदि राजा (और) सभासद मुदित हुए।

—‘जनक के घर में, पूर्वकाल में उग्राक्ष (शिव) के सुरक्षापूर्वक, प्रकट रूप से रखे चाप (धनुष) को, ॥ १८४० ॥

—पराक्रम के साथ तोड़कर राघव अतिशय और अत्यंत प्रसन्नता के साथ परसों सीता को ग्रहण करेंगे’ इस प्रकार समस्त रसातल में कहने के लिए मानों भास्कर अस्तंगत हुए।

—जनक से बिदा लेकर गाधिसम्भव एक स्थान पर राम के साथ ठहर गए। अनुपम प्रीति से उस रात को बिताकर सूर्योदय के समय नित्यकृत्यों से निपटकर, रामसहित विश्वामित्र जनक के पास गए, (और) प्रकट रूप से बोले—‘ये दिव्यमूर्ति और करोड़ों सूर्यों के समान तेज वाले अनघकीर्ति-युक्त, अनन्यगोचर, पुण्यधनी, तुम्हारे घर में रखे धनुष को देखने आए हैं।

शिवधनुर्वृत्तान्तमु

आ विल्लु दॆप्पिपुं' मनवुडु जनक । भूवरुंडप्पुडद्भुतमंदि पलिकॆ:
'भवुडंधकासुर भस्मासुरादि । दिविजारिवरुल मर्दिंचॆ ना विंट;
नुल्लोकुडै रुद्रुडुग्रदानवुल । दॊल्लि यनेकुल द्रुंचॆ ना विंट; १८५०
विपुल कोपाटोपविभवुडै भवुडु । त्रिपुर दुर्गमुलु साधिंचॆ ना विंट;
ना विंट मऱि दक्षु यागंबु नाडु । देवेंद्रमुख्युल द्रिदशुल दोलि,
नियतात्म! मा तात निमि चक्रवर्ति । कयनयान्वितुनकु नाऱवतरमु
नगु देवरातुचे हरुडिच्चॆ दॊल्लि । यगणितबलमैन या विल्लु बिदप
नदि यादिगा नुंडु ननघ! मायिंट । विदितमै या विल्लु विनुतुल नॊप्पि;
जन्नंबु गाविंप समकट्टि येनु । सन्नुत नियति भूस्थलि शुद्धि कॊऱकु
ग्रतुशाल दुन्न नागटि चालि लोन । नतुलितंबुग जालुनंदॊप्पु मिगिलि
मंदसंबॊन्डु रा मदि नुब्बि चूचि । मंदसंबुनु नेनु ममत दीयंग
नति वैभवंबुगा नंदुलो नपुडु । नतिव मॊक्कतॆ पुट्टॆ नाश्चर्य लील;
ब्रीतितो सीत यन् पेरॊप्प बॆट्टि । या तन्वि न कूतुरनि पॆन्चुचुंड १८६०

शिवधनु का वृत्तान्त

—उस धनुष को मँगाओ'। ऐसा कहने पर जनकभूवर तब आश्चर्यचकित हो बोले—'भव (शिव) ने अन्धकासुर, भस्मासुर आदि दिविज-(देवताओं के) अरियों (शत्रुओं) को उसी धनुष से संहार किया था, अतिशय बनकर रुद्र ने कई उग्र दानवों का संहार उसी धनुष से किया था। ॥ १८५० ॥

विपुल-कोप-आटोप के वैभव से भव (शिव) ने त्रिपुरदुर्गों को उसी धनुष से जीता था। उसी धनुष से दक्ष के यज्ञ के दिन देवेन्द्र आदि त्रिदशों को भगा दिया था। हे नियतात्म! हमारे पितामह विनयसम्पन्न निमि चक्रवर्ति के छठी पीढ़ी वाले देवरात को पूर्वकाल में, हर (शिव) ने अगणित बल-सम्पन्न वह धनुष दिया था। उसके बाद, तब से लेकर हे अनघ! प्रशंसाओं का पात्र बनकर (और) (लोक) विदित वह धनुष हमारे घर में है। यज्ञ करने का संकल्प करके, मैंने सन्नुत (सराहनीय) नियति से भूस्थल की शुद्धि के लिए क्रतुशाला (यज्ञभूमि) में हल चलाया। (तब) उस हल की रेखा में, अतुलित रूप से युक्त एक मंजूषा (पेटी) मिली। मन में फूलकर (प्रसन्न होकर) मैंने ममता (प्रेम) के साथ उसे खोला, उसमें अति वैभव के साथ, आश्चर्यप्रद रूप से एक कन्या निकली।

निल बसंतंबुन नॆलदीगॆ बोलि । नळि नारिकळ बोलि नानाट बॊदलि
यितयै यंतयै मलजव्वनमुन । वितगा ना यिंति वॆलयुट जूचि,
तलकॊनि तरुणिकै धरणिवल्लभुलु । बलियुलै येतॆन्चि पडुचुनु दमकु
नडिगिन वारल कंटि नेनप्पु । 'उडुराजबिंबास्यकुंकुव नाग
हरुनि विल्लुन्नदि; यतिसत्त्वयुक्ति । बॆरिगि येतॆन्चि मोपॆट्टिन जालु;
नतनिकि ना कूतु नब्जाक्षिनित्तु । नतिमोदमुन' नन्न नन्नरेश्वरुलु
नॆत्तिन कडकतो नेतॆन्चि चाप । मॆत्तनोपक पोदुरॆन्दरेनियुनु;
धनुवॆत्तजालनि धरणीशुलॆल्ल । दनरारु सिग्गुन दललॆत्तलेक
'कूतु निच्चॆदननि कोदंडमॊकटि । ब्रातिगा नॆपमिडि भंगिचॆ मनल
जनकु; डातनि निंक सकलयत्नमुल । ननि सेसि साधित'मनि विचारिंचि
१८७०
चनुदॆन्चि कोटपै संवत्सरंबु । घनसैन्यमुलतोड गडिमिमै विडिय
दगमुन्नु गूर्चिन धान्यादुलॆल्ल । नॊगि दीऱ मदिलॊन नॊकटि सिंतिंचि

प्रेम से उसका नाम सीता रखा (और) उस नारी को अपनी पुत्री मानकर पाल रहा था । ।। १८६० ।।

पृथ्वी पर, वसन्तऋतु में लता के समान, चन्द्र की कला के समान वह दिन प्रतिदिन प्रवर्द्धित होने लगी । प्रवर्द्धमान होकर, नूतन यौवन में आश्चर्यप्रद रूप में उस कन्या को शोभायमान होते देख, उस तरुणी के लिए अनेक धरणीवल्लभ बल (सेना)-युक्त हो आये और अपने लिए (उस) युवती की माँग की । तब मैंने उनसे कहा—'उडुराज-बिम्बास्य (चन्द्रमुखी) के लिए कन्याशुल्क के रूप में शिवधनुष है । अतिसत्त्वयुक्ति से (यहाँ) आकर (उस धनुष की) प्रत्यंचा चढ़ाना भर पर्याप्त है । उसे (ऐसे वीर को) मैं अपनी पुत्री (जो) अब्जाक्षी (कमलनेत्री) (है) को अति प्रसन्नता के साथ दूँगा । (ऐसा) कहने पर वे नरेश्वर अति साहस के साथ आकर (भी) धनुष को उठा न सके । धनुष को उठाने में असमर्थ सभी धरणीश अति लज्जित हो, सिर (तक) न उठा सके । 'पुत्री को देने के लिए कोदंड (धनुष) रूपी दुर्लभ बहाने के कारण जनक ने हमारा अपमान किया । सभी प्रयत्नों से युद्ध करके हम उससे बदला लेंगे' ऐसा विचार करके, ।। १८७० ।।

—आकर, बड़ी-बड़ी सेनाओं के साथ, पराक्रम से दुर्ग को वर्ष भर घेर रखा । पूर्व से जो धान्य आदि संचित कर रखे थे, वे क्रम से कम होते देख, मन में एक बात सोची । शीघ्रता से देवताओं की प्रार्थना कर,

वडि देवतल गॊल्चि वारिचे नॆनु । वडसिन चतुरंग बलमु गैकॊनुचु
विडिसिन बलमुपै वीकतो नडुव । दॊडर जालक भीतितो गॊन्दऱुग,
गॊन्दऱु मा तोड घोराजि बॆनगि । चिदऱवंदऱै चॆडिपोयिरोडि;
यक्कजमगु शक्ति ना विल्लु रामु । डॆक्कुवॆट्टिन गूतुनिच्चॆद'ननुचु
'विल्लुन्न मंदस वेग तॆम्म' नुचु । बल्लिदुलगुवारि बदिवेल बनिच;
नदि लोहमयमुनु नत्यायतंबु । विदिताष्टचक्रंबु विपुलंबु नगुचु
नमरॆंडु मंदस या विटितोड । दमतम सत्त्वमुल् दलकॊन वारु
गनकाद्रितो गूड गमलजांडंबु । गॊनिवच्चुगति नीड्चुकॊनिवच्चि; रंत
१८८०

जनकुनंतःपुर चारुलौ वारु । पनिवडि दादुल परतॆन्चि वेग
जानकि नूर्मिळ जनकुनि देवि । गानंग जजुदॆन्चि कनि चॆप्पि रॆलमि :
'विनरम्म! चॆलुलार! विन्नपंबॊकटि :। मन रानुसभलोन मऱि मुनुलुंड
गाधिनंदनुडैन कौशिकु वॆनुक । नरवरोत्तमुल नाजानुबाहुवुल
नमरंग देवगंधर्वुल कन्न । कॊमरैन तेजंबु कॊमरॊप्पु वारि
चॆलुवैन तेजंबु चॆलगि वीक्षिंचि । यल वीरलॆव्वारलनि जनकुंडु

उनसे प्राप्त चतुरंग बल को लेकर, ठहरी हुई (शत्रु) सेना पर निर्द्वंद्वता से (आक्रमण करने) निकल पड़ा। (कोई मेरा) सामना न कर सका, कुछ लोग भय के मारे चले गए, कुछ लोग हमारे साथ भयंकर युद्ध कर, हारकर तितर-बितर हो भाग गए। आश्चर्यप्रद शक्ति के साथ राम उस धनुष को चढ़ा सकें तो अपनी पुत्री दूँगा'। ऐसा कहते हुए उन्होंने दस हज़ार बलिष्ठ (सेवकों) को धनुष रखी पेटी लाने के लिए भेजा। लोहे की बनी बहुत विस्तृत, विदित-अष्टचक्र वाली, विपुल और शोभित उस पेटी को, धनुष के साथ, अपनी-अपनी शक्ति के साथ प्रयत्न कर, (सेवक) खींचकर लाये, मानों कनकाद्रि के साथ कमलजाण्ड (ब्रह्माण्ड) को ले आ रहे हों। ॥ १८८० ॥

तब जनक के अन्तःपुर चर (परिचारक) (और) धाइयाँ शीघ्र आकर जानकी, ऊर्मिला (और) जनक की देवी को देखकर, आनन्द के साथ बोलीं—'हे सखियो! एक निवेदन को सुनिए। हमारे राजा की सभा में अनेक मुनि थे। (उनमें) गाधिनन्दन कौशिक के पीछे आजानुबाहु, देवगन्धर्वों की अपेक्षा तरुण तेज से मनोज्ञ बने नरवरोत्तमों (राजश्रेष्ठों) के सुन्दर तेज को शोभा के साथ देखकर, जनक ने पूछा कि ये कौन हैं। पूछने पर आत्मा में अति हर्ष के उमड़ आने पर कौशिक ने बताया—'ये दशरथात्मज हैं। हे धरणीश! शिवधनुष को चढ़ाने यहाँ आए हैं।

अडिगिन गौशिकुडतिहर्षमात्म । नडरंग 'दशरथुनात्मजुल् वीरु;
हरुचाप मॅक्किड नरुदॅन्चिरिटकु । धरणीश! तॅप्पिपु तगुवारि बनिचि'
यन नट्लु कौशिकुननुमति मीऱ । दन मंत्रुलनु बिल्चि धनुवु देवनिचॅ;
सोरणगंड्ललो जूडगवच्चु । नारय वेग रं' डनि नॅम्मि बिलुव १८९०
गुलमु शौर्यमु रूपु गुणमुनु बॉगड । जॅलगि चॅवुल सुध चिलिकिनट्लुंड
ब्रेम वॅग्गलमैन बृथिवीजकपुडु । रोमांचमय्यॅ नारूढमै मेन;
ब्रियमुनु भयमुनु बिरिगॉनि पॉदल । नयमॅन्चि तलवांचि ननबोणियुंडॅ;
अलिवेणि सिग्गुन नट बल्ककुन्न । जॅलुवकु बरिचर्य चेसिरि सखुलु;
पन्नीट गुंकुम पदनिच्चि यॉकतॅ । चन्नार मकरिकल् चॅक्किकळ्ळ व्रासॅ;
दट्ट पुनुंगुनु दगु चंदनंबु । दट्टंबुगा बूसॅ दरळाक्षि कॉकतॅ;
नुदुट गस्तुरिलेख नुतमुगा दीर्चॅ । नॅदुट नद्दमु बॅट्टॅ नॅलनाग यॉकतॅ;
कुरुलु नुन्नग दुव्वि कॉप्पमर्चुचुनु । विरुलंदु नॉक तन्वि वितगा दुरिमॅ;
वासिंचु बागालु वडि नाकुमडुपु । ला सतीजनमणि कंदिच्चॅ नॉकतॅ;

योग्य लोगों को भेजकर (धनुष को) मँगाओ'। ऐसा कहने पर कौशिक की अनुमति (आदेश) के अनुरूप, अपने मन्त्रियों को बुलाकर, धनुष ले आने के लिए (आदमी) भेजे। गवाक्षों (झरोखों) से (उस दृश्य को) देख सकते हैं। उसे निहारने के लिए शीघ्र आइए'। (ऐसा) कह प्रेम से बुलाने पर, ।। १८९० ।।

—(राम के) कुल, शौर्य, रूप, गुण की प्रशंसा (ऐसी थी मानों) कानों में सुधा छिड़क दी गई हो। तब प्रेम-भाव की अतिशयता के कारण पृथ्वीजा (सीता) के शरीर पर रोमांच हो उठा। प्रेम (और) भय के मन को घेर लेने के कारण (वह) युवती नीति (मर्यादा) का विचार करके सिर झुकाए रही। अलिवेणी (भ्रमरों के समान केशवाली) (सीता) लज्जा के मारे चुपचाप खड़ी रही (तो) सखियों ने उसकी परिचर्या (शुश्रूषा) की। गुलाब-जल में कुंकुम घोलकर एक (सखी) ने सुन्दरता से कपोलों पर मकरिका-पत्रों की रचना की। दूसरी ने तरलाक्षी को गाढ़ी जवादि और श्रेष्ठ चन्दन का ख़ूब लेप किया। एक और ने ललाट पर सराहनीय रूप से कस्तूरी की रेखा (तिलक) बनाई। एक नवेली ने सामने दर्पण रख दिया। एक तन्वी (नारी) ने केशों को मृदुता से कंघा करके, जूड़ा बाँध दिया (और) उसमें निराले ढंग से फूल सजाए। सुगंधित सुपारी और बीड़ा किसी (सखी) ने उस सतीजनमणि (नारीरत्न) को दिया। अलि-नीलवेणी (भ्रमरों के

अलिनीलवेणिकि नंदंबुगान । मोलनूलिघंटलिम्मुल म्रोय निडियें;
१९००
गुलुकु बालिड्लपै गोप्पमुत्यमुल । विलसिल्लु हारमुल् वेसें नोक्करितें;
कान्त गट्टिन चंद्रकावि वल्वलनु । वितगा नेरिनोप्प वेस दीर्चें नोकतें;
यी माड्कि जेलिकत्तें लेलमि गैसेय। हेमपीठंबुन नेलमितो नुंड
नप्पुडु कल्याणि नवनिनंदननु । दप्पक वीक्षिंचि तल्लि दानपुडु
कनक सौधगवाक्ष कलितगा नपुडु। वनजाक्षि दोड्कोनि वच्चें ना येडकु;
'नेप्पुडु वीक्षितु मिनवंशजातु? । नेप्पुडु गनुगोन्दु मेमु राघुवुनि?'
ननि वारलंदरु हर्षंबुतोड । घनगवाक्षमुलंदु गनुगोनिरंत;
रामुनि लोकाभिरामुनि दिव्य । धामुनि गन्गोनि तरलाक्षुलपुडु
घनशौर्यरूपमुल् गलिगिन वानि ।गनकचेलुनि माड्कि गळलोप्पुवानि
ज़ोक पुव्वुलविल्लु जोनिपिनवानि। ज्याकिणांकितहस्त जलजुडौ वानि
१९१०
रूपंबुलोक्कट रुचिर वर्णमुल । नेपार वेरुगा नेन्नग वच्चु
श्रीपतियंशजुल् क्षितिपालसुतुलु । भूपालरत्नमुल् पोलुपारुटौर !

समान काले केशोंवाली) को (किसी सखी ने) सुन्दरता के साथ किंकिणि-युक्त करधनी को उचित रूप से पहना दिया । ॥ १९०० ॥

और किसी ने (सीता के) इठलाते स्तनों पर बड़े-बड़े मोतियों से विलसित हार डाले । कान्ता (सीता) ने जो चन्द्रकावि (चन्द्रकान्ति-सम) वस्त्र पहने थी, उन्हें किसी ने निराले ढंग से, शीघ्रता से सुन्दरता से सँवारा । इस प्रकार सखियों ने प्रेम के साथ उसे (सीता को) सजाया (और) उसे हेमपीठ पर आनन्द के साथ बिठाया । तब कल्याणी हो अवनिनन्दना (सीता) को अच्छी तरह देखकर (उनकी) माता, कनकसौध के गवाक्ष को सुन्दर बनाते हुए, स्वयं उसे वहाँ ले आई । 'कब इनवंशजात को देखेंगी ? हम कब राघव को देखेंगी' ? (ऐसा) कहते हुए वे सब हर्ष के साथ बड़े-बड़े गवाक्षों में से देखने लगीं । तब राम को, लोकाभिराम को, दिव्यधाम को उन तरलाक्षियों ने देखा । महान शौर्य (और) रूप से युक्त, चन्द्रसम कलाओं से युक्त, उत्साह से पुष्पधनुष को धारण किये हुए, ज्याकिणांकित (प्रत्यंचा के चिह्नों से युक्त) हस्त-जलज (करकमल) वाले (राम को) देखकर, ॥ १९१० ॥

—समस्त रूपों को एकत्रकर, रुचिर वर्णों को अलग-अलग गिन सकते हैं, परन्तु श्रीपति (विष्णु) के अंशज हो इन क्षितिपालसुतों का, भूपालरत्नों

जनकजदगु रामचंद्रुन किरवु । औंनरु सौमित्रिकि नूर्मिळयनुचु
दनरुगा कनि वारु दग नेंन्निकोंनुचु । ननुपमप्रेमतो नट जूचुचुंड,
नमरेंद्रसभ बोलु ना सभनडुम । नमरंग मंदस नट जेर्चि यपुड्डु
सभंलोन नुनुपंग जनकभूविभुडु । शुभमूर्ति ना गाधिसुतुनि वीक्षिचि
'किन्नर गंधर्व गीर्वाण यक्ष । पन्नग राक्षस प्रवरुलेंव्वरुनु
नेंक्कुवेंट्टगजालरी चापमनिन । दक्किन नरुलकु दलपंग दरमें?
कौशिक! रामलक्ष्मणुलकु जूपु । मीशरासन'मन्न नेंलमि नम्मुनियु
रामचंद्रुनि जूचि 'रघुवंशवर्य! । यी महाधनुवेंत्ति येंक्किडितिवियु;
१९२०
मादिवराहमै यवलील गोट । मेदिनीतलमेंत्ति मेंऽसिन नीकु
दनर नी विल्लेंन्त तलपोय ननघ!' । यनि यिट्लु मुनिवरुडानतिंचिननु
मनुवंशतिलकुड मरि वेग बुत्तु । मुनुकोंनि येनट्लु मुदमुतोनंचु
सौमित्रियुनु दानु जय्यन लेचि । प्रेमयु दमकंबु पेंनुगोंनुचुंड
जेंलगुचु दनमीदि चेंऽगु रा दिगिचि । मोंलनूलु बिगजुट्टि मोहनाकृतुल

की इस शोभा का कहाँ तक वर्णन कर सकें? 'जनकजा (सीता) रामचन्द्र के योग्य है, सौमित्री के योग्य है ऊर्मिला'। (ऐसा) कहते हुए शोभा के साथ वे जोड़ियाँ बनाती हुईं, अनुपम प्रेम के साथ उधर देख रही थीं। अमरेन्द्र-सभा के समान उस सभा के मध्य, सुन्दर रूप से उस पेटी को लाकर रखा गया। तब जनकभूविभ ने शुभमूर्ति वाले उस गाधिसुत को देखकर कहा—'किन्नर, गन्धर्व, गीर्वाण, यक्ष, पन्नग, राक्षस-प्रवरों में कोई भी इस धनुष को चढ़ा न सका, तो अन्य नरों का इसके बारे में सोचना सम्भव कहाँ है? हे कौशिक! यह शरासन राम-लक्ष्मण को दिखाओ'। (ऐसा) कहने पर स्नेह से उस मुनि ने रामचन्द्र को देखकर कहा—'हे रघुवंशवर! इस महाधनु को उठाकर, चढ़ाओ, ॥ १९२० ॥

—हे अनघ! (तुम) आदिवराह बन नाखून पर मेदिनीतल को सहजता से उठाने वाले (हो।) तुम्हारे लिए यह धनुष कौन बड़ी वस्तु है'? ऐसा कहकर मुनिवर के आदेश देने पर, मनुवंशतिलक (मानवश्रेष्ठ), शीघ्र ही मुनिवर के आदेश को सफल बनाने के उद्देश्य से, मुदित हो, सौमित्री (लक्ष्मण) के साथ झट उठ खड़े हुए। प्रेम (और) मोह के परिव्याप्त होने पर, शोभित होते हुए, अपने ऊपरी वस्त्र (उत्तरीय) को निकाल कर, कमरबन्द (के रूप में) कस लिया। मोहन (आकर्षक) आकृतियों के साथ, कान्ति के स्थिरता से दिशाओं में शोभित होने पर, अरविन्दलोचन,

दिरमुगा निग्गुलु दिशल शोभिल्ल । नरविंदलोचनुंड, समसाहसुडु मॊलनूलि घंटलु मुरुवु मिंचगनु । मलगुचु नवरत्नमालिकल् पॊरल बाहुपुलुंगराल् पट्टु कंकणमुलु । बाहुवु लंगुळावळिकांतुलीन नमरंग गर्णभूषादुल कांति । गॊमरारु चॆक्किळ्ळु गुदिगॊनि मॆऱ्य नलकलु पॆंडतल नट नृत्यमाडि।तळुकॊन्दु बंगारु तनुकांतुलीन १९३० गोटि मन्मथलील गॊमरु दीपिंप । नीटुगा नटुवच्चि नॆऱि यॆल्लरॆऱुग जनकुनि सभलोन जननुतंबैन । मनुवंशतिलकंबु मंदस दॆऱचि धरणिभरंबॆल्ल दनमीद नुनिचि । चिरनिद्र सुखियिंचु शेषाहि यनग गालमेघमुलोन गदलनि रुचुल । दूलक पॊलुचु विद्युद्दंडमनग निरुपमाकारत निंडारि यंदु । गरमॊप्पु विल्लॆत्ति गवुसॆन दिगिचि

शिवधनुर्भंगमु

गर्विंचि तन दिव्व गडगि येतॆन्चु । नुर्वीशबलमु लाहुतुलुगा म्रिगि यरुणरत्नप्रभलनु मंटलॊलुक । बॆरुगुचु निलुचुन्न पॆनुजिच्चुवॊलॆ

(और) असमसाहस वाले (राम) ने कमरबन्द की घंटियों के उल्लसित होने पर, नवरत्न-मालिकाओं के उलझकर (छाती पर) लुढ़कते रहने पर, केयूर, अंगुलीयक (अंगूठी), पटु-कंकण, बाहु (और) अंगुलावलियों (उँगलियों) के कान्ति बिखेरते समय, शोभायुक्त कर्णाभूषणों की कान्ति से मनोहर बने कपोलों के सान्द्र (कान्ति के घनीभूत) हो चमकते समय, अलकों के सिर के पिछले भाग में नृत्य करते हुए, चमकते हुए सुवर्ण-(सम) शरीर की कान्तियों के बिखरते समय, ॥ १९३० ॥

—करोड़ों मन्मथों के सौन्दर्य के शोभित होने पर, वहाँ आकर, सुन्दरता से, सब लोग जानें इस रूप में, जनक की सभा में, जननुत (जनता से प्रशंसित) मंजूषा को मनुवंशतिलक (मनुष्यश्रेष्ठ) ने खोला। उसमें स्थित धनुष ऐसा था मानों धरणी के समस्त भार को अपने ऊपर रख, चिरनिद्रा में सुखी रहनेवाला शेषाहि (शेषनाग) हो, (अथवा) कालमेघ में शाश्वत रुचियों (कान्ति) के साथ, अचंचल हो विलसित विद्युत्दण्ड हो। निरुपम आकार से सम्पन्न, अधिक श्रेष्ठ बने उस धनुष को उठाकर, उत्तरीय को उतार कर,

शिवधनुर्भंग

—गर्व के साथ धनुष को हराने (उठाने) के लिए प्रयत्नशील राजाओं के बल को अपनी अरुण रत्नप्रभा रूपी प्रस्फुटित अग्नि की कराल

नक्कजमगु चापमवलील रामु । डॆक्कुवॆट्टुचुनुंड नॆऱिगि कौशिकुडु
'हरुनि चापमु रामुडतिसत्त्वयुक्ति । बॆरिगि नॆडिदॆ यॆक्कुवॆट्टुचुन्नाडु
अदरकु भूदेवि! यात्मलो नीवु; चॆंदिरि चलिंपकु शेषाहि! नीवु १९४०
कडक धरिंपुमु कमठेंद्र! नीवु; । कडुनेमरकुडु दिक्करुलार! मीर'
लनि मुनि पल्कग ना मेटिविल्लु । गॊनयमॊक्किंचि कैकॊनक राघवुडु
तन बाहुसत्त्वंबु दर्पंबु मॆऱसि । जनकुतो ननियॆ ना चापंबु सूपि
'यिद जाल जुलकन; यिदि चाल ब्रात; ।
यिदि चाल निस्सार-मिदि चाल नलति;
तॆगगॊन निलुवदु; दीनि नायॆदुट । बॊगडिति पलुमाऱु भूपाल!' मनुचु
सुरलु खेचरुलु भूसुरुलु गिन्नरुलु । नरुलुनु नृपवरुल् नलि बर्विचूड,
नॆडपक तन जयंबॆल्लॆड जाटु । वडुवुन विलुगुणध्वनि सॆलंगिंचि
सीतगुणंबुलु सॆविसोकॆननग । जेति विंटि गुणंबु सॆविसोक दिगिचि
वडि रक्कसुलपट्टु वदलॆ नन्नट्टु । पिडिपट्टु वदलिन बॆटिलि पेडॆत्ति

ज्वालाओं से निगल जाने के लिए उद्यत उस आश्चर्यप्रद धनुष को बड़ी सहजता (आसानी) से राम को डोरी चढ़ाते जानकर कौशिक ने कहा, 'शिव के चाप (धनुष) को आज यह राम अतिसत्त्वयुक्ति से डोरी चढ़ा रहा है। हे भूदेवी! तुम आत्मा (मन) में काँपो मत। हे शेषनाग! तुम डरकर विचलित मत होओ। ॥ १९४० ॥

हे कमठेन्द्र! तुम सप्रयत्न (धरा का) वहन करो। हे दिग्गजो! तुम सावधान रहो'। ऐसा मुनि के कहने पर, उस महान् धनुष पर डोरी चढ़ाकर, (उसे) ऊपर न उठाकर, अपने बाहु-सत्त्व (भुजबल) से सगर्व शोभायमान होते हुए, उस धनुष को दिखाते हुए, राघव ने जनक से (यों) कहा, 'यह (धनुष) बहुत हलका है, यह बहुत पुराना है, यह बहुत निस्सार है, यह बहुत क्षुद्र है। उठाकर, खैंचने पर नहीं ठहरेगा (टूट जाएगा)। इसकी (ऐसे इस धनुष की ही) मेरे सामने कई बार प्रशंसा आपने की है न भूपाल!' ऐसा कहते हुए सुर, खेचर, भूसुर, किन्नर, नर, नृपवरों को (भयातुर) भागते हुए देखने पर, धनुष के गुण (डोरी) पर टंकार दी, मानों वह (ध्वनि) निरन्तर राम की जय को सर्वत्र घोषित कर रही हो। हाथ से धनुष की डोरी को कान तक खींचा मानों (यह बता रहे हों कि) सीता के गुण कान तक पहुँच चुके हैं। (उसके बाद) उन्होंने अपनी (मुट्ठी की) पकड़ इस तरह ढीली कर दी मानों राक्षसों की पकड़ (शक्ति) ढीली (कमज़ोर) पड़ गई हो।

पॆळपॆळध्वनुलुनु बॆटपॆट ध्वनुलु। गलय दिक्कुल बर्वंगा विल्लु विऱिगॆ; १९५०
विऱिगॆ राजन्युल विपुलमानमुलु;। पऱियलु वारॆ भूभागमंतयुनु;
जिदिसॆ दिग्गजमुलु; शेषाहिम्रॊग्गॆ;। बॆदरॆ भूतमुलु; गंपिंचॆ लोकमुलु;
जनकुडु रामलक्ष्मणुलुनु गाधि। तनयुंडु नॊगि दक्क दक्किनवारु
बिट्टुलिक मूर्छिल्लि पृथिविपै बडिरि। नॆट्टन बॊडमु ना निष्ठुरध्वनिकि
जनकभूविभुडंत संतोषमंदि। घनविस्मयमुतोड गौशिकु जूचि
‘ना माट दप्पक ना मुद्दुगूतु। नी महितात्मुनकिच्चॆद; निंक
दडयक पॆन्डिलकि दशरथाधीशु।गडु सम्मदमुन निक्कडिकि रप्पितु’

दशरथाह्वानमु

ननि दशरथुनकु नत्तॆऱंगॆल्ल। विनुपिंचि तोड्तॆर वेड्कतो नपुडु
तन याप्तमंत्रुल दडयक पनुप। बनिपूनि वारु दत्पर बुद्धि नॆगि
जवनाश्वमुलमीद साकेतपुरिकि। दिवसत्रयमुन केतॆन्चि वेगमुन १९६०

मुट्ठी की पकड़ के छूटते ही वह (धनुष) ध्वनिपूर्वक टूटकर, फटकर, टूटने की ध्वनियों से समस्त दिशाओं को व्याप्त करता हुआ टूट गया। ॥१९५०॥

राजन्यों का विपुल मान (अहंकार) भंग हो गया। समस्त भूभाग पर दरारें पड़ गईं। दिग्गज विचलित हो गए। शेषनाग ने घुटने टेक दिए (धँस गया)। (पंच) भूत डर गए। लोक कम्पित हो उठे। एकदम उत्पन्न उस निष्ठुर (क्रूर) ध्वनि के कारण क्रम से जनक, राम-लक्ष्मण (और) गाधितनय को छोड़ शेष (सभी) लोग घबड़ाकर मूर्च्छित हो, पृथ्वी पर गिर पड़े। तब जनक महाराज आनन्दित हुए, अतिशय विस्मय से कौशिक को देखकर बोले, ‘मैं अपने वचन से न हटकर (वचन के अनुसार) अपनी प्रियपुत्री को इस महितात्म (महान् व्यक्ति) को दूँगा। अब देरी न करके विवाह के लिए दशरथाधीश को (सादर) सम्मोद यहाँ बुलाऊँगा’।

दशरथ को निमन्त्रण

—ऐसा कह, दशरथ को सारा समाचार सुनाकर, सानन्द (उन्हें) लिवा लाने के लिए तब (जनक ने) अपने आप्त मन्त्रियों को, बिना विलम्ब किए भेजा। प्रेरित हो, वे भी तत्पर बुद्धि से, जवनाश्वों (तेज़ घोड़ों) पर (आरूढ़) होकर तीन दिन में शीघ्रता से साकेतपुरी पहुँच गए। ॥ १९६० ॥

दनयुल सेमंबु दलपोसि पोसि । वनरुचुनुन्न या बसुधेशु गांचि
विनतुलै जनकभूविभुडंपिनट्टि । जननुतवस्तुवुल् सन्निधि नुनिचि
'नी कुमारुडु शौर्यनिधि रामचंद्रु । डा कौशिकुनि याग मर्थितो गाचि
जनकु जन्नमु जूड जनुदेन्चि यंदु । मुनुलु राजन्युलु मुदमुतोड जूड
धर सुरासुरुलकु धरियिपरानि । हरुविल्लु मोपेट्टि यवलील विऱिचें;
विऱिचिन जनकभूविभुडिच्चे सीत । नऱलेक तन कूतु ना राघवुनकु;
ब्रियमार बेन्ड्लकै पिलुव बुत्तेन्चे :। रयमुन विच्चैयु राजन्यचंद्र !'
यनवुडु दन मदि नानंदमंदि ।जनपति पेन्ड्लकि जाटिंप बनिचि
जनकु मंत्रुलकु नुत्सवमोप्पनिच्चे । घनरत्न भूषण कनकांबरमुलु;
अऱलेनि कुलगुरुडैन वसिष्ठु । धीरात्मुडगु वामदेवु जाबालि १९७०
घनुनि गश्यपुनि मार्कंडेयु महिम । दनरु कात्यायनु दन यमात्युलनु
निम्मुल बिलिपिंचि यिट्लनि पलिकें: 'सम्मदंबडर विश्वामित्रु नोद्द
देजंबुतोड विदेहु गेहमुन । राजिल्लुचुन्नारु रामलक्ष्मणुलु:
अंदु रामुडु राजुलंदरु बोगड । नेन्दु नसाध्यमौ निंदुशेखरुनि

पुत्रों के कुशल के बारे में चिंतित, दुखी और खिन्न उस वसुधेश (दशरथ) को देखकर, जनकभूविभु के द्वारा भेजी गई जननुत (प्रशंसनीय) वस्तुएँ सविनय समक्ष रखकर (उन मन्त्रियों ने) कहा, 'तुम्हारे पुत्र शौर्यनिधि रामचन्द्र ने उस कौशिक के यज्ञ की प्रेम से रक्षा की, (उसके बाद) जनक के यज्ञ को देखने (मिथिला) आये। वहाँ मुनि (और) राजन्यों के देखते-देखते, (उन्होंने इस) पृथ्वी पर सुर-असुरों के लिए दुर्निवार शिवधनुष को (प्रत्यंचा) चढ़ाकर आसानी से तोड़ दिया। (धनुष) तोड़ने पर जनकभूविभु ने बिना संकोच के अपनी पुत्री सीता को समर्पित किया। बड़े प्रेम से विवाह के लिए (आपको) निमन्त्रित करने के लिए (हमें) भेजा है। हे राजन्यचन्द्र! अब (आप) शीघ्र पधारें'। —ऐसा कहने पर, अपने मम में आनन्दित होकर, जनपति (राजा दशरथ) ने (अपने सेवकों को) विवाह की घोषणा करने के लिए भेजा। जनक के मन्त्रियों को उत्सव के साथ (धूमधाम से) घन (विशेष) रत्न-भूषण-कनकाम्बर (कनक-वस्त्र आदि) दिए। बिना संकोच रहनेवाले (निर्मल हृदय वाले) वसिष्ठ, धीरात्मा वामदेव, जाबालि, ।। १९७० ।।

—घन (महान्) कश्यप, मार्कण्डेय, महिमा से शोभायमान कात्यायन (आदि मुनियों और) अपने अमात्यों (मन्त्रियों) को प्रेम से बुलाया (और) यों कहा—'विश्वामित्र के पास, तेजोयुक्त होकर राम-लक्ष्मण विदेह (जनक) के गेह (गृह) में सानन्द सकुशल विराजमान हैं। वहाँ राम ने

चापंबु विऱिचिन जनकुंडु सीत। नेपार रामुन की निश्चयिंचि
यॆलमि बॆन्डि्लकि मम्मु नेगुदॆन्डनुचु। बॊलुपार वीरल बुत्तॆन्चिनाडु;
जननुतंबगु गदा जनकु संबंध'। मनिन नंदरु मॆच्चि; रम्मरुनाडु

दशरथुनि मिथिलाप्रयाणमु

मॊगि वसिष्ठादि सन्मुनुलतो गूड। दगु बंधुराजन्यततुलतो गूड
रमणीय दिव्यांबरमुलतो गूड। विमल मौक्तिक वज्रवितति गूड
गरिरथभट तुरंगमुलतो गूड। बरमाप्त वरमंत्रिपतुलतो गूड १९८०
विनुत पुण्यांगनाविततितो गूड। ननुपमवैभवंबलर गैसेसि
करमॊप्प रथमॆक्कि कल्याणमुनकु। नरनाथतिलकुडानन्द मुप्पॊन्ग
गड गॆलंकुल गजस्कंधंबुलॆक्कि। कॊडुकुल मुत्यालगॊडुगुल नीड
बरम सम्मदमुन भरत शत्रुघ्नु। लिरुवुरु गॊलिचरा नेपुदीपिंप
ग्रंदुगा निंडि मंगळतूर्यकोटु। लंदंद म्रोय महाभूति मॆऱसि

समस्त राजाओं की प्रशंसाएँ प्राप्त कर, सर्वथा असाध्य इन्दुशेखर (शिव) के धनुष को तोड़ डाला। जनक ने शोभा के साथ सीता को, राम को देने का निश्चय किया है। आनन्द से विवाह में (भाग लेने) आने के लिए (निमन्त्रित करने) सुचारु ढंग से इन (मंत्रियों) को भेजा है। मेरे लिए जनक के साथ सम्बन्ध जननुत (लोकप्रशंसनीय) होगा न ?'। ऐसा कहने पर सब ने (उसका) अनुमोदन किया। उसके दूसरे दिन,

दशरथ का मिथिला प्रयाण

—वसिष्ठ आदि सन्मुनियों के साथ, योग्य बन्धु (रिश्तेदारों) (और) राजाओं (के समूहों) के साथ, रमणीय दिव्य-अम्बरों, विमल मौक्तिक (और) हीरकआदिरत्न, रथ, सुभटों, एवं तुरंगों के साथ, परम आप्त मन्त्रि-श्रेष्ठों के सहित, । ॥ १९८० ॥

विनुत (श्रेष्ठ) पुण्यांगनाओं (स्त्रियों) को लिए हुए, अनुपम वैभव के साथ सज-धजकर, बड़ी शोभा के साथ रथ पर आरूढ़ नरनाथ-तिलक (राजश्रेष्ठ) (दशरथ) ने (पुत्र के) कल्याण (विवाह) के लिए बड़े आनन्द के साथ मिथिला को प्रस्थान किया। (उनके) समीप (दोनों) पार्श्वों में गजस्कन्धों पर, मोतियों की छत्र-छाया में परम सम्मोद के साथ दोनों पुत्र भरत और शत्रुघ्न, शोभा के साथ चल रहे थे। जहाँ-तहाँ मंगल-तूर्य का विपुलनाद सर्वत्र मुखरित हो रहा था। (वह राजा) महान् विभूति-(ऐश्वर्य) युक्त हो शोभायमान थे। (इस प्रकार) जहाँ-तहाँ ठहरते हुए,

येडनेड विड्डुदुलनेकवस्तुबुल । नडपिंप मंत्रुलु नाल्गु पैनमुल
जनियेनु मिथिलकु; जनकुंडु नंत । निनकुलाधिपुनकु नेदुरुगा वच्चि
कोनिपोयि वेड्कलु कोनलोत्तनपुडु । जनपति कुचितोपचारमुल् सेसि
मुनिवरनिवहंबु मुदमंद नप्पु । डनियें महानंदमलर नातनिकि;
'ना कूतु दशरथ नरनाथ! येनु । नी कुमारुनि किच्चि नेम्मि बेन्ड्लकिनि
१९९०
निट विल्व बंचिन नीवु विच्चेसि;। तटुगान नेनु गृतार्थु डनैति;
नी वसिष्ठ महामुनींद्रुडीवाम । देवादिमुनुलु नेतेन्चुट जेसि
ना कोर्कि सिद्धिंचें : ना जन्म मलरें;। ना कुलंबतिपावनंबय्यें नेडु;
रविकुलोत्तमुलैन राजुलतोडि । यविरळसंबंधमदि नाकु गलिगें;
नेल्लि पेन्डिलि लग्न; मिष्टुल बिलिचि । तेल्लंबुगा ब्रवर्तिंपगवलयु'
ननवुडु दशरथुंडट्लगाकनुचु । ननुरागमोन्दि यत्यन्तमौ ब्रीति
जनकडमर्चिन सदनराजमुन ।ननुरक्ति वसियिंचें; नंत नच्चटिक
गडु ब्रीति रामलक्ष्मणुलतो गूड । नडरि विश्वामित्रुडरुगुदेन्चुटयु
ननघुंडु दशरथुंडम्महामुनिकि । विनतुडै तग बल्कें विनयंबुतोड

मन्त्रियों के अनेक वस्तुओं की व्यवस्था करते रहने पर, चार दिन की यात्रा के बाद (दशरथ) मिथिला पहुँचे। तब जनक इनकुलाधिप (सूर्यवंशी राजा दशरथ) के समक्ष (अगवानी हेतु) आए; अपने साथ ले जाकर बड़े मोद के साथ जनपति का उचित उपचार (आदर-सत्कार) किया। मुनिवर-समुदाय (और) उस (दशरथ) को मुदित करते हुए (तब जनक यों) बोले, 'हे दशरथ-नरनाथ! मैंने अपनी पुत्री को आपके पुत्र को देकर, आनन्द से विवाह करने की बात (तय) कर, ॥ १९९० ॥ —आपको यहाँ आमंत्रित किया है, अस्तु आपके पधारने से मैं कृतार्थ हुआ हूँ। इन महामुनीन्द्र वसिष्ठ (तथा) वामदेव आदि मुनियों के (शुभ) आगमन से मेरी इच्छाएँ पूर्ण हो गई हैं। मेरा जन्म सफल हुआ है। आज मेरा कुल (वंश) अतिपावन हुआ। रविकुलोत्तम नरेश के साथ मुझे अविरल सम्बन्ध प्राप्त हुआ है। कल (ही) विवाह का लग्न (मुहूर्त) है। अपने इष्टजनों को बुलाकर, आवश्यक कार्य सम्पन्न कीजिए'। उनके ऐसा कहने पर, दशरथ ने 'तथास्तु' कहकर, अत्यन्त अनुराग और प्रीति के साथ, जनक द्वारा सम्पन्न किए गए सदन-राज (श्रेष्ठ-भवन) में हर्षपूर्वक निवास किया। तब वहाँ अति प्रीति के साथ, राम-लक्ष्मण को साथ लिये हुए अति शोभा से विश्वामित्र पधारे। अनघ दशरथ ने उस महामुनि को प्रणाम कर विनय के साथ (यों) कहा,

'दनरार नी दय धन्युंडनैति । ननघात्म!' यन विनि यक्कौशिकुंडु
२०००

'अकलंक चरितुंडवैतिवीवधिप ! । सुकृतंबु गाविंचि शुद्धुंडवैति;
रविकुलोत्तमुडैन रामुंडु पुत्रु । डवुट विशेषिंचि यधिकपुण्युडवु;
क्रतुरक्षणार्थमै कडगि राघवुल । हितबुद्धि नाडु माकिच्चिचति वीवु;
नॆम्मदि नुन्नारु नी सुतुल्; वीरि । नॆम्मि गन्गॊनु'मन्न नृपतिकि वारु
नालोन म्रॊक्किन नलरि दीविंचि । यालिंगनमुसेसॆ ननुरागमॆसग:
जनकुंडु ना दिवसंबुन नंत । दन यागकर्ममंतयु नॆऱवेर्चि
यलरुवेडुक निनुडस्त्राद्रि करुग । बॊलुपॊन्द ना रात्रि पोयिनपिदप
मऱुनाडु कल्याणमंटपवेदि । नॆऱसि मंत्रुलतोड निंड गॊल्वुंडि
यिम्मुल दन पुरोहितु शतानंदु । सम्मदंबुन जूचि जनकुंडु वलिकॆ:

ऊर्मिळादुल विवाह यत्नमु

'ननघात्म! ना तम्मुडगु कुशध्वजुडु । गनुगॊनवलयु नी कल्याण; मतडु
२०१०

'हे अनघात्म ! तुम्हारी कृपा से मैं धन्य हो गया हूँ'। यह सुनकर कौशिक (यों बोले), ॥ २००० ॥

—'हे अधिप ! तुम अकलंक-चरित्रवान् हुए हो। सुकृत (पुण्य) करके शुद्ध (पवित्र) हो गए हो। रविकुलोत्तम राम के (तुम्हारे) पुत्र होने के कारण, विशेष रूप से तुम अति पुण्यवान् बन गए हो। उस दिन यज्ञ-रक्षा के लिए तुमने सुन्दर मन से राघवों (राम-लक्ष्मण) को हमें दिया था। (देखो! आज) तुम्हारे पुत्र सकुशल हैं। इन्हें आनन्द से देखो'। ऐसा कह रहे थे कि इतने में (राम-लक्ष्मण) दोनों ने नृपति को प्रणाम किया। (तब राजा ने आशीर्वाद देकर) अनुराग के उमड़ने पर, बड़े स्नेह से उन्हें गले से लगा लिया। उस दिन जनक ने अपना समस्त यज्ञ-कर्म सम्पन्न किया। सूर्य के अस्ताद्रि जाने के बाद बड़े आनन्द के साथ वह रात बिताई। दूसरे दिन कल्याण-मंडप की वेदी तैयार कराई, मन्त्रियों के संग विराजमान हुए, आनन्द के साथ अपने पुरोहित शतानन्द को देखकर बोले—

ऊर्मिला आदियों का विवाह-प्रयत्न

—'हे अनघात्म ! मेरे अनुज कुशध्वज को यह विवाह देखना चाहिए (उसे यहाँ उपस्थित रहना चाहिए)। वह, ॥ २०१० ॥

दिरमुगा निक्षुमतीतीरभूमि ।बौरि नोप्पु सांकाश्यपुरिनुन्नवाड्डु;
अतनि दोड्तेंर नी वरुगु' मनंग । नतिजवाश्वमुलतो नमरु तेरेक्कि
यतिवेगमुग नेगि या कुशध्वजुनि । नतुलितंबुग गनि यर्थिमै जेप्पि
'जनकपुत्रिकि नेडु जननाथवर्य !। मनुवंशचंद्रुडौ मन रामुनकुनु
घनमुग बेन्ड्लियौ गडुवेड्क तोड;। जनकुंडु यत्नंबु जरुपंग गोरि
पति निन्नु दोड्तेर बनिचे नन्निपुडु । सतुलतो हितुलतो सकलसैन्ययुति
गदलुद मिप्पुडे घनत मिथिलकु । पद' मनि चेप्पिन बरग नंदरुनु
दनरारु वेडुक दग रथंबेक्कि । तनयाद्वयमुतोड दा नेगुदेन्चि
यनघमानसुडु शतानंदुनकु ।जनकभूविभुनकु सद्भक्ति म्रोक्कि
येलमि नम्मानवाधीशु सम्मतिनि । नलुवोप्प सिंहासनमुन गूर्चुंडे;
२०२०
नंत सुदामनुंडनुमंत्रि जनकु । डेन्तयु मुदमुन नीक्षिंचि 'नीवु
सनि वसिष्ठुनितोड सचिवुलतोड । दनयुलतो गूड दशरथेश्वरुनि
वेरवार दोड्कोनि वेग र'म्मनिन । नरिगि यातडु ब्रीति नम्महीपतिकि
विनयंबुतो म्रोक्कि 'वेड्कतो नन्नु । जनकुड्डु पुत्तेन्चे जनलोकनाथ !

—(वह) इक्षुमती के तीर पर स्थिरता के साथ अत्यन्त शोभावान् सांकाश्यपुरी में है। उसे लिवा लाने के लिए आप जाइए'। (ऐसा) कहने पर, अति जवाश्व (तेज भागनेवाले घोड़े) से जुड़े रथ पर बैठकर, अति वेग से जाकर उस कुशध्वज को अनुपम रूप से देखकर, बड़ी इच्छा से (यों) कहा, 'हे जननाथवर ! जनक पुत्री का भानुवंशचन्द्र राम के साथ बड़े आनन्द और वैभव के साथ विवाह होगा। (तदर्थ) यत्न करने के लिए ज़रूरी समझकर राजा जनक ने तुम्हें लिवा लाने के लिए मुझे इस समय भेजा है। सतियों (पत्नियों), हितू-जनों, समस्त सेनाओं के साथ अभी प्रयाण करो, वैभव के साथ मिथिला चलो'। ऐसा कहने पर, अति आनन्द के साथ, सभी लोगों को साथ लिए, योग्य रथों पर चढ़कर, दो कन्याओं को लिये हुए, शोभायुक्त उस अनघमानस शतानन्द ने स्वयं पधारकर महाराज को सद्भक्ति के साथ प्रणाम किया, उस मानवाधीश की सप्रेम सम्मति पाकर, उपयुक्त सुन्दर सिंहासन पर विराजमान हुआ। ॥ २०२० ॥

तब सुदामन नामक मन्त्री को अत्यन्त मोद से देखकर जनक बोले, 'आप जाकर, वसिष्ठ आदि मुनियों, सचिवों (मन्त्री) और पुत्रों के सहित दशरथेश्वर को, सादर शीघ्र लिवा लाइए'। (ऐसा) कहने पर वे गए और उस महीपति (दशरथ) को प्रीति और विनय के साथ प्रणाम किया और बोले, 'हे जनलोकनाथ ! मुझे जनक ने प्रेम से (आपकी सेवा में)

मी युपाध्यायुलु मी तनूभवुलु ।मी यमात्युलु मीरु मॆऱसिरावलयु'
ननिन ना दशरथुंडंदऱतोड ।जनि सुखासीनुडै जनकुतो ननियॆ:
'बरग वसिष्ठुंडु परमदेवतयु । गुरुवु नी यिक्ष्वाकु कुलमुन कॆल्ल:
सर्वज्ञुडगुट नी संयमीश्वरुडु । सर्वकार्यमुलकु जालु मा' कनिन
नप्पुडु दशरथु नन्वयक्रममु ।जॆप्प भाविंचि वसिष्ठुडिट्लनियॆ;

दशरथुनि वंशक्रममु

'नरनाथ! विनु, निर्गुण ब्रह्ममैन । हरि सगुणैकलीलाकृति दाल्चि २०३०
निज़लीलकै नाभिनीरजंबंदु । नजुनि गल्पिपंग हरिकजुडॊदवॆ:
भूमीश ! ब्रह्मकु बुट्टॆ मरीचि; ।या मरीचिकि बुट्टॆ नवनि गश्यपुडु;
नतनि कर्कुंडु सुतु; डा जगदाप्त । मतिकि वैवस्वतमनुवु जन्मिंचॆ;
नतनिकि निक्ष्वाकुडनु राजरत्न । मतनिकि गुक्षियौ नात्मसंभवुडु
कुक्षियन् भूनाथु कॊडुकु विकुक्षि; । यक्षतात्मुडु बाणुडतनि नंदनुडु
नतनिकि ननरण्यु; डतनिकि बृथुडु; । चतुरमानसुडु द्रिशंकुडातनिकि;

भेजा है। आपके उपाध्याय (गुरु), आपके तनूभव, आपके अमात्य (मन्त्री), इनसे सुशोभित होकर आप (विवाह-मण्डप में) पधारें'। (ऐसा) कहने पर, वह दशरथ, सबके साथ चलकर, सुख से आसन पर बैठकर, जनक से (यों) बोले, 'इस समस्त इक्ष्वाकुकुल के लिए वसिष्ठ परमदेवता और गुरु हैं। सर्वज्ञ होने के कारण ये संयमीश्वर (हमारे) सर्वकार्यों को कराने में दक्ष हैं'। ऐसा कहने पर, दशरथ के अन्वय-(वंश) क्रम को कहने का विचार कर वसिष्ठ (यों) बोले—

दशरथ का वंशक्रम

—'हे नरनाथ! सुनो, निर्गुण ब्रह्म ने सगुण लीला (मय) आकृति 'हरि रूप' को धारणकर, ॥ २०३० ॥

—अपनी लीला के लिए नाभि-नीरज (नाभि-कमल) में अज (ब्रह्मा) की सृष्टि की। इस प्रकार हरि के अज (ब्रह्मा) पैदा हुए। हे भूमीश! ब्रह्मा के मरीचि पैदा हुए। उस मरीचि के (इस) अवनी पर कश्यप पैदा हुए। उसके पुत्र अर्क (सूर्य) हुए। उस जगदाप्तमति वाले (सूर्य) के वैवस्वतमनु उत्पन्न हुए। उनके इक्ष्वाकु नामक राजरत्न (और) उनके कुक्षि नामक आत्मसम्भव (पुत्र) जन्मे। कुक्षि नामक भूनाथ के पुत्र विकुक्षि हुए। निर्मल आत्मावाले विकुक्षि के पुत्र बाण

नतनिकि दनयुंडु ना हरिश्चंद्रु; । डतनिकि लोहितुंडनु राजवर्यु;
डतनिकि धुंधुमारावनीनाथु; ।डतनिकि युवनाश्वुडनु नरेश्वरुडु;

युवनाश्वुनि वृत्तान्तमु

नतनिकि ब्रियभार्य लतिरूपवतुलु; । सतुलिद्दरकु बुत्रसंततिलेमि
नंतट ना राजु नखिल सन्मुनुल । संतति कौरकुनै सरग रप्पिंचि
२०४०
यामहात्मुलकुनु नर्घ्यपाद्यमुलु ।प्रेमतो दग निच्चि प्रियवाक्यमुलनु
'घनुलार! नन्नुनु गरुणिंचि मीरु । दनयुल नाकुनु दयसेयवलयु'
ननि विन्नविंचिन ना राजुनकुनु । ननुवौन्द नम्मुनुलपुडिट्टुलनिरि:
'ऐंद्रयागमु सेयु मवनीश! भक्ति । सांद्रंबुगा; बुत्रसंतति गलुगु'
नन जन्नमुन कप्पुडखिलवस्तुवुल । ननुवौन्द दॅप्पिंचॅ ना क्षणंबुननु:
नैंद्रयागंबनु ना मखंबपुडु । सांद्रानुमोदुलै संयमीश्वरुलु
पुत्रलाभंबुकै पौलुपौन्द नंत । चित्रयज्ञमु दारु सेयंग नंदु
जलमुलु मंत्रिंचि जलकुंभमुलनु । नलरार नियतिचे नट्टु दाचियुंड

हुए। उसके अनरण्य (और) उसके पृथु (और) उसके चतुरमानस त्रिशंकु हुए। उसके पुत्र हरिश्चन्द्र (और) उसके लोहित नामक राजवर हुए। उसके धुन्धुमार नामक अवनीनाथ (और) उसके युवनाश्व नामक नरेश्वर हुए।

युवनाश्व का वृत्तान्त

—उस (युवनाश्व) की दोनों प्रिय पत्नियाँ अतिरूपवान् थीं। दोनों की पुत्रसन्तति नहीं हुई। उस राजा ने सन्तान (प्राप्ति) के लिए अखिल सन्मुनियों को शीघ्र बुलवाया, ॥ २०४० ॥

—(और) उन महात्माओं को प्रेम से, उचित रूप से अर्घ्य-पाद्य देकर (यों) बोले, 'हे महात्माओ! मुझपर कृपाकर आपको मुझे पुत्र प्रदान करने चाहिए'। ऐसा निवेदन करने पर, उस राजा (के मन) की अनुकूलता के अनुरूप उन मुनियों ने तब (यों) कहा, 'हे अवनीश! भक्तिपूर्वक तुम ऐन्द्रयाग करो। तुम्हारे पुत्र-सन्तति होगी'। (ऐसा) कहने पर (राजा ने) यज्ञ के लिए (आवश्यक) सभी वस्तुओं को मनोरम रूप से उसी क्षण मँगवाया। तब संयमीश्वरों ने सहर्ष ऐन्द्रयाग नामक उस मख (यज्ञ) को पुत्रलाभ के लिए आरम्भ किया। तब सुघड़ाई से स्वयं चित्रयज्ञ किया। उसमें जल को अभिमन्त्रित कर जलकुम्भों को (मुनियों

धरणीशुडारात्रि दप्पितो नंत। मऱपॊन्दि या यज्ञमंदिरमंदु
गलशंबुलो नीळ्ळु ग्रक्कुन द्राव। जलहीनमगु कलशंबुनु जूचि २०५०
'यॆवरु द्राविरि जलं? बॆट्टु पोयॆ?' ननुचु। ब्रविमलात्मुलु वारु भावनिरीक्ष
नरसि या नृपतियॆ या नीरु द्रावु। टॆऱिगि चोद्यंबंदि यिदि दैवमाय
यनि चूचुचुंडग ना नृपालकुडु। घनमगु गर्भंबु गडुवेग दाल्चॆ
गर्भमंतट बडिकडुजोद्यमलर। नर्भकुंडुदयिंचॆ; ना राजु चच्चॆ;
गडगुचु ऋषुलॆल्ल गड्डुःखमंदि। सडलनि यम्मंत्रसामर्थ्यमुलनु
बनिवडि युवनाश्वु ब्रतिकिंचि; रंत। ननुपमशुभमूर्तियॆ युंडॆनतडु;
वरुस तोडुत जक्रवर्ति चिह्नंबु। लरुदार नुंडॆडि या पुत्रु जूचि
यितडेडुदीवुलु नेलुनटंचु। जतुरत ऋषुलॆल्ल संतोषपडिरिः
अल युवनाश्वुंडु ना मौनिजनुल। कॆलमितो धनरासुलिच्चिन जनिरि;
तल्लिये लेनिकतंबुन बालु। डल्लन नाकॊनि यट नॆड्चुचुंड २०६०
वरुस नायिद्रुंडु वच्चि ता नप्पु। डरयंग ना शिशुवाकलिदीर
बॆनुपॊन्दगा नोर बॆनुव्रेलु वेग। नुनिचिन नमृतंबु नॊय्यन द्राव

ने) मनोहरता से नियमपूर्वक वहाँ (यज्ञशाला में एक ओर) छिपाकर रख दिया। उस रात को प्यास के मारे राजा (युवनाश्व) भूल से उस यज्ञमन्दिर में रखे कलश के अभिमंत्रित जल को झट से पी गए। (दूसरे दिन) जल-रहित कलशों को देखकर, ॥ २०५० ॥

—'किसने जल पिया? (जल) किधर गया?' ऐसा कहते हुए, उन प्रविमल-आत्मा वाले मुनियों ने ध्यानपूर्वक विचार किया तो उन्हें विदित हो गया कि स्वयं नृपति ही इस जल को पी गए हैं, इसे दैव-माया मानकर देखते रहे कि नरनाथ ने बड़ी शीघ्रता से गर्भ-धारण किया। अति आश्चर्यप्रद रूप से उस गर्भ से तब एक अर्भक (शिशु) पैदा हुआ (और) राजा मर गया। (तब) सभी ऋषि अत्यन्त दुखी हुए (और) सुदृढ मन्त्र-सामर्थ्य से यत्न करके युवनाश्व को फिर जीवित कर दिया। तब वह (राजा पुनः) अनुपम शुभमूर्ति (युक्त) हो गया। क्रम से, आश्चर्यजनक रूप से चक्रवर्ति के चिह्नों से युक्त उस पुत्र को देखकर, सभी ऋषि-प्रवीण यह जानकर प्रसन्न हुए कि यह सप्तद्वीपों पर शासन करेगा। तब युवनाश्व के आनन्द से अतुल धन-राशि देने पर वे मुनिगण विदा हो गये। माता के न होने पर बालक भूख के मारे रोने लगा। ॥२०६०॥

तब इन्द्र स्वयं आये और मनोज्ञता से (शिशु के) मुख में शीघ्रता से (अपना) अंगूठा दे दिया, अमृत का पान करने से तुरन्त शिशु की

सुध ग्रोलुटयुजेसि शुभयुतु पेरु। बुधुलतो मांधात भूमीशुडनुचु
नतनिकि नामधेयंबट्टु चेसि। यतिवेगमुन बोये ना बिडौजुंडु;
अंत ना मांधात यल पूर्णचंद्रु। नंतटि प्रभतोड नतिशयिल्लुचुनु
रूढिगा यौवनारूढुडै यंत। गाढ शौर्यस्फूर्ति गड्डु देजरिल्लि
रावणादुल बहुरणमुल गेलिचि। भूवलयंबेल्ल बौन्दुगा नेलि
विष्णुनिभक्तुडै वेलसि यागमुलु। जिष्णुबलंबुन जेयुचुनुंडे;
ना राजुनकु विमलांगि यन् सतिकि। भूरितेजोयुतुलु पुत्ररत्नमुलु
नरयंग मुचुकुंदु डा सुसंधियुनु।दरुणुलेबंड्रु नु दग जनयिप २०७०
सुदतुल ब्रायंबु सौरिदि वच्चिननु। मुदमुन सौभरि मुनिपति किच्चे;
नतिवल कग्रजुडगु मुचुकुंदु। डतिवेड्क हरिभक्तुडै येगे दिविकि
नातनि सोदरुंडा सुसंधियुनु। नाततपुण्यात्मुडै भुविनेले,
नतनिकि ध्रुवसंधि यनुराजु पुट्टे।। नतडु प्रसेनजित्तनु राजु गनिये;
दोरय ब्रसेनजित्तुकु भरतुंडु। नरय ना भरतुनकसितुंडु वुट्टे;

भूख मिट गई। सुधा का पान करने से (उस) शुभलक्षण (वाले बालक) का, बुधजनों (की सलाह) से मान्धाता भूमीश नाम रखकर, वह बिडौज (इन्द्र) (इन्द्रलोक को) शीघ्र चले गए। तब वह मान्धाता भी पूर्णचन्द्र के समान प्रभा से युक्त हो (नित्य) बढ़ने लगा। यौवन पर आरूढ़ होते ही, प्रगाढ़ शौर्य-स्फूर्ति-सम्पन्न (मान्धाता), रावण आदियों को अनेक युद्धों में जीतकर, समस्त भूमण्डल पर सुन्दरता से शासन करने लगा। विष्णु की भक्ति और जिष्णु (इन्द्र) के बल से उन्होंने (अनेक) यज्ञ किये। उस राजा के विमलांगी नामक पत्नी से अति तेजस्वी पुत्ररत्न मुचुकुन्द (और) सुसन्धि (तथा) पचास पुत्रियाँ उचित रूप से उत्पन्न हुईं। ॥ २०७० ॥

पुत्रियों के क्रम से वयस्क (सयानी) होने पर, प्रसन्नता के साथ उन्हें सौभरि नामक मुनिपति को (ब्याह) दिया। उन पुत्रियों के अग्रज मुचुकुन्द अति आनन्द से हरिभक्त हो (स्वर्ग को) सिधार गए। उनके सहोदर सुसन्धि ने अति पुण्यात्मा होकर पृथ्वी पर शासन किया। उसके ध्रुवसन्धि नामक राजा पैदा हुआ, उसने प्रसेनजित नामक राजा को जन्म दिया। प्रसेनजित के भरत हुआ, उस भरत के असित उत्पन्न हुए। उसके राज्य करते समय, हैहयवंश के नारंग, शशिबिन्दु नामक अतुल पराक्रमशाली, दारुण आकारवाले (और) तालजंघाओं वाले शत्रुओं ने मिलकर अनुपम रूप से अतिघोर युद्ध किया (और) उसका (असित का)

ततडु राज्यमु सेय नातनि शत्रु । लतुलपराक्रमुलैन हैहयुलु
दारुणाकारुलु दाळजंघुलुनु । नारंग शशिबिंदु लनुवारु गूडि
यतिघोरयुद्धंबु नतुलत जेसि । यतनि ना यनिलोन हतु जेसि चनिरि;
अंत नातनि सतुलतिदु:खमंदि । मंत्रुल राज्यंबु मऱि दीर्प नुनिचि
मॆलिमि नुंडिरि; मॆलतलिद्दरनु । गाळिंदि यनु सति गर्भमैयुंडॆ; २०८०
मेलौर्वलेक या मॆलतलंदन्य । सालंग सवति मच्चरमुन जेसि
गर्भिणियै युन्न काळिंदि कपुडु । गर्भंबु जॆऱुप नॊक्कट विचारिंचि
यॊवंक विषमु प्रयोगिंचॆ; नंत । ना विषमुन गर्भमट वीडिपडक
ता वेगि वेदनदल्लडंबंदि । या वनितयु दुषाराद्रिकि नरिगि
च्यवनुनि गांचि या संयमींद्रुनकु । नविरळभक्तितो नल्लन म्रॊक्कि
तनदु वृत्तांतंबु दग विन्नविंप । विनियु ना पुत्रिवि वॆऱवकुमनुचु
बॊन्दार गरुणतो बूबोडि नॆत्ति । कंदुवदृष्टिनि कडगि लो जूचि
‘प्रतिपक्ष दमनुंडु परमधार्मिकुडु । नतुलतेजुंडु महात्मुंडु नगुचु
वरकीर्तिवंतुंडु बंशवर्धनुडु । परमरूपंबुन भासिल्लुवाडु
बॊगडॊन्द गरमुतो बुत्रुंडु नीकु । नगुगाक गाळिंदि ! ’ यनुचु दीविंप
२०९०

उस युद्ध में वधकर चले गए । तब उसकी दोनों पत्नियाँ अति दुखी हुईं । (उसके बाद) मन्त्रियों पर राज्य (भार) रख शान्ति से जीवन बिताती रहीं । उन दोनों नारियों में कालिन्दी नामक रानी गर्भवती थी । ॥ २०८० ॥

सौतियाडाह के कारण दूसरी (रानी) से यह सहा नहीं गया । जब कालिन्दी गर्भवती थी, तब उस गर्भ को हानि पहुँचाने का एक उपाय सोचकर, विष का प्रयोग किया । तब उस विष के कारण गर्भपात न होकर, अति वेदना से व्याकुल होकर, वह वनिता तुषाराद्रि (हिमालय) को गई । (वहाँ) च्यवन ऋषि का दर्शनकर, उस संयमीन्द्र को अविरल-भक्ति से प्रणाम किया (और) उचित रूप से अपना वृत्तान्त कह सुनाया । सुनकर ‘मेरी पुत्री हो, डरो मत’ कहते हुए, (मुनि ने) स्नेह और करुणा से उस लतांगी को उठाया । वात्सल्य दृष्टि से अन्तरंग (सारी कथा) को जानकर, यह कहकर आसीसा कि ‘हे कालिन्दी ! शत्रुदमन, परम धार्मिक, अतुल तेजोयुक्त, महात्मा, वरकीर्तिवान्, वंशवर्द्धन, परमरूपवान्, अति प्रशंसनीय पुत्र तुम्हें होगा’ । ॥ २०९० ॥

वलगॊनि यम्मुनीश्वरुनकु म्रॊक्कि । यॆलमितो दनयिंटि केगि या युवति
यतिमुदंबुन नुन्न ना शुभांगिकिनि । सुतुडुदयिंचॆनु शुभमुहूर्तमुन;
गरमॊप्प बुत्रुनि गाँचि काळिंदि । गरमुतो मुदमंदॆ गडु संभ्रममुन;
नातंडु शत्रुल नणचि राज्यंबु । चेतोमुदंबुन जेयुचुनुंडु
सततंबु विलसिल्लॆ सगरुडन् पेर, । नतनिकि दनुजन्मुडसमंजसुंडु;
नतनिकि सुतुडय्यॆ नंशुमदाख्यु; । डतनि पुत्रुडु दिलीपावनिनाथु;
डतनिकुन्नतपुण्युडगु भगीरथुडु; । सुतुडातनिकि गकुत्स्थुंडनु राजु;
नतनिसूनुडु रघुवनु महीपालु; । डतनि पुत्रुडु पुरुषादुडन् राजु;
गमनीयसितकीर्ति कल्माषपादु; ।डमर शंखणुडय्यॆ नतनिकि; कातनिकि
सुतुडु सुदर्शन क्षोणीतलेशु; । डतनि तनूजन्मुडग्निवर्णुडु; २१००
नतनिकि शीघ्रगुं; डतनिकिमरुवु।सुतु; डातनिकि ब्रशुश्रुकुडु; नातनिकि
सुतुडय्यॆ नंबरीषुंडनु राजु; । सुतुडातनिकि जनस्तुत्युंडु नहुषु;
डतनिकि सुतुडु ययाति यन् मेटि; । यतनिकि नाभागु: डातनिकजुडु;
नतनिकि नतिरथुंडगु दशरथुडु । सुतुडय्यॆ; सफलनिस्तुलमनोरथुडु
रामुडीदशरथराजु तनूजु; । डेमनि वर्णितु ने निंक नतनि?
नितनिकि नी कूतु नी गंटि; वीवु । कृतकृत्युडवु; शुभांकितमय्यॆ गुलमु’

प्रदक्षिणाकर, उस मुनीश्वर को प्रणामकर, प्रसन्नता से वह युवती अपने घर गई । अति मोद के साथ रहनेवाली उस शुभांगी के एक शुभ-मुहूर्त में पुत्रोदय हुआ । अति शोभायुक्त पुत्र को देखकर कालिन्दी बड़े सम्भ्रम के साथ अत्यन्त प्रसन्न हुई । वह (पुत्र सयाना होने पर) शत्रुओं का दमन कर आनन्द के साथ राज्य करने लगा । सगर के नाम से वह शोभायमान हुआ । उसके पुत्र असमंजस (और) उसके अंशुमदाख्य (अंशुमान) पुत्र हुआ जिसका पुत्र भूनाथ दिलीप हुआ । उसके उन्नतपुण्यवान् भगीरथ हुआ । उसके ककुत्स्थ नामक पुत्र हुआ । उसका पुत्र रघु नामक महीपाल था । उसका पुत्र पुरुषाद (नामक) राजा था । उसका कमनीय सितकीर्तिवाला कल्माषपाद हुआ । उसके शंखण हुआ, जिसके पुत्र सुदर्शन का क्षोणीतलेश (और) उसका पुत्र अग्निवर्ण था । ।। २१०० ।।

उसका शीघ्रग हुआ, उसका पुत्र मरु था । उसका प्रशुश्रुक हुआ । अम्बरीष नामक राजा उसका पुत्र हुआ । उसका (पुत्र) लोकवन्दित नहुष हुआ । उसका पुत्र ययाति नामक वीरश्रेष्ठ था । उसका आभाग (और) उसका अज हुआ । उसका पुत्र अतिरथ हो दशरथ अति सफल-मनोरथ हुए । ये राम इसी राजा दशरथ के तनूज हैं । अब मैं

ननि यिट्लु रघुवंशमभिनुति सेय । विनि शतानंदुंडु विमलमानसुड्डु
संतोषमुन बॊन्दि समयज्ञुडगुचु । बंतंबु मॆऽसि शुंभद्वाक्य सरणि
जनकानुमति सभासदुलॆल्ल विनग ।मुनि वसिष्ठुनि जूचि मुदमॊप्प बलिकॆ:
'मुनिनाथ ! मी चेत मुदमार विंटि । मनघात्मु दशरथुनन्वयक्रममु
२११०
सन्नुतिकॆक्कु नी जनकुनन्वयमु । सॆन्नॊन्द मी केनु जॆप्पॆद विनुड्डु

जनकुनि वंशक्रममु

सद्विजपरमहंस प्रतिपाद्यु । डद्वितीय ब्रह्मैन यच्युतुनि
नाभिसरोजंबुननु ब्रह्मवुट्टॆ; । ना भूतनिर्मात यगु धात वलन
बुट्टॆ मरीचि; या पुण्य वर्तनुनि । पट्टियै कश्यपब्रह्म जनिंचॆ:
नतनिकि दिननाथुडात्मजुंडय्यॆ; । मतिमंतुडतनिकि मनुवु जन्मिचॆ;
नम्मनु वच्युतध्यानकालमुन । दुम्मग वैवस्वतुनि तुम्मु वलन
निर्मलाचारुड्डु नीतिकोविदुड्डु । धर्मशीलुंडु नुत्तमगुणान्वितुड्डु

इसका अधिक क्या वर्णन करूँ? इसे अपनी पुत्री देने के योग्य बने हो। तुम कृतकृत्य हुए हो। तुम्हारा कुल (इससे) शुभांकित हो गया है'। इस प्रकार (वसिष्ठ) के रघुवंश की अभिनुति करते सुनकर, विमलमानस शतानन्द प्रसन्न हुए। समयज्ञ होने से, स्पर्धा से चमककर, अतिशय वाक्यों की पद्धति में, जनक की अनुमति से, मुनि वसिष्ठ को देखकर, बड़े आनन्द से वे (शतानन्द) यों बोले, जिसे सभी सभासद सुन रहे थे—'हे मुनिनाथ! तुम्हारे मुख से अनघात्म दशरथ के अन्वयक्रम को हमने बड़े आनन्द से सुना। ॥ २११० ॥

—प्रशंसनीय इस जनक के चारु अन्वय (वंशावली) के बारे में अब मैं सुनाऊँगा।

जनक का वंशक्रम

—'सद्विजों (और) परमहंसों (मुक्त-आत्माओं) के द्वारा प्रतिपादित अद्वितीय ब्रह्म अच्युत के नाभिसरोज में ब्रह्मा पैदा हुए। (पंच) भूतों के निर्माता उस धाता (ब्रह्मा) के मरीचि पैदा हुए। उस पुण्यवर्तन (मरीचि) के पुत्र कश्यपब्रह्म पैदा हुए। उनके आत्मज दिननाथ, और मतिमान दिननाथ के मनु (वैवस्वत) पैदा हुए। अच्युत का ध्यान करते समय मनु ने छींका तो उस वैवस्वत की छींक से निर्मल आचारवान्, नीतिकोविद, धर्मशील, उत्तम गुणान्वित, विमल मूर्तिवान्, त्रिलोकों में

विमलमूर्ति त्रिलोकविश्रुतकीर्ति । निम यनु राजु मानिततेजुडॉप्पे;
नतनि पुत्रुडु मिथि: यतनिकि जनकु । डतनिकुदावसुं; डम्महीजानि
तनयुंडु नंदिवर्धनुडु; सुकेतु । डनु विभुडतनिकि; नम्महात्मुनकु २१२०
राजर्षि यगु देवरातुडेल्लॅडल ।राजिल्लॆ; मरि बृहद्रथुडु दत्सुतुडु;
नतनिकि नंदनुडु महावीरु; डतनि ।सुतुडय्यॆ सुधृति: या सुधृतिकि दृष्ट
केतु डातनिकुरुकीर्ति हर्यश्वु । डातनिकिनि मरुं; डामरुनकु
सुतुडु प्रतींधकक्षोणीशु; डतनि ।सुतुडु कीर्तिरथुंडु; सुतुडाविभुनकु
देवमीढुंडु; तदीयुडौविबुधु; । डा विबधुनि पुत्रुडगु महीध्रुनकु
गीर्तिरातुडु: वानिकिनि महारोमु । डार्तिदूरुडु: वानि का स्वर्णरोमु:
डा स्वर्णरोमुंडु ह्रस्वरोमाख्यु ।भास्वरगुणशालि बडसॆ: नातनिकि
जनकभूपाल कुशध्वजुल् वीरु । जनियिंचिरिरुवुरु सौजन्यधनुलु:
जनकुडंतट महीजनुल बालिप ।गनि यॊक्कनाडु सांकाश्यभूविभुडु
धन्य विक्रमुडु सुधन्वुडन्वाडु । सैन्यसमेतुडै चनुदॆंन्चि मिथिल २१३०
सीतासमेतंबु शिवुनि विल्लडुग । दूत बुत्तॆन्चिन द्रोपिंचॆ वॆडल
बैवच्चि हरुनि चापंबु सीतयुनु । गाव लॆननि घोरकलहंबु जेय

विश्रुत कीर्तिमान, मानित तेज (मान्य तेजोयुक्त) निमि नामक राजा उत्पन्न हुआ। उसका पुत्र मिथि था। उसके जनक (और) उसके उदावस हुए। उस राजा का पुत्र नन्दिवर्द्धन हुआ। उसके सुकेतु नामक विभु (राजा) हुआ। उस महात्मा के ॥ २१२० ॥

—राजर्षि देवरात हुए। उनके पुत्र बृहद्रथ थे। उसके पुत्र महावीर, उसके पुत्र सुधृति, जिसके पुत्र धृष्टकेतु हुए। उसके महान् कीर्तिसम्पन्न हर्यश्व हुआ। उसके मरु (और) उस मरु के पुत्र राजा प्रतीन्धक हुआ। उसका पुत्र कीर्तिरथ (और) उस राजा के देवमीढ (और) उसके विबुध, उस विबुध के पुत्र महीध्र के कीर्तिरात, उसके दुःख को दूर करनेवाला महारोम, (और) उसके स्वर्णरोम हुआ। उस स्वर्णरोम ने ह्रस्वरोम नामक तेजोवान्-गुणशाली पुत्र को प्राप्त किया। उस (ह्रस्वरोम) के राजा जनक (और) कुशध्वज नामक दो (पुत्र) पैदा हुए। ये दोनों सौजन्य की मूर्ति हैं। जब जनक (प्रजा पर) राज्य कर रहे थे, उसे देख, एक दिन सांकाश्य-नरेश सुधन्व जो धन्यविक्रम वाला था, सेना सहित मिथिला आया, ॥ २१३० ॥

—(और) सीता सहित शिवधनुष को प्राप्त करने के लिए (जनक के पास) दूत भेजा। उसे (जनक ने) विमुख कर दिया। (इस उपेक्षा पर)

जनकुंडु संगरस्थलि वानिगूल्चि । तन तम्मु बून्चे नद्धरणिकि; नंत
निमिवंशमुन बुट्टु नृपतुलंदऱुनु । समधिकयोग विज्ञानसंपदल
चिरजीवुलट्टुगान जॆच्चॆऱ वीरि । तरमुनु गॊन्चॆमै तगुनु लॆक्क' कनि
जनकुनि वंशंबु सद्वर्तनंबु । गॊनियाडि, या सीतगुणमुलु वॊगडि
विशद प्रतापुनि विमलभाषणुनि । दशरथु गनुगॊनि 'दशरथाधीश
नी तनूजुनि रामु नित्याभिरामु ।सीत तोडुत बॆन्ड्ल सॆलुवॊप्प जेसि
यलघुकीर्तुल बॊन्दु' मनु शतानंदु । पलुकुल दशरथपति युत्सहिंचि
२१४०

घनुनि वसिष्ठुनि गाधिनंदनुनि ।गनुगॊनि वारितो गडुवेड्क बलिकॆ:
'जारु विचारु नी जनक भूविभुनि । मीरडुगुंडु सौमित्रकूर्मिळनु
ब्रकट गुणोत्तरुल् भरतशत्रुघ्नु । लकु गुशध्वजनृपालकुनि कूतुलनु'
नन वारु जनकुन कत्तॆऱंगॆल्ल ।विनुर्पिंचि यनुमति वेड्कतो बडसि
जनकुनि वाक्यमुल् सकलंबु वेड्क । दनरार जॆप्पि रा दशरथुतोड;

उसने (सुधन्व ने) चढ़ाई की (और) शिवधनुष तथा सीता के लिए घोर युद्ध किया। जनक ने (युद्धभूमि) में उसको (मार) गिराया, (और) उस धरणी (सांकाश्य भूमि) पर अपने भाई को राजा बनाया। तब से जनक से लेकर, उस वंशजात सभी राजाओं के लिए धरती पर 'जनक' नाम ही प्रशस्त (श्रेष्ठ) माना गया। इस प्रकार निमि वंश में उत्पन्न सभी नृपति समधिक विज्ञान-योग-सम्पत्ति से युक्त और चिरजीवी होते रहे हैं। अतः इनकी पीढ़ियों की गणना कहाँ तक सम्भव है—'। इस प्रकार जनक के वंश, उनके सदाचरण (आदि) की प्रशंसा कर, सीता के गुणों की सराहना की (और) विशद प्रताप (तथा) विमलभाषी दशरथ को सम्बोधित कर (शतानन्द ने) इस प्रकार कहा—'हे दशरथाधीश ! अपने आत्मज नित्याभिराम राम का सीता के साथ मनोहरता से विवाह करके विशद कीर्ति को प्राप्त करो'। शतानन्द की इन बातों से राजा दशरथ उत्साह से, ॥ २१४० ॥

—महान् वसिष्ठ (तथा) गाधिनन्दन को देख, बड़े आनन्द से उनसे (यों) बोले—'आप चारु विचारशील महाराज जनक से निवेदन करें कि सौमित्र (लक्ष्मण) से ऊर्मिला (और) गुणों में श्रेष्ठ भरत-शत्रुघ्न से कुशध्वज नृपाल की पुत्रियों को ब्याह दें। (ऐसा) कहने पर उन्होंने वह समस्त विषय जनक को कह सुनाया (और) सानन्द उसकी अनुमति प्राप्त करके, जनक के समस्त वाक्यों को (अर्थात् स्वीकृति को), आनन्द से उल्लसित दशरथ को कह सुनाया। अनुराग से आलोड़ित राजा जनक ने, दूसरे

ननुराग मुप्पौंग्ग ना मरुनाडु । घनशुभग्रहदृष्टि गलुगुट जेसि
पनिवडि युत्तर फल्गुनियंदु । जनकुंडु लग्ननिश्चयमु सेयिंचि

पुरालंकारमु

पुरमुनु दन यंतिपुरमु गैसेय । बरिचारकुल वेग बंचिन वारु
गंधकस्तूरिकाकलितांबुपूर । गंधिलसकलमार्गंधरांगणंबु
चीनिचीनांबर श्रेणीवितान । नानामणितोरण ध्वजांचितमु २१५०
फलभारनम्ररंभास्तंभपूग । कलित प्रतिद्वारकक्ष्यातरंबु
सांकवलिप्तविस्तारवितर्थि । कांकितरंगवल्लयादि शोभितमु
मणिशातकुंभ कुंभवितर्कितार्क । गणसौधगोपुरोत्करशिरोग्रंबु
दीपित माणिक्य दीप सांब्राणि । धूप पुष्पकलाप धूर्वहापणमु
नै पुरमॆल्लॆड नलर गैसेसि । नैपुणि मॆऱसि यंतःपुरबंत
गरमॊप्प गैसेसि 'कल्याणवेदि । विरचिंपु' डन शिल्पवेदुलंतयुनु

दिन अत्यंत शुभ-ग्रह-दृष्टि को देखकर, उत्तर-फाल्गुनी (नक्षत्र) में लग्न का निश्चय किया।

नगर को सजाना

—(उन्होंने) नगर (और) अपने अन्तःपुर को सजाने के लिए तत्काल परिचारकों को भेजा। उन्होंने (नगर के) सभी मार्गों पर गन्ध(चन्दन)-कस्तूरी से सुवासित जल से (छिड़काव कर) पूरी तरह से धरती को सुगन्धमय बनाया। चीनि-चीनाम्बरों (रेशमी वस्त्रों) की पंक्ति वितानों (तम्बुओं) से, नाना मणिमय तोरणों (और) ध्वजाओं से (सारे नगर को) सजाया।॥ २१५०॥

प्रत्येक द्वार (तथा) कक्ष (घर) को फलभार से झुके हुए रम्भा-(कदली के) स्तम्भों और पूग (सुपारी के) पल्लवों से विभूषित किया। सांकवलिप्त (मृगमद से विलेपित) विस्तृत वितर्थिकाओं (चबूतरों) को रंगवल्लियों से सुशोभित किया। मणिमय-शातकुम्भ (सुवर्ण-कलशों) से युक्त सौध-गोपुरों के शिरोग्र भागों का समूह अर्क (सूर्य) गण की भ्रान्ति उत्पन्न कर रहा था। दीप्त माणिक्य-दीपों, सांब्राणि (वारम्भी) धूप के (धुएँ) (और) पुष्पकलाप के भार को मानों बाजारें वहन कर रही थीं। इस प्रकार नगर को सर्वत्र सानन्द सजाकर, तब अन्तःपुर को अधिक नैपुण्य के साथ सजाया। फिर 'कल्याण-वेदी का निर्माण कीजिए' कहने

बच्चऱाजगतिपै बसिडि कंबमुलु । मॆच्चु रा निलिप यामीद नीलंपु
बोदॆलु गुरुविंदमुल दूलमुलुनु । बादुगा निडि तीरुपड जॆक्कडंपु
गोमेधिकंबुल कॊणिगलु बविरि । गा मलिच पै वज्रगार यॊसंगि
हाटकमणिमयायत कवाटमुल । वाटंबुगा नाल्गु वाकिड्लमर्चि २१६०
यंदुल बंगरुहरुवु चित्तरुवु । लंदंबुगा दीर्चि हरिनीलकरुल
गमि गमिचिन पटिकंपु सिंगमुल । गमकमौ सोपानगतुलेर्पऱिचि
कलितलामज्जकायमानमुल । गलुवडंबुलु डंबुगा जुट्टुगट्टि
यालोन नेकांडमौ बलुपच्च । मेलिपॆन्ड्लयरुंगु मृगनाभि नलिकि
मुत्तॆम्पुनिग्गुल म्रुग्गुलेर्पऱिचि । चित्तजजनक लक्ष्मी विवाहंबु
गुजरातिकॆंपुल गोड लिखिप । व्रजलकु गन्नुलपंडुवै यॊप्पॆ;
नंत वसिष्ठविश्वामित्रमुनुल । संतत पुण्युल जनकुंडु सूचि
'मीर लयोध्यकु मिथिलकु गर्त । ले रूप मुचितमै यिटमीद जॆल्लु

पर शिल्पविदों ने (विवाह-हेतु) कल्याणवेदिका का निर्माण इस प्रकार किया। (शिल्पवेदियों ने) मरकत की जगत (फ़र्श) पर सुवर्ण-स्तम्भ सराहनीय रूप से खड़े किए। उसके बाद नीले रंग की धन्नियों और गुंजाफल (लाल रंग) के स्लीपरों को ठीक ढंग से सजाया। सुन्दर ढंग से नक्काशी करके बनाए गए गोमेदिकों की राशि को स्वच्छ रूप से खचित कर उनपर वज्र (हीरा) का गारा किया। (उस मंडप के चारों ओर) स्वर्ण और मणिमय चार विशाल किवाड़ों (फाटकों) को समुचित ढंग से लगाया। ॥ २१६० ॥

उसमें सोने के मनोज्ञ चित्र सुन्दर ढंग से चित्रित किये गए। नीलमणि के हाथियों (और) स्फटिक-सिंहों से युक्त आकर्षक सोपानों (सीढ़ियों) का निर्माण किया गया। सुन्दर खस का मनोहर शामियाना और उसमें कमल की लड़ियों को अधिकता से, चारों तरफ़ लटकाया। उसके मध्य मरकत पत्थर से बनी एक श्रेष्ठ-विवाह-वेदी रची गई जिस पर कस्तूरी का लेपन किया, चमकते मोतियों से चौक पूरे, गुजरात के माणिक्यों की दीवार सजाई। इस प्रकार मनोज और लक्ष्मी के विवाहार्थ बना विवाहमण्डप जनता को नेत्रोत्सव प्रदान करता हुआ शोभायमान हुआ। तब सन्तत पुण्यवान वसिष्ठ (और) विश्वामित्र आदि मुनियों को देखकर जनक (यों) बोले—'आप ही लोग अयोध्या और मिथिला (दोनों ओर) के कर्ता (नियामक) हैं। अब आगे जो विधान समुचित हो, उसे कराइए'।

दाशरथुल यलंकरण

नदि सेयुदुरु गाक' यनवुडु वारु । सदुरॊप्प दशरथ जनपालचंद्रु
नायतशुभमैन यभ्युदयंबु । सेयिप नर्थितो जेसॆ नव्विभुडु; २१७०
ऎक्कुडु संतोषमॆसग जित्तमुन । नॊक्कॊक्कसुतुनकभ्युदयंबुकॊरकु
वॆलयंग नन्नियु वेदोक्तयुक्ति । गलय बदारु लक्षलधेनुवुलनु
गलधौतखुरमुलु गनक श्रृंगमुलु । दलकॊनि चॆलुवॊन्दु ताम्रपुच्छमुलु
दॊरसि मिंचिन कांस्यदोहनंबुलुनु । वरुस वॆष्ठिंचिन वरवस्त्रमुलनु
गलिगि सवत्सलै करमॊप्पु वानि । ललि भूसुरोत्तमुलकु भक्ति निच्च
मऱियु नसंख्यातमहित हेममुलु । तऱचुगा नंतट दक्षिणलॊसगि
भूदान बसुदानमुलु मॊदलैन । वेदोक्त दानमुल् वेर्वेऱ नॊसगॆ;
गॊमरुल नल्वुर गॊमरोप्प नप्पु । डमितमंगळमुलौ नखिलवाद्यमुल
बाटलु पाडुचु बरग नंगनलु । तेटगा नंदरु दॆच्चि पीटलनु
गूर्चुंड दललंटि कुदुरुग वार । लॆर्चि नल्वुलु वॆट्टि यॆन्तयु ब्रीति २१८०
स्नानमुल् सेयिंचि चक्कगानुदुट । मानिततिलकंबु मऱि भूषणमुलु
जीनाबरंबुलु जॆलुवॊप्पनिच्चि । नानाविधंबुल नलुवुग दीर्प

दशरथ-पुत्रों का अलंकरण

—ऐसा कहने पर, उन्होंने दशरथ-जनपाल-चन्द्र के लिए आयत शुभप्रद अभ्युदय (प्रद कार्य) कुशलता से करवाया। उस राजा ने (भी उन कार्यों को हार्दिक रूप से) किया। ॥ २१७० ॥

मन में अधिक हर्ष के उमड़ आने पर, एक-एक (प्रत्येक) सुत के अभ्युदय (श्रेय) के लिए वेदोक्तयुक्ति के अनुरूप सुन्दर-सफ़ेद खुर, कनक-श्रृंग, शोभायमान ताम्रपुच्छों से युक्त, वर-वस्त्रों से सज्जित, श्रेष्ठ कांस्य-दोहन (दूध दुहने के लिए काँसे के पात्र), और बछड़ों से युक्त सोलह लाख गाएँ, प्रेम और भक्ति से भूसुरोत्तमों (श्रेष्ठ ब्राह्मणों) को दीं। फिर असंख्य मूल्यवान् स्वर्ण (मुद्राएँ) दान में दीं। अलग से भूदान, स्वर्णदान आदि वेदोक्तदान दिए। तब अमित मंगलप्रद नाना वाद्यों के मंगलनाद और वनिताओं के मंगलगीतों के बीच, शोभा के साथ चारों पुत्रों को लाकर आसनों पर बिठाया, सिर पर तेल लगाकर, सुचारु रूप से, बड़ी प्रीति से उबटन लगाया, ॥ २१८० ॥

—स्नान करवाया, (उपरान्त) माथे पर सुचारु तिलक देकर भूषण (और) चीनाम्बर (रेशमी वस्त्रों) से विभूषित कर, नाना विधियों से अलंकृत

दशरथु भार्यलु दशरथेश्वरुडु । विशदप्रतापुंडु वॆड्क नुप्पॊंगि
सकलभूषणमुलु सरसत बॆट्टि । यकलंकमतितोड नलरिरॆन्तयुनु:
ददवसरमुन युथाजित्तु प्रेम । तुदमीऱगा भरतुनि मेनमाम
तनतंड्रि केकयधरणीश्वरुंडु । मनुमनिभरतुनि मैत्रि दॊड्तेर
दनु नंपगा नयोध्यकु वच्चि यचट । दनयुल पॆन्ड्लिकै दशरथेश्वरुडु
जनकुनि वीटिकि जनुट यॆंऱिगि । यनुरक्ति वेवेग नचटि केतेर
दशरथुंडतनि नादरण बूजिंचि । कुशलंबॆल्ल बेकॊर्नुचुंडॆ; नंत
मऱुनाडु स्नातक महितकृत्यमुलु । तऱितोड गाविंचि तम्मुलु दानु २१९०

रामुडत्तऱि दशरथुनॊद्द निलुव । श्रीमीऱ नतनि गैसेयिंचॆ नृपुडु;
नारामु नौदल नमरॆ गिरीट । मारोहणाद्रि श्रृंगाग्रमो यनग;
बद्धकंकणुडय्यॆ भक्तुल ब्रोव । सिद्धमन्नट्लु दाल्चॆनु गंकणम्मु;
लॆद मुन्नुवुट्टिन यिंदु दीधितुलु । पॊदलॆ नेडन हारमुलु सॆन्नुमीऱॆ;
दन कनकांबरत्वमु भूमि दॆल्पॆ । नन गनकांबरंबलरारॆ गटिनि;

किया । (उन्हें देखकर) दशरथ की पत्नियाँ और विशद प्रतापवाला दशरथेश्वर आनन्द से फूले नहीं समाते थे । पवित्र मन होकर सरलता से (उन्होंने पुत्रों के कल्याणार्थ) सकल भूषण (आदि दान) में देकर प्रसन्नता का अनुभव किया । उसी अवसर पर भरत का मामा (युधाजित्) असीम प्रेम के साथ वहाँ आया । वह अपने पिता कैकय-धरणीश की आज्ञा से उनके दौहित्र (भरत) को लिवा ले जाने के लिए अयोध्या आया था । (किन्तु) वहाँ, दशरथेश्वर पुत्रों के विवाह के लिए जनक के यहाँ गए हैं, (यह) जानकर, प्रसन्न मन से अति शीघ्र यहाँ (मिथिला) आया । दशरथ ने उसका आदर से सत्कार कर, समस्त कुशल-समाचार पूछा-बताया । तदनन्तर, दूसरे दिन, स्नातक-विहित-कृत्य (विवाह-पूर्व वर के द्वारा कराए जानेवाली विधियाँ) ठीक समय से सम्पन्न करके राम (अपने) भाइयों के सहित, ।। २१९० ।।

—दशरथ के समक्ष आ उपस्थित हुए । (तब) नृप ने अति शोभा के साथ उनको अलंकृत कराया । उस राम के सिर पर किरीट ऐसा शोभित हुआ मानों उदयाचल के श्रृंग का उत्तुंग शिखर हो । उन्होंने कंकण धारण किए, मानों भक्तों की रक्षा के लिए बद्धकंकण (कृत-संकल्प) हो गये हों । आज उनके वक्षस्थल पर हार ऐसे शोभा दे रहे थे मानों उनके वक्ष से पैदा हुई चन्द्र-किरणें छिटक रही हों । कटि-प्रदेश पर कनक-वस्त्र ऐसे शोभित हुए मानों पृथ्वी अपने कनकांबरत्व को प्रकट कर रही हो ।

गष्ट रावणुनिचे गासिल्लिनट्टि । यष्टदिक्पालुर यशमुलिवॆंक
मौक्तिकच्छलमुन मनवुलु दॆल्पु । युक्तिमै जौकट्टु लॊप्पॆ वीनुलनु;
वदनश्रृंगार मी वैखरि नॊप्पु । बॊदलन गस्तूरि बॊट्टु सूपट्टॆ;
बदपडि लक्ष्मण भरत शत्रुघ्नु । लुदयार्कतेजु लॊन्डॊरुलु वेर्वेऱ
गुंडलकेयूर कोटीर हार । मंडनावळि सुकुमार देहमुलु २२००
गॆसेय नंदु दिक्पतुल मध्यमुन । वासवुंडन रामवल्लभुंडॊप्पॆ
तंत नक्कड जनकावनिनेत । कांतिमै नलुवुरु कन्यकामणुल
गॆसेय सैरंध्रिकल बंप वारु । भासुरमणिपीठिपै वारिनुनिचि
पेरटांड्रॊगि बाडु पॆन्ड्लिपाटलकु । शारिका कीरमुल् संदडि सेय
गुंकुम कस्तूरि गोरोचनंबु । संकुमदंबु वासन गदंबिप
नलुगुरि कॊक्कट नलुगुलु वॆट्टि । कलमृदुध्वनुल गंकणमुलु मॊऱय
गुरुल संपॆन्ग नूनॆ गूर्चि यिपॊन्द । हरिचंदनंबुन नटकलि वॆट्टि
घनसार सुरभि नखंपचांबुवुल । जनकपुत्रिकलकु जलकमुल् दीर्चि

चार-चार मोतियों से बने कुण्डल उनके कानों पर ऐसा शोभा दे रहे थे कि क्रूर रावण से पीडित अष्टदिक्पालों का यश (व्यथा) मुक्ताओं के बहाने (राम के कानों में) विनम्र होकर सुना रहा हो। मुख का श्रृंगार कैसा सुशोभित है, यह व्यक्त करने के लिए कस्तूरी-तिलक शोभा दे रहा था। उस समय पृथक्-पृथक् उदयार्क (बाल सूर्य) के समान तेजोयुक्त, कुण्डल, केयूर, कोटीर, हार से मण्डित सुकुमार देह वाले सुशोभित लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, ॥ २२०० ॥

—के बीच राजा राम ऐसे शोभा दे रहे थे मानों दिक्पतियों के मध्य वासव (इन्द्र) विराजमान हों। तब वहाँ राजा जनक ने अति मञ्जुल चारों कन्यकामणियों को अलंकृत करने के लिए सैरन्ध्रियों (दासियों) को (अन्तःपुर में) भेजा। उन्होंने उन्हें (कन्याओं को) दीप्तिमान मणि-जटित आसन पर बिठाया। सुमंगलियों द्वारा क्रम से गाए जानेवाले विवाह-गीतों को (सुन) शुक-सारिकाओं के कलरव के बीच, चारों (कन्यायों) को एक साथ, कुंकुम, कस्तूरी, गोरोचन (और) संकुमद (जवादि) की सुगंध से सुवासित उबटन लगाया। कंकण की मृदुध्वनियों से मुखरित करपल्लवों से (उनके) केशों में चम्पा का तेल लगाया, प्रीति के साथ हरिचन्दन का लेप किया, घनसार (कर्पूर) की सुरभि से युक्त गुनगुने जल से जनक की (उन) पुत्रियों को स्नान करवाया, महीन वस्त्रों से (उनके शरीर को) पोंछा और गुलाबी रंग के स्वच्छ लहँगों पर सुनहली

जिलगुल दडियॊत्ति चॆन्गावि वन्नॆ । चलुवपावडलपै जाळुवा सरिग
कॊन्गुल नॊप्पु दुकूलमुल् गट्टि । श्रृंगारमुल् गुप्पसेसिरो यनग २२१०
गॊप्पगा नॊप्पुगा गॊप्पुलमर्चि ।विप्पुगा जाजि क्रॊव्विरुलंदु दुऱिमि
पच्चकप्पुरमुतो बन्नीटितोड । बच्चिकस्तुरि कलपमु गूर्चि यलदि
बंगारुसरिग गन्पड़ु कुट्टुपनुल । कंगुल ऱयिकलु गनुपट्ट दॊडिगि
निग्गयिन सकिनल निर्रसिंचि तम्मि । मॊग्गलकुनु सिग्गु
मॊलर्पिंचि पसिडि
तालंबुलनु गेरि तरमैन विरुल । मेलिबंतुलतोड मेलंबुलाडु
चनुकट्ल मीद बच्चल बन्नसरमु । लुनु दारहारंबुलुनु बॊन्दुपऱिचि
मुद्दुमोमुल कॊक्क मुरुवुरागोर । दिद्दुचु गस्तूरि तिलकमुल् दीर्चि
चॆक्कुल मकरिकल् सिंत्रिचि गॊप्प । मुक्कऱल् नासाग्रमुल गीलुकॊलिप
मगऱाल तळुकुगम्मलुनु गट्टाणि । बॊगडलु जुऱुकु गॆम्पुल बविरलुनु
बच्चल कडियमुल् पद्मरागमुलु । ग्रुच्चिन मॊलनूळ्ळु गोमेधिकमुल २२२०
यंदियल मॊदलैन हारिभूषणमु । लंदंबुगा जेर्पनपुड़ु कन्नियलु
शारदपूर्णिमा चंद्रबिंबमुलॊ ? । चारु वसंत वासर पुष्पलतलॊ?

ज़रीदार किनारों से शोभित दुकूल (महीन वस्त्र) पहनाए। उन्होंने मानों श्रृंगार को समेट कर प्रस्तुत कर दिया हो, इस प्रकार— ॥ २२१० ॥

—बड़े सुन्दर ढंग से जूड़े को सवाँरा, फिर उसमें खिले हुए बहुत से जूही के फूल सजाए। भीमसेनी कपूर एवं कच्ची कस्तूरी को गुलाबजल में मिश्रित कर (सारे शरीर पर) लेपन किया, सुनहली ज़रीदार कञ्चुकी (चोलियाँ) पहनाईं। उत्कृष्ट विहगों का तिरस्कार करनेवाले, कमल की कलियों को लज्जित करनेवाले, सुवर्णदीप्ति की अवहेलना कर, श्रेष्ठ पुष्पकन्दुकों का मज़ाक उड़ानेवाले स्तनों पर मरकतों के हार और तारहारों को सुन्दर ढंग से पहनाया। सुन्दर मुखों के सौन्दर्य-श्री की वृद्धि करते हुए ललाट पर कस्तूरी-तिलक लगाया, कपोलों पर मकरिका-पत्र रचे, नासाग्र पर श्रेष्ठ बेसर पहनाया, हीरों के कर्णफूल, मोतियों की बालियाँ, अधिक लाल रंग के पद्मराग के कर्णाभरण (कुण्डल), मरकतमणियों के कड़े, पद्मराग-गुँथी हुई मेखलाएँ, गोमोदिकों के बने नूपुर, ॥ २२२० ॥

—आदि सुरम्य आभरणों को सुन्दरता के साथ सजाने पर वे कन्याएँ ऐसी लगीं कि मानों शरत् पूर्णिमा के चन्द्रबिम्ब हैं! (अथवा) चारुवसन्त काल की पुष्पलताएँ हैं! (अथवा) खराद पर चढ़े हुए श्रेष्ठ रत्न हैं!

सानल दीऱिन जातिरत्नमुलॊ ? । श्रीनिंड बटिकनार्चिन कुंदनंपु
गम्मुलॊ ? मऱि पुलुगडिगिन मुत्ति । यम्मुलो ? नॆऱतावि नलरुगंदंपु
गॊम्मलो यन बॆन्ड्लिकूतुलॊप्पारि । 'रम्मक्क' यनि सतुलक्कजंवंद;
वारिलो सीत लावण्यविख्यात । सारगुणोपेत जगदेकमात
यादिमलक्ष्मि दानै पुट्टॆ गान । ना देवि चॆलुव मितंतनि तॆलिसि
भूषिप शक्यमे ? भूषणंबुलकु । भूषणंबै यॊप्पॆ भूदेविकरणि
मॆऱसि रत्नाकरमेखल यगुचु । मऱि गंधवति वसुमतियु नगुचु:
नंत वसिष्ठसंयमि लग्नसमय । मंतयु जनकुनि नरसि यॆतॆञ्चि २२३०
दशरथुतोड नंतयु दॆल्प नतडु । कुशिकपुत्र वसिष्ठगुरुलतो गदलि
यमरेंद्र विभवुडै यर्हयानमुल । गॊमरॊप्प गैसेसि कॊडुकुलु नडव
संगडि गॊलिचि राजन्युलु नडव । शृंगारमलवड जॆलुवलु नडव
ग्रंतलु गॊनि पुण्यकांतलु नडव । नंतंत बॊगडुचु नर्थुलु नडव
गैसेसि गणिकानिकायमुल् नडव । गैसेसि मंत्रिवर्गंबुतो नडव
गैसेसि मदमत्तगजमुलु नडव । गैसेसि भटतुरंगमकोटि नडव
वेदनादमुलतो विप्रुलु नडव । मोदंबुतो मुनिमुख्युलु नडव
नडचि यज्जनकुनि नगरॊप्प जॊच्चि । पुडमिऱेडप्पुडु पुत्रुलु दानु

(अथवा) श्री-समन्वित कुन्दन की शलाकाएँ हैं जिन्हें स्फटिक में स्वच्छ किया गया हो ! (अथवा) धवलित मोती हैं ! अधिक सुगन्ध से परिपूर्ण चन्दन की पुत्तलियाँ हैं ! —इस प्रकार- शोभायमान वे दुलहिनें सभी स्त्रियों को आश्चर्य-चकित करने लगीं । उनमें सीता, लावण्य की खान, सार-गुणोपेता, जगदम्बिका, आदिलक्ष्मी ही का अवतार थीं । अतः उस देवी के सौन्दर्य का वर्णन करना किस प्रकार सम्भव है ? वे भूषणों के लिए भूषण, और रत्नाकर रूपी मेखला से युक्त भूदेवी के समान प्रकाशमान हुईं । गन्धवती, वसुमती जैसी भासमान हुईं । तब शुभ-लग्न, समय (आदि) सब (बातों) के बारे में जनक से परामर्श कर, वसिष्ठ ने आकर, ।।२२३०।। —दशरथ से निवेदन किया, तो वे कुशिकपुत्र (कौशिक), वसिष्ठ (आदि) गुरुओं के साथ, अमरेन्द्र वैभव से युक्त होकर चले । उनके साथ उचित वाहनों पर विराजमान उनके पुत्र, साथ में अन्य सामन्त राजा, सुसज्जित रमणियाँ, वरपक्ष की ओर से वधू को दिए जानेवाले मंगलद्रव्यों को लिए हुए पुण्यवनिताएँ, बिरुद बखाननेवाले याचक, खूब साजसिंगार किये वेश्या-समूह, ठाठ-बाट के साथ मन्त्रिगण, सजे-बजे मदमत्त गज, सुभट, अश्वसमूह, वेदपाठ करते हुए विप्र, और प्रसन्नचित्त मुनिश्रेष्ठ चल पड़े । (ऐसे) चलकर उस जनक के नगर में पृथ्वीपति (दशरथ) ने पुत्रों के साथ

वनजलोचनलु निवाळुलॊसंग । जनकुडॆदुर्कॊनि संभ्रमंबॆसग

श्री सीता-कल्याणमु

खचितोरु नवरत्न कल्याण वेदि । नुचितपीठंबुल नुन्नचो ब्रीति २२४०
दन पुरोहितुलतो दडयक जनकु । डनलु ब्रतिष्ठिचि हैमवेदिकल
वेदोक्तविधि होमविधुलाचरिंचि । या देवकन्यकलन नॊप्पु तनदु
कन्यकामणुल नगण्य लावण्य । मान्यल नलुवुर मैत्रि राविंचि
जनकुंडु मधुपर्कसमयंबु दीर्चि । तन कूर्मिपुत्रि सौदामिनीगात्रि
गामिनीजनमणि गल्याणि सीत । गोमलि दॆरमऱुंगुन वेड्क निलिपि
रामाभिरामुडौ रामचंद्रुनकु । गामितसिद्धि संकल्पपूर्वमुग
'श्रीराम ! ना पुत्रि सीत सद्धर्म ।चारिणि गॊनुमग्निसाक्षिगा' ननुचु
दार वोसॆंनु देवतापुष्पवृष्टि । धारतो दिव्यवाद्य ध्वनुल् मीऱ्;
ब्रमदंबुतोड दीपाल पळ्ळॆमुलु । समदयानलु महासंभ्रमंबुननु

प्रवेश किया। जनक के ससम्भ्रम अगवानी करने के बाद कमलनेत्रियों ने आरती उतारी।

श्रीसीता-कल्याण

—तब जनक ने विवाहमण्डप में श्रेष्ठ नवरत्नों से खचित कल्याण-वेदी पर योग्य आसनों पर प्रीति से उनको आसीन कराया। ॥ २२४० ॥

उसके पश्चात् अविलम्ब जनक ने अपने पुरोहितों से सुवर्ण वेदिकाओं में अनल (अग्नि) को प्रतिष्ठित कराकर, वेदोक्तविधि से होम-विधियों को सम्पन्न कराया। (उसके बाद) देवकन्याओं के समान शोभायमान, अतुलित लावण्यवती अपनी चारों कन्यकामणियों को सप्रेम बुलवाया। मधुपर्क (विवाह के समय वर वधू को दिये जानेवाले नूतन वस्त्र) की विधि पूरी करके, विद्युत् के समान शरीर वाली, कामिनीजनमणि, कल्याणी, (और) कोमलांगी, अपनी लाड़ली पुत्री सीता को परदे के पीछे बड़े आनन्द से खड़ा किया। पश्चात्, रामाभिराम, रामचन्द्र को, वांछित फल की सिद्धि के लिए संकल्पपूर्वक यह कहते हुए कि 'हे श्रीराम! मेरी पुत्री सीता, सद्धर्मचारिणी सीता को, अग्नि को साक्षी बनाकर ग्रहण करो', (जनक ने सीता को) पानी के साथ कन्यादान कर दिया। दिव्य पुष्प-वृष्टि के साथ देवदुंदुभियाँ बज उठीं। मस्त चाल से चलनेवाली सुन्दर स्त्रियाँ महासम्भ्रम के साथ दीपों की थालियाँ लिए प्रस्तुत थीं। स्वर्ण

दलब्रालु बंगरु तबुकुल नुनिचि । कॆलकुल रमणुलु कॆरलुचु बट्ट २२५०
गुडमुतो जिल्कर गूर्चि यिद्दरकु । वडि शिरस्सुल मीद वलनॊप्प नुंचि;
रंतट सुमुहूर्तमनि तॆरदीय । गांत नॆम्मोमु मुन् गनुगॊनि यलरॆ
रामुनि कनुगव राकासुधांशु । गोमुन नलरॆडु कुमुदंबुलनग;
भामचूपुलु निल्चॆ बतिपादयुगळि । दामरपै देटितंडंबुलनग;
नितिलावण्याब्धि कॆदुरॆक्कु मीन । संतानमै रामचंद्रु चूपडरॆ;
वरु देहकांति प्रवाह मध्यमुन । दरुणिचूपुलु पद्मदळमुलै कालॆ;
सतिचूपु बतिचूपु सरसतजूपु । रतिरूपु रतिमनोरमणुनि रूपु
नॆलसि नॊन्डॊरु मेनुलॆऱुगराकुंड । गळलंट दाकिनगति गॊन्तसेपु
वॆलसॆ; नंतट रघुवीरकुंजरमु । चॆलिकेलु गॆन्दम्मि चॆलुवु बट्टॆ;
नॊन्डॊरुल् पुलकिंचि यॊक्क पीठमुन । नुंडि होममु सेयुचुंडि; रापिदप
२२६०
नुरुवयोधन्य ना यूर्मिळाकन्य । गरमु संप्रीति लक्ष्मणकुमारुनकु

के थालों में मंगलाक्षत रख, दोनों पार्श्वभागों में, प्रसन्नचित्त हो रमणियाँ खड़ी थीं। ॥ २२५० ॥

गुड़ के साथ जीरा मिलाकर, (मंगलस्वरूप) दोनों (वर-कन्या) के शिरोमध्य भाग पर सुन्दरता से रखा गया। तब सुमुहूर्त जानकर, परदा हटाया। (तब) कान्ता (सीता) के सुन्दर मुख को देखकर राम की आँखें राकासुधांशु (पूर्णचन्द्र) को देखकर सुकुमारता से प्रसन्न होने वाले कुमुदों के समान प्रफुल्लित हो उठीं। भामा (सीता) ने पति के चरण-युगल पर अपनी चितवन स्थिर की, मानों कमलों पर भ्रमर-समूह हों। रमणी के लावण्यसिन्धु-प्रवाह में तैरनेवाली मीनसन्तान के समान रामचन्द्र की चितवनें प्रतीत हुईं। (और) श्रीवर (राम) की देह-कान्ति के प्रवाहमध्य में वधू की चितवनें पद्मदल सदृश शोभित हुईं। सरसता को व्यक्त करनेवाला रतिरूप तथा रतिमनोरमण (मन्मथ) का रूप, सोल्लास एक दूसरे के शरीर को अनजान में स्पर्श कर रहा हो, इस प्रकार पत्नी और पति की चितवनें (एक दूसरे को अनजाने में देखती) कुछ क्षण तक विलसित हुईं। इसके पश्चात् रघुवीरकुंजर ने सखी (सीता) के लाल-कमल सम हाथ को प्रेम से हाथ में ले लिया। (एक दूसरे के स्पर्श से) प्रफुल्लित हो वे एक ही आसन पर दोनों बैठकर हवन करने लगे। तदनन्तर, ॥ २२६० ॥

—युवतियों में श्रेष्ठ ऊर्मिला को लक्ष्मणकुमार को, विराजमान उस कुश-ध्वज की पुत्रियों में कमलाक्षी मांडवी को भरत को, चन्द्रबिम्ब के समान

नलनॊप्पु ना कुशध्वजु कूतुलंदु । नलिनायताक्षि मांडवि भरतुनकु,
नत्रिजबिंबास्ययगु श्रुतकीर्ति । शत्रुघ्नुनकु निच्चॆ जनकुंडु ब्रीति;
निगमोक्तविधिनि बाणिग्रहणमुलु ।दगिलि कार्विचिरि दशरथात्मजुलु;
तलब्रालु वोसिरंदरु; लाजहोम । मुलु दीर्चि कांचिरि मुनुल दीवनलु;
दिविनुंडि घोषिंचॆ देवदुंदुभुलु; । भुविनिंड गुरिसॆनु बुष्पवर्षमुलु;
अप्पुडानंदिंचिरखिलदेवतलु; । नप्पुडानंदिंचिरखिल सन्मुनुलु;
पाडिरि गंधर्वपतुलुत्सहिंचि; । याडिरि संप्रीति नप्सरोजनुलु;
अपुडु वसिष्ठुडा यवनीशसुतुल । नुपमिंप वैवाहिकोक्तोमॆनट्टि
होमांतमुन वारि युचितकृत्यमुलु । नेमंबुतो नग्नि नॆरि ब्रदक्षिणमु
२२७०
सेर्यिंचि सप्तर्षिसेवलॊनर्चि । यायतंबुग दीक्षनलरुचु नपुडु
कूर्चुंडिरंदरु कुदुरुगा नंदु । नेर्चुंचु मौनुलु नॆसगु भूसुरुलु
सरगुन नंदरु संतोषमॆसग । बरग दीवनलिच्चि परमपावनुल
शुभलक्षणंबुगा सुंदरीजनुल । विभवसमृद्धिगा विलसिल्लनप्पु
डायतंबुग दीक्ष नलरि मोदमुन । जेर्यिंचि मरुनाडु चॆलगि सदस्सु

मुखवाली श्रुतकीर्ति को शत्रुघ्न को जनक ने अति प्रीति से अर्पित किया। दशरथात्मजों ने वेदोक्तविधि से, प्रेमपूर्वक पाणिग्रहण किया। सब (वधूवरों) ने एक दूसरे के सिर पर मंगलाक्षत डाले, लाजहोम (धान की खीलें अग्नि में डालने की क्रिया) सम्पन्न करके मुनियों के आशीर्वाद प्राप्त किये। स्वर्ग से देव-दुन्दुभियाँ बज उठीं, समस्त पृथ्वी पर पुष्पवृष्टि हुई। तब सभी देवता आनन्दित हुए, सभी सन्मुनि प्रसन्न हुए। गन्धर्वपतियों ने सोत्साह गीत गाये। अप्सराएँ सम्प्रीति से नृत्य करने लगीं। तब वसिष्ठ ने वैवाहिक हवन के उपरान्त नियम के अनुसार उन राजकुमारों से उचित कृत्य करवाए, सुन्दरता से अग्नि की प्रदक्षिणा कराई, ।। २२७० ।।

—(और) सप्तर्षियों का पूजन करवाया। आयत (दीर्घ) दीक्षा में विराजते हुए सब स्थिरता से बैठे रहे। मुनियों और ब्राह्मणों—सभी ने प्रसन्न चित्त हो, परमपावन (राम-लक्ष्मण आदि) को 'शुभ लक्षणों से युक्त होकर सुन्दरीजनों तथा विभवसमृद्धि से विलसित रहो' इस प्रकार आशीर्वाद दिए। अजस्र दीक्षा के सम्पन्न होने पर प्रमुदित हो दूसरे दिन उत्साह से सदस (ब्राह्मणों की सभा, जिसमें वेदमन्त्रों का पाठ करते हुए वर-वधू को आसीसते हैं) किया। तब सभी ने सन्तुष्ट होकर दिव्यमन

गाविंचि संतोषकलितुलै यपुडु । दीविंचिरंदऱु दिव्यचित्तमुल:
दॆऱगॊप्प बॆन्डिलिदिनमुलु नैदु । नॆऱसि यित्तॆऱगुन निंडॆ; निंडुटयु
नन्निशोभनमुलु नन्नि वेडुकलु । गन्नुलपंडुवुगा जूचि प्रीति
दरणिवंशाधीशु दशरथाधीशु । शरधिसन्निभशीलु जनकभूपालु
वॆरवॊप्प दीविंचि, वेड्क वारनुप । नरिगॆ गौशिकुडु हिमाचलंबुनकु;
२२८०

धरणीशुलुनु दमतमदेशमुलकु ।गरमर्थि जनिरि सत्कारमुल् वडसि;
यप्पुडु मिथिलेशु डानन्दकेळि । नुप्पॊन्गि निजवैभवोन्नति मॆऱसि
करमॊप्प बुद्धुलु गऱपि कूतुलकु । वररत्नभूषणावळुलु विचित्र
चित्रांबरमुलु दासीजनंबुलुनु । नेत्रोत्सवंबुगा नॊम्मितो नॊसगि
करिरथहयभटगणभूषणादु । लरणंबुगा दन यळ्ळुंड्र किच्चि
या वसिष्ठादि संयमुलकु दशर । थावनीशुनकु ननर्घ माणिक्य
भूषणंबुलॊसंगि पूजिंचि विनय । भाषणंबुल युक्तपद्धति ननुप
गॊडुकुल गोडंड्र गॊमरॊप्प गॊनुचु । गडकतो दशरथक्ष्मापति गदलि
यडरि ययोध्यकु नरुगुचो द्रोव । वडि बॆर्चि प्रतिकूलवायुवुल् वीचॆ;

से आशीर्वाद दिए। इस प्रकार कुल मिलाकर विवाह के पाँच दिन व्यतीत हो गए। व्यतीत हो जाने पर, सभी शुभसंस्कारों, सभी उत्सवों को नेत्रोत्सव रूप में देखकर प्रीति से, भानुवंशाधीश को तथा समुद्र सदृश शीलवान् जनक भूपाल को औचित्यपूर्वक आशीर्वाद देकर, सप्रेम उनके बिदा करने पर, कौशिक (विश्वामित्र) ने हिमाचल को प्रस्थान किया। ।। २२८० ।।

धरणीश (राजागण) भी सत्कार प्राप्तकर, बड़े प्रेम से अपने-अपने देश चले गए। तब वैभवोन्नतियुक्त मिथिलेश (जनक) ने आनन्द की अधिकता से उमड़कर, सुन्दर विधि से पुत्रियों को (उचित) सीख दी। (उन्हें) वर-रत्न भूषणावलियाँ, विचित्र चित्राम्बर, दासीजन, (आदि) नेत्रोत्सव रूप में प्रेम से दिए। अपने जामाताओं को (दहेज के रूप में) हाथी, रथ, अश्व, भटगण, भूषण आदि भेंट किए। वसिष्ठ आदि संयमियों को, राजा दशरथ को अनर्घ माणिक्य भूषण देकर, आदर-सत्कार कर, विनय-भाषणों से युक्त पद्धति से बिदा किया। पुत्र तथा पुत्रवधुओं को शोभा से साथ लिए, बड़े आनन्द से, महाराज दशरथ अयोध्या के लिए रवाना हुए। (अकस्मात्) मार्ग में बड़े ज़ोरों से प्रतिकूल वायु चलने लगा।

राम परशुराम समागममु

दडयक   दुर्निमित्तमुलनेकमुलु । पॊडसूपॆ; नप्पुडु भूपति गलगि २२९०
'येलॊको मुनिनाथ! यिब्भंगि दॊडरि।पोलनि शकुनमुल् पॊडसूपदॊडगॆ?'
ननवुडु दशरथुननुकंप जूचि । यनियॆ वसिष्ठसंयमि निश्चयिंचि;
'युर्वीश ! मुंदऱ नॊक महाभयमु । पर्वि यंतटिलोन पायु नोडकुमु'
अनुचुंड वायुवुलंदंद विसरॆ । गनुकनि; बॆन्धूळि गप्पॆ; गप्पुटयु
गरुलु जोदुलु दुरंगमुलु राहुतुलु । विरथुलै रथुलनिव्वॆऱपाटु वडिरि;
सेनलु नलुगड जीकाकु वडियॆ; । भानुमंडलमुन ब्रभमासॆ; नंत
निरुवदियॊक्कमाऱेचि राजुलनु । दरमिडि चंपिन धन्यविक्रमुडु
क्रम्मिन जडललो गापुन्न गंग । चॆम्मना नुदुट बॆन्जॆमरुब्बुचुंड
घोरमै मंडॆडु कुत्तुकविषमु । ग्रूरदैत्युलमीद गॊपिंचि युमिसि
परमेश्वरुडु दन फाल नेत्रमुन । बॆरिगि मंडुचुनुन्न पॆनुमंट बुच्च २३००

राम और परशुराम का समागम

—शीघ्र ही अनेक अपशकुन दिखाई पड़े। तब राजा व्याकुल होकर, ।। २२९० ।।

—(यों) बोले, 'हे मुनिनाथ ! बहुलता से ये अनुपम (दुः) शकुन क्योंकर दिखाई पड़ रहे हैं ?' ऐसा कहने पर दशरथ की ओर अनुकम्पा से देखकर, संयमी वसिष्ठ निश्चय करके बोले—'हे अवनीश ! एक महाभय उत्पन्न होनेवाला है, किन्तु वह शीघ्र ही दूर हो जाएगा। (अतः) डरो मत'। (ऐसा) कह ही रहे थे कि सम्भ्रम से इधर-उधर हवा बह चली। (आकाश में) अत्यंत धूल छा गई। छा जाने पर, हाथी, योद्धा, तुरंग, घुड़सवार (और) रथी (आदि) विरथ होकर चकित से रह गए। चारों ओर सेना तितर-बितर हो गई। भानुमण्डल प्रभाहीन हो गया। उसी समय, क्रम से इक्कीस बार अतिक्रम से राजाओं (क्षत्रियों) का संहार करनेवाले धन्यविक्रम परशुराम परशु को कंधे पर धारण किये आते दिखाई पड़े। उनके ललाट पर अधिकता से प्रकट होता हुआ पसीना ऐसा लग रहा था मानों फैले हुए जटाजूट में छिपी हुई गंगा हो। उनकी आँखें ऐसी थीं मानों अत्यन्त भयंकर रूप से जलने वाले कंठस्थ विष को, क्रूरदैत्यों पर क्रुद्ध हो, थूक कर, परमेश्वर ने अपने फालनेत्र में प्रज्वलित विराट अग्नि को, ।। २३०० ।।

तन रॆन्डु कन्नुल दग बंचिपॆट्टु । कॊनि वच्चु पगिदि गन्गॊनल गॊम्पॆसग
दॆगि लोन मंडॆडु तीव्र कोपाग्नि । यॆगसि पै सुडिगॊन्न यॆऱमंटलनग
वॆलसि कॆन्जायल वॆदसल्लु जडलु । बलिसिन जूटंबु भासिल्लुचुंड
दमकिंचि भुजलक्ष्मि दग बट्टियुंडु । विमलनाळमुतोडि विरिदम्मियनग
वरशुवु मूपुन भरियिंचि वच्चु । परशुरामुनि जूचि भयमुन गलगि
रयमुन दशरथराजुनु मुनुलु । भयनिवारणमंत्र परतंत्रुलगुचु

परशुराम गर्वभंगमु

ननघुलै यॆदुरुगा नर्घ्यपाद्यमुलु । गॊनिपोव मुनुल चेगॊनि जामदग्नि
दशरथभूपालु दर्जिंचि त्रोचि । दशरथरामु मुंदऱ वच्चि निलिचॆ:
निलिचिन भार्गवुनिजमूर्ति जूचि । तलयूचि मॆच्चि सद्भक्ति म्रॊक्कि
चक्क गट्टॆदुर हस्तमुलॊप्प मोगिचि । यॊक्किंत भयमुन नुन्न वीक्षिंचि २३१०
'नीवॆन्त म्रॊक्किन निन्नु मन्निंचि । पोव : नातो बोरु भूपाल!' यनुडु
'भूसुरोत्तम! कश्यपुडु मॊदलयिन । भूसुरोत्तमुलकु भुवि नॆल्लनिच्चि

—अपने दोनों नेत्रों में बाँट दिया हो। लाल रंग को बिखेरनेवाली घनी जटाएँ भीतर प्रज्वलित तीव्र कोपाग्नि से प्रज्वलित हो उठी अग्नि-शिखाओं के समान भासित हो रही थीं। कंधे पर का परशु ऐसा लग रहा था मानों उनकी भुजा रूपी लक्ष्मी ने विमुग्ध होकर विमलनाल के साथ खिले कमल को धारण किया हो। (इस प्रकार) आने वाले परशुराम को देखकर भय से व्याकुल हो, राजा दशरथ और मुनि शीघ्रता से भयनिवारण के मन्त्र (जपने) में लग गए।

परशुराम-गर्वभंग

—अर्घ्यपाद्य लेकर निष्पाप मुनियों को सामने प्रस्तुत देख, जामदग्नि ने मुनियों को निकट ले (सत्कार किया)। (फिर) दशरथ भूपाल को डाँट-फटकार कर, हटाकर, राम के सामने आ खड़े हुए। (सामने) खड़े भार्गव (परशुराम) की साक्षात्मूर्ति को देख, सिर हिलाकर, (मन में ही) सराहकर, सद्भक्ति से (राम ने उनको) प्रणाम किया, सद्विधि से ठीक सामने हाथ जोड़कर, तनिक भय से खड़े हो गए। उन्हें देख, ॥ २३१० ॥

—(परशुराम ने) कहा, 'तुम कितना भी प्रणाम करो (विनय दिखाओ), तुम्हें क्षमा नहीं करूँगा। हे भूपाल! मुझसे युद्ध करो'। (तब) राम ने कहा, 'हे भूसुरोत्तम! कश्यप आदि ब्राह्मणों को समस्त पृथ्वी देकर,

यतिजितेंद्रियवृत्ति नडवुलनुंडु । नतुलतपोराशि वगुटनु जॆसि
यॊनर नीकॆऱगुट युचितंबुगान । मुनिनाथ ! ये नीकु म्रॊक्कितिगानि
वॆऱचि म्रॊक्कुट गादु; वॆरवेदि नन्नु । नुऱक पोनाडुट युचितमे नीकु?'
ननवुडु 'दापसुंडनि नन्नु बलिकि; । तनिलो सहस्रबाहार्जुनु दॊट्टि
यिरुवदियॊक्कमाऱेचि राजुलनु । दरमिडि चंपि यी धरणिपै दॊल्लि
नॆऱि दिलोदकमुलु नॆत्तुटु नॊरुग । दॆऱगॊप्प मा पितृ देवतलॆल्ल
भूपालशवमुलु पॊलुपॊन्द दिविकि।सोपानमुलु सेसि सॊरिदिमै जनिरि;
अट्टि भार्गवरामु ननघु नन्नॆऱुग । किट्टॆल रामुडै यिल बुट्टितीवु? २३२०
राजन्न बॊरिगॊन्दु : रामनामकुल । राजुल सैतुने रणभूमि नेनु ?
राजकुलुंडवौ रामुनि निन्नु । नाजि मन्नितुने? यदियुनुगाक
राजनि मी तंड्रि रणमुन द्रुंप । नाजिकि वच्चिन नाकुनु नोडि
स्त्रील मऱुंगुन जॆलुवॊप्प नुन्न । गालवशंबुन गाचितिनतनि;
दान गर्वांधुडै तद्दयु निपुडु । मानक युन्नाडु मऱि युब्बि यिचट
मऱुगु जॊच्चिननैन मननीय, ननुचु । वॆऱवक पल्किन वॆऱपुतो नपुडु

अतिजितेन्द्रिय (प्र)-वृत्ति से काननों में रहनेवाले तुम अतुल तपोराशि हो। सहृदयता से तुम्हें प्रणाम करना उचित है। इसीलिए हे मुनिनाथ! मैंने तुम्हें प्रणाम किया, डरकर नहीं। व्यर्थ ही मेरी निन्दा करना कहाँ तक उचित है?' ऐसा कहने पर (परशुराम ने कहा)—'मुझे तुमने तपस्वी कहा है। युद्ध में मैंने सहस्रबाहु (कार्तवीर्यार्जुन) को मार डाला है। इक्कीस बार प्रकाशित होकर, धरणी पर राजाओं को क्रम से मारकर (पितरों को) उनके रक्त से सुचारु रूप से तिलोदक प्रदान किया है। (उससे) मेरे सभी पितृदेवता अच्छे विधान से, शोभायमान रूप से भूपालों के शवों की सीढ़ी (निसेनी) बनाकर क्रम से दिवि को गये हैं। हे अनघ! ऐसे मुझ भार्गवराम को न पहचान कर, इस प्रकार राम होकर कैसे जन्मे हो? ॥ २३२० ॥

—जो राजा (क्षत्रिय) कहाता है, (उसे) मैं मार डालूँगा। तब रामनाम मात्र धारण कर लेने से ही राजाओं को रणभूमि मैं कैसे सहन करूँगा (छोड़ दूँगा)? राम नाम कुल वाले राजाओं को, मैं रण में कैसे क्षमा करूँगा? यही नहीं, राजा होने के नाते तुम्हारे पिता को युद्ध में मार डालने के लिए, युद्ध हेतु आया था। मुझसे हारकर, स्त्रियों की आड़ में छिपा रहा, तो मैंने काल के प्रभाव से उसको छोड़ दिया था। उससे गर्वान्ध होकर यहाँ अब (वह) फूला हुआ (मस्त) विराजमान है। अपने गर्व को न छोड़कर, अब तो छिप जाने पर भी, उसे जीने नहीं

अनघुडु दशरथुडतिभीतुडगुचु । विनयोक्ति भार्गवु वीक्षिचि पलिकें;
'नीवु ब्राह्मणुडवु, नीकु रोषंबु । गाविंपनेटिकि घनमुगा? नादु
तनयुलु बालुरु; दगदु गोपंबु । विनुतशास्त्रपुराणबिख्याति गनुट
नॆऱुगने? भार्गव ! यॆऱुगवे नीवु ? । ऎऱुगनि मर्मंबुलॆन्दैन गलवे २३३०
नी तोड बोराड निन्नॆंदिरिप । नाततंबुग नुंडु नट भवुंडैन
नोपुने? भागर्व ! यॊरुलॆंदिरिप । बापवे यीतऱि बरमपावनुड !
देवेंद्रुडैन नी तीव्रप्रतिज्ञ । भाविंचि युडुपंग भव्युंडु गाडु;
मन्निंचि रक्षिंचि मम्मुनंदऱनु । जॆन्नुगा जनु' मनिशिरसुनु वंचि
मन्निंपुमनि वेडि मऱियु म्रॊक्किननु । गन्नुल गोपंबु गडुनॊप्पियुंडॆ;
तनि दन्नु गॊनियाडु नतनिवाक्यमुलु । विनि यादरिंपक विपुलरोषमुन
गनलुचु नत्यंत कठिनुडै यपुडु । दमिंयितु ननि मदि दलचि यिट्लनियॆ;
'करमॊप्प विलुविद्य गडिमिमै नेनु । हरुनितो दॊल्लि यभ्यासंबु सेय
नाडु कुमारुंडु नातोड दॊडरि । पोडिमि सॆडि योडिपोयिन जूचि

दूँगा'। इस प्रकार निर्भय (परशुराम के) कहने पर, अनघ दशरथ अति भयभीत हुए। भार्गव को देखकर, विनय-वचन बोले, '(भगवन् !) तुम ब्राह्मण हो, तुम्हें इतना अधिक क्रुद्ध क्यों होना चाहिए। मेरे पुत्र बालक हैं। (उनपर) क्रोध न करना चाहिए। तुम्हारा विनुत शास्त्र-पुराण-विख्यात होना क्या मैं नहीं जानता ? हे भार्गव ! क्या तुम (मुझे) नहीं जानते हो ? ऐसे कौन-से मर्म (रहस्य) हैं जो तुम्हें अज्ञात हैं ! ॥ २३३० ॥

—तुमसे लड़ने (या) तुम्हारा सामना करने के लिए शाश्वत शिवजी की भी सामर्थ्य नहीं है। हे भार्गव ! इस समय दूसरे (कोई) सामना करें तो (उन्हें यमलोक) भेज देने में आप कब समर्थ नहीं हैं ! हे परम-पावन ! देवेन्द्र भी आपकी तीव्र प्रतिज्ञा को व्यर्थ करने में समर्थ नहीं है। हम सबको क्षमाकर, रक्षाकर प्रसन्न मन से गमन कीजिए'। (दशरथ के ऐसा) कहकर सिर झुकाकर क्षमा याचना करने, फिर दण्डप्रणाम करने पर भी, (परशुराम की) आँखों में अपरिमित क्रोध भरा ही रहा। अपनी प्रशंसा करने वाले उस (दशरथ) के वचनों को सुनकर, उनकी उपेक्षा कर, विपुलरोष से क्रुद्ध होते हुए, अत्यन्त कठोर हो मन में (यह) सोचकर कि (इन सबका) दमन करूँगा, वे इस प्रकार बोले, 'बड़े यत्न से (और) पराक्रम से मैं शिव के पास पुरातन काल में जब धनुर्विद्या का अभ्यास करता रहा, उस समय कुमार कार्तिकेय ने मुझसे लड़ने का फैसला किया, और सब कौशल खोकर मुझसे हार गए। (उसे) देख (शिवजी

ना पॆम्पु मॆच्चिन नागकंकणुनि । चापंबु विऱिचिन सैतुने मऱियु’
२३४०
ननिन ना रघुरामु डारामु जूचि । यनियॆ निश्चलवृत्ति नतिसम्मदमुन
‘नेनु विनोदमै यॆक्किडि तिविय । बूनिन चाप मुप्पुड तॆगॆगाक!
ना तॆगकेल पिनाकिविल् निलुचु? । नाततभुजसत्त्वमट्टिदि नाकु;
नॆसगि युद्धतुलयि यिक्ष्वाकुकुलुलु । पसुल ब्राह्मणुल जंपदलंपरॆन्दु;
नीवॆन्निपलिकिन नीकवि सॆल्लु; । नीवु ब्राह्मणुडवु; निनु नॊम्पनॊल्ल:
निदॆ नादु कंधर मिदॆ नीदु परशु । वदरक युचितकृत्यमु सेयुमिक ।’
ननवुडु रघुरामु नलुक दीपिंप । गनुगॊनि पलिकॆ भार्गवरामुडडरि
‘भाविंप नाकु नी पलुकुल जूड । नीवु क्षत्रियुडवु, नेनु ब्राह्मणुड
ननु गर्वमुन्नदि; यटु चूडवलदु; । विनुतविक्रमशक्ति वॆन्डि चूपॆदनु;
वऱलु नज्जनकभूवरुविंट नीवु । विऱिचिनविल्लु नीविल्लुनु दॊलि
२३५०
यर्मिलिनिंडार नमरुलु विश्व । कर्मचे नॊक्कट गाविंचि रॆलमि;

ने भी मेरी) शक्ति की सराहना की थी। (उस) नागकंकण (शिवजी) का धनुष तोड़ दें, तो मैं कैसे सहन कर सकूँगा’? ॥ २३४० ॥

—(ऐसा) कहने पर उस रघुराम ने उस (परशु-) राम को देखकर निश्चलवृत्ति से सम्मोद (यों) कहा, ‘मैंने विनोद मात्र के लिए सन्धान करके खींचना चाहा तो धनुष (अकस्मात्) टूट गया। मेरे साहस (सामर्थ्य) के सामने पिनाकि (शिव) का धनुष कहाँ टिक सकेगा? ऐसी ही है मेरी विशाल भुजाओं की शक्ति! इक्ष्वाकुवंशज उद्धत होकर पशु और ब्राह्मणों का वध करना पसन्द नहीं करते। आपने जितना कुछ कहा, वह आपके लिए उचित ही माना जाएगा। आप ब्राह्मण हैं। मैं आपका वध करना नहीं चाहता। यह मेरी गर्दन है, वह आपका परशु है। व्यर्थ बातचीत को त्याग कर अब जो उचित समझिए, कीजिए’। ऐसा कहने पर, रघुराम को क्रोध से उद्दीप्त हो देखकर, भार्गव-राम ने आवेश से कहा—‘तुम्हारी बातों से मुझे लगता है कि तुममें गर्व है कि तुम क्षत्रिय हो और मैं ब्राह्मण हूँ। ऐसा मत सोचो। (मैं अपने) विनुत-विक्रम एवं शक्ति को बाद में दिखाऊँगा। उस जनक भूवर के घर में विलसित जिस धनुष को तुमने तोड़ दिया था, उस धनुष को (और) इस मेरे धनुष को, ॥ २३५० ॥

—देवताओं ने, बड़े स्नेह से, बड़े प्रेम से विश्वकर्मा से एक साथ बनवाया

बुरमुलु निर्जिप बोयॆडुनाडु । हरुनकु दग विच्चिरंदुलो नॊकटि
ना विंट द्रिपुरंबुल नणचि रुद्रुंडु । दा वीरगर्वमुद्रारतुडगुचु
'नसहायमुग नेनु नसुरत्रयंबु । वसुधपैगूल्चि; तॊव्वरु नाकु नीडु?'
ननि वल्क 'जक्रि बाणाकृति बूनि । तुनिर्यिचॆ गाक रुद्रुनिकि शक्यंबॆ'
यनि यॆडकॆडकुनु नमरुलु मुनुलु । सनकादि हरि पार्श्वचरुलुनु बलुक
विनि रुद्रगणमुलु विनुपिप शिवुडु । विनि रोषमुन बोर विष्णुनि बिलुव
सुरगरुडोरगवरुलॆल्ल गूडि । सरसिजासनु जेर जनि विचारिंचि
हरिहरसत्त्वंबु लरयुदमनुचु । मुरवैरि कपुडु कार्मुकराजमिच्चि
यिरवुन कॆन्तयु नॆरुकसेयुटयु । हरियु रुद्रुडु बोरिररुदुगा; नपुडु
२३६०
नारायणुनि तीव्र नाराचघोर । धारचे शिवुनि कोदंडंबु सगमु
विरिगि पेटॆत्तिन वीक्षिंचि यंत । हरिशक्ति घनमनि यमरुलंदरुनु
इरुवुर मान्पि: रा यीशुडव्वेळ । सुरल चित्तस्थिति जूचि या विल्लु
रयमुन ना देवरातुन किच्चॆ; । जयधन्युडातंडु जनकुन किच्चॆ :

था। (त्रि) पुरों को पराजित करने के लिए जाते समय उनमें से एक शिवजी को दिया था। उस धनुष (की सहायता) से त्रिपुरों का दमन कर, रुद्र (शिवजी) ने वीरमुद्रारत होते हुए कहा—'बिना किसी की सहायता के मैंने असुरत्रय को वसुधा पर गिरा दिया। मेरी समता करनेवाला और कौन है'? (उस समय) जहाँ-तहाँ अमर, मुनि, सनक आदि हरि के पार्श्वचर (सहचर) कहते रहे कि 'चक्रि (विष्णु) ने बाण की आकृति धारण कर (राक्षसों का) संहार किया है, अन्यथा रुद्र की सामर्थ्य ही क्या है'? (इसे) सुनकर रुद्रगणों ने शिवजी को सुनाया। शिवजी (उसे) सुनकर रुष्ट हुए (और) युद्ध के लिए विष्णु को ललकारा। तब सुर, गरुड, उरगादि देवता, सब मिलकर, कमलासन (ब्रह्मा) के पास गये। विचार किया कि हरि (और) हर के सत्त्वों को (युद्ध के द्वारा) जानना चाहिए। तब विष्णु को कार्मुकराज (श्रेष्ठ धनुष) दिया, और (युद्ध के लिए योग्य) स्थान के बारे में भी बताया। (तब) अनुपम रूप से हरि और रुद्र ने युद्ध किया। ।। २३६० ।।

तब नारायण के तीव्र-नाराच (बाण) के भयंकर प्रवाह से शिव का कोदंड आधा टूटकर विदीर्ण हुआ। (उसे) देखकर सभी देवताओं ने यह कहकर कि हरि की शक्ति ही अधिक श्रेष्ठ है, दोनों को शान्त किया। उस ईश (शिव) ने उस समय देवताओं की चित्तस्थित को देखकर वह धनुष शीघ्रता से उस देवरात को दिया। जयधन्य होकर, उसने (उसे)

वनजोदरुंडुनु वलनॊप्प निच्चॆं । दन चेति चापमत्तऱि ऋचिकुनकु;
जमदग्नि किच्चॆं निश्चलमति नतडु: । जमदग्नि ना किच्चॆं
सदयुडै दीनि;
बॆनकुव नदि तॊल्लि पॆटॆत्तियुंट । गनि नीवु विऱचिति गाक! भूतनाथ!
आविटि तोडिदॆ यरय ना चेति । यी विल्लु, निदॆ चूडुमिनवंशतिलक!
नॆलकॊनि यी विल्लु नी वॆक्कुवॆट्टु । वलकॊनि बाणसंधानमु सेसि
कडिमि सूपक निन्नु गदलनी' ननिन । दडयक रोषिंचि दशरथात्मजुडु
२३७०

कन्नुल घनवह्नि कणमुलु दॊरुग । दन्नॆऱुंगनि जामदग्नितो ननियॆ :
'निरुपमभुजशक्ति नीकु गलुगुटयु । दरमिडि राजुल दऱिमि चंपुटयु
नॆऱुगुदु; नन्नु नीवितरुनि माड्कि । वॆऱवक पलिकॆदु बीरंबु मॆऱसि:
नी वॆऱुंगवु नादु निजबाहुबलमु : । नीवॆन्तवाडवु ? नी चापमॆन्त ?
तॆम्म'नि विलुदीसि तिगिचि मोपॆट्टि । क्रम्मन नत्युग्रकांडंबु दॊडिगि
'नी काळ्ळु दॆगनेसि नी गर्वमडचि । नी कोप मुडिपॆद ने' डन्न दलकि
युरुसत्त्वगर्वंबु नुब्बुनु दूलि । परशुरामुडु रामु ब्रार्थिंचि पलिकॆ :

जनक को दिया । कमलगर्भ विष्णु ने बड़ी सुन्दरता से उस समय अपना धनुष ऋचिक को दिया । उसने निश्चलमति से (वही धनुष) जमदग्नि को दिया । जमदग्नि ने सदय होकर उसे मुझे दिया । (पूर्व के) युद्ध में पहले ही थोड़ा विदीर्ण रहने के कारण उसे तुमने तोड़ डाला है । हे भूनाथ ! मेरे हाथ का यह धनुष उसी के साथ का है । यह देखो, हे इनवंशतिलक ! स्थिरभाव से इस धनुष का सन्धानकर, घूमकर, (इस पर) बाण चढ़ाकर अपने प्रताप को बताए बिना तुम्हें हिलने नहीं दूँगा' । (ऐसा) कहने पर विलम्ब न करके रुष्ट हो दशरथात्मज की ।। २३७० ।।

—आँखों से बड़े-बड़े अग्निकण झरने लगे । अपने को (राम को) न जाननेवाले जामदग्नि से उन्होंने कहा, 'मैं यह जानता हूँ कि आपमें निरुपम भुज-शक्ति है, आपने क्रम से राजाओं का पीछाकर (हराकर) वध कर दिया है । मुझे आप अन्य लोगों के समान मानकर ही, निर्भीकता से डींग मार रहे हैं । आप मेरे बाहुबल को नहीं जानते हैं । आपकी शक्ति ही कितनी है ? यह धनुष ही क्या वस्तु है ? लाइए' । (यह) कहकर धनुष लेकर, उसे उठाकर, प्रत्यंचा चढ़ाकर, तुरन्त अत्युग्र-कांड (बाण) उसपर चढ़ा दिया । कहा, 'आपके पैर काटकर, गर्व का दमन कर, आपके क्रोध का निवारण कर दूँगा' । (ऐसा) कहने पर कम्पित

'नेनु गश्यपुनकु निलनिच्चिनाड : । गान रात्रुलु निल्वगा नेर निचट :
ननुदिनंबुनु महेंद्राचलंबुनकु । जनवलयुट जेसि चरणमुल् वलयु :
ना काळ्ळनेयक ना पालि पुण्य । लोकमार्गंबुलालोकिंचि येयु २३८०
नन्नु रक्षिपुमु नरनाथचंद्र ! । मन्निपवे राम ! मनुजलोकेश !'
यनवुडु रघुरामु डा जामदग्नि । घनपुण्यलोकमार्गमु नेसें : नंत
जडुरीति निलुचुन्न जमदग्निरामु । गडुनुग्रुडैयुन्न काकुत्स्थरामु
जूचुचु नुंडिरि सुरसिद्धसाध्य । खेचरुलद्भुतक्रीडल दगिलि :
वलनोप्पगा बुष्पवर्षमुल् गुरिसें : । नलिनगर्भादुलु नानंदमंदि
पोगडिरि रामुनि: बोन्दुगा सुरल । मिगुलुतेजंबुन मिन्नुननुंडि;
रंत भार्गवरामुडारामु जूचि । यंतरंगंबुन नतनि भाविंचि
'यनघ ! नी सत्त्वमेनात्मलो जूचि । निनु विवेकिंचिति; नीवु विष्णुडवु:
काकुत्स्थ ! यटुगान गदनंबुनंदु । नीकु नोडुट नाकु निंद गादेन्दु
ना बलंबुनु नीवें: नायात्म नीवें: । ना बंधुवुलु नीवें ना रामचंद्र !
२३९०

होकर, शक्ति की प्रबलता के गर्व को, मद को छोड़कर, परशुराम ने राम से प्रार्थना की, 'मैंने कश्यप को पृथ्वी दे दी है, अतः मैं रात को यहाँ ठहर नहीं सकता। प्रति दिन महेन्द्राचल को जाना चाहिए, इसलिए पैर (मेरे लिए) आवश्यक हैं। मेरे पैरों को न काटकर, (यदि चाहो तो) मेरे पुण्यलोक के मार्ग को देखकर (उस पर यह बाण) छोड़ दो।॥ २३८० ॥

हे नरनाथचन्द्र ! मुझे बचाओ। हे राम ! हे मनुजलोकेश ! मुझे क्षमा कर दो'। ऐसा कहने पर रघुराम ने उस ज़ामदग्नि के महान् पुण्य-लोक मार्ग पर (वह बाण) छोड़ दिया। तब जड के समान खड़े जामदग्निराम को और अतिउग्र काकुत्स्थराम को आश्चर्य चकित हो सुर, सिद्ध, साध्य, खेचर, सब देखते रहे। सुन्दर ढंग से पुष्पवृष्टि हुई। नलिनगर्भ (ब्रह्मा) आदि ने आनन्दित हो राम की प्रशंसा की। देवता तेजोयुक्त होकर स्वर्ग में विलसित हुए। तब भार्गव राम ने उस (दाशरथी) राम को देखकर, अन्तरंग में उनके महितस्वरूप का ध्यान कर, कहा, 'हे अनघ ! तुम्हारी शक्ति के बारे में मैंने आत्म-विचार कर, विवेचन कर लिया है कि तुम विष्णु हो। हे काकुत्स्थ ! ऐसा होने पर युद्ध में तुम्हारे हाथ हार जाना मेरे लिए किसी भी रूप में निन्दनीय नहीं है। मेरा बल भी तुम ही हो, मेरी आत्मा भी तुम ही हो। मेरे बन्धु-बान्धव सब कुछ तुम ही हो। हे मेरे रामचन्द्र ! ॥ २३९० ॥

ना माटलन्नियु नात्म नुंपकय । राम! रक्षिपवे रघुकुलाधीश!’
यनुचु ब्रस्तुति सेसि यानंदमंदि । मनमुन रघुरामु महिम लॆन्नुचुनु
वरुस श्रीरामुनि वलगॊनि भक्ति । गरमुलु मुकुळिंचि करमु संप्रीति
विनयविधेयुडै विभुनट्टु चूचि । मनमुन गृपवुट्ट मऱि यिट्टुलनियॆ:
‘सॆलविम्मु राघव! श्री जानकीश! । सॆलविम्मु, पोयॆद, सॆलविम्मु नाकु:
ना तप्पुलॆन्नक नन्नु मन्निंचि । यी तऱि रक्षिंचि यिपुगा बनुपु:
मनसु नेकमु चेसि मदि वॆल्गु गनुचु । गनुमूसि निनु गूर्चि कदलक तपमु
लॊनरंग जेसिन नॊय्यन मुनुलु । मनमुल नानंदमग्नुलै युंदु’
रनुचु ब्रस्तुतिसेसि यभिनुतुल् सेसि । यनुपमप्रीतितो नप्पुडे कदलि
‘निरुपमतरशक्ति नी शक्ति’यनुचु । नरिगॆ रामुडु महेंद्राचलंबुनकु
२४००
बरशुरामुनि विल्लु प्रार्थिप नॊसगॆ । वरुणुचेतिकि रघुवर्युडाक्षणमॆ:
यप्पुडु वायुवुलनुकूलगतुल । नॊप्पॆ: नुत्साहंबुलॊदवॆ सेनलकु:
नरुदरुदनि सुरलभिनुतिसेय । वरजयश्रीगूडि वच्चि राघवुडु
तन तंड्रि दशरथधऱणिपालुनकु । ननघवसिष्ठुनकतिभक्ति म्रॊक्कॆ

—मेरी सब बातों को मन में मत रखो। हे राम! हे रघुकुलाधीश! मुझे बचाओ’। (ऐसी) स्तुति करते हुए, आनन्दित होकर, मन में रघुराम की महिमा को गुनते हुए, क्रम से श्रीराम की प्रदक्षिणा कर, हाथ जोड़कर, अधिक सम्प्रीति से, विनय से विधेय (आज्ञाकारी) हो, प्रभु की ओर देखकर, कृपा उत्पन्न करनेवाले वचन बोले, ‘आज्ञा दो, हे राघव! श्री जानकीश! आज्ञा दो। जाने की आज्ञा दो। मेरी त्रुटियों का ध्यान न कर, मुझे क्षमाकर, अबकी बेर रक्षा कर, आनन्द से बिदा कर दो। मन को एकाग्रकर, मन में प्रकाश को देखते हुए, आँखें बंदकर, तुम्हारे प्रति अचल एकनिष्ठ ऐसी तपस्या करूँगा कि मुनिजन आनन्दमग्न हो जायँ। ऐसा कहते हुए प्रस्तुति, अभिनुति करके, अनुपम प्रीतिभाव से उसी समय, ‘तुम्हारी शक्ति निरुपमतरशक्ति है’ ऐसा कहते हुए (भार्गव) राम महेन्द्राचल को प्रस्थान कर गए। ॥ २४०० ॥

प्रार्थना करने पर उसी क्षण रघुराम ने परशुराम के धनुष को वरुण के हाथ दे दिया। तब वायु अनुकूलगति से चलने लगा, सेना में उत्साह उत्पन्न हुआ। ‘यह तो विरल है’ ऐसा कहते हुए देवताओं के अभिनुति करते समय, वर (श्रेष्ठ) जयश्रीयुक्त राघव ने आकर अपने पिता धरणिपाल (राजा) दशरथ को (और) अनघ वसिष्ठ को अतिभक्ति से प्रणाम किया।

म्रौक्किन दीविंचि मौगि गौगिलिंचि। यक्कुन नंदनु नौदल जेर्चि
परमसम्मदमुन बार्थिवेश्वरुडु । 'सरसोक्ति ने बुनर्जातुंडनैति:
गौमरौप्प नी वंटि कौडुकुनु गनुट । नमरेंद्रु बोलिति नवनिलो निपुडु
परमपावनुडैन परशुरामुंडु । परमेशुपगिदिनि बरग निच्चटिकि
वच्चुटं ने गांचि वडलेल्ल वडक । यिच्चलो भयमंदि 'यिकनेदि त्रोव?'
यनुचु भयंबुन नातनितोड । मनविगा जेप्पिन मऱि विनकुन्न २४१०
बरवशतं बौन्दि पलुकनेरकय । परममैत्रिकि नेनु बालपडियुंटि:
नतनिं गेल्चुटये नाकाश्चर्यमय्ये: । नतुलितवैभवंबंदिति नेनु:
बासेनु भयमेल्ल: ब्रौढि नीचेत । वासिकेक्किति:निल वैभवंबब्बे'
ननुचु रामुनि जाल नभिनुति सेसि । मुनिवसिष्ठादुल मुदमुन गूडि
परमसम्मदमुन बलमुलु दानु । नरिगेनयोध्यकुनवनिवल्लभुड्डु

अयोध्या प्रवेशमु

पुण्यचिह्नमुलतो बुण्युलतोड । बुण्य मंगळवाद्यमुलतोड वच्चि

प्रणाम करने पर आसीस देकर, सम्भ्रम से गले लगाकर, वक्ष-स्थल पर पुत्र के सिर को रखकर, परम सम्मोद से पार्थिवेश्वर (राजा) ने कहा, 'सचमुच मैं पुनर्जीवित हुआ हूँ। तुम्हारे जैसे पुत्र को प्राप्त करने से आज मैं पृथ्वी पर अमरेन्द्र के समान शोभायमान हूँ। परम-पावन परशुराम के परमेश्वर के समान (कराल रूप में) यहाँ उपस्थित देख (मेरा) सारा शरीर काँप उठा था, मन में भीत होकर 'अब क्या उपाय हो सकता है ?' अस्तु बड़े भय से उससे विनय की, (जब) उसने नहीं सुना, ।। २४१० ।।

—तब विवश हो, अवाक् होकर, उससे परममैत्री करने के लिए तैयार हो गया। (तुम्हारा) उसे जीत लेना ही मेरे लिए आश्चर्यप्रद हुआ। मैंने अतुलित वैभव को प्राप्त किया है। सारा भय दूर हो गया। तुम्हारे प्रताप के कारण मैं (आज) यशस्वी हुआ। इस पृथ्वी में मुझे वैभव प्राप्त हुआ है'। ऐसा कहते हुए राम की अधिक अभिनुति करके, मुनि वसिष्ठ आदि से मोद सहित मिलकर, अधिक सम्मोद के साथ अवनिवल्लभ (दशरथ) ने सेना सहित अयोध्या की ओर कूच किया।

अयोध्या में प्रवेश

—पुण्य (मंगलप्रद) चिह्नों (तथा) पुण्यात्माओं के साथ, पुण्य-मंगलवाद्यों की ध्वनि के बीच, दशरथाधीश ने अपने पुत्रों के साथ सानन्द अयोध्यापुरी

तानुनु गॊडुकुलु दशरथाधीशु। डानंदमुन नयोध्यापुरि जॊच्चि
राजितालंकाररचन जूपट्टु। राजमार्गंबुन राराजमुखुलु
सखुलु दारुनु वेड्क सौधंबुलॆक्कि। सुखतराकृतुल रासुतुल गन्गॊनुचु
सेसलसल्ल नाशीर्वादमॆल्ल। भूसुरुलॊसग विस्फुरण पॆम्पॆसग २४२०
नगणित शृंगारमै यॊप्पु तनदु। नगरु ब्रवेशिंचॆ नरनाथु; डंत
गौसल्य केकयक्ष्मापालपुत्रि। या सुमित्रादेवि यादिगा गलुगु
नंतःपुरांगनलंदऱु नप्पुडॆन्तयु। ब्रीतितो नॆदुरुगा वच्चि
चेरि वारलमीद सेसलु सल्लि। नीराजनंबुलु नॆऱि निच्चि; रंत
गॊडुकलंदऱु म्रॊक्क गोडंड्रु म्रॊक्क। गडुब्रीति दीविंचि कौगिळ्ळ जेर्चि
सीतादिकांतल चॆलुवंबु बुद्धि। चातुरि गन्नुलु सल्लगा जूचि
तनरारुचुंडिरि; दशरथुंडपुडु। तनयुलु नलुगुरु दनु भजियिंप
नाल्गु चेतुल नॊप्पु नलिनाक्षुडनग। नाल्गु कॊम्मुल नॊप्पु नाकेभमनग
सकल जनानंदचरितुडै राज्य। मकलंक रक्षकुडै येलुचुंडॆ;
नॊकनाडु दशरथुंडुचितमॆऱिंगि। प्रकटितशुभरतु भरतुनीक्षिंचि
२४३०

में प्रवेश किया। समलंकृत राजमार्ग में राराज-(चन्द्र) मुखियों एवं सखियों ने आनन्द से सौधों (प्रासादों की अटारियों) पर चढ़कर, सुखतर आकृतिवाले हो, (रघुरामादि) राजसुतों को देखते हुए (आशीर्वाद-पूर्वक) अक्षत बरसाये। सभी भूसुरों ने आशीर्वाद दिए। (ऐसे समय), ॥ २४२० ॥

—अत्यन्त श्रृंगारमय अपने नगर में नरनाथ ने इस प्रकार शोभन रूप में प्रवेश किया। तब कौसल्या, कैकेयी, सुमित्रादेवी आदि सभी अन्तःपुरांगनाएँ अति हर्ष के साथ उनके स्वागतार्थ आईं, (उनसे) मिलकर, उनपर पुष्पों की वर्षा की और भली प्रकार आरती उतारी। तब सभी पुत्रों के प्रणाम करने पर, पुत्रवधुओं के प्रणाम करने पर, उन्होंने अति प्रीति से आसीस दे उन्हें आलिंगन में लिया। सीता आदि बधूटियों के सौन्दर्य, मृदु स्वभाव एवं कुशलता को देख, उनकी आँखें ठंडी हुईं और वे सन्तुष्ट हुईं। तब दशरथ चारों पुत्रों की सेवाएँ प्राप्त करते हुए, चार भुजाओं से शोभायमान नलिनाक्ष (विष्णु), (अथवा) चार श्रृंगों वाले स्वर्ग के हाथी (ऐरावत) के समान विलसित होते हुए, सकल जनों को आनन्द देने वाले और अकलंक-रक्षक होते हुए, राज्य पर शासन करने लगे। एकदिन दशरथ उचित (समय) को जानकर, शुभ लक्षणों से सम्पन्न पुत्र भरत को देखकर बोले, ॥ २४३० ॥

'घनुडु मी माम केकयराजसुतुडु । गॊनिपोदु निन्ननि कोरियुन्नाडु
गान शत्रुघ्नुतो गदलि मी माम । तो नॆगि यतनि संतोषंबु नॆऱपु :
तातकु नव्वकु दग मेनमाम । काततभक्तितो ननिशंबु म्रॊक्कु
सुरलका दलचि भूसुरुलकु वत्स ! । परमप्रियंबुन बरिचर्य सेसि
वारलचे नश्व वारण स्यंद । नारोहणमुलु शस्त्रास्त्रविद्यलुनु
नॆरि वेदशास्त्रमुल् नीतिशास्त्रमुलु । नुरुकळाविद्यलु नॊगि नभ्यसिपु
मेकक्षणंबुनु नॆडपक नियति । जेकॊनि, नी मेलु सॆप्पि पुत्तॆम्मु'
अनवुडु दल्लुल कवनिपालुनकु । विनतुडै रघुरामविभुनकु म्रॊक्कि
तानु शत्रुघ्नुंडु दन मेनमाम । तोन यिम्मुल भरतुडु पुण्यरतुडु
राजगृहंबुन रमणीयमैन । राजधानिकि नेगि रघुकुमारकुलु २४०
तातकु दम राक दग नॆऱिंगिप । ब्रीतिमै बुच्च ना पृथ्वीवरुंडु
पट्टणंबुन दीरुवड तोरणमुलु । गट्टिंचि बहुपताकलु कल्वडमुलु
गलयंग नॆत्तिचि गंधोदकमुलु । पॊलुपॊन्द जल्लिचि पुष्पधूपमुलु
गरमॊप्प राजमार्गमुल वासिप । बरिचारकुल बंचि बलयुतुंडगुचु

—'सम्भ्रान्त व्यक्तित्व वाले तुम्हारे मामा, कैकयराज-सुत तुम्हें (अपने यहाँ) ले जाना चाहते हैं। इसलिए शत्रुघ्न के साथ अपने मामा के साथ जाकर उन्हें प्रसन्न करो (उनकी इच्छा को पूरी करो)। नाना, नानी, मामा (आदि) को आतत भक्ति से अनिश (सदा) प्रणाम करते रहना। हे वत्स ! देवता मानकर भूसुरों की परमप्रेम से परिचर्या (सेवा) करके, उनसे अश्व, हाथी, स्यन्दन (रथ) के आरोहण (सवारी), शस्त्र-अस्त्र विद्याएँ, श्रेष्ठ वेदशास्त्र, उत्तम कलाएँ, लगन के साथ, एक क्षण भी आलस्य न करके, नियमपूर्वक अभ्यास करना और सीखना। अपना कुशल-समाचार भेजते रहना'। ऐसा कहने पर, माताओं तथा अवनिपाल (राजा) को, विनीत होकर, रघुराम-प्रभु को प्रणाम कर, स्वयं और शत्रुघ्न सहित अपने मामा के साथ बड़े सुख से पुण्यरत-भरत राजगृह में स्थित रमणीय राजधानी को गए। रघुकुमारों ने, ।। २४० ।।

—अपने आगमन (का समाचार) नाना को कहला भेजा। उस पृथ्वीवर ने बड़ी प्रीति के साथ नगर को अच्छे ढंग से तोरण बँधवाकर, विविध प्रकार की झंडियों और कमल की मालाओं से सजाकर, सुगंधित जल को सुन्दर ढंग से छिड़काकर, राजमार्गों को पुष्पधूपों से सुवासित कराने के लिए परिचारक भेजे। (कैकयराज ने) परिवार (मित्र तथा नौकर-चाकरों के समूह) से युक्त हो, वनिताएँ, निजमंत्रि-वर्ग को साथ लेकर,

वनितलु निजमंत्रिवर्गंबु तोड । जनुदेर नॆन्तयु संतोषमॆसग
वरुस नानागीत वाद्यनृत्यमुलु । परमशुभाचार भंगुल नडुव
ब्रीति नॆदुर्कॊनि प्रियमॊप्प वंदि । सूतमागधजनस्तुतुलोलि जॆलग
मनुमल दोड्कॊनि महिमतो वच्चॆं । बनुगॊन्नभक्तितो भरतुंडु नंत
दम तात मॊदलुगा दगिन पॆद्दलकु । ग्रममु दप्पक नमस्कारमुल् सेसि
पॊलुपॊन्द वारिचे बूजितुंडगुचु । दळुकॊत्त वेडुक दाततो ननियॆ:
२४५०

'नार्य ! नाकिचट विद्याभ्यासमिंक । गार्य; माचार्युलै घनुलैन वारि
कप्पगिंपुडु नन्नु' ननिन ना राजु । चॆप्पिनवारिचे शिक्षितुंडगुचु
नमर विद्याभ्यासमंतयु जेसि । विमलैकमति नॊक विप्रुनि जीरि
तमतंड्रिययिनट्टि दशरथेशुनकु । 'समुचितस्थिति मेमु सकलविद्यलुनु
जॆलुवॊन्दगा नभ्यसिंचिति; मिंक । दलपुपुट्टॆडु माकु दगमिम्मु जूड'
ननि चॆप्पुमन नयोध्यापुरंबुनकु । जनुदॆन्चि यतडु ना जननायकुनकु
राजपत्नुलकुनु रामलक्ष्मणुल । कोज नॆन्तयु जॆप्पॆ नुल्लंबुललर:
नंत श्रीरामुंडु यौवराज्यमुन । नॆन्तयु जतुरुडै यॆल्लवारलकु

सानन्द नाना गीत-वाद्य-नृत्यों के परम शुभ आचार-भंगियों में सम्पन्न, सप्रीति उन (राजकुमारों) की अगवानी की। प्रीति से बंदि-सूत-मागध-जन (चारण-भाट आदि) की स्तुतियों के क्रम से मुखरित होने पर, दौहित्रों को साथ लेकर बड़ी महिमा (वैभव) के साथ वे (अपने यहाँ) आए। अधिक भक्ति से भरत ने तब अपने नाना आदि सभी योग्य गुरुजनों को क्रम से नमस्कार कर, शोभा से उनसे आदर-सत्कार प्राप्तकर, उत्साह में उमड़ कर नाना से बोले, ॥ २४५० ॥

—'हे आर्य ! अब यहाँ विद्याभ्यास हमारा कार्य है। हमको श्रेष्ठ आचार्यों के हाथ सौंप दीजिए'। (ऐसा) कहने पर, उस राजा के बताए लोगों से शिक्षित होते हुए, उन्होंने शोभा से समस्त विद्याभ्यास किया। (एक दिन) विमलमति वाले विप्र को बुलाकर, अपने पिता दशरथेश के पास यह संदेश भिजवाया कि 'समुचित स्थिति से हमने भली प्रकार सकल विद्याएँ सीख ली हैं। अब हमारे मन में इच्छा हुई है कि आपके दर्शन करें'। ऐसा आदेश पाकर वह (संदेशवाहक) अयोध्यापुर आया और (उसने) जननायक (राजा दशरथ), राजपत्नियों, राम-लक्ष्मण, सबको भलीभाँति सब बातें कह सुनाईं, जिनको सुनकर उनके हृदय उल्लसित हुए। तब श्रीराम ने युवराज के कर्तव्य में अधिक कुशल होकर, सभी को किसी

ब्राकटंबुग नॊन्डु बाध लेकुंड । नेकप्रबुद्धिगा निट दंड्रि गॊलिचि
धारुणीप्रजलकु दययॊप्प जेसे । वीरुवारनकनु बिश्रुतकीर्ति २४६०
समचित्तुडै धर्मचरितंबु बूनि । यमरेंद्रविभवुडै या रामविभुडु
सीतयु दानुनु जॆलुवॊप्प गूडि । नूतनरति सुखार्णोराशि दॆलि
चंद्रशालल गेळिसौधवीथिकल । जंद्रकांतमणि विशालवेदिकल
गाजुटोवरुल बंगरुपडकिंड्ल । जाजिपूबान्पुल जंपक क्रमुक
नारिकेळरसाल नारंगरंग । दाराममुल गृतकाद्रिसानुवुल
गॊलकुल कॆलकुल गुंजपुंजमुल । जलुवचप्परमुल सैकतस्थलुल
जातुरि मॆलगुचु सकलभोगमुलु । नाततसौख्यंबुलंदुचुनुंडे
नति यांध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुतकाव्यागम विमलमानसुडु
पालिताचारुडपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
दम तंड्रि विट्ठलधरणीशुपेर । गमनीयतरधैर्यकनकाद्रि पेर- २४७०
बनुगॊन नरिगंडभैरवु पैर । घनु पेर, मीसरगंडनि पेर

प्रकार का कष्ट हुए बिना, एकाग्रचित्त से इधर पिता की सेवा करते हुए और उधर धारुणीप्रजा पर दयादृष्टि से, बिना भेदभाव के विश्रुतकीर्ति से, ॥ २४६० ॥

—समचित्त हो, धर्मवान् और चरित्रवान् होकर शासन किया। वे प्रभु राम, अमरेन्द्र वैभव-सम्पन्न हो, सीता के साथ शोभा से नूतनरति (नव-वैवाहिक सुख) के सुखसमुद्र में ऊभचूभ होते रहे। चन्द्रशालाओं में, क्रीडा-वीथिकाओं में, चन्द्रकान्तमणियों की विशाल वेदिकाओं पर, चन्द्र-शालाओं की भीतरी कोठरियों में, सुवर्णखचित शयनागारों में, जूही की पुष्पशय्याओं में, चंपक, पूग, नारिकेल, रसाल (आम), नारंगी (आदि वृक्षों) से विलसित उपवनों में, क्रीडा-पर्वत की घाटियों में, सरोवरों के पार्श्व में, कुंजपुंजों में, धवल (अथवा शीतल) वितानों के नीचे, बालुकामय स्थलों पर, चातुर्य के साथ रहते हुए, सकलभोग (और) महान् सुखों का आनन्द लेते रहे।

इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्यागम-विमल-मानस (श्रेष्ठ काव्य और शास्त्रों के ज्ञाता), आचारवान्, अपार-बुद्धि-सिन्धु, भूलोक-निधि गोन बुद्ध-भूपति ने, अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, जो कमनीयतर धैर्य के कनकाद्रि हैं, ॥ २४७० ॥

—दृढता से अरिगंडभैरव (शत्रुभयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रताप-शाली), अलघु-निश्चल-दया के आयतबुद्धि वाले हैं, ललित सद्गुणगणा-लंकार हैं, आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो

नलघु निश्चलदयायत बुद्धि पेर। ललितसद्गुणगणालंकारु पेर
नाचंद्रतारार्कमै यॊप्पुमिगिलि। भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वॆलय
नसमानललितशब्दार्थसंगतुल। रसिकमै चॆलुवॊन्द रामायणमुन
बरग नलंकारभावनल् निंड। गरमॊप्पु नी बालकाडंबु जॆप्पॆ:
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य। मै रसिकानंदमै यॆल्लनाडु
निव्वसुमति नॊप्पु नी पुण्यचरित।। मॆव्वरु सदिविन नॆव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधामराम। नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु। परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु। धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु २४८०
नायुरारोग्यंबु लधिकसंपदलु। बायक पाटिल्लु; बापक्षयंबु
वरपुत्रलाभंबु वैरिनाशनमु। सरिनॊप्पु; धनधान्यचय समृद्धियुनु
ने विघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक। लावण्यवतुलैन ललनल पॊन्दु
गॊडुकुलतो नॆप्डु गूडियुंडुटयु। नॆंडगाग नापदलॆल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु। निम्मुल गाम्यंबु लॆडकुंडुटयु
नन्नलुदम्मुलु नभिवृद्धि बॊन्दि। मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु
सततंबु देवतासंतर्पणंबु। बितृगणतृप्तियु बॆम्पॊन्दुचुंडु;

शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगति से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस बालकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देने वाले (तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ें, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकटराज्य (सुख), निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति,॥ २४८० ॥

—आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश समुचित रूप से होगा। बिना किसी प्रकार की विघ्न-बाधाओं के धनधान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ बन्धुजनों से मिले रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों की अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर बड़े स्नेह के साथ मिलजुल कर रहना, सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) से वे सम्पन्न होंगे। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह

निदि मोक्षसाधनं, बिदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदिभव्य, मिदियु
श्रीकरमु;
रमणीयलील नी रामायणंबु । ग्रममॊप्प बूजिप गल्गु बुण्यमुलु;
व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोकनिवासंबु गलुगु;
२४९०

नॆन्दाक गुलगिरु लॆन्दाक जलधु । लॆन्दाक रविचंद्रुलॆन्दाक दार
लॆन्दाक वेदंबु लॆन्दाक दिशलु । नॆन्दाक भुवनंबु लेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोह-दोहळाचारमै परगु२४९३

बालकाण्डमु समाप्तमु

पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीयलीला (विधान) से इस रामायण को नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा। लिखने वालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा। ॥२४९०॥

जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रविचन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर विराजमान रहेगी। ॥ २४९३ ॥

बालकांड समाप्त

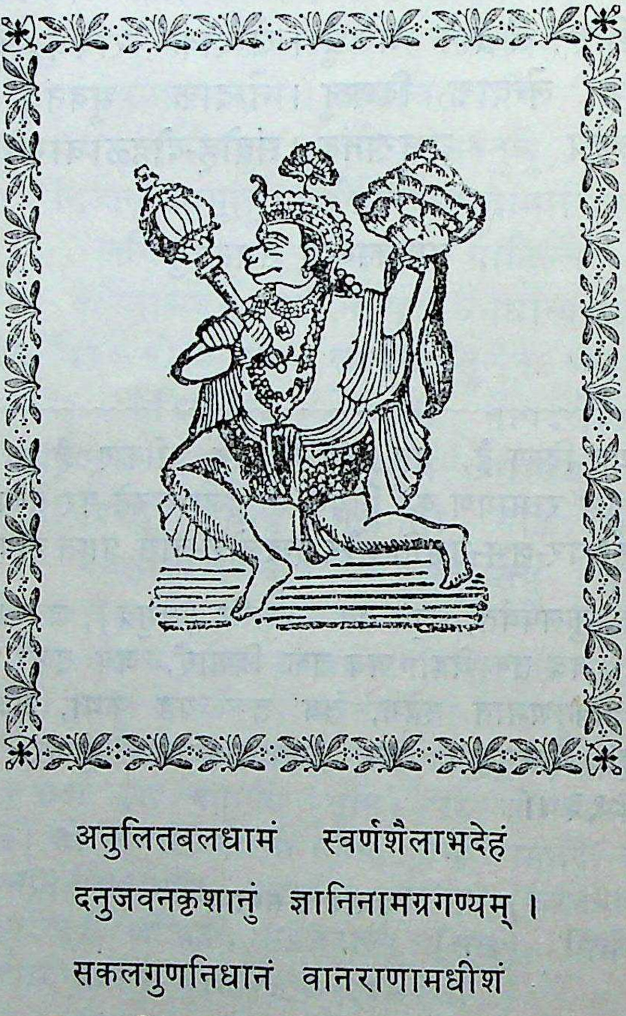

अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ।।

अयोध्या - काण्डमु

श्रीराम पट्टाभिषेक संकल्पमु

श्री लील दशरथोर्वीपालुडवनि । बालिंचुचुंडि चॊप्पड नॊक्कनाडु
सुतुलु नल्वुरलोन शुभतरमूर्ति । नतुल यशोनिधि यगुचुन्न वानि
नुरुसत्यमुनु युक्तियुक्तंबु मितमु । बरहितंबुनु गाग बलिकेडु वानि
बन्नुगा दन बहि:प्राणंबुलनग । सन्नुति गैकॊन्चु जरियिंचुवानि
ननुदिनंबुनु बॆट्टलगुवारिनॆल्ल । मनमुल मुदमंद मन्निंचुवानि
हितबुद्धि यगुवानि नॆल्लभूतमुल । हितमुन गरुण नन्वेषिंचु वानि
बोल जतुर्विधपुरुषार्थगतुल । नोलि जित्तंबुन नूहिंचुवानि
ननिशंबु संतुष्टुंडै युंडुवानि । विनुतविचारुडै विलसिल्लुवानि
वॆरवरि यगु वानि, विहितकार्यंबु । लरय ननालस्युडै चेयुवानि
गाढ विचारंबु गलवानि, बरम । गूढमंत्रंबुन गॊमरॊन्दु वानि १०
दप्पनि कोपंबु दगु प्रसादंबु । नॊप्पगु प्रभुशक्ति योनरॆडु वानि
ननि सुरासुरुलकु नविजेयुडगुचु । घनभुजबलमुन गडु वालुवानि
गज हयारोहण क्षमुडगुवानि । विजयलक्ष्मी समन्वितुडगु वानि

श्रीराम के राजतिलक का संकल्प

—बड़ी शोभा के साथ दशरथ-उर्वीपाल (राजा) अवनि का पालन उत्कर्ष से कर रहे थे। एक दिन (उन्होंने) चारों सुतों में शुभतर मूर्तिवाले, अतुल यशोनिधि, महत् सत्य को युक्तियुक्त, परिमित, परहित रूप में बोलनेवाले, शोभा से अपने (दशरथ के) बहि:प्राण माने जाकर, सन्नुति (प्रशंसा) प्राप्तकर विराजमान होनेवाले, प्रतिदिन गुरुजनों के मन को मुदित करते हुए, (उनके आदेशों को) माननेवाले, हितबुद्धिवाले, समस्त प्राणियों को हित (-बुद्धि) से, करुणा से देखनेवाले, समुचित रूप से चतुर्विध पुरुषार्थ के विधान की क्रम से चित्त में कल्पना करनेवाले, अनिश (सदा) सन्तुष्ट बनकर रहनेवाले, विनुत (सराहनीय) विचार-युक्त हो विराजनेवाले, उपायशाली, देख-समझकर विहित कार्यों को बिना आलस्य के करनेवाले, प्रगाढ़ विचारवाले, परम गूढ़ मन्त्रों (उपायों) से शोभित होनेवाले, ॥ १० ॥

—अनिवार्य (आवश्यक) क्रोध (तथा) उचित प्रसाद (वरदान) से शोभित प्रभुता की शक्ति से समंचित रहनेवाले, अनि (युद्ध) में सुर (और) असुरों के लिए अविजेय होते हुए, महान् भुजबल से अतिशयता को

माननि रोषंबु मदि लेनि वानि । मानुगा भृत्युल मन्निंचुवानि
नतिरथुडगुवानि ननसूयावृत्ति । ब्रतिदिनंबुनु बुद्धि बाटिंचु वानि
गुमुदबांधवु भंगि गॊमरॊन्दु वानि । नमितप्रजानंद मलरिंचुवानि[1]
गरुणासमुद्रुडै कडुमिंचुवानि । बरुल गुणंबुलु पाटिंचुवानि
बुद्धि बृहस्पति बुरुडिंचुवानि । निद्धतेजंबुन निनु बोलुवानि
नमित प्रजानंद मलरिंचुवानि । गुमुदबांधवु भंगि गॊमरॊन्दु वानि[1]
वॆलयु धनुर्वेद वेदशास्त्रमुल ।वलयु विद्यलयंदु वलनॊप्पु वानि २०
न्यायमार्गंबुन नर्थार्जनंबु । पायक चेय नेर्परि यगुवानि
सैरण धर तोड सरिवच्चुवानि । भूरिगुणंबुल बॊलुपारुवानि
श्रीरामु बट्टाभिषेकंबु सेसि । धारुणि येलिप दलपोसि चूचि
तलकॊन्न कडकतो दशरथेश्वरुडु ।गॊलुवुकूटमुनकु गॊमरॊप्पवच्चि २४

वसिष्ठादुलतो दशरथुनि समालोचन

यंदु वसिष्ठादुलगु पुरोहितुल । नंदु सुमंत्रादुलगु मंत्रिवरुल

प्राप्त करनेवाले, गज-हय (घोड़े) आरोहण (सवारी) में क्षमता (-युक्त) वाले, विजयलक्ष्मी से समन्वित, दीर्घ रोष को मन में न रखनेवाले, समुचित रूप से भृत्य-जनों का आदर करनेवाले, अतिरथ, अनसूया (ईर्ष्यारहित) वृत्ति को प्रतिदिन (सदा) बुद्धि (मन) से माननेवाले, कुमुद-बान्धव (चन्द्र) के समान शोभित होनेवाले, अमित प्रजानन्द (प्रजा को अति आनन्द देने) से विलसित, करुणा के समुद्र हो अनुपम बननेवाले, दूसरों के गुणों का आदर करनेवाले, बुद्धि में बृहस्पति को परास्त करने वाले, शुद्ध तेज में सूर्य के सम दीखनेवाले, अमित प्रजानन्द से विलसित, कुमुद-बान्धव के समान शोभायमान, विलसित, धनुर्वेद, वेद, शास्त्रों में, (और) आवश्यक विद्याओं में पारंगत, ॥ २० ॥

—न्यायमार्ग से निरन्तर अर्थार्जन (धन कमाने) में उपायशाली, क्षमा में पृथ्वी के समान, भूरि (सद्) गुणों से विलसित होनेवाले श्रीराम का पट्टाभिषेक (राजतिलक) कर (तत्पश्चात्) धारुणी (धरती) का पालन करवाने का विचार कर, (तदर्थ) सप्रयत्न हो, दशरथेश्वर सभास्थल में शोभा के साथ आये ॥ २४ ॥ (और),

वसिष्ठ आदि से दशरथ की मन्त्रणा

—उसमें (सभा में) वसिष्ठ आदि पुरोहित, सुमन्त्र आदि मन्त्रिवर, निकट

---

[1] यह पंक्ति दो बार पद आगे-पीछे करके आई है।

जेरुव नृपतुल जॆलुल जुट्टमुल । बौरवर्युल जानपदुल नाश्रितुल
धारुणीदिविजुल दंडनायकुल । धीरुल राजनीतिज्ञुल नॆल्ल
वारल रार्विंचि वारिदनिनद । चारु गंभीर सुस्वरमुन बलिकॆः
'मापॆद्दलिक्ष्वाकु मनुजेश मुख्यु । ली पृथिवीतलमेलि रिंपॆसग;
वारल रीति नवारितनीति । नी राज्यमंतयु ने नोपिनट्लु ३०
निजकुलागतधर्मनिरतुंड नगुचु । ब्रजल नेलितिनि मी प्रापुन जेसिः
यदि यंतयुनु मीरलॆऱिंगिनयदिय । विदितंबुगा निंक विनुडॊक्कमाट
यरुवदि वेलेडु लवनि बालिंचि । नॆऱि सितच्छत्त्रंबु नीडन युंडि
मुदिसिति भूभारमुनकंटॆ घनत । बॊदलु जराभारमुन दाल्चु कतनः
ना मेनु विकसित नलिनषंडंबु । गौमुदि चे बोले गर्वंबु दक्कॆः
रमणीयगुणमुल रामचंद्रुनकु । समुलु लेरधिकुलु सरिंचपगलरॆ ?
तलप नीतडु दल्लिदंड्रुलर्भकुल । नलरिंचुगति मिम्मु नलरिंपगलडुः
प्रजलॆल्ल रामुनि पट्टंबुनकुनु ।निजमुगा सुरलकु निष्ठम्रॊक्कुदुरु;
जनमनोरथमुलु सफलंबुलगुचु । ननुपम सुखलील नलरु गावुतमः

(पास-पड़ोस) के नृपति, मित्र, सम्बन्धी, श्रेष्ठ नागरिक, जनपद के निवासी (ग्रामीण), आश्रित जन, धारुणी-दिविज (ब्राह्मण), दंडनायक (सेनापति), धीरजन, राजनीतिज्ञ (आदि) सभी को बुलाकर, वारिद (मेघ-) निनद-चारु-गम्भीर स्वर में (यों) बोले—'हमारे पूर्वज इक्ष्वाकु (वंश के) श्रेष्ठ राजाओं ने बड़ी शोभा के साथ इस पृथ्वीतल पर शासन किया। उनके समान मैंने भी अबाध गति से, इस समस्त राज्य को, अपनी शक्ति (सामर्थ्य) के अनुसार, ॥ ३० ॥

—निज कुलागत-धर्म-निरत होते हुए, आप (लोगों) के सहयोग से, प्रजा का पालन किया है। यह सब आप लोगों को ज्ञात ही है। सुस्पष्ट रूप से एक और बात सुनिए। साठ हज़ार वर्ष तक अवनि (भूमि) का पालन करके, विधि-विधान से श्वेत छत्र की छाया में रहते हुए, भू-भार की अपेक्षा बढ़ती हुई वृद्धावस्था के अतिशय भार को वहन करने के कारण बूढ़ा हो गया हूँ। विकसित कमल-समूह कौमुदी (चाँदनी) के कारण जिस तरह कान्तिहीन हो जाता है, वैसे ही मेरा शरीर गर्वहीन हो गया है। रमणीय गुणों में रामचन्द्र के समान कोई नहीं है। लोग उनकी अधिक क्या प्रशंसा कर सकेंगे? सोच-विचार कर देखने पर यह आपको इस प्रकार खुश रख सकता है, जैसे माता-पिता शिशुओं को। सचमुच समस्त प्रजा राम के राजतिलक के लिए देवताओं की निष्ठा से पूजा करती है। इससे (राम के राजतिलक से) जनता के मनोरथ सफल

कावुन निक रामु गल्याणनामु । देवताहितकामु धीगुणस्तोमु ४०
निंदीवरश्यामु निनकोटि धामु । सौंदर्यजितकामु जगदभिरामु
ब्रजल बालिपग बट्टंबुगट्टि । सुजनुलु गोंनियाड सुखकरंबैन
यूरट गोरुचुनुन्नाड; मीकु । नी रीति सम्मतंबे' यंचु बलुक
घनगर्जितंबु लाकर्णिंचि यलरु । वनमयूरंबुल वड्वु वहिंचि
मोंगि गलकलशब्दमुखरिताशान्तु । लगुचु भूसुरमुख्युलगु भूमिप्रजलु
दमलोन दामु मंतनमाडि कूडि । कमलाप्तकुलुनकुत्कंठ निट्लनिरि:
'मीरानतिच्चिन मेलिमिमाट । वारु वीरनकेंल्लवारिकि हितमु
हृदयरंजकमु, नभीष्टदंबय्यें । नदिगाक सकल प्रजानंदकरुनि
राजनीतिज्ञु निर्मलधर्मनिपुणु । देजोजगद्‌बंधु दीनैकबंधु
सत्यसंधु ब्रसन्नु शांतिसंपन्नु । नित्यविप्रार्चनानिरतु सच्चरितु ५०
नीतियु ब्रीतियु नेर्पुनु नोर्पु । ख्यातियु भूतियु गांतियु दांति
शांतियु मोंदलगु सद्‌गुणावळुल । नेंन्तयु नीकन्ननेक्कुडैयुन्न
रामुनि लोकाभिरामुनि नीवु । भूमिकि राजुगा बून्चुट तगदें?

होंगे (और) अनुपम सुख लीला से विलसित होंगे। अतः अब कल्याण-नाम, देवता-हित की कामना करनेवाले, धीगुणस्तोम, ॥ ४० ॥

—इन्दीवर श्याम, इन कोटि-धाम (करोड़ सूर्यों के समान प्रकाशवाले), सौंदर्यजित-काम (जिसने सौन्दर्य में कामदेव को जीत लिया हो), जगदभिराम राम का, प्रजा का पालन करने के लिए राजतिलक कर, सुजनों की प्रशंसा प्राप्तकर, सुखप्रद रूप से आश्वस्त होना चाहता हूँ। (क्या) आपको यह रीति (प्रकार) सम्मत (स्वीकार) है?' ऐसा बोलने पर, घनगर्जन को सुनकर प्रसन्न बननेवाले वन-मयूरों की भाँति, कल-कल शब्द से मुखरित अशान्ति (हलचल) से युक्त हो, भूमिसुर आदि भू-प्रजा परस्पर परामर्श करके, मिलकर (एक साथ) उत्कंठा से कमलाप्त (सूर्य) कुल (वाले दशरथ) से (यों) बोले—'आपने जिन श्रेष्ठ वचनों का आदेश दिया, वे सबके लिए हितकर, हृदयरंजक (तथा) अभीष्टदायक हैं। यही नहीं, सकल प्रजा के लिए आनन्दकर, राजनीतिज्ञ, निर्मल धर्म में निपुण, तेज में जगत्‌बन्धु (सूर्य), दीनैक बन्धु (दीनों के लिए एकमात्र बन्धु), सत्यसन्ध, प्रसन्न, शान्ति-सम्पन्न, नित्य विप्रों के अर्चन में रत, सच्चरित्र, ॥ ५० ॥

—(तथा) नीति, प्रीति, निपुणता, क्षमा, ख्याति, भूति (ऐश्वर्य), कान्ति, दान्ति, शान्ति, आदि सद्‌गुणावलियों से आप से भी अधिक श्रेष्ठ बने राम को, लोकाभिराम को पृथ्वी के लिए राजा बनाना (क्या) न्याय नहीं

त्रैलोक्यमैन नातंडेलजालु । नी लोक मेलुटदॆन्त मात्रंबु ?
नी सुताग्रणि राज्यनिरतुडौनेनि । भूसति सेसिन पुण्यंबु गादॆ ?
कावुन बट्टंबु गट्टुटु मीवतनि । केवेळ मेमुनु निदियॆ कोरुदुमु ।”
अनुचु बद्धांजलुलै विन्नविंप । विनि तन मदिलोन वेड्क रॆट्टिंप
भूमीशुडप्पुडुप्पॊंगि वसिष्ठ । वामदेवुल जूचि वलनॊप्प बलिकॆ:
‘नी मधुमास मभीष्टदंबगुट ।रामुनि सकल साम्राज्य लक्ष्मिकिनि
राजु जेयुदमु; दद्द्रव्य वस्तुवुलु। योजिंचि तॆप्पिंपुडुचितवैरवरिनि ६०
ननिपल्क वारु नय्यभिषेकयोग्य । घनवस्तुवुलु गूर्पंगा बूनि; रंत
नादित्यकुलगुरुंडगु वसिष्ठुंडु । मेदिनीपति याज्ञ मॆयिकॊनि यपुडु
परिचारकुल जूचि पलिकॆ ।‘मीरिक बॊरि सुवर्णंबुलु बॊलुचु रत्नमुलु
नॆल्ल योषधुलुनु नॆसगु गंधंबु । तॆल्लबुष्पंबुलु दॆनिय घृतमु
लाजलु नूतन ललितवस्त्रमुलु । राजयोग्यंबगु रथवरेण्यमुनु
मणिकांचनांचित महितायुधमुलु । ब्रणुतलक्षणमैन भद्र सामजमु

है? (अर्थात् न्यायसंगत ही है।) वे (राम) तो तीनों लोकों पर शासन करने में समर्थ हैं। इस लोक पर शासन करना (उनके लिए) कौन-सी बड़ी बात है? यदि आपका सुताग्रणि (पुत्रों में श्रेष्ठ) राज्य (शासन-) निरत हो तो वह भूसति (पृथ्वी) के पुण्य का फल ही तो है न। अतः आप उनका राजतिलक कर दें। सदा हम यही चाहते हैं।’ (ऐसा) कहते हुए, बद्धांजलि (अंजलि बाँधकर) उनके (सभासदों के) निवेदन करने पर, (उसे) सुनकर अपने मन में हर्ष के अधिक हो जाने पर, भूमीश (राजा) फूल गये (और) वसिष्ठ (और) वामदेव की ओर देखकर, समुचित रूप से (यों) बोले—‘इस मधुमास के अभीष्टप्रद होने के कारण, राम को सकल साम्राज्य-लक्ष्मी का राजा बना देंगे। तत् तत् द्रव्य और वस्तुओं को सोचकर उचित रूप से मँगाइए।’ ॥ ६० ॥

—(राजा दशरथ के) ऐसा कहने पर वे (वसिष्ठ और वामदेव) उस (राम के) अभिषेक के योग्य अधिक वस्तुओं को सँजोने के प्रयत्न में लग गये। उस समय आदित्यकुल (सूर्यवंश) के गुरु वसिष्ठ मेदिनीपति (राजा) के आदेश को स्वीकार कर, परिचारकों को देख (यों) बोले—‘अब आप (लोग) क्रम से सुवर्ण, शोभायमान रत्न, समस्त ओषधियाँ, अतिशय गंध (सुगंध द्रव्य), श्वेत पुष्प, मधु, घृत, लाजा (खील) नूतन-ललित वस्त्र, राजा-योग्य श्रेष्ठ रथ, मणिकांचन से समंचित महित (बड़े) आयुध, सराहनीय लक्षणों से युक्त भद्र सामज (गज), श्रेष्ठ हय (घोड़ा), गोलाकार बने वस्त्र के पंखे, श्वेत छत्र, उपयुक्त चँवर, बड़ा केतन, सौ

नवदातहयमुनु नालवट्टमुलु । धवळातपत्रंबु दगु चामरमुलु
घनकेतनमु हेमकलशमुल् नूऱु । गनक शृंगंबुलु गल वृषोत्तममु
वऱलु समंचित व्याघ्रचर्मंबु । मऱियुनु वलसिन महितवस्तुवुलु
नॊगि दॆन्डु मीरग्निहोत्रशालकुनु ।नगरि वाकिड्लुनु नगर वीथुलुनु७०
बुरगोपुरंबुलु बॊरिनॊप्पुसेयु । डरुदार शिल्पंबुलंदंद मॆऱय
गलुवडंबुलु बताकलु दोरणमुलु । गलयंग बुरलक्ष्मि गैसेयु डॆलमि;
नोलि भूसुरुलकु नॊकलक्षकैन । बोल नन्नंबु लॊप्पुग जेयुडॆलमि:
दक्षिणार्थं बैन द्रव्यंबुलॆल्ल । नक्षीणमुग गूर्पु डखिलयत्नमुल
नंदऱु बूजोपहारादि विधुल । बॊन्दुगा गॊलुवुडु पुरदेवतलनु;
वारांगनलु वीरुवारनकॆल्ल । वारुनु गैसेसि वारक नगरि
रॆन्डव वाकिट रीतितो वच्चि । युंडुडु; नगरि भटोत्तमुल् गॊलुव
नॆऱिंगिपु’ डनिनि वारॆल्लकार्यमुलु । मऱवक कार्विंचि मदिमुदंबॊदव
ना वसिष्ठुनितोड नंतयु जॆप्प । गा विनॆ दशरथक्ष्मापालु: डंत
क्ष्मावल्लभुंडु सुमंत्रादिमंत्र । कोविदुलनु बंधुकोटि बेर्वॆर ८०
रार्विंचि चॆप्पि वारलु सम्मतिप । वेवेग रघुरामविभुनि रर्प्पिंचि८१

हेमकलश (सोने के घड़े), कनक-शृंगों से युक्त श्रेष्ठ वृषभ, शोभायमान (और) समंचित व्याघ्र चर्म और भी आवश्यक श्रेष्ठ वस्तुओं को विधि-क्रम से अग्निहोत्रशाला (हवनशाला) में लाइए। नगर के द्वारों, नगर की वीथियों (तथा) नगर के गोपुरों को, जहाँ-तहाँ आश्चर्यप्रद शिल्प के (द्वारा) शोभायमान पद्धति पर अलंकृत कीजिए। कमलों की मालाएँ, झंडियाँ, तोरण से युक्त पुरलक्ष्मी को सानन्द सजाइए। ॥ ७० ॥ क्रम से एक लाख भूसुरों के लिए भी (जो) पर्याप्त हो, इतना अन्न (संचित करने) का प्रयत्न सप्रेम कीजिए। अखिल (समस्त प्रकार के) प्रयत्न करके दक्षिणा के लिए (आवश्यक) द्रव्यों को, अक्षीण रूप से सँजोइए। सभी पूजा (और) उपहार-विधियों से, सुन्दर रूप से पुर-देवताओं की पूजा कीजिए। वारांगनाएँ (वेश्याएँ) और सभी लोग समलंकृत हो, अवाध गति से नगर के दूसरे द्वार पर क्रम से आकर, ठहर जाइए। नगर के उत्तम भटों की सेवाएँ लेते हुए (यह समाचार) सबको बताइए।’ (ऐसा) कहने पर वे (परिचारक-गण) सभी कार्यों को, बिना भूले सम्पन्न कर, मन में हर्ष के उत्पन्न होने पर वापस आ गये (और) उस वसिष्ठ से सब कुछ बताया। उसे राजा दशरथ ने (भी) सुन लिया। तब राजा ने सुमन्त्र आदि मंत्र-कोविदों के द्वारा सम्बन्धियों को, प्रत्येक का नाम ले-लेकर बुलवाया (और) (उनको) बताया। (जब) वे सहमत हुए (तब) अति शीघ्र रघुराम विभु को बुलाया ॥ ८१ ॥

राज्यपालनमु बूनुमनि दशरथुडु श्रीरामुनि गोरुट

तन चूपुलनु सुधाधारलु दौरुग । जननाथु डा रामचंद्रुतो ननियैः
'बेनुपौन्द गडिमिमै बेद्दगालंबु । जनुलेल्ल बौगड राज्यमु सेसि येनु
दानमुल् धर्ममुल् दनरु यागमुलु । नूनिन निष्ठतो नौगि बेक्कु सेसि
कडपट नी यट्टि कल्याणशीलु । गौडुकुगा बडसिति गोर्कि दीपिंपः
नेनिंक भूभारमिट मोवजाल । गान निन् बट्टंबु गट्टेद ब्रीति;
जेलुवार बट्टाभिषेकंबु सेय । ललितमै यौप्पेडु लग्नमेल्लुंडि
यौनर सीतयु नीवु नुपवासमंडु । डेनसिन भक्तितो नेल्लि संप्रीति'
ननिपल्कुटयु रामुडवनीशु जूचि । विनय धैर्यंबुलु वेलयनिट्लनियैः
'जननाथ ! नाकुमी चरणपद्ममुलु । गौनकौन्न भक्ति गौलुचुटकंटे९०
गडचिन कार्यंबु गलदे लोकमुन? । नुडुगुडीपलुकुलयोग्यंबु' लनुडु
'ननघचारित्रुड; वतिपुण्बघनुड; । विनकुलरत्नंब; वीवुदक्कंग
दगुवारलेव्वरु धरणि पालिप ? । दगिलि कैकौनुमिक द्रैलोक्यवीर!'
यनिपल्कुटयु रामु 'डट्ल का' कनुचु। दन नगररिकि बोयैः ददनंतरंब

राज्य-पालन करने के लिए दशरथ का श्रीराम से प्रार्थना करना

—अपनी चितवनों से सुधा-धाराओं के स्रवित होते रहने पर, जननाथ (राजा) ने रामचन्द्र से कहा—'औन्नत्य (और) आधिक्य से युक्त हो, दीर्घकाल तक प्रजा की प्रशंसाएँ प्राप्त करते हुए (मैंने) राज्य किया। कई दान, धर्म, श्रेष्ठ यज्ञ, निष्ठा धारणकर, बड़ी लगन के साथ कर, कामनाओं के प्रदीप्त होने पर, अन्त में तुम-जैसे कल्याणशील को पुत्र के रूप में प्राप्त किया। अब मैं भूभार को वहन नहीं कर सकता। अतः प्रीति से तुम्हारा राजतिलक करूँगा। शोभा से पट्टाभिषेक करने के लिए ललित रूप से उपयुक्त (शुभ) लग्न परसों है। अतः तुम और सीता अधिक भक्ति (और) प्रीति के साथ कल उपवास करो।' ऐसा कहने पर राम ने अवनीश को देखकर, विनय (तथा) साहस के उमड़ने पर (यों) कहा—'हे जननाथ ! आपके चरण-पद्मों की लगन के साथ सेवा करने से बढ़कर' ॥ ९० ॥

—मेरे लिए लोक में श्रेष्ठ कार्य कोई दूसरा है ? (नहीं है।) छोड़िए इन अयोग्य (अनुचित) शब्दों को, ऐसा कहने पर (राजा ने कहा)—'(तुम) अनघ (निष्पाप) चरित्रवाले हो, अतिपुण्य धनवाले, (और) इस (सूर्य) कुल के रत्न हो। तुम्हारे सिवा इस धरणी का पालन करने में समर्थ और कौन है ? हे त्रैलोक्य (त्रिलोकों में भी अद्वितीय) वीर !

पौरुल राजुल बंधुलनॆल्ल । वारल वीड्कॊलिपि वनजाप्तकुलुडु
अंत:पुरंबुन करिगि श्रीरामु । जॆन्तनुन्न सुमंत्रुचे बिलिपिंचि
तनसमीपमुन नाततयु गूर्चुंड । बनिचि यानंदबाष्पमुलुप्पतिलग
मनमलरग जूड महिपुनकपुडु । मनमुन दिगुलॊत्त मऱि यशुभमुलु
कनुपट्टॆं; नंतट गडुभयमंदि । तन पुत्रकुनि जूचितद्दयु बलिकॆं;
'नापालि भाग्यंब! ना निधानंब! ।-ना पुण्यसारंब! ना तप: फलम! १००
न पुत्र रत्नंब! ना कललंदु ।दीपिंचॆ नशुभवर्धितनिमित्तमुलु;
घन दुर्ग्रहमुलु नुल्कापातमुलुनु । गनु गॊंटि; मनसु वैकल्यंबुनॊन्दॆ;
गावुन बुण्ययोगंबुन निपुडु । नीवु पट्टमु बून निंडु ना कॊर्कि;
यालस्यमेल? नी यभ्युदयमुन । की लोकमंतयु नॆपुडु गांक्षिचु;
नन विनि दशरथु नानति नीय ।कॊनि म्रॊक्कि तंड्रि वीड्कॊनि राघवुंडु
तन तल्लिकिनि सुमित्रकु नट्टिवार्त । जनकनंदनकु लक्ष्मणुनकु जॆप्पि
वारल संतोष वार्धि दॆलिंचि । या राघवुंडु शीतांशु सन्निभुडु
तन नगरिकि वच्चॆं दानु सीतयुनु । घनमैन हृदयविकासंबु तोड;

अब अवश्य (इस भार को) ग्रहण करो।' ऐसा कहने पर, राम ने कहा—'ऐसा ही होने दीजिए' (और) अपनी नगरी (महल) में चले गये। उसके अनन्तर नागरिक, राजा और सम्बन्धी सभी को बिदाकर, वनजाप्त (सूर्य) कुल (के राजा दशरथ) ने अन्त:पुर में जाकर, निकटस्थ सुमन्त्र के द्वारा श्रीराम को बुलवाया। अपने समीप उस तनय (पुत्र, श्रीराम) को बैठने की आज्ञा दी, आनन्द-वाष्प (अश्रु) के उमड़ आने पर, मन में आनन्द के उमड़ने पर, देखने पर (विचार करने पर) महिप (राजा) को कुछ अशुभ (बुरे शकुन) दिखलायी पड़े, जिससे उनके मन में चिन्ता उत्पन्न हुई। तब अति भीत होकर, अपने पुत्र को देखकर फिर से बोले—'हे मेरे भाग्य (-निधि)! हे मेरे निधान! हे मेरे पुण्यसार! हे मेरे तप:फल! ॥ १०० ॥

—हे मेरे पुत्ररत्न! मैंने स्वप्नों में अशुभ को वर्द्धित करनेवाले कारण दीप्त हुए बड़े दुष्ट ग्रहों को (तथा) उल्कापातों को देखा है। मन विकल हो गया है। अत: अब पुण्य योग में तुम अभिषिक्त हो जाओ, यही मेरी प्रगाढ़ इच्छा है। (अब) देरी क्यों? यह समस्त लोक तुम्हारे अभ्युदय (उन्नति) की आकांक्षा करता है।' (ऐसा) कहने पर (उसे) सुनकर, दशरथ की आज्ञा को स्वीकार कर, प्रणाम कर, पिता से बिदा लेकर, वह समाचार अपनी माता को, सुमित्रा को, जनकनन्दिनी (सीता) को, (तथा) लक्ष्मण को बताकर, उन्हें आनन्द-समुद्र में ऊभ-चूभकर, वह राघव,

नंत वसिष्ठुतो ननियें भूविभुडु, "संतोष मेंसगंग जनि रामविभुनि
मुनिनाथ! युपवासमुनकु संकल्प।मोंनरिंप जेयुमु युक्त मार्गमुन" ११०
ननवुडु ब्रह्मरथारूढुडगुचु।जनि वसिष्ठुडु रामचंद्रुनि कडकु
दन शिष्यु नोंक्कनि दडयक पनिपि। तन राक मुन्नुगा दग नेंरिंगिंचि
यम्मूडु वाकिड्लयंदाक बोव। निम्मुल राघवुंडेदुरेगु देंन्चि
यवरोहणंबु दा नमर जेयिंचि।यवतीर्ण रथुनिकि नतिभक्ति म्रोंक्कि
लोनिकि देंच्चि या लोकवंद्युनकु। मानुगा सत्कृतुल् मनसार जेय
बुण्याहवाचनंबुनु नुपवास। पुण्य संकल्पंबु बोंसग जेयिंचि
वेंलय रामुडु पदिवेल धेनुवुल। नेंलमि दक्षिणगाग निच्चिन गोंनुचु
वच्चि वसिष्ठुडु वसुमतीपतिकि। नच्चुगा जेंप्पि गृहंबुन करुग
नंतः पुरंबुन करिगें भूविभुडु। नंत नक्कड रामु डानंद मोंदव
जानकितो गृत स्नानुडै विष्णु। मानुगा गूंचि होमंबु गाविंचि १२०
या हविश्शेषंबु नमर ब्राशिंचि। यूह विष्णु ध्यान मोंनर जेयुचुनु

जो शीतांशु-सन्निभ (चन्द्र-समान) थे, सीता के साथ अधिक हृदय-विकास (उत्साह) से अपनी नगरी (महल) में आये। तब राजा ने वसिष्ठ से कहा—'हे मुनिनाथ! (आप) जाकर विभु राम को, आनन्द के उमड़ आने पर, समुचित विधि से उपवास के लिए संकल्प कराइए।' ॥ ११० ॥

ऐसा कहने पर वसिष्ठ ब्रह्मरथ पर आरूढ़ होकर, रामचन्द्र के यहाँ गये (और)अविलम्ब अपने एक शिष्य को भेजकर, पहले ही अपने आगमन (का समाचार) उचित रूप से जतला दिया। (राम के महल के) तीन द्वारों को (जब वसिष्ठ ने) पार कर लिया, तब राघव प्रेम से (उनके) स्वागत के लिए आये, उचित रूप से (उन्हें) अवरोहण कराया (रथ से उतारा); रथ से उतरे हुए उन्हें (उस मुनि को) अति भक्ति से प्रणाम किया, भीतर ले गये (और) उस लोकवन्द्य (वसिष्ठ) का विधि-विधान से, हार्दिक रूप से आदर-सत्कार किया (तब वसिष्ठ के) पुण्याह-विधान (तथा) उपवास (का) पुण्य संकल्प कराने पर, राम ने हर्ष से दस हजार धेनु (उन्हें) दक्षिणा में दिये तो उनको (धेनुओं को) स्वीकार कर, वसिष्ठ वसुमतीपति के पास आकर (सब कुछ) स्पष्टता से बताकर (स्व) गृह गये तो राजा (भी) अन्तःपुर में चले गये। तब वहाँ राम, आनन्द के उत्पन्न होने पर, जानकी के साथ स्नानकर, विष्णु के प्रति होम (हवन) कर, ॥ १२० ॥

—उस हविश्शेष (हवन-शेष) को उचित रूप से ग्रहणकर, मन से विष्णु का ध्यान करते हुए, विशद निश्चय बुद्धि से, विष्णु-गृह (मंदिर)

विशद निश्चय बुद्धि विष्णु गेहमुन । गुश शय्य पै बॊलिच कुलगुरुंडैन
या वसिष्ठुडु सॆप्पिनट्टि चंदमुन । धीवरिष्ठुडु रामदेवुंडु निष्ठ
नुपवासमुंडे; नयोध्यलो नंत । विपुल सम्मदमुन विलसिल्लुवारु
गलयंग गस्तूरि कलयंपि जल्लि । कॊलदि मुत्तॆमुल म्रुग्गुलु वॆट्टुवारु,
नरुदार नुत्तुंग हर्म्यंबुलंदु । सरिनॊप्पु देवता सदनंबुलंदु
विपणिमार्गमुलंदु विविध चित्रमुल । विपुल पताकलु वॆसनॆत्तुवारु
जॆलुवार गृहमुलु सिंगारिंचुवारु । नलिमीऱ मणितोरणमुलॆत्तुवारु
विरुलचप्परमुलु विरचिंचुवारु । बुर वीथि गेतनंबुलु निल्पुवारु
गलुवडंबुलु डंबुगा गट्टुवारु ।गलिमि नॊंडॊरुलर्थि गैसेयु वारु१३०
बॆरयंग निस्साण भेरी मृदंग । मुरज शंखादुलु मॊरयिंचुवारु
बॊलुचु दिव्यसुगंध पुष्पाक्षतमुलु । वॆलयंग गैकॊनि विलसिल्लुवारु
नभिषेक सुमुहूर्त मरयिंचुवारु । विभुडैन दशरथु विनुतिंचु वारु
निलुवेल्पुलकु बूजलिच्चॆडुवारु । गल कॊद्दि दानमुल् गाविंचु वारु
बुरराजवीथि गुंपुलु गूडु वारु । सरसकथागोष्ठि सलिपॆडु वारु

में कुशासन पर, विराजमान हो, कुलगुरु वसिष्ठ के (द्वारा) बतायी (विधि के) अनुसार, धी-वरिष्ठ राम, देव-निष्ठा से उपवास (व्रत में) रहे। तब अयोध्या में विपुल सम्मोद से विराजमान होनेवाले, सुन्दरता से कस्तूरी का छिड़कावकर, श्रेष्ठ मोतियों से चौक पूरनेवाले (रँगोलियाँ सजानेवाले), आश्चर्यप्रद उत्तुंग हर्म्यों (सौधों) (तथा) शोभायमान देव-सदनों में, विपणि (व्यापार के) मार्गों में विविध प्रकार के विपुल पताकाओं को शीघ्रता से फहरानेवाले, सुन्दरता से गृहों को सजानेवाले, शोभा से मणि-तोरण सजानेवाले, फूलों के छप्परों की रचना करनेवाले, नगर-वीथियों पर झंडे लगानेवाले, कमलों के हारों को आडम्बर से बनानेवाले, अधिक सम्पन्नता से परस्पर अलंकार करनेवाले; ॥ १३० ॥

—निसान, भेरी, मृदंग, मुरज, शंख आदि को मुखरित करनेवाले, सुन्दर दिव्य सुगन्ध-पुष्प-अक्षतों को लेकर विलसित होनेवाले, अभिषेक-सुमुहूर्त की (ठीक) खोज करनेवाले, प्रभु दशरथ की प्रशंसा करनेवाले, कुल-देवताओं की पूजा करनेवाले, यथाशक्ति दान करनेवाले, नगर की राजवीथियों में एकत्रित होनेवाले, सरस कथा-गोष्ठियाँ करनेवाले, राम ही राजा हों—ऐसी प्रार्थना करनेवाले, राम की सेवा करने के लिए उतावले होनेवाले, राम-संकीर्तन में अनुरक्त होनेवाले बनकर (अयोध्या-वासी) कोटि-कोटि महोत्सवों में प्रसन्न हो रहे थे ॥ १३७ ॥

रामुडे राजुगा ब्रार्थिचुवारु । रामुनि गोलुव संभ्रम पडुवारु
राम कीर्तनमुल रागिल्लुवारु ।नै महोत्सव कोटु ललरिंचु चुंड१३७

मंथर दुरालोचनमु

नप्पुड मंथर यनु कैक दासि । तप्पक तन मेड नेक्कि चूचि
“यिदि येमि चंदमो! यी पुरलक्ष्मि । पौंदलुचुन्नदि महाद्भुत वैभमुल
बौरु लंदऱुनु नपार शृंगार । चारु शरीरुलै संचरिंचेंदरु; १४०
कौसल्य नगरिलो गल कांतलेंल्ल । गैसेसि युन्नारु गड्डवेड्कतोड;
नेलोंको! कौसल्य येंद नुब्बि युब्बि । वेल संख्य धनंबु वेंच्च पेट्टेडिनि”
ननुचु ब्रमोदादि यगु रामु दादि । गनुगोंनि यडिगि यक्कामिनि वलन
रामु बट्टमु गट्टि राजु गाविंप । ना महोत्सव कोटु लनि निश्चयिंचि
पनिवडि “रामुडु बाल्यंबुनंदु । दन कालु विऱिचिन तप्पु साधिंप
निदि नाकु दऱि” यनि यिच्च जिंतिंचि। यदि हेंच्चि कैकतो नंतयु जेंप्प
वच्चि तत्केळीनिवासंबु जोंच्चि । मच्चिचक नुय्येंल मंचंबु मीद
ब्रविमल मृदुल तल्पंबु पै वेड्क । बर्वळिंचियुन्न यप्पद्माक्षि जूचि

मंथरा का दुष्ट विचार

—तब मंथरा नामक कैकेयी की दासी ने अपने महल (की छत पर) चढ़कर, (यह महोत्सव) देखकर सोचा—‘यह क्या कारण है कि यह नगरलक्ष्मी महा अद्भुत वैभव से विलसित हो रही है। सभी नागरिक अपार श्रृंगार (से युक्त) चारु शरीरवाले होकर विचर रहे हैं। ॥ १४० ॥

—कौसल्या की नगरी (महल) की सभी कान्ताएँ (स्त्रियाँ) बड़े शौक़ से अलंकृत हैं। ऐसा क्यों? (क्या कारण है) कौसल्या मन में फूल-फूलकर हज़ारों की संख्या में (अगणित) धन व्यय कर रही है।’ (ऐसा) सोचते हुए (मंथरा ने) प्रमोदादि (प्रमोद ही जिसके आदि में हो, अत्यन्त हर्षित) राम की धाय को देखकर (कारण) पूछा। उस कामिनी से (यह जानकर कि) राम के राजतिलक के लिए राजा के निर्णय के कारण ये महोत्सव कोटियाँ हैं, (उसने) निश्चय किया कि ‘राम ने बाल्यावस्था में मेरी टाँग तोड़ दी थी, उस अपराध का बदला लेने के लिए यही मेरे लिए अवसर है।’ ऐसा मन में चिन्तन करके, उसके (इच्छा के) बढ़ जाने पर, कैकेयी से सब कुछ कहने आकर, लाड़-प्यार से झूलनेवाले पलंग (पालने) पर, प्रविमल मृदु तल्प पर, आनन्द से लेटी हुई उस पद्माक्षी को देखकर, ‘उठो उठो, हे भामा! लीलाभिरामा! अपनी भलाई

“लॆम्मु लॆम्मो भाम! लीलाभिराम! । यिम्मॆऱुंगवु कार्य मेमियु” ननुचु
गॊन रॆट्ट बट्टि ग्रक्कुन लेवनॆत्ति ।तन नेर्पु माटल दरुणि किट्लनियॆ १५०
“वामलोचन! नीकु वच्चिन भयमु । नी मदि दलपोयनेर वॆन्तयुनु;
वसुधाधिपति नाकु वलचु; ना भाग्य।मसमान मनि चॆप्पु; ददि बॊंकुलय्यॆ
नदि यॆट्टि दन बॆद्दयालिकि वॆऱचि।मदिराक्षि! निनु नेडु मऱि मोसपुच्चि
भरतुनि नॊकवंक बरभूमि कनिचि। परिकिंचि रघुरामु बट्टंबु गट्ट
दलचुचुनुन्नाडु दशरथेश्वरुडु; । नॆलत! यिट्टिदयैन नीकेटि ब्रतुकु?
राजुल मदि नम्मरादु; नीवेल । वेजाडलनु विऱ्वीगॆदो बाल !
यिट्टि मोह विदूरु निट्टिवंचकुनि । निट्टि बूमॆलकानि नॆन्दु ने गान;
मगडॆ यातडु मैत्रि मानिन यट्टि । पगवाडु गाक यी पट्टुन नीकु!
सवतिकुमारुनि जगति यंतटिकि । धवुनिगा जेसिन धवळायताक्षि
नीकुमारुनकुनु नीकुनु नाकु ।शोक मब्बुटॆ काक सुखमेल कलुगु? १६०
नीकरणंबुगा नीतंड्रि वनुप । जेकॊन्न प्रेम वच्चिनदान गान

के किसी कार्य को नहीं जानती हो’—यह कह, उसके (कैकेयी के) हाथ के छोर को पकड़कर, उसे झट से उठाकर बैठाया (और) अपने चतुर वचनों से तरुणी (कैकेयी) से (यों) बोली— ॥ १५० ॥

—‘हे वामलोचना (सुन्दर नेत्रोंवाली) ! अपने (सिर) आये भय (आफ़त) के बारे में अपने मन में तनिक भी विचार नहीं करती तुम जो कहती थीं कि वसुधाधिपति (राजा) मुझसे प्रेम करता है, मेरा भाग्य असमान है, वह झूठा (सिद्ध) हो गया है। बात ऐसी है, अपनी बड़ी पत्नी से भय खाकर, हे मदिराक्षी (मतवाली आँखोंवाली) ! तुम्हें आज धोखा देकर, एक ओर भरत को पर-भूमि (विदेश) में भेजकर, (अवसर) देखकर, दशरथेश्वर रघुराम का राजतिलक करने की सोच रहे हैं। हे भामिनी ! यदि यह हो गया तो तुम्हारा जीना किसलिए ? (जीवन व्यर्थ है।) राजाओं का मन से (कभी) विश्वास नहीं करना चाहिए। हे वाला ! तुम क्यों हज़ार प्रकार से इठलाती हो ? ऐसे मोह-विदूर, वंचक, कपटी को कहीं भी मैंने देखा नहीं है। वह तुम्हारा पति है ? (नहीं है)। इस अवसर पर तुम्हारे लिए वह तो मैत्री को भूला हुआ शत्रु है। हे धवलायताक्षी (स्वच्छ आँखोंवाली)! सौत के पुत्र को समस्त जगती का पति बना दे तो तुम्हारे पुत्र को, तुम्हें (और) मुझे दुख के सिवा सुख कैसे (प्राप्त) होगा ? ॥ १६० ॥

—तुम्हारे पिता द्वारा दिये गये वर-शुल्क के रूप में, तुम्हारे पिता के भेजने पर, अतिशय प्रेम से (यहाँ) आयी हूँ अतः तुम्हारी भलाई (ही)

नी लॅस्स ना लॅस्स, नी कैन लेमि । ना लेमि; गान नाना विधंबुलनु
हितवु जॅप्पिति नीकु निंदुनिभास्य! । मति नीदु पुत्त्रुंडु मनुट दलंपु"
मनिन वेडुक बूनि या कैक दानि । विनुतिंचि कौगिट वेगंब चेर्चि
"श्रीरामु पट्टाभिषेकोत्सवंबु । सेरि ना कॅरिंगिचि चॅवुलकु विंदु
सेसिति; वेमंदु जॅलुव ! नीपॊंदु ।वासिगा फलियिंचॆ; वक्रोक्तुलुड्डुगु;
भरतुनकंटॆ ना भरताग्रजुंडु । दिरमैन भक्ति विधेयुंडु नाकु;
नी मेलु वार्तल केनु मॅच्चितिनि । भामरो!" यनुचु नेर्पड गॊंतसॊम्मु
घनतर नवरत्न खचितमै यॊप्पु । तन चेति कडियंबु दानिकि वेग
'कॊम्मु कॊ'म्मनि यॊसगुटयु ना सॊम्मु।लम्मायलाडि यळ्ळटु पाऱ वैचि १७०
पापंबु हृदयतापंबु गोपंबु ।दीपिंप बलिकॆ नत्तेऱवतो मऱियु:
'निदि येमि मेलुगा निच्च नुब्बितिवि। यिदि येमि मॆच्चुगा निच्चिति नाकु?
निदि येमि कैक! यी हितवु गैकोक । पदरि पल्किति नीति भाविंप लेक;
वलनॊप्प नेमनवच्चु नी गुणमु ? कलकाल मी तीरुगा जन दॊडगॆ;

मेरी भलाई है। तुम्हारा अभाव मेरा अभाव है। इसलिए नाना विधियों से हित (की बात) तुम्हें बता दी है। हे इन्दुनिभास्य (चन्द्र-समान मुखवाली) ! मन से अपने पुत्र के जीवन (जीवित रहने) के बारे में सोचो।' (ऐसा) कहने पर, हर्षित होकर, उस कैकेयी ने उसकी नुति (तारीफ़) कर, शीघ्र (उसे) गले से लगा लिया। (बोली) 'श्रीराम के पट्टाभिषेकोत्सव के बारे में मुझे बताकर (तुमने) कानों की दावत की है (कर्ण-मधुर शब्द कहे हैं)। क्या कहूँ सुन्दरी ! तुम्हारा सांगत्य, श्रेष्ठता से सफल हुआ है। वक्रोक्तियों को छोड़ दो। भरत की अपेक्षा वह भरताग्रज (राम) स्थिर भक्ति से मेरा विधेय (आज्ञाकारी) है। हे भामा ! तुम्हारे श्रेष्ठ समाचारों के लिए मैं (तुम्हारी) सराहना करती हूँ।' (ऐसा) कहती हुई, कुछ धन (तथा) श्रेष्ठ नवरत्नों से खचित, हाथ में शोभायमान कड़ा उसे झट से 'ले लो, ले, लो'—कहते हुए (दिया) देने पर, उन गहनों को उस जादूगरनी (ठगिनी) ने दूर फंक दिया। ॥ १७० ॥

(और) पाप, हृदयताप, कोप के दीप्त होने पर, उस स्त्री (कैकेयी) से फिर यों बोली—'इसे कौन-सा हित समझकर मन में फूली हुई हो ? यह कौन-सी प्रशंसा (मानकर) मुझे उपहार दिया है ? यह क्या कैकेयी ! इस (मेरी) भलाई (की बात) को स्वीकार न कर, नीति के बारे में सोचने में असमर्थ रह, ऐसा क्या बक रही हो ? अति प्रिय तुम्हारे गुण के बारे में क्या कहूँ ? सदा ऐसा ही होता आ रहा है। कहीं अपने स्वार्थ को

दन्नु मालिन यट्टि धर्मंबु गलदॆ ? कन्नु बॊयॆडु नट्टि काटुक गलदॆ ?
जगति लो नॆंदैन सवति नंदनुल । कगपडु शुभमुल कात्म गॊरुदुरॆ ?
सवति कुमारुंडु साम्राज्यमुनकु । धवुडैन सकल भूधवुलु बांधवुलु
ब्रजलु मंत्रुलु रामु पंपु सेयुदुरु । गजहयादि बलंबु कैवसंबगुनु;
दशरथुनकु स्वतंत्रमु लेदु विदप; । शशिमुखियैन कौसल्य संपदल
विर्र्वीगग सरिवॆलदिवै युंडि ।वॆर्रिदाना! यॆट्लु वेगिंचॆदीवु? १८०
नदि यिदि येल? नी वावधूमणिकि । नॊदुगुचु दासिवै युंडगवलयु;
भरतुंडु ना रघुपतिकि भीतिलुचु । वॆरवेदि भृत्युडै विहरिंपवलयु;
राचदेवि यटंचु रमणि सीतकुनु । नीचिन्नि कोडलॆन्निक गॊल्वलयु;
नॆलत! यिट्टिद येनि नीकेटि ब्रतुकु? कलदुपायंबिट्टि कार्यंबुनकुनु,
वनदुर्गमुल रामु वसियिंप बनुपु; । पनिवडि भरतुनि बट्टंबु गट्टु"
मनवुडु कैकेयि "यक्कट! नाकु जननाथु डिंतटि चनवेल यिच्चु?
ना रोजु नेमनि यडुगुदु नेनु । नी रॆन्डु दशरथुडेल ना किच्चु?
नॆक्कडि माट! नी वॆन्नि सॆप्पिननु । निक्कार्य घटन नाकेरीति बॊसगु?

छोड़कर भी धर्म है ? आँखों को अन्धा बनानेवाला भी काजल हो सकता है ? जगत में कहीं (ऐसा भी होता है) सौत के पुत्रों के हित के बारे में मन में चाहें ? सौत का पुत्र साम्राज्य का पति हो तो सभी भूधव (राजा), बन्धुजन (नातेदार), प्रजा, मन्त्री, राम की आज्ञा का पालन करेंगे। गज-हय-आदि बल (उनके) वश में हो जायगा। उसके बाद दशरथ को स्वतन्त्रता नहीं रहेगी। शशिमुखवाली कौसल्या संपत्ति से इठलाती रहेगी तो समान अधिकारवाली होती हुई हे पगली ! तुम दिन कैसे बिताओगी ? ॥ १८० ॥

—यह-वह (अनेक बातें) क्यों ? तुम्हें उस वधूमणि (नारी-रत्न) के समक्ष झुककर, दासी बनकर, रहना होगा। भरत को, उस रघुपति से डरते हुए, मार्गान्तर के न होने से, भृत्य बनकर रहना पड़ेगा। राजदेवी (राजमहिषी) मानकर तुम्हारी छोटी पुत्रवधू को रमणी सीता की ढंग से सेवा करनी होगी। हे स्त्री ! (अगर) ऐसा हो, तो तुम्हारा जीवन किसलिए ? ऐसे कार्य का उपाय यह है कि राम को वनदुर्गों में रहने के लिए भेजो। प्रयत्न कर, भरत का राजतिलक कराओ।' तब कैकेयी बोली—'हाय, जननाथ (राजा) इतनी स्वतन्त्रता देंगे ? (नहीं)। उस राजा से ये दोनों (वर) कैसे पूछूँ ? दशरथ ये दो (वर) क्यों मुझे देंगे ? कहाँ की बात है ? (असंभव है)। तुम जो भी कहो, यह कार्य मेरे लिए कैसे घटित होगा ? हे नवेली ! श्रीराम से यह मैं कैसे कहूँ कि जंगलों में जाओ।' ऐसा कहने

श्रीरामु नडवुल जेर बॊम्मनुचु । नेरीति जॆप्पुदु नॆलनाग! नेनु ?"
ननुचुन्न कैकतो ना युपायंबु ।तन कीडु मॆऱय मंथर सॆप्पदॊडगॆ१९०
"वडतुक! तॊल्लि शंबरुडु निद्रुंडु । दॊडरि पोराड निद्रुनकु नै पूनि
निनु दोडुकॊनि सैन्य निवहंबु दानु । जनि रात्रि माकॊन्न शंबरु तोड
बोराडु दशरथ भूपालु मीद । ना राक्षसुडु माय ललुक बन्नुटयु
धवळांगुडनु मुनि दय नीवु गन्न । यविरळंबगु माय ना माय लणचि
नी विभु ना दैत्यु निशितास्त्र निहति। जाव कुंडग गाचि संप्रीतु जेसि
वसुधेशु चे नाडु वरमुलु रॆन्डु ।मसलक पडसिति; मऱचिते वानि?
नीवे ना कीकथ यॆऱिगिंचि मऱचि । ती वात्म मऱचिननेनेल मऱतु ?
बट्टंबु बॆड़बासि पदुनालुगेंड्लु । गट्टिगा मुनि वृत्ति गौसल्य कॊडुकु
दारुण कांतार तलमु नेलुटकु । धारुणी तलमु नीतनयु डेलुटकु
ना रॆन्डु वरमुलु नवनीशु नडिगि ।यी रॆन्डु तॆऱगुल निट्टु सेय बनुपु२००
पडतुक ! यतडॆंत प्रार्थिंचॆ नेनि । दॊडवु लॆन्नेनि दोड्तो निच्चॆनेनि
जडमति लो गाक सत्यंबु नॆऱपि । विडुवक यी कार्यविधमु साधिंपु;

वाली कैकेयी से वह उपाय, अपनी आफ़त के दीप्त होने पर, मंथरा कहने लगी ।। १९० ।।

—'हे स्त्री ! पूर्व में शंबर (और) इन्द्र के जोश के साथ युद्ध करते समय, इन्द्र का पक्ष लेकर, तुम्हें साथ लेकर, सेना-समूह के साथ, स्वयं जाकर, रात के समय (दशरथ ने उसका) सामना किया। शंबर के साथ लड़नेवाले दशरथ भूपाल पर, उस राक्षस ने क्रोध से मायाओं का प्रयोग किया। धवलांग नामक मुनि की कृपा से प्राप्त अविरल माया (-शक्ति) से तुमने उन मायाओं को परास्त कर दिया। (और) अपने विभु को उस दैत्य के निशित (तीखे) अस्त्रों की निहति (चोट) से मरने से बचाकर, सन्तुष्ट किया। उस दिन वसुधेश (राजा) से (तुमने) अविलम्ब दो वर प्राप्त किये। (क्या) उन्हें भूल गयी हो ? तुम स्वयं यह कथा मुझे बताकर, भूल गयी हो। तुम भूल गयी तो भी मैं क्यों भूलूंगीं ? राज्य को छोड़कर चौदह वर्ष, दृढ़ता से मुनि-वृत्ति से कौसल्या के पुत्र को दारुण-कान्तार-तल पर शासन करने (रहने) के लिए, (और) धारुणी-तल (पृथ्वी) का शासन अपने पुत्र के लिए, ये दो वर अवनीश से माँगकर, इन दो प्रकारों से करने की आज्ञा दो। ।। २०० ।।

हे स्त्री ! वह कितना ही प्रार्थना क्यों न करे, तुरन्त अनेक आभूषण दे दे, (तब भी) जड़मति (मूर्ख) न बनकर, सत्य की दुहाई देकर, दृढ़ता से

पति बोंक वेरचु; नी पै नेय्य मेक्कु;। डतकरिंपडु, सेयु" ननिन रागिल्लि
"नीवंटि प्रियुरालि नीवंटि सखिनि। नीवंटि नयगुणनिधि नेंदुगान;
नीवु नाचे विन्न यी वर द्वयमु। गावरंबुन गानगा वरारोह!
यी वेंचिनट्टुवले नी भूमि केल्ल। ना वरतनयुंडु नायकुंडैन
बागुगा नपरंजि बंगारु चेत। नी गूनु वोंदिगिंचि नी मुखेंदुवुन
दिलकंबु गस्तूरि दिद्दि नी मेनु। वलनोप्प भूषणावळुल गैसेसि
नटियिंचु मरुनि यंदपु गोम्म यनग। गुटिल कुंतल! नीवु ग्रुम्मरुचुंड
सखुलेल्ल नी माट जवदाटकुंड।सखिय! निन्नलरिंतु सतत मे" ननुचु२१०
गैक मंथरकु सत्कारमुल् सेसि। येकांतमुन दनयिंटिकि बोयि
पेट्टिन सोम्मुलु पेट्टेलो बेट्टि। दट्टमौ कस्तूरि दलपट्टु वेट्टि
मलिन वस्त्रमु गट्टि मदि नल्क दोट्टि। व्रलमु सेपट्टि भूस्थलि बंडे, नंत
दनलोन नूहिंचि तनु गोल्चि वच्चि। मन मारनुन्न या मंथर जूचि

इस कार्य-विधान को सिद्ध कर लो। पति (राजा) असत्य बोलने से डरता है, तुम पर अधिक प्रेम रखता है। (तुम्हारा) अपमान नहीं करता। (तुम्हारी बात के अनुसार) करेगा।' (ऐसा) कहने पर अनुराग-युक्त हो (कैकेयी ने कहा)—'तुम-जैसी प्रिया को, तुम-जैसी सखी को, तुम-जैसी नयगुणनिधि को कहीं देखा नहीं है। हे वरारोहे (उत्तम स्त्री)! मुझसे तुमने जिन दो वरों के बारे में सुना था, उन्हें मैं गर्व के कारण देख नहीं पा रही हूँ। तुमने जैसा सोचा, वैसे ही इस समस्त भूमि का मेरा वर-तनय नायक होगा तो ढंग से स्वच्छ सुवर्ण से तुम्हारे कूबड़ को जड़ दूँगी। तुम्हारे मुखेन्दु (चन्द्र-मुख) पर कस्तूरी का तिलक लगाकर, प्रेम से तुम्हारे शरीर को भूषणावलियों से सजा दूँगी। हे कुटिलकुन्तले (घुँघराले बालों वाली)! तुम मन्मथ की सुन्दर नारी के समान विचरती रहोगी तो ऐसी (व्यवस्था) करूँगी कि सभी सखियाँ तुम्हारी बात का पालन करती रहें। हे सखी! (इस प्रकार) सदा तुम्हें खुश रखूँगी।' ॥ २१० ॥

(ऐसा) कहते हुए कैकेयी ने मन्थरा को सत्कृत कर, एकान्त में अपने घर (कक्ष) में जाकर, धारण किये आभरणों को (उतारकर) पेटी में रखकर, माथे पर गाढ़ी कस्तूरी का लेप लगाकर, मलिन वस्त्र पहनकर, मन में क्रोध धारणकर, ज़िद पकड़कर, भूस्थल पर लेट गयी। तब अपने मन में कल्पनाकर (कुमंत्रणाकर), अपनी सेवा करने के लिए आकर, सन्तुष्ट बनी हुई उस मन्थरा को देखकर (कैकेयी बोली)—'(जब तक) जननायक (राजा दशरथ) रामचन्द्र को बुलाकर, वन में मुनि-वृति से विचरण करने भेजकर, बड़े प्रेम से भरत को अपने

"जन नायकुडु रामचंन्द्रुनि बिलिचि । वनमुन मुनिवृत्ति वर्तिप बनिचि
भरतुनि दन राज्य पदमुन कॆल्ल । गरमर्थि बट्टंबु कट्टिन गानि
यन्न पानमु लॊल्ल; नाभरणमु ।लॆन्नि यिच्चिन नॊल्ल; नेमियु नॊल्ल;
निट लेचि रानिक ने" नंचु नलुक ।नट्टुवूनि मदिलोन नलयु चुन्नंत२१८

दशरथुडु कैकयिंटि करुगुट

गैकेयि तोड राघवुनि पट्टाभि । षेकोत्सवंबॆल्ल जॆप्पॆद ननुचु
ना रात्रि दशरथु डचटि कॆतॆंचि।चारु माणिक्य कांचन धगद्धगित२२०
कनक रत्न कवाट कक्ष्यांतरमुल । घनसार चन्दन कर्पूर गंध
कलित नानारत्न कांति शोभितमु । दुर्लकिंचु सौधवेदुल वेग कडचि
केळी गृहंबुन गेकय पुत्त्रि । बोलंग बरिकिंचि पॊडगानकपुडु
दौवारिकुनि जूचि दशरथुं डडुग । गा वाडु वणकुचु गरमुलु मॊगिचि
"देव! या कोप मंदिरमु लोपलिकि । देवि विच्चेसॆ; नेतॆऱगॊको यॆऱुग,"
ननि वाडु वलिकिन या माटलॆल्ल । धनुरुग्र टंकार दारुणंबगुचु

समस्त राज्यपद का राजतिलक नहीं करेंगे, (तब तक) मैं अन्न (जल-पान) नहीं चाहूँगी (ग्रहण नहीं करूँगी)। जितने भी आभरण देंगे, नहीं चाहूँगी। कुछ भी नहीं चाहूँगी। यहाँ (कोपगृह) से अब उठकर नहीं आऊँगी।' ऐसा कहते हुए, क्रोध को धारणकर, मन में रुष्ट होती रही। (उस समय) ॥ २१८ ॥

दशरथ का कैकेयी के घर जाना

—'कैकेयी से राघव के पट्टाभिषेकोत्सव के बारे में सब कुछ कह दूँगा' (ऐसा सोचते हुए) उस रात को दशरथ वहाँ (कैकेयी के महल में) आये, चारु (सुन्दर) माणिक्य-कांचन (से) धगद्धगित (प्रकाशमान) ॥ २२० ॥

—कनक-रत्न कपाट (किवाड़) कक्ष्यान्तरों, घनसार, चन्दन, कर्पूर (के) गन्ध (से), कलित नाना रत्न-कान्ति (से) सुशोभित, प्रकाशित सौध (महल-) समूहों को शीघ्रता से पारकर, केलिगृह (रंगमहल) में केकयपुत्री को समुचित रूप से ढूँढ़ा, उनका पता न लगा, तब (वहाँ) दौवारिक (द्वारपाल) को देखकर (पूछा)। दशरथ के पूछने पर वह काँपते हुए, हाथ जोड़कर (बोला)—'हे देव! उस कोपगृह में देवी पधारी हैं। कारण मुझे मालूम नहीं है।' उसकी सभी बातें उग्र धनुष्टंकार के समान दारुण होते हुए, कानों में पड़ने पर, मुख के विवर्ण होने पर, मानवाधीश

वीनुल बड मोमु वॆल-वॆल बाऱ। मानवाधीशुंडु मानसंबुननु
मानैन धृति दूलि म्रान्पडि कलगि। मानंबु डोलायमानंबु गाग
ब्रेमानुबंधंबु ब्रीति रॆट्टिंप। ना मंदिरंबुन कल्लन वच्चि
यनिमिषपुरि नुंडि यच्चर लेम। सनु दॆंचि पडियुन्न चंदंबु दोप २३०
नूरक धरणि पै नुन्न या विकच। नीरजानन जूचि निव्वॆऱ गंदि
वॆऱवॆऱ पाटॊंदि वेदन जॆंदि। तॆऱव दग्गऱ जेरि दीनुडै मीऱि
या यिंति यॊडलॆल्ल नंटि दुव्वुचुनु। गायज विवशुडै कडु वेडदॊडगॆ
“निंदीवराक्षि! पूर्णेंदुबिंबास्य। इंदिंदिरालक! यी नेल नलुक
बवळिंप नीकेल बालेंदु फाल!। यविरळ मृदुल पर्यंकंबुलुंड
गोमल धवळ दुकूलंबुलुंड। नी मैल चेल नी वेल कट्टितिवि?
पसिडिशलाककु ब्रतियैन मेन। बॊंसग भूषणमुल बूनवेमिटिकि?
ज़लपट्टि कॊऱनॆल चंदमौ नुदुट। दलपट्टु वॆट्ट नीतलपॆट्टुवुट्टॆ?
नीलालकंबुल निग्गुलु देर। नेल पापट दीर्प विन्नाळ्ळ रीति?

मानस में दृढ़ धैर्य के विचलित हो जाने पर, स्तंभित होकर, व्याकुल होकर, मान (अभिमान) के डोलायमान होने पर, प्रेमानुबन्ध और प्रीति के द्विगुणित होने पर, उस मन्दिर (कोपगृह) में धीरे से आये (जहाँ कैकेयी ऐसे पड़ी थी) मानों अनिमिषपुरी (अमरावती) से (कोई) अप्सरा आकर लेटी हुई हो।॥ २३०॥

अकारण धरणी पर पड़ी हुई उस विकच-नीरज-आनन (विकसित कमल-सम मुख) वाली को देखकर अचम्भे में आकर, निश्चेष्ट हो, वेदना पाकर (वेदना का अनुभव कर), स्त्री (कैकेयी) के पास पहुँचकर, अधिक दीन बनकर, उस स्त्री के समस्त शरीर का स्पर्शकर, हाथ फिराते हुए, कायज (मन्मथ-) विवश (काम-भाव से विवश) होकर अधिक प्रार्थना करने लगे—'हे इंदीवराक्षी (कमलनेत्री)! पूर्णेन्दु बिम्बास्य (पूर्णचन्द्रमुखी)! इन्दिन्दिरालके (भ्रमरों-जैसे केशवाली)! हे बालेन्दुफाले (बालचन्द्र के समान फाल भागवाली)! अविरल मृदुल पर्यंकों के होते हुए, तुम्हारा इस भूमि पर क्रोध से लेट जाना क्यों? कोमल धवल दुकूलों के रहते हुए, तुमने मैला वस्त्र क्यों पहना है? कनक-शलाका-सी देह पर सुन्दरता से भूषण क्यों धारण नहीं करती? हठ करके बालचन्द्र-सम ललाट पर लेप (किसी पीड़ा को सूचित करनेवाला) लगाने का विचार कैसे पैदा हुआ? रोज़ की तरह अलकों में चमक पैदा करते हुए, माँग क्यों नहीं भरती हो? हे अबला! अरुण अधरों में दुगुनी अरुणिमा उत्पन्न करते हुए स्वादिष्ट ताम्बूल की कामना क्यों नहीं करती हो? ॥ २४०॥

गॆम्मोवि किनुमडि कॆंपु संधिल्ल।गम्म दम्मुलमेल कांक्षिप वबल! २४०
जिलुगु वॆन्नॆल तेट जिगिनव्वु मॊलक। मॊलपिंपवेटिकि मुखचंद्रुनंदु !
निदि येमि कैक! नी विटु सिन्न वोव।मदि दूलि नी कित मऱुग नेमिटिकि?
नॆव्वरु नी दॆस नॆग्गुलु वलिकि ? रॆव्वरु माऱाडि रॆदिरि नी तोड?
वारि नॆऱिगिंपु वारिजनयन ! । वारि वारितु नॆव्वारलनैन;
नॆव्वरु नी माटलिट मीऱि चनिरि?। यिव्वगनीकेल ? यिट्लुंडनेल ?
यनि पलिक कन्नुल नंदंद क्रम्मु । घन बाष्प पूरमुल् गरमुल दुडिचि
"लेम! नी वॊक दिक्कु लेनि चंदमुन।भूमि पै निटु धूळि बॊरल नेमिटिकि?
गामु सोकॆनॊ, लेक घनमैन रोग । मेमि वाटिल्लॆनो, यॆऱिगिंपु नाकु;
वॆज्जुल बिलिपिंचि वेग मान्पॆदनु; लज्जिपनेटिकि ललितांगि! नीकु?
नटु गाक नी तलंपरय नॊंडयिन—'निटुसेयु'मनि पल्कु; मेनॆचेसॆदनु; २५०
वनित! नी कॊऱकुनै वध्युलु गानि । यनघ चरित्रुल नैन जंपॆदनु;
जंपंग दगिन दुर्जनकोटि नैन । गंपिंचि नी माट गाचि पुच्चॆदनु;
नीकु ब्रियंबैन निरुपेद नैन । जेकॊनि राजुगा जेसॆद नॆलिमि;

—स्वर्ण-सम स्वच्छ चाँदनी के समान मंदहास के अंकुरों को अपने मुखचन्द्र पर क्यों नहीं उत्पन्न करती ? यह क्या कैकेयी ? इस प्रकार मन को छोटा क्यों करती हो ? मन में विकल होकर (इस तरह) संतप्त क्यों होती हो ? किसने तुम्हारे प्रति कटुवचन कहे हैं ? किसने तुम्हारी बातों का विरोध किया ? हे वारिजनयने (कमलनेत्री) ! बताओ उनके बारे में। कोई भी हो, उनका निवारण (दमन) कर दूँगा। किसने तुम्हारी बातों का अतिक्रमण किया है ? यह दुख तुम्हें किसलिए ? ऐसा क्यों (उदास) रहती हो ?' ऐसा कहकर, आँखों में उमड़कर आनेवाले अधिक आँसुओं के समूह को हाथों से पोंछकर (दशरथ ने फिर कहा)—'हे भामा ! अनाथ की तरह तुम्हें इस प्रकार, ज़मीन पर, धूल में लोटने की क्या ज़रूरत है ? यह किसी दुष्ट ग्रह की पीड़ा है अथवा कोई भयंकर रोग है ? बताओ मुझे। वैद्यों को बुलाकर शीघ्रता से स्वस्थ करा दूँगा। हे ललितांगी ! तुम लज्जित क्यों हो रही हो ? (यदि) यह नहीं, तुम्हारा कोई दूसरा विचार है तो कह दो कि ऐसा करो। मैं ही (वह काम) कर दूँगा। ॥ २५० ॥ हे वनिता ! तुम्हारे लिए अवध्य पुण्यात्माओं का भी सही, वध करूँगा' वध करने-योग्य दुर्जन-कोटि (-समूह) की भी तुम्हारी बात पर रक्षा कर दूँगा। (यदि) तुम्हें प्रिय है तो कंगाल को ग्रहणकर, सप्रेम राजा बना दूँगा। हे भामिनी ! तुम्हारी दया को खोए हुए श्रीमन्त (धनी) को भी दरिद्र बना दूँगा। मैं और मेरे लोग (परिवार के अन्य लोग)

भामिनि! नी दय बासिन यट्टि । श्रीमंतुनैन दरिद्रु जेसॆदनु;
नेनु ना वारु नी हित बुद्धि गडव । गा नेर; मिट्लुंड गारणमेमि ?
लेम! ना माट लालिंचि नीविपुडु । मोमॆत्तु ना मदि मुच्चट दीऱ;
नडिगिन प्राणंबुलैन नी कित्तु । नडुगुमु नी" वन्न नानंदमंदि
यन्नाति विभुनि नॆय्युमु दिय्यमॆऱिगि। सन्नपुटॆलुगुन जननाथु कनियॆ;
"देव! ने जॆप्पिन तॆऱगुन नीवु । गावितुननि बास गावितुवेनि
मऱि यॆऱिंगितु नम्माट नी" कनिन ।दॆऱवतो दशरथाधिपुडप्पुडनियॆ २६०
"वीरुडॆव्वडु मेटि विलुकांड्रलोन ? सारमॆव्वडु धर्मसमितिलो नॆल्ल
नॆव्वनि जूडक येनुंडजाल ? नॆव्वडु ननु भक्ति नेप्रॊद्दु गॊलुचु ?
नट्टि राघवुनि तोडतिव! नी कोर्कि । नॆट्टन गावितु ने" नन्न नलरि
मरुदग्निशशि नभोमणिमुख्युलैन । सुरल वेर्वेऱ साक्षुलुगा नॊनर्चि
धरणीशु मदिलोनि तमकंबु दॆलिसि।करुणकु बॆडबासि कैकेयि वलिकॆ २६५

कैक दशरथुनि वरमुलडुगुट

"नॊलसि देवासुर युद्धंबुनंदु । वलनॊप्प निच्चिति वरमुलु रॆंडु;

तुम्हारी बुद्धि (विचारों) का अतिक्रमण नहीं कर सकते.। तुम्हारा ऐसा रहने का क्या कारण है ? हे रमणी ! मेरे मन को प्रसन्न करते हुए, बातों को मानकर, मुख उठाओ (मेरी ओर देखो) । माँगने पर प्राण भी दूंगा । (जो चाहो) तुम माँग लो ।' (ऐसा) कहने पर आनन्दित होकर, उस स्त्री ने विभु (पति) के स्नेह-माधुर्य को जानकर, मंद स्वर में जननाथ से कहा—'हे देव ! मेरे कथनानुसार (कार्य) करने का वचन दोगे, तब मैं वह बात तुम्हें बताऊँगी ।' तब (ऐसा) कहने पर, उस स्त्री से दशरथ-अधिप (राजा दशरथ) बोले ॥ २६० ॥

—'श्रेष्ठ धनुर्धारियों में ऐसा वीर कौन है ? धर्मसमिति का सार कौन है ? ऐसा कौन है जिसे देखे बिना मैं रह नहीं सकता ? ऐसा कौन है जो सदा भक्ति से मेरी सेवा करता है ? ऐसे राघव की सौगंध है । हे रमणी ! तुम्हारी इच्छा की किसी भी तरह पूर्ति करूँगा ।' (ऐसा) कहने पर, प्रसन्न होकर, मरुत्, अग्नि, शशि, नभोमणि आदि देवताओं को अलग-अलग से साक्षी बनाकर, धरणीश के मन की आतुरता को जानकर, करुणा से अलग होकर (निष्ठुरता से), कैकेयी बोली— ॥ २६५ ॥

कैकेयी का दशरथ से वर माँगना

—'देवासुर युद्ध में प्रेम से (आपने) दो वर दिये थे । हे भूवर ! (क्या)

भूवर! मऱचिते बुद्धि जिंतिपु । मा वरद्वयमु निन्नडिगॆद निपुडु;
नादित्यकुलजुंडवगु महाराज । वादि राजुल कंटॆ नधिक पुण्युडवु;
तप्पाड; वाडिन दप्पवु; नाकु । दप्पक वरमुलु दय निच्चितेनि
धरणि कंतटिकिनि दग राजुगाग।भरतु बट्टमुगट्ट बनुपु मॊक्कटिकि २७०
बरग दापसवृत्तिबदुनालुगेडु।लुरु दुर्गमुल रामु नुनुपु मॊक्कटिकि";
ननु पल्कु निर्घातमै वच्चि चॆवुल ।गॊनि काडि नॊप्पिप गुंभिनि द्रॆळ्ळि
पॆलुकुऱि मूर्छिल्लि पॆद्द प्रॊद्दुनकु ।दॆलिवॊन्दि कैकेयि दॆस जूचि पलिकॆ;
"गोमलि! केकय कुलमुन बुट्टि । यी माटलाड नी कॊट्लाडॆ नोरु?
नडवुल पालु गस्मनि रामु द्रोव । नॆडपक तॊल्लि नी कॆग्गेमि सेसॆ?
गौसल्यकंटॆ निन् घनतगा जूचु । नी सेव लॊनरिंचु; नी पंपु सेयु;
नट्टुवंटि सुगुणाढ्युडैन श्रीरामु । नॆट्टुवलॆ बॊम्मंटिवे दयमालि?
यडवुल कतनि नी वंपु मटन्न । नॆड सूचि चूचि नेनॆट्लु पॊम्मंदु?
ना महात्मुनि रामु नडवुल कनिचि । यी मेन ब्राणंबु लॆट्लु निल्पुदुनु?
नृपपुत्त्रि वनि निन्नु नॆम्मि गैकॊन्टि।जपललोचन! कालसर्पंबवैति; २८०

भूल गये हो? बुद्धि (मन) से चिन्तन (विचार) करो। अब तुमसे वह वरद्वय माँगूँगी। (तुम) आदित्यकुल के महाराजा हो, आदि (पूर्व) राजाओं की अपेक्षा अधिक पुण्यशाली हो। ग़लत (असत्य) नहीं बोलते हो (और) बोलकर वचन-भंग नहीं करते हो। (यदि) मुझे कृपा से अवश्य दो वर दोगे तो पहले (वर से) समस्त धरणी के लिए ढंग से (सुचारु रूप से) राजा बनने के लिए भरत के राजतिलक की आज्ञा दो। ॥ २७० ॥

दूसरे (वर से) तापस-वृत्ति से चौदह वर्ष के लिए घने जंगलों में रहने के लिए राम को भेजो।' ऐसा (यह) वाक्य बिजली के समान बनकर कानों में पड़कर चुभने पर, पीड़ित करने पर, कुम्भिनी (धरती) पर (दशरथ मानों) टूट गिरे, बेहाल हो मूर्च्छित हो गये। बहुत देर के बाद होश में आकर, कैकेयी की ओर देखकर बोले—'हे कोमलांगी! केकय-कुल में पैदा होकर यह बातें (तुम) कैसे बोल सकी? राम ने पूर्व में तुम्हें क्या हानि पहुँचायी है जो उसे वनवास का भागी बना रही हो! (राम) कौसल्या की अपेक्षा तुम्हें अधिक मानता है। तुम्हारी सेवाएँ करता है। तुम्हारा आदेश मानता है। ऐसे सुगुणाढ्य (सुगुण-सम्पन्न) श्रीराम को, निष्ठुर होकर (वन में) जाने का आदेश कैसे दे रही हो? (यदि) तुम कहो भी कि उसे जंगल भेज दो (तब भी) मैं हृदय में देखकर (विचार कर) उसे (जंगल) जाने को कैसे कहूँ? हे चपललोचने! यह

ना राज्यमैन ब्राणमुलैन विडुतु ।ना रामु विडिचि पॊम्मनि पल्क जाल;
ननु वृद्धु दीनु ननाथु दुर्बलुनि । मनिकित पडकुंड मगुव! रक्षिपु;
चक्कगा नी पाद-जलजंबुलकुनु । म्रॊक्कॆद नेनु रामुनि यॆडाटमुन ;
जॆलुव ! यी पापंबु सेय जिंतिप ।वल" दन गोपिंचि वामाक्षि वलिकॆ;
"राजेंद्र! सत्य पराक्रम स्फूर्ति । बूजित कीर्तिवै बॊन्कंग दगुनॆ ?
इट्टु देवतलंदऱॆऱुगंग नॊट्टु । वॆट्टि तप्पॆद, वॆट्टि पृथिवीपालुडवु?
ऒक गुव्वकै तन यॊडलि मांसंबु । नॊक डेगकुनु शिबि यॊसगडॆ मुन्नु?
क्षोणिदेवुन कलकुंडनु राजु । त्राण तो नॊसगडॆ तन लोचनमुलु?
चॆलरेगि जलधियु जॆलियलिकट्टु । बलिमि दाटक लोनुबडि युंडलेदॆ?
यदि यट्टुलुंडॆ; नी यन्वयोद्भवुलु । मदिलोन नव्वुल माटलकैन २९०
गलनैन बॊंक, रिक्ष्वाकुंडवय्यु । वॆलय गौसल्यकु वॆऱचि बॊंकॆदवु!
बॊंकॆडुवाडॊक्क पुरुषुडे ! यकट ! बॊंकिति, निनु बॊंद बुद्धिगा, दिक

समझकर कि (तुम) नृपपुत्री हो, मैंने तुम्हें प्रेम से ग्रहण किया था। (किन्तु आज) तुम कालसर्प बन गयी हो । ॥ २८० ॥

अपने राज्य को (और) प्राणों को भी छोड़ दूँगा, पर अपने राम को (मुझे) छोड़ जाने के लिए नहीं कह सकूँगा । हे वनिता ! मुझ वृद्ध, दीन, अनाथ, दुर्बल को व्यथित होने से बचाओ । ढंग से तुम्हारे पाद-जलजों (चरण-कमलों) को प्रणाम करूँगा । हे सुन्दरी ! राम के बिछोह का यह पाप करने का विचार मत करो ।' (ऐसा) कहने पर वामाक्षी (सुन्दर आँखोंवाली कैकेयी) रुष्ट होकर बोली—'हे राजेन्द्र ! सत्य-पराक्रम-स्फूर्ति के कारण पूजित कीर्तिवाले होकर, (तुम्हारा) असत्य बोलना उचित है ? (नहीं है ।) इस प्रकार सभी देवताओं को साक्षी बनाकर भी वचन को तोड़नेवाले तुम कैसे पृथ्वीपाल (राजा) हो ? पूर्व काल में एक कबूतर के लिए शिबि ने अपने शरीर का मांस बाज को नहीं दिया था ? अलर्क नामक राजा ने (एक) क्षोणिदेव (ब्राह्मण) को साहसपूर्वक अपने लोचन नहीं दिये थे ? विजृंभित होकर भी जलधि (समुद्र) बलपूर्वक वेला का अतिक्रमण किये बिना नहीं रहता ? उसे (उन बातों को) वैसा रहने दो । तुम्हारे अन्वय-उद्भव (वंशज) मन में, हँसी-मज़ाक के लिए भी, ॥ २९० ॥

—सपने में भी, झूठ नहीं बोलते । इक्ष्वाकु (वंश के) होते हुए भी, कौसल्या से भय खाकर झूठ बोलते हो ? झूठ बोलनेवाला भी कहीं पुरुष है ? हाय ! (तुमने) झूठ बोल दिया । अब आपके सांगत्य का मन नहीं हो रहा है । अब स्वच्छन्दता से मैं विष भी तो निगल (खा)

विच्चलविडि नेनु विषमैन म्रिंगि । चच्चेद, नटमीद जंपिपु भरतु
बावनुंडगु रामु बट्टंबु गट्टि । नीवु कौसल्ययु नेम्मदि नुंडु"
डनि पल्कुटयु शोक मात्म रेट्टिंप । जननाथु डेन्तयु संतापमंदि
वेल-वेल बोयि विवेक हीनतनु ।गलिगि या कैक तो ग्रम्मऱ बलिकें;
"नेल कैकेयि! नी किट्टि पापंबु । बालिशत्वंबुनु ब्रापिंचे मदिनि ?
नन्न युंडग दम्मु डविनीति तोड । निन्नेल नेलुने ? यिन्नियु नेल ?
नी कुमारुडु धर्मनिरतुंडु भरतु । डी कलुष क्रिय कॆट्लॊडिकट्टु ?
मा कुलागतमैन मर्यादि दलपु । शोकार्तु ननु देगजूडक मनुपु ३००
मेप्पुडु निल्लालु हितवु भक्तियुनु।दप्पक सखि रीति, दल्लि चंदमुन,
दासि वैखरि, सहोदरि तेऱंगुननु । ना सेवलोनरिंचु नाना विधमुल;
नट्टि कौसल्य मोहपुबट्टि बासि । पट्टिन धृति नेट्टि प्राणमुल् वट्टु?
सौदामिनी - लता - संकाश - देह । वैदेहि ये रीति वगल वेगिंचु ?
ना सुमित्रापुत्त्रुडतनि तल्लियुनु । नी सुद्दि विनि शोक मेंट्लणंचेदरु?
श्रीरामु पट्टाभिषेकंबु गोरि । पौरुलंदऱु वेड्क बडि युंडु चोट,

कर मर जाऊँगी। उसके बाद भरत का वध करा दो। पावन राम का राजतिलक करके तुम और कौसल्या सुख-शान्ति से रहो।' ऐसा कहने पर हृदय में शोक (दुख) के द्विगुणित होने पर, जननाथ अधिक संतप्त होकर, कान्तिहीन बनकर, विवेक-हीनता को प्राप्त कर, उस कैकेयी से फिर से बोले—'हे कैकेयी! तुम्हारे मन में ऐसा पाप और मूर्खता कैसे संप्राप्त हुए ? बड़े भाई के रहते हुए छोटा भाई अविनीति से इस भूमि पर शासन करेगा ? यह सब क्यों ? तुम्हारा पुत्र भरत जो धर्म-निरत है, इस कलुष क्रिया (पाप कर्म) के लिए कैसे उद्यत होगा ? हमारी कुलागत मर्यादा का विचार करो। शोकार्त (दुखी) बने मुझको मार मत डालो, बचाओ। ।। ३०० ।।

सदा गृहिणी के धर्म—हित और भक्ति—को न छोड़, सखी के समान, माता के समान, दासी की भाँति, सहोदरी की तरह, कौसल्या नाना विधियों से मेरी सेवाएँ करती रहती है। ऐसी कौसल्या (अपने) लाड़ले पुत्र से बिछुड़कर, धैर्य के साथ, प्राणों को कैसे रोक पायेगी ? (जीवित कैसे रह सकेगी ?) सौदामिनी-लता के समान देहवाली वैदेही (सीता) किस प्रकार इस दुख से दिन बितायेगी ? वह सुमित्रापुत्र (लक्ष्मण) (और) उसकी माता इस समाचार को सुनकर, दुख का दमन कैसे करेंगी ? श्रीराम के पट्टाभिषेक की कामना कर, समस्त नागरिक हर्ष से एकत्र हुए हैं। वहाँ (इस अवसर पर) अपने राम को जंगल भेज दूँ तो (वे) धीरात्मा मुझे

ना रामु नडवुल कनिचिति नेनि । धीरात्मकुलु नन्नु दिट्टकुंडुदुरॆ ?
"अकट! कामांधुडै यालि माटलकु । सकल भू - भुवन - रक्षण - दक्षुडैन
यग्रनंदनु रामु नडवुल कनिचे । नुग्रांशुकुलकीर्तुलुडिगॆबो" म्मनुचु
वॆऱगंदि रच्चलु वीथुलु गलय ।दऱचु मूकलु गट्टि तलपोसि चूचि ३१०
कल्लु द्राविन विप्रु गर्हिंचिनट्टु । लॆल्लऱु नॆंत गर्हिंतुरो नन्नु ?
गावुन नॆल्ल लोकमुलकु गीडु । गाविंचि ये सौख्यगतुलंदॆदीवु ?
इदि यदि येल? नेनिक नॊक्क माट।मुदित! सॆप्पॆद निक्कमुगनीवु विनुमु;
कलुव रेकुल बोलु कन्नुल वानि । मॊलक नव्वुल मोमु मुरिपॆंबु वानि
बलुवैन याजानुबाहुल वानि । वलराजु गेरु चॆल्वमु गलवानि
नलरु गल्वलकांति नगु मेनिवानि । जल्ल जूपुलु वॆदसल्लॆडु वानि
गॆंपु पॆम्पडगिंचु कॆम्मोविवानि । निपु गुल्कॆडु नड नॆसगॆडुवानि
जिगि यद्दमुल बोलु चॆक्कुल वानि । मगटिमि दिविजुल मऱपिंचुवानि
सुध लॊल्कु तिय्यनि सुद्दुल वानि । बुधुलकु हित मात्म बूनॆडु वानि
वलचि ना कॆंपुडु सेवलु सेयुवानि । निलुवॆल्ल धर्ममै नॆगडॆडु वानि ३२०

गालियाँ नहीं देंगे ? हाय ! कामान्ध बन, पत्नी की बात मानकर, सकल-भू-भुवन-रक्षण में दक्ष (और) अग्रनन्दन (ज्येष्ठ) राम को जंगल भेजा, उग्रांशुकुल (सूर्यवंश) की कीर्ति समाप्त (नष्ट) हो गयी—ऐसा कहते हुए, आश्चर्य-चकित होकर चौराहों (और) वीथियों में, अविरल रूप से, झुण्ड बाँधकर, सोच-विचार कर, ॥ ३१० ॥

—सुरापान करनेवाले विप्र की जिस तरह निन्दा करते हैं, उसी प्रकार सभी मेरी कितनी निन्दा करेंगे ? अतः सभी लोकों का अहित कर तुम कौन-से सुख को प्राप्त करोगी ? यह (और) वह क्यों ? (इतनी बातें क्यों ?) मैं अब एक बात कहता हूँ । हे रमणी ! ध्यान से तुम सुनो । कमल के-से नेत्रवाले, मन्दहास से सुन्दर बने मुखवाले, बलिष्ठ आजानु बाहुओंवाले, कामदेव की अवहेलना करनेवाले सौन्दर्य से युक्त, सुन्दर नीलोत्पलों की कान्ति की हँसी उड़ानेवाली शरीर-कान्ति से युक्त, शीतल चितवनों को बिखेरनेवाले, पद्मराग के आधिक्य की अवहेलना करनेवाले, लाल अधरों से युक्त, सौन्दर्य को बिखेरनेवाली चाल से विलसित, कान्तिमान दर्पणों के-से गालों से युक्त, पौरुष में दिविजों को भुला देनेवाले, सुधा-सने मधुर वचन (बोलने) वाले, बुध जनों के हित को आत्मा में धारण करनेवाले, प्रेम से सदा मेरी सेवाएँ करनेवाले, समस्त शरीर से धर्म-रूपी राम को, ॥ ३२० ॥

—भृगु (परशु) राम को जीतनेवाले, चन्द्रसमान कान्तिवाले, सद्गुण-

रामुनिजित भृगुरामुनि गांति । सोमुनि सद्गुणस्तोमुनि गीर्ति
कामुनि सौंदर्यकामुनि शांति । धामुनि रविसमधामुनि बासि
निमिष मात्रंबैन ने निल्व जाल । गमलाक्षि! नी वॆऱुंगवॆ यिट्टिदौट?
ना युत्तमोत्तमु डडवुल कॆपुडु । वोवु, ना प्राणमुल् वोवु ना क्षणमॆ;
यॆंत पापिष्ठवे! यॆंत कट्टडिवॆ । यॆंत मुढ़ात्मवे! यॆन्त राक्षसिवॆ ?
कठिनात्मुराल! यी कल्मषंबेल । शठमति गोरॆदु साध्विवै युंडि ?
यालवै प्राणापहारंबु सेयु । काळ रात्रिवि गाक कांतवा नीवु?
नडचि रामुडु काननमुन कॆट्लरुगु । नडवुल नॆट्लुंडु नंदऱ दॊऱगि ?
मॆत्तनि पान्पुन मॆनॆत्तु भोगि । यॆत्तॆऱंगुन नुंडु निल दृण शय्य ?
बंति निष्टान्नमुल् बंधुलु दानु । नॆन्तयु नियतितो निट नारगिंचु ३३०
कडु पुण्यदेहिकि गंदमूलमुलु । नॆडपक भुजियिंचुटॆट्टुलनि तलप;
वतिव! नी कतिभक्तुडैन रामुनकु । मति गीडु दलपकु; मन्निपु" मनुचु
नडरु शोकंबुन नडुगुल मीद । बडिन म्रॊक्कॊल्लक पादमुल् दिगुव
भूकांतु डिलबडि पॊगुल गैकॊनक । कैकेयि दशरथु गनि यिट्टुलनियॆ;
"चालु चाली वट्टि जगजोलि माट! । चालिंपुमी! वट्टि जाड लेमिटिकि?

स्तोम, कीर्ति-काम, सौन्दर्य में कामदेव, शान्तिधाम, रवि-सम कान्तिवाले- (राम) से बिछुड़कर मैं निमिष (पल-) भर भी नहीं रह सकता। हे कमलाक्षी! ऐसी बात को तुम नहीं जानती हो क्या ? जब वह उत्तमोत्तम (राम) जंगलों में जायेगा, उसी क्षण मेरे प्राण (निकल) जायेंगे। कितनी पापात्मा हो ? कितनी निष्ठुर हो ? कितनी मूढ़ हो ? कितनी राक्षसी (राक्षस-स्वभाववाली) हो ? हे कठिन आत्मावाली ! साध्वी होकर भी कुत्सित बुद्धि से यह कलमष (पाप) क्यों चाहती हो ? पत्नी होकर प्राणों को लेनेवाली तुम (मेरे लिए) कान्ता नहीं, काल की रात हो। पैदल चलकर राम जंगल में कैसे जायेगा ? सबको छोड़कर जंगल में कैसे रहेगा ? मृदुल शय्या पर शयन करनेवाला भोगी, ज़मीन पर, तृणशय्या पर, किस प्रकार रह (लेट) सकेगा ? (जो) पंक्ति में बन्धुओं (नातेदारों) के साथ इष्टान्न को नियति से यहाँ खाता है, ॥ ३३० ॥
—ऐसा पुण्यदेही निरन्तर कंदमूल कैसे खायेगा ? ऐसा न सोचकर हे स्त्री ! अपने अतिभक्त राम का अहित मत सोचो। (उसे) क्षमा करो।' (ऐसा) कहते हुए अधिक शोक (दुख) से (कैकेयी के) चरणों पर (दशरथ) गिर पड़े। (उस) चरण-वन्दना को न चाहकर उसने पैर हटा लिये। भूकान्त (राजा) ज़मीन पर गिरकर व्याकुल होने लगे। उसकी परवाह न करते हुए कैकेयी ने दशरथ को देखकर इस

धर्मंबु मानि, सत्यमु वीटि बुच्चि ।निर्मल यश मॆल्ल नीटिलो गलिपि,
यी वरद्वयमु नाकी लेदटंचु । भूवर! बॊंकि नी पुत्त्रुंडु नीदु
देवुलु नीवु वर्धिल्लुमु; नेनु । ना वरसुतुडु प्राणमुल बासॆदमु''
अनुनंत माऱाड कनुवेदि विभुडु।दन मदि जिंतिंचि तलवांचि युंडॆ; ३३९

रामाभिषेक सन्नाहमु

नंत वेगुटयु दूर्यंबुलु म्रोय । नंतंत वंदिजनावळि वॊगड ३४०
गलगॊनि कर्पूर गंधमुल् सलिल । जलमुल जलकंबु सदुरॊप्प नाडि
परग दिव्यांबराभरणमुल् वूनि । चिरकीर्ति रामुडु सीततो गूडि
तॆऱगॊप्प शचि तोड देवेंद्रु डॊप्पु । तॆऱगुन संपूर्ण तेजुडै यॊप्पॆ
मऱि यंत नभिषेक मंटपंबुनकु । नॆऱि वसिष्ठादुलु निंड नेतॆंचि
या यरुंधति मॊदलगु पुण्य सतुल । नायतमतुलगु ना मंत्रिवरुल
दग नॊप्पु मकुट वर्धन चक्रवर्तु । लगु महाराजुल नपुडु रप्पिंचि
पंच वल्लवमुलु बंचवल्कमुलु । बंचामृतंबुलु बट्ट पेनुंगु
नॆनमंड्रु कन्यलु हेम वृषंबु । नॊनर नौदुंबर योग्य पीठंबु

प्रकार कहा—'बस करो, इन व्यर्थ के कपट-वचनों को ! बस करो !! ये व्यर्थ विधान किसलिए ? धर्म को त्यागकर, सत्य को व्यर्थ (सिद्ध) कर, समस्त निर्मल यश को पानी में मिलाकर (व्यर्थकर), हे भूवर ! यह कह दो कि यह वरद्वय तुमको दिया (ही) नहीं है। (ऐसा) झूठ बोलकर तुम्हारा पुत्र, तुम्हारी देवियाँ (और) तुम वर्द्धित होकर रहो। मैं और मेरा वर (श्रेष्ठ) पुत्र प्राण तज देंगे।' (ऐसा) कहने पर, (उसका) प्रत्युत्तर दिये बिना, (दशरथ) उपाय के बारे में मन में सोचते हुए सिर झुकाये (बैठे) रहे ॥ ३३९ ॥

राम के राजतिलक की तैयारी

—तब प्रातःकाल होते ही तूर्य (मंगलवाद्य) बजे। यहाँ-वहाँ (सब ओर) वन्दीजन-समूह स्तुति (-पाठ) करने लगा ॥ ३४० ॥

—सुन्दर ढंग से कर्पूर-चन्दन से मिश्रित जल से अच्छी तरह स्नानकर, शोभा से दिव्य-अंबर (वस्त्र)-आभरण धारणकर, चिरकीर्ति वाले राम, सीता के साथ, शचीदेवी से युक्त देवेन्द्र के समान, सम्पूर्ण तेज से विराजमान हुए। तब अभिषेक के मंडप में वसिष्ठ आदि पधारे (और) अरुन्धति आदि पुण्य-सतियों को, उद्यतमति वाले मंत्रिवरों को (तथा) सिर पर शोभायमान मुकुटों से विवर्द्धित चक्रवर्ती महाराजाओं को तब (वहाँ) बुलाया। पंचपल्लव, पंचवल्कल, पंचामृत, भद्रगज (राजा का हाथी), आठ कन्याएँ, सुनहरे सींगों

गंगादि तीर्थोदकमु लादिगाग । मंगळ वस्तु सामग्रि दॆप्पिचि
वर रत्न भूषणावळुल दॆप्पिचि । तरमिडि वेदोक्त दानमुल् सेय ३५०

सुमंत्रुडु कैक नगरि केगुट

नॊक लक्ष कन्यल नोक लक्ष गोवु । लॊक लक्ष युष्ट्रंबु लॊप्प दॆप्पिचि
जपमुलु सेयिंचि शांति सेयिंचि । विपुल होमंबुलु वेड्क सेयिंचि
यनुपमंबगु लग्न मासन्न मैन । मनुजेशु बिल्व सुमंत्रुनि बनुप
गैकेयि नगरिकि गडकतो बोयि । वाकिट निलुचुंडि वलनॊप्प बलिकॆः
"देव! सूर्युडु वॊडतेंचु चुन्नाडु । वेवेग मी रट वेंचेय वलयु;
श्रीरामु पट्टभिषेकंबु सेय । नारूढमगु लग्न मासन्न मय्यॆ;
मनुजेश! यभिषेक मंटपंबुनकु । मुनुलु राजुलु महात्मुलु वच्चिनारु;
पौरुलु बुधुलुनु बंधुल गूडि । मीराक गोरि यम्मॆयि नुन्नवार"
लन विनि दशरथुडा वार्त लॆल्ल । दनकु गेवल मनस्तापंबु सेय
वनट नीवुनु नॊप वच्चिते यनुचु । विनियु निद्रिंचिन विधमुन नुंडॆ ३६०

वाले वृषभ, औदुम्बर (ताँबा या गूलर) योग्य (निर्मित) पीठिका, गंगा आदि का तीर्थोदक आदि मंगल-वस्तु-सामग्री मँगवाकर, वर (श्रेष्ठ) रत्न भूषणावलियाँ मँगवाकर, शीघ्रता से वेदोक्त दान करने के लिए, ।। ३५० ।।

सुमन्त्र का कैकेयी के महल जाना

—एक लाख कन्याओं, एक लाख गायों, एक लाख ऊँटों को शोभा से मँगवाकर, जप कराकर, शान्ति (पाठ) कराकर, आनन्द से विपुल होम कराकर, अनुपम लग्न के आसन्न होने पर, मनुजेश को बुलाने, सुमन्त्र को भेजा। (सुमन्त्र) कैकेयी के महल को धैर्य के साथ जाकर, द्वार पर खड़े होकर, समुचित रूप से बोले—(हे) देव ! सूर्य आ (निकल) रहे हैं। आपको शीघ्र वहाँ पधारना चाहिए। श्रीराम का पट्टाभिषेक करने के लिए आरूढ़ लग्न आसन्न हुआ है। (हे) मनुजेश! अभिषेक-मण्डप में मुनि, राजा, महात्मा (लोग) आये हुए हैं। पौर (पुर-जन) (और) बुध-जन नातेदारों के साथ, आपके आगमन की इच्छा से, उसी प्रकार (प्रतीक्षा कर रहे) हैं।' (ऐसा) कहने पर, (उन्हें) सुनकर, उन सभी समाचारों के द्वारा केवल अपने को मनस्ताप (क्लेश) पहुँचने पर, दशरथ यह सोचकर कि तुम भी मुझे दुख से (देकर) सताने के लिए आये हो, वैसे लेटे रहे, मानों सो रहे हों ।। ३६० ।।

ना समयंबुन ननियॆ गैकेयि । "यो सुमंत्रुड! वेग युर्वीशु कडकु
रामुनि दोड्तॆम्मु; राजु पं" पनुड्डु ।ना माट विनि यत डप्पडे पोयि ३६२

सुमंत्रुड्डु रामु सन्निधि केगुट

शीतपटीरांबु - सिक्तांगणंबु । गेतनान्वितमु निकेतनांचितमु
जंदनागुरुधूप सौरभान्वितमु । मंदानिला लोल मालिका युतमु
ब्रतिगृह द्वार रंभास्तंभ वर्ग । मतुलितमणि तोरणाभिरामंबु
बौर जनादि संभ्रम दुर्गमंबु । नौ राजमार्ग मॊय्यन गनुं गॊनुचु
निंद्रु गेहमु हसियिंचि या किन्न । रेंद्रु मंदिरमुतो नीडु जोडगुचु
सांद्र-वैभव-रमा-सहितमौ राम । चंद्रुनि नगरिकि जनुदॆंचि लोन
जनवरुलै युन्न जनुलचे वेग । तन राक यॆऱ्ऱिंगिंचि तदनुज्ञ वडसि
चित्राख्य तार तो सिरुलुल्लसिल्ल । मैत्रि नॊप्पॆडु चंदमाम चंदमुन ३७०
सीता समेतुडै चॆलुवॊंदु राम । भूतलनाथुनि बॊडगांचि म्रॊक्कि
"रा देव मिमु दशरथ चक्रवर्ति । या देवि कैक गृहंबुन नुंडि
यादट बिलिचि तॆम्मनि पंचॆ" ननुड्डु । मोदिंचि चिऱुनव्वु मॊलकलु निगुड
३७३

—उस समय कैकेयी (यों) बोली—'हे सुमन्त्र ! शीघ्र उर्वीश (राजा) के पास राम को लिवा लाओ। (यह) राजा की आज्ञा है।' यह बात सुनकर, वह तभी जाकर, ॥ ३६२ ॥

सुमन्त्र का राम के निकट जाना

—शीतल चन्दन-जल से सिक्त आँगनवाले, केतनों (ध्वजाओं) से समंचित निकेतनों (सौधों) से समलंकृत, चन्दन-अगरु के धूम (धुएँ) के सौरभ से युक्त, मन्द-अनिल से डोलायमान मालिकाओं से युक्त, प्रत्येक गृह के द्वार पर रंभा (कदली) के स्तम्भों से समंचित, अतुलित-मणि-तोरणों से अभिराम (सुन्दर), पुर-जन आदि के सम्भ्रम (उत्साह) से दुर्गम बने हुए राजमार्ग को, अकुटिल भाव से देखते हुए, इन्द्र के गेह की अवहेला कर, उस किन्नरेन्द्र (कुबेर) मन्दिर से तुलनीय बनकर, सान्द्र-वैभव-रमा (लक्ष्मी) से सहित रामचन्द्र की नगरी (महल) में आकर (पहुँचकर), भीतर मिलनसार (प्रिय) जनों के द्वारा शीघ्र अपने आगमन की सूचना दिलायी। उनकी (राम की) अनुज्ञा पाकर, चित्रा नामक तारा के साथ श्री-वैभव से सुशोभित होनेवाले चन्द्र के समान, ॥ ३७० ॥

—सीता के साथ शोभायमान बने राजा राम को देखकर, प्रणाम कर, (कहा)—'आइए देव ! दशरथ चक्रवर्ती ने देवी कैकेयी के गृह में रहकर,

श्रीरामुडु कैक नगरि केगुट

धरणिज नट नुंचि तानु लक्ष्मणुडु ।गरर्मथि रथ मॆक्कि कडक तो गदलि
चतुरंग बलमु लसंख्यमुल् गॊलुव । नतुल वाद्यमुलु मिन्नंदि म्रोयंग
वंदि बृंदमुलु गैवारमुल् सेय । जॆंदि पुण्यांगनल् सेसलु सल्ल
बुरजनु लानंदमुन जयवॆट्ट । नरनाथु नगरि कुन्नत गति वच्चि
यरदंबु डिगि रामुडपुडु कैकेयि । वरमंदिरमु जॊच्चि वलनॊप्प नचट
वदनंबु वांचि वैवर्ण्यंबु मिंचि । पॆदवुल दडुपुचु बॆंपॆल्ल नुडिगि
युडुगक कन्नीळु लॊलुक शोकाग्नि ।बडि कालु दशरथपति जेर बोयि३८०
करमु भीतिलि म्रॊक्कि कैककु म्रॊक्कि।करमुलु मुकुळिंचि कडु विस्मयंबु
वॆऱवॆऱ पाटुनु विह्वलत्वंबु । वॆऱपुनु मऱपुनु वीडु जोडाड
परिपरिविधमुल बलुमाऱु नॆमकि । परमपुण्युडु रामभद्रुंडु पलिकॆ,
"नो दॆवि! यिदि येमि, युर्वीश्वरुंडु । ना दॆस जूडडु? ना तप्पु लेमि?

आपको लिवा लाने के लिए मुझे भेजा है।' (ऐसा) कहने पर, प्रसन्न होकर, मुस्कान के अंकुरों के व्याप्त होने पर, ॥ ३७३ ॥

श्रीराम का कैकेयी के नगर जाना

—धरणिजा (सीता) को वहाँ रख (छोड़) कर, आप लक्ष्मण के साथ, अधिक इच्छा से, रथ पर सवार होकर, साहस के साथ निकलकर, असंख्य चतुरंग बल के सेवा करने पर (पीछे-पीछे चल पड़ने पर), अतुल-वाद्यों की ध्वनियों के आकाश को स्पर्श करने पर, वन्दि-वृन्द (चारण-समूह) के कैवार (स्तुतिपाठ) करते रहने पर, पुण्य-स्त्रियों के लाजा (खील) बिखेरने पर, पुर-जनों के आनन्द के साथ जय-जयकार करने पर, नरनाथ (राजा दशरथ) के महल में उन्नतगति से (वैभव के साथ) आये। (आकर) रथ से उतरकर राम तब कैकेयी के वर मन्दिर में प्रवेश कर, समुचित रूप से रहे। वहाँ वदन (मुख) झुकाकर, (मुख के) अधिक विवर्ण होने पर, (सूखने वाले) होंठों को आर्द्र करते हुए, समस्त वैभव (तेज) को खोकर, निरन्तर अश्रुओं को बहाते हुए, शोकाग्नि में दग्ध होनेवाले दशरथपति के पास जाकर, ॥ ३८० ॥

—(राम ने) अधिक भय खाकर, प्रणाम किया, कैकेयी को प्रणाम किया, हाथ जोड़े, अधिक विस्मय, संभ्रम, विह्वलता, भय, विस्मृति के एक के समान दूसरे के होने पर (सब भावों के समान रूप से होने पर), अनेक विधियों से, कई बार (कारण की) खोजकर, परमपुण्यवाले भद्र राम बोले —'हे देवी! यह क्या ? उर्वीश मेरी ओर देखते (क्यों) नहीं हैं ? मेरे

यी विन्नदनमुनु निट्टि दुःखंबु । नी विचारमु राजु के वॆंट गलिगॆ?"
ननवुडु ना कैक "यधिपु चंदंबु । विनुपितु नीवु गाविचॆद वेनि"
ननि पलक रघुरामु "इदि येमि तॆऽगु? विनुपिपु मो यम्म! विशदंबुगाग;
दंड्रि वाक्यमुलकै दारुणशिखल । वेंड्रमौ नग्निलो विषधि नैन
बडियॆद; विषमैन भक्षिचुवाड । जडियक विनुपिपु; सत्य मी माट"
यनवुडु गैकेयि या रामु जूचि । मनमुन गृपमालि मरि सॆप्प दॊडगॆ ३९०

कैक तन कोरिक रामुनकु दॆलुपुट

गरुण देवासुर कदनंबु नंदु । वरमुलु रॆंडु भूवरुडु ना कॊसगॆ;
नवनीशु ना रॆंडु नडिगि मा भरतु । नवनिकि बतिसेयु मंटि नॊक्कटिकि
नॆडपक पदुनालुगॆंड्लुनु । निन्नु नडवुल गापुंचुमंटि नॊक्कटिकि
ननुटयु 'नौ गाक' यनि यिच्चि नीकु । विनुपिप मी तंड्रि वॆऽचुचुन्नाडु
कावुन जडलु वल्कलमुलु गट्टि । नी विक दपसि वै नृपवेष मुडिगि
जनुलचे दशरथ जनपति बॊंक । डनिपिप वलतेनि नडवुल करुगु

अपराध क्या हैं ? यह विवर्णता (खिन्नता), ऐसा दुःख, यह खेद राजा को क्यों कर हुआ ?' (ऐसा) कहने पर वह कैकेयी बोली—'यदि तुम करो तो मैं राजा की इच्छा बताऊँ।' ऐसा कहने पर रघुराम बोले—'वह क्या मार्ग है ? हे माता ! विशद रूप से सुनाओ। पिता के वचन के लिए दारुण शिखाओं से उत्तप्त बनी अग्नि में, (या) समुद्र में भी कूद पड़ूँगा। विष को भी खा जाऊँगा। यह बात सत्य है। बिना भय (संकोच) के सुनाओ।' (ऐसा) कहने पर कैकेयी उस राम को देखकर, मन से कृपा (ममता) का त्यागकर यों कहने लगी— ॥ ३९० ॥

कैकेयी का अपनी इच्छा राम को बतलाना

—'देवासुर-कदन (युद्ध) में करुणा (कृपा) से भूवर ने मुझे दो वर दिये। (मैंने इस समय) अवनीश से वे दो (वर) माँग लिये। एक के लिए (बदले में) कहा, मेरे भरत को अवनि का पति (राजा) बनाओ। एक के लिए कहा, तुम (राम) को निरन्तर चौदह वर्ष के लिए अरण्यों का पहरा देने भेजो। (ऐसा) कहने पर 'तथास्तु' कहकर, (वर) देकर, तुम्हें सुनाने (बताने) के लिए तुम्हारे पिता डर रहे हैं। अतः जटाएँ, वल्कल धारणकर, तुम अब तपसी बनकर, नृपवेष छोड़कर, यदि जनता से यह कहलाना चाहते हो कि दशरथ-जनपति (राजा) झूठ नहीं बोलते तो अरण्यों में जाओ। जाओ।' (ऐसा) कहने पर मुस्कान के व्याप्त होने

पीं" म्मन्न विनि मौगंबुन जिरुनव्वु। ग्रम्म माटल नोंडु गसट लेकुंड
गरुणयु देगुवयु गरिमंबु दोप। बरमपुण्युडु रामभद्रुडु वलिकें;
"निट्टु सेयु मन्नवाडिनकुलाधीशु। डट; ना सहोदरुंडट राज्यकर्त;
यट मीद नी कोर्कि यट वेडनेल? कटकटा! कैकेयि! कडु मुग्धवैति४००
विंत मात्रमुनकै यिन वंश विभुडु। सिंतिप नेटिकि जित्तंबु लोन?
दन जनकुनि माट दाटिन वाडु। दनयुडे तलपोय धर दायगाक?
ये नेमि ना तम्मुडेमि यी भूमि। बूनुटकुनु? बुण्यपुरुषडै युन्न
भरतुनि देस नाकु ब्राणंबुलैन। सरकु गावनिन राज्यमु नाकु सरकें?
यनवुडु मुदमंदि या कैक वलिकें। "मनुजेंद्र-तनय! यी माट के निपुडु
भरतुनि दोड्तेर बनिचेंद; निंक। नरुगुमु वनमुल; करुगुनंदाक
गुडुवडु वलुकडु गूर्चुंड डिट्ल। पडियुंडु नृपु" डंचु बल्कें बल्कुटयु
"गट कटा! तगुनें यी कठिनोक्तु" लनुचु।बट्टुमूर्छतो नेल बडियें ना राजु
नय्येंड ना रामु डवनीशचंद्रु। नोय्यन बट्टि शैत्योपचारमुल
दलिपि यंतयुनु बोधिंचुचु मरियु। बलिकें गैकनु जूचि परम हर्षमुन४१०

पर, बातों में किसी प्रकार के मालिन्य के न होने पर, करुणा, साहस (और) गरिमा के अभिव्यक्त होने पर, परम पुण्यवाले भद्र राम बोले—'इस प्रकार करने के लिए कहनेवाले इन-कुलाधीश (सूर्य वंश के राजा) हैं। राज्य के कर्ता मेरे सहोदर हैं। तिस पर तुम्हारी इच्छा है। इसमें माँगना क्या? हाय! हे कैकेयी! बड़ी अबोध (भोली) बनी हो ॥ ४०० ॥

—इस (छोटी-सी) बात के लिए इन-वंश-विभु को मन में चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है? अपने पिता की बात (आज्ञा) का पालन न करने-वाला, सोचने पर कहीं पुत्र होता है? वह तो संसार में ज्ञाती है। इस भूमि (राज्य) को वहन करने में मुझमें और मेरे भाई में कोई भेद नहीं है। पुण्य-पुरुष बने भरत के लिए मुझे प्राणों की भी परवाह नहीं है तो इस राज्य की क्या गिनती?' ऐसा कहने पर मुदित होकर वह कैकेयी बोली—'हे मनुजेन्द्र-तनय (राजकुमार)! इस बात पर अब मैं भरत को बुला लाने हेतु (आदमी) भेजूँगी। अब (तुम) वन में जाओ। (तुम) जब तक नहीं जाओगे तक तक नृप (राजा) न खायेंगे, न बोलेंगे, न (उठेंगे) बैठेंगे, ऐसे ही पड़े रहेंगे।' (ऐसा) कहते ही राजा यह कहते हुए कि 'हाय! क्या ये कठिनोक्तियाँ उचित हैं? (नहीं हैं।)' अधिक मूर्च्छा से ज़मीन पर गिर पड़े। उस समय वह राम अवनीश-चन्द्र (दशरथ) को ढंग से पकड़कर शीतलोपचार कर, (जब वे होश में आये तब) (उन्हें) सबकुछ समझाते हुए, कैकेयी को देखकर परमहर्ष से (यों) बोले— ॥ ४१० ॥

"निंत येटिकि जिंत? यिदि यॆंत नाकु? नंतरंगंबुन ननुमान पडकु;
परिकिंचि धर्मंबु पाटिंतु गानि। कर मर्थि व्यर्थंबु गाविप नेनु;
वेयेल? विभुनाज्ञ विनबड कुन्न। नी याज्ञ गडवनु; निक्कुवं बरय;
जारुल शीघ्र संचारुल घोट। कारूढुलुग जेसि यनिचि वे वेग
करमर्थि नी लग्न घटिकल यंदॆ। भरतुनि बिलिपिंचि पट्टंबु गट्टु;
मिदॆ यरण्यमुलकु नॆगॆद" ननुचु। वदनाब्ज मलरंग वलगॊनि वच्चि
"तन तल्लिकिनि सुमित्रा वधूमणिकि। जनकनंदनकु नी चंद मंत युनु
विनुपिंचि वारल वेस नूर्ऱडिंचि। चनुदॆंतु नो यम्म! संदिय पडकु"
मनि राजुनकु म्रॊक्कि या कैक। कॆऱगि तनु गॊल्चि सौमित्रि दगिलि
रा गदलि
चॆलुवार बट्टाभिषेकंबु कॊऱकु। ललि नर्मिचन मंगळ द्रव्यमुलकु ४२०
नुचित प्रदक्षिण मॊनरिंचि चित्त। मचलमै यविकारमै विकसिप
नी वार्त दम तल्लि कॆऱिगिप दलचि। पोवंग नट यंतिपुरमु लोपलनु
'राज्यपट्टमु मानि रामुंडु लोक। पूज्युंडु कानन भूमि कॆगॊंडिनि'

—'इतनी चिन्ता किसलिए ? यह मेरे लिए कौन बड़ी बात है ? अन्तरंग में (मुझपर) सन्देह मत करो। विवेक के साथ मैं धर्म का पालन करूँगा (पर) उसे (धर्म को) व्यर्थ नहीं करूँगा। हज़ार (बातें) क्यों ? प्रभु (दशरथ) की आज्ञा सुनायी न पड़े (मुझे न मिले) तो भी सच मानो, (मैं) तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करूँगा। दूतों को शीघ्रगामी अश्वों पर सवार कर, भेजकर, तुरन्त भरत को बुलाकर, इन्हीं लग्न-घटिकाओं (शुभ-मुहूर्त) में अधिक इच्छा (उत्साह) से राजतिलक कर दो। यही (अभी) (मैं) अरण्यों को जा रहा हूँ।' (ऐसा) कहते हुए प्रसन्न वदनाब्ज (मुख-कमल) हो, (माता-पिता की) परिक्रमा कर (बोले)—'अपनी माता (कौसल्या), वधूमणि सुमित्रा को (और) जनकनन्दिनी (सीता) को यह सब विधान (समाचार) सुनाकर, उन्हें शीघ्र सान्त्वना देकर, आ जाऊँगा। हे माता ! सन्देह मत करो।' (ऐसा) कहकर, राजा को प्रणाम कर, उस कैकेयी को प्रणाम कर, अपनी सेवा करते हुए सौमित्र (लक्ष्मण) के अनुगमन करने पर (राम) वहाँ से निकल पड़े। शोभा से पट्टाभिषेक के लिए सुन्दरता से सजाये गये मंगल द्रव्यों की, ॥ ४२० ॥

—उचित रूप से परिक्रमा कर, चित्त के अचल (अचंचल) (और) अविकार रूप से विकसित (प्रसन्न) रहने पर, यह समाचार अपनी माता को बतलाने की सोचकर, वहाँ (कौसल्या के महल में) गये। वहाँ अन्तःपुर के भीतर सब ओर इस महाकलकल के सुनायी पड़ने पर 'राज्याधिकार छोड़ लोकपूज्य

अनु महाकलकलं बंतट निंडि । विनबड दशरथु वेलदुलु गलगि
"ये भक्ति कौसल्य यॆडनु गाविंचु। ना भक्ति मन यंदु नट्ल काविंचु
ना गुणालंकारु ना महोदारु । ना गिरिवरधैर्यु न शौर्यधुर्यु
ना पुत्त्र रत्नंबु नकट! कानलकु । भूपालु डेमनि पॊम्मन नेर्चॆ ?
वीऱिडि यै रामु विपिनवासमुन । काऱडि बुच्चंग नौ नम्म" यनुचु
मीऱिन वगल तो मेदिनी-नाथु । दूऱुचु शोकिंप दॊडगि रंदऱुनु४२९

श्रीरामुडु कौसल्य नगरि केगुट

आ समयंबुन ना रामविभुडु । कौसल्य यिंटिकि गडक तो वच्चॆ४३०
नटमुन्न तॊडरि या यभिषेकमुनकु । बटुविघ्न मॊरुलु संपादिंपकुंड
जपमुलु शांतुलु चतुर होममुलु । विपुलैकनिष्ठ गाविंचुचु ब्रेम
गरमर्थि नेममुल् गैकॊनि भक्ति । परत जनार्दनु ब्रार्थिंचुचुन्न
कौसल्य रामु राककु संतसिल्लि । भासिल्लु वर पुण्य भामलु दानु
नॆलमि सेसलु गॊंचु नॆदुरुगा वच्चि। वॆलय शुभाचार विधुलाचरिंचॆ;
नंत ना कौसल्य यडुगुल कॆऱग । संतोषमुन रामचंद्रुनि नॆत्ति

राम कानन भूमि में जा रहे हैं' दशरथ की स्त्रियाँ व्याकुल होकर कहने लगीं—'राम कौसल्या के प्रति जो भक्ति रखता है, वही भक्ति हमारे प्रति रखकर, व्यवहार करता है। उस गुणालंकार, उस महा-उदार (मनवाले), गिरिवर (हिमाचल)-धीर, शौर्य-धुर्य, पुत्र-रत्न को, हाय! भूपाल (दशरथ) वनवास की आज्ञा कैसे दे सके ? मूर्ख बनकर, दुःखप्रद विपिनवास के लिए राम को भेजना कहाँ उचित है ?' (ऐसा) कहते हुए अधिक व्यथा से मेदिनीनाथ (राजा दशरथ) की निन्दा करते हुए सभी दुखी होने लगीं ॥ ४२९ ॥

श्रीराम का कौसल्या की नगरी जाना

—उस समय वे प्रभुराम कौसल्या के घर सोत्साह आये ॥ ४३० ॥

—वहाँ (कौसल्या के महल में) अभिषेक में अन्य लोग (अधिक) विघ्न न डालें, इसलिए उत्साह से विपुल-एकनिष्ठा के साथ, जप, शान्ति, चतुरता से होम करते हुए, प्रेम से अधिक नियमों को ग्रहण कर, भक्ति परायणता से जनार्दन की प्रार्थना करनेवाली कौसल्या राम के आगमन पर प्रसन्न हुईं। शोभायमान श्रेष्ठ-पुण्य-स्त्रियों के साथ स्वयं प्रेम से लाजा (खील) लेकर समक्ष आयीं और समुचित विधि से शुभाचार-पद्धतियों का निर्वाह किया। तब कौसल्या के चरणों में नत होने पर, हर्ष से रामचन्द्र को उठाकर (कौसल्या ने) गले से लगा लिया (और कहा)—'हे पुत्र ! तुम आयु, यश

यालिंगनमु सेसि "यायुवु यशमु। भू लाभमुनु बॊंदु पुत्र! नी" वनुचु
दीविंचु तम तल्लि तॆऱगॊप्प राम । देवुडु वीक्षिंचि दीनुडै पलिकॆ;
"नी कार्यमुनु दल्लि! यॆऱुगरु मीरु; मीकु सुमित्रकु मिथिलेंद्र सुतकु
गडुभीति बुट्टिंचु कार्यंबु वुट्टॆ । विडुवक धृति बूनि विनुडु सॆप्पॆदनु४४०
वसुधेशुचे रॆंडु वरमुलु दॊल्लि । यसमान गति गैक याजिलो बडसॆ;
गॊडुकु बट्टमुगट्ट गोरॆ नॊक्कटिकि।नडविकि ननु बंप नडिगॆ नॊक्कटिकि;
४४२

श्रीराम वनवासमुनकु कौसल्य शोकमु

नडिगिन दशरथुडधिक शोकमुन । बडुटयु मातंड्रि पलुकु रक्षिंप
नडवुल बदुनालुगब्दंबुलुंड । गडगि वच्चिचति" नन गौसल्य मदिनि
गलगि निव्वॆऱगंदि कडु जिन्न वोयि। पलुक नेरक म्रानुपडि युस्सुरनुचु
मुडिगॊन्न वगलतो मादलंट द्रव्वि । पडियुन्न लत बोलॆ बडि मूर्छ वोयॆ;
नड़लुचु रघुरामुडप्पु डातल्लि । नॆडपनि भक्ति तो नॆत्ति नॆम्मेन

(और) भू-लाभ को प्राप्त करो।' (यह) कहते हुए आशीर्वाद देनेवाली अपनी माता की (मानसिक) दशा को देख, प्रभु राम दीन हो बोले—'इस कार्य (घटना) को हे माता! आप नहीं जानतीं। आपको, सुमित्रा को, (और) मिथिलेन्द्र-सुता (सीता) को अतिभय उत्पन्न करनेवाला कार्य उत्पन्न हुआ (घटना घटी)। सतत धैर्य को धारणकर सुनिए, कहता हूँ॥ ४४०॥

—"पूर्व में आजि (युद्ध) में असमान गति से कैकेयी ने वसुधेश (राजा) से दो वर पाये। एक से (उसने) चाहा, (अपने) पुत्र का राजतिलक हो (और) दूसरे से चाहा, मुझे जंगल भेजा जाये॥ ४४२॥

श्रीराम के वनवास पर कौसल्या का दुख

—"(ऐसा वर) माँगने पर दशरथ अधिक शोक (-संतप्त) हो गये। अपने पिता के वचन की रक्षा करने के लिए, जंगलों में चौदह अब्द (वर्ष) रहने के लिए सोत्साह आया हूँ।" (ऐसा) कहने पर कौसल्या मन में व्याकुल हुईं, निश्चेष्ट हो गयीं; अधिक कान्तिहीन हो गयीं; बोल नहीं सकीं, स्तम्भित हो गयीं। आहें भरने लगीं। घनीभूत बने दुख से (कौसल्या), जड़ से उखड़ी लता के समान (जमीन पर) गिरकर मूर्च्छित हो गयीं। तब घबड़ाकर रघुराम ने माता को बड़ी भक्ति से उठाकर, शरीर पर अधिकता से लगी हुई धूल को हाथों से पोंछकर, सुन्दर आसन पर बिठाया (और) श्रम को दूर करनेवाले ढंग से लक्ष्मण और स्वयं (राम ने) समुचित

गमिय नंटिन धूळि गरमुल दुडिचि। कॊमरारु गद्दिय गूर्चुंड बॆट्टि
श्रममु दीऱंग लक्ष्मणुडुनु दानु । समुचितगति नुपचारमुल् सेय
नॊदविन वगलतो नॊय्यन दॆलिसि ।पॆदवुलु दडुपुच्चु बिंबोष्ठि वलिकॆ४५०
“ननघ! राघव! निन्नु नडवुल नुंडु । मनु पल्कु विन नॆंदु नरिदि वीनुलकु
बॆलुच नॊक्कट निन्नु बिलिपिंचि यिट्लु।पलुक नॆम्मॆयि जालॆ बार्थिवेश्वरुडु?
धरणि कंतटिकिनि दन माऱुगाग । भरतु बट्टमु गट्टि पति सेयु गाक!
कडु गृपाशून्युडै काकुत्स्थतिलकु । डडविकि निन्नु बॊम्मनकुन्न नेमि?
यविवेकिगादॊंडॆ यधमुडु गाडु । सवति माटलु विन जनुनय्य! तनकु?
‘निदि धर्म मिदि कार्य मिदि लॆस्स’ यनुचु। मदि कॆक्क हितुलैन मऱि मंत्रु लैन
गुलगुरुडैन लोकुलु मॆच्च नतनि । दॆलुप लेरैरॆ नी दॆस मैत्रि गलिगि?
यिंत पापमु सेसॆने नेडु कैक? यिंत नेरमि सेसॆने नेडु नाथु ?
डडवुल नुंडुपॊ’म्मनि निन्नु जूचि । नॊडुवग गैककु नोरॆट्टुलाडॆ
ननुवुन जेरि प्राणमुलैन नडुग । जननाथुनकु दानु चनवुरालैन४६०
गैककु बुट्टि लोकमु लेल कीवु । ना केल पुट्टिति ना रामचंद्र!

गति से उपचार किया। (मन में) उत्पन्न दुखों के कारण झट से चेतना के (लौट) आने पर बिम्बोष्ठी (बिम्बाफल-जैसे होंठोंवाली कौसल्या) (अपने) होंठों को आर्द्र करती हुई बोलीं— ॥ ४५० ॥

—“हे अनघ! राघव! तुम्हें वन में रहने के लिए (दिये गये) वचन (आदेश) को कहीं सुना नहीं अश्रुतपूर्व है। कानों को विचित्र-सा लग रहा है। तुम्हें बुलाकर पार्थिवेश्वर (राजा) इस प्रकार कैसे बोल सके ? समस्त धरती के लिए, अपनी जगह, भरत का राजतिलक कर, भले ही राजा बना दें। परन्तु अधिक कृपा-शून्य (निष्ठुर) होकर, काकुत्स्थतिलक (दशरथ) तुम्हें वन जाने को न कहते (तो) क्या होता ? (वे दशरथ) अविवेकी नहीं हैं, यही नहीं, अधम (भी) नहीं हैं। फिर उनके लिये (मेरी) सौत की बातें सुनना क्या शोभनीय है ? ‘यह धर्म (संगत) है, यह श्रेष्ठ कार्य है’—ऐसा मन को समझाते हुए, तुम्हारे प्रति मैत्री रखकर, हितू अथवा मन्त्री (अथवा) कुल-गुरु उन्हें, जन प्रशंसनीय रूप में, नहीं बता सके ? (हाय) आज कैकेयी ने इतना पाप कर दिया ! आज नाथ ने इतना अपराध कर दिया ! तुम्हें देखकर यह कहने के लिए कि ‘जाओ, वन में रहो,’ कैकेयी का मुख कैसे खुला ? यदि वह (कैकेयी) जननाथ (राजा दशरथ) के लिए प्रिय है तो अनुकूलता से (उनके) निकट पहुँचकर प्राण ही माँग लेती ॥ ४६० ॥

यीवु ना कडुपुन निट्टु पुट्टकुन्न । नी विषादमु नाकु नेल वाटिल्लु?
गॊड्डुकुलु लेनि या गॊड्रालिकंटॆ । गडलेनि शोकंबु गलिगॆ ना ककट !
नरनाथनंदन! ननु डिंचिनीवु । करमु तॆंपुन घोर कांतारमुलकु
नरिगिनप्पुडॆ नाकु नारसिचूड । मरणंबु दप्पिंचि मऱियॊंडु लेदु
नन्नॆट्लु डिंचि कानल केगॆं दिक?। नन्न ! ने नॆमिट नडलार्चुकॊंदु?
बॆक्कु दानंबुलु बॆक्कु धर्ममुलु । बॆक्कु व्रतंबुलु बॆक्कुव जेसि
पॆद्द गालमुनकु बिड्डुलु लेक । तद्दयु वेड्क निन् दनयुगा गांचि
यूऱडि युन्नचो नुंड रादय्यॆ! नाऱडि जॆंडिपोयॆ नकट! ना तपमु
नॆलमि मै निरुवदि येनु वत्सरमु । ललरि पॆंचिति निन्नु नखिलंबु नॆऱुग, ४७०

नट्टि नन्निट डिंचि यॆट्टु पोयॆदवु?। पट्टि! नी कॊऱकुनै पाटिंचि नट्टि
विविध व्रतंबुलु विविध दानमुलु । चवुट वित्तनमुलु सल्लि नट्लय्यॆ
भरतुडु राजैन बरिचार जनुलु । करुणमालिन यट्टि कैककु वॆऱचि
ननु गॊल्व वत्तुरे नरनाथु नंदु । जनवु लेकुंडॆडु चंदंबु जूचि ?

—"(ऐसी) कैकेयी के गर्भ से जन्म लेकर लोक पालन न करके, तुम मेरे गर्भ से क्यों पैदा हुए ? (अगर) तुम मेरे गर्भ से इस प्रकार पैदा न होते तो मुझे यह विषाद क्योंकर संप्राप्त होता ? हाय ! पुत्रहीन वन्ध्या की अपेक्षा मुझे अधिक दुख प्राप्त हुआ है। हे नरनाथ-नन्दन ! मुझे छोड़कर, अधिक साहस से घोर-कान्तारों में जिस समय तुम जाओगे, तो, सोच-समझकर देखने पर, मेरे लिए मरण के सिवा अन्य (उपाय) नहीं है। मुझे छोड़कर काननों में अब कैसे जाओगे ? हे तात ! मैं किस रूप से विषाद को शान्त कर सकूँगी ? अनेक दान, अनेक धर्म, अनेक व्रत, बड़ी लगन से करके (भी), चिरकाल तक सन्तान-हीन रही। तब बड़े आनन्द के साथ तुम्हें पुत्र-रूप में प्राप्तकर, शान्ति पायी। (अब वैसी) शान्ति नहीं रहेगी। हाय ! मेरा तप नष्ट हो गया। प्रेम से पच्चीस वर्ष, आनन्द से तुम्हें पाला-पोसा जिससे तुम अखिल (जगत्) को जान गये ॥ ४७० ॥

—"ऐसी मुझे यहाँ छोड़कर कैसे जा पाओगे ? हे पुत्र ! तुम्हारे लिए जो विविध व्रत रखे, विविध दान किये, (वे सब) मानों ऊसर क्षेत्र में बिखेरे बीज-सम हो गये। (यदि) भरत राजा हो जाय तो निष्ठुर बनी कैकेयी से भय खाकर, (और) नरनाथ के हमारे प्रति प्रेम न रहने के कारण, परिचारक लोग, सेवा करने मेरे पास आयेंगे ? आधिक्य, विलास, वैभव (सबसे) रहित होकर, इन सौतों के मध्य (मैं) कैसे रह पाऊँगी ? कैकेयी

वासियु वन्नॆयु वैभवं बॆडलि । यी सवतुललोन नॆट्लु वर्तितु ?
गैक राजसमुले करणि सैरिंतु? । नी कार्य मिट्लौट नॆरुग लेनैति;
वीनुल नी वार्त विनुटकु मुन्नॆ । ये नेल चानैति निनवंशतिलक!
कडगि यी राज्यंबु गैकॊनि कैक । कॊडुकु बट्टमु गट्टुकॊनि येलु गाक,
भूरि दुर्गमुलकु बोव नेमिटिकि? । नूरक ना यॊद्द नुंडु मो तंड्रि!
या वसिष्ठादि संयमुलु बाल्यमुन । भाविंचि नी पाणि पाद पद्ममुलु४८०
जलजात हल कुलिश ध्वज कलश । मुलु मॊदलगु चिह्नमुलु विलोकिंचि
"यी विश्वमंतयु नित डेलु' ननिरि । या वार्त गैक ने डनृतंबु सेसॆ"
ननि पॆक्कु तॆऱगुल नडलु कौसल्य । गनि लक्ष्मणुडु शोकमु गोपमॆसग,
मुडिवडु बॊमलतो मॊगमु गॆंपॆसग । नुडुगक रोषाग्नु लॊगि मंडुचुंड
रामु मातनु जूचि रामुनि जूचि । सौमित्रि यडिदंबु जळिपिंचि
पलिकॆ ४८५

लक्ष्मणुनि कोपमु

"मगटिमि दिगनाडि मानंबु विडिचि । तगु नुत्तम क्षत्र धर्मंबु वदलि
वालिन तेजंबु वम्मुगा जेसि । येल यी दीनोक्तु लिट्लाड नीकु?

के अधिकार (रोब) को किस प्रकार सहूँगी ? नहीं जानती थी कि यह काम ऐसा होगा। हे इनवंश-तिलक। इस समाचार को कानों से सुनने से पहले ही मैं मर क्यों नहीं गयी ? प्रयत्नकर, इस राज्य को ग्रहणकर, कैकेयी का पुत्र पट्टाभिषिक्त होकर, भले ही शासन कर ले। (तुम्हें) भूरि काननों (घने जंगलों) में जाना क्यों ? हे तात ! चुपचाप मेरे पास पड़े रहो न! उन (वसिष्ठ आदि) संयमी लोगों ने बाल्य (काल) में तुम्हारे कर (और) चरण कमलों का परिशीलन कर, ॥ ४८० ॥

—'जलजात (कमल), हल, कुलिश (वज्र), ध्वज, कलश आदि चिह्नों को विलोक कर कहा 'यह (बालक) इस समस्त विश्व पर शासन करेगा।' उस बात को कैकेयी ने आज झूठा कर दिया है।" (ऐसा) कहकर, अनेक प्रकार से दुखी होनेवाली कौसल्या को देख, लक्ष्मण शोक (और) क्रोध के उमड़ने पर, तनी हुई भौंहों से, मुख के लाल बनने पर, रोषाग्नियों के बलते रहने पर, राम की माता को (और) राम को देखकर, सौमित्र (लक्ष्मण) खड्ग चमकाकर बोले— ॥ ४८५ ॥

लक्ष्मण का क्रोध

—"पौरुष को छोड़कर, मान को तजकर, समुचित उत्तम क्षत्रिय-धर्म को छोड़कर, अतिशय तेज को व्यर्थ बनाकर, ऐसे दीन वचन तुम क्यों कह रहे

नक्कटा! नीतिज्ञु डगु तंड्रि पनुपु । स्रुक्कक धिक्करिंचुट गादुकाक
कामातुरुडु पापकर्मुंडु वृद्धु । डेमिटि की राजु नित वाटिंप ?
गैकेयि किच्चि 'बॊंकग नॆर' ननुचु।नीकिच्चि योडक नॆडॆट्लु बॊंकॆ? ४९०

नडरि वसिष्ठादु लंद्रुरु विनग । गडगि 'निन् बट्टंबु गट्टॆद' नन्न
पलुकु सत्यंबुगा बाटिंप वलदॆ? तलपंग निदि यसत्यमुगादॆ तॊलत?
नॆक्कडि दशरथुं? डॆक्कडि वरमु? लॆक्कडि भरतुंडु? नॆक्कडि कैक
विनु मेनु निजमुगा विल्लॆक्कु वॆट्टि । कॊनियुन्न नन्नु माकॆनि नॆव्वडोपु?
भरतुनि मॊदलुगा बगवारि जंपि । नॆरसि यी पुरमॆल्ल नीरु गाविंतु
हरिहर ब्रह्मादु लड्डुमै रेनि । दरमिडि तोलि तॊप्परलाडु वाड
नालिकै सुतु बारनडचु ना धरणि । पालुनि दुनिमिन बापंबु लेदु
तगवुनु धर्मंबु दप्पिन मीद । दग जूचि गुरुवैन दंडिंप वलयु,
गमनीय केयूर कंकणालंकृ । तमुलु मनोब्ज चंदन चर्चितमुलु
नगु नाभुजम्मुल नभिषिक्तु जेसि । पगतुर जंपुदु बालपडि यिपुडॆ ५००

पाटिंप ना वंटि बंटु गल्गियुनु । नेटिकि साम्राज्य मॆल्ल वर्जिंप?
नडवुल कॆगॊद ननुनट्टि बुद्धि । विडिचि कौसल्यकु वेड्कलुप्पॊंग

हो ? हाय ! नीतिज्ञ पिता के आदेश को ठुकरा तो नहीं रहे हो। कामातुर, पाप कर्मवाले, वृद्ध इस राजा का इतना मान क्यों करें ? कैकेयी को (वर) देकर, झुठलाना नहीं चाहते तो तुम्हें (राज्य) देकर आज कैसे झुठला रहे हैं ? ॥ ४९० ॥

—"अतिशयता से, वसिष्ठ आदि सबके सुनते (समय), चाह कर 'तुम्हारा राजतिलक करूँगा', कहा था। उक्त वचन को सत्य नहीं मानना चाहिए ? सोचने पर सर्वप्रथम यह असत्य नहीं है क्या ? कहाँ का दशरथ ? कहाँ के वर ? कहाँ का भरत ? कहाँ की कैकेयी ? सुनो, (यदि) मैं सचमुच धनुष चढ़ा लूँ (धनुष हाथ में ले लूँ) तो मेरा सामना करने में कौन समर्थ है ? भरत से लेकर (सभी) शत्रुओं का संहार कर, इस समस्त नगर को भस्म कर दूँगा। हरि, हर, ब्रह्मा आदि (भी) बीच में आवें तो शीघ्रता से (उन्हें) भगाकर, (उनका) उपहास करूँगा (हरा दूँगा)। पत्नी के लिए पुत्र को भगा देनेवाले उस धरणिपाल (राजा) को मार डालने में कोई पाप नहीं है। न्याय (और) धर्म को छोड़ देने पर, न्याय को दृष्टि में रखकर, गुरु को भी दंडित करना चाहिए। कमनीय केयूर-कंकणों से अलंकृत (और) मनोज्ञ चन्दन-र्चचित अपनी भुजाओं से (आपको) अभिषिक्त करूँगा। अभी आरम्भ करके शत्रुओं को मार डालूंगा ॥ ५०० ॥

नॆट्टन गडिमि मै निजशक्ति मॆऱसि । पट्टंबु बूनुचु ब्रजल बालिंपु"
मनवुडु राघवुं डनुजन्मु जूचि ।मनमुन दलपोसि ममत निट्लनियॆ;
"सौमित्रि! शूरत समयंबु गादु । ई माट मॆच्चदु हितबुद्धि निलुपु
चालु चालीपट्ल जगमु लेलगनु । पोलंग मन कब्बॆ बॊसगु कार्यमुलु
शूरत निक्कड चूपंग नेल । वैरुलयंदुनु वर्तितु गानि"
यनिन गौसल्ययु नारामु जूचि ।"विनुमु नीतम्मुनि विमल वाक्यमुलु;
शौर्यंबु सेपट्टि जनुलॆल्ल बॊगड । नार्य सम्मतमुगा नवनि बालिंपु;
सवति माटलकु राज्यमु मानि यडवि । निवसिंप बोवुट नीकु धर्मंबॆ? ५१०

ना यिंट नुंडुमु; नाकु शुश्रूष । सेयु; मिंतटि कंटॆ क्षिति धर्म मॆद्दि?
जनकु वाक्यमु सेय जालिन नीकु । जननि वाक्यं बॆन्न सन्नमे यन्न?"
यनि पॆक्कु विधमुल नडलुचु नुन्न । तन तल्लि नूरार्चि तगवॆल्ल दॆलिपि,
"येमिटि कीमाट? लिंत शॊकिंप । नेमिटि" कनि रामु डेपॆंड बलिकॆ ५१४

—"सोचने पर मुझ-जैसे सेवक के रहते हुए, समस्त साम्राज्य को वर्जित करना (त्यागना) क्यों? 'जंगलों में जाऊँगा', इस बुद्धि (विचार) को छोड़कर, कौसल्या को प्रसन्न करते हुए, शीघ्र साहस से निज शक्ति से प्रकाशित होकर, राजपाट ग्रहण करते हुए प्रजा पर शासन कीजिए।" ऐसा कहने पर राघव अनुजन्म (अनुज) को देख, मन में सोच, ममता (प्रेम) से (यों) बोले—"हे सौमित्र (लक्ष्मण)! शूरता का (प्रदर्शन के लिए यह) समय नहीं है। यह बात प्रशंसनीय नहीं है। हित बुद्धि को (मन में) रखो। बस-बस, इस समय जगत् पर शासन नहीं करना है। हमारे लिए (और भी) उचित कार्य हैं। यहाँ शूरता दिखाने की क्या आवश्यकता है? वैरियों के प्रति (शूरता का) व्यवहार करना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर कौसल्या ने भी उस राम को देखकर कहा—'सुनो, अपने भाई के विमल वाक्य। शौर्य को धारणकर, समस्त जनता से प्रशंसा प्राप्त करते हुए, आर्य-सम्मत रूप से अवनि पर शासन करो। (मेरी) सौत की बातें मान, जंगलों में रहने जाना तुम्हारे लिए (कहाँ का) धर्म है? ॥ ५१० ॥

—मेरे घर पर रहो। मेरी शुश्रूषा करो। इससे बढ़कर, पृथ्वी पर धर्म कौन-सा है? जनक के वाक्य (वचन) का पालन कर सकनेवाले तुम्हारे लिए, जननी का वचन क्या कम (महत्वपूर्ण) है?' (ऐसा) कहकर अनेक विधियों से दुखी होनेवाली अपनी माता को आश्वस्त कर, न्याय समझाकर, ठीक ढंग से राम बोले—"ये बातें क्यों? इतना दुखी होना क्यों? ॥ ५१४ ॥

श्रीरामुडु लक्ष्मणुनि युद्रेकमुडिंगिचुट

''बलुविडि दमतंड्रि पनुपुन दॊल्लि । च्रलमुन दमतल्लि जंपॆ भार्गवुडु;
तऱुगनि किनुक मै दमतंड्रि वनुप । दऱिगॊनि यॊक गोवु दऱिगॆ गुंडिनुडु
तन मनोहर मैन तारुण्य मॊसगि । तन तंड्रि मुदिमिनि दाल्चॆ बूरुंडु;
तम तंड्रि पनुपुन द्रव्वरे तॊल्लि । तमकिंचि सगरनंदनु लंबुनिधिनि?
गडगि तंड्रिदि पंपु गैकॊनि नाकु । नडवुल नुंडुट यदि यॆंत पॆद्द!
नी वल्लभुनि माट नीकुनु नाकु । भाविंचि चेयुट परमधर्मंबु; ५२०
ई लक्ष्मणुडु बालु डेमियु नॆऱुग । जालडु वीर विचारंबॆ कानि"
यनि नव्वुचुनु रामु डनुजन्मु जूचि । तन लोनि शांतमंतयु दोप बलिकॆ:
"नी विक्रमंबुनु नी भुजा बलमु । नी विलु विद्ययु नी सुबुद्धियुनु
नी मगतनमुनु ने नॆऱुंगुदुनु । सौमित्रि ना यॆड सद्भक्ति गलिग
यॆंत साहसमु नी विपुडु गोरितिवि?। एंतटि बुद्धि ना कीवु सॆप्पितिवि?
गॊनकॊनि यिट्टु वेडुकॊन्नदि तल्लि। यनुकंप निच्चि पॊम्मन्नाडु तंड्रि

श्रीराम का लक्ष्मण के आवेश को दूर करना

''पूर्व (काल) में अपने पिता की आज्ञा से, हठ कर (दृढ़ता से) अपनी माता का भार्गव (परशुराम) ने वध किया था। अपने पिता के आदेश से कुंडिन ने, कम न होनेवाले क्रोध से, अवसर पाकर एक गाय को काट डाला था। पुरु ने अपने मनोहर तारुण्य को देकर, पिता की वृद्धता को धारण किया था। अपने पिता की आज्ञा पर पूर्व में ससंभ्रम सगरनन्दनों ने अंबुनिधि (समुद्र) को खोदा नहीं था? साहस के साथ पिता के आदेश को ग्रहणकर, जंगलों में रहना मेरे लिए कौन बड़ी बात है? तुम्हारे वल्लभ (पति) की बात का पालन करना सोचने पर तुम्हारे लिए और मेरे लिए परम धर्म है ॥ ५२० ॥

—यह लक्ष्मण (तो) बच्चा है। वीर (के समान) विचार (करने) के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानता।" (ऐसा) कहकर, हँसते हुए राम ने अनुजन्म (अनुज) को देखकर, अपने अन्तर के समस्त शान्तभाव को प्रकट करते हुए कहा—"तुम्हारे विक्रम को, तुम्हारे भुजबल को, तुम्हारी धनुर्विद्या को, तुम्हारी सुबुद्धि को, तुम्हारे पौरुष को मैं जानता हूँ। हे सौमित्री! मेरे प्रति सद्भक्ति से युक्त होकर तुम अब कितना (दुः) साहस करना चाहते हो? तुमने मुझे कैसा उपदेश दिया? जानबूझकर ऐसा चाहने (वन जाने का आदेश देने) वाली माता हैं। अनुकम्पा से (ऐसा आदेश) देकर, जाने के लिए कहनेवाले पिता हैं। समस्त पृथ्वी को ग्रहणकर, इस राज्य

यिल यॆल्ल जॆकॊनि यी राज्य पदमु । नलि नेलुवा डिक ना सहोदरुडु
बलुविडि नॆव्वरि पै नलगॊदीवु? । बल गर्वमुलु सूप बाडिये नीकु?
नर्मिलि दंड्रि वाक्यमु सेयुकंटॆ । धर्मंबु गलदॆ? यी तंड्रि वाक्यंबु
त्रोयुट कंटॆनु दुरितंबु गलदॆ ।वेयु विधंबुल वॆदकि चूचिननु? ५३०

जनकुनि पनुपवश्यमु नीकु नाकु । जननुलकुनु जेय सहज धर्मंबु;
गान नातनि पंपु गैकॊनि नेनु । कानल कॆगुट गा दनवलदु
परमपावनुलैन भानु वंशजुल । चरितंबु नीकु विचारिंप दगदॆ?
कावलसिन पनुल् गाकेल मानु?। दैव यत्नमु लवि दाटंग दरमॆ?"
यनि पॆक्कु भंगुल ननुनयंबॆसग । ननुजन्मु बोधिंचि "यनघात्म! नीवु
नाकु भक्तुडवय्यु ना पंपु नॆम्मि । गैकॊनि काविंपु गारवं बॆसग;
नी निष्ठुर क्रम मॆल्ल बोविडुवु । मे नरण्यमुलकु नेगॆद; वॆनुक
नॆल्ल भंगुल भक्ति नॆडपक कॊलिचि। तल्लिदंड्रुल मनस्तापंबु मान्पु"
मनिन लक्ष्मणुडप्पु डाटोप मुडिगि। तन मदि रघुरामु तलपॆल्ल नॆऱिगि
जडिसि यूऱक युंडे; साध्वि कौसल्य। गॊड्डुकु तॊंपुनकु मिक्कुट मैन वगल
५४०

पद पर अब ढंग से शासन करनेवाला मेरा सहोदर है। तुम अब किस पर अधिक रुष्ट होगे? बल का गर्व दिखाना तुम्हारे लिए (कहाँ) उचित है? स्नेह से पिता के वचन का पालन करने की अपेक्षा (अन्य कोई) धर्म है? हज़ार प्रकार ढूँढ़कर देखने पर भी पिता के वचन को ठुकराने से बढ़कर (कोई) दुरित (पाप) है? ॥ ५३० ॥

—"जनक (पिता) की आज्ञा का अवश्य पालन करना तुम्हारे लिए, मेरे लिए, माताओं के लिए सहज धर्म है। इसलिए उनकी आज्ञा को ग्रहणकर (आज्ञानुसार) मुझे काननों में जाने से मत रोको। परम पावन भानु वंशजों के चरित्र (के बारे में) तुम्हें विचार नहीं करना चाहिए? होनेवाले काम, हुए बिना कैसे रहेंगे? दैव-यत्न (नियति-विधान) का उल्लंघन करना किसके बस की बात है?" ऐसा अनेक भाँतियों से, अनुनय के साथ, अनुजन्म को समझाकर (राम यों बोले)—"हे अनघात्म! तुम मेरे भक्त हो। अतः मेरे आदेश को प्रेम से ग्रहणकर, गौरवभाव को प्रकट करते हुए, (उस आदेश का) आचरण करो। (तुम) अपने समस्त निष्ठुर क्रम (निष्ठुरता) को छोड़ दो। मैं अरण्यों को (में) जाऊँगा। (मेरे) बाद सब प्रकार से भक्तियुक्त हो, निरन्तर सेवा कर, माता-पिता के मनस्ताप (दुख) को दूर करो।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण आवेश को छोड़कर, अपने

बॊगुलुचु गळलचे बुन्नम चंद्रु । दॆगडु रामुनि मोमु दृष्टिंचि पलिकॆ:
“ना कुलभूषण! ना मुद्दुलय्य! ना कूर्मि कॊमरुंड! ननु गन्न तंड्रि!
क्रेपु बासिन यावु क्रिय निन्नु बासि । यी पदुनालुगें ड्लिदुंड जाल;
निनु गूडि चनु दॆंतु निष्ठुराटवुल”। कनि प्रलापिंचु नय्यंब नूरार्चि ५४४

श्रीरामुडु कौसल्य नोदार्चुट

यनुनयालापदीनास्युडै रामु । डनियॆ: “नो यम्म! यिट्लाडंग दगुनॆ?
पतियॆ प्राणपदंबु; पतियॆ चुट्टंबु: । पतियॆ दैवत मात्म बरिकिंप, नट्टि
पति बासि ना वॆंट बऱ्तॆंतु ननुट । मति दलंपग धर्ममा तल्लि! नीकु?
वसुधेशु नानति वसुमतीभार । मॆसग ना भरतुन किच्चुट दप्पॆ?
यवनीशु डिच्चद नन्न या वरमु । लवि रॆंडु गैकेयि यडुगुट दप्पॆ?
यनृतंबुनकु नोडि यकट! राजेंद्रु । डॊनरंग वरमु लिट्लॊसगुट दप्पॆ ५५०
मातंड्रि यानति महि निर्वहिंप । नी तॆऱंगुन बूनु टिदि नाकु दप्पॆ?
चेकॊनि पतिपंपु सॆल्लिपकुन्न । नी कैन दप्पदु निक्कुवं बरय

मन से रघुराम के समस्त विचारों को जानकर, (उनसे) डरकर चुप रहा। साध्वी कौसल्या पुत्र के साहस पर अत्यन्त दुख से, ॥ ५४० ॥

—व्यथित होते हुए, कलाओं से (युक्त होने में) पूर्णिमा के चन्द्र को परास्त करनेवाले राम के मुख को निहारकर बोलीं—“हे मेरे कुलभूषण! मेरे लाड़ले! मेरे प्रिय पुत्र! हे मेरे तात! बछड़े से बिछुड़े गाय की भाँति, तुमसे बिछुड़कर, ये चौदह वर्ष यहाँ नहीं रह सकती। तुम्हारे साथ निष्ठुर (भयंकर) अटवी (अरण्य) में आऊँगी।’ ऐसा कहते हुए, रोदन करनेवाली अंबा (माता) को सान्त्वना देकर, ॥ ५४४ ॥

श्रीराम का कौसल्या को सान्त्वना देना

—अनुनय के आलापों (वचनों) से दीनास्य (दीनमुख) बनकर राम बोले—‘हे माता! क्या ऐसा कहना उचित है? आत्मा (मन) में विचार कर देखने पर पति ही प्राणसम है, पति ही (सच्चा) नातेदार है, पति ही देवता है। ऐसे पति को छोड़कर, मेरे साथ आने के लिए कह रही हो, सोचो कि क्या यही तुम्हारा धर्म है? माता! वसुधेश की आनति से समस्त वसुमती (पृथ्वी) के भार को भरत को देने में क्या दोष है? अवनीश ने जो वर देने का वचन दिया था, उन वरों को कैकेयी के माँगने में दोष ही क्या है? अनृत (असत्य) से हार (डर) कर हाय! राजेन्द्र का इस प्रकार वर देना क्या दोषयुक्त है? ॥ ५५० ॥

बूनि कानल केनु बोयिन पिदप । दीनुडै पॊगुलु पार्थिवुनि नीवॆपुडु
ननुनयिंचुचु सपर्यल नॊनर्पुचुनु । मनसु नुम्मलिकंबु मान्पंग वलयु;
दुरित दूरुंडु बंधुर पुण्यरतुडु । भरतुंडु ना कन्न भक्ति निन्नरयु;
नीवु शोकिंपकु, मिक गलनैन । भाविंप दशरथपति यॊप्पडनकु
कैकेयि विडुवक कलिसि वर्तिंपु । नाकु सेममु गोरु ननु वीडुकॊलुपु;
मेनु नॆम्मदि तोड नेतॆंचु कॊऱकु । बूनि भूसुरुल वेल्पुल नर्थि गॊलुवु"
मनि पल्कि म्रॊक्किन ना रामचंद्रु। गनुगॊनि कौसल्य गौगिट जेर्चि
क्रम्मॆडु शोकाश्रुकणमु लंदंद । वॆम्मुचु रघुरामु वीपुन राल५६०
"नडविकि बोयॆदे यकट! नी"वनुचु।गॊडुकु मै निमिरि डग्गुत्तिक वॆट्टि
यॊक्किंत धृति बूनि युल्लंबु लोन । जॆक्किट गन्नीरु सेत बो दुडिचि
पावन जलमुल प्रक्षाळितास्य । यै वच्चि पुण्याह मपुडु सेयिंचि
सुरलुनु खेचरुल् श्रुतुलुनु यतुलु । दरुलुनु गिरुलुनु दांतियु शांति

—"हमारे पिता के आदेश को मानकर, इस प्रकार आचरण करने के लिए प्रस्तुत होने में क्या दोष है ? सच देखा जाए तो पति की आज्ञा का पालन करना तुम्हारे लिए भी अनिवार्य है। (इसलिए) मेरे जंगलों के जाने के बाद, दीन बन, व्याकुल होनेवाले पार्थिव (राजा) को सदा सान्त्वना देते हुए, सपर्याएँ (सेवाएँ) करते हुए, मन के ताप को तुम्हें दूर करना चाहिए। दुरित-दूर (पाप-रहित), बन्धुर-पुण्य-सहित भरत, मेरी अपेक्षा अधिक भक्ति से (तुम्हारी) सेवा करेगा। तुम शोक मत करो। अब स्वप्न में भी राजा दशरथ के संबंध में कटु विचार (मन में) मत लाओ। कैकेयी को न छोड़कर, मिलकर (स्नेहयुक्त होकर) व्यवहार करो। मेरे कुशल-क्षेम की इच्छा करो। मुझे बिदा करो। मेरे प्रशान्त (मन) से लौट आने के लिए, इच्छा से भूसुरों की (तथा) देवताओं की सेवा करो।" ऐसा कहकर प्रणाम करनेवाले उस रामचन्द्र को देखकर, कौसल्या ने (उन्हें) गले से लगा लिया। उमड़कर आनेवाले शोकाश्रुकण, दुख के कारण अधिक होते हुए, रघुराम की पीठ पर गिरने लगे ॥ ५६० ॥

—"हाय, तुम वन में जाओगे ?" कहते हुए, पुत्र के शरीर पर हाथ फेरते हुए, गद्गदस्वर-युक्त हुईं। (इसके पश्चात्) मन में थोड़ा धैर्य धारणकर, कपोलों पर (झरनेवाले) आँसुओं को हाथ से पोंछकर, पावन जल से मुख का प्रक्षालन करके आकर, तब पुण्याहवाचन कराया। (और कहा)—'सुर, खेचर, श्रुति, यति, दरि (गुहा), गिरि, दान्ति, शान्ति, नदी, निधि, समुद्र, आकाश, उदक, मारुत, उर्वी, अग्नि, दिक्पालक, दशदिशा, चन्द्र, अर्क (सूर्य), वाक्पति (ब्रह्मा) आदि सभी प्रेम से तुम्हारा स्वस्ति (कल्याण)

नदुलुनु निधुलु नर्णवमु लाकसमु । नुदकंबु मारुतं बुर्वियु नग्नि
दिक्पालकुलु दशदिशलु जंद्रार्क । वाक्पति प्रमुखुलु वलनॊप्प नीकु
स्वस्ति यॆल्लप्पु डॊसंगुदु” रनुचु । ब्रस्तुति सेसि या भामाललाम
पॊलुपॊंद वेल्पुल बूजिचि रामु । वलचेत नॊक रक्ष वलनॊप्प गट्टि
“यलिगि वृत्रासुरु ननि जंप बोवु । बलभेदि यगु वज्रपाणिकि दॊल्लि
ये मंगळमु लिच्चि रॆल्ल देवतलु । ना मंगळमुलु नी कगु रामचंद्र! ५७०

यरुदुगा दिवि नुन्न यमृतंबु देर । गरमॊप्प नरिगॆंडु गरुडुन कॆलमि
ने मंगळमु लिच्चॆ हितमति विनत । या मंगळमुलु नी कगु रामचंद्र!
आ तारकासुरुननि जंप बोवु । नातत बलशालि यैन षण्मुखुनि
के मंगळमु लिच्चॆ निपार गौरि । या मंगळमुलु नी कगु रामचंद्र!”
यनि रामु दीविंचि यक्कुन जेर्चु। कॊनि मस्तकंबु मूकॊ'नि निंडु मदिनी
अनिपिन दम तल्लि यडुगुल कॆऱगि। यनुजन्म सहितुडै यच्चोटु वॆडलि
यभिषेक विघ्न वृत्तांतंबु दॆलिसि । सभिकुलु राजुलु सचिवुलु सकल
पौरुलु शोकिंप बादचारमुन । जारुचामर सितच्छत्रमुल् मानि
यनुराग मंदुचु नंत राघवुडु । दन नगरिकि वच्चिच तग वॊप्प मॆऱसि
यंतः पुरंबुन करुगुचो सीत । यितुलु दानुनु नॆदु रेगुदॆंचि ५८०

करेंगे ।” ऐसा कहकर, प्रस्तुति कर, उस भामाललाम (नारीरत्न) ने ठीक ढंग से देवताओं की पूजा कर, राम के दाहिने हाथ में प्रेम से रक्षा (कंकण) बाँधा (और कहा—) “पूर्व में रुष्ट होकर, युद्ध में वृत्रासुर का वध करने के लिए जानेवाले बलभेदी वज्रपाणि (इन्द्र) को समस्त देवताओं ने जो मंगल दिये थे, हे रामचन्द्र ! वे सब तुम्हें (प्राप्त) होंगे ।। ५७० ।।
—“विरल ही दिवि (स्वर्ग) में स्थित अमृत लाने के लिए, शोभा से जानेवाले गरुड़ को हितमति वाली विनता ने जो मंगल दिए थे, हे रामचन्द्र ! वे सब तुम्हें (प्राप्त) होंगे ।” (ऐसा) कहकर राम को आशीर्वाद देकर, छाती से लगाकर, मस्तक को सूँघकर, पूर्ण हृदय से भेजा (जाने की अनुमति दी) तब अपनी माता के चरणों में झुककर, अनुजन्म (अनुज) सहित हो, उस स्थान से निकलकर, अभिषेक-विघ्न के वृत्तान्त (समाचार) को जानकर, सभासद, राजा (सामन्त), सचिव (मन्त्री) (और) सकल पौरजनों के दुखी होने पर, चारु-चामर (तथा) सित-छत्र छोड़कर, पैदल चलकर अनुरागयुक्त हो तब राघव अपनी नगरी (महल) में आए (और) शोभायुक्त हुए । (राम के) अन्त:पुर में प्रवेश करते समय, सीता (अन्य) स्त्रियों के साथ स्वयं अगवानी के लिए आईं ।। ५८० ।।

तनु जूचि मदि विन्नदनमु गैकॊन्न । घनुनि राघवु जूचि कडु जिन्नवोयि
"यिदि येमि? ना प्राण हृदयेश! नीदु। वदनांबुजमु गडु वाडु वाऱिनदि?
गट्टिगा बुष्ययोगमु दप्पकुंड । बट्टंबु गट्टॆने पार्थिवेश्वरुडु?
सोम मंडलमुतो जोडगु गॊडुगु । नी मोमुदम्मिकि नीडगा देल?
चामर द्वयमु पार्श्वंबुल नॆव्वि? । येमॊको ! मुनु पट्टपॆनुंगु रादु?
श्रीराम! नी मौळि सेसब्रालॆव्वि? पौरुलु निनु गॊल्चि बलिसि रारेल?
दुंदुभिपटहादि तूर्य घोषमुलु । वंदि मागधुल कैवारंबु लॆव्वि?
यभिषेक दिनमु ने डधिप! नी यंदु। शुभ राजचिह्नमुल् चूडंग लेवु
सौमित्रि मोमुन जाल दुल्लास; । मेमि चंदमॊ? नाकु नॆऱिंगिपु डिप्पु"
डनि पल्कु सीत मुग्धालपमुलकु । मनमुन गुंदि यम्मानिनि जूचि ५९०

श्रीरामुडु सीतकु तन यभिषेक भंग मॆऱिंगिचुट

"मुनुलकु नृपचिह्नमुल गॊडवेल?। विनु मदि यॆट्लन्न विवरिंतु नीकु;
गैक मा तंड्रि चे गरमॊप्प दॊल्लि । गै कॊन्न वरमुलु गांक्षिंचि नेडु
धरणि पालिप ना तम्मुनि भरतु । गर मॊप्प बट्टंबु गट्टॆद ननियॆ
कॊडुकु बट्टमु गट्टु कॊनि राज्य मेल। नडवुल नन्नुंड नडिगॆ गावुनु

--अपने को देखकर मन में उदास बने महान् राघव को देखकर (सीता) अत्यन्त उदास हुई (और) बोली—'यह क्या ? मेरे प्राणहृदयेश ! आपका वदनाम्बुज अति ही मुरझा गया है ? क्या पुष्ययोग (के लग्न) को न बीतने देकर, पार्थिवेश्वर ने अच्छी तरह पट्टाभिषेक किया ? सोममंडल से समता करनेवाला छत्र आपके मुखकमल को छाया क्यों नहीं दे रहा है ? (उभय) पार्श्वों में चामरद्वय कहाँ हैं ? ऐसा क्यों? भद्रगज (आप से) पहले क्यों नहीं आ रहा है ? हे श्रीराम ! आपके सिर पर मंत्राक्षत कहाँ ? आपकी सेवा में प्रवृत्त पुरजन अधिक संख्या में क्यों नहीं आ रहे हैं ? दुन्दुभि, पटह आदि के तूर्यनाद, वन्दी-मागधों (चारण-भाटों) के कैवार (स्तुतिपाठ) कहाँ ? आज (तो) अभिषेक का दिन है। हे अधिप ! आप में शुभ राजचिह्न दिखाई नहीं पड़ रहे हैं। सौमित्री के मुख पर, पता नहीं क्यों उल्लास नहीं है। अब मुझे बताइए (इन सबका कारण क्या है ?)' ऐसा कहनेवाली सीता के मुग्ध वचनों से मन में दुखी होकर, उस मानिनी को देखकर (कहा—) ।। ५९० ।।

श्रीराम का सीता को अभिषेक-भंग सुनाना

—"(भला) मुनियों को नृप (राज)-चिह्नों का झंझट क्यों ? सुनो, (अगर) पूछोगी कि वह कैसे ? (तो) तुम्हें बताता हूँ। कैकेयी ने हमारे

बनिवडि यडवुल बदुनालु गेंड्लु । जनकुशासन मेनु जरियिंप वलसें;
दलिल दंड्रुल माट तप्पक सेयु । बलिलदुलकुनु संपदलु गीर्तियुनु
नाकलोकादि नाना विधपुण्य । लोकंबु लरचेतिलो नंडु नंड्रु;
गावुन बति याज्ञ गानल सलिपि । ये वच्चु नंदाक निंदीवराक्षि!
गुरुवुल वगलचे गुंदक युंड । बरिचर्यं लोंनरिंचि भक्तितो गोंलुवु;
चित्तंबु लोन ना सेमंबु गोरु । मुत्तम शील वै युचित धर्ममुल६००
वनित! यम्मल म्रोल वर्तिपु" मनिन। जनकज या रामचंद्रुनि जूचि
कदलिन मति भीति गालिकि गदलु । कदळि चंदंबुन गडगड वणकि
बेंदरि डग्गुत्तिक वेंट्टि पेंन्वगल । जेंदरि यंतंतकु जेंलुवेदि पलिकें; ६०३

रामानुगमनमुनकु सीतालक्ष्मणुल निश्चयमु

"निदियें निश्चयमैन नेनु मी वेंट । वदलक पैनमै वत्तु नी क्षणमें
निनु बासि ये निल्वनेर, ब्राणमुलु । ननु बट्ट नेरवु ना प्राणनाथ!

पिताजी से पहले शोभा से जो वर प्राप्त किये थे, आज उन्हें माँग लिया है। कहा (माँगा) कि धरणि का पालन करने के लिए मेरे छोटे भाई का शोभा से राजतिलक करें। पुत्र के राजा बन, राज्य का शासन करते समय, कहा (माँगा) कि मैं जंगलों में रहूँ। इसलिए जनक (पिता) के शासन (आदेश) के अनुसार, जानबूझ कर मुझे चौदह वर्ष जंगलों में रहना है। कहते हैं कि माता-पिता के वचनों का पालन करनेवाले बलशालियों को संपत्तियाँ, कीर्ति, नाकलोक (स्वर्गलोक) आदि नानाविध पुण्यलोक हथेली में रहेंगे (सुलभ होंगे)। इसलिए हे इंदीवराक्षी ! कानन में पति (राजा) की आज्ञा का पालन कर आने तक, गुरुजनों के दु.खों से व्याकुल न होकर, (उनकी) परिचर्याएँ (सेवाएँ) कर, भक्ति से पूजा करती रहो। मन में मेरे कुशल की कामना करो। हे वनिता ! माताओं के समक्ष उत्तम शीलवाली होते हुए उचित धर्मों का, ॥ ६०० ॥

—आचरण (पालन) करो।" (ऐसा) कहने पर जनकजा (सीता) उस रामचन्द्र को देखकर, विकल बनी मति से, हवा से हिलनेवाली कदली के समान थर-थर काँपकर, भयभीत होकर, गद्गद स्वर में अत्यधिक दुःख से चंचल बनकर, क्षण-क्षण विवर्ण बनकर, (यों) बोली— ॥ ६०३ ॥

रामानुगमन के लिए सीता और लक्ष्मण का निश्चय

—"(अगर) यही निश्चय (सत्य) है तो, (तो) मैं आपका साथ न छोड़कर इसी क्षण प्रयाण कर आऊँगी। आपको छोड़कर मैं रह नहीं सकती। हे

यडवुल कॆनुन नर्थितो वत्तु । दोड्डुक पॊ'' म्मन दूलि राघवुडु
''कमलाक्षि! यडवुल गंदमूलमुलु । नमलुचु, ऱानेल नडुचुचु, नीवु
नारचीरल गट्टि नवयुचु वगल । गूरुचु, बॆरॆंडकुनु गालि कोर्चि
नेलल बवळिंचि, निच्चलु बर्ण । शालल लो नुंड जालुदे यकट!
कोमल देहवु, गोलवु, बेल; । वेमियु ने पाटु नॆरुगवु नीवु६१०
तलप नी वॆक्कड? दंतुलु बुलुलु । नॆलुगुलु दोडेळ्ळु निऱुलु गरुलु
बामुलु गामुलु बै ब्राकु नेऱ् । चीमलु गिरिगुहासीमल दरुल
झरुल निम्नोन्नताश्चर्यमार्गमुल । विरस कंटक लतावृक्ष मार्गमुल
दलप नक्कजमैन दारुणाटवुल । मॊलगुट यॆक्कड़! मेदिनीतनय!
कावुन गौसल्यकडनुंडु मीवु । सेविंपु मा साध्वि चित्तंबु वडसि
गृह देवतल गॊल्वु; कीर्तिपु नन्नु । नहरहंबुनु माम यड्डुगुल कॆऱगु
भरतुंडु निनु मातृभावन गॊलुचु । बरुसंबु लातनि बलुककु मबल!
यिदॆ पोयि पदु नालुगेंड्लु निंडिच । मुदमॊप्प जनुदॆंतु मुगुद! चिंतिलकु''

मेरे प्राणनाथ! प्राण मुझे पकड़कर नहीं रह सकेंगे। मैं भी सोत्साह जंगलों में आऊँगी। (मुझे) साथ ले चलिए।'' (ऐसा) कहने पर विचलित हो राघव (बोले—) ''हे कमलाक्षी! जंगलों में कंदमूल चबाते हुए, पथरीली भूमि पर चलते हुए, वल्कल वस्त्र धारणकर, कृशीभूत होते हुए, दुःखों से व्याकुल होते हुए, कड़ी धूप (और) वायु को सहकर, (कड़ी) भूमि पर शयन करते हुए, नित्य (सदा) पर्णशालाओं में हाय! (कहाँ) रह सकोगी? कोमल शरीरवाली हो, मुग्धा हो, अबोध हो, किसी प्रकार के कष्ट को तुम नहीं जानती हो, ॥ ६१० ॥

—सोचने पर तुम कहाँ (और उपरोक्त कष्ट कहाँ)? वानर, व्याघ्र, रीछ, भेड़िये, हिरन, हाथी, सर्प, पिशाच, ऊपर चढ़नेवाली लाल चीटियाँ (आदि से युक्त) गिरि-गुहा प्रान्तों में, दरियों में, झरियों में, निम्न-उन्नत (हो)-आश्चर्य-(प्रद) मार्गों में, विरस (विकट) कंटक-लता (युक्त) मार्गों में, सोचने (कल्पना करने) पर आश्चर्यप्रद भयंकर अटवियों में रहना कहाँ? (अर्थात् तुम नहीं रह सकतीं)। इसलिए हे मेदिनीतनये (भूपुत्री)! तुम कौसल्या के पास रह जाओ। उस साध्वी के चित्त के अनुकूल सेवा करती रहो। गृहदेवताओं की पूजा करो। मेरी कीर्ति करती (गाती) रहो। दिनरात ससुर के चरणस्पर्श करती रहो। मातृभावना से भरत तुम्हारी सेवा करेगा। हे अबला! उसे कभी परुष-वचन मत सुनाओ। हे मुग्धे! यह जाकर चौदह वर्ष पूरा करके, मोद के साथ लौट आऊँगा। चिन्ता मत करो।'' ऐसा कहने पर प्रणय-शोक से आर्त होकर, सीता ने रामचन्द्र को

मनवुड्ु ब्रणय शोकार्त यै रामु । गनुगॊनि सीत निक्कमु विन्नविंचॆ;
"पतुलु गाविंचिन भाग्यंबुलैन । सतुलनु रक्षिंचु सम्मदं बॆसग; ६२०

नापालि विभुडन्न ना दैवमन्न । ना पुण्यगति यन्न नरनाथ! नीवॆ;
घन तप स्वर्ग भोगमु लनेकंबु । लनुभविंचुट कंटॆ नति भक्ति तोड
निश्चलमनमार नी पदांबुजमु ।लच्चुगा गॊलुचुट यदि नाकु सुखमु;
नृपवर्य! नीवुन्न निष्ठुराटवुलु । नुपवनंबुलु नाकु नूहिंचि चूड,
जगतीश! विनु विष्णुसमुडैन नीवु। जगदेक विक्रमशालिवै परग,
गरमॊप्प नी रक्ष गलिगिन नन्नु । सुरराजु दलयॆत्ति चूडंग वॆऱचु
नारचीरलु गट्टि नडचि नी तोड । नारंग जनु दॆंच नट नीवु सूप
नमरंग जूचॆद नद्रुलु नदुलु । गमलाकरंबुलु गडुवेड्क तोड
बायक यी येंड्लु परगनूऱैन । वेयैन गानिम्मु विपिनंबुलंदु;
नन्नु दोड्कॊनि पॊम्मु नरनाथ! "यनिन।नन्नाति गनुगॊनि यतडिट्टुलनियॆ
६३०

"ननिशंबु नति दुरंतायासमैन । वनवास मेटिकि वनजाक्षि! नीकु?
नीयंदु जित्तंबु निलिपि निन्नुनिचि। पोयि काविंचॆद भूपालु पनुपु;

देखकर, अन्तरतर से (इस प्रकार) निवेदन किया— "पतियों का भाग्य ही सम्मोद के साथ सतियों की रक्षा करेगा ।। ६२० ।।

—हे नरनाथ ! मेरे लिए (आप ही) प्रभु हैं, मेरे दैव हैं, मेरी पुण्यगति (सबकुछ) आप ही हैं। घन-तप से अनेक स्वर्गभोग के उपभोग की अपेक्षा अतिभक्ति से, निश्चल मन से, हार्दिक रूप से आपके चरणाम्बुजों की सेवा करने में ही मुझे सुख है। हे नृपवर ! आप (साथ) रहेंगे (तो) निष्ठुर (भयंकर) अरण्य, सोचने पर मेरे लिए उपवन हो जाएँगे। हे जगदीश ! सुनिये, विष्णु समान आप जगदेक-विक्रमशाली होकर शोभित होते रहेंगे तो अधिक शोभा युक्त आपकी रक्षा से युक्त मेरी ओर सिर उठाकर देखने के लिए भी सुरराज (इन्द्र) (भी) डर जाएँगे। वल्कल पहनकर, (आपके साथ) पैदल चलकर, शोभा से (अरण्य में) आऊँगी। (आकर) वहाँ आपके दिखाने पर, शोभा से अद्रि (पर्वत), नदियाँ, कमलाकरों (सरोवरों) को बड़ी शौक से देखूँगी। ये (चौदह) वर्ष विपिनों में, सौ होने दीजिए या हज़ार (कोई परवाह नहीं), हे नरनाथ ! मुझे साथ ले चलिए।" (ऐसा) कहने पर, उस स्त्री को देखकर उन्होंने (राम ने) इस प्रकार कहा— ।। ६३० ।।

वनमेड? नी वेड? वनित निन्नेड । गॊनिपोदु दुर्गमुल् गुटिल मार्गमुल?
नाराम वन केळि कर्हंबु गानि । घोराटवुलयंदु ग्रुम्मरदगुन?
पॆल्लु क्रूर वृकाळि पृथु पुंडरीक । भल्लूक सिंहादि बहुमृगावळुलु
घूककाकानेक घोर हुंकार । काकोल झिल्लिका कर्कश ध्वनुलु
मानक वर्तिंचु मऱि भयं बॊंदव । नी नीड गनि यल्कु; नीवंदु वलदु''
नावुड विनि सीत नरनाथु जूचि । ''नी वुंडगा नाकु निर्भयं बधिप!
वनभूमि दिरुगुदु वरुनितो गूड । ननि नाकु जॆप्पिनारा वेदविदुलु
कान नीविधमुन गांतारमुनकु । भानु कुलेश! नी पादमुल् गॊलिचि ६४०
वच्चॆद; नन्नु रा वलदनवलदु; । नच्चिन मदिलोनि ना भक्ति जूडु''
मनि पादमुल बट्टि यडलंग वगचि। यनुमतिंपमि जूचि यति दीन यगुचु
''नॆऱिगि ने जेसितिने मुन्नु तप्पु? मऱचि चेसिति नॆनि मन्निपु नन्नु;
बटु शिला कंटक प्रचुर देशमुल । नट निन्नु गॊलिचिरा नलतयु लेदु

''हे वनजाक्षी ! अनिश (सदा) अति दुरन्त आयास युक्त वनवास तुम्हें क्यों ? तुम पर चित्त रखकर, (तुमको यहीं) छोड़कर, जाकर, भूपाल की आज्ञा का पालन करूँगा । वन कहाँ और तुम कहाँ ? हे वनिता ! तुम्हें कहाँ ले जाऊँ (उन) दुर्गम (और) कुटिल मार्गों में ? आराम-वन-केली के अनर्ह घोर-अरण्यों में तुम कहाँ घूम सकोगी ? अनेक क्रूर वृक-समूह, विराट पुंडरीक, भल्लूक, सिंह आदि बहु मृग-समूह, घूक (उल्लू), काक (के) अनेक घोर हुँकार (ध्वनियाँ), काकोल, झिल्लिकाओं की कर्कश ध्वनियाँ, (वहाँ) निरन्तर होती रहती हैं और तुम भीत हो ज़ाओगी । तुम (वहाँ) अपनी छाया से ही डर जाओगी । तुम को वहाँ नहीं आना चाहिए ।'' ऐसा कहने पर सीता नरनाथ को देखकर (यों) बोली—''तुम (साथ) रहोगे तो हे अधिप ! मेरे लिए निर्भय है । उन वेदविदों ने कहा था कि मैं वर (पति) के साथ वनभूमियों में विचरण करूँगी । इसलिए इस प्रकार हे भानुकुलेश ! कान्तार को, तुम्हारे चरणों की सेवा करते हुए, ॥ ६४० ॥

—आऊँगी । मुझसे मत आने के लिए मत कहिए (मुझे मत रोकिये ।) मन पसन्द मेरी भक्ति पर ध्यान दीजिए ।'' (ऐसा) कहकर, चरण पकड़कर अतिव्याकुल होने पर भी, अनुमति न देने पर, अति दीन होकर (सीता) बोली—'जानबूझकर पहले मैंने कभी अपराध किया था ? (नहीं) भूलकर (कहीं) अपराध किया हो तो मुझे क्षमा कर दीजिए । पटु-शिला-कंटक-प्रचुर-प्रदेशों में, आपकी सेवा करते हुए आने से थकावट नहीं होगी । करुणा (प्रेम) से आपके द्वारा दिए जानेवाले कन्द मूल निश्चय ही सदा मेरे

करुण मै नी विच्चु कंदमूलमुलु । नरुदार नमृतमै यलरु नाकेंपुडु
भाविंचि चूड ना प्राणबंधुडवु । नीवे कावुन वत्तु नी तोड ब्रीति;
जनकुनि जिंतिप; जननि जिंतिप । जनुनिष्टुलगु बंधुजनुल जिंतिप;
जननाथ! सहधर्मचारिणि गाग । जनकुनिचे नग्नि साक्षि गैकोंटि
जनलोकनुतुडवु; सत्यसंधुडवु । ननु डिंचि नीकु गानल केग दगुने?
येन्नि दुःखमुलु नी वेन्निति वडवि ।नन्नियु सौख्यंबु लगुनु नी दयनु; ६५०

ई वाड ली मेड ली बंधुबृंद । मी वस्तु संपद ली जीवनंबु
नीवु लेकुन्नचो निस्सार मरय । गावुन निचट नेकरणि वेगिंतु?
सावित्रि यनु पुण्य सति दनपतिनि। सेविंचि पोयिन चेलुवुन नेनु
नी वेंट जनुदेंतु नी नीड वोलें । ने वेंट साध्विकि निदिय धर्मंबु;
निनु बासि यिच्चट निमिष मे नोर्व। वनमुल निनु गूडि वर्तिप नेर्तु;
बदुनालुगेंड्लेल प्राणेश! निन्नु । गदिसि वेयेंड्लैन गापुंदु नंदु;
सतुलकु बतुलकु जनु लेंच दगिन । मतमु ब्रतिष्ठिपु मरि वेयुनेल?
यी वरण्यमुलकु निट नन्नु विडिचि। पोवुट निजमैन बोवु ब्राणमुलु

लिए अमृत (सम) होंगे। सोच-विचारकर देखने पर तुम ही मेरे प्राण बन्धु हो। अतः प्रेम से तुम्हारे साथ आऊँगी। जनक (पिता) की चिन्ता (स्मरण) नहीं करूँगी, जननी की चिन्ता नहीं करूँगी। इष्ट बन्धु जनों की चिन्ता नहीं करूँगी। हे जननाथ! (महाराजा) जनक (के हाथों) से, अग्नि को साक्षी बनाकर, (आपने) मुझे सहधर्म-चारिणी के रूप में ग्रहण किया था। (आप) जन लोक-नुत हैं, सत्यसन्ध (सत्यनिष्ठ) हैं। मुझे छोड़कर काननों में जाना (क्या) आपको उचित है? आपने जितने दुःख (कष्ट) गिनाये हैं, वे सब आपकी दया से सुख ही बनेंगे ॥ ६५० ॥

—ये वीथियाँ, ये महल, यह बन्धु समूह, ये वस्तु सम्पत्तियाँ, ये जीवन (ये सब) आपके न होने से निस्सार ही होंगे। अतः मैं यहाँ किस प्रकार (जीवन) बिताऊँगी? जिस प्रकार सावित्री नामक पुण्यसती ने अपने पति की सेवा की थी, उसी प्रकार मैं आपके साथ, छाया के समान आऊँगी। साध्वी (स्त्री) के लिए यही धर्म है। आपसे बिछुड़कर एक निमिष भी मैं सहन नहीं कर सकती। जंगलों में आपके साथ मैं रह सकूँगी। हे प्राणेश! चौदह वर्ष ही क्या, आपको निकट प्राप्तकर, हज़ार वर्ष भी रह सकूँगी। सतियों और पतियों के लिए ऐसा आदर्श स्थापित कीजिए जिसे (समस्त) जन मान लें। अब हज़ार (बातें) क्यों? अगर यह सच है कि आप मुझे यहीं छोड़ अरण्यों में जायेंगे तो प्राण भी (शरीर छोड़) रुष्ट हो

नलुकमैगादेनि नग्निचे नैन । जलमुचे नैन विषंबुचे नैन;
नेचिन वगलतो निट जत्तु नेनु । ना चावु सूचि पो ननु डिंचिपोकु'' ६६०
मनि विलापिंचुचु नडुगुल मीद । जनकज वडियुन्न चंदंबु सूचि
करुण तो नल्लन गरपल्लवमुल । धरणीशतनयु डा तनुमध्य नॆत्ति ६६२

सीतालक्ष्मणुल राककु श्रीरामुडु सम्मतिंचुट

"यलिवेणि! निनु बासि यावनंबुलनु। नलुवंद विहरिंप नाकिच्च लेदु
निनु दोडुकॊनि पोदु; नीवु ना वेंट। जनुदेर गुशलंबु सकलंबु नाकु;
निम्मुल नी चित्त मॆरुगंग दलचि। यिम्माट लाडिति; नेतेंतु गाक''
यनुचु ना रघुरामु डतिकृपामूर्ति । जनकज राककु सम्मतुंडगुचु
वलयु दानंबुलु वरुस गाविपु । नॆलत! नी'' वनवुडु नॆम्मनंबलर
गांचन रत्नादिकंबु लैनट्टि । यंचित दानंबु लम्महि सुतयु
वरुस ब्रियंबगुवारल कॆल्ल । गरमर्थि नंदंद काविंचॆ; नंत
ना वेळ लक्ष्मणुं डन्न निश्चयमु।भाविंचि तन पाणिपद्मुल् मॊगिचि ६७०

निकल जायेंगे नहीं तो अग्नि से या जल से या विष से (ही सही) (प्राण) निकल जाएँगे। बढ़े हुए दुःख के कारण मैं यहाँ मर जाऊँगी। मेरी-मौत को देखकर जाइये। (पर) मुझे छोड़ मत जाइये।'' ॥ ६६० ॥

(ऐसा) कहकर विलाप करती हुई, चरणों पर जनकजा (सीता) के पड़े रहने के विधान को देखकर, करुणा (प्रेम) से धीरे से, कर पल्लवों से, धरणीश-तनय (राजकुमार) ने उस तनुमध्या (स्त्री) को उठाकर कहा— ॥ ६६२ ॥

सीता (और) लक्ष्मण के अनुगमन के लिए श्रीराम का राज़ी होना

—''हे सुन्दर वेणीवाली ! तुमसे बिछुड़कर उन वनों में, सुन्दरता के साथ विहार-करने की मुझे इच्छा नहीं है। तुम्हें साथ ले जाऊँगा। तुम्हारा मेरे साथ आना मेरे लिए समस्त (रूप से) कुशलप्रद है। प्रेम से तुम्हारे चित्त को जानना चाहकर (मैंने) ये बातें कही हैं। (अवश्य ही) मेरे साथ आ जाओ।' (ऐसा) कहते हुए अति कृपामूर्ति वे रघुराम जनकजा (सीता) के आगमन के लिए स्वीकृति देकर (यों बोले)—'हे सुन्दरी ! आवश्यक दानों को तुम क्रम से कर लो।'' ऐसा कहने पर मन में प्रसन्न होकर, उस महीसुता (सीता) ने अपने प्रिय जनों को क्रम से अति प्रेम से कांचन (स्वर्ण), रत्न आदि का समंचित दान जहाँ-तहाँ (वहीं) कर दिया। तब (उसके बाद) उस समय लक्ष्मण ने अग्रज के निश्चय का विचारकर, अपने पाणि-पद्मों को जोड़कर (कहा—) ॥ ६७० ॥

“यिनकुलाधिप! यिंक निट्टि दयेनि। दन किट वनियेमि? धनुवु मॊपॆट्टि
मुनुपुगा नडवि किम्मुल मिम्मु गॊलिच। चनुदॆंतु”ननि वेड सौमित्रि जूचि
धरणीशुडुनु ब्रेम दळुकॊत्तनंत। जेर रम्मनि रामचंद्रुडिट्लनियॆ;
“ना तोड नीवु गानकु वच्चॆदेनि। ना तोड निनु बासि नाना विधमुल
मिडुकु कौसल्यासुमित्रल नॆव्व। रुडुकार्चि पोषितु रुडुगनि भक्ति?
मन मिद्दऱमु जन्न मन तंड्रि भक्ति। ननुदिनंबुनु नॆव्व ररयुवारिचट?
मॊदलन सवति पै म्रॊग्गु गैकेयि। मदिलोन नी राज्यमद मिक नॊदवु
बॆर्मि सूपुचु दुःख पॆट्टु ना कैक। धर्मंबु दल पोसि तगवेल नडुपु?
नटु गान ने वच्चु नंदाक नीवु। निट नुंड दगु” नन्न नॆंतयु गनलि
“यप्पुडु नन्नु रा नानति यिच्चि। यिप्पुडु वलदनुटेमि कारणमु? ६८०
कौसल्य कृप रक्ष गाक ना रक्ष। या सुमित्रकु नेटिका तेज मरय
बदि वेवुरकु नुन्कि पट्टु नी वॆलुगु। निदि येल चिंतिप निट रामचंद्र!

“हे इनकुल-अधिप (सूर्यवंश के राजा)! अब अगर यह ऐसा ही है (आपका जंगलों में जाना अवश्यभावी है) तो मेरे लिए यहाँ क्या काम है? धनुष चढ़ाकर, (आपके) आगे-आगे (चलते हुए), प्रेम से आपकी सेवा करते हुए, जंगलों में आऊँगा।” इस प्रकार विनय करने पर सौमित्र को देखकर धरणीश (राजा राम) ने प्रेम के अधिक होने पर, तब (उन्हें) (अपने पास) बुलाया। रामचन्द्र ने इस प्रकार कहा, “यदि तुम मेरे साथ काननों में आओगे तो, मेरे साथ तुमसे भी बिछुड़कर, नानाविधियों से टिमटिमाने वाले (किसी भी प्रकार दिन बितानेवाले) कौसल्या (और) सुमित्रा के दुख को कम कर, अविरत भक्ति से (उनका) पोषण कौन करेगा? यदि हम दोनों ही चले जाएँ तो हमारे पिता की, अनुदिन (प्रतिदिन) भक्ति के साथ कौन देखभाल करेगा? पहले से ही कैकेयी (अपने) सौतों पर अधिकार जमाती थी। (अब) मन में यह राज्यमद उत्पन्न होगा। (अब) प्रेम दिखाते हुए वह कैकेयी (उन्हें) दुखी बनाएगी। धर्म का ख्यालकर, वह न्याय का निर्वाह क्यों करेगी? अतः मेरे (लौट) आने तक तुम्हारा यहाँ रहना उचित है।” (ऐसा) कहने पर अधिक तप्त (दुखी) होकर, (लक्ष्मण बोले—) “तब मुझे आने के लिए अनुमति देकर, अब इनकार करने का क्या कारण है? ॥ ६८० ॥

—उस सुमित्रा के लिए कौसल्या की कृपा ही रक्षा (रक्षक) है। मेरी रक्षा क्या है? (अनावश्यक, व्यर्थ है।) खूब देखने पर वह तेज, तुम्हारा प्रकाश दस हज़ार (व्यक्तियों) के लिए भी निवास-स्थान है। हे रामचन्द्र! अब इसकी चिन्ता क्यों? भरत तुम्हारी ओर से भय खाकर, स्थिरता से

भरतुंडु नी दॆस भयमुन जेसि । तिरमुगा गौसल्य दॆस भक्ति जेयु;
गरमु सुमित्रकु गाविंचु नट्टुल । निरवॊंद; नट्टुगान नॆनिंदु निलुव;
बाणबाणासनपाणिनै वॆनुक । दूणीरमुलु बूनि दुर्गमाटवुल
बॊंदुगा मिम्मु निम्मुल गॊल्व वलयु। गंद मूलादुलु गडक देवलयु;
नट दृणपर्णादुलरसि मीरुंड । नुटजमु सॆज्जयु नॊनरिंप वलयु
बदुनालुगेंड्लुनु बगलुनु रेयि । निदुर वोवक सेवनॆऱि सेय वलयु
वच्चॆद ने” नन्न वसुधेशु डतनि । निच्चमै गैकॊनि यिपुदळ्कॊत्त
“वलयु बंधुल नॆल्ल वरुस वीड्कॊनुमु ।वलनॊप्पगा मुन्नु वरुण देवुंडु ६९०
मन तंड्रि किच्चिन महितचापमुनु । घनशर श्रेणुलुगल कवदॊनलु
गर मभेद्यंबगु कवचंबु बसिडि । परुजुल जॆन्नॊंदु पट्टु कृपाणमुलु
गॊनिरम्मु” ना नेगि कॊमरार बंधु।जनुल वीड्कॊनि शस्त्रशालकु नरिगि
यायुधंबुलु गॊंचु नरुगुदॆंचुटयु । नायतात्मुडु रामु डनुजन्मु जूचि
“तम्मुड! विनुमॆल्ल धनमुल नेनु । नॆम्मि निच्चॆद; धरणीसुरवरुल
महित पुरस्थुल मन किपुलैन । सहजभृत्युल नर्थिजनुल राविपु

कौसल्या की भक्ति करेगा । उसी प्रकार सफलतापूर्वक सुमित्रा की भक्ति करेगा । अतः मैं यहाँ नहीं ठहरूँगा (रुकूँगा नहीं) । बाण (और) बाणासन (धनुष) को पाणि में (धरकर), (आपके) पीछे दुर्गम अटवियों में, ढंग से, प्रेम से (मुझे) आपकी सेवा करनी चाहिए । सप्रयत्न कंदमूल फल आदि (मुझे) लाने चाहिए । वहाँ तृण-पर्ण आदि की (अच्छी तरह) परखकर, आपके रहने के लिए कुटी और शय्या तैयार करनी चाहिए । चौदह वर्ष रात और दिन बिना सोए उचित रूप से (आपकी) सेवा करनी चाहिए । मैं (भी) आऊँगा ।” ऐसा कहने पर वसुधेश (राजा राम) ने उसकी इच्छा को स्वीकार किया (और) प्रेम भाव के प्रकाशित होने पर बोले—“आवश्यक बन्धुओं (संबंधी जनों) को बिदाकर दो । अच्छे ढंग से पूर्व में वरुणदेव ने, ।। ६९० ।।

—हमारे पिता को दिए महितचाप, घन (महान्) शर श्रेणियों से युक्त तूणीर, अति अभेद्य कवच, सोने के मूठों के शोभित पट्टु कृपाण लेकर आओ ।” (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण), जाकर समुचित रूप से बन्धुजनों (रिश्तेदारों) को बिदा देकर, शस्त्रशाला को जाकर, आयुध लेकर (लौट) आए । (आने पर) सिद्ध आत्मावाले राम ने अनुजन्म (अनुज) को देखकर (कहा—) “हे अनुज ! सुनो, मैं समस्त धन सप्रेम दूंगा । धरणीसुरवरों (ब्राह्मणों) को, महित पुरस्थों (नागरिकों) को, हमारे प्रिय सहज भृत्यों को, अर्थिजनों (याचकों) को बुलाओ । इस समय अर्ह (योग्य),

मावेळ नहुँडु नखिलज्ञु डैन । या वसिष्ठुनि पुत्त्रुडयिन सुयज्ञु मॊदलैन पुत्त्रुल मुदमु चित्तमुन । बॊदलंग नतिभक्ति बूजिप वलयु मऱियु दक्किन वारि मन्नित मॆल्ल। तॆऱगुल नक्कऱ दीर नर्थुलकु" ननवुडु लक्ष्मणुं 'डौगाक! यनुचु । मुनिपुत्त्रु निटिकि मुदमुतो नरिगि७००

रामु वाक्यमु जॆप्पि रम्मन्न नतडु। नेमंबु लन्नियु निष्ठतो दीर्चि सौमित्त्रि सहितुडै चनुदेर गांचि । रामुडु विनयाभिरामुडै तानु नॆलमि सीततो नॆदुरुगा वच्चि । यलघु तेजोमूर्ति यैन मुनींद्रु गॊनिवच्चि गद्दिय गॊमरार नुनिचि। विनुतार्घ्यपादमुल् वेड्कतो निच्चि हारकुंडल वलयांगद कटक । चारु कोटीरादि सकल भूषलनु मातुलुं डॊसगिन मदगजेंद्रंबु । ख्यात शत्त्रुंजयाख्यमु मॊदलैन करिसहस्त्रंबुनु गमनीयवस्त्र । सुरुचिर दिव्य वस्तुवुलॆल्ल मऱियु बहु भूषणमु लिच्चि पयि पयि तोन। महनीय रत्नमुल् मानुगा निच्चॆ; बसिडि येर्पड बुच्चि पदिकोट्ु लॊसगि। यसमान वस्तुवुलन्नियु नॊसगॆ निच्चिन गैकॊनि हृदयंबु लोन । नच्चॆरु वडरंग नधिक मोदमुन७१०

अखिलज्ञ उस वसिष्ठ के पुत्र सुयज्ञ आदि (उनके) पुत्रों को समुद चित्त से, अधिक भक्ति से पूजा करनी चाहिए। फिर शेष लोगों का आदर करेंगे जिससे याचकों की आवश्यकताएँ सभी तरह से पूरी हो जाएँ।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण यह कहकर कि 'ऐसा ही हो' मुनि पुत्र के घर समुद गए ॥ ७०० ॥

राम का वाक्य बताकर उन्हें बुलाया। तब वे सभी नियमों को निष्ठा से करके, सौमित्र सहित आये। आये हुए उन्हें देखकर राम विनयाभिराम होकर स्वयं प्रेम से सीता के साथ अगवानी करने आये। अलघु-तेजोमूर्ति मुनीन्द्र को लिवा लाकर गद्दी पर शोभा से रखा (बिठाया)। विनुत (नुति करने योग्य, श्रेष्ठ) अर्घ्य पाद्य सानन्द देकर, (उन्हें) हार, कुण्डल, वलय (कंठमाला), अंगद (कंगन), कटक (कड़ा), चारु कोटीर (किरीट) आदि सकल आभूषण तथा मातुल के दिये गये मद-गजेन्द्र जो ख्यात है (और) शत्रुंजयाख्य (शत्रुंजय नामवाला) है, आदि करि सहस्र, कमनीय वस्त्र (तथा) समस्त सुरुचिर वस्तुएँ तथा बहुभूषण दिये। (देकर) उसके बाद महनीय रत्नों को सादर दिया। ढंग से दस करोड़ स्वर्ण (मुद्राएँ) दीं। (देकर) समस्त असमान वस्तुएँ दीं। देने पर (उन्हें) ग्रहणकर, हृदय में अधिक आश्चर्य के उमड़ने पर, अधिक मोद से, ॥ ७१० ॥

ना राजमिथुनंबु नतडु दीविंचॆ। नारंग रघुरामु डप्पुडु मरियु
नॆडपक भंडार मॆल्ल दॆप्पिचि। तॊडरि दीनुलकु नर्थुलकु बेदलकु
जॆलिमि नगस्त्य कौशिकु लनुवारि। किल रत्न रासु लनेकंबु लॊसगि
मॊगि वसिष्ठादि सन्मुनि जनंबुलकु। दगु तपस्वुलकु नर्थमु लॊप्प निच्चि
वंदिमागधुलकु वरदान शक्तु। लॆंदुनु बॊगडंग निलुसूर लिच्चि
पेदसादलकुनु बृथ्वि देवतल। कादट बंधुमित्राश्रितावळिकि
बन्नुगा निब्भंगि बहुदान ततुलु। सन्नुत मति निच्चि सौमित्रि जूचि
"नीवुनु दानंबु नॆम्मि गाविंपु"। नावुडु ना राजनंदनुं डळरि
घटजन्मु गौशिकु गार्ग्यु शांडिल्यु। नटकु रप्पिचि पॆक्कर्थंबु लिच्चि
वीरुवारन कॆल्ल विधमुलवारु। नारंग नॆव्वरे मडिगिन निच्चॆ ७२०
धरणीशु नानति दनबुद्धि यलर। गरमॊप्प नति महा कल्याणि यैन
या यरुंधतिकि सुयज्ञुनि सतिकि। नायतंबगु भक्ति नप्पुडु सीत
तन भूषणमु लिच्चि तन यर्थ मिच्चि। तनयिंट गल वस्तुततुलॆल्ल निच्चॆ;
(नप्पु डरुंधति "यकट! यिक्ष्वाकु। लिप्पाटु पडुचुंड निट्टु जूड दगुनॆ?

—उन्होंने उस राजमिथुन (राजदंपतियों) को आसीसा। शोभायुक्त हो रघुराम ने तब अविलंब समस्त भंडार को मंगवाया (और) क्रम से दीन, याचक, निर्धनों को (तथा) सप्रेम अगस्त्य तथा कौशिक नामक व्यक्तियों को अनेक रत्नराशियाँ दीं। उसके बाद वसिष्ठ आदि सन्मुनि जनों को, योग्य तपस्वियों को शोभा से अर्थ देकर, वंदिमागध (जनों) को अत्यधिक दान दिए ताकि वे सदा-सर्वदा वर दान शक्तियों की स्तुति करते रहें। ग़रीब जनों को, पृथ्वी देवताओं (ब्राह्मणों) को (और) अनन्तर बन्धु, मित्र, आश्रित (जन) समूह को समुचित प्रकार से इस प्रकार बहुदानततियों को सन्नुतमति से देकर, सौमित्र को देखकर कहा—'तुम भी सप्रेम दान करो।' (ऐसा) कहने पर वह राजनन्दन (लक्ष्मण) प्रसन्न हुए। घटजन्म (अगस्त्य) कौशिक, गार्ग्य, शांडिल्य को वहाँ बुलाकर, अनेक अर्थ दिये। ये और वे न कहकर सब प्रकार के लोगों को, शोभा से, जिसने जो माँगा, वह उन्हें दिया॥ ७२०॥

धरणीश (राम) के आदेश से, अपनी बुद्धि के प्रसन्न होने पर, बड़ी शोभा से, अति-महा-कल्याणी उस अरुंधती को, (और) सुयज्ञ की सती को सिद्ध भक्ति के साथ तब सीता ने अपने आभूषण दिये। अपना अर्थ (संपत्ति) देकर, अपने घर का समस्त वस्तु-समुदाय दे दिया। (तब अरुन्धती ने वसिष्ठ से पूछा—'हाय! इक्ष्वाकु वंशजों को इस तरह कष्ट उठाते देखते रहना उचित है?' तब उस महामौनी ने अपनी बुद्धि से देर तक सोचकर

यनि वसिष्ठु नडुग नम्महामौनि । तन बुद्धि नेंतयु दलपोसि चूचि
"ये रूपमुन बोव ; दिदि दैव योग ।मूर कुंडुमु चूचु चुंडुद"मनियें ;) ७२६

श्रीरामुडु त्रिजटुनकु गोदानमु चेयुट

ना वेळ द्रिजटाख्यु डनु विप्रु डडरि । जीवन स्थितिकिनै चेनु दुन्नुचुनु
घोरंपु लेमि चे गुंदुट जेसि । पेरास दत्सति बिड्डल गोंचु
नति संभ्रमंबुन नच्चोटि करिगि । तति गोंन बनि सेयु तद्भर्त जूचि
"येल यी नागेलु हृदयंबु चिवुर । नेल यी गुद्दलि यिट बाऱ वैचि ७३०
रम्मु चेप्पेंद नेडु रामचंद्रुंडु । सम्मदंबुन नर्थिजनुलकु नेल्ल
द्रव्यतंडंबुलु दयतोड धनमु । नेंव्व रेमडिगिन निच्चु चुन्नाडु
नी कुटुंबमु चेंप्पि नी पेरु चेंप्पि । काकुत्स्थपति चेत गामितार्थंबु
वे वेग चनि नीवु वेडुकों" म्मनिन । ना विप्रु डूहल नंदंद निगुड
जनु देंचि या रामचंद्रु नीक्षिचि । तनरंग दीविंचि ता निट्टुलनियें
"बेदवाडनु ; सुतुल् पेक्कंड्रु गलरु । लेदु द्रव्यंबुनु लेशमात्रमुनु ;

देखा और कहा, 'यह दैवयोग है । किसी भी रूप से नहीं टलेगा । चुप रहो । (चुपचाप) देखते रहेंगे ।') ॥ ७२६ ॥

श्रीराम का त्रिजट को दान देना

उस समय त्रिजट नामक विप्र, जीवन-स्थिति (जीत्रिका) के लिए खेत जोतते हुए, घोर-अभाव (दारिद्र्य) से दुखी होते हुए था । अधिक आशा लिए उसकी पत्नी संतान को (साथ) लिए, अतिसंभ्रम से वहाँ गई । अधिक श्रम से काम करनेवाले पति को देखकर (यों बोली—) "क्यों इस हल को हृदय के फटने तक चलाते हैं ? यह कुदाल क्यों ? (इन्हें) यहाँ फेंककर, ॥ ४३० ॥

—आइए, (एक बात) कहती हूँ । आज रामचन्द्र सम्मोद के साथ समस्त अर्थिजनों (याचकों) को द्रव्यतण्ड (द्रव्यसमूह) (और) दया के साथ (सदय हो) जो व्यक्ति जो माँगे वह धन दे रहा है । अपने कुटुम्ब के बारें में कहकर (तथा) अपना नाम कहकर काकुत्स्थपति (राम) से कामित अर्थ (अभीप्सित इच्छा) की आप वेवेग (शीघ्रता से) जाकर याचना कर लीजिए ।" (ऐसा) कहने पर वह विप्र (अपनी) कल्पनाओं के इधर-उधर बढ़ने पर (अत्यधिक सुख की कल्पना कर) आया (और) उस रामचन्द्र को देखकर, श्रेष्ठ विधि से आसीसकर, स्वयं यों बोला—'मैं निर्धन हूँ, कई सुत हैं, लेशमात्र भी द्रव्य नहीं है । हे नरनाथ ! तुम्हें मेरी रक्षा

ननु नीवु रक्षिप नरनाथ! वलयु"। ननिन नारघुरामु डा विप्रु जूचि
"यावुल मंद लय्या! युन्न विपुडु । नीवु नीचे मुष्टि निज शक्ति मॆऱसि
यॆंदाक नेसिति वीलोनि पसुल । मंद नीकॆ" यटन्न मदि संतसिल्लि
यऱचि दोवति मॊलनंट बिगिंचि । कुऱुचैन सिग मुडिगॊनि यॊडु गऱचि
७४०

नरमुलु ब्राणमुल् नरि नंट बट्टि । करमुन बाषाण कलितुडै यपुडु
श्रीरमाधवु नॆंचि श्रीरामु नॆंचि । बिर बिर दन मुष्टि बॆट्टुगा द्रिप्पि
युरमुन जंदॆंबु लुरूंतलूग । सरयुवु दाक विच्चलविडि नेसि
'ब्रदुकु जीवम' ब्राह्मणुं डट्टि । मॊदवुलु गॊन्न रामुडु चोद्यमंदि
"यनघ! नी सत्वमे नरयुट किट्लु। पनिचिति" ननि चाल ब्रर्थिचि यलरि
मऱि वेयु गोवुल महित वस्त्रमुल । नऱलेक यिच्चॆद नडुगुमी" यनिन
जन्नंबुनकु नीवु चालिन यर्थ । मॆन्न नॆक्कुडुगानु नि" म्मंचु नडुग
दनियंग निच्चिन दद्दयु नलरि। तन पत्नि तो गूड धनमुलु गॊनुचु
संतोषमुन नट सनॆ द्रिजटुंडु । नंतट रघुरामु डनुराग मॆसग

करनी चाहिए।' (ऐसा) कहने पर उस रघुराम ने उस विप्र को देखकर (कहा—) 'हे आर्य ! अब गोसमूह (बचा) है। तुम अपने हाथ की मुट्ठी की निजशक्ति को प्रकाशित (दिखा) कर, जहाँ तक (पत्थर) डाल (फेंक) सकोगे, वहाँ तक का गो समूह तुम्हारा है।' (ऐसा) कहने पर मन में प्रसन्न हो, चीखकर, धोती को कमर में कसकर, छोटे से बालों की चुटिया बाँधकर, ओंठ दबाकर, ।। ७४० ।।

—नसों (और) प्राणों को कसकर, कर में पाषाण (पत्थर) से शोभित हो, तब श्रीरमाधव (विष्णु) का स्मरणकर, श्रीराम का स्मरणकर, अपनी मुट्ठी को दृढ़ता से, शीघ्रता से घुमाकर, छाती पर जनेऊ के हिलते रहने पर, विश्रृंखलता से सरयू (नदी) तक (पत्थर) फेंका। 'चलो, जी गए' कहते हुए ब्राह्मण ने उस क्षेत्र की सभी गाएँ ले लीं। राम आश्चर्य चकित हो (बोले—) 'हे अनघ ! तुम्हारे सत्त्व को जानने के लिए मैंने ऐसा आदेश दिया।' (ऐसा) कहकर (उनकी) प्रार्थना की और प्रसन्न हो (कहा—) 'और एक हज़ार गायें (तथा) महित वस्त्र दूंगा, बिना संकोच के माँगो।' (ऐसा) कहने पर ब्राह्मण ने (यों) माँगा—'एक यज्ञ के लिए पर्याप्त अर्थ (धन), सोचकर, दे दो।' (ऐसा) माँगने पर (उन्हें) तृप्त कर दिया। ऐसा देने पर अधिक हर्षित हो, अपनी पत्नी के साथ, (समस्त) धन लेकर, प्रसन्नता से तब त्रिजट चला गया। तब रघुराम अनुराग के अधिक होने

गृतकृत्युडै वच्चि गृह देवतलकु । जतुरुडै मुनुलकु सद्भक्ति म्रॊक्कॆ
नी रीति रघुरामु डॆल्ल वस्तुवुलु। गोरिन वारिकि गोरिन ट्लॊसगि
७५१

श्रीरामुडु सीता लक्ष्मणुल तो दशरथु दर्शिप नेगुट

मुनु जनकुनि यज्ञमुन वरुणुंडु । तन कॊसंगिन तनु त्राण कोदंड
घन तर तूणीर खड्गायुधमुलु । दन कुलगुरुनिंट दाचुट जेसि
यनुजुचे दॆप्पिंचि यवि धरियिंचि । जनकजा लक्ष्मण सहितुडै वॆडलि
राजु नॊद्दकु नेग राज चिह्नंबु । लोज गानक पौरु लुल्लंबु लॆरिय
राज वीथुल नुंडि रच्चल नुंडि । राजितोन्नत सौधराजि पै नुंडि
पुट्टिन शोकाग्नि बॊगुलुचु गॊंद । ऱिट्टि दुर्दशकर्हुंडे रामु'' डनुचु,
"नॆंदु रामुडु वोयॆ निक नंदऱमु । नंदॆ पोदमु गाक! ''यनि कॊंदऱनुचु
गॊंद "ऱी राजन्य कुंजरु वॆनुक । मंदिरंबुलु डिंचि मनमॆल्ल जनग
नेपारि पॆंपॆल्ल नॆडलि पाडैन । यौ पट्टणमु गैक येलुगा'' कनुचु ७६०

बरिकिंचि कॊंदरु प्रज"ली पुरंबु । पॊरिबॊरि नॆलुगुलु बुलुलु सिंगमुलु
नक्कलु वऱळुलु नलि बिशाचमुलु। बॆक्कु भूतंबुलु ब्रेत संघमुलु

पर, कृतकृत्य हो (सब कामों से निपटकर) आकर, गृह देवताओं को (तथा) चतुर हो सद्भक्ति से मुनियों को प्रणाम किया। इस प्रकार रघुराम ने जैसा चाहनेवालों को वैसी समस्त वस्तुएँ दीं ।॥ ७५१ ॥

श्रीराम का सीता-लक्ष्मण के साथ दशरथ के दर्शन के लिए जाना

पूर्व में जनक के यज्ञ में वरुण के अपने को दिए तनुत्राण (कवच), कोदंड, घनतर तूणीर, खड्ग, आयुधों को, (राम ने) अपने कुलगुरु के घर में रखा था। (उन्हें) अनुज के द्वारा मँगवाकर, उन्हें धारणकर, जनकजा (और) लक्ष्मण के साथ निकल पड़े। वे राजा के पास जा रहे थे। (उनके पास) राजचिह्नों को, क्रम से, न देखकर पुरजनों के हृदय तप्त हुए। राजवीथियों में, चौपालों में, (वि) राजित-उन्नत-सौध-राजि (समूह) में स्थित (पुरजन) (मन में) उत्पन्न शोकाग्नि से व्याकुल होते हुए इस प्रकार कहने लगे—'इस प्रकार की (दुः) दशा के (क्या) राम योग्य हैं? 'जहाँ राम जाएँगे, अब हम सब वहीं जाएँगे। इस 'राजन्य-कुंजर के पीछे, महलों को छोड़ हम सबके जाने पर, अपनी समस्त शोभा से निरस्त होकर, श्मशान बने इस नगर पर कैकेयी को शासनकर लेने दो ।॥ ७६० ॥

बायनि यडवि यै, पति रामु डुन्न। या यरण्य मे पुरंबगु" नंचु बलुक
ग्रंदय्ये बहुविधाक्रंदनरवमु । लंदंद यवि विंचु नधिक धैर्यमुन
जगतीशु नगरिकि जनुदेंचि मऱियु। दग सुमंत्रुनि गांचि धरणीश सुतुडु
"विनिपिंपु माराक विभुनितो" ननिन। जनि शोकमुन जाल संतापमंदु
राजेंद्रु गनि "देव! राम लक्ष्मणुलु । बूजित चरितयौ भूतनूभव यु
वच्चिना" रनि चेप्प वडि मूर्छ वोयि। चेच्चेर देलिवोंदि चेंदिन वगल
नल्लन गद्दिय ना सीनुडगुचु । नुल्लंबुलो धैर्य मोक्किंत निलिपि
"वत्तुरु गाक ना वनित लंदऱुनु । नित्तऱि रघुरामु नेलमितो जूड"
७७०

ननुचु डग्गुत्तिक नल्लन बलुक । विनि या सुमंत्रुंडु विनयंबु तोड
नंतः पुरंबुन करिगि या राजु । नितुल मुन्नूट येबंड्र देच्चि
मरि पोयि या रामु महनीय तेजु। देऱगोप्प दोड्कोनि तेर नीक्षिंचि
यालिंगनमु सेय नर्थितो लेचि । या लोन रालेक यवशुडै पडिये

देख (सोच-विचार) कर कुछ लोग (यों बोले)—'यह पुर क्रम से रीछ, बाघ, सिंह, लोमड़ी, बड़े श्रृगाल, पिशाच, कई भूत, प्रेतसंघ (समाज) (आदि) के (कारण) निरन्तर अटवि बनेगा। पति राम जहाँ हैं, वह अरण्य ही पुर (नगर) होगा।' ऐसा (लोगों के) कहते समय बहुविध-आक्रन्दन-रव मुखरित हुआ। यहाँ-वहाँ (जगह-जगह) उन्हें (उपरोक्त वाक्यों को) सुनते हुए, अधिक धैर्य के साथ जगतीश (राजा दशरथ) की नगरी (महल) में आकर, और उचित रूप से सुमन्त्र को देखकर, धरणीश सुत (राम) बोले—'हमारे आगमन की बात विभु को सुनाओ।' ऐसा कहने पर, (सुमन्त्र) जाकर शोक के कारण अधिक संतप्त राजेन्द्र को देख (बोले)—'हे देव! राम लक्ष्मण (और) पूजित चरित्र (पूज्यशील) वाली भूतनूभव (सीता) भी आए हैं।' ऐसा कहने पर, झट मूर्च्छित होकर, झट होश में आकर, दुख को प्राप्त हो, धीरे से गद्दी पर आसीन होते हुए, चित्त में थोड़ा धैर्य धारणकर, गद्गद् स्वर से, धीरे से (यों) बोले—'इस अवसर पर रघुराम को प्रेम से देखने के लिए मेरी सभी स्त्रियाँ आ जाएँ।' ॥ ७७० ॥

(यह) सुनकर वह सुमन्त्र, सविनय, अन्तःपुर में जाकर, उस राजा (दशरथ) की साढ़े तीन सौ स्त्रियों को (लिवा) लाकर, फिर जाकर, उस महनीय तेज राम को, समुचित ढंग से लाए। लाने पर, (उन्हें) देखकर, आलिंगन करने के लिए, अभिलाषा के साथ उठकर, उतने में न आ सक, अवश हो (राजा) गिर पड़े। तब वह श्रीराम उस राजा को पकड़कर अधिक

नंत ना श्रीरामु डा राजु बट्टि । यॆंतयु ब्रेम चे नॆंसगंग दिगिचि
तॊंडल पै निडि कॊंनि दु:खिप गॊंत । वडिकि जैतन्यंबु वच्चिच कूर्चुंडि
तनु जूचुचुन्न या तंड्रि नीक्षिचि । जननुतुंडगु रामचंद्रुंडु वलिकॆ:
"ननघात्म! नीदु सत्यमु निल्प नेनु। वनभूमुलकु बोवुवाड नौ टॆंड्रिगि
यी साध्वि जनक महीपाल तनय। यी सुमित्रापुत्त्रु डिद्दरु मिगुल
वलदनि ये नॆंत वारिंप विनक । नलरि तामुनु बैनमै युन्न वारु
७८०
गान वीरलु नेनु गानल केग । नानति" म्मनुटयु नानरेश्वरुंडु
"मदि दूलि कैकेयि माटकु निन्नु । नदयत बॊम्मंटि नकट! कानलकु;
जेकॊंनि ना माट सेयंग नेल । नी किट्लु नंदन! नीवु नीयंत
जॆन्नॊंद राज्यंबु सेयुदु गाक" । यन्न ना माटकु हस्तमुल् मॊगिचि
"तलपोय गुरुडवु, धारुणीपतिवि। यॆलमि मै रक्षिप निष्टबंधुडवु;
अटुगान नी वाक्य मर्थि तो जेय । निट नाकु नानति यिच्चि नन्ननुपु
सत्यसंधुंडवै जनलोकनाथ ! । नित्यंबुगा नेलु निखिल लोकमुलु"
ननिन "दीर्घायुवु नत्यंत शुभमु । विनुत यशंबुनु विमल विक्रममु

प्रेम के उमड़ने पर, राजा को जाँघों पर (गोद में) रखकर, दुखी हुए। थोड़ी देर में चैतन्य युक्त हो, (राजा) (उठ) बैठे। अपने को (एकटक) देखनेवाले पिता को देखकर, जननुत रामचन्द्र (यों) बोले—'हे अनघात्म ! तुम्हारे सत्य (वचन) की रक्षा के लिए, मैं वनभूमियों में जाने के लिए तैयार हुआ। यह जानकर, यह साध्वी जनक-महीपाल-तनया (सीता), (और) यह सुमित्रा-पुत्र (लक्ष्मण) ये दोनों, मेरे अधिक मना करने पर भी, न मानकर, स्वयं भी, आनन्द के साथ, यात्रा के लिए तैयार हुए हैं ॥ ७८० ॥

—अत: इनके और मेरे काननों में जाने के लिए आनति (अनुमति) दीजिए।' (ऐसा) कहने पर, उस नरेश्वर (राजा) ने कहा—'मति भ्रष्ठ हो, कैकेयी की बात पर, तुम्हें निर्दयता से हाय ! कानन जाने को कहा। हे नन्दन! सप्रयत्न तुम्हें मेरी बात का पालन क्यों करना चाहिए ? तुम स्वयं शोभा के साथ राज्य करो।' (ऐसा) कहने पर, उस बात पर हाथ जोड़, (राम) बोले—'विचारने पर तुम गुरु हो, धारुणीपति हो। प्रेम से रक्षा करनेवाले इष्ट-बन्धु हो। अत: तुम्हारे वाक्य का हृदय से (पालन) करने के लिए अब मुझे आनति देकर भेज दो। हे जनलोक-नाथ ! सत्य सन्ध (सत्यनिष्ठ) होकर, सदा निखिल लोकों पर शासन करो।' (ऐसा)

नकळंक धर्मंबु नमरंग बोंदु । मोंक बाधयुनु लेक युंडु मो पुत्त्र!
यारंग नन्नुनु नलयु मी तल्लि । नी रात्रि यूरार्चि येल्लि पों'म्मनिन
७९०

"नेडेमि? येल्लेमि? निलुवंग दगदु । नेडें पोयेंद; नन्नु नेंम्मि वीड्कोंलुपु,
नरनाथ! नी यीगि ना तम्मुडैन । भरतुडी वसुमति बालिप निम्मु
वगवु नी किटमीद वल" दन्न रामु। तेंगुवकु दशरथाधिपुडु शोंकिंचि
"नी वंटी सत्पुत्त्रु निष्ठुराटवुल । केवेंट बोंम्मंदु? नेंट्लु नोराडु?
गैकेयि मायल गडु मोसमायें । गा, कटकट!" यनि करुण दानेड्व
नंत:पुरांगन लंदरु नडल । नंत गौसल्ययु ना सुमित्त्रयुनु
वंतल वालुचु वगल दूलुचुनु । वितगा विभु जेरि विलपिंचु चुंड,
नपुडु सुमंत्त्रु डय्यतिवल येड्पु । नृपु शोकमुनु जूचि निट्टूर्पु वुच्चि
घनतरशोक संकलितुडै कैक । गनुगोंनि पलिकें नुत्कट कोपुडगुचु
"नी यत्नमुन गदा नृपुनकु माकु । नी यवस्थलु वच्चें; नेमन गलदु?
८००

कहने पर (राजा ने कहा)—'हे पुत्र ! दीर्घायु, अत्यन्त शुभ, विनुत यश, विमल विक्रम, अकलंक धर्म को उचित रूप से प्राप्त करो । बिना एक कष्ट के रहो । मुझे और व्यथित होनेवाली तुम्हारी माता को आज रात आश्वस्त कर, कल जाओ ।' (ऐसा) कहने पर, ॥ ७९० ॥

—'क्या आज ? क्या कल ? रुकना उचित नहीं है । आज ही जाऊँगा । मुझे प्रेम के साथ बिदा कर दो । हे नरनाथ ! तुम्हारे त्याग के कारण मेरे अनुज भरत को इस वसुमति (पृथ्वी) पर शासन करने दीजिए । अब आगे दुखी न होना ।' (ऐसा) कहने पर राम के साहस पर दशरथाधिप (राजा दशरथ) दुखी हुए (और) बोले—'तुम जैसे सत्पुत्र को निष्ठुर (भयंकर) अटवियों में जाने के लिए कैसे कहूँ ? मुँह कैसे आयेगा ? हाय, कैकेयी की माया के कारण बड़ा धोखा हुआ ।' यह कहकर करुणा से स्वयं रोने लगे । तब अन्त:पुर की समस्त स्त्रियाँ व्याकुल हुईं । तब कौसल्या और सुमित्रा सन्ताप से तप्त होती हुईं, दु:ख से दुखी होती हुईं, विभु के निकट जा विलाप करने लगीं । तब सुमन्त्र उन स्त्रियों के विलाप और नृप के शोक को देख, लंबी साँस छोड़, घनतर (अधिक) शोक-संकलित होकर, उत्कट क्रोध से कैकेयी को देख (यों) बोला—'तुम्हारे यत्न के कारण ही तो नृप को (और) हमें ये दुरवस्थाएँ आईं । तुम्हें क्या कहूँ ? ॥ ८०० ॥

पतिहितं बेमियु बरिकिंप वेंट्टि । सतिवैति? वकट! राक्षसिवि नी वरय!
नी तल्लि यट्लने नीवु प्राणेश । घातिनि; वदि येट्टिगति यन्न विनुमु
सकल भाषलु नीदु जनकु डेरुंगु । नोक नाडु मी तल्लियुनु दानु शय्य
नोऽपुगा शयनिंचि योक कीटवार्त। लेऽगि यातडु नव्व नेंद संशयिंचि
''यिदि येल नव्विति? वेरिंगिपु'' मनिन।''नदि सेप्पिननु ब्राणहानि यौ निप्पु''
डनवुडु ''नी प्राण हानि के वेऽव; । विनुपिंपु'' मनिन विवेकिचुनतनि
नदियें तप्पनि वेंळ्ळनडचें मीतल्लि। यदिगान ना ज़ंत कात्मजवैन
नीकेल कलुगु मानित पति हितमु। ओ कैक! यनिन ना युविद येंतयुनु
दलवांचि कोंडोक तडवु सिंतिंचि। पलिकें ना दशरथपति जूचि यपुडु
''मुन्नु मी कुलमुन मुख्युडै सगरु । डुन्नत कीर्ति यै युर्वि नेलुचुनु ८१०

नसमंजसुंडनु नग्रनंदनुनि । गोंसरक पुरिवेंळ्ळ गोंट्टगा लेदें?
रामचंद्रुनि नी वरण्य भूमुलकु । दामसिपक पंपु; तप्पेमि दीन?

'पति के हित के बारे में तनिक भी नहीं विचारती हो। तुम कैसी सती हो? हाय, सोचें तो तुम राक्षसी हो। अपनी माता के समान ही तुम प्राणेश-घातिनी (हत्यारिन) हो। (पूछोगी कि) वह हालत कैसी है (तो) सुनो। तुम्हारे पिता सभी भाषाओं को जानते थे। एक दिन तुम्हारी माता और वे शय्या पर सुन्दरता से लेटे हुए थे। (तब) एक कीड़े की बातचीत जानकर वे हँस पड़े। मन में शंकालु हो, (तुम्हारी माता ने) पूछा—'यह क्यों हँस पड़े? (कारण) बतलाओ।' (ऐसा) कहने पर, (वे बोले)—'वह बताऊँ तो अब मेरी प्राणहानि होगी।' ऐसा कहने पर (उसने) कहा—'तुम्हारी प्राणहानि से मैं नहीं डरती। सुनाओ।' सोच-विचार करनेवाले उसे, उसी दोष के कारण, तुम्हारी माता ने निर्वासित कर दिया। यह बात ऐसी है। उस धूर्त (स्त्री) की आत्मजा हो तुम। हे कैकेयी! तुम्हें अपने पति के हित का विचार क्यों होगा?' (ऐसा) कहने पर वह स्त्री (कैकेयी) सिर झुकाकर, थोड़ी देर चिन्ताकर, उस दशरथपति को देख तब (यों) बोली—'पूर्व में आपके वंश के प्रधान सगर ने उन्नत कीर्ति युक्त हो, पृथ्वी पर शासन करते हुए, ।। ८१० ।।

—असमंजस नामक (अपने) अग्रनन्दन (ज्येष्ठपुत्र) को, संकोच न कर, नगर से नहीं भगाया था (निर्वासित नहीं किया था)? तुम विलंब किए बिना रामचन्द्र को अरण्यभूमियों में भेज दो। इसमें दोष ही क्या है?'

नन विनि दशरथुं डधिक शोकाब्धि। मुनिगि प्रत्युत्तरंबुन कोपकुन्न
नपुडु सिद्धार्थकुंडनु मंत्रिवरुडु । कपटात्मुरालैन कैक किट्लनियें
"नसमंजसुंडु दर्पातिरेकमुन । नैंसग बट्टणमुलो नैंल्ल बालुरनु
सरिपट्टि कट्टि या सरयुवुलोन । दगवु सिंतिचि या तनयु बोनडचें
सगरुनितो जैंप्प जनहितंबुनकु । दगवु सिंतिचि या तनयु बोनडचें;
नी रामुनं दौंक्क यैंग्गैन गलदे । चारुवर्तनगण्य सौजन्युडितडु"
नावुडु "सत्यंबु ना तोड बलिकें । गावुन दंड्रिवाक्यमु सेसि सुकृति
यगु गाक! रघुरामु" डनवुडु गैक। तैंगुवकु दशरथाधिपुडु शोकिंचि ८२०

चाल संतापिंचि जडि गौन्न वगल। दूलुचु ना सुमंत्रुनि जूचि पलिकें
"धनमुल मणुल गोधनमुल बंधु । जनमुल नवरोधजनमुल हितुल
विजय चिह्नंबुल विलसिल्लुचुन्न । गजमुल रथमुल घनतुरंगमुल
निजमुगा वेटकु नेर्चु धीवरुल । ब्रजल मंत्रुल रामभद्रुनि वैंनुक
वैंडलिपु; मी रित्त वीडु गैकेयि । कौडुकु बट्टमु गट्टु कौनि यैलुगाक! "
यनि यिट्लु दशरथुं डाडुवाक्यमुलु। विनि कैक गोपिंचि विभु दूर बलिकें,

(ऐसा) कहने पर, सुनकर, दशरथ अधिक शोक समुद्र में मग्न हो, प्रत्युत्तर नहीं दे सके। तब सिद्धार्थक नामक मन्त्रिवर, कपटात्मा कैकेयी से (यों) बोले—'असमंजस दर्प के अतिरेक से विजृम्भित होकर, पट्टण के सभी बालकों को बाँधकर, उस सरयू (नदी) में क्रम से डालता रहा। (तो) समस्त नागरिक सगर से बोले (शिकायत की)। जनहित के लिए, धर्म का विचार कर (सगर ने) उस तनय को निर्वासित कर दिया। इस राम में (क्या) एक भी दोष है? यह (तो) चारु वर्तन (शीलवाले), गण्य-सौजन्य (वाले) हैं।' ऐसा कहने पर कैकेयी बोली—'(वे) मुझसे सत्य बोले। अतः पिता के वाक्य का पालन करके रघुराम सुकृति (पुण्य-शाली) बने।' ऐसा कहने पर, कैकेयी के साहस पर दशरथाधिप दुखी होकर, ॥ ८२० ॥

—बहुत संतप्त हो, झड़ी लगी हुई (अनवरत की) व्यथाओं से लड़खड़ाते हुए, उस सुमन्त्र को देखकर बोले—'धन, मणियाँ, गोधन, बन्धुजन, अवरोध (अन्तःपुर)-जन, हितू, विजयचिह्नों से विलसित गज, रथ, घन (श्रेष्ठ) तुरंग (घोड़े), सचमुच आखेट में निपुण धीवर (बुद्धिमान), प्रजा (और) मंत्रियों को उस रामभद्र के पीछे भेजो। इस शून्य देश (नगर) पर कैकेयी का पुत्र राजतिलक कर शासन कर लेगा।' ऐसा कहनेवाले दशरथ

"राजपुंगव! नीवु रामचंद्रुनकु । राजिल्लु नी सर्वराज्य संपदलु
निच्चि पाडै युन्न यी पुरंबेल । यिच्चॆदु भरतुन? की पल्कु लेल?
सौमित्रियुनु दानु जनक नंदनयु । रामुडु नारचीरलु ब्रीति गट्टि
येनु जूचुचुनुंड नॆल्ल भोगमुलु । मानि दुर्गमुल ग्रुम्मर बोवकुन्न ८३०
बॊंसगदु नी यीगि; बॊंकु नी पलुकु। वसुधेश! नी यिच्चु वरमु ले नॊल्ल
दप्पिति वी" वन्न, दशरथाधीशु । डप्पुडु मूर्छिलिल यवनि पै द्रॆळ्ळॆ
धरणि पै नट्लुन्न तंड्रिनि जूचि । परिताप मंदुचु बलिकॆं राघवुडु
"एलम्म! कैकेयि! यिम्महाराजु । दूलि पो बलुमारु दूल नाडॆदवु?
गुरुडुनु राजुनु गूरिमि तंड्रि । परम दैवंबिट्टी पति नन्नु बनुप
विषमैन मिंगुदु, विपुलाग्नि नैन । विषधि नैननु जॊत्तु वेड्कतो नेनु
वनमुल मुनुलतो वर्तिपुमन्न । ननुमतिचुट नाकु नदि यॆंत पॆद्द"
यन विनि दशरथु डावाक्यमुलकु। मनमुन गड्डूलि मरि कैक जूचि
"विनु मेनु राज्यंबु विडिचि यीरामु। वॆंनुक बोयॆदनु; नी विभवंबु तोड
भरतु नयोध्यकु बट्टंबु गट्टि । धरणि येलुदु गाक! तगवेल?" यनग
८४०

के वाक्य सुनकर, कैकेयी रुष्ट होकर, विभु को कोसने लगी—'हे राजपुंगव! तुम रामचन्द्र को अपने विराजमान समस्त राज्य-सम्पदाएँ देकर, उजड़ा हुआ यह नगर भरत को क्यों दोगे ? ये बातें क्यों ? सौमित्र, स्वयं जनक-नन्दिनी (सीता) (और) राम वल्कल वसन प्रेम से पहनकर, मेरे देखते हुए (मेरी आँखों के सामने), समस्त भोगों को छोड़कर, अगर दुर्गों (वनों) में घूमने नहीं जाएँगे, ॥ ८३० ॥

—तो तुम्हारे त्याग का अर्थ नहीं होगा। तुम्हारे वचन झूठे होंगे। हे वसुधेश! तुम्हारे दिए वर मुझे नहीं चाहिये। तुमने वचन-भंग किया है।' (ऐसा) कहने पर तब दशरथाधीश मूर्छित हो, अवनि (भूमि) पर गिर पड़े। धरणी पर ऐसे (पड़े) हुए पिता को देख, परितप्त होते हुए राघव बोले—'क्यों माता! कैकेयी! बार-बार इस महाराज की क्यों निन्दा करती हो (जिससे वे) लड़खड़ा जाएँ। गुरु, राजा, प्रिय पिता, परम देव हो ऐसे पति मुझे आज्ञा दें तो (मैं) विष भी निगल जाऊँगा, विपुल अग्नि में हो या विषधि (समुद्र) में प्रेम से घुस जाऊँगा। (तब) वनों में (जा), मुनियों के साथ रह आने की यह आज्ञा (मेरे लिए) कौन बड़ी बात है?' ऐसा कहना सुनकर, दशरथ उन वाक्यों के लिए मन में अत्यधिक व्यथित हो फिर कैकेयी को देख बोले—'सुनो, मैं राज्य को छोड़ राम के पीछे

ना माटलकु रामु डधिपुतो ननियें। "भूमीश! निर्जनभूमि यै परगु
नव्वनंबुनु नाकु नर्हमै युंडु। नेव्वरु ना तोड नेटि केतेर ?
नार चीरलु देंच्चि ना किडु; वानि। नारंग धरियिंचि यडवुल लोन
पदुनालुगेंड्लुनु बरग नी याज्ञ। वदलक वर्तिंचु वाडनु नेनु; ८४४

सीतारामुलु नारचीरलु धरिंचुट

दे नार चीरलु देवि! ना" कनिन। नानाति निर्लज्जयै तानें यपुडु
मुदमंदि मदिलोन मोंगमोट लेक। मदि चलिंपक सभा मध्यंबु नंदु
नार चीरलु देंच्चि "नरनाथ पुत्र!। गारवंबुन नीवु गट्टुकों" म्मनुचु
बेरेंलुंगुन बलक ब्रियमुतो रामु। डा राजसभयुनु ना राजु नडल
ना तल्लिचे नुन्न यवि पुच्चु कोंनुचु। भातिगा मुन्नुन्न पटमुलु विडिचि
यारंग धरियिंचें; नट लक्ष्मणुंडु। वारक या रामु वलेंनें धरिंचें८५०
सीतकु ना नार चीरलु रेंडु। चेतिकिच्चिन गोंनि चित्तंबुलोन
गलगि रामुनि जूचि "कांतारवासु।लेंलमिमै नी चीर लेंट्लु कट्टुदुरों

जाऊँगा। अपने वैभव के साथ भरत को अयोध्या का राजा बनाकर धरणी पर शासन कर लो। झगड़ा क्यों ?' (ऐसा) कहने पर ॥ ८४० ॥

—उन बातों पर राम अधिप (राजा) से बोले--'भूमीश ! निर्जन भूमि हो विलसित वह वन मेरे लिए योग्य रहेगा। कोई मेरे साथ क्यों आये ? वल्कल, वसन लाकर मुझे दीजिए। उन्हें शोभा से धारणकर, जंगलों में चौदह वर्ष समुचित रूप से, तुम्हारी आज्ञा का, निष्ठा से मैं पालन करूँगा।॥ ८४४ ॥

सीता-राम का वल्कल पहनना

हे देवी (कैकेयी)! मेरे लिए वल्कल लाओ।' कहने पर वह स्त्री (कैकेयी) निर्लज्ज हो, मुदित हो, मन में (किसी) संकोच के बिना, मन में विचलित न होकर, सभा मध्य में तब स्वयं वल्कल लाकर उच्चस्वर से बोली—'हे नरनाथ-पुत्र (राजकुमार) ! गौरव के साथ तुम पहन लो।' उस राज-सभा के (और) राजा के विकल होने पर, राम ने प्रेम से, उस माता के हाथ से उन्हें ग्रहण कर, ढंग से पूर्व के वस्त्रों को छोड़ शोभा से (वल्कल) पहन लिये। तब लक्ष्मण ने भी राम के समान ही (उन्हें) पहन लिया ॥ ८५० ॥

सीता को वल्कल की दो साड़ियाँ देने पर, चित्त में व्याकुल होकर, राम कोदेख (सीता यों बोली)—'कान्तार-वासी (वनवासी) मुनि प्रेम से इन

मुनु" लंचु नोंक्कटि मूपु पै वैचि । तनरार नोंक्कटि तनकेल दाल्चि
कट्टनेरक युन्न गनि रामु डतिव । यट्टि चंदमु गांचि या पुव्वुबोणि
घन नितंबमुन बोंकमु मीऱ गट्टि । गनि राजसतुलु राघवुनि वीक्षिंचि
"नारचीरलु गट्टि नरनाथपुत्र! । यी राजवर पुत्रि नी सीत निट्लु
दारुणगति मीऱि तापसि बोलें । घोराटविकि नीवु गोंनि पोव वलदु
मा माट मन्निंचि मा योद्द नुनिचि । सौमित्रियुनु नीवु जनुडु कानलकु"
८५८

वसिष्ठुडु कैक तो गठिनोक्तुलाडुट

ननग वसिष्ठुंडु नलुकतो गैक । गनुगोंनि "कुलनाशकारिणि वीवु
भूपालु गडु मोस पुच्चिचति कान;। नी पाप मरयंग नेंदुनु गलदें? ८६०
राजपत्नुल योद्द रघुरामुनाज्ञ । नी जनकज नुंडनि; य्मट्लु गाक
वल दन नेल? यी वैदेहि सनग । गलय बौरुल तोड गाननंबुलकु
नेमुनु जनुवार; मिंतिये कादु । रामचंद्रुनि गोल्चि रमणीय लील
भरत शत्रुघ्नुलु बलसि वच्चेंदरु । परिकिंप नीव यी पाडूर नुंडु

वस्त्रों को (न जाने) किस प्रकार पहनते होंगे ?' ऐसा कहती हुई उन्होंने एक (साड़ी) को कंधे पर डाल लिया और एक को शोभा से हाथ में पकड़ लिया । (वल्कल वस्त्र) पहनना न जानकर खड़ी उस स्त्री (सीता) के विधान को राम ने देखा । (देखकर) उस पुष्पमनोज्ञा नारी के घन नितम्बों पर (वल्कल) श्रेष्ठ रूप से पहना दिया । तब राजपत्नियाँ राघव को देख बोलीं—'वल्कल वसन पहनाकर हे नरनाथ-पुत्र ! राजश्रेष्ठ की पुत्री इस सीता को इस प्रकार निष्ठुरता से तपस्विनी के समान भयंकर वनों में तुम मत ले जाओ । हमारी बात मानकर हमारे पास रख छोड़ो (और) सौमित्र और तुम जंगलों में जाओ ।' ।। ८५८ ।।

वसिष्ठ का कैकेयी को खरी-खोटी सुनाना

(ऐसा राजपत्नियों के) कहने पर, वसिष्ठ ने क्रोध से कैकेयी को देखकर (कहा)—'तुम कुल के नाश के कारण हो । (तुम ने) राजा को अधिक धोखा दिया है । अतः (ऐसा) तुम्हारा (किया) पाप विचारकर देखने पर भी और कहीं है ? (नहीं है ।) ।। ८६० ।।

रघुराम की आज्ञा के अनुसार इस जनकजा को राजपत्नियों के पास रहने दो । ऐसा न कर, अस्वीकार क्यों करती हो ? अगर यह वैदेही (जंगलों में) जायेगी तो सभी पुरजनों के साथ हम भी काननों में जायेंगे । यही नहीं, रामचन्द्र की सेवा करते हुए, शोभा से, भरत (और) शत्रुघ्न (भी)

"पोलंग रामुंडु पुण्य शीलुंडु । लील नुन्नदि यूरु, लेनिदि पाडु'
पति निट्टु वंचिंचि पापंबु दलचि । यति लोभमुन रामु नडवुल कनिचि
भरतु नयोध्यकु बट्टंबु गट्टि । चिरलील राज्यंबु सेय जूचेंदवु
पतियाज्ञ दप्पडु भरतुंडु तंड्रि । प्रति यनि या रामभद्रुनि जूचु
नी माट विनि धर्म निष्ठ बोविडिचि।रामु नडंचि यी राज्यंबु गॊनुनॆ?
तल पोसि चूडग दशरथेंद्रुनकु ।बॊलुपार नतडु दा बुट्टिनट्लैन८७०

नी तप्पु नी मीद नॆऱिगिनंतटनॆ । मातगा दलचुने मदिलोन निन्नु?
गरमर्थि नडवि राघवुडु वर्तिप । भरतु डी साम्राज्यभार मॆट्लॆलु?
नॆऱुगवु भरतुनि हृदय मेमियुनु । मऱि यी तॊऱगु विन्न मंडु नी मीद;
नॆव्वरिकै नीकु नी निष्ठुरंबु । लिव्वॆल्ल भरतुन किय्यकॊलगुनॆ ?
कावुन निदि मेलुगा नॆन्न वलदु । नी; वदियुनु गाक निष्ठुर वृत्ति
श्रीरामुनकुनु नी सीतकु नार । चीर लिच्चुटकु नी चेतु लॆट्लाडॆ?

आयेंगे। सोच समझकर, तुम्हीं इस उजड़े नगर में रहो। पुण्य शीलवाले राम शोभा से जहाँ रहें, वही नगर है, जहाँ नहीं हैं, वह उजाड़ है। इस प्रकार पति को धोखा देकर, पाप की बात सोचकर, अति लोभवश राम को जंगलों में भेजकर, भरत का अयोध्या का राजतिलक कर, चिरसुख से राज करने की (बात) सोच रही हो। पति (राजा) की आज्ञा को भरत नहीं टालेगा। वह रामभद्र को पितृतुल्य मानता है। तुम्हारी बात सुन (मान) कर, धर्मनिष्ठा को तजकर, राम का दमन कर क्या वह (भरत) इस राज्य को ग्रहण करेगा? सोच विचारकर देखें, यदि सुन्दरता से वह दशरथ का आत्मजात है तो, ॥ ८७० ॥

—तुम्हारे (किए) दोष को तुम्हारे मुख से जान लेते ही, क्या वह हृदय से तुम्हें माता मानेगा? (नहीं मानेगा)। राम वन में बड़े प्रेम से विहार करते रहें तो भरत इस साम्राज्यभार को कैसे वहन करेगा? (तुम) भरत के हृदय को बिलकुल नहीं समझतीं। अगर वह इस विधान को सुनेगा तो तुम पर भड़क उठेगा। जिसके लिए तुम ये सब निष्ठुर (कार्य) कर रही हो, उसभरत को ये सब स्वीकार्य होंगे? (नहीं)अतः तुम इसे शुभ(प्रद)मत मानो। यही नहीं, निष्ठुरता से श्रीराम और इस सीता को वल्कल वस्त्र देने के लिए तुम्हारे हाथ (आगे) कैसे आए? वल्कल वस्त्रों को तज, नव-रत्नखचित-चारु (सुन्दर)-भूषण, सरस (समुचित) चीनांबर(रेशमी कपड़े) सुन्दरता से धारणकर, जानकी अपनी परिचारिकाओं की सेवाएँ ग्रहण करती हुई जावे।' (ऐसा) कहते हुए, उस संयमीश्वर के विनुत (प्रशंस-

नार चीरलु मानि नवरत्न खचित। चारुभूषणमुलु सरसंबुलैन
चीनांबरंबुलु सेलुवार बूनि । जानकि दन परिचारिकल् गोलुव
जनुगाक!" यनुचु ना संयमीश्वरुडु। विनुत भूषांबर विततु लिच्चुटयु
सीत यप्पुडु नार चीरलु मानि । यातत मति नुंडे; ना समयमुन८८०

दशरथुडु कैकनु देगडुट

गैक नंदरु दिट्टगा राजु विनुचु ।ना कांत देस जूचि यलुक तो बलिके
"दक्कक पापंबु दलचि रामुनकु । नक्कटा! वनवास मडिगिति काक
मेदिनी सुतयु सौमित्रियु नार । लादरंबुन गट्ट नडिगिते नन्नु?
नी मानवति सीत यितकु दगुने?। येमि चेसिति नीकु नी तेंपु सेय?
रामुनि विनयाभिरामु गांतार । भूमिकि दपसियै पोम्मनु कंटे
मरि योंडु पापंबु महिमीद गलदे?। तऱम जेसियु नेल तंडार वैति?
पाप जातिकि नीकु बतियैन नाकु। बापंबु गडमये परिकिंप" ननग
ना माट विनि रामु डधिपुतो ननियें । "भूमीश! ननु बासि पोंदलु
शोकमुन

नीय) भूषा (आभूषण)-अंबर (वस्त्र) विततियों (समूहों) के देने पर, तब सीता वल्कल वस्त्रों को छोड़, सन्तुष्ट हो रही । उस अवसर पर, ॥ ८८० ॥

दशरथ का कैकेयी की निन्दा करना

—जब सब लोग कैकेयी की निन्दा कर रहे थे, राजा ने सुना (और) उस स्त्री की तरफ़ देख, क्रोध से बोले--"निरन्तर पाप का संकल्प करके, (तुमने) हाय ! राम के वनवास की माँग की थी । (किन्तु क्या) मुझसे माँगा था कि मेदिनीसुता और सौमित्र (भी) सप्रेम वल्कल पहन लें ? (इसकी माँग नहीं की थी ।) क्या यह मानवती सीता इतने के लिए योग्य है ? इतना (दुः) साहस कर रही हो, (मैंने) तुम्हारा क्या (बिगाड़) किया है ? विनयाभिराम राम को कान्तारभूमियों (जंगलों) में तपस्वी बन जाने के लिए कहने से बढ़कर इस पृथ्वी पर अन्य कोई पाप है ? (वन में) भेजकर भी तुम्हें शान्ति क्यों नहीं मिल रही है ? (केवल राम के वन जाने से तुम्हें सन्तोष क्यों नहीं हो रहा है ?) तुम ऐसी पापजात (पापिनी) के पति बने हुए मेरे लिए कोई पाप शेष नहीं है । (सभी पाप मेरे पल्ले पड़े हैं ।)" ऐसा कहने पर, वह बात सुनकर, राम ने अधिप से कहा—"हे भूमीश ! मुझसे बिछुड़कर (मेरे वियोग में) अधिक शोक से हमारी माता कौसल्या मन में व्याकुल न हों, आप उचित ढंग से कृपा से रक्षा कीजिए ।" ऐसा

मा तल्लि कौसल्य मदि गुंदकुंड । भातिगा गृप मीरु परग रक्षिंपु"
डनुडु ना दशरथुं डा वाक्यमुलकु। दनरारु शोकाग्नि दनचित्त मेरिय
८९०

"नेट्टि पापमु दोल्लि येनु जेसितिनो? पट्टि! ना कनुभविंपक पोदु नेडु;
तल्लुल बिड्डल दग बापि मिम्मु। नुल्लंबु लोलिमै नोप्पिंप वलसे;
गैक माटकु निन्नु गान्तारभूमि । बैकोनि यिडुमुल बड्पगा वलसे:
हा पुत्त्र! हा राम!" यनुचु मूर्छिल्लि । भूपालु डंतट बोधिंप देलिसि
वारक पदुनाल्गु वत्सरंबुलकु । नारग बरिपूर्णमगुनट्लुगाग
मेच्चैन तोडवुलु मेलि वस्त्रमुलु । नच्चुगा जानकि कवनीविभुंडु
वलनोप्प देप्पिंचि वरुस निप्पिंचे । वलुवलु गट्टि या वरभूषणमुलु
दनरंग जानकि धरियिंचे; नंत । ननयंबु मदिलोन हर्षमुप्पोंग८९८

श्रीरामुडु दशरथुनूरार्चुट

रामु डादशरथ राजु नीक्षिंचि । यामहितात्मुतो नचलुडै पलिके
"बदुनालुगेड्लु ब्रकट दुर्गमुल । बदुनाल्गु दिनमुल पगिदि वर्तिंचि
९००

कहने पर वह दशरथ उन वाक्यों के कारण, अधिक शोक की अग्नि के चित्त में जल उठने पर (बोले)— ॥ ८९० ॥

—"(न जाने) पूर्व में कौन-सा पाप किया था ? हे पुत्र ! (उस पाप का फल) भोगे बिना नहीं जाएगा। माताओं और पुत्रों को अलग कर, तुम लोगों के मन को दुखाना पड़ा। कैकेयी की बात पर तुम्हें कान्तार-भूमियों में कष्टों को सहने के लिए भेजना पड़ा। हाय पुत्र ! हाय राम !" ऐसा कहते हुए (दशरथ) मूर्च्छित हुए। तब भूपाल होश में लाये गये। निरन्तर चौदह वर्षों के लिए परिपूर्ण (पर्याप्त) हों, ऐसे आभूषण, श्रेष्ठवस्त्र जानकी को अवनिवल्लभ (राजा) ने शोभा से मँगवाकर क्रम से दिलाए। वस्त्र धारणकर, उन वरभूषणों को जानकी ने धारण किया। तब मन में अत्यन्त हर्ष के उमड़ने पर, ॥ ८९८ ॥

श्रीराम का दशरथ को सान्त्वना देना

—(तब) राम ने उस दशरथराज को देखकर, उस महितात्म से, अचल होकर (निश्चल भाव से), कहा—"चौदह वर्ष प्रसिद्ध दुर्गों (वनों) में चौदह दिन की तरह रहकर, ॥ ९०० ॥

धरणीश! वत्तु; संतापिंपवलदु। भरतुंडु नाकंटॆ भक्तुंडु नीकु
ननि बट्टमु गट्टु; मात्म गैकेयि। कृतकंबुनकु मदि गिंकिरिपडकु;
मा तल्लि नीकु नॆम्मदि सेव सेयु। ना तन्वि मीरुनु नरयुडु करुण"
ननि प्रदक्षिणमुगा ननुजुंडु दानु। जनकजयुनु वच्चि चागिलि म्रॊक्क
"नडविकिबोयि मी ररुगुदॆं" डनुचु। गॊडुकुल गोडलि गॊर्कि दीविंचॆ;
ना समयंबुन नर्थि मुव्वुरुनु। गौसल्य पादपंकजमुल कॊऱग
वॆलदि राघवुडुन्न वेषंबु जूचि। पलुमाऱु विधि दूऱि पलविंचि पिदप
९०७

कौसल्य सीतकु पतिधर्ममु दॆल्पुट

घनुनि राघवुनि लक्ष्मणुनि दीविंचि।जनकज जूचि कौसल्य शोकिंचि
"यडरंग नितडु महाचक्रवर्ति। कॊडुकनि मी तंड्रि कोरि निन्निच्चॆ
गडवनि दैव योगंबुन जेसि। कडपट मऱि यिट्टि गतियय्यॆ नेडु
९१०

तापस वृत्तिमै दगिलि कानलकु। नी पतितो गूडि नी केग वलसॆ
दीनिकि वगुवकु; तिविरि श्रीरामु। डी निखिलोर्वियु नेलॆडि मगुड;

—हे धरणीश ! (मैं लौट) आऊँगा। सन्ताप मत करो। मेरी अपेक्षा भरत तुम्हारा (अधिक) भक्त है। उसका राजतिलक करो। आत्मा (मन) से कैकेयी के कार्य के लिए मन में क्रुद्ध मत होना। हमारी माता (कौसल्या) अच्छी तरह तुम्हारी सेवा करेगी। उस स्त्री (कौसल्या) पर तुम भी कृपा करो।" (ऐसा) कहकर, अनुज, (और) जनकजा (सीता) के साथ स्वयं (राजा की) प्रदक्षिणा (परिक्रमा) की और साष्टांग प्रणाम किया। (तब) (दशरथ ने) पुत्रों (तथा) बहू को प्रेम से आसीसा कि 'वन जाकर लौट आओ'। उस समय प्रेम से तीनों ने कौसल्या के पाद-पंकजों में (सिर) नवाया। राघव के वेष को देखकर, (उस) स्त्री (कौसल्या) ने कई बार विधि (नियति या ब्रह्मा) की निन्दा कर, रोकर, तत्पश्चात्, ॥ ९०७ ॥

कौसल्या का सीता को पतिधर्म बताना

—महान् राघव (और) लक्ष्मण को आसीसा, जनकजा (सीता) को देख कौसल्या ने शोक कर, (कहा)—"अतिशय भाव से कि यह (राम) महासुरिचि से चक्रवर्ती का पुत्र है, (यह सोचकर) तुम्हारे पिता ने तुम्हें दिया। अनिवार्य दैवयोग के कारण, अन्त में आज ऐसी दशा हो गई है ॥ ९१० ॥

—तापस-वृत्ति ग्रहणकर, पति के साथ तुम्हें जंगलों में जाना पड़ा। इसके

बति पेदवाडैन बायंगरादु । सतुलकु; निदिय विचारिंप दगवु
चेकॊनि पतिपंपु सेयु पत्नुलकु । गैकॊनु नुभयलोकमु लंदु शुभमु''
लनगनु गौसल्य ना सीत सूचि । विनुतंबुगा बल्कॆ विनयंबु मॆऽसि;
''यनुकूलनै पति नतिभक्ति गॊलिचि । तनर वर्तिचॆद धर्ममार्गमुन
मानुगा बति बायु मगुव सक्रंबु । लेनि तेरुनु, दंत्रि लेनि वीणॆयुनु
बोलॆ बुत्रुलु गल पुण्युरालैन । जालंग गॊऽगाक चनु; नट्लुगान
बतिकि ब्रियंबैन ब्राणंबु लैन । हितबुद्धि वंचिपकित्तुने'' ननिन
ना देवि वैदेहि नलरार जूचि । ''भूदेवि पुत्त्रिवै पुट्टिन नीकु९२०
नी गुणंबुलु दगु; नॆलमि लक्ष्मणुनि। नी गुणोज्ज्वलु रामहितुनि मन्निपु''
मनिन सीतादेवि 'यौगाक' यनुचु । दनकु म्रॊक्किन नॆत्ति तग
गौगिलिंचि
दीविंचि, यप्पुडु दॆऽगॊप्प राम । देवुनि तोड ना देवि यिट्लनियॆ
''बृथुलाटवुलयंदु बृथिवीशपुत्त्र! । मिथिलेंद्रसुतनु सौमित्त्रि नेमरकु

लिए दुःख मत करो। अवश्य ही श्रीराम बाद को निखिल उर्वी (पृथ्वी) पर शासन करेगा। पति (चाहे) निर्धन हो जाए, सति (पत्नी) को उसे त्यागना नहीं चाहिए। सोचने पर यही न्याय (धर्म) है। मन से पति की आज्ञा का पालन करनेवाली पत्नियों के लिए उभय लोकों में शुभ होगा।'' ऐसा कहनेवाली कौसल्या को देखकर, उस सीता ने विनयपूर्वक, प्रशंसनीय रूप से (कहा)—''अनुकूल होकर, पति की अतिभक्ति से सेवाकर, धर्ममार्ग पर चलूँगी। पति से बिछुड़नेवाली स्त्री चक्रहीन रथ के समान, तन्त्रीरहित वीणा के समान होगी (और वह) पुत्रोंवाली पुण्यवती होने पर भी, व्यर्थ होकर रहेगी। ऐसा न होकर, पति की इच्छा हो तो धोखा न देकर, हितबुद्धि से मैं प्राणों को भी दे दूँगी।'' (ऐसा) कहने पर उस देवी (कौसल्या) ने वैदेही को प्रेम से देखकर (कहा)—''भूदेवी की पुत्री होकर जन्म लेनेवाली तुम्हारे लिए, ॥ ९२० ॥

—तुम्हारे ये गुण उचित ही हैं। लक्ष्मण को जो गुण से उज्ज्वल और राम का हितू है, प्रेम से, आदरभाव से देखो।'' कहने पर, सीतादेवी ने 'ऐसा ही हो' कहकर, प्रणाम किया। उसे (सीता को) उठाकर, उचित रूप से आलिंगन कर, आसीस कर, तब ढंग से वह देवी (कौसल्या) रामदेव से यों बोली—''पृथुल अटवियों में हे पृथिवीशपुत्र ! मिथिलेन्द्रसुता (सीता) और सौमित्र के प्रति असावधान न रहना (सतत ध्यान रखना)।'' (ऐसा) कहने पर (राम ने कहा)—''हे जननी ! आपकी आज्ञा को सुना (पालन

मनिन "मी यानति नदि विंटि जननि! । पोंनर ना दक्षिण भुजमु लक्ष्मणुडु
नानड जानकि नाकु नेंब्भंगि । मानसंबुन वीरि मरुवंग नगुनें?
येनु विल्लंदिन नेंदु नेभयमु । गा नेलवच्चु मुक्कंटि पै बडिन?
नदिगान नीविंक नडलकु माकु । वदलनु धर्मंबु, वगवकु" मंचु
भूनाथुनकु गरांबुजमुलु मोंगिचि । तानु सीतयु सुमित्रानंदनुंडु
"अम्मलु दीविंपु डंदरु" ननुचु । निम्मुल मुन्नूट येबंड्रुलकुनु९३०

सरि प्रदक्षिमुगा जनु देंचिमनुसु । लेंरियंग ना तल्लुलेंल्ल शोकिंप
विनुचु सुमित्रकु विनतुलै रंत; । गनुगोंनि यद्देवि कौगिट जेर्चि
श्रीरामु दीविंचि सीत दीविंचि । धारुणिपति सेत दलपोसि वगचि
मेंलुपोंद नपुडु सुमित्र लक्ष्मणुनि । बिलिचि यिपार गंभीरोक्ति बलिकें
"रामुनि दशरथ राजुगा जूडु: । भूमिज नन्नुगा बुद्धि जिंतिपु,
मडवि नयोध्यगा नात्म लो दलपु। कडु भक्ति युक्ति राघवु गोंल्चियुंडु;

करूँगा) । अनुकूलता के भाव से लक्ष्मण (तो) मेरी दाहिनी भुजा है। हर तरह से जानकी तो मेरी गति है। मन से इन्हें भूला कैसे जा सकता है ? (यदि) मैं धनुष धारण करूँ तो चाहे त्रिनयन ही क्यों न चढ़ आवें, भय क्यों कर होगा ? यह ऐसा है। (मेरी भुजशक्ति पर विश्वास करके) अब तुम डरो मत। मैं धर्म को त्यागूँगा नहीं। (अब) शोक मत करो।" (ऐसा) कहते हुए भूनाथ (दशरथ) को करांबुज (करकमल) जोड़कर, सीता और सुमित्रानन्दन के साथ 'हे माताओ ! सभी हमें आशीर्वाद दीजिए।' कहते हुए (वे) प्रेम से साढ़े तीन सौ (माताओं) की, ॥ ९३० ॥

--परिक्रमा कर आए। हृदय के फटने पर, वे सभी माताएँ शोक (विलाप) करने लगीं। तब (उस विलाप को) सुनते हुए, सुमित्रा को (उन तीनों ने) प्रणाम किया। (उसे) देख, उस देवी ने (उन्हें) हृदय से लगा लिया। श्रीराम को आसीसा, सीता को आसीसा, धारुणीपति (राजा) के कार्य पर विचारकर दुखी हुई। भले ढंग से तब सुमित्रा लक्ष्मण को बुलाकर, शोभा से, गम्भीर स्वर से बोली--'राम को दशरथ राजा के समान देखो (मानो)। मन में भूमिजा (सीता) को मेरे समान मानो। आत्मा (मन) में वन को ही अयोध्या समझो। अधिक भक्तियुक्त होकर, राघव की सेवा करते रहो। अत्यधिक विजय, सिद्धि की उन्नति प्राप्त

मायत जयसिद्धुलभिवृद्धि बोंदु । बोयिर" म्मनि प्रीति बुत्त्रु दीविंचि
रामचंद्रुनि जूचि "रघुवीर! नीकु। सेमंबु दलचिन चित्तंबु लोन
नऱ लेनि सखुडन्न ननुजन्मु डन्न । नेऱय नीतडे काक निक्कुवंबरय
नटुगान लक्ष्मणु नरसि रक्षिपुमटवुललो"। नन्न 'नौ गाक' यनुचु९४०
गृतकृत्युडै यंत गृह देवतलकु । जतुरुडै मुनलकु जननुल कॆऱगि
धरणिज दोड्कोंनि तानु लक्ष्मणुडु। शरचाप तूणीर सहितुडै वेडले;
९४२

रामादुल यरण्य प्रयाणमु

नप्पुडरुंधति "यकट! यिक्ष्वाकु । लिप्पाटु वड्चुंड निटु सूडवलसॆ!"
ननि वसिष्ठुनि बल्क नम्महामौनि। तन बुद्धि नेंतयु दलपोसि चूचि
"ये रूपमुन बोव, दिदि दैव योग । सूरकुंडुमु, सूचुचुंडुद" मनियॆ;
नप्पुडु रघुरामु डडविकि बूनि । तप्पक वेडले; ना दशरथाधिपुडु
मदिलोन वगचि सुमंत्रुनि जूचि । "यिदे रामुडडवुल केगुचुन्नाडु,
गोनिपोम्मु रथ" मन्न गुवलयाधिपुनि । पनुपुन गोनि पोयि भक्ति
तो म्रोक्कि

करो। जाकर (वापस) आओ।' कहकर प्रेम से पुत्र को आसीसकर, रामचन्द्र को देखकर (कहा)--'हे रघुवीर! चित्त में तुम्हारे क्षेम (कल्याण) का विचार करनेवाला, कलमषरहित सखा, अनुजन्म (अनुज) तो सच पूछें तो यह लक्ष्मण ही है। इसलिए अटवियों में लक्ष्मण का ध्यान रख, (उसकी) रक्षा करना।' कहने पर 'ऐसा ही हो' कहते हुए, ॥ ९४० ॥ --कृतकृत्य होकर (सभी कामों से निपटकर), गृह देवताओं, मुनियों, जननियों को यथाविधि प्रणामकर, धरणिजा को साथ लेकर, लक्ष्मण के साथ (राम) शर-चाप-तूणीर-सहित हो चल पड़े ॥ ९४२ ॥

रामादि का वनगमन

--तब अरुन्धती (ने कहा--) 'हाय! इक्ष्वाकुओं को इस प्रकार दुर्गति प्राप्त करते देखना पड़ रहा है।' ऐसा वसिष्ठ से कहने पर उस महामौनी ने अपनी बुद्धि से अधिक सोचकर देखा (और) कहा--'यह किसी रूप से टल नहीं सकता। यह दैवयोग है। चुप रहो। देखते रहें।' तब रघुराम सप्रयत्न वन को निकल पड़े। वे दशरथाधिप मन में दुखी हो, सुमन्त्र को देख बोले--'यह (देखो), राम जंगलों में जा रहा है। रथ ले जाओ।' (ऐसा) कहने पर कुवलयाधिप (राजा) की आज्ञा मानकर, (रथ) ले

“रथ मिदॆ पुत्तॆंचॆ राजु मी कॊऱकु। रथ मॆक्कि विच्चेयु रघुरामचंद्र!”
यनवुडु दशरथु नाज्ञकु वॆऱचि । मुनु सीत नॆक्किंचि मॊगि नायुधमुलु
९५०
दनरु जोडुनु बॆट्टि तानु लक्ष्मणुडु। घनमैन रथ मॆक्कि कदलॆ राघवुडु
अंत बौरुलु वृद्धुलाप्तुलु मंत्रु । लितुलु बालुरु हितुलु नाश्रितुलु
वंत ब्राह्मण राज वैश्य शूद्रादु । लंतंत नलुगड नडलुचु वॆंडलि
मुंदट निरुपार्श्वमुल बिऱुंदटनु । संदडिपुचु मदि जडि गॊन्न वगल
“नरनाथपुत्त्रु डॆन्नडु गान राडु । सुरुचिर स्थिति नेडु चूत” मंचनुचु
जंद्रुतेजमु नव्वजालु ना राम । चंद्रु मोमुनु जूड जनुदॆंचुवारु
“गडगि यिक्ष्वाकुल गौरवंबॆल्ल । नडचॆने मंथर” यनि तिट्टुवारु,
“दगवेदि रघुरामु दपसिगा जेय । नगु नम्म! कैकेयि” कनि दूऱुवारु,
“दालिमि दिगनाडि दशरथाधीशु। डालिकि वॆऱचने!” यनि रोयुवारु,
“जन वॆल्ल जॆडि राम सौमित्रुलित। यनदलै पोदुरे!” यनि वेगुवारु,
९६०

जाकर, भक्ति से प्रणामकर (सुमन्त्र) बोले--‘आपके लिए राजा ने रथ भेजा है। हे रघुरामचन्द्र! रथ पर आरूढ़ होकर चलिए।’ ऐसा कहने पर दशरथ की आज्ञा को मानकर, सीता को पहले रथ पर बिठाया, फिर आयुध, ॥ ९५० ॥

--(और) शोभायमान पादुकाएँ रखीं। (तब) लक्ष्मण के साथ स्वयं उस महान् रथ पर चढ़कर रवाना हुए। तब पुरजन, वृद्ध, आप्त जन, मन्त्री, स्त्रियाँ, बालक, हितू, आश्रित, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि चौतरफ़ दुखी होते हुए, निकल पड़े। आगे, दोनों ओर, पीछे (भीड़ लगाकर) कोलाहल करते हुए, मन में निरन्तर दुखी होते हुए (यों) कहने लगे--‘नरनाथ पुत्र कभी दिखाई नहीं पड़ता। सुरुचिर स्थिति (सुन्दर रूप) से आज (उन्हें) देखेंगे।’ (ऐसा) कहते हुए, चन्द्र के तेज की अवहेला कर सकनेवाले उस रामचन्द्र के मुख को देखने के लिए कुछ लोग आए हुए थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि ‘हाय, इक्ष्वाकुवंश के समस्त गौरव को मंथरा ने नष्ट कर दिया है’ (मंथरा को) कोस रहे थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि ‘हाय, रघुराम को तपस्वी बनाना कैकेयी के लिए कहाँ तक उचित था’ (कैकेयी की) निन्दा कर रहे थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि ‘हाय, धैर्य को तज दशरथाधीश पत्नी से डर गए’ (दशरथ के प्रति) घृणा प्रदर्शित कर रहे थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि

"बनुगौन्न तम तंड्रि पनुपुन । पौनुपड निट्लेल पोदु" रन्वारु,
"नी पदुनालुगेंड्लेट्लु वीरडवि । नापद वेगितु?" रनि पोक्कुवारु
"ने नोमु नोचेनो यिम्ममहीपुत्त्रि । ता" नंचु मदिलोन दलपोयुवारु
"नति मृदुगात्त्रि यी यबल भूपुत्त्रि। पति बायले" दनि प्रणुतिंचुवारु,
"नी सुतुडडवुल केगंग बून । गौसल्य येट्लोर्चेंगा" यनुवारु
नै रामुनरदंबु नंदंद कदिसि । भूरि शोकाग्नुल बौगुलुचु बोव
नंत गौसल्ययु ना सुमित्रयुनु । जितापरंपर जिक्कि शोकिंप
वारिकरंबुलु वलनौप्प नूदि । वारि पै व्रालुचु वगल दूलुचुनु
गलय नंतःपुरकांतलु दन्नु । गौलिचि रा दशरथ क्षोणिपालकुडु
भूरिलोचन-बाष्प-पूरंबु दौरुग । "हा राम! हा राम" यनि पलुमारु ९७०

नेलुगेत्ति येड्चुचु नेचिन वगल । नलि दूलि पोंगुलुचु नगरंबु वेडले
नप्पुडु रविदीप्तु लणगे; नल्देसल । नुप्पोंगे दमम‌ु; वह्नुलु मंडवय्ये;

'हाय, समस्त सौमनस्य को बिगाड़कर, राम-लक्ष्मण इतने निस्सहाय क्यों हो गए ?' मन में दुखी हो रहे थे ।। ९६० ।।

--कुछ लोग कह रहे थे कि 'दृढ़भाव से अपने पिता के आदेश को छोड़ (न मान) ये व्यर्थ ही ऐसा क्यों जा रहे हैं ?' कुछ लोग व्याकुल हो रहे थे कि 'इन चौदह वर्ष तक ये लोग जंगल में विपत्तियों को कैसे झेलेंगे ?' कुछ लोग मन में सोच रहे थे कि 'इस महीपुत्री (सीता) ने कौन-सा व्रत किया है (जो इस प्रकार जंगलों में जा रही है) ।' कुछ लोग (सीता की) सराहना कर रहे थे कि 'अति मृदुगात्र (शरीर) वाली यह अबला, भूपुत्री (सीता) पति को छोड़ नहीं (रह) सकती ।' (कुछ लोग) कह रहे थे 'अपने पुत्र के जंगलों में जाने पर, कौसल्या उसे कैसे सहन कर सकी ।' ऐसा कहते हुए वे लोग राम के रथ को यहाँ-वहाँ घेरकर, भूरि (अधिक)-शोक की अग्नि में तप्त होते हुए (रथ के पीछे-पीछे) जा रहे थे । तब कौसल्या और सुमित्रा चिन्ता-परम्परा (दुख के प्रवाह) में फँसकर शोक करने लगीं । उनके हाथों का सहारा लिए हुए, उन पर झुककर, दुख से लड़खड़ाते हुए, अन्तः-पुर की कान्ताओं से सेवित (अनुगमन करने पर), दशरथ-क्षोणिपालक (राजा) भूरि (अधिक)-लोचन-बाष्प (अश्रु)-पूर (समूह) के झरने पर 'हे राम ! हे राम !' कहकर कई बार, ।। ९७० ।।

—उच्चस्वर से रोदन करते हुए, अत्यधिक दुःख के मारे लड़खड़ाते हुए, व्याकुल होते हुए, नगर से निकल पड़े। तब रवि की दीप्तियाँ मंद पड़ गईं । चारों दिशाओं में तम उमड़ पड़ा । वह्नियाँ (अग्नियाँ) नहीं जल रही

धरणि बीटलु वाऱॆ; दारलु रालॆ, विरसिंचि ग्रहमुलु विनुवीथि बोरॆ
नॆलसिन मदधार लिंकॆ दंतुलकु। गलय नश्वमुलकु गन्नीरु दॊरगॆ
नावुलु चन्नियय्यवय्यॆ ग्रेपुलकु। नावीडु कडुशून्यमै तोचॆ व्रजकु;
वारु वीरन कॆल्लवारु बॆल्लडल। बौरुल येड्पुलंबरमॆल्ल निंडॆ;
सुरवर-कामिनी शोकारवमुलु। बॊरि बॊरि विन वच्चॆ बुरजनंबुलकु
नप्पुडु दशरथुं डारामु रथमु। चॊप्पु बाष्पमुल चे जूड जॊप्पडक
९७८

रथमु निल्पुमनि दशरथुडु सुमंत्रुनि बिलुचुट

"चंद्रबिबमु तोड सरियैन राम। चंद्रुनि मॊगमॊकसारि चूचॆदनु,
ओ सुमंत्रुड! रथ मुनुपवे" यनुचु। ना सुमंत्रुडु विनुनट्लु चीऱुचुनु१८०
वॆनुकॊनि पुरि दाटि वॆस नेगुदेर। मनुजेशसुतुडु सुमंत्रुतो ननियॆ,
"निदॆ वच्चुचुन्नवाडिनकुलेश्वरुडु। पॊद-पॊद, पोनिम्मु-पोनिम्मु रथमु"
ननि यनि रघुरामुडंदंद दऱुम। मॊनसि यातडु रयंबुन देरु बरपॆ
नंत वसिष्ठु डय्यवनीशु जूचि। यंतरंगंबुन नडलुचु बलिकॆ;

थीं। धरणि में दरारें पड़ गईं। नक्षत्र टूट पड़े। विरस हो ग्रह आकाश-वीथि में, अस्त-व्यस्त हो गए। दन्तियों (हाथियों) की मद-धाराएँ सूख गईं। अश्वों के अश्रु झरने लगे। गाएँ बछड़ों को स्तन्य नहीं दे रही थीं। प्रजा को वह प्रदेश अधिक शून्य भासित हुआ। ये (और) वे नहीं, सभी के अधिक भीत होने पर, पुरजनों के रोदन की ध्वनियों से समस्त आकाश भर गया। पुरजनों को सुर-वर (देवता-श्रेष्ठों की)-कामिनियों के शोक-रव बार-बार सुनाई पड़ने लगे। तब दशरथ उस राम के रथ की शोभा को अश्रुओं के कारण देख न सके। (कहा--) ॥ ९७८ ॥

रथ को रोकने के लिए दशरथ का सुमंत्र को बुलाना—

'चन्द्रबिम्ब के समान रामचन्द्र के मुखड़े को एक बार देखूँगा। हे सुमन्त्र ! रथ को रोक दो।' ऐसा कहते हुए चिल्लाने लगे जिसे सुमन्त्र सुन सके। ॥ ९८० ॥

(रथ का) पीछा करते हुए, नगर को पार कर, शीघ्र गति से आ रहे थे। (दशरथ को देखकर) मनुजेश-सुत (राजकुमार राम) ने सुमन्त्र से कहा—'यह (देखो) कुलेश्वर (राजा दशरथ) आ रहे हैं। चलो चलो, रथ को (शीघ्र) चलने दो।' ऐसा कहकर रघुराम के वहाँ आदेश देने पर, प्रयत्नशील हो उसने रथ को शीघ्रगति से चलाया। तब वसिष्ठ

"ननघ! शोकिंचुचु ननुपगाराडु; । मनुजेश! नी विक मऱलु मिच्चोट"
ननवुडु दशरथु डटपोक निलिचि । तन सूनु रथमट्टु तप्पक चूचि
यदियु गानक धूळि नट्टु चूचि चूचि । यदियु गानक बयलट्टु चूचि चूचि
'हा!' यनि यॆलुगॆत्ति 'हा राम! राम। हा!' यनि मूर्छिल्लि यवनि पै
द्रेळ्ळि,
पौरलुचु गॆंधूळि ब्रुंगि कन्विच्चि । कर मुग्रमगु दृष्टि गैकेयि जूचि
"नी पाप सॆऱुगक निन्नु मन्निंचि । ना पुत्त्र रत्नंबु नट्टु कोलुपोति ९९०
निन्नु बॆंड्लाडि ने नीचुंड नैति । नन्निट मेटिनै यल्पुंड नैति
नडरु निंदल कॆल्ल नाधार मैतिं । गडपट जॆरिचिति गाकुत्स्थकुलमु
निनु जूडगा राडु, निनु मुट्टराडु । चॆनटि! नीतोड भाषिंपगा राडु"
अनि दशरथुडाड, ना पौरजनुलु । गनुगॊनि तनु दिट्ट गैकेयि विनुचु
दल वंचुकॊनि युंडॆ, दशरथुं डंत । नलयुचु जनि ययोध्यापुरि जॊच्चि
पाडुवाऱिनयट्टि पट्टणवीथि । नाडाड निलुचुचु नपुडु कौसल्य

ने उस अवनीश (दशरथ) को देखकर, अन्तरंग में दुखी होते हुए, कहा—'हे अनघ! शोक करते हुए (राम को) नहीं भेजना चाहिए। हे मनुजेश! अब तुम यहाँ लौट चलो।' ऐसा कहने पर दशरथ उधर न जाकर, (रुक गये और) अपने सुअन के रथ को देखते रहे, वह भी न दीखा तो उड़ती धूल को देखते रहे। वह भी न दीखा तो शून्य को देख-देख, हाहाकार कर, ऊँचे स्वर में 'हे राम! हे राम!' कह मूर्च्छित हो, पृथ्वी पर गिर पड़े, लोटने लगे, अधिक धूल से लोट-पोट हो गये। (तब) आँखें खोलकर, अत्यन्त उग्र-दृष्टि से कैकेयी को देखकर (कहा)—'तुम्हारे पाप (भाव) को न जानकर तुम्हारा आदर किया (और) अपने पुत्र-रत्न को इस प्रकार खो बैठा। ॥ ९९० ॥

—तुम्हारे साथ विवाह करके मैं नीच बन गया हूँ। सब (बातों) में श्रेष्ठ होते हुए भी अल्प (छोटा) बन गया हूँ। अधिक निन्दा (-वाक्यों) का आधार (पात्र) बना। अन्त में काकुत्स्थकुल को ही भ्रष्ट कर दिया। तुम्हें नहीं देखना चाहिए, तुम्हारा स्पर्श भी नहीं करना चाहिए। हे कुत्सित भाववाली (दुष्टे)! तुम्हारे साथ बात भी नहीं करना चाहिए।' ऐसा दशरथ के कहने पर, उन पुरजनों के उसे देख, कोसने पर, कैकेयी सुनती हुई, सिर झुकाए खड़ी रही। तब दशरथ ने (दुख से) थककर, चलकर, अयोध्यापुरी में प्रवेश किया। उजाड़ बनी नगर-वीथियों में यहाँ-वहाँ ठहरते हुए तब कौसल्या की नगरी में प्रवेशकर, आनन पर लगी धूल से विकल होते हुए, शय्या पर लोटते हुए,

नगरंत जॊच्चि याननधूळि तोड ।बॊगुलुचु, सॆज्जपै, बॊरलुचु, मिगुल
नलयुचु, सॊलयुचु, नसुरुसुरनुचु । नलु दॆसल् सूचुचु नालुक यॆंड
"हा राम! हा राम!" यनुचु दैवंबु । दूऱुचु दनु दाने दूषिंचुकॊनुचु
"ने पाटु ने दुःख मॆऱुगनियट्टि ।ना पुत्त्र रत्नंबु नादु कोडलुनु १०००

एंत दव्वरिगिरो ? यॆंदुन्नवारॊ ? । यॆंत लो गुंदिरो ? एट्टु लेगॆंदरॊ?
कंदमूलमुलु शाकमुलु ने रीति । दिंदुरो? यॆट्लु वर्तिंतुरो यडवि?"
ननि रामसीतल यायासमुलकु । दनमदि नडलुचु दलपोयुचुंडॆ,
गौसल्ययुनु नंत कंटॆ शोकिंप । ना सुमित्रादेवि यडलार्पुचुंडॆ,
नंत रामुडु पौरुलंदऱु गॊलुव । गॊंत दव्वेगि पेर्कॊनि वारि बलिकॆ
"ननघात्मुलार ! मीरंदऱु मगुडि ।चनु डयोध्यकु, नाकु जयमु गोरुडु;
भरतुनि याज्ञ लोपलनु वर्तिंचि । पॊरयुडु सौख्यमुल्, पॊंदु मी" रनिन
वार लंदऱु नेक वाक्युलै पलिकि ।"रो राम! यिट्लाडनुचितमे नीकु?
भरतु डेटिकि माकु ? बट्टणं बेल ? वरमंदिरमुलेल? वाहनमुलेल ?
युप्परिगलु नेल? युविदलु नेल? चप्परमुलु नेल? सौधंबु लेल? १०१०

अधिक थकित होते हुए, बेहोश होते हुए, लंबी-साँसें छोड़ते हुए, चारों दिशाओं में (शून्य भाव से) देखते हुए, जीभ के सूखने पर, 'हा राम ! हा राम !' कहते हुए दैव की निन्दा करते हुए, अपने-आपको कोसते रहे। (कहा)—'किसी भी कष्ट, किसी भी दुख को न जाननेवाले (अनभिज्ञ) मेरे पुत्ररत्न और मेरी बहू— ॥ १००० ॥

—(पता नहीं,) कितनी दूर गये होंगे ? कहाँ होंगे ? मन में कितने व्याकुल बने होंगे ? (आगे) किस प्रकार जायेंगे ? कन्द-मूल और शाक किस प्रकार (कैसे) खायेंगे ? वन में किसविध रहेंगे ?' ऐसा कहकर राम (और) सीता के प्रयास (कष्ट) के बारे में अपने मन में व्याकुल हो सोचते रहे। कौसल्या भी उससे अधिक शोक कर रही थी (तो) वह सुमित्रा देवी (उनके) दुख को कम कर रही थी (सान्त्वना दे रही थी)। तब राम समस्त पुरजनों के सेवा करते रहने पर (घेरे रहने पर), थोड़ी दूर जाकर, उनका (पुरजनों का) सम्बोधन करते हुए बोले—'हे अनघात्माओ (पुण्यात्माओ) ! आप सब अयोध्या लौट जाइए। मेरी विजय की कामना कीजिए। भरत की आज्ञा का अनुसरण कर, सुख प्राप्त कीजिए। (अब) आप लोग जाइए।' (ऐसा) कहने पर वे सब एक वाक्य (स्वर) से बोले—'हे राम ! ऐसा कहना तुम्हारे लिए क्या उचित है ? जब तुम बन में जाओगे तो हमें भरत क्यों ? पट्टण

मेडलु माकेल? मेलमैनट्टि । वाडलु माकेल वनुल की वरुग?
वत्तुमु नी वेंट ; वलदंटिवेनि । जत्तुमु; दीनि कै संदेहमेल ?”
यनि यिटु पलुकुचु नखिलभूप्रजलु । दनु गोॅल्चिरा रघूत्तमुड् तानेगि
तमसा नदीतटस्थलमुन विडिसि । तमसलो सांध्यकृत्यमुलेल्ल दीर्चि
तगु सौधमुन मृदु तल्पंबुनंदु । मोॅगि बव्वळिंचु ना मोहनमूर्ति
तरुमूलमुन बर्णतल्पंबुनंदु । धरणीसुतयु दानु दग विश्रमिंचि
तनु जुट्टि पौरुलु दम यिड्लु मरचि । तनयुल भार्यल तगुलु वोविडिचि
वनमुल दमवेंट वच्चुवारगुचु । निनुपारु भक्ति तो निद्रिंप जूचि
वारल मगुडिप वल नोॅडु लेक । या रात्रिमध्यंबुनंदु सुमंत्रु
“दे रायितमु सेसि तें” म्मनि पलिकि । पौरुल वंचिचुभाव मातनिकि
१०२०
देॅलिपि ययोध्यकै तेरु वोनिच्चि ।तलकोॅनि मगुडिचि तमस दाटिंचि
तृणशिलावृतभूमि देरु दोलिंचि । गणुतिपरानि वेगमुन बोवुचुनु
दमराकयुनु महीधवुनि चेतयुनु । दमकिंचि विनि मनस्तापंबु नोॅंदि
तेॅरुवु पल्लेॅल वारु धृति दूलि येड्चु । परुसंपु टेॅलुगुलु पलुमारु विनुचु

किसलिए ? श्रेष्ठ मन्दिर किसलिए ? वाहन किसलिए ? अट्टालिकाएँ क्यों ? स्त्रियाँ क्यों ? छप्पर क्यों ? सौध क्यों ? ॥ १०१० ॥

श्रेष्ठ मुहल्ले किसलिए ? (अर्थात् इन सबकी हमें कोई आवश्यकता नहीं है ।) तुम्हारे साथ (वन में) आयेंगे । मना करोगे तो मर जायेंगे । इसमें सन्देह किसलिए ? (सन्देह नहीं है ।)’ ऐसा कहते हुए अखिल-भू-प्रजाओं के, सेवा करते हुए आने पर, रघूत्तम (रघुवंशियों में उत्तम) स्वयं चलकर तमसा नदी के तटस्थल पर ठहर गये । तमसा (नदी) में समस्त सान्ध्य-कृत्यों को पूरा किया । उचित सौध में मृदुतल्प (शय्या) पर सुन्दरता से शयन करनेवाले मोहनाकार (रामचन्द्र ने) (उस दिन) तरुमूल में(पेड़ के नीचे),पर्णशय्या पर, धरणीसुता (सीता) के साथ विश्राम किया। अपने को घेरकर, अपने घर भूलकर, पुत्रों (और) पत्नियों के मोह को तजकर, वनों में अपने साथ आनेवाले पुरजनों को द्विगुणित भक्ति के साथ सोते देखकर, उन्हें लौटाने के अन्य उपाय के न होने पर, उस रात्रि के मध्य में सुमन्त्र से कहा—‘रथ तैयार करके ले आओ ।’ पुरजनों को वंचित करने (भुलावा देने) के भाव को उसे— ॥ १०२० ॥

—समझाकर, अयोध्या की ओर रथ को (थोड़ी दूर) जाने देकर, फिर उसे लौटाकर, तमसा नदी को पार कराया । तृण-शिला से आवृत भूमि पर रथ को हँकवाकर, अगणित वेग से जाते हुए, अपने आगमन

वनतरुल् सीतकु वरुस जूपुचुनु । इनकुलमणियैन यिक्ष्वाकुनकुनु
मनुवु मुन्नोसगिन महि गनुंगोनुचु । जनि वेगवति दाटि सरयुवु दाटि
नरनाथु डम्मरु̱नाडु मापटिकि । गरमु वेगमुन गंगानदि जेरि
तडयक यिंगुदीतरुसमीपमुन । विडिसि यच्चट प्रीति विश्रांति नोंदे,
नारय दमसलो नट निद्रवोवु । पौरुलंदरु̱नु प्रभातंबु नंदु
गर मर्थितो मेलुकनि नाल्गु देसलु । परिकिंचि निव्वेर̱पडि शोकमेसग
१०३०

रामुनि गानक रथमु चोप्परसि । 'रामु डयोध्यापुरमुन की रात्रि
यवनिनाथुडु विल्वनंपिन मरल । भुवन भारमु बून बोनोपु" ननुचु
ननि ययोध्यकु वच्चि यच्चोट रामु । गनुगोन जालक घनशोक वह्नि
ननयंबु बोगुलुचु "नकट! राघवुडु । मनल वंचिंचि क्रम्मर̱ बोये" ननुचु
ना रामु कृपयु सत्यंबु धर्मंबु । जारुवर्तनमु निच्चलु नुतिंचुचुनु
नितर वस्तुवुल पै निच्चलु मानि । यतनि दलंचुचु नतनि बायुटकु
नंतरंगंबुन नलयुचुनुंडि; । रंत नक्कड गुहुंडनु चेंचु राजु १०३७

(और) महीधव (राजा) के कृत्य के बारे में सस्नेह सुन, मनस्ताप प्राप्त कर, मार्ग के ग्रामवासियों के धैर्य तजकर, परुष स्वरों में रोदन को कई बार सुनते रहे। क्रम से सीता को वनतरु दिखाते रहे। इनकुल-सणि इक्ष्वाकु को, पूर्वकाल में, मनु के द्वारा प्रदत्त भूमि का अवलोकन करते हुए जाकर, वेगवती (नदी) को पार कर, सरयू (नदी) को पार कर, दूसरे दिन सन्ध्या तक नरनाथ (राम) अधिक वेग से गंगानदी (के तट पर) पहुँच गये। झट से (वहाँ) इंगुदी-वृक्ष के समीप ठहरकर, वहाँ प्रेम से विश्राम किया। तमसा में वहाँ सोनेवाले समस्त पुरजन, प्रभात में अधिक प्रेम से जागकर, चारों दिशाओं में देखकर, चकित रह गये। शोक के उमड़ने पर, ॥ १०३० ॥

—राम को न देख, रथ के (गमन के) ढंग को देख सोचा—'अवनीनाथ (राजा दशरथ) के बुला भेजने पर पुनः भुवनभार को सम्हालने के लिए रात को राम अयोध्यापुरी आ गये होंगे।' (ऐसा सोचकर) अयोध्या आकर, वहाँ राम को न देखकर वे महान् शोक की अग्नि में सदा तप्त होते हुए, कहने लगे—'हाय! राम हमें धोखा देकर फिर से (वन में) चले गये। उस राम की कृपा, सत्य, धर्म, चारु-वर्तन (सद्व्यवहार) की नित्य नुति (सराहना) करते हुए, अन्य वस्तुओं पर इच्छाएँ छोड़कर उसका (रामका) स्मरण करते हुए, उससे बिछुड़ने के कारण मन में व्याकुल होते रहे। तब वहाँ गुह[1] नामक निषाद-राज, ॥ १०३७ ॥

---

[1] निषादराज (केवट) का नाम।

गुह दर्शनमु

श्रृंगिबेरंबेलु चिर पुण्यशालि । गंगातटमुन राघवुडुंडुटॆऱिगि
चनुदॆंचि राम लक्ष्मणुलकु म्रॊक्कि । वनमूल फलमुलु वलयु वस्तुवुलु
गनकांबरादुलु कानुक लिच्चि । विनयविधेयुडै विनुतु लॊनर्चि
१०४०
यच्चॆरुवगु रामुनाकृति जूचि । यिच्चलो वॆऱगंदि "यिदि येमि देव !
नी वरण्यमुलकु निखिलंबु विडिच । यी विधि विच्चेयुटेमि कारणमु?
नलिनाप्तकुलनाथ! ना यट्टि बंटु । गलुग नी वेषंबु गलिगॆने नीकु?
जॆनसि नी किंत सेसिन नीच मतुल । ननि बट्टि चंपॆद" ननिन राघवुडु
ननि सद्भक्तिकि ननि शक्तिकिनि। ननि धीरोक्तुलकात्मलो मॆच्चि
यतनि गौगिट जेर्चि यादरं बॆसग । ननि तो दनदुवृत्तांतंबु दॆलुप
नंतयु विनि गुहुंडात्मलो बॆद्द । चिंतिंचि कैकेयि चेतकु वगचि
दशरथु नेरमि दलपोसि रोसि । दशरथात्मजुल दुर्दशकु शोकिंचॆ
रामुडप्पुडु गृपारसमग्नुडगुचु । सौमित्रियुनु दनु समुचित फणिति
गुहु शोक मुडुप नर्कुडु ग्रुंकुटयुनु । विहित संध्यकालविधु लॊप्प दीर्चि
१०५०

गुह के दर्शन

—जो श्रृंगिबेर पर शासन करनेवाला चिरपुण्यशाली था, गंगातट पर राघव के निवास को जानकर, (वहाँ) आया, राम-लक्ष्मण को प्रणाम कर, वनमूल, फल, आवश्यक वस्तुएँ, कनक-अम्बर (वस्त्र) आदि उपहार देकर, विनयविधेय होकर, विनुति (स्तुति) की (और)— ।। १०४० ।।

—आश्चर्यजनक राम की आकृति को देख. मन में भीत होकर (बोला)—'यह क्या देव ! समस्त (वैभव) को छोड़कर, इस प्रकार तुम्हारे अरण्य में आने का क्या कारण है ? हे नलिनाप्त (सूर्य)-कुलनाथ ! मेरे जैसे सेवक के होते हुए आपका ऐसा वेष क्यों हुआ ? विरोधकर तुम्हें इतना (ऐसी दशा) करनेवाले नीचमतियों को युद्ध में पकड़कर वध कर दूंगा ।' (ऐसा) कहने पर राघव ने उसकी सद्भक्ति, उसकी शक्ति, उसकी धीर-उक्तियों पर आत्मा में (मन में) सराहना कर, उसे गले से लगाकर, आदर के अधिक होने पर, उससे अपना वृत्तान्त कह सुनाया । सब सुनकर गुह ने आत्मा (मन) में अधिक चिन्तित होकर, कैकेयी की करनी पर दुखी होकर, दशरथ की असमर्थता के बारे में सोच, घृणाकर, दशरथात्मजों की दुर्दशा पर शोक किया । तब राम कृपारसमग्न हुए

गंगोदकमुल नाकलि दीर्चि सूत । श्रृंगिबेराधिपुल् सेरि सेविंप
धरणीतनूजयु दानु राघवुड़ु । धरणि पै दृणशय्य दग विश्रमिंचें
शरचापहस्तुडै सौमित्रि यंत । गरमोप्प दमयन्न गातु नन् बुद्धि
बदुनालुगेंड्लुनु बगलुनु रेयि । निदुर वोवक युंड नियमंबु सेसि
तम यन्न सेज्जकु दव्वुल निलिचि । यमल मानसुड़ु नै यटु गोलिचियुंड
ना रात्रि निद्र मायारूपु दालिच । धीरु डालक्ष्मण देवुनि जेरि
"येनु निद्रादेवि; येपंड देल्पु । मा नाकु निकेंट्लु मानाढ्य! यंत
विधि विधिचेंनु वेंट वेंट वर्तिंप । विधमेदि निन्नु ने विड़ुचुट किंक
ननिन "नूर्मिळयंदु नहरहंबुलुनु । जनि युंड़ु; मंत नीसमयंबु दीर्चि
वच्चिन गैकोंदु वरुस नि" न्ननिन । निच्च "नौ गा" कंचु नेगें निद्रयुनु
१०६०
नलरुचु "नी देवतानुग्रहंबु । गलिगें ना" कनुचु लक्ष्मण देवुड़ुंडि
हंस तूलिक शय्य यंदुंडु भोगि । पांसु पल्लवमुल बवळिंचि यिपुड़ु

(और) स्वयं और सौमित्र ने समुचित पद्धति से गुह के शोक का शमन किया। (इतने में) अर्क (सूर्य) अस्त हुए तब विहित (नियमित) सन्ध्या समय की विधियों को शोभा से सम्पन्न किया। ॥ १०५० ॥

गंगा के उदक से (अपनी) क्षुधा को शान्तकर, सूत (सुमन्त्र) (तथा) श्रृंगिबेरपुर के अधिपति के सेवा करते रहने पर, धरणीतनूजा (सीता) के साथ राघव ने धरणि पर, तृणशय्या पर विश्राम किया। शर-चाप-हस्त हो सौमित्र तब अधिक शोभा से 'मैं अपने अग्रज की रक्षा करूँगा' इस विचार से चौदह वर्ष तक दिन-रात (कभी) अनिद्र रहने का नियम करके अपने अग्रज की शय्या से दूर खड़े रहकर, अमलमानस वाले हो सेवा में रत थे। उस रात को निद्रा ने मायारूप धारणकर धीर लक्ष्मणदेव के निकट पहुँचकर कहा—'मैं निद्रा देवी हूँ। हे मानाढ्य (मानधनी)! मुझे समझाकर बताओ। विधि ने निर्देश दिया है (जागरण के बाद निद्रा का)। तुम्हें छोड़कर जाने का विधान क्या है?' (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण ने कहा)—'जाकर अहरह (रातदिन) ऊर्मिला में जा रहो। तब इस समय (प्रतिज्ञा) की पूर्ति करके, लौटकर, मैं तुम्हें लगातार ग्रहण करूँगा।' (कहने पर) 'ऐसा ही हो' कहकर निद्रा चली गई ॥१०६०॥

'इस देवता का अनुग्रह मुझे प्राप्त हुआ है' कहते हुए लक्ष्मण प्रसन्न भाव से रहे। हंसतूलिकातल्प (हंस के कोमल पंखों से बनाई गई कोमल शय्या) पर सोनेवाला भोगी धूल भरे पल्लवों पर लेटकर अब कठिन

कऱ्कुराळ्ळॊत्तंग गळवळ पडुचु । गुरुवॆट्टि निद्रचे गूर्कि युंडगनु
सुकुमार तारुण्य शोभनाकृतुलु । प्रकटित धैर्य संपन्नुलै युन्न
या रामसीतलत्यंत दुःखमुल । गूरॆडु तॆऱगॆल्ल गुहुनकु जॆप्पि
यडरि कौसल्ययु ना सुमित्रयुनु । बडियॆडि शोकंबु पलुमाऱु जॆप्पि
सॊरिदि निद्दऱु गूडि शोकिंचुचुंड ।नरुणोदयंबय्यॆ; नंत राघवुडु १०६७

जटाधारियै रामुडु सुमंत्रुनि वीड्कॊनुट

नेमंबु लन्नियु निष्ठतो दीर्चि । सेममेर्पड गुहुचे मर्ऱिपालु
दॆप्पिचि कोमल दीर्घकेशमुलु । विप्पि या वैदेहि विवशयै तूल
ना मर्ऱिपाल चे नंदंद तडिपि ।सौमित्रियुनु दानु जड लॊप्प दाल्चि
१०७०

घनुडु राघवुडु वैखानसवृत्ति । ननुजुंडु दानु बायनि निष्ठ बूनि
"यनघ! सुमंत्र! र"म्मनि चेर बिलिचि । "तनरार रथ मॆक्क दगदु मा;
किक
नरदंबु गॊनि ययोध्यापुरंबुनकु । मरलि पॊ; म्मधिपु नॆम्मदि गॊल्चियुंडु
पार्थिवेश्वरुनकु बरग दल्लुलकु । नर्थितो म्रॊक्कितिमनि चप्पु" मनुडु
"नेमिटि की माट लिटमीद" ननुचु।सौमित्रि यधिक रोषमुन निट्लनियॆ
"भूमीशु डालिपुन नीति मालि । येमियु बरिकिंप किटु सेसॆ मम्मु;

पत्थरों के चुभने पर परेशान होते हुए भी, खर्राटे भरते हुए निद्रा में मग्न है। (उस समय) सुकुमार-तारुण्य-शोभन की आकृति वाले, प्रकट-धैर्य-सम्पन्न वाले उन राम (और) सीता को अत्यन्त दुख प्राप्त होनेवाला समस्त विधान (लक्ष्मण ने) गुह को बताया। व्याकुल कौसल्या और सुमित्रा के शोक के बारे में भी कई बार बताया। (तब) दोनों मिलकर शोक कर रहे थे कि अरुणोदय हो गया। तब राघव, ।। १०६७ ।।

जटाधारी होकर राम का सुमन्त्र को बिदा देना

समस्त नियमों को निष्ठा से सम्पन्न करके, क्षेम (कल्याण युक्त) हो, इस विधान से गुह से वट का दूध मँगवाकर, कोमल दीर्घ केशों को खोलकर, बड़ के उस दूध से जहाँ-तहाँ भिगोकर, सौमित्र के साथ स्वयं शोभा से जटाएँ धारण कीं। इसे देख वैदेही अवश हो लड़खड़ाती रही। ।। १०७० ।।

महान् राघव ने अनुज के साथ अटल निष्ठा से वैखानस वृत्ति (वानप्रस्थाश्रम का एक भेद) ग्रहण की। 'हे अनघ ! सुमन्त्र ! आओ'

दन यालु दानुनु दन कूर्मि कॊडुकु । घन राज्य भोगमल् गैकॊनु गाक!
यनि येनु जॆप्पिति ननि पल्कु मीवु ।चनु'' मन विनि रामचंद्रुडु गिनिसि
''मानु सौमित्रि! '' ''सुमंत्र! नी विंक। भूनाथुतो निवि पुट्टिंपवलव;
दा नृपुडिवि विन्न नधिक दीनाय । मानमानसुडु नै मऱि पॊक्ककुन्नॆ?
१०८०

यनिन सुमंत्रु डत्यंत शोकमुन । मुनिगि भीतिल्लि रामुनि जूचि पलिकॆ
''गानल मिमु द्रोचि कडु दीन वृत्ति। ने नयोध्यापुर मेमनि चॊत्तु ?
नेमनि चॆप्पुदु नीवार्त पतिकि । नेमनि कॊनि पॊदु नी शून्य रथमु?
नेमनि कौसल्य नेनूऱडिंतु । नेमनि कैक मो मेनु वीक्षितु ?
वनमुल केनुनु वच्चॆद गाक'' । यनिन रामुडु नव्वि यातनि जूचि
''कडक तो नेमु गंगानदि दाटि । यडवुल सॊच्चिचति मनु वार्त गैक
नीवु सॆप्पिन गानि निजमुगा गॊनदु। नीवु शोकिंपक नॆम्मदि बॊम्मु

कह निकट बुलाकर कहा—'अब हमें रथ पर आरूढ नहीं होना चाहिए। रथ को लेकर (अब तुम) अयोध्यापुर को लौट जाओ। शान्तभाब से अधिप (राजा) की सेवा करते रहो। कहो कि मैंने पार्थिवेश्वर (राजा) (तथा) माताओं को प्रेम से प्रणाम किया है।' (ऐसा) कहने पर 'अब भी ऐसी बातें क्यों ?' कहते हुए सौमित्र अधिक रोष से यों बोले—'भूमीश ने पत्नी के आदेश पर, नीति छोड़, (आगे-पीछे) कुछ न सोचकर, हमारी यह दशा कर दी है। अपनी पत्नी, अपने लाडले पुत्र के साथ वे महान् राज्य भोग ग्रहण कर लें। उनसे कह दो कि मैंने ऐसा कहा है। जाओ।' (ऐसा) कहने पर रामचन्द्र रुष्ट हो बोले—'हे सौमित्र ! छोड़ो (इन बातों को)।' (सुमन्त्र से बोले) 'हे सुमन्त्र ! तुम अब भूनाथ से ये बातें न कहना। यदि नृप इन्हें सुनें तो (क्या और) अधिक दीनायमान मानस हो और अधिक दुखी नहीं होंगे ?' ॥ १०८० ॥

सुमन्त्र अत्यन्त शोक में मग्न हो, भीत हो, राम को देख यों बोला—'काननों में आपको ढकेलकर, अधिक दीन - भाव से मैं अयोध्यापुर में कैसे प्रवेश करूँगा ? पति (राजा) को यह समाचार कैसे दूँ ? इस शून्य रथ को कैसे ले जाऊँ ? कौसल्या को सान्त्वना कैसे दूँ ? कैकेयी के मुख को किस विधि देखूँ ? मैं भी वन में आ जाऊँगा।' (ऐसा) कहनेपर राम हँसे (और) उसे देखकर कहा—हमने गंगानदी पार करके, जंगलों में प्रवेश किया, यह समाचार जब तक तुम (स्वयं) जाकर कैकेयी को नहीं बताओगे, तब तक वे इसे सत्य नहीं मानेंगी। तुम शोक न करके शान्तभाव से जाओ। मेरे बदले तुम नीतिवाक्य

ना मारुगा नीवु नयवाक्यसरणि । वेमारु दॆलिपभूविभु गॊलिचियुंडु"
मनवुडु रथमॆक्कि यति दीनुडगुचु । जनियॆ सुमंत्रुडु साकेत पुरिकि १०८९

रामादुलु गंग दाटि यडवुल केगुट

नंत राघवु डयोध्यापुरि कपुडु । नंतरंगंबुन नतिभक्ति म्रॊक्कॆ १०९०
नडुम जानकि गंग नटु चूचि म्रॊक्कि । कडुवेड्क यॆसगगा गरमुलु मॊगिचि
"दशरथेश्वरुनाज्ञ धरणि वर्जिंचि । दशचॆंडि रामुडु दंडक केगु
बदुनालुगेडुलु भव्य वृत्तुलनु । विदितंबुगा नॆनु वीरितो गूड
संचरिंचॆद; नंत सॊमित्रि येमु । नंचितशुभमु चे नलरु वेडुकल
वच्चिन नीकुनु वलनॊप्प गानु । निच्चॆद गोवु लनेकमुल् वस्त्र
दानमृष्टान्नादि दानंबुलमर । गानु भूसुरुलकु गानुक नित्तु;
सुरघटल् वेयिंटि शुद्धान्न मांस । मरय बॆट्टॆद नम्म!" यनि भक्ति गॊलिचि
भवभंग धवळांग भवमौळिसंग । नवनिज या गंग नर्थि प्रार्थिंचॆ,

सरणि (पद्धति) से बार-बार बताते हुए भूविभु की सेवा करते रहो ।' ऐसा कहने पर रथ पर चढ़कर, अतिदीन होते हुए सुमन्त्र साकेतपुरी गया । ॥ १०८९ ॥

रामादि का गंगा को पारकर जंगलों में जाना

तब राघव ने अयोध्यापुरी को अन्तरंग में अतिभक्ति से प्रणाम किया । तब जानकी ने गंगा की ओर देखकर प्रणाम किया और बड़े हर्ष से हाथ जोड़कर (कहा) 'दशरथेश्वर की आज्ञा से धरणि को छोड़, दशा के फिरने पर, राम दंडक (वन) जा रहे हैं । चौदहवर्ष भव्य वृत्तियों से, विदित रूप से, मैं इनके साथ संचरण करूँगी । तब (अवधि के समाप्त होने पर) सौमित्र (और) हम अंचित शुभ, हर्षोल्लास से आयेंगे तो तुम्हें प्रेम से अनेक गाएँ दूँगी । भूसुरों को वस्त्र, दान, , मृष्टान्न आदि दान ठीक ढंग से उपहार के रूप में दूँगी । हे माता! एक हजार सुरघटाओं में शुद्धान्न और माँस दूँगी ।' ऐसा कहकर भक्ति से सेवाकर, भवभंग (संसार के पापों को नष्ट करनेवाली), धवलांग (धवल शरीरवाली) भवमौलिसंग (शिवजी के जटाजूट में निवास करनेवाली) उस गंगा की प्रेम से अवनिजा (सीता) नें प्रार्थना की । गुह की लाई हुई नौका पर

गुहुडु वॆंट्टिन योड गॊमरॊप्प नॆक्कि । यहिमांशुकुलुलंत नागंग दाटि
गुहुनि संभाविंचि गुहु वीडुकॊलिपि । गुहुडु सॆप्पिन त्रोव गॊमरॊप्प ब्रीति
११००
मुंदऱ गूर्मि तम्मुडु वॆन्क दानु । सुंदरि नडुचक्कि जूपट्ट गदलि
वनचरमृगमुल वरुस जानकिकि । गनुपट्ट जूपुचु घनुडु राघवुडु
सनि यॊक्क मौनि याश्रममुनु जेरि । मुनिपति कतिभक्ति म्रॊक्कि यिम्मुलनु,
ननघुडा राघवु डनियॆ ग्रम्मऱचु । “मुनिनाथ! सॆलविम्मु मुदमुतो” ननिन
वारल गन्गॊनि, वल्कलादिकमु । गारवंबुनु बॆंचगा बल्कॆ मौनि
“येनॆऱिंगिति मीर लिटवच्चु पनिनि । ई दिन मिंदुंडि यॆल्लि पोवलयु
रघुकुलोत्तंस ! यी रमणीयमैन । यघनाश मैनट्टि याश्रमभूमि
निलुवुडु नेटि” कनिन रघूत्तमुडु । पलिकॆ ग्रम्मऱ मुनिपति किट्टुलनुचु
“निक्कड माकुंड नेल ? पोयॆदमु; । अक्कट! मुनिनाथ! यदियुनु गाक
मा तल्लि दंड्रुलु मा पुरवासु । लेतॆंचि ममु जूड निट वत्तु” रन्न १११०
ना माट कलरि यिट्लनियॆ नम्मौनि । “यी माट निश्चयंबे राम! यिपुडु
पद” मनि सॆलविच्चि परमपावनुडु । वदलनि मुदमुन वारल कनियॆ

शोभा से आरूढ होकर, सूर्यवंशी (राजकुमार) तब उस गंगा को पारकर, गुह की संभावना (आदर) कर, गुह को बिदा कर, गुह के बताये मार्ग पर शोभित प्रीति से— ।। ११०० ।।

—आगे लाडले अनुज, पीछे आप स्वयं, मध्य में सुन्दरी के दीखने पर चल पड़े । वनचर मृगों की पंक्ति को जानकी को दिखाते हुए महान् राघव ने जाकर, एक मुनि के आश्रम पहुँच, मुनिपति को अतिभक्ति से प्रणाम किया । प्रेम से उस अनघ (पुण्यात्मा) से राम फिर यों बोले—'हे मुनिनाथ ! मोद से (हमें) आज्ञा दीजिए ।' ऐसा कहने पर, उन्हें देखकर, वल्कलादि के गौरव को बढ़ाने पर मुनि बोले—'आपके यहाँ आने के कार्य के बारे में मैं जान गया हूँ । (आपको) आज यहाँ रहकर कल जाना चाहिए । हे रघुकुलोत्तंस (रघुकुलशिरोमणी) ! इस रमणीय (तथा) अघनाशक आश्रमभूमि में आज ठहर जाइए ।' ऐसा कहने पर रघु-उत्तम ने मुनिपति से फिर इस प्रकार कहा—'यहाँ हमें क्यों रहना चाहिए ? (रहना उचित नहीं है ।) जायेंगे । यही नहीं, हाय मुनि-नाथ ! हमारे माता-पिता (तथा) हमारे पुरजन हमें देखने के लिए यहाँ आ जायेंगे ।' ।। १११० ।।

"जननाथ! याऱु योजनमुलु नडुव । ननु वोंद जित्रकूटाद्रि जेन्नोंदु,"
ननवुडु राघवु 'डौ गाक!' यनुचु । जनकजा सौमित्रि सहितुडै यप्डु
चनिचनि मूडु योजनमुलु गडचि । चनि सुधर्मंदमनु सरसि नाडुंडि
या रात्रि भूपुत्रि यति मृदुगात्रि । कारडविनि नोंटिगा शयनिंचि
युन्न चंदंबु दानुन्न चंदंबु । गन्न तल्लुलकैन कडिदि शोकंबु
कैकेयि कोर्कुलु गडमुट्टुटयुनु । भूकांतु सत्यंबु भूप्रजवगयु
गन्नीरु दोरुग राघवुडु लक्ष्मणुन । कन्नियु जेप्पगानट वेगे ब्रोद्दु
मनुवंशतिलकंबु मरुनाडु गदलि । मुनुमिडि योजनंबुलु मूडु गडचि
११२०
यनघ गंगानदि यमुनयु गूडि । कन नोप्पु ना प्रयागकु बोयि, यंदु
मुनिलोकनुतुडैन मुनिभरद्वाजु । गनि नमस्कारमुल् गाविंचि तनदु
वृत्तांतमंतयु विन्नविंचुटयु । नत्तपोधनमुख्यु डा राघवुलनु
दीविंचि रघुरामदेवु वर्तनमु । भाविंचि यच्चेरुपडि तत्त्वमेऱिगि
कंदमूल फलादिकंबुल वारि । बोंदुगा संतुष्टि बोंदिंचि प्रेम
नम्मुनि पूजिप ना रात्रि यंदु । नेम्मि दीपिंपग निल्चि मर्नाडु

उन बातों पर प्रसन्न हो उस मुनि ने यों कहा—'हे राम ! यह बात तो निश्चित ही है । अब चलो ।' यों आदेश देकर, परमपावन (मुनि) ने न छूटनेवाले मोद के साथ उनसे (यों) कहा—'हे जननाथ ! छः योजन चलने पर समुचित ढंग से चित्रकूटाद्रि विराजमान है ।' ऐसा कहने पर राघव 'ऐसा ही हो' कहते हुए, जनकजा (और) सौमित्र के सहित हो तब चल-चलकर, तीन योजन पार कर, उस दिन 'सुधर्मंद' नामक सर के निकट पहुँच उस दिन वहीं ठहर गए । उस रात को अतिमृदु गात्र वाली भूपुत्री के अकेली ही सोते रहने के ढंग को (तथा) अपनी दशा को, अपनी माताओं को प्राप्त अधिक शोक, कैकेयी की इच्छाओं की पूर्ति, भूकान्त (राजा दशरथ) के सत्य (निष्ठा), भू प्रजा के दुख आदि के बारे में राघव ने आँसू बहाते लक्ष्मण को कह सुनाया । ऐसे ही रात बीती । मनुवंशतिलक (मानवश्रेष्ठ) दूसरे दिन निकलकर, आगे बढ़कर तीन योजन पार कर, ।। ११२० ।।

—अनघ (पवित्र) गंगानदी और यमुना के मिलकर देखने में सुन्दर लगनेवाले प्रयाग गये । वहाँ मुनिलोकनुत (मुनियों के समूह से प्रशंसित) भरद्वाजमुनि को देखकर, नमस्कार कर, अपने समस्त वृत्तान्त का निवेदन किया । उस तपोधन-श्रेष्ठ ने उन राघवों को आसीसा, रघुरामदेव के व्यवहार पर विचार कर आश्चर्यचकित हुए (और) तत्त्व (असली बात)

घननिष्ठ संध्यादि कर्ममुल् दीर्चि । मुनुल याशीर्वादमुलु साल बडसि
यरुदैन चित्रकूटाद्रिकि दॆरुवु । वरपुण्युडगु भरद्वाजुचे नॆरिगि
यरुगुचो रामुडय्यडवुल नडुम । नुरुचापरवमुन कुलुकुचु बाऱु
मृगमुल जूपुचु मेदिनीसुतकु । नगवु बुट्टिंचुचु नडतॆंचु नॆडल ११३०
नलसि डस्सिन चोट नवनीतनूज । निलिचिन चोटनु निलिचि
तोड्कॊनुचु
गरमर्थि बॆक्कु दुर्गंबुलु गडचि । वरपुण्युलट सिद्धवटमु नीक्षिंचि
सीत यप्पुडु कार्यसिद्धुलु गोरि । या तरुवरमुन कंजलिसेसि
प्रार्थिंप नप्पुडा पार्थिव तनयु । लर्थितो यमुनामहानदि दाटि
या रात्रि यंदुंडि यम्मरु नाडु । घोराटवुल सॊच्चि कुशल मार्गमुन
वलनॊप्प जनि माल्यवनि सुट्टुबाऱि । यलघु संयमुलकु नाटपट्टगुचु
सललित-तरुलता-सानु-कूटमुलु । सॆलुवु दीपिंचिन चित्रकूटाद्रि ११३७

चित्रकूटमुन बर्णशालवासमु

गनि यॆक्कि यंदुन्न घन तपोधनुल । गनि म्रॊक्कि मिगुल सत्कारमुल्
वडसि

जान गये । कन्द-मूल-फल आदि से उन्हें समुचित ढंग से सन्तुष्ट करके प्रेम से उनकी पूजा (सत्कार) की । उस रात को वहाँ बड़े प्रेम से (राघव) रहे । दूसरे दिन बड़ी-निष्ठा से सन्ध्या आदि कर्मों से निवृत्त होकर, मुनियों के आशीर्वादों को अधिक (मात्रा में) प्राप्त किया । अनुपम चित्रकूटाद्रि के मार्ग को वरपुण्य वाले भरद्वाज से जानकर, चल पड़े । उन काननों में धनुष के अधिक (टंकार) रव से इठलाते भागने वाले मृगों को दिखाते हुए मेदिनीसुता (जानकी) का मनोरंजन करते हुए जाते समय— ।। ११३० ।।

—जहाँ स्वयं थक जाते या अवनीतनूजा थककर रुक जाती वहाँ (थोड़ी देर के लिए) ठहर जाते (फिर) उन्हें साथ लेकर, अधिक प्रीति से अनेक दुर्गों (वनों) को पारकर, उन श्रेष्ठ पुण्यवानों ने वहाँ सिद्ध-वट (वृक्ष) को देखा । तब सीता ने कार्यसिद्धि की कामना कर, उस तरुवर को हाथ जोड़कर प्रार्थना की । तब उन पार्थिव (राज) तनयों ने प्रेम से महानदी यमुना को पार कर, उस रात को वहीं ठहरकर, दूसरे दिन घोर काननों में घुसकर, कुशल (सुरक्षित)-मार्ग से, शोभा से चले । (वहाँ उन्होंने) माल्यवती (नदी) से घिरकर, अलघु (महान्) संयमियों के लिए निवास स्थान हो, सुललित तरु-लता (युक्त) सानु (घाटी)-कूट (समूह) से शोभित चित्रकूट पर्वत को— ।। ११३७ ।।

यम्मुनींद्रुल चेत ननुमति वडसि । तम्मुडु दानु नत्तऱि महीजमुल
कॊम्मलु रॆम्मलु गॊट्टि वितगनु । सम्मदंबुन बर्णशाल गाविंचि ११४०
कृष्णसारमु जंपि गृहशांतिहोम । मुष्णांशुकुलुडु शास्त्रोक्ति मै जेसि
यंदु ब्रवेशिंचि या पर्णशाल । चदंबु मॆच्चुचु साध्वियु दानु
मुनुल सेविंचुचु मुनुलॆल्ल बॊगड । मुनिचरित्रंबुल मॊदिंचुचुंडॆ; ११४३

काकासुर कथ

दन तॊंड यॊकनाडु तलयंपिगाग । नुनिचि रामुडु गूर्क नुर्वीतनूज
यॊगि गंदमूलादुलुपहारमुनकु । दग नायितमु सेयुतऱिभीतिलेक
कडक तो नॊक दुष्ट काकंबु सेरि । यॊडियुचु गासि सेयुचुनुन्न जूचि
सीत या काकंबु जॆच्चॆर जोप । नेतॊऱंगुन बोव कीडाड जूचि
चनुगवनडुचक्कि जंचुन बॊडुव । घन शोणितबॊल्कगा निद्रदेऱि
कडुनलिग रामुडा काकंबु मीद । वडि निषीकमु बुच्चि वैचॆ; वैचुटयु

चित्रकूट में पर्णशाला निवास

—देख, (उस पर्वत पर) चढ़कर, उसमें स्थित महान् तपोधनियों को देख, प्रणामकर, अधिक सत्कार प्राप्त कर, उन मुनीन्द्रों से अनुमति प्राप्त की। तब अनुज और स्वयं महीजों (वृक्षों) के डाल (और) पत्ते काटकर, विलक्षण रूप से, सम्मोद रूप से पर्णशाला का निर्माण किया। काले हिरन को मारकर, उष्णांशुकुल (सूर्यवंशी) ने शास्त्रोक्त रूप से गृहशान्ति-होम किया। उस (पर्णशाला) में प्रवेशकर, उस पर्णशाला के विधान की प्रशंसा करते हुए, साध्वी (सीता) और स्वयं मुनियों की सेवा करते हुए, सभी मुनियों के प्रशंसा करने पर, मुनि चरित्रों को सुन मुदित होते रहे। ॥ ११४३ ॥

काकासुर की कथा

एक दिन अपनी जाँघ को तकिये के रूप में रखकर राम के सोने पर उर्वीतनूजा (सीता) लगन के साथ कंदमूल आदि को उपाहार (नाश्ते) के लिए, ढंग से तैयार कर रही थी। (उस समय) निर्भय हो, साहस के साथ एक दुष्ट कौआ निकट आकर, (बार-बार) ऊपर से उड़ते हुए, पीड़ा पहुँचा रहा था। (उसे) देख सीता ने उस कौए को शीघ्र भगाया। वह किसी भी तरह गया नहीं (और) इधर-उधर देखकर, (सीता के) स्तनों के मध्यभाग में चोंच से मारा। (तब) अधिक शोणित (रक्त) बह चला। निद्रा से जागकर, अधिक क्रुद्ध हो राम ने उस काक पर, शीघ्र बाण चलाया। (बाण) चलने पर, (वह बाण) उसे न छोड़कर

विडुवक यदि दानि वॆनुवॆंट दगुल । दडयक यदि जगत्त्रय मॆल्ल
दिरिगि ११५०
कावु कावनुचु दिक्पालुर ब्रह्म । देवुनि नम्महादेवु ब्रार्थिंप
वारलु "तमचेत वारिंप बडुनॆ । श्रीराम शर ?" मन्न शीघ्रंबॆ मगुड
जनु दॆंचि मऱि तन्नु शरणु सॊच्चुटयु । घनमैन कृपतोड गाकंबु जूचि
"ना यस्त्र मॆंदु नॊन्नडु रित्तवोदु । नी यंग मॊकटि दानिकिनिच्चि पॊम्म"
यनवुडु दन नेत्र मा यस्त्रमुनकु । घन भक्ति तो निच्चि काकंबु सनियॆ
जॆलगि राघवुडंत सीतचेनुन्न । फलमुलु देवतार्पणमुलु सेसि
या युन्न फलमुल नंदऱु दृप्तु । लैयुंडिरिम्मुल; नंत नक्कडनु ११५७

अयोध्यकु सुमंत्रुनि तिरिगि राक

रामु वर्तनमु लारय मूडु नाळ्लु । नॆमिंचि गुहु चॆंत निलिचि मर्नाडु
मलगनि वगल सुमंत्रुडु साल । नलयुचु जनि ययोध्यापुरि जॊच्चि
सहज वैभवमुलु सर्वंबु नॆडलि । रहि सॆडियुन्न या राज-मार्गमुन
११६०

उसके पीछे पड़ा। कहीं देरी न कर उस (कौए) के समस्त जगत्रय में घूमकर, ।। ११५० ।।

—काँव-काँव[1] करते हुए दिक्पालों, ब्रह्मदेव (तथा) महादेव से प्रार्थना करने पर, उन्होंने कहा—'(क्या) हमसे श्रीराम का शर निवारित होगा ? (नहीं)।' (उनके ऐसा) कहने पर शीघ्रता से लौट आकर, अपनी शरण में आने पर, महान् कृपा से युक्त होकर, (उस) काक को देखकर (राम बोले)—'मेरा अस्त्र कहीं (और) कभी खाली नहीं जाता। अपना एक अंग उसे देकर जाओ।' ऐसा कहने पर अपना (एक) नेत्र उस अस्त्र को अधिक भक्ति से देकर काक चला गया। (तब) प्रसन्न हो राघव ने सीता के हाथ के फलों को देवतार्पण कर, उन शेष फलों से सभी आनन्द से तृप्त हो रहे। तब वहाँ— ।। ११५७ ।।

अयोध्या को सुमन्त्र का पुनरागमन

—राम की गतिविधि जानने के लिए तीन दिन नियामन कर, गुह के पास रहकर, दूसरे दिन घोर दुख से अधिक व्याकुल होते हुए सुमन्त्र ने जाकर, अयोध्यापुरी में प्रवेश किया। समस्त सहज वैभवों से रहित हो, श्रीहीन उस राजमार्ग में, ।। ११६० ।।

---

[1] तॆलुगु में 'कावु' का अर्थ 'रक्षा करो' भी होता है।

नरुगुचो बुरजनुलारथध्वनुलु । परिकिंचि “यिदे रामभद्रुंडु वच्चे”
ननि सुमंत्रुनि जेर नरुदेंचि रथमु । गनुगोंनि रघुरामु गानक वगचि
“क्रूरकर्मुंडु रामु गोंनिराक डिचि । यीरित्तरथमेल निट देच्चे” ननुचु
गुंपुलु गुंपुलु गोंनि तन्नु दूर । सोंपेदि रामुनि सुद्दिसेप्पुचुनु
राजगेहमु सेरि रथ मंत डिग्गि । राजुन्न यंतः पुरंबुन केगि
धूळि गप्पिन मेनि तो बाष्पपूर । लोल नेत्रमुलतो लोलोन बोंदलु
कडलेनि वगलतो गौसल्य यिंट । बडि प्रलापिंचु भूपति गांचि, म्रोक्कि
“भूमीश ! मी पुण्य पुत्त्ररत्नंबु । रामुडु सत्य पराक्रम शालि
सौमित्रियुनु दानु जडलोप्प दाल्चि । तामसिपक गंग दाटि काल्नडल
ननघुडै चित्रकूटाद्रिकि बोये” । ननवुडु दशरथुडात्म शोकिंचि ११७०
“यनघ! सुमंत्र! र” म्मनि चेर बिल्चि। तनयुनि चरित मंतयु जाल नडिगि
“गौरवमति नीवु गल्गिति गान । मा रामचंद्रु सेममु लेल्ल विंटि
गन्नुल करवु शोकंबुनु दीर । जेन्नार नतनि जूचिन गानि यकट!

—जाते समय, पुरजनों ने उन रथ की ध्वनियों को ध्यान से देख (सुन) कर, (यह कहते हुए कि) ‘यह देखो, रामभद्र आये हैं’, सुमन्त्र के पास आये। (आकर) रथ को देखकर, रघुराम को न देखकर, दुखी होकर, कहने लगे—‘यह क्रूरकर्मी राम को साथ न लाकर, (वहीं) छोड़कर, इस खाली रथ को यहाँ क्यों लाया ?’ ऐसा भीड़ बाँधकर प्रजा की अपनी निन्दा करने पर, सुन्दरता से राम के वृत्तान्त को बताते हुए, राजगृह पहुँचकर, रथ से उतर पड़ा। राजा के अन्तःपुर में जाकर, धूल से ढँके शरीर, बाष्पपूरित लालनेत्रों से मन ही मन व्याकुल होते हुए, अन्तहीन दुख से, कौसल्या के घर पड़े, (और) विलाप करनेवाले भूपति को देखा, (देखकर) प्रणाम कर कहा—‘हे भूमीश ! आपका पुण्यशाली पुत्ररत्न, सत्य पराक्रमशाली राम सौमित्र के साथ शोभा से जटाएँ धारणकर, विलम्ब किये बिना, गंगा को पारकर, पवित्र होकर, पैदल चित्रकूटाद्रि को गये हैं।’ ऐसा कहने पर दशरथ मन में शोककर, ॥ ११७० ॥

—‘हे अनघ ! हे सुमन्त्र ! आओ’, कह निकट बुलाकर, पुत्र के चरित्र के बारे में अधिक पूछकर कहा—‘गौरव मतिवाले तुम्हारे होने से हमारे रामचन्द्र के समस्त कुशल (समाचार) सुन लिये। नेत्रों का अकाल (दर्शन का अभाव) (तथा) शोक कम हो जाये, ऐसा (तदर्थ) शोभा से उसे देखे बिना हाय ! इस शरीर में प्राणों को धारण नहीं कर सकता। (मुझे) ले जाकर रघुराम से मिला दो न’। (ऐसा) कहने

तनुवुन ब्राणमुल् धरियिंप जाल । गोंनि पोयि रघुरामु गूर्पवे" यनिन
"विनु नीवु श्रीरामु वेंनुकोंनि पोव । गनि प्रज शोकिंचु गैक दूषिंचु
निदि विचारंबुगा; दिदि बुद्धिगादु । मदि निंत वगवकु मनुजेंद्र! नीवु;
धैर्यंबु वदलकु; धर्मंबु निलुपु । मार्युलु गोंनियाड ननघुंडवगुमु
अऱलेक यडवुल नखिल भोगमुलु । मऱचि नीसुतुलु नेंम्मदि नुन्नवार"
लनि पलिक लक्ष्मणुंडन्न वाक्यमुलु । विनिपिंचुटयुनु भूविभुडु शोकिंचि
"सौमित्रि माट निजंबु; नेनट्टि । कामांधुडनु, ग्रूरकर्मुंड, खलुड ११८०

ननि सुमंत्रुनि बल्कि यटु वीडुकोंलिपि । तनमदि शोकिंचु धरणीशु जूचि
"हा राम! हा राम! हा राम! यनुचु । श्रीरामु बलुमाऱु जिंतिप नेल?
येल नटिंचेंद ? वी लेनि शोक । मेल ताल्चेंद? विंत येंऱुगने येनु?
नीवु लोकमुललो निंदकु वेंऱचि । यावल गैकेयि कन्नियु गऱपि
रामु बट्टमु गट्टि राजु गाविंचि । भूमि येलिंचेंद बोंगडोंद ननुचु
नडवुल द्रोयिंचितालिचे बनिचि । कडु दुष्टुडवु, नीकु गलवे धर्ममुलु?

पर (सुमन्त्र ने कहा)—'सुनो, तुम्हारे श्रीराम के पीछे जाने पर, (उसे) देख प्रजा दुखी होगी, कैकेयी निन्दा करेगी। यह (अच्छा) विचार नहीं है, यह (अच्छी) बुद्धि नहीं है। (उचित नहीं है।) हे मनुजेन्द्र! तुम मन में इतना दुख मत करो। धैर्य को मत छोड़ो। धर्म का निर्वाह करो। आर्यजनों के प्रशंसा करने पर पवित्र बनो। बिना (किसी) संकोच के काननों में, अखिल भोगों को भूल तुम्हारे पुत्र शान्ति से हैं।' ऐसा कहकर लक्ष्मण के कहे वाक्य भी सुनाये। भूविभु (राजा) शोककर (बोले)—'सौमित्र की बात सच है। मैं ऐसा ही कामान्ध, क्रूरकर्म (तथा) खल हूँ।' ॥ ११८० ॥

ऐसा सुमन्त्र से कहकर, उधर (उसे) बिदाकर, अपने मन में शोक करनेवाले धरणीश को देखकर, कौसल्या उनकी निन्दा करते हुए कहने लगी—"हे राम! हे राम! हे राम! कहते हुए श्रीराम के बारे में कई बार चिन्ता क्यों कर रहे हो? क्यों अभिनय करते हो? जो शोक है नहीं, उसे क्यों धारण करते हो? इतना भी मैं नहीं जान सकती हूँ? लोक की निन्दा से डरकर, उधर तुमने कैकेयी को सब कुछ सिखा दिया है। 'राम का राजतिलक कर, राजा बनाकर, सराहनीय रूप से भूमि का शासन कराऊँगा' ऐसा कहते हुए, उसे (राम को) पत्नी के द्वारा जंगलों में ढकेल दिया। (तुम) अति दुष्ट हो। तुम्हारे भी कोई धर्म है? (नहीं है।) निन्दा से भीत होकर, प्रयत्न कर, मेरे पुत्र के राजतिलक को रोकने के लिए (कैकेयी ने) कहा है। हे अधिप। कमज़ोर

तिट्टुपाट्टुनकोडि तिविरि़ ना कोंडुकु । पट्टंबु मान्पिप बनिचेंगा कधिप?
सोंपेदि रामुनि स्त्रुक्कक कैक । चंपु मन्ननु बट्टि चंपवे नीवु ?
पेंद्दगालमु नाकु बिड्डलु लेक । पेंद्दयु शोकिंचि पेक्कुलु नोंचि
कडपट नोंक्कनि गनि येनु गोंत ।युडुकारि़ युन्नचो नुंडनीवैति' ११९०
वनि दूरु़ कौसल्य नधिपति सूचि । तन पूर्वकथ येंल्ल दा जेंप्प दलचि
"नीवु सेंप्पिन देंल्ल निजमु गौसल्य । भाविप नेनट्टि पापकर्मुंड;
नोंडल ब्राणमु लिक नुंडवु नाकु । गडु बेंट्टिदमु लाडि कारिंपवलदु;
कौसल्य! ना तोंटि कर्मफलमु । लोसरिंचिन नेल यूरक पोवु ?
दैवंबुनकु नैन दन कर्मफलमु । भाविंचि कुडुवक पायरादेंदु
'नदि येंट्टि' दनिननु नदि चेंप्प जोद्य । मदि देंल्लमिगविनु" मनि चेंप्प
दोंडगें; ११९६

दशरथुडु कौसल्यकु दन शापवृत्तांतमु देंल्पुट

"नाडेंल्ल नेलेंडु ना पिन्नदनमु । नाडोंक्कनाडेनु नडु रेयि बोयि
यरुदैन वेटल नासक्ति दगिलि । शरचापमुलु वूनि सरयुवु पोंत
रे़सि चूडग रानि रेवुचक्ककटिकि । डासिन पोंदललो डागि येनुंड

न होकर, यदि कैकेयी उसे मार डालने के लिए कहे तो क्या तुम राम को पकड़ वध न कर डालोगे ? बहुत समय तक मेरे पुत्र न थे, अधिक दुखी हुई थी। अनेक व्रत कर अन्त में एक (पुत्र) को जन्म देकर, मैं कुछ शान्त बनी रही तो (तुमने मुझे) ऐसा रहने नहीं दिया।" ॥ ११९० ॥

इस प्रकार निन्दा करनेवाली कौसल्या को राजा ने देखा और अपनी समस्त पूर्वकथा स्वयं कहना चाहकर (यों बोले)—'हे कौसल्या ! तुमने जो कुछ कहा, वह सत्य ही है। सोचने पर मैं ऐसा ही पापकर्मा हूँ। अब शरीर में मेरे प्राण नहीं रहेंगे। अधिक परुषवचन कह मुझे सताओ मत। हे कौसल्या ! मेरे पूर्वकर्मफल भोगे बिना कैसे व्यर्थ जायेंगे ? (नहीं टलेंगे।) सोचने पर, दैव (भगवान्) से भी अपना कर्मफल भोगे बिना नहीं रहा जा सकता। (कोई पूछे कि) वह कैसा है (तो) कहने में आश्चर्यजनक है। उसे स्पष्टता से सुन लो।' इस प्रकार (दशरथ) कहने लगे। ॥ ११९५ ॥

दशरथ का कौसल्या को अपना शापवृत्तान्त बताना

'समस्त भूमि पर शासन करते हुए, अपने बचपन में, एक दिन मैं आधी रात को जाकर, अनोखे आखेट में आसक्त होकर, शर-चाप धारण कर, सरयू (नदी) के पास, अनुपम घाट की ओर (निकट) स्थित

नऱिमुऱि मृगकोट्टु लय्येटि नीरु। पऱतॆंचि क्रोलु शब्दमुल चक्कटिकि
१२००

वीनुल दृष्टिंचि वॆस शब्दवेधु। लैन बाणमु लेसि यंदंद चंपि
तनियक कापुन्न तऱि यज्ञदत्तु। डनु नॊक्क मुनिपुत्त्रु डम्महानदिकि
दीममै विधि दन्नु दॆच्चिन वच्चि। करमर्थि नय्येट गलशंबु मुंप
गुदियक वॆस म्रोयु गुट गुटध्वनिकि। नदि मत्तगज मनि यडरि येयुटयु
ना तीव्रशरमप्पुडदरंट गॊन्न। "हा तात! हा मात!" यनु नार्तरवमु
पॊरिबॊरि ना मर्ममुलु गाडि पार। वरमुनि सुतुडिल व्रालि यिट्लनियॆ
"ग्रममॊप्प नडवुल गंदमूलमुलु। नमलुचु दपसिनै ननु गन्न गुरुल
गॊलिचि येरिकि गीडु गोरनि नाकु। गलिगॆने नेडिट्टि कष्टंपु जावु?
ऎट्टिपापात्मुलु नीरात्रुलंदु। नॆट्टन चंपरु नॆऱसि जंतुवुल
बगळुल रतिकेळि बायक मॆलगु। मृगमुल जंप; रिम्मॆयि नोट लेक
१२१०

यॆव्वडॊको! नन्नु नी नडु रेयि। ग्रॊव्वाडि शरमुन गूल्चिन वाडु?
वाडेमिगति बोवुवाडॊको यिक? वाडेमि सेयुनु? वगव ना मृतिकि;

झाड़ियों में मैं छिपा रहा। क्रूर मृग-समूहों के उस नदी के नीर के पास आकर, (पानी) पीने के शब्द को ठीक ढंग से— ॥ १२०० ॥

—कानों से देखकर (सुनकर), झट शब्दवेधी बाण डालकर (चलाकर), जहाँ-तहाँ (मृगों को) मार डाला। (उससे) तृप्त न होकर ताक में था। उस अवसर पर, यज्ञदत्त नामक एक मुनिपुत्र उस महानदी के पास, विधि (नियति) के लाने पर, धैर्य से आया (और) अधिक इच्छा से कलश डुबोया। उस कलश के न डूबने से झट 'गुट गुट' की ध्वनि से (के कारण), उसे मत्तगज समझकर, अतिशयता से (बाण) चलाया। उस तीव्रशर के तब हठात् लगने से 'हे पिता! हे माता!' का आर्तनाद मेरे मर्मस्थानों में बार-बार चुभ गया। (तब वह) श्रेष्ठ मुनिपुत्र पृथ्वी पर गिरकर यों कहने लगा—"क्रम (नियम) से जंगलों में कन्दमूल चबाते (खाते) हुए, तपस्वी होकर, मुझे जन्म देनेवाले गुरुओं की सेवा करते हुए, किसी का अहित न चाहते हुए रहनेवाले मेरी आज ऐसी कष्टप्रद मृत्यु क्यों हुई? कोई भी पापात्मा (क्यों न हो), इन रातों में जन्तुओं का वध नहीं करते हैं (और) दिन (के समय) में रतिकेलि को न छोड़ रहने वाले (रतिकेलि में निरत रहने वाले) मृगों का वध नहीं करते हैं। इस प्रकार— ॥ १२१० ॥

नक्कटा! वृद्धुलै यंधुलै तमकु। दिक्कॆव्वरुनु लेक दीनुलै युन्न
तल्लिदंड्रुलु नेडु दमकैन वगल। वॆल्लि ने तेपल वॆडल नीदॆदरॊ?
'कडु ब्रॊद्दुवोयॆ; नॊक्कडु बोयि तडसॆ।गॊडु' कनि मदि नॆंत गुंदुनो तल्लि?
ननु गन्न तल्लिकि नारामि जॆप्पि। यनुमानपडि यॆंत यडलुनो तंड्रि?
'याटलु मरगि रा' डनि चूतुरॊक्कॊ?। नीटि कंदुव लेमि निलि’चॆ नंड्रॊक्कॊ
ये मनि वगतुरो यी चावु विन्न? नेमि गागलवारॊ यिटमीद वार?
लॆव्व रीयुदकंबु लिच्चॆद रिक? नॆव्वरु प्रोचॆद रिट मीद वारि?
गडगि यी बाण मॊक्कटनॆ मुव्वुरमु। बडिति; मिंकेमनि पलवितु विधिकि? १२२०
ननि विलापिंचुचो ना विलापमुलु। विनि "यॆप्पुडॆप्पुडु विरियुनो तममु?
ऎप्पुडु सूतुनो यिम्महापुरुषु?। निप्पाटु वाटिल्लॆने नेडु नाकु!"
ननुचुंड तुदयिचॆ नंत जंदुरुडु। वनधितो ना शोक वनधि युप्पॊंग

—कौन है वह (जिसने) इस आधीरात (के समय) अधिक तीक्ष्ण शर से मुझे गिरानेवाला? अब वह किस गति (दुर्गित) को प्राप्त होगा? वह भी क्या करेगा (जब मेरा भाग्य ही ऐसा है)? अपनी मृत्यु पर मैं दुखी नहीं होता। हाय! वृद्ध होकर, अन्धे होकर, किसी सहारे के बिना दीन बने माता-पिता, आज अपने को प्राप्त दुख के प्रवाह को किस नौका के सहारे पार करेंगे? 'अधिक समय हो गया। अकेला जाकर पुत्र ने देर कर दी है' ऐसा कहकर माता मन में कितनी व्याकुल हो रही होगी? मुझे जन्म देनेवाली माता को मेरे न आने (की बात) कहकर, सन्देह करते हुए पिता कितना डर रहे होंगे? क्या यह सोच रहे होंगे कि खेलों में लगकर नहीं आया? (अथवा) यह कहते होंगे कि जल के स्थान (घाट) के अभाव से रुक गया? इस मृत्यु का समाचार पाकर, वे किस प्रकार से (कितने) दुखी होंगे? आगे उनकी कैसी दशा हो जायेगी? अब यह उदक उन्हें कौन देगा? अब आगे उनकी रक्षा (पालन-पोषण) कौन करेगा? इस एक बाण से (हम) तीनों की मृत्यु हो गई है। अब विधि की करतूत पर क्या रोऊँ?" ॥ १२२० ॥

ऐसा विलाप करते समय, उन विलापों को सुनकर, मैं सोचने लगा कि 'कब अंधकार छँट जायेगा? इस महापुरुष को कब देखूँगा? मुझे आज यह कैसा कष्ट प्राप्त हो गया?' (ऐसा सोच रहा था कि) तब

जंदुरु डुदयिंप सरयुवु दाटि । यंदु दत्तीरंबुनंदेनु वेदकि
तन चेति कलशंबु धरणि पै वैचि । तन चेक्कु गलश मस्तकमुन जेर्चि
युरमुन वीपुन नुडुगक वेडलु । नुरुरक्तधारल नोडलेल्ल दोगि
वीडिन जडलतो विशिख वेदनल । वाडिन मोमु तो वसुधपै व्रालि
शर मुपदेशमै चन जोच्चिच लोन । बरिकिंचि देहसंबंधंब्रु लणचि
ये कर्ममुल यंदु नीडाडनीक । कैकोनि यिंद्रिय गतु लुज्जगिंचि
कडपटि योगंबु गनि तन्नु मरचि । पडियुन्न योगियै पडियुन्न वानि
१२३०

मुनि कुमारुनि जगन्मोहनाकारु । गनु गोनि बाणंबु गनुगोनि बेदरि
यन्नदीजलमु लेनप्पुडु तेच्चिच । कन्नुलु दुडिचि यंगमुलेल्ल दडिपि
"यक्कट! मुनिनाथ! यडरि नाशरमु । तेक्कलि दाकि वधिचेने निन्नु?
नी नदीजलमुल केल विच्चेसि? ते निक नी पाप मेमिट गडतु?"
ननुचुंड दन कन्नुलल्लन विच्चिच । ननु जूचि तनु जूचि ना भीति जूचि
"नी वेमि सेयुदु? नीकेल वगव? नी वेव्वडवु नाकु निकृति गाविंप?
दैव योगंबुन धरणीश ! नाकु । नी विधि यय्ये; निंकेल शोकिंप?

चन्द्र का उदय हो गया । (उस उदय से) वनधि (समुद्र) के साथ मेरा शोक-वनधि भी उमड़ पड़ा । चन्द्र के उदय होने पर, सरयू को पारकर, उस (नदी) में, उस तट पर मैंने खोजा । (वह) अपने हाथ के कलश को धरणि पर डालकर, अपने गाल को उस कलश के मस्तक से लगाकर, छाती (और) पीठ से न रुककर (अबाध गति से) निकलने वाली उरु (अधिक) रक्त-धाराओं से समस्त शरीर के लथपथ होने पर, खुली जटाओं (तथा) विशिख (बाण) की वेदनाओं के कारण मुरझाये मुख से वसुधा पर पड़ा हुआ था । शर के उपदेश बनकर प्रवेश करने से अन्तरंग का परिशीलनकर देह के सम्बन्धों का दमनकर, किसी कर्म में आसक्त न होकर, प्रयत्नपूर्वक इन्द्रिय की गतियों को रोककर, अन्तिमयोग को प्राप्तकर, अपने आपको भूलकर पड़े हुए योगी के समान पड़े हुए उस— ॥ १२३० ॥

—मुनिकुमार को, जगन्मोहनाकार को देखकर, बाण को देखकर, घबरा गया । उस नदी के जल को ही मैं ले आया, आँखें पोंछकर, सभी अंगों को भिगोकर कहने लगा—'हाय ! हे मुनिनाथ । अतिशयता से मेरे शर ने धोखे से लगकर तुम्हारा वध कर डाला है न ? इस नदी जल के लिए आप क्यों पधारे ? मैं अब इस पाप से कैसे मुक्त होऊँ ?' ऐसे मेरे कहने पर, अपनी आँखों को धीरे से खोलकर, मुझे देखकर, अपने

ने नेनुगनु बुद्धि नेसिति गानि । पूनि नायॆंड गोपमुन नेय वीवु;
एनु ब्राह्मणुड गा; नॆलमि वैश्युनकु । भूनाथ! शूद्रकु बुट्टिन वाड;
नट्टुगान निदि ब्रह्महत्ययु गाट्टु । पादु पाप फलमु निन् ब्रापिंप लेदु; १२४०
नरनाथ! तलककु ना चावु जूचि । यरिगि ना गुरुवुल कंतयु जॆप्पु
नीवु सॆप्पक मुन्न निज योगदृष्टि । भाविंचि चूचि येर्पंड गांचिरेनि
गोपिंचि ननु गन्न गुरुवुलु विन्नु । शापिंप रघुकुलक्षयमु गागलदु
कावुन वारिकि गलशोदकमुलु । वेवेग गॊनिपोयि विनुपिंपु दीनि
भूपाल ! यी कॊंडपॊंत बश्चिमपु । गोपुन नॊक मर्ऱि कॊमरॊंदु चुंडु;
नावटवृक्ष कोटरमंदु रेयि । कावडि घटियिंचि कडु संतसमुन
गुरुतुगा नेनु ना गुरुल नंदुंचि । यरसि पोषण सेय नंदुन्नवारु;
करमॊप्प गुरुवुल ग्रक्कुन डिंचि । परिताप मार्पुमु भयपडकीवु
मनुजेश ! यी यस्त्रमरणंबु नाकु । ननुचित; मी बाण मल्लन बॆऱुकु
मी शरवेदन केनोर्वजाल । ना शरीरमुन ब्राणमु लुंड विक १२५०

को देखकर, मेरी भीति को देखकर (कहा)—'तुम क्या कर सकोगे ? तुम्हें दुख क्यों करना चाहिए ? तुम कौन होते हो, मेरा प्रवंचन करने वाले ? हे धरणीश ! दैवयोग के कारण मेरी ऐसी गति हुई है। अब शोक क्यों करें ? मुझे हाथी समझकर (बाण) चलाया पर चाहकर, क्रोध से तो नहीं चलाया न ! मैं ब्राह्मण नहीं हूँ। हे भूनाथ ! मैं वैश्य और शूद्रा को उत्पन्न हुआ हूँ। ऐसा होने से यह ब्रह्महत्या नहीं है। अधिक पापफल तुम्हें प्राप्त नहीं हुआ है'। ॥ १२४० ॥

—हे नरनाथ ! मेरी मृत्यु को देखकर व्याकुल मत होओ। जाकर मेरे गुरुओं को सब कुछ बताओ। तुम्हारे कहने से पहले यदि वे अपनी योगदृष्टि से सब कुछ सोच-समझकर देख (जान) लें, तो क्रुद्ध होकर, मुझे जन्म देनेवाले गुरु तुम्हें शाप देंगे तो रघुकुल का क्षय (नाश) हो जायेगा। अतः शीघ्र ही कलश का उदक उन्हें ले जाकर दो और यह (समाचार) बता दो। हे भूपाल ! उस पर्वत के निकट पश्चिम की ओर एक बड़ (का पेड़) शोभित है। उस वटवृक्ष के कोटर में, रात के समय कावड़ रखकर, प्रसन्नता से, उसे चिह्न मानकर, अपने गुरुओं को उसमें रखकर, देखभालकर, पोषण कर रहा हूँ। वे वहीं हैं। अधिक शोभा से गुरुओं को झट से उतार कर परिताप को कम करो। भय मत खाओ। हे मनुजेश ! यह अस्त्रमरण (अस्त्र के शरीर में रहते मृत्यु) मेरे लिए अनुचित है। (अतः) बाण को धीरे से निकाल दो।

ननवुडु नेनप्पुडल्लन जेरि । घनमैन शोकाग्नि गालुचु गदिसि
यम्मु वॆऱुक बूनि यट्टु मुट्ट वॆऱचि । क्रम्मऱ दॆगुवमै गडगि कंपिंचि
पनुगॊनु वगलतो बाणंबु वॆऱुक । मुनिकुमारुडु प्राणमुल् वासॆ; नंत
गलगुचु नेनु ना कलशंबुतोड ।जलमुलु गॊनि तदाश्रमभूमि करिगि
यति वृद्धुलै यंधुलै तारनन्य । गतिकुलै निज सुतागमन मुल्लमुल
नॆडपक कोरुचु नॆऱकलु विऱिगि । पडियुन्न पक्षुल पगिदि नट्लुन्न
घन पुण्युलगु वारि गनुगॊनि चेर । जनुदॆंचु नाकालि चप्पुडालिंचि
"यो पुत्त्र! यिट्टु तडवुंडुदुवय्य ! । 'मा पट्टि राडेल मसलॆनो' यनुचु
दलकुचुंडितिमि मी तल्लियु नेनु । निलुतुवॆयॊक चोट नी वितडवु
तनय! नी वॆक्कड दडसितिवय्य! । कनु गॊनगा माकु गन्नुलुनीव
१२६०

यति वृद्धुलगु माकु नाधारमीव । गति लेनि माकु सद्गतियुनु नीवु,
यदि येल पलुक? वेमंटिमि निन्नु? ।नुदकमुल् दॆम्मंटि मो कुमारकुड!"
यनि पल्कु मुनिपल्कु लंतरंगमुन । बॆनगॊनु शोकंबु भीतियु बॆनुप
जॆट्टॆक्कि कावडि शीघ्रंब डिंचि । यट्टिट्टु वडकुचु नति दीन वृत्ति

इस शर की वेदना को मैं सह नहीं सकता। अब मेरे शरीर में प्राण नहीं रहेंगे। ॥ १२५० ॥

ऐसा कहने पर मैंने तब धीरे से निकट जाकर, अधिक शोकाग्नि से तप्त होते हुए, पास जाकर, शर को निकालना चाहा, उधर उसे छूने से डरकर, फिर साहस के साथ प्रयत्न कर, काँपकर, बढ़ते हुए दुख से, बाण को खींच निकालते ही मुनिकुमार के प्राण निकल गये। तब व्याकुल होते हुए मैं उस कलश के साथ जल लेकर, उस आश्रमभूमि (प्रदेश) में जाकर, अतिवृद्ध हो, अंधे हो, किसी अन्य की गति (आधार) के बिना, मन में अपने पुत्र के आगमन को चाहते हुए, पर कटे हुए पक्षियों के समान पड़े हुए महान्‌पुण्यात्मा-स्वरूप उन्हें देखा। निकट आनेवाले मेरे पैरों की आहट को सुनकर (उन्होंने कहा)—'हे पुत्र ! इस प्रकार (कहीं) देरी कर देते हो ? तुम्हारी माता और मैं यह सोचकर व्याकुल हो रहे थे कि हमारा पुत्र अभी तक नहीं आया, कहाँ देरी कर रहा है। इतनी देर तक एक स्थान पर रुका जाता है ? हे पुत्र ! तुमने कहाँ देरी कर दी ? (विचार कर) देखने पर तुम्हीं हमारी आँखें हो। ॥ १२६० ॥

—अतिवृद्ध (बने) हमारे लिए तुम्हीं तो आधार हो। गतिहीन हमारे लिए तुम्हीं तो सद्गति हो। यह (क्या) बोलते क्यों नहीं ? तुम्हें कहा ही क्या है ? हे कुमार ! (केवल) जल लाने के लिए कहा

जॆप्पॆद ननि वच्चि चॆप्पराकुंडि । चॆप्पकपोदनि चॆप्प नूंहिंचि
चलियिंचि गद्गदस्वरमुन वॆडलु । पलुकुलु दडबाटु पडग निट्लंटि;
"दापसोत्तम ! येनु दशरथमेदि । नीपालकुड गानि नी पट्टि गानु
नीचकर्मुलु विन्न निंदिचुनट्टि । नीच कर्ममु नाकु नेडु सिद्धिचॆं;
ने युगंबुल यंदु नॆव्वडेनियुनु । जेयनि पापंबु सेसि मी कडकु
वच्चिति; नेमनि वाक्रुव्वनेर्तु? ।दॆच्चॆ नन् दैवमी तॆंपु सेयुटकु; १२७०
सरयुवु पॊंत निशावेळ वेट । दिरुगुचु मृगमुलेतॆंचु चक्कटिकि
वीनुल दृष्टिचि वॆस शब्दवेधु । लैन बाणमु लेसि यंदंद चंप
नीरुकंदुवनुंडि नी कुमारुंडु । नीरु मुंपग गुंभनिनदमालिंचि
येनुगन् तलपुन नेसिति; नॆरुग । नानति नाकेमि यनघ! मी तनयु
प्राणमुल् गॊनियॆ ना पटु बाण"मनिन । ब्राणमुल् जल्लन बडि मूर्छ वोयॆ
ना मुनि; पत्नियु 'हा पुत्त्र'! यनुचु । भूमि पै बडि रित्त बॊंदि यट्लुन्न
नप्पुडे नडलुचु नल्लन दॆलुप । दॆप्पिरि वारु ना दॆस मोमु लॆत्ति

है'। ऐसा बोलनेवाले मुनि की बातें (मेरे) अन्तरंग में उलझे शोक और भीति को बढ़ा रहे थे। (तब) पेड़ पर चढ़कर शीघ्र काँवड़ को उतारकर, थर-थर काँपते हुए, अति दीन वृत्ति से कह देने का विचार कर (भी) न कह सका, कहे बिना नहीं होगा यह सोच, कह देने का विचार कर, विचलित हो, गद्गद स्वर से निकलनेवाली बातों के लड़खड़ाने पर इस प्रकार बोला—'हे तापसोत्तम ! मैं राजा दशरथ हूँ, किन्तु आपका पुत्र नहीं। नीचकर्मा (भी) सुनें तो निन्दा करें, (ऐसा) नीचकर्म मुझे प्राप्त हुआ है। किसी भी युग में किसी ने (ऐसा) पाप नहीं किया होगा, ऐसा पाप करके, आपके पास आया हूँ। कैसे बोल सकूँ? दैव यह (दुः) साहस करने के लिए मुझे (यहाँ) लाया है। ॥ १२७० ॥

सरयू के पास रात्रि के समय मृगया में घूमते हुए, मृगों के आनेवाले घाट (के पास), कानों से देख (सुन) कर, शीघ्र शब्दबेधी बाण चलाकर जहाँ-तहाँ मार डालता रहा। जल के स्थान पर तुम्हारे पुत्र के (कलश को) पानी में डुबोने पर, कुम्भ (घड़े) के निनद (ध्वनि) को सुनकर, हाथी समझकर (बाण) चलाया। जानता नहीं था। हे अनघ ! (अब) मुझे क्या आदेश है ? उस पटुबाण ने तुम्हारे पुत्र के प्राण लिये हैं'। (ऐसा) कहने पर, प्राणों के ठंडे हो जाने पर, वह मुनि मूर्च्छित हो गया। (उनकी) पत्नी 'हा पुत्र !' कहते हुए भूमि पर गिर कर मानों शून्य को प्राप्त (निश्चेष्ट) हो गई। तब मैंने डरते (-डरते) बताया। (तब) उन्होंने मेरी

"येलय्य! दशरथ! येल शोकाग्नि। गाल मा तनयु देक्कलि दाचितीवु?
अडवुल दपसुलै यंधुलै युन्न। बड्गुल जंपि पापमु गट्टुकोंटि
वडरि नी दगु बाण मदरंट गोन्न। बडुनप्पुडेमनि पलिकेनो कोंडुकु
१२८०
पायनि वेदन ब्राणमुल् विडिचि। पोयेनो? विडुवक पोरलुचुन्नाडो?
मृतिकैन नोंडु निमित्तंबु लेदे? यतिसुतुंडट बाणमट चंप विधिये!
पुडमि वानप्रस्थु बोलियिंचेनेनि। जेंडु निंद्रुडैननु; जेंडडे भूविभुडु?
अवनीश! मा पुत्त्रु नज्ञान बुद्धि। दविलि येसिति गान दगदु मा
कलुग;
मा कुर्ऱ जूडक ममु गोनि कालु। शोकाग्नु लाऱवु; चूपवे वानि;"
नि यनि शोकिंचु नत्तपोधनुल। गोनि पोयि 'वीडे मी कोंडु' कनुटयुनु
"वेडि दयोदार विमल मानसुडु?। वेडि तपोधन विपुल पुण्युंडु?
वेडि सुधीजन विनुत वर्तनुडु?। वेडि निरंतर वेदतत्परुडु?"
ननुचु जेतुलु साचि यंदंद तडवि। तनयुनिपै बडि तल्लि शोकिंचि
तोडल पै नुनिचि नेत्तुट दोगियुन्न। जडललो दल जेर्चि संताप मंदि
१२९०

ओर मुँह करके मेरी निन्दा की। 'क्यों जी ! दशरथ ! तुमने हमको शोकाग्नि में जलाने के लिए हमारे पुत्र को धोखे से (क्यों) छिपाया है ? जंगलों में तपसी हो, अंधे बने ब्रह्मचारियों अथवा निस्साहायों का वध करके पाप कमा लिया है। अतिशयता से तुम्हारे बाण के ज़ोर से लगकर गिरते समय मेरे पुत्र ने क्या कहा ? ।। १२८० ।।

अधिक वेदना से प्राण निकल गये। (अथवा) (प्राणों के) न निकलने से लोट रहा है ? मरण के लिए भी दूसरा कोई कारण नहीं होना चाहिए ? है यति का सुत, रहा बाण, ऐसा मरना भी कोई विधि है ! इस पृथ्वी (लोक) में वानप्रस्थी (आश्रम में जीवन यापन करनेवाले) का वध करे, तो इन्द्र भी नष्ट हो जायेगा। (तब) भूविभु का नाश नहीं होगा ? हे अवनीश ! हमारे पुत्र पर अज्ञान बुद्धि के कारण (बाण) चलाया इसलिए हमें रुष्ट नहीं होना चाहिए। अपने पुत्र को देखे बिना हमें जला देनेवाली शोकाग्नियाँ नहीं बुझेंगी। दिखाओ न उसे'। ऐसा कहकर शोक करनेवाले उन तपोधनियों को पास ले जाकर कहा कि यही आपका पुत्र है। 'कहाँ है वह दया-उदर-विमल-मनवाला ? कहाँ है वह तपोधन-विपुल पुण्यवाला ? कहाँ है वह सुधीजनों से विनुत (प्रशंसित) वर्तन (आचरण) वाला ? कहाँ है वह निरन्तर वेद (पाठ में) तत्पर ?'

"यो विमलात्मक! यो यज्ञदत्त! । यो विश्रुताचार! यो धर्मनिरत!
यँदु मा तोड नी विट्टु सॅप्पि कानि । यँदुनु बोवु; नी विदि येमि नेडु?
नाकलोकमुन कुन्नति बोवुचुंडि । नाकॆल चॅप्पवु ना वंशतिलक!
कडव जेसिति; बापकर्मुरालैति । नडुरेयि निन्नेल नदिकि बॊम्मंटि?
नेचिन गुरु भक्ति नॆल्ल लोकमुल । ड़ाचिन कोडुकु नाड़डि जंपुकॊंटि;
नाकेटि तप मिक? नाकु नी तोडि । लोकंबॆ गतियगु लोकैकविनुत!
यॆक्कडि प्राणंबु? लॆक्कडि बाण? । मॆक्कडि दशरथुं? डॆक्कडि नीवु?
इन्नियु नॊंड गूर्प निट्टु नेर्पु गलिगि । निन्नु द्रॆक्कॊनियॆने नी कर्मफलमु?"
अनि तल्लि शोकिंप, नम्मुनीश्वरुडु । तनयुनि पै बडि तद्दयु वगचि
"नीवु नाकड कति निष्ठतो वच्चि । कावितु प्रीति सत्कारमुल् दॊल्लि; १३००
येनु नीकड किप्पु डेतॆंचियुंड । ने नॆय्यमुलु सेय; विट्टु नीकु दगुनॆ?
कॊडुक! नी निर्मलगुण कलापमुलु । वॆडलॆने यी बाण विवरंबुनंदु?
नॆव्वनि जदिवितु निक वेदमुलु! । नॆव्वनि जदिवितु निक शास्त्रमुलु?

(ऐसा) कहते हुए हाथ फैलाकर, जहाँ-तहाँ टटोलकर, पुत्र पर गिरकर माता शोक करने लगी। जांघों पर (उसे) रखकर, रक्त से सनी जटाओं में सिर रखकर सन्तप्त हो (कहा) ।।१२९०।।

'हे विमलात्मक! हे यज्ञदत्त! हे विश्रुत (प्रसिद्ध) आचरणवाले! हे धर्मनिरत! हमसे कहे बिना कभी, कहीं भी नहीं जाते थे। तुमने आज यह क्या किया? नाकलोक (स्वर्ग) को उन्नति पर जाते हुए मुझसे क्यों नहीं बताया। हे मेरे वंशतिलक! (तुम्हें नदी) भेजकर पापकर्मा बन गई हूँ। आधीरात को तुमसे नदी (के पास) जाने को क्यों कहा? अधिक गुरुभक्ति के कारण समस्त लोकों को व्यर्थ (प्रमाणित) करनेवाले पुत्र को योंहीं मैंने मार डाला। अब मुझे तप क्यों? हे लोकैक विनुत! मुझे तुम्हारे साथ लोक (मरण) ही गति है। कहाँ के प्राण? कहाँ का बाण? कहाँ का दशरथ? कहाँ के तुम? हाय, इन सबका संयोग करने की निपुणता से युक्त तुम्हारे कर्मफल ने तुम्हें मार डाला है न?' (ऐसा) कहकर माता के शोक करने पर, उस मुनीश्वर ने पुत्र पर गिरकर अधिक दुखी होकर, कहा—'पहले तुम ही मेरे पास अतिनिष्ठा से आकर प्रीति से सत्कार (सेवाएँ) करते थे। ।।१३००।।

मैं (स्वयं) तुम्हारे पास आया हुआ हूँ, (तब भी) किसी प्रकार के स्नेह (-पूर्ण कार्य) नहीं करते हो। (क्या) यह तुम्हारे लिए उचित है? हे पुत्र! इस बाण के विवर (बिल) से तुम्हारा निर्मल-गुण-कलाप

नॆव्वनि विनिपिंतु निक धर्ममुलु । नॆव्वनि कॊऱिगिंतु निक गाव्यमुलु?
फल मूल जलमुलु परगंग दॆच्चि । यलयकुंडग नॆव्वररसि पॆट्टॆदरु?
दीर्घायुवनि निन्नु दीविंतु गानि । निर्घातपटु बाण निहति वल्कितिनॆ?
जमुनैन बुत्त्र भिक्षमु वेडुकॊनॆद । गॊमर! नन्नचटिकि गॊनि पो गदय्य!
पनिवडि यॆंदुनु बरलोकविधुलु । दनयु लॊनर्तुरु तल्लिदंड्रुलकु
बरिपाटि दप्पिंचि परलोक विधुलु । मरलिचि विधि नीकु ममु जेय बनिचॆ
नी कल दिनमुल निष्ठ वॆंपार । जेकॊनि मम्मु रक्षिंचिति वीवु १३१०
नी यट्टि कॊडुकुनु निजमुगा बूनि । ये युगंबुल गंदु मेमिक ननघ!
दुरितदूरुडवु; बंधुरतपोनिधिवि । गुरुभक्तुडवु नीवु, गुरुभक्तियुतुलु
बरलोकपरु लार्यवरुलु धर्मैक । परुलुनु निजदारपरु लात्मपरुलु
नन्नदानादि महादान परुलु । गन्न लोकंबुलु गनुमु नी" वनुचु
गरमॊप्प नग्नि संस्करादिविधुलु । दरमिडि चेसिरि तम तनूजुनकु

(समूह) निकल गया (क्या) ? अब किसे वेद पढ़ाऊँगा ? अब किसे शास्त्र पढ़ाऊँगा ? अब किसे धर्म (की बातें) सुनाऊँगा ? अब किसे काव्य समझाऊँगा ? शोभा से फल-मूल-जल (आदि) लाकर, (हमें) थकावट हुए बिना, (आवश्यकता) पहचानकर कौन खिलायेगा ? मैंने तुम्हें दीर्घायु का आशीर्वाद दिया था । निर्घात (वज्रसम)-पटु (शक्तिशाली) बाण-निहति की बात कब कही थी ? यमराज से भी पुत्रभिक्षा माँग लूँगा । हे पुत्र ! मुझे वहाँ ले जाओ न ! जहाँ कहीं भी हो, माता-पिता के परलोक-कर्म (उत्तरक्रियाएँ) तो पुत्र ही करते हैं । इस क्रम का भंगकर विधि ने तुम्हारा परलोककर्म करने के लिए हमें भेजा । जब तक तुम (जीवित) रहे, तब तक अधिक निष्ठायुक्त हो तुमने हमारी रक्षा की थी । ॥१३१०॥

—हे अनघ ! तुम जैसे पुत्र को चाहकर भी हम (आगे) किस युग में जन्म दे सकेंगे ? तुम दुरित (पाप)-दूर हो, बन्धुर (अधिक)-तपोनिधि हो, तुम गुरुभक्त हो । (अतः) गुरुभक्तियुक्त, परलोकपर, (परमार्थी), आर्यवर, धर्मैकपर (केवल धर्म परायण), निजदारापर, (अव्यभिचारी), आत्मापर (आत्मतत्व के चिन्तन में परायण), अन्नदान आदि महादानों में निरत रहनेवाले (आदि सब) जिन लोकों को प्राप्त करते हैं, तुम उन लोकों को प्राप्त करो ।' (ऐसा) कहते हुए अधिक समुचित रूपसे अपने पुत्र का अग्नि संस्कार आदि विधियाँ क्रम से सम्पन्न कीं । तब वह अमर होकर, आकाशवीथि में अमर विमान में से यों बोला—

नमरुडै यतडंत नाकाश वीथि । नमर विमानंबुनंदुंडि पलिकै
"नो गुरुलार! ये नुत्तमलोक । भोगभाग्युडनैति; बुण्युड नैति
गरमर्थि मिमु गौल्चु कतमुन; नादु। मरणंबुनकु मीरु मरुगकुंडिक;
नेकाल मे त्रोव नेदि गावलयु । ना काल मात्रोव नदि गाक पोव;
दय्येडु कार्यंबु लगुगाक मान । वय्य! मीरितनि पै नलुगकु" डनुचु
१३२०
ननिमिषपुरि केगॆ नत; डंत वारु । दनयुनि पै गूर्मि दरियिंप लेक
"पोयॆद मे मिदे पुत्त्र शोकमुन । मा यट्ल नीवुनु मरणंबु नौंदु"
मनि घोरमगु शाप मलिगि नाकिच्चि।तनुवुलु विडिचिरत्तपसु; लच्चोट
नग्निसमानुलका पुण्यधनुल । कग्नि संस्कारादुलट नेनु जेसि
चेकौन्न वगल वच्चिति बुरंबुनकु । ना कर्मफल मिदे यासन्नमय्ये १३२५

दशरथ निर्याणमु

धीरत सॆडि बुद्धि दिरुगुडु वडियॆः । नोरॆंड जौच्चे; गन्नुलु गानवय्यॆ;
बलुकुलु विनरावु; प्राणंबु लिक । निलुववी यॊडलिलो, निलुवंगलेनु;

'हे गुरुजनो ! मैं उत्तम लोकों के भोगों का भागी बन गया हूँ। अधिक प्रेम से आपकी सेवा करने के कारण, पुण्य (वान्) बन गया हूँ। मेरे मरण के कारण अब आप दुखी मत होइए। जिस काल में जिस मार्ग से जो होना है, वह उस काल में, उस मार्ग से होकर रहेगा। होनेवाले कार्य होकर रहेंगे, टलेंगे नहीं। आप इस पर क्रोध मत कीजिए'। (ऐसा) कहते हुए— ।। १३२० ।।

—वह अनिमिष (देवता)-पुरी को गया। तब वे पुत्र पर के प्रेम को पार न कर सक, बोले—'यह हम अभी पुत्रशोक के कारण (मर) जायेगे। हमारे समान तुम भी (पुत्रशोक के कारण) मरण को प्राप्त करो'। क्रुद्ध होकर, ऐसा घोर शाप मुझे देकर, उन तपस्वियों ने शरीर छोड़ दिये। वहीं अग्नि-सम उन पुण्यधनियों का, तब अग्नि संस्कार आदि करके, मैं अधिक दुख से पुर को लौट (आया)। यह देखो, मेरा कर्मफल आसन्न (निकट आया) हुआ है। ।। १३२५ ।।

दशरथ का निर्वाण (स्वर्गवास)

—धैर्यभ्रष्ट होने से, बुद्धि भ्रमित हो रही है। कंठ सूखा जा रहा है, आँखें (कुछ) देख नहीं पा रही हैं। (दूसरों की) बातें सुनाई नहीं पड़ रही हैं। अब इस शरीर में प्राण नहीं रुके रहेंगे। (अब) खड़ा नहीं रह सकता।

नापालि कल्पद्रु ना धीसमुद्रु । ना पराक्रमरुद्रु ना गुणोन्निद्रु
ना भाग्यपदभद्रु ना रामभद्रु । शोभनगुणमुद्रु जूड लेनैति
नी रात्रि तो गूड नेडु नाळ्ळय्यॆ । श्रीरामु बासि ना जीव मॆट्लुंडु?" १३३०

ननि प्रलापिंचुचु 'हा राम! राम!' यनुचु नंतनॆ मृतुंडय्यॆ ना राजु,
"वनटल डस्सि भूवरुडु निद्रिंचॆ" । ननि तानु निद्रिंचॆ नंत गौसल्य,
परिकिंप नंत प्रभातमौटयुनु । गरमर्थि वंदि मागधुलु गीतिंप
दॊरकॊनि मंगळतूर्यमुल् म्रोय । बुरि नॆल्लरु नियोगमुलवारु वच्चि
धरणीश दर्शनोत्कंठुलैयुंड । "निरवॊप्प नेडेल यिन्नाळ्ळ रीति
दॊर मेलुकॊन" डंचु दॊरकॊन्न चिंत । बरिचारिकुलु वच्चि पति सॆज्ज डासि
"धरणीशुडुन्न चंदमु वोल" दनुचु । नुरुभयंबुनु बॊंदि यूरुपुलरसि
यडुगुलु जेतुलु नंटंटि चूचि । यॊडल प्राणमुलु लेकुनिकि भाविंचि
यंदऱु बॆलुच महारोदनंबु । लंदंद सेय दिग्गन मेलुकांचि
यदरि कौसल्ययु ना सुमित्रयुनु । बॆदरि यंदऱ् जूचि पृथिवीशु जूचि १३४०

मेरे लिए कल्पद्रम, उस धीसमुद्र (बुद्धिमान), उस पराक्रम-रुद्र, उस गुणोन्निद्र (गुणवान्), उस भाग्यपद-भद्र, उस रामभद्र, शोभन-गुणसमुद्र को मैं देख नहीं पाया । आज रात के साथ सात दिन हो गये हैं । श्रीराम को छोड़कर मेरे प्राण कैसे रहेंगे ? ॥१३३०॥

ऐसा प्रलाप करते हुये 'हा राम ! राम !' कहते हुये उतने में ही वह राजा मृत हो गये । 'शोक से थककर भूवर सो गये हैं' यह सोचकर तब कौसल्या सो गई । इतने में प्रभात हो गया । (होते ही) बंदी (तथा) मागध बड़े प्रेम से स्तुति (पाठ) करने लगे । मंगल तूर्य (वाद्य) बजने लगे । नगर के समस्त नियोगवाले (जिनको कोई काम सौंपा गया हो) आकर, धरणीश के दर्शन की उत्कंठा से थे । 'शोभा से आज प्रतिदिन की तरह राजा जागे क्यों नहीं हैं ?' ऐसा सोचते हुए, चिन्ता के भार से, परिचारिकाएँ आकर, पति (राजा) की शय्या के निकट जाकर, 'धरणीश के (सोये) रहने का ढंग उचित नहीं है' कहकर, अधिक भीत हुए (और) साँसों की परीक्षाकर, पैर (और) हाथ छू—छूकर देखा (और) सोच लिया कि शरीर में प्राण नहीं हैं । (तब) सभी जहाँ-तहाँ अधिक महारोदन करने लगे । (तब) झट जागकर, भीत होकर कौसल्या (और) सुमित्रा ने घबड़ाकर सबको देख, राजा को देख ॥ १३४० ॥

'हा!' यनि यॆलुगॆत्ति "हा प्राणनाथ!। पोयिते दशरथभूनाथ!" यनुचु
विलपिंप गैकेयि विनि राग जूचि। पलुमारु नापेपै बडि मोदुकॊनुचु
"गैक! नीकोर्कुलु गडमुट्टॆ नेडु;। कैकेयि! कलचिते काकुत्स्थकुलमु?
'नडवुल पालुग' म्मनि रामु द्रोचि। सडि कॊर्चि दशरथेश्वरु जंपुकॊंटि
नॆलकॊनि यिटमीद नीवु नीसुतुडु। निलयॆल्ल गैकॊनि यॆलमि भोगिंपु"
डनुचु ना कौसल्य यादिगा सतुलु। तनु बेरुकॊनि येड्व दलवांचिकॊनुचु
नलि दूलि चनुदॆंचि नाथु पै व्रालि। पलु दॆरंगुल गैक पलविंचुचुंडॆ
ना समयंबुन नडलु दीपिंप। गौसल्य दशरथु गनुविच्चि चूचि
"धरणीश! नी यट्टि धर्मानुरूप। चरितुन की चावु समकूर दगुनॆ?
मोसपोयिति निन्नु मुदलिंप लेक;। नीसत्य संपद निन्निंत सेसॆ १३५०

गड्डुगष्टमति यैन कैकेयि गडगि। यडविकि रामु बोनडचिन वगपु
परिकिंचि नीकेनु बरिचर्य सेसि। तरियिंप जूचिति, दैवमीदय्यॆ;
नीयिच्च नोकुंड नी पंपु सेसि। पोयि सत्कीर्तुलु वॊंदॆ राघवुडु

'हाय' कह, ऊँचे स्वर से 'हा प्राणनाथ ! हे दशरथ भूनाथ ! (हमें छोड़) चले गये क्या ?' कहते हुए विलाप करने लगीं। (यह) सुनकर, कैकेयी के आने पर, बार-बार उसपर गिरकर, (सिर) पीटते हुए कहा—'हे कैकेयी! आज तुम्हारी इच्छाएँ पूरी हुईं। कैकेयी! काकुत्स्थकुल में ऊधम मचा दिया न (नाश कर दिया न) ! 'जंगलों में चला जा' कहकर राम को ढकेलकर, अवहेला को सह, दशरथेश्वर को मार डाला। शोभा से अब आगे तुम और तुम्हारा पुत्र समस्त पृथ्वी को ग्रहणकर प्रेम से भोग करो'। (ऐसा) कहते हुए कौसल्या आदि, उन सतियों के अपना सम्बोधन कर रोने पर, सिर झुका लेते हुए, लड़खड़ाते हुए आकर नाथ पर गिरकर कैकेयी अनेक प्रकार से विलाप करती रही। उस समय नीति के दीप्त होने पर, कौसल्या ने आँख खोलकर दशरथ को देख कहा—'हे धरणीश ! तुम जैसे धर्मानुरूप चरित्रवाले को ऐसी मौत होनी चाहिए? तुम्हें ललकार न सक (रोक न सक), धोखा खा गई। तुम्हारी सत्य-सम्पदा (निष्ठा) ने तुम्हारा यह हाल कर दिया। ॥ १३५० ॥

अत्यन्त क्रूर (दुष्ट) बुद्धिवाली कैकेयी ने सप्रयत्न रामको जंगल भेजा। (उस) दुखको देखकर-मैंने सोचा, तुम्हारी परिचर्या (सेवा) करके तर जाऊँ। भगवान् ने न चाहा। तुम्हारी इच्छा का उल्लंघन करके, तुम्हारे आदेश (की पूर्ति)कर, (जंगल) जाकर, राघन ने सत्कीर्ति पाई। स्थिर सत्य का तुम पालन करके, दृढ़ता से तुमने निर्लिप (देवता)-सम्पदा

नेॅलकोॅन्न सत्यंबु नीवु वार्टिचि । बलिसि निलिंप संपदलु गैकोॅटि;
धरणीश ! नाकु नुत्तमुडैन निन्नु । बरुसंबु लाडिन पापंबु दक्के"
ननि चाल पलविंप ना सुमित्रादि । वनितलु नेॅलुगेॅत्ति वापोवुचुंडि
रंतंत नी वार्त लंतट म्रोसेॅ । गांतल येड्पु लाकासमेॅल्ल निंडेॅ
नंत सूर्योदयंबय्येॅ; नौटयुनु । नेॅंतयु भयमुतो हितुलु बांधवुलु
जेरुवनृपुलु वसिष्ठादि मुनुलु । धारुणीसुरुलु प्रधानुलु वच्चि
भूरिशोकंबुन बोॅगुल वसिष्ठु । डारुढमति मंत्रुलनुमति सेय १३६०

दडयक दशरथ धरणीशु मेनु । गडकतो दैलपक्वंबु सेयिंचि
चेॅलुवैन मणिमय सिंहासनमुन । गोॅलुवुन्न तेॅऱगुन गूर्चुंड बेॅट्टि
मंत्रुल सकल सामंतुल राज । तंत्रज्ञुलनु गूर्चि तगवोॅप्प बलिकेॅ;
"नी राजु साम्राज्य मेॅल्ल बालिंचि ।स्वाराजु नगरिकि जनियेॅ नेडकट!
यितनि पूनिकि दीर्प नितियु दानु । हितमति मऱि रामु डेगेॅ गानलकु
भरतुंडु दम माम पट्टणंबुनकु । नरिगेॅ शत्रुघ्न सहायुडै मुन्ने
मनमु रामुनि विल्व मगुडि राडतडु। तन पून्कि दीर्पक धर्मवर्तनुडु;
१३६७

(स्वर्गसुख) को ग्रहण किया । हे धरणीश ! तुम जैसे उत्तम (व्यक्ति) को परुष (वचन) सुनाने का पाप मुझे मिला'। (ऐसा) कहकर, अधिक विलापकर, सुमित्रा आदि, वे वनिताएँ ऊँचे स्वर में रोती रहीं। धीरे-धीरे यह समाचार सब जगह फैल गया। कान्ताओं का रोदन समस्त आकाश में भर गया। तब सूर्योदय हो गया। (सूर्योदय) होने पर, अधिक भय से हितू, बान्धव, निकट के नृप, वसिष्ठ आदि मुनि, धारुणीसुर (ब्राह्मण), प्रधान (मन्त्री) आकर, भूरिशोक से व्याकुल हुए। आरूढ़मतिवाले वसिष्ठ ने मन्त्रियों के अनुमति देनेपर— ।। १३६० ।।

—देर न करके, दशरथ धरणीश के शरीर को अविलम्ब तैलपक्व कराकर, ऐसा बिठाया मानों शोभायमान मणिमयसिंहासन पर दरबार में विराजमान् हों। (बिठाकर) मन्त्री, सकल सामन्त (राजा), राजतन्त्रज्ञों को जुटाकर, समुचित रूपसे बोले—'हाय, यह राजा समस्त साम्राज्य का पालनकर आज स्वाराजा (इन्द्र) की नगरी को गये। इनके वचन का पालन करने के लिए स्त्री के साथ हितमति वाले राम काननों में गये। इससे पूर्व ही शत्रुघ्न के साथ भरत अपने मामा के नगर गये। हम राम को बुलायें तो वह धर्म-वर्तन (आचरण) वाला अपनी प्रतिज्ञा पूरी किये बिना नहीं आयेगा। ।। १३६७ ।।

भरतुनि बिलिपिंचुट

कावुन भरतु वेगमें पिलुपिंप । गावलयुनु राच-कार्यमुल् दीर्पं,
राजु लेकुन्न बुरंबु राष्ट्रंबु । राजिल्ल; देंल्ल वर्णंबुलु गलयु;
दंडनीति-क्रियल् दान-धर्ममुलु । मेंडोडि चेंडिपोवु; मितुरु रिपुलु १३७०
जारुलु जोरुलु संदडिंपुदुरु । कोरि नोंतुरु साधुकोटि दुर्जनुलु
दोंरलु सामंतुलु दुर्गाधिपतुलु । नरि यप्पनमु लीय' रनि निश्चयिंचि
यलघुमानसुडु जयंतुंडुमोंदलु । नलुवुरु मंत्रुल नयमोंप्प बिलिचि
"पलुवन्नें चीरलाभरणमुल् गोंनुचु । बोंलुचु गिरिव्रजपुरिकि मीरेगि
यी वार्त लातनि केमियु देंलुप । 'कावसिष्ठुंडु रम्मने सि'म्मटंचु
गडुवेग भरतु नक्कड नुंडनीक । तोडि तेंडु, पों" डन दोरंपु गडक
वारलु हरुल दुवाळिगा नेंक्कि । सारें नानापुरजनपदंबुलुनु
नदमुलु नदुलु गाननमुलु गिरुलु ।बोंदलु बेंक्कुलु दाटि पोंदलिन धाटि
गरमु जेंन्नोंदु केकय राजपुरिकि । नरिगि वारंत नेडव नाटि रात्रि
बलमेदि गोमय पंकमध्यमुन । दल विरिय बोसि तंड्रि गूलुटयु १३८०

भरत को बुलाना

—अतः राजकाज सम्हालने के लिए शीघ्र ही भरत को बुलाना चाहिए। राजा न हो तो पुर (और) राष्ट्र विराजित (शोभित) नहीं होंगे। समस्त वर्णवाले (आपस में) मिल जायेंगे (वर्ण संकर होगा)। दण्डनीति के कार्य, दान-धर्म बहुत अधिक बिगड़ जायेंगे। रिपु (शत्रु) प्रबल हो जायेंगे। ॥१३७०॥

—जार-चोर (आदि) की वृद्धि होगी। दुर्जन स्वेच्छा से साधुकोटि को दुख देंगे। छोटे अधिकारी, सामन्त, दुर्गों के अधिपति, कर (और) उपहार नहीं देंगे'। ऐसा निश्चय कर अलघुमानस, जयन्त आदि चार मन्त्रियों को नयपूर्वक बुलाकर, (कहा)—'अनेक रंगों के चीर (वस्त्र), आभरण साथ लेते हुए, शोभित गिरिव्रजपुरी को आप (लोग) जाकर, ये समाचार उसे बिलकुल न बताकर, केवल यह कहकर कि 'उस वसिष्ठ ने आपको बुलाया है', अधिक शीघ्रता से, भरत को वहाँ रहने न देकर, साथ ले आइए, जाइए'। (ऐसा) कहने पर, अधिक उत्साह से वे (लोग) झट से घोड़ों पर सवार होकर, नानापुर, जनपद (ग्राम), नद, नदी, कानन, गिरि, झाड़ी (आदि) अनेक पार कर, अत्यन्त वेग से, अधिक शोभायमान केकयराज की पुरी को, सातवें दिन रात को गये। गोमय (गोबर) के पंक (कीचड़) के मध्य में, सिर के बाल खोलकर, पिता का गिरना, ॥१३८०॥

जलनिधि शून्यमै संपूर्ण चंद्रु । डिल गूलुटचु, बट्टपेनुंग गॊम्मु
विऱुगुट मॊदलैन विषमंपु गललु । दऱुचुगा गनि लेचि तद्दयु भीति
दन यिष्ट सखुलतो दत्प्रकारंबु । विनुपिंचि वगलचे वॆंतवडुचुन्न
भरतु सन्निधिकेगि प्रणतुलै निलिचि। करमर्थि दमचेति कानुक लिच्चि
"या वसिष्ठुडु गार्यमक्कड गलिगि । देव! निन्नट तोडि तॆम्मन्नवाडु
विच्चेयु" मनवुडु विनि दूत चेष्ट । लच्चुगा गनुगॊनि यतिभीति नॊंदि
तम माम कड केगि तत्प्रकारंबु । क्रममॊप्प दॆलिपि सत्कारमुल् वडसि
१३८७

भरतु डयोध्य ब्रवेशिंचुट

यत डंप गदलि रथारुढुडगुचु । जतुरंग बलमुलु सचिवु लेतेर
नतुलित चिंत नेडव नाडु वच्चि । यति रयंबुन नयोध्यापुरि सॊच्चि
पति लेनि सति,निशापति लेनि रात्रि। गति नॆंतयुनु भोग कळलकु बासि
१३९०

कन्नुल कापुरि कडु बाडु वाऱि । युन्न चंदमु गांचि युल्लंबु गलगि

—जलनिधि (समुद्र) का शून्य हो (सूख) कर, सम्पूर्णचन्द्र का धरती पर गिरना, भद्रगज के सींग (दांत) का टूट जाना आदि विषम स्वप्नों को, अक्सर देखकर, जागकर, (भरत-शत्रुघ्न) अधिक भीति से, अपने इष्टसखाओं को वह प्रकार (स्वप्नों का विधान) सुनाकर, दुख के कारण व्याकुल हो रहे थे। (इतने में अयोध्या से आए हुए मंत्री) भरत के समक्ष जाकर, प्रणत हो खड़े होकर, अधिक प्रेम से अपने हाथ के (साथ लाये) उपहार देकर, (कहा)—'हे देव, वहाँ (अयोध्या में) किसी कार्य के होने से उस वसिष्ठ ने तुमको वहाँ साथ ले आने को कहा है। पधारो'। ऐसा कहने पर, सुनकर, दूत के हावभाव को स्पष्ट देखकर, अतिभीत होकर, अपने मामा के पास जाकर, उस विधान को, क्रम से बताकर, सत्कार प्राप्तकर, ॥१३८७॥

भरत का अयोध्या में प्रवेश करना

—उनके भेजने (बिदा करने) पर, निकलकर, रथारूढ़ होकर, चतुरंग बल (सेना तथा) सचिवों (मन्त्रियों) के आने पर, अतुलित चिन्ता से, सातवें दिन आकर, अतिशीघ्रता से अयोध्यापुरी में प्रवेश कर, (अयोध्या नगर) पतिहीना सती, निशापति (चन्द्र)-हीन रात्री के समान अत्यन्त भोगकलाओं से रहित हो, ॥ १३९० ॥

—वह नगरी आँखों को अधिक उजड़ीदीखी। उस विधान को देखकर मन

“यिदि येमि विधमॊको? यी पट्टणंबु। दुदमुट्ट शून्यमै तोचुचुन्नदियु
बौरुलु ननु जूचि बाष्पमुल् दॊरुग। दूऱुचु दव्वुल दॊलगि पोयॆदरु
अंगळ्ळ सकल सामग्रि वस्तुवुलु। पॊंगारवेटिकि बुरमुलो” ननुचु
नगरि वाकिट समुन्नति रथंबु डिगि। मॊगि चॆडि तानु दम्मुडु शून्यमैन
यंतः पुरंबुन करुग गैकेयि। यॆंतयु ब्रियमु तो नॆदुरुगा वच्चि
कवुगिलिंचुटयुनु गरमर्थि गैक। कविरळ भक्तितो नप्पुडु म्रॊक्कि
यिच्चमै दम माम यिच्चिन तॊडवु। लिच्चि वारल सेम मेर्पड जॆप्पि
“यॆंतयु शून्यमै यिदि येमि नगरु। विंतयै युन्नदि विभवंबु लॆडलि
रामलक्ष्मणुलकु राजवर्युनकु। सेममे?” यनवुडु जिंतिचि कैक १४००
भरतुनि जूचि संभ्रमसु रॆट्टिप। दरहास वदनयै तगवेदि पलिकॆ
“दलकॊनि तॊल्लि मी तंड्रि ना कर्थि। वलनु मीऽग रॆंडु वरमु लिच्चुटयु
‘नॊकटिकि भरतुनि नुर्वि येलिपु। मॊकटिकि रघुरामु नुनुपु दुर्गमुल’
ननि वेडुटयु दंड्रि यानति बूनि। जनकजा लक्ष्मण सहितुडै-मुनुल
यनुवुन रघुरामु डडविकि बोव। दनयुनि नॆड बासि धरणीशु डीलॆ
नीसुन नीकुगा नी युपायंबु। सेसिति; राज्यंबु जेकॊनु मिक;
ब्रजल बालिपु; संपदल गीलिपु। भुज शक्ति नेलुमु; बुद्धि नॊंडनकु”
मनवुडु मूर्छिलिल यल्लन दॆलिसि। घन कोप दृष्टि तो गैकेयि जूचि

में व्याकुल हो ‘यह कैसा विधान है? यह समस्त पट्टण शून्य लग रहा है। पुरजन मुझे देखकर, आँसुओं के बहते रहने पर, निन्दा करते हुए, दूर-दूर हटकर (कतराते हुए) जा रहे हैं। पुर के हाट बाजारों में समस्त सामग्रियाँ और वस्तुएँ शोभा क्यों नहीं देरही हैं!’ ऐसा सोचते हुए, नगरी (महल) के सामने समुन्नति से रथ से उतरकर संरम्भ से हीन हो, भाई (शत्रुघ्न) के साथ, शून्य बने अन्तःपुर में गये। कैकेयी ने अत्यन्त प्रेम से अगवानी करने आकर, गले से लगा लिया। अब अधिक प्रेम से, अविरल भक्ति से कैकेयी को प्रणामकर, इच्छा से अपने मामा के दिये आभरण देकर, उनका कुशल समाचार अच्छी तरह कह सुनाकर, पूछा—‘यह क्या नगर अत्यधिक शून्य होकर, वैभवहीन हो, आश्चर्य पैदाकर रहा है? रामलक्ष्मण और राजश्रेष्ठ (दशरथ) कुशल ही हैं न?’ ऐसा कहनेपर चिन्तित होकर कैकेयी– ॥१४००॥

—भरत को देख, संभ्रम के दुगुना होने पर, दरहास (मंदहास) से युक्त वदन से (वह) झगडालू (स्त्री) बोली—‘चाहकर, पूर्व में, तुम्हारे पिता ने मुझे बड़े प्रेम से, शोभा से दो वर दिये थे। ‘एक के बदले भरत से उर्वी (पृथ्वी) पर शासन कराओ (और) दूसरे (वर) के लिए रघुराम को

"कैक! नातल्लिवै करुणकु बासि । यी कष्टवर्तनमेल कैकोंटि?
मुनि वेषमुन वनम्मुन रामुनुंडु । मनि पल्क नॆट्लु नोराडॆने तल्लि?
१४१०

यरय निर्मल धर्मुलैन राघवुल । चरितंबु नीकु बिचारिंप वलदॆ?
येंनिक मातंड्रि केमनि वगतु? नेनु रामुनि मोंग बेमनि चूतु?
नॆंत लोगुंदॆनो यिच्चलो रामु? डॆंत कोपिंचॆनो येचि लक्ष्मणुड्डु?
यॆंत दूरॆनों कान केगुचो सीत? यिंत केमय्यॆनो यिंति कौसल्य?
यंतः पुरांगनला सुमित्रयुनु । वंतचे नेमनि वगचुचुन्नारों?
वीरल कड केगि विलपिंप नाकु । नोरेदि? यॆट्लु मनोव्यथ दीर्तु?
निंक नीपुर मेल? यी भोगमेल? शंकिंप कडविये शरणंबु नाकु;
घन पापरति जेसि कडगि मी तल्लि । निनु नॊक्क रक्कसुनिकि गन नोपु
गानि केकयराजु गन्न कूतुरवु । गानेर; वेमंदु गैक! नी तोड"
ननु माटलन्नियु नल्लन बोंचि । विनुचुन्न मंथर वेंस जूचि सतुलु १४२०

दुर्गों (वनों) में भेजो', ऐसा मैंने विनति की। (तो) पिता के आदेश को मानकर, जनकजा (और) लक्ष्मण के साथ, मुनियों के ढंग से (की तरह) रघुराम वन को गया। पुत्र से बिछुड़कर धरणीश मर गया। ईर्ष्यावश हो, तुम्हारे लिए (मैंने) यह उपाय किया है। अब राज्य को ग्रहण करो। प्रजा का पालन करो। सम्पत्ति प्राप्त करो। भुजशक्ति से शासन करो। (अपनी) बुद्धि से और (विपरीत बात) मत कहो'। ऐसा कहने पर (भरत ने) मूर्च्छित होकर, धीरे से होश में आकर, अत्यन्त क्रोध (भरी) दृष्टि से, कैकेयी को देखकर, कहा—'हे कैकेयी! मेरी माता होकर, करुणा से रहित होकर, यह कष्ट वर्तन (क्रूर आचरण) (तुमने) क्यों किया? मुनिवेष से राम को जंगल में रहने के लिए, कहने के लिए तुम्हारा मुँह कैसे खुल सका? ॥१४१०॥

—परिशीलन करने पर निर्मल धर्म (आचरण) वाले राघवों (रघुवंशियों) के चरित्र के बारे में तुम्हें विचारना नहीं चाहिए? अब मैं अपने पिता के बारे में कैसे दुखी होऊँ? राम के मुख को कैसे देखूँ? मन ही मन राम कितना व्याकुल हो गये होंगे? लक्ष्मण रुष्ट हो, कितना क्रुद्ध हो गये होंगे? कानन में जाते हुये सीता ने (मेरी) कितनी निन्दा की होगी? (बेचारी) कौसल्या की क्या दशा हुई होगी? अन्तःपुर की स्त्रियाँ (तथा) वह सुमित्रा शोक के मारे कितना विकल हो रही होंगी? इनके पास जाकर विलाप करने की मुझमें योग्यता कहाँ है? कैसे उनकी मनोव्यथा को दूर करूँ? अब मुझे यह नगर क्यों? यह भोग क्यों? (आवश्यकता नहीं है)।

"इन्नि पापंबुलु निदिय चेयिंचे" । नन्न शत्रुघ्नुडु ना वृद्ध वनित
गूनु डोंकुलु दीऱ ग्रोम्मुडि जाऱ । मेनि सोम्मुलु वीड मेलतलु सूड
गडकालु वट्टि याकसमुन द्रिप्पि । पुडमि पै वैव नप्पुडु साल गलगि
कैकेयि सतु लेल्ल गनुकनि बऱव । गैकेयि वधियिंप गडगि वच्चुटयु
भरतुडु सूचि "यी पापात्मुरालि । बोरिगोनि पापंबु बोंद नेमिटिकि?
'बेनुपेदि तल्लि जंपिन नीचु' लनुचु ।मनल जूडग रोयु मदि रामविभुडु;
अटुगान वल" दनि यतनि वारिंचि । यट वोयि कौसल्य यडुगुल केऱगि
१४२७

भरतुडु कौसल्य योद्दकु बोवुट

तानु दम्मुडु शोक दंदह्यमान । मानसुलै पलुमाऱेलुगेत्ति
पलविंप नप्पु डाभरतुनि जूचि । यलिगि कौसल्य यिट्लनि दूऱ बलिके

बिना सन्देह किये अरण्य ही मेरे लिये शरण्य है। महान् पाप से रति (प्रेम) करके, सप्रयत्न, तुम्हारी माता ने तुम्हें किसी राक्षस से जन्म दिया होगा। वरन् केकयराज की आत्मजा तुम नहीं हो। (अब) तुमसे (और) क्या कहूँ ?' इस प्रकार (कहनेवाले भरत की) समस्त बातें, धीरे से छिपकर सुननेवाली मंथरा की ओर देखकर (अन्य) स्त्रियों ने—।। १४२० ।।

—कहा –'इसीने सारे पाप कराये हैं'। शत्रुघ्न ने, जिससे उस वृद्ध वनिता के कूबड़ की वक्रता जाती रहे, जूड़े के बाल खुल जायें, शरीर के आभरण छूट जायें, अन्यस्त्रियों के देखते-देखते उसकी टाँग पकड़ कर, आकाश में घुमाकर, जमीन पर डाल (पटक) दिया। (तब इसे देखकर) अत्यन्त व्याकुल हो, कैकेयी की स्त्रियाँ (दासियाँ) सकपकाकर भाग चलीं। (तब शत्रुघ्न) कैकेयी का वध करने के लिए निश्चयकर आने लगा तो उसे देख भरत ने कहा—'इस पापात्मा का वध करके पाप क्यों कमावें ? '—माता का वध करनेवाले महान् नीच' कहते हुए, रामविभु हमें देख घृणा करेंगे। अतः ऐसा मत करो'। (ऐसा) कह उसे रोक, उधर जाकर कौसल्या के चरणों में सिर रखकर, ।। १४२७ ।।

भरत का कौसल्या के पास जाना

आप (और) अनुज ने शोक-संतप्त-मानस होकर कई बार, ऊँचे स्वर से विलाप किया। तब उस भरत को देखकर, रुष्ट हो, कौसल्या इस प्रकार कोसने लगी—'पति से बिछुड़ कर, सुत से बिछुड़कर, बहुल-दुखों के कारण शोक करना हमारे लिए उचित है। ।। १४३० ।।

"बति बासि सुतु बासि बहुळ दु:खमुल । मति माकु शोकिंप मऱि तगुगाक! १४३०
नीकेल शोकिंप नॆलकॊनि यित? नी कोरिनट्लॆल्ल नी तल्लि सेसॆ;
नन्न! नीविंक राज्यमु सेयुचुंडु" । मन्न जेतुलु मोड्चि यतडु भीतिल्लि
वॆनुवॆन्क केगि यव्वॆलदि कौसल्य । गनुगॊनि "वाक्कायकर्मचित्तमुल
श्रीरामुनकु गीडु सेसिति नेनि । धारुणि येनेल दलचितिनेनि,
नेनु गैक तलंपु नॆऱिगितिनेनि । ने नॊक्क कीडैन नॆऱिगितिनेनि,
विनुमु मद्यंबु द्राविन वानि गतिकि । बॆनुपेदि विप्रु जंपिनवानि गतिकि
दॆगि गुरुपत्नि बॊंदिन वानि गतिकि । जगति पै ननि नोडि चनुवानि गतिकि
जॆनटि यै पसिडि म्रुच्चिलु वानि गतिकि । जॆनसि गोहत्य सेसिनवानि गतिकि
न्यायंबु दप्पिन नरनाथु गतिकि । नेयॆड गॊंडॆकाडेगॆडु गतिकि
शरणार्थि ब्रोवनि दुरितात्मु गतिकि । वरधर्मविक्रय वांछितु गतिकि १४४०
गुरुवुल दिट्टिन कुटिलात्मु गतिकि । नरय स्वामिद्रोहि यगुवानि गतिकि
दल्लि दंड्रुल दिट्टु तनयुनि गतिकि । गल्ललाडॆडु पापकर्मुनि गतिकि

—तुम्हें इतना शोक करने की क्या आवश्यकता है ? तुमने जैसे चाहा, वैसा ही सब तुम्हारी माता ने किया । हे तात ! अब तुम राज्य करते रहो' । (ऐसा) कहने पर, हाथ जोड़कर, वह (भरत) भीत होकर, पीछे-पीछे जाकर उस स्त्री (कौसल्या) को देखकर (बोला)—'(यदि मैंने) वाक्, काय, कर्म, चित्त से श्रीराम की हानि की हो, (यदि) धारुणी पर मैंने शासन करना चाहा हो, (यदि) मैंने कैकेयी के भाव (इच्छा) को जाना हो, (यदि) मैंने एक भी बुराई (बुरी भावना) जानी हो, तो सुनो, मदिरा पीनेवाले की गति को, श्रेष्ठ विप्र का वध करनेवाले की गति को, धृष्टता से गुरुपत्नी से सम्भोग करनेवाले की गति को, जगति में हारकर भागनेवाले की गतिको, नीच बन सुवर्ण चुरानेवाले की गति को, दुष्टता से गोहत्या करनेवाले की गति को, न्याय रहित होनेवाले नरनाथ की गति को, सर्वत्र चुग़लखोर के जाने की गति को, शरणार्थी की रक्षा न करनेवाले दुरितात्मा (दुष्ट) की गति को, वरधर्म को बेच डालने की इच्छा रखनेवाले की गति को, ।। १४४० ।।

—गुरुओं को अपशब्द कहनेवाले कुटिलात्मा (कपटी) की गति को, स्वामी-द्रोह करनेवाले की गति को, माता-पिता को गाली देनेवाले पुत्र की गति को,

बरधनंबुल कासपडुवानि गतिकि । बरसति गलिसिन पापात्मु गतिकि
दनर नधर्मवर्तनुडेगु गतिकि । जनुवाड; देवतल् साक्षुलितटिकि
ना पापमुन जेसि नाकु नी पाप । मी पापकर्मुरालिटु गट्टॆगाक!
येनु रामुनि केल यॆग्गु गाविंतु? । नी नीच कर्मंबु लेड? नेनेड?”
ननि येड्चु भरतु शोकाग्नुल पॆंपु । गनुगॊनि कौसल्य गरमु शोकिंचि
“यिट्टुवंटि पुण्यात्मु नेल दूऱितिनि।गटगटा! ”यनि पॊक्कि कौगिट जेर्चि
भरतशत्रुघ्नुल पै व्रालि तूलि । परिताप मॊंदुचु बलविंचुचुंडॆ
नंत वसिष्ठ संयमि वारि गॊनुचु । नंतः पुरंबुन कडलुचु बोव१४५०
“गनु गॊनगा रादु कैकेयि गन्न । तनयुंडु वी” डनि तन मीद नलिगि
पॆनुपॊंद माणिक्य पीठि पै नॊऱगि । तनु जूड नॊल्लनि तलपुन रोसि
कनुगव मूसिन गति नुन्न तंड्रि । गनुगॊनि भरतुंडु गडु मूर्छ बॊंदि
तॆलिसि क्रम्मऱ जूचि तीव्रंपु वगल । वॆलुवरिंपगराक विलपिंप दॊडगि
“वसुधेश! केकयावनिपालुचेत । नसमानमणिभूषणावळि नीकु
गॊनिवच्चिनाड, गैकॊन नॊल्लवेमि?। ननु जूड विदि येमि ? ना
तप्पुलेमि?

झूठ बोलनेवाले पाप-कर्मा की गति को, परधन की इच्छा करनेवाले की गतिको, परपत्नी से सम्भोग करनेवाले पापात्मा की गति को,अधर्म-आचरण (करने) वाले की गति को प्राप्त करूँगा। इसके लिए देवता साक्षी हैं। मेरे पाप के कारण, इस पापकर्मवाली ने यह पाप मेरे सिर मढ़ दिया है। मैं राम का अहित क्यों करूँगा? ये नीचकर्म कहाँ (और) मैं कहाँ ?' ऐसा कहकर रोनेवाले भरत की शोक-अग्नियों की अधिकता को देखकर, कौसल्या अधिक शोककर (यों बोली)—'हाय, ऐसे पुण्यात्मा को क्यों कोसा ?' ऐसा व्याकुल होकर, (उन्हें) गले से लगा, भरत-शत्रुघ्नों पर झुककर, लड़खड़ाते हुए, परिताप करते हुए विलाप करने लगी। तब संयमी वसिष्ठ उन्हें (साथ) लेकर, अन्तःपुर में दुखी होते हुए गये। ॥ १४५० ॥

'यह कैकेयी का गर्भजात पुत्र है। (अतः)इसे नहीं देखना चाहिए'। (मानों) यह समझ, अपने पर (भरत पर) रुष्ट होकर, माणिक्य-पीठ पर लेटकर, (भरत को) न देखने की भावना से, घृणा से (मानों) नेत्रयुग्म मूँद लिये हों, ऐसे पिता को देख, भरत अत्यधिक मूर्च्छित हो, (पुनः) होश में आकर, पुनः (उन्हें)देखकर, तीव्र दुख को प्रकट न कर सक विलाप करने लगा। (कहा)—'हे वसुधेश! केकय-अवनिपाल (राजा) द्वारा (भेजे गये) असमान-मणि-भूषणावलि तुम्हारे लिये लाया हूँ। स्वीकार करना क्यों नहीं चाहते हो ? यह क्या मुझे क्यों नहीं देखते हो ? मेरे

कडु बापमति यैन कैकेयि गन्न । कॊडु' कनि ननु जूड गूडदु गाक;
धरणीश! या सुमित्रा पुत्त्रु जूडु । पुर-पुर बॊक्कुचु बॊरलु चुन्नाडु
कडगि नी हस्तपंकजमुल बट्टि । तुडुव वेमिटिकि शत्रुघ्नु पै धूळि?
यितनि गटाक्षिपु; मितनितो बल्कु । मितनि गौगिट जेर्पु मित डेमि
सेसॆ १४६०

नी मंचितनमुनु नी दयारतियु । नी मॊगमोटयु ने डॆंदु बोयॆ?
गैकेयि नी बुद्धि गलचॆने तंड्रि? । नी किट्टि मरणंबु नेर्चुने कलुग?
जावरे नृपु लिट्लु चावरु गाक! । लेवॊ नॆय्यमु, लिट्लु लेवुगा कॆंदु!
बडतुलु मॆप्पिचि प्राणवल्लभुल । नडुगरॆ, यी यीवु लडुगरु काक!
यी कष्ट वर्तनं बेमिट गडव । जेकुरु? ने नेमि सेयुदु" ननुचु
बलुमारु बलविंचु भरतुनि जूचि । तॆलिसि वसिष्ठुंडु दॆरगॊप्प बलिकॆ
"ननघात्म! मी तंड्रि यवनि यंतयुनु । विनुतिप नरुवदि वेलेडु लेलॆ;
मनु मार्गनियति धर्ममु लॆल्ल जेसॆ । गॊन कॊनि मी यट्टि कॊडुकुल
गनियॆ;
गावुन नीवु शोकमु मानु मिक । गाविंपु नग्नि संस्कारादि विधुल"

दोष क्या हैं ? यह सोच कि 'अधिक पापमतिवाली कैकेयी का गर्भजात पुत्र है' मुझे (मेरी ओर) नहीं देखना चाहिये। (ठीक है।) हे धरणीश ! उस सुमित्रापुत्र (शत्रुघ्न) को देखो। अत्यधिक दुखी हो, लोट रहा है। सप्रयत्न तुम्हारे (अपने) हस्त-पंकजों से पकड़कर, शत्रुघ्न (के शरीर) पर (लगी) धूल को क्यों नहीं पोंछते ? इसपर कृपा करो। इसके साथ बातें करो। इसे गले लगा लो। इसने क्या (पाप) किया है ? ।। १४६० ।।

—तुम्हारी भलमानसी, तुम्हारी दयारति, तुम्हारा संकोच (मुखभीति) आज कहाँ (छिप) गये हैं? क्या कैकेयी ने तुम्हारी बुद्धि को क्षुब्ध कर दिया है ? क्या तुम्हारा ऐसा मरण उचित है ? (नहीं है।) राजा मरते नहीं ? (मरते तो हैं) पर ऐसा नहीं मरते। स्नेह-सम्बन्ध नहीं होते ? (होते हैं) पर ऐसा कही नहीं है। स्त्रियाँ प्राण-वल्लभों (पतियों) को प्रसन्न कर, (वर) माँगती हैं, पर ऐसे दान तो नहीं माँगते। इस कष्टप्रद आचरण को कैसे पार जाऊँ ? मैं क्या करूँ ?' ऐसा कहकर, बार-बार विलाप करनेवाले भरत को देख, समझकर, वसिष्ठ ने उचित विधान से कहा—'हे अनघात्म ! आपके पिता ने समस्त अवनि पर विनुत (प्रशंसनीय) रूपसे साठ सहस्र वर्ष राज्य किया। मनु के (धर्म) मार्ग-नियति से समस्त धर्म किये। अन्त में आप जैसे पुत्रों को जन्म दिया। अतः तुम अब शोक मत करो। अग्नि संस्कार आदि विधियों को (सम्पन्न)

ननवुडु 'नौ गाक' यनि मऱुनाडु ।मुनुल राजुल महात्मुल बिलिपिंचि
१४७०
वलनॊप्प दशरथेश्वरु कळेबरमु । कलगॊनि तीर्थोदकमु लार्चि पेर्चि
वरवस्त्रभूषणावळुलु गैसेसि । तरमिडि वेदोक्त दानमुल् सेसि
परग विमाननंबु पै दॆच्चि पॆट्टि । यरुदैन मंत्रपूताग्नि सेपट्टि
तन तम्मुडुनु दानु दग वसिष्ठादि । मुनुलतो भरतुंडु मुंदऱ् नडुव
ना विमानमुनकु नंतंत गदिसि । वाविरि नेड्चुचु वगल दूलुचुनु
मुनुकॊनि कौसल्य मॊदलुगा । वनित लंदऱु गूडि वरुसनेतेर
सरयुवु चेरुव शव भूमियंदु । दिरमुगा सॊंद वेर्चि त्रेताग्नु लिच्चि
यॊलसिन भक्ति वेदोक्त मार्गमुन । नॆलकॊनि दशरथ नृपति दहिंचि
तगुरीति मऱि तिलोदकमुलु वोसि। तगवुतो बिंड प्रदानंबु सेसि
नगरिकि वच्चि युन्नति भूसुरुलकु । दग बितृ प्रीतिगा दानमुल् सेसि
१४८०
तॆऱगॊप्प बंड्रेंडु दिनमुलु वलयु । तॆऱगुल नडपि वर्तिंचुचो नंत
गॊन कॊनि यिक्ष्वाकु कुलगुरुंडैन ।मुनि वसिष्ठुडु गार्यमुनु विचारिंचि
तानु राजन्युलु दग मंत्रिवरुलु । भानुसन्निभतेजु भरतुनि जूचि

करो'। ऐसा कहने पर 'वैसा ही हो' कहकर, दूसरे दिन मुनियों, राजाओं (और) महात्माओं को बुलाकर ॥१४७०॥

—शोभा से दशरथेश्वर के कलेवर (शव) को क्षुब्ध (हृदय से) तीर्थ-जल से स्नान कराया, पोंछा, ढंग से रखा, वर वस्त्र भूषणावलियों से सजाया, क्रम से वेदोक्त दान किया, श्रेष्ठ रूपसे विमान (अरथी) पर ला रखा, विलक्षण मन्त्रपूत अग्नि को हाथ में लिया, अनुज (और) वसिष्ठ आदि मुनियों के साथ भरत आगे-आगे चल पड़ा। उस विमान को अगल-बग़ल में घेरकर, रोती हुई, दुख से लड़खड़ाती हुई, कौसल्या आदि सभी वनिताएँ इकट्ठी होकर क्रम से आईं। सरयू (नदी) के पास, शवभूमि (श्मशान) में स्थिरता से चिता सजाकर, त्रेताग्नियों को दे कर, वरिष्ठ भक्ति से, वेदोक्तमार्ग से, स्थिरता से दशरथ नृपति (के शरीर) का दहन कर, समुचित रीति से तिलोदक दे कर, धर्म के अनुसार पिण्ड-प्रदान कर, नगरी (अन्तःपुर) में आकर, उन्नति (श्रेष्ठता) से, उचित रूपसे, पितृ-प्रीति हो, (ऐसा) भूसुरों को दान देकर, ॥ १४८० ॥

—समुचित रूपसे बारह दिन आवश्यक विधान (क्रियायें) (भरत) करता रहा। तब (इन सब कार्यों के होने के बाद) इक्ष्वाकु कुल के गुरु मुनि वसिष्ठ ने (भावी) कार्य के बारे में विचार कर, राजन्य, मन्त्रिवरों के

“वरतेज! मी तंड्रि परलोकमुनकु । नरिगॆ, श्रीरामुडु नरिगॆ गानलकु,
नुर्विकि राजु लेकुन्न गार्यमुलु । निर्वहिंपगरादु; निलुवरु प्रजलु
धारुणि चलियिंचु; धर्मंबु लणगु । वैरुलु मितुरु; वर्णमुल् गलयु;
नवनि यराजकमै युंड दगदु । प्रविमलमति नीवु पट्टंबु बूनु”
मनि बुद्धि सॆप्पिन नम्मुनि नाथु । गनुगॊनि भरतुंडु गरमु गोपिंचि
“यिदि येमि मुनिनाथ! यित मूढुडवॆ? ।मदि नित यॆऱुगवॆ मा कुलक्रममु?
नन्न गानल द्रोचॆ नक्कटा! नन्नु । गन्न तंड्रिनि जंपॆ गडगि मातल्लि;
१४९०

यित सालदॆ नाकु? निक राज्यंबु । जिंतितुने येनु ? जॆप्पकु मिक
गैकेयि कॊडुकनि कडगि पल्कॆदवु । गाक, यी तलपुलु गलवॆ नायंदु?
निट्टुन्न रूपुन नेनु मा यन्न । बट्टंबु गट्टॆद ब्रार्थिंचि तॆच्चिच;
काकुन्न मा यन्न गैकॊन्न नियति । गैकॊंदुगा, कॊंडु गलुगुने माकु?”
१४९४

साथ स्वयं भानु-सन्निभ (सम)-तेजवाले भरत को देखकर (कहा)–‘हे वरतेजवाले ! आपके पिता परलोक सिधारे । श्रीराम काननों में गये । उर्वी (पृथ्वी) पर किसी राजा के बिना कार्यों का निर्वाह नहीं करना चाहिये । प्रजा नहीं ठहरती (उच्छृङ्खल हो जायेगी) । धारुणी विचलित होगी । धर्मों का नाश होगा । वैरी प्रबल होंगे । वर्ण मिश्रित होंगे (वर्णसंकर होगा) । अवनि का अराजक (बिना राजा के) नहीं रहना चाहिये । प्रविमल मति से तुम शासन (का भार) सम्हालो’ । ऐसा समझानेवाले उस मुनिनाथ को देखकर, भरत अधिक क्रुद्ध हो (बोला)–‘यह क्या मुनिनाथ ! इतने मूढ़ हो तुम ? हमारे कुल के क्रम के बारे में मन में इतना भी नहीं जानते हो ? हाय ! सप्रयत्न हमारी माता ने अग्रज को कानन में ढकेल दिया, मुझे (और) मुझे जन्म देनेवाले पिता को मार डाला । ।। १४९० ।।

—क्या मेरे लिये इतना पर्याप्त नहीं है ? (इतना होने पर भी) अब मैं राज्य की चिन्ता करूँ ? अब आगे मत बोलो । शायद यह समझकर बोल रहे हो कि यह कैकेयी का पुत्र है । क्या मुझ में (सचमुच) ऐसी भावनाएँ हैं ? (नहीं हैं ।) अब जैसा हूँ, उसी रूप से मैं प्रार्थना करके अपने अग्रज को लाकर राजतिलक करूँगा । नहीं तो मेरे अग्रज ने जिस नियति (गति) को ग्रहण किया, मैं भी उसी (वृत्ति) को ग्रहण करूँगा । अन्य (कोई गति) हमारी नहीं हो सकती’ ।। १४९४ ।।

भरतुडु रामुनि योंद्दकु बोवुट

ननि निश्चयमु चेसि यपुडु मंत्रुलनु । गनुगोंनि "मा यन्न गान बोवलयु
देंरुवुलु सक्कगा दिद्दिंपु डखिल । पुर जनुलकु नेग बौंसगिन रीति
नेंड नेंड विडुदु लनेक वस्तुवुलु । गडु समग्रमुलुगा गाविंपु" डनिन
ननुकूलमति वारु नट्ल चेयिंप । ननुपमोत्साहुलै यम्मऱुनाडु
वंदि मागधुलुनु वरमंत्रि वरुलु । सुंदरी नट नर्त सुकुमार वरुलु
नवसहस्रमुलु दंतावळ घटलु । जवनाश्व कोटि लक्षयु शतांगमुलु
१५००
नऱुवदि वेलुनु नमितपदाति । तऱुचुगा नडुव नत्तऱि बौर जनुल
जनपदस्थुल नेंल्ल जातुल वारि । धनरत्न रासुल दग वसिष्ठादि
मुनुल राजुल मंत्रि मुख्युल गोंनुचु । दन तम्मुडुनु, दानु, दल्लुलंदऱुनु
ननुवुगा जतुरंतयानंबु लेंक्कि । वेंनुक रा भरतुंडु वेंगमें कदलि
पोयि गंगा नदि पोंतन विडिय । नायत शुभशीलुडगु गुहुं डेंऱिगि
"कडगि रामुनि मीद गैकेयि कोंडुकु। नडचु चुन्नाडु सेनल तोड" ननुचु

भरत का राम के पास जाना

ऐसा निश्चय करके तब मंत्रियों को देखकर (कहा)—'हमारे अग्रज के दर्शन के लिये जाना चाहिये। अखिल पुरजनों के जाने के लिये उचित रूपसे मार्गों को ठीक सजवाइये। जगह-जगह पर पड़ाव डालने के लिये अनेक वस्तुओं को बहुसमग्रता से (व्यवस्था) कराइये'। (ऐसा) कहने पर अनुकूलमति से उन्होंने वैसे ही (प्रबन्ध) कराया। (तब) अनुपम उत्साह से, दूसरे दिन, वंदी-मागघ, श्रेष्ठ मन्त्रीवर, सुन्दर सुकुमार नट (और) नर्तकी, श्रेष्ठ नौ सहस्र मेघ सम दंतावली (हाथियों का समूह), एक करोड़ जवनाश्व, एक लाख रथ, ॥१५००॥

—अमित (असंख्य) पदाति (पैदल) के निरन्तर चलने पर, उस अवसर पर समस्त जातियों के पुरजन, (तथा) ग्रामीण, धनरत्नराशियों के साथ वसिष्ठ आदि मुनियों, राजाओं, मन्त्रिमुख्यों को साथ लेते हुए, अपने अनुज, स्वयं (और) समस्त माताओं के उचित रूप से चतुरन्तयान (रथ) चढ़कर पीछे आनेपर, भरत ने शीघ्र ही निकलकर, जाकर, गंगानदी के निकट पड़ाव डाला। आयत शुभशीलवाले गुह ने (इस विषय को) जानकर (सोचा)—'प्रयत्नकर रामपर आक्रमण करने के लिए कैकेयी का पुत्र सेनाओं के साथ जा रहा है'। (ऐसा सोचते हुए) अत्यधिक क्रुद्ध हो नावों को (घाट से) हटाकर, (अपने दल-) बल के साथ आकर भरत से

नलवुमै गोपिंचि नाव लागिंचि। बलमुतो वच्चि भरतुन कनियॆ
"भरत! रामुडु राज्य पदवि नी किच्चि। यरुदैन मुनि वृत्ति नडवुल नुंड
नीवु सेनल तोड निजशक्ति मॆऱसि। पोवु चुन्नाडवु; पोलुने नीकु?
नेनु रामुनि बंट; नेनिंक निन्नु। बोनीनु; नी बलंबुल संहरिंतु; १५१०
नडरि नी तोड बोराडि प्राणमुलु। विडिचिन मरि राम विभुनि पै बॊम्मु'
अनि रोषमुन गुहु डाडुवाक्यमुलु। विनि भरतुडु नव्वि विमलुडै पलिकॆ
'बरमात्मुडगु रामु ब्रार्थिंचि तॆच्चि। परग नयोध्यकु बट्टंबु गट्ट,
बोवु चुन्नाडनु; बुद्धिलो गीडु। भाविप; नी विट्लु पलुकंगवलव"
दनि यन नातनि नक्कुन जेर्चि। तन मदि बॊगुलु नातनि चित्त मॆऱिगि
यनुरक्ति भरतेशु नडुगुल कॊऱगि। यनुपम वन्यंबु लैन वस्तुवुलु
गनु दनियग बॆक्कु कानुक लिच्च। कॊनि पोयि गुहुडु काकुस्स्थुंडु दॊल्लि
विडिसिन चोटनॆ विडियिंचि, प्रीति। जडलुगट्टिन चोटु सनि यट्टुसूप
जननुलु मुनुलुनु सचिवुलु दानु। गनुगॊनि भरतुंडु गडुशोक मंदि
सीत रामुंडुनु जेरि परुंड। नातत तृणशय्यलंदु गन्पडॆडु १५२०
तरुचैन कनक वस्त्रमुल चिह्नमुलु। पॊरिगनुगॊनि मदि बुरपुर बोक्कि

बोला—'हे भरत ! राज्यपद तुम्हें देकर राम अनुपम मुनिवृत्ति से जंगलों में रहे (तो) तुम सेनाओं के साथ, अपनी शक्तिको प्रकाशित करते जा रहे हो। यह क्या तुम्हारे लिए उचित है ? मैं रामका सेवक हूँ। अब मैं तुम्हें (आगे) नहीं जाने दूँगा। तुम्हारे बल (सेनाओं) का संहार कर दूँगा। ॥१५१०॥ —अतिशयता से तुम्हारे साथ युद्ध कर मेरे प्राण छोड़ने (मरने) के बाद ही तुम प्रभुराम पर (आक्रमण करने) जाओ'। ऐसा रोष के साथ गुह के कहे वाक्यों को सुनकर, भरत हँसकर विमल हो यों बोला—'परमात्मा राम से प्रार्थनाकर, (उन्हें वापिस) लाकर, शोभासे अयोध्या पर (उनका) राजतिलक करने जा रहा हूँ। मन से उनका अहित नहीं सोचता। तुम्हें ऐसा नहीं कहना चाहिये'। ऐसा कहने पर उसे गले से लगाकर, अपनेमन की व्याकुलता को उसे जताकर, उसके मन (की बातको) जानलिया, तब अनुरक्ति से (गुह) राजा भरत के चरणों को नमस्कार कर, अनुपम वन्य वस्तुओं की, संतृप्त करते हुये, अनेक भेंट देकर, (अपने साथ) ले गया। (ले जाकर) गुह ने पूर्व में काकुत्स्थ (राम) जहाँ ठहरे, वहीं ठहराया, प्रीति से (राम ने जहाँ) जटाएँ बाँधी थीं, ले जाकर वह स्थान दिखाया। दिखाने पर माताओं, मुनियों, सचिवों के साथ स्वयं (उसे) देखकर, अत्यन्त दुखी हुआ। सीता और राम के मिलकर सोने पर, आतत तृण-शय्याओं पर दिखाई पड़ने वाले— ॥१५२०॥

घनशोकमुनु बोंदि कडु दीनुडगुचु । मुनु राघवुडु जटल् मोनसि धरिंचे
नेक्कड ननि भरतेश्वरुं डप्पु । डक्कडके मुनु ननुवुगा नेगि
पनवुचु मरि मर्रिपालु देप्पिंचि । तन तम्मुडुनु दानु धरियिंचे जडलु
भरतुंडु मरुनाडु ब्राह्मिककर्म । परुडुनै गुहु डोंप्प बन्निचिनट्टि
येनूरु बलुनाव लोक्कि वेर्वेर । तानु दल्लुलु मुनुल् दग मंत्रिवरुलु
सकल सेनल तोड जाह्नवि दाटि । यकलंकुडगु गुहु नपुडु दोड्कोनुचु
१५२७

भरतुडु भरद्वाजाश्रममु जेरुट

नतडु सूपिन त्रोव नट वोयि पोयि । ऋतु होमतत धूम कबळित व्योम
कृतकांबुद स्तोम केवल मुदित । कृतलास्य विपिन बर्हिण बर्हजाल
रचितांतरांतर रत्न विचित्र । खचित तोरण पथिक्रममयि योप्पु
१५३०
ना भरद्वाज संयमि याश्रममुन । काभरतुडु वोयि यनति दूरमुन
जतुरंग बलमुल जतुरत निलिपि । यतुल पुण्यात्मकुंडगु भरद्वाजु

—अनुपम कनकवस्त्रों के चिह्नों को बार-बार देखकर, मन में अधिक व्याकुल होकर, अधिक शोक को प्राप्तकर, अतिदीन होते हुए राजा भरत ने पूछा 'पूर्व में राघव (राम) ने जटाएँ कहाँ धारण कीं'। तब वहीं प्रथमतः जाकर, व्याकुल होते हुए, फिर बड़ का दूध मंगवाकर, अपने अनुज के साथ स्वयं जटाएँ धारण कीं। दूसरे दिन भरत ब्राह्मीक-कर्मपर (ब्रह्ममुहूर्त में किये जानेवाले कर्मों में रत) होकर, गुह के द्वारा शोभा से भिजवाए पाँच सौ नावों पर, स्वयं, माताओं, मुनियों और मंत्रिवरों के साथ अलग-अलग नावों पर बैठकर, सकल सेनाओं के साथ जाह्नवी को पारकर, अकलंक गुह को तब साथ लेकर, ।। १५२७ ।।

भरत का भरद्वाजाश्रम पहुँचना

—उसके दिखाए मार्ग पर, उधर जाकर, यज्ञ-होम के समूह से परिव्याप्त आकाश में कृतक मेघों के भ्रम के कारण केवल-मुदित हो लास्य करनेवाले जंगली मोरों के बर्हिजाल (मोर-पंख) से अन्तरान्तर (जगह-जगह) पर रचित विचित्र रत्नों से खचित तोरणों से युक्त मार्गों से शोभायमान—।। १५३० ।।

—उस भरद्वाज संयमी के आश्रम में भरत गए। (जाकर) थोड़ी दूर पर चतुरंग बल को चतुरता से खड़ाकरके, अतुलपुण्यातमा भरद्वाज को देख

गनि भक्ति तो नमस्कारमुल् सेय । गनि यम्महामुनि गडु नलिग पलिकॆ
"भरत! यी चतुरंग बलमुल गॊनुचु । भरित सन्नाह संभ्रमुडवै नीवु
गडुशांत वृत्ति राघवु डरण्यमुल । बडि युंड नातनि पै बोव दगुनॆ?"
यनुचुन्न मुनिकोपमंतयु नॆऱिगि । विनतुडै भरतुंडु वॆऱचुचु बलिकॆ
"जानकीवल्लभु 'सकल राज्यंबु । बूनुमु नी' वन बॊयॆद गानि
यॊंडु भावमुन बो नोमुनिनाथ! । यॊंडुगा दलपकु मुल्लंबु लोन"
ननिन संतोषिंचि यम्मुनि वलिकॆ ।"ननघात्म ! नीवु नी यखिल सैन्यमुलु
मनमार मा याश्रममुन नेडुंडि । विनुति मे मॊनरिंचु विंदारगिंपु" १५४०
मनि विश्वकर्मनु नटकु रप्पिंचि । "घन चित्रपुरि यॊंडु गल्पिंचि यंदु
वारु वीरन कॆल्ल वारिकि दगिन । मेरल निंड्लु निर्मिंपुमी" वनिन
नैदु योजनमुल नत डॊक्क पुरमु । भूदेवि चरण नूपुरमु निर्मिंचॆ
नंदु गांचनमयंबै यॊक्क राज । मंदिरं बमरॆ, दन्मध्य भागमुन
श्वेतातपत्रोरुसिंहासनमुन । जातुरि नॊक सभासदन मिपॊंदॆ;
नप्पुडु मुनियाज्ञ नट भरतुंडु । विप्पैन गृहमु ब्रवेशिंचि यंदु

भक्ति से नमस्कार किया। उसे (भरत को) देखकर, वह महामुनि अत्यन्त रुष्ट हो बोले—'हे भरत ! इन चतुरंग बल (युक्त सेनाओं) को साथ लेकर, भरित-सन्नाह (तैयारी)-संभ्रम से युक्त तुम्हारा, अतिशान्त वृत्ति से जंगलों में निवास करनेवाले राघव पर आक्रमण करने जाना उचित है ? (नहीं है।) (ऐसा) कहनेवाले मुनि के समस्तकोप को जानकर, विनत हो भरत डरते हुए (यों) बोला—'जानकी-वल्लभ से यह कहने जा रहा हूँ कि 'तुम समस्त राज्य को ग्रहण (स्वीकार) करो'। हे मुनिनाथ ! मेरे मन अन्य कोई भाव नहीं है। मन में अन्यथा मत समझिये'। (ऐसा) कहने पर सन्तुष्ट होकर वह मुनि बोले—'हे अनघात्म ! तुम (और) तुम्हारी सेनाएँ प्रसन्नता से आज हमारे आश्रम में रहकर, विनुति से हमारे भोज को स्वीकार करो'। ॥ १५४० ॥

(ऐसा) कह, विश्वकर्मा को वहाँ बुलाकर (आदेश दिया)—'एक महान् विचित्र नगर का निर्माण कर (और) उसमें समस्तजनों के लिए समुचित घर बनाइये'। कहने पर उसने पाँच योजनों का एक नगर बनाया जो भूदेवी के चरण नूपुर (के समान) था। उसमें कांचनमय एक राजमन्दिर शोभित हुआ। उसके मध्यभाग में श्वेत आतपत्र (छत्र) से युक्त उस (महान्)-सिंहासन के चातुर्य से युक्त एक सभासदन शोभायमान हुआ।

सिंहासनमु गांचि "श्रीराम नृपति ।सिंहार्ह" मिदि यनि चेतुलु मोंगिचि
या समीपंबुन नत डोक्क पीठि । नासीनुडै मंत्रु लंदरु गोलुव
नुन्नचो मुनियाज्ञ नोक्कट वच्चि । किन्नर गंधर्व खेचरांगनलु
नच्चर नेच्चेलु लाट पाटलुनु । नच्चेरुवुग जूपि रतनि सन्निधिनि १५५०
ना रीति सकल जनावळि यिड्ल । नारुढि वेलसे नाट्य प्रसंगमुलु;
निलमीद दिविमीद नेये विशेष । मुलु गल वन्नि या मुनियाज्ञ वच्चे;
जानपदुल् पौर जनमु लंदरुनु । स्नानमुल् गाविंचि चलुवलु गट्टि
मंदार पुष्प दाममु लूनि दिव्य । चंदनं बलदि भूषणमुलु दाल्चि
वेवेल तेरुगुल वितगा वेल्पु । टावु चतुर्विधाहारंबु लोसग
बरि तृप्तुलै दिव्यभामलु दमकु । सुरत विशेषमुल् सोक्कुचु देलुप
जन्म साफल्यंबु समकूडे ननुचु । दन्मयावस्थल दविलि क्रीडिप
नम्मुनियाश्रमं बट्टु सूड नोप्पे । निम्मुल ना स्वर्ग मेवगिंचुचुनु;
ईरीति भरतेशु डेल्ल सैन्यमुलु । ना ऋषि बोगडुचु ना रात्रि दीर्प
मरुनाडु पुरमु दन्मंदिरावळुलु । देरुगंटि चेलुलु नदृश्य मौटयुनु १५६०
भरतु डत्याश्चर्यभरितुडै यंत । वर तपोनिधि भरद्वाजुनि जेरि

तब मुनि की आज्ञा से भरत ने विशाल गृह में प्रवेश किया, उसमें सिंहासन को देख 'यह श्रीराम-नृपति-सिंह (राजसिंह) के योग्य है' कह हाथ जोड़कर, उस (सिंहासन) के निकट एक पीठ (आसन) पर आसीन हुआ। समस्त मन्त्री सेवा में हाज़िर थे। तब मुनि की आज्ञा से वहाँ आकर, किन्नर-गन्धर्व-खेचर स्त्रियों, (तथा) अप्सरा-सखियों ने उसके समक्ष विचित्र रूप से संगीत और नृत्य का प्रदर्शन किया। ।।१५५०।।

उस प्रकार समस्त जनसमूह के घरों में नृत्यप्रसंग सम्पन्न हुआ। भूमि पर (और) स्वर्ग में जो-जो विशेषताएँ थीं, वे सब मुनि की आज्ञा से (वहाँ) आईं। ग्रामीण (और) नागरिक सभी ने स्नान किया, स्वच्छ वस्त्र पहने, मन्दार पुष्प-दाम (हार) धारण किए, दिव्य चन्दन का लेप किया, भूषण धारण किये, हज़ार-हज़ार पद्धतियों में विलक्षणता से काम धेनु के चतुर्विध आहार देनेपर, परितृप्त हो, दिव्य स्त्रियों के आनन्द मग्न हो सुरत-विशेष (रतिविधान) बताने पर, तन्मय होते हुए (अयोध्या के नागरिक) (रति) क्रीड़ाएँ करते रहे कि जन्म (लेने की) सफलता प्राप्त हो गई है। (इस प्रकार) वह मुनि-आश्रम, स्वर्ग का तिरस्कार करता हुआ, शोभायमान दीखा। इस रीति से राजा भरत (और) समस्त सेनाओं ने उस ऋषि की प्रशंसा करते हुए, वह रात बिताई। दूसरे दिन वह नगर, वह मन्दिर-समूह, अप्सरा सखियाँ (सब) अदृश्य हो गईं। ।। १५६० ।।

प्रणमिल्लि “मी तपोबल महत्त्वमुलु। प्रणुतिंप दरमे या परमेष्ठिकैन !
ने निंक रघुरामु निनकोटि धामु । गान बोयेद” नंत गन्न तल्लुलनु
नव्वेळ म्रॉक्किंप नतडु “वीरेव्व । रेव्वरु, वेर्वेर नेरिंगिपु” मनुडु
“धीरात्म! नृपु पेद्द देवुलै येल्ल । वारिलो वन्नेयु वासियु गांचि
कडुपु सल्लग रामु गांचियु वगल ।नुडुकु चुन्नदि तद्वियोगाग्नि शिखल
बरिचित-जन्म-साफल्य-कौसल्य ।परिकिंपु मिदे मुनिपति-सार्वभौम!
कौसल्यसति वामकर मंट बट्टि । कै सेतलुडि वोयि गत पुष्प कर्णि
कारशाखयु बोलि कै व्रालि युन्न । यी राम श्रीराम नेंड बाय लेनि
या लक्ष्मणुनि गन्न यट्टि पुण्यात्मु । रालु सुमित्र; पराकु मुनींद्र! १५७०
ये तल्लिकै कान केगे मा यन्न?। ये तल्लि कतमुन नीलगे मा तंड्रि
ये तल्लि कोर्के नन्निंतकु देच्चे? । ना तल्लि मा तल्लि हत पुण्यपाक
कैक गन्गोनु” मंचु गद्गद कंठु । डै कडपट शोक मग्गलंबैन
नूरक युन्नचो नूरार्चि यतनि । ना ऋषि भाविकार्यमु जूचि पलिके:

—(तो) भरत अति आश्चर्य-भरित हो, तब श्रेष्ठ तपोनिधि भरद्वाज के पास जाकर, प्रणामकर (बोला)—‘आपके तपोबल-महत्त्व की प्रणुति (प्रशंसा) करना उस परमेष्ठी के लिए भी सम्भव है ? (नहीं है।) अब मैं इन-कोटिधाम (कोटिसूर्य के धामवाले) रघुराम को देखने जाऊँगा’। कहकर, उस अवसर पर माताओं से प्रणाम कराने पर, उसने (मुनि ने कहा)—‘ये कौन कौन हैं ? अलग-अलग से बताओ (परिचय दो)’। तब (भरत ने कहा)—‘हे धीरात्मा ! राजा की ज्येष्ठ देवी होकर, सब में विलास और कीर्ति प्राप्त कर, कोख की सफलता के रूप में राम को (पुत्र के रूप में) प्राप्त करके भी, तद्वियोग्नि-शिखाओं में तप्त हो रही है, यह परिचित-जन्म-साफल्यवाली कौसल्या है । हे मुनिपति-सार्वभौम ! यह देखिये । सति-कौसल्या के वाम-कर को पकड़कर, अलंकारों से रहित होकर, पुष्प-रहित कर्णिकार (कनेर) के समान, (दुखभार से) झुकी हुई वह रामा, श्रीराम से बिछुड़ न सकनेवाले उस लक्ष्मण को जन्म देनेवाली पुण्यशीलवाली सुमित्रा हैं । हे मुनीन्द्र! सावधान (होकर सुनिये),।।१५७०।।

—जिस माता के कारण हमारे अग्रज काननों में गये, जिस माता के कारण हमारे पिता मर गये, जिस माता की इच्छा ने मेरी यह दशा कर दी, उस मेरी माता, हमारी माता, हतपुण्यवाली कैकेयी को देखिये’। (ऐसा) कहते हुए गद्गदकण्ठवाला हो, अन्त में शोक की अधिकता के कारण, भरत मौन हो रहा । उसे सान्त्वना देकर, भावी कार्य के बारे में विचार कर ऋषि (यों) बोले—‘इस कैकेयी ने लोकैकहित किया है । आप

“नी कैक लोकैक हितमु गाविंचॆ;। मी कॆल्ल दॆल्लमौ मीद दा” ननुचु
मऱि रामुडुन्नट्टि मार्गंबु दॆलिपि । तॆऱगॊप्प नम्मौनि दीविंप वॆंडलि
सिंधुरबृंहित सेनानुलाप । सैंधव हेषित स्यंदन नेमि
रवमुल कलिकि यरण्य मृगाळि । दिविऱिन भीति नल् दॆसलकु बाऱ
बल चरणोद्धूत पांसु संघात । मलिनीकृतादित्य मंडलुंडगुचु
ना चित्रकूटाद्रि कर्थितो भरतु । डेच्चि सेनलु दानु नेगु चुन्नंत १५८०
नट जित्रकूटाद्रि यंदु राघवुडु । कुटिल कुंतल सीत गूडि मोदमुन
“गनुगॊंटिवे यिन्नगंबु बिंबोष्ठि । कनु दम्मुलकु विंदु गाविंचॆ मनकु
निन्नग महिम दा नॆन्नग वशमॆ । पन्नग पति कैन भामाललाम!
गुऱुतैन सॆलयेटि घुमघुमध्वनुल । नुऱुमु लटंचु बॆल्लुब्बि नीकुरुल
बुरुडिंचु तन गॊप्प पुरि विच्चि नॆमलि।पॊरिबॊरि नाडॆडु; बूबोडि! सूडु;
कांतरो! यी चॆंचु कांतल गंटॆ? दंति कुंभंबुलु दम चन्नु गवकु
नॆन वच्चुटॆट्लनि यिभकुंभ दळन । मॊनरिंचि तन्मणु लॊप्प दाल्चेदरु,

---

सबको वह बाद में स्वयं स्पष्ट होगा’। (यह कहकर) फिर राम जहाँ थे, उस मार्ग के बारे में बताया (और) ढंग से आसीसा। (तब) हाथियों की चिंघाड़, सैनिकों की बातचीत, घोड़ों की हिनहिनाहट, रथों के नेमी रव, (आदि) की संयुक्त (ध्वनि) से अरण्य की मृगावली अधिक भीति से चारों दिशाओं में भागने लगी। बल (सेना) के चरणों से उठी धूल के समूह से आदित्यमण्डल को मलिन करते हुए (समय) भरत के चित्रकूट पर्वत को उत्कट अभिलाषा से सेनाओं के साथ जाते समय—॥ १५८० ॥

—वहाँ चित्रकूटाद्रि पर राघव कुटिल कुन्तलों वाली सीता के साथ मोद से (वार्तालाप कर रहे थे)। (राम ने कहा)—‘हे बिम्बोष्ठी ! इस नग (पर्वत) को देखा है तुमने ! हमारे कमलनेत्रों को भोज (आनन्द) दे रहा है। हे भामाललामा ! पन्नगपति (आदिशेष) के लिए भी इस पर्वत की महिमा का वर्णन सम्भव है ? (नहीं है।) विस्पष्ट निर्झरों की गम्भीर ध्वनियों को मेघगर्जन समझकर, अत्यन्त आनन्द से, तुम्हारी केशराशि की समता करनेवाली अपनी बड़ी पंखराशि को खोल (फैला) कर, मोर बार-बार नाच रहा है। हे पुष्प के समान शरीरवाली ! देखो। हे कान्ता ! इन चेंचु (जंगली जाती की) स्त्रियों को देखा है ? गज-कुम्भ (-स्थल) अपने कुचकुम्भों की समता क्यों करें, (यह सोच) गजों के कुम्भस्थलों का विदारण करके, उनकी मणियों को शोभा से धारण करती हैं। यह दिव्य (अमर)-जनों का संकेत प्रदेश (अभिसार का प्रदेश) है अतः इस पर्वत (प्रदेश) में दिव्यसुगंधियाँ फैल रही हैं। उस झाड़ी को देखो, वह पदतल

दिव्युल संकेत देशंबु गान । दिव्य वासनलु संधिंच नी कोन
पदतलालक्तक भासुरंबैन । पोंद सूडु गंधर्व भोग गेहंबु;
किन्नरकंठि ! यी गिरिकंदरंबु ।किन्नर किन्नरी गीत सद्गोष्ठि१५९०
कलकंठ रवसहकार पल्लवमु । कलकंठि ! यी सहकारंबु जूडु;
परि परि विधमुल परुवंपु विरुल । परिमळंबुलु गदंबमुग गूर्चुचुनु
मलयानिलुंडु गोमल यान लील । मलयु चुन्नाडिदे! मन मीद नबल!
यल्लदे! चूचिते ? हल्लकनिकर । फुल्लकैरव कुंज पुंजरंजितमु
सालतमाल रसाल तक्कोल । ताल हिंताल कुद्दाल कूलमुन
नमलिन पुलिन मध्यासनासीन । समुचित मुनिबृंद संदीप्तमैन
मंदाकिनी नदीमणि गन्नु ललर । मंद यान विलास मथित मराळ"
यनि यनि पलुकुचु नवनीरुहमुल । गनुपट्टु पोंदरिंड्ल घनकंदरमुल
शैल शृंगंबुल सानुदेशमुल ।नोलि विनोदिंचुचुन्नचो गडगि१५९९

भरतुनि जूचि लक्ष्मणुडु संदेहिंचुट

बलुविडि चनुदेंचु भरत सैन्यमुल । कलकलध्वनुल नार्कणिंचि बिट्टु
१६००

के अलक्तक (महावर) से भासुर (शोभायमान) गन्धर्व-भोग-स्थली है। हे किन्नरकण्ठ वाली ! यह गिरि कन्दरा किन्नर (और) किन्नरियों के गीतों की सद्गोष्ठी (का स्थान) है। ।। १५९० ।।

—हे कलकण्ठी ! इस सहकार (आम के पेड़) को देखो। कलकण्ठ (कोयल) की ध्वनि के सहकार (करनेवाले) पल्लवों से युक्त है। विविध प्रकार के यौवन से युक्त (विकसित) फूलों के परिमल को एकत्रित करते हुए मलयानिल कोमल-यान-लीला (मन्द-मन्द गति) से, हे अबला ! हम पर अपना प्रभाव डाल रहा है। उधर देखा ! फुल्ल-कैरव-कुंज-पुंज (से) रंजित, साल, तमाल, रसाल, तक्कोल, ताल, हिन्ताल, कुद्दाल (आदि वृक्षों से) युक्त कूलवाली, अमलिन पुलिनों (तट) पर मध्यासन में आसीन समुचित मुनि-बृन्दों से संदीप्त मन्दाकिनी-नदीमणि को, हे मन्दगमन के विलास से मराल (हंस) का भी तिरस्कार करनेवाली (सीता) ! नेत्रोत्सव करते हुए देखो'। ऐसा कहते हुए (राम और सीता) वृक्षों के (नीचे) दिखाई पड़नेवाले लताकुँजों में, महान् कन्दराओं में, शैल शृंगों में, तराइयों में प्रेम से आनन्द उठा रहे थे। (तब) सप्रयत्न—।।१५९९।।

भरत को देख लक्ष्मण का सन्देह करना

—चढ़ आनेवाले भरत की सेना की कलकलध्वनियों को सुनकर, अधिक ।।१६००।।

कलगि नलगड बारु करि वराहमुल । बलु मृगंबुल जूचि बलधूळि जूचि
“यिट धूळि दिवि बर्व नेमि कारणमॊ? यट वोयि यरसि र’म्मनिन
लक्ष्मणुडु
वेवेग नॊक महावृक्षाग्र मॆक्कि । भाविंचि युत्तरभागंबु नंदु
बलमुल बॊडगांचि भानु वंशजुल । बलु बिरुदुल तोडि पडगलु गांचि
यिच्चलो “भरतेशु डिट रामुमीद । वच्चुचुन्ना’ डनि वडि निश्चयिंचि
पटु वज्र मद्रि पै बडुभंगि दोप । जटुल सत्त्वमुन वृक्षमु डिग्ग नुरिकि
वारक रोष दुर्वारुडै वच्चि । या राम विभु जूचि यनियॆ लक्ष्मणुडु;
अडविकि निन्नु बोनडचि नी राज्य । मडरि यंतयु गॊनि यंतट बोक
घन शक्ति नी मीद गैकेयि कॊडकु । सनुदॆंचुचुन्नाडु सबलुडै नेडु;
अवॆचूडु! कोविदारादि ध्वजंबु । लवॆ चूडु! भटुल वीरालापमुलुनु १६१०
शरचापकवचमुल् सरिबूनि नीवु । भरतुनि कॆदुरुगा बलुविडि नडवु
निलुवकु, कादेनि नीवु सीतयुनु । दॊलगुमु; नीशांति दुदि नित सेसॆ!
ने निक सैरिप; निट वच्चॆ नेनि । वीनि जंपॆद” नन्न विनि रामविभुडु
“नाकु दम्मुडवय्यु ना तोड बुट्टि । नी किट्टि यविनीति नेडेल पुट्टॆ?

—क्षुब्ध होकर, चारों दिशाओं में भागनेवाले करि (हाथी), वराह (आदि) अनेक मृगों को देखकर सेना (के आगमन की)-धूल को देखकर, (राम ने कहा)—‘यहाँ धूल के आकाश में उठने का क्या कारण है ? उधर जाकर पता लगाकर आओ’। (ऐसा) कहने पर लक्ष्मण अतिवेग से एक महावृक्ष के अग्र (शिखर) पर चढ़कर, सोचकर, उत्तर भाग (दिशा) में सेनाओं को देखकर, भानुवंशजों की अनेक बिरुदों से युक्त पताकाओं को देख, मन में झटसे निश्चय किया कि ‘राजा भरत अब राम पर (चढ़) आ रहा है’। चटुल सत्त्व से (लक्ष्मण) वृक्ष पर ऐसा कूद पड़े मानों पटु वज्र अद्रि (पर्वत) पर गिर रहा हो। निरन्तर के रोष से दुर्वार होते हुए, आकर, उस प्रभुराम को देखकर लक्ष्मण बोले—‘जंगलों में तुम्हें भेजकर, तुम्हारे समस्त राज्य को अतिशयता से लेकर, उतने से न रुककर, अधिक शक्ति से कैकेयी का पुत्र तुम पर आज ससैन्य चढ़ आ रहा है। वे ही देखो, कोविदार आदि ध्वजाएँ, वे ही देखो, सैनिकों के वीरालाप। ॥१६१०॥

—ठीक तरह से शर, चाप, कवच धारणकर, तुम भरत का सामना करो, (उस पर) आक्रमण करने चलो। रुको मत, नहीं तो तुम और सीता हट चलो। तुम्हारी शान्ति (शान्त स्वभाव) ने अन्त में इतना (बुरा हाल) कर दिया है। मैं अब (आगे) सहन नहीं करूँगा। यहाँ आया तो (मैं)

भ्रातृ वत्सल मूर्ति परमपावनुडु । नीति कोविदुडु मानित धर्मपरुडु
भरतुंडु नी कंटॆ भक्तुंडु नाकु । भरतुनि दॆस नॊक्क पापंबु लेदु;
मनल नयोध्यकु मरल ब्रार्थिप । जनुदॆंचु चुन्नाडु; संदेह मुडुगु;
कडवकु'' मनुडु राघवु नाज्ञ पॆंपु । गडव भीतिल्लि लक्ष्मणु डूरकुंडॆ
भरतेशु डंतट बौरुल हितुल । दॊरल समरत्त योधुल नॊक्क चोट
विडियिंचि तल्लुल वॆनुक दोड्तेर । गडक वसिष्ठुनि गट्टड सेसि १६२०

गुरुभक्ति सूतुडु गुहुडु दोडुगनु । नरिगि तम्मुडु दानु नग्गिरि यॆक्कि
वरुस नय्यडवि त्रोवलु दॆलियुटकु । गरमर्थि सौमित्रि गट्टिन यट्टि
गुऱुतुलु गॊन्नि गन्गॊनुचु नलगडल । नॆऱि बरिकिंचुचु निखिलास्त्रशस्त्र
जाल पालित सुविशालांगणमुल । जाल जॆन्नगु पर्णशाल केतॆंचि १६२४

भरतुडु मुनिवेषधारुलैन रामलक्ष्मणुल जूचुट

मुनिवेषमुन जाल मुदमंदु रामु । गनुगॊनि यात्मलो गलिगि
शोकिंचि

उसका (भरत का) वध कर दूँगा'। (ऐसा) कहने पर, सुनकर प्रभुराम ने (कहा)–'मेरे अनुज होकर, मेरे सहोदर होकर भी, तुम में आज यह अविनीति कैसे पैदा हुई ? भ्रातृवात्सल्य की मूर्ति, परम पावन, नीतिकोविद, मानित (सम्मान्य)-धर्म-पर (तत्पर) भरत तुम्हारी अपेक्षा मेरा अधिक भक्त है। भरत की ओर (के मन में) एक भी पाप नहीं है। हमसे अयोध्या लौट चलने की प्रार्थना करने आ रहा है। सन्देह को छोड़ दो। छोड़ो'। ऐसा कहने पर राघव के आदेश का उल्लंघन करने में भीत होकर लक्ष्मण चुप रहा। तब राजा भरत पुरजन, हितू, उमराव, समस्त योद्धाओं को एक स्थान पर ठहराकर, माताओं को पीछे ले आने के लिए सप्रयत्न (सविनय) वसिष्ठ से प्रार्थनाकर, ।। १६२० ।।

—अधिक भक्ति से सूत (सुमन्त्र), गुह के साथ, अनुज के साथ, आप उस गिरि पर चढ़कर, क्रम से उस जंगल में मार्ग को पहचानने के लिए, सौमित्र ने बड़ी इच्छा से जो कुछ संकेत बाँधे (बनाए) थे, उन्हें देखते (पहचानते) हुए, चारों ओर ध्यान से देखते हुए, (भरत ने) निखिल (समस्त) अस्त्र-शस्त्र जाल (समूह) से युक्त विशाल आँगनों से अधिक शोभायमान पर्णशाला में आकर, ।। १६२४ ।।

भरत का मुनिवेषधारी राम लक्ष्मण को देखना

—मुनिवेष में अत्यन्त मुदित होनेवाले राम को देखा, मन में विकल हो

"पॊलुचु कांचन गृहंबुल नुंडुवाडु । ललि दूलि पर्णशालल नुन्नवाडु
पॊगडॊंदु पूल पान्पुन नुंडुवाडु । जगति पै बूरि सॆज्जनु नुन्नवाडु
नॆऱसि किरीटंबु नॆरि दाल्चुवाडु । तऱुचैन जड लॊप्प दालिच युन्नाडु
नोलि राजुलु गॊल्व नुंडॆडि वाडु । लोलत मृगमुल लो नुन्नवाडु
मेलिचंदनमुनु मेयि बूयुवाडु ।धूळि धूसरितुडै तूलि युन्नाडु; १६३०
मॊनसि दिव्यांबरंबुलु गट्टुवाडु । मुनिवृत्ति वल्कलंबुलु गट्टिनाडु
पॊसग रसान्नमुल् भुजियिंचुवाडु । कसरुगायल ब्रॊद्दुगडपु चुन्नाडु
चूचिते शत्रुघ्न ! शुभमुर्ति रामु । डीचंदमुन दुःख मीदु चुन्नाडु;
कैकेयि पापंबु गडुपुन बुट्टि । यी कष्ट दुर्दश लिट्टु सूड वलसॆ"
ननुचु दम्मुडु दानु ना राम विभुनि ।गनि म्रॊक्कुटयु वारि गौगिट जेर्चि
कन्नुल हर्षाश्रुकणमुलु दॊरुग । वॆन्नुलु निविरि भाविंचि दीविंचॆ;
नहिमांशुकुलुनकु ना सुमंत्रुंडु। गुहुडु म्रॊक्किरि भक्ति कॊन साग नपुडु;
धरणिजकु सुमित्रातनूजुनकु । भरत शत्रुघ्नुलु प्रणमिल्लि निलुव

शोककर (भरत ने शत्रुघ्न से कहा)—'शोभायमान कांचन गृहों में रहनेवाला (आज) लालित्य से शून्य हो, पर्णशालाओं में निवास कर रहा है। सराहनीय पुष्प-शय्या पर रहनेवाला (आज) जगति में पर्णकुटी में रह रहा है। शोभा से किरीट को सुन्दरता से धारण करनेवाला (आज) विलक्षण जटाओं को सुन्दरता से धारण किया हुआ है। क्रम से राजाओं की सेवाएँ ग्रहण करते रहनेवाला, (आज) बड़ी इच्छा से मृगों के मध्य में है। श्रेष्ठ चन्दन को शरीर पर लगानेवाला (आज) धूलिधूसरित बना हुआ है ॥ १६३० ॥

—उपक्रम करके दिव्याम्बर धारण करनेवाला, मुनिवृत्ति से (आज) बलकल पहने हुए है। समुचित रीति से (षड्) रसों से युक्त अन्न खानेवाला (आज) कच्चे फलों से दिन बिता रहा है। देखा शत्रुघ्न ! शुभमूर्तिवाला राम इस प्रकार दुख में ऊभ-चूभ हो रहा है। कैकेयी के पापी गर्भ में जन्म लेकर, ये कष्ट (-प्रद) दुर्दशाओं को इस प्रकार देखना पड़ा।' (ऐसा) कहते हुए अनुज के साथ स्वयं (भरत ने) उस विभुराम को देखकर प्रणाम किया। उन्हें गले से लगाकर, आँखों से हर्ष के अश्रुकणों के झरने पर, (उनकी) पीठों पर हाथ फेरकर (राम ने) आशीर्वाद दिया। उस अहिमाँशुकुल (सूर्यकुल) वाले (राम) को सुमन्त्र (तथा) गुह ने बड़ी भक्ति से प्रणाम किया। धरणिजा (सीता) को तथा सुमित्रा-तनूज (लक्ष्मण) को भरत (और) शत्रुघ्न प्रणाम कर खड़े रहे। (तब) राघव

गुशपीठमुल नुंड गोरि राघवुडु । दशरथु सेमंबु दल्लुल शुभमु
बलुमारु नडुगुचु "भरत! नीवेल ।यिलरुयेल किंत दव्वेगु देंचितिवि?
१६४०
भूतलाधीशु पंपुन राज वगुचु । नीति तो जेयुदे नीवु राज्यंबु ?
दशरथुनकु सत्य प्रतापुनकु । विशद पुण्युनकु गावितु वे पूज ?
तल्लुल नेल्ल नादर मुल्लसिल्ल । नुल्लंबु सल्लगा नूऽडिपुदुवे ?
कोविदु मत्कुलगुरु दपो निष्ठु । ना वसिष्ठु गरिष्ठु नर्चिंचि नीवु
अग्निहोत्रमुल संध्याकाल नियति । भग्नंबु गाकुंड बालिते नीवु ?
सुजनुलौ मंत्रुल चॉप्पेल्ल देलिसि । विजय मूलमु मंत्रविधि मेरुंगुदुवे?
यपर रात्रुल लेचि यर्थचिंतनमु । निपुणत जेयुदे नीवु नित्यंबु ?
नरसि युत्तममध्यमाधमजनुल । वेरवुतो बनि गोंदुवे तगिनट्लु ?
तनवारियेंड नैन दगवुन दंड । मनुरक्ति जेयुदे यपराध मेरिगि ?
मतिमंतु सकल सम्मतु स्वामि हितुनि।विततविक्रम सैन्य विभु जेसिनावे
१६५०
कॉलिचिन वारिकि गोरि जीतमुलु। निलुव गाकुंड सन्निधि नोसंगुदुवे?

ने उन्हें कुशासन पर बैठने का आदेश दिया (और) बार-बार दशरथ का कुशल तथा माताओं का शुभ (कुशल) पूछा (और कहा)—'हे भरत ! तुम पृथ्वी पर शासन न कर, इतनी दूर क्यों आये हो ?।। १६४० ।।

भूतलाधीश (राजा) की आज्ञा से राजा बनकर, नीति के साथ राज्य कर रहे हो न ? सत्यप्रताप (और) विशद पुण्यवाले राजा दशरथ की तुम पूजा कर रहे हो न ? सभी माताओं का बड़े आदर के साथ, हृदय को शीतल बनाते हुए सान्त्वना दे रहे हो न ? कोविद, हमारे कुलगुरु, तपोनिष्ठ, गरिष्ठ उस वसिष्ठ की अर्चना करके, सन्ध्या-काल के नियम का भँग न करते हुए अग्निहोत्र का पालन करते हो न ? सुजन मन्त्रियों की चित्तवृत्ति को जानकर, विजयमूल मंत्रविधि (राजनीत) को जानते हो न ? अपर-रात्रियों में (रात के पिछले पहरों में) जागकर, निपुणता से, नित्य ही अर्थ-चिन्तन करते हो न ? उत्तम, मध्यम, अधमजनों के साथ, (उनकी चित्तवृत्ति) जानकर समुचित रूप से, उपाय से काम लेते हो न ? अपराध को जानकर, अपने लोगों (स्वजनों) के सम्बन्ध में भी न्याय को जानकर, अनुरक्ति से दण्ड-विधान करते हो न ? मतिमान्, सकल-सम्मत (लोकप्रिय), स्वामि-हितू, विततविक्रमवाले को सेनापति बनाया है न ? ।। १६५० ।।

—सेवा करनेवालों को, प्रेम से, वेतन बिना पिछड़े हुए, अपने समक्ष

चारुल वलन राष्ट्रमुल वार्तलुनु । वैरुल तॆऱगु सर्वमु नॆऱुंगुदुवॆ ?
जालि दूलॆंडि पेदसादल मॊरल । वालायमुग विंदुवे गर्व मुडिगि ?
यॆमिलि वर्णाश्रमाचार विहित । धर्मंबु लरयुदॆ तडबडकुंड ?
जोरुल जारुल सुडियंगनीक । वारल दंडिंतॆ वदलक पट्टि ?
चतुरंगबलमुल सन्नाह पटिम । नतियुक्ति जेयुदॆ यप्पटप्पटिकि ?
धन धान्य वस्तु सद्भट समेतमुग । मुनुपुगा गडि दुर्गमुल बलियिंतॆ ?
यन्यायमुलु सेसि यर्थमुल् गॊनक । मान्यत ब्रोतुवॆ मऱि कापु जनुल?
नर्थलोभमुन विप्राग्रहारमुल । नर्थ मॆत्तवु गदा यरवीसमैन ?
नॆपुडु गोब्राह्मण हितमु गोरुचुनु । निपुणुंडवै धर्मनिष्ठ नुंडुदुवॆ ?
१६६०

शक्तित्रयंबुनु षड्गुणंबुलुनु । सक्ति बंचांगमुल् चतुरुपायमुलु
बदुनाल्गु राजपापंबुलु दॆलिसि । सदयुडै मनुधर्मशास्त्र पद्धतिनि
देवतापितृ महीदेवता पूज । गाविंचि स्वर्गंबु गांचु भूविभुडु
नीवुनु ना रीति राज्यंबु । गाविंतु वे'' यंचुगाकुत्स्थुडडुग
गरमुलु मॊगिचि गद्गद कंठुडगुचु । भरतुंडु राम भूपति किट्टु लनियॆ

देते हो न ? गुप्तचरों के द्वारा (स्व) राष्ट्र (राज्य) का समाचार (तथा) वैरियों की समस्त गतिविधियों को जानते हो न ? गर्व को त्यागकर, दीन बने निर्धन (तथा) साधारण जनों की दुहाई को निरन्तर सुनते हो न ? बिना किसी संकोच के, अनुराग से वर्णाश्रम-आचार-विहित धर्मों के बारे में विचार करते हो न ? चोरों और जारों (पुरुषों) को बढ़ने न देकर, अवश्य पकड़कर दण्ड देते हो न ? समय-समय पर चतुरंग-बल (सेना) की सन्नाह(तैयारी)की दक्षता का अतियुक्ति से(प्रयोग)करते हो न ? धन-धान्य-वस्तु, सद्भट युक्त रखते हुए, (शत्रुओं के आक्रमण के) पूर्व ही सुदृढ़ दुर्गों का बल बढ़ाते हो न ? अन्याय करके, अर्थ (कर) न लेकर, मान्यता से किसानों की रक्षा करते हो न ? धन-लोभ से विप्रों के अग्रहारों से किंचित् अर्थ भी नहीं लेते हो न ? सदा गोब्राह्मण-हित की कामना करते हुए, निपुण हो, धर्मनिष्ठा के साथ रहते हो न ? ।। १६६० ।।

शक्तित्रय (इच्छा, क्रिया, ज्ञान), षड्गुण, पाँच अंग, चार उपाय, चौदह राजपापों के बारे में जानकर, सदय होते हुए, मनु के धर्मशास्त्र की पद्धति के अनुसार देवता, पितृ, महीदेवताओं की पूजा करके राजा स्वर्ग को प्राप्त होता है। तुम भी उसी रीति से नीति से राज्य करते हो न ?' ऐसा काकुत्स्थ(राम) के पूछने पर, हाथ जोड़कर, गद्गद कण्ठवाला होते हुए भरत ने रामभूपति से यों कहा—'हे धर्मनिपुण! धर्मसरणि(पद्धति या मार्ग) में

"नी धर्मसरणि नाकेदियु दॆलिय । दो धर्मनिपुण! यिकॊक वार्त विनुमु
नृपकुलाधीश्वर! निन्नु गानलकु ।गृपमालि कैकेयि किनिसि पॊम्मनिन
दडयक नीविट्लु तापसवृत्ति । नडविकि विच्चेसि; तदि यादिगाग
१६६८

दशरथुनि मृतिनि भरतुडु श्रीरामुनकु दॆल्पुट

नलतल दूलि येडगु नाडु निन्नु । दलचुचु मृतुडय्यॆ दशरथेश्वरुडु;
एनुनु बितृमेध मॆल्लनु जेसि । कानल मीरुंड गान वच्चितिनि"
१६७०

अनु पल्कु निर्घात मै ताक राम । जनपति मूर्छिलिल जगति पै द्रेळ्ळे,
मेदिनीसुतयु सौमित्रियु दूलि । मेदिनि ब्रालिरि मृतुलैन पगिदि;
नॊलसिन धृति रामु डॊक कॊंत दॆलिसि । पलुमारु विलपिंप भरतु
डिट्लनियॆ
"गृतमति वय्यु ब्राकृतुनि चंदमुन । नतिशोकमुनु बॊंद नगुनय्य नीकु?
देव! लक्ष्मणुडु वैदेहियु नीवु । वे वेग दशरथोर्वीनाथ-मणिकि
बरलोक विधु लॆल्ल भक्ति तो जेयु । डरयंगनदि कृत्य"मनिन राघवुडु

कुछ भी नहीं जानता। एक और समाचार सुनो। हे नृपकुल-अधीश्वर! निर्दयता से कैकेयी ने रुष्ट होकर (तुम से) कहा कि तुम काननों में जाओ। बिना विलम्ब के तुम इस प्रकार तापस वृत्ति से जंगलों में पधारे। तब से लेकर—॥ १६६८ ॥

दशरथ की मृत्यु के बारे में भरत का श्रीराम को बताना

—व्याकुलता से तड़पते हुए, सातवें दिन तुम्हारा स्मरण करते हुए, दशरथेश्वर मृत हुए। मैं भी समस्त पितृयज्ञ करके, काननों में तुम्हारे दर्शनार्थ आया हूँ, ॥ १६७० ॥

यह वाक्य वज्र सदृश लगने पर राजा राम मूर्च्छित हो धरती पर गिर पड़े। मेदिनीसुता (सीता) और सौमित्र भी लड़खड़ाकर मेदिनी पर, मृतकों के समान, गिर पड़े। विशिष्ट धैर्य से राम कुछ होश में आकर, बार-बार विलाप करने लगे तो भरत ने इस प्रकार कहा—'कृतमति (बुद्धिमान) होते हुए भी प्राकृत (साधारण व्यक्ति) के समान तुम्हें क्या अतिशोक करना चाहिए? हे देव! लक्ष्मण, वैदेही और तुम अति शीघ्रता से दशरथ-उर्वीनाथ-मणि (राजशिरोमणि) की परलोक-क्रियाएँ भक्तियुक्त हो करो। सोचने पर यही कर्त्तव्य है।' (ऐसा) कहने पर

मंदाकिनिकि वच्चि मदि निष्ठ वॆलय । नंदु गृतस्नानुडै तंड्रि कपुडु
मॊंनसि तिलोदकमुलु वोसि वगलु । पॆंनगॊंन मऱि गारपिंडि चे बुण्य
धनु डर्थि बिड प्रदानंबु सेसि । घनतर शोक संकलितुडै मगुडि
सन्नुत गति वर्णशाल कॆंतॆंचि । युन्नचो रघुराम डुन्न चक्कटिकि
१६८०

बौर वर्गमु तोड बंधुल तोड । जारु वर्तनुलैन सचिवुल तोड
घनुडु वसिष्ठुंडु गौसल्य मॊंदलु । जननुल दोड्कॊंनि चनुदॆंचुटयुनु
नूनिन शोकाग्नु लॊंदव राघवुडु । दानु सीतयु सुमित्रा-तनूजुंडु
वारि यंघ्रुल मीद व्रालि शोकिंप । वारुनु शोकिंप वारिंचॆ नंत
ना वसिष्ठमुनींद्रु डमलवाक्यमुल । नावेळ गौसल्य यवनिनंदननु
वनवास कलित विवर्णांगि जूचि । तनमदि विधि दूऱितद्यु बॊंगुल
गिरिमीद वर्तिचु किन्नर यक्ष । गरुडोरगामर कांतलु वच्चि
“रामुनि सति दशरथराजु कोड । ली मुग्ध जनक महीपालु पुत्त्रि
विविध संकटमुल नॆगुचुनुंडॆ । भुवि नसाध्यमु लेदु पो यॆंदु विधिकि”
ननि सीत बेकॊंन ना रामचन्द्रु । डनघुडैन वसिष्ठु नडुगुल कॆऱगि
१६९०

राघव मन्दाकिनी के पास आकर, मन में निष्ठा के शोभित होने पर, उसमें (नदी में) कृत-स्नान हो, तब पिता को उपक्रम से तिलोदक देकर, दुख के अधिक होने पर, मिट्टी के ढेलों से पुण्यधन (राम) ने इच्छा (लगन) से पिण्ड-प्रदान किया। घनतर (अधिक) शोक-संकलित हो, फिर सन्नुतगति (सराहनीय विधि) से पर्णशाला में आ रहे। रघुराम जहाँ थे, उस स्थान पर—।। १६८० ।।

—पुरजन वर्ग के साथ, बन्धुजनों के साथ, चारु-वर्तन (आचरण) वाले सचिवों के साथ, महान् वसिष्ठ, कौसल्या आदि जननियों को साथ लेकर (भरत के) आने पर, सम्प्राप्त शोकाग्नियों के उत्पन्न होने पर, राघव सीता और सुमित्रातनूज के साथ उनकी (माताओं की) अन्घ्रियों (चरणों) पर गिरकर शोक करने लगे। जब वे शोक करने लगे तब वसिष्ठ मुनीन्द्र ने अमल वाक्यों से उन्हें रोका (शान्त किया)। उस समय कौसल्या वनवास-कलित-विवर्ण-शरीरवाली अवनिनन्दना (सीता) को देखकर, अपने मन में विधि (नियति) को कोसकर, अत्यन्त दुःखी हुई। (उसी समय) उस गिरि पर विचरण करनेवाली किन्नर, यक्ष, गरुड, उरग, अमर कान्ताएँ (वहाँ) आकर सीता के बारे में यों बोलीं—‘राम की पत्नी, राजा दशरथ की बहू, जनक-महीपाल की पुत्री यह मुग्धा विविध संकटों से तप्त हो रही है।

जननुल जुट्टाल सचिवुल हितुल । मुनुलनु गुशपीठमुल नुंड बनिचि
तन तम्मुलुनु दानु दर्भासनमुल । जन-लोचनोत्पल-चंद्रुडै युंडि
या वेळ भरतुनि याकृति जूचि । "यो वत्स! जडलुनु नुरुवल्कलमुलु
नीवेल तालिचिति! नृपुनाज्ञ बूनि । वेवेग चनि महीविभुडवै युंडु'
मनि पल्कुटयु रामुनाननांबुजमु । गनुगोनि भरतुंडु गरमुलु मोगिचि
"देव! राघव! कैक धृति दूलि निन्नु। भाविंप नेरक पापंबु सेसि
"यडवुल नुंडु, वो"म्मन्न माटलकु । दडयक चनुदेर दगुनय्य! नीकु?
मिमु बासि दशरथ मेदिनीपतियु । नमरलोकंबुन करिगें; नी घोर
पापंबु मा तल्लि पचरिंचें; नरक । कूप कोटुल निंक गूलक युन्नें ?
येनु नीदगु राज्य मे मेयि बून । गानेर; नाचेत गादु भूनाथ !
१७००

नी वयोध्यकु निंक नेम्मि विच्चेसि। पावन मति तोड बट्टंबु बूनु;
वल्लभु नेडबासि वगल बेल्लडलु । तल्लुल नूरार्पु; तक्किन हितुल
सचिवुल जुट्टाल सकल पौरुलनु । सुचरित्र! कृपतोड जूचि पालिपु;

विधि (नियति) के लिए इस भुवि में कोई बात असम्भव नहीं है ।' तब उस रामचन्द्र ने अनघ वसिष्ठ के चरणों में प्रणाम किया ।। १६९० ।।

(उसके बाद) जननियों, रिश्तेदारों, सचिवों, हितूजनों, मुनियों को कुशासनों पर बिठाया और स्वयं भाइयों के साथ दर्भासनों पर, जन-लोचनों के उत्पलों के लिए चन्द्र समान (राम), बैठ गए । उस समय भरत की आकृति को देख (राम बोले)—'हे वत्स ! जटाएँ और बड़े-बड़े वल्कल तुमने क्यों धारण किये हैं ? नृप की आज्ञा ग्रहण (मान) कर, शीघ्रता से जाकर, राजा होकर रहो ।' ऐसा (राम के) बोलने पर राम के आनन-अम्बुज (मुखकमल) को देखकर, भरत हाथ जोड़कर (बोला)— 'हे देव ! हे राघव ! कैकेयी के धैर्य को छोड़ (असहनशील हो), तुम्हें न जानकर, (यह कहकर कि) 'जाओ, जंगलों में रहो' पाप का विस्तार किया । उन बातों पर अविलम्ब यहाँ (जंगलों में) आ जाना क्या तुम्हें उचित है ? तुम से बिछुड़कर, राजा दशरथ भी अमर लोकों में गए । हमारी माता ने यह घोर पाप किया है । वह कोटिनरक-कूपों में नहीं गिरेगी ? मैं तुम्हारे राज्य को किसी भी प्रकार ग्रहण नहीं कर सकता । मुझसे होगा नहीं हे भूनाथ ! ।। १७०० ।।

—अब तुम प्रेम से अयोध्या को पधारकर, पावनमति से राज्य ग्रहण करो । वल्लभ (पति) से बिछुड़कर, अत्यधिक शोक से व्याकुल होनेवाली माताओं को सान्त्वना दो । शेष हितू-जनों, सचिवों, रिश्तेदारों, समस्त

नन्नु नी बंटु मन्नन जेसि नादु । विन्नपं बालिपवे दयामूर्ति !”
यनि पादमुल व्रालि यटु लेवकुन्न । दनदु तम्मुनि नॅत्ति तग गौगिलिंचि
“भरत! नी विदि येमि बालुंडवैन।करणि बल्कॅदु धर्मगति दप्प नाडि?
या कैक नेल पो नाडॅदु ? तंड्रि । पोककु नीवेल पॉगिलॅदी वेळ ?
डाकतो नदिनि गाष्ठंबु गाष्ठबु । जोक यै पासिन चॉप्पु दीपिंप
बुत्रमित्रकळत्रमुलु डायु, बायु । मैत्रि ऋणानु संबंधरूपमुन;
नवनि पै बुट्टिन यप्पुडे चावु । ध्रुवमु जीवुन कनि रूपिंचि नरुड्डु
१७१०

तन कुलोचितमैन धर्ममार्गमुन । मनिन वाडिह पर मान्युडै युंडु,
गावुन मन तंड्रि कमनीय सत्य । भावुडै नीति तो ब्रजल बालिंचि
घन यागदान सत्कारमुल् वॅक्कु । लॉनरिंचि राज्यसौख्योन्नति मिंचि
मनवंटि तनयुल मनमार गांचि । जनुलॅल्ल गॉनियाड स्वर्गस्थुडय्यॅ;
नतनिकै वगचुट यनुचितं बिक । नतनि वाक्यमु मन कट्टु सेय दगवु;
पितृ वाक्यकरणंबे प्रियधर्म मॅदु । सुतुनकु; नट्टु सेयु सुतुडे विश्रुतुड्डु

पुरजनों को हे सुचरित्र (वाले) ! कृपा से अवलोकन कर पालन करो। हे दयामूर्ति ! मुझ अपने सेवक का मान रखकर, मेरी विनती का पालन करो।’ (ऐसा) कहकर चरणों पर गिरकर न उठनेवाले अपने भाई को उठाकर, समुचित रीति से हृदय से लगाकर, (राम ने कहा)—‘यह क्या भरत ? धर्म की गति (मार्ग) को छोड़कर बालक के समान क्यों बोलते हो ? उस कैकेयी को क्यों कोसते हो ? पिता के चल बसने पर इस समय क्यों व्याकुल हो रहे हो ? प्रवाह वेग के कारण नदी में (एक) काठ (दूसरे) काठ से (कभी) मिलकर, (कभी) बिछुड़ जाता है। (इसी विधान को) दीप्त करते हुए पुत्र, मित्र, कलत्र नियराते हैं (और) बिछुड़ते हैं। ऋणानुबन्ध रूपक है मैत्री। (यह) जानकर कि अवनी पर जन्म लेते ही जीव के लिए मृत्यु निश्चित है, ॥ १७१० ॥

—अपने कुल के लिए उचित धर्ममार्ग पर जीवित रहनेवाला इह (और) पर (लोकों) में मान्य होकर रहेगा। अतः हमारे पिता ने कमनीय सत्य-भाव (युक्त) हो, नीति से प्रजा-पालन कर, अनेक महान् याग, दान, सत्कार करके, राज्य-सौख्य की उन्नति में (सबसे) बढ़कर, हम जैसे पुत्रों को जी-भर देखा, समस्त जनता की प्रशंसाएँ प्राप्तकर स्वर्गस्थ हुए। अब आगे उनके लिए दुखी होना अनुचित है। उनके वचन के अनुसार करना हमारे लिए न्याय (-संगत) है। पुत्र के लिए कहीं भी (सर्वथा) पितृ-वाक्य को करना ही प्रियधर्म है। ऐसा करनेवाला पुत्र ही विश्रुत

वनमुल बदुनाल्गु वर्षमुल् नन्नु । घन राज्यभोगमुल् गैकॊनि निन्नु
नुंड गट्टड सेसॆ नुर्वीशु; डट्ल । युंडुद; मिदुकु नॊंडाडवलव"
दनि तॆल्पुचो नंत नर्कुंडु ग्रुंकॆ । ननुपम प्रीति मै नारात्रि दीर्चि
मऱुनाडु संध्या समाधु लॊनर्चि । मऱि वसिष्ठादुलु मंत्रिवर्गमुलु १७२०

विशदंबुगा बरिवेष्टिंचि कॊलुव । गुशपीठमुन रघुकुंजरु डुंडॆ;
ना सभ मध्यंबु नंदुंडि भरतु । डा समयंबुन हस्तमुल् मॊगिचि
"देव! मी यानति तॆऱगुन नीति । भाविंचि पितृ वाक्य पद्धति बुडमि
गैकॊंटि, नाभूमि गडपट नेनु । मी कित्तु; निंदु केमियु ननवलदु;
सर्व सर्वंसहाचक्र भारंबु । बर्वि तालपग फणिपति योपुगानि
यसल डिंभक जलव्याळ मॆट्लोपु? । वसुधेश ! येनट्टिवाड; बालुंड;
नी धारुणीभार मेड ? नेनेड ? । साधुरक्षण मेड? चर्चिंचि चूड !
बालार्कुचे नॊप्पु प्रथमाद्रि यंदु । बॊलिप मिणुगुरु बुरुगुन्न यट्लु
श्रीनिधि नी वुंडु सिंहासनमुन । ने नुंड गनुपट्टुने भूमि प्रजकु ?
गावुन मौनि लक्षणमुलु मानि । नी वयोध्यकु वच्चि निपुणत हॆच्चि १७३०

(विख्यात होता) है। मुझे चौदह वर्ष (के लिए) जंगलों में, (तथा) तुम्हें महान् राज्यभोग ग्रहण कर, रहने के लिए उर्वीश (राजा) ने आदेश दिया है। वैसा ही रहेंगे। इसके लिए अन्यथा कुछ मत कहो।' ऐसा बताते (-बताते) अर्क (सूर्य) अस्त हुए। अनुपम प्रीति से (उन लोगों ने) वह रात बिताई। दूसरे दिन सन्ध्या-समाधि (जप-तप) करके (निवृत्त होकर) फिर वसिष्ठ आदि मन्त्री-समूहों के— ॥ १७२० ॥

—विशद रूप से परिवेष्ठित होकर दरबार लगाये बैठे थे। रघुकुंजर कुशपीठ पर बैठे हुए थे। उस सभामध्य में रहकर, उस समय भरत ने हाथ जोड़कर (कहा)—'हे देव ! तुम्हारी आज्ञा के अनुसार, नीति के बारे में सोचकर, पितृवाक्य-पद्धति से (मैंने) पृथ्वी को ग्रहण किया है। अपनी भूमि को अन्त में (अब) मैं तुम्हें दूँगा। इसके लिए अन्यथा कुछ मत कहो। सर्वसर्वंसहाचक्रभार (समस्त पृथ्वी के भार) को धारण करने के लिए फणिपति (आदिशेष) समर्थ हो सकता है। किन्तु जल-सर्प का बच्चा कैसे समर्थ हो सकता है ? हे वसुधेश ! मैं वैसा ही हूँ। बालक हूँ। यह धारुणीभार कहाँ ? मैं कहाँ ? सोच-विचारकर देखने पर साधु-रक्षण कहाँ ? हे श्रीनिधि ! बालार्क से शोभायमान प्रथमाद्रि (उदय-पर्वत) पर जुगुनु के समान, तुम्हारे सिंहासन पर मेरा

यॆल्ल वारल कोर्कु लीडेर राज्य । मॆल्ल बालिपु, मिंकेमियु ननकु;
मॊनर नी वट्टु सेय नॊल्लवै तेनि । विनु मेनु नी यॊद्द विड्तु ब्राणमुलु;
काकुन्न सौमित्रि गति निन्नु गॊलिचि । काकुत्स्थतिलक ! यिक्कड
नुंडुवाड"
ननि दर्भशयनुडै यट्टु लेवकुन्न । यनुजन्मु नॆत्ति यिट्लनियॆ राघवुडु:
"इदि येमि भरत! नीविट्लाड दगुनॆ? ।मदि दलपोयवो मन तंड्रि याज्ञ?
दशरथेशुनकु मी तल्लिनि मुन्नु । विशदंबुगा निच्चु वेळ मी तात
"ना कूतुनकुगल्गु नंदनु नखिल । भूकांतुगा नीवु पून्पु मी" यनुचु
नम्मिक वडसि वॆन्कनु बॆंड्लि सेसॆ । नम्माट पट्टुन; नमर दैतेय
युद्धंबुलो विभुं डॊसगिन वरमु । बुद्धि दप्पक कैक भूमीशु नडिगॆ
धारुणि नीकु, गांतारंबु नाकु । गोरिन दशरथ क्षोणि पालकुडु
१७४०
सत्यंबु दप्पकी जाड गाविंचि । नित्य कीर्तुलु गांचि नॆगडॆ निंदंदु
मनमुनु मनुजेंद्रु माट वालिंचि । घन कीर्ति सुकृतमुल् गैकॊंद मॆलमि

अस्तित्व प्रजा को कहाँ दिखाई पड़ेगा ? अतः मौनि-लक्षणों को छोड़कर, तुम अयोध्या को आओ (और) निपुणता की अधिकता से— ॥ १७३० ॥

—समस्त जनों की इच्छाओं की पूर्ति करते हुए, समस्त राज्य पर शासन करो। और कुछ मत कहो। अगर तुम शोभा से ऐसा करना नहीं चाहोगे तो सुनो मैं तुम्हारे पास (समक्ष) प्राण छोड़ दूँगा। नहीं तो सौमित्र के समान तुम्हारी सेवा करते हुए, हे काकुत्स्थ-कुल-तिलक ! यहीं रह जानेवाला हूँ।' (ऐसा) कहकर दर्भशयन हो (प्राण त्याग करने), न उठने पर, अनुजन्म (अनुज) को उठाकर राघव बोले—'यह क्या भरत ! तुम्हें ऐसा बोलना चाहिए ? हमारे पिताजी की आज्ञा (के बारे में) मन में नहीं सोचते हो ? राजा दशरथ को (के हाथ) तुम्हारी माता को विशद रूप से देते समय (विवाह करते समय) तुम्हारे नाना ने यह विश्वास (वचन) प्राप्त करने के बाद ही कि मेरी पुत्री से उत्पन्न नन्दन (पुत्र) को अखिल भूकान्त (समस्त पृथ्वी का राजा) तुम बनाओ' इस वचन के आधार पर विवाह किया। अमर (और) दैत्यों के युद्ध में विभु (पति) के दिए वर को, न भूलकर, कैकेयी ने भूमीश से माँगा। तुम्हें धारुणी, मुझे कान्तार चाहने पर (कैकेयी के माँगने पर) राजा दशरथ—॥ १७४० ॥

—सत्य को न छोड़, इस प्रकार (व्यवस्था) करके समस्त लोक में नित्य-कीर्तियाँ प्राप्तकर, विराजमान हुए। हम भी प्रेम से मनुजेन्द्र की बात का पालन करके घन (महान्) कीर्ति (और) सुकृत (पुण्य) को प्राप्त करें।

'नरुगडे गय कॊक्कडैन ? गन्यकनु । बरग दानमु सेसि वऱलडे यॊकडु?
विडुवडे यॊकडैन वृषभ' मटंचु । गॊडुकुल गांचुट गोरि पिताळ्ळु
धात्रि बुन्नरक संत्रातयौ कतन । बुत्त्रुडै यॊप्पु, नीपुण्यंबु लॆऱिंगि
येनॆ ना तंड्रि पल्किटु सेय नैति । नेनि दंड्रल पलु कॆव्वडु सेयु
धर? "यथा राजा तथा प्रजा" यनुचु। नरुलॆल्ल मनयट्ल नडतुरु; गान
वरबुद्धि गै कॊन्न व्रतमु निंडिचि । यरुदॆंचॆदेनु; नी वाग्रहं बुड्गु,
ना माट वालिपु; ना पंपु मीद । भूमिकि बतिगम्मु; पुरि किक
बॊम्मु"
अनिन "रावणु डिक नाजि लो गूलॆ"। ननि निश्चयमु सेसि यंदुन्न मुनुलु
१७५०
सुरलु दिग्वरुलु "भासुर धर्मनिरत! । भरत ! रामुनि माट वाटिंपु"
मनिरि १७५१

श्रीरामुनकु जाबालि हितोपदेशमु

यप्पुडु जाबालि यनु मौनि रामु । दप्पक कनुगॊनि तगवेदि पलिकॆ

सभी पिता पुत्रों को इसीलिए प्राप्त करते हैं कि 'क्या एक (पुत्र) भी गया[1] को नहीं जाएगा ? कन्यादान करके क्या एक (पुत्र) भी शोभायमान नहीं होगा ? क्या एक (पुत्र) भी वृषभ[2] (साँड) को नहीं छोड़ेगा ? धरती पर पुन्नाम (पुनामक) नरक से संत्राता (रक्षा करनेवाला) होने के कारण ही पुत्र शोभा देता है । इन पुण्यों के बारे में जानकर मैं ही अपने पिता की बात न मानूँ तो धरा पर कौन पिता की बात का पालन करेगा ? 'यथा राजा तथा प्रजा' कहते हुए समस्त नर (मानव) हमारे जैसा आचरण करेंगे । अतः वर-बुद्धि से गृहीत व्रत को पूरा करके मैं (नगर में) आऊँगा । तुम आग्रह छोड़ दो । मेरी बात सुनो । मेरे आदेश पर पृथ्वी का पति बनो । अब नगर को जाओ ।' (ऐसा) कहने पर वहाँ के मुनियों, सुरों, दिग्वरों ने यह निश्चय कर कि 'अब तो रावण आजि (युद्ध) में गिरा (मरा)', ।। १७५० ।। (भरत से) कहा—'हे भासुर धर्मनिरत ! राम की बात का पालन करो ।' ।। १७५१ ।।

श्रीराम को जाबालि का उपदेश

तब जाबालि नामक मौनि ने राम को ध्यान से देखकर, कहा—

---

[1] पितरों को पिण्डप्रदान करने के लिए 'गया' क्षेत्र जाने की प्रथा है ।

[2] बछड़ों में सभी को बैल न बनाकर, एक को साँड बनाकर छोड़ देने की प्रथा है ।

"राम! यिदेमि निरर्थक बुद्धि । नॆमिचि मुनि वोलॆ नृप वेष मुडिगि
राजोपभोग्यमौ राज्यंबु विडिचि । यी जाड नुंडुट केमि कारणमु ?
ऎक्कडि तलिदंड्रु? लॆक्कडि सत्य ।मॆक्कडि सुतधर्म? मिदियॆल्ल गल्ल;
तलिदंड्रु लॊंडॊरुल् दम सौख्यमुनकु। गलयुचो शुक्ल रक्तमु लैक्यमॊंदि
योज बिंडाकृति नुदयिंचु नरुडु । बीज मात्रमु दंड्रि, पॆक्केल यिक?
निमुडक यारिपोयिन दीपमुनकु । जमुरु वोसिन यट्लु सच्चिन यट्टि
वारिकि बरलोक वैदिक कर्म । मूरक जनुलु सेयुटयु व्यर्थंबु
गावुन ना माट गैकॊनि राम ! । नी वयोध्यकु बोयि नृपुडवै युंडु"
१७६०

मनि यिट्लु जाबालि याडु वाक्यमुलु । विनि कोपमुन रघुवीरु
डिट्लनियॆ
"निट्टि नास्तिक बुद्धि यॆव्वरिकैन । बट्टि बोधिंपु जाबालि मुनींद्र !
माकु मा पॆद्द ले मर्याद नडचि । रा कैवडि मॆलंगुटदिय सम्मतमु,
सत्यमूलंबुलु सकल धर्ममुलु । सत्यंबु कंटॆ नॆंचग धर्म मॆद्दि ?
यट्टि सत्यमु दप्प कनघ! मा तंड्रि । पट्टिन धृति नन्नु बनिचॆ गानलकु,

'हे राम ! यह कैसी निरर्थक बुद्धि है ? नियम से मुनि के समान (रहकर) नृपवेष छोड़कर, राजा के उपभोग्य राज्य को छोड़कर, इस मार्ग से रहने का क्या कारण है ? कहाँ के माता-पिता ? कहाँ का सत्य ? कहाँ का पुत्रधर्म ? यह सब झूठ है। माता-पिता परस्पर अपने सुख के लिए मिलते (सम्भोग करते) हैं तो शुक्ल (और) रक्त के ऐक्य होकर, स्वभावतः पिण्ड की आकृति में नर उदित होता है। पिता केवल बीज मात्र है। और अधिक क्यों ? शमित हो, बुझे हुए दीप में तेल डालने के समान है, मरे हुए लोगों के लिए (जीवित) लोगों का परलोक-वैदिक क्रियाएँ करना। यह व्यर्थ है। अतः मेरी बात ग्रहणकर हे राम ! तुम अयोध्या में जाकर राजा बनकर रहो ' ॥ १७६० ॥

इस प्रकार कहनेवाले जाबालि के वाक्यों को सुनकर क्रोध से रघुवीर यों बोले—' हे जाबालि मुनीन्द्र ! ऐसी नास्तिक-बुद्धि और किसी को पकड़कर समझाओ। अपने पूर्वजों ने जिस मर्यादा के अनुसार आचरण किया है, उसी पद्धति से आचरण करना हमारे लिए सम्मत है। सकल धर्म सत्य-मूल हैं। सोचने पर सत्य से बढ़कर धर्म कौन-सा है ? हे अनघ ! वैसे सत्य को न छोड़, हमारे पिता ने धैर्य के साथ मुझे जंगलों में भेजा है। अतः उसकी आज्ञा का उल्लंघन करूँ तो मेरे समान पुण्यहीन कोई दूसरा हो सकेगा ? बुध लोग (ज्ञानी) कहते हैं कि सत्य, धर्म, शम, दम,

गान नातनि याज्ञ गडचिन बुण्य। हीनुंडु नाकंटॆ नितरुडु गलडॆ ?
सत्यंबु धर्मंबु शममुनु दममु। नित्यभूति दययु नीति विक्रममु
ब्रियवाक्यमुनु देवपितृ विप्रपूज। रयमॊप्प स्वर्गमार्गमुलंड्रु बुधुलु,
इवि यॆल्ल गल्लगा नीवु बॊधिंचि। तवु नवु, नी वॆट्टि यग्रजन्मुडवु?
निन्नन बनि येमि? निन्नु नास्तिकुनि। मन्नन सेसिन मा तंड्रि ननक?”
१७७०

यनि राम विभुडाडु नट्टि वाक्यमुलु। विनि प्रीति जाबालि वॆंडियु ननियॆ,
“नन्नु नास्तिकुनिगा नरनाथचंद्र!। यॆन्नि; तयोध्य कॊट्लेनि विच्चेसि
भूमि येलुदु वनु बुद्धि निट्लंटि। राम! योर्वु” मटंचु ब्रार्थन सेसॆ,
नंत वसिष्ठ संयमि सूर्यवंश। मंतयु निक्ष्वाकु डादिगा नॆन्नि,
“यनघ! मी कुलमुन नग्रजुडुंड। ननुजुंडु राजौट यरसिन लेदु;
कावुन बॆद्दल क्रममुन नीवु। भूवलयं बॆल्ल बूनुट लॆस्स,
‘यॆंतैन बितृ वाक्य मे दाट’ ननुचु। नॆंतयु निश्चयं बिट्टिद येनि १७७७

पादुका प्रदानमु

यादट निनु गॊल्चुनट्ल नी दैन। पादुका युगळंबु भरतुंडु गॊलिचि

नित्यभूति, नीति, विक्रम, प्रियवाक्य, देव-पितृ-विप्र--ये स्वर्ग के मार्ग (साधन) हैं। इन सबको तुम झूठ कहकर समझा रहे हो। तुम (भी) कैसे अग्रजन्मा हो? तुम्हें कहने में क्या काम (लाभ) है? तुम जैसे नास्तिक का आदर करनेवाले हमारे पिता को कहना (दोष देना) चाहिए।’ ॥१७७०॥

ऐसा कहनेवाले विभुराम के वाक्यों को सुनकर, फिर जाबालि प्रीति से (यों) बोले—‘हे नरनाथचन्द्र! मुझे नास्तिक मानकर (सही), किसी भी प्रकार तुम अयोध्या को पधार कर राज्य करोगे, इस बुद्धि (विचार) से ऐसा कहा है। हे राम! (मेरी बातों को) सहन कर लो।’ ऐसा कहते हुए प्रार्थना की। तब वसिष्ठ संयमी ने इक्ष्वाकु से लेकर समस्त सूर्यवंश को गिनाकर (चर्चा कर), कहा—‘हे अनघ! आपके कुल में अग्रज के रहते अनुज का राजा होना, सोच-विचारने पर भी (कभी) नहीं दिखता। अतः पूर्वजों के क्रम से तुम्हारा भूवलय के शासन को ग्रहण करना उचित है। यदि (तुम्हारा) निश्चय यही हो कि ‘जो हो, मैं पितृवाक्य का उल्लंघन नहीं करूँगा।’ तो—॥ १७७७ ॥

पादुका-प्रदान

—तुम्हारी सेवा करने के समान ही तुम्हारे पादुका-युगल की सेवाकर

नेम्मदि नुंडेडु, नी पादुकम्मु । लि"म्मन्न दल्लुलु हितुलु नाश्रितुलु
बौरुलु मंत्रुलु बांधवु लप्पु । "डो राम ! यिट्टु सेयु, मुचित"
मटंचु १७८०
बलुकंग वेवेग भरतुंडु हेम । विलसित पादुका द्वितयंबु रामु
मुंदट निडिन संफुल्लारुणार । विंद पल्लव गर्व विभव भेदमुलु
यतिवधूतिलक शापापनोदमुलु । श्रुतिशिरोभवन विश्रुत विनोदमुलु
तनदु पादमुलु संतत सनकादि ।मुनि विवादमुलु रामुडु मोपि यीसग
जेकोनि यवि रेंडु शिरमुन दालिच । कैकेयि कोडुकु राघवुन किट्लनियें
"नी वेषमुन नेनु नृपवेष मुडिगि । तावक पादुका द्वंद्वंबु नंदु
बदिलंबुगा राज्यभारंबु निलिपि । पदुनाल्गुवर्षमुल् पालिचुवाड;
ना मीद मी रयोध्यकु राक युन्न ।स्वामि पादमु लान! वह्नि ये जोत्तु"
ननि पल्कि यन्नकु नति भक्ति म्रोक्क। ननुजुनि दीविंचि यक्कुन जेर्चि
तल्लुल नूरार्चि धन्युलौ मौनि । वल्लभुलनु मंत्रि वरुल बांधवुल
१७९०
नेल्लवारल ब्रियं बेसग वीड्कोलुप । नुल्लंबुलो शोक मुप्पोंगु चुंड

भरत शान्ति से रहेगा। अपनी पादुकाएँ दे दो। (ऐसा) कहने पर माताएँ, हितू, आश्रित, पुरजन, मन्त्री, बान्धव (सब ने) तब कहा—'हे राम ! ऐसा करो। (यही) उचित है।'॥ १७८०॥

ऐसा कहने पर तुरन्त भरत ने हेम (स्वर्ण) विलसित पादुका-द्वितय (द्वय) को राम के समक्ष रखा। राम ने अपने सम्फुल्ल-अरुण-अरविन्द-पल्लव-गर्व-वैभव का भेद (परास्त) करनेवाले, यति-वधू-तिलक (अहल्या) के शाप का अपनोद (दूर) करनेवाले, श्रुति-शिरोभवन-विश्रुत विनोदवाले, सन्तत सनक आदि मुनि-विवाद (के कारण भूत) चरणों को (उन पादुकाओं पर) रखकर, दिया। (देने पर) (उन्हें) लेकर उन दोनों को सिर पर रखकर, कैकेयी का पुत्र राघव से यों बोला—'इस (मुनि) वेष में, मैं नृपवेष को छोड़कर, तुम्हारे पादुका-द्वन्द्व (द्वय) में सुरक्षित रूप से राज्य-भार को रख, (ये) चौदहवर्ष (राज्य) पालन करूँगा। उसके बाद तुम अयोध्या में न आओ तो स्वामी के चरणों की कसम, मैं वह्नि (आग) में प्रवेश करूँगा।' ऐसा कहकर अग्रज को अतिभक्ति से प्रणाम करने पर, (राम ने) अनुज को आसीसा, गले लगा लिया, माताओं को सान्त्वना दी, धन्य (धन्यात्मा) मुनि-वल्लभों, मन्त्रिवरों, बांधवों—॥ १७९०॥

(तथा) सभी लोगों को अतिप्रेम से बिदा किया। तब मन में शोक के उमड़ने पर भरत ने राम की पादुकाओं की परिक्रमा और नमस्कार

भरतु डप्पुडु रामु पादुकंबुलकु । सरि प्रदक्षिण नमस्कारमुल् सेसि
पट्टंपुटेनुंगु पै नॊप्प दॆच्चि । पॆट्टि लोकंबुलु ब्रीति गीर्तिंप,
छत्रचामरमुलु सरिदाल्चि पॊल्चि । शत्रुघ्नुडुनु दानु संगडि गॊलिचि
चॆलगि नल्दिक्कुल सेनलु गॊलुव । गुलपवित्रुडु चित्रकूटंबु डिग्गि
यब्भंगि भरतेशु डडलुचु नरिगि । यब्भरद्वाजुनि यडुगुल कॆरगि
यतनितो दनदु वृत्तांतंबु दॆलिपि । यत डंत बनुप सैन्यंबुलु दानु
नट् पोयि गंगामहानदि दाटि । यट शृंगिबेरंबु नंदु ना गुहुनि
बटुयशोधनुनि संभाविंचि निलिपि। यट पोयि मरि ययोध्यापुरि जॊच्चि
तडयक नगरिलो दल्लुल नुनिचि । कडु मूल बलमुल गावलि वॆट्टि
१८००

मणि लेनि पॆट्टिय माड्कि नाकाश । मणि लेनि पगलिटि माड्कि जूड्किकिनि
जतुरपुण्युडु रामचंद्रुडु लेनि । यतिशून्यमगु नयोध्यापुरि जूचि
यायत शुभशीलु डंदुंड रोसि । पोयि नंदिग्राममुन वसियिंचि
पनिवडि रघुरामु पादुका युगळ । मुन राज्यभार मिम्मुल नावहिंचि
श्रीरामुनकु बोलॆ सेव सेयुचुनु । नार चीरलु जडल् नवयुचु दाल्चि

कर—, भद्रगज पर शोभा से (उन्हें) ला रख, समस्त लोकों के प्रीति से प्रशंसा करते समय, छत्र-चामर को ठीक ढंग से धारणकर, आप और शत्रुघ्न के साथ में सेवा करते समय, शोभा से चारों दिशाओं में सेनाओं के परिवेष्ठित हो, (वह) कुलपवित्र (कुल को पवित्र करनेवाला भरत) चित्रकूट से उतर पड़ा। इस प्रकार भरतेश ने विकल होते हुए जाकर, उन भरद्वाज के चरणों में विनत होकर, उनसे अपना वृत्तान्त सुनाया। तब उनके बिदा करने पर, सेना के साथ आप वहाँ जाकर, महानदी गंगा को पार कर, वहाँ शृंगिबेर (पुर) में पटुयशोधन उस गुह का सम्मानकर, (उन्हें) वहीं ठहराया। वहाँ (आगे) जाकर, फिर अयोध्यापुर में प्रवेश कर, अविलम्ब नगरी (अन्त:पुर) में माताओं को रख, अधिक (संख्या में) मूलबल को रक्षार्थ रख (नियतकर), ॥ १८०० ॥

—मणिहीन पेटिका के समान, आकाश-मणि (सूर्य)-हीन दिन के समान, देखने के लिए चतुरपुण्यवाले रामचन्द्र से रहित, अतिशून्य (बने) अयोध्यापुरी को देख, आयत शुभशीलवाले भरत को वहाँ रहने में घृणा हुई। (अत: वे) जाकर नन्दिग्राम रहकर, रघुराम के पादुका-युगल में राज्यभार को प्रेम से आवाहन कर, (उनकी) श्रीराम के समान ही सेवा करते हुए, वल्कल वस्त्र, जटाएँ धारणकर, विकल होते हुए, उस

या राघवुनि पुनरागमनंबु । गोरुचु नतनि सद्गुणमु लॆन्नुचुनु
सरस सज्जन मंत्रि सम्मति तोड । भरतुंडु महि यॆल्ल बालिचु चुंडॆ
निदि ययोध्याकांड मॆल्ललोकमुल ।विदितमै बुधलोक विनुतमौ गाक!
यनि यंध्रभाष भाषाधीश निभुड्डु । विनुत काव्यागम विमल मानसुड्डु
पालिताचारु डपार धीशरधि। भूलोक निधि गोन बुद्ध विभुड्डु १८१०

दमतंड्रि विठ्ठल धरणीशु पेर । गमनीयतर धैर्यकनकाद्रि पेर
बनुगॊन नरिगंड भैरवु पेर । घनु पेर मीसर गंडनि पेर
नलघु निश्चल दयायत बुद्धि पेर । ललित सद्गुणगणालंकारु पेर
ना चंद्रतारार्कमै यॊप्पु मिगिलि । भूचक्रमुन नति पूज्यमै वॆलय
नसमान ललित शब्दार्थ संगतुल । रसिकमै चॆलुवॊंदु रामायणमुन
बरग नलंकारभावनल् निंड । गरमॊप्पग नयोध्यकांडंबु जॆप्पॆ;
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै यॆल्लनाड्डु
निव्वसुमति नॊप्पु नी पुण्य चरित । मॆव्वरु सदिविन नॆव्वरु विनिन
सामादि-बहुवेदचय-धाम राम- । नाम-चिंतामणि नव्य भोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुल् । परिपूर्णशक्तुलु प्रकट राज्यमुलु १८२०

राघव के पुनरागमन की इच्छा करते हुए, उसके सद्गुणों की प्रशंसा करते हुए, सरस, सज्जन मन्त्रियों की सम्मति (सलाह) से भरत समस्त महि (पृथ्वी) पर शासन करता रहा। यह अयोध्याकाण्ड समस्त लोकों में विदित (विख्यात) हो, बुध-लोक (विद्वज्जनों में)--विनुत (प्रशंसित) हो जाए, ऐसा चाहकर, आन्ध्रभाषा के लिए भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्य-आगम-विमल मनवाले, पालित आचारवाले, अपार धीशरधि (बुद्धिसमुद्र) वाले, भूलोकनिधि गोन बुद्ध राजा ने—॥ १८१० ॥

--अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, कमनीयतर-धैर्य कनकाद्रि के नाम पर, जो दृढ़ता से अरिगडभैरव (शत्रु भयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रतापशाली), अलघु-निश्चल-दया के आयतबुद्धिवाले हैं, ललित सद्गुण-गणालंकार हैं, आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगति से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस अयोध्याकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देनेवाले (तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ेंगे, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि-बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकट राज्य (के वैभव), ॥ १८२० ॥

निर्मल कीर्तुलु नित्य सौख्यमुलु । धर्मैक निष्ठलु दानाभिरतुलु
नायुरारोग्यंबु - लधिक - संपदलु । बायक वाटिल्लु बापक्षयंबु
वरपुत्र लाभंबु वैरिनाशनमु । सरिनॊप्पु,धन धान्यचय समृद्धियुनु
ने विघ्नमुलु लेक यिड्ल लो नधिक। लावण्यवतुलैन ललनल पॊंदु
गॊंडुकुलतो नॆप्डु गूडुटयु । नॆडगाग नापद लॆल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लॆडपकुंडुटयु
नन्नलु दम्मुलु नभिवृद्धि बॊंदि । मन्नन तो गूडि मॆलसि युंडुटयु
सततंबु देवता संतर्पणंबु । बितृगण तृप्तियु बॆंपारु चुंडु
निदि मोक्ष साधनं,बिदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदि भव्य, मिदि
श्रीकरंबु
रमणीयलील नी रामायणंबु । ग्रममॊप्प बूजिप गल्गु बुण्यमुलु, १८३०
व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोक निवासंबु गलुगु
नॆंदाक गुलगिरु लॆंदाक जलधु । लॆंदाक रविचंद्रु लॆंदाक दार
लॆंदाक वेदंबु लॆंदाक धरणि । यॆंदाक भुवनंबु लेपु दीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोहदोहळाचार मै परगु। १८३४

अयोध्याकांडमु समाप्तमु

—निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश, समुचित रूप से होगा। बिना किसी प्रकार की विघ्न-बाधाओं के धन-धान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ बन्धुजनों से मिलकर रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों का अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर, बड़े स्नेह के साथ मिलजुल कर रहना, सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि,(आदि) सम्प्राप्त होंगे। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीय लीला (विधान) से इस रामायण की नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा ॥ १८३० ॥

लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा। जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रवि-चन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक), विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर, विराजमान रहेगी ॥ १८३४ ॥

अयोध्याकाण्ड समाप्त

अरण्य-काण्डमु

अत्र्याश्रमागमनमु

श्री चित्रकूटमौ चित्रकूटमुन । वाचंयम श्रेणि वर्णिप नुंडि
यंत रामुडु भरतागमनंबु । सिंतिचि 'यिचट वसिंपरा' दनियु
'निच्चट नेनुन्न नॆल्लपौरुलुनु । मुच्चटपडि दिनंबुनु वत्तु' रनियु
'दंति रथाश्व पदातिवर्गमुल । नॆन्तयु गासिल्लु नीवनं' बनियु
'खरदूषणादि राक्षस कोटि बाध । परिहरिंपुमटंचु वरमसंयमुलु
चॆन्तल जेरि सूचिंचिना' रनियु । जिंतिचि, मऱुनाडु चित्रकूटाद्रि
मुनुल वीड्कॊनि यत्रिमुनियाश्रममुन। कनुरागमुन नेग, नम्महामौनि
तन शिष्युलुनु दानु तग नॆदुर्वच्चि । कॊनिपोयि पलुदेऱंगुल बूजसेसे ।
नम्मुनिपत्नियु ननसूय प्रीति । नम्महीतनयकु नातिथ्यमॊसगि,
तॆऱगॊप्प गॊन्नि पतिव्रतागुणमु । लॆऱिंगिचि, रघुरामु नॆडबायलेक
१०

अत्रि के आश्रम को आना[१]

श्री चित्रकूट बने चित्रकूट को, वाक् की रमणीय श्रेणी से वर्णन करना चाहा । तब राम भरत के आगमन का विचार कर, (यह) सोच कर, 'यहाँ रहना नहीं चाहिए', (और यह) सोचकर कि 'यदि मैं यहाँ रहूँ तो समस्त पुरजन शोक से प्रतिदिन (यहाँ) आएँगे', (और यह) सोचकर कि 'दंति (हाथी), रथ, अश्व, पदाति वर्ग से (आने जाने से) इस वन को अधिक कष्ट होगा', (और यह) सोचकर कि 'परम संयमी (जन ने) निकट आकर यह सूचित किया कि खर, दूषण आदि राक्षस-कोटि (समूह) की बाधा (पीड़ा) का परिहार कर दो', (यह सब) सोचकर, दूसरे दिन चित्रकूटाद्रि के मुनियों को बिदा कर, अत्रि मुनि के आश्रम को अनुराग से गए । उस महामौनी ने अपने शिष्यों के साथ ढंग से अगवानी करके, (आश्रम में) ले जाकर, अनेक प्रकार से (राम की) पूजाएँ कीं । उस मुनि की पत्नी अनसूया ने प्रीति से उस महीतनया (सीता) को आतिथ्य देकर, विधान से पतिव्रता के कुछ गुण बताये, रघुराम को छोड़ न सक (वियोग को न सह सक)— ॥ १० ॥

---

[१] मूल (वाल्मीकि रामायण) तथा भास्कर रामायण में यह कथा अयोध्याकाण्ड के अन्त में है । यहाँ यह कथा भाग अरण्यकाण्ड के आदि में आया है ।

तन बंधुजनुल नंदऱ नॆंडबासि । वनमुल कासीत वच्चुट पॊगडॆ;
बिम्मट ननसूय प्रीतितो दानु । नम्महीतनयकु नंगरागमुलु
वाडनि विरुल चॆल्वपुदंड तोड । गूड मायनि मडुंगुलुनु दा नॊसगि
‘रमणि ! निन्नु स्वयंवरमुन राघवुडु । ग्रममॊप्प गैकॊन्न कथ दॆल्पु’ मनिन
जिलिबिलि सिग्गुनु जिऱुनव्वु दॊलक।बलिकॆ जानकि दनपतिनि वीक्षिंचि:
‘विनवम्म ! मिथिलकु विभुडॆनयट्टि । जनकुडॊक्कॆड यागशाल दुन्निप
गलिगिति ने; नदि कारणंबुननु । कलित सीतानामकमुन नॊप्पितिनि।
अनपत्युडौट नय्यवनिपालकुडु । दनयगा नन्नु मोदंबुन बॆनिचॆ:
नंत यौवनवति यगु नन्नु जूचि । चिंतिंचि तनयिंटि शिवुनि चापंबु
नॆक्कुवॆट्टिनवानि कॆलमि पॆम्पॊन्द । निक्कन्यकामणि नित्तु ने ननुचु२०
वरबुद्धिमै स्वयंवरमु साटिंप । धरणिनायकुलु मॊत्तंबुलै वच्चि
शैलजारमणुनि चापमॆत्तंग । जालक मोपॆट्ट जालक चनिरि;
अंत राघवुडु विश्वामित्रु गॊलिचि । कॊन्तगालंबुनकुनु नट वच्चि

—अपने समस्त बन्धुजनों से बिछुड़कर, सीता के जंगलों में आ जाने की सराहना की। (उसके) बाद अनसूया ने प्रीति से स्वयं उस महीतनया को अंगराग, न मुरझाने वाले फूलों की सुन्दर माला के साथ-साथ, (कभी) गंदे न बनने वाले वस्त्र देकर, कहा ‘हे रमणी ! स्वयंवर में राम ने तुम्हें जिस क्रम से ग्रहण किया, वह कथा बताओ।’ जानकी ने अपने पति को देखकर, स्वल्प (मधुर) लज्जा तथा मुस्कुराहट के उमड़ने पर, कहाः— ‘हे माता, सुनो। मिथिला के राजा जनक के एक बार यागशाला को जुतवाने पर, मैं उत्पन्न हुई। उस कारण से कलित (सुन्दर) सीता के नाम से (मैं) शोभित हुई। अनपत्य (निस्सन्तान) होने से उस अवनि-पालक (राजा) ने मुझे मोद से पुत्री के रूप में पाला-पोसा। तब यौवनवती बनी मुझे देख, चिन्ता कर, यह कहा (घोषणा की) कि मेरे घर के शिवधनुष को चढ़ा सकने वाले को, प्रेम की वृद्धि होने पर, यह कन्यकामणि दूंगा ॥ २० ॥

(इस) वर-बुद्धि से स्वयंवर की घोषणा करने पर, धरणी-नायक (राजा) झुंड बाँधकर आकर, शैलजा-रमण (शिव) के चाप को उठा न सक, चढ़ा न सक, चले गए। तब राघव विश्वामित्र की सेवा करते हुए, कुछ समय के बाद वहाँ आए (और) जैसे करि (हाथी) इक्षुकांड (ईख के डंठल) को तोड़ डालता है, (उसी प्रकार) झट से हर (शिव) के धनुष को तोड़कर मुझे वरण किया।’ ऐसा कहकर अपने विवाह के समस्त वृत्तान्त को सुनाने पर, सुनकर अनसूया मुदित हुईं। तब रवि के

करि यिक्षुकांडंबु खंडिचुनट्लु ।हरुविल्लु विरिचि चय्यन नन् वरिंचे'
ननि तनपेण्डिल वृत्तांतमंतयुनु । विनिपिंप ननसूय विनि मुदमंदे;
नप्पुडु रवि पश्चिमांबुधि मुनुग । दप्पक सांध्यकृत्यमुलेल्ल दीर्चि
श्रीरामुडत्रिपूजिप सद्गोष्टि । ना रात्रि गडपि काल्यक्रियल् दीर्चि
मुदमोप्प नय्यत्रिमुनि वीडुकोलुप । गदले नम्मरुनाडु; कमलाप्तकुलुडु

दंडकारण्य प्रवेशमु

सरळतालतमालसाल हिंताल । कुरवकागुरु वट कुटज गण्यंबु
चंडांशुनिभ मुनिजन शरण्यंबु । गंडकहर्यक्ष गवय वेदंड ३०
गंडभेरुंडादि खगमृगोद्दंड । दंडकारण्यंबु दरियंग जोच्चि
वेदनादमुलचे विस्तारहोम । वेदुलचेत बवित्रंबुलैन
पर्णशाललयंदु बवनांबुजीर्ण । पर्णाशुलगुचु दपंबु गाविंचु
मुनुलचे मिगुल समुन्नति नोप्पु । जननुत तापसाश्रममुलु वेक्कु
गनुगोन्चु वारलु गाविंचु पूज । लनुरक्ति गैकोन्चु ननुजुंडु दानु

विराधवध

नरुगुचो ना दंडकारण्यवीथि । नुरुपर्वताकारुडुग्रलोचनुडु

पश्चिम समुद्र में डूबने पर, आवश्यक समस्त सान्ध्य-कृत्यों की पूर्ति कर (निवृत्त होकर), श्रीराम ने अत्रि के पूजा करने पर, सद्गोष्ठियों में वह रात बिताई, दूसरे दिन कालकृत्य (दैनिक कार्य) पूरा कर (निपट कर), मोद से, उस अत्रिमुनि के बिदा करने पर, रवाना हुए। कमलाप्त (सूर्य) कुल (वाले) (राम)—

दण्डक अरण्य में प्रवेश

—सरल ताल, तमाल, साल, हिंताल, कुरवक, अगुरु, वट, कुटजों (के-कारण) गण्य (प्रसिद्ध), चंडांशु (सूर्य) निभ (के समान) मुनिजन-शरण्य, गंडक, हर्यक्ष, गवय, वेदंड, ॥३०॥

—गंडभेरुंड आदि खग, (और) मृगों से उद्दंड बने दंडकारण्य में प्रवेश कर, वेदनादों से, विस्तार होम वेदियों से, पवित्र बने पर्णशालाओं में, पवन, अंबु (जल) जीर्ण-पर्ण ग्रहण करते हुए, तप करने वाले मुनियों के कारण अधिक समुन्नति से विराजमान, जननुत (लोगों से प्रशंसित) कई तापस-आश्रमों को देखते हुए, उनकी पूजाओं को अनुरक्ति से ग्रहण करते हुए अनुज के साथ स्वयं (राम)—

विराध का वध

—जाते समय, उस दंडकारण्य-वीथियों में उरु (बड़े) पर्वत-आकार वाला,

घनवक्त्रनासुंडु कठिनविग्रहुडु । घनुडु विराधुडन् कडिदिरक्कसुडु
अट्टहासमु सेसि याकसंबद्रुव । बॆट्टुगा वनमॆल्ल भेदिल्ल वच्चि
गरुडुंडु बालनागमु बलिमि नॊडिसि । यिरवॊन्दगा दिवि कॆगयुचंदमुन
बट्टुशूलमुखचंचुभागुडै सीत ।गुटिलकुंतल नॆत्तुकॊनि मिंटि कॆगसि ४०
जनकजदॆस जूचि चाल जिंतिंचु । घनुल श्रीरामलक्ष्मणुल वीक्षिंचि
'योरि ! वीरुलवलॆ नोडक वच्चि । यीरसंबुन मीरलेनुन्न यडवि
शरचापहस्तुलै चरियिंप नॆन्त । बिरुदुलु ! भुजशक्ति पेर्कॊन नॆन्त?
तल्लि शतह्लद; तंड्रि जयुंडु; । तॊल्लि यायुधमुल द्रुंगक युंड
ब्रह्मचे वरमुलु वडसिनवाड; । ब्राह्मणाशनुड; विराधुडन्वाड;
ने नलिग चूचिन निंद्रादिसुरल । नैननु म्रिंगुदुनट, मर्त्युलॆन्त ?
यी यिंति नॊप्पिंचि यी कान विडिचि।पोयि मी मी प्राणमुलु गाचिकॊनुडु
कादेनि नाचेति घनशूलहतिकि । नादट नरिमि रं' डनि पॆर्चिपलुक
सौमित्रि यप्पुडु जनकजभयमु । नामहाराक्षसु नदटुनु जूचि
'योरि! रामुनि देवि नुरुपुण्यसाध्वि। धारुणिनंदन दगदोरि! नीकु ५०

उग्र लोचन वाला, घन वक्त्र-नास (नासिका) वाला, कठिन विग्रह (शरीर) वाला और महान् विराध नामक दुर्निवार राक्षस, आकाश को कंपित करते हुए अट्टहास कर, समस्त वन को उद्धत रूप से बेधते हुए आया। जैसे गरुड बालनाग को जबरदस्ती पकड़ कर, सुन्दरता से आकाश की ओर उड़ जाता है, उसी प्रकार पटुशूल मुखरूपी चंचुभाग वाला (वह राक्षस), कुटिल-कुन्तल (घुँघुराले केश) वाली सीता को पकड़, आकाश की ओर उड़ा, ।।४०।।
—जनकजा की ओर देख अधिक चिन्तित होने वाले, महान् (पुरुष) श्रीराम (और) लक्ष्मण को देखकर (उस राक्षस ने कहा), 'रे ! वीरों के समान अपराजित हो आकर, इस प्रकार, तुम लोग इस जंगल में, जहाँ मैं रहता हूँ, शरचाप धारण कर घूमने के लिए कितने साहसी हो ? (तुम्हारी) भुज शक्ति ही कितनी है ? माता (मेरी) शतह्लदा है, पिता जय हैं। पूर्वकाल में ब्रह्मा से वर प्राप्त किया कि किसी आयुध से मरूँगा नहीं। (मैं) ब्राह्मणाशन (ब्राह्मणों को खाने वाला) हूँ। विराध मेरा नाम है। मैं क्रुद्ध होकर देखूँ तो इन्द्र आदि देवताओं को भी निगल जाऊँगा। फिर मर्त्य की बात ही क्या ? इस स्त्री को समझाकर, (मेरे पास रहने के लिए मनवाकर), इस जंगल को छोड़ जा कर, अपने-अपने प्राणों की रक्षा कर लो। नहीं तो, मेरे हाथ के घन-शूल के प्रहार के लिए, सन्तोष के साथ तैयार हो जाओ।' ऐसा गरजकर कहने पर, सौमित्र ने तब जनकजा के भय (तथा) उस महाराक्षस

गॊनिपोव; नॆक्कड गॊनिपोयॆदिक ?। निनु बट्टि वधियिंतु नॆडुनाकडिमि'
'ननि बाणसंधानमलुकमै जेसि । घनबाणततुलु वक्षमु गाडनेय
नरुदुगा वाडट्टहासंबु सेसि । कॆरलुचु शूलमंकिचि वैचुटयु
घनघनाघनमु संगति बासि पिडुगु । चनुदॆन्चु करणिरा जानकीविभुडु
नदि रॆन्डु शरमुल नलुवुमै द्रुंप । बदरि वाडट सीत बडवैचॆ बुडमि:
ना राक्षसुनि बासि याकाश वीथि । धारुणीसुत सीत दल्लडिल्लुचुनु
जलदंबु नॆडबासि चनुदॆन्चु मॆऱपु । चॆलुवुन जनुदेर जॆच्चॆर जूचि
गरुडास्त्रमुन डिंचि कडगि राघवुडु । वरबाणमुलु पॆक्कु वानिपै नेय
नविलॆक्क सेयक यट्टहासंबु । भुवनभयंकरंबुग बिट्टॊनर्चि
करमुल रामलक्ष्मणुल निद्दरनु । गरसर्थि बट्टि रक्कसुडुक्कुमीऱि ६०
मूपुलनिडि रयंबुन द्रोवबट्टि । वेपोव सीतयु वॆनुवॆण्ट दगिलि
वापोव नट गॊन्तवडि पोयि पोयि । प्रापितकोपुलै रामलक्ष्मणुलु
मॆऱुगुदीगॆलरीति मॆऱयु खड्गंबु । लॊरलूड्चि वानि बाहुलु रॆन्डु द्रुनुम

के मद को देखकर (कहा)—'ओरी ! राम की देवी, उस-पुण्य-साध्वी धारुणी-नन्दना को ले जाना तुम्हारे लिए ॥५०॥

—उचित नहीं है । अब (उन्हें) ले भी कहाँ जा सकोगे ? मैं अपने पराक्रम से तुम्हें पकड़ वध कर दूँगा ।' (ऐसा) कहकर क्रोध से बाण सन्धान कर, घन बाण-समूह चलाए, जो (उस राक्षस के) वक्षस्थल पर गड़ गए । अपूर्व रूप से उस (राक्षस) ने अट्टहास कर, विजृम्भित हो, शूल को घुमा-घुमा कर फेंक दिया । घने जलद के सांगत्य को बिछुड़ कर आने वाली गाज़ के समान (उस शूल के) आने पर जानकीविभु ने उसे दो बाणों से, सरलता से काट दिया । क्रुद्ध हो उस (राक्षस) ने सीता को पृथ्वी पर डाल दिया । उस राक्षस से बिछुड़कर आकाशवीथि में धारुणीसुता सीता के, व्याकुल होते हुए, जलद से बिछुड़कर आने वाली बिजली के सौंदर्य के समान (नीचे) आते रहने पर, झट से देख, राघव ने गरुडास्त्र से (सीता को) नीचे उतारा । (और) अनेक श्रेष्ठ बाण उस पर चलाए । उनकी परवाह न करते हुए, शीघ्र भुवन भयंकर रूप से अट्टहास कर, हाथों से राम लक्ष्मण दोनों को, इच्छा से पकड़कर, राक्षस पराक्रम के आधिक्य से ॥६०॥

—उन्हें कंधों पर बिठा कर, शीघ्रता से मार्ग-ग्रहण कर, झट से जाने लगा । सीता भी उनके पीछे लग रोती रही । उधर थोड़ी देर तक जा-जाकर, राम लक्ष्मण ने प्राप्त क्रोधवाले (क्रुद्ध) होकर, चंपालताओं के समान चमकनेवाले खड्गों को म्यानों से निकाल कर, उसके दोनों बाहु काट डाले । वज्र (के आघात) से गिरने वाले गिरि के समान, दिशाओं को कंपायमान करते

गिरिवज्रमुन गूलुक्रिय दिक्कुलद्रुव। नुरवडिनोऱलुचु नुर्विपै गूलि
यसुवुलु वीड कय्यसुरयुंडुटयु। नसमानपदमुष्टिहतुल नंदंद
मुद्दगा जेसि समुद्धति जंपि। 'रद्दिरा' यनि मुनुलाश्चर्यमंद
नतडंत गंधर्वुडै रामु जूचि। यतुलविमानंबुनंदुंडि पलिकॆं:
'नेनु गंधर्वुड; नेनु तुंबुरुड; । भूनाथ! मनु रंभ बॊन्दि कॊल्वुनकु
रानि गर्व मऱिंगि राक्षसाकृतिग। नेनु गुबेरुचे निट्टुशापमंदि
नेडु मी भुजशक्ति निजशापमुक्ति। पोडिमि गांचिति; बोयॆदनिक; ७०

निरवोप्प ना देहमिल बूड्चि चनुडु। शरभंगमौनियाश्रममुन' कनुचु
बोयॆ म्रॊक्कुचु; नंत बॊलुपॊन्दुवानि। कायंबु धर बूड्चि कडुभयंबंदु
धरणीतनूभव दग गौगिलिंचि। परमसम्मदमुन भयमॆल्ल मान्पि
तलकॊन्न पेर्मितो दम्मुनि जूचि। 'यिलमीद गलगुनॆ यिट्टि दुर्गमुलु?
कावुन वेग मी गहनंबु दाटि। पोवलॆ मनमु भूपुत्रि दोड्कॊनुचु'
ननि यंतशरभंगुडनु मुनिचंद्रु। गनुगॊनुतलपुन गाकुत्स्थकुलुडु

हुए, अति वेग से, विलाप करते हुए वह (राक्षस) धराशायी हुआ, पर उस राक्षस ने प्राण नहीं छोड़े। तब असमान चरण (और) मुष्टि के आघातों से उसे वहीं पिण्ड-सा बनाकर, समुद्धति से मार डाला जिसे देख मुनि आश्चर्यचकित हो, साधुवाद देने लगे। तब वह गन्धर्व होकर, अतुल विमान में रहकर, राम को देखकर बोला 'मैं गन्धर्व हूँ, मैं तुम्बुर हूँ। हे भूनाथ! पूर्व में रम्भा को प्राप्त कर (रतिक्रीडा में तल्लीन रहते हुए), सभा में नहीं गया। (मेरे) गर्व को जानकर, कुबेर ने राक्षसाकृति को प्राप्त होने का शाप दिया। आज आपकी भुजशक्ति से, मनोज्ञरूप से, निज शापमुक्ति प्राप्त की। अब जाऊँगा। ।।७०।।

—सुन्दरता से मेरे शरीर को पृथ्वी में गाड़ कर, शरभंगमुनि के आश्रम को जाइए।' (ऐसा) कहते हुए, प्रणाम करते (वह) चला गया। तब शोभायमान उसके शरीर को धरा में दफनाकर, अधिक भीत होने वाली धरणीतनूभवा (सीता) को प्रेम से गले लगा कर, परम सम्मोद से समस्त भय को दूर किया, बड़े प्रेम से अनुज को देख (कहा), 'पृथ्वी पर ऐसे दुर्ग (कानन) (और कहीं) हो सकते हैं? अतः भू-पुत्री को साथ लेकर हमें शीघ्रता से इस गहन (अरण्य) को पार कर जाना चाहिए।' (ऐसा) कह शरभंग नामक मुनिचन्द्र को देखने के विचार से काकुत्स्थकुलज (राम) (निकल पड़े)।

शरभंगाश्रमगमनमु

चनुचोट नुदयार्क संकाशमगुचु । नॊनर नम्मुनियाश्रमोपरिवीथि
हरितहयाकीर्णमै सितच्छत्र । परिवृतंबै देवभरितंबु नगुचु
नकलंकमणिरोचुलंदंद पर्व । नॊक विमानमु गांचॆ नुडुवीथि; नंत
गनि विमानमुलोनि कमनीयशीलु । गनुगॊनु तलपुन गदियवच्चुटयु ८०

नदि यदृश्यंबय्यॆ; नंत राघवुडु ।मुदमॊप्प शरभंगमुनि गांचि म्रॊक्कि
मुनिचेत सत्कारमुलु साल बडसि ।यनुरागमुन बॊन्दि यतनिकिट्लनियॆ:
'नेमु निन्निट जूड नेतॆन्चुचोट । नो मुनीश्वरचंद्र ! यॊक विमानंबु
च़दलेल्ल वॆलुग निच्चटनुंडि पोयॆ; ।नदि यॆन्दुलकु वच्चॆ? नदि यॆन्दुबोयॆ?
ना विमानमुलोनि यतडॆव्वड ?'निन। भूववरुनकु मुनिपुंगवुडनियॆ:
'देवेंद्रुडातडु देवेंद्रवंद्य ! । देव ! नाकडकुनु दिविनुंडि प्रीति
ननिमिषुलुनु दानु नर्थि दीपिंप । ननु ब्रह्मलोकंबुनकु बिल्व वच्चॆ:
वच्चिन नो महीवरचंद्र ! नीवु । विच्चेयुटिच्च भाविंचिनेनिपुडु
नेऱसिन भक्तितो निन्नु बूजिंचि । मऱि पोवुवाडनै मदि निश्चयिंचि
'यंतकु रा' ननि यतनि बॊम्मंटि । जिंतिंचि वच्चियु श्रीराम ! निन्नु

शरभंग के आश्रम में जाना

—जा रहे थे तो उस मुनि के आश्रम के ऊपरी भाग पर, उदयार्क (बाल सूर्य) के समान शोभायमान, हरित हय आकीर्ण, सित-छत्र-परिवृत (श्वेत छत्र से आवेष्टित), देव भरित, अकलंक मणियों की रोचियों (किरणों) से व्याप्त (युक्त) होने वाले एक विमान को उडुवीथि (आकाश मार्ग) में देखा। तब (उसे) देखकर, विमान में बैठे कमनीयशील (वाले पुरुष को) देखने के विचार से निकट आने पर ।।८०।।

—वह (विमान) अदृश्य हो गया। तब राघव ने प्रसन्नता से शरभंग मुनि को देख, प्रणाम कर, मुनि के द्वारा अनेक सत्कार प्राप्त कर, अनुराग प्राप्त कर, उससे यों कहा, 'हे मुनीश्वरचन्द्र ! हम जब तुमको देखने आ रहे थे तब एक विमान समस्त आकाश के प्रकाशित होने पर यहाँ से गया। वह क्यों आया ? वह कहाँ गया ? उस विमान में कौन था ?' (ऐसा) कहने पर भूवर(राजा) से मुनिपुंगव (यों)बोले, 'हे देवन्द्र वन्द्य ! हे देव ! वह देवेन्द्र था। मेरे पास दिवि (स्वर्ग) से प्रेम से, अनिमिष (देवता) और स्वयं, अभिलाषा के दीप्त (उत्कट) होने पर मुझे ब्रह्मलोक में बुलाने आया। आया था तो हे महीवरचन्द्र ! तुम्हारे यहाँ पधारने की (बात) मन में विचार कर, (मैंने) मन में निश्चय किया कि मैं अब उत्कट भक्ति से तुम्हारी पूजा करके ही जाऊंगा, (और उससे यह कहा)

गांतारखिन्नु निक्कड सूड करिगॆं; । निंतलो विच्चेसि तिनकुलाधीश!
धरणीश ! नी प्रसादमुन नातपमु । नरुदार नॊंक विघ्नमैननु लेक
सलिपिति निष्ठतो: सफलंबुनय्यॆं ;। नॆंलकॊंनि श्रीराम ! निनु जूडगंटि:
ननघ ! सुतीक्षणसंयमि निंक नीवु । गनुगॊंनि यतनि चॆंन्गट नुंडु; मेनु
बनिविनियॆंद निंक ब्रह्मलोकमुन' । कनि चॆप्पि रामु समक्षंबुनंदु
ननलमुखंबुन नम्मुनीश्वरुडु । दनमेनु मंत्रपूतमु सेसि वेल्चि
यॆंडपक यिंद्रादुलॆल्लनु गॊंलुव । गडुनॊप्पु ब्रह्मलोकमुनकु बोयॆं;
ना याश्रमवासुलैन संयमुलु । वायुभक्षकुलुनु वैखानसुलुनु
वालखिल्युलु मौनवंतुलु बर्ण । शालाविहीनुलु स्थंडिलशयुलु
मननशीलुरु दांतिमंतुलेकांतु । लनशनव्रतुलु बंचाग्निमध्यगुलु
१००
मॊंदलैन तापसुल् मूकलु गट्टि । सदयात्मुडगु रामचंद्रुनि जेरि
'पितृवाक्यपालनप्रियुडवु, सत्य । रतुडवु, नीवु निर्मलयशोनिधिवि;
राम ! नी यंतटि राजु गल्गियुनु । नेमु राक्षसबाध निट गुंद दगुनॆ ?
व्रतिनि रक्षिचिन राजुकु गल्गु । नतनि पुण्यमुन नालवपालु; गान

'अभी नहीं आऊँगा, तुम जाओ।' वज्री (इन्द्र) चिन्तित हुआ। हे श्रीराम ! ॥९०॥

—कान्तार-खिन्न (वनवास से खिन्न बने) तुम्हें यहाँ देखे बिना चला गया। इतने में हे इनकुलाधीश ! (तुम) पधारे। हे धरणीश ! तुम्हारे प्रसाद (कृपा) से मेरा तप, जो मैंने बिना किसी विघ्न के, निष्ठा से किया था, सफल हुआ। स्थिर भाव से हे श्रीराम! तुम्हें देख सका। हे अनघ[1]! अब तुम सुतीक्ष्ण संयमी को देखकर, उसके पास रहो। मैं अब ब्रह्मलोक को जाऊँगा।" ऐसा कहकर राम के समक्ष उस मुनीश्वर ने, अग्निमुख में, अपने शरीर को मन्त्रपूत कर, होम किया। निरन्तर इन्द्र आदि सभी के सेवा करते रहने पर, अतिशोभित ब्रह्मलोक को गया। उस आश्रम के वासी संयमी, वायुभक्षक, वैखानस[2], वालखिल्य, मौनवन्त, पर्णशालाविहीन, स्थण्डिल-शायन (भूशायी) मननशील, दान्तिमन्त, एकान्त (वासी), अनशनव्रती, पंचाग्नि मध्यग (-मध्य रहने वाले) ॥१००॥

—आदि तपस्वी झुण्ड बाँधकर, सदयात्म (दयालु) रामचन्द्र (के निकट) पहुँचकर (बोले) 'हे राम ! तुम पितृवाक्य-पालन-प्रिय हो, सत्यरत हो, निर्मल यशोनिधि हो। तुम जैसे राजा के होते हुए, हमें यहाँ राक्षसों से पीडित होना चाहिए ? व्रती की रक्षा करने वाले राजा को उस (व्रती

---

१ निष्पाप २ वानप्रस्थ आश्रम का संन्यासी, वैष्णव।

नी तरि दैत्युल नेल्ल खंडिंचि । मा तपोव्रतमुलु मैत्रि निंडिपु;
सोरिदि नी शरणंबु सोच्चिचति' मनिन । शरणागत त्राण चरितुंडु गान
ना याश्रमंबुलयंदुंडु मुनुल । कायतमति रामुडभयंबुलिच्चि
'मी यनुग्रहमुन मेटि रक्कसुल । दायल खंडितु; दलककु' डनुचु

सुतीक्षणमुनि दर्शनमु

वारि वीड्कोनि घोर वनसीम दूरि । यारूढमति सुतीक्षणाश्रमंबुनकु
वच्चि या मुनिचंद्रु वलगोनि पेरु । ग्रुच्चि सद्भक्ति नेक्कोन म्रोक्कटयुनु ११०
वारल दोड्कोनि वच्चि सुतीक्ष्णु । डा रामु दीविंचि यक्कुन जेर्चि
'यनघात्म ! चित्रकूटाद्रिकि नीवु । मुनिवृत्ति वल्कलंबुलु गट्टिवच्चि
युनिकि यार्कणिंचि युल्लंबुलंदु । गोनकोनि नी राक गोरुचुंडुदुमु;
नीव विच्चेसिति; निनु जूडगंटि: । मेविधंबुननिक नेमु धन्युलमु;
आयत भुजसत्त्वुलैन राक्षसुलु । मा याश्रममुलकु मत्तुलै वच्चि

व्यक्ति) के पुण्य का चौथा भाग प्राप्त होता है। अतः इस अवसर पर समस्त दैत्यों का वध कर, मैत्री से हमारे तप (और) व्रत को पूर्ण (सम्पन्न) करो। क्रम से (हम) तुम्हारी शरण में आए हैं।' (ऐसा) कहने पर शरणागत त्राण-चरित्र वाले होने से, उन आश्रमों में रहने वाले मुनियों को आयतमति वाले राम ने अभय प्रदान किया। 'आपके अनुग्रह से श्रेष्ठ (बली) शत्रु राक्षसों का वध करूँगा। भीत मत होइए।' कहते हुए

सुतीक्षण मुनि के दर्शन

—उन्हें बिदा कर, घोर वन सीमाओं में प्रवेश कर, आरूढमति वाले सुतीक्षण के आश्रम में आए। उस मुनिचन्द्र की परिक्रमा कर, (अपना) नाम बताकर, सद्भक्ति के उत्कट होने पर, (साष्टांग) प्रणाम किया ॥११०॥

—उन्हें लिवा ले आकर, सुतीक्षण ने उस राम को आसीस, गले से लगाया (और कहा):— 'हे अनघात्म ! चित्रकूटाद्रि में मुनिवृत्ति से वल्कल धारण कर, आकर रहने (की बात) सुनकर, मन में उत्कट इच्छा लिए, तुम्हारे आगमन की कामना करते रहे हैं। तुम पधारे। तुम्हें देख पाए। अब हम सब विधियों से धन्य हैं। आयत-भुज-सत्व वाले राक्षस हमारे आश्रमों में मस्ती से आकर, होमवेदियों को उखाड़, यूप (स्तम्भों) को गिरा देते हैं। स्वयं सोमपान कर देवताओं को भगाकर, तप का भंग कर, पादपों (वृक्षों)

होमवेदुलगल्चि यूपमुल् गूल्चि। सोमयानमु ग्रोलि सुरल बोद्रोलि
तपमुलु सेऱचि पादपमुलु विऱिचि।जपमालिकलु द्रेंन्चि शाटिकल् सिंचि
फलमुलु डुल्चि पुष्पमुलेल्ल राल्चि।कौलकुलु गलचि दिक्कुलुगासि सेसि
पेक्कंड्र मुनुल जंपिरि दुरात्मकुलु;। दिक्कुले; दीपाटु दीर्पवे देव !
येचिन दनुजुल नेमु गोपिंचि। चूचिन नीऱुगा जूड जालुदुमु;
१२०

नेलकोंनि महिमीद नीयट्टि राजु। गलुगुट जेसि येक्कडनलग मेमु;
कावुन दुष्टराक्षसुल मर्दिंचि। नीवु मा तपमुलु निष्ठ बालिंपु'
मनिन रामुडु 'राक्षसाधीशवरुल। ननिलोन जंपेद' नंनि यूऱडिंचि
शरभंगुनाश्रमस्थलमुन मुनुल। किरवोप्प नभयंबुलिच्चुट देलिपि
रक्कसुलनु जंप रामुंडु प्रतिन। लक्कजंबुग बट्टि या रात्रि गडपे;
मऱुनाडु वेक्कंड्रु मौनुलु वच्चि। मऱि तम तम याश्रममुलकु बिलुव
दिननाथकुलुडु सुतीक्ष्णु वीड्कोनुचु। मुनुल पुण्याश्रमंबुलु सूडगोरि

सीतादेवि धर्मसंशयमु

चनुचोट रघुरामु जानकि सूचि।'यनघ! राज्यमु मानि यडविकिवच्चि

को तोड़ (गिरा) कर, जयमालाओं को तोड़कर, शाटियों (लंगोटियों) को फाड़कर, फल गिराकर, समस्त पुष्पों को गिराकर, सरोवरों को कलुषित कर, दिशाओं को (सब ओर) व्याकुल कर देते हैं (और) उन दुरात्मकों ने कई मुनियों को मार डाला है। (हमारे लिए कोई) चारा नहीं है। हे देव ! इस कष्ट को दूर कर दो न ! विजृम्भित राक्षसों को हम क्रुद्ध होकर देखें तो दृष्टि (मात्र) से भस्म कर सकते हैं ।।१२०।।

—मही पर शोभा से तुम जैसे राजा के होने के कारण हम कहीं (किसी भी दशा में) क्रुद्ध नहीं होते हैं। अतः दुष्ट राक्षसों का दमन कर, तुम हमारे तपों की निष्ठा से पालन करो।' (ऐसा) कहने पर, राम ने उन्हें आश्वस्त किया कि 'अनि (युद्ध) में राक्षसाधीश-वरों का वध करूँगा।' शरभंग के आश्रम स्थल में मुनियों को शोभा से अभय प्रदान (का समाचार) बताकर, आश्चर्यप्रद रूप से राक्षस-वध की प्रतिज्ञा धारण कर, वह रात बिताई। दूसरे दिन अनेक मुनि आए और अपने-अपने आश्रमों में बुलाया। दिननाथ-कुल (वाले राम) के सुतीक्ष्ण से बिदा लेकर, मुनियों के पुण्य आश्रमों को देखने की इच्छा कर,

सीता देवी का धर्मसंशय

—जाते समय, रघुराम को देख जानकी (बोली):— 'हे अनघ ! राज्य को

समुचित वृत्तिमै जडलुनु वल्क। लमुलु धरिंचि मेलंगुचु नुऱ्क
यसुरुलदेंस नीकु नलुग नेमिटिकि?। पोंसग नी माटलु बुद्धि जिंतिप;
१३०

मुनुलतो 'राक्षसमुख्युल द्रुंतु'। ननि यूऱडिंचिनयंतनुंडियुनु
गलगुचुन्नदि मदि गाकुत्स्थतिलक!। वलदी तेंऱंगुलु; वर्जिपवलयु;
ब्राणुल जंप बापमु रादे ? तोंल्लि। प्राणेश ! योंक मुनि बहुतपोनिष्ठ
नुंडुचो भटरूपयुक्तुडै वज्रि। योंन्डु खड्गमु मौनियोद्द दाचुचुनु
इदे पोयिवच्चेंद ने' ननि चनियें ;। ददनंतरमुन नातडु खड्गमंदि
यूरकुंडक तीवलोंकट वृक्षमुल। सारें द्रुंचुचुनु हिंसारतुडगुचु
जडमतियै तपश्चर्यंकु बासि। कडपट नतडु दुर्गति गूलें : गान
दपमेड ? मऱि राजधर्मंबुलेड ?। विपुलायुधमुलेड ? विडुववे देव!"
यनवुडु विनि नव्वि यधिपति सीत। गनुगोंनि "विप्रमार्गंबु नी पलुकु;
क्षत्रमार्गमु गादु साध्वि ! ना वलनि। मैत्रि बल्केंदवु नामतमेंऱिगियुनु;
१४०

छोड़, जंगल में आकर, समुचित वृत्ति से, जटाएँ तथा वल्कल धारण कर रहते हुए (समय) धृष्ट असुरों पर तुम्हें क्रुद्ध क्यों होना चाहिए ? बुद्धि से सोचने पर ये बातें ठीक नहीं जँचतीं ॥१३०॥

हे काकुत्स्थतिलक ! (जबसे) तुमने मुनियों को 'राक्षसमुख्यों का वध करूँगा' कहकर आश्वस्त किया था, (तब से) (मेरा) मन क्षुब्ध हो रहा है। ये पद्धतियाँ नहीं चाहिए (उचित नहीं), (इस विचार को) वर्जित करना चाहिए। प्राणियों का वध करने से पाप नहीं होगा ? हे प्राणेश ! पूर्व (काल) में एक मुनि बहुत निष्ठा से युक्त था तो वज्री (इन्द्र) ने भट (सैनिक) रूप युक्त हो, एक खड्ग मौनी के पास रख छोड़ते हुए कहा:— 'यही मैं जाकर आ जाऊँगा' (और) चले गए। उसके बाद वह (मुनि) खड्ग को पाकर चुप न रह सका, कभी लताओं को, कभी वृक्षों को काट डालते हुए हिंसारत होते हुए जड़मति (मूर्ख) हो, तपश्चर्या को छोड़ अन्त में वह दुर्गति को प्राप्त हुआ। अतः तप कहाँ ? फिर राजधर्म कहाँ ? (तथा) विपुल आयुध कहाँ ? हे देव ! (इस विचार को) छोड़ दो न !' ऐसा कहने पर, सुनकर, हँसकर, अधिपति (राम) सीता को देख बोले:— 'तुम्हारी बात विप्र मार्ग (के अनुकूल) है। हे साध्वी ! क्षत्र-मार्ग नहीं है। मेरे अभिमत को जानकर भी, मेरे प्रति मैत्री (प्रेम) के कारण (यों) बोल रही हो ॥१४०॥

दरुणि ! युत्तमराजधर्मैकपरुलु । शरचापमुलु दाल्चि चरिंचुटेल्ल
शरणागतुल गाव जर्चिचि कादे ? । परिकिंपवेल यी परमधर्मंबु ?
निम्महामुनुलतो नाडिन प्रतिन । नेम्मेयि गाविंतु; निदिय निश्चयमु;
विड्तु ब्राणमुनैन; विड्तुनिन्नैन; ।विड्तु दम्मुनि नैन; विड्व ने ब्रतिन"
ननिन नूरक युंडे नवनिज यपुडु; । विनि लक्ष्मणुडु साल विस्मयंबंदे;
नटमीद नोक्कोक्क याश्रमंबुननु । बटुधर्मविधि रामभद्रुंडु प्रीति
बदियु वासरमुलु बदुनेनुदिनमु । लदिगाक नेलनेल यटु रेन्डु नेललु
मूडेसिनेललु निम्मुलनालगुनेललु । बोडिमि निलुचुचु बुण्याश्रममुल

मंदकर्णि वृत्तांतमु

धीयुक्ति जूचुचु देरुवुन योज । नायतंबैन महातटाकंबु
गनि गीतवाद्य मंगळनिनादमुलु । दनर नय्युदकमध्यमुन स्रोयुटयु
१५०
गड् जोद्यपडि तटाकमु सेरि दानि। कड धर्मभृतुडुंड गनि चेरि स्रोक्कि
'यिदि येमि मुनिनाथ ! यी तटाकमुन । नुदकंबुलो घोष मुब्बुचुन्नदियु
गड् जित्र'मनुडु राघवु जूचिपलिके। नडरेंडु वेड्क ना धर्मभृतुड्;

हे तरुणी ! उत्तम राज धर्म का ही पालन करने वाले जन का शर-चाप धारण कर घूमना तो शरणागतों की रक्षा करने के लिए ही है न ! इस परमधर्म पर क्यों ध्यान नहीं देती हो ? उन महामुनियों के साथ जो प्रतिज्ञा की थी, किसी भी प्रकार से, उसका पालन करूँगा। यही (मेरा) निश्चय है। (इसके लिए) प्राण भी छोड़ दूंगा, तुम्हें भी छोड़ दूंगा, लक्ष्मण को भी छोड़ दूंगा। (किन्तु) प्रतिज्ञा को नहीं छोड़ूंगा।' (ऐसा) कहने पर तब अवनिजा चुप हो रही। (यह बात) सुनकर लक्ष्मण को अधिक विस्मय हुआ। उसके बाद पटु-धर्मनिधि रामभद्र प्रीति से एक-एक (किसी-किसी) आश्रम में दस दिन, पन्द्रह दिन, मास-मास, दो मास, तीन मास, चार मास, सुख से, अनुकूलता से ठहरते हुए, पुण्याश्रममों को

मन्दकर्णी का वृत्तान्त

—धीयुक्त हो दर्शन करते हुए, मार्ग में योजनभर (एक) महातटाक को देखकर, उस (तटाक) के जल-मध्य में शोभा से गीत वाद्य मंगल निनादों के मुखरित होते (देख) ॥१५०॥

—अत्यन्त चकित हो, तटाक के पास पहुँच, उसके निकट स्थित धर्मभृत्य को देख, नियराकर, प्रणाम कर, (पूछा):— ' यह क्या मुनिनाथ ! इस तडाग

‘कदलक मुनु मंदकर्णि यन् मौनि । युदकमध्यंबुन नुरुनिष्ठ निलिचि
यॆनसिन महिम ननेकवर्षमुलु । तनियक यत्युग्रतपमाचरिंप
ना तपंबुनकु निंद्रादिदेवतलु । भीतिल्लि मुनिपति पॆम्पॆल्ल गलप
नम्मुनिकडकेवुरप्सरस्त्रील । निम्मुल बुत्तेर नेतॆंन्चि वार
लतनिकि भार्यलै यंबुमध्यमुन । नतडु निर्मिंचिन हैमसौधमुल
मुनिनाथुमुंदट मुदमॊप्प निलिचि । यनुरक्ति वारिप्पुडाडुचुन्नार;
लदिगान गॊलनु पंचाप्सरंबय्यॆ । निदि वारि बहुवाद्य हृद्यशब्दम्मु”
१६०
लनवुडु विनि रामुडतिभक्ति तोड । घनपुण्युडगु मंदकर्णिकि म्रॊक्कि
मऱियु महाटवी मार्गंबुनंदु । नॆऱसिन कडिमिमै नॆऱि नेगुनपुडु
मुनुलकु म्रॊक्कुचु, मुनुलुन्न पुण्य । वनुलकु जॊक्कुचु, वनजकह्लार
सरसुल देलुचु सत्कथालाप । सरणुल नानुचु जल्लनि गालि
राकल बॊगडुचु रणितझिल्लिकल । जोकल दॆगडुचु शुकमयूरादि
खगमुल बट्टुचु गरि वराहादि । मृगमुल गॊट्टुचु मेघास्त्रमेसि
तापंबुलडचुचु दमु जूचुवारि । पापंबुलुडुपुचु बरुवंपुलतल
बुव्वलु सिदुमुचु बॊदलु तुम्मॆदल । नव्वल गदुमुचु नभमंट दाकु

के उदक में शब्द उभर रहा है। बड़ी विचित्रता है।’ (ऐसा) कहने पर उत्कट उत्साह से उस धर्मभृत्य ने राघव को देख कहा:— ‘पूर्व में मन्दकर्णी नामक मौनी ने स्थिरता से उदक-मध्य में उरुनिष्ठा से खड़े रहकर, अधिक महिमा से अनेक वर्ष, तृप्त न होते हुए, अत्युग्र तप किया। उस तप से इन्द्र आदि देवता भीत होकर (और) मुनिपति के महत्त्व को क्षुब्ध करने के लिए उस मुनि के पास पाँच अप्सरा स्त्रियों को प्रेम से भेजा। वे आकर उसकी पत्नियाँ बनकर, अम्बुमध्य में उसके निर्मित स्वर्ण-सौधों में मुनिनाथ के समक्ष मोदयुक्त हो रहकर, अनुरक्ति से वे अब नाच रही हैं। अतः वह तडाग पंचाप्सर हुआ (कहलाया)। ये उनके बहुवाद्य (युक्त) हृद्य शब्द हैं’ ॥१६०॥

ऐसा कहने पर सुनकर राम ने अतिभक्ति से घनपुण्य वाले मन्दकर्णी को प्रणाम किया और महा-अटवी-मार्ग में प्रसरित साहस के साथ मनोहरता से जाने लगे। (जाते समय मार्ग में) मुनियों को प्रणाम करते हुए, उन पुण्य वनों को देख, जहाँ मुनिजन थे, अघाते हुए, वनज (जंगली) कह्लार (कमल) से (युक्त) सरसियों में डुबकियाँ लगाते हुए, सत्कथा-आलाप-सरणियों से प्रसन्न होते हुए, शीतल वायु के आगमन की प्रशंसा करते हुए,

शैलंबुलॆक्कुचु जानकि यलय । मेलंबु दक्कुचु मृदुरीति गुहल
मॆल्लन दार्चुचु मॆलतकु नॆक्कु । डल्लन नेर्पुचु नचटि चॆन्चॆतल
१७०
बीरमुल् मॆच्चुचु भेदिंपरानि । यीरमुल् सॊच्चुचु निनरश्मिलेनि
कोनल गानल ग्रुम्मरुचिट्लु । जानकि दानु लक्ष्मणुडु गॊन्नॆंड्लु
पुण्यतीर्थंबुलु बुण्यवाहिनुलु । बुण्यतपोवनभूमुलु गलय
दिरुगुचु बदियेंड्लु दीऱिनपिदप । मरलि सुतीक्ष्णाश्रममुनकु मऱियु
वच्चि यम्मुनिचंद्रुवद्द गॊन्नाळ्लु । मच्चिक नुंडि रामक्षितीश्वरुडु
ऒकनाडु घनु नगस्त्युनि जूडगोरि । यकलंकभक्ति संयमिकिनिट्लनियॆ:

अगस्त्य वृत्तांतमु

"निंदु नगस्त्यमुनीश्वरुडुंडु । नंदु; रॆन्दॊक्कॊ तदाश्रमभूमि ?
तॆलुपवे" यनिन सुतीक्ष्णुडु गुऱुतु । ललवड दन्मार्गमंतयु दॆलिपि
दीविंचि यनुप गादिलि तम्मुतोड । देवितो दक्षिणदिक्कुकै नडचि
चनिचनि नालुगु योजनमुलु दाटि । वनमुलु शैलमुल् वाहिनुल् पॆक्कु
१८०

मुखरित झिल्लिकाओं के समूह की निन्दा अथवा उपेक्षा करते हुए, शुक-मयूर आदि खगों को पकड़ते हुए, करि-वराह आदि मृगों को मारते हुए, मेघास्त्र डाल (चलाकर), ताप को कम करते हुए, अपने को देखने वालों के पापों को दूर करते हुए, यौवन से भरी लताओं के फूलों को तोड़ते हुए, भ्रमरों को दूर भगाते हुए, नभचुम्बी शैलों पर चढ़ते हुए, जानकी के थक जाने पर परिहास करते हुए, मृदुरीति से गुहाओं के पास पहुँचाते हुए, वनिता (स्त्री अर्थात् सीता) को धीरे से चढ़ना सिखाते हुए, वहाँ की चेंचु (जंगली जाति) स्त्रियों की ।।१७०।।

—बहादुरी की प्रशंसा करते हुए, अभेद्य निकुंजों में घुसते हुए, सूर्यरश्मि से विहीन पर्वतों (तथा) काननों में घूमते हुए, इस प्रकार, जानकी, लक्ष्मण के साथ (राम) कुछ वर्ष तक पुण्यतीर्थों, पुण्यवाहिनियों, पुण्यतपोवन भूमियों की खाक छानते हुए, दस वर्ष के व्यतीत होने पर, फिर से सुतीक्ष्णाश्रम में लौट आए । आकर उस मुनिचन्द्र के पास कुछ दिन प्रेम से रहकर, रामक्षितीश्वर (राजाराम) एक दिन महान् अगस्त्य के दर्शन करने की इच्छा से अकलंक भक्ति से संयमी से यों बोले :—

अगस्त्य का वृत्तान्त

—'कहते हैं, यहाँ अगस्त्य मुनीश्वर रहते हैं। उनकी आश्रम-भूमि कहाँ है ? बताइए।' (ऐसा) कहने पर सुतीक्ष्ण ने चिह्न सुचार रूप से ज्ञात हों,

गनुगॊन्चु नेगि यगस्त्यानुजन्मु । ननघाश्रमंबुनकरिगि संप्रीति
ना यतीश्वरचंद्रु नडुगुल कॆऱगि । या याश्रमंबुन ना रात्रि निलिचि
मुनितोड सुखगोष्ठि मॊगि जेयुचुंडि । यिनकुलाधीश्वरुंडिट्लनिपलिकॆः
"नय्य ! यगस्त्यमहामुनि दॊलि । यिय्यॆड वातापि नॆब्भंगि जंपॆ"
ननिन नम्मुनिचंद्रुडा रामचंद्रु । गनुगॊनि या पुण्यकथ सॆप्पदॊडगॆ।
'नुरुतापि वातापियुनु निल्वलुंडु । धरणिपै निरुवुरुद्दंड राक्षसुलु
गल; रंदु वातापि घनमेषमूर्ति।यिल निल्वलुडु नॊक्क ऋषियुनैनिलिचि
यिच्चट बॆनुत्रॊव कॆदुरॆगि मिगुल । दच्चन दमयिंट दद्दिनंबनुचु
मुनुल निमंत्रिंचि मुदमॊप्प दॆच्चि । यॆनय नम्मेषंबु नेर्पड जंपि
प्रीति गूरलु सेसि पॆट्टि भुजिप । "वातापि ! र" म्मनि वडिबॆर
जीऱ १९०

दडयक यपुडु वातापि यम्मुनुल । कडुपुलु व्रच्चि यगलिकतो वॆडलुः
नी रीति मुनुल ननेकुल जंपि । या राक्षसाधमु लडरियुंडुदुरुः
कॊनकॊनि यॊकनाडु कुंभसंभवुडु । चनुदेर गपटभोजनमॊप्पबॆट्टि

ऐसा उस मार्ग को समग्र रूप से बताकर, आसीस कर भेजा । लाड़ले अनुज (तथा) देवी (पत्नी) के साथ दक्षिण दिशा की ओर चलकर, चल चल कर, चार योजन पार कर, अनेक वन, शैल, वाहिनी ।।१८०।।

—देखते हुए जाकर अगस्त्य के अनुजन्म (अनुज) के अनघ-आश्रम में जाकर, सम्प्रीति से उस यतीश्वरचन्द्र के चरणों में नत होकर, उस आश्रम में वह रात ठहर कर, मुनि के साथ सप्रयत्न सुखगोष्ठी करते हुए, इनकुलाधीश्वर यों बोले:— 'हे आर्य ! पूर्व में अगस्त्य महामुनि ने यहाँ वातापि का संहार किस प्रकार किया ?' (ऐसा) कहने पर वह मुनिचन्द्र रामचन्द्र को देख, उस पुण्य कथा को कहने लगा । 'उरुतापि (अधिक तप्त करने वाला) वातापि तथा इल्वल नामक दो उद्दण्ड राक्षस पृथ्वी पर थे । उनमें वातापि घन-मेष (बकरी)-मूर्ति (धारण कर लेता) (तथा) इल्वल एक ऋषि बन कर, यहाँ के बड़े मार्ग में जाकर रहता । आगत मुनियों को कपट से कि हमारे यहाँ श्राद्ध है, निमन्त्रित कर, बड़ी प्रसन्नता से लाकर, उस मेष (बकरी) को ढंग से मारकर, प्रेम से साग बनाकर परोसने पर (वे लोग) खा लेते । तब शीघ्र नाम लेकर पुकारता कि 'हे वातापि ! आओ ।' ।।१९०।।

—तब अविलम्ब वातापि उन मुनियों के उदर चीरकर, सोत्साह बाहर निकलता । इस प्रकार अनेक मुनियों को मारकर वे अधम राक्षस आधिक्य से विराजते थे । एक दिन कुम्भसम्भव के आने पर शोभा से कपट

वातापि बिल्व निल्वलु जूचि नगुचु।"वातापि यॆन्दुंडि वच्चु ? जीर्णिंचॆ"
ननि यगस्त्युडु वल्क नायिल्वलुंडु । कनलि रक्कसुडयि कदियवच्चुटयु
गलशसंभवुडु हुंकारमात्रमुन । बलियु निल्वलु बिट्टु भस्मीकरिंचि
मुनुलकु नॆल्ल ब्रमोदंबु सेसॆ; । विनु मदियुनु गाक विंध्यं बडंचॆ;
सरिगाग दक्षिणाशास्थलि निलिचॆ; । नरुदुगा नंबुधि नापोशनिंचॆ;
बॊनुबामुगाग शपिंचॆ ना नहुषु; । मुनिमात्रुडे पुण्यमूर्ति कुंभजुडु ?
मुनिवेषमुन नुन्न मुक्कंटिगाक" । यनविनि रघुरामु डानंद मंदि२००
मऱुनाडु मुनिपति मार्गंबुसूपि । तॆऱ्गॊप्प बूजिंचि दीविंप वॆडलि
चनिचनि यॊक्क योजन मुत्तरिंचि । पनस दाडिम शमी बदरिकाश्वत्थ
साल प्रियाळु रसाल तमाल । मालूर खर्जूर मंदार तरुल
तरुल ग्रिक्किरिसिन तावि क्रॊव्विरुल । विरुल तेनियलानि वॆलयु तुम्मॆदल
मॆदल निंपगुनट्टि मेटिपूबॊदल । बॊदललो बगलेक पॊदलु मृगमुल
कलकंठकलकुहूकार नादमुल । विलसिल्लु बहुशास्त्रवेद नादमुल
जॆलगुचु गिन्नर सिद्धगानमुल । कलिमि दीपिंचु नगस्त्युनाश्रममु

भोजन कराकर, वातापि को बुलाने वाले इल्वल को देख हँसते हुए (अगस्त्य) बोले:— 'वातापि कहाँ से आएगा? वह जीर्ण (पाचन) हो गया है।' ऐसा अगस्त्य के बोलने पर, वह इल्वल क्रुद्ध होकर राक्षसबन, आक्रमण करने आया (तो) कलशसम्भव ने हुंकार मात्र से बली इल्वल को शीघ्र भस्म कर, समस्त मुनियों को प्रमुदित किया। सुनो, इसके अतिरिक्त विन्ध्य को दबा दिया, सुचारु रूप से दक्षिण दिशा की भूमि पर जा ठहरे, अद्वितीय रूप से अम्बुधि का आपोशन (पान) किया, उस नहुष को बड़ा सर्प बन जाने का शाप दिया। वे पुण्यमूर्ति कुम्भज क्या मुनिमात्र हैं? वे तो मुनिवेषधारी त्रिनयन (शिव) ही हैं।' (ऐसा) कहने पर सुनकर रघुराम प्रसन्न हुए। ॥२००॥

—दूसरे दिन मुनिपति के मार्ग बताकर, सुविधि से पूजन कर, आसीसने पर (वहाँ से) निकल पड़े। चल चलकर एक योजन पारकर, कटहल, दाड़िम, शमी, बदरी, अश्वत्थ, साल, प्रियालु, रसाल, तमाल, मालूर, खर्जूर मन्दार (आदि) वृक्षों, (तथा उन) वृक्षों पर सघन सुगंधित पुष्पों, पुष्पों के मधु का पान कर शोभित भ्रमरों के समूह से विलसित श्रेष्ठ पुष्प-कुंजों, कुंजों में निर्वैरभाव से संचार करने वाले मृगों, कलकण्ठ-कलकुहू-के निनाद के समान विलसित बहुशास्त्र-वेद नाद से शोभित हो, किन्नर-सिद्ध गान की सम्पन्नता से दीप्त अगस्त्याश्रम को ॥२०७॥

अगस्त्य दर्शनमु

गनुगव विंदुगा गांचि यंदॊक्क । मुनि चेत दम राक मुनि कॆऱगिंचि
चनि चॊच्चि यम्मुनिचरण पद्ममुल । कनुरागमुन म्रॊक्क नक्कुन जेर्चि
दीविंचि वेवेल तॆऱगुल भक्ति । भाविंचि संतुष्टिपरुल गाविंचि २१०
"यो राम ! शुभनाम ! युत्पलश्याम ! । क्रूरदानवभीम ! गुणधाम! नीवु
मुनुल भाग्यमुन मुनिवृत्ति दाल्चि । वनमुन दपसिवै वर्तिंप वच्चि
यरुदार जित्रकूटाद्रि केतॆंचि । वरमति नॊक्क संवत्सरंबुंडि
शरभंगमौनि याश्रममु केतॆंचि ।शरणु सॊच्चिन मुनीश्वरुलनु गाचि
'दनुजुल जंपॆद: दलककुंडिक' । ननि प्रीति मुनुलक नभयंबुलिच्चि
करुणिंचि तनविनि काकुत्स्थतिलक! । परमसंतोषसंपन्नुडनैति'
ननि यर्थि बूजिंचि यतुल दिव्यास्त्र । घनशस्त्र कोदंड कवचादुलिच्चॆं:
निच्चन मैकॊनि यिनकुलाधीशु ।डच्चट सुखगोष्ठि ना रात्रि निलिचॆं:
मऱुनाडु संध्यासमाधुल दीर्चि । परमात्मु डम्मुनिपतिकि म्रॊक्कंग

अगस्त्य के दर्शन

नेत्रयुग्म को प्रसन्नता हो, (ऐसे उस आश्रम को) देखकर, वहाँ के एक मुनि से अपने आगमन से मुनि को जनाया, (तब)जाकर, (आश्रम में) प्रवेश कर, उस मुनि के चरण-पद्मों में अनुराग से वंदना की। (अगस्त्य ने) गले लगा कर, आसीस कर, हज़ार-हज़ार ढंग से भक्ति की,(और उन्हें) संतुष्ट कर (कहा) ॥२१०॥

—'हे राम ! हे शुभनाम (वाले) ! हे उत्पलश्याम ! हे क्रूर दानव-भीम (भयंकर) ! हे गुणधाम ! तुम मुनियों के सौभाग्य के कारण, मुनि-वृत्ति धारण कर, वन में तपस्वी हो रहने आकर, अपूर्वरूप से चित्रकूटाद्रि में आकर, वरमति से एक संवत्सर (वहां) रह, (पश्चात्), शरभंग मुनि के आश्रम (में) आकर, शरण में आए मुनीश्वरों की रक्षा कर, (यह कह कि) 'राक्षसों का वध करूँगा, अब घबराइए नहीं' प्रीति से मुनियों को अभय प्रदान कर, करुणा दिखाई, यह सुनकर हे काकुत्स्थतिलक ! (मैं) परम संतोष-संपन्न हुआ हूँ। ऐसा कह प्रेम से पूजा कर (अगस्त्य ने) अतुल-दिव्यास्त्र, घनशस्त्र, कोदंड, कवच आदि दिए। देने पर, (उन्हें) ग्रहण कर, इनकुलाधीश (राम) सुखगोष्ठि में वह रात वहाँ ठहरे (बिताई)। दूसरे दिन सन्ध्या-समाधि से निवृत्त होकर, परमात्मा ने उस मुनिपति को प्रणाम किया, (तब उन्होंने) आसीस कर, पूजा कर,(ठीक) ढंग से रामदेव को देखकर, धीमान् ॥२२०॥

दीविंचि पूजिंचि तॆऱ्गॊप्प राम । देवुनि वीक्षिंचि धीमंतुडैन
घटसंभवुडु भाविकार्य मूहिंचि । पटुतरवाक्युडै पलिकॆ निट्लनुचुः
"श्रीराम ! गोदावरी सरित्पुण्य । वारिशीतल गंधवाह कुमार
घटित नर्तन वनांगण लतानटिकि । जटिकृतपूज धूर्जटिकि ना पंच
वटिकि बॊं" म्मन रघुवर्युडच्चटिकि ।घटसूति वीड्कॊनि कदलि पोवुचुनु,

जटायुवुतो मैत्रि

नडुत्रोव नॊक पक्षिनाथुनि ऱॆक्क । लुडिवोनि कुलगिरियो यनुदानि
गनि दैत्युडनु बुद्धि गदिसि 'नी वॆव्व' । डनुटयु मुदमंदिया पक्षिवलिकॆः
"गरुडाग्रजातुंडु कश्यपतनयु । डरुणसारथियैन यरुणुंडु घनुडु
मा तंड्रि; मरियु संपाति मा यन्न;। मी तंड्रि सखुड सुमी ! येनु राम!
यितरुड गानु; मी हितकार्यपरुड । नतुलसाहसुड; जटायुवन्वाडः
नी वनंबु नसुरेंद्र सेवितमुः । गावुन वैदेहि गावुः मेमऱकु" २३०
मनुवुडु श्रीरामुडट्लुगा नतनि । मनमुन योजिंचि मैत्रि बूजिंचि,

पंचवटी प्रवेशमु

यट बंचवटि केगि यंदुन्न मुनुल । बटुतपोधनुल संभाविंचि म्रॊक्कि

—घटसंभव (अगस्त्य) ने भावी कार्य की कल्पना कर, पटुतर-वाक्यों से यों कहा:— 'हे राम ! गोदावरी नदी के पुण्य-जल से शीतल बने पवन-कुमार (मन्द-पवन) के कारण, नृत्य में संलग्न वनांगन की लता रूपी नटी से युक्त, यतिकृत पूजाओं से धूर्जटि (शिव) सम, उस पंचवटी को जाओ।' कहने पर श्रेष्ठ रघु घटसूति (अगस्त्य) को विदा कर वहाँ से निकल पड़े।

जटायु से मैत्री

मार्ग-मध्य में एक पक्षिनाथ को, जो (उस) कुलपर्वत के सम था, जिसके पंख झड़ नहीं गए हों, देख, दैत्य समझकर, नियराकर पूछा 'तुम कौन हो ?' (यह सुन) मुदित हो वह पक्षि बोला:- 'गरुड के अग्रजन्म, कश्यपतनय, अरुण (सूर्य) के सारथी, महान् अरुण मेरे पिता हैं, और संपाती मेरा भाई है। हे राम ! मैं तुम्हारे पिता का सखा ही हूँ। पराया नहीं हूँ। तुम्हारे हितकार्य-पर (तत्पर) हूँ। अतुल-साहस वाला हूँ। मैं जटायु नाम-धारी हूँ। यह वन असुरेंद्र-सेवित है। अतः वैदेही की रक्षा करो। असावधान मत बनो।' ॥२३०॥

—ऐसा कहने पर श्रीराम ने उसी प्रकार मन में उसे मानकर, मैत्री से पूजा की।

पंचवटी-प्रवेश

—तब पंचवटी जाकर, वहाँ के पटुतपोधनी मुनियों की संभावना कर, प्रणाम

करमर्थि वारु सत्कारमुल् सेय । धरणीतनय जूचि तम्मुनि जूचि
"पोलुपोंद नेंदुनु बुण्याश्रममुलु । गलय वेक्कुलु वोंडगंदुमु गानि
यी गौतमी गंग यी सरोवरमु । ली गिरु ली तरुली याश्रममुलु
नेंदुनु वोंडगंटिमे ? यिट मीद । निदुंडुदमु मन मिपोंद" ननुचु
नानंदमुन बोंदि यंदुन्न मुनुल । यानति गैकोनि या प्रोद्दे कडगि
तानु लक्ष्मणुडुनु दग बर्णशाल । नूनिन क्रममुतो नोप्पार गट्टि
तम्मुडु दानुनु दानि बूजिंचि । यम्महीसुत गूडि यनुरागमेसग
ना पर्णशालयंदारु मासमुलु । दीपिंचु पेर्मि वर्तिंपुचुनुंड; २४०

हेमंतवर्णनमु

नंत नीहारधराक्रांतदश दि । शांतमै हेमंत मवनि बर्वुटयु
वेकुव नोंकनाडु वेलदियुनु दानु । देकुव गौतमि दीर्थमाडंग
जनुचोट रामुडु सौमित्रि जूचि । "कनुगोंटिवे शीतकालंबु महिम
देसलेल्ल जलिकि भीतिलि वेलिपट्टु । मुसुगु वेट्टिनयट्लुमुंचे हिमंबु;
हेमंतमनु मेघमेल्लेड बर्वि । वामिगा वडगंड्लु वर्षिंचे ननग
गुरिसिन पेनुमंचु गुंभिनिनेल्ल । नेरसि योप्पारे घनीभविंचुनु;

करने पर, अतिप्रीति से उन (मुनियों) के (अपने को) सत्कार करने पर, धरणीतनया और अनुज को देखकर (राम बोले):— 'शोभायमान कई पुण्याश्रमों को कई स्थानों पर देखा है। किन्तु यह गौतमी नदी, यह सरोवर, ये गिरि, ये तरु, ये आश्रम कहीं देखे हैं ? अब आगे शोभा से यहीं रह जाएँगे।' यह कहते आनंदित हो, वहाँ के मुनियों की आनति (अनुमति) प्राप्त कर, उसी दिन शुरूकर, लक्ष्मण के साथ स्वयं प्रयत्नशील हो, क्रम से शोभा से, पर्णशाला का निर्माण किया। अनुज के साथ उसकी (पर्णशाला की) पूजा कर, महीसुता के साथ, अधिक अनुराग से, उस पर्णशाला में छः मास अत्यंत प्रेम से रहे; ॥२४०॥

हेमंत वर्णन

—उस समय धरा और दश-दिशांतों को नीहार से आक्रांत करते हुए, अवनि (पृथ्वी) पर हेमंत के व्याप्त होने पर, एक दिन तड़के, स्त्री (सीता) के साथ, स्थैर्य के साथ, गौतमी में स्नान करने जाते हुए, राम ने सौमित्र को देख, (कहा):– 'देखा, शीतकाल की महिमा को ? हिम ने (समस्त धरती को) आच्छादित कर दिया है। यह ऐसा लग रहा है, मानों समस्त दिशाओं ने ठंड से भीत होकर, श्वेत कौशेय से (अपने आपको) ओढ़ लिया हो। मानों हेमंत रूपी मेघों ने सब जगह व्याप्त होकर, अधिकता से ओले बरसाए हों, उस प्रकार बरसा हुआ अधिक बरफ समस्त पृथ्वी पर व्याप्त हो,

उर्विपै ना मंचु नॊक्कॊकचोट । दूर्वांकुरंबुल तुदल जूचितिवॆ ?
पच्चभिन्नसलाक पौजुपै वेड्क । ग्रुच्चिन मुत्याल क्रॊवलै यॊप्पॆ
गामु सम्मोहनकांडबुलनग; । हैमंतवायुवु ललवुमै सोक
वॆऱ्पुन वणकॆडु विरहिणुलनग । दॆऱ्गॊप्प गदलु पूदीग लीक्षिपु; २५०

मंचुन दारु तामरलु कन्नीरु । मुंचिन विरहुल मोमुल गेरु;
बॊंदिगॊन्न यकरुवुल् पॊट्टुगा मीद । गदलु तेट्टुलु पॊगलगा जलिगॊन्न
कॊलनु देवतलकु गुंपट्लु वोलॆ । विलसिल्लु कॆंदम्मि विरुलजूचितिवॆ?
यडवियेनुगुलु नीरान नीनदिकि । दुडि दुडि वच्चि तत्तोयंबु दॊंडिकि
नडिकि गिर्ऱनुचु दुंडमुलु वेवेग । मुडिचि पार्ऱॆडिनि तम्मुड! विलोकिंपु;
इट्टि कालंबुन नेनुन्नुयट्लु । पट्टंबु नामीदि भक्तिमै मानि
नारचीरलु जटल् नवतमै दाल्चि । ना राक गोरुचु नम्महाघनुडु
परमपावनुडु सौभ्रात्रभावनुडु । वरपितृवाक्य मद्वाक्यतत्परुडु
चिरकीर्तिनिरतु डाश्रितलाभरतुडु । भरतुडुष:काल परिचित नॆट्लु
स्नानंबु सेयुनो सरयुवुलोन ? मौनियै यॆट्लॊको महि बव्वळिंचु ? २६०

शोभायमान रूप से घनीभूत हो गया है। पृथ्वी पर, कहीं-कहीं उस ओस को दूर्वांकुरों के सिरों पर देखा है ? वे मानों मरकत मणियों की शलाकाओं की पंक्तियों पर सुंदरता से गुंथे हुए मोतियों की लड़ियाँ हैं। कामदेव के सम्मोहन-कांड (बाण) के सम हैमंत-वायु के मृदुता से, स्पर्श करने पर, भीति से काँपने वाली विरहिणियों के समान सुंदरता से डोलने वाली पुष्पलताओं को देखो। ॥२५०॥

—ओस में रहने वाले कमल, आँसुओं से डूबी विरहिणियों के मुख की अवहेलना कर रहे हैं। उधर देखो, समूह बन, किंजल्कों के पराग पर विहार करने वाले भ्रमर रूपी धुएँ से युक्त शोभायमान लालकमल के फूल मानों ठंड से व्याकुल सरोवर के देवताओं के लिए अंगीठियाँ हैं। जंगली हाथी पानी पीने के लिए इस नदी के पास शीघ्रगति से आकर, इस (नदी) के तोय (जल) को ग्रहण (स्पर्श) कर, बीच में ही, झट से सूंड समेटे हुए, लौटकर भाग रहे हैं। हे अनुज! (उन्हें) देखो। ऐसे समय में, मुझ पर भक्ति के कारण, राजसिंहासन को तजकर, मेरे समान (यति रूप में) रहते हुए, वल्कल वस्त्र, जटाएँ नूतन ढंग से (अपूर्वता से) धारण कर, मेरे आगमन को चाहते हुए वह महान्, परम पावन, सौभ्रातृभाव वाला, श्रेष्ठ पितृवाक्य (तथा) मेरे वाक्य (वचन) में तत्पर, चिरकीर्ति निरत, आश्रितजनों के लाभ (हित) में तत्पर, भरत (इस प्रकार के शीतल) उष:-

ना तंड्रिसत्यंबु ना पून्कि यतनि । चेत नेंतयु ब्रकाशिंचें लोकमुल;
ने तल्लि पनुपुन नेल्ल संयमुल । चेत दीवेनलु गांचिति वेड्क नेनु
नट्टि कैकनु नोंव्वनाडुनो तेंलिय ! । दट्टेल कांविचु ननघात्मुडतडु;
पट्टबु दोंलगि तापसिनैति नेनु । बट्टबु गलिगि तापसियय्यें नतडु;
अन्नदम्मुल पाडि या पुण्यु जूचि । येंन्ननेंव्वरिकैन निक नेर्ववलयु;
नट्टिया भरतुनि ननुगुदल्लुलनु । जुट्टाल नेंन्नडु सूतुमो मनमु ?
अनि वारि दलचुचु ननिवारितमुग । दनिवारु निष्ठ गौतमिवारि ग्रुंकि
यिनुनकु नर्ध्यंबु लेंत्ति गायत्रि । पनुगोंनि यजियिंचि ब्रह्मयज्ञंबु
तम्मुडु दानु सीतयु बर्णशाल । किम्मेंयि जनुदेंचि हितगोष्ठि नुंडे

जंबुमालि वृत्तांतमु

नोंकनाडु लक्ष्मणुंडुदयकालमुन । नकलंकचित्तुडै यन्नकु म्रोंक्कि २७०
कंदमूलफलादिकमुलु देंच्चुटकु । नंदंद वनमुल नरयुचु नरिगि
युन्नतंबगुचुन्न योंकगिरि गांचि । मिन्नक यच्चोट मेंलगुचुन्नंत

काल में सरयू में कैसे स्नान करता होगा ? मुनि बन, महि (जमीन) पर कैसे लेटता होगा ? ।।२६०।।

—मेरे पिता का सत्य (वचन) और मेरा दृढ़ संकल्प, उसके (भरत के) कार्य से ही लोकों में प्रदीप्त (प्रख्यात) हुए। जिस माता के आदेश से मैं समस्त संयमियों से सप्रेम आशीर्वाद प्राप्त कर सका, उस कैकई को पता नहीं, वह किस प्रकार की कटूक्तियाँ कहता होगा ? वह पुण्यात्मा ऐसा क्यों करेगा ? (नहीं करेगा।) राज्य (के अधिकार) से अलग होकर मैं तपस्वी बना। राज्य से युक्त होकर वह (भरत) तपस्वी बना। अब किसी को भी उस पुण्यात्मा को देखकर यह सीखना चाहिए कि भाइयों में (परस्पर) न्याय (सगत व्यवहार) कैसा होना चाहिए। ऐसे उस भरत को, प्रिय (स्नेहपूर्ण) माताओं को (और) नातेदारों को हम कब देख पाएंगे ?' इस प्रकार उनके बारे में सोचते हुए, अनिवारित (और) पूर्ण निष्ठा से गौतमी के जल में डुबकी लगा (स्नान) कर, सूर्य को अर्घ्य देकर, गायत्री का जपकर, ब्रह्मयज्ञ किया, (फिर) अनुज और सीता के साथ पर्णशाला को लौटकर, हितगोष्ठियों में रहे।

जंबुमालि का वृत्तान्त

एक दिन लक्ष्मण प्रातः समय, अकलंक चित्त हो, अग्रज को प्रणाम कर, ।।२७०।।

—कंद-मूल-फल आदि लाने के लिए, यहाँ-वहाँ वनों में खोजने गए। उन्नत

महियॆल्ल देदीप्यमानमै वॆलुग । नहिमांशुकल्पितंबगु खड्गमॊकटि
भीषणजलदगंभीरघोषंबु । घोषिंचि यिदि यॆमॊको यन बलिकॆ;
"नंदुकॊम्मिक दैत्याधीशतनय ! । पॊंदुगानी तपंबुनकु दा मॆच्चि
भानुंडु वनिचॆ नी पग नीग नन्नु । मानुग गॊनु"मन्न मऱि वाडु वलिकॆ:
'मॆल्लनॆ ता वच्चि मॆच्चिनाकीक । यॊल्लबोकलु सेसॆं; नॊल्लबोनिन्नु;
नलघुतपंबॆल्ल नवनिपै गलिसॆं; वलसिनकडकेगु वनजाप्तु हेति !"
यनि पलिक तॊल्लिटि यचलसमाधि । दनरंग नुंडॆ; नंतट लक्ष्मणुंडु
विपुलाद्भुतंबंदि वॆस दानि जूचि । युपमतो डग्गऱि यॊडिसि चेपट्टि २८०

निपुणुडै परिकिंचि नृपकुमारुंडु । 'तपसुल कॆल्ल नाधारमैनट्टि
फलवृक्षमुलु द्रुंप बाडिगा"दनुचु । गलय ग्रुम्मरुचु नग्गलिक नॊक्कॆडनु
भाविंचि भाविंचि बागॊप्प जूचि । भावंबुनंदुनु ब्रमदंबु गॊनुचु
"नी खड्ग मिंदुंड नेमि कारणमॊ? । यी खड्गमिच्चटिकेल वच्चिनदॊ?
यनि यनि खड्गंबु नादृति जूचि । पनिगॊनि दानि जेपट्टुचु मऱियु

बने एक गिरि (पर्वत) को देखकर, चुप न रहकर, उस पर (चढ़कर) विहार करने लगे। तब समस्त महि (पृथ्वी) को देदीप्यमान कर चमकते हुए, अहिमांशु (सूर्य) कल्पित (निर्मित) एक खड्ग ने भीषण जलद के गंभीर घोष से गरजकर यों कहा:— 'हे दैत्याधीश-तनय ! इसे (मुझे) अब ग्रहण करो। शोभा से तुम्हारे तप की स्वयं सराहना कर सूर्य ने (मुझे) भेजा है। अपने शत्रुत्व को नष्ट करने के लिए, साहस से ग्रहण करो।' ऐसा (उस खड्ग के) कहने पर, वह बोला—'सुन्दर ढंग से स्वयं आकर, मेरी सराहना कर, (तुम्हें) मुझे न देकर, (मेरा) अनादर किया। मैं तुम्हें नहीं चाहता (ग्रहण नहीं करता)। मेरा समस्त अलघु (अधिक) तप मिट्टी में मिल गया। हे वनजाप्त (सूर्य) के खड्ग ! जहाँ चाहो, वहाँ जाओ।' यह कहकर, वह पूर्ववत् अचल-समाधि में लीन हो गया। तब लक्ष्मण अधिक आश्चर्यचकित होकर, झट से उसे देख, चतुराई से निकट जा, कुशलता से उसे हाथ में लिया ।।२८०।।

—निपुण हो, उसे ध्यान से देख, उस राजकुमार (लक्ष्मण) ने सोचा:— 'सभी तपस्वियों के लिए आधार बने इन फल (से युक्त) वृक्षों को काटना न्याय-संगत नहीं है।' चारों ओर घूमते हुए, सोत्साह, एक जगह सोच-सोचकर, ठीक ढंग से देखकर, मन में मुदित होते हुए, सोचा:– 'इस खड्ग का यहाँ रहने का क्या कारण है ? यह खड्ग यहाँ क्यों आया ?' (ऐसा) सोच-सोच कर खड्ग को आदर से देखकर, सप्रयत्न उसे हाथ में लेते हुए, सुशोभित एक

विलसिल्लु नोंक गोंप्प वेदुरु जोंपंबु । मलसि खंडिप दन्मध्यभागमुन
दैगि योंक्कमौनि मेदिनि गुलुटयुनु । निगिडेडुमूर्छं मुनिगि सौमित्रि
यट गोंतसेपुन कल्लन देलिसि । ‘कटकटा ! सकल लोकमुलु निंदिप
ब्राह्मणु जंपिति परिकिंप लेक । ब्रह्महत्यादोषभरितुंडनैति;
नेनेल वच्चिति नित दव्वुलकु ? नेनेल यी खड्गमिट्लु गैकोंटि ?
२९०
ननुपमधर्मात्मुडगु रामचंद्रु । ननुजुंड नगु नाकु नधिकपापंबु
समकूडे; नी मुनीश्वरुडेव्वडोक्को? ।समय जेसिति; निंक जानकीविभुडु
विनि नन्नु नेमनि विडनाडु नोक्को । पेनुपेदि मुनुलु शपिंतुरो पट्टि !
चेप्पकुंडग रादुः चेप्पकपोदु; । तप्पे गार्य"मटंचु “दैवमा!” यनुचु
नडलुचु नल्लन नडुगुलु वडक । सुडिवडि ब्रमयुचु जोंप्पु दप्पुचुनु
नडतेंचि “दशरथुनकु गुरुपुत्रु । बडनेसि चंपिन पापंबु वच्चे;
दंड्रिकि वलेनें नंदनुनकु वच्चे । नंड्रु भूजनुलेल्ल” ननि तल्लडिल्लुचु
दम यन्न जेरि गद्गदकंठुडगुचु । ग्रममेदि वडकुचु गडगि म्रोंक्कुटयु
ननुजुनि नेत्ति योंय्यन गौगिलिंचि । कनुगव नीरु ग्रक्कुन जेत दुडिचि

घने बाँस के समूह को सविलास काट डाला । उसके मध्य भाग में (स्थित) एक मुनि के कटकर मेदिनी (भूमि) पर गिर पड़ते ही, सौमित्र अधिक मूर्च्छा में डूब गए (मूर्च्छित हुए ।) फिर थोड़ी देर के बाद धीरे से होश में आकर (कहा) :– ‘हाय हाय! (ठीक तरह से) देख न सक, सकल लोकों की निंदा के पात्र होते हुए ब्राह्मण का वध किया (और) ब्रह्महत्या के दोष से भरित हो गया । इतनी दूर आया ही क्यों ? इस खड्ग को मैंने इस प्रकार लिया ही क्यों ? ।।२९०।।

अनुपम धर्मात्मा रामचंद्र के अनुज हो कर (भी) मुझे अधिक पाप प्राप्त हुआ । पता नहीं, ये मुनीश्वर कौन हैं ? (इन्हें) मार डाला । अब (यह सब) सुनकर, मुझे क्या कह (कर) जानकीविभु (श्रीराम) तज देंगे । गुरु मुनिजन कैसा शाप देंगे ? कहा नहीं जा सकता, कहे बिना नहीं रह सकता । (सारा) कार्य बिगड़ गया है । हे भगवान !’ ऐसा कहते हुए, भीत होते हुए, धीरे से क़दमों के आगे न बढ़ने पर, चक्कर खाते हुए (भ्रमित होते हुए), स्वाभाविक गति से अलग होते हुए ‘दशरथ को गुरुपुत्र (श्रवण कुमार) को मार गिराने का पाप लगा । समस्त भूजन यही कहेंगे कि पिता के समान ही पुत्र को भी (पाप) लगा ।’ ऐसा सोचते हुए, व्याकुल होते हुए, अपने अग्रज के पास जाकर गद्गदकंठ (वाला) होते हुए, कांपते हुए, सप्रयत्न प्रणाम किया । अनुज को उठाकर, झट से गले लगाकर, नेत्र

यनुकंप मदि बर्वननियॆ राघवुडु; । "अनघ ! ये गलुग नीकडल
नॆमिटिकि ?
धर्मवर्तनुड; वुदारशीलुडवु; । निर्मलात्मकुडवु; नीतिमंतुडवु;
दशरथ क्ष्मापालतनय मान्युडवु; । पशुपति विक्रम प्रकट शौर्युडवु;
नन्न ! नी मॊगमेल यटु सिन्नवोयॆ? । नुन्नदि येर्पड नॊगि जॆप्पु' मनिन
जयशालियैन लक्ष्मणुडिट्टुलनियॆ; । "भयनिवारण ! नीदु पंपुन बोयि
वनमूल फलमुलु वलयुनन्नियुनु । गॊनि येनु मॆलगुचो ग्रूरखड्गंबु
ऒक्कटि मिंट रा नॊडिसि चेपट्टि । वॆक्कसंबगु नॊक्क वॆदुरु जॊंपंबु
नऱिकिति; दान नुन्नतुडॊक्क मौनि । यॊरलुचु घर गूलॆ नुग्रडो यनग;
ना नेरमिकि गुंदि नरनाथचंद्र ! । रानेरकुंडियु रा नेरवलसॆ;"
ननवुडु रघुरामुडाश्चर्यमंदि । यॊनर गार्यमु मदि नूहिंचुचुंडॆ;
नंत नक्कडि मुनुलंदऱु गूडि । "यॆंतयु नी तॆऱंगॆरिंगित" मनुचु ३१०
जनुदॆंचि रघुरामचुद्रु दीविंचि । घनतर मृदुवाक्यगरिम निट्लनिरि:
"अखिलेश ! विनुमु, नी यनुजन्मुडिप्पु । डखिललोकद्रोहियैन रावणुनि

युग्म के जल को झट से पोंछकर, मन में अनुकंपा के व्याप्त होने पर राघव (ने कहा):— 'हे अनघ ! मेरे रहते हुए तुम्हें भीत क्यों होना चाहिए ? ।।३००।।

—(तुम) धर्मवर्तन, उदारशील, निर्मलात्मा, नीतिमान (और) दशरथ-क्षमापाल (राजा) के पुत्र (और) मान्य हो, पशुपति (शिव) (के समान) विक्रम से प्रकटित शौर्य वाले हो। हे तात ! तुम्हारा मुख इस प्रकार उतरा हुआ क्यों है ? जो हुआ, (उसे) स्पष्ट रूप से कहो।' ऐसा कहने पर जयशील लक्ष्मण ने ऐसा कहा:– 'हे भय-निवारण (दूर करने वाले)! तुम्हारे आदेश से जाकर, आवश्यक समस्त वनमूल फलों को लेकर, मैं घूम रहा था। (तब) एक क्रूर खड्ग के आकाश से आने पर हाथ में लिया। बांस की अति घनी झाड़ी को काट डाला। उसमें (स्थित) एक उन्नत (श्रेष्ठ) मौनि जो उग्र (शिव) सम थे, चीखते हुए धरा पर लोट गए। अपने अपराध के कारण दुखी होकर, आ न सकने पर भी (मुझे यहाँ) आना ही पड़ा।' ऐसा कहने पर रघुराम आश्चर्यचकित हुए (और) कर्त्तव्य के बारे में मन में सोचते रहे। तब वहाँ के सभी मुनि एकत्र होकर, यह कहते हुए कि 'यह समस्त वृत्तान्त बताएंगे' ।।३१०।।

—आकर, रघुरामचंद्र को आसीस कर, घनतर मृदु वाक्य गरिमा से यों बोले 'हे अखिलेश ! सुनो, तुम्हारे अनुजन्म ने अब अखिल लोकद्रोही रावण की बहन के पुत्र, विजृंभित जंबुनामक दुष्ट का संहार किया है। (इसमें)

चॆलियलि कॊडुकु नेचिन जंबुडनॆडु । तुलुव निर्जिंचॆ; ने दोषंबु लेदु
मुनुलॆल्ल संतसंबुन बॊंदि रधिप !" । यनुवुडु रघुरामुडनियॆ मौनुलकु;
"ने वेल्पु गॊलिचि वाडिट्टि तपंबु । गाविंचॆ? खड्गमॆक्कडनुंडि वच्चॆ?
चीटिकि माटिकि जॆडुदुरे बुधुलु ? नाटिकि हतुडुगा नजुडेल व्रासॆ ?
नॆंतकालमु सेसॆ नी युग्रतपमु ? । संतुष्टुडय्यॆने सरसिजाप्तुडु ?
अंतयु नॆऱिगिंपु" डनिन ना भूमि । कांतुनितो मुनिग्रामणुलनिरि:
"तॊल्लि दशास्युंडु दोर्बलशक्ति । नॆल्लदिक्कुलु गॆल्व नेगुचो मदिनि
ऒरुल नम्मगलेक सोदरिमगनि । नुरुपराक्रमुनि विद्युज्जिह्वु
बिलिचि ३२०
मन्निंचि 'लंक येमरकुमी !' यनुचु । सन्नुति गापुंचि चनियॆ; नंतटनु
'येनु मायलु नेर्चि यी दशकंठु । रानीनु; लंकापुरंबु गैकॊंदु'
ननुचु विद्युज्जिह्वुडपुडु पाताळ । मुन केगि राक्षसमुख्युल दंड
महित मायोपायमंत्रवादमुलु । ग्रहवाद खिलवाद गारुडक्रियलु
विषवाद रसवाद विकृतकृत्यमुलु । दृष दीऱगा नेर्चि धीरुडै मऱियु
बायक वारिचे बहुळंबुलैन । मायलु नेर्चुचु मदवृत्ति नुंड

कोई दोष नहीं है। हे अधिप ! सभी मुनि (इस कार्य से) संतुष्ट हुए हैं।' ऐसा कहने पर रघुराम मुनियों से बोलेः— 'किस देवता के प्रति उसने ऐसा तप किया है? खड्ग कहाँ से आया है? जब-तब (उससे) बुधजनों की हानि हो सकती है ? ब्रह्मा ने आज मर जाने की (उसके ललाट पर) क्यों लिख दी ? (उसने) यह उग्रतप कितने काल तक किया ? सरसिजाप्त (सूर्य) क्या संतुष्ट हुए ? सब बताइए।' (ऐसा) कहने पर उस भूमिकांत (राजा) से मुनि-ग्रामीणी (श्रेष्ठ) बोलेः— 'पूर्व में दशास्य (रावण) भुजबल शक्ति से समस्त दिशाओं को जीतने जाते समय, मन से किसी दूसरे पर विश्वास न कर सक, अपनी बहन के पति उस विक्रमशाली विद्युज्जिह्व को बुलाकर, ।।३२०।।

—आदर, (सत्कार) कर, 'लंका के प्रति असावधान मत बनो' कहकर, सन्नुति (प्रशंसनीय रूप) से, उसे रक्षक बनाकर गया। तब यह सोचकर कि मैं 'मायाओं को सीखकर इस दशकंठ को नहीं आने दूँगा। लंकापुर को हस्तगत कर लूँगा।' विद्युज्जिह्व पाताल जाकर, राक्षस-प्रमुखों के पास महित मायोपाय मंत्रवाद, ग्रहवाद, खिलवाद, गारुड-क्रियाएँ, विषवाद, रसवाद (आदि) विकृत कृत्य, तृष्णा बुझने तक सीखकर, धीर बन और (उन्हें) न छोड़कर, उनसे बहुल मायाओं को सीखते हुए मदवृत्ति से रहा।

नच्चट रावणुंडखिल दिक्पतुल । विच्चलविडि गॆलिच्चि वॆस लंक जॊच्चि
घनत विद्युज्जिह्वु कथलॆल्ल दॆलिसि । कनुगवलनु निप्पुकलु निव्वटिल्ल
"नायाज्ञ नुंडक नलि रेगि वीडु । पोयि मायलु नेर्व बोवु गाकेमि ?
मायलन्नियु नेडु मायमै पोव । जेयुदु" ननुचु नजेयुडै यरिगि ३३०
अस्मय नगर वासासुरुल् बॆगड । विस्मयकोपुडै वॆस हेति बॆरिकि
'मऱदि; ना चॆलियलि मगडीत' डनक । तऱिमि विद्युज्जिह्वु तल द्रॆव्व नेसि
क्रम्मऱ वेग लंककु नेगुदॆंचि । 'र' म्मनि चॆलिय शूर्पणख नूरार्चि
"यनयंबु स्वेच्छाविहारिणिवगुचु । मनमुन नीकु सम्मतमैन पुरुषु
बॊंदुमुः वॆऱवक पूनि लोकमुल । यंदु जरिंपु, पॊ' म्मनिन नानॆ'लल
गर्भिणियै युन्नकतन बै नॆललु । निर्भरगति निंड नॆलतुक गांचॆ
जटुलोग्रबलुडैन जंबुकुमारु; । नटवाडु पॆद्दयै या तल्लिचेत
दन जनकुनि चावु दप्पक तॆलिय । विनि तंड्रिपग दीर्प वॆरवु सिंतिचि
"ब्रह्ममुनु गूर्चि तपंबु सेसिननु । ब्रह्म वरंबीडु; भवुनि गॊल्चिननु
अतनि भक्तुडु गान नलुगडातनिकि; । नतुलितगति विष्णुनर्थिंतु नेनि ३४०

वहाँ रावण स्वछन्दवृत्ति से सभी दिक्पतियों को जीतकर, झट से लंका में प्रवेश कर, विद्युज्जिह्व की समस्त कथाएँ जानकर, नेत्रयुग्मों से चिनगारियों के निकलने पर (कहा)– 'मेरे आदेश के अनुरूप न रह कर, रजकण जैसे उड़कर, यह जाकर मायाएँ सीखे तो क्या होने वाला है ? समस्त मायाओं को मैं आज अदृश्य (मटियामेट) कर दूँगा ।' (ऐसा) कहते हुए वह (रावण) अजेय होते हुए जाकर ॥३३०॥

—अस्मय नगरवासी राक्षसों के भीत होने पर, आश्चर्यजनक क्रोध वाला होते हुए,झट तलवार खींचकर, 'बहनोई है,यह मेरी बहन का पति है' ऐसा न सोच कर, पीछा करते हुए विद्युज्जिह्व का सिर काट डाला । फिर शीघ्र लंका में लौटकर, बहन शूर्पणखा को बुलाकर, सान्त्वना दी, (कहा):– 'सदा स्वेच्छा-विहारिणी बन कर, अपने मन से सम्मत (अनुकूल) पुरुष को प्राप्त करो । बिना भय के लोकों में विहार करो । जाओ ।' (ऐसा) कहने पर छः महीने की गर्भवती होने के कारण, शेष महीने निर्भर गति (अतिशयता) से पूर्ण होने पर, (उस) स्त्री के चटुल-उग्र-बल वाला जंबु-कुमार हुआ । तब वह बड़ा होकर, अपनी माता से अपने पिता की मृत्यु के बारे में जानकर, पिता (की मृत्यु) का प्रतिशोध लेने के प्रकार के बारे

जाल नातडु मेँच्चि चनुदेँचि वरमु । पालिचुटेँपुडु ? ना पगदीरुटेँप्पु ?
डरय द्रिमूर्तुलौ हरिहर ब्रह्म । लरविंद हितरूपमैयुंदु रंड्र;
कावुन रवि गूर्चि कडुनिष्ठ दपमु । गाविंचि मेँप्पिचि कदनरंगमुन
दनुज-नायकुडैन दशकंठु द्रुंतु" । ननि येँचि तपमु सेय दौडंगेँ; नंत
वनरुहाप्तुडु मेँच्चि वरखड्गमोकटि । पनिचेँ दानवुनकु बग नीगुटकुनु;
दानि गैकोँनडय्येँ दर्पांधुडगुचु; । नानिमित्तमुन नी यनुजुन कब्बे
ना हेति; यट्टुगाक यसुर चेबडिन । साहसंबुन नेचु जगमुलन्नियुनु;
दैवकृतंबुन दैत्युंडु मडिसेँ; । नी विचारंबेल यिनवंशतिलक !
कलन रावणु गेल्चेँ गार्तवीयुंडु; । च्रलमोप्प नातनि जंपेँ भार्गवुडु;
नट्टि भार्गवरामु ननिलोन बट्टि । कोँट्टिति बीरंबु ग्रोँव्वुनु नणग ३५०

नट्टि नी चे रावणादि राक्षसुलु । गट्टिगा दुरमुन गडतेरुगलरु"
अनवुडु रघुरामु डाश्चर्यमंदि । विनतुडै मौनुल वेड्कतो ननिचेँ ।

में सोचकर, 'ब्रह्मा के प्रति तप करूँगा तो भी ब्रह्मा वर नहीं देगा। भव (शिव) की सेवा करूँगा तो भी अपना भक्त होने के कारण (शिव) उस पर नाराज नहीं होगा। अतुलित गति से विष्णु की याचना करूँ ॥३४०॥

—(तो) वह अधिक प्रसन्न होकर, कब आकर वर देगा ? मेरा प्रतिशोध कब पूरा होगा ? कहते हैं, सोचने पर त्रिमूर्ति हरि-हर-ब्रह्मा (तीनों) अरविंद-हित (सूर्य) के रूप में रहते हैं। अतः रवि के प्रति अतिनिष्ठा से तपस्या कर, प्रसन्नकर, कदन (युद्ध)-क्षेत्र में दनुज-नायक दशकंठ का वध करूंगा।' ऐसा सोचकर तप करने लगा। तब वनरुहाप्त (सूर्य) ने प्रसन्न होकर, दानव के पास प्रतिशोध लेने के लिए एक वरखड्ग भेजा। गर्वांध होते हुए (उसने) उसे (खड्ग को) हाथ में नहीं लिया। उस कारण से वह हेती (तलवार) तुम्हारे भाई को प्राप्त हुआ। वैसा न होकर राक्षस के हाथ पड़ता तो वह साहस से समस्त लोकों को सताता। दैवकृत्य (दैवयोग) से राक्षस मर गया। हे इनवंशतिलक! यह सोच (शोक) क्यों? युद्ध में कार्त्तवीर्य ने रावण को जीता, हठ से भार्गव ने उसे मार डाला। ऐसे भार्गवराम को (तुमने) युद्ध में हरा दिया जिससे उसकी वीरता और मद नष्ट हो गए। ॥३५०॥

—ऐसे तुम्हारे (हाथ) से रावण आदि राक्षस अवश्य ही युद्ध में मर जाएँगे।' ऐसा कहने पर रघुराम आश्चर्यचकित हुए और विनत होकर मुनियों को सानन्द विदा किया।

कुमारुनि मृतिकि शूर्पणख शोकमु

नंतशूर्पणख नित्यमु दॆच्चुनट्लु । वितगा नन्नंबु विविध भक्ष्यमुलु
पॊसग निंचिन बोनपुट्टिक गॊनुचु । वॆस वच्चि तुनिसिन वॆदुरु जॊंपंबु
नडुम खंडंबुलै नलि बडियुन्न । कॊंडुकु गनुंगॊनि कुंभिनि व्रालि
तॆलिसि या तुनुकल दृढमुगा गूर्चि । पलविंचि पलविंचि पडति
यिट्लनियॆ:
"नो कुमारकचंद्र ! युचितमे ? नन्नु । गैकॊनि चूडवु गन्नुलु दॆऱचि;
तगु माम यनक प्रताप लंकेशु । डगु रावणुनि जंप नात्म गोरिननु
नी कॊनगूडुने ? नेरवैतकट ! । या कार्तवीर्युचे नणगॆने यतडु ?
अनरण्यु शापाब्धि नणगॆने यतडु ? । वनजसंभवु शापवह्निचे दॆगॊने ?
३६०
नलकूबरुनि चेत नलगॆने यतडु ? । अल नंदि कोपानलार्चुल बडॆने ?
शांडिल्य मौनि रोषंबुन जॆडॆने ? । यॊंडेल धननाथुडुंडॆने लंक ?
बलवद्विरोधंबु पाडिगादनॆडु । पलुकु नॆम्मदि लोन भाविंपवैति;
प्रापिंप दतनिकि बंचत्वमिपुडु; । 'पापी चिरायु' वन् पलुकु वम्मौनॆ!

पुत्र की मृत्यु पर शूर्पणखा का शोक

—तब शूर्पणखा नित्य के समान, विचित्र अन्न, विविध भक्ष्य (पकवान) से शोभा से भरे हुए भोजनपात्र को लेती हुई, शीघ्रता से आकर, कटी बांस की झाड़ी के मध्य खंड-खंड होकर गिरे पुत्र को देखकर, कुंभिनी (जमीन) पर (मूर्च्छित होकर) गिर पड़ी। होश में आकर उन टुकड़ों को एकत्र कर, रो-रोकर (वह) स्त्री यों बोली: 'हे कुमारकचंद्र ! मुझे पाकर भी आँखें खोलकर नहीं देखते हो, क्या यह उचित है ? यह भी न सोचकर कि प्रतापवान लंकेश मेरा मामा है, उसे वध करने की मन में इच्छा की थी। क्या वह तुमसे हो सका ? हाय, ऐसा कर नहीं पाए। क्या वह (रावण) कार्त्तवीर्य से विजित हुआ था ? अनरण्य (पृथु के पिता) की शापरूपी अब्धि (समुद्र) से नष्ट हुआ था ? वनजसंभव (ब्रह्मा) की शाप-वह्नि से नष्ट हुआ ? (नहीं) ॥३६०॥

—नलकूबर से पराजित हुआ क्या ? पूर्व में नंदि (शिव-वाहन) के कोप-अनल-अर्चियों (ज्वालाओं) में मरा क्या ? शाँडिल्य मुनि के रोष से नष्ट हुआ ? इतना क्यों ? धननाथ (कुबेर) लंका में रह सका ? (नहीं) तुमने मन में इस बात पर विचार नहीं किया कि बलवान से विरोध उचित नहीं है। उसे (रावण को) अभी पंचत्व (मृत्यु) प्राप्त नहीं होगा। (वह अभी

पगवलदन्न ना पल्कु गैकोंनक । तेंगितिः रावणुडेल देंगुनु नी चेत?
धर्मदेवत माट तल्लि माटंड्रु; । निर्मलात्मक ! विननेरवै तकट;
गंधर्व सुरसिद्ध गणमुलु सेंऱल । नंधुलैयुन्नार; लसुर मीरुदुरे ?
कोरि विद्युज्जिह्व कुलदीपकुंड ! । भूरि तपोनिधि ! पुण्यमानसुड!
तपमु वंडें ननंग दग नीकु बुद्धि । गर्पटिंचें; दैवंबुकतलेल यिक ?
बतिहीननैनट्टि पापात्मुराल ! । सुतुनैन गन्नुल जूडंगनैन ३७०

गोंत शोकमु मानु; गुलमुद्धरिंचु । संतति मुख्यंबु सतुलकु नंदु"
रनि यनि शोकिंचि यक्कुमारकुनि । गनुगोनि यग्नि संस्कारंबु सेसि
यनतिदूरंबुन नचलसमाधि । दनरुचुनुन्न पेंद्दल जेर बोयि
"योरि ! कन्नुलु मूसि युडुगनि निष्ठ । घोरतपंबु गैकोंनि सेयुरीति
दलल मोपेंडु जडल् धरियिंचि बूदि। यलदि जन्नंबुल नंदरु गूडि
तोंलगक मेकपोतुल मेंडल् विड्रिचि । पोंलुपार नुडिकिंचि पोंट्टल निंड
नेंट्टन भुजियिंचि नेंरि गळासमुलु । गट्टि येमियु नेंरुंगनियट्टुलुंडि

मरेगा नहीं) । क्या यह वचन व्यर्थ होगा कि 'पापी चिरायु'होता है ? (नहीं) 'प्रतिकार का भाव मन में मत लाओ', मेरी इस बात को न मानकर, नष्ट हो गए । रावण तुम्हारे हाथ क्योंकर मरेगा ? कहते हैं, माता के वचन धर्म देवता के वचन होते हैं । हे निर्मलात्मा वाले ! हाय, (मेरी बात को) मान नहीं सके । गंधर्व, सुर-सिद्ध गण (समूह) (रावण के) कारागार में अंधे (निस्सहाय) बन पड़े हुए हैं । क्या उस राक्षस (रावण) को जीता जा सकता है ? (नहीं) । हे विद्युज्जिह्व के कुलदीपक ! हे भूरि तपोनिधि ! हे पुण्य मानस ! चाहकर तप के पक्व (सिद्ध) होते समय तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई । अब दैव को क्या कहें ? मैं पतिहीना बनी पापात्मा हूँ । पुत्र को ही आँख भर देख सकती तो ॥३७०॥

—थोड़ा शोक कम हो जाता । कहते हैं, सतियों (स्त्रियों) के लिए कुल का उद्धार करने वाली संतति मुख्य है ।' ऐसा कह-कह शोक करने के बाद, उस कुमारक को देख, अग्नि-संस्कार कर, थोड़ी दूर पर अचल समाधि में शोभित वृद्ध जनों के पास जाकर, (कहा):— 'रे ! आँखें बन्दकर, अधिक निष्ठा से घोर तप करने (वालों) के समान, सिर पर गठरी के सम जटाएँ धारण कर, (शरीर पर) विभूति लगाकर, यज्ञों में सब मिलकर, हठ से बकरों का सिर काटकर, (अच्छे) ढंग से (उस मांस को) पकाकर, पेट भर मजे से खाकर, (उनके) चमड़े पहनकर, ऐसे बैठे हो, मानों कुछ नहीं जानते । मदांध हो, कुमति वाले होकर, मेरे शिशु को पकड़ किस प्रकार मार डाला ?

कॊव्वि ना शिशुवुनु गुमतुलै पट्टि । यॆव्विधि जंपिति ? रॆरिंगिपकुन्न
दापसाधमुलार ! तापंबु दीऱ । वे पट्टि म्रिंगुदु विडुवक मिम्मु"
ननि कहकहरावमडर डग्गऱिन । मुनुलॆल्ल भीतिल्लि
मुदितकिट्लनिरि; ३८०
"विनु शूर्पणख ! मुनिवेषुडॊक्करुडु । सनुदॆंचि नी पुत्त्रु समयंग जेसि
फलमुलु गॊनि यल्ल पर्णशालकुनु । जलियिंप केगि यच्चट नुन्नवाडु;
मुक्कु मोमॆर्पडु मॊगि गार्यमुनकु; । दिक्कु गल्गति गान तॆऱव! यंदरुगु"
मनि चूपि चॆप्पिन ना दुष्टबुद्धि । गनलुचु नपुडु लक्ष्मणुडु सन्नट्टि
यडुगुल चॊप्पुन नरुग नम्मुनुलु । पॊडमिन भीतिचे 'बुलि नाकिविडिचॆ;
दप्पक दीनिकि दगनिट्टि बुद्धि । सॆप्पि पंपुदुरिक जॆलगि राघवुलु;
नादट सकल दैत्यक्षयंबुनकु । नादि कारणमिदि' यनि मुदमंद,
विधि बलवंतमै वॆस द्रिप्पिकॊनुचु । नधिक वेगंबुन नटगॊनिपोव
नत्तऱि नॆसरेगि यसुरेंद्रु चॆलिय । लुत्तुंग नासिकंबुग्रभालंबु
गुरुविलोचनमुलु गोरदौडलुनु । पऱपैन कडुपुनु बल्लवॆंड्रुकलु ३९०
दॆऱनोरु गऱिमेनु दीर्घजिह्वयुनु । वॆऱपैन रूपुनु विषमदृष्टियुनु

रे तापसाधमो ! नहीं बताओगे तो अपना क्रोध-शांत हो, (इस प्रकार) शीघ्र तुम्हें पकड़कर निगल जाऊँगी । तुम्हें नहीं छोड़ूँगी ।' ऐसा कह-कह-रव (गर्जना) के विजृंभित होने पर, (उसके) निकट आने पर, सभी मुनि डरकर, (उस) स्त्री से यों बोले:— ॥३८०॥

—'हे शूर्पणखा ! सुनो । एक मुनिवेषधारी आया, तुम्हारे पुत्र का वध करके, फल ग्रहणकर, उधर पर्णशाला की ओर, अविचलित रूप से जाकर, वहाँ है । हे स्त्री ! वहाँ जाओ तो सभी बातों का पता लग जायेगा ।' (ऐसा) कहकर, (मार्ग) दिखाने पर, वह दुष्ट बुद्धि वाली क्रुद्ध होती हुई, तब लक्ष्मण के चरण-चिह्नों का अनुसरण करती चल पड़ी । वे मुनि (मन में) उत्पन्न भीति से (सोचने लगे):— 'बाघ ने चाटकर ही छोड़ दिया (अर्थात् बड़ी आफत टल गई ।) । अब राघव विजृंभित हो अवश्य ही इसे उचित बुद्धि सिखाकर (दंड देकर) भेज देंगे । तदनन्तर यह सकल-दैत्य-क्षय (नाश) का मूलकारण बनेगी ।' ऐसा सोचकर वे हर्षित हुए । विधि (नियति) बली होकर, शीघ्रता से उसे (शूर्पणखा) अधिक बेग से उधर ले गई । उस अवसर पर, विजृंभित हो असुरेंद्र की बहन ऊँची नाक, उग्र ललाट, बड़ी-बड़ी आँखें, दाढ़ों वाले जबड़े, विशाल उदर, अस्त व्यस्त केश, ॥३९०॥

नरुदार धर्रयिंचि याडुरूपमुन । गरमुग्रमुग वच्चु गरळमो यनग
नॊडिसि लोकमुलॆल्ल नॊगिम्रिग गडगि।पॊडमिन यॊक महाभूतमो यनग
दऱिवेचि दैत्यसंतति नाशकाल । मॆऱिगि भूस्थलि दोचु मृत्युवो यनग
नडुकक वॆस शूर्पणख यनु नाति । कडकतो रामु डग्गऱ जेर बोयि

शूर्पणख रामुनि मॊहिंचुट

यिंदीवरश्यामु निनकोटिधामु । सौंदर्यजितकामु जगदभिरामु
रामु दैतेयविरामु वीक्षिंचि । कामभूतमु सोक गनुगॊन राक
तामसगुणमेचि तन्नु लोकाभि । रामगा दलचि या रक्कसि निक्कि
'तनमॊद्दुमॊगमु नातनि मुद्दुमॊगमु। तन महोदरमु नातनि तनूदरमु
तन कप्पकन्नुलातनि गॊप्पकन्नु । लॆन' यंचु 'दनकितडे तगु' नंचु ४००
मॊगमु चेटंतगा मुसिमुसि नगवु ।लिगुरिंप रघुरामु नीक्षिंचि पलिकॆ;
"शरचापमुलु पूनि चरियिंपनेल । यरुदैन यडवुल नतिवयु नीवु ?

—खुला मुँह, काला शरीर, लंबी जीभ भयावह रूप, विषम दृष्टि आदि अपूर्व रूप से धारणकर, मानों स्त्री रूप धारणकर, अधिक उग्रता के साथ आनेवाला गरल (विष) हो, (अथवा) समस्त लोकों को पकड़कर निगलने के लिए उत्पन्न एक महाभूत हो, (या) घात में रहकर दैत्यसंतति के विनाश के काल को जानकर भूस्थल पर दिखाई पड़नेवाली मृत्यु हो, इस प्रकार भीत न होते हुए, शूर्पणखा नामक नाति (स्त्री) वेग से, सप्रयत्न राम के निकट गयी ।। ३९५ ।।

शूर्पणखा का राम पर मोहित होना

इंदीवर श्याम, कोटि-सूर्य-धाम, सौंदर्य में काम को जीतनेवाले, जगदाभिराम, दैत्यों का नाश करनेवाले राम को देखकर, कामरूपी भूत के आविष्ट होने पर, (उसे) कुछ नहीं दीखा, तामस-गुण के अधिक होने पर, अपने आपको लोकाभिराम (समस्त लोक में सुन्दरी) मानकर, वह राक्षसी (वासना से) गर्वीली होकर, (यों) सोचकर 'अपने भद्दे मुख के लिए उसका (राम का) सुन्दर मुख, अपने महोदर (बड़ी तोंद) के लिए उसका क्षीणोदर, अपनी मेंढक जैसी आँखों के लिए उसकी श्रेष्ठ आँखें, तुलनीय' हैं (और) यही मेरे लिये योग्य है' ।। ४०० ।।
मंदमंद मुस्कान के उत्पन्न होनेपर, मुख के सूप समान चौड़ा होनेपर, रघुराम को देखकर (वह यों) बोली:— '(इन) अपूर्व (अगम्य) वनों में स्त्री के साथ, शरचाप धारण कर तुम (यों) क्यों विचरण कर रहे हो ?

नी वेषमुन नुंडनेमि करणमु ? । नीवॆव्वडवु ? मऱि नीकु बेरेमि ?”
यनुवुडु विनि रामुडल्लन नव्वि ।दनुजकामिनि तोड़ दग निट्टुलनियॆ;
“रामाभिराम! यो राम! ना पेरु । रामुडु; दशरथराजु मा तंड्रि;
या पर्णशाल नुन्नतडु ना तम्मु । डी पद्मलोचन यिल्लालु नाकु;
नेनु दंडिरि पंप नीयरण्यमुल । बूनि चरिंतु दपोवृत्ति निपुडु;
नी वॆव्वरॆलनाग ? नीकु बेरेमि? । नीवेल वच्चिचति नेडु माकडकु ?
नी विलासंबुनु नी वयोरूप । लावण्यमुनु नितुलकु नॆंदु गलदु ?”
ना विनि या शूर्पणख रामु जूचि।वाविरि बल्कॆ दुर्वारयै निलिचि; ४१०
“या विश्रवसु कॊडुकखिलकंटकुडु । रावणुडुग्र विक्रम यशोधनुडु;
ना पट्टुसत्त्वुनि यनुगु जॆल्लॆलनु; । ना पेरु विनु शूर्पणख यंड्रुदॆलिय;
नी रूपुरेख लन्नियु सरि चूचि । कूरिमि नीकु नाकु दगुनंचु
गामिंचि वच्चिचति; गडु नॊप्पु रूपु। गामिंचिनप्पुडे कैकॊन नेर्तु;
नॆंदैन जन नेर्तु; ने वस्तुवैन । बॊंदुगा दे नेर्तु; भोगिंप नेर्तु;

इस वेष में रहने का क्या कारण है ? तुम कौन हो ? और तुम्हारा नाम क्या है ?’ (ऐसा) कहने पर, सुनकर, राम ने धीरे से हँसकर (मुस्कुराकर) दनुजकामिनी से उचित रूप से यों कहा:— ‘रामाओं में अभिरामा (सुंदरियों में सुंदरी) ! हे रामा ! मेरा नाम राम है। राजा दशरथ हमारे पिता हैं। इस पर्णशाला में जो है, वह मेरा अनुज है। यह पद्मलोचना मेरी पत्नी है। मैं पिता के भेजने पर इन अरण्यों में तपोवृत्ति ग्रहण कर अब विचरण करता हूँ। हे युवती ! तुम कौन हो ? तुम्हारा क्या नाम है ? आज हमारे पास तुम क्यों आई हो ? तुम्हारा विलास (हाव-भाव), तुम्हारा वयो-रूप-लावण्य स्त्रियों में और कहाँ हैं ? (अर्थात् तुम अनुपम सुन्दरी हो।) (ऐसा) कहने पर, सुनकर, उस शूर्पणखा ने राम को देखकर, दुर्निवार रूप से खड़ी होकर, उत्कृष्टता से यों कहा:— ॥ ४१० ॥

‘उस विश्रवसु के पुत्र, अखिल (लोक)-कंटक, उग्र-विक्रम (के) यशोधनी, पटु सत्व वाले रावण की लाड़ली छोटी बहन हूँ। सुनो, मेरा नाम शूर्पणखा है। तुम्हारी समस्त रूपरेखाओं को (अपनी रूपरेखाओं से) तुलनाकर देख, प्रेम से यह सोचकर कि तुम्हारी और मेरी (जोड़ी) उचित होगी, काम भाव से आई हूँ। जब कामना करूँ तभी अति सुंदर रूप को ग्रहण कर सकती हूँ। जहाँ चाहूँ, वहाँ जा सकती हूँ। किसी भी वस्तु को समुचित रूप से ला सकती हूँ। (किसी भी सुख का) भोग कर सकती हूँ। तुम्हारे साथ जो है, वह क्यों ? (वह किसी काम की

नुन्नदि येल ? ना यौप्पु भाविंपु; । नन्नु बाणिग्रहणंबु गाविंपु;
मिदि कुलगुणहीन; यिदिविकृतांगि। यिदि नीकु मरि तगुने ? यट्टुगान
नी मैंलतुक बट्टि यिप्पुडे म्रिंगि । राम! नी कोरिन रति सल्प नेर्तु;”
ननि यदि दनुजेर ना सीत दिगिचि। कौंनि राघवुडु दानि कोर्किकिनव्वि
कौंत हास्यमु सेय गोरि या दनुज।कांत विकारंबु गनुगौंनि पलिके; ४२०

“ने निंतिगलवाड; निदि नन्नु नम्मि। पूनि नातो वनंबुनकु नेतेंचे;
दगिलि नी कौंप्पिप दगदीलतांगि; । बगगौनु सवतितो बडजाल वीवु;
नी नाति लेकुन्न नितकु मुन्ने। ये निन्नु गैकोंदु; निप्पुडेमायें ?
वाडे नातम्मुडु वरसत्त्वधनुडु। वाडु नाकंटेनु वर रूपधरुडु;
तन कौक्क चक्कनि तरलायताक्षि । ननुकूलवतिनि नित्यमु गोरु; गान
निनु बौंद नातडु नेर्चु; नीवरुगु” ।मनवुडु ‘नौगाक!’ यनि डायबोयि
नेलकौंनि “लक्ष्मण! निन्नु गामिंचि। कलय वच्चिति; नन्नु गैकौनु”मनुडु

नहीं है।) मेरे सौन्दर्य का विचार करो। मेरा पाणिग्रहण (विवाह) करो। (तुम्हारे साथ जो है) यह (स्त्री) कुल (तथा) गुण से हीन है। यह विकृत शरीरवाली है। यह क्या तुम्हारे लिए योग्य है ? (नहीं है।) यही नहीं, इस स्त्री को पकड़कर अभी निगल जाऊँगी (और) हे राम ! तुम जिस प्रकार की रति (-क्रीड़ा) चाहोगे, वह कर सकूँगी।’ (यह) कहकर उसके अपने पास आने पर, सीता को निकट लेकर, राघव उसकी इच्छा पर हँसकर, तनिक हास्य (परिहास) करना चाहकर, उस दनुज-कान्ता के विकार को देखकर (यों) बोले:— ॥ ४२० ॥

‘मैं स्त्री (पत्नी) से युक्त हूँ। यह मुझ पर विश्वास रखकर, चाहकर, मेरे साथ वन में आई। इस लतांगी को तुम्हें चाहकर सताना नहीं चाहिए। वैर भाव रखनेवाली सौत के साथ तुम निर्वाह नहीं कर सकोगी। (यदि) यह स्त्री नहीं होती, इससे पहले ही मैं तुम्हें ग्रहण कर लेता। अब भी क्या हुआ (बिगड़ा) है ? वह देखो, मेरा अनुज है। वर (श्रेष्ठ) सत्त्व का धनी है। वह मुझसे भी श्रेष्ठ रूप (सौन्दर्य) धारण करने वाला है। वह नित्य अपने लिए एक सुन्दर तरलयाताक्षी (चंचल तथा विशाल नेत्रवाली) अनुकूलवती की इच्छा करता रहता है। अतः तुम्हें ग्रहण करने में वही समर्थ है। तुम (उसके पास) जाओ।’ ऐसा कहने पर यह सोच कि यही ठीक है वह (शूर्पणखा) (लक्ष्मण) के पास जाकर, खड़ी होकर, बोली:— ‘हे लक्ष्मण ! तुम पर आसक्त होकर, मिलने आई हूँ। मुझे ग्रहण करो।’ (ऐसा) कहने पर, राम के प्रयत्न को वह समझ गया, धैर्य से वह उससे क्रम से बोला:—

ना रामुनुद्योगमतडुनु दॆलिसि । धीरुडै दानितो दॆऱ्गॊप्प बलिकॆ;
"मेलत! मा यन्न गामिंचिति तॊलुत। दलपुन: नटुगान दगदुनिन् बॊंद;
सीत निन् बोलदु चॆलुवंबुनंदु; । नी तरितीपुनु नी मुरिपॆंबु ।।४३०।।
भाति निंकॊंकसारि परिकिंचॆनेनि । सीतनॊल्लक निन्नु जॆंदु राप्पुवुडु;
रामुनि सन्निधिकि नो रमणि! पो" म्मनिन।सौमित्रिमाटलु सत्यंबुलनुचु
दामसि तन रोत दलपक मऱियु । रामुनिकडकेगि रतिकि ब्रार्थिंचॆ;
"वलव; दातनि बॊंदु वनित! नी" वनिन । जलजाक्षि मऱियु लक्ष्मणुनि ब्रार्थिंचॆ;
दम्मुडन्ननु, नन्न, दम्मुनि जूप । द्रिम्मरि तन कोर्कि तिरितीपुलाड
मऱि मन्मथुनिसूत्र महिमचे दिरुगु। तॊऱबॊम्मयो यन दिरिगॆ बेरास;
विरसवर्तनमुल वॆलदि यिब्भंगि । निरुवुरि सन्निधि कॆडदाकि ताकि
वेसरि यन्योन्यविरस वाक्यमुल । गासिलि यॆंतयु गडु नलिग पलिकॆ;
"नोरि मानवुलार! यॊक पेदरालि। गारिंचु गति नन्नु गारिप दगुने ?
येनु गोपिंचिन निंद्रादि सुरुल । नैननु म्रिगुदुनट, मर्त्युलॆंत? ४४०
पॊदिवि यी यितितो भुवनंबुलॆल्ल । जदिपि म्रिगॆद" ननि संरंभमॆसग

'हे रमणी ! तुमने प्रथमतः मन में मेरे भाई को चाहा (प्रेम किया।) अतः तुम्हें ग्रहण करना उचित नहीं है। सौन्दर्य में सीता तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकती। तुम्हारे हाव-भाव ।। ४३० ।। —के विधान को एक बार और देख लें तो सीता को न चाहकर, राघव तुम्हें प्राप्त करेंगे। हे रमणी ! राम की सन्निधि (सम्मुख) में जाओ।' (ऐसा) कहने पर सौमित्र की बातों को सत्य मानकर, तामसी (राक्षसी) ने अपने भद्देपन का विचार न कर, राम के पास जाकर रति (-क्रीड़ा) के लिए प्रार्थना की। 'संभव नहीं है, हे वनिते ! तुम उसको (लक्ष्मण को) प्राप्त करो।' (ऐसा राम के) कहने पर उस जलजाक्षी ने पुनः लक्ष्मण से प्रार्थना की। अनुज के अग्रज को, अग्रज के अनुज को दिखाने पर, मन में इच्छा के विकल बना देने पर, वह दुराशा के कारण, मन्मथ के सूत्र की महिमा से घूमनेवाली छाया-पुतली के समान घूमती रही। इस प्रकार वह स्त्री विरस-व्यवहार के कारण, दोनों के समक्ष जा जाकर, ऊबकर, अन्योन्य विरस वचनों के कारण सताई जाकर, अत्यधिक क्रुद्ध होकर बोली:— 'अरे मानवो ! किसी अकिंचन स्त्री को सताने के समान मुझे सताना उचित है ? मैं क्रुद्ध हो जाऊँगी तो इन्द्र आदि देवताओं को भी निगल जाऊँगी। मानव (मात्र) की बात ही क्या ? ।। ४४० ।। —इस स्त्री के साथ समस्त लोकों को घेरकर, मारकर निगल जाऊँगी।'

नदि मृत्युवुनु बोलें नट्टहासंबु । पोंदल दग्गऱ वच्चु पूनिक सूचि
“जानकि दलकेंडु सौमित्रि! यिक । दीनि मेलमु चालु; दीनि शिक्षिंपु”
मनि राघवुडु वल्क ना लक्ष्मणुंडु । विनि पर्णशालकु वेलुपल निलिचि
“पडति । नीकिंत कोपंबेल रम्मु । कडमुट्ट नी कोर्कि गाविंतुनिपुडें”
यनि दानिगनि पल्क ना शूर्पणखयु । दन मदि नुप्पोंगि दग्गऱ जेर
घनविषज्वालोरगमु पुट्टवेंडलु । ननुवुन नोऱबापि यदरुलु सेंदर
दन खड्गभंकिंचि दानवुरालि । घन नासिकमु चेवुल् गरमुन बट्टि
“ये सीम सरसमोयिदि” यन नतडु।“मा सीम सरसमो मगुवरो! ” यनुचु
“जेयोड्डि वलचिवच्चिन जेवुल् मुक्कु । पोयें” नन् सामेंतबुडमि बुट्टिंचि ४५०

मुक्कुनु जेवुलुनु मोंदलंट गोय । वेक्कुचु वेसारि विवशात्म यगुचु
शृंगमुल् वोयिन जेवुरुगोंड । भंगि रक्तमुलोल्क भयमंदि पाऱि
चनि चतुर्दश सहस्र निशाचरेंद्र । जनविराजित जनस्थानंबु नैन

कहकर, संरंभ के साथ, मृत्यु के समान उसके अट्टहास के बढ़ते जाने पर, उसके (शूर्पणखा के) निकट आने का प्रयत्न देखकर, राघव बोले:— ‘हे सौमित्र ! जानकी भयभीत हो रही है । अब इसका परिहास बस है । इसे दंडित करो ।’ राघव के कहने पर, उस लक्ष्मण ने (बातें) सुनकर, पर्णशाला के बाहर खड़े होकर, कहा:— ‘हे युवती ! तुम्हें इतना क्रोध क्यों ? आओ, तुम्हारी इच्छा को अभी सान्त रूप से पूरी करूँगा ।’ ऐसा उसे देख बोलने पर, वह शूर्पणखा भी मन में फूल उठी, (लक्ष्मण के) निकट आई । बांबी से निकलने वाले, घन-विष ज्वालाओं से युक्त सर्प के सम खड्ग को म्यान से निकालकर, चंचलताओं के नष्ट होने पर, खड्ग को हिलाकर, दानवी की बड़ी नाक और कान को हाथ से पकड़ लिया । शूर्पणखा के पूछने पर कि ‘यह किस प्रान्त की सरस-क्रीड़ा है ?’ लक्ष्मण ने कहा कि ‘हे प्रमदे ! यह हमारे प्रान्त की सरस-क्रीड़ा है ।’ ‘चाहकर आने पर कान और नाक गए’ वाली कहावत को जन्म देकर, ।। ४५० ।।

—(लक्ष्मण के) नाक और कान को जड़ से काट डालने पर, (वह) रोती-बिलखती, ऊबकर, विवशता से युक्त मनवाली होकर, शृंग कटे लाल-पर्वत के समान, रक्त के बह उठने पर, भीत होकर, भागकर, चतुर्दश-सहस्र-निशाचरेन्द्र-जन से विराजित जनस्थान,

खरदूषणादुल संहारमु

खरुनि यावासंबु कडकु वच्चुटयु। खरुडुनु दानि याकारंबु जूचि
वॆऱगंदि "यदि येमि वॆलदि! नीरूपु। वॆऱवक यॆव्वडु विकृतंबु सेसॆ ?
नॆव्वडु कालाहि नॆऱिगियु द्रॊक्कॆ? । नॆव्वडु मृत्युवु नित्तऱि जॆक्कॆ ?
वानि ना कॆरिगिंपु; वानि रक्तमुलु। वानि मांसमुलु वडिनीकु नित्तु"
ननि पेर्चि खरुडु दन्नडिगिन जूचि। विनुटकु व्रेगैन विकृत स्वरमुन
मुनुकॊन्न सिग्गुन मोमर वांचि। विनुपिप दॊडगॆ नव्वॆलदि येड्चुचुनु:
"विनुमरण्यमुन ने वॆस नादुत्रोव। जनुचोट ना जनस्थानंबुनंदु ४६०
ना सुतुडैनट्टि नाकेश सदृशु। डा सूर्युनिं गूर्चि यट निष्ठनुंड
विनु मरगॊरलेक विपुल साहसुलु। मुनिवेष-धारुलु मोहनाकृतुलु
वानि वधिंचिरि वानि मीऱगनु। वानिकि गर्मंमुल् वडि जेसि येग
रामलक्ष्मणुलनु राजनंदनुलु। कामिंचि येनु डग्गऱुटयु जूचि
पट्टुशक्ति नन्नंटबट्टि नावेष। मिट्टु सेसि विडिचिन नेनु दुःखिंचि
निनु गानवच्चिचति : नीविंक बोयि। यॆनसिन कडिमि ना यिद्दर जंपि

खरदूषण आदि का संहार

खर के निवास-स्थान के पास आई। खर उसके आकार को देख, डरकर बोला:— 'यह क्या नारी ! भीत न होकर किसने तुम्हारे रूप को विकृत कर दिया ? किसने जान-बूझकर कालसर्प को कुचला ? इस समय किसने मृत्यु को छेड़ा ? उसके बारे में मुझे बताओ। झट से उसका रक्त (और) उसका मांस तुम्हें दूँगा।' इस प्रकार विजृंभित खर के अपने से पूछने पर, (उसे) देखकर, सुनने में भद्दे विकृत स्वर में, अत्यधिक लज्जा से सिर को आधा झुकाकर, वह नारी रोती हुई, (समाचार) सुनाने लगी। 'सुनो, अरण्य में मैं अपने मार्ग पर झट से जा रही थी। उस जनस्थान में ।। ४६० ।।

—मेरा पुत्र, जो नाकेश (इन्द्र) सदृश है, सूर्य के प्रति वहाँ अतिनिष्ठा से (तप करता) रहा। सुनो, बिना किसी संकोच के, विपुल साहस वाले, मुनिवेषधारी, मोहनाकृति वाले राम लक्ष्मण नामक राजनन्दनों ने उसे (मेरे पुत्र को) बिना किसी कारण के, मार डाला। शीघ्रता से उसकी अन्त्येष्टिक्रियाएँ कर, उनपर आसक्त होकर, मैं उनके निकट गई। इसे देख पट्टुशक्ति से मुझे पकड़, मेरे रूप को इस प्रकार करके छोड़ दिया। तब मैं दुखी होकर, तुम्हें देखने आई हूँ। तुम अब जाकर अधिक साहस से उन दोनों का वधकर, झट से उनके मांस मुझे ला दो (और)

वारि मांसमुलु वडि नाकु निच्चि। वारक नालोनि वगलार्पु" मनुडु
"नितमात्रमुनकै ये नेल ? वारि। पंतमदेंत ? ना पंपु गैकोंम्मु"
अनि पदुनलुवुर नंतकोपमुल। ननलोग्रतेजुलु नप्पुडु पिलिचि
"यी शूर्पणख वेंट नेगि या नरुल ।नाशंबु नोंदिंचि ना सहोदरिकि४७०
वारि शोणितमु द्रावग जेयु"डनिन। वारुनु दुर्वार वारिवाहमुलु
गालितो वच्चिन करणि ना जंत। तो लोल शूलकांतुलु मेरुपुलुग
जनदेंचि रामलक्ष्मण सूर्यचंद्रु। लनु गप्पि गर्जितालापमुल् सूप
दिनकर-कुलुडंत देदीप्यमान। धनुरादिसाधनोद्दामुडै येदिरि
वारलु दनमीद वैचिन यशनि। दारुण शूलमुल् धारुणि गूल्चि
वारि नंदऱ भूरि वज्रानुकारि। नाराचमुल गंठनाळमुल् चिदुम
बरिपक्व फलशिरोभागमुल् वासि। निरुपमाशुगहति निट्टऱाळ्ळनग
बुडमिपै गेंडसि; रप्पुडु चुप्पनाति। मडमेत्तु परुवुन मऱियुनु वारि
खरुनकु लोक भीकरुनकु वारि। मरणंबु रघुरामु महितरणंबु

मेरे अन्तर के अनिवार्य दुख को शान्त करो।' ऐसा कहने पर, खर ने कहा:— 'इतनी सी बात के लिए मेरी क्या आवश्यकता है? उनका पौरुष ही कितना है? मेरी आज्ञा ले लो।' (ऐसा) कहकर अन्तक (यम)-समान, अनल-सम-उग्र तेजवाले चौदह (वीरों) को तभी बुलाकर कहा:— 'इस शूर्पणखा के साथ जाकर, उन मानवों का नाशकर, मेरी सहोदरी को ।। ४७० ।।

—उनका शोणित पिला दो।' (ऐसा) कहने पर, वे भी पवन के साथ आनेवाले दुर्वार-वारिवाहों (मेघों) के समान, उस धूर्त स्त्री के साथ, चंचल शूल कांतियों के बिजलियों के समान चमकते रहने पर, जाकर, राम-लक्ष्मण रूपी सूर्य-चन्द्रों को ढककर, आलाप-रूपी गर्जन करने लगे। तब दिनकरकुल वाले (राम) ने देदीप्यमान धनुष आदि साधनों से उद्दाम बनकर, (उनका) सामना किया। उनके अपने पर फेंके अशनि (गाज)– समान दारुण शूलों को धारुणि पर गिरा दिया। भूरि-वज्र-समान नाराचों (बाणों) से उन सबके कंठनालों को काट दिया, परिपक्वफल रूपी शिरोभागों (सिरों) से बिछुड़कर (के कट जाने पर), वे (राक्षस वीर) निरुपम आशुग (बाण) के आघात से, सीधी शिलाओं के समान पृथ्वी पर गिर पड़े। तब शूर्पणखा ने एडियों के बल भाग-भागकर, लोकभयंकर खर का उन (वीरों) के मरण तथा रघुराम के महितरण के बारे में बताया। आहुति की अधिकता के कारण, अधिक बल उठनेवाले पावक के समान ।। ४८० ।।

नुग्गडिंचुटयु नाहुति वॆग्गलमुन। भग्गुभग्गन मंडु पावकुडनग ४८०
गोपिंचि खरुडु मिक्कुटमैन कडिमि। दीपिंप दूषणत्रिशिरुलु मॊदलु
वीरुलु पदुनाल्गुवेल राक्षसुलु। घोर सत्त्वुलु गॊल्व गॊमरु दीपिंचि
तॆरलिन सुरलतो दिवि तल्लडिल्ल। बॊरलिन गिरुलतो भुविपैल्लगिल्ल
रणभेरि व्रेयिंचि रत्नशैलाभ। गणनीय शबलाश्व कलित वैडूर्य
मणिकूबर सुवर्णमय चक्रदशक। रण जयप्रद धनुर्बाणासि पूर्ण
रणितकिंकिणियैन रथमॆक्कि वॆडलॆ। रणबलोदग्रुडै रघुरामु मीद;
द्रिशिरुंडु कंकपत्रशरुंडु विलस। दशनिकल्पुडु दिक्कुलगल नार्चुचुनु
वासव वारणोज्ज्वल भासमान। भासुररासभ प्रकरसंभरित
हाटकस्थगित शतांगबु नॆक्कि। मेटि कय्यमुनकु मेनुब्बि वॆडलॆ;
बर्हिणिवर्णनिबर्हण पवन। गर्हणचणकांति घनवेग तुरग ४९०
संदोह संभृत स्यंद नोत्तममु। मुंदुगा दोलिंचि मुदमग्गलिप
सेना मुखंबुन जॆलगि दूषणुडु। नाना विधंबुल नलुवॊप्प नडचॆ:

—क्रुद्ध होकर, अधिक साहस के दीप्त होने पर, दूषण, त्रिशिर आदि वीरों, चौदह हजार घोर सत्व वाले राक्षसों के सेवा करते रहने पर, मनोज्ञता के दीप्त होने पर, क्षुब्ध बने देवताओं के कारण दिवि (स्वर्ग) के घबरा उठने पर, लोटते (धाराशायी होते) पर्वतों से भुवि (पृथ्वी) के उखड़ने पर, रणभेरी बजवाकर, रत्न शैल के समान, गणनीय-शबल (रंगबिरंगे) अश्व-कलित वैडूर्य-मणि-कूबर-सुवर्णमय दस चक्रोंवाला, रण में जयप्रद धनुर्बाण-असिपूर्ण (तथा) रणित (मुखरित) किंकिणियों से युक्त रथ पर आरूढ़ हो, रण-बल से उदग्र बन, रघुराम की ओर चल पड़ा। (उसके पीछे-पीछे) कंकपत्रों से युक्त बाणवाला, विलसित अशनि (बिजली) की समता रखनेवाला त्रिशिर (नामक राक्षस) दिशाओं को बेध देने वाले रूप में चिल्लाते हुए, वासव (इन्द्र) के वारणों (घोड़ों) के सम उज्ज्वल (और) भासमान भासुर रासभ- (गधों)- प्रकर (समूह)- संभरित, हाटक (स्वर्ण) से स्थगित (जड़े हुए) शतांग (रथ) पर आरूढ़ होकर, महायुद्ध के लिए, शरीर के फूलने पर निकल पड़ा। सेनामुख में (सेना के आगे-आगे) मयूर के वर्ण (कान्ति) को मात करने वाले, पवन की गति का तिरस्कार करने वाले, कान्तियुक्त, शीघ्रगामी तुरग (अश्व)॥ ४९०॥

—समूह से घिरे हुए उत्तम स्यन्दन (रथ) को सबसे आगे हाँककर, मोद के अधिक होने पर, दूषण अनेक प्रकार से शोभित होता हुआ चल पड़ा। पृथुग्रीव, श्येनगामी, विहंगम, मेघमाली, महामाली, प्रलयकाल

व्रेमतो मऱि पृथुग्रीवुंडु श्येन । गामियु नव्विहंगमुडुनु मेघ
मालियु दगु महामालियु व्रळय । काल कालानलकल्पुडौ सर्प
मुखुडुनु गालकार्मुकुडु दुर्जयुडु । मखशात्रवुंडुनु मऱि परुषुंडु
कारुण्यदूरुडौ करवीरनेत्रु । डा रुधिराशनुंडन नॊप्पुवाडु
द्वादशदैत्युलत्तऱि खरु गॊल्चि । द्वादशादित्य प्रतापुलै चनिरि :
त्रिशिरुंडु मऱि प्रमाथियु रणोदग्र । यशमुन बेर्चु महाकपालुंडु
स्थूलाक्षुडुनु रणोद्योगुलै सेन । नालुगुमुखमुल नडचिरेमऱक;
भीषणकरिघटाबृंहित तुरग । हेषारथस्वनानेक पदाति ५००
पटुतर हुंकार पटह भांकार । पटुकेतु पटपटस्फारनादमुल
ग्रुंगॆ भूतलमु; दिक्कुल व्रक्कलय्यॆ । बॊंगॆ बयोधुलु; भूतमुल् वडकॆ;
बलमुल पेंधूळि भानुमंडलमु । गलदु लेदन गप्पॆ गगनंबु निंड;
खरुनि केतनमुपै ग्रद्दलु व्रालॆ; । दुरगमुल् म्रॊग्गॆ; नॆत्तुरवान गुरिसॆ;
नक्कलु सेनलो नडचि वापोयॆ । जुक्कलु डुल्लॆ; बक्षुलुचुट्टु नऱचॆ;
मऱियु नुत्पातमुल् महि नाकसमुन । दऱुचुगा दोप नॆंतयु भीतिलेक
खरुडीतॆरंगुन गडकतो नडचि । यरुदुगा नादंडकाटवि जॊच्चॆ;

के कालाग्नि-सम सर्पमुख, कालकार्मुक, दुर्जय, मखशात्रव (यज्ञ-शत्रु), और परुष, करुणारहित करवीरनेत्र और रुधिराशन नाम से शोभित बारह दैत्य उस समय खर की सेवा करते हुए, द्वादश-आदित्यों के सम प्रतापी हो चल पड़े। त्रिशिर (और) प्रमाथी, रण के उदग्र यश में महान् बने महाकपाल, (और) स्थूलाक्ष रण के प्रयत्न में लगकर, सावधानी से सेना के चारों तरफ चलते रहे। (इस प्रकार राक्षस सेना जब चल पड़ी तब) भयंकर गज-समूह के चिंघाड़ने, घोड़ों के हिनहिनाने, रथों के चलने (और) असंख्य पदातियों (पैदल सैनिकों) ॥ ५०० ॥

—के पटुतर रूप से हुँकारने, पटहों (ढिंढोरों) के निनाद करने, (तथा) बड़े-बड़े झंडों के फड़फड़ाने आदि की ध्वनियों से पृथ्वी धँस गई, दिशाएं टूक-टूक हो गईं, समुद्र उमड़ उठे, पंचभूत कंपायमान हो गये। सेना के चलने से उड़ी धूल ने आकाश को इस प्रकार आच्छादित कर दिया कि संदेह होने लगा कि भानुमंडल है या नहीं। खर के केतन (झंडे) पर चील बैठने लगे, घोड़े टेकने लगे, रक्त की वर्षा हुई, सियार सेना के मध्य से रोते हुए चले गए, नक्षत्र टूट गिरे, चारों ओर पक्षी चिल्लाए, (इनके अतिरिक्त) और भी उत्पात पृथ्वी (और) आकाश में अक्सर (बहुतायत से) दीख पड़े। (फिर भी) खर ने भीत हुए बिना, इस प्रकार (उपरोक्त सेनाओं के साथ) साहस के साथ चलकर, अपूर्वरूप से

ननुपमाकृति रामुडक्कलकलमु । विनि पर्णशालकु वेलुपल निलिचि
यवनिपै दिवमुपै नपशकुनमुलु । विविधमुल् गनुगोंचु वेस दम्मु बिलिचि
"सौमित्रि! समर सूचकनिमित्तमुलु।भूमिपै बेक्कुलु पुट्टुचुन्नवियु; ५१०
रट्टुडि मुक्किडि रक्कसि मरियु । दिट्टयै बलमुल दैच्चे गावलयु;
नदे सैन्यघोषंबुलट्ल कानोपु; । नदे महाबलधूळि यखिलंबु गप्पे;
नवमैन रणमब्बुना; कट्लुगान । नवहितमति बूनि यालस्यमुडिगि
जनकज निक्कड जनदुंपनिक । गोनिपोयि यग्गिरिगुहनुंडु" मनिन
"निनवंश वल्लभ ! ये नेट्लुपोदु । निनुडिंचि ? यटुगान नीवु सीतयुनु
बर्वतगुह जेरि परिकिंपु; डेनु । दुर्वारदनुजुल द्रुंतु नी कृपनु"
अनविनि "वीरितो नालंबु सेय । नेनसे वेडुक नाकु; नीवुंडवलदु;
जनकज दलकेंडु! जनु" मन्न सीत । गोनिपोयि पर्वतगुह जोच्चियुंडे;
नंत रामुडु प्रळयांतकु पगिदि । नेंतयु गोपिंचि येपु दीपिंप
नमितमुनित्राणमगु कृपाणंबु । ग्रममोप्पगा वज्रकवचंबु बूनि ५२०

उस दंडक-वन में प्रवेश किया। अनुपम आकृति वाले राम उस कोलाहल को सुन, पर्णशाला के बाहर खड़े रहकर, पृथ्वी पर (और) आकाश में विविध अपशकुनों को देखते हुए, शीघ्रता से अनुज को बुलाकर (यों) बोले:-- 'हे सौमित्र ! पृथ्वी पर समर सूचक कई निमित्त (शकुन, कारण) उत्पन्न हो रहे हैं ।। ५१० ।।

निंदनीय (और) नकटी राक्षसी संभवत: और भी बली सेनाएँ ला रही है। संभवत: वह सैन्य-घोष हो सकता है। वह (देखो) महाबल (सेना) की धूल ने समस्त (पृथ्वी-आकाश) को आच्छादित कर दिया है। मुझे नवीन रण प्राप्त होगा। ऐसा है (इसलिए) जनकजा को अब यहाँ नहीं रखना चाहिए। (तुम) अवहित मति (सावधानी) को धारणकर, आलस्य को छोड़, (जनकजा को) ले जाकर, उस गिरि-गुफा में रहो। (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण ने कहा):-- 'हे इनवंश-वल्लभ ! तुम्हें छोड़ मैं कैसे जा सकता हूँ ? अत: तुम और सीता पर्वत की गुफा में पहुँचकर, देखते रहो। मैं तुम्हारी कृपा से दुर्वार-दनुजों का संहार करूँगा।' (ऐसा) कहने पर, सुनकर (राम बोले):-- 'इनसे युद्ध करने का मुझे कौतुक हो रहा है। तुम (यहाँ) मत रहो। जनकजा भयभीत हो रही है। जाओ।' (ऐसा) कहने पर, सीता को (साथ) ले जाकर (लक्ष्मण) पर्वत गुफा में प्रवेश कर रहा। तब राम प्रलयांतक (प्रलय-काल के यम) के समान, अत्यधिक क्रुद्ध होकर, विकास के दीप्त होने पर, अमित मुनि-त्राण (अनेक मुनियों की रक्षा करनेवाले) कृपाण को

शरशरासनमुलु चतुरुडै तालिच । युरुतर तूणीर युगळंबु बिगिचि
कोंडविल्लुग वंचु कुंडलिकुंड । लुंडन विल्लु वेल्लुग नेक्कुवेट्टि
यगणितध्वनुल मिन्नंतयु बगुल । दगिलि चापमु गुणध्वनि सेयुचुंडे;
निंद्रुंडु मोदलुगा नेल्लदेवतलु । सांद्ररत्न विमानसहितुलै यपुडु
च्रदलेल्लनिंडि "येंचग रामुडोकडु । पदुनालुगुवेल नप्रतिमविक्रमुल
खरदूषणादि राक्षसुल ने रीति । बोरिगोनुनो चोद्यमुग जूत मनुचु
गनुगोनुचुंडिरि; "कपटदानवुल । घनुडु रामुडु द्रुंचुगा" कंचु सारे
देवर्षिगणमुलु दिविनुंडि रामु । दीविंचुचुंडिरि तिविरि पल्मारु
बदिवेलकोटुल भानुतेजमुलु । पोंदिगोनि लोकमुल् पोंदिविनयट्लु
रामुनि तेजमरण्यभूजमुलु । भूमियु नभमु नब्धुलु गप्पुटयुनु ५३०
जडमतुलै सर्वसंभ्रमंबुडिगि । मिडुकुचु गन्नुलु मिरुमिट्लु गोलुप
गडुदीनुलैन राक्षसुलनु जूचि । कडकतो बल्के ना खरुडु दूषणुनि;
"निदियेमि दूषण! यी सेन नडव;। देंदिरेनो परसेन ? येरडुपडेनो?"

(और) क्रम के शोभित होने पर, वज्रकवच को धारणकर, ।। ५२० ।।
—चतुरता से शर (और) शरासन (धनुष) धारणकर, उरुतर (महान्) तूणीर-युगल को बांधकर, पर्वत को धनुष के रूप में झुकाने वाले कुंडलि कुंडल (शिव) के समान धनुष को सीधे चढ़ाया। अगणित ध्वनियों से मानों समस्त आकाश फटा जा रहा हो, (इस प्रकार) चाप (धनुष) की गुण-ध्वनि (टंकार) करता रहा। तब इन्द्र आदि समस्त देवता सान्द्र रत्न (खचित) विमान-सहित हो, समस्त आकाश में भरकर यह सोचते देख रहे थे कि 'इस आश्चर्य को देखेंगे कि अकेले एक राम चौदह हजार अप्रतिमविक्रम वाले खर-दूषण आदि राक्षसों का किस प्रकार संहार करेगा।' यह कहते हुए कि कपट दानवों को महान् राम मार डालें, बार-बार देवर्षिगण आकाश से बार-बार राम को आसीस दे रहे थे। दस हजार करोड़ भानुतेज एकत्र होकर मानों लोकों को परिवेष्टित कर रहा हो, उस प्रकार राम के तेज ने अरण्य के वृक्षों, भूमि, नभ (आकाश), अब्धियों (समुद्रों) को आच्छादित किया। ।। ५३० ।।

—जड़मति हो, समस्त संभ्रम (आडम्बर) को खोकर, व्याकुल हो, आँखों के चकाचौंधिया जाने पर, अतिदीन बने राक्षसों को देख, वह खर साहस से दूषण से बोला:— 'यह क्या दूषण ! यह सेना आगे नहीं बढ़ती ? शत्रु की सेना का सामना हुआ या कोई नदी बीच में पड़ गई ?' (ऐसा) कहने पर दूषण जाकर, वहाँ देख आया (और) बोला:— 'हे दनुजेश ! राम के उद्दंड तेज के सर्वत्र व्याप्त होने पर,

यनिन दूषणुडेगि यटजूचि वच्चि । "दनुजेश ! रामुनुद्दंडतेजंबु
गलय बर्वुंटयुनु गतिदप्पें" ननुडु । नलुकमै खरुडु सैन्यमुल दिट्टुचुनु

खरुनि सेनलु रामु नेंदर्कोनुट

नरदमत्युग्रत नट्टु दोलुकोंनुचु । नरुगुचो राक्षसुलंदरु गूडि
भुजबलाटोपविस्फुरित प्रताप । गजरथ भटवाजिकलितुलै योकट
मंडु कार्चिच्चुपै मलयुचु मिडुत । तंडंबु लोक्कट दार्कोन्न करणि
गडुनुग्रवेगुलै काकुत्स्थरामु । वडि जुट्टुमुट्टि दुर्वारुलै कदिसि
शरचाप पट्टिस शक्ति त्रिशूल ।करवाल कुंत मुद्गर भिंडिवाल ५४०
परशु तोमर गदा पाश चक्रमुलु। गुरिसि यार्चिरि देवकोटि भीतिल्ल ।
नप्पुडु रघुरामुडंबुदपंक्ति । गप्पिन चंडांशुगति गानबड्क
कोंतसेपुनकु रक्षोगणमुक्त ।कुंतादि बहुशस्त्रकुटिलास्त्रततुल
नन्नियु मार्यिचें नैंद्रजालिकुनि । चेंन्नुन दनु सुरश्रेणि गीर्तिप;
मर्रियु दोड्तो दैत्यमंडलि गुरियु । तरुचु नस्त्रमुल शस्त्रमुल द्रुंचुचुनु

(सेना की) गति रुक गई ।' (ऐसा) कहने पर, क्रोध के मारे, खर (अपने) सैन्य को गालियाँ सुनाते हुए,

खर की सेनाओं का राम का सामना करना

—रथ को अति-उग्रता से उधर (राम की ओर) हाँकते हुए जाने लगा। (तब) सभी राक्षसों ने एकत्र होकर, भुजबल के आटोप (आडम्बर) से विस्फुरित प्रतापवाले (तथा) गज-रथ-भट-वाजि से एक साथ युक्त हो, बलते हुए प्रचंड दावानल का, मानों शलभों का समूह एक साथ सामना कर रहा हो (टूट गिर रहा हो), (इस प्रकार) अति-उग्र-वेग वाले होते हुए काकुत्स्थ राम को शीघ्रता से घेर लिया। (घेरकर) दुर्वार होते हुए, निकट पहुँचकर, शर, चाप, पट्टिस (एक प्रकार का खड्ग), शक्ति, त्रिशूल, करवाल (खड्ग), कुंत, मुद्गर, भिंडिवाल ॥ ५४० ॥
—परशु, तोमर, गदा, पाश, चक्र आदि की, चिल्लाते हुए, वर्षा की जिससे देवकोटि भीत हो गई। तब रघुराम अंबुद पंक्ति से आच्छादित चंडांशु (सूर्य) के समान दिखाई नहीं पड़े। थोड़ी देर के बाद रक्षोगण (राक्षस-समूह) के छोड़े (चलाए गए) कुंत आदि बहुशस्त्र (तथा) कुटिल अस्त्रों के समस्त समूह को, ऐन्द्रजालिक (जादूगर) के समान नष्ट कर दिया, जिससे सुरश्रेणि ने उनकी प्रशंसा की। फिर से, साथ ही साथ दैत्यमंडलि के द्वारा बरसाए जानेवाले अस्त्र (तथा) शस्त्रों को काट देते हुए, समक्ष,

मुंदट निरुपार्श्वमुल बिरुंदटनु । संदंडिचिन दैत्यसैन्यंबुमीद
गरलाघवमु मीरु गवदोनलोनि । शरमुलन्नियु नोक्कसारि संधिंचि
पदियु नूरुनु वेयु बदिवेलु लक्ष । पदिलक्ष पदिकोट्लु बदिनूरुकोट्लु
मंडित परिवेष मध्यंदिनार्क । मंडलपरिवेष . महितानुकारि
कुंडलीकृत चन्डकोदंडदंड । भंडनात्युत्साहबाहुडै व्रेय ५५०
दुनियु गंभीर वेदुलुनु जोदुलुनु । दुनुकलै पडेडु वीतुलुनु रौतुलुनु
द्रुंगेडु बहुपदातुलुनु हेतुलुनु । मुंगल बडु शरंबुलु शिरंबुलुनु
म्रोग्गेडु योधांगमुलु रथांगमुलु । म्रग्गेडु सगुणधर्ममुलु वर्ममुलु
तूलेडु रथिकजातुलुनु सूतुलुनु । गूलेडि वेलिगोडुगुलु बडगलुनु
नलियैन मांसखंडमुलु मोंडेमुलु । गलिगि लोकैकभीकरमय्ये रणमु;
अंत भानुनि दीप्ति नंधकारंबु । पंतमंतयु बटापंचलैनट्टु
लतुल विक्रम धामुडगु रामुनकु । हतशेषमगु सैन्यमंतयु विरिगि
खरुनकु 'शरण' न्न खरुडुनु वारि । बुरिकोल्पि दूषणु बोरिकै पनुप
वाडुनु हतशेषवाहिनुल् दानु । वेडिमि सूपुचु वेवेग पोंदिवि

दोनों पार्श्वों में, (तथा) पीछे (की ओर से) व्याप्त दैत्य सैन्य पर करलाघव (हाथ की चतुराई) की अधिकता को प्रदर्शित करते हुए, तूणीर के सभी बाणों को जो दस, सौ, हजार, दस हजार, लाख, दस लाख, दस करोड़, हजार करोड़ थे, संधान करके, परिवेश से मंडित मध्यंदिन—अर्क (सूर्य) के समान तेजोरूपी परिवेश (घेरा) से युक्त हो, कुंडलाकार में झुकाए गए चंडकोदंड-दंड के साथ, युद्ध के उत्साह से युक्त बाहुओं से युक्त हो, डाल दिया (बाणों का प्रयोग किया)। ॥ ५५० ॥

(इस शर-प्रयोग से) कट गिरनेवाले गंभीर वेदी (मस्त हाथी), योद्धा, टुकड़े होने वाले घोड़े (तथा) घुड़सवार, नष्ट होने वाले अनेक पदाती (पैदल सैनिक) (और) तलवारें, सामने गिरनेवाले शर (और) शिर, चित्त होने वाले योद्धाओं के अंग (और) रथों के भाग, चूर-चूर होने वाले गुण (डोरी) सहित धनुष (तथा) वर्म (कवच), लोटने वाले रथी और सूत (सारथी), गिरनेवाले श्वेत छत्र (तथा) पताकाएँ, कुचले हुए मांस खण्डों और रुंडों से युक्त हो, रण लोकभीकर हुआ। तब मानों भानु की दीप्ति से अन्धकार की समस्त स्पर्धा छिन्न-भिन्न हो गई हो, (उसी प्रकार) अतुल-विक्रमधाम राम के समक्ष हतशेष (मरने से बची) समस्त सेना टूटकर (दर्प खोकर) खर की शरण में पहुँची। खर ने उनको प्रेरित (प्रोत्साहित) कर, दूषण को युद्ध के लिए भेजा। उसने भी हतशेष वाहिनियों (सेनाओं) के साथ पौरुष दिखाते हुए,

तालसालशिलावितान नानास्त्र । जाल वर्षमु रामचंद्रुपै गुरिसें; ५६०
गुरिसिन दनमेन ग्रॊन्नॆत्तुरॊलुक । नरुणारविंदाक्षुडै रामुडलुक
गांधर्वशरमु राक्षसुलपैनेय । सैंधवसिंधुरस्यंदन सुभट
वीरुल कम्महाविशिखराजंबु । तेरिचूडग राक देदीप्यमान
धाराकराळमै दनुजवर्गमुल । गारिंचि नॊंचि चीकाकु गाविंचि
दंडिंचि खंडिंचि तललुत्तरिंचि । चॆंडाडुचो रणक्षितियॆल्लनिंडि
यॆंदु जूचिन दुरंगेभखंडंबु । लॆंदु जूचिन निंगिकॆगयु मॊंडॆमुलु
नॆंदु जूचिन ब्रेवुलॆड्रचियु मेदडु । नॆंदु जूचिन नॆत्तुटेरुलै युंडे;
शाकिनीभूत पिशाच भेताळ । डाकिनुल् दंडतंडंबुलै यप्पु
"डेनुगुतलकाय लॆसगु कुंडलुग । बूनि यंदलि मुत्यमुलु दंडुलमुग
दंडि रामुनि रणधर्मसत्रमुन । वंडिनारिदॆ रंडुवरुस भुंजिप" ५७०
ननि वेड्क बैकॊन्न यधिकारमुद्र । गॊनि रॊदगाकुंड गूचुंडबॆट्टि
रक्तचंदनमुनु रक्ताक्षतमुलु । रक्तसंकल्पपूर्वंबुगा दाल्चि

अतिशीघ्रता से घेरकर ताल, साल, शिला, वितान, नाना अस्त्र-जाल को रामचन्द्र पर बरसाया ।। ५६० ।।

—(अस्त्रों के) बरसने पर अपने शरीर पर नए रक्त के छलकने (स्रवित होने) पर अरुण-अरविन्द जैसे नेत्रोंवाला होकर, राम ने क्रोध से राक्षसों पर गान्धर्वशर को चलाया। उस महा-विशिख (बाण)- राज (श्रेष्ठ) ने सैंधव (घोड़े), सिन्धुर (हाथी), स्यन्दन (रथ), सुभट वीरों के लिए आँखों को चौंधिया देनेवाले रूप में देदीप्यमान धारा-कराल (भयंकर धार से युक्त) हो, दनुज समूहों को पीड़ितकर, सताकर, उद्विग्न बनाकर, दंडितकर, खंडितकर, सिर काटकर (शत्रुओं के) छक्के छुड़ाए। तब समस्त रणभूमि जहाँ देखो वहाँ तुरंग, इभ (हाथी) के टुकड़े, जहाँ देखो वहाँ आकाश को उठने वाले रुंड, जहाँ देखो वहाँ आंतड़ियाँ, मांसखंड (और) दिमाग, जहाँ देखो वहाँ रक्त की नदियों से भरी हुई थी। तब शाकिनी, भूत, पिशाच, भेताल (बेताल), ढाकिनी (आदि) झुंड के झुंड (वहाँ पहुँचकर) कहने लगे:— 'हाथियों के सिर को शोभा से घड़े बनाकर, उनमें प्राप्त मोतियों को चावल बनाकर, राम के रणरूपी धर्मशाला में खूब (बहुलता से) पकाया गया है। पंक्ति में बैठ खाने के लिए, यहाँ आओ' ।। ५७० ।।

—(ऐसा) कहकर आनन्द से प्राप्त अधिकार-चिह्न को ग्रहण कर, खामोशी से बैठकर, रक्त चन्दन (और) रक्ताक्षतों को रक्त संकल्पपूर्वक धारण कर, बकझक किए बिना, चमड़े के (बने) केले के पत्तों के चौतरफ आर्द्र

पदरक चर्मरंभापलाशमुलु । पदनैन पुनकदोंप्पलु चुट्टमर्चि
शरवह्नि पक्व मांसपुटन्नमुनु । पोरलेंडु मेंदडु पप्पुनु ग्रोंव्वुलंदु
वरदलौ नाज्यप्रवाहमुल् कंड । लेंड्रचि कारिजमु लनेकशाकमुलु
पालप्रेवुलु सेवॅ पासॅमुल् मेलि । वालुगुंडेंलु पिंडिवंटलु क्रोत्त
नेंत्तुरु तीयनि नीरुगादलचि । यत्तरि विप्रयोग्याहारमनुचु
नाकंठतृप्तुलै यधिकसम्मतमु । सेकोंनि सभ गूडि "श्रीरामचंद्र !
ते विजयोऽस्त" नि दीविंचि कोंन्नि । यावल गोंन्नि "तथाऽस्त" नि पल्क
नितलोमरि कोंन्नि येनुगु जीव । दंतमुल् चेतलातमुलुगा बूनि ५८०
पोंलुसुटेंम्मुल संकुपूसल पेर्लु । कळुकु कामाक्षुलुगा धरियिंचि

श्रीरामुनितो खरदूषणुलयुद्धमु

करिघंटिकाताळगतुल कुब्बुचुनु । दरिबेसिकोपुलत्तरि जूपदोंडगॅ;
नंत दूषणुडु मत्तारिभीषणुडु । वंत नोंदुचु दनवंटि योधुलनु
विजयशीलुर नैदुवेल बंपुटयु । द्रिजगमुल् वडक नेंदिर्चि वारपुडु
चापविद्या प्रौढि सकलंबु जूप । जूपुल गोपंबु सूपुचु नृपुडु

कपाल के दोने सजाकर, शर-वह्नि (बाणाग्नि) से पके मांस को अन्न, लुढ़कते भेजे को दाल, बाढ़ के रूप में स्थित चर्बी को प्रवहित आज्य (घी), शिराएँ, मांस, कालेय को अनेक शाक (साग), दूधिया आंतड़ियों को सेवैं खीर, श्रेष्ठ हृदय पिंड को मिष्ठान्न, नये रक्त को जल मानकर, उस समय उसे विप्र-योग्य-आहार मानकर, (भोजन करने से) आकंठ-तृप्त हो, अधिक सम्मति से, सभा (रूप) में जमा होकर, कुछ ने आसीसाः— 'श्रीरामचन्द्र ! ते विजयोऽस्तु ।' तत्पश्चात् कुछ ने कहाः-- 'तथास्तु'। इतने में कुछ और ने हाथियों के दाँतों को हाथ की छड़ी के समान धारण कर, ॥ ५८० ॥

–मांसयुक्त हड्डियों को शंख की गुरियों की लड़ियों के समान, सुशोभित कामाक्षियों के समान धारण कर,

श्रीराम के साथ खर-दूषणों का युद्ध

करि (हाथी) घंटिकाओं की तालगतियों से (को सुन) फूलते हुए, वे (भूत-पिशाच) उस समय (अपनी) निन्दनीय शोभा दिखाने लगे। तब मत्त अरि-भीषण (मस्त वैरियों के लिए भयंकर) दूषण ने संतप्त होते हुए, अपने समान विजयशील पांच हजार योद्धाओं को भेजा। उन्होंने तब तीनों लोकों को कंपाते हुए (अपनी) चापविद्या-प्रौढ़ता

नोक्कोक्कशरमुन नोक्कोक्क दनुजु । दक्कक नोंचि विदारिंचि वैचें;
गोंदऱ नंदंद गुदुलुगा गूर्चि । यंदऱ देंगटार्चि यार्चिन जूचि
दूषणुडप्पुडत्युग्रुडै परुष । भाषणुंडै रामुपै देरु वऱपि
दशदिगंतंबुलु दट्टंबुगाग । नशनि कालाहितुल्यंबुलें योप्पु
नम्मुल निगुडिप नवि द्रुंचि नालु । गम्मुल नरदंबु हयमु गूल्चि५९०
वेरवोप्प नोक कोल विलुद्रुंचुटयुनु । दुरमुन विरथुडै दूषणुंडलिगि
दारुण प्राणविदारण विजय । कारणातंकगदाकल्पमै योप्पु
परिघंबु द्रिप्पुचु बरतेऱ रामु । डुरुशरद्वयमुन नुरुबाहुयुगमु
नरुदुगा देगनेसि याम्यबाणमुन । नुरमेयुटयु दैत्युडोऱलुचु गूलें
दंतमुल् विऱिगिन दारुण भद्र । दंतावळेंद्रंबु धर गूलिनट्लु;
गूलिन जूचि मुग्गुरु दंडनाथु । लालो ब्रमाथि महाकपालुंडु
स्थूलाक्षुडुनु बरशुवु द्रिशूलंबु । गेल बट्टिसमु लंकिंचि वैचुटयु
वारि शस्त्रंबुल वारि मस्तमुल । श्रीरामु डोक्कट बेंडाडें;

दिखाई। चितवनों से क्रोध दिखाते हुए नृप (राजा-राम) ने एक-एक शर से एक-एक दनुज को, बिना किसी को छोड़े, सताकर, फाड़ डाल दिया (वध कर दिया)। कुछ दनुजों को, यहाँ-वहाँ, समूह रूप में एकत्र कर, सबका वधकर, ललकारा। इसे देख तब दूषण अत्युग्र हो, परुष-भाषण वाला बन (परुष वचन कहते हुए), राम के सम्मुख रथ चलाकर, दशदिगन्तों को निबिड़ रूप से आच्छादित करते हुए, अशनि (बिजली), कालाहि (काल-नाग) सम-शोभित बाणों का प्रयोग किया। उन्हें (बीच में ही) काटकर, चार बाणों से रथ और घोड़ों को गिरा दिया ॥ ५९० ॥

—ढंग से एक बाण से (दूषण के) धनुष को काट दिया, (तब) रण में विरथ बन दूषण क्रुद्ध होकर, दारुण, प्राणविदारण, विजयकारण, अन्तक (यम)-गदा-सम शोभित परिघा को घुमाते हुए दौड़ पड़ा। राम ने उरु (श्रेष्ठ) शर-द्वय से, उरु बाहुयुग को अपूर्वरूप से काट डाल, याम्य बाण का छाती में प्रयोग करने पर, दैत्य चिल्लाते हुए ऐसे गिर पड़ा मानों दारुण-भद्र-दन्तावलेन्द्र (भयंकर मद गज), दाँतों के टूटने पर, पृथ्वी पर ढह पड़ा हो। (उसे) ढेर होते देख, उसी बीच तीन सेनापतियों ने-प्रमाथी, महाकपाल, स्थूलाक्ष-हाथ में परशु, त्रिशूल (और) पट्टिस (एक तरह का खड्ग) घुमाकर (राम पर) डाल दिया। श्रीराम ने उनके शस्त्र (और) मस्तकों को एक-साथ काट डाल दिया। तब खर ने त्रिगुणित रोष से सेनाधिनायकों को प्रेरित किया। वे बारहों

नप्पुडु खरुडु सेनाधिनायकुल । मुप्पिरिगोनु रोषमुन बुरिकोल्प,
वारु पन्निद्दऱवार्य शौर्यमुन । वीरु राघवु दाकि वेर्वेऱ पोर६००

गुलिश धाराकार घोर बाणमुल ।कलिमि जूपुचु श्येनगामि नुक्कणिचि
कालकार्मुकु द्रुंचि करवीरनेत्रु । दूलिचि सर्पास्यु त्रुळ्ळडगिंचि
या विहंगमु द्रुंचि यज्ञशात्रवुनि । चेव यडंचि शिक्षिचि दुर्जयुनि
गेलि महामालि गेंडसि या मेघ । मालिनि वधियिंचि मर्दिचि परुषु
पृथुकंठु कंठंबु बृथ्विपै गूल्चि । रुधिराशनुनि जंपि रोषंबु मिगुल
दिक्केदि खरुडुनु द्रिशिरुंडु दक्क । दक्किन वारि नंदऱ नेल गूल्चें ।
नी लील रामुचे नेल्ल सैन्यमुलु । गालिचे दूलिन काराकुलट्ल
कूलिन गोपंबु गोनि काल द्रिशिरु। डालोन रामुपै नरदंबु वऱपि
सिंहनादमु सेसि सिंधुरोत्तममु । सिंहंबु नेदिरिन चेलुवुन नंदिरि
गुणनाद मेसग रक्षोवीरुडोकट । गणनापरंपरल् गडव नंदंद ६१०

नतुल बाणमुलेय नलिगि राघवुडु । प्रतिबाणततुलेसि बलुविडिद्रुंचें;
वाडुनु दन पेरुवाडि वाडिमिनि । मूडुबाणमुल रामुनि फालमेसें;

(सेनापति) अवार्य शौर्य के साथ वीर राघव से जूझकर अलग-अलग लड़ने लगे ।। ६०० ।।

कुलिश (गाज) की धारा के आकार वाले घोर बाणों की सम्पत्ति (शक्ति-सामर्थ्य) दरसाते हुए, श्येनगामी के शौर्य का दमन किया, कालकार्मुक का वधकर, करवीर नेत्र को मारकर, सर्पास्य के गर्व को कुचलकर, उस विहंगम को मारकर, यज्ञशत्रु की सामर्थ्य को दबाकर, दुर्जय को दंडितकर, लीला से महामाली का संहारकर, उस मेघमाली का वध कर, परुष का मर्दनकर, पृथुकंठ के कंठ को पृथ्वी पर गिराकर, उत्कट रोष से रुधिराशन को मारकर, खर और त्रिशिर को छोड़, शेष सभी को पृथ्वी पर गिरा दिया । इस प्रकार, पवन (के झोंके) से गिरनेवाले पके पत्तों के समान समस्त सेना के नष्ट हो जाने पर, क्रुद्ध होकर, जलते हुए, उसी समय त्रिशिर, राम के समक्ष रथ चलाकर, सिंहनाद कर, (राम का) सामना किया उत्तम गज मानों सिंह का सामना कर रहा हो । रक्षोवीर ने धनुष की टंकार करते हुए, गणनीयता से यहाँ-वहाँ अतुल बाणों का प्रयोग किया ।। ६१० ।।

—रुष्ट होकर राघव ने प्रति-बाण समूह का प्रयोग कर, (उन्हें) झट से काट डाला । उसने भी अपने नाम को सार्थक करते हुए, पौरुष से, राम के फाल भाग (ललाट) पर तीन बाण डाले । उन पैने बाणों के

नव्वाडि बाणंबु ललिकंबु दाक । नव्वुचु नलुकमै नलिनाप्तकुलुड्डु
त्रिशिरुनि नेसिन द्रिशरमुल् कुसुम । दश दाल्चॆ; ‘निक जतुर्दशभुवनमुलु
दूरिन निनु बट्टि तुनुमाडुनट्टि । दारुणतर चतुर्दश सायकमुल
ने नेयुवाड सहिंपुमी’ यनुचु । दा नेसॆ बदुनाल्गु दारुणास्त्रमुल;
नवि ऱॊम्मु गॊनि काडि यव्वल वॆडलि । यवनीस्थलमु गाडॆ; नंत राघवुड्डु
नरदम्मु मऱि नालुगम्मुल विऱिचि । युखडि बदियिंट नुरमेयुटयुनु
सुरवैरि कोपिंचि शूलंबुवैव । नरनाथुडदिद्रुंचॆ नालुगस्त्रमुल;
द्रुंचि मूडम्मुलतो मूडु दलल । द्रुंचिन द्रिशिरुंडु दुरमुन गूलॆ ६२०
मूडुगॊम्मुलतोड मॊदलंट द्रॆव्वि । पोडिमि सॆडि कूलु भूजंबु करणि;
द्रिशिरुंडु गूलुट दृष्टिंचि खरुडु । दशरथरामु चेतकु जोद्यमंदि
मऱिचाल गोपिंचि महनीयरथमु । दऱिमि युग्रास्त्र संततुलेय जूचि
शरलाघवमु पेर्चि जानकीविभुडु । खरुनिपै ब्रतिसायकमुलेयुटयुनु
खरुनि बाणमुलु राघवुनिबाणमुलु । धरणीतलमु वियत्तलमुनुनिंडॆ;
नप्पुडर्कुनि दीप्तुलन्नियु मासॆ । गप्पॆनु निबिडांधकारंबु दिशल

(अपने) ललाट पर लगने पर, हँसते हुए, रूठकर नलिनाप्तकुल (सूर्यवंशी राम) ने त्रिशिर पर (बाण) चलाए तो (उसके) तीनों सिर कुसुम सम बन गए। ‘अब चतुर्दश भुवनों में जा पैठने पर भी, तुम्हें पकड़ मार डालने वाले दारुणतर-चतुर्दश-सायक (बाण) मैं चला रहा हूँ। (उन्हें) सहन कर लो।’ (ऐसा) कहते हुए उन्होंने (राम ने) चौदह दारुण-अस्त्र चलाए। वे (त्रिशिर की) छाती को छेदकर, उस पार निकलकर, भूमि में जा गड़ गये। तब राघव ने और चार बाणों से रथ को नष्ट कर दिया (और) द्रुतगति से दस अस्त्र छाती पर चलाए। उस पर क्रुद्ध होकर, सुर-वैरी (राक्षस) ने शूल चलाया, नरनाथ (राम) ने उसे चार अस्त्रों से काट दिया। काटकर तीन अस्त्रों से तीन सिरों को काट देने पर, त्रिशिर रण में ऐसे गिरा ॥ ६२० ॥

—मानों तीन शाखाओं के साथ, समूल उखड़कर, शोभारहित हो, ढह गिरने वाला भूज (वृक्ष) हो। त्रिशिर को गिरते देखकर, खर दशरथ राम के कार्य पर विस्मित हुआ। फिर अतिक्रुद्ध हो महनीय रथ को दौड़ाकर, उग्र-अस्त्र-समूह चलाया। यह देख शरलाघव (बाण चलाने का कौशल) प्रदर्शित करते हुए, जानकी के विभु ने खर पर प्रति-सायक (बाण) चलाए। खर के बाणों (तथा) राघव के बाणों से धरणीतल और वियत्तल (आकाश) भर गया। तब अर्क (सूर्य) की समस्त दीप्तियाँ मंद हो गयीं। दिशाओं में निबिड़ (घना) अन्धकार फैल गया।

खरुनिराघवुडु, राघवुनि ना खरुडु । सरकुगा गॊन काजि जयकामुलगुचु
गासरयुगळंबु गलभद्वयंबु । गेसरियुगळंबु गॆरलि यॊंडॊंड
पोरॆडु गति दोप भुजबलाटोप । भूरि प्रतापुलै पोराडु चोट
खरुडप्पुडलिगि राघवु चेतिविल्लु । सरि द्रुंचॆ वॆस नर्धचंद्र बाणमुन;
६३०

द्रुंचि जोडुनुद्रुंचि तोड्तोन मड़ियु । मुंचॆ रामुनि देहमुन नंपवॆल्लि:
नायंपतंडंबु ना तड़ि सरकु । सेयक तनु सुरश्रेणि गीर्तिप
नुष्णांशुकुलुडगस्त्युनि चेत गॊन्न । वैष्णवचापंबु वडि नॆक्कुवॆट्टि
शिंजिनि म्रोयिंचि शितसायकमुल । भंजिचॆ राक्षसप्रवरु केतनमु:
मड़ि वाडु रामु मर्ममुलुच्चिपाड़ । गड़कुटम्मुलु नाल्गु गर्द्दिंचि येय
रक्तसिक्तांगुडै राघवुंडंत । नक्तंचरुनि नॊंचि नाराचनिहति
बट्टुबाण मॊकट जापमु द्रुंचि वैचि । यट नालुगिट वानि हयमुल गूल्चि
सारथि बडनेसि सायकवह्नि । ना रथंबपुडु पूर्णाहुति सेसे;
विलु गोलुपडि यट्लु विरथुडै खरुडु । प्रलयकालांतक प्रतिमुडै केल

खर की राघव और राघव की खर, परवाह न कर, आजि (युद्ध) में जय की कामना से, ऐसे लड़ रहे थे मानों दो कासर (महिष), दो कलभ (हाथी के बच्चे), दो केसरी (सिंह) सोत्साह आपस में लड़ रहे हों। भुजबल के आटोप (आडम्बर) तथा भूरि प्रतापवाले होते हुए लड़ते समय, तब खर ने रुष्ट होकर, राघव के हाथ के धनुष को झट अर्द्धचन्द्र-बाण से ठीक (बीच में) काट दिया ॥ ६३० ॥

—काटकर, (धनुष) युग्म को काटकर, साथ ही साथ राम की देह को बाण समूह में डुबो दिया। उस समय उस बाण समूह की परवाह न कर, सुरश्रेणी की (अपने को) प्रशंसा करते समय, उष्णांशुकुल (सूर्य-वंशी राम) ने अगस्त्य से प्राप्त वैष्णव चाप को शीघ्रता से संधान कर, शिंजिनी (धनुष की डोरी) बजाकर, राक्षस-प्रवर के केतन (झंडे) को शित (सफेद) सायकों से नष्ट कर दिया। तब उसने भी राम के मर्मस्थानों का विदारण करने वाले चार क्रूर (कठोर) बाणों का, गर्जन करके, प्रयोग किया। रक्तसिक्ताँग वाले होते हुए राघव ने तब नक्तंचर (राक्षस) को नाराचनिहति (बाण समूह) से सताकर, एक पटुबाण से चाप काट डाल दिया, चार (बाणों) से उसके घोड़ों को मार गिराया, सारथी को मारकर, सायक (बाण)- वह्नि (अग्नि) से उसके रथ की तब पूर्णाहुति कर दी। धनुष से वंचित हो, उस प्रकार विरथ बन, खर प्रलयकाल के अन्तक (यम) के सम होकर, हाथ में, मात्सर्य से,

ज़लमुन गद गॊंचु जनुदॆंचुटयुनु । जलियिंचॆ गिरुलतो जगति
यंतयुनु; ६४०
नप्पुडु रघुरामु डा दुष्टदैत्यु । दप्पक कनुगॊनि दर्पिंचि पलिकॆ;
'नोरि ! राक्षस ! विनरोरि ! नीचात्म ! शूरत नीकेल चॊप्पडु निक ?
नी बलंबुलु सच्चॆ; नी वारु दॆगिरि; । नी बाणसंपद निर्मूलमय्यॆ;
नरुदुगा नीदंडकाटवि दॊलि । पॆरिगि सन्मुनुल जंपिन पापफलमु
गुडुव गालमु वच्चॆ; गुडुतुगाकिक; । नडरि वधिंतु घोराजिलोनिन्नु'
ननवुडु खरुडप्पु डा रामु जूचि। कनलुचु बलिकॆ दोर्गर्वंबु मॆऱसि
'येलरा राघव ! यित गर्वंबु ? । आलंबुलो गॊंदरल्पुल जंपि
कॊलयुचु निनु नीव कीर्तिचुकॊनॆदु ? कुलजुंडु तनु दानॆ कॊनियाडुकॊनुनॆ ?
यिदॆ गदाधरुडनै येतॆंचिनाड; । गदिसि पोराडु: ना कडिमियु जूडु;
देवासुरुलकैन दृष्टिपरादु; । नीवु नामुंदऱ निलुव शूरुडवॆ ? ६५०
यॊंडॊंड कडगि नी यॊडलि मांसंबु । चॆंडाडि नेडुना चॆलियलि कित्तु।'
ननि महागद द्रिप्पि यडरि वैचुटयु । ननिलुनि वेगंबु नर्कुतेजंबु

गदा धारणकर (राम की ओर) आने लगा तो, गिरियों के साथ समस्त जगती काँप उठी ।। ६४० ।।

तब रघुराम उस दुष्ट दैत्य को देखकर, दर्प के साथ बोले:— 'अरे ! राक्षस ! सुन रे ! नीचात्मक ! अब तुम्हें शूरता क्यों कर प्राप्त होगी ? तुम्हारी सेनाएँ नष्ट हो गयीं, तुम्हारे स्वजन मर गये, तुम्हारी बाण-सम्पत्ति निर्मूल हो गयी । अपूर्व रूप से इस दंडकाटवि (दंडक वन) में बढ़कर, सन्मुनियों को मारने का पापफल भोगने का समय आ गया है । अब (उसे) भोग लोगे । घोर रण में, अतिशयता से, तुम्हारा वध करता हूं ।' ऐसा कहने पर खर तब उस राम को देखकर (क्रोध से) जलते हुए, बड़े गर्व के साथ बोला:-- 'क्यों रे राघव ! इतना गर्व ? युद्ध में कुछ अल्प (जनों) का संहार करके, प्रसन्न होकर, अपनी ही प्रशंसा करते हो ? कुलीन (व्यक्ति) क्या अपनी प्रशंसा स्वयं करता है ? ये देख, गदा धारण कर आया हूँ । (मुझसे) निकट आकर भिड़ो, (और) मेरे पौरुष को देखो । देवासुर भी (मेरी ओर) देख नहीं सकते । तुम मेरे समक्ष खड़े रहने योग्य शूर हो ? ।। ६५० ।।

–एक-एक करके तुम्हारे शरीर के मांस को काटकर आज अपनी बहन को दूंगा ।' (ऐसा) कहकर महागदा को घुमाकर, अतिशयता से फेंक दिया । मानों अनिल का वेग, अर्क का तेज, अनल का ताप, अशनि (बिजली) का काठिन्य, घनगदा के रूप में एकत्र हुए हों, इस प्रकार से वह गदा आ

ननलुनि वेडिमि यशनि बॆट्टिदमु । घनगदारूपमै कदिसिनयट्लु
चनुदेर नुद्दंडचंडकांडमुल । गनॆलुगा रामु डागद द्रुंगनेसि

खरुडु श्रीरामु नॆदुर्चुट

'योरि ! नी गर्वोक्तुलुब्बुनु मदमु । दीरॆने ? बिंकमुल् दीरॆने ?' यनुडु
गद्दिंचुचुनु वच्चि कडु वडि तोड । नद्दनुजुंडु महारोषमुननु
ग्रक्कुन वृक्षमोक्कटि पॆल्लगिंचि । चिक्कनि भुजशक्ति जिरजिर द्रिप्पि
'चावु' मटंचुनु जय्यन वैव । ना वृक्षमुनु द्रुंचि यपुडु राघवुडु
खरुनिपै खरकर कर सहस्राभ । शरसहस्रमुलेसि चाल नॊंप्पिचॆः
नॊच्चियु वाडु तनुवुरक्तधार । पिच्चिल दॆच्चिकोल् बीरंबु मीर ६६०
नॆदुरुगा जनुदेर नीक्षिंचि रामु । डदयुडै भुवनंबु लन्नियु गलग
नुरुवडि नैंद्रास्त्रमॊनर संधिंचि । युरमेयुटयु दैत्युडुब्बॆल्ल बॊलिसि
पिडुगडचिन कॊंड पृथिवि पै गूलु । वडुवुन खरुडंत वसुधपै गूलॆ ।
ननि मुहूर्तमु मुहूर्ताधंबु लोन । दनु नॆदिर्चिन चतुर्दश सहस्रमुल
खरदूषणादि राक्षसुल नीरीति । बॊरिगॊनुटयु रामु बॊगडिरि सुरलुः

रही थी । राम ने उस गदा को उद्दंडचंड कांडों (बाणों) से टुकड़े-टुकड़े कर दिए ।

खर का श्रीराम का सामना करना

'रे ! तुम्हारी गर्वोक्तियाँ, हर्षातिरेक, गर्व चुक गये ? ऐंठ (गर्व) चुक गया ?' (ऐसा राम के) कहने पर, धमकी देते हुए, अतिशीघ्रता से आकर, वह राक्षस महारोष से, झट से एक वृक्ष को उखाड़कर, अधिक भुजशक्ति से, वेग से घुमाकर 'लो, मरो' कहते हुए, झट से डाल दिया। उस वृक्ष को काटकर राघव ने खर पर खरकर (सूर्य)-कर-सहस्र (हजारों किरणों की)-आभा से युक्त शरसहस्र चलाकर खूब सताया। पीड़ित होकर, शरीर से रक्तधाराओं के फूट निकलने पर भी वह दिखावे के गर्व की अधिकता से ॥ ६६० ॥

—(राम के) समक्ष आया, (उसे) देख राम ने अदय (दयाविहीन) हो, समस्त भुवनों के व्याकुल होने पर, शीघ्रता से ऐन्द्रास्त्र का संधान करके, उसकी छाती पर चलाया। दैत्य समस्त अकड़ को खोकर, वज्रपात से (चूर-चूर होकर) पृथ्वी पर गिर पड़ने वाले पर्वत के समान वह खर गिर पड़ा। युद्ध में मुहूर्त (और) मुहूर्तार्द्ध में, अपना सामना करनेवाले चौदह हजार खर-दूषण आदि राक्षसों को इस प्रकार संहार करते देख

मुनुलु दीविंचिरिः मोंगि बुष्पवृष्टि। यनिमिषुल्गुरिर्यिचि रा रामुमीद;
घनशैलगुहनुंडि कडकतो नंत। जनकज गोनिवच्चि सौमित्रि म्रोक्कि
यभिनुतुलोनर्रिचि या राम भूमि। विभुनिचे शोभिल्लु विल्लंदुकोनिये;
सुनिशितास्त्र क्षतशोभितवक्षु। गनि सीत रामु वेड्कनु गौगिलिंचे;
नूनिन संतोषमुल्लंबुनिंड। जानकीपति पर्णशाल केतेंचि ६७०
कलनि लो देगिन राक्षसुल भूमिजकु। देलिय जेप्पुचु विनोदिंचुचुनुंडे।

लंकलो अकंपन, रावण संभाषणमु

नपुडकंपनुडु रयप्रकंपनुडु। विपुलार्ति लंककु वेगंबे पोयि
या रावणुनिगांचि 'यसुराधिनाथ !। वीरुलु पदुनाल्गुवेल राक्षसुलु
खरदूषणादुलु काकुत्स्थरामु। शरवह्नि नीरैरिः सत्यं' बटन्न
नक्कजंबुन बोंदि यय्यकंपनुनि। दिक्कुचिक्कनि रोषदृष्टि जूचुचुनु
'नेमेमि ? यिदिविंत ! येट्टुरा योरि ! रामुडेव्वडु ? राजराजो ?
स्वराजो ?

देवताओं ने राम की प्रशंसा की, मुनियों ने आसीसा, अनिमिषों (देवताओं) ने उस राम पर, संरंभ के साथ पुष्पवृष्टि की। तब घन-शैल-गुफा से, साहस के साथ तब जनकजा को ले आकर सौमित्र ने प्रणामकर, अभिनुति (स्तुति) कर, उस रामविभु के हाथ में सुशोभित धनुष को ग्रहण किया। सुनिशित (तेज, पैने) अस्त्रों के क्षतों (घावों) से शोभित वक्ष वाले को देख सीता ने आनन्द से राम का आलिंगन किया। उत्कट आनन्द से हृदय के पूर्ण होने पर, जानकीपति पर्णशाला में आकर, ॥ ६७० ॥
—युद्ध में मरे राक्षसों के बारे में जनकजा को समझाकर कहते हुए, विनोद करते रहे (आनन्द मग्न रहे)।

लंका में अकम्पन और रावण का संवाद

तब रयप्रकंपन (वेग के कारण कंपन उत्पन्न करने वाला) अकंपन (नामक राक्षस) विपुल आर्ति से, वेग से लंका जाकर, उस रावण को देखकर (बोला):-- 'हे असुराधिनाथ ! चौदह हजार वीर राक्षस, खर दूषण आदि काकुत्स्थ राम की शर-वह्नि से भस्म हो गये। (यह) सत्य है।' ऐसा कहने पर, चकित हो, उस अकम्पन की ओर प्रगाढ़ रोष (पूर्ण) दृष्टि से देखते हुए (रावण बोला):— 'क्या-क्या ? यह कैसा आश्चर्य है रे ! रे ! राम कौन है ? (वह क्या) राजराज (कुबेर) है ? स्वाराज (इन्द्र) है ? यमधर्मराज है ? ये (सब) ठीक तरह से

यमधर्मराजौ ? वारैननु गूडि । यमर मा खरदूषणादुल गेल्व
जाल; रट्टि प्रतापशालुल नोक्क। डेलील गेल्चे ? मा केऱिगिपु तेलिय;
निर्दे यभयंबु नीकिच्चिचति' ननिन। बदरक मऱि यकंपनुडु राघवुनि
चरितंबु धैर्यंबु शौर्यंबु नतडु । खरदूषणादुल खंडिचुटयुनु ६८०
सौमित्रिचंदंबु जानकिचंद । मामूलमुग जेप्प नतडु रोषिंचि
युद्धंबु सेय नुद्योगिंचुटयुनु । बद्धमैत्रिनि नकंपनुडिट्टुलनियें;
'राक्षसेश्वर! विनु, रघुरामु गेलुव। बक्षिवाहन शूलपाणुल वशमे ?
माटमात्रंबुन महियु नाकसमु । मीटनु नाट नम्मेटिये नेर्चु;
गार्चिच्चुनैननु गरुवलिनैन । नार्चनु नूर्चनु नातडेनेर्चु;
भुवनंबुलन्नियु बूदि गाविंप । नवि प्रोदि गाविंप नातडे नेर्चु;
बाल्पडि ब्रह्मांडभांडंबुनैन । निल्प बगुल्प नानिपुणुडे नेर्चु;
जलरासुलन्नियु जल्लि यिंकिंप । नलवड निंडिप नातडे नेर्चु;
ग्रहतारकावळि गडुवडितोड । महिराल्प नवि निल्प महिपति नेर्चु;
कानुन्न कार्यंबु गाकुंड जेय । गानि कार्यंबैन घटियिंप जेय६९०

मिलकर भी, हमारे खर-दूषण आदि को जीत नहीं सकते । ऐसे प्रतापशाली (राक्षस वीरों) को एक (व्यक्ति) किस प्रकार जीता ? हमें समझाकर बताओ । यही तुम्हें अभय प्रदान किया है ।' (ऐसा) कहने पर, भीत न होकर, फिर अकम्पन ने राघव का चरित्र (समाचार), धैर्य (वहादुरी), शौर्य (और) उसका खर-दूषण आदियों का खण्डन (वध) करना ॥ ६८० ॥

—सौमित्र का विधान, जानकी का वृत्तान्त (आदि को) आमूल (आदि से अन्त तक) बताया । (तब) उसने (रावण ने) रुष्ट होकर, युद्ध करने का उद्योग किया । (तब) बद्धमैत्री से अकम्पन यों बोला:— 'हे राक्षसेश्वर! सुनो, रघुराम को जीतना पक्षिवाहन (ब्रह्मा) (और) शूलपाणि (शिव) के बस की (बात) है ? (नहीं है ।) मात्र बात से (बात की बात में) मही (पृथ्वी), आकाश को उछालने (अथवा) स्थिर बनाए रखने में वह निपुण (व्यक्ति) ही समर्थ है । दावानल को बुझाने (अथवा) पवन को निरुद्ध करने में वही समर्थ है । समस्त भुवनों को भस्म करने (अथवा) रक्षण करने में वही समर्थ है । चाहकर ब्रह्माण्ड-भाण्ड की रक्षा करने (अथवा) तोड़-फोड़ करने में वही समर्थ है । समस्त जलराशियों को बिखेर-कर, सुखाने (अथवा) ढंग से भरने में वही समर्थ है । ग्रह (और) तारक समूहों को अति-शीघ्रता से धरती पर गिरा देने (अथवा) स्थिर बनाए रखने में राजा (राम) समर्थ हैं । होने वाले कार्य को (सम्पन्न) होने से रोक सकता है । न होने वाले कार्य को घटित करने में ॥ ६९० ॥

ननघुडातडे योपु; ना जोदुतोड । मोन सेयजालरी मूडु लोकमुल;
नदिगान नोकयुपायंबु सेप्पेदनु; । कदनंबु वलवः दा काकुत्स्थ रामु
देवि लावण्यवार्धिनि देच्चितेनि । ना वियोगाग्निचे हतुडगु नतडु'
ना विनि राक्षसनायकुंडदिय । भाविंचि यातनि बदिनोळ्ळ बोगडि
हाटकरथ मेक्कि यपुडब्धि दाटि । ताटकेयुनि मंत्रि-धौरेयु जेरि
यतनितो खरदूषणादि राक्षसुलु । हतुलौटयुनु दानु ना रामु देवि
सीत देच्चुटकु नासिंचि वच्चुटयु । ब्रीति जेप्पुटयु मारीचुडिट्लनिये;
६९७

मारीच हितबोध

'निदियेमि रावण ! येल्लभोगमुलु । कोंदलेनि सुखमुन गुडिचि कूचुंडि
यिट्टि दुर्बुद्धि नीकेट्लोको पुट्टे । नेट्टि दुर्मंत्रि नीकीबुद्धि सेप्पे ?
वानि नीवट्टु पगवानिगा नेरुगु; । मे नीकु बोरानि हितमंत्रि गानि
७००
यितरुंड गानु; नीकिदि बुद्धिगादु । क्षिति बतिव्रतल कांशिचुट दगदु;

—वह अनघ ही समर्थ है। इन तीनों लोकों में उस योद्धा के साथ कोई युद्ध नहीं कर सकता। यह ऐसा है, अतः एक उपाय बताऊँगा। युद्ध नहीं चाहिए। उस काकुत्स्थ राम की देवी को, जो लावण्य की वारिधि है, लाओगे तो उस वियोगाग्नि से वह निहत हो जाएगा।' ऐसा कहने पर, सुनकर, राक्षस-नायक ने (रावण) उसी को सोचकर, उसे दस मुँह से (अधिक) सराहकर, स्वर्णरथ पर चढ़कर, तभी अब्धि (समुद्र) को पार कर, ताटकेय (ताड़का पुत्र) (और) धुरन्धर मन्त्री के पास पहुँचकर, उससे खर-दूषण आदि राक्षसों का निहत होना, उस राम की देवी सीता को (हर) लाने की इच्छा से अपने आने की बात सप्रेम कहा। मारीच ने यों कहा :— ॥ ६९७ ॥

मारीच का हितबोध

'यह क्या रावण ! (किसी) अभाव के बिना समस्त भोगों को सुख से अनुभवकर रहने पर भी, ऐसी दुर्बुद्धि तुम्हें क्योंकर पैदा हुई ? किस दुष्ट-मन्त्री ने तुम्हें यह बुद्धि सिखाई ? उसे (उस दुष्ट मंत्री को) तुम (अपना) शत्रु मानो। मैं तुम्हारा अनिवार्य हित (चाहनेवाला) मन्त्री हूँ, ॥ ७०० ॥

—किन्तु पराया (व्यक्ति) नहीं हूँ। यह तुम्हारे लिए (उचित) विचार

आशिंचितेनि नीयन्वयंबेल्ल । नाशमौ; गान दानवनाथ ! मरलि
चनुमु लंककु; सुप्रसन्नुडवगुमु; । कनुमु सौख्यमु नीदु कांतलवलन'
ननिन मारीचु वाक्यंबुलप्पटिकि।विनि लंक केतेंचे विंशतिभुजुडु।७०४

रावणुनितो शूर्पणख मॊर्

अंत ना खरदूषणादि राक्षसुलु । पंतंबुसेंडि रामु बाणाग्नि बडुट
यंतयु नट सूचि या चुप्पनाति । संतापमंदुचु जनि लंक सॊच्चि
यासुधर्मास्थानमंदु जिताम । णीसिंहपीठि नुंडेंडि यिंद्रुडनग
मानितंबगु सभामंटपवेदि । बूनि सिंहासनंबुन नुन्नवानि
गरुडोरगामर गंधर्वयुवतु । लुरुमति गॊलुवगनुन्न रावणुनि
नैरावतोग्रदंताग्रसंघट्टि । तोरस्स्थलस्थगितोरु भूषणुनि ७१०
नखिललोकैक भीषणुनि संग्राम । विकट भाषणुनि विद्वेषिदूषणुनि
गनि म्रॊक्कि येड्चुचु गरमुलु मॊगिचि । तनलोनि घनविषादमु दोप
बलिके;

नहीं है। पृथ्वी पर पतिव्रताओं (स्त्री) को चाहना अनुचित है। चाहोगे तो तुम्हारा समस्त अन्वय (वंश) नष्ट होगा। अतः हे दानवनाथ ! लंका में वापिस जाओ। सुप्रसन्न हो रहो। अपनी कान्ताओं से सुख प्राप्त करो।' (ऐसा) कहने पर मारीच के वाक्यों को तब तक के लिए सुनकर विंशति (बीस) भुजाओंवाला (रावण) लंका (में) आ गया ॥ ७०४ ॥

रावण से शूर्पणखा का आर्त्त निवेदन

उस समय उन खर-दूषण आदि राक्षसों का, पौरुष के नष्ट होने पर, राम की बाणाग्नि में गिरते हुए, सब कुछ वहाँ देखकर, वह शूर्पणखा संतप्त होती हुई जाकर, लंका में प्रवेशकर, मानों उस सुधर्मास्थान (देवसभा) में चिन्तामणि (से निर्मित) सिंहपीठ (सिंहासन) पर स्थित इन्द्र हो, (इस प्रकार) सम्मानित सभामंडप की वेदी पर, सिंहासन पर स्थित हो गरुड़, उरग, अमर, गंधर्व युवतियों की योग्य बुद्धि युक्त सेवाएँ लेते रहनेवाले रावण को (देखा।) ऐरावत के उग्र दन्ताग्र से संघट्टित (रगड़ खाए) उर-स्थल पर स्थगित उर-भूषण वाले को, ॥ ७१० ॥

—सकल लोकैक (लोक में अकेला) भीषण, संग्राम में विकट (भयंकर) भाषण (गर्जन करने) वाले, विद्वेषी (शत्रु) का नाश करने वाले (रावण) को देख, प्रणाम कर, रोते हुए, हाथ जोड़कर, अपने (हृदय के) अधिक

'नसुरेंद्र ! लोकंबुलन्निटियंदु । नसमानसत्त्वुंड ननुकोंदुवीवु;
कडिमिमै मूडुलोकंबुल रिपुल । गडगि चंपितिननि गर्वितुवीवु;
कडक ना राज्यमकंटकंबनुचु । नोंडिवि पेल्लुब्बि विनोदितुवीवु;
चारुलयंदुनु जनवरुलंदु । गोरि बोक्कसमंदु गोरिकलंदु
गूढचारुलयंदु गुप्तंबुलंदु । रूढिगा देलियुचु रूपिंचुवाडे
सकल लोकमुलकु स्वामि ना बडुनु; । विकटंबुलैन नीविद्यल कलिमि
नी विक्रमंबुनु नी भुजाबलमु । नी विभवंबुलन्नियु मुन्नेकाक
यिक जेल्लुने ? यदि येट्लंटिवेनि ? गोंकक विनु; भानुकुलपावनुंडु
७२०

तनतंड्रि दशरथ धरणिवल्लभुडु । तनु बंप रामुडु दापसवृत्ति
दनकु गादिलि सहोदरुडु लक्ष्मणुडु । दनदेवि सीतयु दानुनेतेंचि
मुनु दंडकाटवि मुदमोप्प जोच्चि । यनुकंप मुनुलकु नभयंबुलिच्चि
वच्चि यिम्मुल बंचवटि नुन्नचोट । निच्चलो गार्मिचि येनु डग्गरिन
गरमलिग नन्निट्लु गासिसेयुटयु । खरुनितो जेप्पिन खरुडु बिट्टलिगि

विषाद को प्रकट करते हुए (शूर्पणखा यों) बोलीः-- 'हे असुरेन्द्र ! तुम समझते हो कि समस्त लोकों में मैं असमान सत्त्ववाला हूँ। तुम गर्व करते हो कि मैंने साहस के साथ तीनों लोकों के शत्रुओं का सप्रयत्न वध किया है। तुम फूलकर साहस से यह कहते प्रसन्न रहते हो कि मेरा राज्य अकंटक है। समस्त लोकों का स्वामी वही कहलाता है जो (अपने) गुप्तचरों के बारे में, अन्य राजाओं के बारे में, चाहकर (उनके) राजकोशों, इच्छाओं, गुप्तचरों, रहस्यों को स्पष्ट रूप से जानकर, (कार्य को) रूपायित करता है। तुम्हारी भयंकर विद्याओं की संपत्ति (आधिक्य), तुम्हारा विक्रम, तुम्हारा भुजबल, तुम्हारे समस्त वैभव, (इससे) पूर्व ही सफल होते थे। अब सफल होंगे ? (नहीं)। कहोगे कि वह कैसा ? बिना संकोच के सुनो। भानुकुल के पावन (व्यक्ति) ।। ७२० ।।

—राम ने अपने पिता राजा दशरथ के भेजने पर, तापस वृत्ति से, अपने लाड़ले भाई लक्ष्मण (तथा) अपनी देवी सीता के साथ स्वयं आकर, प्रथमतः मोदपूर्ण हो, दंडकवन में प्रवेश कर, मुनियों को अनुकंपा से अभय प्रदान किया। (तदनन्तर) आकर, सुन्दरता से पंचवटी में रहा। मन में आसक्त होकर मैं निकट गयी तो अधिक क्रुद्ध हो मुझे इस प्रकार सताया। (मैंने) खर से कहा तो खर अधिक क्रुद्ध हो, रुष्ट हो, लयकाल-रुद्र के समान, दूषण (और) त्रिशिर के साथ, नरभोजी चौदह हजार वरवीर

रोषिंचि लयकालरुद्रुंडु बोलॆ । दूषण त्रिशिरुलतो दंडुवॆडलि
नरभोजनुलु पदुनालुगुवेलु । वरवीरभटुलतो वडि नेगुदॆंचि
बलुविडि रघुरामु बाणाग्निशिखल । बलमुलु दानुनु भस्मॆ मडिसॆ;
नट्टुगान ना भंगमंतयु नीग । निट नीवॆ काक दिक्कॆव्वरु गलरु ?
इदॆनादु मुखभंगमीक्षिपु; नादु । कॊदव नीकॊदवगा गोर्कि भाविंपु'
७३०
मनिन नच्चॆरुवंदि यात्म जिंतिंचि । दनुजाधिनाथु डा दानवि कनियॆ;
'ज्ञातिवधंबु नीचन्नविधंबु । ख्याति विंटिनि; गंटि; नदि यट्टुलुंडॆ;
नो राम ! या रामु नुरुसत्त्वमॆन्त ? ये रूप ? मे प्राय ? मॆन्तटिवाडु ?
अतनि तम्मुनि रूपमदि यॆट्टि ? दतनि । सतियैन सीत के चंदंबु रूपु ?
चॆप्पुमा चूचिवच्चिन तॆऱंगॆल्ल ।दप्पिदीऱुतु रक्तधारल नीकु'७३५

शूर्पणख सीतारामुल रूपातिशयमु दॆल्पुट

ना विनि या शूर्पणख यिच्च बॊंगि । रवाणुतोड नेर्पड जॆप्पदॊडगॆ;
'नुन्नतोरस्थलुडुत्पलश्यामु । डिन्निलोकमुलकु नॆक्कुडुवाडु

भटों के साथ चढ़ आया। शीघ्रता से आकर बरजोरी से रघुराम की बाणाग्नि-शिखाओं में, सेनाओं के साथ स्वयं भस्म हो गया। ऐसा होने पर अब मेरे समस्त अपमान को दूर करने के लिए तुम्हारे सिवा मेरा कौन शरण्य है? यही मेरे मुख का अपमान (दुर्गति) देखो। मेरे अभाव (कमी) को चाहकर अपना अभाव समझो।' ॥ ७३० ॥

—(ऐसा) कहने पर चकित होकर, मन में विचारकर, दनुजाधिनाथ ने उस दानवी से कहा:-- 'ज्ञाति-वध और तुम्हारे (वहाँ) जाने के विधान के बारे में अच्छी तरह सुना है, देखा है। अस्तु, हे रामा! उस राम का उरु (अधिक) सत्त्व कितना है? (उसका) कैसा रूप है? क्या अवस्था है? कितना (आकार का) है? उसके भाई का वह रूप कैसा है? उसकी पत्नी सीता का रूप विधान कैसा है? तुम जो कुछ देख आई हो, वह सब बताओ। रक्त की धाराओं से तुम्हारी प्यास बुझाऊँगा।' ॥ ७३५ ॥

शूर्पणखा का सीताराम का रूपातिशय बताना

ऐसा कहने पर सुनकर, वह शूर्पणखा मन में फूलकर (प्रसन्नता से) रावण से ढंग से कहने लगी:-- 'रामचन्द्र उन्नत उर-स्थलवाला, उत्पल (के सम) श्याम (वर्णवाला), सभी लोकों में श्रेष्ठ, बहुत सुन्दर,

मिगुल जक्कनिवाडु मिहिरमंडलमु। दॆगडुतेजमुवाडु धीरवर्तनुडु
नाजानुबाहुडुदग्रविक्रमुडु । राजीवनेत्रुडु रामचंद्रुडु;
नतडॆपो खरदूषणादि राक्षसुल । गृतमति नॊन्टिगा गॆलिचिन जोदु ७४०
हेमवर्णुडु गाक यिन्निचंदमुल । सौमित्रि रघुरामुचंदंबु वाडु;
वाडॆपो नाकीयवस्थ गाविंचि । ना; डिक सीतसौंदर्यंबु विनुमु;
तॆऱगॊप्प जूचिति देवकामिनुल; ।दऱिगॊनि चूचिति दनुजकामिनुल;
गॆलिमै जूचिति गिन्नरांगनल; । बॊलिचि चूचिति भोगिकामिनुल;
गलयंग जूच्चिति गंधर्वसतुल; । नलवड जूचिति यक्षकांतलनु;
जूचिति बार्वति; जूचिति शचिनि। जूचिति द्रिभुवनसुंदरीजनुल;
जूचिति रंभनु; जूचिति शचिनि । जूचिति द्रिभुवनसुंदरी;
मुनुकॊनि चूचिति मुनुल कामिनुल। बनिवडि चूच्चिति ब्राह्मणस्त्रील;
ना चन्नु लाकन्नु लामुद्दुबल्कु । ला चॆक्कुला मुक्कु ना सोयगंबु
ला तरु ला कुरु ला वालुजुपु । ला तॊड ला यॊडला यॊयारंबु ७५०
ला मंदहासंबु ला विलासंबु । ला मंदगमनंबु ला विवेकंबु

मिहिर (सूर्य) मंडल (के तेज) को परास्त करनेवाला, धीर-वर्तन (व्यवहार) वाला, आजानु बाहुवाला, उदग्र विक्रमवाला, राजीवनेत्र वाला है। वही तो खर-दूषण आदि राक्षसों को कृतमति हो, अकेले ही जीतने वाला योद्धा है ।। ७४० ।।

हेमवर्ण वाला हो सौमित्र, इन सब विधियों से रघुराम जैसा है। उसी ने तो मेरी यह दुर्दशा की है। अब सीता के सौंदर्य (के बारे में) सुनो। मैंने अच्छी तरह देव-कामिनियों को देखा है; अवसर पाकर दनुज कामिनियों को देखा है; खेल ही खेल में किन्नर-अंगनाओं को देखा है; ढंग से भोग (नाग) कामिनियों को देखा है; सर्वत्र गन्धर्वसतियों को देखा है; बार-बार यक्ष-कान्ताओं को देखा है, पार्वती को देखा है, रति को देखा है, भारती को देखा है, लक्ष्मी को देखा है, रंभा को देखा है, शची को देखा है,त्रिभुवन की सुन्दरियों को देखा है। सप्रयत्न मुनियों की कामिनियों को देखा है, आवश्यकता से ब्राह्मण स्त्रियों को देखा है। (किन्तु) वे स्तन, वे आँखें, वे प्यारी बोलें, वे गाल, वह नासिका, वह सुघड़ाई, वे वली (त्रिवली), वे केश, वे तिरछी नजरें, वे जांघ, वह देह, वे अदाएँ।। ७५० ।।

—वह मन्दहास, वह विलास, वह मन्दगमन, वह विवेक, मैंने इतः पूर्व किसी भी स्त्री में नहीं देखा है। कहो, मैं भूमिजा का किस विधि वर्णन करूँ ? मैंने जिन कन्याओं के विलासों के बारे में कहा, सोचकर

ने मुंदु बॊंडगान ने यितुलंदु । भूमिज नेमनि भूषितु जॆपुम !
ने बल्किनट्टि कन्नॆल टॆक्कुलॆल्ल । रूपिंप गालि गोरुनु बोल वरय;
नॆम्मेन वॆलुगॊन्दु निद्दंपुमणुल । सॊम्मुलकुनु दानॆ सॊम्मयि तनरु;
नॆगड लोकमु लेलुनीयट्टि पतिकि । दगुगाक या यिंति तगुनॆ यन्युलकु?
ना यिंदुबिंबास्य या चकोराक्षि । या यॆलजव्वनि या कुंदरदन
या मत्तगजयान या लतकून । या मानिनीमणि या पद्मगंधि
या यिंति नी यिंतियै युंडॆनेनि ।नीयान दनुजेश! नी राज्यमॊप्पु'७५८

रावणुडु मऱल मारीचु कडकेगुट

ननिन रावणुडु कामातुरबुद्धि । मुनु नकंपनुमाट मुद्दियमाट
विन नॊक्कतॆऱगंचु विस्मयंबंदि । गॊनकॊन्न प्रेममै गॊलुवु सालिंचि७६०
तन पालि विधि तन्नु दगिलि प्रेरेप । जनि येकतंबुन सारथि बिलिचि
'यरदंबु दॆ' म्मन्न नतडट्लसेय । खरकरसदृशंबु गामचारंबु
ननुपमायुधपूर्णमगु रथंबॆक्कि । दिनकरकोटि संदीप्तुडॆ मॆऱसि

तुलना करने पर वे (सीता के) पदनख की बराबरी नहीं करते। सुन्दर शरीर पर प्रकाशमान स्निग्ध मणिमय आभूषणों के लिए स्वयं भूषण होकर (सीता) विराजमान है। शोभा से लोकों पर शासन करने वाले तुम जैसे पति (मालिक) के लिए वह योग्य है। अन्य के लिए वह कहाँ योग्य है? (योग्य नहीं है) वह इन्दुबिंबास्या (चन्द्रमुखी), वह चकोराक्षी, वह नूतन यौवनवाली, वह कुन्द रदनवाली, वह मत्तगजयाना (गजगामिनी), वह नवल लतिका, वह मानिनीमणी, वह पद्मगंधी, वह नारी यदि तुम्हारी नारी होकर रहे तो हे दनुजेश ! मेरी कसम, तुम्हारा राज्य शोभायमान होगा' ॥ ७५८ ॥

रावण का फिर से मारीच के पास जाना

(ऐसा) कहने पर रावण कामातुर-बुद्धि से यह सोच कि पूर्व की अकम्पन की बात (एवं) नारी (शूर्पणखा) की बात सुनने के लिए एक समान हैं, चकित हो गया, सप्रयत्न उत्पन्न प्रेम के कारण सभा को समाप्त कर, ॥ ७६० ॥

—अपनी विधि (नियति) के अपने को लगकर प्रेरित करने पर, जाकर, एकान्त में सारथी को बुलाकर, कहा 'रथ लाओ'। उसके वैसा ही करने पर, खरकर (सूर्य) सदृश, कामचार (इच्छानुसार जानेवाला), अनुपम-आयुध-पूर्ण रथ पर आरूढ़ होकर, करोड़ दिनकरों की संदीप्ति से

गगनमार्गमुन सागरमध्यवीथि । दगिलि वस्तुविशेषततुलु सूचुचुनु
दर्मकिचि वडि समुद्रमु दाटिपोयि। क्रमुक मरीचिकागरु नारिकेळ
साल तक्कोल रसाल विशाल । वेलावनंबुलु वेड्क गन्गोनुचु
गरुडडु मुनु सुधाकलशंबु देर । गरर्थि बोवुचो गजकच्छपमुल
भक्षिचुकोड्रकुनै पदमूदिनट्टि । वृक्षंबु पक्षींद्रकृतलक्षणंबु
शतयोजनायतशाखंबु मौनि । वृतमु सुभद्राख्य वेलयु वटंबु
सुमुखुडै कनुगोन्चु सुरुचिरमहिम। नमरिन या सुचंद्राश्रमभूमि ७७०
ग्रममोप्प जडलु वल्कलमुलु दाल्चि। समचित्तुडै कडुसौम्य भावमुन
भूरि तपोनिष्ठ बोलुपारुचुन्न । मारीचु जेरि सन्मानंबु वडसि
यतिदीनवदनुडै या पंक्तिकंठु । डतनितो दनदु कार्यमु सेप्पदोडगे;
'मारीच ! नी वाप्तमंत्रिवि गान । वारक मड्रियुनु वच्चितिमिटकु;
दरणिवंश्युडु रामधरणिवल्लभुडु । धरणि येलगनीक तंड्रि वोम्मनिन
ननुजन्मुडुनु दानु नतिवयु गूडि । वनमुल दपसुलै वर्तिप वच्चि
तन सत्त्वमुन पेर्मि दंडकारण्य । मुनुलकु नभयमिम्मुल निच्चि निल्चि

प्रकाशमान हो, गगनमार्ग से, सागर की मध्यवीथि (मार्ग) से होते हुए, विविध वस्तुओं के समूहों को देखते हुए, संभ्रम से, शीघ्रता से समुद्र पारकर गया। क्रमुक (सुपारी, पूग) मरीचिका, अगरु, नारिकेल, साल, तक्कोल, रसाल से युक्त विशाल वेलावनों को प्रसन्नता से देखते हुए, पूर्व में गरुड़ ने सुधाकलश को लाने के लिए इच्छा से जाते समय, गज-कच्छपों को खाने के लिए, जिस वृक्ष पर पैर रखा था, पक्षीन्द्र द्वारा कृत लक्षण (चिह्न) वाले, शतयोजन-आयत-शाखाओं वाले, मुनियों से घिरे हुए, सुभद्र नाम से विलसित उस वट को सुमुख (प्रसन्न) हो देखते हुए, सुरुचिर-महिमा से शोभित उस सुचन्द्राश्रम भूमि में ॥ ७७० ॥

—यथाविधि जटाएँ (तथा) वल्कल धारणकर, समचित्त हो, अधिक सौम्यभाव से, भूरि तपोनिष्ठा से विराजित मारीच के पास जाकर, सम्मान (आदर-सत्कार) प्राप्त किया। अतिदीन वदन हो, वह पंक्तिकंठ (वाला) उससे अपने कार्य के बारे में कहने लगाः—'हे मारीच ! तुम आप्त मंत्री हो, इसलिए बिना रुके, दुबारा (हम) यहाँ आये हैं। तरणि (सूर्य) वंशज राजाराम, धरणी पर शासन न करने देकर, पिता के (जंगलों में) जाने को कहने पर, अनुजन्म (और) स्त्री के साथ, वनों में तपसी हो रहने के लिए आया है। अपने सत्त्व के कारण प्रेम से दंडकारण्य के मुनियों को शोभा से अभय प्रदानकर रहते हुए, अकंपित (निर्भीक) भाव

नडुकक मन शूर्पणख मुक्कु जॆवुलु । गडुनलिग कॊसॆ नक्कट! यकारणम;
खरदूषणादि राक्षसुल खंडिचॆ । दरमिडि मऱि चतुर्दश सहस्रमुल
तॆगिन बंधुलकु ब्रतीकारमेनु । नॆगडि चेयकयुन्न नॆन्जिलिवोदु; ७८०

नीवु मुन् गऱपिन नीतिनट्लुन्न । नावल नभिमानहानि गाकुन्नॆ ?
तग नटुगान नातनि देवि माय । बॊगडॊन्द गॊनितेर बोवुचुनुंडि
यलवड नॊकयुपायमु गंटि; नीवु । दलकॊन्न नदिनाकु दगिलि सिद्धिंचु;
नडरॆडु कडक तो ना पर्णशाल । कडकेगि मायामृगंबवै नीवु
चॆलगुचु वर्तिप सीत निन् जूचि । मॆलुपॊन्द रामसौमित्रुल बिलिचि
निनु बट्टि तॆम्मन्न नीवुनु वारि । गॊनिपोयि मृगवृत्ति गुशलत मॆऱसि
पोयि दुर्गांतरंबुल गाडु पऱचि । मायमै नी याश्रममु वच्चिच चॊरुमु;
एनुनु जानकि निट लंकलोनि । कूनिन वेड्कमै नॊगि दॆच्चुकॊन्दु;
ना रामुडुनु विरहाग्निचे गुंदु; । गोरि येनुनु गोर्कि कॊनसागनुंदु;
निदि यिट्लु कार्विपु; मेनु ना राज्य । पदमुन सगपालु पंचि नीकित्तु'
७९०

से हमारी शूर्पणखा की नाक और कान अतिक्रुद्ध हो, हाय ! अकारण ही काट डाला । खरदूषणादि राक्षसों का वध कर दिया । बरज़ोरी (युद्ध में) मरे चतुर्दशसहस्र-बन्धुओं का प्रतिशोध मैं शोभा से न लूँ तो व्यथित रह जाऊँगा । ॥ ७८० ॥

—तुमने पहले जो नीति (उपदेश) कही थी, उसके अनुरूप रहूँ तो बाद में मान-भंग होकर नहीं रहेगा ? वैसा उचित नहीं है । अतः उसकी देवी को माया से, प्रशंसनीय ढंग से लाने जाते समय, एक उचित उपाय सूझा । तुम चाहोगे तो वह मेरे लिए सिद्धि प्रदान करेगा । अधिक साहस से, उस पर्णशाला के पास जाकर तुम्हारे मायामृग बनकर, विचरण करते रहने पर, सीता तुम्हें देखकर, आकृष्ट होगी । राम (और)सौमित्र को बुलाकर, तुम्हें पकड़ लाने के लिए कहेगी । तुम भी उन्हें ले जाकर मृग-वृत्ति से कौशल प्रदर्शितकर, दुर्ग (वन) के मध्यभाग में ले जाकर, सताकर, अन्तर्धान होकर अपने आश्रम में आ प्रवेश करो । मैं भी यहाँ जानकी को, लंका में अधिक प्रसन्नता से, सप्रयत्न ला लूँगा । वह राम भी विरहाग्नि से दुखी होगा । चाहकर मैं भी (अपनी) इच्छाओं के पूर्ण होते रहूँगा । इसे (कार्य को) ऐसा ही सम्पन्न करो । मैं अपने राज्य में आधा भाग बाँटकर तुम्हें दूँगा ।' ॥ ७९० ॥

मारीचुडु रावणुनिकि श्रीरामुनि प्रभावमु दॆलुपुट

ननवुडु मारीचुडा नीचु जूचि । घनभीति नेचि शोकसमुद्र-वीचि
मुनिगि मूर्छिलि लेचि मोमट द्रोचि । 'दनुजेश ! मऱियु नीतलपॆट्टु-वुट्टॆ ?
गूडुने यिट्टुवंटि कॊऱगानि त्रोव ? योडक नी कॆव्वडुपदेश मिच्चॆ ?
सुक सुकंबुननुंडि सुतसोदराप्त । सकलबांधवुलतो जाव गोरॆदवु ?
कटकटा ! यॆव्वनिगा जूचिनावॊ । कुटिल राक्षसकोटिकुलभीमु रामु !
नेनु बाल्यंबुन नॆरुगुदु गॊन्त; । या नित्यकल्याणु डसमसाहसुडु;
अडरि विश्वामित्रु यागंबु गाव । गडगि यातडु वच्चि कापुन्न चोट
बलिमिमै नेनु सुबाहुंडु बोर । नलुक सुबाहु नॊक्कम्मुन द्रुंचॆ;
नॊक कोल बुच्चि पयोधि मध्यमुन । ब्रकटितगति नन्नु बडवैचॆ नुऱ्क;
यक्तास्त्रुडै बालुडै पिन्ननाडॆ । यकलंकुडिट्टि शौर्यमु जूपिनाडु; ८००
नेडस्त्रबलशौर्यनिधियैन यतनि । वाडिमि जॆनकि यॆव्वरु निल्चुवार ?
लिप्पटि शौर्यंबु नॆरुगुदु गॊन्त; । दप्पक विनु मुग्रदानवाग्रणुल

मारीच का रावण को श्रीराम का प्रभाव बताना

ऐसा कहने पर, मारीच ने उस नीच को देखकर, अधिक भीति से शोक समुद्र की वीचियों में डूबकर, मूर्च्छित होकर, (फिर) जागकर (होश में आकर), संकोच को दूरकर (कहा):—'हे दनुजेश ! फिर से यह विचार कैसे पैदा हुआ ? ऐसा अनुचित मार्ग क्या समुचित है ? निस्संकोच भाव से किसने तुम्हें यह उपदेश दिया है ? सुख-चैन से रहते हुए (अब) सुत-सहोदर-आप्त-कुल-बान्धवों के साथ क्यों मरना चाहते हो ? हाय, हाय ! कुटिल-राक्षस-कोटि-कुल के लिए भीम (भयंकर) राम को (तुमने) क्या समझ रखा है ? मैं बाल्य में (उनके बारे में) थोड़ा जानता हूँ। वह नित्य-कल्याण (गुण-सम्पन्न) असमसाहस वाला है। शोभा के साथ विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करने लगकर जहाँ वह रक्षार्थ खड़ा था (वहाँ) मैं और सुबाहु बल बटोरकर लड़ने गये। क्रोध से (उसने) एक बाण से सुबाहु का वध किया। एक बाण से प्रकटित गति से मुझे समुद्र के मध्य में फेंक दिया। अक्तास्त्र होते हुए, बालक होते हुए, बचपन में ही उस अकलंक (चरित्रवाले) ने ऐसा शौर्य दिखाया है। ॥ ८०० ॥

—आज अस्त्र-बल (से युक्त)-शौर्यनिधि हो उसके साहस को छेड़कर कौन टिक सकता है ? अबके शौर्य को (मैं) थोड़ा जानता हूँ। अवश्य सुनो, दो उग्र-दानव-अग्रणियों को साथ लेकर, मैं पूर्वरोष से भरित होकर,

निरुवुर दोकोंनि ये बूर्वरोष । भरमुन व्याघ्ररूपमु दाल्चि यतनि
दपमुन गृशुगाग दलचुचु बोव । नपुडेमि चेंप्प मूडंबकंबुलनु
मुग्गुरि नेसिन श्रोंग्गि यिद्दऱुनु । श्रग्गिः रायुश्शेषमहिम येंट्टिदियो ?
ये नोंक्क विधमुन निक्कड गूलि । प्राणंबुलुंडुट बट्टि चूचुकोंनि
यंतनुंडियु रामुनतुलविक्रममु । जिंतिंचि नालोनि चेव वोविडिचि
रवमन्न रथमन्न रमणीयमन्न । रवियन्न रतियन्न रत्नंबुलन्न
मऱियु रेफादिनाममु लेंव्वि विन्न । दऱुचैन भीति नातनिग नेंन्नुचुनु
ई विधि दपसिनै यिदुन्नवाड; । रावण! येंऱुगवु रामु पोंरुषमु; ८१०
दलपदु तन रोत; तनु जूड दित; । नलिरेगि मन शूर्पणख तानु बोयि
यनुपमगुणधामु नभिरामु रामु । गनुगोंनि यी रीति गामिंप दगुनें ?
तनकु नावेषंबु तानें काविंचु । कोंनियें; निंदुकु मदि ग्रोंधिंचि पोयि
परुषत रघुरामु बाणाग्निशिखल । खरदूषणादि राक्षसुलु नीऱैरि;
वीरिकै नीवेल विपरीतबुद्धि । श्रीरामु बगगोंनि चेंडदलंचेंदवु ?
इदि विचारंबु गादिदि बुद्धिगादु । इदि नीतिगा; दिंक नी तलंपुडुगु;
नीवु लंककु बोयि नेंम्मदि नुंडु; । मेविधंबुनैन निदि यकार्यंबु;

व्याघ्र (बाघ)-रूप धारणकर, उसे (राम को) तप के कारण कृश (दुर्बल) मानकर, गया। तब की क्या कहूँ ? तीन अंबक (बाण) तीनों पर डाले। वे दोनों मर गये। शेष-आयु की महिमा (पता नहीं) कैसी है ? मैं किसी प्रकार से यहाँ गिरकर, अपने को प्राणयुक्त समझकर, तब से लेकर राम के अतुलविक्रम की चिन्ता (विचार) कर, अपने पौरुष को छोड़कर, रव, रथ, रमणीय, रवि, रति, रत्न आदि रेफ (रकार) आदि में होनेवाले शब्दों को सुनकर, उसका स्मरण होनेपर भीत होते हुए, इस प्रकार तपस्वी हो, यहाँ पड़ा हुआ हूँ। हे रावण ! (तुम) राम के पौरुष को नहीं जानते। ॥ ८१० ॥

—(शूर्पणखा) अपने भद्देपन के बारे में सोचती नहीं, अपने बारे में सोचती नहीं, स्वयं प्रेरित हमारी शूर्पणखा का, स्वयं जाकर—अनुपमगुणधाम, अभिराम, राम को देखकर, इस प्रकार आसक्त होना क्या उचित था ? उसने अपनी दुर्दशा स्वयं कर ली है। उसके लिए मन में क्रुद्ध हो, जाकर, परुषता से, खरदूषणादि राक्षस रघुराम की बाणाग्निशिखाओं में भस्म हो गये। इन (सब) के लिए तुम क्यों विपरीत बुद्धि से श्रीराम से वैर मोलकर, नष्ट होना चाहते हो ? यह (सु) विचार नहीं है, यह बुद्धि (संगत) नहीं है, यह नीति (संगत) नहीं है। इस विचार को छोड़ दो। तुम लंका में जाकर सुख से रहो। किसी भी प्रकार से (विचार

कावुन निपुडेनु गडगिपोदु ननु । पोव रामुनिचेत बोवुब्राणम्मु;
लेनु नीकपकारमॆन्नडु सेय; । नेनु नीकॊंककीडु निच्च जिंतिप;
बूनि नीविपुडु ना बुद्धि बाटिंपु; । मेनेमि चॆप्पिन हितवुगा गॊनुमु;
८२०

‘ऒच्चॆमॆंचक कार्यमॊनरिंचितेनि । निच्चॆद सगराज्यमे’ नंटि विपुडु
चॆच्चॆर रघुरामु जॆनकि ये ब्रतिकि । वच्चुट किदु नॆव्वडु पूट चॆपुम ?’
यनि यिट्लु मारीचुडाडु वाक्यमुलु।विनिरावणुडु क्रोधविवशुडै पलिकॆ;
लोकैकभर्त; द्रिलोकभीकरुड; ।ना कॆक्कुडनि यॊक्क नरुनि जॆप्पॆदवु;
कडुब्राणभयमुन गाऱुलाडॆदवु; । विडुवक नाकॊक्क वॆऱपु सॆप्पॆदवु;
नन्नु राजनुचु मनंबुन गॊनवु; चिन्नपुच्चॆदवेनु जॆप्पिन पनुलु;
नीवेमिटिकि नाकु ? निनु दोडुवेड। नीविधि वच्चॆने यिप्पुडु नाकु’
ननि चंपगडगिन नतनि रोषंबु । गनुगॊनि मदिलोन गडु विचारिंचि
मारीचु ‘डी नीचमरणंबुकंटॆ । ना रामुनिचे जच्चुटदि यॊप्पु’ ननुचु
दनुजाधिपति जूचि ‘तगुनीति नीकु। गॊनकॊनि चॆप्पिन गोपमेमिटिकि ?
८३०

कर देखने पर) यह अकार्य है । अतः यह कहकर कि अब मैं प्रयत्नकर जाऊँगा, तो राम के हाथ (मेरे) प्राण जाएँगे । मैं कभी तुम्हारा अपकार नहीं कर सकता । मैं मन से कभी तुम्हारा अनभला नहीं चाहता । चाहकर तुम अब मेरे विचार को मान लो । मैं जो भी कहूँ उसे अपना हित मान लो ।॥ ८२० ॥

—आगे-पीछे न सोचकर, कार्य करोगे तो आधा राज्य दूँगा, ऐसा अब कहा था । (किन्तु) झट से रघुराम को छेड़कर, मेरे जीवित लौट आने के लिए यहाँ कौन (मेरा) रक्षक है?’ ऐसा कहे मारीच के वचनों को सुनकर रावण क्रोध-विवश हो बोला:—‘मैं लोकैकभर्ता, त्रिलोक भीकर हूँ । मुझसे एक नर को श्रेष्ठ बतलाते हो ? अधिक प्राणभय से बकवास करते हो ? न छोड़कर मुझे भी भय बताते हो ? मुझे मन से (अपना) राजा नहीं मानते हो । मेरे कहे कार्य को न कर मुझे अपमानित करते हो । मुझे तुम्हारी आवश्यकता ही क्या है ? मेरी ऐसी क्या दुर्दशा आ पड़ी है (जो मुझे तुम्हारी सहायता माँगनी पड़े) ?’ ऐसा कहकर (मारीच को) मारने गया, उसके रोष को देखकर, मन में अधिक चिन्तित हो, मारीच यह सोचकर कि इस नीचमरण की अपेक्षा राम के हाथ मरना संगत है, दनुजाधिपति को देखकर बोला:—‘उचित नीति (की बात) कहने पर इतना क्रोध क्यों ? ॥ ८३० ॥

मञ्चि बुद्धि सॅप्पिन मंत्रुल बट्टि । नञ्कदलंचु भूनायकुल् गलरें ?
नीवेमि चॅप्पिन नी चॅप्पिनट्ल । काविप गलवाड गडमुट्ट' ननग
ननुरागमुन बॉन्दि यतनि मन्निंचि । तन रथमॅक्किंचि तद्द्यु ब्रीति
नसमानवेगुडै यतडुनु दानु । नसुराधिपति वच्चॅनट बंचवटिकि;
नट्टिदकादें कामातुर बुद्धि । यॅट्टुनु जॅडुत्रोव नेटिकि रोयु; ८३५

मारीच मायामृगमु

नायॅड मारीचुडरदंबु डिग्गि । या यसुराधिपुडपुडु प्रार्थिप
मायावि गान नमानुषमहिम । मायामृगाकृति मदि विचारिंचि
मेलैन कनकंबु मेनुनु निंद्र । नील नीलायतनेत्रयुग्मंबु
पवडंपु बॉमलुनु भासिल्लु वज्र। निवहकर्णबुलु नीलवालंबु
बॉलुचु पच्चल श्रृंगमुलु मुत्तियमुल। तॉलकुलु रत्नबिंदुवुलैन पॉडलु
८४०
राजिल्लु नवपद्मरागोदरंबु । राजित खुरमुलु रम्यमै मॅञ्य
जगतिपैं रोहणाचल मॉप्पु मिगुल । मृगरूपमै वच्चि मॅलगुचुन्नदियॉ ?

—अच्छा उपदेश देनेवाले मंत्रियों को पकड़कर, मार डालने की (बात) सोचने वाले भूनायक (राजा) भी कहीं होते हैं ? तुम जो भी कहो, तुम्हारे कहे जैसा, (कार्य के) अन्त तक करनेवाला हूँ ।' (ऐसा) कहने पर अनुराग को प्राप्तकर, उसे क्षमाकर (अथवा सम्मानकर), अपने रथ पर आरूढ़ करवाकर, फिर प्रीति से असमान वेगवाला होता हुआ, उसके साथ स्वयं असुराधिपति उधर पंचवटी में आया। ऐसी ही है न कामातुर-बुद्धि ! वह किसी प्रकार के कुमार्ग (को अपनाने) से घृणा नहीं करती। ॥ ८३५ ॥

मारीचरूपी-मायामृग

उस समय मारीच रथ से उतरकर, उस असुराधिप के तब प्रार्थना करने पर, मायावी होने के कारण अमानुष महिमा से मायामृग की आकृति का मन में विचारकर, (मायामृग का रूप धारण किया)। स्वच्छ कनक जैसी देह, इन्द्रनील-से नीलायत (नील और विशाल) नेत्रयुग्म, प्रवाल-सी भौंहें, भासमान वज्र-निवह-से कर्ण, नील वाल (पूंछ), सुन्दर मरकत के-से सींग, मोती-से (और) रत्न बिन्दुओं के-से धब्बे, ॥ ८४० ॥ —विराजित नवपद्मराग-सा उदर, रजत-से खुर, (आदि से) रम्य बन, प्रकाशमान होते हुए (वह मृग ऐसा लग रहा था) मानों रोहणाचल

ऒन्डेनि राहुवु कुलिकि राकेंदु । मंगलमृगमुर्वि मलयुचुन्नदियॊ ?
कादेनि राक्षसक्षयमु गाविंप । नादट जिंतिंचि यब्जसंभवुडु
मॆऱुगु लॆल्लनु गूर्चि मृगमुगाविंचि । कऱटियै पुत्तेरगा वच्चिनदियॊ ?
जानकि नॆऱिवेणि शक्रनीलमुल । ना नातिदंतंबु लाणिमुत्तॆमुल
भामिनि कॆम्मोवि पवडंपुलतल । गामिनि चॆक्कुलु कळ्कु वज्रमुल
वैदेहि तनुकांति वैडूर्यमणुल । ना देवि नूगारु हरित रत्नमुल
भामपाणि द्युतुल् पद्मरागमुल । गोमलि नखकांति गोमेधिकमुल
बट्टुतेजमुन जाल बरिहसिंचुटयु । नदुल गीड्पडि वच्चि यखिलरत्नमुलु
८५०

रत्नगर्भात्मजारत्नंबु नलप । यत्नंबुतो मृगंबै वच्चिनवियॊ ?
'सीतकै तनविल्लु सेकॊनि विऱिचॆ; । नी तऱि रघुरामु नॆलयितु' ननुचु
हरुडु पुत्तेरगा नातनिचेति । हरिणमिच्चोटिकि नरुदॆन्चिनदियॊ?
सीतमोमुनकोडि सीत भ्रमिंप । शीतांशुडनुप वच्चिन मायलेडॊ ?

बड़ी सुन्दरता से मृग-रूप धारणकर, जगती पर विचरण कर रहा हो। अथवा राहु से भीत होकर राकेन्दुमंडल (चंद्रबिंब) का मृग उर्वी (पृथ्वी) पर विचरण कर रहा हो। नहीं तो राक्षस-क्षय करने के लिए प्रेम से विचार कर, अब्जसंभव के सभी कान्तियों को एकत्रकर, कपट-मृग बनाकर भेजने पर आया हो। जानकी की कुटिल वेणी के, इन्द्र नीलमणियों का, उस नाति (स्त्री) के दाँतों का, निखरे मोतियों का, भामिनी के अरुण ओष्ठों का, प्रवाललताओं का, कामिनी के कपोलों का, श्रेष्ठ वज्रों का, वैदेही के शरीर की कान्ति का, वैढूर्य मणियों का, उस देवी की रोमराजि का, हरित रत्नों का, भामा की पाणि-द्युतियों का पद्मरागों का, कोमली की नख-कान्तियों का, गोमेधिकों का, पटुतेज से अधिक परिहास करने पर (अर्थात् जानकी के शरीर का प्रत्येक अंग किसी न किसी तुलनीय रत्न से अधिक सुन्दर था) अखिल रत्न मानों इस प्रकार (मायामृग के शरीर के अंग बनकर) ॥ ८५० ॥

—रत्न गर्भात्मरत्न (सीता) को सताने के प्रयत्न से मृग बनकर आये हों। 'सीता के लिए चाहकर मेरे धनुष को तोड़ा है। इस समय मैं रघुराम को सताऊँगा' यों कह (सोच) कर, हर (शिव) के (वहाँ) आनेपर, उनके हाथ का हरिण शायद यहाँ आया हो। (या यह) सीता के मुख (सौंदर्य) से हारकर, सीता को भ्रम में डालने के लिए शीतांशु (चन्द्र) के भेजने पर आया हिरन हो। इस प्रकार चित्र वर्णों की दीधितियों (कान्तियों) से समन्वित होकर, एक (वर्ण) का दूसरे के साथ शोभित

यन जित्वर्णंबुलैन दीधितुलु । बॆनगॊनि यॊन्डॊन्ड पॆर्चि शोभिल्ल
गपटसारंगमै कदिय नॆतॆन्चि । युपमिप नरुदैन यॊप्पुल नॊप्पि
नॆमकुचु बुलुमेयु; निजवालरुचुल । रमणमै वनमयूरमुल नाडिंचु;
दऱमिडि यॊकमाऱु तन मेनि रुचुल। बऱपैन बनमॆल्ल बसिडि गाविंचु;
नॊकमाऱु चॆंगुन नुप्परंबॆगसि । प्रकटिंप नतुल शंपालतारुचुल; ८६०
दऱिगॊनि यॊकमाऱु तन पार्श्वरुचुल। नॆऱि जंद्रकांतमुल् नीऱु गाविंचु;
मृगयूथमुल गूडि मॆलगि पुल् मेयु । मृगमुल बॆदरिंचु; मॆल्लन डागु;
नंतंत बॊडसूपु; नट जेरवच्चु; । नंतलो बॆदरि बिट्टडरि कुप्पिचु;
दरुल नीडल केगु; दग बर्णशाल । जॊरबाऱु, नंतनॆ स्रुक्कि कॆळ्ळुरुकु;
वसुध मूकॊनि चूचु; वालमल्लार्चु; ।दॆसलकु जॆवि सॆर्चि तॊलिय नालिंचु;
गंचु मिंचै पाऱु; ग्रम्मऱ जेरु; । गुंचिताकृति जॆविकॊन गदलिंचु;
बच्चिचक पट्लपै बवळिंचु; लेचु;। मच्चिचक नच्चोटि मौनुल जेरु;
खुरमुल जॆवि गोकु; गॊम्मुलतुदल ।विरुलतीग गदलिंचि विरुलॆल्लराल्चु;
नंदंद यंदमै या पर्णशाल । मुंदऱ मृगमिट्लु मॊदिंचुचुंडॆ ।

होनेपर, कपट सारंग बनकर निकट आकर, उपमित करने के लिए अपूर्व सुन्दरताओं से शोभित हो, वह मृग (कभी) खोजता हुआ, घास चरता हुआ, निज वाल (पूँछ) रुचियों (कान्तियों) से रमणीय बन, वनमयूरों को नचाता हुआ, शीघ्रता से एक बार अपने शरीर की कान्तियों से विस्तृत समस्त वन को सुनहरा बनाता, कभी सिकुड़कर एक बार चौकड़ी भरकर, त्रिदशेन्द्रचाप (इन्द्र धनुष) के समान लगता, एकबार झट से आकाश की ओर उछलकर, अतुल शंपालताओं की रुचियों को प्रकट करता, ।। ८६० ।। —एकबार अपनी पार्श्वरुचियों से सुन्दर चन्द्रकान्त (मणियों) को लज्जितकर देता, मृगसमूहों से मिलकर विचरणकर घास चरता, मृगों को डराता, धीरे से छिप जाता, जहाँ-तहाँ प्रकट हो जाता, कभी नियराता, इतने में डरकर अतिभीत होकर, छलांग मारता, तरुओं की छाया में जाता, ढंग से पर्णशाला में प्रवेश करता, इतने में सिकुड़कर छलांगें भरता, वसुधा को सूँघकर देखता, पूँछ को हिलाता, दिशाओं में कान खड़े कर (मानों किसी विषय को) जानते हुए सुनता, अदृश्य हो दौड़ता, फिर से नियराता, कुंचित आकृति से कान के छोर को हिलाता, घास के मैदान पर लेट जाता, उठता, प्रेम से वहाँ के मुनियों के पास पहुँचता, खुरों से कान को खुजलाता, सींगों के आखिरी भागों से (नोक से) पुष्पलताओं को हिलाकर, सभी फूलों को गिरा देता। इस प्रकार वह हिरन, जहाँ-तहाँ सुन्दर बन, उस पर्णशाला के आगे बड़ा मुदित होता रहा। उस समय

ना वेळ सीतयु नलरुलु सिदुम । लावण्यसीम यल्लन बर्णशाल ८७०
मंजुलशिंजानमंजीर रवमु । रंजिल्ल वॆडलि सौरभमुल बॊदलु
पॊदलु डायुचु विरुल् पॊसग गोयुचुनु । मदिकि विस्मयमैन मायंपुलेडि
गनुगॊनि वैदेहि कडुजोद्यमंदि । यिनकुलाधिपु जूचि यिट्लनि पलिकॆ
'नी पॊन्त वितयै यिदि यॊक्क मृगमु। भूपाल ! चूचितॆ पॊदलुचुन्नदियु;
जूपुल किंपार सॊम्पु गलिंपप । नेपारियुन्नदि येमि चोद्यंबु !
एन्नडु बॊडगान मिन्निचंदमुल । वन्नॆलमृगमुल वनभूमुलंदु;
जगतीश ! यीमृगचर्मंबुनंदु । दगिलि सुखिप नॆन्तयु वेड्क वुट्टॆ;
दिननाथकुलनाथ! दीनि वॆन्दगिलि। चनि येसि वॆस जंपि चर्मंबु दॆम्मु;
अदियेल ? ये युपायंबुन दीनि । जॆदरक पट्टि तॆच्चॆदवेनि मिगुल
मंचिदि; प्राणेश ! मन वनवास । मॆन्चग नीडेरॆ; नी पैडिमृगमु ८८०
बुरिकि वेडुक गॊनिपोयि यत्तलकु। भरतादुलकु वेड्क परुपंग वच्चु'
ननि सीत प्रीतिमै नाडु वाक्यमुलु । विनि लक्ष्मणुडु रामविभु जूचि
पलिकॆ;

लावण्यसीमा सीता भी फूल चुनने के लिए धीरे से पर्णशाला से ।। ८७० ।।

—मंजुल-शिंजान (नूपुर)-मंजीर-रव के रंजित होनेपर, निकलकर, सौरभों से महकनेवाली झाड़ियों को नियराते हुए, ढंग से फूल चुनने लगी। मन को आश्चर्यचकित कर देनेवाले माया-मृग को देखकर वैदेही अतिचकित होकर, इनकुलाधिप (सूर्यवंशी राजा = राम) को देखकर इस प्रकार बोली:—'हे भूपाल ! देखा, इस ओर अद्भुत यह एक मृग विचरणकर रहा है। क्या आश्चर्य है, यह चितवनों को सुन्दर लगते हुए, मनोहरता से शोभित है। वनभूमियों में कभी इतने प्रकार से सुन्दर मृग को देखा नहीं है। हे जगदीश ! इस मृग के चर्म पर सुखी होने के लिए अत्यधिक कुतूहल उत्पन्न हुआ है। हे दिनकुलाधिनाथ ! इसके पीछे लग जाकर, (बाण) डालकर, झट से मारकर चर्म लाओ। वह क्यों ? किसी भी उपाय से इसे परेशान किये बिना पकड़ लाओगे तो बहुत अच्छा होगा। हे प्राणेश ! सोचकर देखनेपर हमारा वनवास सार्थक हुआ है। इस स्वर्णमृग को ।। ८८० ।।

—नगर में प्रसन्नता से ले जाकर, सासों, भरतादियों को प्रसन्न किया जा सकता है।' इस प्रकार सीता के प्रीति से युक्त वाक्यों को सुनकर लक्ष्मण राम-विभु को देख बोला:—'पृथ्वी पर मृगराज के भी ऐसा शरीर नहीं है। तब साधारण मृग का ऐसा शरीर कहाँ हो सकता है ? यह मायामृग है।

'मृगराजुनकु निट्टि मेनुलेदुर्वि; । मृगमात्रमुनकिट्टि मेनॆन्दु गलदु ?
मायामृगमु; दीनि मदि नम्मदगदु; । मायावुलसुरुल माय गानोपु !
नदियुगाकिचटि संयमुलु 'मारीचु । डदयुडै मायावियै यिदु मॆलगु'
ननि पल्क विनमॆ? या यसुरगाबोलु! मनल भ्रमिप नी माड्कि नेतॆन्चॆ !'
जित्तंबु दीनिपै जेरिचि मीर । लुत्तलपडि पट्ट नूहिंपवलव
दारय वैदेहि यतिमुग्धयैन । मीरुनु मुग्धुले मेदिनीनाथ !
यनिन रामुडु सीत याननांबुजमु ।गनुगॊनि नव्वि लक्ष्मणु जूचि पलिकॆ;
'जलियिंप नेटिकि सौमित्रि! यित ? । यिल राक्षसुल मायलॆदुरुने नन्नु ?
८९०

मृगमेनि गॊनिवत्तु; मेटिरक्कसुल ।दॆगनेसि पॊलिवुत्तु; दॆलियुमु नीवु;
मगुड नॆक्कड बोवु मायामृगंबु; । दॆगुवमै लक्ष्मण! दीनि वॆन् दगिलि
यिंपार लक्ष्मण ! यिप्पुडे दीनि । जंपि चर्ममु दॆच्चि जानकि कित्तु;
निन्नि नाळ्ळकु सॆलवी कॊर्कि वेड । जिन्नवुत्तुनॆ सीत चॆप्पिन चेत ?
हितमतिवै पूनि यी पर्णशाल । नतिव नेमरकुंडु' मनि यप्पगिंचि ८९५

मन से इसपर विश्वास नहीं करना चाहिए। यह शायद मायावी असुरों की माया हो सकती है। यही नहीं, यहाँ के संयमियों का यह कहना नहीं सुना कि यहाँ मारीच अदय (निर्दय) हो घूमता रहता है। (शायद यह) वही राक्षस होगा जो हमें भ्रम में डालने के लिए इस विध आया है। इस पर मन लगाकर आप जल्दबाजी न कर, (इसे) पकड़ने का विचार मत कीजिए। सोचने पर वैदेही अतिमुग्ध है तो हे मेदिनीनाथ ! आप भी मुग्ध (भोलेभाले) हैं ?' (ऐसा) कहने पर राम सीता के आननांबुज को देख, हँसकर लक्ष्मण को देख (संबोधनकर) बोले:—'हे सौमित्र ! इतने से विचलित क्यों हो ? पृथ्वी पर राक्षसों की मायाएँ मेरा सामना कर सकती हैं ? ॥ ८९० ॥

—तुम यह जान लो कि मृग ही लाऊँगा या श्रेष्ठ राक्षसों को काट मार डालूँगा। (यह) मायामृग फिर और कहाँ जा सकता है ? हे लक्ष्मण ! इसका पीछाकर, सुन्दरता से, अभी इसे मारकर, चर्म लाकर, जानकी को दूँगा। इतनी अवधि के बाद (जानकी ने) यह इच्छा प्रकट की, उसे (पूरा) न कर सीता को उदास बनाऊँगा ? (नहीं) हितमति (वाले) होकर, सयत्न इस पर्णशाला तथा नारी के प्रति असावधान मत रहो।' (ऐसा) कहकर, सौंपकर, ॥ ८९५ ॥

रामुडु मायामृगमुनु वॆन्टाडुट

यल्लन रघुरामुडनुजु चे नुन्न । विल्लंदि मोपॆट्टि वॆऱवॊप्प गदलि
यागमृगंबु मुन्नथि वॆन्कॊनिन । यागजासुर-वैरि यन जॆन्नुमीऱि
कॊन्कुचु बॊदमऱुगुन बॊन्चि पॊन्चि । क्रुंकुचु नंतंत गूडदाटुचुनु
मगिडि चूचुटयुनु मऱुगुन निलिचि । तगुलुचु बट्टंग दमकमंदुचुनु
विल्लुनम्मुलु वॆन्क व्रेलिचि पट्टि । यल्लन जरणंबुलवनिपै निडुचु ९००
जप्पुडु गाकुंड जनुचु बट्टुटकु । जॊप्पुनु नॊप्पुनु जूचि डायुचुनु
'नदॆ चॆरॆ बट्टॆद; नदॆ चॆरॆ' ननुचु । 'नदियॆं लोबडियॆं ना' कनि चॆलंगुचुनु
निव्विधंबुन बोव नेचि या मृगमु । दव्वुल बॊडसूपु; दनु जेरवच्चु;
बट्टबोयिन मिट्टिपडि पाऱिपोवु;। गट्टल्क रामुनि गनि यट्टॆ निलुचु;
ललि दॆसलकु बाऱु; लालतो गूड। सॊलवुल बुलुराल्चु; जॆष्टलु मानु;
नॆसगि क्रेवलवच्चु; नॆगसि क्रॆळ्ळुऱुकु; । बसमिंचि मिन्नुलयै बाऱुचुंडु;
गुप्पिचि दाटु जॆन्गुन; दीगमॆऱुगु । द्रिप्पिनगति जिह्व द्रिप्पुनंदंद;
कॊऱवि द्रिप्पिनरीति गुम्मरि सारॆ। तॊऱगुन भ्रमरिगा दिर्दिर दिरुगु;

राम का मायामृग का पीछा करना

धीरे से रघुराम अनुज के हाथ का धनुष लेकर, (डोरी) चढ़ाकर, ढंग से (ऐसे) निकल पड़े मानों पूर्व में इच्छा से मायामृग का पीछा करने वाले गजासुर-वैरी हों। अधिक सुन्दरता से, झिझकते झाड़ी की आड़ में छिपते-छिपते हुए, झुकते हुए, यहाँ-वहाँ छलांग भर पार करते हुए, पीछे मुड़ देखते हुए, आड़ में खड़े होकर, पकड़ने के लिए उतावले होते हुए, धनुष-बाण पीछे की तरफ लटकाकर रख, धीरे से चरणों को अवनि पर रखते (दबे-पाँव चलते) हुए, ।। ९०० ।।

—(उस हिरन को) पकड़ने के लिए खामोशी से जाते हुए, अवसर को देख नियराते हुए, 'यह पहुँचा, पकड़ा, यह मिला', 'बस, मेरे हाथ में आ गया' कहते हुए विचरण करते गये। इस प्रकार (राम के) जानेपर, (उन्हें) सताते हुए वह मृग (कभी) दूर पर दिखाई पड़ता, (कभी) निकट पहुँचता, पकड़ने जाने पर, उछलकर भाग जाता, अधिक क्रोध से राम को देख, वैसे ही खड़ा रहता, चंचलता से दिशाओं में (इधर-उधर) भागता, लार के साथ घास (के तिनकों) को होंठों से टपकाता, गति को छोड़ देता (निश्चल खड़ा रहता), उकसाने के लिए पार्श्व में आता, उछलकर छलांगें भरता, अधिक सामर्थ्य से आकाश (मार्ग) पर दौड़ता रहता, झट से उछलकर छलांग भरता, कभी-कभी बिजली की चमक के

बडलिन गति म्रॊग्गु; बज्ज केतेर। वडि साळुवंबु कैवडि मिंटि कॊंगयु;
नलसि रामुडु वॆऱगंदि निल्चुटयु। गॆलकुल बॊंडसूपु; गिकुरिंचि तॊलगु;
दॆगि येय दलप नदृश्यमै पोवु; । मगिडि रादलचिन मऱिम्रोल निलुचु;
गलगॊन निब्भंगि गाकुत्स्थरामु। नलयिंचि यलयिंचि यवलकु गदल
गॊनिपोयि कॊनिपोयि घोरदुर्गमुल। गनुब्रामि यटबोव गडगिन जूचि
मायामृगंबनि मदि रामु डॆरिगि । 'दाय ! नीवॆक्कड दप्पिपोयॆदवु ?
९१४

मायामृगमु रामुनिचे गूलुट

अगपडि' तंचु ब्रह्मास्त्रंबु दॊडगि । नगमुलु वडक, नर्णवमुलु गलग
जगमुलु बॆदर, दिक्चक्रंबुलदर । दॆगगॊनि दृष्टि संधिंचि येयुटयु
नालोन नॊऱलुचु ना रूपमुडिगि । 'हा लक्ष्मण !' यनु नार्तरावमुन
दॆसलद्रुवग महादीर्घदेहमुन । नसुवुलु वॆडवासि यसुरयै पुडमि
गूलॆ, राक्षसलक्ष्मि गूलॆ, रावणुडु । गूलॆ, लंकापुरि गूलॆ नन्नट्टु ।

समान जीभ को घुमाता, लुकाठी के समान, कुम्हार के चाक के समान, भ्रमर के समान चक्कर काटता रहता, थके हुए के समान झुक जाता (झुककर बैठ जाता), (राम के) निकट आनेपर बाज़ के समान आकाश की ओर उड़ता, थककर राम के चकित होकर खड़े रह जाने पर, पार्श्वों में दिखाई पड़ता, धोखा देकर निकल जाता, (बाण) चलाने की सोचने पर अदृश्य हो जाता, फिर आने की सोचने पर सामने खड़ा रहता, इस प्रकार काकुत्स्थ राम को विकल बनाते, सता-सताकर उस पार चलकर घोर वनों में ले जाकर, वहाँ राम की आँखों से ओझल हो जाना चाहा। उसे देख राम ने मन में यह जानकर कि यह मायामृग है, (यह कह कि) 'हे शत्रु! तुम कहाँ निकल जाओगे ॥ ९१४ ॥

मायामृग का राम के हाथ मरना

(एक बार) दिखाई देकर ?' ब्रह्मास्त्र का संधानकर, पर्वतों के काँपनेपर, समुद्रों के आन्दोलित होनेपर, जगत् के भीत होनेपर, दिक्-चक्रों के थर्रानेपर, मार डालने के लिए दृष्टि एकाग्रकर, (अस्त्र) डाल दिया। इतने में बिलखते हुए उस रूप को छोड़, 'हा लक्ष्मण !' के आर्त्तरव से दिशाओं के फट जानेपर, महादीर्घदेह से, प्राणों के निकल जाने पर, राक्षस हो (रूप से) पृथ्वी पर गिर पड़ा। (उसके गिरने पर)-राक्षस-लक्ष्मी नष्ट हो गयी, रावण नष्ट हो गया, मानों लंकापुरी ही नष्ट

लंत मायामृगमवनि द्रॆळटयु । संतोषमुन बॊन्दि जानकीविभुडु ९२०
गनुगॊनि मारीचुगा निश्चयिंचि । तनतम्मु माटलु दलचि मॆच्चुचुनु
'सौमित्रि! यदि येमि चंदमो? नेडु । रामुडु निन्नार्तरवमुन जीरॆ;
ननघ! नी वापलुकालिंचि विनवॊ?। विनवॊल्लवॊ ? काक विनरादो
नीकु ?
नुलुकवु; भीतिल्ल; वॊकयित गलग;। वलयवु; शोकिंप; वदियेमि
नीवु ?
नानाविधंबुल ना यंतरंग । मूनिन वगल बॆल्लुडुकुचुन्नदियु;
नडवुल कॊन्टिमै नटु पोयिनाडु;। तडवायॆ, राडु; युद्धंबुन नेडु
कडिदि रक्कसुल कॆक्कड जिक्किनाडॊ ? । तडयक पोवय्य ! धरणीशु
वॆदुक' ९३०
ननि यश्रुपूरंबुलंदंद दॊरुगु । जनकनंदनकु लक्ष्मणुडिट्टुलनियॆ;
'दल्लि! नीवेटिकि दलकॆदु? राम । वल्लभुनकु गीडु वच्चुने यॆन्दु ?

हो गयी । तब मायामृग के अवनि पर गिरनेपर, सन्तुष्ट होकर, जानकी विभु ने ॥ ९२० ॥

—(उसे) देख, यह निश्चयकर कि मारीच है, अपने अनुज की बातों का स्मरणकर, (उसकी) प्रशंसा करते, यह सोच डरते रहे कि 'इस चपल-राक्षस के इस महारव को सुन, सौमित्र और सीता कितना भयभीत हो गये होंगे ?' उस आर्त्तनाद को सुन सीता डरकर झट से पृथ्वीपर (मूर्च्छित हो) गिर पड़ी । (फिर) होश में आकर, दिशाओं को देख, धैर्य को खोकर, लालित्य को खोकर, लक्ष्मण को देख उच्चस्वर से बोलीः— 'हे सौमित्र ! यह कैसा विधान है ? आज राम ने तुम्हें आर्त्तस्वर से पुकारा । हे अनघ ! तुम उन वचनों को ध्यान से क्यों नहीं सुनते हो ? सुनना नहीं चाहते हो ? अथवा तुम्हें सुनाई नहीं पड़ता ? यह क्या तुम विचलित नहीं होते, भीत नहीं होते, तनिक भी व्याकुल नहीं होते, थकित नहीं होते, शोक नहीं करते । अनेक व्यथाओं से मेरा अन्तरंग अनेक प्रकार से अधिक व्याकुल हो रहा है । (राम) जंगलों में अकेला ही गया है । देर हो गयी है, नहीं आया है । आज कहीं युद्ध में दुष्ट राक्षसों के हाथ नहीं फँसा है ? धरणीश को खोजने अविलंब जाओ न ।' ॥ ९३० ॥

—(ऐसा) कह अविरत अश्रुधाराओं को ढारने वाली जनक-नन्दना से लक्ष्मण ने यों कहाः—'हे माता ! तुम क्यों भीत होती हो ? कहीं राम-वल्लभ का अहित हो सकता है ? तुम अपने प्रिय हृदयेश की महिमा नहीं जानती हो ? जानकर भी इस प्रकार की बेतुकी बातें करना क्या उचित

नॆऱुगवे नीकूर्मि हृदयेशु महिम ? । लॆऱिगियु वॆडमाटलिट्लाड दगुनॆ ?
निव्वटिल्लॆंडि वग निन्निंत गलप? । नॆव्वडो राक्षसुंडिटु चीऱॆ गाक !
चलियिंचुने रामजगतीशु? इंत । तलकि पल्कॆद; इंत दैन्यमेमिटिकि?
इनकुलाधिपुडेड? नीदैन्यमेड ? । जनकज ! नीवेल चंचलिंचॆदवु ?
दलमीऱि रघुराम धरणीशु दॊडरि। पॊलियक निलुतुरे पोरि राक्षसुलु ?
मिडुतल कार्चिच्चु मीद गर्विंचि । पडि निल्व नेर्चुने भस्मंबु गाक ?
कावुन रामाज्ञ गडचि निन् डिंचि । पोवजूचुट नाकु बुद्धि गादिक;
नी काननलोन निन्निटु डिंचि पोव । ने कीडु वच्चुनो ? ये बोव वॆऱतु; ९४०

नलयक नामाट लात्मलो नम्मु;। तलककु’ मनवुडु धरणीतनूज
यॊलसिन रोषाग्नुलॊगि बर्वुचुंड । नलयुचु सौमित्रि नटु चूचि पलिकॆ;
‘नीवु रामुनि दॆस नॆऱय भक्तुडवु । नीवेल नेडिंत नीचुंडवैति ?
श्रीरामुडट निन्नु जीऱुट विनियु । दारुणमति बगदायचंदमुन
नॆम्मदि नुन्नावु; नीकिदि दगुनॆ? । ‘तम्मुडु प्राज्ञुडुत्तमुडीत’ डनुचु
भूपति निनु नम्मि पोयिनचोट । नी पापवर्तनमेल कैकॊन्टि ?

है ? अत्यधिक व्यथा से तुम्हें व्याकुल बनाने के लिए किसी राक्षस ने ऐसा पुकारा होगा । क्या राजाराम विचलित होंगे ? (नहीं) । इतना डरकर बोलती हो ? इतना दैन्य क्यों ? कहाँ इनकुलाधिप ? कहाँ यह दैन्य ? हे जनकजा ! तुम क्यों विचलित हो रही हो ? अपनी सामर्थ्य का अतिक्रमणकर, रघुराम-धरणीश का सामनाकर, लड़कर, क्या राक्षस मरे बिना रह सकते हैं ? गर्व के मारे यदि शलभ दावानल पर गिरें तो भस्म हुए बिना रह सकते हैं ? अतः राम की आज्ञा का उल्लंघनकर, तुम्हें (अकेली) छोड़ जाने का, अब मेरा मन नहीं मान रहा है। तुमको इस कानन में इस प्रकार छोड़ जाऊँ, तो पता नहीं कौन-सी विपत्ति आ पड़ेगी ? जाने से मैं डरता हूँ । ।। ९४० ।।

—मेरी बातों पर आत्मा में विश्वास करो । डरो मत ।’ ऐसा कहने पर धरणीतनूजा फैलती रोषाग्नियों के प्रकट होने पर, श्रान्त होते हुए, सौमित्र की ओर देख बोली:—‘तुम राम के प्रति पूर्ण भक्त हो । आज तुम इतने नीच क्यों बन गये हो ? वहाँ (से) श्रीराम का तुम्हें पुकारना सुनकर भी, दारुण मति से शत्रु-ज्ञाति के समान प्रशान्त (मन से) हो । यह क्या तुम्हें उचित है ? भूपति (राम) यह सोच कि (मेरा) यह अनुज प्राज्ञ (और) उत्तम है, तुम पर विश्वास रख गये । ऐसी जगह तुमने यह पाप-आचरण क्यों अपनाया ? हाँ, जानती हूँ । राम असुरों

वगु; नेरुंगुदु; रामडसुरुलचेत। देगुट निक्कमुगाग देलिसि नीवर्थि
ननुचितमति बूनि यनुमानमुडिगि। ननु बोन्द दलचेदो नान वोविडिचि?
कादेनि 'गोनिपोयि कैकेयिसुतुनि। कादट नोप्पितु' ननि तलंचेदवो ?
येनु नादगु जीवमी शरीरमुन। बून दलंचुट बुद्धि गादिक; ९५०

दडयक पोयि गोदावरिलोन। बडि प्राणमुलु वातु; बलुकुलिकेल ?'
यनि बेट्टिदपुमाट लवनिज वलुक। विनि लक्ष्मणुडु साल वेदन बोन्दि,
रामु बेर्कोनि कर्णरंध्रमुल् मूसि। दीमसंबुन नाल्गुदिक्कुलु सूचि
'पलु पापमुलु सीत पलुकुचुन्नदियु। देलिय विंटिरे वनदेवतलार !
मीरंदरुनु साक्षि; मेदिनीतनय। घोरभाषल नन्नु ग्रूरत बलिके'
ननि बाष्पचोचनुंडै लक्ष्मणुंडु। दनमदि 'निक निल्व दगवुगा' दनुचु
'दल्लि! ये निदे पोयि तडयक नीदु। वल्लभु गोनिवत्तु; वगवकु' मनुचु,
'निनु दल्लिमारुगा नेनु भाविंतु;। ननु जित्तमेरियमिन्नक याडितिट्टु;
लेनु बोयेदनम्म! यिदि नीकु गीडु। गानोपु' ननुचु निक्कमुगाग बलिकि
पर्णशालकु जुट्टु बरुलेडु व्रासि। वर्णिचि 'यी बरुल् वडि दाटकम्म!
९६०

के हाथ अवश्य मरेगा, यह जानकर, तुम स्व-इच्छा से अनुचित मति से, संकोच छोड़, प्रतिज्ञा (अग्रज के दिए वचन) को छोड़, संभवतः मुझे प्राप्त करना चाहते हो। अथवा यह सोच रहे हो कि (सीता को) ले जाकर कैकेयी-सुत को स्नेह से मना लूँगा'। (अब) मुझे अपने जीव (प्राण) को अपने इस शरीर में धारण किये रहने की सोचना उचित नहीं है।॥ ९५० ॥

—विलम्ब न करके जाकर गोदावरी में डूब प्राण छोड़ दूँगी। अब अधिक बातें क्यों ?' इस प्रकार सीता के कठोर वचन कहने पर, सुनकर लक्ष्मण अत्यधिक व्यथित हुआ। राम का नाम लेकर (राम-राम कह-कर), कर्णरन्ध्र बन्दकर, चारों दिशाओं (ओर) में देखकर बोला:—'हे वनदेवताओ ! खूब सुन रहे हो न। सीता अनेक पाप (-युक्त वचन) बोल रही है। आप सभी साक्षी हैं। मेदिनीतनया ने क्रूरता से घोर भाषाएँ (कठोर वाणी) मेरे प्रति कही हैं।' (ऐसा) कह सजललोचन हो लक्ष्मण ने मन में सोचा कि अब रुकना उचित नहीं है। (फिर) कहा:—'हे माता ! यह मैं अभी विलम्ब न कर तुम्हारे वल्लभ को ले आऊँगा। दुःख मत करो। मैं तुम्हें माता-सम मानता हूँ। मेरा चित्त व्याकुल हो जाए, इस प्रकार कटु वचन कहे हैं। अब मैं जाऊँगा। सम्भवतः यह तुम्हारे अहित के लिए होगा।' ऐसा सत्यता से कह पर्ण-

एव्वडे नी बरुल् वॆंस दाटि वच्चु । नव्वीरवरु तललवियु नाक्षणमॆ’
यनि पल्कि यनलुनि नपुडु प्रार्थिंचि । ‘वनित नेमरकु नी’ वनि
यॊप्पगिंचि
जगती तनूजकु सद्भक्ति म्रॊक्कि । पॊगुलुचु रामु चॊप्पुन बोयॆ; नंत
९६३

सीतापहरणमु

नत्तरि रावणुंडरुदार वेचि । युत्तलंबुन जित्तमुलुकुचुनुंड
गरमुन दंडंबु घनकमंडलुवु । नुरुललाटंबुन नूर्ध्वपुंड्रंबु
गॊलदुलौ व्रेळ्ळनु गुशपवित्रमुलु । बॊलुपॊन्दु पेरुरंबुन जन्निदमुलु
नरुदार वलकेल नक्षमालिकयु । सरि बूनियुन्न काषायवस्त्रमुलु
दुलसिपूसलपेर्लतोड मुंदरिकि । वलनॊप्प नॊक कॊन्त व्रालिन मॆडयु
बडुगुदेहंबुनु बावलु जिपि । गॊडुगुनु वॆड मुडिगॊन्नट्टि शिखयु
नलवड गपट सन्यासिवेषंबु । विलसिल्ल वॆडवॆड व्रेळ्ळॆन्निकॊनुचु
९७०

शाला के चौतरफ़ सात रेखाएँ खींच, वर्णनकर कहा:--‘हे माता ! झट से इन रेखाओं को पार मत करो । ॥ ९६० ॥

--जो कोई झट से इन रेखाओं को पारकर आएगा, उस वीरवर के सिर उसी क्षण नष्ट हो जाएँगे ।’ ऐसा कहकर अनल से तब प्रार्थनाकर, यह कह कि ‘वनिता (सीता) के प्रति तुम असावधान मत बनो’ (उसे) सौंपकर, जगतीतनूजा को सद्भक्ति से प्रणामकर, क्षुब्ध होते हुए राम के यहाँ गये । तब, ॥ ९६३ ॥

सीतापहरण

उस अवसर के लिए रावण अपूर्व रूप से प्रतीक्षाकर, उतावलेपन से चित्त के उद्विग्न होते रहनेपर, कर में दंड (और) घन (बड़ा) कमंडल, उरु (-बड़े) ललाट पर ऊर्ध्वपुंड्र (तिलक), बड़ी-बड़ी उंगलियों में कुश (की बनी) पवित्री, शोभित विशाल उर पर जनेऊ, अपूर्व रूप से दाएँ हाथ में रुद्राक्ष की माला, अच्छे ढंग से धारण किये हुए काषायवस्त्र, तुलसी के मनकों की लड़ियों (मालाओं) के कारण सुन्दरता से आगे की ओर थोड़ी-सी झुकी गरदन, कृशगात्र, फटा-पुराना छत्र, सुन्दरता से बँधी हुई शिखा (आदि से) कपट संन्यासी के वेष को अच्छी तरह धारणकर, शोभायमान रूप से झट-झट उँगलियाँ गिनते हुए, ॥ ९७० ॥

गॊन्निमंत्रंबुलु गॊणुगुचु मुनुलु । दन्नॆरुंगुदुरनि तत्तऱिंचुचुनु
दलकॊन्न मुदिमिचे दल वडकंग । नलयुचु सॊलयुचु नसुरुसुरनुचु
नंतंत निलुचुचु 'हरि हरी!' यनुचु। श्रांति बॊन्दुचु बर्णशाल कॆतॆन्चि
तनु जूचि वनदेवतलु 'जगद्द्रोहि । चनुदॆन्चॆ वी' डनि सभयुलै यॊदुग
निक्कंपु मुनिवोलॆ निलिचिन जूचि । ग्रक्कुन वैदेहि गडुभक्ति मॆऱसि
यक्कपटात्मु संयमि गाग दलचि । म्रॊक्कि हस्तांबुजंबुलु मुकुळिंचि
सौमित्रि व्रासिन चक्कनि बरुलु । नमरंग गडचियु नतिभक्तितोड
बॊलति यभ्यागतपूज गाविंप । गलगुचु गैकॊनि कल्याणि जूचि
'यो भाम! नीविट्टि युग्रदुर्गमुल । ने भंगि जरियिंचॆदिट्लॊन्टि निलिचि!
रतिवॊ? श्रीसतिवॊ? भारतिवॊ? काकुन्न। क्षिति मर्त्यसतुल की चॆलुवंबु
गलदॆ ? ९८०

नीमॊमु पंडुवॆन्नॆलपिंडु दॆगडु; । नी मोवि कॆम्पुऱानिग्गुल दॆगडु;
नी मेनु सौदामिनीलत गेरु; । नी माट सुध तेट नीटुल मीऱु;
नी वेणि जलधरनिकरंबु दऱुमु; । नी विलासंबु वर्णिप ना तरमॆ ?

--कुछ मंत्र गुनगुनाते हुए, कहीं मुनि (जन) पहचान न लें, (इस भय से) घबराते हुए, सिर पर बैठी जरा (बुढ़ापे) के कारण सिर के काँपते रहने पर, थके हुए (के समान) (सन्तापसूचक) लंबी आहें छोड़ते हुए, जहाँ-तहाँ ठहरकर 'हरि-हरि' कहते हुए मानों शान्ति प्राप्त करते हुए, पर्णशाला पहुँचा। उसे (रावण को) देख वनदेवताएँ 'यह जगद्द्रोही आया है' कहकर सभय होकर (एक तरफ़) सटकर रह गयीं। ऐसा वह रावण सच्चा-मुनि-सा खड़ा रहा। उसे देख झट से वैदेही अति भक्ति से प्रकाशित हो, उस कपटात्म को संयमी समझकर, प्रणामकर, हस्तांबुज जोड़कर, सौमित्र की लिखी सुन्दर रेखाओं को ढंग से पारकर, अतिभक्ति से नारी (सीता) ने अभ्यागत की पूजा की। (उस पूजा को) घबराते हुए स्वीकारकर, कल्याणी (सीता) को देख बोला:--'हे भामा! ऐसे अकेली रहकर, किस प्रकार तुम ऐसे उग्र (भयंकर) दुर्गों (वनों) में विचरण कर रही हो? (तुम क्या) रति हो? श्रीसती (लक्ष्मी) हो? भारती हो? नहीं तो पृथ्वीपर की मर्त्यसतियों (मानव-नारियों) के ऐसा सौंदर्य है क्या? ।।९८०।।

—तुम्हारा मुख पूर्ण ज्योत्स्ना के समूह का उपहास करता है, तुम्हारा अधर पद्मराग मणि के सौंदर्य का निरास करता है, तुम्हारा शरीर सौदामिनी-लता का तिरस्कार करता है, तुम्हारी वाणी स्वच्छ सुधा की विलासिता से बढ़कर है, तुम्हारी वेणी जलधर-निकर (समूह) को भगाती (परास्त करती) है, तुम्हारे सौंदर्य का वर्णन करना मेरे बस की बात

तरुणि! नी कौगिट दविलि सुखिंचु। पुरुषुडे तलपोय बुरुषोत्तमुंडु;
कामिनि! नी पौन्दु गलवाडे पूर्ण। कामु; डातडे नित्यकल्याणुडरय;
निच्चट नी युन्कि कॅन्तयु वगपु; । नच्चेरुवय्येंडि नब्जाक्षि! माकु;
नॅलत! नीवॅव्वरु ? नीवेल यित ।नलगॅद विक्काननमुलोन निलिचि?
यंतयु नॅरिंगिपु' मनिन ना सीत । यॅन्तयु भक्तितो निट्लनि पलिकॅ;
'ननघात्म! रघुरामु नतिव; मा तंड्रि।जनकुंडु; दशरथेश्वरुडु मा माम;
ना पेरु सीत; युन्नतकीर्ति राम। भूपति, तम तंड्रि पॊम्मन्न वॅडलि ९९०
काननंबुल नुंड गडगि वच्चुटयु। नेनुनु लक्ष्मणुंडेगुदॆन्चितिमि;
ई याश्रमंबुन नेमु मुव्वुरमु। बायनि नियति दापसुलमै युंड
नॊलसि मा मुंदर नॊक पैडिमृगमु। पॊलयुटयुनु नेनु भूनाथु जूचि
दानि नेगतिनॆन दगिलि तॆम्मनिन। बूनि रामुडु वोयॆ; बोयिन वॆनुक
'हा लक्ष्मणा !' यनु नार्तरावंबु। शूलमै ना चॆवि सोकि काडुटयु
बॊगिलि लक्ष्मणु नेनु बॊम्मन्न बोयॆ;। मगुडि राडिदियेमि माययो ?
येरुग'
ननि पलिक मुनि जूचि 'यनघ! नीपेरु।विनुपिंपुमिटकेल विच्चेसि'तनिन

है ? (नहीं)। हे तरुणी ! तुम्हारे आलिंगन में बद्ध हो, सुख भोगनेवाला पुरुष ही, सोच-विचार करने पर, पुरुषोत्तम है। हे कामिनी ! जिसे तुम्हारा साहचर्य प्राप्त है, वही पूर्णकाम है, विचार करने पर वही नित्य कल्याण (सम्पन्न) है। हे अब्जाक्षी ! यहाँ अब तुम्हारे निवास से हमें अत्यधिक व्यथा और आश्चर्य हो रहा है। हे नारी ! तुम कौन हो ? इस कानन में ठहरकर तुम इतना अधिक दुःख क्यों भोग रही हो ? सब कुछ बताओ।' (ऐसा) कहने पर, सीता ने अधिक भक्ति से यों कहा:--'हे अनघात्म ! (मैं) रघुराम की स्त्री हूँ। हमारे पिता जनक हैं। दशरथेश्वर हमारे ससुर हैं। मेरा नाम सीता है। उन्नत कीर्ति वाले राम-भूपति के अपने पिता के 'जाओ' कहने पर, ॥ ९९० ॥

--निकलकर, सप्रयत्न काननों में रहने के लिए आनेपर, मैं और लक्ष्मण आये हैं। इस आश्रम में हम तीनों अविरत नियम से तपस्वी बन रहते हैं। हमारे आगे एक स्वर्णमृग के उपस्थित होनेपर मैंने भूनाथ को देख कहा, उसका पीछाकर, उसे किसी भी तरह लाओ। (ऐसा कहने पर) राम सप्रयत्न गये। जाने के बाद 'हा लक्ष्मण' का आर्त्तरव शूल बन मेरे कानों में लग चुभ गया। (मैं) संतप्त हो, लक्ष्मण से 'जाओ' कहने पर, वह गया। लौटकर नहीं आया। नहीं जानती कि यह कैसी माया है।' ऐसा कहकर, मुनि को देख कहा:--'हे अनघ ! तुम (अपना) नाम

गॊन्कक तनदैन कुहकत्वमुडिगि । लंकाधिनाथुडाललनकिट्लनियॆ;
'वनजाक्षि! विनु मेनु वनधिमध्यमुन । नॆनय लंकापुरमेलॆडिवाड;
राक्षसाधिपुड, विश्रवसु नंदनुड । यक्षेशु ननुजुंड; नखिल दिग्जयुड;
१०००

रावणुंडनुवाड; रणमुन नॆदिरि । देवासुरुलनैन दॆगटार्चुवाड;
वनित! नी रूपलावण्य संपदलु । विनि, चूड वच्चिति वेड्कलुप्पॊंग;
नवयुचु बेद मानवुनितो गूडि। युविद! नी कडवुल नुंड नेमिटिकि?
ना राज्यमंतयु नलिनायताक्षि! । कोरि येलुचु नीवु गॊमरु दीपिंप
बॊगडॊन्दु पॆम्पुन बुष्पकंबादि । यगु विमानमुलंदु हर्म्यंबुलंदु
सुरगरुडोरगासुरसिद्ध साध्य । वरकन्यकलु गॊल्व वर्तितुगाक !
नी यंघ्रिरुचुलु ना निलयभूमुलकु । नायनि मणिकुट्टिममुलगुगाक !
चॆलुव ! नी चूपुल सिरुलु नामेड । कलुवतोरणमुतो गलहिंचुगाक !
नी मंदहासंबु नित्यंबु नादु । प्रेमांबुनिधिकि जंद्रिक यगुगाक !
रम्मु ना लंकापुरम्मुन' कनुडु । नम्माट विनि सीत यतिभीत
यगुचु १०१०

बताओ। यहाँ क्यों पधारे हो ?' (ऐसा) कहने पर, संकोच न कर अपना कपट (रूप) तजकर, लंकाधिनाथ ने उस ललना (नारी) से यों कहाः—'हे वनजाक्षी ! सुनो, मैं वनधि (समुद्र)-मध्य में स्थित लंकापुर पर शासन करनेवाला हूँ। राक्षसाधिप हूँ। विश्रवसु का पुत्र हूँ। यक्षेश का अनुज हूँ। अखिल दिशाओं का विजेता हूँ। ।। १००० ।।

—रावण कहलानेवाला हूँ। रण में, सामना करनेपर, देवासुरों को भी मार डालनेवाला हूँ। हे वनिते ! तुम्हारी रूप लावण्य-संपदा (के बारे में) सुनकर, अत्यधिक कौतूहल से फूलकर, देखने आया हूँ। कृशीभूत होते हुए, गरीब (अकिंचन) मानव के साथ हे नारी ! तुम्हें इन जंगलों में रहना क्यों ? हे नलिनायताक्षी ! मेरे समस्त राज्यपर चाहकर, मनोज्ञता के दीप्त होने पर शासन कर लो। अधिक सराहनीय विधान से पुष्पक आदि विमानों (तथा) सौधों में सुर-गरुड़-उरग-असुर-सिद्ध-साध्य (आदियों) की श्रेष्ठ कन्यकाओं की सेवाएँ लेते हुए रहो। तुम्हारी अंघ्रियों (चरणों) की कान्तियाँ, मेरी निवास-भूमियों के लिए सदा स्वच्छ रहनेवाले मणिमय कुट्टिम (फर्श) बन जाएँ। हे सुन्दरी ! तुम्हारी चितवनों की श्रियाँ मेरे सौध के लिए कुमुदिनियों के बन्दनवारों से झगड़ती रहें (समान बनने का प्रयत्न करती रहें), तुम्हारा मन्दहास नित्य ही

धीर गावुन वानि दृणमुगा जूचु । तीरुन दनचेति तृणमु जूचुचुनु
'सार प्रतिव्रताचारगा यनक । योरि! नन्निटुलाड नुचितमे नीकु ?
ननिमिषयोग्यपूर्णाहुति शुनक । सुनकु दुर्लभमैन पोल्कि भाविंप
श्रीरामचंद्रुनि जैंन्दिन नन्नु । गोरि कामिंप नीकुनु नेन्नि तललु ?
पौँम्मु गुट्टुन नीदु पुरवरंबुनकु; । नेम्मदि बोक दुर्नीति येमेनि
दलचितिवेनि ना धवुडु राघवुडु । विलसित शस्त्रास्त्रविदितलाघवुडु
हरचंडकोदंडहरण विनोदि । खरदूषणादि राक्षस शिरच्छेदि
निन्नु नीवंशंबु नीरु गाविंचु । नेन्नंग नीकु नायिनकुलाग्रणिकि
नक्ककु सिंहंबुनकु, दोमकुनु । दिक्करिकिनि, बयोधिकिनि गाल्वकुनु
वायसंबुनकुनु वैनतेयुनकु । नेयंतरवु बेद्दलेर्परिपुदुरु; १०२०
आ यंतरवु गल; दट्टुगान नीवु । धीयुक्ति लंककु दिरिगि पौँम्मिक'!
नन विनि रावणुंडाग्रहोदग्र । जनितोग्रदृष्टिमै जानकि जूचि
यनुपमाटोपुडै यारूपमुडिगि । तन मनोवीथि गंदर्पाग्नि मंड

मेरी प्रेमांबुनिधि के लिए चन्द्रिका बने। आओ मेरे लंकापुर में।' (ऐसा) कहने पर, वह बात सुन सीता अति भीत होती हुई ॥ १०१० ॥

—धीरा होने के कारण, उसे तृण सम मानकर, अपने हाथ के तृण को देखते हुए बोली:—'रे! सार-पतिव्रताचार वाली न समझ, मेरे साथ ऐसा कहना तुम्हें क्या उचित है? अनिमिषयोग्य पूर्णाहुति जैसे शुनक के लिए दुर्लभ है, उसी प्रकार श्रीरामचन्द्र की बनी, मुझे चाहकर काम-भाव प्रकट करने को तुम्हारे कितने सिर हैं? चुपचाप अपने पुरवर को जाओ। चुपचाप (लौट) न जाकर कुछ दुर्नीति सोचोगे तो राघव, विलसित शस्त्र-अस्त्र विदित लाघव (नैपुण्य) वाला, हर के चंडकोदंड के भंजन में विनोदी, खरदूषणादि राक्षस शिरच्छेद करनेवाला मेरा पति तुम्हें और तुम्हारे वंश को नष्ट कर देगा। गणना करने पर तुममें और इनकुलाग्रणी में सियार और सिंह, मच्छड़ और दिग्गज, नाला और पयोधि, कौए और वैनतेय (गरुड़) में जिस अन्तर को बड़े लोगों ने बताया है, ॥ १०२० ॥

—वह अन्तर है। यह ऐसा है। (अतः) तुम धीयुक्ति से लंका को लौटकर जाओ।' (ऐसा) कहने पर, सुनकर रावण आग्रह (क्रोध) की उदग्रता (भयंकरता) से उत्पन्न उग्रदृष्टि से जानकी को देखकर, अनुपम आटोप से उस रूप (कपट यति के रूप) को छोड़कर अपनी मनो-वीथि में कंदर्पाग्नि के बलकर दस अवस्थाओं के दिखाई पड़ने के समान,

बदियवस्थलु दोचि भासिल्लु पगिदि । बदितलल् मणिजूटपंक्तुलनॊप्प
नायवस्थल गॊर्कुलवि यिन्मडिंप । बायनिगति नॊप्प बाहुलिर्वदियु
गॊनलिन्मडिंप गॊर्कुलु पल्लविंचॆ । नन रक्तरुचुलैन हस्तंबुलॊप्प
ललि दोचु कॊर्कि पल्लवमुल बुष्प । मुलु वॊलॆ नायुधंबुलु पॊल्पुमिगुल
बरग दिव्यांबराभरणौघकांतु । लरुदार मदनाग्नुलै मंडुचुंड
नतिभीकराकारुडै निल्चुटयुनु । धृति दूलि सीत भीतिल्लि मूर्च्छिल्लॆ;
वडि गालि बडियुन्नवनलत वॊलॆ । बडियुन्न गनुगॊनि पंक्तिकंधरुडु
१०३०

ग्रम्मि यश्रुवुलॊल्क गौदीग युल्क । ग्रॊम्मुडि बिगियूड गुचमुलल्लाड
नंदंद तॆंगि राल हाररत्नमुलु । पॊन्दिन भयशोकमुल मेनु वडक
नच्चारुलोचन नदयुडै येति । तॆच्चि रथंबुपै दॆऱगॊप्प बॆट्टि
दैवंबु प्रेरेप दन पालि मृत्यु । देवत गॊनिपोवु तॆऱगु दीपिंप
नमरारि गॊनिपोव नाकाशवीथि । गमललोचन देऱि कनुविच्चि चूचि
पॆदवुलु दडपुचु बिगिचन्नुदोयि । ब्रिदिलिन पय्यॆद बिगिय जेर्चुचुनु

मणि-जूट-पंक्तियों के साथ दस सिरों के साथ दिखाई पड़ा। उन दस (मन्मथ) अवस्थाओं की इच्छाओं को द्विगुणीकृत कर रहे थे, इस प्रकार निरन्तर बीस बाहु शोभा दे रहे थे। (प्रेम के) अंकुर द्विगुणित होकर, इच्छाएँ पल्लवित हो रही हों, इस प्रकार रक्त की कान्तिवाले हाथ शोभा दे रहे थे। सुन्दरता से दिखाई पड़नेवाले इच्छारूपी पल्लवों के पुष्प हों, इस प्रकार आयुध अधिक शोभित हो रहे थे। शोभित दिव्य-अंबर (के) अरुण-औघ कान्तियाँ अपूर्व रूप से मदनाग्नियों के समान प्रज्वलित हो रही थीं। (इस प्रकार रावण के) अति भीकर आकार से खड़े होनेपर, धैर्य के छूटने पर सीता भीत होकर मूर्च्छित हो गयी। आँधी के मारे (नीचे) पड़ी हुई वनलता के समान, (पृथ्वी पर) पड़ी हुई सीता पंक्तिकंधर ने देखा ॥ १०३० ॥

—(आँखों में) घिरकर, आँसुओं के उमड़ने पर, तनुलता के काँपने पर, वेणीबंध के खुलने पर, कुचों के हिलने पर, हार के टूटने पर, जहाँ-तहाँ रत्नों के गिरने पर, प्राप्त भय-शोक से (सीता का) शरीर काँप रहा था। (ऐसी) उस चारुलोचना को अदय हो, उठा ले आकर रथ पर अच्छे ढंग से रखकर, दैव के प्रेरित करनेपर अपनी मृत्यु देवता को ले जानेवाले विधान के दीप्त होनेपर, अमरारि (राक्षस) सीता को ले जाने लगा। आकाश-वीथि (मार्ग) में कमललोचना होश में आकर, आँखें खोलकर, देखकर, होंठों को आर्द्र करते हुए, ढीले बने आँचल से कठिन कुचद्वय को कसते

वेड्क जकोरमुल् वॆन्नॆलग्रक्कु । माड्कि दम्मुल जारु मकरंदमनग
नाननशशि दोचु नमृतबिंदुवुल । पूनिक गन्नीरु पॊंटपॊंट दॊरुग
नॆलुगॆत्ति कॊंदमकोयिल गूसिनट्लु । पलुमारु विधि दूरि प्राणेशुजीरि
१०३९

जानकी विलापमु

यलतयु गोपंबु नतिविषादंबु । वॆलवॆल पाटुनै विलपिंप दॊडगॆ;
'नो राघवेश्वर! यो रामचंद्र ! । नीरजहितवंश ! नी देवि नन्नु
ननदचंदंबुन नक्कटा ! यिपुडु । कॊनिपोवुचुन्नाडु कुटिल राक्षसुडु;
वेवेग चनुदॆन्चि वीनि मर्दिंचि । काववे ना लज्ज ! गाववे नन्नु
'नेलरा राक्षस! यी निंदनीकु ? । नी लंक नेलरा नीवॆ काल्चॆदवु ?
तगदुरा नीकु नी दारुणक्रममु । दॆगटार्चुरा निन्नु दिविरि राघवुडु'
'कनकमृगंबेल कनुगॊन्टि नॊन्टि?। निनवंशवल्लभुनेल पॊम्मंटि ?
गादन्नपलुकेल कैकॊननैति ? । मेदिनीविभुडेल मृगमु देबोयॆ ?

हुए, कुतूहल से चकोरों के चाँदनी के वमन करने के समान, कमलों से चू पड़नेवाले मकरंद के समान, आनन-शशि (मुख़चंद्र) पर दिखाई पड़नेवाली अमृत बिन्दुओं की तरह आँसुओं के टप-टप् गिरने पर, ऊंचे स्वर से मस्त कोयल के कूकने के समान, अनेक बार विधि को कोसकर, प्राणेश को पुकारकर, ॥ १०३९ ॥

जानकी का विलाप

—व्यथा अथवा थकान, क्रोध (तथा) अतिविषाद से विवर्ण हो (जानकी) (यों) विलाप करने लगी:—'राघवेश्वर ! ओ रामचन्द्र ! हे नीरजहित (सूर्य) वंशवाले ! तुम्हारी देवी—मुझे—अनाथ की तरह हाय ! अब कुटिल राक्षस ले जा रहा है। अतिवेग से आकर, इसका मर्दन (संहार) कर, मेरी लाज की रक्षा करो न ! मेरी रक्षा करो न।' 'क्यों रे राक्षस ! तुम्हें यह निंदा (बदनामी) क्यों ? रे, अपनी लंका को स्वयं क्यों जला रहे हो ? तुम्हें यह दारुण क्रम उचित नहीं है। राघव तुम्हें शीघ्र ही मार डालेंगे।' '(मैंने) कनकमृग को अकेले देखा ही क्यों ? इनवंशवल्लभ को जाने के लिए कहा ही क्यों ? मना करने पर उस वचन को क्यों नहीं ग्रहण किया ? मेदिनी-विभु (राजा) मृग लाने गये ही क्यों ? जगतीश की सामर्थ्य के बारे में क्यों नहीं सोचा ? व्याकुल होकर, कोसकर लक्ष्मण को जाने को क्यों कहा ? ये सब बातें

जगतीशुलावेल चर्चिपनैति?। बोगिलि लक्ष्मणुनेल पोम्मंटि दिट्टि ?
यी पल्कुलेटिकि? निट्टुसेयकुन्न। नापालि विधि येल ननु बोव निच्चु?'
'नन्नु! लक्ष्मण! निन्नु नभिमानधन्यु। गन्नतल्लिग नन्नु गरमर्थि नेन्नु
१०५०

नन्नुतगुणमान्यु नुदित सौजन्यु। नन्नितेऱंगुल नाडिनफलमु
गुडिचिति जेसेत; गोपंबु दक्कि। कडुवेगमुन वच्चि काववे नन्नु!"
'नक्कटा! कैक! नीवडिगिन वरमु। लिक्कड जेकूडेने ? यिटमीद
नीकुमारुंडुनु नीवुनु गूडि। एकातपत्रत नेलुडी वसुध।'
ननि रामविभु जीऱि यसुरेशुदूऱि। तन चेत दैगडि या दैवंबु बोगडि
काकुत्स्थतिलकु लक्ष्मणुगोनियाडि। कैक बोनाडि शोकंबुन मऱियु
'मिथिलेशु कूतुर, मेदिनि बंक्ति। रथुनकु गोडल, रामुनि देवि
वलतुलै काव नेव्वरु लेनि चोट। बोलिदिडि सेऱगोनि पोवुचुन्नाडु;
तरुलार ! ना सहोदरुलार! मीरु। धरणीशुनकु निदितग जेप्परय्य !
'सुरलार! मीरैन सुरवैरि दाकि। वेरवोप्प ना चेऱ विडिपिपरय्य !
१०६०

क्यों ? ऐसा न करती तो मेरी विधि (भाग्य) मुझे चुप रहने देती ?' 'भाई ! लक्ष्मण ! तुम्हें, अभिमान धनी को, अत्यधिक भाव से मुझे माता माननेवाले को, ।। १०५० ।।

—उन्नत गुणों से मान्य को, उदित सौजन्यवाले को, उतने प्रकार से अपशब्द कहने के फल को, स्वयंकृत (के फल) को भुगत रही हूँ। क्रोध तजकर अतिवेग से आकर मेरी रक्षा करो न।' 'हाय ! हे कैकेयी ! तुमने जो वर माँगे थे, वे यहाँ सफल हुए हैं न ? आगे से अपने कुमार के साथ तुम इस वसुधा पर एकच्छत्राधिपत्य शासन करो।' (ऐसा) कह प्रभुराम को पुकारकर, असुरेश को फटकारकर, अपनी करतूत की निन्दाकर, उस दैव (भगवान) की स्तुतिकर, काकुत्स्थ (वंश)-तिलक लक्ष्मण की प्रशंसाकर, कैकेयी को कोसकर, आगे (इस प्रकार कहा):—'(मैं) मिथिलेश की पुत्री हूँ, धरती में (पृथ्वीपर) पंक्तिरथ (दशरथ) की बहू हूँ, राम की देवी हूँ। रक्षा करने के लिए कोई न हों, ऐसे स्थान पर, (यह) मांसभक्षी (मुझे) बन्दी बनाकर ले जा रहा है। हे तरुओ ! हे मेरी सहोदरियो (भूमिज) ! आप लोग धरणीश को उचित रूप से यह (बात) बता दीजिए।' 'हे देवताओ ! कम से कम आप तो सुरवैरी का सामनाकर, ठीक समय से मुझे क़ैद से छुडाइए न !' ।। १०६० ।।

‘निंडिन भक्तितो निन्नाश्रयिंचि । युंडुदु; ननु गाव नुचितमीवेळ;
दगिलि नीवैन गोदावरीदेवि! । जगतीश्वरुनितोड जनि तॆल्पवम्म!”
‘प्रल्लदु चेतिलोबडि चिक्कुवडिति; ।दल्लि ! नीवैननु दग गाववलदे?
भूदेवि ! रघुरामभूपालमणिकि । नी दुरवस्थ पॆम्पॊऱिगिपवम्म !’
वीरु वारनक यी विधमुन जीऱि । ‘नोरॆन्डॆ; धृतिदूलॆ; नॊच्चॆ ब्राणमुलु;
ननु गावरय्य! किन्नरुलार! पुण्य । धनुलार! घनुलार! तापसुलार!
कृतुलार! हितुलार! खेचरुलार! । व्रतुलार! यतुलार! वनपक्षुलार!
करुलार! हरुलार! गंधर्वुलार! । नरुलार! सुरलार! नागेंद्रुलार!’
यनि पॆक्कुभंगुल नम्महीतनय । पॊनुपडि शोकिंप भूदेवि वडकॆ;
गौतमि पाऱक ग्रक्कुन निलिचॆ । नातऱि सकलभूताक्रोशमॆसगॆ; १०७०

‘नन्यायमन्याय’ मनिमुनुल् कपट । सन्यासि रावणु चंदंबु दॆलिसि
पॊगिलिरि शोकाश्रुपूरमुल् दॊरुग । मृगमुलु निलुचुंडॆ मेतलु मऱचि;
पक्षुलु वापोयॆ; बवनंबुलडगॆ; । वृक्षमुल् वाडॆ; नाविलमय्यॆ नभमु;
दिक्कुलु वगिलॆनु; दिनमणि नॊगिलॆ;। ‘दिक्केदि’ यनि धर्मदेवत पॊगिलॆ;

—‘पूर्णभक्ति से तुम्हारे आश्रय में रहती हूँ । इस समय मेरी रक्षा करना समुचित है। हे गोदावरी देवी ! ध्यान देकर तुम तो जगतीश्वर के पास जाकर बता दो न !’ ‘दुष्ट के हाथ में पड़कर फँस गयी हूँ। हे माता ! तुम्हें तो मेरी रक्षा करनी चाहिए न ? हे भूदेवी ! रघुराम-भूपालमणि को इस दुर्दशा की अतिशयता के बारे में बता दो न।’ इस प्रकार सबको पुकारकर (कहा):—‘कंठ सूख गया, धैर्य छूट गया, प्राण व्यथित हुए। हे किन्नरो ! हे पुण्यधनियो ! हे महात्माओ ! हे तापसियो ! हे कृती-जनो ! हे हितू-जनो ! हे खेचरो ! हे व्रतियो ! हे यतियो ! हे वनपक्षियो ! हे करियो ! हे हरियो ! हे गंधर्वो ! हे नर ! हे सुर ! हे नागेंद्रो मेरी रक्षा करो न!’ (इस प्रकार) अनेक प्रकार से वह महीतनया के (सीता) व्यर्थता से विलाप करने पर भूदेवी काँप उठी, गौतमी न बहकर झट से ठिठक गयी, उस अवसरपर सकलभूतों (प्राणियों) का आक्रोश बढ़ चला। ॥ १०७० ॥

—‘अन्याय, अन्याय’ कहकर कपट-संन्यासी (बने) रावण के स्वभाव को जानकर, शोकाश्रु-समूह के प्रवाहित होनेपर, मुनि दुखी हुए। चरना भूलकर मृग खड़े रह गये, पक्षी रोये, पवन बन्द हो गया, वृक्ष मुरझा गये, नभ धुंधला (व्याकुल) हो गया, दिशाएँ फट गयीं, दिनमणि (सूर्य) विकल

वनदेवतलु साल वगचिरि; साधु। जनुलॆल्ल नेड्चरि जानकि जूचि। १०७५

जटायुवु रावणु नॆदिरिंचुट

यत्तरि विहगेंद्रुडरुणतनूजु। डुत्तमसाहसुंडॊक कॊन्डनुंडि युक्कलुंडगु जटायुवु बिट्टु विनियॆ। 'नक्कट! रघुराम!' यनु नार्तरवमु; विनि संभ्रमिंचि निव्वॆरगंदि दिशलु। गनुगॊनि मॊगमॆत्ति गगनंबु सूचि 'यदयुडै रावणुंडारामु देवि। बॊंदिवि यिम्मुल गॊनिपोवुचुन्नाडु नाडीवनंबुन ननु गन्नमॊदलु। पोडिमि घनमैत्रि ब्रोचु राघवुडु; १०८०

तगदिक वर्जिप; दैत्यु निर्जिंचि। तॆगुवमै वैदेहि दॆत्तु; नॊन्डेनि निनकुलाधिपुनकै यिक ब्राणमुल। ननि मॊन नॊप्पितु' नननि निश्चयिंचि कुलिशंबुधार ताकुनकु नॆब्भंगि। नलविगा कॆगयु महाद्रिचंदमुन नुरुशक्ति मॆयिवॆन्चि यूकिंचि यॆगसि। पॊरिबॊरि गिरिशृंगमुलु नुग्गुगाग मरलिचि पुक्किटि मांसखंडमुलु। धरणिपै नुमिसि युदग्रभावमुन

हो गया, धर्म-देवता दुखी हुआ कि (अब मेरे लिए) शरण्य कहाँ है, समस्त वन-देवता बहुत रोये, जानकी को देखकर समस्त साधुजन रोये। ॥ १०७५ ॥

जटायु का रावण का सामना करना

उस अवसर पर विहगेन्द्र, अरुण का तनूज, उत्तम साहसवाला, धुरंधर जटायु ने एक पर्वतपर से 'हाय, रघुराम' के आर्त्तरव को शीघ्र सुना। सुनकर संभ्रमित होकर, चकित होकर, दिशाएँ (चौतरफ़) देखकर, सिर उठा आकाश (की ओर) देखकर, यह निश्चय किया कि 'अदय होकर रावण उस राम की देवी को घेरकर (पकड़), आनन्द से ले जा रहा है। उस दिन इस वन में जब से मुझे देखा, तब से लेकर मनोज्ञता से, महान् मैत्री से राघव (मेरी) रक्षा कर रहा है। ॥ १०८० ॥
—(इस अन्याय का) अब वर्जन किये बिना नहीं रहना चाहिए। दैत्य का संहारकर, साहस से वैदेही को लाऊँगा। नहीं तो इनकुलाधिप के लिए अब युद्धभूमि में प्राणों को पीड़ित करूँगा।' ऐसा निश्चयकर कुलिश (गाज़) (तथा) अंबुधारा के आघात से न दबकर उठनेवाले महाद्रि (महापर्वत) के समान, उरु (महान्) शक्ति से शरीर को बढ़ाकर, दृढ़ निश्चयकर, उड़कर बार-बार गिरिशृंगों के चूर-चूर होनेपर, मुँह में रखे

खरनखंबुलनुन्न करिसिंहशरभ । शिरमुलंतंतन चिद्रुपलै तौरुग
बट्टुतुंडरोचुलु पक्षदीधितुलु । चटुलकोपोग्रलोचनरुचुल् वर्व
बक्षानिलंबुल पर्वतशिखर । वृक्षमुल् विरिगि दिग्वीथुलु निंड
बरगु रावणतम:पटलंबु नडप । नरुदेन्चु मध्यन्दिनार्कुचंदमुन
नासन्नबलु रावणादित्यु म्रिंग । रासि युग्रत वच्चुराहु चंदमुन १०९०
वडि बेर्चि कदियु रावण राहु म्रिंग । दडयक चनुदेन्चु तार्क्ष्युनि भंगि
'निलुनिलु पोकुमु; निलु पोकु पोकु । निलुनिलु; रघुराम नृपचंद्रु देवि
गुटिल राक्षस ! यॆन्दु गौनिपोयॆदिक ? । नॆट्टुपोयॆ ? दॆट्टुपोयॆ ? दॆन्दु
बोयॆदवु ?
पोयिन बोनीनु; पौरिगौन्दु निन्नु । व्रेयुदु; खंडितु; विदळितु; द्रुंतु;
दंडितु; दुंडितु; दललुत्तरितु । जॆन्डु बॆन्डुग' नंचु सीत नीक्षिंचि
'योडकोडकु देवि ! युग्रराक्षसुनि । नीडाडि नी चॆर ने विडिपिंतु'
ननिन या पल्कु महानिदाघमुन । वनमयूरिकि घनध्वनियुनुबोलॆ
वाडिन चॆनिकि वानयु बोलॆ । वॆडुक गौन्त गाविंचिन नलरि

मांस-खंडों को धरणि पर थूककर, उदग्रभाव से खर (तीक्ष्ण) नखों में स्थित करि (हाथी), सिंह, शरभ के सिरों के जहाँ-तहाँ टुकड़े-टुकड़े हो गिरने पर, पटु-तुंड-(चोंच) रोचियों (दीप्तियों), पक्ष (पंख) की दीधितियों (आभा), (तथा) चटुल-कोप-उग्र-लोचन-रुचियों के व्याप्त होनेपर, पक्ष (पंखों) के अनिल से पर्वत-शिखर (पर स्थित) वृक्षों के टूटकर, दिग्वीथियों (आकाश मार्ग) में भर जानेपर, सुशोभित रावण (रूपी) तम:पटल को दूर करने के लिए आनेवाले मध्यंदिन-अर्क (सूर्य) के समान, आसन्न बलवाले रावण (रूपी) आदित्य को निगलने के लिए उग्रता से आनेवाले राहु के समान, ॥ १०९० ॥

—शीघ्रता से क्रम से नियरानेवाले रावण (रूपी) राहु को निगलने आने वाले तार्क्ष्यु की तरह 'ठहरो, ठहरो, मत जाओ, ठहरो मत जाओ, मत जाओ, ठहरो, ठहरो। हे कुटिल राक्षस ! रघुराम-नृपचंद्र की देवी को अब कहाँ ले जाओगे ? कहाँ जाओगे ? कहाँ जाओगे ? किस स्थान पर जाओगे ? जाना चाहो तो भी जाने नहीं दूँगा। तुम्हारा संहार करूँगा। मार डालूँगा, खंडन करूँगा, विदलन करूँगा, टुकड़े कर दूँगा, दंडित करूँगा, तोड़ दूँगा, छक्के छुड़ाकर सिर काट दूँगा'—(ऐसा) कहते हुए सीता को देखकर (कहा):—'हे देवी ! डरो मत, डरो मत। उग्र राक्षस को मारकर, तुम्हें क़ैद से मैं मुक्त करूँगा।' (ऐसा) कहने पर, वह वचन महा-निदाघ (ग्रीष्म) में वनमयूरी के लिए मेघध्वनि की

या सीत वल्कॆ; 'जटायुवा ! नन्नु । नी सुरकंटकुंडॆत्ति युद्वृत्ति
मायचे रामलक्ष्मणुल वंचिंचि । यो योन्न ! कॊनिपोवुचुन्नवाडॆचि
१११०
यनि पल्क विनि यंत नरुणनंदनुडु । घनमैन कोपंबु कडिमियु दोप
नलुकमै रथमुन कड्डंबु वच्चि । प्रळयाभ्रनिर्घोष पटुभाषणमुल
बलुमाऱु दशकंठु भंजिंचि मिंचि । निलिचि यिट्लनियॆ नूनिन धैर्यमॆसग:
'बरमपावनुडैन ब्रह्ममन्मडवु; । वरपुण्यनिधि विश्रवसुतनूजुडवु;
धनदानुजुंडवु; दानवाग्रणिवि; । विनुमिट्टि कृत्यंबु विहितमॆ नीकु?
जगदेकपति रामचंद्रुनि देवि । दगदोरि ! कॊनिपोव दगिलि यिब्भंगि;
मुदलिंचि तेक रामुनि डागुरिंचि । सुदति नी भंगि दॆच्चुट बंटुतनमॆ ?
नीलंकयुनु निन्नु नी बंधुजनुल । गालुचु नोरि ! राघवु कोपवह्नि;
यॆरिगियु विषमिट्टुलेल क्रोलॆदवु ?। ऎऱ्रगॊन्न पॆनुबामु नेल त्रॊक्कॆदवु?
अरवदिवेलेंड्ल यतिवृद्धु नन्नु । नॆऱुगुदो, यॆरुगवो ! ये जटायुवनु;

तरह, मुरझाए खेत के लिए वर्षा के समान, थोड़ा-बहुत (सीता को) प्रसन्न करनेपर, खुश होकर वह सीता बोली:—'हे जटायु ! मुझे यह सुरकंटक (राक्षस) उद्वृत्ति (घमंड) से, माया (के प्रभाव) से राम लक्ष्मण को वंचितकर, हे भाई ! (मुझे) सताते हुए ले जा रहा है।' ॥ १११० ॥

—ऐसा कहनेपर सुनकर, तब अरुण-नंदन महान् क्रोध और साहस के प्रकट होनेपर, क्रोध से रथ को टोककर, प्रलय अभ्र (मेघ)-निर्घोष (के सम) पटु-वचनों से कई बार दशकंठ को फटकारकर, (मार्ग का) अतिक्रमणकर, खड़े होकर, स्थिर धैर्य के शोभित होनेपर यों बोला:—'तुम परमपावन ब्रह्मा के पौत्र हो, वर पुण्यनिधि विश्रवसु के तनूज हो, धनद (कुबेर) के अनुज हो, दानवाग्रणी हो। सुनो, क्या ऐसा कृत्य तुम्हारे लिए विहित है ? रे, जगदेकपति रामचन्द्र की देवी को इस प्रकार ले जाना समुचित नहीं है। ललकारकर (लड़कर) (सीता को) न लाकर, राम को धोखा देकर, सुदती (नारी) को इस प्रकार लाना (कहीं) वीरता है ? अरे, राघव की क्रोधाग्नि तुम्हारी लंका को, तुम्हें, तुम्हारे बंधुजनों को जला देगी। जानते हुए भी इस प्रकार विष को क्यों पीते हो ? क्रुद्ध महासर्प पर क्यों पैर रखते हो ? साठ हज़ार वर्ष के अतिवृद्ध मुझे (पता नहीं) जानते हो या नहीं जानते। मैं जटायु हूँ।

नी पुण्यसाध्वि नी विप्पुडॊप्पिंचि। पोपोम्मु; पोकुन्न वॊरिपुत्तु निन्नु; ११२१

रावणुनितो जटायुवु पोरु

दुंडाग्रमुन विल्लु दुनुकलु सेसि। मंडितवर्ममर्ममुलु भेदिंचि
यडरि नीदैन प्राणाभिमानमुलु। विडिपिंचि जानकि विडिपिंतु' ननिन
नरदंबु निलिपि युदग्रुडै दैत्य। वरु डलिग विलुगुणध्वनि सेसि यार्चि
घोर बाणमु लेय गोपिंचि विहग। वीरुडु तद्बाणविततुलु विड़िचि
युरुपक्षयुगमुन नुरमु धट्टिंचि। पॊरि फालमुलु सीड़ि भुजमुलु वॊडिचि
तरमिडि खरनखततुल नॊप्पिप। गरमु गोपिंचि राक्षसकुलेश्वरुडु
खगराजु नॆड़कलु गाड नुग्रंबु। लगु बाणमुलु वदि यडरि येयुटयु
दुंडाग्रमुन विल्लु दुनियलुगाग। खंडिचि वडि बताकलु नेल गलिपि
दनुजेशु मकुटमुल् धर डॊल्लनेसि। पॆनचि सारथि बट्टि प्रेवुलु सीड़ि ११३१
तलमीड़ि दनुजु रथ्यमुलु जॆंडाडि। चलमॊप्प नरदंबु जदिय मोदुटयु

इस पुण्यसाध्वी को तुम अब (मुझे) सौंपकर चले जाओ। नहीं जाओगे तो तुम्हारा वध कर दूँगा।॥ ११२१ ॥

रावण से जटायु का युद्ध

तुंडाग्र (चोंच के अग्रभाग) से धनुष के टुकड़ेकर, (तुम्हारे शरीर पर) शोभित वर्म और मर्म को बेधकर, प्राणों के प्रति तुम्हारे अधिक अनुराग को अलगकर, (शरीर और प्राणों को अलगकर) जानकी को मुक्त करूँगा।' (ऐसा) कहनेपर, रथ को रोककर, उदग्र हो, दैत्यवर ने क्रुद्ध हो, धनुष के गुण (डोरी) को ध्वनितकर, चिल्लाकर, (जटायु पर) घोर-बाणों का प्रयोग किया। (उसपर) क्रुद्ध हो विहगवीर ने उन बाणविततियों (समूहों) को तोड़कर, उरु पक्षयुग से (रावण के) उर पर आघातकर, बार-बार फाल (भाग) को नोचकर, भुजाओं को छेदकर, शीघ्र खर (तेज) नखसमूहों से (उसे) पीड़ित किया। (तब) अधिक क्रुद्ध होकर राक्षसकुलेश्वर ने ऐसे दस उग्र बाण अतिशयता से डाले जो खगराज के पंखों में धंसे। (तब जटायु ने) तुंडाग्र से धनुष के टुकड़ेकर, झट से पताकाएँ ज़मीन (मिट्टी) में मिलाकर, दनुजेश के मकुट को ज़मीन पर लुढ़का देकर, खींचातानीकर सारथी को पकड़, आँतड़े फाड़कर, ॥ ११३१ ॥

विरथुडै राक्षस विभुडु गंपिंचि । धरणिपै बडि लेचि धरणिज गॊनुचु
मायाबलंबुन मऱि मिंटि कॆगसि । पोयॆ; बोयिन जूचि पोनीक पॆंचि
यड्डगिंचि जटायु वाकाशवीथि । नॊड्डिनगति दाकि 'योरि पापात्म!
जुणिगि ये लोकंबु जॊच्चिन नैन । दृणमुगा बट्टि वधितु नि' न्ननिन
दिरिगि रोषमुन दैतेयवल्लभुडु । तरमुगाकुन्कि नद्धरणिज डिंचि
परुषरोषानल प्रभलुप्पतिल्ल । गरमुग्रमैन मुद्गरमु वैचुटयु
नदि तुंडमुन द्रुंचि यतनिमस्तमुलु । नदियंग नडिचि केशमुलु द्रॆंचुटयु
सुर वैरि गोपिंचि स्रुक्कक कदिसि। युरवडि बक्षींद्रु नॊडिसिरा दिगिचि,
मॊगि बट्टि यंदंद मुष्टिघट्टनल । दगिलि नॊप्पिप नुद्धत शक्ति मॆऱय
११४१

दनुजेंद्र विहगेंद्र दारुणयुद्ध । मनिमिषादुलु सूचि यच्चॆरुपडिरि;
यरुदैन कडिमिमै नंत रावणुडु । गरमुग्रगति मिंचि खड्गमंकिंचि
यॆऱकलु पदमुलु नॆगिचि त्रुंचुटयु । नॆऱि दूलि खगपति नेलकु व्रालॆ;
व्रालिन वैदेहि वग नॊक्क वृक्ष । मूलंबु जेरि रामुनि बॆरुगॊनुचु

—अतिक्रमणकर (बाज़ी मारकर), दनुज के रथ्यों (अश्वों) को नष्टकर, हठ से रथ को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया । (तब) विरथ हो राक्षसराज कंपित हो, धरणि पर गिरकर, उठकर, धरणिजा को लेकर, माया के बल से फिर आकाश में उड़कर गया । जानेपर, देखकर, जाने न देकर, क्रम से रोककर, जटायु आकाशवीथि में रोकने के समान, सामनाकर (बोला):—'रे पापात्मा ! भयादि से संकुचित हो (छिपकर) किसी भी लोक में प्रवेश करने पर भी, तिनके के समान पकड़कर (तुम्हारा) वध कर दूँगा ।' (ऐसा) कहने पर, मुड़कर रोष से, दैतेय-वल्लभ ने, सहन न होने से, उस धरणिजा को उतारकर, परुष-रोषानल-प्रभाओं के उमड़ने पर, अधिक उग्र मुद्गर को डाल दिया । उसे तुंड (चोंच) से काटकर, उसके मस्तकों को दबाकर, कुचलकर, केशों को काटने लगा । (तब) सुरवैरी (राक्षस) क्रुद्ध होकर, न थककर, सामनाकर, शीघ्रता से पक्षीन्द्र को तरकीब से पकड़ नीचे लाकर, संरंभ से पकड़कर, जहाँ-तहाँ मुष्टि के आघातों से, उद्धत शक्ति के शोभित होनेपर, पीड़ित करने लगा । ॥ ११४१ ॥

—(इस प्रकार से) दनुजेन्द्र और विहगेन्द्र के दारुणयुद्ध को देख, अनिमिष (देवता)-आदि आश्चर्यचकित हुए । अपूर्व साहस से तब रावण अधिक उग्रगति से शोभित हो, खड्ग को हिलाकर, (जटायु के) पंख और चरण काट डाले । झट से कंपित हो, खगपति ज़मीन पर गिरा । गिरने पर

वापोवुचुंड रावणुडंकसीम । ना परम पतिव्रतांगन नुनिच्चि ११३६

सील ऋश्यमूकपर्वतमुन नाभरणमुल बडवेयुट

यंत संतोषिंचि याकाशवीथि । नैन्तयु रयमुन नेगे रावणुडु;
अप्पुडु ब्रह्मादुलगु सुरलु मुनुलु । 'दप्पदु; रामुचे दशकंठुडीलगु;
मन मनोरथमुलु मनकु सिद्धिंचु' ।ननि चेप्पिकोनि युब्बिरंदरु ब्रीति;
ननिमिषपथमुन नंत रावणुडु । चनुरयंबुन सीत चरण नूपुरमु
सुरवैरि कुत्पातसूचकंबगुचु । नुरवडि बड्तेन्चु नुल्कयै पडियें;
११४१
जगतिपै जाह्नवि जलधारलौलुकु । पगिदियै याकाशपथमुन नुंडि
चेलवकुचंबुल जेलवोन्दु हार । मुलु द्रेव्वि यंदंद पुडमिपै बडियें;
नालोन सीत 'हा हा' रवं बेसग । लोलोन गडु नडलुचु बोयि पोयि
यट ऋश्यमूकंबुनंदु वानरुल । बटुसत्त्वुलेवुर बरिकिंचि कांचि
तन वस्त्रमुन गोन्त तगजिच्चि पुच्चि । तन भूषणंबुलु दान बंधिचि,
'वीरैन रामभूविभुन की वार्त । लारय देलुपरे' यनु बुद्धिनपुडु
तडयक रामुचे दशकंठुडिक । जेडुनंचु मुडियु वैचिन बागुदोप

वैदेही दुःख से एक वृक्षमूल में पहुँच, राम का नाम लेते हुए रोती रही। (तब) रावण उस परम-पतिव्रता-अंगना को अंक (गोद) में ले, ॥ ११३६ ॥

सीता का ऋश्यमूक पर्वत पर आभरण डाल देना

—तब प्रसन्न हो, आकाशवीथि में अधिक शीघ्रता से रावण गया। तब ब्रह्मादि सुर और मुनि सभी यह कह लेते हुए प्रीति से फूल उठे कि 'अवश्यंभावी है कि राम के हाथ दशकंठ मरेगा, हमारे मनोरथ हमें प्राप्त होंगे।' तब अनिमिष पथ (आकाश मार्ग) में रावण के गमनवेग से सीता का चरण नूपुर गिर पड़ा मानों सुरवैरी का उत्पात सूचक होते हुए शीघ्रता से आन गिरनेवाली उल्का हो। ॥ ११४१ ॥

—जगत् पर जाह्नवी की जलधाराओं के छलक पड़ने के समान आकाश पथ से, सुन्दरी (सीता) के कुचोंपर शोभित हार टूटकर पृथ्वी पर जहाँ-तहाँ गिर पड़े। इतने में सीता हाहाकार के उमड़ने पर, अन्तर में अधिक व्यथित होती हुई जा-जाकर, वहाँ ऋश्यमूक पर पटुसत्त्व वाले पाँच वानरों को ध्यान से देखा, अपने वस्त्र को थोड़ा फाड़कर, अपने भूषणों को उससे बाँधकर, 'सोचने पर ये तो रामभूविभु को यह समाचार बताएँगे' इस विचार से, विलंब न कर, 'अब राम के हाथ से दशकंठ नष्ट हो

वारि मध्यंबुन वैचुचु बोव । वारुनु दाचिरि वडि दानि बुच्चि
दनुजाधिपति यंत दशरथात्मजुलु । दनवेंन्ट वत्तुरन् तल्लडंबुननु
वेंलवेंल बारच वेंनुक जूचुचुनु । दलकुचु वडि समुद्रमुदाटिपोयि
११५१
जडिगोंनु मरणसूचकनिमित्तमुलु । पोंडसूप गनि रयंबुन लंक जोंच्चि
यनुपम विविध भोगास्पदंबेंन । तन नगरिकि वच्चि तगु राजसमुन
जनकपुत्रिकि दन सकलसंपदलु । मुनुकोंनि येंन्तयु मुदमोंप्प जूपि
११५४

सीतनु रावणुडु अशोकवनमुनंदुंचुट

‘यिवें ना निवासंबु लिवें ना धनंबु । लिवें ना तुरंगंबु लिवें ना गजंबु;
लिवें येनु दिविजुल नेंल्ल भंजिचि । तिवुटमें देंच्चिन दिव्यभूषणमु;
लिदें कुबेरुनि गेंल्चि येनु गेंकोंन्न । मदिकिंपु गाविंचु मणिपुष्पकंबु;
वीरें ना कुडिगमुल् वेवेंर सेयु । चारणामर सिद्ध साध्य कामिनुलु
वारें ना माट गर्वमुन गेंकोंनक । कारागृहंबुल गासिल्ल सतुलु;

जाएगा’ (इस विषय के) ठीक प्रकट होनेपर जैसा गाँठ बाँधकर, उन (वानरों) के मध्य (आभूषणों की पोटली) डालती चली गयीं। उन्होंने भी उसे लेकर झट से छिपा दिया। तब दनुजाधिपति (यह सोचकर कि) दशरथात्मज अपना पीछा करते आएँगे, इस अकुलाहट से, विवर्ण होते हुए, पीछे (मुड़कर) देखते हुए, घबराते हुए, झट से समुद्र पार जाकर, ।। ११५१ ।।

—क्रम से मरणसूचक निमित्तों (कारणों) के दिखाई पड़ने पर, देखकर, शीघ्रता से लंका में घुसकर, अनुपम-विविध-भोगों के आस्पद (स्थान) बनी अपनी नगरी में आया। उचित राजस से जनकपुत्री को पहले अपनी समस्त संपदाएँ अधिक मोद से दिखाकर, (बोला):— ।। ११५४ ।।

सीता को रावण का अशोक वन में रखना

‘यही मेरा निवास है, ये ही मेरे धन हैं, ये ही मेरे तुरंग हैं, ये ही मेरे गज हैं, समस्त दिविजों (देवताओं) का संहारकर, मुझसे लाये गये दिव्य भूषण ये ही हैं, कुबेर को जीतकर, मेरा लिया हुआ मणिपुष्पक यही है, जो मन को प्रसन्न बनाता है। येही अलग-अलग मेरी सेवाएं करनेवाली चारण-अमर-सिद्ध-साध्य (जातियों की) कामिनियाँ हैं, वे ही हैं जो मेरे वचन को गर्व के कारण ग्रहण न कर, कारागृहों में तड़पने वाली सतियाँ हैं।

अवॆ नाट्यशाल; लल्लवॆ केळिवनमु। लिवॆ चंद्रशाललो यिंदीवराक्षि!
करमर्थि नितकु गर्तवै नीव । यरुदुगा भोगिंपु मखिल संपदलु !’
११६१

ननवुडु तृणखंडमतिव चेबट्टि । कॊनि पल्कॆ वानिगैकॊनक यॆन्तयुनु
‘नोरि ! नीकीपापमूरकपोदु । घोराग्नियै निन्नु काल्चु गानि;
निडिविगा ब्रदुकरु नीवु नी वारु । चॆडिपोवगलरु; सिद्धमीपलुकु;
रामु बाणानलराशिलो गूलि । नी मेनु वडि गालि नीऱु गाकुन्न
घनमैन यी पातकमुलॊन्टदीर’ । वनि पल्कि वैदेहि यंदंद पॊगिलि
‘यिट्टि दुर्वाक्यंबुलेनु ना चॆवुल । बॆट्टिति; नेडु ना पॆम्पॆल्ल बॊलिसॆ;
नामानमिट्टु सेसि नन्नित सेसॆ; । नेमनि पलवितु नेनु ना विधिकि’
ननि महारोदनमंदंद सेय । दनमदि गोपिंचि दनुजवल्लभुडु
तॆऱगॊप्प नप्पडु त्रिजटादुलॆन । तॆऱवल बिलिचि धात्रीपुत्रि जूपि
‘यॆन्दु नेमऱक मीरिदऱु गूडि । पॊन्दुगा ननु बॊन्द बोधिंचुकॊनुचु
११७१
नॆनसिन कडक नीयिंति नशोक । वनमुन निडिकॊनि वर्तिपु’ डनुचु

वे ही नाट्यशालाएँ हैं, वे ही केलीवन हैं। हे इन्दीवराक्षी ! ये ही चन्द्रशालाएँ हैं। अधिक इच्छा से इन सबका कर्ता (कर्त्री) बनकर तुम अपूर्व रूप से अखिल संपदाओं का भोग करो।’ ॥ ११६१ ॥

—ऐसा कहने पर उसकी बिलकुल परवाह न करते हुए नारी (सीता) ने तृणखंड को हाथ में लेकर कहा:—‘अरे, यह पाप तुम्हारे लिए यों ही नहीं जाएगा, घोराग्नि बनकर तुम्हें जलाकर रहेगा। तुम और तुम्हारे लोग दीर्घकाल तक जीवित नहीं रहेंगे। नष्ट हो जाएँगे। यह वचन सिद्ध (सत्य) है। राम की बाणानल-राशि में गिरकर, शीघ्रता से तुम्हारी देह जब जलकर नष्ट होगी तभी यह महान पातक जाएगा, अन्यथा नहीं।’ ऐसा कहकर वैदेही जहाँ-तहाँ व्याकुल हो ‘ऐसे दुर्वाक्यों को मैंने अपने कानों रखा (सुना)। आज मेरा सारा महत्त्व मिट्टी हो गया। मेरे अभिमान (गर्व) ने मेरी यह दशा की। अपनी विधि (भाग्य) के लिए मैं क्या कह रोऊँ ?’ कहकर जब-तब महारोदन किया। (तब) अपने मन में क्रुद्ध हो दनुजवल्लभ ने ढंग से तब त्रिजटा आदि स्त्रियों को बुलाकर, धात्रीपुत्री (सीता) को बतलाकर, यह कह कि ‘कहीं भी असावधान न होकर तुम सब मिलकर, अच्छी तरह मुझे प्राप्त करने का बोध कराते हुए, ॥ ११७१ ॥

—साहस से इस स्त्री को अशोक वन में रखकर, (उपरोक्त) बर्ताव

बनिचि कापुलु वॆट्टि पंक्तिकंधरुडु । दनमदि मदनाग्नि दरिकॊन नुंडॆ;
११७३

श्रीरामुडाश्रममुनकु मरिल वच्चुट

मायामृगमु जंपि मऱि रामचंद्रु । डायॆड मऱि यॊक यन्यमृगंबु
जंपि तन्मांसंबु जर्मंबु गॊनुचु । निपॊंदि मरलि तानेतॆन्चुचोट
म्रोयु जंबुक रवंबुलकु गुंदुचुनु । नायासमंदुचु नट वच्चि वच्चि
रामभूपालुडरण्यमध्यमुन ।सौमित्रि बॊडगनि चाल भीतिल्लि
'यकट लक्ष्मणुड ! ना याज्ञ गैकॊनक । विकलधैर्यमुन विवेकिवै युंडि
यत्तन्वि सीत नप्यडविलो डिंचि । वत्तुरे ? यिट्ले वच्चिति वीवु ?
जगतिपै गलुगु राक्षसुलॆल्ल मनकु । बगयॊट यॆऱुगवे पलुमाऱु नीवु ?
कुलहानि गुणहानि गुरुधर्महानि । तलपोयवलवदे तम्मुडा ! नीवु
११८१
अनवुडु लक्ष्मणुंडतिभीति बॊन्दि । यनयंबु गंपिंचि हस्तमुल् मॊगिच्चि
'जगदीश! नाकिट्टु चनुदेर दगदु । तगकुंट नॆऱुगुदु द्रलोक्यनाथ !
मायामृगाकृति मऱि मिम्मु द्रिप्पि । पायक मी दिव्य बाणाग्निशिखल

करो' आदेश दे, पहरा रखवाकर, पंक्तिकंधर अपने मन में मदनाग्नि (काम-पीड़ा) से दग्ध होता रहा । ॥ ११७३ ॥

श्रीराम का आश्रम में लौट आना

मायामृग को मारकर, फिर रामचन्द्र, उस अवसर पर और एक अन्य मृग को मारकर, उसके माँस (तथा) चर्म को लेकर, प्रसन्न होकर फिर लौट आते समय मुखरित होनेवाले जंबुक-रव से (को सुनकर) दुखी हुए। निश्वास भरते हुए वहाँ आ-आकर, रामभूपाल ने अरण्य-मध्य में सौमित्री को देखकर, अधिक भीत होकर (कहा) :—'हाय ! लक्ष्मण ! मेरी आज्ञा को ग्रहण (मान) न कर, विवेकी होकर भी, विकल बने धैर्य से उस स्त्री सीता को उस अटवि में छोड़ आते हो ? ऐसा तुम क्यों आये हो ? जगति पर जितने राक्षस हैं, उन सबका हमारा शत्रु होना बार-बार तुम नहीं जानते हो ? हे अनुज ! तुम्हें तो कुलहानि, गुण-हानि, गुरु-धर्महानि के बारे में सोचना नहीं चाहिए था ? ॥ ११८१ ॥

—ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने अतिभीत हो, अनारत कंपित हो, हाथ जोड़ (कहा) :—'हे जगदीश ! मुझे इस ओर आना नहीं चाहिए था। हे त्रैलोक्यनाथ ! यह अनुचित है, यह भी जानता हूँ। मायामृग की

गूलुचुनुंडि या कुटिलराक्षसुडु । ‘हा लक्ष्मणा’ यन्न यार्तरावंबु
सीतामहादेवि चॆविसोक मिगुल । भीतिल्लि मीदैन पॆम्पॆल्ल मऱचि
‘यन्न ! मीयन्न चॊप्परय बॊम्मन्न ! यॆन्नडु नॆलुगिपडिटु दीनवृत्ति
सौमित्रि !’ मनवुडु जानकि जूचि । ‘भूमिज ! नीकित पॊगुलंग वलदु;
पनिवडि मनयंदु भयमु पुट्टिप । ननि राक्षसुडु क्रूरुडै चीऱॆ गाक !
यिनकुलाधिपुडेड ? नी दैन्यमेड ?। जनकज ! नीवेल चंचलिचॆदवु !
अनवुडु गॊपिंचि या देवि नन्नु । विनरानि पलुकुल वॆस दूरि पलुक
११९१
नेनु नामदिलोन नॆन्तयु वगचि । दानिकि वनदेवतल साक्षिवॆट्टि
यिट केनु वच्चिचति निक्ष्वाकुतिलक! यटुगान दप्पुगा नवधरिंपकुडु’
अनि बाष्पलोचनुंडै म्रॊक्किकयुन्न । यनुजुनि गरमुल नल्लन नॆत्ति
कनुगव दॊरगॆडु कन्नीरु दुडिचि ।यनयंबु वगचि यिट्लनियॆ राघवुडु;
‘आजन्मशुद्धुडै यखिलज्ञुडैन । या जनकुनि पुत्रियै वार्तकॆक्कु
ना पुण्यवति यॆग्गुलाडुट यॆल्ल । नापदलकु मूलमनि विचारिंचि
निलुवक वत्तुरे ? नी यट्टिवानि । कलुगंगदगुनय्य ! यतिवमाटलकु’

आकृति से आपको खूब घुमाकर, न बच सक आपकी दिव्य-बाणाग्नि-शिखाओं में गिरते हुए, उस कुटिल राक्षस के ‘हा लक्ष्मणा !’ आर्त्तरव के महादेवी सीता के कानों में पड़ने पर, (वे) आपके महत्त्व को भूल, अधिक भीत हुईं । ‘हे भाई ! अपने भाई की स्थिति को जानने के लिए जाओ भाई ! हे सौमित्र ! राम ने कभी इस प्रकार दीनवृत्ति से पुकारा नहीं है ।’ ऐसा कहने पर जानकी को देखकर (मैंने कहा):—‘हे भूमिजा ! तुम्हें इतना व्याकुल नहीं होना चाहिए । जानबूझकर हममें भय उत्पन्न करने के लिए राक्षस ने क्रूर हो पुकारा होगा । (वरन्) कहाँ इनकुलाधिप ? कहाँ यह दैन्य ? हे जनकजा ! तुम क्यों चंचल बन रही हो ?’ ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो उस देवी ने मुझे कर्ण-कठोर शब्दों में झट से गालियाँ सुनाईं । ॥ ११९१ ॥

—मैं अपने मन में अधिक दुखी हो, उसके लिए वनदेवताओं को साक्षी बना कर, इस ओर आया हूँ । हे इक्ष्वाकुतिलक ! यह ऐसा होने से (इसे मेरी) त्रुटि मत मानिए ।’ (ऐसा) कह बाष्प (पूरित) -लोचनवाले होते हुए, प्रणाम करनेवाले अनुज को हाथों से धीरे से उठाकर, नेत्रयुग्म से गिरनेवाले आँसू पोंछकर, निरन्तर दुखी हो, राघव यों बोले:—‘आजन्मशुद्ध (पवित्र), अखिलज्ञ उस जनक की पुत्री होकर, प्रख्यात बनी उस पुण्यवती का अपशब्द कहना ही समस्त आपदाओं का मूल है—ऐसा

ननुचु सौमित्रि नूरार्चि येतेंन्चि । जननाथुडट निजाश्रमभूमि जौच्चि
'यिदियेमि लक्ष्मणा ! यीयाश्रमंबु । तुदिमुट्ट शून्यमै तोचुचुन्नदियु;
वनदेवतानंदवचन घोषमुलु । विनरावु; चेंलगवु विहगनादमुलु;
१२०१
'एलोंको मुनिवरुलिट संचरिंप । रेलोंको सीत ना केंदुरुगा रादु !
कडुदीनमै बुद्धिगलगेंडु नाकु; । नेंडमकन्नदरेंडु नेलोंको नेडु ?
इक्कानलोपल नेनुनु नीवु । नक्कट ! ये दुःखमनुभविंचेंदमो ?
यनि पर्णशालकु नटु सेर वच्चि ।दिनकरु रुचि लेनि दिनलक्ष्मि बोलि
रेराजुकक लेनि रेयुनु बोलि । शारिक लेनि पंजरमुनु बोलि,
येंनय गोयिल लेनि येंलमावि बोलि । कनुगोंन विन्ननै कडु बाडुवारि
युन्न चंदमु जूचि युल्लंबु गलगि । विन्ननै धृति दूलि वेंलवेंलवारि,
पन्नि शोकरसंबु प्रवहिंचें ननग । गन्नुल बाष्पांबुकणमुलु दोरुग
बेंदवुलु दडपुचु भीति ब्राणमुलु । सेंदर दम्मुनि जूचि श्रीरामुडनियें;
'बोल जूचिति नेनु; भूमिज पर्ण। शाललोपल नुन्न चंदंबु लेदु
१२११

विचारकर (वहीं) न ठहरकर (यहाँ) आना चाहिए ? (नहीं आना चाहिए था)। तुम जैसे व्यक्ति को एक स्त्री की बातों पर रूठ जाना चाहिए ?' कहते हुए सौमित्री को सान्त्वना देकर, आकर, जननाथ (राजा) ने अपनी आश्रमभूमि में प्रवेशकर, (कहा):—'यह क्या लक्ष्मण ! यह आश्रम तो बिलकुल शून्य-सा लग रहा है। वनदेवता के आनन्द (पूर्ण)-वचन-घोष (ध्वनियाँ) सुनाई नहीं पड़ रहे हैं। विहगनाद व्याप्त नहीं हो रहे हैं। ।। १२०१ ।।

—यहाँ मुनिवर विचरण क्यों नहीं कर रहे हैं ? सीता (मेरे) समक्ष क्यों नहीं आ रही है ? अतिदीन बनकर मेरी बुद्धि विकल बन रही है। आज न जाने क्यों मेरा वाम नेत्र फड़क रहा है ? हाय ! इस कानन में तुम और मैं शायद किस दुःख का अनुभव करेंगे ?' कह उधर पर्णशाला पहुँचकर, दिनकर के प्रकाश से रहित दिनलक्ष्मी के सम, निशापति की कला से रहित रात्रि के समान, सारिका हीन पिंजड़े के समान, शोभित कोयल से हीन रसाल के समान, देखने के लिए उदास बने, अधिक विवर्ण बने उसे देख, मन के व्याकुल होकर, मुख के विवर्ण बन, धैर्य के छूटकर, कांतिहीन बनने पर, राम की आँखों से बाष्पांबुकण झरने लगे मानों शोकरस ही प्रवाहित हो रहा हो। होंठों को आर्द्र करते हुए, भीति से प्राणों के विकल बनने पर अनुज को देखकर श्रीराम बोले:—'अच्छी

पौदल बूवुलु गोयबोयेनो ! काक । वेंदुक नोन्डोक जाड वेडलेनो! काक
सरसुल ग्रीडिंप जनियेनो ! काक । करमुग्रमगु भीति ग्रागेनो ! काक
डासि नव्वुलकुनै डागेनो ! काक । यीसुन गोनि येक्कडेगेनो ! काक
ये चंदमो नाकु नितयु देलिय । दे चंदमुन सीत यिदुलो लेदु'
अनि वितर्किंचुचु ना पर्णशाल । जन जोच्चि लोपल सकलंबु वेदकि
जानकि ना पर्णशाललोपलनु । गानक प्राणमुल् गलगि कंपिंप
मनमेल्ल सेंडि मेनु म्रान्पडि बोध । मनु रवि शोकाब्धि नस्तमिंचुटयु
भ्रांति यन् चीकटि प्रबलमै पर्वि । यंतरंगमु गप्पि यक्षुलु गप्पि
मरलेडि धृति गप्पि मानंबु गप्पि । नेरसिन विकलुडै नेलकु व्रालि
'वदलक सीतकै वगचेंडि नन्नु । ब्रिदिलि पोनीक नोप्पिचे नेव्वगलु;
१२२१
ई पग ना किप्पुडेत्तोव वच्चे ? । ने वेन्ट दरियिंतु निक नी वगलु ?
नेमेयि वच्चिति मी काननमुल ?। के माट लाडुदु नितनितो निक !
ये नन्न नितनिकि; नितडु ना तम्मु; । डेनु नीतडु गूडि येट्लु वेगेदमो ?'

तरह देख लिया है। ऐसा नहीं लगता कि भूमिजा पर्णशाला में है। ॥ १२११ ॥

—कहीं झाड़ियों में फूल चुनने गयी हो अथवा (हमें) ढूँढ़ने के लिए किसी दूसरे मार्ग से गयी हो अथवा सरसियों में (जल-)क्रीड़ा करने गयी हो अथवा अधिक उग्र भीति से संतप्त हो रही हो अथवा (कहीं) निकट हँसी-मज़ाक के लिए छिप गयी हो अथवा क्रोध से कहीं गयी हो अथवा और क्या प्रकार है, मुझे बिलकुल मालूम नहीं। किसी भी तरह से सीता तो इसमें नहीं है।' ऐसा (तर्क-) वितर्क करते हुए, उस पर्णशाला में प्रवेशकर, भीतर समस्त को ढूँढ़, उस पर्णशाला में जानकी को न देख पा, प्राणों के व्याकुल हो, काँपने पर, समस्त मन के बिगड़कर, शरीर के स्तब्ध होकर, बोध (ज्ञान) रूपी रवि के शोकाब्धि में अस्तंगत होनेपर, भ्रान्तिरूपी अन्धकार के प्रबल हो व्याप्त होकर, अंतरंग को घेर, आँखों को ढक, लौटनेवाले धैर्य को आवृतकर, मान को घेर, विकल बनाने पर, ज़मीन पर गिरकर (बोले):—'निरन्तर सीता के लिए (वन-वास की यातनाओं के बारे में सोचकर) दुखी होनेवाले मुझे ॥ १२२१ ॥

—यह दुःख अब किस प्रकार से प्राप्त हुआ ? इस दुःख को किस प्रकार पार करूँगा ? किस प्रकार से इन काननों में आये थे ? इससे (लक्ष्मण से) अब कैसे बात करूँगा ? मैं इसका अग्रज हूँ, यह मेरा अनुज है। मैं और यह (दोनों) मिलकर (एक साथ) कैसे संतप्त होते

यनु विचारमु बुद्धि नणुमात्रमैन । नुनुपनेरक रामुडुल्लंबु गलगि १२२५

सीतनु गानक श्रीरामुनि शोकमु

मदनवेदनल नुन्मत्तुचंदमुन । बेंदरि चूचुचु दन पेंम्पेंल्ल मरचि
'तनुमध्य ! नीवित दडवेंन्दु बोयि?'। तनि चूचु; 'निंदु रम्म' नि चेर बिलुचु;
ब्रियमोंप्प बैंबडु; बेंनचि रा दिगुचु; । बयलु गौगिट जेर्चि पलुमारु वगचु
नोंय्यन नूरार्च; नोंक कोंन्तवडिकि । नोंय्यन दनलोन नोंककोंन्त देलियु;
'नक्कटा ! सौमित्रि! यवनीतनूज । येंक्कडवोयेंनो येमैनयदियों !
वेंलि नडुगुल चोंप्पु वेंदकियु गान । जलजाक्षि यी पर्णशाललो लेदु १२३१
ए देस बोयेंनो यिंदीवराक्षि ? । यी देस गादोंको! यिदि पर्णशाल
गादोंको ! यिदि दंडकावनभूमि । गादोंको ! रामुड गानोंको नेनु ?
नैन ना प्राणंबुलकट ! यी बोंन्दि । लो नेंट्टुलुन्नवि लोलाक्षि बासि ?

रहेंगे ?' इस विचार को अणुमात्र (लेशमात्र) भी मन में धारण न कर सक, राम मन में विकल हो, ॥ १२२५ ॥

सीता को न देख श्रीराम का दुःख

मदन-वेदनाओं के कारण उन्मत्त के समान, घबराते हुए (इधर-उधर) देखते हुए, अपने समस्त महत्त्व को भूलकर, (यह कल्पना कर कि सीता जी आयी हैं) यह कह कि 'हे तनुमध्ये ! इतनी देर तक कहाँ गयी थी ?' देखते, 'यहाँ आओ' कहकर नियराने के लिए बुलाते, प्यार से आलिंगन करते, जकड़कर नीचे लोटते, शून्य को आलिंगन में ले, कई बार दुखी होते, झट से सान्त्वना देते, थोड़ी देर के बाद झट से होश में आते । (कहते) 'हाय ! सौमित्री ! (पता नहीं) अवनीतनूजा कहाँ गयी है ? उसका क्या हो गया ? स्वच्छता से चरणह्निों के छाप खोजनेपर भी न दीखे, जलजाक्षी इस पर्णशाला में नहीं है । ॥ १२३१ ॥

—इन्दीवराक्षी किस दिशा में गयी है ? इस ओर नहीं क्या ? क्या यह (वही) पर्णशाला नहीं है ? क्या यह (वही) दंडक वनभूमि नहीं है ? मैं क्या राम नहीं हूँ ? तब (यदि मैं राम ही हूँ) तो लोलाक्षी से बिछुड़कर हाय, इस शरीर में प्राण कैसे (अटके हुए) हैं ? प्रयत्नकर इस समय

पूनि यी यॆड ब्राणमुं तगुल् रोसि । तानुनु दिविकेग दलचितिनेनि
‘व्रतमु सॆल्लिपक वच्चॆ; वीडॆट्टि । सुतु’ डंचु ननु गणिंचुनॆ दशरथुडु ?
कादेनि व्रतमु सांगंबुगा दीर्चि । मेदिनि बालिप मिन्नक पुरिकि
जनिनचो मिथिलुडच्चटिकि रा नतनि।गनुगॊनगा सिग्गु गादॊको नाकु?
नट्टुगान नन्नु नी यडविलो विडिचि । पटुबुद्धि बुरि केगि भरतुनि गांचि
‘तन यनुमति सर्वधरणि बालिपु’ । मनि चॆप्पि, कैककु ना सुमित्रकुनु
गौसल्यकुनु जनकज सन्न तॆऽगु । ना सुद्दियुनु दॆल्पु; ननु मदिनिल्पु’
१२४१
मनि राघवुडु ऱॆप्पलल्लन व्रालचॆ । जनकज मुनु पर्णशाललोनुंडि
पोयिनगति मनंबुन नुंडि वॆडलि । पोयॆडु ननि यड्डमुग जेर्चॆ ननग;
नप्पुडु लक्ष्मणुडन्न चंदंबु । दप्पक चूचि यॆन्तयु शोकमंदि
‘ये तल्लि पनिसॆसि, ये तल्लि गॊलिचि। ये तल्लि तल्लिगा निटमीद
नडतु ?
निनकुलाधिपु शोक मे त्रोव मान्तु ? । दनकु दल्लुलकुनु दन सोदरुलकु
नॆनय नीतनि तोडिदे लोकमगुट । मनुवंशमंतयु मडिसॆ बॊ’ म्मनुचु,
नंदंद विलपिंप, नंतलो रामु । डॊन्दिन मूर्च्छ दा नॊककॊन्त दॆलिसि

प्राणों के प्रति आसक्ति से घृणाकर, मैं भी स्वर्ग जाना चाहूँ तो ‘प्रण पूरा करके नहीं आया, यह कैसा सुत है ?’ कह दशरथ मेरी गणना नहीं करेंगे। नहीं तो प्रण को पूर्णतः पूरा करके मेदिनी (पृथ्वी) पर शासन करने के लिए चुपचाप नगरी में जाऊँ तो वहाँ मिथिलापति आएँगे तो उन्हें देखने में मुझे लज्जा नहीं होगी ? इसलिए मुझे इस अटवि में छोड़कर, पटु-बुद्धि से पुरी (नगर) जाकर, भरत को देखकर, ‘अपनी अनुमति से सर्व-धरणि पर शासन करो’ कहकर, कैकेयी को, उस सुमित्रा को, कौसल्या को जनकजा के (खो) जाने का विधान (तथा) मेरा समाचार बताओ। मुझे अपने मन में बनाए रखो।’ ॥ १२४१ ॥

—(ऐसा) कह राघव ने पलकें धीरे से मूँद लीं, कहीं पहले पर्णशाला से चले जाने की रीति से जनकजा कहीं मन से भी न चली जाएँ। तब लक्ष्मण बड़े भाई की गति को अवश्य देखकर, अधिक दुखी हो, जब-तब रोदन करने लगे कि ‘(अब आगे) किस माता का कामकर, किस माता की सेवाकर, किस माता को अपनी माता मानकर रहूँगा ? इनकुलाधिप के शोक को किस विध कम करूँ ? मेरे लिए, माताओं के लिए, मेरे भाइयों के लिए प्रीति से इसके (राम के) साथ ही लोक (जीवन) होने के कारण, (अब) (विरहताप से राम की मृत्यु के बाद) समस्त मनुवंश नष्ट हो जाएगा।’

तलकौन्न वगलतो दंडकावनमु । गलय नालोकिंचि कन्नीरु निंचि
वनजाक्षि जिंतिंचि वगलु रैट्टिंप । दनमदि शोकिंचि धैर्यंबु डिच्चि,
'पोयिते सीत! ना बौन्दितो बासि? । पोयिते ननु ब्राणमुलतोड डिंचि ?
१२५१

पौरि सुरासुरलोकपूजार्ह मनक । हरुविल्लु विड़िचिति नतिव ! नी
कौड़्कु;
बरुनिगा दलपोसि ब्राह्मणुंडनक । परशुरामुनि भंगपड़चिति गडगि;
नीरजलोचन ! नीकुनै पूनि । यी रैन्डु निंदल नैनु गैकौन्टि;
गडपट निनु बापै गष्टदैवंबु; । पडति ! निंदलबड बालैति नेनु;
नीवेडुकलु सूचि 'नीकेनु ब्रियमु । गाविंतु' ननि पोयि कपट मृगंबु
जंपि तैच्चिति दानि चर्मंबु गडगि; । यिंपार नैव्वरिकित्तु नेनिंक ?
मदिनैल्लसुखमुलु मड़चि काननकु । वदलक ननु नम्मि वच्चिन चोट
निनु गावलेनैति; नी चन्न त्रोव । गनि रयंबुन वच्चि कदियलेनैति;
बरुवडि जगमैल्ल बालिंपजालु । वरशक्ति गलिगिन वानि चंदमुन
मुनुकौनि शरचापमुलु दाल्चि घोर । वनदुर्गभूमुल वर्तिपवच्चि १२६१

इतने में राम मूर्च्छा से थोड़ी सी होश में आकर, सिरपर आ टपके दुःखों से दंडक वन को चौतरफ़ देखकर, आँसू भरकर, वनजाक्षी के बारे में सोचकर (सोचने से) दुःख के दुगुना होनेपर, अपने मन में दुखी होकर, धैर्य को छोड़ (बोले):—'हे सीते! क्या मेरे शरीर को छोड़कर चली गयी हो? क्या मुझे प्राणों से छोड़कर चली गयी हो? ॥ १२५१ ॥

—हे नारी! तुम्हारे लिए यह न मान कि सुर-असुर-लोक के पूजार्ह है, हर के धनुष को तोड़ डाला था। अन्य मानकर, ब्राह्मण है इसका विचार न कर, सप्रयत्न परशुराम को अपमानित किया था। हे नीरजलोचने! तुम्हारे लिए चाहकर इन दोनों निन्दाओं को मैंने ग्रहण किया है। अन्त में क्रूरदैव ने तुम्हें (मुझसे) अलग कर दिया है। हे नारी! मैं निन्दाओं का ही भागी बना हूँ। तुम्हारे कौतूहल को देख 'मैं तुम्हारे लिए प्रिय (कार्य) करूँगा' ऐसा सोच कपटमृग को मारकर, लगकर उसके चर्म को लाया हूँ। अब शोभा से उसे किसे दूँगा? मन से सभी सुखों को भूल, जंगलों में (मुझे) न छोड़, मुझपर विश्वास रखकर आयी हो, (इस परिस्थिति में) तुम्हें बचा न सका। जिस मार्ग से तुम गयी हो, शीघ्रता से उधर आ (तुमसे) मिल न सका। क्रम से समस्त-जगत पर शासन कर सकने की वरशक्ति से युक्त व्यक्ति के समान, आगे बढ़, शरचाप धारण कर, घोर-वन-दुर्गों में विचरण करने के लिए आकर, ॥ १२६१ ॥

पॆंडमरि मावारि पॆम्पॆल्ल दक्कि । पडतुक! निनु गोलुपडिति ने नेडु;
एणाक्षि! निनुबासि यी शरीरमुन । ब्राणंबु लॆब्भंगि बट्टुदुनिक ?
मेदिनीतनय ! नी मेनितो बासि । ये दॆस भरियिंतु नी देहमिक ?
नॆलत! नी विरहाग्नि नीदु लावण्य। जलराशि मुनुगक चल्लार्परादु;
तगिलि यी शोकाब्धि दरुणि! नी मेनु।तगु तॆप्पगाकॆट्लु तरियिंपवच्चु?
मगुव! नी पालिड्ल मरुगु लेकुन्न। नॊगि गामु शरवृष्टि कोर्वंगरादु;
पडति ! नी मुखचंद्रु प्रापुलेकुन्न । गडतेर वशमॆ दुःखतमंबुचेत ?
मट्टुमायदैवंबु मत्सरंबूनि । कटकटा ! कपट मृगव्याजमुननु
नन्नट्टुकॊनि चनि नळिनाक्षि ! पिदप। निन्निट्टु कॊनिपोयॆ; नेडिट्लु मनल
निरुवुर बापिन यी दैवमुनकु । नरुदॆन्दु गल? दसाध्यमुलॆन्दु गलवु?
१२७१
कोमलि ! निन्नॆत्तुकॊनिपोवुनप्पु । डेमनि पलविंचि ? तेमंटि नन्नु ?
ने देशमुन केगि ? तॆन्दुन्नदान ? । वेदुःखमुल वेगॆ ? देमि सेसॆदवु ?
ऎव्वरु गॊनिपोयि ? रेत्रोव बोयि ?। तिव्विधि वाटिल्लॆने नेडु मनकु ?
नी यट्टि चदुरालु नी यट्टि मुग्ध । नीयट्टि लावण्यनिधि यॆन्दु गलदु?

—पीछे हट (कार्य न कर सक) अपने स्वजनों के महत्त्व को खोकर, हे सुन्दरी ! आज मैं तुमको खो चुका हूँ। हे हरिणाक्षी ! तुमसे बिछुड़कर अब इस शरीर में प्राणों को कैसे धारण करूँगा ? हे मेदिनीतनये ! तुम्हारी देह को खोकर, अब इस देह को कैसे वहन करूँगा ? हे युवती ! यह विरहाग्नि तुम्हारे लावण्य (रूपी)-जलराशि में डूबे बिना बुझाई नहीं जा सकती। इस शोकाब्धि को हे तरुणी ! तुम्हारी देह को समुचित नौका बनाए बिना कैसे पार किया जा सकता है ? हे वनिते ! तुम्हारे स्तनों की आड़ के बिना, लगन के साथ, काम की शरवृष्टि को सहन नहीं कर सकता। तुम्हारे मुखचन्द्र के आश्रय के बिना, दुःखतम को पार करना कैसे सम्भव है ? हाय, हाय ! कपटदैव ने मात्सर्यभाव धारणकर कपटमृग के बहाने मुझे उधर ले जाकर, हे नलिनाक्षी ! उसके बाद तुम्हें इधर ले गया। आज इस प्रकार हम दोनों को अलगकर देनेवाले दैव के लिए असम्भव क्या है ? असाध्य (बातें) कहाँ हैं ? ॥ १२७१ ॥

—हे कोमली ! उठा ले जाते समय तुम क्या कहकर रोई थी ? मुझे क्या कहा था ? किस देश में गयी हो ? कहाँ हो? किन दुःखों से संतप्त हो रही हो ? क्या कर रही हो ? कौन (तुम्हें) ले गया है ? किस मार्ग से गयी हो ? आज दुर्विधि ने हमारे प्रति ऐसा किया है ? तुम जैसी कुशल, तुम जैसी मुग्धा, तुम जैसी लावण्यनिधि कहाँ है? हे कमलाक्षी ! अधिक इच्छा से तुमसे

कलदॊको यॊकनाडु गरमर्थि निन्नु । गलसि विनोदिंप गमलाक्षि! नाकु?
दॊरकुने यॊकनाडु तॊगरु लेजिगुरु। दरुमु नी मोवि सुधारसमान ?
हरिणाक्षि ! यॊकनाटिकब्बुने नाकु । दरचैन नी चक्कदनमु वीक्षिंप ?
जलजाक्षि ! निनु गूडि साकेतपुरमु।गलवाडननि कानिकाननॊन्डॊकटि;
कलकंठि! निनुगूडि कनकहर्म्यमुलु।गलवाडननि कानिकाननॊन्डॊकटि;
यलिवेणि ! निनुगूडि यखिलभोगमुलु । गलवाडननि कानिकान-
नॊन्डॊकटि; १२८१
नॆलतुक ! निनुगूडि निखिलसौख्यमुलु । गलवाडननि कानिकान-
नॊन्डॊकटि;
यदि महारण्यमै यिप्पुडुतॊचॆ; । निदि पर्णशालयै यिप्पुडु तॊचॆ;
निदि नाकु दपमनि यिप्पुडु तॊचॆ; । निदिनाकु दु:खमै यिप्पुडु तॊचॆ;
नेलॆ महीपुत्रि ! येलॆ मृगाक्षि ! । येलॆ सरोजाक्षि ! येलॆ लतांगि !
येलॆ वधूमणि ! यिन्नि चंदमुल । गालुचुन्नाड; 'गटकटा' यनवु !
अलसयानमुल बागंचलकिच्चि । ललितांघ्रिरुचि प्रवाळंबुलकिच्चि
वर कुचोन्नति चक्रवाकुलकिच्चि । करमुल कॆम्पु पंकजमुलकिच्चि

मिलकर विनोद करने (सुख भोगने) का दिन (फिर से) मुझे प्राप्त होगा ? अरुण किसलय का उपहास करनेवाले तुम्हारे अधर सुधारस का पान करने का दिन (फिर से) मुझे प्राप्त होगा ? हे हरिणाक्षी ! तुम्हारे सौंदर्य को देखने का (सौभाग्य) किस दिन प्राप्त होगा ? हे जलजाक्षी ! तुम्हारे साथ रहकर यही समझता था कि मैं साकेतपुर में ही हूँ, अन्य जगह नहीं । हे कलकंठी ! तुम्हारे साथ रहकर यह समझता था कि मैं कनक हर्म्य (महल) वाला हूँ, अन्य नहीं । हे अलिवेणी ! तुम्हारे साथ रह कर यही समझता था कि मैं समस्त सम्पदाओं से युक्त हूँ, अन्य नहीं । ।। १२८१ ।।

—हे सुन्दरी ! तुम्हारे साथ रहकर यह समझता था कि मैं समस्त सुखों से युक्त हूँ, अन्य नहीं । अब (तुम्हारे बिना) यह महारण्य लग रहा है, अब यह (सचमुच) पर्णशाला जैसी लग रही है । अब यह (सचमुच) तप (साधना) जैसा लग रहा है, अब यह सचमुच दु:ख सा लग रहा है । क्यों महीपुत्री ! क्यों मृगाक्षी ! क्यों सरोजाक्षी ! क्यों लतांगी ! क्यों वधूमणि ! इतने प्रकार से मेरे संतप्त होनेपर भी तुम 'हाय' तक नहीं कहती हो (सहानुभूति नहीं प्रकट करती हो) । (तुम्हारा) मंदगमन श्रेष्ठ राजहंसों को देकर, ललित अंघ्रिरुचियाँ प्रवालों को देकर, वर-कुच-औन्नत्य (शोभा) चक्रवाकों को देकर, हाथों की

मॆयिचाय क्रॊक्कारुमॆऱुगुलकिच्चि । नयनवैभवमु मीनमुलकुनिच्चि
चल्लनि मुखदीप्ति चंद्रुनकिच्चि । तॆल्लनि नगवु चंद्रिकलकुनिच्चि
चॆलुवंपु बलुकुलु चिलुकलकिच्चि । यलकल नुनुगांति यळुलकुनिच्चि
१२९१
रदमुल यॊप्पु वज्रंबुलकिच्चि । पॊंदलु मैतावुलु पूवुलकिच्चि
सन्नपुनडुमाकसंबुनकिच्चि । निन्नु दैवमु म्रिंगने नेडु सीत !
हा वामलोचन ! हा पद्मगंधि! । हा वारिजानन! हा सीत !' यनुचु
विवशुडै रामभूविभुडु पल्वगल । दविलि दीनत बॊन्दि तम्मुनि जूचि
'येदॆस बोयॆनो यिंदीवराक्षि ? । पोदमा लक्ष्मण ! भूमिज वॆदुक ?
नॊलसि येपॊंदललो नुन्नदो ? पोयि । पिलुतमा लक्ष्मण ! पृथ्वीतनूज ?
नेतरुचाटुलकेगॆनो यिन्ति ? । चूतमा लक्ष्मण! शुकमजुवाणि ?
नॆत्तम्मिकॊलकुलकेगॆनो ? यरसि । वत्तमा लक्ष्मण! वनजाक्षिनिप्पु ?
डनि यिट्लु पलुमऱु नतिदीनवृत्ति । मनमुन गॊनि जालिमऱिमऱि तूलि
धरियिपरानि वेदनलतो राम । धरणिवल्लभुडु गौतमि जेरबोयि
१३०१
'यो लोकपावनि ! यो लोकमात ! । यी लोकपावनि नॆऱुगवे सीत ?

लालिमा पंकजों को देकर, शरीर की छाया नूतन चंचलाओं को देकर, नयन वैभव मीनों को देकर, शीतल मुखदीप्ति चन्द्र को देकर, श्वेत हास्य चंद्रिकाओं को देकर, सुन्दर वचन सारिकाओं को देकर, केशों की स्निग्ध कांति भ्रमरों को देकर, ॥ १२९१ ॥

—दाँतों की सुघड़ाई वज्रों को देकर, वर्द्धित शरीर की सुगंधियाँ फूलों को देकर, पतली कमर आकाश को देकर, हाय सीते ! भगवान आज तुम्हें निगल गया है। हाय वामलोचने ! हाय पद्मगंधी ! हाय वारिजानने ! हाय सीते !' कहते हुए विवश हो, राम भूविभु अनेक प्रकार दुःखों से युक्त हो, दीन हो, अनुज को देख (बोले):—'वह इन्दीवराक्षी (पता नहीं) किस दिशा में गयी है ? लक्ष्मण ! क्या भूमिजा को खोजने जाएँ ? थककर (पता नहीं) वह किन झाड़ियों में है ? हे लक्ष्मण ! जाकर पृथ्वीतनूजा को बुलाएँ ? वह इन्ती (स्त्री) (पता नहीं) किन पेड़ों की आड़ में गयी है ? हे लक्ष्मण ! (उस) शुकमंजुवाणी को देखें ? (पता नहीं, कहीं) कमलों से युक्त सरसियों में गयी हो। हे लक्ष्मण ! (उस) वनजाक्षी को अब देख आवें।' ऐसा कहकर बार-बार, मन में अतिदीनवृत्ति लिए, दुःख के कारण बार-बार लड़खड़ाकर, असह्य वेदनाओं से राम-धरणी-वल्लभ गौतमी (नदी) के पास जाकर, बोलेः—॥ १३०१ ॥

नो लोकबांधव! यो कर्मसाक्षि!। ये लीलनैन नीवेंरुगवे सीत ?
वो सर्वसंचार ! यो जगत्प्राण !। या सीत नेंरुगवे यनघ! नीवैन ?
नेंलदीग ! कानवे येंलदीगबोडि?। जलजंब ! कानवे जलजातगंधि ?
हरिराज! कानवे हरिमध्य नीवु ?। करिराज! कानवे करिराजगमन?
हरिणंब ! कानवे हरिणायाताक्षि?। बरभृत ! कानबे परभृतवाणि ?
नळिनाथ! कानवे यलिनीलवेणि?।दिलकंब! कानवे तिलकांचितास्य?
जंदन ! कानवे चंदनगंधि ?। गुंदंब ! कानवे कुंदाभरदन ?'
ननुचु विभ्रांतुडै यिटुल नंदंदु। जनिचनि वेंदकुचु जालि दूलुचुनु
नेंडयक यिब्भंगि नेंन्दु वैदेहि। दडवि कानक जनस्थानंबु वेंडलि
विन्ननै विरहार्ति विवशुडैयुन्न।यन्न नीक्षिचि यिट्लनियें लक्ष्मणुडु;
१३१२

लक्ष्मणुडु रामु नूरडिंचुट

'अन्न! नी वखिललोकारध्यवरुड;। वुन्नतच्चित्तुंड; वुरुबलाढ्युडवु;

—'हे लोकपावनी ! हे लोकमाता ! इस लोकपावनी सीता को नहीं जानती हो ? (सीता का पता नहीं है ?) हे लोकबान्धव ! हे कर्मसाक्षी (सूर्य) ! किसी भी प्रकार से तुम सीता को नहीं जानते ? हे सर्वसंचार (करनेवाले = पवन) ! हे जगत्प्राण ! हे अनघ ! तुम भी सीता को नहीं जानते ? हे लताकुमारी ! लतांगी को नहीं देखा है ? हे जलज ! जलजातगंधी को नहीं देखा है ? हे हरिराज ! (सिंह श्रेष्ठ) हरिमध्या को तुमने देखा नहीं है ? हे करिराज ! करिराजगमना (गजगामिनी) को नहीं देखा है ? हे हरिण ! (उस) हरिणायताक्षी (हिरन जैसी विशाल आँखों वाली) को देखा है ? हे परभृत (कोयल) ! परभृतवाणी (पिकबयनी) को देखा है ? हे अलिनाथ (भ्रमर) ! भ्रमर जैसी नीलवेणी (वाली) को देखा है ? हे तिलक ! तिलक से समंचित मुखवाली को देखा है ? हे चंदन ! चंदनगंधी को देखा है ? हे कुंद ! कुंद जैसी आभावाले रदन (दांत) वाली को देखा है ?' (ऐसा) कहते हुए विभ्रान्त हो, इस प्रकार (उन्मत्त दशा में) जहाँ-तहाँ जा-जाकर खोजते हुए, तरस खाते लड़खड़ाते हुए, अनारत इस प्रकार खोजनेपर भी वैदेही को न पाकर, जनस्थान से निकलकर, विवर्ण हो, विरहार्ति से विवश बने रहे। (ऐसे) अग्रज को देखकर लक्ष्मण ने यों कहा:— ॥ १३१२ ॥

लक्ष्मण का राम को सान्त्वना देना

'हे अग्रज ! तुम समस्त-लोकाराध्य-वर (श्रेष्ठ) हो, उन्नतचित्तवाले

इंतिकै विभ्रांति निन्निचंदमुल । नित शोकितुरे ? यिनकुलाधीश !
यी मोहशोकंबु लिटु नीकु गलवे ? । तामसमोहनार्थमु गादेजगति ?
नरुदुगा नीवु विल्लंदितिवेनि । सुरलैन नीदिक्कु चूडनोपुदुरे ?
यसमानसत्त्वुंडवखिलेश ! नीवु; । वसुधेश ! नायट्टिवाडु नीबंटु;
अक्कटा ! नीकसाध्यंबुलेन्दु गलवु ? । तक्कक नी पेर्मिदलपवुगाक ?’
यनिन रामुडु शोकमंतयुनुडिगि । तन यदि देलिवोन्दि तम्मुनि जूचि
‘येनिंक निटमीद निन्निचंदमुल । जानकि नेडबासि सैरिपजाल;
वारक नादु दुर्वार बाणमुल । धारुणीतलमु विदारिंचि चोच्चि
१३२१

पाताळवासुल बट्टि बंधिंचि । शीतांशुमुखियैन सीत साधितु;
गादेनि सप्तसागरमुलु गलचि । मेदिनीधरमुलु मेऽमि नुग्गाडि
यीरसंबुन दिग्गजेंद्रकुंभमुलु । दारिंचि मेदिनीतनय साधितु;
गादेनि नष्टदिक्पालमर्ममुलु । भेदिंचि यादित्यबिंबंबु द्रुंचि
पोरिबोरि नक्षत्रमुलु डुल्लनेसि ।धरणि जीकटिसेसि तरुणि साधितु;

हो, उरु (महान्) बलाढ्य हो । हे इनकुलाधीश ! स्त्री के लिए विभ्रान्त होकर, इतने प्रकार से, इतना दुखी होना (क्या) तुम्हारे लिए उचित है ? ये मोह और शोक यहाँ तुम्हारे लिए (वास्तव में) हैं ? (नहीं हैं ।) यह जगत तो तामसमोहनार्थ ही है न? (तामस गुणवालों को आकर्षित करने के लिए ही है ।) अपूर्व रूप में तुम (हाथ में) धनुष लोगे तो देवता भी तुम्हारी ओर देख सकेंगे ? हे अखिलेश ! तुम असमान सत्त्व वाले हो । हे वसुधेश ! मुझ जैसा व्यक्ति तुम्हारा सेवक है । हाय, तुम्हारे लिए असाध्य (विषय) कहाँ हैं ? (कुछ भी असाध्य नहीं है ।) वैसे (तुम) अपने महत्त्व के बारे में सोचते ही नहीं ।’ (ऐसा) कहनेपर राम ने समस्त दुःख को छोड़कर, अपने मन से होश में आकर, अनुज को देखकर कहाः—‘अब आगे मैं किसी भी प्रकार से जानकी से बिछोह को सहन नहीं कर सकूँगा । निरन्तर मेरे दुर्वार (दुर्निवार) बाणों से धारुणी-तल का विदारणकर, (उसमें) पैठकर, ।। १३२१ ।।

—पातालवासियों को पकड़ बांधकर, शीतांशुमुखी (चन्द्रमुखी) सीता को प्राप्त करूँगा । नहीं तो सप्तसागरों को विकल बनाकर, मेदिनी-धरों (पर्वतों) को अतिशयता से चूर करके, अमर्ष (भाव) से दिग्गजेन्द्र के कुंभ (स्थलों) को बेधकर, मेदिनीतनया को प्राप्त करूँगा । नहीं तो अष्ट दिक्पालों के मर्मों को चीरकर, आदित्यबिंब के टुकड़ेकर, बार-बार नक्षत्रों को तोड़ गिराकर, धरणी को अन्धकार युक्तकर, तरुणी को प्राप्त

गादेनि सकलराक्षसुलु भस्मंबु । गा दीप्तबाणमुल् कडकतो नेसि
यवनि यराक्षसमैयुंड जेसि । तिवुटमै नेडु वैदेहि साधिंतु;
गादेनि ब्रह्मलोकंबॆल्ल गलचि । यादिम ब्रह्म संहारंबु सेसि
बलसि जीवुलकॆल्ल भयमु वुट्टिंचि। नॆलकॊन्न कडिमिमै नॆलत साधिंतु;
नी रीति भुजशक्ति ने जूपकुन्न । जेरि मिन्नक सुरल् सीत जूपुदुरॆ ?
१३३१

यदॆ ! चूडुनादु बाणानलशिखलु । पॊदुवुचुनुन्नवि भुवनंबुलॆल्ल;
निदॆ ! चूडु वैदेहि ने विजृंभिंचि । त्रिदशुलु मॆच्च साधिंचॆद' ननुचु
नॊदवि लोकमुलकु नत्पातकेतु । वुदयिंचॆनन बॊमलुऱक निक्किंचि
बलसि जीवुलतोडि ब्रह्मांडमॆल्ल । नलिसेयु संकर्षणस्वरूपंबु
रूपिंचि लयकाल रुद्रुंडु वोलॆ । गोपिंचि विल्लंदुकॊन्नमात्रमुन
दलकॆ भूतमुलु; भूतलमॆल्ल वडकॆ;। गलगॆ बयोधुलु; गगनमल्लाडॆ;
ब्रह्मांडभांडमुल् पगिलिनट्लय्यॆ; । ब्रह्ममंत्रमु दप्पॆ; रवि दप्पि नडचॆ;
नक्षत्रमुलु डुल्लॆ; नभवुंडु वॆऱचॆ । यक्षदेवासुरुलात्म जेड्पडिरि;
अत्तऱि सौमित्रि या रामु जूचि । चित्तंबु भयमंद जेतुलु मॊगिचि

करूँगा। नहीं तो साहस से दीप्त बाण डाल सकल राक्षसों को भस्मकर, अवनि को अराक्षस (राक्षसरहित) बनाकर, शीघ्रता से आज वैदेही को प्राप्त करूँगा। नहीं तो समस्त ब्रह्मलोक को आलोड़ितकर, आदिम-ब्रह्मा का संहारकर, भरे-पुरे समस्त जीवों को भयभीतकर, स्थिर बने साहस से सुन्दरी को प्राप्त करूँगा। इस रीति से मैं भुजशक्ति का प्रदर्शन न करूँ तो क्या देवता चुपचाप ही सीता को दिखाएँगे? (पता देंगे?) ॥ १३३१ ॥

—वही देखो, मेरी बाणानल-शिखाएँ समस्त भुवनों को समेट ले रही हैं। यह देखो, मैं विजृंभित होकर त्रिदशों (देवताओं) की प्रशंसा प्राप्त करते हुए, सीता को प्राप्त करूँगा।' (ऐसा) कहते हुए मानों लोकों के लिए उत्पात (सूचक) केतु का उदय हुआ हो, इस प्रकार भौंहों को एक साथ तानकर, भूरि-भूरि जीवों के साथ समस्त ब्रह्माण्ड को चूरकर देनेवाले संकर्षण-स्वरूप को धारणकर, लयकाल के रुद्र के समान क्रुद्ध हो, धनुष को ग्रहण करने मात्र से ही भूत (प्राणी) भयभीत हुए, समस्त भूतल काँप उठा, पयोधियाँ (समुद्र) क्षुब्ध हुईं, गगन हिल उठा, ब्रह्मांड भांड मानों टूट गया, ब्रह्मा का मन्त्र (सृष्टि का नियम-चक्र) टूट गया, रवि भटककर चला, नक्षत्र टूट गिरे, अभव (शिव) भीत हुआ, यक्ष, देव, असुर मन में व्याकुल हुए। उस अवसर पर, सौमित्र ने, उस राम को देख, चित्त में

'काकुत्स्थ ! नीवतिकारुण्यनिधिवि ;। लोकरक्षण कळालोलचित्तुडवु;
१३४१
जनकज कौऱ्कुनै सकललोकमुलु । मुनुमिडि निर्मूलमुलु सेयदगुनॆ ?
यौन्डौन्ड वनमुल नौगि समुद्रमुलु । निंडन पुरमुलु निखिलदेशमुलु
नलयक वैदेहि नरसि लेकुन्न । ज़लमु पैम्पुन मऱि साधितुगानि ।'
यनिन तम्मुनि माटलन्नियु ब्रीति । विनि कोपमुडिगि ता विल्लॆक्कुडिंचि
यखिलेशुडगु रामुडट दक्षिणाभि । मुखुडयि तानु दम्मुडु वोवुचुंडॆ;
ना तऱि दैरुवुन नंदंद नलगि । सीत कौप्पुन नुंडि चिंदिन विरुलु,
ना तन्वि वक्षोजहाररत्नमुलु, । नाततमणिमयंबैन या नाति
पदनूपुरमुलुर्वि बडियुन्न जूचि । मुदमु शोकंबुनु मूर्छयु गदुर
नप्पुडु रघुरामुडात्म जिंतिंचि । 'तप्प दैव्वडो क्रूर दानवुंडोकडु
कुटिलकुंतल नॆत्तुकौनि पोयिनाडु ;। कटकटा !' यनि त्रोवगनुगोन्चु
बोव १३५१

जटायु मरणमु

नंत ना तेरुवुनकनतिदूरमुन । नंतंत राक्षसुनडुगुल चौप्पु

भीत होकर, हाथ जोड़कर, (कहा) :—'हे काकुत्स्थ ! तुम अतिकारुण्यनिधि हो, लोकरक्षणकला में लग्न चित्तवाले हो । ।। १३४१ ।।

—(क्या तुम्हें) जनकजा के लिए सकल लोकों को प्रथमतः निर्मूल करना चाहिए ? (क्या यह उचित है ?) एक-एक वन में, लगन के साथ समुद्रों में, भरपूर पुरों में, समस्त देशों में, बिना थके, वैदेही को खोजकर, (उनके) प्राप्त न होनेपर, अधिक हठ से फिर ऐसा ही (सीता को) प्राप्त करेंगे ।' अनुज की सभी बातों को प्रीति से सुनकर, क्रोध को छोड़कर, उठाए हुए धनुष को नीचेकर, अखिलेश राम तब दक्षिणाभिमुख हो, अनुज के साथ जाने लगा । उस अवसर पर मार्ग में जहाँ-तहाँ चूर होकर, सीता के जूड़े से बिखरकर गिरे फूलों, उस तत्वंगी के वक्षोज-हार के रत्नों, उस स्त्री के आतत-मणिमय पद-नूपुर को उर्वी पर पड़े हुए देखकर, मोद, शोक (और) मूर्च्छा से अभिभूत हुए । तब रघुराम ने आत्मा (मन) में विचारा:—'निश्चय है, हाय, कोई एक क्रूरदानव कुटिलकुन्तला (सीता) को उठाकर ले गया है ।' (ऐसा) कह मार्ग को देखते हुए जानेपर, ।। १३५१ ।।

जटायु का मरण

तब उस मार्ग से थोड़ी दूरपर, जहाँ-तहाँ राक्षस के चरणों के चिह्नों

नरयुचु नरयुचु नंदंद पोयि । करमर्थि जूचिरा कमलाप्तकुलुलु
रालिन यॆऱकलु रक्तपंकमुन । गूलिन सूतुपै गूलिन तेरु
देरुक्रिंदट बडि तॆगिन यश्वमुलु । धारुणि बडिन पताकखंडमुलु
विऱिगि मुंदटनुन्न विंटितुन्कलुनु । नऱिमुऱि बडियुन्न यस्त्रशस्त्रमुलु;
गनि लक्ष्मणुडु सूप गडु जोद्यमंदि । 'घनुलव्वरो यिंदु गदनसौख्यंबु
लनुभविंचिनवार' लनि यव्विधंबु । गनुगॊनु तलपुन गाकुत्स्थकुलुडु
देरुवंतकंत शोधिंचुचु मुंद । ऱुगुचो रघुरामुडासमीपमुन
नॆलमि यंतयु दूलि यॆऱकलु दुनिसि ।कलय नॆत्तुट दोगि काळ्ळुनु विऱिगि
पविचेत गूलिन भर्माद्रि पगिदि । विवशुडै पडियुन्न विहगेंद्रु गांचि
१३६१
'सौमित्रि! चूचिते चपलराक्षसुडु । भूमिज म्रिंगि ता बॊंडसूप वॆऱचि
चलियिंचि पक्षिवेषमुन नुन्नाडु; । पॆलुकुऱ वीनि जंपॆद' नंचु गडगि
घनचापहस्तुडै कदिसिन रामु । गनि पक्षिविभुडु गद्गदकंठुडगुचु
नॆत्तुरु ग्रक्कुचु निट्टूर्पुलॆसग । गुत्तुक ब्राणमुल् गुदिवड बलिकॆ;
'धरणीश! येनु मीतंड्रिकि सखुड;। बरगंग गश्यपब्रह्मपौत्रुडनु;
नरुणनंदनुड; जटायुवन्वाड; । जरियिंतु नडवुल शैल श्रृंगमुल

को देखते-देखते जाकर, अधिक इच्छा से उन कमलाप्तकुल वालों ने देखा। झड़े पंख, रक्तपंक में गिरे सारथीपर गिरा हुआ रथ, रथ के नीचे गिरकर कटे अश्व, जमीनपर गिर पड़े झंडे के टुकड़े, टूटकर सामने गिरे हुए बाणों के टुकड़े, इधर-उधर (अस्त-व्यस्त) गिरे हुए अस्त्र-शस्त्रों को लक्ष्मण ने देखा, देखकर बताने पर अति आश्चर्यचकित हो (सोचा) किन्हीं महान् व्यक्तियों ने यहाँ कदन (युद्ध)-सुख का उपभोग किया है', उस विधान को देखने की इच्छा से काकुत्स्थकुलवाले समस्त मार्ग को खोजते हुए, आगे जाते रहे तो रघुराम ने निकट ही समस्त शोभा को खोकर, पंख कटकर, रक्त में डूबकर, पैर के कटनेपर, वज्र से टूटे भर्माद्रि (स्वर्ण पर्वत) के समान, विवश हो पड़े विहगेन्द्र को देख (कहा):— ॥ १३६१ ॥

—'हे सौमित्र देखा, चपलराक्षस भूमिजा को निगल, अपने रूप में दिखाई देने से डरकर, छल से, पक्षी के वेष में है। विह्वल हो (ऐसा) इसे मार डालूँगा।' कहते हुए, सप्रयत्न महान्-चाप को हाथ में ले झपटने वाले राम को देखकर पक्षी-विभु ने गदगद कंठ होते हुए, खून उगलते हुए, लंबी आहें छोड़ते हुए, कंठ में प्राणों के अटकनेपर (कहा):—'हे धरणीश! मैं तुम्हारे पिता का सखा हूँ। विलसित कश्यप ब्रह्मा का पौत्र हूँ। अरुण नन्दन हूँ। जटायु कहलानेवाला हूँ। जंगलों और

नति नादु वृत्तांतमंतयु नीकु । विनुपिंपने मुन्नु विशदंबुगाग;
'नट्टिवानिकि निट्टि यापद यॆट्लु । पुट्टॆ' नटन्न नो पुण्यात्म ! विनुमु;
वलनॊप्प नेडु रावणुडु नी देवि । नॆलमि म्रुच्चिलिकॊनि येगुचो नेनु
बोनीक यड्डमै भूरिसत्त्वमुन । वानितो बोराडि वसुध गूलितिनि;
१३७०

अदॆ वानि केतु सूताश्व समेत । विदितरथंबाजि विड्गॆ नाचेत;
ज़लमुन नुडुवीथि जपलराक्षसुडु । नॆलतुक गॊनिपोयॆ; नीवु रावैति;
वेनु नीकीवार्त यॆड्गिंप गंटि; । बूनि नी शुभमूर्ति बोडगान गंटि;
नतिपुण्यकृतिनैति' ननि विन्नविंप । मतिलोन शोकमिन्मडिग राघवुडु
विल्लटु पडवैचि विवशुडै धरणि । द्रॆळ्ळि सौमित्रि बोधिंपगा दलसि
'यय्यो ! महात्म ! जटायुवा ! नीकु। निय्यवस्थलु वच्चॆने मदर्थमुग ?'
ननि जटायुवुदेहमंदंद तडिवि । तनुरक्तमंतयु दानॆ पोदुडिचि
तम्मुनि जूचि 'यीतडु मनकॊड्कु । निम्माड्कि रावणु नॆदिरि पोराडॆ;
निट्टुवंटि पुण्यात्मुडन्दैन गलडॆ? । यटुगान दिविकीतडरुगकमुन्न

शैलशिखरों पर विचरण करता हूँ। यह अपना सारा वृत्तान्त विशदरूप से (इससे) पहले तुमको सुनाया नहीं था ? यदि पूछोगे कि ऐसे व्यक्ति को ऐसी विपदा कैसे संप्राप्त हुई तो हे पुण्यात्मा ! सुनो। तरकीब से आज रावण के तुम्हारी देवी को ढंग से चुराकर ले जाते समय मैंने (उसे) जाने न देकर, भूरि सत्त्व से उससे युद्धकर, वसुधा (पर) गिर गया हूँ। ॥ १३७० ॥

—वही उसका केतु (झंडा), सूत, अश्व समेत विदित (प्रसिद्ध) रथ है जो आजि (युद्ध) में मेरे हाथ नष्ट हुआ है। हठ से, उडुवीथि (आकाश मार्ग) से चपलराक्षस नारी को ले गया। तुम (समय पर) नहीं आए। (यही बड़ी बात है कि) मैं तुम्हें यह समाचार दे सका, सप्रयत्न तुम्हारी शुभमूर्ति को देख सका। अतिपुण्यकृति बन सका।' ऐसा निवेदन करने पर, मन में दु:ख के द्विगुणित होनेपर राघव धनुष को उधर डालकर, विवश हो, धरणी पर गिर पड़े। सौमित्र के प्रबोधित करने पर, होश में आकर (बोले):—'हाय, महात्मा ! जटायु ! मदर्थ (मेरे हेतु) तुम इन (दु:) अवस्थाओं को प्राप्त हुए ?' (ऐसा) कहकर जटायु की देह पर जहाँ-तहाँ फेरा, शरीर पर के समस्त रक्त को स्वयं पोंछकर, अनुज को देखकर कहा:—'इसने हमारे लिए इस प्रकार रावण का सामनाकर युद्ध किया। ऐसा पुण्यात्मा और कहीं है ? (नहीं है।) यह ऐसा है

रावणुडेलेंडि राजधानिकि । द्रोवयु, वानि बंधुर पराक्रममु
१३८०
नन्नियु नडुगुमी' वन्न लक्ष्मणुडु । ग्रन्नन रघुरामकार्य सहायु
ना जटायुवु निर्जरादिविधेयु । नोज दद्विधमेल्ल नुचितोक्ति नडुग
गोन्निमाटलु पेरुकोनुचु गुत्तुकनु । ग्रोन्नेत्तुरोलुक बल्कुल कोंडलेक
यतुलपुण्योदयुंडगु रामु जूचि । मतिलोन नतनि नामंबु नेमऱक
मोक्षपदानंदमुन बुलकिंचि । पक्षिवल्लभुडंत ब्राणमुल् विडिचें ।
धरणीशसुतुलंत दशरथाधीशु । मरणंबुकंटेनु मदि जाल वगचि
विहगवल्लभुनकु वेदोक्तयुक्ति । दहनादिकृत्यमुल् दग नाचरिंचि
१३८७

कबंध संहारमु

यंत वेवेग क्रौंचारण्यमुनकु । नेन्तयु गडकतो नेगि यच्चोट
नाना लतावृक्ष नगमृगोदग्र । मैनट्टि योक कोन नरुगुचो नचट
नेऱसिनकुरुलुनु निडुदकोऱलुनु । बऱपैन कडुपुनु बडबाकिनोरु १३९०
मिडिग्रुड्ल कन्नुलु मीगाळ्ळदाक । विडिवड्ड चन्नुलु वेऱिचिन्नेलुनु

(अतः) इसके स्वर्ग जाने से पहले रावण की राजधानी के मार्ग, उसके बन्धुर पराक्रम, ।। १३८० ।।

—(ये) सभी तुम पूछ लो ।' कहनेपर लक्ष्मण ने झट से रघुराम के कार्य में सहायक, निर्जरादि के विधेय (आज्ञाकारी) उस जटायु से उत्साह से, उस समस्त प्रकार को, उचित उक्तियों से पूछा । कुछ बातों का उल्लेख करते हुए, गले में नये रक्त के उमड़नेपर, बात करने का अवकाश न होने पर, अतुलपुण्योदय वाले राम को देखकर, मन में उसके नाम को न भूलकर, मोक्षपदानन्द से पुलकित होकर, पक्षिवल्लभ ने तब प्राण तज दिये । तब धरणीसुत (राजकुमार) दशरथाधीश के मरण की अपेक्षा मन में अधिक दुखी हुए । विहगवल्लभ को वेदोक्तयुक्ति से उचित प्रकार से दहनादि कृत्य (सम्पन्न) कर, ।। १३८७ ।।

कबन्ध संहार

—तब अतिशीघ्र क्रौंचारण्य में अधिक साहस से जाकर, वहाँ नानालता-वृक्ष-नग-मृग से उदग्र (भयंकर) वने एक जंगल में जानेपर, वहाँ पके हुए केश, लंबी दाढ़ें, विशाल उदर, बड़ा मुंह, ।। १३९० ।।

—उभरी हुई आँखें, घुटनों तक लटकते कुच, पागलों की-सी करतूतें,

कुदियगट्टिन मॆंड गॊप्प पिक्कलुनु । मॊदलंट बलसिन मॊद्दु पॆन्दॊडलु
नलर नयोमुखियनु दैत्यवनित । कलितसौंदर्यलक्षणुनि लक्ष्मणुनि
गनुगॊनि कामिंचि करमंटबट्टि । तनुबॊन्द रम्मनि तरितीपु सेय
जुप्पनातिकि नॆट्टिसुखमिच्चॆ दानि । कप्पाटु नसिधार ननुवार नॊसगि
दुंदुभिपटहादि तूर्यनादमुल । क्रंदुनकंटॆ नग्गलमुगा नपुडु
मुंदऱ नॊकम्रोत म्रोयंग दानि । चंदंबु गनुगॊनि चनुचु राघवुलु
योजनायत बाहुलॊगि बारसाचि । ये जंतुवुलनैन नेपुमै नॊडिसि
यऱिमुऱि म्रिगुचु नाकलिचिच्चु । जुऱवुच्चि मस्तकशून्युडै निलिचि
युदरंबु नोरुगानुन्न कबंधु । विदळित बहुजीववितककबंधु १४००
द्रिदशनिबंधु संदीप्त मदांधु । गदिसि रामुडु सूचि कडु जोद्यमंदॆ;
वाडुनु दन करद्वयमुन वारि । वॆडिमि वडि बट्टि वेवेग दिगुव
नन्ननु जूचि यिट्लनियॆ लक्ष्मणुडु;। 'नन्नु वीनिकि भक्षणमु सेसि मीरु
सीतनन्वेषिंचि चेकॊनि सकल । भूतल मेलंग बॊन्ड'न्न नतडु
चिंतिंचुचुनु वानि चेतुल वॆन्ट । गॊन्तदूरमु वोयि कूमितम्मुडुनु

संकुचित हो मोटी बनी गरदन, बड़ी-बड़ी पिंडलियाँ, जड़ से मोटी बनी भद्दी बड़ी जाँघों (आदि से) युक्त 'अयोमुखी' नामक दैत्य वनिता के, कलित-सौंदर्य लक्षण से युक्त लक्ष्मण को देखकर, कामी बन (आसक्त होकर) हाथ पकड़कर, अपने को प्राप्त (संभोग) करने के लिए कामना (प्रकट) करनेपर, (लक्ष्मण ने) शूर्पणखा को जो सुख दिया था, उसे भी, उस समय तलवार की धार से, चतुरता से, वही सुख दिया। तब आगे दुंदुभि पटहादि तूर्यनादों के हल्ले से बढ़कर, एक ध्वनि के मुखरित होनेपर, उसके प्रकार को देखते हुए राघव जा रहे थे। योजन-आयत (विशाल) बाहुओं को लगन के साथ फैलाकर, किसी भी जानवर को, अतिशयता से पकड़कर, अस्त-व्यस्त रूप से निगलते हुए, क्षुधाग्नि को बुझाते हुए, मस्तक शून्य हो, उदर ही मुँह हो ऐसा खड़े कबन्ध को, जो विदलित बहुजीव-वितत (समूह)-कबन्ध है, ।। १४०० ।।

—त्रिदश-निर्बन्ध (देवताओं को बंधनों में डालनेवाला) है, संदीप्त-मदान्ध है, नियराकर, देखकर, राम आश्चर्य-चकित हुआ। उसने भी अपने दो हाथों से, तीक्षणता से, झट से पकड़, शीघ्रता से अपनी ओर खींचा। (उसे देख) अग्रज को देख लक्ष्मण ने यों कहा:—'मुझे इसका आहार बनाकर, आप सीता को खोजकर, प्राप्तकर, समस्त भूतल पर शासन करने जाइए।' कहनेपर वह (राम) चिन्ता करते हुए उस (राक्षस) के हाथों के साथ थोड़ी दूर जाकर, लाड़ले अनुज और स्वयं (दोनों ने भी) मन में बहुत

दानुनु बुद्धि नॆन्तयु विचारिंचि । पूनिकमीऱ गॊब्बुन नॊऱल् वॆऱिकि
कडुवाडि खड्गमुल् गैकॊनि वानि। कडिदि चेतुलु रॆन्डु खंडिचुटयुनु
नुब्बॆल्ल जॆंडि दैत्युडॊऱलुचु गूलि । गॊब्बुन दॆलिवि गैकॊनि वारि जूचि
'मीरॆव्वर' नुडु सौमित्रि सर्वंबु । श्रीरमचरितंबु सॆप्पिन वाडु
विनुकलिचे नंत विज्ञानमॊदव ।दनदु वृत्तांतमंतयु जॆप्पदॊडगॆ १४१०
'दनुवनु दिव्युंड धरणीश ! येनु; । घनमैन मुनिशापगति निट्टुलैति;
गनकगर्भुनि चेत गामरूपत्व । मुनु जिरंजीवित्मुनु गांचि, क्रॊव्वि
यिट्टिरूपमु दाल्चि यॆल्लसंयमुल । बट्टि बांधिपग बरमकोपनुंडु
स्थूलशिरुंडु ना शोभिल्लु मुनिकि । नी लोकमुन दॊल्लि यॆग्गु गाविंप
नतनि शापंबुन ना क्षणंबुननु । नतिघोररूपुंडनै येनु मरल
नतनि ब्रार्थिंचिन नतडु मी वलन। नतुल शापविमुक्ति यगुनंचु बलुक
नदि यादिगा निट्टि याकृति बूनि । त्रिदशेंद्रु नाजि कॆतॆम्मन्न नतडु
कंठंबु तलतोड गडुपुलो बोव । गुंठितंबुग सेसॆ गुलिशपातमुन'
ननिन राघवुडु 'दशाननुचंद । मनघ! नी वॆऱुगुदे?'यनिन वाडनियॆ;
'नॆरुगुदु; गानि मौनींद्रु शापमुन। नॆऱुक चालदुनाकु; नी शरीरमुन
१४२०

विचारकर, कृतसंकल्प हो, झट से म्यान से खींच, अतितीक्ष्ण खड्ग हाथों में लेकर, उसके दोनों बलिष्ठ हाथ काट दिये। समस्त गर्व के भंग होने पर, दैत्य चिल्लाते हुए गिर गया। झट से होश में आकर, उन्हें देख पूछा, 'आप कौन हैं ?' तब सौमित्र ने श्रीराम सारा चरित सुनाया तो वह श्रवण-सौभाग्य से विज्ञान (पूर्वज्ञान) के उत्पन्न होनेपर, अपना समस्त वृत्तान्त कहने लगा। ॥ १४१० ॥

—'हे धरणीश ! मैं दनु नामक दिव्य (देवता) हूँ। महान् मुनि के शाप की गति से ऐसा हुआ हूँ। कनकगर्भ (ब्रह्मा) से कामरूपत्व और चिरंजीवत्व (चिरायु) प्राप्तकर, गर्वीला बन, इस प्रकार का रूप धारण कर, सभी संयमियों को पकड़ सताने लगा। (तब) परमक्रोधी, स्थूल-शिर नाम से शोभायमान मुनि को, पूर्व में, इस लोक में, हानि पहुँचाई तो उसके शाप से मैं उसी क्षण घोररूप को प्राप्त हुआ। मेरे फिर प्रार्थना करने पर उन्होंने कहा कि आपके कारण अतुल शाप से विमुक्ति होगी। तब से लेकर इस प्रकार की आकृति को धारणकर, त्रिदशेन्द्र (इंद्र) को युद्ध के लिए आह्वान करनेपर उसने सिर के साथ कंठ उदर में चला जाए, इस तरह अकुंठित रूप से कुलिशपात (वज्र का आघात) किया।' (ऐसा) कहनेपर राघव ने (पूछा):—'हे अनघ ! दशानन

ननलंबु दरिकौंल्पु; डामीद मीकु। विनुपिंतु दैलिय निव्विध' मन्न वारु
दनुवू शरीरंबु दग संस्करिंचि । यनलुन का देहमाहुति सेय
नतडंत दिव्युडै याकाशवीथि । नतुलविमानंबुनंदुंडि पलिकें;
'नो रघुराम ! यायोधनोद्दाम ! । कारुण्य तारुण्य गांभीर्यधुर्य !
काकुत्स्थवर्य ! नी कारुण्यदृष्टि । गैकौंन्टि नातौंन्टि कमनीयतनुवू;
विनु; मिंक रावणुविधमैल्ल नेनु । विनुपिंतु देटगा विवरिंचि; यतडु
धनदानुजुडु; पुलस्त्यब्रह्म कूर्मि । मनुमडु; तन तपोमहिम मैप्पिंचि
नलुवचे वरमुलुन्नति गांचिनाडु; । चैलगि दिग्विजयंबु चेसिनवाडु;
तौलिवेलुपुलकैल्ल दौरयैनवाडु; । कलवेलुपुलकैल्ल गंटैनवाडु;
बलुतलल् पदियुनु बाहुलिर्वदियु । गलवाडु; लवणसागरखेयमैन
१४३०
लंकापुरंबु पालनसेयुवाडु; । बिंकान रजताद्रि बैऱिकिनवाडु'
अनि चैप्पि, रावणुंडट सीत गौनुचु । जनिन मार्गमु सैप्पि सरग ना दनुवु
मऱि त्रोव गुरुतुलु मार्गंबुनंदु । दरुचैन वस्तुवुल् दप्पक चैप्पि
'मेरगा बंपासमीपंबुनंदु । नारूढमति मतंगाश्रमंबौप्पु;

के प्रकार को तुम जानते हो क्या ?' उसने कहा:— 'जानता हूँ। किन्तु मौनीन्द्र के शाप से मुझे पर्याप्त ज्ञान नहीं है। इस शरीर में ॥ १४२० ॥

—अनल को प्रज्वलित कीजिए। उसके बाद, आप जान लें, इस तरह समस्त विधान को बताऊँगा।' (ऐसा) कहनेपर उन्होंने शरीर को ठीक तरह संस्कृतकर, उस देह को अनल की आहुति कर दी। तब वह दिव्य होकर आकाशवीथि में अतुल विमान में से (यों) बोला:—'हे रघुराम ! हे युद्ध में उद्दाम ! हे कारुण्य-तारुण्य-गाम्भीर्य-धुर्य ! हे काकुत्स्थवर ! तुम्हारी करुणादृष्टि के कारण मैंने पूर्व के कमनीय शरीर को प्राप्त किया। सुनो, अब रावण के विधान का मैं स्पष्ट रूप से विवरण दूंगा। वह धनद (कुबेर) का अनुज है। पुलस्त्य ब्रह्मा का लाड़ला पौत्र है। अपनी तपोमहिमा से प्रसन्नकर, ब्रह्मा से वर और औन्नत्य प्राप्त किया है। उल्लसित हो दिग्विजय किया है। वह पूर्व-देवताओं (दानवों) का राजा है, देवताओं का मनोकंटक है, बड़े-बड़े दस सिर, बीस बाहुओं से युक्त है। लवणसागर के खेय (खाई) से युक्त, ॥ १४३० ॥

—लंकापुरी पर शासन करनेवाला है। (वह) गर्व से रजताद्रि को उखाड़नेवाला है।' ऐसा कहकर, रावण जिस ओर से सीता को ले गया, उस मार्ग को बताकर शीघ्रता से उस दनु ने फिर मार्ग के चिह्न, मार्ग में अक्सर पड़नेवाली वस्तुओं के बारे में अवश्य बताकर (कहा):— 'पम्पा

नम्मुनि शिष्युरालयिनट्टि शबरि । मिम्मु बूजिंचु; नम्मॆलत युन्नॆडकु
मीरुवॊन्डट मीकु मिहिरसूनुनकु । गूरिमि चॆलिमिगल्गुनु; दानिवलन
जानकि बॊन्देदु; साम्राज्यपदवि । बूनि कांतु' वटंचु बोयॆनद्दिविकि।
दनुवट्टु दिव्यपदंबुन करुग । मनुवंशतिलकुलु मरुनाडु कदलि
पंपासरोवर पश्चिमस्थलिनि । संपूर्ण तरुलतासंपद बॊदलि
प्रबल पुण्यमुलकु बट्टैनयट्टि । शबरियाश्रमवनस्थलिकि बोवुटयु
१४४०

शबरी सत्कारमु

नॆदुरुगावच्चि यय्यिति सद्भक्ति । बदमुलकट्टु सागबडि म्रॊक्कि लेचि
'दशरथवरपुत्र ! ताटकाजैत्र ! । कुशिकसंभव-याग-कुशलप्रयोग !
चिरमुनिध्येय! शिक्षित ताटकेय! । परमगंगातीर पादसंचार !
पदरजोनैर्मल्य पालिताहल्य ! । विदळितहरचंड विपुल कोदंड !
भीमभार्गवरामबिरुदविराम ! । कामितपितृ वाक्यकरण सुश्लोक!

(सरोवर) की सीमा के पास, आरूढ़ मतिवाले मतंग (मुनि) का आश्रम है। उस मुनि की शिष्या शबरी आपकी पूजा करती है। वह नारी जहाँ है, वहाँ जाइए। वहाँ आप और मिहिरसून (सूर्यपुत्र, सुग्रीव) में मैत्री होगी। उसके कारण जानकी को प्राप्त करेंगे। साम्राज्यपद को प्राप्तकर शोभित होंगे।' (यह) कह वह दिवि को गया। दनु के उधर दिव्यपद (स्वर्ग) को जाने के बाद, मनुवंशतिलक (राम-लक्ष्मण) दूसरे दिन निकलकर, पम्पासरोवर की पश्चिमस्थली में, सम्पूर्ण-तरुलता-सम्पन्नता से शोभित, प्रबलपुण्यों का आकर बने शबरी-आश्रम-वनस्थल गये। ॥ १४४० ॥

शबरी का सत्कार

(स्वागतार्थ) सामने आकर, उस नारी ने सद्भक्ति से चरणों में लोटकर, प्रणामकर, उठकर, (कहा):—'हे दशरथ-वर पुत्र ! हे ताटकाजैत्र (ताड़का विजयी) ! हे कुशिक सम्भव (कौशिक)-याग कुशलप्रयोगा ! हे मुनियों के चिरध्येय ! हे शिक्षित ताटकेय (ताड़का के पुत्रों को दंडित करनेवाले) ! हे परम गंगातीर-पाद संचार (करनेवाले) ! हे पदरजोनैर्मल्य (से) पालिताहल्या ! हे विदलित हर-चंड-विपुल-कोदंड ! हे भीम-भार्गवराम-बिरुद विराम ! कामित पितृवाक्य-करण-सुश्लोक ! प्रकटापराध-विराध निरोध। सकल मुनित्राण ! सत्यप्रवीण ! खरदूषणादि राक्षस-शिरच्छेद (करनेवाले) ! मरणार्थि मारीचमर्दिनाराच ! सीतावियोग

प्रकटापराध विराधनिरोध ! । सकलमुनित्राण ! सत्यप्रवीण !
खरदूषणादि राक्षस शिरश्छेद ! । मराणार्थिमारीचमर्दिनाराद्र !
सीतावियोग सूचितमोहराग ! । ख्यातखगाध्यक्ष कल्पितमोक्ष !
यलघुविक्रमधाम! यतिपुण्यनाम! । नेलकोन्न वेडुक निनु जूडगंटि;
बरिकिंप नातपःफलमंदगंटि; । नरुदैन पुण्यंबुलन्नियुगंटि; १४५०
गाकुत्स्थ! तेरुवुन गडु डस्सितेन्दु । बोकु; मायाश्रमंबुन नेडु निलुवु;
मनघात्म ! ना गुरुडैन मतंग । मुनिचेत नी कथल् मुनु विनियुंदु;
नी वाद्युडवु, सर्वनिगमवेद्युडवु । गावुन निनु नुतुल् गाविंपदरमे ?
यिदि या मातंगमुनींद्रु नाश्रममु । विदित तपश्चर विश्रांतिकरमु'
ननि या महत्त्वंबुलन्नियु देलिपि । वनमूलफलमुलु वलनोप्पदेच्चि
यिच्चिन भुजियिंचि येलमिमै रामु । डच्चट ब्रीतितो ना रात्रि निलिचि
घनजटाबंधैककबरि ना शबरि । गनुगोनि मऱुनाडु काकुत्स्थुडनिये;
'दरमिडि नन्नु सीतावियोगाग्नि । दरिकोन नेन्तयु दलकुचुन्नाड;
नोकचोट निलुवलेकुडुकुचुन्नाड; । विकचाब्जमुखि सीत वेदुकबोवलयु;
बनिविनियेद' नन्नबरमसंतोष । मुन बोन्दि शबरि रामुनि जूचि
पलिके १४६०

सूचित मोहराग (से युक्त) ! ख्यात-खगाध्यक्ष-कल्पित मोक्ष ! अलघु विक्रमधाम ! अतिपुण्यनाम ! स्थिर बने कुतूहल से तुमको देख पाई हूँ। सोचनेपर अपने तपः फल को प्राप्तकर सकी। अपूर्व समस्त पुण्यों को प्राप्तकर सकी। ।। १४५० ।।

—हे काकुत्स्थ (से युक्त)! मार्ग में (मार्गश्रम से) बहुत थक गये हो। कहीं मत जाओ। आज हमारे आश्रम में ठहर जाओ। हे अनघात्म ! मेरे गुरु मतंगमुनि द्वारा पूर्व में तुम्हारी कथाएँ सुनी थीं। तुम आद्य हो, सर्वनिगमवेद्य हो। अतः तुम्हारी नुतियाँ करना सम्भव है ? (असम्भव है।) यह उस मतंग मुनीन्द्र का आश्रम है, विदित (प्रसिद्ध) तपश्चर्या (से पूर्ण तथा) विश्रान्तिकर है।' (ऐसा) कहकर उन सभी महत्वों (पूर्ण बातों) को बताकर, प्रेम से वनमूलफल लाकर, देनेपर, (उन्हें) खाकर, आनन्द से राम वहाँ उस रात को प्रीति से ठहर गये। दूसरे दिन घन जटा-बन्धैक-कबरी (वाली) उस शबरी को देखकर, काकुत्स्थ ने कहा:— 'शीघ्रतत से सीता की वियोगाग्नि के प्रज्वलित होनेपर व्याकुल हो रहा हूँ। एक स्थानपर रहना असह्य होने के कारण संतप्त हो रहा हूँ। विकच-अब्जमुखी सीता को खोजने जाना है। (अब मुझे) जाना है।' (ऐसा) कहनेपर परम प्रसन्न हो, शबरी राम को देख बोली:— ।। १४६० ।।

'दनुवनु घनुडु मुंदऱ जेयदगिन । पनुलॆल्ल दॆलिपॆ नेर्पडमुन्नॆ मीकु;
नॆननु मऱियु नेनदियॆ तॆल्पॆदनु । मानवनाथ ! नीमदि कॆक्कुनट्लु;
रावणु जंपॆदु राम ! नी कूर्चु । देवि गूडॆदवु; संदेहंबु वलव;
दैन नेकाकुलैयट पोवदगदु । भानुकुलाधीश ! पगरपैनॆपुडु;
निनकुलाधिप! विनुमिट ऋश्यमूक । मनु पर्वतमुनकु नरुगुमु प्रीति;
सुनिशितमति सूर्यसुतुडु सुग्रीवु । डनु वानराधिपुडाकॊन्डनुंडु;
दन वधूरत्नंबु दन राज्यपदमु । दन यन्न वालिचे दा गोलुपोयि
यतडु शोकातुरुडै युन्नवाडु; । अतनिकि गपिसेनलप्रमाणम्मु;
लतनिकि विश्वासमात्म बुट्टिंचि । यतनिकि नुपकारमलवड जेसि
यतडु नीवुनु गूडि यटु लंक करिगि । यतिसत्त्वु रावणु ननिलोन जंपि
१४७०
बलविक्रमंबुल प्रस्तुति कॆक्क । जॆलुवॊन्द नी देवि सीत गैकॊनुमु'
अनि प्रीति शबरि कार्यमुलॆल्ल दॆलिपि । तन गुरुवाक्यमुल् दलचि या
क्षणम
यनलंबु दरिकॊलिपया यग्निलोन । दन शरीरमु वेल्व दा समकट्टि
या समयंबुन नंतरिक्ष मुन । वासवप्रमुखगीर्वाणुलंदऱुनु
मणिघृणिदेदीप्यमानविमान । गणसमारूढुलै कनुगॊनुचुंड

—'दनु नामक महान् (व्यक्ति) ने आगे करणीय (करने योग्य) ढंग से पहले ही तुमको बताया है। फिर भी हे मानवनाथ ! मैं फिर से वही बताऊंगी जिससे तुम्हारे मन में (बात) जमे। हे राम ! रावण का वध करोगे। तुम्हारी लाडली देवी को प्राप्त करोगे। सन्देह की आवश्यकता नहीं है। फिर भी हे भानुकुलाधीश ! एकाकी हो वहाँ शत्रुओं पर नहीं जाना चाहिए। हे इनकुलाधिप ! सुनो, यहाँ ऋश्यमूक नामक पर्वतपर प्रीति से जाओ। उस पर्वतपर सुनिशितमतिवाला सूर्यसुत सुग्रीव नामक वानराधिप रहता है। अपनी वधू-मणि (तथा) अपने राज्यपद को अपने अग्रज वालि के हाथों खोकर वह शोकातुर बना रहता है। उसकी कपिसेनाएँ अप्रमाण (अनन्त) हैं। उसके मन में विश्वास को उत्पन्नकर, उसका सुन्दरता से उपकार कर, वह और तुम मिलकर उधर लंका जाओ, अतिसत्त्ववाले रावण को युद्ध में मार डालकर ॥ १४७० ॥

—बलविक्रमों के प्रशंसित होनेपर, शोभा से सीता को ग्रहण करो।' (ऐसा) कहकर प्रीति से शबरी (करणीय) समस्त कार्य बताकर, अपने गुरु के वाक्यों को स्मरणकर, उसी क्षण अनल को प्रज्वलितकर, उस अग्नि में अपने शरीर को होमकर देने के लिए तैयार हुई। उस समय अंतरिक्ष

नारद सनक सनंदन प्रमुख । सार मुनींद्रुलु संतोषमंद
बरमु बरंधामु बरमकल्याणु । बरिपूर्णु बरमात्मु बरमेष्ठिविनुतु
नव्ययु नविकारु नखिलांतरात्मु । नव्यक्तु नखिलेशु नाद्यंतरहितु
भवमुखामरवेद्यु भवरोगवैद्यु । रविकुलांबुधिचंद्रु रघुरामचंद्रु
दनमदिनिर्लिपि यत्तड़ि वलगोँनुचु । विनुतिचि शबरि या विभुनि
सन्निधिनि १४८०
ननिलुनियंदु रामार्पणंबुगनु । दन शरीरमु वेल्चि दैवतानीत
मानितदिव्य विमानंबु नेँक्कि । नानाविधमुल वर्णनसेय सुरलु
देवलोकमुन कोँन्ते वेड्क जनियेँ । देवदुंदुभुलु धिंधिस्मनि म्रोय;
ननलमुखंबुन ना रीति शबरि । यनिमिषसौख्यंबुलंदिनयंत १४८४

ऋश्यमूकगमनमु

रमणीयमूर्तुलु रामसौमित्रु । लमितबलोदग्रुलच्चोटु वेँडलि
यनवरतानेकयतगुणानीक । मुनिलोकमगु ऋश्यमूकंबु गनिरि ।
त्रैलोक्यविभुलैन तम राक जूचि । यालोन मदि बोँन्गि यानंदमंदि

में, वासव-प्रमुख (आदि) समस्त गीर्वाणों के, मणिघृणि देदीप्यमान-विमान-गण-समारूढ़ होकर देखते समय, नारद-सनक-सनन्दन-प्रमुख (आदि)-सारमुनीन्द्रों के प्रसन्न होनेपर, परम, परंधाम, परमकल्याण (प्रद), परिपूर्ण, परमात्मा, परमेष्ठि (ब्रह्मा)-विनुत, अव्यय, अविकार, अखिलान्तरात्मा, अव्यक्त, अखिलेश, आद्यन्तरहित, भव-मुख (आदि)-अमर-वेद्य, भवरोग-वैद्य, रविकुलांबुधिचन्द्र, रघुरामचन्द्र को अपने मन में रख (स्थिरकर), उस अवसर पर, अनुकूलता से ग्रहणकर, विनुतिकर, शबरी उस विभु की सन्निधि में ।। १४८० ।।

—अनल में, रामार्पण के रूप में, अपने शरीर को होमकर, दैवतानीत (देवताओं से लाये गये)-मानित-दिव्य विमानपर चढ़कर, देवताओं के नानाविधियों से वर्णन करते रहनेपर, देवदुन्दुभियों के धिम्-धिम् (नाद से) मुखरित होनेपर, अधिक कुतूहल से देवलोक में गयी । अनलमुख से, उस प्रकार शबरी के अनिमिषसुख प्राप्त करने के बाद, ।। १४८४ ।।

ऋश्यमूक गमन

रमणीय मूर्तिवाले, अमित बल से उदग्र बने राम और सौमित्र ने उस स्थान से निकलकर, अनवरत-अनेक-यत-गुणानीक-मुनिलोक (युक्त) हो, ऋश्यमूक को देखा । त्रैलोक्य विभु (राम-लक्ष्मण) के आगमन को देख,

यनयंबु नॊप्पॆडु नश्रुपूरंबु । लन सॆलयेऱुल नलरॆडुदानि
निल मेरुमंदर हिमशैलपतुल । नलिमीऱि नगियॆडि नगवुलो यनग
सांद्रंबुलैयुंडि ब्रदल दीपिंचु । चंद्रकांतोपलच्छायलदानि
१४९०

सरसिजासनुडु भूचक्रंबुमीद । बरग बर्वतराज्यपट्टंबुगट्टि
शिरसुन बॆट्टिन सेसब्रालनग । नुरुशृंगमुल जुक्कलॊप्पॆडि दानि
नुरुभीति दनु जॊच्चियुन्न सुग्रीवु । बरिभविंचिन वालिपै मंडुचुंडु
गति सूर्यकांतमुल् गनकन मंड । नतुल प्रतापोग्रमै यॊप्पुदानि
मॆऱुगुलु गॊम्मुलै मॆऱय नेतॆन्चि । नॆऱसि सानुवुलपै नीलमेघमुलु
पॊलुपॊन्द ब्रतिगजंबुलु गागदलचि । मलयु सामजमुल मानैन दानि
नंगजहरु मौळि नलरु नाकाश । गंगना नप्पुलु गरमॊप्पुमिगुल
नायॆड ग्रीडिंचु हंसमालिकलु । मायनि विधुशिरोमालिकल् गाग
बहुशृंगभूरुहपल्लवचयमु । विहित जटाजूट विभवमै यॊप्पु
नासन्नुलै सिद्धुलर्थि सेविंप । ना सदाशिवमूर्ति यन नॊप्पुदानि
१५००

उससे मन में फूलकर, आनन्दित हो, निरन्तर शोभित अश्रुपूर के समान (लगनेवाले) झरनों से विराजमान, पृथ्वीपर (स्थित) मेरु, मन्दर, हिमशैलपतियों को कुचलकर (तिरस्कारकर) उपहास करनेवाली हँसी हो, इस प्रकार आकाश में (उन्नत प्रदेशों में) सान्द्र हो दीप्त होनेवाले चन्द्रकान्त-उपलों की छायाओं से युक्त, ।। १४९० ।।

—सरसिजानन (ब्रह्मा) के भूचक्र पर समुचित रूप से पर्वतराज्य का पद देकर, शिरस् पर रखे मंत्राक्षत हों, इस प्रकार उरु-शृंगोंपर नक्षत्रों से शोभित, उरुभीति से अपनी शरण में आये सुग्रीव को परिभवित (अपमानित) करनेवाले वालिपर बलनेवाले (क्रुद्ध होनेवाले) की तरह सूर्यकान्त (मणियों) के बलते-जलते रहनेपर, अतुल-प्रताप से उग्र हो विराजित, चपलाओं के ही सींग बनकर प्रकाशित होनेपर, निकट आकर, नीलमेघों के (पर्वत-) सानुओंपर शोभित होनेपर (उन्हें) प्रतिगज मानकर, विचरण करनेवाले सामजों (गजों) से शोभित, अंगजहर (शिव) की-मौलि (सिर) पर शोभित आकाश-गंगा के समान, नदियों की अधिक शोभा से युक्त, उस स्थानपर (पर्वतपर) क्रीड़ाएँ करनेवाली हंसमालिकाएँ, स्वच्छ विधु-शिरोमालिकाएँ हों, बहुशृंग-भूरुह (वृक्ष)-पल्लव-चय (समूह) ही विहित जटाजूट का वैभव हो, निकट आये हुए सिद्ध (जनों) के, इच्छा से सेवाएँ करते रहनेपर, सदाशिवमूर्ति के समान सुशोभित, ।। १५०० ।।

बलभेदिमोंदलुगा बरगु देवतलु । कलय नंबुधि द्रच्चिच कन्न वस्तुवुलु
पनिवडि तमलोन बालुवोकुन्न । नुनिचिरो, यमृतपानोन्मत्तुलगुचु
मऱचिरो, यदि गडु मंचितावगुट । देऱगोप्प दाचिरो दीनिपैननग
गल्पवृक्षंबुलु गामधेनुवुलु । वेल्पुगन्नियलुनु विविधौषधमुलु
जिंतामणुलु नेन्दु जेडनि पेन्निधुलु । संतानतरुवुलु सरिनोप्पुदानि
गनिदानि महिमकु गडु जोद्यमदि । यिनवंशवल्लभुंडेन्तयु बोगडि
यऱलेनिभक्तितो ननुजुंडु गोलुव । मेऱय नाशैलसमीपंबुनंदु
दरुचैन तोंगल नेत्तम्मुल तेगल । वऱलु पंपासरोवरमुन करिगि
यंदिन नियतितो ना सरोवरमु । नंदु गृतस्नानुडै रामविभुडु
कलय गनुंगोनि कडु जोद्यमंदि । विलसिल्लु नोक मावि वृक्षंबुनीड
१५१०
नलसट दीरंग नपुडु लक्ष्मणुडु । सललित शैत्योपचारमुल् सलुप
नीक्षिचि रघुरामुडेपु दीपिंचि । वृक्षंबु बरिकिंचि वेड्क निट्लनियें;
वनवासमिट्टु तुदवच्चिनमोंदलु । घनमैन यद्रुलु घनपुण्यनदुलु
दरमिडिकंटिमि; धारुणिनिट्टि । तरुवेन्दुगान मीतरुवुकु सवतु;
सुरपति मोंदलगु सुरलेल्लगूडि । करमर्थि नी तरु गाविंचिरोक्को ?

—बलभेदी (इन्द्र) आदि विलसित देवताओं ने अंबुधि का मंथनकर प्राप्त की गयी वस्तुओं को, वितरण न कर पाने के कारण यहाँ रख दिया हो, (अथवा) अमृतपान से उन्मत्त हो भूल गये हों, इस स्थान के अत्यन्त श्रेष्ठ होने के कारण समुचित रूप से इस (पर्वत) पर छिपाया हो, इस प्रकार के कल्प-वृक्ष, कामधेनु, देवकन्याएँ, विविध-औषध, चिन्तामणियाँ, कभी नष्ट न होनेवाली बड़ी निधियाँ, सन्तान-वृक्ष (आदि से) शोभित (उस पर्वत को) देखकर, उसकी महिमा से अधिक चकित हो, इनवंशवल्लभ ने (उसकी) अधिक सराहनाकर, अकलंक भक्ति से अनुज के सेवा करते रहनेपर, प्रकाशित उस शैल के समीप (स्थित) घने उत्पल, लालकमलों के समूहों से शोभित पंपा-सरोवर को जाकर, उचित नियम से उस सरोवर में कृतस्नान होकर, रामविभु ने चारों तरफ देखकर, अधिक चकित होकर, विलसित एक रसाल वृक्ष की छाया में ।। १५१० ।।

—लक्ष्मण के सललित-शैत्योपचार करनेपर, थकावट के मिटनेपर, रघुराम ने अधिक महिमा से वृक्ष को देखकर, कुतूहल से यों कहा:—'वनवास के लिए यहाँ आने के बाद, महान् पर्वतों को, महान् पुण्यनदियों को शीघ्रता से देखा है। (परन्तु) धारुणि पर इस तरु के समकक्ष अन्य वृक्षों को नहीं देखा। कहीं अधिक इच्छा से सुरपति आदि समस्त देवताओं ने मिलकर

यजुडे यी तरुवुन कायुवु बोसि । निजमुगा निच्चट निलिपिनाडोक्को?
रविसुतु तपमुन रागिल्लि ब्रह्म । भुविनि नी तरुवुनु बुट्टिंचिनाडो ?
सेविंचि यमृतंबु चेकोनि सुरलु । भाविंचि रविसुतु पक्षंबु गलिगि
यरयंग मेलैन यमृतंबु वोसि । पुरणिप दरुवुगा बुट्टिंचिनारो ?
यिनुनितो निष्टंबु लिपोन्द जेय । जनुधर्ममुन नुंडि शाखलुन्नतमु
१५२०
लष्टदिक्कुलकुनु ननुवंद बारि । यिष्टफलंबुल नीगोरिनट्लु
पऱचु शाखल रुचि प्रभ नोप्पुमीरि । तेऱचि पर्णंबुलु तेजंबुलोप्प
रविदृष्टि चोरनीदु; रात्रुल बेर्मि । दविलि या शशिदीप्ति दनु गाननीदु;
फलमुलायमृतपुफलमुल कंटे । गलशतगुणमुल गडुनोप्पुदानि
दरुराजपट्ट मी धात्रिपै वेड्क । गरमर्थि दिविजुलु गट्टिरो प्रीति ?'
ननि तम्मुनिकि देल्प 'नगुगाक' यनुचु । विनियोक्ति नारामविभु
चित्तमेऱिगि
यालोन सौमित्रि यन्नकुभक्ति । शालियै मृदुपर्णशय्य गाविंप,
समुचितस्थिति मृदुशय्य राघवुडु । विमलचित्तंबुन वेड्क शयिंप

इस तरु को बनाया हो ? स्वयं अज (ब्रह्मा) ने ही इस तरु को जीवन प्रदानकर, सचमुच यहाँ प्रतिष्ठित किया हो ? रविसुत (सुग्रीव) के तप से अनुरक्त होकर ब्रह्मा ने भुवि पर इस तरु को उत्पन्न किया हो ? अमृत का सेवनकर, देवताओं ने सोचकर, रविसुत के पक्ष में होकर, परिशीलन-कर, श्रेष्ठ अमृत डालकर, पोषणकर, तरु के रूप में उत्पन्न किया हो ? इन (सूर्य) के साथ प्रेम बढ़ाने के लिए, जननधर्म में रहकर, उन्नत शाखाओं को ।। १५२० ।।

—आठ दिशाओं में शोभा से फैलाकर, इष्टफल देना चाहकर, फैली शाखाओं की रुचि (कान्ति) की प्रभाओं से अधिक शोभित होकर, खुले पर्णों के तेज के अधिक होनेपर (यह वृक्ष) रवि की दृष्टि (कान्ति) को पैठने नहीं देता । रात्रि के समय प्रेम से लगकर उस शशि-दीप्ति (चाँदनी) को (यह वृक्ष) ज़मीनपर लगने नहीं देता । उन अमृतफलों की अपेक्षा शतगुणों से युक्त फलों से सुशोभित इसे, इस धात्रीपर अधिक प्रेम से दिविजों ने तरुराजपद प्रदान किया हो ।' (ऐसा) कह अनुजको बताने पर विनयोक्ति से (लक्ष्मण ने) कहा—'ऐसा ही होगा ।' इस बीच उस रामविभु के मन को जानकर सौमित्र ने अग्रज के प्रति भक्तिशाली होते हुए मृदुपर्ण-शय्या तैयार की । समुचित स्थिति (रूप) से मृदुशय्या पर राघव के विमलचित्त से प्रसन्न हो लेटनेपर, सौमित्र के रघुराम के चरण

सौमित्रि रघुरामु चरणंबुलोत्त । श्रीमीऱ निद्दऱु जेलगुचुनुंड
ननघुनि रघुरामु नट लक्ष्मणुंडु । गनि वेन्डि येलुगेत्ति ग्रक्कुन बलिके;
१५३०
गैकोन्दु चेलिननि कलयंग रोप्पि । चेकोनि चिऱुत रा चेरुवबट्टि
येल्लेड शुभमुले येसगु नीकनुचु । बल्लि दीप्तंबुगा बलिके बो चेविकि,
भानुनिपै बक्षि परुसुन नेलुगु । मानुगा गूर्चेद महिपुत्रि नीकु
ननियु निंचुक चेरि यंतयु रोप्प । दनयात्म गडुमेच्चि तम्मुनिजूचि
यिनवंशवल्लभुंडिट्लनि पलिके;। 'वनचराधीशुंडु वडि नेगुदेन्चि
घनभक्ति मनलनु गलयु निच्चटनु;। चनुदुमु लंककु सरगुन मनमु;
नन राम सौमित्रुलधिक संतोष । मुनु बोन्दि सुखगोष्ठि मुदमोप्पनुंडि;
गूलु रावणुडाजि; गूडुनु सीत; । येलुदु लोकंबु लेलमि बेंपोंद'
रारण्यकंड मिंपारंग नुतुल । ना रवितारार्कमगु नुर्वि मीद
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुत काव्यागम विमल मानसुडु
१५४०
पालिताचारुं डपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
तमतंड्रि विट्ठलधरणीशु पेर । गमनीयगुण धैर्यकनकाद्रि पेर

दाबते रहनेपर, दोनों अधिक शोभा से विराजमान हुए। अनघ रघुराम को उस समय देख लक्ष्मण ने झट से उच्चस्वर में कहा:-- ॥ १५३० ॥

--'चीता के निकट आने से यह निश्चय है कि शोभा से सखि (सीता) को प्राप्त करेंगे। कानों में छिपकली ने दीप्तरूप से कहा कि तुम्हें सर्वत्र शुभ होगा। भानु (एक बृक्ष) पर पक्षी की परुष ध्वनि ढंग से तुम्हें महिपुत्री प्राप्त कराएगी।' थोड़ा निकट आकर, (शुभशकुनों के बारे में) यह सब कहनेपर, अपने में अधिक प्रसन्न होकर, अनुज को देख इनवंश-वल्लभ यों बोला:—'यहाँ शीघ्रता से आकर, वनचर-अधीश (वानर-राजा) अधिक भक्ति से हमसे मिलेगा। हम झट से लंका जाएँगे। युद्ध में रावण गिरेगा। सीता मिलेगी। सुख के बढ़नेपर लोकोंपर शासन करेंगे।' (ऐसा) कहनेपर राम-सौमित्र अधिक प्रसन्न हो मोद से सुख-गोष्ठि में रहे। शोभा से अरण्यकाण्ड नुतियों से युक्त हो, रवि-तारार्क (आचन्द्रतारार्क) उर्विपर बने रहे, इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश विभु, विनुत काव्यागमविमल मनवाले पालित आचारवाले, अपार धीशरधि (बुद्धिसमुद्र) वाले, भूलोकनिधि गोन बुद्ध राजा ने, अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, ॥ १५४० ॥

नाचंद्र तारार्कमगु नॊप्पुमिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वॆलय
नसमान ललित शब्दार्थ संगतुल । रसिकमै चॆलुवॊन्दु रामायणंबु
परगु नलंकार भावनल् निड । गरमर्थि नारण्यकांडंबु चॆप्पॆ ।
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै यॆल्लनाडु
इव्वसुमति नॊप्पु नी पुण्यचरित; । मॆव्वरु सदिविन नॆव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधाम राम । नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्ण शक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु
१५५०
नायुरारोग्यंबु लैश्वर्यमुलुनु । बायक पाटिल्लु बापक्षयंबु
वरपुत्रलब्धियु वैरिनाशनमु । सरिनॊप्पु; धनधान्यचयसमृद्धियुनु
नेविघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक । लावण्यवतुलैन ललनल पॊन्दु
गॊडुकुलतो नॆप्पुड गूडियुंडुटयु । नॆडगाग नापदलॆल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लॆडपकुंडुटयु
सततंबु देवतासंतर्पणंबु । बितृगणतृप्तियु बॆम्पारुचुंडु;

—आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगतियों से युक्त, रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस अरण्यकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देनेवाले (तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ेंगे, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि-बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकट राज्य (के वैभव), निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, ।। १५५० ।।

—आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वर-पुत्रलाभ, वैरि-नाश, समुचित रूप से होगा। बिना किसी प्रकार की विघ्न-बाधाओं के धन-धान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ बन्धुजनों से मिलकर रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सतत् देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) सम्प्राप्त होंगे। (इसे) लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा। जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र),

व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोकाधिवासमु गलुगु;
नॆन्दाक गुलगिरुलॆन्दाक दार । लॆन्दाक रविचन्द्रुलॆन्दाक दिशलु
नॆन्दाक वेदंबु लॆन्दाक धरणि । यॆन्दाक भुवनंबुलेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोहदोहळाचारमै परगु। १५६०

अरण्यकाण्डमु समाप्तमु

जब तक रवि-चन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक), विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत)- आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर, विराजमान रहेगी ।। १५६० ।।

अरण्यकाण्ड समाप्त

किष्किंधा-काण्डमु

पंपा सरोवर वर्णनमु

श्रीरामुडय्यॆड शीतलवारि । वारिजोत्पल कैरवंबुल नॊप्पु
पंपयु मधुमास फलित तत्तीर । चंपक सहकार चारु कांतार
संपदयुनु जुचि जानकीविरह । कंपितुंडगुचु लक्ष्मणुनकिट्लनियॆ;
‘सौमित्रि ! यी पंप सकलनिर्लिप । कामिनुल् जलकेळि गरमु गांक्षिप
नॊप्पु; नी सरसितो नुपमानमरसि । चॆप्पंग शक्यमॆ शेषाहिकैन ?
ननकूलमलयानिलाहति दीन । जनियिंचु बो बिंदु सरमुलॆन्नैन !
दीनिमहत्त्वंबु दॆलिसिन चोट । मानसंबुनु नणुमात्रंबॆ कादॆ ?
पावन जीवनास्पदमैन दीनि । का वेल्पुडिग्गययैन समंबॆ ?
युन्नाळविस्फुरितोरुकर्णिकल । दिन्नगा विरिसिन तॆल्ल नॆत्तम्मि
मरकतस्तंभ निर्मल हेमकुंभ । भरितातपत्रमै पार्श्वदयमुन १०

पंपा सरोवर का वर्णन

उस समय श्रीराम शीतल वारि (जल) (तथा) वारिज-उत्पल-कैरवों से शोभायमान पंपा (सरोवर) को तथा उसके तीर पर स्थित, मधुमास (वसंत) (के कारण) फलित (विकसित) चंपक, सहकार (से युक्त) चारु-कान्तार-संपदा (सुन्दर वन-वैभव) को देखकर, जानकी-विरह के कारण कंपित होते हुए, लक्ष्मण से यों बोले:- ‘हे सौमित्र ! यह पंपा (सरोवर) इस प्रकार सुशोभित है कि समस्त निर्लिप-कामिनियाँ (देवता-स्त्रियाँ) (यहाँ) जलकेली करने के लिए अधिक इच्छा करें। क्या शेषाहि भी इस सरसी के युक्त उपमान को, सोच विचारकर भी, बताने में समर्थ हो सकता है ? (नहीं।) इसमें अनुकूल मलयानिल से आहत (होकर), अनगिनत बिंदु-सर (बूंदों के हार) उत्पन्न हो रहे हैं। जहाँ इसका महत्व समझ में आ जाए, वहाँ मानस (सरोवर) भी अणुमात्र (नगण्य) ही है न ! पावन-जीवन (जल) के आस्पद (आकर) इसकी समता वह देवता-सरोवर भी (कहाँ) कर सकता है ? उन्नाल (ऊंचे मृणाल)-विस्फुरित-उरु-कर्णिकाओं से युक्त, स्वच्छता से विकसित श्वेत कमल, (इस सरोवर के लिए मानों) मरकत स्तंभ (पर स्थित) निर्मल हेमकुंभ से भरित आतपत्र (छत्र) बने हैं। पार्श्वद्वय (दोनों तरफ) में, ॥ १० ॥

देटिऱॆक्कल ग्रम्मु तॆम्मॆरवलन । नूटाडु तरगल नुय्याल लूगु
विप्पारु ऱॆक्कल वॆलयु रायंच । लॊप्पारगा वैचु नुभयचामरमु
लॆपॊन्द नी पंप यीक्षिप नॊप्पॆ । श्रीपूर्ण पट्टाभिषिक्तुनि करणि;
नामनि जव्वनंबलरिन रुचुल । चे मिचु चिन्नारि चिगुरु मानिकपु
सॊम्मुलु दालिच नल् चुट्टुनु ग्रम्मि । कॊम्मलीनिद्दंपु गॊलकुटद्दमुन
निक्कि नीडलु सूचि निजविलासमुल । कॊंक्कित यौदललूचुचंदमुन
गॊन्डीक गालिसोकुल दुदल् गदल । नॊन्डॊरु बॊगडुचुनुन्नचंदमुन
गीरशारिकलर्थि गॆरलु निच्चोटि । तीर वनीवाटि दृष्टिंप निपुडु
तापंबु मरुनि प्रतापंबु करणि । दीपिंचॆ ना मेन धृतिनट्टु गान
सौमित्रि, यिदि वनस्थलिगादु, चूड । गामुनि यायुधागारंबु गानि; २०
चिंतिंप निवि माविचिगुरुलु गावु, । कंतुनि क्रॊव्वाडि कत्तुलु गानि;
भाविंप निवि पूवुबंतुलु गावु, । भावजातुनि बाणपंक्तुलु गानि;
यी यॆड भृंगझंकृतुलिवि गावु, । डायु मारुनि चाप टंकृतुल् गानि;
वर्णिंप निवि पिकध्वनुलुगा, वतनु। कर्णकठोर हुंकारमुल् गानि;

—भ्रमरों के पंखों से उत्पन्न मंद-पवन के कारण डोलनेवाली तरंगों में झूलनेवाले शोभित राजहंसों के (अपने) फैले पंख रूपी चामरों को डुलाने पर सुशोभित यह पंपा, देखने पर, श्री-पूर्ण पट्टाभिषिक्त (राजा) के समान लग रहा है। वसंत में यौवन से संप्राप्त कांतियों से संपन्न हो, नवपल्लव-रूपी माणिक्य-आभरणों को धारणकर, चारों तरफ से घेरकर, (वृक्ष की) शाखाएँ[1], इस स्वच्छ सरसी रूपी दर्पण में, उझककर (अपने) प्रतिबिंबों को देख, कभी-कभी पवन के स्पर्श से अग्र भागों के हिलने पर ऐसे लग रही हैं मानों अपने विलास (-वैभव) के कारण (प्रसन्न हो), धीरे-धीरे सिर हिला रही हों। अति उत्साह से चहकनेवाले कीर और शारिकाएँ ऐसी लग रही हैं मानों एक दूसरे की प्रशंसा कर रही हों। यहाँ के तीरस्थ वनस्थल को देखने पर अब मेरा (सं-) ताप मन्मथ के प्रताप के समान मेरे शरीर पर दीप्त हुआ है। अब धैर्य नहीं (रह गया) है। अतः हे सौमित्र ! देखने पर (ऐसा लग रहा है) मानों यह वनस्थली नहीं है, काम (देव) का आयुधागार ही है ॥ २० ॥

—सोचने पर ये आम्रपल्लव नहीं हैं, बल्कि कामदेव के नये पैने खड्ग हैं। सोचने पर ये पुष्पगुच्छ नहीं हैं, बल्कि भावजात (मन्मथ) की बाणपंक्तियाँ हैं। इस अवसर पर ये भृंग-झंकृतियाँ (भ्रमर-गुंजार) नहीं (लग रही) हैं, बल्कि नियरानेवाले मन्मथ के धनुष के टंकार हैं। वर्णन

---

[1] कोम्म शब्द के दो अर्थ हैं १. शाखा २. नारी

यटु गान नावंटि यंगनारहितु । लॆंटुवलॆ वेंगितु री काननमुन ?
गलकंठकलकुहूकारनिस्वनमु । जॆलगिंचु वनमु गर्जिलु घनाघनमु
गुलुकु पुप्पॊडि मिंचु ग्रॊक्कारु मिंचु । दलिरु गॊम्मलु शक्रधनुवुल यनुवु
वसुध रालॆडि विरुल् वर्षोपलमुलु । मुसुरुतेनियसोन मुंचिनवान
गा नॊप्पुचु वसंतकालंबु चूड । वानकालमु बोलि वसुध नॊप्पियुनु
जिगुराकुशिखलतो जिट्टाडु तेटि । पॊगलतो बॊगडपुप्पॊडि बूदि तोड ३०
बूरुगुपूवु निप्पुकलतो नॆगडि । यारय विरहुल कग्नियै निगुडि
कंतु प्रतापाग्नि करणि गडंगि । यॆन्तेनि नाचित्तमॆरियिप दॊडगॆ;
रामाशिरोमणि राजबिंबास्य । ने मार्गमुन गॊनि येगॆनो यसुर ?
वनजाक्षि यॆच्चट वसियिंचिनदियॊ? । कनिविनि यॆरुगमिक्कार्यंबुलॆल्ल;
नेमि चेयुदुनिक ? नॆट्लु वेंगितु ? । गामिनीमणि सीत गांतु नॆन्नटिकि ?
बंपासरोवरप्रांतकांतार । संपदतोड वसंतुंबुगूड
गलिगिनि गति जनकजतोड गूड । गलुगुने नाकु नॊकानॊकनाडु ?

करने के लिए ये पिकध्वनियाँ नहीं हैं, ये तो अतनु (अनंग) के कर्णकठोर हुंकार हैं। यह (सब) ऐसा होने पर मुझ जैसा अंगना-रहित (व्यक्ति) इस कानन में किस प्रकार समय व्यतीत करेगा ? कलकँठ-कल-कुहूकार (कुहू की)- निस्वन (ध्वनि) से मुखरित (यह) वन गरजनेवाला घनाघन (काला बादल) है। सुंदर-पराग से उत्कर्ष को प्राप्त (तथा) नूतन मेघ की शोभा की अपेक्षा अधिक सुंदर बनी पुष्पशाखाएँ शक्रधनु (इन्द्रधनुष) के समान हैं, वसुधा पर गिरनेवाले पुष्प ओले हैं। घिरकर झरनेवाली मधुवर्षा, डुबो देनेवाली वर्षा ही है। इस प्रकार शोभायमान वसंतकाल देखने के लिए वर्षाकाल के समान वसुधा पर सुशोभित है। (यह वसंत) नवपल्लव रूपी शिखाओं (ज्वालाओं) से, घूमनेवाले भ्रमररूपी धुँए से, सराहनीय पुष्पपराग रूपी राख के साथ, ।। ३० ।।

—सेमर के पुष्परूपी अंगारों से बलकर, सोचने पर विरहियों के लिए अग्नि बन व्याप्त होकर, कंत (कामदेव) की प्रताप-अग्नि के समान मेरे चित्त को अधिक परितप्त करने लगा है। रामा (सुन्दरी)-शिरोमणि, राजबिंबास्य (चंद्रमुखी) को (वह) असुर (पता नहीं) किस मार्ग से ले गया ? (वह) वनजाक्षी (सीता) कहाँ रह रही है ? ऐसे कार्यों को कभी न देखा न सुना है। अब मैं क्या करूँ ? उत्तप्त होकर कैसे रहूँगा ? कामिनीमणि सीता को कब देखूँगा ? पंपा-सरोवर प्रान्त की कान्तार-संपदा के वसंत से युक्त होने के समान क्या मुझे वह दिन प्राप्त

ई पंपलो दम्मुले जूचिनट्लु । भूपुत्रिवदन मॆप्पुडु चूतुनॊक्कॊ ?
इंदु मीनविहार मीक्षिंचिनट्टु । लिंदुवदन चूपुलॆप्पुडु चूतु ?
जलपक्षुलिच्चट जतगूडिनट्लु । जलजाक्षि नॆन्नडु जतगूडुवाड ? ४०
देटि यिच्चट दम्मि तेनॆ ग्रोल्करणि । बोटि कॆम्मोवि यॆप्पुडु ग्रोलुवाड ?
नॆक्कडि तलपोत ? लॆक्कडि सीत ? । यॆक्कडि वॆडसेत ? लिवियॆट्लु
पौंसगु ?
दम्मुडा ! नीवयोध्यकु जनुमिक; । निम्मॆयि ब्राणंबुलिक निल्पजाल’
ननि यनाथुनिक्रिय नंदंद वगव । विनि लक्ष्मणुडु रामविभुनि बोधिंचि
‘यिदि येमि रघुराम ! यॆल्ललोकमुलु । मुदलिप बुरुषोत्तमुडवैन नीवु
ई मोहशोकंबुलेल ताल्चॆदवु ? । कामिनि वंचनगैकॊनि चनिन
रावणु जंप नारंभंबु सेयु । मी’ वनि तॆलुपुचो नॆन्तयु ब्रीति
गनु बंटि यॆलुगिच्चॆ गब्बुलगु पलिकॆ । गनुगॊनितच्चॆलि कलयंग रॊप्पॆ
जेकॊनि चिरुत दा जेरुव बॆट्टॆ । गैकॊन्दु चॆलिनवि कलयंग रॊप्पॆ

होगा जब मैं सीता के साथ (मिलकर) रहूँ ? इस पंपा में मैं जिस प्रकार कमलों को देख रहा हूँ, वैसे ही भूपुत्री के वदन (मुख) को कब देखूँगा ? इस (सरोवर) में मीन, विहार को देखने के समान, इन्दुवदना (चंद्रमुखी-सीता) की चितवनों को कब देखूँगा ? जैसे यहाँ जलपक्षी एक संग रहते हैं, उसी तरह मैं कब जलजाक्षी के संग रह पाऊँगा ? ॥ ४० ॥

—यहाँ भ्रमर के, कमल के मकरंद को पान करने के समान, नारी के अधर का पान कब कर सकूँगा ? ये कहाँ के विचार ? कहाँ की सीता ? कहाँ के व्यर्थ-कार्य ? ये (विचार) कैसे अनुकूल बनेंगे ? हे अनुज ! तुम अब अयोध्या जाओ । अब (मैं) किसी भी प्रकार प्राणों को रोक रख नहीं सकूँगा ।’ (ऐसा) कह अनाथ के समान, बारंबार दुखी होने पर, (उन बातों को) सुनकर, लक्ष्मण विभु राम को प्रबुद्धकर, बोला:- ‘यह क्या रघुराम ! समस्त लोकों को आज्ञापित करने (अथवा ललकारने) के लिए पुरुषोत्तम बने तुम इस मोह-शोक को क्यों धारण करते हो ? कामिनी (सीता) को छल से लेकर गये हुए रावण का वध करने के लिए तुम उपक्रम करो ।’ (ऐसा) बताने पर, अधिक प्रीति से कनुबंटि[१] ने आवाज़ दी, कुक्कुभ बोला, (उसे) देखकर उसकी सखी सुन्दरता से चहक उठी, सप्रयत्न चीता निकट आया, उसने (चीता ने) आवाज़ दी मानों कह रहा हो कि तुम सखी (स्त्री) को प्राप्त करोगे । कान के पास

---

[१] तित्तिरि सदृश एक पक्षी ।

नॆल्लॆड शुभमुलुनित्तु मीकनुचु । बल्लि दीप्तंबुगा बलिकॆबो चॆविक ५०
भानुपै वामाक्षि परुसनि यॆलुगु । यानि यिंचुक चॆवि यंतयु रॊप्पॆ
दनयात्म गडुमॆच्चि तम्मुनि जूचि । यिनवंशवल्लभुडिट्लनि पलिकॆ;
‘वनचराधीशुंडु वडिनेगुदॆन्चि । घनभक्ति मनलनु गलयंग गलडु
कूलु रावणुडाजि; गूडुनुसीत; । नेलुदु लोकंबु लॆलमि धरिंप’
ननि रामसौमित्रुलधिक संतोष । मुनु बॊन्दि सुखगोष्ठि मुदमंदुचुंड

सुग्रीवसख्यमु

नालोन सुग्रीवुडा ऋश्यमूक । शैलसानुवुलंदु जरियिंचु चुंडि
या पंप चेरुवयंदुन्न राम । भूपालु लक्ष्मणु बॊडगांचि वॆऱचि
यचलंबुपैंकि गुंडनक चॆट्टनक । किचकिचध्वनुलतो गिच्चकॊट्टुकॊनुचु
नॆगब्राकि यॊक्कचो नेकांतमुंडि । यगचरुलकु वारिनट चूपिचूपि
‘विलुपूनि यिद्दऱु विविधशस्त्रास्त्र। कलितुलै यदॆ पंपकडनुन्नवारु ६०
विनुडिंदु ब्रच्छन्नवेषुलै वालि । पनुपुन मनल जंपंग वच्चिनारु
कादेनि मुनुलकु खड्गतूणीर । कोदंड शरमुल गॊडव येमिटिकि ?

छिपकली दीप्त रूप से बोली मानों (कह रही हो कि) सर्वथा तुम्हें समस्त सुख दूँगी ॥ ५० ॥

—भानु पर वामाक्षि के परुष स्वर को सुन कान प्रसन्न हो गये। (यह सब देख) अपने मन में अत्यंत प्रसन्न हो, अनुज को देख, इनवंशवल्लभ (राम) ने यों कहा:— ‘वनचर-अधीश (वानरों का राजा) शीघ्र आकर, बड़ी भक्ति से हमसे मिलेगा। आजि (युद्ध) में रावण गिरेगा (मरेगा), सीता से भेंट होगी, लोक को प्रसन्न करते हुए शासन करेंगे।’ (ऐसा) कह राम (और) सौमित्र अधिक हर्ष प्राप्तकर, सुखगोष्ठी से मुदित हो रहे।

सुग्रीव से मित्रता

इतने में सुग्रीव उस ऋश्यमूक-शैल की तराइयों में विचरण करते हुए, उस पंपा के पास स्थित राजाराम (तथा) लक्ष्मण को देख, भीत होकर, ‘किच्किच्’ की ध्वनियों से चीत्कार करते हुए, झाड़-झंखाड़ की परवाह न कर, अचल (पर्वत) पर चढ़कर, एक स्थान पर एकांत में रहकर, (अन्य) अगचरों (वानरों) को उन्हें दिखा-दिखा कर कहा:— ‘वह (देखो), दो (व्यक्ति) धनुष धारणकर, विविध-शस्त्र-अस्त्र-कलित होकर, पंपा के पास हैं ॥ ६० ॥

विनुत साहसुलैन वीरि वेषमुलु । गनुगॊन्न नाबुद्धि गलगुचुन्नदियु
नॆक्कडिकैननु नेगुट कार्यं । मिक्कडनुंडुट यिदि बुद्धिगादु,
यनि मंत्रिवरुलतो नाडुवाक्यमुलु । विनि हनुमंतुडुविमलुडै पलिकॆः
'बूनि वीरल जूड बुण्यमानसुलु । गानि कानेररु कपटमानसुलु
आ रविचंद्रुलो यन नॊप्पु वीरु । कारणपुरुषुलु कडु विचारिंप
नेरूपमुनवच्चि यिदुन्नवारो । वीरि चॊप्पॆऱगक वॆऱुवनेमिटिकि ?'
ननिन सुग्रीवुंडु हनुमंतुजूचि । 'विनु वालि पनुपुन वीरलिच्चटिकि
जनुदॆन्चिरनु शंक जनियिंचॆ नाकु । गिनिसि येवेळ ने कीडॆन्चुनॊक्कॊ ?
७०
तन पगतुनि नम्म दगदट्टुगान । जनिनीवु वीरल जतुरत गदिसि
वीरेलवच्चिचरो वीरिलोतॆऱिगि । वीरितो भाषिंचि वेवेग वच्चि
पवनज ! नालोनि भयमॆल्लमान्पु । मविरतगति नेगु' मनि वीडुकॊलिपि
यलमॆंडु भीतिमैनंदुंड वॆऱचि । मलयाद्रि कटुवोयॆ मंत्रुलुदानु । ७४

—सुनो, (ये लोग कहीं) वालि की आज्ञा से हमें मारने के लिए यहाँ आए हों। नहीं तो मुनियों को खड्ग-तूणीर-कोदंड-शरों की झंझट क्यों ? विनुत-साहसवाले इन लोगों की वेश-भूषा देखकर मेरी बुद्धि क्षुब्ध हो रही है। (इस स्थान को छोड़) और कहीं चला जाना (समुचित) कार्य है, यहाँ रहना यह बुद्धि (की बात) नहीं है।' इस प्रकार (उसके अपने) मंत्रिवरों से कहनेवाले वाक्यों को सुनकर, विमल (मानस) हो, हनुमान बोलाः— 'ध्यान से इन्हें देखने पर, ये पुण्य पुरुष (लगते) हैं, कपट पुरुष (कदापि) नहीं हो सकते। अधिक विचार करने पर, रवि और चन्द्र के समान शोभायमान ये कारण-जन्म हो सकते हैं। किस विधान से आकर यहाँ ठहरे हैं ? इनके विधान को न जानकर, क्यों डरना चाहिए ?' (ऐसा) कहने पर सुग्रीव हनुमान को देख, बोलाः— 'सुनो, मेरे मन में शंका उत्पन्न हुई कि वालि के आदेश पर ही ये यहाँ आए हैं। (हम पर) क्रुद्ध होकर, (पता नहीं वालि) किस समय कैसी हानि पहुँचाएगा ? अपने शत्रु का कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। यह (बात) ऐसी है, अतः तुम चतुरता से इनके पास जाकर, इनसे बातें कर, ये यहाँ क्यों आए हैं ? उनकी गहराई (मन की बात) क्या है ? (यह जानकर) शीघ्रता से लौट-कर, हे पवनज ! मेरे भीतर के भय का निवारण करो। अविरतगति से जाओ।' ऐसा कह बिदाकर, व्याप्त भीति के कारण, वहाँ ठहरने में डरकर, अपने मंत्रियों के साथ (सुग्रीव) मलयाद्रि की ओर गया ॥ ७४ ॥

हनुमंतुडु रामलक्ष्मणुल जेरवच्चुट

अत्तऱि हनुमंतुडतिशौर्यवंतु । डुत्तमगुणशीलु डुरुबाहुबलुडु
खरकर तेजुंडु गमनीय मूर्ति । तरुचरुलकु रक्ष धर्मार्थमोक्ष
यतुलकु गुरुभक्ति यभिनवयुक्ति । श्रुतकीर्ति यंजनासुतुडु तावॆड्क
नमरलोकमुनकु नावालि बनुप । रमणमै सुग्रीवु राज्यंबु निलुप
वाविरि सुरुलनु वरभक्ति ब्रोव । रावणु जयलक्ष्मि रामुनकॊसग
नवनिज घनशोकमंतयु मान्प । रविसूनु मनसॆल्ल राणिप जेय ८०
वच्चॆनो? यनग नव्वनचरेश्वरुडु । अच्चुगा ना गिरि नल्लन डिग्गि
वटुवेषधारियै वायुनंदनुडु । नट पंप कडकु दा नर्थितो बोयि
यनुपमंबगु शून्यहस्तंबुतोड । जनि महात्मुलगान जन दटुगान
नलरामुनकु निय्यनर्हमैनट्टि । फलमॊक्कटपुडु चेपट्टि वेडुकनु
नरुदॆन्चु ननिलजु नपुडु ताजूचि । धरणीशुडिट्लनियॆ तम्मुनि तोड
'कनकपुवन्नॆयु गरमॊप्पु मुंजि । घनरत्नकुंडलकलित कर्णमुलु
नरुतरहारंबु लॊन्टि जन्निदमु । गरमॊप्प गॊच्चियु गरकंकणमुलु

हनुमान का रामलक्ष्मण के निकट आना

उस अवसर पर, अतिशौर्यवाला, उत्तमगुणशीलवाला, उरुबाहुबल वाला, खरकर तेजवाला, कमनीय मूर्तिवाला, तरुचरों का रक्षक, धर्म-अर्थ मोक्ष का इच्छुक, गुरु (अधिक) भक्तिवाला, अभिनव युक्तिवाला (कुशल), श्रुतकीर्तिवाला अंजनासुत वनचरेश्वर हनुमान बड़े आनन्द से, सीधे, पर्वत से उतरकर वहाँ इस प्रकार पहुँचा मानों उस वालि को अमरलोक भेजने के लिए, रमणीय रूप से सुग्रीव को राज्यपद पर सुस्थिर करने के लिए, उत्कृष्टता से देवताओं की वरभक्ति से रक्षा करने के लिए, रावण की जयलक्ष्मी राम को देने के लिए, अवनिजा के महान् शोक के निवारण के लिए, रविसुअन (सुग्रीव) के मन को प्रसन्न बनाने के लिए ।। ८० ।।

—आया हो । (इस प्रकार) वायुनंदन वटु (ब्रह्मचारी) वेशधारी बनकर, वहाँ पंपा के पास बड़ी इच्छा से जाकर, महात्माओं को देखने के लिए जाते समय, अनुपम शून्य हस्त (खाली हाथ) से नहीं जाना चाहिए, अतः राम को देने योग्य एक फल को तब हाथ में लेकर, प्रसन्नता से आया । तब अनिलज को स्वयं देखकर धरणीश (राम) ने अनुज से यों कहा:— 'सुनहरा रंग, अधिक शोभायमान मुंजि (मौंजी), घन-रत्न-कुंडलों से कलित कान, श्रेष्ठ हार, (ब्रह्मचारी के योग्य) यज्ञोपवीत, अधिक शोभित कौपीन, कर-कंकण (से युक्त हो), उपमित करने के लिए अपूर्व शोभा से शोभित

नुपमिंप नरुदैन यॊप्पुलनॊप्पु । गपिरूपु मनुजुडु गैकॊनॆनॊक्कॊ ?
ई रूपु रेखयु निलगोरि रुद्रु । डारूढिगा नितडै पुट्टिनाडॊ ?
काक यी वसुधपै गपिमात्रमुनकु । ब्राकटंबुग शुभप्रभ येल गलुगु ?' ९०
ननि रामसौमित्रु लन्योन्यमतुल । ननुनयिंपुचुनुन्न नंत वायुजुडु
कॊन्डंत भक्तितो गोरि रामुनकु । दंड प्रणामंबु दगनाचरिंचि
रमण सीताशिरोरत्नंबु दॆच्चि । यमर रामुनिचेतिकंदिच्चिनट्लु
मरुवक तनचेति माकंदफलमु । करमु रामुनकर्थि गैकानुकिच्चि
मुकुळितहस्तुडै मुंदरनुन्न । नकलंकुडै रामुडतनिकिट्लनियॆ;
'वनचर ! यॆन्दुंडि वच्चितिवीवु ? । निनुजूडगा माकु निखिल कार्यमुलु
चेकूरि वच्चॆडु चिह्नमुल् दोचु; । नेकांग वीरुंड वेमि कावलसि
वच्चिति? पनियेमि? वाक्रुव्वुमीवु; । निच्चॆद नी कोर्कि यिहपरोन्नतुलु;
देवेंद्रमणि कांति दिव्यदेहंबु । भाविंप सरिगारु प्लवंग पुंगवुलु;
भूषिंचु नी मेनि भूषणावळुलु । शेषाहिकैन जर्चिपंगरावु; १००

कपि के रूप को संभवत: किसी मनुष्य ने धारण किया हो। इस रूप-रेखा को चाहकर, रुद्र ने, सुस्थिरता से इस पृथ्वी पर, शायद इस रूप में जन्म लिया होगा। नहीं तो इस वसुधा पर कपिमात्र को, प्रकट रूप से, ऐसी शुभ-प्रभा कैसे प्राप्त होगी ?' ।। ९० ।।

—ऐसा कहकर राम (और) सौमित्र परस्पर समझा रहे थे। तब वायुज पर्वत-सम भक्ति से चाहकर, उचित ढंग से राम को दंड-प्रणामकर, मानों सीता का सुन्दर शिरोरत्न लाकर, ढंग से राम के हाथ में दे रहे हों, इस प्रकार भूले बिना अपने हाथ के रसाल फल को अधिक प्रीति से राम को भेंट स्वरूप दिया। (देकर) मुकुलित-हस्त बन, सामने खड़ा हुआ तो अकलंक (मनवाले) हो राम ने उससे यों कहा:— 'हे वनचर ! तुम कहाँ से आए हो ? तुम्हें देखने पर हमें ऐसे चिह्न दीख रहे हैं कि हमारे समस्त कार्य सफल हो जाएँगे। तुम एकांग (अकेले ही शत्रुनाश करनेवाले) वीर हो। क्या चाहकर आए हो ? काम क्या है ? बोलो तुम। तुम्हारी इच्छा पर इह-पर-उन्नतियाँ (इहलोक और परलोक के वैभव) प्रदान करूँगा। देवेन्द्रमणि की कान्ति से शोभित तुम्हारी दिव्यदेह से कोई प्लवग (वानर)- पुंगव (श्रेष्ठ) सानी नहीं रखता। तुम्हारे शरीर को भूषित करनेवाले भूषण-समूह की शेषाहि भी चर्चा (वर्णन) नहीं कर सकता ।। १०० ।।

—तुम्हारी माता कौन है ? तुम्हारा पिता कौन है ? तुम्हारे दादा कौन

नी तल्लि यॆव्वरु ? नी तंड्रि यॆवरु ?। नी तात यॆव्वडु ? नी दात यॆवडु ?
नी नाममॆय्यदि ? नी जन्ममॆद्दि ? । भूनुतंबगु नीदु पुट्टुवेलागु ?
चॆप्पुमा' यन विनि चेतुलु मॊगिचि । चॆप्पदॊडंगॆनु श्रीराघवुनिकि;

हनुमंतुनि जन्मप्रकारमु

'बुंजिकस्थलमुन बोयि मातल्लि । यंजनीदेवि करांजलि वट्टि
वायुदेवुनि गूर्चि वरपुत्रुगोरि । पायक वेयेंड्लु पदिलमैयुंड
शिवुडुनु बार्वति सितगिरिनुंडि । भुविमीद दमइच्च बोवगा दलचि
नंदिकेश्वरुनि नानंदिंचि यॆक्कि । विदार नाकाशवीथि बोवुचुनु
विद्योपदेशंबु विलसिल्लुचुन्न । युद्यानमट्टुगांचि युविद यिट्लनियॆ;
'जूचिते देव ! यी चोद्यंबु तॆऽगु । पूचिन सहकारभूजंबुक्रिंद
माकंदफलमुलु माकंदुननुचु । माकंद शाखल माटुन नुंडि ११०
मगलु नय्यांड्रुनु मानंबु विडिचि । पगलुनु रतिसेय बाडिये' यनुचु
'मर्कटुलकु जॆल्लु महितकृत्यमुलु । तर्किपने' लन दलवांचि गौरि
क्रीगंट वीक्षिंचुक्रिय शिवुंडॆऽगि । या गौरि कोर्कि दानंतयु दीर्प

हैं ? तुम्हारा (आश्रय) दाता कौन है ? तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारा जन्म कैसा है ? तुम्हारा भूनुत (लोकप्रसिद्ध) जन्म किस प्रकार हुआ ? बताओ ।' (ऐसा) कहने पर, सुनकर, हाथ जोड़कर, श्रीराघव से यों कहने लगा ।

हनुमान का जन्म वृत्तान्त

'हमारी माता अंजनी देवी (एक समय) पुंजिकस्थल जाकर, अंजलि बाँधकर, वरपुत्र की इच्छाकर, वायुदेव के प्रति, निरंतर ही, हज़ार वर्ष स्थिरता से (तपस्या करती) रही । (उस समय) सितगिरि (श्वेत पर्वत कैलास) से शिव (और) पार्वती भुवि पर अपनी इच्छा से विचरण (करने) का विचार कर, नंदिकेश्वर को प्रसन्नकर, आरूढ हो, आनन्द से आकाशवीथि से जा रहे थे । विद्योपदेश से विलसित उद्यान (वन) को वहाँ देखकर स्त्री (पार्वती) ने यों कहा:— 'हे देव ! देखा न इस विचित्र विधान को । फूले सहकार वृक्ष के नीचे रसालफल हमें प्राप्त होंगे, यह कहते हुए, रसाल शाखाओं की आड़ में, ।। ११० ।।

—पुरुष और स्त्रियाँ लाज को छोड़कर, दिनके समय रतिक्रिया कर रहे हैं । यह उचित कैसे है ?' (ऐसा) कहने पर, (शिवजी ने कहा):— 'इस प्रकार के कृत्य मर्कटों के लिए उचित ही हैं । (इस पर) तर्क करना

दर्किपगा नंत दर्पकुंडेचें; । मर्कटरूपुलै महिषियु दानु
नपरिमितानंदुडै सदाशिवुडु । नुपरति दलचि या युविद नीक्षिंचि
पार्वति जेंन्त केर्पडजेरबिलिचि । योर्वनि सिग्गुतो नुविद गलिय
रेतंबु दिगजारि रिव्वुरिव्वनुचु । भूतलंबुनकेग भूरिमार्गमुन
झणझण हुंकारशब्दंबुतोड । गणनापथमु दप्पु कालचक्रंबु
करणि नेतेरगा गनि संभ्रमिंचि । करुवलि तन रेंन्डुकरमुल दानि
धरियिंचुकोंनिवच्चि तरुणीललाम । गरुणिंचि डग्गर गदिसि यंदुन्न
१२०
यंजनीदेवि करांजलियंदु । संजीवि यिडु क्रिय जय्यन निडिन
नदिपुच्चि दिगमिंगें नंजनीदेवि : । पदिवेलियेडुला पद्मायताक्षि
गर्भंबु मोय नक्कांताललाम । यर्भकु ननु गांचें : नंतने यिनुडु
नुदयिंचु तेजंबु नुग्रत जूचि । पदिलमै फलबुद्धि बक्षियु बोलें
लक्षयोजनमुलु लघुलील नेंगसि । भक्षिंप बट्टिन बर्जन्युडलिगि
तनचेति वज्रायुधंबुन वैव । ननघात्म ! येनु बूर्वाद्रिपै बडिति;

क्यों ?' (ऐसा) कहने पर सिर झुकाकर गौरी के तिरछी नज़र से देखने की क्रिया को शिवजी जान गये (और) उस गौरी की इच्छा की पूर्णरूप से पूर्ति करने के लिए सोचा, तब मन्मथ ने (उन्हें) पीड़ित किया। मर्कट रूप धारणकर (अपनी) महिषी (रानी) के साथ सदाशिव अपरिमित आनन्द युक्त हुए। (तब शिवजी) उपरति की सोचकर, उस नारी (पार्वती) को देख, पार्वती को ढंग से निकट बुलाया। अमित लज्जा से (युक्त) पार्वती से संभोग करने पर, रेतस् नीचे फिसलकर, अतिवेग से, भूतल की ओर, भूरि मार्ग में झन-झन के हुंकार शब्द से गणना पथ (गणना के क्रम) से भटकनेवाले कालचक्र के समान आने पर, उसे देख, संभ्रमित हो, वायुदेव ने उसे दोनों हाथों से धारण कर लिया (और) तरुणी-ललाम (अंजना) पर कृपालु बनकर, निकट आकर, वहाँ स्थित ।। १२० ।।

—अंजनी देवी की करांजलि में, संजीवनी रखने के समान, झट से रख दिया। उसे ले अंजनीदेवी निगल गयी। उस पद्मायताक्षी ने दस हज़ार वर्ष तक गर्भ धारण किया। (तब) उस कान्ता ललाम ने मुझ अर्भक (शिशु) को प्राप्त किया। तभी (पैदा होते ही) सूर्य के उदयकालीन तेज को उग्रता से देख, (उसे) स्थिरता से फल मानकर, पक्षी के समान, आसानी से, एक लाख योजन उड़कर, (सूर्य को) खाने गया। तब पर्जन्य (इन्द्र) ने रुष्ट होकर, अपने हाथ का वज्रायुध मुझ पर डाल दिया। हे अनघात्म!

हनुवु भग्नंबैन यानिमित्तमुन । हनुमंतुडनुपेर नमरिनवाड;
नांजनेयुड; भिक्षुकाकृति निप्पु । डंजक मी चंदमरय वच्चितिनि ।
ऎलमिमातल्लिकि नॆलमि जन्मिचि । वलनॊप्प नॊक कॊन्नि वर्षमुल्
सनग
नॊक कारणमुनकै यॊक ब्रह्म गूर्चि । प्रकटितमति ने दपंबु सेयगनु १३०
बरिकिंचि सरसिजभवुडेगुदॆन्चि । 'वरमु वेडु' मटन्न वलगॊनिम्रॊक्कि
वेवेलु विधमुल विनुतुलु सेसि । 'यो विमलात्म ! यी युर्विपैनाकु
गति मोक्षकाम्यार्थकारणंबुलकु । बति यॆव्व ? डतनि ने ब्रार्थिंचि
कॊलुतु'
ननि विन्नविंचिन नब्जसंभवुडु । तन मनोवीथिनि दलपोसि चूचि
'यॊनरंग नी मेनि युरुभूषणमुलु । कनुगॊन्नयातडे गतियुनु बतियु
धातयु नीकिष्टदैवंबु सकल । भूतजालमुलकु भुविकॆल्ल कर्त;
नतडॆव्वडनिन नल्लतडॆ विष्णुंडु; । अतडे नी गति यनि यरयु मी वात्म'
ननि ब्रह्म चनियॆ; ने नदियादिगाग । घनबुद्धि जरियिंतु गलय लोकमुल
भूपालतिलक ! भूषणावळुलु । दीपिंच गानरु दिविजुलादिगनु

(तब) मैं पूर्वाद्रिपर गिर पड़ा । हनु के भग्न होने के उस कारण से मैं हनुमान के नाम से विराजमान हुआ । (मैं) आंजनेय हूँ, भिक्षुक की आकृति से अब आपके विधान को जानने के लिए आया हूँ । बड़े प्रेम से प्रिय माता के गर्भ से जन्म लेकर, सुन्दरता से कुछ वर्षों के बीतने पर, (किसी) एक कारण से ब्रह्मा के प्रति प्रकटितमति से मैंने तप किया, ।। १३० ।।

—(मेरा) परिशीलनकर, सरसिजभव आकर बोले:— 'वर मांगो' । ऐसा कहने पर, प्रदक्षिणाकर, प्रणामकर, हज़ार-हज़ार प्रकार से बिनुतियाँ (स्तुतियाँ) कर, (मैंने कहा):— 'हे विमलात्मा ! इस पृथ्वी पर मेरे लिए गति (आश्रय) (तथा) मोक्ष-काम्यार्थ-कारणों के लिए पति कौन है ? मैं उसकी प्रार्थनाकर, सेवा करूँगा ।' ऐसा निवेदन करने पर अब्जसंभव ने अपनी मनोवीथि में सोच देखा, (कहा):— 'ठीक ढंग से तुम्हारे शरीर पर के उरु-भूषणों को देख पानेवाला ही तुम्हारे लिए गति, पति, धाता तथा तुम्हारा इष्ट देवता है । सकल-भूत-समूह (तथा) समस्त भुवि के लिए वह कर्ता है । पूछोगे कि वह कौन है तो वह विष्णु ही है । अपने मन में विचार कर लो कि वही तुम्हारी गति (आश्रयदाता) है ।' (ऐसा) कह ब्रह्मा चले गये । मैं तब से लेकर, समस्त लोकों में बड़ी-बुद्धि से खोजते हुए, विचरण करता हूँ । 'हे भूपालतिलक ! दिविज आदि मेरी

दीनशरण्य ! मी दृष्टि नन्सोक । नैनवि ना भूषणावळु; लिक १४०
नेनु गृतार्थुंड; नेनु धन्युंड: । नेनुमीभृत्युंड; नॆलमितो' ननुचु
गॊनकॊनि कॊनियाडि कोर्कि दीपिंप । नॆनयु संतोषाब्धि नॆन्तयु देलि
तरमिडि साष्टांगदंडंबु वॆट्टि । करमुलु मुकुळिंचि कडुब्रीति बलिकॆ;
'नवनि निंद्रोपेंद्रुलर्थि नश्विनुलु । रविचंद्रुलन रूपरम्यत तोड
नॆगुबुजंबुलतोड निंदुबिंबंबु । नगु मॊगंबुलतोड नळिनपत्रमुल
दॆगडु कन्नुलतोड दिविजुलु मॆच्चि । पॊगडु विक्रमकळाभुजशक्तितोड
नरुदैन राजचिह्नमुलतो मीरु । शरचापहस्तुलै चनुदॆन्चिनारु;
भूरि तपोवेषमुलुमीकु नेल ? । मीरॆव्व ? रिचटिकि मीरु रानेल ?'
यनि सुधामुधुरवाक्यंबुल नधिक । विनयविधेयुडै विन्नविंचुटयु
नतनि वाक्शुद्धिकि नतनि बुद्धिकिनि । नतनि चमत्कृति कतनि
याकृतिकि १५०
नतनि मन: प्रीति कतनि नीतिकिनि । यति संतसिलि रामक्षितीश्वरुडु
दम्मुनि जूचि 'यीतनियट्लु वलुक । दम्मिचूलिकिनि नातनि वधूमणिकि
दगुगाक यॊरुलकु दरमॆ ? व्याकरण । निगमशास्त्रंबुलन्नियु नेर्वे बोलु

भूषणावलियों को दीप्ति से नहीं देख पाते हैं। हे दीनशरण्य ! आपकी दृष्टि के मुझे स्पर्श करने से ये (सचमुच) भूषणावलियाँ बन गयी हैं ।। १४० ।। —अब मैं कृतार्थ हूँ, मैं धन्य हूँ । (अब) मैं प्रेम से आपका भृत्य हूँ ।' (ऐसा) कहते हुए सप्रयत्न प्रशंसाकर, इच्छा के दीप्त होने पर, दीप्त आनंद-अब्धि में अधिक ऊभचूभ होकर, क्रम से साष्टाँग प्रणामकर, हाथ जोड़कर, अत्यंत प्रीति से बोला:— '(इस) पृथ्वी पर प्रेम से, रूप की रमणीयता से इन्द्र-उपेन्द्र, अश्वनी-देवता, रवि-चन्द्र बन, उन्नत भुजाओं से, इन्दु बिंब का तिरस्कार करनेवाले मुखों, नलिन-पत्रों की अवहेलना करनेवाले नेत्रों, दिविजों के सराहकर, प्रशंसा करनेवाली विक्रम कला भुजशक्ति के साथ, अपूर्व राजचिह्नों से युक्त हो, आप शर-चापहस्त हो पधारे हैं। आपको ये भूरि-तपोवेश क्यों ? आप कौन हैं ? यहाँ आपको क्यों आना पड़ा ?' (ऐसा) कह सुधा-मधुर वाक्यों में, अधिक-विनय-विधेय (आज्ञाकारी) हो निवेदन करने पर, उसकी वाक्शुद्धि, उसकी बुद्धि, उसकी चमत्कृति, उसकी आकृति ।। १५० ।।

—उसकी मन:प्रीति, उसकी नीति (आदि) से मन में संतुष्ट हो, राजा राम ने अनुज को देख (कहा):— 'इसके समान बात करना ब्रह्मा (और) उसकी वधूमणि को ही उचित होगा, अन्यों के लिए यह संभव है क्या ? लगता है, इसने व्याकरण, निगम, शास्त्र सभी सीख लिए हैं। इसका संवाद,

नितनि सल्लापंबु नितनि रूपंबु । नतुल लक्षण लक्षितानुरूपंबु;
निट्टुवंटि दूत नाकिपुडब्बेॅनेनि । घटियिंपकुन्नेॅ मत्कार्यंबुलेॅल्ल ?
गावुन मत्कार्यगतुलीतनिकिनि । गोविदात्मक !ऽपूस ग्रुच्चिनयट्लु
चेॅप्पुमेर्पड' नन्न श्रीरामुतम्मु । डप्पुडु प्रियमंदि हनुमंतु जूचि
'मे मन्नदम्मुल; मिक्ष्वाकुकुलुल;। मी महात्मुडु रामु; डेनु लक्ष्मणुड;
दशरथराजनंदनुल मिद्दरमु; । दशरथु पनुपुन दपसुलै वच्चि
दंडकावनमुन दविलि वर्तिचु । चुंड रामुनिदेवि नुर्वीतनूज १६०
ममु डागुरिंचि दुर्मदुडु रावणुडु । क्रममेदि कॉनिपोयेॅ गपटमार्गमुन;
वानिपोयिन जाडवदलक वेॅदक । गानल नडुम नोॅक्कट वच्चि वच्चि
शबरि सुग्रीवुनि चरितंबु सेॅप्प । सबलुडातडु माकु सुखुडुगा गोरि
वच्चितिमिचटि; किव्वडुवुन निन्नु । नच्चुगा गनुगोॅन्टि' मन ननेॅ नतडु;
'विनुडु, सुग्रीवुडु विश्रुतकीर्ति । वनचरुलकु राजु वरबलाधिकुडु
भानुसूनुडु बृहद्भानुतेजुंडु । मानभूषणुडसमानविक्रमुडु
अन्नयौ वालिचे नपहृतराज्य । खिन्नुडै यिप्पुडिग्गिरि नुन्नवाडु;

इसका रूप (दोनों) अतुल लक्षणों से लक्षित-अनुरूप है । अब अगर ऐसा दूत मुझे संप्राप्त हो जाता तो क्या मेरे सभी कार्य संपन्न न होते ? अतः हे कोविदात्मा ! इसे मेरे कार्य की गतियों को क्रम से, ढँग से कह दो ।' (ऐसा) कहने पर श्रीराम का अनुज तब प्रसन्न होकर, हनुमान को देखकर (बोला):— 'हम भाई हैं । इक्ष्वाकु कुलवाले हैं । यह महात्मा राम है । मैं लक्ष्मण हूँ । हम दोनों राजा दशरथ के नंदन (पुत्र) हैं । दशरथ की आज्ञा के कारण, तपसी बन आए हैं, दंडकवन में आसक्त हो विचरण करते रहने पर, राम की देवी (तथा) उर्वीतनूजा (सीता) को ॥ १६० ॥

—हमें धोखे में डाल, दुर्मदवाला रावण, कपट मार्ग से ले गया है । उसके गमन के चिह्नों को न छोड़कर, ढूँढते हुए, काननों के मध्य आ आकर, शबरी के द्वारा सुग्रीव चरित्र को सुना है । वह सबल (बलवान) है, अतः उसे सखा बना लेने के उद्देश्य से यहाँ आए हैं । इस प्रकार तुम्हारे यहाँ आने पर स्वच्छता से तुम्हें देखा है ।' ऐसा कहने पर उसने कहाः— 'सुनिए, सुग्रीव विश्रुत कीर्तिवाला है, वनचरों का राजा है, श्रेष्ठ बल से श्रेष्ठ बना है । भानुसून (सुग्रीव) वृहत्-भानु-तेज से युक्त है, मान-भूषण है, असमान विक्रमवाला है । बड़े भाई वालि से अपहृत-राज्य (के कारण) खिन्न (दुखी) बन अब इस गिरि पर रहता है । (वह) आर्त (बना हुआ) है । (उसे) आपका सखा बना सकता हूँ ।' (ऐसा)

आर्तुडु मी सखुडै युंडजेय । नेर्तु' नावुडु रामनृपु चित्तमॆड़िगि
मड़ियुनु सौमित्रि मारुति जूचि । तॆड़गॊप्प नतनितो धीरुडै पलिकॆं;
'विनु राघवुडु लोकविख्यातसत्त्वु। डनुपम दिव्यास्त्रु डतुलसाहसुडु
१७०

करुणापयोधि यगाधमानसुडु । शरणागतत्राण सद्धर्मपरुडु
जगदेकनाथु डशरणशरण्यु । डगणितगुणगण्युडधिकतेजुंडु
अतिलोकविक्रमुंडतिसत्यवादि; । हितुडनै बंटनै येनु वर्तितु;
गावुन राघवक्ष्मापालमणिकि । ले वसाध्यंबुलु लॆक्किप नॆन्दु;
गुटिलराक्षसुडुन्न गुरुतु मुन्नॆड़िगि । यिट सीतसाधिंप नेम चालुदुमु;
अलवुमै नेकाकुलै पोवदगदु; । दलपोय निदि राजधर्मंबुगादु;
गान नी सुग्रीवु गैकॊनुतलपु । मानवाधीश्वरु मदिलोन गलदु;
इट मीद नी कार्यमेवॆन्टनैन । घटियिंपु' मनवुडु गरुवलिसुतुडु
नॆड़य संतसमंदि निजमूर्ति जूपि । मड़ि तन्नु रामलक्ष्मणुलु मन्निंप
दनु गृतकृत्युगा दपननंदनुनि । वनचरराजुगा वरुसनॆन्नुचुनु १८०
गनुगव हर्षाश्रुकणमुलु दॊरुग ।गॊनियाडि कॊनियाडि कोर्कॆ दीपिंप

कहने पर राजा राम के चित्त (-प्रवृत्ति) को जानकर, सौमित्र ने मारुति को देखकर, ढंग से उससे, धीर बनकर, कहा:— 'सुनो, (ये) राघव लोक विख्यात-सत्त्व वाला है। अनुपम दिव्यास्त्र से युक्त है, अतुल साहस वाला है, ।। १७० ।।

—करुणा-पयोधि है, अगाध-मानसवाला है, शरणागत-त्राण (रक्षा) (रूपी) सद्धर्म में निरत है। जगदेकनाथ, अशरणशरण्य, अगणितगुणगण्य, अधिक तेजवाला, अतिलोकविक्रमवाला, अतिसत्यवादी है। (इनके) हितू और सेवक होकर मैं रहता हूँ। अतः राघव-क्ष्मापाल (राजा)-मणि के लिए गणना करने पर कहीं असाध्य नहीं हैं। कुटिल राक्षस जहाँ है, उसका पता पहले से लगाकर, सीता को ला सकने में हम समर्थ ही हैं। समर्थ के पास अकेले होकर जाना नहीं चाहिए। विचार करने पर यह राजधर्म नहीं है। अतः तुम्हारे सुग्रीव को (अपना) लेने का विचार मानवाधीश्वर (राजा-राम) के मन में है। अब आगे इस कार्य को किसी भी प्रकार संपन्न करो।' ऐसा कहने पर पवनपुत्र अधिक संतुष्ट होकर, निजमूर्ति (स्वस्वरूप) का प्रदर्शनकर, फिर अपने को राम-लक्ष्मण के सम्मानित करने पर क्रम से अपने को कृतकृत्य मानते हुए, तपननन्दन (सुग्रीव) को वनचर-राजा मानते हुए ।। १८० ।।

—नेत्रयुग्म से हर्षाश्रुकणों के ढुलकने पर, प्रशंसाकर, इच्छा के प्रदीप्त होने

मनमुन संतोषमग्नुलै वारु । ननुवुन वीड्कॊल्प नतिसंभ्रममुन
नरिगि राघवुल वृत्तांतमंतयुनु । दॊरकॊनि सुग्रीवुतो नॊप्पजॆप्पि
रमणीयमूर्तुल रामलक्ष्मणुल । कमनीयगुणमुलु गडगि वर्णिंचि
‘जगतिपै नतिशोकसागरमग्नु । डगु नीकु रघुरामुडनु तॆप्प दॊरकॆ;
ब्रदिकिति सुग्रीव ! पगयॆल्ल दीरॆ । दुदमुट्टगलिगॆ संतोषंबु नीकु;
ना दशरथपुत्रु डा सुचारित्रु । डा दयापरमूर्ति या सत्यवादि
या महाभुजशालि या महाबलुडु । श्रीमहाविष्णुंडु श्रीनिवासुंडु
आ पुण्यनिधि रामुडट नीकु गर्त ! । नी पुण्यमॆमन नॆर्तु सुग्रीव !
निरुपेदवानिकि निधियब्बिनट्लु । करमर्थि नीकिट गल्गॆ राघवुडु;
१९०
ना महात्मुडु तंड्रियानति दंड । कामध्यमुन नुंडगा दशाननुडु
दनदेवि म्रुच्चिलितनमुन नॆत्ति । कॊनिपोव वानि मार्कॊनि त्रुंचि वैव
जिंतिंचि नी तोड जॆलिमि वाटिंप । नॆन्तयु दलपोसि यॆतॆन्चॆ निटकु’
ननिन सुग्रीवुंडु हर्षंबुनॊन्दि । यनिलनंदनु जूचि यर्थितो बलिकॆ;
‘बवनज ! नालोनि भयमॆल्ल नडगॆ । दविलि ये जेसिनतपमॆल्ल बंडॆ ।
नलवडनाकु नीयट्टि यंजनमु । गलुगुट गंटि राघवनिधानंबु;

पर, मन में आनंद हो उनके आनुकूल्यता से बिदा करने पर, अतिसंभ्रम से जाकर, राघवों के समस्त वृत्तान्त को, क्रम से, सुग्रीव को कह सुनाया। रमणीयमूर्तिवाले राम-लक्ष्मणों के कमनीय गुणों को सप्रयत्न वर्णनकर, (यों कहा):— ‘जगती में अतिशोक-सागर मग्न बने तुम्हें रघुराम रूपी नौका मिल गयी है। हे सुग्रीव ! (अब तुम) जीवित (सुरक्षित) हो गये, समस्त प्रतिशोध पूर्ण हो गया, तुम्हें अब पूर्ण संतोष प्राप्त हो गया। वह दशरथपुत्र, वह सुचरित्र, वह दयापरमूर्ति, वह सत्यवादी, वह महाभुजशाली, वह महाबली, श्रीमहाविष्णु, श्रीनिवास, वह पुण्यनिधि अब तुम्हारा कर्ता है न। हे सुग्रीव ! तुम्हारे पुण्य की कैसे प्रशंसा करूँ ? जैसे कंगाल को निधि प्राप्त हुई है, उसी प्रकार बड़ी इच्छा से तुम्हें यहाँ राघव प्राप्त हुए ॥ १९० ॥

—वह महात्मा, पिता की आज्ञा से दंडक-मध्य में रहते समय दशानन के अपनी देवी के धोखे से उठा ले जाने पर, उसका सामनाकर, वध करने की सोचकर, तुम्हारे साथ मैत्री करने की बहुत सोचकर यहाँ आया है।’ (ऐसा) कहने पर सुग्रीव हर्षित होकर अनिलनंदन को देख, इच्छा से बोला:— ‘हे पवनज ! मेरे अंतर का सारा भय दूर हो गया। लगकर मैंने जो तपस्या की, वह फलीभूत हो गया। ढंग से मुझे तुम जैसे अंजन के प्राप्त

गलगक नी वंटि कर्णधारुंडु । गलुगुट शोकाब्धि गडतेर गंटि;
गडकतो ऋश्यमूकमुनकु वारि । दोडितेंच्चि नादैन दुःखंबु मान्पु;
पों’ म्मनवुडु वायुपुत्तुंडु वोयि । नेंम्मितो रघुरामनृपतिकि म्रोक्कि
‘देव ! सुग्रीवुंडु देवरसखुडु । देव ! निन् दर्शिप दिवुरुचुन्नाडु;
२००

विच्चेयु’डनि विन्नविंचिन रामु । डिच्चलो हर्षिचि येपु दीपिंचि
हनुमंतु गोंनियाडि, यतिशुभलग्न । मुन हनुमंतुंडु मुंदट नडुव
दन तम्मुडुनु दानु दग ऋश्यमूक । मुन केगि यानंदमुन बोंन्देंविभुडु;
हनुमंतुडंत नेकांतबुनंदु । मनुजेश्वरुल डिंचि मलयाद्रिकरिगि
श्रीरामदर्शनोद्ग्रीवु सुग्रीवु । जेरि ‘नी कोरिकल् चेकूरेंनिक;
रा देव ! वच्चिरि रामलक्ष्मणुलु । आदट ऋश्यमूकाद्रिकि’ ननुडु
निनतनूजुडु प्रीति निच्चलो नुब्बि । मनुजवेषमु बूनि मकुटकेयूर
घनतर श्रृंगार कलितुडै यपुडु । तन मंत्रुलुनु दानु दडयकेतेंन्चि
डक्किन भक्तितो डासि रामुनकु । जक्क सागिलि म्रोक्कि संप्रीति
वेलय

रहने पर, (मैंने) राघवरूपी निधान को प्राप्त किया। क्षुब्ध न होने वाले तुम जैसे कर्णधार के प्राप्त होने पर शोकाब्धि को पूरा-पूरा पार कर सका। सप्रयत्न ऋश्यमूक को उन्हें लिवा लाकर मेरे दुःख का निवारण करो। जाओ।’ ऐसा कहने पर वायुपुत्र जाकर, प्रेम से रघुराम-नृपति को प्रणामकर, (कहा):— ‘हे देव ! सुग्रीव, श्रीमान् (आप) का मित्र है, हे देव ! आपके दर्शन के लिए तड़प रहा है ।। २०० ।।

—पधारिए।’ (ऐसा) कह निवेदन करने पर, राम मन में हर्षित होकर, विकास से दीप्त होकर, हनुमान की प्रशंसाकर, अतिशुभलग्न में हनुमान के आगे-आगे चलने पर, अपने अनुज के साथ, ढंग से ऋश्यमूक जाकर विभु (राम) आनंदित हुए। तब हनुमान मनुजेश्वरों को एकांत में उतारकर, मलयाद्रि जाकर, श्रीराम-दर्शन-उद्ग्रीव (उत्कंठित) सुग्रीव के पास पहुँचकर (कहा):— ‘अब तुम्हारी इच्छाएँ संपन्न हुई हैं। आओ देव ! ऋश्यमूकाद्रि को राम-लक्ष्मण आए हैं।’ (ऐसा) कहने पर इन-तनूज (सूर्यपुत्र-सुग्रीव) प्रीति से मन में फूलकर, मनुजवेष धारणकर, मकुट-केयूर (के) घनतर अधिक-श्रृंगार (सजावट) से कलित होकर, तब अपने मंत्रियों के साथ विलंब न कर, अधिक भक्ति से निकट आकर, ठीक तरह राम को साष्टांग प्रणामकर, सम्यक् प्रीति के अभिव्यक्त होने पर,

मुकुळितहस्तुडै मुंदऱ नुन्न । यकलंकु सुग्रीवु नधिपति सूचि २१०
यालिंगनमु सेसि यतनिकट्लनियॆ । नालोन दरहासममृतमै तॊरुग
'नी वायुसुतुनिचे निनसुत ! येनु । नी विक्रमंबुनु नी गुणावळुलु
विनि प्रीति नॊन्दिति ; वॆऱवकुमिक । नॆनसि नी पगवानि नेनॆ चंपॆदनु ;
नाकाप्तबंधुंडु नम्मिन सखुडु । नी कंटॆ नॊकडु गणिंचिन गलडॆ'
यनि यूरडिंचिन नर्कनंदनुडु । 'ननिचिन बंटुगा नन्न गैकॊन्टि ;
देव ! नी कारुण्यदृष्टि नन् सोकॆ ; । ने वॆन्ट धन्युड नेनिंक नॆन्दु ;
नलिनाप्तकुलनाथ ! ना यट्टि बंटु । गलिगॆ नी ; कटुगान गडिमिदीपिंप
'दिविरि रावणुनि वधिंचिति गडगि । यवनिज गैकॊन्टि' ननि निश्चयिंपु'
मनि राम सुग्रीवु लन्योन्यभाष । लनलु सन्निधि चेसिरकलंकुलैरि
अटनंगदुंडु नुदंचितांगदुडु । आटप्रायमुगाग नप्पुडावनुल २२०
गिरुलनु वॆसवच्चि क्रियनाडुचुंडि । या राम सुग्रीवु लन्योन्यमु गनि
नॆन्नगा ननलु सन्निधि बल्कु पल्कु । लन्नियु विनि वच्चि या तार तोड

मुकुलित-हस्त हुए। समक्ष स्थित अकलंक सुग्रीव को अधिपति ने देखा ॥ २१० ॥

--आलिंगन कर दरहास के अमृत के छलकने पर, उससे यों कहा:— 'हे इनसुत ! इस वायुसुत से मैं तुम्हारे विक्रम, तुम्हारी गुणावलि सुनकर संप्रीत हुआ। अब डरो मत। तुम्हारे शत्रु का मैं ही वध करूँगा। गणना करने पर तुम्हारे सिवा मेरे लिए आप्तबंधु, विश्वासपात्र सखा दूसरा कौन है ?' (ऐसा) कह सान्त्वना देने पर अर्कनंदन ने कहा:— आज्ञाकारी सेवक के रूप में मुझे स्वीकार किया है। हे देव ! तुम्हारी करुण-दृष्टि ने मेरा स्पर्श किया है। किसी भी प्रकार से मैं सर्वथा धन्य हूँ। हे नलिनाप्त (सूर्य)-कुल-नाथ ! मुझ जैसा सेवक (तुम्हें) मिला है न ! अतः साहस के दीप्त होने पर यह निश्चय करो कि शीघ्र ही रावण का सप्रयत्न वध कर दिया है। (और) अवनिजा को प्राप्त किया है।' (ऐसा) कह राम (और) सुग्रीव अनल के समक्ष परस्पर वचन-बद्ध हो, अकलंक बने। वहाँ उदंचित-अंगद (उभरे हुए शरीर वाला) अंगद ने, क्रीडा करने योग्य आयु के होने पर, तब उन वनों में' ॥ २२० ॥

—गिरियों में, शीघ्र आकर खेलते रहते हुए, उन राम सुग्रीवों के अन्योन्य (परस्पर) सुघड़ाई से, अनल के समक्ष कहे हुए वचनों को सुना (सुनकर) (नगर में) लौट आकर, उस तारा से (सबकुछ) निवेदन किया। मन

विन्नविंचिन मदि वेगुचु दार । कॊन्नि दुश्शंकल गुंदुचु नुंडे
नपुडर्कसुतुनकु ना राघवुनकु । विपुल भूरुहशाख विड़िचि वायुजुडु
आसनंबुग वैवनंदु गूचुंडि । यासक्ति बरिणाममरयुचुन्नंत

सुग्रीवुडु रामुनकु जनकजतॊडवुलिच्चुट

नहिमांशुनंदनुंडंत राघवुल । गुहलोपलिकि दोडुकॊनिपोयि प्रीति
भूमिज मुनु वैचिपोयिन तॊडवु । लामेयि गॊनिवच्चि यपुडिट्टु-
लनियॆ:
‘दनुजुंडु नी देवि धरणितनूज । वनसीमलोपल वंचन मिम्मु
गनुब्रामि गगनमार्गंबुन नेत्ति । कॊनिपोव बोव नी कॊन्डपै मम्मु
गनुगॊनि मिमु बॆक्कु गतुल जीऱुचुनु। जिनुगुपय्यॆद कॊन्गु सिंचि बंधिंचि
२३०
तन तॊडवुलु वैचि तरलाक्षि वोयॆ’ । ननि चॆप्पि यिच्चिन नधिपति सूचि
मुन्नुगा वगलनु मुन्नीट मुनिगि । कन्नीट ना सॊम्मु कसटॆल्ल गडिगि
यदंद युरमुन नाभूषणमुलु । पॊन्दिचि पॊन्दिचि भूमिज दलचि
पॆलुकुड़ि लक्ष्मणु बेकॊनि पिलिचि। पलिकॆ बल्कुल दॊट्रुपाटु रॆट्टिप

में व्याकुल होते हुए, कुछ दुष्ट शंकाओं के कारण (तारा) व्यथित होती रही। तब वायुज ने अर्कसुत तथा राघव के लिए विपुल-भूरुह (वृक्ष)-शाखा तोड़कर आसन के रूप में डाल दिया, उस पर बैठकर, आसक्ति से परिणाम (के बारे में) सोच रहे थे, तब—

सुग्रीव का राम को सीता के आभूषण देना

—अहिमांश (सूर्य)-नंदन तब राघव को गुफ़ा में लिवा ले गया, प्रीति से, भूमिजा जो आभूषण डाल गयी थी, उस अवसरपर उन्हें लाकर, तब यों कहा:— ‘दनुज तुम्हारी देवी धरणीतनूजा को वनप्रांत में छल से, आपको धोखा देकर, गगनमार्ग से ले जाता रहा, जाता रहा। (तब) इस पर्वत पर हमें देखकर, आपको कई प्रकार से पुकारते हुए, महीन आंचल के कोर को फाड़कर, (आभूषण) बाँधकर, ।। २३० ।।
—अपने आभरण डालकर, तरलाक्षी (सीता) चली गयी।’ ऐसा कहकर (आभरण) देनेपर, राजा (राम) ने (उन्हें) देखा, (देखते ही) पहले शोकरूपी सागर में डूबकर, अश्रुधाराओं से उन आभरणों के मैल को धोकर, बार-बार उन आभरणों को उर (वक्ष) से लगा लगाकर, भूमिजा का स्मरणकर, विह्वल हो, लक्ष्मण को नाम ले पुकारकर, वचनों में

'गंटॆ लक्ष्मण ! सीत कैसेतलॆल्ल । मंटिपालय्यॆ नी माड्कि नेमदु ?
नी तॊडवुलु वैव नेमि कारणमॊ ?। यी तॊडवुलतोड नेमैनयदियॊ ?
यदिगाक प्राणनायकियैन सीत । कुदुरु निंडिन गब्बिगुब्बलमीद
बायनि यी जिल्गु पय्यॆदचीर । की यवस्थलु वच्चॆ नेमनवच्च् ?
बन्नीट ना पादपाद्ममुल् गडिगि । युन्नति दडियॊत्तुलॊत्तनु दीन
सुरटिगाविंचि भासुरलील दीन । भरितश्रमांबुवुल् पलुचगा जेयु
२४०
मॆऱुगारु मैदीग मॆऱयुचुंडंग । मऱि यडुगुलकुनु मडुगुलु पऱचु'
ननि यनि शोकिंचि यश्रुवुल् निंचि । यनयंबु मूर्छिल्लि यंतलो दॆलिसि
प्रियभक्ति विनमितग्रीवु सुग्रीवु । नयसनाथुडु रघुनाथुडीक्षिंचि
'ना देवि गॊनिचन्न नाकेशवैरि । ये देशमुन नुंडु? नॆद्दिपुरंबु ?
चॆप्पुमा सुग्रीव ! सीत साधिंतु । निप्पुड ना दैत्यु नेपडगिंतु'
ना विनि या रविनंदनुंडनियॆ । 'देव ! या द्रोहि मंदिरमॆनॆऱुग
नॆऱुगकुंडिननेमि ? यिटमीद वानि । नॆऱुगु नॆरंगॆल्ल नेनु गाविंतु;
नीवु शोकमु मानि निश्चलधैर्य । भावपौरुषगुणास्पदुडवु गम्मु;

लड़खड़ाहट के बढ़नेपर बोला:— 'देखा लक्ष्मण ! सीता के सभी श्रृंगार (आभरण) इस प्रकार मिट्टी में मिल गये हैं। क्या कहूँ ? इन आभूषणों को डाल देने का क्या कारण हो सकता है? इन आभूषणों को साथ रखने में क्या (कष्ट) हुआ होगा ? यही नहीं, (मेरी) प्राणनायकी सीता के स्थिर (सुडौल) बने पीन-स्तनोंपर निरंतर रहनेवाले इस महीन अंचल को कैसी दुर्गति प्राप्त हुई। (अब) क्या कहें ? मेरे पदपद्मों को गुलाबजल से धोकर, श्रेष्ठता से इसी (अंचल) से पोंछती थी, (इसे) पंखा बनाकर, सुंदर-ढंग से इससे (मेरे शरीरपर) भरे हुए श्रमबिंदुओं को सुखा देती थी; ।। २४० ।।

—प्रभायुक्त तनुलता के दीप्त होनेपर, (इसी से) (मेरे) चरणों के लिए पांवडे बिछाती थी।' (ऐसा) कह-कहकर शोककर, आँसू भरकर, बार-बार मूर्च्छित होकर, इतने में होश में आकर, प्रियभक्ति से विनमित-ग्रीववाले (झुके सिरवाले) सुग्रीव को नय-सनाथ, रघुनाथ देखकर बोले:— 'मेरी देवी को ले जानेवाला नाकेश (इन्द्र)-वैरी किस देश में रहता है ? (उसका) नगर कौन-सा है ? बोलो सुग्रीव ? सीता को लाऊँगा, उस दैत्य के विकास का उन्मूलन करूँगा।' (ऐसा) कहनेपर, सुनकर, रविनंदन ने कहा:— 'हे देव (प्रभू) ! उस द्रोही के निवास को मैं नहीं जानता। न जाननेपर क्या हुआ ? आगे उसे जानने का समस्त

अतिपराक्रमशालियगु वालि चेत। हृतकळत्रुडनय्यु नेंनित वगव;
नापद यनु वार्धि कात्मधैर्यंबु । देप सेयुनतंडु तेंलिविमै नुंडु: २५०
मावंटि प्राक्रुतमतुलचदमुन । नीवुनु शोंकिप नीतिये देव !'
यनग ना सुग्रीवुनाप्तवाक्यमुलु । विनि धीरुडै रघुवीरुडेंन्तयुनु
इंतिवोयिन जाड येंरिगिनपिदप । नंतरंगंबुन नडलुचु नुनिकि
मगपाडि गादनि मदिनिश्चयिंचि। जगतीशुडंतट संतापमुडिगि
'सरसिजानन बूनि साधिंचुपनिकि। बरिकिंचि मुनु वीनि पग दीर्तु' ननुचु
मीनाक्षि तोंडवु सौमित्रिकंदिच्चि। भूनाथुडपुडर्कपुत्रु नीक्षिंचि
'यापदकुनु सखुडैनट्लु चुट्ट । मापाटि गानेरडारसि चूड:
गुणवंतुडैननु गुणहीनुडैन। गणियिंप सखुडे सद्गति यंड्रु बुधुलु:
गावुन नी चेंल्मि गलिगिन नाकु । ने वेंन्ट गोंदवले: दिदि निश्चयंबु:
नी पत्नि गैकोंनि निनु जंपगोरु । पापात्मुडगु वालि बरिमार्तुनिपुडे; २६०

विधान मैं करूँगा । तुम शोक त्यागकर, निश्चल-धैर्य-भाव (तथा) पौरुष-गुणास्पद बनो । अतिपराक्रम-शाली वालि द्वारा (अप-) हृतकलत्र वाला होता हुआ भी मैं इतना दुखी नहीं होता । विपत्तिरूपी वारिधि (सागर) के लिए आत्मधैर्य को नौका बनानेवाला सजग (सावधान) रहता है ।॥ २५० ॥

—हे देव ! हम जैसे प्राकृतमति (साधारण बुद्धि) वालों के समान तुम्हें भी दुखी होना नीति (-संगत) है क्या ? (समुचित नहीं है ।) (ऐसा) कहनेपर उस सुग्रीव के आप्त वाक्यों को सुनकर, अधिक धैर्य धारणकर नारी के (खो) जाने का पता जानने के बाद अंतरंग में व्याकुल होते रहना पुरुषलक्षण नहीं है, ऐसा मन में निश्चयकर, तब जगदीश ने संताप त्यागकर (यों) सोचाः— 'सरसिजानना (पद्ममुखी) को प्राप्त करने के कार्य (के बारे में) सोचकर, उससे पहले इसके (सुग्रीव के) शत्रु का संहार करूँगा ।' (ऐसा) सोचते हुए, मीनाक्षी (सीता) के आभूषण सौमित्र को सौंपकर, भूनाथ (राम) ने तब अर्कपुत्र (सुग्रीव) को देखकर (कहा):— 'सोचकर देखनेपर विपत्ति में सखा (मित्र) के समान रिश्तेदार कभी (उतना सहायक) नहीं हो सकता । बुध (जन) कहते हैं कि गणना करनेपर गुणवान हो या गुणहीन, मित्र ही सद्गति (सहायक) है । अतः तुम्हारी मित्रता को प्राप्त मुझे किसी भी प्रकार का अभाव नहीं है । यह निश्चित है । तुम्हारी पत्नी को लेकर (अपहरणकर),

यन्नदम्मुल मैत्रि नलरुटकंटे । नुन्नदा सौख्य ? मा यौरिमिक मानि
यगचराधिपुड ! मी यन्नकु नीकु । बगयैन विधमु दप्पक चेप्पु' मनिन

वालिसुग्रीवुल कलहकथा

'नो राम ! वालिकि नोंगि नाकुनैन । वैरानुकथनंबु वर्णितु विनुमु :
कडगि मंथरगिरि कव्वंबु सेसि । तडयक वासुकि दरित्राडु सेसि
सम्मु देवतलेल्ल मन्ननसेय । ग्रम्मिन देलिविमै घनभुजाबलमु
वालियु नेनुनु वडि नोक्क वंक । व्रालिति मोकवंक वालिन वारु
सुरगरुडोरगासुरसिद्धसाध्य । वरुलंदऱुनु क्षीर वारिधि दरुव
गरळंबु वुट्टि लोकमुलेल्ल गाल्प । हरुडदियुनु म्रिंगे नद्भुतंबनग :
नलरंग ज्येष्ठयु नंदुदयिंप । गलिराजु दानिनि कैकोने ब्रीति :
ब्रस्तुति केक्कुचु बहुळंबुलैन । वस्तुचयंबुलव्वारिधि बुट्टे: २७०
तमतम कोर्केकु दगिनवस्तुवुलु । नमरंग गैकोनिरंदऱु ब्रीति :

तुम्हारा संहार करना चाहनेवाले पापात्मा वालि का अभी संहार कर दूंगा । ॥ २६० ॥

—भाइयों का मैत्री के साथ शोभित होने से बढ़कर कोई सुख है क्या ? उस प्रकार की आनुकूल्यता (अथवा एकता) को छोड़, हे अगचर-अधिप ! तुम और तुम्हारे अग्रज के बीच शत्रुता होने का विधान अवश्य बताओ ।' (ऐसा) कहने पर,

वालि और सुग्रीव के कलह की कथा

—(सुग्रीव ने कहा)— 'हे राम ! क्रम से मेरे और वालि के मध्य हुए वैरानुकथन का वर्णन करता हूँ, सुनो । सप्रयत्न मंथरगिरि को मथानी बनाकर, अविलंब वासुकि को नेती बनाकर, समस्त देवताओं ने हमारा सम्मान किया (तो) व्याप्त बुद्धि (तथा) घनभुजबल से वालि और मैं झट से एक ओर आ कूदे । एक ओर उतर जाने पर वे सुर, गरुड, उरग, असुर, सिद्ध, साध्य श्रेष्ठ सभी (जन) क्षीर-वारिधि का मंथन करने लगे । (तब) गरल उत्पन्न हो, समस्त लोकों को जलाने लगा तो अद्भुत रूप से उसे हर निगल गये । उसमें शोभा से ज्येष्ठा (दरिद्र देवता) के उदित होनेपर, उसे राजा कलि ने प्रेम से ग्रहण किया । (तदनंतर) प्रख्यात होते हुए बहुत वस्तुचय (समूह) उस वारिधि में उत्पन्न हुए । ॥ २७० ॥

—शोभा से सभी लोगों ने प्रीति से अपनी-अपनी इच्छा के अनुरूप वस्तुएँ

नलि बुट्टे नैरावतमु मेषमहिष । मुलु मकरकरेणुवुलु हयवृषमु
लवि जनिर्यिप निंद्रादिदिक्पतुलु । विविधयानमुलुगा वेड्क गैकोनिरि :
महनीय सौभाग्य महिमलु दनुक । सहजंबुलै लक्ष्मि जनिर्यिप जूचि
यामहालक्ष्मि नारायणुंडपुडु । कामिंचि तनदेवि गाग गैकोनिये :
जंद्रुडु देवतासतुलुदर्यिप । नंदङ्लिो दार यनुनाति माकु
देवतलिच्चिन दिविरि कैकोंन्टि । मा विधंबुन मङ्रि यंदरु दरुव
जनिर्यिचे नमृतंबु, सकल देवतलु । ननुरागमुन बोंन्दि या सुधारसमु
कामधेनुवु कल्पकमुलादिगाग । सोमुनि गोनि तम चोटिकि जनुचु
नमरुलु मम्मंप नर्थितो वच्चि । कमनीयपदमुन गांततो गूडि २८०
कलसियुंटिमि कोंन्तकालंबुदनुक । नलरुसुषेणुनि यनुगु गूतुरुनु
जेलुवोंप्प बेन्ड्लियै चेलगु वेडुकल । वलनोंप्पु रुम गूडि वर्तिचुचुंड
मातंड्रि तर्वात मंत्रुलु वेद्द । यीतडंचुनु वानरेंद्रपट्टंबु
वालिकि गट्टिः रा वालियु नन्नु । जाल मन्ननसेसि संप्रीतिनडपु :
नतनिकि बंटनै यहरहंबेनु । बितृसमानुनि गाग बेमि सेवितु :
नीरीति नन्योन्यहितुलमै मेलग । श्रीराम ! योंकनाडु चिरवैरमूनि

ले लीं। क्रम से ऐरावत, मेष, महिष, मकर, करेणु (हथिनी) हय, वृष, आदि के उत्पन्न होनेपर, इन्द्र आदि दिक्पतियों ने अनेक वाहनों के रूप में, सहर्ष (उन्हें) ले लिया। महनीय-सौभाग्य-महिमाओं के अपने में सहज ही लिए लक्ष्मी को उदित होते देखकर, उस महालक्ष्मी को, तब नारायण ने कामनाकर, अपनी देवी के रूप में ग्रहण किया। चन्द्र (और) देवता-स्त्रियों के उत्पन्न होने पर, उन सब में तारा नामक स्त्री को हमें देनेपर, सकाम (उसे) ग्रहणकर लिया। हमारे समान ही सबके मंथन करनेपर अमृत उत्पन्न हुआ। सकल देवता अनुराग प्राप्तकर, उस सुधारस, कामधेनु, कल्पक, सोम (चंद्र) आदि को लेकर अपने स्थानपर जाने लगे। जाते हुए अमरों के हमें विदा करनेपर, प्रेम से आकर, कमनीय स्थानपर कान्ता के साथ मिलकर, ॥ २८० ॥

—कुछ समय तक मिलजुलकर रहे। शोभायमान सुषेण की लाड़ली पुत्री को सुंदरता से ब्याहकर, अधिक विनोद (विहार) के साथ, प्रिया रुमा के साथ रहा। हमारे पिता के बाद मंत्रियों ने बड़ा (ज्येष्ठ) मानकर, वालि को वानरेंद्र का पद दिया। वह वालि भी मुझे अधिक सम्मानितकर, सम्यक् प्रीति से व्यवहार करता रहा। मैं उसका सेवक बनकर, अहरह उसे पितृसमान मानकर, प्रेम से सेवाएँ करता रहता। इस प्रकार अन्योन्यहितू बनकर हे श्रीराम ! हम लोग रहे। एक दिन

तोंडरिन कडकतो दुंदुभि गन्न । कोंड़कु मायावि यन् घोरराक्षसुडु
नड़रेयि किष्किंधनगरबु बेंदर । वडि नार्चि गर्व दुर्वारुडै पेर्चि
यनिसेय बिलिचिन नलुक दीपिंप । ननुपमबलशालियगु वालि वेंडलि
ननुगूडि युद्धसन्नद्धुडै वेग । तनमीद नडुव निद्दऱ जूचि वाडु
२९०

वालि, मायावि युद्धमु

ननि सेयकतिभीतुडै पाऱिपोयि । तन गुह जोच्चिन दर्पिंचि वालि
'यधिकगर्वोद्धतुंडगु वानि बट्टि । वधियिंचि वत्तु: ने वच्चुनंदाक
निच्चट नेमऱ कीवु वेऱोंकडु । चोच्चि राकुंड निच्चोनुंडु' मनुचु
गुहवात नन्नुंचि गुह दानु जोच्चि । गुहलोन नोकयेडु घोरयुद्धंबु
कडकनो जेय रक्तमु वेल्लि विरिसि । युडुगक गुहवात नुब्बिन जूचि
कनुकनि नार्चु राक्षसुनि यार्पुलुनु । विनि 'वालि राक्षसविभुनि चे
जच्चें:
निच्चट ने नुंडुटेऱिगिन वेंडलि । वच्चि दैत्युडु पट्टि वधियिंचु नन्नु'

चिर वैरभाव से विजृंभित साहस से दुंदुभि का पुत्र मायावी नामक घोर राक्षस आधीरात को किष्किधा नगर को भयभीत करते हुए, शीघ्र चिल्लाकर, आया। गर्वदुर्वार होकर अनि (युद्ध) करने के लिए (वालि को) बुलाया। (तब) क्रोध के दीप्त होनेपर, अनुपम बलशाली वालि (बाहर) निकलकर, मुझे साथ ले, युद्ध के लिए सन्नद्ध (तैयार) होकर, झट चल पड़ा। दोनों को देखकर वह, ॥ २९० ॥

वालि और मायावी का युद्ध

—युद्ध न कर, अतिभीत हो, भागकर अपनी गुफा में घुसा। दर्पित होकर वालि (ने मुझसे कहा):— 'अधिक गर्वोद्धत बने उसे पकड़, वधकर (लौट) आऊँगा। मेरे (लौट) आने तक यहाँ असावधान न होते हुए, किसी दूसरे को भीतर घुसने न देकर यहाँ रहो।' कहते हुए गुफा-मुख पर मुझे रख, स्वयं गुफा में प्रवेश किया, गुफा में एक वर्ष (तक) घोर युद्ध सप्रयत्न किया, (तब) रक्त के अधिक बह उठकर, (भीतर) न रुककर गुफा के मुख तक उमड़कर आनेपर, (उस रक्त को) देख, संभ्रम से चिल्लानेवाले राक्षस के हुंकारों को सुनकर, मैंने यह निश्चयकर कि 'राक्षसविभु के हाथ वालि मरा। मेरा यहाँ रहना वह जान जाए तो निकल आकर, दैत्य मुझे पकड़ मार डालेगा।' ऐसा निश्चयकर, तभी

ननि निश्चयमु सेसि यप्पुडे पोयि । कॊनिवच्चि यॊक कॊन्ड गुहवात नुनिचि
यच्चट वालिकि नट तिलोदकमु । लिच्चि किष्किधकु नेनु वच्चुटयु
'वालि वोयिन तरुवात नी राज्य । पालनंबुन कीवॆ प्राप्तुंड' वनुचु ३००

वदलक मंत्रुलु वानर राज्य । पदमुन ननु दॆच्चि पट्टंबु गट्ट
वानरकुल चक्रवर्तिनै येनु । नूनि राज्यमु सेयुचुंडिति : नंत
मनुजेश ! मऱि वालि मायावि जंपि । ननु जीऱि चीऱि यंतट गुहवात
पॆनचि वॆच्चिन कॊन्ड बिडिगा दन्नि । चनुदॆन्चि नेलेमि जाल गोपिंचि
किनुकतो मऱि वच्चि किष्किध जॊच्चि । तनकु ने जेयुवंदनमु गैकॊनक
'योरि ! तम्मुडवनि यूऱडि नम्मि । पोराड बगतुपै बोयिन चोट
ननुंडिचि चनुदॆन्चि ना राज्यपदमु । गॊनि प्रीतिनिट्लुंडगूड़ुने नीकु ?
गड़ु बापबुद्धिवि गावुन निन्नु । दॊडरि चंपिन नाकु दोसंबु लेदु।'
अनवड़ु ने वालियड़ुगुल कॆऱगि । विनयंबु भयमुनु वॆलयनिट्लंटि :
'नॊकयेड़ु मायावियुनु मीरु बोर । ब्रकटिप रक्तपूरमु गुहवात ३१०

जाकर एक पहाड़ी (बड़ी चट्टान) लाकर, गुफा-मुखपर रख दिया, वहाँ वालि को तिलोदक देकर (तर्पण-क्रियाकर) मैं किष्किंधा चला आया। 'वालि के (मर) जाने के बाद इस राज्य-पालन के तुम ही अधिकारी हो।' (ऐसा) कहते हुए, ॥ ३०० ॥

—(मुझे) न छोड़कर, मंत्रियों ने मुझे वानर-राज्यपद के लिए अभिषिक्त किया। मैं वानर-कुल-चक्रवर्ती बनकर, राज्य करता रहा। तब हे मनुजेश ! वहाँ मायावी का वधकर, वालि मुझे पुकार-पुकारकर, तब गुफा-मुख पर स्थापित चट्टान को पदाघातों से चूर-चूरकर, (बाहर) निकलकर, मेरी अनुपस्थितिपर अधिक क्रुद्ध हुआ। क्रोध से आकर, फिर किष्किंधा में घुसकर, मेरे द्वारा किए गये वंदन (नमस्कार) को ग्रहण न कर (कहा):— 'रे ! अनुज समझकर, (तुमपर) विश्वासकर, शत्रु से युद्ध करने गया। ऐसी स्थिति में तुम (मुझे) छोड़कर, (यहाँ) आए, मेरे राज्यपद को ग्रहणकर, प्रेम से इस प्रकार रहना तुम्हारे लिए उचित है ? अधिक पापबुद्धिवाले हो, अतः सोत्साह तुम्हें मार डालनेपर मुझे (कोई) दोष नहीं लगेगा।' ऐसा कहनेपर मैं वालि के चरणोंपर गिरकर, विनय (और) भय के प्रकट होनेपर यों बोला:— 'एक वर्ष (भर) मायावी और आपके युद्ध करनेपर, गुफा-मुख में रक्त-प्रवाह के प्रकट होनेपर, ॥ ३१० ॥

वॆडलिन भयमंदि विपरीतबुद्धि। वडि बाऱि यिचटि कॆ वच्चिन जूचि
रट्टडिमंत्रुली राज्यंबु नाकु। गट्टि: रिंतियकानि कपटमॆऱुग:
नाकु नी यागमनंबॆ शोभानमु:। नी कपिराज्यंबु नीवॆ कैकॊनुमु:
वावि दम्मुड गानि वालि! नीकॆनु। सेवकुंड: सुतुंड: जॆप्पनेमिटिकि ?
गरुणाढ्य! नायॆड गल्ल गलिगननु। गरुणिंपु' मनि पॆक्कुगतुल ब्रार्थिंप
नंतकंतकु मंडि, 'यनुजुनिपट्ल। निंतेल ?' यनि मंत्रुलॆन्त सॆप्पिननु
अनयुडै ना पत्नि यगु रुम बुच्चु। कॊनि राज्यमुनु बुच्चुकॊनि चंपगडग
वॆऱचि येकाकिनै वॆनुकॊनि वालि। तऱुम भूलोकमंतयु नेनु दिरिगि
येपऱ पऱतॆन्चि यिदुन्नवाड। नी पर्वतमु वालिकॆक्कराकुनिकि'
ननिन रामुडु वॆऱगंदि 'यी कॊन्ड। यिनतनूभव ! वालिकॆट्लॆक्कराडु ? ३२०
विनुपिंपु' मनवुडु विनतुडैनिलिचि। यिनतनूजुडु प्रीतिनिट्लनि पलिकॆ:
'दॊलिल दुंदुभि यनुदुष्टराक्षसुडु। बलिदुडै वरबलमु रंजिल्ल

—भीत होकर, विपरीत बुद्धि से, झट से, भागकर यहाँ मैं आया। (इस प्रकार) आए हुए (मुझे) देखकर निंदनीय चरित्रवाले मंत्रियों ने यह राज्य मेरे सिर मढ़ दिया। यह इतना ही है, मैं किसी कपट को नहीं जानता। मेरे लिए तुम्हारा आगमन ही शोभन है। अपने कपिराज्य को तुम्हीं ले लो। हे वालि! रिश्ते में मैं तुम्हारा अनुज हूँ, किन्तु (वास्तव में) मैं तुम्हारा सेवक हूँ, पुत्र हूँ। (और अधिक) कहना क्यों ? हे करुणाढय। (यदि) मुझसे कुछ दोष हो भी गया हो, (मेरे प्रति) करुणा बरतो।' (ऐसा) कह, अनेक प्रकार से प्रार्थना करनेपर, और अधिक क्रुद्ध हुआ। 'अनुज के प्रति इतना (क्रोध) क्यों ?' ऐसा मंत्रियों के कितना ही कहने (समझाने) पर भी, अनय (नीति रहित) होकर, मेरी पत्नी रुमा को लेकर, राज्य को भी लेकर (वालि ने) मुझे मारने का प्रयत्न किया। (उससे) डरकर, अकेला होकर, वालि के पीछा करने पर, मैं समस्त भूलोक में (शरण ढूँढते) घूमा। विकास (शोभा) के नष्ट होनेपर, भाग आकर, इस पर्वत के वालि के लिए अगम्य होनेपर, यहाँ रह गया हूँ।' (ऐसा) कहने पर राम चकित होकर (बोला):— 'हे इनतनूभव (सुग्रीव)! यह पर्वत वालि के लिए अगम्य क्यों है ? (अथवा वालि इस पर्वत पर क्यों नहीं चढ़ सकता ?) ।। ३२० ।।

—(सारी कथा) सुनाओ।' ऐसा कहनेपर, विनत हो खड़े रहकर, इनतनूज (सुग्रीव) ने प्रीति से यों कहा:— 'पूर्व में दुंदुभि नामक दुष्ट

मुल्लोकमुलु दनमौनकु भीतिल्ल । मल्लडिगौनि पेनुमहिषमै पोयि
तड्रिमि समुद्रुनि दनतोडननिकि । नड्रिमि पिल्चुटयु नय्यंबोधि गलगि
घनरत्नकोट्टुलु कानुकलिच्चि । 'तुनियनि बलिम नीतोड बोराड
घनमैन तुहिनाद्रि गानि ये बूनि । यनि सेयजाल बौ' म्मनिन नेतेंन्चि
जंभारिदोस्तंभसंभावितोग्र । दंभोळिनैशित्य दर्पभंगमुल
नतुलश्शृंगमुल हिमाद्रि गोराड । नतिभीतुडै पर्वताधीशुडनियै :
'नीसरिवाडना निलिचि पोराड ?। नोसरिंपकनिल्व नेर्तुने येनु ?
ई लोकमुन निन्नु नेंदिरि पोराड । वालिन भुजशक्ति वालिक
गलदु : ३३०
बलियुडै किष्किंध बालिचु नतडु: । कलहंबुपै वांछ गलदेनि नीवु
नलघुविक्रम ! यिक नटकेगु' मनिन । जेलगि राक्षसुडु किष्किंध केतेंन्चि

वालि, दुंदुभुल युद्धमु

विलयकालाभीलवेळ गर्जिल्लु । जलदंबुगति नार्चि 'सरि दनतोड

राक्षस बलिष्ठ होकर, श्रेष्ठ वर (-दानों के कारण) से प्रसन्न होकर, त्रिलोकों के अपने पौरुष के कारण भयभीत होनेपर, विजृंभित होकर, बड़ा भैंसा बनकर, जाकर, पीछाकर, समुद्र को अपने साथ युद्ध करने के लिए ललकारकर, बुलाया। (तब) वह अंबोधि विकल होकर, बड़े रत्न समूहों को भेंट देकर, (बोला):— 'अटूट बल से तुमसे लड़ने के लिए महान् तुहिनाद्रि (हिमालय) ही (समर्थ) है, मैं सप्रयत्न भी युद्ध नहीं कर सकता, जाओ।' कहने पर, आकर, जंभारि (इंद्र) के दो स्तंभ (भुज)-संभावित-उग्र-दंभोलि (वज्रायुध) के नैशित्य (तेज) के दर्प का भंग करनेवाले अतुल श्रृंगोंवाले हिमाद्रि को सींग मारनेपर, अतिभीत हो, पर्वताधीश ने कहा:— 'अड़कर लड़ने के लिए क्या मैं तुम्हारी बराबरी का हूँ ? हटे बिना (तुम्हारे सामने) खड़े रहने में मैं क्या समर्थ हूँ ? इस संसार में तुम्हारा सामना करने के लिए योग्य भुजशक्ति वालि में है। ॥ ३३० ॥

—बलवान होकर वह किष्किंधापर शासन करता है। हे अलघुविक्रम वाले ! यदि तुम्हें युद्ध पर इच्छा है तो अब वहाँ जाओ।' (तब) उल्लसित हो राक्षस किष्किंधा में आकर,

वालि और दुंदुभि का युद्ध

—विलय (प्रलय) काल के भयंकर समय में गर्जना करनेवाले जलद के

नालंबु सेयर'म्मनि वालि बिल्व ।वालि कॊपिंचि वॆल्वडि वच्चि यार्चि
दुंदुभि गति म्रोयु दुंदुभि दाकि । 'यॆन्दु बोवग वच्चु निंक नी'कनुचु
शिललु पादपमुलु चॆच्चॆऱ ऱुव्वि । नल मुष्टिहतुल गॊन्दलमंद जेय
वाडुनु वानरेश्वरुनि वक्षबु । वाडिकॊम्मुल ग्रुम्म वालि कॊपिंचि
यतिघोरुडै पेर्चि यचलंबु वैव । गतिदप्प नुऱिकि रक्कसुडॆदिरिप
गंडशैलमु वुच्चि कपिराजु वैव । नॊन्डॊन्ड कॊम्मुल नोसरिल्लुचुनु
अऱुग्रम्मिकॊनि वालि नदरंट व्रेय । दऱिमि वृक्षंबुन दरुचरुंडडुव ३४०
माटुन नसुर ग्रम्मऱ वच्चि ताक । मोट ताडॆत्तुक मोदॆना वालि :
कदिसि कॊम्मुल जिम्म गपिराजु निलिचि। कदलनि मुष्टि ववत्रंबुन बॊडुव
रक्कसुडॊडुव मर्कटराजु वॊडुव । दक्कक यिरुवुरु दर्पिंचि पेर्चि
कॊनकॊनि नूऱॆंड्लु घोरयुद्धंबु । मनुवशवल्लभ ! मऱि चेसि वालि
क्रेळ्ळुरिकियु बिडिकिट दोक बट्टि । यॆल्लॆड गुदियिंचि यॆडपक त्रिप्पि

समान सिंहनादकर, (कहा):— 'बराबरी से मेरे साथ युद्ध करने के लिए आओ।' कहकर वालि को बुलानेपर, वालि क्रुद्ध होकर, बाहर निकलकर, आकर, सिंहनादकर, दुंदुभि (युद्धवाद्य) के समान ध्वनि करने वाले दुंदुभि का सामनाकर (बोला):— 'अब तुम कहाँ जा सकोगे (मेरे हाथों से बचकर) ?' (ऐसा) कहकर, झट-झट शिलाएँ और पादप (वृक्ष) फेंककर, (राक्षस के) सिरपर मुष्टि-प्रहारकर (उसे) व्याकुल कर दिया। उसने भी वानरेश्वर के वक्षपर पैने सींग मारे। वालि ने क्रुद्ध होकर, अतिभयंकर बन, क्रम से पर्वत डाल दिया। गति का अतिक्रमण न कर, दौड़कर, राक्षस के सामना करनेपर, गंडशैल लेकर कपिराज के डालनेपर, इधर-उधर सींगों से (उन्हें) हटाते हुए, (वालि के) गर्दन को घेरकर, वालि को ऐसा धक्का दिया कि वालि विचलित हो गया। (तब) पीछाकर वृक्ष लेकर, तरुचर (वानर) के मारने पर, ।। ३४० ।।

—राक्षस छिपकर, लौटकर, सामना करनेपर, उस वालि ने मोटा ताड़ (का वृक्ष) लेकर, प्रहार किया। उसे सप्रयत्न अपने सींगों से फेंक दिया। तब कपिराज ने स्थिरता से अटूट मुष्टि से उसके गर्दनपर प्रहार किया। राक्षस के प्रहार करनेपर, मर्कटराजा ने प्रहार किया। (इस प्रकार एक दूसरे से कम न होकर) दोनों ने दर्प-युक्त हो, क्रम से, लगकर, सौ वर्ष तक युद्ध किया। हे मनुजवंशवल्लभ ! वालि (युद्ध करके) (एक बार) उछलकर, मुट्ठी से (राक्षस की) पूँछ को पकड़कर, सब जगह सिकोड़कर, निरंतर घुमानेपर, झट से विचलित हो, असुर के

वड्दिूलि यसुरयु वापोव वैव ।गडगि मर्ममु गांचि कडुवडि बोँडिचि
बलिमि गोँम्मुलु वट्टि पडवैचि चंपि। तलकोँन्न लावुमै दन्नॆ : दन्नटयु
मुक्कुन जेँवुल मोमुन नेँत्तुरोँलुक । नक्कुलिशाहति नद्रियु बोलॆ
ना युग्रदैत्यु महाकळेबरमु । पोयि योजनमात्रमुन दूलि पडियॆ:
गैरिकनिर्झराकारंबुलगुचु । ना रक्तकणमुलीयद्रिपै बडिन ३५०
नारसि यिचट नित्यमु तपंबुन्न । दारुणशक्ति मतंगुडु गिनिसि
यी पर्वतमु वालि कॆक्कराकुंड । शापंबु गाविंचॆ जगदेकनाथ !
कान नी ऋश्यमूकमुनंदु वेँऽव । केनु गापुरमुंदु नेँल्लकालंबु
कडगि या दुंदुभिकायंबु वूच्चि । पुडमि योजनदूरमुन बाऽ वैव
वलनैन भुजशक्ति वालिकि गाक । तलपोय नोरुलकु दरमुगादधिप!
कैकोँनि नीवंतकंटॆ दूरमुग । नी कळेबरमिप्पुडिट मीटकुन्न
निनवंश ! मी सत्त्वमे नातमनम्म’ । ननवुडु रघुरामुडल्लन नव्वि
‘या दुंदुभिशरीरमल्लन मीटि । नीदु संदेहंबु नेडु वापॆदनु
इनतनूभव ! दानि नेर्पड जूपु’ । मनवुडु सुग्रीवुडर्थितो जूप

रोदन करनेपर, मर्म-स्थान को देखकर, अतिशीघ्रता से प्रहारकर, बलपूर्वक सींग पकड़कर, (जमीनपर) डालकर, मारकर, अत्यधिक बल से (उसे) लात मारी । लात मारनेपर, नाक, कान (और) मुँह से खून के उमड़नेपर, कुलिश (वज्र) के आहत से अद्रि (पर्वत) के समान, उस उग्र दैत्य का महा-कलेवर (शरीर), योजन भर दूरपर जा गिरा। गैरिक (काषाय रंग) के निर्झर के आकारवाले होते हुए वे रक्त कण इस अद्रिपर गिरे । ।। ३५० ।।

—यहाँ नित्य तप करनेवाले, दारुणशक्तिवाले मतंग (नामक ऋषि) ने उसे देख क्रुद्ध हो, हे जगदेकनाथ ! ऐसा शाप दे दिया जिससे वालि इस पर्वत पर चढ़ न पावे । इससे मैं सदा निर्भीक हो इस ऋश्यमूक (पर्वत) पर निवास करता हूँ । हे अधिप ! सप्रयत्न उस दुंदुभि के शरीर को पकड़कर, पृथ्वीपर योजन भर दूर फेंकने के योग्य भुजशक्ति, वालि के अतिरिक्त और किसकी हो सकती है ? अब उस कलेवर को लेकर, तुम उससे भी दूर नहीं फेंकोगे तो हे इनवंश (वाले) ! मैं तुम्हारे सत्त्व का, मन से विश्वास नहीं कर सकता ।’ ऐसा कहनेपर राघव ने मंद-मंद हँसकर (कहा):— ‘उस दुंदुभि के शरीर को धीरे से उछालकर, तुम्हारे संदेह को दूर कर दूँगा। हे इनतनूभव ! ढंग से उसे बताओ।’ ऐसा कहनेपर, सुग्रीव के चाहकर बतानेपर, घन-मेरु (और) मंदर (पर्वतों के)- आकार वाले (उस कलेवर) को देख, कलेवर के पास आकर, ।। ३६० ।।

घनमेरुमंदराकारमैयुन्न । गनि कळेबरमु दग्गऱकु नेतेंन्चि
३६०
गौनकौनि दानि गैकौनक यंगुष्ठ । मुन बदियोजनंबुलु मीटिवैचें :
वैचिन रघुरामु वरशक्ति पेर्मि । जूचियु नम्मक सुग्रीवुडनियें :
'मेलपुमै निदि वालि मीटेंडुनाडु । दलमैन रक्तमांसमुलतो नुंडु ;
मनुजेश ! नेडस्थिमात्रमैयुंड । गनि नीवु मीटिति गाक यौक्किकत
वडि बेर्चि ; नी लावु वालि लावुनकु । गडुनेक्कुडनि नम्मगारादु देव !
यतडदियुनुगाक यलवोक मीटु । क्षितिधरंबुलु पुट्टचेंन्ड्ल कैवडिनि :
जतुरंबुधुलयंदु संध्यलु वार्चु : । शितिकंठु पदमुलु शिरमर्थि जेर्चु :
वायुवुकन्न जवंबु हेंच्चुगनु । दोयधुलन्नि तोड्तो दाटिवच्चु :
वालिकि निर्जरेश्वरदत्त हेम । मालिकेंव्वरु साटि ? मरि यौन्डु
विनुमु :
धरणीश! यी येडु ताळ्ळुनु दौल्लि । वरशक्तियुक्तिमै वालि बिट्टेंचि
३७०
करमुल नौक्कटिगा गूड बट्टि । तरमिडि वानि पत्रमुलेल्ल द्रुंचु :
नडरि यी ताळंबुलंदौक्कटैन । वडि गदल्पग लेरु वासवादुलुनु :

—सप्रयत्न उसे ग्रहण न कर, अंगूठे से दस योजन (दूर) उछालकर डाल दिया। डालनेपर रघुराम की श्रेष्ठ-शक्ति के औन्नत्य को देखकर भी, विश्वास न कर, सुग्रीव ने कहा:— 'यह (कलेवर) स्थिरता से वालि के उछालने के दिन (समय) रक्तमांसों से युक्त समर्थ (बना) था। हे मनुजेश ! आज उसे अस्थिमात्र (केवल हड्डियाँ भर) होते देख, तुमने थोड़ी शक्ति से, शीघ्र उछाल दिया। हे प्रभो ! तुम्हारी सामर्थ्य को वालि की सामर्थ्य से अधिक नहीं मान सकते। यही नहीं, वह बड़ी आसानी से क्षितिधरों (पर्वतों) को वस्त्रादि-निर्मित कंदुकों के समान उछाल देता है। चारों अंबुधियों में सन्ध्या (वंदन) करता है। शितिकंठ (शिवजी) के चरणों को सप्रेम सिरपर रखता है। वायु की अपेक्षा अधिक वेग से समस्त तोयधियों (समुद्रों) को एक साथ पारकर आता है। निर्जरेश्वर (इंद्र)-दत्त-हेममाला वाले वालि के समान कौन है ? और एक सुनो। हे धरणीश ! पूर्व में इन सात ताड़ों (के वृक्षों) को वरशक्तियुक्त हो, विजृंभित हो वालि हाथों से एक साथ पकड़कर, ।।३७०।।
—शीघ्रता से उनके समस्त पत्रों को तोड़ देता है। आधिक्यता से इन ताड़ों (के वृक्षों) में एक को भी झट से वासव आदि भी हिला नहीं सकते। प्रयत्न करके एक बाण से सात ताड़ के वृक्षों को गिरा दोगे

दलकॊनि यॊक कोल दाळंबु लेडु । निलुवक काडि पो नॆड्रिदॆगनेय
वसुधेश ! नी लावु वालि लावुनकु । नसमानगति नॆक्कुडनि नम्मवच्चु:
धरणीश ! यी सप्तताळंबुलॊक्क । शरमुन दॆगव्रेयु शौर्यंबु गलुगु
पुरुषुनिचे वालि वॊलयुनटंचु । नरसि नाकु मतंगुडनु मुनि सॆप्पॆ ।'
ननवुड विनि रामुडल्लन नव्वि । 'वनचराधिप! ताळ्ळु वदलक चूपु'
मनवुडु सुग्रीवु डा रामु वेग । कॊनिपोयि या ताळ्ळ गुरुतॆड्रिगिप
नशनिसंकाशमै यसदृशंबैन । निशितास्त्रमरिवोसि निपुणुडै नृपुडु
मुंचि यॊक्कट बंक्तिमुखुनाळ्ळ ताळ्ळु । द्रॆन्चिनगति दाळ्ळु दॆगनेयु-
टयुनु ३८०
नवनिपै वक्रंबुलैयुन्न ताळ्ळ । नविरळंबुग वडि नट्टु गाडि पाड्रि
चॆरुव गिरिदाटि चॆच्चॆर बोयि । धारुणि दूरि पाताळंबु जेरि
यलयक तीव्रत नम्महाशरमु । तॊलगक रघुरामु दॊन वच्चि चॊच्चॆ ।
नतुलितंबगु रव माकाशवीथि । नतुलविमानंबुनंदुंडि पलिकॆ :
'परमात्म ! ये सुरपतिकड नुंदु । गरुणावतनियॆडु कन्निक : दॊल्लि
निरतंबु दुर्वासु निंदिचुटयुनु । गरमलिग शापंबु गाविंचॆ निट्टि

तो हे वसुधेश ! तुम्हारी सामर्थ्य को, असमान रूप से, अधिक मान सकते हैं। हे धरणीश ! इन सप्त तालों को एक शर से गिरा सकने के शौर्य से युक्त पुरुष के हाथ वालि मरेगा, ऐसा सोचकर मतंग नामक ऋषि ने मुझे बताया।' ऐसा कहने पर सुनकर, राम मुस्कुराकर (बोले):— 'हे वनचर-अधिप ! (उन) ताड़ (के वृक्षों को) अवश्य दिखाओ।' ऐसा कहनेपर, सुग्रीव उस राम को शीघ्र ले जाकर, उन ताड़ (के वृक्षों को) पहचानें, ऐसा बताया। तब नृप (राम) अशनि (वज्र)-संकाश (सम), असदृश हो, निशित अस्त्र का संधानकर, निपुण हो, पंक्तिमुख (रावण) के नाड़ियों को काट देने के समान, एक बाण से ताड़ों को काट गिराने के लिए (बाण चलाया), ।। ३८० ।।

—पृथ्वीपर वक्र हो खड़े ताड़ (के वृक्षों) को अविरल रूप से, झट से, पार जाकर, निकट के पर्वत को पारकर, अतिशीघ्र जाकर, पृथ्वी में घुसकर, पाताल पहुँचकर, अथक तीव्रता से वह महाशर, अविचल रूप से रघुराम के तूणीर में आ घुसा। (तब) आकाशवीथि से अतुलित विमान में से, एक अतुलित रव (ध्वनि) यों मुखरित हुआ:— 'हे परमात्मा ! मैं सुरपति के पास रहनेवाली करुणावती नामक कन्या हूँ। पूर्व में निरत ही दुर्वासा की निंदा करनेपर, अधिक क्रुद्ध होकर, इस प्रकार के रूप (को प्राप्त करने) का शाप दिया। हे धरणीश ! तुम्हारे कारण सचमुच मेरा

रूपमै धरणीश ! रूढि नीकतन । शापमोचनमय्यं; जनियेंदनिंक;'
ननि चेप्पि करुणावतमरेंद्रुपुरिकि । जनियेनु रघुरामु शरमु ता दूणि
जोच्चिन गनुगोनि सुग्रीवुडप्पु । डच्चेरुवुन बोन्दि यानंदमंद
'सप्तपताळससक्तमूलमुलु । सप्ताश्वमंडलाच्छादिपत्रमुलु ३९०
नगु सप्तताळंबुलस्त्रमोक्कटने । तेगनेसे : नादु संदेहंबु वासे :
वालि राघवुनिचे वडि जच्चुनिंक । नेलिति लोकबु; लेलिति दार :
नेलिति गपिराज्यमे' ननि पोंन्गि । यालोन कपिवीरु लानंदमंद
गमलाप्तकुलनाथु गाकुत्स्थु जूचि । कमलाप्तसुतुडंत गरमुलु मोगिचि
'देव ! देवरमूर्ति दृष्टिंचि लावु । भाविंपनेरक पशुबुद्धिनैति
निनजुंड नेनु : नीविनवंशसभवुड । वनि समबुद्धिमै नपराधिनैति
नी लोकमुलकेल्ल नेलिकवीवु । बालिशु नन्न नी बंटुगा नेलि
ना शत्रु देगटार्चि ना राज्यमिच्चि । ना शोकमुडुपवे नरनाथचंद्र !'
यनवुड् सुग्रीवु नतिकृपादृष्टि । गनुगोनि मन्निंचि काकुत्स्थुडनियै :
'जेच्चेरु नीवु किष्किंधकु बोयि । यच्चट वालितो ननि सेयुचुंडु४००

शाप-विमोचन हो गया । अब जाऊँगी ।' ऐसा कहकर करुणावती अमरेंद्रपुरी को गयी । रघुराम के शर के स्वयं द्रोणि (तरकस) में प्रवेश करते देख, तब सुग्रीव चकित हो, आनंद प्राप्तकर (यों बोला) :— 'सप्त पाताल-संसक्त मूलवाले, सप्ताश्व (सूर्य)-मंडल को आच्छादित करनेवाले पत्रवाले ॥ ३९० ॥

—सप्ततालों को एक ही अस्त्र से काट डाला । मेरा संदेह दूर हो गया । अब शीघ्र ही वालि राघव के हाथ मरेगा । (समझ लो अब) लोकोंपर शासन किया, तारा पर शासन किया, कपिराज्य पर शासन किया ।' ऐसा (कह) फूलकर, इस बीच कपिवीरों को आनंदित करते हुए कमलाप्त-कुल-नाथ काकुत्स्थ को देख कमलाप्तसुत (सुग्रीव) ने तब हाथ जोड़कर (कहा) :— 'हे देव ! देव (प्रभु) की मूर्ति को देखकर, (आपकी) सामर्थ्य की कल्पना न कर सक, पशु-बुद्धिवाला (मूर्ख) बन गया । मैं इनज (सूर्यभव) हूँ, तुम इनवंशभव (सूर्यवंश में उत्पन्न) हो, ऐसी समता की बुद्धि से अपराधी बन गया हूँ । इन समस्त लोकों के तुम शासक हो । मुझ मूर्ख को अपने सेवक के रूप में पालकर, मेरे शत्रु का संहारकर, मेरा राज्य देकर, हे नरनाथचंद्र ! मेरे दुःख को दूर कर दो न ।' ऐसा कहनेपर, सुग्रीव को अतिकृपादृष्टि से देखकर, सम्मान अथवा क्षमाकर काकुत्स्थ (यों) बोलेः— 'झट से तुम किष्किंधा जाकर, वहाँ वालि से युद्ध करते रहो । ॥ ४०० ॥

मवलील नोंककोल ना वालि जंपि । प्रविमलकपिराज्यपदमु नीकित्तु
वेंऱवक सुग्रीव ! वेग पो’म्मनिन । नऱलेनि कडकतो नप्पुडुप्पोंन्गि
नलुडु नीलुडु नंजनातनूभवुडु । बलियुडु तारुंडु बलसि तो नडुव
नाजिकि सन्नद्धुडै बलिम मेंऱसि । राजिल्लि वेंनुक रा रामलक्ष्मणुलु
वच्चि किष्किंधकिव्वलनुन्न वनमु । सोंच्चि गूढमुग नच्चो दन्नु बनुप
वडि बोयि किष्किंधवाकिट निलिचि । यडरि सुग्रीवुडुदग्रुडै यार्चि

वालिसुग्रीवुल द्वन्द्वयुद्धमु

तडयक तनतोड दगिलि पोराड । वडि नेगुदेंम्मनि वालि बिल्चुटयु
गरिबृंहितंबुलाकर्णिंचि पेंलुच । गरिवैरि कोपिंचु करणि गोपिंचि
शितिकंठ चरणराजीवालि वाल । कृतबंधरावणग्रीवालियैन
वालि सुग्रीवुनि वडि वच्चि ताक । वालिसुग्रीवुलवक्रविक्रमुलु ४१०
समरूप समकोप समजवाटोप । समसुप्रतापुलै जानु जंघोरु
जत्रु वक्षोनाभि जघनदेशमुलु । चित्रवेंखरि नोंन्चि चिंचि चेंन्डाडि

बड़ी सुगमता से एक बाण से वालि को मारकर, प्रविमल-कपिराज्य पद तुम्हें दूँगा। हे सुग्रीव ! बिना डरे शीघ्र जाओ।’ (ऐसा) कहनेपर बिना संभ्रम के, साहस के साथ तब सुग्रीव फूलकर, नल, नील, अंजना-तनूभव (हनुमान), बली तार (आदि) के सबल हो साथ चलनेपर, युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर, बल से प्रकाशित हो, शोभित हो, राम लक्ष्मणों के पीछे (-पीछे) आने पर, किष्किंधा के इस पार वाले वन में घुसकर, वहाँ से अपने को भेजनेपर, शीघ्र जाकर, किष्किंधा के द्वारपर खड़े होकर, विजृंभित हो सुग्रीव ने उदग्र हो, सिंहनाद किया।

वालि सुग्रीव का द्वन्द्व युद्ध

अविलंब अपने साथ युद्ध करने के लिए शीघ्र आने के लिए वालि को बुलानेपर, (वह वालि) करि-बृंहित (हाथी की चिंघाड़) का आकर्णनकर, करि-वैरि (सिंह) के अधिक क्रुद्ध होने के समान, शितिकंठ (शिवजी)-चरण-राजीवाली (कमल समूह), वालकृत-बंध-रावण-ग्रीवाली (कंठ-समूह) वालि ने झट से आकर सुग्रीव का सामना किया। (तब) अवक्रविक्रम वाले वालि और सुग्रीव ।। ४१० ।।

—समरूप, समकोप, समजव-आटोप, सम प्रतापवाले होकर, जानु, जंघा, उरु, जत्रु, वक्ष, नाभि, जघन प्रदेशों को विचित्र ढंग से झुकाकर; फाड़कर, (एक दूसरे के) दांत खट्टे करते हुए, विजृंभित हो, इस प्रकार जूझने लगे

चॆलरेगि पूर्व पश्चिमसमुद्रमुलु । बलुविडि बोराडु भंगि बोराड
नायॆड धृति रामुडम्मु संधिंचि । येय नुद्योगिंचि मिरुवुर जूचि
वदनमुल् रदनमुल् वालमुल् बाहु । लुदरंबु लधरंबु लूरुलु बरुलु
कक्षमुल् वक्षमुल् काळ्ळुनु व्रेळ्ळु । वीक्षलु शिक्षलु वेषभाषलुनु
जॆक्कुलु मुक्कुलु शिरमुलंसमुलु । प्रक्कलु पिक्कलु पादयुग्ममुलु
कर्णमुल् वर्णमुल् गळमु लंगमुलु । निर्णयिपग नॊक्क नॆऱियैन जूचि
येतॆऱंगुन जूड निरुवुरियंदु । नीतडु सुग्रीव डीतडु वालि
यनि येर्पऱिंचुट कलविगाकुन्न । दनलोन वॆऱगंदि दशरथात्मजुडु ४२०
'ऎडपक येसिन नी यम्मु चेत । दॊडिबड नॆव्वडु द्रुंगुनो' यनुचु
नम्मु वेयक युंडॆ; नंत सुग्रीवु । डिम्मॆयि गडु डस्सि येपॆल्ल बॊलिसि
वलतियै पोराडि वालिकि नोडि । बलमेदि यातनि बलुमुष्टिहतुल
गुल्ललतित्तियै कुट्टूर्पुलॆसग । 'जॆल्लबो ! नेनेल श्रीरामु नम्मि
वच्चिति ? बदिवेलु वच्चॆ; जल्चालु; । वच्चिन त्रोव बोवगवलॆ' ननुचु
मॆलकुव चॆडि तोक मॆडमीद वैचि । सॊलसि नल्गडल जूचुचु बाऱिपोयि
तन ऋश्यमूकंबु तडयक यॆक्कि । तनमदि शोकिंचुतऱि रामुडरुग

मानों पूर्व और पश्चिम के समुद्र बरजोरी जूझ रहे हों। उस अवसरपर धैर्य से रामने बाण का संधानकर डालने का प्रयत्न किया। दोनों को देख, वदन, रदन, वाल (पूँछ), बाहु, उदर, अधर, ऊरु, कक्ष (बगल), वक्ष, चरण, उंगलियाँ, वीक्षण, शिक्षण, वेषभाषाएँ, गाल, नाक, शिर, अंसभाग, पार्श्व, पिंडलियाँ, चरणयुग्म, कर्ण, वर्ण, गला, अंग (आदि) का निर्णय करनेपर एक समान होते देख, किसी भी प्रकार से विचारकर देखनेपर, यह सुग्रीव है, यह वालि है, ऐसा निर्णय न कर सकने के कारण, अपने में चकित हो दशरथात्मज ।। ४२० ।।

—'न रुककर बाण चला दूँ तो इस बाण से पता नहीं कौन मरेगा ?' ऐसा सोचते बाण चलाए बिना रहे। तब सुग्रीव इस प्रकार अधिक थककर, समस्त विकास को खोकर, समर्थ हो जूझकर, वालि के हाथ हारकर, उसके प्रबल मुष्टिप्रहारों के कारण, (सुग्रीव) घोंघों की थैली के समान हो, लंबी आहें छोड़कर (कहा):— 'हाय रे ! मैं श्रीरामपर भरोसा रखकर आया ही क्यों ? बहुत हो गया। बस, बस, जिस रास्ते आया, उस रास्ते जाना चाहिए।' (ऐसा) सोचते हुए, उपाय अथवा सुधबुध के बिगड़ने पर, पूँछ को गरदनपर डालकर, थककर, चारों दिशाओं में देखते हुए, भाग निकलकर, अपने ऋश्यमूकपर अविलंब चढ़कर, मन ही मन दुखी

नलघुविक्रमधामुडगु रामुतोड । दल वंचुकोनि यर्कतनयुडिट्लनियें:
वसुधेश ! निनु नम्मि वालितो गदिसि । यसमान बलरूढि नडरिपोराड
नन्नुपेक्षिंचिति; ननु गाववैति; । मिन्नक चूचिति : मेकोंनवैनि : ४३०
जगतिपै सूर्यवंशबुन बुट्टि । तगुनय्य ! नीकिट्लधर्मंबुसेय ?
देव ! नी सत्यंबु तेजंबु नम्मि । ये वालि दोंडरिति; निंतिये कानि,
यतडेड ? नेनेड ? याहवंबेड ? । ब्रतिकि वच्चुट येड भाविंचि चूड ?
नेमिभाग्यमुननो येंप्पटियट्ल । राम ! यी पर्वताग्रमु चेरगलिगें !
बगतुनिचे भंगपाटु, नी रीति । नगुबाटु नोंदवें निन्नम्मिन कतन;
दगवुनु गृपयुनु धैर्यंबु शक्ति । मिगुल नी येंड जुचि मेंच्चि
नम्मितिनि ।'
अनवुडु 'सुग्रीव ! यात्मलोनित । यनुमानपडनेल ? यकट ! नावलन
दप्पु लेशमु लेदु; दायकु निन्नु ।नोंप्पगिंतुनें? विनुमोंकमाट देंलिय;
विश्वमोहनरूपविख्यातुलैन । यश्वनीतनयुलयट्ल येपट्ल
वर रूपरेखलु वालिकि नीकु । वेंरसि समंबैन भेंदिप राक ४४०

होता रहा। (तब) राम के नियरानेपर अलघु-विक्रमधाम राम से अर्कतनय सिर झुकाकर यों बोला:— 'हे वसुधेश ! तुमपर भरोसा रखकर वालि का सामनाकर, असमान-बल से युक्त हो, विजृंभित हो जूझनेपर (तुमने) मेरी उपेक्षा कर दी। मुझे नहीं बचा पाए, चुपचाप देखते रह गये, (उसे मारने के लिए) सहमत नहीं हुए।। ४३०।।

—हे आर्य ! जगती पर सूर्यवंश में पैदा होकर, ऐसा अधर्म करना तुम्हारे लिए कहाँ संगत है ? हे देव ! तुम्हारे सत्य (और) तेज का विश्वास कर, मैंने वालि का सामना किया। इतना नहीं तो वह कहाँ (और) मैं कहाँ ? युद्ध कहाँ ? सोचकर देखनेपर जीवित बच आना कहाँ ? (जीवित बच आना असंभव था।) हे राम ! पता नहीं किस भाग्यवश यथावत् इस पर्वताग्रपर पहुँच सका। तुम पर विश्वास रखने के कारण शत्रु के हाथ अपमान, इस प्रकार की (जग-) हँसाई प्राप्त हुई। तुम्हारे पास न्याय, धैर्य, शक्ति की अधिकता को देख, सराहकर, विश्वास किया था।' ऐसा कहनेपर (राम ने कहा):— 'हे सुग्रीव ! मन में इतना संदेह क्यों करते हो ? हाय ! मुझसे तनिक भी दोष नहीं हुआ। क्या तुम्हें दायाद (ज्ञाती) को सौंप दूँगा ? एक बात को समझकर सुन लो। विश्वमोहनरूप से विख्यात अश्वनीतनयों के समान किसी भी (हर) प्रकार से तुम्हारी और वालि की रूपरेखाओं के समान होने से, (तुम दोनों में) अंतर न कर सक, ।। ४४० ।।

ये नेय वेॅड़च्चिति; निदि यमोघंबु;। गान नीविदि कीडुगा जूडवलदु;
करमोॅप्प निक नी गजपुष्पमाल। धरियिंचि पोयि युद्धमु सेयुचुंडु;
बेॅदरकु; वालि जंपेॅद; निश्चयिंपु;। कदलुमु किष्किंधकडकु नी' वनुचु
गादिलितम्मु चे गजपुष्पमाल। यादट देॅप्पिचि यतनि कंठमुन
जोॅक्कंबुगा जेर्प सुग्रीवुडोॅप्पे। जुक्कलु पेॅनगोॅन्न शुभ्रांशुडनग
सरिबलाकलतोडि संध्याभ्रमनग। शरदंबुदमुतोडि स्वर्णाद्रि यनग;
नंत गाकुत्स्थुडु ननुजुंडु दानु। संततंबुन युद्धसन्नद्धुलगुचु
नलनीलतारांजनातनूभवुलु। गेॅलकुल गोॅल्व सुग्रीवु दोड्कोॅनुचु
नदुलु पूबोॅदलु पुन्नाग नारंग। कदळिका सहकार कांतारमुलुनु
भासुर कैरव पद्म कह्लार।वासित बहु सरोवर विशेषमुलु४५०
गासर केसरि करि वराहमुलु। नासक्ति गनुगोॅन्चु नटु पोयिपोयि
दीप्तवैश्वानर तेजुलै योॅप्पु। सप्तजनाह्वयसंयमीश्वरुल
याश्रममीक्षिंचि या महत्त्वंबु। सुश्राव्यमुग बिंचु सुग्रीवुचेत
बलशालियगु वालि पालिपसिरुल। विलसिल्लु किष्किंध वीक्षिंचि नृपुडु

—मैं (बाण) चलाने में डरा। यह (मेरा बाण) अमोघ (दुर्निवार) है। अतः इसे बुरा मत मानो। अब अधिक शोभा से इस गजपुष्पमाला का धारणकर, जाकर, युद्ध करते रहो। डरो मत, वालि का वध करूँगा, निश्चय करो, किष्किंधा की ओर चलो तुम।' (ऐसा) कहते हुए लाड़ले अनुज से गजपुष्पमाला को प्रेम से मँगाकर, उसके कंठ में सुन्दरता से डालनेपर, तारिकाओं से शोभायमान शुभ्रांशु (चन्द्र) के समान, बलाकाओं (बगुलों) से युक्त संध्याभ्र के समान, शरत्-अंबुद से युक्त स्वर्णाद्रि के समान सुग्रीव शोभित हुआ। तब काकुत्स्थ (राम), अनुज और स्वयं आनन्द के साथ युद्ध के लिए सन्नद्ध (तैयार) होते हुए, नल, नील, तार, अंजनातनूभवों के पार्श्वों में सेवाएँ करते रहनेपर, सुग्रीव को साथ लिए हुए, नदियों, पुष्पित झाड़ियों, पुन्नाग, नारंग, कदली, सहकार (से युक्त) कांतारों को, भासुर (उज्ज्वल) कैरव, पद्म, कह्लारों से वासित विशिष्ट अनेक सरोवरों को, ॥ ४५० ॥

—कासर, केसरी, करि, वराहों को आसक्ति से देखते हुए, जा-जाकर, दीप्त-वैश्वानर (अग्निदेव) -तेजवाले हो, सुशोभित सप्त-जनाह्वय संयमीश्वरों के आश्रम को देखकर, उसके महत्त्व को सुश्राव्य रूप से सुनते हुए, बलशाली वालि द्वारा सुशासित (और) संपत्तियों से विराजमान किष्किंधा को, सुग्रीव के बतानेपर, देखकर, नृप (राम) ने (कहा):— 'पूर्व के समान युद्ध करते रहनेपर, बलशाली वालि

‘तॊल्लिटि चंदान दुरमॊनरिप । बल्लिदृडगु वालि बरिमार्तु’ ननुचु
गृतमति नंत सुग्रीवु मन्निंचि । यतनि ‘बॊ’ म्मनि पंचि यासमीपमुन
ननुजुडु सौमित्रि यटुचेरियुंड । मनुजेशुडॊक म्रानि माटुन नुंडॆ;
नहिमांशुनंदनुंडंत गिष्किंध । गुहलॆल्ल भेदिल्ल घोषिंचि यार्चि
तनतोड युद्धंबु दगजेयनिंद्र ।तनयुबिल्चुटयु नॆन्तयु बिट्टु गिनिसि
‘मानक वीडॊक्क मगवाडुवोलॆ । बूनिन भृजशक्ति बॊन्गुचुन्नाडु ४६०
‘वीनि सैरिंचुट वॆरवुगा; दिंक । वीनि जंपॆद’ ननि वॆस निश्चयिंचि
यतिसत्वजयशालियगु वालि वॆडल।बति जूचि वॆस नड्डुपडि तार बलिकॆ;

तार वालिनि वारिंचुट

‘देवेंद्रनंदन ! दिनपजुमीद । ने विचारमुलेक येल पोयॆदवु ?
अतडु नीतो निप्पुडनि सेसि नॊच्चि। मति चॆडि पारि क्रम्मर वच्चुटॆल्ल
नॆगडिन कडिमिमै नीकंटॆ नॆक्कु । डगु सहायमुलेक यतडिदु राडु;
अनिमिषेश्वरपुत्र ! यदियुनुगाक । यॊनर नंगदु चेत नॊक माट विंटि;
बनिवडि तमतंड्रि पनुपुन जेसि । वनवासमुग नुंडवच्चिन चोट

का संहार करूँगा।’ (ऐसा) कहते हुए कृतमति (निश्चित बुद्धिवाले) सुग्रीव का सम्मानकर, उसे बिदाकर, उस (स्थान) के निकट, अनुज सौमित्र के निकट रहनेपर मनुजेश (राम) एक (पेड़ के) तने की आड़ में रहे। तब अहिमांशु (सूर्य)-नंदन किष्किधा की सभी गुफाओं को विदीर्ण करते हुए गर्जनाकर, सिंहनादकर, अपने साथ ठीक तरह से युद्ध करने के लिए इंद्रतनय (वालि) को बुलाया, (वह) अधिक क्रुद्ध हो ‘न छोड़कर, यह भी एक मर्द के समान, प्राप्त भुजशक्ति से फूल रहा है। ।। ४६० ।।

इसको सहना समुचित नहीं है, अब इसे मार डालूंगा।’ ऐसा झट निश्चयकर, अतिसत्त्वशाली वालि (बाहर) निकल पड़ा। पति को देख शीघ्र (उसे) रोककर तारा बोली:—

तारा का बालि को मना करना

—‘हे देवेंद्रनंदन ! कुछ भी सोच-विचार किए बिना दिनज (सुग्रीव) पर (आक्रमण करने) क्यों जा रहे हो ? वह अभी तुमसे युद्धकर, पीड़ित हो, बुद्धि के भ्रष्ट होनेपर, भागकर, दुबारा आया है। (यह) सब (ऐसा है कि) तुम्हारी अपेक्षा अधिक पराक्रमवाले की सहायता के बिना वह यहाँ नहीं आएगा। हे अनिमिषेश्वर (इन्द्र)-पुत्र ! यही नहीं, क्रम से अंगद के द्वारा एक बात सुनी है। आवश्यक होने से अपने पिता के

दशरथरामुडु दन धर्मपत्नि । दशकंधरुनिचेत दा गोलुपोयि
तनतम्मुडुनु दानु दडयक वेंदक । मुनिवेषुला ऋश्यमूकाद्रि जेरि
पनिगोनि सुग्रीवु बंटुगा नेलि । यनि निन्नु जंपेदननि वच्चिनाडु;
४७०
आराघवुडु विष्णुडंबुजोदरुडु । वैरिभीकरुडु गेवलदयापरुडु
धीरुंडु कोदंडदीक्षागुरुंडु । वैरंबु गोनि गेल्व वशमुगादतनि
निनसुतुनकु ब्रीति नी राज्यमिच्चि । चनि नीवु गनि रामु संधि गाविपु
विनु; मदि गादेनि वीरंबु विडिचि । मुनिवृत्ति जनि प्राणमुलु
गाचिकोनुमु'
अनि तार वलिकिन नावालि गिनिसि । 'विनु नाकु पत्निवै वेंऽवने-
मिटिकि ?
बलशालिनै येंट्टि बलियुनि नेन । गलन गेल्चि जयंबु गैकोन्दु गानि
परुलकुनेनोड; बगवाडु वच्चि । पेरिगि युद्धमुसेय बिलिचिन चोट
धीरत दोऽगि संधिकि निय्यकोनुट । वीरधर्ममु गादु वेलदि! नाकिक;
नलिनविलोचन ! नायंतवानि । बलियु जेपट्टक पट्टे सुग्रीवु;

आदेश से (राम) वनवास के लिए आए तो उस स्थानपर दशरथराम अपनी पत्नी को दशकंधर के हाथ स्वयं खोकर, अपने अनुज के साथ अविलंब (सीता को) खोजने के लिए मुनिवेष धारणकर ऋश्यमूक-अद्रि (पर्वत) पर पहुँचे । (वह राम) चाहकर सुग्रीव को अपना सेवक मानकर, युद्ध में तुम्हें मारने आया है । ।। ४७० ।।

वह राघव (साक्षात्) विष्णु है, अंबुजोदर है, वैरिभीकर है, केवल दयापर (दयालु) है, धीर है, कोदंड-दीक्षा (धनुर्विद्या का)-गुरु है । वैर ग्रहणकर, उसे जीतना संभव नहीं है । प्रेम से इनसुत को यह राज्य देकर, जाकर तुम राम को देख, संधि कर लो । सुनो, यह नहीं हो सकता तो वीरता छोड़कर, मुनिवृत्ति ग्रहणकर प्राणों की रक्षा कर लो ।' ऐसा तारा के कहनेपर वह वालि क्रुद्ध होकर (बोला):— 'सुनो, मेरी पत्नी होकर तुम्हें डरना क्यों ? मैं बलशाली होकर, कितना ही बलवान क्यों न हो, युद्ध में जीतकर, विजय प्राप्त करूंगा किन्तु अन्य से मैं नहीं हारता । शत्रु के आकर, बढ़-बढ़कर युद्ध करने के लिए बुलाते समय, धैर्य खोकर, संधि के लिए तैयार होना अब मेरे लिए वीर धर्म नहीं है । हे स्त्री ! नलिन विलोचने ! मुझ जैसे बलशाली को ग्रहण न कर, राम ने सुग्रीव को ग्रहण किया (अपनाया) अतः राम नीतिवान् नहीं है । अतः राम की मित्रता स्वीकार-योग्य नहीं है । ।। ४८० ।।

गान रामुडु नीतिगलवाडु गाडु ।गान रामुनि पौंन्दु गैकौंनदगदु४८०
तैंरलि सुग्रीवुंडु दिक्कु लेकुंडि । यरिगि रामुनकु बंटयि चेरेंगाक !
नाकेल रामुडु ? नाकेल संधि ?। नाकेमिटिकि वेड नलिदूलि यौंकनि ?
ना महितात्मकुंडतिधर्मपरुडु । रामुडु नन्नु नूरक येल चंपु ?
बोल वी माटलु; पोयिसुग्रीवु । वालायमुग ग्रूरवज्रप्रहार
मूलमै यौंप्पु नामुष्टिघट्टनल । नेल गूलिचि वत्तु नेंम्मदि नुंडु ।’
मनि तार मरलि पौंम्मनि वीडुकौंलिपि । यनिमिषेश्वरपुत्तुडगु वालि कडगि
कलगौंन जुट्टिन कर्मपाशमुलु । नेंलकौंनि तिगिचिन निलुव राकुन्न
वेंडलुचंदंबुन वेंरवुनु लावु । गडिमियु बेंम्पु नृत्कटमुगा वेंडलि
शरधुलु गलग भूचक्रंबु वडक । गिरुलौंड्डुगिल्ल गिर्ष्किध घूर्णिल्ल
गर्जिचि चनुदेंन्चि कदिसि सुग्रीवु । दर्जिचि चूचि युदग्रुडै पलिकें ४९०
‘न तोड बोराडि ना कोडि पाडि । येतेंन्चिते योरि । यिदु लज्जमालि?
येतेंन्तुगाकेमि यिप्पुडे जमुनि । वातिकि निनु नुट्रवडियंबौंनर्तु;
वेंदरकचेंदरक बेंट्टु बीरमुलु । वदरक यौंक्कित वडिनिल्वु चालु।

—चाहे सुग्रीव अनाथ होकर, जाकर राम का सेवक बन जाए तो बन जाए। मुझे राम की क्या आवश्यकता है ? मुझे संधि क्यों ? शोभा को खोकर, मुझे दूसरे की प्रार्थना करना क्यों ? वह महितात्मक(महान् पुरुष) अतिधर्मवान् है। वह यूँही मुझे क्यों मारेगा ? ये बातें असंगत हैं। (मैं) जाकर, सुग्रीव का, निश्चय ही, क्रूर-वज्र प्रहार का मूल बनकर शोभित अपने मुष्टिप्रहारों से, वध कर आऊँगा। तुम निश्चित रहो।’ (ऐसा) कह तारा को लौट जाने के लिए कहा, (उसे) बिदाकर अनिमिषेश्वर (इंद्र)-पुत्र वालि साहसकर निकल पड़ा मानों विकराल रूप से घिरे कर्मपाश के स्थिर बनकर आकर्षित करनेपर (जीव) नहीं रुक सकता हो। पराक्रम, शक्ति (तथा) साहस के अधिक उत्कर्ष से निकलकर, गर्जना की जिससे शरधियाँ (समुद्र) व्याकुल हो गयीं, भूचक्र कांप उठा, पर्वत झुक गये, किष्किधा उद्भ्रांत हो गयी। (इस प्रकार) आकर, सामनाकर, सुग्रीव को डाँटकर, उदग्र हो कहा:— ॥ ४९० ॥
—‘रे ! मेरे साथ युद्धकर, मेरे हाथ हारकर, इस प्रकार बेशरम बनकर, (फिर) आए हो ? आए तो क्या हुआ ? अभी तुम्हें यमराज के मुँह की बरी बना दूँगा। बस, भीत हुए बिना, चंचल हुए बिना, डींग न हांककर, थोड़ी देर के लिए रुक जाओ। युद्ध में मुष्टिप्रहार से तुम्हें

नालंबुलो मुष्टिहति निन्नुनेल । गूलिचि प्राणमुल् गॊन्दु ने' ननुचु
नुऱुमनि पिडुगुतो नुल्लसंबाडु । कऱकैन तनमुष्टि गट्टिगा बट्टि
पऱतॆन्चि पॊडिचिन भानुतनूजु । डॊरगि नॆत्तुरु ग्रक्कि यॊय्यन दॆलिसि
धीरुडैनिलिचि गद्दिंचि यिंद्रजुनि । गेरडंबाडि सुग्रीवु डिट्लनियॆ;
'नन्नवु नाकु बूजार्हुंडवनुचु । निन्नाळ्ळु सैचिति निंतिय कानि
विग्रहंबुन केनु वॆऱतुने ? तॊन्टि । सुग्रीवुडगानु जूचि पोराडु ।
वालि ! निन्निप्पुडवश्यंबु चपि । पालितु गपिराज्यपदमु ने' ननुचु
५००
गडुनलिग सालवृक्षमगलिच तॆच्चि । वडि नार्चि वैचिन वालि गंपिंचि
पुडमिपै बडि मूर्छं बॊन्दि यॊक्किंत । वडि देऱि गर्वदुर्वारुडै निलिचि
धीरुडै शूरुडै दिविजुलु वॊन्ग । ना रविजुनि वैचॆ नडरि शैलमुन;
नदरक सुग्रीवुडडचॆ वालमुन; । बदमुल नॊप्पिंचॆ बलियुडै वालि;
करनखंबुल व्रच्चॆ गडगि सुग्रीवु । डुरुमुष्टि नॊप्पिंचॆ नुग्रुडै वालि;
यंतट दनियक नार्पुलु निगुड । नंतकंतकु लावुलडरि यिद्दऱुनु

ज़मीनपर गिराकर, मैं प्राण हरण कर दूँगा।' (ऐसा) कहते हुए न गरजनेवाले वज्र (अशनि) का परिहास करनेवाली अपनी कठोर मुष्टि को सबल बांधकर, आकर, प्रहार करनेपर, भानुतनूज गिरकर, रक्त उगलकर, ज़रा होश में आकर, धीर हो, खड़े होकर, धमकी देकर, इंद्रज का परिहासकर, सुग्रीव ने यों कहा:— '(तुम) मेरे अग्रज हो, पूजार्ह हो, (ऐसा) मानकर, इतने दिन सहन किया। यह नहीं तो विग्रह (युद्ध) के लिए मैं डरने वाला हूँ क्या ? (मैं) पूर्व का सुग्रीव नहीं हूँ। देख (संभल) कर युद्ध करो। हे वालि ! तुम्हें अब अवश्य मार डालकर, मैं कपिराज्य-पद को ग्रहण करूँगा।' (ऐसा) कहते हुए ॥ ५०० ॥

—अधिक क्रुद्ध हो, सालवृक्ष उखाड़ ला, झट सिंहनाद कर डालनेपर वालि कांपकर, पृथ्वीपर गिरकर मूर्च्छित हुआ। थोड़ी देर में होश में आकर, गर्व से दुर्वार बनकर, धीर, शूर बनकर, देवताओं के प्रसन्न होने पर, विजृंभित होकर, उस रविज (सुग्रीव) पर शैल (पर्वत) फेंक दिया। भीत न होकर सुग्रीव ने उसे वाल (पूँछ) से दबा दिया। बली बनकर वालि ने चरणों से (उसे) पीड़ित किया। सुग्रीव ने सप्रयत्न कर-नखों से (वालि को) नोच डाला। वालि उग्र बन उरुमुष्टि से पीड़ित किया। उसके बाद तृप्त न होकर, हुंकार भरते हुए, क्रमशः शक्ति से विजृंभित हो, महान् रूप से पदाघातों से, कचाकची (एक दूसरे की शिखाओं को पकड़कर), नखानखी (एक दूसरे को नाखूनों से नोचते हुए), मुष्टामुष्टि

घनपदापदि कचाकचि नखानखिनि। जॆनसि मुष्टामुष्टि जॆलगि पोरुचुनु
'हु' म्मनि म्रोयुचु नूर्पु लॊन्डॊन्ड । ग्रम्म नंगमुल रक्तमुलुब्बुचुंड
वालमुल् बाहुवुल् वरुस नॊन्डॊन्ड । कीलिंचि पॆनगुचु गिनिसि ताकुचुनु
बायुचु डायुचु बलिमि नॊन्डॊरुल । व्रेयुचु द्रोयुचु विपुलसत्त्वमुल ५१०
दूटुचु दाटुचु दोड्तोन पगलु । चाटुचु मीटुचु सांद्रमर्ममुल
निरुवुरु गडिमिमै निब्भंगि बोर । सुरलोकनायकसुतुनकु गाक
तरणितनूजुडत्तरि जालनॊच्चि । गरुवंबुदक्कि संगरभूमिजिक्कि
पॆदवुलु दडपुचु बॆम्पॆल्ल बॊलिसि । कुदिसि भीतिल्लि दिक्कुलु सूचुचुंडॆ
निग्रहानुग्रहनिधि रामुडंत । सुग्रीवुडलवेदि स्रुक्कुट जुचि

रामास्त्रमुचे वालि गूलुट

'यी लोन वालि ने नेयकयुन्न । वालि सुग्रीवुनि वधियिंचु' ननुचु
जलनिधुलेड्डनु जगमुलीरेडु । गलग भूतमुलॆल्ल गडगि कंपिप
गुणनादमॊनरिंचि कोरि मै वॆन्चि । त्रुणमुगा नव्वालि दृष्टिंचि पॊन्चि

(मुष्टि प्रहार करते हुए), विजृंभित हो लड़ते हुए, 'हुम्' की ध्वनि के बढ़ने पर, एक के श्वास के दूसरेपर प्रसरित होनेपर, अंगों से रक्त के फूट निकलने पर, पूँछ (और) बाहुओं को क्रम से एक दूसरे से फँसाकर, खींचातानी करते हुए, क्रुद्ध हो झटते (धक्का देते) हुए, दूर हटते हुए, नियराते हुए, बल से एक दूसरे पर प्रहार करते हुए, ढकेलते हुए, विपुल सत्त्व से ।। ५१० ।।

—नोचते हुए, लांघते हुए, साथ ही साथ वैर को प्रदर्शित करते हुए, मर्म-स्थानों पर प्रहार करते हुए, दोनों साहस से इस प्रकार (उपरोक्त विधान से) लड़ते रहे। उस समय सुरलोक-नायक के सुत के हाथ तरणितनूज अत्यधिक पीड़ित हो, गर्व (दर्प) को खोकर, संगरभूमि में (शत्रु के हाथ) फँसकर, होंठ चाटते हुए, उत्कर्ष के नष्ट होने पर, सिकुड़कर, भीत होकर, (चारों) दिशाओं में देखता रहा। तब निग्रह (और) अनुग्रह के निधि राम सुग्रीव के श्रांत हो, कमज़ोर होते देख,

राम के अस्त्र से वालि का गिरना

(यह सोचकर कि) 'इस बीच मैं वालि पर (बाण) न चलाऊँ तो वालि सुग्रीव का वध कर देगा।' सात समुद्र और सात लोकों के विकल होने पर (तथा) समस्त भूतों के कंपित होने पर, गुण (धनुष की डोरी)-नाद

वेँस नमोघास्त्रंबु विट संधिंचि । यसमानबलशालियगु वालि नेसेँ;
नेयुडु नब्बाणमिनवह्निरुचुल । मायिंचि वडि नभोमडलिनिंड ५२०
नुरुतरानलकील लोँलुक नोँन्डोँन्ड । गरुडोरगामरगंधर्वुलदर
दन पुत्रु रक्षिंप दाय शिक्षिंप । निनुडिट्टि यस्त्रमै येतेँन्चेँ ननग
दपनपुत्रुडु गान दंडधरुंडु । कृप दम्मुडैन सुग्रीवुनि ब्रोव
दनकालदंडमुद्धति वालिमीद । बनिचेँनो यन महापवनवेगमुन
नुरवडि जनुदेँन्चि युरमुगाड्टयु । दरुचरपति गूलेँ दर्पंबु दूलि;
कोँरलि दिक्करुलतो गिरुलतो बेँलुच । दरुलतो नंदंद धरणि गंपिंप
नुरमु गाडिन बाणमुरवडि वेँडलि । धरगाडेँ; नत्तरि दरुचरेश्वरुडु
नविरळरक्तसिक्तांगुडै गालि । नवनि द्रैळ्ळिन पुष्पिताशोकमनग
ब्रळयकालंबुन ब्रभलेँल्ल मासि । यिलमीद ब्रालिन यिनुनिचंदमुन
नवशुडै यवनिपै नट्टुपडियुन्न । नवनीशुडगु रामुडट्टु चेर वच्चेँ;
५३०
वच्चिन रघुरामु वालि वीक्षिंचि । यिच्चलोपल कोपमेँरुग निट्लनियेँ

करके, चाहकर, शरीर को बढ़ाकर, उस वालि को तृण के समान देखकर, ताक में रहकर, झट से अमोघ-अस्त्र को धनुष पर चढ़ाकर, असमान बलशाली वालि पर चला दिया। चलानेपर वह बाण इन-वह्नि-रुचियों (कांतियों) को म्लान बनाते हुए, (अपने प्रकाश को) नभोमंडली में भरते हुए, ।। ५२० ।।

—उरुतर-अनल-कीलाओं (ज्वालाओं) के उमड़नेपर, आपस में गरुड़, उरग, अमर, गंधर्वों के भीत होनेपर, मानों अपने पुत्र की रक्षा करने (तथा) शत्रु को दंडित करने के लिए सूर्य ही अस्त्र बनकर आया हो, मानों सुग्रीव के तपन (सूर्य)-पुत्र होने से यमराज कृपा से अपने अनुज की रक्षा करने के लिए अपने कालदंड को उद्धत रूप से वालि पर भेजा हो, (इस प्रकार) महापवन वेग से, अतिशीघ्रता से आकर, उर में धंसते ही तरुचर (वानर)-पति दर्प खोकर गिर पड़ा। विकल बने दिग्गजों, गिरियों (तथा) घने तरुओं के साथ जहाँ-तहाँ धरणि के कंपित होनेपर, (वालि के) उर में धँसा बाण, शीघ्रता से निकलकर धरती में गड़ गया। उस अवसर पर तरुचरेश्वर, अविरल-रक्तसिक्त अंगवाला होता हुआ, पवन के कारण जमीनपर गिरे पुष्पित अशोक के समान, प्रलयकाल में समस्त प्रभा के मलिन होनेपर, जमीनपर गिरे सूर्य के समान, अवश हो, अवनिपर गिर पड़ा। (ऐसे पड़े हुए) उसके पास अवनीश राम उधर आया। ।। ५३० ।।

वालि रामुनि दूरुट

'नो राघवेश्वर ! यो रामचंद्र ! । धारुणिलो निन्नु धर्मात्मुडंड्रु;
दममुनु शममुनु दययु सत्यंबु । समबुद्धियुनु नीति सौमनस्यंबु
मोदलैन सद्गुणंबुल राशि वगुचु । बोदलिन नी पेम्पु पोल्लुगा जेसि
येनसि सुग्रीवुतो नेनु बोराड । ननु नेयनगुनय्य ! नडुसोच्चि नीवु?
एनु नीकपकारमोन्नडु जेय; । नेनु नीकोक दोषमेपुडु जिंतिप
नीकु शत्रुड गानु; नी शत्रु गूड; । नीकु शत्रुलुसेयु निक्कुतुलेनेरुग;
नेरिगि युपेक्षिप; निटु सेयदगुने ? । येरिगियु नेरुगवैतिनवंशतिलक !
शरभ कंठीरव शार्दूल कोल । करिहरिणादुल खंडिप गोरि
वसुध राजुलु वेट वत्तुरुगाक । येसगि कोतुलबट्टि येन्दु जंपुदुरे ?
५४०
यर्कसूनुंडु ने नन्नदम्मुलमु; । कर्कशमति बूनि गारवंबेडलि
यडरि मेमेट्लैन नैतिमिगाक । कडगि नीविटु चंप गारणंबेमि ?
कुंदेलु नुडुमुनु गूर्मंबु नेदु । बंदि याळुवयुनु भक्ष्यमुल् गानि,

---

बाली और राम का सम्वाद

—आये हुए रघुराम को देखकर, वालि मन के क्रोध के बढ़नेपर (यों बोला):— 'हे राघवेश्वर ! हे रामचंद्र ! धरणि में तुम्हें धर्मातमा कहते हैं। दम, शम, दया, सत्य, समबुद्धि, नीति, सौमनस्य आदि सद्गुणों के राशि होकर वर्द्धित अपने उत्कर्ष को व्यर्थ बनाकर, मेरे सुग्रीव के साथ लगकर लड़ते समय, बीच में आकर (मुझपर बाण) चलाना संगत है क्या ? मैंने कभी तुम्हारा अपकार नहीं किया, मैं कभी तुम्हारे प्रति दोष (पूर्वक) चिंतन नहीं करता। तुम्हारा शत्रु नहीं हूँ। तुम्हारे शत्रु का साथ नहीं देता। तुम्हारे प्रति शत्रु क्या अहित कर रहे हैं, मैं नहीं जानता। जानकर, (उनकी) उपेक्षा नहीं करता। क्या (तुम्हें) ऐसा करना चाहिए था ? (क्या यह उचित है ?) हे इनवंशतिलक ! जानकर भी अज्ञ बन गये। वसुधा पर राजा (लोग) शरभ, कंठीरव, शार्दूल, कोल, करि, हरिण आदि का वध करना चाहकर, आखेट खेलने आते हैं। जानबूझकर वानरों को पकड़ कहीं मार डालते हैं ? ॥ ५४० ॥

—अर्कसून और मैं सहोदर हैं। कर्कशमति (क्रूर बुद्धि) धारणकर, (परस्पर) गौरव (भाव) को छोड़कर, विजृंभित हो, हम जैसा चाहें कर लें, तुम्हें इस प्रकार (मुझे) मारने का क्या कारण है ? (राजाओं के लिए) खरगोश, गोधा, कूर्म (कछुआ), शल्यमृग, वराह (आदि)

पंचनखंबनि प्लवगंबु दिनरु; ।पॊन्चि नन्निट्लेसि पॊलियिंचितेल?
मनुजेश ! यिक ना मांसरक्तमुल । ननुभविंपुमु नीवु ननुजुंडु गूडि;
विशदकीर्तुल जगद्विख्यातुडैन । दशरथु पनुपुन धर्मंबु नूदि
वनमुल दपसिवै वर्तिचुटकुनु । जनुदॆन्चि जीवहिंसकुरायवैति;
धरणिपै मेमॊक तप्पुसेसिननु । भरतुंडुदगु गाक पट्टि शिक्षिप;
नीकु गारणमेमि ? नीवु भूपतिवॆ ?। चेकॊन किट्लु चेसितिगाक नन्नु?
नी देवि जॆऱगॊन्न नीचु रावणुनि । नादट सांधितुननि येगुदॆन्चि ५५०
ननुडिंचि नीवर्कनंदनुनि बट्टि । यनयंबुनीतिलेवैति लोकमुल;
नी वार्त नीवु ना कॊऱिंगिचितेनि । देव ! नी देवि साधिंपने येनु ?
नाततबलशालियै येगुदॆन्चि । सीतामहादेवि जॆऱगॊनि चनिन
वानिनि मुन्नु ना वालरोममुल । बूनि बंधिंचि यंबुधुलॆल्ल मुंचि
करुणिंचि विडिचिति घन बाहुशक्ति । सॊरिदि लोकमॆऱुंगु; सुग्रीवुडॆऱुगु;
बॆलुकुऱ नन्नु जंपॆडिवाडवकट ! । बलिमिमै ना दृष्टिपथमुन निल्चि

भक्ष्य (खाने योग्य) हैं किन्तु पंचनख मानकर प्लवग (वानर) को नहीं खाते । ताक में रहकर (आड़ में छिपकर) मुझपर (बाण) चलाकर ऐसा वध क्यों किया ? हे मनुजेश ! अब तुम और अनुज मिलकर अब मेरे रक्तमांस का भोग करो । विशद-कीर्तियों से जगद्विख्यात बने दशरथ के आदेशपर धर्म का आधार बनकर, वनों में तपस्वी बन रहने के लिए आकर, (तुमने) जीवहिंसा को घृणास्पद नहीं माना । (इस) धरतीपर हम कोई अपराध करें तो भरत को उचित था कि वह हमें पकड़कर दंडित करता । किन्तु तुम्हें (ऐसा करने का) क्या कारण है ? क्या तुम राजा हो (जो इस तरह दंड देते ?) । मुझे न अपनाकर ऐसा किया । अपनी देवी का हरण करनेवाले नीच रावण को बाद में पराजितकर दूँगा, (ऐसा) सोचकर, (यहाँ) आकर, ।। ५५० ।।

—मुझे छोड़ अर्कनंदन को अपनाकर, सदा के लिए लोक में नीतिहीन बन गये । हे देव ! अगर तुम अपना समाचार मुझे बताते तो क्या मैं तुम्हारी देवी को नहीं ला देता ? आतत-बलशाली बन आकर, सीता महादेवी को पकड़ ले जानेवाले उस (रावण) को पूर्वकाल में अपनी पूँछ के बालों से बाँधकर, समस्त समुद्रों में डुबोकर, (अपनी) महान् बाहुशक्ति का प्रदर्शनकर, (अंत में) करुणा दिखाकर छोड़ दिया था । इस क्रम को लोक जानता है । सुग्रीव जानता है । हाय ! विह्वल बन मुझे मार डालनेवाले (तुम) सबल हो, मेरी दृष्टिपथ में आकर, मुझे

ननु बेरुकौनि पिल्चि नन्नु मुदलिंचि । जननाथ ! कडिमिमै जंपलेवैति!
छ्रलमु गैकौनि डागि चपितिनन्नु; । दलपोयनिदि राजधर्मंबे' ? यनिन
वालिमाटलु विनि वसुधेशुडनियें; । 'वालि ! यी माटलु वलवदु नीकु;
गपिवंशमुन बुट्टि कपुललो बॆरिगि । चपलुंडवै धर्मशास्त्रंबु तॆऽगु ५६०
तॆलियक नीवु नादॆस दप्पुलॆन्नि । पलिकॆद; विदि धर्मपद्धति गादु;
नीवन्न पलुकुलन्निटिकि नुत्तरमु । ना वाक्यमुलु गॊन्नि नयबुद्धि
विनुमु;
यनुजुनि दनुजुनियट्लग्रजुंडु । पनुपगवलॆ नंड्रु महि धर्मविदुलु;
आमेर दप्पिती वपराधहीनु । दामरसाप्तनदनु बुरि वॆडल
नडिचि वाविनि गॊडलैनयट्टि यतनि । पडतिनि रति बलिमि बट्टि
भोगिंचि;
कामांधुडॆन्दैन गलडॆ नीवंटि । पामरुडॊकडु दप्प जगत्त्रयमुन
नदियट्लुंडनि; स्ममतडुनु नेनु । गदिसि सख्यमु सेयुकतमुन नीवु
जगतिपै ना मित्रुशत्रुंडवगुट । दॆगि नाकु निन्नु वधिचुट दगवु;
अकलंकुलयि वेटलाडॆडि राजु । लॊकट दीममु नॊड्डि यॊकट जंपुदुरु;

नाम लेकर बुलाकर, मुझे ललकारकर, हे जननाथ ! पराक्रम के साथ मार नहीं सके न ! धोखे से, छिपकर मुझे मार डाला । सोचने पर क्या यही राजधर्म है ?' (ऐसा) कहने पर वालि की बातें सुनकर वसुधेश ने कहा:— 'हे वालि ! ये बातें तुम्हारे लिए उचित नहीं हैं । कपिवंश में पैदा होकर, कपियों में पलकर, चपल बनकर धर्मशास्त्र के विधान को ।। ५६० ।।

—न जानकर, तुम मेरे प्रति अपराध गिनाकर कहते हो । यह धर्मपद्धति नहीं है । तुम्हारे कहे सभी वचनों के उत्तर (रूप में) मेरे कुछ वाक्यों को नयबुद्धि से सुनो । महि (जगत) पर धर्मविद (धर्मज्ञों) का कहना है कि अग्रज को (अपने) अनुज को तनुज (पुत्र) के समान पालना चाहिए । उस नियम का तुमने उल्लंघन किया । अपराधहीन तामरस-आप्त (सूर्य)-नंदन को नगर से निर्वासित कर, रिश्ते में बहू होनेवाली, उसकी (अनुज की) स्त्री से बलात्कार से रतिकर, भोगा । तुम्हारे जैसा कामांध, किसी पामर को छोड़, जगत्त्रय में दूसरा कोई है ? उसे वैसा रहने दो । उसके (सुग्रीव के) और मेरे मिलकर मैत्री करने के कारण तुम धरतीपर मेरे मित्र के शत्रु हो । अतः तुम्हारा वध करना मेरे लिए संगत ही है । अकलंक हो आखेट करनेवाले राजा एक स्थान पर बताकर, दूसरी जगह से मार डालते हैं । एक दूसरे से लड़ते समय मार डालते

ऒकटितो बॊराडुचुंड जंपुदुरु; । ऒकभंगि बॊदरिंट नुंड जंपुदुरु५७०
उरुलॊड्डि चंपुदु; रुड्रक चंपुदुरु;। उरुशक्ति माटुन नुंडि चंपुदुरु;
तॆरलु बोनुलु नॊड्डि तॆगुव जंपुदुरु । परिकिंप दीन बापमुलेदु नाकु;
गावुन शाखामृगंबगु निन्नु । नीविधि जंपिन नॆग्गेल कलुगु ?
जतुर बाहाशक्ति जगतिकंतटिकि । बतियैन भरतुनि पनुपुन वच्चि
दुष्टमृगंबुल दुष्टराक्षसुल । सृष्टिपै नॆपुडु शिक्षिचु चुंडुदुमु;
नी तम्मुडगु वानि नॆलत गैकॊन्न । पातकुडव्; गान बट्टि चंपितिनि;
राजदंडितुड् नारकबाधबॊरय । डोजमै गान ना युग्रास्त्रनिहति
मनिकितपडक निर्मलुडवै यिक । ननिमिषराज्यसौख्यमु बॊन्दुमीवु'
अनियॊप्प रघुरामुडाडु वाक्यमुलु । विनि वालि कनुमूसि विवशुडैयुंडि
कॊन्तसेपुनकु नॆक्कॊन रामचंद्रु । गांतिराकाचंद्रु गनुगॊनि पलिकॆ
५८०
'यो राम ! शुभनाम ! युग्रांशुधाम । ताराधिपानन तार ना देवि
देवरशौर्यंबु दॆलिपि 'नीवनिकि । बोवल' दन्न दुर्बुद्धि बाटिंचि

हैं। एक समय झाड़ियों में रहते समय मार डालते हैं। ॥ ५७० ॥

—फंदे फैलाकर मार डालते हैं। अकारण ही मारते हैं। उरुशक्तियुत होकर आड़ में रहकर मार डालते हैं। परदे, कटघरे रखकर साहस के साथ मार डालते हैं। (अत:) सोच-विचारने पर इससे (तुम्हें मारने से) मुझे कोई पाप नहीं लगता। शाखामृग (वानर) हो तुम्हें इस प्रकार मार डालने में दोष ही क्या है? चतुर बाहुशक्ति युक्त होकर (हम) समस्त जगत के पति भरत के आदेश से आकर, सृष्टि में (फैले हुए) दुष्ट मृगों (तथा) दुष्ट राक्षसों को दंडित करते रहते हैं। (तुम) अपने अनुज की स्त्री को ग्रहण करनेवाले पापी हो। अत: तुम्हें मारा है। राजा के हाथ दंडित होनेवाले व्यक्ति को दीप्ति से नरक की यातनाएँ प्राप्त नहीं होतीं। अत: मेरे उग्र-अस्त्र के प्रहार के लिए व्याकुल न होकर, निर्मल बन अब तुम अनिमिषराज्य (स्वर्ग)- सौख्य को प्राप्त करो।' ऐसा शोभा से राम के कहे वाक्य सुनकर, वालि आँखें मूँदकर, विवश हो थोड़ी देर के बाद रामचन्द्र को, कांति में राकाचंद्र सम वाले को, देखकर (वालि) बोला:— ॥ ५८० ॥

—'हे राम ! हे शुभ नाम ! हे उग्रांशु (सूर्य) धाम ! मेरी देवी ताराधिप-आनन (चंद्रमुख) वाली तारा के प्रभु (आप) का शौर्य बताकर, 'तुम युद्ध के लिए मत जाओ' कहने पर भी, दुर्बुद्धि को मानकर, विधिवश (उसकी बातें) न मानकर, मैं निकल पड़ा और इस प्रकार ज़मीनपर

विधिविहितंबुन विनक ने वेंडलि । यधिकवैरमुन निट्लवनिपै बडिति
बडिन कोपमुन दुर्भाषलु गोन्नि । जडमति बल्किति; सैरिंपवय्य !
तनपाटु चिंतिप; दारकु वगव; । दनयुडंगदुनकै तलकेंद नधिप !
यितकेमगुदुरो यितियु सुतुडु ! । नितटि दुरवस्थ ये वच्चुटेऱुग'
ननि शोकमोहंबुलनु पयोराशि । मुनिगि मूर्छिलियुंडे मूगचदमुन;
नंत : पुरबुन का वार्तवोव । नंतलो दारादुलैन कामिनुलु
वालि गूलिन माट वज्रमै तमदु । वालुगुंडेलु नाट वसुधपै गूलि
यंतलो देलियुचु नट सोलयुचुनु । वंतलो दाऱुचु वालि जीऱुचुनु ५९०
'ओ यंगदा ! नेडयो ! वालि दिविकि । बोयेन्गदा' यंचु बोंगुलुचु, नडलु
नंगदु दोड्कोनि यतुलशोकमुन । ब्रुंगियु बोन्गि येड्पुलु निंगि मुट्ट
बदमुलु दोट्रिल बय्येदल् जाऱ । वदलि कोप्पुलु वीड वा तेऱल् वडक
गन्नुल बाष्पांबुकणमुलु दोरुग । नन्नुव गौदीगलटुनिटु बेणक
वेवेग किष्किधवेडलि रा नपुडु । द्रोव वारल नेदुकोनि कपुलनिरि;
'वालि राघवुचेत वसुधपै गूले । नेल पोयेदरु ? पोयिन ब्रमादंबु

गिर पड़ा। गिर पड़ा, इस क्रोध से कुछ बुरे वचन मूर्खतावश कहे हैं। क्षमा कर दो न! (मैं) अपने पतन के लिए दुखी नहीं होता। तारा के लिए दुखी नहीं होता। हे अधिप! पुत्र अंगद के लिए ब्याकुल होता हूँ। अब मेरी स्त्री (तथा) पुत्र का क्या होगा! नहीं सोचा था कि मेरी ऐसी दुर्दशा होगी।' (ऐसा) कह शोक-मोहरूपी पयोराशि (समुद्र) में डूबकर, गूंगे के समान, मूर्च्छित हो (पड़ा) रहा। इतने में इस समाचार के अंत:पुर में जाने पर, तारा आदि कामनियाँ, वालि के निहत होने की खबर के अपने विशाल वक्ष में गड़ जानेपर वसुधापर गिर पड़ीं। कभी होश में आते हुए, कभी बेहोश होते हुए, संताप में ऊभचूभ होते हुए, वालि (का नाम लेकर) पुकारते हुए, ।। ५९० ।।

—'हे अंगद! हाय! आज वालि स्वर्गस्थ हुआ है न!' (ऐसा) कहते हुए, भीत बने अंगद को साथ लेकर, अतुलशोक में ऊभचूभ होकर, रोदन (के स्वरों) के आकाश को स्पर्श करनेपर, चरणों के लड़खड़ानेपर, आँचलों के खिसकने पर, जूड़ों के ढीले होकर खुल जानेपर, होठों के कंपित होनेपर, आँखों से बाष्पांबुकणों के ढुलकनेपर, लघु (पतली) लतारूपी कटियों के कंपायमान होनेपर, अतिशीघ्रता से किष्किन्धा से निकलकर आनेपर, मार्ग में कपिजन उनके सामने आकर बोले:— 'वालि राघव के हाथ वसुधा पर गिर गया है (मारा गया है।) (वहाँ) क्यों जाती हो? जानेपर अवश्य ही (कोई न कोई) विपत्ति आएगी। पहले से

राक मानदु सुमी ! रामसुग्रीवु । लेकमैयुंट मीरेंरुगरे मोंदल ?
नी यंगदुनि बट्टि येमि सेयुदुरों ? । दायल मदि नम्म दग दट्टुकान
नितनिचे गपिराज्यमेंलितमिक; । मतिमंतुलगु कपुल् मनकु नुन्नारु;
पोवल’ दन्न नप्पुडु तार दगवु । भाविंचि वेंस वारि बलुमारु दूरि
६००

तारा विलापमु

‘येटिकंगदुडु ? मीरेटिकि ? राज्य। मेटिकि ? नाकु ब्राणेश्वरुडैन
वालि जूडक’ यंचु वारि वारिंचि। या लोन दार ताराधिपवदन
तनमदिलो वालि दलपोसि पोसि । घनशोकमुन जनुगव चूचि चूचि
‘यमरेंद्रसुतुराक यल्लंत जूचि । समकट्टि डायुचु सत्क्रीड गोरि
रासि गदा सुरराजेंद्र सुतुनि । बासिति ! रिंक ना फलमुचेसेत
गुडुवुडितटनुंडि कुचमुला’ रनुचु । गडुनल्क वेंस नुग्रगति मोदुकोंनुचु
बुडमि गंपिप नद्भुतशोकमडर । नेंडपक यिब्भंगि नेतेर दार
हारमुल् देंगि राल नलिवेणि दूल । भारंपु जनुगव बय्येंद जार

ही तुम नहीं जानते हो कि राम और सुग्रीव मिले हुए हैं। पता नहीं, इस अंगद को पकड़कर क्या करेंगे ? दायादों (नातियों) का मन में विश्वास नहीं करना चाहिए। अतः इससे (अंगद से) अब कपिराज्य पर शासन कराएँगे। हमारे (पास) मतिमान कपि हैं। मत जाओ।’ कहनेपर तब तारा ने न्याय (औचित्य) का विचारकर, झट उनकी कई बार निन्दाकर, ॥ ६०० ॥

—(कहा):— ‘(अपने) प्राणेश्वर वालि को न देख सकूँ तो मुझे अंगद किसलिए ? आप किसलिए ? राज्य किसलिए ?’ (ऐसा) कहते हुए उन्हें रोककर, इस बीच ताराधिप-वदनवाली तारा अपने मन में वालि के बारे में विचार कर-कर, घनशोक से (अपने) स्तन-द्वय को देखकर, (कहने लगी):— ‘थोड़ी दूर से ही अमरेंद्रसुत (वालि) के आगमन को देख, सन्नद्ध हो नियराकर, सत्क्रीड़ा की इच्छाकर, (उनसे) टकराते रहने के कारण सुरराजेंद्रसुत को खो बैठे न ! हे कुचो ! अब उसके फल, अपने किए के फल को भोगो।’ (यों) कहते हुए अधिक क्रोध से झट उग्रगति से (अपनी छाती) पीटने लगी। अद्भुत शोक के बढ़नेपर, पृथ्वी के कंपित होनेपर, इस प्रकार तारा के आनेपर, तारा के हार टूटकर गिरने लगे, सुन्दरवेणी खुल गयी, भारी स्तनद्वय पर आँचल खिसक गया। नीरज से मकरंद के झरने के समान, अधिक अश्रु झरने लगे। (वह)

नीरजंबुननु देनिय गाऱिनट्लु । तोरमै कन्नीरु दॊरुग नंदंद
बलुविडि नेतॆञ्चि पवनवेगमुन । ललि दूलि पडु पुष्पलतिकयु बोलॆ
६१०

ना वालिपै बडि यंदंद पॊंगुल । लावेदि तार प्रलापिंपदॊडगॆ;
'गपिकुलाधीश्वर! कपिराजचंद्र! । कपिराजशेखर! कपिसार्वभौम !
सकलसुरासुरसंघंबुलंदु । नकलंकसत्त्वुडवधिनाथ ! नीवु;
अऱिमुऱि विंध्यादुलगु महागिरुलु । वॆंऱिकि पेटाडिन बिरुदवु नीवु;
बलियुडै त्रिभुवनपालुडै वॆलयु । कुलशैलभेदिकि गॊंडुकवु नीवु;
कोलंबुडनु पेरि क्रूरगंधर्वु । नेल गूल्चिन रणनिपुणंडवीवु
नीवु मानवुनिचे नीचत बॊन्दि । यी विधिबडितिंक नेमनगलदु ?
इनतनूजुडु निन्नु नॆंदिरि लावेदि । यनिलोन निनु गूल्तुननि रामुडॆच्चॆ
'रामुनि ननि गॆल्वरादुंडु' मंटि; । नामाटविनवैति; ना मन्कि गॊन्टि
'वा महात्मुडु विष्णु वटु पोकु' मंटि । 'भीमशौर्युडतंडु; बिरुदुडुगु' मंटि;
६२०

निनु जंप वच्चिन नीपालि मृत्यु । वनक रामुनिचेत नाऱडिवडिति;

अतिशीघ्रता से, पवनवेग से आकर, लालित्य को खोकर गिरनेवाली पुष्पलतिका के समान, ।। ६१० ।।

—उस वालिपर गिरकर, शोभा को खोकर, बार-बार विलाप करने लगी:— 'हे कपिकुलाधीश्वर ! हे कपिराजचन्द्र ! हे कपिराजशेखर ! हे कपिसार्वभौम ! हे अधिनाथ ! तुम समस्त सुरासुर समाज में अकलंक सत्त्ववाले हो। तुम अतिवेग से विंध्यादि महागिरियों को उखाड़कर, छिन्नभिन्न करनेवाले, विरुदवाले हो। बली हो, त्रिभुवनपालक हो, विराजमान कुलशैल-भेदी (इन्द्र) के तुम पुत्र हो। कोलंब नामक क्रूर गंधर्व को जमीनपर गिरा देनेवाले रणनिपुण हो तुम। (ऐसे) तुम मानव के हाथ नीच (हीन) बन, इस प्रकार गिर गये हो ! अब और क्या कह सकूँगी ? इनतनूज तुम्हारा सामनाकर, बल खोकर, युद्ध में तुम्हें मार डालने के लिए राम को लाया। मैंने कहा कि ठहरो, राम को युद्ध में जीता नहीं जा सकता। मेरी बात नहीं मानी। मेरे अस्तित्व का हरणकर लिया। (मैंने) कहा कि वह महात्मा विष्णु है, उधर मत जाओ। कहा कि वह भीम-शौर्यवाला है, पौरुष को छोड़ दो। ।। ६२० ।।

(मेरी बात नहीं मानी)। तुम्हें (मेरे) मार डालने के लिये आये, तुम्हारे (मेरे) लिए मृत्यु है, ऐसा न मानकर राम के हाथ व्यर्थ हो

वॊलसि देवासुरु लॊगि द्रच्चिचतच्चि । बलमाऱि मऱि पायबडियुन्न जूचि
यडरि वासुकि मंदराद्रिकि जुट्टि । वडि समुद्रमु द्रच्चि वरशक्ति पॆंमि
द्रिजगंबुलंदु नुद्दीपिंचु नीदु । भुजमुलु पॆन्धूळि क्रुंगॆने नेडु ?
अतिसत्त्वुडगु राक्षसाधीशु बट्टि । धृतिदूलि वगव नी दृढमुष्टि गट्टि
मुनुकॊनि वार्धुल मुंचि मुंचॆत्तु । घनवालमिट धूळि गलिसॆने नेडु ?
कऱकंठु श्रीपादकमलंबुमीद । दॆऱगॊप्प नी मौळि तॆटियै व्रालु
नट्टि नीमस्तकंबकट ! यिच्चोट । वट्टिनेलनु गूलवलसॆने नेडु ?
हृदयेश ! निनुबासि ये निल्व जाल; । गदिसि नीवुन्न लोकमुनके वत्तु;
वेदन निटमीद वेगबालैति; । ना दिक्कुलेमिकि नाकुनु वगव ६३०
गोत्रारिनंदन ! कोरि नीकन्न । पुत्रु नंगदु जूचि पॊक्कॆद गानि:
दूलितो दोगि नी तॊडलपॆ बॊरलु । बालु नंगदु नेल पालिपवय्य !
युरमुपै दॊडलपै नुंचि मन्निंचि । शिरमु मूर्कॊनि मुद्दु जॆक्कुलु
पुणिकि
करमु मुद्दाडि नी गारापु पट्टि । वरुस नंगदु नेल वारिंप वधिप !'

गये । क्रमसे देवासुर मंथन करके-करके थककर, बल खोकर, शिथिल बनकर रहे (तो उन्हें) देख, उत्कर्ष के साथ वासुकि से मंदर पर्वत को परिवेष्टितकर, वरशक्ति के उत्कर्ष से शीघ्रता से समुद्र का मंथनकर, त्रिजग में उद्दीप्त होनेवाली तुम्हारी भुजाएँ आज अधिक धूलि में लोट गये न? अतिसत्त्ववाले राक्षसाधीश को पकड़कर, (उसके) धैर्य को खोकर, रोते रहने पर अपनी दृढ़मुष्टि से बांधकर, वारिधियों में ऊभचूभ करने वाला तुम्हारा वाल (पूँछ) आज धूल में मिल गया क्या ? नीलकंठ के श्री चरणकमलों पर अच्छे विधान से भ्रमर हो झुकनेवाला तुम्हारा मस्तक को हाय ! यहाँ आज खुली जमीनपर गिरना पड़ा ना ! हे हृदयेश ! तुमसे बिछुड़कर मैं रह नहीं सकती, नियराकर तुम जिस लोक में हो, वहीं आऊँगी । अब से वेदना की भागी बन गयी हूँ । मैं अपने अनाथपन के लिए दुखी नहीं होती । ॥ ६३० ॥

हे गोत्रारि (इन्द्र)-नंदन ! तुम्हारे लाड़ले पुत्र अंगद को देख अधिक दुखी हो रही हूँ । धूल से लिपटकर तुम्हारे जाँघों पर लोटनेवाले बालक अंगद का लालन क्यों नहीं करते ? हे अधिप ! वक्षस्थल पर, जाँघों पर रख (बिठाकर), मानकर, सिर को सूंघकर, प्यारे गालों पर पुचकार कर, अधिक चूमकर, अपने लाड़ले पुत्र को (रोने से) क्यों नहीं मना करते ?' ऐसा प्रलाप करती हुई स्त्री (तारा) ने, सुग्रीव को देखकर, शोक के

यनि प्रलापिंचुचु नतिव सुग्रीवु । गनुगॊनि पल्कॆ शोकमु वॆल्लिविरिय:
‘दलकॊनि वालिमुंदऱ निल्वलेक । बलमऱि पलुमाऱु पंदवै पाऱि
गतिमालि पोयि राघवुतोडितॆच्चि । कृतकंपु जयमुन गिष्किंध गॊन्टि:
नी कोरिनट्लय्यॆ: नी पग दीरॆ: । गैकॊनि भोगिंपु कपिराज्यपदवि:
नॆडमाटलाडि यी यिनवंश्यु देर । गडु हनुमंतुडु गलिगॆने नीकु ?
बलुमाऱु बुद्धुलु परिकिंचि चॆप्प । नल नीलतारुलुन्नारुले नीकु’ ६४०
ननि पल्कि रघुरामु नब्जाक्षि सूचि। ‘जननाथ ! यी वालि जंप ने-
मिटिक ?
मॆऱसि निन्निटुसेय मी तंड्रितोड ।गऱपॆने रघुराम ! गणुतिंप वालि ?
वॆरवॊप्प नी राज्य विभवंबु गॊन्न ।भरतुडे रघुराम! परिकिंप वालि ?
चॆनटियॆ नी देवि जॆऱगॊनि चन्न । दनुजुडे रघुराम ! तलपोय वालि ?
वालि नकारणवैरंबु वूनि । येलय्य! तॆगटार्चितिब्भंगि बॆर्चि ?
नी यट्टि सुकृतिकि नी यट्टि पतिकि। नी यट्टि कारुण्यनिधिकिट्लु
तगुनॆ ?
जनकजतो गूड जनियॆनो यॆऱुक ? । घनमैन विरहाग्नि ग्रागॆने यॆऱुक ?

उमड़ने पर (कहा):—‘सामनाकर वालि के सामने खड़े न रह सक, बल को खोकर, कई बार कायर बन, भागकर, अनाथ-से जाकर, राघव को साथ ले आकर, कृतक (कपट) जय से किष्किंधा को प्राप्त किया। तुमने जैसा चाहा, वैसा ही हुआ। तुम्हारा प्रतिशोध पूरा हुआ। कपि राज्यपद लेकर उपभोग करो। समुचित बातें करके इस इनवंशवाले को लाने के लिए तुम्हें हनुमान मिल गया न ? अनेक बार सोच-विचार कर मंत्रणा देने के लिए तुम्हें नल, नील, तार हैं न !’ ।।६४०।।

—ऐसा कहकर रघुराम को देख अब्जाक्षी (कमलनेत्री) ने (कहा):—‘हे जन-नाथ ! इस वालि को किसलिए मार डाला ? प्रकट रूप से तुम्हारी ऐसी दशा कर देने के लिए, गणना करने पर क्या वालि ने तुम्हारे पिता को सलाह दी थी ? हे रघुराम ! उपाय से तुम्हारे राज्य-वैभव को छीननेवाला, सोचने पर वालि तो नहीं है न ? हे रघुराम ! दुष्टता से तुम्हारी देवी को चुरा ले जानेवाला राक्षस, विचार करने पर वालि तो नहीं है न ? हे आर्य ! अकारण वैर ग्रहणकर इस प्रकार वालि का संहार क्यों किया ? तुम जैसे सुकृति (पुण्यात्मा) को, तुम जैसे प्रभु को, तुम जैसे कारुण्यनिधि के लिए यह उचित है क्या ? क्या जनकजा के साथ (तुम्हारी) समझ (विवेक) चली गयी ? महान् विरहाग्नि के कारण विवेक (-ज्ञान) जल गया क्या ? हे भूमीश ! आज मेरा पुण्य (भाग्य) ही ऐसा हो गया। अब क्या करूँ ?

भूमीश ! नेडुना पुण्यमिट्लय्यॆ : । नेमि सेयुदुनिक ? नेमंदु विधिकि ?
नी वालि नॆडबासि ये नुंडजाल : । देव ! नन्नुनु बट्टि तॆगटार्पवय्य !’
यनि युरंबुनु मोमु नंदंद मोदि । कॊनुचु वालिनि बेरुकॊनि येड्चुचुंडॆ : ६५०
नावेळ हनुमंतुडट्टु तार गदिसि । ‘नी वॆरुंगनि धर्मनीतुलु गलवॆ ?
याजि वीरस्वर्गमंदिन वालि । की जाड शोकिंपनेल ? यी पनुलु
दैवयत्नमु’ लंचु दा बलुमारु । धीविचक्षणुडिट्लु तॆलुपुचुनुंडॆ

वालि सुग्रीवुनकु बुद्धुलु गऽपुट

नंतलो गनुविच्चि यमरेंद्रतनयु । डिंतित यनरानि यिति शोकंबु
नंतकंटॆनु मिंचु नंगदु वगपु । नंतयु नट्टुसूचि यर्कंजु जूचि
‘पूनि रामुनिचेत भुवनंबु लॆरुग । भानुज ! नेडु नी पग साध्यमय्यॆ:
क्षितिमीद राजुल कृप नम्मदगदु: । मति नम्मि चॆडक येमऽक वर्तिपु:
मडरि रामुनितोड नाडिन प्रतिन । यॆडपक काविंपु मिटमीद नीवु:
पायक नातोड बलिमि बोराडि ।मायावि गडिमिमॊ मडिसिन मॆच्चि

विधि को क्या कहूँ ? इस वालि से बिछुड़कर मैं नहीं रह सकती । हे प्रभू ! मुझे भी पकड़कर मार डालो न !’ (ऐसा) कह छाती और मुख पर जहाँ-तहाँ पीटते हुए, वालि का नाम लेकर रोती रही । ॥ ६५० ॥

उस समय उधर हनुमान तारा के नियराकर (कहा):— ‘क्या ऐसे धर्म (और) नीतियाँ हैं, जिन्हें तुम नहीं जानती हो ? युद्ध में वीर स्वर्ग को प्राप्त करनेवाले वालि के लिए इस प्रकार शोक क्यों करती हो ? ये कार्य दैवयत्न (से हुए) हैं ।’ (ऐसा) कहते हुए वह धीविचक्षण कई बार इस प्रकार समझाता रहा ।

वालि का सुग्रीव को सीख देना

इतने में अमरेन्द्र-तनय (वालि) ने आँख खोलकर अवर्णनीय (बने) स्त्री के शोक, उससे अधिक बने अंगद के शोक (आदि) सब कुछ देख, अर्कज को देख (कहा)—‘हे भानुज ! सप्रयत्न राम के हाथ आज तुम्हारा प्रतिशोध भर आया, जिसे सारे भुवन जान गये । क्षिति (पृथ्वी) पर राजाओं की कृपा का विश्वास नहीं करना चाहिए । मन से (उस पर) विश्वासकर, न बिगड़कर, असावधान न बनकर, व्यवहार करो । अब आगे राम से की गयी प्रतिज्ञा का पालन अविलम्ब करो । न छोड़कर

पूनिन वेड्कतो बुरुहूतुडिच्चें । मानैन यी हेममालिक दॊल्लि; ६६०
यिदिनीवु धरियिंपु मी कपिराज्य । पदमुन किदि नीवु बरगु चिह्नंबु:
ई यंगदुनि शोकमिंक वारिंपु । ना यट्ल कॊनियाडि ननु मऱपिंपु
मा सुषेणुनि पुत्रियैन यी तार । धीसार दीनि बुद्धिनि ब्रवर्तिल्लु:
मेनु जेसिन तप्पुलॆल्लनु मऱवु : । पूनि ना मॆयि ब्राणमुलु निल्वविक:
गैकॊनु मी मालिकारत्न' मनुचु । शोकानतग्रीवु सुग्रीवु बिलुव
नतडुनु रघुरामु नानति वडसि । यतिभक्ति दाल्चॆ ना हैमदामंबु ।
ननुवॊप्प मऱि वालि यंगदु जूचि । तन मदिलो नतिदय दोप बलिकॆ;
'नो कुमारक! शोकमुडुगुमु नीवु । शोकिंप नेटिकि सुग्रीवुडुंड ?
नलिनाप्तसूनुंडु नाकंटॆ निन्नु । ललि बॆम्पुमै नुपलालिपगलडु;
सुग्रीवुडॆक्कड शूरत जूपॆ । नग्रणिवै युंडु मक्कड नीवु: ६७०
चिरतरकीर्तुलु सिद्धिंचु नीकु: । नुरुतर सौख्यबु लॊगि बॊन्दु निन्नु;
बरग गिष्किंधकु बट्टंबु गट्टि । यरुदुगा जूचु पुण्यमु सेयनैति;
ननिमिषपुरमुन करिगॆद निंक' । ननि पलिकि रघुरामुनर्थितो जूचि

(लगातार) मुझसे प्रबलता से लड़कर मायावी (नामक राक्षस) के ससाहस मरने पर, (मेरी) सराहनाकर, बड़े आनन्द के साथ पुरुहूत (इंद्र) ने पूर्वकाल में यह मान्य हेमामालिका दी थी । ।। ६६० ।।
—इसे तुम धारण करो । इस कपिराज्यपद के लिए यह चिह्न के रूप में रहेगा । इस अंगद के शोक का निवारण करो । (उसका) मुझ जैसा पालनकर, मुझे भुला दो । यह तारा हमारे सुषेण की पुत्री है, यह धीसारा (बुद्धिमती) है । इसकी बुद्धि (मंत्रणा) के अनुसार आचरण करो । मैंने जो अपराध किए थे, उन्हें भुला दो । अब मेरे प्राण शरीर में नहीं रहेंगे । इस मालिकारत्न को ग्रहण करो ।' (ऐसा) कहते हुए शोक से अवनत-ग्रीवावाले सुग्रीव को बुलाने पर, उसने भी रघुराम का आदेश प्राप्तकर, उस हैमदाम को अतिभक्ति से धारण किया । आनुकूल्यता के शोभित होने पर वालि ने अंगद को देखकर, अपने मन में अति करुणा के उत्पन्न होने पर कहा—'हे कुमार ! तुम शोक त्यागो । सुग्रीव के रहते शोक करने की क्या आवश्यकता है ? नलिनाप्तसून (सूर्यपुत्र सुग्रीव) मेरी अपेक्षा तुम्हें लालित्य की आधिक्यता से उपलालन करेगा । सुग्रीव जहाँ शूरता दिखावे, वहाँ तुम अग्रणी बनकर रहो । ।। ६७० ।।
—तुम्हें चिरतर कीर्तियाँ प्राप्त होंगी । क्रम से उरुतर सुख तुम्हें प्राप्त होंगे । तुम्हें किष्किंधा का राजा बनाकर, अपूर्व रूप से उसे देखने का पुण्य मैंने नहीं किया है । अब मैं अनिमिषपुर को जाऊँगा ।' ऐसा

'यो राम ! येनु बॆम्पॊन्द सुग्रीवु । तो रासि पोरुट तुदि बथ्यमय्यॆ:
नारय नंगदुंडबलु डॆमैन । नेरमुल् सेसिन नेर्पुगा गॊनुम;
यिनसुतु तर्वात नितनि राजुगनु । मनुवंशतिलकुंड ! मन्निपवय्य !
वेदशास्त्रंबुल वॆदकि निन् गान । रादिमध्यांतंबुलवि नीकु लेवु:
चनुदॆन्चि प्राणावसानकालमुन । नॊनर नाकिदॆ तोचुचुन्नाडवीवु:
अटु पोयि कनियॆडु ना मूर्ति गंटि: । नटुगान नेनु गृतार्थुंडनैति:
बंकजहितवंश ! परमकल्याण ! । यिक ब्राणमुलुंड वी यम्मु वॆऱुकु' ६८०
मनिन रामुनि याज्ञ ना दिव्यशरमु । पॆनुपॊन्द नीलुंडु पॆऱिकि वैचुटयु
गरमॊप्प दन बाह्यगतुलु बंधिचि । मरलिन पवनुतो मनसु संधिंचि
यी मॆयि बरममै यिपारु रामु । श्रीमूर्ति मनमुलो जॆलुवॊप्प जेर्चि
ब्रह्मपदानंदपरुडैन वालि । ब्रह्मरंध्रंबुन ब्राणमुल् विडिचॆ:
ना वेळ दारादुलैन कामिनुलु । ना वालिपै बालि यंदंद वगव
नंगद सुग्रीवुलच्चटि प्लवग । पुंगवुल् 'हा ! वालि ! पोयितॆ' यनुचु
विलपिंचुचुंड ना वेळ सौमित्रि । नलिनाप्तसुतुनि नंदऱनु वारिंचि

कहकर प्रेम से रघुराम को देखकर (कहा)—'हे राम ! अधिक शोभा से मेरा सुग्रीव के साथ लड़ना अन्त में (मेरे लिए) पथ्य ही (सिद्ध) हुआ है। सोच-देखने पर अंगद अबल है। (वह) कुछ भी अपराध करे तो उन्हें चतुरता से स्वीकारो (क्षमा कर दो)। हे मनुवंशतिलक ! इनसुत के बाद इसे राजा के रूप में मान्य करो। वेद शास्त्रों में खोजकर भी तुम्हें देख नहीं सकता। तुम्हारे लिए आदि-मध्य-अन्त नहीं है। (मेरे पास स्वयं) आकर, प्राणावसान काल में, यह तुम मुझे दिखाई पड़ रहे हो। उधर (स्वर्ग) जाकर देखनेवाली मूर्ति को (यहीं) देख पाया है। अतः मैं कृतार्थ बन गया हूँ। हे पंकजहितवंश (वाले) ! हे परमकल्याण (करनेवाले) ! अब प्राण नहीं रहेंगे, इस बाण को निकाल दो।' ॥ ६८० ॥

(ऐसा) कहने पर, राम की आज्ञा से उस दिव्य शर को शोभा से नील ने निकाल दिया। अधिक शोभा से अपनी बाह्यगतियों का बन्धन करके, रुद्ध पवन को मन में बाँधकर, इस शरीर में परम (सबसे श्रेष्ठ) बन विराजमान राम की श्रीमूर्ति को मन में सुन्दरता से धारणकर, ब्रह्मपदानन्द (तत्पर) पर-वालि ने ब्रह्मरंध्र के द्वारा प्राण छोड़ दिये। उस समय तारा आदि कामिनियों के उस वालि पर झुककर बार-बार रोते रहने पर, अंगद, सुग्रीव (और) वहाँ के प्लवग (वानर)—पुंगव (श्रेष्ठ) 'हा वालि! चले गये!' कहकर रोते रहे। उस समय सौमित्री ने

‘हनुमंत ! नीविक नंबरमाल्य । घनगंधसारादिकमुलु दॆप्पिपु’
‘शिबिक दॆप्पिपुमु शीघ्रंबे तार । निबिड हाटकरत्ननिर्मितंबुगनु’
अनि पंप वारुनु नट्ल काविंप । वनचरुलंदऱु वच्चिरच्चटिकि: ६९०
मऱि तार मॊदलैन मगुवल यडलु । तॆऱगॊप्प वारिंचॆ दिननाथसुतुडु:
नालोन रघुरामु नानति वडसि । वालिकि बरलोक वैदिक क्रियलु
सेसि या दशरात्रशेषकृत्यमुलु । भासुरगति दीर्चि परिशुद्धि बॊन्दि
यंगदुंडुनु दानु हनुमदादुलुनु । संगति ना रामचंद्रु गांचुटयु
विपुलसंतोषंबु विलसिल्ल नंत ।गपिनायकुलकु राघवुडिट्टुलनियॆ:

श्रीरामुडु सुग्रीवुनि गिष्किधकु बट्टमु गट्टुट

‘मीरिंक ना पंपु मेकॊनि पोयि । श्रीरम्यमुगनु गिष्किधकु गैसेसि
स्थिरमैन कपिराज्यसिंहासनमुन । बरग सुग्रीवुनि बट्टंबु गट्टि
यॊन्द नी यंगदु युवराज्यपदमु । नंदु बट्टमु गट्टु’ डनि यॊप्प बलुक

नलिनाप्तसुत (और) दूसरों को रोककर (कहा)—‘हे हनुमान ! अब तुम अम्बर (वस्त्र)-माल्य-घन-गंधसार-आदि मँगाओ।’ हे तारा ! निबिड हाटक (स्वर्ण) रत्न निर्मित शिविका को शीघ्र ही मँगाओ।’ (ऐसा) कह भेजने पर उन्होंने भी वैसा ही किया। तब समस्त वनचर वहाँ आए। ।। ६९० ।।

तारा आदि स्त्रियों के अधिक शोक का दिननाथसुत ने क्रम से निवारण किया। इस बीच रघुराम की आज्ञा प्राप्तकर, वालि के लिए परलोक-वैदिक क्रियाएँ (उत्तर क्रियाएँ) करके, उस दशरात्र के शेष कृत्यों को भासुरगति से पूर्णकर, परिशुद्ध होकर, अंगद हनुमान आदियों के साथ (सुग्रीव ने) ठीक ढंग से रामचंद्र के दर्शन किए। विपुल हर्ष के विराजित होने पर तब कपिनायकों से राघव ने यों कहा—

श्रीराम का सुग्रीव को किष्किधा का राजा बनाना

‘आप (लोग) अब मेरी आज्ञा को मानकर, जाकर, श्रीरम्यता से किष्किधा को अलंकृतकर, सुस्थिर-कपिराज्य के सिंहासन पर, शोभा से, सुग्रीव को पट्टाभिषिक्त कर, उसी समय शोभा से इस अंगद को युवराजा के पद पर, पट्टाभिषिक्त कीजिए।’ ऐसा सुन्दर ढंग से बोलने पर, बिलंब न कर वानर सेनापति, एक साथ मिलकर, तब किष्किधा आए। नूतन

दडयक वानर दंडनायकुलु । गेंडगूडि यंत गिष्किध केतेंन्चि
नूत्नश्शृंगार मनोहरागार । रत्नवितर्थिकारमणीय हीर ७००
रंगवल्लीवार रंजितद्वार । रंगद्ध्वजोदार रम्यपटीर
नीरपूरितमार्ग निरुपमाकार । पौरसंचारसंभरितंबु गाग
जेलगि या पुरमु गैसेयिंचि नगरु । कौलुवुकूटंबु मिक्कुटमैन सिरिकि
गारणंबुग नलंकारं बोनर्चि । वारिधि नदनदी वारियु मरियु
दगु मंगळद्रव्यततुलु देप्पिपचि । मोगि नोप्प शुभतूर्यमुलु म्रोयुचुंड
बण्यांगनामणुल् पात्रंबुलाड । बुण्याहवाचनपूर्वकंबुगनु
सिंहचर्मंबुन जिह्नितंबैन । सिंहपीठिनि गपिसिंहंबु नुनिचि
सुरलिंद्रु बोलें भासुरलील ब्लवग । वरु लभिषेकपूर्वकमुगा गदिसि
ललितपुण्योदयलग्नंबुनंदु । बलियु सुग्रीवुनि बट्टंबु गट्टि
युरुसत्त्वु नंगदु युवराज्यमुनकु । गरमोप्प बट्टंबु गट्टिरि प्रीति ७१०
नंगदु यौवराज्यमुनंदु निलुप । बोन्गे वेडुक नंतिपुरमु बुरंबु;
नल नील तारांजनाभवुलु । गलबंधुवुलु बोडगनिरि सुग्रीवु;
नितर वानरनाथुलेल्ल गेल्मोगिचि । यतिमोदमुन गोनियाडिरि प्रीति।

श्रृंगार (सजावट) से युक्त मनोहर-आगार (गृह), रत्न-वितर्थिकाओं से (तथा) रमणीयहीर ।। ७०० ।।
—रंगबल्लीवार से रंजित द्वार, रंगत् (प्रकाशमान) ध्वज (से) उदार (विस्तृत), रम्यपटीर-नीर पूरित मार्गों के (आदि से युक्त हो) निरुपम-आकार (वाले किष्किधा के) पुरजन-संचार-संभरित होने पर, उल्लसित (अथवा शोभित) उस नगर को सजाया, अंतःपुर (तथा) राजदरबार को अत्यधिक श्री के कारणभूत रूप में अलंकृतकर, वारिधि-नद-नदी का वारि (जल) तथा उचित मंगल-द्रव्य-समूह को मंगवाकर, संरंभ (आडंबर) की शोभा से शुभ तूर्यों के ध्वनित होते रहने पर, पण्यांगना (वेश्या)-मणियों के कलशों के साथ नाचते रहने पर, पुण्याहवाचनपूर्वक, सिंहचर्म से चिह्नित सिंहपीठ पर कपिसिंह को रखा (बिठाया)। भासुरलीला से प्लवग-(वानर) वीरों ने अभिषेकपूर्वक (सुग्रीव के) नियराकर, मानो देवता इन्द्र के निकट पहुँच रहे हों, ललित-पुण्योदय लग्न में बली सुग्रीव का राजतिलक कर, उरु-सत्त्व वाले अंगद को युवराज्यपद के लिए बड़ी शोभा से (तथा) प्रीति से पट्टाभिषिक्त किया । ।। ७१० ।।

अंगद को युवराज्य (पद) पर रखने पर अंतःपुर और पुर भी हर्ष से उमड़ पड़े। नल, नील, तार, अंजनातनूभव (हनुमान) आदि संबंधियों ने सुग्रीव के दर्शन किए। अन्य समस्त वानर-नाथों ने हाथ जोड़कर

नंत सुग्रीवुडुदात्त संपदल । नॅन्तयु बॅम्पॉन्दि यिपु सॉम्पॉन्दि
वनचर बलमु तो वडि नेगुदॅन्चि । घनरत्नकोट्टुलु कानुकलिच्चि
यादट बॅम्पॉन्द ना रामचंद्रु । पादपद्ममुलकु भक्तितो म्रॉक्कि
करमुलु मुकुळिंचि कडु ब्रेम निलिचि । परमसम्मदमुन भानुनंदनुडु
'इच्चोट नेटिकि ? निंक ना पुरिकि । विच्चेयुदुरुगाक ! विश्वलोकेश !'
यंनवुडु सुग्रीवुनाननांबुजमु । गनुगॉनि प्रीति राघवुडिट्टुलनियॅ;
'दपसुलु पुरमुन दगदु वर्तिप । दपनज ! किष्किंध दगदु माकुंड; ७२०
महिमीद नाषाढमासंबु वच्चॅ; । नहितुलपै बोव ननुवुगादिक;
वानकालमु माल्यवंतंबुनंदु । ने नुंडगलवाड नॅव्भंगिनैन;
निनतनूभव ! नीवु नी वानकाल । मॉनर गिष्किंधलो नुंडुमुपोयि;
तलकॉनि मरि शरत्कालंबुनंदु । बॉलुपॉन्द बगऱपै बोदमु कडगि'
यनि चॅप्पि मन्निंचि यतनि वीड्कॉलिपि। यनुजन्मुडुनु दानुनच्चोटु वासि

श्रीरामुडु माल्यवंतमु जेरुट, वर्षाकाल वर्णनमु

वसुधेशु डम्माल्यवंतंबु जेरि । कुसुमकोमलि सीत गुणमु ब्रायंबु

अतिमोद से, प्रीति से प्रशंसाएँ कीं । तब सुग्रीव उदात्त-संपत्तियों से अत्यधिक उत्कर्ष को प्राप्तकर, आनंद-सौंदर्य को प्राप्तकर, वनचर-बल (समूह) के साथ झट से आकर, घन-रत्न-कोटियाँ उपहार में देकर, अनंतर शोभा से उस रामचंद्र के चरणकमलों में भक्ति से प्रणामकर, हाथ जोड़कर, अति प्रेम से खड़ा हो गया । भानुनंदन ने परमसम्मोद से (कहा):--'यहाँ (रहना) क्यों ? हे विश्वलोकेश ! अब मेरी नगरी में पधारिएगा ।' ऐसा कहने पर सुग्रीव के मुख-कमल को देखकर, प्रीति से राघव यों बोले:-- 'तपस्वियों को नगरों में रहना नहीं चाहिए । हे तपनज ! हमें किष्किंधा में नहीं रहना चाहिए । ।। ७२० ।।

—पृथ्वी पर आषाढ़ मास आ गया है । अहितुओं (शत्रुओं) पर जाने के लिए (आक्रमण करने के लिए) अब आनुकूल्यता नहीं है । मैं किसी भी प्रकार वर्षाकाल (का समय) माल्यवंत में रह जानेवाला हूँ । हे इनतनूभव ! तुम इस वर्षाकाल में जाकर किष्किंधा में रहो । फिर शरत्काल में सप्रयत्न, शोभा से शत्रु पर जाएँगे ।' ऐसा कहकर, सम्मान कर, उसे विदाकर, अनुजन्म के साथ उस स्थान को छोड़कर,

श्रीराम का माल्यवंत पहुँचना (वर्षाऋतु वर्णन)

—वसुधेश (राम) उस माल्यवंत (पर्वत पर) पहुँचकर, कुसुमकोमली

नसमानरूपविलास मॆन्नुचुनु । नसमान शोकार्तुडै युंडॆ; नंत
धरणिज नॆडबासि तलकॊंडु रामु । बॊरिबॊरि दु:खमुल् पॊंदवुचंदमुन
नऱिमुऱि दिविनुंडि यंबुजमित्रु । मॆऱयनीकंदंद मेघमुल् वॊडमॆ :
रावणु राज्यंबु रघुरामु चेत । नीविधि जलियिंचु निक नन् पगिदि
७३०

नॊलसि यॊंडॊंड विद्युन्निकायमुलु । जलदंबुलंदुंडि चलियिंप दॊडगॆ;
'गैकॊनि यिक निक्ष्वाकुवल्लभुडु । नाकारि पै दंडु नडुचुचुन्नाडु'
अनि सुरलकु जॆप्प नरिगॆनो धात्रि । यन वायुवुलतोड नट धूळि यॆगसॆ;
'नालंबुलो दैत्यु नणगिंपु' मनुचु । गालुडु तन चेति कालपाशंबु
बॊनर रामुनि कयि पुत्तॆंचॆ ननग । दनरार दिवि निंद्रधनुवॊप्पॆ जूड;
नमरुलु रामुनकयि दंडु वॆडल । गॊमरार भेरुलु घोषिंचुपगिदि
नुन्नतध्वनुलतो नॊंडॊंट बर्वि । मिन्नॆल्ल भेदिल्ल मेघंबुलुऱिमॆ;
नलरु प्रावृट्कालमनु पुरुषुंडु । ललिमीर नाकाशलक्ष्मितो गदिय

सीता के गुण, वय, असमान रूप-विलास को गिनते (सोचते) हुए, असमान-शोकार्त हो रहे। तब धरणिजा से बिछुड़कर व्याकुल होने वाले राम (के मन में) बार-बार दु:खों के उद्भव होने के समान, दिवि (आकाश) में अंबुज-मित्र को प्रकाशित न होने देकर, जहाँ-तहाँ मेघ शीघ्रता से उत्पन्न हो (घिर) आए। रावण का राज्य रघुराम के द्वारा अब इस प्रकार विचलित होगा, इस प्रकार ।। ७३० ।।

—जहाँ-तहाँ जलदों में विद्युत्-निकाय (समूह) उत्पन्न हो, चंचल होने (चमकने) लगा। वायु के साथ धूल इस प्रकार उड़ी मानों धरती देवताओं को यह बताने गयी हो कि 'निश्चयकर अब इक्ष्वाकु-वल्लभ (राम) नाक-अरि (देवलोक का शत्रु) पर आक्रमण करने जा रहा है।' आकाश में इन्द्र-धनु इस प्रकार शोभित हुआ मानों 'युद्ध में राक्षसों का दमन करो' यह कहते हुए काल (यमराज) ने अपने हाथ का कालपाश अनुकूलता से राम के हाथ भेज दिया हो। जहाँ-तहाँ व्याप्त हो, उन्नत-ध्वनियों से समस्त आकाश को फोड़ देते हुए मेघ इस प्रकार गर्जन करने लगे मानों देवताओं के राम के लिए सेना के रूप में निकल पड़ने पर, शोभा से (रण-) भेरियाँ बज रही हों। प्रथम वर्षा की बूंदें जहाँ-तहाँ इस प्रकार पड़ीं मानों वर्षा-काल रूपी पुरुष के हाव-भावों के उत्कर्ष के साथ आकाश-लक्ष्मी से भेंट (संभोग) करने पर, हारों के मोती टूटकर गिर रहे हों। जहाँ-तहाँ धरणीपर, हर जगह उदग्र होते हुए भाप (इस प्रकार) निकलने लगी मानों (राक्षस को) दिखाई पड़कर,

नौंगि सरुल् दैंगि रालुचुन्न मुत्यमुल । पगिदि दौंल्चिनुकुलु पडियें नंदंद
यगपडि चैंर वोयें ननि कूतु दलचि । वगचि नट्टूर्पुलु वडि बुच्चुचुन्न
७४०
वैंरवुन नावुलु वैंडलें नंदंद । धरणि नैंल्लैंडल नुदग्रंबुलगुचु
जनुदैंचि रामलक्ष्मणपयोदमुल । गनुगौंनि सुरचातकमु लुब्बुपगिदि
गनुकनि बवैंडु घनपयोदमुल । गनुगौंनि दिवि जातकमु लुब्ब दौंडगें;
धिमिधिमियनुचु मर्द्दल म्रोय बाट । लमर नटीमणुलाडु चंदमुन
घुमघुम यनुचु मेघुंडु गर्जिल्ल । नमलकेकास्फूर्ति नाडें नैंमळ्ळु
राक्षासांगमुलपै रामबाणमुलु । लक्षिपबडु निट्टिलागुनन्नट्लु
पर्वताग्रमुलपै भयदघोषमुलु । पर्व निर्घातमुल् वडियें नंदंद
प्रकटबुंगा दैत्यसति मेनिमांस । शकलंबुलिट्टु रणस्थलि निंडुननिन
परुसुन निंद्रगोपमु लंतकंत । नरुणारुणंबुलै यवनिपै बडियें
रावणु जंपुचो रघुरामुमीद । देवतल् तललूचि दिव्यपुष्पम्मु ७५०
लेंडनेंड वर्षितुरीक्रिय ननिन । वडुवुन महिरालें वर्षोपलमुलु
रावणु कीर्ति परंपरलणगि । पोवुनिंकिट रामभूपालुचेत
ननिन चंदमुन रायंच्रल पिंडु । चनें क्रौंचगिरिमीद जय्यन नडचें;

(उसके हाथ) क़ैद हुई' (अपनी) पुत्री के बारे में सोच, दुखी हो, धरणी झट से निश्वास (लंबी आहें) छोड़ रही हो। ॥ ७४० ॥ —(वनों में) आए हुए राम-लक्ष्मण रूपी पयोदों को देखकर सुररूपी चातक फूल उठे हों, मानों इस प्रकार संभ्रम से व्याप्त होनेवाले घने बादलों को देखकर, आकाश में चातक (पक्षी) फूलने लगे। 'धिम्-धिम्' की ध्वनि से मर्दल के मुखरित होने पर, गीतों के साथ नटीमणियों के नृत्य करने के समान, 'घुम्-घुम्' कहते मेघ के गर्जन करने पर, अमल-केका-स्फूर्ति के साथ मयूर नाच उठे। राक्षसों के शरीरों पर राम के बाण इस प्रकार लक्षित होंगे, इस प्रकार भयद-घोष के व्याप्त होने पर जहाँ-तहाँ पर्वत के अग्रों (शिखरों) पर, गाज गिरे। परुषता से इंद्रगोप (बीर बहूटी) अधिकाधिक अरुण से अरुण बनकर, अवनि पर (बिखर) पड़े मानो यह प्रकट कर रहे हों कि दैत्यपति के शरीर के माँस-खंड इसी प्रकार प्रकट रूप से रणस्थल को भर देंगे। मानों रावण का संहार करते समय देवता सिर हिलाकर (प्रशंसा में) दिव्यपुष्पों को ॥ ७५० ॥ —लगातार इस प्रकार रघुराम पर बरसाएँगे, इस प्रकार वर्षोपल (ओले) महि पर गिरे। अब आगे रामभूपाल के द्वारा रावण की कीर्ति-परंपराएँ लुप्त हो जाएंगी, मानों इस प्रकार राजहंसों का समूह

ननि मॊन दन पुत्रुडैन सुग्रीवु । डनिमिषाधिप सूनु नकट: चंपिचॆ
नलुगु नापै निंद्रुडनि सूर्युडुन्न । बलितंबु गोटन बरिवेषमॊनरॆ;
गुदियनि कडकतो गोरि याकाश । नदि नाडबोयिन नागकन्यकलु
च्चनि चनि मगुड रसातलंबुनकु । जनुदॆंचुगति वर्षजलधार लमरॆ;
वासिगा दमकु जीवनमु लव्वारि । गा समर्पिंचिन घनुनि वेनोळ्ळ
बॊगडु चंदमुन नद्भुत वृत्ति भेद । मगपड भेकंबुलऱ्चॆ नंदंद;
वॆलय मेघमुलु प्रावृड् वधूमणिकि । गलय मै बूसिन कस्तूरियनग ७६०
धरणि नॆल्लॆडलनु दनर सॊंपॆक्कि । परग नीलच्छाय बंकमॊप्पारॆ;
वाराशि नॊंडगूडि वलनेदि रामु । घोर बाणाग्नि ग्रागुट विचारिंचि
चऱ्चि पो वॆऱ्चिन चाड्पुन वरद । लऱिमुऱि जॆरवुल नंदंद निलिचॆ;
लोककंटकु दैत्यु लोवॆट्टुकॊंटि । काकुत्स्थुडिदॆ निन्न गट्टिंचुननुचु
सुडिवडि मॊऱ वॆट्टुचुनु बारु करणि । वडि म्रोयुचुनु जॊच्चॆ वार्धि
बॆन्नदुलु

क्रौंचगिरि पर चला गया। 'युद्ध-भूमि में मेरे पुत्र सुग्रीव ने अनिमिष-अधिपसून (इन्द्रपुत्र-वालि) को हाय! मरवा डाला, मुझपर इन्द्र रुष्ट हो जाएगा', (इस भय से) मानों सूर्य बलिष्ट दुर्ग में रह गया। (सूर्य के चारों तरफ का) परिवेश प्राचीर के समान लगा। वर्षा की जलधाराएँ इस प्रकार शोभित हुईं मानों दुनिर्वार साहस से, चाहकर आकाश-नदी में स्नान करने गयी नाग-कन्याएँ फिर से रसातल को लौट रही हों। भेक (मेंढक) अद्भुत वृत्ति (ढंग)-भेद (स्वर-भेद) दिखाते हुए, जहाँ-तहाँ बोलने लगे, मानों अपने को अपार जीवन प्रदान करनेवाले उस महान् (व्यक्ति) की, हजार मुखों से, प्रशंसा कर रहे हों। शोभित मेघों ने मानों प्रावृट् (वर्षा) रूपी वधूमणि के शरीर पर खूब कस्तूरी लगाई हो, ॥ ७६० ॥

इस प्रकार धरणी पर हर जगह विराजित नील-छाया (वर्ण) से पंक सुशोभित हुआ। वाराशि (समुद्र) में मिल जाने पर राम की घोर बाणाग्नि से तप्त हो, शोभा से रहित होने की बात सोचकर, (समुद्र में जाने से) डरकर, मानों बाढ़ का पानी जहाँ-तहाँ शीघ्रता से तालाबों में ठहर गया हो। लोककंटक दैत्य को भीतर रख लिया, अब काकुत्स्थ तुम पर बाँध (पुल) बँधवाएगा, मानों यह कहते हुए, भँवरों के साथ, निवेदन करते हुए, शीघ्रता से शब्द करते हुए, बहते हुए, बड़ी-बड़ी नदियाँ समुद्र में जा मिलीं।

शरदागममु

नंत वानलु वॆल्चॆ नवनि नॆल्लॆडल । नंतंत दिवि नुन्न यभ्रमुल् विरिसॆ;
दॆलिवॊंदि किरणमुल् दिशलॆल्ल निंड । जलुवॊंद रवि प्रकाशिंचॆ
लोकमुल;
धरणि निष्पंकमै तनरॆ नॆंतयुनु : । गरमॊप्प गॊलकुल गमलंबु ललरॆ;
गूलमुल् मदकरुल् ग्रुच्चि गोराडॆ : । रेलु नक्षत्रचंद्रिकल बॆंपारॆ;
वच्च नंचलु सरोवनिकि गापुरमु : । मॆच्चॆ दामरतूंड्लु मॆसगि
युल्लमुन; ७७०
जॆऱकु राजनमुल चेनुल पंट । तऱुचय्यॆ; वृषभयूथमु ऱंकॆ वैचॆ;
गलक यंतयु बासि कनुपट्टॆ जलमु; । लिल दॆरुवरुलकु निच्चॆ सौख्यंबु;
ज़दल निर्मलमुलै जलदंबुलॊप्पॆ; । नदुलॆल्ल डॊंकि कालनडलय्यॆ; नंत
नटमुन्न हनुमंतुडर्कजु गदिसि । 'यिट शारदागमंबॆतॆंचॆ; निंक
श्रीरामु कार्यंबु सेयंगवलयु; । वारु वीरतकॆल्ल वानराधिपुल
रप्पिंपु' मनवुडु रविसूनुडलरि । यप्पुड पडवालुडगु नीलु बिलिचि

शरत् का आगमन

तब अवनि पर सर्वत्र वर्षा समाप्त हुई । जहाँ-तहाँ आकाश पर के अभ्र (मेघ) छँट गये । होश में आकर, समस्त दिशाओं के किरणों से भर जाने पर, शोभायुक्त हो रवि, लोकों पर प्रकाशित हुआ । धरणि निष्पंक हो अधिक शोभायमान हुई । अधिक सुंदरता से सरोवरों में कमल शोभित हुए । मद करि (मस्त हाथी) कूलों को दाँतों से खोदकर, मज़ाक करने लगे । नक्षत्र (तथा) चंद्रिका से रात्रि सुशोभित हुई । राजहंस सरोवरों में रहने आ गये । मृणालों का भक्षण कर, मन में सराहा । ।। ७७० ।।

ईख तथा राजन (एक प्रकार का धान्य) के खेतों में फसल अधिक हुई । वृषभ-यूथ (समूह) ने गर्जन किया । समस्त कालुष्य से रहित हो जल दिखाई पड़ा (और) भूमि पर यात्रियों को सुख दिया । आकाश पर निर्मल जलद शोभित हुए । समस्त नदियाँ (जल के कम हो जाने से) पैदल पार करने योग्य बन गयीं । तब उससे पूर्व ही (शरत् के आगमन से पहले ही) हनुमान अर्कज से मिलकर (बोले):—'अब शरत्काल आ गया है । अब श्रीराम का कार्य करना चाहिए । यह और वह न कहकर (बहानेबाज़ी न कर), समस्त वानर-राजाओं को बुला भेजो ।' ऐसा कहने पर रविसून (सुग्रीव) प्रसन्न हो, तभी सेनापति नील को

‘विविध पर्वत सरिद्वीपाधिपतुल । ब्लवग गोलांगूल भल्लूकपतुल
राविंपु; मोकडैन राकुन्न नाज्ञ । गाविंपु’ मनि पंचें गडकमै; निचट
दम्मुडु चेयूत दन तालिम कोंसग । ग्रम्मिन वग वानकालंबु गडपि
रामभूवरुडु शरत्कालमैन । गोम्मलि जिंतिंचि कोर्कुल बोंदलि ७८०
मदनातुरुंडयि मदि जाल ब्रमसि । युदयाद्रिपै नुन्न युडुराजु जूचि
‘यिदियेमि युत्पात ? मिदि येमि चंद ? । मिदियेमि यी रात्रि यिनुडेल
पोंडिचें ?
ना मेनि तापमिन्मडि गाग जोंच्चें;। सौमित्रि ! ननु तरुच्छायल जेर्पु’
मनिन ‘जंद्रुडु गानि यर्कुंडु गाडु । जननाथ ! हरिणलांछनमदें चूडु।’
मनि लक्ष्मणुडु वल्क ‘हरिणाक्षि पोयें’। ननि सीत बेकोंनि यट मूर्छ वोव
दशरथात्मजुनकु दम्मुडालोन । शिशिरोपचारमुल् सेसि तेर्चुटयु
मऱि विवेकमु बूनि मनुजवल्लभुडु । ‘तऱि लंकमै निक दंडैत्तवलयु;
सौमित्रि ! चूचितें ? जलजाप्तसूनु । डेमनि भाषिंचें ? नेमनि पोयें ?
वानकालमु बुच्चि वच्चेंदननियें; । वानकालमु वोयें; वच्चुटलेदु;

बुलाकर, सप्रयत्न आज्ञा देकर भेजा कि ‘विविध पर्वत, सरित्, द्वीपों के अधिपतियों (तथा) प्लवग, गोलांगूल, भल्लूकपतियों को बुलाओ। (उनमें से) एक भी न आवे, तो (मेरे) आदेश का पालन करो (दंडित करो)।’ यहाँ अनुज की सहायता तथा सांत्वना देते रहने पर, व्याप्त व्यथा से वर्षाकाल बिताकर, शरत्काल होने पर, रामभूवर ने कोमली (सीता) के बारे में सोचकर, (मन में) इच्छाओं के उत्पन्न होने पर, ॥ ७८० ॥

—मदनातुर हो, मन में अधिक भ्रमित हो, उदयाद्रि पर स्थित उडुराज (चंद्र) को देख (कहा):—‘यह कैसा उत्पात है ? यह कैसा विधान है ? यह क्या इस रात को सूर्य का उदय कैसे हुआ ? मेरे शरीर का ताप दुगुना होने लगा। हे सौमित्र ! मुझे पेड़ की छायाओं में पहुँचा दो।’ (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण ने कहा):—“हे जननाथ ! यह तो चंद्र है, अर्क (सूर्य) नहीं है। वह देखो, हरिण लांछन (चिह्न)।” ऐसा लक्ष्मण के कहने पर “हरिणाक्षी तो गयी।” कहते सीता का नाम ले (राम), वहाँ मूर्छित हो गये। इतने में अनुज के दशरथात्मज (राम) को शिशिरोपचारकर, होश में लाने पर, फिर विवेक धारणकर, मनुजवल्लभ ने (कहा):—“इस अवसर पर, अब लंका पर आक्रमण करना चाहिए। देखा सौमित्र ! जलजाप्तसून (सुग्रीव) ने क्या कहा ? क्या कहकर गया ? वर्षाकाल बिताकर आने की बात कही। वर्षाकाल बीत

औदवि ना चेसिन युपकारमेल्ल । मदिलोन मऱचि युन्मत्तुडै वाडु ७९०
तारतो रतिकेळि दगिलियुन्नाडो ? । या राज्यमुन मत्तुडै युन्नवाडो ?
काकुन्न मत्कार्यगतुलु भाविंप; । डी कृतघ्नत कोर्चि येटिकि दडय ?
मति नुपकारंबु मऱचिनवाडु । प्रतिन दप्पिनवाडु पाडिमै दनदु
चेलिकानि कार्यंबु सेयनिवाडु । तलपोय मानवाधमुडंड्रु बुधुलु;
अलवुमै नट बोयि यर्कजु बिलुवु; ।;पिलिचिन राननि बिरुदाडेनेनि
'ननि वालि जंपिन यम्मेंदु वोये' । ननि रम्मु; पो' म्मन्न नन्नकु म्रोक्कि

लक्ष्मणुडु कुपितुडै किष्किंधकु बोवुट

कनुगव ब्रळयाग्निकणमुलु दोरुग । घन शर चापमुल् गैकोनि वेडलि
नेल यल्ललनाड निडुजंगलिडुचु । गालि वेगमुन वृक्षमुलेल्ल गूल
गृतमति नटुपोयि किष्किंध जेर । नतिभीतुलै कपुलंदंद बर्व
ना पुरद्वारस्थुलगु कपुलप्पु । डेपऱतेंचि 'वीडेव्वडो' यनुचु ८००

गया। उसका आना नहीं हुआ। मेरे हाथ किए गये समस्त उपकार को मन से भुलाकर, उन्मत्त हो वह ॥ ७९० ॥

—शायद तारा से रतिकेलि में लगा हुआ है। शायद उस राज्य में मत्त हो रह गया है। वरन् मेरे कार्य की गतिविधियों के बारे में क्यों नहीं सोचता। इस कृतघ्नता को सहनकर, क्यों विलंब करना चाहिए ? बुधजन कहते हैं, मन से उपकार को भुलानेवाला, प्रतिज्ञा का भंग करनेवाला, न्यायानुकूल अपने मित्र का कार्य न करनेवाला सोचने पर मानवाधम है। समर्थता से वहाँ जाकर अर्कज को बुलाओ। बुलाने पर आने से इनकार कर, घमंड से बातें करे तो यह कह आओ "युद्ध में वालि का संहार करनेवाला बाण कहीं नहीं गया। जाओ।" (ऐसा) कहने पर, अग्रज को प्रणाम कर,

लक्ष्मण का क्रुद्ध हो किष्किंधा जाना

—नेत्रयुग्म से प्रलयाग्नि-कणों के निकलने पर, महान् शर-चाप हाथ में लेकर, निकलकर, धरती को कंपायमान करते हुए, लंबे-लंबे डग भरते हुए, (अपने) पवनसम वेग से समस्त वृक्षों के गिरने पर, कृतमति (निश्चित बुद्धिवाला) हो, वहाँ जाकर, (लक्ष्मण के) किष्किंधा पहुँचने पर, अतिभीत हो कपि इधर-उधर भागने लगे। उस पुर के द्वार पर स्थित कपि तभी विकास को खोकर, यह कहते कि 'यह कौन है ?' ॥ ८०० ॥

गोट वाकिळ्ळु ग्रक्कुन वेसि प्लवग । कोटि गावलि वॆट्टि कोरियत्तॆऱगु
वडि राजु कॆऱिंगिपवलॆननि यॆंचि । कडु भीतुलै पाऱि करमुलु मॊगिचि
वडि दार परिचार वनितलतोड । दडयका चंदमंतयु दॆल्प वारु
'निदि वेळ गा' दन्न नॆलमि नंगदुनि । गदिसि चागिलि म्रॊक्कि करमुलु मॊगिचि
'विनवय्य ! युवराज ! विख्याततेज !। मन वीटि वाकिट मौनिवेषंबु
गनुपड जडलु वल्कलमुलु दाल्चि । तन केल बाणकोदंडमुल् वूनि
यॊक डंतकुडु वोलॆ नुन्नाडु वच्चि । यकलंकसत्त्वुडै' यनिनि नंगदुडु
ना रामु ननुजन्मुडनि निश्चयिंचि । तारातनूजुडु दडयक वच्चि
सौमित्रि बॊडगन जंडकोपमुन । 'दामरसाप्तनंदनुन कंगदुड !
ना राक चॆपु' मन्न नतडुनु बोयि । मार विकाराब्धिमग्नुडै मिगुल ८१०
गारवंबुन जेरि करपल्लवमुल । ना रुमासति यंघ्रुलल्लन बिसुक
दारामृदूरुलु दलगड गाग । नूरक सुखियिंचुचुन्न सुग्रीवु
गनुगॊनि 'वाडॆ लक्ष्मणुडुन्नवाडु । मन वीटि वाकिट मंडुचु' ननिन
मदि संशयिंचुचु मंत्रुल बिलिचि । 'यिदियेमि ? सौमित्रि हितमैत्रि दप्पि

—दुर्ग के द्वार झट से बंदकर, प्लवग-कोटि को पहरे पर रख, चाहकर, वह विधान झट से राजा को जताने का सोचकर, अतिभीत हो भागकर, हाथ जोड़कर, झट तारा की परिचारिकाओं से अविलंब वह समस्त विधि बताई। उन्होंने कहा "(राजा को बताने के लिए) यह समय नहीं है"। तब स्नेह से अंगद के निकट जाकर, साष्टांग प्रणामकर, हाथ जोड़कर (कहा):—"हे युवराज ! विख्यात तेजवाले ! सुनो न। हमारे निवास-स्थान के द्वार पर मुनिवेष में, जटाएँ-वल्कल धारणकर, अपने हाथ में बाण-कोदंड धारणकर, कोई अकलंक सत्त्ववाला (व्यक्ति) अंतक (यम) के समान आया हुआ है।" (ऐसा) कहने पर अंगद ने यह निश्चयकर कि उस राम का अनुजन्म है, तारातनूज (अंगद) ने अविलंब आकर सौमित्री को देखा। चंडकोप से (लक्ष्मण ने कहा):—"हे अंगद ! तामरसाप्तनंदन को मेरा आगमन (का समाचार) बता दो।" (ऐसा) कहने पर, वह भी जाकर, (सुग्रीव को देखा जो) मार (मन्मथ) के विकार-सागर में अधिक मग्न बनकर, ॥ ८१० ॥

—सती रुमा के अधिक प्रेम से निकट पहुँचकर, चरणों को धीरे से दाबते रहने पर, तारा के मृदुल जाँघों को तकिया बनाकर, सुखी होनेवाले सुग्रीव को देखकर (कहा):—"वही लक्ष्मण हमारे निवास-स्थान की देहली पर, (क्रोध से) जलते हुए हैं।" (ऐसा) कहने पर मन में संशय करते

यी रीति वच्चुट केमि कारणमु ? । नेरमि नावल्ल नेमकिन लेदु'
अनि वितर्किपगा नांजनेयुंडु । दिननाथसुतुनितो देलियनिट्लनियें;
'ना महेंद्रकुमारु ननिगूल्चि नीकु । नी माड्कि गपिराज्यमिच्चिनयट्टि
रामुनि कार्यमारडि वुच्चि यिट्लु । कामोपभोगसौख्यंबुल बोंदलि
युंदुरे ? यिदुकै युग्रभावमुन । संदेहमेटिकि, सौमित्रि यिटकु
वच्चिनाडम्मेटि वाकिट नुंड । वच्चुने ? लोकैकवंद्युडा घनुनि ८२०
राविपु; सेविंपु; रामुकार्यंबु । भाविंपु; गाविंपु परग नी प्रतिन'
ना विनि या रविनंदनुंडट्ल । भाविंप बंचिन रामानुजुंडु
भर्मगोपुर हर्म्यपटलंबु विश्व । कर्म निर्मित चित्र कर कौशलंबु
कैलासशैल संकाशसौधंबु । केळी सरोवरांकित वनांतरमु
देव गंधर्वावतीर्णप्लवंग । मावासतत्परंबगु तत्पुरंबु
चोच्चि यच्चोटि निस्तुलवस्तुमहिम । कच्चेरुवंदुचु नटु पोयि पोयि
यिंद्रुगेहमुतोड नेनयैन वान । रेंद्रु गेहमु सोच्चि हेच्चिन किनुक
नच्चरलेमल यंदचंदमुलु । मेच्चनि मेलतल मिसिमिपाटलुनु

हुए, मंत्रियों को बुलाकर वितर्क (सोच-विचार) किया कि "यह क्या ? सौमित्र के हितमैत्री को छोड़कर, इस प्रकार आने का क्या कारण है ? खोजने पर भी मुझसे दोष नहीं हुआ है।" आंजनेय ने दिननाथसुत को समझाकर यों कहा:—"उस महेंद्रकुमार (वालि) को युद्ध में संहारकर, तुम्हें इस प्रकार कपिराज्य (पद) प्रदान करनेवाले राम के कार्य को व्यर्थकर, इस प्रकार कामोपभोग-सुखों में फूलकर रहना क्या उचित है ? इसमें संदेह क्या ? इसी कारण उग्रभाव से सौमित्री यहाँ आया है। उस वीर को द्वार पर रहने देना उचित है ? लोकैक-वंद्य उस महान् (व्यक्ति) को ।। ८२० ।।

—(भीतर) बुलाओ; सेवा करो, राम के कार्य पर विचार करो, अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करो"। ऐसा कहने पर सुनकर, 'रविनंदन ने उसी प्रकार बुला भेजा। (तब) रामानुज भर्म (सुवर्ण)-गोपुर (से युक्त) हर्म्य (सौध)-समूहवाले, विश्वकर्मा के निर्माण के चित्र-कर-कौशल से संपन्न, कैलास-शैल-संकाश (समान) सौधवाले, केलीसरोवर से युक्त उपवनवाले, देव गंधर्वों के अवतार प्लवंगों (वानरों) के आवास बने उस पुर में प्रवेश कर, वहाँ की अनुपम वस्तुओं की महिमा पर आश्चर्य करते हुए, उधर जा-जाकर, इंद्र के गृह की समता करनेवाले वानरेंद्र के गृह में प्रवेशकर, अधिक क्रुद्ध बनते हुए, अप्सरा स्त्रियों के सौंदर्य-विलास की सराहना न करनेवाली (अर्थात् उनसे अधिक सुंदर) सुंदरियों की उज्ज्वल

वारि वीणावेणु वाद्यमृदंग । भूरिभूषणरवस्फूर्तियु विनुचु
नंतकाकारुडै यतिकोपुडगुचु । नंतःपुरद्वारमट्टु चेरि निलुव ८३०
ना राक विनि यॊंटि नपुडु दा राक । तारासमेतुडै तडयक वच्चि
यतनि कोपंबुनु नतनि रूपंबु । नतिभीति गनुगॊंचु नर्कनंदनुडु
अलमॆडु भक्तिमै नडुगुल कॆऱगि । वलयु नर्चनमु ली वच्चिन जूचि
'योरि ! रामद्रोहि ! योरि ! कृतघ्न ! । योरि ! नीयर्चनलुचितमे
नाकु ?
जानकीपतितोड सत्यात्मुतोड । वानकालमु वुच्चि वच्चॆद नंटि;
रावैति; तप्पिति; रघुरामुनाज्ञ । भाविंपलेवैति; पशुबुद्धिवैति;
वालि जंपिन रामवसुधेशु शरमु । कालाग्निकणमुलु ग्रक्कुचुन्नदियु;
निनु नीऱु सेयक निलुचुने यिक ? । वनचराधम ! वॆऱ्ऱिवाडवै चॆडिति'
वनिन दारादेवि यतिभीति बॊंदि । 'यनघ ! मी दासुडी यर्कनंदनुडु;
ई राज्यसंपदली भोगकोट्टु । लारय मीरिच्चिनविय यीतनिकि; ८४०
मीरु वॆट्टिन चॆट्टु मिहिरनंदनुडु; । वैरंबुनकु नॆंतवाडु मीकितडु ?
रणविशारदुडैन रामुनि याज्ञ । गणुतिंपकुन्नाडु गाडर्कसुतुडु;

शोभाएँ, उनकी वीणा, वेणु, मृदंग (आदि) वाद्यों (तथा) भूरि-भूषण-रव-स्फूर्ति को सुना। (सुनकर) अंतक (यम) आकारवाले होते हुए, अति-क्रुद्ध होते हुए, अंतःपुर-द्वार पर पहुँचकर खड़े हुए। ॥ ८३० ॥

उस आगमन (के समाचार) को सुनकर, तब स्वयं (अकेले) न आकर, अविलंब तारा-सहित आकर, उसके (लक्ष्मण के) कोप, उसके रूप को अतिभय से देखते हुए, अर्कनंदन ने उमड़ती हुई भक्ति से, चरणों पर प्रणत होकर, समुचित अर्चन करना चाहा। तो (उसे) देख (लक्ष्मण ने कहा):— "अरे! रामद्रोही! अरे! कृतघ्न! अरे! ये तेरी अर्चनाएं मेरे लिए उचित हैं? सत्यात्मा जानकीपति से कहा था कि 'वर्षाकाल बिताकर आऊँगा।' नहीं आए, (वचन का) भंग किया, रघुराम की आज्ञा का विचार नहीं किया। पशुबुद्धि वाले बन गए। राजाराम का वह शर जिसने वालि का संहार किया था, कालाग्नि के कणों को उगल रहा है। वह अब तुम्हारा नाश किए बिना रुकेगा? वनचर-अधम! मूर्ख बनकर, नष्ट हो रहे हो।" (ऐसा) कहने पर देवी तारा अतिभीत होकर (बोली):— "हे अनघ! यह अर्कनंदन आपका दास है। ये राज्य-संपत्तियाँ, ये भोग-कोटियाँ (भूरि-भोग-सामग्री), सोच देखने पर आप ही की दी हुई हैं। ॥ ८४० ॥

मिहिरनंदन (सुग्रीव) आपका लगाया हुआ वृक्ष (के समान) है।

पोलुचु नी कार्तिक पूर्णिम नाटि । किलमीद गपिसेनलॆल्लनु गूर्प
बडवालु नीलुनि बंचि ता बोदु । नडरॆडु कडकतोननि युन्नवाडु;
काडु रामद्रोहि; गाडसत्युंडु; । गाडु कृतघ्नुंडु; गान मीरितनि

लक्ष्मणुडु सुग्रीवुनि मन्निंचुट

गरुणिंपु डनवुडु गलुषंबु दक्कि । नरनाथसुतुडर्चनमुलु गैकॊनियॆ ।
गैकॊन्नपिम्मट गनकपीठमुन । राकॊमारुनि नुंचि रवितनूभवुडु
तदनुज्ञ गैकॊनि तानु गूर्चुंडि । मृदुमधुरोक्तुलु मेकॊन बलिकॆ;
'सौमित्रि ! राघवस्वामिकार्यंबु । ने मऱतुनॆ? यिप्पुडॆल्ल वानरुल
दॆच्चॆद; वैदेहि दिक्कुल वॆदुक बुच्चॆद;। वच्चॆद बॊदडु मी वॆनुक; ८५०
ने शरंबुन वालि यिलमीद व्रालॆ । ने शरंबुन गूलॆ नेडु ताळमुलु
ना शरंबे चालु नखिल दानवुल । नाशंबु नॊंदिप, नाति साधिंप;
नैननु रघुरामु नतिभक्ति गॊलिचि । येनु गीर्तुलकॆल्ल नॆल्लयै पॊलुतु ।'

यह आपके वैर के योग्य नहीं है। यह बात नहीं है कि अर्कसुत रण-विशारद राम की आज्ञा को नहीं मान रहा है। इस कार्तिक-पूणिमा तक पृथ्वी पर की समस्त कपिसेना को एकत्र करने के लिए सेनापति नील को भेजा है। स्वयं युद्ध के लिए उमड़ते साहस से बैठा हुआ है। वह रामद्रोही नहीं है, असत्यभाषी नहीं है, कृतघ्न नहीं है, अतः आप इस पर

लक्ष्मण का सुग्रीव को मानना

—कृपा कीजिए।" ऐसा कहने पर, कलुष (भाव) को छोड़कर, नरनाथ-सुत (राजकुमार-लक्ष्मण) ने अर्चना स्वीकार की। ग्रहण करने के बाद, कनकपीठ पर राजकुमार को आसीन कर, रवितनूभव उनकी आज्ञा लेकर स्वयं बैठ गया, मृदुमधुरोक्तियों से (उन्हें) सहमत कराते हुए कहा :—"हे सौमित्र ! स्वामी राघव के कार्य को मैं भूल सकता हूँ ? अभी समस्त वानरों को लाऊँगा। (समस्त) दिशाओं में वैदेही को ढूंढने के लिए भेजूंगा। चलिए, मैं आपके पीछे-पीछे आऊँगा। ॥ ८५० ॥

जिस शर से वालि पृथ्वी पर गिरा, जिस शर से सात ताड़ (के वृक्ष) गिरे, वह शर ही समस्त दानवों का नाश करने के लिए, स्त्री (सीता) को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है। फिर भी अतिभक्ति से रघुराम की सेवाकर, समस्त कीर्तियों के लिए सीमा बनकर, मैं विराजूंगा।"

सुग्रीवुडु कपियूथमुलतो माल्यवंतमु जेरुट

ननिपल्कि हनुमंतु नतिनीतिमंतु । गनुगॊनि 'मन वीट गल कपिकोटि
जाटिंचि वॆंडलिप समकट्टु प्रतिन । बाटिंचि; यॆडसेय बाडिगादिक;
मनमिप्पु डा राम मनुजेशु गान । जनवलॆ' ननि पल्कि संभ्रमंबॆसग
दरणिनंदनुडंत दारादिसतुल । वॆरवॊप्प नप्पुडु वीड्कॊनि वच्चि
कलय दिक्कुल नुन्न कपियूथपतुल । बलमुल बिलिपिंचि पयनंबु सेसि
मेदिनीभागंबु मिन्नुनु दिशलु । भेदिल्ल ब्रस्थान भेरि वेयिंचि
प्रबलकांचन रत्न रम्यमौ नॊक्क । शिबिकपै लक्ष्मणु जॆलिमि नॆक्किंचि
८६०
चामरद्वय सितच्छत्रचिह्नंबु । ला महात्मुनि म्रोल नरुग नेर्मिंचि
सबलुडै तानुनु सौमित्रि वॆनुक । शिबिक यॊक्कटि यॆक्कि चित्रवैखरिनि
मुंदुगा शुभतूर्यमुलु बोरुकॊनग । ग्रंदुगा वंदिमागधनुतुल् सॆलग
नॆडनॆड गपिनाथुलेतॆंचि तन्नु । बॊडगॊन नुडुगणस्फुरितेंदु पगिदि
सकल वानर वीर सैन्य सन्नाह । मकलंकमै यॊप्प नप्पुड कदलि
यरुदैन पेर्मितो नवनि गंपिप । गरमु तॆंपॆक्कि लक्ष्मणु गॊल्चि नडचॆ ।

सुग्रीव का कपिसमूहों के साथ माल्यवंत पहुँचना

ऐसा कहकर अतिनीतिवान हनुमान को देखकर (कहा):— "प्रतिज्ञा के अनुकूल हमारे आवास में स्थित कपिकोटि को घोषितकर, प्रस्थान के लिए सन्नद्ध करो। अब विलंब करना उचित नहीं है। अब हमें राजाराम के दर्शन करने जाना है।" ऐसा कहकर, संभ्रम के उमड़ने पर, तब तरणिनंदन ढंग से तारा आदि सतियों को बिदा कर आया। (और) शोभा से समस्त दिशाओं में स्थित कपियूथ-पतियों की सेनाओं को बुलाकर, प्रयाण (प्रस्थान) कर, पृथ्वी, आकाश (और) दिशाओं को विदीर्ण करनेवाली प्रस्थान भेरी को ध्वनित कराया। प्रेम से लक्ष्मण को प्रबल (अधिक)-कांचन-रत्न से रम्य बनी एक शिविका पर बिठाकर, ॥ ८६० ॥ —उस महात्मा के आगे-आगे चामर-द्वय और श्वेत-छत्र-चिह्नों को जानें का आदेश देकर, ससैन्य स्वयं भी सौमित्र के पीछे एक शिविका पर बैठ गया। आगे-आगे चित्रवैखरी (विलक्षणता) से शुभतूर्य (मंगलवाद्य) के बजते समय, अधिकता से वंदि-मागधों (चारण-भाटों) की नुतियों (स्तुतियों) के व्याप्त होने पर, जहाँ-तहाँ कपिनाथों के आकर, दर्शन करते रहने पर उडुगण (नक्षत्र) से स्फुरित (शोभित) इंदु के समान (शोभित होते हुए), सकल-वानर-वीर-सैन्य का (युद्ध) सन्नाह (सन्नद्धता) से अकलंक (दोषरहित)

नट माल्यवंतबुनंदुन्न रामु । डट ओयु कलकलंबप्पु डालिंचि
'यवे वच्चे गपिसेन' लनि कोपमुडिगि । रवितनूजुनि मीद रागिल्लुचुंडे ।
नंदमै मणिकांचनांचितंबैन । यांदोळिकाद्वयं बल्लंत डिग्गि
तामरसाप्तनंदनुडु संप्रीति । सौमित्रियुनु दानु जनुदेंचि ओक्कि ८७०
यविरळंबगु भक्ति हस्तमुल् मोगिचि । यवनिवल्लभुनकिट्लनि
विन्नविंचे;

'देव ! सेनल बिल्व देसलकु बंचि । वाविरि नवि गूडिवच्चुनंदाक
दंडेत्ति यिट राक तडसिति गानि । योंडोक्क वेंटमैनुन्नाड गानु'
अनिन नर्कजु रामु डति कृपादृष्टि । गनुगोनि मन्निंचे; गडकतो नंत
गैलासगिरियंदु गनकाद्रियंदु । नीलाचलमुनंदु निषधाद्रियंदु
द्रोणाचलमुनंदु दुहिनाद्रियंदु । शोणाचलमुनंदु सोमाद्रियंदु
वृषभाचलमुनंदु विंध्याद्रियंदु । ऋषभाचलमुनंदु ऋक्षाद्रियंदु
बारियात्रमुनंदु ब्राग्गिरियंदु । ना रत्नगिरियंदु नस्ताद्रियंदु
मलयाचलमुनंदु मंथाद्रियंदु । गलगोन वर्तिंचु घनबाहुबलुलु
पवमानसूनुंडु पनसु डंगदुडु । गवयुंडु नीलुंडु गंधमादनुडु ८८०

हो शोभा देने पर, वह (सुग्रीव) तभी चलकर, अपूर्व गरिमा के साथ, पृथ्वी के काँपने पर, अधिक साहस से शोभित हो, लक्ष्मण की सेवा करते हुए चल पड़ा। वहाँ माल्यवंत में स्थित राम, वहाँ मुखरित कोलाहल को तब सुनकर, यह सोच कि 'वे ही कपिसेनाएँ आ रही हैं,' क्रोध के शांत होनेपर, रविपुत्र पर प्रसन्न हो रहे। सुंदर मणिकांचनमय शिविकाद्वय से थोड़ी दूर पर ही उतरकर, तामरस-आप्त (सूर्य)-नंदन ने संप्रीति से लक्ष्मण के साथ आकर, प्रणाम किया, ॥ ८७० ॥

—अविरल भक्ति से हाथ जोड़कर, अवनि-वल्लभ (राजा-राम) से यों निवेदन किया:— "हे देव! सेनाओं के लिए दिशाओं में (अपने लोगों को) भेजकर, क्रम से उनके एकत्र हो आने तक, (शत्रु पर) आक्रमण के लिए, यहाँ न आकर विलंब किया। और किसी कारण से लगा नहीं रहा।" (ऐसा) कहने पर राम ने अर्कज को अतिकृपादृष्टि से देखकर, सम्मानित (अथवा क्षमा) किया। तब साहस से कैलासगिरि, कनकाद्रि, नीलाचल, निषधाद्रि, द्रोणाचल, तुहिनाद्रि, शोणाचल, सोमाद्रि, वृषभाचल, विंध्याद्रि, ऋषभाचल, ऋक्षाद्रि, पारियात्र, प्राक्-गिरि, रत्नगिरि, अस्ताद्रि, मलयाचल, मंथाद्रि (आदि) में विचरण करनेवाले महान् बाहुबली (वानर), पवमान-सून (हनुमान), पनस, अंगद, गवय, नील, गंधमादन, ॥ ८८० ॥

पावकाक्षुडु कालपाशुंडु ग्रधनु । डा वेगदर्शियु नग्गवाक्षुंडु
नलुडु मैंदुडु महानाथुंडु धूम्रु । डलघुंडु जंघुंडु नग्गिरिभेदि
सुमुखुंडु केसरि ज्योतिर्मुखुंडु । विमुखुंडु तारुंडु विनतुंडु गजुडु
जांबवंतुंडनु संपाति रंभु । डंबुराशितनूजुडगु सुषेणुंडु
शतबलि शरभुंडु सन्नाथुलनग । नतिवीरवरुलु वीरादिगा गपुलु
तम सुतुल् दम हितुल् दम सहोदरुलु । दम चुट्टमुलु दामु दट्टमै कूडि
यिवि पदुलिवि नूरुलिवि वेलु लक्ष । लिवि कोटुलव्वल निवि शतकोटु
लनराक पद्म महापद्म शंख । मनग बर्विन संख्यलन्निटि गडचि
येलमि सोंपुन नेल यीनिनभंगि । जेलगि ये दिक्कु सूचिन वेल्लिविरिसि
येमेयि गोलदिगाकेपु दीपिंचि । भूमियु नाकसंबुनु निंड गप्पि ८९०
कर मुग्रगति ग्रालु कालदंडमुल । परुसुन दीपिंचु बाहुदंडमुलु
गेडगूडि बडबाग्नि कीललु वोलि । वडि बेर्चि दिवि रायु वालपाशमुलु
बोरि बोरि गालाभ्रमुल कांतुलनग । नुरवडि मै ग्रालु नुग्रदंष्ट्रमुलु
नलरेडु प्रळयकालादित्य बिंब । मुल बोलि मंडेडु मुखगह्वरमुलु
लोलाब्धि विपुल कल्लोल घोषमुल ।बोलि घोषिंचु नार्पुलु वेल्लिविरिय

—पावकाक्ष, कालपाश, ग्रधन, वेगदर्शी, गवाक्ष, नल, मैंद, महानाथ, धूम्र, अलघु, जंघु, गिरिभेदी, सुमुख, केसरी, ज्योतिर्मुख, विमुख, तार, विनत, गज, जांबवान, संपाति, रंभ, अंबुराशि (समुद्र)-तनूज सुषेण, शतबलि, शरभ, सन्नाथ आदि अतिवीरवर--इनसे प्रारंभकर (समस्त) कपि अपने सुत, अपने हितू, अपने सहोदर, अपने संबंधी (जनों के साथ) सांद्रता से एकत्र होकर, ये दस हैं, ये सौ हैं, ये हजार हैं, ये लाख हैं, ये करोड़ हैं, उसके बाद ये सौ करोड़ हैं, (उसके बाद) गिने न जा सकनेवाले पद्म, महापद्म, शंख आदि समस्त संख्याओं को पारकर, (इतनी अधिक संख्या में) आनंद की शोभा से ऐसे विजृंभित हुए, मानों धरती से (तत्काल) उत्पन्न हो आए हों। जिस दिशा में देखें, उधर ही उमड़ पड़ते हुए, किसी प्रकार से कम न होकर, उन्नति से दीप्त होकर, भूमि और आकाश को आच्छादित कर दिया (इस प्रकार से व्याप्त हो गए)।॥ ८९० ॥

अधिक उग्रगति से जाज्वल्यमान कालदंड के समान परुषता से दीप्त बाहुदंडों के साथ एकत्र होकर, बाडब-अग्नि की ज्वालाओं के समान, शीघ्रता से आकाश को रगड़नेवाले वालपाश (पूँछ) मानो बार-बार कालाभ्र (प्रलयकालीन मेघ) की काँतियाँ हों, इस प्रकार शरीर से दीप्त होनेवाली उग्र द्रंष्ट्राएँ, शोभायमान प्रलय काल के आदित्यबिंब के समान प्रज्वलित मुख-गह्वर, चंचल समुद्र के विपुल-कल्लोल-घोष के समान

बलमुलतो गूड प्लवगवल्लभुलु । गलगोनि वच्चु नग्गलिकलु सूचि
यिच्चलोपल नप्पुडिक्ष्वाकुतिलकु । डच्चेरुवडि चूच्चि हर्षिचुचुंडे ।
ना वेळ सुग्रीवु डधिपति जूचि । 'देव ! ना सेन लेतेंचु चंदंबु
लवधरिंचितें ? वीरलंदोक्कडोकडु । तिविरि नी पनुलु साधिपनोपुदुरु'
अनि चेप्पि वारल यलवुलु वेळ्ळु । जननमुल् जातुलु सत्त्वसंपदलु ९००
दनुवुलु वर्णमुल् दगु भोजनंबु । लुनुकुलु देशंबु लोलि वर्णिचि
'बडबाग्निमुखमुन बडियुन्ननैन । गडुवेग जनि युग्रगति योप्पुमिगिलि
वडि बेर्चि यार्चि दुर्वारुलै कदिसि । पुडमियु नभमु नब्धुलु सोच्चियैन
नट मृत्यु वक्त्रंबुनंदुन्ननैन । नेंट नेंदु बोरानि येंदुन्ननैन
नी वानराधीशुलिदोक्करोकरु । देव ! नी देवि वैदेहि देच्चेदरु ।
आनति यि' म्मन्न नर्कजु दिगिचि । भूनाथुडादरंबुन गौगिलिंचि
'बलसंपदलयंदु भानुज ! नीकु । दलपोय मऱि यसाध्यमुलेंदु गलवु ?
पूनि नी पौरुषंबुनु जूचि काक । येनेल कैकोंदु निट क्रिंद निन्नु'
ननि पलिक 'वैदेहि नरसि रा बनुपु' । मनवुडु हर्षिचि यर्कनंदनुडु

गरजनेवाले उमड़ते सिंहनाद—(इस प्रकार की) सेनाओं को साथ लिए हुए आनेवाले प्लवग-वल्लभों (वानर राजा) के महत्त्व को देखकर, तब इक्ष्वाकु-तिलक (राम) मन में आश्चर्यचकित हो, हर्षित होते रहे। उस समय सुग्रीव ने अधिपति (राजा = राम) को देखकर (कहा):— "हे देव! मेरी सेनाओं के आगमन के विधान पर ध्यान दिया है न ? इनमें से एक-एक (अकेला) ही तुम्हारे कार्य को सिद्ध कर सकते हैं।" ऐसा कहकर, उनका बल, नाम, जन्म, जाति, सत्त्व-संपत्तियाँ, ।। ९०० ।।
—तनु, वर्ण, योग्य भोजन, स्थान, देश (आदि का) क्रम से वर्णनकर, (कहा):— "हे देव ! इन वानराधीशों में प्रत्येक आपकी पत्नी वैदेही को, वह बाड़ब-अग्नि के मुख में पड़ी क्यों न हो, अतिवेग से जाकर, उग्रगति से शोभित हो, शीघ्र ही गरजकर, दुर्वार हो, लगकर, पृथ्वी, नभ, अब्धि (समुद्र) में पैठकर, वह कहीं मृत्युमुख में ही क्यों न हो, बिलकुल अगम्य स्थान में ही क्यों न हो, (सीता को) लाएँगे। आज्ञा दीजिए।" (तब) अर्कज को निकट ले, भूनाथ ने आदर से गले लगाकर (कहा):— 'हे भानुज! सोचने पर, बल की संपदा (के कारण) तुम्हारे लिए कहीं (कोई) असाध्य (कार्य) है ? (नहीं है)। तुम्हारे पौरुष को देखकर ही, तुम्हें ग्रहण किया (अपनाया) है। नहीं तो क्यों अपनाता।' ऐसा कहकर "वैदेही का पता लगा आने को (अपने लोगों को) भेजो।" ऐसा कहने पर अर्कनंदन हर्षित हो,

सीतान्वेषणकै सुग्रीवुडु वानरुल बंपुट

ऒनर नुत्तममैन यॊक लग्नमंदु । विनतुडन् वानर वीरुनि बिलिचि
९१०
'ये वॆंट नॆच्चोट नॆंदु नेमऱक । नीवु नी सेनलु नॆऱि दूर्पु नडचि
या महीतनय ना यमुनलो वॆदकि । यामुनगिरि जूचि यटमीद बोयि
सुरनदिलो जूचि शोणनदंबु । गरमर्थि नरसि या कौशिकि वॆदकि
यल सरस्वति जूचि यल सिंधुवरसि । पॊलुचु पौंड्र विदेह भूमुलु वॆदकि
मालव कोसल मागध ब्रह्म । मालाख्य सीमल मैथिलि नरसि
जलधितीरमु सूचि चनि मंदराद्रि । निलय किरातुल नॆलवुलु वॆदकि
तिवुटमै नट यवद्वीपंबु गडचि । यवल जंबूद्वीपमट दाटि मीद
जॆच्चॆर नटु पोयि शिशिराद्रि वॆदकि । यच्चोट गालोदमनु मडुगरसि
तनरु लोहितसमुद्रमु दाटि पोयि । चनि कूट शाल्मलिच्छायल नरसि
मऱि पोयि गरुडाश्रमंबुन वॆदकि । वरलु गोश्रृंगपर्वतमु शोधिंचि ९२०
यंदलि श्रृंगंबुलंदु वर्तिचु । मंदेहराक्षसमंडलि नरसि

सीता को खोजने सुग्रीव का वानरों को भेजना

—अनुकूलता से एक उत्तम लग्न में, विनत नामक वानर को बुलाकर (बोला) ॥ ९१० ॥

—"किसी तरह, कहीं भी असावधानी न बरतकर, तुम अपनी सेनाओं के साथ, क्रम से पूर्व की ओर चलकर, उस महीतनया (सीता) को, उस यमुना में ढूँढ़कर, यामुनगिरि को देखकर, वहाँ से (आगे) जाकर, सुरनदी में देखकर, अधिक इच्छा से शोणनद को खोजकर, उस कौशिकी में ढूँढ़कर, फिर सरस्वती (नदी) को देखकर, फिर सिंधु में खोजकर, विस्तृत पौंड्र, विदेहभूमियों को खोजकर, मालव, कोसल, मागध, ब्रह्ममाला नामक देशों में मैथिली को खोजकर, जलधितीर (छोर) को देख, आगे (जाकर) मंदराद्रि में निवास करनेवाले किरातों के (निवास) स्थान ढूँढ़कर, इच्छा से वहाँ यवद्वीप पारकर, आगे उसके बाद जंबूद्वीप को पारकर, शीघ्र उधर जाकर, शिशिराद्रि में (हिमालय) खोजकर, वहाँ 'कालोद' नामक सरोवर की खोजकर, शोभित लोहित समुद्र को पारकर जाकर, कूट शाल्मली (वृक्ष की) छायाओं में खोजकर, और (आगे) जाकर, गरुडाश्रम में (सीता की) खोजकर, विराजमान गोश्रृंगपर्वत पर खोजकर, ॥ ९२० ॥

—उसके शिखरों पर निवास करनेवाले मंदेह राक्षसों के समूह को देखकर, वहाँ से दुग्ध-सागर को सरलता से पारकर, वहाँ सुदर्शन नामक सरोवर

यट दुग्धसागर मवलील गडचि । यट सुदर्शनमनु नळिनिलो वॆदकि
वलनॊप्प शुद्धार्णवमु दाटि पोयि । बलुवैन जातरूपशिलाद्रि यरसि
यंदु वेदललतो नासीनुडैन । यिंदुवर्णु ननंतु नीक्षिंचि म्रॊक्कि
यॆगि बदुनालुगु योजनंबुलकु । मिगिलि यव्वलनुन्न मेरुव वॆदकि
या मेरुगिरिचुट्टु नर्कुनि कॆऱगि । या मॆयि वालखिल्यादुल कॆऱगि
यावल नुदयाद्रियंदु शोधिंचि । रावणु निलय मारसि वार्त दॆम्मु ।
रविलेक यंधकारमु ग्रम्मु कतन । भुवि मीद नव्वलि भूमुलॆऱुग;
निविडि नी विट्टु पोयि नॆललोन रम्म; । यवमति राकुन्न नाज्ञ गाविंतु'।
नावुडु लक्ष वानरुलतो गूडि । या वालितम्मुन कर्कवंश्युनकु ९३०
वेवेल तॆऱगुल विनतुडै कडगि । वे वेग विनतुंडु वॆडलॆ दूर्पुनकु ।
निनतनूभवुडंत हितशीलु नीलु । हनुमंतु नंगदु नट जांबवंतु
गजु गंधमादनु गवयु गवाक्षु । विजयुनि मैंदुनि द्विविदुनि दारु
दग बिल्चि 'मीरिक दक्षिणंबुनकु । दगु वानरुल गॊंचु दडयक पोयि
यर्मिलि विंध्याद्रि यादिगा दॊडरि । नर्मदयु दशार्णनगरंबु नरसि
दंडकारण्यंबु दप्पक वॆदकि । दंडिगा नवल गोदावरि नरसि

में खोजकर, बड़ी शोभा से शुद्ध-अर्णव (समुद्र) को पारकर, जाकर, महान् जातरूप शिलापर्वत को खोजकर, वहाँ सहस्र सिरों के साथ आसीन इन्दुवर्ण-वाले अनन्त (आदिशेष) को देख, प्रणामकर, लगन के साथ चौदह योजनों से भी आगे स्थित मेरु (पर्वत पर) खोजकर, उस मेरुगिरि के चौतरफ़ घूमनेवाले अर्क (सूर्य) को प्रणामकर, उसी प्रकार वालखिल्य आदि (मुनियों) को प्रणामकर, उसके बाद उदयाद्रि में खोजकर, रावण के निलय का पता लगाकर, समाचार लाओ। रवि के न होने से अंधकार के आवृत होने के कारण, पृथ्वी पर, उसके आगे की भूमियों को मैं नहीं जानता। झट से तुम इस प्रकार जाकर महीने के भीतर आओ। अवज्ञा कर नहीं आओगे तो दंडित करूँगा।" ऐसा कहने पर, एक लाख वानरों को साथ लिए, वालि के अनुज तथा सूर्यवंशवाले को, ॥ ९३० ॥

—हज़ार-हज़ार तरह से विनत हो, ससाहस, अतिशीघ्र विनत पूर्व दिशा की ओर निकल पड़ा। तब इन-तनूभव (सुग्रीव) ने हितशीलवाले नील, हनुमान, अंगद, जांबवान, गज, गंधमादन, गवय, गवाक्ष, विजय, मैंद, द्विविद, तार (आदि) को उचित रूप से बुलाकर (कहा):—"अब आप योग्य वानरों को साथ लेकर अविलंब जाकर, प्रेम से विन्ध्याद्रि से लेकर, सोत्साह नर्मदा, दशार्ण नगर में ढूँढकर, दंडकारण्य में अवश्य खोजकर, बहुलता से आगे गोदावरी में अन्वेषणकर, अतिशोभा से वहाँ वेत्रवती में

वलनॊप्प नट वेत्रवतिलोन जूचि । नॆलकॊनि काळिंग निषधदेशमुल
नारसि कर्णाटकांध्रचोळेंद्र । चेर केरळ पांड्य सीमल नॆल्ल
नरसि यम्मलयाद्रि नरसि कावेरि । नरसि यगस्त्युनि याश्रमंबरसि
यम्महात्मुनि गांचि यतनि यनुज्ञ । नॆम्मितो दाम्रपर्णिनदि दाटि ९४०
जलधिवेलावनस्थलमुल वॆदकि । पॊलुपॊंदु ना हेमपुरमुलो वॆदकि
यॆदिरिन कडक महेंद्राद्रियंदु । वॆदकि यव्वलनुन्न विषमाद्रि जूचि
यावल बुष्पाद्रियंदु शोधिंचि । क्रेव गुंजरमनु गिरि बरीक्षिंचि
यचट नगस्त्यु गेहमु विश्वकर्म । रचितमै तगु नंदु रमणि शोधिंचि
यंजनानदि दाटि यव्वल मणुल । रंजिल्लु फणुलचे रक्षिपबडिन
वदलक या भोगवतिलोन जॊच्चि । वॆदकि यव्वलनुन्न वृषभाद्रि करिगि
यंदुपै गंधर्वुलप्सरल् सुरलु । नुंदु राचोटुल नोडक वॆदकि
तलकक यरिगि वैतरणि लंघिंचि । पॊलुचु वैवस्वतुपुरमुन करिगि
यंदु ना समवर्ति यनुमति वडसि । पॊंदुगा बितृलोकमुलु गलयंग
वॆदकि सीतादेवि वृत्तांतमरसि । पदिलुलै नॆललोन ब्रतिवार्त दॆंडु । ९५०

देखकर, स्थिरता से कालिग, निषध देशों में पता लगाकर, कर्णाटक, आन्ध्र, चोल, इन्द्र, चेर, केरल, पांड्य (आदि) समस्त देशों में पता लगाकर, उस मलयाद्रि में ढूँढकर, कावेरी में पता लगाकर, अगस्त्य के आश्रम में पता लगाकर, उस महात्मा के दर्शनकर, उसकी आज्ञा से, प्रेम से ताम्रपर्णी नदी को पारकर, ।। ९४० ।।

—जलधि-वेला (किनारे पर स्थित)-वनस्थलियों में ढूँढकर, शोभायमान उस हेमपुर में खोजकर, अत्यधिक साहस के साथ महेंद्राद्रि में ढूँढकर, उसके आगे स्थित विषमाद्रि को देखकर, उसके बाद पुष्पाद्रि में ढूँढकर, पार्श्व में स्थित कुंजर नामक गिरि की परीक्षा (निरीक्षण) कर, वहाँ विश्वकर्मा के बनाए अगस्त्य के गृह में रमणी (सीता) को खोजकर, अंजना नदी को पारकर, उसके आगे मणियों से रंजित (विलसित), फणियों (सर्पों) से रक्षित उस भोगवती (नामक नगरी) को न छोड़, (उसमें) प्रवेशकर, ढूँढकर, उसके आगे स्थित वृषभाद्रि जाकर, जिसपर गंधर्व, अप्सराएँ, सुर रहते हैं, उसके स्थानों को, पीछे न हटकर, ढूँढकर, विचलित न होकर, जाकर, वैतरणी (नदी) को लाँघकर, सुशोभित वैवस्वत के नगर को जाकर, वहाँ उस समवर्ती (यमराज) की अनुमति प्राप्तकर, सुघड़ता से पितृलोकों को खूब अच्छी तरह ढूँढकर, सीतादेवी के समाचार को जानकर, सकुशल, महीने के भीतर प्रतिसमाचार लाओ । ।। ९५० ।।

आवल नंधकारावृतंबगुट । देवतलकु नैन दीऱदंदरुग ।
ननिन ना कपिनाथुलंदरु गूडि । यनुमोदरसवार्धियंदोललाडि
दिननाथतेजुडै दीपिंचु राम । जननाथुतो दम सत्त्वमुलू मॆऱसि
‘जानकि नॆंब्भंगि साधिंचि कानि । मानवेश्वर ! रित्त मगुडिरा मेमु’
अनि पल्क रामुडु हनुमंतु जूचि । यनुवुगा भाविकार्यमु निश्चयिंचि

रामुडु हनुमकु आनवालुगा अंगुळीयकमिच्चुट

तन दयादृष्टि यातनिमीद नुंचि । ‘यनिलज ! यिंदु र’म्मनि चेर बिलिचि,
‘जनकज गनुगॊन जालुदुवीव; । यनघ ! नीचेत गार्यमुलु सिद्धिंचु;
नीवंतवाडवु; नी बाहुबलमु । भाविंप नट्टिद पवमानतनय !
यिदॆ ! नादु मुद्रिक; यिदि सीत किच्चि । सुदतिचित्तमुलोनि शोकंबु माम्पि
सीतकु मा यन्न सेमंबु सॆप्पि । सीतसेममु जॆप्प शीघ्रंबॆ रम्मु’ ९६०
अनि मुद्रिक यॊसंग ननिलनंदनुडु । दन मस्तकंबुन धरियिंचि मिंचॆ

उसके आगे अंधकारावृत होने से, वहाँ जाना देवताओं के लिए भी संभव नहीं है।” (ऐसा) कहने पर वे सभी कपिनाथ मिलकर, अनुमोद-रसवारिधि में ऊभ चूभ होकर, दिननाथ (सूर्य के समान) तेज से दीप्त होनेवाले राजाराम के समक्ष अपने सत्त्वों के साथ चमककर, (कहा):—“हे मानवेश्वर ! किसी भी प्रकार से जानकी का पता लगाए बिना, रिक्त (खाली हाथ) नहीं आएँगे।” ऐसा कहने पर, राम हनुमान को देखकर, समुचित ढंग से भावी कार्य का निश्चयकर,

राम का हनुमान को अभिज्ञान के रूप में अंगूठी देना

—अपनी दयादृष्टि उसपर रखकर, ‘हे अनिलज ! यहाँ आओ’ कह निकट बुलाकर, (बोले):—“हे अनघ ! तुम्हीं जनकजा का पता लगा सकोगे। तुम्हारे हाथ कार्य सफल होंगे। तुम समर्थ हो। हे पवमानतनय ! सोच-विचार करने पर तुम्हारा बाहुबल वैसा है। यही है मेरी मुद्रिका। इसे सीता को देकर, सुदती (नारी) के चित्त के शोक (खेद) को दूरकर, सीता को हमारी कुशलता के बारे में बताकर, सीता का क्षेम (कुशल) बताने शीघ्र ही आओ।” ॥ ९६० ॥

(ऐसा) कह मुद्रिका देनेपर अनिलनंदन (हनुमान) (उसे) अपने

दनरार नुदयाद्रि दनदु शृंगमुन । दिनमणि दाल्चि येंते नोप्पु करणि;
नंत ना हनुमंतु डानंदमंदि । गंतुलु वेयुचु गरमुलु मोगिचि
'यिनकुलाधीश्वर ! यंत दव्वैन । जनि सीतयुन्नेड साधिंचि वत्तु;
सोमसूर्युलबट्टि शोधिंचियैन । भूमियु नभमु नब्धुलु सोच्चियैन
ना महीसुत निक नारसि वत्तु । नी महिलोपल नेच्चटनुन्न
नसमानमगु सत्त्वमभिनुति केक्क । वसुधेश ! रावणावासंबु जोत्तु;
नरिगेद' ननि म्रोक्कि यट दक्षिणमुन । करिगे वायुजुडंगदादुलतोड ।
मड्रि सुषेणुनि बिल्चि मर्कटेश्वरुडु । 'वड्ल नीवोक लक्षवानरुल् गोलुव
सौराष्ट्रदेशंबु सन जोच्चि वेदकि । धीरत बाह्लिकदेशंबु नरसि ९७०
श्रीकरमै योप्पु सिंधु सौवीर । केकयदेशमुल् गृतमति वेदकि
वलनोप्प बुन्नागवनमुलो नरसि । तेलिवि बश्चिमवार्धि दृष्टिंचि चूचि
ललितमौ नारिकेळवनंबु वेदकि । यलयकपोयि वज्राद्रि शोधिंचि
पारियात्रनगंबु वरिकिंचि यच्चट । गूरिमि गंधर्वकोट्टुल देलिसि
बलियु हयग्रीवु बंचजनाख्यु । गलन खंडिंचि शंखंबु जक्रंबु

मस्तक पर धारणकर, शोभा से उदयाद्रि के अपने शृंग (शिखर) पर दिनमणि (सूर्य) को धारणकर अधिक शोभित होने के समान, शोभित हुए । तब हनुमान आनंदित हो, उछलते-कूदते, हाथ जोड़कर, (बोला):— "हे इनकुलाधीश्वर ! कितनी भी दूर क्यों न हो, जाकर, सीता के स्थान का पता लगाकर आऊँगा । सोम (चन्द्र) और सूर्य को पकड़ ढूंढकर भी, (अथवा) भूमि, नभ, अब्धि (समुद्र) में प्रवेशकर ही सही, इस महि पर कहीं भी क्यों न हो, अब उस महीसुता का पता लगाकर ही आऊँगा । असमान सत्त्व के प्रशंसित होनेपर, हे वसुधेश ! रावण के आवास में प्रवेश करूँगा । (अब मैं) जाऊँगा ।" कह, प्रणामकर, वायुज अंगद आदियों के साथ उधर दक्षिण को गया । तब सुषेण को बुलाकर मर्कटेश्वर (वानरों का राजा = सुग्रीव) ने (कहा):—"शोभा से तुम एक लाख वानरों के सेवा करनेपर, सौराष्ट्र देश जा, प्रवेशकर, ढूँढकर, धैर्य से बाह्लिक देश में पता लगाकर, ।। ९७० ।।

—श्रीकर हो शोभित सिंधु, सौवीर, कैकयदेशों को कृतमति (निश्चित-बुद्धि) से ढूंढकर, सुशोभित पुन्नाग वन में ढूंढकर, अच्छी तरह पश्चिम समुद्र पर दृष्टि रखकर देख, ललित हो नारिकेल वन में ढूंढकर, बिना थके जाकर वज्राद्रि को ढूंढकर, पारियात्रनग (पर्वत) को निहारकर, वहाँ प्रेम से गंधर्व समूह को जानकर (परिचय प्राप्तकर), जहाँ बली हयग्रीव तथा पंचजन नामक (व्यक्तियों का) युद्ध में संहारकर, सर्वप्रथम चक्री (विष्णु)

जक्रि यॆच्चो दॊल्लि जत गांचॆनट्टि । चक्रवंतंबनु शैलंबु वॆदकि
मॆलकुव नट्टुपोयि मेघाद्रियरसि । विलसिल्लु नऱुवदिवेल संख्यमुलु
गल कांचनाद्रुल गलय नीक्षिंचि । जलजाप्तुडॆचट नस्तमुगांचु नट्टि
चरमाद्रि नीक्षिंचि सौवर्णमरसि । पुर्णिंचु वरुणुनि पुरमॆल्ल वॆदकि
चरितार्थुडगु मेरुसावर्णिमौनि । बरिकिंचि नॆललोन ब्रतिवार्त दॆंडु;
९८०

अर्कहीनमु नमर्यादंबु गान । बॆकॊंन नव्वलि पृथिवि ने नॆऱुग ।'
ननिन सुषेणादुलगु महाकपुलु । पनि बूनि पोयिरि पडमटि दॆसकु ।
जलजाप्तसुतुडंत शतबलि बिलिचि । 'नलि नीवु लक्षवानरुलतो गूडि
मॊंदल बुळिंदभूमुलु सॊच्चि पोयि । चॆंदरक या सौरसेनंबु वॆदकि
भरतभूमुल नॆल्ल बरकिंचि यवन । धरणीशुदेशंबु तडयक वॆदकि
कडगि कांभोज कॊंकणभूमुलरसि । यॆडपक यट्टु पोयि हिमवंतमरसि
सोमाश्रमंबुन जॊच्चि शोधिंचि । श्रीमिंचु कालाख्यशिखरि नीक्षिंचि
या पै सुदर्शनमनु नद्रिवॆदकि । कामिंचि यट्टु पोयि कनकाद्रि वॆदकि
कैलासगिरि जेरि कौबेर वनमु । ना लोलनयन मीरलयक वॆदकि

ने शंख और चक्र दोनों को प्राप्त किया था, उस चक्रवंत नामक पर्वत पर ढूँढकर, सावधानी से उधर जाकर मेघाद्रि में अन्वेषणकर, शोभित साठ हज़ार संख्यावाले कांचन पर्वतों को अच्छी तरह देखकर, जलजाप्त (सूर्य) जहाँ अस्त होता है, उस चरमाद्रि को देखकर, सौवर्ण पर ढूँढकर, वर्धित वरुण के नगर भर में ढूँढकर, चरितार्थ बने मेरु सावर्णि मौनी को देखकर, महीने भर में प्रतिसमाचार लाओ ।॥ ९८० ॥

अर्कहीन होने से, अमर्यादित होने से उसके बाद वाली पृथ्वी का मैं उल्लेख नहीं करूँगा और जानता भी नहीं हूँ ।" कहनेपर सुषेण आदि महाकपि, निश्चित मति से पश्चिम की ओर गये । जलजाप्तसुत (सुग्रीव) ने तब शतबली को बुलाकर (कहा):—"शोभा से तुम एक लाख वानरों के साथ, प्रथमतः पुलिद भूमियों में प्रवेशकर जाकर, एकाग्र हो, उस सौरसेन (प्रदेश) को ढूँढकर, समस्त भरतभूमियों को देखकर, अविलंब यवन-धरणीश के देश को खोजकर, सप्रयत्न कांभोज, कोंकण भूमियों में देखकर, न रुककर वहाँ जाकर हिमवंत में पता लगाकर, सोमाश्रम में प्रवेशकर, ढूँढकर, अधिक श्रीसंपन्न कालाख्य-शिखरी को देखकर, उसके बाद सुदर्शन नामक पर्वत में ढूँढकर, चाहकर उधर जाकर कनकाद्रि में ढूँढकर, कैलास-गिरि पहुँचकर, कौबेर (कुबेर के) वन में उस लोल-नयनवाली

धनदुनि पुरमु नातनि सरोवरमु । ननुमोदभरमु बायक विलोकिंचि ९९०
यंदु गुबेरुनि नडिगि क्रौंचाद्रि । यंदु मीरंदऱु नवनिज नरसि
चनि यट मैनाकशैलंबु गडचि । यनघ ! वैखानसंबनु कोलनरसि
तनरु शैलोदाख्यतटिनि लंघिंचि । गोनकोनि युत्तरकुरुभूमुलरसि
यच्चट गंधर्वुलप्सरल़ु सुरलु । निच्चलु नुंदु रा नेलवुलु वेदकि
निलुवकुत्तरपयोनिधि दाटिपोयि । सोलयक यटमीद सोमाद्रिवेदकि
यचट ब्रह्मयु शिवुडर्थि वर्तिंतु । रचलगति मीऱ नंदुंडि मरलि
योक नेललोपल नुर्वीशुकडकु । ब्रकटंबुगा मीरु प्रतिवार्त देंडु"
अनवुडु शतबलि यवनीशु वीडु । कोनि युत्तरंपु दिक्कुन केगे; नंत
नप्पुडु रघुरामुडर्कजु जूचि । 'येप्पुडु चूचिनावी भूमुलेल्ल'
ना विनि 'वालिकि नाडेनु वेऱचि । वेवेग यतडु ना वेनुवेंट दगुल १०००
गलगोनं गुऱुतुलुगा महियेल्ल । नलुदिक्कुलुनु जूचिनाड ने' ननियें ।
ननिन नच्चेरुवंदि यट गोंतकाल । मिनजानुजुलु गोल्व निनकुलुडुंडे;

को, न थककर, ढूँढकर, धनद (कुबेर) के नगर, उसके सरोवर को अनुमोद (प्रसन्नता) के भार से न छोड़कर, देखकर, ।। ९९० ।।

—वहाँ कुबेर से पूछकर क्रौंचाद्रि में तुम सब लोग अवनिजा का पता लगाकर, (आगे) जाकर वहां मैनाक शैल को पारकर, हे अनघ ! वैखानस नामक सरोवर में ढूँढकर, शोभित शैलोदाख्य-तटी (नदी) को लांघकर, सप्रयत्न उत्तर-कुरु भूमियों में पता लगाकर, वहाँ जहाँ गंधर्व, अप्सराएँ, सुर नित्य निवास करते हैं, उन स्थानों को ढूँढकर, (वहाँ) न रुककर उत्तर पयोनिधि को पारकर जाकर, न थककर, उसके बाद सोमाद्रि पर ढूँढो। वहाँ ब्रह्मा और शिव प्रेम से रहते हैं। अचलित (अविचल) गति से वहाँ से लौटकर, एक महीने के भीतर, उर्वीश (राजा राम) के पास, प्रकट रूप से तुम लोग प्रतिसमाचार लाओ।" ऐसा कहने पर शतबली अवनीश से बिदा लेकर उत्तर दिशा की ओर गया। तब रघुराम ने अर्कज को देख (कहा):—"तुमने इन सभी भूमियों को कब देखा है ?" यह सुनकर (सुग्रीव ने कहा):—'उस दिन मैं वालि से डरकर, उसके मेरे पीछे पड़नेपर, अतिशीघ्र, ।। १००० ।।

—विकल हो, समस्त मही को, चारों दिशाओं को मैंने देखा है।' (ऐसा) कहने पर आश्चर्यचकित हो, इनकुलवाला (राम) इनज (सुग्रीव) (तथा) अनुज (लक्ष्मण) के सेवाएँ करते रहनेपर, वहीं कुछ समय तक रहा। उचित विधान से पूर्व, पश्चिम (और) उत्तर में अन्वेषण के लिए जगदीश

दग बूर्व पश्चिमोत्तरमुल वेंदक । जगतीशु पनुपुन जनिन वानरुलु
निनरश्मुलेंदाक निलमीद बर्वु । ननुपमसत्त्वुलै यंदाक दिरिगि
नलिनाक्षि नेंदु गानक वच्चि पतिकि। जेलुवेदि प्रतिवार्तसेप्पिरंदरुनु;
नट रामसुग्रीवु 'लंगदमुख्यु । लिट मीद ब्रतिवार्त लेमि सेप्पेदरो ?
यदि येमि चंदमो ?' यनि वारि राक । केंदुरु चूचुचुनुंडिरेंतयु वगचि;
यंत नंगदमुख्युलगु महाकपुलु । पंतंबु लाडुचु बरमहर्षमुन
संतत जवसत्त्वसंपदल् मेऽसि । मंतु केक्किन हनुमंतुंडु दामु
जेंदरक रविजुंडु सेप्पिनयट्ल । मोदल विंध्याचलंबुन केगुदेंचि १०१०
यंदलि गुहल महागहनमुल । नंदंद वैदेहि नरयुचु गदलि
यदियादिगा दक्षिणंबुन करिगि । पोदलु पूबोदलंद भूजंबुलंदु
नदुलंदु गिरुलंदु नगरंबुलंदु । वेंदकि जानकि गान वेरवु लेकुनिकि
चिंतासमाक्रांतचित्तुलै वार । लंतंत गुमुरुलै यट पोयि पोयि

अंगदादुल विचित्रगुहाप्रवेशमु

पदियेंड्ल तन कूर्मि पट्टि यच्चोट । गदलक मेदलक कालुनिपुरिकि

(राम) की आज्ञा से गये वानर, जहाँ तक इनरश्मियाँ (सूर्य की किरणें) पृथ्वी पर व्याप्त होती हैं, वहाँ तक अनुपमसत्त्व युक्त हो जाकर, कहीं भी नलिनाक्षी को न पाकर, लौट आकर, शोभा से रहित सभी ने पति (राजा) को प्रति-समाचार सुनाया। तब राम (और) सुग्रीव अधिक व्यथित होते हुए, यह सोचते कि "अब आगे अंगद आदि प्रतिसमाचार क्या सुनाएँगे ? यह कैसा विधान है ?" उनके आगमन की प्रतीक्षा करते रहे। तब अंगद आदि महाकपि स्पर्धा की बातें करते हुए, परमहर्ष से, संतत-जव-सत्त्व-संपदाओं से प्रकाशित होते हुए, मंत्रणा में अधिक उन्नत बने हनुमान के साथ, विकल न बनते हुए, रविज के कथनानुसार, प्रथमतः विंध्याचल आकर, ।। १०१० ।।

—वहाँ की गुफ़ाओं, महा-गहनों (काननों) में जहाँ-तहाँ वैदेही को ढूँढते हुए, चलकर, वहाँ से शुरूकर, दक्षिण को जाकर, शोभित फूलों से युक्त झाड़ियों (तथा) वृक्षों में, नदियों में, गिरियों में, नगरों में ढूँढकर, जानकी को देख सकने के उपाय के न होनेपर, चिंता से समाक्रांतचित्तवाले हो, वे धीरे-धीरे झुंड बाँधकर, उस तरफ़ जा-जाकर,

अंगद आदियों का विचित्रगुफ़ा में प्रवेश

—उस वन में प्रवेश किया कि जो अपनी दस वर्षीया लाड़ली पुत्री के वहाँ

बोयिन बोंगुलुचु बुत्नशोकाग्नि । बायक पडि कालि पर्लविंचुचुन्न
कंडु महामुनि घन शाप वह्नि । मंडि निमृ'गमु निर्मानुष्यमगुचु
नुंड नीडयु द्राव नुदकंबु लेक । पंडक जनशून्यपथमैन यडवि
चोंच्चि येंतेनियु सोंलसि लो दारु । नच्चोट नुदकंबु लरयुचन्नंत
नंदोंक्क रक्कसुंडगचराधिपुल । मुंदऱ नीलाभ्रमो यन निलिचि १०२०
'योरि वानरुलार ! युर्विपै नेनु । मारीचतनयुंड, महितविक्रमुड
देवगंधर्वुलु दिविरि ये नुन्न । यी वनि दृष्टिप नोंव्वरु वेंऱतु;
रिंदेल वच्चितिर्रिदऱु गूडि ? । योंदु बोवग वच्चु निंक नाचेत
जावक मी' कंचु संरंभमोंसग । 'गो' यनि यार्चिन गुपितुडै यप्पु
डंगदुंडादैत्युनदरंट व्रेय । बोंगि रक्तमु वात बोंटबोंट वेंडल
वसुधपै बडे; नंत वानरुलेल्ल । बोंसगंग नोंक महाभूजंबु नीड
नलसि कूर्चुंडि 'तोयंबुलेच्चोट । गलवोंको ?' यनि दप्पि गदुरनुन्नंत
दरमिडि योंक बिलद्वारंबु वेंडलि । युरवडि जलपक्षुलोंडोंड येंगय
गनुगोंनि 'युदकमिक्कड नुंड बोलु' । ननि वच्चि बिलमुलो नंदऱु
सोंच्चि

चेतनाशून्य हो, यम की पुरी को जानेपर (मर जानेपर), व्यथित होते हुए पुत्री की शोकाग्नि में रत होकर, दग्ध होते रोते रहनेवाले कंडु (नामक)-महामुनि के घोर-शाप-वह्नि के कारण जलकर, निर्मृग (मृगरहित) (तथा) निर्मानुष्य होते हुए, रहने के लिए छाया, पीने के लिए पानी के न होकर, सस्य-रहित, जनशून्यपथ बन गया था। (उस वन में प्रवेशकर) अधिक थककर, भटकते हुए, वहाँ उदक (जल) के लिए ढूँढ रहे थे तो वहां एक राक्षस अगचर (वानर)-अधिपों के सामने यों खड़ा हो गया मानों नीला मेघ हो। ॥ १०२० ॥

(उसने यों कहा):—"रे वानरो ! उर्वी (पृथ्वी) पर मैं मारीचतनय हूं, महितविक्रमवाला हूँ। देव-गंधर्व कामना करके भी इस वन को, जहाँ मैं रहता हूँ, देखने के लिए भी डरते हैं। सभी मिलकर यहाँ क्यों आए हो ? अब मेरे हाथ मरे बिना तुम लोग कहाँ जा सकते हो ?" (ऐसा) कहते हुए अधिक संरंभ (महत् प्रयत्न) के साथ 'को' कह (वह राक्षस) चिल्लाया। तब कुपित हो अंगद ने उस दैत्य के मर्म पर प्रहार किया, तब मुँह से रक्त उगलते वह वसुधा पर गिर पड़ा। तब समस्त वानर अनुकूल ढंग से एक महावृक्ष के नीचे, थककर, बैठकर, (यह सोचते कि) 'पता नहीं, जल कहाँ है' ? प्यास से व्याकुल होते रहे। एक बिलद्वार से पंक्तिबद्ध हो, बड़े वेग से जल पक्षियों के जहाँ-तहाँ उड़ आते

कलगौनि विपुलांधकारमै तॆरुवु । तॆलिय कॊंडॊरुवुल धृति
जीड्रिकॊनुचु १०३०
ननुपमसत्त्वुलै यट्टु पोव बोव । गनुकनि यय्यंधकारंबु विरिसि
यरुदुगा जगदद्भुताकारमैन । पुरमॊकडच्चोट वॊडगांचि निलिचि
पसिडिगोपुरमुलु बसिडि माड्वुलु । बसिडि यट्टळ्ळनु बसिडिकोटलुन्
बसिडिवृक्षंबुलु बसिडि पूबॊदलु । बसिडि पर्वतमुलुबसिडि तामरलु
नॆ चूड ना पुरंबतिरम्यमैन । जूचि यॆंतेनियु जोद्यंबु नॊंदि
'प्रकट संपदलचे बरगुचुंडियुनु । नकट ! निर्मानुष्यमैनदी पुरमु !
एलॊको ! यिट्लय्यॆनी पुरं' वनुचु । ने लील वॆडलु चॊप्परुगंग लेक
चाल जिंतिलुचु नच्चट गॊन्निनाळ्ळु । पोल जरिंचुचु बुरमध्यवीथि
मिन्नुलतो रासि मेटियै युंडु । नुन्नतंबैयुन्न यॊक मेड गनिरि ।

हनुमदादुलकु स्वयंप्रभ सत्कारमु

कनि दानिमीदिकि गपुलॆल्ल ब्राकि । कनिरि तपोवृत्ति गरमॊप्पुदानि
१०४०

देख, (यह सोच कि) "संभवत: यहाँ जल हो सकता है," आकर, सब बिल (-द्वार) में घुस गए। (घुसकर) चारों तरफ़ देखकर, विपुल अंधकार के होनेपर, मार्ग के न सूझनेपर, धैर्य से एक दूसरे को पुकारते हुए, ॥ १०३० ॥

—अनुपम सत्त्ववाले होते हुए, उधर जाते रहनेपर, शीघ्र ही उस अंधकार के दूर हो जानेपर, अपूर्व (रूप) से जगद्-अद्भुत-आकारवाले एक नगर को, वहाँ देखकर, ठिठक गए, सुवर्णमय गोपुर, सुवर्णमय सौध, सुवर्णमय अट्टालिकाएँ, सुवर्ण के दुर्ग, सुवर्ण के वृक्ष, सुवर्णमय पुष्पकुंज, सुवर्ण-पर्वत, सुवर्ण-कमल से युक्त हो देखने में उस पुर के अतिरम्य होनेपर, (उसे) देख, अत्यधिक चकित हो (कहने लगे):—"प्रकट संपदाओं से युक्त होकर शोभित होते हुए भी हाय ! यह नगर निर्जन है।" "पता नहीं, क्यों यह नगर ऐसा हो गया है।" किसी भी प्रकार से बाहर निकलने के उपाय को न जानकर, अधिक चिंतित होते हुए, वहाँ कुछ दिन शोभा से विचरण करते हुए, पुर की मध्य-वीथि में, आकाश को स्पर्श करते हुए श्रेष्ठ (और) वहाँ (सबमें) उन्नत बने हुए एक महल को देखा।

हनुमान आदि को स्वयंप्रभा का सत्कार

—(महल को) देखकर, उसपर सब कपि चढ़ गए और तपोवृत्ति में अधिक शोभायमान, ॥ १०४० ॥

हरिणाजिनांबरयै यॊप्पुदानि । दरुणेंदुकळ बोलि तनरारुदानि
नॊक पुण्यकांत। नय्युविदकु म्रॊक्कि । यकलंकचित्तुडै हनुमंतुडनियॆ;
'नो तन्वि ! नीवॆव्व ? रॊंटिमै निचट । नी तपंबुन नुंड नेमि कारणमु ?
ए महात्मुनि पुर मी पुण्यनगर ? । मे मॆन्नडुनु गान मी विचित्रम्मु !'
लनिन नक्कोमलि हनुमंतु जूचि । तन पूर्वकथयॆल्ल दा जॆप्पदॊडगॆ;
'दग दॊल्लि मयुडनु दानवेश्वरुडु । तगिलि पद्मजु गूर्चि तपमाचरिंचि
पस नॊप्पु निर्माणपटुशक्ति वडसि । पसिडि नी पुरमिट्लु परग निर्मिंचि
यविरळगति हेम यनु दिव्यवनित । गविसि यातडु पॆद्दकालमिदुंड
नातनि वज्रधाराहतु जेसि । या तन्वि गॊनिपोयॆ नमर वल्लभुडु;
आ तरलाक्षि नॆय्यपुजॆलि नेनु; । मा तंड्रि सौवर्णि महितमानसुडु;
१०५०
आ यिंतिपनुपुन नति तपोनिष्ठ । बायकुंडुदु; स्वयंप्रभ यनुदान';
ननि जॆप्पि कंदमूलादुलंदऱकु । दनिविदीर नॊसंगि दाहंबु दीर्चि
'यनघ ! मीरॆव्व ? रिंदरुगुदेनेल ? । यनिमिषुलैन निंदरुदेरादु;
विनु डिंदु मीरलॆव्विधिनि वच्चितिरि ?' । यन विनि हनुमंतुडतिवकिट्लनियॆ;

—हरिणाजिन (मृगचर्म के)-अंबर (वस्त्र) धारणकर सुशोभित, तरुणेंदुकला के समान शोभित एक पुण्य-कांता को देखा। उस स्त्री को नमस्कार कर, अकलंक चित्तवाला होता हुआ हनुमान (यों) बोला:—"हे तन्वी ! तुम कौन हो ? अकेली यहाँ तप करते रहने का क्या कारण है ? यह पुण्यनगर किस महात्मा का पुर है ? हमने इस विचित्र (दृश्य) को कभी नहीं देखा है।" (ऐसा) कहनेपर वह कोमली हनुमान को देखकर, अपनी समस्त पूर्वकथा स्वयं कहने लगी:— "उचित रूप से पूर्व (काल) में मय नामक दानवेश्वर ने लगन के साथ पद्मज (ब्रह्मा) के बारे में तप किया, सामर्थ्य से शोभित निर्माण करने की पटु शक्ति प्राप्तकर, सुवर्ण से इस पुर का शोभा से निर्माणकर, अविरल गति से हेमा नामक दिव्य वनिता से मिलकर लंबी अवधि तक यहाँ रहा, उसे वज्रधारा से आहतकर, अमरवल्लभ उस तन्वी को ले गया। उस तरलाक्षी की मैं प्रियसखी हूँ। हमारे पिता सौवर्णी महितमनवाला है। ॥ १०५० ॥

उस नारी (हेमा) के आदेश से अति तपोनिष्ठा को न छोड़कर (यहाँ) रहती हूँ। मैं स्वयंप्रभा नामवाली हूँ।" ऐसा कहकर सबको कंद-मूल आदि देकर संतुष्टकर, प्यास बुझाकर (पूछा):—"हे अनघ ! आप कौन हैं ? यहाँ क्यों आए हैं ? अनिमिष (देवता) भी यहाँ नहीं

‘दन तंड्रि पनुपुन दंडकाटविकि । मुनिवृत्ति रामुडिम्मुल वच्चियुंड
वनजाक्षि ना रामु वरपत्नि गॉनुचु । जनिन रावणुवेंट जनि चनि येमु
जनकज वेंदकुचु जलशून्यमगुट । घनमैन दप्पिचे गड्डु डस्सि यॉक्क
बिलमुलोपल जॉच्चि पेंद्दचीकटिकि । दलकक यॉक्कट दैवयत्नमुन
नीयाश्रमंबुन केतेंचि वेंडलि । पोयेंडि मार्गंबु पॉडगानलेक
तिरुगुचुन्नारमु; धृति बेंक्कुदिनमु । लुरि बडियुन्नारमीक दिक्कु लेक’
१०६०
यनिन ‘रामुनिकार्यमै वच्चिनार । लनघुलु पुण्यात्मुल’नि भक्ति जेसि
‘मीकेंद्दि यिष्टमिम्मॅयि वेड्डु’ डनिन । ‘माकी बिलद्वारमार्गंबु वेंडल
जेयुमु; वेवेग सीतनु वेंदक । बोयेंद’ मनुड्डु नुप्पॉंगि या मगुव
‘मॉगि मीरु कन्नुलु मूसिकॉ’ डनुचु । दग बल्कि वारल दन तपश्शक्ति
नेंलतुक यवलील निमिषमात्रमुन । बिलमुखमुन देंच्चि पेंट्टि ता बोयें;
बोयिन गपिवीरपुंगवुलेंल्ल । ना यिंति बॉगड्डुचु नट्टु पोयि पोयि
यायतोन्नतबलुलंदॉक्क सरसि । बायक जलमुलु बलुविडि द्रावि

आ सकते । बताइए, आप (लोग) यहाँ किस विध आए हैं ?” (ऐसा) कहनेपर, सुनकर, हनुमान ने (उस) नारी से यों कहा:—“अपने पिता के आदेश से राम मुनिवृत्ति अपनाकर, दंडक वन में प्रेम से आकर रहे। उस राम की पत्नी वनजाक्षी को (चुरा) ले जानेवाले रावण का पीछा करते आ आकर, हम जनकजा का अन्वेषण करते, (जंगल के) जलशून्य (जल से रहित) होने के कारण, अधिक प्यास से अधिक थक गए। (और) एक बिल में घुसकर, घन-अंधकार के कारण क्षुब्ध हुए बिना, दैव यत्न (संयोग) से इस आश्रम में आए (और) बाहर निकल जाने के मार्ग को न जानकर घूम रहे हैं। धैर्य से, कई दिनों से, बिना किसी उपाय के विचलित हो रहे हैं।” ॥ १०६० ॥

(ऐसा) कहनेपर, “राम के कार्य से आए हुए अनघ (तथा) पुण्यात्मा हैं” (ऐसा) सोच, भक्ति से (कहा):—“अब इस समय आपको क्या चाहिए, माँगिए।” (ऐसा) कहनेपर (वानरों ने कहा):—“हमें इस बिलद्वार से निकाल दो। अतिशीघ्र सीता को ढूँढने जाएँगे।” (ऐसा) कहनेपर उस नारी ने (प्रसन्नता से) फूलकर (कहा):—“झट से आप लोग आँखें बंद कर लीजिए।” (ऐसा) उचित रूप से कहकर, उस स्त्री ने अपनी तप:शक्ति से, अति सरलता से, पलभर में उन्हें बिलमुख पर ला छोड़ दिया (और) स्वयं चली गयी। (उसके) चले जानेपर समस्त कपिवीर-पुंगव उस स्त्री की प्रशंसा करते हुए, उधर से चलते ही गए।

यंत नंदऱु महेंद्राद्रिकि बोयि; । रंत नंगदुडिट्टुलनुचु शोकिंचॆ;

सीत गानमिकि वानरुलु पलविचुट

“निनजुनि मिति दप्पॆ; निनवंश्यु देवि।वनजाक्षि बॊडगन्नवारमु गामु;
आज्ञाधुरंधरुडैन सुग्रीवु । ‘डाज्ञदप्पिरिवीर’ लंचुनु मनल १०७०
बॊडगन्नयप्पुड भूपति मॆच्च । नडिमिकि रॆंडुगा नऱकिंचु नुऱक;
कावुन मनमिक गपिराजु गान । बॊवुट तगवुनु बुद्धियु गादु;
वॆलुवडि मनमिप्डु वॆस वच्चिनट्टि । बिलमुलोपल जॊच्चि पेमिनुंडुदमु;
अदि यष्टदिक्पालकाभेद्यमार्ग; । मदि पक्वफलभरिताराम मरय;
बॊंदुगा नचट गापुरमुन्न मनल । नॆंदु नॆव्वरिकैन नॆऱुग जॊप्पडदु”
अन गोंदऱगचरुलापनिकिय्य । कॊनि; रंत मारुति कोपिंचि पलिकॆ;
‘बॆद्दबुद्धिवि नीवु ! पिनतंड्रि पनुप । गद्दरिवै रामुकार्यमै वच्चि
कपुलतो गूडि या गंभीर बिलमु । जपलत जॊच्चि यच्चट नुंडिनपुडॆ
भानुजुतो मळ्ळबडु चॊप्पुगादॆ ! । तानुनु नीलुंडु दारुंडु नलुडु

वे आयत-उन्नत बल वाले वहाँ की एक सरसी में बरज़ोरी जल पीकर, तब सभी महेंद्राद्रि गए । वहाँ यों कहता हुआ अंगद दुखी हुआ ।

सीता के न दिखाई पड़ने पर वानरों का विलाप करना

‘इनज की (दी हुई) नियत अवधि समाप्त हो गयी है । इनवंशवाले (राम) की देवी वनजाक्षी (सीता) को देख नहीं पाए । आज्ञा-धुरंधर सुग्रीव हमें देख (यह समझकर कि) ‘ये आज्ञा का पालन नहीं कर सके’ उसी समय, झट से (हमारे शरीर को) बीच में से दो टुकड़े करा देगा जिसकी भूपति (राजा राम) सराहना करेंगे । अतः अब हमारा कपिराजा (सुग्रीव) के दर्शन करने जाना न उचित है न बुद्धिमत्ता ही । अब झट से जिस बिल से निकल आए, उसी में प्रवेशकर सुख से रहेंगे । वह (स्थान) अष्ट दिक्पालकों के लिए (भी) अभेद्य-मार्गवाला है, वह (स्थान) विचार करनेपर पक्वफल-भरित आराम (उपवन) वाला है । समुचित ढंग से वहाँ निवास करते रहने पर हमें जानना किसी के बस की बात नहीं होगी ।” (ऐसा) कहनेपर कुछ अगचर (वानर) उस काम के लिए राजी हो गए । तब मारुति क्रुद्ध हो बोले:—“बड़ी बुद्धिवाले हो ! चाचा के भेजनेपर, साहसी हो, राम-कार्य के लिए आकर, कपियों के साथ उस गंभीर बिल में, चपल बुद्धि से, प्रवेशकर, वहाँ रह जाने का अर्थ भानुज (सुग्रीव) के साथ विद्रोह करना ही है न ! मैं, नील, तार, नल

दीनि कॆव्विधि सम्मतिपमु; दक्कु ।वानरुल् दम बंधुवर्गंबु वासि १०८०
निनु गॊल्चियुंडंग नेररु सुम्मु; । विनु; मदियुनुगाक, वृत्रारि तॊल्लि
यर्मिलि दन वज्रहति ना बिलंबु । निर्मिचॆ; नट्टुवंटि निशितवज्रास्त्र
कोटि लक्ष्मणुनकु गॊलदि कग्गलमु; । माटमात्रमुन नी मर्कटाधमुल
निन्नु नी बलमुनु नीऱुगा जेय । कुन्नॆ ? यी दुर्बुद्धुलॊक्कट विडिचि
'यवनिज बॊडगानमैति' मटंचु । रविजुनिकड कंदऱमु पोयि म्रॊक्कि
विन्नवितमु; जगद्विख्याति नतडु । निन्नुनु मम्मु मन्निचु मोमोट;
ना मीद मीतल्लिकनुरक्तुडगुट । नी मीद नलुगडु; नीवॆ पुत्रुडवु
कावुन गडु निन्नु गट्टु बट्टंबु" । ना विनि या वालिनंदनुंडनियॆ;
"बितृसमानुनि वालि बृथ्विपै गूल्चि । यतनि भार्य वरिंचि या मीद दनकु
नुपकारियगु रामु नुद्योगमॆल्ल । जपलुडै मऱचि लक्ष्मणुडाग्रहिंप १०९०
मऱि कादॆ चनुदॆंचॆ मा पिनतंड्रि ? । यॆऱुगवे यातनि हीनवर्तनमु !
नट्टि कामांधुनि नट्टि कृतघ्नु । नॆट्टु नम्मगवच्चु ? निदि यदि येल ?

इसके लिए किसी भी प्रकार सहमत नहीं होंगे। वानर अपने बंधु (संबंधी)-वर्ग से बिछुड़कर, ॥ १०८० ॥

—तुम्हारी सेवा करते नहीं रहेंगे। सुनो, यही नहीं, वृत्रारि (इंद्र) ने पूर्व में, चाहकर, अपनी वज्रहति (वज्र के आघात) से उस बिल का निर्माण किया। उस प्रकार के निशित वज्र (रूपी) अस्त्र-समूह लक्ष्मण की अधिक शक्ति के अधीन हैं। बात ही बात में क्या वे इन मर्कट-अधमों को, तुम्हें (और) तुम्हारी सेना का नाश नहीं कर देंगे ?' इन दुर्बुद्धियों को एकदम छोड़कर, यह कहते कि "अवनिजा को देख नहीं पाए हैं," रविज के पास हम सब जाकर, प्रणामकर, निवेदन करेंगे। जगद्-विख्यात हो वह, तुम्हें और हमें क्षमा कर देगा। संकोचवश मुझपर (और) तुम्हारी मातापर अनुरक्त होने के कारण, तुमपर रुष्ट नहीं होगा। (सुग्रीव के) तुम्हीं पुत्र हो, अतः तुम्हारा राजतिलक कर देगा।" ऐसा कहनेपर सुनकर उस वालिनंदन ने कहा:— "पितृसमान वालि को पृथ्वीपर गिराकर (वधकर), उसकी पत्नी का वरणकर, उसके बाद अपना उपकार करनेवाले राम के समस्त कार्य को भूलकर लक्ष्मण के क्रुद्ध होनेपर, ॥ १०९० ॥

—ही तो हमारा चाचा निकल पड़ा था न ? उसके हीन-व्यवहार को नहीं जानते हो ? वैसे कामांध, वैसे कृतघ्न का किस प्रकार विश्वास करें ? ये सारी बातें क्यों ?

कपुल प्रायोपवेशमु

श्रीरामु कार्यंब सेयक पोयि । या रविसूनुचे नट्टु चच्चुकंटे
नीयेंड जच्चुट यिदि लेस्स मनकु; । ब्रायोपवेशपरुलु गं" डनुचु
वारुनु दानुनु वरदर्भशयनु । लै राक वृथयौट कात्मजिंतिचि
तेवुलुनु मुदिमियु दीव्रवेदनयु । नवतयु लेनि प्राणंबुलु गान
लेचियु मरि पव्वळिंचियु दिशलु । सूचियु दमतम चुट्टाल सतुल
दलचियु "बापुरे ! दैवमा ! यिट्लु । व्रलपट्टि ममु वृथा चंपनिच्चोट
समकट्टिते !" यंचु सकल वानरुलु । गुमुरुलु गुमरुलै कूडि योंडोरुलु
"नलिनाप्तकुलुडु कानलकुरानेल ? । कुलभाम नसुरचे गोल्पडनेल ?
११००
योरसि दैत्युडु जटायुवु जंपनेल ? । धरणीशुडरुणनंदनु गननेल ?
धरणिज वार्त यतडु सेप्पनेल ? । तरणिवंश्युडु पंप दरिकि रानेल ?
सुग्रीवु कडकु रासुतुलु रानेल ? । सुग्रीवु डातनि सोम्मु गानेल ?
वलनोप्प वालि भूवरुडेयनेल ? । बलिमितोडुत गपिबलमु रानेल ?
यिनतनूजुडु मम्मु निटु पंपनेल ? । पनिवडि मनकु निप्पाटु रानेल ?

कपियों का प्रायोपवेश

—श्रीराम के कार्य को (संपन्न) किए बिना, उस रविसून (सुग्रीव) के हाथ वहाँ मरने की अपेक्षा, यहीं मर जाना हमारे लिए उचित है। चलो, प्रायोपवेश के लिए तत्पर हो जाओ।" (ऐसा) कहते हुए, वे और स्वयं वर-दर्भशायी हो, (अपने) आगमन के वृथा हो जानेपर मनमें चिंतित हो, रोग, जरा, तीव्र वेदना, दुर्बलता से रहित प्राण (वाले) होने के कारण, (दर्भशय्या से) उठकर, फिर लेटकर, दिशाओं में (चौतरफ़) देखकर, अपने-अपने संबंधियों, सतियों का स्मरणकर, सोचते कि "बाप रे ! हाय दैव ! इस प्रकार हठकर, क्या हमें व्यर्थ ही यहाँ मार डालनेपर उतारू हो गए ?" (ऐसा) कहते समस्त वानर छोटे-छोटे झुंड बाँध, एकत्र हो एक दूसरे से कहतेः-- "नलिनाप्तकुल (राम) को जंगलों में क्यों आना चाहिए था ? कुलसती को राक्षस के हाथ खोया ही क्यों ? ।। ११०० ।।

—संघर्षकर दैत्य ने जटायु को मारा ही क्यों ? धरणीश (राम) ने अरुणनंदन (सुग्रीव) को देखा ही क्यों ? उसने (सुग्रीव ने) धरणिजा (सीता) का समाचार दिया ही क्यों ? तरणिवंशवाला (राम) पंपा के पास आया ही क्यों ? राजकुमार सुग्रीव के पास आए ही क्यों ? सुग्रीव उसकी संपत्ति (दास) बना ही क्यों ? शोभा से भूवर (राम) ने वालि

यीक्कोंट ब्राणंबुलुऱ्क पोनेल ? । यक्कटा ! भुवि गैक यडिगिन वरमु
मनुवंशयुतमुगा मनवंश मणचॆं" । ननि यनि शोकिंचि यलयुचुन्नंत

संपाति दर्शनमु

ना यॆड संपाति यनु पक्षिनाथु । डायतदेहुडत्यंतवृद्धुंडु
प्रायंबु ऱॆक्कलु बलिमियु लेमि । ना यद्रिगुहनुंडि यल्लन वॆंडलि
मॆल्लन जनुदॆंचि मृतिगोरि धरणि । द्रॆळ्ळन वनचराधिपुल वीक्षिंचि
१११०
"दैवंबु कृपसेसॆं दनकु नाहार । मीवेळ" ननि चेर नेतेर गपुलु
चपलुलै मरण निश्चयबुद्धि वगव । नपुडांजनेयुनितो नंगदुंडनियॆं;
"निदि पक्षिगादु; मम्मिदऱ जंप । नदयुडै यमुडिट्टुलरुदॆंचिनाडु;
नाडा जटायुवु नरनाथु देवि । बोडिमि जॆऱ्गॊनि पोवु रावणुनि
दाकि यातनि खड्गधारचे जच्चि । तेकुव बडयडे दिव्यपदंबु ?
रामु कार्यार्थमै प्राणमुल् मनमु । नी महापक्षिकि निच्चुट लॆस्स"

को मारा ही क्यों ? अधिक सामर्थ्य के साथ कपि सेना का (वहाँ) क्यों आना चाहिए ? इनतनूज ने हमें इधर भेजा ही क्यों ? जानबूझकर इस आफ़त का हमारे सिरपर आना क्यों ? अचानक हमारे प्राणों का यूँ ही जाना क्यों ? हाय ! (इस) भुविपर कैकेयी के माँगे वर ने मनुवंश (मानव) के साथ हमारे वंश का नाशकर दिया ।" (ऐसा) कह-कह विलाप करते-करते वे थक गए ।

संपाति दर्शन

उस समय संपाति नामक पक्षिनाथ जो विशाल देहवाला, अत्यंत वृद्ध था, वय, पंख, बल के न होनेपर, उस पर्वत की गुफ़ा से धीरे निकलकर, धीरे से आकर, मृत्यु चाहकर, पृथ्वी पर लेटे हुए वनचराधिपों को देखकर, ।। १११० ।।

—सोचा कि "इस समय मुझे भगवान ने आहार की कृपा की ।" (ऐसा) सोच नियराने पर कपियों के चपलता के साथ मरण की निश्चयबुद्धि से दुखी होनेपर, आंजनेय से अंगद ने कहा:—"यह पक्षी नहीं है । हम सब को मार डालने के लिए अदय (निर्दय) बन यमराज यों आया है । उस दिन जटायु ने नरनाथ (राम) की देवी को सुविधा से चुरा ले जानेवाले रावण का सामनाकर, उसकी खड्ग धारा से मरकर, स्थैर्य से दिव्य पद

यनुचोट ना माट लालिंचि यरुण । तनयुंडु शोकगद्गदकंठुडगुचु
ना कपिवीरुल नट्टु चेर बोयि । "यो कपुलार ! येंदुंडि वच्चितिरि ?
या जटायुवु नाकु नर्मिलितम्मु; । डा जटायुवु नेनु नरुणपुत्रुलमु;
निशितोग्रनखुडु मानितगुहामुखुडु।दशरथसखुडु संततसुखुडात; ११२०
डतडेमिटिकि जच्चें ?" ननवुडु वालि । सुतुडंतयुनु जेंप्प जोंप्पड देलिसि
येंतयु शोकिंचि यिच्चलो जाल । वंत नोंदुचुनुन्न वनचरुलेत्ति
चेंतनुन्न पयोधि जेर्चिन नंदु । संतापमुन गृतस्नानुडै वच्चि
विपुलशोकमुतोड विहगवल्लभुडु । कपुलतो दन पूर्वकथ जेंप्पदोंडगें;
"नालोलगतुल जटायुवु नेनु । गैलासगिरि दोंल्लि कवगूडियुंड
घनजवसत्त्वमुल् कडिमिमै मेंऱसि । मोंनसि मेमिद्दऱमुनु मच्चरिंचि
युडुवीथि किद्दऱमुदयकालमुन । गडकतो नेंगसि संगडि बोयि पोयि
परुवडि नट पट्टपगलिटि कोंलदि । निरुवुरु गदिसिति मिनमंडलंबु;
नुग्रांशु किरणंबु लोंडोंट दाकि । युग्रमै वडि जटायुवु मंडुटयुनु
बदिलमै वानि ना पक्षंबुलंदु । बोंदिविन नापक्षमुलु गालिपोयें; ११३०

को प्राप्त नहीं किया था ? राम के कार्य के लिए हमें (अपने) प्राण इस पक्षी को देना समुचित ही है।" ऐसा कहनेपर उस बात को सुनकर, अरुण-तनय (संपाति) ने शोक से गद्गद कंठवाला होते हुए, उन कपिवीरों के निकट जाकर, (कहा):—"हे कपियो ! आप किधर से आए हैं ? वह जटायु मेरे लिए लाड़ला भाई है। वह जटायु और मैं अरुण के पुत्र हैं। निशित-उग्र-नखवाला, मान्य गुफ़ा जैसे मुखवाला, दशरथ का सखा, संततसुखी है वह। ॥ ११२० ॥

वह क्यों मरा ?" ऐसा कहनेपर वालिसुत ने सब कह सुनाया। (सब कुछ) अच्छी तरह जानकर, अधिक शोककर, मनमें अधिक व्याकुल होता रहा। (तब) वनचरों (वानरों) ने उसे उठाकर, निकट में स्थित पयोधि (समुद्र) के पास पहुँचाया। उसमें संताप के साथ, स्नानकर आकर, विपुल शोक से विहगवल्लभ कपियों से अपनी पूर्वकथा बताने लगा:—"चंचलगतियों से जटायु और मैं पूर्वकाल में कैलासगिरि पर साथ मिलकर रहते थे। अधिक जव (वेग) सत्त्व (और) पराक्रम से प्रकाशित होकर, सप्रयत्न हम दोनों ने स्पर्धाकर, उडुवीथि (आकाश) में दोनों (एक दिन) प्रातःकाल सधैर्य उड़कर, साथ-साथ जाकर, क्रम से वहाँ दिनदहाड़े दोनों इनमंडल तक चले गए। उग्रांशु (सूर्य) की किरणों के जहाँ-तहाँ लगकर, उग्र बननेपर, झट से जटायु के जलनेपर, सुरक्षा के लिए उसे अपने पंखों से घेर लेने के कारण मेरे पंख जल गए। ॥ ११३० ॥

नॆऱकलु गालिन नेपॆल्ल बॊलिसि । मऱि वच्चि यीयाश्रमंबुन बडिति;
ना पक्षिनाथुडॆंदऱिगॆनो यॆऱुग; । नी पल्कु मीचेत निटविंटि नेडु;
वीनुल नी वार्त विनियुन्नवाड । हीनबलुंडनै यॆऱकलु लेमि;
बक्षमुल् दॊल्लिटि पगिदि नाकुन्न । दक्षित नितकु दन सहोदरुनि
पगदीर्चि श्रीरामभद्रु देवि । मगटिमि देनेर्तु; माटल केमि ?”
ना विनि भल्लूकनाथुडिट्लनियॆ । ना वायुजुडु नंगदादुलुप्पॊंग;
“ना जटायुवु तम्मुडगु नीकु मिगुल । नी जगंबुललोन नॆदुरॆंदु गलदु ?
नीवु चूडनियट्टि नॆलवुलु लेवु; । रावणुडिप्पुडु रघुरामुदेवि
नॆंदु दाचिनवाडॊ यॆऱिगिंपु” मनुडु । संदेह मॆडवाय संपाति वलिकॆ;

सीत जाडनु संपाति वानरुल कॆऱिंगिचुट

“तन तनूभवुडु दुर्दमपराक्रमुडु । घनुडु सुपार्श्वुंडु कडुभक्तियुक्ति
ऱॆक्कलु गालि यी क्रियनुन्न नाकु । नक्कऱतो दॆच्चि याहारमॊसगु;
नतडॊक्कनाडु नाकशनंबु देक । ततिवच्चुटयु ‘नेल तडसिति’ वनिन
‘नो तंड्रि ! नीकु ने नुपहारमरय । नाततगति महेंद्राद्रि समुद्र

पंखों के जलने पर, समस्त विकास को खोकर, आकर, इस आश्रम में गिर गया। नहीं जानता कि वह पक्षिनाथ (जटायु) कहाँ चला गया। यह बात आज तुमसे सुनी है। कानों से यह समाचार सुन, हीनबल (तथा) पक्षरहित होने के कारण (ऐसे ही) पड़ा हुआ हूँ। पूर्व के समान मेरे पंख होते तो दक्षता के साथ मेरे सहोदर के (वध का) बदला चुकाकर, श्री रामभद्र की देवी को सपौरुष ला सकता। (केवल) बातों से क्या (लाभ)?” (ऐसा) कहने पर सुनकर, भल्लूकनाथ ने उस वायुज (तथा) अंगद आदियों के फूलने पर (प्रसन्नता से) यों कहा:—“उस जटायु के तुम्हारे अनुज होने पर, इन लोकों में कौन तुम्हारा सामना कर सकता है? ऐसे स्थान नहीं हैं, जिन्हें तुमने न देखा हो। यह बताओ कि रावण ने अब रघुराम की देवी को कहाँ छिपाकर रखा है?” (ऐसा) कहने पर संदेह को दूर करते हुए संपाति बोला—

संपाति का वानरों को सीता का पता बताना

—“दुर्दम पराक्रमवाला (तथा) महान् सुपार्श्व नामक मेरा तनूभव (पुत्र) अति भक्तियुक्त होकर, पंख जलकर इस विधि पड़े हुए मुझे आवश्यकतानुसार आहार ला देता है। उसके एक दिन मुझे अशन (आहार) न लाकर, देर से आने पर (मैंने) पूछा “देर क्यों की?” (उसने कहा)—“हे

तीरमार्गमुन नॆंते बॊंचियुंड । ना रविप्रभवंटि यंगन गॊनुचु
गाटुकनडकॊंड कैवडि नॊकडु । धाटिमै जनुदॆंचि तनकु ब्रियंबु
जॆप्पि ये दॆरुवीय जॆच्चॆर जनियॆ; । नप्पुडच्चटि मौनुलंदऱु नन्नु
संतसिंचुचु 'नेडु सावुकु दप्पि; । तंतकुंडगु रावणासुरुंडतडु
चॆऱगॊनि लंककु श्रीरामु देवि । नुऱक कैकॊनिपोवुचुन्नना' डनिरि
अंदुकै तडसिति ननि वाडुवलिकॆ; । संदेहमेटिकि ? जनकतनूज
बलसि राक्षसवधूपरिवृत यगुचु। जलदमालिकलोनि चंद्रिक वोलॆ ११५०
नुन्नदि लंकलो; नॊगि शतयोज । नॊन्नति ना दृष्टि युर्वि जरिंचु;
दॆल्लंबु गगनंबु दृष्टियु नाकु । नॆल्लपक्षुलकंटॆ नॆक्कुडै परगु"
ननिपल्कि मऱियु निट्लनियॆ संपाति; । "तनपक्षयुगळंबु दग्धमैनप्पु
डे वच्चि मूर्च्छिल्लि यिच्चोट द्रॆक्कि । चावुकु दप्पि यॆंचग रानि डप्पि
गुट्टूर्पुलॆसगंग गॊन्नेंड्लु गडपि । गट्टिगा नाभाग्यगति नॊक्कनाडु
घननिष्ठ दपर्मिदु गाविंचु सकल । जनतापहरुनि साक्षान्निशाकरुनि
ना निशाकरु नॊय्यन गांचि म्रॊक्कि । भानुदीप्तुलचेत पक्षमुल् गालि
तनयुन्न चंदमंतयु विन्नविप । मुनिशिखामणियुनु मुन्नुनन्नेऱुगु

पिता ! मैं तुम्हारे लिए उपहार (नाश्ता) ढूँढने, आततगति से महेंद्राद्रि के समुद्र तीरमार्ग पर देर तक टोह में बैठा रहा। तब उस रविप्रभा समान अंगना (स्त्री) को लेकर, काजल के महापर्वत के समान (दीखनेवाला) एक व्यक्ति औद्धत्य से आकर, (मेरे) उससे प्रिय बातें कहकर, मार्ग देने पर शीघ्र चला गया।" तब वहाँ के सभी मौनी मुझे (देख) प्रसन्न होते हुए (बोले)—"आज (तुम) मृत्यु (मुख) से बच गये। वह अंतक (यम) (समान) रावण-असुर है। बंदी बनाकर (वह) लंका को श्रीराम की देवी को अप्रत्याशित रूप से ले जा रहा है। इसी से देरी हुई है।" ऐसा उसने कहा था, संदेह क्यों ? जनकतनूजा बली राक्षस-वधुओं से परिवृत होकर, जलद मालिका में चंद्रिका के समान, ।। ११५० ।। —लंका में स्थित है। मेरी दृष्टि उर्वी (पृथ्वी) पर लगन से शतयोजन तक जाती है। स्पष्ट है कि समस्त पक्षियों की अपेक्षा मेरी गमन (शक्ति) (तथा) दृष्टि अधिक हो प्रवर्तित होती है।" ऐसा कह, संपाति ने आगे यों कहा—"अपने पक्ष युगल के दग्ध होने पर मैं आकर, मूर्च्छित हो यहाँ गिरकर, मृत्यु से बचकर, अत्यंत तृष्णा से, कराहते हुए, कुछ वर्ष बिताकर, एक दिन मेरे (सौ) भाग्यगति से यहाँ घननिष्ठा से तप करने वाले, सकल जन के ताप को हरने वाले, साक्षात् निशाकर (चंद्र) के समान (गुणवाले) निशाकर नामक मुनि को ऋजुता से देखकर, प्रणामकर,

गावुन नॆंतयु गरुणिंचि मीदु । भाविंचि "या श्रियःपति परात्परुडु
विष्णुंडु दशरथविभुनकु बुट्टि । युष्णांशुकुलुडंत उग्राटवुलकु ११६०
जनुदेर नातनि सतिनि रावणुडु । गॊनिपोयि चॆऱ नुंचुकॊनि युन्नयप्पु
डमृतान्न मायिंति कमृतांशुडिडिन । दॆमलक याहारतृष्णलु वासि
युंडु; नंतट रामुडॊय्यन वच्चि । चंडांशजुनि गाचि शक्रजु द्रुंचि
यालोलगति सीत नरय वानरुल । नालुगुदॆसल कुन्नति बंपगलडु;
आ रामु निजदूतलगु वारितोड । जेरि नी वीकथ सॆप्पिननाडु
घनपक्षयुगळंबु गलुगु नी" कनुचु । मुनु निशाकरुडनु मुनि सॆप्पॆ नाकु;
नतडानतिच्चिनयट्ल मीतोड । हितमति नी कथ यॆऱिगिप गंटि;
निवॆ पक्षमुलुवच्चॆ, निदॆ चूडु" डनुचु । दिविरि कुप्पिचि यद्दिविकि
लंघिंचि
"वडि लंकचेरुव वनमुलो सीत । बॊडगंटि नदॆ सीत बॊडगंटि नेनु;
अदॆ ! शतयोजनंबैन दूरमुन नदॆ ! लंकलोपलनदॆ ! पुण्यसाध्वि ११७०
चालु ब्रायोपवेशन मिक लॆंडु; । पौलस्त्यपति लंक बरिकिंप बॊंडु"

भानु दीप्तियों से पंखों के जलकर पड़े हुए अपनी विधि का निवेदन किया। (वह) मुनि शिखामणि (श्रेष्ठ) भी पूर्व में मुझे जानते थे। अतः अधिक करुणा से भावी का चिंतन कर (कहा)—'वह श्रियः (लक्ष्मी) पति, परात्पर और विष्णु दशरथविभु के यहाँ पैदा होगा, उष्णांशु (सूर्य) कुल वाला तब उग्र-अटवियों को ॥ ११६० ॥

—निकल पड़ेगा, उसकी सती को रावण ले जाकर बंदी बनाकर रखेगा, तब उस नारी को अमृतांश (चंद्र) अमृतान्न देंगे, (उस कारण) वह अचंचल हो, आहार-तृष्णाओं से रहित रहेगी। तब राम ऋजुता से आकर, चंडांशज (सुग्रीव) की रक्षाकर, शक्रज (बालि) का संहार करके, अलोलगति सीता के अन्वेषण के लिए चारों दिशाओं में, औन्नत्य के साथ, वानरों को भेजेगा। उस राम के निजदूत हो उन (वानरों) के पास पहुँचकर, जिस दिन यह कथा सुनाओगे, उस दिन तुम्हें घन (महान्)-पक्षयुगल प्राप्त होगा।' ऐसा पूर्व में मुझे निशाकर नामक मुनि ने बताया। उसके आदेशानुसार आपसे हितमति से इस कथा को बता चुका। लो, ये पंख आ गए, यही देखिए।" कहते हुए, झट से सांस रोककर, आकाश की ओर छलांग भरकर (कहा) :—"झट से लंका के वन में सीता को देखा है। लो, मैंने सीता को देखा है। वही है शतयोजन की दूरी पर, वही है लंका ! वही लंका के भीतर पुण्यसाध्वी है ! ॥ ११७० ॥

अनिलंककै पोव नटु त्रोव सूपि । चनियॆ हेमाद्रिकि संपाति प्रीति;
नंत वानरवीरुलंदऱु गूडि । संतोषचित्तुलै जवमॊप्प बोयि
चंडवाताघात जात डिंडीर । गंडूषिताशवकाशवाचाल
वीची समीचीनविहरमाणाति । वैचित्र्यकरवाल वरवालमुलनु
घोरनक्रग्राहकोटुलुप्पॊंगि । पोराडुचुन्न यंभोराशि डासि
यंदरु निश्चेष्टुलै कॊंतदडवु । गुंदु डेंदमुलतो गूचुँडि यप्पु
"डी समुद्रमु दाट नॆव्वडु चालु ! । नी सत्त्वमॆव्वरिकिदुलो गलदु ?"
अनि यिट्लु चिंतिपनंत नंगदुडु । वनचरुल् तानु नव्वनधितीरमुन
ना रात्रि वेगिंचि यम्मऱुनाडु । वीर वानरुल वेर्वेऱु नीक्षिंचि ११८०
"यी रीति मी यंतलेसि वानरुलु । पौरुषंबुनु नेलपालुगा जेसि
जलराशिलोपल शतयोजनमुल । कॊलदि दाटुट किट्लु गुंदॆदरेनि
नपकीर्ति यनुपेरि यगणितांबोधि । गपिवर्युलार ! ये करणि दाटॆदरु ?
मी मी जवंबुलु मी दाटु कॊलदु । लीमात्रमनि नाकु निदऱु गूडि ११८४

—(अब) प्रायोपवेश बस है (उसे छोड़ दीजिए)। अब उठिए। पौलस्त्यपति की लंका को देखने जाइए।" (ऐसा) कह लंका जाने के लिए उधर मार्ग बताकर, संपाति प्रीति से हेमाद्रि पर चला गया। तब सभी वानर वीर एकत्र हो, प्रसन्नचित्त हो, अतिवेग से जाकर, अंभोराशि (समुद्र) के पास पहुँचे। (वह समुद्र) चंड-वात (वायु)-आघात से जात (उत्पन्न) डिंडीर (फेन) रूपी गंडूष (कुल्ली) से समस्त दिशाओं के, अंतिरिक्ष के भर जाने से मुखरित बना था। (उस समुद्र में) वीची (तरंग)-समीचीन विहार करनेवाले, अति विचित्रता से वर-वाल रूपी करवालों से घोर नक्र-ग्राह समूह औद्धत्य से जूझ रहे थे। (उसे देख) सभी वानर कुछ देर तक निश्चेष्ट हो रहे। तब व्याकुल बने हृदय से बैठकर इस प्रकार चिंतित होने लगे कि "इस समुद्र को पार करने की सामर्थ्य किसमें है ? यह सत्त्व इनमें किसमें है ?" तब अंगद वनचरों (वानरों) के साथ उस वनधि (समुद्र) के किनारे ।। ११८० ।।

—वह रात बिताकर, दूसरे दिन वीर वानरों को अलग-अलग से देखकर (कहा) :—"हे कपिवरो ! इस प्रकार आप जैसे वानर पौरुष को मिट्टी में मिलाकर जलराशि में शतयोजनों को समर्थ हो पार करने के लिए व्याकुल होते रहेंगे तो अपकीर्ति नामक अगणित (अपार)-अंभोधि (समुद्र) को किस प्रकार पार करेंगे ? अपने अपने जब (वेग) (तथा) पार करने की अपनी-अपनी सामर्थ्य इतनी है, ऐसा सब मिलकर, ।। ११८४ ।।

वानर वीरुलुतम तम सत्त्वमुल दॆल्पुट

घनुलार ! यॊक्कडॊक्कडु चॆप्पु" डनुचु । गिनिसिन नंदऱु गृतमतुलगुचु
दमतम सत्त्वमुल् दलपोसि चूचि । यमितसत्त्वोन्नतुलंदऱु गूडि
"नलिमीऱ बदियोजनंबुलु दाट । गलवाड ने" ननि गजुडर्थि बलिकॆ।
नॆलसिन लावुमै निरुवदि दाट। सॊलय ने" ननि गवाक्षुडु वॆर्चि पलिकॆ।
"मॊनसिन कडिमिमै मुप्पदि दाट।घनशक्ति गल" दनि गवयुंडु वलिकॆ।
"ना लावु पॆम्पुन नलुवदि दाट। जालुदु ने" ननि शरभुंडु वलिकॆ ११९०
"बनिगॊनि जलधि नेबदि दाटुवाड"। ननि गंधमादनुंडलवुमै बलिकॆ।
"नसमितडिपक यऱुवदि दाट। मसल कोपुदु" ननि मैंदुंडु वलिकॆ।
"नॆनुबदि दाटुदु नेपु दीपिंप। दनियक ने" ननि तारुंडु वलिकॆ।
नोपिन तम लावु नॊकडुनु दाप। केपुमै नंदऱु निट्टु पल्कुचुंड
भल्लूकनाथुंडु बहुकालवृद्धु। डुल्लोक विक्रमुडॊकमाट वलिकॆ;
"जिन्ननाटि बलंबु सॆप्पवच्चिननु। ग्रन्नन हास्यकारणमगु नेडु;
नैननु विनुडु; मुन्नमृतंबु कॊऱकु। दानवुल् सुरलु युद्धंबु गाविप
नमरुलकै सहायंबुगा वच्चि। यमृतंबु द्राविति नर्थि वारॊसग;

वानर वीरों का अपना-अपना सत्व बताना

—हे महान् (जनो) ! एक-एक अलग-अलग से कहिए।" ऐसा कहते क्रुद्ध होने पर, कृतमति (निश्चित बुद्धिवाले) होते हुए, अपने-अपने सत्त्व (के बारे में) विचारकर (उन) अमित सत्त्व में उन्नत (वानरों ने) मिलकर यों कहा। "सरलता से मैं दस योजन पारकर सकता हूँ"। (ऐसा) गज ने इच्छा से कहा। "सुस्थिर बल से मैं बीस (योजन) पार कर नहीं सकूँगा" गवाक्ष ने चीखकर कहा। "सुनिशित साहस से तीस (योजन) पार करने की महाशक्ति (मुझमें) है"। (ऐसा) गवय बोला। "अपने बलके आधिक्यसे मैं चालीस (योजन) पार कर सकता हूँ" शरभ ने कहा ॥ ११९० ॥

—"सप्रयत्न (मैं) जलधि में पचास (योजन) पारकर सकता हूँ" ऐसा गंधमादन ने समर्थता से कहा। "उद्रेक के कम न होने पर, साठ (योजन) पारकर, सुस्ताए बिना रह सकूँगा" ऐसा मैंद ने कहा। "कम न होनेवाले साहस से सत्तर (योजन) पार करने में समर्थ हूँ" ऐसा द्विविद ने कहा। "औन्नत्य के दीप्त होने पर मैं अस्सी (योजन) बिना थके पारकर सकूँगा" ऐसा तार ने कहा। अपनी सामर्थ्य को छिपाए बिना प्रत्येक (वानर) ने औन्नत्य से सभी के इस प्रकार कहते रहने पर, भल्लूकनाथ ने जो बहुकाल-वृद्ध, उल्लोकविक्रम वाला था, एक बात कही—"बचपन के बल की बात

नुदधुतलेड्डनु दाट नोपु; दस्ताद्रि । कुदयाद्रिपै नुंडि यौक जंग मिड्डदु;
नेल्ललोकमुल नाकेंदुरेंदुलेंदु । बल्लिदुडगु बलि बंधिचुनाड्डु १२००
इरुवदियौक्क माड्रिल ब्रदक्षिणमु । दिरिगि त्रिविक्रमदेवुनि गौलुचु
तड्रि गालु विड्रिगॆ; ना दर्पंबु जवमु।पड्रिबोयॆ; मड्रि जराभारंबु वौंदिवॆ;
नरयंग गड्डवृद्धनैतिनिप्पटिकि; । बरिकिंप नेनु दौंबदि गानि चाल;
बौलुपौंद नी त्रोव बोयेंडुपनिकि। वलति गा'' ननि जांबवंतुंड्डु वलिकॆ ।
"दौंबदियेड्डु दोड्तो दाटुवाड । नंबुधि'' ननि नीलुडत्तड्रि बलिकॆ ।
ना मारुतात्मजुडात्मपौरुषमु । लेमियु बलुककय्यॆड नूरकुंडॆ ।
''वालिन कडिमिमै वडि नूरु । दाट जालुदु; मगुडि राजालनु गानि''
यनि यंगदुड्डु वल्क ना जांबवंतु । ''डनघ ! माकंदड्रकधिपति वीवु;
वालितनूज ! यी वाराशि दाट।जालुदु, मगुडि राजालुदु वीव; १२१०
युवराज वी कपियूथंबुलकुनु; । रवितनूजुनियट्ल राजवु गान
दगमम्मु बनिगौन दगुगाक ! यिट्लु।तगुनय्य! नीकिंत दैन्यमेमिटिकि ?

कहूं तो एकदम हास्य का कारण बनेगा। फिर भी सुनिए। पूर्व में अमृत के लिए दानव और सुरों के युद्ध करते समय, अमरों की सहायता के लिए आकर, उनके प्रेम से देने पर अमृत का पान किया था। सात समुद्रों को पार कर सकता हूँ। अस्ताचल से उदयाचल तक एक छलाँग भर सकता हूँ। समस्त लोकों में मेरा कोई सानी नहीं है। बलिष्ठ बलि को बाँधने के समय, ॥ १२०० ॥

—पृथ्वी पर इक्कीस बार प्रदक्षिणा कर, त्रिविक्रमदेव की सेवा करते समय टाँग टूट गयी थी। मेरा दर्प (तथा) जव नष्ट हो गए। इसके अतिरिक्त जराभार भी प्राप्त हुआ। सोचने पर अब तक अधिक वृद्ध हो गया। देखने पर मैं नब्बे (योजन) के लिए तो योग्य हूँ। शोभित इस मार्ग से जाने के काम के लिए समर्थ व्यक्ति नहीं हूँ।" (ऐसा) कह जांबवान ने कहा। उस समय नील ने कहा—"साथ-साथ सतानबे (योजन) अंबुधि को तो पार कर सकता हूँ।" मारुतात्मज आत्मपौरुष के अभाव में उस अवसर पर चुप्पी साधे रहा। "साहस से झट सौ (योजन) पार तो कर सकूँगा, वापिस नहीं आ सकूँगा" ऐसा अंगद ने कहा। जांबवान ने कहा—"हे अनघ ! तुम हम सबके अधिपति हो। हे वालितनूज ! इस वाराशि (समुद्र) को पारकर सकोगे, लौटकर भी आ सकोगे। ॥ १२१० ॥

--हे युवराज ! इन कपियूथों (समूहों) के लिए रवितनूज के समान तुम राजा हो। उचित रूप से (तुम्हें) हमसे काम लेना चाहिये। ऐसा

रामकार्यपरुंडु रविजुनिमंत्रि । यी मर्कटावलि कैल्ल ब्राणंबु
तक्कक पवमानतनयुंडु गलुग । नक्कटा ! नी कसाध्यमुलेंदु गलवु ?
वल" दनि वारिंचि वायुनंदनुनि।बिलिचि यातनितोड ब्रियमुन बलिकें;

समुद्रलंघनकु जांबवंतुडु हनुमंतुनि ब्रोत्साहिंचुट

"मारुति नी ! पनि मा मीद बेट्टि । यूरकयुन्नाड वुचितमे नीकु ?
ललितलावण्य विलास संपदल । वलनोप्पु नप्सरोवनितलयंदु
बुंजिकस्थलयन बोलुचु मी तल्लि । यंजन यट्टु दोल्लि यग्निशापमुन
वानर वनितयै वसुध गेसरिकि । मानिनियैयुंडि मरि योक्कनाडु
वनगिरिस्थलुलंदु वर्तिंचुचुंड । ननिलुडायंगन यलसयानंबु १२२०
दोडलबेडंगुनु दोरंपुबिरुदु । नुडुराज़बिबंबु नोरयु नेम्मोमु
गलदु लेदनु कौनु गब्बिगुब्बलुनु । दल चुट्टिवच्चु बित्तरिकन्नुगवयु
गनुगोनि मोहंबु गडलुकोनंग । मनसिजशरभिन्नमानसुंडगुचु
जेल बायगजेसि चेलिमिमै डासि । यालिंगनमु सेय नंजन यलिगि,
"नादु पातिव्रत्यनैपुणि जेरुप । ने दुष्टमति योको यिट्टु समकट्टे ?"

(करना तुम्हारे लिए) उचित है ? तुम्हें इतना दैन्य क्यों ? रामकार्यरत, रविज का मन्त्री, इस मर्कट-समूह के लिए प्राण समान इस पवमानतनय के होते हुए हाय ! तुम्हारे लिए असाध्य (कार्य) ही क्या है ? व्याकुल मत बनो" ऐसा मना कर वायुनन्दन को बुलाकर, उससे प्रिय वचन बोला ।

समुद्र लांघने के लिए जांबवान का हनुमान को प्रोत्साहित करना

"हे मारुती ! अपना काम हम पर रख चुप बैठे हो । यह क्या तुम्हें उचित है ? ललितलावण्यविलास की सम्पदाओं से शोभित अप्सरा-स्त्रियों से 'पुंजिकस्थल' के समान शोभित तुम्हारी माता अंजना पूर्व में अग्नि के शाप से वसुधा पर वानरवनिता हो, केसरी की पत्नी होकर रही । (ऐसा होकर) एक दिन (उसके) वन-गिरि-स्थानों में विचरण करते समय, अनिल उस अंगना के अलस (मंद)-गमन, ॥ १२२० ॥

—जंघाओं की सुन्दरता, विलासपूर्ण नितंब, उडुराजबिंब (चंद्र) की समता करनेवाला सुन्दर मुख, अस्ति-नास्ति का संदेह पैदा करनेवाली कटि (क्षीण कटि), पीन स्तन, विशाल तथा चंचल नेत्रों को देख मोह के व्याप्त होने पर, मनसिज-शर से छिन्न मनवाला होता हुआ, (अंजना के) वस्त्रों को दूरकर, प्रेम से नियराकर, आलिंगन किया । (तब) अंजना ने रुष्ट होकर, (कहा)—"कौन दुष्टमति इस प्रकार मेरे पातिव्रत्य-नैपुणी को

ना विनि "यलुगको नाति ! ने वायु । देवुंड; नीदु पातिव्रत्यमुनकु
भंगंबु गाकुंड बरिकिंचि हृदय । संगंबु सलिपिति; जलजाक्षि ! दीन
बल वेग विक्रम पौरुष धैर्य । मुलु गल तनयुडिम्मुल नीकु बुट्टु"
ननि पल्कि चनुटयु ना वधूमणियु । मनमुन नलरुचु मऱि वायुदेवु
प्रविमलकृप निन्नु बडसे गावुननु । भुविनि वायुवुतोडि भूरिसत्त्वुडनु;
१२३०
वेगविक्रमकळा विस्फूर्तुलंदु । ना गरुडुनिकंटॆ नधिकुड वीवु;
वऱलु पंकजगर्भु वरमुन जेसि । मऱि नीकु नायुधमरणंबु लेदु;
नी समानुलु लेरु निखिललोकमुल; । नी सत्वमॆऱुगुदु निजमुगा नेनु;
जडनिधि लंघिंचि जनकज गांचि । कडकमै निट्टु रामकार्यंबु सेसि
कपुल प्राणमुलु राघवुल प्राणमुलु । कपिनाथु प्राणमुल् गरुणतो गाचि
तडयक यो जगत्प्राणनंदनुड ! । पडयु मुत्तमलोकपदमुलु नीवु"
अनवुडु हनुमंतु "डवुगाक ! मीरु । पनिचिन जेयुदु बतिकार्यमॊनर;
नगचरुल् सूडुडु ना शक्तिनेडु । जगदेकहितबुद्धि जलधि लंघिंचि
पऱतेंचि सुरलड्डुपडिन साधितु; । नॆऱसि लोकमुलॆल्ल नीऱु गाविंतु;

बिगाड़ने पर उतारू हुआ ?" यह सुन, (वायुदेव ने कहा)—"हे नारी ! क्रुद्ध मत होना। मैं वायुदेव हूँ। यह देखकर कि तुम्हारा पातिव्रत्य खंडित न हो मैंने हृदयसंगम किया है। हे जलजाक्षी ! इससे बल, वेग, विक्रम, पौरुष, धैर्य से सम्पन्न पुत्र प्रेम से उत्पन्न होगा।" ऐसा कह (वायुदेव के) जाने पर वह वधूमणि भी मन में प्रसन्न होते हुए, फिर वायुदेव की प्रविमल कृपा से तुम्हें प्राप्त किया है। अतः भुवि (लोक) में तुम वायु के समान भूरिसत्त्ववाले हो ।। १२३० ।।

—वेग-विक्रम-कला की विस्फूर्तियों में तुम गरुड़ से भी अधिक हो। शोभायमान पंकजगर्भ (ब्रह्मा) के वर से फिर तुम्हें आयुध-मरण नहीं है। निखिल लोकों में तुम्हारे समान कोई नहीं है। मैं वास्तव में तुम्हारे सत्त्व को जानता हूँ। जड़निधि (समुद्र) को लांघकर, जनकजा को देखकर, साहस से यहाँ रामकार्य सम्पन्न कर कपियों के प्राण, राघवों के प्राण (तथा) कपिनाथ के प्राणों की, करुणा से, रक्षाकर, (इस कार्य में) विलंब न कर हे जगत्प्राणनंदन ! तुम उत्तम लोकपदों को प्राप्त करो।" ऐसा कहने पर हनुमान ने कहा—"वैसा ही हो। आपके आदेशानुसार पति (राम के) कार्य को सम्पन्न करूँगा। हे अगचरो ! आज मेरी शक्ति को देखो। जगदेकहितबुद्धि से जलधि को लांघकर, यदि दौड़ आकर देवता भी बाधाएँ उपस्थित करें तो (कार्य को) सिद्ध

नक्कजंबगु शक्ति नट्टु लंक सॊत्तु । स्रुक्कक वॆदकि भूसुत जूचिवत्तु;
१२४०
जूड जॊप्पडकुन्न सुरवैरितोड । गूड लंकापुरि गॊनिवत्तु वेग;
गाकुन्न जलधुलु गलतु नॊंडेनि । वीकतो नमराद्रि विऱुतु नॊंडेनि
बुडमि तुत्तुमुऱुगा बॊडुतुनॊंडेनि । जेवमीऱग लंक जेरियच्चोट
दुष्टासुरुल नॆल्ल द्रुंतु नॊंडेनि । सृष्टि जीकटि सेसि चॆऱुतु नॊंडेनि
गानि यूरक रानु गडगि मीयॊद्द । के'' ननि पूनि महेंद्राद्रि यॆक्कि,

हनुमंतुडु समुद्रमुनु दाटुट

युदधुलतो गूड नॊंगि सृष्टि म्रिंग । गदिसिन लयकालकालुडो यनग
वॆस द्रिविक्रमुडैन विष्णुनि रीति । नसमानदेहुडै यंदंद पॆरिगि,
यंगदादुलचेत ननुमति वडसि । यंगमॆंतयु बॊंग बॊंग नंतरंगमुन
दन तंड्रि बवमानु दलचि श्रीराम । जननाथु पदपंकजमुलात्मनिलिपि
१२५०

करूँगा, रुष्ट होकर समस्त जगत को नष्ट कर दूँगा। आश्चर्यप्रद शक्ति से उधर लंका में प्रवेश करूँगा, दुर्बल न बन अन्वेषण कर भूसुता को देखकर आऊँगा। ।। १२४० ।।

--देखने में दुर्निवार बने सुर-वैरी (रावण) के साथ लंकापुरी को ही झट से लाऊँगा। ऐसा न हो तो जलधियों को व्याकुल बनाऊँगा, नहीं तो बेपरवाह हो अमराद्रि के टुकड़े कर दूँगा, नहीं तो पृथ्वी को चकनाचूर कर दूँगा, नहीं तो सप्रयत्न मृत्यु का ही संहार कर दूँगा, नहीं तो समस्त द्वीपों को शोध डालूँगा, नहीं तो अधिक शक्ति से लंका पहुँचकर वहाँ के समस्त दुष्ट असुरों का वध कर दूँगा, नहीं तो सृष्टि को अंधकारमय बनाकर नष्ट कर दूँगा। ऐसा कुछ नहीं करूँगा तो खाली हाथ मैं आपके पास लौटकर नहीं आऊँगा।'' (ऐसा) कह निश्चयकर महेंद्रादि पर चढ़कर,

हनुमान का समुद्र पार करना

—मानो उदधियों के साथ, लगकर सृष्टि को निगलने पास आया हुआ प्रलयकाल का कालपुरुष हो, (हनुमान) झट त्रिविक्रम बने विष्णु की तरह, असमान देहवाला हो। जहाँ-तहाँ बढ़कर, अंगद आदियों से अनुमति प्राप्तकर, शरीर के अधिक फूलने पर, अंतरंग में अपने पिता पवमान का स्मरणकर, राजा श्रीराम के पदपंकजों को आत्मा में स्थिर कर, ।। १२५०।।

—चरणों को स्थिरता से अद्रि पर आरूढ़कर, गरदन उठाकर, थोड़ा-सा मही

यड्गुलु दिरमुगा नद्रिपै गोपि । मॆडयॆत्ति यॊकयित मॆयि ग्रुंक निक्कि
बॊमलॆत्ति कलय नंभोराशि जूचि । यमरारिपुरि मीदनट दृष्टि निलिपि
वऱलग नटमीद वाल मल्लार्चि । नॆऱि कर्णमुलु रॆंडु निक्किंचि मिंचि
यट नद्रिशिलमीद हस्तंबुलूदि । पटुजवंबुन दाटॆ बवमानसुतुडु
अल सुधाहरणार्थमै वैनतेयु । डिलनुंडि मुनु दिविकॆगयुचंदमुन;
ना रभसंबुन नद्रिशृंगमुलु । भूरेणुवुलकंटॆ बॊडिवॊडियय्यॆ
ना रावणुंडु मुन्नार्जिंचिनट्टि । भूरिकीर्तुल पॆम्पु पॊडियैन यट्टु;
ला युरवडि म्राकुलतनितो नॆगसि । तोयधिलो जॊच्चि तुनियलै पडियॆ
भाविसेतुवुनकै पवननंदनुडु । दा वच्चि शंकुवुल् स्थापिंचॆननग;
वॆस बॆर्चि यप्पटि विषमवायुवुल । दॆसलकु जॆड पाऱॆ दिविरि मेघमुलु
१२६०

वक्रिंचॆ लंकपै वायुजुंडनुचु । शक्रादुलकु जॆप्प जनिनचंदमुन;
नावडि नब्धि नीरंतयु बासि । यावलि पाताळमट्टु गानवच्चॆ
‘जनकज दॆच्चि ना जलमुलो दाप’ । डनि मारुतिकि जूपॆ नंबोधियनग;
दन पति हितकार्य धैर्यशौर्यमुलु । दन वेगलाघवोदात्त सत्त्वमुलु

दब जाए, ऐसा ऊपर उठ कर, भौंहें उठाकर अंभोराशि को खूब निहारकर, अमरारि (राक्षस) की पुरी पर दृष्टि स्थिर बनाकर, उसके बाद शोभा से पूंछ को हिलाकर, बड़े कानों को ऐंठकर, शोभित हो, तब अद्रिशिला पर हाथ दबाए रख, पूर्व में सुधा-हरण के लिए वैनतेय (गरुड़) पृथ्वी पर से आकाश को उड़ा था, उस तरह पवमानपुत्र पटु जव के साथ लांघ उठा। उस रभस (शीघ्रता) के कारण पर्वत के शृंग भूरेणुओं की अपेक्षा (अधिक) चूर-चूर हुए मानों उस रावण के पूर्व में अर्जित भूरिकीर्तियों की सम्पत्ति चूर हो गयी हो। उस वेग के कारण बड़े पेड़ उसके साथ उड़कर तोयधि (समुद्र) में गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गये मानों भावी सेतु के लिए पवननंदन ने स्वयं आकर शंखुओं की स्थापना[1] (शिलान्यास) की हो। झट एकत्र होकर (उठे) उस समय के विषम वायुओं के कारण मेघ हारकर दिशाओं में फैल गये ॥ १२६० ॥

—मानों शक्र (इंद्र) आदियों को यह कहने गए हों कि वायुज लंका के प्रति वक्र हो गया है। उस वेग के कारण अब्धि (समुद्र) समस्त जल से रहित हो, उस ओर का पाताल दिखाई पड़ा मानों अंबोधि (समुद्र) मारुति को यह बता रहा हो कि जनकजा को लाकर मेरे जल के भीतर

---

[1] तॆलुगु में ‘शिलान्यास’ को ‘शंखुस्थापना’ कहते हैं।

जूचि यिंद्रादुलु सॊरिदिगीर्तिंप । नी चंदमुन दाटि यॆगुचुन्नंत
'नी नित्यकृति जगद्धितमुगा गोरि । पूनि यॆंतयु दव्वु पोवुचुन्नाडु;
इतनिकि विश्रांति यिचुट गाविप । नितनि बुच्चॆद' ननि यिच्चलो दलचि
यप्पुडु मैनाकु नंबुधि पिलिचि । 'यिप्पुडु हनुमंतुडेतेंचॆ निटकु;
नॊप्पार नातिथ्य मॊसगु नी' वनुचु । जॆप्पि 'पो' म्मनुटयु शीघ्रंबॆ यॆगसि
१२६९

हनुमंतुनकु मैनाकुनि आतिथ्यमु

युरुतर निजपक्षयुगळ संजात । मरुदुच्चलद्वार्धिमध्यंबु वॆडलि
श्रीकरकांचन श्रृंगसंकलित । नाकमै यॊप्पु मैनाकपर्वतमु
ऎदुट दोचिन जूचि 'यिदि दैत्यमाय; । कदिसि ना पनिकि विघ्नमु
सेयगोरॆ;
दानिकि नेमि ? ना दर्पंबु पेर्मि । दीनि द्रुंचॆद गाक तॆगि'' यंचु नडरि
वरवज्रकठिनमौ वक्षंबु चेत । नुरुवडि हनुमंतुडुदरि ताकुटयु
गरुवलि सुडिगॊन्न काराकु वॊलॆ । दिरमेदि धृति दूलि दिर्दिर दिरिगि
मनुजुडै पॊडसूपि मैनाक शिखरि । यनिलनंदनु जूचि यर्थितो बलिकॆ;
'ननिलज ! नेनु नीकपकारिगानु । वनराशि पनुपुन वच्चिति गानु;

नहीं छिपा रखा है।' अपने पति (राजा) के हितकार्य के लिए धैर्य-शौर्य, अपने वेग-लाघव (और) उदात्त सत्त्व (आदि) को देख इंद्र आदियों के क्रम से प्रशंसा करते रहने पर, इस प्रकार समुद्र को पार करते जाते (देख) मन में यह सोच कि "यह नित्य कृती (पुण्यात्मा) जगत्‌हित की इच्छाकर, निश्चयकर बहुत दूर जा रहा है। इसे विश्राम देने के लिए इसे भेजूँगा" तब अंबुधि ने मैनाक को बुलाकर, यह कह कि "अब हनुमान यहाँ आया है, शोभायुक्त रूप से उसे तुम आतिथ्य प्रदान करो, जाओ" भेजा। (वह भी) शीघ्र उड़कर ॥ १२६९ ॥

हनुमान को मैनाक का आतिथ्य प्रदान करना

—उरुतर (महत्तर) निजपक्ष युगल से संजात (उत्पन्न) मरुत् (पवन) से उच्छलत् (उछलते हुए) वारिधि के मध्य से निकलकर श्रीकर कांचन-श्रृंग-संकलित नाक (स्वर्ग) हो शोभित मैनाक पर्वत के सामने दीखने पर, (उसे) देख, यह सोच कि "यह दैत्यमाया है। इसने जान-बूझकर मेरे कार्य में विघ्न उपस्थित करना चाहा। हुआ तो क्या ? अपने दर्प की अधिकता इसका दमनकर दूँगा।" उद्धत होकर, वर-वज्र (समान) कठिन वक्ष से झट से भीत करते हुए हनुमान के लगने पर,

यम्महात्मुडु नीकु नातिथ्यमोसगु । पोम्मन्न वच्चिति; बूर्वकालमुन
बर्वतंबुलकेल्ल बक्षमुल् गलिगि । गर्विंचि मेलग नाखंडलुंडलिगि
पविधार नोक्कट बक्षमुल् दुनुम । बवनुडु मी तंड्रि परिकिंचि नन्नु १२८०
नवलील नी लवणाबुंधिलोन । गवयिंचि पक्षमुल् गाचि रक्षिंचे;
गान मी वाडनु गानि यन्युंड । गानु; शीताचलाग्रणिकुमारुंड;
नेनु मैनाकुंड; नीवु ना यंदु । बूनिन फलमूलमुल दृप्ति बोंदि
बडलिकलुनु बासि पवनकुमार ! । कडुलावु मीऱ लंकापुरंबुनकु
नरुगुमु नी'वन्न नम्महाबलुडु । "वेरवुगादिप्पुडु विश्रमिंचुटकु
जलधिनडुम नेच्चट निल्व ननुचु । जेलगि मुन्नु प्रतिज्ञ सेसिनवाड
निट्टु रामुकार्यमै येगुचुन्नाड; । नट्टुगान निल्वरादद्रीश ! नाकु"
ननि पाणितलमुन नय्यद्रिदडवि । 'यनघात्म ! नी पूजलन्नियु वच्चे'
ननि पल्कि पोवुचो ननिलनंदनुनि । घनशक्ति कमरुलु गड्डु जोद्यमंदि
नानाविधमुल नानंदिंचि; रंत। मैनाकगिरि निपुमै नाकविभुडु १२९०

पवन के भँवर में फंसे पके पत्ते के समान स्थिरता (और) धैर्य को खोकर, गोल घूमकर, मनुष्य हो दिखाई पड़कर, मैनाक पर्वत ने अनिलनंदन को देख प्रेम से कहा:—"हे अनिलज ! मैं तुम्हारा अपकार करनेवाला नहीं हूँ। बस, वनराशि (समुद्र) के भेजने पर आया हूँ। उस महात्मा के कहने पर कि तुम्हें आतिथ्य दूँ, आया हूँ। पूर्वकाल में समस्त पर्वतों के पंख होकर, उनके गर्वित हो विचरण करने पर, आखंडल (इंद्र) रुष्ट होकर, पवि (वज्र)-धारा से एक बार पंख काट डाले। (तब) आपके पिता पवन ने मुझे निहारकर ॥ १२८० ॥

—सरलता से इस लवणांबुधि में डुबोकर (मेरे) पंख बचाकर, रक्षा की। अतः मैं आप ही का हूँ, अन्य नहीं हूँ। मैं सीताचलाग्रणी (हिमालय) का पुत्र हूँ। मैं मैनाक हूँ। तुम मुझ पर उत्पन्न फल-फूलों से तृप्त होकर, थकावट को दूरकर हे पवनकुमार ! अधिक सामर्थ्य की अधिकता से तुम लंकापुर को जाओ।" (ऐसा) कहने पर वह महाबली (बोला):— "विश्राम करने का अब अवसर नहीं है। प्रथमतः मैंने प्रतिज्ञा की कि जलधि के मध्य कहीं रुकूँगा नहीं। इधर राम के कार्य के लिए जा रहा हूँ। अतः हे अद्रीश ! मुझे यहाँ नहीं रुकना चाहिए।" (ऐसा) कह हथेली से उस अद्रि (पर्वत) को स्पर्शकर कहा:—"हे अनघात्म ! तुम्हारी समस्त पूजाएँ मुझे प्राप्त हैं।" (ऐसा) कह जाते समय अनिलनंदन की घनशक्ति से अमर अत्याश्चर्यचकित हो अनेक प्रकार से आनन्दित हुए। तब मैनाकगिरि को शोभा से, नाकविभु (इंद्र) ॥ १२९० ॥

गनुगोंनि ‘श्रीरामुकार्यमै येगु । हनुमंतुनकु ब्रियंबाचरिंचितिवि;
यटुगान नीकु ने नभयमिच्चितिनि,।इट सुखस्थिति नुंडु मी वंचु बलिकें’,
नप्पुडु गंधर्वुलमरुलु मुनुलु । दप्पक यंजनातनयु जूचुचुनु
‘इतनि लावेंट्टिदो येरुगुद’ मनुचु । जतुरुलै सुरस ना जनु देवदूत
बनिचिन राक्षसभावंबु दाल्चि । यनिलसूनुनकु दा नड्डमै निलिचि
‘यी वार्धिलोनुंडि येगु निन् गंटि;। दैवयत्नंबुन दानिक मंटि;
ननिलज ! याकोंटि; नटनिट जनक।मुनुकोंनि ना वक्त्रमुन वच्चिचोरुमु
नी’वनवुडु ‘रामनृपु कार्यमुनकु । बोवुचुन्नाडनु बोलति ! रारादु;
धरणीशु कार्यमंतयु नेंऽवेर्चि । तिरिगि येतेंचुचो दीर्तु नीकोर्कि;
पोयि वच्चेंद निंति ! बोंकुगा’ दनिन । ना यिंति कोपिंचि यरुक्रम्मि-
निलिचि १३००
चननीनु; निनुबट्टि चंपुदु गडिमि’’। ननि नोरु देरचिन ननिलनंदनुडु
तन मेनु वेंस बेंचे दशयोजनंबु; । लिनुमडिगा बेंचे निंति याननमु;
मुप्पदि योजनंबुलु वेंचे नात; । डप्पुडु नलुवदि यदियुनु बेंचे;
नोंडोरुलिटु शतयोजनाधिकत । दंडिमै बेंचिरि तनुवु वक्त्रमुलु :

—देखकर बोले:—‘‘श्रीराम के कार्य के लिए जानेवाले हनुमान को प्रिय किया है। अतः मैंने तुमको अभय दिया है। यहाँ तुम सुख से रहो।’’ तब गंधर्व, अमर, मुनि अवश्य अंजनातनय को देखते हुए यह सोच कि ‘‘इसकी सामर्थ्य कैसी है ? यह जानेंगे’’ चतुर हो, सुरसा नामक देवदूती को भेजा। (वह) राक्षसभाव को धारणकर, अनिलसून के (मार्ग में) बाधा बन खड़ी हुई। (कहा):—‘‘इस वारिधि में से जानेवाले तुम्हें देखा है। दैवयत्न से अब मैं जीवित रह पाऊँगी। हे अनिलज ! भूखी हूँ। इधर-उधर न जाकर तुम प्रथमतः मेरे गले में आकर प्रवेश करो।’’ ऐसा कहने पर ‘‘हे नारी ! राजाराम के कार्य के लिए जा रहा हूँ। नहीं आना चाहिए। धरणीश के समस्त कार्य को सम्पन्न कर लौट आते समय तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करूँगा। हे नारी ! जाकर आऊँगा। इसे झूठ मत समझो।’’ (ऐसा) कहने पर वह नारी क्रुद्ध होकर, खूब व्याप्त होकर खड़ी हो गई ।। १३०० ।।

—(और कहा):—‘‘(तुम्हें) जाने नहीं दूंगी। साहस से तुम्हें पकड़ मार डालूंगी।’’ (ऐसा) कह मुँह खोलने पर अनिलनन्दन ने झट से अपने शरीर को दस योजन तक बढ़ा दिया। (उस) नारी ने अपने मुख को दुगुना (बड़ा) बना दिया। दोनों ने इस प्रकार परस्पर तनु और वक्त्र को खूब शतयोजनों से अधिक बढ़ा लिया। तब वह हनुमान

नंत ना हनुमंतुडसमान बुद्धि । मंतुडै यंगुष्ठमात्रगात्रमुन
नतिसूक्ष्मुडै वच्चि या यितिवदन । मतिरयंबुन जॊच्चि यवलील वॆडलॆ
मुडिगॊन्न संसारमोहबंधमुलु । विडदन्नि सुज्ञानि वॆडलिनमाड्कि;
वॆडलि 'नी कॊर्कि गाविंचिति निक । गडलि दाटॆद' नन्न गपिकुलोत्तमुनि
बुद्धि कॆंतयु मॆच्चि पॊगडुचु 'गार्य । सिद्धि नीकय्यॆडु शीघ्रंबॆ' यनुचु
नट दिव्यवनितयै या यिति प्रीति।बटुसत्त्वुननिलजु बरग दीविंचॆ१३१०
नतडंत प्रणमिल्लि यटु बोवुचुंड । नतिरयंबुन वच्चि यातनि गदिसि
यॊलसि देहच्छाय लॊडिसि रा दिगिचि।चॆलगि जीवुल म्रिंगु सिंहिक गडगि
पदियोजनंबुल पऱपुनु मूडु । पदुल योजनमुलै परगॊडु निडुपु
नगुचुन्न तन नीड नलमि चेपट्टि । तिगिचि म्रिंग गडंग धीरुडै यतडु
प्रतिकूलवातूलपवनसंघात । हतुल नोडयु बोलॆ नटु पोक निलिचि
यॆडद 'छायाग्राहि यिद' यनि तॆलिसि। मडपक यटमीद मकरि वक्त्रंबु
चॊच्चि वत्तु नटंचु सूचिंचुनट्टु । लच्चॆरुवंदि यिंद्रादुलु सूड
गडुसूक्ष्मरूपुड कलगक दानि । कडुपुलोपल जॊच्चि कडिमिमै व्रच्चि

असमान बुद्धिमान होते हुए अंगुष्ठमात्र गात्र (शरीर) से अतिसूक्ष्म हो आकर, उस नारी के मुख में अतिशीघ्रता से घुसकर सरलता से (बाहर) निकल आये मानों उलझे हुए संसार-मोह-बन्धनों से छूटकर सुज्ञानी निकल पड़ता हो। निकलकर (बोले)—"तुम्हारी इच्छा की पूर्ति की। अब समुद्र को पार करूँगा।" (ऐसा) कहनेवाले कपिकुलोत्तम की बुद्धि की अधिक प्रशंसाकर, सराहते हुए, यह कहते "तुम्हें शीघ्र ही कार्यसिद्धि होगी" दिव्यवनिता हो (राक्षस रूप छोड़), उस नारी ने प्रीति से पटु-सत्त्ववाले अनिलज को शोभा से आसीसा। ॥ १३१० ॥

—वह तब प्रणामकर उधर जा रहा था तो अतिशीघ्रता से आकर, उसके निकट आकर, देह की छायाओं का स्पर्शकर, आकर्षितकर, नीचे खींच, उल्लसित हो, जीवों को निगलनेवाली सिंहिका के सप्रयत्न दस योजन चौड़ाई, तीस योजन की लम्बाई वाली अपनी छाया को आवृत हो, पकड़कर, निगलने लगने पर, धैर्यशाली होकर वह प्रतिकूल-वातूल-पवन संघात-हतियों के कारण नौका के समान आगे न जाकर, मन से यह जानकर कि "यह छायाग्राही है", न दबकर, प्रथमत: मकरी के वक्त्र में प्रवेश कर आऊँगा, यह सूचित करते हुए, इंद्र आदियों के चकित हो देखते रहने पर, अतिसूक्ष्म रूप से, व्याकुल हुए बिना उसके पेट में प्रवेशकर, (उसे) चीरकर, उस दुष्ट राक्षस को समुद्र में डाल दिया। अनन्तर सभी देवताओं ने आनन्दित हो, विनुति कर वर-पुष्पवृष्टि की। वननिधि (समुद्र) को सरलता से झट पारकर, जाकर, ॥ १३२० ॥

या दुष्टराक्षसि नब्धिलो वैचि । यादट सुरलेल्ल नानंदमंदि
विनुतिंचि वरपुष्प वृष्टुलु गुरिय । वननिधि नवलील वडि दाटिपोयि
१३२०

या समीरजुडनायासंबुतोड । ना सुवेलाचलंबचलुडै येक्के ।
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुत काव्यागम विमल मानसुडु
पालिताचारुडपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
दम तंड्रि विट्ठलधरणीशुपेर । गमनीयतरधैर्यकनकाद्रि पेर
बनुगोंन नरिगंडभैरवु पेर । घनु पेर, मीसरगंडनि पेर
नलघु निश्चलदयायत बुद्धि पेर । ललितसद्गुणगणालंकारु पेर
नाचंद्रतारार्कमै योप्पुमिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वेलय
नसमानललितशब्दार्थसंगतुल । रसिकमै चेलुवोन्द रामायणमुन
बरग नलंकारभावनल् निंड । गरमोप्पु नी किष्किधाकाडंबु जेप्पे:
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै येल्लनाडु १३३०
निव्वसुमति नोप्पु नी पुण्यचरित । मेव्वरु सदिविन नेव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधाम राम । नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु

—वह समीरज अनायास उस सुवेलाचल पर अचंचल हो चढ़ गया। इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत काव्यगम-विमल-मानस (श्रेष्ठ काव्य और शास्त्रों के ज्ञाता), आचारवान्, अपार-बुद्धि-सिंधु, भूलोक-निधि गोन बुद्धि-भूपति ने, अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, जो कमनीयतर धैर्य के कनकाद्रि हैं, दृढ़ता से अरिगंडभैरव (शत्रुभयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रतापशाली), अलघुनिश्चल-दया के आयतबुद्धि वाले हैं, ललित सद्गुणगणालंकार हैं, आचन्द्रतारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगित से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस किष्किधाकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देनेवाले ।। १३३० ।।

—(तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ें, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकटराज्य (सुख), निर्मल कीर्तियाँ,

नायुरारोग्यंबु लधिकसंपदलु । बायक पाटिल्लु; बापक्षयंबु
वरपुत्रलाभंबु वैरिनाशनमु । सरिनॊप्पु; धनधान्यचय समृद्धियुनु
ने विघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक । लावण्यवतुलैन ललनल पॊन्दु
गॊडुकुलतो नॆप्डु गूडियुंडुटयु । नॆडगाग नापदलॆल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लॆडकुंडुटयु
नन्नलुदम्मुलु नभिवृद्धि बॊन्दि । मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु १३४०
सततंबु देवतासंतर्पणंबु । बितृगणतृप्तियु बॆम्पॊन्दुचुंडु;
निदि मोक्षसाधनं, बिदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदिभव्य, मिदियु
श्रीकरमु;
रमणीयलील नी रामायणंबु । ग्रममॊप्प बूजिप गल्गु बुण्यमुलु;
व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोकनिवासंबु गलुगु;
नॆन्दाक गुलगिरु लॆन्दाक जलधु । लॆन्दाक रविचंद्रुलॆन्दाक दार
लॆन्दाक वेदंबु लॆन्दाक दिशलु । नॆन्दाक भुवनंबु लेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोह-दोहळाचारमै परगु १३४७

॥ किष्किधाकांडमु समाप्तमु ॥

नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही (प्राप्त) होंगे। पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश समुचित रूप से होगा। बिना किसी प्रकार की विघ्न-बाधाओं के धनधान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ बन्धुजनों से मिले रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों की अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर बड़े स्नेह के साथ मिलजुलकर रहना ॥ १३४० ॥

—सतत् देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) से वे सम्पन्न होंगे। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीयलीला (विधान) से इस रामायण को नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा। लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा। जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रविचन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर विराजमान रहेगी। ॥ १३४७ ॥

॥ किष्किधाकांड समाप्त ॥

सुंदर कांडमु

लंका प्रवेशमु

श्रीरामुकार्यंबु सेयंग बूनि । वारिधि बिल्लकाल्वयु बोलॆ दाटि
चारुशृंगंबुल सानुदेशमुल । भूरि भूरुह लतापुंज कुंजमुल
कैरव बंधूक कह्लार कुमुद । सारस जलचरचय तुंगभंग
चलितडोलाकेळि जरियिंचु हंस । कलकलस्वरमुल ग्रौंचनादमुल
राजीवरसमत्त रणित सद्भृंग । राजिचे नॊप्पॆडु रम्यदीर्घिकल
कलिमिचे नॊप्पु लंकापुरियॊद्द । वॆलयु सुवेलाद्रि वेड्कमै नॆक्कि
यंत ना हनुमंतुडायद्रिमीद । नॆंतयु बदिलुडै येपुमै निलिचि
यटु दक्षिणमु सूचि यपुडिट्टुल् गनियॆ । नट द्रिकूटाद्रिपै नमरॆडु दानि
गदलक धर्मार्थकाममुल् मूडु । पॊंदिगॊन्न सिरिवोलॆ बॊलुपॊंदु दानि
दनरारु मॆरुगुल दाराद्रि बोलि। विनुवीथितो रासि विलसिल्लु दानि १०
घनतर वज्र सत्कांतुल दनरि । यनिमिषचयमुचे नलरारुनट्टि
यमरावतीपुरं बब्धिमध्यमुन । गमनीयमुग नॊप्पुगति दोचुदानि

लंका प्रवेश

श्रीराम का कार्य करने का निश्चयकर, वारिधि को छोटी-सी नहर के समान पार कर, चारु श्रृंगों, सानु देशों (पहाड़ की तराइयाँ), भूरि (प्रचुर) भूरुह (वृक्ष) (एवं) लताकुञ्जों के पुंजों, कैरव, बंधूक, कह्लार, कुमुदों, सारस (आदि) जलचर-चयों (समूहों), ऊँचे होकर गिरनेवाली लहरों पर चंचल डोलाकेलि में विचरण करनेवाले हंसों के कलस्वरों, क्रौंच (पक्षियों) के नादों, राजीव (कमल)-रस के पान से मत्त बनी सद्भृंग राजि से सुशोभित रमणीय बावलियों (आदि) की सम्पन्नता से विराजमान लंकापुरी के पास विलसित सुवेलाद्रि पर हनुमान शौक से चढ़ गए। तब उस अद्रि पर अधिक सावधानी से, शोभा से खड़े होकर, उधर दक्षिण की ओर (लंका को) देखा तो वह नगर त्रिकूटाद्रि पर विराजमान था, धर्म-अर्थ-काम को स्थिर तथा एकत्र बनाए रख शोभित होनेवाली लक्ष्मी के समान था, सुशोभित कान्तियों से ताराद्रि की समता करते हुए, आकाश-मार्ग को स्पर्श कर विलसित था, ।। १० ।।

—घनतर (महत्तर)-वज्रों की सत्कान्तियों से शोभित हो, अनिमिष

सललितमकरकच्छप पद्मनिधुल । जॆलुवॊंदि यंचितस्थिति दनरारु
नलककुबेरुतो नलुकमै नचट । नॆलकॊन्न कैवडि नॆगडॆडुदानि
गलकालमुनु नथोगति नुंडलेक । तॆलिविमै भोगवतीनगरंबु
जलराशि वॆलुवडि सरि द्रिकूटमुन । वॆलसिन कैवडि विलसिल्लुदानि
नंबुधि यावरणांबुवुल् गाग । बंबिनप्रभ नॊप्पु बंगारुकोट
ब्रह्मांडविधमुगा बरिकिंप दनरि । ब्रह्माद्यभेद्यमै परगॆडु दानि
दुरग सामज रथस्तोमारि भीम । वरभटानेक दुर्वारंबु नगुचु
बॊलुपॊंदु बहुदिव्यभोगसंपदल । ललितमै यॊप्पॆडु लंकापुरंबु २०
गनि चाल वॆऱगंदि कनुऱॆप्प बॆट्ट । कनिलतनूभवुंडंदंद जूचि
"यॆल्ललोकंबुलु नॆक्कटि गॆलिचि । बल्लिदुंडै पेर्चु पंक्तिकंधरुडु
इट्टि संपदलचे नॆसगु नी लंक । बट्टाभिषिक्तुडै ब्रदुक बालेदि ?
सकलेशुडगु रामचंद्रुनि देवि । विकलुडै कॊनिवच्चि वीडॆल पॊलिसॆ ?"
ननि वानि दूषिंचि यट लंक जॊरग । ननुवु विचारिंचि या सत्वधनुडु
तग लंकयुत्तरद्वारंबु जेरि । तगवुनु नीतियु दलपोसि मऱियु

(देवता)-चय (समूह) से विलसित अमरावतीपुर ही मानों अब्धि (समुद्र) के मध्य कमनीय रूप से विलसित हो रहा हो, (अथवा) सललित मकर-कच्छप-पद्मनिधियों से संपन्न बन, समंचित स्थिति से शोभित (कुबेर की) अलकानगर ही कुबेर से रूठकर, वहाँ आकर बस गया हो, (अथवा) सदा के लिए अधोगति (समुद्र के नीचे, पाताल में) न रह सक, विवेक से मानों भोगवतीनगर (पाताल की राजधानी) जलराशि से निकलकर, त्रिकूट (पर्वत) पर आ जम गया हो, ऐसा था वह नगर। अंबुधि के परिखा बनने पर, व्याप्त-प्रभा से शोभित (वह) स्वर्ण-दुर्ग ब्रह्माण्ड के समान शोभित हो, ब्रह्मा आदि के लिए अभेद्य हो विलसित हो रहा था। तुरग (अश्व) सामज (गज) रथ-स्तोम (समूह), अरि भीम (शत्रुओं के लिए भयंकर) अनेक श्रेष्ठ वीरों से युक्त हो (वह नगर) दुर्वार था। इस प्रकार सुशोभित हो, बहु-दिव्य-भोग-सम्पत्तियों से ललित (सुन्दर) बन विलसित लंकापुर को ॥ २० ॥

—देख अधिक चकित हो, अपलक हो, अनिलतनूभव ने जहाँ-तहाँ देखकर (यों सोचा)—"समस्त लोकों को अकेले ही जीतकर, बलवान हो शोभित पंक्ति-कंधर (रावण) को, इस प्रकार की सम्पदाओं से युक्त हो, सिंहासनस्थ हो जीवित रहने का (आगे) अवसर कहाँ है ? सर्वेश्वर रामचन्द्र की देवी को, विकलता से लाकर यह मरा क्यों ? (सीताजी को लाना मृत्यु को आमंत्रित करने के समान है।)" इस प्रकार रावण की

"नी समुद्रमु गपुलॆट्लु दाटॆदरु ? । वासि दाटिननैन वासवादुलकु
साधिंप मिगुलनसाध्यमीलंक । साधिंप नलवियॆ सकलयत्नमुल ?
भीमसाहसमुन बेर्चु रावणुनि । रामुडॆट्लु जयिंचु रणमुलो नॆदिरि ?"
यनि मुहूर्तमु दन यात्म जिंतिंचि । मनमुन श्रीरामु महिमंबु दॆलिसि ३०
"यी समुद्रंबॆन्त, यी लंक यॆंत, । यी सुरारियु नॆंत यिनकुलेश्वरुन ?"
कनि तिरस्कारंबुगा दलपोसि । "यॆनलेनि पॊडवैन यी मेनितोड
बगटुन नी पुरि बगलु सॊच्चिननु । बग यगु राक्षसभटुलकु नाकु :
जानकि बॊडगान जाल ने नट्लु; । कान सूक्ष्माकृति गैकॊनि पोयि
यी लंक दैत्युल नॆल्ल वंचिचि । वालायमुन गांतु वैदेहि" ननुचु
मदिलोन सूर्यास्तमयमॊप्प दलचि । पदिलुडॆ यॆंतयु बरिकिंचुचुंड
"नविरळसत्त्वुडै यवनीशुदेवि । नवनीतनूभव नरसिपो वच्चॆ;
नेनुन्न ननुवुगा दी लंक जॊरग । वीनिकि" नन्नट्लु वॆस ग्रुंगॆ निनुडु;
अनिललनंदनुनकु ननुविच्चि दैत्यु । घनपापमुलु पूनि कलगॊन बर्वॆ

निन्दा करते हुए, लंका में प्रवेश करने के उपाय के बारे में सोचकर उस सत्त्वधनवाले ने लंका के उत्तर-द्वार पर पहुँचकर, न्याय और नीति के बारे में विचारकर सोचा—"इस समुद्र को कपि कैसे पार कर सकेंगे ? किसी भी तरह पार करेंगे तो भी वासव (इन्द्र) आदि के लिए असाध्य इस लंका को सकल प्रयत्न करके भी जीतना कहाँ सम्भव हो सकेगा ? भयंकर साहस से विलसित रावण का सामना कर राम उसे युद्ध में कैसे जीत पाएंगे ?" ऐसा मुहूर्त (पल) भर अपनी आत्मा में चिन्तनकर, मन से श्रीराम की महिमाओं को जानकर, ॥ ३० ॥

—तिरस्कार भाव से सोचा—"इस समुद्र की हस्ती ही क्या है ? यह लंका ही क्या चीज़ है ? इनकुलेश्वर (राम) के समक्ष यह रावण ही क्या है ? (नाचीज़ है ।)" फिर सोचा—"अनुपम विशाल इस शरीर से दिन के समय इस पुरी में प्रवेश करूँ तो राक्षसभटों से मेरा वैर (प्रतिरोध) होगा । ऐसा होने पर मैं जानकी का पता नहीं लगा सकूँगा । अतः सूक्ष्म आकृति धारणकर, जाकर, इस लंका के सभी दैत्यों को धोखा देकर, अवश्य ही सीता के दर्शन करुँगा ।" मन में सूर्यास्त-समय के बारे में सोचकर, सावधानी से देखते रहे (प्रतीक्षा करते रहे) । सूर्य झट से अस्त हो गए मानों यह सोचा कि "अविरल सत्त्व से युक्त हो, (हनुमान) अवनीश की देवी (और) अवनीतनूभवा (सीता) का पता लगाने आया है । मेरे रहने पर, उसके लिए लंका प्रवेश में सुविधा नहीं होगी ।" दिशाओं में घोर-अन्धकार ऐसे व्याप्त हुआ मानों अनिलनन्दन (हनुमान)

नन बवें दिशल घोरांधकारंबु; । घनमैन दैत्युल कळकलंबडगॆ; ४०
नंत नाकळकलंबडगुट नात्म । नंतयु बरिकिंचि यनिलनंदनुडु
मनमुन रघुरामु मरुवक निलिपि । तन तंड्रि वायुवु दप्पक वेडि
मार्जालमात्रुडै मऱि लंक जॊरग । गर्जमूहिंचुचु घनुल राघवुळ

लंकिणि हनुमनड्डगिंचुट

दलचुचु मॆलग नत्तऱि विस्मयमुग । गलितभयंकराकारंबुतोड
बॆन्निधि साधिप ब्रीतिमै नरुगु । चुन्न साधकुनकु नोंगि नड्डुपडग
वडि महाभूतंबु वच्चु चंदमुन । नडरि लंकिणि वच्चि यड्डुमै निलिचि
यट्टहासमु सेसि यनिलनंदनुनि । धट्टिंचि पलिकॆ ग्रोधंबु रेट्टिप :
"नीवॆव्वडवु ? मऱि नीकु बेरेमि ? । नी वीपुरंबुलोनिकि वच्चुटॆट्टु ?
लॆव्वरु वंचिना ? रॆऱिगिंपु मनिन । नव्वायुनंदनुंडचलुडै पलिकॆ :
"नीवॆव्वतॆवु ? मऱि नीकु बेरेमि ? । नीवेल यड्डुमै निलिचिति नाकु ? ५०

को अनुकूल्यता प्रदान कर, दैत्य के महापाप क्षुब्ध हो भाग उठे हों। दैत्यों का अधिक कोलाहल शान्त हो गया। ॥ ४० ॥

—उस कोलाहल का शान्त होना (आदि) सब कुछ के बारे में मन में विचारकर, अनिलनन्दन ने मन से रघुराम को न भूलकर, (मन में) उन्हें स्थिर बनाकर, अपने पिता वायुदेव की अवश्य प्रार्थना की (और) मार्जालमात्र (बिल्ली के समान) बन, लंका में प्रवेश करने के उपाय के बारे में सोचता, मन में महान् राघवों का स्मरण करता, विचरण करता रहा।

लंकिणी का हनुमान को रोकना

उस समय विस्मयप्रद रूप से कलित-भयंकर आकार से, परमनिधि को प्राप्त करने के लिए प्रीति से जानेवाले साधक को अवरुद्ध करने के लिए आनेवाले महाभूत के समान, अतिशयता से लंकिणी आकर, रास्ता रोककर, खड़ी हो गयी, अट्टहास कर अनिलनन्दन को डाँट बताकर, क्रोध के द्विगुणित होने पर बोली—"तुम कौन हो ? फिर तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारा इस नगर में आना कैसे हुआ ? किसने (तुम्हें) भेजा है ? बताओ।" वह वायुनन्दन अविचल हो बोला—"तुम कौन हो ? फिर तुम्हारा नाम क्या है ? तुम क्यों मुझे रोककर खड़ी हो गयी हो ? ॥ ५० ॥

मुन्नु नी वेंड्रिगिपु मुदित ! या वेंनुक । नुन्नट्लु ना तेंड्रंगोनर जेप्पेदनु"
अनि पल्क "नेनु दशाननु नाज्ञ । बनिपूनि यी पुरि बलिमि रक्षिंतु;
बेरु लंकिणि यंड्रु; पेंड्रवारि गन्न । बोरन बोंरिगोंदु वोनीक" यनिन
हनुमंतु डय्यिंयति कनियें वेंडियुनु । "वनित ! यी पुरि जूचुवाडनै येनु
जनुदेंचितिनि; वेग चनग नि" म्मनिन । गनुल गोपमुन नक्कड्कु रक्कसियु
"नेंक्कड वोयेद विक ? ना चेत । जिक्किति गा ! " कंचु जेंलगि मै वेंचि
"कड्कड्रि निनु बट्टि कदिसि नीमेनु । दड्रिगि नी रक्तमुल् द्रोंवद" ननुचु
गडुगोप मेंसग नक्कपिनाथु ड्रोंम्मु । बोंडिचिन 'बोंलति जंपुट पाप' मनुचु
दडयक मारुति दानि वक्षंबु । बिडिकिट बोंडिचिन बेंपेल्ल दक्कि
यिल गूलि मिक्किलि हीनस्वरमुन।बलुमारु हनुमंतु ब्रार्थिचि पलिकें:६०
"गपिकुलोत्तम ! नन्नु गरुणिंपुमय्य !। निपुणुडै यी पुरि निर्मिचुनाडु
वनजासनुडु नाकु वरमिच्चिनाडु;। वनचरुडोंक्कडु वच्चि निन्नेदिरि
येंन्नडु नोंप्पिचु निल नदि मोंदलु । ग्रन्नन राक्षसक्षयमगु" ननुचु;

—हे मुदिते (नारी) ! प्रथमतः तुम बताओ। उसके बाद मैं अपने विधान के बारे में यथारूप बताऊँगा।" ऐसा कहने पर (वह बोली)—"मैं दशानन (रावण) की आज्ञा से, सप्रयत्न इस पुरी की, सबल हो रक्षा करती हूँ। मुझे लंकिणी कहते हैं। पराये लोगों (शत्रुओं) को देखती हूँ तो उन्हें जाने (बचने) न देकर, तुरन्त मार डालती हूँ।" ऐसा कहने पर फिर हनुमान ने उस नारी से यों कहा—"हे वनिते ! इस नगर को देखना चाहकर मैं आया हूँ। शीघ्र जाने दो।" (ऐसा) कहने पर आँखों से क्रोध प्रकट करते हुए वह कठोर राक्षसी ने यह कहते हुए कि "मेरे हाथों में फँसकर अब कहाँ जा सकोगे ?" उद्धत हो शरीर को बढ़ाकर, "बलात् तुम्हें पकड़कर, नियराकर, तुम्हारे शरीर के टुकड़ेकर, तुम्हारा रक्त पी जाऊँगी।" अधिक क्रोध के बढ़ने पर, उस कपिनाथ के वक्षस्थल पर घूँसा मारा। 'स्त्री का वध करना पाप है' यह सोचकर, अविलंब मारुति (हनुमान) ने उसके वक्ष पर घूँसा जमाया। तब अपने समस्त आधिक्य (बल) को खोकर, अत्यन्त हीन स्वर से, कई बार हनुमान की प्रार्थना कर वह (यों) बोली— ।। ६० ।।

"हे कपिकुलोत्तम ! मुझ पर करुणा दिखाओ। निपुणता से इस पुरी का निर्माण करते समय वनजासन (ब्रह्मा) ने मुझे एक वर दिया कि जिस समय कोई वनचर (वानर) आकर, तुम्हारा सामना कर, तुम्हें

गान नी तलचिन कार्यसंसिद्धु । लौ "नंचु दीविंचि या यिंति सनियै।
दनमदि मारुति दानि माटलकु । ननुवोंद नुब्बि मिन्नंदि पेल्लार्चि
'चेंडुदुरु राक्षसुल् सिद्ध' मटंचु । नेंडमकाल् मुन्नुगा निलनडुगिड्चु

हनुम लंकनंतयु वेदकुट

गड् सूक्ष्मरूपंबु गैकोंनि पोयि । यडरि कोटलु दाटि यट लंक सोच्चि
वडि गोट कावलिवारु दलार्लु । वोडगानकुंड नप्पुडु गूढवृत्ति
वीथुलु परिकिंचि विपणिमार्गमुलु । शोधिंचि रच्चलु सोरिदि नीक्षिंचि
घनगोपुरमुलेक्कि गजशाललरसि। मुनुमिडि वरहर्म्यमुल संचरिंचि ७०
देवालयंबुलु दिरिगि यिल्लिल्लु । भाविंचि गोंदुलु परिकिंचि चूचि
युप्परिगलु गांचि योवरुल् नेमकि । चप्परंबुलु डासि सौधमुल् वेदकि
चाल जेन्नगु रथशाललु वाजि । शाललु शस्त्रास्त्रशाललु दडवि
माडुवुल् परकिंचि मणिमयमैन । मेडलु वाडलु मिगुल जेन्नैन
मंत्रुल यिड्लु सामंतुल यिड्लु । तंत्रिपालुर यिड्लु दैवज्ञुलिड्लु

दु:ख पहुँचाएगा, उस दिन से, झट से राक्षसक्षय होगा। अत: तुम्हारे इच्छित कार्य सफल हो जाएँगे।" ऐसा कह, आसीसकर, वह नारी चली गयी। उसकी बातों से मारुति अपने मन में अनुकूलता के कारण, फूलकर, आकाश को स्पर्शकर, अधिक गरजकर, "अवश्य राक्षस नष्ट हो जाएँगे" ऐसा सोचते हुए प्रथमत: ज़मीन पर वामचरण रखते हुए,

हनुमान का समस्त लंका में खोजना

—अत्यन्त सूक्ष्मरूप को धारणकर, जाकर, अतिशयता से प्राकार पार कर, वहाँ लंका में प्रवेश किया। झट से दुर्ग के पहरेदारों (और) सैनिकों की आँख बचाकर, तब गुप्त रूप से वीथियों का परिशीलनकर, विपणिमार्गों को खोजकर, चौराहों को क्रम से देखकर, उन्नत गोपुरों पर चढ़कर, गजशालाओं को देखकर, क्रम से श्रेष्ठ सौधों में विचरण कर, ॥ ७० ॥

—देवालयों में घूमकर, घर-घर खोजकर, गलियों में खूब खोजकर, अट्टालिकाओं को देखकर, भीतर के कमरों में खोजकर, छप्परों में जाकर, सौधों में खोजकर, अतिशोभायमान रथशालाएँ, वाजिशालाएँ, शस्त्र-अस्त्रशालाओं में ढूँढकर, बड़े मकानों का परिशीलनकर, मणिमय सौध, मुहल्ले, अधिक शोभित मंत्रियों के मकान, सामन्तों के मकान, तन्त्रिपालकों के मकान, दैवज्ञों के मकान, उस विभीषण का मकान, अतिकाय का गृह,

ना विभीषणु गेह मतिकायु गृहमु । देवांतकुनि यिल्लु द्रिशिरु मंदिरमु
गंभीरमगु कुंभकर्णुनिनेलवु । गुंभुनालयमु निकुंभु सद्मंबु
श्रीमिंचु नय्यिंद्रजित्तुनि नगरु । ना महोदरु गेहमादिगा नयिन
दनुजनाथुल निकेतनपंक्तुलोंकट । गनुगोंचु नद्भुतक्रांतुडै वारि
यंतःपुरंबुल नंतयु वेंदकि । कांताजनंबुल गलयंग नरसि ८०
वेंडियु दनुजुल वेश्ममुल् गलय । नोंडोंड गनुगोंचु नोक्कोक्कचोट
नोक कन्नु नोक चेंवि योक केलु गलुगु । विकृतवेषुल जूचि वेरगु बोंदुचुनु
बहुपाद बहुभुज बहुमस्तकोरु । सहितुल गोंदरु सारें गन्गोनुचु
जपतपस्वाध्याय सत्कर्मनिष्ठ । दपसुलौ दानवोत्तमुल जूचुचुनु
मकरतोरणबद्धमाल्यजालमुल । ब्रकटित धूपसौरभविशेषमुल
रत्नमुक्ताफलरंगवल्लिकल । नूत्नेंदु कांत बंधुर वितर्दिकल
मणिगण हाटकमयकवाटमुल । गणुतिपदगिन बंगरुकुट्टिममुल
गणनाधिकोग्र विष्कंभसूत्रमुल । ब्रणुतिप दगुमंटपप्रदेशमुल
स्फुट वज्रकलितकपोत मालिकल । घटितेंद्र नीलप्रकाशदेहळुल
महनीयतर विद्रुम स्तंभततुल । बहुशिरोगृहमुल भवनपाळिकल ९०

देवान्तक का घर, त्रिशिर का मंदिर (घर), कुंभकर्ण का गंभीर निवास-स्थान, कुंभ का आलय, निकुंभ का सद्म, श्री (शोभा) से अधिक संपन्न उस इन्द्रजित का नगर (अन्तःपुर), उस महोदर का गेह (गृह) आदि दनुजनाथों के निकेतन (गृह)–पंक्तियों को क्रमशः देखते हुए, आश्चर्य-चकित होते हुए, उनके सभी अन्तःपुरों में खोजकर, कान्ताजनों में खूब देख लिया, ।। ८० ।।

—अन्य दनुजों के मकानों को एक के बाद एक देखते हुए, एक-एक जगह (कहीं-कहीं) एक आँख, एक कान, एक हाथ से युक्त विकृत-वेष (रूप) वालों को देख चकित हो, बहुधा बहुपाद, बहुभुज, बहु-मस्तक (तथा) उरु (वक्ष) से सहित कुछ (राक्षसों) को देखते हुए, जप-तप-स्वाध्याय-सत्कर्म में निष्ठा रखनेवाले तपस्वी दानवोत्तमों को देखते हुए, मकर-तोरण-बद्ध-माला-जाल (समूह), प्रकटित (महकते) विशिष्ट धूप-सौरभ-रत्न-मुक्ताफल (मोती) से युक्त रंग वल्लिकाएँ (रंगोली या चौक) नूतन-इन्दु (चन्द्र)-कान्त (शिलाओं से) बन्धुर (निर्मित)-वितर्दिकाएँ (चबूतरे), मणिगण तथा हारक (स्वर्ण) मय किवाड़, प्रशंसा के योग्य स्वर्ण-भित्तियाँ, गणना में अधिक उग्र (तुंग) विष्कंभ सूत्र, प्रणुति (स्तुति) के योग्य मण्डप-प्रदेश, स्फुट (परिस्फुट) वज्र कलित कपोत मालिकाएँ, जटित इन्द्र-नील (मणियों) के प्रकाश से युक्त देहलियाँ, महनीयतर-विद्रुम के खंभों की पंक्तियाँ, अनेक शिरोगृह, भवनों की पंक्तियाँ, ।। ९० ।।

नायुधोज्ज्वलहस्तुलैन राक्षसुलु । बायक ये प्रॊद्दु बलसियुनट्टि
रावणुनगरु चेरगबोयि यचट । गावलिवारल गलय शोधिंचि
पॆक्कु वाकिड्लु निर्भीतिमै गडचि । यक्कॊल्वुकूटंबुलन्नियु वॆंदकि
यंतःपुरमु जेर नरुगु नालोन । गंतुनि माम सत्कळलकु सीम
कलुवलपै ब्रेमगल चंदमाम । कलितबिंबललामगति नुदयिंचि
जलराशि देलिंचि जलजषंडमुल । गलवासि दूलिंचि गब्बिजक्कवल
विरहाग्नि नलयिंचि वॆडविटिवानि । वरकीर्ति वॆलयिंचि वाडिन कलुव
मॊत्तंबु नलरिंचि मुग्धजारिणुल । चित्तंबुलडरिंचि चिम्मजीकट्टुल
यंतंबु दलरिंचि पदनैन चंद्र । कांतंबु गरगिंचि घनचकोरमुल
विंदुल दनियिंचि विटविटीजनुल । पॊंदुल नॆलयिंचि पूर्ण चंद्रिकल १००
दिक्कुलकॆल्लनु दॆलिवि दॆप्पिंचि । चुक्कलगमिकाडु चूपट्टॆ मिंट
बावनि वीडॆल्ल बरिकिंपवलसि । देवतलॆत्तिन दीपमो यनग

हनुम रावणांतःपुरप्रवेशमु

नट्टि चंदुरु जूचि यंतरंगमुन । दॊट्टिन वेड्क वातूलनंदनुडु

—आयुधों से उज्ज्वल बने हाथोंवाले राक्षसों से निरन्तर सुरक्षित रावण के अन्तःपुर के पास जाकर, वहाँ पहरेदारों का खूब परिशीलन किया। (वहाँ से) निडर हो अनेक द्वार पारकर, वहाँ के सभी सभागारों को खोजकर, अन्तःपुर में प्रवेश करने गया कि इतने में मन्मथ का मामा, सत्कलाओं की सीमा (चरमावधि), उत्पलों से प्रेम रखनेवाला चन्द्रमा, कलित बिंब से युक्त हो ललामगति से उदित हुआ। (उदित हो) जलराशि (समुद्र) को प्रसन्नकर, जलज-षंड (-समूह) की कान्ति को मिटाकर, मस्त चक्रवाकों को विरहाग्नि में तड़पाकर, मन्मथ की श्रेष्ठ कीर्ति को सुस्थिर बनाकर, मुरझाए हुए उत्पल-समूहों को प्रसन्नकर, मुग्ध-जारिणियों के चित्तों को चंचल बनाकर, घने अंधकार के प्रताप को नष्टकर, तर बने चन्द्रकान्त (शिलाओं) को गलाकर, महान् चकोरों को दावतों से तृप्तकर, विट और विटीजनों के समागमों को सम्पन्नकर, पूर्ण चंद्रिकाओं से ॥ १०० ॥

—समस्त दिशाओं को होश में लाकर (जागृतकर), नक्षत्रों का नायक (चन्द्र) आकाश में इस प्रकार दृष्टिगोचर हुआ मानों पावनी (पवनकुमार) को समस्त प्रदेश देख लेने की सुविधा प्रदान करने के लिए देवताओं ने दीप जला दिया हो।

हनुमान का रावण के अन्तःपुर में प्रवेश

ऐसे चन्द्र को देखकर, अंतरंग में हर्षित हो, वातूल (वायु)-नन्दन

अऱयोजनमु वेँडल्पै योजनंबु । विरिवियौ नोँकयिल्लु वेग कन्गोँनुचु
नंतःपुरंबेँल्ल नरयुचु रत्न । कांतिमंतमु विश्वकर्मनिर्मितमु
गामचारमु जित्रकरकौशलंबु । सोमार्कनिभमुनै सुरलोकवैरि
या कुबेरुनि दोँल्लि याजिलो गेँलिचि । कैकोँन्न मणिपुष्कंबु वीक्षिचि
या विमानंबुलो नंगनामणुलु । रावणु सौख्यवाराशि देँलिचि
पानाभिरतिकेळि बरवशलगुचु । मेनुदीगेँलु सोल मिसिमि पेँदोँडल
पस बयल्पड नीविबंधमुल् सडल । वसिवाळ्ळु वाडिन वदनंबु ललर ११०
गम्मनिट्टूर्पुलु ग्रम्म गेँम्मोवु । लेँम्मेँलु गैव्राल नेँलनव्वुदेर
नरमोड्पु गनुगव लंगजकेळि । परवशत्वमु देँल्प बादपद्ममुल
नंदेँलु रोँदलु सेयक याश्रयिंप । जंदनतिलकमुल् श्रमवारि गरग
वेणीभरमु वीड विरिदंडलूड । नाणिमुत्तेँपु बेरुलत्यंतकठिन
वक्षोजपर्वतद्वयि जिक्कुवडग । लक्षितासवमदालसचित्तलगुचु
गटिसैकतंबुल गचशैवलमुल । स्फुटनाभिसरसुल भ्रूतरंगमुल
स्तनचक्रमुल विलोचनमीनततुल । गनुपट्टि सुखसुप्ति गैकोँन्न नदुल

ने आधा योजन चौड़ा तथा योजन भर लम्बा एक गृह को झट से देखा। उसके समस्त अन्तःपुर का परिशीलन करते हुए उसने रत्न-कान्तिमान, विश्वकर्म द्वारा निर्मित, कामचार (अपनी इच्छाशक्ति से चल सकने की सामर्थ्य रखनेवाला), विचित्र कर-कौशल से युक्त, सोम (चन्द्र)-अर्क (सूर्य) समान मणिपुष्पक को देखा, जिसे सुरलोक-वैरी (रावण) ने पूर्वकाल में कुबेर को युद्ध में जीतकर प्राप्त किया था। उस विमान में अंगनामणियों को देखा। वे रावण को सुख-समुद्र में ऊभ-चूभकर, मद्यपान (तथा) रतिकेली में परवश बन, तनुलताओं के शिथिल होने पर, स्निग्ध जंघाओं के सौंदर्य के प्रकट होते रहते पर, नीवि बन्धनों के ढीले पड़ जाने पर, मुरझाए हुए वदनों के शोभित होने पर, ॥ ११० ॥

—सुगंधित लम्बी साँसों के घेरने पर, अरुण अधरों के सविलास हाथों पर झुकने पर, मुस्कान के प्रकट होते रहने पर, अधमुँदी आँखों के अंगज-केली (रति) की परवशता को प्रकट करते रहने पर, नूपुरों के बिना कोलाहल के पादपद्मों में आश्रय लेने पर, चन्दन (और) तिलक के श्रमवारि (पसीने) के कारण गल जाने पर, वेणियों के खुल जाने पर, पुष्पमालाओं के बिखर जाने पर, श्रेष्ठ मुक्ताओं की मालाओं के वक्षोज-पर्वतद्वय के मध्य फँसे रहने पर, चित्तों के आसव-मद के आलस्य को प्रकट करने पर, सुख-सुषुप्ति को प्राप्त नदियों के समान सो रही थीं। उनकी कटियाँ ही सैकत, केश ही शैवाल, (परि) स्फुट नाभियाँ ही सरोवर, भौंह ही तरंग, स्तन ही भँवर, (तथा) विलोचन ही मीनसमूह थे। (इस

कैवडि निद्रिंचु कामिनीमणुल । ना वायुनंदनुंडंदंद चूचि
परवधूमर्ममुल् परिकिंचुटकुनु । बुरबुर बॊक्कचु बुण्यमानसुडु
स्वामिकार्यार्थंमै सतुलमर्मंबु। ली भाड्कि गनुगॊंटि; नितियॆकानि १२०
कानिचेतल वीरि गनुगॊन्नवाड । गा; निंति नी यितिगमिलोन वॆदक
वलॆगानि मऱि पॆऱ वानिलो वॆदक। वलनुगा'' दनुचु भावमुन नॆन्नुचुनु
जप्पुडु गाकुंड जनुचु मुंदऱनु । विप्पैन यॊक रत्नवेदिक मीदि
बुव्वुपान्पुन निद्रपोयॆडुवानि । नव्वासवु भोगमडगिंचु वानि
संजकॆंपुलतोडि जलदंबु वोलॆ । रंजित गंधांगरागंबु वानि
नीटैन सॆलयेळ्ळ नीलाद्रि वोलॆ । देट मुत्तॆपुबेर्ल दीपिंचुवानि
नैदुमस्तमुल घोराहुलु वोलॆ । ब्रोदि नंगुळिरम्यभुजमुलवानि
जिलुगु वॆन्नॆल्ल तोडि चीकटिवोलॆ । जलुवदुप्पटि मेन जत नॊप्पुवानि
वॆडद ड्रॊम्मुन नॊप्पु वेल्पुटेनुंगु । कडिदि कॊम्मुल पोटु कैपुलवानि
गर्पूरमणिदीपकळिकलिर्वंक । नेर्पुमै गदलिंचु निट्टूर्पु वानि १३०
मकुटकुंडल दीप्तिमयमूर्ति वानि । सकलारिगर्व निस्रावणुंडैन
रावणुंडनुवानि राक्षसाधिपुनि । भाविंचि यातनि पार्श्वभागमुल

प्रकार सोनेवाली) कामिनी-मणियों को जहाँ-तहाँ देखकर वायुनन्दन पर-स्त्रियों के मर्मस्थानों को देखने के कारण अत्यन्त दुखी हुआ। उस पुण्य मानसवाले ने सोचा—"स्वामी के कार्यार्थ ही मैंने (इन) सतियों (स्त्रियों) के मर्म स्थानों को इस प्रकार देखा है ॥ १२० ॥

—यह इतना ही है। दुष्ट भावों या पाप कार्य के लिए इन्हें देखा नहीं है। स्त्री (सीता) को इस स्त्री-समूह में ढूँढ निकालना होगा। अन्यत्र उसे नहीं ढूँढ सकते।" इसी प्रकार सोचते हुए दबे पाँव बढ़ाते हुए, सामने एक विशाल रत्नवेदिका पर पुष्पशय्या पर सोनेवाले, वासव (इन्द्र) के भोग (-विलास) को मात करनेवाले, संध्या की अरुणिमा से युक्त जलद सम रंजित सुगंधित अंगरागवाले, स्वच्छ निर्झरों से नीलाद्रि सम स्वच्छ मोतियों की लड़ियों से दीप्त होनेवाले, पाँच शिरवाले भयंकर सर्पों की भाँति सुपोषित उँगलियों से युक्त भुजाओंवाले, स्वच्छ चाँदनी से युक्त अंधकार के समान स्वच्छ चादर से युक्त शरीरवाले, विशाल वृक्ष पर ऐरावत के कठिन दाँतों के आघातों के शूरतायुक्त चिह्नोंवाले, दोनों पार्श्वों में रखे कर्पूर मणिमय दीपकलिकाओं (शिखाओं) को हिला सकने में कुशल उसाँसोंवाले, ॥ १३० ॥

—मकुट (तथा) कुंडलों की दीप्ति से युक्त मूर्ति (रूप) वाले, सकल-अरि (शत्रुओं के)-गर्व को निचोड़ देनेवाले को देख रावण नामक राक्षसा-

नडपंबु गिंडियु नालवट्टमुलु । गडुवेड्क बट्टियु गरकंकणमुलु
रायंग विजामरमुलु वेसियुनु । हायिगा बाडियु नाडियु वीण
मीटियु मद्दॆलल् मृदुमार्गलील । सूटि वायिंचियु स्रुक्कि यॊंडॊरुलु
तम साधनंबुलु दग गौगिलिंचि । तमि निद्रवोवु गंधर्वकामिनुल
देवकामिनुल दैतेयकामिनुल । भाविंचि यंत ना परमपावनुडु
गगनमंडलि जंद्रकळयुनु बॊलॆं । मॊगुलु चॆंत मॆरुंगु मॊलकयु बॊलॆं
ना रावणुनि शय्य नभिनवयौव । ना रूढयै देवतांगन करणि
नुन्न मंदोदरि नॊय्यन गांचि । यन्नॆलतुक सीत यनि निश्चयिंचि १४०
"यवनिज ने गंटि" ननुचु नानंद । विवशुडै गंतुलु वेयुचु नचटि
कंबमुल् ग्राकुचु गलित वालाग्र । चुंबनं बॊनरिंचुचुनु नटिंचुचुनु
गापेयजाति विकारमुल् गॊंत । सेपु सूपुचु दम चित्तंबुलोन
मऱि विवेकमु बूनि "मनुकुलेश्वरुनि । तॆऱव पतिव्रतातिलकंबु परम
पावनि जनकभूपालुनि पुत्रि । देवदेवुनि रामदेवुनि बासि
रावणुगोरुने ? रागिलिल मधुवु । द्रावुने ? यट़ेल तन बुद्धि ब्रमसॆं ?

धिप का अनुमान कर लिया। उसके पार्श्वभागों में पानदान, हुक्का, छत्र (आदि को) बड़े शौक से धारणकर, करकंकणों के झंकृत होने पर चामर डुलाकर, आनन्द से गाकर, नाचकर, वीणा बजाकर, मृदुरीति से मृदंग बजाकर, थककर, अपने साधनों (उपकरणों) से ही गले लगाकर, उत्कट इच्छा से सोनेवाली (स्त्रियों को) गन्धर्व कामिनियाँ, देव कामिनियाँ, दैतेय कामिनियाँ समझकर तब उस परम पावन (हनुमान) रावण की शय्या पर गगन मंडल के चंद्रकला के समान, मेघ के पास चपला के अंकुर के समान, अभिनव-यौवन-आरूढ़ा हो, देवतांगना के समान स्थित मंदोदरी को झट से देखकर, उस स्त्री को सीता ही समझकर ॥ १४० ॥

—"अवनिजा को मैंने देख लिया है" ऐसा कहते आनन्द-विवश हो, उछलता-कूदता, स्तम्भों पर चढ़ता, सुन्दर वालाग्र (भाग) का चुम्बन करता, अभिनय करता हुआ थोड़ी देर कपि जाति के विकार (विकृत चेष्टाएँ) प्रदर्शित करता रहा। फिर अपने चित्त में विवेक धारणकर सोचा—"मनुकुलेश्वर (राम) की स्त्री पतिव्रता-तिलक (शिरोमणि), परमपावनी, जनकभूपाल की पुत्री (सीता) कहीं देवों के देव रामदेव को छोड़, रावण की चाह करेगी ? आसक्त हो मधुपान करेगी ? (नहीं) मेरी बुद्धि को ऐसा भ्रम क्यों हो गया ? नानाविधियों से विचारकर देखने पर, यह तरलाक्षी सीता नहीं है, (कोई) दानवी है।" ऐसा जानकर, वहाँ न रहकर आगे मेदुर (स्निग्ध)-परिकर-आम्रेडित (द्विगुणित)-

नानाविधंबुल नाकु जूचिननु । दानवि गानि यी तरळाक्षि सीत
गा दनि तॆलिसि यक्कड नुंड कवल । मेदुर परिकराम्रेडितामोद
मानितासव रक्त मधुमांसयुक्त । पानशालापरंपरलॆल्ल जूचि
गरुडोरगामर गंधर्वसिद्ध । वरसतुल् चॆऱलुन्न वाडलु वॆदकि १५०

हनुमंतुडु उद्यानवनमु जूचुट

वारि दुःखंबुलु वारि यापदलु । नारंग वीक्षिंचि यात्मलोवगचि
"वॆऱवकुंडिटमीद; विभुरामु डिक । नॆऱि रावणुनि नाजि निर्जिंच मिम्मु
विडिपिंचु; नंदऱु वॆऱवकुंडिक । दडवुले" दनि वारि दग नूऱडिंचि,
नीडल नंदंद निलिचि येकांत । माडॆडु वारल नट्टु जेर बोयि
या माटलॆल्लनु नालिंचि विनुचु । ना मारुतात्मजुंडल्लन वच्चि
"यिदि नाकु जॊर बोलु; निदि नाकु बोल । दिदि नाकु जॊर वच्चु;
निदि नाकु रादु"
अनक लंकापुरमंतयु वॆदकि । मनुजवेषमुतोडि मगुव नॆऱभंगि
नॆंदुनु बॊडगानकिच्चलो वगल । बॊदुचु नट्टु बोयि पुर समीपमुन

रावणुनि युद्यानमुन हनुमयन्वेषण

बसिडिगोडलचेत भासिल्लुचुन्न । यसमानमैन युद्यानंबु गांचि

आमोद-मानित आसव-रक्त-मधुमांसयुक्त-पानशालाओं की सभी परंपराओं (पंक्तियों) को देखकर, उन भवनों को ढूँढा जहाँ गरुड, उरग (नाग), अमर, गन्धर्व, सिद्धों की वरसतियाँ (श्रेष्ठ स्त्रियाँ) बंदी थीं। ॥ १५० ॥

हनुमान का उद्यानवन देखना

उनके दुःखों (तथा) उनकी आफ़तों को समुचित रूप से देखकर, मन में दुखी होकर, (यह कह कि) "अब आगे डरो मत, प्रभुराम अब ढंग से रावण को युद्ध में हराकर तुम्हें छुड़ा देगा। (तुम) सब डरो मत। अब विलंब नहीं होगा" उन्हें उचित रूप से आश्वस्त कर, (वृक्षों की) छायाओं में जहाँ-तहाँ रुककर, एकान्त में बात करनेवालों के पास जाकर, उन सबको सुनते हुए, वह मारुतात्मज धीरे से "यह मेरे प्रवेश के योग्य है, यह योग्य नहीं है, यहाँ मैं प्रवेश कर सकता हूँ, यहाँ नहीं" ऐसा न सोचकर, समस्त लंकापुर को खोजकर, मनुज रूप की स्त्री को (सीता को) किसी प्रकार, कहीं भी देख न सक, मन में दुखी होते हुए, उधर जाकर, नगर के समीप

रावण के उपवन में हनुमान का (सीता को) खोजना

—स्वर्णभित्तियों से भासमान, अनुपम उद्यानवन को देखकर, धीरे से वहाँ

मॆल्लन नटबोयि मॆलग वीक्षिंचि । यल्लनल्लन ब्राकि या गोडलॆक्कि १६०
चंदनपुन्नाग सहकारतरुल । मंदार खर्जूर मातुलुंगमुल
बनसपिप्पल निंब पाटली वकुळ । घनसार सौवीर कर्णिकारमुल
मल्लिका मालती माधवीलतल । सल्लकी कुरवक जंबीरतरुल
दालतमाल हिंतालरसाल । नाळिकेराशोक नागवल्लरुल
नेडाकुटनटुल नेलालवंग । दाडिम नारंग तक्कोलकमुल
गदळिका केतकी क्रमुक भूजमुल । बदनैन गोस्तनी फलगुळुच्छमुल
बरिपक्वफलपुष्प परिमळमिळित । भरितमौ वायुसंपदल निंपॆक्कि
कलकंठ शुकनीलकंठ शारिकल । जॆलुवॊंदि यळुलचे जॆलुवग्गलिंचि
कमलाकरंबुल गरमु शोभिल्लि । कुमुदषंडंबुल गॊमरु दीपिंचि
शशिकांतवेदुल सन्नुति कॆक्कि । विशदचंद्रिकलचे वॆड्क सॊंपॆक्कि १७०
सिकतातलंबुलचे जॆन्नुमीरि । सकलर्तु विहरणस्थानमै मिगुल
रमणमै नदि चैत्ररथमुनु मिंचि । यमरेंद्रु नंदनमन जूडनॊप्पि
यलरु रावणु विनोदारामभूमि । गलयंग गनुगॊनि कडुजोद्यमंदि
यॊप्पु ना वनभूमि कॊय्यन डिग्गि । चप्पुडु गाकुंड जरणंबुलिडुचु

जाकर, ठीक ढंग से देखकर, हौले-हौले उन दीवारों पर चढ़कर ॥ १६० ॥
—चन्दन, पुन्नाग, सहकार (आम) के वृक्षों, मंदार, खर्जूर, मातुलुंग, फनस, पिप्पल, निंब, पाटली, वकुल, घनसार, सौवीर, कर्णिकार (कनेर), मल्लिका, मालती, माधवी (आदि) लताओं, सल्लकी, कुरवक, जंबीर (आदि) तरुओं, ताल, तमाल, हिंताल, रसाल, नारिकेल (नारियल), अशोक, नागवल्लरी, सप्तपर्णी, ऐला, लवंग, दाड़िम, नारंगी, तक्कोल, कदली, केतकी, क्रमुक (आदि) वृक्षों, उपयुक्त द्राक्षाफल गुच्छों, परिपक्व फल पुष्पों के परिमल से मिलित संभरित वायुसंपदाओं से शोभा को प्राप्तकर, कलकंठ, शुक, नीलकंठ, शारिकाओं विलसित हो, अलियों (भ्रमरों) से अति शोभायमान हो, कमलाकरों (सरोवरों) से अधिक शोभित हो, कुमुद षंडों (समूहों) से अति शोभित हो, शशिकान्त (मणियों) की वेदिकाओं से प्रशंसित हो, विशद-चन्द्रिकाओं की प्रचुरता से शोभायमान हो ॥ १७० ॥

—सिकता-तलों (रेतीले स्थलों) से सुन्दर बन, सकल ऋतुओं के विहरण-स्थान बन, रमणीय बन, वह चैत्ररथ (कुबेर का उपवन) को मातकर, देखने में अमरेंद्र के नन्दन (-वन) समान दीखकर, शोभित (होनेवाली) रावण की विनोद-आराम (उपवन)-भूमि को खूब ढूँढकर, आश्चर्यचकित होकर,

गोलकुलयंदुनु गूलंबुलंदु । बुलिनदेशमुलंदु बोंदरिड्लयंदु
गेळीगृहमुलंदु गृतकाद्रुलंदु । शैलशृंगमुलंदु सानुवुलंदु
नुर्वीरुहमुलंदु नोलंबुलंदु । नुर्वीतनूभव नुडुगक वेंदकि
या वनमध्यंबुनंदु रेवगलु । गावलियुंडु राक्षसकोटि कोंपुडु
दावलंबै मिन्नु तलदन्नु पोंडवु । चे वेलुंगुचु मेरुशिखराळि गेरु
पसिडि कुंभमुलचे बसमीरि वेलयु । पसिडिकंबंबुल बरपु दीपिंचि १८०
वररत्न तोरणावळुल शोभिल्लि । युरुतरंबगुचुन्न योक मेड गांचि
या मेडलोपल नंतयु वेंदकि । भूमिज गानक बुद्धिलो वगचि

सीतकानमिकि हनुम संतापमु

"यिनवंशवल्लभुडेकतंबुननु । मुनु नन्नु रम्मनि मुदमोप्प बिलिचि
'जनकज गनुगोनजालुदु वीव' । यनि चेप्पि ना चेति कानवालीय
बनिपूनि वच्चिति बंटनै येनु; । गनुगोनलेनैति गमलाक्षि नेंदु;
नी दुरात्मुडु तन्नु निटु देच्चु चोट । वेदन ब्राणमुल् विडिचेनो यिंति ?
यंबरंबुन वेग नरुदेर भीति । नंबुधि बडियेनो यसुर चे दप्पि ?

सुशोभित उस वनभूमि में झट से उतरकर, बिना आहट फिर चरण रखते हुए, सरोवरों में, कूलों में, पुलिन-प्रदेशों में, निकुंजों में, केलीगृहों में, कृतक-अद्रियों में, शैलशृंगों में, सानु (-प्रदेशों) में, उर्वीरुहों (वृक्षों) में, (उनकी) आड़ में, बिना कहीं रुके, उर्वीतनूभवा (सीता) को ढूँढा। उस वनमध्य में, रात-दिन पहरा देनेवाले राक्षससमूहों का निलय बन, आकाश को मात कर देनेवाली ऊँचाई से प्रकाशित होते हुए, मेरु (पर्वत) के शिखर-समूह की अवहेलना करते हुए, स्वर्णकुंभों (कलशों) से अधिक शोभायमान स्वर्णस्तम्भों की व्याप्ति (प्रचुरता) से दीप्त होते हुए ॥ १८० ॥ —वर-रत्न-तोरण-समूहों से शोभित उरुतर (बहुत बड़े) सौध को देखा। (देखकर) उस समस्त अट्टालिका को ढूँढकर, भूमिजा को न पाकर, मन में दुखी हो,

सीता के न दीखने पर हनुमान का दुःख

—(हनुमान सोचने लगा)—"इनवंश-वल्लभ (राम) के एकान्त में, प्रथमतः मुझे बुलाकर, बड़े मोद से बुलाकर, यह कहकर कि 'तुम्हीं जनकजा का पता लगा सकोगे' मेरे हाथ में मुद्रिका रखने पर, (उनका) सेवक बनकर, मैं सप्रयत्न आया हूँ। कहीं कमलाक्षी (सीता) का पता नहीं लगा पाया हूँ। इस दुरात्म (दुष्ट) के अपने को यहाँ लाते समय, कहीं वेदना के कारण उस इन्ती (स्त्री) ने प्राण छोड़ दिए हों?

यिच्चट दनुजुल नीक्षिंचि बॆदरि । चच्चॆनो ? विरहाग्नि समसॆनो ? लेक
कमलाक्षि यॊरुलकु गानराकुंड । भ्रमपॆट्टि मायलु वन्नॆनो वीडु ?
ऒंडु देशंबुल नुनिच्चॆनो ? काक । दंडिंचि चंपॆनो तरलाक्षि नसुर ? १९०
येमनि मगुड्डु ? नेमंदु बोयि ? । येमि चेयुदु निक निट मीद नेनु ?
"वामाक्षि गानक वच्चिति" ननिन । रामुडप्पुडॆ पायु ब्राणवायुवुल ;
नन्नकै सौमित्रि यडगु; नी वार्त । विन्नंत भरतुंडु विडुचु ब्राणमुल;
नतनिकै शत्रुघ्नुडखिलबांधवुलु । हतुलौदु; रिनवंशमंतयु समयु;
नदि चूचि सुग्रीवुडायंगदुंडु । मॊदलैन कपिवंशमुलु नाशमॊंदु;
गान वानप्रस्थुगति महाटवुल । नेनु गापुंडुदु; निदियु गादेनि
सॊद बॆर्चुकॊनि यग्नि जॊत्तु; नॊंडेनि।नुदधिलो बडि चत्तु नुसुरास दक्कि
यक्कट ! संपाति याडिनमाट । निक्कंबुगा नम्मि नीरधि दाटि
यिच्चटि कॊंटिमै ने वच्चुटॆल्ल । नच्चुगा वृथयय्यॆ; नौगाक ! येमि
त्रिदशुलतो गूड दॆगुवमै बॆंचि । त्रिदशेंद्रु बट्टि बाधितु नॊंडेनि २००

(अथवा) आकाश में अतिवेग से आते समय, मारे भय के, राक्षस के हाथ से छूटकर कहीं अंबुधि (समुद्र) में न गिरी हों ? (अथवा) यहाँ राक्षसों को देखकर, कहीं (भय से) प्राण छोड़ दिए हों ? (अथवा) विरह की अग्नि में भस्म हो गयी हों ? अथवा इसने (रावण ने) किसी ऐसी माया की रचना की हो जिससे वह किसी को दीखे ही नहीं ? (अथवा) कहीं अन्य देशों में रख दिया हो ? नहीं तो राक्षस ने दंडितकर मार डाला हो ? ।। १९० ।।

—मैं किस प्रकार (किस मुँह से) लौट पड़ूँ ? जाकर क्या कहूँ ? अब आगे मैं क्या करूँ ? यदि यह कहूँ कि वामाक्षी (सीता) को देखे बिना आया हूँ तो राम तभी प्राणवायु छोड़ देगा । अग्रज के लिए लक्ष्मण मर जाएगा । यह समाचार सुनते ही भरत प्राण छोड़ देगा । उसके लिए शत्रुघ्न (और) अखिल बन्धु (सगे-संबंधो) मर जायँगे । (इस प्रकार) समस्त सूर्यकुल नष्ट हो जाएगा । यह देखकर सुग्रीव, अंगद आदि कपि-वंश (समूह) विनष्ट हो जायँगे । अतः वानप्रस्थ की तरह मैं महाटवियों में रह जाऊँगा । यह भी न हो सका तो चिता बनाकर, अग्नि में प्रवेश करूँगा । नहीं तो प्राणों पर आशा छोड़कर उदधि (समुद्र) में डूब मरूँगा । हाय, संपाति की कही बात को सच मानकर, नीरधि (समुद्र) को पारकर यहाँ मेरा अकेले आना एकदम व्यर्थ हो गया । हुआ तो क्या हुआ ? साहस करके त्रिदशों (देवताओं) के साथ त्रिदशेन्द्र (इन्द्र) को पकड़ सताऊँगा । नहीं तो ।। २०० ।।

जॆलगु कीललतोड शिखि नीट । यिल ब्रामि प्रभलु मार्यितु नॊंडेनि
ग्रंदुगा जमुनि गिकरुलतो बट्टि । डॆंदंबु वगुल दंडितु नॊंडेनि
ज़लमॊप्प निऋृति राक्षसुलतो गूड । बॆलुकुऱ बट्टि नॊप्पितु नॊंडेनि
वारिरासुलतोड वरुणु गारिंचि । धीरत गॆल्चि साधितु नॊंडेनि
गरुवलि नय्येडु गाड्पुल बॆनचि । कॆरलि यंदंद शिक्षितु नॊंडेनि
नलिरेगि धनदु गिन्नरुलतो बट्टि । चॆलुवेदि कूल भंजितु नॊंडेनि
नॆनय सेनानितो नीशानु बट्टि । चॆनसि यॊंडॊंड निर्जितु नॊंडेनि
नी लंक दैत्युल नी यब्धि मुंचि । लीलमै गलचि गालितु नॊंडेनि
ने नित सेसिन नॆल्ल देवतलु । नानतुलै वच्चि यतिव जूपॆदरु;
२१०

काकुन्न राघवुल् करुणमै दारॆ । यी कीडु वलदनि यिंक मान्चॆदरु
अनि निश्चयमु सेसि या मेड शिखर । मनिलनंदनुडॆक्कि या समीपमुन
वायुवु नॆंडयु वडि जॊर रानि । या यशोक वनांतरावनि लोन

—प्रज्वलित होनेवाली ज्वालाओं के साथ शिखि (अग्नि) को पानी में डुबोकर, ज़मीन पर रगड़कर उसकी प्रभाओं को समाप्त कर दूँगा। नहीं तो उपद्रव मचाकर यम को, किंकरों के साथ पकड़कर ऐसा दंडित करूँगा कि हृदय फट जाए। नहीं तो हठ कर के नैऋृति को राक्षसों के साथ पकड़कर, बेहालकर दुखी बनाऊँगा। नहीं तो जलराशियों के साथ, वरुण को पीड़ितकर धैर्य से उसे जीतकर (कार्य को) संपन्न करूँगा। नहीं तो वायु को, सप्त पवनों के साथ बाँधकर, विजृंभित हो, जहाँ-तहाँ दंडित करूँगा। नहीं तो भड़ककर कुबेर को, किन्नरों के साथ पकड़कर, ऐसा करूँगा कि समस्त शोभा चूर हो जाए। नहीं तो ढंग से सेनानी (कुमार) के साथ ईशान को पकड़कर, युद्धकर, पराजित कर डालूँगा। नहीं तो कुतल (पृथ्वी) को पहाड़ों के साथ कुम्हार के चाक के समान घुमा-घुमाकर उगलवा दूँगा। नहीं तो इस लंका के दैत्यों को इस अब्धि (समुद्र) में डुबोकर, सलील हो, उपद्रव मचाकर, छान डालूँगा। मैं इतना करूँगा तो समस्त देवता आनत हो (झुककर), आकर स्त्री (सीता) को दिखा देंगे ॥ २१० ॥

—यह नहीं होगा तो राघव ही स्वयं ही दया करके इस नाश से मुझे रोकेंगे। ऐसा निश्चयकर अनिलनन्दन उस सौध के शिखर पर चढ़कर, उसके समीप में वायु और आतप के लिए भी झट से प्रवेश के लिए दुर्गम उस अशोक-वन के भीतर

हनुमंतुडु सीतनु जूचुट

नैलमि बौंपिरि वोयि हेमवर्णमुन । विलसिल्लु शिशुपावृक्षंबुक्रिंद
व्रतमुल गडु डस्सि वनटल ग्रुस्सि । यति दुःखमुन गुंदि यलतल गंदि
विपुलाश्रुवुल दोगि विरहाग्नि ग्रागि।कपटवृत्तुल जिक्कि कडुमुट्ट स्रुक्कि
जीवंबुपै रोसि चैलुवंबु बासि । या विधि मदि दूरि यलसत मीरि
चैक्किट जैयि सेर्चि चितल कोर्चि । दिक्कुलेमि दलंचि धृति दूर डिंचि
यिनरश्मि वाडिन यैलदीग बोलॆ । घनधूमयुत दीपकळिकयु बोलॆ
जलदमालिकलोनि शशिकळयु बोलॆ । बलुमंचु वौदिविन पद्मिनि बोलॆ
२२०
जैलगु पिल्लुललोनि चिलुकयु बोलॆ। बुलुललो नावुनु बोलॆ दुर्वार
घोरराक्षस वधूकोटिलो नुन्न । नारि शिरोमणि नळिनायताक्षि
नलिनांगि वेणीसमन्वित जघन । गलित भूषण जाल गद्गद कंठि
जनितोष्ण निश्वास सततोपवास । जनकतनूजात जगदेकमात
निखिल सन्नुतपूत निर्मलख्यात । यखिलगुणोपेत ययिन या सीत

हनुमान का सीता को देखना

—आनन्द से समृद्ध हो, हेमवर्ण से बिलसित शिशुपावृक्ष के नीचे, व्रतों (के अनुष्ठान) के कारण अधिक थकी, शोक से कृशीभूत, अति दुःख से विलखती हुई, श्रम से व्याकुल, विपुल अश्रुओं में ऊभचूभ, विरह की अग्नि से तप्त, कपटवृत्ति (आचरण) में फँसकर अत्यधिक दुर्बल, जीवन के प्रति विरक्त, सौंदर्य को खोकर, उस विधि (ब्रह्मा) को मन में कोसकर, थकावट के अधिक होने पर, कपोल पर हाथ रख, चिन्ताओं को सहकर, (अपनी) असहाय स्थिति के बारे में विचारकर, धैर्य को छोड़कर, सूर्य की रश्मि से सूखी नवलतिका के समान, घन-धूम-युक्त दीपकलिका (शिखा) के समान, जलद-मालिकाओं में शशिकला के समान, अधिक तुषार से आवत पद्मिनी के समान, ।। २२० ।।

—विजृंभित मार्जारों के बीच तोते के समान, व्याघ्रों के मध्य (फँसी) गाय के समान, दुर्वार-घोर-राक्षस-वधू (नारी)-कोटि (समूह) के मध्य स्थित नारी-शिरोमणि, नलिनायताक्षी, मलिनांगवाली, वेणी-समन्वित जघनवाली, कलित-भूषण-जाल (समूह) वाली, गद्गदकंठवाली, जनित-उष्ण निश्वासवाली, सतत् उपवास करनेवाली, जनकतनूजाता, जगदेक माता, निखिल सन्नुत-पूत (सब से प्रशंसित पवित्र चरित्रवाली), निर्मल ख्यातिवाली, अखिल-गुण-समुपेता उस सीता को देखा। देखते ही संभवतः सीता हो सकती है, यह सोचकर, अतिभक्ति से राम-लक्ष्मण को

बॊंडगनि सीत गाबोलु बॊम्मनुचु । गडुभक्ति रामलक्ष्मणुलकु म्रॊक्कि
कडुवेड्क सुरलनु गडँगि वेडुचुनु । नडरॆडु मुदमुन ना मेड डिग्गि
मदि नुब्बि यंगुष्ठमात्रुडै कदिसि । पदिलुडै या शिशुपा वृक्षमॆक्कि
बालुडै यल वटपत्रंबुनंदु । वे लील ग्रीडिंचु विष्णुंडु वोलॆ
शाखामृगेंद्रुंडु जडिगॊन्न दानि । शाखललो डाँगि चतुरुडै निलिचि २३०
पावनचरितुडा पद्मायताक्षि । भाविंचि भाविंचि पलुमारु जूचि
"कडकतो ऋश्यमूकमुनंदु गन्न । तॊडवुलु नी युन्न तॊडवुलु जूड
नेकप्रकारंबु; ली पद्मनयन । काकुत्स्थु सति सीत गाबोलु" ननुचु
मऱियुनु बरिकिंचि मारुतात्मजुडु । नॆऱसिन बुद्धिमै नॆलत नीक्षिंचि
श्रीरामुडानतिच्चिन प्रकारमुन । ना रमणीमणि यवयव श्रीलु
गर्णभूषणमणि करकंकणमुलु । स्वर्णांबरंबुनु सरि बरिकिंचि
वलवंत बडि वेगुवारि चिह्नमुलु । वलनॊप्पगल पतिव्रतल चिह्नमुलु
जदुरांडुरगु मर्त्यसतुल चिह्नमुलु । जॆंदरकन्नियु जूचि चिंतिंचि मऱियु
गॊनकॊनि रामु बेकॊनि प्रलापिप । गनुगॊनि मऱि सीतगा निश्चयिंचि
या विन्ननगु मोमु ना कृशांगंबु।ना विरिसिन वेणि या युन्न युनिकि २४०

प्रणामकर, बड़े उत्साह से देवताओं की प्रार्थना कर, अतिशय मोद से उस सौध से उतरकर, मन में फूलकर, अंगुष्ठ-मात्र (आकारवाले) होते हुए, निकलकर, सावधानी से उस शिशुपा वृक्ष पर चढ़कर, बालक बनकर वट पत्र पर अनेक प्रकार से क्रीडाएँ करनेवाले उस विष्णु के समान, शाखा-मृगेंद्र (वानरेंद्र) उस (वृक्ष) की घनी शाखाओं में छिपकर, चतुरता से स्थित होकर, ।। २३० ।।

—पावन चरित्रवाले (हनुमान)ने उस पद्मायताक्षी के बारे में सोच-सोचकर बार-बार देखकर, (सोचा)—"ऋश्यमूक में देखे हुए आभूषण (और) ये आभूषण, देखने पर, एक प्रकार हैं। यह पद्मनयना काकुत्स्थ (रामचंद्र) की पत्नी हो सकती है।" फिर (उसे) देखकर, मारुतात्मज समर्थ बुद्धि से स्त्री (सीता) को देखकर, श्रीराम के वचनानुसार, उस रमणी-मणि के अवयव-सौभाग्य (सुघड़ता), कर्णभूषण, मणि (-जड़ित) करकंकण, स्वर्णांबरों को ठीक तरह से परिशीलन कर, प्रेम की पीर में फँसकर व्यथित होनेवालों के लक्षणों को, सुशोभित पतिव्रता (स्त्रियों) के लक्षणों को, चतुर मर्त्यस्त्रियों के लक्षणों को स्थिरता से सब को देखकर, विचारकर, और सप्रयत्न राम का नाम लेकर प्रलाप विलाप करते देख यह निश्चय कर कि वह सीता है, उस विवर्ण मुख, कृश-अंग (शरीर), बिखरी वेणी, उस स्थिति, ।। २४० ।।

या दुरवस्थयु ना विलापंबु । ना दैन्यमुनु जूचि यात्मलो वगचि
'चंद्रुनि बासिन चंद्रिक रीति । जंद्रास्य या रामचंद्रुनि बासि
युंडुने ? यी यिंति नोंगि बासि रामु । डुंडुने ? यिदि सोद्यमूहिंचि चूड
गुलशील दाक्षिण्य गुण वयोधर्म । ललितरूपमुलोक्कलागौट जेसि
यारामविभुनकी यंगनामणियु । नी राम का रामनृपतियु दगुनु;
ई कांतकै कादे यिनकुलेश्वरुडु । श्रीकंठु विलु द्रुंचे जेऱकु चंदमुन
नाकुलंबुन जेंद नडरि याक्कपट । काकंबु शिक्षिंचे गडिमि वार्टिचि
तोलुत बट्टिनयंत द्रुंचे विराधु; ।नलि गोसे ना शूर्पणख मुक्कु सेवुलु;
खरदूषणादि राक्षसुल खंडिंचे; । मरणंबु नोंदिंचे मारीचु नीचु;
वालि नोक्कम्मुन वधियिंचे; गपुल। नालुगुदिशल कुन्नतशक्ति बनिचे;
२५०
वारललोपल बलवंतुंडननुचु । नारूढगति नंगदादुल गूडि
घनपुण्य निधियेन काकुत्स्थु नेदुर । बनिपूनि वच्चिचति बंतंबु मेऱसि;
ना पुण्यवशमुन ना कोरिनट्ल । यी पुण्यसति गंटि निच्चोट वच्चि;
दारुणासुरवधूतति नट्टनडुम । गारणाकृति जिक्कि कलगु नी सतिकि

—उस दुर्दशा, उस विलाप, उस दैन्य को देखकर मन में दुखी हो (हनुमान ने सोचा)—"चन्द्र से बिछुड़कर चन्द्रिका के समान, चंद्रास्या (चन्द्रमुखी) उस रामचन्द्र से बिछुड़कर रह सकती है ? इस स्त्री से बिछुड़कर राम रह सकेंगे ? विचार कर देखने पर यह आश्चर्य (की बात) है। कुल, शील, दाक्षिण्य, गुण, वय, धर्म, ललित रूप के एकसम होने के कारण उस प्रभु राम के लिए यह अंगनामणि (रमणीश्रेष्ठ) तथा इस रामा के लिए वह राजाराम उपयुक्त ही हैं। इसी कान्ता के लिए तो इनकुलेश्वर (राम) ने ईख की तरह श्रीकंठ (शिव) के धनुष को तोड़ दिया था। (इसके) व्याकुल होने पर अतिशयता से कपटी कौए को, पराक्रम मानकर दंडित किया था। पूर्व में विराध के पकड़ लेते ही (उसका) वध किया था। लीला से उस शूर्पणखा के नाक-कान काट दिए थे। खर-दूषण आदि राक्षसों का संहार किया था। नीच मारीच को मौत के घाट उतारा, वाली को एक बाण से मार डाला था। उन्नत शक्ति से चार दिशाओं में कपियों को भेजा। ॥ २५० ॥

उनमें (अपने आपको) बलवान समझते हुए, आरूढ़ गति से अंगद आदियों के साथ घन-पुण्यनिधि काकुत्स्थ (राम) के समक्ष, होड़ लगाकर, कार्य संपन्न करने आया हूँ। अपने पुण्यवश, अपनी इच्छा के अनुसार, इस पुण्यसति को यहाँ आकर देख पाया हूँ। दारुण-असुर-वधूतति (स्त्री-समूह)

नॆब्भंगि जूपुदु निक ना रूपु ? । नॆब्भंगि भाषिंतु नीयिंतितोड ?
नॆब्भंगि नूरार्तु नी पुण्यसाध्वि ? । नॆब्भंगि निब्भंगु लॆरिंगितु सतिकि?

सीतयॊद्द रावणुनि प्रलापमु

ननि यिट्लु चिंतिप नंत रावणुडु । जनकज जिंतिंचि संतापमंदि
वेकुवजामुन वेग मेल्कांचि । तेकुव मनसिजाधीन चित्तमुन
दिव्यमाल्यंबुलु दॆऱगॊप्प मुडिचि । दिव्यगंधंबुलु दॆऱगॊप्प बूसि
दिव्याबरंबुलु दॆऱगॊप्प गट्टि । दिव्यभूषणमुलु दॆऱगॊप्प बॆट्टि २६०
तन किरीट प्रभाततुलॆंदुं बर्व । घनचंद्रहास संकलितुडै मॆऱसि
करमणि कंकण क्वणनमुल् मॊऱय । सरस नच्चरलु विंजामरलिडग
घनकुचहारमुल् ग्राल गंधर्व । वनिताजनमु लालवट्टमुल् वट्ट
गॊडुगुनु धरियिंचि कुचमूलरुचुल । नडयाडुचुंड गिन्नरसतुल् गॊलुव
बाहुपार्श्वंबुल् बरगंग हस्त । वाहिकलै यक्षवनितलु नडुव
बरिमळोदक पानपात्रिकल् वट्टि । गरुड कामिनुलिरुगडल नेतेर

के बीचोंबीच, कारणाकृति से फँसकर विकल होनेवाली इस सती को मैं अब किस प्रकार अपना रूप दिखाऊँ ? इस स्त्री के साथ कैसे बात चलाऊँ ? इस पुण्य-साध्वी को किस प्रकार' सांत्वना दूँ ? सती को कैसे समस्त दशा जताऊँ ?"

सीता के पास रावण का प्रलाप

ऐसा कह, इस प्रकार हनुमान के सोचते रहने पर, रावण जनकजा के बारे में सोचकर, संतप्त हो, बड़े तड़के शीघ्र जागकर, स्थैर्य से, मनसिज-अधीन चित्तवाला होता हुआ, दिव्य मालाओं को ढंग से धारणकर, दिव्य गंधों (चंदन आदि) का ढंग से लेपकर, दिव्य वस्त्रों को ढंग से पहनकर दिव्य भूषणों को ढंग से धारण कर, ।। २६० ।।

—अपने किरीट की प्रभाततियों के हर जगह व्याप्त होने पर, घन चन्द्रहास (खड्ग)-संकलित (युक्त) हो, शोभायमान होकर पार्श्व में करमणिकंकणों के क्वणित हो झंकृत होने पर, अप्सराओं के चामर डुलाते रहने पर, घन-कुचों पर हारों के फबते रहने पर, गंधर्व-वनिता-जन (समूह) के छत्र धारण करने पर, छत्र धारणकर, कुचमूल (बाहुमूल)-रुचियों (कान्तियों) के शोभित होते रहने पर, किन्नरों की स्त्रियों के सेवाएँ करते रहने पर, बाहु-पार्श्व भागों के विलसित होते रहने पर, यक्ष-वनिताओं के हस्त वाहिकाएँ बन (साथ) चलने पर, दोनों पार्श्वों में परिमल-उदक (सुगंधित जल) की

लॆडनॆड संदडि नॆडगलग जडिसि । कडगि मुंदऱ नागकन्यलु नडुव
विद्याधर स्त्रीलु वीणादिवाद्य । हृद्यसंगीतंबु लिंपुगा बाड
दन गुणोन्नतुलकु दग सिद्धसाध्य । वनितलु सेरि कैवारमुल् सेय
बागॊप्प वरखड्गपाणुलै कदिसि । रागिल्लि वॆनुक रा राक्षस स्त्रीलु
२७०
कलगॊनि करदीपिका सहस्रमुलु । वॆलुग मंडोदरि वॆड्क दोड्कॊनुचु
मॆऱुगुलु वॆनुकॊनु मेघंबु वोलॆ । मऱियुनु गल सतुल् मलसि तन्गॊलुव
नुरुपादहति कोडि युर्वि गंपिंप । बरिहासरवमु लंबर वीथि निंड
मंजीरमेखलादि मणिभूषणादि । शिंजितंबुलु विंदुसेय वीनुलकु
ना यशोकाराममपुडु सॊत्तॆंचि । वायुसूनुडु दन्नु वांछतो जूड
निद्रावशेष घूर्णितदृष्टितोड । भद्रकेयूरांकबाहुलतोड
वसुधपै जीराडु वल्लॆवाटु तोड । वसिवाळ्ळु वाडिन वदनंबु तोड
घनतरभीषणाकारंबु तोड । जनकज मुंदऱ जनुदॆंचि निलिचॆ;
निलिचिन गनुगॊनि निव्वॆऱगंदि । तलपुलो रघुरामु दप्पक निलिपि
यूरुलु नुदरंबु नुरुकुचद्वयमु । जारुहस्तंबुलु जक्कगा माटि २८०

पान-पात्रिकाएँ (छोटे पात्र) लेकर, गरुड़ों की स्त्रियों के चलने पर, जहाँ-तहाँ हलचल के मचने पर मन में डरकर, (फिर भी) साहस कर आगे नाग-कन्याओं के चलने पर, विद्याधर स्त्रियों के वीणा आदि वाद्यों के साथ हृद्य-संगीत को मधुरता से गान करने पर, अपने गुणों की उन्नति के अनुकूल सिद्ध और साध्य वनिताओं के मिलकर स्तुतिपाठ करने पर, अच्छे ढंग से हाथों में वर खड्गों से युक्त हो, प्रेम के साथ राक्षस स्त्रियों के पीछे-पीछे आने पर, ।। २७० ।।

—विकल होकर दीपिका सहस्रों के बलते रहने पर, उत्साह से मंदोदरी को साथ लेकर, चपलाओं से युक्त मेघ के समान, अन्य सतियों के घेर कर अपनी सेवाएँ करते रहने पर, उरु (बृहत्) पाद के आघात से हारकर, उर्वी (पृथ्वी) के कंपित होने पर, परिहास के स्वनों से अंबर-वीथि के भर जाने पर, मंजीर (तथा) मेखलाओं के मणिभूषण आदि के शिंजितों (ध्वनियों) के कानों में मधु घोलने पर, तब उस अशोकाराम (उपवन) में प्रवेशकर, वायुसून के इच्छा से अपने को (रावण को) देखने पर, निद्रा-वशेष-घूर्णित दृष्टि लिए, भद्रकेयूरों से अंकित (अलंकृत) बाहुओं के साथ, वसुधा पर लोटनेवाले उत्तरीयके साथ, मुरझाए बदन के साथ, घनतर-भीषण-आकार के साथ, (रावण) जनकजा के सामने आ खड़ा हो गया। (ऐसा रावण के आ) खड़े होने पर, उसे देख, आश्चर्यचकित हो, विचार

पुलिगन्न लेडिनि बोलि चित्तमुन । गलगुचु नुन्नट्टि कल्याणि जूचि
वनितललोन दुर्वारगर्वमुन । दनु दैवमाडिंप दगवेदि पलिकें;
"निंति! नी तनुमध्यमिट दाचनेल? कांत नी नेम्मोमु गैन्नालनेल ?
वेंडर्विटि वानिकि वेंड्रचिन नन्नु । गडकंट निकनैन गावुमो यबल !
बलमिनैननु बट्टि परकांत बोंद । दलचुट तम जाति धर्ममो यबल !
यैन नी यानति यरसियुन्नाड; । गान ना माटलु गैकोंनि विनुमु ।
ई रूपमुन नुंड नेमि कारणमु ? । दारुणाटवि दाटि तम्मुडु दानु
वनित! रामुडु वच्चि वनधि बंधिंचि । ननिचिन कडिमिमै नन्नु साधिंचि
गोंनकोंन्न वेड्क दोकोंनिपोवु निन्नु । ननि विचारिंचेंदवात्मलो नीवु;
अमरेंद्र यम वरुणादुल कैन । समरंबुलो नन्नु साधिपरादु; २९०
ई बेलतनमेल ? यिंदीवराक्षि !। ना बाहुशक्तिकि नरुलेंतवार ?
लडवुल गोंडल ननदयै तिरिगि । यिडुमलु पडुचुन्न हीनमानवुनि
पोंदेल कोरेंदु? पोलति! नन् बोंदि । पोंदनोल्लवें राज्यभोगंबुलकट !

(मन) में रघुराम को स्थिर बनाकर, ऊरु (जाँघ), उदर, उरु (पीन) कुचद्वय, चारुहस्त को अच्छी तरह छिपाकर, ।। २८० ।।

—व्याघ्र द्वारा देखी गई हिरनी के समान, मन में विकल होनेवाली कल्याणी (सीता) को देखकर, स्त्रियों से परिवेष्टित होकर, दुर्निवार गर्व से, नियति के कहलाने पर, न्याय (औचित्य) को त्याग (रावण) बोला—"हे सुन्दरी ! यह अपने तनुमध्य (कमर) को क्यों छिपाती हो ? हे कान्ता ! तुम्हारे सुन्दर वदन का हाथ पर झुकना क्यों ? हे अबले ! मन्मथ (की पीड़ा) से त्रस्त मुझे अब तो कृपाकोर से बचाओ । हे अबले ! बल, ही से सही परस्त्री को प्राप्त करने की सोचना हमारे जाति का धर्म है । फिर भी तुम्हारे आदेश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ । अत: मेरी बातों को ध्यान से सुनो । (तुम्हें) इस रूप में रहने का कारण (आवश्यकता) क्या है ? हे वनिते ! तुम मन में सोचती हो कि दारुण कानन को अनुज के साथ पारकर, राम आकर वनधि (समुद्र) (पर पुल) बाँधकर, उत्कट साहस के साथ मुझे जीतकर, उत्साह के साथ तुम्हें ले जाएगा । मुझे समर में जीतना अमरेंद्र, यम, वरुण आदि के लिए भी संभव नहीं है । ।। २९० ।।

यह नासमझी (मूर्खता) क्यों ? हे इन्दीवराक्षी ! मेरी बाहुशक्ति के समक्ष मनुष्य किस गिनती के हैं ? जंगलों (तथा) पर्वतों में अनाथ हो घूमते हुए, कष्ट सहनेवाले हीन मानव का सहवास क्यों चाहती हो ? हे नारी ! हाय, मुझे प्राप्तकर, राज्य-भोग भोगना क्यों नहीं चाहती हो ? सुनो, अनिमिषाधिप (इन्द्र) हो, अन्तक (यम) हो, जलाधिप (वरुण) हो,

यनिमिषाधिपुडैन नंतकुंडैन । विनु जलाधिपुडैन वित्तेशुडैन
ननल नैऋति वायु हरुलुनु नैन । जनुदेंचि ना लंक साधिपलेरु;
लंक मानवुलकु लक्षिप दरमे ? । यिक नेक्कडि रामु? डिंदेट्लुवच्चु?
वच्चि लंकापुर वरमेट्लु चोच्चु ?। जोच्चिच नन्नेभंगि स्रुक्कक येदुरु ?
नेदिरि नातो वोर नेभंगि गदियु? । गदिसि ना सत्वमेगति सैपजालु ?
जालुट येंदाक समकूर बोलु ? । बोलवीमाटलु पो विड्डुमिक''
ननि यिट्लु पलुमाऱु नड़्रिमि रावणुडु । विनरानि पलुकुलु वेंस दूड़्रि पलुक
३००
गडु नलिग गद्गदकंठंबुतोड । बुडक द्रुंचि 'यवश्यमुग रामुचेत
जेडुदु वी' वनि चाटि चेप्पिन रीति । बडतुक तृणमु चेपट्टि यिट्लनिये :
३०२

जानकि रावणुनि दूरुट

"बापात्म! नीवु ना पति डागुरिंचि । नी पुरि लंकलोनिकि नन्नु देच्चि
यिदि योक्क कडिमिगा नेल गर्विंचे?। दिदि योक्क मेलुगा नेल प्रेलेदवु ?
परवधूरति गोरु पापात्मु कुलमु । सिरियुनु नायुवु जेडु; नट्टु गान

वित्तेश (कुबेर) हो, अनल, निऋति, वायु (अथवा) हर हो, कोई भी आकर मेरी लंका को जीत नहीं सकता। (ऐसी) लंका की ओर देखना भी मानव के लिए कहीं संभव है ? अब कहाँ का राम ? यहाँ (वह) आएगा ही कैसे ? आकर भी लंकापुर में प्रवेश कैसे करेगा ? प्रवेशकर कमज़ोर हुए बिना कैसे मेरा सामना करेगा ? सामना करके भी मेरे साथ कैसे भिड़ सकेगा ? भिड़कर मेरे सत्त्व को किस प्रकार सहन कर सकेगा ? सहन करना कहाँ तक संभव हो सकेगा ? (अतः) ये (सब) बातें संभव नहीं है। छोड़ो इन्हें।'' ऐसा कई बार संभ्रम से रावण के (राम की) तुरत निन्दा करते हुए ऐसी बातों के कहने पर जिन्हें सुना नहीं जा सकता, ॥ ३०० ॥

—अधिक रुष्ट हो, गद्गद कंठ से, (एक) तिनके को तोड़ मानों घोषणा कर रही हो कि तुम अवश्य ही राम के हाथों नष्ट हो जाओगे (वह) नारी तृण को हाथ में ले यों बोली—

जानकी का रावण की निन्दा करना

"हे पापात्मा ! तुम मेरे पति को धोखा देकर, अपने नगर लंका में मुझे लाकर, इसे साहस (का कार्य) मानकर क्यों गर्व करते हो ? इसे श्रेष्ठ कार्य मानकर क्यों प्रलाप (बकवास) करते हो ? पर-स्त्री-रति को

दगवुनु धर्मंबु दलपोसि नन्नु । मगुड रामुन किम्मु मनगोरॆदेनि;
गादनि दुर्बुद्धि गैकॊंटिवेनि । गोदंड दीक्षागुरुनिचे राम
जननाथुचे नीवु सच्चुट निजमु; । 'वनवासकृशुडु केवल दुर्बलुंडु
ननद राज्यविहीनु डसहायुडतडु । मनुजमात्रु' डटंचु मदि नॆन्नवलदु;
दंडकाटवि जतुर्दश सहस्रोग्र । चंडराक्षस कोटि जंपडे तॊल्लि ?
३१०
दंडधरोद्दंड दंडंबु नॊडिसि । चंडांशु किरणोग्र संरंभमडच्रि
गणना परंपरल् गडचि यंदंद । रणभीषणमुलैन रामु बाणमुलु
परुवडि नी लंकपै बारुनाडु । तरमिडि नी युरस्स्थलि गाडुनाडु
मुनुकॊनि नी शिरंबुलु द्रुंचुनाडु । मुनुमिडि नी रक्तमुलु ग्रोलुनाडु
रावण ! नी लावु रघुरामु लावु । नीवु चूचॆदु गाक नेडेल चॆप्प !
नॆंडतो ब्रालेयमॆंदिरिनयट्लु । कॊंडतो दगरु डीकॊनिन चंदमुन
मदहस्ति दोम माकॊन्न करणि । नुदधितो गाल्व मॊंडॊड्डिन पगिदि
श्रीतर्वुतो वेमु श्रीशुतो जोगि । धाततो विप्रुंडु धनिकुतो बेद

चाहनेवाले पापात्मा का वंश, श्री (संपदा) और आयु नष्ट हो जाएँगे । अतः न्याय (औचित्य) धर्म के बारे में विचारकर, यदि जीवित रहना चाहते हो तो मुझे राम को लौटा दो । न मानकर दुर्बुद्धि को ग्रहण करोगे तो कोदंड-दीक्षा-गुरु प्रभु राम के हाथ तुम्हारा मरना सत्य है । मन में यह मत सोचो कि '(राम) वनवास से कृश हैं, मात्र दुर्बल है, अनाथ है, राज्य विहीन है, निस्सहाय है, मनुजमात्र हैं ।' क्या उसने पूर्व में दंडक वन में चतुर्दश सहस्र (संख्यावाले) उग्र (तथा) चंड-राक्षस-कोटि (समूह) का बध नहीं किया ? दंडधर (यम) के उद्दंड दंड को मात करनेवाले, चंडांशु (सूर्य) की किरणों के उग्र संरभ को परास्त करनेवाले (तथा) गणना के क्रम को पार करनेवाले (असंख्य) राम-बाण जहाँ-तहाँ रणभीषण होकर, शीघ्रता से तुम्हारी लंका पर व्याप्त होते समय, झट से तुम्हारे वक्षःस्थल पर गड़ते समय, लगकर तुम्हारे सिर काटते समय, लगकर तुम्हारे रक्त का पान करते समय हे रावण ! उस समय अपने तथा राम की सामर्थ्य का अनुभव कर सकोगे । आज (उस सम्बन्ध) में क्यों कहूँ ? कुहरे का आतप का सामना करने के समान, भेड़ का पर्वत से टक्कर लेने के समान, मच्छड़ का मदगज का सामना करने के समान, नाले का समुद्र की बराबरी करने के समान, नीम (के पेड़) का श्रीतरु (कल्पवृक्ष) से, जोगी (निर्धन) का श्रीश (विष्णु) से, बिप्र का धाता (ब्रह्मा) से, सियार का भूत से बराबरी करने के समान, छोटे बच्चों के समान जो (खेल में)

जातिरत्नमुतोड सरि गाजुपूस । बूतंबुतो नक्क पुरिणिंचिनट्लु
तन्नंटुकॊनुवारु तनयंतलनुचु । बिन्नबिड्डलमाड्कि ब्रेलॆदवीवु; ३२०
तॆगुवमॆ राघवधिपुनकु नीकु । मगटिमि मदहस्तिमशकांतरंबु;
मिगुल नोरुलु गलिग मीऱि पल्कॆदवु।जगति रामुनितोड सरियॆ राक्षसुड!
ऒक लंक येलुचु नुब्बॆदवीवु । सकललोकमुलकु स्वामि राघवुड;
अखिल कंटकुडवीवन्नि लोकमुल । नखिललोकाराध्युडाराघवुंडु;
वेदचोरुडवविवेकिवि नीवु । वेदंबुलकु नॆल्ल वेद्युंडतडु;
कर्मपूरितघनकायुंड वीवु । निर्मलगुणयशोनिधि राघवुंडु;
सर्वजीवाळि भक्षकुडवु नीवु । सर्वजीवुलकुनु समुडु राघवुडु;
उन्नतोन्नतुडैन युर्वीशुनकुनु । ऎन्नि सारॆल पॆट्टु नॆऱुगवु नीवु;
इंद्रुंड जंद्रुंडु निनुडु गाडतडु । निंद्रादिवंद्युडुं निनवंशजुंडु;
निन्नु मर्दिंचियु नी पेरु मान्चि । नन्नु गॊंपॆयॆडि; नम्मुमितटिकि; ३३०
नाकु नीकुनु साक्षि ननु दॆच्चुनपुडु । गैकॊनि यॊक पक्षि कडगि यॆतॆंचि
नी लावु शक्तियु नी पराक्रममु । नेलपालुग जेसि नॆऱि व्रेसि निलुप
गपटभाषलु वल्कि घनपक्षिनाथु । नपुडु खंडंचिन यधमुड वीवु;

यह कहते हैं कि मुझे छूने वाले मेरे बराबर होंगे, क्यों बकवास करते हो ? ॥ ३२० ॥

राघवाधिप तथा तुम में, पराक्रम की दृष्टि से, मदहस्ति और मशक (मच्छड़) का अन्तर है। अधिक मुँह रहने से ज्यादा बोलते हो। हे राक्षस! (यह) जगत राम की सानी रख सकता है? एक लंका पर शासन करते, (गर्व से) फूल रहे हो, राघव तो सकल लोकों का स्वामी है। तुम सभी लोकों में अखिल कंटक हो, वह राघव तो अखिल लोकों का आराध्य है। तुम अविवेकी तथा वेद-चोर हो। वह तो सभी वेदों का वेद्य है। तुम कर्म पूरित-घन-काय वाले हो, राघव तो निर्मलगुणयशोनिधि है। तुम सर्व जीव समूह के भक्षक हो, राघव सर्व जीवों पर समदृष्टि रखनेवाला है। उन्नत से उन्नत वह उर्वीश (राजा) तुमसे कितने गुने बड़ा है, तुम नहीं जानते। वह इन्द्र, चन्द्र, (अथवा) इन (सूर्य) नहीं है। इन-वंशज (राम) इन्द्रादि-वन्द्य है। अब इस पर विश्वास रखो कि तुम्हारा मर्दन (संहार) कर, तुम्हारे नाम (यश) को नष्टकर, मुझे ले जाएगा ॥ ३३० ॥

तुम्हारे मुझे लाते समय, एक पक्षी के साहस युक्त हो आकर, तुम्हारे बल, शक्ति, तुम्हारे पराक्रम को नष्टकर, पराक्रम से तुम्हें रोकने पर, कपट की बातें कहकर, महान् पक्षिनाथ को खंडित करनेवाले अधम हो तुम।

तरमॆऱुंगक राम धरणीशुतोड । दॊरसिन भस्मै त्तुंगॆदु गाक !
येमिटि कॆंदुरु दन्नॆरुगनिमाट ? । लेमिटि की गर्व ? मिनकुलेश्वरुडु
ई मूडु जगमुल नॆंदु डागिननु । ई महि निन्नेल यिट्लुंड निच्चु ?”
ननिन रावणुडु महारोषमॆत्ति । जनकजजूचि यच्चलमुतो ननियॆ;
“बरमेष्ठि दपमुन बरग मॆप्पिंचि । वरशक्ति नतनिचे वरमुलु गांचि
सुरपति मॊदलुगा सुरलनोडिंचि । गरळकंधरुतोड गैलासमॆत्ति
कडिमिमै नूर्ध्वलोकमुलु साधिंचि । वडि बॆंचि पाताळवासुल नॊंचि ३४०
सकलोन्नतुंडनै सडिगन्न नन्नु । वॆकलियै तमतंड्रि वॆडलंग द्रोव
नतिहीनसत्त्वुडै यडवुललोन । गतिमालि फलमुल बर्णाशनमुल
विकृतांगुडै तपोवृत्तिमै नुन्न । यॊक पेद मानवुडोपुने चॆनक ?”
ननि रामु निंदिप नंदंद बॊगिलि ।मनमुन नॊगिलि युम्मलिकंबु मिगिलि
घनशोक गद्गदकंठयै यप्पु । डिनकुलाधिपुदेवि यॆलुगॆति येड्चॆ;
धृतिदूलि नलगड देवगंधर्व । सतुलॆल्ल नेड्चिरि जानकि जूचि;
रावणु गर्वंबु रमणि शोकंबु । भाविंचि कोपतापंबुलु निगुड

(अपने) स्तर को न जानकर राम-धरणीश के साथ भिड़कर, भस्म बन नष्ट हो जाओगे। प्रतिपक्षी तथा अपने को न जाननेवाली यह बात क्यों ? यह गर्व क्यों ? इन तीनों लोकों में कहीं भी छिप जाओ वह इनकुलेश्वर तुम्हें इस महि पर ऐसा क्यों रहने देगा ?” (ऐसा) कहने पर रावण महारोष से जनकजा को देख महाहठ से (यों) बोला:—“परमेष्ठी (ब्रह्मा) को अधिक प्रसन्नकर, वरशक्ति से उससे वर प्राप्तकर, सुरपति से लेकर (सभी) देवताओं को हराकर, गरलकंधर (शिव)- समेत कैलास को (भुजाओं पर) उठाकर, पराक्रम से ऊर्ध्वलोकों को जीतकर, झट से क्रम से पातालवासियों को सताकर, ।। ३४० ।।

—सकल (लोकों में) उन्नत बन नाम कमानेवाले मुझे अपने मूर्ख पिता के (नगर से) निष्कासित कर देने पर, अति सत्त्वहीन हो, जंगलों में अनाथ हो, फल और पर्ण खाते हुए, विकृतांग से, तपोवृत्ति से रहनेवाला एक मानव मुझे छेड़ने में समर्थ हो सकता है ?” ऐसा (रावण के) राम की निन्दा करने पर जब-तब व्याकुल हो, मन में दुःख के अधिक होने पर घनशोक से गद्गदकंठी होकर, तब इनकुलाधिप की देवी ऊँचे स्वर से विलाप करने लगी। धैर्य को खोकर चारों ओर देवगन्धर्व सतियाँ जानकी को देखकर रो उठीं। रावण के गर्व (तथा) रमणी के शोक के बारे में विचार कर क्रोध और ताप के बढ़ने पर, अनिल-तनूभव (हनुमान) तब

ननिलतनूभवु डप्पु डादुष्ट । दनुजुपै लंघिप दलपोसि चूचि
"बिरुदनै वीनि जंपितिनेनि पतिकि। धरणिजसेमंबु दग जॆप्पगलनु;
अमरारि चेत ना यलवॆल्ल बॊलिसि। समरंबुलोपल जच्चितिनेनि ३५०
लंक दिक्कॆऱुगक ललन नॆव्वगल । निकुचु निदुन्कि यॆऱुग जॊप्पडक
येनु जच्चुटयुनु नॆर्पड विनक । भानुकुलाग्रणि प्राणमुल् विडुचु;
नित चेसिन चेतलेमियु गाक । यंतयु जॆंडिपोवु नधिपु कार्यंबु;
ऎडपक निटमीद नी दैत्यु तोड । गडगि कय्यमु सेयगलवाड गानु;
दनुजुतो बोराडि दर्पिंचि गॆलुतु ।ननि तलंचिन गॆल्पु नदि गानरादु;"
अनि निश्चयमु सेसियात्मलो मुन्नु । दनुजुतो बोरुट तगवु गादनुचु
"नॆलतनु दर्शिंचि निष्ठतो बिदप । गल कार्यमुलु सेयगलवाड गानि,
अनि सेय निदि समयमु गादु नाकु"। ननि धीरुडै युंडॆ ना म्रानिमीद;
मरियु रावणुडु गामंबु ग्रोधंबु । वॆऱयुनु नॊऱपुनु वॆऱगुनु गदुर
नाडिन माटल कन्निटि कात्म ।'नोडक यतिनिष्ठुरोग्रवाक्यमुलु ३६०
वनितलंदरु विन वसुधातनूज । तनु दूऱ बल्किन दनुजेशुडंत
गुटिलभावमुन भ्रूकुटिल सन्निटल । चटुल रक्ताक्षुडै जाज्वल्यमान

उस दुष्ट दनुज पर झपटने का विचार कर देख (सोचा)— "शूर-वीर हो इसको मार डालूँ तो पति (राम) को धरणिजा के कुशल के बारे में ठीक तरह बता सकूँगा। अमरारि (राक्षस) के हाथों अपने समस्त बल को खोकर, समर में मर जाऊँगा तो ॥ ३५० ॥

—लंका का पता न जानकर, अधिक व्यथा से ललना के यहाँ व्यथित होते रहने की (बात) न जानकर, मेरे मरण का समाचार भी न पाकर, भानुकुलाग्रणी (राम) प्राण छोड़ देंगे। अब तक जो कार्य किया था, वह पूर्ण न होकर, अधिप (राम) कार्य बिगड़ जाएगा। विलंब किए बिना अब इस दैत्य के साथ युद्ध नहीं करूँगा। दनुज से जूझकर, गर्वकर, जीतने की सोचूँ, वह भी दिखाई नहीं पड़ रहा है।" ऐसा निश्चय कर मन में यह सोच कि अब दनुज से लड़ना न्याय (-संगत) नहीं है। यह सोच धैर्य धारण कर शाखा पर बैठा रहा कि "नारी के दर्शन करने के बाद निष्ठा से आगे के कार्य करूँगा। अब यह मेरे लिए युद्ध करने का समय नहीं है।" और (उधर) काम, क्रोध, भय, उतावलापन, स्तब्धता के आधिक्य से रावण की, कही बातें सुनकर, मन से भीत न होकर, समस्त वनिताएँ सुनें इस तरह अति निष्ठुर उग्र वाक्यों से वसुधातनूजा के निंदा करते रहने पर, दनुजेश कुटिल भाव से कुटिल-भ्रू-सन्निटलचटुल-रक्ताक्षी वाला हो, जाज्वल्यमान लोल-आकील-आभील-लोक-संहार (करनेवाली)

लोल कीलाभीललोकसंहार । कालाग्निरीति नाग्रहमुन मंडि
घोरहुंकारुडै क्रूरुडै नीति । दूरुडै या सति दोडरि भंजिचि
चंद्रहासंबेंत्ति जानकि नेय । निंद्रारि गर्मकिचुनेंड गेलु बट्टि

रावणुनिक मंडोदरि नीतिबोध

यमल मंडोदरि यड्डमै निलिचि। कोमरोप्प बलिकें ना कुमतियौ विभुनि;
"दंडिमै नेंदिरिन धरणिपालकुडे । खंडिप नीकु नी कांत दैत्येश !
येंन्नि चेंप्पिन विनवेमि सेयुदुन ? । निन्नन बनियेमि ? नी पुराकृतमु !
म्रुच्चिलि परसति मुनु देंच्चुटोंकटि;। चेंच्चेऱ भुवि निंद जेंदुट रेंडु;
तेंगुवतोडुत बट्टि तेंच्चिन सतियु । बगगोनि युंडुडेर्पऱुपगा मूडु;
नोनर दुर्बुद्धि ना युविदनु गूडि । यनुभविंचेंद ननुटारय नाल्गु;
कन नुत्तमस्त्रील गडगि पल्माऱु । विनरानि पल्कुलु वेंस बल्कुटेनु;
गाममणपलेक कामिनि जंप । दा मदि नेंचुट दनुजेश ! याऱु;
तगवेंचनेरकेंतयु जेसि तुदिनि । मगटिमिवोवुट मऱियुनु नेडु;

कालाग्नि के समान क्रोध से जलकर, घोर-हुँकार युक्त हो, क्रूर बन, नीति-दूर हो, उस स्त्री (सीता) को डाँटकर, चन्द्रहास (खड्ग) उठाकर, इंद्रारि (रावण) जानकी को मारने को उद्यत हो गया। तब उसका हाथ पकड़कर,

मन्दोदरी का रावण को उपदेश

—अमल-मंदोदरी (उसे) रोककर, उस कुमतिवाले विभु से शोभा से बोली:—"हे दैत्येश ! मार डालने के लिए यह कान्ता क्या अतिशयता से सामना करनेवाला (कोई) धरणिपालक है ? कितनी बार कहा, एक भी नहीं सुनते। मैं (अब) क्या करूँ ? तुम्हें कहने की भी क्या ज़रूरत है ? (यह सब) तुम्हारा पुराकृत (पूर्वजन्मकृत पाप) है। पहला दुष्कार्य चोरी करके परस्त्री को लाना है, भुवि (जगत) में (तदर्थ) झट निंदाएँ प्राप्त करना दूसरा है, पराक्रम से लाई गई स्त्री का भी द्वेषभाव से युक्त रहना तीसरा है, दुर्बुद्धि से तुम्हारा उस स्त्री का उपभोग करने की बात सोचना चौथा है, पाँचवाँ (तुम्हारा) बार-बार ऐसी बातें कहना जिन्हें उत्तम स्त्रियाँ सुन नहीं सकतीं, कामभावना का दमन न कर सक, स्त्री को मार डालने की मन में सोचना हे दनुजेश ! छठा है। न्याय (औचित्य) के बारे में न सोचकर कई महान् कार्य कर, अन्त में पौरुष खोना सातवाँ है। (इस प्रकार) इस नारी के कारण सात हानियाँ

नेड़ु चेट्टुलुनय्यै नीयिंतिवलन; । नेड़ु गडपगराद़ु निजमु नेन्न
बौरिबातकंबुल पुट्ट यी मेनु । दोऱगिन सद्गति दौरुकुनै नीकु ?
नभिमानवति मानवांगन सीत । कभिलाष पडि यित कलगंगनेल?
नी यंतिपुरमुन नैलतललोन । नी यिंति चिंतिपनेव्वरि बोलु ?
ननु गूडि क्रीडिंपु नाथ ! यी चेत । निनुवंटिवानिकि नीति गादेंदु ?
बौलिसैने नी बुद्धि? पोपौ" म्मटंचु । बलिमि दौलंगिप बतिकेलिवालु;
३८०

गड़ु सिग्गुवडि चाल गलुषिंचि सीत । कडनुन्न . दुष्टराक्षसवधूजनुल
नतिदीर्घतनुल भयंकराकृतुल । सततनिष्ठुर वाक्य समरकर्कशल
विनत नयोमुखि विकटहयास्य । यनुदानि हरिजट यनुदानि द्रिजट
ब्रघस महोदरि बाटिंचि पिलिचि।लघुवृत्ति बलिकै निर्लज्जुडैनिलिचि;
"प्रियनयोक्तुलनैन बैदरिंचियैन । भयदचेष्ठलनैन बाधिंचियैन
मासद्वयंबुन मगुव ना सौम्मु चेसि तें। डट्टु मीरु सेयलेकुन्न
नंतटिमीद नी यब्जाक्षि जंपि । यितलितलु कंडलिदरु दिनुडु"
अनि यशोकाराममप्पुडु वैडलि । तन नगरिकि बोयै दनुजवल्लभुड़ु ।

हुई हैं। सच मानें तो सात दोषों से बचना दुष्कर है। यह शरीर पापों की बाँबी (समूह) है। यह छूठ जाए तो क्या तुम्हें सद्गति प्राप्त होगी ? अभिमानवती (मानिनी) और मानव स्त्री सीता को चाहकर इतना विकल क्यों होते हो ? तुम्हारे अन्तःपुर की स्त्रियों में यह स्त्री, विचार करने पर, किसी की समता कर सकती है ? (किसी की नहीं)। हे नाथ, मेरे साथ सुख भोगो। यह करतूत तुम जैसे व्यक्ति के लिए नीति (संगत) नहीं है। क्या तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है ? (हट) जाओ, जाओ।" यह कहते पति के हाथ के खड्ग को बलपूर्वक हटा देने पर, ॥ ३८० ॥

—अधिक लज्जित होकर, अधिक क्षुब्ध होकर, निकट की दुष्ट-राक्षस-वधू जनों को, जो अति दीर्घ तनु वाली थीं, भयंकर आकृतिवाली थीं, सतत-निष्ठुर-वाक्य-समर में कर्कश थीं, विनता, अयोमुखी, विकट हयास्या, हरिजटा, त्रिजटा, प्रघसा, महोदरी नाम वाली थीं, सादर बुलाकर, निर्लज्ज हो खड़े होकर, लघुवृत्ति (नीच बुद्धि) से बोला— "प्रिय-नय-उक्तियों से अथवा धमकियों से अथवा भयद-चेष्टाओं (कार्य) से अथवा सताकर ही मासद्वय में (इस) नारी को मेरी संपत्ति बनाकर लाओ। ऐसा न कर सकोगी तो उसके बाद इस अब्जाक्षी को मार डालकर, (इसके) मांस के टुकड़े खा जाओ।" (ऐसा) कह तभी अशोकाराम छोड़, दनुज-वल्लभ अपने अन्तःपुर में गया।

राक्षस स्त्रीलु सीतनु बेदरिंचुट

अपुड जानकि दानवांगनलेल्ल । गृपमालि तमतम कृतक वाक्यमुल
बोधिंचि 'रावणु बोंदु मी' वनुचु । बाधिंचुतरि शूलपाणियै यौक्क ३९०
रक्कसि बेदरिंचु; "रामुडीलंक । दिक्कु सूडगलेडु; तेरव ! यायास
विडु" मंचु नोक यिति वेडमति बलुकु; । "निडुमल वडियुंड नेल नीकिट्लु ?
वरियिंपु दानवेश्वरुनि; गादेनि । बोरिगोंदु" ननि यौक्क पोलति भंजिचु;
देंडु खड्गमु; तल तेगगोट्टि दीनि । कंडलु कम्मगा गल्लुतो नद्दि
चविचूत" मनि यौक्क जंत मार्मलयु; । "नवु नवु नट्टु सेयु" डनि योर्तु पदुरु;

सीत शोकमु

नी रीति बेदरिंप निंदीवराक्षि । धारुणितनय गोंदलमंदि कुंदि
कन्नीरु दोरुग गद्गदकंठयगुचु । दन्नु गारिंचु दैत्यस्त्रील कनियें;
"दलप मानवुलकु दानवलकुनु । गलुगुने दांपत्यगौरव श्रीलु ?

राक्षस स्त्रियों का सीता को धमकाना

तब निष्ठुर हो दानव-स्त्रियाँ अपने-अपने कृतक-वाक्यों से जानकी से 'रावण को अपना लो' कहकर समझाने लगीं । उस समय कोई राक्षसी शूलपाणी हो, ॥ ३९० ॥

—उसे धमकाती, कोई स्त्री मूर्खबुद्धि से कहती कि "राम इस लंका की ओर देख नहीं सकता । हे नारी ! उस आशा को छोड़ दो ।" एक स्त्री डाँट बताती कि "इस प्रकार कष्ट क्यों भोगती रहती हो ? दानवेश्वर का वरण करो । नहीं तो मार डालूँगी ।" एक नारी कहती कि लाओ खड्ग । सिर काटकर, इसकी मांसपेशियों को मधुरता से सुरा में डुबोकर चखकर देखें ।" एक बकती कि "हाँ हाँ, इसी तरह करो ।"

सीता का शोक

इस प्रकार धमकाने पर, इंदीवराक्षी धारुणि-तनया (कमलनयनी सीता) व्याकुल होकर, आँसुओं के ढुलक पड़ने पर, गद्गदकंठवाली होती हुई, अपने को सतानेवाली दैत्यस्त्रियों से (यों) बोली—"सोच विचारने पर

इंदरु दुर्भाषलिट्लाडदगुनॆ ? । चंदुरु वायनि चंद्रिक वोलॆ
भानुनि बायनि प्रभयुनु बोलॆ । नेनु श्रीरामुनि नॆडबायजाल; ४००
नानृपालुडु दीनुडैननु राज्य । हीनुडैननु नाकु निष्टदैवंबु;
जलधिकन्यकरीति शर्वाणिभाति । बलुकदॊय्यलिमाड्कि बौलोमि माड्कि
रोहिणि सरणि नरुंधति करणि । स्वाहंगनागति सावित्रिमतिनि
रतिचंदमुन बतिव्रतनिष्ठ बॊंदलि । पतियैन रघुरामु भजियिंचुदान;
जंपिन जंपुडु; शातासि शिरमु । द्रॆंपिन द्रॆंपुडु; धृति रामु गानि
यितरुनि ने नॊल्ल; निटुवंटि कल्ल। मतमुलु ने जॆल्ल; मानुडि'' कनिन
मंडुचु वारलामाटकु मिगुल । गंडक्रॊव्वुन बॆक्कुगतुल गारिंप
धूळिधूसरितयै तूलि लो दारि । नीलाहि बोलिन नॆरि वेणि सॆदर
नेलपै बडि वेडि निट्टूर्पु निगुड । 'हा लक्ष्मणा !' यंचु 'हा राम !' यनुचु
'हा यत्त! कौसल्य! ' यनुचु नॆलगॆत्ति। या युत्तमांगन यार्तिमै नेड्चॆ; ४१०

कहीं मानव और दानवों में दाम्पत्य-गौरव-श्रियाँ(-वैभव) (संभव) हो सकती हैं ? इतने सब का इस प्रकार दुर्भाषाएँ (अपशब्द) कहना क्या उचित है ? चन्द्र से विलग न होनेवाली चन्द्रिका के समान, भानु से विलग न होने वाली प्रभा के समान, मैं श्रीराम से अलग नहीं हो सकती हूँ। उस नृपाल के दीन, राज्यहीन होने पर भी (वही) मेरा इष्टदैव है। जलधि-कन्यका (लक्ष्मी), शर्वाणी, सरस्वती, पौलोमी (शची), रोहिणी, अरुंधती, स्वाहा (अग्निदेव की पत्नी), सावित्री, रती के समान पातिव्रत्य निष्ठा में मग्न हो, पति रघुराम की आराधना करती हूँ। चाहो तो मुझे मार डालो, चाहो तो शातासि (पैनी धारवाली तलवार) से सिर काटना चाहो तो काट डालो। मैं राम के अतिरिक्त अन्य को नहीं स्वीकार सकती। ऐसी कपटी बातों में मैं नहीं आऊँगी। छोड़ दो अब (इन बातों को)।'' (ऐसा) कहने पर (राक्षस स्त्रियों के) उन बातों के कारण प्रज्वलित हो, अधिक मत्तता के कारण (सीता को) अनेक प्रकार से सताने पर, धूलिधूसरित होकर, झूमकर, मन में विकल हो, नीलाहि (कृष्णसर्प) सम काली वेणी के (बालों के) बिखरने पर, जमीन पर गिरकर, गरम उसाँसें भरती बोली:—"हा लक्ष्मण ! हा राम ! हे सास ! कौसल्या !'' ऐसा ऊँचे स्वर में, आर्ति के कारण वह उत्तम नारी रो उठी ॥ ४१० ॥

त्रिजट स्वप्नमु

नंत ना त्रिजटयु नवनीतनूज । संतापमट्टु चूडजालक तॊलगि
नॆलकॊनि यॊकचोट निद्रिंचि लेचि । कलगनि राक्षसकांतल जूचि
"यॊक कलगंटि ने नो यितुलार! । प्रकटिंचि चॆप्पॆद; बाटिंचि विनुडु;
रामुडेनुगु नॆक्कि रा जूड गंटि; । सौमित्रि भृत्युडै चनुदेर गंटि;
ना महागजमुपै नवनिवल्लभुडु । गोमलि नॆक्किचुकॊनि पोव गंटि;
बट्टाभिषिक्तुडै ब्रह्मादिसुरलु । गट्टिगा गॊल्व राघवुडुंड गंटि;
गमनीयमगु पुष्पकमु मीद नुंडि । ब्रमसि रावणुडुर्विपै गूलगंटि;
गूलिन रावणु ग्रूरासि नॊकतॆ । नीलांबरमुतोड नॆऱि जेरगंटि;
जेरि रावणु तलल् चॆलवेदि कूल्चि । भूरिगार्दभमुल बूनिन रथमु
नंदुग्रमुग वॆंचि याम्यदिक्कुनकु । गॊंदलपड नीड्चिकॊनि पोवगंटि;
गुरुतरोष्ट्रमुनॆक्कि कुंभकर्णुंडु । तिरमेदि दक्षिणदिशकेगगंटि
दनरारु तोरणततुलतो गूड । वनधिलोपल लंक वडि गूलगंटि;
नतिकायु मकराक्षु ला यिंद्रजित्तु । प्रतनविक्रमुलुर्विपै गूलगंटि;
दैलधारल दोगि दानवुलॆल्ल । नेल नूरक पडि निद्रिपगंटि;

त्रिजटा का स्वप्न

तब वह त्रिजटा अवनीतनूजा के संताप को न देख सक, हटकर एक स्थान पर स्थिरता से सो गई, स्वप्न देखकर जाग गई और राक्षसकान्ताओं को देखकर बोली:—"हे नारियो ! मैंने एक स्वप्न देखा है। प्रकटरूप से कहूँगी। ध्यान से सुनो। राम को हाथी पर सवार आते देखा है। सौमित्र को भृत्य (सेवक) बन आते देखा है। उस महागज पर अवनि-वल्लभ (राजा) के कोमली (सीता) को बैठाकर ले जाते देखा है। पट्टाभिषिक्त हो, ब्रह्मादि देवताओं के दृढता से सेवाएँ करते रहने पर, राघव को देखा है। कमनीय पुष्पक (विमान) पर से भ्रमित हो (चकराकर) रावण को उर्वी (पृथ्वी) पर गिरते देखा है। गिरे रावण के पास एकस्त्री को क्रूरासि ले, नीलांबर धारण किए आते देखा है। (निकट) पहुँचकर रावण के सिरों को शोभारहित कर, गिराकर, भूरि (प्रचुर) गार्दभों से जुते रथ पर उग्रता से डालकर, याम्य (दक्षिण) दिशा की ओर व्याकुल बनाते, खींचकर ले जाते हुए देखा है ॥ ४२० ॥

गुरुत्तर-उष्ट्र (बड़े ऊँट) पर चढ़कर, कुंभकर्ण को, स्थिरता खोकर दक्षिण दिशा की ओर जाते देखा है। सुशोभित तोरणसमूहों के साथ, लंका को झट वनधि में डूब गिरते देखा है। अतिकाय, मकराक्ष, इन्द्रजित

गनकपीठंबुपै गारुण्यमूर्ति । यौनर विभीषणुंडुंडंग गंटि;
रावणु मरणंबु रघुरामु जयमु । नेविधंबुन सिद्धमिटमीद निंक;
नट्टुगान मीरलीयवनीतनूज । बट्टुदुष्टभाषल भंजिपवलदु;
तौलगि पौ’ डनवुडु दौलगि निद्रिंचि । रलसि राक्षसभामलंदरुनंत;
ना समयंबुन नवनीतनूज । गासिल्लि भयशोककंपितयगुचु
दन्नु रेण्नेललकु दयमालिचंपु । मन्न रावणु माट लंदंद तलचि ४३०
शोकंबु ग्रम्म नशोकंबु कौम्म । या कौम्म यूतगा नट्टु लेचि निलिचि
लोलत नडवुललो नौंटिबडिन । बालिकैयुनु बोलॆ बलविप दौडगॆ;

राक्षसस्त्रील बाधलकु जानकि पलविंचुट

“नक्कटा ! दैवंब ! यदयत नन्नु । निक्कड जैरबॆट्टि यिट्टुलेचदगुनॆ ?
‘खलदैत्युचे जावगलवु नीवनुचु । नलिनसूति लिखिंचिनाडौ ना
नौसट ?
गाकुन्न मऱि दंडकावनंबुनकु । गाकुत्स्थकुलुडु रागारणंबेमि ?
पैडिमृगंबु नन् भ्रमियिंपनेल ? । वीडिट्टु चैरवट्टि वैतबॆट्टनेल ?

(आदि) पुरातन विक्रमवालों को पृथ्वी पर गिर पड़ते देखा है। तैल-धाराओं में लथपथ हो समस्त दानवों को अकारज पृथ्वी पर सोते देखा है। कनकपीठ पर कारुण्यमूर्तिवाले विभीषण को ढंग से आसीन देखा है। अब आगे रावण का मरण और रघुराम की विजय हर तरह से निश्चित है। अतः तुम लोग इस अवनीतनूजा को पट्टु दुष्ट वाक्यों से धमकाओ मत। हटकर चले जाओ।” ऐसा कहने पर (वहाँ से) हटकर, थककर सभी राक्षस स्त्रियाँ सो गईं। उस समय में अवनीतनूजा पीड़ित हो भय-शोक कंपित होती हुई, ‘दो महीने के बाद निर्दय हो मार डालो’ रावण के इन बातों का जब तब स्मरण कर, ।। ४३० ।।

—शोक के घेर लेने पर, वह नारी अशोक की शाखा को सहारे के लिए पकड़कर, उठकर, जंगलों में अकेली पड़ी हुई चंचल बालिका के समान रोने लगी।

राक्षसस्त्रियों के पीड़ित करने पर जानकी का विलाप करना

“हाय ! हे दैव ! दयाहीनता से मुझे यहाँ बंदी बनाकर, इस प्रकार सताना क्या (तुम्हारे लिए) उचित है ? क्या नलिनसुअन (ब्रह्मा) ने मेरे ललाट पर यह लिख दिया कि ‘तुम खल दैत्य के हाथ मरोगी ?’ नहीं तो फिर काकुत्स्थकुल वाले को दंडकावन में आने की क्या आवश्यकता थी ? स्वर्णमृग

नाकेमि चिंतिप; ना कूर्मिविभुडु । लोकरक्षणलोलकळामानसुडु
राकेंदुवदनुंडु रामचंद्रुंडु । नाकुगा घोर कांतार मध्यमुन
सौमित्रियुनु दानु जालिमै दूलि । येमिगागलवाडॊ? यॆट्लुन्नवाडॊ ?
यॆन्नडाघनशौर्युडिटकॆत्तिवच्चु । निन्नीच दैत्युनिनॆन्नडुवकडचु ? ४४०
दुदि नन्नु नॆन्नडु दोड्कॊनिपोवु ? । नदि यॆन्नटिकि गूडु ? नदियॆट्लु पॊसगु?
नी दुरात्मुनिचेत निट्टु चच्चुकंटॆ । जेदुर्म्रिगुट मेलु; चेदुनु नाकु
वालिन दय निच्चुवारिदु लेरु । हा लक्ष्मणाग्रज! हा धर्मनिरत!
नीकैन येकपत्नीत्वंबु नेडु । चीकाकुपड हत्यचे जत्तुंननुचु
गॆरलिन दन दीर्घकेशपाशमुल । नुरि पॆट्टुकॊन नूहिंचॆ; नंत
नालोन यॆडमकन्नदरॆ ना सतिकि । वालु मीनुलचेत वनजंबु वोलॆ;
वलपुदॆम्मॆरलचे वनलत वोलॆ ।बॊलतिकि मड़ि वामभुजमुनु नदरॆ;
नय्यॆड मदहस्ति हस्तंबु वोलॆ । दॊय्यलि दापलि तॊडयुनुनदरॆ;
घोर राहु विमुक्त कुवलयहितुनि । तीरुन मुखचंद्र दीप्तुलिपॆसगॆ;

मुझे भ्रम में क्यों डालता ? यह (रावण) इस प्रकार बंदी बनाकर, दुख क्यों देता ? (किन्तु) मैं (अपने बारे में) चिन्ता क्यों करूँ ? मेरे प्रिय विभु रामचन्द्र जो लोक-रक्षण-कला में लोल मानसवाला है, राकेन्दु (चन्द्र) वदनवाला है, मेरे लिए घोर-कान्तार-मध्य में सौमित्र के साथ करुणा से विकल होकर पता नहीं, किस स्थिति में है ? कैसा है ? कब वह घनशौर्यवाला यहाँ धावा बोल देगा ? कब इस नीच दैत्य के गर्व को चूर करेगा ? ।। ४४० ।।

अन्त में मुझे कब ले जाएगा ? वह (कार्य) कब संपन्न होगा ? वह कैसे संभव होगा ? इस दुरात्म के हाथ यहाँ मरने की अपेक्षा गरल पी जाना अच्छा है। अधिक दया कर वह गरल भी मुझे देनेवाला यहाँ कोई नहीं है। हे लक्ष्मणाग्रज ! हे धर्मनिरत (स्वभाववाले) ! तुम्हारे एकपत्नीव्रत को छल कर (आतम) हत्या कर लूँगी।" (ऐसा) कहती हुई, अपने बिखरे दीर्घकेशपाश से फाँसी लगाकर मरने का विचार किया। इतने में उस सती का वाम-नेत्र मछलियों के स्पर्श से वनज (कमल) के समान फड़क उठा। उस सुन्दरी की वामभुजा प्रिय मलयनिल के स्पर्श से (हिलनेवाली) वनलता के समान फड़क उठी। उस समय हाथी की सूँड के समान स्त्री (सीता) की बाईं जाँघ भी फड़क उठी। घोर राहु से विमुक्त कुवलयहितू (चन्द्र) के समान मुखचन्द्र की दीप्तियाँ सुशोभित हुईं। इस प्रकार शुभसूचक (लक्षणों) के सम्पन्न होने पर,

शुभसूचकंबु लीचॊप्पुन नॊदव । निभराजगमन यय्यॆड दॆंपु मानि ४५०
जनकुनि श्रीरामचंद्रुनि नतनि । यनुजुल नत्तल नट दलंचुचुनु
दनुजुलचेति बाधल जाल नलसि । दन दिक्कु लेमिकि दरळाक्षि वगव
"सुदति चित्तमु लोनि शोकंबु मान्प । निदि नाकु दरि" यनि यिच्च
जिंतिंचि

हनुम राघवुल वृत्तांतमु सीतकॆऱिगिंचुट

रविकुलक्रममुनु रामु पौरुषमु । विवध भंगुल वेड्क विनुति सेयुचुनु
म्रानि मीदनॆ युंडि मारुतात्मजुडु । वानर भाष गीर्वाण भाषयुनु
नी नाति यॆऱुगुनो यॆऱुगदो" यनुचु । मानवभाषल मगुवकिट्लनियॆ;
"नो महीनंदन ! यो पुण्यसाध्वि ! । यीमॆयि शोकिंपनेटिकि नीकु ?
मगुव ! नी विभुडु सेममुननुन्नाडु; । जगदेकपति रामजनपालकुंडु
वनधि बंधिंचि रावणु संहरिंचि । निनु दोड्कॊनिपोवु; निक्कमीपलुकु;
सहजन्मुडैन लक्ष्मणुडु तन् गॊलुव । महनीयमहिमतो माल्यवंतमुन४६०
नुन्नाडु कपिसेनलॊंगि ननेकमुलु । तन्नर्थि गॊल्वगा दशरथात्मजुडु"

इभराज-गमना (गजगामिनी) (सीता) उस समय दुःसाहस को तजकर, ।। ४५० ।।

(अपने) जनक का, श्रीरामचन्द्र का, उसके अनुजों का, सासों का वहाँ स्मरण करते हुए, दनुजों के हाथ (दिए गए) कष्टों से बहुत क्लान्त होकर, अपने अनाथपन के कारण तरलाक्षी (सीता) के दुखी होने पर, (हनुमान ने) मन में यह सोचकर कि "(इस) नारी के चित्त के शोक को शान्त करने के लिए यह मेरे लिए (अच्छा) अवसर है।"

हनुमान का राघवों का वृत्तान्त सीता को बताना

रविकुल-क्रम (परंपरा) (तथा) राम के पौरुष का विविध प्रकार से उत्साह से नुति करते हुए, वृक्ष की शाखा पर रहकर मारुतात्मज यह सोच कि 'वानर-भाषा और गीर्वाण-भाषा को यह नारी जानती है या नहीं', मानवभाषा में नारी से यों बोला:—"हे महीनन्दने ! ओ पुण्यसाध्वी । तुम्हें इस प्रकार दुखी होने की क्या आवश्यकता है ? हे नारी ! तुम्हारा प्रभु सकुशल है। जगदेकपति, राजाराम, वनधि (समुद्र) को बाँधकर रावण का संहार कर, तुम्हें ले जाएगा। यह बात सत्य है। अनुजन्म लक्ष्मण की सेवाएँ करते रहने पर, महनीयमहिमा के साथ माल्यवंत पर, ।। ४६० ।।

अनवुडु "निदियोक्कयशरीर वाणि"। यनि शिशुपावृक्षमवनिज सूड
ब्रन्ननि नीलाभ्रपटलंबुलोनि । क्रोन्नेल गति मेरुगुनु बोले जूड
सन्नमै या म्रानि शाखल नडुम । नुन्न मर्कटरूपमोय्यन गांचि
"कललोन प्लवगंबु गंटि ने" ननुचु।गलगि "याकल कीडु काकुत्स्थजुलकु
गाकुंडुगा !" कंचु घनुल देवतल । बाकशासन बृहस्पति वीतिहोत्र
लोकेश्वरुलनु मेल्कोनि भक्तितोड । नाकांत गोनियाडि यट देलिवोंदि
"कंटकासुरकोटि गारिंचुकतन । गंटिकि निदुर ने गान रेबगलु;
कान निद्दुरलेनि कल येंदु गलदु ?। पूनि यिंकोकसारि पोलंग जूतु"
ननि तन वदनाब्जमल्लन नेत्ति । हनुमंतु मरियुनु नंदंद चूचि ४७०
"येंदुंडि वच्चेनो यी म्रानिमीदि ? । केंदुनु गडुजित्रमिदि योक्क कोति!
चेलुवोप्प नरुडु भाषिंचुचंदमुन । नलिनाप्तकुलुडु ना नाथु सेमंबु
नलवड देलुपुचु नमृतंबु लोलुक ; बलुमारु ब्रियमुन बलुकुचुन्नदियु;
वानर जाति की वार्तलु गलवे ? । नानाविधंबुल नाकु जिंतिप
गडगि राक्षसमाय गाबोलु" ननुचु । बडति यूरकयुंडे ब्रतिभाषलुडिगि;

—अनेक (अगणित) कपिसेनाओं के इच्छा से सेवाएँ करते रहने पर दशरथात्मज (राम) स्थित हैं।" ऐसा कहने पर 'यह कोई अशरीर वाणी है' ऐसा समझ अवनिजा ने शिंशुपा वृक्ष को देखा। उस वृक्ष की शाखाओं के बीच स्थित मर्कटरूप को देखा जो मनोज्ञ नीलाभ्र-पटल में नूतन चन्द्ररेखा के समान (तथा) चपला के समान (शोभायमान) था। "स्वप्न में प्लवग (वानर) को मैंने देखा है" ऐसा मान व्याकुल हो, यह सोचकर कि इस स्वप्न का बुरा फल काकुत्स्थकुलजों को प्राप्त न हो, फिर जागृत हो महान् देवता पाकशासन (इन्द्र), बृहस्पति, वीतिहोत्र (अग्नि) (आदि) लोकेश्वरों की भक्ति से प्रशंसा कर, वह कान्ता होश में आकर, यह सोच कि "कंटक (सम) असुरकोटि के सताते रहने पर, रात दिन आँखें लगती ही नहीं। अतः बिना निद्रा के स्वप्न कहाँ का ? सप्रयत्न एक बार और ध्यान से देखूँगी।" अपने वदनाब्ज (मुखकमल) को धीरे से उठाकर, फिर से वहाँ हनुमान को देखकर, ॥ ४७० ॥

—"यह एक वानर इस वृक्ष पर कहाँ से आया ? यह बड़ा विचित्र है। शोभा से मानव के बोलने के समान, नलिनाप्तकुल (सूर्यवंश) वाले मेरे नाथ के कुशल के बारे में बार-बार प्रियवचन बोल रहा है, मानों (कानों में) अमृत उँडेल रहा है। कहीं वानर जाति का ऐसा समाचार है ? अनेक प्रकार से सोचने पर मुझे लग रहा है कि यह राक्षस-माया है।" ऐसा सोचते हुए वह नारी प्रत्युत्तर दिए बिना चुप रही।

अंगुळीयक प्रदानमु

यनिलनंदनुडंत नवनीतनूज । मनमुन दन्नु नम्ममि जाल नॆऱिगि
यातरु वट्टु डिग्गि यतिभक्तियुक्ति । नातिकि दंडप्रणाममुल् सेसि
करमुलु मोड्चि "यॊ कल्याणि! नम्मु; । परिकिंपु, येनु नी पति कूर्चु
बंट;
जनपति नीवु विश्वासंबु वुट्टु । ननि यिच्चि पुत्तॆंचॆ नंगुळीयकमु"
ननि चूपि म्रॊक्किन नवनीतनूज । हनुमंतु गनुगॊनि यतनिकिट्लनियॆ;
४८०
"नडरॆंडु दनुजमायल ननुगलमु । नुडुकुलवडि वेगुचुंडुदु गान
ननघात्म! रघुरामु नंगुळीयकमु । गनियु विश्वासंबु गलुगदु नाकु;
नीवॆव्वडवु? मऱि नीकु बेरेमि? । भूवरुनकु नीकु बॊंदॆट्टु गलिगॆ?
निनकुलाधिपु रूपमॆट्टिदि? यतनि । यनुजुंडु सौमित्रि यतडॆट्टिवाडु?
गाकुत्स्थुडिप्पुडॆक्कड नुन्नवाडु? । नीकु नेमनि चॆप्पि निन्नु बुत्तॆंचॆ?
ने चंदमुन वच्चितीवार्धि दाटि? । ना चित्तमूऱड नातोड जॆप्पु"
मनि यॊप्प नडिगिन नवनिनंदनकु । हनुमंतुडंत मुन्नट जॆप्पदॊडगॆ; ४८७

अंगूठी प्रदान करना

तब अनिलनन्दन यह खूब जानकर कि अवनीतनूजा मन से मुझपर विश्वास नहीं कर रही है, उस तरु से उतरकर, अतिभक्ति से नारी को प्रणामकर, हाथ जोड़कर बोला—"हे कल्याणी! (मुझ पर) भरोसा करो। देखो, मैं तुम्हारे पति का प्रिय सेवक हूँ। राजा (राम) ने यह सोचकर कि तुम्हें विश्वास हो, यह अंगूठी देकर भेजा है।" (ऐसा) कह, (अंगूठी) दिखाकर प्रणाम करने पर अवनीतनूजा ने हनुमान को देखकर (यों) कहा:—॥ ४८० ॥

—"अतिशय दनुज-मायाओं के कारण निरन्तर ताप से संतप्त होती रहती हूँ अतः हे अनघात्मा! रघुराम की अंगूठी देखकर भी मुझे विश्वास नहीं होता। तुम कौन हो? फिर तुम्हारा नाम क्या है? भूवर (राजाराम) तथा तुममें मैत्री कैसे हुई? इनकुलाधिप का रूप कैसा है? उसका अनुज सौमित्री कैसा (किस प्रकार का) है? काकुत्स्थ (राम) अब कहाँ है? तुमसे क्या कहकर तुम्हें पठाया है? इस वारिधि को पार कर कैसे आये हो? यह सब ऐसा बताओ कि मेरे चित्त को सान्त्वना मिले।" ऐसा शोभा से पूछने पर अवनीनन्दना को हनुमान सब कुछ वहाँ (यों) बताने लगा:—

हनुमंतुडु सीतकु दन वृत्तांतमु दॆल्पुट

"वनजाक्षि ! वायुदेवर वरंबडिगि । घनुडु केसरियनु कपिकुलाग्रणिकि
ननु बुत्रुगा नंजनादेवि गनियॆ; । हनुमंतुडनु पेर नमरिनवाड;
वसुध सुग्रीवुडन्वानरेंद्रुनकु । नसमानमति मंत्रिनै मॆलंगुदुनु; ४९०
आतनि राज्यंबु नातनि पत्नि । नातनि यग्रजुंडगु वालि गॊन्न
मदमेदि नलुगुरु मंत्रुलु दानु । नदि मॊदल् ऋश्यमूकाद्रिपै नुंड
बटुसत्त्वमुन बॆचि पंक्तिकंधरुडु । कुटिलुडै निन्नॆत्तिकॊनिपोबुचुंड
नॊंदविन याक्रोशमूरक विनुचु । सुदति ! निन् दललॆत्ति चुचुचुंडितिमि;
नॆलत! यप्पुडु मम्मु नीवुनु जूचि । तॊलगक नी मेनि तॊडवुलु वुच्चि
नी वस्त्रमुन गट्टि नेल वैचुटयु । ना वेळ सुग्रीवुडवि यॆत्ति दाचॆ;
नच्चुगा रघुरामुडट निन्नु वॆदुक । वच्चि पंपासरोवरतीर भूमि
दानु दम्मुडु नुन्न तरि जूचियर्क । सूनुंडु वारल जूचि रम्मनिन
ने नेगि यंतयु नॆरिगि येतॆंचि । भानुजु रामभूपालु गान्पिप
नन्नरनाथुकर्कनंदनुडु । कन्न सॊम्मुलु सूपि कडुभक्ति म्रॊक्क ५००

हनुमान का सीता को अपना वृत्तान्त बताना

"हे वनजाक्षी ! वायुदेव से वर प्राप्त कर अंजनादेवी ने केसरी नामक महान् तथा कपिकुल के अग्रणी के मुझे पुत्र के रूप में जन्म दिया । हनुमान नाम से सुशोभित हूँ । वसुधा पर सुग्रीव नामक वानरेन्द्र का असमान-रूप से मंत्री हो रहता हूँ ।। ४९० ।।

उसके (सुग्रीव के) राज्य तथा उसकी पत्नी को उसके अग्रज बाली के ग्रहण कर लेने पर, मद खोकर, तब से लेकर चार मंत्रियों के साथ वह (सुग्रीव) ऋश्यमूक-पर्वत पर रहने लगा । पटुसत्त्व से हुँकार कर पंक्ति-कंधर (रावण) के कुटिल भाव से तुम्हें ले जाते समय, उत्पन्न आक्रोश को यों ही सुनते हुए हे वनिते ! सिर उठाकर तुम्हें देख रहे थे । हे सुन्दरी ! तब तुम भी हमें देखकर, हटे बिना, अपने शरीर के आभूषण निकालकर, अपने वस्त्र में बाँधकर ज़मीन पर डाल दिया था । उस समय सुग्रीव ने उन्हें उठाकर छिपा दिया था । उधर रघुराम के तुम्हें ढूँढते आकर पंपासरोवर-तीर भूमि में अनुज के साथ रहते समय, अर्क-सुअन (सुग्रीव) ने (उन्हें) देखकर, उन्हें देख आने के लिए कहने पर, मैंने जाकर सब कुछ जानकर, (लौट) आकर भानुज (सुग्रीव) और रामभूपाल की भेंट करायी । (तब) उस नरनाथ (राम) को अर्कनन्दन ने अपने देखे आभूषण दिखाकर, अतिभक्ति से प्रणाम किया । ।। ५०० ।।

ना तोंडवुल जूचि हर्षिंचि रामु । डातनि निजशत्रुडगु वालि जंपि
युपकारशीलुडै योप्पु सुग्रीवु । गपिराज्यपदमुन गरमर्थि निलिपें;
नतिभक्ति सुग्रीवुडंत राघवुनि । बतियुगा निजभृत्यभावंबु मोचि
यक्षीण बलधन्युलैन वानरुल । लक्षयु रेंडेसि लक्षलु गूर्चि
"गर्वुलौ दैत्युल कटकंबुलरसि । युर्वीतनूभव युन्नचोटॆऱिगि
मसलक नेललोन मगुडिरंड" निन । नसमुन गपुलेगिरन्नि दिक्कुलकु;
बटुशक्ति दक्षिणभागंबु वेंदक । निटु नंगदुडु मोंदलेमु गोंदऱमु
चनुदेंचि पेक्कुदेशंबुलु वेंदकि । निनु गान नेरक निव्वेंऱ गंदि
शोकिंप नरुणुनि सुतुडु संपाति । माकु लंकापुरिमार्गंबु सूपें;
जूपुटयुनु निन्नु जूड नर्थिंचि । येपुन बऱतेंचि ये नब्धि दाटि ५१०
मऱि नेडु सूर्यास्तमयमुन नितरु । लेऱुगकुंडग वच्चि यी लंक सोच्चि
विलसिल्लु ना महावेषंबु दाचि । सोलवक निन्नेल्ल चोटुल वेंदकि
येंदुनु बोंडगान किटु लेगुदेंचि । यिदु निन् दर्शिंचि येर्पड जूचि
रविकुलाधिपुडैन रामुनि देवि । यवुनोको कादोको यनि विचारिंचि
सृष्टीशुचे विन्न चिह्नंबुलेल्ल । दृष्टिंचि पिदप संदेहंबु वासि

उन आभूषणों को देखकर राम हर्षित हुआ और उसके (सुग्रीव के) निज शत्रु बालि का संहारकर, उपकार-शीलवाले होते शोभा देनेवाले सुग्रीव को अति इच्छा (प्रेम) से कपिराज्य पद पर अभिषिक्त किया। तब सुग्रीव अतिभक्ति से राघव को पति (स्वामी) मानकर, सच्चे भृत्य सेवक भाव को वहन कर रहा है। अक्षीण बल के धनी वानरों को लाख और दो लाख एकत्रित कर "गर्वीले दैत्यों के कटकों (सेना) का पता लगाकर, उर्वीतनूभवा का पता लगाकर, विलंब न कर, एक महीने के भीतर लौट आओ" कहने पर, दर्प से कपि सभी दिशाओं में गए। पटु शक्ति से दक्षिण भाग में अन्वेषण करने के लिए, अंगद आदि हम कुछ आकर, अनेक देशों में ढूँढकर, तुम्हें न पाकर, आश्चर्यचकित हो, दुखी होने लगे। (तब) अरुण के पुत्र संपाति ने हमें लंकापुरी का मार्ग बताया। बताने पर, तुम्हें देखना चाहकर, औन्नत्य से आकर मैंने अब्धि (समुद्र) पार किया, ॥ ५१० ॥

—फिर आज सूर्यास्तमय (के समय) इस लंका में प्रवेश किया जिसे अन्य कोई जान न सके। विलसित अपने महावेष को छिपाकर, न थककर, तुम्हारे लिए सभी स्थानों में ढूँढकर, कहीं न देखकर, यहाँ आकर, तुम्हारे दर्शनकर, समुचित रूप से देखकर, यह विचार किया कि यह रविकुलाधिप राम की देवी है या नहीं। सृष्टीश (राम) के द्वारा सुने समस्त चिह्नों

वलनेदि यिप्पुडु वच्चिच रावणुडु । तलकक निनु बल्कुतऱि नुन्नवाड;
घनशक्ति वानितो गय्यंबु सेसि । यनि वानि जंपॆद ननि विचारिंचि
पूनि निन् दर्शिंचि पॊंदुगा नीकु । नी नाथु सेमंबु निजमुगा जॆप्पि
दनुजु बिम्मट जंप दलपोसि कानि । वनित ! ना प्राणमुल् वंचिंचि कादु"
अनि चॆप्पि रघुरामु नलवु ब्रायंबु । गनुगव चॆलुवंबु गळमु सोयगमु ५२०
नगुमोमु कळयुनु नखमुल तीरु । नॆगुबुजंबुल बागु निऱि कौनु लागु
वॆडद रॊम्मु बॆडंगु वीनुल रंगु । नडल यंदंबुनु नाभिचंदंबु
घन जघनमु पॆंपु गरमुल कॆंपु । दनुवुलक्षणमुलु दप्पक चॆप्पि
या शौर्य मा धैर्य मा ब्रह्मचर्य । मा शांति या दांति या महाक्षांति
या शक्ति या युक्ति या पितृभक्ति । या शील मा लीललन्नियु जॆप्पि
रूपिंचि लक्ष्मणु रूपॆल्ल जॆप्पि । या पुण्यु डंगुळीयकमप्पुडिच्चॆ;
निच्चिन गैकॊनि "यिपुडु प्राणमुलु । वच्चॆंगा" यनुचु नॆव्वग नूऱडिल्लि
रामु जूचिनकंटॆ राम रागिल्लि । सेम मेर्पड भद्रसिंहासनमुन
ब्रेमतो गूर्चुंडबॆट्टिनकरणि । ना मणिमुद्रिक नक्कुन जेर्चि

को देखकर, बाद में संदेहों को दूरकर, औचित्य को तज अब आकर रावण के निर्भीकता से तुम्हारे साथ बात करते समय यहीं था। यह सोचा था कि घनशक्ति से उससे युद्धकर, युद्ध में उसे मार डालूँगा। लगकर तुम्हारे दर्शनकर, ढंग से तुम्हें अपने नाथ का कुशल बताकर, तब दनुज को मार डालने का सोचा था किन्तु हे नारी ! अपने प्राणों पर आशा रखकर नहीं।" ऐसा कहकर रघुराम के बल, वय, नेत्रद्वय का सौंदर्य, कंठ की सुन्दरता, ॥ ५२० ॥

—मृदुहास्य से युक्त मुख की कला, नाखूनों का ढंग, उन्नत स्कन्धों की सुघड़ता, सुन्दर कमर की आकृति, विशाल वक्ष की शोभा, कानों का वर्ण, चाल की सुन्दरता, नाभि का आकार, घन जघन का औन्नत्य, करों की लालिमा (आदि) तनु लक्षणों को अवश्य बताकर, वह शौर्य, वह धैर्य, वह ब्रह्मचर्य, वह शान्ति, वह दान्ति, वह महाक्षान्ति (क्षमा), वह शक्ति, वह युक्ति, वह पितृभक्ति, वह शील, वह लीलाएँ सब बताकर, लक्ष्मण के समस्त रूप को रूपायित कर बताकर, उस पुण्यशील वाले ने तब अंगूठी दी। देने पर लेकर 'अब प्राण (ठिकाने) आए' (यह) कहते अधिक दुःख से सान्त्वना प्राप्तकर, रामा साक्षात् राम को देखने की अपेक्षा अधिक प्रसन्न हुई। उस मणिमुद्रिका को वक्ष से ऐसे लगाया मानों उसे ढंग से भद्रसिंहासन पर प्रेम से बिठाया हो। नेत्रद्वय से हर्ष के अश्रुकण ढुलकने लगे मानो अनुरक्ति (प्रेम) से अर्घ्यपाद्य दे रही हो ॥ ५३० ॥

यनुरक्ति नर्घ्यपाद्यमुलिच्चिनट्लु । कनुगव हर्षाश्रुकणमुलु दोॅरुग ५३०
धूपदीपम्मुलु दोड्तोड नोॅसगि । येपार साष्टांगमेॅऱगिनपगिदि
बुलकिंचि तिलकिंचि पोॅलति मूर्छिल्लि । तेॅलिसि या हनुमंतु देॅस जूचि पलिकेॅ;

“गपिवंशवर्य ! राघवकार्यधुर्य !। युपकारनिरत ! लोकोन्नतचरित!
पवमानसुत ! नाकु ब्राणदानंबु ।दविलि चेसिति; नीकु दग जेयलेनु;
गाकुत्स्थतिलकुनि करुण नीविक । नाकल्पमुगनुंडु” मनुचु दीविंप
नलघु विक्रमशीलुडगु वायुसुतुडु । चेॅलुव जानकि जूचि चेतुलु मोॅगिचि
“हरुनकुनैन निंद्रादुलकैन । बरमेष्ठिकैननु बडय जोॅप्पडनि
नी कृप वडसिति; निनु जूडगंटि; । नाकिंत चालदे नलिनायताक्षि!”
यनिन सीतादेवि यनियेॅ वेंडियुनु । मनुजेशु सेमंबु मऱदि सेमंबु
मनमाऱ नड्गुचु ममत रेॅट्टिंप; । “ननघात्म ! रघुरामुडसमानबलुडु ५४०

ननु नेॅडबासि युन्नाडे धैर्यमुन ? । ननुजुंडु दानुनु नप्पटप्पटिकि
दय नन्नु दलतुरे ? दंडेॅत्ति यिटकु । रयमुन वत्तुरे रणकांक्ष ?” ननिन

—साथ-साथ धूपदीप समर्पित कर, शोभा से साष्टांग (प्रणाम) करने के समान, देखकर, पुलकित होकर, नारी (सीता) मूर्च्छित हुई। फिर होश में आकर हनुमान की ओर देखकर बोली:—“हे कपिवंश-श्रेष्ठ ! हे राघव-कार्य-धुरंधर ! हे उपकार निरत ! हे लोकोन्नत चरित (वाले) ! हे पवमान सुत ! मुझे आसक्ति से प्राणदान किया है। तुम्हारा (किए का) न्याय नहीं कर सकती। काकुत्स्थ-कुल-तिलक (राम) की करुणा से अब तुम आकल्प (चिरकाल) रहो।” ऐसा कह आसीसने पर अलघु विक्रमशील वाले वायुसुत ने रमणी सीता को देखकर हाथ जोड़ कहा:—“हर (शिव), इंद्रादियों, (तथा) परमेष्टि (ब्रह्मा) के लिए असाध्य तुम्हारी कृपा प्राप्त की है तुम्हें देख सका हूँ। हे नलिनायताक्षी ! क्या मेरे लिए यही पर्याप्त नहीं है ?” (ऐसा) कहने पर सीतादेवी ने मनुजेश (राम) का कुशल, देवर का कुशल, जी भर कर, ममता के द्विगुणित होने पर, पूछते हुए कहा—“हे अनघात्म! असमान बल वाला रघुराम, ॥ ५४० ॥

—मुझसे बिछुड़कर क्या धीरज के साथ रह रहा है ? अनुज और स्वयं क्या कभी-कभी दया से मेरा स्मरण करते रहते हैं ? रणकाँक्षा से शीघ्र यहाँ धावा बोलने के लिए आएँगे ?” (ऐसा) कहने पर (हनुमान ने कहा):—

हनुम सीतकु श्रीरामलक्ष्मणुल क्षेममु दॆल्पुट

“विनवम्म! नी प्राणविभुनि सेमंबु; ।निनु बासिनदि मॊदल् नित्यवेदनल
नेलपै बवळिंचु; निद्र यॆऱुंग; । डोलि मांसाहारमॊल्लडॆन्नडुनु;
वासिमै दंडकावनमुलो निन्नु । मोसपोवुट यॆंचु; मोमर वांचु
निट्टूर्पु निगुडिंचु; निंचु गन्नीरु; । नॆट्टन मूर्छिल्लु नेलपै द्रॆळ्ळु;
दॆलिविमै लेचु; नल्दिक्कुलु सूचु;। गलगु; निव्वॆऱगंदु; गळवळंबंदु
‘हा सीत! हा सीत!’ यनि प्रलापिंचु; । ना सुमित्रापुत्रुडदि चूचि वगचु;
गावुन मीरलिक्कड नुंडु वार्त । वेवेग ना चेत विन्नंत गदलि
नाकंटॆ घनुलैन नगचराधिपुल । भीकराकृतुल नभेद्य विक्रमुल५५०
नगशृंगतरु संघ नखमुखायुधुल । नगणितबलुल देवांशसंभवुल
सुग्रीव नल वालिसुतुलादियैन । युग्रवीरुलगूडि युदधि लंघिंचि
यॆल्लभंगुल वच्चु निति! नी विभुडु;। तल्लि! निन्गॊनि ययोध्यापुरि केगु;
रामुचे रणमुन रावणुडील्गु; । नी मदि कॊर्कुलु नीकु सिद्धिंचु;

हनुमान का सीता को श्रीराम-लक्ष्मण का कुशल बताना

—“हे माता! अपने प्राण विभु का कुशल (-समाचार) सुनो। जब से तुम्हारा विछोह हो गया था, (तब से) नित्य (सतत) वेदानाओं के कारण धरती पर सोता है, निद्रा को तो जानता ही नहीं। कभी माँसाहार नहीं चाहता। दंडकवन में तुम्हारे वंचित होने की बात सोचता है। मुँह थोड़ा झुकाए रहता है। उसाँस छोड़ता है, आँसू भर लेता है, अचानक मूर्च्छित हो जाता है, धरती पर गिर पड़ता है, होश में आकर उठता है, चारों दिशाओं में देखता है, व्यथित होता है, चकित हो जाता है, व्याकुल होता है। ‘हा सीते! हा सीते!’ कहकर प्रलाप करता है। उसे देखकर वह सुमित्रापुत्र दुखी होता है। अत: आपके यहाँ रहने का समाचार, शीघ्र मेरे द्वारा सुनते ही वे निकल पड़ेंगे। मुझसे भी श्रेष्ठ नगचर (वानर)-अधिप, जो भीकर आकृतिवाले हैं, अभेद्य विक्रमवाले हैं, ।। ५५० ।।

—नग, श्रृंग, तरुसंघ, नख, मुख (दाँत) आदि के आयुधवाले हैं, अगणित बलवाले हैं, देवांश संभव हैं, (तथा) सुग्रीव, नल, बालिसुत आदि उग्रवीरों के साथ उदधि (समुद्र) को लाँघकर, हे सुन्दरी! हर प्रकार से तुम्हारा विभु आएगा। हे माता! तुम्हें साथ लेकर अयोध्यापुरी जाएगा। राम के हाथ रण में रावण मरेगा। तुम्हारे मन की इच्छाएँ पूरी होंगी

नैन नीतडवेल यखिलैकमात ! । येनु ना वीपुन निडिकॊनि प्रीति
यॊदविन कडकतो नुदधि लंघिंचि । युदयवेळकु बोद्दु नुर्वीशुकडकु;
नी पनि किट्टु संशयिंचितिवेनि । भूपक्षि मृगरूपमुल बूनि यॆट्टि
रूपुननैननु रूढि निन् गॊनुचु । भूपालु पालिकि बोयॆद वेग;
विच्चेयु'' मनवुडु वॆलदि वायुजुनि । सच्चरित्रमुनकु संतोषमंदि
"यो समीरात्मज ! योपुदु वीवु; । नी सत्त्वमट्टिद, निजमु चिंतिप; ५६०
ननघात्म ! ये बॆंड्लियैनदि मॊदलु । जनलोकविभु रामचंद्रुनि गांचि
पॊलुपेदि यॆन्नडु बुरुषांतरंबु । गलोननैननु गदिसि यॆरुंग;
नी नीचमति नन्नु निट दॆच्चु चोट । वीनि यंट्टुटकेनु वेगुचुंड्डुदुनु;
वॆऱवक बलिमिमै वीडंटॆगाक । मऱि यन्यपुरुषुलमदि नंटनेनु;
ना नाथुनकु नीवु नम्मिन बंट; । वैननु निनु नॆक्कि यरुदॆंचुटॊल्ल;
दनदेवि म्रुच्चिलि दैत्युंडु सनिन । निनकुलुंडारीतिने तॆच्चॆनंदु;
रिदि विचारंबुगादिनकुलेश्वरुडु । कॊंदलेक मुनु चित्रकूटंबुनंदु
नॊकनाडु तन तॊड नॊऱगि निद्रिप । ग्रकचोग्रनखमॊक्क काकंबु सेरि

(बर आएँगी)। फिर भी हे अखिलैकमाता ! यह विलंब क्यों ? मैं अपनी पीठ पर प्रीति से बिठाकर, अधिक साहस से उदधि लाँघकर, उदयवेला (प्रातःकाल) तक उर्वीश के पास (ले) जाऊँगा। इस कार्य के लिए संकोच करोगी तो भूपक्षी-मृग रूप को धारणकर, किसी भी रूप से, निश्चय ही तुम्हें लेकर तुरन्त भूपाल के पास जाऊँगा। आओ।" ऐसा कहने पर वायुज के सच्चरित्र से नारी (सीता) प्रसन्न हो बोली— "हे समीरात्मज ! तुम (तदर्थ) सामर्थ्य रखते हो। सचमुच विचार करने पर तुम्हारा सत्त्व ऐसा ही है। ॥ ५६० ॥

हे अनघात्म ! विवाह होने से लेकर मैंने जनलोकविभु रामचन्द्र के अतिरिक्त शोभा को खोकर, अन्य पुरुष के स्वप्न में भी नियराना नहीं जानती। यह नीचमति वाले (रावण) के मुझे यहाँ लाते समय, इसके स्पर्श से मन में व्यथित होती रहती हूं। निर्भीकता से, बलात्कार से इसने मेरा स्पर्श किया हो किन्तु मैं किसी अन्यपुरुष का स्पर्श नहीं करती। तुम मेरे नाथ के विश्वस्त सेवक हो, फिर भी तुम्हारी (पीठ पर) चढ़कर आना नहीं चाहती। (लोग) कहेंगे कि अपनी देवी को दैत्य के चुरा ले जाने पर, इनकुलज भी उसी प्रकार लाया। यह उचित नहीं है। पहले एक दिन चित्रकूट में इनकुलेश्वर मेरी जाँघ पर सिर रख सो रहे थे। क्रकच-उग्र नखवाला एक काक (कौआ) के आकर

चंचुपुटंबुन जनुगव नडुम । बौंचि चिंचिन रक्तपूरंबु दौरुग
गाकुत्स्थतिलकुडौक्कट निद्र दैलिसि ।काकंबुपै निषीकमु ब्रयोगिंप ५७०
नदियु ब्रह्मास्त्रमै यखिल लोकैक । विदितोग्रशक्तिमै वेनुवेंट नंट
ना काकि येकाकियै येंदु दिरिगि । कैकौनि तनु 'गावु कावु' मटंचु
मरलि क्रम्मऱ दन मऱुगु सौच्चुटयु । शरणागतत्राणचरितुंडु गान
दानि नेत्रमु निजास्त्रमुन किंप्पिंचे । ना निमित्तंबुगा नलिनाप्तकुलुडु;

सीता प्रतिसंदेशमु

नाटि नापै प्रेम नाटि यस्त्रंबु । नेटिकि मऱचेनो ? यदि हेच्चरिंपु;
पदिवेलभंगुल बाधलकोर्चि ।पदिनेलल् गडपिति बति बासि येनु;
नायुन्कि सूचिति; ना पाटु गंटि; । वेयुपायंबुल निंदोर्वरादु;
उडुगनि वगलतो नौक्कौक्क दिनमु । गडचुट यौक वार्धि गडचुट नाकु;
नरनाथु मदिलोन ना मीद जाल । गरुण वुट्टेडुनट्लुगा विन्नविंपु;
मा तंड्रि जनकुंडु महिमीद दन्नु । नेतॆऱंगुन बौकडितडनि नम्मि ५८०

चंचुपुट से स्तनमध्य में चीरने पर, रक्तपूर (प्रवाह) प्रवाहित होने लगा। काकुत्स्थ-तिलक (राम) एकदम निद्रा से जगाकर, काक पर निषीक (बाण) का प्रयोग करने पर, ।। ५७० ।।

—वह (बाण) भी ब्रह्मास्त्र बन, अखिल-लोकैक-विदित-उग्रशक्ति से पीछा करने पर, वह कौआ एकाकी होकर, 'काव्-काव्'[1] कहते संसार भर में घूमकर, फिर वापिस अपनी ही शरण में आने पर, शरणागत की रक्षा करने के स्वभाववाले होने पर, नलिनाप्तकुल वाले ने मेरे लिए, उस (कौए) का नेत्र निज-अस्त्र को दिलाया।

सीता का प्रतिसन्देश

—उस समय के मुझपर प्रेम, उस दिन के अस्त्र को क्या आज भूल गया ? इसका स्मरण दिलाओ। पति से बिछुड़कर, दस हज़ार (अनेक) प्रकार से कष्ट को सहते मैंने दस महीने बिताए हैं। मेरी स्थिति को (तुमने) देखा है, मेरी विपत्ति को देखा है। किसी भी उपाय से अब यह (आगे) सहा नहीं जा सकता। कम न होनेवाले दुखों से एक-एक दिन बिताना मेरे लिए एक-एक वारिधि पार करने के समान है। ऐसा निवेदन करो कि नरनाथ के मन में मेरे प्रति अधिक करुणा उत्पन्न हो। उनसे कहो कि मैंने यों कहा है कि हमारे पिता जनक ने, 'इस महि पर किसी भी प्रकार से मुझे नहीं छोड़ेगा', ऐसा विश्वासकर, ।। ५८० ।।

---

[1] 'कावु' का अर्थ तेलुगु में 'बचाओ' होता है।

तनकु निच्चिन दॆच्चि तगदु नन्विडुव। ननि यॆनु बलिकितिननि पल्कुमीवु;
विलसिल्लु कल्याणवेदिपै नुंडि । वलनॊप्प नग्निदेवर साक्षिगाग
गरमॊप्प नन्नॆल्लकालंबु विडुव । करसि रक्षिंचॆदननि तॆच्चि नन्नु
नरयकुपेक्षिंचि यनदगा जेसॆ; । बरिकिंपुमनि विन्नपमु सेयु मनघ!
तनयिंति नॊकनिचे दा गोलुपोयि । मन निच्च सेयुट मगपाडि गादु;
अट्टुगान दनकिदि यपकीर्ति यनुचु । निट्टु विन्नविंचिति; निंतिये कानि
कलगक ना मनोगतुलु ब्राणंबु । लॊलसि तन्नॆडबायकुन्नवि यनुमु;
चतुरात्म ! मरि नीवु सौमित्रि जेरि ।यतनितो नॊक्क माटाडुमु तॆलिय;
ननु दल्लिगा जूचु; ना पाट्टु चूड । दन कॊन्नि भंगुल दगदनि चॆप्पु;
वाविरि दंडकावनमुलो बरम ।पावनुंडगु तन्नु बलिकिन फलमु ५९०
कुडिचितिननि चॆप्पु कॊदुवलेकुंड; । दडयकु मनि तॆल्पु; दय वुट्ट जॆप्पु;
मवसरोचितमुगा नंगदुतोड । रविजुतो दक्कु मर्कटकोटितोड
विनयमुल् वलिकि यॆव्विधिनैन वारि । निनकुलुलनु वेग निटकु दोड्तॆम्मु;
मिक्किलि तॆगुवमै मी राक वेचि । यॊक्कमासमु चूतु; नुंड ले नवल;

—मुझे सौंपा था। मुझे (मायके से) लाकर, मुझे इस प्रकार छोड़ देना उचित नहीं है। हे अनघ ! (उनसे) निवेदन करो कि विलसित कल्याण वेदी पर शोभा से अग्निदेव को साक्षी बनाकर, यह कह मुझे लाकर कि अधिक शोभा से तुम्हें कभी न छोड़कर, अच्छी तरह रक्षा करूँगा, मेरी खबर न लेकर, उपेक्षा कर, मुझे अनाथ बना दिया है, इसपर ध्यान दें। अपनी स्त्री को किसी दूसरे के (हाथ) खोकर, जीते रहने की इच्छा करना पुरुष का लक्षण नहीं है। ऐसा (लोकरीति) होने से आपके लिए यह अपकीर्ति (का विषय) है, इसीलिए ऐसा निवेदन किया है। उनसे कहो कि क्षुब्ध न बनकर मेरी मनोगतियाँ (और) प्राण, उन्हें छोड़े बिना स्थित हैं। हे चतुरात्म ! फिर तुम सौमित्र के पास जाकर, उसे समझा कर एक बात कहो। वह मुझे माता के समान मानता है। उससे कहो कि मेरे दुःख को देखते रहना किसी भी प्रकार से उचित नहीं है। (उससे) कहो, दंडकवन उसमें परमपावन को अपशब्द कहने का फल ॥ ५९० ॥

—बिना किसी कसर के भुगत लिया है। उन्हें समझाओ कि अब विलंब न करें। ऐसा कहो कि (उनके मन में) दया उत्पन्न हो। अवसर के अनुकूल अंगद से, रविज (सुग्रीव) से तथा शेष मर्कट कोटि से विनय (वचन) कहकर, किसी भी प्रकार उन्हें और इनकुलवालों को झट यहाँ ले आओ। अधिक साहस (धैर्य) से एक मास तक तुम्हारे आगमन की

नी लोन रघुरामु नॆब्भंगिनैन । वालायमुग दॆम्मु; वडि निक बॊम्मु;"
अनि सीत वल्कु वाक्यमुलॆल्ल दॆलिय । विनि हनुमंतुडु विमलुडै पलिकॆ;
"नवुगाक ! चॆप्पॆद नन्नि कार्यम्मुलुविद ! । नी मदिलोन नूरडुमिक;
नच्चुगा रघुरामुनंगुळीयकमु । दॆच्चि यॊप्पिंचिति देवि ! नी कथि;
धरणिज ! रिक्तहस्तमुतोड मगुड । मरलुट दूतधर्ममु गादु नाकु;
नतिव ! मुद्रारत्नमानति" म्मनिन । नतनितो दॆलिय नय्यवनिज
वलिकॆ; ६००

चूडामणिप्रदानमु

"नीवु विचारिंप निसुमंत गानि । लेवु; समुद्रमेलील दाटितिवि ?
यारूढबलविक्रमास्पदंबयिन । नी रूपमॆट्टिदो निजमुगा जूपु;
मेनु नी निजरूपमेर्पडजूचि । कानि ना तलमानिकमु नीकु नीय"
ननिन ना हनुमंतुडाकाशमॆल्ल । दन मेनु निंड नुद्दंडुडै पॆरिगि
मालतीमल्लिकामाल्यमै मॆडकु । नालोलतरहारमै कटिनि
गलधौतमयघंटिकादाममगुचु । ललितमौ पदयुगळमुनकु मुव्व
लनुवारु विधमुन नंदंदु चूंड । दनरि चुक्कलपिंडु तन मेन नलर

प्रतीक्षा करती रहूँगी। उसके बाद नहीं रह सकूँगी। इसी बीच किसी भी प्रकार अवश्य रघुराम को लाओ। अब झट से जाओ।" इस प्रकार सीता के समस्त वाक्यों को सुनकर, हनुमान विमल मन से यों बोला--"ऐसा ही होगा। सभी कार्य (बातें) उनसे कह दूँगा। हे नारी ! अपने मन में आश्वस्त हो जाओ। अति इच्छा से रवुराम की अंगूठी ला देकर तुम्हें समझाया है। हे धरणिजा ! मेरा रिक्त हस्त से फिर लौट जाना, दूत का धर्म नहीं है। हे नारी ! मुद्रारत्न प्रदान कर दो।" उससे समझाकर, अवनिजा (यों) बोली— ॥ ६०० ॥

चूड़ामणि को प्रदान करना

—"सोचने पर तुम बहुत छोटे हो। समुद्र को किस प्रकार पार किया है ? आरूढ़ बल-विक्रम के आस्पद अपने वास्तविक रूप को बताओ। तुम्हारे सच्चे रूप को देखे बिना मैं अपना शिरोरत्न नहीं दूँगी।" (ऐसा) कहने पर वह हनुमान समस्त आकाश को अपने शरीर से व्याप्त करते हुए उद्दंडता से बढ़ता गया। नक्षत्र समूह प्रथमतः सिर पर मालती-मल्लिका-माला बना, (तदनन्तर) कंठ में लोलतर (चंचल) हार बना, कटि में कलधौत (चांदी)-मय घंटिका-दाम (माला) बना, (तदनन्तर) ललित पदयुगल में घुंघरू के शोभित होने के समान, जहाँ-तहाँ नक्षत्र समूह के

नतिभीषणाकारुडगुचु निल्चिननु । नतिव चित्तंबुन नतिभीति बौंदि
"यसमानगात्र ! यो यंजनापुत्र !। विसुमान मी रूपु, वैंसदाचु" मनुचु
हनुमंतु गौंनियाडि यतनि दीविंप । दन विश्वरूपंबु दग जूचि सुरलु ६१०
विनुतिंप नदि दाचु वैन्नुंडु वोलैं । ननिलजुडंतलो नलतियै निलिचैं;
निलिचिन हनुमंतु नैम्मिमै जेर ।बिलिचि लोकौंगुन बिगियंग मुडिचि
युन्न शिरोरत्न मौय्यन विडिचि । यन्नाति प्रीतिमै नपुडौसंगुटयु
वनितशिरोमणि वलनौप्प नंदि । कौनि म्रौक्कि सीत वीड्कौनि वेड्क नरिगि
पंतंबुतो निंक वंक्तिकंठुनकु । नितट दनराक नैरिंगितु ननुचु
"दलि ! ने नाकौंटि; दनरग वनमु । नैल्लैड फलमुलु नेनु गैकौंदु"
ननवुडु सीत या हनुमंतु जूचि । यनैं; "राक्षसावळि यल्ल कापुंडु;
ग्रम्मि रालिन पंड्लु क्रममुतो नमलि । पौम्मु वेग" यटंचु बौंदुगा ननुप
दन मदि गौंडौक तडवु चिंतिंचि । वनभंग मौनरिंचुवाडुनै पैरिगि
तौडलंदु बौंडमु वातूलघट्टनल । बड़्गु बेकयु बोल बड महीजम्मु ६२०

अपने शरीर पर शोभित होने पर, अतिभीषणाकार होते खड़े रहने पर, नारी (सीता) चित्त में अतिभीत होकर, यह कहते कि "हे असमान गात्र (वाले)! हे अंजनापुत्र ! यह रूप असमान है, इसे झट छिपा दो।" हनुमान की प्रशंसाकर, उसे आसीस, अपने विश्वरूप को ढंग से देख देवताओं के ।। ६१० ।।

विनुति करने पर उसे छिपानेवाले विष्णु के समान, अनिलज पलभर में लघु हो खड़ा रह गया । (ऐसा) खड़े हनुमान को प्रेम से निकट बुलाकर, साड़ी की भीतरी छोर में बंधी शिरोरत्न को झट से खोल, उस नारी ने प्रीति से दिया । वनिता (नारी) की शिरोमणि को शोभा से ग्रहणकर, प्रणामकर, सीता से बिदा लेकर जाकर, हठ से यह सोचकर कि अब पंक्तिकंठ वाले को अपने आगमन का (समाचार) बताता हूँ, सीता से कहा--"हे माता ! मुझे भूख लगी है । इस उपवन के फलों को शोभा से ले लूंगा ।" ऐसा कहने पर सीता ने उस हनुमान को देखकर कहा:— "राक्षस समूह तो वहाँ पहरे पर रहता है । व्याप्त हो गिरे फलों को क्रम से चबाकर झट से चले जाओ ।" ऐसा कह ढंग से भेजने पर, अपने मन में थोड़ी देर विचारकर, वन का नाश करना चाहकर, (शरीर को) बढ़ाकर, जाँघों से उत्पन्न वातूल (वायु)-घट्टनाओं (झोंकों) के कारण, (वन के) महीजों (वृक्षों) के (कपड़े के) ताने-बाने-से गिरने पर, ।। ६२० ।।

अशोकवन विध्वंसनमु

ला नित्यकृति यशोकारामभूमि । मानैन हर्म्यमुल् महिगूल दन्नि
मॊनसि कॆळीगृहंबुलु नुग्गुसेसि । वनमहीरुहमुलु वडि नेल गलिपि
कॊम्मलु खंडिचि कुसुममुलु रालिच । कम्मदॆनॆलु सलिल कालुवल् सॆड्रिचि
पूवुदीगॆलु द्रॆंचि पॊदरिड्लु सदिपि । बावुलु गलचि दोर्बलकेळि देलि
कलकंठ बक बिसकंठिका क्रौंच । कलहंस शुक शारिका मयूरादि
वनपक्षुलार्तरावमुलतो　बाऱ । वनपालकुलु भीति वडि मेलुकांचि
हनुमंतु चेतकु नग्नुलॆ मंडि । यनिकि सन्नद्धुलै यति शौर्यमुननु
विनुवीथि दिक्कुलु व्रील नार्चुचुनु । ननुपम कर वालहस्तुलै कदिय
दन पेरु तन राक तन पराक्रममु । विन जॆप्पि श्रीराम विभु कूर्मिबंटु
नॊक्कॊक्क राक्षसु नुद्दंडवृत्ति । नॊक्कॊक्क तरुवुन नॊगि गूलनेसि ६३०
प्रथमसंगरकळाप्रारंभुडगुचु　। बृथिविपै बीनुगुबॆंटलु गाग
भूरिसित्त्वंबुन बॊलुपॊंदु घोर । वीरुल नॆनिमिदिवेल राक्षसुल
बवमानतनयु डप्रतिमुडै पेर्चि । यवलील दॆगटार्चि यार्चिन बॆदरि

अशोक वन का विध्वंस

—उस नित्यकृति (नित्य धन्य जीव) ने अशोक-आराम-भूमि के शोभायमान हर्म्मों (सौधों) को पृथ्वी पर गिराकर, दीप्त हो, केलीगृहों को चूर(चूर) कर, झट से वन के वृक्षों को मिट्टी में मिलाकर, शाखाओं को तोड़कर, फूलों को गिराकर, मधुर मधु को बिखेरकर, नालों को नष्टकर, पुष्पलताओं को तोड़कर, पुष्पकुंजों को छिन्नभिन्न कर, वापियों (के जल) को आलोड़ित किया। (उसके इस प्रकार) बाहुबल-केली में ऊभचूभ होने पर, कलकंठ (कोयल), बक, बिसकंठिका (हंस), क्रौंच, कलहंस, शुक, शारिका, मयूर आदि वनपक्षी आर्त्तरव करते हुए भागने लगे। (उस समय) वनपालक भीत हो, जागकर, हनुमान की करतूत पर अग्नि के समान भड़ककर, युद्ध करने को तैयार होकर, अतिशौर्य के साथ, आकाश और दिशाओं को फाड़ देनेवाला गर्जन करते हुए, अनुपम-करवाल-हस्त होते हुए (हनुमान के) निकट पहुँचे। (तब) अपना नाम, अपना आगमन, अपने पराक्रम के बारे में सुनाकर, श्रीराम के लाड़ले सेवक ने एक-एक राक्षस को उद्दंडवृत्ति से, लगन के साथ, एक-एक वृक्ष (के प्रहार) से गिरा दिया, ॥ ६३० ॥

—(इस प्रकार) प्रथम-संगर (युद्ध) की कला का प्रारम्भ करते हुए, पृथ्वी को शव-समूह से भरते हुए, भूरि-सत्त्व से शोभित होनेवाले आठ हजार घोर-वीर

येपऱि धृतिदूलि यिनवंश्युदेवि । गापुन्न राक्षसकांतलु पाऱि
रावणु लोकविद्रावणु गांचि । "देव! नेडोक कोति तेगुवमै वच्चि
तोलि दोलि वैदेहितो माटलाडि । कलगोन वनमेल्ल गासिगा बेऱिकि
वेनुदन्नि येनिमिदिवेल राक्षसुल । वनपालकुल जंपि वालुचुन्नाडु;
वाडु राघवुडंप वच्चिनवाडु । गाडेनि या सीत गापुगानुन्न
तरुवोक्कटियु दक्क दक्किन वनमु । गरमलिग पेरुकंग गारणंबेमि ?
वानि तेरंगेल्ल वैदेहि नडुग । दा नेरुंगनटंचु दाचुचुन्नदियु; ६४०
गावुन वाडु राघवुनि दूतौट । ये विधंबुन सिद्ध; मिटमीद वानि
नेट्टन गडिमिमै नीलावु मेऱसि । पट्टि शिक्षिपुमु प्राभवंबोप्प"
नावुडु मंडि दानवलोक विभुडु । रावणु डुग्र निग्रह दृष्टि जूचि
दीपाग्रनिर्गळद्दीप्त तैलंबु । लै पावक ज्वाल लक्षुल दोरुग
दन किंकरुल बंचे दंडि राक्षसुल । नेनुबदि वेवुर निद्ध विक्रमुल;

राक्षसों का अप्रतिम हो, पवमानतनय ने सामना किया और सहज ही संहार कर, गर्जन किया। (तब) भीत होकर, विकास को खोकर, धैर्य को खोकर, इनवंश (वाले राम की) देवी की रखवाली करनेवाली राक्षस-स्त्रियाँ भागकर, लोकविद्रावण (लोक को रुलानेवाला) रावण को देख (बोलीं):—"हे देव! आज एक बंदर साहस से आकर, पहले-पहल वैदेही से बातकर, समस्त वन को क्षुब्ध करते हुए, उखाड़कर, पीछा करके आठ हज़ार वनपालक राक्षसों को मारकर विलसित हो रहा है। वह राघव के भेजने पर आया है। नहीं तो उस सीता को सुरक्षा प्रदान करनेवाले वृक्ष के अतिरिक्त शेष समस्त वन को अधिक क्रुद्ध हो उखाड़ने का क्या कारण है? उसके विधान के बारे में वैदेही से पूछने पर, वह यह कहकर (बात) छिपा रही है कि मैं कुछ नहीं जानती। ।। ६४० ।।

—इसलिए यह प्रत्येक विधि से सिद्ध (सत्य) है कि वह राघव का दूत है। अब आगे किसी भी प्रकार से, साहस से, अपने बल से प्रकाशित हो प्रभुता के शोभित होने पर, उसे पकड़ दंडित करो।" ऐसा कहने पर दानव-लोक-विभु रावण ने (क्रोध से) भड़ककर, उग्र-निग्रह-दृष्टि से देख कर, दीपाग्रभाग से निर्गलित दीप्त-तैल सम, आँखों से पावक-ज्वालाओं के ढुलकने पर, अपने किंकर, विक्रम से सुशोभित तथा बली अस्सी हज़ार राक्षसों को भेजा।

अड्डु वच्चिन राक्षसुल संहारमु

बनिचिन बनिपूनि बलियुलै वारु । धनुरस्त्र शूल मुद्गर-भिडिवाल
घनगदा करवाल कलितुलै पेर्चि । यनिकि सन्नद्धुलै यार्चुचु वेंडलि;
रंत सूर्योदयंबय्यें; नौटयुनु । नेंतयु गडकतो नेपग्गलिचि
यकलंकगति बर्वताकारु डगुचु । मकरतोरणमेक्कि मारुतात्मजुड्डु
तनुदाकि शस्त्रास्त्रततुल नोंप्पिचु । दनुजवीरुल जूचि दर्पिचि पलिकें;
६५०
"नोरि ! राक्षसुलार ! युर्विपै नेनु । शूरत विलसिल्लु सुग्रीवु बंट;
रामुनि दूत; ना रामु सेमंबु । भूमिज तो जेंप्पि पोवुचुन्नाड;
हनुमंतुडनुवाड; नतिबलाधिकुड । विनुत विक्रम कळाविभव शूरुंड;
बूनि लंकापुरंबुन नुन्न मगल । के नंतकुंडनै यिट वच्चिनाड;
जेंडगोरि नन्नेल चेंनकेंद" रनुचु । वड बेंचि याभीलवालमंकिंचि
पदुल नूरुल वेल बलियुडै पट्टि । त्रिदशारिभटुल बंधिंचि बंधिंचि
यारूढ विक्रमाहव केळि देळि । तोरणस्तंभंबुतो व्रेसि व्रेसि

सामना करने आए राक्षसों का संहार

—भेजने पर, निश्चित मन वाले (तथा) बली होते हुए वे (राक्षस) धनु-अस्त्र, शूल, मुद्गर, भिंडिवाल, घन-गदा (तथा) करवालों से कलित हो, क्रम से युद्ध के लिए सन्नद्ध हो, गर्जन करते हुए निकल पड़े। इतने में सूर्योदय हुआ। होने पर, अत्यधिक साहस से उत्साह के बढ़ने पर, अकलंक-गति से पर्वताकार होता हुआ, मकर तोरण पर चढ़कर, मारुतात्मज, अपने से भिड़कर, शस्त्र-अस्त्रततियों (समूहों) से कष्ट पहुँचाने वाले, दनुज वीरों को देखकर, दर्पयुक्त हो, यों बोला:–- ॥ ६५० ॥

—'रे राक्षसो ! पृथ्वी पर शूरता से विलसित होनेवाले सुग्रीव का मैं सेवक हूँ। राम का दूत हूँ। उस राम का कुशल समाचार भूमिजा को बताकर जा रहा हूँ। हनुमान कहलानेवाला हूँ। अत्यधिक बलवान हूँ। विनुत-विक्रम-कला-वैभव (से युक्त) शूर हूँ। जानबूझकर लंकापुर में स्थित पुरुषों के लिए अंतक (यम) बनकर यहाँ आया हूँ। नष्ट होना चाहकर, मुझे क्यों छेड़ते हो ?" (ऐसा) कहकर, झट विजृंभित हो, आभील (भयंकर) वाल (पूँछ) को चलाकर दसों, सैकड़ों, हजारों को, बली होते हुए पकड़, त्रिदश-अरि (देवताओं के शत्रु) के भटों (सैनिकों) को बाँध-बाँधकर, आरूढ़-विक्रम (युत) आहव (युद्ध)-केली में मग्न हो, तोरण स्तंभ से मार-मारकर, युद्ध में एक को भी जीवित न

पूनि योक्करुनैन बोरुलो ब्रतिकि । पोनीक विशेषमुगा जंपिवैचे;
नंतलो बनिहारुलमरारि कडकु । नेंतयु भीतुलै येतेंचि म्रोक्कि
"दनुजेश! विनु कोति तनदुवालमुन । नैनुबदि वेवुर नेपुमै जंपि ६६०
मलयुचुन्नाडु मकरतोरणमु । तलदन्नि रणबलोदग्रुडै" यनुडु
नापंक्तिमुखुडु कालांतकु पगिदि । गोपिंचि पिंगळाक्षुनि दीर्घजिह्वु
वक्रनासुनि नश्मवक्षुनि वैरि । चक्रभीकरुडैन शार्दूलमुखुनि
वेवेग रप्पिंचि "वीरुलै मीर । ला वानरुनि दैगटार्चिरंड" नुचु
बनिचिन नेवुरु ब्रबल सैन्यमुल । गोनि रथारूढुलै क्रूरत वेडलि
परुवडि नार्चुचु बवनजु दाकि । शरवृष्टि बोदिविन जलियिप कात
डा तोरणमुपै नार्चुचु बेर्चि । वातूलसुतुडेचि वालमंकिंचि
रथमुल विरचि सारथुल नुग्गाडि । रथतुरंगमुल रणवीथि द्रुंचि
वारणमुल गूल्चि वाजुल गेडपि । या राक्षसुल सेन नट रूपु मापि
धरणिकि लंघिंचि तनदु वालमुन । नुरुशक्ति गळमुनकुरिगा बिगिंचि
६७०
युरुवडि कन्नुग्रुड्लुरुकंग द्रिप्पि । सुरुगक वक्रनासुनि व्रेसि चंपे;

छोड़ते हुए निःशेष रूप से मार डाला। उतने में द्वारपालक अमर-अरि के पास अत्यन्त भीत हो आकर, प्रणामकर, (बोले):—"हे दनुजेश! सुनो, वानर अपने वाल से अस्सी हज़ार (राक्षसों) को शोभा से मारकर ।। ६६० ।।

—मकरतोरण के ऊपर, रणबल के उदग्र होते हुए लसित हो रहा है।" (ऐसा) कहने पर पंक्तिमुख कालान्तक के समान क्रुद्ध हुआ (और) पिंगलाक्ष, दीर्घजिह्व, वक्रनास, अश्मवक्ष, वैरिचक्र (समूह) के लिए भीकर शार्दूलमुख को शीघ्रातिशीघ्र बुलाकर, यह कह भेजा कि "तुम लोग वीरतापूर्वक उस वानर का संहार करके आओ।" (भेजने पर) वे पाँचों प्रबल सैन्यों को साथ ले, रथारूढ़ हो, क्रूर हो निकल पड़े। क्रम से गरजते हुए, पवनज का सामना कर, शर वृष्टि से घेर लेने पर, वह (हनुमान) विचलित न होकर, उस तोरण पर (बैठकर) गरजते हुए, क्रम से (उन्हें) व्याकुल करते हुए, वातूलसुत (हनुमान) पूँछ को चलाकर, रथों को टुकड़ेकर, सारथियों को चूरकर, रथ के तुरंगों (घोड़ों) को रणवीथि में मार डालकर, वारणों (हाथियों) को गिराकर, वाजियों को मारकर, राक्षसों की सेनाओं को नष्टकर, धरणि पर कूद पड़ा (और) अपनी पूँछ को महान् शक्ति से (वक्रनास के) गले में फँदे के रूप में कसकर, ।। ६७० ।।

—झट से घुमाया जिससे उसकी आंख की पुतलियाँ बाहर निकल आईं

जंपियंतट बोक समयनि किनुक । दॆंपुसॊंपुनु बॆंपु दीपिंप गदिपि
पॆंडपॆंड नार्चुचु बिडुगुन कंटॆ । बॆंडिदमै कनुपट्टु पिडिकिटि चेत
बुडमिपै नुरुरक्तमुल ग्रक्कि कूल । वडि नश्मवक्षुनि वक्षंबु वॊंडिचॆ;
बॊंडिचि बाहागर्वमुन मारुलेनि । कडक दन गनुगॊनि कलगु राक्षसुल
मॊगि द्रुंचि शार्दूलमुखु ललाटंबु । पगुलंग वडि द्रिप्पि पडवैचि चंपॆ;
नट्टु चंपि क्रोधाग्नुलंदंद निगुड । गुटिल राक्षसकुलक्षोभंबु गाग
ग्रूरुडै पिंगळाक्षुनि दोक गट्टि । काराकु सुडिगालि गडु वडि द्रिप्पु
तीरुन वानि दिर्द्दिर मिंट द्रिप्पि । तोरणस्तंभमुलतो व्रेसि चंपॆ;
वानि निम्मॆयि जंपि वरशक्तियुक्ति । बूनि दानवसैन्यमुलु चॊच्चि
कलचि ६८०

युरुवडि दीर्घजिह्वुनि वच्चि ताकि । युरुमुष्टिसंहति युर्वि पै गूल्चि
यालोन बवनुजु डसमान विजय । लोलुडै वानि नालुक पीकि चंपि
तोरणारूढुडै तॊलगकयुन्न । मारुति गनुगॊनि मदि भीतुलगुचु

(और) (इस प्रकार) वक्रनास को मार डाला। मारकर, उतने से न रुककर, कम न होनेवाले क्रोध से, साहस, शोभा और औन्नत्य के दीप्त होने पर, नियराकर, ज़ोर से गरजते हुए, गाज़ की अपेक्षा भयंकर दीखने वाली मुट्ठी से, अश्मवक्ष के वक्ष पर (घूँसा) मारा, जिससे अधिक रक्त उगलकर, (वह) ज़मीन पर गिर पड़ा। मारकर, वाहु (बल) के गर्व से, अनुपम साहस से, अपने को देखकर, विकल होनेवाले राक्षसों के समूह का संहार कर, शार्दूलमुख को झट घुमाघुमाकर (ऐसा) पटक दिया जिससे उसका ललाट फूट गया। ऐसा मारकर, जहाँ-तहाँ क्रोधाग्नियों के बलने पर, कुटिल-राक्षस-कुल को क्षुब्ध करते हुए, क्रूर बन, पिंगलाक्ष को पूँछ से बाँधकर, पके पत्ते को जिस प्रकार आँधी वेग से घुमाती है, उसे आकाश में गोलाकार घुमाकर, तोरणस्तंभ से दे मारा। उसे इस प्रकार मारकर, वरशक्ति-युक्ति को धारणकर, दानव-सैन्य में पैठकर, क्षुब्ध कर, ॥ ६८० ॥

—वेग से आकर दीर्घजिह्व पर आक्रमण कर, उरु-मुष्टि-संहति (संघात) से ज़मीन पर गिराकर, इतने में असमान-विजय-लोलता से पवनज उसकी जीभ खींचकर (उसे) मार डालकर, तोरण पर चढ़ बैठा, वहाँ से न हिला। ऐसे मारुति को देखकर, मन में भीत होते हुए,

हनुमंतुनि मीदिकि रावणुडु रक्तरोमादुल बंपुट

नंत जिक्किन दैत्युलट बारिपोयि । यंतयु जेंप्पिन नद्दशाननुडु
सोंमिंचि निजमंत्रिसुतुलैन रक्त । रोमुनि शतजिह्ववु रुधिरलोचनुनि
स्तनितहासुनि शूलद्रंष्ट्रु दुर्मुखुनि । घनसत्त्वुडगु व्याघ्रकबळुनि बिलिचि
"यिदि योंक्क वानरुंडेचि राक्षसुल । बोंदिवि पेंक्कंड्र जंपुचुनुन्नवाडु;
आ मर्कटुनि जंपु' डनि पूनि पनुप । ना महाबलगर्वु लार्चुचु वेडलि
चतुरंगबलमुलसंख्यमुल् गोलुव । नतुलरथारूढुलै वच्चि पेंचि
मकरतोरणमुपै मारुलेकिच्च ।नकलंकुडैयुन्न हनुमंतु बोंदिवि ६९०
वरदिव्यशस्त्रास्त्रवर्षमुल् गुरिय । बरमसाहसुडैन पवमानसुतुडु
जलदसंवेष्टित शक्रुनि पगिदि । बोंलुपोंदि येंतयु बोंलिवोनि कडिमि
नप्पुडादैत्युल यस्त्रशस्त्रमुलु । दप्पिचुकोंनुचुनु दनु दाककुंड
दन नखाग्रंबुल दंतकुंतमुल । घनपाद कूर्पर करघट्टनमुल
जेलरेगि वडि महाशिलल वृक्षमुल । बलमुल नलुगड बरपि नुग्गाडि
कंठीरवमु वोलें गजमुल पैकि । गुंठितेतर शक्ति गुप्पिंचि ताकि
पटु मांस मौक्तिक प्रकरमुल् सेंदर । गुटिलोग्रनखमुल गुंभमुल् व्रच्चि

हनुमान पर रावण का रक्तरोम आदि को भेजना

—तब बचे दैत्य वहाँ से भागे। सबके कहने पर वह दशानन ने पराक्रम से युक्त हो, अपने मंत्री-पुत्रों—रक्तरोम, शतजिह्व, रुधिरलोचन, स्तनितहास, शूलद्रंष्ट्र, दुर्मुख, घन (महान्) सत्त्ववाले व्याघ्रकबल--को बुलाकर (कहा):—"यह एक वानर उद्धत हो, अनेक राक्षसों को पकड़ मार डाल रहा है। उस मर्कट को मार डालो।" (ऐसा) कह सप्रयत्न भेजने पर वे महाबल-गर्वित (राक्षस) गरजते हुए निकल पड़े, मकरतोरण पर असमान हो, मन से अकलंक बने हुए हनुमान को घेरकर, ॥ ६९० ॥

—श्रेष्ठ-दिव्य शस्त्र-अस्त्र की वर्षा करने पर, परम साहसिक पवमानसुत, जलद से संवेष्टित शक्र (इन्द्र) के समान, शोभायमान हो, अकुंठित पराक्रम से, तब उन दैत्यों के अस्त्र-शस्त्रों से (अपने को) बचाते हुए, उन्हें (अपने को) स्पर्श करने न देते हुए, अपने नखाग्रों से, दन्त-कुन्तों (भालों) से घन-पाद-(बड़े-बड़े चरणों), कूर्पर (घुटने) तथा करघट्टनों से, विजृंभित हो, वेग से महाशिलाओं (तथा) वृक्षों को चारों तरफ़ फेंककर, सेना को चूर-चूरकर, जैसे सिंह गजों पर कुंठितेतर (अकुंठित) शक्ति से छलाँग भरकर, आक्रमणकर, कुटिल-उग्र-नखों से कुंभ (-स्थल) फाड़कर, पटुमांस

लेळ्ळपैबुलि चौकळिंचिन पगिदि । द्रुळ्ळु गुर्रमुल दोड्तो रूपुमापि
जंतुपारण सेयु जमुनि कैवडिनि । बंतंबुतो ग्रालु बलमु मार्यिचि
कुलशैलमुल दाकि कुलिशायुधंबु ।पेळपेळध्वनुलतो भेदिंचिनट्लु७००
बलुविडि रथमुल पैकि लंघिंचि । पोलुपार रथरथ्यमुल नेल गलपि
रथुल जेंडाडि सारथुल नुग्गाडि । पृथुसत्त्वयुक्तुडै पेर्चि लंघिंचि
मुनुमुन्न रक्तरोमुनि नेलगूल्चि ।स्तनितहासुनि द्रुंचि शतजिह्वु नणचि
रुधिराक्षु जंपि दुर्मुखु विदारिंचि । क्रधनविक्रमु व्याघ्र कबळु खंडिंचि
शूलदंष्ट्रु वधिंचि शूरत मिंचि । कालपाशाभीलकरवालुडगुचु
नुरुवडि निब्भंगि नोक्कोक्क तेंगुव । दरमिडि पेलुच नुद्दंड राक्षसुल
बलमुलतोगूड भस्मंबु सेसि । तलगक मारुतात्मजुडुन्न दलकि
पोरिलो निलुवक पोयिनवारु । वारि चावुलु चेप्प वडि गोपमेत्ति
यट ब्रहस्तुनि पुत्रुडगु जंबुमालि । जटुल प्रताप संचलितांशुमालि
गुटिलारि पर्वत क्रूर दंभोळि । बटु बाहुबलशालि बनिचे रावणुडु;
७१०

पनिचिन ना दैत्यपतिकि म्रोक्कुचुनु । ननुरक्ति रक्तमाल्यांबरोदग्र

मौक्तिक प्रकरों को बिखेर देता है, जैसे हिरनों पर व्याघ्र छलांग भरता है, (उसी प्रकार) उछलते अश्वों को झट से निःशेष कर, हठ से विजृंभित सेना को, जन्तु पारण करनेवाले यम(-राज) के समान, मटियामेट कर, कुलपर्वतों पर गिरकर भयंकर ध्वनि से उनको बेधनेवाले कुलिशायुध (वज्रायुध) के समान, ।। ७०० ।।

—बरज़ोरी रथों पर लाँघकर, शोभा से रथ-रथ्य को मिट्टी में मिलाकर, रथियों का संहारकर, सारथियों को चूर-चूरकर, पृथु-सत्त्वयुक्त हो, क्रम से, लाँघकर, सर्वप्रथम रक्तरोम को ज़मीन पर गिराकर, स्तनितहास का वधकर, शतजिह्व को दबाकर, रुधिराक्ष को मारकर, दुर्मुख का विदारण कर, क्रधन (वध करने के)-विक्रम वाले व्याघ्र-कबल का खंडनकर, शूलदंष्ट्र का वधकर, शूरता में बढ़कर, कालपाश के समान अभील (भयंकर) करवाल (खड्ग) वाले होकर, बड़े वेग से, इस प्रकार, एक-एक प्रकार, क्रम से उद्दंड राक्षसों को, ससैन्य भस्मकर, पीछे हटे बिना रहा। (इस प्रकार) मारुतात्मज के रहने पर, युद्ध में टिक न सकनेवाले जाकर, उनकी (अन्य राक्षसों की) मृत्यु के बारे में कहने पर, झट से क्रुद्ध होकर, प्रहस्त के पुत्र जंबुमालि को जो चटुल-प्रताप-संचलित-अंशुमालि (सूर्य) है, जो कुटिल-अरि-पर्वत-क्रूर-दंभोलि (वज्रायुध) है, जो पटु बाहुबलशाली है, रावण ने भेजा। ।। ७१० ।।

समरोग्रशस्त्रास्त्रसन्नद्धुडगुचु । नमितरथारूढुडै वच्चि यतडु
शिंजिनी टंकार सिंहनादमुल । गंजजांडमु हल्लकल्लोलमुगनु
हरि दाकु नुन्मत्त हस्ति चंदमुन । नरुदैन कडिमिमै हनुमंतु दाकि
करलि मेघमु महागिरिमीद बोलें । शरवृष्टि गुरिसिन जलियिंपकतडु
पेनुशिल दैत्युपै बैंडिकि वैचुटयु । गनि दानि शरदशकंबुचे दुनिमि
हनुमंतु वदनाब्ज मर्धचंद्रास्त्र । मुन नोंचि पदि बाणमुल बाहुलुरमु
नाटिंचि योक शक्ति नडुनेत्ति वगुल। मेटियै येसिन मिगुल रोषिंचि
पवमानतनयुंडु बाहुदर्पमुन । नवलील नोक सालमगलिंचि वैव
नालुगम्मुल दानि नडुमनें त्रुंचि । वालिन कडिमि ना वनचरवरुनि
७२०

शिरमोक्क निष्ठुरशितसायकमुन । दरमिडि वक्षंबु दशविशिखमुल
बोरि भुजंबुल नैदु भूरिभल्लमुल । गरमु नोंप्पिंचि रक्कसुडेपु मेंडय
गालुनि पगिदि गन्गव निप्पुलुरल । नालोन हनुमंतु डा दैत्युरथमु
बदमुल बडदन्नि पट्टि दंष्ट्रमुल । गदिसि विदारिंचि गर्जिचि व्रेसि

—भेजने पर उस दैत्यपति को प्रणामकर, अनुरक्ति से रक्त (लाल)-माला, रक्तअंबर तथा उदग्र-समर (के लिए उचित) उग्र-शस्त्र-अस्त्र से सन्नद्ध होते हुए, अमित रथारूढ़ होकर, आकर, उसने शिंजनी-टंकार (तथा) सिंहनादों से ब्रह्मांड को कल्लोलित करते हुए, हरि (सिंह) से भिड़ जाने वाले उन्मत्त हस्ति (हाथी) के समान, विरल साहस से हनुमान पर आक्रमण किया (और) मेघ के महागिरि पर (बरसने) के समान शर-वृष्टि की फिर भी उसने (हनुमान ने) विचलित न होकर दैत्य पर बहुत बड़ी चट्टान उखाड़कर फेंक दिया। (उसे) देख उसे दस बाणों से टुकड़े कर, हनुमान के वदनाब्ज को अर्द्धचन्द्र बाण से पीड़ित कर, बाहु और उर पर दस (-दस) बाण गड़ाकर, एक शक्ति (बाण) को उत्कृष्टता से ऐसा डाला कि (हनुमान का) शिरोमध्य भाग फूट गया। (तब) अतिरुष्ट हो, पवमानतनय ने बाहु-दर्प से, अनायास एक साल(-वृक्ष) को उखाड़कर डाल़ (फेंक) दिया। उसे चार बाणों से बीच में ही काटकर, निशित पराक्रम से उस वनचर-वर के ॥ ७२० ॥

—शिर को एक निष्ठुर-शित (तेज)-सायक (बाण) से, (तथा) क्रम से वक्ष को दस बाणों से, पुनः भुजाओं को पाँच बड़े-बड़े भालों से अधिक पीड़ित कर, राक्षस सुशोभित हुआ। इतने में काल के समान नेत्रद्वय से अंगार उगलते हुए, हनुमान ने उस दैत्य के रथ को चरणाघात से जमीन पर गिरा दिया, (उसे) पकड़, दाँतों से टुकड़े-टुकड़े कर, फेंककर गर्जना

पॊंदिवि महासालमुन रथ्यसमिति। जदिपिन विरथुडै जंबुमालियुनु
बलकयु नडिदंबु बलुविडि गॊनुचु । नलवु बॆंपुनु गूड नार्चुचु वच्चि
पवमानतनयुनि फालंबु व्रेय । नवशुडै मूर्च्छिल्लि यंतलो दॆलिसि
पिडुगुतो सरिपोलु पिडिकिट बलक। बॊडिचि भग्नमु सेसि पोनीक कदिसि
यॊडिसि कैदुव गॊनि युग्रुडै कडिमि। दडयक दैत्युनि तल द्रॆव्व नेय
धृति दूलि यतडुर्वि द्रॆळ्ळॆ; द्रॆळ्ळुटयु। नतुल सत्वमुन दैत्यावळि दरिमि ७३०
वितत विक्रम जयवृद्धि बॆंपॊंदि । चतुरुडै तोरणस्थलिनुन्न जूचि
यतिभीतचित्तुलै यंदरु बऱचि । हतशेषुलतनिपाटंतयु दॆलुप
गडु जोद्यमंदि राक्षसमंत्रिवरुल । दडयक पिलिपिंचि तग गॊलुविच्चि
दनुजनाथुडु गॊंत दडवु सिंतिंचि । यनिमिषेंद्रुनिनैन नाजि गैकोननि
यलघु विक्रमु विरूपाक्षु यूपाक्षु । गलहदुर्धरु भासकर्णाख्यु ब्रघसु
नदयुल बंचसेनाग्रनायकुल ।गदन कर्कशुल नॊक्कट जूचि पलिकॆ;
"ने लोकमुननैन निट्टु मर्कटुलकु । नी लावु गलदॆ? वीडॆव्वडो तॆलिय

की, (और) घेरकर महासाल (वृक्ष) से रथ्य-समिति (समूह) को चूर कर दिया, (तब) विरथ हो जंबुमालि ने भी ढाल तथा खड्ग को दृढ़ता से (हाथ में) लेते हुए, बल और शोभा के साथ गरजते हुए आकर, पवमान-तनय के फाल पर प्रहार किया, (तब) अवश हो, मूर्च्छित हो, पलभर में होश में आकर, गाज की समता करनेवाली मुष्टि से ढाल पर आघात कर, (उसे) भग्नकर, (राक्षस को) जाने न देकर, नियराकर, खड्ग खींच हाथ में ले, उग्र बन, पराक्रम से अविलंब दैत्य के सिर को काट डाला। धृति को खोकर वह (राक्षस) ज़मीन पर गिर पड़ा। गिर पड़ने पर अतुल-सत्त्व से दैत्य-समूह को भगाकर, ॥ ७३० ॥

—वितत-विक्रम, विजय-वृद्धि के बढ़ने पर, चतुर हो तोरणस्थली पर (बैठा) रहा। (उसे) देख अतिभीत चित्तवाले होते हुए हतशेष (मरने से बचे हुए राक्षस) सब भागकर उसकी (जंबुमालि की) समस्त दुर्गति बताने पर, (रावण) अति चकित हो, राक्षसमंत्रिवरों को अविलंब बुलाकर समुचित रूप से सभा का आयोजन कर, दनुजनाथ थोड़ी देर चिन्तनकर, युद्ध में अनिमिषेन्द्र (इन्द्र) की भी परवाह न करनेवाले, अलघुविक्रम वाले (तथा) दयाहीन (क्रूर) विरूपाक्ष, यूपाक्ष, कलह-दुर्धर, भासकर्ण, प्रघस (नामक) पाँच अग्रसेनानायकों को जो कदन (युद्ध में)-कर्कश हैं, एक साथ देखकर बोला:—"क्या किसी भी लोक में मर्कटों (वानरों) की ऐसी

रादु ! मीरेवुरु रणबलोदग्रु । लै दर्पमेर्पड नात्म नेमऱक
यगणित सैन्य सहायुलै वानि । दॆगुवमै निट बट्टि तॆंडु; पॊंड" निन
रावणुनाज्ञ शिरंबुन बूनि । पावकादित्यप्रभाभासुलगुचु ७४०
वारलु बहुरथ वारण तुरग । वीर दैत्युलतोड वेवेग कदलि
प्राग्गिरिपै नुंडु भानुंडु वोलॆ । दिग्गगनांतरोदीर्णतेजमुन
दोरणंबॆक्कि बंधुर दैत्यवरुल । तो रणंबॊनरिप दौरकॊनुवानि
ननिलसूनुनि दाकि यवनियु दिशलु । जिनुगंग जेयुचु सिंहनादमुल
नंदऱु दिव्यशस्त्रास्त्रमुल् गुरिय । नंदुलो दुर्धरुंडनु पेरि वाडु
ऐदुबाणंबुल ननिलजुनुरमु । भेदिंचुटयु रोषभीषणुंडगुचु
गपिवीरु डार्चि याकसमुनकॆगय । नपुड दुर्धरुडुनु नतनितो नॆगसि
विलुनारि सारिंचि विलयकालोग्र । जलदंबु कैवडि शरवृष्टि गुरिय
ना युग्रशरवृष्टि नणचि वायुजुडु । ना यॆंड बॊडवुगा नटमिंट कॆगसि
वडिवडि बऱतेंचि वानिपै बडिन । बॊंडिपॊडियै कूलॆ बुडमि रक्कसुडु; ७५०
अदि सूचि या विरूपाक्ष यूपाक्षु । लदयत मुद्गर हस्तुलै यॆगसि

सामर्थ्य है ? (नहीं है ।) पता नहीं यह कौन है ? तुम पाँचों रणबल से उदग्र हो, दर्प के साथ, मन से असावधान न होकर, अगणित सेना की सहायता लेकर, उसे साहस से पकड़कर यहाँ लाओ, जाओ ।" कहने पर, रावण की आज्ञा सिर पर धारणकर, पावक (तथा) आदित्य की प्रभा से भासमान होते हुए, ।। ७४० ।।

—वे (लोग) अनेक रथ, वारण, तुरग (और) वीर दैत्यों के साथ अतिशीघ्रता से निकल पड़े । प्राक्-गिरि पर स्थित भानु के समान, दिक (और) गगनांतरों में उदीर्ण तेज से, तोरण पर चढ़कर, बन्धुर (सान्द्र) दैत्यवरों से रण करने के लिए उद्यत अनिलसून पर आक्रमण कर, अवनि और दिशाओं को विदीर्ण करनेवाले सिंहनाद करते हुए, सभी ने दिव्य शस्त्र-अस्त्रों को बरसाया । उनमें दुर्धर नामक व्यक्ति ने पाँच बाणों से अनिलज के उर को बेध डाला । तब रोष-भीषण होते हुए, कपिवीर गरजकर आकाश की ओर उड़ा । तब दुर्धर भी उसके साथ उड़कर, धनुष की डोर चढ़ाकर, विलयकाल-उग्र-जलद के समान शरवृष्टि की । उस उग्र शरवृष्टि को रोककर, वायुज तब आकाश में अधिक ऊँचा चढ़कर शीघ्रता से आकर, उस पर गिर पड़ा तो वह राक्षस चूर-चूर हो जमीन पर गिर पड़ा । ।। ७५० ।।

उसे देख विरूपाक्ष और यूपाक्ष अदयता (क्रूरता) से मुद्गर-हस्त हो

याकसंबुन निलिचि पेर्चि यार्चुटयु । ना करुवलिपट्टि यट दानु नॆगसि
वारितो बोराड वारुनु नतनि । घोरमुद्गरमुलु गॊनि व्रेयुटयुनु
जगतिपै बडि लेचि सालभूरुहमु । नर्गलिचि मऱियुनु नार्चुचु नॆगसि
चिक्कनि भुजशक्ति जिऱचिऱ द्रिप्पि । यॊक्कदॆब्बन वारि नुर्विपै गूल्चॆ;
भासकर्णुंडुनु ब्रघसुंडु नंत । ना समीरात्मजु नदरंट दाकि
पटु शूल पट्टिस प्रहतुल नॊप । नटु रक्तसिक्तांगुडै वायुसुतुडु
कॊपिंचि मिक्किलि कुलशैलसदृश । मौ पर्वतंबेत्ति यसुरुलमीद
स्रुक्कक वैचिन जूर्णमै पडिरि । कॊक्कुलु वडि गुंट गूलु चंदमुन;
वायुनंदनुडंत वारि सैन्यमुल ।ना यंतकुडु वोलॆ नणगिचुनपुडु ७६०
पडु करुल् चॆडु हरुल् पऱचु काल्बलमु । गडतेऱु तेरुलु गलगु शूरुलुनु
मडियु महारथुल् म्रग्गु सारथुलु । बॊडियैन शस्त्रमुल् पॊलियु नस्त्रमुलु
गडिकंडलैन चक्रप्रासमुलुनु । मडिसिन गुर्रमुल् म्रग्गु काल्बलमु
गूलॆडु मावतुल् ग्रंगु रावुतुलु । दूलॆडु गॊडुगुलु द्रुंगु पडगलु
बऱचु नॆत्तुरुटेर्लु बहुमांसमुलकु । नऱुग्रम्मु भूतंबुलै रणंबॊप्प
क्षणमात्रमुन वारि जंपि वायुजुडु । रणकांक्ष मऱियु दोरणमॊक्कियुंडॆ;

उड़कर, आकाश पर खड़े होकर, गरजकर विजृंभित हुए तब वह पवनपुत्र भी स्वयं उड़कर, उनसे लड़ पड़ा। उन्होंने उस पर धोर मुद्गर फेंके। (तब हनुमान) जमीन पर गिरकर, उठकर सालवृक्ष को उखाड़कर, फिर गरजते हुए, ऊपर उठकर, महान् भुजशक्ति से (उस वृक्ष को) वेग से गोल घुमाकर, एक ही प्रहार से उन्हें जमीन पर गिरा दिया। तब भासकर्ण और प्रघस ने उस समीरात्मज को भीत करते हुए आक्रमण किया, पटु शूल (तथा) मुद्गरों के प्रहारों से पीड़ित करने पर, उधर रक्तसिक्तांग हो वायुपुत्र क्रुद्ध हो, विशाल कुलशैल सदृश पर्वत को उठाकर, असुरों पर बिना कमज़ोर हुए (अधिक बल से), डाल देने पर, वे चूर हो गिर पड़े जैसे बड़े चूहे गर्त में गिर पड़ते हों। तब वायुनन्दन के उनके सैन्यों को अन्तक के समान नष्ट करते समय, ॥ ७६० ॥

—गिरते करियों, नष्ट होते अश्वों, भागते पैदलों, ध्वस्त होते रथों, विकल होते शूरों, मरते महारथियों, दबते सारथियों, चूर्ण बने शस्त्रों, नष्ट होते अस्त्रों, मरे हुए तुरंगों, मरते पैदल भटों, गिरते महावतों, दबते घुड़सवारों, झुकते छत्रों, ध्वस्त होते ध्वजाओं, प्रवाहित रक्त की नदियों, प्रचुर मांस (खंडों) के लिए आकृष्ट भूतों से युक्त हो रण के शोभित होने पर, क्षणमात्र में ही उन (राक्षसों) का संहार कर, वायुज रणकांक्षा से

बंचसेनाग्रगुल् पंचत्वमोंदि । रंचुनु हतशेषुलय्येंड देलुप

अक्षयकुमारुडु हनुमपै नेत्तिवच्चुट

राक्षसपति यंत रणबलोदारु । निक्षु चापाकारु निद्ध विचारु
नक्षीणदोस्सारु नसहायशूरु । नक्षयकुमारु महावीरु बिलिचि
"यलवुमै ना कोति ननिलोन जंपि । तलगोसि तोरणस्तंभंबुनंदु ७७०
गट्टि र" म्मनवुडु गडकतो नतडु । नेट्टन शस्त्रास्त्रनिचयंबुतोड
दुरगाष्टकमुतोड द्रुतगति तोड । बिरुदु टेक्केमुतोड बृथुकांति बोदलि
युदयार्कनिभमैन योकरथंबेक्कि । कदलि भूभागंबु गंपिप नडचे
नरदंबुस्रोतयु हयहेषितमुलु । गरिबृंहितमुलु रक्कसुल यार्पुलुनु
दन महाकार्मुक ध्वनियु नोंडोंड । घनमुलै याशावकाशमुल् निंड
दोरणारूढुडै तोलगक चेलगु । मारुति नक्षकुमारुंडु दाकि
त्रिजगमुल् भीतिल्ल दिशलु घूर्णिल्ल । भुजशक्ति पुंखानुपुंखंबुगाग
घनबाणततुल नक्कजमुगा बोंदुव । "ननि वीनि मदि बालुडनि येंचरादु;
घनपराक्रम कळाखनि वी' डटंचु । हनुमंतुडचलुडै या बाणततुल

फिर से तोरण पर चढ़ बैठा। तब हतशेषों के यह बताने पर कि पंचसेनापति पंचत्व को प्राप्त हुए,

अक्षकुमार का हनुमान पर आक्रमण करना

—तब राक्षसपति ने रणबल-उदार, इक्षुचापाकार (मन्मथ के सम आकार वाले), इद्ध विचारवाले, अक्षीण-दोःसार (बाहुबाल) वाले, असहाय शूर, महावीर, अक्षकुमार को बुलाकर (कहा):—"सबल हो, उस वानर को युद्ध में मारकर, सिर काटकर, तोरणस्तभ पर ।। ७७० ।।

—बाँधकर आओ।" ऐसा कहने पर साहस से वह सप्रयत्न अनिवार्य शस्त्र-अस्त्र-निचय (समूह) ले, आठ तुरगों तथा द्रुतगति के साथ, बिरुद को बतानेवाली पताका के साथ, पृथु कान्ति से शोभित उदयार्क-निभ (उदयकाल के सूर्य के सम) एक रथ पर चढ़कर चल पड़ा तो रथ की ध्वनि, घोड़ों की हिनहिनाहट, हाथियों की चिंघाड़, राक्षसों की गर्जनाएँ, अपने महाकार्मुक (धनुष) की ध्वनि पर परस्पर एक दूसरे से बढ़कर दिशाओं और अन्तराल में भर जाने पर, भूभाग काँप उठा। तोरण पर बैठ विचलित न होकर विलसित होनेवाले मारुति पर अक्षकुमार ने आक्रमण कर, तीन लोकों के भीत होने पर, दिशाओं के घूर्णित होने पर, भुजशक्ति से लगातार घनबाण-ततियों से आश्चर्यचकित रूप से घेर लिया। हनुमान यह सोचते हुए कि "युद्ध में इसे बालक नहीं मानना चाहिए। यह घनपराक्रम-कला की

वालमुखंबुन वडि द्रुंचिवैव । मॆलनि हनुमंतु मॆच्चुचु वाडु ७८०
बाणत्रयंबुन बावनि शिरमु । शोणितंबुलु गाऱ सूटि नेयुटयु
गीलालधारलु किरणमुल् गाग । बालभानुडु वोलॆ बरग जूपट्टि
या लोन ब्रळय कालाग्नियै मंडि । तालवृक्षमुन रथ्यमुलु द्रुंचुटयु
नेल बदातियै निलिचि वाडतनि । फालंबु शरमुल बदियिंट नॊंप
नवशुडै तॆप्पऱि यतडु वालमुन । दविलि यय्यक्षुनि तनुवु नॊंप्पिप
नक्षुंडु गदगॊनि यनिलतनूजु । वक्षंबु व्रेसिन वडि दूलि तॆलिसि
कुदिसि यग्गद बुच्चुकॊनि बिट्टु व्रेय । बॆदरि वाडोक विंटि पॆट्टोसरिंचि
तप्पिचुकॊनि वियत्तलमुन कैगसॆ । नप्पुडु पलकयु नडिदंबु गॊनुचु;
नलवुमै नंतलो ना वायुसुतुडु । तॊलगक या दैत्यु तोडनॆ यॆगसि
गद व्रेयुटयु जूचि खड्गमंकिंचि । गद रॆंडु तुनुकलुगा व्रेसि डासि ७९०
तॊडलु व्रेयुटयु वातूलनंदनुडु । पुडमिपै बडि नभंबुनकु बिट्टॆगसि
खगनाथुडुरगंबु गबळिंचुनट्टु । लॊगि वानि चरणंबु लॊडिसि रादिगिचि
तॆगुव गुम्मरिसारॆ तीरुन द्रिप्पि । जगतिपै व्रेसिन जवमॆल्ल दूलि

निधि है।" अचल हो, उन बाणततियों को वालमुख से झट तोड़ डाला। हनुमान की प्रशंसा करते हुए ।। ७८० ।।

—उसने तीन बाण सीधे पावनी (पवनपुत्र) के सिर पर डाले जिससे शोणित (रक्त) बह उठा। रक्त की धाराओं के किरणें होने पर बाल भानु के समान शोभायमान दीखकर, उतने में ही प्रलयकाल की अग्नि हो बल उठकर, (हनुमान ने) तालवृक्ष से रथ्यों (अश्वों) को मार डाला। जमीन पर पैदल खड़े होकर उसने उसके (हनुमान के) फाल-भाग को दस शरों से पीड़ित किया। अवश (बेहोश) हो (फिर) होश में आकर उसने (हनुमान ने) बाल (पूँछ) से अक्ष के शरीर को पीड़ित किया। अक्ष ने गदा लेकर अनिल तनूज के वक्ष पर डाल दिया, डालने पर झट मूर्च्छित हो (फिर) होश में आकर, सिकुड़कर, उस गदा को लेकर, पूरी शक्ति से फेंक दिया। वह (अक्ष) भीत होकर, धनुष मात्र की दूरी तक सरककर, बचकर, तब ढाल और तलवार लेकर आकाश की ओर उड़ा। उतने में न हटकर, वायुसुत ने उसी दैत्य के साथ उड़कर, गदा फेंक दी। (उसे) देख खड्ग चलाकर, गदा के दो टुकड़े कर, नियराकर, ।। ७९० ।।

—जाँघों पर मारने पर, वातूलनन्दन जमीन पर गिरकर, पूरी शक्ति से आकाश की ओर उड़ा। खगनाथ (गरुड़) के उरग (सर्प) को निगलने के समान क्रम से उसके चरण पकड़, खींच लिया, साहस से कुम्हार के चाक

पौलुपऱि तलनुन्न बौमिडिकमूडि । कलभूषणमुलुर्वि गनुकनि जेंदर
गुंडियल वगिलि प्रेगुलु वात दौट्टि । कंडलेल्लेड राल गनुग्रुड्लु सेंदर
नगलि यद्दानवुडंगंबुलेल्ल । बगिलि नेत्तुरु ग्रक्कि प्राणमुल् विडिचें;
वानि चावट्टु चूचि वासवाद्यमरु । लानंद भरितात्मुलै तन्नु बौगड
नंत ना हनुमंतु डसमान विजय । वंतुडै यार्चि दुर्वारुडै युंडे,
जेंदरिन दनुजुलच्चेरुवुगा बऱचि । त्रिदशारिसभ सौच्चि दीनुलै निलिचि
“बलियु डा वानरपति बाहुबलमु । दलप नच्चेरु वौंदु दानवाधीश !
८००
पौलिसिरि वनपालपुंगवुल्, गिंक । रुलु गीटडंगिरारूढ विक्रमुलु,
शतजिह्वुडिलगूले, शार्दूलमुखुडु । गतजीवुडय्ये, बिंगळनेत्रुडीलगें,
स्तनितहासुडु सच्चे, शार्दूलकबळु । डनि द्रुंगे, मृतुडय्ये नट जंबुमालि,
सोमिचि वक्रनासुडु स्रग्गे, रक्तरोमुंडु । लयमय्ये, रुधिराक्षुडडगे,
दळमुलतो शूलदंष्ट्रुडु मडिसे । जेलुवेदि मऱि दीर्घजिह्वुंडु देगिये,
रूपऱि पोये दुर्मुखुडु, दुर्धरुडु । प्रापिंचे मरणंबु, प्रघसुडु वडियें,

के समान (उसे) घुमाकर ज़मीन पर पटक दिया। (डाल देने पर) समस्त प्रताप के खोने पर, शोभा से शिर पर स्थित किरीट के छूटकर, सुन्दर आभूषणों के संभ्रम से भूमि पर बिखर जाने पर, हृत्पिंड के फटकर, आंतों के बाहर निकल आकर, कंडराओं (स्नायुओं) के जगह-जगह टूट पड़ने पर, आँख की पुतलियों के बिखर जाने पर, उस दानव ने समस्त अंगों के फूटने पर, रक्त उगलकर, प्राण छोड़ दिए। उसकी मृत्यु को उस प्रकार देखकर वासव आदि अमरों के आनन्द-भरित-आत्मावाले होते हुए अपनी प्रशंसा करने पर, तब हनुमान असमान विजयवान हो, गरजकर दुर्वार बना रहा। भीत बने दनुज, आश्चर्य चकित रूप से भागकर, त्रिदशारि (देवताओं के शत्रु) की सभा में प्रवेशकर, दीन हो, खड़े होकर, (बोले):—“हे दानवाधीश! उस बली वानरपति का बाहुबल सोचने पर आश्चर्यप्रद है॥ ८००॥

—वनपाल-पुंगव (श्रेष्ठ) मर गए, आरूढ़ विक्रम वाले किंकर नष्ट हो गए। शतजिह्व ज़मीन पर गिर गया, शार्दूलमुख गतजीव हुआ, पिंगल-नेत्र मर गया, स्तनितहास मर गया, शार्दूलकबल युद्ध में मर गया, उधर जंबूमालि मृत हो गया, पराक्रम दिखाकर वक्रनास समाप्त हो गया, रक्तरोम का लय हो गया, रुधिराक्ष का दमन हो गया, (अपनी) सेना के साथ शूलदंष्ट्र मर गया, शोभा को खोकर फिर दीर्घजिह्व कट गया, दुर्मुख का रूप ही नहीं रहा, दुर्धर मरण को प्राप्त हुआ, प्रघस गिर गया, भासकर्ण भस्म हो गया, यूपाक्ष गिर गया, विरूपाक्ष प्राण खो बैठा, अक्ष मर गया,

नुरुमय्यॆ भासकर्णुंडु, यूपाक्षु । डॊऱगॆ, विरूपाक्षु डुसुरुतो बासॆ,
नक्षुंडु दॆगटारॆ, हतुडय्यॆ नक्ष्म । वक्षुंडु, मडिसॆ दुर्वारसैन्यमुलु,
निक ना वानरु निंद्रादि सुरल । शंकिंप कनिमॊन साधिपलेरु,
प्रळयांतकुनिनैन बट्टि निर्जिप । जलमॆक्कि यसमानसत्त्वुडैनाडु,८१०
अमरारुलनु म्रिंग नगचर रूप । ममरदालिचन मृत्युवगु निजंबरय"
नावुडु वॆऱगंदि नाकारि वगल । भाविंचि यक्षुनि बलविंप दॊडगॆ,
"हा कुमारक ! यक्ष ! हा वीरवर्य ! । हा कपिचे नीवु नणगिते ?" यनुचु
दलकुचु बलविंचु तंड्रिनि जूचि । तॊलगक यिंद्रजित्तुडु चेरि पलिकॆ,

इंद्रजित्तुचे हनुम बद्धुडगुट

"देव ! नीकेटिकि धृतिदूलि वगव ? । ना वानराधमु नवलील दाकि
वारक यट जंपि वच्चॆद नॊंडॆ । धीरत निट बट्टि तॆच्चॆद नॊंडॆ"
ना विनि तन यग्रनंदनु जूचि । रावणुडनियॆ धैर्यस्फूर्ति निगुड,
"जिरकाल ममरेंद्रु जॆऱबॆट्टिनावु । परम मायाबल प्रौढुंडवीवु,

अशमवक्ष का वध हो गया, दुर्वार सैन्य नष्ट हो गया। अब उस वानर को युद्ध में इन्द्र आदि सुर भी निस्सन्देह जीत नहीं सकते। (लगता है) वह प्रलयान्तक (प्रलयकाल का यम) को भी पकड़ परास्त करने का हठ करने वाला असमान सत्त्व संपन्न है।॥ ८१० ॥

यह बात सच लगती है कि अमरारियों (राक्षसों) को निगल जाने के लिए मृत्यु ने मानो अगचर (वानर)-रूप धारण किया है।" ऐसा कहने पर चकित हो नाकारि (स्वर्ग का शत्रु) दुखी हो, अक्ष के बारे में विलाप करने लगा "हा कुमारक ! अक्ष ! हा वीरवर ! हाय, तुम (एक) कपि के हाथ मर गए ?" ऐसा कहते, विचलित हो, विलाप करने वाले पिता को देखकर, (निकट) पहुँच, हटे बिना, इन्द्रजीत ने कहा:—

इन्द्रजीत से हनुमान का बन्धित होना

—"हे देव ! धैर्य को छोड़ दुखी होने की तुम्हें क्या आवश्यकता है ? उस वानराधम पर सरलता से आक्रमण कर, वहाँ (युद्ध में) मार डालकर आऊँगा अथवा धैर्य से पकड़ यहाँ लाऊँगा।" ऐसा कहने पर सुनकर, अपने अग्रनन्दन को देखकर, धैर्य स्फूर्ति के शोभित होने पर, रावण बोला—"(तुमने) चिरकाल तक अमरेन्द्र को बन्दी बना रखा है, तुम परम माया-बल में प्रौढ़ हो, विक्रम के औन्नत्य में मुझसे बढ़ गए हो, निखिल लोकों में तुम्हारी समता कौन कर सकता है ? दर्प से ऐसा होने पर भी, उस

नाकंटॆ विक्रमोन्नति मिंचिनावु । नीकॆंदुरॆव्वरु निखिल लोकमुल ?
नसमुन नट्टुलय्यु ना वानरेंद्रु । नसदुगा वदलक यात्म नेमऱक८२०
बहुदिव्य बाण प्रभावमुल् सूपि । सहजशौर्यंबुन जयमु गैकॊनुमु"
अन दंड्रि वीड्कॊनि या मेघनादु । डनलार्क संकाशमगु रथंबॆक्कि
यगणित निज धनुर्ज्याघोषमुनकु । बॊगिलि दिग्गजकर्णपुटमुलु वगुल
जगमुलु बॆदर दिक्चक्र बंधमुलु । पगुल नार्चुचु वच्चि पवनजु दाकॆ,
ना समयंबुन नमरुलु मुनुलु । वासव प्रमुख दिग्वरुलु गिन्नरुलु
नुप्परंबुन नुंडि यॊदिगि वीक्षिप । नप्पंक्तिकंधरु नग्रनंदनुडु
नडरि यातनि देह मणुमात्रमैन । बॊडवडकुंड नद्भुतशितास्त्रमुलु
गुरिय नय्यस्त्रमुल् ग्रूरवालमुन । दरमिंडि चिदिपियु दप्पिचुकॊनियु
शरवेगलक्ष्यगोचरुडु गाकिट्लु । दुर मॊनरिंचॆ नद्भुत पौरुषमुन,
रावणि निर्जितैरावणि यंत । बावनि यसमान बलवेगमुनकु८३०
नरुदंदि मऱियु दिव्यास्त्रंबु लेय । बरुवडि खंडिंचि पवनजुडतनि
दरुशैलमुल वैव दर्पिंचि यसुर । शरमुल वानि जर्जरितमुल् सेसॆ,
जेसिन गनि यिंद्रजित्तुपै गविसि । या समीरात्मजुंडवलील दन्नि

वानरेंद्र को अल्प मान (उसे) न छोड़कर, आत्मा से असावधान न बनकर, ।। ८२० ।।

—अनेक दिव्य बाणों के प्रमाव को दिखाकर, सहजशौर्य से विजय को प्राप्त करो ।" (ऐसा) कहने पर पिता से बिदा लेकर, वह मेघनाद अनल (और) अर्क-संकाश (समान) रथ पर चढ़कर, अपने अगणित धनुर्ज्या-घोष से दिग्गजों के कर्णपुटों के फट जाने पर, लोकों के भीत होने पर, दिक्-चक्रबन्धों के फट जाने पर, गरजते हुए आकर, (उसने) पवनज पर आक्रमण किया । उस समय अमर, मुनि, वासव आदि दिग्वर (देवता-श्रेष्ठ), किन्नर आकाश में एक पार्श्व में हटकर, देखने लगे । (तब) पंक्तिकंधर के उस अग्रनन्दन ने उत्कर्ष से, अपनी देह को अणुमात्र भी प्रदर्शित न कर, अद्भुत-शित (तेज) अस्त्रों की वर्षा की । उन अस्त्रों को क्रम से क्रूर-वाल से नष्ट कर और बचकर, अद्भुत पौरुष से शर-वेग-लक्ष्य के लिए गोचर न होकर (हनुमान ने) युद्ध किया । तब रावणि (रावण का पुत्र) ने जो निर्जित-ऐरावणि (ऐरावत को जीतनेवाला) था, पावनी (हनुमान) के असमान बल और वेग को (देखकर), ।। ८३० ।।

—चकित हो, और भी दिव्यास्त्र डाले । बरज़ोरी उनका खंडनकर, पवनज ने उस पर तरु और शैल फेंके । दर्प से असुर ने उन्हें शरों से जर्जरित (छिन्नभिन्न) कर दिया । (ऐसा) करना देखकर, इन्द्रजीत पर

मोनयुचु रथरथ्यमुल नुग्गुसेय । ननिमोन विरथुडै या यिंद्रजित्तु
हनुमंतु कडिमिकि नच्चेरु वंदि । विनुतोग्रगति वायवीयास्त्रमेय
वायुपुत्तुडु गान वानराधीशु । डायस्त्रमुन दूल कचलुडै युन्न
नरुदंदि रौद्रास्त्रमतनिपै नेय । बेरिगि यातडु रुद्रबीजंबु गान
गदलक निलिचिन गनि यिंद्रजित्तु । मदिलोन गोपिंचि मारुति मीद
सुरसिद्धसाध्युलु सूचि कंपिंपि । बरमदुर्जयमैन ब्रह्मास्त्रमेय
ना यस्त्रराजंबु नवनियु मिन्नु । रायुचु दन मीद रा वायुसुतुडु८४०
ब्रह्मास्त्रमुन ब्राणभयमु लेकुंड । ब्रह्मचे वरमुलु वडयुट जेसि
बलुविडि ब्रऽतेंचु ब्रह्मास्त्रमुनकु । दलकक ब्रह्ममंत्रमुलुच्चरिंप
नदि चंपजालक यतनि बंधिंचि । कुदियिंचि पडवैचे गुंभिनि मीद,
बडिन मारुति जूचि "पट्टुडु कट्टु । डडवुडु पोंडवु" डंचुखिलराक्षसुलु
सुट्टु मुट्टि कठोर सूत्रजालमुल । गट्टिगा गट्टिरि कट्टल्क निगुड,
नंतलो हनुमंतुडवशुडैयुन्न । नेंतयु रयमुन निंद्रारि जेरि
"नलुव बाणंबुचे नाशंबु काक । बलियुडै यिट्टु कट्टबडियुन्नवाडु,

झपटकर, वह समीरात्मज सरलता से रथ और रथ्यों को लात मारकर चूर कर दिया। (तब) युद्ध क्षेत्र में विरथ हो, इन्द्रजीत ने, हनुमान के पराक्रम के कारण आश्चर्यचकित हो, विनुत-उग्रगति से वायव्य-अस्त्र चलाया। वायुपुत्र होने से वानराधीश उस अस्त्र के कारण न हिलकर, अचल हो खड़ा रहा। चकित हो, उस पर रौद्रास्त्र का प्रयोग किया। वह (हनुमान) रुद्रबीज था, अत: निश्चल हो खड़ा रहा। उसे देख मन में क्रुद्ध हो, सुर-सिद्ध-साध्यों को देखकर कंपायमान होने पर, मारुति पर परम दुर्जेय ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। उस अस्त्रराज के अवनि और आकाश को स्पर्श करते हुए, अपने ऊपर (ओर) आने पर वायुसुत ने ॥ ८४० ॥

—ब्रह्मा से यह वर प्राप्त करके रहने से कि ब्रह्मास्त्र से प्राण भय (हानि) नहीं होगी, उस विधि से आने वाले ब्रह्मास्त्र से विचलित न होकर, ब्रह्म-मंत्रों का उच्चारण करने पर, वह (अस्त्र) मार न सक, उसे बाँधकर, सिकोड़कर, ज़मीन पर गिरा दिया। गिरे मारुति को देख 'पकड़ो, बाँधो, दबाओ, चुभो दो,' कहते हुए सभी राक्षस, अधिक क्रोध के उमड़ने पर, उसे घेरकर, कठोर सूत्र-जाल से मज़बूती से बाँध दिया। उस समय हनुमान अवश हो पड़ा रहा। तब अति शीघ्रता से इन्द्रारि (इन्द्रजीत) (हनुमान के) पास पहुँच, यह निश्चय कर कि "ब्रह्मा के बाण से नष्ट हुए बिना यह बली, इस प्रकार बंधा पड़ा है। सोचने पर न जाने यह

एनय नी वानरुंडॆव्वडो ? वीनि । ननि मॊन जंपरा'' दनि निश्चयिंचि
यमितसत्त्वोन्नतुडै पट्टि तॆच्चि । तम तंड्रि मुंदऱ दडयक पॆट्ट
दन मंत्रिवरुलुनु दानु वेर्वेऱ ।दनयु लावुनकु दद्दयु संतसिंचि८५०
कनुगव गोपाग्निकणमुलु दॊरुग । हनुमंतु जूचि यिट्लनियॆ रावणुडु,
“ओरि वानरुड ! ना युन्न पट्टणमु । शूरत नॊंटिमै जॊच्चुट यॆट्लु ?
नी वॆव्वडवु ? मऱि नीकु बेरेमि ? । ये वॆरवुन वच्चितीवार्धि दाटि ?
हरुडु वंचिनवाडॊ ? हरि वंचिनाडॊ ? । परमेष्ठि निन्निट बंचिनवाडॊ ?
सुरगरुडोरगासुर सिद्ध साध्य । नर वियच्चर वरुल् ना पेरु विन्न
वेऱतुरु, नी विट्लु वॆऱवक वच्चि । तॆऱगंटि दॊरकैन दृष्टिप राक
वऱलॆडु ना पुरि पंचन जॊच्चि । पॆरिकिति वनमॆल्ल बीरंबु मॆऱसि,
बडुगु रक्कसुल दुर्बलुल गॊंदऱिनि । मडियिंचितिवि मेटि मगवाडु वोलॆ,
दीपिंचु नीदगु तेजंबु सूड । गापेयमात्रुडु गावु चिंतिंप,
निप्पुडी नेरंबु लिन्नियु गातु । दप्पक नी राक तग जॆप्पितेनि''८६०
ननिन ना हनुमंतु डद्दशकंठु । गनुगॊनि यॆंतयु गनलि यिट्लनियॆ,

वानर कौन है ? इसे युद्ध क्षेत्र में नहीं मारना चाहिए।'' अमित सत्त्वोन्नत वाले उसे पकड़ लाकर, अविलंब अपने पिता के समक्ष रख दिया। स्वयं और अपने श्रेष्ठमंत्रियों के साथ, अलग-अलग, अपने पुत्र की सामर्थ्य पर अधिक प्रसन्न हो, ।। ८५० ।।

—नेत्रद्वय से कोपाग्निकणों के ढुलकने पर, हनुमान को देख रावण ने यों कहा:—“रे वानर ! मेरे नगर में अकेले ही शूरता के साथ (तुमने) कैसे प्रवेश किया ? तुम कौन हो ? फिर तुम्हारा नाम क्या है ? किस प्रकार से इस वारिधि को पार कर आए हो ? (तुम्हें) हर (शिव) ने भेजा है ? (या) हरि ने भेजा है ? या परमेष्ठी (ब्रह्मा) ने तुम्हें यहाँ भेजा है ? सुर, गरुड़, उरग (नाग), असुर, सिद्ध, साध्य, नर (और) वियच्चर (देवता)-वर मेरा नाम सुनकर डरते हैं। तुमने इस प्रकार भीत हुए बिना, आकर, इन्द्र के लिए भी, देखने में दुर्निवार होकर विराजमान मेरी नगरी में धोखे से प्रवेशकर, वीरता प्रदर्शित कर, समस्त वन को उखाड़ डाला। महान् पराक्रमी के समान कुछ अशक्त (तथा) दुर्बल राक्षसों का वध किया। दीप्तिमान तुम्हारे तेज को देखने से लगता है कि तुम मात्र कपि नहीं हो। अपने आगमन (के कारण) के बारे में समुचित रूप से बताओगे तो अब इन सभी अपराधों को क्षमा कर दूँगा।'' ।। ८६० ।।

—(ऐसा) कहने पर हनुमान ने दशकंठ को देखकर, अत्यधिक क्रुद्ध हो यों कहा:—

हनुम रावणुनिकि दन राक यॆऱिगिंचुट

“नोरि राक्षस! विनरोरि नीचात्म!। दूरीकृताचार ! दुष्टमानसुड ! विशदकीर्तुलु मुन्नु विश्वंबुनिंड ; दशरथेश्वरुनकु दनयुडै पुट्टि यरिगि विश्वामित्रु यागंबु गाचि । हरुविल्लु विऱिचि महाशक्ति मॆऱसि परशुरामुनि बट्टि भंगिंचि विडिचि। खरदूषणादि राक्षसुल खंडिंचि नी पॆंपु गुदियिंचि निनु दोक गट्टि । येपुन जलधुल नीड्चिन वालि बॊलुपार नॊक बाणमुन गूलनेसि । बलियुडै सुग्रीवु बट्टंबु गट्टि यक्षीणशक्तिमै नतुलकोदंड । दीक्षागुरुंडन देजंबु मॆऱसि तगिलि राक्षसकुलांतकुडैन राम । जगतीशु निजदूत, जतुरमानसुड, हनुमंतु डनुवाड, नर्कजु मंत्रि । निनवंशनिधि रामुडिट नन्नु बनुप८७० मुदमॊप्प बति व्रेलि मुद्रिक गॊनुचु नॊंदविन कडिमिमै नुदधि लंघिंचि वच्चि नी पुरि जॊच्चि वैदेहि वॆदकि। यॆच्चट बॊडगान कॆंतयु वगचि यवनिज वनमुलो नारसि कांचि । यवनीशुडिच्चिन यानवालिच्चि देवि नी पुरि नुन्न तॆऱगॆल्ल राम । भूवरुनकु जॆप्प बोवुचुनुंडि

हनुमान का रावण को अपना आगमन बताना

“अरे राक्षस ! सुन रे नीचात्मा ! दूरीकृत (सत्) आचार वाले ! रे दुष्ट मानसवाले ! पूर्व में विशद कीर्तियों के विश्वों में भर जाने पर, दशरथेश्वर के तनय के रूप में जन्म लेकर, जाकर, विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा कर, शिव धनुष का खंडनकर, महाशक्ति से प्रकाशित होकर, परशुराम को पकड़ अपमानित कर छोड़ दिया, खरदूषण आदि राक्षसों का खंडन (संहार) किया। तुम्हारे औन्नत्य को लघु बनाकर तुम्हें (अपनी) पूँछ से बाँधकर, शोभा से जलधियों में घसीटनेवाले वालि को शोभा से एक बाण से गिराया। बली हो सुग्रीव का राजतिलक कर, अक्षीण शक्ति से, अतुल-कोदंड-दीक्षा गुरु के नाम से प्रख्यात होने वाले राक्षस-कुलान्तक (बने) जगदीश राम का निजी दूत हूँ, चतुर मानस वाला हूँ, हनुमान नाम वाला हूँ, अर्कज (सुग्रीव) का मंत्री हूँ। इनवंशनिधि राम के यहाँ मुझे भेजने पर ॥ ८७० ॥

—आनन्द से पति (राम) की उंगली की मुद्रिका लेकर, उत्पन्न साहस से उदधि को लाँघकर, आकर, तुम्हारी पुरी में पैठकर, वैदेही का अन्वेषण कर, कहीं उसे न पाकर, अधिक दुखी हो, (तत्पश्चात्) अवनिजा को (अशोक) वन में देख, अवनीश (राजा राम) का दिया चिह्न देकर, राजा राम को यह कहने जाते हुए कि तुम्हारी पुरी में देवी (सीता)

यॆनसि ना राक नी कॆऱिंगिप गोरि । पॆनचि नी वनमॆल्ल बॆऱिकि पो वैचि
वनपालुरगु दैत्यवरुल गिंकरुल । नॆनुबदि वेवुर नेपुमै गडगि
मडियिंचि मुनुमिडि मंत्रिनंदनुल । मडियिंचि यक्षुनि मडियिंचि पिदप
दगिलि नी युन्न चंदमुलॆल्ल जूचि । मगुडि पोयॆदननि मऱि पट्टुवडिति,
ना रामु निजभृत्युडैन सुग्रीवु । भूरि सैन्यमुललो बॊलुपुदीपिंप
नलवुन नाकंटॆ नति बलाधिकुलु ।कॊलदि बॆट्टगरानि कोटुलुन्नार,८८०
लदिमि ब्रह्मादुलनैन साधिंचु । मदयुतुल् नीवन्न मंडुचुंडुदुरु,
गॊनकॊनि या वीर कोटुलतोड । वननिधि बंधिंचि वच्चि राघवुडु
लंकपै विडिसि च्चलमु पॆंपॆक्क । गिंकमै नसुरुल गीटणगिंचि
नी तलल् नुग्गाडि निनु संहरिंचि । सीत दोड्कॊनिपोवु,सिद्धमीपलुकु,
नॆलकॊनि नीविंक नीतिमार्गमुन । दॊलगक बुद्धिमंतुडवैन विनुमु !
सीत नॊप्पिंचि याश्रितलोक पारि । जातंबु रघुरामु शरणंबु सॊरुमु,
वलवदु वैरंबु, वसुधेशुचेत ।बॊलियक नी प्राणमुलु गाचिकॊनुम”
यनि बुद्धि सॆप्पिन हनुमंतु जूचि । कनलुनु बॆंपु मॊक्कलमुनु गदुर
घनघनाघनमेचि गर्जिंचिनट्लु । तनियक भर्जिंचि दशकंठु डलिगि

किस विधि से है, सोचा कि तुम्हें अपने आगमन के बारे में जता दूँ। इसी से तुम्हारे समस्त वन को उखाड़ डाला, वनपालक दैत्यवर, तथा अस्सी हजार किंकरों का शोभा से वध कर दिया, तदनन्तर मंत्रि-नन्दनों का संहार कर, अक्ष का संहारकर, बाद में तुम्हारे समस्त विधान को देखकर लौट जाने की इच्छा से बंदी बना हूँ। राम के निजभृत्य सुग्रीव की भूरि सेनाओं में, शोभा के दीप्त होने पर, बल में मुझसे भी अति बलाधिक, संख्या में करोड़ों (वानर) हैं, ।। ८८० ।।

—ब्रह्मादियों को जीतने वाले वे मदयुत (मस्त) (वीर) तुम्हारे नाम से ही जलते रहते हैं। चाहकर, उन वीर-कोटियों के साथ वननिधि (समुद्र) को बाँधकर, आकर, राघव लंका पर आक्रमण कर, हठ के उत्कर्षित होने पर, क्रोध से असुरों का संहार कर, तुम्हारे सिरों को चूर कर, तुम्हारा वध कर, सीता को ले जाएगा। यह वचन तथ्य (सत्य) है। स्थिरता से तुम अब नीति मार्ग से हटे बिना बुद्धिमान होकर तो सुनो। सीता को मनाकर, आश्रितलोक (के लिए)-पारिज़ात रघुराम की शरण में आओ। शत्रुता उचित नहीं है। वसुधेश (राम) के हाथ, न मरकर, अपने प्राणों को बचा लो।” ऐसा हित (वचन) कहने पर, हनुमान को देख, क्रोध, औन्नत्य, मात्सर्य के उमड़ने पर, महान् घनाघन के विजृंभित हो गरजने के समान, अधिक भर्त्सना (फटकार) कर, दशकंठ ने क्रुद्ध हो, यह सोच कि

"वॆऱवक चनुदॆंचि वीडु ना यॆदुट । नऱुग्रम्मि दुर्भाषलाडुचुन्नाडु, ८९०
कॊनिपोयि चंपुडी कोतिकीटंबु" । ननि प्रहस्तुनि बंप नसुरेशु जूचि

दूत जंपरादनि विभीषणुडु रावणुनि वारिंचुट

विनयभाषणुडु विवेकभूषणुडु । ननघपोषणुडु मत्तारि भीषणुडु
ना विभीषणुडु कार्यमु दीर्घचिंत । भाविंचि चूचि येर्पड विन्नविंचॆ,
"मगुवल ब्राह्मल मऱि बालकुलनु । दगदु दूतल जंप दनुजाधिनाथ !
वलनॊप्प बति पंप वच्चिन दूत । ललवुमै नेमैन नाडुचुनुंदु,
रदि दूतलकु धर्म, मदि विचारिंचि । मदि गोपमॊक्किंत मट्टु गाविंपु,
तुदि दूत लॆंदु वध्युलु गारु गान । बॊंदिवि यी कोति जंपुट पाडि गादु,
छलमु गोपमु रामसौमित्रुलंदु । वॆलुवरिंपुमु, वीनि विडिचि पोनिम्मु,
मगुडनि किन्क नी मदि नुंडॆनेनि । दगिन दंडमु कॊंत दंडिंचि पुच्चु"
मनि नीति चॆप्पिन ननि वाक्यमुलु । विनि रावणुडु दैत्यवीरुल जूचि
९००
"कोतुलकॆल्लनु गुऱुतु वालंबु । ब्रातिगा, नट्टुगान ब्रजलॆल्ल जूड

"भीत हुए बिना आकर, यह मेरे सामने खुलकर अपशब्द कह रहा है" ।। ८९० ।।

—प्रहस्त को आज्ञा दी कि "इस कपि-कीट (कीड़े) को ले जाकर मार डालो ।" (तब) असुरेश को देखकर,

विभीषण का रावण से कहना कि दूत को नहीं मारना चाहिए

--विनय-भाषण वाला, विवेकभूषण, अनघ-पोषण करनेवाला, मत्त-अरि-भीषण, वह विभीषण ने (भविष्य के) कार्य का दीर्घचिन्तन कर, भावना कर, ढंग से निवेदन किया:--"हे दनुजादिनाथ ! स्त्रियों, ब्राह्मणों, बालकों तथा दूतों को नहीं मारना चाहिए । शोभा से (अपने) स्वामी द्वारा भेजने पर आए दूत सामर्थ्य से जो भी हो, कहते रहते हैं । (ऐसी वाचलता) दूतों का धर्म है । मन से विचारकर, मन में क्रोध को थोड़ा कम कर दो । अन्त में दूत कहीं भी वध्य नहीं हैं न ! अतः इस कपि को पकड़कर मारना न्याय (-संगत) नहीं है । (अपना) हठ तथा क्रोध राम और सौमित्र पर प्रकट करो । इसे छोड़ जाने दो । यदि अपने मन में अभी क्रोध कम न हुआ हो, तो थोड़ा योग्य दंड देकर भेज दो ।" इस प्रकार नीति (-वाक्य) कहने पर, उसके वाक्य सुन रावण ने दैत्यवीरों को देख (कहा):-- ।। ९०० ।।

वीनि वालमु गालिच वीथुल द्रिप्पि। पोनिंडु" नावुडु बोंदिवि राक्षसुलु
बलुम्रोकुलोंगि देंच्चि पवनजु बट्टि। बलिमि जेतुलु काळ्ळु बंधिचि तोंच्चि
"मनवारि बेंवकंड्र मडियिचिनट्टि। चेंनटि कीटमु लेंस्स चिक्केंरा !" यनुचु
बुरवीथुलंदु द्रिप्पुचु नंतकंत। वरुस दूर्यंबुलु वायिचुकोंनुचु
नेंल्लंदु मेंलग नय्येंड वायुसुतुडु। कल्लरि दनुजुल गलय ग्रेगंट
गनुगोंचु मरियु लंकापुरंबेंल्ल ; गनुगोनु तलपुन गासिकि नोर्चि
हीनसत्त्वुडु वोलें विटनटु दिरुग। नानाविधंबुल नगुचु गेरुचुनु
नाबालगोपालमतनि वेंन् दगुल। ना बूमेंलकु बुण्युलात्मलो वगव

हनुम तोककु निप्पंटिंचुट

दलकोंनि यंत गोंदरु दैत्यवरुलु।च्रलमुन जीरलसंख्यमुल् देंच्चि९१०
कालसर्पाकृतुल्गा तिरुल् दलिच। लोलत नवि नूनेंलो दोंचि तोंचि
"यिदि यशोकाराममेंल्ल खंडिचें। निदि दानवेंद्रुल निदरु जंपें,
दीनिकि दगु शास्ति देवारि वेंट्टें। दीनिगाल्त" मटंचु देंगुव नोंडोरुलु

--"समस्त कपियों के लिए पूँछ प्रिय चिह्न है। अतः सब लोगों के समक्ष इसकी पूँछ को जलाकर, (नगर-) वीथियों में घुमाकर, (तब) जाने दो।" ऐसा कहने पर (हनुमान को) घेरकर राक्षस झट मोटे मोटे रस्से लाकर, पवनज को पकड़, मज़बूती से हाथ और पैर बाँधकर, यह कहते हुए कि "हमारे कई लोगों को मार डालनेवाला दुष्टकीट ढंग से फँस गया न", पुर-वीथियों में घुमाते हुए, क्रम से अधिकाधिक तूर्य बजाते हुए, हर जगह घूमने लगे। तो उस समय वायुसुत मृषावादी दनुजों को सर्वत्र कनखियों से देखते हुए, और समस्त लंकापुर को देखने के विचार से, तकलीफ़ को सहते हुए, हीनसत्त्व वाले के समान इधर-उधर घूमता रहा। नाना विधियों से हंसते हुए, मज़ाक उड़ाते हुए, आबाल-गोपाल (सभी लोग) उसके पीछे हो गए। उन दुश्चर्याओं के कारण पुण्यी जन मन में दुखी हुए।

हनुमान की पूँछ में आग लगाना

तब कुछ दैत्यवर ज़िद करके असंख्य चीर (वस्त्र) लाकर, ॥ ९१० ॥
—काल सर्प की आकृतियों में बँटाकर, सुन्दरता से उन्हें तेल में डाल-डालकर, आपस में यह कहते हुए कि "इसने समस्त अशोकवन को नष्ट किया, इसने इतने (बहुत-से) दानवेन्द्रों को मार डाला, देवारि (रावण)

नॊदविन लंकलो नुत्पातकेतु । वुदयिंचॆ नन बॆर्चुचुन्न वालमुन
नच्च्रलंबुन जीर लन्नियु जुट्टि । चिच्चु दगिलिच्चिरच्चॆरुवुगा मंड,
दनुजुलु सिंहनादमुलु सेयुचुनु । वॆनुवॆंट दगुल ना वृत्तांतमॆल्ल
दप्पक दनुजकांतलु सूचि पोयि । चॆप्पिन नप्पुडु सीत शोकिंचि,
“यक्कटा ! नीतिज्ञुडैन नीकिट्टि । यिक्कुपाटुनु गल्गॆने ? तंड्रि” यनुचु
जलमुल मुट्टि सुस्थलमुन निलिच । चॆलवॊप्प नग्निकि जेतुलु मॊगिचि
“या रामविभुडु धर्मात्मुडौनेनि ।वारिधि नाकुगा वडि दाटुनेनि९२०
ई रावणुनि रामु डिल गूल्चुनेनि । वारक ये बतिव्रतनौदुनेनि
जनकभूपति सर्वसमुडगुनेनि । दनरु वेदमुलु सत्यमुलगुनेनि
पवमानमित्र ! यो परमपवित्र !। सवकेकि शरद! दोषह्लद द्विरद!
वरद ! वैश्वानर ! वानरोत्तमुनि । बरमशीतलुडवै पालिपुमय्य !”
यनि सीत प्रार्थिप ननिलसूनुनकु । घनवालमनु पेरि कालाहि तलनु
गनुपट्टु माणिक्यकळिकना मॆरसि । यनलुंडु गडु जल्लनैयुंडै, नंत
ना विधंबुनकु दा नाश्चर्यमंदि । पावनि “तन तंड्रि पावकसखुडु

ने इसे उचित दंड दिया है। इसे जला डालेंगे।” मानों लंका में उत्पात (-सूचक) केतु का उदय हुआ (इस प्रकार) क्रम से बढ़ती पूँछ में हठ से समस्त चीर लपेटकर, आग लगा दी। वह आश्चर्यजनक रूप से जलने लगी। दनुजों के सिंहनाद करते हुए, पीछे लगने के समस्त वृत्तान्त को अवश्य देखकर, दनुज कान्ताओं के जाकर बताने पर, तब सीता दुखी हुई (और) यह सोचकर कि “हाय ! तात ! नीतिज्ञ हो तुम्हें ऐसी दुरवस्था प्राप्त हुई !” जल का स्पर्शकर, सुस्थल पर खड़े रहकर, शोभा से अग्नि को हाथ जोड़कर (कहा):—“यदि रामविभु धर्मात्मा है, मेरे लिए झट वारिध पार करनेवाला है, ।। ९२० ।।

—इस रावण को राम (मार) ज़मीन पर गिरानेवाला है, मैं पतिव्रता हूँ, जनकभूपति सर्वसम (-दृष्टि) वाले हैं, शोभायमान वेद सत्य हैं तो हे पवमान-मित्र ! हे परमपवित्र ! सवकेकि (यज्ञ रूपी मयूर के लिए) -शरद् (शरद् मेघ) ! दोषह्लद (दोषरूपी सरोवर के लिए) द्विरद ! हे वरद ! हे वैश्वानर ! परमशीतल बनकर वानरोत्तम का पालन (रक्षा) करो।” इस प्रकार सीता के प्रार्थना करने पर, अनिलसून के महान वालरूपी कालाहि (कालसर्प) के सिर दीखनेवाले माणिक्य के समान प्रकाशित हो अनल अति शीतल बना रहा। तब उस विधान से आश्चर्य-चकित हो, पावनी यह सोच होश में ही रहा कि “मेरा पिता पावक-सखा है। इसलिए शायद अग्नि ने मुझपर करुणा दिखाई हो ! (अथवा)

गावुन नन्नग्नि गरुणिंचे नोक्को ! । देवतलेल्ल ब्रार्थिचिरो ! राम
देवु विक्रममो ! येदियु गादु, सीत । दीवेन यिदि" यंचु देलिविमै नुंडे,
ब्रविमल तत्त्वैकपरुलैन जनुल । भवपाशमुलु वीडु भावंबु दोप९३०
ब्रह्म मंत्रमुलु दप्पक युच्चरिप । ब्रह्मपाशमुलूडै बवनसूनुनकु,
नंत ना हनुमंतुडसुरेशु लंक । यंतयु गाल्पग ननुवु सिंतिचि
"यलवड दनकुनै यग्निसूक्तमुलु । जलमुललो ग्रुंकि जपिंयिपवलयु"
ननि पोयि मुनिगिनट्लपरांबुराशि। निनुडस्तमिंचिन नेचि वायुजुडु
कनकमहीधराकारमै योप्पु । तन मेनु डिचि बंधमुलेल्ल द्रुंचि
कीडाचरिंचुचु - गेलि सेयुचुनु । वेडुकतो दन वेनुवेंट वच्चु

लंकादहनमु

दनुजुल निर्जिचि दनुजेशुडुन्न । घनमैन मेड कुत्कट शक्ति नेगसि
तन वालवह्नुलंतट दरिकोल्प । दनरि यंतंतकुदग्रंबुलगुचु
बुगुलन बोगलोप्पें, बोगलकु मुन्ने । निगिडि पेन्मंटल निंडे नाकसमु,
नाकसमुन मंटलडरकमुन्ने । पैकोनि यंदंद पर्वे नुल्कमुलु, ९४०

समस्त देवताओं ने (मेरे लिए) प्रार्थना की हो ! (अथवा) रामदेव का विक्रम हो ! नहीं, यह कुछ भी नहीं, यह सीता का आशीर्वाद है।" प्रविमल तत्त्वैकपर (परमात्मा में एकनिष्ठ)-जनों के भवपाशों के छूटने के समान ।। ९३० ।।

—ब्रह्ममन्त्रों के उच्चारण करने पर पवमानसून के ब्रह्मपाश छूट गए। तब हनुमान असुरेश की समस्त लंका को जलाने की सुविधा के बारे में चिन्तन करता रहा। अपरांबुराशि (पश्चिम समुद्र) में सूर्य का अस्त हुआ मानों उसने यह सोचा कि "मुझे जल में डूबकर अग्निसूक्त का जप करना चाहिए।" तब वायुज कनक-महीधर (पर्वत) के आकार से शोभित अपने शरीर को छोटा बनाकर समस्त बन्धनों को तोड़कर, अहित का आचरण करते हुए, उपहास करते हुए, उत्साह से अपने पीछे आने वाले,

लंका दहन

—दनुजों का वधकर, दनुजेश के उत्तुंग सौध पर उत्कट शक्ति से उछलकर, अपनी पूंछ की अग्नि चारों ओर लगा दी। शोभित हो, देखते-देखते उदग्र होते हुए, भयंकर धुआँ व्याप्त हो गया। धुएँ से पहले ही तनकर महाग्नि आकाश में व्याप्त हुई। आकाश में अग्नि के उत्कर्ष को प्राप्त करने से पहले ही जहाँ-तहाँ उल्काएँ गिरीं। ।। ९४० ।।

नडरि या युल्कल कटमुन्नॆ तॊलगि । वडि दिक्कुलकु बाऱॆ वरविमानमुलु,
नप्पुडु हनुमंतुडडरि यॊंडॊंड । कुप्पिचि मऱि कॊल्वुगूटमुल् गाल्चि
वरशस्त्रशाललु वडि नीऱु सेसि । यिरवॊंद बंड़ारपिड्लुनु गाल्चि
परुवडि सौधमुल् भस्मंबु सेसि । सॊरिदि व्रप्परमुलु चूर्णंबु सेसि
मणिचंद्रशाललु मसिगा नॊनर्चि । प्रणुत शय्यागेहपटलि दहिंचि
रमणीय गज वाजि रथशाललोलि । गमलिचि दग्धमुल् गा जेसॆ, नप्पु
डॆडपक यॆगसिन यॆऱमंटतुनुक । लुडुगक युडुवीथि नॊंडॊंट बर्वॆ
खचरोरगामरगण विमानमुलु । प्रचुर विभागैक परत जरिंप,
सॊरिदिमै रावणासुरु चेटु दॆल्प । दॊरगुनुल्कलयट्लु दोचॆ नुल्कमुलु,
राजन्यनिधि रघुरामभूपालु । डोजमै दंडॆत्त नुद्युक्तुडगुचु ९५०
बलुविडि लंकलोपल ब्रतापाग्नि । नॆलमिमै निर्गममिडियॆनो यनग
दहनुंडु निर्भर ध्वनुल ब्रह्मांड । कुहरंबु निंड मिक्कुटमुगा बर्वॆ,
रावणुडट घोर रणकळाकेळि । गावलुंडगुचु दिक्पालुरनॆल्ल
बऱचिन तॊल्लिटि भंगमुल् माऱु । पऱपक पोवनु भंगि बॆल्लॆगसि

—उन उल्काओं से पहले ही, हटकर, वर त्रिमान दिशाओं में भाग गए। तब हनुमान उत्कर्ष को प्राप्त हो, एक स्थान से दूसरे स्थान पर छलाँग भरते हुए, फिर सभागारों को जलाकर, वर-शस्त्र-शालाओं को शीघ्र भस्मकर, सफलता से भंडार-घरों को जलाकर, क्रम से सौधों को भस्मकर, पंक्तिबद्ध छप्परों को चूर्णकर, मणि(-मय) चन्द्रशालाओं को भस्म बनाकर, प्रनुत शय्यागृह-समूह का दहनकर, रमणीय गज-वाजि-रथ शालाओं को भूनकर दग्ध कर दिया। तब अविरल गति से ऊपर उठी धधकती अग्नि की शिखाएँ, निरन्तरता से उडुवीथि (आकाश) में व्याप्त हुईं। खेचर, उरग, अमर गणों के विमान अलग-अलग हो विचरने लगे। क्रमशः (लगातार) रावणासुर के अहित को बतानेवाले उल्काओं के समान उल्काएँ दीख पड़ीं। मानो राजन्य निधि रघुराम भूपाल ने ओज से आक्रमण करने उद्यत होते हुए ॥ ९५० ॥

—बरजोरी लंका में (राम की) प्रतापाग्नि का निर्गम[1] रखा हो, इस प्रकार दहन (अग्नि) निर्भर (अतिशय) ध्वनियों से ब्रह्मांड-कुहर को भरते हुए अधिकता से व्याप्त हुआ। पूर्व में रावण ने घोर-रण-कलाकेलि का कावल (पापी) होते हुए समस्त दिक्पालकों के प्रति जो अपमान किए, वे यूँ ही व्यर्थ नहीं जाएँगे, इस प्रकार अधिक व्याप्त हो, बढ़कर, विभीषण

---

[1] यात्रा के निश्चित समय से पहले, शुभमुहूर्त में पड़ोस के यहाँ निर्गमन का सूचक कोई वस्तु रखना (प्रस्थान)।

बलसि विभीषणु भवनमॊक्कटिय । वॆलिगाग बुरमॆल्ल व्रेल्मिडिलोन
दरिकॊनि मंडॆ, नत्तऱि दैत्यवरुलु । करमु भयभ्रांति गंपिंचुवारु
दललुनु जीरलु दरिकॊनि मंड । बलुविडि नलगड बाऱॆडु वारु,
दमतमवारलु दम बंधुजनुलु । गमरुट जूचि शोकमु नॊंदुवारु,
हाहानिनादंबुलडरिंचुवारु । ना हनुमंतुपै नलिगॆडि वारु,
"नादि देवुडु रामु, इतनिकि नॆग्गु । गादलचॆनु पापकर्मु" इन्वारु, ९६०
"नट्टि कीडॊनरिंचिनट्टि रावणुनि । किट्टियापद वितये" यनुवारु
नगुचुंड नॆंतयु नत्युग्रुडगुचु । नगचरवीरुंडु नलि जॆलरेगि
यॊकचोटु दप्पकयुंड ना लंक । सकलंबु गालिच युत्सवकेळि देलि
चन जन ना यगचरनाथु वाल । घनतरदीप्ताग्नि कडुनेपुमिगुल
नॆडपक पैरालु नॆऱमंटतुनुक । लुडुगक त्रोयुचु नॊगि दूलि तूलि
सोलि सुरापानसुखसुप्ति मुनिगि । कालुट यॆरुगक कालॆडु वारु
ना यॆड मृदुलशय्यलयंदु निदुर । पोयिनट्टुलॆ युंडि बॊंदुलु कमल
दॆलिविकि नॆडमीक तीव्राग्निशिखल । मिलमिल मिडुकुचु मृति बॊंदुवारु
दमतम बंधुल दम वधूजनुल । दमतम बिड्डल दम प्राणसखुल
दमतम वारलंदऱ दोडुकॊनुचु । गुमुरुलु गट्टि येगुचु म्रग्गुवारु ९७०

के भवन को छोड़कर, समस्त नगर पलभर में जल उठा। उस समय अधिक भयभ्रान्ति से कंपित होने वाले दैत्यवर, सिर (के बाल) और वस्त्रों के जलने पर चौतरफ़ भागनेवाले, अपने-अपने लोग (तथा) बन्धुजनों को भुने जाते देख, शोक करनेवाले, हाहाकार करनेवाले, हनुमान पर क्रुद्ध होनेवाले, "राम तो आदिदेव हैं, उसके प्रति पापकर्मा (रावण) ने अहित किया है", ॥ ९६० ॥

"उस प्रकार का अहित करनेवाले रावण पर इस प्रकार विपत्ति के आने में आश्चर्य ही क्या है?" ऐसा कहनेवाले बन गए। अत्यधिक अत्युग्र होते हुए, अगचर-वीर विजृंभित हो, एक स्थान को छोड़कर शेष समस्त लंका को जलाकर, उत्सवकेलि में ऊभचूभ हुआ। उस अगचरनाथ की पूँछ की घनतर-दीप्त-अग्नि के अधिक होकर, अनवरत ऊपर से गिरनेवाली लाल अग्नि के टुकड़ों (चिनगारियों) को निरन्तर हटाते हुए झूम-झूमकर, सुरापान की सुखसुप्ति में डूब बेहोश (कुछ राक्षस) जलना न जानकर ही जल गए। उस समय मृदुल शय्याओं पर निद्रा में रहकर, शरीर के भुनने पर, होश में न आकर, तीव्र अग्नि की शिखाओं के कारण झिलमिलाते (और) छटपटाते मरने वाले, अपने-अपने बन्धुजनों, अपने वधूजनों,

देॅगिर्यिड्लसरकुलु दिगिचि तेबोयि । मगुडि रानेरक श्रग्गेॅडु वारु
सतुल गौगिट जेॅर्चि सरि देॅच्चि तेॅच्चि । धृति दूलि वाकिड्ल
द्रेळ्ळेॅडुवारु
नै लंक घूर्णिल्ल नंतंत गदिय । नालोकभयदंबुलै मीऱिमीऱि
युरुसिहमुल बोलि युग्रत मिगिलि । करिकुंभविदळनगति मंडि मंडि
योज बेॅंपारु राहुत्तुल चंदमुन । वाजुलमीदिकि वडि दाटि दाटि
तर्गनिचु वरविटोत्तमुल चंदमुन । मोॅगि गामिनीकुचंबुलु ब्राकि प्राकि,
भाविंचि यन्युल ब्रहसिंचुवारि । कैवडि नालुकल् कडु ग्रोसि कोसि
तगिलि संतसमुन दलकोॅन्नवारु । मिगिलि युब्बेॅडुगति मिन्नंदि यंदि
पेॅलुकुऱि पऱतेॅंचु भीतुल पगिदि । दोॅलगक निगुडि गोॅंदुलु दूरि दूरि
वालुचु निब्भंगि वायुनंदनुनि । वालाग्नुलोॅगि लंक वडि जुट्टि काल्चेॅ,
९८०
गाल्चिन नुब्बि दिक्पतुलु देवतलु । 'मेल्चुट्ट मित' डनि मेॅच्चि तन् बोॅगड
हनुमंतुडंतट नंतरंगमुन । जनकजमरणंबु शंकिंचि बेॅदरि
"यी लंकतो गूड निनवंश्यु देवि । गालिचितिनि गन्नुगानक क्रोॅव्वि,

---

अपने-अपने बच्चों, अपने प्राणसखाओं, अपने-अपने सभी लोगों को साथ लिए, समूह बन जाते-जाते भुननेवाले, ।। ९७० ।।

—घरों में वस्तुओं को लाने जाकर, पीछे लौट न आ सक जल भुननेवाले, सतियों को छाती से लगाए ही, (उन्हें बाहर) लाने (के प्रयत्न) में धैर्य को खोकर, देहलियों पर गिर पड़ने वाले, (ऐसे राक्षसों से युक्त हो) इस प्रकार लंका घूर्णित होने लगी । क्रमशः फैलते हुए, आलोक से ही भयंकर हो, बढ़-बढ़कर, करिकुंभ (हाथियों के कुंभस्थल) के विदलन करने के लिए अधिक उग्र बने उरुसिंहों के समान भड़ककर, तेज से शोभित घुड़सवारों के समान, घोड़ों पर झट छलाँगें भर भरकर, वर-विटोत्तमों (लंपटों) की भाँति, लगन के साथ कामिनियों के कुचों पर व्याप्त होकर, जानबूझकर दूसरों को प्रहसित (निंदा) करने वालों की जिह्वाओं को काट-काटकर, प्रसन्नता में ऊभचूभ लोगों के अधिक फूलकर गगन चूमने के समान, बेहाल हो भागने वाले कायरों की भाँति न हटकर, गलियों में घुसघुसकर, इस प्रकार वायुनन्दन की वालाग्नियों ने शीघ्र लंका को घेरकर जला दिया । ।।९८० ।।

—जलाने पर, दिक्पति (तथा) देवता फूलकर, सराहकर 'यह हमारा श्रेष्ठ बन्धु है' कहकर प्रशंसा करने लगे । तब हनुमान ने अंतरंग में जनकजा के मरण की शंका कर डरकर (सोचा)—"चर्बी चढ़कर, आँखों के न दीखने पर (आँखों पर चर्बी चढ़ने के कारण) मैंने इस लंका के साथ,

येनिक रघुरामु नेमनि कांतु ? । जानकि सेममेसरणि दॆल्पुदुनु ?
दप्पॆ गार्यं" मटंचु दल्लडंबंदि । यप्पुडु तन मदि नट विवेकिंचि
"ये तल्लि दीवॆन नी घोर वह्नि । ना तोक रोममैन गमर्प वॆऱचॆ,
नट्टि सीतादेवि कग्निचे भयमु । वुट्टुने? यिदि येदि बुद्धि ?" यटंचु
धरणिज मदिलोनि तापाग्नुलार्चु । वॆरवुन वालाग्नि विषधिलो नार्चि
वॆस नशोकारामवीथिकि बोयि । यसुरकांतलु भयंबंदि वीक्षिप
दनुजकांतलचेत दनसेममॆल्ल । विनि मुन्ने संतोषविवशयैयुन्न ९९०
जनकपुत्रिकि म्रॊक्कि सन्निधि निलिचि। तन पौरुषमॆल्ल दग विन्नविंचि,
"यिदॆ पोयि तॆच्चॆद निनकुलेश्वरुनि। मदि लोन नीकु नुम्मलिकंबु दीर"
ननि "यिक बनिविंदु" ननुचु सीतकुनु। विनयंबुतो म्रॊक्कि वीड्कॊनि
कदलि
तडयक पश्चिमद्वारंबुनंदु । वॆडलुचु बावनि वॆस नेपुमिगिलि
तलुपुलु वड दन्न दलुपुलु विऱिगि । यिल गूलॆ राक्षसुलॆल्ल भीतिल्ल,

इनवंशवाले (राम) की देवी को भी जला डाला। अब मैं रघुराम के दर्शन कैसे कर सकूँगा ? जानकी के कुशल के बारे में कैसे बताऊँगा ? कार्य ही बिगड़ गया।" (थोड़ी देर) परेशान होकर, तब अपने मन से विवेकी होकर, "जिस माता के आशीर्वाद से यह घोर-वह्नि मेरी पूँछ के रोम को भी जलाने से डरी, उस सीतादेवी को अग्नि से भय होगा ? यह कैसी बुद्धि (विचार) है ?" धरणिजा के मन के ताप की अग्नि को बुझाने के समान, पूँछ की आग को विषधि (समुद्र) में बुझाकर, शीघ्र अशोक वन-वीथि में जाकर, असुरकान्ताओं के भीत होकर देखते रहने पर, पहले ही दनुजकान्ताओं के मुख अपना समस्त कुशल सुन, आनन्द-विवश बनी, ।। ९९० ।।

—जनकपुत्री को प्रणामकर, निकट खड़े हो, अपने समस्त पौरुष (कृत्य) को समुचित रूप से सुनाकर, यह कहते कि "यही जाकर इनकुलेश्वर (राम) को लाऊँगा जिससे तुम्हारे मन का ताप दूर हो" (और) "अब जाता हूँ", सीता को सविनय प्रणामकर, बिदा लेकर, निकलकर, विलंब न कर, पश्चिमद्वार से निकलते हुए, पावनी ने झट शोभा के उत्कर्ष से किवाड़ों पर लात मारी, किवाड़ टूटकर ज़मीन पर गिरे, सभी राक्षस भीत हुए।

हनुम यंगदादुल गलिसिकॊनुट

तुरुवडि ना लंक यॊकट गंपिप । बरवसंबन बॆंचि पदिलुडै वॆंडलि
वरुसतो नट्टळ्ळु वडि गूलदन्नि । यरिगि सुवेलाद्रि नवलील नॆक्कि
कलय लंकापुरि गल दैत्युलॆल्ल । बॆलुकुरि भीतिल्ल बॆल्लार्चि यार्चि
कडगि सानुवुलु भग्नंबुलै यब्धि । जॆंडि कूल वडि गंडशिललॆल्ल डुल्ल
नंगदमै वॆंचि यद्रिशृंगमुलु । क्रुंग गुंभिनि क्रुंग गुप्पिचि यॆगसि १०००
यटु दाटि बलुविडि नाकाशवीथि । बटु सत्त्वदेहसंपद वच्चि वच्चि
यरुदैन पॆर्मितो नब्धि मध्यमुन । बरगॆडु मैनाक पर्वताधीशु
गनि, यंदु दन सेन गल डप्पि दीर्चु । कॊनि पर्वतुनि वीडुकॊनि यटवच्चि
पॊलुपॊंद दन जवंबुनु बॆंपु सॊंपु । दलकॊनि जलधियुत्तरतीरभूमि
नतिसत्त्वसंपन्नुडै वच्चि निलुव । नतनि संतोषचिह्नमुलॆल्ल जूचि
यंगदुडादिगा नगचराधिपुलु । संगति नॆदुरुगा जनि कौगलिंचि,
प्रकटिंचि यंदंद परिणाममरसि । यॊकट नंदरु गूडि योलि गूर्चुंडि,
पोयिन कार्यंबु पॊलुपॊंद नडुग । ना युन्नतोन्नतुंडंदऱ जूचि
"कपुलार! येनु मी करुणमै जेसि । युपमिप नरुदैन युदधि लंघिंचि

हनुमान की अंगद आदियों से भेंट

एकदम लंका के कंपित होने पर, परवशता से (आनन्द से अपने को भूल) सुरक्षित रूप से निकलकर, क्रम से महलों को झट लातों से गिराकर, जाकर, सरलता से सुवेलाद्रि पर चढ़कर, लंकापुरी में सर्वत्र स्थित सभी दैत्य विह्वल तथा भीत हों, ऐसा अधिक जोर से गरज-गरजकर, (पर्वत के) सानु (-भाग) भग्न होकर अब्धि में गिरें, बड़ी चट्टानें गिर पड़ें, इस प्रकार शरीर को बढ़ाकर अद्रि के शृँग (तथा) कुंभिनी (पृथ्वी) के धँसने पर, छलाँग भरकर, उछलकर, (समुद्र को) पार कर, आकाशवीथि में पटु सत्त्व-देह संपत्ति से आ आकर, विरल प्रेम से, अब्धिमध्य में विलसित मैनाक पर्वताधीश को देख, वहाँ अपने शरीर की प्यास बुझाकर, पर्वत को बिदाकर, वहाँ से निकलकर, अपने वेग, औन्नत्य, सौंदर्य के शोभित होने पर, सप्रयत्न जलधि की उत्तर-तीरभूमि पर, अतिसत्त्वसंपन्न हो, आ खड़ा हो गया। उसकी प्रसन्नता के चिह्नों को देखकर, अंगद आदि अगचराधिप उसकी अगवानी कर, गले मिलकर, (हर्ष को) प्रकटकर, जहाँ-तहाँ परिणाम (के बारे में) पूछकर, एक स्थान पर सब मिलकर बैठकर, गए कार्य (के बारे में) शोभा से पूछने पर, वह उन्नतोन्नत (हनुमान) सबको देखकर (यों बोला)—"हे कपियो ! मैं आपकी करुणा से, अनुपम उदधि को

यगणित वैभवंबगु लंक जोंच्चि । तगिलि शोधिंचि सीतादेवि गांचि १०१०
यिनकुलाधिपुडानतिच्चिन तेऱगु । जनकनंदनतोड सकलंबु जेप्पि
यितिकि मुद्रिक यिरवंद निच्चि । यिति शिरोमणि यिदे पुच्चुकोनुचु
वच्चिति ने" नन्न वनचराधिपुलु । निच्चलो हर्षिंचि यिंपु सोंपोंदि
हनुमंतु नंदरु नन्नि चंदमुल । गोंनियाडि कोंनियाडि कोर्कुल देलि
युन्नचो नंगदुडुरुपराक्रमुडु । ऋन्नन नुत्साह कलितुडै पलिके,
"जनकज मनमिक साधिंचि तोडु । कोंनिपोयि रघुरामु गूर्चुट लेस्स,
यटु गान निप्पुडीयंबुधि दाटि । पटु पराक्रमुडैन पंक्तिकंधरुनि
सुतुलतो हितुलतो जुट्टालतोड । नतिरयंबुन जंपि यवनिज गोंनुच्चु
वत्तमु लें"डन्न वालिसूनुनकु । नत्तऱि ऋक्षेशुडनियै भाविंचि,
"मनल सुग्रीवुंडु मैथिलि वेंदुक । बनिच्चिन पनुलेल्ल बावनि वलन १०२०
ननघात्म! सफलंबुलय्यै, नी मीद । निनकुलाधिपुनितो नी वार्त देलुप
बोंवुट दगु" नन्न बुद्धि नोंडोरुलु । भाविंचि दानि केर्पड सम्मतिंचि
वनचरुल् नाडेल्ल वनधितीरमुन । ननिलसूनुडु दारु नर्थितो नुंडि

लाँघकर, अगणितवैभवयुक्त लंका में प्रवेशकर, अन्वेषण में लग, सीतादेवी को देख, ।। १०१० ।।

—इनकुलाधिप की आज्ञा का समस्त विधान, जनकनन्दना को बताकर, नारी (सीता) को शोभा से मुद्रिका देकर, नारी की शिरोमणि को लेते हुए, यह मैं आ गया हूँ । "(ऐसा) कहने पर वनचर-अधिप मन में हर्षित हो, आनन्द (और) शोभा को प्राप्त कर, सभी ने हनुमान को सभी प्रकार से सराहा-सराहा (और) इच्छाओं (भविष्य की कल्पनाओं) में ऊभचूभ हुए । तब उरु पराक्रमवाला अंगद शीघ्र उत्साह कलित हो बोला—'अब हमारे लिए सीता को जीत ले जाकर, रघुराम के पास पहुँचना उचित है । अतः अब इस अंबुधि को पारकर, पटु पराक्रमशाली पंक्ति-कंधर को सुत, हितू, बान्धवों के साथ अति शीघ्र मार डालकर, अवनिजा को लेते हुए आएँगे । उठिए ।" कहने पर, उस अवसर पर ऋक्षेश (जाँबवान) ने सोचकर, वालिसून से कहा—"हमें सुग्रीव ने मैथिली को ढूँढने के लिए भेजा था । वे समस्त कार्य पावनी द्वारा ।। १०२० ।।

—हे अनघात्म ! सफल (सम्पन्न) हुए हैं । अब आगे यह उचित है कि इनकुलाधिप को यह समाचार देने जावें ।" (ऐसा) कहने पर परस्पर विचार कर, उसे स्वीकार कर, वनचर, सारा दिन वनधि के तीर पर

बहुमूलफलमुल बरितृप्ति बोंदि । महितसत्त्वाधिकुल् मऱुनाडु गदलि
धरणिपै मेरुमंदरमुलकंटें । बरपैन दर्दुर पर्वतंबुनकु
जनुदेंचि यग्गिरिसानुदेशमुल । वनमूलफलमुलु वडि नास्वदिंचि
या यद्रिपति मीद ना रात्रि निलिचि । यायतभुजबलुलंत वेगुटयु

मधुवनमुलो अंगदादुल विहारमु

"मनमिंक सुग्रीवु मधुवनंबुनकु । नेंनसिन कडकतो नेगि यंदऱमु
दनिवोव देनियल् द्रावक युन्न । मन दप्पि पो' दनि मदि विचारिंचि
"यिनकुलाधिपु पनुलेल्ल साधिंचि । चनियेंद, मट्टुगान जलजाप्तसुतुडु
१०३०
मनमीद गोपिंचि मर्दिप वेंऱचु" । ननि निश्चयमु सेसि यंदऱु गूडि
हनुमंतु नंगदु नपुडु प्रार्थिंचि । यनुकूलमुग वारि यनुमति वडसि
याततबलुलु मध्याह्नंबु कोंलदि । केतेंचि मधुवनंबेपुमै जोंच्चि
दिक्कुल वेंदचल्लु तेनेतावुलकु । ग्रुक्किळ्ळु म्रिगुचु गुनिसियाडुचुनु
गोंनसेंवुल् रिक्किचि कोंक्किरिपुचुनु। गिनिसि योंडोंरुलु दर्किचुचु वेंड्क
लेंनयंग दमतमकिष्टंबुलैन । वनभूमुलकु बारि वनचराधिपुलु

अनिलसून के साथ प्रेम से रहे । बहु-मूल-फलों से परितृप्त होकर, (वे) महित सत्त्वाधिक दूसरे दिन निकलकर, धरणि पर मेरु (और) मन्दर पर्वतों की अपेक्षा उन्नत दर्दुर पर्वत पर आकर, उस गिरि के सानुप्रदेशों पर वन मूल-फलों को शीघ्र खाकर, उस अद्रिपति (पर्वत राजा) पर, उस रात को रहकर, पौ फटने पर आयतभुजबल वालों ने (यों सोचा)—

मधुवन में अंगदआदियों का विहार

"अब हम सुग्रीव के मधुवन को दीप्त पराक्रम से जाकर, सभी जी भरकर मधु का पान नहीं करेंगे तो हमारी प्यास नहीं बुझेगी ।" ऐसा मन में विचारकर, "इनकुलाधिप के समस्त कार्य संपन्न करके जा रहे हैं, अतः जलजाप्तसुत (सुग्रीव) ।। १०३० ।।

—हम पर रुष्ट होकर, मार-पीट (दंडित) करने में भीत होगा ।" ऐसा निश्चय कर सभी मिलकर, तब हनुमान (और) अंगद की प्रार्थना कर, उनकी अनुकूल अनुमति प्राप्त कर, (वे) आतत बलवाले मध्याह्न के समय आकर, मधुवन में उत्साह से प्रवेशकर, दिशाओं में परिव्याप्त मधुसौरभ के कारण, घूंट भरते हुए (टपकते हुए लार को पीते हुए, लालायित होते हुए) हाव-भाव प्रदर्शित करते नाचते हुए, कान के अन्तिम भाग खड़े

धीनिधुल् मऱि पूवुदेनियल् जुंटि । तेनियलुनु बुट्टतेनें मुन्नैन
पलुदेनियलु ग्रोलि फलमुलु नमलि । कलय बूवुलु राल्चि कायलु डुल्चि
तलिरुगोम्मलु द्रुंचि तरुकोटि वंचि । मलयुचु गोम्मकोम्मकु दाटि दाटि
योलसि पूदीगेल नुय्येललूगि ।कोलकुल ग्रोडिंचि कूडि वर्तिंप १०४०
नालोन दधिमुखुंडनग नावनमु । पालिंचुचुंडेडु प्लवगुडोक्करुडु
असमानकोपुडै यंदऱ गिनिसि । वेस दम्मु भर्जिंचि वेडलिपोंडनुचु
वनपालकुलचेत वरुस द्रोयिंप । वनचुरुल् वेस बाऱ वारि वारिंचि
वडि नंगदुंडुनु वायुनंदनुडु । दडयक दधिमुखु धरणिपै लील
गेडपि बेट्टग मोमुक्रिंदुगा नीड्चि । पोडिचि त्रोयुटयुनु बोलुपेदि वाडु
कोर्पिंचि मोऱवेट्टुकोनुचुनु बोयि । भूपालु पदपद्ममुलकु लक्ष्मणुनि
श्रीपादमुलकु सुस्थिरभक्ति म्रोक्कि । या पद्महितसूनु नडुगुल केऱगि
"देवदानवुलकु दृष्टिपरादु । देव ! नी वनमेल्ल, देजंबु मेऱसि
पेनगोनि वनचरुल् पेक्कंड्र तोड । जनुदेंचि यसमानसत्वुलै कूडि

करके, (एक दूसरे की) खिल्ली उड़ाते हुए, क्रुद्ध होकर, परस्पर तर्क करते हुए, उत्साह के उमड़ने पर, अपनी-अपनी प्रिय वनभूमियों में दौड़कर (वे) वनचराधिप जो धीनिधि हैं, पुष्प मकरंद, छत्तों के मधु, झाड़ियों में एकत्र मधु आदि अनेक प्रकार के मधु का पानकर, फल चबाकर, सर्वत्र फूल गिराकर, कच्चेफल गिराकर, नव-शाखाओं को तोड़, वृक्षसमूह को झुकाकर, घूमते हुए, एक शाखा से दूसरी शाखा पर छलांग भरकर, पुष्पलताओं पर झूला झूलकर, सरोवरों में क्रीड़ाएँ कर, सब मिलकर इस प्रकार बिचरने लगे ॥ १०४० ॥

इतने में उस वन की रक्षा करनेवाला दधिमुख नामक प्लवग (वानर) असमान कोपवाला होता हुआ, सब पर क्रुद्ध हो, झट निकल जाने के लिए फटकार कर, वनपालकों से क्रम से उन्हें ढकेलवा दिया। तब वनचर (वानर) झट भागने लगे तो उन्हें रोककर, झट अंगद और वायुनन्दन ने अविलंब दधिमुख को सलील धरणि पर गिराकर, मुँह के बल घसीटकर, घूँसे देकर, ढकेल दिया तो शोभा खोकर वह क्रुद्ध हो, दुहाई देते हुए जाकर, भूपाल (राम) के पद-पद्मों को, लक्ष्मण के श्रीचरणों को सुस्थिर भक्ति से प्रणाम कर, पद्महितसून (सुग्रीव) के चरणों में नत होकर (बोला)—"हे देव ! तुम्हारे समस्त वन को देव-दानव नजर उठाकर तक नहीं देख सकते। तेज से प्रकाशित होते हुए, अनेक वनचरों के साथ खींचातानी करते आकर, असमानसत्त्व वाले होकर, मिलकर, मरुत्तनय (हनुमान) तथा वालिपुत्र तुम्हारे मधुवन में आज आकर, ॥ १०५० ॥

या मरुत्तनयुंडु ना वालिसुतुडु । नी मधुवनमुलोनिकि नेडुवच्चि १०५०
तगिलि म्राकुल व्राकि तरुशाखललमि। तिगिचि पंडुलु दिनि तेनियल् ग्रोलि
यिदि राचवनमनि यिच्च भीतिलक। कुदियक यित गैकॊनकुन्न जूचि
यॆडपक जंकिंचि येनु मी यान ।बॊडिचि त्रोचुटयुनु बॊडिचिरि नन्नु"
ननि वाडु मॊऱयिड नलिगि सुग्रीवु। डॆनसि मर्दिप नूहिंचिन जूचि
यंत ना वृत्तांतमंतयु नॆऱिगि । संतत जयशालि सौमित्रि वलिकॆ,
"दॊलगक यंगदादुलु महाकपुलु । नॆलकॊनि सुग्रीव ! नी याज्ञवलन
तलकितयुनु लेक तमयंत जॊच्चि । नलि देनॆ द्रावुचुन्नारेनि विनुम
याततबलसत्त्वुलगु वारिचेत । सीताधिपतिपनुल् सिद्धिप नोपु,
गाकुन्न नीयाज्ञ गडव नोपुदुरॆ ? । कैकॊनि पिलिपिपु कडकतो वारि"
ननि बुद्धि सॆप्पिन नर्कनंदनुडु ।तन बुद्धि गैकॊनि दधिमुखु जूचि १०६०
"श्रीरामु कार्यंबु सेसिरि, गान । वारि चेसिन चेत वारिकि जॆल्लॆ,
नूरक यी शोकमुडिगि नीविक । वारि बुत्तॆ" म्मन्न वाडंत नरिगि
हनुमंतु नंगदु ना जांबवंतु ।गनि म्रॊक्कि" तन तप्पु गाचि मन्निंचि
वनचरोत्तमुलार ! वडि नेगुडिक । वनमुलोपल नुंडवलवदु मीरु,

—वृक्षों पर चढ़कर, तरुशाखाओं को जबरन् झुकाकर, फल खाकर, मधु का पानकर, मन में भीत न होकर, संकोच न कर कि यह राजवन है, इतना (कोलाहल) करने पर, पीछे न हटकर, मैंने आपके आदेश से उन्हें ढकेल दिया तो मुझे घूँसे लगाए हैं।" ऐसा उसके दुहाई देने पर, क्रुद्ध हो सुग्रीव का उन्हें मारने-पीटने का विचार करते देख, तब समस्त वृत्तान्त को जानकर, संतत जयशाली लक्ष्मण ने कहा—"हे सुग्रीव ! सुनो अंगद आदि महाकपि लगकर, तुम्हारी आज्ञा के बिना अपने आप (वन में) प्रवेशकर, यदि मधुपान कर रहे हैं तो आतत बल सत्त्ववाले उनसे सीताधिपति के कार्य संपन्न हुए होंगे। नहीं तो तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन कर सकते हैं ? चाहकर उन्हें सप्रयत्न बुलाओ।" ऐसा समझाने पर, अर्कनन्दन ने समझकर, दधिमुख को देखकर ॥ १०६० ॥

—(कहा)—"श्रीराम का कार्य (सम्पन्न) किया अत: उन्होंने जो किया वह उनके योग्य था। तुम इस शोक (व्यथा) को छोड़कर, उन्हें भेजो।" (ऐसा) कहने पर वह तब जाकर, हनुमान, अंगद, जांबवान को देख, प्रणाम कर, कहा—"हे वनचरोत्तम। मेरे अपराध को क्षमाकर, अब शीघ्र जाइए। आपको इस वन में नहीं रहना चाहिए। प्रेम से मिहिर-तनूज (सुग्रीव) ने तुम्हें बुला भेजने का मुझे आदेश देकर भेजा है।"

मिम्मु बुतॆम्मनि मिहिरतनूजु । डिम्मुल नाकानतिच्चिपुत्तॆंचॆ”
ननु वार्त सॆप्पिन नंदऱु नुब्बि । यिनसूनु नाज्ञकै यॆड गॊंकु वालि
तनयुनि नूरार्चि तडयक पॆंचि । वनचराधीशुलु वनभूमि वॆडलि
युप्पॊंगु कडकल नुप्परंबॆगसि । यप्पुडु मेघंबुलट्ल म्रोयुचुनु
वारक चनुदॆंचु वारि चिह्नमुलु । दूरंबुनंदॆ संतोषिंचि चूचि
यिनजुंडु गपिसेन नॆदुरुगा बंचि । यनुरक्ति रप्पिप नर्थितो वच्चिच १०७०

हनुमंतुड्डु सीतकुशलमुनु रामुन कॆऱिगिंचुट

जगतीशुडगु रामचंद्रुनंघ्रुलकु । नगचरुल् दंडप्रणाममुल् सेसि
तदनंतरंबुन दग लक्ष्मणुनकु । बिदप नर्कजुनकु ब्रीतितो म्रॊक्कि,
यंदऱु गॊनिवच्चि हनुमंतुनपुडु । मुंदऱ निडिकॊनि मुदमु दीपिंप
श्रीरामचंद्रुनि सिंहासनंबु । चेरुव नोलि नासीनुलै युंड,
वलनॊप्प दम पोयि वच्चिन तॆऱगु । दलकॊनि विनगोरु धरणीशु तलपु
हनुमंतुडॆंतयु नात्मलो नॆऱिगि । घनमैन भक्तितो गरमुलु मॊगिचि
“कमलाप्तकुलनाथ ! कंटि वैदेहि । ब्रमदाशिरोमणि बरम कल्याणि
धरणीश! मी याज्ञ दल मोचिकॊनुचु । नरुदैन देशंबुलन्नियु वॆदकि

ऐसा समाचार देने पर वे सब फूलकर, इनसून (सुग्रीव) के आदेश के (अभाव के कारण) भीत होनेवाले वालितनय को सान्त्वना देकर, अविलंब क्रम से बनचराधीश वनभूमि से निकल पड़े। तब उमड़ते साहस से आकाश तक उछलते हुए, मेघों के समान ध्वनि करते हुए, न रुककर आनेवाले उनके लक्षणों को दूर से ही सन्तुष्ट हो, देखकर, इनज ने कपि-सेना को अगवानी करने के लिए भेजकर, अनुरक्ति से बुलवाया। प्रेम से आकर, ।। १०७० ।।

हनुमान का सीता का कुशल राम को बताना

—अगचरों ने जगदीश रामचन्द्र की अंघ्रियों में दंड प्रणाम कर, तदनन्तर समुचित रूप से लक्ष्मण, उसके बाद अर्कज को प्रीति से प्रणाम किया। तब सब हनुमान को आगे करके, मोद के दीप्त होने पर, श्रीरामचन्द्र के सिंहासन के पास क्रम से आसीन हो रहे। शोभा से अपने जाने और आने के विधान को चाहकर सुनने की इच्छा रखनेवाले धरणीश (राम) के विचार को हनुमान ने अपने मन से जानकर, अधिक भक्ति से हाथ जोड़, (कहा)—“हे कमलाप्तकुलनाथ ! प्रमदाशिरोमणि, परमकल्याणी वैदेही को देखा है। हे धरणीश ! आपकी आज्ञा को सिर पर धारण कर, समस्त

चिरशक्ति संपातिचे द्रोव यॆऱिगि । यरिगि समुद्रमे नवलील दाटि
यॊनर दक्षिण वार्धि नुन्नतमहिम । दनरु त्रिकूटाद्रि दद्दयु नॊप्पि १०८०
दानवकुलपालितंबैन लंक । ये नॊक्करुड जॊच्चि यॆल्लचो वॆदकि
धरणिज गानक तद्दयु वगचि । यरिगि रावणुनि युद्यानंबु जॊच्चि
परिकिंचि राक्षसभामलु दन्नु । दिरिगि चुट्टुचुनुंड देव ! मी देवि
युपवासमुल ग्रुस्सि यॊक म्रानिक्रिंद । विपुलदु:खंबुल वॆल्लिलो मुनिगि
चॆक्किट जेयूदि चित्तंबुलोन । नॆक्कॊन्न वगलतो निनु दलंचुचुनु
दनुजुंडु सनुदॆंचि दंडिचु तॆऱगु । दन दिक्कुलेमिनि दलपोसि पोसि
युडुगक कन्नीळुलोरंत प्रॊद्दु । वडिय निट्टूर्पुलु वडि बुच्चि पुच्चि
मासिन चीरतो मलिनयै धूळि । धूसरितांगियै तूलि कै व्रालि
तलयूचि तलयूचि तलकॊन्न वगल । बलुमाऱु व्रेगुचु बलविप जूचि
मीनाक्षि चिह्नमुल् मीरु ना तोड । नानतिच्चिन जाडलन्नियु जूचि
१०९०
क्रममुन मऱि सीतगा निश्चयिंचि । कमलाक्षि बिदप डग्गऱि पोयि
म्रॊक्कि

अनुपम प्रदेशों में (उनका) अन्वेषण कर, चिरशक्ति वाले संपाति से मार्ग जानकर, जाकर, मैंने बड़ी आसानी से समुद्र पार किया। शोभा से दक्षिण समुद्र में, उन्नत महिमा से विराजमान त्रिकूटाद्रि पर आधिक्य से शोभित, ॥ १०८० ॥

—दानवकुलपालित लंका में मैंने अकेले ही प्रवेश कर, हर जगह खोजकर धरणिजा को न पाकर, अधिक दुखी हो, जा-जाकर रावण के उपवन में प्रवेशकर, परिशीलन किया, हे देव ! राक्षस भामाओं के अपने को घेरकर घूमते समय, आपकी देवी उपवासों से क्लान्त हो, एक वृक्ष के तले विपुल दुःख की बाढ़ में डूबकर, कपोल पर हाथ धरे, चित्त में उमड़ती व्यथाओं से आपका स्मरण करते हुए, दनुज के आकर दंडित करने के विधान तथा अपनी अनाथ-अवस्था का विचार करके दिनभर अविरत अश्रु बहाकर, लंबी आहें छोड़-छोड़कर, मलिन वस्त्र से मलिन बन, धूलि-धूसरित शरीर वाली हो, डगमगाते हुए, हाथ पर झुककर, सिर हिला-हिलाकर, अधिक व्यथाओं से बार-बार व्यथित होती हुई, विलाप करने लगीं। मीनाक्षी (सीता) के चिह्न तथा आप द्वारा आदिष्ट (आदेश दिए गए) सभी चिह्नों को (मिलाकर) देखकर, ॥ १०९० ॥

—क्रम से यह निश्चयकर कि यह सीता हैं, फिर कमलाक्षी (सीता) के निकट जाकर, प्रणामकर, तामरसाक्षी (सीता) से उचित बातें कर, (उस)

तामरसाक्षितो दगुमाटलाडि । लेमकु मी यंगुळीयकमिच्चि
मगुवशिरोमणि मऱि पुच्चुकॊनुचु । मगुडक यारामममंतयु बॆऱिकि
कमलाकरंबुल बट्टि कलचु सिंहंबु । तऱि वनपालकतति रूपुमापि
तरमिडि तमतंड्रि तलपु दीपिंप । नरुदॆंचिनट्टि या यक्षयु द्रुंचि
चॆलगि राक्षसवीरसेनल जंपि । यल यिंद्रजित्तुतो नचट बोराडि
रावणिचे जिक्कि राक्षसेश्वरुनि । कावर मणचंग गडगि ने वानि
वरमंदिरमु जेरि वलयु वाक्यमुल । बरुवडि ने दॆल्प वाडुनन् गनलि
वालमग्नि दगिल्चि वडि नेगुमनिन । गालिचि लंकनु गड्डु वडि गदलि
११००
यगणितंबैनट्टि यंबुधि दाटि । मगुड निन् गांचंग मदि दलपोसि
वच्चिति ने'' ननि वसुधाधिपतिकि ।नच्चुगा सति वियोगाग्नि कीललकु
मच्चिदि यन नॊप्पु माणिक्यमिच्चॆ। निच्चिन ना रत्नमेर्पड जूचि
यनुरागमुन दानि नल्लन बुच्चु । कॊनि डॆंदमुन जेर्चुकॊनि मूर्छबोयि
यॊक कॊंत प्रॊद्दुन कॊय्यन दॆलिसि। प्रकट धैर्यंबुन ब्राणमुल् निलिपि
नृपति बाष्पाकुलनेत्रुडै चूचि । कपिनाथु सुग्रीवु गरमर्थि बलिकॆ,

---

नारी को आपकी अंगूठी देकर, फिर नारी की शिरोमणि को ग्रहणकर, (वहाँ से) न लौटकर समस्त वन को उखाड़कर, कमलाकरों (सरोवरों) का मंथनकर, तुम्हारा स्मरणकर, कमलाप्तसुत (सुग्रीव) की आज्ञा का मन में विचार कर, करि-समूहों को पकड़ व्याकुल करनेवाले सिंह के समान, वनपालक-समूह को मिट्टी में मिलाकर, क्रम से अपने पिता के विचार को दीप्त करने आए हुए अक्ष(-कुमार) का वधकर, विजृंभित हो, राक्षस-वीरों की सेनाओं का संहार कर, तब वहाँ इन्द्रजीत से लड़कर, रावणि (इन्द्रजीत) के हाथ फँसकर, (वंदी बनकर), राक्षसेश्वर के गर्व का दमन करने लगकर मैंने उसके श्रेष्ठ मंदिर जाकर, आवश्यक बातें कर, औचित्य बताने पर, उसने मुझपर क्रुद्ध होकर, पूँछ में आग लगाकर, शीघ्र चले जाने के लिए कहा । (तब), लंका को जलाकर, अतिशीघ्र रवाना होकर, ।। ११०० ।।

—अगणित अंबुधि को पार कर, फिर तुम्हारे दर्शन करने का विचार कर मैं (यहाँ) आया हूँ ।'' (ऐसा) कह वसुधाधिपति को वास्तव में सती की वियोगाग्नि कीलाओं (ज्वालाओं) के नमूने के समान शोभित माणिक्य दिया । देने पर उस रत्न को ढंग से देखकर, अनुराग से उसे हाथ में ले, छाती से लगा, मूर्च्छित हो, थोड़ी देर के बाद झट से होश में आकर, प्रकटित धैर्य से प्राणों को रोक, नृपति बाष्पाकुलनेत्रों वाला होता हुआ (राम),

“भानुज ! ना प्राणप्रदमैनयट्टि । मानिनीमणि शिरोमणि जूचिनपुडॆ
ना मदि गरगुचुन्नदि लक्कवोलॆ । नी मणि मा मामकिच्चॆ निंद्रुंडु
यागसंतृप्तुडै यात्मलो मॆच्चि । या गुणनिधि जनकावनीविभुडु
नट्टि यी मणि सीतयौदल वेड्क । गट्टि पॆंड्लि यॊनर्चॆ गरमर्थि नाकु, ११११०
नन्नुल तलमिन्नयैन या सीत । नॆन्नडु नॆडबायदी मणि, नेडु
नातिनि नन्नु मन्नन गूर्पवच्चु । दूतिक यन सिरुल् दुलकिंप वच्चॆ ।”
ननि यनि यंदंद यक्कुन जेर्चि । मनुकुलेश्वरुडु रामक्षितीश्वरुडु
इनतनूजुनितोड निट्लनॆ मऱियु । “वनजातहितपुत्र ! वारक विनुमु,
ए दॆस जूचिन नॆद्दि गन्गॊनिन । ना दॆस नॆल्लनु नर्थि दानगुचु
ना दृष्टिमार्गंबुननु मदि नॆपुडु । वैदेहि पायदु वरुस नॊंडॆडनु,
वैदेहि बॊडगनिवच्चितिमनुट । वादमो, निजमो ? धीवर! यदिगाक
मुनु निमिषांतरंबुननु बायनट्टि । यनघात्म मत्प्रिय यवनीतनूज
जनकज यॊक्कतॆ जलनिधिशैल । वन बहुळांतरावासिनि यॆंदु
ननु नॆडबासि युन्नदि यॆव्विधमुन । घनविरहाग्निचे ग्रागुचु नचट ? ११२०

कपिनाथ सुग्रीव से बड़े प्रेम से बोला— “हे भानुज ! मेरे प्राणप्रद मानिनीमणि की शिरोमणि को देखने पर ही मेरा हृदय लाख के समान पिघल रहा है। यागसंतृप्त हो, मन से सराह कर, इन्द्र ने मेरे ससुर को यह मणि दी थी। गुणनिधि जनकावनी-विभु (राजा जनक) ने इस मणि को सीता के सिर पर उत्साह से पहनाकर, बड़े प्रेम से मेरा विवाह किया था। ॥ ११११० ॥

—नारियों में श्रेष्ठ उस सीता से यह मणि कभी अलग नहीं होती। आज नारी को सगौरव मुझसे मिला देने वाली दूतिका के समान, शोभाओं को बिखेरते आयी है।” ऐसा कह जब-तब उसे छाती से लगाकर, मनुकुलेश्वर राजा राम ने फिर इनतनूज से यों कहा— “हे वनजातहित (सूर्य) के पुत्र ! सावधानी से सुनो ! जिस किसी दिशा में देखें, जिस किसी को देखें, उसी दिशा में स्वयं (स्थित) होते हुए, वैदेही कभी मेरे दृष्टि-मार्ग से अलग नहीं होती। हे धीवर (धीमान्)! (इनका कथन) कि हम वैदेही को देख आए हैं बकवास है अथवा सच ? यही नहीं, पूर्व में पलभर के लिए भी मुझसे न बिछुड़ने वाली अनघात्मा वाली मेरी प्रिया, अवनीतनूजा, जनकजा अकेले ही जलनिधि-शैल-वन बहुलांतरावासिनी बन, वहाँ महान् विरह की अग्नि से तप्त होती हुई, मुझसे बिछुड़कर किस विध जी रही है ? ॥ ११२० ॥

जनकज बासि यिच्चट निल्वलेवु । तनुवुन ब्राणमुल्, तडयक यिंक
जनकजयुन्न यच्चटिकि गोंगोयि । मनमुलो वग नुडुपु मर्कटाधीश!"
यनुचु ब्रलापिंचु ना रामचंद्रु । ननुवंद नूरार्चि हनुमंतुडनियें,
वननिधि दाटि रावणु जंपि जगमु । ननुमोदमुन गोंनियाड भूपुत्रि
जनकज गोंनि तेर जनवलें, निंक । मनमुन नेंव्वग मानवें देव !"
यनि तेंल्प देरि रामावनीश्वरुडु । हनुमंतु मरियुनु नट जूचि पलिकें,
"बरमपुण्यात्मक ! पवनज ! नीवु । मरलि येतेंचुचो मगुव येमनियें ?
जेंप्पु मेर्पंड" नन्न श्रीरामु जूचि । चेप्पंग दोंणगें नंचितसत्त्वधनुडु,
"एडपनि वगलतो ने नोंक्कभंगि ।गडपिति बदिनेंलल् काकुत्स्थु बासि
व्रलमूदि रेंडुमासमुलकु बिदप । बेंलुकुर नन्नु जंपेद नन्नवाडु ११३०
रावणु, डटुगान रामभूपतिकि । ने विधंबुन ब्राणमिटमीद निल्व
दनि विन्नपमु सेयुमनियें, मा तंड्रि । तनु सत्यधनुडनि तगनिच्चिनपुडु
विलसिल्लु कल्याणवेदिपैनुंडि । वलनोंप्प नग्निदेवर साक्षिगाग
गरमर्थि नन्नेंल्लकालंबु विडुव । करसि रक्षिंचेदननि तेंच्चें, नन्नु

जनकजा से बिछुड़कर यहाँ मेरे प्राण शरीर में नहीं रह पा रहे हैं। अब विलंब न कर, वहाँ ले जाओ जहाँ जनकजा है और हे मर्कटाधीश ! (मेरे) मन की व्यथा को दूर करो।" (ऐसा) कहते विलाप करनेवाले रामचन्द्र को उचित विधान से सान्त्वना देकर, हनुमान ने कहा—"वननिधि को पारकार, रावण का वध कर, जगत् के अनुमोदन-स्वरूप सराहते समय भूपुत्री जनकजा को लाने के लिए चल पड़ना चाहिए। हे देव ! अब मन से अधिक व्यथा को दूर कर दो।" ऐसा बताने पर राजा राम ने होश में आकर, फिर वहाँ हनुमान को देख (यों) कहा—"हे परमपुण्यात्मा! हे पवनज ! तुम जब लौटकर आरहे थे, तब सीता ने क्या कहा ? सब ढंग से सुनाओ।" (ऐसा) कहने पर अंचित-सत्त्व-धनी (हनुमान) श्रीराम को देखकर कहने लगा—"(उन्होंने) कहा कि (राम से) निवेदन करो कि काकुत्स्थ (राम) से बिछुड़कर मैंने अनारत व्यथाओं से दस महीने एक-से बिताए हैं। रावण कहता है कि हठ करके दो महीने के बाद बेचैनी से तुम्हें मार डालूँगा। ।। ११३० ।।

—अतः रामभूपति से कह दो कि अब आगे किसी प्रकार प्राण नहीं बचेंगे। मेरे पिता के उन्हें (राम को) सत्यधनी मानकर, उचित रूप से देने पर, बिलसित कल्याणवेदी पर रहकर, शोभा से अग्निदेव को साक्षी बनाकर, बड़े प्रेम से मुझे सदा के लिए न छोड़कर, 'अच्छी तरह रक्षा करूंगा' यह (प्रणकर) (वे मुझसे) लाये थे। मेरा विचार न कर उपेक्षा की, अनाथ

नरयकुपेक्षिंचॆ, ननदगा जेसॆ । बरिकिंपडनि विन्नपमुसेयुमनियॆ,
दक्कक चनुदॆंचि तन धर्मपत्नि । नॊक्कडॆत्तुकपोव नूरक युनिकि
महिलोन वीरधर्ममु गादु गान । विहितमंतयु विन्नविंचिति गानि
वलनॊप्प ना मनोवाक्कायकर्म । मुलु पूनि तनयंदॆ पॊंदि वर्तिंचु
नॆनयंग ना यॊंडलॆंदुंडॆनेनि । ननि विन्नपमु सेयुमनियॆ मी देवि,
तनुचित्रकूटाद्रि दग नॊक्क काकि । चॆनकुटयुनु मनशिशलचेत मीरु
११४०
लीलतो मकरिकल् लिखियिंचुटयुनु । शीलिंचि गुऱुतुगा जॆप्पि नन्ननिचॆ,
चतुरात्मुडगुचुन्न सौमित्रि जेरि । यतनितो नॊक्क वाक्यमु वल्कुमनियॆ
ननु दल्लिगा जूचु ना पाटु चूड । दनकॆन्नि भंगुल दगदनि चॆप्पि
वाविरि दंडकावनमुलो बरम । पावनुंडगु तन्नु बलिकिन फलमु
गुडिचितिननि चॆप्पु, कॊऱतलॆव्वियुनु । दडवकुमनि चॆप्पु, दयवुट्ट बल्कु
मनि विन्नपमु सेयुमनियॆ लक्ष्मणुन । किनजुंडु मॊदलैन गिरिचरुलकुनु
विनयमुल् वलिक यॆव्विधिनैन वारि । निनकुलुलनु वेग निटकु दॆम्मनियॆ,
नीति दप्पिन लोकनियतुलु दप्पु । नीतियॆ तॊडवगु निखिलनृपुलकु

कर दिया । निवेदन करो कि मेरा विचार (क्यों) नहीं कर रहे हैं । किसी के आकर अपनी धर्मपत्नी को ले जाने पर चुप रहना जगती में वीरधर्म नहीं है, अतः समस्त विहित (कर्त्तव्य) का निवेदन किया है । नहीं तो शोभा से मेरे मनोवाक्-काय-कर्म, शरीर कहीं भी रहे, तुम्हीं में लगकर प्रवर्तित होते हैं, ऐसा निवेदन करने के लिए आपकी देवी ने कहा है । अपने को चित्रकूटाद्रि पर एक कौए का छेड़ना, मनःशिला (गैरिक) से आपका— ।। ११४० ।।

—लीला से मकरिकाएँ लिखना, यह परिशीलन कर, पहचान के रूप में बताकर मुझे भेजा है । चतुरात्मा सौमित्र के निकट जा, उससे एक वाक्य कहने के लिए कहा है । मुझे माता समान माननेवाले उसका मेरे कष्टों पर ध्यान न देना किसी भी प्रकार से उचित नहीं है । (उससे) कहो कि क्रम से दडंक वन में परमपावन उसके प्रति जो कटुवचन कहे हैं, उनका फल भोगा है । कहो कि अपराधों की गिनती न करे । लक्ष्मण से इन बातों का ऐसा निवेदन करो कि उसके मन में दया उपजे । कहा कि इनज आदि गिरिचरों से विनयवचन कह, किसी भी प्रकार इनकुलजों को यहाँ सवेग लाने के लिए उनसे कहो । नीति (मार्ग) का उल्लंघन करने पर लोक-नियति (नियम) उल्लंघन होगा । उस देवी ने यह निवेदन करने के लिए कहा है कि समस्त राजाओं के लिए नीति (-मार्ग) ही अलंकार

ननि विन्नपमु सेयुमनियॆ ना देवि । यिनवंश्युतो जॆप्पि यिप्पुडे दंडु
ननुवोंद वॆंडलिपुमनि विन्नविंचॆ'' । ननि, लक्ष्मणुनितोड नर्कजुतोड
११५०
जनकज पलुकुलु सकलंबु जॆप्प । घनशोकमुनु मानॆ घनुडु रामुंडु,
चॆप्पिन गपिवीरसिंहंबु लॆल्ल । नप्पुडु दमलोन हर्षिंचिरंत ।
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुत काव्यागम विमलमानसुडु
पालिताचारुंडपार धीशरधि । भूलोक निधि गोन बुद्ध भूविभुडु
दमतंड्रि विट्ठलधरणीशु पेर । गमनीय गुण धैर्य कनकाद्रि पेर
बनि बूनि यरिगंड भैरवु पेर । घनु पेर, मीसर गंडनि पेर
ना चंद्रतारार्कमै यॊप्पु मिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वॆलय
नसमान ललित शब्दार्थसंगतुल । रसिकमै चॆलवॊन्दु रामायणंबु
परग नलंकार भावनल् निंड । गरमॊप्प सुंदरकांडंबु सॆप्पॆ ।
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै यॆल्लनाडु ११६०
निव्वसुमति नॊप्प नी पुण्यचरित । मॆव्वरु सदिविन नॆव्वरु विनिन
सामादि बहुवेद चयधाम राम । नाम चिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु

है। निवेदन किया कि इनवंश वाले से कहकर अभी (तुरन्त) सेना को शोभा से रवाना करा दो।'' ऐसा, लक्ष्मण से (तथा) अर्कज से, ॥११५०॥

—जनकजा के समस्त वचन कह सुनाने पर, महान् राम ने महान् शोक को छोड़ दिया। (यह सब) कहने पर तब सभी कपिवीरसिंह अपने मन में हर्षित हुए। इस प्रकार आन्ध्रभाषा के लिए भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्य-आगम-विमल-मन वाले, पालित आचारवाले, अपार धीशरधि (बुद्धि समुद्र) वाले, भूलोकनिधि गोनबुद्ध राजा ने अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, कमनीय-गुण-धैर्य-कनकाद्रि के नाम पर, जो दृढ़ता से अरिगंड-भैरव (शत्रु-भयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रतापशाली) के नाम पर, आचन्द्र तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ संगतियों से युक्त, रसमय हो विराजित होनेवाली रामायण के सुन्दरकांड को अधिक सुन्दरता से, अलंकार-भावनाओं से पूर्ण रूप में कहा। सुप्रसिद्ध आर्ष-ग्रन्थ, आदिकाव्य, सदा रसिकों को आनन्दप्रद होकर, ॥ ११६० ॥

—इस वसुमति (पृथ्वी) पर यह पुण्य चरित्र शोभायमान होगा। (इसे) जो भी पढ़ेंगे, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि-बहुवेद-समूहों का धाम, रामनाम-चिन्तामणि (के कारण) नव्यभोग, परहित (करनेवाले)-आचार,

निर्मल कीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु
नायुरारोग्यंबु लधिकसंपदलु । बायक वाटिल्लु, बापक्षयंबु
वरपुत्रलाभंबु वैरिनाशनमु । सरिनॊप्पु, धनधान्यचय समृद्धियुनु
ने विघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक । लावण्यवतुलैन ललनल पॊन्दु
गॊड्डुकुलतो नॆप्डु गूडियुंडुटयु । नॆंडगाग नापदलॆल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लॆंडपकुंडुटयु
नन्नलु दम्मुलु नभिवृद्धि बॊन्दि । मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु ११७०
संततंबु देवतासंतर्पणंबु । बितृगणतृप्तियु बॆंपारुचुंडु,
निदि मोक्षसाधनंबिदि पापहरमु । निदि दिव्य मिदि भव्य मिदि श्रीकरंबु,
रमणीय लील नी रामायणंबु । ग्रममॊप्प बूजिप गल्गु बुण्यमुलु,
व्रासिनिवारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोक निवासंबु गलुगु,
नॆंदाक गुलगिरुलॆन्दाक जलधु । लॆंदाक रविचंद्रुलॆंदाक दार
लॆंदाक वेदंबुलॆंदाक धरणि । यॆंदाक भुवनंबु लेपु दीपिंचु
नंदाक नी कथ यक्षरानंद । संदोह दोहळाचारमै परगु ।११७७

॥ सुंदरकांडमु समाप्तमु ॥

श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकट राज्य (के वैभव), निर्मल कीर्तियाँ, नित्य सुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, आयु, आरोग्य, अधिक संपदाएँ अवश्य ही प्राप्त होंगी। पाप-क्षय, वरपुत्रलाभ, वैरियों का नाश समुचित रूप से होगा। बिना किसी विघ्न-बाधाओं के घरों में धन-धान्य की समृद्धि, लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद से बन्धुजनों के साथ मिलकर रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों का अभिवृद्धि पाकर, बड़े स्नेह के साथ मिलजुलकर रहना, ॥ ११७० ॥

—सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि अधिक विलसित होगा। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीय लीला (विधान) से इस रामायण की क्रम से (नियम से) पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा। लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्र-लोक-वास प्राप्त होगा। जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधियाँ, जब तक रवि-चन्द्र, जब तक नक्षत्र, जब तक वेद, जब तक धरणि, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशित होते रहेंगे, तब तक यह कथा अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का आकर होकर, विराजमान रहेगी। ॥ ११७७ ॥

॥ सुन्दरकाण्ड समाप्त ॥

अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।

सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥

युद्ध कांडमु

श्रीरामुडु हनुमंतुनि गॊनियाडुट

श्रीरामचंद्रु डाश्रितहितोदयुडु । वारिजबांधव-वंशवर्द्धनुडु
प्रियमुलयंदॆल्ल ब्रियमैनयट्टि । प्रियवाक्य मंजनाप्रियसुतुचेत
ब्रियमुन विनि तन प्रियसति युनिकि। ब्रियमुन भाविंचि प्रीतितो ननिये:
"हनुमंतु चेसिनयंत कार्यंबु । चनुनॆ चेयंग निर्जरुलकुनैन ?
नरय सत्त्वमुन नीहनुमंतु डॊंडॆ । गरुवलि यॊंडॆ नग्गरुडुंडु नॊंडॆ
देवगंधर्व दैतेयकिन्नरुलु । भाविंचि चॊरकाक पगलुनु रेयु
राक्षसानीक विराजित बाहु । रक्षितमौ लंक रमणमै जॊच्चि
प्राणंबुतोडन ब्रदिकि कम्मऱग । नेणांकधरुडैन नॆट्लु रानेर्चु ?
गडुमोदमुन बॆद्दगार्यंबु पतिकि । वडि जेयु नॆव्वडु वाडुत्तमुडु १०
एलिनपतिकार्य मॆंडरैन यॆडनु । वालूर नट्टु चेयुवाडु मध्यमुडु;

श्रीराम का हनुमान की प्रशंसा करना

आश्रित-हितोदय (करनेवाले) (तथा) वारिज-बान्धव (सूर्य)-वंश का वर्द्धन करनेवाले श्रीरामचन्द्र ने समस्त प्रिय (विषयों) में प्रिय बने प्रियावाक्य को अंजनाप्रियसुत से, प्रेम से सुनकर, अपनी प्रिय सती की स्थिति के बारे में प्रेम से सोचकर, प्रेम से यों कहा—"हनुमान ने जितना कार्य किया, वह कार्य निर्जरों के लिए भी साध्य है? सोच-विचारकर देखने पर सत्त्व के साथ वनधि (समुद्र) को पार करने में सामर्थ्यवान या तो हनुमान है या पवन या गरुड़ ही। मन से सोचने पर और कौन समर्थ है? चाहकर भी देव, गन्धर्व, दैतेय (राक्षस), किन्नरों के लिए दुर्गम बनकर, दिनरात राक्षस-सेना के विराजित बाहु(-बल) से रक्षित लंका में, रमणीयता से, प्रवेशकर, प्राणों के साथ (सजीव) जीवित रहकर लौट आने में एणांकधर (चन्द्र) भी कैसे समर्थ हो सकता है ? अतिमोद से पति (स्वामी) के महत्कार्य को शीघ्र करनेवाला (सेवक) उत्तम है ।। १० ।।

शासक स्वामी (प्रभु) के कार्य में विपत्ति (विघ्न) पड़ने पर,

पलुमाऱु मूल्गुचु बति वंचु पनिकि । दॊलग बाऱॆडुवाडु दुस्सेवकुंडु;
ईमुव्वुरंदुनु नॆक्कुव यॆन । यामेलिवाडय्यॆ नऱ यितलेक
यनुरागमुन बॆद्द यॆन नाकार्य । मनुपमंबुग जेसॆ ननिलनंदनुडु;
कावुन ब्रत्युपकार मीतनिकि । नेविधंबुन जेय नॆर्चुवाड ?
नालिंगनंबे ना यर्थ'' मं चतनि । नालिंगनमु सेसॆनप्पु डव्विभुडु;
ईरीति मॆच्चि या यिनसूति विनग । ना रामु डनियॆ ना यांजनेयुनकु:
"ननिलतनूज ! नी वंबुधि दाटि । जनकज गनि राग संतोष मॊदवॆ;
निटनाकु बॊडमिन यी मुदं बॆल्ल । निटमीद मऱि तुदिनॆट्लौनॊकानि;
यदि यॆट्टि दंटेनि नगलंबैन । युदधि लंघिपंग नोपॆडिवॆरवु २०
कपिसेन कॆब्भंगि गलुगुनो यनुचु । गपिनाथ! नामदि गलगंगजॊच्चॆ।''
नंनि पल्कि यटमीद नास्यंबु वंचि । मनुजेशु डेमियु मऱिपल्ककुन्न
श्रीरामदेवुनि चित्तंबुकलक । नारविजुडु मान्तु ननि विचारिंचि
"यिदि येमि देव! नी वितस्थलभंगि । मदिलोन शोकंबु मानवय्यॆदवु;
दाटरादननेल ? दाटुद; मब्धि । दाटि, सुवेलाद्रि दाटि, यालंक

विलम्ब के साथ (सुविधा से) उसे (पूरा) करनेवाला मध्यम है। कई बार (बार-बार) कराहते हुए (अनिच्छा से), प्रभु द्वारा आदिष्ट कार्य से हट भागनेवाला दुस्सेवक है। इन तीनों में (हनुमान) निस्सन्देह उत्तम (तथा) श्रेष्ठ सेवक हुआ। अनुराग से मेरे महत्कार्य को अनिलनन्दन ने अनुपम रूप से (सम्पन्न) किया। अतः इसका प्रत्युपकार मैं किस विधि से कर सकूँगा ? (अब) आलिंगन (करना) ही मेरा उद्दिष्ट कार्य है।'' (ऐसा) कहते तब उस विभु (राम) ने उसे गले से लगा लिया। इस प्रकार (हनुमान की) सराहना कर, इनसुत (सुग्रीव) के सुनते रहने पर, राम ने आंजनेय से कहा—''हे अनिलतनूज ! तुम्हारे अंबुधि पार कर, जनकजा को देख आने पर मुझे प्रसन्नता हुई। यहाँ मुझे जो समस्त मोद (प्राप्त) हुआ, पता नहीं, आगे और अन्त में (वह) कैसा परिणत होनेवाला है। पूछोगे कि वह (आशंका) क्यों ? वह (आशंका) यह है कि हे कपिनाथ ! अपार उदधि को लांघने का उपाय (मार्ग), ।। २० ।।

—कपिसेना को किस प्रकार (प्राप्त) होगा, यह सोच मेरा मन व्याकुल हो रहा है।'' ऐसा कहने के पश्चात् सिर झुकाकर, मनुजेश (राम) कुछ नहीं बोले। (तब) रविज ने यह सोचकर कि श्रीरामदेव के मन की विकलता को दूर करूँगा, कहा—''यह क्या देव ! तुम, दूसरों के समान मन में दुःख को, क्यों नहीं छोड़ रहे हो ? क्यों कहते हो कि नहीं पार कर सकते ? देखो, भूपालक ! (हम समुद्र) पार करेंगे। अब्धि को

साधिंचि रावणु जंपि, लोकमुल । बाध मान्पेदमु भूपालका ! चूडु;
मुर्वीश ! कपुलेल्ल नुद्योगपरुलु । दोर्विभवाढ्युलु दुर्जयक्रमुलु;
वीरुंड राघवोर्वीनाथ ! नीकु । वारक यिब्भंगि वगव नेमिटिकि?
नुद्योगि वगुमु; समुद्योगि कॆंदु । सद्यःफलंबुलु सकलकार्यमुलु;
नुत्साहि यगुवानि कुलुकुदुरहितु ।लुत्साहरहितुन कुलुकरु गानि;" ३०
यनि यतंडिब्भंगि नाडु वाक्यमुलु । विनि हनुमंतुतो विभु डर्थि बलिकॆः
वेडॆद; गादेनि वॆंडलु नयंप । वाडिमिनैननु वार्धि निंकितु;
"वेडॆद; गादेनि; बवनतनूज ! । कंधि दाटुट यॆंत गगनंबु नाकु ?
नदि यॆंत पनि? विनु मनिलनंदनुड! । पदिशिरंबुलवानि पट्टणंबुनकु
नॆन्निकोटलु ? बल मॆंत ? वीक्षिप । नन्निटि गवनुलु नवि यॆव्विधमुलु?
कावलियुंडु राक्षसु लॆंदऱंदु ? । भाविंप दद्गृहपंक्तुलेतॆऱगु ?
चूचि वच्चिचति कान चूचिन तॆऱगु । नीचेत विनियॆद, निक्कंबु सॆपुम"
यनिन नंजलि मोड्चि यांजनेयुंडु । विनयोक्तु लॆसग नव्विभुन—
किट्लनियॆः

पारकर, सुवेलाद्रि को पारकर, उस लंका को जीतकर, रावण का वध कर, लोकों के कष्ट को दूर करेंगे। हे उर्वीश ! समस्त कपि उद्योग तत्पर (प्रयत्नशील) हैं, दोर्विभव (बाहुबल) से सम्पन्न हैं, दुर्जेय हैं। हे राजा राघव ! (तुम) वीर हो, तुम्हें इस प्रकार दुखी क्यों होना चाहिए ? (तुम) उद्योगी बनो। समुद्योगी (सम्यक् रूप से उद्योग करनेवाले) के लिए सभी कार्य सद्यः फलप्रद होते हैं। अहितू (शत्रु) उत्साही व्यक्ति से डरते हैं, उत्साहरहित से नहीं डरते।" ॥ ३० ॥

इस प्रकार के उसके वाक्यों को सुनकर हनुमान से प्रेम से विभु (प्रभु राम) ने कहा—"(समुद्र से मार्ग देने के लिए पहले) निवेदन करूँगा। नहीं तो अपने बाणों की गरमी से वार्धि (समुद्र) को सुखा दूँगा। नहीं तो (पुल) बाँध डालूँगा। हे पवनतनूज ! समुद्र पार करना मेरे लिए कौन बड़ा कार्य है ? वह है कितना काम ? सुनो अनिलनन्दन ! दसशिर वाले (रावण) के पट्टण के लिए कितने दुर्ग हैं ? (उसका) बल (सेना) कितना ? देखने पर उसके दुर्ग-द्वार किसने (और) किस प्रकार के हैं ? पहरा देनेवाले राक्षस कितने रहेंगे ? सोचने पर तत्-गृह-पंक्तियाँ किस प्रकार की हैं ? (तुम) देख आए हो अतः तुमने जो विधान देखा, (उसे) तुमसे सुनना चाहता हूँ। वास्तविकता बताओ।" (ऐसा) कहने पर अंजलि भरकर, आंजनेय ने विनयोक्तियों के शोभा देने पर, उस विभु से यों कहा—

हनुम श्रीरामुनकु लंकवैभवमु दॆलुपुट

“नुडुगनि मदधार लॊलुकुचु नुंड । गडु नॊप्पु पर्वताकारंबुलगुचु
रौद्रंबु मोमुल रंजिल्लुचुंडु । भद्रदंतावळप्रततु लग्गलमु; ४०
पॆक्कायुधंबुल बॆरिगि चूड्कुलकु । नक्कजंबै घोरमै कनुपट्टु
गॊडुगुलु बडगलु गॊमरारु पॆक्कु । नडियालमुलु डॆक्कियंबुलु ग्राल
भानुबिब प्रभापटलंबुपगिदि । मानैन मणिदीप्त महिम वॆलुंगु
रथिक सारथि मनोरथमुलै युंडु । रथमु लॆक्कुडु दशरथराजतनय !
घनवीररसवार्धिकरडुलो यनग । दनरारि यॆंतयु दऱुचु वन्नियल
मॆऱसि चूड्कुलकुनु मिऱुमिट्लु गॊलुप । वऱलिन हेषारवंबुलु सॆलग
हरिघोटकंबुलनैन वेगमुन । हरियिंप नोपिन हरिशक्ति गलिगि
हरुलॆंतयुनु मनोहरमुलै युंडु । हरिवाजुलनु मॆच्चनट्टि वग्गलयु;
पिडुगुल तोड ब्रब्बिन नल्लमॊगुळ्ळु । लडरि दानवरूपुलय्यॆनो यनग
नॆर्चि रौद्रंबुतो नॆनसि यंगंबु । गूर्चिन नल्लनि कॊंडलो यनग ५०
गादॆनि हरुडु म्रिंगिननाटि गरळ । मीदैत्यकोटियै यॆसगॆनो यनग

हनुमान का श्रीराम को लंका का वैभव बताना

“निरन्तर मद की धाराओं के स्रवित होते रहने पर, अधिक शोभायमान, पर्वताकार वाले, रौद्र (भाव) के मुखों पर रंजित होनेवाले भद्र दन्तावलियों के समूह अधिक हैं। ॥ ४० ॥

हे दशरथराजतनय ! अनेक आयुधों से सम्पन्न, देखने में आश्चर्यप्रद तथा भयंकर दीखनेवाले छत्र, पताकाएँ, सुशोभित कई चिह्न (तथा) ध्वजों से विराजमान, भानुबिम्ब के प्रभा-पटल के समान शोभायमान, मणिदीप्ति की महिमा से प्रकाशित, रथिक, सारथियों से मनोरथ (मनोवेग वाले) बने रथ असंख्य हैं। महान् वीररस की वारिधि के घनीभूत पिंड हों, इस प्रकार शोभायमान होकर, बहुलवर्णों से चमककर, दृष्टियों को चकाचौंध करते हुए, प्रशस्त हेषारव (हिनहिनाहट) के व्याप्त होने पर, हरि-घोटकों को भी वेग से जीत सकने की हरि-शक्ति से युक्त हो, हरि (अश्व) अधिक मनोहर बने हुए हैं। हरि-वाजियों को भी पसन्द न (मात) करनेवाले (ऐसे अश्व) बहुत अधिक हैं। हे देव ! राघव-धराधीश (राजाराम) ! वहाँ के राक्षसों की गिनती नहीं हो सकती। वे ऐसे हैं मानों गाज (बिजलियों) से व्याप्त काले मेघों ने उत्कर्ष के साथ दानव रूप धारण किया हो, (अथवा) रौद्र से उत्कर्ष को प्राप्त काले पहाड़ों ने ही शरीर धारण किया हो, ॥ ५० ॥

ब्रळयकालमुनाटि पावक धूम । मलवड राक्षसु लैरोको यनग
गलिगिनयट्टि राक्षसुलकु संख्य । गलुगदु; देव! राघवधराधीश!
दट्टमै यट्टुळ दनरि चूपट्टु । निट्टिककोटयु निरवैन ऱाति
कोटयु बोंडवुन गोमरोंदु निनुप । कोटयु नट युक्कुगोटयु गंचु
गोटयु यऱि वेंडिकोटयु बसिडि । कोटयु नन नेडु कोट लोप्पारु;
गालुनि वक्षंबुकरणि बल् पेक्कु । मेलैन तलुपुल मेऱसि येंतयुनु
नक्कोट लन्निटियंदुनु जूड । मिक्किलि दीप्तुल मिक्कुटंबगुचु
नखिलरत्नमुल मेलैन वाकिळ्ळु ।नखिलावनीनाथ! यरय नाल्गेसि;
वरमंत्रविधुल दिव्यंबु लैनट्टि । शरचापचयमु लसंख्यलैयुंडु; ६०
नाकोटचुट्टनु नखिललोकेश! । भीकरमकरसंभृतमुलै परगु
नालुगगड्तलु नाल्गुदिक्कुलनु । जालंग बाताळसमिति नोप्पारु;
देव! यानालुगु तेरुवुलयंदु । गावलि पेक्कु राक्षसकोट्लुंडु;
नमितशिलाबाणयंत्र जालमुलु । दमतमयंतन दायल जंपु;
धात्रीश! यिंटिंट दप्पक यग्नि । होत्रमुलुन्नवि योंकार मेसग"
ननवुडु विनि यत डतिचोद्यमंदि । मनमुन जिंतिप मारुति यनियेः

—नहीं तो हर ने जिस गरल का पान किया था, वही यह दैत्यकोटि बनकर विलस रहा हो (अथवा) प्रलयकाल का पावक-धूम ही शोभा से राक्षस बना हो। शोभा से दिखाई पड़नेवाले अग्रगृहों (जो युद्ध के समय बनाए जाते हैं) से युक्त ईंटों का दुर्ग है, (उसके बाद) सुस्थिर बना पत्थरों का दुर्ग है, लंबान में विराजमान लोहे का दुर्ग है, (उसके बाद) वहाँ फ़ौलाद का दुर्ग, काँसे का दुर्ग, फिर रजत का दुर्ग (और) सुवर्ण का दुर्ग है। इस प्रकार सात दुर्ग (प्राकार) शोभा देते हैं। हे अखिल-अवनीनाथ! उन सभी प्राकारों में काल (पुरुष) के वक्षस्थल के समान अनेक श्रेष्ठ किवाड़ों से प्रकाशित (तथा) देखने में अधिक दीप्तियों के उत्कर्ष से युक्त, अखिल रत्नों से युक्त श्रेष्ठ चार द्वार हैं। वर-मन्त्रविधियों से दिव्य बने शर (और) चाप के असंख्य समूह हैं ॥ ६० ॥

हे अखिलेश! उस दुर्ग के चौतरफ़, चारों दिशाओं में, भीकर-मकर संभृत (पूर्ण) हो विलसित चार परिखाएँ हैं, जो पाताल-समिति (समूह) (सम) शोभित हैं। हे देव! उन चारों मार्गों पर अनेक राक्षस-समूह पहरा देते रहते हैं। (वहाँ) अमित शिला-बाण (चलानेवाले)-यन्त्र-जाल (समूह) हैं जो अपने आप शत्रुओं का संहार करते हैं। हे धात्रीश! (वहाँ) घर-घर अवश्य अग्निहोत्र हैं, जो ओंकार से युक्त हैं।" ऐसा कहने पर, सुनकर, वह (राम) मन में चिन्ता करने लगे तो मारुति ने

"सत्यंबु धर्मंबु शौचंबु दययु । नत्यंतशून्यंब यसुरुलयंदु"
ननि पल्कुटयु 'साध्यमौ' ननि लंक । जनपति मुदमंद, जतुरुडै पलिकॆ:
"नवि यन्नि यिट्टिट्टिवनि यॆन्ननेल । यवनीतलेश ! महावैभवमुन
वारक सेनतो वाह्याळि वॆडलि । या रावणुंडु नित्यमु दोडुसूचु ७०
वालिन मदमुन वडि गय्ययुनकु । गालुदुव्वुचुनुंडु गमलाप्तवंश !
यग्गलिकयु लावु नडरु वैरुलकु । लग्ग वट्टगरादु लंक भूनाथ !
जलवनकृतिम स्थलशैलदुर्ग । मुलु नालुगुंडु समुद्रंबुलोन
नदि येल्लकालंबुनंदुनु; गानि । कदियबोवग रेवु गानंगरादु;
मृत्युजिह्वनु बोलि मॆऱुगुलतोडि । यत्युग्रशूलंबु लनिशंबु बट्टि
कडुनुग्र दैत्युलु गाचियुंडुदुरु । पडुमटिवाकिट बदिवेलसंख्य;
लक्षदैतेयु लालंकापुरंबु । दक्षिणद्वार मुद्धति गातु रॆप्पु;
डट दूर्पुवाकिट नमरारि युंडु । बटुतर चतुरंग बलसमेतमुग;
नगणित शस्त्र सहायमैयुंडु । दग नॊक्कलक्ष युत्तरपुवाकिटनु;
ग्रालु राक्षसुलु लक्षयु निर्वदेनु । वेलु दत्पुरमध्यवीथि नुंडुदुरु; ८०
आलंक मीकृप नर्ककुलेश ! । ये लील जॊच्चितिनित गैकॊनक;

कहा—"(किन्तु) असुरों में सत्य, धर्म, शौच (एवं) दया का अत्यन्त अभाव है।" ऐसा कहने पर, यह कहा कि "(तब तो) लंका को जीत सकते हैं।" जनपति (राजा) के मुदित होने पर चतुरता से (हनुमान ने) कहा—"हे अवनीतलेश ! उन सब का कहाँ तक वर्णन करूँ ? महावैभव के साथ, नित्य सेना के साथ, वह रावण सैर करने निकलता है (और) नित्य निरीक्षण करता है ।। ७० ।।

हे कमलाप्तवंशज ! अधिक मद से वह झट दूसरों को कलह के लिए ललकारता रहता है। हे भूनाथ ! महत्त्व, सामर्थ्य से अतिशयता को प्राप्त लंका शत्रुओं के लिए असाध्य है। (वहाँ के) समुद्र में जल, वन, कृत्रिम स्थल, शैल के चार दुर्ग सदा रहते हैं किन्तु नियराने पर घाट दिखाई नहीं देते। मृत्युजिह्वा के समान चमक से युक्त अत्युग्र शूलों को, सदा धारण कर, अधिक उग्रदैत्य, संख्या में दस हज़ार पश्चिमद्वार की रक्षा करते रहते हैं। उस लंकापुर के दक्षिणद्वार की एक लाख दैत्य सदा औद्धत्य से रक्षा करते रहते हैं। वहाँ पूर्वद्वार पर पटुतर-चतुरंग बल समेत रावण रहता है। अगणितशस्त्र-सहाय से युक्त एक लाख (राक्षस) उत्तर के द्वार पर स्थित रहते हैं। उस पुर की मध्य-वीथि में सवा लाख समर्थ राक्षस रहते हैं ।। ८० ।।

हे अर्ककुलेश ! आपकी कृपा से इन सबकी परवाह किए बिना सलील

वडि जौच्चि यट्टळ्ळु वडि गूलदन्नि। यडरि कोटलु द्रोचि यगडितल् पूड्चि
यच्चेरुवुग लंक यंतयु गाल्चि । वच्चि मीश्रीपादवनजमुल् गंटि;
नडिगि यक्कडिकार्य मंतयु विंटि; । तडय नेटिकि? नब्धि दाटुदमिक;
दटिनयप्पुडे दशकंठु लंक । मीटि वैचेंदरु व्रेलिमडिलोन गपुलु"
अनवुडु रघुरामुडर्कजु जूचि । "यिनसुत! यालस्य मेटिकिनिंक?
निदि शुभलग्नंबु; ई मुहूर्तमुन । गदलुट कार्यंबु कपिराज! मनकु;
नायस्त्रमुनु दक्क नरभोजनुनकु । नेयुपायमु गलदेंदु दागिननु ?"
अनि नीलु देस जूचि यर्कवंशजुडु । विनु मनि बुद्धिगा वेस जेप्पे नपुडु
"कडु निपुदनमुनु गडु निर्मलंबु । गडुतीपुगल नीरु गलुगंग जूचि९०
परिपक्वफलमुल भरितंबुलैन । तरुवुल नीडलु तरुचैन त्रोव
नडवुमु मुंगलि नलि जौरनीक; । वडि बरिकिपु मोव्वनि लातिवारि"
ननिन नारामुनि यानतिनेल्ल । विनि नीलु डट्ल काविंचे शीघ्रमुन;

सुग्रीवुड्डु कपिसेनल वेडलिंचुट

नप्पुडु सग्रीवु डखिलवानरुल । दप्पक राविंचि दंडेत्त बनिचे;

मैंने (लंका में) प्रवेश किया। झट प्रवेशकर अग्रगृहों को झट लात मार गिराकर, औन्नत्य से प्राकार गिराकर, परिखाओं को पूर दिया (और) आश्चर्यप्रद रूप से समस्त लंका को जलाकर, (वापस) आकर आपके श्रीचरणकमलों के दर्शन किए हैं। पूछकर वहाँ के समस्त कार्य को सुना है। अब देरी करना क्यों? अब समुद्र पार करेंगे। इस गहन (समुद्र) को पार करते ही दशकण्ठ की लंका को कपि पलभर में मिटा देंगे।" ऐसा कहने पर रघुराम ने अर्कज को देख (कहा)—"हे इनसुत! अब विलम्ब क्यों? यह शुभ लग्न है। हे कपिराज! मुहूर्त पर चल पड़ना हमारे लिए (उचित) कार्य है। कहीं भी छिप जाए, उस नरभोजन वाले (राक्षस) के लिए मेरे अस्त्र को छोड़ दूसरा कौन-सा उपाय है?" तब नील की तरफ़ देखकर अर्कवंशज (राम) ने शीघ्र समुचित रूप से कहा—"अधिक मनोहरता, अधिक निर्मलता (तथा) अधिक माधुर्य से युक्त जल, ।। ९० ।। —(तथा) परिपक्व-फल-भरित तरुओं की छायाओं के प्राचुर्य वाले मार्ग पर (अन्य) रेणु को भी स्थान न देते हुए, (तुम) आगे-आगे चलो। झट से अहितू शत्रुओं का परिशीलन करते रहो।" ऐसा कहने पर राम के समस्त आदेश को सुन, नील ने शीघ्र वैसा ही किया।

सुग्रीव का कपिसेनाओं का प्रस्थान कराना

तब सुग्रीव ने समस्त वानरों को अनिवार्यतः बुलाकर आक्रमण की

बनिचिन नंदंद पटुरभसमुन । घनगुहलंदुंडि कपिसेन वॆडलॆ;
भूरिपदाहति भुवनंबु गलग । घोर रावंबुल गुहलु घूर्णिल्ल
वीरगर्जनमुलु वीरहासमुलु । वीरनादंबुलु वॆस निंगि मुट्ट
बॆल्लुगा गॊंदऱु पॆडबॊब्बलिडुचु । द्रुळ्ळुचु बटुशक्तितो दाटुवारु;
गॊंदऱु पंडिन कुजमुलु मूपु । लंदिडि नमलुचु नरिगॆडुवारु;
'रावणुतो गूड राक्षसप्रतति । नॆविधबुननैन नेमॊ चंपॆदमु १००
रामभूपालक ! रणमुन' ननुचु । रामुनि मुंदऱ रागिल्लुवारु;
गॆरलि पै नॆगुरुचु गेक वैचुचुनु । वॆरवाऱ दोकलु विसरि याडुचुनु
जॆच्चॆऱ बर्वतशिखरबुं लॆक्कि । यिच्च गॊंदऱु बॊब्बलिडुवारुनगुचु
नप्पुडु कपिवीरु लंदऱु जॆलगि । रप्परमेश्वरु डानंदमॊंद;
नारवंबुन म्रोसॆ नाकाशविवर; । मारवंबुन भूमि यट्टिट्टु वडियॆ;
नारवंबुन बॆल्च नद्रुलु वणकॆ । नारवंबुन म्रॊग्गॆ नष्ट दिग्गजमु;
लारवंबुन भारमय्यॆ शेषुनकु; । नारवंबुन गूर्म मणचॆ शिरंबु;
निट्टु सेन नडवंग नॆगसिन धूळि । पटलंबु मिन्नंदॆ बहुवर्णमुलनु
आरवंबुन भारमै यिल नॆसगु । तोरंपु निश्वासधूमंबु लनग;

आज्ञा दी। आज्ञा देने पर जहाँ-तहाँ की बड़ी गुफाओं से कपिसेना पटु रभस (संरंभ) से निकल पड़ी। (उस कपिसेना के) भूरि पदाघात से भुवन विकल बना, घोर आरव (गर्जन) से गुफाएँ घूर्णित होने लगीं। वीर गर्जन, वीर हास (तथा) वीर नाद झट से आकाश को छूने लगे। (उनमें) कुछ अधिक महानाद करते हुए, इठलाते हुए पटु शक्ति से छलाँगें भर रहे थे, कुछ पके वृक्षों को कन्धों पर लादकर, (फल) चबाते हुए जा रहे थे, कुछ राम के समक्ष प्रेम से यह कहते जा रहे थे कि "हे रामभूपालक ! रण में रावण के साथ राक्षस-समूह को हमीं किसी भी प्रकार से मार डालेंगे।" ।। १०० ।।

विजृंभित हो ऊपर उछलते हुए, चिल्लाते हुए, उपाय से पूँछ हिलाते-खेलते हुए, झट से पर्वत-शिखरों पर चढ़कर, चाहकर कुछ (वानर) गर्जन कर रहे थे। तब वह परमेश्वर (राम) आनन्दित हो, इस प्रकार समस्त कपिवीर विजृंभित होते रहे। उस गर्जन से आकाश-विवर गूँज उठा, उस रव से भूमि डोल उठी, उस रव से अतिशयता से पर्वत काँप उठे, उस रव से अष्टदिग्गज धँस गए, वह रव (आदि) शेष को भारी लगा, उस रव ने कूर्म के शिर को दबाया। इस प्रकार से सेना के चलने पर उड़ा धूल-समूह बहुवर्णों से युक्त हो, आकाश में व्याप्त हो गया, जो ऐसा लगा मानों उस रव के भारी होने पर पृथ्वी से निकलनेवाला बहुल-निश्वासरूपी धूम

नप्पुडु मुंगलि यै नीलुतोड । नॉप्पेंडु सैन्य मत्युग्रतुंडमुग ११०
निरुदिक्कुलंदुनु नेपारि नडचु । तरुचरबलमु लुद्धतपक्षमुलुग
स्फुरणमॉप्पग मध्यमुन वच्चु राम । धरणीतलेशुडु तन यात्मगाग
गडिमि सॉपारि चक्कग वॅन्क गाचि । वडि वच्चु सैन्यंबु वालंबुगाग
नुरगपाशंबुल नॉंदग नुन्न । तरणिवंशजु नवस्थलु तॉलंगिप
गरुडुंडु भूस्थलि गैगॉनि नडचु । करणि नॉप्पारॆ मर्कटमहासेन;
सरि प्रजंघुंडु गेसरि दधिमुखुडु । बरुवडि संदडि बाय द्रोवगनु
विरळमै श्रीरामु वॆल्लुव नडव । बरम संतोष संभरितांतमुलगुचु
गवयुंडु दारुंडु गंधमादनुडु । बवमानसूनुंडु बनसु डंगदुडु
शरभुंडु नलुडुनु जांबवंतुंडु । हरुडुनु मैंदुंडु नादिगागलगु
वनचरपतुलुनु वडि नेगुदेर । जनुदॆंचि रघुपति सह्यपर्वतमु १२०
गनि यंदु विडिसॆ लक्षणसमेतमुग; । धनततो नप्पुडग्गलमुगानंदु
बॆंपारु वनमुल बेनुतटाकमुल । निंपारु नीडल नॆडलॆनि तरुल
विडिदलल् गैकॉनि वॆलय नब्बलमु । विडिसॆ सुग्रीवुंडु विडियंग बनुप;
मारुनाडु नॆप्पिटिमाड्कि लक्ष्मणुडु । तरिमि सेनयु दानु दद्दयु नडव

हो। तब आगे-आगे चलनेवाले नील के साथ वह सेना (इस प्रकार) लगी कि (अग्रभाग में स्थित नील) अत्युग्र तुंड है, ॥ ११० ॥

दोनों पार्श्वों में शोभा से चलनेवाला तरुचर (वानर)-बल ही उद्धत पक्ष (पंख) है, अधिक स्फूर्ति से मध्यभाग में चलनेवाला राजाराम ही आत्मा है, साहस की शोभा से युक्त हो अच्छी तरह पृष्ठभाग की रक्षा करते झट आनेवाली सेना ही पूँछ है, उरग (सर्प)-पाशों में फँस जानेवाले तरणिवंशजों (सूर्यवंशी) की दुरवस्थाओं को दूर करने के लिए मानों गरुड़ भूस्थली पर चल रहा है। इस प्रकार मर्कट-महासेना शोभायमान हुई। प्रजंघ, केसरी, दधिमुख (आदि) क्रम से भीड़-बब्भड़ को हटाकर मार्ग बना रहे थे। (इस प्रकार) अनुपम श्रीराम की (सेना-रूपी) बाढ़ के चल पड़ने पर, परम-सन्तोष से भरित आत्मा वाले होते हुए गवय, तार, गन्धमादन, पवमानसून, पनस, अंगद, शरभ, नल, जाम्बवान, हर, मैंद आदि वनचरपतियों के शीघ्र चलने पर, रघुपति ने आकर सह्यपर्वत को, ॥ १२० ॥

—देख वहाँ लक्ष्मण समेत हो, पड़ाव डाला। सुग्रीव के पड़ाव डालने की आज्ञा देने पर वह सेना तब वहाँ बहुलता से शोभायमान वनों, बड़े-बड़े तडागों, तरुओं की मनोहर तथा घनी छायाओं में स्कन्धावार डाल विराजमान हुई। दूसरे दिन सदा की तरह लक्ष्मण के पीछे-पीछे सेना

दौरलु महीपति द्रोचि येगगनु । धरणि ग्रक्कदलंग दरुचरुल् नडव
नुरुवीररसमुन नुप्पोंगि पोंगि । भरितसत्त्वंबुन बरपोंदि पोंदि
तनुकांतिकरडुल दनरारि यारि । घनमैन म्रोत नाकस मंदि यंदि
मुनुकोनि वरशैलयुल नोप्पि योप्पि। मनुवंशचंद्रुचे मदि नुब्बि युब्बि
यासमुद्रमुपेंपु नडगिंप नडचें । भासुरंबगु कपिबलसमुद्रंबु;
धैर्याढ्युलामहीधवु लभ्रमध्य । सूर्यचंद्रुलमाड्कि शोभिल्लिरंत १३०
नदुललो जोच्चिच वानरसेन नडव । नेंदुरु दोट्टुचु नुब्बें नेसगि यानीरु;
सह्याद्रिमलयाद्रिसंदुल नडव । सह्यमै कपिबलसमितितो बोडमु
चिरुगालिचे दरुशेखर प्रततु । लोरुपैन कोम्मलोंडोंटितो रासि
यगचरावळिमीद नलरुलु राल्चें; । दग नट्टिदय कादे तलपोसिचूड
वनलक्ष्मि या रामवल्लभु जूचि । येनय बुष्पांजलु लीकेल मानु ?
नप्पुडु कपिवीरु लय्यद्रियेंडल । नोप्पेंडि कोलकुल नुरुवडि जोच्चिच
यानिर्मलोदक मारंग ग्रोलि । यानंदमुन बोंदि यंदंद कदिसि
कमनीयमृदुकरकमल युग्ममुल । गमलमुल् द्रुंतुरु गमुलुगा बट्टि

और स्वयं (राम) निकल पड़े। सरदार और महीपतियों के आगे-आगे चलने पर, उन्हें ढकेलते हुए, धरणि विचलित हो, इस प्रकार तरुचर (वानर) चलने लगे। भासुर बने कपि-बल (सेना) रूपी समुद्र ने वीररस से उमड़-उमड़कर, भरित सत्त्व से विस्तृत हो-होकर, शरीर की कान्ति के संपुटों से शोभित हो-होकर, महान् घोष से आकाश को छू-छूकर, आगे वर-शैलों से शोभित हो-होकर, मनुवंश-चन्द्र (राम) के कारण मन में फूल-फूलकर, उस (सच्चे) समुद्र की शोभा को मात किया। वे धैर्यसम्पन्न महीधव (राजा) अभ्र (मेघ)-मध्य (स्थित) सूर्य-चन्द्र के समान शोभित हुए। तब, ॥ १३० ॥

—नदियों में प्रवेशकर वानरसेना के चलने पर, मार्ग के रुकने से (नदी का) जल उमड़ उठा। सह्याद्रि (तथा) मलयाद्रि के मध्यभाग में चलने पर, कपिबल-समिति (समूह) के साथ उत्पन्न मन्द पवन के कारण तरुशेखर (श्रेष्ठवृक्ष)-प्रततियों (समूहों) की विशाल शाखाओं ने आपस में रगड़ खाकर, अगचर-समूह पर फूल बरसाए। सोचकर देखने पर न्याय (औचित्य) तो यही है न! रामवल्लभ को देखकर, आनुकूल्यता के कारण वनलक्ष्मी पुष्पांजलियाँ दिए बिना कैसे रहेगी? तब कपिवीर उस अद्रि (पर्वत) पर शोभायमान सरोवरों में बड़े वेग से प्रवेशकर, उस निर्मल-उदक (जल) को जी भर पीकर, आनन्दित हो, जहाँ-तहाँ नियराकर, कमनीय मृदु कर-कमल-युग्मों से, गुच्छों के गुच्छे पकड़कर कमल (के फूलों) को

"कमलाकरंब! माकमलाप्तकुलुडु। कमलारि युद्धति गमलमुल् द्रुंचु
क्रममौप्पगा दशकंधरु वदन। कमलमुल् द्रुंचु" नन् करणि
जेलंगि; १४०
"तोगलु दट्टितुयु दुष्टारिसतुल। तोंगलु जानकि यिकदोलगंग वैचु
दोंगलार! यिटमीद दोंग यिट्टि" दनुचु। दोंगलेल्ल जिदिमि वैतुरु
पेंच्चुपेरिगि;
बिरुदुलै यसुरुल प्रेवुलु वेंरुकु। करणि बेंकुंदुरोलि घनमृणाळमुल;
निट्टु विनोदिंचुचु नेल्लवानरुलु। दटमुलमीदि कुद्धतशक्ति दाटि
गिरुलेंक्कि पणकुल ग्रिक्किड्रियंग। वेंरल तेनिय लानि पेंन्नीरुग्रोलि
कडुनुत्सहिंचि युत्कटबलाधिपुलु। नडचिरि 'वानरनायकोत्तमुलु।

श्रीरामुडु महेंद्राद्रि जेरुट

इनवंश्युडपुडु महेंद्राद्रि येक्कि। यनतिदूरंबुन नंबुधि गनियै;
गरिमकरंबुलु करिसमूहमुलु। दरगलु गुर्रंपुदळमुल पेल्लु
गमठकर्कटमुलु घनरथावळुलु। समदजलार्भकसमिति भटाळि

तोड़ते हैं मानों यह कह विजृंभित हो रहे हों कि "हे कमलाकर! हमारा कमलाप्त (सूर्य)-कुल वाला, औद्धत्य से कमलारि (चन्द्र) के कमलों को नष्ट करने के समान, क्रम से दशकंधर के वदनकमलों को तोड़ डालेगा।" ॥ १४० ॥

वे उद्धत हो समस्त कुमुदों को नष्ट कर देते हुए मानों कह रहे हों कि "दुष्ट-अरि-सतियों को दुःख देकर, जानकी के दुखों को दूर कर देगें। हे कुमदो! आगे उन्हें मालूम हो कि दुःख क्या होता है।" बिरुद वाले होकर, असुरों के आँतों को खींच निकालने के समान क्रम से बड़े मृणालों को उखाड़ते हैं। इस प्रकार विनोद करते हुए, समस्त वानर, तटों पर उद्धत शक्ति से लाँघकर, श्रेष्ठ जल पीकर, अधिक उत्साही हो, उत्कट बल के अधिप वानर-नायकोत्तम (आगे बढ़) चले।

श्रीराम का महेन्द्राद्रि पहुँचना

तब इनवंश (वाले) ने महेन्द्राद्रि चढ़कर, अनति (थोड़ी) दूर से अंबुधि को देखा। करि (हाथी बराबर) मगर ही करि-समूह हों, लहरें ही अश्वदल की बाढ़ हो, कमठ (कछुए) और कर्कट (केकड़े) ही घन-रथ समूह हों, समद (मस्त) जलार्भक (मत्स्य)-समिति (समूह) ही भट-समूह

पोलुपारु फणिफणंबुलु केतनमुलु । ललि जोऽमीलवालमुलडिदमुलु
१५०
जलदुरुमीनाळि चामरप्रतति । तलकोन्न नुरुवु सितच्छत्नसमिति
पेनुपोंदु घोषंबु भेरीरवंबु । विनुतिप वीरंबु वीररसंबु
गा 'नन्नुजोच्चिन कडिदिरावणुनि । नेनेल चंपंग नित्तु' नन्माड्कि
दननरिन क्रूरसत्त्वस्थिति बेंचि । तन केदुरै महोद्धति नोप्पुदानि
गनि वेऽगंदि यागांभीर्यधनुडु । वनधितीरमु जेर वच्चे राघवुडु;
प्रकटंबुगा सर्ववलमु गूडुटकु । नोक मंचि चंद्रकांतोपलस्थलिनि
जलनिधि प्रापुन जरियिंचुचुन्न । बलितंपु रावणपाठीन वरुनि
ननुपमंबगु तन यंप गालमुन । गोनि तिवुचुटकुनै कूर्चुन्नकरणि
नासीनुडै यप्पुडर्ककुलेशु । डासन्नुडै युन्न यर्कजु बलिकै;
"वच्चिचति मिम्महावारिधि जेर; । नेच्चोट घटियिंचु निदि दाट
मनकु ? १६०
नायुपायंबु नी वात्म जिंतिपु; । मीयगचरकोटि नेंदु बोनीक
यिपैनयेड विडियिंपंग बनुपु । सोंपारगा जोटु चूपंगवलयु"

हो, शोभायमान फणि-फण (सर्प-फन) ही केतन हों, मोटे-मोटे मीन के वाल (पूँछ) ही करवाल हों, ।। १५० ।।

चंचल-उरु (श्रेष्ठ)-मीनावलि ही चामर प्रतति हो, ऊपर उठा फेन ही सित-छत-समिति हो, बढ़ता हुआ घोष (गर्जन) ही भेरी-रव हो, विनुत नीर ही वीर-रस हो, इस प्रकार मानों यह कहते कि "मेरी शरण आए हुए बली रावण को मैं क्यों मारने दूँगा ?" शोभित क्रूर-सत्त्व-स्थिति से युक्त हो, अपने समक्ष महा-उद्धति से विराजमान (समुद्र को) देख आश्चर्य-चकित हो, वह गाम्भीर्य-धनी राघव वनधि (समुद्र) तीर पर पहुँचा। प्रकट रूप से सर्वसेना को एकत्रित करने योग्य एक अच्छी चन्द्रकान्त-उपल (शिला)-स्थली पर (राम) इस प्रकार बैठ गए मानों जलनिधि की शरण में विचरण करनेवाले बली रावण-रूपी श्रेष्ठ मत्स्य को अपने अनुपम बाण-रूपी बंसी से पकड़ने के लिए बैठे हों। (इस प्रकार) बैठकर तब अर्ककुलेश (सूर्यवंश के राजा) ने निकटस्थ अर्कज (सुग्रीव) से कहा—"इस महावारिधि के पास पहुँच गए। इसे किस स्थान पर पार किया जा सकता है ? ।। १६० ।।

तुम मन से उस उपाय के बारे में चिन्तन करो। इस अगचर-कोटि को कहीं जाने न देकर मनोहर स्थान पर पड़ाव डालने के लिए भेजो। शोभा से (योग्य) स्थान (उन्हें) बताने चाहिए।" (ऐसा) कहकर

ननि राघवेश्वरु डर्कजु बनुप । निनसुतुंडुनु नीलु निटुसेय बनिचें;
नीलुंडु नप्पुडु निरतंबुगाग । वालिनसेनल वडि विडियिंचें;
"वनचररवमु नावलननु गलिगें; । वनचररवमु नीवलननु गलिगि
युनिकि सहिंतुने योसमुद्रंब !" । यनि यप्पु डावार्धि नदलिचुमाड्कि
विडियु वानरसेन वेंडलेंडु म्रोत । यडचें बेंल्लैन या यंबुधि म्रोत;
नट रेंडुवेलंबुलै यापयोधि । तटवनभूमुल दरुचरुल् विडिय
नप्पुडु रामु डेकांतंबुनंदु । नोंप्प लक्ष्मणुनितो नोय्यन बलिकें:
"सौमित्रि! कंटें यीजलनिधि नेलवु । नेमेंयि दुद निश्चर्यिपंग वच्चु !
१७०
निदि यिंत यिंतनि येंन्नंगरादु; । तुदि लेदु गद मनोदुःखवारिधिकि!"

सायं संध्यादि वर्णन

ननि रामविभुडु शोकांबुधिलोन । मुनुगुचुंडग मूडुमूर्तुलु गलिगि
यतनितोडिदें लोक मनिन चंदमुन। नतिवेगमुन निनु डपराब्धि ग्रुंकें;
निनुडु ग्रुंकिनयप्पुडेंल्ललोकमुलु । पेंनुपेदि मणिलेनि पेंट्टियबोलें

राघवेश्वर के अर्कज को आज्ञा देने पर इनसुत ने वैसा करने के लिए नील को आज्ञा दी। तब नील ने आसक्ति से अतिशय सेनाओं को (उचित स्थान पर) ठहराया। "वनचर-रव मुझसे उत्पन्न हुआ। हे समुद्र ! तुमसे भी वन (जल)-चर-रव का उत्पन्न होते रहना मैं क्या सह सकूंगा ?" मानों ऐसा उस वारिधि को डाँटने के समान, पड़ाव डालनेवाली वानरसेना के कारण उत्पन्न घोष ने अंबुधि के अत्यधिक घोष को दबा दिया। तब दोनों (समुद्रों) के विशाल बनने पर, उस पयोधि के तीरस्थ वनभूमियों में तरुचरों ने पड़ाव डाला। तब राम ने एकान्त में शोभा से झट लक्ष्मण से कहा—"हे सौमित्र ! देखा है न, इस जलनिधि के अस्तित्व को ! इसके अन्त का कैसे निश्चय कर सकें ? ॥ १७० ॥

इसके वैशाल्य की कल्पना नहीं कर सकते। मनोदुःख-रूपी वारिधि का भी कोई अन्त नहीं है न !"

सायं-सन्ध्या आदि का वर्णन

(ऐसा) कह विभु राम शोकांबुधि में डूबने लगे (तब) तीन मूर्तियों[1] (रूपों) से युक्त सूर्य भी यह समझकर कि उसके (राम के) साथ लोक (जीवन) है, अतिवेग से अपराब्धि (पश्चिम समुद्र) में डूब गया। सूर्य के डूब जाने पर समस्त लोक बुद्धि खोकर, मणिरहित मंजूषा के समान,

---

[1] ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर।

मनसिजानल तप्तमानसु रामु । गनुगॊनि तनुपुग गप्पॆडुकॊऱकु
जॆलुवॊंद नपराब्धि चॆंगाविचीर । नॆलमि दॆच्चिन क्रिय नॆऱसंज यॊप्पॆ।
‘निनवंशचंद्रुचॆ निंद्रारिमोयु । लनयंबु निटुवाडु’ ननिन चंदमुन
दलमुल बिगुवॆल्ल दऱिगि यंदंद । ललि दक्कुचुनु गमलंबुलु मॊगिडॆ;
जॆलुवुगा रामुनि शीतलक्रियकु । नलिरेगि याशांगनलु गूड वैचु
ललित तमालपल्लवरासुलनग । गलयंग दॆसल जीकटि पर्वजॊच्चॆ;
१८०
‘दिननाथकुलु देवि दॆच्चि मोदिंचु । दनुजनाथुनि मोमुदम्मुलु विरियु’
ननि नगियॆडिमाड्कि नप्पुडंदंद । तनरारगा गुमुदंबुलु विरिसॆ;
‘श्रीरामदेवुनि शितमार्गणमुल । नारत्नमुलु दक्क नंबुधि यिंकि
यीरुपमुन नुंडु निक’ ननुमाड्कि । दारकावळिचेत दनरारॆ मिन्नु;
आनिशीथिनि रामुनंगतापंबु । कै निबिडंबुगा नमरिंचियुन्न
सारंपु मल्लिकाशय्यना नॊप्पि । तारलु प्रतिबिंबितमुलय्यॆनब्धि;
‘विरहंबुचे रामविभुडुनु जिक्कॆ; । नरिदिये विरहुल मौटमे’ मनुचु
दॆसलकु जॆप्पॆडि तॆऱगुन बासि । वस मऱि वॆस जक्रवाकमुल् सनियॆ;

हो गए। लालिमा से पूर्ण सन्ध्या ऐसे व्याप्त हुई मानों मनसिज-अनल (विरहाग्नि) से तप्त मानसवाले राम को देखकर, अपराब्धि प्रीति से, उसे शीतल बनाने के लिए, मनोहरता से काषाय वस्त्र लाई हो। निचले भाग के ऐंठ के कम होने पर, जहाँ-तहाँ लालित्य को खोकर, कमल मुकुलित हो गए मानों यह बता रहे हों कि "इनवंशचन्द्र (राम) के हाथ इन्द्रारि (रावण) के मुख सदा इस प्रकार मुरझा जाएँगे।" सुन्दरता से राम की शीतलक्रिया (शीतलोपचार) के लिए विजृंभित होकर, आशा (दिशा)-अंगनाओं ने ललित-तमाल-पल्लव-राशियाँ बिखेर दी हों, इस प्रकार दिशाओं में अन्धकार फैलने लगा ॥ १८० ॥

"दिननाथकुल (वाले राम) की देवी को ले आकर, मुदित होनेवाले दनुजनाथ के मुखकमल कुम्हला जाएँगे" (ऐसा) सोच हँसने के समान तब जहाँ-तहाँ शोभा से कुमुद विकसित हुए। तारकसमूह से आकाश इस प्रकार शोभित हुआ मानों "श्रीरामदेव के सित-मार्गणों (बाणों) से, सूखे हुए समस्त अंबुधि का रूप इसी प्रकार रहेगा जिसमें रत्न ही बचे रहेंगे।" उस निशीथ को राम के अंगताप (को दूर करने) के लिए सान्द्र रूप से सजाए गए मल्लिका पुष्पों की शय्या हो, इस प्रकार तारकाएँ अब्धि में प्रतिबिंबित हुईं। "विभु राम विरह में फँस गए तो हमारा विरही होने में क्या आश्चर्य है?" मानों इसे दिशाओं में कहने के समान चक्रवाक बिछुड़कर

‘राजनै येनु वाराशि युब्बितु; । राजवै नीवु वाराशि यिंकिप
दलचुट पाडिये धरणीतलेश ! । विलसित सत्कळान्वितुडवु नीवु;
१९०
नट्टुचेसितेनि दोषाकरत्वंबु । पटुवृत्ति नीयंदु ब्रभविंचु’ नंचु
दूरु वच्चिचनमाड्कि दोचॆ जंदुरुडु । मीऱिन करमुलु मिन्नुलुमुट्ट;
‘जनकजकै रामजननाथतिलक ? । ननु दल दाल्चि मन्नन चेसिनट्टि
हरु विल्लु विऱिचिन या दोषमुनुन । विरहि वैतिवि सीतवॆऱवुन’ ननुचु
जंदुरु डट्टहासमु चेसॆ ननग । नंदंद चंद्रिक लतिशयंबंदॆ;
शरनिधि नुरुवनु चंदनं बर्थि । गरमॊप्प वीचिकागणमुल पेरि
करमुल दिगिचि दिक्कांतल मेन । बॊरिबॊरि नाराजु पूसॆनो यनग
दलकॊनि मऱियुनु दट्टमै पर्वि । वॆलयंग नच्चपु वॆन्नॆल यॊप्पॆ;
नप्पुडु वेडुक नाचकोरंबु । लॊप्पुचित्तमुल बॆंपॊलयंग गदिसि
पॊरि बॊरि दम चंचुपुटमुलु साचि। निरतंबुगाग वॆन्नॆल पुक्किलिंचि २००
ललितोड दम प्रियलकु निच्चि यिच्चि । यॆलमितो नवि यंदि यी ग्रोलि
क्रोलि

शीघ्रगति से चले गए। “राजा होकर मैं वाराशि (समुद्र) को प्रफुल्ल कर देता हूँ। हे धरणीतलेश ! राजा होकर तुम्हें वाराशि को सुखाने की बात सोचना न्यायसंगत है क्या ? तुम विलसत्-कलाओं से अन्वित (युक्त) हो ॥ १९० ॥

वैसा करोगे (समुद्र को सुखा दोगे) तो दोषाकरत्व[1] तुममें पटुवृत्ति से समुत्पन्न होगा।” मानों इस प्रकार निन्दा करता हुआ, अत्यधिक करों (किरणों) के आकाश को स्पर्श करते हुए चन्द्र दिखाई पड़ा। जहाँ-तहाँ चन्द्रिकाएँ (चाँदनी) अतिशयता से व्याप्त हुईं मानों चन्द्र यह कहकर अट्टहास कर रहा हो कि “हे राम जननाथ-तिलक (राजश्रेष्ठ) ! पूर्व में जनकजा के लिए मुझे सिर पर धारण कर आदर करनेवाले हर (शिव) का धनुष तोड़ा, उस दोष के कारण, सीता के कारण से विरही बन गए हो।” अधिक सान्द्र बन, व्याप्त हो स्वच्छ चाँदनी इस प्रकार शोभित हुई मानों उस राजा (चन्द्र) ने शरनिधि (समुद्र) के फेनरूपी चन्दन को प्रेम से अधिक शोभा से वीचिका-गणों से आकृष्ट कर, हाथों में लेकर, दिग्वधुओं के शरीर पर बार-बार लेप कर दिया हो। तब (उस समय) उत्साह से चकोर प्रसन्न चित्तों से, शोभा से नियराकर, बार-बार अपने चंचुपुटों को फैलाकर, निरन्तर चाँदनी से कुल्ला कर, ॥ २०० ॥

---

[1] चन्द्र दोष (कलंक) का अकर (स्थान) है।

मलसि याडुचु बलुमरु सोलि सोलि । पॊलुचु वॆन्नॆलरसंबुल देलि तेलि
गमिबासि यॆडगलुगग दारितारि । कॊमरारि यितुल गूडियुंडुटयु
गनुगॊनि मदनमार्गणपात भिन्न । तनुडैन रामुडा धरणिज दलचि
यंतकंतकु मदनाग्निचे गंदि । यंतरंगंबुन नडलुचु नुंडॆ;
नप्पुडु लक्ष्मणुं डन्नसंताप । मुप्पॊंगुटयु जूचि युडुपंगदलचि
"यिदॆ यब्धि दाटुद; मिदॆ दाटिपोयि । पदिशिरंबुलवानि बटुशक्ति नाजि
भंजिचि मिथिलाधिपतिकूर्मिपुत्रि । गंजास्ययगु सीत गैकॊनॆदधिप !
यसमानवीरुंड वारूढ मतिवि; । वसुधेश ! नी किंत वगव नेमि-
टिकि ?"
ननवुडु तम्मुनि यनुनयंबुनकु । जननाथु डॆंतयु संतोषमंदॆ; २१०
नादट वॆन्नॆलयंदु वानरुलु । मोदंबुतोड निम्मुल नॆल्लकडल
नारामदेवु गुणांकंबु लिंपु । लारंग बाडुचु नाडेडुवारु,
हरि यवतारंबु लन्नियु गथल । वॆरवुन निपुगा विनिपिंचुवारु,
गरगिन याचंद्रकांतोपलमुल । बरिणमिपुचु मॆच्चि पवळिंचुवारु,

—लालित्य के साथ अपनी प्रियाओं को दे-देकर, उनके प्रेम से देने पर पान करते हुए, घूमते-खेलते, कई बार मस्त हो झूम-झूमकर, अत्यधिक चन्द्रिका-रस में ऊभ-चूभ हो, झुण्ड से बिछुड़कर, अवकाश मिलते ही (परस्पर) स्पर्श कर, शोभा से अपनी स्त्रियों के संग थे। (उसे) देख मदन-मार्गण (मन्मथ के बाण)-पात (लगने से)-भिन्न-तन वाला राम धरणिजा का स्मरण कर, अधिकाधिक मदनाग्नि (विरहवेदना) से तप्त हो, अन्तरंग में व्याकुल होता रहा। तब लक्ष्मण अग्रज के सन्ताप के उमड़ते देख, (उसे) कम करने का विचार कर (कहा)—"यही (अभी) अब्धि को पार करेंगे। हे अधिप ! यही पारकर जाकर दस सिर वाले को पटुशक्ति के साथ युद्ध में हराकर, मिथिलापति की लाड़ली पुत्री, कंजास्या (कमलमुखी) सीता को (तुम) ग्रहण करोगे। (तुम) असमान वीर हो, आरूढ़मति वाले हो। हे वसुधेश ! तुम्हें इतना दुखी क्यों बनना चाहिए ?" ऐसा कहने पर अनुज के अनुनय (-वाक्य) सुनकर जननाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ २१० ॥

चन्द्रिका में वानर सर्वत्र मोद के साथ, प्रेम के साथ थे। उन्होंने रामदेव के गुणगण शोभा के साथ गाते हुए, खेलते हुए, झुण्ड बाँधकर जलनिधि के कूल पर उत्साह से फूलकर विहार करते हुए, हरि के समस्त अवतारों को, कथाओं के रूप में, उचित विधान से मनोहरता से सुनाते हुए, पिघले उन चन्द्रकान्त पत्थरों पर, हर्षित होते, सराहते लेटे हुए, समय

नयि प्रौद्दु गडपि प्रियंबुन बोंदल । रयमुन नंत बूर्वमुन गेंपेसगें
'जलनिधि राघवेश्वरु डेयुनपुडु । बलुशिलीमुखमुल बड्डुनो' यनुचु
गडुवेग तोंलगि याकंपंबु नोंदि । बडबाग्नि युदयाद्रि ब्राकेनो यनग;
'रामु बाणाग्नि वाराशि दहिंचु । चो मिन्नुमुट्ट नर्चुलु पर्वु' ननुचु
वेऱ्चि तोंलंगिन विधमुन ग्रुंके । नेऱसिन चुक्क लन्नियु दोड्डुतोड; २२०
'निदि येल तडसेंद ? बीयब्धि गट्टि । वदलक चंपु रावणु राघवेंद्र ।'
यनि मनुमनिकि दोडैं रेपकडनु । जनुदेंचें ननग भास्करुडुदयिंचें;
गमालाप्तकुलुनि राघवुनि सद्विजय । कमलयु दद्राज्यकमलयु गीर्ति
कमलयु नेंऱि मेलुकनिनचंदमुन । गमलंबु लेल्ल नोंक्कट मेलुकनियें;
नप्पुडु तगिन संध्यादिकृत्यंबु । लोंप्पंग सलिपि रायुर्वीशु; लंत

रावणुडु मंत्रुलतो नालोचिंचुट

नक्कड रावणुं डखिलमंत्रुलनु । दक्कक राविंचि तग वारि कनियें;
"मंत्रकोविदुलार ! मर्कटुंडोकडु । जंत्रंबु चूपिन चंदान वच्चि

बिताया। तब प्रीति के पनपने पर शीघ्र पूर्व (दिशा) में लालिमा व्याप्त हुई। (वह ऐसा लगा) मानों बड़वाग्नि यह सोच कर कि "जलनिधि पर राघवेश्वर के (बाण) चलाते समय, अधिक शिलीमुखों (बाणों) का शिकार बन जाऊंगा" अतिशीघ्र (समुद्र से) निकलकर, काँपकर, उदयाद्रि पर चढ़ गयी हो। सभी नक्षत्र साथ-साथ इस भय से व्याकुल हो छिपने लगे कि राम की बाणाग्नि के वाराशि को जलाते समय, अग्नि ज्वालाएं कहीं आकाश को छू न लें ॥ २२० ॥

मानों अपने पौत्र की सहायता करने के लिए भास्कर तड़के ही यह कहते उदित हुए कि "अब विलम्ब क्यों करते हो ? हे राघवेन्द्र ! इस अब्धि को बाँधकर, शीघ्र ही रावण का वध कर दो।" कमलाप्तकुल वाले राघव की सद्विजय-कमला, राज्यकमला, कीर्तिकमला के सुन्दरता से जाग्रत होने के समान, सभी कमल एक साथ जाग्रत हुए। तब उचित विधान से उर्वीशों (राजाओं) ने सन्ध्यादि-कृत्य सम्पन्न किए। तब,

रावण का मन्त्रियों से विचार-विमर्श करना

—वहाँ रावण ने सभी मन्त्रियों को अवश्य बुलाकर, उनसे समुचित रूप से कहा—"हे मन्त्रिकोविदो ! एक मर्कट जन्त्र (मायायन्त्र) दिखाने के समान आकर, लंकिणी को हराकर, मेरी लंका को शोध डालकर, पंकजानन वाली

लंकिणि नॊंचि नालंक शोधिंचि । पंकजानन सीत बरिकिंचि कांचि
नावनं बगलिंचि नासुतु जंपि । नाविक्रममु मीऱि नापुरि गाल्चि
पेक्कुव नसुरुल बेक्कंड्र जंपि । चिक्किकयु मनचेत जिक्ककपोये;
२३०
नदॆ तॆंच्चॆ रामुनि नावानरुंडु । पदिलुडै यंबुधिप्रातंबुनकुनु;
भल्लूकबलमुलु ब्लवगसैन्यमुलु । वॆल्लुवलै वच्चि विडिसिरि वार्धि;
स्थिरमुगा नीवार्त तॆऱगॆल्ल दॆलिय । जरजनुल् चॆप्पिरि सकलंबु नाकु;
निनकुलु डीयब्धि यिंकिंचियैन । दन सेन बंचि युद्धति गट्टियैन
दाटि वच्चिन मऱि तप्पु गार्यंबु; । दाटकमुन्नॆ मीर् तज्ज्ञत मॆऱसि
'यिदि कार्य' मनि चॆप्पुडिदरु गूडि; । यदियॆ चेयुदमु मेलगु तॆऱंगैन"
ननि यडिगिन राक्षसाधीशुतोड । ननिरि मंत्रुलु गडु नल्पज्ञुलगुचु:
"दिव्युलकैननु दृष्टिंपरानि । दिव्यास्त्रमुलु पॆक्कु देवरयंदु;
ग्रक्कन विषमुलु ग्रक्कंग बट्टि । युक्कडगिंचिति वुरगाधिपतिनि;
रुद्रुनि सखु गुबेरुनि मदंबणचि । भद्रकंबैन पुष्पकमु गैकॊंटि; २४०
मयुनि ब्रख्यातुनि मर्दिंचि यतनि । प्रियतनूभव बॆंड्लि प्रीतितोनैति;

सीता का परिशीलन कर (उसे) देख, मेरे वन को उखाड़कर, मेरे सुत का वध कर, मेरे विक्रम से परे बन (परास्त) कर, मेरी नगरी को जलाकर, —बहुत से राक्षसों को मारकर, फँसकर भी हमारे हाथों फँसे बिना चला गया ।। २३० ।।

यह वही वानर सुरक्षित रूप से राम को अंबुधि प्रान्त में लाया है। भल्लूक-सेनाओं (और) प्लवग-सेनाओं ने बाढ़ के रूप में आकर, वारिधि के पास पड़ाव डाल लिया है। पुरजनों ने समस्त समाचार, उचित विधि से मुझसे बताया है। इनकुलवाला (राम) इस अब्धि को सुखाकर ही अथवा अपनी सेना को भेजकर औद्धत्य से पुल बाँधकर ही (समुद्र को) पार कर आएगा तो कार्य बिगड़ जाएगा। पार करने से पहले ही तुम लोग बुद्धि कौशल से, इतने सब लोग मिलकर बताओ कि 'यह कार्य (कर्त्तव्य) है' उसीको श्रेष्ठ विधान से करेंगे।" इस प्रकार पूछनेवाले राक्षसाधीश से मन्त्री अति अल्पज्ञ होते हुए बोले—"आपके पास कई ऐसे दिव्य-अस्त्र हैं जिनकी ओर दिव्य (देवता) भी दृष्टि प्रसरित नहीं कर सकते। उरगाधिपति (सर्पराज) को पकड़कर, उसका गर्व भंग किया, जिससे उसने झट विष उगल दिया। रुद्र के सखा कुबेर के मद का दमन कर, भद्रक (शुभप्रद) पुष्पक को ग्रहण किया (ले लिया); ।। २४० ।।
—प्रख्यात मय का मर्दन करके, उसकी प्रिय तनूभवा (पुत्री) को प्रेम से ब्याह

वंतकु नेंक्कुडौ नंतकु बट्टि । यंतकुनकु नीवें यंतकुडैति;
वारनि बलुडैन वरुणुनि यात्म । नीरु गाविंचिति निर्जराराति !
चक्रवर्तुल राज्यचक्रमुल् द्रिप्पि । चक्रमुल् गोंटि राक्षसचक्रवर्ति !
शूलायुधुनि गिट्टि शूरत मेंऱसि । मूलकु द्रोयवा मुक्कंटि यनक !
वासवु नन्नाकवासुलतोड । वासि दप्पिंपवा वासिकि नेंक्कि ?
वेडिकि बलुमाऱु वेडिमि जूपि । वेडिमि बापवा वेडिको ननलु ?
बलिमिनि गोणाधिपति दैत्यनाथु । नलिगि मर्दिपवा यधिकशौर्यमुन?
निलिचिनचोटनु निलुवंगनीक । पलुमाऱु बवनु दुप्पल दूलवेंतु;
मनुजु डातडु; नीवु मनुजाशनुडवु;। मनुजुंडु नीचेत मनुटेल कलुगु !
२५०

नीश्वरु गूर्चि महेश्वरक्रतुवु । शाश्वतकीर्तिमै सलिपें नीसुतुडु;
सांद्रानुमोदियै सफलतनोंदि । यिंद्रुनि भंजिचि यिंद्रजित्तय्यें;
नायिंद्रु जेंऱबेट्ट नजुडु वेडुटयु । नायजुनकु निच्चें नायिंद्रजित्तु;
आतडु चालडे यालंबु गेलुव ? । दैतेयकुलनाथ ! तगदु चिंतिप''

लिया । अधिक संतप्त करनेवाले अंतक (यम) को पकड़, अंतक के लिए तुम्हीं अन्तक बने । हे निर्जर-अराति (देवारि) ! दुर्निवार बल वाले वरुण की आतमा को भस्म कर दिया । हे राक्षस चक्रवर्ती ! चक्रवर्तियों के राज्य-चक्र घुमाकर चक्र (अधिकार चिह्न) अपने हाथ में ले लिए । शूलायुध वाले (शिव) के पास पहुंच, शूरता से प्रकाशित हो, त्रिनेत्र की परवाह न करके, उसे कोने में नहीं ढकेल दिया था? (नीचा दिखाया था)। स्वयं प्रसिद्ध बनकर नाक (स्वर्ग)-वासियों के साथ वासव (इन्द्र) की प्रसिद्धि को दूर नहीं किया था? अग्नि (-देवता) को कई बार अपनी अग्नि (प्रतापाग्नि) बताकर, उसका ताप नष्ट नहीं किया था? क्या दैत्यनाथ कोणाधिपति (नैऋत) पर क्रुद्ध हो अधिक शौर्य और बल से (उसका) मर्दन नहीं किया था? पवन को एक स्थान पर स्थिरता से ठहरने न देकर, कई बार उसे अत्यन्त विचलित नहीं किया था? वह मनुज है, तुम तो मनुजाशन (नरभक्षी) हो । तुम्हारे हाथ पड़कर मनुज जीवित कैसे रह पाएगा ? ।। २५० ।।

तुम्हारे पुत्र ने ईश्वर के प्रति, शाश्वत कीर्तियुक्त हो, महेश्वर-क्रतु (यज्ञ) किया था । सान्द्रानुमोदी (अधिक प्रसन्नता से युक्त) हो, सफलता प्राप्त कर, इन्द्र को जीतकर (वह) इन्द्रजित बन गया था । उस इन्द्र को बन्दी बनाने पर, अज (ब्रह्मा) के विनय करने पर, इन्द्रजित ने उसे (इन्द्र को) अज (ब्रह्मा) को दे दिया । क्या युद्ध जीतने के लिए वह पर्याप्त नहीं है ? (अत:) हे दैतेयकुलनाथ ! चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है ।''

दनुजसैनिकुल वीरमुलु

ननि मंत्रुलाडुचो नधिकदर्पमुलु । घनमैन लावुलु गल दैत्यवरुलु
ब्रळयकालांतक प्रभुलैनवारु । सुलभशौर्युंडु ब्रहस्तुडु निंद्रजित्तु
शतमायुडुनु बाहुशालि दुर्मुखुडु । नतिकायुडुनु मकराक्षुंडु खड्ग
रोमुंडु वृश्चिकरोमुंडु सर्प । रोयुंडु नग्निवर्णुडु विरूपाक्षु
डक्षीणबलुडु धूम्राक्षु डन्वाडु । नक्षतोन्नतुडु यूपाक्षु डन्वाडु
रमणीयबलशालि रश्मिकेतुंडु । नमितविक्रमशालि यग्निकेतुंड
२६०
वज्रदंष्ट्रुंडनुवाडु द्रिशिरुडु । वज्रदेहुडु बलवंतु डैनट्टि
सुप्तघ्नुडुनु मरि शोणिताक्षुंडु । ब्राप्तशौर्युंडु महापार्श्वु डन्वाडु
नीनर गुंभुडु निकुंभुडु सूर्यशत्रु । डुनु नग्निकोपनुंडुनु महोदरुडु
दिव्युल गेलिचिन देवांतकुंडु । नब्ययविक्रमुं डानरांतकुडु
गडुनुग्रुडगु महाकायु डन्वाडु । नडर विद्युज्जिह्वुडनुवाडु मरियु
गंपनुडुनु महाघनु डकंपनुडु । बेंपारुचुन्न यभेद्यविक्रमुडु
नादिगा गल्गु महादैत्यवरुलु । नादैत्यवल्लभु नग्रभागमुन
गन्नुल गोपंबु गडलुकोनंग । मिन्नुलु मुट्टंग मीरि पलकुचुनु

राक्षस-सैनिकों की वीरोक्तियाँ

इस प्रकार मन्त्रियों के अधिक दर्पपूर्ण वचन कहने पर अत्यधिक सामर्थ्य वाले दैत्यश्रेष्ठ (तथा) प्रलयकाल के अन्तक के प्रभु सम, (तथा) सुलभ शौर्यवाले प्रहस्त, इन्द्रजित, शतमायु, बाहुशाली दुर्मुख, अतिकाय, मकराक्ष, खड्गरोम, वृश्चिकरोम, सर्परोम, अग्निवर्ण, विरूपाक्ष, अक्षीणबल, धूम्राक्ष, रमणीय बलशाली रश्मिकेतन, अमित विक्रमशाली अग्निकेतन, ।। २६० ।।

—वज्रदंष्ट्र, त्रिशिर, वज्रदेह, बली सुप्तघ्न, शोणिताक्ष, प्राप्तशौर्य, महापार्श्व, कुंभ, निकुंभ, सूर्यशत्रु, अग्निकोपन, महोदर, देवताओं को जीतनेवाला देवान्तक, अव्ययविक्रम वाला नरान्तक, अति उग्र महाकाय, शोभित विद्युज्जिह्व और कंपन, महान् अकंपन, शोभायमान अभेद्यविक्रम आदि महादैत्य-श्रेष्ठ उस दैत्यवल्लभ (राक्षसराजा) के सम्मुख, आँखों से क्रोध के उमड़ने पर, बढ़-बढ़कर आकाश स्पर्श करनेवाली बातें करते हुए, प्रलय-अवसर (काल के)-महापवन-निर्धूत (मुक्त) कुलपर्वतों के समान परस्पर ऐसा देखते हुए कि कुंभिनी (पृथ्वी) दब जाए, उद्दंडता से परस्पर न सराहते हुए (दूसरे को अपने सामने तुच्छ मानते हुए), उग्रता से प्रकाशित होते हुए, ।। २७० ।।

ब्रळयावसरमहा पवननिर्धूत । कुल पर्वतमुलन गुंभिनि यद्रुव
नोंडोरु जूचुचु नद्दंडवृत्ति । नोंडोरु मेंच्चक युग्रत मेंऱसि२७०
यूर्पुलु निगुड नत्युद्धति म्रोयु । सर्पंबुलुनु बोलें सरभसवृत्ति
शूलंबु लंकिंचि सुरियलु बिगिंचि । वालमुल् जळिपिंचि वडिलोंडुलेंत्ति
सबळंबु लमरिंचि चक्रमुल् द्रिप्पि । प्रबलंबुलगु भिंडिवालमुल्दिगिचि
पट्टसंबेसगिंचि प्रासमुल् द्रिप्पि । गट्टिविड्लनु गुणकलितमुल् सेसि
युड्डगक यलुगु लोंडोंटितो रासि । मिड्डुगुर्लु मंटलु मिक्कुटंवगुचु
नोंडोरु बिपुलकेयूरंबु लोरय । नोंडोरु मकुटंबु लग्रत राय
भासुरमौक्तिकप्रकरमुल् सेंदर । रासिन भूषणरजमुलु दोरुग
संदडिंपुचु महासंरंभ मेसग । बृंदारकारितो बेंचि यिट्लनिरि:
"देवगंधर्व दैतेयकिन्नरुलु । देव ! निन् जूड भीतिल्लुदुरेंपुडु;
नरुलेंतवारु, वानरु लेंतवारु । सुरवैरि ! निनु जूचि स्रुक्कक
निलुव ? २८०
नेमु नाडोंकक्कोंत येमऱियुंड । नामर्कटाधमुडट्लेगेगाक !
यिक मामुंदऱ नीलंक जोंच्चिच । शंकिप केव्वरु चन जालुवारु ?
वानरु लनियेंडि वार्त लेकुंड । बूनि निर्जिंचि पेंपुन महीधवुल

—निश्वासों के वेग से चलने पर, अति-उद्धति से मुखरित सर्पों के समान, स-रभस (संरंभ)-वृत्ति से शूल उठाकर, धुरियाँ कसकर, तलवार हिलाकर, लट्ठ ऊपर उठाकर, सबलों (एक प्रकार का आयुध) को ढंग से पकड़कर, चक्र घुमाकर, प्रबल भिंडिवालों को संभालकर, पट्टिस को पकड़कर, प्रास घुमाकर, दृढ़ धनुषों को गुणकलित (ज्या से युक्त) कर, (किसी से) न दबकर, परस्पर बाण रगड़ते हुए जिससे जुगुनुओं के समान ज्वालाएं फूट रही थीं, परस्पर विपुल केयूरों के रगड़ खाने पर, आपस में उग्रता से, मकुटों के रगड़ खाने पर, भासुर मौक्तिक प्रकरों के रगड़ खाने पर, भूषणरज के ढुलकने पर, कोलाहल करते हुए, महासंरंभ के प्रकट होने पर, क्रम से बृन्दारकारी (देवताओं के शत्रु रावण) से यों बोले—"हे देव ! तुम्हें देख सदा देव-गन्धर्व-दैतेय-किन्नर भीत होते रहते हैं। हे सुर-बैरी ! तुम्हें देख कमज़ोर हुए बिना खड़े रहने के लिए नर और वानर कितने समर्थ हैं ? (उनमें कोई सामर्थ्य नहीं है।) ॥ २८० ॥

उस दिन हमारे थोड़ा असावधान रहने पर, वह मर्कटाधम उस प्रकार चला गया। अब हमारे समक्ष इस लंका में प्रवेश कर, बिना शंका (भय) किए कौन जा सकता है ? हे दानवनाथ ! अब बातें क्यों ? झट से हमें भेज दो तो वानरों का नामोनिशान मिटाकर, हराकर, शोभा से महीधवों

जंपि येतेंतुमु चय्यन मम्मु । बंपु दानवनाथ ! पलुकुलिकेल ?''
यनि गर्वदुर्वारुलै पल्कुचुन्न । दनुजुल नंदऱ दप्पक जूचि

विभिषणुडु राक्षसवीरुलकु हितमुपदेशिंचुट

''युवरुवडिपकुडोंहोहो! मानु मानु। डरसि कार्यमु चूत'' मनि विभीषणुडु
चित्तंबुलोन बेंचिन यिंद्रियमुल । नोंत्ति यडंचिन योगियु बोलें
बरग गर्जिचु नुत्पातमेघमुल । निरवुन बेंट्टिन यिंद्रनिभंगि
ननुवोंद नेंप्पटियट्ल कुर्चुंड । बनिचि कार्यमु मुट्टबलिकें वारलकु:
''बेंनुपोंदगा सामभेददानमुल । गोंनरानि कार्यंबु गोनकोंनेंनेनि २९०
मऱि कदा दंडंबु मायलु दलचि । नेंऱपुट; मुन्नें दुर्नीति येमिटिकि ?
नेंसगंग शात्रवु डेमऱियुंडु । देंस शत्रु गेंलुवंगदीरु : गादेनि
नातऱि नोंकशत्रुडतनिपै विडिय । नेतेंऱंगुननैन नेतेंचेंनेनि
दानिपै नतनिकि दैवशक्तियुनु । हीनमैयुन्न नेपेंडलिपवच्चु;
येंन्नडु नेमऱ; डेंदुरेंदु लेदु; । मुन्नें दैवंबु रामुडु; काक मऱियु

(राजाओं) का संहार कर लौट आएंगे ।'' ऐसा गर्व-दुर्वार हो बतियाने वाले दनुजों को अवश्य देखकर,

विभीषण का राक्षसवीरों को हितोपदेश

—विभीषण ने, चित्त में विजृंभित होनेवाली इन्द्रियों का दमन कर देनेवाले योगी के समान, शोभा से गरजनेवाले उत्पात (करनेवाले)-मेघों को शान्त करनेवाले इन्द्र के समान, सुविधा से (सभी राक्षसों को) यथापूर्व रूप में बिठाकर, कार्य-साफल्य के लिए उनसे कहा—''ओहो, जल्दबाजी मत करो। छोड़ दो (इन बातों को) सोच-विचार कर कार्य (की बात) देखेंगे। शोभा से साम, भेद, दान (आदि उपायों) से असाध्य कार्य सामने आ जाए ।। २९० ।

—तो तब दण्ड (और) माया को अपनाकर (कार्य) साधना चाहिए। पहले यह दुर्नीति क्यों ? शोभा से शत्रु के असावधान रहते समय शत्रु को जीता जा सकता है। नहीं तो, उस समय शत्रु पर (कोई दूसरा) शत्रु किसी भी रूप में आ जाए (धावा बोल दे), जिसपर वह दैवशक्ति से हीन बना हुआ हो तो, उसके विकास का नाश कर सकते हैं। (राम) कभी असावधान नहीं रहता, वह दुर्जेय है, स्वयं दैव (भगवान) है। यही नहीं, हर के धनुष को तोड़नेवाला साहसी है। परमविवेकी

हरुविल्लु विरिचिनयट्टि साहसुडु; । परमविवेकि; दोर्बलजयाधिकुडु;
मीचेत साध्युडे मिहिरिकुलेशु । डेंचि मीरी गति नेंन्नि याडिननु !
गडिलेनि यीवार्धि गालुव करणि । वडि दाटि राडे या वायुनंदनुडु !
वच्चि यीलंकलो वलसिनमाड्कि । नच्चेरुवंदि मीरंदऱु जूड
नेमेयि चेसेनो येऱुगरा मीरु ? । रामुनि वीटि शूरत्वंबु चूप ३००
नत डोक्क वानरु; डट्टिवानरुलु । नतनिकि नेक्कुडैनट्टि बानरुलु
नावानरुल केक्कुडैन वानरुलु । भाविंपगा लेक्क पऱुपंगरादु;
मीरु राघवुनि नेम्मेयि नोर्चुवारु? । वारनि कोपंबु वलन नेपारि
येदिरिनि दन्नुनु नेऱुगक पलुकु । टिदि विवेकमे दानवेश्वरुलार !
रामललो नभिराम यासीत । रामुनि देवि नरण्यमध्यमुन
भयमुन रामुनि बलुमाऱु जीर । रयमुन देच्चे नीराक्षसेश्वरुडु;
मदिलोन दलपोय मन कीडेकाक । यितनिकि जेसिन येग्गेमि यतडु?
खरदूषणादुल गडिकंडलुगनु । धरणिपै गूल्ये गदा यनि मीरु
तलचेद; रतनिपै दैत्युल पोक । दलपरु; वारिपै दाडि पोदगुने ?

है, दोर्बल (बाहुबल) के जय में अधिक है। अतिशयता से आप इस प्रकार कितनी ही बातें क्यों न करें, क्या मिहिर (सूर्य)-कुलेश (राम) आपके हाथों हारेगा ? क्या वह वायुनन्दन अपार वारिधि को नहर के समान झट पार करके नहीं आया था ? आकर इस लंका में आप सबके आश्चर्यचकित देखते रहने पर ही, अपनी इच्छा से क्या-क्या किया था, आप नहीं जानते ? राम के यहाँ की शूरता बताने के लिए, ।। ३०० ।।

—वह मात्र एक वानर है। उस प्रकार के तथा उससे अधिक (बली) वानर और उन वानरों से अधिक (बलशाली) वानर, सोचने पर (उसके पास) असंख्य हैं। आप लोग राघव का कैसे सामना कर सकेंगे ? (नहीं कर सकते।) हे दानवेश्वरो ! अत्यधिक क्रोध से, उद्धत बन, प्रतिपक्षी तथा अपने (बल) को न जानकर, (इस प्रकार) बोलना कहीं विवेक है ? रामाओं (सुन्दरियों) में अभिराम उस सीता के, राम की देवी के, अरण्य-मध्य में, भय से राम को कई बार पुकारते समय, यह राक्षसेश्वर शीघ्रता से लाया। मन में सोचने पर हमारी ही बुराई है, वरन् उसने (राम ने) इसकी (रावण की) क्या हानि की है ? आप सोचते हैं कि खर-दूषण आदियों को टुकड़े-टुकड़े कर धरती पर गिरा दिया। (किन्तु) उस पर (राम पर) दैत्यों के जाने (आक्रमण) के बारे में नहीं सोचते। (ऐसे) उनपर आक्रमण करने जाना क्या संगत है ? अपने दोष के कारण ही वे

तम नेरमिनि वारु धरणिपै गूलि । यमरलोकमु जेरि; रदि चॆप्पनेल?
३१०
मेटिवानरुलिट मीऱक मुन्नॆ । कोटलु वारिचे गूलकमुन्नॆ
सौमित्रिबाणवर्षमु राकमुन्नॆ । रामुनि कोपाग्नि राजकमुन्नॆ
यायग्निचे लंक यडगकमुन्नॆ । मीयसुरावळि यील्गकमुन्नॆ
सीत बुच्चुट लॆस्स श्रीरामुकडकु; । सीत देच्चिनकीडु चेसेत गुडुप;
धर्मात्मुडा राम धरणीश्वरुंडु; । धर्मंबुवलननॆ तगनुंडु जयमु ।"
अनि पॆक्कुभंगुल नव्विभीषणुडु । दनुजवीरुल बल्कि दशकंठु जूचि
"तलपोय सुखमुनु धर्मंबु जॆरुप । वलतियै पॆरुगु दुर्व्यसनंबु विडुवु;
सुखमु गीर्तिमु जेयु सुरुचिरधर्म । मखिलनीतिज्ञुडवगुचु गैकॊनुमु;
च्रलमु मानुमु; सुप्रसन्नुंडवगुमु; । कुलमॆल्ल रक्षिंचुकोन जूचॆदेनि
जनकज विडुवु; मा जननाथुतोड । मनकेल वैरंबु मदि मदि बुंडि"
३२०
यनि विन्नविंचिन ननि वाक्यमुलु। विन बुद्धिपुट्टक वॆसगॊल्वुविडिचि
रावणु डंतःपुरंबुन करिगॆ; । नाविभीषणु डंत नामरुनाडु

(राक्षस) धरती पर गिर, अमरलोक पहुँचे । उनके बारे में अब क्यों कहें ? ।। ३१० ।।

श्रेष्ठवानरों के यहाँ (आकर) उद्धत बनने से पहले, उनके हाथ दुर्गों के गिरने से पहले, सौमित्र के बाणों की वर्षा से पहले, राम की क्रोधाग्नि के सुलगने से पहले, उस अग्नि से लंका के नष्ट होने से पहले, इस असुर-समूह के मरने से पहले, श्रीराम के पास सीता को भेज देना उत्तम (कार्य) है। सीता को लाने के दोष का फल अवश्य भुगतना पड़ेगा। वह धरणीश्वर राम धर्मात्मा है, धर्म के पास ही जय स्थिर बनकर रहती है।" ऐसा अनेक विधियों से वह विभीषण दनुजवीरों से कहकर, दशकंठ को देख बोला—"सोचने पर सुख और धर्म को बिगाड़ने के लिए समर्थ बन पनपने वाले दुर्व्यसन को छोड़ दो। सुख और कीर्ति को सम्पन्न करानेवाले सुरुचिर धर्म को नीतिज्ञ होकर ग्रहण करो। हठ छोड़ दो, सुप्रसन्न बनो। यदि समस्त वंश को बचाना चाहोगे तो जनकजा को छोड़ दो। उस जननाथ (राजा) से हमें वैर क्यों ? (उस वैर को) मन से निकाल दो।" ।। ३२० ।।

ऐसा निवेदन करने पर, उसके वाक्य सुनना न चाहकर झट सभा छोड़ रावण अन्तःपुर में चला गया। तब विभीषण दूसरे दिन,

विभीषणुडु रावणुनियोद्दकु वोवुट

प्रथमसंध्याविधुल् परिपाटि दीर्चि । रथमॆक्कि नलुगड राक्षसुल् गॊलुव
रमणीय चित्रतोरण राजवीथि । गमनीय शिल्पमुल् गनुगॊंचु वच्चि
पटुहेषितंबुलु बटुबृंहितमुलु । बटहशंखादुल पटुनिनादमुलु
सेवागतांगना शिंजितंबुलुनु । सावासुलडरिंचु चंडहुंकृतुलु
सूतमागधवंदिशुभकीर्तनमुलु । नाततभट संकुलालपमुलुनु
मातंग निश्वा समारुतोद्धूत । केतनांशुकपटाकृतु लोलि बॆरय
बधिरदिग्भागमै बहुळोर्मिजलधि । विधमुन म्रोयंग विश्वासुलैन
राक्षसवीरुल रक्षचे नमरि । नक्षत्रपरिवृत नवसौधमगुचु ३३०
दॆर्पिलेकिभमुलु देरुलु हरुलु । गिरिकॊन्न नगरिवाकिट देरु डिग्गि
पाद्यादिविधुल संभावितुंडगुचु । वेद्यंबुगा नुर्वीसुपर्वाळि
पुण्याहवाचन पूर्वंबुलैन । पुण्यशांतुलु सेय वॊरि गनुंगॊनुचु
मनसॊप्प नास्थान मंटपंबुनकु । जनुदॆंचि यन्नकु सद्भक्ति म्रॊक्कि
यलरि यातडु सूप नर्हपीठमुन । नॆलमिमै गूर्चुंडि येकांत मॆर्रिगि

विभीषण का रावण के पास जाना

—प्रथम (प्रात:कालीन) सन्ध्या-विधियों को क्रमानुसार सम्पन्न कर, रथ पर आरूढ़ हो, चारों तरफ़ राक्षसों के सेवा करते रहने पर, रमणीय-चित्र-तोरणों से युक्त राजवीथि में कमनीय शिल्पों को देखते हुए आकर, पटु-हेषित (हिनहिनाहट), पटु-बृंहित (चिंघाड़), पटह, शंख आदियों के पटु-निनाद, सेवारत-अंगनाओं के शिंजित (आभूषणों के झनझनाहट), सहवासियों के अधिक हुंकार, सूत-मागध-वन्दीजनों के शुभकीर्तन, आतत भटों के संकुल आलाप, मातंगों के निश्वास-मारुत से उद्धूत केतनांशुक की पटाकृतियों के क्रम से स्पर्श करते रहने पर, दिग्भाग (आकाश) को बधिर बनाते हुए, बहुल-ऊर्मि से युक्त जलधि के समान मुखरित होते रहने पर, विश्वस्त राक्षसवीरों की रक्षा से शोभित हो, नक्षत्र-परिवृत (घिरे हुए अर्थात् गगनचुंबी) नवसौध के, ।। ३३० ।।

—अधिक संख्या में रथ, अश्वों से घिरे (रावण के) नगर-द्वार पर (विभीषण) रथ से उतर पड़ा। पाद्य आदि विधियों से सम्भावित होते हुए, विदित रूप से उर्वी-सुपर्व-अवली (ब्राह्मणों के समूह) के पुण्याह-वाचन-पूर्वक पुण्य (पवित्र) शान्तिपाठ को क्रम से देखकर, प्रीति से आस्थान (सभा)-मण्डप पहुँचकर, अग्रज को सद्भक्ति से प्रणामकर, प्रसन्न हो, उसके (रावण के) बताने (इशारा करने) पर, योग्यपीठ पर आनन्द से

मंत्रुल सन्निधि महनीयमंत्र। तंत्रज्ञुडनिये ना दशकंठुतोड

रावणुनिकि विभीषणुनि हितोपदेशमु

"नवधर्रिपुमु देव! यसुराधिनाथ!। यवनिज देच्चिनयंतनुंडियुनु
दुर्निमित्तंबुलु दोचुचुन्नवियु; । निर्णयिंपग रादु निक्कुवंबरय;
होमकुंडंबुल नुन्न त्रेताग्नु। लेमियु वेलुगव यीदिवसमुल;
नागुंडमुलु सोच्चि यलमि चुट्टियुनु। सागिलि पडियुंडु सर्पमुल् पेक्कु; ३४०
लुडुगनि मदमुल नोलसि तुम्मेदल। गडुनोप्पु नम्मदकरुलेल्ल निपुडु
कडु मेनु डिल्ल मै कंबालतोड। येंड लेत्तुकोनि स्रुक्कि मेदलकुन्नवियु;
नुन्नतस्थितिगल युत्तमाश्वमुलु। गन्नुल नोगि नीळ्ळु गारुचुनुंड
गवणंबु नीरुनु गड्डियु नुडिगि। जवसत्त्वमुलु दूलि सडलि युन्नवियु;
वानि तोकलयंदु वडि नग्निशिखलु। मानुगा नलुगुल मंटलु वेडलु;
नरदालपै नग्नु लट रालुचुंडु; ।बोरिबोरि युल्कमुल् भुवि बडदोडगे;
जडिगोनि वीरमस्तमुल वायसमु। लडरुचु बुरमुलो नाडंगदोणगे;

बैठकर, एकान्त जानकर, मन्त्रियों की सन्निधि में (समक्ष) महनीय-मन्त्र-तंत्रज्ञ (विभीषण) ने उस दशकण्ठ से कहा—

रावण को विभीषण का हितोपदेश

"हे देव ! हे असुराधिनाथ ! ध्यान से सुनो। जब से भूमिजा (सीता) को लाए थे तब से दुःशकुन दिखाई पड़ रहे हैं। सोचने पर यथार्थ का निर्णय नहीं कर पा रहे हैं। इन दिनों होमकुण्डों में स्थित त्रेताग्नियाँ प्रज्वलित नहीं हो रही हैं। उन कुण्डों में प्रविष्ट होकर, आनन्द से घेरकर, कई सर्प लेटे पड़े हुए हैं ॥ ३४० ॥

अनारत मद (धाराओं) से भरे हुए (तथा) भ्रमरों से अधिक शोभायमान वे सभी मद-गज अब शरीर के ढीले पड़ने पर, शरीर-रूपी स्तम्भों से (और) सिर ऊपर उठाए, कमज़ोर बन, चुप खड़े हैं। उन्नत स्थिति से युक्त उत्तम अश्व, आँखों के क्रम से आँसुओं के बहते रहने पर, चारा, जल और घास को छोड़, जवसत्त्वों से हीन हो क्लान्त बने हुए हैं। उनकी पूँछों में झट अग्निशिखाएँ (तथा) मनोज्ञता से बाण-ज्वालाएँ निकल रही हैं। रथों पर अग्नियाँ गिरती रहती हैं। पुनः पुनः उल्काएँ भुवि (पृथ्वी) पर गिरने लगीं। झड़ी लगाकर (ताँता बाँधकर) पुर में वीरों के मस्तकों पर कौए बहुलता से मँडराने लगे। प्रख्यात रूप से शिखाओं

ख्यातिगा शिखलतो गडगि कूपमुल । भातिगा मंडूकपतुलुद्भविंचे;
देवगेहमुल भूदेवगेहमुल । भाविंप शिथिलाधिपङ्क्तुलु वुट्टे;
इंद्रधनुस्सुलु निट रात्रुलंदु । जंद्रधारिक नैन जयमु लेदंड्रु ; ३५०
पूनि चूडग शुभंबुलु गावु मनकु; । वीनि विचारिंचि विग्रहं बुड्डुगु;
मट्टुगान निन्निटि कसुराधिनाथ । सटलेल ? विनु मॊक्क शांति
चॆप्पॆदनु:

श्रीरामुनकु निम्मु सीत गोंपोयि; । नेरमि वट्टडानृपकुंजरुंडु;
नॆंदु नीतिज्ञुन किदि लॆस्सकार्यं; । मिदऱु नॆऱ्गरा यिदि बुद्धियगुट!
दनुजेश ! नीचित्तधर्मंबु नूदि । 'विनु' मनि चॆप्पंग वॆऱ्तुरुगाक !
नाकु बोरादु दानवनाथ ! कान । नीकु जॆप्पिति निट्लु नीतिमार्गंबु"
ननि बुद्धि सॆप्पिन नव्विभीषणुनि । विनुतवाक्यंबुलु वीनुलु सॊरक
"यॆव्वरिदिक्कुन नेभयं बॆऱुग; । नॆव्विधंबुन सीत नीनु रामुनकु;
दुर्जयुंडगु नाकु दुरमुलो नतडु । निर्जरुल् तोडैन निलुचुने?" यनुचु
गोपंबु दीपिंप गॊल्वंत विडिचि । वेपोयॆ दानवविभुडु लोपलिकि;
३६०

से युक्त हो, कुओं में प्रचुरता से मंडूक उत्पन्न हुए। देवगेहों में, भूदेव (ब्राह्मणों)-गृहों में, सोच देखने पर शिथिलाधिपंक्तियाँ (खंडहर) उत्पन्न हुईं। यहाँ रात के समय इन्द्रधनुष हैं। कहते हैं, रात को इन्द्र-धनुष के होने पर, चन्द्रधारी (शिव) को भी विजय प्राप्त नहीं होती ।। ३५० ।।

ध्यान से देखने पर (ये शकुन) हमारे लिए शुभप्रद नहीं हैं। इनके बारे में विचार कर विग्रह (कलह) को छोड़ दो। हे असुराधिनाथ! यह ऐसा है, अत: इतने कष्ट क्यों ? सुनो, शान्ति की एक बात कहता हूँ। सीता को ले जाकर श्रीराम को दे दो। वह नृपकुंजर (तुमको) अपराधी नहीं मानेगा। नीतिज्ञ के लिए यह उत्तम कार्य है। क्या सब लोग नहीं जानते कि यह बुद्धिमानी है ? हे दनुजेश ! इतना ही है कि तुम्हारी चित्तवृत्ति को जानकर, कहने में डरते हैं। मैं कहे बिना नहीं रह सकता। अत: तुम्हें इस प्रकार नीतिमार्ग बताया है।" ऐसा समझाने पर उस विभीषण के विनुत-वाक्यों को कानों में प्रविष्ट न कर, यह सोचते कि "किसी की ओर से मैं किसी प्रकार का भय नहीं जानता, किसी भी प्रकार से राम को सीता नहीं दूँगा। मुझ दुर्जय के समक्ष यदि निर्जर भी तो उसका साथ दें, क्या वह युद्ध में खड़ा रह सकता है ?", कोप के दीप्त होने पर, सभा को छोड़कर, शीघ्र दानव-प्रभु भीतर चला गया ।। ३६० ।।

मऱुनाडु लेचि क्रम्मऱ रावणुंडु । मऱुवक संध्यासमाधुलु दीर्चि
यनुजुनि वचनंबु लात्म जिंतिंचि । तन मंत्रुलुनु दानु दलपोय दलचि
भानुमंडलनिभप्रभ गलयट्टि । मानैन दिव्यविमानंबु नॆक्कि
कमनीय बहुरत्नखचितंबुलगुचु । गॊमराऱु नप्पैडिकुंभमुल् मॆऱय
वॆन्नॆलनुरुवुन विरचिंचिनट्टुल । नुन्नतच्छत्रंबु लॊप्पारुचुंड
गंकणझणझणत्कारमुल् मॆऱय । नंकिंचि चामर लतिवलु वीव
बॆक्कुर्यंतुलु पॆल्लुगा म्रोय । बॆक्कंड्रु सुभटुलु पॆंपारगॊलुव
वंदिमागधुलु गैवारंबु सेय । संदडि जडिय नैश्वर्यंबु मॆऱय
जनुदॆंचि बहुमंत्रसहितंबुगाग । मनुजाशनुडु सभामंटपंबुनकु
'नर्कवंशजुनि शराहति दॆगि मीद । नर्कबिंबमु जॊत्तु' ननि तॆल्पुकरणि
३७०
जॊच्चि सिंहासनस्थुंडयि पिलुव । बुच्चॆ नायकुल नप्पुडु पडवाळ्ळ।
वारलु दम रथावळुलपै नॆक्कि । वारणंबुल नॆक्कि वाजुल नॆक्कि
विमलचामरमुलु वॆलदुलु वट्ट । दमतम विभवमुल् तगनॊप्प मॆऱसि
चारुचामीकरच्छत्रंबु लॊप्प । वारक भीषणाकारंबु लॊप्प

दूसरे दिन जागकर, फिर रावण ने भूले बिना सन्ध्या-समाधि से निवृत्त होकर, अनुज के वचनों के बारे में मन में चिन्तन कर, अपने मन्त्रियों के साथ विचार-विमर्श करने के लिए, भानुमण्डल के सम प्रभा से युक्त, दिव्य विमान पर आरूढ़ हो, कमनीय बहुरत्नखचित सुन्दर स्वर्णस्तम्भों के प्रकाशित होने पर, मानों चाँदनी के झाग से बनाए गए हों, ऐसे सित-छत्रों के शोभा देते रहने पर, कंकणों के झणझणत्कारों के मुखरित होने पर, सुन्दरियों के चामर डुलाते रहने पर, अनेक तूर्यों के अधिकता से बजते रहने पर, अनेक सुभटों के शोभा से सेवा करते रहने पर, वंदि-मागधों के स्तुतिपाठ करते रहने पर, कोलाहल के मचने पर, ऐश्वर्य के दीप्त होने पर, आकर, अनेक मन्त्रियों के साथ, मनुजाशन (राक्षस) ने सभामण्डप में इस प्रकार प्रवेश किया मानों यह बता रहा हो कि अर्क (सूर्य-) वंशज के शराघात से मरकर, अर्कबिंब में प्रवेश करूँगा ॥ ३७० ॥

(इस प्रकार सभा में) प्रवेशकर, सिंहासनासीन होकर, तब नायक और सरदारों को बुला भेजा। वे अपनी-अपनी रथावलियों पर आरूढ़ होकर, वारणों (हाथियों) पर सवार होकर, वाजियों (घोड़ों) पर सवार होकर, सुन्दरियों के विमल चामर धारण करने पर, अपने-अपने वैभवों से उचित विधि से दीप्त होकर, चारु-चामीकर-छत्रों के शोभा देने पर, क्रम से भीषणाकारों के शोभा देने पर, अपने-अपने तूर्यनादों के साथ आकर, क्रम से

तमतम तूर्यनादमुलतो वच्चिच । क्रममुन मंटपांगणमुलयंदु
दम वाहमुलु डिग्गि तनरु सिंहमुलु । कौमरारगा गिरिगुह जौच्चुकरणि
नामंटपमु जौच्चि यादानवेंद्रु । चे मन्ननलु गांचि चित्तंबुललर
नुचितासनंबुल नुंडि पडालु । रुचितंबु लेरिंगिप नुत्तमंबनुचु
“देव ! नेडेंतयु दॆलिसियुन्नाडु । देवरतम्मु डुद्दीपितबलुडु
घनुडैन याकुंभकर्णु-” डनंग । विनि “पिल्वु” डनवुडु वेग वारेगि
३८०

“देवारि सभकु नेतेंचि कौल्वुंडि । देव ! निन्बिलुव बुत्तेंचे” नावुडुनु
गौडुकुलु कुंभनिकुंभुलु गॊलुव । गडुवेगमुन गुंभकर्णु डेतेंचि
मणिमयंबै दिव्यमहिमंबु गलिगि । गणिकासमूहंबु गाननादमुल
नेंतयु नौप्पारि यॆसगिन मंट । पांतरंबुननु सिंहासनस्थलिनि
नुन्न यन्नकु म्रॊक्कि यॊगि गॊल्वु सौच्चि । युन्नतासनमुन नुन्नयावेळ
नन्नतोडने वच्चि याबिभीषणुडु । क्रन्नन गूर्चुंडे गनकपीठमुन;
नप्पुडु रावणुंडमरवल्लभुनि । यॊप्पेल्ल गैकोनि युंडि प्रहस्तु
गनुगॊनि पलिकॆ: “लंकापुरंबुनकु । बनुपडगा बॆट्टु बलुवैन कापु
मरियु नीकड नॆल्ल मार्गबुलंदु । गिरिकॊन्न कोट वाकिळ्ळ नेल्लेडल

मण्डप के प्रांगण में, अपने वाहनों से उतरकर, सुशोभित सिंहों के गिरिगुफा में प्रवेश करने के समान, उस मण्डप में प्रवेशकर, उस दानवेन्द्र से सम्मान प्राप्त कर, चित्त के प्रसन्न होने पर, उचित-आसनों पर रहकर, सरदारों के औचित्य बताने पर, दूतों ने (उसे) उत्तम मानते हुए, (कहा)—“हे देव ! आपका अनुज, उद्दीप्त बल वाला, महान् कुंभकर्ण आज अति जाग्रत दशा में है।” (ऐसा) कहने पर, सुनकर, कहा ‘बुलाओ’। ऐसा कहने पर वे शीघ्र जाकर, ॥ ३८० ॥

—बोले कि “हे देव ! देवारि (रावण) ने सभा में पधारकर, दरबार लगाकर, तुम्हें बुला लाने (हमें) भेजा है।” ऐसा कहने पर कुंभ-निकुंभ नामक पुत्रों के सेवाएँ करते रहने पर, कुंभकर्ण अतिशीघ्रता से आया। मणिमय तथा दिव्य-महिमा-युक्त हो, गणिका-समूह तथा गान-नादों से अत्यधिक शोभायमान मण्डप के भीतर सिंहासनस्थली पर स्थित अग्रज को प्रणामकर, लगन के साथ सभा में प्रवेशकर उन्नत-आसन पर रहा। उसी समय अग्रज के साथ ही आकर विभीषण भी कनकपीठ पर शीघ्र बैठ गया। तब रावण अमरवल्लभ की समस्त शोभा के लिए विराजमान होकर, प्रहस्त को देखकर बोला—“लंकापुर के लिए आनुकूल्यता से बलवत्तर रक्षा का आयोजन करो। फिर यहाँ के समस्त मार्गों में, परिवेष्टित दुर्ग-द्वारों

जतनमै युंड राक्षसवीरवरुल । ब्रतिदिवसंबु लोपलनु वॆल्पलनु" ३९०
ननि दानवाधीशु डाकुंभकर्णु । गनुगॊनि पल्कॆ नुत्कंठ दीपिंप:

रावणुडु कुंभकर्णुनकु रामुनिराक यॆऱिगिंचुट

"विनु कुंभकर्ण! नोविननिदि यॊकटि । जनपदंबुन केगि चय्यन नेनु
रामुनि देवि धरासुत सीत । गार्मिंचि तॆच्चिति गंजदळाक्षि:
मऱि मॊन्न नॊक हनुमंतुडन् कोति । पऱतेंचि सीतकु बरिणाम मॊसगि
'देवि ! नीपति रामदेवुंडु वच्चु' । ना विनि मदिलोन नम्मि यासीत
युन्नदि; यॆंतयु नुद्दंडवृत्ति । नन्नरुंडुनु नब्धि कव्वल विडिसॆ;
वनमुललो गल वनचरुलॆल्ल । बॆनुमूकगा गूड बॆट्टु केतॆंचॆ;
जॆच्चॆर ननिसेसि सीत गॊंपोव । वच्चिनाडतडु; तावच्चुगाकेमि?
सुरनाथसुरलनु स्रुक्किंचिनाड; । हरुडुन्नकैलास मगलिंचिनाड;
शंभुचे जंद्रहासंबु गॊन्नाड; । नंभोजभवु वरंबडिगिकॊन्नड; ४००
दानिपै नीलावु तविलि युन्नाड; । मानवुडे नन्नु मर्दिंचुवाडु !

पर, सर्वत्र, जतन के साथ, प्रतिदिन, दिन-रात, राक्षसवीरों को नियुक्त करो।" ।। ३९० ।।

(ऐसा) कह दानवाधीश कुंभकर्ण को देख, उत्कण्ठा के दीप्त होने पर बोला—

रावण का कुम्भकर्ण को राम का आगमन बताना

"हे कुंभकर्ण ! एक बात सुनो जिसे तुमने सुना नहीं था। झट जनपद जाकर मैं राम की देवी, धरासुता, कंजदलाक्षी सीता को कामा बनकर लाया हूँ। फिर परसों हनुमान नामक एक वानर ने (यहाँ) आकर सीता को प्रसन्न बनाकर (कहा)—"हे देवी ! तुम्हारा पति रामदेव आएगा।" यह सुन, वह सीता मन में विश्वास किए हुए है। अधिक उद्दंडवृत्ति से उस नर (राम) ने भी अब्धि के उस पार पड़ाव डाला है। वनों के समस्त वनचरों की बड़ी भीड़ साथ लेकर आया है। अतिशीघ्र युद्ध कर, सीता को ले जाने के लिए वह आया है। आया तो आया, क्या होनेवाला है ? सुरनाथ (तथा) सुरों को मैंने दुर्बल बना दिया है। कैलास को, जहाँ हर थे, उखाड़ दिया है। शम्भु से चन्द्रहास प्राप्त किया है। अंभोजभव से वर माँग लिया है ।। ४०० ।।

रामु डॆन्नडु गॆल्चु रणभूमि नन्नु ! । गोमलि नॆन्नडु गॊनिपोवु नतडु!"
ननवुडु गोपिंचि या कुंभकर्णु । डनियॆ रावणुतोड नंदऱु विनग;
"रामु वंचिंचि या रामुनि देवि । नेमऱियुंडग नेचि युद्वृत्ति
दॆत्तुवे ? यिट्टु लेल तॆच्चिचति कडगि ? । चित्तंबुलो नीति जिंतिपवैति;
धर्ममार्गमु नीवु दलपोयवैति; । वर्मिलि गुलमॆल्ल नडग जेसितिवि;
सीत दॆच्चिचनयप्डॆ चॆडियॆ नीलंक; । येतॆऱंगुननैन निदिय निश्चयमु;
ऎट्टियिननेमि ? या यिनकुलेश्वरुनि । नॊट्टन शरमुलु नॊऱि गाडकुंड
ब्रदिकि वच्चिचति नीदुभाग्यंबुकतन; । निदि मेलु कीडनि यॆन्नंगनेल ?
पोवच्चुनेयिंक बूनॆदु गाक ! । रावण! यितकार्यमु चक्कबॆट्ट ४१०
नामीद बडियॆ; वानरुल राघवुल । नेमियु दलपक यिंक सुखिंपु"
मनि पल्कुटयुनु महापार्श्वुडनियॆः । "घनभुज यॆल्ललोकमुलकु नीव
पतिवट ! यासीत बलिमिनि बट्टि। रति सल्पनेरवा? राक्षसाधीश!"
यनवुडु जित्तंबुनंदु मॊदिंचि । दनुजाधिनाथु डातनि जूचि पलिकॆः
"विनु महापार्श्व! ये वेधकॊल्वुनकु । जनुचोट बुंजिकस्थल यनु नाति

तिस पर तुम्हारी सामर्थ्य को प्राप्त किया है। क्या मानव मुझे परास्त करनेवाला है ? क्या राम कभी मुझे रणभूमि में जीत सकेगा ? क्या कभी वह कोमली (सीता) को ले जा सकेगा ?" ऐसा कहने पर, क्रुद्ध हो कुंभकर्ण ने सबके सुनने पर रावण से कहा—"राम को धोखा देकर, उस राम की देवी के असावधान रहते समय, विजृंभित हो, उद्वृत्ति से क्यों लाए हो ? सप्रयत्न (उसे) इस प्रकार क्यों लाए ? मन से नीति के बारे में सोच नहीं पाए। तुम धर्ममार्ग के बारे में सोच नहीं पाए। प्रेम से समस्त कुल को नष्ट कर दिया। जब सीता को लाए तभी लंका नष्ट हो गई। किसी भी विधान से यही निश्चित बात है। जो भी हो। उस इनकुलेश्वर के अप्रतिहत शरों के, क्रम से गड़ने से पहले, अपने भाग्य के कारण जीविति (बच) आए। इसे भला (और) बुरा क्या मानें ? अब (अपने कर्तव्य से) कैसे मुक्त हो सकता हूँ ? अब (भार) धारण करूँगा ही, हे रावण ! इतना महाकार्य सुधारने का, ॥ ४१० ॥

—(भार) मुझपर आ पड़ा। वानरों और राघवों के बारे में बिलकुल न सोचकर अब सुख से रहो।" ऐसा कहने पर महापार्श्व ने कहा—"हे घनभुजाओं वाले (हे रावण) ! समस्त लोकों के लिए तुम्हीं स्वामी हो न ! हे राक्षसाधीश ! उस सीता के साथ बलपूर्वक रति नहीं कर सकते ?" ऐसा कहने पर मन में हर्षित हो, दनुजाधिनाथ ने उसे देखकर कहा—"हे महापार्श्व ! सुनो। (एक बार) पूर्व में मैं वेधा (ब्रह्मा) की सभा में

वलुवूडिपड बट्टि वडि गुदियिंचि ।बलिमि भोगिंचिति बैबडि तॊल्लि;
यामेरलॆल्लनु नब्जजुंडॆऱिगि । नामीद गोपिंचि नयमितलेक
"योरि! राक्षस! कडु नुचितंबु दक्कि । नारीजनुल यॆड नय मितलेक
वलिमि नॆव्वतॆनैन बट्टि भोगिंप । दलतु वॆप्पुडु नीदु तललप्पुडविसि
वारक यिल नूऱु व्रय्यलै रालु । बोरोरि"यनुचु शप्तुनि जेसि
विडिचॆ । ४२०

नदि कारणंबुगा नंगनाजनुल । हृदयंबु गरगक ये नॆंदु गलय;
नालावु गॊनक वानरुलतो गूडि । यीलंकपै रामु डेतॆंचुटॆल्ल
निद्रिंचु सिंहंबु नॆऱि मेलुकॊल्पु । भद्रदंतावळ प्रततिविधंब"
यनि पल्कुटयु नव्वि यव्विभीषणुडु । दनुजनाथुनितोड दग विन्नविंचॆः
"मौनयु निट्टूर्पुलॆ ञ्रोगुट गाग । घनमैन चिंतयॆ गरळंबु गाग
गॊपंबु ञ्रलमुनु गोड्लुगाग । नेपरियुंडुटे यॆरगॊंट गाग
नमरंग जॆक्कुन हत्तिन चेयि । कमनीयतर फणाकारंबु गाग
निजनखंबुलु मणिनिकरंबु गाग । भुजयुगमध्यंबु भोगंबु गाग
दारुणंबैन सीतकालसर्प । मे रूपमुन निन्नु नेल पोनिच्चु ?
नपकीर्ति यट, पापमट, सुखंबुनकु । विपरीतमट ! यिट्टि वितमेल ?
युड्गु ?" ४३०

जाते समय पुंजिकस्थला नामक सुन्दरी के वस्त्रों के हट जाने पर, (उसे) पकड़, दबाकर, बलपूर्वक (उसे) भोगा । वे सभी बातें अब्जज (ब्रह्मा) ने जानकर, मुझपर क्रुद्ध हो और बिना अनुनय के यह शाप देकर छोड़ दिया कि "रे राक्षस ! अधिक औचित्य को छोड़, नारी जनों के प्रति, नीति न मान, कभी किसी को बलपूर्वक पकड़ भोगना चाहोगे तभी तुम्हारे सिर टूटकर अवश्य पृथ्वी पर, सौ टुकड़े होकर गिर पड़ेंगे । जा रे !" ।। ४२० ।।

इस कारण से अंगनाजनों के मन को पिघलाए बिना (प्रसन्न किए बिना) मैं कभी उनसे संभोग नहीं करता । मेरी सामर्थ्य को न मानकर, वानरों के साथ राम का इस लंका पर (चढ़) आना सोनेवाले सिंह को भद्र-दन्तावल-प्रतति का जगाने के समान है ।" ऐसा कहने पर, हँसकर, उस विभीषण ने दनुजनाथ से उचित रूप से निवेदन किया । "अतिशय लम्बी आहें ही फुफकार, अधिक चिन्ता ही गरल, क्रोध और हठ ही दाढ़ें, शोभा से विहीन रहना ही सुस्ताना, शोभा से गाल पर दबाया हाथ ही कमनीयतर फण, मणिनिकर ही नाखून, भुजयुगमध्य ही भोग बना दारुणाकार वाला सीता-रूपी कालसर्प तुम्हें किस विधान से छोड़ देगा ? (डसे बिना नहीं रहेगा) । यह कार्य अपकीर्ति (-प्रद) है, पाप है, सुख का

मनि यन्नतो बलिक यंतट बोक। सुनिशितंबुग ब्रहस्तुनि जूचि
पलिके;
"नेँड्रि पिडुगुल बोलु नृपुनि बाणमुलु। गरुलंट नीदुवक्षमु गाडुनाडे
येँड्रिगेँदु गा! केल यिट्टट्टु पडेँदु ? । कड्कुलाडिन माड्कि गादु;
मीदटनु
नी कुंभकर्णुंडु नी निकुंभुडुनु । नी कुंभुडुनु मरि यीमहोदरुडु
नीमहापार्श्वुंडु नीयिंद्रजित्तु । रामुनि गेल्चुवारा रणंबुननु ?
नेपु चूपक यप्पु डेँदु बोयेँदरु ? । प्रापुलै मी रड्डुपडेँदरु गाक ?
कडगि यिंद्रुडु वच्चि काचिन नैन । गडुनड्डुपडि सुरल् गाचिननैन
गालाग्नि रुद्रुंडु गाचिननैन । गालमृत्युवु वच्चि काचिननैन
रावणु जंपक रामभूपालु । डेविधंबुननैन नेल पोनिच्चु ?
दनुजेशुपै विल्लु धरियिंचुनपुडु । मनचेत साध्युडे मनुकुलेश्वरुडु ?
४४०
पिडिकिट नडगुने पेर्चु कालाग्नि? । पुडिसिट नडगुने पोँगारु जलधि?
पट्टंग वच्चुने पाताळतलमु ? । गट्टिप नलवियो गगनभागंबु ?

विपरीत (उल्टा) है। यह विधान क्यों ? छोड़ो (इसे)।" ऐसा अग्रज से कह, उतने से जाने न देकर (चुप न रहकर) सुनिशित (पैनी दृष्टि से) रूप से प्रहस्त को देखकर कहा—॥ ४३०॥

—"अभी क्यों इठलाते हो ? मनोहर वज्र के समान नृप (राम) के बाण जिस दिन तुम्हारे वक्ष पर गड़ जाएँगे, तभी मालूम होगा। परुष वचन कहने के समान नहीं होगा (उन बाणों को सहना।) यही नहीं, क्या यह कुंभकर्ण, यह निकुंभ, यह कुंभ, फिर यह महोदर, यह महापार्श्व, यह इन्द्रजित (आदि) रण में राम को जीतनेवाले हैं ? (नहीं) विकास दिखाए बिना तब कहाँ जा सकेंगे ? आप सब रोकने आएँ (रक्षा करने आएँ), सप्रयत्न इन्द्र आकर रक्षा करना चाहे, अतिशयता से बीच में आकर देवता रक्षा करें, कालाग्नि रुद्र भी रक्षा करे, कालमृत्यु आकर रक्षा करे, तो भी रावण का वध किए बिना किसी भी विधि से, (राम) क्यों (रावण को) जाने देगा ? दनुजेश पर जब धनुष चढ़ाएँगे, तब क्या मनुकुलेश्वर को हराना हमारे लिए सम्भव होगा ? ॥ ४४०॥

—विजृंभित कालाग्नि क्या मुट्ठी में समाएगी ? उमड़ता समुद्र मुँह में समा सकेगा ? पाताल-तल को पकड़ (छू) सकते हैं ? गगनभाग को (आकाश-रूपी वितान को) खड़ा कर देना संभव है ? दिग्वितान (आकाश-रूपी वितान) को तोड़ सकते हैं ? धूर्जटि (शिव) की तलवार को तोड़ सकते

त्रैंपंग वच्चुने दिग्वितानंबु ? । त्रुंपंग वच्चुने धूर्जटिवालु ?
नऱचेत नणचिन नणगुने सूर्यु ? । डेऱगनि मीतोड निट्लाडनेल ?
कडुमूर्खु नाकारि कामातुरुंडु ? । मडियडे मीयट्टि मंत्रुलु गलुग ?
नाबुद्धि विनुने यी नाकेशवैरि । मी बुद्धि जेंडुगाक मिक्किलि-
क्रोव्वि !"
यनि मोगमोडक याड ब्रहस्तु । डनुवाडु गैकोन का बिभीषणुनि
"नुरगुलतो बोरि योड मेन्नडुनुः । सुरलतो बोराडि स्रुक्कमेन्नडुनु;
यक्षुलतो गिट्टि मलय मेन्नडुनु; । राक्षसावळिचेत ग्राग मेन्नडुनु;
नरुडैन या रामनरनायकुनकु । दुरमुलो ने मोड्डुमे विभीषणुड ?
४५०
येचंदमुन वारि नेरुगुदो कानि । नीचेत विंटिमि नेडिट्टि विंत;

इंद्रजित्तु विभीषणुनिकि तन पराक्रम मेरिंगिंचुट

दनुजुल लाविंत तक्कुवे ?" यनिन । ननियें नाग्रह मेत्ति यायिंद्रजित्तु
तोरमै पेर्चिन दुर्मद ग्रंथि । यारामु तम्मु शराग्निचे गाल
गारणं बटमीद गलुगुटजेसि । येरूपमुन नीति निच्चलो निडकः

हैं ? दबाने पर भी हथेली से सूर्य दब सकेगा ? आप अज्ञानियों से इस प्रकार की बातें करना क्यों ? अतिमूर्ख और नाकारि (रावण) जो कामातुर है, आप जैसे मन्त्रियों के होते मरकर क्यों नहीं रहेगा? मेरे विवेकयुक्त वचनों को यह नाकेश-वैरी सुनेगा ? (नहीं) आपकी बुद्धि (मन्त्रणा) के अनुसार, मदान्ध होकर नष्ट हो जाएगा ।" ऐसा संकोच किए बिना कहने पर, प्रहस्त नामक (राक्षस ने) विभीषण की परवाह किए बिना कहा—"उरगों से लड़कर हम कभी नहीं हारे । देवताओं से लड़कर कभी दुर्बल नहीं बने । यक्षों के समीप जाकर कभी क्लान्त नहीं हुए । राक्षस-समूह से कभी संतप्त नहीं हुए । हे विभीषण ! तब उस मानव राजा राम के हाथ युद्ध में हम हारेंगे ? ॥ ४५० ॥

—पता नहीं किस प्रकार तुम उन्हें जानते हो, कि आज तुमसे ये विचित्र बातें सुनीं ।

इन्द्रजित का विभीषण को अपना पराक्रम बताना

क्या दनुजों का सामर्थ्य इतना कम (हीन) है ?" क्रुद्ध हो इन्द्रजित जो स्थिर बना दुर्मदग्रन्थी है, (आगे चलकर) राम के अनुज की शराग्नि से जलने के कारण के होने से, किसी भी रूप से मन से नीति (की बात को)

"विनु विभीषण! नीवु वॆऱचॆदुगाक! । मनयंदु राक्षस महिमलूहिंप
हीनुडैननु जालु नितटिपनिकि । मानक रामलक्ष्मणुल निर्जिप;
मूडु लोकंबु लिम्मुल नेलुवनि । बाडिवज्रमु गल वासवु वट्टि
चॆऱवॆट्टना ? वानि सितकरि बट्टि । विरुवना कॊम्मुलु ? वितये नाकु ?
ननलुनि गारिंचि यंतकु नॊंचि । दनुजु वारिंचि यातलिवानि नॊंडिचि
गालि दूलिंचि यक्षपुनि मर्दिचि । शूलि नॊंडिचि निष्ठुरत वारिंचि ४६०
येचिन नाचेत नीनरुल् चाव । रा ? चॆप्पॆ दुब्बि वारल बॆद्दसेसि !
कलतुना सप्तसागरमुलु सॊच्चि । मलपुदुना मेरुमंदरंबुलनु ?
दाटुदुना धरातल मॆल्ल गडव ? । मीटुदुना नेल मिंटितो नंट ?
वंतुना जगमुलु ? वनचरकोटि । मुंतुना बॆगडॊंद मुन्नीटिलोन ?
बुडमि मोचिन नागपुंगवु बट्टि । पिडुतुना विषमॆल्ल बिच्चिलिवोव?
नॊक्कट दुंडंबु लोडिसि रा दिगिचि । दिक्करींद्रुल नीड्चि तॆत्तुनापूनि?
भूमितो निप्पुडु भुजशक्ति मॆऱसि । प्रामुदुना चंद्र भानुबिंबमुल ?
वनचरकोट्टुल वैतुना पट्टि । दिनकर बिंबंबु दिक्कुलु गडव ?

न मानकर, (बोला)—"सुनो विभीषण ! हो सकता है, तुम डरते हो तो डरो । हमारे राक्षसों की महिमाओं का विचार करने पर, राम-लक्ष्मण का वध करने के लिए, कोई हीन (राक्षस) भी पर्याप्त है। तीनों लोकों का आनन्द से पालन करनेवाले (तथा) निशित वज्र वाले वासव (इन्द्र) को पकड़ (मैंने) बन्दी नहीं बनाया था ? उसके सितकरि (सफ़ेद हाथी, ऐरावत) को पकड़, उसके सींगों (दाँतों) को नहीं तोड़ा था ? यह क्या मेरे लिए आश्चर्य (-प्रद कार्य) है ? अनल को पीड़ित कर, अन्तक (यम) को दबाकर, दनुज (नैॠत) को रोककर, वरुण को खींच पकड़कर, पवन को मारकर, यक्षप (कुबेर) का मर्दन कर, शूली (शिव) को हराकर, निष्ठुरता को मान, ।। ४६० ।।

—(इन सभी को) सतानेवाले मेरे हाथ ये नर नहीं मरेंगे ? फूलकर, उन्हें बड़ा बनाकर (बेकार की) बातें करते हो ? सप्तसागरों में पैठकर (उन्हें) आलोडित कर दूँ ? मेरु (और) मन्दर (पर्वतों) को मटियामेट कर दूँ ? समस्त धरातल को लाँघ जाऊँ ? पृथ्वी को उछाल दूँ ताकि वह आकाश को जा लगे ? लोकों को झुका दूँ ? वनचर कोटि को समुद्र में डुबो दूँ जिससे वे भीत हो जावें ? पृथ्वी का वहन करनेवाले नागपुंगव (नाग-श्रेष्ठ) को पकड़ निचोड़ दूँ जिससे वह समस्त विष उगल दे ? एक साथ सभी के सूँड पकड़, चाहकर दिग्गजों को खींच लाऊँ ? भुजशक्ति से दीप्त हो चन्द्र

नालंबुलो वानरालि रक्तमुलु । ग्रोलितुना भूतकोटुलचेत ?
गप्पुदुना यंपगमुलचे मिन्नु । निप्पुडमियु दिक्कु लिन्नियु गूड?
४७०
गडु नोंगल् वट्टि याकसमुन द्रिप्पि । यडतुना नेलतो नर्कुनि रथमु ?
बेंडचेत लोचेत बृथिवियु मिन्नु । नडतुना पोंडिपोंडियै रालिपोव ?
दनुजाधिनाथुनि तम्मुड वगुट । निनु नोंडनाक मन्निंचिति गानि
योरुडैन सैतुने ? यूरकयुंडु; । वेंरविडि माटलु वे याडनेल ?”

इंद्रजित्तु बीरमुलनु विभीषणुडु गर्हिंचुट

ननवुडु गोपिंचि याविभीषणुडु । गनुगोंनि पलिके नुद्गाढवाक्यमुल:
“नेंव्वनिगा जूचितिनकुलेश्वरुनि ? । ग्रोंव्वुलु वलिकेदु कूडदु नाक;
गणुतिंप निंद्रुंडु गाडु नीकोड । रणभीषणुंडगु रामुंडुगानि;
गणुतिंप ननलुंडु गाडु नीकोड । रणगरिष्ठुंडगु रामुंडुगानि;
गणुतिंप गालुंडु गाडु नीकोड । रणमहोग्रुंडगु रामुंडु गानि;
गणुतिंप निरृति गाडु नीकोड । रणभीकरुंडगु रामुंडु गानि; ४८०

और भानु-बिंबों को ज़मीन पर डाल रगड़ दूँ ? वनचर-कोटियों (समूहों) को पकड़कर दिनकर-बिंब तथा दिशाओं के उस पार फेंक दूँ ? युद्ध में वानरालि (वानर-समूह) का रक्त भूतकोटियों को पिला दूँ ? अस्त्र-समूह से आकाश, यह पृथ्वी, समस्त दिशाओं को एक साथ ढँक दूँ ? ।। ४७० ।। —अतिशय जुआ पकड़ आकाश में घुमाकर, अर्क (सूर्य) के रथ को ज़मीन पर पटक दूँ ? बाएँ और दाएँ हाथ से (क्रमशः) पृथ्वी और आकाश को दबा दूँ जिससे वे चूर-चूर हो गिर जाएँ ? दनुजाधिनाथ के अनुज होने के कारण तुम्हें कुछ कहे बिना क्षमा कर दिया, दूसरा होता तो क्या सहन करता ? (नहीं) चुप रहो। उपायहीन हज़ार बातें क्यों करते हो ?”

इन्द्रजित के दम्भी वाक्यों द्वारा विभीषण की निन्दा

ऐसा कहने पर वह विभीषण उसे देख, उद्गाढ वाक्यों से बोला—“इनकुलेश्वर को कौन समझ रहे हो ? दर्पयुक्त वचन (क्यों) कहते हो ? ऐसा अनुचित नहीं कहना चाहिए। गणना करने पर वह इन्द्र नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणभीषण राम है। गणना करने पर वह अनल नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणगरिष्ठ राम है। गणना करने पर वह काल नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणमहोग्र-राम है। गणना करने पर वह निऋति नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणभीकर राम है ।। ४८० ।।

गणुतिंप वरुणुंडु गाडु नीकोड । रणविनिद्रुंडगु रामुंडु गानि;
गणुतिंप ननिलुंडु गाडु नीकोड । रणनिपुणुंडगु रामुंडु गानि;
गणुतिंप धनदुंडु गाडु नीकोड । रणमहाशनियगु रामुंडु गानि;
गणुतिंप बशुपति गाडु नीकोड । रणविजयुंडगु रामुंडु गानि;
वारि नोर्चिनरीति वच्चुने योर्व । नारामदेवुनि नालंबुलोन ?
दलयु दप्पिनयट्टि तलपुलु दलचि । तलक्रिंदु वडियेदु तद्दयु ग्रोव्वि;
कुलनाशकुंडवु कोडुकवा नीवु ? । वलयु रावणु पगवाडवुगाक !
पावकनिभरामबाणघट्टनकु । रावणुंडा योर्चु रणमुलो निलिचि?
यी रावणुडु तन हितुलतो गूड । ना रामचंद्रुनि यडुगुल कैड्रगि
मणुलतो वारणमणुलतो दुरग ।मणुलतो मानिनीमणिनिच्चुटोप्पु;
४९०
नीकुन्न राघवु डीयब्धि गट्टि । यीकुलं बडपक येल पोनिच्चु?"
ननवुडु रावणुं डाविभीषणुनि । दन रोषदृष्टुल दप्पक चूचि

रावण-विभीषण संवादमु

"पगवानितो नैन बायक कूडि । मिगिलिन येपुतो मेलगंग वच्चु;

गणना करने पर वह वरुण नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रण-विनिद्र राम है। गणना करने पर वह अनिल नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणनिपुण राम है। गणना करने पर वह धनद नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रण-महा-अशनि राम है। गणना करने पर वह पशुपति नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह रणविजयी राम है। उपरोक्त लोगों का सामना करने के समान, युद्ध में रामदेव का सामना कर सकते हैं क्या? अधिक गर्वांध हो, सीमा से परे विचार कर, उल्टे सिर गिरोगे। कुल नाश करनेवाले तुम भी पुत्र हो? रावण के लिए तो तुम अवश्य शत्रु हो। पावक-निभ (सम) राम-बाण के आघात का, रण में खड़े होकर, रावण सामना कर सकेगा? इस रावण का अपने हितू-जनों के साथ, उस रामचन्द्र के चरणों में नत हो, मणियों, वारणमणियों, तुरंगमणियों के साथ मानिनीमणि (सीता) का देना उचित है ।। ४९० ।।

नहीं देगा तो राघव इस अब्धि पर (पुल) बाँधकर, इस कुल का नाश किए बिना कैसे छोड़ देगा?" ऐसा कहने पर रावण उस विभीषण को अपनी रोष (पूर्ण)-दृष्टियों से अवश्य देख, (बोला)—

रावण-विभीषण-सम्वाद

"शत्रु से भी सदा मिल-जुलकर शोभा के साथ विचर सकते हैं, पटु-

बट्टुविषं बौलिकेडु पामुतोनैन । जटुलनिर्भयवृत्ति जरियिंपवच्चु;
दनवानिवले नुंडि दायल गूडि । मनुवानितो गूडि मनरादु काक!
वारक नी वट्टिवाडवु गान । वैरुल नायोद्द वर्णिचेंदुब्बि;
तम्मुडवनि चंपदगदुका; कीवु । तम्मुडवा नाकु दायवु गाक"
यनवुडु ब्रह्मशापातिशयंबु । गौनकोनुटयु जूचि कुंभकर्णुंडु
दम्मुनिमाटलु दगवनराक । यिम्मुलाडेडु नन्न नेट्टनलेक
यग्गौरवमु तोड नन्नकु म्रौक्कि । दिग्गुन गुहकु निद्रिंपग जनियें;
५००
जनिनपिम्मट विभीषणुडु रावणुनि। कनियें जित्तंबुन नलुक दीपिंप:
"नन्नवु गान नी यापद कुलिकि । यिन्नियु जॆप्पिति हितवनि नीकु;
बौसगदु बहुमुखंबुल गान नीकु । नसुरेश ! चॆप्पिन याप्तुलबुद्धि;
हितवुसेप्पेडि मंत्रुलेंदु बुट्टुदुरु ? । हितवनि विनु राजुलेंदु गल्गुदुरु ?
तगुनाकु जॆप्पुट; तगुनीकु विनुट; । तग सीत निच्चुट तगुनीति नीकु;
बलमेंत गलिगिन बरिकिंचि चूड । नलवेंत गलिगिन नदियेमि सेयु
बुरुषुनि वैरवुन बोनीवु पेंचि । परिकिंप दैवंबु प्रतिकूल मैन ?

विष को उगलनेवाले सर्प के साथ ही सही, चटुल (अधिक)-निर्भय-वृत्ति से विचरण कर सकते हैं। अपने (पक्ष के) व्यक्ति के समान रहकर, शत्रुओं का साथ देकर रहनेवाले के साथ नहीं रह सकते। तुम ऐसे ही व्यक्ति हो, इसीलिए अबाध रूप से, फूलकर वैरियों का मेरे पास वर्णन (प्रशंसा) करते हो। अनुज मानकर तुम्हें मारना नहीं चाहिए। किन्तु तुम मेरे भाई हो क्या ? शत्रु ही हो।" ऐसा कहने पर ब्रह्मा के शाप की अतिशयता (प्रबलता) के प्रारम्भ होते देख, कुंभकर्ण अनुज की बातों को न्याय-संगत न कह सक, (मिथ्या) सुख की बातें करनेवाले अग्रज की बातों का खण्डन न कर सक, गौरव के कारण अग्रज को प्रणाम कर, शीघ्रता से सोने के लिए गुफ़ा की तरफ़ चला गया ॥ ५०० ॥

(उसके) जाने के बाद विभीषण ने चित्त में क्रोध के दीप्त होने पर रावण से कहा—"(तुम मेरे) अग्रज हो, अत: तुम्हारी आगत-विपद् के बारे में डरकर, यह सब तुम्हारे हित के लिए कहा है। हे असुरेश ! आप्तों के हितवचन, बहुमुख वाले होने के कारण, (तुम्हारे कानों में) नहीं बैठते। हित का दिग्दर्शन करनेवाले मन्त्री कहाँ होते हैं ? (उसे) हित मानकर, सुननेवाले राजा कहाँ होते हैं ? मेरे लिए कहना उचित है। सुनना तुम्हारे लिए उचित है। ढंग से सीता को दे देना तुम्हारे लिए उचित नीति है। कितना भी बल क्यों न हो, सोचकर देखने पर, सामर्थ्य कितना भी हो,

दैवंबुना नॊंडु दैवंबु गलडे ? । दैवंबु दशरथतनयुंडु गाक !"
यनि विभीषणुडाड ना रावणुंडु । विनि बॊमल् मुडिवड विकृता-
स्युडगुचु
मिन्नंद गोपिंचि मीसंबुलदर । गन्नुल मंटलु ग्रम्म निट्लनिये: ५१०
"नॆन्नॆदु रामुनि निट्टु दैवमनुचु । नन्नरुडे दैव मय्यॆडुनेनि
वॆडगयि तंड्रिचे वॆडलंग गॊट्टि । बडि यडवुल नेल बडि म्रग्गि स्रुक्क?
बिनु माकु नलमुनु वेरु वेल्लंकि । दिनियॆंडिवानिने देवरयंड्रु !
ननु दाकवलवदे नन्नॆदिरिंचि । तन देवि गॊनिराग दैवंबयेनि ?
नलसि तम्मुडु दानु नडवुललोन । बलविंचि पलविंचि पलुमारु दिरिगि
वच्चि सुग्रीवुडन् वानरु मरुगु । सॊच्चुट दैवंबु चॊप्पुले तलप ?
बलुमरु नेटिका पंद मानवुनि । जॆलगि नातो सरिचेसि चॆप्पेदवु ?"
अनिन रावणुतोड ननिये ग्रम्मरनु । दनलोन नव्वुचु दग विभीषणुडु:
"अॆसगि दिब्युल वॆंप ऋषुल रंक्षिप। नसुरुल शिक्षिप नवनि बालिप
नादिनारायणुं डर्कवंशमुन । नीदाशरथिगाग निट्लु जन्मिचॆ; ५२०
वनजासनादुलु वर्णिपलेरु: । सनकादुलुनु गूड जर्चिपलेरु;

यदि दैव प्रतिकूल होकर, पुरुष को सन्मार्ग पर चलने न दे तो वह क्या कर सकता है। दैव कहलाने के लिए अन्य दैव कहाँ है ? दैव तो दशरथतनय ही है।" ऐसा विभीषण के कहने पर, रावण ने भौंहों के तनने पर, विकृत मुख वाला होता हुआ, अत्यधिक क्रुद्ध हो, मूँछों के काँपने पर, आँखों से ज्वालाओं के फैलने पर यों कहा— ॥ ५१० ॥

—"उस राम को दैव मानकर कहते हो ! यदि वह नर भगवान है तो मूर्ख बन, पिता से निष्कासित होकर, जंगलों में जा मरने की क्या आवश्यकता है ? सुनो, पत्ते-वत्ते, जड़-वड़ खानेवाले को ही भगवान कहते हैं क्या ? यदि वह दैव ही है तो मुझपर आक्रमण कर, मेरा सामना कर, अपनी देवी को ले जाना चाहिए। क्लान्त होकर स्वयं अनुज के साथ जंगलों में प्रलाप कर-कर, बार-बार घूमकर, अन्त में सुग्रीव नामक वानर की आड़ (शरण) में जाना क्या भगवान के काम हैं ? बार-बार उस भीरु मानव को मेरे बराबर क्यों बताते हो ?" (ऐसा) कहनेवाले रावण से, अपने में हँसते हुए, फिर विभीषण ने कहा—"दिव्यों का पालन (रक्षा) करने, ऋषियों की रक्षा करने तथा असुरों को दण्डित करने, अवनि पर शासन कर विलसित होने के लिए आदिनारायण अर्कवंश में, दाशरथि होकर इस प्रकार जन्मा है ॥ ५२० ॥

वनजासन (ब्रह्मा) आदि वर्णन नहीं कर सकते, सनक आदि भी

आ महामहिम नीकलवियॆ तॆलिय? । रामुडु मर्त्युडे राक्षसाधीश !
कान रामुनि गनि कंजास्य निम्मु । दानवेश्वर ! मन दलचेदवेनि;
मलगक यर्थ कामंबुलवलन । दलपग्गलंबैन धर्म मॆक्कडिदि ?
नी वॊल्लवॆन्नडु नीतिमार्गंबु; । नीवार लॊल्लरु नीकंटॆ मुन्नॆ;
कान गार्याकार्यंगति यिट्टि दनवु; । दानवेश्वर ! नीकु धर्मंबु गलदॆ ?
वातूलसुतुचेत वनमु चॆड्डुट्लु । सीतचे लंकयु जॆडगलदिक;
वच्चॆद रगचरुल् वारिध दाटि; । वच्चि यी राक्षस वनितल नॆल्ल
मोड्चिन करमुल मुंदलल् वट्टि । यीड्चॆद; रट्टुवलॆ नीड्वकमुन्न
यॊप्पिपुमा सीत नुर्वीश्वरुनकु; । दप्पक चॆप्पिति दानवाधीश! ५३०
मंडॆडि नग्नुलमाड्कि राघवुनि । दंडिबाणंबु लुद्दंडत वच्चि
नीरॊम्मु गॊनि काड नॆर्तुने चूड? । नीराज्यगति सूड नेर्तु गाकेनु !
प्रळयानिलयु गुलपर्वतशिखर । मुल गूल्चुपगिदि रामुडु भंडनमुन
नीतललंदंद नॆलपै गूल्प । नॆतॆरंगुन निकने जूडनेर्तु ?”
ननिन विभीषणु नदरंट जूचि । मुनुकॊनि पदिमॊगंबुलु जेवुरिंप

(उसके गुणों की) चर्चा नहीं कर सकते। उस महामहिम को जानना तुम्हारे लिए सम्भव है? हे राक्षसाधीश ! वह राम क्या मर्त्य है? अतः हे दानवेश्वर ! यदि जीना चाहते हो तो राम के दर्शन कर, कंजास्या (कमलमुखी सीता) को दे दो। यदि अर्थ-कामों से मुँह न मोड़, उन्हीं का अधिक विचार करोगे तो फिर धर्म कहाँ रहेगा? तुम कभी नीति-मार्ग को नहीं चाहते। तुम्हारे लोग तुमसे पहले ही नहीं चाहते। अतः तुम कार्य (तथा) अकार्य की गति को समझ नहीं पाते। हे दानवेश्वर ! तुम्हारा भी कोई धर्म है? वातूलसुत (हनुमान) से उपवन के नष्ट हो जाने के समान, अब आगे सीता से लंका भी नष्ट हो जाएगी। अगचर के कारण वारिधि पार कर आएँगे, आकर इन समस्त राक्षस-स्त्रियों को प्रथमतः झुके हाथों से पकड़ खींचेंगे। उस प्रकार खींचने से पहले सीता को उर्वीश्वर (राजा राम) को देकर मनवा लो। हे दानवाधीश ! आवश्यक (सब बातें) कही हैं ।। ५३० ।।

प्रज्वलित अग्नियों के समान राघव के पटुबाणों के उद्दण्डता से आकर—तुम्हारे वक्ष पर गड़ते मैं देख सकूँगा क्या? तुम्हारी राज्यगति (शासन) को देख सकता हूँ। जैसे प्रलय-अनिल कुलपर्वत शिखरों को ढहा देता है, उसी प्रकार राम युद्ध में तुम्हारे सिरों को जहाँ-तहाँ गिरा देगा। उस विधान को मैं कैसे देख सकूँगा?” (ऐसा) कहने पर प्रथमतः दसमुखों के लाल होने पर, विभीषण भीत हो जाए, ऐसा उसे देख,

रावणुडु विभीषणुनि दन्नि पुरि वॆडल गॊट्टुट

गटमु लुप्पॊंग नॊक्कट नूर्पु लॆसग । बट्टुधूममुलतोडि पावकुंडनग
बदहति मेदिनीभागंबु वगुल । नदलुपुबॆट्टुन नाकसंबदर
'नह्हिरा! यितनि कोपावेश' मनग । गह्यिनुंडि डिग्गिन डिग्गनुऱिकि
यडिदंबु जळिपिंचि यटु व्रेय बूनि । युडिगि विभीषणु नुग्रत दन्नॆ;
दन्निन वज्रंबुताकुन गूलु । नुन्नतगिरि बोलॆ नुर्विपै बडियॆ; ५४०

बडिन वॆंडियु व्रेय बाऱ ब्रहस्तु । डॆड सॊच्चि वलदनि यॆडलिचे वालु;
गॊलुवॆल्ल नातनि गोपंबु जूचि । 'तलकोनि यॆंत वितलु वुट्टॆ' ननग
ननलार्चु लक्षुल नडर दैत्येशु । डनियॆ निर्दयत ब्रहस्तुनि जूचि:
"वीनि दुरुक्तुलु विंटॆ प्रहस्त ! । वीनि नम्मुदुरे यॆव्विधि दम्मुडनुचु?
वॆडलंग द्रोयुमु वेगंबॆ वीनि; । नॆडसेसि मॊगमोडितेनि नायान !"
यनिन ब्रहस्तुंडु नव्विभीषणुनि । गनुगॊनि पलिकॆ नाग्रहवृत्ति दोप:
"वलदिट नुंड; नी वलसिनयॆडकु । वॆलुवडि यरुगुमु वीटिक बासि"

रावण का विभीषण को लात मारकर नगर से निकाल देना

—गंडस्थलों के फूलने पर, एकदम उसाँसों के उमड़ने पर, मानों पटु धूम से युक्त पावक हो, पदाघात से मेदिनी (धरती) फूटे, भर्त्सना से आकाश कम्पित हो जाए, 'वाह रे ! (यह है) इसका कोपावेश' (ऐसा अन्य जन कहें), (इस प्रकार) (रावण ने) सिंहासन से झट कूदकर, तलवार हिलाकर, मार डालना चाहकर, रुककर, विभीषण को उग्रता से लात मारी । लात मारने पर (विभीषण) वज्र के प्रहार से गिरनेवाले उन्नत गिरि के समान उर्वी पर गिर पड़ा ।। ५४० ।।

गिर पड़ने पर फिर (लात) मारने पर, (उसके) भागने पर, प्रहस्त ने बीच में आकर, मनाकर, तलवार को हटा दिया । समस्त सभासद उसके कोप को देखकर कहने लगे कि 'जान-बूझकर कितने आश्चर्य (-प्रद कार्य) उत्पन्न हुए ।' अनल की अर्चियों के आँखों से उमड़ने पर, दैत्येश ने निर्दयता से प्रहस्त को देखकर कहा—"हे प्रहस्त ! इसकी दुरुक्तियों को सुना है न ? किस प्रकार से इसे अनुज मानकर विश्वास करें ? इसे शीघ्र निकाल ढकेल दो । अन्तर कर, संकोच करोगे तो मेरी सौगन्ध है ।" (ऐसा) कहने पर प्रहस्त ने उस विभीषण को देखकर, क्रोध प्रवृत्ति के दीखने पर कहा—"(अब) यहाँ मत रहो । (इस) घर को छोड़, अपने इच्छित स्थान को (यहाँ से) निकलकर जाओ ।" (ऐसा) कहने पर,

यनिन विभीषणुंडति कोपुडगुचु । ननलुंडु नलुडुनु हरुडु संपाति
यनुवारितो गूडि यसुरेंद्रु तोड । ननियें नुद्धति गदाहस्तुडै निलिचि:
"मदनातुरुंडवु; मरि पापमुलकु । गुदुरैनवाडवु; क्रूरकर्मुडवु; ५५०
मुन्ने कदा निन्नु मूर्खुनि बाय । नुन्नाड; निदि ग्रोत्तयुनु गादु नाकु;
नार्तरक्षकुनि गृपांबुधि दिव्य । मूर्ति जगद्धितंबुग बुट्टिनट्टि
सत्यसंधुनि रामजनपालचंद्रु । नित्ययशोनिधि निर्मलात्मकुनि
शरणनि पोयेंद; शरणन्न यतडु । करुणतो ब्रोचु नेकालंबुनंदु;
नेनु बोयिन नैन निटमीद नेरिगि । मानैन नीतितो मनु दानवेंद्र !
यट्टुनु गादेनि नगचरुल् लंक । जुट्टिनयपुडैन जोनुपु नाबुद्धि;
यट्टुनु गादेनि नर्कनंदनुडु । दट्टिचुनपुडैन दलपु नाबुद्धि;
नोंडेनि रघुरामुनुग्रबाणमुलु । खंडिचुनपुडैन गनुमु नाबुद्धि"

विभीषणुडु तल्लि वद्द केगुट

ननि पलिक यन्नकु नवनतुंडगुचु । दन तल्लिनगरि कुद्धतगति बोयें
जेलगिन सिंहंबुचेपडि तप्पि । मलगिन वगतोडि मदकरिवोलें;
५६०

विभीषण अति क्रुद्ध हो, अनल, नल, हर, सम्पाति नामक लोगों के साथ हो, औद्धत्य से, गदाहस्त हो खड़े होकर, असुरेन्द्र से बोला—"(तुम) मदनातुर हो, और पापों के आलवाल हो, क्रूरकर्म (करने) वाले हो ।। ५५० ।।

(इससे) पहले ही तुम (जैसे) मूर्ख से बिछुड़ने वाला था। यह (इस प्रकार का आचरण) मेरे लिए नया भी नहीं है। आर्तरक्षक, कृपांबुधि, दिव्यमूर्ति (वाले), जगद्विख्यात रूप से उत्पन्न सत्यनिष्ठ, राम-जनपालचन्द्र, नित्य-यशोनिधि (और) निर्मलात्मा की शरण में जाऊँगा। शरण माँगने पर वे हर समम करुणा से रक्षा करते हैं। हे दानवेन्द्र ! मेरे जाने के बाद (ही सही) अब आगे समझकर, उत्तम नीति से जीवन-यापन करो। ऐसा भी नहीं तो जब अगचर लंका को घेर लेंगे तब मेरी बुद्धि (हितवचन) को (मन में) प्रवेश कराना। ऐसा भी नहीं तो अर्कनन्दन के भर्त्सना करते समय तो मेरी बुद्धि (हितवचन) का स्मरण करना। नहीं तो रघुराम के उग्र बाणों के खण्डन करते समय तो मेरी बुद्धि का स्मरण करोगे।"

विभीषण का माता के पास जाना

ऐसा बोलकर, अग्रज को अवनत हो (सिर झुकाकर), उद्धतगति से

भीकरारवसंस्फीतमै परगि । चेकॊनि पिडुगडचिन यद्रिभंगि;
जनि यट गैलास सदृशमैनट्टि । घनतरंबुग विश्वकर्मचेनैन
गृहमुन नुपवासकृशमैन मेन । महितशुक्लांबरमानित यगुचु
वॆन्नॆलरसमुन विदलिंचि तिविचि । मिन्नेटिनुरुवुन मॆऱुगिड्डुकरणि
नरसिनबॊमलुनु नरपच्चॊळ्ळियमु । गरमॊप्पि यॆंतयु गौरवं बॊलय
बन्नुगा मुदुककुप्पसमुलु दॊडिगि । चॆन्नार ब्रद्दलु सेतुल बट्टि
मुदिसिन विप्रुलिम्मुल नॆंदऱॆनि । वदलक चेरि सावासुलॆ कॊलुव
गरुण प्रवाहंबुगा वचोभंगि । सरळत्व मूर्मुल चंदंबुगाग
बॊलुपार शमदमंबुलु तटंबुलुग । गल नरलेल्ल जॊक्कपुनुर्वुगाग
वॆलसिन तनयॊद्दि वेदघोषमुलु । सललितं बगुचुन्न जलघोषमुलुग ५७०
विनुत बहुद्विजविततुलतोड । दनरारु नाजह्नुतनय ना नॊप्पि
बहुपुराणंबुलु बहुवेदमुलुनु । बहुशास्त्रमुलु पॆक्कु ब्रह्मराक्षसुलु
बहुभंगि जदुवंग बहुमति विनुचु । बहुळनिर्मलशुभप्रभ देजरिल्लु
चुंडियु रावणु नॊप्पमि दलचि । कॊंडंत वगपु जेकॊनियुन्न तल्लि

अपनी माता की नगरी में गया। विजृंभित सिंह के हाथ पड़, बचकर, दुख से मुड़े मदगज के समान, ।। ५६० ।।

—भीकर-आरव (ध्वनि)-संस्फीत हो विचरण करनेवाले वज्र के (आघात से) दबे पर्वत के समान, जाकर, वहाँ कैलास-सदृश, महत्तर रूप से विश्वकर्मा से निर्मित गृह में, उपवासों से कृश बने शरीर से, महित-शुक्ल-अम्बर से मान्य माता को देखा। ज्योत्सना के रस में घोलकर, काढ़कर, आकाश-गंगा के फेन में चमकाई हों, ऐसी सफ़ेद भौंहें, तथा सफ़ेद (पलित) जूड़े के अधिक शोभित होने से अत्यधिक गौरवयुक्त हो, ढंग से मोटे वस्त्र धारणकर, शोभा से बाँस (छड़ी) को हाथ में लेकर, अनेक वृद्ध ब्राह्मणों के निरन्तर समीप में सेवा करते रहने पर, वचोभंगिमा के करुणा के प्रवाह के समान, सरलता के ऊर्मियों के समान होने पर, सुशोभित शम (और) दम के तट होने पर, सफेद केशों के फ़ेन होने पर, अपने निकट विराजमान वेदघोषों के सललित रूप से जलघोष होने पर, ।। ५७० ।।

—विनुत-बहु-द्विज (पक्षी, ब्राह्मण)-ततियों (समूहों) के साथ विलसित उस जह्नुतनया (गंगा) के समान शोभित हो, अनेक ब्रह्म-राक्षसों के बहु पुराण, बहु वेद, बहु शास्त्रों को बहुभंगि (अनेक प्रकार से) पढ़ने पर बहुमति (स-सम्मान) सुनते हुए, बहुल-निर्मल-शुभ-प्रभा से दीप्त होते हुए भी, रावण के अमंगल (अनौचित्य) का स्मरण कर, अत्यधिक व्यथा को लिए

गांचि दंडमु वॆट्टि कन्नुल नीरु । निंचि दुःखितुडैन निव्वॆऱगंदि
कैकेसि नंदनु गरमुल नॆत्ति । कैकॊनि यक्कुन गदियंग जेर्चि
"लोपलियिड्ल नालोकिंपरानि । यापद पुट्टॆनो? यट्टुकाक मऱियु
ब्राह्मण वधमु जॊप्पडियॆनो? काक । ब्रह्म कोपिंचॆनो ? परिकिंचिचूड
हरि यल्गॆनो ? हरु डल्गॆनो? रामु । डुरुवडिमै वच्चॆनो संभ्रमिंचि ?
यिदि येमि नापुत्र! यित शोकिंचॆ? । दिदि येमि वित ? नीवितयु दॆल्पु;
५८०
मडिगॆद; नदि विन्नयंतकु नाकु । नॊडलिलो ब्राणंबु लुंडवय्यॆडिनि!"
अनि पल्कु तल्लिकि नाविभीषणुडु । मुनुकॊनि करमुल मॊगिचि यिट्लनियॆ:
"नवधारु! देवि! नीयग्रनंदनुडु । रविकुलाधीश्वरु राककु नेडु
मंत्रुलु दानुनु मंत्रकूटमुन । मंत्र मिट्टिदि यनि मदि जर्चंसेय,
'निन्नि विचारंबु लेल ? रामुनकु । नॆन्निभंगुल सीतनिच्चुट लॆस्स;
यीकुन्न राघवुं डीयब्धि गट्टि । यीकुलं बडपक येल पोनिच्चु ?'
ननि यॊत्ति चॆप्पिन नापंक्तिकंठु । डनलुंडु मंडिन याकृति मंडि
तन्नॆ गद्दियतोड धरबड नन्नु; । दन्नि यंतट बोक तालिमि दक्कि

माता को देख, प्रणामकर, आँखों में आँसू भर, दुखी हो रहा। (उसे देख) आश्चर्यचकित हो, कैकेसी ने नन्दन (पुत्र) को हाथों से उठाकर, छाती से लगाकर (पूछा)—"अन्तःपुर पर देखने न योग्य विपत्ति आई है क्या ? ऐसा नहीं तो फिर ब्राह्मण-वध हो चुका है क्या ? या ब्रह्मा क्रुद्ध हो गया ? ध्यान से देखने पर हरि रूठ गया ? हर रूठ गया ? राम संभ्रम से अत्यन्त वेग से (चढ़) आया ? यह क्या मेरे पुत्र ! इतने दुखी क्यों हो ? यह कैसा आश्चर्य है ? ।। ५८० ।।

—पूछ रही हूँ, तुम सब कुछ बताओ। उसे सुनने तक मेरे प्राण शरीर में नहीं रह पाएंगे।" ऐसा कहनेवाली माता से उस विभीषण ने आगे बढ़, हाथ जोड़ यों कहा—"ध्यान दो हे देवी ! तुम्हारे अग्रनन्दन (रावण) ने रविकुल-अधीश्वर (राम) के आगमन के कारण आज मन्त्रियों के साथ स्वयं मन्त्रकूट (मन्त्रणागृह) में मन से चर्चा की कि उपाय कैसा हो। मैंने ज़ोर देकर कहा कि 'इतने विचार क्यों ? सभी प्रकार से राम को सीता दे-देना उत्तम है। नहीं दोगे तो राघव इस अब्धि को पार कर, इस (राक्षस) कुल का दमन किए बिना क्यों जाने देंगे ?' (ऐसा) कहने पर, वह पंक्तिकण्ठ (वाला) अनल के समान बल उठकर, मुझे सिंहासन के साथ लात मारी जिससे मैं धरा पर गिर पड़ा। लात मारकर, उतने से न

यदिदंबु गॊनि व्रेय नट्टु पूनुटयुनु । जॆडक ने व्रतिकि वच्चिति नॊक्क-भंगि;
बोयॆद नारामभूवरु गान; बोयि । यायनकृप बॊंदियुंडॆदनु; ५९०
ईवीट नाकिक नॆव्वरु गलरु । भाविंपगा नात्मबंधुवु लॊरुलु ?"
ननवुडु नतिभीत यै मूर्छनॊंदि । घनमैन धैर्यंबुकतमुन दॆलिसि
कैकेसि नंदनु गनुगॊनि पलिकॆ, । "नीकथ मुन्नु ने नॆऱिगिनदान;
नदि यॆऱिंगिचॆद नमरुलु मुनुलु । द्रिदशेंद्रुडुनु ब्रह्मदेवुडु गूडि
यमृताब्धिकड केगि यच्युतु गांचि । तमपडु निडुमलु दारॆऱिंगिपंग
"नीरसंबुन मिम्मु नेचुचुन्नुन्न । क्रूरुल रावणकुंभकर्णुलनु
जंपॆडु कॊऱकुनै जनियिंचुवाड । सॊंपार वर्तिचु सूर्यवंशमुन"
ननि देवु डाडिनयट्टि वाक्यमुलु । विनुपिंचॆ मीतंड्रि विशदंबुगाग;
विनि येनु वॆऱचि मद्विभुन किट्लंटि। "नैनपंग नीकुलं बॆव्वडु निलुपु
नीपुत्रकुललोन? निक्कंबु सॆप्पु । मापुण्यु डॆव्वडो ? यनघ ! ना" कनिन ६००
"सत्यंबु धर्मंबु शौचंबु गलिगि । नित्ययशोनिधि नी कडगॊट्टु
कॊडुकु रामुनि कृप गोरि यीलंक । गडुनॊप्प बालिपगलवाडु मीद"

रुककर, धैर्य खोकर, तलवार ले मारना चाहा तो (किसी) एक प्रकार से बचकर, जीवित आया हूँ । (मैं) उस राम-भूवर को देखने जाऊँगा । (और) उनकी कृपा प्राप्त कर रहूँगा ।। ५९० ।।

अब मेरे लिए इस प्रदेश में सोचने पर भी अन्य आत्मबन्धु कौन हैं ?" ऐसा कहने पर अतिभीत हो, मूर्च्छित हो, अति धैर्य के कारण, होश में आकर, कैकेसी ने नन्दन को देखकर कहा—"मैं इस कथा को पहले ही जानती हूँ । वह बताऊँगी । अमर, मुनि, त्रिदशेन्द्र (इन्द्र), ब्रह्मदेव ने मिलकर, अमृताब्धि के पास जाकर, अच्युत को देखकर, अपनी विपत्तियों के बारे में स्वयं बताया । (भगवान विष्णु ने कहा)—"इस प्रकार तुम्हें सतानेवाले क्रूर रावण (और) कुंभकर्ण को मार डालने के लिए मैं रमणीयता से प्रवर्तित होनेवाले सूर्यवंश में जन्म लूँगा ।" ऐसा भगवान के कहे वाक्यों को विशद रूप से तुम्हारे पिता ने (मुझे) सुनाया । सुनकर मैं डरकर अपने विभु से यों बोली—"तुम्हारे कुल को तुम्हारे पुत्रों में कौन सुस्थिर रूप से बनाए रखेगा ? हे अनघ ! मुझे सच बताओ कि वह पुण्यवान कौन है ?" (ऐसा) कहने (पूछने) पर, ।। ६०० ।।

—(उन्होंने कहा) "सत्य, धर्म, शौच से सम्पन्न (तथा) नित्य-यशोनिधि तुम्हारा कनिष्ठ पुत्र राम की कृपा चाहकर (प्राप्त कर) आगे बड़े औचित्य

ननि चेप्पि तपमुन करिगॆ मीतंड्रि । यॆानर नम्मेरुनगोपांतमुनकु;
गान रामुडे हरि कंजाप्तकुलुडु; । मानिनि यासीत महनीयलक्ष्मि;
विश्रवसुनि माट वेऱॊक्कटगुनॆ ? । विश्रुतकीर्ति ! येविधमुननैन
जनुमु; रामुनि गनि शरणनि म्रॊक्कि । मनुमु, राक्षसकोटि मनुप
जिंतिपु;
आयुवु श्रीयुनु नगुगाक ! नीकु, । नायन्न ! पॊम्मु श्रीनरनाथुकडकु"
यक्षतलु वॆट्टि यर्मिलि बॆमि । तनयुनि दीविंचि तग वीड्कॊलुप
नतडुनु दल्लिकि नवनतुंडगुचु । मतिलोन बॊंगुचु मंत्रुलु दानु
रावणु तनुवुन ब्राणंबु लैदु । नीविधंबुन बोवुनिक ननुमाड्कि
६१०
वेगंबॆ याकाशवीथिकि नॆगय । नागुणाढ्युनि जूचि या लंकवारु
तमतम वीथुल दमदु लोगिळ्ळ । गुमुरुलुगा गूडुकोनि पल्किरपुडु:
"धर्मंबु दिगनाडि तम्मुडुनालु । पेर्मिवो बल्कि विभीषणु विडिचॆ;
नीतियु नॆय्यंबु नेर्पु गोल्पडियॆ । नीतॆऱंगुन निप्पु डी रावणुंडु;
चॆडियॆगा कीलंक सॆप्पने ?" लनुचु । नुडुगनि वगलतो नुंडॆडुवारु,

से लंका पर पालन कर सकेगा।" ऐसा कहकर, शोभा से तुम्हारे पिता उस मेरु-नग-उपान्त (निकट स्थान) पर, तपस्या करने चले गए। कंजाप्त (सूर्य) कुल वाले राम ही हरि हैं, वह मानिनी सीता महनीय लक्ष्मी हैं। विश्रवसु का कथन अन्यथा हो सकता है ? (नहीं)। हे विश्रुतकीर्ति (वाले) ! किसी भी प्रकार (वहाँ) जाओ, राम को देखकर, शरण कहकर, प्रणामकर जीते रहो, राक्षसकोटि को जीवित रखने का विचार करो। तुम्हें आयु (तथा) श्री भी प्राप्त हो। हे तात ! श्री नरनाथ (राम) के पास जाओ।" (ऐसा) कह, (सिर पर) अक्षत रख, अधिक प्रेम से पुत्र को आसीस देकर, ढंग से विदा किया। वह भी माता के समक्ष अवनत होते हुए, मन में फूलते हुए, मन्त्रियों के साथ स्वयं, मानों अब रावण के तन से पाँच प्राण, इस प्रकार जाएँगे, ॥ ६१० ॥

(इस प्रकार) वेग से आकाश मार्ग पर उड़ा। उस गुणाढ्य को देख, लंकावासी, अपनी-अपनी वीथियों में, अपने आँगनों में, झुण्ड बाँधकर तब (आपस में) बोले। "धर्म को तजकर, भाई न मानकर, प्रेम छोड़, (दुष्ट वचन) कहकर, विभीषण को छोड़ दिया (निर्वासित कर दिया)। नीति, स्नेह, कुशलता को रावण ने इस प्रकार अब गँवा दिया। अब (अधिक) कहना क्या ? यह लंका तो नष्ट हो गई।" (ऐसा) कहते अधिक व्यथाओं से रहनेवालों से, 'इस लंका पर यही (आगे) शासन करेगा'

"नीलंक यीतडे येलु बो" म्मनुचु । बोलिंचि तम मनंबुल नॆंचुवारु,
गोरि यीतडु रामु गूडु गाकेमि । यीरावणुडु म्रंदुने" यनुवारु,
"नरनाथु डीतनि नम्मुने यचटि । करिगिन" ननुवारलगुचु नुंडंग

विभीषण शरणागति

नंत विभीषणु डाकाशवीथि । संतसंबुन मंत्रिजनुलतो गूडि
वच्चुट गनुगोनि वनचरु लॆल्ल । नच्चेरुवडि चूचि रट्टु तललॆत्ति
६२०
यॆत्तिन रामुचे निंद्रारि यिक । नॆत्तडु दललु, पेडॆत्तु दत्कुलमु;
नॆत्तॆडु भयमु वोनिडि सुरलार ! । यॆत्तु, डात्मल दल लॆत्तु डन्माड्कि;
नप्पुडु सुग्रीवु डगचराधिपुल । दप्पक कनुगॊनि तग वारि कनिये
"वनचरुलार! यी वच्चु राक्षसुनि । गनुगॊनुंडदे ! वाडखंडविक्रमुडु
घनमैन पर्वताकारंबुवाडु । तनरार शस्त्रमुल् दाल्चिनवाडु
मिक्किलि पॊडवुन मॆऱसिनवाडु । स्रुक्कक यिट वच्चुचुन्नाडु वाडु"
ननवुडु गडगि यय्यगचराधिपुलु । घनमैन गिरुलु वृक्षमुलु सेपट्टि

कहकर अपने मन में तुलना कर सोचने वालों से, 'चाहकर यह राम के साथ मिल जाए तो क्या यह रावण मरेगा ?' (इस प्रकार) कहने वालों से, 'इसके वहाँ जाने पर भी नरनाथ (राम) इसका विश्वास करेगा ?' कहने वालों से (लंका की गलियाँ) भर गईं।

विभीषण की शरणागति

तब विभीषण के आकाश-वीथि पर प्रसन्नता से (तथा) मन्त्रियों के साथ आते देख, सभी वनचरों ने आश्चर्य-चकित हो, सिर उठाकर (इस प्रकार उधर देखा ।। ६२० ।।

मानों यह कह रहे हों कि "हे देवताओ ! आक्रमण करनेवाले राम के कारण अब इन्द्रारि (रावण) सिर नहीं उठाएगा । उसका कुल नष्ट हो जाएगा । उठ आनेवाले भय को छोड़, अपने सिर उठाओ ।" तब सुग्रीव ने अगचराधिपों को अवश्य देखकर, उनसे ढंग से यों कहा—"हे वनचरो ! वही, आनेवाले उस राक्षस को देखिए । वह अखण्ड विक्रम वाला है, महान् पर्वत के समान आकार वाला है, शोभा से शस्त्र धारण किए है, बड़े गर्व के साथ प्रकाशमान है । वह निर्भयता से यहाँ आ रहा है ।" ऐसा कहने पर, सप्रयत्न वे अगचराधिप बड़े पर्वतों (तथा) वृक्षों को हाथ में ले बोले—"हे सुग्रीव ! हमें भेजो । हे देव ! हमें भेजो ।

"ममु बंपु सुग्रीव ! ममु बंपु देव! । समरंबुलो दैत्यु जंपॆद" मनुडु
ना विभीषणुडनॆः "नगचरुलार! । मीवाड, निट्टु संभ्रमिंपंगवलदु,
रावणु तम्मुड, राक्षसोत्तमुड; । भाविंप नेनु निष्पापमानसुड;
६३०
शरणनि याराम जनपालु गान । नरुगुदेंचिनवाड नट लंकनुंडि;
रावणुतो नेनु "रामभूपाल । देवि नि" म्मनि पॆक्कु तॆरगुल नंटि;
ननवुडु नामाट कतडु गॊपिंचि । तन सभलोपल दन्नॆ नन् बट्टि;
तन्नि यंतट बोक तन वीटिलोन । नुन्न जंपॆदननि योट लेकाडॆ;
नेनुनु वॆलुवडि यीरामचंद्रु । गानंग वच्चिचति; गानि चिंतिंप
गपटुंड गानु; निष्कपटमानसुड; । गपुलार! नायॆड गपटंबु लेदु;
सभयुंडनगु नाकु संप्रीति वॆलय । नभयमिप्पिपुडी यवनीशुचेत"
ननवुडु सुग्रीवु डारामुकडकु । जनि विन्नपमुसेसॆ सविनयुंडगुचु;
"रावणुतो नलिग रायिडि वुट्टि । देव ! वीडॊक्क डेतॆंचियुन्नाडु;
मॊत्तंबुतो नभंबुन नुन्नवाडु; । चित्तंबु मीमीद जॆर्चियुन्नाडु, ६४०
'अमरारितम्मुड' ननुचुन्नवाडु; । विमलवाक्यंबुल वॆलसिनवाडु;

समर में दैत्य को मार डालेंगे।" (ऐसा) कहने पर, उस विभीषण ने कहा—"हे अगचरो ! (मैं) आपका हूँ। इस प्रकार जल्दबाज़ी मत करो। रावण का अनुज हूँ, राक्षसोत्तम हूँ, सोचने पर मैं निष्पाप-मन वाला हूँ ॥ ६३० ॥

उधर लंका से (यहाँ) शरण माँगने, रामभूपाल के दर्शन करने आया हुआ हूँ। रावण से मैंने कई विधियों से कहा कि 'रामभूपाल की देवी को (वापस) दे दो।' ऐसा कहने पर, मेरे वचन पर, क्रुद्ध हो, उसने अपनी सभा में मुझे पकड़, लात मारी। लात मारकर, उतने से न जाने देकर, दुर्निवार रूप से कहा कि मेरे यहाँ रहोगे तो मार डालूँगा। मैं भी (वहाँ से) निकलकर, रामचन्द्र के दर्शन करने आया हूँ। किन्तु सोचने पर (मैं) कपटी नहीं हूँ। निष्कपट मन वाला हूँ। हे कपियो ! मुझमें कपट नहीं है। मुझ सभय (भीत मन वाले) को सम्प्रीति के विलसित होने पर, अवनीश राम द्वारा अभय प्रदान कराइए।" ऐसा कहने पर, सुग्रीव ने सविनय होते हुए, राम के पास जाकर निवेदन किया—"हे देव ! रावण से रूठकर, संघर्ष के उत्पन्न होने पर, यह एक (राक्षस) आया हुआ है। अपनों के साथ आकाश (मार्ग पर) स्थित है। चित्त आप पर लगाए हुए है ॥ ६४० ॥

कहता है कि 'मैं अमरारि (रावण) का अनुज हूँ'। वह विमल

'आदित्यकुलनाथ ! यभय मि'म्मनुचु । मोदवाक्यंबुल मोनसिनवाडु;
मीकृपकलिमि येम्मैयि नुन्नयदियो ? । नाकु जूडग बीनि नम्मंगरादु;
नरनाथ ! कपटंबुनकु बुट्टिनिल्लु । लरय राक्षसुलुगाकन्युलु गलरे ?
दनुजाधिनाथुनि तम्मुडेमिटिकि । जनुदेंचु ? निन्नीचु जंपगावलयु"
ननुडु नंतटिलोन नांजनेयुंडु ।विनयसंभरितुडै विभुन किट्लनियें:

विभीषणुनि योग्यत नांजनेयुडु रामुन केरिगिंचुट

"दनुजाधिनाथु डुद्दंडकोपमुन । दनु सभलोपल दन्नें नन्माड्कि
नखिलंबु नेरुगंग नाडे नीयसुर; ।निखिलेश! यामाट निजमु गानोपु;
नुडुगक मनलकै युचित माडुटयु । वेंडल द्रोचिनवानि विडिचि वच्चुटयु
गलुगनोपुनु गानि कपटंबु गादु; । वलवदु शंकिप वसुधेश ! यितनि; ६५०
गपटमानसु लेट्टि क्रममुन नुन्न । गपट मितटिलोन गानंगवच्चु;
नितनि माटललोन नेमाट यैन । गृतकमै तोपदु; कीडनरादु;
मनुजेश! दनुजुल मर्मज्ञु डितडु; । मनदेस नुंडुट मानैन नीति;

वाक्यों से सम्पन्न है। 'हे आदित्यकुलनाथ ! अभय प्रदान करो', कहते मोदप्रद वाक्यों से शोभित है। पता नहीं, आपकी कृपा की सम्पदा किस प्रकार है ? मुझे तो लगता है, इसका विश्वास नहीं करना चाहिए। हे नरनाथ ! कपट के लिए मातृगृह (उत्पत्ति स्थान) राक्षसों के सिवा अन्य (कौन) हो सकते हैं ? दनुजाधिनाथ का अनुज क्योंकर (यहाँ) आएगा ? इस नीच को मार डालना चाहिए।" कहने पर इतने में आंजनेय ने विनय-संभरित हो विभु से यों कहा—

विभीषण की योग्यता के बारे में आंजनेय का राम को बताना

"दनुजाधिनाथ ने उद्दण्ड क्रोध से मुझे भरी सभा में लात मारी है, इस प्रकार इस असुर ने सब कुछ बताकर कहा है। हे निखिलेश ! वह बात सच हो सकती है। अनारत हमारे लिए उचित बातें करना और घर निकालनेवाले को छोड़ आना भी (सम्भव) हो सकता है, किन्तु कपट नहीं है। हे वसुधेश ! इस पर शंका नहीं करनी चाहिए।। ६५०।।

कपटी मानुस किसी भी क्रम में रहें, थोड़े में (उनका) कपट दिखाई पड़ जाएगा। इसकी बातों में कोई बात कृतक (बनावटी) नहीं दीखती। बुरी भी नहीं दीख रही है। हे मनुजेश ! यह दनुजों के मर्म को जानने

ननु रावणुड्डु वट्टि नाडु बंधिंचि । यॆनलेनि बाधल नेचुट सूचि
यितडु नाकै पेक्कुहितवुलु वल्कॆं; । नितनि चित्तस्थिति यॆरुगुदु गॊंत"
यनिनमाटलु दनयात्मकु नॆक्क । वनजाप्तसुतु जूचि वसुधेशु डनियॆः
"नर्कज ! दीन मेलौट गीडौट । दर्किच नेटिकि ? धर्मंबु त्रोव
शरणनि वच्चिन शत्रुवु नॆन । बरिकिंपगा राचपाडि रक्षिप;
नॊक कपोतमु डेग यद्धति दरुम । विकलभावंबुन वेगंबवच्चि
शिबिमाटु सॊच्चॆं; जॊच्चिन डेग यडुग । शिबि तनु विच्चि चॆच्चॆर
गुव्व गाचॆं, ६६०
नपकीर्ति बॊंदक यार्तु जेकॊन्न । कृप यश्वमेधसत्कृतिफलं बिच्चु;
नीविभीषणु डेल, यिंक सुग्रीव ! । रावणुंडैन गर्वमु दक्कि वच्चि
शरणन्न गातु नेचंदंबुनंदु, । मरियाद यिट्टिदि माकुलंबुनकु,
नभय मिच्चिति, वेग मर्कज! पोयि। सभयुनि नव्विभीषणु दोडितॆम्म"
यनवुडु सुग्रीवु डारामु कृपकु । गनु व्रालिच यट्टु शिरः कंपंबु सेसि
"परिकिंप नीवलॆ बगवानि तम्मु । शरणन्न गैकॊनु सत्कृपारसमु

वाला है। (इसका) हमारे पक्ष में रहना मान्य नीति है। जिस दिन रावण मुझे पकड़ बाँधकर, अगणित कष्ट देकर सता रहा था, उसे देख, इसने मेरे लिए कई हित (-वचन) कहे हैं। मैं इसकी चित्त-स्थिति (-प्रवृत्ति) को थोड़ा जानता हूँ।" (ऐसा) कही बातों के अपने मन में अच्छी लगने पर, वनजाप्तसुत को देख वसुधेश ने कहा—"हे अर्कज ! ऐसा तर्क क्यों करें कि इससे भला होगा (और) हानि होगी। परिशीलन करने पर शरण में आए शत्रु की रक्षा करना क्षत्रिय-नीति है, धर्म का मार्ग है। बाज के उद्धत रूप से पीछा करने पर, एक कबूतर, विकल भाव से, वेग से आकर, शिबि की आड़ में घुस गया। (इस प्रकार कबूतर के) प्रवेश करने पर, बाज के माँगने पर शिबि ने झट शरीर देकर, कबूतर की रक्षा की ॥ ६६० ॥

अपकीर्ति के भागी न होकर, आर्त को कृपा से अपना लेने पर, (वह कार्य) अश्वमेध-सत्कृति का फल देगा। हे सुग्रीव ! यह विभीषण ही क्यों ? अब रावण ही गर्व छोड़, आकर, शरण चाहे तो हर तरह से उसकी रक्षा करूँगा। यह हमारे कुल की मर्यादा (रीति) है। (विभीषण को) अभय प्रदान किया है। हे अर्कज ! शीघ्र जाकर, सभय (भीत) उस विभीषण को ले आओ।" ऐसा कहने पर सुग्रीव ने राम की कृपा पर, आँखें झुकाकर, शिरःकम्प (सिर हिला) कर, कहा—"परिशीलन करने पर तुम्हारे समान शत्रु के अनुज के माँगने पर, (उसे) ग्रहण करने का

नीकै का कैंदु ने नृपुलकु जेल्लु । गाकुत्स्थतिलक ! निक्कमु
धात्रिलोन !"
ननि पलिक सुग्रीवु डाकाशमुनकु । दन सेनतो समुद्धतगति नेंगसि
"चेंकोनि यभयंबु श्रीरामु डिच्चे । नीकु विभीषण ! निक्कंबु नम्मु,
र" म्मनि कपिराजु राक्षसराजु । निम्मुल गौगिट नेनयंग जेर्चि६७०
तोड्कोनि वच्चि संतोषंबु गृपयु । वेड्कयु नेसग नव्विभु गानुपिप
निंड नानंदिंचि नृपु जूचि यतडु । दंडप्रणामंबु दग जेसि निलिचि

विभीषगुडु श्रीरामुनि नुतिंचुट

नित्यसत्यत्राण ! नित्यकल्याण ! । नित्यजगत्राण ! नित्यगीर्वाण !
जगदन्वयाकार ! जगदेकवीर ! । जगदुदयाकार ! जगदब्धिपूर !
सर्वसंगातीत ! सर्वानुभूत ! । सर्वजगत्पूत ! सर्वनिर्णेत !
गुरुलघुक्रमरूप ! गुरुबोधदीप ! । गुरुमधुरालाप ! गुरुचारुचाप !
पद्मसन्निभनेत्र ! बहुजीवसूत्र ! । पद्माकलितगात्र ! परमपवित्र !
कविमनस्संवेद्य ! करुणानवद्य ! । विविधशास्त्रापाद्य ! वेदांतवेद्य!

सत्कृपारस तुम्हारे सिवा अन्य किन राजाओं को भाती है ? हे काकुत्स्थ तिलक ! यह (बात) धरती पर सत्य है ।" ऐसा कहकर सुग्रीव ने अपनी सेना के साथ समुद्धत गति से उड़कर (कहा)—"हे विभीषण ! चाहकर श्रीराम ने तुम्हें अभय प्रदान किया है । यह सच है, यह सच है, विश्वास करो । आओ ।" (ऐसा) कह, कपिराज ने राक्षसराज को प्रेम से, शोभा से आलिंगन कर, ।। ६७० ।।

—साथ ले आकर, प्रसन्नता, कृपा, उत्साह के विलसित होने पर उस विभु के दर्शन किए । पूर्णतः आनन्दित हो, नृप (राम) को देखकर, उसने उचित रूप से दण्ड-प्रणाम कर, खड़े होकर,

विभीषण का श्रीराम की नुति करना

—(इस प्रकार स्तुति की)—"नित्यसत्य-त्राण (रक्षक) ! नित्यकल्याण (रूप वाले) ! नित्यजगत्त्राणा ! नित्यगीर्वाणा (देव) ! जगदन्वयाकारा (वाले) ! जगदेकवीरा ! जगदुदयाकारा ! जगदब्धिपूरा ! सर्वसंगातीता ! सर्वानुभूता ! सर्वजगत्पूता ! सर्वनिर्णेता ! गुरु-लघुक्रमरूपा (वाले) ! गुरुबोधदीपा ! गुरुमधुरालापा ! गुरु चारु चाप (वाले) ! पद्मसन्निभनेत्र ! बहुजीवसूत्र ! पद्माकलित-गात्र (वाले) ! परमपवित्र ! कविमनस्संवेद्य ! करुणानवद्य ! विविध शास्त्रापद्य ! वेदान्तवेद्या ! तुम्हीं परमात्मा हो,

परमात्मुडवु नीव; परमंबु नीव; । परमविद्ययु नीव परिकिंप नेंदु;
भुवनकर्तयु नीव; भुवनंबु नीव; । भुवनहर्तयु नीव भुवनैकवीर! ६८०
यागभोक्तयु नीव; यागंबु नीव; । यागफल प्रदुंडरयंग नीव;
चंद्रार्कुलुनु नीव; जलधुलु नीव; । यिंद्रादुलुनु नीव; यिलयुनु नीव;
शब्दार्थंमुलु नीव; शब्दमुल् नीव; । शब्दमुल् भेदिंचु श्रवणमुल् नीव;
मूडुमूर्तुलु नीव; मूडुमूर्तुलकु । बोडिमि नव्वलि पोडवुनु नीव;
क्षरमुनु नीव, यक्षरमुनु नीव, । क्षरसाक्षि वीव, यक्षरसाक्षि वीव,
त्रिभुवनवंदित ! देवाधिदेव ! ।यभय मी देव! ना कखिलाधिनाथ!
जयजय शतकोटि जलजाप्ततेज! । जयजय संसारसर्पसुपर्ण !
ललितागमस्तोत्र ! लक्ष्मीकळत्र! । विलसद्दयापात्र ! विबुधारिजैत्र!
यलघुमुनिस्तुत ! याद्यंतरहित ! । दळितशात्रवभीम ! दशरथराम!
दिनकरशशिनेत्र ! दिव्यचारित्र! ।यनुपमशुभगात्र ! यखिलैकसूत्र! ६९०
वेनोळ्ळुगल भोगिविभुडैन नीमहिम । नोंप्पार नुतियिंप नोपुने तविलि ?
ये निन्नु नुतियिंप नेंतटिवाड ! । ये निन्नु नेंरुगंग नेंतटिवाड ?

तुम्हीं परम (मोक्ष) हो। किसी भी प्रकार से देखें तुम्हीं परमविद्या हो। तुम्हीं भुवनकर्त्ता हो, तुम्हीं भुवन हो। हे भुवनैकवीर ! तुम्हीं भुवनहर्ता हो ॥ ६८० ॥

तुम्हीं यागभोक्ता हो, याग भी तुम्हीं हो। सोचने पर याग-फलप्रद तुम्हीं हो। चन्द्र-अर्क तुम्हीं हो, जलधियाँ तुम्हीं हो, इन्द्रादि भी तुम्हीं हो, धरती भी तुम्हीं हो। शब्दार्थ तुम्हीं हो, शब्द तुम्हीं हो, शब्दों का भेद करनेवाले श्रवण तुम्हीं हो। तीन मूर्ति तुम्हीं हो, तीन-मूर्तियों के सुन्दर अवस्थान के परे औन्नत्य तुम्हीं हो। क्षर तुम्हीं हो, अक्षर भी तुम्हीं हो। क्षरसाक्षी तुम्हीं हो, अक्षरसाक्षी (भी) तुम्हीं हो। हे त्रिभुवन-वन्दिता ! हे देवादिदेव ! मुझे अभय प्रदान करो हे देव! हे अखिलादिनाथ ! जय जय शतकोटि जलजाप्ततेज (वाले) ! जय जय संसार-सर्प-सुपर्णा ! ललितागमस्तोत्र ! लक्ष्मीकलत्र ! विलसद्दयापात्र ! विबुधारिजैत्र ! अलघुमुनिस्तुत ! आद्यान्तरहिता ! दलितशात्रवभीम[1] ! दशरथ राम ! दिनकर-शशि-नेत्रा ! दिव्यचारित्र ! अनुपमशुभगात्र ! अखिलैकसूत्र ! ॥ ६९० ॥

हे भूपाल ! हज़ार मुखवाले भोगी (सर्प)-विभु भी सयत्न तुम्हारी नुति कर सकता है क्या ? (नहीं)। वह पद्मसम्भव भी लगकर, तुम्हारी महिमा को शोभासम्पन्न रूप में स्तुति कर सकता है क्या ? (नहीं)।

---

[1] दलित-शत्रुओं के लिए भयंकर।

दानवुंडनु, वृथा तरळचित्तुडनु, । भूनाथ ! नी वादिपुरुषोत्तमुडवु;
कान निन्नितरुलु गानग लेरु; । ने नेंतवाडनु निजमुगा देलिय ?
नरनाथ ! यार्तुनि नन्नु रक्षिपु, । परमदुर्जनु दैत्यपति द्रुंचिवैवु;
मखिलशरण्युंड वैन नीमरुगु । सुख मनि ये वच्चि चोच्चिचति ब्रीति ।"

श्रीरामुडु विभीषणु ननुग्रहिंचुट

ननवुडु नतनि गृपांबुधिलोन । मनुजेश्वरुंडु ग्रम्मरु नोललांचि
"नम्मु विभीषण ! नाकेशवैरि । तम्मुडवा ? नाकु दम्मुडवीवु;
मरुगकुमिक! लक्ष्मणुकंटे निन्नु । नरलेनिवानिगा नात्म गैकोंटि" ७००
ननि भयं बुडिपि दयार्द्रवाक्यमुल । जननायकुडु विभीषणुनादरिंचे,
नेय्यंबुतोड नानृपु डप्पु डतनि । चेय्यूदुकोनि वार्धि सेरंग बोयि
"माकु निक्कमु सेप्पुमा विभीषणुड! । नाकारि शक्तियु नम्मिन बलमु,
नुदधिलो बुरमु मुन्नुदयिंचुटेट्लु ? । वदलक तोलुत नेव्वडु नेलेनंदु?"
ननिन विभीषणुं डारामचंद्रु । गनुगोनि म्रोक्कि निक्कमु विन्नविंचे:

तुम्हारी स्तुति करने के लिए मैं कितना हूँ ? तुम्हें जानने को मैं कितना हूँ ? (मेरी सामर्थ्य ही कितनी ?) । (मैं) दानव हूं, वृथा-तरल-चित्त वाला हूँ । हे भूनाथ ! तुम आदि पुरुषोत्तम हो । अतः तुम्हें अन्य नहीं जान सकते । सचमुच ही तुम्हें जानने के लिए मैं कितना हूँ ? हे नरनाथ! मुझ आर्त की रक्षा करो, परमदुर्जन दैत्यपति का संहार कर दो। समस्त जनों के शरण्य तुम्हारे आश्रय को सुख (प्रद) मानकर, मैं प्रेम से यहाँ आया हूँ ।"

श्रीराम का विभीषण को अनुगृहीत करना

ऐसा कहने पर उसे मनुजेश्वर (राम) ने कृपासागर में ऊभचूभ कर, (कहा)—"हे विभीषण ! (मेरी बातों पर) विश्वास रखो । तुम नाकेशवैरी (रावण) के अनुज हो ? (नहीं), तुम मेरे अनुज हो । अब व्याकुल मत होना । लक्ष्मण की अपेक्षा तुम्हें निस्संकोच रूप से मन से स्वीकारा है ।" ॥ ७०० ॥

(ऐसा) कह, भय दूर कर, दयार्द्र वाक्यों से जननायक (राम) ने विभीषण का आदर किया । स्नेह से उस नृप (राम) ने तब उसके हाथ का अवलम्ब लेकर वारिधि के निकट पहुँच, (कहा)—"हे विभीषण ! हमें नाकारि की शक्ति और उसकी विश्वस्त सेना के बारे में सच (सच) बताओ । (यह भी बताओ कि) पूर्व में समुद्र में यह नगर कैसे उत्पन्न हुआ ? पूर्व में किसने अनारत वहाँ शासन किया ?" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने रामचन्द्र को देख, प्रणाम कर, सत्य का निवेदन किया ।

विभीषणुडु रामुनकु लंकोत्पत्तिनि दॆलुपुट

"दोयजदळनेत्र! तॊल्लि नारदुडु। वायुवु मुंदऱ फणिराजुलावु
फणिराजुमुंदऱ बवमानु लावु। ब्रणुतिंचि वारिकि बग सेयुटयुनु
रासि लावुनकु वारलु मत्सरिंचि। "भासुरहेमाद्रि फणिराजु चुट्टि
पट्टंग दानि गंपमु नॊंद वीतु। नॆट्टन नॆ" ननि नियमिंचॆ गालि,
तन सत्वमंतयु दग बूनि शेषु। डनिमिषगिरि जुट्टॆ नसदृशलील, ७१०
वॆयुफणंबुल वॆशिखरमुल। नायतभुजशक्ति नंटंग बॊदिव
च्रलमुन बट्टिन सप्तवायुवुलु। वॆलयंग बवनुंडु वीवग दॊडगॆ,
शेषुनि भेदिंप जेकुऱकुन्न। भीषणगति वीचॆ बॆंचि वायुवुलु,
नागालि नचलंबुलन्नियु बिऱिगॆ, । नागालि भुवनंबुलन्नियु वालॆ,
नागालि नंबुधुलन्नियु गलगॆ, । नागालि भूतंबुलन्नियु नऱचॆ,
नागालि जलियिंचॆ नर्कुनि रथमु, । नागालि नूटाडॆ नखिलदिक्कुलुनु,
गदिसिन लोकसंकटमॆल्ल जूचि। 'यिदि महापद वच्चॆ नित्तऱि' ननुचु
नर्थिमै ब्रह्मादु लचटिकि वच्चि। प्रार्थिंचि पवनु मान्पगलेक पोयि

विभीषण का राम को लंका की उत्पत्ति के बारे में बताना

'हे तोयज (कमल)-दल-नेत्रा! पूर्व में नारद ने वायु के समक्ष फणिराज (नागराज) की सामर्थ्य (तथा) फणिराज के समक्ष पवमान की शक्ति की प्रशंसा कर, उनमें शत्रुता (उत्पन्न) की। अन्य (प्रतिपक्षी) की सामर्थ्य से वे मात्सर्य-युक्त हुए। पवन ने नियम से कहा कि "भासुर हेमाद्रि को फणिराज घेरकर पकड़े रहें तो भी मैं प्रवहित होकर, उसे किसी भी प्रकार कम्पित कर दूँगा।" तब असदृश रीति से फणिराज अपने समस्त सत्त्व को धारणकर अनिमिष गिरि को घेरकर रहे ॥ ७१० ॥

हज़ार फणों से हज़ार शिखरों को आयत (विशाल) भुजशक्ति से परिवेष्ठित कर, हठ से पकड़े रहने पर, सप्तपवनों से विलसित हो वायु (देव) बहने लगा। (आदि) शेष को बेधने के लिए भीषण गति को प्राप्त हो वायु चलने लगा। उस पवन (की गति) के कारण सभी अचल (पर्वत) टूट पड़े, उस पवन के कारण समस्त भुवन काँप उठे, उस पवन के कारण समस्त अंबुधियाँ आलोडित हो गईं, उस पवन के कारण समस्त भूत चीख उठे। उस पवन के कारण अर्क (सूर्य) का रथ कम्पित हो उठा, उस पवन के कारण समस्त दिशाएँ हिल उठीं। (इस प्रकार) नियराये समस्त लोक-संकट को देख, यह सोच कि 'इस अवसर पर यह महा विपत्ति आई है', चाहकर ब्रह्मादि (देवता) वहाँ आकर, प्रार्थना कर भी पवन को

परमसात्विकुडैन फणिराजु गदिसि । "युरगेंद्र ! नीवैन नोर्वंगवलयु,
मीमच्चरंबुल मिहिरुंडु गूलें, । मीमच्चरंबुल मेदिनि ग्रुंगें,७२०
मीमच्चरंबुल मितिमीरॆ नब्धि, । मामाट लालिंचि मम्मु मन्निंचि
गालिनि गेलिपिंचि करुण वाटिंचि । केळिमै मम्मु रक्षिपवे" यनिन
सुरल प्रार्थनकु शेषुडु शांति बोंदि । करुवलिकिनि वीवगा ननुविच्चि
यिचुक योकफणंबेत्त वे जोच्चि । मिंचिनबलिमि समीरुंडु वीव
जेलुवेदि यंदोक्क शिखरंबु विरिगि । तलकोन्न गालिचे दव्वुगा दूलि
गुरुतरगतिनि द्रिकूटंबु नाग । धरणीश ! यब्धिमध्यंबुन बडियें,
देव ! याश्रृंखलद्वीपंबु नंदु । देवेंद्रु पनुपुन देवताशिल्पि

विभीषणुडु रावणु वैभवमुनु रामुन केरिगिंचुट

करकौशलमुन लंकापुरं बनेडु । पुरमु निर्मिचें, दत्पुरवरंबुनकु
गोट लेडोप्पु, नक्कोटकोटकुनु । वाटमै नाल्गेसि वाकिड्लु गलवु,
तरुचैन यट्टि कोत्तळमुलतोड । निरिवुगा मुंदरु निटिककोटकुनु ७३०
बडुमटि द्वार मेपंड गाचियुंदु । रेंडपक राक्षसु लेनुबदिकोट्लु,

मना नहीं सके । तब परम सात्त्विक (बुद्धि वाले) फणिराज के निकट जाकर कहा—"हे उरगेन्द्र ! तुम्हें तो सहन कर लेना चाहिए । तुम लोगों के मात्सर्य (स्पर्धा) के कारण मिहिर (सूर्य) गिर गया, तुम्हारे मात्सर्य से मेदिनी (पृथ्वी) धंस गई ।। ७२० ।।

तुम्हारे मात्सर्य से अब्धि सीमा को पार कर गई । (अतः) हमारी बातें सुनकर, हमारा मानकर, पवन को जिताकर, करुणा मानकर, लीला से हमें बचाओ न ।" (ऐसा) कहने पर देवताओं की प्रार्थना पर, (आदि) शेष ने शान्त हो, पवन को बहने के लिए सुविधा देकर, एक फन को थोड़ा सा उठाया । झट आकर, अधिक बल से समीर बहने लगा तो उसमें से एक शिखर शोभा को खोकर, पवन के वेग से दूर जाकर, हे धरणीश ! गुरुतर गति से त्रिकूट नामक होकर, अब्धिमध्य में गिर पड़ा । हे देव ! उस श्रृंखला-द्वीप में, देवेन्द्र की आज्ञा पर देवताशिल्पी ने,

विभीषण का रावण के वैभव को राम को बताना

—करकौशल से लंकापुर नामक नगर का निर्माण किया । उस पुरवर के लिए सात दुर्ग शोभा देते हैं, प्रत्येक दुर्ग के दृढ़ता से चार द्वार हैं । पर्याप्त गुम्बजों के साथ शोभा से प्रथमतः ईंटों का दुर्ग है ।। ७३० ।।

दानवु लुत्तर द्वारंबु गाचि । येनूट डॆंबदि येडुकोट्लुंड्रु,
तूर्पुवाकिलियंदु दॊलगके प्रॊद्दु । दर्पिंचि युंदुरु तग नूरुकोट्लु,
दक्षिणद्वार मुद्धति गाचियुंदु । रक्षीणदानवु लरुवदिकोटु,
लरय नालोपलि यारुकोटलनु । नरनाथ! यिरुवदिनाल्गु वाकिड्ल
वरुस नीचॆप्पिन वडुवुन नॆपुडु । दरि गाचियुंदुरु धरणीतलेश !
तिरमगुचुन्नट्टि दिड्डिवाकिड्ल । नुरुसत्वु लुंडुदु रॊक्कॊक्ककोटि,
पुरमध्यवीथि नॆप्पुडु गाचियुंदु । रिरुवदिलक्षलु नॆन्नूरुकोट्लु,
कुंभकर्णुनि निद्रगुहचुट्टु गाचि । जृंभणमै वसिंचॆद रेडुकोट्लु,
मॊनसि यारावणु मॊगसाल गाचि । कॊनियुंदु रॊकलक्षकोटिराक्षसुलु,
७४०

नॊनर नावाकिट नुंडु राक्षसुलु । विनवय्य! मिरुवदिबेलकोट्लॆलमि
जॆलुवंबुगा निंद्रजित्तुवाटिकटनु । बलवंतु लुंदुरु पदिवेलकोट्लु,
घनुलैन यायतिकायादिवीर । दनुजुल वाकिड्ल दशलक्षकोटि
तॊडरिन कडिमिमै दुष्टराक्षसुलु । कडुनेचि विडिवड्डु गजमुलो यनग,
नॆन्निकतो मरि यिनकुलाधीश ! । यॆन्नराक्षसेन, यॆंतयु घनमु,

(उसके) पश्चिमद्वार को निरन्तर ढंग से अस्सी करोड़ राक्षस पहरा देते रहते हैं। उत्तरद्वार की रक्षा करते दो सौ सतहत्तर करोड़ दानव रहते हैं। पूर्व के द्वार पर सदा, (वहाँ से) न हटनेवाले सौ करोड़ (राक्षस) दर्प के साथ रहते हैं। दक्षिणद्वार का पहरा देते साठ करोड़ अक्षीण (क्षीण न होनेवाले) दानव उद्धति से रहते हैं। विचार करने पर भीतर के छहों दुर्गों के, हे नरनाथ! चौबीस द्वार हैं। हे धरणीतलेश! अब कहे अनुसार, क्रम से सदा (उन द्वारों की) रक्षा करते (राक्षस) रहते हैं। स्थिर (दृढ़) बने हुए छोटे द्वार (दुर्ग के बड़े द्वार में बना छोटा द्वार) पर एक-एक करोड़ उरु (महा) सत्त्व वाले (राक्षस) रहते हैं। पुर की मध्यवीथि की बीस लाख सात सौ करोड़ (राक्षस) सदा रक्षा में रहते हैं। कुंभकर्ण की निद्रा-गुफा के चारों तरफ़ रक्षा करते, विजृंभित हो, सात करोड़ (राक्षस) रहते हैं। रावण के आँगन की लाख करोड़ राक्षस सप्रयत्न रक्षा करते रहते हैं ॥ ७४० ॥

सुन लीजिए। उस (रावण के आँगन के) द्वार पर शोभा से रहनेवाले राक्षस बीस हज़ार करोड़ हैं। सुन्दरता से इन्द्रजित् के द्वार पर दस हज़ार करोड़ बलशाली राक्षस रहते हैं। उन महान् अतिकाय आदि वीर राक्षसों के द्वारों पर दस लाख करोड़ दुष्ट राक्षस रहते हैं जो उदित साहस से युक्त हो अधिक सताए जाकर मुक्त हुए गजों के समान हैं।

वासवांतकु लावु वर्णिपदरमे ? । यीसुन गैलास मॆत्तिनवाडु,
वनजजुंडतनिकि वर मिच्चिनाडु । दनुजुलचेत गंधर्वुलचेत
नमरुलचेत नायक्षुलचेत । समरंबुलोपल जावु लेकुंड,
समरंबे येल ? येचंदंबुनंदु । समयिपरादु राक्षसलोकनाथु,
नतडु मीचेतने यनि जच्चु गानि । क्षितिनाथ! यितरुलचे नसाध्युंडु,
७५०
कुंभकर्णुंडु गैकॊनडु चीरिकिनि । जंभारिनैननु समरंबुलोन,
नॆत्तिनमदमुन नॆरुगडेभयमु । जित्तंबुलो निंद्रजित्तनुवाडु,
हरुनकु व्रियमुगा यागंबु सेसि । वरमुन बडसॆनु वज्रकवचमु,
नरुदुगा मायावियै विल्लु वट्टि । यरुल नाकाशंबुनंदुंडि गॆलुचु,
नतिसत्वधनुडु प्रहस्तु डन्वाडु । चतुरुडा रावणु सैन्यपालकुडु,
खंडेंदुधरु चॆलिकानि सामंतु । भंडनंबुन माणियद्रुनि नोर्चॆ,
दनुजवीरुलु महोदरमहापार्श्वु । लनुवारु नतिकायु डनुवाडु देव!
बलिमि गैकॊनरु दिक्पालुर नैन, । गॆलुतुरु रणमुन गिट्टिनयपुडु,
यनिनिषकंटकुलैन बल्लिदुलु । दनुजेशुनकु लक्षतनयुलु देव !

हे इनकुलाधीश ! गिनती करें तो उस सेना की गिनती नहीं हो सकती। बहुत महान् है। वासवान्तक (रावण) की शक्ति का वर्णन (क्या) सम्भव है? (नहीं।) उसने ईर्ष्या से कैलास पर्वत को उठाया है, वनज-ज (ब्रह्मा) ने उसे वर दिया है कि दनुजों, गन्धर्वों, अमरों, यक्षों के हाथ समर में मृत्यु नहीं होगी। युद्ध ही क्यों ? उस राक्षसलोकनाथ को किसी भी प्रकार से मार डाला नहीं जा सकता। हे क्षितिनाथ ! वह आपके ही हाथ युद्ध में मरेगा। अन्यों के लिए (वह) असाध्य है ।। ७५० ।।

कुंभकर्ण युद्ध में जम्भारि (इन्द्र) की भी परवाह नहीं करता। इन्द्रजित नामक (राक्षस) तो उभरे मद के कारण मन में किसी भी प्रकार के भय को नहीं जानता। हर को प्रसन्न करने हेतु याग कर, वज्रकवच को वर के रूप में प्राप्त किया है। सतत मायावी हो, धनुष धारण कर, आकाश में स्थित होकर, अरियों को जीतता है। उस रावण का सैन्य-पालक प्रहस्त नाम का है जो अतिसत्त्वधनी तथा चतुर है। उसने खंडेंदुधर (शिव) के सखा के सामन्त मणिभद्र को भंडन (युद्ध) में हराया था। हे देव ! महोदर, महापार्श्व, अतिकाय आदि दनुजवीर, (अपने) बल के कारण दिक्पालकों की भी परवाह नहीं करते। नियराने पर (सामना होने पर) उन्हें भी जीत लेते हैं। हे देव ! अनिमषों (देवताओं) के लिए कंटक बने हुए बली एक लाख पुत्र हैं दनुजेश के।

ज्ञातुलतो बंधुसमिति लेंक्किंप । धातकु नैननुदरमुगादधिप! ७६०
यरय गुबेरादु लरिगापुलन्न । विरंचिपवच्चुनॆ विभवंबुकोलदि ?
नॆत्तुट नंजुट नॆट्टन दनिसि । मत्तुन संगरोन्मत्तुलै चाल
नदटॆक्किनट्टि महादैत्यवरुलु । पदिवेलकोट्टुलु बलियुरु गलरु,
वारि लावुनजेसि वसुमतीनाथ ! । यारावणुडु गॆल्चॆ नखिलदिक्कुलनु"
अनवुडु राघवुंडतनितो ननियॆं, । "विनु विभीषण! मुन्नु विन्नाड नेनु,
मीयन्न यॆंतयु मिक्किलिबंटुः । पायक यातनि बलिमि यट्टिदय,
वाडॆंतवाडैन वच्चि नायॆदुट । वाडिमि बचरिंप वाडॆंतवाडु ?
हरिहरब्रह्मादुलादिगागल्गु । सुरलड्डगिंचिन जूर्णंबुसेसि
वानि जंपुदु, निन्नवश्यंबु लंक । बूनि येलिंतु निम्मुल दानवेश!"
यनिन विभीषणुंडु रामुनि जूचि । विनयंबुतो म्रोक्कि वेड्क निट्लनियॆं : ७७०
"नारावणुंडॆंत, यालंक यॆंत । श्रीराम! नीबाणशिखि पर्वुनपुडु?
लंककोटलु व्राकि लग्गलु वट्टि । किकतो नसुरुल गिट्टिनयपुडु
नालावु जूडुमु नरनाथचंद्र ! । कालाग्निरुद्रुनिगति वेर्चुवाड ।"

हे अधिप ! ज्ञातियों के साथ (रावण की) बन्धु (रिश्तेदार)-समिति की गिनती करना धाता (ब्रह्मा) के लिए भी सम्भव नहीं है ।। ७६० ।।

यह जानने पर कि कुबेर आदि उसके सामन्त हैं तो उसके वैभव का वर्णन कैसे करें ? (इसके अतिरिक्त) दस हज़ार करोड़ बली महादैत्यवर हैं जो (शत्रु-) रक्त का पान कर, तृप्त हो, मद से संगरोन्मत्त बन, गर्वीले बने रहते हैं। उनकी शक्ति के कारण हे वसुमतीनाथ ! उस रावण ने समस्त दिशाओं को जीत लिया है।" ऐसा कहने पर राघव ने उससे यों कहा— "सुनो विभीषण ! (यह सब) मैंने पहले ही सुन रखा है। तुम्हारा अग्रज बहुत बड़ा वीर है, उसकी शक्ति भी वैसी ही है। (किन्तु) वह कितना ही महान् (बड़ा शूर, शक्तिशाली) क्यों न हो, मेरे समक्ष आकर, (अपना) प्रताप दिखाने के लिए किस बूते का है ? हरि, हर, ब्रह्मा आदि देवता (भी मुझे) रोकें, (तब भी) चूर-चूरकर उसे मार डालूँगा। हे दानवेश ! तुम्हें प्रेम से अवश्य ही लंका का राजा बनाऊँगा।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने उस राम को देखकर विनय से प्रणाम कर, उत्साह से यों कहा— ।। ७७० ।।

"हे श्रीराम ! तुम्हारे बाणों की शिखि (अग्नि) के निकल पड़ने पर, वह रावण और वह लंका कहाँ (टिक कर) रह सकेंगे ? लंका के प्राचीरों पर रेंग-चढ़कर, दुर्ग पर चढ़कर, क्रोध से असुरों का सामना करते समय

ननवुडु बति वानि नालिगनंबु । घनमुगा जेसि लक्ष्मणुनकु ननियें;

श्रीरामुडु विभीषणुनकु लंकाभिषेकमु सेयुट

“नीसमुद्रमुनीट निनजुंडु नीवु । जेसेत वडि नभिषेकंबुसेसि
कट्टुडु वेग लंकाराज्यमुनकु । बट्टंबु वानिकि ब्रति विभीषणुनि”
ननि यानतिच्चिन नतडुनु नतनि । वननिधिजलमुलु वनचरुल् देर
नभिषेक मोंनरिंचि “यसुरुल केल्ल । ब्रभुडवु ग” म्मनि पट्टंबुगट्टि
“तलपोय नाचंद्रताराकर्मुगनु । सललितंबुग रामचंद्रुनि कीर्ति
यॆंतकालमु गल्मु निल विभीषणुड! । यंतकालमुनु राज्यमुसेयु” मनग
७८०
नार्चि वानरकोटि हर्षिचें; नपुडु । पेर्चि राघवुडु विभीषणु जूचि
“यी यब्धि दाटंग नेयुपायंबु । सेयुद” मनवुडु जेतुलु मोंगिचि
“यीवार्धि गट्टक यिंद्रादलकुनु । देव! यॆम्मॊयि दाट दीरदु, कान
निदि गट्टुवडुटकु निनकुलाधीश! । पदिलंबुगा वार्धि ब्रार्थिपवलयु।”

हे नरनाथचन्द्र ! मेरी सामर्थ्य को देखोगे। (तब) कालाग्नि रुद्र के समान प्रज्वलित हो जाऊँगा।” ऐसा कहने पर पति (राम) ने उसका आलिंगन कर, सम्मानित कर, लक्ष्मण से कहा—

श्रीराम का विभीषण को लंका का राजा बनाना

“इस समुद्र के जल से इनज (सुग्रीव) और (लक्ष्मण) तुम लोग (विभीषण) को शीघ्र अभिषिक्त कर, उसके (रावण के) बदले विभीषण को लंका राज्य का राजा बनाओ।” ऐसा आदेश देने पर उसने (लक्ष्मण ने) वनचरों के वननिधि (समुद्र) का जल लाने पर, उसे (विभीषण को) अभिषिक्त कर, यह कह राजतिलक किया कि समस्त असुरों के लिए प्रभु बन जाओ। उसके (लक्ष्मण के) यह कहने पर कि “सोचने पर चन्द्र, तारा, अर्क के रहने तक, सललित रूप से रामचन्द्र की कीर्ति के पृथ्वी पर रहने तक, हे विभीषण ! उतने काल तक राज्य करो,”॥ ७८० ॥

—वानर-कोटि सिंहनाद कर हर्षित हुई। तब क्रम से राघव ने विभीषण को देखकर कहा—“इस अब्धि को पार करने के लिए कौन सा उपाय करेंगे ?” ऐसा कहने पर हाथ जोड़कर (विभीषण बोलने लगा—) “हे देव ! इस वारिधि पर (सेतु) बाँधे बिना, इसे इन्द्रादि भी किसी भी प्रकार से पार नहीं कर सकते। अतः हे इनकुलाधीश ! बाँध के बाँधे जाने के लिए, सावधानी से वारिधि की प्रार्थना करनी चाहिए।” ऐसा

ननि पल्कुचुंडंग नट दशग्रीवु । ननुमति शार्दूलुडनु दूत वच्चि,
कपिसेनकोलदियु गपुल माटलुनु । गपुलतो नाडु राघवुनि वाक्यमुलु
नरसि क्रम्मर जनि मसुरेशु गांचि ।करमुलु मोगिचि निक्कमु विन्नविंचे:
"नुत्तुंग गात्रुलु नुत्तुंगभुजुलु । नुत्तुंगसत्त्वुलु नुत्तुंगमतुलु
नगु रामलक्ष्मणु ललवुमै विडिसि । रगचरसेनतो नब्धितीरमुन;
गणुतिंपनगु नुडुगणमुल नैन, । गणुतिपनगु वृष्टिकणमुल नैन, ७९०
गणुतिंपनगु नब्धिकरडुलनैन, । गणुतिंपगा रादु कपिसेनसंख्य,
नुचित मीवेळ सामोपायमुनकु । बचरिंप बंपु नेर्परुलैनवारि" ।
ननवुडु शार्दूलुडनु वानि माट । विनि शुकुनकु दैत्यविभु डर्थि बलिकै:

शुक संदेशमु

"जनि नीवु वानरसैन्यंबु सोच्चि । यिनसूनुतो ब्रियं ब्रेपंड बलिकि
पंग लेमि दैलिपि या भानुनंदनुनि । मगुडिंचि रम्मु सम्मति बोम्मु लेम्मु ।"

कहते समय वहाँ दशग्रीव की अनुमति से शार्दूल नामक दूत ने आकर, कपिसेनाओं की सामर्थ्य, कपियों की बातें (तथा) कपियों के साथ राघव के वचनों को जानकर, लौटकर जाकर, असुरेश के दर्शन कर हाथ जोड़, तथ्य का निवेदन किया। (उसने कहा)—"उत्तुंग गात्र (शरीर) वाले, उत्तुंग भुजाओं वाले, उत्तुंग सत्त्व वाले, उत्तुंग मति वाले राम-लक्ष्मण ने सरलता से, अगचर सेना के साथ समुद्रतीर पर पड़ाव डाला है। उडुगणों (नक्षत्रों) को गिना जा सकता है, वृष्टि (वर्षा) के कणों को भी गिना जा सकता है, ।। ७९० ।।

—अब्धि की तरंगों को भी गिना जा सकता है, (किन्तु) कपिसेना की संख्या को गिना नहीं जा सकता। इस समय उचित है कि सामोपाय का प्रयोग कर सकने वाले चतुर (जन) को वहाँ भेजो।" ऐसा कहने पर शार्दूल नामक (उस दूत) की बात सुन, दैत्यविभु ने प्रेम से शुक से कहा—

शुक-सन्देश

"तुम जाकर वानरसैन्य में पैठकर, इन-सुअन (सुग्रीव) से प्रिय वचन बोलकर, वैर के अभाव को बताकर, उस भानुनन्दन (सुग्रीव) को विरत कर आओ, सम्मति (ले) जाओ, उठो।" ऐसा कहने पर वह जाकर, अर्कज को देख रावण के समस्त वचनों को जताकर कहा—"हे अर्कज! मुझे

अनवुडु नतवेगि मर्कजु गांचि । यनिये रावणुचेॅप्पिनंतयु देॅलिय:
"वैरंबु सेय रावणुतोड नीकु । गारणं बेमि ? यर्कज! नाकु जेॅपुम,
वालि मीयन्नना वलवदु, विनुमु, । वालिकि नीकुनु वैरंबु गलदु,
वालि यादानवेश्वरु पगवाडु, । चाल रावणुतोड संधि नी कमरु,
रावणुं डीरामु राम देच्चुटकु । नी विट्लु रादगुनॆ ? कपिराज !
८००

यनि गुबेरुनि गेॅल्चि यतनि पुष्पकमु। गोॅनिन रावणु नेॅरुंगुट लेॅस्सगादे।
यट्टेल, हरुतोड नय्यद्रि नेॅत्ति । नट्टि रावणु डल्पुडा कपिराज !
देवेंद्रु डादिगा दिविजुल नेॅल्ल । नाविधंबुन गेॅल्वडा वानरेंद्र ।
कौलदि मीट्रिन होमकुंडंबुलंदु । दललु खंडिंचि युद्धति व्रेॅल्चिव्रेॅल्चि
जलरुहसंभवु जाल मेॅप्पिच्चि । वेॅलयंग द्रैलोक्यविजयंबु गोॅनडे ?
हीनमानवुनितो नेटिसख्यंबु ? । दानवेश्वरुतोड दग जेयु संधि"
ननवुडु गोपिंचि यगचरुलेॅल्ल । विनुवीथि कॆगयुचु वेॅस वानि बट्टि
बेॅडिदंबुगा बेॅक्कुपिडिकिळ्ळ बोॅडिचि । कडु मारुमसगि रेॅक्कलु
द्रुंचिवैचि
मुक्कुनु जेॅवुलुनु मोॅगि गोसिवैव । नोॅक्कट गडगिन नुदरि राघवुडु

बताओ, रावण से वैर करने के लिए तुम्हें क्या कारण है ? अपने अग्रज वालि से (तुम्हारी) नहीं बनती थी। सुनो, वालि और तुम में वैर था। वालि उस दानवेश्वर का शत्रु है। रावण से सन्धि (समझौता) तुम्हें खूब जमेगी। रावण के इस राम की रामा (स्त्री) को लाने पर क्या तुम्हें ऐसा आना चाहिए ? (तुम्हारा आना उचित नहीं है)। हे कपिराज ! ॥ ८०० ॥

युद्ध में कुबेर को जीतकर, उसके पुष्पक (-विमान) को लेनेवाले रावण (की शक्ति-सामर्थ्य) को जानना उचित है न ! यही क्यों, हे कपिराज ! हर (शिव) के साथ उस अद्रि (पर्वत) को उठानेवाला रावण क्या अल्प है ? हे वानरेन्द्र ! उसने देवेन्द्र आदि दिविजों को उस प्रकार से (प्रख्यात रूप से) जीत नहीं लिया था ? अति औन्नत्य से होमकुण्डों में सिर काट डालकर, हवन करके, जलरुह-सम्भव (ब्रह्मा) को अधिक प्रसन्न कर, शोभा से त्रैलोक्य-विजय को प्राप्त नहीं किया था ? हीनमानव से कैसी मित्रता ? दानवेश्वर से उचित विधि से समझौता कर लो।" ऐसा कहने पर समस्त अगचर (वानर) आकाश-वीथि में उड़कर झट उसे पकड़, कठोरता से अनेक मुष्ठिघात कर, अनेक प्रकार से मरोड़, पंख तोड़कर, नाक (और) कान काट डालने पर, एक साथ (उसे मार डालने का)

"दूत नेटिकि नित दौसगुल बेट्ट । ब्रातिगा वीनि नेपक पोवनिड्ु ।"
८१०
अनवुडु राघुरामुनाननति कुलिकि । वनचरु लंदरु वानि बोविडुव
विनुवीथि केगसि याविनुवीथिनुंडि। यिनसूनुनकु शुकुंडेपंड बलिकें:
"रावणुतो गपिराज ! येमंदु" । नावुडु दाराधिनाथुंडु गिनिसि
"ता नेंच द्रोहि यीधरणीश्वरुनकु । गान नाद्रोहिनि गनि सैपननुमु,
सुरिगि येलोकंबु जौच्चिन नैन । बौरिगौंदु गानि ये बोवनीननुमु,
पटुकार्मुकंबु यूपंबुगा निलिपि । चटुलास्त्रमुलु परिस्तरणमुल् सेसि
परग गेंधूळुलु प्रभलु गाविंचि । तरुचरस्सुक्सृवततुलु चेपट्टि
समरभूवेदिकास्थलमुन निलिचि । यमरुल कॆल्ल ब्रियं बेक्कुचुंड
गरमौप्प वीरांगकमुल बेल्लुब्बि । तौरगुचुनुन्न नेत्तुरु नेय्यि गाग
महितगुणध्वनुल् मंत्रमुल् गाग । बहुराक्षसश्रेणि पशुकोटि गाग
८२०
दनरेंडु सिंहनादध्वनुल् पेर्चि । यनिमिषावलिकि नाह्वानंबु गाग
विडुवनि काहळ विततुल म्रोत । कडुनिपुगा सामगानंबु गाग ।

प्रयत्न करने पर, राघव उद्विग्न हो बोले—"दूत को इतना त्रास क्यों देना चाहिए ? आफ़तों में डालने और इसे सताए बिना जाने दो ।" ।। ८१० ।।

ऐसा कहने पर, रघुराम की आज्ञा के कारण चौंककर सभी वनचरों ने उसे जाने दिया । (तब वह) विनुवीथि पर उड़कर, उस आकाशमार्ग से इन-सून (सुग्रीव) से शुक ढंग से बोला—"हे कपिराज ! रावण से क्या कहूँ ?" ऐसा कहने पर तारा-अधिनाथ (सुग्रीव) क्रुद्ध हो बोला—"(उससे) कहो कि (वह) स्वयं गणना करने पर इस धरणीश्वर (राम) का द्रोही है, अतः उस द्रोही को देख, सहन नहीं करूँगा । कहो कि वह क्रम से किसी भी लोक में घुस जाए, फिर भी मैं पकड़कर मार डालूंगा, किन्तु जाने नहीं दूंगा । पटु-कार्मुक को यूप (रूप) खड़ाकर, चटुल-अस्त्रों को परिस्तरण (आच्छादन) बनाकर, विलसित लाल-धूलि को ही प्रभा बनाकर, तरुचरों (वानरों) को स्रुक्-सृव (यज्ञ के उपकरण)-समूह बनाकर, समर-भू-वेदिका स्थल पर खड़े होकर, देवताओं के अत्यधिक प्रसन्न होने पर, अतिशयता से वीरों के अंगों से घुमड़कर प्रवाहित होनेवाले रक्त के ही मानों घृत होने पर, महित-गुण (ज्या) की ध्वनियों के ही मन्त्र (घोष) होने पर, बहु-राक्षस श्रेणी के ही पशुकोटि होने पर, ।। ८२० ।।

—शोभायमान सिंहनाद-ध्वनियाँ ही अनिमिषावली (देवता-समूह) के लिए न्योता होने पर, अनारत काहल (नगाड़े आदि युद्ध-वाद्य)-समूह के निनाद

घनमैन रामलक्ष्मणुल कोपमुलु । मुनुकोनि नाकोपमुनु गूड बर्वि
यनुपम त्रेताग्नुलै युंड नंदु । दनदु प्राणंबु लत्तरि नाहुतुलुग
रणमुन दन वीररस मडंचुटये । प्रणुतिपगा सोमपानंबु गाग
ब्रकटराक्षसवीर पशुपललमुल । सकलभूतव्रात संतृप्ति गाग
विड्वक संग्राम विपुलयज्ञंबु । गडुनोप्प जेयु राघवसोमयाजि,
यटुगाक मुन्ने सीतांगन देच्चि । यिट यिच्चि ब्रदुकुट यिदि बुद्धि यनुमु"
अनि पेर्चि सुग्रीवुडाडु वाक्यमुलु । विनि शुकचारुंडु वेगंबे पोयि
यंत वृत्तांतंबु नारावणुनकु । मंतनंवुन जेप्पे, मरि रामु डिचट ८३०

श्रीरामुनि दर्भशयनमु

वनधितीरंबुन वनदर्भशयन । मोनर्रिचि तात्पर्य मोप्पारुचुंड
नमृतपयोधिलो नहिशय्यमीद । नमलचित्तंबुन नानंदमंदि
मुन्नुन्न तन यादिमूर्तिचंदमुन । नन्नरनायकुं डतिकौतुकमुन
नवरत्नकटकमंडनमंडितंबु । विविधोर्मिकामणि विपुलरावंबु
नुर्वीतनूजा मृदूपधानंबु । गर्विताहितभिदा कालदंडंबु
घोरप्रताप कुंकुमचर्चितंबु । सारंगमदलेप संवासितंबु

के ही अतिरमणीय सामगान होने पर, राम-लक्ष्मणों का महान् क्रोध (तथा) मेरे कोप के भी प्रकट अनुपम त्रेताग्नियों के समान रहने पर, उसके (रावण के) प्राणों को उस अवसर पर आहुतियाँ बनाकर, रण में उसके वीररस का दमन करना ही मानों प्रस्तुति करने पर सोमपान होने पर, प्रकट-रक्षोवीर रूपी पशुओं के पललों से सकलभूत-व्रात (समूह) के संतृप्त होने पर, राघव-सोमयाजी अवश्य ही, बड़े औचित्य से संग्राम-रूपी विपुलयज्ञ करेगा। ऐसा न होने से पहले ही सीतांगना को यहाँ ला देकर जीवित रहना ही बुद्धिमत्ता है, (ऐसा) (जाकर) कह दो।" ऐसा क्रम से सुग्रीव के कहे वाक्यों को सुन शुकाचार्य ने शीघ्र जाकर, समस्त वृत्तान्त उस रावण को रहस्य प्रसंग में बताया। फिर राम यहाँ, ॥ ८३० ॥

श्रीराम का दर्भशयन

वनधि (समुद्र) तीर पर, वनदर्भ शयन कर, तात्पर्य के शोभित होने पर, रमणीय दक्षिण भुज शाखा को सुन्दर तकिया बनाकर, धरणीश्वर (राम) अति कौतुक से अमृतपयोधि में, अहि-शय्या पर, अमल चित्त से, आनन्दित हो स्थित अपनी पूर्व की आदिमूर्ति की तरह लेट गया। (वह दक्षिण भुजा) नवरत्न-कटक-मंडन-मंडित, विविध-ऊर्मिका-मणि (के) विपुल रव से युक्त, उर्वीतनूजा के लिए मृदु-उपधान (तकिया), गर्वित शत्रुओं के लिए कालदंडसम, घोर-प्रताप-कुंकुम चर्चित, सारंग-मद-लेप से संवासित, निरत-

निरत महादान निपुणतानकमु । धरणीभरणधुर्यतासमंबगुचु
बॊलुपॊंदु दक्षिणभुजशाख दनर । दलगडगा जेसि धरणीश्वरुंडु
"नेविधंबुन नैन ने दाटि पोव । द्रोव मिम्मनियेद दोयधि" ननुचु
रामभूवरुडु वारक युपवासि । यै मूडुदिवसंबु लट्टु शयनिंचि ८४०
तॆलिडॆंदमुन जलदेवत निलिपि । पलुमरु निष्ठतो ब्रार्थिपदॊडगॆ:
"गड गानरानि नी कडिदिचित्तंबु । वडयुटकै येनु बडियुन्नवाड,
नी केनु मान्युंड, नीरधि ! वेग । नाकिम्मु त्रोव या नाकारि जंप"
ननि वेडुकॊनुटयु नारामुनॆदुर । दनरारि यंतकंतकु बॊंगि पॊंगि
तोरंपुदेरलचेतुलु वीचि वीचि । बोरन नुर्वुतॆल्पुन नव्वि नव्वि
घनमीनरुचिनालुकलु ग्रोसि क्रोसि । चनु स्रोत नट्टहासमु सेसि चेसि
तुदि नीट दिक्कुलतो जॆप्पिचॆप्पि । कदिसिन सुळ्ळ वक्रत जूपिचूपि
युदधि यारामुनि नॊक्किकत गॊनड, । यदि यट्टिदय कादॆयरसिचूडंग ?
जडुडैनवाडु दुर्जनु डैनवाडु । कडु ग्रूर जीवनगति नुन्नवाडु
मलुगक तनलोन मंडॆडुवाडु । कुलगोत्रमैन जेकॊनिर्म्रिंगुवाडु ८५०

महादान-निपुण-तानक, धरणीभरण-धुरीणता से युक्त था । "किसी भी प्रकार से पार जाने के लिए रास्ता देने के लिए तोयधि से कहूँगा ।" (ऐसा) सोचते हुए, राम-भूवर (राजा) अनवरत उपवास करते तीन दिन उस प्रकार लेटे रह कर, ॥ ८४० ॥

—स्वच्छ हृदय में जलदेवता को रख, बारबार निष्ठा से प्रार्थना करने लगा । "तल दिखाई न पड़नेवाले तुम्हारे साहसी चित्त को प्राप्त करने के लिए मैं (यहाँ) पड़ा हुआ हूँ । मैं तुम्हारे लिए मान्य हूँ । हे नीरधि ! उस नाकारी का वध करने के लिए झट से मुझे रास्ता दे दो ।" ऐसा निवेदन करने पर, (समुद्र) उस राम के समक्ष शोभित हो, अधिकाधिक फूलकर, विशाल वीचि रूपी हाथ हिला-हिलाकर, फेन की सफ़ेदी मिस खिलखिल हँसकर, घन (बड़े) मीन की रुचियों रूपी जिह्वाओं को फैला-फैलाकर, प्रवाह की ध्वनि मिस अट्टहास कर, जल के अन्तिमभागों से दिशाओं से बातकर, नियराये भँवरों से वक्रता का प्रदर्शन कर, मानों उदधि उस राम की बिलकुल परवाह नहीं करता था । सोचकर देखने पर यह तो वैसी ही (स्वाभाविक) बात है न ! जड़, दुर्जन, अधिक क्रूर जीवन-गति से युक्त, अनवरत भीतर ही भीतर जलनेवाला, कुल गोत्र को भी निगल जानेवाला,[१] ॥ ८५० ॥

---

[१] ये विशेषण श्लेषयुक्त हो दुर्जन तथा समुद्र के लिए अन्वित होते हैं ।

नेदुरेंत वेडिन नेरुगुने ? पेद्द । योंदरुचु नंतंत नुब्बुनुगाक !
कदियंग वच्चुचो गडिदिचित्तंबु । चेंदरंग विषमु पै जिलिकिचु गाक!
नडुकक तन प्रार्थनंबु गैकोनक । जडधि वोंगुट सूचि जानकीविभुडु
निडुदकन्नुलक्केव निप्पुलु राल । मुडिवडु बोमलु ग्रम्मुचु गोपमेसग
जलनिधि दिक्कुनु सौमित्रिदिक्कु । बलुमारु जूचुचु बलिके राघवुडु
"वीनि गर्वमु गंटिवे? लक्ष्मणुंड ! । येनेंत वेडिन नित गैकोनक
पोंडसूपकुन्नाडु, पोंडसूपकुन्न । बोंडवडगिपक पोनेल यित्तु ?
नेंडपक क्रोलियु निंकिपलेनि । बडबानलंबे नाबाणानलंबु ?
अटु चूचु गाक नायस्त्रंबु कोलदि । बटुतर मकर सर्पमुलु मीनमुलु
गंडकंबुलु गूर्म कर्कटंबुलुनु । मंडूकमुलु नीरुमानिसुलु कदुपु ८६०
नुरुवडि नोंडोंटि नोरयंग बारि । केरलेडि तिमितिमिंगल तद्गिलमुलु
दंडिराक्षसुलुनु दरुचु नेगळ्ळु । गोंडलु मुनु मारुकोनि रूपुमापि
परगुचुनुन्न नाबाणाग्निशिखल । नेरसिन तनलोनि येम्मुलो यनग
जलमुल गप्पि तज्जलचरकोटि । मेलगुट मान्पिचि मीद देलिचि

—दूसरा (व्यक्ति) कितना ही प्रार्थना करे तो भी (कब) समझ सकता है ? (ऐसे समय) ज़ोर से चिल्लाते हुए और भी फूलकर रहेगा । नियराने पर ऊपर से विष (गरल, जल) छिड़केगा, जिससे साहसी चित्त भी प्रकम्पित हो जाए । न हिलते हुए (प्रभावित न होते हुए), अपनी प्रार्थना को स्वीकार न करते हुए जडधि (समुद्र) को फूलते-उमड़ते देख, जानकी-विभु विशाल नेत्रों के पार्श्व भागों से अंगारों के बरसने पर, कुंचित होते भौंहों में क्रोध के छाकर उमड़ने पर, जलनिधि की ओर तथा सौमित्र की ओर बारबार देखते हुए राघव बोला—"हे लक्ष्मण ! इसके गर्व को देखा है? मेरे कितना ही प्रार्थना करने पर भी, बिलकुल परवाह न करके दिखाई नहीं पड़ रहा है। दिखाई नहीं पड़ेगा तो गर्व का भंजन कर दूंगा । (ऐसे ही) जाने दूंगा क्या ? सदा पान करते रहने पर भी सुखा न सकनेवाला बड़वानल है क्या मेरा बाणानल ? इधर (समुद्र भी) देख ले मेरे अस्त्र की सामर्थ्य । पटुतर मकर, सर्प, मीन, गंडक, कूर्म, कर्कट, मंडूक, जलमानुषों के समूह, ।। ८६० ।।

—अत्यन्त वेग से एक-दूसरे को रगड़ते हुए दौड़कर, उत्साहित होनेवाले तिमि-तिमिंगल, तद्गिल, बली (जल) राक्षस, अधिक अग्नि-पर्वत आदि का सामना कर, (समूल) रूप को मिटाकर, व्याप्त होनेवाली मेरी बाणाग्नि-शिखाओं के अपने भीतर की अस्थियों के समान (प्रकाशित होकर), जलों को आच्छादित कर, उस जलचर-कोटि (समूह) के संचलन को बन्दकर,

चिप्पलु गुल्ललु जिक्कंग दन्नु । निप्पुड धूळिगा निंकिचुवाड,
सिरितंड्रि यनि पॆद्दसेसिति गानि । हरिमाम यनुचु बालार्चिति गानि
यिंदुकु दनु वेडनेटिकि नाकु ? । बॊंदॆरुंगक पेर्चि पॊंगॆडु जलधि
नन्नशक्तुनिगा मनंबुन दलचि । यिन्नि चंदंबुल नेचॆ सौमित्रि !
ते विल्लु नम्मुलु, दॆंगि पॊंगियुन्न । यी वार्धि नाचेत निंकुट जूडु,
वनधिलो जलमुलु वडि जूरवुत्तु" । ननुचु राघवुडु विल्लंदुमात्रमुन ८७०
बलभेदि वणकॆ, दिग्भागंबु वगिलॆ, । जलधुलु गलगॊ, नाशाकरुलुलिकॆ,
धारुणि ग्रुंगॆ, भूधरमुलु गूलॆ । नीरजासनुडुनु निव्वॆरगंदॆ,
जुक्कलु डुल्लॆ, शेषुंडु भीतिल्लॆ, । दिक्कुलु घूर्णिल्लॆ, दिवि यॊड्डुगिल्लॆ,
निनकुलेश्वरुडंत नेपु दीपिंप । विनुतुलु शोभिल्ल विल्लॆक्कुवॆट्टि
समवर्ति संवर्तसमयदंडंबु । सममैनवानि नुज्ज्वलमैनवानि
ब्रळयकालानलप्रभ नॊप्पुवानि । विलयोग्रचंडांशु विधमैनवानि
सायकंबुलु पॆक्कु संधिप पेर्चि । तोयधिलोपल दॊडरि येयुटयु
"गडव बॊंगिति नन्नु गरुणिपु" मनुचु । जॆडक वारिधि यॊरपिल्लॆडु
माड्कि

(मर जाने के कारण) ऊपर तैराकर, सीप और घोंघे ही बचे रहें, (इस प्रकार) अभी धूल के रूप में (समुद्र को) सुखा दूँगा। लक्ष्मी के पिता मानकर, बड़ा सम्मान किया है, हरि के मामा (ससुर) मानकर विलम्ब किया है। नहीं तो इस (कार्य) के लिए उससे निवेदन करने की ही क्या आवश्यकता है ? स्नेह को न समझकर उमड़कर फूलनेवाले समुद्र ने मन में मुझे अशक्त मानकर, इतने प्रकार से सताया है। हे सौमित्र ! लाओ धनुष-बाण, सीमारहित हो फूला हुआ इस वारिधि का मेरे हाथ सूख जाना देखो। वनधि (समुद्र) के जल को झट से सुखा दूँगा।" (यह) कहते राघव के धनुष उठाने मात्र से, ॥ ८७० ॥

—बलभेदी (इन्द्र) काँप उठा, दिग्भाग (दिशाएँ) फूट गईं, जलधियाँ आलोड़ित हो गईं, आशाकरि (दिग्गज) चौंक पड़े, धरणी धँस गई, भूधर गिर पड़े, नीरजासन (ब्रह्मा) भी चकित रह गया, तारे टूट गिरे, शेष भयभीत हो गया, दिशाएँ घूर्णित हो गईं, दिवि अपने स्थान से हट गया। तब इनकुलेश्वर ने विकास के दीप्त होने पर, विनुतियों (स्तुतियों) के शोभित होने पर, धनुष चढ़ाकर, समवर्ती (यम) के संवर्त-समय (प्रलय) के दण्ड के सम, उज्ज्वल, प्रलयकालानल-प्रभा से शोभित, विलय-उग्र-चंडांशु के समान अनेक सायकों (बाणों) का संधान कर क्रम से (उन्हें) तोयधि (समुद्र) में लगकर डालने पर, मानों यह कहते कि "अतिक्रमण कर फूल

गडुग्रोसि पर्वताकारंबुलगुचु । गडुवेग दरग लाकस मप्पळिंचॆ;
बलितंपु रामभूपालुनि वाण । मुलु पॆक्कु नाट समुद्रुनि नोट ८८०
ग्रम्मॆडु लाललकैवडि नुरुवु । लम्महावीचुलयंदु बॆल्लॆगसॆ
सॊरिदि नेलोकंबु जॊत्तु नन्माड्कि । धरियिंपका समुद्रमु दल्लडिल्लॆ,
जलनिधियुदकमास्वादिंप वच्चि । मलुगनि रामास्त्रमहिमकु नुलिकि
मॊगुळ्ळु मगुडि वॆम्मुचु बोवु भंगि । बॊग लॆडत्रॆव्वक पॊरिबॊरि नॆगसॆ,
नॊऱलुचु राक्षसु लॊऱलुट सूपु । तॆऱगुन नॊऱले नॆंतॆ जलचरुलु,
मनुकुलवल्लभु मार्गणवह्नि ।दॊनकजॊच्चिन समुद्रुनि चित्तवृत्ति
घनतरंबगु नहंकारादुलेल्ल । बॆनुपरि निलुवक पॆडबायु करणि
दैतेयुलॆल्ल बाताळंबु विडिचि । भीतिल्लि पाऱिरि पॆक्कुदिक्कुलकु,
दनचेत निंकक तनरिन वार्धि । ननयंबु निंकितु ननि वच्चुचुन्न
यिनकुलु बाणाग्नि कॆदुरुगावच्चि । ननुपॊंद नालिगनमु सेयुकरणि ८९०
नुडुगनि वाणाग्नि नॊडगूडि लोनि । बडबाग्नि वाराशिपै मंडजॊच्चॆ;

उठा, मुझपर करुणा दिखाओ", वारिधि के क्रन्दन करने के समान, अधिक ध्वनि कर, पर्वताकार होते हुए, अति वेग से तरंगें आकाश को स्पर्श करने लगीं। रामभूपाल के कई शक्तिशाली बाणों के लग जाने से समुद्र के मुख से, ॥ ८८० ॥

—उमड़ पड़नेवाले झाग के समान, उन महावीचियों पर फेन अधिकता से फैल गया। '(अब) क्रम से मैं किन लोकों में घुस पड़ूँ, (अपने आपको बचाने के लिए)' (यह सोचते) वह समुद्र (बाण-प्रभाव को) धारण (सहन) न कर सक, विचलित हो गया। जलनिधि के उदक का आस्वादन करने के लिए आकर, राम के दुर्निवार-अस्त्र-महिमा के कारण भीत होकर, मेघ मानों दुखी हो वापिस जा रहे हों, (इस प्रकार) निरन्तर धुआँ फैलने लगा। जलचर आत्यन्तिक रूप से चीख-पुकार मचाने लगे मानों (भविष्य में) इसी प्रकार राक्षस चीख-पुकार मचाएँगे। मनुकुल-वल्लभ (राम) की मार्गण-(बाण)-अग्नि के विकल बना देने पर, समुद्र की चित्तवृत्ति से घनतर (अधिक) अहंकार आदि के उन्नति के साथ वहाँ न रह सक, निकल जाने के समान, समस्त दैतेय पाताल को छोड़, भीत हो अनेक दिशाओं में भाग निकले। बड़वानल से न सूखकर विलसित वारिधि को अवश्य ही सुखा दूँगी, यह कहते आनेवाली इनकुल वाले की बाणाग्नि के समक्ष आकर, शोभा से आलिगन करने के समान, ॥ ८९० ॥

—बड़वाग्नि का साथ देकर, भीतर की बड़वाग्नि वाराशि (समुद्र) के

नप्पुडु लक्ष्मणुंडंतकुभंगि । नुप्पोंगि रौद्र - संयुक्तुडै युन्न
यन्न चंदमु जूचि यलुकुचु वच्चि । मुन्नोटि वेडसोच्चि मोड्पुगेलमर
"मानवेश्वर! यिदि मथनंबु सेय । रानि रुद्रुनि रोषरसवार्धि गादु,
मानवेश्वर ! यिदि मथनंबु सेय । रानि कालुनि कोपरसवार्धि गादु,
ईनीरु नेर्डियिप निब्भंगि दोंडगें, । मानक यिक नी मार्गणवह्नि
वेलिकि नेतेंचि दिग्विततितो गूड । गलय लोकंबुलु गाल्चुनो तुदनु ?
सर्वजगद्धितचरितंबु बूनि । युर्वीश ! नीकोपमुपसंहरिंपु,
नी कोपमुनकु नी नीरधि यंत । ते कार्मुकमु दीनि देंगगोन नधिप!"
यनि विल्लुवट्टिन नतडीक कोप । मिनुमडिपंग सौमित्रि दानुडिपि ९००
"यंबकंबेल ? नायंबकंबुलने । यंबुधि निंकितु" ननिन चंदमुन
ग्रूरदृष्टुल गनुंगोनि योडुगरचि । "योरि समुद्रुंड ! योडवु नाकु;
नीनीरु निंकिंचि नीयंदु गलुगु । वानि नन्निटिनि वडि नीरुसेसि
भर्जितु; नीविक बंटवै निलुवु । दुर्जनत्वमुननु दोंडरि नायेंदुट;
९०४

उपरितल पर दहकने लगी। तब लक्ष्मण अन्तक (यम) के समान भड़ककर, रौद्र संयुक्त बने अग्रज का विधान देखकर, भीत हो, समुद्र के किनारे आकर, हाथ जोड़कर (यों बोला)—"हे मानवेश्वर! यह रुद्र की रोष-रस-वारिधि नहीं है, जिसका मन्थन न किया जा सके। यह काल (यम) की कोप-रस-वारिधि नहीं है, जिसका मन्थन न किया जा सके। इस जल को तुम्हारी बाणाग्नि इस प्रकार सुखाने लगी, अब वह वहीं न रुककर, बाहर निकलकर, अन्त में दिग्वितति (दिशा-समूह) के साथ सम्भवतः (समस्त) लोकों को जला देगी! हे उर्वीश (राजा)! सर्व-जगत्-हित-चरित को धारणकर, अपने क्रोध का उपसंहार करो। तुम्हारे क्रोध के लिए यह नीरधि क्या (चीज) है? हे अधिप! इसका संहार करने के लिए कार्मुक (धनुष) इधर दो।" (ऐसा) कह धनुष सम्भालने पर, (उसे) न देकर, क्रोध के द्विगुणित होने पर, सौमित्र को मनाकर, ॥ ९०० ॥

—कहा, "बाण ही क्यों? अपनी दृष्टियों से ही अंबुधि को सुखा दूंगा।" इस प्रकार क्रूरदृष्टियों से देख, होंठ चबाकर (कहा)—"रे समुद्र! (तुम) मुझसे परास्त नहीं होते हो? तुम्हारे जल को सुखाकर, तुम्हारे भीतर सभी (प्राणियों) को झट नष्ट कर, भर्जित करूंगा। तुम अब दुर्जनत्व को छोड़, मेरे समक्ष सेवक हो खड़े रहो ॥ ९०४ ॥

श्रीरामुडु समुद्रुनिपै ब्रह्मास्त्रमेयुट

यिदॆ तॊडिगॆद बाणमॆ नारि'' ननुचु । नर्दलिचि यपुडु ब्रह्मास्त्रंबु दॊडुग
ब्रह्मयु निद्रुंडु भ्रम गानरैरि; । ब्रह्मांडमॆल्लनु बगिलिनट्लय्यॆ;
भुवनंबुलॆल्लनु बॊगिलिनट्लय्यॆ; । भुवनत्रयमुलोनि भूतंबुलऱ्चॆ;
गलयंग दिशल जीकट्लग्गलिंचॆ; । वॆलुगवु रविचंद्रविमलबिबमुलु;
नशनुलु वडियॆ; महानिलमडरॆ; । नशरीरि यॊऱलॆ; मिथ्याग्नुलु मंडॆ;
नुडुगक यॊक म्रोत यूरक म्रोसॆ; । जडधि यप्पुडु ग्राहसमितियु दानु ९१०
बॊगॆल्ल नॆक्कड बोयॆनो यनग । दुंगफेनमुलॆंदु दूलॆनो यनग
बटुघोषमॆम्मॆयि बासॆनो यनग । जटुलोग्रविषमॆंदु समसॆनो यनग
बॆपॆल्ल नॆक्कड ब्रिदिलॆनो यनग । सॊंपॆल्ल नॆक्कड जॊच्चॆनो यनग
भंगंबु लेकयु बरिकिंचि चूड । भंगंबुनकु दानॆ पट्टन बरगि
सत्त्वंबु सॆडियु नाश्चर्यंबु गाग । सत्त्वसमग्रुडै चलनंबु नॊंदि
भ्रमणंबु लेकयु भ्रमणंबु गलिगि । यमितवेगंबुन नधिकत दक्कि
यारामु चेति ब्रह्मास्त्रंबु तुदकु । बीरंबु सॆडि वच्चि बिंदुवॆ निलिचॆ

श्रीराम का समुद्र पर ब्रह्मास्त्र चलाना

यही धनुष की डोरी पर बाण चढ़ाता हूँ।'' (ऐसा) कहते हुए तब ब्रह्मास्त्र का संधान करने पर, ब्रह्मा और इन्द्र भ्रान्त हुए। ऐसा लगा मानों समस्त ब्रह्माण्ड फट गया, मानों समस्त भुवन संतप्त हो गए। भुवनत्रय के भूत चीख उठे, दिशाओं में पूरी तरह से अन्धकार व्याप्त हो गया, रवि-चन्द्र के विमल बिम्ब प्रकाशित न हुए, अशनियाँ (वज्र) गिरीं, महा-अनिल भीत हुआ। अशरीरी चीख उठी, मिथ्याग्नियाँ बल उठीं, अविरल गति से एक भयंकार नाद लगातार मुखरित हो उठा। तब पता नहीं जड़धि (समुद्र) का समस्त उफ़ान कहाँ चला गया, ॥ ९१० ॥

—तुंग फ़ेन कहाँ लुप्त हो गया, पटुघोष किस प्रकार छूट गया, चटुल-उग्र-विष कहाँ मिट गया, समस्त गर्व कहाँ शिथिल हो गया, समस्त शोभा कहाँ चली गयी, अपनी ग्राह समित के साथ स्वयं (वहाँ उपस्थित हुआ)। (अब तक) भंग (पराजय) के न होने पर भी, विचारकर देखने पर (आज) पराजय (तरंग) के निवास-स्थान के समान, सत्त्व के नष्ट होने पर, आश्चर्यप्रद रूप से सत्त्वसमग्र होकर विचलित हो, भ्रमण के न होते भी भ्रमण-सम्पन्न हो, अमित वेग से आधिक्य को खोकर, वीरता को खोकर, उस राम के हाथ के ब्रह्मास्त्र के अन्तिम भाग पर, एक बिन्दु होकर खड़ा

वरमुन बॆरुगु रावणु मस्तकमुलु । गरमरुदार नॊक्कट द्रुंचुकॊऱकु
गडगि राघवु डंबकमु वाडिसेय । बडबाग्नि निडि नीट बदनिड्डु-
करणि
“र्जिंतिप देव ! ना जीवनंबॆंत । यिंतियेका” कनियॆंडु भंगिदोप; ९२०

समुद्रुडु रामुनि ब्रार्थिंचुट

नासमुद्रुंडप्पुडखिलंबु जूड । भासुररत्न प्रभाभासुडगुचु
ब्रज्वरिल्लॆडु पॆनुबडगलतोड । नुज्ज्वलदहिकोटि यॊक्कट गॊलुव
गंगादिनदुलॆल्ल गदिसि तो नडव । मंगळबहुपुष्पमालिकल् मॆऱय
दलबूनि जलचरततुलोलि नडव । जलनिधि सनुदॆंचि साष्टांगमॆऱगि
करपद्ममुलु मॊड्चि कडुसंभ्रममुन । नरवराग्रणिकि सन्मति विन्नविंचॆ,
“नेनु मीयलुककु नॆंतटिवाड ? । भूनाथ ! नी वादिपुरुषोत्तमुडवु;
वायु भू जल नभो वह्नु लादिगनु । नीयाज्ञलोनिवि निक्कुवंबरय;
नीयंदुनुन्नवानिकि लॆक्कलेदु; । नीयधीनंबुलु निखिललोकमुलु;

रह गया । वह ऐसा लग रहा था मानों वर (के प्रभाव) से बढ़नेवाले रावण के मस्तकों को आधिक्य से एक साथ काट डालने के लिए, सयत्न राघव ने अंबक (बाण) को पैना करने के लिए, बड़बाग्नि में रख (तपाकर), फिर पानी में डुबोया तो उसकी छोर पर स्थित जलबिन्दु के समान हो वह (समुद्र) यह कह रहा हो कि “हे देव ! सोचने पर मेरा जीवन (अस्तित्व) इतना ही तो है न ।” ॥ ९२० ॥

समुद्र का राम से प्रार्थना करना

तब वह समुद्र अखिल (समस्त जीव कोटि) के देखने पर (समक्ष), भासुर-रत्नप्रभा-भासमान होते हुए, प्रज्वलित होनेवाले बड़े-बड़े फणों से उज्ज्वल बने अहिकोटि के सेवाएँ करते रहने पर, गंगा आदि नदियों के निकटता से साथ-साथ चलने पर, मंगल(-प्रद)-बहु-पुष्पमालिकाओं के विलसित होने पर, आगे-आगे जलचरततियों के क्रम से चलते रहने पर, जलनिधि (समुद्र) ने आकर, साष्टांग प्रणाम कर, करपद्म जोड़कर, अधिक संभ्रम से सन्मति से नरवराग्रणि (राज श्रेष्ठ) से निवेदन किया—“मैं आपके क्रोध के लिए कितना हूँ ? हे भूनाथ ! तुम आदि पुरुषोत्तम हो। वायु, भू, जल, नभ, वह्नि आदि सच पूछें तो तुम्हारी आज्ञा के अन्तर्गत हैं। तुम्हारे भीतर जो हैं, उनकी कोई गिनती ही नहीं है। अखिल लोक

तप्पुसेसिति ननि दंडिंपवलदु; । चॆप्पुमे पनियैन जेसॆद गानि"
यनि विन्नपमु सेय नंत नारामु । गनुगॊनि यप्पुडा गंगादिनदुलु
९३०
धर शिरम्मुलु म्रोव दंडमुल् वॆंट्टि । करमुलु फालभागमुननु जेर्चि
"शरणार्थुलमु राम! जगदभिराम! । करुणिंपवे मम्मु गरुणासमुद्र !
यभयंबु वॆडॆदमय्य ! यिदऽमु; । नभिनवंबुगनु नी यब्धीशु गाचि
शुभगति मंगळसूत्रमुल् निलुपु । त्रिभुवनाधीश्वर ! दीनमंदार !
यपराधुलनु गाचुटदियॆ नीगुणमु; । कृप जूचि रक्षिंचु गीर्वाणवंद्य !
नीमहिमल नॆंच नेरवु श्रुतुलु । नेमॆंतवारल मिट मिम्मु बॊगड?
देवतामयुडवु, देवदेवुडवु, । कावनु ब्रोवनु गर्तवु नीव;
भूमीश ! लोकेश ! भूरिप्रकाश ! । भूमिसुताधिप ! पुण्यस्वरूप !"
यनि यिट्लु नदुलॆल्ल नभिनुतुल् सेय । विनि यप्पुडारामविभुडु वारलनु
मन्निंचि "भययॆल्ल मानु" डटन्न । नन्नरनाथुन कब्धि यिट्लनियॆ,
९४०
"सरसिजोदर! मौनिजननुतचरण! । शरणागतार्तरक्षक ! दिव्यमूर्ति !

तुम्हारे अधीन हैं। अपराध किया, इसलिए दण्डित मत करो, कहो तो कोई भी काम कर दूँगा।" ऐसा निवेदन करने पर उस राम को देखकर, तब गंगा आदि नदियों ने— ॥ ९३० ॥

—धरा पर सिर नवाकर, प्रणाम कर, हाथ फालभाग पर जोड़कर, कहा— "हे राम ! जगदभिराम ! शरणार्थी हैं (हम)। हे करुणासमुद्र ! हम पर करुणा दिखाओ न। हे तात ! इतने सब अभय की प्रार्थना करती हैं। अभिनव रूप से इस अब्धीश (समुद्रराज) की रक्षा कर, शुभगति से (हमारे) मंगलसूत्र (सौभाग्य का चिह्न) की रक्षा करो। हे त्रिभुवनाधीश्वर ! हे दीनमन्दार ! अपराधियों की रक्षा करना ही तुम्हारा गुण है। हे गीर्वाणवन्द्य ! कृपा से देखकर रक्षा करो। श्रुतियाँ भी तुम्हारी महिमाओं की गिनती नहीं कर सकतीं। तुम्हारी स्तुति करने के लिए हमारी क्या सामर्थ्य है ? (तुम) देवतामय हो, देवदेव हो, रक्षा करने तथा पालन करने के लिए कर्ता तुम्हीं हो। हे भूमीश ! हे लोकेश ! हे भूरि प्रकाश (वाले) ! हे भूमिसुता-अधिप ! हे पुण्यस्वरूप !" कहकर इस प्रकार समस्त नदियों के अभिनुतियाँ करने पर, सुनकर तब विभु राम ने उन्हें मानकर, कहा—"समस्त भय से विरत होइए"। (तब).उस नरनाथ से अब्धि (समुद्र) ने यों कहा— ॥ ९४० ॥

"हे सरसिजोदर ! हे मौनिजन-नुतचरण (वाले) ! हे शरणागतआर्तरक्षक !

तरुचरसेन युद्धति नेगुनपुडु । गरिमकरादुल गदलंग नीय;
नुप्पोंगि कय्यल कौत्ति वेलिवरिय; । दप्पि झंझामारुतमु जूचि म्रोय;
गडलेक मिगुल नगाधमैयुंडु । सुडि वोंडमिप; नासोंपु वाटिप;
नलरि सेतुवु गट्टियैननु नडवु; । मलघुविक्रम ! यूरकैननु नडवु"
मनिन राघवुडमोघास्त्र मब्धीशु । पनुपुन मरुभूमिपै ब्रयोगिंचि
विलसिल्लु नायंपवेडिमिचेत । सोलव कंदुलनीरु शोषिप जेसि
यामरुभूमि कुदात्तुडै सर्व । कामसमग्रंबुगा वरंबिच्चे;
नदि मरुदेशमै यंतनुंडियुनु । वदलक यस्साड्कि वर्तिचुचुंडे;
मगुडे दूणिकि नंत मनुजेशु शरमु; । तग नब्धि पूर्वविधंबुन नुंडे। ९५०
नप्पुडंभोनिधि यनियें राघवुन । कुप्पोंगु नयमुन नोप्पु वाक्यमुल,
"जगति मीपूर्ववंशजुलैनयट्टि । सगरुलु सेयंग सागरंबनग
बरगिनवाड भूपालक ! येनु । मरियुनु मीकुनु मान्युंड विनुमु;
मीतंड्रि दशरथमेदिनीश्वरुडु । दैतेयदेवयुद्धमुन बेंपोंदि
नन्नयोध्यकु गोनि नरनाथ ! पोयि । मन्निचि यप्पुडु मगुड वीड्कोंलिपि
पुत्तेर वच्चिचति भूतलाधीश ! । यित्तेरंगुन मीकु ने दक्किनाड;

हे दिव्यमूर्ति (वाले) ! जब तरुचर सेना उद्धत (गति) से जाती रहेगी (तब) करि मकर आदियों को हिलने नहीं दूँगा । उमड़कर कुल्याओं में बढ़कर बाहर नहीं निकलूँगा । भटककर झंझामारुत को देख गरजूँगा नहीं । अतल हो, अत्यन्त अगाध भँवरों की सृष्टि नहीं करूँगा । अपनी शोभा का प्रदर्शन नहीं करूँगा । हे अलघुविक्रम (वाले) ! प्रेम से सेतु बाँधकर ही चलो या यूँही चले जाओ ।" (ऐसा) कहने पर राघव ने अब्धीश की आज्ञा से अमोघ-अस्त्र का मरुभूमि पर प्रयोग किया । विलसित उस बाणाग्नि से, वहाँ के समस्त जल को सुखाकर, उदात्तता से उस मरुभूमि को सर्व-कामद (इच्छा तत्त्व की) समग्रता का वर दिया । तब से लेकर वह मरुदेश हो, उस प्रकार प्रवर्तित होता रहा । तब मनुजेश का शर फिर तूणीर में लौट आया, अब्धि भी पूर्व विधि से रहा । ॥ ९५० ॥

तब अंभोनिधि ने राघव के प्रति फूलते हुए नीति से शोभित वाक्य कहे—"हे भूपालक ! जगत् में आपके पूर्वज सगरों द्वारा बनाया जाकर सागर के नाम से विख्यात हूँ । मैं आपके लिए और भी मान्य हूँ । हे नरनाथ ! आपके पिता दशरथ-मेदिनीश्वर (राजा) दैतेय-देव युद्ध में अधिक प्रेम से मुझे अयोध्या को ले जाकर, सम्मान कर, तब फिर बिदा कर भेजने पर हे भूतलाधीश ! इस प्रकार मैं आपके हाथों आ गया हूँ ।

दौरकनि कट्टु सेतुवु राघवेंद्र ! । तरुचरसेन नुद्धति नडपिंपु ।"
९५७

सेतुवु गट्ट श्रीरामुडु सुग्रीवु नाज्ञापिंचुट

मनवुडु राघुरामुडर्कजु जूचि । "पनुपु सेतुवु गट्ट ब्लवगपुंगवुल
रयमुन" नन विनि रविनंदनुंडु । प्रियमुन बनिचे वाधिनि गट्ट गपुल;
जनिरंगदुंडुनु जांबवंतुंडु । घनुलैन यानील गजगवाक्षुलुनु ९६०
बनसुंडु नलुडुनु बावकनेत्तु । डुनु दपनुडु दारुडुनु गवयुंडु
गरमौप्प ऋषभुडु गंधमादनुडु । शरभुंडु द्विविदुंडु शतबलि मेटि
हरि रोमवक्षुंडु नट सुषेणुंडु । सौरिदि गेसरियुनु ज्योतिर्मुखुंडु
दधिमुखुंडुनु वेगदर्शियु मरियु । नधिकुलु ब्लवगसेनाधिपु लेल्ल
म्राकुलु गौंडलु सल्लडिगौनग । वीकतो गौनिवच्चि बिषधिलोवैव
नौकटियु नीटिपै नुंडक मुनुग । विकलुलै कपुलेल्ल वेऽरगंदि वच्चि,
पतिकि जेप्पुटयु भूपति यात्मलोन । नतिविस्मयंबंदि यब्धि किट्लनियॆ
"निदियेमि कपिवीरुलीभंगि देच्चि । वदलक तरुलु बर्वतमुलु वैव

हे राघवेन्द्र ! लगकर सेतु का निर्माण कीजिए और उद्धतगति से तरुचरसेना को चलाइए ।" ।। ९५७ ।।

सेतु बाँधने के लिए श्रीराम का सुग्रीव को आज्ञा देना

ऐसा कहने पर रघुराम ने अर्कज को देख (कहा)—"सेतु बाँधने के लिए प्लवग-पुंगवों (वानर श्रेष्ठों) को शीघ्र बुला भेजो ।" (ऐसा) कहने पर रविनन्दन ने प्रेम से सेतु बाँधने के लिए कपियों को भेजा । (तब) अंगद, जाम्बवान्, महान् बने वे नील, गज, गवाक्ष, ।। ९६० ।।

—पनस, नल, पावकनेत्र, तपन, तार, गवय, अधिक शोभायुक्त ऋषभ, गन्धमादन, शरभ, द्विविद, शतबलि, श्रेष्ठ हरि, रोमवक्ष, सुषेण, क्रम से केसरी, ज्योतिर्मुख, दधिमुख, वेगदर्शी और भी सभी प्लवग सेनाधिपति, वृक्षों पर्वतों को (आपस में) खींचा-तानी करते हुए, बेपरवाही से ले आकर, विषधि (समुद्र) में डाल देने पर, (उनमें) एक भी पानी पर न रहकर, डूब जाने पर व्याकुल हो, समस्त कपि आश्चर्य-चकित हो, आकर पति (राजाराम) से बोले । (बोलने पर) आत्मा में अतिविस्मित होकर (उन्होंने) अब्धि से यों कहा—"यह क्या ? कपिवीरों के इस प्रकार लाकर लगातार तरु और पर्वतों को डालने पर, एक भी जल पर टिक नहीं रहा है ।" (ऐसा) कहने पर सकलाधिपति (राम) से उस जलधि ने यों

नौकटियु नीटिपै नुनिकिले" दनिन । सकलाधिपतिकि नाजलधि
यिट्लनियें:
"बरमेश! विनुमु लोपलि कवि वोव । बौरिबौरि जलचरंबुलु म्रिंगु
वानि; ९७०
नमरंग शतयोजनायतंबगुचु । दिमि यनु मत्स्यंबु दिरुगुचुनुंडु
मिंगु ना मीनु दिमिगलंबौकटि । म्रिंगु ना मत्स्यंबु मिंगुल दद्गिलमु;
निट्टुवलें नौंडोंटि नेऱगोंनुचुंडु । चटुलसत्त्वंबु लसंख्यमुल् देव!"
यन विनि "यिट्टि महांबुधिगट्ट । ननुवेदि, चेंप्पवे यब्धीश!" यनुडु
"निनकुलाधीश्वर ! यीनलु वंपु; । घनुडैन याविश्वकर्मनंदनुडु
भानुकुलेश ! युपायज्ञुडितडु; । दानु नैंतयु दम तंड्रिचे नेर्चें;
वडि वानिचे दप्प वननिधि गट्टु । वड; ददि यैट्लन्न ? वसुधेश !
विनुमु:
शिशुवेळ विंध्याद्रिचेरुव यडवि । बशुकण्वुडनुमुनि पज्ज नाडुचुनु
मुनि यनुष्ठानमिम्मुल जेय बोव । मुनिवेल्पुलनु बट्टि मोरतोपुननु
वनधिलोपल बाऱवैंचें नीनलुडु; । चनुदेंचि यम्मुनि चय्यन नैंरिगि
९८०
चालंग गोपिंचि शास्ति गाविप । बालुंडु दगडनि परग जिंतिंचि

कहा—"हे परमेश ! सुनो, उनके (जल के) भीतर जाने पर जलचर क्रम से उन्हें निगल जाते हैं ।। ९७० ।।

बड़ी शोभा से शत-योजन-आयत (विशाल) होते हुए तिमि नामक मत्स्य घूमता रहता है। उस मछली को एक तिमिंगल निगल जाता है। उस मत्स्य को तद्गिल निगल जाता है। हे देव ! इस प्रकार चटुल सत्त्व वाले असंख्य (जलचर) एक-दूसरे को खाते रहते हैं।" (ऐसा) कहने पर सुनकर (राम ने) पूछा—"हे अब्धीश ! इस महांबुधि पर (सेतु) बाँधने का उपाय बताओ न।" ऐसा कहने पर (समुद्र ने कहा)—"हे इनकुलाधीश्वर ! महान् विश्वकर्मा के नन्दन (पुत्र) उस नल को भेजिए। हे भानुकुलेश ! वह उपायज्ञ है। उसने स्वयं भी अपने पिता से सीख लिया है। उसके सिवा और किसी से वननिधि बाँधा नहीं जा सकता। वह कैसा है ? हे वसुधेश ! सुनो। शिशुता के समय विन्ध्याद्रि के पास कानन में पशुकण्व नामक मुनि के समीप खेलते हुए, मुनि के प्रेम से अनुष्ठान के लिए जाने पर, मुनि के देवता-विग्रहों को हाथ में ले इस नल ने वनधि में डाल दिया। आकर, उस मुनि ने इस विषय को झट जानकर, ।। ९८० ।।

—अधिक क्रुद्ध हो, दण्डित करने की सोचकर, (दण्ड देने के लिए) यह

तन सौम्मु पोकुंड दानै तेच्चुटकु । ननुवु जिंतिचि यायर्भकु जूचि
तन तपोमहिम नत्तापसोत्तमुडु । घनतरंबगु नोक्क कट्टड सेसे;
"दोयधिलोपल दृणमादिगाग । बायक वीडेमि पट्टि वैचिननु
नवि तेलुगा" कनि यावरंबीय । नवि यंतलो देल नतडु गैकोनिये;
नदिगान देलेंडु नतनिचे गिरुलु; । वदलक ने गट्टुवडियेदनपुडु;
धरणीश! यीवार्धि दग गट्टुनंत । कुरुभक्तियै गोलिचि युंडेद; नलुनि
रप्पिपु" मनवुडु रघुकुलोत्तमुडु । रप्पिचि यत्यादरंबुन जूचि९८८

सेतुबंधनमु

"यो वनचरवीर! यो महाधीर ! । नीविक्रमंबेल्ल नीरधि सेप्पे;
मानुग निप्पुडु महिम सूपुचुनु । बूनिक गपुलचे बोंकंबु मीर९९०
दरुगिरुलंदरु दार तेरगनु । वेरवोप्प नसदृशविद्य येर्पडग
गट्टु मंभोराशि गडकतो नीवु । नेट्टन नीलावु नेर्पुन मेरसि"
यनवुडु गरमुगंबर्थितो मोगिचि । विनयंबुतो रामविभुनकु ननिये:
"नुर्विपै नेनिट युदयिंचुटकुनु । नुर्वीश ! कलिगे ब्रयोजनंबिपुडु

बालक उपयुक्त नहीं है, ऐसा खूब सोचकर, अपनी खोई सम्पत्ति (वस्तुओं) को स्वयं लाने का उपाय सोचकर, उस अर्भक को देखकर, अपनी तपोमहिमा से उस तापसोत्तम ने एक महान् नियम बनाया। तोयधि में तृण आदि कुछ भी पकड़कर यह डाल दे तो वे (जल के ऊपर ही) तैरते रहेंगे।" ऐसा वर देने पर, उतने में ही उनके (देवमूर्तियों के) ऊपर आने पर, उन्हें ले लिया। हे धरणीश! इस वारिधि को ठीक ढंग से बाँधने तक मैं उरु (अधिक) भक्ति के साथ रहूँगा। नल को बुला भेजिए।" ऐसा कहने पर रघुकुलोत्तम ने (उसे) बुलाकर, अत्यादर से देखकर, ॥ ९८८ ॥

सेतु बन्धन

"हे वनचरवीर! हे महाधीर! नीरधि ने तुम्हारा समस्त विक्रम कहा है। स्थिरता से अब महिमा का प्रदर्शन करते हुए, सप्रयत्न कपियों से, सुघड़ाई की अधिकता से, ॥ ९९० ॥

—उन सबके तरु-गिरियों के लाने पर, उपाय से, असदृश विद्या को बताते हुए साहस से अपनी सामर्थ्य (तथा) कौशल प्रकाशित करते हुए (अंभोराशि (पर बाँध) बाँध दो।" ऐसा कहने पर, इच्छा से करयुग जोड़कर, सविनय रामविभु से कहा—"हे उर्वीश! उर्वी (पृथ्वी) पर यहाँ मेरे जन्म

देव! यीजलधि बंधिचेद बनुपु । मावॆरवॆल्ल नेनट तंड्रिचेत
धारुणीतलनाथ! तग नेर्चिनाड; । नारय देवर यानति जेसि
नानेर्पु मीयॊद्द नरनाथ ! चॆप्प । गानेल ? यिपुडु सागरमु बंधिचि
चॆच्चॆर देवरचित्तंबु वडसि । मॆप्पिंचुवाड; नम्मिक बंपु'' मनुडु
नलिनाप्तकुलमणि नलुनि बंचुटयु । नलुनितोगूड वानरसेनलॆल्ल
नेलयु निंगियु निखिलदिक्कुलुनु । वालिनयार्पुल ब्रय्य जेयुचुनु १०००
नायॆड शैलवृक्षावळि दॆच्चि । तोयधि गट्ट नुद्योगिंचिरपुडु;
रामचंद्रुंडनु राजु गणेशु । दा मदिलोपल दलचि म्रॊक्कुचुनु
नरयोजनंबॆन यद्रि सुग्रीवु । डुरुवडि गॊनिवच्चि युर्वि गंपिंप
गलयंग देवतागणमुलु वॊगड । नलवुन दॊलुदॊल्त नलुचेतिकिच्चॆ;
दॊरकॊनि नलुडुनु दोयधियंदु । वॆरवार निलिपॆ नाविपुलशैलंबु
दनचेयु सेतुबंधमुनकु रामु । ननुपमकीर्तिकि नाविभीषणुनि
विनुतपट्टमुनकु विशदप्रभाति । दनरारु शासनस्तंभंबु माड्कि;
नंत वानरकोटि याशावितान । मंतयु दानयै यद्रुलु दरुलु
नवलील बॆरुकुचु नवि दॆच्चि नलुन । कवसरोचितमुग नंदियिच्चुचुनु,

लेने का प्रयोजन अब सम्पन्न हुआ है। हे देव ! आज्ञा दो, इस जलधि को बाँध दूंगा। हे धरणीतलनाथ ! वह सारा उपाय मैंने पिता से ढंग से सीख लिया है। आपके आदेश पर विचार कर, अपनी कुशलता के बारे में हे नरनाथ ! आपके समक्ष क्यों कहूँ ? अब सागर को बाँधकर शीघ्र देव के चित्त को प्रसन्न करूँगा। (मुझपर) विश्वास रख भेजिए।" (ऐसा) कहने पर, नलिनाप्त-कुल (सूर्यवंश)-मणि ने नल को भेजा। नल के साथ समस्त वानर सेनाओं ने पृथ्वी, आकाश, समस्त दिशाओं को (अपनी) व्याप्त गर्जनाओं से फाड़ देते हुए ॥ १००० ॥

—उस अवसर पर, शैल-वृक्ष-अवली लाकर, तब तोयधि को बाँधने का उद्योग किया; रामचन्द्र नामक राजा का (तथा) गणेश का मन में स्मरण कर, प्रणाम किया। सुग्रीव ने आधा योजन वाले अद्रि (पर्वत) को अतिशीघ्रता से लाकर, उर्वी (पृथ्वी) के कम्पित होने पर, परिव्याप्त देवतागणों के सराहने पर, सरलता से प्रथम नल के हाथ में दिया। लगकर नल ने भी तोयधि में उस विपुल शैल को ढंग से रख दिया। मानों वह अपने सेतुबन्धन कार्य के लिए, राम की अनुपम कीर्ति के लिए, उस विभीषण के विनुत राज्याधिकार के लिए विशद प्रभा से युक्त, विलसित शिलास्तम्भ था। तब वानर-कोटि समस्त आशावितान में व्याप्त होकर, अद्रि एवं तरुओं को आसानी से उखाड़कर, उन्हें लाकर नल को आवश्यकतानुसार देते हुए,

ऒककॊंडपैनुंडि यॊककॊंडपैकि ।ब्रकटजवंबुलॊप्पंग दाटुच्चुनु, १०१०
गॆरलुचु नॊककॊन्नि गिरुलॆत्ति यार्चि । गिरुल क्रिंदुग बॆल्लगिलगवैचुचुनु
गॊंडलु तलकॆत्ति गुनिसियाडुचुनु । दॆंडनि कॊंदऱ दिट्टि नव्वुचुनु
गॊंडपै गॊंड याकॊंडपै गॊंड । यॊंडॊंड यवि डॊल्लकुंड बॆर्चुचुनु
निम्मुल शैलंबु लिरुचेतुलंदु । निम्मपंडुलमाड्कि निगुडवैचुचुनु
नॊकडु कॊंडलु मोचि युरुवडिराग । नॊकडवि पडद्रोचि युब्वि
नव्वुचुनु
दाटि याकॊंड लुद्दंडत बट्टि । मीटुदुना नीवु मॆच्चंग ननुचु
नीतरु लीगिरुलित वेगमुन । वैतुना यानलुवद्दकु ननुचु
ननि बासलिच्चुचु नग्गिचुकॊनुचु ।वनचरु लिब्भंगि वडि दॆच्चि तॆच्चि
तरुवुलु नगमुलु दन किच्चुचुंड । दॊरकॊनि नलुडु सेतुवु गट्टदॊडगॆ
मुंदटिचंदमै मुनुगक युंडॆ । नंदॊक्कटैननु नंबुधिलोन; १०२०
नट्टिचंदंबुन नाकपिकोटि । गट्टॆनु; गटकटा ! कष्टजीवनमु
गलिगॆना ना कनि कलगिनमाड्कि । गलगि यंबुधि हल्लकल्लोलमय्यॆ;
नलुडु निम्मॆयि बदुनाल्गुयोजनमु । ललवड दॊलिनाडॆ यब्धि बंधिचॆ;

एक पहाड़ से दूसरे पहाड़ पर प्रकटित जब (वेग) के शोभित होने पर, उछलते हुए, ।। १०१० ।।

—उल्लसित होते कुछ गिरियों को उठाकर, चीखकर, गिरियों को समूल उखाड़ डालते हुए पर्वतों को सिर पर ले इठलाते, कुछ (अन्य वानरों) से लाओ कहकर, हँसते हुए, एक पर्वत पर दूसरा पर्वत, उस पर्वत पर दूसरा पर्वत—परस्पर न लुढ़कें ऐसा सजाते हुए, सुन्दरता से दोनों हाथों से शैलों को नींबू के फलों के समान उछालते हुए, किसी के पर्वतों को ढोते हुए अति वेग से आने पर, दूसरा (कोई) उन्हें गिराकर फूलकर हँसते हुए, यह कहते कि इन पहाड़ों को उद्दण्डता से पकड़ फेंक दूँ जिसे तुम सराहो, यह कहते कि इन तरुओं, इन गिरियों को इतने ही वेग से उस नल के पास फेंक दूँ, इस प्रकार के वचन कहते, प्रशंसा करते, वनचर इस तरह झट ला-लाकर, तरु (और) नगों को अपने को देते रहने पर, लगकर नल सेतु बाँधने लगा तो पूर्व की तरह उनमें से एक भी अंबुधि में डूबे बिना रहा। इस तरह से उस कपिकोटि ने (सेतु) बाँध दिया। ।। १०२० ।।

हाय ! विकल हो अंबुधि क्षुब्ध हुआ मानों यह सोच विकल हो गया हो कि मुझे यह कष्ट-जीवन (विपत्तियों का समय) प्राप्त हुआ है। नल ने इस प्रकार पहले ही दिन चौदह योजन तक अब्धि पर (सेतु) बाँध दिया। तब सूर्य अस्त हुआ। वलीमुख (वानर) उस सेतु के लिए

नंत सूर्युडु ग्रुंकॆ; नासेतुवुनकु । नॆंतयु बलुकापुलिडि बलीमुखुलु
वच्चि वेलमुल निवासदेशमुल । जॊच्चि यॆंतॆनियु सॊंपुतो नुंड१०२५

चंद्रोदय वर्णनमु

गृतकृत्युडगु रामु कीर्तिपुष्पमुलु । चतुरतमै वेदचल्लिनयट्लु
करमॊप्प जुक्कलु गापिंचॆ मिंट; । वरकळायति सीम वलराजु माम
पॊलुपॊंदु कलुवल पॊरानि विंदु । कलसिन जक्कवकव बापु मंदु
पालवॆल्लिनि द्रच्चि पडसिन वॆन्न । शूलि यौदलपुव्वु चुक्कलनव्वु
नॆऱिचकोरमुलकु नॆलनॆलपंट । युऱवेदि विरहुल नुडिकिंचु मंट१०३०
गगनंबुतोडवु दॊंगलगुंडॆदिगुलु । नॊगि नब्धि बॊंगिचु नूऱटपट्टि
हरिहरब्रह्मल यानंदसृष्टि । सरसिजरिपुडैन चंद्रुडु वॊडिचॆ?
निनुपारि कलशांबुनिधि वॆल्लिविरिसॆ । ननग वॆन्नॆल वर्वॆ नट निद्रलेक
"यॆन्नडॊको सेतुवेमु गट्टॆदमु ? । ऎन्नडॊको लंक येमु सूचॆदमु ?
ऎन्नडॊको दानवेंद्रुंडु गूलु ? । नॆन्नडोकी सीता यी रामु गूडु ?
नॆप्पुडु वेगुनो यीरेयि यिंक ? । नप्पुडे वच्चिचति मात्मलो सॊलसि

अधिक पहरा नियुक्त कर, आकर (समुद्र के) तटस्थ (तीर पर के) निवास-प्रदेशों में प्रवेश कर अत्यन्त शोभा से रहे ॥ १०२५ ॥

चन्द्रोदय का वर्णन

कृतकृत्य बने राम के कीर्ति-पुष्पों को चतुरता से बिखेर दिये हों, इस प्रकार बड़ी शोभा से आकाश में तारे दिखाई पड़े। श्रेष्ठ कलाओं की सीमा (पूर्णता), मन्मथ का मामा, सुशोभित कुमुदों का बन्धु, जुड़े हुए चक्रवाक की जोड़ी को अलग कर देनेवाला औषध, क्षीरसागर का मन्थन कर प्राप्त किया नवनीत, शूली (शिव) का शिरोपुष्प, नक्षत्रों का हास, सुन्दर चकोरों को आनन्द प्रदान करनेवाला, रूप खोये विरहियों को तपाने वाली ज्वाला— ॥ १०३० ॥

—गगन का आभूषण, चोरों के हृदय की चिन्ता, क्रम से अब्धि को उत्तेजित करनेवाला प्रियपुत्र, हरिहर ब्रह्माओं की आनन्द-सृष्टि, (और) सरसिज-रिपु चन्द्र उदित हुआ। ज्योत्स्ना इस प्रकार छिटक गई मानों कलशांबुनिधि (क्षीर-सागर) शोभा से द्विगुणित हो व्याप्त हो गई हो। उधर वानर निद्रा के अभाव में (सोचने लगे)—"कब हम सेतु बाँध देंगे ? कब लंका को हम देख लेंगे ? दानवेन्द्र कब (मर) गिरेगा ? कब सीता राम से मिलेगी ? इस रात का अब कब सवेरा होगा ? मन से थककर अभी आ गए थे। रात भर वहीं

येल वच्चितिमि रेयॆल्ल नंदुंडि । योलि सेतुवु गट्टुचुंडक मनमु"
अनुचु नव्वानरुलंदरु नट्लु । मनमुन जिंतिचि मक्कुवल् दक्कि
यारेयि गडिपि संध्याविधुल् दीर्चि । चारुतरंबुगा सकलवानरुलु
नॊंडॊरु जीरुचु नुत्साह मॊप्प । नॊंडॊरु गडवंग नुरुबडितोड १०४०
बृथिवीधरंबुलु पृथिवीजमुलुनु । बृथुलसत्त्वंबुन बॆरिकि वे तॆच्चि
यंबुधिलो वैव नपुडु सुग्रीवु । डंबरवीथिकि नरिगि वेगमुन
वेरवारगा बट्टि विंध्याद्रिशिखर । मरयोजनमु निडुपैनदि तॆच्चि
यासुषेणुनि चेति कंदियिच्चुटयु । नासुषेणुं डिच्चॆ नानलुनकुनु;
दारासुतुंडुनु दर्दुरशैल मारूढगति । दॆच्चि यब्धिलो वैचॆ;
मलयाद्रिशृंगंबु म्राकुलतोड । नलुनकु नीलु डुन्नतगति निच्चॆ;
द्विविदुंडु मैंदुंडु दॆच्चि यावार्धि । गवगूडि वैचिरि ग्रावंबु लॆत्ति;
गजुडु गवाक्षुंडु गंधमादनुडु । भुजवलाढ्युलु शरभुडु गवयुंडु
निल चलियिंप महेंद्राद्रिशिखर । मुलु दॆच्चि वैचिरि मुन्नीटिलोन;
नवि यॆल्ल मुनुगनी कंटि नलुंडु । तविलि यंबुधि गट्टॆ; दरुचरुलिट्लु
१०५०
प्रकटिंचि तॆच्चु पर्वतमुलु दरुलु । नॊककेल नंदि पयोनिधियंदु

रहकर, क्रम से सेतु बाँधते न रहकर, हम (वहाँ से) क्यों आ गए ?" ऐसा वे सभी वानर मन में उस प्रकार सोचते हुए, प्रेम-विहीन होकर, वह रात बिताकर, संध्या विधियों से निपटकर, चारुतर रूप से सभी वानर, एक दूसरे को पुकारते हुए, उत्साह के विलसित होने पर, एक-दूसरे को मात करने के लिए अत्यन्त वेग से, ॥ १०४० ॥

—पृथ्वीधरों (पर्वतों) और पृथ्वीजों (वृक्षों) को पृथुलसत्त्व से उखाड़ शीघ्र ला, अंबुधि में डाल दिया। (उस समय) सुग्रीव अंबर वीथि में जाकर, वेग से, उपाय से पकड़कर, आधे योजन की चौड़ाई वाले विन्ध्याद्रि-शिखर को लाकर, उस सुषेण के हाथ में देने पर, उस सुषेण ने (उसे) नल को दिया। तारासुत (अंगद) ने भी आरूढ़ गति से दर्दुर शैल को लाकर अब्धि में डाल दिया। नील ने उन्नतगति से वृक्षों सहित मलयाद्रि श्रृंग नल को दिया। द्विविद (तथा) मैन्द ने ग्रावों (चट्टानों) को उठाकर एक साथ उस वारिधि में डाल दिया। गज, गवाक्ष, गन्धमादन, भुजबल में आढ्य (धनी) शरभ (तथा) गवय ने पृथ्वी विचलित हो उठे, इस तरह महेन्द्राद्रि के शिखर लाकर गहरे पानी में डाल दिये। उन सब को डूबने न देकर, स्पर्श कर, नल ने अंबुधि (पर बाँध) बाँध दिया। इस प्रकार तरुचर, ॥ १०५० ॥

—प्रकट रूप से लानेवाले पर्वत (तथा) तरुओं को एक हाथ में ले पयोनिधि

नुनुपंग गनुगोनि युग्रकोपमुन । गनलुचु बलिमिमै गरुवलिसुतुडु
चय्यन नेडुयोजनमुल कोंड । नय्येंड गोनितेर नदि रामु डेऱिगि
यनयंबु निरुगेल नंद ननुज्ञ । योनरिप नट्लने योनरिंचे नतडु।
वप्पुडु कपिसेन यार्पुल म्रोत । युप्पोंगि वाराशि युब्बेडिम्रोत
तरुगिरु लोंडोंटि दाकेडु म्रोत । तरुचरु लोंडोरु दग बिल्चु म्रोत
कुदिसि भूतंबुलु घोषिंचु म्रोत । वदलि दिग्गजमुलु वापोवु म्रोत
कडुनग्गलंबुगा गगनंबु मुट्टि । युडुगक पेल्लैन युलिवु चिंतिप
बृंदारकासुरबृंदंबु लेत्ति । मंदरगिरि वैचि मथियिंचुनाटि
यमृताब्धिम्रोतयो यनग नाम्रोत । कमलभवांडदिक्तटमुलु निंडे;
१०६०

नंतट मध्याह्नमैन वानरुलु । श्रांति नोंदुटकु वृक्षंबुलु सेरि
पलुदेऱंगुल मंचि फलमुलु नमलि । नेलवुल जल्लनि नीळ्ळोप्प द्रावि
नीडल नोक्किंत निलिचि क्रम्मऱनु । वेडुक रेट्टिंप वेगंबु मिगुल
"नाकोंड लेत्तिते नरुगुडु गोंद; । ईकोंडलनु गोंदरेत्ति तें" डनुचु
बेक्कैन तरुवुलु वेक्कैन गिरुलु । बेक्कुमोत्तंबुलु बेक्कुव देच्चि

में रख देते देख, उग्रकोप से जलते हुए बल (सारी शक्ति) से पवनपुत्र, झट सात योजन वाले पर्वत को उस अवसर (या स्थान) पर लाया। उसे जानकर, उसे सदा दोनों हाथों से लेने (नल को) आदेश देने पर, उसने वैसा ही किया। तब कपिसेना के गर्जनों की ध्वनि, उफन कर वाराशि के फूलने की ध्वनि; तरु-गिरि के परस्पर टकराने की ध्वनि, तरुचरों के आपस में एक-दूसरे को बुलाने की ध्वनि, सिकुड़कर भूतों के घोष की ध्वनि, (अपने स्थान से) विचलित हो रुदन करनेवालों दिग्गजों की ध्वनि, (इन सबके) बहुत अधिक हो, गगन को स्पर्श कर, (वहाँ) न रुक उस ध्वनि के और अधिक हो जाने के कारण वह ध्वनि बृन्दारक-असुरों के जुटकर, मन्दरगिरि को (समुद्र में) डालकर मन्थन करते समय अमृताब्धि में उत्पन्न ध्वनि के समान हो, कमलभवांड (ब्रह्माण्ड)-दिक्तटों में भर गया। ॥ १०६० ॥

तब मध्याह्न होने से वानर विश्रान्ति लेने वृक्षों (के तले) पहुँचकर, अनेक प्रकार के अच्छे फल चबाकर, सरोवरों के ठण्डे पानी को शोभा से पीकर, छायाओं में थोड़ी देर ठहरकर, फिर से उत्साह के द्विगुणित होने पर, (कार्य में) वेग के अधिक होने पर, यह कहते कि "उन पहाड़ों को उठा लाने के लिए कुछ (लोग) जाओ, इन पहाड़ों को कुछ उठा लाओ", असंख्य तरुओं, असंख्य गिरियों को, अधिक संख्या में, प्रेम से लाकर, निरन्तर नल

यूरक नलुनकु नौंप्पिचुवारु । वारिधिलोपल वैचेंडुवारु
नट येंदुरेगि पेंल्लंदकोंन्वारु । निट तेंच्चि चेरुव निडियेंडिवारु
नलु डंदिकोंनग वानरुलंदि योंसग । बलुतरुल् गिरुलु निब्भंगिमर्नाडु
नासेतु विरुवदियारुयोजनमु । लीसुन बंधिच्चि; रिनुडंत ग्रुंकें;
नप्पुडु सुग्रीवु डादिगा गपुलु । चेंप्पिरप्पनियेंल्ल श्रीरामुतोड;
१०७०

जेंप्पि वेलमुलकु जेंच्चेंर नरिगि । योंप्पेंडि सुखनिद्र नोंदि याराव्रि
गडच्चुटयुनु रेपकड वलीमुखुलु । वडि नंदरुनु गूडि वारिधि गट्ट
“ने मेमें तेंच्चेंद मेंल्लभूजमुल; । नेमेमें तेंच्चेंद मेंल्ल कोंडलनु”
ननि पारि तरुवुलु नद्रुलु देंच्चि । वननिधिलोपल वडि वैचुवारु
गोंदऱंतयु गनुंगोंनुचुंडुवारु । गोंदरु नीडल गूर्चुंडुवारु
गोंदरु सेतुवु गोंलवेंट्टुवारु । गोंदरु निद्रल गूर्केंडुवारु
गोंदरु तेंलिनीरु ग्रोलेंडिवारु । नंदरु नीक्रिय नलसुलैयुंड
नप्पुडु रवि चंद्रुडै तनु पोंसगें; । नप्पुडिंद्रुडु निंचें नमृतंपुसोन;
नप्पुडु चल्लनै यनिलुड् वीचें; । नप्पुडु सौरभंबानंद मोंसगें;
दरुचरु लंत नुत्साहुलै शैल । तरुवु लंबुधि महोद्धति देंच्चि वैव
१०८०

को देनेवाले, वारिधि में डालनेवाले, सामने जाकर उन्हें (अपने हाथ) लेनेवाले, यहाँ लाकर निकट रखनेवाले, (इस प्रकार) वानरों के कई तरु (और) गिरियों के ला देने पर उन्हें नल (अपने हाथ में) लेता रहा। इस प्रकार दूसरे दिन उस सेतु को ईर्ष्या (स्पर्धा)-वश बीस योजन तक बाँध दिया। तब इन (सूर्य) अस्त हुआ। तब सुग्रीव आदि कपियों ने श्रीराम को समस्त कार्य के बारे में बताया। ॥ १०७० ॥

(श्रीराम से) कहकर निवास स्थानों में शीघ्र जाकर, शोभा से सुख की नींद ली। उस रात के बीतने पर, दूसरे दिन प्रात: सभी वलीमुखों (वानरों) ने मिलकर वारिधि को बाँधना शुरू किया “हमीं समस्त भूजों (वृक्षों) को लाएँगे, हमीं समस्त पर्वतों को लाएंगे।” (ऐसा) कहते (कुछ वानर) दौड़कर, तरु (और) पर्वत लाकर, वननिधि में झट डाल रहे थे, कुछ (वानर) सब कुछ देख रहे थे, कुछ छायाओं में बैठे हुए थे, कुछ सेतु को नाप रहे थे, कुछ निद्रा (के कारण) ऊँघ रहे थे, कुछ निर्मल जल को पी रहे थे। इस प्रकार सभी के आलसी हो रहने पर, तब रवि ने चन्द्र बन, तृप्ति प्रदान की। तब इन्द्र ने अमृत की धारा भर दी। तब शीतल होकर अनिल चला। तब सौरभ ने आनन्द प्रदान

नारभसंबुन कतिभीति नोंदि । वारिधिलोनि जीवंबुलन्नियुनु
देरलुचु नोऱलुचु दिरुग बाऱुचुनु । नेऱियुचु नट दललेत्ति चूचुचुनु
"मुंदटिपगिदि नमोघबाणंबु । म्रंदिप वच्चेनो मम्मेल्ल" ननुचु
दलचि यंतटिलोन दगिलिनभीति । देलिसि सेतुवुगट्टु तेऱगुगा नेऱिगि
मऱि संतसंबुलु मदिलोन गलिगि । वऱलु निजेच्छल वर्तिचुचुंडे;
बंधुरंबुग गपिपतुलु नाडब्धि । वंधिचिरेलमि नेबदियोजनमुलु
रवि ग्रुंके; नंत मर्कटनाथुलेल्ल । नविरळलील संध्यादुलु दीर्चि
"पंतंबु मेऱयंग बदियोजनंबु । लितिय कट्टुट येल्लि यीजलधि"
ननि माटलाडुचु नरिगि वेलमुल । ननुपमलील निद्रानंद मोंदि
युदयावसरमुन नुर्वीशु जेरि । मुदमुन गपियूथमुख्युलु म्रोक्कि १०९०
पनि विन्नपमु सेसि परवसंबोप्प । जनि तरुवुलु महाशैलंबुलेत्ति
मनुपमलीलमै नतिशीघ्रवृत्ति । गोनिवच्चि नलुनकु गोम्मनि योसग

किया। तब तरुचरों (वानरों) के उत्साहयुक्त हो, शैल और तरुओं को लाकर, महा-उद्धति से अंबुधि में डालने पर, ॥ १०८० ॥

—उस कोलाहल से अतिभीति होकर, वारिधि के समस्त जीव (पानी से बाहर) निकलकर, चिल्लाते हुए, फिर भागते हुए, बिखर जाते हुए, उधर सिर उठाकर देखते हुए, यह सोच कि "पूर्व के समान कोई अमोघ बाण कहीं हम सबका वध करने के लिए आया है", इतने में अनुभूत भीति के कारण यह जानकर कि यह सेतु बाँधने का विधान है, फिर मन में आनन्द के होने पर, निज इच्छाओं के प्रकाशित होने पर, विचरण करते रहे। बन्धुरता से कपिपतियों ने उस दिन पचास योजन तक सेतु का निर्माण किया। (तब) रवि का अस्त हुआ। तब सभी मर्कटनाथों ने अविरलगति से सन्ध्या (वन्दन)-आदि से निवृत्त हो, यह कहते हुए कि "अब तो स्पर्धा के प्रकाशित होने पर कल इस जलधि पर दस योजन ही पुल बाँधना रह गया है" जाकर, वेलाओं पर अनुपम लीला से निद्र के आनन्द को प्राप्त किया। (दूसरे दिन) (सूर्य-) उदय के अवसर पर, उर्वीश के पास पहुँच, मोद से कपियूथ-मुख्य (नायक) प्रणाम कर, कार्य का निवेदन कर, ॥ १०९० ॥

—बड़े लगन के साथ, वृक्ष (तथा) महाशैलों को उठाकर, अनुपम लीला से, अतिशीघ्र वृत्ति से लाकर, नल को देने लगे।

श्रीरामुनियेॅड उडुतभक्ति

नप्पुडु श्रीरामुडासेतुवेॅल्ल । दप्पक गनुगोॅनु तात्पर्यमोॅप्प
वनधीश्वरुंडुनु वनचराधिपुडु । दनुजनायकुडुनु दनु जेरि कोॅल्व
सौमित्रिकरमुपै सौभाग्यलील । वामहस्तमु जेर्‍चि वडि गट्टु मीद
सन्नपु दरहासचंद्रिक लोलय । नन्नरनायकुंडट्टु चूचुवेळ
दरुचरेश्वरुलेल्ल दरुलुनु गिरुलु । बिरुदुलै वडिबेॅचि पेकलिंचि तेॅच्चि
नलुचेति कोसग नानलुडवि वुच्चि । तलकोनि कट्टे; नातड़ि योक्क युडुत
"गोॅब्बुन सेतुवु गोनसागवलयु; । निब्बल्लिदुलकु दोडेनु गाविंतु"
ननुचु श्रीरामुनि यडुगुदामरलु । मनमुन जेॅर्चि यामनुजेशुनेदुर ११००
नच्चपुभक्तितो नल वार्धि मुनिगि । वच्चि ता निसुकलो वडि बोरलाडि
तडयक यट चनि तनमेनि यिसुक । वडि गट्टपै रालिच वनधिलो मड़ियु
देलि गट्‍टुन केंगि तिरुगंग बोरलि । वालिन भक्तितो वच्चि विदल्चु;
निव्विधंबुन नुंड निनकुलाधिपुडु । दव्वुल बोडगांचि तम्मुनि जूचि

श्रीराम के प्रति गिलहरी की भक्ति

तब श्रीराम उस समस्त सेतु को भलीभाँति देखने के तात्पर्य (उद्देश्य) के विलसित होने पर, वनधीश्वर (सागरेश्वर), वनचर-अधिप (सुग्रीव) तथा दनुजनायक (विभीषण) के अपनी सेवाएँ करते रहने पर, सौमित्र के कर पर सौभाग्य-लीला (शोभा) से वाम कर रखकर, शीघ्रता से बाँध पर (खड़े होकर) मन्द-दरहास-चन्द्रिकाओं के व्याप्त होते रहने पर, वह नरनायक उधर देखता रहा। साहसी हो समस्त तरुचरेश्वरों के तरु और गिरि झट, क्रम से उखाड़कर, लाकर, नल के हाथ में देने पर उस नल ने उन्हें लेकर, सयत्न (बाँध) बाँध दिया। उस अवसर पर एक गिलहरी यह सोचकर कि "शीघ्रता से सेतु (-बन्धन का काम) हो जाना चाहिए। इन बलवानों की मैं सहायता करूँगी", श्रीराम के चरणकमलों को मन में रख, उस मनुजेश्वर के समक्ष, ।। ११०० ।।

—शुद्ध भक्ति से उधर वारिधि में डूबकर, आकर, स्वयं झट रेत में लोटकर, विलम्ब न कर, वहाँ जाकर, अपने शरीर पर के रेत को झट बाँध पर गिराकर, फिर से वनधि में डूबकर, किनारे जाकर फिर लौटकर, अधिक भक्ति से आकर, (रेत) डाल देने लगी इस प्रकार करते समय दूर से ही पता लगाकर, इनकुलाधिप ने अनुज को देखकर (कहा)—"हे लक्ष्मण! ढंग से

"पोंदुगा लक्ष्मण ! पोन्नदे चूडु । मुंदऱ नोक तरुमूषिकंबेलमि
नामीद भक्ति नुन्नतगति बूनि । ता मेनु जलमुल दडिपि गट्टुनकु
जनि वेग निसुकपै जल्लाडि तिरुग । जनुदेंचि कोंडलसंदुन रालिच
कर मोप्पुचुन्नदि; कपिकुलाधीशु । लुरुशक्ति दरुगिरुलोगि देच्चुचोट
दा नेंतयनि मदि दलपक प्रेम । बूनि सहायमै पोंदलुचुन्नदियु;
गनुगोंटे "यनवुडु गमलाप्तवंश्य! ।कनुगोंटि भवदंघ्रिकमलमुल् भक्ति
नेव्वडु मदिनिलिप येसग दृणंबु । नव्वेल्पुगिरिबोलु मनिन गाकुन्ने?
१११०
कावुन भक्तिये कारणंबनघ !" । नावुडु मुदमंदि नलिनाप्तसुतुनि
गनुगोनि "मदि दानि गनुगोनु वेड्क । पेनगोनुचुन्नदि; प्रेम निच्चटिकि
दे "म्मन्न वेगंबे तेच्चिच सुग्रीवु । डम्माहत्मुनि चेतिकंदियिच्चुटयु
बलुतेऱंगुल दानि ब्रस्तुति सेसि । कलितदक्षिण कराग्रमुन दुव्वुटयु
नल युड्डुतकु वेन्क नमरे द्रिरेख । चुलुकनै चूड्कुल सुखकरंबुगनु;
नेंतयु संतोष मिनुमडिपंग । नंत लक्ष्मणुडुनु नब्धिनायकुडु

वहाँ देखो। वहाँ एक तरुमूषिक (गिलहरी) प्रेम से मेरे प्रति भक्ति के कारण उन्नतगति से (ऊँची भावना को ले), अपनी देह को जल में भिगोकर, किनारे जाकर, झट रेत पर लोटकर, वापिस आकर, (समुद्र में रखे गए) पहाड़ों के मध्य (उस रेत को) डालकर अधिक शोभित हो रही है। जहाँ कपिकुलाधीश उरु (अधिक) शक्ति से तरु और गिरियों को क्रम से ला रहे हैं, वहाँ अपनी (शक्ति) के बारे में मन में न सोचकर, प्रेम धारण कर, सहायता कर रही है। देखा है न !" ऐसा कहने पर, (लक्ष्मण ने कहा)—"हे कमलाप्त(-सूर्य)-वंश्य ! देखा है। जो (व्यक्ति) आपके अंघ्रिकमलों को भक्ति से मन में धारण कर, तृण भी दे, तो वह देवगिरि (हिमालय) के समान होकर नहीं रहेगा ? (भक्ति से प्रदत्त तृण भी मेरु-सम हो जाता है।) ॥ १११० ॥

अतः हे अनघ ! भक्ति ही कारण (मूलभाव) है।" ऐसा कहने पर प्रसन्न हो, नलिनाप्त (सूर्य)-सुत को, देख (कहा)—"मन में उसे (गिलहरी को) देखने की इच्छा तीव्र हो रही है। प्रेम से (उसे) यहाँ लाओ।" (ऐसा) कहने पर शीघ्र लाकर, सुग्रीव के (उस गिलहरी को) उस महात्मा (राम) के हाथ में देने पर, अनेक प्रकार से उसकी प्रस्तुति कर, कलित-दक्षिण-कर-अग्र (भाग) से (पीठ पर) फेरा। तब गिलहरी की पीठ पर अनायास ही, नेत्रानन्द रूप से, अधिक आनन्द के द्विगुणित होने पर, तीन रेखाएं बन गईं। तब लक्ष्मण, अब्धिनायक, दनुजेश (रावण) के अनुज

दनुजेशु तम्मुंडु दरुचराधिपुडु । ननयंबु संतोष मतिशयिंपंग
नंदंद कैकोनि यलरुचु नुंड । जंदनमंदारचंपकक्रमुक
पुन्नागसहकारभूरुहप्रततु । लुन्नचो विडिपिंचे नुर्वीशु; डंत११२०
हनुमदंगदनीलहरिरोमकुमुद । पनसादि वानर प्रमुखुलु गूडि
कनुगोंन नाश्चर्यकरमैनयट्टि । घनतरंबैन या कट्टपै निलिचि

श्रीरामुडु सेतुवुनु जूचि संतसिंचुट

"बापुरे! यैंत नेर्परियौंको नलुडु! । रूपिंप बेंद्दयु रूढिकि नेक्कि
यरुगु दीर्चिनमाड्कि नलवड दीर्चें । दौरकौंनि सेतुवु दुद्दिदाक" ननुचु
दन बाहुबलमुन दन विद्यकलिमि । घनमैन सेतुवु गट्टे नी नलुडु;
अदि शतयोजनंबैनट्टि निडुपु । बदियोजनंबुल परपुनु गलिगि
वैलसिन मलयसुवेलाचलंबु । लौंलसि यैंतयु जूड नोप्पु वहिंचें;
मैलगि याडेडु गंडुमीलु पैदरुचु । वैलिगेडुचुक्कल विधमुन नुंड
निरुदेस नल्लनै येपारु नब्धि । करमोप्पुचुन्न याकाशंबु गाग
गलयंग दीपिंचे घनसेतुवपुडु । वैलसिन नक्षत्रवीथि चंदमुन;
११३०

तथा तरुचराधिप के निरन्तर अतिशय प्रसन्न होकर, जहाँ-तहाँ (उसे) हाथ में लेकर, आनन्दमग्न होने पर उर्वीश (राजा-राम) ने (उसे) वहाँ छुड़वा दिया जहाँ चन्दन, मन्दार, चंपक, क्रमुक (पूगीफल), पुन्नाग, सहकार (आदि) भूरुह (वृक्ष) प्रततियाँ (समूह) थीं। तब, ॥ ११२० ॥

—हनुमान, नील, अंगद, हरिरोम, कुमुद, पनस आदि प्रमुख वानरों से युक्त होकर, देखने में आश्चर्य-प्रद उस महान् सेतु पर खड़े होकर, (कहा)—

श्रीराम का सेतु को देखकर प्रसन्न होना

"वाह रे ! कितना निपुण है नल ! रूप में बड़ा तथा सुप्रसिद्ध चबूतरे के निर्माण के समान, जुटकर सेतु का अन्त तक निर्माण किया।" अपने बाहुबल से तथा अपनी विद्या-संपत्ति से इस नल ने महान् सेतु का निर्माण किया है। वह शत योजन लम्बा तथा दस योजन चौड़ा होकर, विलसित मलय (पर्वत) तथा सुवेलाचल का स्पर्श करता हुआ अधिक सुन्दर दीख रहा है। (समुद्र में) उछल-कूद करनेवाले बड़े-बड़े मत्स्यों के ऊपर (आकाश में) अधिकता से चमकने वाले नक्षत्रों के समान रहने (दीखने) पर, दोनों ओर श्याम हो सुशोभित अब्धि के अधिक शोभायमान आकाश-सम होने पर, वह महान् सेतु तब विलसित नक्षत्र-वीथि (आकाश-गंगा) के समान सुशोभित हुआ। ॥ ११३० ॥

दनु नट्टु गांचिन तनपेर्मि जूचि । तनरार मन्निपदगु ननि राम
विभु डासमुद्रुनि वेडुकतोड । नभयपट्टमु गट्टॆ नन मिंचि मरियु
गप्पारु नायब्धि गन्नार जूचि । यॊप्पार गपुलॆल्ल नब्बुचुनुंड
नप्पुडु देवतलामिटनुंडि । यप्पौरुषमु गन्नुलारंग जूचि
“निक्कंबु निट्टिद; नीचु मृदूक्ति । जक्क नेलगु दंडसाध्युंडु गाक !
यट्टु वेडुकॊनुटयु नब्धि गैकॊनमि । निट्टु सेय नेरडे यिनकुलेश्वरुडु ?
चेकॊनि यॆव्वडी सेतुवु जूचु । जेकॊनि यॆव्वडीसेतुवु दलचु
नतनिकि विजयंबु नतुलकीर्तियुनु । वितत पुण्यंबुलु वॆलयंग गलुगु;
नॆंतकालंबेनि नीसेतुवुंडु । नॆंतकालंबेनि नीयब्धि युंडु
नंतकालमु राघवाधीशु कीर्ति ।यंतंत कॆक्कुचु नानंदमॊसगु” ११४०
ननि मदिलोपल हर्षिचुकॊनुचु । दनुवुन बुलकलु दरुचुगा नॆगय
बुव्वुलवानलु पॊरिबॊरि गुरिसि । रव्वल देवतूर्यम्मुलु म्रोय;
नप्पुडु रघुरामु डानंदमॊंदि ।यॊप्पुसेतुवु जूचि यॊनर निट्लनियॆ:
“नॆलमितो नीसेतुवॆल्लकालंबु । नलुपेर बरगुचु नलुवॊप्पु गाक!”
यनुटयु नाविभुनानति नलुनि । गनुगॊनि पॊगडिरि कपिवीरुलॆल्ल

अपने को उस प्रकार देखकर, अपनी अतिशयता को देखनेवाले समुद्र को मान्यता देकर मानों विभु राम ने उत्साह से अभय प्रदान किया हो। (इस कारण) और भी अधिक शोभित होनेवाले उस अब्धि को आँख भर देखकर समस्त कपि (आनन्द से) फूल रहे थे। तब आकाश से देवता उस पौरुष को आँख भर देखकर (कहने लगे)—“सच बात तो यही है। नीच (व्यक्ति) कहीं मृदुवचनों से सुधरेगा ? वह तो दण्ड-साध्य ही है। उस प्रकार विनय करने पर अब्धि के न मानने पर, इनकुलेश्वर ऐसा नहीं कर पाया क्या? चाहकर जो इस सेतु का दर्शन करेगा, चाहकर जो इस सेतु का ध्यान करेगा, उसे विजय, अतुलकीर्ति तथा वितत पुण्यों की, प्राप्ति शोभा से होगी। जब तक यह सेतु बना रहेगा, जब तक यह अब्धि रहेगा, तब तक राघवाधीश की कीर्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई आनन्द प्रदान करती रहेगी।” ॥ ११४० ॥

(ऐसा) कह मन में हर्षित होते हुए, शरीर पर अधिक रोमांच के होने पर, वहाँ देवतूर्यों के मुखरित होने पर, (देवताओं ने) बार-बार पुष्पवृष्टि की। तब रघुराम ने आनन्दित हो, शोभायमान सेतु को देखकर आनुकूल्यता से यों कहा—“प्रेम से यह सेतु सदा के लिए नल के नाम पर प्रसिद्ध होकर, शोभा से रहेगा।” (ऐसा) कहने पर उस विभु की आनति पर समस्त कपिवीरों ने नल को देख (उसकी) प्रशंसा की।

मुदमुतो नपुडु समुद्रुंडु रामु । सदनम्मुनकु सैन्यसहितम्मुगाग
बोलुपार दोडकोनि पोयि दिव्यास्त्र । मुलुनु दिव्यांबरमुलु भूषणमुलु
नोक वज्रकवचंबु नुरुभक्ति निच्चि । यकलंकचित्तुडै यारामु जूचि
"रामभूपालक ! राजपुत्रुलकु । नीमुनिवेषंबुलेल युद्धमुन ?
जारुवस्त्रमुलु भूषणमुलु निपुडु । मीरु धरिंपुडिम्मेयि नुचितंबु"
११५०

रामलक्ष्मणुलु सुवेलाद्रिकेगुट

ननवुडु दिव्यांबराभरणंबु । लनुपमगंधमाल्यादुलु दाल्चि
चारुतेजमुल भास्वरमूर्तुलगुचु । ना रविचंद्रुलो यन वेलुंगुचुनु
वननिधि यंत दीवनलतो ननुप । ननिलज नीलुर यंसंबु लेक्कि
सकलदेवतलुनु सन्नुतुल्सेय । सकललोकंबुलु जयवेट्टुचुंड
सकलतरंगिणीश्वरु वीडुकोलिपि । सकलेश्वरुंडनुजन्मुंडु दानु
रमणीयमैनट्टि राक्षसलक्ष्मि । सीमंतवीथिपै जेलगेंडुमाड्कि
मुनुकोनि लंकाभिमुखुडोंचु नडचे । घनमैन सेतुमार्गंबोगिबट्टि ।
तगविभीषणुडु गदाहस्तुडगुचु । मोगि गपिसेनकु मुंदरु नडचि

मोद से तब समुद्र ने सेनासहित राम को (अपने) सदन (निवास) को शोभा से ले जाकर, दिव्य-अस्त्र, दिव्य-अंबर, भूषण और एक वज्रकवच को उरु भक्ति से देकर, अकलंकचित्त से उस राम को देखकर (कहा)—'हे राजाराम ! राजपुत्रों को युद्ध के समय ये मुनिवेष क्यों ? आप चारु वस्त्र तथा भूषण अब धारण कीजिए । इस समय यही उचित है ।। ११५० ।।

राम-लक्ष्मण का सुवेलाद्रि जाना

ऐसा कहने पर दिव्य अंबर, आभरण और अनुपम गन्ध-मालाएँ आदि धारण कर, चारुतेज से भास्वर (प्रकाशमान) मूर्ति (आकार) वाले होते हुए, ऐसे प्रकाशित होते हुए मानों रवि (और) चन्द्र ही हों, तब वननिधि के आसीसों के साथ भेजने पर (विदा करने पर), अनिलज और नील के कन्धों पर चढ़कर, सकल देवताओं के सन्नुतियाँ (प्रशंसाएं) करने पर, सकल लोकों के जयकार करने पर, सकल-तरंगिणीश्वर (समुद्र) को बिदा कर, सकलेश्वर (राम) अनुजन्म (अनुज) के साथ स्वयं रमणीय बनी राक्षसलक्ष्मी की सीमंत-वीथि पर विचरण करने के समान, महान् सेतुमार्ग का अनुसरण कर, लंकाभिमुख हो चल पड़ा । उचित रूप से विभीषण गदाहस्त हो, कपिसेना के आगे-आगे चलने लगा । (इस प्रकार) अपने

तन मंत्रुलुनु दानु दर्पंबु मॆऱसि । विनुतविक्रमुडु सुवेलाद्रि विडिसॆ;
मिगुल मॊत्तंबुलॆ मिन्नंदि क्रंदि । नगचरसेनलु नडवंग दॊडगॆ;
११६०
वडिगॊनि सेतु क्रेवल नेगुवारु । विडुवक त्रोवनु वॆस नेगुवारु
वेडुक विनुवीथि वॆसनेगुवारु । नाडकाडकु गुमुलै येगुवारु
दोयधिलोन नीदुचु नेगुवारु । बायलुगा गूडि पऱुविडुवारु
नप्पुडा सेनल यार्पुल म्रॊत । युप्पॊंगु वाराशि युरुघोष मडचॆ;
दिवियु बाताळंबु दिक्कुलु भुवियु । नविरळंबुग नप्पुडल्ललनाडॆ;
गडुनॊप्प सेतुवु गडचि यिब्भंगि । विडिसॆ राघवुडु सुवेलाद्रियंदु:
दडयक वनचरदळमु लेतॆंचु । कडुसंभ्रममु जूचि घनधनुर्घॊष
मडरिप ब्रह्मांडमविसिनट्लय्यॆ; । नुडुवीथि जुक्कलु नुरलॆ म्रोयुचुनु;
बॆंडिदंबुगा भूमि बॆगडॊंदि यळिकॆ । नुडुकारि वैदेहि युल्लंबु चॆलगॆ
खंडपरशु शिर:कंपंबु सेसॆ;। दंडि राक्षसुलॆल्ल दल्लडपडिरि; ११७०
चारुलचे रामजनपालु राक । यारावणुडु विनि यखिलमंत्रुलनु

मन्त्रियों के साथ स्वयं दर्प से प्रकाशित होते हुए, विनुत विक्रम वाले (राम) ने सुवेलाद्रि पर पड़ाव डाल दिया। अधिक संख्या में एकत्र होकर, आकाश को छूते हुए बढ़कर, नगचर (कपि) सेनाएँ चलने लगीं। ॥ ११६० ॥

(उनमें कुछ) शीघ्रता से सेतु के पार्श्व (किनारे) में चल रहे थे, (कुछ) मार्ग को न छोड़कर (सीधे) शीघ्रता से जा रहे थे, (कुछ) उत्साह से विनु वीथि (आकाश मार्ग) से जा रहे थे, कुछ जहाँ-तहाँ झुण्ड बाँधकर जा रहे थे, (कुछ) तोयधि (समुद्र) में तैरते हुए जा रहे थे, (कुछ) झुण्ड बाँधकर मिलकर दौड़ रहे थे। तब उस सेना के निश्वासों की ध्वनि ने उमड़ते हुए समुद्र के महा-घोष का दमन कर दिया। तब दिवि, पाताल, दिशाएँ तथा भुवि अविरल रूप से थरथरा (काँप) उठे। अधिक शोभा से सेतु को पारकर, इस प्रकार राघव ने सुवेलाद्रि पर पड़ाव डाल दिया। अविलम्ब वनचर दल के आगमन के अधिक संभ्रम को देख, घन-धनु-घोष की अतिशयता से मानों ब्रह्माण्ड विकल हो गया, उडुवीथि (आकाश) से ध्वनि करते हुए तारे टूट गिरे, अत्यधिकता से भूमि भीत होकर काँप उठी, वैदेही का (मन:) ताप कम होकर, हृदय प्रसन्न हो उठा, खण्डपरशु (शिव) ने शिर: कम्प किया, समस्त बली राक्षस व्याकुल हो उठे। ॥ ११७० ॥

(गुप्त) चरों से राजाराम के आगमन की (बात) सुनकर, रावण

बिलिंपिचि नवरत्नपीठंबुनंदु । गोलुवुंडे नसुरुलु गोलुव बॅक्कंड्रु
११७२

कैकेशि वेत

अंत नावृत्तांत मंतयु नॅरिंगि । चिंतिचि कैकेशि चिडिमुडिपडुचु
वंत गुंदुचु माल्यवंतु बिलिपचि । यॅंतयु बॉगुलुचु ननियॆ नातनिकि
"नलघुविक्रमशीलु डारामविभुडु । ञलमुन वानरसैन्यंबुतोड
विडिसॆ सुवेलाद्रि; विनु; मिंक लंक । चॆडुनु, दप्पदु ब्रह्मशिवुलु गाचिननु;
बदुंडिक मनमु नप्पंक्तिकंठुनिकि । विदितंबुगा सीत विडु मनिबुद्धि
चॆप्पुद; मटुलॆन्नि चॆप्पिन नतडु । चॆप्पिन मनबुद्धि चॆवियानिविनडु;
ऐननु तलिदंड्रु लैनट्टिवारु । तनयुंडु धर्मंबु दप्पिनयॆडल
दग बुद्धि सॆप्पुट तगवु, धर्मंबु । नगुनंचु जॆप्पुदु रनघुलु बुधुलु;
११८०
विनु मुन्ने नाकु नाविश्रवसुंडु । विनिपिंचॆ नंतयु विशदंबुगाग"
नानि परमरहस्य मतनिकि जॆप्प । विनि माल्यवंतुंडु वॆरगंदि कूतु

ने, अखिल मन्त्रियों को बुलाकर, अनेक राक्षसों के सेवाएँ करते रहने पर, नवरत्न-पीठ पर (बैठकर) दरबार किया ।। ११७२ ।।

कैकेशी की व्यथा

तब उस समस्त वृत्तान्त को जानकर, चिन्तित हो, कैकेशी ने सकपकाते हुए (दुविधा में पड़कर), व्यथा से दुखी होते हुए, माल्यवन्त को बुलाकर, अधिक संतप्त होते हुए, उससे कहा—"अलघु विक्रमशील वाले विभुराम ने, हठ से वानरसेना के साथ सुवेलाद्रि पर पड़ाव डाला। सुनो, अब लंका नष्ट हो जाएगी। ब्रह्मा (और) शिव भी रक्षा करें तो भी यह होने से नहीं रुकेगा। (अवश्य होगा)। अब चलो, हम (लोग) उस पंक्तिकण्ठ (वाले) को विदित रूप से समझावें कि सीता को छोड़ दे। ऐसा कितना भी कहें, वह हमारी बुद्धि (की बात) को कान देकर नहीं सुनेगा। फिर भी यदि तनय धर्म (-मार्ग) से हट जाए तो माता-पिता को ढंग से समझाना चाहिए। इसे अनघ (और) बुधजन न्याय और धर्म मानते हैं। ।। ११८० ।।

सुनो, पूर्व में ही उस विश्रवसु ने मुझे सभी कुछ विशदरूप से सुनाया था।" (ऐसा) कह परमरहस्य उसे बताया। सुनकर माल्यवंत ने भीत (चकित) हो, पुत्री को देखकर (कहा)—"जो होनेवाले (कार्य) हैं, वे

गनुगोनि "यय्येविकाकेलमानु ? । मन बुद्धि विनडनि मानंगरादु
अम्म ! नीवुनु नद्दशास्युनक । निम्महागोप्यंबु लिन्नियु देलिय
जेप्पंगवलयु नेर्चिन नीतुलेल्ल; । निप्पुडे कदलुद मिदि वेळ गान;
वलनोप्प नाविश्रवसुनि यापलुकु । दलग ब्रह्मादुलु दप्पिपलेरु;
चेप्पुमु नीवु नेर्चिन नीतु लेल्ल । नोप्पुग" ननवुड नुविद याक्षणमे
पसिडिपल्लकिमीद बसमिच नेक्कि । यसमुतो नच्चरयतिवलु मोय
धवळांबरंबुलु तगुनट्लु गट्टि । धवळचामरमुलु धवळमाल्यमुलु
धवळगंधंबुलु धवळाक्षतमुलु । धवळभूषणमुलु तलकोनि प्रेम ११९०
नविरळंबुग दालि्च यतिवैभवमुन । दविलि दिव्यांगनातति वेंट नडव
सुतभृत्यहितबंधुसोदरुल् नडव । मतिमंतुलैनट्टि मंत्रुलु नडव
श्रुतिपाठतंत्रुलु सूनृतोन्नतुलु । व्रतधर्मगुणचारुवर्तनुल् नडव
गिन्नरगंधर्वगीर्वाणसिद्ध । पन्नगासुरयक्षभामलु नडव
वंकृति मनु माल्यवंतुनि वनित । संकृति यनुमालि सति केतुमतियु
मानितंबुग सुमालितन्वंगि । दानवांगनलु गोंदरु वेंट नडव

होकर क्यों न रहेंगे ? हमारी बुद्धि (की बात) नहीं मानेगा, ऐसा सोचकर कहने से विरत नहीं होना चाहिए। अम्मा ! तुम्हें और मुझे दशास्य (वाले) को ये सभी महागोप्य (बातें) समझाकर बताना चाहिए। (हमारी) सीखी हुई सभी नीतियाँ समझना चाहिए। यह (समुचित) अवसर है, अतः अभी निकल पड़ो। औचित्य से युक्त उस विश्रुवसु के उस वचन का व्यक्तिक्रम ब्रह्मादि भी नहीं कर सकते। सीखी हुई नीति की सभी बातों को तुम उचित रूप से कहो।" ऐसा कहने पर स्त्री (कैकेशी) उसी क्षण, स्वर्णमय पालकी पर अधिक प्रभा से आरूढ़ होकर, प्रसिद्ध रूप से अप्सरा स्त्रियों के उसे ढोने पर (चल पड़ी)। उचित रूप से धवल-अंबर धारण कर, धवल चामर, धवल मालाएँ, धवल गन्ध, धवल अक्षत, धवलभूषणों को प्रेम से सयत्न, ॥ ११९० ॥

—अविरल रूप से धारण किया, चाहकर दिव्य-अंगना-तति (समूह) के साथ चलने पर, सुत, भृत्य, हित, बन्धु (रिश्तेदार) (तथा) सहोदरों के चलने पर, मतिमान मन्त्रियों के चलने पर, श्रुतिपाठ तन्त्रज्ञ, सूनृत (सत्य) में औन्नत्य वाले, व्रत-धर्म-गुण (से युक्त) चारु-वर्तन वालों के चलने पर, किन्नर-गन्धर्व-गीर्वाण-सिद्ध-पन्नग-असुर-यक्ष-भामाओं के चलने पर, माल्यवन्त की वंकृति नामक वनिता (स्त्री), मालि की संकृति तथा केतुमति नामक सतियाँ, मान्यता से सुमालि की तन्वंगी (स्त्री) के (तथा) कुछ (अन्य) दानव-अंगनाओं के साथ चलने पर, तीनों माताओं के आगे-पीछे

मुग्गुरुतल्लुलु मुंदऱ वेँनुक । डग्गऱि नडवंग धवळचामरलु
गरुडगंधर्वादिकांतलु वीव । नरुगुचो नाट्यंबु लच्चरल् सेय
बंधुरंबुग मित्रभ्रातलैनट्टि । बंधुजनंबुलु बलिमितो नडव
यूपाक्षुडतिकायुडोँगि विरूपाक्षु । डेपुन मुंदऱ नेचि तो नडव१२००
मुदुक कुप्पसमुलु मुदमोँप्प दोँडिगि । मुदिसिन राक्षसमुदितलु नडव
संदडि जडियंग साहो यटंचु । मुंदऱ फणिहारमुख्युलु नडव
गुरुतरबहु वेदघोषंबुतोड । सरि लेनि याब्रह्मसभतोड गदलि
चंद्रदीधितुलतो शारदादेवि । यिंद्रुमंदिरमुन केतेँचुकरणि
मंदारचंद्रिका मल्लिकाश्वेत । कंदलहिमशैल कर्पूरहार
चंदनगोक्षीर शरदिंदु रुचुल । नंदमै विलसिल्लु नभिनवस्फुरण
मंदाकिनीदेवि मऱि दिविनुंडि । बृंदारकुलु दानु बृथिवि केतेँचि
विलसिल्लुविधमुन वीक्षिप नोँप्पि । कलित विलासमै कैकेशि केल
वररत्नमणिगणवलयमुल् मेऱय । गरमोँप्प मुत्यालकंठहारमुलु
वेँऱवार दनमेन विलसिल्लुचुंड । मेऱुपुल दगु शुभ्रमेघमो यनग
१२१०
दीपिंचु नादित्यतेजमो यनग । नेपारि येँतयु निभुमुलु नडव

(और) निकट चलने पर, गरुड़-गन्धर्व आदि कान्ताओं के धवल-चँवर डुलाने पर, चलते समय अप्सराओं के नाट्य (नृत्य) करने पर, मित्र-भातृ आदि बन्धुजनों के सान्द्र रूप से शक्तियुक्त हो चलने पर, यूपाक्ष, अतिकाय और विरूपाक्ष के औन्नत्य से आगे-आगे अतिशयता से चलने पर, ॥१२००॥

—मोटे वस्त्रों को आनन्द से धारण कर वृद्ध राक्षस-स्त्रियों के चलने पर, कोलाहल के बढ़ने पर ओहो कहते हुए आगे-आगे फणिहार आदियों के चलने पर, गुरुतर-बहु-वेदघोष से युक्त अनुपम ब्रह्म-सभा (ब्राह्मणों का समूह) के साथ चलने पर, चन्द्र-दीधितियों के साथ शारदादेवी के इन्द्र-मन्दिर को आने के समान, मन्दार, चन्द्रिका, मल्लिका, श्वेत-कन्दल, हिमशैल, कर्पूरहार, चन्दन, गोक्षीर, शरदिन्दु की रुचियों से सुन्दर बन विलसित अभिनव-स्फूर्ति से मन्दाकिनी (गंगा) देवी दिवि से बृन्दारकों (देवताओं) के साथ स्वयं पृथ्वी पर आकर विलसित होने के विधान से दीप्त होने पर, कलित विलास से युक्त हो कैकेशी हाथों में वर-रत्न-मणि-गण (से जड़ित) वलयों (कंकणों) के प्रकाशित होने पर, अधिक शोभित मुक्ताओं के कण्ठहारों के समुचित विधि से अपने शरीर पर विराजमान होने पर, मानों चंचलाओं से युक्त शुभ्रमेघ हो, ॥ १२१० ॥

ब्रबल नीलांबुदपटलमो यनग । निबिडमै राक्षसनिचयंबु नडव
रथसिंधुघोटकराजि सैन्यमुलु । पृथिवि बीटलुवाऱ बॆल्लुगा नडव
वनजोदरुनि पुत्रि वाहिनुल् गॊलुव । नॆनयंग नजुसभ केतॆंचॆ ननग
नमृतवारिधि वॊंगि यमलतरंग । विमलमै यट वॆल्लिविरिसॆनो यनग
नरिदि नक्षत्रंबुलन्नियु वच्चि । गुरिगाग नॊकच्चोट गूडॆनो यनग
नुदधिमुत्यमुलॆल्ल नॊक्कटै वच्चि । पॊदिगॊनि यट मुन्नु पॊडमॆनो यनग
गुरुतैन कप्रंपु गॊंडलो यनग । दिरमैन वॆन्नॆल तेटलो यनग
युक्तंबुगा दन्नु नुविदलुचेरि । मुक्तातपत्रमुल् मुदमुतो बट्ट
नीभंगि नप्पुड यिंद्रारिसभकु । ब्राभवस्फुरणमै बरग नेतेर १२२०
विभवशुभाचार विनुतुलु सॆलग । शुभलील गैकेशि जूचि रावणुडु
मुदमुतो गद्दिय मॊगि डिग्गि वच्चि । मुदितकु नंदंद म्रॊक्कि कैदंड
प्रमदंबुतो निच्चि पल्लकि डिंचि । यमरार गॊनिवच्चि यास्थानमुनकु
दन भद्रपीठंबु दरियग नॊक्क । कनकासनंबिडि कैकेशि यंदु
गूर्चुंड दल्लुल गूर्चु सोदरुल । गूर्चिनभक्तितो गूर्चुंडु डनियॆ;

—मानों दीप्त आदित्य तेज हो (इस प्रकार कैकेशी चल पड़ी)। अतिशयता से इभों (गजों) के चलने पर ऐसा लग रहा था मानों प्रबल नीलांबुद पटल है। सान्द्र राक्षस-निचय (समूह) के चलने पर तथा रथ, सिन्धु-घोटक-राजि (समूह) तथा सैन्य के चलने पर पृथ्वी में दरारें पड़ गईं। वनजोदर की पुत्री (गंगा) मानों वाहिनियों (नदियों) के सेवाएँ करने पर शोभा से अज (ब्रह्मा) की सभा में आई हो; मानों अमृत-वारिधि (क्षीर-सागर) उफ़न कर, अमलतरंगों से विमल होकर वहाँ व्याप्त हो उठा हो, मानों विरल समस्त नक्षत्र एक साथ एक स्थान पर एकत्र हुए हों, मानों उदधि के सभी मोती एकत्र होकर, ढेर लगकर, वहाँ उत्पन्न हुए हों, मानों श्रेष्ठ कर्पूर के पर्वत हों, मानों स्थिर ज्योत्स्ना की निर्मलता हो, इस प्रकार युक्त रूप से स्त्रियों के अपने पास आकर, मोद से मुक्ता (जड़ित)-आतपत्रों के धारण करने पर, इस प्रकार से (ऊपर वर्णित विधान से) उस इन्द्रारि (रावण) की सभा में प्राभवस्फूर्ति से आने पर, ॥ १२२० ॥

—वैभवयुक्त शुभाचारों की विनुतियों (स्तुतियों) के मुखरित होने पर, शुभलीला से कैकेशी को देख रावण, मोद से झट गद्दी से उतर, आकर, मुदिता (प्रसन्न बनी स्त्री-माता) को बार-बार प्रणाम कर, प्रमोद से हाथ का सहारा देकर, पालकी से उतारकर, ठीक ढंग से लिवा लाकर, सभा में अपने भद्रपीठ के निकट एक कनकासन डलवाकर, उसपर कैकेशी को बिठाकर, प्रिय माताओं को, प्रिय सहोदरों को अधिक भक्ति से (उचित स्थानों पर)

नंतरांतरमुल नंदरु निट्टु । लंतंत गूर्चुंडिरर्हंपीठमुल;
नंत नाकैकेशि यनुमति जेसि । चिंतामणी भद्रसिंहासनमुन
दानवेंद्रुंडुनु दत्प्राकारमुन । नूनिन संतोष मौप्प गूर्चुंडि
यचलितमतिमंतु नम्मालयवंतु । नुचितासनंबुन नुंडंग बनिचे;
नावेळ रावणुंडमरवल्लभुनि । भावंबु गैकोंनि भासिल्लु चुंडे;
१२३०
नलयु श्रोतयु लेनि यंबुधिकरणि । यलबलंबुडिगे नामसुरेशु कोलुवु:
आलोन नमरारि हस्तमुल् मोगिचि । कैलासनिभकेशि कैकेशि कनियें:
"जनयित्रि! यिब्भंगि जननुलतोड । नेनयंग नासभ कैन्नडुरावु;
चालंग नामदि संतोषमय्यें; । नेल विच्चेसिति ? वेड्रिंगिपु" मनिन
नप्पुडु कैकेशि यम्मालयवंतु । दप्पक कनुगोंनि तगुनीति मेड्रसि
प्राभवस्फुरणमै बंक्तिकंधरुनि ।शोभनगुणशील जूचि यिट्लनियें;
१२३६

रावणुनकु कैकेशि हितबोध

देलियंग मीतंड्रि दिव्यरहस्य । मैलमि जेप्पिनवार्त लेड्रिंगितु विनुमु:

बैठने को कहा। सभी (लोग) जहाँ-तहाँ अन्तरान्तर से अर्ह (योग्य)-पीठों पर बैठ गए। तब कैकेशी की अनुमति लेकर, चिन्तामणी-भद्रसिंहासन पर दानवेन्द्र उस प्रकार अधिक प्रसन्नता से शोभित हो बैठकर, अचलित-मतिमान उस माल्यवन्त को उचित आसन पर बैठने का आदेश दिया। उस अवसर पर रावण अमरवल्लभ की समता को ग्रहण कर भासमान हो रहा था। ॥ १२३० ॥

उस असुरेश की सभा और तरंग कोलाहल से रहित अंबुधि के समान कोलाहल से रहित हो गयी। इतने में अमरारि ने हाथ जोड़कर, कैलास-निभ (श्वेत)-केशी कैकेशी से यों कहा—"हे जनयित्री! इस प्रकार (अन्य) माताओं के साथ शोभित होते (तुम) कभी मेरी सभा में नहीं आई हो। मेरे मन में बड़ी प्रसन्नता हुई है। क्यों आई हो ? बताओ।" (ऐसा) कहने पर, तब कैकेशी ने उस माल्यवंत को अवश्य देखकर, उचित नीति से प्रकाशित होकर, प्राभव-स्फूर्ति से पंक्तिकंधर को देख, (उस) शोभनगुणशीला ने यों कहा— ॥ १२३६ ॥

रावण को कैकेशी का हितबोध

"तुम्हारे पिता ने प्रेम से जो दिव्य रहस्य बताया था, वह समाचार

सुरलु ब्रह्मादुलु सॊरिदिमै मुनुलु । दऱुगनि भीतिचे दनुजारि जेरि
तमतम यिडुमल दमपाटुलॆल्ल । दमनेलुस्वामितो दामॊप्प जॆप्पि
‘रावणकुंभकर्णादिराक्षसुल । नेवगनैननु नेपडगिंचि १२४०
काववे दीनुल गरुणचे’ ननुचु । दिविरि यब्जजुडादि देवतलॆल्ल
नभयदानमु वेड नतिकृपांबोधि । यभयंबुलिच्चॆ नय्यमरुलकॆल्ल
‘निनकुलंबुन जनियिंचि राक्षसुल । ननिलोन दुनिमॆद नवलील ननुचु;
वरमिच्चि सकलदेवतल वीक्षिंचि । ‘तरुचरुलै मीरु धरणि जन्मिंचि
यनिलोन नाकु दोडगु’ डनि पलिकॆ । ननि चॆप्पॆ मीतंड्रि; यारीति निप्पु
डमरुलु वानरुलै पुट्टि रॆलमि । नमरकंटक! निन्नु नणप श्रीहरियु
वनजसंभवु डिच्चु वरमु बालिंचि । यिनकुलंबुन बुट्टॆ निदऱु बॊगड;
जॆनटि ताटकि जंपॆ जिन्ननाडेचि, । मुनियागरक्षणंबुनु जेसि काचॆ,
पदधूळिचे शिल बडति गाविंचॆ, । वदलक जनक भूवरु वीटिलोन
नरुदरुदनि जनंबभिनुतिसेय । हरुविल्लु मोपॆट्टि यवलील विऱचि
१२५०
जनकभूपतितनूजनु बॆंड्लियाडॆ, । मॊनसिन परशुरामुनि भंगपऱचॆ;

समझाकर कहूँगी, सुनो। सुर, ब्रह्मा, क्रम से मुनि (गण) अत्यन्त भीति से दनुजारि (विष्णु) के पास जाकर, अपनी-अपनी मुसीबतों तथा अपनी समस्त विपत्तियों के बारे में अपनी रक्षा करनेवाले स्वामी से ढंग से कहकर, यह कहते कि “रावण कुंभकर्ण आदि राक्षसों के गर्व को किसी भी प्रकार, दमन कर, ॥ १२४० ॥

—हम दीनों की करुणा से रक्षा कीजिए” सप्रयत्न अब्जज (ब्रह्मा) आदि समस्त देवताओं ने अभयदान माँगा। अति कृपांबोनिधि ने उन समस्त अमरों को यह कहते अभय प्रदान किया कि ‘इनकुल में जन्म लेकर, राक्षसों को अनायास ही युद्ध में मार डालूँगा,’ (ऐसा) वर देकर, सकल देवताओं को देखकर कहा कि ‘आप (लोग) तरुचर हो, धरणी पर जन्म लेकर, युद्ध में मेरा साथ दीजिए’। यह (सब) तुम्हारे पिता ने कहा। उसी प्रकार अब अमर शोभा से वानर होकर पैदा हुए हैं। हे अमरकंटक! तुम्हारा दमन करने के लिए श्रीहरि भी वनजसंभव के दिए वर का पालन कर, सबके प्रशंसा करने पर इनकुल में पैदा हुआ है। बचपन में ही कुत्सित ताड़का का वध किया, विजृंभित होकर मुनि के राग का रक्षण किया, पदधूलि से शिला को नारी बना दिया, फिर जनकभूवर के यहाँ हर (शिव) के धनुष का संधान कर, अनायास (उसे) तोड़कर, ॥ १२५० ॥

—जिसकी जनता ने ‘विरल विरल’ कह अभिनुति की, जनक-भूपति की

दमतंड्रिपनुपुन दपसियै मुनुल । कमितसत्त्वंबुन नभयंबुलिच्चॆ
घनु विराधु गबंधु गडुविक्रममुन । दुनुमाडि विडुवडे दोषाचरेंद्र !
वॆऱचि तपुडु गादॆ वेयुभंगुलनु? । वॆऱवकुंडितिवेनि वॆऱल, नीदु
चॆलियलि मुक्कुनु जॆवुलुनु बट्टि । बलिमि गोसिननाडॆ पग गॆल्वरादॆ?
घनु खरू दूषणु खंडिचुमाट । विनि यूरकुंडुट वॆऱचुट गादॆ ?
मारीचु नोक्कोल मडियिंचुनाडु । नूरकॆ यॊकवंक नॊदिगियुंडितिवि;
रामुनि मुदलिंचि रमणि देलेक । येमऱुपाटुन नॆलनाग गॊंचु
वॆनुवॆन्क जूचुचु वॆलवॆलनगुचु । नॆनलेनि भीतिचे नॆलमि बाऱुचुनु
वच्चितिगाक भूवरुल जयिंचि । वच्चितिवा? योडि वच्चितिगाक !
१२६०

सच्चरित्रनु रामचंद्रुनि देवि । म्रुच्चिलि तॆच्चुट मॊगतनंबगुनॆ ?
वालंबुननु जुट्टि वारिधि मुंचु । वालि द्रुंचुट निन्नु वंचुट कादॆ ?
यिन्नि यॆन्नगनेल? यिनकुलेश्वरुडु । मुन्नीरु नोक्कोल मॊनकु देलेदॆ ?
नेडोडिते रामनृपशेखरुनकु ? । ना डोडितिवि गादॆ नाकेशवैरि ?
माटिमाटिकि बेल मनुजुलटंचु । नेटिकि नाडेदवॆंतयु नेचि ?

तनूजा से विवाह किया, आगे बढ़ आए परशुराम के (गर्व का) भंग किया, अपने पिता के आदेश पर तपस्वी बन, अमित सत्त्व से मुनियों को अभय प्रदान किया। हे दोषाचरेन्द्र! महान् विराध (तथा) कबंध को अति विक्रम से (उसने) मार नहीं डाला था ! तब हज़ार विधियों से (तुम) भीत नहीं हुए थे ? भीत नहीं हुए थे तो अन्य (बातें) क्यों, तुम्हारी बहन को पकड़, जबरदस्ती नाक-कान काट दिए, उसी दिन शत्रु को जीत लेना था न ? महान् खर-दूषण का खण्डन करने की बात सुनकर चुप रहना भीत होना नहीं है ? मारीच को एक बाण से मार डालते समय चुपचाप एक ओर छिपे रहे। राम को ललकार कर रमणी को न ला सक, धोखे से नारी (स्त्री) को ले आते, पीछे-पीछे देखते हुए, विवर्ण होते हुए, असीम भय से भागते हुए (लंका में) आए थे। क्या भूवरों को जीत आए थे ? हारकर आए थे न ! ।। १२६० ।।

—सच्चरित्र वाली रामचन्द्र की देवी को चुरा ले आना पौरुष है ? पूँछ से लपेटकर (तुम्हें) वारिधि में डुबोने वाले वालि का संहार करना तुम्हारा दमन करना नहीं है ? ये सब गिनना क्यों ? इनकुलेश्वर एक बाण से समुद्र को एक छोर पर नहीं लाया था ? क्या आज (तुम) नृपशेखर राम से हारे हो ? हे नाकेश-वैरी ! उसी दिन हार गये थे न ! अधिक विजृंभित होकर बार-बार (वे) अबल मनुष्य हैं, ऐसा क्यों कहते हो ? घन-तपोमहिमा के

घनतपोमहिमकु गरुणिंचि नीकु । वनजसंभवुडु दा वर मिच्चुवेळ
नरुल नॆन्नक तप्पॆ; नाटितप्पॆल्ल । दरमिडि नेडिदॆ तलकूडॆ नीकु;
गॆलुपेदियिक नीकु गीर्वाणवैरि ! । चलमुन गुलमॆल्ल समयितुगाक!
येटिकिन्नियु जॆप्प? निट नोक्ककोति । दाटि वारिधि महोदग्रुडैवच्चि
लंकिणि बरिमार्चि ललि शंकलेक । लंकलोपल जॊच्चि लंक शोधिंचि
१२७०
जानकि बॊडगांचि जननाथु सेम । मूनिनभक्तितो नॊनरंग जॆप्पि
मरलि पोवुचु नीदु मधुवनंबॆल्ल । बॆऱिकि कावलिकांड्र बॆक्कंड्र जंपि
यक्षकुमारुतो नसुराधिपतुल । नक्षणंबुन नॆंदऱैननु द्रुंचि
बलिमि शौर्यस्फूर्ति बचरिंचि मऱियु । बलमरि लंकनु भस्मंबु सेसॆं;
निंत सेसियु मऱि यिट बट्टुवडॆनॆ ? । यॆंतयु नॆदुरले केंचि पेल्लार्चि
नीवुनु नीवारु नॆऱिचॆंडि चूड । बोवडॆ यल वायुपुत्त्रुडु दॊल्त ?
गुरुसत्त्वमुन निन्नु गोनिपोयि राम । धरणीशु मुंदट दट्टुकुन बॆट्टि
'तॆच्चिति गॊ' म्मनन देवेंद्रवैरि ! । यच्चट नीसत्त्वमदि येमि सेयु ?
नट्टुगाक यीलंक नगलिंचि पट्टि । तट्टुकुन धरणिपै दट्टिंचेनेनि

कारण करुणा दिखाकर, तुम्हें वनजसंभव के स्वयं वर देते समय, नर की गिनती न कर (तुमने) भूल की। उस दिन की समस्त भूल एकत्र होकर आज सम्पन्न होने जा रही है। हे गीर्वाण-वैरी ! अब तुम्हारे लिए विजय कहाँ ? हठ के कारण समस्त कुल का नाश कर दोगे। ये सब कहना क्यों ? यहाँ एक बन्दर ने वारिधि को पारकर, महा-उदग्र हो आकर, लंकिणी का संहार कर, बिना शंका (संकोच) के लंका के भीतर प्रवेश कर, लंका की खोज कर, ।। १२७० ।।

—जानकी को देखकर, अधिक भक्ति से जननाथ (राम) का कुशल (समाचार) शोभा से बताकर, लौटकर जाते हुए, तुम्हारे समस्त मधुवन को उखाड़कर, अनेक पहरेदारों को मारकर, अक्षकुमार के साथ अनेक असुराधिपतियों को उस क्षण (समय) मारकर, बल (और) शौर्य-स्फूर्ति को प्रसारित कर, फिर निर्बल बनाकर लंका को भस्म कर दिया था। इतना कुछ करके भी (वह क्या) यहाँ पकड़ में आया था ? (नहीं)। प्रतिरोध के अभाव में अधिक सिंहनाद कर, तुम और तुम्हारे लोगों के शोभाहीन हो देखते रहने पर, उस समय वायुपुत्र (यहाँ से) चला नहीं गया था? गुरु-सत्त्व से तुम्हें ले जाकर झट राम-धरणीश के समक्ष रख, 'यह लो, (इसे) लाया हूँ' कहता तो हे देवेन्द्र-वैरी ! वहाँ तुम्हारा सत्त्व क्या कर सकता था ? (कुछ नहीं।) ऐसा न कर, इस लंका को पकड़कर, झट धरणी

जिदरवंदरै चेंदरि पल्वगल । नंदऱु द्रुंगरे यमरुलुप्पोंग ?
१२८०
ततनिकि नोडित वसुराधिनाथ ! । यतनि येलिक गेल्व नलवियै नीकु
वनचरुलनि कदा वालुचुन्नावु । वनचरुलनु गेल्व वशमे? मुन्विनुमु:
वनचरुचे जेटु वच्चु बोम्मनुचु । गोनकोनि नंदि दा गोपिंचि नीकु
बाय किच्चिन शापफलमेल्ल नीव । वायुपुत्रुनिचेत वालिचे गनवे ?
फालाक्षवासव ब्रह्मादिदिविजु । लेलील दैत्यारियिष्टंबु नोंदि
नीलंकयुनु निन्नु निखिलराक्षसुल । गूल द्रोयुटकुनै घोररूपमुल
भूलोकमुन वच्चि पुट्टिरि काक । यीलागु वनचरुलेंदैन गलरे ?
यलघुबलुंडवै यखिललोकमुल । ज्रलमु पेंपुन गेलिच चनुदेंचुनपुडु
किन्नरगंधर्व किपुरुषादि । पन्नगगुह्यक पक्षींद्रयक्ष
सुरवरमुनिवर सुदतुल नेल्ल । बिरबिर जेऱलनु बेट्टुडुवेळ १२९०
बरमपतिव्रतल् वडवड वणकि । "परकांतनेपमुन भस्गमै नीवु
कुलमुतो बलमुतो गूलिपो" म्मनुचु । नलिगि शापंबिच्चि; रदि
तलकूडे;
वालिकि नेक्कु डव्वालिनंदनुडु; । वालिकि नेक्कु डठवायुपुत्रुंडु;

पर फटक देता तो देवताओं के प्रसन्न होने पर, (लंकावासी) बिखरकर टुकड़े होकर, अनेक दुखों से सब नष्ट न होते ? ।। १२८० ।।

—हे असुराधिनाथ ! उसी के हाथ हार गए थे । उसके प्रभु को जीतना तुम्हारे वश (की बात) है ? यह बक रहे हो कि वे वनचर ही हैं। वनचरों को जीतना तुम्हारे बस (की बात) है ? (नहीं) सुनो, लगकर रुष्ट होकर नन्दी ने तुम्हें शाप दिया था कि 'वनचर से तुम्हें हानि होगी, जाओ ।' वह समस्त शाप-फल तुम्हें वायुपुत्र और वालि से प्राप्त नहीं हुआ था ? फालाक्ष (शिव), वासव (इन्द्र), ब्रह्मा आदि दिविज ही इस प्रकार दैत्यारि (विष्णु) की अनुमति प्राप्त कर, तुम्हारी लंका को, तुमको (और) निखिल राक्षासों को (मार) गिराने के लिए, घोर रूपों में, भूलोक में आकर जन्मे । वरन् ऐसे वनचर और कहीं हैं ? अलघु बलशाली होते हुए, अखिल लोकों को हठ की अतिशयता से जीतकर आते समय, किन्नर, गन्धर्व, किंपुरुष आदि, पन्नग, गुह्यक, पक्षीन्द्र, यक्ष, सुरवर, मुनिवर (आदि) की स्त्रियों को अतिशीघ्र क़ैद करते समय, ।। १२९० ।।

—उन परमपतिव्रताओं ने थर-थर काँपकर, रुष्ट होकर, शाप दिया कि "परकान्ता के मिस भस्म होकर तुम कुल और बल (परिवार) के साथ नष्ट हो जाओ ।" वह (आज) सम्पन्न हुआ है । वालि की अपेक्षा अधिक

वारु निन् रणमुलो वधियिंप लेरे ? । वारिकि नॆक्कुडव्वालितम्मुडुनु,
समरंबुननु बलसहितंबु गाग । सौमित्रि निनु बट्टि समयिंप लेडे?
मऱि यॊक्कटियु विनु मनुजाशनेंद्र! । यरमंग नीविक नॆऱुगवु गानि,
रामलक्ष्मणुलेल रविसूनु डेल । कोमलि यासीत कोपानलंबॆ
यरुदुगा ब्रह्मरुद्रादिदेवतलु । वरदुलै यिच्चिन वरमुलतोड
हरुडीसंगिन चंद्रहासंबुतोड । नरयु मूडरकोटियायुवुतोड
गैलास मॆत्तिन घनशक्तितोड । जलनंबु लेनट्टि संपदतोड१३००
दक्कनि भुजबल दर्पंबुतोड । दिक्कुलु गॆलिचिन तेजंबुतोड
राक्षसकुलमुतो रावण ! निन्नु । नीक्षणंबुन बट्टि यॆरियिंप लेदॆ ?
धर्मपतिव्रत दग दन कीवु । कर्मपाशंबुन गैकॊनि तॆच्चि
यऱिमुऱि चॆऱपट्टि यापुण्यवतिनि । मॊऱगिन संकटमुन बुट्टु वह्नि
निन्नु नीकुलमुनु नीवारि नॆल्ल । नॆन्नि भंगुल गाल्पकेलपोनिच्चु ?
नसुरेश! यिदि यॆट्टि दनिननु विनुमु । विडुवक नीवु दिग्विजयंबु सेसि
यकलंकगति पूनि यमरुल गॆल्चि । सकललोकंबुल जरियिंचुनपुडु

(बलशाली) है वह वालिपुत्र। वालि की अपेक्षा अधिक है वह वायुपुत्र। वे ही तुम्हें रण में नहीं मार सकते ? उनसे भी बढ़कर है वालि का वह अनुज समर में बल (परिवार)-सहित तुम्हें पकड़कर वह सौमित्र ही तुम्हारा वध नहीं कर सकता ? हे मनुजाशनेन्द्र ! और एक बात सुनो, वैसे सोच विचारने पर तुम अभी (इस बात को) नहीं जानते हो। राम-लक्ष्मण ही क्यों, रविसून (सुग्रीव) ही क्यों (इनकी क्या आवश्यकता ?) कोमली उस सीता का कोपानल ही विरल रूप से, ब्रह्मा-रुद्र आदि देवताओं के वरद (प्रसन्न) हो दिए वरों से युक्त, हर के दिए चन्द्रहास (खड्ग) के साथ, साढ़े तीन करोड़ वर्ष की आयु से युक्त, कैलास (पर्वत) को उठानेवाली महान् शक्ति से युक्त, चल-रहित (स्थिर) सम्पत्ति से युक्त, ।। १३०० ।।

—भुजबल के दर्प से युक्त, दिशाओं को जीत लेनेवाले तेज से युक्त बने तुम्हें, हे रावण ! राक्षसकुल के साथ इसी क्षण व्यथित नहीं कर सकेगा ? (सीता) धर्म से पतिव्रता है, ऐसा न मानकर, तुमने कर्मपाश के कारण (उसे) लाकर, जल्दबाज़ी से क़ैद कर, उस पुण्यवती को प्रताड़ित किया, उस संकट से उत्पन्न वह्नि तुम्हें, (और) तुम्हारे कुल को, तुम्हारे समस्त आत्मीय जनों को हर प्रकार से जलाए बिना क्यों जाने देगी ? हे असुरेश ! पूछोगे कि वह कैसे होगा तो सुनो (बताती हूँ)। अनारत तुम दिग्विजय कर, अकलंकगति से अमरों को जीतकर, सकल लोकों में विचरण कर रहे थे, उस समय प्रथम युग में ब्रह्मर्षि-वर, प्रथित-उरु-सुज्ञान-परमार्थ-विद, परम

प्रथमयुगंबुन ब्रह्मर्षिवरुडु । प्रथितोरुसुज्ञानपरमार्थविदुडु
परमसात्त्विकगुणास्पदकुशध्वजुनि । वरपुत्रियगु वेदवतिनि गलंप
बरमपतिव्रत 'पापात्म ! नीदु । वरगर्वमंतयु वम्मुगा जेसि १३१०
सुतुलतो सतुलतो सोदरप्रभृति । हितुलतो भृत्यसंहतुलतो गूड
नमितविक्रमुडैन यतनिचे निन्नु । समरंबुलोपल जंपितु' ननुचु
नऱिमुऱि गोपिंचि याधर्मशील । मऱुगुचु शपियिंचें; मऱचिपोयितिवे?
यासति यीसीत यादि श्रीदेवि । भूसुतयै पुट्टे; भुवनरक्षकुडु
आदिनारायणुंडंबुजोदरुडु । वेदवेद्युडु रामविभुडैनवाडु; १३१५

कैकेशि रावणुनकु रामुनि महिम चेप्पुट

असुरुल मर्दिप नमरुल गाव । वसुमति रक्षिप वच्चें विष्णुंडु;
अॆऱुग नीवुनु नेनु नेंतटिवार ? । मैऱुगरु ब्रह्मरुद्रेंद्र प्रमुखुलु;
पुट्टिंचु बोषिंचु बॊलियिंचु बिदप । नॆट्टनु गाक ता नेकमै युंडु;
नतडंदऱिकि मेटि; यातनितोड । ब्रतिपोल्प दलचिन बापंबु गादे?
चॆदरि लोकमुलॆल्ल जॆडिनपिम्मटनु । वदलक युंडॆडिवाडु वो यतडु;
१३२०

सात्त्विक-गुणों के आगार कुशध्वज की वरपुत्री वेदवती को व्याकुल करने पर, (उस) परमपतिव्रता ने यह कहा 'रे पापात्मा ! तुम्हारे समस्त वर गर्व को व्यर्थ कर, ।। १३१० ।।

सुतों, सतियों, सहोदर आदि हितों, भृत्य-समूहों के साथ तुम्हारा वध अमित विक्रम वाले उससे (विष्णु से) समर में करवाऊँगी ।' शीघ्र क्रुद्ध हो, उस धर्मशीला ने क्षुब्ध होते शाप दिया था । (क्या उसे) भूल गए हो ? वह सती (वेदवती) ही यह सीता है । आदि श्रीदेवी भूसुता होकर जन्मी है । भुवनों के रक्षक, आदिनारायण, अंबुजोदर, वेदवेद्य (परमात्मा) प्रभु राम हुए हैं ।। १३१५ ।।

कैकेशी का रावण को राम की महिमा बताना

असुरों का मर्दन (संहार) करने, अमरों की रक्षा करने, वसुमती (पृथ्वी) की रक्षा करने विष्णु आए हैं । (उसे) जानने के लिए तुम्हारी और मेरी हस्ती ही क्या है ? ब्रह्मा-रुद्र-इन्द्र आदि भी नहीं जानते । (वह समस्त सृष्टि को) उत्पन्न करता, पोषण करता, लय करता, उसके बाद अविकल रूप से एक होकर रहता है । वह सब में श्रेष्ठ है, उसकी समता करने की सोचना पाप है न ? बिखरे हुए समस्त लोकों के नष्ट होने के बाद अविकल रूप से रहनेवाला वही तो है । ।। १३२० ।।

शरणन्न वेग ना सामजवरुनि । गरुण लीलाभति गाचें नाघनुडु;
मधुकैटभादुल महित राक्षसुल । नधिकतेजस्फूर्ति नणचें नाघनुडु;
चौच्चिच सोमकु जंपि श्रुतु लर्थितोड़ । देंच्चि ब्रह्मकु निच्चि दीपिंचेंनतडु;
अमृताब्धि दा द्रच्चिच यमृतंबु वडसि । यमरुलकुनु निच्चें नरय नाघनुडु;
भासुरंबुग दैत्यु बट्टि शिक्षिंचि । भूसति नेंत्तिन पुण्युडाघनुडु;
कडगि बालुनि गाव गंबंबुनंदु । बौंडमि कांचनकशिपुनि जीऱेंनतडु;
धरणि मूडडुगुल दानर्थि वेडि । पेंरिगि या बलि जेंऱपेंट्टे नाघनुडु;
राजसंबुन भृगुरामुडै पुट्टि । राजुल द्रुंचिन रणदक्षुडतडु;
तप्पक चेंप्पिति दनुजलोकेश ! । यिप्पुडु देवताहितमु चिंतिंचि
रामुडै जनियिंचें रविवंशमुननु । दामसगुण मेंचि दनुजेश! नीकु १३३०
ऒमि पापमों कानि, येंरुक चौप्पडदु;। कामांधुनकु धर्मगतुलेल कलुगु?
गोंडुकुचें नैननु गूतुचे नैन । नडरि कीर्तियकानि यपकीर्ति गानि
वच्चु गोत्रमुनकु वडि बेंद्दलकुनु । जेंच्चेंऱ ननि जनुल् चेंप्पेंडिदेंल्ल
नरय निंदलु रेंडु नसुरेश ! चूड । मऱि येंव्वरिकि वच्चें मनकु
गाकिपुडु ?

उस महान् ने शरण में आए सामज (गज)-श्रेष्ठ की करुणा से, लीला से रक्षा की, उस महान् ने मधुकैटभ आदि महित राक्षसों को अधिक-तेज-स्फूर्ति से दमन कर दिया। (पाताल में) पैठकर, सोमक का वध कर, चाहकर श्रुतियों को लाकर, ब्रह्मा को देकर वह दीप्त हुआ था। अमृताब्धि का मन्थन कर, अमृत प्राप्त कर, उस महान् ने उसे अमरों को दिया था। भासुर (प्रकट) रूप से दैत्य को पकड़, दण्डित कर, भूसति का उद्धार करनेवाला पुण्यी है वह महान् (व्यक्ति)। सप्रयत्न बालक की रक्षा करने के लिए स्तम्भ में उत्पन्न होकर, उसने काँचन-कशिप को मार डाला था। तीन चरण की पृथ्वी को चाहकर, माँगकर, बढ़-बढ़कर उस बलि को क़ैद किया था उस महान् ने। राजस (रजोगुण युक्त) से भृगुराम हो उत्पन्न होकर, राजाओं का संहार करनेवाला रणदक्ष है वह। हे दनुजलोकेश ! अवश्य कह रही हूँ। अब देवताहित की चिन्ता कर, राम हो, रविवंश में जन्म लिया है। हे दनुजेश ! तामस गुण के विजृंभित होने के कारण, ।। १३३० ।।

—पता नहीं कौन-सा पाप है, तुम्हें (कोई बात) समझ में नहीं आती। कामान्ध को धर्म की गतियाँ कहाँ से उपलब्ध होंगी ? कहते हैं कि पुत्र से हो या पुत्री से, गोत्र तथा वृद्धजनों को अतिशयता से कीर्ति हो या अपकीर्ति झट प्राप्त होती है। हे असुरेश ! सोच-विचारने पर निंदाएँ दो हैं।

अदि येट्टिदंटेनि नंतयु विनुमु । मदि गोंत दलपक मन शूर्पणखयु
आयन परमात्मुडनक कामिंचि । पोयि मुक्कुनु जेवुल् पोकार्चुकोनिये
बरसति यन कासपडि पट्टि तेच्चि । करकरि गुलमेल्ल गाल्चेदवीवु;
इंतकंटेनु निंद यिक नेंदु गलदु ? । पंतमेलोकों ? यिट्टि पापंबुलेल?
बलसि रक्षोराज्य प्रमुखुलंदरुनु । नेलमि विष्णुनितोड नेदिरिंचि कादे
चक्रंबु घातकु सैरिंपलेक । शुक्रशिष्युलु भुवि जौच्चिचरि वेड्रचि; १३४०
शंकलेटिकि; नीवु जन्मिचुकतन । ग्रुंकिन राक्षसकुलमेल्ल नेगडे
ननि मनंबुन गोंत यलरुचुंडितिनि; । दनुजेश! नाकोर्के तलकूडदय्ये;

कैकेशि रावणुनिकि जलप्रळयमु देल्पुट

जेकोनि लोकमुल् चेडिनपिम्मटनु । नेकमै युदकंबु लेपारुचुंड
मक्कुव नाजलमध्यंबुलोन । नोक्कडै तनकु दोडेव्वरु लेक
बालुडै यट वटपत्रमु मीद । लोलत देलाडु लोकरक्षकुडु

देखने पर वे (निंदाएँ) हमारे सिवा और किसको अब प्राप्त हुई हैं? कहोगे, वह कैसा तो सब कुछ सुनो। मन में कुछ भी न सोचकर हमारी शूर्पणखा यह न सोच कि वह परमात्मा है, कामभाव वश होकर, नाक और कान खो बैठी। परसती है, ऐसा न मानकर (उसकी) इच्छा कर, उसे (सीता को) लाकर, क्रूरभाव से तुम समस्त कुल को जला दोगे। इससे बढ़कर अपकीर्ति और कहाँ है? (इतना) हठ क्यों? ऐसे पाप क्यों? बली (गर्वीले) होकर सभी रक्षोराज्य-प्रमुख (राक्षस प्रमुख) शोभा से विष्णु का सामना कर ही, चक्र के आघात को सहन न कर सक, डरकर, शुक्रशिष्यों (राक्षसों) ने भुवि में प्रवेश किया। ॥ १३४० ॥

शंकाएँ क्यों? यह सोचकर कि तुम्हारे जन्म लेने के कारण पतन को प्राप्त समस्त राक्षसकुल (पुनः) शोभायमान हुआ, मन में कुछ प्रसन्न होती रही। हे दनुजेश! मेरी इच्छा सफल नहीं हुई।

कैकेशी का रावण को जलप्रलय (के बारे में) बताना

लगकर (समस्त) लोकों के विनष्ट होने के बाद, सब कुछ के एक (लय) होकर, (सर्वत्र) जल के शोभित रहते समय, प्रेम से उस जलमध्य में एक (अकेला) होकर, अपने को किसी सहचर के न रहने पर, बालक हो, उधर वटपत्र पर, चंचलता से, तैरते हुए, लोकरक्षक के कमनीय

कमनीयमगु सृष्टिकार्यंबुनंदु । विमलचित्तंबुन वॆसनुन्न नंत
गमलोदरुनि नाभिकमलंबु पुट्टॆ; । गमलंबुलो बुट्टॆ गमलसंभवुडु;
कमलासनुडु सृष्टिकार्यंबुकॊऱकु । नमर नवब्रह्मलनुवारि बडसॆ;
वरपुण्युलॆनट्टि वारिलोपलनु । बरमात्मुडय्यॆ नापौलस्त्यवरुडु;
गमलाप्तनिभुनकु घनयशोनिधिकि । विमलात्मुडै पुट्टॆ विश्रवसुंडु;
१३५०
नरुदार जन्मिचिततनिकि नीवु; । परिकिंप नालव ब्रह्मवुगावॆ ?
ब्रह्मसंतति येड ? परदारलेड ? । इम्महापातकमिट्टु सेयुटेड ?
चॆकॊनि लोकमुल् सॆड्रिचॆदवीवु? । लोकरक्षणगणलोलुरु वारु;
धर्मघातकुडवै तनरुदुवीवु; । निर्मलधर्मैकनिपुणुलु वारु;
मीड्रि तापसुलनु म्रिंगॆदवीवु; । वारु तापसुलनु वडि ब्रोतुरॆपुडु;
चेरि परस्त्रील जॆरुतुवु नीवु; । परदाररक्षकुल् परिकिंप वारु;
वेदबाह्युंडवै विहरिंतु वीवु: । वेदार्थसत्कर्म विहितुलु वारु;
धर्ममॆक्कड नुंडु दगिलि दैवंबु । निर्मलस्थितितोड निलुचु नक्कडनु
अॆक्कड दैवंबुलिपारुचुंडु । नक्कड विजयंबुलमरुचुनुंडु:
वरमिच्चि चनिनट्टि वनजजुतोड । नुरगकंकणुतोड नुरगुलतोड १३६०

सृष्टिकार्य में विमलचित्त को झट (तत्पर) करने के कारण, कमलोदर की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ। कमल में कमलसम्भव (ब्रह्मा) उत्पन्न हुआ। कमलासन (ब्रह्मा) ने सृष्टिकार्य के लिए समुचित रूप से नव ब्रह्माओं को प्राप्त किया। उन वर पुण्यात्माओं में वह पौलस्त्यवर परमात्मा हुए। कमलाप्त (सूर्य)-निभ (समान), घन यशोनिधि को विमलात्मा वाला विश्रवस उत्पन्न हुआ। ।। १३५० ।।

विरल रूप से उसके तुम उत्पन्न हुए हो। सोच-विचार करने पर तुम चतुर्थ ब्रह्मा नहीं हो ? कहाँ ब्रह्मा-संतति और कहाँ परदाराएँ ? ऐसा महापातक करना कहाँ (उचित है) ? जान-बूझकर तुम लोकों को विनष्ट कर देते हो, वे (राघव) लोकरक्षण-गुण-तत्पर हैं। तुम धर्मघातक होकर शोभित होते हो, वे निर्मल-धर्मैक-निपुण हैं। बढ़-बढ़कर तुम तपस्वी (जनों) को निगल जाते हो, वे झट तपस्वियों की सदा रक्षा करते रहते हैं। लगकर परस्त्रियों को तुम भ्रष्ट कर देते हो, सोचने पर वे पर-दाराओं के रक्षक हैं। तुम वेद-बाह्य होकर विचरण करते हो, वे वेदार्थ-सत्कर्म विहित हैं। धर्म जहाँ रहता है, दैव भी स्थिरता से, निर्मल स्थिति से वहाँ रह जाता है। जहाँ दैव शोभा से रहता है, वहीं विजय शोभा से

सुरसिद्धखेचरुल् सुमुखुलै वच्चि । यरिमुरि नीकुगा नड्डंबु निलिचि
काचिननैननु गाकुत्स्थवंशु । डेचिन निनु जंपकेल पोनिच्चु?
नॊप्पदॊप्पदु च्रलमॊप्पदु विडुबु । तप्पक चॆप्पिति दनुजलोकेश !
वालिन वरगर्ववह्निनलोपलनु । नेल कालॆदु पडि यॆंतयु नेचि ?
वद्धवैरमु मानि परिकिंच नादु । बुद्धि निर्मलमगु बुद्धिलो गोनुमु
तल्लिदंड्रुल बुद्धि दलमोचु धर्म । वल्लभुनकु गीडु वच्चुने तलप ?
दल्लि चॆप्पिनमाट तग दन कीवु । प्रल्लदंबुलु मानि परिकिंचि विनुमु;
अक्षरुं डमृतुंडु नखिलरूपुंडु । पक्षींद्रवाहुडु परमपावनुडु
मोक्षमिय्यगजालु मोहनमूर्ति । रक्षकुंडुरुकीर्ति रणकर्कशुंडु
आदिनारायणुंडमरुल ब्रोव । मोदंबुतो मुनिमुख्युल गाव १३७०
भूदेविभारंबु बुच्चिपोवैव । नादशरथुनि कट्लमरि जन्मिचॆं;
नेराजु जलनिधि निंकिप जालु । नेराजु हरुबिल्लु नॆलमि मोपॆट्टि
तृणलील विरिचॆनु दिविजुलुप्पॊंग । गुणरत्नघनखनि कोदंडगुरुडु
मनुकुलाधीशुंड माधवुंडरय; । निनवंश्युदेवियौ निंदिरादेवि;

रहती है। वर देकर गए हुए वनज-ज (ब्रह्मा) के साथ, उरग-कंकण (शिव) के साथ, उरगों के साथ ॥ १३६० ॥

—सुर-सिद्ध-खेचर (तुम पर) सुमुख (प्रसन्न) हो आकर, अतिशीघ्र बीच में पड़ जाएँ, रक्षा करना चाहें तो भी काकुत्स्थवंश वाला (राम) विजृंभित होकर तुम्हारा वध किए बिना कैसे जाने देगा ? (यह) संगत नहीं है, संगत नहीं है, हठ करना नहीं चाहिए। हे दनुजलोकेश ! अवश्य कह दिया है। अधिक विजृंभित होकर वर-गर्व-वह्नि में पड़कर क्यों भस्म हो जाते हो? बद्ध वैर को छोड़कर, सोच-विचारकर, मेरी बुद्धि (हित-वचनों) को निर्मल बुद्धि से मन में ग्रहण करो। माता-पिता के हित-वचनों को सिर आँखों रखनेवाले धर्म-वल्लभ को सोचने पर कहीं हानि होती है ? माता की कही बात को इनकार न कर तुम बकवास छोड़कर, सोच-विचार कर सुनो। अक्षर, अमृत, अखिल-स्वरूप, पक्षीन्द्रवाह, परम-पावन, मोक्ष दे सकनेवाला, मोहनमूर्ति वाला, रक्षक, उरु-कीर्तिमान, रणकर्कश, आदिनारायण, अमरों की रक्षा करने के लिए, मोद से मुनिमुखयों की रक्षा करने के लिए, ॥१३७०॥

—भूदेवी के भार को नष्ट करने के लिए, उस दशरथ के यहाँ उचित रूप से पैदा हुआ। जो राजा जलनिधि को सुखा सकता है, जो राजा हर के धनुष को शोभा से संधान कर, दिविजों के (प्रसन्नता से) फूल उठने पर, तृण के समान तोड़ दे सकता है, वह गुणरत्न-घन-खनि (निधि), कोदण्डगुरु, मनुकुलाधीश, सोच-विचारने पर माधव है, इनवंश वाले की देवी इन्दिरादेवी

जगतीतनूजात जगदेकमात । निगमसन्नुतपूत निगमविख्यात
यमितगुणोपेत यैन यासीत । ब्रमदंबुतो नीति वाटिंचि बुद्धि
सकलभूषणमणिसहितंबु गाग । सकलेशुडगु रामचंद्रु ब्रार्थिंचि
यिप्पुडॆ कॊनिपोयि यॆलमि रामुनकु । नॊप्पिंचि नी प्राणमॊगि
गाचुकॊनुमु;
ता नॊरुवरमुलु दप्पिंचु गानि । ता निच्चुवरमुलु दप्पिपलेडु;
गुरुधर्मपोषणगुणु विभीषणुनि । हरिभक्तितोषणु ननघपोषणुनि
१३८०
समर विभीषणु सत्यतोषणुनि । ग्रमभॊप्प गनुटयु गडु लॆस्स नीकु;
नतिमृदु भाषणु ना विभीषणुनि । नतिवेग प्रार्थिंचि यतनि रार्विचि
परग लंकाराज्य पट्टंबु गट्टि । शरणनि ग्रॊक्कु मा जननायकुनकु;
शरणन्न नॆंटुवंटि चंदबुनंदु ।गरुणतो गाचु ना करि गाचुरीति"
ननि पॆक्कुभंगुल नध्यात्मविद्य । घनमति यैनट्टि कैकेशि तनकु
निर्मलतरपुण्य नीतिमार्गंबु । धर्मतत्परबुद्धि दगिलि चॆप्पिननु
दललकॆल्लनु बॆद्दतल यैनयट्टि । तलतोड गूड नातललॆल्ल वंचि

है वह सीता जगती तनूजा, जगदेकमाता, निगम-सन्नुत-पूता (पवित्र चरित्र वाली) अमितगुणोपेता है। प्रमोद से नीति (की बात) मानकर, बुद्धि (-मत्ता) से, सकल-भूषण-मणि युक्त कर, सकलेश रामचन्द्र की प्रार्थना कर, अभी (उसे) ले जाकर, प्रेम से राम को मनाकर, झट अपने प्राणों की रक्षा कर लो। (वह) स्वयं दूसरों के दिए वरों से (किसी को) बचा सकता है किन्तु स्वयं अपने दिए वरों को व्यर्थ नहीं कर सकता। गुरु-धर्म पोषण-गुण वाले हरिभक्ति-तोषण (तुष्ट रहनेवाले), अनघ-पोषण (करनेवाले) ॥ १३८० ॥

—समर विभीषण, सत्य-तोषण विभीषण को क्रम से देख लेना तुम्हारे लिए बहुत उत्तम है। अतिमृदु भाषण वाले उस विभीषण की अतिशीघ्र प्रार्थना कर, उसे बुलवाकर, शोभा से लंकाराज्य के लिए पट्टाभिषिक्त कर, उस जननायक (राजा राम) की शरण जाकर प्रणाम करो। शरण माँगने पर, किसी भी परिस्थिति में, उस करि (गजेन्द्र) की रक्षा करने के समान, वह रक्षा करता है।" (इस प्रकार) कह, अनेक प्रकार से अध्यात्म। विद्या में घन (बड़ी)-मति वाली कैकेशी ने निर्मलतर पुण्य (प्रद)-नीति मार्ग को धर्मतत्पर बुद्धि से, चाहकर बताया। (कहने पर भी) सिरों में सबसे बड़े सिर के साथ सभी सिरों को झुकाकर, उचित रूप से दण्ड-प्रणाम कर, पूर्ण भक्ति से खड़े होकर रावण, पूर्व में उस सनत्सुत से सुने भासुर

दंड प्रणामंबु दग नाचरिंचि । निंडिन भक्तितो निलिचि रावणुडु
आ सनत्सुतुनिचे नट मुन्नु विन्न । भासुरंबैनट्टि परतत्त्वमॆल्ल
दनकु सिद्धिचुट दनलोन दॆलिस । मनमुन नॆंतयु मग्नुडै यपुडु १३९०
तलकॊन्न वेड्कतो दललॆल्लनॆत्ति । तलपक यप्पुडु तल्लितो ननियॆ:
"नॆऱुगुदु नन्नि; ने नॆऱुगनियट्टि । मौड़्गुलु गलवे मीमूडुलोकमुल?
दरमिडि यीपरतत्त्वंबुतॆड़्गु । लॆड़्गिगि यॆऱुंगवु हृदयंबु चॆदिरि;
तल्लि ! नीवॆड़्गिगिन धर्मशास्त्रंबु । लॆल्ल निष्पलमुलैयिप्पुडु तोचॆ;
दल्लिदंड्रुलु पल्कु तप्पुलॆन्नैन । नुल्लंबुलो नाटि युंडवु गानि
यामहात्मुडु विष्णुडैन रामुनकु । नीमेनितो बोयि ये म्रॊक्कजाल;
हेयपादार्थमै यॆसगुचुन्नट्टि । कायंबु वॆंचुट कष्टंबु गादॆ ?
नरुलु वानरुलु नॆन्नग नॆंतवारु ? । सुरलकन्ननु वारु शूरुले तलप?
गॆलुतु नवश्यंबु; गॆलुपु लेकुन्न; । निल रामु शरमुल नील्गुदु गानि,
हीनमानवुनकु ने म्रॊक्कजाल; । मानु मिम्माट मुम्माटिकोयम्म!
१४००
चालु नी बुद्धुलु, चालु नी ममत, । चालिंचवैतेनि जननि! विच्चेयु;

समस्त परतत्त्व के अपने को सिद्ध होने की बात अपने (मन) में जानकर, मन में अत्यधिक मग्न हो रहा । ।। १३९० ।।

तब सम्पन्न उत्साह से समस्त सिरों को उठाकर, सोचे बिना तब माता से (उसने) कहा—"सब जानता हूँ । मैं न जानता हूँ, ऐसे भी षड्यन्त्र इन तीनों लोकों में कहीं हैं ? (नहीं) । इस परतत्त्व के विधान को जानकर भी, हृदय के विकल हो जाने से, नहीं जानती हो । हे माता ! अब लगता है, तुम जिन समस्त धर्मशास्त्रों को जानती हो, वे सब निष्फल हैं माता-पिता कितने ही ग़लत (बातें) कहें, वे मन में गड़कर तो नहीं रहते । किन्तु उस महात्मा, विष्णु, राम को इस शरीर से जाकर मैं प्रणाम नहीं कर सकता । घृणित पदार्थ हो विराजमान (इस) काया का संवर्द्धन करना भी कठिन है न ? नर (और) वानर गिनती करने में कितने हैं (उनकी शक्ति ही कितनी है) ? क्या सुरों की अपेक्षा वे शूर हैं ? अवश्य (उन्हें) जीत लूँगा । विजय (प्राप्त) न हो तो राम के बाणों से मर जाऊँगा किन्तु हीन मानव को प्रणाम नहीं कर सकूँगा । हे माता ! यह बात (उपदेश) छोड़ दो, छोड़ दो, छोड़ दो । तुम्हारे हित-वचन बस हैं, तुम्हारी ममता बस है । (इन बातों को) बन्द न कर सकोगी तो हे जननी ! पधारो (यहाँ से) । ।। १४०० ।।

चाहकर अपने छोटे पुत्र के साथ अनुपम सम्पत्ति के साथ इस लंका

गॊनकॊनि नी पिन्न कोडुकुतो गूडि । यॆनलेनि संपद नेलु मीलंक;
ईलोकसंपदलिन्नि नीकृपनु । नालोलमति नेनु ननुभविंचितिनि;
बलिमिनि गलिमिनि भर्ममितलेक । बलिसि लंकेलिति बदलक्षलेडु
लॆलमि नाकुनु नॆदुरॆव्वरु लेक । विलसिल्लु प्राभवविभवंबु मॆऱसि;
विच्चॆयु नगरिकि वेगंब'' यनिन । नच्चुगा रावणुंडाडुमाटलकु
गैकेशि मदिलोन गडु जोद्यमंदि । याकॊडुकुन जूचि यनियॆ ग्रम्मऱनु:
''वरतपोनिधि विश्रवसुडानतिच्चु । परतत्त्व मदियेल परिवोवु''
ननुचु
वनित यप्पुडु माल्यवंतुनि जूचि । ''मनमॆंत चॆप्पिन यानुने यितडु''
अन विनि यिट्लने नम्माल्यवंतु: । 'डॆनयंग नीविप्पु डेल चॆप्पॆदवु ?
१४१०
जडुनकु नार्युलु चाटु वाक्यमुलु । कडु ब्रीति जॆप्पिन गादनि विनडु;
गान गानडु वीडु कार्यंबु तॆऱगु । मानुमु नीविंक मानिनि ! लॆम्मु''
अनवुडु गैकेशि यट्लकाकनुचु । ''नॆनपंग जॆडुत्रोव येटिकि दप्पु?
नेतॆऱंगुन बोवदिदि दैवकृत्य । मोतंड्रि! मननीति युचितमे'' यनुचु
दातयु दानुनु दलकॊंडु वगल । भ्रातलु दल्लुलु बांधवुल् गलग

पर शासन करो। इस लोक की इतनी सम्पदाओं (वैभवों) को, तुम्हारी कृपा से आलोकमति (कामुकता) से, भोगा है। बलयुक्त (और) ऐश्वर्य-युक्त हो, किसी भी प्रकार के भय से रहित हो, गर्वीला हो, दस लाख वर्ष तक लंका पर शासन किया है। प्रतिपक्षी के अभाव में, विलसित प्राभव-वैभव से शोभा से विराजमान हूँ। (अब तुम) शीघ्र नगरी में पधारो।" (ऐसा) कहने पर, रावण की निश्चल बातों पर कैकेशी मन में अति चकित हो, उस पुत्र को देखकर फिर बोली—"वरतपोनिधि विश्रवसु का दिया आदेश (कथन) परतत्त्व (से सम्बद्ध) व्यर्थ कैसे जाएगा ?" (ऐसा) कहते हुए उस स्त्री ने तब माल्यवन्त को देखकर कहा—"हम कितना भी कहें क्या यह विरत होगा ? (नहीं)। कहने पर सुनकर उस माल्यवन्त ने यों कहा—"अब तुम उचित रीति से (और अधिक) क्या कहोगी ? ॥१४१०॥

—जड़ (व्यक्ति) को आर्य (जन) हित-वचन अधिक प्रीति से कहें तो वह उन्हें नहीं मानता है। अतः यह कार्य के विधान को समझ नहीं सकता है। हे मानिनी ! अब तुम छोड़ दो, उठो।" ऐसा कहने पर 'वैसा ही हो' कहकर,-यह कहते कि "कुमार्ग से कैसे हटेगा? हे तात! यह दैवकार्य किसी भी तरह से नहीं टलेगा। हमारे हित-वचन कहाँ उचित लगते हैं ?" तात और स्वयं, भ्राताओं, माताओं और सम्बन्धियों के विचलित-व्याकुल

जनि यप्पुडा सभासदनंबु बासि । तन नगरिकि बोयि धर्मक्रमंबु
दन नित्यकर्मंबु दप्पक यपुडु । मनमुन देलिसि सम्मदमुन नुंडे;
नट दशग्रीवुंडु नधिकदर्पमुन । बटुतरनिस्साणभांकृतुल् सेलग
जेयिंचि राक्षससेन रार्विचि । यायोधनोद्युक्तुलै येपुमीड्रि
युन्न मंत्रुल जूचि युग्रुडै पलिकें । गन्नुल गोपंबु गडलुकोनंग: १४२०
"श्रीरामचंद्रुंडु सेतुवु गट्टि । वीरुडै वच्चि सुवेलाद्रि विडिसें;
बटुगति नामीद बगवाडु राग । निटु निद्रवोवुट ये नीति मीकु?
मिम्मेमि सेयुदु? मिमु मंत्रुलनुचु । नम्मिन वीड्रिडि ननु नंदु गाक!
कादु पो मीरुपेक्षापरुलैन । नादेस गीडोंदुना येंव्विधमुन ?
सामभेदंबुल जक्क गाकुन्न । रामुनितो बेंचि रणमु सेसेंदनु"
अनि रावणुंडाड नखिलराक्षसुलु । दनिकिन सिग्गुन दल लेत्तलेक
यूरकुंडिरि; 'यूरकुंड ने' लनुचु । धीरुडै यावेळ दिविजारियैन
रावणुतोंड दर्पंबुन दनदु । चेव दोपग निंद्रजित्तुंडु वलिकें:
"देव! रावण! सर्व देवसंघमुल । नाविधंबुन गेल्चिनंतटि नीकु
निल येल गाननि यीरामलक्ष । णुलचेत नेकीडु नूल्कोनु निक? १४३०

होने पर, तब उस सभासदन को छोड़, अपनी नगरी में जाकर धर्मक्रम तथा अपने नित्यकर्म को न छोड़, मन में (सब कुछ) जानकर, सम्मोद से रही। वहाँ दशग्रीव (रावण) अधिक दर्प से, पटुतर-निस्साण भांकृतियों (ध्वनियों) के व्याप्त होने पर, राक्षससेना को बुलाकर, आयोधन (युद्ध) के लिए उद्युक्त (तैयार) हो, अधिक विजृंभित बने हुए मन्त्रियों को देखकर, आँखों से क्रोध के परिव्याप्त होने पर, उग्र हो यों बोला— ।। १४२० ।।

—"श्रीरामचन्द्र ने सेतु का निर्माणकर वीर हो आकर, सुवेलाद्रि पर पड़ाव डाल दिया है। पटुगति से मुझ पर शत्रु के आने पर, इस प्रकार सोते रहना आपके लिए नीति संगत है? तुम लोगों को क्या करूँ? तुम (लोगों) को मन्त्री मानकर भरोसा करनेवाले मुझ मूर्ख को दोष देना चाहिए। जाने दो, आप उपेक्षा कर दें तो मेरे प्रति किसी प्रकार की हानि कैसे होगी? साम तथा भेद से (कार्य) न बन सकेगा तो क्रम से राम से रण करूँगा।" (ऐसा) रावण के कहने पर, अखिल राक्षस अतिशय लज्जा से सिर उठा न सक, चुप रहे। 'चुप क्यों रहें' ऐसा सोच, धीर बन, दिवजारि रावण से दर्प के साथ तथा अपनी शक्ति को प्रकट करते हुए इन्द्रजित ने कहा—"हे देव! हे रावण! सर्व देव संघों को उस प्रकार जीतनेवाले तुम्हें पृथ्वी पर शासन न कर सकनेवाले इन राम-लक्ष्मणों से अब हानि किस प्रकार होनेवाली है? ।। १४३० ।।

वलदु चिंतिप; ने वालिनवाड; । नलवु ज्ञलंबु धैर्यमु गलवाड;
नागपाशंबुल नाकीशु गट्टि । यागति नेपना यसुराधिनाथ !
कालकेयादि राक्षसवीरवरुल । दोलना दानवोद्धुरसंगरमुल ?
मनुजुल गृशुल दापसुल दुर्बलुल । दनुजेश ! दशरथतनयुल नाकु
जंपुट पॆद्दये समरंबुलोन ? । जंपॆद, नीमदि संदियपडकु"
मन विनि यतिकामुडनुवाडु बलिके । दनुजेश्वरुनि तोड दज्ज्ञुलु मॆच्च: १४३६

रावणुनकतिकायुडु नीति सॆप्पुट

"विनु दानवेश्वर! विशदनीतिज्ञु । डनु पॆंपुतोड नीयखिलंबु वॊगड
बरुल सॊम्मुल कासपडक वर्तिंचु । नरनाथुडिल यॆल्लनाडुनु नेलु;
निदि नीतिगति यनि यिच्च र्जिंतिप । कॆंदरॆंदु लेदनि येल चूचॆदवु ?
इनकुलोत्तमुडु नी कॆग्गेमिचेसॆ ? । दनुजेश! नीकु नातनि देवियेल? १४४०
नीदैन लंकयु निन्नुनु जॆरुप । नीदुष्टराक्षसु लॆत्तुकोन्नारु;
गावुन सीत राघवुनकु निच्चि । या विभीषणुनकु नट्टु लंकयिच्चि

—चिन्ता करनी नहीं है, मैं समर्थ हूँ। शक्ति, हठ, धैर्य से युक्त हूँ। हे असुराधिनाथ! नागपाशों से नाकीश (वानरेश) को पकड़कर उस प्रकार सताया नहीं था? कालकेय आदि राक्षसवीरों को दानवोद्धुर संगरों में भगाया नहीं था? हे दनुजेश! कृश तापस तथा दुर्बल मनुजों, दशरथतनयों को, युद्ध में मार डालना मेरे लिए कौन बड़ी बात है? मन में सन्देह मत करो, (उन्हें) मार डालूँगा।" ऐसा कहने पर सुनकर, अतिकाय नामक (राक्षस) दनुजेश्वर से बोला जिसे तज्ञ (विज्ञ) सराहें ॥ १४३६ ॥

रावण को अतिकाय का हित कहना

"सुनो दानवेश्वर! विशद नीतिज्ञ की प्रसिद्धि से इस अखिल (समस्त सृष्टि) के सराहना करने पर, दूसरों की सम्पत्ति की आशा न कर व्यवहार करनेवाला नरनाथ धरती पर सदा शासन करता है। यह नीति मार्ग है, ऐसा मन में न सोचकर, मेरा सामना करनेवाला कोई नहीं है, ऐसा क्यों सोचते हो? इनकुलोत्तम (राम) ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? हे दनुजेश! तुम उसकी देवी क्यों हर लाये? ॥ १४४० ॥

—तुम्हारी लंका का तथा तुम्हें विनष्ट करने का इन दुष्ट राक्षसों ने बीड़ा उठाया है। अतः सीता को राघव को दे-देकर, उस विभीषण को लंका

यूनिन भक्तितो नूरकयुंडि । मानितंबुग बुद्धिमंतुंड वगुम"
यनि पेक्कुभंगुल नतिकायुडपुडु । तनतोड बलुकंग दानवेश्वरुडु
अतिकायु माट दानात्म गैकोनक । नतिसाहसस्फूर्ति नप्पुडु मऱियु
शुकसारणुल जूचि शूरुडै पलिकॆ । "नीक मानवुंडब्धि नुऱक बंधिंचि
घनुडैनवाडेंदु गल? डिदिचित्र; । मनयंबु रामु डी यंबुधि गट्टॆ
ननुचुन्नवारु; मीरासेन जॊच्चि । घनमतुलै यॆल्ल क्रममु वीक्षिंचि
रं" डनि पनिचिन रयमुन वारु । दंडि वानरवेषधारुलै वच्चि
वनमुलयं दुपवनमुलयंदु । ननुपमलील महाद्रुलयंदु १४५०

शुकसारणुलु रामसेनल जूचिवच्चुट

वरसेतुवंदु नव्वार्धियव्वलनु । गुरुगुहांतरमुल गॊमरैनयॆडल
गलयंग विडिसिन कपिसेन जूचि । तललूचि वॆऱगंदि तलकि या चरुलु
मेनुलु गरुपार मॆल्लन जॊच्चि । वानरसेनलो वच्चुट जूचि
यॆऱिंगि बिभीषणुं डेचि पट्टिंचि । युऱक वांड्रनु रामुनॊद्दकु दॆच्चि
"मनुजेश ! रावणु मंत्रुलु वीरु: । वनचरवेषुलै वच्चिनवारु;

दे देकर, स्थिर भक्ति से चुपचाप रहकर, मान्य रूप से बुद्धिमान बनो।" (ऐसा) कह अनेक प्रकार से तब अतिकाय के कहने पर, दानवेश्वर ने, अतिकाय की बात पर ध्यान न देकर, अतिसाहस-स्फूर्ति से तब फिर शुक-सारणों को देखकर शूर हो कहा—"अब्धि को यूँही (अनायास) बाँधकर महान् बना मानव कहीं है? यह तो विचित्र है। (लोग) सतत कहते हैं कि राम ने इस अंबुधि को बाँध दिया है। तुम (लोग) उस सेना में प्रवेश कर, घनमति से समस्त क्रम (विधान) को देखकर आओ।" कहकर भेजने पर, शीघ्रता से वे अतिशयता से वानर वेषधारी हो, आकर, वनों में, उपवनों में, अनुपम लीला से महाद्रियों में, ॥ १४५० ॥

शुकसारणों का राम की सेनाओं को देख आना

—वरसेतु पर, उस वारिधि के उस पार, गुरु-गुहान्तरों में सुन्दर बने स्थानों पर, शोभा से पड़ाव डाले हुए कपिसेना को देखकर, सिर हिलाकर, आश्चर्यचकित हो, विचलित हो उन (गुप्त) चरों के, शरीरों के (भय से) पुलकित होने पर, धीरे से प्रवेश कर, वानरसेना में आते देख, जानकर, विभीषण विजृंभित हो, (उन्हें) पकड़वाकर, यूँही उन्हें राम के पास लाकर, (कहा)—"हे मनुजेश! ये रावण के मन्त्री हैं, वनचर वेषधारी हो आए हैं। ये शुकसारण हैं। ये (इस सेना में) घुसकर, यहाँ के समस्त (समाचार)

शुकसारणुलु; वीरु सोच्चि यिव्वीट । सकलंबु गनुगोनि चनगलवार"
लनवुडु नाचारु लतिभीति नोंदि । मुनुकोनि चेतुलु मोगिचि म्रोक्कुचुनु
"देव ! रावणुडु वुत्तेंचिन चरुल; । माविभीषणु चेप्पिनंतयु निजम;
येचि या रावणुं डेलमि मीसेन । जूचि रम्मनवुडु जूड वच्चितिमि"
अनुटयु नव्वुचु ननियें राघवुडु: । "विनुडु, रावणु मंत्रिविभुलौटजेसि १४६०
मिम्मु जंपुट दगु; मिमु जंपगानि; । मिम्मु जंपग वच्चु मेलेमि माकु ?
नदि सेप्पनेल ? वीडंतयु जूडु । 'डदि सूड मिदि सूड' मनक मीरिप्पु
डिटु तेरकोनग वीडेंतयु जूचि । यटुपोयि वेस जेप्पु डारावणुनकु;
नेलावु नम्मि ता निट सीत देच्चे । नालावु जूपरम्मनु; डाजिलोन
नेल्लि यीलंकलो नेल्लराक्षसुल । द्रुळ्ळेडि तन्नुनु दुनुमाडु ननुडु;
चनु" डनि रावणु चारुल वनिचे । जननाथु डारामचंद्रुडु प्रीति;
वारु विभीषणुवलन नव्वीडु । वारक सकलंबु वडि जूचिपोयि
रावणु गांचि या रावणुतोड । "देव ! नीपंचिन तेरुगुन बोयि
कपिसेन नेंतयु गनुगोनुचुंड । नेपमात्रमुन मम्मु नीतम्मु डेरिगि

को देखकर जाएँगे ।" ऐसा कहने पर, वे चर अति भीत होकर, प्रथमतः हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए बोले—"हे देव ! (हम) रावण के भेजे चर हैं। विभीषण ने जो कुछ कहा वह सब सच है । विजृंभित होकर, उस रावण के शोभा से आपकी सेना को देख आने के लिए कहने पर, देखने आए हैं ।" (ऐसा) कहने पर हँसते हुए राघव ने कहा—"सुनो, रावण के श्रेष्ठ मन्त्री होने के कारण, ।। १४६० ।।

—तुमको मार डालना उचित है। तुम्हें मार तो नहीं डालूँगा । तुम्हें मार डालने से हमें क्या लाभ होगा ? वह कहना क्यों ? (हमारे) समस्त स्थान देख लो । 'यह नहीं देखा, वह नहीं देखा' (ऐसा) न कह, अब तुम स्पष्टता से समस्त स्थानों को देखकर, वहाँ जाकर झट उस रावण से कह दो । किस सामर्थ्य पर भरोसा कर वह सीता को यहाँ लाया था, उस सामर्थ्य को दिखाने के लिए आने को कह दो कह दो कि परसों युद्ध में इस लंका के समस्त राक्षसों को, उसे भी मार डालूंगा, जाओ ।" (ऐसा) कह रावण के चरों को जननाथ रामचन्द्र ने प्रीति से भेज दिया । वे विभीषण के द्वारा उस समस्त स्थान को निरन्तर शीघ्रता से देखकर जाकर, रावण को देखकर, उस रावण से (कहा)—"हे देव ! तुम्हारे भेजे विधान के अनुसार जाकर, कपिसेना को अधिकता से देख रहे थे । इशारे भर से

पट्टिंचि कट्टिंचि भानुकुलेशु । कट्टेदिटिकि देच्चि कलुषंबुतोड १४७०
जंपिपदलचिन सदयुंडुगान । जंपिपडय्ये निक्ष्वाकुवल्लभुडु;
नीलंकयुनु निन्नु निखिलराक्षसुल । नालंबुलोपल नणगिचुटकुनु
रामभूपालु शौर्यमु जेप्पनेल । सौमित्रि योक्कडे चालु लंकेंद्र !
सुरवैरि ! सेतुवु जूचिति; मंदु । नेरसि वानरसेन निंडि युन्नदियु;
नदि शतयोजनंबैनट्टि निडुपु । पदियोजनंबुल पऱ्पुन नोप्पे;
गपिसेन यितनि गणुतिंपरादु; । कपुलाडकाडकु घनगिरुलंदु
विडिसिन सेनयु विडियु सेनयुनु । विडिदलपट्लकु वेदकु सेनयुनु
नुदधिकि नव्वल नुंडु सेनयुनु । वदलक नऱियुनु वच्चु सेनयुनु
नेयुंटकु बराकु नात्मलो वेऱ्गु । पायनि वेऱ्पुनु ब्रभविंचे देव !
योक्कोक्कचोटुन नुन्न यासेन । लेक्किंचि ब्रह्मयु लिखियिंपलेडु; १४८०
कान नारामुनि गनि सीत निच्चि । दानवनाथ ! मोदंबुननुंडु"
मनवुडु रावणुं डामाटलेल्ल । विन निपुगाक क्रोव्विन रोषमेत्ति
"देवगंधर्वुलेत्तिन नैन सीत । नेविडुतुने ? येल यीपंदतनमु ?

हमें तुम्हारा भाई जान गया और पकड़कर, बाँधकर, भानुकुलेश के समक्ष ले जाकर, कलुष (भाव) से, ।। १४७० ।।

—(हमें) मरवा डालना चाहा तो सदय होने के कारण इक्ष्वाकुवल्लभ ने हमारा संहार नहीं कराया। हे लंकेन्द्र! युद्ध में तुम्हारी लंका को, तुमको (तथा) अखिल राक्षसों को दबा देने के लिए राम भूपाल का शौर्य क्यों, अकेला सौमित्र ही पर्याप्त है। हे सुर-वैरी ! सेतु को देखा है, उसमें वानर सेना भरी हुई है। वह (सेतु) शतयोजन की लम्बाई (तथा) दस योजन की चौड़ाई से शोभित है। कपिसेना की गिनती नहीं कर सकते। कपि जहाँ-तहाँ (फैले हुए) हैं, घन-गिरियों में पड़ाव डाली हुई सेना, पड़ाव डालने वाली सेना, पड़ाव के लिए (स्थान) ढूँढनेवाली सेना, उदधि (समुद्र) के उस पार स्थित सेना, निरन्तर आनेवाली सेना के होने से आत्मा (मन) में आश्चर्य और अत्यन्त भय उत्पन्न हुए। हे देव ! एक-एक स्थान पर स्थित उस सेना की गिनती कर ब्रह्मा भी लिख नहीं सकता। ।। १४८० ।।

अतः उस राम को देख (दर्शन कर), सीता को देकर, हे दानवनाथ! मोद से रहो।" ऐसा कहने पर, वे बातें श्रवण सुभग न होने से दर्प से रोषपूर्ण होकर बोला—"देव गन्धर्भ भी आक्रमण करें तो भी सीता को छोड़

मिम्मु गोतुलु वट्टि मॆंदिचिन नॊच्चि । बम्मॆरवोवुचु बऱतॆंचिनारु;
वलव दोडकुडु; दुर्वारुलै मिम्मु । दलचि कोतुलु रारु दाडि मी वॆनुक
ननि धीरुडै बलिक यारावणुंडु । चनि तनतो शुकसारणुल् नडव
मिक्किलि पॊडवैन मेडपै नॆक्कि । यक्कपिबलमुल नंतयु नपुडु
चूचि यद्भुतमंदि शुकसारणुलकु । "नीचंदमुन नुन्न यीसेनलोन
नॆव्वडु मुंगल नेपारि नडचु ? । नॆव्वडॆव्वडु वॆन्क नेमऱकुंडु ?
नॆव्वरु शूरु ? डिंदॆव्वडु वलति ? । यॆव्वनिमाट लायिनसूति सेयु ? १४९०
नॆव्वनितो रामु डिष्टंबु वलुकु ? । नॆव्वनिचे सेन येपारियुंडु ?
नॆव्वरु रेवग लीसेन गातु ? । रॆव्वरु सामंतु लीसेनलोन ?
नॆव्वडु सुग्रीवु ? डॆव्वडु रामु ? । डॆव्वडु लक्ष्मणुं ? डॆव्वडंगदुडु ?
चूपुडा यॆर्पड; जूपिति रेनि । गोपिंप ने वारि गुणमुलु विन्न"
नन विनि सारणुं डारावणुनकु । विनुपिंप दॊणगॆ ब्रवीणत मॆऱसि:

रावणुनकु सारणुडु कपिपुंगवुल दॆलुपुट

"देव ! पुळिंदानदी तीरवर्ति । पावकसुतुडैन प्रबलुडीधात्रि;

दूंगा ? यह कायरता क्यों ? तुम्हें बन्दर जानकर, पकड़कर मर्दन करने से, तुम भ्रान्त होकर भाग आए हो, डरो मत। दुर्वार बने तुम (लोगों) का स्मरण कर, तुम्हारे पीछे बन्दर धावा बोलते नहीं आएँगे।" ऐसा धीर हो बोलकर, वह रावण, अपने साथ शुकसारणों के चलने पर जाकर, अत्यन्त ऊँचे सौध पर चढ़कर, तब उस समस्त कपिबल को देखकर, चकित हो, शुकसारणों से बोला—"इस प्रकार की इस सेना में कौन शोभा से आगे-आगे चलेगा ? कौन पीछे असावधान हुए बिना रहेगा ? कौन शूर है ? कौन समर्थ है ? किसकी बातें वह इनसुत (सुग्रीव) मानता है ? ।। १४९० ।। किससे राम प्रिय (वचन) कहता है ? किसके कारण सेना शोभित रहती है ? कौन किस प्रकार इस सेना की रक्षा करते हैं ? इस में कौन सामन्त हैं ? सुग्रीव कौन है ? राम कौन है ? कौन लक्ष्मण है ? कौन अंगद है ? वह विधान बताओ। बताओगे तो उनके गुणों को सुनकर, मैं तुम पर क्रुद्ध नहीं होऊँगा।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, वह सारण प्रवीणता से प्रकाशित होकर, उस रावण को सुनाने लगा।

रावण को सारण का कपि-पुंगवों के बारे में बताना

हे देव! इस धरती पर पुलिंदा तीरवर्ती (तथा) पावक का सुत है प्रबल

वीडॆ यीलंकॊल्ल वॆस बॆल्लगिंचॆ । बॊडिगा नार्पुलु बॊब्बलु सॆलग;
गुरुतरकपिनायकुलु लक्ष गॊलुव । दरुचरसेनमुंदऱ नुन्नवाडु
अलघुसत्त्वुडु नीलुडनुवाडु देव ! । जलजाप्तसुतुनकु सैन्यपालकुडु;
वीकतो दिक्कुलु वॆस बॆल्लगिल्ल । दोक दार्टिचुचु दुर्दमवृत्ति १५००
वॆऱगंद जेयुचु वेयुपद्ममुलु । मऱिनूरु शंखमुल् मर्कटोत्तमुलु
बलवंतुलगुवारु बलसि तन् गॊलुव । गॊलुवुन्नवाडॊक्ककॊंडयु बोलॆ
वालिनंदनुडल्लवाडॆ यंगदुडु; । वालिकंटॆनु बलवंतुडु वाडु;
अडरंग नाचंदनाद्रिवल्लभुडु । कडु ब्रसिद्धुडु विश्वकर्मनंदनुडु
विनु प्लवंगंबुलु वेयुगोट्लुनु । नेनुबदिलक्षलु नेपारि कॊलुव
घनमैन सेतुवु गडकतो गट्टि । वनचरसेन निव्वलिकि दार्टिचि
वालिन नलुडु वो वाडु दैत्येंद्र ! । वालिनंदनुन कव्वल नुन्नवाडु;
तरुचरयूथमुल् तनु बॆक्कु गॊलुव । सुरलोककंटक ! सुतरुडन्वाडु;
ननसेनतो गूडि तानॊक्करुंड । मन लंक साधिप मंडुचुन्नणडु;
रजनीचराधीश ! रमणीयकांति । रजताद्रि बोलुचु रविपुत्रुनॆदुर
१५१०

(नामक कपि)। उसी ने सुघड़ता से सिंहनादों के विजृंभित होने पर, झट इस लंका को उखाड़ डाला था। एक लाख गुरुतर कपिनायकों के सेवा करने पर, तरुचर-सेना के आगे-आगे नील (खड़ा) है जो अलघुसत्त्व वाला है। हे देव ! वह जलजाप्तसुत (सुग्रीव) का सैन्यपालक है। साहस से पूँछ के आघात से झट दिशाओं को उखाड़ डालते हुए, दुर्दम वृत्ति से ॥ १५०० ॥

—आश्चर्य-चकित करते हुए, हज़ार पद्मों तथा सौ शंखों की संख्या में बलवान मर्कटोत्तमों के बली हो सेवाएँ करने पर, एक पर्वत के समान उपस्थित है वालिनन्दन ! वही अंगद है। वह वालि से भी बलवान है। अतिशयता से वह चन्दनाद्रि-वल्लभ (और) विश्वकर्मनन्दन अधिक प्रसिद्ध हैं। सुनो, हज़ार करोड़ (तथा), अस्सी लाख प्लवगों के शोभा से सेवाएं करने पर, महान् सेतु का साहस के साथ निर्माणकर, वनचर सेनाओं को इस पार उतारनेवाला वह नल है। हे दैत्येन्द्र ! वह वालिनन्दन के उस तरफ़ है। हे सुरलोक-कंटक ! अनेक तरुचरयूथों के सेवाएँ करने पर सुतरु नामक (कपि) अपनी सेना के साथ अकेले ही हमारी लंका को जीतने के लिए प्रज्वलित हो रहा है। हे रजनीचराधीश ! रमणीयकांति से रजताद्रि से उपमित होते हुए रविपुत्र के समक्ष ॥ १५१० ॥

वलमुलन्निटिनि बरिपाटि दीर्चु । वलति याश्वेतुडन्वानरु जूडु;
गुरुबलाढ्युलु वेयुगोट्लु गॊलुव । वड्लुनातडु वेगवंतुडन्वाडु
चूडुमा मनदिक्कु सूचुचुन्नाडु; । चूडुगा लंकॆंद्र ! सुग्रीवसखुनि;
दग विंध्य सह्यसुदर्शनमुख्य । नगमुल कॆल्लनु नाथुंड् वाडु;
कॊमरारु सिंगपु गॊदमयु बॊलॆ । नमरिनवाडु लंकाधीश ! विनुमु
गांभीर्यवारिधि कपिलवर्णुडु । रंभुंडु घनकेसरंबुलवाडु
बलुविडि नूटमुप्पदिलक्ष लॆलमि । गॊलुवनुन्नाडदिगो देव ! चूडु;
कुमुदुडन्वाडु संकोचनाचलमु[1] । नमरंग बालिंचु नमरारि ! यतडु
पदिकोट्ल यगचरपतुलॊलि गॊलुव । मदमुन मलयु नामर्कटु जूडु;
रम्यशैलमुनकु[2] राजैनवाडु । रम्योरु विस्तृतोरस्थलुंडतडु
१५२०
नलुवदिलक्षलु नालुगुवेलु । गॊलुवंग लंकपै गोपंबु मीऱ
गुदियक यिरुगॆलंकुल जूचुवाडु । त्रिदशारि ! यदॆ चूचिते शरभुंडु;
बलसि तन्नॆप्पुडेबदिकोट्ल कपुलु । गॊलुवनुन्नतनि गन्गॊनुमल्लवाडॆ

—(अपनी) समस्त सेनाओं को क्रम से सजाए रखनेवाला समर्थ श्वेत नामक उस वानर को देखो। देखो न, गुरु-बलाढ्य हज़ार करोड़ (कपियों) के सेवाएँ करते रहने पर शोभित होनेवाला वह वेगवान् नामक (कपि) हमारी ओर देख रहा है। देखो न लंकेन्द्र ! सुग्रीव सखा को। वह उचित रूप से विन्ध्य, सह्य, सुदर्शन आदि समस्त नगों का नाथ (अधिपति) है। हे लंकाधीश ! सुनो, शोभायमान सिंह-शावक के समान विराज रहा है। हे देव ! (उधर) देखो, गांभीर्य-वारिधि, कपिलवर्ण वाला, घन केसर वाला रम्भ (नामक कपि) बरजोरी एक सौ तीस लाख (कपियों) के प्रेम से सेवाएँ करने पर स्थित है। हे अमरारी ! कुमुद नामक वह (कपि) संकोचनाचल[1] पर समुचित रूप से शासन करता है। दस करोड़ अगचरपतियों के सुन्दरता से सेवाएँ करने पर, मोद से घूमते उस मर्कट को देखो। रम्यशैल[2] का राजा, रम्य ऊरु (तथा) रम्य उरस्थल वाला है वह। ।। १५२० ।।

चालीस लाख और चार हज़ार (सैनिकों) के सेवाएँ करते रहने पर, लंका पर उत्कट क्रोध से, सिकुड़े बिना, दोनों तरफ़ देखनेवाले शरभ को हे त्रिदशारी ! देखा है न ! हे देवेन्द्र वैरी ! सान्द्रता से सदा पचास करोड़ कपियों की सेवाएँ पानेवाले उसे देखो। वह पारियात्राचल का

---

[1] मूल वाल्मीकि में 'संरोचनाचल' है।

[2] संस्कृत मूल में 'रम्यं साल्वेय पर्वतम्' है।

पारियात्राचलपति घोरसमर । धीरुंडु पनसुंड् देवेंद्रवैरि !
ललि नौप्प नरुवदि लक्षल कपुलु । गौलुवनुन्नाडदे ! गुरुबलोन्नतुडु
सिंदूरपुं जाय जैलुवग्गलिचि । यंदमै क्रोधनुंडनुवाडु देव !
'येनै चालुदु लंक निल गूलद्रोय । गा' ननि पूनि यिक्कड जूचुवाडु;
बलवंतुलगु कपिपतुलु दन्नेपुडु । ललिनौप्प डेब्बदिलक्षलु गौलुव
गवयुडन्वाडदे कनुगौनु देव ! । विविधप्रतापसंवृतुडैनवाडु;
कामरूपुलु वीरु घनघोरसत्त्वु । लीमैयि ननिलोन नेक्कुडौवारु १५३०
तलपोयगा देवदैत्युलकैन । गलगनि वारु; मुंगलिबारु वीरु;
नडुम नेप्पुडुनु सेनासमेतमुग । नडतेंचुवारि दानवनाथ! विनुमु:
उरुभुजुल् विविधवर्णोज्ज्वलु लद्रि । चरुलु नानासहस्रंबुलु गौलुव
नीतोड नेक्कटि नेरि बोर दिवुरु । नातंडु हरुडनु नगचरोत्तमुडु;
नलुवैंतयुनु मीऱि नानाविधमुल । नेलुगु लसंख्यंबु लेपारि कौलुव
नतिनीलमेघमध्यस्थुडै पौलुचु । शतमखु बोलि युज्ज्वलुडैनवाडु
नर्मदातीरंबुनन‌ु ऋक्षनगमु । बेमितो नेलेडु पृथुबाहुबलुडु
वाडे धूम्रुडु जांबवंतु तम्मुंडु । वाडिमि मगटिमि वालिनवाडु;

पति (तथा) घोर-समर-धीर पनस है। हे देव ! वही शोभा से साठ करोड़ कपियों के सेवा करने पर गुरु-बलोन्नत (और) सिन्दूर की छाया से अति रमणीय बना हुआ वह क्रोधन नामक (कपि) है। यह कहते कि 'लंका को मटियामेट करने के लिए मैं ही बस हूँ' सप्रयत्न इधर देखनेवाला (तथा) सत्तर करोड़ बलवान कपिपतियों की सदा सेवाएँ लेनेवाला, विविध प्रताप संवृत वह गवय नामक (कपि) है। हे देव ! वही (उसे) देखो। ये (सब) कामरूप धारी हैं, घनघोर सत्त्व वाले हैं, युद्ध में अधिक समर्थ हैं, ।। १५३० ।।

—सोच-विचारने पर देवदैत्यों के कारण भी विकल न बननेवाले हैं, ये (सेना के) अग्रभाग के हैं। हे दानवनाथ ! (सेना के) मध्य में सेना समेत हो अतिशयता को प्राप्त लोगों की (बातें) सुनो। उरु भुजाओं वाले, विविध वर्णों से उज्ज्वल बने नाना सहस्र अद्रिचरों के सेवाएँ करते रहने पर, तुम्हारे साथ चारुता से घोर संग्राम करने की कामना करनेवाला वह हर नामक नगचरोत्तम है। अत्यधिक खूबी से अतिशय बने नाना प्रकारों के रीछों के असंख्य बन शोभायमान हो सेवाएँ करने पर, अतिनील-मेघ-मध्यस्थ हो शोभित शतमख (इन्द्र) के समान उज्ज्वल बना हुआ, (और) नर्मदातीर के ऋक्षनग पर प्रेम से शासन करनेवाला (और) पृथु बाहुबल वाला वही धूम्र है जो जांबवान का अनुज है जो तीक्ष्ण पौरुष

नीलशैलंबुल निलुवॆल्ल दार । यै लील नॊप्पॆडु नाक्तुल् गलिगि
युल्लसिल्लुचुनुन्न यॊककोटिसंख्य । भल्लूकमुलु गॊल्व बलसियुन्नाडु
१५४०
तॊल्लि देवासुरोद्धुरयुद्धकेळि । नॆल्लवरंबुल निंद्रुचे बडसि
वालिन या जांबवंबडु वाडै: । तूलडु रणमुलो धूर्जटिकैन;
नुक्कलुंडदॆ वीनि युभयपार्श्वमुलु । नॊक्कॊक्क योजनं बॊडलंत पॊडवु
नलि बद्मसंख्य वानरसेन गॊलुव । सललितुंडगुवाडु सन्नादनुंडु
नाकारि ! विरुदु वानर पितामहुडु । नाकीशुतो बोरि नलि गॆल्चिनाडु;
दहनुनिवलन गंधर्वकन्यककु । महनीयमैन जन्मंबुनु बॊंदि
परपैन या द्रोणपर्वतं बेलु । दिरमुगा जंबुनदीतीरवर्ति
वेयुगोट्लु कपुल् वेड्क दन् गॊलुव । नीयगचरु जूडु मेचिनवाडु
नीलुनि तम्मुडु निर्जरवैरि ! । चालुवाडिर्तडिंद्रजालुडन्वाडु;
कुपितमर्कट्लु वेगोट्लु गॊलुव । कपिवीरुडदॆ चूडु क्रथनुडन्वाडु;
१५५०
करमु संप्रीति गंगातीरमुननु । जरियिंचुवाडु शाश्वतबाहुबलुडु
चिरतरलीलमै शिशिराद्रि वेड्क । निरवंद नॆप्पुडु नेलॆडुवाडु

से विराजमान है । नीलशैलों पर जहाँ-तहाँ नक्षत्रों के समान शोभित आकार से युक्त हो उल्लसित होनेवाले एक करोड़ की संख्या के भल्लूकों के सेवाएँ करने पर बली बना हुआ है । ॥ १५४० ॥

पूर्व में देवासुरों के उद्धर-युद्ध-केलि में इन्द्र से समस्त वरों को प्राप्त कर विराजित जांबवान वही है । वह रण में धूर्जटि (शिव) से नहीं हारता । वही उक्कल (नामक कपि) है । उसके उभय पार्श्वों के शरीर की लम्बाई एक-एक योजन है । शोभा से पद्म संख्या की वानर सेना के सेवा करने पर सललित बना हुआ है सन्नादन । हे नाकारी ! प्रसिद्ध रूप से वानर पितामह नाकीश से संघर्ष कर, शोभा से विजयी हुआ है । दहन (अग्नि) के द्वारा गन्धर्वकन्या में महनीय जन्म प्राप्त कर, विशाल उस द्रोण पर्वत पर शासन करते हुए, जंबूनदी तीरवर्ती हो, हज़ार करोड़ कपियों के उत्साह से सेवाएं करने पर यह अगचर विजृंभित हो रहा है, इसे देखो । हे निर्जर वैरी ! नील का भाई यह इन्द्रजाल नामक (कपि) समर्थ है । हज़ार करोड़ कुपित मर्कटों की सेवाएँ लेनेवाले कपिवीर क्रथन नामक (कपि) को देखो । ॥ १५५० ॥

अधिक संप्रीति से गंगातीर पर विचरण करनेवाला (तथा) शाश्वत बाहुबल वाला, चिरतर-लीला से सोत्साह शिशिराद्रि पर सदा शोभा से

पदिकोट्ल नगचरुल् बलसि तन् गौलुव । नदॆ चूडुमा गजुंडनुवाडु देव !
कोटिकोटुल वेलु कोमरारु जमुनि । पाटि गोलांगूल बलमुलु गौलुव
नदॆ गवाक्षुंडनुनतडालमुनकु । द्रिदशारि ! यौडुलु दीडुचुन्नाडु;
धवळवर्णांगुलुद्दंडविक्रमुलु । रविसन्निभुलु रणरंगभीषणुलु
विविधरूपंबुल विख्यातुलैन । प्लवगमुख्युलु दनु बदिवेलु गौलुव
नुन्न केसरि जूडु मॊप्पारु कांच । नोन्नतगिरुलकु नॊडयंडु वाडु;
बहुवर्णुलै पटुभाषणध्वनुल । महि यगल्चुचु दंतमंडलि वॆलुग
सिंगंपुगौदमल चॆन्नग्गलिचि । पिंगळाक्षंबुल बॆद्दयु मॆऱसि १५६०
वेयुगोटुल कपुल् वेड्कतो गौलुव । बायक राम कृपारसंबंदि
तन प्राणमुलु रामधरणीश्वरुनकु । ननयंबु नीगोरु नतुलविक्रमुडु
अमरारि ! वाडॆ यत्यायतबलुडु । समरकर्कशुडैन शतबलि चूडु;
वीडॆ सुषेणुंडु वेगोट्लकपुलु । वाडिमि दनयट्टिवारु दन् गौलुव
नुन्नवाडदॆ चूडुमो देव ! समर । सन्नद्धुडै वॆक्कसंबैन कडिमि;
बदिकोट्ल यगचरपतु लोलि गौलुव । नॊदवु नाकपिवीरुडुल्कामुखुंडु;
इटु चूडुमा वीडॆ ऋषभुडन्वाडु ! । भटमुख्युलतनिकि बदिकोट्ट लधिप !

शासन करनेवाला, दस करोड़ नगचरों की सेवाएं लेते हुए गज स्थित है। हे देव ! उसे देखो। हे त्रिदशारी ! करोड़-करोड़ हज़ार (की संख्या में) यम के समान शोभित वानर सेना के सेवाएँ करने पर वही गवाक्ष नामक (कपि) युद्ध के लिए ओंठ चबा रहा है। धवल वर्ण वाले, उद्दंड विक्रम वाले, रवि सन्निभ, रणरंग भीषण (तथा), विविध रूपों से विख्यात दस हज़ार प्लवग मुख्यों के सेवाएँ करने पर स्थित केसरी को देखो। शोभायमान कांचन उन्नत गिरियों का वह अधिपति है। बहुवर्ण वाले हो, पटुभाषण ध्वनियों से (तथा) महि को फोड़ देनेवाली दन्त-पंक्तियों के प्रकाशित होने पर, सिंह-शाबकों की शोभा को मात कर, पिंगलाक्षों (पीतवर्ण के नेत्रों) से अधिक शोभित होकर, ।। १५६० ।।

—हज़ार करोड़ कपियों के उत्साह से सेवाएं करने पर, निरन्तर रामकृपा रस को प्राप्त कर, अपने प्राणों को राजाराम के लिए सदा समर्पित करना चाहनेवाला अतुल विक्रमशाली वही अत्यायत बल वाला (तथा) समर कर्कश शतबली है। हे अमरारी ! उसे देखो, यही सुषेण है। बल-पराक्रम में अपने समान हज़ार करोड़ कपियों के सेवाएँ करने पर, अधिक साहस से समर के लिए सन्नद्ध (तैयार) है। हे देव ! वही देखो। दस करोड़ अगचरपतियों के सुन्दरता से सेवाएँ करने पर स्थित वह कपि-वीर उल्कामुख है। इधर देखो न, यही ऋषभ नामक है। हे अधिप !

वनचरशतकोटि वलनौप्प गौलुव । दनरुनातनि जूडु दानवाधीश !
कनकाद्रिधैर्युडखंडविक्रमुडु । घनभुजस्कंधुडु गंधमादनुडु;
मौनकु वेगोट्लुगा मुय्येडुमौनलु । दनर गल्गिनवाडु दधिमुखुडतडु;
१५७०
विनु मिरुवदियौक्क वेयुशंखंबु । लुनु मर्रिंडु वेल्नूरु बृंदमुलु
गल यल्ल मौन दिवाकरसूनु मूल । बल; मा वलीमुखप्रमुखुलु वेड्क
लोलय गिष्किंधलो नुंडेडु वारु; । ललि देवगंधर्वुलकु बुट्टिनारु;
कामरूपमुल संगरकौतुकमुल । भीमविक्रममुल बेंपारुवार
लनिकि सन्नद्धुलै यार्चुचुन्नारु; । कनुगौनु वारि राक्षसलोकनाथ!
अमृतंबु ब्रह्मचे नमरंग वडसि । रमरुलकंटेनु नधिकुलु चूडु
विनुतिप मैंदद्विविदुलनुवारु । विनु देव ! येकांगवीरुलु वारु
पदिवेलकोटुलु प्लवगुलु गौल्व । नुदधितीरंबुन नुन्नारु देव !
वीरुलु सुमुखुंडु विमुखुंडु ननग । घोरविक्रमुलु गन्गौनुमु लंकेश !
मृत्युघुकोड्कुलु मिक्किलिचेव । मृत्युवुकंटेनु मीरिनवारु; १५८०
मिगिलिन तेगुवतो मिति मेर लेनि । यगचरुल् दनु भृत्युलै कौलुवंग

उसके दस करोड़ मुख्य भट हैं। हे दानवाधीश ! शतकोटि वनचरों के शोभा से सेवाएँ करने पर शोभित उसे देखो। कनकाद्रि सम धैर्यशाली, अखण्ड विक्रमवाला, घन भुज-स्कन्ध वाला, वह गन्धमादन है। एक-एक छोर पर हज़ार करोड़ (के हिसाब) से इक्कीस छोरों की शोभा से युक्त वह दधिमुख है। ।। १५७० ।।

सुनो, इक्कीस हज़ार शंख तथा और दो हज़ार सौ से युक्त बृन्द (समूह) दिवाकर-सून (सुग्रीव) के मूल बल में हैं। वे वलीमुख (वानर)-प्रमुख सोत्साह किष्किन्धा में रहनेवाले हैं, शोभा से देव-गन्धर्वों से उत्पन्न हुए हैं। कामरूपों से, संगर-कौतुक से, भीम-विक्रम से वे युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर, सिंहनाद कर रहे हैं। हे राक्षसलोकनाथ ! उन्हें देखो। हे देव ! ब्रह्मा से अमृत को समुचित रूप से प्राप्त कर, वे अमरों की अपेक्षा अधिक (पराक्रम वाले) हैं सराहनीय मैंद (और) द्विविद एकांगवीर हैं। हे देव ! वे दस हज़ार करोड़ प्लवगों के सेवाएँ करने पर उदधितीर पर स्थित हैं। हे लंकेश ! सुमुख (तथा) विमुख नामक वीर (तथा) घोर विक्रम वालों को देखो। मृत्यु (यम) के पुत्र (तथा) अधिक सामर्थ्य के कारण मृत्यु से भी अधिक हैं। ।। १५८० ।।

अधिक साहस से अनन्त अगचरों के भृत्य हो सेवाएँ करने पर, उदधि

नुन्नवाडदॆ चूडु मुदधि लंघिंचि । निन्नु नीबलमुनु नीवारि गॊनक
चनुदॆंचि मनमुलो जानकि गांचि । वनमॆल्ल वॆऱिकि नीवरसुतु जंपि
लंक भस्ममु सेसि लंकिणि नॊंचि । जंकॆंतो ग्रम्मऱ जन्नवाडतडु;
आ वायुसूनुंडु हनुमंतुडगुट । नीवुनु नॆऱुगुदु निर्जराराति !
विनु चित्रमॊक्कटि; वीडु बाल्यमुन । निनमंडलं बुदयिंपग जूचि
पॆरिगिन याकटि पॆल्लुन दानि । बरिकिंचि फलमनि पट्टंग दिविरि
वेगंबुतो मूडु वेल योजनमु । लागगनंबुनकपुडु बिट्टॆगसि
यंतटनुंडि पूर्वाद्रिपै बडियॆ । नॆंतयु रयमुन; नीवानरुनकु
हनुवु भग्नंबय्यॆ; नंतनुंडियुनु । हनुमंतुडानुनाममय्यॆ नीतनिकि;
१५९०
वीरलंदऱुनु बृथ्वीतलंबॆल्ल । वारक यॊक्किकत वडि गॆल्चुवार;
लिट्टि कपींद्रु लनेकुलु देव ! । यॆट्टुनि संख्य दानॆन्नंग वच्चु ?"
ननि सारणुडु वल्क नसुरेंद्रुजूचि । सुनिशितमतियैन शुकु डर्थि
बलिकॆ: १५९३

शुकुडु श्रीरामुनि तेजोविशेषमुलदॆल्पुट

"वारल कॆल्ल जीवनमैनयट्टि । यारामु जॆप्पॆद नसुरेश ! विनुमु:

को लांघकर, तुम्हें और तुम्हारी सेना की परवाह किए बिना आकर, वन में जानकी के दर्शन कर, समस्त वन को उखाड़कर, तुम्हारे श्रेष्ठ सुत का वध कर, लंका को भस्म कर, लंकिणि का दमन कर, त्रास देकर लौट जानेवाला (साहसी) है, उसे देखो। हे निर्जराराती ! उस वायुपुत्र का हनुमान होना तुम भी जानते हो। सुनो, एक विचित्र (बात) है। यह बाल्य में उदित होते इनमण्डल (सूर्य) को देख, क्षुधा के आधिक्य के कारण, उसे फल समझ, पकड़ने की कोशिश कर, वेग से तीन हज़ार योजन तक आकाश में अतिशयता से उड़कर, वहाँ से अतिशीघ्रता से पूर्वाद्रि पर गिर पड़ा। (तब) इस वानर का हनु (टुड्ढी) टूट गया। तब से इसका नाम हनुमान हो गया। ॥ १५९० ॥

ये सब समस्त पृथ्वी-तल को अतिशीघ्रता से जीत लेनेवाले हैं। हे देव ! ऐसे कपीन्द्र अनेक हैं। इनकी संख्या को कैसे गिन सकें ?" ऐसा सारण के कहने पर, असुरेन्द्र को देखकर, सुनिशितमति से शुक चाहकर बोला— ॥ १५९३ ॥

शुक का श्रीराम का तेजोविशेष बताना

—"हे असुरेश ! उन सबके लिए जीवन (प्राण) बने उस श्रीराम के बारे

नयरीति हरिनील रत्नप्रभाति । मॆयिचाय नॆंतयु मॆऱसिनवाड़ु
गमलंबुलनु बोलु कन्नुलवाड़ु । विमल नीतिस्थिति वॆलसिनवाड़ु
आजानुबाहुंडु नखिलेश्वरुंडु । राजतेजोनिधि रघुकुलोत्तमुड़ु
सत्यंबुलोपलि सारमौवाड़ु । नित्यधर्मंबुन नॆगडिनवाड़ु
शस्त्रास्त्र विद्य विशारदुंडखिल । शास्त्रज्ञु डुरुकीर्तिसम्पदवाड़ु
दपनुनिनैननु दम तात यनक । तपियिंपजेयु प्रतापंबुवाड़ु; १६००
जक्काड़ु नभमैन शरजालमुलनु; । व्रक्कलुगा जेयु वसुमतिनैन;
नलिगिन नातनि यलुक वैरुलकु । दलपंग मृत्युवु दशकंठ ! विनुमु;
तेगुव नीवा सीत दॆच्चिचति गान । जगतीशु डिब्भंगि जनुदॆंचे
ननिकि
वरशरणागत वज्रपंजरुड़ु । बिरुदुल कॆल्लनु बिरुदैनवाड़ु
शरणन्न गानि येचंदंबुलंदु । दीरकॊन्न यलुककु दुदि लेनिवाड़ु
मिक्किलियैन नीमीदिकोपमुन । नक्कन्नुलंदॆऱ यमरिनवाड़ु
मूडुलोकमुल निम्मुल नेलुवाड़ु । वाडॆ पो रामुंडु वनजाप्तकुलुड़ु;
वारक शुद्धसुवर्णवर्णांगु । डारामुवलपट नट नुन्नवाड़ु
व्रलमुन नीरेडुजगमुलनैन । नलुकतो निर्जिचु नतिशक्तिवाड़ु

में कहूँगा। सुनो, नयरीति से हरिनील रत्न प्रभा के सम शरीरवर्ण से अति प्रकाशित है (वह)। कमल के समान नेत्रोंवाला है, विमल नीति स्थिति से विलसित है, आजानुबाहुओं वाला है, अखिलेश्वर है, रघुकुलोत्तम राजतेज का निधि है। सत्य के भीतर का सार है वह, नित्यधर्म से शोभित है। शस्त्र-अस्त्र विद्या में विशारद है, अखिल शास्त्रज्ञ है, उरुकीर्ति-सम्पत्ति से युक्त है। तपन (सूर्य) को भी अपना तात (दादा) न मानकर तप्त करनेवाले प्रताप से युक्त है। ।। १६०० ।।

शरजाल से नभ को टुकड़े-टुकड़े कर सकता है, वसुमति के भी टुकड़े कर सकता है। हे दशकण्ठ ! सुनो, क्रुद्ध होने पर उसका क्रोध, सोचें तो, शत्रुओं के लिए मृत्यु ही है। साहस कर तुम उस सीता को लाए हो, इसीलिए जगदीश इस प्रकार युद्ध करने के लिए आया है। शरणागतों के लिए वह वर वज्रपंजर है, समस्त बिरुदों के लिए बिरुद है। शरणागति के अतिरिक्त और किसी प्रकार से कम न होनेवाला अनन्त क्रोधवाला है। तुम पर अधिक क्रोध के कारण उन आँखों में लालिमा से युक्त है तीनों लोकों पर प्रेम से शासन करनेवाला है। वही तो राम, वनजाप्तकुल वाला है। नित्य शुद्ध सुवर्ण वर्ण-अंग (शरीर) वाला है वह जो राम के दाहिनी ओर स्थित है। मारे हठ के चौदह जगों को भी क्रोध

आरामुनकु ब्राणमैनट्टिवाडु । आरामुतम्मु डुदग्रविक्रमुडु १६१०
भाविप नम्मेंचि पट्टिनवाडु । देव ! यालक्ष्मणदेवर जूडु;
मलुकमै निन्नु नुगाजिलो गेलिचि । व्रलमोप्प लंक निश्शंक नेलुटकु
बट्टंबु रामभूपालुनिचेत । गट्टिंचुकोनि प्रीति ग्रालुचुन्नाडु
महनीयवर धर्म मार्गंबुवाडु । महित नीतिस्थिति मरगिनवाडु
आविभीषणु जूडु मसुराधिनाथ ! । भूवरु वेनुक नेपुननुन्नवाडु
आरामुतम्मुनि याविभीषणुनि । चेरुव नव्वल जेरियुन्नाडु
मानगुणाधीन मति नोप्पुवाडु । पूनि किष्किध नेप्पुडु नेलुवाडु
चिरकपिराज्याभिषेचनहेतु । कर हेममालिकाकलितवक्षुंडे
गुरुभुजुडत्यंत घोर विक्रमुडु । सुरवैरि ! चूचिते सुग्रीवुडतडु;
वीनिकि गल सेन विवरंबु विनुमु । दानवनाथ ! चित्तंबुन दैलिय:
१६२०
संख्य वेगोटुल चन नूरुवेल । संख्यलु मरि महाशंखु नाबरगु;
नवि लक्ष गूड महाबृंद संख्य; । यवि लक्षगूडिन नगु पद्म संख्य;
यवि लक्षगूडिन नगु महापद्म संख्य; । यवि लक्ष गूडिन नगु खर्वगणन;

से जीत सकने की अतिशक्ति से युक्त है। वह उस राम के लिए प्राण-सम है। राम का वह अनुज उदग्र विक्रम वाला है। ॥ १६१० ॥

सोचने पर बाण का सन्धान किए हुए हैं।' हे देव ! उस प्रभु लक्ष्मण को देखो। क्रोध के मारे तुम्हें उग्र-युद्ध में जीतकर, हठ से लंका पर निस्सन्देह शासन करने के लिए रामभूपाल से पट्टाभिषिक्त होकर, प्रेम से विलसित होनेवाले, महनीय-वर-धर्म-मार्ग वाले (तथा) महित-नीति-स्थिति से विलसित, उस विभीषण को देखो। हे असुराधिनाथ ! वह भूवर (राजाराम) के पीछे शोभा से बैठा है। उस राम के अनुज (तथा) उस विभीषण के पास, उस ओर उपस्थित है, मानगुणाधीन-मति वाला (तथा) सप्रयत्न सदा किष्किन्धा पर शासन करनेवाला, चिरकपि-राज्य के अभिषेक के कारणभूत हेम मालिका से कलित वक्ष वाला, गुरु (बड़ी) भुजाओं वाला, अत्यन्त घोर विक्रम वाला, सुग्रीव है। हे सुरवैरी ! देखा है न उसे। हे दानवनाथ ! चित्त (मन) को मालूम हो जाए (इस प्रकार) इसकी सेना के विवरण को सुनो, ॥ १६२० ॥

—संख्याओं में हज़ार करोड़ों के बाद लाख करोड़ की संख्या महाशंख कहलाती है। वे एक लाख हों तो उस संख्या का नाम महाबृन्द है। वे एक लाख हों तो पद्म कहलाती है। वे एक लाख मिलकर महापद्म कहलाते हैं। वे एक लाख हों तो गणना में खर्व होता है।

यवि लक्षगूडिननगु महाखर्वं । मवि लव गूडिन नगु समुद्रंबु;
अवि लक्षगूड महसमुद्रंबु; । नवि लक्षतो महदाख्यमै परगु;
नवि कोटि वो वालियनुजुनि बलमु; । विवरिंचि चूडुमु विशदंबु गाग;
निदि तुद मॊदलनि यॆन्नंगरादु; । चदुरुदनंबुन संख्य देरादु;
कावुन रामुतो गदिसि पोराड । रावण! रादु; दुर्वार माबलमु”
अनि शुकुं डॆऱिगिप नारावणुंडु । घनमैन कपिसेन गलयंग जूचि
तनलोन बडबाग्नि दरिकॊनुचुंड । दनरारु बार्धिचंदंबुनु नपुडु १६३०

वॆऱचियु दनलोनि वॆऱपडगिंचि । वॆऱवनिगति गोपविवशुडैपलिके:
“मंत्रि येलिकचित्तमार्गंबु विडिचि । मंत्रंबु जॆप्पुने मनसॆल्लविऱुग?
नेतॆऱंगॆऱुगक मॆदिरि नायॆदुर । नीतॆऱंगुन बल्कुटिदि मीकु दगुनॆ?”
यनवुडु दललॆत्त कच्चोटु वासि । चनिरि भीतिलि शुकसारणुलंत;
जनिन पिम्मट नाप्तसचिवुलु दानु । दनुजाधिनाथुडॆन्तयुनु जिंतिंचि
वारि वीड्कॊलिप दुर्वारुडै वैर । मार विद्युज्जिह्वुडनुवानि बिलिचि

वे एक लाख हों तो महाखर्व होता है। वे एक लाख हो जाएँ तो समुद्र होता है। वे लाख हों तो महासमुद्र होता है। वे एक लाख हों तो महत् नाम होता है। ऐसे महत् (संख्या में) करोड़ (कपियों) का है वालि के अनुज का बल (सेना)। विवरण कर, विशद हो जाए, (ऐसा) देख लो। यह अन्त है, यह आदि है, ऐसा नहीं कह सकते (अनन्त सेना है)। निपुणता से भी (किसी भी संख्या से) गिनती नहीं कर सकते। हे रावण! अतः राम का सामना कर लड़ नहीं सकते। वह सेना दुर्वार है।” ऐसा शुक के बताने पर, उस रावण ने कपिसेना को समग्रता से देख, अपने में बलनेवाली बाडबाग्नि से युक्त हो शोभित समुद्र के समान ।। १६३० ।।

—तब भीत होकर भी, अपने भीतर के भय का दमन कर, मानों भीत न हुआ हो, ऐसा कोपविवश हो, कहा—“स्वामी के चित्तमार्ग (मानसिक प्रवृत्ति) को छोड़ (उसके विरुद्ध), मन टूट जाए, ऐसा भी कोई मन्त्री मन्त्रणा देता है क्या? कोई भी पद्धति न जानकर, मेरे समक्ष इस प्रकार कहना क्या आपके लिए उचित है?” ऐसा कहने पर तब सिर न उठाकर, भीत हो, उस स्थान को छोड़ शुक-सारण चले गए। (उनके) जाने के बाद आप्त सचिवों के साथ दानवनाथ ने अधिक चिन्तन कर, उन्हें विदा कर, दुर्वार हो, वैर-भाव को ले, विद्युजिह्व नामक (राक्षस) को बुलाकर, (कहा)—

रामुनि मायशिरस्सुजूपि रावणुडु सीतनु वेंड्रपिंचुट

"रामुनि धनुवु शिरंबुनु बोलें । नीमाय नतिवेग निर्मिंचि तेम्म"
यनवुडु वाडुनु नप्पुड पोयि । तन नेर्पुमीऱ नाधनुवुनु शिरमु
नतिवेग निर्मिंचि यर्थि देंच्चुटयु । नतनिकि मेंच्चु प्रियंबुन नोंसगि
सुरुचिरमैन यशोकवनमुन ।करिगि यादशकंठु डवनिज गनियें;
१६४०
'बेंल्लगु नीवग बेंट्टने कंटि । तल्लि! न"न्ननि वसुंधर दूरुकरणि
दल वंचुकोंनि विन्नदनमुन दूलि । सोंलवक धात्रि जूचुचुनुन्नदानि
नोंडल जित्तमुन बेंपोंदु तापाग्नि । नुडिकि पोंगुंचु वेंलिकुरुकुचुनुन्न
राक्षसुपै रोषरसधार लनग । नक्षीणबाष्पधारावळिदानि
"बुत्रि ! यीदुरवस्थ बोंदितें" यनुचु । धात्रि दानुनु बरितापंबु नोंदि
यालिंगनमु सेसिनट्टिचंदमुन । धूलि गप्पिन मेनितोनुन्नदानि
"रावण ! निन्नु नीराक्षसकोटि । नेविधंबुन द्रुंप केलपोनित्तु ?"
ननि वानि क्रूरकर्माधि दैवंबु । गोंनकोंन्नकैवडि गूर्चुन्नदानि

राम के माया शिर को दिखाकर रावण का सीता को डराना

"अपनी माया से अतिशीघ्र राम के धनु और शिर के समान (धनु और शिर का) निर्माण कर लाओ।" ऐसा कहने पर वह भी तभी जाकर, अपनी निपुणता के आधिक्य से उस (प्रकार के) धनुष और शिर का अतिशीघ्र निर्माण कर, प्रेम से ले आया। उसे प्रेम से पुरस्कृत कर सुरुचिर अशोकवन को जाकर, उस दशकण्ठ ने अवनिजा (सीता) को देखा। ॥ १६४० ॥

सिर झुकाकर, विवर्णता से लड़खड़ाकर, निरन्तर मानों यह कहते कि 'हे माता ! मुझे इस प्रकार व्यथित होते (कैसे) देख रही हो ?" (सीता) धरती को देख रही थी, वह अक्षीण (बहुत अधिक) बाष्प (अश्रु) धारावली से युक्त थी। वह अश्रु-प्रवाह ऐसा लग रहा था मानों शरीर और चित्त में वर्धित होनेवाली तापाग्नि के खौलकर, उबलकर, बाहर निकल पड़ने वाली राक्षस के प्रति-रोषरस की धाराएँ हैं। वह धूल से आवृत शरीर वाली थी। मानों धरती स्वयं भी परितप्त होकर यह कहते कि 'हे पुत्री ! (हाय) कैसी दुरवस्था को प्राप्त हुई हो ?' उसका आलिंगन कर रही हो। वह ऐसी बैठी थी, मानों उसका (रावण) का क्रूरकर्मों का अधिदेवता यह कहते कि "हे रावण ! तुम्हें और तुम्हारी राक्षसकोटि को किसी भी प्रकार नष्ट किए बिना कैसे जाने

नमरारुलनु नीरसावनीजमुल । दमकिंचि ता विटताटंबुसेय
ननि दरिकोनु विलयानिलुपगिदि ।दनरु निट्टूर्पुलु दरुचैनदानि १६५०
गनि चेंड दलचि या कष्टदानवुडु । तनदिक्कु जूडनि धरणिज कनियें:
"वेरवु चालनि यविवेकि दानवुल । खरधूषणादुल खंडिचें ननुचु
जनकनंदन ! रामु शौर्यंबु नम्मि । ननु गणुतिपवेन्नडु जित्तमुननु:
नसमुन गपुलतो नत डब्धि दाटि । यसमुडै यासुवेलाद्रिपै नुंडि
यलसि निद्रिंपंग, नगचरसेन । नलमि यीरात्रि प्रहस्तुडन्वाडु
नाकूर्चुबंटु चूर्णंबुगा जेसि । काकुत्स्थुनुरुकार्मुकंबुनु शिरमु
गोनिवच्चे; रामुनि कूर्मितम्मुडुनु। वनचराधिपुडुनु वगचुचुनुंड
दप्पिचुकोनि पाऱे दा विभीषणुडु; । चुप्पनातिनि मुक्कुसुरियचेगोयु
नापापमुन बाऱे नपुडु नीमऱदि; । वापोवुचुनु जांबवंतुडु पऱचें;
नूरक यंगदुंडूडंग बाऱें; । दारितप्पुन बोयें दारुंडु भीति; १६६०
नीलुंडु शरभुंडु निलिचि पोराडि । व्रालिरि मेनुलु व्रय्यलै जगति;

दूंगा।" सयत्न बैठा हो। अमरारी राक्षस (रूपी) नीरस (शुष्क) अवनीजों (वृक्षों) को ससंभ्रम तितर-बितर करने के लिए प्रयत्नशील विलय (प्रलयकाल के)-अनिल के समान शोभित दीर्घ नि:श्वासों से (सीता) युक्त थी। ।। १६५० ।।

(ऐसी सीता को) देख, नष्ट होना चाहकर, उस दुष्ट राक्षस ने अपनी ओर न देखनेवाली धरणिजा से कहा—"हे जनकनन्दने ! उपायहीन (तथा) अविवेकी दानवों (तथा) खरदूषणादियों का खण्डन (वध) किया, ऐसा (सोच) राम के शौर्य पर विश्वास कर, मन में मेरी गिनती तक नहीं करती हो। दर्प के साथ, कपियों के साथ वह (राम) अब्धि पारकर, असमान हो, उस सुवेलाद्रि पर रहकर, थककर सो रहा था। (तब) अगचर सेनाओं का दमन कर, इस रात को प्रहस्त नामक (राक्षस) जो मेरा प्रिय सेवक है, (कपि सेना को) चूर्णकर, काकुत्स्थ (राम) का उरु-कार्मुक (बड़े धनुष) तथा शिर ले आया। राम के लाड़ले अनुज तथा वनचराधिप के व्यथित होते समय, बचकर विभीषण भाग गया। शूर्पणखा की नाक को छुरी से काट देने के पाप के कारण तुम्हारा देवर भी भाग गया। रोदन करते हुए जांबवान भाग गया। अंगद यूँही (विरोध किए बिना) (लंगोट के) छूट जाने पर भाग गया। मारे भय के तार रास्ता भटक कर भागा। ।। १६६० ।।

नील और शरभ डटकर लड़े और शरीर के टुकड़े होने पर धरती

बोक निलिच समीरपुत्त्रुंडु वडियें । मोकाळ्ळु विड़िगि रामुनि बायलेक
नेंत्तुरु ग्रक्कुचु नेगें सुषेणु; । डुत्तलंबुन धूम्रुडुदधिलो बडियें;
जेयेंत्ति म्रोंक्क गूलिचरि दधिमुखुनि; । मायचे गेसरि मयि दाचिपोयें;
गुमुदुंडु तल देंगगोंट्टिन बडियें; । समसें मैंदुडु; वीगि चनियेंनु नलुडु;
पनसुडेंड्रिगि दब्बर वच्चें ननुचु । बनसचेंट्टुनु बोलि ब्रमसि ता निलिचें;
नालंबुलोपल नखिलवीरुलुनु । गूलुट ता जूचि कूडिनभीति
जिव्वजालिंचि वच्चिनकपुलेंल्ल । नव्वंग बरुगेंत्तें नलिनाप्तसुतुडु;
सेतुवु जूड वच्चिन कपुलेंल्ल । भीतिचे निल्लांड्र बिड्डल दलचि
मुगिसें कार्यंबनि मोंदलि टेंकुलकु । दग गोंट्ट बाड़िरि दैत्युलु दरुम; १६७०
गान गंजास्य! राघवुनास विडिचि । ना नारुलकु नाकु नाथवै युंडु;
नायिंट दासीजनमु लैंदुवेलु । पायक मणिमयाभरणमुल् दाल्चि
यच्चरलुन्नवारतिव ! नीसेव । किच्चेंद; नीमनसिम्मु ना किपुडु:
विरिदोटलो गल्पवृक्षंबु लैंदु । तरुणि! नीमुडिपुव्वुदंडलकित्तु;
नमरभूधररोहणाचल मणुलु । रमणि! नी कित्तु, नन् रतुल देंलिपु;

पर गिर गए। राम को छोड़ न जा सक, खड़े रहकर, समीरपुत्र घुटनों के टूट जाने पर गिर गया। सुषेण रक्त उगलता हुआ चला गया। मारे व्याकुलता के धूम्र उदधि (समुद्र) में गिर गया। हाथ उठाकर प्रणाम करने पर भी दधिमुख को (राक्षसों ने) गिरा दिया। केसरी माया से शरीर छिपाकर चला गया। सिर काट गिराने से कुमुद गिर गया। मैंद मर गया, नल हिल-डुलकर चला (समाप्त हो) गया। आफ़त आई यह जानकर पनस पनसवृक्ष के समान हो (राक्षसों को) भ्रम में डालते रह गया। युद्ध में समस्त वीरों के गिरते स्वयं देख, भीतियुक्त हो, ॥१६७०॥
—युद्ध करना छोड़कर, (साथ) आए समस्त कपियों के हंसने पर नलिनाप्तसुत (सुग्रीव) भाग गया। सेतु को देखने आए समस्त कपि, मारे भय के पत्नी-बच्चों का स्मरण कर, कार्य समाप्त हो गया यह जानकर, सिर पर मार कर, दैत्यों का पीछा करने पर भाग गए। अतः हे कंजास्या (कमलमुखी)! राघव की आशा छोड़कर मेरी नारियों के लिए तथा मेरे लिए नाथ (अधीश्वरी) बनकर रहो। हे नारी! मेरे घर में निरन्तर मणिमय आभरण धारण कर पाँच हजार अप्सराएँ दासीजन बनकर हैं। उन्हें तुम्हारी सेवा में दूँगा। तुम अब मुझे अपना मन दे दो। हे तरुणी! फुलवाड़ी के पाँच कल्पवृक्षों को तुम्हारे जूड़े की पुष्पमालाओं के लिए दे

मामीद गाम्मधेन्वादिधेनुवुल । भामिनि! नीयिंटि पाडि के नित्तु;
नाबलंबेल्ल नीयडुगुलु गोलिचि । योबाल ! यिटमीद नुप्पोंगगूर्तु"
ननुचु विद्युज्जिह्वु डनुवानि बिलिचि । वनजाक्षिमुंदऱ वैव बंचुटयु
"दनुमध्य! यिदे रामुतलयुनु विल्लु" । ननि यट्टुवैचि वा डरिगे
नव्वुचुनु;
दलकोनि रामभूतलपति वच्चि । तलरु नय्याहव-तलमुन नसुर
१६८०

तल द्रेंचुननि वियत्तलवाणि वीचे । 'दलककु; नी विभु तलचोप्पुगादु;
साधिंचु श्रीरामचंद्रुडु नेडु । नी धर्मगुणमुतो निक' नन् माड्कि
दरलाक्षि यातल तप्पक चूचि । करमोप्पु रामुनि कन्नुलु मोमु
दलकट्टु मौळिरत्नप्रभावळियु । बलुवरुसयु गर्णभातियु मोवि
तलपोसि रामुनि तलयका दलचि । बलुमूर्छ पालपडि पडियें धरित्रि
'निदि बोंकु, नीपति केम्मियु गादु; । सुदति! नी कीमाय चूडगा' दनुचु
दन युरस्थलिकि नातन्वंगि दिविचि ।कोनियेनो काक याकुंभिनि यनग;

दूँगा। हे रमणी! सुन्दरता से भूधर-रोहणाचल की मणियाँ तुम्हें दे दूँगा। मुझे रतियों से प्रसन्न करो। उसके बाद हे भामिनी! कामधेनु आदि धेनुओं को तुम्हारे घर दूध आदि (दुग्ध विकार) के लिए दे दूँगा। हे बाला! अब आगे मेरा समस्त बल (सेना, परिवार) तुम्हारे चरणों की सेवा करे, ऐसी व्यवस्था करूँगा।" (ऐसा) कहते हुए विद्युज्जिह्व नामक (राक्षस को) बुलाकर, वनजाक्षी के समक्ष डालने का आदेश देने पर, वह यह कहते कि 'हे तनुमध्ये! ये ही राम के सिर तथा धनुष हैं।' उधर डालकर हँसते हुए चला गया। लगकर राम-भूतलपति (राजा) आकर, शोभायमान आहवतल (युद्धभूमि) में असुर का सिर काट देगा, ।। १६८० ।।

—ऐसा कहते वियत्तलवाणी (आकाशवाणी) हुई मानों यह कह रही हो कि "विचलित मत बनो। यह तुम्हारे विभु के सिर का ढंग नहीं है। अब आगे तुम्हारे धर्मगुण के कारण श्रीरामचन्द्र आज तुम्हें जीत ले जाएँगे।' (फिर भी) तरलाक्षी (चंचलाक्षी, सीता) ने उस सिर को अवश्य देखकर, अधिक सुन्दर राम की आँखें, मुख, किरीट, मौलि-रत्न की प्रभा का समूह, दन्त-पंक्ति, कर्ण-सौंदर्य, अधरों का स्मरण कर, (उसे) राम का ही सिर मानकर, अधिक मूर्छित हो धरती पर गिर पड़ी। मानों कुंभिनी (धरती) ने उस तन्वंगी (सीता) को अपने उर: स्थल पर, यह कहते कि 'हे नारी! यह झूठ है, तुम्हारे पति को कुछ भी (हानि) नहीं होगी। इस माया को तुम देख नहीं सकती हो' खींच लिया हो। गिरकर,

बडि यंत दनलोन बडतुक दैलिसि । यडरैडु शोकाग्नि नलयुचु वलिकॆ;
"गटकटा ! कैकेयि ! कलहंबु वन्नि । यिटु द्रुंगजेसिते यिक्ष्वाकुकुलमु !
नीराघवेश्वरुंडॆग्गेमि सेसॆ । नूरक यडवुल नुंडंग बनुप ?" १६९०
"वननिधि बंधिचि वच्चिचति; नन्नु । गौनिपोयॆदनि येनु गोर्कि दीपिंप
बॆट्ट नम्मितिगदे पृथिवीश ! निन्नु ! । निट्टैस नादैवमिटु सेयु टॆरुग;
नाकुनु नीकु ब्राणमु लॊकटगुट । काकुत्स्थ ! यिटु बॊंकुगा जेय दगुनॆ?
पतिकंटॆ मुंदर ब्राणमुल् विडुचु । नतिव गानैतिने ? यर्ककुलेश !
यरुगुदु गाकेमि; यडरु नीकडकु । नरनाथ ! पुत्तॆंतु नादुप्राणमुलु;
वसुध नातल्लि; ना वरुडवु नीवु; । वसुध गौगिट जेर्प वाविये नीकु?
जनकुचे नन्नग्निसाक्षि जेपट्टि । कौनिवच्चि यिटु पायगूडुने नीकु?
नॆट्टॊको राम ! नी विट्लुन्न नादु । कट्टिडिप्राणमुल् ग्रागवय्यॆडिनि;
ग्रागनि यप्पुडे काकुत्स्थ ! नीवु । ग्रागुट निक्कंबु गाकुंडु" ननुचु
नीविधंबुन सीत येड्चुचुनुंड । दौवारिकुलु वच्चि दनुजेशु गांचि
१७००

इतने में अपने में होश में आकर, बढ़ती शोकाग्नि के कारण व्यथित होते हुए, उस स्त्री (सीता) ने कहा—"हायहाय ! हे कैकेयी ! कलह (का जाल) फैलाकर इस प्रकार इक्ष्वाकु वंश का नाश कर दिया है न ! जंगलों में रहने के लिए भेजने के लिए इस राघवेश्वर ने (तुम्हारा) क्या बिगाड़ा था ?" ॥ १६९० ॥

—"वननिधि (समुद्र) को बाँधकर आये हो । कामना के दीप्त होने पर हे पृथ्वीश ! मैं यह बड़ा विश्वास लेकर (बैठी) थी कि आप मुझे ले जाएँगे । हाय, यह नहीं जानती थी कि भगवान मेरी ऐसी स्थिति करेंगे । हे काकुत्स्थ ! तुम्हारे और मेरे प्राण एक हैं न ! उसे आज यों मिथ्या क्यों कर दिया ? हे अर्ककुलेश ! पति से पहले प्राण त्याग कर देनेवाली स्त्री नहीं बन सकी न ! जाओगे तो क्या हुआ ? हे नरनाथ ! अतिशय शोभित तुम्हारे पास अपने प्राणों को भेज दूँगी । वसुधा मेरी माता है, तुम मेरे वर (पति) हो । वसुधा को गले से लगाना क्या तुम्हारे लिए न्यायसंगत है ? जनक के यहाँ अग्नि को साक्षी बनाकर, पाणिग्रहण कर, ले आकर, इस प्रकार बिछुड़ना तुम्हें उचित है ? हाय राम ! तुम्हारे इस प्रकार रहते भी मेरे कठोर प्राण तप्त नहीं हो रहे हैं । जब (मेरे प्राण) उत्तप्त नहीं होते तब हे काकुत्स्थ ! तुम्हारा तप्त होना सच न हो ।' (ऐसा) कहते इस प्रकार सीता के रोते रहते समय द्वारपाल आकर दनुजेश को देखकर, ॥ १७०० ॥

"देव! कार्यंबु लेंतेनि बुट्टुटयु । नी वरमंत्रुलु निनु सभास्थलिकि
नख़गुदेंडनि प्रहस्तादुलु वच्चि । तरमिडि युन्नारु द्वारदेशमुन"
ननि विन्नविंचिन नारावणुंडु । चनियें शीघ्रंबुन सभकुनत्तड़िनि;
दनुजुंडु सनग ना तलयुनु विल्लु । विन विस्मयंबुग वेंस मायमय्यें
ना रावणुनि लक्ष्मि यंतलोपलनें । बोरन मायमै पोवुनन्नट्टु;
लिदें वच्चें राघवुंडेत्तिपै ननुचु । द्रिदशारि यैंतयु धीरुडै कडगि
वेगुल वारिचे विन्न वार्तलकु । वेग निस्साणंबु व्रेयंग बनिचि
तन सेन गूर्प ब्रद्दलवारि बनिचें; । जनकनंदन नंत सरम वीक्षिंचि
"येल मायम्म! नी विट्टु प्रलापिंप? । बोलवीमाटलु, बोंकुगा दलपु;
वनित ! नीमुंदट वैचिन शिरमु । दनुजुनि मायगा दलपोय वलदें?
१७१०

वनजाक्षि ! यसुर दुर्वाक्यंबुलेंल्ल । विनि येनु बोयिति वेंनुकने यरय;
नावार्त विनु; रामु डनि केंत्तें ननुचु । देवारि यैंतयु दिरुगुडुपडियें:
नदें विनु निस्साणहननघोषंबु; । नदें विनुमा राक्षसावळियुग्र
रथमुल म्रोतयु; रथिकसारथुल । पृथुलभाषणमुलु पेंल्लुगा म्रोसें;

—बोले, "हे देव ! अत्यावश्यक कार्यों के उत्पन्न होने से तुम्हारे वरमन्त्रियों ने तुम्हें सभास्थल में बुलाया है। (यह समाचार लेकर) प्रहस्त आदि आकर, शीघ्रता से द्वारदेश पर खड़े हैं।" ऐसा निवेदन करने पर, उस अवसर पर वह रावण शीघ्र सभा में गया। दनुज (रावण) के चले जाने पर वह सिर और धनुष झट विस्मयप्रद रूप से अदृश्य हो गए मानों उस रावण की लक्ष्मी (ऐश्वर्य) अनतिकाल में शीघ्र (इसी प्रकार) अदृश्य हो जाएगी। यह आया, राघव चढ़ आया है, यह कहते हुए गुप्तचरों द्वारा सुने समाचारों के कारण त्रिदशारी (रावण) ने अधिक धीर होकर, सप्रयत्न झट निस्साण बजाने के लिए भेजकर, वेत्रधरों को अपनी सेना एकत्र करने भेजा। तब जनकनन्दना को देख सरमा बोली—"हे मेरी मैया ! तुम्हें इस प्रकार विलाप करना क्यों? ये बातें उचित नहीं हैं, (उन्हें) असत्य मान लो। हे वनिते ! तुम्हारे समक्ष जो सिर डाला गया, (उसे) दनुज की माया नहीं समझनी चाहिए ? हे वनजाक्षी ! असुर के समस्त दुर्वाक्य सुन, मैं पता लगाने पीछे गई थी, ।। १७१० ।।

—वह समाचार सुनो। राम चढ़ आया है, यह जानकर देवारी अत्यन्त विचलित हो उठा है। वही सुनो, निस्साण-हनन (बजाने का) घोष। वही सुनो, राक्षसावली के उग्र रथों की ध्वनियाँ। रथिक और सारथियों के पृथुल (अधिक)-भाषण (संभाषण) अत्यधिक मुखरित हो रहे हैं।

नटु गान रामुन गापद लेदु; । कुटिलकुंतुल! नीवु गुंदंग वलव"
दनि चेप्पुचो लंक यगल नार्चुचुनु । वनचरसेनलु वच्चुट सूचि
यंतरंगमुन बिट्टदरि रावणुडु । चिंतिंचि मंत्रुल जेच्चेर बिलिचि
"यदे राघवुंडेत्तें ननिकि; मी रिपुडु । विदित विक्रमशक्ति वेगंबे पोयि
मनुजुल निद्दर मडियिंचि रंडु; । वनचरसेनल वधियिंचु डोलि;
नरुगुडु; लें" डन्न नारावणुनकु । वरनीतिमति माल्यवंतु
डिट्लनियें: १७२०

रावणुनिकि माल्यवंतुनि हितोपदेशमु

"नुचितकालंबुन नोप्पुनु संधि: । युचितकालंबुन नोप्पु वैरंबु;
गान नयोचितकार्यंबु सेयु । वानिकि राज्यंबु वधिल्लुचुंडु;
नधमुतो विग्रह, मधिकुतो संधि । बुधुल मतंबु नेप्पुडु सेयुटोप्पु;
वलवदु; मनकंटे वनजाप्तकुलुडु । बलवंतुडगुवाडु बलवैरि-वैरि !
दैवकार्यंबुगा धर बुट्टिनाडु; । दैवबलंबु नातनियंदे कलदु;
आरय धर्मात्मुडनि चेप्पनेल ? । वारक ऋषुल दीवनलु गोन्नाडु;

अतः राम को कोई विपत्ति नहीं है। हे कुटिलकुंतले ! तुम्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।" ऐसा (सरमा के) कहते समय, लंका फट जाए ऐसा सिंहनाद करते हुए, वनचर सेनाओं को आते देख, रावण ने अन्तरंग में अधिक भीत होकर, चिंतित हो, मन्त्रियों को शीघ्र बुलाकर (कहा)— "वही राघव युद्ध के लिए चढ़ आया है। तुम लोग अब विदित (प्रकट)-विक्रमशक्ति से शीघ्र ही जाकर (उन) दोनों मनुजों का वध कर आओ। क्रम से वनचर-सेनाओं का वध करो। जाओ, उठो।" कहने पर उस रावण से वर नीतिमति वाला माल्यवान यों बोला— ॥ १७२० ॥

रावण को माल्यवान का हितोपदेश

—"उचित समय में सन्धि (कर लेना) शोभा देता है, उचित समय में वैर शोभा देता है। अतः नय (नीति)-उचित कार्य करनेवाले के राज्य की वृद्धि होती रहती है। अधम (व्यक्ति) से विग्रह और अधिक (बलवान) से सन्धि, बुधजनों के मत से, समुचित है। हे बलवैरि (इन्द्र-वैरी) ! हमारी अपेक्षा वनजाप्तकुल वाला बलवान् है। अतः (विग्रह) नहीं चाहिए। (वह) दैवकार्य के रूप में धरा पर उत्पन्न हुआ है, दैवबल उसी में है। सोच-विचार कर, उसे धर्मात्मा क्यों (न) कहें ? सतत ऋषियों के आशीर्वाद प्राप्त किये हैं। सुरों को पीड़ित कर, भूसुरों का मर्दन कर,

सुरुल बाधिंचि भूसुरुल मर्दिंचि । युरुपापबुद्धिवै युंडुदुवीवु;
गेलुपु धर्ममुदेस गील्कोनु गानि । यिल नधर्ममुदेस नेल वर्तिंचु ?
नक्कमलजुचेत नट्टु नाडु वरमु । तक्किनवारिचेतनु जावकुंड
बडसिति गानि यिब्भंगि नीमीद ।नडतेंचु नरुल वानरुलनु गेलुव १७३०
बडमवु नी; वेन्नि भंगुल नैन । जेंडुट तथ्यमु वारिचेतनु नीवु;
दानि कंतटिकि ब्रत्यक्षंबु सूडु; । मानैन विपुलहोममुल धूममुलु
जडिसे; राक्षसुल तेजंबुलु मासे;। नुडुगक मन वीट नोप्पमुल् वुट्टे;
नट्टगान नादिनारायणुंडात; । डिट्टुसेयुटकु बुट्टे निद्धरमीद;
रामुनितोड विग्रह मोप्प; दुडुगु;। रामुनि बाणपरंपरल् बेट्टु;
वलवदु; रामुनि वनित नोप्पिंचि । कुलमेल्ल रक्षिचुकोनु दानवेंद्र!"
यनवुडु दशकंठुडम्माल्यवंतु । गनुगोनि रोषसंकलितुडै पलिके;
"मिगुल देजंबुन मेटिनै येंदु । नेगडिन नायोद्दने पगवानि
जेप्पेदु; निन्नेमि सेयुदु निंक ? । नेप्पुडु मानवय्येंदु पंदतनमु;
सीत नेमिटि कित्तु ? सीतनिय्युटकु । भीति नाकेटिकि बेर्चु नितटने?"
१७४०

तुम उरु-पाप-बुद्धि-युक्त हो रहते हो। धर्म की ओर विजय लगा रहता है किन्तु धरती पर अधर्म की तरफ़ क्यों रहता है? उस दिन उस कमलज (ब्रह्मा) से अन्य (सभी) जनों से न मरने का वर प्राप्त किया था किन्तु इस प्रकार तुम पर चढ़ आनेवाले नरों और वानरों को जीतने का (वर), ॥ १७३० ॥

—प्राप्त नहीं किया था। उनके हाथ तुम्हारा नष्ट होना हर तरह से तथ्य (निश्चित) है। उस समस्त (विषय) के लिए प्रत्यक्ष (प्रमाण) देखो। श्रेष्ठ विपुल होम (कुण्डों) में धूम भीत (निस्तेज) हो गया है। राक्षसों के तेज धूमिल पड़ गये हैं। हमारे यहाँ निरन्तर अमंगल (अपशकुन) उत्पन्न हुए हैं। अतः वह (राम) आदिनारायण है। इस प्रकार करने के लिए इस धरती पर जन्मा है। राम के साथ विग्रह उचित नहीं है। (विरोध) छोड़ दो। राम की बाण-परम्पराएँ दुर्निवार हैं। (ऐसा करना) नहीं चाहिए। हे दानवेन्द्र! राम की वनिता (स्त्री) को मनाकर समस्त कुल की रक्षा कर लो।" ऐसा कहने पर दशकण्ठ ने उस माल्यवन्त को देखकर रोषसंकलित हो कहा— "अत्यधिक तेज से सर्वत्र श्रेष्ठ हो शोभित मेरे समक्ष ही शत्रु का वर्णन करते हो! अब तुम्हें क्या करूँ? (अपनी) कायरता को कभी नहीं छोड़ते हो। सीता को क्यों दूँगा? अभी मुझे क्या भय कि मैं सीता को दे दूँ?" ॥ १७४० ॥

यनि मीऱि पलिकिन नम्मालयवंतु । डनियॆं; “ना माट नी वात्मगैकॊनक
यारामचंद्रुनि नालंबुलोन । शूरत गॆलुवंग जूतुमु गाक !
यॆंदु बोयॆद” मनि हॆच्चिच कंटकमु । लंदंद पलुकुचु नलुकमै बोयॆ;
बोयिनपिम्मट बुद्धिलो दलचि । यायसुरेश्वरुंडप्पुडे कडगि
यलघुबलाढ्यु ब्रहस्तुनि बनिचॆं । दॊलितॊलि बलुकापु दूर्पुवाकिटिकि;
दक्षिणंबुन महोदरमहापार्श्वु । लक्षीणबलयुतुलैयुंड बनिचॆं;
वारक पडुमटि वाकिट नुंड । शूरत नटु पंचॆ सुतु निंद्रजित्तु;
दनमाऱुगाग नुत्तरपुवाकिटिकि । जनियुंडुडनि पंचॆ सारणशुकुल;
नंदऱकुनु मुख्युडै पुरमध्य । मंदुंडगा विरूपाक्षुनि बनिचॆ;
नीविधंबुन लंककॆल्ल गापिडुचु । रावणुंडंत:पुरंबुन करिगॆ; १७५०
नंत नक्कड रामु डनुजु नर्कजुनि । नंतकंटॆनु हितुंडगु विभीषणुनि
वालितनूजुनि वायुनंदनुनि । वालिन याजांबवंतु सुषेणु
नालोन रप्पिंचि यंदऱितोड । नालोचनंबुनकै कूर्चि पलिकॆ:
“नवगुणंबुलकॆल्ल नालयंबैन । दिविजारिलंक येतॆऱगॊको यिक
जूतमा येर्पड; जूडुडा यॊकनि । चेत दत्कुलमॆल्ल जॆडुट सिद्धंबु”

—ऐसा (सीमा का) अतिक्रमण कर कहने पर वह माल्यवन्त बोला—“मेरी बात को अपने मन में न लेकर, उस रामचन्द्र को ही युद्ध में शूरता-पूर्वक जीतना चाहते हो न ! जाएँगे कहाँ (देखे बिना) ?” ऐसा अधिक कंटक (पुरुषवचन) कहते (वह) क्रोध से चला गया। (उसके) जाने के बाद मन में सोचकर, उस असुरेश्वर ने तभी सप्रयत्न अलघु-बलाढ्य प्रहस्त को प्रथमत: पूर्वद्वार पर रक्षार्थ भेजा। दक्षिण (द्वार) पर महोदर (तथा) महापार्श्व को अक्षीण बलयुत हो रहने भेजा। पश्चिम-द्वार पर सतत शूरता से रहने के लिए (अपने) पुत्र इन्द्रजीत को भेजा। अपने बदले में उत्तर-द्वार पर जाकर रहने के लिए सारण (तथा) शुक को भेजा। सबके लिए प्रधान होकर पुरमध्य में रहने के लिए विरूपाक्ष को भेजा। इस प्रकार समस्त लंका के लिए पहरा रखते हुए (रक्षण की व्यवस्था करते हुए), रावण अन्त:पुर में गया ।। १७५० ।।

तब वहाँ राम ने अनुज, अर्कज, उससे बढ़कर हितू विभीषण, वालि-तनूज, वायुनन्दन, बली जांबवान, सुषेण (आदि) को उस अन्तर में बुलवाकर, सबके साथ आलोचना (मन्त्रणा) के लिए, (उन सबको) एकत्र कर, कहा—“समस्त अवगुणों के लिए आलय (आकर) दिवजारि की लंका किस विधान से है, अब ठीक ढंग से देखेंगे। देखिए, उस एक (रावण) के कारण उसके समस्त कुल का नष्ट होना सिद्ध (निश्चित) है।”

श्रीरामुडु लंकापुरवैभवमु जूचुट

ननि पल्कि यारामु डनुजुंडु दानु । निनसुतु डादिगा नॆल्लवानरुलु
गॊलुवंग वच्चि नॆक्कॊनु वेड्कतोड । नलरुचु नासुवेलाचलंबॆक्कि
गुणमुलु गलवाडु गोत्रंबुनंदु । ब्रणुतिकि नॆक्कु निब्भंगि नन्माड्कि
गनियॆ राघवुडु लंकापुरंबपुडु । दनचेत गडकु साध्यंबगुदानि
ननिलजु पॆट्टिन यंतनुंडियुनु । दनरार लोपल दरिकॊन्न चिच्चु
१७६०
नाडु नेडुनु मंडु नामणिप्रभल । पोडिमि गलुगु गोपुरमुलदानि
गडु नेरुपुन रामु घातकु नुलिकि । मिडिकॆंडु रावणमृगमु बोनीक
विलयकालुंडनु वेटकाडर्थि । वॆलिवाऱु वाऱिन विधमुन जूड
दनरारु पॆद्द कॊत्तळमुलतोड । गनुगॊन नॊप्पु प्राकारंबुदानि
रावणु बॊरिगॊंदु, राम! र'म्मनुचु । जेवीचुगतिनि विचित्रध्वजमुल
महनीयतोरण मंगळसूत्र । महिमतो नंबरमणिसंगममुन
दळतळ वॆलुगु नद्दंबुल नॊप्पि । चॆलुवारगा दट्टु चेतुलु गलिगि
पगलुनु रेयुनु बायक कूडु । मगलचे नॊप्पु कॊम्मलु गलदानि

श्रीराम का लंकापुर के वैभव को देखना

ऐसा कहकर, राम अपने अनुज, इनसुत आदि समस्त वानरों के सेवाएँ करते रहने पर, आकर, विजय(भाव)से होनेवाले उत्साह से प्रसन्न होते हुए, उस सुवेलाचल पर चढ़ा, मानों गुणों से युक्त (व्यक्ति) इसी प्रकार (अपने) गोत्र (वंश) में प्रसिद्ध हो जाता है । तब राघव ने अन्त में अपने हाथों अधीन हो जाने वाले लंकापुर को देखा ।। १७६० ।।

वह (लंका) मणिप्रभाओं से युक्त गोपुरों से ऐसे लग रही थी मानों अनिलज के लगाए समय से लेकर, शोभा से उसके भीतर तब और अब आग सुलग रही थी । (मणिप्रभाएँ अग्निशिखाओं के समान थीं ।) (वह नगर) राम के आघात से चीखकर, उछलने वाले रावण-रूपी मृग को अतिनिपुणता से जाने न देकर, विलयकाल-रूपी शिकारी ने चाहकर मानों फंदा फैलाया हो, इस प्रकार देखने में शोभायमान गुंबजों से युक्त द्रष्टव्य प्रकारों वाला था । 'रावण का संहार करो, राम ! आओ' कहते हुए फहरने वाली विचित्र ध्वजाओं से तथा महनीय तोरणरूपी मंगलसूत्रों की महिमा से, अंबरमणि (सूर्य) के संगम के कारण झिलमिल चमकानेवाले शीशे के टुकड़ों से युक्त हो, सुन्दरता से हिलाते हुए, रात दिन सतत पति से मिली रहनेवाली रमणी के समान थी (वह पुरी) । (चारों तरफ़)

नैसगिन रामु कट्टेदुटिकि गालु । डसुरेशुडनु लुलायमु बट्टितेर
नोरुपुगा द्रव्विन योदंबुलनग । नेरुसिन परिखल नेलकोन्नदानि
१७७०
गैलास ममरारि क्रम्मरु बेंरिकि । मेलैन पेंमि निर्मिचिन माड्कि
दनरारि यल मिन्नु दाकि तेल्पुननु । गनुपट्टु मेडलु गलिगिनदानि
घनलक्ष्मि येदुरुको गडगे रामुनकु । ननि चेप्पुनट्टि तूर्यध्वनिदानि
जिलुकलपलुकुल चेलुवु वहिंचि । यलुल नादंबुल नानंदमंदि
कलकंठरवमुल गडु ब्रीति जेसि । पलिकेंडि शारिकास्फारत मेंरुसि
पल्लवचयमन:पल्लवंबिचु । पल्लवंबुल रागभरितंबुलगुचु
गडिवोनि पूवुल गंधंबुवलन । नेंडपक यंदंद यिपुलु सूप
जेप्प बेक्कगुचु नेंचिनयट्टितरुल । नोप्पेंडिवनमुल नोप्पारुदानि
गमल केंदुनु मन:कमलंबुलैन । कमलाकरंबुल गरमोप्पुदानि
नट्टु चोद्यपडि चूचु नाराघवुनकु । बट्टुतरोद्यत्प्रभाभाति दा नोसगि
१७८०
याकाशमणि ग्रुंके नपराब्धिलोन । गाकुत्स्थमणि नमस्कारंबु सेय;
नाराघवुडु सुवेलाद्रिपैनुंडि । यारात्रि गडतेंचि यंत वेगुटयु

विलसित परिखाएँ ऐसी थीं मानों सुशोभित राम के समक्ष असुरेश-रूपी लुलाय (भैंसे) को पकड़ लाने के लिए काल (पुरुष) के चतुरता से खोदे गए खड्डे हों ।। १७७० ।।

सुशोभित गगनचुंबी श्वेतवर्ण वाले सौधों से युक्त लंका ऐसी थी मानों अमरारी (रावण) ने दुबारा कैलासपर्वत को उखाड़कर, श्रेष्ठ पद्धति से यहाँ लाकर निर्मित कर दिया हो । तूर्यध्वनि ऐसी थी मानों घन (महान्) लक्ष्मी (राम का) स्वागत करने लगी है । शुकालापों से मनोज्ञ बने, अलियों के नाद (गुंजार) से आनन्दित बने, कलकंठियों (कोयलों) के रव से अधिक प्रीत बने, मुखर सारिकाओं की स्फूर्ति से प्रकाशित बन, पल्लव-चय (समूह) से मन को पल्लवित करनेवाले पल्लवों से राग भरित होते हुए, पुष्पों के अमित सुगन्धों के कारण जहाँ-तहाँ सुन्दर लगते हुए, अगणित (तथा) शोभायमान तरुओं से शोभित वनों से विलसित था (वह नगर)। कमला (लक्ष्मी) के मन: कमल बने कमलाकरों (सरोवरों) से युक्त था (वह नगर)। ऐसी लंका को चकित हो देखनेवाले उस राघव को स्वयं पट्टुवर-उद्यत-प्रभाभाति प्रदान कर, ।। १७८० ।।

—काकुत्स्थमणि (राम) के नमस्कार करने पर, आकाशमणि (सूर्य) अपराब्धि में डूब गया। राघव ने सुवेलाद्रि पर रहकर, वह रात बिताई।

गपुलु विनोदंबुगा बॆल्लु रेगि । विपिनंबुलंदॆल्ल वॆस जॊच्चि चॊच्चि
यंदलि शरभसिहादुलनॆल्ल । नंदंद तोलुचु नार्चुचु जॆलग
नट्टिटकोलाहलं बंतयु लंक । मुट्टॆ राक्षसुल यॆम्मुलु वगिलिप;
नदि विनि रावणुं "डदि येमि रवमु? ।पॊंद" डनि वच्चि गोपुर मॆक्कि चूचॆ;
नप्पुडु गोपुरं बतनितो गूड । नॊप्पॆ जूपऱकुनु नुज्ज्वलंबगुचु;
धवळातपत्रमुल् दऱुचुगा बट्ट । धवळचामरमुलु दऱुचुगा वीव
बॊरि बॊरि सुरदंति पोटुल नमरु । नुरमुन बदकंबु लॊरयुचु ग्राल
नायत रत्न सिहासनासीसु । डैयुंडॆ नंत बॆंपलर रावणुडु १७९०
बहुविध राक्षसपरिवृतुंडगुचु । महितायुधप्रभामंडलंबुननु
नपराचलमु मीदि यर्कुनितोडि । युपमकु बात्रुडै युज्ज्वलुंडगुचु;
मॆऱुपुलु गल नीलमेघंबु वोलॆ । दऱुचुगा मॆऱसि मदंबुलु गुरिय
नॆसगिन यादानवेश्वरुंडप्पु । डसमानुडैयुंडॆ नागोपुरमुन;
महनीयरावण महिमचे जेसि । महितविद्युत्प्रभामंडलंबैन
गोपुरस्थलमु दृग्गोचरंबैन । भूपालतिलकुडद्भुतमु बॊंदुचुनु
आ विभीषणु जूचि यल्लन बलिकॆः । "रा विभीषण ! गोपुरंबुन वच्चि

तब प्रातः होने से, कपि विनोद से अति विजृंभित होकर, समस्त विपिनों में झट प्रवेशकर-कर, वहाँ के समस्त शरभ-सिह आदियों को जहाँ-तहाँ भगाते हुए सिहनाद करते हुए विलसित हुए । वह समस्त कोलाहल लंका में व्याप्त हुआ जिससे राक्षसों की हड्डियाँ हिल (काँप) उठीं । उसे सुन, रावण ने 'यह क्या रव है ? चलिए (देखें) ।' (यह) कहते आकर,. गोपुर पर चढ़कर देखा । तब उसके साथ गोपुर, दर्शकों को उज्ज्वल हो, शोभित हुआ । अधिकता से धवल-आतपत्रों (छत्रों) के धारण करने पर, अधिकता से धवल-चामरों के डुलाने पर, सुरदन्ति (देवतागज) के प्रहारों से शोभित उरः स्थल पर पुनः पुनः (अनेक) पदकों (तमगों) के रगड़ खाते हुए विलसित होने पर, अधिक शोभा के व्याप्त होने पर आयत (विशाल)-रत्न सिहासन पर आसीन हो रहा ॥ १७९० ॥

तब वह दानवेश्वर असमान (अप्रतिम) होते हुए, बहुविध राक्षस परिवृत होते हुए, अपराचल (अस्ताचल) पर स्थित अर्क (सूर्य) के साथ उपमा देने पात्र (योग्य होते हुए) महित-आयुध-प्रभामण्डल में उज्ज्वल हो रहा है । चंचलाओं से युक्त हो अक्सर चमककर, मद (जल) बरसानेवाले नीलमेघ के समान शोभित हुआ । महनीय रावण की महिमा से, महित विद्युत् प्रभामण्डल बने गोपुरस्थल के दृग्गोचर होने पर, भूपालतिलक विस्मित होते हुए, उस विभीषण को देख धीरे से बोला—"आओ विभीषण !

भाविंप नरुदैन प्राभवंबुननु । ई विधंबुन नुन्नयितडेव्वडोक्को ?
प्रळयकालमुनाटि भानुबिंबमुल । वेलुगुलपोंदि बोलि वेलुगुचुन्नाडु"
अनिन विभीषणुंडारामुतोड । ननियें: "नातंडु मा यन्न रावणुड;
१८००
सुरनाथु सुरलनु स्रुक्किंकचिनाडु । सुरकामिनुल जेर जौनिपिनवाडु
मुल्लोकमुल नुग्रमूर्तिचे हल्ल । कल्लोलमुग वडि गारिंचिनाडु"

रावण सुग्रीवुल मल्लयुद्धमु

अनवुडु सुग्रीवु डारामुतोड । ननियें: "मीयेंदुट नीयसुर गर्विंचि
वैभवंबिट्टु चूपुवाडे श्रीराम ! । यीभंगि नुंड ने नेंट्लोर्तु" ननुचु
गुटिलवर्तनुडुनु ग्रूरुंडु नगुचु । नट्टु तल लेत्तिन यसुराहिमीद
नकुटिल शौर्यसमग्रुडैनट्टि । प्रकट दिव्यांगसुपर्णुडै पेंचि
सकलेशुडगु रामचंद्रुनि येंदुर । नकलंक साहसव्याप्तिचे बोंदलि
मस्तककोटीर महितश्रृंगमुल । विस्तरोरस्थल विपुलसानुवुल
गुरुकोंनि वाडोक्क कोंडयै युन्न । बिरबिर बडवच्चु पिडुगुचंदमुन
वेस नग्गलमुग सुवेलाद्रिनुंडि । यसुरेश्वरुनिमीदि कर्कजुंडेगसि
१८१०

गोपुर पर आकर, सोचने में भी विरल प्राभव से इस प्रकार स्थित (यह व्यक्ति) पता नहीं कौन है ? प्रलयकाल के भानुबिंब के प्रकाश-पुंज-सा प्रकाशित हो रहा है।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने उस राम से कहा—"वह मेरा अग्रज रावण है ॥ १८०० ॥

सुरनाथ और सुरोंको पीड़ित किया है, सुरकामिनियों को बन्दी बनाया है, तीनों लोकों को, उग्रमूर्ति हो, होहुल्लड़ करते झट पीड़ित किया है।"

रावण और सुग्रीव का द्वन्द्व युद्ध

ऐसा कहने पर सुग्रीव ने उस राम से कहा—"हे श्रीराम ! आपके समक्ष यह असुर गर्वीला हो (अपने) वैभव को इस प्रकार दिखाए ! इस विधान से रहना मैं कैसे सह सकूँगा ?" (ऐसा) कहते हुए कुटिल वर्तनवाला तथा क्रूर होते हुए, उधर सिर उठाए असुराहि (असुर-रूपी सर्प) पर अकुटिल शौर्य समग्रता (से) प्रकट-दिव्यांग वाला सुपर्ण (गरुड़) हो, क्रम से, सकलेश रामचन्द्र के समक्ष अकलंक-साहस-व्याप्ति से वर्धित हो, मस्तक-कोटीर (किरीट) के महित श्रृंगों (तथा) विस्तृत-उर:स्थल-रूपी विपुल सानुओं से उसके (रावण के) एक पर्वत-सम होने पर

देवारि रावणु दृणमुगा जूचि । "रावण ! विनु मेनु रामुनि बंट;
माकु नीवैभवमा चूपे" दनुचु । वीकतो मकुटमुल् वेस डोल्ल व्रेसें;
व्रेसिन नुरुमुलै वेलुगुचु रालु । भासुरकोटीरपंक्ति योप्पारें
गालरुद्रुडु मिन्नु गदगोनि व्रेय । रालु ताराग्रहराजि चंदमुन;
जाल गोपिंचि दशग्रीवुडंत । वालितम्मुनि बट्टि वडि बडवैचें;
नंतटिलोन नय्यर्कतनूजु । डेंतयु रयमुन नेचि पेल्लेंगसि
यसुर जेतुलतोड नटंग बट्टि । दैसलु गंपिंपंग धृति दूल वैचें;
गटमुलु नुदुरुलु गंधरंबुलुनु । विटताटमुलु सेसि वीपेल्ल जीरि
कडकाळ्ळु मेंडलतो गदियंग बट्टि । वडि गोपुरंबुतो वैचि नोंप्पिंचें;
निट्टु पोरुचो वारलिद्दरु दप्पि । पटुगति नेलपै बड वच्चि वच्चि
१८२०

यानेल मोवक यतिलाघवमुन । बूनिक नेंगसि गोपुरमुमीदटनु
बैनगिरि; पेनगुचो बृथुलसत्वमुल । गोनिन विन्नाणमुल् गोनक त्रोयुचुनु
डासि मोकाळ्ळ दट्टनलु सेयुचुनु । बासि क्रम्मर वच्चि बलमु सूपुचुनु

(उस पर्वत पर) अतिवेग से गिरनेवाली गाज के समान, झट अतिशयता से सुवेलाद्रि से अर्कज ने, असुरेश्वर पर छलांग मारी ।। १८१० ।।

(सुग्रीव ने) देवारि रावण को तृण-सा देखकर (कहा)—"हे रावण ! सुनो, मैं राम का सेवक हूँ । हमें अपना वैभव दिखाते हो ? (इतना साहस ?)" (यह) कहते साहस से (रावण के) मुकुटों को झट से लुढ़का दिया । गिरा देने पर चंचलाओं के समान प्रकाशित होनेवाली भासुर-कोटीर-पंक्ति ऐसे शोभित हुई मानों कालरुद्र के गदा लेकर आकाश पर आघात करने से टूट गिरनेवाली तारा-(और) ग्रह-राजि (-समूह) हो । अधिक क्रुद्ध हो दशग्रीव ने तब वालि के अनुज को पकड़कर झट पटक दिया । उतने में वह अर्कतनूज अधिक शीघ्र ऊपर उठकर, वर्धित हो, असुर को हाथों के साथ पकड़कर, दिशाओं के कम्पित होने पर, धृति छूट जाए, ऐसा फेंक दिया । कनपटियों, ललाटों (और) कन्धों पर तमाचे जड़कर, समस्त पीठ को नोचकर, पैरों और गर्दनों को एक साथ पकड़कर, झट गोपुर से दे मारा । इस प्रकार, संघर्ष करते हुए वे दोनों (पकड़ के) छूटने से पटुगति से धरती पर गिरने लगे (किन्तु), ।। १८२० ।।

—उस धरती का स्पर्श न कर, अति लाघव (फुर्ती) से सप्रयत्न, ऊपर उड़कर, गोपुर पर ही जूझ पड़े । जूझते समय पृथुलसत्त्वों से पैंतरे बदलते हुए, ढकेलते हुए, नियराकर घुटनों से आघात करते हुए, दूर होकर फिर नियराकर, बल प्रदर्शन करते हुए, चरणों से छाती पर लात मारते हुए

बदमुल गुंडॆलु पगुल दन्नुचुनु । गदिसि मोचेतु लंगमुल नॊत्तुचुनु
गरवलयंबुल गडगि यौदललु । पॊरिबॊरि नॆत्तुरुलू पॊडम व्रेयुचुनु
दडबड बॆक्कु विधंबुल बॆनगि । कडगि यॆप्पटि तानकमुलु गैकॊनुचु
नुब्बुनूर्पुलतोड नॊककॊंतसेपु । नुब्बरिपक पट्टि यूरकुंडुचुनु
निम्मॆयि बोरुचो निद्दरु मेन । ग्रम्मि पॆल्लॆगयु रक्तप्रपूरमुल
जेगुरुटेरुल जॆलुवैन गिरुल । बागुन नॆंतयु भास्वरुलगुचु
नुन्नचो रावणुंडुरुवडि माय । बन्नि तन्नप्पुडु पट्ट जूचुटयु १८३०
नॆरिगि याकसमुन कॆगिसि वेगमुन । गऱकु राक्षसुलु वॆक्कसमंदि चूड
गपुलॆल्ल नार्व नुत्कटसंभ्रममुन । गपिराजु वच्चि राघवुनकु म्रॊक्क
भक्तिमै रणरज: पटलसम्मिळित । रक्तपंकमु निजोरस्थलं बंट
गपिराजु रामुडु गौगिट जेर्चि । कृप दळुकॊत्त वीक्षिचुचु बलिकॆ:
"वासवांतकुनि रावणुनि गैकॊनक । यीसाहसमुसेय निटु नीकु जॆल्लु;
'ने वानि जंपॆद: नी विभीषणुनि । नावीट निलिपॆद' ननु बास कॊऱकु
वानि जंपक नीवु वच्चुट लॆस्स; । येनु मॆच्चिचति निन्नु निनसूति! नीवु

जिससे छाती फट जाए, निकट आकर कुहनियों से (एक दूसरे के) अंगों को दबाते हुए, सप्रयत्न कर-वलयों से ललाट पर ऐसा मारते हुए कि क्रम से रक्त बह निकले, लड़खड़ाते हुए अनेक प्रकार से जूझने के बाद फिर पुराने पैंतरे ग्रहण कर, फूलती हुई साँसों के कारण थोड़ी देर तक साँस न फुलाते हुए (न हाँफ कर) चुप खड़े रहते, इस प्रकार संघर्ष करते समय दोनों के शरीरों पर व्याप्त हो, अधिक उमड़ने वाले रक्त-प्रवाहों से, लाल रंग की नदियों से शोभित गिरियों के समान भास्वर (प्रकाशमान) हुए। ऐसी स्थिति में रावण के द्रुतगति से माया फैलाकर, अपने को बाँध डालने की (बात) सोचने पर, ॥ १८३० ॥

—उसे जानकर, आकाश में उड़कर, वेग से, अनेक क्रूर राक्षसों के आश्चर्यचकित हो देखते रहने पर, समस्त कपियों के उत्कट-संभ्रम के साथ सिंहनाद करने पर, कपिराज ने आकर राघव को प्रणाम किया। भक्ति के कारण रणरज-पटल (समूह) से सम्मिलित रक्तपंक के निज उर:स्थल पर लगने पर कपिराज को राम ने गले से लगाकर, कृपा (भाव) के प्रकाशित होने पर देखते हुए, कहा—"वासवान्तक (इन्द्रान्तक) रावण की परवाह किए बिना इस प्रकार साहस करना यहाँ तुम्हें शोभा देता है। मेरे इस वचन के लिए कि 'मैं उसका वध करूंगा, इस विभीषण को उस स्थान पर प्रतिष्ठित करूंगा' उसका (रावण का) वध किए बिना तुम्हारा आना उत्तम है। हे इनसूति ! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। तुम वालि के अनुज हो,

वालितम्मुडवु, रावणुनि निर्जिप । जालवे ? तलपंग सैरिंचुटॆल्ल
नदि नाकु बालिडि यवनि नाकीर्ति । बदलक चॆल्लिप वच्चिचति" वनुडु
"देव ! याद्रोहिनि दॆऱगॊप्प जूचि । येविधंबुन गोपमेनु सैरितु" १८४०
ननि यर्कजुडु वल्क नतनि माटलकु । मनमुन हर्षिंचि मऱि यिट्टुलनियॆः
"स्फुरिततारकमु भासुरकृष्णरक्त । परिवेषमुनु नगु भानुमंडलमु
वलन मंटलु दॆगि ग्रालुचुन्नवियु; । जलदमुल् वॆक्कु राक्षसरूपमुलनु
जॆलगुचु नॆत्तुरुल् सिलुकुचुन्नवियु; । गलयंग नॊकट भूकंपमय्यॆडिनि;
मेटिगाड्पुलनु भूमीधरकोटि । कूटमुल् धरणिपै गूलुचुन्नवियु;
बॆगडक दिनकराभिमुखंबुलगुचु । निगिडि वापोयॆडि नॆऱि जंबुकमुलु;
सारॆकु निट्लु राक्षसकुलप्रळय । कारणोत्पातमुल् गानंगबडियॆ;
दिरमुगा नांगिकास्त्रिकशुभप्रकर । वरसूचकंबु लीवलन गन्पट्टॆ;
मनकु जयंबनुमानंबु लेक । यॊनगूडु; निक दडयुट गा" दटंचु
गरुवलिसुतुनिपै गरमॊप्प नॆक्कि । वरपुण्यनिधि जांबवंतु डंगदुडु
१८५०
सौमित्रिमुनु विभीषणुडु नलुंडु । भीमविक्रमकळाभेद्युलै कॊलुव

रावण को मार नहीं सकते थे ? सोचने पर सब कुछ सहन कर लेना, उसे (रावण-वध) मेरे हिस्से छोड़, धरती पर मेरी (प्राप्य) कीर्ति मुझे देने के लिए है।" (ऐसा) कहने पर अर्कज ने कहा—"हे देव ! उस द्रोही को समुचित विधि से देखकर भी, किस प्रकार मैं क्रोध को सह लूँ ?" ॥१८४०॥

—उसकी बातों से मन में हर्षित हो फिर यों कहा—"स्फुरित (विलसित)-तारक (ताराओं से युक्त) (तथा) भासुर कृष्ण रक्त परिवेष (परिवेषण) युक्त भानुमण्डल से ज्वालाएँ टूट गिर रही हैं, अनेक जलद राक्षसरूपों से विजृंभित होकर रक्त बरसा रहे हैं। लगता है, एक बार भूकम्प हो जाएगा। प्रचण्ड वायु के कारण भूमीधर (पर्वत) कोटि-कूट (समूह) धरणी पर गिर रहे हैं। भीत न होकर, दिनकर के अभिमुख हो, तनकर, सुन्दर जंबुक रोदन कर रहे हैं। इस प्रकार बार-बार राक्षस-कुल के प्रलय-कारण-उत्पात दिखाई पड़ रहे हैं। स्थिरता से इस ओर आंगिक-अस्त्रिक-शुभ-प्रकर-वर-सूचक (लक्षण) दिखाई पड़े। हमें निस्सन्देह विजय प्राप्त होगी। अब विलम्ब नहीं करना चाहिए।" (ऐसा) कहते हुए वायुपुत्र के (कन्धे पर) अधिक शोभा से चढ़ (आसीन हो) कर, वर पुण्यनिधि जांबवान, अंगद, ॥ १८५० ॥

—सौमित्र, विभीषण, नल (आदि के) भीम-विक्रम-कला से अभेद्य होते हुए सेवाएँ करते रहने पर, उस नगस्थल से उतर गया। वह अतुल विक्रम

ना नगस्थलि डिगें; नतुलविक्रमुडु । वानरसेनलु वडि दोडुसूप
दानु मुंदरु धनुर्धारियै नडचें । दोन यालक्ष्मणादुलु चेरि कोलुव;
दक्किन सेन लुद्दंडवेगमुन । बेक्कुभंगुल नोक्क पेल्लुगा दोड
नडव नेंतयुबेंचि नलिनाप्तकुलुडु । गडुघोरमैन राक्षसकोटिचेत
दनरिन लंकयुत्तरपुवाकिटनु । विन विस्मयंबुगा विडिसें राघवुडु;

श्रीरामुडु वानरुलचे लंक मुट्टडि वेयिंचुट

द्विविदमैंदुलतोड दिविरि नीलुंडु । नविरळभुजशक्ति नमरुलु पोंगड
बरुवडि गपिसेन बलसि तन् गोलुव । वरमति विडिसें बूर्वद्वारमुननु;
गजुडु गवाक्षुंडु गवयुंडु भूरि । भुजुडैन ऋषभुंडु बोंकंबुतोड
दनतोड गूडिरा दक्षिणद्वार । मुन वालिपुत्रुंडु मुदमोप्प विडिसें;
१८६०
बसतो सुषेणुनि बवननंदनुडु । वेंस गूर्चुकोनि बाहुविक्रमंबोप्प
वाडे पो यीलंक वडि गाल्चिनट्टि । वाडुना बडुमटि वाकिट विडिसें;
मेटुलु पेंद्दनम्मिन मुप्पदारु । कोटुलु कपिनायकुलु तन्नु गोलुव

वाला (राम) वानरसेनाओं के झट साथ देने पर, स्वयं आगे (-आगे) धनुष धारण कर, पीछे (-पीछे) लक्ष्मण आदियों के एकत्र होकर सेवाएँ करने पर, चल पड़ा। शेष सेनाओं के उद्धंडवेग से अनेक प्रकार से एक साथ, आधिक्य के साथ चलने पर अधिक औन्नत्य से नलिनाप्तकुल वाला (राम) अतिघोर राक्षसकोटि से शोभित लंका के उत्तर द्वार पर, सुनने में आश्चर्यप्रद रूप से, राघव ने पड़ाव डाला ॥ १८५६ ॥

श्रीराम का वानरों से लंका का घेरा डलवाना

द्विविद (और) मैंद के साथ नल ने शीघ्र अविरल भुजशक्ति से, अमरों की प्रशंसा करने पर, क्रम से कपिसेना के बली हो अपनी सेवाएँ करने पर, वरमति से पूर्वद्वार पर पड़ाव (घेरा) डाला। गज, गवाक्ष, गवय (और) भूरिभुज (शक्ति)-युक्त ऋषभ के सुघड़ता से अपने साथ मिलकर आने पर, मोद की अतिशयता से वालिपुत्र ने दक्षिण द्वार पर पड़ाव डाला ॥ १८६० ॥

समर्थता से सुषेण को झट साथ लेकर पवननन्दन ने बाहुविक्रम के शोभित होने पर, 'यही तो है इस लंका को झट जला डालनेवाला' ऐसा (दीखते हुए) पश्चिम द्वार पर घेरा डाला। श्रेष्ठ और अधिक विश्वसनीय छत्तीस करोड़ कपिनायकों की अपनी सेवाएँ करने पर, अर्कज ने झट राम

नसमानबलयुतुंडै ऋक्षविभुडु । वसुधेशुनकु दूर्पुवंकनु विडिसॆ;
नॆक्कड नेमियु नेमऱकुंड । मिक्किलि कडिमिमै मॆऱसिराघनुलु;
मनुजेशुडपुडु लक्ष्मण विभीषणुल । गनुगॊनि पलिकॆ नुत्कंठ दीपिप;
“वनचरपतुल नवारित बलुल । वनुपुडु मऱियुनु बैदळंबुगनु
नॆक्कड नेमियु नेमऱकुंड । नॊक्कॊक्क पद्म मॊक्कॊक्क वाकिटिकि ।”
ननवुडु श्रीरामुनानतिजेसि । पनिचिरि यट्टुले पटुसत्त्वधनुल;
१८७०
बंपिन रामभूपालुंडु सौरि । निंपार गनुगॊनि यिट्लनि पलिकॆ:
“ननलुंडु नलुडुनु हरुडु संपाति । मनमु मूवुरमुनु मार्तुरतोड
मिगिलि राक्षसकोटिमीद बॆल्लॆगसि। तगिलि यिक्कडनॆ यद्धंबु सेयुदमु;
ऋंदैन संदडि कय्यंबुनंदु । निंदु नंदुनु मन केऱुगंगवलयु”
ननि पल्कि रामु डायगचराधिपुल । गनगॊनि यपुडॊक्क कट्टड सेसॆ;
“गपिरूपमुलॆ कानि कामरूपमुलु । गपटरुपंबुलु गाकुंडु” डनुचु;
निट्टु रामुनानति नॆल्लवानरुलु । नट लंकचुट्टु नत्यंतवेगमुन
निश्चलसत्वुलै नॆलकॊनि पूर्व । पश्चिमोत्तरयाम्यभागमुल् निंडि

की पश्चिम (दिशा में) पड़ाव डाला। समर्थ भल्लूक सेना के सेवाएँ करने पर, असमान बलयुत हो, ऋक्षविभु (भल्लूक राजा) ने वसुधेश (राम) की पूर्वदिशा में पड़ाव डाला। कहीं भी, कुछ भी असावधान न रहते हुए, अति साहस से वे महान् (योद्धा) प्रकाशित हुए। तब मनुजेश (राम) ने उत्कंठा के दीप्त होने पर, लक्ष्मण और विभीषण को देखकर कहा—“इनके अतिरिक्त अवारित बलवाले वनचरपतियों को, कहीं भी, कुछ भी असावधान रहे बिना एक-एक द्वार पर, एक-एक पद्म (एक संख्या) (की संख्या में) अतिरिक्त दल (सेना) के रूप में भेज दो।” ऐसा कहने पर श्रीराम के आदेश पर पटुसत्त्व-धनवालों को (उन्होंने) उसी प्रकार भेजा ।। १८७० ।।

भेजने पर रामभूपाल ने सौरि (सुग्रीव) को प्रेम से देखकर यों कहा—“अनल, नल, हरि, संपाति (और) हम तीनों शत्रुओं (तथा) शेष राक्षस समूह पर अधिक विजृंभित हो, लगकर यहीं युद्ध करेंगे। घमासान युद्ध में हमें यहाँ की और वहाँ की (अपने और परायों की) जानकारी रखनी चाहिए।” ऐसा कहकर राम ने उन अगचर-अधिपों को देखकर तब एक नियम बनाया कि “कपि रूप ही धारण कर रहो, कामरूप (और) कपटरूप धारण मत करो।” इस प्रकार राम के आदेश पर समस्त वानर, उधर लंका के चारों तरफ़ अत्यन्त वेग से, निश्चल सत्त्ववाले हो, जम गए

पदियोजनंबुल परपुन विडिसि । पदिलमैयुंडि यप्रतिमविक्रमुलु
विक्रुतवालंबुलु विक्रुताननमुलु । विक्रुतदंष्ट्रंबुलु विक्रुतकायमुलु १८८०
नमरंग दरुशैलहस्तुलै पेर्चि । समरंबु सेयंग सन्नद्धुलैरि;
वारि यदल्पुलु वारि यार्पुलुनु । वारि हुंकाररवंबुलु जेलग
भीममै लंकलो बेर्चि यादैत्य । भामिनी-जनुल गर्भंबुलु गलगे;
नट्टि कोलाहलंबंतयु जूचि । नेट्टन राक्षसनिकरंबु बेदरे;
कमलाप्तकुलुडप्डु कल्याणरामु । डमितसत्त्वोन्नतु डतिदयाशालि
“रावणुनोद्दिकि रायबारंबु । पोवनु नेव्वनि बुत्तेंत” मनुचु
“गपिकुलोत्तमुडैन कंजाप्तसुतुनि । गपिराजु बंपुट कार्यंबु गादु;
बल्लिदुडगु जांबवंतु बंपुटकु । नेल्लविधंबुल नेरुगडु वाडु;
परमविक्रमशालि बवमानसुतुनि । मरलनु बंपुट मर्याद गादु;
भुजविक्रमंबुन भूरिवेगमुन । भुजगवैरिकि सरिपोलु नंगदुनि १८९०
नंपुट मे” लनि यतिवेड्क नेंचि । संपद वेलयंग सर्वज्ञुडैन
मनुजेशु डंतट मंत्रुलतोड । ननुमति गैकोनि यंगदु बिल्चि १८९२

(और) पूर्व, पश्चिम, उत्तर, याम्य भागों में फैलकर, दस योजन की चौड़ाई में पड़ाव डालकर, सुरक्षित रूप से रह गए। (वे) अप्रतिम विक्रम वाले, विक्रुत-वाल, (पूँछ) विक्रुत-आनन, विक्रुत-दंष्ट्राएँ, विक्रुतकाय, ॥ १८८० ॥ —वाले होकर, शोभा से तरु शैलों को हाथों में धारणकर, समर करने के लिए सन्नद्ध (तैयार) हो गए। उनके गर्जन, उनके सिंहनाद (तथा) उनके हुंकार-रवों के व्याप्त हो भयंकर होने पर, क्रम से उन दैत्यों की भामिनी-जनों के गर्भ संचलित हुए। उस समस्त कोलाहल को देखकर राक्षस-निकर (समूह) एकदम सहम गया। तब कमलाप्त-कुलवाला, कल्यणराम, अमितसत्त्व-उन्नति वाला, अतिदयाशाली, यह सोचते कि ''रावण के पास दूतकार्य के लिए किसे भेजें'', ''कपिकुलोत्तम, कंजाप्तसुत (सुग्रीव) कपिराज को भेजना समुचित कार्य नहीं है, बलवान जांबवान को भेजने के लिए, वह कुछ भी (राजनीति) नहीं जानता, परम-विक्रमशाली पवमानपुत्र को फिर से भेजना सभ्यता नहीं है, भुजविक्रम में (तथा) भूरि वेग में भुजगवैरी के बराबर अंगद को, ॥ १८९० ॥

—भेजना श्रेष्ठ है।'' ऐसा अति उत्साह से सोच, संपत्ति (ऐश्वर्य) से शोभित हो, तब सर्वज्ञ मनुजेश ने मन्त्रियों से अनुमति लेकर, अंगद को बुलाकर,

अंगदु रायबारमु

येलमि वहिंचुचु निट्लनि पलिकें: । "दलगक नीवेगि दशकंठुतोड
"यरसि रावण! नीवु नजुनिचे गोन्न । वरगर्वमुन मुनिवरुल देवतल
नडचि बाधिंचिनयट्टुगादु; नेडु । विडिसें नीपै रामविभु"डनि पल्कु;
"मेलावु नम्मि नी वेंलनाग देंच्चि । तालावु जूप र"म्मनुमाजिलोन;
"बंटवै श्रीरामु बाणघट्टनल । गेंटक रणमुलो गील्कोंनु" मनुमु;
"अट्टु चेय वेंरचिते नवनिज देंच्चि । यिट निच्चि ब्रतुकुट यिदिबुद्धि"
यनुमु;
"परग लंकाराज्यपट्टंबुनकुनु । गरुण विभीषणु गट्टिना" डनुमु:
"चंपेंडु राघवेश्वरु डिदें निन्नु; । जंपक मुंदर सकलबांधवुल १९००
जूडुमु; लंकयु जूडु मेर्पडग; । जूडुमु नीकूर्चुसुंदरीजनुल;
दनयुलु दम्मुलु दग बंधुजनुलु । ननि जावकुंडगा नट्टु कावु"मनुमु;
"नीवु नीबंधुवुल् निरवशेषमुग । जावंगगलवारु; चच्चिन मीद
कार्यंबु लिप्पुडु गाविंचुकोंनुमु; । कार्यमिट्टिदि दशकंठ! नी"कनुमु।
अनि यिट्लु श्रीरामु डानतिच्चुटयु । मनमुन हर्षिंचि मर्कटोत्तमुडु

अंगद का दूतकार्य

—प्रेम (भाव) धारण करते हुए इस प्रकार कहा—"विचलित न होकर तुम जाकर दशकण्ठ से कहो कि 'हे रावण! सोचो तो तुम अज से प्राप्त वरों के गर्व से मुनिवरों (तथा) देवताओं का दमन कर पीड़ित करने के समान नहीं है (राम के साथ लड़ना)। आज तुम पर (आक्रमण करने के लिए) विभु राम ने पड़ाव डाला है।' कहो कि 'जिस सामर्थ्य पर विश्वास कर तुम सुन्दरी (सीता) को लाए थे, उस सामर्थ्य को दिखाने के लिए युद्ध (भूमि) में आ जाओ।' कहो कि 'योद्धा बन श्रीराम के बाणाघातों से विचलित न होकर रण में लग जाओ'। कहो कि 'ऐसा (युद्ध) करने से डरोगे तो अवनिजा को लाकर, यहाँ देकर जीवित रहना नीति संगत है।' कहो कि 'शोभा से लंकाराज्य पदवी को करुणा से विभीषण को (राम ने) प्रदान किया है।' कहो कि 'यही (अभी) राघवेश्वर तुम्हारा वध कर देगा। मरने से पूर्व समस्त बान्धवों (रिश्तेदारों) को, ।।१९००।।

—देख लो, लंका को खूब देख लो, अपनी प्रिय सुन्दरियों को देख लो, तनय, अनुज, योग्य बन्धुजनों को युद्ध में मर जाने से बचा लो।' कहो कि 'तुम और तुम्हारे सम्बन्धी निरवशेष (निःशेष) रूप से मर जाने वाले हैं। मरने के बाद किए जानेवाले कार्यों को अब कर लो। हे दशकण्ठ!

विनयंबुतो रामविभुनकु म्रोक्कि । यनुरागमुन नेगें; नम्महाबलुडु
घनतरपर्वताकारंबुतोड । ननिमिषुल् पोंगडंग नालंक जोच्चें
गड्डुदुष्टराक्षसगहनमुल् गाल्प । नडरेंडु विलयकालाग्नियु बोलें
नेंगसि यासभलोन निंद्रारि जंप । दगिलिन मृत्युदूतयु बोलें नपुडु
दशरथात्मजुनाज्ञ दल मोचिकोंनुचु । दशकंठुमुंदर दडयक निलुव
१९१०
गनुगोंनि यपुडु राक्षसकोटि येंल्ल । "निनजुंडु क्रम्मर नेतेंचें" ननुचु
नायोधनोद्युक्तुलै संभ्रमिंप । नायसुरुल नेंल्ल हस्तमुल् साचि
'वलव दोहो !' यनि वारण सेसि । पलिकें नंगदुनितो बंक्तिकंधरुडु:
"क्रोंव्वि वानरुड! यी कोंलुवुलोपलिकि । नेंव्वग नोंदक नेडुवच्चितिवि,
ऐंवरु निन् बंचिना ? रेंव्वंडवीवु ? । एव्वनि तनयुंड ? वेमि नीपेरु ?
निव्वटिल्लेंडु लंक नीविटु चोंच्चि । येंव्वरिपनि बूनि येगुदेंचितिवि ?
वनचर! चेंप्परा वच्चिनकार्य ।" । मनि रावणुंडिट्टुलदलिंचि पलुक
विनि क्रोधविवशुडै विकृतास्युडगुचु । वनचरपति यंतवानि किट्लनियें
"नी वेव्वडनिपल्कु, देंरुगवे नन्नु ! । रावण ! येनु रा रामुनिबंट ।"

यह कार्य ही ऐसा है ।" (ऐसा) कह इस प्रकार श्रीराम के आदेश देने पर, मन में हर्षित हो, मर्कटोत्तम (वानरश्रेष्ठ) विनय से विभुराम को प्रणामकर अनुराग से गया । वह महाबली घनतर-पर्वताकार से अनिमिषों (देवताओं) के प्रशंसाएँ करने पर, उस लंका में प्रविष्ट हुआ । अत्यन्त दुष्ट राक्षस-गहनों (वनों) को जलाने के लिए विजृंभित विलय कालाग्नि के समान, उड़कर, उस सभा में इन्द्रारि (रावण) को मारने के लिए उद्यत मृत्युदूत के समान तब दशरथात्मज की आज्ञा को सिर पर धारण करते हुए, दशकण्ठ के समक्ष अविलम्ब खड़ा हो गया ।। १९१० ।।

(उसे) देख, तब समस्त राक्षस-समूह के यह सोच कि "इनज (सुग्रीव) फिर से आया है" आयोधन (युद्ध) के लिए उद्युक्त हो जल्दबाजी करने पर, हाथ फैलाकर उन समस्त असुरों को "न न, रुको" कह, मना कर, पंक्तिकंधर ने अंगद से कहा—"हे वानर ! चर्बी चढ़ गई जो इस सभा में किसी प्रकार की बाधा को न पाकर आज आए हो ? तुम्हें किसने भेजा है ? कौन हो तुम ? किसके पुत्र हो ? क्या है नाम तुम्हारा ? अधिक शोभायमान लंका में इस प्रकार प्रवेशकर, किनके काम को लेकर आए हो ? हे वनचर ! बोलो रे ! क्या काम है ?" ऐसा रावण के धमकाकर कहने पर, सुनकर, क्रोधविवश हो, विकृतास्य (विकृत-आनन) वाला होता हुआ, वनचरपति ने उससे यों कहा—"यह पूछते हो कि तुम कौन हो ? मुझे नहीं

"रामुडॆव्वडु?" "पराक्रममुन बरशु। रामुनि गॆलिचिन रणविचक्षणुडु"
१९२०
"अतडॆव्व ?" "डुद्धतुंडै कार्तवीर्यु । नतिवीरु द्रुंचिन यतुल विक्रमुडु।
"अतडॆव्व? डॆऱुगवा याजिलो निन्नु। जितु जेसिकॊनि पोयि चॆऱ् निडनतडु"
"ऎव्वनि तनयुड ?" वॆऱुगवा नन्नु ? । निव्वटिल्लग बट्टि निनु दोकगट्टि
मौऱ्पेट्ट वार्धुल मुंचि मुंचीड्चि । करुणिंचि विडुवडे घनुडैन वालि!
यावालि मऱ्चिते यकट! यितटनॆ? । ये वालिसुतुडौट यॆऱुगवा योरि !
यंगदुंडनुवाड; नाहववार्धि । नंगद निनु मुंतु नातंड्रिवोलॆ;
मातंड्रि यॆऱुगक मऱ् निन्नु बट्टि । याततंबुग नीट नटु मुंचॆगाक !"
यनवुडु गोपिंचि यसुरेशुडनियॆ: । "वनचराधम! योरि! वच्चिनदूत
जॆनकि निन्निट शिक्ष सेयरादनुचु । घनमुगा बॆंडिदंपु गाऱुलाडॆदवु;
मन्निपगा नीवु मम्मु गैकॊनक । यिन्नीचवाक्यंबु लेल पल्कॆदवु ?
१९३०
वलनुगा निट मुन्नु वच्चिन दूत । यलरग दनपेरु हनुमंतुडनुचु
वलनॊप्प निट वच्चि वैदेहितोड । गलवि लेनिवि कॊन्नि काऱुलु बलिक

जानते हो ? हे रावण ! मैं हूँ रे राम का सेवक ।" "राम कौन है ?" "पराक्रम से परशुराम को जीतनेवाला रणविचक्षण (कुशल) है" ॥ १९२० ॥ —"वह कौन है ?" "उद्धत बन अतिवीर कार्त्तवीर्य का संहार करनेवाला अतुलविक्रमी है ।" "वह कौन है ?" "नहीं जानते (उसे) ? युद्ध में तुम्हें हरा ले जाकर बन्दी बनानेवाला वह ।" "किसके पुत्र हो ?" "नहीं जानते हो मुझे ? अतिशयता से पकड़कर तुम्हें पूँछ से बाँधकर, (तुम्हारे) मिन्नतें करते रहने पर वारिधियों में (तुम्हें) डुबो-डुबोकर, (अन्त में) करुणा कर नहीं छोड़ दिया था उस महान् वालि ने । हाय उस वालि को इतने में ही भूल गए ? रे, यह नहीं जानते कि मैं वालि का पुत्र हूँ । मैं अंगद हूं । आहव (युद्ध) रूपी वारिधि में उत्साह के साथ मेरे पिता के समान तुम्हें डुबो दूंगा । मेरे पिता ने न जानकर तुम्हें पकड़कर, उस समय केवल पानी में डुबोया था ।" ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो असुरेश ने कहा—"हे वनचराधम ! रे ! आए हुए दूत को छेड़कर दण्डित नहीं करना चाहिए, (ऐसा हमारे) सोचने से, बढ़-बढ़कर परुष निंदा वाक्य कहते हो । (तुम्हारा) मान करने पर हमारी परवाह न करके तुम ये नीच वाक्य क्यों कहते हो ? ॥ १९३० ॥

यहाँ पहले आए दूत ने औचित्य से अपना नाम हनुमान बताया । औचित्य से यहाँ आया (और) वैदेही (सीता) से अनेक व्यर्थवचन कह,

यीचतुरोक्तुलनेकंबु लाडि । माचेत दंडन मरि पोंदि पोयें;
नोरि! यावानरुडुन्नाडो ? लेडो? । वेरवारगा नाकु विवरिंचि चेप्पु।"
मनवुंडु नंगदुंडसुर किट्लनियें: । "घनुलु रामुनिसेन गपुलेल्ल गिनिसि
बलिमि नहंकार पटुशक्ति मेरसि । चेलगि याहनुमंतु चेंपलु गोट्टि
यनिरि 'रामुनितोड नटु माटलाडि। पनिपूनि लंककु बंटवै पोयि
यडरि यिंद्रारिचे नालंबुलोन । वडि बट्टुवडि चिक्कि वनचर! नीवु
तोक गाल्पिचुक तोलगिवच्चितिवि ;। वीकतो रामुनि वीटिलोपलनु
सरवि नंदरु कपसडि तेच्चि' तनुचु । वेरविडि तोलिन वीटिकिबासि
१९४०
यट बंपकड केगें नावानरुंडु । इट रामुसेनलो निद्दरु मम्मु
निनजुंडु वानरहीनुल नेंचि । पनुपड निटुवंटि पनुलु सेयिंचु"
ननि यंगदुडु वल्क नसुरेशु डंत । मनमुन विस्मयमग्नुडै युंडें;
मलयुचु जलमु क्रम्मरु नूलुकोलिपि । यलघुडै यंगदुंडप्पुडु पलिकें:
"नेर रावण! रामु नेरुगवा योरि! । यीरीति गर्विप नेटिकि नीकु ?
लोकविक्रमुडु त्रिलोकभीकरुडु । लोकशरण्युंडु लोकैकनुतुडु
लोकरक्षकुडुनु लोकशिक्षकुडु । प्राकटचंद्रमोभानुवीक्षणुडु
वेदांतवेद्युंडु वेदगोचरुडु । नादिनारायणुं डतिसत्त्वधनुडु

इस प्रकार के अनेक चतुर वचन कह, हमारे हाथ दण्डित होकर चला गया था। अरे, वह वानर (अभी) जीवित है या नहीं? ठीक ढंग से मुझे सविवरण बताओ।" ऐसा कहने पर अंगद ने असुर से कहा—"राम की सेना के समस्त वीर कपियों ने क्रुद्ध हो, बल (तथा) अहंकार की पटुशक्ति से दीप्त हो, विजृंभित हो उस हनुमान को तमाचे जड़कर कहा 'हे वनचर ! राम से बात करके (वचन देकर), सप्रयत्न लंका को वीर बन जाकर, शोभित हो, इन्द्रारि से युद्ध में झट बन्दी बन, अपनी पूँछ जलवाकर, वापिस आए हो ? क्रम से राम के यहाँ के सबको अपकीर्ति लाए हो।' (ऐसा) कहते औचित्य को छोड़, भगाने पर, स्थान से बिछुड़कर, ॥ १९४० ॥

—वह वानर उधर पम्पा (सरोवर) के पास गया है। राम की सेना में हम दो हीन वानर हैं। इनज (सुग्रीव) हमें तैयार कर इस प्रकार के (नीच) कार्य करवाता है।" ऐसा अंगद के कहने पर तब असुरेश (थोड़ी देर) मन में विस्मयमग्न हो रहा। घूमते हुए हठ से फिर भड़काकर, अलघु होते हुए, तब अंगद ने कहा—"अरे रावण ! राम को नहीं जानते ? इस प्रकार का गर्व तुम्हें क्यों ? लोकविक्रमी, त्रिलोकभीकर, लोक-शरण्य, लोकैक-विनुत, लोकरक्षक, लोकशिक्षक (दण्डित करनेवाला), प्रकट

यसदृशुं डारामु डभिरामु डनघु । डसहायशूरुडुं नतुलबिक्रमुडु
अडरि नीचेॅलिय लत्यासक्ति डाय । नडचिन नाशूर्पणखमुक्कु सेॅवुलु
१९५०
वडि बट्टि कोसिन वरखड्गधार । वडियु नेॅत्तुरु दुडुवग रोसिरोसि
खरदूषणांगरक्तंबुल गडिगि । कर मोॅप्प जेसिन काकुत्स्थतिलकु
नेॅरुगवा रामुनि? नेटिकि ब्रेलेॅ ? । देॅरिगेॅदु का केमि? येॅदु बोयेॅदवु?
मूडु लोकंबुलु मुट्टि गर्वमुन । मार्डिचि निन्नु नम्मनुजवल्लभुडु
दुनिमेॅडि, नुग्रत दौलगक निलिचि । यनिसेयु बंटवै; यंतिय चालु;
लंक नीविंक नेलगलेवु विनुमु; । लंककु बति सुम्मु ललि विभीषणुडु;
तडयक नीमीद दयगलिग विभुडु । कडुवेगमुन निट्टि क्रममुन मंचि
बुद्धि नीकुनु जेॅप्प बुत्तेॅंचेॅ नन्नु; । वद्दुरा ! राक्षस! वैदेहि निम्मु;
तौडरिन बलवंतुतो संधियगुट । पुडमि राजुलकेॅल्ल बुद्धियेॅ सुम्मु!
मदि मदि नुंडि रामाधिपुतोड । गदिसि कय्यमुनकु गालु द्रुव्वकुमु;
१९६०
राक्षसाधम! योरि ! रामुनि देवि । नीक्षिति मौरगि नी विट्लु
तेदगुनेॅ ?

चन्द्रमुखवाला, भानुवीक्षण (सूर्यसम नेत्रवाला), वेदान्तवेद्य, वेदगोचर, आदिनारायण, अतिसत्त्वधनी, असदृश अभिराम, अनघ, असहायशूर, अतुल विक्रमवाला है वह राम। अतिशयता से तुम्हारी बहन (शूर्पणखा) के निकट आने पर, उस शूर्पणखा के नाक कान, ॥ १९५० ॥

—अतिशयता से झट पकड़कर काट देने पर, वर खड्ग की धारा से स्रवित होनेवाले रक्त को पोंछने को घृणित मानकर, खरदूषण के अंगरक्त से (खड्ग) को धोकर, उचित कार्य करनेवाले काकुत्स्थतिलक राम को नहीं जानते हो ? क्यों बकते हो ? अब नहीं जानोगे (उन्हें) ? कहाँ जाओगे ? त्रिलोकों को स्पर्श कर (तुम कहीं भी छिपो, पकड़कर) गर्व से दग्ध कर, तुम्हें वह मनुजवल्लभ (राम) मार डालेगा। उग्रता से न हटकर, खड़े रहकर, वीरता से युद्ध करो। इतना ही बस है। सुनो, अब तुम लंका पर शासन नहीं कर सकते। अब तो लंका का पति विभीषण है। विलम्ब न कर तुम पर दयालु हो विभु (राम) ने अतिशीघ्र इस प्रकार से तुम्हें अच्छी बुद्धि (की बातें) बताने के लिए मुझे भेजा है। यह छोड़ दो रे राक्षस ! वैदेही को दे दो। समक्ष आए बलवान (राजा) से सन्धि कर लेना, धरती पर सभी राजाओं के लिए उचित ही है। प्रशान्त मन से रहकर, राम-अधिप (राजा राम) से युद्ध मत छेड़ो ॥ १९६० ॥

लोकपावन सीत लोकैकमात । नीकु देदगु नोरि! नीच राक्षसुड!
निनु जूड दोषंबु निनु जूडरादु; । घनतर दुष्पापकर्मुॅड वीवु;
लोकंबुलकु दल्लि लोलाक्षि सीत । नीकु दल्लियकादॆ ? निर्भाग्य दनुज!
एदिरि दन्नॆऱुगवे; येमंदु गिन्नु? । मदिराक्षि नट्टु पोयि मायचे दॆच्चु
टिवि बंटुतनमुला यॆऱुगंग नीकु ? । निवि राजसंबुला यॆन्नंग नीकु?
निवि कीर्तुला नीकु? नॆऱुगलेवैति; । वविवेकमुनजेसि यपसडिवडिति;
विहपरदूरुड वी वेपुमीऱि । विहितमार्गंबित विवरिंपवैति;
वॆंडपक रघुरामुडॆग्गेमि सेसॆ ? । गडुगर्वमुन मीदु गानलेवैति;
वुडुगक बडवाग्नि नॊंडिगट्टुकॊंटि । पुडमिपै भस्ममै पोयॆडिकोऱकु; १९७०
नीपालि विधि पट्टि नीमॆड गट्टि । यीपाटु सेसॆ निन्नीरसमॆत्ति
नीवेमिसेयुदु; नीव्रातफलमु । गाविप नजुडिट्लु कट्टडसेसॆ;
गडिदि रामुनि यंप कार्चिच्चुलोन । वडि शलभंबवै व्रालॆदवॆल्लि;

हे राक्षसाधम ! अरे ! राम की देवी को इस क्षिति (लोक) में वंचना से इस प्रकार तुम्हारा लाना उचित है ? अरे, नीच राक्षस ! लोकपावनी, लोकैकमाता (सीता) को तुम्हें लाना चाहिए था ? तुम्हें देखना ही दोषप्रद है, तुम्हें नहीं देखना चाहिए । घनतर दुष्पाप-कर्म वाले हो । लोलाक्षी सीता समस्त लोकों की माता है (तो) हे निर्भाग्य दनुज ! तुम्हारे लिए भी माता नहीं है ? प्रतिपक्षी और अपनी (सामर्थ्य) को नहीं जानते । क्या कहें ? उधर जाकर मदिराक्षी को धोखे से लाना कैसी वीरता है ? सोचने पर यह तुम्हारे लिए राजस (राजा सा कार्य) है क्या ? क्या यह तुम्हारे लिए कीर्ति (-प्रद) है ? नहीं समझ सके । अविवेक के कारण अपकीर्ति के भागी बने । इह (लोक) तथा पर (लोक) से दूर होकर तुम अतिशय गर्व से विहित मार्ग को समझ नहीं सके । रघुराम ने सतत ही तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ? अधिक गर्व से ऊँच (-नीच) को नहीं जान सके । पृथ्वी (लोक) पर भस्म हो जाने के लिए, न रुककर (आगे-पीछे न सोचकर) बड़बाग्नि को गोद में भर लिया है ॥ १९७० ॥

तुम्हारी विधि (नियति) ने तुम्हें इस प्रकार उभाड़कर, (यह सब) तुम्हारे गले मढ़ दिया है तो तुम क्या कर सकोगे ? तुम्हारे विधि-विधान को कार्यान्वित करने के लिए आज (ब्रह्मा) ने ऐसा नियम बनाया है । परसों सप्रयत्न राम की बाणाग्नि में पड़ शलभ बनकर मर जाओगे । अधिक

चाल नॊप्पिनयट्टि सौख्यत लंक । येलु भाग्यंबु ले; देमंदु निन्नु ?
सडिवोक रघुरामु शरणंबु सॊरुमु । पुडमिलो नीप्राणमुलु गाचिकॊनुमु
नी पुत्रमित्रादिनिखिलराक्षसुलु । नेपऱि रामुचे नील्गकमुन्ने ।
कार्यंबु मनुपड गैकॊनि ब्रतुकु । कार्य मॊल्लक पोरु गैकॊंटिवेनि
चुट्टाल नितुल सुतुल सोदरुल । निट्टै यिदऱ जूडु, मिक जूडलेवु;
एलमि नीमोहंपुटितुल नॆल्ल । गलय भोगिंपुमु कांक्षलु दीर;
वॆलयंग नीराज्यविभवंबु लॆल्ल । बलुदॆऱंगुल नेडॆ पार्टिचि चूडु;
१९८०

हरिहरब्रह्मादुलड्डगिंचिननु । दुरमुलोपल निन्नु द्रुंचु राघवुडु;
इन्नियु नेटिकि निनकुलेश्वरुनि । कुन्नतमति सीत नॊप्पिचि ब्रतुकु;
मिट्टु रामुनानति येऱुग जॆप्पितिनि । गुटिलराक्षस ! येमि ? गॊब्बुन जॆप्पु"

रावणु डंगदुनितो दन पराक्रमसु सॆप्पुट

मन रोषचित्तुडै यद्दशाननुडु । ननियॆ नंगदुतोड नप्पुडु किनिसि
"रामु जॆप्पॆदु, पराक्रमशालि नन्नु । रामु डेऱुंगडा रणविजयुडुग ?

शोभायमान सुख से लंका पर शासन करने का सौभाग्य नहीं है। तो तुम्हें (अधिक) क्या कहूँ ? अपने पुत्र-मित्र आदि निखिल राक्षसों के शोभा रहित हो राम के हाथ मरने से पहले ही, अपकीर्ति के भागी न बन, रघुराम की शरण में जाओ, पृथ्वी (लोक) पर अपने प्राणों की रक्षा कर लो। कार्य ठीक करके प्राण बचा लो, यह न चाहकर युद्ध को अपनाना चाहो तो बन्धुवर्ग, स्त्रियाँ, सुत, सहोदरों को सभी को अभी देख लो, आगे (उन्हें) नहीं देख सकोगे। प्रेम से अपनी समस्त लाड़ली स्त्रियों का, आकांक्षाएँ पूरी हों, ऐसा उपभोग करो। शोभा से अपने समस्त राज्य वैभव का अनेक प्रकार से निर्वाह (भोग) कर देख लो ॥ १९८० ॥

हरिहर ब्रह्मा आदि बीच में (रोकने) आवें तो भी युद्ध में राघव तुम्हारा वध करके रहेगा। ये सब क्यों ? इनकुलेश्वर (राम) को उन्नत मति वाली सीता देकर जीवित रहो। हे कुटिलराक्षस ! यह राम के आदेश से (तुम्हें) समझाकर बताया है। क्या (जवाब देते हो), झट कह दो।" ॥ १९८३ ॥

रावण का अंगद से अपने पराक्रम के बारे में बताना

(ऐसा) कहने पर रोषचित्त वाला हो, दशानन ने क्रुद्ध हो, अंगद से तब (यों कहा)—"राम के बारे में (इतना क्या) कहते हो ? मुझ

दिविजेंद्रु डादिगा देवसंघमुल । बवरंबुलो दोंडरि पऱपिनवाड
हरुडुन्न कैलास मगलिंचिनाड । नेंरियंग गालुनि नेंदिरिंचिनाड
वरुसतो जगमुलु वर्णिप नलरि । सरवि लोकमलेंल्ल साधिंचिनाड
वनजासनुनिचेत वरमु गोंन्नाड । मोंनसि दिव्यायुधंबुलु गलवाड;
निट्टिपिम्मटनु ने नीरामुमऱुगु । बट्टिन नलुगुरु पकपक नगरें ?
१९९०
यनुजुंडु नातोड नलिगट्टुपोयि । जननाथु मऱुगु वंचन जोंच्चेंगाक!
येनेनु जोंच्चिन हीनत गादें । वानराधम! नाकु वसुमतिलोन ?
मगपाडि दिगनाडि मानंबु वीडि । पगवानि गोंल्चुट पंतमे नाकु ?
बगवाडु दंडेंत्ति पैवच्चिनपुडु । मगटिमि चेंडि संधि मऱि चेसिनंत
जगति राजुलु नन्नु सरकुसेयुदुरें? । तगदुरा! संधि यित्तऱि वानरुंड !”
यनिन दशास्युनिकनियें नंगदुडु: । “घनपराक्रमुतोड गय्यंबु दगदु;
दानव ! रघुरामु तरमेंऱुंगकय । पूनि युन्नाड विप्पुडु कावरमुन;
सुरल गेंलिचनमाड्कि शूरु राघवुनि। दुरमुलो नेंदिरिंचि तोंडरुट-
येंट्लु ?
बलमेंदि रघुरामपार्थिवुनेंदुर । बलुमुष्टि विल्लेंट्लु पट्टंगवच्चु ?

पराक्रमशाली को रणविजयी के रूप में राम नहीं जानता ? दिविजेन्द्र के साथ देवसमूहों को युद्ध में हराकर भगा दिया है, हर के कैलास को उखाड़ डाला है, काल (यम) को दुखी कर सामना किया है, क्रम से सभी जग वर्णन करें, ऐसा आनन्द से समस्त लोकों को जीत लिया है, वनजासन से वर प्राप्त किया है, श्रेष्ठ दिव्य-आयुधों वाला हूँ। इतना सब होने पर मैं राम की शरण जाऊँ तो सभी लोग खिल-खिलकर नहीं हँसेंगे ? ॥ १९९० ॥

अनुज मुझपर रूठकर, उधर जाकर जननाथ (राम) की शरण में (मुझे) वंचित कर गया तो गया। हे वानराधम ! मेरा भी (राम की) शरण में जाना, वसुमति (लोक) में हीनता नहीं होगी ? पौरुष को छोड़, मान को छोड़, शत्रु की सेवा करना मेरे लिए पौरुष है ? शत्रु के चढ़ आने पर, पौरुष को छोड़, फिर सन्धि कर लेने पर, जगत में (आगे अन्य) राजा मेरी परवाह करेंगे ? हे वानर ! इस अवसर पर (मेरे लिए) सन्धि उचित नहीं है।” (ऐसा) कहने पर अंगद ने दशास्य से कहा—“घन पराक्रम वाले से युद्ध नहीं करना चाहिए। हे दानव ! रघुराम के स्तर को न जानकर, अब घमण्ड से युद्ध के लिए तैयार हो गए हो। सुरों को जीतने के समान, शूर राघव का, युद्ध में सामना कर कैसे टिक सकोगे ? बल खोकर रघुराम-पार्थिव (राजा) के समक्ष दृढ़ मुष्टि से धनुष कैसे

नॊरुल गॆल्चिन माड्कि नॊर्चि राघवुनि । शरमुलमुंदऱ जरियिंचुटॆट्लु ? २०००
कणकतो नीवॆत्तगा लेनि विल्लु । दृणलील विऱुवडे त्रिजगंबुलॆऱुग?
वॆऱवेदि रघुरामु विक्रमस्फुरण । मॆऱुगनि यविवेकि, वेमंदुनिन्नु ?
जनकनंदन निच्चि शरणंट लॆस्स" । यनि यंगदुडु वल्क नसुरेशुडनियॆ:
"नोरि! वानरुड! नी वोडक निल्चि । सारॆकु रघुरामु शौर्यमॆन्नॆदवु,
आरामु विक्रम मा रामु कडिमि । या रामु भुजशक्ति यदि यॆंतपॆद्द?
चलमुन दाटक जंपॆनंटेनि । तलपोय, नाटदि, दानि पॆंपॆंत?
जनकुनि विल द्रुंचि जनकतनूज । घनत जेकॊन्नट्टि घनुडंटिवेनि
नाविल्लु नेटिदे, यदि यॆंचनेल ? । आविल्लु चिवुकुदि; अदि येमिदॊड्डु ?
जमदग्नि रामुनि समरमध्यमुन । ग्रममुन गॆलिचिन घनुडंटिवेनि
अनि ब्राह्मणुनि गॆल्चुटदि बंटुतनमॆ?। विन बोलदीमाट; वीरत्वमगुनॆ ? २०१०
नलपुन खरदूषणादिराक्षसुल । जलमुन नॊक्कडे चंपॆनंटेनि

धारण कर सकोगे ? अन्यों को जीतने के समान, राघव के बाणों को सहन कर कैसे विचरण कर सकोगे ? ॥ २००० ॥

प्रयत्न करके भी तुम जिस धनुष को उठा नहीं सके, उसे त्रिलोक जानें ऐसा तृण के समान तोड़ा नहीं था ? उपाय (युक्ति) को खोकर, रघुराम की विक्रम-स्फूर्ति को न जान सकनेवाले अविवेकी हो । क्या कहूँ तुम्हें ? जनकनन्दना को देकर शरण माँगना ही समुचित है ।" ऐसा अंगद के कहने पर असुरेश ने कहा—"अरे ! वानर ! तुम हारे (थके) बिना रहकर, बार-बार रघुराम के शौर्य की स्तुति करते हो । उस राम का विक्रम, उस राम का साहस, उस राम की भुजशक्ति —वह कितनी बड़ी है ? कहोगे कि हठ से ताड़का का वध किया है तो सोचने पर वह अबला है, उसकी शक्ति कितनी है ? कहोगे कि जनक के धनुष को तोड़कर जनकतनूजा को बड़प्पन के साथ स्वीकारनेवाला महान् (व्यक्ति) है तो क्या वह धनुष आज का है, उसकी गिनती क्यों करते हो ? वह धनुष जीर्ण हो गया है । (उस धनुष को तोड़ना) वह कौन-सी बड़ी बात है ? कहोगे कि जमदग्नि-राम (परशुराम) को युद्ध में क्रम से जीतनेवाला महान् (व्यक्ति) है तो युद्ध में ब्राह्मण को जीतना भी कोई वीरता है ? यह बात तो सुनने भी योग्य नहीं है । यह वीरता है ? (नहीं) ॥ २०१० ॥

कहोगे कि अथक हो, खरदूषण आदि राक्षसों को हठ से अकेले ही

नलर वारलु वृद्धु, लदि चॆप्पनेल ? । तलपोय कॊंचिति तप्पक नीवु;
तॆगुव मारीचु मर्दिंचॆनंटेनि । मृगमात्र, मदियेमि मॆलपु वॆग्गलमु ?
ऎसग वालिनि गूलनेसॆ नंटेनि । वसुधलोपल गोति, वाडॆंतदॊड्डु ?
जवसत्त्वमुन वार्धि शरमुखंबुनकु । गवगॊनदॆच्चिन घनुडंटिवेनि
नावार्धि जलमात्र, मदि येमि बलिमि ? । एविधंबुन रामुनॆन्नॆदवुब्बि ?
इवि बंटुतनमुला यी राघवुनकु ? । निवि यॊक्क गॆलुपुला यी
रामुनकुनु ?
बूनि नामुंदड़ बॊंडवुलु सेसि । वानराधम ! रामु वर्णिंचॆदीवु”
अनि दशास्युडु वल्क ननियॆ नंगदुडु:। “पनिगॊन निर्घातबाणु राघवुनि
सकललोकाराध्यु जगदभिरामु । सकलजगन्नुत जयशालि रामु
२०२०
नकलंकविक्रमोन्नतशौर्यु रामु । नकट! तूलगनाड नर्हमे नीकु ?
जॆलगु नारघुरामु शौर्यंबुनकुनु । तॊलिमुद्दयगु खरदूषणुल् साक्षि;
गॊनकॊनि वालिनि गोतंटिवकट ! । अनघुडावालि कोतौट गाकुंट
कॆनसिन यंबुधु लेड्डुनु साक्षि । किनुकमै नी दशग्रीवमुल् साक्षि;
अलघुविक्रमशालियैन राघवुनि । जॆलगि दूर्षिचिन जननाथुपोर्मि

मार डाला है तो वे वृद्ध हैं। (उनकी बात) कहना ही क्यों ? यह सोचे बिना ही तुमने इन्हें गिना है। कहोगे कि साहस से मारीच का मर्दन किया है तो वह तो मृगमात्र है। वह कौन बड़ा आधिक्य है ? कहोगे कि शोभा से वालि को गिराया है तो वह तो वसुधा पर वानर है। वह कितना बड़ा है ? कहोगे कि जव-सत्त्व से वारिधि को शरमुख से एकत्र ला सकनेवाला महान् (व्यक्ति) है तो वह वारिधि जल-मात्र है। वह कौन-सी सामर्थ्य है ? फूलकर राम कि किस प्रकार स्तुति करोगे ? ये राघव के लिए (कोई) वीर (कार्य) हैं ? ये भी राम के लिए (कोई) विजय हैं ? हे वानराधम ! चाहकर मेरे समक्ष बड़ा बनाकर राम का वर्णन करते हो !” ऐसा दशास्य के कहने पर अंगद ने कहा— निर्घात बाण वाले, राघव की, सकल लोकाराध्य, जगदभिराम, सकल जगन्नत, जयशाली राम की, ॥ २०२० ॥

—अकलंक विक्रम से उन्नत शौर्य वाले राम की हाय, निन्दा करना तुम्हारे लिए योग्य है ? विजृंभित उस रघुराम के शौर्य के प्रथमकवल बने खरदूषण ही साक्षी हैं। जान-बूझकर वालि को वानर कहा है। हाय, अनघ उस वालि के वानर होने या न होने के परिव्याप्त सात समुद्र साक्षी हैं, क्रुद्ध बने तुम्हारे दशग्रीव ही साक्षी हैं। अलघु विक्रमशाली राघव का

दप्पुने ? नीकेमि धन्यत वौडमे? । निप्पुडु रघुरामु निट्लु दूषिप
नी राजसंबुनु नीदु भोगंबु । दूरमौ; नायुवु दोलगुनु सिरियु;
दनरंग रामुनि दलचिनंतटने । घनमैन पापंबु ग्रक्कुन बायु;
रामु पादमु सोकि ड्रा यितियय्ये; । रामरामनि बोय राशिकि नेक्के;
रामयन् कीरंबु रमण डा बिलिचि । यामेटि सायुज्य मायिति वडसे;
२०३०

नट्टि श्रीरामुनि यसुरेश ! नीवु । नेट्टन दूषितु; नी केदि गतियो ?
रामनामस्तुति रावण ! नीकु । नेमि पापमुननो येरुगजोप्पडदु !"
अनि यंगदुडु वल्क नसुरेशुडनियें: । "वनचर! रघुरामवसुधेशु शक्ति
येरुगुदु; जेप्पगा नेल ? यास्वामि । परमैन तारकब्रह्मंबनंग;
नाडवलसि माटलाडिति गाक ! । पोडिमि रामुतो बुरुणिप गलदे?
ब्रलपट्टि रामुतो समरंबु सेय । गलुगुनो यनिचाल ग्रालुचुन्नाड;
निदु नंदुनु मेच्च निनवंश्युतोड । जेंदि कय्यमु सेतु शिवु डेरुंदगनु;
अतनितो बोराडि यतनिचे जच्चि । प्रतिलेनि वैकुंठपदवि गैकोंदु;
नीलोकसौख्यंबु लितिय चालु; । नेलमि जेप्पगनेल ? येरुगुदंतयुनु;

विजृंभित हो (बढ़-बढ़कर) दूषण करने से जननाथ (राम) के वैभव में कमी आएगी ? तुम्हें कुछ धन्यता प्राप्त होगी ? (नहीं) अब रघुराम का इस प्रकार दूषण करने से तुम्हारा राजत्व, तुम्हारा भोग दूर होगा ।. आयु और श्री दूर होंगे । शोभा से राम का स्मरण करने से घन (महान्) पाप झट दूर हो जाएगा । राम के चरण का स्पर्श पाकर पत्थर स्त्री बन गया । राम राम कहकर बहेलिया प्रसिद्ध हुआ । सुन्दरता से कीर को राम कह कर बुलाकर उस स्त्री ने श्रेष्ठ सायुज्य को प्राप्त किया ।। २०३० ।।

ऐसे श्रीराम का हे असुरेश ! तुम ऐसा घोर दूषण करते हो ? पता नहीं तुम्हारी कैसी गति होगी ! हे रावण ! पता नहीं किस पाप के कारण तुम्हें राम-नाम स्तुति (का महत्त्व) समझ में नहीं आती ।" ऐसा अंगद के कहने पर असुरेश ने कहा—"हे वनचर ! रघुराम-वसुधेश की शक्ति को जानता हूँ । (तुम्हारे) कहने की क्या ज़रूरत है ? (जानता हूँ कि) वह स्वामी परम तारक-ब्रह्म है । मैंने कहने योग्य बातें कह दीं । (किन्तु) उचित रूप से कोई राम की समता कर सकता है ? हठ करके राम से समर करने के अवसर के लिए अधिक व्यथित हो रहा हूँ । यहाँ-वहाँ सब (लोग) प्रशंसा करें, (ऐसा) इनवंश वाले से युद्ध करूँगा जिसे देख शिव भी चकित हो जाए । उसके साथ लड़कर, उसके हाथ मरकर, अप्रतिम वैकुंठपद को प्राप्त करूँगा । इस लोक के सुख अब पर्याप्त हो

बलवंतुडगु रामु प्राभवोन्नतुलु । दॆलिय चित्तंबुलो दिवुरुचुन्नाड"
२०४०
ननि चॆप्पि दशकंठु डनियॆ ग्रम्मऱनु । दन विवेकमु सॆडि तामसुंडगुचु:
"धरणीतलं बॆल्ल दम्मुनिचेत । बरगंग गोल्पोयि पडतियु दानु
ननुजुंडु गूडंग नडवुल बडुचु । दनसति नॊकनिचे दा गोलुपोयि
वच्चि सुग्रीवादि वानरवरुल । जॊच्चियु नटमीद शूरत जूप
जनुदॆंचॆ रामुडु संगरस्थलिनि । ननु दाक नेर्चुने नरनायकुंडु ?
अटुगान रघुरामु डालंबुलोन । बटुतरशौर्यसंपन्नुंडु गाडु
मनुजुलु कोतुलु मगटिमिचेत । तनयॊद्द जॆप्पकु तरुचराधमुड !
वनचराधम! योरि! वालिकि नीवु । तनयुंडवै युंडि दशरथात्मजुनि
गॊलिचिति बंटवै; कॊल यीगवैति;। चलमुन मीतंड्रि जंपिनाडतडु;
अट्टि रामुनि गॊल्चितधमवानरुड ! । पुट्टिति वालिकड्पुन वृथा नीवु;
२०५०
चंपक मीतंड्रि जंपिन रामु । पंपुसेयुचु निट्लु बंटवै तिरुगु;
दॆलमितो गॊलुवंग नीराजॆ कानि । तलपोय राजुलु धरणिपै लेरॆ ?

गए हैं। शोभा से (तुम्हारा) कहना क्यों ? मैं सब कुछ जानता हूँ। बलवान राम के प्राभव (तथा) औन्नत्य को जानने के लिए प्रयास कर रहा हूँ।" ।। २०४० ।।

ऐसा कहकर, अपने विवेक को खोकर, तामसी (तामस गुणवाला) होता हुआ दुबारा दशकंठ ने यों कहा—"समस्त धरणीतल (पृथ्वी) को अनुज के हाथ शोभा से खोकर, स्त्री (तथा) अनुज के साथ स्वयं जंगलों में घूमते हुए, अपनी सती को किसी के हाथ खोकर, आकर, सुग्रीव आदि वानर-वरों के (आश्रय में) आकर, उसके बाद (इतनी कायरता के बाद) अब शूरता दिखाने राम संगर-स्थल में आया है। वह नरनायक मेरा सामना कर सकता है ? रघुराम युद्ध में पटुतर-शौर्य-सम्पन्न नहीं है। हे तरुचर-अधम ! मनुज और वानरों के पौरुष के बारे में मेरे सामने मत कहो। रे ! वनचराधम ! वालि के पुत्र होकर दशरथात्मज के दास होकर (उसकी) सेवा कर रहे हो ? (अपने पिता के वध का) बदला नहीं ले सके। हठ से उसने तुम्हारे पिता का वध किया है। हे अधमवानर ! ऐसे राम की सेवा कर रहे हो ? वालि के गर्भ से व्यर्थ ही उत्पन्न हुए हो ।। २०५० ।।

(उस राम को) न मारकर, पिता का वध करनेवाले राम के आदेश का पालन करते हुए, ऐसा दास हो विचरण कर रहे हो। शोभा से सेवा

गॊनकॊनि पगवानि गॊलिचिन वानि। निनुगानि यॆव्वनि ने नॆंदु गान;
नीमगटिमिकिन नीदुपॆंपुनकु । सीमवारॆल्लरु सीयनि नगरॆ ?
कॊडुकैन पिम्मट गुलपगलॆल्ल । वडितोड नीगनिवाडॆट्टि कॊडुकु ?
ईरीति बंदवै हीनमानवुनि । जेड्रि कॊल्चुट यॆट्लु चेवयु लेक?
निनु वालि कॊडुकन्न नॆट्टु नम्मवच्चु? । वनचर ! यॆव्वरिवाडवो काक?
विनु, बुद्धिसॆप्पॆद, विवरंबु गाग: । मनुजुल गॊलुतुरे? मनुजुलु नाकु
बगवारु; नीकुनु बगवारुगाक ! । नॊगि दैत्य मिट्टु सेयुचुंडुट दक्कि
नन्नु गॊल्चिन निन्नु नंगद! यिपुडु । वनचरुलकु नॆल्ल वरप्रभुगाग
२०६०
घनभूषणंबुल घनवाहनमुल । मन जेतु निप्पुडु महिमीद" ननिन
दनुजाधिपति जूचि तारासुतुंडु । घनकोपमुन जाल गरिमनिट्लनियॆ:
"नगणितोन्नतशक्तुडैन राघवुडु । तग नादु तलि दंड्रि दात दैवंबु;
एमि गर्वमु नीकु ? नॆरुक चॊप्पडदु; । भूमीशुतो रिपुल् पुरणिपगलरॆ ?
यरयलेक विवेकु ला रामविभुनि । नरुडंचु नॆंतुरु नक्तंचरेंद्र !

करने के लिए इस राजा को छोड़, धरणी पर अन्य राजा नहीं हैं ? तुम्हें छोड़कर, चाहकर शत्रु की सेवा करनेवाले अन्य किसी को नहीं देखा है। तुम्हारे पौरुष (तथा) तुम्हारे औन्नत्य को देख तुम्हारे देश के लोग छि: कहकर अवहेलना नहीं करेंगे ? पुत्र हो जनमने के बाद वंश के प्रति (किए गए कार्यों का) बदला न लेनेवाला भी कोई पुत्र है ? यह क्या ? कायर होकर, सामर्थ्यहीन होकर, एक हीन मानव की सेवा कर रहे हो ? तुम्हें वालि का पुत्र कैसे मानूँ ? हे वनचर ! तुम और किसी के (पुत्र) हो। (वालि का पुत्र ऐसा नहीं कर सकता।) सुनो, सविवरण बुद्धि की बातें कहूँगा। कहीं मनुष्यों की सेवा की जाती है। मनुज मेरे लिए शत्रु हैं। तुम्हारे लिए भी तो शत्रु हैं। क्रम से इस प्रकार दौत्य (दूतकार्य) करना तजकर मेरी सेवा करोगे तो तुम्हें हे अंगद ! अब समस्त वनचरों का वर (श्रेष्ठ)-प्रभु, ।। २०६० ।।

—बनाकर घन (महान्) भूषणों (तथा) घन-वाहनों से युक्त कर, अब महि पर जीवन-निर्वाह करने दूँगा।" (ऐसा) कहने पर, दनुजाधिपति को देखकर, तारासुत ने महाकोप से (तथा) अधिक गरिमा से यों कहा— "अगणित उन्नत शक्तिवाला राघव मेरे लिए माता, पिता, दाता (तथा) दैव (भगवान) है। कैसा गर्व है तुम्हारा ? (बात) समझ में नहीं आती। भूमीश (राजाराम) के साथ रिपु (शत्रुजन) अपनी तुलना कर सकते हैं ? हे नक्तंचरेन्द्र ! जान न सक, अविवेकी-जन उस विभु राम को नर (मात्र)

यतडु मानवमात्तुडा यसुरेश ! । यतडु लोकाराध्यु डत डप्रमेयु
डतडु श्रीविष्णुंडु नत डादिमूर्ति; ।यितनिकि सरिपोल्प नॆव्वरुगलरु ?
सनकादुलुनु गूडि चर्चिंपलेरु; । वनजासनादुलु वर्णिंपलेरु;
दानवांतकुडुनै दशरथेंद्रुनकु । बूनि जन्मिंचिन पुरुषोत्तमुंडु;
नितनि कोपाग्निकि नॆव्वडु निल्चु ?। नितनितो डीकॊनि यॆव्वडु पोरु?
२०७०
नितनि बाणाहति कॆव्वडु नोर्चु ? । नितनि नॆन्न वशंबॆ यिंद्रादुलकुनु?
नी वॆऱुंगवु रामु निपुणविक्रममु; । कावरंबुन नेल काऱुलाडॆदवु?
वररामु नॆऱिगॆदु दुरमुलो नॆल्लि; । कर मर्थि दुरमुन गदलक निलुमु;
कर्मपंकंबुलु गडतेरि वालि । निर्मलात्मुडु रामनृपतिचे जच्चि
पदपडि वैकुंठपदमु गैकॊंयॆ; ।निंदि कीडुगा मम्मु नॆन्न नेमिटिकि?
नितनि गॊलिचिन नाकु निहमुनु बरमु। नतुलितंबुग गल्गुनवनीशु सेव;
नीमदंबुनु नुब्बु नीराजसंबु । रामचंद्रुनि घोररणरंगमंदु
बोयॆडु भुवि ग्रुंगि पॊलुपॆल्ल द्रुंगि; । वेयु जॆप्पग नेल? विधि निन्नुबट्टि

समझते हैं। हे असुरेश ! क्या वह मानवमात्र है ? वह लोकाराध्य है, वह अप्रमेय है, वह श्रीविष्णु है, वह आदिमूर्ति है। उसकी बराबरी करनेवाला (और) कौन है ? सनकादि भी मिलकर (उसकी) चर्चा (वर्णन) नहीं कर सकते। वनजासन आदि वर्णन नहीं कर सकते। (वह) दानवान्तक होकर दशरथेन्द्र के यहाँ सप्रयत्न उत्पन्न पुरुषोत्तम है। उसकी कोपाग्नि के (समक्ष) कौन टिक सकता है ? उसका सामना कर कौन जूझ सकता है ? ॥ २०७० ॥

—उसके बाण के आघात को कौन सह सकता है ? इन्द्र आदि भी उसका वर्णन कर सकते हैं ? तुम राम के निपुण-विक्रम को नहीं जानते हो। मस्ती के कारण क्यों बुरे वचन कहते हो ? परसों युद्ध में श्रेष्ठ राम को जान सकोगे। युद्ध में अधिक इच्छा से अचल हो खड़े रहो। कर्मपंकों से निवृत्त होकर निर्मलात्मक वालि ने नृपति-राम के हाथ मरकर, तदनन्तर वैकुंठ पद को प्राप्त किया। इसे अशुभ के रूप में मानकर, हमारी निंदा क्यों करते हो ? इसकी (राम की) सेवा करने पर मुझे इह (लोक-सुख) तथा पर (लोक) अतुलित रूप से अवनीश की सेवा से प्राप्त होगा। तुम्हारा मद, गर्व, तुम्हारा राजस (ये सब) रामचन्द्र के साथ घोर रणरंग में, धरती के दब जाने पर, समस्त वैभव को खोकर, नष्ट हो जाएँगे। हज़ार (बातें) कहना क्यों ? हे कुटिल राक्षस ! विधि (नियति) तुम्हें पकड़कर (इस मार्ग पर) ले जा रही है। (तुम्हारे) पूर्व के वरगर्व अब

कॊनिपोवुचुन्नदि कुटिलराक्षसुड ! । मुनुपटि वरगर्वमुलु चॆल्लविक;
निन्नियु नेटि कायिनकुलेश्वरुन । कुन्नतमति सीत नॊप्पिंचि ब्रतुकु''
२०८०

अंगदुनि बट्टि कट्टुंडनि रावणुडु तन भटुल नियमिंचुट

अनवुडु गोपिंच या रावणुंडु । घनबाहुबलुनि नंगदु बट्टि कट्ट
बनिचिन गॊंदरु बलितंपुटसुरु । लनयंबु नुद्धतुलयि पट्टुटयुनु
सॊलवक तन शक्ति सूपॆडिकॊऱकु । दॊलग नॊल्लक यंगदुडु वट्टुवडियॆ;
नट्टु पट्टुवडि यत डाकसंबुनकु । बटुशक्ति नॆगसि युद्भटवृत्ति मॆऱसि
विद्रिचिन बदिवेल वीरुलु धात्रि । यद्रुवंग नुग्गुनूचै व्रॆळ्ळि; रंत
नलिगि यंतट बोक यंगदुं डसुर । कॊलुवुन्न यम्मॆड गूल दन्नुटयु
नदि वज्रहति दुहिनावनीधरमु । तुदि गूलुपगिदि दुत्तुनियलै कूलॆ
वॆंडियु "नंगदु विड्वक पट्ट । बॊं'' डनि दैत्युल बुच्चॆ रावणुडु;
पुच्चिन वारुनु बॊदिवि यंगदुनि । नच्चॆरु वडरंग नाकाशमुननु
बरशुबट्टिसभिंडिवालशूलमुल । गरवालतोमरगदल नॊप्पिप२०९०

काम नहीं देंगे। ये सब क्यों ? उस इनकुलेश्वर (राम) को उन्नत मति से सीता देकर, मनाकर, जीवित रह जाओ।'' ॥ २०८० ॥

अंगद को पकड़ बाँधने के लिए रावण का अपने सैनिकों को आदेश देना

ऐसा कहने पर क्रुद्ध होकर उस रावण ने घन-बाहुबल वाले अंगद को पकड़, बाँधने का आदेश दिया। (तब) कुछ बली असुरों ने अनारत उद्धत हो पकड़ लिया। (तब) थके बिना अपनी शक्ति दिखाने के लिए, हट जाना न चाहकर, अंगद बन्दी हो गया। ऐसा पकड़ा जाकर, उसने आकाश में पटुशक्ति से उड़कर, उद्भट वृत्ति से प्रकाशित होकर, (राक्षस वीरों को) बिखेर दिया तो दस हज़ार वीर, धरती के सहम जाने पर, चूर-चूर हो गिर पड़े। तब क्रुद्ध हो, उतने से न जाकर, अंगद ने उस सौध को लात मार गिरा दिया, जिसमें राक्षस (रावण) सभा लगाए बैठा था। वह (सौध) वज्रहति से समूल गिरनेवाले तुहिन-अवनीधर (हिमालय) के ढहने के समान, टुकड़े-टुकड़े हो गिर गया। आगे (उसके बाद) रावण ने यह कह कि 'अंगद को न छोड़ पकड़ लो, जाओ', दैत्यों को भेजा। भेजने पर उन्होंने भी घेरकर, अंगद आश्चर्यचकित हो जाए, (इस प्रकार) आकाश में परशु, पट्टिस, भिंडिवाल, शूल, करवाल, तोमर, गदाओं से बहुत पीड़ित किया ॥ २०९० ॥

बिडिकिळ्ळतोडने प्रेवुलु वेंडल । बेंडिदंबुगा नोंचि पृथिविपैगूल्चि
यरुगुचुनुन्न यायंगदु जूचि । खरसूति सुकरुंडु कार्मुकं बेत्ति
“निलु निलु यंगद ! नी वेंदु बोव । गल” वनि पेल्लार्चि कांडबुलैदु
नुदुरु गाडग नेसि नोंप्पिचि मरियु । बदि तीव्रशरमुल बाहुवु लेय
नलुकतो बिडिकिट नंगदुंडसुर । तल पेक्कु व्रय्यलै धरगूल बोंडिचें;
दानिकि दैत्युलु तल्लडपडग । दानवेश्वरुडु चिंतामग्नुडय्यें;
दारातनूजु डत्तरि नेगुदेंचि । यारामुनकु म्रोक्कि यंजलि मोड्चि
“योजगदाराध्य ! योरामचंद्र ! । भूजननुत ! रामभूपालतिलक !
देव ! मीयानति तेरगुन नेनु । रावणुनोद्दिकि रयमुन बोयि
चेप्पगा गल वेल्ल जेप्पिति देव ! । चेप्पिनमाटलु चेवि बेट्टडय्यें; २१००
गट्टिगा जावुकु गडु देंपुसेसि । युट्टिगट्टुक यूगुचुन्नाडु देव !
दिनमुलन्नियु दीरें दिविजांतकुनकु; । निनकुलनाथ ! नी वी दशग्रीवु
ननिलोन मडियिंपु मखिललोकेश ! । यनघात्म ! सकलसुरादुलुप्पोंग”
ननुचु नावृत्तांतमंतयु देलिय । विनुपिंचें नेंतयु विशदंबुगाग;

—(तो उन्हें) मुष्ठियों से ही भयंकर रूप से मारकर जिससे उनकी आंतड़ियाँ बाहर निकल आवें, (उन्हें) पृथ्वी पर गिराकर, जाते हुए उस अंगद को देखकर, खर का पुत्र सुकर ने कार्मुक (धनुष) उठाकर, सिंहनाद कर कि “रुक रे रुक अंगद ! तुम कहाँ जा सकोगे ?” पाँच बाणों को ललाट में गड़ाकर, पीड़ित कर और दस तीव्र शरों को बाहुओं पर चलाया । (तब) क्रोध से अंगद ने मुष्टि से ही असुर के सिर पर दे मारा, जिससे (उसके सिर के) अनेक टुकड़े होकर, वह धरती पर गिर गया । उसपर दैत्य क्षुब्ध हो गए, (और) दानवेश्वर चिन्तामग्न हो गया । उस अवसर पर तारातनूज ने आकर, राम को प्रणाम कर, हाथ जोड़कर (कहा)—“हे जगदाराध्य ! हे रामचन्द्र ! हे भूजन-नुत ! हे रामभूपाल-तिलक ! हे देव ! आपकी आनति के विधान से मैं रावण के पास शीघ्र गया, जो कुछ कहना था, वह सब कह सुनाया । हे देव ! मेरी कही बातों को (उसने) कानों से धारण नहीं किया ।। २१०० ।।

हे देव ! दृढ़ता से मृत्यु के लिए, अधिक साहस कर, वह मस्ती से झूम रहा है । हे इनकुलनाथ ! दिविजान्तक के सभी दिन पूरे हुए हैं । हे अखिल लोकेश ! तुम इस दशग्रीव का युद्ध में वध कर दो । हे अनघात्म ! (इससे) समस्त सुर आदि प्रसन्न हो जायँगे ।” (ऐसा) कहते अधिक विशद रूप से (अंगद ने) वह समस्त वृत्तान्त समझाकर

जननायकुंडुनु संतसंबंदॆ । घनतरंबैन यंगदु सत्त्वमुनकु;
नट रावणुनितोड नसुरुलंदऱुनु । बट्टुतरवाक्कुलै पलिकिरय्यॆडनु;
"इदि येमि देव! नी विट्लूरकुनिकि ? । यदॆ ! कपिसेनतो न राघवुंडु
विडिसिनाडीलंक; वेधिंचु निक; । गडिमि यॆन्नडु चूपगलवाड वीवु?
ममु बंपु रामलक्ष्मणुल वानरुल । समरंबुलो गॆलिच चनुदॆंतु" मनुडु

रावणुडु तन वैभवमुनु मॆऱयिंचुट

वीनुल करुदुगा विनि दशाननुडु । भानुजादुलकुनु भयमु वुट्टंग२११०
दन वैभवमु रामधरणीशुनकुनु । घनमुगा जूपॆदगा ! कंचु दलचि
सांद्रप्रतापनिस्तंद्रुडै तॊल्लि । यिंद्र नागॆंद्र धनॆंद्रुल गॆलिचि
कप्पमुल् गैकॊन्न घनवस्तुवितति । दॆप्पिंचि मेलैन दीधितुल् निगुड
जीनांबरंबुलु चॆलुवार गट्टि । नानादिशल वासनलु वॆदचल्लु
मृगमदघनसारमिळितमनोज्ञ । मगु दिव्यचंदन मर्थितो नलदि
सरसमंजुळ पारिजातप्रसून । विरचितमालिकाविततुलु मुडिचि

सुनाया । अंगद के घनतर-सत्त्व को (जानकर) जननायक (राम) प्रसन्न हुए । वहाँ रावण से समस्त असुरों ने पटुतर-वाक्यों से (युक्त हो) उस अवसर पर यों कहा—"यह क्या देव ! ऐसे आप चुप क्यों हैं ? वही कपिसेना के साथ उस राघव ने लंका के पास पड़ाव डाला है । अब (तुम्हें) व्यथित करेगा । तुम अपना साहस कब दिखाओगे ? हमें भेजो । रामलक्ष्मणों (तथा) वानरों को समर में जीतकर आ जायँगे ।" (ऐसा) कहने पर, ।। २१०८ ।।

रावण का अपने वैभव का प्रदर्शन करना

—कानों के लिए विरल रूप में (इन वचनों को) सुनकर दशानन ने 'भानुज आदियों को भय उत्पन्न हो, ।। २११० ।।

—(ऐसा) अपना वैभव राम-धरणीश को घनता से दिखाऊँगा', ऐसा सोचकर, सान्द्र प्रताप से निस्तन्द्र होकर, पूर्व में इन्द्र, नागेन्द्र, धनेन्द्र को जीतकर, शुल्क या कर के रूप में प्राप्त की गई घन-वस्तु-वितति को मँगाया। श्रेष्ठ दीधितियों के दीप्त होने पर चीनांबरों (कौशेय-वस्त्रों) को सुन्दरता से धारणकर, नाना दिशाओं में सुगन्धियों को बिखेरने वाले मृगमद (कस्तूरि) (तथा) घनसार (कर्पूर) से मिलित मनोज्ञ दिव्य चन्दन का चाहकर लेपन कर, सरस-मंजुल-पारिजात-प्रसूनों से विरचित मालिका वितियों को धारणकर, पंकजराग (पद्मराग) आदि बहुरत्न कलित कंकण,

पंकजरागादि बहुरत्नकलित । कंकणमुद्रिकांगद भुजाभरण
घनतरग्रैवेय घंटिकानेक । विनुतहारंबुलु विपुलंबुलैन
पदकंबु लादिगा बहुभूषणमुलु । पदकशुद्धिग वन्नॆ पर्चॊरिप दलिच
कुंडलंबुल मॆंडुकॊनु मणिप्रभलु । गंडमंडलमुल गडलुकॊनंग २१२०
जंडांशुमंडलोज्ज्वलमुलै दिक्कु । लॊंडॊंड वॆलिगिचु नुरुकिरीटमुलु
दशशिरंबुल मिचु दहनुडो यनग ।दशशिरंबुल लील धरियिंचि मिंचि
सुरवरानलयमासुरनाथ वरुण । मरुदर्थनायक स्मरसंहरुलनु
गंडडंचि जयिंचि कैकॊन्न बिरुदु । गंडपॆंडॆंबु डाकाल धरिंचि
शर शरासन पट्टिस प्रास चक्र । परशु तोमर भिंडिवाल त्रिशूल
करवाल पाश मुद्गर चंद्रहास । परिघादुलगु वरप्रहरणश्रेणु
लिरुवदिकरमुल नेपार बट्टि । परिचारकुलु वॆंट बलिसि येतेर
गॊब्बुन नुत्तर गोपुरंबुनकु । गब्बु नुब्बुनु मीऱ गदलि शूलादि
हस्तुलै यॆडगलिग याप्तराक्षसुलु । विस्तरंबुग बरिवेष्टिंचि कॊलुव
स्फुरितभूषणवस्त्र भूषितुलगुचु । निरुवंक मंत्रुलनेकुलु गॊलुव २१३०

मुद्रिका, अंगद (एक प्रकार का आभरण) भुजाभरण, घनतर ग्रैवेय (कण्ठाभरण) घंटिका आदि अनेक विनुत (स्तुत्य) हार, विपुल (बहुल)-पदक आदि बहुभूषणों को पदकशुद्धि से, वर्णों के व्याप्त होने पर धारणकर, कुंडलों से मणिप्रभाओं के अधिकता से गंडस्थलों पर व्याप्त होने पर, ॥ २१२० ॥

—चंडांशु मण्डल (सूर्यबिंब) (के समान) उज्ज्वल हो, जहाँ-तहाँ दिशाओं को प्रकाशित करनेवाले उरु-किरीटों को, मानों दस सिरों से समुन्नत बने दहन (अग्निदेव) हो, ऐसा दस सिरों पर लीला से धारणकर, समुन्नत बना। सुरवर, अनल, यम, असुरनाथ, वरुण, मरुत् (पवन), अर्थनायक (कुबेर), स्मर-संहारक (शिव) (आदि) के पौरुष का दमनकर, जीतकर, ग्रहण किए प्रसिद्ध तोड़े को वामचरण में धारण किया। शर, शरासन (धनुष), पट्टिस, प्रास, चक्र, परशु, तोमर, भिंडिवाल, त्रिशूल, करवाल, पाश, मुद्गर, चन्द्रहास, परिघा आदि वरप्रहरण (आयुध)-श्रेणियों को बीसों हाथों में शोभा से धारणकर, परिचारकों (सेवकों) के साथ विवर्धित होते आने पर, झट से उत्तर के गोपुर की ओर दर्प और उत्कर्ष के अधिक होने पर, निकलकर, शूल आदि को हाथों में धारणकर, आप्त (प्रिय) राक्षसों के विस्तार से घेरकर, सेवाएँ करते रहने पर, स्फुरित-भूषण (और) वस्त्रों से भूषित होकर, दोनों तरफ़ अनेक मन्त्रियों के सेवाएँ करते रहने पर, ॥ २१३० ॥

दुद लेनि रत्नपंक्तुलु दापिनट्टि । पॆंदपॊद्द पसिडिकुप्पॆलु मीद नॊप्प
विवरिंप नॆनुबदिवेल संख्यलगु । धवळातपत्रमुल् दनुजुलु वट्ट
नल शेषफणमुलो यन नन्निवेल । सललित व्यजनमुल् सकियलु वून
निंदुरश्मुल बोलु नॆनुबदिवेलु । चंदनगंधु लप्सरस लिर्वंक
दळकुवॆन्नॆलल चंदमुन नासंख्य । गल चामरंबुलु गड़ुसंभ्रममुन
गंकणझणझणत्कारमुल् मॆऱय । नंकिंचि वेडुक नल्लन वीव
सुरल गॆल्चिन जयस्फुरणलु मॆऱय । बिरुदु लॆत्तुचु वंदिबृंदंबु वॊगड
मंद्रमध्यमतारमान भेदमुल । जंद्रास्य लॆंदुर नॆच्चरिकलु पाड
सन्नुतमाणिक्य जालप्रभा स । मुन्नत सिंहासनोपरिस्थलिनि
नपराचलमु मीदि यर्कुनितोडि । युपमकु बात्रुडै यॊगि रावणुंडु
२१४०
वलनॆन तन वैभवंबॆल्ल मॆऱसि । कॊलुवुंडॆ नुत्तरगोपुरंबुननु;
ना गॊडुगुलनीड यादित्यु गप्प । वेगंबॆ चीकटि विलसिल्लुटयुनु
नावेळ मायामृगाजिनंबुननु । देवेंद्रमणिकांति दीपिंचु मॆनि
वामभागमु मोपि वामभुजाग्र । सीम गपोलमूर्जितमुगा जॆर्चि

—अन्तहीन रत्नपंक्तियों से जड़ित बड़े-बड़े स्वर्णपात्रों के ऊपर शोभित अस्सी हज़ार संख्या में धवल-आतपत्रों (छतरियों) के (सेवकों द्वारा) धारण किए जाने पर, शेषफण के समान, उतने हज़ार (अस्सी हज़ार) सललित व्यजनों को सखियों के धारण करने पर, इन्दुरश्मियों (चन्द्रकिरणों) के सम अस्सी हज़ार चन्दनगन्धी अप्सराओं के दोनों तरफ़ उज्ज्वल चन्द्रिकाओं के सम, उस संख्या के (अस्सी हज़ार) चामरों को अधिक संभ्रम से, कंकण-झनझनाकारों के मुखरित होने पर, उल्लसित हो, उत्साह से, धीरे-धीरे डुलाने पर, देवताओं पर विजय की स्फूर्ति को दीप्त करते हुए, वंदिवृन्द के बिरुदों का उल्लेख करते हुए स्तुति करने पर, समक्ष चन्द्रास्याओं (चन्द्रमुखियों) के मन्द्र-मध्यम-तारमान भेदों से प्रबोधगीत गाने पर, सन्नुत (स्तुत्य)-माणिक्य-जाल (समूह)-प्रभा से समुन्नत सिंहासन के उपरिस्थल पर, अपराचल पर अर्क के साथ उपमा के पात्र होते हुए क्रम से रावण, ।। २१४० ।।

—अपने श्रेष्ठ वैभव के साथ समुज्ज्वल होते हुए, उत्तर गोपुर पर सभा में विराजमान हुआ । उन छतरियों के आदित्य को ढक देने पर, शीघ्र ही अन्धकार विलसित हुआ । उस समय माया-मृग के अजिन (चर्म) पर देवेन्द्रमणि की कान्ति से दीप्त शरीर के वाम भाग को टेककर, वाम भुजाग्र प्रदेश पर कपोल को उत्कृष्टता से टेककर, उग्रांशु (सूर्य)-बिंब के

यग्रांशुबिंबसमुज्ज्वलुंडयिन । सुग्रीवु तॊडलपै सॊरिदि सौंदर्यं
संपदलॊलुक राजसमॊप्प नॊऽरगि । पॆंपारु महिमचे ब्रियभक्तुडैन
पवनजु तॊडलपै बादपद्ममुलु । सवरण जाप निश्चलभक्ति नतडु
मृदुरीति नॊत्त नर्मिलि नंगदुंडु । कदिसि दक्षिणभुजाग्रंबिरुगेल
नंदि यंगुळमुलॊय्यन बट्टुचुंड । वंदिबृंदम्मुल वैखरि निलिचि
नल नील भूल्लूकनायकप्रमुखु । ललरुचु सकललोकाराध्यचरण !
२१५०
जानकीहृदयांबुजातषट्चरण ! । दीनार्तिहरण! कीर्तितकृपाभरण!
हरनुतनाम! सूर्यकुलाब्धिसोम ! । यरिभीम! रघुराम! ” यनि सन्नुतिप
गंदनिपूर्ण राकाचंद्रु बोलु । मंदस्मिताननमंडलंबुननु
नविरळकरुणामृतापूर्ण मगुचु । धवळारविंद-सौंदर्यंबु दॆगडु
तॆलिगन्नुगवकांति दॆसलॆल्लनिंड । ललितावलोकविलासचंद्रिकलु
वॆंदचल्लगा गरद्वितयसन्निहित । वदनुंडु राक्षसवरमर्मविदुडु
नगु विभीषणुतोड नतिरहस्यंबु । लगु माटलाडुचु नप्पटप्पटिकि
रमणीयलील श्रीराघवेश्वरुडु । नमर दक्षिणमुखमै युन्नवाडु
गावुन गोपुराग्रमुन गॊल्वुन्न ।रावणु बोडगांचि रमण निट्लनियॆः

समान समुज्ज्वल सुग्रीव की जाँघों पर, क्रम से सौंदर्य की सम्पदाओं के उमड़ने पर, राजसी ठाठ से टेककर, (राम) अतिशय महिमा से प्रियभक्त पवनज की जाँघों पर, पदपद्मों को समुचित विधि से पसारे रहे। वह (हनुमान) निश्चल भक्ति से, मृदुरीति से (चरणों को) दबाता रहा। प्रेम से अंगद (उनके) नियराकर दक्षिण भुजाग्र को दोनों हाथों से पकड़कर, उँगलियों को दबा रहा था। नल, नील, भल्लूकनायक आदि शोभा से वंदिबृन्दों के समान खड़े होकर, (यह कहते) "हे सकल लोकाराध्य चरणवाले ! ॥ २१५० ॥

—जानकी हृदय-रूपी अंबुजात (कमल) के षट्चरण (भ्रमर)! दीनार्तिहरण! कीर्तितकृपाभरणवाले ! हरनुत नाम वाले ! सूर्यकुलाब्धि सोम (चन्द्र) ! अरिभीम ! हे रघुराम !" प्रशंसा कर रहे थे। अमलिन पूर्ण-राकाचन्द्र सम मन्दस्मित-आननमण्डल को अविरल करुणामृतपूर्ण बनाते हुए, धवल-अरविन्द के सौन्दर्य की अवहेलना करनेवाले स्वच्छ नेत्रद्वय की कान्ति को दिशाओं में भरते हुए, ललित-अवलोकन-विलास-चन्द्रिकाओं को बिखेरते हुए, कर-द्वितय (युग्म) को वदन के सन्निहित रखनेवाले (हाथ जोड़नेवाले) (तथा) राक्षसवरों के मर्म को जाननेवाले विभीषण से अति रहस्यपूर्ण बातें करते हुए भी रमणीय लीला से श्री राघवेश्वर ने समुचित रूप से दक्षिण की ओर मुख रखे रहने के कारण, गोपुराग्र पर सभा लगाए (बैठे) रावण

“नो विभीषण ! चूडुमुन्नतंबैन ।या विशालपु गोपुराग्रंबुनंदु२१६०
भोगियै यॆंतयु बॊगडॊंदुवाडु । बागॊप्प वानिकि बट्टिनयट्टि
शरदभ्र विभ्रमच्छत्न संघमुल । बरगॆडु नीड भूभागंबु गप्प;
नारूढवैभवायतवृत्तितोड । नीरीति नुन्नवाडितडॆव्व” डनिन
नारामु जूचि यिट्लनि विन्नविच्चॆ । नारावणुनि तम्मुडगु विभीषणुडु:
“देव ! राघव ! वीडु देवारियैन । रावणु डमरविद्रावणुं; डखिल
दिविजुलचे गॊन्न दिव्यभूषणमु । लविरळंबुग बूनि याप्तुलैनट्टि
दनुजमुख्युलु गॊल्व दनकु निडार । बनुपडगा नॆनुबदिवेल संख्य
गल गॊडुगुलु वट्ट घनचामरंबु । ललवुमै वीवंग नालवट्टमुलु
पूनंग दनदु पॆंपुनु राजसमुनु । दा निट्टि दनुचु मोदमुन मीयॆदुर
जूपंग दलचि भासुरवैभवमुन । गोपुरोपरिसीम गॊलुवुन्नवाडु”२१७०
ना विनि नव्वि मानवकुलेश्वरुडु । देवारिगर्वंबु दीपंग दलचि

श्रीरामुडु रावणुनि छत्रचामरमुलु दॆगनेयुट

वॆनुकॊनि“लक्ष्मण! विल्लु दॆ”म्मनुचु। दनकु बिम्मट नुन्न तम्मुनिचेति

को देखकर सुन्दरता से यों कहा—“हे विभीषण ! देखो, उन्नत बने उस विशाल गोपुराग्र पर, ॥ २१६० ॥

—भोगी बन अधिक सराहनीय स्थिति में रहकर, बड़ी खूबी से उसके लिए धारण किए गए शरदभ्र का विभ्रम (उत्पन्न करनेवाले)-छत्र-संघों (समूहों) से व्याप्त छाया के भूभाग को आच्छादित करने पर, आरूढ़-वैभव-आयत-वृत्ति से इस प्रकार स्थित वह कौन है ?” (ऐसा) कहने पर राम को देखकर, रावण के अनुज विभीषण ने इस प्रकार निवेदन किया—“हे देव ! हे राघव ! यह देवारि रावण है, अमरों का विद्रावण (रुलानेवाला) है। अखिल दिविजों से प्राप्त दिव्यभूषणों को अविरलता से धारणकर, आप्त दनुज-मुख्यों के सेवाएँ करने पर, अपने को पूर्णता से विराजमान अस्सी हज़ार की संख्या में छत्रों को धारण करने पर, घन-चामरों को सुन्दरता से झलने पर, व्यजनों के धारण करने पर, अपनी शोभा तथा राजस को आपके समक्ष दिखाना चाहकर, भासुर वैभव के साथ गोपुर की उपरि-सीमा (ऊपर के भाग) पर दरबार लगाए (बैठा) है ॥ २१७० ॥

ऐसा कहने पर सुनकर, हँसकर, मानव-कुलेश्वर ने देवारि (रावण) के गर्व का भंग करने का सोचकर,

श्रीराम का रावण के छत्र-चामरों का खण्डन कर देना

‘हे लक्ष्मण ! धनुष लाओ’ कहते हुए, अपने पीछे स्थित अनुज के हाथ

धनुवु डाचेत नेंत़यु वेड्क नंदि । कौनि दक्षिणांघ्रियंगुष्ठान विंटि
गौनयंबु बूनि ग्रक्कुन नेक्कुवेट्टि । कनदर्धचंद्रमार्गण मरिबोसि
धीलक्षितोल्लासि तेंगनिड दिगिचि । यालील नौऱगिनयट्लने युंडि
यल चामरव्यजनातपत्रौघ । मुलमीद नेसें नद्भुतवृत्ति मेऱय;
शरमोक्कटियु बदिशरमुलै नूरु । शरमुलै बदिवेलशरमुलै मऱियु
लक्षयै कोटियै लक्षिचि चूड । नक्षणंबुन संख्यलन्नियु गडचि
तालवृंतंबुलु दाल्चु चेडियल । मेलिचामरमुलु मेऱयिचु सतुल
संगीतमुलु सेयु सरसिजमुखुल ।बोंगुचु गैवारमुलु सेयु बोंट्ल २१८०
धवळातपत्रमुल् धरियिंचु दैत्य । निवहंबुलनु गोल्चि निल्चन भटुल
गरमुलु द्रुंपक गळमुलु द्रेंप । कुरमुलु नाटक युरुकिरीटमुलु
धर डोल्लजेयक तललु खंडिप । 'करु दरु दिदि' यनि यमरुलु वोगड
नालवट्टंबुलु नातपत्रमुलु । देलुचु जल्लन दिविनिंड नेगसि
कोलुवुलो गोन्नि दिक्कुलयंदु गोन्नि । कोलुवुलोपलि दैत्यकोटिपै गोन्नि
लंकलो गोन्नि यालवणाब्धि गोन्नि । लंकेशुपै गोन्नि लघुलील बडियें
नलवुमै नटुचेसि यादिव्यशरमु । तोलगक रघुरामुदोन जोच्चें; नंत

के धनुष को, वाम कर में अधिक उत्साह से ग्रहण कर, दक्षिण-अंघ्रि (चरण) के अँगूठे से धनुष की प्रत्यंचा पकड़कर, शीघ्र (उसे) चढ़ाकर, अर्द्धचन्द्र-मार्गण (बाण) का संधान कर, धी-लक्षित-उल्लास से, पूरी तरह से खींचकर, उसी प्रकार लेटे ही रहकर, अद्भुत वृत्ति से प्रकाशित होकर, उन चामर-व्यजन-आतपत्र-औघ (-समूह) पर, छोड़ दिया। वह एक शर दस शर हो, सौ शर हो, दस हज़ार शर हो और लाख हो, करोड़ हो, ध्यान से देखने पर उसी क्षण सभी संख्याओं को पारकर, तालवृन्तों को धारण करनेवाली सुन्दरियों, श्रेष्ठ चामरों को डुलानेवाली सतियों, संगीत गानेवाली सरसिजमुखियों, फूलकर कीर्तिगान करनेवाली लतांगियों, ।। २१८० ।।

—धवल आतपत्रों को धारण करनेवाले दैत्य-निवहों (समूहों) की सेवाएँ करते स्थित भटों के हाथों को काटे बिना, कण्ठों को काटे बिना, उर (स्थलों) में गाड़े बिना, उरु-किरीटों को धरा पर डुलाए बिना, सिर काटे बिना ही, 'विरल है, विरल है' ऐसा अमरों के स्तुति करने पर, (छत्र-चामर आदि के) कण्ठ-सूत्रों को काटता चला गया। उस अवसर पर कट गिरे वे चामर, आलावर्त (छत्र), आतपत्र (छत्र) उड़ते हुए, बिखरकर, समस्त आकाश में व्याप्त हो, उस सभा में कुछ, दिशाओं में कुछ, सभा की दैत्य-कोटि पर कुछ, लंका में कुछ, उस लवण समुद्र में कुछ, लंकेश पर कुछ, लघुलीला (सरलता) से गिर पड़े। सरलता से ऐसा करके वह दिव्यशर फिर

महितातपत्र चामर तलावृंत । रहित दंडधरासुरश्रेणि नड्डुम
नुन्न रावणु डप्पुडॊप्परि चूड ।दन्नु गॊंपोव नुद्धति वच्चियुन्न२१९०
दुर्वारुलगु यमदूतल नड्डुम । गर्वंबु चॆडियुन्न गति नुंडि चाल
वॆर्रिगंदि रघुरामु विलुविद्यपॆंपु ।तर्रिगॊनि तलपोसि तललूचियूचि
बट्टु कैवडि मॆच्चिच पट्टुतरध्वनुल । बॆट्टॆत्ति रघुरामु बॆकॊनि पॊगडॆः

रावणुड्डु रामुनि धनुर्विध्याकौशलमुनु गॊनियाडुट

“नल्लवो रघुराम ! नयनाभिराम! । विल्लुविद्यगुरुव ! वीरावतार!
करशरलाघवक्रमकळानिपुण ! । स्फुरदुरुचापसंशोषित कृपण !
भुजसार दृढ़मुष्टि! भुवनविख्यात! । विजितरिपुव्रात ! विजयसमेत!
मानव राजकुमारकंठीर । वा ! नव्यदिव्यशस्त्रास्त्रसंपन्न!
स्फारघोराक्षयबाणतूणीर ! । वीराग्रगण्य ! यो विश्वशरण्य !
बापुरे ! रामभूपाल ! लोकमुल । नीपाटि विलुकाडु नॆर्चुने कलुग ?
बाटिंचि पुरमुलपै बड्डु हरुनि । येटॊप्पु,निदु नी येटॊप्पुगाक! ”२२००

रघुराम के तूणीर में प्रविष्ट हो गया। तब महित आतपत्र, चामर, तालवृन्त से रहित दंडधर (दंडों को धारण किए) असुर श्रेणी के बीच स्थित रावण तब शोभारहित हो इस गति से था, मानों उद्धत गति से अपने को ले जाने के लिए आए हुए, ॥ २१९० ॥

—दुर्वार (दुर्निवार) यमदूतों के बीच गर्व को खोए बैठा हो। अधिक आश्चर्यचकित हो रघुराम की धनुर्विद्या के महत्त्व के बारे में सोचकर, सिर हिला-हिलाकर (सराहना कर) भट्ट (वन्दीजन) के समान प्रशंसाकर, पट्टुतर ध्वनियों से रघुराम का नाम लेकर, (उसने) प्रशंसा की।

रावण का राम के धनुर्विद्या-कौशल की प्रशंसा करना

“वाह रे ! हे रघुराम ! हे नयनाभिराम ! हे धनुर्विद्या गुरु ! हे वीरावतार ! हे कर-शर-लाघव के क्रम में कलानिपुण ! स्फुरत्-उरु-चाप से संशोषित कृपण (समुद्र) वाले ! भुजसार-दृढ़ मुष्टि वाले ! हे भुवन विख्यात ! हे विजित-रिपु-व्रात (समूह) वाले ! हे विजयसमेत ! हे मानव-राजकुमारों में कंठीरव (सिंह) ! हे नव्य-दिव्य-शस्त्र-अस्त्रों से सम्पन्न ! हे स्फार-घोर-अक्षय-बाण-तूणीर वाले ! हे वीराग्रगण्य ! हे विश्वशरण्य ! बापरे ! हे रामभूपाल ! लोकों में तुम्हारे समान धनुर्धारी कोई हो सकता है ? सोचकर पुरों (त्रिपुरों) पर गिरा हर (शिव) का आघात मानने योग्य है और अब तुम्हारा आघात मान्य है।’ ॥ २२०० ॥

यनि यनि पदिनोळ्ळ नंदंद पॊगड । विनि मंत्रु लादैत्यविभुन किट्लनिरि:
"पगवानि नीरीति बंतंबु विडिचि । पॊगड्डुरे दैत्यपुंगव ! यिट्लु ?
पॊगडिन् भय मंदबोलुनटंचु । बगवारु दनवारु बलुचगा जूतु;
रदिगाक राचकार्यमुगा" दटन्न । मदि नव्वि यमरारि मंत्रुल कनियॆ:
"विलुविद्यपॆंपुनु विक्रमक्रममु । गलितनंबुनु बाहुगर्वराजसमु
लादियौ गुणमुल नधिकुडैनट्टि । कोदंडदीक्षादिगुरुनितो राज
वरुनितो रामभूवरुनितो नॊरुलु । परिकिंचि चूड नेपट्टुननैन
साटिये यिम्मूडु जगमुलयंदु ? । मेटिशूरुल पॆंपु मॆच्चंग वलदे ?"
यनि नीति सॆप्पुचु नच्चोटु वासि । दनुजेश्वरुडु वोय; दनुजनायकुलु
तॆगिपड्डु गॊडुगुल तॆऱगॊप्प जूचि । मिगिलिन भीतिमै मॆल्लन जनुचु २२१०
नट्टु रामु शौर्यंबु नतुल विक्रममु । बटुगति वॊगडुचु बलुतॆऱंगुलनु
"ना राघवुडु करुणांबुधिगान । घोरबाणंबुन गॊडुगुले त्रुंचॆ;
नट्टुवंचि येसिन नंदऱ तललु । पट्टुतरंबुग नुच्चिच पाऱवे?" यनिरि;

(इस प्रकार) बार-बार कहकर, दसों मुँहों से निरन्तर सराहने पर, मन्त्रियों ने दैत्यविभु से यों कहा—"हे दैत्यपुंगव ! इस प्रकार अहंकार को छोड़कर, कहीं शत्रु को सराहते हैं ? सराहने पर शत्रु और अपने लोग यह सोच कि यह भीत हो गया है, (सराहनेवाले को) उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। यही नहीं, यह राजा के (योग्य) कार्य नहीं है।" ऐसा कहने पर मन में हँसकर अमरारि (रावण) ने मन्त्रियों से कहा—"धनुर्विद्या का आधिक्य, विक्रम का क्रम, तेज, बाहु-गर्व, राजस आदि गुणों में (सबसे) अधिक बने कोदण्ड-दीक्षा-गुरु, राज-वर (राजश्रेष्ठ) राम-भूवर के साथ दूसरों की (तुलना कर) देखें, तो इन तीनों जगों में किसी भी प्रकार से (उनकी) समता कौन कर सकता है ? श्रेष्ठ शूरों के आधिक्य की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए ?" ऐसा नीति (-वाक्यों) को कहते हुए, उस जगह को छोड़, दनुजेश्वर चला गया। दनुज-नायकों ने कटकर गिरे छत्रों के विधान को ढँग से देखकर, अत्यन्त भीति से हौले-हौले जाते हुए, ॥ २२१०॥

—राम के शौर्य, अतुल-विक्रम (तथा) पटुगति को अनेक प्रकार से सराहते हुए, कहा—"वह राघव करुणासागर है अतः घोर बाण से केवल छत्र ही काट डाला। ऐसा न कर, (अस्त्र-) संधान कर डालता तो सब के सिर महत्तर रूप से फूट न गिरते ?"

वानरुलु लंकनु ध्वंसपटलमु गाविंचुट

इट नंत मरि राघवेंद्रुंडु गार्य । घटनाप्रयत्नसंगतचित्तु डगुचु
ननुजविभीषणार्यमजादुलेंन । तनवारि यनुमति दगुमुहूर्तमुन
बनिचें लंककु लग्गपट्ट वानरुल; । बनिचिन वानरबलमुलु. लंक
घनगति निक्कडक्कड बड नार्चि । वनजाप्तकुलु रामवल्लभु जूचि
"देव ! माशौर्यंबु तेंऱगोंप्प जूडु: । येविधि ब्राणंबुलित्तुमु नीकु"
ननि पर्वतंबुलु नवनीरुहमुलु । गोंनि वेलु लक्षलु कोटानकोटु
लक्षौहिणुलु गुमुलै कूडिवच्चि । याक्षणंबुन मुट्टिरा लंककोट;
२२२०

मुट्टिन "गेंलुपु रामुनकु नौ" ननुचु । दट्टिचि पेंर्चि युदग्रुलै कविसि
बहुकाष्ठपाषाण पादपावळुल । नहितदुर्वारुलै यंदंद पेंर्चि
तरमिडि यायगड्तलु पूड्चुनप्पु । डुरुशक्ति गपिवीरु लुन्नविधंबु
पोंलुपार नपुडु चंपुडु गट्टुमीद । दलमुगा नुन्नचंदमु निव्वटिल्लें;
गुमुदु डत्तरि बदिकोंट्टुलतोड । समदुडै तूर्पुमोसालकु नरिगें;
बें दळंबै युंडि बलसि राक्षसुलु । पैं द्रोचि राकुंड बलिमि जूपुचुनु

वानरों का लंका को ध्वंसपटल करना

यहाँ पर तब राघवेन्द्र कार्य-घटना के प्रयत्न में संगत-चित्तवाला होता हुआ, अनुज, विभीषण, सूर्यपुत्र आदि अपने लोगों की अनुमति से, उचित मुहूर्त में लंका पर आक्रमण करने वानरों को भेजा। भेजने पर वानर-सेनाओं ने घनगति से गर्जन किया जिससे लंका जहाँ-तहाँ धंस गई। (उन्होंने) वनजाप्तकुल (सूर्यवंश) वाले राम-वल्लभ को देखकर कहा—"हे देव ! हमारे शौर्य को उचित विधि से देखिए। देखिए हम किस प्रकार आपके लिए प्राण देंगे।" (ऐसा) कह, पर्वतों, वृक्षों को लेकर, हज़ारों, लाखों, करोड़ों, अक्षौहिणियों में झुंड बाँधकर, उसी क्षण लंका को घेर लिया ॥ २२२० ॥

घेर लेने पर, 'विजय राम की होगी' कहते, भर्त्सना करतें, क्रम से उदग्र हो, व्याप्त हो, अनेक काष्ठ, पाषाण, पादप समूहों के साथ, अहित (शत्रु भाव) से दुर्वार बन, जहाँ-तहाँ क्रम से उन परिखाओं को पाटने लगे। तब उरु-शक्तियुत हो कपिवीर शोभा से इस प्रकार दीख रहे थे मानों वध्यभूमि पर वधिक हों। उस अवसर पर कुमुद दसकरोड़ (वानरों) के साथ, समद हो, पूर्व की ड्योढ़ी की ओर गया। बली हो महान् बाहुबलवाला शतबली अस्सी करोड़ कपियों के अपने साथ क्रम से

गौनकौनि यॆनुबदिकोट्टुल कपुलु । तनतोड बॆंचि युद्दंडत नडव
घनबाहुबलुडु लंककु दक्षिणमुन । जनियुंडॆ बलियुडै शतबलि; यंत
बडुमटिदॆसकुनु बदिकोट्ल कपुलु । नडव सुषेणु डुन्नति नेगियुंडॆः
रामलक्ष्मणुलुनु राक्षसेश्वरुडु । नामर्कटेश्वरुं डायुत्तरंपु २२३०
वाकिट नुंडिरि; वनचरोत्तमुल । नाकोट लॆक्किचि यडरि यार्चुचुनु
गजुडुनु गवयुंडु गंधमादनुडु । भुजबलाढ्युडु शरभुडु नुग्रवृत्ति
दट्टिचि कोट यंतटिकिनि लग्ग । पट्टिचुचुंडिरि पलुमाऱु दिरिगिः
कोपिंचि वानरकोट्टुलु गविसि । योपिनंतंत नॊंडॊरुल द्रोयुचुनु
इदि कौत्तडमुकोट यिदि दनि कौम्म । यिदि यदि यनि येमि यॆरुगराकुंड
वडि गोट लॆक्कि याळ्वारुलपै कुरिकि । पॆंडबॊब्बलिडि तमपेरु वाडुचुनु
नुडुगक तमतोक लॊडिसॆलल् सेसि । वडि ऱालु लोनिकि वैचि यार्चुचुनु
म्राकुल तुदलु समंबुगा बट्टि । वीक लोपलियिड्लु विऱुगवैचुचुनु,
गुड्लु नट्टळ्ळुनु गोपुरंबुलुनु । बडदन्नि कोटपै बरुवुलॆत्तुचुनु
नट्टळ्ळतोडन यसुरवर्गंबु । नॆट्टन गूलिन निलिचि नव्वुचुनु २२४०
निम्मुल रूपिंचि यिदॆ चूडुडनुचु । गौम्मुलु विऱुगंग गुंड्लु वैचुचुनु

उद्दंडता से चलने पर, ऊपर से बलयुत हो आनेवाले राक्षसों को रोकते हुए, बलप्रदर्शन करते हुए, लंका के दक्षिण की ओर गया। तब दस करोड़ कपियों के (साथ) चलने पर, उन्नति (आधिक्य) से सुषेण पश्चिम दिशा में गया। रामलक्ष्मण, राक्षसेश्वर (विभीषण), मर्कटेश्वर उस उत्तर के, ॥ २२३० ॥

—द्वार पर रहे। वनचरोत्तमों को उन प्राकारों पर चढ़ाकर अतिशयता से सिंहनाद करते हुए, गज, गवय, गन्धमादन, भुजबलाढ्य शरभ कई बार घूमकर, उग्रवृत्ति से डाँटते-फटकारते हुए, समस्त दुर्ग का अधिरोहण करा रहे थे। क्रुद्ध हो वानर-कोटि (-समूह) व्याप्त होकर, भरसक एक-दूसरे को ढकेलते हुए, यह गुंबजवाला दुर्ग है, यह उसका भाग है, ऐसा कुछ समझ में न आए, इस प्रकार शीघ्र प्राकारों पर चढ़कर, मन्दिरों पर कूदकर, अपना नाम लेते हुए घोर-गर्जन करते हुए, वहीं न रुककर, अपनी पूँछों को गोफन बनाकर, झट से पत्थर (दुर्ग के) भीतर फेंककर सिंहनाद करते हुए, वृक्षों के मूल भागों को समरूप से पकड़कर, उत्साह से ऐसा फेंकते हुए जिससे (दुर्ग के) भीतर के मकान ढह जाएँ, गृह, अट्टालिकाएं (तथा) गोपुरों को मार गिराकर, प्राकारों पर दौड़ते हुए, अट्टालिकाओं के साथ असुरवर्ग के अतिशयता से गिरने पर हंसते हुए, ॥ २२४० ॥

—मनोज्ञता से निरूपित करते हुए, 'यही देखो' कहते हुए, चट्टान ऐसे फेंक

दोरणावळुलु गैदुवुलु राक्षसुलु । जारुपताकाध्वजच्छत्रमुलुनु
गोटलु गॊम्मुलु गूलुट चूचि । व्रेट्टुन दिक्कुलु व्रील नार्चुचुनु
मुंचि कॊंडलु करम्मुल बिट्टु वट्टि । दंचनंबुलकिवि दंचनालनुचु
ग्रच्चऱ नट्टु विरुगंग वैचुचुनु । मच्चरंबुन बलुमाऱुनु गपुलु
वडि निट्लु तमचेति नाटुलचेत । गुडु बॆट्टिदमुग लंकापुरिलोन
गूलॆडु मेडलु ग्रंगु वाडलुनु । व्रीलॆडु गोडलु विऱुगु माडुवुलु
नुऱुमैन यिड्लुनु नुग्गुनूचैन । तऱुचु गुळ्ळुनु ननंतंबुलै पडग
दानवक्षयकरोत्पातंबु लनग । बूनि यॆंतयु भीति बुट्टिंचुटयुनु
"इट्टु गनि यॆऱुगमे यॆन्नडु" ननुचु ।जटुलतराट्टहासमुलु सेयुचुनु २२५०
नार्चु वानरुलपै नादैत्युलॆल्ल । बॆच्चि यॆंतयुनु गॊपिंचि शूलमुल
बॊडिचियु गरवालमुलनु व्रेसियुनु । गडुबॆट्टिदंबुगा गदल मोदियुनु
जॊच्चि तन्नियु बरशुवुल व्रच्चियुनु । ग्रुच्चि यगड्तल गूल द्रोचियुनु
दंचॆनगुंड्लचे दाटिंचि कडिमे । मुंचिन लग्ग यिम्मुल विडिपिंचि
यलरि राक्षसुलार्व नाकपुलार्व । निलयु दिक्कुलु जलियिंचॆ नॆंतयुनु;

रहे थे जिससे गुंबज टूट जाएँ। तोरण-समूह, हथियार, राक्षस (तथा) चारु (सुंदर) पताकाएँ, ध्वज, छत्र, दुर्ग, गुंबज (आदि के) गिरते देख, एक साथ दिशाओं के बेध डालनेवाली गर्जनाएँ करते हुए, बड़े पर्वतों को हाथों में दृढ़ता से धारणकर महान् गोलायुधों से बढ़कर ये गोलायुध हैं, ऐसा कहते वेग से उन्हें ऐसा फेंक रहे थे जिससे (लंका) टूट गिर जाए। मात्सर्य से कई बार कपि इस प्रकार झट अपने हाथ के प्रहारों से अधिक भयद रूप से प्रहार करने लगे। (तब) लंकापुरी में ढहनेवाले सौध, धँसनेवाले मोहल्ले, गिरनेवाली दीवारें, टूटनेवाले भवन, चूर-चूर बने मकान, चूर्ण-चूर्ण बने असंख्य मन्दिर, (ये सब) अनंत (असंख्य) हो गिरने पर मानों वे दानव-क्षयकर-उत्पात हों, ऐसा अधिक भीति को उत्पन्न करने पर, 'ऐसा हमने कभी देखा नहीं है' कहते हुए, चटुलतर-अट्टहास करते हुए, ॥ २२५० ॥

—सिंहनाद करनेवाले वानरों पर, वे सभी दैत्य क्रम से अत्यधिक क्रुद्ध हो, शूलों से भोंककर, करवाल चलाकर, अतिभयंकरता से गदाओं से प्रहार कर, घुसकर लात मारकर, परशुओं से चीरकर, घुसेड़कर, खंदकों में गिरा-ढकेलकर, महान् गोलायुधों से आहतकर, साहस से प्राकारों को (वानरों से) मुक्त करने पर, प्रसन्न हो राक्षसों ने सिंहनाद किया। उन कपियों के भी सिंहनाद करने पर भूमि तथा दिशाएँ अधिक विचलित हुईं। व्याकुल हो दिग्गज चिंघाड़ उठे। आकाश भी फट गया। खौलते अदहन के समान

गलगि दिक्करुलु घींकारंबुलिच्चें; । बेलुकुड़ि या निगि बीटलु वाड़ें;
ग्रागिन येसरुलगति नब्धुलुडिकें; । वेगें भूभागंबु; वेड़चें भूतमुलु;
गुलगिरुलच्चनगुंडुल माड्कि । निलमीद नंदंद येत्तेंत्ति पडियें;
नुरगाधिपति विषं बोंलिकें; गूर्मंबु । गिरियु नोंडोंटितो ग्रिंदुमीदय्यें;
नाकारि यप्पुडु नडुचक्कि नुन्न । भीकरसैन्यंबु बिलिचि युब्बिचि
२२६०
"कडिमि सोंपारंग गपिसेन लंक । वेडल दाकुं" डनि वेस बुरिकोलुप
भेरीरवंबुलु भीकरकाह । ळारवंलुनु शंखारवंबुलुनु
बटहारवबुलु बहुतूर्यरवमु । बटुतरनिस्साण भांकारमुलुनु
दुरगहेंषितमुलु दोरंबुलैन । करिबृंहितंबुलु घननेमिरवमु
लत्तड़ि जेलगु भुजास्फालनमुलु । जित्तंबु लगलिचु सिंहनादमुलु
नडरि योंडोंड ब्रह्मांडंबु लविय । सडलि दिग्देवतासमिति भीतिल्ल
बलुविडि राक्षसप्रवरसैन्यमुलु । वलनोंप्प नालुगुवाकिड्ल वेडलें
नटु शांतवक्त्रंबुनंदु दक्कंग । बटुभीषणाकृति ब्रळयरुद्रुनकु
नुन्न मुखंबुल नुडुगक वेडलु । चुन्न मंटलमाड्कि नोक्कट मेड़िसि;

समुद्र खौल उठे। भूभाग पीड़ित हो उठा। भूत भीत हुए। कुलपर्वत अच्चन-गुंडु[1] के समान जहाँ-तहाँ उछल-उछल गिर पड़े। उरगाधिपति (सर्पराज) ने विष उगल दिया। कूर्म और गिरि (मंदर पर्वत) आपस में नीचे-ऊपर हो गए। नाकारि (राक्षस राजा) तब बीचोंबीच स्थित भीकर सैन्य को बुलाकर, (उन्हें) सराहकर, ॥ २२६० ॥

—'साहस के शोभित होने पर कपिसेनाओं को लंका के बाहर भगा दो।' यह कह झट भड़काया। (तब) भेरियों के रव, भीकर-काहलों के रव, शंखों के रव, पटहों के रव, बहुतूर्यों के रव, पटुतर-निस्साणों के भांकार, तुरगों के हेषित (हिनहिनाहट), महत्तर करियों के बृंहित (चिंघाड़), घन नेमियों (रथ-चक्रों) के रव, (तथा) उस अवसर पर विवर्धित भुजाओं के आस्फालन, चित्त को विकल बना देनेवाले सिंहनाद (आदि) विजृंभित होकर, ब्रह्माण्डों के फट जाने पर, दिग्देवतासमिति के भीत होने पर, राक्षस-प्रवर की सेनाएँ शोभा से चारों द्वारों से निकल पड़ीं। एक साथ वे ऐसे चमक उठे मानों शांतवक्त्र को छोड़ पटुभीषणाकृति वाले प्रलयकाल रुद्र के सभी मुखों से अनारत निकलनेवाली ज्वालाएँ हों।

---

[1] बालिकाओं के एक खेल में प्रयुक्त गोलाकर छोटे पत्थर।

वानरराक्षसुल द्वंद्वयुद्धमु

वॆडलि वानरसेन वॆस दाकुनपुडु । तडयक द्वंद्वयुद्धमुनकु जॊच्चि २२७०
कडिमिमै नप्पुडंगदु निंद्रजित्तु । गडु बॆट्टिदंबुगा गद गॊनि व्रेसॆ
वज्रंबु बट्टि पर्वतमुन कॆगसि । वज्रि वेसिनक्रिय वारणलेक;
यंगदुंडुनु बेर्चि यायिंद्रजित्तु । संगरंबुन गिट्टि समशक्ति मॆरसि
भूरिभूधरशृंगमुन बेर्चि वैचि । सारथिरथरथ्यचयमुल जदिपॆ;
वारक येसॆ दुर्वारुडै मूडु । क्रूरास्त्रमुल ब्रजंघुंडु संपाति;
विजयुडै यतडुनु वॆस नश्वकर्ण । कुज मॆत्तुकॊनि प्रजंघुनि बडवैचॆ;
विनतुनि रंभुनि वॆस नॊंचि पॆक्कु । घनबाणमुल नतिकायुंडु पेर्चॆ;
बूनि यय्यिद्दरु भूरिशैलमुल । वानिसेननु वानि वडि नॊंचिरपुडु;
दट्टिपुचुनु महोदरुडु सुषेणु । गिट्टि यातनिमीदि किनुकच्चुपडग
नडरिंचॆ बाणंबु लैदुनु मूडु । वॆडदवक्षंबुन विपुलफालमुन; २२८०
वानि रथ्यंबुल वानि सारथिनि । वानि रथंबु बर्वत मॊक्कटॆत्ति
नलियंग जाव जूर्णबुलै पोव । जॆलगि यार्चुचु नासुषेणुंडु वैचॆ;

वानर और राक्षसों का द्वन्द्वयुद्ध

(ऐसा) निकलकर झट वानरसेना से भिड़कर, अविलम्ब द्वन्द्वयुद्ध करने लगे ।। २२७० ।।

साहस से तब अंगद पर इन्द्रजित्त ने अधिक काठिन्य से गदा ले प्रहार किया, मानों वज्र को लेकर उछलकर वज्री (इन्द्र) ने पर्वत पर दुर्निवार रूप से प्रहार किया हो । अंगद ने क्रम से उस इन्द्रजित्त के नियराकर, समशक्ति से प्रकाशित होकर, भूरिभूधर शृंग को क्रम से डालकर, सारथी, रथ और रथ्यचय को चूर-चूर कर दिया । प्रजंघ ने दुर्वार हो, न रुककर, तीन क्रूर अस्त्र सम्पाति पर डाले । वह भी विजयी हो झट अश्वकर्ण (नामक) कुज (वृक्ष) को उठाकर प्रजंघ को गिरा दिया । अतिकाय ने विनत और रंभ पर झट अनेक घन-बाण डालकर सिंहनाद किया। लगकर उन दोनों ने तब भूरि शैलों से उसकी सेनाओं का नाश कर दिया। महोदर भर्त्सना करते हुए सुषेण के निकट जाकर, उसपर का क्रोध प्रकट होने पर, विशाल वक्ष पर पाँच और विपुल फाल (ललाट) पर तीन अस्त्र चलाकर शोभित हुआ ।। २२८० ।।

सुषेण ने विजृंभित होकर, सिंहनाद करते हुए, एक पर्वत को उठाकर (हाथ में लेकर) उसके रथ्यों तथा सारथी पर डाल दिया जिससे वे दबकर, चूर होकर मर गए । और जांबवान ने विशाल वृक्ष को ज़ोर से घुमाते

मऱि जांबवंतुंडु मकराक्षुमीद । बिऱुबिऱु द्रिप्पुचु बॆनुम्राकु वैचॆ;
नडुमने यदि द्रुंचि नाटिंचॆ नतडु । कडुबॆक्कुशरमु लुग्रस्फूर्ति मॆऱय
नतनि भुजंबुल नतनि फालमुन । नतनि वक्षंबुन नतिलाघवमुन
नाजांबवंतुंडु नलुकमै वानि । भाजनंबुग जेय बर्वतंबॊकटि
वैचिन रथमुनु वररथाश्वमुलु । जूचॆडुनंतलो जूर्णंबुलय्यॆ;
शरमुलु पॆक्किकट शतबलि गिट्टि । युरुलाघवमुन विद्युज्जिह्वुडॆय
नतनि वक्षमु गाड नत्युग्रभाति । शतबलि यॊक्कवृक्षंबुन वैचॆ;
बॆक्कंड्रु दैत्युल पीचंबु लणचि । पॆक्कुचंदंबुल बॆंचिन गजुनि २२९०
दप्पक प्रमदुडत्तऱि जूचि किनिसि । विप्पैन वनचरविभुनि वक्षंबु
शूलंबु गॊनि पॊडुचुटयुनु जूचि । सालवृक्षमुन राक्षसुनि नागजुडु
व्रेयंग नतडुनु वॆस मृतुंडय्यॆ । नायॆड नगचरु लार्चि मोदिंप;
ननि गुंभकर्णुनि यग्रनंदनुडु । घनुडु कुंभुडु प्लवंगमुल बॆल्लडरि
कुत्तुकलो वैचिकॊनग धूम्रुंडु । नॆत्ति वक्षमुबट्टि येपुतो वैचॆ;
ग्रूरुडै देवांतकुंडु गवाक्षु । चारुतरोरुवक्षस्स्थलं बैदु
शरमुल नेसिन जालंग नॊच्चि । सरभसवृत्तिमै सालवृक्षमुन
वैचिन वाडेडु वाडिबाणमुल । जूचुनंतनॆ दानि जूर्णंबु सेसि

हुए मकराक्ष पर डाल दिया। उसने उसे (वृक्ष को) बीच में ही काट देकर, अति उग्र-स्फूर्ति से प्रकाशित होते हुए, अनेक शर उसकी (जांबवान) भुजाओं, उसके फाल, उसके वक्ष पर अति-लाघव (शीघ्रता) से फेंके। वह जांबवान भी क्रोध से उसको निशान बनाकर, एक पर्वत फेंका जिससे देखते-देखते रथ और श्रेष्ठ रथाश्व चूर-चूर हो गए। विद्युज्जिह्व ने उरु-लाघव से शतबली को घेरकर अनेक शर फेंके। शतबली ने अत्युग्रता से एक वृक्ष फेंका जो उसके वक्ष में गड़ गया। अनेक दैत्यों के छक्के छुड़ाकर, अनेक प्रकार से शोभित होनेवाले गज को, ॥ २२९० ॥

—उस अवसर पर देख प्रमद ने क्रुद्ध होकर, वनचर-विभु (गज) के विशाल वक्ष पर शूल चलाया। वह देख, उस राक्षस पर गज ने सालवृक्ष फेंका (जिससे) वह झट मृत हो गया। उस समय नगचरों (वानर) ने मुदित हो सिंहनाद किया। युद्ध में कुंभकर्ण के अग्रनन्दन महान् कुंभ अधिक विजृंभित हो प्लवंगों (वानरों) को मुँह में डालने (निगलने) लगा। धूम्र ने अति पराक्रम से उसके वक्ष पर दे मारा। क्रूर बन देवांतक ने गवाक्ष के चारुतर-उरु-वक्षस्थल पर पाँच शर डाले। अधिक पीड़ित हो अधिक शीघ्रता से (गवाक्ष ने) सालवृक्ष फेंक दिया। उसने देखते-देखते सात पैने बाणों से उसे चूर्ण कर, नौ बाणों से उसे संचलित कर दिया।

तोम्मिदियम्मुल दूलिप वानि । 'गों' म्मनि गिरि यॆत्तिकॊनि वैचॆ नतडु;
ऋषभुनि मुसलान नेसॆ सारणुडु; । वृषभुंडु सारणु विपुलवक्षंबु २३००
वृक्षंबु गॊनि वैव विल्लुनम्मुलुनु । नक्षणंबुन वैचि यतडु मूर्छिल्लॆ;
गिरिवोनि गजमु नॆक्किन त्रिशिरुंडु । शरभुनि तलव्रेसॆ जनि तोमरमुन
शरभुंडु गोपिंचि सालवृक्षमुन । हरि गिरि व्रेसिनट्ला त्रिमस्तकुनि
व्रेसि तद्गजमुनु व्रेसॆ गूलंग; । रासि राक्षसुलकु राक्षसुंडगुचु
ननयंबु बेर्चि नरांतकुंडपुडु । पनसुनिपै दीव्रबाणंबु लेय
बनसुंडु नातनिपै वृक्षवृष्टि । घनमुगा गुरिसि युग्रत जूपॆ नंत;
बरिघंबु गॊनि यकंपनुडु व्रेयुटयु । धरणिपै स्रॊग्गि यद्धतशक्ति नॆगसि
कुमुदुंडु पिडिकिट गुपितुडै पॊडुव । भ्रमसि चय्यननकंपनुडु मूर्छिल्लॆ;
गिट्टि धूम्राक्षुंडु केसरिमीद । नॆट्टन नंप पॆन्निटंनु मुंप
वानि सेनलमीद वडि बर्वतमुलु । मानक कुरियिप मरि वाडु विरिगॆ:
२३१०
मंडितभुजु गंधमादनु गिट्टि । भंडनंबुन महापार्श्वुंडु दाक
दरुलनु गिरुलनु दंष्ट्रल वानि । गरमॊप्प नॊप्पिचॆ गंधमादनुडु;

तब उसने 'यह ले' कहते पर्वत उठाकर उस पर डाल दिया। सारण ने ऋषभ पर मूसल डाल दिया। वृषभ ने सारण के विपुल वक्ष पर, ॥ २३०० ॥

—वृक्ष लेकर डालने पर, धनुष-बाणों को झट फेंककर, वह मूर्छित हो गया। गिरि-सम गज पर सवार त्रिशिर ने तोमर से शरभ के सिर पर मारा। शरभ ने क्रुद्ध होकर सालवृक्ष से उस त्रिमस्तक वाले को मारा, जैसे हरि (इन्द्र) ने गिरि को गिराया था। उसके गज को भी गिरा दिया। वह राक्षसों का राक्षस बन शोभित हुआ। निरन्तर गरजते हुए नरान्तक ने तब पनस पर तीव्र बाण डाले। पनस ने उस पर अतिशयता से वृक्षों की वर्षा कर, उग्रता दरसाई। परिघा लेकर अकंपन ने उसपर फेंका। वह (कुमुद) धरणी पर झुककर, उद्धतशक्ति से ऊपर उड़कर, क्रुद्ध हो मुट्ठी से मारने पर, भ्रमित हो झट अकंपन मूर्छित हो गया। धूम्राक्ष ने केसरी के निकट आकर, उसे क्रूर बाणों की बाढ़ में डुबो दिया। वह (केसरी) भी उसकी सेनाओं पर टूट गिरकर, अनवरत पर्वतों को बरसाने पर वह भी टूट गिर गया ॥ २३१० ॥

मंडित भुजाओंवाले गन्धमादन के निकट आकर, भंडन (युद्ध) के लिए महापार्श्व ने सामना किया। गन्धमादन ने तरुओं (और) गिरियों (और) दंष्ट्राओं से उसे (महापार्श्व को) बहुत पीड़ित किया। वेगदर्शी

तरुचुगा ना वेगदर्शिपै शुकुडु । नॅऱिनाट नम्मुलु निगुडिचुटयुनु
वानि रथंबु दुर्वारुडै वाडु । पूनिकमै द्रॊक्कि पॊडिपॊडि सेसॆ;
नडुकक तपनुंडु नलुनकु नॆंदुर । नडतेरगा दॊड्डनगमुन नतडु
नुरुवडितोड ग्रुड्लुरुकुनट्लुगनु । बॆरिगि यातनि गिट्टि बॆट्टुगा वैव
वाडि बाणंबुलु वडि नलुमीद । वाडेयुटयु व्रेसॆ वानि सालमुन;
गुरुतरंबगु शक्ति गॊनि जंबुमालि । यरुदुगा नुरमंट हनुमंतु नेय
नॆऱि जवंबुन नांजनेयुंड गिनिसि । युरुक रथंबुपै नुऱिकि युग्रतनु
गिरिशिखरंबनु क्रिय नुन्न वानि । शिर मरुचेत व्रेसॆनु व्रय्यलुगनु;
२३२०
शरपरंपर विभीषणुनि मित्रघ्नु । डुरुवडि नॆत्तुरु लुरल नेयुटयु
गलुषिंचि यातडु गदगॊनि व्रेय । दलकि मूर्छिल्लॆ मित्रघ्नु डॆंतयुनु;
वनचरसेनल वारक पट्टि । कॊनि यवलील मिंग्रुडु नाप्रहस्तु
घूर्णितारुणकटाक्षुंडुनै सप्त । पर्णवृक्षंबुन भानुजुं डडचॆ;
मॊनसि युद्धति वज्रमुष्टि यन्वानि । बॆनुपार मैंदुंडु पिडिकिट बॊडुव
नालंकगोपुरं बवनीस्थलमुन । गूलॆनो यन दन्नुकॊनि कूलॆ वाडु;

पर शुक ने लगातार बाण चलाए जो (उसके शरीर में) गड़ गए। वह भी दुर्वार हो, सप्रयत्न उसके रथ को कुचलकर चूर्ण कर दिया। कम्पित हुए बिना तपन नल के समक्ष आया तो उसने बड़े पर्वत को ले, द्रुतगति से ऐसा बढ़कर कि उसकी आँखें फूट जाएँ, उसके निकट जाकर, (उस पर्वत को) जबरदस्ती डाल दिया। उसने (तपन ने) भी झट नल पर पैने बाण चलाए। उसपर (नल ने) साल (-वृक्ष) डाल दिया। गुरुतर-शक्ति को ले जंबुमालि ने आश्चर्यप्रद रूप से ऐसा फेंका कि वह हनुमान के उर में गड़ गया। श्रेष्ठ जव (वेग) से हनुमान क्रुद्ध हो एकदम (उसके) रथ पर छलाँग मारकर, उग्रता से, गिरिशिखर के समान शोभित उसके सिर को हथेली से मारा जिससे वह फूट गया ।। २३२० ।।

मित्रघ्न ने विभीषण पर शरपरम्परा चलाई, जिससे झट विभीषण ने रक्त उगला। क्रुद्ध होकर उसने (विभीषण ने) गदा लेकर फेंका तो मित्रघ्न एकदम मूर्च्छित हो गया। प्रहस्त दुर्निवार रूप से वनचर-सेनाओं को सरलता से निगलने लगा। (तब) भानुज (सुग्रीव) ने घूर्णित-अरुण-कटाक्ष (उद्भ्रान्त लाल चितवनों) वाला होता हुआ सप्त-पर्ण-वृक्ष से (उसका) दमन किया। लगकर उद्धतभाव से वज्रमुष्टि नामक (राक्षस) को, वर्द्धित हो मैंद ने मुट्ठी से मारा तो वह छटपटाकर धराशायी हो गया, मानों लंका का गोपुर ही अवनीस्थल पर गिरा हो। द्विविद ने अशनि-प्रभु

विनुवीथि सुरलार्व द्विविदुंडु शैल । मुन नशनिप्रभु मॊगि गूल नेसॆ;
गरमल्क नीलमेघमु सूर्यु गप्पु । करणि नंदंद युग्रप्रतापमुन
बरग दिव्यास्त्र संपदलचे नीलु । गुरुभुजुंडैन निकुंभुंडु गप्पॆ;
गप्पिन नीलुंडु गदिसि निकुंभु । जप्परिंचुचु रथचक्रंबु बुच्चि २३३०
रयमुन वैचि सारथि तल द्रुंचॆ । भयमंदि वाडु विभ्रांतुडै चूड;
शरवर्ष मप्पुडु सौमित्रिमीद । गुरियु विरूपाक्षु गॊनक सौमित्रि
यॊक्कबाणंबेय नॊगि वाडु शक्ति । दक्कि मूर्छिल्लॆ नुद्दंडत धरणि;
रामुपै सुप्तघ्नु रश्मि केतुवुल । नामॆयि नग्निकोपाग्नि केतुवुलु
भीमप्रतापुलै पेर्चि यंतंत । वेमऱु गर्जिंचि वॆस विजृंभिंचि
कॆरलि मेघंबुल क्रिय नंपसोन । गुरिसिरि गुणरावघोरगर्जनल;
नलिनाप्तकुलुडंत नाल्गुबाणमुल । नलुवुरि तललनु नलि द्रुंचिवैचॆ;

युद्धभूमिवर्णनमु

नॆक्कटिकय्यंबु लिट्टु चॆल्लुचुंड । दक्कक विऱिगिन तऱचैन विड्लु
जिदिसिन करमुलु जिद्रुपलै पडिन । गदलुनु दुनिसिन करवालमुलुनु

(नामक राक्षस) को शैल से मार गिराया, जिसे देख विनुवीथि (आकाश-मार्ग) पर देवताओं ने हर्षनाद किया। अधिक क्रोध से, नीलमेघ के सूर्य को ढँकने के समान, उग्रप्रताप से शोभित हो, दिव्यास्त्र-सम्पत्ति से गुरु-भुजाओंवाले निकुंभ ने नील को ढँक दिया। ढँक देने पर नील निकट पहुँच, निकुंभ को चुबलाकर, रथचक्र को हाथ में ले, ॥ २३३० ॥
—झट फेंककर, सारथी के सिर को काट दिया, जिसे वह (निकुंभ) डरकर, विभ्रान्त हो देखता रह गया। तब विरूपाक्ष ने सौमित्र पर बाणों की वर्षा की। उसकी परवाह न कर सौमित्र ने एक बाण फेंका, जिससे वह शक्ति को खोकर, उद्दंडता से धरणी पर मूर्छित हो गिर गया। सुप्तघ्न, रश्मिकेतु, अग्निकेतु, कोपाग्नि केतु (नामक राक्षसों ने) भीम (भयंकर) प्रताप से युक्त होकर, बार-बार गरजकर, झट विजृंभित होकर, औद्धत्य से मेघों के समान, गुण (ज्या)-रव की घोर-गर्जनाओं के साथ, राम पर बाण बरसाए। तब नलिनाप्तकुल वाले ने चारों के सिर चार बाणों से सलील काट फेंक दिया।

युद्धभूमि का वर्णन

इस प्रकार घोर युद्ध के चलते रहने पर, (युद्ध भूमि में) टूटे हुए असंख्य धनुष, टूटे बाण, तिनके-तिनके बनी गदाएँ, खण्डित करवाल

मुरिसिन शक्तुलु मुद्गरंबुलुनु । बरिसिन परिघलु बट्टिसंबुलुनु २३४०
गडिकंडलैन चक्रप्रासमुलुनु । बॊंडियैन सुरियलु भूरिशूलमुलु
दुमुरुलै पडियुन्न तोमरंबुलुनु । रमण जूर्णंबैन रथचक्रमुलुनु
गूलि पॆल्लुग दन्नुकॊनु घोटकमुलु । व्रालि मन्नगऱचिन रथचोदकुलुनु
रालिन कोटीररत्न पुंजमुलु । नेल बट्टिन बाहु निचयखंडमुलु
जच्चिन यसुरुल समरभूभाग । मच्चॆरु वयियुंडॆ नप्पुडु चूड
मर्दितारातिरामक्षितीश्वरुडु । दुर्दांतशरमुल द्रुळ्ळडंचुटयु
मलगौन्न युरुमीन मकरोरगादि । जलचरंबुलु सिक्क जलमॆल्ल
निगिरि
वशगतंबै रामवल्लभुनॆदुऱ । गृशमैन यंबुधि क्रियनुंडॆ रणमु;
नट्टिविधंबुन नवनिज दॆच्चि । नट्टि रावणुनकु नट्टपै शिरमु
लट्टॆल निलुचु नन्नट्टि चंदमुन । नट्ट लाकसमुनंदाडंग दॊडगॆ; २३५०
नॆऱिगलु मज्जंबु नॆऱसिन ऱॊंपि । तऱचैन वॆंड्रुकतंडंबु नाचु
बुनुकलु चिप्पलु बॊरिबॊरि नुन्न । घनमुलौ पलकलु कमठतंडमुलु
दुमुरुलै पडिन कैदुवुलु मीनमुलु । रमणीयतरचामरमुलु हंसमुलु

(तलवार), फटी शक्तियाँ और मुद्गर, (ज़मीन में) दबी परिघाएं और पट्टिस, ॥ २३४० ॥

—खण्ड-खण्ड बने चक्र और प्रास, चूर-चूर बनी छुरिकाएं और भूरि (महान्) शूल, सूक्ष्म खण्ड बन पड़े हुए तोमर, रमणीय चूर्ण बने रथचक्र, गिरकर अतिशयता से छटपटाने वाले अश्व, गिरकर मिट्टी चाटनेवाले रथ-चोदक (सारथी), ढुलक गिरे किरीटों के रत्न-समूह, ज़मीन पर पड़े बाहुओं के समूहों के खण्ड, मरे हुए असुर (आदि से भरकर) समर भूभाग तब आश्चर्यप्रद दिखाई पड़ा। मर्दित-आराति (शत्रुओं का दमन करनेवाले) राम-क्षितीश्वर के दुर्दान्त शरों का (अपना) गर्व भंग कर देने पर, समस्त जल के सूख जाने पर, असंख्य उरु (बृहद) मीन-मकर-उरग आदि जलचरों के फँस जाने पर, (राम के) वशीभूत होकर, राम-वल्लभ के समक्ष कृश बने अंबुधि (समुद्र) के समान था रण (-स्थल)। शून्य में (उस युद्धभूमि में) धड़ इस प्रकार नाच रहे थे मानों कह रहे हों कि उस प्रकार (अत्याचार कर) अवनिजा को लानेवाले रावण के धड़ पर सिर कैसे टिक कर रह सकेंगे ? ॥ २३५० ॥

(कटकर गिरे वीरों की) शोभायुक्त मज्जा रूपी कीचड़, अतिशय केशसमूह-रूपी सेवार, खोपड़ी-रूपी सीप, खण्डित होकर गिरे हुए ढाल-रूपी कमठ-समूह, खण्डित हो पड़े हुए खड्ग-रूपी मीन, रमणीयतर-चामर-रूपी

गॊमरारु तॆल्लनि गॊडुगुलु नुरुवु । नमरु भूषणचूर्ण मंदलि यिसुक
यॊड्डुनंबुलु नॆगळ्ळुरुदंतिशवमु । लॊड्डि पॆंपारिन यॊड्डुयिन गिरुलु
दुरुचरासुर देहततुलु वृक्षमुलु । दॊरिगिन प्रेवुलु दुष्टसर्पमुलु
गॊऱ्प्राणमुलतोड गुंभिनियंदु । नॊऱगिन राक्षसु लॊरलुट म्रोत
गलगॊन्न घनतुरंगमुलु ग्राहमुलु । नलि दूलु पडग लुन्नति नंदु तॆरलु
नव्विधंबुन मीऱि येऱुल नॆल्ल । नव्वुचु बटुरक्तनदुलुब्बि पाऱॆ;
नारय बापात्मु डगुगाक, येमि? । यारामुनकु द्रोहि यगु गाक, येमि?
२३६०
यतिलोककंटकुंडगु गाक, येमि ? । यतडु नीचात्मकुंडगु गाक, येमि?
यतुल जंपिन पापि यगुगाक, येमि? । सतुल जंपिन दुरासदुडुगा, केमि ?
हितमतिनै यिप्पु डीडेपं दलचि । प्रतिलेनि रघुरामु बाणजालमुल
धृति दूल गट्टि या देवकंटकुनि । हितमति नीदेह मिटु विडिपिंचि,
लोगॊनि वानि नालोपल मुंचि । बागॊप्प गलुषमुल् वापि रक्षिंचि
खलुडैन यट्टि युक्कलुनि रावणुनि । वॊलुपार मुक्तिकि बुत्तु नन्माड्कि
संगति नॊप्पारु जाह्नवि यनग । संगरस्थलि महाश्चर्यमै यॊप्पॆ;

हंस, शोभायमान श्वेत-छत्र-रूपी फेन, विराजमान भूषण चूर्ण-रूपी सैकत, ढाल-रूपी जलग्रह, विशालकाय दंतियों (हाथियों) के शवरूपी विपुल पर्वत, तरुचर (तथा) असुरों के देह-समूह-रूपी वृक्ष, बाहर कढ़े आंत-रूपी दुष्ट सर्प, मरणासन्न हो धराशायी बने राक्षसों के कराह-रूपी घोष, क्षुब्ध घन तुरंग (घोड़े) रूपी ग्राह (मकर), गिर-गिर् पड़नेवाली पताकाएँ रूपी ऊँची लहरें, इस प्रकार इन सबसे अतिशयता से युक्त हो, समस्त नदियों का उपहास करती हुई, पटु रक्त-नदियाँ फूलकर बह उठीं। सोचने पर पापात्मा हुआ तो क्या? उस राम के प्रति द्रोही बना तो क्या हुआ ? ।। २२६० ।।

—अतिलोक-कंटक हुआ तो क्या? वह-नीच आत्मावाला है तो क्या हुआ? यतियों को मार डालनेवाला पापी हुआ तो क्या? सतियों (साध्वी-स्त्रियों) को मार डालनेवाला नीच है तो क्या हुआ ? मैं हितमति हो अब उसे तार देना चाहकर, अनुपम रघुराम के बाण-समूह से धृति (धैर्य) को छुड़ाकर, उस देवकंटक (रावण) को देह से हितमति से मुक्तकर, उसे अपने भीतर ले, अपने में खूब डुबोकर, अच्छी तरह उसके कलुष (पाप) धो डालकर, रक्षाकर, खल (दुष्ट) और धुरंधर नेता बने रावण को शोभा से मुक्ति प्रदान करूंगी, मानों इस प्रकार कहनेवाली शोभायमान जाह्नवी (गंगा) के समान संगरस्थली महाश्चर्यप्रद रूप शोभित हुई।

सायंकालादिरात्रि वर्णनमु

नप्पुडु लंकलो नादैत्यकांत । लुप्पोंगु शोकपयोधिलो मुनिगि
"ग्रद्दन जेयु नक्कय्यंबु दक्कि । प्रोद्दु ग्रुंकिन गानि पोडु राघवुडु;
ऍप्पुडु ग्रुंकुनो यिनुडिंक" ननुचु । नप्पटप्पटिकि बिट्टरयुचु नुंड२३७०
नंचितकठिनपुंखास्त्रांशु समिति । मुंचि रावणुनि तमोगुणं बणप
भीमप्रतापसंस्फीतुडै युन्न । रामुडे चालु दुर्वारु डम्माड्कि
घनतरंबगु तन करमुलु मोड्चि । वनजाप्तु डपरदिग्वनधिलो मुनिगै।
खलुडैन यादशकंठुनि चेटु । दैलुपुटकै निशीथिनि कचभरमु
विरळमै जल्लन विरिसैनो यनग । बरपोंदि चीकटि प्रबलमै पर्वें;
नप्पुडु बोब्बलु नार्पुलु वैट्टु । चप्पुळ्ळु मल्ललु सडचु बेडिदमु
लट्टहासंबुलु नडरि यौंडोरुलु । दिट्टैडुनैलुगुलु दीर्घ हुंकृतुलु
झंकाररवमुलु जप्परिंचुटलु । नंकिचुपलुकुलु नाह्वानमुलुनु
रथनेमिरवमुलु रथिकसारथुल । पृथुलवाक्योद्भूतभीमनादमुलु
गुणनिस्स्वनंबुलु गुंजरांगमुल । घणिघणिल्लनि म्रोयु घंटास्वनमुलु
२३८०

सायंकाल तथा रात्रि का वर्णन

तब लंका में दैत्यकान्ताएँ उमड़नेवाली शोक-पयोधि में ऊभ-चूभ होकर, यह कहते हुए कि 'सूर्यास्त होने से पहले इस भीषण संघर्ष को छोड़कर राघव नहीं जाएगा। अब कब सूर्य का अस्त होगा ?' बार-बार (आकाश की ओर) देख रही थीं ॥ २३७० ॥

अंचित (श्रेष्ठ)-कठिन-शर-किरण-समूह में डुबोकर, रावण के तमोगुण का दमन करने के लिए, भीमप्रताप से संस्फीत और दुर्निवार राम ही पर्याप्त है, मानों ऐसा सोच अपने घनतर-करों को समेटकर, वनजाप्त (सूर्य) अपर (पश्चिमी)-दिग्वनधि (दिशा-समुद्र) में डूब गया। खल बने उस दशकंठ की हानि (नाश) को सूचित करने के लिए मानों निशीधिनी (निशिकान्ता) ने अपने कच-भार (केश-समूह) को अविरल रूप से चारों दिशाओं में फैला दिया हो, इस प्रकार प्रसरित हो, अंधकार घना हो, व्याप्त हो गया। तब (सूर्यास्त होने पर भी) गर्जन और सिंहनाद, भुजास्फालन, परुषवचन, एक-दूसरे को कोसने के शब्द, दीर्घ-हुंकार, झंकार-रव, चुबलाने की ध्वनियाँ, उल्लसित वचन, आह्वान पूर्वक शब्द, रथनेमि के रव, रथिक और सारथियों के पृथुल (अत्यधिक) वाक्यों से उद्भूत भीमनाद, गुण (ज्या) के निस्वन, कुंजर (हाथियों) के शरीरों पर की घंटाओं के स्वन, ॥ २३८० ॥

गरिबृंहितंबुलु घनतूर्यरवमु । दुरगोग्रहेषलु दोरमै निगुड
बौद्दु ग्रुंकिन नैन बोवक चलमु । पेद्दयै कपुलुनु बेर्चि राक्षसुलु
नतिभयंकरमैन यनि सेयुनप्पु । डतिनिबिडंबैन यंधकारमुन
बौडु पौडु पौडु; पोकु पोकु डन्माट । विडु विडु विडु; व्रेयु व्रेयु डन्माट
च्चलमु डिपक चंपु चंपु डन्माट । तौलगक तल द्रुंपु व्रुंपु डन्माट
यैंदुन्नवाडेडि येडि यन्माट । यिंदु रानिम्मु रानिम्मनुमाट
यटमीद्द हुंकृतुल् हासमुल् सैलग । निट्टु चेल्लुमाटल निक्कुव लैड़िगि
पोरुचो गैंधूळि बोरन नैगय । बेरि याचीकटि पेद्द यौटयुनु
ब्रमयुटजेसि येर्परुपंगराक । तमतमवारल दार्मै चंपुदुरु;
कोंपिचि वानरकोट्टुलु गविसि । यापापकर्मुल नसुरुलगिट्टि २३९०
रथिकुल जंपि सारथुल जैंडाडि । पृथुलरथ्यंबुल पीचंबु लणचि
कडनौग ललमि म्रौग्गग देरुलैत्ति । यडतुरु नुग्गुनूचै नेल गूल;
दुमुरुगा जोदुल व्रुळ्ळडगिंचि । समदवारणमुल चरणंबु लैत्ति
मिरुगेल नमरिंचि येचि तार्टिचि । वरुस नल्लट्टु पाड़वैतुरु चंपि;
चिदुरलै दैसलंदु जैदरुगुर्ऱमुल । गदिसि तोकलतोड गडकाळु लौडिसि

—करियों की चिघाड़ें, घन तूर्य के रव, तुरगों की उग्र हिनहिनाहटें—आदि अतिशयता से व्याप्त होने पर, सूर्यास्त होने पर भी वापिस न जाकर, अधिक हठ से कपि और राक्षस अतिभयंकर युद्ध करने लगे। उस समय अति निबिड़ अन्धकार में 'मारो, मारो, मारो', 'जाओ मत, जाओ मत', 'छोड़ो, छोड़ो, छोड़ो', 'मारो, मारो', 'हठ न छोड़कर मार डालो, मार डालो', 'न हटकर सिर काट दो, काट दो', 'कहाँ है कहाँ कहाँ ?' 'यहाँ आने दो, आने दो'—ऐसी बातों के उपरान्त हुंकार, अट्टहास के विजृंभित होने पर, इस प्रकार की बातों के यथार्थ्य को जानकर युद्ध करने लगे तो अधिकता से उड़ी धूल ने, जमकर, उस अन्धकार को और घना बना दिया। उससे भ्रमित होकर, (एक-दूसरे को) पहचान न सक, अपने-अपने लोगों को आप ही मारने लगे। क्रुद्ध हो वानर-समूह पापकर्मवाले असुरों के पास पहुँच, जूझकर, ॥ २३९० ॥

—रथिकों को मारकर, सारथियों को चीर डालकर, पृथुल रथ्यों (अश्वों) के गर्व का दमनकर, शोभा से रथों को अनायास ऊपर उठाकर ऐसे पटक देते थे कि उनके टुकड़े-टुकड़े हो जाते थे। फिर योद्धाओं के अहंकार का दमनकर, मदयुक्त वारणों (गजों) को चरणों से उठाकर, दोनों हाथों में समा लेकर एक-दूसरे से टकराकर, मारकर, क्रम से फेंक देते थे। तितर-बितर होकर, दिशाओं में (इधर-उधर) भागनेवाले अश्वों के पास जा,

पट्टि बॆट्टुग द्रिप्पि पडवैतुरॆलमि । नॆट्टन नेल बॆन्नॆत्तुरु लोलुक
गोलॆम्मु लुरमुलु गुंडॆलु बरुलु । वालिन भुजमुलु वदनदंष्ट्रमुलु
बुनुकलु मॆदडुनु भुविमीद जॆदर । गनुकनि गाल्वुर गडगि चंपुदुरुः
अरदाल पॆल्लुन नडरु धूळियुनु । दुरगखुरोद्धूतधूळियु नॆगसि
दानवानीकंबु तलपुलोनुन्न । कानमि मॆल्लनु ग्रम्मि वॆल्विरिसॆ
२४००

ननग जीकटि कूडि यग्गलंबगुचु । विनुवीथि नडुमॆल्ल विपुलमै निंडॆ;
नसुरुल यसुवुलु नगचराधिपुल । यसुवुलु नॊक्कट नपहरिंचुटकु
नामॆयि नारात्रि यसुरेशुचेत । रामुनिचे गाळरात्रियै तोचॆ;
दमवेळ यगुटयु दैत्यु लंदंद । गुमिगूडि मुट्टि त्रिकूटाचलंबु
दम यार्पुलकु ब्रतिध्वनु लिच्चुचुंड । समरसन्नद्धुलै सरभसवृत्ति
मिगिलि याराघवुमीदनु गविसि । गगनंबु निंड मार्गणमु लेयुटयु
नारामविभु डप्पु डग्निबाणमुन । बेरिन चीकटि पॆंपॆल्ल नणचि
तन्नु गिट्टिन महोदरु महापार्श्वु । सन्नुतबलुलैन सारणशुकुल
नट्टु वज्रदंष्ट्रु महाकायु नॆसॆ । बट्टुवेगमुन नारुबाणमुल् दॊडिगि

पूंछ के साथ पिछले पैर पकड़कर, ज़ोर से घुमाकर, ज़मीन पर पटक देते जिससे वे खून उगलते। पैदल सैनिकों को झट ऐसा मार डालते कि उनकी रीढ़ (की हड्डियाँ), वक्ष, कलेजा, पसलियाँ, भुजाएँ, वदन, दंष्ट्राएँ, खोपड़ी, भेजा (आदि) छिन्न-भिन्न होकर चारों ओर फैल जाएँ। रथों की अतिशयता से (उड़ी) धूल और तुरगों के खुरों से उद्धूत धूल (दोनों) उड़कर, ऐसे फैलकर व्याप्त हो गई मानों दानवानीक (राक्षस सेना) के मन का अज्ञान हो ॥ २४०० ॥

यह (धूलन) अन्धकार से मिलकर घनीभूत होते हुए, विनुवीथि (आकाश) के मध्य में विपुलता से भर गयी। असुरों के प्राणों तथा नगचराधिपों के प्राणों का एक साथ अपहरण करने के लिए, उस समय वह रात असुरेश तथा राम द्वारा प्रवर्तित कालरात्रि (प्रलयकाल की रात) के समान प्रतीत हुई। अपना समय होने के कारण (रात का अपने लिए अनुकूल होने के कारण) दैत्य जहाँ-तहाँ झुंड बाँधकर, अपने गर्जनों से त्रिकूटाचल को गुंजायमान करते हुए, समर-सन्नद्ध हुए और संरभ के साथ, अतिशयता से राघव को घेरकर, (अपने) मार्गणों (बाणों) से गगन को भर दिया। तब प्रभुराम ने अग्निबाण से, घनीभूत बने अन्धकार के औद्धत्य का नाश कर, अपने को घेरे हुए महोदर, महापार्श्व, सन्नुत (प्रशंसित) बलवाले सारण और शुक, वज्रदंष्ट्र तथा महाकाय पर पटुवेग

यार्वुरु दैत्युलु नवि नॊव्वनाट । बॆविन भीतियै बारिरि दिशल; २४१०
कट नुन्न राक्षसु लारामविभुनि । पटुबाणशिखि शलभंबुलै पडिरि।

इंद्रजित्तु मायायुद्धमु

अरदंबु सूतुंडु हरुलु नंगदुनि । करमुक्त गिरिश्रृंगकठिन पातमुन
नवनिपै गूलिन नाजि वर्जिचि । सवनशालकु वेग चनि यिंद्रजित्तु
तगु होमसाधनततुलु राक्षसुलु । मॊगि देर गैकॊनि मुख्यमार्गमुन
वलनॊप्पगा रक्तवर्णंबुलैन । तलचुट्टु नुभयवस्त्रमुलु माल्यमुलु
धरियिंचि वह्निनकि दग बरिस्तरण मुरुतोमरंबुलु नुग्रशस्त्रमुलु
गड़िलेनि शरमुलु गाविंचि नलुपु । गड़िगॊन्न घनमेषकंठरक्तंबु
नॊगि दाडिसमिधलु होमंबु सेय । बॊग लेक मंडुचु बॊडवुगा निक्कि
यॆलमिमै विजयंबु लॆड़िगिप जाल । वलतियै दक्षिण वलमानशिखल
नॊप्पुचु ननलुडाहुतुलु गैकॊनियॆ; । नप्पुडु निष्ठतो नायिंद्रजित्तु २४२०

से छः बाणों का संधान कर चलाया। वे छः दैत्य, उन बाणों के गड़कर पीड़ित करने पर, दिशाओं में (चारों तरफ़) भाग गए ।। २४१० ।।

वहाँ स्थित राक्षस विभुराम की पटु-बाण-शिखाओं में शलभ हो गए। (जलकर मर गए।)

इन्द्रजित का माया-युद्ध

अंगद के कर-मुक्त (हाथों से फेंके गए) गिरि-श्रृंग के कठिन-पात से रथ, सारथी, (तथा) अश्वों के धराशायी होने पर, युद्ध से निरस्त होकर, इन्द्रजित शीघ्रगति से सवनशाला (यज्ञ-शाला) में गया। उपयुक्त होम-साधन-ततियों (होम के लिए सामग्री-समूहों) को क्रम से राक्षसों के लाने पर, (उन्हें) लेकर मुख्यमार्ग से शोभा से चल पड़ा। रक्तवर्ण का शिरोवेष्टन (पगड़ी), उभयवस्त्र (अधोवस्त्र (धोती) और उत्तरीय) तथा मालाएँ पहनकर, वह्नि के लिए योग्य परिस्तरण (होमकुंड के चारों ओर रखे जानेवाले कुश) के रूप में उरु (बड़े-बड़े) तोमर, उग्रशस्त्र (और) असम शर रखकर, घने कालेवर्ण के घन (बड़े) मेषों (बकरों) के कण्ठरक्त (तथा) क्रम से समिधाओं से होम करने लगा, तब निर्धूम हो बलते हुए, ऊँचे बनकर, शोभा से विजय की सूचना देने में समर्थ दक्षिणाग्नि की भ्रमणशील शिखाओं से युक्त हो अनल ने आहुतियाँ ग्रहण की। तब निष्ठा के साथ उस इन्द्रजित ने, ।। २४२० ।।

युक्तक्रमंबुन होम मॊप्पार। भक्तितो नॊनरिंचि पावकुवलन
नालुगु हयमुलु नानास्त्रशस्त्र। जालंबु गलुगु कांचनमयरथमु
बडसॆ; नारथमॆक्कि ब्रह्मांड मगल। गडुवडि नाॅचि युत्कटकोपुडगुचु
निंद्रादिदेवतलॆल्ल भीतिल्ल। निंद्रजित्तुडु मरि येपुदीपिंचि
चॆच्चॆर दानवसेनलतोड। वच्चि यदृश्युडै वडि दिविनुंडि
मसलक रामलक्ष्मणुलपै नेसॆ। ससदृशकांडंबु लंदंद पॆक्कु;
ला रामलक्ष्मणु लाकसंबुनकु। भूरिशरंबुलु पोवनेयुटयु
नंदॊक्कटैननु नायिंद्रजित्तु। नंदु दाकमि मरि यादैत्यवरुडु
तनु गानराकुंड दर्पंबु मॆरसि। विनुवीथि गडु बॆक्कुविधमुल दिरिगि
कविसि यंतट बोक घनुलैन कपुल। नवलील दुनुमाडि यंदंद पॆर्चि २४३०
नलुदॆस नेयुचो नगचरुलकुनु।नलिनाप्तकुलुनकु नलिनाप्तकिरण
निभमुलै पडतॆंचु निष्ठुरास्त्रमुलु। नभमुनयंदु गानगवच्चु गानि
यरदंबु स्रोतयु नाघोटकमुल। खुरमुल स्रोतयु गुणमु स्रोतयुनु
सारथिपलुकु कशाघातरवमु। ला रथिकुनि यार्पु लतनि मूर्तियुनु
नारथंबुनु दानि यधिकध्वजंबु। लीरुपु लनि कन नॆन्नंगबडव;

—युक्तक्रम से शोभित भक्ति के साथ होम कर (हवन-कार्य पूरा कर), पावक (अग्नि) द्वारा चार हय (अश्व), नाना-अस्त्र-शस्त्र-जाल (समूह) से युक्त कांचनमय रथ को प्राप्त किया। उस रथ पर सवार होकर ब्रह्मांड को विदीर्ण करनेवाला सिंहनाद कर, उत्कट क़ोपवाला होता हुआ, इन्द्र आदि समस्त देवताओं के भयभीत होने पर, इन्द्रजित और अधिक पराक्रम से युक्त हो, झट दानव सेनाओं के साथ आकर, अदृश्य रूप से, आकाश से जहाँ-तहाँ से लगातार असदृश बाण रामलक्ष्मण पर चलाए। रामलक्ष्मणों ने आकाश में भूरि-शर चलाए किन्तु उनमें से एक भी उस इन्द्रजित को नहीं लगा। फिर वह दैत्यवर (इन्द्रजित) ने स्वयं दिखाई न पड़ते हुए, बड़े दर्प के साथ, विनुवीथि में अनेक प्रकार से संचरण कर, व्याप्त हो, महान् कपियों का अनायास ही संहार किया। जहाँ-तहाँ रहकर क्रम से, ॥ २४३० ॥

—चारों दिशाओं में (बाण) फेंकने लगा। नगचरों को, (तथा) नलिनाप्तकुल वाले को नलिनाप्त (सूर्य)-किरण सम हो आनेवाले निष्ठुर अस्त्र नभ में तो दीख रहे थे, किन्तु रथ की ध्वनि, उन घोटकों के खुरों की ध्वनि, गुण (ज्या) की ध्वनि, सारथी के वचन, कशाघात का रव, रथिक के सिंहनाद, उसकी मूर्ति (रूप), उसका रथ, उसका महत्तर ध्वज—ये सभी रूप बिलकुल दिखाई

याविधमासेन कप्पुडु दोचॆं; । नावालि दुनुमाडि यसमुन बेर्चु
रामुनि मीद सुरप्रभुं डलिगि । रामणीयकमहोग्रप्रकांडमुल
नातनूजुनि गूलिचनाडंचु बेर्चि । यीतॆऱंगुन मिचि येसॆनो यनग;
नप्पुडु कपिसेनयंगंबु लॆल्ल । जिप्पलु चिद्रुपलै चॆंदरंग जूचि
जनलोकपतितोड सौमित्रि पलिकॆः । विनुवीथि डागिन वीनिचे निट्लु २४४०

मनुजेंद्र ! चूचिते मर्कटोत्तमुलु । मनकॊऱकै वच्चि मडियुचुन्नारु;
विस्मयंबुग निंक वीनि वंशंबु । भस्मंबु सेयुदु ब्रह्मास्त्र मेसि"
यनवुडु रघरामु डनुजुतो ननियॆ; । "जनुनॆ यॊक्करुनिकै चंप बल्वुरनु?
ऎऱुगवे रणधर्म ! मॆंदु राजुलक । वॆऱचि डागिनवारि वॆन्निच्चुवारि
मुकुळितहस्तुलै म्रॊक्कॆडुवारि । जकितात्मुलै वच्चि शरणन्नवारि
गदनंबुलो बूरि गऱचिनवारि । बिदप नायुधमुलु प्रिदिलिनवारि
निद्रवोयिनवारि निर्जिप दगुनॆ । भद्रंबु गोरु ना परमपुण्युलकु ?
नधिकमायल बेर्चु नायिंद्रजित्तु । वधियिंपनोपॆडु वानरोत्तमुल
गामचारुल बंप गालंबु गानि । सौमित्रि ! ब्रह्मास्त्रसमयंबु गादु"
अनि नलु नंगदु ननिलनंदनुनि । घनुनि गवाक्षुनि गंधमादनुनि २४५०

नहीं पड़ रहे थे। तब यह विधान उस (कपि) सेना को ऐसा दीखा मानों उस वालि का संहार कर दर्प से शोभित राम पर सुरप्रभु (इन्द्र) क्रुद्ध होकर, रमणीय महोग्र प्रकांडों से मेरे तनूज को गिराया, ऐसा सोचकर इस प्रकार अतिशयता से (इन्द्र) बाण-वर्षा कर रहा हो। तब कपिसेना के (सैनिकों के) अंग खण्ड-खण्ड होकर बिखर पड़े। इसे देख जनलोकपति (राम) से सौमित्र ने कहा—'विनुवीथि में छिपे इस (राक्षस) से इस प्रकार, ॥ २४४० ॥

—हे मनुजेन्द्र ! देखा, हमारे लिए आए हुए मर्कटोत्तम मर रहे हैं। अब ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर, आश्चर्यप्रद रूप से, इसके वंश का नाश कर दूंगा।' ऐसा कहने पर रघुराम ने अनुज से कहा—'एक के लिए अनेकों को मारना कहाँ उचित है ? रणधर्म को नहीं जानते हो ? भीत हो छिपे हुए लोगों को, पीठ दिखानेवालों को, मुकुलित करों से प्रणाम करनेवालों को, चकितात्मा हो शरण में आए लोगों को, कदन (युद्ध) में फूस खानेवालों को (पराजितों को), फिर शिथिल बने आयुध वालों को, सोनेवालों को निर्जित करना (मार डालना) कल्याणकामी (तथा) पुण्यात्मा राजाओं के लिए क्या उचित है ? अधिक मायाओं से विलसित उस इन्द्रजित का वध करने में समर्थ वानरोत्तमों को, कामचारियों को भेजने के लिए (उचित)

भरितविक्रमधामु बनसु गेसरिनि । शरभुनि ऋषभुनि सन्नाथु गजुनि
मऱि गवयुनि नीलु मैंदुनि द्विविदु । नऱिमुऱि गोपिंचि यसुरुपै बनिचे;
नट्टु राघवुडु वंप नगचराधिपुलु । पटुगति मिन्नुलपै कप्पु डेगसि
तरुशैलमुलु वैव दर्पिंचि क्रूर । शरपरंपरल राक्षसराजसुतुडु
वारि नोंप्पिंचिन वार लादैत्यु । नेरूपमुन गान केप्पटिपगिदि
वच्चिरि रयमुन वसुमतीस्थलिकि । नच्चेरुवोंदि यिंद्रादुलु सूड;
विलयमेघश्याम विपुलगात्रंबु । नलुक गैंजायल नडरु नेत्रमुलु
गल घोररूपंबु गानराकुंड । मैलगुचु बलिकें नम्मेघनादुंडु:

रामलक्ष्मणुलु नागपाशमुलचे गट्टुवडुट

"नरनाथसुतुलार ! नन्नु गय्यमुन । नरुदु लक्षिप सहस्त्राक्षुनकुनु;
मीरेंतवा;" रनि मिन्नेल्ल नद्रुव । घोरम्मुगा धनुर्गुणमु म्रोयिंच २४६०
यशनिसंकाशंबुलगु सायकमुलु । दशरथात्मजुलपै दऱचुगा बऱपि

समय है। सौमित्र ! यह ब्रह्मास्त्र के लिए (अवसर) नहीं है।' (ऐसा) कहकर नल, अंगद, अनिलनन्दन, घन, गवाक्ष, गन्धमादन, ।।२४५०।।

—भरित-विक्रम-धाम पनस, केसरी, शरभ, ऋषभ, सन्नाथगज, और गवय, नील, मैंद, द्विविद (आदि) को झट क्रुद्ध हो (राम ने) असुर पर भेजा। ऐसा राघव के भेजने पर, तब नगचराधियों ने पटुगति से आकाश में उड़कर, तरुशैल फेंके। दर्प से राक्षसराजसुत ने शर-परम्पराओं से उन्हें खूब पीड़ित किया। वे उस दैत्य के रूप को न देख सक, यथापूर्व-रीति से शीघ्रगति से वसुधा पर आ गए। इसे इन्द्र-आदि (देवता) आश्चर्य से देखते रह गए। विलय (प्रलयकाल के) श्याम-मेघ के सम विपुल गात्र (शरीर) तथा क्रोध से (उत्पन्न) अरुणिमा से शोभित नेत्रों से युक्त घोर रूप को (अन्यों की) दृष्टि से बचाकर विचरण करते हुए उस मेघनाद ने कहा—

रामलक्ष्मण का नागपाशों में बद्ध हो जाना

'हे नरनाथसुतो ! युद्ध में मेरा सामना कर सकना या देख पाना सहस्त्राक्ष के लिए भी असम्भव है। तुम किस गिनती के हो ?' (ऐसा) कह समस्त आकाश को फोड़ देनेवाले रूप में, अति घोर रूप में धनुष की ज्या का टंकार कर, ।। २४६० ।।

—अशनि (बिजली) के संकाश (समान) बाणों को लगातार दशरथात्मजों पर सायक (बाण) चलाये और जहाँ-तहाँ मर्म-स्थान छिन्न-भिन्न हो जाएँ

मऱियुनु नंदंद मर्मंबुलंदु । गरुलुच्चिपो बॅक्कुकांडंबु लेसि
यंतट बोवक यायिंद्रजित्तु । डंतकाकारुडै याग्रहंबुनन‌ु
बटुतरनिर्घातपात भीकरत । जटुलतरक्रूर सर्पबाणमुल
निनकुलेश्वरुलपै नेयग वारु । घनबाणमुल वानि खंडिंचि वैचि
वानिमीदिकि मऱि वरसायकमुलु । पोनेय वानिनि बॊंडिसेसि यसुर
वॆंडियु नंदंद वेगंबु मॆऱसि । दंडि शस्त्रावळि दरुचुगा बऱप
"निदॆ वच्चॆ बाणंबु लिदेयु" मनुचु । "नदॆ वच्चॆ बाणंबु लंदेयु" मनुचु
नेदॆस बाणंबु लेतेंचुचुंडु । नादॆस ब्रतिबाण मंदंद येय
"नुरगसमेतु लैयुंडुट मीकु । गरमॊप्प दॊल्लियु गल; दटुगान
२४७०
दरणिवंशजुलार ! तप्पक यिपुडु । नुरगसमेतुलै युंडु" डन् करणि
बंधुरंबुग नब्जबांधवकुलुल । बंधिंचॆ वॆस नागपाशसंततुल;
वारुनु नाब्रह्मवरमु मन्निंचि । तारु राक्षसुनिचे दद्दयु दूलि
यादिनारायणुनंशजुलैन । मेदिनीपतुलु निस्मॆयि गट्टुवडिरि;
"नेडु रामुडु गाक निक्क मूहिंप । ना डितडे वामनस्वरूपंबु
नटु दाल्चि भूदान मडिगि याबलिनि । बटुक्रूतघ्नत बट्टिबंधिंचॆ; नट्टि

इस प्रकार अनेक बाण चलाये। उतने से न जाने देकर (सन्तुष्ट न होकर) इन्द्रजित ने अंतक (यम) का आकारवाला होता हुआ, आग्रह (क्रोध) से पटुतर-निर्घातपात (वज्रपात) की भयंकरता से युक्त चटुलतर क्रूर सर्प-बाण इनकुलेश्वरों पर चलाए। उन्होंने भी घन-बाणों से उनका खंडन कर, उसपर और भी श्रेष्ठ सायक चलाए। उन्हें चूर-चूर कर असुर ने फिर जहाँ-तहाँ शीघ्रता से प्रकाशित होकर, अधिक शस्त्र-समूह को अनवरत चलाया। 'ये ही बाण आए, इधर बाण चलाओ', 'वे ही बाण आए, उधर बाण चलाओ' कहते हुए जिस ओर से (मेघनाद के) बाण आते, उस ओर प्रति-बाण चलाने लगे। 'उरग (सर्प) समेत होकर रहना तुमको पूर्व में भी अधिक शोभा देता था। ऐसा होने से, ।। २४७० ।।

—हे तरणि (सूर्य) वंशजो! अब अवश्य ही उरगसमेत होकर रहो।' मानों इस प्रकार कहते अब्ज-बांधव-(सूर्य) कुल वालों को बन्धुरता से झट नागपाश समूह से बाँध दिया। उन्होंने भी उस ब्रह्मा के वर को मानकर, स्वयं उस राक्षस के हाथ विचलित होकर, आदि-नारायण के अंश वाले वे मेदिनीपति (राजा) इस प्रकार बंधित हुए।' आज वास्तव में उस समय में वामनस्वरूप को धारणकर भूमिदान माँगकर, उस बलि को पटुकृतघ्नता से पकड़ बाँध देने का फल राम को प्राप्त होकर क्यों नहीं रहेगा? नहीं

फलमु रामुन किट्लु प्राप्तंबु गाक । पौलयुने मनुजुडै पुट्टि युंडगनु"
नलि लोकमुन बुट्टु नपवादमुनकु । दनु सृजिचिनमाय दागट्टवडियें;
बन्नुगा मायाविबंधंवुवलन । दन्नु दामऱचिन धरणीशु नपुडु
कनुगौनि दिविजुलु गडु विन्ननैरि; । वनचरोत्तमुलैल्ल वडि
खिन्नुलैरि; २४८०
खिन्नुडै युन्न सुग्रीवुन कपुडु । सन्नुतमति विभीषणुडिट्टुलनियें:
"निदि येल चिंतिप! नैट्टि वारलकु । नौदववे यापद लौक्कौक्कवेळ ?
निनकुलेश्वरुलकु नेमय्यें निपुडु । घननागपाशमुल् गट्टिनंतटनें"
यनि पल्कि यतडु मायादृष्टि जूचि । कनियें रावणसुतु गगनमार्गमुन;
गनि नीरु मंत्रिंचि कन्नुलु दुडिचि । वनजाप्तसुतुनकु वलनौप्प जूपें;
नारविजुंडुनु नाविभीषणुनि । चारुमहामंत्रशक्तिचे जेसि
यायिंद्रजित्तुनि नप्पुडु कांचि । यायतोन्नतमगु नचलंबु बॆऱिकि
यॆगसि वेयग द्रुंचि यिंद्रजित्तुंडु । मौगि दिरिगिंचें नम्मुलवॆल्लि
वऱपि;
मिनजुंडु तिरिगिन निनजुनि डाक । गनि मुन्नु वॆऱचु राक्षसुलु मोदिप
नप्पुडु विजयुडै यायिंद्रजित्तु । मुप्पिरिगौनु मुदंबुन दन्नु गौलुचु २४९०

तो मनुष्य होकर जनमकर, (राम) ऐसा क्यों मरेगा ?' इस प्रकार लोक में उत्पन्न अपवाद को स्थान देकर स्वयं अपने द्वारा सृजन की गई माया में स्वयं बँध गया। शोभा से मायाविबंधन में स्वयं अपने आपको भूले हुए धरणीश को देख तब दिविज अति उदास हो गए। समस्त वनचरोत्तम खिन्न हो गए ॥ २४८० ॥

खिन्न बने हुए सुग्रीव से तब सन्नुतमति वाले विभीषण ने यों कहा— 'यह चिंता करना क्यों ? चाहे कैसा भी व्यक्ति क्यों न हो, किसी-किसी समय में विपत्तियाँ क्यों नहीं आएँगी ? घन नागपाशों से आबद्ध कर देने पर इनकुलेश्वरों का अब क्या हुआ ?' ऐसा कहकर, उसने मायादृष्टि से रावण-सुत को गगनमार्ग में देखा। देखकर जल को मंत्रित कर, आँख पोंछकर वनजाप्तसुत को शोभा से दिखाया। रविज ने भी उस विभीषण की चारु-महा-मन्त्रशक्ति के कारण उस इन्द्रजित को तब देख, आयत (विशाल) तथा उन्नत अचल को उखाड़कर, उछलकर फेंक दिया। उसे काटकर बाणवर्षा कर उसे फिर लौटाया। उससे इनज (सुग्रीव) ने पीठ दिखाई तो इनज के विधान को देख, इतःपूर्व भीत होनेवाले राक्षस मुदित हुए। तब विजयी हो इन्द्रजित ने अत्यधिक मोद से अपनी सेवाएँ करनेवाले ॥ २४९० ॥

वारुनु दानुनु वडि लंक करिगि । यारावणुनि गांचि यप्पुडिट्लनियें:
"जंपिति गपुलनु; सर्पबाणमुल । गंपिप जेसितिक्ष्वाकुवल्लभुल"
ननि यॉप्प जॅप्पिन नंतरंगमुन । दनयुनि चेतकेंतयु संतसिचि
रावणुडप्पुडु रयमुन द्रिजट । रांविचि यनियें: "धरापुत्रि नन्नु
नॉल्लदु रामुनि नॉडगूडुकॉनुट । युल्लंबुलो नम्मियुंडुट जेसि;
ने डिंद्रजित्तुचे नेलकु नॉरगि । पोडिमि चॅडिन या भूपालुनिकि
सीत दोड्कॉनिपोयि चॅच्चॅर जूपु । सीतरि बुष्पकमॅक्किंचि नीवु;
अंत रामुनिमीदि यासलु दक्कि । चिंतिपकिट नन्नु जेकॉनु सीत"
यनवुडु रावणुनानति द्रिजट । दनुजांगनलु दानु धरणीतनूज
नॅनय बुष्पकमुपै नॅक्किंचि वेग । चनुदॅंचि संगरस्थलि बडियुन्न
२५००

नागपाशबद्धुलैयुन्न रामलक्ष्मणुलजूचि सीत शोकिंचुट

कपुलनु रामलक्ष्मणुलनु जूप । जपलाक्षियुनु नट्टिचंदंबु सूचि
कन्नीरुधारलैं क्रम्म नंदंद । विन्ननै कडु दूलि विलपिपदॉडगें:
"गटकटा! राम! नीकार्मुकविद्य । यॅटु पोयॆ? नीयंदॆ येपारियुंडु

—लोगों के साथ स्वयं शीघ्रता से लंका में जाकर उस रावण को देख तब यों बोला—'कपियों को मार डाला है, सर्पबाणों से इक्ष्वाकु-वल्लभों (राजाओं) को कम्पित कर दिया है।' ऐसा शोभा से कहने पर, अन्तरंग में तनय (पुत्र) के कार्य पर अधिक प्रसन्न हो, रावण ने तब झट त्रिजटा को बुलवाकर, कहा—'मन से राम के मिलन पर विश्वास रखे रहने के कारण, धरापुत्री (सीता) मुझे नहीं चाहती। आज इन्द्रजित के हाथ, धरती पर गिरकर, शोभाहीन बने उस भूपालक (राजाराम) के पास सीता को पुष्पक पर आरूढ़ कराकर, ले जाकर, शीघ्र दिखा दो। तब (उस मृत बने राम को देखकर) राम पर आशाएँ छोड़, चिन्ता किए बिना अब सीता मुझे ग्रहण करेगी।' ऐसा कहने पर, रावण के आदेश पर त्रिजटा दनुज-अंगनाओं के साथ स्वयं धरणीतनूजा को शोभा से पुष्पक पर आरूढ़ कराकर, शीघ्र आकर, संगरस्थल पर पड़े हुए ॥ २५०० ॥

नागपाशबद्ध बने हुए रामलक्ष्मण को देख सीता का दुखी होना

—कपियों (तथा) रामलक्ष्मण को दिखाया। चपलाक्षी (चंचल आँखों वाली सीता) उस विधान को देख, अश्रुओं की धाराओं के उमड़ने पर, जहाँ-तहाँ विवर्ण होकर, अधिक विचलित हो, विलाप करने लगी—'हाय हाय! हे राम! तुम्हारी कार्मुक-विद्या (धनुर्विद्या) कहाँ चली गई?

हरिहरादुलनैन नदलिचु नीदु । शरमुल शक्तियु समसेने नेडु ?
जामदग्न्युनिनैन सरकुगा गोनवु । नीमेयि लावुन नीभुवि नीवु !
सकलमुनींद्रुलु सर्पमुल् नीकु । ब्रकटितशय्यगा बलुकुचुंडुदुरु;
नट्टिसर्पंबुले यवनीश ! निन्नु । गट्टंग द्राडुलै कविसेनु नेडु !
लाक्षणिकुलु नन्नु लक्षिचि "सकल । लक्षणंबुलु मेन ललितंबुलरय
विलसित रेखारबिंदबुलंघ्रि । तलमुन गलुगुट दरळायताक्षि !
पट्टाभिषेकंबु पतितोड़ गल्गु । बुट्टुदु रिपार बुत्रुलु नीकु ; २५१०
नैदुवयै युंदु" वनु माटलेल्ल । नादित्यकुलज ! नेडवि बोंकुलय्ये;
"रोलंबकुलनीलरुचिशिरोजमुलु । ब्राल जेन्नारेडु; सन्नंबु नडुमु;
गदिय वोंडोंटितो गरिवंकबोमलु;। कदिसियुन्नवि वज्रकांतिदंतमुलु;
तोंगलिचुकयु लेक तोरमुल् गाक । मिगुल वट्रुवलुनै मिचु पेंदोडलु;
करमुलु निटलंबु गन्नुलु मोमु । जरणमुल् रुचिरलक्षणसमेतमुलु;
वरकांति नुनुपारि वट्रुव लगुचु । सरिनोप्पु नखमुलु संगतांगुळुलु;
एचि वृत्ताकृति नेनसि क्रिक्किरिसि । नीचाग्रमैनदि नीकुचद्वयमु;

तुम्हीं में शोभित रहनेवाली (तथा) हरिहर आदियों को भी भर्त्सना करनेवाली तुम्हारी शर-संचालन-शक्ति आज नष्ट हो गई क्या ? इस पृथ्वी में अपने शरीर-बल के कारण तुम जामदग्न्य (परशुराम) की भी परवाह नहीं करते हो । सकल मुनींद्र प्रकट रूप से कहते रहते हैं कि सर्प तुम्हारे लिए शय्या हैं । हे अवनीश ! वे सर्प ही तुम्हारे लिए रस्से बन आज आ जुटे न ! लाक्षणिकों (सामुद्रिकों) ने मुझे देखकर (कहा था)—'ललितरूप से शरीर पर समस्त लक्षणों के होने पर, अंघ्रितल (चरणतल) में अरविन्द-रेखाओं के विलसित होने पर हे तरलायताक्षी (चंचल और विशाल नेत्र वाली) ! पति के साथ तुम्हारा पट्टाभिषेक (राजतिलक) होगा । शोभा से पुत्रों का जन्म होगा ।। २५१० ।।

—(सदा) सुहागिन होकर रहोगी ।' हे आदित्यकुलज ! वे सभी बातें आज झूठी हो गईं न ! रोलंब-कुल (भ्रमर-समूह) की नील-रुचि (-कांति) से युक्त शिरोज (केश) अधिक शोभायुक्त हैं । कमर पतली है, काली और बंकिम भौंहें (एक दूसरे से) मिलती नहीं हैं; वज्रकांति से युक्त दाँतावलि (एक दूसरे से) जुड़ी हुई हैं, विकृतिहीन, मंजुल वर्तुलाकार वाली बड़ी-बड़ी जाँघें शोभा से युक्त हैं; कर, निटल (ललाट), नेत्र, मुख, चरण रुचिर-लक्षण-समेत हैं । वरकांति से स्निग्ध तथा वर्तुल बनकर उंगलियों के साथ नख शोभायमान हैं, घने (पीन) (तथा) वर्तुल आकार से विवर्धित बन, तुम्हारा कुचद्वय नीच (झुके हुए)-अग्र भाग से युक्त है । उदर के पार्श्व

उरुतरस्निग्धंबु लुदरपार्श्वमुलु; । गरमॊप्पुचुन्नदि गंभीरनाभि;
कमनीयतरदिव्य कांति जॆन्नॊंदि । रमणीयमैनदि रमणि! नीमेनु;
सौभाग्यमुन नीकु सरियॆव्व” रनिरि; । ना भाग्य मिट्लय्यॆ नरनाथ!
नेडु; २५२०
“ललन लीपदियेनु लक्षणंबुलनु । गलवारलत्यंत कल्याणवतुलु”
अनि चॆप्पु नार्योक्तुलवियॆल्ल दप्पॆ; ।मनुजेश! नापुण्यमहिम गाकिदियु;
“गॆंदामरलभंगि गॆंजाय मॆऱसि । यंदंबुलैयोप्पु नऱचेतुलॆन्न;
बल्लवारुणकांति बरगु पादाग्र । पल्लवंबुलु समस्पर्शंबुलरय;
नडुमॊप्पु नॆलुगॊप्पु नगुमॊगंबॊप्पु । गडुनॊप्पु निवि कन्यकालक्षणमुलु
परिकिंप” ननि पल्कु पलुकुलु दप्पॆ; । नरनाथ! चूचिते नानोमुफलमु!
तलपुलु दैवंबु तलकूडनीक । वॆलयग निट्टु संभविंचॆने नाकु?
धरणीश! ननु जनस्थानंबुनंदु । नुरुवडि गॊनिपोवु नुग्रदानवुनि
बॊरिबॊरि वॆदकि नापोयिनजाड । करमॊप्प दॆलिसि या कपिसेन गूडि
जलनिधि बंधिचि चनुदॆंचि पिदप । बॊलुपेदि गोष्पदंबुन मुनिंगितिवॆ?
२५३०

भाग उरुतर-स्निग्ध हैं, गम्भीर नाभि अधिक शोभा दे रही है। तुम्हारा शरीर हे रमणी! कमनीयतर दिव्य-कांति से शोभित हो रमणीय है। उन्होंने कहा कि सौभाग्य में तुम्हारे समान (और) कौन हैं। हे नरनाथ! मेरा भाग्य आज ऐसा हो गया न! ॥ २५२० ॥

—‘इन पन्द्रह लक्षणों से युक्त ललनाएँ अत्यन्त कल्याणवती होती हैं’ ऐसा कहनेवाली समस्त आर्योक्तियाँ भी झूठी हुईं। हे मनुजेश! यह तो मेरी पुण्य-महिमा ही होगी। (मेरा दुर्भाग्य है।) ‘लाल कमल के समान, लालिमा से प्रकाशित हो, सुन्दर बनी शोभित हथेलियाँ, पल्लव-अरुण कांति से विराजमान पादाग्र-पल्लव (चरणतल) जो देखने पर समस्पर्श वाले हों (पृथ्वी को समरूप से स्पर्श करनेवाले हों), शोभित कमर, शोभा से युक्त कण्ठ-स्वर, शोभित प्रसन्न वदन —सोचने पर अधिक शोभा से युक्त ये कन्यका-लक्षण हैं।’ ऐसे सभी वचन झूठे हुए न? हे नरनाथ! देखा न मेरे व्रतों का फल! (मन के) विचारों के सफल न होने देकर भगवान ने मेरे प्रति ऐसा किया है न! हे धरणीश! मुझे जनस्थान से बरज़ोरी ले जानेवाले उग्रदानव को निरन्तर ढूँढकर, मेरे गए मार्ग को अच्छी तरह जानकर, कपिसेना के साथ मिलकर, जलनिधि को बाँधकर, (यहाँ) आकर, शोभा को खोकर (अब) गोष्पद (छोटा गड्ढा, पगार, गोपद) में डूब गए क्या? ॥ २५३० ॥

आरय नतिघोरमगु याम्यशरमु । वारुणबाणंबु वह्नि-सायकमु
नॆऱय ब्रह्मास्त्रंबु नॆऱि ब्रयोगिंप । मऱचितिवे ? नेडु मनुजलोकेश ?
पगवाडु मीदृष्टिपथमुन बडिन । दॆगि नेल बडुगाक! तिरिगि पोगलडॆ ?
यिदि दैवकृतमु गाकॆल्लचंदमुल । नॆंदुरंग शक्तुलॆ यॆवरैन निन्नु ?
मेघनादुडु मायमॆऱसि मिम्माजि । नीघोरशरमुल निटु कट्टॆ ननिन
गालंबु गडिमिमै गडव नॆव्वरिकि । बोलुने तलपोय ? भूलोकनाथ !
हा नाथ! हा वीर! हा रामचंद्र ! । ये नाकु शोकिंप; निट नीकु वगव;
नीकु ब्राणमुलिच्चि निर्मलुंडैन । काकुत्स्थमणिकि लक्ष्मणुनकु वगव;
मनसु गंदग नाकु मऱुगुचुनुन्न । जननिकि दु:खिंप; सततंबु नीकु
जित्तंबुलोपल जिंतिचुचुन्न । यत्त कौसल्यकै यडलॆद नधिप! २५४०
“ऎप्पुडु पदुनालुगेडुलु चनुनॊ ! । यॆप्पुडु वच्चुनो यिटु रामु” डनुचु
नीतॆऱंगुन नीकु नॆदुरुलु सूचु । नीतल्लियाशलु निलिचॆने नेडु ?
नीदिव्यशक्तियु नीबाहुबलमु । नीदुर्दमक्रम निपुणविक्रममु
नॆक्कड बोयॆनो ? येमंदु निक ? । नक्कटा ! विधि ! नीकु नलगॆने नेडु?
चॆलुवॊंद नेनु नोचिन नोयुलॆल्ल । फलियिंचॆ, नेमनि पलविंतु विधिकि”?

—विचार करने पर अतिघोर याम्यशर, वारुणबाण, वह्नि सायक, शोभित ब्रह्मास्त्र (आदि) का क्रम से प्रयोग करना क्या आज हे मनुजलोकेश ! भूल गए ? शत्रु यदि आपके दृष्टिपथ में आ जाए तो कटकर ज़मीन पर गिर न पड़ेगा ! (कहीं) बचकर जा सकता है ? (नहीं) यह तो दैवकृत है वरन् किसी प्रकार से तुम्हारा सामना करने में कोई समर्थ है ? मेघनाद ने माया से प्रकाशित होकर, आपको आजि (युद्ध) में इन घोर शरों से बाँध दिया। यह (इस बात को स्पष्ट करता है कि) साहस से भी काल (नियति) का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता है। हे भूलोकनाथ ! हा नाथ ! हा वीर ! हा रामचन्द्र ! मैं अपने लिए शोक नहीं करती, यहाँ तुम्हारे लिए दुखी नहीं होती, तुम्हारे लिए प्राण देकर निर्मल बने काकुत्स्थमणि लक्ष्मण के लिए दुखी नहीं होती, मन के विकल होने पर मेरे लिए तप्त होनेवाली (अपनी) जननी के लिए दुखी नहीं होती। (किन्तु) सतत ही तुम्हारे लिए चित्त में चिन्तित होनेवाली सास कौसल्या के लिए हे अधिप ! व्यथित होती हूँ ॥ २५४० ॥

‘कब चौदह वर्ष बीत जाएंगे, कब राम इस ओर आएगा’ ऐसा सोचते हुए तुम्हारे लिए प्रतीक्षा करनेवाली तुम्हारी माता की आशाएँ बनी रह सकीं ? (नहीं।) तुम्हारी दिव्यशक्ति, तुम्हारा बाहुबल, तुम्हारा दुर्दमनीय निपुण-विक्रम-क्रम कहाँ चले गए ? मैं अब क्या कहूँ ? हाय ! नियति !

त्रिजट सीत नूरडिंचुट

ननि प्रलापिंपंग ननियें नात्रिजट । जनकज नूरार्चि सदयचित्तयुन:
"रामुनकौक कीडु रादु; नीकेल । नीमेंयि शोकिंप निंदीवराक्षि !
यट्टिदयैन नीयगचरसेन । यिट्टेल पेंद्दयु नेंचि वर्तिंचु ?
नदें चूडुमा देवि ! यगचरेश्वरुलु । पदिलुलै नीविभु बलसियुन्नारु;
कादु पो, यीपुष्पकंबेल निलुचु । मेदिनीतनय ! यिम्मेदिनि बडक ?
२५५०
विधवलमोवनि विधि दीनियंदु । वृथयौनें, निक्कमै विलसिल्लुगाक !
कान रामुन कोंडु गादु चिंतिंप; । मानिनि ! नामाट मनसुन नम्मु;
लंकेशु जंपि यी लंक साधिंचि । पंकजानन ! निन्नु भानुवंशजुडु
नलि दोडुकौनिपोवु; नम्मु नामाट; । कलगकुमिंक नो कल्याणि! नीवु"
अनवुडु सीत "मायामस्तकंबु । ननुवुगावो" लनियात्मलो नम्मे;
सुंदरि त्रिजट यशोकवनंबु । नंदु ग्रम्मर देंच्चि यवनिज नुनिचें;

आज तुमने (राम को) क्षुब्ध कर दिया न ? शोभा से मेरे किए सभी व्रत (इस प्रकार) सफल हुए न ? अब किस मुँह से नियति को देख रोऊँ ?"

त्रिजटा का सीता को सान्त्वना देना

ऐसा प्रलाप (विलाप) करने पर त्रिजटा ने सदयचित्त से जनकजा को सान्त्वना देकर कहा—"हे इन्दीवराक्षी ! तुम्हें इस प्रकार शोक करना क्यों ? राम पर कोई विपत्ति नहीं आ सकती । यदि (राम पर कोई विपत्ति आई होती तो) यह ऐसा है तो यह अगचरसेना इस प्रकार अधिक विजृंभित होकर कैसे प्रवर्तित होती ? वही देखो देवी ! अगचरेश्वर सावधानी से तुम्हारे विभु को परिवेष्टित किए हुए हैं । ऐसा नहीं तो, इस मेदिनी (पृथ्वी) पर गिरे बिना यह पुष्पक (आकाश में) कैसे रहेगा ? ।। २५५० ।।

—विधवाओं को वहन न करनेवाली बात (पुष्पक के बारे में) क्या व्यर्थ होगी ? (नहीं होगी ।) तथ्य होकर रहेगी । अत: हे मानिनी ! सोचने पर राम के प्रति अन्यथा (कुशल के अतिरिक्त अन्य प्रकार) नहीं हो सकता । मेरी बात पर मन से विश्वास करो । हे पंकजानने ! लंकेश का वध कर, इस लंका को जीतकर भानुवंशज (राम) तुम्हें शोभा से साथ ले जाएगा । मेरी बात पर विश्वास करो । हे कल्याणी ! अब आगे व्यथित मत होना ।" ऐसा कहने पर सीता ने आत्मा (मन) में विश्वास किया कि "माया मस्तक (राम का) (राक्षसों की माया के) अनुकूल है ।" सुन्दरी त्रिजटा ने फिर से लाकर अवनिजा को अशोकवन में रख दिया ।

नंत नप्पुडु कपुलार्तुलै मिगुल । जितनौंदुचु दमु जेरि शोकिंप
मनुवंशतिलकुंडु मदि देलिवोंदि । तनकु जेरुवनुन्न तम्मुनि जूचि

रामुडु मूर्छ देरि लक्ष्मणुनिकै वापोवुट

"नातम्मु जूचिते नलिनाप्ततनय ! । यीतेरंगुन वोंदि यिट्लुन्नवाडु;
सीत गोल्पडि सीतचेर माम्पलेक । यीतनि गोल्पोवुटिट्टु संभविंचे;
२५६०
सौमित्रि गोल्पडि जनकज नाकु । नेमिटि ? किटमीद नेल नाब्रतुकु ?
यत्नंबु सेसिन नवनिज बोलु । पत्नि नौंडौकचोट बडयंग वच्चु;
गलरु कांतलु; सुतुल् गलरु; बांधवुलु । गलरुगा; कैंदुनु गलरे सोदरुलु ?
तम्मुडम्मात्रमे तलपोसि चूड; । निम्मुल ननु गोल्चु निम्महाभुजुडु;
अरय गौसल्यकु नासुमित्रकुनु । सरिय का वर्तिचु सद्भक्ति तोड;
दग लक्ष्मणुनिकंटे दयतोड नन्नु । मिगुल मन्निंचु सुमित्र; नावलन
वात्सल्यमॆप्पुडु वदल; दापुत्र । वत्सलयगु तल्लि वगबेट्टवलसे !
बुरि कयोध्यकु नेनु बोयितिनेनि । भरतशत्रुघ्नुलु भ्रातृवत्सलुलु

तब कपिओं के आर्त हो, अधिक चिंतित होते हुए, अपने पास आकर शोक करने पर मनुवंशतिलक (राम) मन से होश में आकर, अपने पास पड़े हुए अनुज को देख, (बोले)—

राम का होश में आकर लक्ष्मण के लिए विलाप करना

—"हे नलिनाप्ततनय (सुग्रीव) ! देखा है न मेरे अनुज को जो इस विधि को प्राप्त हो ऐसा पड़ा हुआ है। सीता को खोकर, सीता को क़ैद से छुड़ा न सक, इसको भी खो देना सम्भव (सम्प्राप्त) हुआ न ! ॥ २५६० ॥ —सौमित्र को खोकर अब मुझे जनकजा क्यों (सीता की क्या आवश्यकता है) ? अब मेरा जीना ही किसलिए ? यत्न करने पर, अवनिजा के समान पत्नी को किसी और जगह प्राप्त कर सकते हैं। कान्ताएं (प्राप्त की जा सकती) हैं, सुत (हो सकते) हैं, बांधव (रिश्तेदार) (हो सकते) हैं, कहीं सहोदर मिल सकते हैं ? सोच देखने पर मनोज्ञता से मेरी सेवा करनेवाला यह महाभुज (वाला) मात्र अनुज ही है ? (बढ़कर है।) विचार करने पर कौशल्या के प्रति, सुमित्रा के समान ही, सद्भक्तियुत हो आचरण करता है। लक्ष्मण की अपेक्षा मुझे अधिक मानती है सुमित्रा। मेरे प्रति वात्सल्य भाव को कभी नहीं छोड़ती है। (ऐसी) उस पुत्र-वत्सल माता को शोकाकुल करना पड़ा न ! मैं यदि पुरी (अयोध्या) को जाऊँ तो भ्रातृ-वत्सल भरत-शत्रुघ्न पूछें कि 'लक्ष्मण कहाँ फँस गया है ?

"अँट चिक्कॆ लक्ष्मणुं ? डॆल रा ?" डनिन । नट नॆमि चॆप्पुदु नकट ! तम्मुलकु ?
"वनटमै नीवॊंटि वच्चुट चूचि । मनमुलु गलगॆंडु माकु नो तनय ! २५७०
सौमित्रितो नेल चनुदेर" वनिन । नेमनि युत्तरंबित्तु दल्लुलकु ?
नेमनि यूरार्तु नीमोमुतोड ? । नेमनि यट्टुपोदु नीमेनितोड ?
ब्रालेयशैलंबु वगिलिन, निनुडु । नेल गूलिन, नीरु निश्चलंबैन,
वनधुलिंकिन, गालि वर्तिपकुन्न, । ननलुंडु कडु जल्लनैयुन्ननैन
नामाट गडवडु; नाकु नप्रियमु । लेमाटलुनु नाडडॆन्नडु नीत;
डितनि चित्तंबु नायॆड नॊक्कचंद; । मितनि बोलॆडि तम्युडॆंदैन गलडॆ ?
यितडु नाप्राणंबु; लितडु नाबंधु; । डितनि नॊक्कनि बुच्चि ये नॊंटिनुंड;
नित डॆंदु बोयिन ने नंदु बोदु; । नितनि तोडिदॆलोक; मीलोक मॊल्ल;
जनुदॆंचॆ ना तोड सौमित्रि नाडु; । चनियॆंद नें नेडु सौमित्रितोड;
हितबुद्धि गार्यंबु लॆडपक सेसि; । ततुलविक्रमशालि; ववि नाकु दक्कॆ २५८०

क्यों नहीं आया है ?' तो हाय, अनुजों को क्या जवाब दूँगा ? 'दुखी होते तुम्हारा अकेले ही वापिस आना देख हे तनय ! हमारे मन व्यथित हो रहे हैं, ।। २५७० ।।

—सौमित्र के साथ क्यों नहीं आए हो ?' ऐसा माताएँ पूछें तो उन्हें क्या जवाब दूँ ? यह मुख लेकर कैसे उन्हें सान्त्वना दूँ ? इस शरीर को लेकर उस ओर (अयोध्या में) कैसे जाऊँ ? प्रालेय शैल (हिमपर्वत) फूट जाए, सूर्य पृथ्वी पर गिर जाए, जल निश्चल हो जाए, वनधियाँ सूख जाएँ, पवन अचंचल बनकर रह जाए, अनल अधिक शीतल बना रह जाए, तो भी (लक्ष्मण) मेरी बात का उल्लंघन नहीं करता । यह मुझे अप्रिय लगनेवाली बातें कभी नहीं कहता है । इसका चित्त मेरे प्रति सदा एकरस रहता है । इसके समान अनुज और कहीं है ? (नहीं है ।) यह मेरा प्राण है, यह मेरा बंधु है, इसे अकेले भेजकर, मैं अकेले नहीं रह सकता । यह जहाँ जाएगा, मैं वहाँ जाऊँगा । इसके साथ ही मेरे लिए लोक है । मैं इस संसार को नहीं चाहता । उस दिन सौमित्र मेरे साथ आया था, आज मैं सौमित्र के साथ जाऊँगा । हे तरुचराधिप ! हितबुद्धि से, अविलम्ब तुमने कार्य किए थे । तुम अतुल विक्रमशाली हो । वे कार्य मुझे संप्राप्त हुए ।। २५८० ।।

दरुचराधिप ! वालितनयु दोड्कौनुचु । गिरिचरसेनतो गिष्किधकरुगु;
मे लक्ष्मणुनितोड नेगिनपिदप । बौलस्त्यजुडु मिम्मु बाधिपगलडु;
जयशालि यगुचुन्न सौमित्रिलेनि । जयमु ना कंधुनि चंद्रोदयंबु;
मद्भक्तुडै पूनि मारुतपुत्रु । डद्भुतकार्यंबुलवि पेक्कु सेसे;
जलनिधि लंघिंचि जनकज गांचि । कलन बेक्कंड्रु राक्षसुल मर्दिंचे;
नी यंगदुंडुनु नी सुषेणुंडु । धीयुतुलैन यी द्विवद मैंदुलुनु
नी गवयुंडुनु नी गवाक्षुंडु । नी गजुंडुनु शक्ति नेनयु नीलुंडु
मेऱयु संपातियु मेटि केसरियु । मऱियु दक्किन वीरमर्कटोत्तमुलु
नाकौऱकै वच्चि नलिनाप्ततनय !। चेकौनि लावुलु सेसि रंदऱुनु;
निक्काल मिक्कड निब्भंगि मिम्मु । द्रेक्कौन्न विधि दाट दीरदेव्वरिकि;
२५९०

रणभूमि बलुवुर राक्षसपतुलु । दृणलील बौलियिंचि तीव्रबाणमुल
बगतुचे निब्भंगि बडि लोचनमुलु । मोगियुचु भूरजंबुन ब्रुंगिनाडु !
वरतल्पमुन नुंडुवाडु नेडकट ! । शरतल्पमुन रणस्थलि नुन्नवाडु!
संकीर्ण रविकुल जलधिपोंगडचि । क्रुंकेने लक्ष्मणकुवलयप्रियुडु ?”
अनुचु विलापिंप नखिलवानरुलु । मनमुल शोकाब्धिमग्नुलै; रंत

—वालितनय को साथ लेकर, गिरिचरसेना के साथ किष्किन्धा को जाओ। मेरे लक्ष्मण के साथ चल बसने के बाद पौलस्त्यज (रावण) तुम्हें पीड़ित करेगा। जयशाली सौमित्र न हो तो मेरे लिए विजय अन्धे के लिए चन्द्रोदय (के समान) है। मद्भक्त हो, लगकर, मारुतपुत्र ने अनेक अद्भुत कार्य किए हैं। जलनिधि को लाँघकर, जनकजा को देख, युद्ध में कई शत्रुओं का मर्दन कर दिया। यह अंगद, यह सुषेण, धीयुत ये द्विविद, मैंद, यह गवय, यह गवाक्ष, यह गज, शक्ति से विलसित नील, प्रकाशमान सम्पाति, श्रेष्ठ केसरी, और भी शेष वीर मर्कटोत्तम मेरे लिए आकर हे नलिनाप्ततनय ! जान-बूझकर सभी ने समर्थ कार्य किए हैं। इस समय, यहाँ इस प्रकार हम पर आए विधि का उल्लंघन कैसे किया जा सकता है ? ॥ २५९० ॥

—रणभूमि में अनेक राक्षसपतियों को, तीव्र बाणों से तृण के समान मारकर, शत्रु के हाथ इस प्रकार गिरकर, आँखें मूँदकर, भूरज (धूल) में लोट रहा है। वरतल्प में रहनेवाला, हाय, आज रणस्थल में शरतल्प पर पड़ा हुआ है। संकीर्ण-रविकुल-जलधि की ज्वार को शान्त कर, लक्ष्मण-रूपी कुवलयप्रिय (चन्द्र) अस्त हो गया न ?” ऐसा कहते विलाप करने पर समस्त वानर मन से शोकाब्धि में मग्न हो गए। तब,

विभीषणांगदुलु वानरुलकु धर्यमुगोलुपुट

ननिकि ग्रम्मऱ वच्चे नामेघनादु । डनुबुद्धि दूरस्थुलैन वानरुलु
घनतरांजन शैलकल्पुडैयुन्न । तनु जूचि वेऱव गदापाणि यगुचु
सैन्यमध्यंबुन जरियिंचु कपुल । दैन्यंबु बापुचु दग विभीषणुडु
तेएचि रविसूति नीक्षिंचि पलिके— । "नीतेऱंगुन मीकु नेल शोकिंप ?
गैकोनि यिदि युद्धकालंबु गानि । शोकिंप वेळये सुग्रीव ! मनकु !
२६००
दुर्णिवारोर्मिबंधुरमैन जलधि । गर्णधारुडु लेक कलमु चंदमुन
मन सैन्यमुन्नदि; मन किक वेग । ननिकि नुद्योगिंचुटदिये कार्यंबु"
अन विनि यंगदुंडाविभीषणुनि । गनुगोनि "नीमाट कडुनुत्तमंबु;
नरनाथतनयुलु नागपाशम्मु । लुरुवडि बेनगोन नुर्विपै नोऱगि
बाणक्षतंबुल बलुविडि वेडलु । शोणितंबुल ब्रुंगि सोलियुन्नार;
लीदाशरथुल मीरेमऱकुंडु; । डादित्युडु दयाद्रि करुदेरक मुन्न
येनु राक्षसकोटि नेल्ल निर्जिंचि । जानकि देच्चेद जननाथु कडकु;
हनुमंतुडादिगा नखिलवानरुल । गोनि कवाटमुलतो गोटलतोड
दोरणश्रेणुलतो गूड लंक । दोरंपुबिडिकिळ्ळ दुमुरु सेसेदनु;

विभीषण (तथा) अंगद का वानरों को धैर्य देना

—दूरस्थ वानरों के 'युद्ध के लिए फिर मेघनाद आया है' ऐसा सोच, घनतर-अंजन-शैल के समान अपने को देख डरने पर, गदापाणी होते हुए, सैन्यमध्य में विचरण करते हुए, कपियों के दैन्य को दूर करते हुए आकर, विभीषण ने रविसूति (सुग्रीव) को देखकर कहा—'इस तरह से तुम्हें दुखी क्यों होना चाहिए ? यह तो लगकर युद्ध करने का समय है, हे सुग्रीव ! क्या यह हमारे लिए शोक करने का समय है ? ।। २६०० ।।

—दुर्निवार-ऊर्मि-बंधुर (दुर्निवार तरंगों से पूर्ण) जलधि में कर्णधार रहित नौका के समान हमारी सेना (की दशा) है। अब हमारा कार्य है कि शीघ्र युद्ध के लिए प्रयत्न करें।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, अंगद ने उस विभीषण को देख (कहा)—"तुम्हारी बात बहुत उत्तम है। नरनाथ-तनय (राजकुमार) नागपाशों के बरबस बाँध डालने पर, उर्वी (पृथ्वी) पर गिरकर, बाण-क्षतों से अविरत निकलनेवाले रक्त में डूबकर, मूर्च्छित पड़े हैं। इन दाशरथियों के प्रति असावधानी मत बरतो। आदित्य के उदयाद्रि पर आने से पहले मैं समस्त राक्षसकोटि को जीतकर जननाथ के पास जानकी को लाऊँगा। हनुमान आदि अखिल वानरों को साथ लेकर

विस्मयंबुग बंधुविततितो गूड । भस्मंबु सेसॆद बंक्तिकंधरुनि; २६१०
नाविक्रमंबुनु नाभुजाबलमु । भूवरुवलन नापूनुभक्तियुनु
दॆल्लंबु सॆयुदु दॆगुवतो नॆल्लि; । यॆल्लभूतंबुलु नीक्षिपनिम्मु;
मलयजकेयूर महितानुभूति । बलुमारु गन्न नाबाहुदंडम्मु
लनवरतंबुनु नधिकदर्पमुन । दनरुचुन्न रघूत्तमु कार्यमुनकु;
रावणु निर्जिंचि रघुवीरुडलर । नीविभीषणु लंक नॊलमि निल्पॆदनु;
गादेनि नाजि राक्षसुनिचे जच्चि । पोदुनु सौमित्रि पोयिन त्रोव"
नन विनि सुग्रीवुडंगदु जूचि । "तनय ! नी विक नीदशरथात्मजुल
गॊनिपॊम्मु किष्किंधकुनु वेग; मेनु । जनि यिंद्रजित्तुनि सकलराक्षसुल
रावणु निर्जिंचि रघुरामु देवि । नॆविधंबुननैन नॆ दॆत्तु वेग"
ननिन सुग्रीवुनि नारामविभुनि । गनुगॊनि खिन्नुलै कपुलु भीतिल्लि
२६२०
मुनुकॊनि शोकाब्धि मुनुग सुषेणु । डनुवाडु वलिकॆ नय्यंदऱ जूचि:
"यीनागपशंबुलॆल्ल बायुटकु । वानरेश्वरुलार ! वलनु सॆप्पॆदनु;

कवाट, दुर्ग, तोरण श्रेणियों के साथ लंका को अपने दृढ़ मुष्टि प्रहारों से चूर-चूर कर दूँगा । आश्चर्यजनक रूप से, बन्धु-वितति (समूह) के साथ पंक्ति-कंधर को भस्म कर दूँगा ।। २६१० ।।

मेरे विक्रम को, मेरे भुजबल को, भूवर के प्रति मेरी अनन्य भक्ति को साहस के साथ आज स्पष्ट (अभिव्यक्त) कर दूँगा । (इसे) समस्त भूतों को देखने दो । मलयज (चन्दन) (तथा) केयूर की महितानुभूति को कई बार प्राप्त मेरे बाहुदण्ड अनारत, अधिक दर्प के साथ रघूत्तम के कार्य के लिए फड़क रहे हैं । रावण को जीतकर (या मारकर), रघुवीर के प्रसन्न होने पर, इस विभीषण को लंका (के सिंहासन) पर शोभा से प्रतिष्ठित करूँगा । नहीं तो आजि (युद्ध) में राक्षस के हाथ मरकर, लक्ष्मण जिस मार्ग से गया, उसी मार्ग से जाऊँगा ।" (ऐसा) कहने पर, सुनकर सुग्रीव ने अंगद से (कहा)—"हे तनय ! अब तुम इन दशरथात्मजों को शीघ्र किष्किन्धा ले जाओ । मैं जाकर इन्द्रजित को, सकल राक्षसों को, रावण को जीतकर (या मारकर), रघुराम की देवी को किसी प्रकार शीघ्र लाऊँगा ।" (ऐसा) कहने पर, सुग्रीव को (तथा) विभुराम को देख, खिन्न हो कपि भीत होकर, ।। २६२० ।।

—शोकाब्धि (दुःख समुद्र) में डूब गए । सुषेण नामक (वानर ने) सबको देखकर कहा—"हे वानरेश्वरो ! इन समस्त नागपाशों से मुक्त होने के लिए उपाय बताऊँगा । पूर्व में देवासुरों के उद्धर-संगर में, समस्त देवताओं को

दॊल्लि देवासुरोद्धुरसंगरमुन । नॆल्लदेवतलकु निवि गट्टियुन्न
देवतलप्पुडु दिव्यौषधमुल । चे वानि बाध बासिरि कट्लु वीडि;
यायौषधमु लिप्पुडमृताब्धिकवल । बायकुन्नवि द्रोणपर्वतस्थलिनि;
हनुमंतु बुच्चुडी यातडु वोयि । कॊनिवच्चु; मीरिट्टु कुंदंग वलव ।"

नारदागमनमु

दनुनंत सूर्यसहस्रसंकाशु । डननॊप्पि कृष्णमृगाजिनं बमर
मॆरुगुलुगल शुभ्रमेघंबु बोलॆ । नॆऱयु पिंगलजटानिचयंबु वॆलुग
बॊनर नुदुट नूर्ध्वपुंड्रबु वॆट्टि । तनरंग गौपीनदंडमुल् दाल्चि
रमणमै नॊप्पु नारायणमंत्र । ममलमै तनवीणयंदॊप्प म्रोय २६३०
दनतोडि योगींद्रतति नाकसमुन । नुनिचि, चित्तंबुन नुल्लासमॊदव
बरमयोगींद्रुंडु परतत्त्ववेदि । परमपावनमूर्ति परमवैष्णवुडु
नारदुडारामनरनाथु गान । गारवंबुन वच्चि करमुलु मोगिचि
वलगॊनि यारामवसुमतीशुनकु । दलकॊन्न भक्तितो दग विन्नविचॆ:
"देव ! निन् ब्रह्मादि देवतलॆल्ल । नावार्धिमध्यंबुनंदॊप्प गांचि

इन (नागपाशों) ने बाँध डाल दिया था । तब देवता दिव्य-औषधों से बन्धनों से मुक्त हो, पीड़ा से मुक्त हुए । वे औषध अब अमृताब्धि के उस पार द्रोण-पर्वतस्थल पर हैं । हनुमान को भेजिए, वह जाकर (उन्हें) ला लेगा । इस प्रकार आप व्यथित मत होइए ।"

नारद का आगमन

(ऐसा) कहने तक सहस्र-सूर्य-संकाश (समान) हो शोभित होकर, कृष्णमृग के अजिन (चर्म) के शोभित होने पर, चपलाओं से युक्त शुभ्रमेघ के समान शोभित पिंगल (वर्ण के) जटा-समूह के प्रकाशित होने पर, ललाट पर ऊर्ध्वपुंड्र लगाकर, शोभा से कौपीन (तथा) दण्ड धारण कर, रमणीयता से शोभित नारायणमन्त्र के अमलता से अपनी वीणा पर शोभा से झंकृत होने पर, ॥ २६३० ॥

—अपने साथी योगीन्द्र समूह को आकाश में ही ठहरा देकर, चित्त में उल्लास के उत्पन्न होने पर, परमयोगीन्द्र, परतत्त्ववेदी, परम-पावनमूर्ति, परम-वैष्णव नारद ने राम-नरनाथ (राजाराम) के दर्शनार्थ गौरव से आकर हाथ जोड़कर, प्रदक्षिणा कर, उस राम-वसुमतीश (-राजा) को अनन्य भक्ति से (यों) निवेदन किया—"हे देव ! वारिधि के मध्य में तुम्हें शोभा से ब्रह्मादि समस्त देवताओं ने देखकर, रावण के द्वारा दी गई बाधा

रावणबाधापरंपरल् सेप्प । गा विनि वारिपै गरुणिंचि नीवु
वारि ब्रोचुटकु रावणुनि द्रुंचुटकु । धारुणि बुट्टिति दशरथेशुनकु;
नट्टु गान नीविट्टुललमट नोंद । निट्टु तगुनय्य! महीपालवर्य !
नीनामममात्मलो निलिपिनंतटने । भूनाथ! यज्ञानमुलु पोंदवनिन,
नीकु नज्ञानंबु नेपमैन गलदे ? । चेकोनि निनु नीवु चिंतितु गाक!
२६४०

नारायणुडवु; पूर्णज्ञाननिधिवि;। चारुकौस्तुभरत्नसहितवक्षुडवु;
ननिशंबु लक्ष्मिकि नाटपट्टयिन । घनतरांगंबुलु गलुगु देवुडवु;
नादिदेवुडवु, सर्वांतरात्मुडवु; । वेदवेद्युंडवु; विश्वरूपुडवु;
दलचु योगींद्रुल ध्यानंबुनंदु । नलुवोंदु सच्चिदानंदरूपुडवु;
धरणि यंघ्रलु; वियत्तलमु मस्तकमु;। परपैन निटलंबु पद्मासनुंडु;
कन्नुलु चंद्रुंडु गमलमित्रुंडु; । नुन्नतंबगुचुन्न यूर्पु मारुतमु;
वदनंबु शिखि; सरस्वति जिह्व योप्पु;। रदनप्रतति वेदराशि चिंतिप;
जेलुवैन गायत्रि शिख; प्रणवंबु । वेलसिन हृदयंबु; वीनुलु दिशलु;
महनीयधर्मंबु मनसु; देवतलु । बहुजयस्थितिगल्गु बाहुसमृद्धि;

(पीड़ा) की परम्पराओं को कह सुनाया। (तो उन्हें) सुनकर उनपर करुणा करके तुम उनकी रक्षा करने के लिए तथा रावण का संहार करने के लिए, धरणी पर, दशरथेश के यहाँ पैदा हुए हो। हे महीपालवर ! ऐसा होने पर, इस प्रकार व्याकुल होना क्या तुम्हारे लिए उचित है ? हे भूनाथ ! कहते हैं कि तुम्हारा नाम आत्मा में स्थिर रखते ही अज्ञान संप्राप्त नहीं होते। तो तुम्हारे अज्ञान का कोई कारण हो सकता है ? (नहीं।) चाहकर तुम अपने बारे में चिन्तन करो तो सही ॥ २६४० ॥

(तुम) नारायण हो, पूर्ण ज्ञान-निधि हो, चारु-कौस्तुभ-रत्न-सहित वक्षवाले हो, सदा लक्ष्मी (शोभा) के निवास-स्थान बने घनतर (महत्तर) अंगों वाले भगवान हो, आदि देव हो, सर्वान्तरात्मा हो, वेदवेद्य हो, विश्वरूप वाले हो, चिन्तन करनेवाले योगीन्द्रों के ध्यान में विराजमान रहनेवाले सच्चिदानन्द रूपवाले हो। (तुम्हारे लिए) धरणी अंघ्रि (चरण) हैं, वियत्तल (आकाश) मस्तक है, पद्मासन (ब्रह्मा) विशाल ललाट है, चन्द्र और कमलमित्र (सूर्य) आँखें हैं, मारुत समुन्नत बना हुआ श्वास है, शिखि (अग्नि) वदन (मुँह) है, सरस्वती जिह्वा हो शोभित है, सोचने पर वेद-राशि रदन-प्रतति (दन्त-समूह) है, सुशोभित गायत्री ही शिखा है, प्रणव (ओंकार) ही विराजमान हृदय है, दिशाएँ कान हैं, महनीय धर्म ही मन है, देवताजन बहुजयस्थिति से सम्पन्न बाहुओं की सम्पन्नता (बाहुबल) हैं,

गॊनकॊन्न ब्रह्मांडकोट्लु गुक्षि; । तनरारु तॊडलु मित्रावरुणुलुनु;
२६५०
नश्वुलु नॊगि जानुलात्मलो जूड; । विश्वंबु नीरोमवितति चिंतिप;
निदॆ चूडुमा देव! यॆल्लदेवतलु । गदिसि किन्नर यक्षगंधर्ववरुलु
नादिगा वच्चि जयंबु नीदॆसकु । मेदिनीश्वर! कोरि मिटनुन्नार;
लकलंकमतिवि गम्मज्ञान मुडिगि; । सकलराक्षसुलनु समयिंपु वेग;
वारक नरुलैनवारु संसार । पारंबु जेरु नुपायंबु लेक
बाळि नाशापाशबद्धुलैरेनि । नीलील नटियिंचुटिंतियकाक !
नीवेल यीसर्पनिकरंबुचेत । भाविंपगा गट्टुपडुदु श्रीराम !
नी वादिमूर्तिवि; नीमूर्ति दुलपु; । नीवाहनंबैन नीकेतु वैन
गरुडुंडु वच्चिन गरुडुनिचेत । नुरगपाशमुलॆल्ल नूडु नीक्षणमॆ"
यनि चॆप्पि दीविंचि यान्नारदुंडु । चनियॆ ग्रम्मर सुधासागरंबुनकु;
२६६०

गरुडुनि राकतो राघवुलु नागपाश विमुक्तुलगुट

नानारदुडु सॆप्पिनट्लु राघवुडु । ता नादिहरियौट दलपोसि चूचि

ब्रह्माण्ड-कोटियाँ (-समूह) ही कुक्षि हैं, मित्र (तथा) वरुण— ।। २६५० ।। —शोभायमान जाँघें हैं, आत्मा से सोचने पर अश्वनी (देवता) शोभा से जानु हैं, चिन्तन करने पर विश्व तुम्हारा रोम-वितति (-समूह) है। हे देव ! यही देखो, समस्त देवता किन्नर, यक्ष गन्धर्ववर आदि जुटकर तुम्हारी जय की कांक्षा करते हुए हे मेदिनीश्वर ! आकाश पर स्थित हैं। अज्ञान से मुक्त हो अकलंकमति वाले बन जाओ। शीघ्र समस्त राक्षसों का संहार करो। निरन्तर ही मानव संसार को पार करने के उपाय के न होने पर, कांक्षा (और) आशा-पाशों से आबद्ध हो, इसी प्रकार पड़े रहते हैं, (शायद यही दिखाने के लिए) तुम लीला से अभिनय कर रहे हो। हे श्रीराम ! नहीं तो तुम इस सर्पनिकर से क्यों आबद्ध रह जाओगे ? तुम आदिमूर्ति हो, अपने (असली) रूप को सोचो। (तुम्हारा) अपना वाहन (तथा) अपना केतन गरुड़ आ जाए तो गरुड़ के कारण इसी क्षण समस्त उरग पाश छूट जाएंगे।" ऐसा कहकर, आसीस कर, नारद फिर से सुधासागर में चला गया ।। २६६० ।।

गरुड़ के आगमन पर राघवों का नागपाशों से विमुक्त होना

उस नारद के कथन के अनुकूल राघव ने यह सोचकर कि मैं आदिहरि हूँ, होश में आकर, धीर वैनतेय (गरुड़) का स्मरण किया।

तैलिसि धीरुनि वैनतेयुनि दलचें; । दलचिन नप्पुडु तलपुतो गूड
नारुढ़मगु नमृताब्धियुत्तरपु । दीरंबुनंदुंडि दिग्गन नेंगसि
यूदि मेंट्टिन पादयुगमुचे बयलु । पादैन धरणि लोपलिशेषुडुलुक
गडुबेंद्दयैन ऱेक्कलगालि मिन्नु । सुडिवडि रिक्कलु सुरियलै तूल
नाम्रोतपेंल्लुन नखिललोकमुलु । नाम्रेडितमगु भयंबुन स्रुक्क
नेंऱकलु विद्रिचिन नेंगसिन धूळि । नेंऱसि चीकट्लुगा निखिलंबुगप्प
जनुदेंचु नुरुवडि शैलंबुलुरुल । वननिधुल् पिडितवारुलै कलग
बदिवेल सूर्युल प्रभलेंल्ल गूर्चि । मेंदिपि चेसिनक्रिय मेंयिप्रकाशिप
मेंऱयु ऱेक्कलतोडि मेरुवोयनग । बऱतेंचें गरुडुडंबरवीथि बेंचि; २६७०

पऱतेंचुटयु नागपाशंबुलेंल्ल । वेंऱचि यानृपतुल विडिचि पेंल्लुऱिकें;
नदि यट्टिदय कादे ? यतनि जिंतिप । वदलु बंधंबुलेंव्वारलकैन;
दनुदानु चिंतिंचि तनदु बंधमुलु । चन द्रोव रामुंडु सालडे तलप ?
निनसतु डादिगा नेंल्लवानरुलु । विन विस्मयंबनि वेंऱगंदि चूड
भानुकोटिप्रभाभव्य तेजमुन । नानंदकरमूर्ति यमरुलु पोंगड

स्मरण करने पर, स्मरण करते ही आरूढ़ अमृताब्धि के उत्तर तीर से झट उछल (उड़) कर, दबाकर रखे पादयुग से (उस स्थान पर) गड्ढा बनने पर, धरणी के भीतर (नीचे) रहनेवाला शेष चौंक पड़ा। उसके बृहद् पंखों से उत्पन्न पवन से आकाश आलोड़ित हो गया और टुकड़े-टुकड़े होकर नक्षत्र गिरने लगे। उस ध्वनि (पंखों की फड़फड़ाहट) की अधिकता के कारण समस्त लोक आम्रेडित (द्विगुणित) भय से कमज़ोर हो उठे। पंखों के फड़फड़ाने से उठी हुई धूल ने व्याप्त होकर समस्त (लोक) को अंधकार-सा ढक लिया। आगमन की प्रबलता के कारण शैल लुढ़कने लगे, वननिधि (समुद्र) आलोड़ित हो उठे। दस हज़ार सूर्यों की समस्त प्रभाओं को गूँथकर एक बनाया हो, इस प्रकार शरीर के प्रकाशित होने पर, मानों चमकते हुए पंखोंवाला मेरु (पर्वत) हो, गरुड़ अम्बर-वीथि से आया ॥ २६७० ॥

आने पर समस्त नागपाश भीत हो, उन नृपतियों को छोड़ शीघ्र भाग गए। यह ऐसा ही है न! उसका चिंतन करने पर किसी के भी हों, बन्धन छूट जाएँगे। स्वयं अपने आप चिंतन कर अपने बन्धनों को काट देने में क्या राम समर्थ नहीं हैं? (हैं, फिर भी उन्होंने यह श्रेय गरुड़ को दिया।) इनसुत (सुग्रीव) आदि समस्त वानरों के विस्मय से देखते रह जाने पर, भानुकोटि-प्रभा दिव्यतेज से, अमरों द्वारा प्रशंसित आनन्दकर

हीरकिरीटंबु हेमांबरंबु । गारुत्मतोज्ज्वलग्रैवेयकंबु
रत्नकुंडलमुलु राजीवराग । नूत्नमंजीरमनोहरांघ्रुलुनु
मौक्तिकमालिकल् माणिक्यकवच । सक्तमै मिंचु विशालवक्षंबु
मरकतकेयूर मंजुबाहुवुलु । नरुण पक्षमुलु चंद्राननाब्जंबु
करुणावलोकमुल् कंबुकंधरमु । नरुणपल्लवकोमलाग्रहस्तमुलु २६८०
दुंदुभिस्वनमु लत्तुकचाय मेनु । मंदरमेरुसमानगात्रंबु
ललितोर्ध्वपुंड्र ललाटपट्टिकयु । सॆलवुल देरॆडु चिऱुनव्वुलॊलुक
वैनतेयुंडुनु वलगॊनि वच्चि । यानरपतुलकु नंदंद म्रॊक्कि
मॆऱुगारु ऱॆक्कल मेनुलु दुडिचि । नॆऱि गरंबुलु मोड्चि निलिचि-
यिट्लनियॆ :
"बासॆ मीकीनागपाशबंधमुलु; । वासवांतकुनि रावणु द्रुंचि वैचि
धरणिज गॊनि ययोध्यकु नेगु वेग; । धरणीश ! यसुरुल दंडिचुनपुडु
मायलु वॆद्द; येमऱक वर्तिपु; । मेयुपायंबुल निक मोसपोकु"
मनि प्रदक्षिणमुगा नरिगि यानृपुल । विनुतिंचि दीविंचि वॆस गौगिलिंचि
म्रॊक्कि यायमृतसमुद्रंबुकडकु । ग्रक्कुन गमनिंचॆ गश्यपात्मजुडु;

मूर्ति (रूप) से, हीरकिरीट, हेमांबर (स्वर्णिम वस्त्र), गारुत्मत्-उज्ज्वल-ग्रैवेयक (कण्ठमाला), रत्नकुण्डल, राजीवराग (कमल की कान्ति से युक्त) नूत्न मंजीर से युक्त मनोहर-अंघ्रि (चरण), मौक्तिक मालिकाएँ, माणिक्य-कवच से लगा हुआ विशाल वक्ष, मरकत-केयूर से युक्त मंजु बाहु, अरुण पक्ष, चन्द्र-आनन-अब्ज (चन्द्र और कमल-सा मुख), करुणावलोकन, कंबु-कंधर, अरुणपल्लव के समान कोमल अग्रहस्त (हथेलियाँ), ।। २६८० ।। —दुंदुभि के समान स्वर, लाख के वर्ण से युक्त शरीर, सुन्दर मेरु समान गात्र (शरीर), ललित ऊर्ध्वपुंड्र से युक्त ललाट-पट्टिका, होंठों के कोरों पर विराजमान मन्दहास के उमड़ने पर, वैनतेय ने परिक्रमा करके आकर, उन नरपतियों को बार-बार प्रणामकर, कान्तिमान पंखों से शरीर पोंछकर, हाथ जोड़कर खड़े होकर यों कहा—"आपके ये नागपाश-बन्धन छूट गए। हे धरणीश ! वासवांतक (इन्द्र का अन्त करनेवाले) रावण का संहार कर, शीघ्र धरणिजा को लेकर अयोध्या जाओ। असुरों को दण्डित करने पर अधिक मायाएँ होती हैं, सावधानी से आचरण करो, किसी भी उपाय से अब धोखे में मत आओ।" (ऐसा) कह, प्रदक्षिणा कर, उन नृपों की विनुति (प्रशंसा) कर, आसीस कर, झट गले मिलकर, प्रणामकर, झट से कश्यपात्मज (गरुड़) अमृतसमुद्र से पास चला गया। सर्प-बन्धनों से मुक्त हो जाने पर राम और लक्ष्मण प्रसन्न हुए। तब, ।। २६९० ।।

पामुल कट्लॆल्ल बायुट जेसि । रामलक्ष्मणुलुनु रागिल्लि; रपुड्डु२६९०
वनचरु लारामवल्लभु नॆंदुर । ननुरागरसमुन नंदंद तेलि
तनरुचु सिंहनादमुलु सेयुचुनु । विनुवीथि दोकलु विसरि याडुचुनु
गुरुवुलुवारुचु गुनिसि याडुचुनु । नुरुवडि बाऱुचु नुब्बि नव्वुचुनु
घाटिंचि शैलवृक्षमुलॆत्ति लंक । कोट लुव्वेत्तुगा गॊनदलंचुचुनु
मिगिलिनवारि या मिक्किलि रभस । मर्गलिचें लंक; बॆल्लगलिचें नभमु;
नंत सूर्योदयंबगुटयु जरुल । नंतयु नरय दशास्युंडु वनिचें;
बनिचिन नक्कोटपैनुंडि वारु । गनिरि सुग्रीवुंडु कदिसियुंडगनु
सविनयुंडै विभीषणुडु गॊल्वगनु । ब्रविमलमति गपिबलमु सेंविप
बोरिकि सेनल बुरिकॊल्पुकॊनुचु । जारुविश्रृंखल समदेभयुगमु
गतिनुन्न रामलक्ष्मणुल निक्ष्वाकु । पतुल बंधंबुलु वासिनवारि;
२७००
गनि विन्ननै वारु ग्रम्मऱ बोयि । दनुजेश्वरुनकव्विधं बॆंऱिंगिप
विनि खिन्नुडै कडु वेंऱगंदि यपुडु । तन मंत्रिवरुलतो दशकंठुडनियें:
"बन्नगपाशमुल् पायंग मगुड । गन्न यारामलक्ष्मणुलचे न्निक
जॆंडगलदीलंक सिद्धंबुगाग;। बडयवच्चुनॆ नागपाशंबुलूड ?

—वनचर राम-वल्लभ के समक्ष, अनुराग रस में बार-बार ऊभचूभ होते हुए, शोभित हुए। सिंहनाद करते हुए, विनुवीथि (आकाश) में पूँछ फेंककर खेलते हुए, अतिशयता से शोभित होते हुए, इठलाते हुए, शीघ्रता से दौड़ते हुए, फूलकर हँसते हुए, बरजोरी शैल (और) वृक्ष उठाकर, लंका के दुर्ग को एकदम आक्रांत करने की सोचते रहे, (इस प्रकार) शेष सभी लोगों के उस संरंभ ने लंका को हिला दिया, नभ को अधिकता से हिला दिया। तब सूर्योदय होने पर, सब कुछ जानकर आने के लिए दशास्य (रावण) ने चरों (गुप्तचरों) को भेजा। भेजने पर, उस दुर्ग पर से ही उन्होंने सुग्रीव के निकट रहने पर, सविनय विभीषण के सेवाएँ करते रहने पर, प्रविमल गति से कपिबल के सेवाएँ करते रहने पर, युद्ध के लिए सेनाओं को प्रेरित करते हुए, चारु-विश्रृंखल-समद-इभ (गज)-युग के समान स्थित रामलक्ष्मण को, इक्ष्वाकुपतियों को जो बन्धन-रहित हो गए थे, देखा ॥ २७०० ॥

देखकर, उदास बन, उन्होंने लौटकर, दनुजेश्वर को वह विधान बताया। (बताने पर) सुनकर, खिन्न हो, अति भीत हो (अथवा चकित हो), तब अपने मन्त्रिवरों से दशकण्ठ ने कहा—"पन्नगपाशों से मुक्त बने उन रामलक्ष्मण से अब यह लंका नष्ट हो जाएगी। यह सिद्ध

जयमॆक्कडिदि नाकु ? समरंबुलोन। रयमुन जॆडुगाक राक्षसलक्ष्मि !
गरुडुंडु वच्चॆनो काक, लेकुन्न । नुरगपाशमुलॆट्टुलूडु वारलकु ?
गरुडुंडु ननु गॆल्चॆ गाक, लेकुन्न । नरुलॆंतवारु ? वानरुलॆंतवारु ?"
अनुचु मत्तेभ मुरवानुकारमुग । घनमैन निट्टूर्पु ग्रम्म धूम्राक्षु

धूम्राक्षुडुयुद्धमुनकु वच्चुट

बनिचॆ "नग्गलमैन बलमुल गॊनुचु । जनु वेग रामलक्ष्मणुलपै" ननुचु;
बनिचिन नादैत्यपतिकि म्रॊक्कुचुनु। ननिकॆत्ति धूम्राक्षुडप्पुडु वॆडलॆ;
२७१०
वानि बलंबु वॆल्वड जॊच्चॆ नपुडु । नानाविधंबुल नलुगडलंदु;
वृकसिंहमुखमुल वॆलसिनयट्टि । प्रकटितस्फूर्तितुरंगंबुलॊप्प
बटपटार्भटि जॆवुल् पगिलिचुनट्टि । पटुरवंबुल दिशापटलंबु लद्रुव
वडि भयंकरमु दिव्यंबैन दीप्ति । यडर धूम्राक्षुनि यरदमॊप्पारॆ;
भेरुलु शंखमुल् पृथुमृदंगमुलु । भूरि घोषणमुलद्भुतमुगा म्रोय
दुरमुन कट्टु वच्चु धूम्राक्षुनकुनु । बरुवडि दोचॆ नॊप्पनि शकुनमुलु;

(अवश्यंभावी) है। नागपाशों से मुक्त होना किसी के लिए सम्भव है ? मेरे लिए अब जय कहाँ ? समर में शीघ्र ही राक्षसलक्ष्मी नष्ट हो जाएगी। शायद गरुड़ आया था, नहीं तो उनके उरगपाश कैसे छूटेंगे ? गरुड़ ने मुझे जीता है, नहीं तो नर कितने समर्थ हैं ? वानर कितने समर्थ हैं ?" (ऐसा) कहते हुए मत्तेभ (गज) के रव (चिंघाड़) का अनुकरण करनेवाली लम्बी आह छोड़कर, धूम्राक्ष को—

धूम्राक्ष का युद्ध के लिए आना

—यह कहते भेजा कि "दुर्निवार बलों (सेनाओं) को साथ लेते हुए, रामलक्ष्मण पर शीघ्र जाओ।" भेजने पर, उस दैत्यपति को प्रणाम करते हुए, युद्ध के लिए सन्नद्ध हो धूम्राक्ष तब निकल पड़ा ।। २७१० ।।

तब उसकी सेनाएँ अनेक प्रकारों से, चारों तरफ़ से निकल पड़ने लगीं। वृक (भेड़िया) (तथा) सिंह जैसे मुखों से सुशोभित प्रकटित स्फूर्ति वाले तुरंगों के शोभित होने पर, पट-पट आरभटी (घोर रव) के कानों को फोड़ देनेवाले पटुरव के दिशापटलों के फट जाने पर, शीघ्रगति से भयंकर (तथा) दिव्यदीप्ति की अतिशयता के साथ धूम्राक्ष का रथ शोभित हुआ। भेरियाँ, शंख, पृथु (अधिक, बहुत) मृदंग (आदि के) भूरि-घोष के अद्भुत रूप से मुखरित होने पर युद्ध के लिए आनेवाले धूम्राक्ष को बरबस कुछ अपशकुन दिखाई पड़े। (उन्हें देख) शोभा से

नलि नार्चि मुंदऱ नडचु राक्षसुलु । निलिचि येंतयु भीति निश्चेष्टुलैरि;
अय्युनु निलुवक यग्गलंबैन । कय्यंबुमीदनु गविसि यार्चुचुनु
वच्चिच धूम्राक्षुंडु वारिधिवोलॆ । नच्चॆरुवैयुन्न यगचरसेन
दाकिन नसुरुल दरुचरेश्वरुलु । दाकिरि मिन्नुलु दाक नार्चुचुनु;
२७२०

नंगदादुलकुनु नसुरुल कपुडु । संगर मतिघोरसंकुलंबय्यॆ;
दानवावलि यडिदंबुलु व्रेय, । वानरावलि व्रेयु वारि वृक्षमुल;
दानवेश्वरुलु कुंतंबुल बॊडुव, । वानरुल् पॊडुतुरु वडि बिडिकिळ्ळ;
दानवुल् हरुल बंतंबुल द्रोल, । वानरुल् वानिनि व्रत्तुरु गोळ्ळ;
दानवोत्तमुलु रथंबुलु वऱप, । वानरुल् वानिनि व्रय्य द्रॊक्कुदुरु;
दानवुल् मदकरिततुल डीकॊलुप, । वानरुल् वानि नुर्वर गूल्तुरलुक;
नव्विधंबुन बेर्चि यिरुवागु बोर । नव्वनचरवीरुलसुरुल गिट्टि,
यंतकाकृति गाळ्ळ नलमि मदोग्र । दंतुल नेलतो दार्टिचि चंपि,
वानि जेकॊनि कडुवडि व्रेसि डासि । दानवानीकंबु दर्पंबु मापि
गॆडपि काळ्ळॊडिसि पक्कॆरलतो बट्टि । पुडमि बॆट्टुग गुर्ऱमुल व्रेसि
चंपि २७३०

सिंहनाद कर आगे-आगे चलनेवाले राक्षस अत्यन्त भीति से निष्चेट होकर रुक गए। ऐसा होने पर न रुककर घमासान युद्ध के लिए लालायित होते हुए, सिंहनाद करते हुए, आकर धूम्राक्ष वारिधि के समान आश्चर्य-प्रद अगचर-सेना के साथ भिड़ गया। भिड़ जाने पर तरुचरेश्वर आकाश को छूनेवाले सिंहनाद करते हुए असुरों के साथ भिड़ गए ॥ २७२० ॥

तब अंगद आदियों और असुरों में संगर (युद्ध) अतिघोर संकुल हो गया। दानवावली (राक्षस-समूह) खड्ग फेंकते तो वानरावली उनपर वृक्ष फेंकती। दानवेश्वरों के भाले भोंकने पर, वानर झट मुष्टिघात करते। दानव हठ करके घोड़ों को चलाते तो वानर उन्हें नखों से चीर डालते। दानवोत्तम रथ चलाते तो वानर उन्हें कुचलकर चूर कर देते। दानव मद-करि-ततियों (मदगज-समूहों) से टकराते तो वानर क्रोध से (उन्हें) विचलित कर गिरा देते। इस प्रकार क्रम से दोनों पक्षों के लोग युद्ध करने लगे। (उस समय) वनचरवीरों ने असुरों को घेरकर, अन्तक (यम) की आकृति से चरणों से कुचलकर, मद से उग्र दंतियों (गजों) को पृथ्वी पर पटककर मारकर, उन्हें (मृत गजों को) हाथों में ले अतिशीघ्रता से फेंक, दानवानीक के दर्प को नष्ट किया, लगकर घोड़ों के चरणों को कवचों के साथ पकड़कर, ज़मीन पर ज़ोर से पटक मार डालकर, ॥२७३०॥

वानि जेकॊनि कडुवडि व्रेसि व्रेसि । दानवानीकंबु तनुवुलु सदिपि
यसमुन गडुनॊगललमि यंदंद । वॆंस द्रिप्पि यरदमुल् विरुग दाटिंचि
वानि जेकॊनि कडुवडि व्रेसि व्रेसि । दानवानीकंबु धरमीद गूल्चि
यिऱियु काल्बलमुल यॆम्मुलन्नियुनु । नुऱुमुगा दन्नि पीनुगुलुगा जेसि
वानिनि कॊनि कडुवडि व्रेसि व्रेसि । दानवानीकंबु दलमुगा गॆंडपि
मऱियु ग्रंदुग जॊच्चिच महितदंष्ट्रमुल । गऱकु राक्षसकोटि गऱचि चॆंडाडि
चाचिनवारि शस्त्रंबुलु विऱिचि । मोचेतुलनु वारिमॊगमुलु वॊडिचि
पडद्रोसि च्चेतुल बलिमिगा नदिमि । मॆडलुनु गाळ्ळुनु मिडुकंग बट्टि
मोकाळ्ळ नूदि यिम्मुल दैत्यवरुल । वीक गोलॆम्मुलु विऱुगंग जेसि
कडुवडि निडुदतोकलु दविलिंचि । युडुगक मॆडलकु नुरुलु गाविंचि
२७४०
यऱिमुऱि बरवशुलै ग्रुड्लु वॆलिकि । नुऱिकि बॆट्टुग जावनॊगिबिगियिंचि
पॆल्लुगा बीनुगुपॆंटलु सेय । मल्लडिगॊनि व्रॆळ्ळ महिमीद नप्पु
डिवि तल; लिवि कन्नु; लिवि वदनंबु । लिवि चॆक्कु; लिवि मुक्कु;
लिवि कंधरंबु;
लिवि बाहु; लिवि मेनु; लिवि जघनंबु; । लिवि यूरु; लिवि जानु;
लिवि चरणंबु

—उन्हें (मृत अश्वों को) हाथों में ले अतिशीघ्रता से फेंक-फेंककर दानवानीक के तनुओं को सपाट कर दिया, आटोप से क्रमश: रथों को घुमा-घुमाकर तोड़ देकर, उन्हें हाथ में ले, अतिशीघ्रता से फेंक-फेंककर, दानवानीक को धरा पर गिरा दिया, शोभायमान बने पैदल सैनिकों की हड्डियों को चूर्णकर, उन्हें शव बना दिया, उन्हें हाथ में ले, अतिशीघ्रता से फेंक-फेंककर, दानवानीक के सामर्थ्य को समाप्त कर दिया, और अतिशयता से (सेना में) घुसकर, महित दंष्ट्राओं से कर्कश राक्षसकोटि को नोचकर, तितर-बितर कर दिया, उनके (हाथों में) स्थित शस्त्रों को तोड़कर, कुहनियों से उनके मुखों पर प्रहार कर, नीचे गिराकर, हाथों से बलपूर्वक दबाकर, गले और चरण ऐसा पकड़ते कि वे छटपटाने लगते, घुटनों से दबाकर, दैत्यवरों के कड़ाहे रूपी कंकालों को तोड़ देते। बड़ी शीघ्रता से लम्बी पूँछों को कण्ठों में फन्दों के समान डालकर, ॥ २७४० ॥

—ऐसा कस देते कि वे परवश हो, आँखों की पुतलियों के बाहर निकल आने पर ढेर हो जाते। इस प्रकार मही (युद्धभूमि) को अधिकता से शवों से पाट दिया तब यह पता नहीं लग रहा था कि ये सिर हैं, ये आँखें हैं, ये वदन (मुख) हैं, ये गाल हैं, ये नाक हैं, ये कंधर हैं, ये बाहु हैं, ये

लनि येरुपडकुंड नसुरवर्गमुलु; । नेनडुनु मज्जंबु नेत्तुरु मेदडु
नेऱचियु ब्रेवुलु नेम्मुलु दोलु । बुऱियलतो बेनुब्रोवुले युंडे;
नप्पुडु धूम्राक्षुडाकपिसेन । जप्परिपुचु दाकि चतुरत मेऱय
दललु व्रय्यलुग मुद्गरमुल व्रेसि । चलमु दीपिंप ब्रासंबुल बोडिचि
परिघंबुलनु भिंडिवालशूलमुल । गरवालमुल महोग्रत बेंपुसूप
गडु नोंच्चि नेत्तुरुल् ग्रक्कुचु बडिरि । कडिमिकि बेडबासि कपुल पेक्कंड्रु;
२७५०
तक्कटि कोतुलुदग्रत दक्कि । दिक्कुल बऱचिरि धृति पेंपु दूलि;
पऱचिन गोपिंचि पर्वतंबोकटि । यऱिमुऱि गोनि वैचे हनुमंतुडलिगि;
वैचिन गदगोनि वारिंचि यप्पु । डा चावुनकु दप्पि यसुर दाटुटयु
नदि दानवाधमु नरदंबुमीद । जदरंबुगा वच्चि चदियंग बडिये;
नंतट बोवक यनिलतनूजु । डेंतयु गडकतो नेपु दीपिंचि
यलुकतो जमुडु ब्रह्मांडंबु वगुल । बलुविडि नुग्गाडु पगिदि गोपिंचि
तरुशैल पाषाणततुल राक्षसुल । शिरमुलु नुग्गाडि सिंहविक्रमुडु
अडरि वांड्रनु दोलि यगश्शृंगमोकटि । तोडिबड गैकोनि धूम्राक्षुयीद
गडगि येतेरंग गदगोनि यतडु । 'मडियु' मंचुनु हनुमंतु मस्तकयु

शरीर हैं, ये जघन हैं, ये ऊरु (जाँघ) हैं, ये जानु हैं, ये चरण हैं। असुर-वर्ग क्रम से मज्जा, रक्त, भेजा, आँतें, हड्डियाँ, चर्म, खोपड़ियों की महाराशि-सा हो पड़ा था। तब धूम्राक्ष के कपिसेना को चुबलातें हुए आक्रमण कर चातुर्य के प्रकाशित होने पर मुद्गरों के प्रहारों से (वानरों के) सिर विदीर्ण करते हुए, हठ के प्रकाशित होने पर भालों से भोंककर, परिघाएँ, भिंडिवाल, शूल, करवालों की महोग्रता की अतिशयता को प्रदर्शित करने पर, अधिक पीड़ित हो, साहस खोकर, अनेक कपि रक्त उगलते हुए गिर पड़े ॥ २७५० ॥

शेष कपि उदग्रता को खोकर, धृति की अतिशयता को खोकर, दिशाओं में भाग गए। भागने पर, हनुमान ने क्रुद्ध होकर अतिशीघ्रता से (उस राक्षस पर) एक पर्वत फेंक दिया। डालने पर, गदा लेकर उसका निवारण कर, असुर उस मृत्यु से बच निकला। वह (पर्वत) दानवाधम के रथ पर आकर सपाट गिर गया। उतने से न जाने देकर अनिलतनूज ने अधिक साहस से दीप्त होकर, यम के बरजोरी क्रुद्ध हो ब्रह्माण्ड को विदीर्ण करने के समान क्रुद्ध होकर, तरु-शैल-पाषाण-ततियों से राक्षसों के सिर विदीर्ण किए। सिंह विक्रमवाला (हनुमान) अतिशयता से राक्षसों को भगाकर, झट एक पर्वत श्रृंग उठाकर धूम्राक्ष पर गया।

व्रेसिन धूम्राक्षु वीकयु लावु । नीसुनु शौर्यंबु नित गैकौनक २७६०
हनुमंतु डुग्रत नऱ्चेत नुन्न । घनतरशैलश्रृंगंबॆत्ति यार्चि
येचि यद्दानवु नेपॆल्ल दूल । वैचिन दल रॆंडु व्रय्यलै कूलॆ;
नप्पुडु कौंड वज्राहति गूलु । चप्पुडु दोचैनु जगमुल नॆल्ल;
नट्टु वाडु मृतुडैन हतंशेषुलैन । कुटिलदैत्युलु गालिकौडुकुन कुलिकि
भूचक्रमगलंग बौरि बौरि मगिडि । चूचुचु वॆस लंक सॊच्चिचरि पाऱि;

अकंपनुड्ड युद्धमुनकु वच्चुट

यंत रावणुड्ड धूम्राक्षुडु वडुट । यंतरंगमु नॆरियंग जेयुटयु
गलन देवतलकु गंपिपकुनिकि । गलिगिनवानि नकंपनाह्वयुनि
दिव्यास्त्रशस्त्रप्रदीप्तुलवानि । दिव्यरथोपरिस्थिति नौप्पुवानि
बडिबडि नाजिकि बडवाळ्ळ बनिचि । वॆंडलिचॆ बहुबलविततितो गूड;
मौनसि कालांबुदमूर्तियै वाडु । तनरि भूषणदीप्तिधामंबु लडर
२७७०
मणिदीधितुल सूर्यमंडलंबगुचु । ब्रणुति गांचिन हेमरथमुपै निलिचि

उसने गदा लेकर 'मर जा' कहते हुए हनुमान के मस्तक पर फेंका। फेंकने पर धूम्राक्ष के साहस, सामर्थ्य, ईर्ष्या, शौर्य (आदि) की किंचित् परवाह न कर, ॥ २७६० ॥

—हनुमान ने उग्रता से हथेली पर स्थित घनतर-शैलश्रृंग को उठाकर, सिंहनाद कर फेंका। फेंकने पर समस्त शोभा को खोकर, सिर के दो फाँकें होने पर वह दानव गिर पड़ा। तब समस्त जगों में ऐसी ध्वनि सुनाई पड़ी मानों वज्र के आघात से पर्वत गिर पड़ा हो। तब उसके मर जाने पर, हतशेष (मरने से बचे) कुटिल दैत्य पवनसुत से भीत होकर, भूचक्र के विचलित होने पर क्रम से, पीछे मुड़कर देखते हुए, भागकर लंका में घुस गए।

अकंपन का युद्ध के लिए आना

तब रावण धूम्राक्ष के पतन से अन्तरंग के फट जाने पर, युद्ध में देवताओं के समक्ष अकंपित रहने के कारण प्राप्त अकंपन नाम वाले को, दिव्य-अस्त्र-शस्त्र-प्रदीप्तियों वाले को, दिव्यरथ के ऊपर शोभित रहनेवाले (अकंपन) को, दूतों को भेज जल्दी बुलाकर, बहुबल (अधिक सेना के)-वितति (-समूह) के साथ युद्ध के लिए भेजा। वह कालांबुद-मूर्ति बनकर, भूषणों के दीप्ति-धाम से विराजमान होकर, ॥ २७७० ॥

मणिदीप्तियों से सूर्यमण्डल सम होता हुआ, प्रसिद्ध हेमरथ पर खड़े

'यिदि वच्चॆ नाजिकि नित' डनि तॆल्पु । चदुरुन गेतुवु च्चदल बॆल्लडर
गुटिलराक्षसवीरघोरनिस्साण । पटहभेरिभूरिभांक्रुतुल् सॆलग
विततंबुगा लंक वॆडलंग दोन । चतुरंगबलमु लसंख्यमै वॆडल
नगचरसेनयु नार्चुचु दाकॆ । गगनंबु वगुल राक्षससेनतोड:
नुभयबलंबुलिट्लुग्रत बॆर्चि । रभसंबुतो दाकि रणमॊनर्रिप
नॆगसिन कॆंधूळि यॆल्लदिक्कुलनु । गगनभूभागमुल् गप्प नालोन
जीकटि मिगुल बॆर्चिनचंदमय्यॆ । नाकपिसेनकु नसुरसेनकुनु;
नप्पुडु तमतम यडियालमुलनु । दप्पक रणमु गॊंदऱु सेयुवारु;
पलुकुल सन्नल बरुलनि यॆड्रिगि । तलकॊनि पॆर्चि कॊंदऱु पोरुवारु;
२७८०
वारु वीरनक यॆव्वरिनैन दाकि । दारुणाक्रुतिनि गॊंदऱु पोरुवारु;
तरुचरावलि वैचु तरुलुनु गिरुलु । नुरुदैत्युलर्डरिचु नुग्रशस्त्रमुलु
बॆरसि नल्दॆसलकु बॆल्लुगा बड्रचि । पॊरिबॊरि जलचरंबुलभंगि नॊंद
मानैन धूळितम:पटलंबु । मानितांभोनिधि माड्कि गाविंचॆ।
नप्पुडायुभयसैन्यंबुल नडुम । नुप्पॊंगु तनुवुल नुरुलु रक्तमुन

होकर, 'यही यह आया युद्ध के लिए' इस बात को प्रकट करने के समान पताकाओं के आकाश में फहरने पर, कुटिल राक्षसवीरों के घोर-निस्साण, पटह, भेरी के भूरि-भांक्रुतियों के मुखरित होने पर, वितत रूप से लंका से निकल पड़ा, तो उसके साथ असंख्य चतुरंग-बल (सेना) के निकल पड़ने पर, गगन को फाड़ देनेवाला सिंहनाद करती हुई वानर सेना भी राक्षस सेना से भिड़ गई। इस प्रकार उभय बल उग्रता से सरभसवृत्ति से भिड़कर रण करने पर, उड़ी हुई लाल धूल ने समस्त दिशाओं तथा गगन-भूभाग को आच्छादित कर दिया, मानों उस कपिसेना तथा असुरसेना के मध्य अधिक अन्धकार व्याप्त हो गया। तब कुछ अपने-अपने (पक्ष के) चिह्नों को अवश्य पहचानकर युद्ध कर रहे थे, बोली के ढंग से ये पराये हैं, ऐसा जानकर, लगकर युद्ध कर रहे थे ॥ २७८० ॥

—कुछ ये और वे (अपने और पराये) न कहकर हर किसी से भिड़कर दारुण-आकृति से लड़ रहे थे। तरुचर-समूह के द्वारा फेंके जानेवाले तरु और गिरि, उरुदैत्यों के द्वारा फेंके जानेवाले उग्र शस्त्र—ये सब चारों दिशाओं में अतिशयता से फैलकर, क्रमश: जलचरों के समान दीखने पर, धूल के तम:पटल को मान्य अंबोनिधि के समान कर दिया। तब उभय-सैन्यों के बीच दैत्य-तरुचरपतियों के उत्साह से युद्ध करने पर, उमंग से भरे शरीरों से उमड़नेवाले रक्त से धरणी-पराग (धूल) (तर होकर) कम हो

धरणीपरागंबु दक्कॅ नादैत्य । तरुचरपतुलु युद्धमु वेड्क जेय;
नावानरुल युद्ध मग्गलंबैन । बावकाकृति नकंपनुडु गोपिंचि
नारि सारिंचि युन्नतसत्त्वुडनियॅ । सारथितोड नुत्साहंबु मिगुल :
"ग्राकुल गॉंडल मर्कटसेन । वीकतो राक्षसवितति नॉप्पिचॅ;
नादिक्कुनकुंगा रयंबुन दोलु । मा दर्पमुन नीवु मन रथं" बनुडु;
२७९०

वाडुनु बऱपिन वाडु नग्गलिक । वाडिमि दाकि यव्वनचरसेन
बॅडिदंपुशरमुल बॅल्लेयुटयुनु । जॅडि वलीमुखुलु निश्चेष्टितुलय्यु
हनुमंतुडडरिन नतनितो गूड । दनुजसैन्यंबुल दाकिरि बॅट्टु;
अप्पुडु मेरुनगाकृति नुन्न । यप्पवनजुमीद नय्यकंपनुडु
वीररसस्फूर्ति वॅल्लुवदॉट्टि । घोरंपुटार्पु निर्घोषमै चॅलग
गडुबॅल्लुगा लयकालमेघंबु । वडुवुन नुरुशरवर्षंबु गुरिय
नवि गणिपक यट्टहासंबु सेसि । पवननंदनुडंत ब्रळयकालाग्नि
रुद्रुनिकैवडि रूक्षकटाक्ष । रौद्ररसंबु घोरंबुगा निगुड
विगतभयुंडुनै वेळ्ळतो गूड । नगलिंचि पॅऱिकि महाशैलमॅत्ति
वैचॅनु नमुचिपै वज्रि वज्रंबु । वैचिनचंदान वारणलेक; २८००

गया। वानरों के युद्ध के अधिक (असहनीय) हो जाने पर पावक की आकृति धारण कर, अकंपन ने क्रुद्ध होकर, उस उन्नत-सत्ववाले ने नारी (धनुष की डोरी) का संधान कर, सारथी से उत्साह से (यों) कहा— "वृक्षों (और) पर्वतों से मर्कटसेना ने साहस से राक्षस-वितति को पीड़ित किया। उस ओर शीघ्रता से दर्प के साथ तुम हमारा रथ चलाओ।" (ऐसा) कहने पर, ॥ २७९० ॥

—उसने भी (रथ) चलाया। वह अतिशय पराक्रम से वनचर-सेना से भिड़कर, अनेक क्रूर शरों के चलाने पर, वलीमुख (वानर) निश्चेष्ट हो गए। हनुमान के आगे बढ़ने पर उसके साथ ज़ोर से दनुजसेना भिड़ गई। तब मेरुनग की आकृति वाले उस पवनज पर अकंपन ने वीररस स्फूर्ति की बाढ़ बनकर, घोर-निश्वास के निर्घोष के समान मुखरित होने पर, अत्यधिकता से प्रलयकाल के मेघ के समान अधिक शरवर्षा की। उनकी परवाह किए बिना, अट्टहास कर, पवननन्दन तब प्रलय कालाग्नि-रुद्र के समान रूक्षकटाक्ष-रौद्ररस के घोर रूप से उमड़ने पर, विगतभयवाला हो, महाशैल को समूल उखाड़कर, दुर्निवार रूप से नमुचि पर वज्रि (इन्द्र) के वज्र डालने के समान फेंक दिया॥ २८०० ॥

दानवुंडर्धचंद्रप्रदरमुन । दानि नुग्गाड नुद्धतशक्ति मॆऱसि
मानितंबगु सत्त्वमहिम दीपिंप । गा नग्निकणमुलु गन्नुलु दॊरुग
जनि वेग वेऱॊक्क शैलंबु वॆऱिकि । कॊनिवच्चि यऱिमुऱि ग्रूरुडै यार्चि
कडुबॆट्टिदमुग राक्षसुमीद वैव । वडिगॊनि तुमुरुगा वाडदि द्रुंचॆ;
दानिकि मारुतितनयुंडु गिनिसि । वे नगंबुनु बोनि वृक्षंबु वॆऱिकि
यडुगुल बॆट्टुन नवनि गंपिंप । मिडुगुरुगमुलु ग्रम्मॆडु कन्नुलॊप्प
मसलक तक्किन म्राकुलु विऱुग । विसरि याडुचु दैत्यविततिपै गविसि
रथिकुल जंपि सारथुल गीटडचि । रथरथ्यमुलनु धरास्थलि गॆडपि
गॊम्मुलु नॆम्मुलु गुंभस्थलमुलुनु । नम्मीदि जोदुलु नंकुशंबुलुनु
बॊरिबॊरिगंटलु भूषणंबुलुनु । जरणंबुलुनुगूड सामजप्रतति २८१०
नडपरगा व्रेसि यंदु गॊन्निटि । बॊडिपॊडिगा व्रेसि पुडमिपै गलपि
तुमुरुगा रौतुलतोनु गुर्ऱमुल । समयिंचि काल्वुर जदियंग मोदि
यंतकाकृति बेर्चु हनुमंतुमीद । नंतरंगमुन गोपाविष्टुडगुचु
वाटंबुगा दैत्यवरुडुच्चिचपाऱ । नाटिंचि यॊकपदुनाल्गुबाणमुल

दानव ने उसे अर्द्धचन्द्रप्रदर से चूर कर दिया। (तब) उद्धत-शक्ति से प्रकाशित होकर, मान्य सत्व-महिमा से दीप्त होकर, आँखों से अग्निकणों के गिर पड़ने पर, जाकर एक और पर्वत को उखाड़कर, लाकर जल्दबाजी से, क्रूर हो, सिंहनाद कर, बड़े ज़ोर के साथ राक्षस पर डाल दिया। झट उसने (दानव ने) उसे ग्रहण कर चूर-चूर कर दिया। उसपर मारुति-तनय क्रुद्ध हो, झट नग (पर्वत)-समान वृक्ष को उखाड़कर, पद-गति से अवनि के कम्पित होने पर, जुगुनुओं के समूहों (स्फुलिंगों) से घिर आँखों के शोभित होने पर, अन्य वृक्षों के टूटने पर, घुमाते हुए, दैत्यवितति पर आक्रमण कर, रथिकों को मारकर, सारथियों के दर्प का उन्मूलन कर रथ और रथ्यों (अश्वों) को धरास्थल पर गिराकर (मिट्टी में मिलाकर), दाँतों, हड्डियों, कुंभस्थलों, (तथा) उनपर के योद्धाओं, अंकुशों को, क्रम से घंटाओं, भूषणों (तथा) चरणों के साथ सामज-प्रतति (हाथियों के समूह) को, ।। २८१० ।।

—पिंड (मिट्टी के पिंड) के समान करके, उनमें कुछ (हाथियों) को चूर-चूरकर, मिट्टी में मिलाकर, घुड़सवारों के साथ घोड़ों को एक साथ मार डालकर, पैदल (सैनिकों) को मार-मार सपाट कर, अंतक की आकृति से शोभित होनेवाले हनुमान पर, अन्तरंग से कोपाविष्ट होते हुए, दैत्यवर ने चौदह बाणों को ढंग से चलाया जो (हनुमान के) आर-पार चले गए। (हनुमान के) हाथ के अश्वकर्णवृक्ष को चूर-चूरकर, प्रसन्न होते हुए

गरमुन गल यश्वकर्णवृक्षमुनु । मुरियलु गाविंचि मुरियुचु नाचें,
नप्पुडु नेंतुरुलडर नशोक । मोप्प बूचिनक्रिय नोप्पि यालोन
हनुमंतुडोकवृक्ष मवलील बेरि्कि । तनर नकंपनु तल व्रेयुटयुनु
पोरिबोरि बगिलिन पुनुकलतोड । नरभोजनुंडु प्राणंबुलु विडिचें
लोकंबुलगल बेल्लुन गोंडगूलु । नाकृति बेट्टुगा नवनिपै गूलि;
वाडु गूलिनयंत वानरोत्तमुनि । वाडिमिकोर्वक वाडु दम्मेदुर २८२०

दनुजुलु गनुकनि दललोलि वीड। जनि लंक सोच्चिचरि संभ्रमिचुचुनु
नगचरेश्वरुलुनु हनुमंतु कडिमि। बोगडिरि तम मनंबुल मेच्चिच मेच्चि;
परुलचे ननि नकंपतुडु गूलुटयु । बरितापमुन बोंदि पंक्तिकंधरुडु
"मनुजुल गपुलनु मरणमोंदिचि । चनुदेम्मु नी बलशौर्यमुल् मेरसि"

महाकायुडु युद्धमुनकु वच्चुट

यनि महाकायुनि नप्पुडु पनिचें; । बनिचिन बनिपूनि यपुडु
रमणीयतर मयूरध्वजंबोप्प । नमितमणिप्रभलखिलंबु निंड
बनुगोन्न शस्त्रास्त्रपंक्तुलु मेरय । घनपिशाचानन गार्धभप्रतति
पूनिन यरदंबु बोलुपार नेक्कि । नानास्त्रशस्त्रसन्नद्ध सैन्यमुलु

सिंहनाद किया। तब रक्त के अधिकता से प्रवहित होने पर पुष्पित अशोकवृक्ष के समान शोभित हनुमान ने इतने में एक वृक्ष को अनायास उखाड़कर, अकंपन के शिर पर दे मारा। उस नरभोजन (राक्षस) ने सिर के फूटने पर लोकों के विचलित होने पर झट पर्वत के गिरने के समान धरा पर गिरकर प्राण छोड़ दिए। उसके गिरते ही वानरोत्तम के प्रताप को सहन न कर सक, उसके पिल पड़ने पर, ॥ २८२० ॥

—दनुज, सिर के बालों के बिखेरने पर, संभ्रमित होते हुए, लंका में घुस पड़े। अपने मनों में सराहते-सराहते नगचरेश्वरों (वानरों) ने हनुमान के साहस की प्रशंसा की। शत्रुओं से युद्ध में अकंपन के गिरने पर पंक्तिकंधर परितप्त हुआ। "मनुजों (तथा) कपियों को मारकर, अपने बलशौर्यों से प्रकाशित होकर वापिस आओ," ॥ २८२४ ॥

महाकाय का युद्ध के लिए आना

—(ऐसा) कह महाकाय को तब भेजा। भेजने पर वह भी चाहकर तब रमणीयतर मयूरध्वज के शोभित होने पर, अमित मणि-प्रभाओं के अखिल (समस्त लोक) में भर जाने पर, दीप्त बनी शस्त्र-अस्त्र-पंक्तियों के चमकते रहने पर, महान् पिशाचों के मुखवाले गार्धभ (गधे)-समूह से जुते हुए रथ

नडवंग निस्साणनादंबुलेंसग । नडियालमैन तूर्यंबुलु मोंरय
दनरिन दक्षिणद्वारंबुनंदु । विनुत विक्रमशालि वेडलें वेगमुन; २८३०
नप्पुडु गुरिसें बै नस्थुल वान; । सोंप्पड बिडुगुलु सोनलै पडियें;
गोंडुगुल बडगलु गूलें; गूलटयु । नडरि महाकायुडवि येंल्ल गोंनक
कडिमि वानरसेन गदिसि ताकुटयु । बुडमि सलिपनप्पुडु वलीमुखुलु
दरुशैलविततुलु तरुचुगा मीद । गुरियुचु दाकिरि क्रूरदानवुल;

वानर राक्षसुल भीकर समरमु

नप्पुडु दानवु लासेन मीद । नुप्पोंगु बीरंबु लोंप्पुचुनुंड
दडबडगा नरदंबुलु वऱपि । कडुवेगमुन गरिघटल डीकोंलिप
तुरग दळंबुल दोलियु नुग्र । तरमुगा मुंचि पदाति द्रोंचियुनु
गरवालमुल द्रुंचि गदल नोंप्पिंचि । सुरियल नाटिंचि शूलाल बोंडिंचि
परिघल विदळिंचि प्रासाल नोंचि । शरपरंपर लेसि चक्रमुल् वैचि

पर शोभा से सवार होकर, नाना अस्त्र-शस्त्र से सन्नद्ध (लैस) सैन्यों के साथ-साथ चलने पर, निस्साणों के नादों के मुखरित होने पर, (अपने) चिह्न बने तूर्यों के बजते रहने पर, शोभित दक्षिणद्वार से (वह) विनुत विक्रमशाली झट चल पड़ा ॥ २८३० ॥

तब ऊपर से हड्डियों की वर्षा हुई । शोभा से लगातार बिजलियाँ (टूट) गिरीं । छत्र-चामर गिर पड़े । गिर पड़ने पर भी उद्धत बन महाकाय उनकी (अपशकुनों की) परवाह न कर, साहस से वानरसेना के निकट पहुँचकर (उनपर) टूट पड़ा । (तब) पृथ्वी कम्पित हुई । वलीमुख (वानर) लगातार तरु-शैल-विततियों (-समूहों) को बरसाते हुए, भयंकरता से जूझ पड़े ।

वानर और राक्षसों का भीकर समर

तब दानव उस (वानर) सेना पर, उमड़ते हुए, दंभपूर्ण वचनों से शोभित होते हुए, रथ चलाकर जिससे शत्रु लड़खड़ाए, अतिवेग से करि-घटाओं (मेघरूपी गजों) को सामना करने के लिए प्रेरित कर, तुरग-दलों को चलाकर, उग्रतर रूप से (शत्रुओं को) डुबोकर, पदातियों (पैदल सैनिकों) को ढकेलकर, करवालों से काटकर, गदाओं से पीड़ित कर, छुरियाँ भोंककर, शूलों को चलाकर, परिघाओं को विदलित कर, प्रासों (एक प्रकार का शस्त्र) से सताकर, शर-परम्पराएँ चलाकर, चक्र फेंककर, पट्टिस (बड़े खड्ग) भोंककर, परशुओं से चीरकर, नियराकर, क्रुद्ध हो मुद्गरों से मारकर, ॥ २८४० ॥

पट्टिसंबुल ग्रुच्चि परशुल व्रच्चि । किट्टि मुद्गरमुल गिनिसि दट्टिंचि
२८४०
मिगिलिन, गपुलुनु मेटि रक्कसुल । नग पादपमुल वानल मुंचि; रंत
नारभसंबुन नवनीपराग । मा रविमंडलंबतयु गप्पे;
नारज:पटलंबु नंदिरुवागु । बोरुचो नोंडोरु बोंडगानराक
तरुवुलु गोंडलु दऱचु ग्रोयुचुनु । देरलंग मीद नेतेंचु चक्कटिकि
नुरुवडि नेयुदुरुग्र दानवुलु । शरपरंपर लाकसंबुन गप्प;
बरग शस्त्रंबुलु बट्टिसंबुलुनु । शरमुलु दोमरचयमु ब्रासमुलु
वडि ग्रोयुचुनु मीद वच्चु चक्कटिकि । विडुतुरु तरुशैल विततुलु गपुलु;
नंत बोवक चेंवुलंदुनु धूळि । येंतयु निंडिन निरुवागुवारु
ग्रोयु चक्कटिकि निम्मुल विक्रमंबु । सेयु नेर्पुलु दक्क जेयुचु नपुडु
कपि वीडु नाक राक्षसुडु वीडनक । चपलत्वमुन बेल्लु चंपुदुरेचि
२८५०
यट्टु वोर दनुवुल नडरु रक्तंबु । पट्टु नदुलयि रज: पटलंबु नणप
दिमिरंबु वासियु दीप्त तेजमुन । नमरुलु वेऱगंद ननि सेयुनपुडु

—आगे बढ़े। कपियों ने भी श्रेष्ठ राक्षसों को नग (और) पादपों की वर्षा में डुबोया। तब उस रभस के कारण उत्पन्न अवनी-पराग (धूल) ने रविमण्डल को ढक दिया। उस रज:पटल में दोनों पक्षवाले एक-दूसरे को देख न सकने पर भी लड़ते रहे। तरु और पर्वतों के अक्सर (लगातार) मुखरित होते, (अपने) ऊपर आने के विधान को देख, उग्र दानव झटपट शरपरम्पराओं का प्रयोग करते हैं, जिससे आकाश ढक जाए। शोभा से शस्त्र, पट्टिस, शर, तोमर-चय (-समूह), प्रास (आदि) के शीघ्र मुखरित होते (अपने) ऊपर आने के विधान पर कपि तरु-शैल-विततियों को डाल देते हैं। अलावा इसके (धूल के उड़कर, सब कुछ अन्धकारमय होने के अतिरिक्त) कानों में भी धूल भर गई। दोनों पक्षवाले (अस्त्र-शस्त्रों के) मुखरित होने तथा शोभा से विक्रमपूर्ण ढंग से (शत्रुओं के किए जानेवाले) चातुर्यों के न सुनाई पड़ने पर (पहले तो दिखाई नहीं पड़ रहा था अब सुनाई भी नहीं पड़ रहा है), यह कपि है, यह राक्षस है, ऐसा न जानकर, चपलता से विजृंभित होकर (परस्पर एक-दूसरे को) मार डालते हैं ॥ २८५० ॥

इस प्रकार जूझते समय शरीरों (के घावों) से अधिकता से निकलनेवाले रक्त के पट्टु (बड़ी) नदियाँ बनकर, रज:पटल का दमन करने पर, तिमिर दूर हो गया। (तब) दीप्त तेज से, अमरों के आश्चर्यचकित होने

वेस दैत्युलकु गाक विऱिगि याकपुलु । कसिमसियै कनुकनि बाऱुटयुनु
गनि यंगदुडु वल्कै : "गपिवीरुलार! । कनुकनि निट्टुपाऱगानेल येनु
गलुगंग" ननि वारि ग्रम्मऱ ननिकि । दलकॊन जेसि युत्साहंबुतोड
नॊक महापर्वत मुरुवडि नॆत्ति । यकलंकुडै राक्षसावळि मीद
नडव नातनि तोड नलि नार्चि यार्चि । नडचिरि वानरनायकुलेचि;
यंगदुंडुनु बेर्चि यसुरुल गिट्टि । यंगद दरुपर्वतादुलु वैचि
पॆडचेत बडद्रोचि पिडिकिळ्ळ बॊडिचि । यडरि मुंजेतुल नंगमुल् मोदि
मोचेत बगुलंग मॊगमुलु सदिपि । पूचि शस्त्रास्त्रमुल् पॊडि पॊडि
सेय २८६०
गऱकु राक्षसुलु नंगदुनकु गाक । विऱिगि हाहाकार विवशुलै तूलि
नलुगड बाऱ नुन्नतशक्ति वारि । "वलवदोहो!" यनिवारण सेसि
ख्याति मिंचिन महाकायुनि मंतृ । लाततमति रुधिराशनुंडनग
वाळॆडिवाडुनु वज्रनाभुंडु । गालदंष्ट्रुंडुनु गालकल्पुंडु
मऱि वपाशुडु शतमायुंडु धूम्रु । डऱिमुऱि दुर्धरुंडनुवाडु गडगि
यट्टहासमु सेसि यगसरसेन । गिट्टि नॊप्पिप वीक्षिचि पृथुंडु
बनसुंडु मेघपुष्पकुडु गवाक्षु । डुनु ऋषभुडु गजुडुनु ग्रोधनुंडु

पर युद्ध करते समय, झट दैत्यों के हाथ हारकर, कपि नष्ट-भ्रष्ट हो, सकपकाकर भागने लगे (तो उन्हें) देख अंगद ने कहा—'हे कपिवीरो ! मेरे रहते इस प्रकार सकपकाकर भागने की क्या आवश्यकता है ?' (ऐसा) कह उन्हें पुनः युद्ध के लिए प्रवृत्त कर, उत्साह से, एक महापर्वत को झट से उठाकर, अकलंक हो, राक्षसावलि की ओर चल पड़ा तो क्रम से उत्साहित हो, सिंहनाद कर, वानरनायक विजृंभित हो चल पड़े। अंगद ने भी क्रम से असुरों के पास जाकर, उत्साह से तरु-पर्वत आदि डालकर, वाम कर से गिराकर, मुट्ठियों से मारकर, मणिबन्धों से शरीरों पर प्रहार कर, कुहनी से मुख तोड़कर, लगकर (राक्षसों के) शस्त्र-अस्त्रों को चूर-चूर कर दिया ॥ २८६० ॥

(तब) क्रूर राक्षस अंगद के हाथ हारकर, हाहाकार करते हुए लड़खड़ाकर चारों दिशाओं में भागने लगे तो उन्नतशक्ति से 'ऐसा मत करो, न करो' कहते (उन्हें) निवारित कर, महाकाय के प्रख्यात मन्त्री तथा आततमति वाले रुधिराशन, वज्रनाभ, कालदंष्ट्र, कालकल्प, वपाश, शतमायु, धूम्र, जल्दबाज दुर्धर नामक (राक्षसों) ने सयत्न अट्टहास कर, अगचरसेना के निकट जाकर, (उन्हें) पीड़ित किया। (उसे) देख पृथु, पनस, मेघपुष्पक, गवाक्ष, ऋषभ, गज, क्रोधन, शतबलि, तार (आदि वानर-

शतबलि तारुंडु सबलुलै वारि । नतुलित गति दाकि यनि सेयुनपुडु
रुधिराशनुंडंत रोषंबुतोड । नधिक बाणमुलु गवाक्षुपै नेय
वेगंबॆ पर्वत वृक्षंबु लॆत्ति । यागवाक्षुडु रुधिराशनुवैचॆ; २८७०
वैचिन नडुमने वानि नन्निटि । नेचि चूर्णंबुगा नेसि गवाक्षु
बडनेसॆ; मूर्छंचे बडिन गवाक्षु । बॊडगनि तारुडप्पुडु कलुषिंचि
पॆडपॆड नार्चुचु बॆडिदंबु मिगुल । गडुनुग्र रणबलकौशलंबमर
घनमैन सालवृक्षंबॆत्ति व्रेसॆ । ननुवंद रुधिराशु नरदंबु मीद;
नारुधिराशनुंडम्महीरुहमु । बोरन नडुमनॆ पॊडि पॊडि सेसि
पदि बाणमुल दारु बडनेसि मिंचि । कदिसि च्रलंबुन गपिसेन गिट्टि
कडु नुग्रुडयि लयकालंबुनाडु । मिडुक लोकमुलॆल्लम्रिंगु नंतकुनि
याकृति गैकॊनि यासेनतोड । भीकर वृत्तितो बेर्चुचु नुंडॆ
नप्पुडॊक्किंत गवाक्ष तारुलुनु । दॆप्पिरि कनुविच्चि तॆलियंग जूचि
यंतलो गदगॊनि यडरि गवाक्षु । डंतकाकृति रुधिराशु मस्तकमु २८८०
व्रेसिन नसुरयु विकृतांगुडगुचु । बासॆ ब्राणमुलकु; बडियॆ दत्तनुवु;
ननि वज्रनाभुडुदग्रुडै पृथुनि । गनुगॊनि पॆल्लेसॆ घनसायकमुल;

नायकों) के सबल हो, अतुलित गति से, (राक्षसों से) टकराकर युद्ध करते समय, रुधिराशन ने तब रोष से गवाक्ष पर अधिक बाण फेंके। शीघ्र गवाक्ष ने पर्वत-वृक्षों को उठाकर रुधिराशन पर डाला ॥ २८७० ॥

डालने पर बीच में ही उन सबको चूर्ण कर, गवाक्ष को गिरा दिया। मूर्च्छित हो गिर पड़े गवाक्ष को देखकर तार ने तब क्रुद्ध होकर, ज़ोर से सिंहनाद करते हुए, कठोर (तथा) अधिक उग्र रण-बल-कौशल से शोभित होकर, एक महान् सालवृक्ष को उठाकर, औचित्य से रुधिराशन के रथ पर डाल दिया। वह रुधिराशन उस महीरुह (वृक्ष) को झट बीच में ही चूर-चूरकर, दस बाणों से तार को गिराकर, विजृंभित हो, हठ से कपिसेना के निकट पहुँच, अतिउग्र हो, लयकाल के समय संतप्त समस्त लोकों को निगल जानेवाले अन्तक (यमराज) की आकृति को धारण कर, उस सेना के साथ भीकरवृत्ति से जूझता रहा। तब गवाक्ष और तार थोड़ा होश में आकर, आँखें खोलकर, देखकर, समझकर, झट गदा ले विजृंभित हुए, गवाक्ष ने अन्तक-आकृति से रुधिराशन के मस्तक पर, ॥ २८८० ॥

—दे मारा, असुर ने भी विकृतांग वाला होकर, प्राण छोड़ दिए। उसका शरीर भी गिर गया। युद्ध में वज्रनाभ ने उदग्र हो पृथु को देखकर

बृथिवीधरमु वैचॅ बृथुडप्पु; डतडु । प्रथितंबुगा नेसॅ बदि व्रय्यलुगनु;
बृथुडुनु रोषसंभृतुडुनै वानि । रथंमुपैंकेॅन्तयु रयमुन नुड्रिकि
विल्लु खंडमुलु गाविंचि गुर्रंमुल । डॉल्लिचि रथमु वेॅट्टुग नुग्गुसेसि
यनयंबु गोपिंचि यव्वज्रनाभु । घनशक्ति वलकेल गडकाळ्ळु वट्टि
वैसद्रिप्पि नेलतो व्रेसि रोषमुन । नसुवुल बेडबापि यापृथुंडार्चें;
बखवडि ऋषभुनिपै गालदंष्ट्रु । डुरुशक्ति गॉलिपे महोद्धतदंति;
नटु मीद जनुदेंचु नग्गजंबुनकु । नटुनिटु तॉलगक या ऋषभुंडु
वेगंब तन पदद्वितयमॉक्कटिग । लागिंचि कुंभस्थलंबु दन्नुटयु
२८९०

मदकरि घींकृति मानक निगुड । नदि यॉक विंटिपट्टुरिगॆ वेॅन्ककुनु
मर्रियुनु ऋषभुंडु मानक मीद । दरिमि यय्येनुगुदंतंबु वैड्रिकि
बागॉप्प व्रेसि यप्पटुकरि जंपि । लागुनु वेगंबु लावुनु मेड्रसि;
कालदंष्ट्रुनि गिट्टि कालॉगि बट्टि । केळिमै धर व्रेसि गीटडगिंचॆ
नसुरसैन्यंबु हाहारवंबंद; । नसमुन गपिसेन यार्चे नंदंद;
कालकल्पुडु नग्निकल्प बाणमुल । पालु गाविंचॆ नप्पनसुनिगिट्टि;

अधिक संख्या में महान् बाण फेंके। तब पृथु ने एक पृथिवीधर (वृक्ष) को फेंका। उसने प्रथित रूप से उसके दस टुकड़े कर दिए। पृथु ने भी रोषसंभृत हो, उसके रथ पर अतिशीघ्रता से दौड़कर, धनुष को टुकड़े कर, घोड़ों को लुढ़काकर, रथ को कठिनता से चूरकर, सदा क्रुद्ध होते, उस वज्रनाभ को घनशक्ति से बाँए हाथ से टाँगें पकड़कर, शीघ्रता से घुमाकर, रोष से, ज़मीन पर पटककर (राक्षस को) प्राणरहित कर, (पृथु ने) सिंहनाद किया। झट ऋषभ पर कालदंष्ट्र ने उरुशक्ति से महा-उद्धत-दंति (-हाथी) को चलाया। अपने ऊपर आनेवाले उस गज को (देख), इधर-उधर न हटकर, उस ऋषभ ने वेग से अपने पद-द्वितय (चरण द्वय) को एक कर, खींचकर (उसके) कुंभस्थल पर लात मारी, ।। २८९० ।।

—(तब) वह मदकरि चिंघाड़ते हुए पीछे इतनी दूर चला गया जितना (चलाने पर) एक तीर जाता है। फिर भी ऋषभ ने न छोड़कर, पीछा कर, उस हाथी के दाँत को उखाड़कर, शोभा से प्रहार कर, उस महान् गज को मारकर, लाघव, वेग, बल से दीप्त हो, कालदंष्ट्र के निकट पहुंच, (उसकी) टाँग को औचित्य से पकड़कर, केलि से (खेल में जैसा) (उसे) धरा पर पटककर, दर्प का दमन कर दिया जिससे असुरसैन्य में हाहाकार फैल गया, दर्प से कपिसेना ने लगातार सिंहनाद किया। कालकल्प ने पनस के पास पहुँच, अग्निकल्प बाणों का भागी बनाया। पनस ने उस रथ पर लाँघकर,

पनसुडय्यरदंबु पैकि लंघिंचि । मुनु बॅट्टुगा गुर्रमुल जदियिंचि
सारथि बडदन्नि सत्त्वमेपार । नारथंबॅल्ल नुग्गयि रालगॉट्टि
पिडिकिट गळसंधि बॅट्टुगा गिट्टि । पॉडिचॅ नक्कालकल्पुडु दन्नुकॉनग;
बॉडिचिन वाडु नप्पुडु पंड्लु डुल्लि । दॉड दॉड नोर नॅत्तुरु ग्रक्कुकॉनुचु
२९००

मिडुकुचु ग्रुड्डुलु मिडुक ब्राणमुलु । विडिचॅ राक्षसुलॅल्ल विस्मयमंद;
वलियुडै कपुल वपाशुंडु गिट्टि । चलमुन नेचि जर्जरितुल जेय
वानिपै बाषाणवर्षंबु गुरिसॅ । जानुगा गजुडाकसंबॅल्ल निंड;
ना वपाशुडु वानि नन्निटि नडुम । गाविचॅ दुनियलुगा नंपगमुल;
गाविंचि मड्रियुनु गजुनुरुमाड । बावकाभमुलैन बाणंबुलेडु
नेसि वॅंडियु गिट्टि इरुवदेॅनिंट । नेसि नूरिंट मेनेसॅ दूरंग;
गजुडु नय्यम्मुल गडुनॉच्चि वानि । निजरथंबंतयु नॅळ नॅळ विरुग
गरुडुनि विधमुन गडुवेग दाकि । करिगोपुराग्रमुग्रत द्रोयु करणि
नावपाशुनि तल यट्टकु बासि । पोवैचॅ नप्पुडु भूमिपै बडग;
रोषिंचि यपुडु धूम्रुडु दुर्धरुंडु । भीषणास्त्रमुल नॉप्पिंचि वानरुल
२९१०

प्रथमतः भयंकरता से अश्वों को मार डालकर, सारथी को लात मार गिराकर, सत्त्व के विजृंभित होने पर, उस समस्त रथ को चूर-चूर कर, मुट्ठी से उस (राक्षस) के गलसंधि के पास दृढ़ता से प्रहार किया जिससे वह तड़पने लगा। ऐसा मारने पर उसने तब दाँतों के टूट गिरने पर, मुँह से रक्त उगलते हुए, ।। २९०० ।।

—आँखों के बाहर निकल आने पर, समस्त राक्षसों के विस्मित होने पर, प्राण छोड़ दिए। (तब) वपाश ने बली हो कपियों के निकट जाकर, हठ से, सताकर, जर्जरित करने पर, गज ने उसपर शोभा से पाषाणों की वर्षा की जिससे आकाश भर गया। उस वपाश ने बाण-समूह से उन सबको बीच में टुकड़े कर दिया। (टुकड़े) कर और गज को चूर करने के लिए पावक-समान सात बाण डालकर, और फिर (उसके) निकट जाकर, पच्चीस (बाण) डालकर, फिर सौ बाण डाले जो (उसके शरीर में) घुस गए। गज उन बाणों से अति पीड़ित होकर, गरुड़ के समान अति वेग से (उस राक्षस के) अपने रथ पर कूद पड़ा जिससे वह टूट गया। करि के गोपुर-अग्र (भाग) को उग्रता से गिराने के समान, उस वपाश के सिर को तब धड़ से अलग करते हुए भूमि पर गिरा दिया। तब रुष्ट होकर धूम्र (और) दुर्धर ने भीषण-अस्त्रों से वानरों को पीड़ित कर, ।। २९१० ।।

दऱिमिन गिनुक ग्रोधनमेघपुष्पु । लुऱक रथंबुलकुऱिकि वारलनु
गरतलंबुल मस्तकंबुलु सऱचि । दुरमुन गॆडपिरद्भुत शक्ति मॆऱसि;
यटु वारु हतुलैन नसुरु लंदंद । पटुरयंबुन जॆडि पाऱिरि भीति;
नसुरुलु वाऱुट यप्पुडु चूचि । मसलक वडि शतमायुंडु वेंचि
कविसिनचो बरिघम्मुद्धरिंचि । कविसि यातनिमीद गजु डॆंदिरिप
ज़लमॊप्प ऋषभुंडु शतबलि पनसु । डलुक गवाक्षु नलांगदुल् गूडि
कडगि वृक्षंबुलु घनशैलमुलुनु । मडवक याशतमायुपै वैव
शर तोमर प्रास चक्र गदासि । वरशस्त्र चयमुल वर्षंबु गुरिसि
वडि शतमायुंडु वनचरेश्वरुल । बॆडिदंबुगा नॊंचि पॆल्लार्चॆं;
वानिचे नटुनॊच्चिच वानराधिपुलु । मानक रोषसमग्रुलै कविसि
२९२०
यडरि गवाक्षुंडु हयमुल जंपॆ; । गडगि खंडिचॆ नंगदुडु बताक;
बऱियलुगा द्रॊक्कॆ बनसुंडु रथमु; । नुरुमुगा ऋषभुंडु नॊंचॆ सारथिनि;
नलवॊप्प नलुडु शस्त्रास्त्रमुल् विऱिचॆ; । ज़लमुन बिडिकिट शतबलि
वॊडिचॆ

—भगाया (तो) क्रोध से क्रोधन (और) मेघपुष्प ने एकदम (उनके) रथों पर कूदकर, अद्भुत शक्ति से प्रकाशित होकर, करतलों से उनके मस्तकों पर प्रहार कर, युद्ध में उन्हें समाप्त कर दिया। ऐसा उनके निहत होने पर भीति से असुर शीघ्रता से इधर-उधर भाग गए। असुरों के भागते तब देख, विलम्ब न कर, झट शतमायु विजृंभित हो, परिघा को उठाकर भिड़ गया। भिड़नेवाले उसका सामना किया गज ने। हठ से ऋषभ, शतबलि, पनस, क्रोध से गवाक्ष, नल, अंगद (आदि) एकत्र होकर, सयत्न वृक्षों, घनशैलों को निष्फल न कर (ठीक लक्ष्य पर), उस शतमायु पर डालने पर, झट से शर, तोमर, प्रास, चक्र, गदा, असि (आदि) वर-शस्त्र-चय की वर्षा कर, शतमायु ने वनचरेश्वरों को तीव्रता से सताकर घोर सिंहनाद किया। उससे उस प्रकार सताए जाकर, वानराधिप न रुककर, रोषसमग्र हो जूझ पड़े ॥ २९२० ॥

विजृंभित हो गवाक्ष ने अश्वों को मार डाला, सप्रयत्न अंगद ने पताका का खण्डन कर दिया, पनस ने रथ के टुकड़े कर कुचल दिया, ऋषभ ने सारथी को चूर कर दिया, शोभा से नल ने शस्त्र-अस्त्रों को तोड़ दिया, हठ से शतबलि ने मुट्ठी से मारा। मुष्टिघात की परवाह न करते हुए, अतिलघुता से गरुड़ के समान पटु सत्त्व से तलवार (और) ढाल ले, चटुल-वेग से शतमायु (आकाश की ओर) उछला। बड़ी तत्परता से (युद्धभूमि

बिडिकिटि पोटुन बिम्मिटि गौनक । कडुलघुत्वंबुन गरुडुंडु वोले
बटु सत्त्वमुन वालु बलकयु गौनुचु । जटुल वेगंबुन शतमायुडेगय
बरवसंबुन वालु बडियुन्न ब्रद्द । परियुनु गौनि शतबलियु दो नेगसे;
नेगसि भेरुंडंबुलेडरेंडु गविसि । यौगि बोरु तेरुगुन नुरुवडि मिगुल
व्रेयुचु दिरुगुचु वेस दप्पुकौनुचु । बायुचु डायुचु बाटवंबौप्प
गेरलुचु देरलुचु ग्रिदु मीदगुचु । बौरि बौरि नाकसंबुन बोरुतरिनि
शतमायु डडिदंबु जळिपिंचि पून्चि । शतबलि विपुल वक्षंबेयुटयुनु
२९३०
सरभसुंडै यप्पुडु शतबलि ब्रद्द । परिदप्प नौड्डि कृपाणोग्रधार
व्रलमुन देग व्रेसे शतमायु तौडलु । तलक्रिंदुगा वाडु धरमीद बडग;
नविसे दैत्युनि तल यतंत जेदरि । यवनिपै गिरि शृंग मवियु चंदमुन;
शतमायु डम्मैयि जच्चिन गपुलु । शतबलितोड नच्चट नार्चुटयुनु
धरणि मिन्नुनु गुणध्वनि बीटलेगय । नरदमत्युग्ररयंबुन बरुपि
यंगद नपुडु महानादुडार्चि । यंगदु मेन मूडम्मुलु ग्रुच्चि

महानादु डंगदुनितो बोरि मडियुट

मरियुनु वेस नेय मर्कटेश्वरुडु । वरुलु कोपंबुन वानिपै गिट्टि

में) पड़े हुए तलवार, ढाल लेकर शतबलि भी (उसके) साथ ही उछला। उछलकर, वे दो भेरुंडों (पक्षियों) के भिड़कर लड़ने के समान, शीघ्रता से वार करते हुए, घूमते हुए, (शत्रु के वार से) बचते हुए, दूर होते हुए, नियराते हुए, पटुता के शोभित होने पर, उत्साहित होते हुए, ऊपर-नीचे होते हुए, क्रम से आकाश में लड़ने लगे। उस समय शतमायु ने खड्ग को चमकाकर, सप्रयत्न शतबलि के विपुलवक्ष पर दे मारा, ॥ २९३० ॥

—तो सरभसता से तब शतबलि ने ढाल को आगे कर (उस वार से) अपने को बचा लिया और कृपाण की उग्र धाराओं से, हठ करके शतमायु की जाँघों को काट डाला तो वह सिर के बल पृथ्वी पर गिर पड़ा। दैत्य का सिर, अवनि पर गिरिशृंग के (छिन्न-भिन्न हो) छितराने के समान छितरा गया। शतमायु के उस प्रकार मरने पर कपियों के शतबलि के साथ वहाँ सिंहनाद करने पर, गुणध्वनि (धनुष्टंकार) से धरणि और आकाश में दरारें पड़ जाने पर, रथ को अत्युग्रता से चलाकर, उत्साह से तब महानाद ने सिंहनाद कर, अंगद के शरीर में तीन बाण जड़ दिए,

महानाद का अंगद से लड़कर मरना

—और भी (बाण) झट डालने से मर्कटेश्वर विवर्धित क्रोध से उसके पास

योजनायतगिरि योंकटि रथंबु। पै जवंबुन वैव बडकुंड वाडु
नडुमने गद वैचि नगमेल्ल बोंडिग। वडि द्रुंप गोर्पिंचि वालिनंदनुडु
नतनि रथंबुन कवलील दाटि। चतुर सत्त्वोन्नति जापंबु विड्रिचि
२९४०
पट्टि रथंबुपै बडवैचि ड्रोम्मु। मेट्टि ग्रुड्डुलु वडि मिडिकि रोजगनु
मेड नुलिचि त्रेंचि क्रम्मिन नेत्तुरोलुक। बुडमिपै वैचें नप्पुडु वानि
शिरमु;
दम्मुडु साव नुद्दंड शोकमुन। नेम्मुलु वगुलंग नेचि यार्चुचुनु
मड्रियुनु गनलुचु महनीय रथमु। मेड्रयंग नलुगड मेरुगुलु वाड्र
गर्दलिचि यम्महाकायु डुद्वृत्ति। मदमुन सिंहंबु मलयु चंदमुन
गुदुलु ग्रुच्चिचन माड्कि ग्रूर बाणमुल। नेंदिरि धारुणि गूल नेसें
वानरुल;
वनचरवीरुलु वानिकि गाक। हनुमंतु मरुगुन कंदरुं जनिरि;
सारथि जूचि "यीचक्कटि मनल। वारक मार्कोनुवारलु लेरु;
बोरन रामुपै बोनिम्मु तेरु। नेरुपु वार्टिचि नी" वन्नवाडु
गडगि युग्यमुल पग्गमुलु वदलिच। वडि,नदलपगनु दीव्रंबुन गदल२९५०

जाकर, एक योजन-आयत-(विशाल)-गिरि को जब (वेग) से डालने पर, उसे गिरने न देकर बीच में ही गदा फेंक समस्त नग को झट चूर कर देने पर, क्रुद्ध वालिनन्दन ने उसके रथ पर सरलता से कूदकर, चतुर-सत्त्व की उन्नति (अधिकता) से चाप को तोड़, ।। २९४० ।।

(उसे) पकड़ रथ पर गिराकर, छाती दबाकर, (राक्षस की) आँखों के झट बाहर निकल (उसके) हाँफते रहने पर, गला घोंटकर, (सिर) तोड़कर, उमड़ते रक्त से भरे हुए उसके सिर को पृथ्वी पर डाल दिया। अनुज के मरने पर, उद्दंड शोक से (छाती की) हड्डियाँ टूट जाएँ, ऐसा रोते हुए, विजृंभित हो सिंहनाद करते हुए, फिर क्रुद्ध होते हुए, महनीय रथ के प्रकाशित होने पर, चौतरफ़ चिनगारियों के व्याप्त होने पर, (उसे) चलाकर, महाकाय ने उद्वृत्ति से मद के कारण सिंह के विचरण करने के समान, गदाएँ भोंकने के समान क्रूर बाणों से, (शत्रुओं का) सामना कर, वानरों को धरणि पर गिराया। वनचरवीर उसे जीत न सक, सभी हनुमान की आड़ में गए। (उसने) सारथी को देख कहा—'इस विधान से हमारा सामना करनेवाला कोई नहीं है। चातुर्य से तुम अब शीघ्र रथ को राम के पास जाने दो।' (ऐसा) कहने पर उसने सप्रयत्न अश्वों के लगाम को ढीला कर, हाँका तो (रथ) तीव्रता से चल पड़ा, ।। २९५० ।।

ना क्रूरतकु गाक यगचरुल् पऱव । “नोक्रोतुलार ! मीकुलुक नेमिटिकि ?
शिवुनि चापमु द्रुंचि सीत जेकोन्न । यवनीशुपै गानि याजि ने नलुग;
बरशुरामुनि भंग पऱचिन यट्टि । नरनायकुडु गानि नायीडु गाडु;
आजिलो खरुनि नुक्कडच्चिन यट्टि । राजु मीदने कानि रादु नायम्मु;
धृति नम्मुतुद कब्धि देच्चिन यट्टि । पतितोड गानि ये बवरंबु सेय;
द्रिजगंबुलंदुनु दीपिंचि नट्टि । रजताद्रि येत्तिन रावणु सुतुड;
दुदि निक निंद्रजित्तुनिकि दम्मुंड; । निदे महाकायुंड नेतेंचिनाड”
ननुचु जेप्पुचु राग नंबुदपटल । मुन नुन्न सूर्युंडु मोनसिन माड्कि
गपिराज तनयु डंगदकुमारुंडु । कपि सेनलो नुंडि कडगि येतेंचि
वेनुकोनि कोपंबु विलसिल्ल नपुडु । घनमैन कडिमितो गलुषिंचि पलिकें; २९६०
नोरि महाकाय युडुगक रज्जु । ली रणस्थलमुन नेल प्रेलेंदवु ?
मीतंड्रि गिरि येत्ति मेऱसे; मातंड्रि । मीतंड्रि दोक निम्मेयि गट्टियेत्ते,
नीकु नाकुनु दगु निष्ठुर रणमु; । काकुत्स्थपति येल? कपिवीरुलेल?
यनि म्राकु गोनि मीद नडरिप ननि । तनुवु निंडग गप्पे दारुणास्त्रमुल;

—उस क्रूरता को सह न सक अगचर भागने लगे (तो उसने कहा)—‘हे वानरो ! तुम लोग क्यों भीत होते हो ? शिव के चाप का खण्डन कर, सीता को ग्रहण करनेवाले अवनीश के अतिरिक्त मैं किसी पर युद्ध में रुष्ट नहीं होता । परशुराम का अपमान करनेवाले नरनायक को छोड़ कोई मेरी बराबरी का नहीं है । युद्ध में खर के दर्प का दमन करनेवाले राजा को छोड़ अन्य किसी पर मेरा बाण नहीं आता । धैर्य से बाण की नोक पर अब्धि को लानेवाले पति (नायक) को छोड़ और किसी से मैं युद्ध नहीं करता । त्रिजगों में दीप्त बने हुए रजताद्रि को उठानेवाले रावण का पुत्र हूँ । अन्त में इन्द्रजित का अनुज हूँ । यही मैं महाकाय आया हूँ ।’ ऐसा कहते हुए (उसके) आते समय, अंबुदपटल में स्थित सूर्य के बहिर्गत होने के समान कपिराजतनय अंगदकुमार कपिसेना में से सयत्न आकर, उद्धत क्रोध से शोभित होने पर, अतिसाहस से, क्रुद्ध हो बोला— ॥२९६०॥

“अरे महाकाय ! न रुककर इस रणस्थल में दम्भपूर्ण वाक्य क्यों बकते हो ? तुम्हारा पिता गिरि को उठाकर दीप्त हुआ, हमारे पिता ने तुम्हारे पिता को पूँछ से इस प्रकार बाँधकर उठाया । तुम्हारे और मेरे मध्य निष्ठुर रण उपयुक्त है । (उसके लिए) काकुत्स्थपति क्यों ? कपिवीर क्यों ?” ऐसा कहकर वृक्ष ले विजृंभित होने पर, (राक्षस ने) उसके

गदिसि वॆंडियु महाकायुडंगदुनि । गदगॊनि व्रेसॆ नुत्कट कोपुडगुचु;
व्रेसिन नॆंतयु विवशुडै पडियॆ; । नासमयंबुन नतडु मूर्छिल्ल
गुतलंबु वगुल नॆक्कॊन दैत्युलार्चि; । रतडु मूर्छिल्लिन नगचरपतुलु
कलिसि यॆंदरु महाकायुपै गविसि । शिललु भूजंबुलु जॆच्चॆऱ वॆव
नवि यॆल्ल दनुदु बाणावलि चेत । नवलील दुनिमि गवाक्षुनि बदिट
बृथुनि नैदिट नूट बृथुसत्वु गजुनि । ब्रथितंबुगा शतबलि मुप्पदिंट
२९७०
नॆनुबदि यम्मुल ऋषभुनि गिनुक । बनसुनि डॆब्बदि पटुसायकमुल
मॆऱसि क्रोधनुनि नम्मेघपुष्पकुनि । नरुवदिंटनु नूट नदरंट नेसॆ;
निटु वानरुल नतडेपडगिप । नट मूर्छनॊंदिन यंगदुडपुडु
तॆलिसि मोमुन ग्रम्मुदेंचु रक्तंबु । बलुमऱु गरमुल बाय द्रोयुचुनु
नुदरुचु नप्पुडयोमयंबैन । गदयॆत्तिकॊनि महाकायुनि रथमु
पयिकि लंघिंचि युद्भट शक्ति तोड । जयशीलुडै वानि सारथिजंपि
वॆस विल्लु बॆळ्ळन विऱुगंग गॊट्टि । यसमुन हयमुल नन्निटि गूल्चि
तल व्रेसॆ; व्रेसिन दैत्यपुंगवुनि । तल बॊमिडिक मूडि धरणिपै
बडियॆ;

शरीर को दारुण अस्त्रों से ढक दिया। और फिर निकट आकर, महाकाय ने उत्कट कोपवाला होता हुआ अंगद पर गदा का प्रहार किया। (गदा) डालने पर वह अधिक विवश हो गिर पड़ा। उस समय उसके (अंगद के) मूर्च्छित होने पर राक्षसों ने ऐसा सिंहनाद किया जिससे कुतल (पृथ्वी) विदीर्ण हो जाए। उसके (अंगद के) मूर्च्छित होने पर नगचरपति सब मिल कर, महाकाय पर आक्रमण कर, शिलाएं और भूज (वृक्ष) शीघ्रता से फेंकने लगे। उन सब को अपने बाण समूह से सरलता से काट देकर, गवाक्ष को दस, पृथु को पाँच, पृथुसत्त्ववाले गज को सौ, प्रथित रूप से शतबलि को तीस, ॥ २९७० ॥

—ऋषभ को अस्सी, क्रोध से पनस को सत्तर पटु-सायक, प्रकाशित होकर क्रोधन और उस मेघपुष्पक को (क्रम से) साठ और सौ बाण मर्म (स्थान) बेधते हुए डाला। इस प्रकार उसके बानरों के उत्कर्ष का दमन करने पर, उस प्रकार मूर्च्छित अंगद तब होश में आकर, मुख पर (प्रवाहित हो) आनेवाले रक्त को कई बार हाथों से पोंछ लेते हुए, विजृंभित हो तब अयोमय (लौह) गदा को उठाकर, महाकाय के रथ पर लाँघकर, उद्भट शक्ति से जयशील हो उसके सारथी को मारकर, झट धनुष को तोड़ देकर, दर्प से समस्त अश्वों को गिराकर, (राक्षस के) सिर

ना महाकायुंड्डु नरदंबु डिग्गि । भीम-गदादंड-भीषणुंडगुचु
नंगदु नंगंबु नदरंट व्रेसें; । नंगटुंडुन व्रेय नतडु दर्पिंचि २९८०
यंगदु मस्तकं बलुकतो मऱियु । बोंगि गदादंडमुन डासि व्रेसें;
नाघातामुन नेत्तुरडरिन नैन । राघवुबंटु शौर्यंबित सेडक
गद पुच्चुकोनि महाकायुनि व्रेसें । नुदुरु भग्नमु गाग नुरुशक्ति मेऱसि;
येंदिरिन तन तंड्रि नीतनि तंड्रि । विदितंबुगा बट्टि वेमारु दोल्लि
मुन्नीटि लोपल मुंचुट दलचि । मुन्निटि पगकुनै मुंचेनो यनग
नसमेदि दनुजु डायंगदु गिट्टि । वेस बेर्चि नेत्तुरु वेल्लुव मुंचें;
मुंचें रावणु बट्टि मुन्नब्धि वालि । मुंचिन गति वानि मुंचें रक्तमुन;
निटु महाकायुंड्डु निंद्रु मन्मडुनु । बटुगति बोरुचो बरगु रक्तमुल
जेवुरु टेरुल जेलुवैन गिरुल । भावंबु चेकोनि भास्वरुलैरि;
गदयुनु गदयु नुग्रंबुगा दाकि । चिदुरुपलगुटयु जेच्चेऱ वारु २९९०
बलुडुनु निर्जरपतियुनु दोल्लि । कलिसि पेनंगिन कैवडि दोप

पर दे मारा । मारने पर दैत्यपुंगव के सिर का किरीट छूटकर धरणि पर पड़ा । उस महाकाय ने रथ से उतरकर, भीमगदादण्ड से भीषण होता हुआ, अंगद का शरीर हिल जाए, ऐसा प्रहार किया । अंगद ने भी मारा तो वह दर्पित होकर, ॥ २९८० ॥

—अंगद के मस्तक पर क्रोध से और विजृंभित होकर, निकट से गदादण्ड से प्रहार किया । उस आघात से रक्त के अधिक बहने पर भी, राघव का सेवक, शौर्य के तनिक भी नष्ट न होने पर, गदा ले, उरुशक्ति से दीप्त हो, महाकाय का ललाट फट जाए ऐसा मारा । सामना करनेवाले मेरे पिता को इसके पिता ने विदित रूप से पकड़कर, पूर्व में, कई बार समुद्र में डुबोने की बात का स्मरण कर, अब यहाँ शत्रुभाव से डुबोने की बात सोच, दर्प के उत्कर्ष से दनुज ने अंगद के पास पहुँच, विजृंभित हो, उसे रक्त की बाढ़ में डुबो दिया । पूर्व में रावण को पकड़ वालि के अब्धि में डुबोने के समान उसे (अंगद को) रक्त में डुबो दिया । इस प्रकार महाकाय और इन्द्र के पौत्र के पटुगति से लड़ते समय, प्रवहित होनेवाले रक्त के साथ, लाल नदियों से समायुक्त शोभित गिरियों के भाव (साम्य) को ग्रहण कर, वे भास्वर (प्रकाशमान) हुए । उग्रता से गदा के गदा से लगकर, (टूटकर) तिनके हो जाने पर वे झट से, ॥ २९९० ॥

—बल (एक राक्षस का नाम) और निर्जरपति के पूर्व में मल्लयुद्ध करने के समान, (जूझने लगे ।)

महाकायुडंगदुनितो मल्लयुद्धमु सेसि मडियुट

बलुधूळि यिद्दऱि पदहति नेगय । दलपडि मल्लयुद्धमु सेयुचोट
जतुरतमै 'वनचर वीरु डीत । डितडु राक्षसु' डनि येरुगंग राक
कीलुबोम्मलु पोरु क्रियलनु दोचि । वालि सुग्रीवुल वडुवुन बोर
नादट गपुलेल्ल नंगदु जूचि । "यी दुष्ट राक्षसु नेल पालार्प ?
वालिनंदनुडवु; वालि कैवडिनि । वालिन वाडवु वरभुजशक्ति;
वालि दुंदुभियुनु वडि बोरु चोट । वालि दुंदुभि नितवडि निल्वनीडु;
वेवेग चंपु मी विबुधकंटकुनि । नी विक्रमक्रम निपुणत मेऱसि;"
यनि जयशब्दंबु लडरिप नतडु । दनुजुनि तल मुष्टि दाटिंचे बेट्टु;
पिडिकिट दाचिन बिट्टुगा दिरिगि । पडियें ना दैत्युंडु बलमऱि नेल; ३०००
बडियुन्न राक्षसपति ऱोम्मु द्रोक्कि । मेड नुल्चि तल द्रेंचि मीदिकि वैचि
यंगदुडार्चें; नय्यंगदु जूचि । यंगद नार्चि रय्यगचरपतुलु;
विच्चि दानवुलुनु वेस नेगि लंक । जोच्चियु वारिधि जोच्चियु नाल्गु

महाकाय का अंगद से मल्लयुद्ध कर, मर जाना।

दोनों के पदाघातों से अधिक धूल के उड़ने पर, लगकर दोनों के मल्लयुद्ध करते समय, (कोई भी) चातुर्य से भी इसका पता नहीं लगा सका कि 'यह वनचरवीर है, यह राक्षस है'। वे कठपुतलियों के युद्ध की क्रियाओं का स्मरण दिलाकर, वालि-सुग्रीव के समान लड़ने लगे। झट से समस्त कपियों ने अंगद को देख (कहा)—'इस दुष्ट राक्षस की उपेक्षा करना क्यों ? (तुम) वालिनन्दन हो, वालि के समान ही वर-भुज-शक्ति से शोभित हो। वालि और दुंदुभि के झट जूझते समय, वालि दुंदुभि को इतनी देर रहने नहीं देता। अपने विक्रमक्रमनिपुणता से दीप्त होकर, इस विबुधकंटक को अतिशीघ्र मार डालो।' (ऐसा) कहकर जय-(जय) कारों के करने पर उसने भीकरता से दनुज के सिर मुष्टि प्रहार किया। मुष्ठि से मारने पर, वह दैत्य बल खोकर, चक्कर खाकर भूमि पर गिर पड़ा ॥ ३००० ॥

गिरे हुए राक्षसपति के वक्ष को रौंदकर, गला घोंटकर, सिर काटकर, ऊपर फेंक, अंगद ने सिंहनाद किया। उस अंगद को देख उत्साह से अगचरपतियों ने सिंहनाद किया। बिखरकर दानवों के झट जाकर लंका में घुसकर और वारिधि में घुसकर और चारों दिशाओं में भागकर, दीनता को प्राप्त होने पर, कपियों ने दर्प से अंगद की स्तुति की। स्तुति कर,

देसलकु बाऱियु दीनत नोंद । नसमुन नुतियिंचिरंगदु गपुलु
नुतियिंचि सीतामनोनाथु कडकु । ननि दोड्कोनि चनि यत्तेऱंगेल्ल
विनिपिंप रघुपति विनि संतसमुन । घनमुगा नुप्पोंगि कौगिट जेर्चि;
करुणाकटाक्ष मंगदु मीद नुनिचि । सरसंपु मंदहासंबुन नोप्पे;
हतशेषुलगु राक्षसावळि चेप्प । गतपडु यम्महाकायुनि दलचि
विन्ननै तलवांचि वेऱगंदि कुंदि । कन्नीरु निंचि राक्षसकुलाधीशु
डंतःपुरंबुन करिगि याराति । चिंतिचुचुनु निद्र सेंदक युंडे; ३०१०
मऱुनाटि रेपु सामंतुलु गोलुव । मेऱुगारु नरदंबु मीदिकि वच्चि
यरिगि पेंपारिन यलवरि नेक्कि । परपेन तन कोट बरिकिंचि चूचि
चूचि पाळेंबुलु शोधिंचि मीद । नेचिन पयिकापुलिड बंचि यप्पु
डारावणुंडु प्रहस्तुतोननियें: । "बेरेक्कि येंदु नभेद्यमीकोटः
येट्टि शात्रवुलकु नेन्नडु डायु । नट्टिदिगा; दिप्पुडगच्चर प्रतति
वच्चि भेदिंचि दुर्वारमै युनिकि । यच्चेरुवैनदि; यदियुनुगाक
श्रीरामु भुजबल-श्री येल्लचोट । नारुढतरमु प्रहस्त ! कापुनकुनु
नी वोंडे, नदिगाक ये नोंडे, रणमु । गाविंप नाकुंभकर्णुंडु नोंडे
दगुवार; मिंदु निद्रारति दनकु । मिगिलि ना तम्मुडु मेल्कोनडय्ये;

सीता-मनोनाथ के पास उसे ले जाकर, वह समस्त विधान सुनाने पर, रघुपति सुनकर, हर्ष से अत्यधिक फूलकर, (उसे) गले से लगाकर, अंगद की ओर करुणा-कटाक्ष (कृपादृष्टि) डालकर, सरस मंदहास से विराजमान हुए। हतशेष राक्षसावली के कहने पर, विगत हुए उस महाकाय का स्मरण कर, लज्जित हो, सिर झुकाकर, भीत हो, विकल हो, आँसू भरकर, राक्षस-कुलाधीश अन्तःपुर जाकर, वह रात चिंतित होते हुए, बिना सोए रहा ॥ ३०१० ॥

दूसरे दिन प्रातः सामन्तों के सेवाएँ करते रहने पर, प्रकाशवान रथ पर सवार हो, आकर, जाकर शोभित प्राकार चढ़कर, विशाल अपने दुर्ग को निहारकर, देखकर, स्कंधावारों को शोधकर, उसके बाद अधिक उपरि-रक्षक रखने (नियमित करने) का आदेश देकर, उस रावण ने प्रहस्त से कहा—'प्रसिद्ध यह दुर्ग किसी भी प्रकार से अभेद्य है। किसी भी प्रकार के शत्रुओं को निकट आने न देनेवाला है। अब ऐसा नहीं है। अगचर-प्रतति (इसमें) आकर, घुसकर, दुर्वार बनी हुई है। उनका अस्तित्व आश्चर्यप्रद है। यही नहीं, श्रीराम की भुजबल-शक्ति सर्वत्र आरूढतर (श्रेष्ठ) है। अतः हे प्रहस्त ! (अब) रण करने को या तुम हो, या मैं हूँ, अथवा वह कुंभकर्ण योग्य है। इनमें निद्रारति से युक्त मेरा अनुज जाग

बोयॆदवो ? येनु बोदुने ?" यनुडु । ना यसुरेंद्रुन कतडिट्टुलनियॆ;
३०२०

"बोयॆद निदॆ; नादु भुजबलंबॆल्ल । नायमरुलु मॆच्च नरुल द्रुंचॆदनु;
डासि भूत प्रेत डाकिनीगणमु । लासक्तितो नॆत्तुरानि मोदिप
नट्टु चूडु माजि ब्रहस्तुंडु कपुल । निट्टु चेयुने यन नेपु सूपॆदनु;
'बोरिकि जनु' मन्न बुद्धुलु सॆप्प । नारय बाडिगादैननु विनुमु
दनुजेश! यॊकमाट; 'तग' दंटि निक । विनु, विनकुंडु; विवेकिंचि चूडु;
दानिकि गादन दनुजेश ! मुन्नु । मानैन बुद्धुलु मंत्रुलु सॆप्प
विनवैति; विकनैन विनु; सीत राम । जननाथुनकु निम्मु; समरंबु
वलव;"

प्रहस्तुनि युद्धमु

दनुचु रावणुनि ब्रहस्तुंडु वीडु । कॊनि वच्चि ता दन कोललवारि
बनिचि यप्पुडु नाल्गु बलमुल वारि । दनु गूर्चुकॊनि महोद्दंडभावमुन
घनमैन कपिवरांगंबुल गालि । तनमीद वीचुनंतकु ब्रोयुचुन्न ३०३०

नहीं रहा है। (तुम) जाओगे ? या मैं जाऊँ ?' ऐसा कहने पर, उस असुरेन्द्र से उसने (प्रहस्त ने) यों कहा— ।। ३०२० ।।

"यही जाता हूँ। अपने समस्त भुजबल से नरों (राम-लक्ष्मण) का वध करूँगा, जिसकी देवता प्रशंसा करें। भूत-प्रेत-डाकिनी-गणों के निकट आकर, आसक्ति से रक्त पी प्रसन्न हो, कहें कि 'वह देखो, युद्ध में प्रहस्त कपियों की ऐसी गत कर सकता था !' ऐसा उत्कर्ष प्रदर्शित करूँगा। 'युद्ध में मत जाओ' ऐसी नीति (वचन) कहने के लिए, सोचने पर (अब) औचित्य नहीं है। फिर भी सुनो। हे दनुजेश ! एक बात। कहा (युद्ध) 'उचित नहीं है'। सुनो या मत सुनो (मानो) विवेक कर देखो। (उसके परिणाम को) इनकार नहीं करता। पूर्व में मन्त्रियों के बुद्धि (नीतिवचन) कहने पर (तुमने) नहीं सुना (माना) था। अब तो सुनो। सीता को राम-जननाथ (राजा) को दे दो। समर (करना) नहीं चाहिए।'

प्रहस्त का युद्ध

(ऐसा) कहते हुए रावण से प्रहस्त ने विदा ली (और) आकर स्वयं अपने वेत्रधरों को भेजकर, तब चतुरंग बल वालों को एकत्र कर, महोद्दंड भाव से महान् कपिवरों के शरीरों पर के पवन के अपने ऊपर प्रवहित होने पर मुखरित होते, ।। ३०३० ।।

कौमरुन जलदनिर्घोषंबु दानि । नमरंग विहगेन्द्रुलन गपुलेगसि
तक्कक द्रुंचुनंतकु ग्रालुचुन्न । चक्कनि युरगध्वजस्फूर्ति दानि
मणिगण किंकिणी महनीय भूरि । रणनंबु गलिगिन रथमप्पुडेक्कि
पेक्कु तूर्यमुल गंभीर रावमुल । दिक्कुलु घूर्णिल्ल दिवि यौड्डुगिल्ल
जुक्कलु डुल्ल वसुंधर येल्ल । व्रक्कलु वारु बूर्व द्वारमुननु
गालांतकुड्डु बोले गडगि यिब्भंगि । नालंबु सेय ब्रहस्तुंड्डु वेडले;
नप्पुडादैत्युल यार्पुलु, नतनि । योप्पार बेर्चिन युग्र मूर्तियुनु
नक्कजंबगुटयु नाविभीषणुनि । कक्कड जूपि रामावनीश्वरुड्डु
"तेजंबु बलमुनु दीप्ति शौर्यमुनु । राजिल्लुचुन्न यीराक्षसवरुनि
पेरेमि ? साहसस्फीतुडै कपुल । पैराक चेप्प जूपग जोद्‌यमय्ये"
३०४०
ननुड्डु विभीषणुं डर्कवंश्युनकु । ननियें "देवा! यितंडारावणुनकु
गलिगिन सैन्यसंघमुलकु नेल्ल । दळवायि; यीतनि दळमंदुलोन
मूडव पालगु; मूड्डु लोकमुल । वाडि मगंटिमि वालिनवाड्डु;
वरबलाढ्‌युंड्डु; रावणु मातुलुंड्डु; । हरविक्रमुंड्डु; प्रहस्तुडन्‌वाड्डु;
खंडेंदुधरु चेलिकानि सामंतु । भंडनंबुन माणिभद्रुनि नोर्चे;

—शोभा में जलद-निर्घोष से युक्त, (तथा) शोभा से विहगेन्द्रों के समान कपि के (ऊपर) उछलकर, अवश्य काट डालने तक सुन्दर उरग-ध्वज-स्फूर्ति से युक्त, मणिगण-किंकिणी के महनीय भूरि-रणन से युक्त रथ पर तब सवार होकर, अनेक तूर्यों के गम्भीर-आरव से दिशाओं के घूर्णित होने पर, आकाश के अवनत होने पर, नक्षत्रों के टूट गिरने पर, समस्त वसुन्धरा में दरारें पड़ जाने पर, पूर्व द्वार से, कालान्तक के समान, सप्रयत्न इस प्रकार युद्ध करने के लिए प्रहस्त निकल पड़ा। तब उन दैत्यों के सिंहनाद और उसकी शोभायमान, विजृंभित उग्रमूर्ति के आश्चर्यप्रद होने पर, उस विभीषण को उसे दिखाकर राम-अवनीश्वर (राजा-राम) ने (कहा)— 'तेज और बल, दीप्ति और शौर्य से विराजित इस राक्षसवर का नाम क्या है ? (इसका) साहस-स्फीत होते हुए कपियों पर आना, कहने में (तथा) बताने में भी विचित्र है।' ॥ ३०४० ॥

ऐसा कहने पर विभीषण ने अर्कवंश वाले से कहा—"हे देव ! यह रावण के समस्त सैन्यसंघ का सेनापति है। इसकी सेना उसमें (रावण की सेना में) तीन भाग है। तीनों लोकों में तीक्ष्ण पौरुष से विराजमान है। वर बल से आढ्य (श्रेष्ठ) है। रावण का मातुल (मामा) है। हर-(सम) विक्रमवाला है। यह प्रहस्त नाम वाला है। खण्ड-इन्दु-धर

दपनकुलेश ! यीदैत्युनितोड । गपिनाथुलकु लेस्स कय्यंबु गलुगु"
ननि चेप्पुचुंडंग नगचरुलेल्ल । दनुजुल केदुरुगा दरुगिरुलेत्ति
यार्चुचु वच्चिन नसुर सैन्यमुलु । नार्चुचु मार्कोनि यनि सेयुनपुडु
प्रळयकालाग्निकि बाडबग्निकिनि । गलुषत दलपाटु गलुगदु गानि,
पोडि पोडिगा मिन्नु भुविकि नोंडोंटि । गडुबेट्टु दाकुट गलुगदु गानि,
३०५०

मोनसि या ब्रह्मांडमुलु दमलोन । घनमुगा दाकुट गलुगदुगानि;
कलिगिन निब्भंगि गपि दैत्यनाथु । लुलुकक पोरुट युपमिप वच्चु;
बावकनिभ-बाणपंक्तुलु दैत्यु । ला वनचरुलपै नार्चुचु नेय
नंदु वेंडियु गोंदरसिगदा प्रास । संदीप्तमुसलोग्र चक्रमुल् वैव
दरुचर बलमुलु दरुलुनु गिरुलु । नुरल दैत्युल मीद नुरुवडि वैव
धरमीद डुल्लेडि तललुनु ब्रय्यु । नुरमुलु नुरुमैन युरुकंधरमुलु
दोरगेडि प्रेवुलु द्रुनियु फालमुलु । मुरिसिन येम्मुलु मुंचु रक्तमुलु
जेदरिन मेदडु विच्छिन्नंबुलयिन । पदमुलु मिट्टेडु बाहुदंडमुलु
मुडिगि मुद्दल भंगि मुरियु पीनुगुलु । नडिमिकि देगिन युन्नत देहमुलनु

(शिव) के मित्र के सामन्त मणिभद्र का, युद्ध में सामना कर टिक सका। हे तपनकुलेश ! इस दैत्य के साथ कपिनाथों का अच्छा (घोर) युद्ध होगा।" ऐसा कहते समय समस्त नगचर दनुजों के सामने तरु (और) गिरि उठाकर सिंहनाद करते हुए आए तो असुरसैन्य भी सिंहनाद करते हुए युद्ध करने लगा। (तब) प्रलयकाल की अग्नि तथा बाडव-अग्नि को तो कलुषता और अपमान प्राप्त नहीं होगा, चूर-चूर होते पृथ्वी और आकाश का एक-दूसरे से भयंकरता से टकराना तो होगा नहीं, ।। ३०५० ।।

—उन (समस्त) ब्रह्माण्डों का आपस में भीषणता से टकराना तो होगा नहीं, किन्तु यदि हो तो कपि (नाथों) और दैत्यनाथों के अविचल रूप जूझने की उपमा दी जा सकती है। दैत्यों के पावक-निभ (समान) बाणों की पंक्तियों को वनचरों पर सिंहनाद करते हुए डालने पर, उनमें से और कुछ असि, गदा, प्रास, संदीप्त मुसल, उग्रचक्र डालने पर, तरुचर-बल (-सेना) ने अतिशीघ्रता से तरु और गिरि दैत्यों पर फेंके। धरा पर लुढ़कनेवाले सिर, फट पड़नेवाले वक्ष, टुकड़े बने उरु-कंधर, लटकनेवाली आँतें, टूटनेवाले फाल, छिन्न बनी हड्डियाँ, डुबो देनेवाले रक्त, बिखरा मस्तिष्क, विच्छिन्न बने चरण, उड़-उड़ गिरनेवाले बाहुदण्ड, सिकुड़कर पिण्डों के समान बने शव, बीच में से कटे उन्नत देह, गिर पड़नेवाले मुण्ड,

द्रॆळ्ळॆडि मेनुलु दिरिगॊडि ग्रुड्लु । बॆल्लुगा नॆंतयु भीकरंबय्यॆ; ३०६०
दलकक संगरस्थलमुन बोरि । कलगॊनबडिन राक्षसुलुनु गपुलु
गलगि यंतट बोक कलुषिचि मिंचि । चलमग्गलिंचि युत्साहंबु मॆरसि
बॆडिदंबुगा दैत्यबृंदंबु मीद । नडचिरप्पुडु कपिनायकोत्तमुलु;
द्विविदुंडु वैचॆ पृथ्वीधर-शिखर । मविरळशक्ति नरांतकु मीद;
नकलंकुडै कुंभहनुबडवैचॆ । नॊक वटंबुन दारुडुग्रवेगमुन;
वडि बॆद्दगिरि जांबवंतुडुद्धतिनि । नडरिंचि मिंचॆ महानादुमीद;
भूरि भूजंबुन बॊरि गूल नेसॆ । घोरंबुगा दुर्मुखुडु समुन्नतुनि;
वानरनाथुल वाटुलचेत । दानवुल् नलुवुरु धरणि द्रॆळुटयु
दन प्रधानुल चावु दप्पक चूचि । यनयंबु नलिगि प्रहस्तुंडु गपुल
नॊकट बदुँड्रनु नॊकट निर्वदुर । नॊकट मुप्पदुरनु नॊकट नल्वदुर ३०७०
रथचित्रगतु लॊप्प रयमुन बॆर्चि । पृथिविपै गूल्चिन बॆर्चि वानरुलु
द्रुमशैलमुल ब्रहस्तुनि सेनलॆल्ल । जमरिन गति नुंड जंपिरि कडगि;
यपुण्डु वॆल्लुवलयि पाऱ जॊच्चॆ । जॊप्पड मिन्नंटि शोणितनदुलु;

(बाहर) फूट पड़नेवाले नेत्र (इन सबके साथ) (रणस्थल) अत्यन्त भीकर हुआ ।। ३०६० ।।

विचलित न होकर, संगरस्थल में जूझकर, भिड़ पड़े राक्षस और कपि व्याकुल होकर, उतने से न जाने देकर, क्रुद्ध हो, बढ़कर, हठ के अधिक होने पर, उत्साह के प्रदीप्त होने पर, भयंकर रूप से तब दैत्यवृन्द पर कपिनायकोत्तम चल पड़े। द्विविद ने अविरलशक्ति से पृथ्वीधर-(पर्वत) शिखर को नरांतक पर फेंका, तार ने उग्रवेग से अकलंक हो, कुंभहनु पर एक वट (वृक्ष) फेंक दिया, जांबवान ने झट एक बड़े पर्वत को उद्धतगति से महानाद पर फेंक उत्कर्ष को प्राप्त किया, दुर्मुख ने समुन्नत को भूरि-भूज (बड़े वृक्ष) से अतिघोर रूप से (मार) गिराया। वानर-नाथों के वारों से कई दानवों के धरणि पर गिर पड़ते देख, अपने प्रधानों (प्रमुख व्यक्तियों) की मृत्यु को अवश्य देखकर, सदा क्रुद्ध हो, प्रहस्त ने कपियों को —एक-एक करके, दसों को एक बार, बीसों को एक बार, तीसों को एक बार, चालीसों को एक बार— ।। ३०७० ।।
—रथ को चित्रगतियों से शीघ्र चलाते हुए, पृथ्वी पर गिराया। तो वानरों ने उद्धत हो, द्रुमशैलों से प्रहस्त की समस्त सेनाओं को लगकर, सफाचट मार डाला। तब आकाश को छूकर शोणित की नदियाँ बाढ़ों

नंदुलोपल नुंडि यसुरुलु गपुलु । नंदंद यनिसेसि रार्चुचु बॆंचि;
यायग्गलिक सूचि यखिल देवतलु । वेयुविधंबुल विनुतिंचि रप्पु;
डा प्रहस्तुंडु कालांतकाकारु । डै प्रतिलेक सॊंपारि यावेळ
गरमुलु बदमुलु खंडिचि वैचि । युरमुलु निटलंबु लुच्चि पोनेसि
तललुनु बाहुलु धरमीद गूल्चि । तलगक यॆम्मुलु दंतमुल् राल्चि
मुरियलुगा जक्रमुल द्रुंचि त्रुंचि । पॊरि बॊरि नंकुशंबुल जिंचि चिंचि
कडुनुग्रमुग बरिघल गॊट्टि कॊट्टि । मुडिवड घनपाशमुल गट्टि
कट्टि ३०८०

ललि मीऱ बरशुवुलनु व्रच्चि व्रच्चि । पॊलुपार बलु शूलमुल ग्रुच्चि क्रुच्चि
मुनुमिडि पट्टिसंबुल जिम्मि चिम्मि । गॊनकॊनि कडिमि शक्तुल ग्रुम्मि
क्रुम्मि
पललंबु मॆदडु गुप्पलु सेसि चेसि । सॊलवक यंपरासुलु वोसि पोसि
पटुभूत कोटिक बलि यिच्चि यिच्चि । पट पट दिक्कुलु वगुल नार्चुचुनु
समर विक्रम कळा संरंभमेसग । नमितुडै मॆऱसि प्रहस्तुडेपॊंदॆ;

नीलुडु प्रहस्तुनि मडियिंचुट

नाकपिसैन्यंबु लणगुट जूचि । भूकंपमुग महाद्भुतवृत्ति नडचं

के रूप में बहने लगीं। उन (बाढ़ों) में से असुर (और) कपि जहाँ-तहाँ सिंहनाद करते, युद्ध करते रहे। उस बड़प्पन (वैशिष्ट्य) को देख, समस्त देवताओं ने सहस्र विधि से तब विनुति (प्रस्तुति) की। वह प्रहस्त कालांतक-आकारवाला हो, अप्रतिम होकर शोभित हो, उस समय, कर (और) पद (चरण) खण्डित कर, वक्ष (और) ललाट विदीर्ण हों ऐसा (अस्त्र) डालकर, सिर (और) बाहुओं को धरा पर गिराकर, विचलित न होकर, हड्डियाँ (और) दाँत ढुलकाकर, चक्रों से टुकड़े-टुकड़े कर, अंकुशों से चीर-चीरकर, परिघाओं से अतिउग्रता से मार-मारकर, घनपाशों से गाँठों में बाँध-बाँधकर, ।। ३०८० ।।

—शोभा से परशुओं से फाड़-फाड़कर, शोभा से अनेक शूलों से भोंक-भोंककर, प्रथमतः पट्टिसों को बिखेर-बिखेरकर, लगकर भयंकर शक्तियों से बेध-बेधकर, माँस और भेजा के ढेर लगा-लगाकर, न थककर शर बरसा-बरसाकर, पटु-भूत-कोटि (-समूह) को बलि दे देकर, दिशाओं को फोड़ देनेवाला सिंहनाद करते हुए, समर-विक्रम-कला-संरंभ के उत्कर्ष से, अमित (बेहद पराक्रमशाली) होते हुए, दीप्त हो, प्रहस्त विजृंभित हुआ।

बॊरिगि युद्भट रणाभीलुडन्नीलु । डुरुतराहंकारहुंकारुडगुचु;
धीरुडै यपुडु धात्रीजंबु बॆऱिकि । याराक्षसुनि तेरि कवलील नुऱिकि
यऱिमि सारथि नॊंचि हयमुल गूल्चि । युऱक याविल्लु महोग्रत विऱुव
मुसलंबु गॊनि यार्चि मुदमॊप्प नप्पु । डसमुन रथमु ब्रहस्तुंडु डिगि ३०९०
नीलुनि मुंदऱ निलिचॆ नॆदिर्चि । नीलुंडु नॆदिरिंचॆ 'निर्जितु' ननुचु,
नॊंडॊरु गॆलुचु नुद्योगंबुलंदु । गंडु मीऱिन वृत्र कौशिकुलनग;
नलुक नीलुनि फाल मडिचॆ नीक्षिंचि । ललि ब्रहस्तुडु मुसलंबुन बगुल;
नडिचिन नंदंद यडरु नॆत्तुरुलु । दुडिचिकॊंचुनु ब्रहस्तुनि बिट्टु गिट्टि
व्रेसॆ नन्नीलुंडु वृक्षंबु बट्टि; । व्रेसिन मुसलान व्रेसॆ नय्यसुर;
व्रेसिन सोलि या वृक्षंबु विडिचि । यासमयंबुन नंदंद कदिसि
यार्चुचु नतडु प्रहस्तु मस्तकमु । बेर्चि व्रय्यग वैचॆ बॆनुगिरि यॆत्ति;
यानीलु व्रेटुन काप्रहस्तुंडु । मेनुनु शिरमुनु मॆयि भूषणमुलु

नील का प्रहस्त को मार डालना

उस कपि-सैन्य के दब (नष्ट हो) जाते देख, उद्भट-रण में आभील (भयंकर) नील बढ़कर, उरुतर-अहंकार से हुंकार करते हुए, भूमि को कँपाते हुए, महाद्भुतवृत्ति से चल पड़ा। धीर बन तब एक धात्रीज (वृक्ष) को उखाड़कर, उस राक्षस के रथ पर आसानी से कूदकर, संक्षुभित कर, सारथी को पीड़ित कर, हयों को गिराकर, साथ-साथ उस (के) धनुष को महोग्रता से तोड़ दिया तो मूसल (हाथ में) ले, मुदित होते हुए, तब दर्प से प्रहस्त रथ से उतरकर, ।। ३०९० ।।

—नील के समक्ष सामना करते हुए डट गया। नील ने 'मार डालूँगा' कहते हुए (उसका) सामना किया। एक दूसरे को जीतने के उद्योगों (प्रयत्नों) में पौरुष के उत्कर्ष से युक्त वृत्र (तथा) कौशिक के समान वे शोभित हुए। शोभा से देखकर (लक्ष्यकर) प्रहस्त ने क्रोध से मूसल से नील के फालभाग को विदीर्ण कर दिया। विदीर्ण करने पर जहाँ-तहाँ प्रवहित होनेवाले रक्त को पोंछ लेते हुए, कठोरता से प्रहस्त के निकट पहुँचकर, नील ने एक वृक्ष को पकड़, दे मारा। मारने पर उस असुर ने मूसल से प्रहार किया। प्रहार करने पर झुककर (लड़खड़ाकर), उस वृक्ष को छोड़, उस समय इधर-उधर से नियराकर, सिंहनाद करते हुए, प्रहस्त का मस्तक फूट जाए ऐसा एक बड़े पर्वत को उठाकर फेंक दिया। उस नील के आघात से वह प्रहस्त शरीर और शिर तथा शरीर के भूषणों के बिखर जाने पर, वृत्रारि (इन्द्र) से (के हाथ) समस्त शोभा को खोकर,

जॆंदरि वृत्रारिचे जॆलुवॆल्ल बॊलिसि । कुदिसि धारुणि गूलुकॊंड चंदमुन
बडुटयु नाकपिबलमॆल्ल नार्चॆ; । जॆंडि पारि लंकजॊच्चिरि
दैत्युलंत; ३१००
सुरुचिरामृत-वार्धि-सुतयुनु बोलॆ । हरियुतमैन निजांगंबु गलिगि
चारु वसंत-मासंबुनु बोलॆ । नारक्तफुल्ल पलाशालि गलिगि
वरदानशीलु निवासंबु बोलॆ । गरमॊप्प नधिक मार्गण कोटि गलिगि
दीपिंचु नेरेडु दीवियु बोलॆ । रूपिंप नवखंडरूपंबु गलिगि
वलचिन पतियॊद्द वनितयु बोलॆ । सललितरागरसंबुनु गलिगि
कडिदियै चॊररानि कानयु बोलॆ । गडु नॊप्पु पुंडरीकंबुलु गलिगि
सडलनि मृडु-निवासंबुनु बोलॆ । गडगि याडेडु भूतगणमुलु गलिगि
कमलाप्तरुचि नॊप्पु गगनंबु बोलॆ । ग्रममु दप्पिन तारकंबुलु गलिगि
सरभसंबैन वेसवियुनु बोलॆ । सुरुचिरांबरमणिस्फुरणंबु गलिगि
कलिसिन शिवुडुन गौरियु बोलॆ । दलपोयगा नर्धं तनुबुलु गलिगि
३११०
रमण जूपट्टु वाराशियु बोलॆ । समधिकतर-वारि-संपद गलिगि

अवनत हो धारुणि पर गिर पड़नेवाले पर्वत के समान, गिर पड़ा। (तब) समस्त कपि-बल (-सेना) ने सिंहनाद किया। तब टूटकर, भागकर, दैत्य लंका में घुस गए ॥ ३१०० ॥

(तब रणभूमि) सुरुचिर-अमृत-वार्धि-सुता (लक्ष्मी) के समान हरि (विष्णु अथवा अश्व) युत निज अंगों से युक्त हो, चारु वसंत मास के समान आरक्त (लाल)-फुल्ल-पलाश-समूह के साथ, वरदानशील के निवास के समान, अधिक शोभा से युक्त अधिक मार्गण (बाण अथवा पातक)-कोटि से युक्त हो, प्रदीप्त होनेवाले जम्बूद्वीप के समान दीखने के लिए नवखण्ड (नौ खण्ड अथवा नए टुकड़े) से युक्त हो, प्रेमी पति के पास वनिता के समान सललित रागरस (प्रेम अथवा लाल रक्त) से युक्त हो, भयंकर हो दुर्गम बने कानन के समान अधिक शोभित पुण्डरीकों (कमल या व्याघ्र या गज) से युक्त हो, अचल मृड (शिव) के निवास के समान सप्रयत्न नृत्य करनेवाले भूतगणों से युक्त हो, कमलाप्त (सूर्य) की रुचि (कान्ति) से शोभित गगन के समान क्रम से च्युत (अस्त-व्यस्त) तारकों (नक्षत्र अथवा आँख की पुतलियाँ) से युक्त हो, सरभस (तीव्र) निदाघ के समान सुरुचिर-अम्बरमणि (सुन्दर सूर्य अथवा वस्त्राभरण) से युक्त हो, सम्मिलित शिव और गौरी के समान सोचने पर अर्द्ध-शरीरों (टुकड़े बने शरीरों) से युक्त हो, ॥ ३११० ॥

—रमणीयता से दीख पड़नेवाले वाराशि के समान समधिकतर वारि (जल

पेक्कु चंदंबुल बेंपु सोंपडरि । यक्कजंबय्यॆ रवणावनी-स्थलमु;
अंतनीलुडु राघवाधीशु कडकु । नेंतयु वेसजनि योऱगॆ नंघ्रुलकु;
बोगडिरि गपुलेल्ल बोरि बोरि नीलु; । देगनि राक्षसुलु भीतिलि पारि चेप्प
विनि रावणुडु शोकविवशुडै मंत्रि । जनुलतो ननियेनु ज्ञलमग्गलिचि;
“येवीरु लरिगिन निट्टु राक लेक । यावानरुल चेत नचट द्रुंगेदरु
वैरुल वलनि गर्वंबडंगिप । नेरूपमुन नैन नेने पोयेदनु ।”

रावणुनकु मंदोदरि हितोपदेशमु

अनि पेर्चि पलुकुचो नामाटलेल्ल । विनियु मंदोदरि वेस माल्यवंतु
करमु चेपट्टि डग्गरि दैत्यवनित । लिरुदेस गोलुवंग नेंतयु वेड्क
नतिकायुडुनु दोड नरुगुदेरंग । ब्रतिहारुलुरुवडि बलसि येतेर ३१२०
नायुधहस्तु लंतंतट गोलुव । बायक चामर प्रततुलु पोलय
सकल भूषणरुचिजालंबु वेलुग । सकल मंत्रुलु तोन चनुदेंचुचुंड
गडु नोप्पु नीलमेघमु जोच्चु मेरुपु । वडुवुन जोच्चॆ रावणु सभास्थलमु;

या रक्त)-सम्पदा से युक्त हो, अनेक प्रकार से उत्कर्ष (और) शोभा से विर्वद्धित हो, रण-अवनीस्थल (-भूमि) आश्चर्यप्रद हुआ। तब नील ने राघवाधीश के पास अधिक शीघ्र जाकर चरणों में प्रणाम किया। क्रम से समस्त कपियों ने नील की प्रशंसा की। हतशेष राक्षस भीत हो, भागकर, कहने पर, सुनकर, रावण ने शोकविवश हो मन्त्रीजनों से हठ के उत्कर्ष से कहा—‘जो भी वीर जाते हैं, वे इधर न आ सके (लौट न सके) उन वानरों के हाथ वहीं मरते हैं। वैरियों के गर्व का दमन करने के लिए, किसी भी रूप से मैं ही जाऊँगा।”

रावण को मन्दोदरी का हितोपदेश

ऐसा विजृंभित हो कहने पर, उन सब बातों को सुनकर, मन्दोदरी ने झट माल्यवन्त का हाथ पकड़कर (सहारा लेकर), निकट से दैत्यवनिताओं के दोनों ओर सेवाएँ करते रहने पर, अधिक उत्साह से अतिकाय के भी साथ आने पर, अधिकता से प्रतिहारियों के आने पर, ॥ ३१२० ॥

—जहाँ-तहाँ आयुधपाणी (सैनिकों) के सेवाएँ करने पर, सदा चामर-प्रततियों के शोभित होने पर, सकल भूषणों के रुचिजाल के प्रकाशमान होने पर, सकल मन्त्रियों के साथ आने पर, अधिक शोभित नीलमेघ में प्रवेश करनेवाली शंपालता के समान रावण के सभास्थल में प्रवेश किया। उस

नासति नप्पुडर्धासनासीन । जेसि रावणुडु विशेषप्रियोक्ति
नुचित पीठंबुल नुंडंग बनिचें । नचलितमतुलगु नम्मंत्रिवरुल;
म्रोक्किन यतिकायु मोदंबुतोड । दक्कक युनिचें नोद्दन गद्देयंदु;
नंत नक्कोलुवेल्ल नलबलंबडग । निंतितो नादानवेश्वरुंडनियें;
"गोलुवुलोपलि किटु कुवलयनेत्रि । तलय नेन्नडु रानिदानवु नेडु;
वडवड वडकुचु वच्चुट येल्ल । गडु जोद्यमैनदि; कारणंबेमि?"
यनिन मंदोदरि यात्मेशु जूचि । "दनुजेश ! नाकुरादरियय्येगान
३१३०
वच्चिति नेडु; नावच्चुटकेल्ल । निच्चलोपल गडु नेग्गु सेयकुमु;
अनिलोन धूम्राक्षु डादिगा गलुगु । मनवारु दनुजेश ! मडियुट कंटे :
यल जनस्थानंबुनंदु राक्षसुल । नलि दुनिमेनु बदुनालुगुवेल;
सरि खरत्रिशिरुल जंपिननाडे । नरुडु गाडंटि नानरनाथु; रामु
डलिगि वेंडियु दंडकारण्यमंदु । बलवंतुडैन कबंधु निर्जिचें;
मारीचु वधियिंचें माय बोनीक । घोरास्त्रमुन वालि गूलंग नेसें;
देवहितार्थमै तिविरि राघवुडु । भूवलयंबुन बुट्टिनवाडु;
आदि नारायणुंडुतडु गाडेनि । मेदिनि नितटि मिक्किलि नरुडु

सति को तब अर्द्ध-आसन पर बिठाकर, रावण ने विशेष-प्रिय-उक्तियों से उन अचलित-मतिवाले मन्त्रीवरों को उचित पीठों (आसनों) पर बैठने का आदेश दिया। प्रणाम करनेवाले अतिकाय को मोद से निकट की गद्दी पर बिठाया। तब समस्त सभा में कोलाहल के शान्त होने पर, इंति (स्त्री-मन्दोदरी) से दानवेश्वर ने कहा—"हे कुवलयनेत्री ! सभा में कभी न आनेवाली हो। तुम्हारा आज इस प्रकार थर-थर काँपते हुए आना आश्चर्यप्रद है। क्या कारण है ?" (ऐसा) कहने पर मन्दोदरी आत्मेश को देख (बोली)—"हे दनुजेश ! मुझे आने की आवश्यकता पड़ी अतः ॥ ३१३० ॥

—आज आई हूँ। मेरे आने के कारण मन में अधिक बुरा मत मानो। हे दनुजेश ! युद्ध में धूम्राक्ष आदि हमारे स्वजनों की मृत्यु को देखा है न ! उस दिन जनस्थान में सरलता से चौदह हज़ार राक्षसों का वध किया था। खर (और) त्रिशिर को जिस दिन मारा था, उसी दिन उस नरनाथ को नर (मात्र) नहीं कहा (माना) था। और राम ने क्रुद्ध हो दण्डक-अरण्य में बलवान कबंध को मार डाला था। (अपनी) माया से न जाने देकर मारीच का वध किया था। घोर-अस्त्र से वालि को गिराया था। सोचकर ही देवहित के लिए राघव भूवलय पर जन्मा है। वह आदि-

गलुगुने ? मरि कऱ्कंठुनि चाप । मलवॊप्प विड़िचॆं ब्रख्यातंबु गाग;
दमतंड्रि पनुपुन दपसियै सत्य । समयम्मुतो वनस्थलिनुंड नतनि ३१४०
सीत दॆच्चिति वीवु; श्रीरामचंद्रु । डेतॆरंगुन नीकु नॆग्गेमि सेसॆ ?
राम लक्ष्मणुलतो रणमॊनर्पि । नीमूडु जगमुल नॆव्वरु गलरु ?
नलि साम-भेद-दानंबुलु सूप । गलिगिन दंडंबु गादु पाटिंप;
दंडंबु बाटिंप दलचॆदवेनि ? । दंडिंप बडुदुरॆ दशरथात्मजुलु ?
देव ! रामुडु परदेवत गान । नीवु म्रॊक्कुटयॆल्ल नेरंबु गादु;
शरणन्न जेकॊनु; शरणन्न नीकु । नुरु शुभंबगुगानि यॊक कीडु गादु;
गुणरूप दाक्षिण्य गुण गण केळि । गणुतिंप नलवियॆ काकुत्स्थु? रामु
डलिगिन निलुबरिंद्रादि देवतलु; । दलपवय्यॆदु ! नीदु तरमुगादिदु;
वलदु; वृथागर्ववह्नि गूलकुमु; । चलमॊप्प; दॊप्पदु; संतापमुडिगि
यिकनैननु सीत निच्चुट मेलु; । लंकेश! कुलमुनु लंकयु निलुपु;
३१५०
महनीय वाहन मणिभूषणादि । सहितंबुगा नीवु जानकि निच्चि

नारायण है। नहीं तो मेदिनी पर इतना श्रेष्ठ नर (और कोई) हो सकता है ? यही नहीं, करकण्ठ (नीलकण्ठ शिव) के चाप को प्रख्यात रूप से सहज रूप से खण्डित किया था। अपने पिता के आदेश पर तपस्वी बन सत्य-प्रतिज्ञा से वनस्थली में रहते समय उसकी, ॥ ३१४० ॥

—सीता को लाए हो तुम। श्रीरामचन्द्र ने किसी रूप से तुम्हें क्या हानि पहुँचाई है ? राम-लक्ष्मण के साथ रण करने (में समर्थ) इन तीनों जगों में कौन है ? यदि साम-भेद-दोनों से काम निकल जाए तो दण्डविधान समुचित नहीं है। यदि दण्डविधान से काम लेना चाहोगे तो क्या दशरथात्मज दण्डित हो सकते हैं ? हे देव ! राम परमदेवता है अतः तुम्हारा उसे प्रणाम करना दोष नहीं है। शरण माँगने पर (वह) स्वीकारता है। शरण माँगने पर तुम्हें उरु-शुभ ही होगा, हानि नहीं होगी। गुण-रूप-दाक्षिण्य-गुणों के केलि (निधान) उस काकुत्स्थ की गणना (प्रशंसा) करना सम्भव है ? राम क्रुद्ध हो जाए तो इन्द्र आदि देवता भी टिक नहीं सकते। (तुम) उसका विचार ही नहीं करते। तुम तो किसी भी प्रकार उसके समर्थ नहीं हो; यह नहीं चाहिए। वृथागर्व-वह्नि में मत गिरो, हठ मत करो, मत करो। सन्ताप छोड़ अभी तो सीता को (वापिस कर) देना उत्तम है। हे लंकेश ! कुल (वंश) और लंका को बचाओ ॥ ३१५० ॥

महनीय वाहन मणिभूषण आदि के सहित (के साथ) तुम जानकी को देकर, यूपाक्ष, अतिकाय और माल्यवन्त को सुलह करने के लिए भूपाल

यूपाक्षु नतिकायु नोंगि माल्यवंतु । भूपालु पालिकि बुच्चु संधिकिनि;
मतिमंतुडगुचुन्न मन विभीषणुडु । हितबुद्धि गाविंचु नीसंधि मनकु:
वेयुनेटिकि? गार्तवीर्युतो संधि । सेयवे ? यतनि गेलिचन भृगुरामु
गेलिचिन रामुडु कीर्तिधामुंडु । तलपोय संधिकि दगडे चर्चिप ?

मंदोदरि हितोपदेशमुलु रावणुडु तिरस्करिंचुट

ननि दैन्यपाटुतो नाडु वाक्यमुलु । विनि रावणुडु कडुवेडियूर्पंडर
गलयंग नेर्ड्नि कनुल गोप । मोलुकुचुनुंड मंदोदरि जूचि
"हितमतिवै नाकु निन्नियु जेप्पि । ततिव ! नी माटलयंदोक्कटैन
मनसुन बट्टदु; मगटिमि कलिमि । घनुडवै मूडु लोकंबुलु गेलिचि
दानवयक्षगंधर्व देवादु । लैननु वेंट्टि सेयगनुन्न नन्नु ३१६०
दुदिबोयि यिक गोतुल मरुवु सोच्चि । न्नदिकेंडु नरुनकु न्नणमिल्लु मनुचु
निदि येट्टि माटगा नीसभ नाडि ? । तिदि नीकु बाडियें ? यिक्ष्वाकु कुलजु
डेर्ड्गि येर्ड्गि मुन्नेग्गोनरिप । मर्ड्किदा तेंच्चितति मनुजेशु देवि?
जडमतिनै पोयि संधिगाविंचि । कडगि खरादुल गडतेर्चिनट्टि

(राजा राम) के पास भेजो । मतिमान बना हमारा विभीषण हितबुद्धि से यह संधि करा देगा । हज़ार (बातें) क्यों ? कार्तवीर्य से संधि नहीं किया था ? उसे जीतनेवाले भृगुराम को जीतनेवाला कीर्तिधाम राम क्या सोचने पर संधि के लिए योग्य नहीं है ?"

मन्दोदरी के हितोपदेश को रावण का तिरस्कार करना

इस प्रकार दीनता से युक्त वाक्यों को सुनकर, रावण ने अति उष्ण साँस के चलने पर, सुन्दर अरुण नेत्रों में क्रोध के उमड़ने पर, मन्दोदरी को देख (बोला)—'हे अतिवे (नारी) ! हितमति से मुझे ये सब बताया । तुम्हारी बातों में एक भी मन में नहीं बैठती । पौरुषसंपत्ति से महान् बन तीन लोकों को जीतकर, देव, यक्ष, गन्धर्व देवादियों से भी बेगार करानेवाले मुझसे, ।। ३१६० ।।

—अन्त में जाकर अब वानरों की आड़ (शरण) में जाकर जीनेवाले एक नर को प्रणाम करने की बात तुम इस सभा में कैसे कह सकी ? यह क्या तुम्हारे लिए न्याय है ? पूर्व में इक्ष्वाकु-कुलज के जानबूझकर अहित करने पर ही तो मनुजेश की देवी को लाया था ? यदि जड़मति हो जाकर, संधि कर लूँ तो खर आदियों के वध का प्रतीकार तथा तुम्हारी ननद के अपमान (के प्रतीकार) को कैसे चुका सकूँ ? (ऐसा) नहीं हो सकता । ऐसा होने

पगयु नीमऱदलि बन्नंबु नेट्टि । पगिदि नीगुदुनु; जोप्पड; दट्टुगान
भीम बाणमुल विभीषणु निनजु । राम लक्ष्मणुल मर्कटुलनु द्रुंचि
गेलुत, नवश्यंबु; गेलुपु लेदेनि । ज्ञलमोप्प दुरमुन समयुदु गानि,
मानवेश्वरु तोड मऱि चेय संधि, । जानकि नीनु; निश्चयमिट्टि दतिव!
यायिंद्रजित्तुडुदात्त विक्रमुडु । नीयग्र सुतुडुंड नीकेल वेऱपु ?
नाकेदुरेव्वरु ? नातनूभवुलु। भीकराकारु लभेद्यविक्रमुलु !" ३१७०
अन विनि चिंतिचि यवनत यगुचु । जनियें मंदोदरि सभनेंडबासि
नीचमैनट्टि दुर्नीति चेपट्टि । येचंदमुन दन्नु नेरुगडटंचु
रमणीयतरमैन रावणु लक्ष्मि । क्रममेदि तोलगेडि कैवडिदोप;

रावणुनि प्रथम युद्धमु

नारावणुंडुनु नप्पुडु गडगि । वारक तन पडवाळ्ळकु ननियें;
"जिरकाल मेनु नाचित्तंबुलोन । दोरकोन्न यलुककु दुदिसेयुवाड;
नातनि पालिकेनल्ल रुद्रुंड; । नातडु नापालि कंधकासुरुडु;
मुनुकोनि तूणीरमुल वेलुवडुचु । दनरारु नायंपतंडमूहिप
गुपसंबु लूड्चिन क्रूर सर्पमुल । नुपमिंप ननुवुलै योंडियु राघवुनि;

से भीम-(भयंकर) बाणों से विभीषण, इनज, रामलक्ष्मण, मर्कटों का संहार कर अवश्य जीतूँगा। विजय न मिले तो हठ से समर में मर जाऊँगा किन्तु मानवेश्वर से संधि नहीं करूँगा। जानकी नहीं दूँगा। हे नारी ! यह निश्चय ऐसा है। उदात्तविक्रमवाले तुम्हारे अग्रसुत इन्द्रजित के रहते तुम्हें भय क्यों ? मेरा सामना कौन कर सकता है ? मेरे तनूभव भीकर-आकारवाले तथा अभेद्यविक्रमवाले हैं।" ॥ ३१७० ॥

(ऐसा) कहने पर, सुनकर, चिंतित हो, अवनत होते हुए मन्दोदरी सभा छोड़कर चली गई; मानों नीच दुर्नीति को धारणकर, किसी भी तरह अपने को न जाननेवाले रावण की रमणीयतर-लक्ष्मी शोभाहीन हो चली जा रही हो।

रावण का प्रथम युद्ध

वह रावण तब सयत्न, अविलंब अपने सरदारों से बोला—"मैं अपने चित्त में चिरकाल से स्थित क्रोध को समाप्त कर दूँगा। उसके लिए मैं कालरुद्र हूँ। वह मेरे लिए अंधकासुर है। लगकर तूणीरों से निकलते हुए विराजमान मेरे बाण-समूह, सोचने पर केंचुली से मुक्त बने क्रूर सर्पों से उपमित होने योग्य होते हुए, राघव को घेर लेंगे। काल (मृत्यु)

गालंबु प्रेरेप गपिसेन नम्मि । वालिन मगटिमि वच्चियुन्नाडु;
उरुदिव्य शस्त्रास्त्र युक्तंबुगाग । नरदंबु देंडु कय्यंबुन" कनुडु ३१८०
वारु नर्क-प्रभावर-रथंबप्पु । डारुढ़गति बन्नि यर्थि देच्चुटयु
दौलगक तनदैन दुर्मनोरथमु । नेलमि नेक्किन क्रियनेक्कि रावणुडु
दिक्कुल मिटनु दीप्तिजालंबु । लक्कजंबयि पर्वं नरदंबु मीद
मेऱसिन तोंडवुल मैरुगुल तोड । देऱगौप्प नप्पुडु देवारि यौप्पे
नाराम बाणानलार्चुल चेत । नारथंबुनु दानु ननि गूलु करणि;
बटुतर निस्साण भांकारमुलुनु । बटह भेरिशंख भयदरावमुलु
हस्ति बृंहितमुलु नश्वहेषलुनु । ब्रस्तुति पाठक प्रकटरावमुलु
नरदाल स्रोतयु नार्पुल रवमु । धरपगिलेंडु पदताडन-ध्वनुलु
नडरि यौंडोंड ब्रह्मांडंबु निंड । गडु भीकरंबुलै कलयंग बर्वे
"नल समुद्रमुनकु नलुगु चंदमुन नलिगे । निप्पुडु राघवाधीशु" डनुचु
३१९०
मुनुकौनि लंका समुद्रंबुलोन । ननुवेदि जीवंबुलऱचु चंदमुन;
"गौनि वच्चितिमि दैत्य कोटि श्रीराम ! । कौनु" मनि यौप्पिप गोनि
पोवु करणि

से प्रेरित होकर, कपिसेना पर विश्वास करके, (राम) उत्तुंग पौरुष से आया हुआ है। दिव्य-शस्त्र-अस्त्र से युक्त रूप में युद्ध के लिए रथ लाइए।" ऐसा कहने पर— ॥ ३१८० ॥

—वे अर्कप्रभा से युक्त वर-रथ को तब आरूढगति से, चाहकर लाए। न हटकर, अपने दुर्-मनोरथ पर शोभा से सवार होने के समान, (उस रथ) पर सवार होकर रावण, दिशाओं में आकाश में दीप्तिजाल के आश्चर्यप्रद रूप से व्याप्त होने पर, रथ पर प्रकाशवान आभूषणों की दीप्तियों के साथ ढंग से तब देवारि (रावण) शोभित हुआ मानों उस राम की बाणानल अर्चियों से उस रथ के साथ स्वयं युद्ध में गिरनेवाला हो। पटुतर-निस्साण भांकार, पटह-भेरी-शंख के भयदराव, हस्ति के बृंहित, अश्व-हेषाएँ, प्रस्तुति-पाठकों (चारणों) के प्रकटराव, रथों की ध्वनियाँ, हुंकार-रव, धरा को विदीर्ण करनेवाले पद-ताड़न की ध्वनियाँ, (आदि के) विजृंभित हो, परस्पर ब्रह्मांड को भर देने पर, (वे ध्वनियाँ) अतिभीकर रूप से फैल गईं। 'तब समुद्र से विचलित होने के समान अब राघवाधीश विचलित हुए' (ऐसा) कहते हुए, ॥ ३१९० ॥

—लंका-समुद्र के जीव (जलचर) चीख रहे थे। 'हे श्रीराम ! यह लो, दैत्यकोटि को लाए हैं। स्वीकारो' कह समझाकर ले जाने के समान

भीम रथंबुलु पेर्चि यंदंद, । रामचंद्रुनि मनोरथमुलै नडचॆ;
"रामशिलीमुखराजी मै नाटि । यीमदंबुडिपॆंडु; नितलोपलनॆ
त्रागुद मिम्मदधार" लन्माड्कि । मूगि याडॆडि शिलीमुखमुलतोड
गरमुलु गड्‌डु भयंकरमुलै रामु । करमुल किद्‌दु दुष्करमुलु गाक
करमॊप्पगा समुत्करमुलै यपुडु । करिकोट्लु वसुमति गंपिप नडचॆ;
"वलनॆल्ल दप्पॆ; रावणुनकु रणमु । वलनि जयंबु मावलन नॆक्कडिदि;
वलनेदि कूलु रावणु" डनुमाड्कि । वलनॊप्प हयमुलु व्रालुचु नडचॆ;
"व्रालिन राघवेश्वरुनि बाणाग्नि । ग्रालु बलंबॆल्ल गालु बलंबु"
३२००
ननिन चंदंबुन नार्चुचु नडचॆ । घनतरंबयिनट्टि कालुबलंबु;
कालमेघंबुल करणि नॊप्पगुचु । शैलंबुलोयन जतुरत मॆरसि
प्रळयकालमु नाटि भानु बिंबंबु । कौलदि मीरिन मिडिग्रुड्डुलतोड
गटमुलु नुदुरुलु घनदंष्ट्रमुलुनु । बटुकेश चयमु नॊप्पगा जूडनपुडु
प्रळयकालुनिकैन भयमु बुट्टिंचु । व्रलमुनु विकृत वेषमुलुनु मॆरय
बॆक्कायुधंबुल बॆक्कु मायलुनु । बॆक्कु तेजंबुलु बॆक्कुव गलिगि
"येमेमॆ रामु जयिंचॆद माजि । नेमेमॆ" यनि यसमॆक्किन वारु

भीमरथ, क्रम से जहाँ-तहाँ रामचंद्र के मनोरथ सम, चल पड़े। राम की शिलीमुख (बाण)-राजि (समूह) इस मद को सुखा देगी। इस बीच ही इन मद-धाराओं का पान करेंगे।' इस प्रकार, घेरकर, चक्कर लगाने वाले शिलीमुखों के साथ करि (हाथी) अति भयंकर हो, राम के करों (बाणों) को किसी भी प्रकार से दुष्कर न होकर, बड़ी शोभा से समुत्कर होकर, तब करि-कोटियाँ (-समूह) पृथ्वी को कंपाते हुए चल पड़ीं। 'समस्त उपाय व्यर्थ हो गए हैं। हमारे कारण रण में रावण को जय कहाँ से होगा! शोभा को खोकर रावण गिरेगा' मानों इस प्रकार हय (घोड़े) झुककर चल पड़े। 'शोभायमान राघवेश्वर की बाणाग्नि में सुशोभित (रावण का) समस्त बल (सेना) दग्ध हो जाएगा।' ॥ ३२०० ॥

मानों यह कहने के समान घनतर (महत्तर) पैदल सेना हुंकार भरती हुई चल पड़ी। कालमेघ के समान शोभित होते हुए, मानों शैल हों, ऐसी चतुरता से दीप्त होकर, प्रलयकाल के समय के भानुबिंब से भी अधिक (भयंकर) उभरी हुई आँखों के साथ, कट (गंडस्थल), ललाट, बड़ी दंष्ट्राएँ, पटु-केशचय (आदि) के शोभित हो दीखने पर तब प्रलयकाल (-पुरुष) को भी भीत करने वाले हठ तथा विकृत वेषों के दीप्त होने पर, अनेक आयुध, अनेक मायाएँ, अनेक तेज के अधिकता से युक्त होकर

राक्षसवीरुलु राक्षसाधिपुलु । राक्षसेश्वरुनितो रणबासलिच्चि
परगंग नार्चुचु बटहनादमुलु । नुरुवडि म्रोयंग नुरुबलोन्नतिनि
नडवंग नप्पुडुन्नत शक्ति मैरसि । नडुनड नडुकि वानरुलेल्ल गलग
३२१०
निनवंशुनकु द्रोव निच्चुट कलिगि । वननिधि निंकिप वडि नेगु करणि
"निनुड ! नीतनयुंडु नीरामु गूडे" । ननि यर्कुं गबळिप नरिगेंडु माड्कि
दन युरुवडि समुद्रंबुलु गलग । दन प्रतापंबुन दपनुंडु माय
देंगुव येल्लनु मुख दीप्तुल दोप । मगटिमि जयलक्ष्मि मरि पोंदुवाय
नारवंबुन दानु नाजिकि वेडले । नारावणुंडट्टहासंबु चैलग;
बेक्कायुधंबुल बेंचि दीधितुलु । मिक्किलि कांतुलु मिरुमिट्लु गोलुप
बंबि वायुवुलचे पडगलु टेक्कि । यंबुलु मिन्नंदि यंदंद काल
घनतर भीषणाकारंबु तोड । ननयंबु नंदंद यार्चुचु रामु
बाणानलंबुन बालपडनुन्न । प्राणंबुलनु दृणप्रायंबु सेसि
वारण लेकट्टु वच्चुचुनुन्न । दारुणासुरसेन दप्पक चूचि ३२२०
रावणानुजु तोड रघुरामुडनियें: । "नीवच्चुचुन्नवाडेव्वडो ? वीडु

'हमीं राम को आजि (युद्ध) में जीतेंगे' ऐसे दर्प से युक्त राक्षसवीर (और) राक्षसाधिप राक्षसेश्वर को रण-वचन देकर, शोभा से सिंहनाद करते हुए, पटहनादों के शीघ्रगति से मुखरित होने पर, उरु-बल-उन्नति से चल पड़े। तब उन्नतशक्ति से दीप्त होकर चल पड़ने पर भीत हो समस्त वानरों के व्याकुल होने पर, ।। ३२१० ।।

—इनवंश्य (राम) को मार्ग देने के कारण क्रुद्ध हो, वननिधि को सुखाने के लिए जाने के समान, 'हे सूर्य ! तुम्हारा पुत्र इस राम से मिल गया' (यह) कहते अर्क (सूर्य) को निगलने के लिए जाने के समान, (ऐसा) अपनी शीघ्रगति से समुद्र के व्याकुल होने पर, अपने प्रताप के समक्ष तपन (सूर्य) के उदास होने पर, (सूर्य की प्रभा को निस्तेज करते हुए), समस्त साहस के मुखदीप्तियों में प्रस्फुटित होने पर, पौरुष से जयलक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए स्वयं रावण, अट्टहास के व्याप्त होने पर, आरव (बड़ी ध्वनि) के साथ चल पड़ा। अनेक आयुधों की दीधितियों (दीप्तियों) के क्रम से आँखों को चकाचौंध कर देने पर, विजृंभित पवन के कारण छत्र-चामरों के आकाश को छूकर जहाँ-तहाँ शोभायमान होने पर, घनतर-भीषण आकार से निरंतर जहाँ-तहाँ सिंहनाद करते हुए, राम के बाणानल के भागी बनने वाले प्राणों को तृणप्राय करके, दुर्निवार रूप से उस प्रकार आनेवाली दारुण-असुर सेना को अवश्य देखकर, ।।३२२०।।

मिक्किलि सत्त्व समेतुडै कडिमि । पॆक्कुव नॆंतयु बॆच्चिन वाड्डु"

विभीषणुडु दनुज नायकुलनु बर्वेर रामुन कॆरिंगिंचुट

अनिन विभीषणुंडारामु जूचि । "दनुज नायकुल नंदरु बेरुवेर
विनुमु श्रीरघुराम ! विन्नविंचेदनु । दनरंग" ननि वारि दग जॆप्प दौड्गॆ
"वाडे बंधुरगंध वारणेन्द्रंबु । वाडिमि नॆक्कि युज्ज्वलुडैनवाड्डु
उदयार्कबिंब समुज्ज्वलास्यमुन । नॊंदविन घनरोषमॊप्पिनवाड्डु
पौरि बौरि नंकुशंबुन नियमिंचि । करि जाळि सेयिप गडगॊड्डुवाड्डु
उरुवडि जनुदॆंचुचुन्नट्टि वीरु । डुरुबलाढ्युनि गंटॆ, यूपाक्षुडतड्डु;
कडुनॊप्पु भीकर घंटारवंबु । लडरॆड्डु रथमॆक्कि यावच्चुवाड्डु
पोरुल बॆक्कंड्र् बौरिगॊन्नवाड्डु । धारुणीश्वर ! महोदरुडनुवाड्डु ३२३०

भरित-रत्न-प्रभा पटलंबुतोड । बरपैन यरुणंपु बक्कॆर वॆट्टि
गरुड वेगंबुचे घनमैन यट्टि । तुरगंबु नॆक्कि युद्धुरवृत्ति तोड

—रावणानुज से रघुराम ने कहा— "यह आनेवाला कौन है ? यह अधिक सत्त्वसमेत हो, साहस के आधिक्य से शोभायमान है ।"

विभीषण का दनुजनायकों का अलग-अलग से परिचित कराना

(ऐसा) कहने पर विभीषण राम को देख (बोला)—"समस्त दनुज-नायकों को (एक-एक के) नाम-नाम से (अलग-अलग से) सुनो (जान लो) ! हे श्रीरघुराम ! शोभा से निवेदन करता हूँ ।" (ऐसा) कह उचित रूप से उनके बारे में कहने लगा—"बंधुरगंध (अधिक मद से युक्त) वारणेंद्र (गजेन्द्र) पर पौरुष से सवार हो, उज्ज्वल बने हुए, उदयार्कबिंब के समान समुज्ज्वलास्य (समुज्ज्वल मुख) में उत्पन्न घनरोष से युक्त, बार-बार अंकुश से नियमन कर, करि को प्रेरितकर सकनेवाले, शीघ्रता से आनेवाले, उस वीर को, उरु-बलाढ्य को देखा है न, वह यूपाक्ष है । अधिक शोभायमान भीकर-घंटारव के उत्कर्ष से युक्त रथ पर सवार हो आनेवाला वह, जिसने युद्धों में कई लोगों का वध किया था, हे धारुणीश्वर ! महोदर नामवाला है ।। ३२३० ।।

भरित-रत्नप्रभा-पटल से युक्त, विशाल (तथा) अरुण जीन (चारजामा) से सज्जित, गरुडवेग से महान् बने तुरग पर सवार हो, उद्धुर वृत्ति (उद्दंडता) से आनेवाला वह पिशाचनाथ है । युद्ध में उसका

जनुदेॅंचुवाडु पिशाचनाथुंडु; । ननिकि नीतनि केॅदुरगु वारु लेरु;
मिक्किलि कडिमिमै मेॅड़सि सिंहंबु । नेॅक्कि शूलमु बट्टि येतेॅंचुवाडु
अनिमीदि वेडुक नलरिनवाडु । दिनकरकुलनाथ ! त्रिशिरुडनुवाडु;
पृथुल घंटारवस्फीतमैनट्टि । रथमेॅक्कि वडि गुणारवमु सेयुचुनु
घन सर्प केतुवु गलिगिन वाडु । घन नीलतनुडु राक्षसुड़ कुंभुंडु;
कनक महामणि खचितमौ पडग । दनरारु चित्ररथंबुपै नेॅक्कि
यरुगुदेॅंचुचुनुन्न याराक्षसुंडु । गुरुभुजबलुडु निकुंभुंडु देव;
यनल सन्निभमैन यरदंबु नेॅक्कि । घन गर्वमुन मीड़ि कय्यंबुसेय
३२४०

गलवाडु वाडे यीकपिसेन दिक्कु । सौलवक विषदृष्टि जूचुचुन्नाडु
शरमट्टु विंटितो संधिंचु कोॅनुचु । नरुदेॅंचुवाडु नरांतकुंडधिप !
भीषण रूपमै पेर्चु वाक्यमुल । रोषमोॅल्केॅडु मिडिग्रुड्डुलतोड
गरि वक्त्रमुल घोटकमुल वक्त्रमुल । हरि वक्त्रमुल गिटिव्याघ्र
वक्त्रमुल
नुरग वक्त्रमुल नुष्ट्रवक्त्रमुल । गरमुग्रुलैन राक्षसुलुत्सहिंचि

सामना करनेवाला कोई नहीं है। अधिक साहस से दीप्त होकर, सिंह पर सवार हो शूल को हाथ में लिए आनेवाला, युद्ध (भूमि) में उत्साह से शोभित वह, हे दिनकरकुलनाथ ! त्रिशिर नामवाला है। पृथुल (विपुल) घंटारव से स्फीत बने रथ पर सवार हो, झट गुणारव (धनुष्टंकार) करते हुए, घनसर्प-केतु (-पताका) से युक्त (तथा) घननील तन वाला राक्षस कुंभ (नाम वाला) है। कनक-महामणि-खचित पताका से शोभित चित्ररथ पर चढ़कर आनेवाला वह राक्षस, गुरु-भुज-बल वाला हे देव ! निकुंभ है। अनल-सन्निभ (-समान) रथ पर चढ़कर, घन-गर्व से उत्कर्ष को प्राप्त कर, युद्ध कर, ॥ ३२४० ॥

—सकनेवाला वही इस कपिसेना की ओर अथक विषदृष्टि से देख रहा है। हे अधिप ! शर का धनुष से संधान करते हुए आने वाला वह नरांतक है। भीषण रूप वाले वाक्यों से, रोष से उमड़ती उभरी आँखों वाला, करि-वक्त्र (-मुख) वाले, घोटक-वक्त्र वाले, हरि (सिंह)-वक्त्र वाले, किटि (वराह) (तथा) व्याघ्र वक्त्र वाले, उरग (सर्प)-वक्त्र वाले, उष्ट्र (ऊँट)-वक्त्र वाले तथा अधिक उग्र राक्षसों के उत्साहित होकर सेवाएँ करते रहने पर, भूतों के सेवाएँ करते रहने पर, फालाक्ष (शिव) की समता करनेवाला वह हे अधिप ! देवांतक है। घन (महान्) घोष (ध्वनि) वाले स्वर्ण-

कौलुव भूतंबुलु गौलुचु पालाक्षु । नलनौप्पुवाडु देवांतकुंडधिप;
घनमैन घोषंबु गल पैडिरथमु । दनरार नैक्कि युद्दंड चापम्मु
नति तृणीकृतलोकुडै गुणाराव । मतिशयिल्लग बट्टि नंतनुंडियुनु
नैन्नडु नोटमि नैरुगनि वीरु । डन्नर भोजनु नात्मसंभवुडु
अरुणचंदनमु मैनलदिन वाडु । तिरमैन यरुणंपु दृक्कुलवाडु ३२५०
संध्यांबुदमु वंटि चंदंबुवाडु । विंध्याचलमु बोलि विलसिल्लुवाडु
कोटानगोट्टुलु गौडुगुल चेत । मेटि चामरमुल मैऱसिनवाडु
अवधरिंपुमु देव ! यतिकायुडात । डवनीश याजिकि नधिकशूरुंडु;
भूरिसितच्छत्रमुलु पदिवेलु । जारु चामीकर चामरावळुलु
बरगंग सिंगंपु बडगयु ग्राल । बरपैन घोटक-प्रततुल नौप्पु
नरदंबु मीद गुणारवंबैसग । भरित शस्त्रास्त्रसंपद देजरिल्ल
नजुनि वरंबुन नखिल देवतल । भुजबलस्फीतुडै पोरिलो नौंचि
सुरपति जैऱपट्टि सौंपारुनट्टि । वरगर्वमुन गडु वालिनवाडु
निच्चलो मनमीद निडिन चूपडर । वच्चुचुनुन्नाडु वाडिंद्रजित्तु;
इंक जूपैद जूडु मिनकुलाधीश ! । लंकाधिनाथु नुल्लसित प्रतापु;
३२६०
गनकरत्न प्रभाकलित दंडमुल । बोनरिन चामरंबुल नुल्लसिल्ल

रथ पर शोभा से चढ़कर, उद्दंडचाप से अति-तृणीकृत-लोक वाला (लोक को अति ही तुच्छ मानने वाला) हो, गुणारव के अधिक होने पर, जबसे (धनुष हाथ में) पकड़ लिया था तबसे अपजय को न जाननेवाला वीर, उस नर-भोजन (राक्षस रावण) का आत्मसंभव (पुत्र), अरुणचंदन का शरीर पर लेपकर, स्थिर अरुण दृष्टियों वाला, ।। ३२५० ।।

—संध्यांबुद (संध्या-मेघ) के समान, विंध्याचल के समान विराजमान, करोड़ों छत्रों के साथ (तथा) श्रेष्ठ चामरों से प्रकाशमान वह अतिकाय है। हे देव ! हे अवनीश ! ध्यान दो कि वह आजि (युद्ध) में अधिक शूर है। दस हज़ार भूरि-सित-छत्र, चारु-चामीकर-चामर-समूह, शोभित सिंह-पताका, विशाल घोटक-प्रततियों से शोभित रथ पर, गुणारव के मुखरित होने पर, भरित-शस्त्र-अस्त्र-संपत्ति के दीप्त होने पर, अज के वर से, अखिल देवताओं को, भुजबल-स्फीत हो, युद्ध में पराजित कर, सुरपति को बंदी बनाकर, मनोज्ञ-वर-गर्व से शोभित तथा मन से हम पर दृष्टि गड़ाकर वह इन्द्रजित आ रहा है। और दिखाऊँगा, देखो हे इनकुलाधीश! लंकाधिनाथ, उल्लसित प्रतापवाला, ।। ३२६० ।।

—कनकरत्नप्रभा से कलित दंडों से शोभित चामरों से उल्लसित हो,

सौलवक पंड्रेंडु सूर्यबिबमुल । गलयंग दशकंबुगा गरगिंचि
चेसिन पगिदि विचित्र रत्नांशु । भासुर कोटीर पंक्ति नोप्पारि
महनीयतरमैन मणिकुंडलमुल । महिम दिक्कुल नेल्ल मट्टाडुचुंड
रोष महादृष्टि रोचुल जाल । भीषणाकारत बेचिनवाडु
हरुडुन्न कैलास मर्गलिचिनाडु । सुर कामिनुल जेर जोनिपिनवाडु
लोकंबुलेल्ल बेल्लुग गेल्चिनाडु । पाकशासनु ननि बऱपिनवाडु
ऐरावतमु दंतमानिन युरमु । तो रमणीयमै तोचिनवाडु
मुल्लोकमुल दन मूर्तिचे हल्ल । कल्लोलमैपड गलचिनवाडु
वाडे सेनामध्यवर्तियैनाडु । वाडु वोदेव! रावणुडनुवाडु" ३२७०
अनि विभीषणु डोलि नंदऱ जेप्प । विनि राघवुडु कडु विस्मयंबंदि
"यारय जित्रमी यसुरेश्वरुंडु । सारमैनट्टि तेजंबु रूपैन
यट्टि चंदंबुवा, डसुरुल यंदु । निट्टि तेजोधनुंडेव्वडु गलडु ?
कडु ग्रूरकर्मुंडु गाकुंडेनेनि । बुडिम कंतटिकिनि बूज्युंडु गाडे!
परिकिंप नंदऱु बर्वताकृतुलु । नुरु शक्ति गलिगिन योधुलु ग्रूर
चरितुलु मऱिवीनि सैनिकुलेल्ल । गरमु भीषणुलु राक्षसवीरु" लनुचु
नुग्रलोचनु पिनाकोग्र चापंबु । निग्रह क्रम कळानिपुणुडै नृपुडु

लगातार बारह सूर्यबिंबों को शोभा से दशक में पिघलाकर बनाए हों, ऐसे विचित्र-रत्न-अंशु (-किरणों से) भासुर-कोटीर-पंक्ति से शोभित होकर, महनीयतर मणिकुंडलों की महिमा के समस्त दिशाओं में प्रदीप्त होने पर, रोषमहादृष्टि-रोचियों (कांतियों) से अधिक भीषण आकार से विजृंभित, हर के स्थित कैलास को हिलाने वाला, सुरकामिनियों को बंदी बनानेवाला, ऐरावत के दाँत के गड़े उर (स्थल) से रमणीय दीखने वाला, तीनों लोकों में अपनी मूर्ति से हलचल मचानेवाला, वही सेना के मध्यवर्ती हो स्थित वह हे देव ! रावण नामक है।" ।। ३२७० ।।

ऐसा विभीषण के क्रम से सबके बारे में कहते सुन, राघव अति विस्मित हो (बोले)— 'देखने पर यह असुरेश्वर विचित्र (लगता) है। मानों तेज का सार ही रूप बन गया हो, ऐसा है यह। असुरों में ऐसा तेजोधन (और) कौन है ? अति क्रूरकर्म वाला न होता तो समस्त पृथ्वी के लिए पूज्य न होता ! परिशीलन करने पर सभी राक्षसवीर पर्वताकार वाले हैं, उरुशक्तियुत योद्धा हैं, क्रूर चरित (स्वभाव) वाले हैं। इसके सभी सैनिक अधिक भीषण हैं।' (ऐसा) कहते हुए उग्रलोचनवाले तथा पिनाक (शिव) के उग्रचाप को, निग्रह-क्रम-कला से निपुण हो नृप (राम) ने साहस से धारण किया। स्वयं और लक्ष्मण के वर-बाण-चय के क्रम

धरियिंचॆ गडकतो दानु, लक्ष्मणुडु । वरबाणचयमुलु वरुस नुप्पॊंग
"गोपिंचयुनु धर्म गुणमॆ चेपट्टि । री पार्थिवुलकु नीडॆव्व" रनंग;
नारावणुंडप्पु डखिलनिशाट । वीरुल वीक्षिंचि 'विनु' डनि पल्कॆ: ३२८०

"नगरि वाकिड्ल नुन्नति तोड बॆद्द । मॊगसालयंदुनु मोसंबु लेक
कडु सुरक्षितमुगा गावलियुंडु । डडरि यीलंकलो नंदऱु ब्रीत्नि;
नेनुनु मीरुनु निट्टुकय्यमुनकु । मानुगा बोयिन मऱि वलीमुखुलु
लंक जॊच्चिन मन लावेमि सेयु ? । शंकिप वलवदु; चनु" डन्नवारु
चनिरि; रावणुडुनु जटुल वेगमुन । धनुवुनु नस्त्रमुल् धरियिंचि मिंचि
कार्चिच्चु वनमुलुग्रंबुगा गिट्टि । येर्चु कैवडि दोप निम्मुल गदिसि
जगतीतलमु नाकसमु दाकुकरिणि । नगचर सैन्यंबु नदरंट दाकि
यिदि धरणीभाग; मिदि वियत्तलमु; । इदि दिशावळि यनि येर्पडकुंड
नतिनिशितास्त्रंबु लंदंद पऱपि । यतुल बलोदग्रुडै दशाननुडु
कलचि कॊंदल मंदगा जेसि कपुल । जुलुकन खंडिचि चूर्णंबु सेसि ३२९०

से उमड़ने पर, कहा जा सकता है कि 'क्रुद्ध होकर भी धर्मगुण को ही धारण करनेवाले इन पार्थिवों का सानी कौन है ?' तब रावण अखिल-निशाट (राक्षस)-वीरों को देखकर 'सुनो' कह, (यों) बोला—॥ ३२८० ॥

—"नगर के द्वारों पर औन्नत्य के साथ (तथा) प्रथम द्वार के समीप के बड़े-बड़े आंगनों में, बिना किसी प्रवंचना के, अधिक सुरक्षा से रक्षणार्थ रहिए। लंका के भीतर सभी प्रीति से रहिए। मैं और आप (लोग) इधर युद्ध के लिए शोभा से जाएँ और यदि वलीमुख (वानर) लंका में घुस आएँ तो हमारी शक्ति किस काम की होगी ! शंका (संकोच) करने की आवश्यकता नहीं है। चलिए।" (ऐसा) कहने पर वे चले गए। रावण भी चटुल वेग से धनुष और अस्त्र धारणकर, उत्कर्ष को प्राप्त कर, दावाग्नि के बनों को उग्ररूप से नियराकर जलाने के समान दीखनेपर, शोभा से नियराकर, जगतीतल के आकास से भिड़ जाने के समान अगचर सैन्य पर आक्रमण किया। यह धरणीभाग है, यह वियत्तल है, यह दिशावलि है, ऐसा समझ में न आए, इस प्रकार जहाँ-तहाँ निशित अस्त्र चलाकर, अतिबल से उदग्र बन, दशानन (रावण) (वानरों को) व्याकुलकर, परेशान कर, कपियों को सरलता से खंडितकर, चूर्ण कर, ॥ ३२९० ॥

यॆम्मुलु मज्जंबु नॆऱचियु मॆदडु । ग्रम्मि नॆत्तुरु नेल गलयंग निंचि
तनरि यार्चुचु गुणध्वनि दिक्कुळंदु । निनिचि घोराजिलो नॆऱय बेर्चुटयु
बडियॆडु वानरुल् भ्रमयु वानरुलु । मडियु वानरुलुनु म्रग्गु वानरुलु
नोऱलु वानरुलुनु नुलुकु वानरुलु । नऱचु वानरुलु रूपऱिन वानरुलु
गलिगिन संगरागण भूमि जूचि । तलकिरि सुरलु चित्तंबुलु सॆदर;
गालकालानल काल दुर्वार । केळीकराळु डक्षीणुडै यपुडु
पेर्चु कोपंबुन भीषणुंडगुचु । नार्चुचु नुन्न दशाननु जूचि
यतनिकि नॆदुरुगा नरिगि सुग्रीवु । डतिरयंबुन नॊक्क यग मॆत्तिवैव
नारावणुंडुनु नदि मध्यमुननु । भूरि शरंबुल बॊडि सेसि मऱियु
नॊंडोंड घनदीप्तु लॊंदव नाकसमु । निंडि मंडुचु नुंडु निशितास्त्र मिनजु ३३००
नुरमाड नेसिन नुच्चि यायम्मु । धरगाडॆ; नत्तऱि दानवु लार्व
दरुचरु लॆल्ल नुद्गत बाष्पधार । लुर्लिप नर्कजु डॊऱलुचॆ गूले;
भुजबलाढ्युलु ऋषभुडु सुदंष्ट्रुडु । गजुडु गवाक्षुंडु गवयुंडु नलुडु
ज्योतिर्मुखुंडदि चूचि कोपमुन । नाततगति बर्वतावनीजम्मु

—हड्डियों, मज्जा, मस्तिष्क, रक्त से, भूमि को भर देकर, सन्तुष्ट हो सिंहनाद करते हुए, गुणध्वनि से दिशाओं को भरते हुए, घोराति घोर युद्ध (भूमि) में शोभा से दीप्त हुआ। गिरने वाले वानर, भ्रमित होने वाले वानर, मरने वाले वानर, नष्ट होने वाले वानर, चीखने वाले वानर, भयभीत होने वाले वानर, चिल्लाने वाले वानर, विकृत रूपी बने वानर—इनसे युक्त संगर-आंगन भूमि को देख, चित्तों के चकराने पर सुर विकल हो गए। काल-कालानल (प्रलयकाल की अग्नि) (और) काल (मृत्यु) की दुर्वार-केलि-सम कराल बन, अक्षीण हो तब दीप्त होने वाले क्रोध से भीषण बनकर सिंहनाद करने वाले दशानन (रावण) को देखकर, उसके समक्ष जाकर, सुग्रीव ने अतिशीघ्रता से एक पर्वत उठाकर डाल दिया। रावण ने भी उसे बीच में ही भूरिशरों से चूरकर, तिसपर जहाँ-तहाँ घनदीप्तियों को उत्पन्न कर, समस्त आकाश में भरकर जलने वाले निशित-अस्त्र को इनज के, ॥ ३३०० ॥

—उर पर चलाया तो आर-पार हो वह बाण धरा में गड़ गया। उस अवसर पर दानवों के सिंहनाद करने पर, समस्त तरुचरों की (आँखों से) उद्गत-बाष्प-धाराओं के उमड़ने पर अर्कज आर्तनाद करता हुआ (धरा पर) गिर गया। भुजबल से आढ्य ऋषभ, सुदंष्ट्र, गज, गवाक्ष, गवय, नल, ज्योतिर्मुख (आदि वानर-नायकों) ने उसे देख अति कोप से आततगति से

लर्डरिंचि रतनिपै; नवियॆल्ल नतडु । नडुमनॆ तुनिमि वानरुल नेड्वुरनु
नॊक्कॊक्क यम्मुन नुर्वर मीद । ग्रक्कुन जच्चिचन गति नुंड नेसॆ ।

हनुम रावणुनितो युद्धमॊनर्चि मूर्छिल्लुट

नालोन हनुमंतु डायूधपतुलु । गूलुट गनुगॊनि कोपंबुतोड
नसुराधिनाथुनि यरदंबुमीदि । कसमुन लंघिंचि यतनितो ननियॆ;
"देवेन्द्रु डादिगा दिविजुल नॆल्ल । रावण ! मरि यक्षराक्षस कोटि
द्रुळ्ळडंचिति ननि व्रुळ्ळॆद वीवु; । चॆल्लदुरोरि; नी चेवडगितु;
३३१०
नुन्नति जिरकाल मुर्विपै ब्रदिकि । युन्न नीमीद नायुन्नतंबैन
वलकेलु नेडु रावण ! यिदॆ चूडु । मलमि सागॆडु दनयंतन पेर्चि;
यिदॆ निन्नु बॊरिगॊनि येचि यंतकुनि । सदनंबु जेर्पक सैपदु; निजमु"
अनि पेर्चि पलिकिन हनुमंतु माट । विनि रावणुडु क्रोधविकृतास्युडगुचु
"गलितनंबुनु लावु गलदेनि नीवु । नलुवॊप्पनुप्पॊंगि ननु मुन्नु बॊडिचि
पेरुकॊम्मटमीद बेर्चिन नीदु । शूरतयुनु लावु जूचि ये नेचि

उस (रावण) पर पर्वत और अवनीज (वृक्ष) फेंक दिए। उन सबको बीच में ही तोड़देकर सात वानरों को एक-एक बाण से झट मृतप्राय कर दिया।

हनुमान का रावण से युद्धकर मूर्च्छित होना

इतने में हनुमान ने उन यूथपतियों (सेनापतियों) को गिरते देख, क्रोध से, असुराधिनाथ के रथ पर दर्प से लाँघकर उससे कहा—"हे रावण ! देवेन्द्र आदि समस्त दिविजों को और यक्ष-राक्षस-कोटि के गर्व का दमन किया, यह सोच दर्पित होते हो। रे, यह (आगे) नहीं चलेगा। तुम्हारी सामर्थ्य का दमन करूंगा ॥ ३३१० ॥

औन्नत्य से चिरकाल तक उर्वी पर जीवित तुम पर मेरा वाम कर अपने आप ही विजृंभित हो उठ रहा है। हे रावण ! यही देख लो। यही तुम्हें आक्रांत कर, दमनकर, अंतक के सदन को पहुँचाकर रहेगा। (यह) सच है।" ऐसा विजृंभित हो कही हनुमान की बात सुनकर, रावण क्रोध से विकृत-आस्य (आनन) वाला होता हुआ, (बोला)—"सामर्थ्य और शक्ति है तो तुम शोभा से उत्साहित हो पहले मुझ पर आघात करके, अपनी प्रशंसा कर लो। विजृंभित तुम्हारी शूरता एवं शक्ति को देखकर, मैं भी विजृंभित हो, तुम पर प्रहार करूंगा।" ऐसा

पोँडिचेँद" ननुड्डु नद्भुत शौर्युंडगुचु । गडगि मारुति दशकंठुनि जूचि
"देवदेवुडु रामदेवुंडु वनुप । नीवीटिलो मेदिनीपुत्रि वेँदकि
तडयक पोँडगांचि तग विन्नविंचि । वेँडलि ये बोवुचो विक्रमस्फुरण
नीतोट नुग्गाडि नीलंक गालिच । नीतनूभवु जंपि निन्नु दट्टिंचि ३३२०
युक्कड़ि निल्चि दैत्युलु सूचुचुंड । जक्क नेँप्पटि त्रोव जन्न नालावु
'नेडु चूचेँद' ननि नीवाडेँ दुब्बि: । नाडेँदु बोयिति नाकारि नीवु ?"
अनवुडु गोपिंचि हनुमंतु वक्ष । मनुवोँप्प बोँडिचेँ नय्यसुरेश्वरुंडु;
पोँडिचिन स्त्रुक्कियु बोवक यतडु । बिडिकिट रावणु बेँट्टुगा बोँडिचेँ;
बेँनुगालि पोँदविन बेँद्द कंपिंचु । घनवृक्षमुनु बोलेँ गंपिचेँ नसुर;
यंतट नोँच्चिन यसरेशु जूचि । येँतयु नार्चि रय्यिंद्रादु लेँल्ल;
दनुजाधिपतियु नंतट मूर्छ देँलिसि । हनुमंतु जूचि यिट्लनु: "नी बलंबु
कडु मेँच्चुवच्चु; नी घनमुष्टि हतिनि । गडकतो ब्रेतलोकमु जूचि वच्चेँ
देवारि।" यनुडु नद्धीरात्मुडनियेँ—। "रावण! विनु मीवु प्राणंबुतोड
नुन्नवाड! विदेल युऽक नालावु । सन्नुतिचोँदु! लज्ज जनियिंचेँ नाकु"
३३३०

कहने पर, अद्भुत शौर्यवाला होता हुआ, लगकर, मारुति ने दशकंठ को देख (कहा)—"देवदेव रामदेव के भेजने पर, तुम्हारे यहाँ मेदिनीपुत्री (सीता) को खोजकर, अविलंब पता लगाकर, औचित्य से निवेदन कर, जाते समय विक्रम की स्फूर्ति से तुम्हारे उपवन का नाशकर, तुम्हारी लंका को जलाकर, तुम्हारे तनूभव (पुत्र) का वधकर, तुम्हें फटकारकर ।। ३३२० ।।
—निर्वीर्य बने दैत्यों के देखते रहने पर, ठीक तरह से अपने मार्ग से जाने वाले मेरी सामर्थ्य को, फूलकर कहते हो कि 'आज देखूंगा'। हे नाकारि! उस दिन कहाँ गए थे ?" ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो हनुमान के वक्ष पर उस असुरेश्वर ने उपाय से (मुष्टि से) प्रहार किया। प्रहार करने पर, कमज़ोर बनकर भी, न हटकर, मुष्टि से रावण को ज़ोर से मारा। वह असुर, झंझा के उत्पन्न होने पर अधिक कंपित होने वाले घनवृक्ष के समान कंपित हो उठा। तब पीड़ित हुए उस असुरेश्वर को देख उन इन्द्र आदियों ने अधिक सिंहनाद किया। दनुजाधिपति भी फिर होश में आकर, हनुमान को देख यों कहा—"तुम्हारे बल को अधिक सराहा जा सकता है। तुम्हारे महान्-मुष्टि-प्रहार से, साहस से देवारि (राक्षस-रावण) प्रेतलोक को देखकर आया है।" (ऐसा) कहने पर उस धीरात्मा ने कहा—"हे रावण! सुनो, तुम प्राण से बच गए हो। यह क्या बेकार मेरी शक्ति की प्रशंसा करते हो ? मुझे तो लज्जा का अनुभव हो रहा है।" ।। ३३३० ।।

ननि पल्कि "नीवु नन्नटु पिडिकिय्नु। गॊनुमॊक्कपो" टन्न "गॊनु"
मनि यतडु
ननयंबु गोपिंचि यनिलनंदनुनि । ननुपमाशनिकल्पमगु मुष्टि नार्चि
वक्षंबु बॊडिचिन वडि मूर्छ नॊंदि । यक्षणंबुन द्रेळ्ळॆ नवनिपै नात;

नीलुडु रावणुनितो बोरुट

डऱिमुऱि हनुमंतुडट्टु कूलुटयुनु । नेऱसि रावणुडंत नीलुपै गविसॆ;
हनुमंतुसनु मूर्छ यंतलो देलिडु । दनुजुंडु नीलुपै दऱुमुट सूचि
"यॆट्टु पोयॆ" दनि पिल्चि यॆदुरुगा निलिचॆ; । नट्टु तन्नु गिट्टि पॆल्लार्चुचुनुन्न
मनुजाशनुनि मीद मलय शृंगंबु । गॊनिवच्चिच नीलुंडु गोपिंचि वैव
नडुमनॆ तुनुमाडॆ नाकारि दानि । नॆडपनि कडकतो नेडम्मु लेसि;
वॆंडियु नीलुंडु विपुल कोपमुन । गॊंडलु दरुवुलु गॊनि वैचुटयुनु
वानि नन्निंटि रावणुडु चूर्णंबु । गा निशितास्त्र संघंबुल दुनिमि ३३४०
नीलुनि मेन ग्रॊन्नॆत्तुरुलॊलुक । वालिन यम्मुलु वडि बॆक्कु लेसॆ;
नेसिन नॊच्चियु नित गैकॊनक । गासिल्ल नीलुंडु गडु लाघवमुन
धारुणि दैत्युलु दल्लडंबंद । वीरुडै दानवविभु तेरि कुऱिकि

फिर ऐसा कहा, 'तुम मेरी मुट्ठी का एक और प्रहार लो ।' 'लो' कहते वह (रावण) ने अधिक क्रुद्ध हो अनिलनन्दन को अनुपम-अशनि-कल्प (-सम)-मुष्टि से, सिंहनाद करके, वक्ष पर मारा तो झट मूर्छित हो, उसी क्षण अवनि पर वह (हनुमान) गिर पड़ा ।

नील का रावण से युद्ध करना

शीघ्रता से हनुमान के उस प्रकार गिरते देख, रावण तब नील से भिड़ गया । इतने में हनुमान मूर्छा से होश में आकर, दनुज (रावण) को नील का पीछा करते देख 'किधर जाओगे !' कहते बुलाकर, सामने डट गया । उस प्रकार अपने निकट पहुँच, अधिक सिंहनाद करनेवाले मनुजाशन (नरभोजी) पर नील ने क्रुद्ध हो मलयशृंग ला डाल दिया । नाकारि ने उसे बीच में ही, विलम्ब किए बिना, साहस से, सात बाण छोड़कर बीच में टुकड़े कर दिया । और भी नील के विपुल कोप से पर्वत और तरु ला डालने पर, उन सबको रावण ने निशित-अस्त्रसंघ से चूर्ण कर दिया ।। ३३४० ।।

नील के शरीर से नवरक्त उमड़ पड़े, ऐसे कई तेज़ बाण फेंके । फेंकने पर पीडित होकर भी, ज़रा भी परवाह न करके, नील अतिलाघव

पॊलुपॊंद नप्पुडद्भुत शक्ति मॆऱसि । निलिचि यच्चलमुन निगुडि युप्पॊंगि
वड बॆचि यारथध्वजमुन कॆगसि । पॊडि चेसि चापाग्रमुनकु लागॊप्प
नॆगसि व्रलंबुन नॆक्कॆडलिचि । मगुडि रावणु घनमकुटमुल् द्रॊक्कि
युरुभुज निज विक्रमोन्नति मॆऱसि । सुरसिद्ध साध्युलु सोद्दॆंबु नॊंद
नॊक मौळिपैनुंडि यॊक मौळि व्रेसि । यॊक मौळिपै नुंडि यॊक मौळि यूचि
यॊक मौळिपै नुंडि यॊक मौळि डुलिच। यॊक मौळिपै नुंडि यॊक मौळि दन्नि
मकुटंबुलन्नियु मट्टि मल्लाडि । यकलंकुडै नीलुडंतट बोक ३३५०
वारक तनुबट्ट वच्चिन सूक्ष्म । मै रावणुनि जूचि यंदंद नगुचु
गॊडगुलु सिंचि ग्रक्कुन मीद द्रोचि । पॊडिगाग जामरंबुलु द्रुंचि वैचि
विरुगंग नरदंबु वीक दाटिंचि । कऱकरि तोड नुत्कंठ दीपिंप
दनुजेशु नुरुमुष्टि दाचि हारमुलु । पॆनचिरा दिगिचि यापृथुल वक्षंबु
जऱचि यंदंद युत्साहंबु मॆऱसि । युऱक यीगति नाडुचुंडुट जूचि
तरुचर सेनलु दैत्य सेनलुनु । बॊरि बॊरि नद्भुतंबुग जूचुचुंड

से, धारुणि पर दैत्य विकल हो जाएं, ऐसा वीर हो, दानवविभु के रथ पर कूदकर, सुशोभित हो, तब, अद्भुतशक्ति से दीप्त हो, अधिक हठ से उमड़कर, झट सिंहनाद कर, उस रथ के ध्वज पर छलांग भरकर, (उसे) चूरकर, चापाग्र (-भाग) पर पूरी शक्ति से कूदकर, हठ से, उस (धनुष की डोरी) को ढीली कर, फिर से रावण के घनमकुटों को कुचलकर, उरु-भुज-निज-विक्रम-उन्नति से दीप्त होकर, सुर-सिद्ध-साध्य (आदि) चकित रह जाएँ, ऐसा एक मौलि (सिर) पर खड़े रहकर दूसरे पर प्रहार करके, एक सिर पर रहकर दूसरे को हिलाकर, एक सिर पर रहकर दूसरे को झकझोर कर, एक सिर पर रहकर दूसरे को लात मारकर, सभी मकुटों को धूल में मिलाकर, अकलंक हो रहा । उतने से न जाने देकर, ।। ३३५० ।।

—अपने को पकड़ने के लिए आने पर सूक्ष्म होकर (सूक्ष्म रूप को धारण कर), (रावण की पकड़ में न आकर) रावण को देख जहाँ-तहाँ हंसते हुए, छत्र फाड़कर, झट (रावण के) ऊपर लुढकाकर, चामर चूर हो जाएँ ऐसा गिरा देकर, पराक्रम से रथ को खंड-खंड करके, बलयुत हो उत्कंठा के दीप्त होने पर, दनुजेश को उरु-मुष्टि से प्रहार कर, हारों को उलझाकर, खींच फेंककर, उस (के) पृथुलवक्ष पर (हथेली से) प्रहारकर, जहाँ-तहाँ उत्साह से दीप्त होकर, इस गति से क्रीडा करते देख, तरुचर-सेनाओं तथा दैत्य-सेनाओं के बार-बार चकित हो देखते रहने पर, वे राजाराम

वॆऱगंदि रा रामविभुडु लक्ष्मणुडु । मऱि रावणुंडुनु महिताग्नि शरमु
नय्यॆड नारितो नलुक संधिंचि । यय्यग्नि सुतु तोड ननियॆ मंडुचुनु;
“नी लाघवमु लॆस्स: निन्नु मॆच्चितिनि; । नी लाघवमॆ नाकु नॆडयक चूपु;
मिदॆ वच्चॆ नाबाणमिनवह्नि रुचुल; । ब्रदिकॆडु चंदंबु बरिकिंचु
कॊनुम” ३३६०
यनि येयुटयु नीलु डग्नि बाणमुन । दनुवॆल्ल मंडुचु धरणिपै बडियॆ;
नग्निपुत्रुडु गान नातीव्र शरमु । नग्निचे जावक यवशुडै युंडॆ;

रावणुडु ब्रह्म शक्तिचे लक्ष्मणु गूलनेयुट

नंत धनुर्घोष मडर सौमित्रि । यंतकंतकु बॆर्चि यद्दैत्यु दाक
नग्गुणारावंबु नतनि साहसमु । नग्गिंचि यतनितो ननियॆ रावणुडु
“पिन्नवै युंडियु बॆर्चुचु ननिकि । सन्नद्ध गति नीवु चनुदॆंचुटॊप्पु;
बुच्चॆद नंतकु पुरिकि लक्ष्मणुड! । यिच्चंदमुन निल्वु मिंचुक तडवु”
अनवुडु विनि राघवानुजुंडनियॆ । “दनुजाधमुड! यीवृथा गर्वमेल?
डासिनवाड; माटलु पॆक्कुलुडिगि । चेसि चूपुदु गाक! चॆलगि नीलावु”

और लक्ष्मण विस्मित हुए। फिर रावण ने महित-अग्नि शर को, उस अवसर पर, क्रोध से धनुष की डोरी का संधानकर, (क्रोध से) जलते हुए उस अग्निसुत से यों बोला—“तुम्हारा लाघव (कौशल) श्रेष्ठ है। तुम्हें प्रशंसित करता हूं। अपने लाघव को ही सर्वदा दिखाते रहो, यह देखो मेरा बाण इन-वह्नि-रुचियों (सूर्य और अग्नि की कांतियों) से आ रहा है। जीवित रहने के विधान को देख लो।” ॥ ३३६० ॥

(ऐसा) कह डालने पर नील अग्निबाण से समस्त शरीर के जलते रहने पर धरणि पर गिर पड़ा। अग्निपुत्र होने के कारण उस तीव्र शर की अग्नि से न मरकर अवश हो रहा।

रावण का ब्रह्मशक्ति से लक्ष्मण को गिरा देना

तब धनुर्घोष के अधिक होने पर, सौमित्र ने अधिकाधिक सिंहनाद कर, उस दैत्य का सामना किया। उस गुणारव (ध्वनि) (तथा) उसके साहस की प्रशंसा कर, उससे रावण ने कहा—“छोटे होते हुए भी सिंहनाद करते हुए, युद्ध के लिए सन्नद्धगति से तुम्हारा आना समुचित है। हे लक्ष्मण! तुम्हें अंतक-पुरी को भेजूंगा। इसी प्रकार थोड़ी देर खड़े रहो।” ऐसा कहने पर सुनकर राघवानुज ने कहा—“हे दनुजाधम! यह वृथा गर्व क्यों? (तुम्हारे) निकट आया हूँ। अनेक बातों को छोड़कर, उत्साहित

ननिन सौमित्रि नेडम्मुल नेसें; । दनुजुनि यम्मु लुद्धति लक्ष्मणुंडु
नडुमनें त्रुंचेंनु; नाकारि यप्पु । डडरेंडु क्रोधमुदग्रमै पर्व ३३७०
घनतरज्या नाद कलितंबुगाग । ननयम्मु निगुडिचें नम्मुलवान;
नायंपतंडबु लंदंद त्रुंचि । वेयेसि शरमुलु वेंस नेसें नात;
डायस्त्रमुलकु मारॅन यस्त्रंबु । लेय नेरक दानवेश्वरुंडपुडु
तलकोंनि योंक ब्रह्मदत्त बाणमुन । ललित वक्षंबेय लावेंल्ल दूलि
विल्लूतगा निलिच वेगंबें तेंलिसि । पेंल्लुगा नार्चुचु बेंचि लक्ष्मणुडु
घनबाण माकट राक्षसनाथु विल्लु । दुनिमि यंतट बोंक दोर्बलंबेंसग
मू डग्नुलन बोलु मूडु बाणमुल । वाडिमि मिगुलंग वक्षंबु नेसें;

लक्ष्मण मूर्छ

नेसिन मूर्छिल्लि यिंतलो देंलिसि । यासन्न-सत्त्व-समग्रुडै कदिसि
तनविल्लु विरिचिन दानिकि नसुर । मनमुन जाल विस्मयमुन बोंदि
कलुषिंचि निच्चलु गंध पुष्पमुल । नलवड बूजिप नमरिन दानि ३३८०

हो अपनी शक्ति को (कार्य रूप में) करके दिखाओ।" (ऐसा) कहने वाले सौमित्रि पर सात बाण डाले। दनुज के बाणों को औद्धत्य से लक्ष्मण ने बीच में ही तोड़ दिया। नाकारि तब उत्कर्ष को प्राप्त क्रोध के उदग्र हो, व्याप्त होने पर, ॥ ३३७० ॥

—घनतर-ज्या-नाद से कलित होने पर, निरन्तर बाणों की वर्षा की। उस वाणसमूह को जहाँ-तहाँ नष्टकर, उसने हज़ारों शर चलाए। उन अस्त्रों के लिए प्रति-अस्त्र चला न सक दानवेश्वर ने तब लगकर ब्रह्मदत्त एक बाण को (लक्ष्मण के) ललित वक्ष पर चलाया। समस्त शक्ति को खोकर, धनुष के सहारे खड़े होकर, झट होश में आकर, अधिकता से सिंहनाद करते हुए लक्ष्मण ने एक घनबाण से राक्षसनाथ के धनुष को काट देकर, उतने से न जाने देकर, दोर्बल (बाहुबल) के उमडने पर, त्रेताग्नियों के सम तीन बाण, नैशित्य से (रावण के) वक्ष पर चलाये।

लक्ष्मण की मूर्छा

चलाने पर, मूर्छित हो, उतने में होश में आकर, आसन्न-सत्त्व से समग्र हो, अपने धनुष के तोड़े जाने पर असुर ने मन में अधिक विस्मित हो, कलुषित (संतप्त) होकर, नित्य गन्धपुष्पों से औचित्य से पूजित होकर सुशोभित बनी थी, ॥ ३३८० ॥

निलयु ब्रह्माण्डंबु नॆल्ल दिक्कुलुनु । वॆलुगॊंदु मंटल विलसिल्लु दानि
नडरॆंडु पदि कोटु लशनुल बोलि । कडु बॆट्टिदपु म्रोत गलिगिन दानि
नलिनमित्रुनि किरणंबुल कंटॆ । वॆलुगॊंदु नुग्रंपु वेडिमि दानि
ननिमिषुल् वॆऱगंद ना ब्रह्मशक्ति । गॊनि लक्ष्मणुनि मीद ग्रूरुडै वैचॆ;
वैचिन गालाग्नि वडुवुन बॆद्द । येचि वज्रमुनकु नॆक्कुडै निगुडि
यनिमिषावलि यॆल्ल नाहारवंबु । लॊनरिप बऱतॆंचु नुग्रत सूचि
वारिंप नम्मुलवान लक्ष्मणुडु । घोरतरंबुगा गुरियंग गॊनक
यदि वच्चि भुज-मध्यमंदु लक्ष्मणुनि। वदलक ताकिन वसुधपै वडियॆ;
नरिगि दशाननुंडंत लक्ष्मणुनि । निरुवदि चेतुल नॆत्त बूनुटयु
नातडु विष्णुनि यंशजुडगुट । नेतॆऱंगुन वानि कॆत्त रादय्यॆ; ३३९०
नॆत्त राकुंडिन "नेनु कैलास । मॆत्तिति नगलिंचि ये नट्टुलडरि;
मऱि मेरुवैननु मंदरंबैन ।नॆऱय नॆत्तग नॊपु निज शक्ति नाकु;
वीडित ग्रेगौट विस्मयं" बनुचु । बोडिगा गरमुल बून्चि रावणुडु
अतुल सत्त्वोन्नति नंदंद यॆत्त । मतिलोन गोपिंचि मारुति गडगि
पऱतॆंचि निर्घात पटुमुष्टि नार्चि । कऱकुराक्षसुनि वक्षस्थल मगल

—पृथ्वी, ब्रह्मांड (तथा) समस्त दिशाओं में प्रज्वलित वह्नियों से युक्त थी, दस हज़ार अशनियों के समान अति भयंकर घोष से युक्त थी, नलिनमित्र (सूर्य) की किरणों से भी अधिक प्रदीप्त उग्र-उष्णता से युक्त थी, ऐसी उस ब्रह्मशक्ति को, अनिमिषों के चकित होने पर, क्रूर बन, लक्ष्मण पर चलाया। उसके डालने (चलाने) पर कालाग्नि के समान विजृंभित हो, वज्र की अपेक्षा अधिक होकर, समस्त अनिमिषावली के हाहाकार करते रहने पर आनेवाली उस (शक्ति) की उग्रता को देख, उसका निवारण करने के लिए लक्ष्मण ने बाणवर्षा घोरतर रूप से की। उसकी परवाह न कर वह (शक्ति) आकर, लक्ष्मण के भुजमध्य (वक्ष) में अनिवार्य रूप से लगी तो (लक्ष्मण) वसुधा पर गिर पड़ा। तब जाकर दशानन, लक्ष्मण को बीसियों हाथों से उठाने का प्रयत्न करने पर, उसके (लक्ष्मण के) विष्णु-अंशज होने पर, किसी भी तरह से उठा न सका ॥ ३३९० ॥

उठा न सकने पर "मैं अतिशयता से कैलाश (पर्वत) को उखाड़कर उठा सका। यही नहीं, मेरु हो या मन्दर, उठाने की मेरी अपनी शक्ति है। इसका इतना भारी होना विस्मयप्रद है।" (ऐसा) सोचते, सुघड़ता से हाथ लगाकर रावण ने अतुल-सत्त्व-उन्नति से जहाँ-तहाँ उठाने का प्रयत्न किया तो मन में क्रुद्ध हो मारुति ने सप्रयत्न आकर, निर्घात

बौडुचुटयुनु मूर्छं बोंदि रावणुडु । कडु दूलि यंत मोकाळ्ळु मोवंग
बडियें बिट्रिदिकि बद मिडलेक: । पडिन रावणुनि यप्पटि भंगि जूचि
यार्चिरि देवत; लप्पुडु कपुलु ।पेर्चिरि; दैत्युलु भीति गीड्वडिरि;
पावनि यट विष्णु भक्तुंडु गान । रावणुनकु नेत्तरानि लक्ष्मणुनि
गुरु सत्त्वमुन नेत्तुकोनि पोयि राम । धरणीतलेशु मुंदर बेट्टे नपुडु
३४००
रामु तेजमुन बराजित मगुचु । सौमित्रि नाटिन शक्तियु नूडि
यसरेशु रथमुन करिगे; सौमित्रि । यसमान बलशालियै मूर्छ देरें;
नट रावणुंडुनु नम्मूर्छ देलिसि । चटुल बाणासन सन्नद्धुडय्यें;

राम रावणुल प्रथम युद्धमु

सौमित्रि यट्टु परिश्रांति नोंदुटकु । नामर्कटुलु भीति नलिकि पारुटकु
रावणुडेचि पैराककु राम । देवुंडु गोपंबु दीपिंप बेंचि
भीकरगुण रवस्फीतुडै वेग । नाकारि कैदुरुगा नडचुट सूचि
यनिलतनूभवुंडनियें रामुनकु । "निनकुलाधीश्वर ! यीरावणुंडु

(वज्र)-पटुमुष्टि ले, सिंहनाद कर, क्रूरराक्षस का वक्षस्थल फट जाए, ऐसा प्रहार करने पर, रावण मूर्च्छित हो, लड़खड़ाकर, घुटनों के बल, पीछे पैर न रख सक, गिर पड़ा। गिरे हुए रावण के उस विधान को देख देवताओं ने सिंहनाद किया। तब कपियों ने सिंहनाद किया। दैत्य भीति से त्रस्त हो उठे। पावनी (हनुमान) के विष्णुभक्त होने के कारण रावण के लिए दुर्वह लक्ष्मण को गुरुसत्त्व से उठा ले जाकर तब राम-धरणीतलेश (राजा राम) के समक्ष रखा, ॥ ३४०० ।

—राम के तेज से पराजित होकर, सौमित्री के शरीर में गड़ी शक्ति छूटकर, असुरेश के रथ की ओर गयी। सौमित्र भी असमान बलशाली हो मूर्च्छा से सचेत हो गया। उधर रावण भी मूर्च्छा से होश में आकर, चटुल-बाणासन ले सन्नद्ध हो गया।

राम-रावण का प्रथम युद्ध

सौमित्री के उस प्रकार मूर्च्छित होने पर, उन मर्कटों के भी भीत हो भाग आने पर, रावण के विजृंभित होकर आक्रमण करने के लिए आने पर, रामदेव के कोप दीप्त होने पर, उत्साहित हो, भीकरगुणरवस्फीत हो, झट नाकारी के समक्ष चल पड़ते देख, राम से अनिलतनूभव ने कहा—"हे इनकुलाधीश्वर ! इस रावण के रथ पर रह युद्ध करते समय तुम्हारा

अरदंबुपै नुंडि यालंबु सेय । वॆरवगुने नीकु विभुड! कालनडव?
नामीद वडि नॆक्कि नाकारि कॆदुर । राम ! विच्चेयुट राजधर्मंबु"
अनवुडु गडकतो हनुमंतु नॆक्कि । यनिमिषकरिमीदि यमरेन्द्रु करणि
३४१०
नॊप्पि गुणध्वनि यॊप्पार जेसॆ । नप्पुडु कोपिंचि याटोपमॊप्प;
रावणुडुग्रुडै रामु नीक्षिंचि । पावक-ज्वालोग्र-बाण-जालमुल
गुरिसिन राघवक्षोणीशु डलिगि । युरु बाणमुल नेसॆ; नुरुवडि वानि
निंद्रारि दॆगनेसॆ; नेसिन राम । चंद्रुडुद्धति नर्धचंद्र बाणमुन
दनुजेशु कोदंड दंडंबु दुनिमि । सुनिशित भीकराशुग पंचकमुन
मर्ममुल् नॊप्पिप मरियुनु नॊक्क । धर्मंबु गॊनि यार्चि दशकंधरुडुं
पटु बाण मॊक्कट बवन नंदनुनि । निटलतटंबेसॆ निपुणुडै मॆऱसि;
यनिलजु फाल मुग्रास्त्रंबु दाक । गनुगॊनि कोपिंचि काकुत्स्थकुलुडु
भल्लंबु दॊडिगि यापंक्तिकंधरुनि । विल्लंत लोपल विरुगंग नेसि
यॊक्कट सारथि नॊकट यश्वमुल ।नॊक्कट नरदंबु नॊकट बताक३४२०
नॊक्कट गॊडुगुनु नॊकट नस्त्रमुल । ग्रक्कुन नेसि चूर्णंबु गाविंचि
मनुज नायकुडु समंत्रक शरमु । दनुजुनि वक्षंबु दाक नेयुटयु

पैदल रहना क्या समुचित होगा ? हे राम ! मुझपर झट सवार होकर, नाकारी के समक्ष पधारना राजधर्म है।" ऐसा कहने पर, साहस से युक्त हो, हनुमान (के कंधों) पर चढ़कर, अनिमिष-करि (ऐरावत) पर अमरेन्द्र के समान, ।। ३४१० ।।

—शोभित हो, तब क्रुद्ध हो, आटोप की शोभा से गुण-ध्वनि की। रावण ने उग्र हो राम को देख पावक-ज्वाला-उग्र बाण बरसाए। राघव-क्षोणीश (-राजा) ने क्रुद्ध हो उरुबाण चलाए। शीघ्रता से उन्हें इंद्रारि ने काट दिए। (काट) देने पर रामचन्द्र ने उद्धति से अर्द्धचंद्र बाण से दनुजेश के कोदंड-दंड को काटकर, सुनिशित-भीकर-आशुग (-बाण) -पंचक से मर्मस्थानों को पीडित किया। और एक धनुष को लेकर, सिंहनादकर दशकंधर ने एक पटुबाण को पवननंदन के निटलतट (ललाट) पर चलाया (और) प्रवीण हो प्रकाशित हुआ। उस उग्र-अस्त्र के अनिलज के फालभाग पर लगते देख, काकुत्स्थकुलज ने क्रुद्ध हो, भल्ल (भाले) का संधानकर, उस पंक्तिकंधर के धनुष को झट काटकर, और एक से सारथी, अन्य से अश्व, एक से रथ, एक से पताका, ।। ३४२० ।।

—एक से छत्र, एक से अस्त्रों को झट चूर्णकर, मनुजनायक ने समंत्रशर को दनुज के वक्ष को लगे, ऐसा चलाया। उस राम के शर से रावण

नारामु शरमुन नारावणुंडु । वारक कडुनोंच्चि वडवड वडकि
यनिकि निश्चेष्टितुंडगु दशकंठु । गनि यर्ध-चंद्र-मार्गण मरिवोसि
दश दिशलंदुनु दनरिन दैत्यु । दश यडंगिचु चंदमु जूपु करणि-
द्रिदशुलु मेंच्च नुद्दीप्त कोपमुन । बदि मकुटंबुलु बडि डोंल्ल नेसें;
नेसिन मदिलोन नेंतयु स्रुक्कि । भासुर मकुट प्रभावळि बासि
ग्रद्दन जेयु नक्कय्यंबु दक्कि । तद्दयु निश्चेष्ट दशकंठु डुंडें;
नप्पुडु राघवुंडनियें रावणुनः । "किप्पुडु कपुलतो निब्भंगि बोरि
कडु डप्पिनाडवु; कान निन् जंप । विडिचिति; नीविक वेगंबु मरलि
३४३०

रावणुडु चिन्नबोयि लंककु मरलुट

पो लंक" कनुडु नप्पुडु चिन्नवोयि । योलिन वेडिनिट्टुर्पुलु निगुड
मंडेंडि कोपंबु मलिपि चित्तमुन । दंडि गर्वमु दक्कि दशकंधरुंडु
बलमेंल्ल बोंलिसि दर्पमु पेर्मि दूलि । वेंलवेंल बारुचु विरथुडै नडचि
पेंदवुलु दडपुचु बिम्मिटि गोंनुचु । गदरिन भीति गद्गद कंठुडगुचु
जेरि योंडोरुवुल चेतुलु सरचि । बोरन नव्वुचु भूतंबु लार्व

दुर्निवार रूप से अधिक पीड़ित हो, थरथर काँप उठा। युद्ध के लिए निश्चेष्टित बने दशकंठ को देख, अर्द्धचंद्रमार्गण का संधानकर, दशदिशाओं में विलसित दैत्य की (महा) दशा का दमन करने के विधान को दिखाने के समान, त्रिदशों (देवताओं) की प्रशंसा करने पर, उद्दीप्त कोप से दसों मकुट (धरा पर) लुढका दिए। (ऐसा) चलाने पर मन में अधिक कमजोर बन, भासुर-मकुट-प्रभावली से रहित हो, जल्दबाजी से किए जाने वाले उस युद्ध से विरत हो, दशकंठ अधिक निश्चेष्ट हो, खड़ा रह गया। तब राघव ने रावण से कहा—"अब कपियों से इस प्रकार जूझकर अधिक थक गए हो। अतः तुम्हें मार डाले बिना छोड़ दिया है। अब तुम शीघ्र ही लौटकर, ॥ ३४३० ॥

रावण का खिन्न हो लंका को लौटना

—लंका जाओ।" (ऐसा) कहने पर तब खिन्न होकर, उद्गत होने वाले उष्ण निश्वासों के बढ़ते रहने पर प्रज्वलित क्रोध को बुझाकर, मन में अधिक गर्व को खोकर, दशकंधर समस्त बल खोकर, दर्प के उत्कर्ष को खोकर, विवर्ण होते हुए, विरथ हो, पैदल चलते हुए, होंठ चाटते हुए, बेहोश होते हुए, अधिक बने भय से गद्गदकंठ वाला होते हुए, सभी (मर्कटों) के मिलकर तालियाँ बजाते हुए, भूत चीख उठें ऐसा अट्टहास करते हुए,

गुरुवुलु वारुचु गुनिसि याडुचुनु । गॆरलि वानर कोटि गेलि सेयंग
गऱकॆल्ल नुडिगि यॊक्करुडुनु वेग । पऱचि यालंक लोपल जॊच्चॆ नप्पु;
इट्टु लंकलोपलि करिगि रावणुडु । पट्टुतरंबगु चिंतबडि तल्लडिलुचु
बंचाननंबुचे बडियु जावुनकु । निचुक तप्पिन येनुगु पगिदि,
गरुडुनिचे बडि क्रम्मऱ ब्रदिकि । सुरिगि पोयिन दंद शूकंबु वोलॆ ३४०
स्फीत विद्युत् प्रभाभील कीलमुल । नातत ब्रह्म-दंडातिशयंबु
लगु रामु बाणंबु लडरि प्राणमुल । दॆगटार्चुचुनिकि जिंतिचि चिंतिचि
युडुगनि वेडि निट्टूर्पुल बॆल्लु । वडगालि बोलॆ नॆव्वलनैन सुडिय
दलकॊन्न सिग्गुन धैर्यंबु वदलि । कॊलुवुलो गल दैत्य कोटि नीक्षिचि
“नालावु कलिमि दानव वीरुलार! । नेलतो गलियुट नेडुवो कलिगॆ !
सहज पराक्रम शालि यॊक्करुडु । महिमीद बुट्टॆ रामक्षितीश्वरुडु;
सॊरिदि युद्धंबुल सुरसिद्धसाध्य । गरुड गंधर्व राक्षस पक्षि यक्ष
किन्नरोरगवर किंपुरुषुलुनु । नन्नु जयिंचुटॆन्नडु लेक युंड
वरमु गांचिति ब्रह्म वलन ने; । नपुडु सरकु सेयनु नरसमिति मोसमुन;
नामोसमॆल्लनु नाकु बैवच्चॆ; । नेमनि चॆप्पुदु नीदुरवस्थ! ३४५०

शीघ्र दौड़ते इठलाते, उद्धत हो वानरकोटि के अपहास करते रहने पर, समस्त क्रौर्य को खोकर, अकेले ही शीघ्रता से तब उस लंका में प्रवेश किया। तब लंका के भीतर जाकर रावण पट्टुतर-चिन्तामग्न हो, विकल होते हुए, पंचानन (सिंह) के हाथ पड़कर भी, बाल-बाल बच निकल जानेवाले हाथी की तरह, गरुड के हाथ पकड़कर भी, फिर जीवित हो, अदृश्य हो जानेवाले दंदशूक (सर्प, राक्षस) की तरह, ॥ ३४० ॥

—स्फीत-विद्युत्-प्रभा-आभील-कील (-ज्वालायुत) हो, आतत-ब्रह्मा के दंड (अस्त्र) से भी अतिशय राम के बाणों का, विजृंभित हो, अपने प्राणों को मार डालने की (बात) सोच-सोचकर, कम न होने वाली गरम साँसों के तीव्र लू के समान होने पर, कहीं जा छिप जाने की बात से उत्पन्न लज्जा के कारण, साहस खोकर, सभा में स्थित दैत्यकोटि को देखकर (बोला)— “हे दानव वीरो! मेरी सामर्थ्य की संपत्ति (अतिशयता) का मिट्टी में मिल जाना आज संभव हुआ न! एक सहज पराक्रमशाली राम-क्षितीश्वर महि पर जन्मा। क्रम से युद्धों में सुर, सिद्ध, साध्य, गंधर्व, राक्षस, पक्षि, यक्ष, किन्नर, उरगवर, किंपुरुषों के हाथ कभी न हारने का वर मैंने ब्रह्मा से प्राप्त किया। तब भूल से नर-समिति की उपेक्षा कर दी। वह समस्त भूल (आज) मेरे (सिर पर) आयी है। इस दुर्दशा के बारे में क्या कहूँ? ॥ ३४५० ॥

कोट मीरेमऱ कुंडि वाकिळ्ळ । बाटिंचि यॆंतयु बलुकापुलिड्डु;
दुरमुलोपल ब्रहस्तुडु मॊदलैन । युरुवीरु लंदरु नॊगि बोरि पडिरि;
मऱि यिक रामलक्ष्मणुल जयिंप । नॆऱिबिरुदॆव्वडु निजमुगा निंदु;
बहुसंगरांगण परिणतुंडैन । सहज शूरुडु रामजनपालु मीद
नडव नेर्चिन यट्टि नातम्मुडैन । कडिदि वीरुडु कुंभकर्णुडुं गाक
विनुतिप मऱि यॊंडु वीरुंडु गलडे" । यनुचु नद्दशकंठु डंदऱ जूचि
"नॆऱयंग निरुमूडु नॆललु निद्रिंचि । मऱि मेलुकनि सभामंटपंबुनकु
नलरि येतॆंचि मंत्रालोचनंबु । पॊलुपार गाविंचि पोयि क्रम्मऱनु
नेडु तॊम्मिदि नाळ्ळ निद्रमै नुन्न । वाडु; शत्रुलनॆल्ल वधियिंपगलडु
अतनि मेल्कॊल्पि यतुल विक्रमुनि । नेतॆऱंगुन नैन निटकुदॆं" डनिन
३४६०

राक्षसुलु कुंभकर्णुनि निद्र मेल्कॊल्पुट

बहु गंधपुष्पमुल् भक्ष्य भोज्यमुलु । बहु विधंबुल गॊनि पऱचि राक्षसुलु
नाततानंत भोगास्पदंबगुचु । बाताळमुनु बोलॆ बरगॆडु दानि
महनीय शतकोटि महिमचे निंद्रु । महितालयमु बोलॆ मानैनदानि

तुम लोग असावधान न बन, दुर्गद्वारों पर अधिक रक्षा की व्यवस्था करो। युद्ध में प्रहस्त आदि उरु-वीर लगन के साथ युद्ध कर मर गये। अब सचमुच राम-लक्ष्मणों को जीत सकनेवाला उत्तम वीर यहाँ कौन है? बहु समरांगणों में परिणत (अनुभवी) (तथा) सहजशूर, साहसी वीर मेरे अनुज कुंभकर्ण को छोड़, राम-जनपाल (राजाराम) का सामना कर सकनेवाला और कौन है?" (ऐसा) कहते वह दशकंठ सबको देख (यों बोला)—"शोभा से छः मास सोकर, फिर जागकर, सभामंडप में आनन्द से आकर, मंत्रालोचन कर, फिर आज से नौ दिन पहले जाकर, सो रहा है। वह समस्त शत्रुओं का वध कर सकता है। उसे जगाकर, उस अतुल विक्रम वाले को किसी भी तरह यहाँ लाओ।" ऐसा कहने पर, ॥ ३४६० ॥

राक्षसों का कुंभकर्ण को नींद से जगाना

—बहुगंधपुष्प, बहुविध भक्ष्यभोज्य लेकर जाकर, राक्षस, आतत-अनंत-भोग (सर्प और भोग) का आस्पद हो पाताल के समान शोभायमान, महनीय शतकोटि-(शत करोड़ और वज्रायुध) महिमा से इन्द्र के महितालय (स्वर्ग) के समान मान्य, निखिल (समस्त लोक) में व्याप्त तेज के

निखिलंबुनंदुनु नॆगडु तेजमुन । शिखिनिवासमु बॊलॆ जॆलुवैनदानि
समधिकंबैन भीषण वृत्ति गलिगि । यमनिवासमु बॊलॆ नमरिन दानि
विविध मेदो मांस वितति ग्रव्यादु । भवनांगणमु बॊलॆ भासिल्लु दानि
निरुपमतर वारुणीयुक्तमगुचु । वरुणालयमु बॊलॆ वालिन दानि
दिरमैन यासुगंधिश्वसनमुल । मरुदालयमु बॊलॆ मलसॆडुदानि
विलसित निधुलचे वॆलसि कुबेरु । नॆलवुनु बॊलॆ वर्णितमैन दानि
नुरुविभूतिकि नॆल्ल नुनिकिपट्टगुचु। हरुनिवासमु बॊलॆ नलरिनदानि
३४७०
गलिगिन पद्मराग प्रभावळुल । नलुव युन्नॆड बॊलॆ नलुवैन दानि
नखिलाशल द्रियोजनायतंबगुचु । सुखतरंबगु गुह सॊच्चि यच्चॊट
नावीरु निट्टूर्पु लडरिन दूलि । लाबुन नॆट्ट केलकु जेर बोयि
कडुनॊप्प नॆंतयु गरगरनैन । वॆडलुपु गल हेम-वेदिक मीद
नंसंबुतो गपोलांकंबु जेर्चि । हंस-तूलिक-तल्पमंदु शयिंचि
युडुगक तरचैन यूर्पुल तोड । बॆडगैन या घर्मबिंदुलतोड
गरमॊप्प मोड्चिन कन्नुल तोड । दरमैन कपुर गंदपु बूत तॊड

कारण शिखि (अग्नि) निवास के समान सुन्दर, समधिक भीषणवृत्ति से युक्त हो यम-निवास के समान विलसित, विविधमेदोमांस-वितति के कारण क्रव्याद (मांसभोजी राक्षस) के भवनांगण के समान भासित, निरुपमतर वारुणी (मदिरा और जल) से युक्त हो वरुणालय के समान विलसित, स्थिर बने सुगंधयुक्त श्वसनों से मरुदालय के समान शोभित, श्रेष्ठ-निधियों से विलसित हो, कुबेर के निलय के समान वर्णित, उरु-विभूति (ऐश्वर्य और राख) के लिए आकर (स्थान) होते हुए, हर के निवास के समान शोभित, ।। ३४७० ।।

—पद्मराग प्रभावलियों से युक्त हो ब्रह्मा के निवासस्थान के समान मनोहर, (इस प्रकार) अखिल-आशाओं (दिशाओं) में त्रियोजन-आयत (विशाल) होते हुए, सुखतर बनी गुफा में प्रवेशकर, वहाँ उस वीर (कुंभकर्ण) के निश्वासों के मारे लढ़खड़ा जाकर, शक्ति के कारण किसी भी प्रकार निकट पहुँच, अधिक शोभित स्वच्छ (अथवा श्वेत), चौड़ी हेम-वेदिका पर, अंश (कंधा) भाग को कपोलांक (कपोल) जोड़कर, हंस-तूलिकातल्प पर शयन कर, न रुककर अधिक बने निश्वासों के साथ, विलसित धर्म-(पसीने की) बिन्दुओं के साथ, अधिक मनोज्ञता से मूँदी आँखों के साथ, घने कर्पूर-चंदन के लेप के साथ, उर पर अधिक उज्ज्वलता से प्रकाशित मणिहार-निकर (-समूह) के साथ, सल्ललित-आनंद-संपत्ति

नुरमुन नॆंतयु नुज्ज्वलंबगुचु । नॆरसिन मणिहार निकरंबु तोड
सल्ललितानंद संपद तोड । नॆल्लप्पुडुनु दन्नु नॆऱुगमितोड
सरस निद्रांगना संभोगकेळि । बरिणमिंचिन भंगि भासिल्लुवानि
३४८०
बलुमाऱु दिविजुल भंजिचु नट्टि । कल लर्थि गनु कुंभकर्णुनि गनिरि;
कनि "यिट्टिवानि की घन निद्र यिच्चॆ । वनरुहासनु" डनिवगचुचुनप्पु
डातनि मुंदऱ् नन्नरासुलुनु । ब्रातिगा महिष वराह मांसमुलु
बोसि यंचित गंधपुष्पार्चनमुलु । सेसि धूपंबुलु चॆलुवॊप्प निच्चि
पॊरि बॊरि बहुदीपमुलु निवाळिंचि । करमुलु मॊगिचि पॊगड्तलनॆरपि
पिड्गुलु म्रोसिन पॆक्कुव कंटॆ । नॆडपकार्चुचु बॊब्बलिडुचु जीऱुचुनु
नुरुवडि शंखंबु लूदुचु बॆट्टु । मॊरयंग निस्साणमुलुनु भेरुलुनु
जॆंदि व्रेयुचु दोन सिंहनादमुलु । नंदंद चॆलंगिप नम्महारवमु
दक्षत बाताळ तलमु दिक्कुलुनु । नक्षत्र-पथमुनु नाकंबु निंडॆ;
नंतक दॆलियक याकुंभकर्णु । डंतकंतकु गड्डु नग्गलंबैन ३४९०
निदुर वोवग जूचि निखिल राक्षसुलु । गदलुनु मुसलमुल् घनमुद्गरमुलु
बॆनुपारु पट्टिस भिंडिवालमुलु । मुनुमिडि यंदऱु मुसरि व्रॆयुचुनु

के साथ, सदा अपने को न जानकर (अपने को भूलकर), सरस-निद्रा-अंगना की संभोगकेली के परिणाम-स्वरूप प्राप्त स्थिति के समान भासित होनेवाले, ।। ३४८० ।।

—अनेक बार दिविजों को पराजित करने के स्वप्न प्रेम से देखनेवाले कुंभकर्ण को देखा । देख 'ऐसे व्यक्ति को यह महानिद्रा दी है न वनरुह-आसन (ब्रह्मा) ने,' (ऐसा) सोच दुःखी होते हुए तब उसके सामने अन्न (भात) की राशियाँ, प्रेम से महिष-वराह मांस (का ढेर) लगाकर, अंचित (पूज्य) गंध-पुष्पों से अर्चनाएँ कर, मनोहरता से धूप जलाकर, बार-बार बहुदीपों की आरती उतारकर, हाथ जोड़कर, स्तुतिपाठ कर, अशनि-घोष से भी अधिक भयंकर (ध्वनि से) निरंतर सिंहनाद कर, पुकारते हुए, शीघ्रता से शंख बजाते हुए, निसानों तथा भेरियों को अधिकता से मुखरित कर, उन (ध्वनियों) के साथ-साथ सिंहनाद कर, (इस प्रकार) लगातार महारव को करने पर, (वह रव) दक्षता से पाताल-तल, दिशाओं, नक्षत्रपथ (और) नाक (स्वर्ग) में भर गया । इतने पर न जानकर (होश में न आकर) कुंभकर्ण के क्रमशः अति गाढ़, ।। ३४९० ।।

—निद्रामग्न होने पर, (उसे) देख समस्त राक्षस गदाएँ, मूसल, घनमुद्गर, शोभित पट्टिस, भिंडिवाल, क्रम से सबके घेरकर डालते हुए, दस हज़ार

बदिवेल कुंतमुल् बरुल ग्रुम्मियुनु । वदलक कौंडलु वैचियु बोक
युरमुपै नंदंद युऱिकि पादमुल । गरमु मैट्टियु मेलुकान्पंग लेक
तडबड सिंहनादमुलु सेयुचुनु । गडु बैट्टुगाग शंखंबु लूदुचुनु
बट्टु नादमुलु ग्रंदुबड गुंभ वाद्य । पटह भेरी भूरि बहु तूर्यमुलुनु
दौंडरि म्रोयिंपुचु दोडन मऱियु । नुडुगक पदिवेवुरुग्र राक्षसुलु
ऋंदुगा निस्साण घनतराराव । मंदंद चैलगिप ना रभसमुन
नीलाद्रियुनु बोलि निश्चलुंडगुचु । नालोन दैलियक यतडुन्न जूचि
करुल हयंबुल घनतरोष्ट्रमुल । नुरुलुलायमुलचे नुऱक त्रौक्किचि ३५००
कौंकक मेनेल्ल गुदियल मोदि । यंकिचि सकलवाद्यमुलु वायिंप
लंक गंपिंचि कोलाहलंबय्यै; । शंकिचे नव्वनचर सेन यैल्ल;
निट्टु चेयुनप्पुडु नेमियु दैलिय । कट्टु निद्र वोवंग नखिल राक्षसुलु
कौंदरु दिक्कुलु घूर्णिल्ल भेरु । लंदंद म्रेयुचु नधिक दर्पमुन,
गौंदरु पर्वत गुहलेल्ल नद्रुव । दंदडि सिंहनादमुलु सेयुचुन,
गलयंग गौंदरु करमुल बैनचि । पैलुच्च शिरोजमुल् वेऱिकि वैचुचुनु,
गौंदरु घनकर्ण-कुहरमुल् सौच्चि । ऋंदुगा गूबलु गऱचि पट्टियुनु,

कुंत (भाले) तथा अंकुशों से मारकर, न छोड़कर पर्वत (तक) डालकर, (उतने से) न जगा सक, उर (वक्ष) पर जगह-जगह कूदकर, चरणों से अधिक दबाकर, (उसे) जगा न सक, लड़खड़ाए ऐसा सिंहनाद करते हुए, बहुत भीकरता से शंख फूंकते (बजाते) हुए, पटुनादों से हल्ला मचाते हुए, कुंभवाद्य पटह, भेरी, भूरि, बहुतूर्यों को विजृंभित हो बजाते हुए, और न रुककर दस हजार उग्र राक्षसों के अधिकता से निस्साण-घनतर-आरव (ध्वनि) को निरंतर करने पर, उस रभस (हो-हल्ला) में भी नीलाद्रि के समान निश्चल होते हुए, अपने आपको न जानते हुए (होश में न आकर) पड़े हुए उसे देख, करियों, हयों, घनतर-उष्ट्रों से, उरु-लूलायों (भैंसों) से लगातार रौंदवाकर, ॥ ३५०० ॥

—संकोच न कर, सारे शरीर को बड़े लट्ठों से मारकर, लगकर सकल वाद्यों को (एक साथ) बजाने पर, लंका कंपित हुई और कोलाहल हुआ। समस्त वनचर-सेना शंकित हुई। (राक्षसों के) ऐसा करने पर कुछ भी न जानकर (कुंभकर्ण के) उस प्रकार सोने पर, समस्त राक्षसों में कुछ लोग, दिशाएँ घूर्णित हो जाएँ ऐसा अधिक दर्प से निरंतर भेरियाँ बजाते हुए, कुछ समस्त पर्वतगुफाएं उखड़ जाएँ ऐसा घोर रूप से सिंहनाद करते हुए, कुछ हाथ मरोड़कर, अधिकतर शिरोज उखाड़ डालते हुए, कुछ घन कर्ण-कुहरों में प्रवेशकर, जबरदस्ती कान के परदे

नटु घोरमगु बाधलडरिंचि मऱियु । बटुगदा मुद्गर प्रास खड्गमुल
मुसलंबुलनु बॆट्टु मॊगमु नुरंबु । मसलकंदऱु बलुमऱु व्रेय व्रेय
दननिद्र यिंचुक दऱिगि यंतटनु । मनुजाशनुंडॊक्क मऱियावुलिप ३५१०
दऱुचुगा सम्मॆट लुरःस्थलमुन वैचि । यिऱिय म्रोकुल संधुलॆल्ल बिगिंचि
तॆरल ग्रागिन नूनॆ दॆच्चिच कर्णमुल । गरमुग्रमुग वेयु घटमुलु वोसि
मुनुकॊनि यातनि मुकुगोळ्ळयंदु । ननलतप्तशलाक लंदंद पॆट्टि
येक यत्नंबुन हेम दंडमुल । भीकर गति म्रोय भेरुल व्रेय
विडुवक करिहय वितति नुरंबु । गडिगि त्रॊक्किप राक्षसुडु स्रुक्कियुनु
चक्क शेषोग्रहस्तंबुलु साचि । यॊक्कित मेल्कनि हुम्मनि नीलिग
बडबामुखाभमै परगिन नोरु । कडुजूड विकृतंबुग नावुलिंचि
“युऱुवैनयट्टि सायुज्य पदंबु । नॆऱयंग रामुंडु नेडु नाकिच्चु;
नी रित्त निद्र नाके” लनि दानि । दूरंबुगा बॆड द्रोचॆनो यनग
गनुविच्चिच यसुरुलु गंपिप मेलु ।कनि कुंभकर्णुडुग्रत गूरुचुंडॆ ३५२०
ब्रळयकालमु नाटि भानु बिंबंबु । चॆलुवंबुतो मोमु जेवुरिपगनु
बटु विंध्य गुहल लोपल नुंडि वच्चु । चटुलानिलंबुल सरि यूर्पु लॆसग

को नोच पकड़कर, इस प्रकार घोर-बाधाओं (पीड़ाओं) को देकर, और पटु-गदा-मुद्गर-प्रास-खड्ग-मूसलों से ज़ोर से मुख पर (तथा) उर पर अविराम गति से कई बार मारने पर, अपनी निद्रा के थोड़ा उचटकर, मनुजाशन (राक्षस, कुंभकर्ण) के एक बार जंभाई लेने पर, ।। ३५१० ।।

—अक्सर उरस्थल पर हथौड़ों से मारकर, रस्सों की गाँठों को निकट से कसकर, उबलते हुए तेल के एक हज़ार घड़े लाकर उग्रता से उसके कानों में डालकर, सयत्न उसके नथुनों में लगातार अनलतप्त-शलाकाएँ रखकर, एक साथ हेमदंडों से भीकरगति से भेरियाँ बजाकर, लगातार करि-हय-वितति से सप्रयत्न उर को रौंदवाने लगने पर, राक्षस (कुंभकर्ण) ने थककर, शेष (सर्प) के समान उग्र-हस्तों को फैलाकर, थोड़ा जागकर, ‘हुम्’ कहकर हुंकार भरी, बड़ब-मुख-आभ (-समान) बन-विलसित मुख को अति विकृत बना, जंभाई लेकर, ‘श्रेष्ठ सायुज्यपद को शोभा से राम आज मुझे प्रदान करेगा। यह रिक्त (व्यर्थ) की नींद मुझे क्यों ?’, ऐसा मान उसे दूर हटा दिया हो, इस प्रकार आँख खोलकर, असुरों को कंपित करते हुए जागकर कुंभकर्ण उग्रता के साथ बैठ गया ।। ३५२० ।।

प्रलयकाल के समय के भानुबिब की मनोज्ञता के साथ मुख के लाल बनने पर, पटु-विंध्य की गुफाओं से आनेवाले चटुल-अनिल के सम निश्वासों के वर्द्धित होने पर, प्रलयकाल के अर्कबिबों के समान सुन्दर

ब्रळय कालार्क बिंबंबुलु बोलॆ । गलयंग नॆऱॅनि कन्नलु मॆऱय;
दानवु लिट्टु लातडु मेलुकॊनग । दानमेश्वरुनि योद्दकु बोयिनिलिचि
“देव ! नीतम्मु डॆंतेनियु बाध । गाविंपगा मेलुकनियॆ; नितटनु
नटु कय्यमुनकु बॊम्मंदुमो, काक । यिटु तोडि तॆत्तुमो येतॆऱं” गनुडु
रागिल्लि “तोड्कॊनि रंडु” नावुडुनु । वेगंबॆ यादैत्यविभुनाज्ञ वच्चि
तन कट्टॆदुर नुन्न दानव प्रतति । गनुगॊनि याकुंभकर्णुंडु वलिकॆ:

राघवुल यॆत्तिराक विनि कुंभकर्णुंडु कुपितुडगुट

“मीरेल नन्निटु मेलुकॊल्पितिरि । याराविणुनकु गार्यंबेमि पुट्टॆ ?
नदि येमि चॆप्पुडी” यनवुडु वारु । “त्रिदशारि चेतने तॆलियुमु नीवु; ३५३०
निनु दोडि तॆम्मनि निर्जरारति । वनिचॆ, निंतिय कानि पनियेमॊ तॆलिय”
दनवुडु जलकर्मिपारगा नाडि । चनुदॆंचि यॆंतयु जतुरत मॆऱसि
चारु वस्त्रमुलु भूषणमुलु दाल्चि । भूरिकोटीर दीप्तुल नॊप्पुचुंड
नति मुदंबुन नप्पुडादैत्युलॆल्ल । नतनि कनेक भक्ष्यमुलु भोज्यमुलु

अरुण नेत्रों के प्रकाशित होने पर, (वह उठ बैठा)। उसके इस प्रकार जाग पड़ने पर दानव तब दानवेश्वर के पास जाकर, खड़े होकर, ‘हे देव ! बहुत अधिक पीड़ित करने पर तुम्हारा अनुज जाग पड़ा है। अब उधर युद्ध के लिए जाने के लिए कह दें या इधर लावें। जो विधान है, बता दो।’ कहने पर, प्रसन्न हो “साथ ले आओ” कहने पर, शीघ्र ही उस दैत्यविभु की आज्ञा से आकर अपने समक्ष स्थित दानव-प्रतति को देख उस कुंभकर्ण ने कहा—

राघवों की युद्ध-यात्रा को सुन कुंभकर्ण का कुपित होना

—“तुमने इस प्रकार मुझे क्यों जगाया है ? उस रावण को क्या कार्य (ज़रूरत) आ पड़ा है ? वह (कार्य) क्या है, कहो।” ऐसा कहने पर उन्होंने कहा—“तुम त्रिदशारि (देवताओं के शत्रु, रावण) से ही जान लो, ।। ३५३० ।।

—तुम्हें लिवा लाने के लिए निर्जराति ने (हमें) भेजा है। इससे अधिक हम नहीं जानते।” ऐसा कहने पर, जी भरकर स्नान कर, आकर अधिक चतुरता से दीप्त होकर, चारु वस्त्र (तथा) भूषण धारण कर, भूरि-कोटीर-दीप्तियों के शोभा देने पर, तब उन समस्त दैत्यों के

मधुवुनु सूकर महिष मांसमुलु । नधिकमॊ मॆदडुनु नाज्य भांडमुलु
मुदमुतो गॊनितॆच्चि मुंदर निडिन । मॊदल मेदोमांसमुल ब्रीतिनमलि
रुधिरंबु मद्यंबु रूढ़िगा ग्रोलि । यधिक संतुष्टुडै यतडुन्न जूचि
म्रॊक्कि निशाचरुल् मुंदर निलुव । नक्कुंभकर्णु डिट्लनियॆ वारलकु:
“मीऱिन सुतुलकु मेटि बंधुलकु । वारक राक्षसेश्वरुनकु शुभमॆ ?
यॆडरु पुट्टदुगदा यॆव्वरिवलन । नडरि यीलंककु? नट्लयिननिपुड
३५४०

यडचॆद नाभयं; बमरेंद्रुनैन । वडिगिट्टि नाकंबु वलन बापॆदनु;
नार्चॆद गालाग्नि नैननु बॊदिवि; । तीर्चॆद बगवारि तीव्र दर्पमुलु”
ननिन यूपाक्षुंडु हस्तमुल् मॊगिचि । कनुगॊनि याकुंभकर्णुतो ननियॆ:
“विनु निशाचरवीर! विबुधुल वलन । दनुजुल वलन गंधर्वुल वलन
नेभयं बॆन्नडु नॆरुगमु; माकु । नीभीति बुट्टिंचिरिप्पुडु नरुलु;
दिविजारि जानकि तॆच्चुट कलिगि । रविकुलोत्तमुडैन रामचंद्रुंडु
कडिदि विक्रमुलैन कपुलतो गूडि । विडिसिना डीलंक वेडिंचि यिप्पु;
डगचरुंडॊक्कडे यक्षकुमारु । मॊगि सेनतो गूड मुन्नु निर्जिंचि

अति मोद से उसे अनेक भक्ष्य, भोज्य, मधु, सूकर-महिष-मांस, बहुत-सा भेजा (तथा) आज्य (घी) की हाँडियाँ (आदि) मोद से ले आकर सामने रखीं। (रखने पर) पहले मेदा, मांस को प्रीति से चबाकर, रुधिर और मद्य को खूब पीकर, अधिक संतुष्ट हुआ। वैसे (संतुष्ट बने) उसको स्थित होते देख, निशाचर प्रणाम कर समक्ष खड़े हो गए। तब कुंभकर्ण ने उनसे यों कहा—“विवर्धित सुतों, श्रेष्ठ बंधुजनों (तथा) राक्षसेश्वर को निरंतर शुभ है न ? उत्कर्ष को प्राप्त इस लंका को किसी से भय तो उत्पन्न नहीं हुआ न ? ऐसा है तो अभी, ॥ ३५४० ॥

—उस भय को दमन कर दूँगा। अमरेन्द्र भी हो तो झट निकट पहुँच, उसे स्वर्ग भगा दूँगा। कालाग्नि को भी गोद में ले बुझा दूँगा। शत्रुओं के तीव्रदर्प का भंग कर दूँगा।” (ऐसा) कहने पर यूपाक्ष ने हाथ जोड़कर, उस कुंभकर्ण को देख कहा—“सुनो निशाचरवीर! विबुधों (देवताओं) द्वारा, दनुजों द्वारा, गंधर्वों द्वारा, हम कभी किसी प्रकार के भय को नहीं जानते थे। अब हममें नरों ने भीति उत्पन्न कर दी है। दिविज-अरि (देवताओं का शत्रु, रावण) के जानकी को लाने पर, क्रुद्ध हो रविकुलोत्तम रामचन्द्र ने साहसी (तथा) विक्रमी कपियों के साथ अब इस लंका को घेरकर पड़ाव डाला है। अकेला एक अगचर, यक्षकुमार को क्रम से सेना के साथ निर्जित कर लंका को भस्म कर,

लंक भस्ममु जेसि लावुमै जनियॆ; । निक नॆव्वडु गॆल्चु नीमहाकपुल?
ननिलोन देवासुरादुल कंटॆ । घन विक्रमख्याति गल रामुतोड
३५५०
नुऱक कय्यमु सेसि योडि रावणुडु । वॆऱपुन बऱतॆंचि वॆस लंक जॊच्चॆ"
ननि विन्नविंचिन ना निशाचरुडु । कनुगव विस्फुलिंगंबुलु सॆदर
यूपाक्षु नीक्षिंचि युग्र कोपंबु । दीपिप नौडुल दीडुचु बलिकॆ;
"समरंबुलो नेडु सकल वानरुल । नमित विक्रमुलैन यादाशरथुल
मर्दियिंचि कपि वीर मांस रक्तमुल ।दॊडरि राक्षस कोटि दृप्ति बॊंदिंचि
राम लक्ष्मणुल यारक्तमुल् ग्रोल । केमनि वत्तुने निंद्रारि कडकु ?
नटु चेसि वच्चॆद" नन महोदरुडु । नट म्रॊक्कि मुकिळित हस्तुडै
पलिकॆ;
"घनुड दशग्रीवु गनि चेयवलयु । पनियॆल्ल विनि पोयि पगवारि गॆलुवु
मनवु 'डौ गा' कनि, याहारकांक्ष । दनयॊद्दि राक्षसतति जूड वार
लिरवॊंदगा नप्पु डिरुवदि यॊक्क ।पुरुषुल मांसंबु ब्रोवुगा बोसि ३५६०
यॆनुबदि महिषंबु लेनू ऱजंबु । लुनु वेयु ग्रोडंबुलुनु नाल्गु वेलु

सामर्थ्य के साथ चला गया। अब इन महाकपियों को कौन जीत सकता है ? युद्ध में देवासुरादियों की अपेक्षा घन-विक्रम-विख्याति से युक्त राम के साथ, ।। ३५५० ।।

—यों ही युद्धकर, हारकर भीति से रावण आकर लंका में घुस गया है।" ऐसा निवेदन करने पर वह निशाचर, नेत्रद्वय से विस्फुलिंगों (चिनगारियों) के निकलने पर, यूपाक्ष को देखकर, उग्रकोप के दीप्त होने पर, होंठ काटते हुए बोला—"आज समर में सकल वानरों (तथा) अमित विक्रम वाले उन दाशरथियों को मारकर, कपिवीरों के मांस-रक्तों से उत्साह से राक्षस-कोटि को संतुष्ट कर, राम-लक्ष्मणों के रक्त का पान किए बिना मैं इन्द्रारि (रावण) के पास कैसे आऊँ ? वैसा ही करके आऊँगा।" (ऐसा) कहने पर महोदर ने तब प्रणाम कर, मुकुलित हस्त होते हुए कहा—"हे महान् (वीर) ! समस्त कार्य दशग्रीव को देखने के बाद ही करना चाहिए। (उनका आदेश) सुनकर ही जाकर, शत्रुओं को जीतो।" ऐसा कहने पर 'ऐसा ही हो' कहकर, आहार-कांक्षा से अपने पास के राक्षसतति (-समूह) को देखने पर, उनके शोभा से तब इक्कीस पुरुषों के मांस का ढेर लगाकर, ।। ३५६० ।।

—अस्सी महिष, दो सौ अज (बकरियाँ), हजार क्रोड (वराह), चार हज़ार शश (हिरन), छः सौ मृगों को ढंग से लाकर, उन्हें अलग-अलग

घनशशंबुलुनु मृगंबु लार्नूऱु । ननुवोंदगा देंच्चि यावि वेऱु वेऱ
चंपि सुपक्व मांसंबुलु सेसि । यिपार नातनि येदुट बोयुटयु
दनिवोव गुडिच्चि युद्धति रेंडुवेलु । घन घटंबुल निंड गल मद्यमानि
पट पट दिक्कुलु बगुल द्रेन्चुचुनु । जट्टुलंबुलेन मीसमुलु दीटुचुनु
जनुदेंचु नुरुवडि जगति गंपिंप । गनुदोयि घूर्णिल्लगा गुह वेंडलें
नल राहु वदन गह्वरमुन नुंडि । विलय कालाकुंडु वेंडलिन माड्कि,
बलि गिट्टि धात्रियु ब्रह्मांडतलमु । वेलय दट्टिंचु त्रिविक्रमुपगिदि;
नाचंदमुन विकृताकारुडगुचु । नेचिन पोंडवुतो नेतेंचुनपुडु
कोट यव्वलि कपि कोट्टु लन्नियुनु । मेटि राक्षसु जूचि मिगिलिन भीति
३५७०

गोंदऱु वेऱगंद गोंदलु डाग, । गोंदरट्टिट्टुवड, गोंदऱु वेऱव,
गोंदऱु मूर्छिल्ल, गोंदऱु जलधि । यंदुऱुकग, गोंदरह्हिरा ! यनग
गोंदऱु रामुदिक्कुन कोंदुगंग, । नंदऱ गनुगोनि यासमयमुन
"सौमित्रि! विल्लुनु शरमु" देम्मनुचु। रामुडु वलिकि यारावणानुजुनि
"नदे याकसंबुनु नवनीतलंबु । गदिसिन देहंबु गलिगिन वाडु
प्रळयांबुधर तटित्पटलंबु वोलें । बोलयु भूषणरुचि बोलुपेन वाडु

मारकर, सुपक्व मांस बनाकर, प्रेम से उसके सामने ढेर लगा देने पर, छककर खाकर, उद्धति से दो हजार घन (बड़ी) घटाओं (घड़ों) भर मद्य पीकर, फट-फट दिशाएँ फट जाएँ ऐसा डकार लेकर, चटुल बनी मूँछों पर ताव देते हुए, आगमन के संभ्रम के कारण जगति के कंपित होने हेतु नेत्रद्वय के घूर्णित होने पर, गुफा से (ऐसे) निकल पड़ा मानों राहुवदन रूपी गह्वर से विलय-काल का अर्क निकला हो, (अथवा) बलि के निकट पहुँच धात्री और ब्रह्मांडतल में सुन्दरता से परिव्याप्त होने वाला त्रिविक्रम हो, उस प्रकार विकृताकार होता हुआ, अतिशय औन्नत्य से आते समय, दुर्ग के बाहर की समस्त कपिकोटियाँ, श्रेष्ठ राक्षस को देख, अधिक भीति से, ३५७० ॥

—कुछ के चकित होने पर, कुछ के छिप जाने पर, कुछ के इधर-उधर होने पर, कुछ के भीत होने पर, कुछ के मूर्च्छित होने पर, कुछ के जलधि में कूद पड़ने पर, कुछ के 'वाह रे !' कहने पर, कुछ के राम की आड़ में जाने पर, (उन) सब (वानरों) को देखकर उस समय राम ने कहा—"सौमित्री ! धनुष और शर लाओ।" कहकर उस रावणानुज को देख (विभीषण से पूछा)—"वही आकाश तथा अवनीतल को मिलाती हुई देह वाला, प्रलयांबुधर (प्रलय मेघ) की तटित् पटल (बिजलियों के

मूडु लोकमुलु निम्मुल म्रिगु नट्टि । वाडिमि देऱचिन वदनंबु वाडु;
कालुंडों ? यटुगाक कालानलुंडों ? । काल रुद्रुडों ? लयकाल मारुतुडों ?
कालार्कुडों ? महा कालाहिपतियों ? । कालमृत्युवों ? लयकालाब्धि
विभुडों ?
काल कालुडों ? लयकाल भैरवुडों ? । कालरुद्रुनकुनु गालरुद्रुंडों ! ३५८०
भीमंपुरूपु विभीषण ! यिट्टि । दे मेन्नडुनु जूचि येरुगमु मुन्नु;
दानवुडों ? वीडु दैत्युडों ? काक । वीनि कुलंबेमि ? वीडेव्व ? डिदु
वाडे ? यापुर वीथि वडि नेगुचुन्न । वाडेव्व ? डेऱिंगिपु; वानि पेरेमि ?
वीनि गनुंगोनि वेऱचिरि कपुलु; । वीनि चंदमु गडु वेऱगय्ये" ननुडु

कुंभकर्णुनि शाप वृत्तांतमु

ना विभीषणुडु रामाधिपु जूचि । "देव यी दैत्युनि तेऱगेल्ल विनुमु;
वरनंदनुडु विश्रवसुनकु नितडु; । करमु ग्रूरुडु; कुंभकर्णुडन्वाडु;
रावणु तम्मुडु; रणवीथि गिट्टि । देवसंघंबुल दिक्पालकुलनु
बलुमरु दोलिन बाहु बलाढ्युु; । डलगु शूलायुदोद्धत सत्व धनुडु;

समूह) के समान विलसित भूषण-रुचि (कांति) से मनोज्ञ, तीनों लोकों को प्रीति से खा जाने वाली प्रबलता से खुला मुँह वाला, (यह राक्षस पता नहीं) काल (मृत्यु) है ? या नहीं तो कालानल है ? या कालरुद्र है ? या लयकाल मारुत है ? या कालार्क है ? या महा-कालाहिपति या कालमृत्यु है ? या लयकाल-अब्धिविभु (वरुण) है ? या कालकाल है ? या लयकाल भैरव है ? या कालरुद्र के लिए कालरुद्र है ? ।। ३५८० ।।

—हे भीमरूप वाले विभीषण ! पूर्व में ऐसा हमने कभी नहीं देखा है। (यह) दानव है ? अथवा यह दैत्य है ? इसका कुल क्या है ? यह कौन है ? यहीं का है ? उस पुरवीथि से शीघ्र जानेवाला वह कौन है ? बताओ, उसका नाम क्या है ? इसे देख कपि भयभीत हुए हैं। इसके विधान को देख अति आश्चर्य हुआ है।" (ऐसा) कहने पर,

कुंभकर्ण का शाप-वृत्तान्त

—वह विभीषण राम-अधिप को देख (बोला)—'हे देव ! इस दैत्य के समस्त विधान को सुनो। यह विश्रवसु का वरनन्दन है। अधिक क्रूर है। कुंभकर्ण नाम वाला है। रावण का भाई है। रण-वीथि में सामना कर देवसंघों (और) दिक्पालकों को कई बार भगाने वाला बाहुवलाढ्य है। अलघु शूलायुध से युक्त उद्धत सत्त्वधन वाला है।

ब्रह्मांड मयिननु बगुलिप नोपु; । ब्रह्मादुलकु वट्रपडडु सत्त्वमुन;
वीडु पुट्टिन यप्डे विकृतंपु नोर । बोडिमि चेंड जीवमुल म्रिंग
जोच्चें ३५९०
मुनुमिडि यट्टु जीवमुल म्रिंग म्रिंग । विनि वज्रि कोपिंचि विपुल वज्रंबु
वीनिपैं वैचिन वीडु गैकोनक । या नाक गजदंत मर्गलिंचि पेंऱिकि
सुरपति नेसिन सुरसुर स्रुक्कि । सुरपति यप्पुडु सुरुलतो वच्चि
यंभोज भवु गांचि हस्तमुल् मोगिचि। "कुंभकर्णुंडनु घोर राक्षसुडु
पोलुपार ब्रजल जंपुचु नुन्नवाडु; । सोलवक सुरल नेचुचुन्नवाडु;
कडगि परस्त्रील गवयुचुन्नाडु; । तोंडरि लोकमुलेल्ल द्रुंचुचुन्नाडु;
ईनीचु डीक्रिय निट मीद नुन्न । वीनि निग्रहमुन विश्वंबु वोलियु"
ननवुडु विनि यप्पु डंबुजासनुडु । तन मनंबुन नल्क दद्दयु मिगुल
राक्षसावळि नेल्ल रप्पिंचि यंदु । वीक्षिंचें दप्पक वीनि रूपंबु;
वीक्षिंचि येंतयु वेऱगंदि "वीडु । भक्षिचु बोवेस ब्रह्मांडमैन; ३६००
वीनि चंदमु जूड वेऱपु नायंदु । नूनेंडु; वीडित युग्रुडै युन्न
वीडाजिलोपल विदळिंपकुन्नें । मूडु गन्नुल वेल्पु मुट्टिन नैन"

ब्रह्मांड को भी फोड़ सकता है। ब्रह्मादियों से भी (अपने) सत्त्व के कारण पराजित नहीं होता। यह पैदा होते ही विकृतमुख से जीवों को निगलने लगा जिससे (सृष्टि की) सुघड़ाई नष्ट हो जाए ॥ ३५९० ॥

क्रम से ऐसा जीवों को निगलने लगने पर, सुनकर वज्रि (इन्द्र) ने क्रुद्ध हो, विपुल वज्र को इस पर फेंक दिया। डालने पर इसने उसकी परवाह न करके उस नाकगज के दाँत को उखाड़कर, सुरपति पर डाल दिया तो वह तत्काल अधिक कमज़ोर हो गया। तब सुरपति सुरों के साथ आकर अंभोजभव को देख, हाथ जोड़ (बोला)—'कुंभकर्ण नामक घोर राक्षस, ढंग से प्रजा को मार डाल रहा है, थके बिना सुरों को पीड़ित कर रहा है। लगकर परस्त्रियों का बलात्कार कर रहा है। समस्त लोकों को तोड़ रहा है। यह नीच इस क्रिया (विधान) को करता रहा तो इसके निग्रह से विश्व नष्ट हो जाएगा।' ऐसा कहने पर, सुनकर तब अंबुजासन ने अपने में अधिक क्रोध के उत्पन्न होने पर, समस्त राक्षसवली को बुलाकर, उनमें इसके रूप को ध्यान से देखा। देखकर अधिक चकित होकर, (यह सोच कि) 'यह ब्रह्मांड को भी झट खा जाएगा, ॥ ३६०० ॥

—इसके विधान को देखने पर मेरे मन में ही भीति उत्पन्न हो रही है। (यह अभी) इतना उग्र होकर है तो (भविष्य में) यह तीन आँखों

ननि वीनितो नप्पुडनियॆ नाब्रह्म । 'चन' दनि मिगुल नाज्ञापिंप दलचि
"यापुलस्त्युनि युत्तमान्वयंबुननु । नी पुट्टुटॆल्लनु निखिल भूतमुल
बॊलियिंचु कॊऱकुना! भुवनंबुलॆल्ल । नलकंग निट्टि शौर्यमु जूपॆ" दनुचु
जावुतो सरियैन शापंबु निच्चॆ । "नीवुडुगनि यट्टिनिदुर बॊ"म्मनुचु;
जलिपिडुगुनु बोलॆ शापंबु दाकि । निलुवले कॆंतयु निद्रितुंडय्यॆ;
रावणुंडप्पु डाब्रह्मकु म्रॊक्कि । "देव! चूडुमु कृपा दृष्टितो वीनि;
दारु पॆट्टिन चॆट्टु दारॆ त्रुंपुदुरॆ? । येरूपमुन नित डॆंत कीडैन
दगु बुद्धि सॆप्पुट तगवगु गानि । तगदिट्टु वलॆ शापतप्तुनि जेय;
३६१०
वीनि निद्रकु दुदि विवरिंपु" मनुडु । दानवु तोड नुत्तर मिच्चॆ नजुडु;
"अक्कजंबुग निद्र याऱेसि नॆललु; । नॊक्क नाडॆऱुकचेनुंडु बॊम्मॆपुडु;
नॆललारु निंडक नॆऱि मेलुकॊल्प । गडुनद्दिनंबुन गडतेरु" ननियॆ;
नंत नुंडियुनु वीडव्विधंबुननु । जित सेयक निद्र जॆंदि मेल्कांचु;
देव! यिप्पुडु नीदु दिव्य बाणोग्र । पावक शिखल बाल्पडि सैप लेक
यनि नोडि चनि यट नारावणुंडु । तनु मेलुकॊल्पंग दैत्युल बनुप

वाले देवता (शिव) भी आ जाए तो उसे भी युद्ध में हरा देगा।' उससे तब ब्रह्मा ने 'ऐसा मत करो' कह विशेष आज्ञा (आदेश) देने का सोचकर कहा—उस पुलस्त्य के उत्तम अन्वय (वंश) में तुम्हारा पैदा होना क्या समस्त भूतों को मार डालने के लिए है? समस्त भुवन कंपित हो जाए, ऐसा शौर्य दिखाते हो! 'तुम कभी कम न होने वाली निद्रा से सो जाओ' कहकर मृत्यु के समान शाप दिया। भयंकर अशनि के समान शाप के लगते ही, टिक न सका, वह अधिक निद्रित हो गया। तब रावण ने उस ब्रह्मा को प्रणाम कर—"हे देव! इसे कृपादृष्टि से देखो न। स्वयं पौधा लगाकर उसे कहीं स्वयं ही काट देते हैं? किसी रूप से यह कितना ही हानिप्रद क्यों न हो, उसे उचित बुद्धि (उपदेश) देना न्यायसंगत होगा। ऐसा शापतप्त करना उचित नहीं है, ।। ३६१० ।।

—इसकी निद्रा का अन्त बताओ।' (ऐसा) कहने पर अज ने दानव को उत्तर दिया 'जाओ, यह आश्चर्यप्रद रूप से छः छः मास निद्रा में रहेगा और एक दिन जागृत रहेगा। छः महीने पूरे होने से पहले अगर जगाया जाए, तो उस दिन मरेगा।' तब से लेकर यह उस विधि से निश्चित हो सोता है और जागता है। हे देव! अब तुम्हारी दिव्य बाम-उग्र-पावक-शिखाओं का भागी बन, सहन न कर सक, युद्ध में हारकर, जाकर, वहाँ रावण के जागृत करने के लिए दैत्यों को भेजने पर, स्वयं भी

दानुनु बेर्चि युद्ध प्रसन्नद्धु । डै नेडु नगरिकि नरुगुचुन्नाडु ।
वेस वीडु रावणु वीड्कोनि वच्चु । नसमुन मनमीद; नंतकु मुन्ने
वीनि याकृति जूचि वेऽवक युंड । वानर सेनलो वडि जाट बनुपु;
'दनुजुंडु गाडिटु दारु यंत्रमुन । नौनरंग जेसिन युग्ररू' पनुचु; ३६२०
निटु चाटगा बंचि येल्ल वानरुल । बटु भीतियुनु बापि भंडनंबुनकु
सन्नद्धुलुग जेय सकलाधिनाथ ! । मुन्ने यानति यिम्मु मोहरिपंग"
ननवुडु नीलुन कानति यिच्चि । जननाथु डब्भंगि जाटंग बनिचे;
ना कुंभकर्णुंडु नट बुरांगनलु । चेकोनि पूवुल सेसलु चल्ल
जनि निंडु वेन्नेल सदनमो यनग । दनराचुन्न यास्थानंबु सोच्चे
बरगिन धवळाभ्र पटलंबु सोच्चु । सुरुचिरकरुडैन सूर्युनि भंगि;
जोच्चि यन्नकु म्रोक्कि सोंपार नतडु । ग्रुच्चि कौगिट जेर्चि कूर्मि दीपिंप
गनकासनंबिडगा बंचुटयुनु । दनुजाधिनाथुनि तम्मु डंदुंडि
यन्न नालोकिंचि "यसुराधिनाथ! । नन्नु देल्पिन कारणंबेमि नेडु ?
एव्वडु नीदेस नेग्गोनिरिंचे ? । नेव्वनि जंपुदु ? नेतेरं" गनुडु ३६३०
नाकुंभकर्णुन कनियें रावणुडु: । "नीकु बेल्लगुचुन्न निद्र पेंपुननु

विजृंभित हो युद्ध के लिए प्रसन्नद्ध हो आज (कुंभकर्ण) नगरी को जा रहा है। झट यह रावण से विदा लेकर, दर्प से हम पर चढ़ आएगा। इससे पहले ही झट वानर-सेना में यह घोषणा करने भेज दो कि इसकी आकृति देखकर (कोई) न डरे। यह कहला दो कि यह दनुज नहीं है, उग्ररूप से तैयार किया हुआ दारु-यंत्र है ।। ३६२० ।।

इस प्रकार घोषणा करने भेजकर, समस्त वानरों की पटुभीति को दूरकर, भंडन (युद्ध) के लिए सन्नद्ध करने के लिए हे सकलाधिनाथ ! पहले ही मोर्चा लेने के लिए आज्ञा दे दो।" ऐसा कहने पर जननाथ (राम) ने नील को आनति (आदेश) देकर, उस प्रकार घोषणा करने भेजा। वहाँ उस कुंभकर्ण ने, पुरांगनाओं के चाहकर पुष्पों के अक्षत बिखेरनेपर, जाकर, पूर्ण-ज्योत्स्ना का सदन रूप हो शोभित दरबार में, सुशोभित धवल-अभ्रपटल में प्रवेश करनेवाले सुरुचिकर (किरण) वाले सूर्य के समान; प्रवेश किया। प्रवेश कर अग्रज को प्रणाम करने पर, उसने गाढ़ आलिंगन कर, प्रेम के दीप्त होने पर, कनकासन डालने की आज्ञा दी। तब दनुजाधिनाथ का अनुज उस पर बैठकर, अग्रज को देख (बोला)—"हे असुराधिनाथ ! मुझे स्मरण करने का आज कारण क्या है ? किसने तुम्हारे प्रति अहित किया है ? किसे मार डालूँ ? क्या विधान है ?" (ऐसा) कहने पर, ।। ३६३० ।।

नेकार्यं गतियुनु नॆऱुगवु गान। जॆकॊनि यंतयु जॆप्पॆद विनुमु;
रामुडु दशराथ-राज-नंदनुडु। सॊमिंचि नामीद सुग्रीवु गूडि
वननिधि बंधिंचि वच्चि यीकोट।वॆनुकॊनि बलुविडि विडिसि युन्नाडु
अनिकि जॊच्चुटयु ब्रहस्तादि वीर। दनुजुल नंदऱ धरमीद गूल्चॆँ;
वानर-वीरु लॆव्वरु जावरंदु; । गान नारामलक्ष्मणुल भंजिंचि
या वालिसुत रविजादुल जंपि। लावुनु जॆँडकुंड लंक रक्षिपु,” ३६३७

रावणुनकु गुंभकर्णुडु नीति सॆप्पुट

मनि पॆद्द कृप वुट्टनाडु वाक्यमुलु। विनि कुंभकर्णुडाविबुधारि कनियॆ;
“मुनु नाटि येकांतमुन मंत्रलॆल्ल। गनुगॊन्न याकीडॆ काक चिंतिप
वारक यिदि नेडु वच्चिन कीडॆ? । येरूपमुन निदि येटिकि दप्पु ?
३६४०
मदमु पॆंपुन जेसि मऱि यॆव्वडैन। दुदि मॊदलॆरुगक तॊडरु गार्यंबु
वाडु गदा यॆल वलन जेटॊंदु; । वाडनि चॆप्प नॆव्वडु नीवॆ काक।

—उस कुंभकर्ण से रावण ने कहा—“तुम अधिक निद्रावश हो, किसी भी कार्य की गति को नहीं जानते हो अतः आरम्भ से सब कुछ कहता हूँ, सुनो। दशरथराजनंदन राम पराक्रमी हो, तब सुग्रीव से मिलकर, वननिधि (समुद्र) को बाँधकर आकर, इस दुर्ग को खोजकर, सबल हो, घेरा डाले हुए है। युद्ध आरंभ कर प्रहस्त आदि समस्त वीर दनुजों को धरा पर गिरा दिया। उनमें कोई भी वानर वीर नहीं मरा। अतः उन रामलक्ष्मणों का संहार कर, उन वालिसुत, रविज आदि को मारकर, (लंका की) सामर्थ्य (नाम) न बिगड़े, ऐसा लंका की रक्षा करो” ॥ ३६३७ ॥

रावण को कुंभकर्ण का हितोपदेश

—ऐसा अधिक करुणोत्पादक वाक्य सुनकर कुंभकर्ण ने उस विबुधारि (रावण) से कहा—“यह उसी दिन एकान्त में समस्त मंत्रियों द्वारा जानबूझ कर किया गया अहित ही है। नहीं तो (समझदारी से) चिन्तन करने पर यह अनिवार्य रूप से आज आया हुआ अहित है क्या ? किसी भी रूप में यह अब कैसे निवारित हो सकता है ? (नहीं) ॥ ३६४० ॥

—मद के आधिक्य से कोई भी हो, आदि-अन्त न जानकर (आगे-पीछे न सोचकर) किए गए कार्य के कारण, ज़रा से दोष से, हानि प्राप्त करता है। ऐसा व्यक्ति तुम्हारे सिवा और कौन है ? मतिमान मंत्रियों की

मति गल मंत्रुल मंत्रानुमतुल । गृत कार्यमुलु पचरिंचु नेविभुडु
ऒगि ब्रभुमंत्र समुत्साह शक्तु । लगणित फलदंबुलै वानिकमरु;
बति देशकाल विभागंबु लॆऱिगि । चतुरजन द्रव्य संपद गलिगि
कार्यंबुनकु मऱि कार्यमूहिंचि । कार्य विघ्न प्रतीकारंबु सेसि
फलसिद्धि गैकॊनि बहुराज्य भोग । मुल नित्युडै युर्वि मोदिंप वलयु;
बगवानि बलशक्ति बाटिंचि संधि । तगुबुद्धियै जेय दलकॊनवलयु;
रूपिंप समबलारूढुनि तोड । नेपुमै जनि निग्रहिंपंगवलयु;
नटुकाक बलशून्युडगुट चिंतिंचि । पटुसत्त्वुडै शत्रुपै नॆत्तवलयु; ३६५०
विडिसिन बलिमि विवेकिंचि मीद । विडिसि मार्तुर गॆल्व वॆरवूनवलयु;
वैरुलसाध्युलै वालिन वारि । लो रॆंडु वुट्ट नालोचिंप वलयु;
नतिसत्त्वुलै वैरुलजितुलैरेनि । हितबुद्धिमै नाश्रयिंपंगवलयु;
नीयाऱुगुणमुल नॆऱिगि वर्तिंचु । नायवनीश्वरुडभिवृद्धि बॊंदु;
बूनि ये पुरुषुडॆप्पुडु साम भेद । दान दंडमु लुचितिमु दप्प जेयु
नॆऱय वानिकि गल नीति शास्त्रमुलु । कॊऱमालियुंडु निक्कुव मिव्विधंबु;

मंत्रणा से कृत (योग्य)-कार्यों को करने वाले विभु (राजा) को, क्रम से प्रभुता (और) मंत्र (मंत्रणा) की समुत्साहित शक्तियों के कारण (कार्य) अगणित-फलत होकर प्राप्त होते हैं। पति (राजा) को देशकाल-विभाग को जानकर, चतुरजन (तथा) द्रव्यसंपत्ति से युक्त हो, कार्य के लिए प्रतिकार्य के बारे में सोचकर, कार्य-विघ्न का प्रतीकार कर, फलसिद्धि (कार्य की सफलता) को प्राप्तकर, बहुराज्यभोगों से नित्य (शाश्वत) होते हुए, उर्वी (पृथ्वी) पर मुदित होना चाहिए। शत्रु की बल-शक्तियों को मानकर, उचित बुद्धि से संधि के लिए प्रयत्न करना चाहिए। समबल से आरूढ़ (संपन्न) व्यक्ति से उत्कर्ष के साथ निग्रह (युद्ध) करना चाहिए। ऐसा न होकर (शत्रु का) बल से शून्य होने की चिन्ता कर, पटुसत्त्व युक्त हो शत्रु पर आक्रमण करना चाहिए ॥ ३६५० ॥

—(शत्रु के) पड़ाव डालने पर (उसके) बल का विवेक (सोच) कर, उसके बाद शत्रु को जीतने का उपाय सोचना चाहिए। वैरी असाध्य (अजेय) होकर विराजें तो उनमें फूट डालने का उपाय सोचना चाहिए। अतिसत्त्वयुक्त हो, वैरी अजेय (सिद्ध) हों तो हितबुद्धि से उनके आश्रय (शरण) में जाना चाहिए। इन छः गुणों को जानकर व्यवहार करने वाला अवनीश्वर (राजा) अभिवृद्धि (उन्नति) को प्राप्त करेगा। यह विधि (विधान) तथ्य है कि जो पुरुष लगकर (जानबूझकर), सदा साम, भेद, दान, दंड (इन चारों) उपायों को उचित विधि से काम में नहीं

परधन परदार परचित्तु डॆव्व। डरय नातडु कुलंबंतयु जॆरुचु"
ननि कुंभकर्णु डिट्लाडु वाक्यमुलु। विनि रावणुडु क्रोध विवशुडै पलिकॆ;
"ननु नन्न यनुचु मनंबुन गॊनक। किनिसि यिब्भंगि शिक्षिचॆदु वच्चि;
यी वृथाजल्पंबु लिक नेमिटिकि ?। ने विधंबुन नैन नी कार्यं मेनु ३६६०
गडवंग जेसिति; गादन कीवु। कडिमि मै निदि चक्कगा जेयु मिक"
ननवुडु विनि यप्पुडा कुंभकर्णु। "डनि सेय बोयॆद; नैन निकॊकटि
विनु दानवेश्वर! वेडुक नॊक्क। दिनमुन ने निद्र दॆलिसिन नाडु
चॆकॊनि कडु बॆक्कु जीवुल म्रिंगि। येकांतमुन नॆम्मि ने नुन्नचोट
कनघुडु नारदुंडरुदॆर नॆदुरु। चनि विन्नविंचिति संयमि तोड;
"नॆक्कड नुंडि ? नीविट्टु संभ्रममुन। नॆक्कड बोयॆद ? वॆरिंगिपु नाकु"
ननवुडु "गनकाद्रियंदुंडि राक;। विनु वार्तलन्नियु विनुपितु नीकु;
बंकजनाभुंडु फाललोचनुडु। बंकजासनुडुनु बाकशासनुडु
ननलुंडु यमुडुनु नंबुधीश्वरुडु। ननिलुंडु यक्षेशुडौ कुबेरुंडु
नोषधीपतियुनु नुष्णकरुंडु। शेष ग्रहंबुलु सिद्धुलु मुनुलु ३६७०

लाता, उसके लिए नीतिशास्त्र व्यर्थ ही होंगे। परधन (तथा) पर-दारा में चित्त लगाने वाला व्यक्ति समस्त कुल को नष्ट करता है।" ऐसे कुंभकर्ण के वाक्यों को सुनकर रावण क्रोध-विवश हो बोला—"मुझे अग्रज न मानकर (सम्मान न देकर), (यहाँ) आकर, नाराज़ हो (मुझे) शिक्षा (उपदेश) देते हो ? अब यह वृथा-जल्प (बकवास) क्यों ? किसी भी रूप में हो, मैंने यह कार्य किया है ।। ३६६० ।।

—(मेरी बात को) नकार न कर, साहस से इस कार्य को ठीक कर दो।" ऐसा कहने पर सुनकर तब कुंभकर्ण (बोला)—'युद्ध करने के लिए जाऊँगा। फिर एक बात और सुन लो। हे दानवेश्वर! उत्साह से एक दिन जागृत होकर, चाहकर अत्यधिक प्राणियों को निगलकर, एकांत में प्रेम से बैठा था (उस समय) वहाँ पर अनघ नारद आए। उनकी अगवानी कर (मैंने) संयमी (नारद मुनि) से निवेदन किया— "कहाँ से (आए हैं) ? इस प्रकार संभ्रम (शीघ्रता) से कहाँ जा रहे हैं ? मुझे बताइए।" ऐसा कहने पर (नारद बोले)—'कनकाद्रि से (मेरा) आगमन है। सुनो, सभी समाचार तुम्हें सुनाऊँगा। पंकज-नाभ (विष्णु), फाल-लोचन (शिव), पंकजासन (ब्रह्मा), पाकशासन (इन्द्र), अनल, यम, अंबुधीश्वर, (वरुण) अनिल, यक्षेश, कुबेर, ओषधिपति (चन्द्र), उष्णकर (सूर्य), शेष ग्रह, सिद्ध, मुनि, ।। ३६७० ।।

गिन्नर गंधर्व गीर्वाण गरुड । पन्नग गुह्यक प्रमुख संघमुलु
सभ गूडि मंत्र विचारंबु सेय । शुभमति नूहिंचि सुरगुरुंडनियें:
"ग्रोधिंचि मनल गैकोनक लोकमुलु। बाधिचुचुन्नाड़ु पंक्तिकंधरुड़ु:
शुंभद्बलंबुन सुडिवड जेसि । जंभारि भंजिचें समरंबु लोन;
वडि नंतकुनि दोलें; वरुणु गारिंचें; । नोंडिचें गुबेरुनि नुरुबलोज्वलुनि;
गट्टल्कतो नति गर्वंबु मेऱसि । पट्टि धर्मात्मुल बलुवुर जंपें;
दिनकर चंद्रुल तेजंबु लणचि । तन याज्ञ नडवंग दट्टिचि पनिचें;
ग्रहमुल नंदंद कारिंचें; मंत्र । महितंबुलगुचुन्न मखमुलु सेंऱिचें;
वऱलु महोद्यान वाटिकल् वेंऱिकें; । जेऱवट्टें नुत्तम स्त्रील बेक्कंड्र;
निवि लोनुगा बाधलिट्लु सेयुचुनु । भुवनंबुलकु भीति बुट्टिंचें गान
३६८०
नडरि राक्षसुलतो नद्दशाननुडु । चेंडुनुपायमु मीरु चिंतिपुडिक"
ननि बृहस्पति वल्क ना माटलेल्ल ।विनि ब्रह्म वल्के नाविबुधुल तोड;
"वरमिच्चिनाड नेवानिकि मुन्नु । सुरगरुडोरगासुर यक्ष वरुल

—किन्नर, गंधर्व, गीर्वाण, गरुड़, पन्नग, गुह्यक प्रमुख (आदि का) समूह के सभा करके, मंत्र विचार (सलाह-मशविरा) करने पर, शुभमति से सोचकर सुरगुरु ने कहा—"क्रुद्ध हो, हमारी परवाह न करके, पंक्तिकंधर (रावण) लोकों को पीडित कर रहा है। शुंभत्-बल (प्रचंड शक्ति) से घेरकर, जंभारि (इन्द्र) को समर में परास्त किया। शीघ्रता से अंतक (यम) को भगाया, वरुण को पीडित किया, उरु-बलोज्ज्वल कुबेर को (अपने) अधीन किया, अधिक क्रोध से, अतिगर्व से प्रकाशित होकर, पकड़ (पकड़) कर अनेक धर्मात्माओं का बध किया। दिनकर (तथा) चन्द्र के तेज का दमन कर, अपनी आज्ञा के अनुसार चलने के लिए डाँट सुनाई। जहाँ-तहाँ ग्रहों को सताया, मंत्र-महित होनेवाले मखों (यज्ञों) को नष्ट कर दिया। शोभायमान महान् उद्यान-वाटिकाओं को उखाड़ दिया, अनेक उत्तम स्त्रियों को बंदी बनाया। इस प्रकार से पीड़ित करते हुए भुवनों को भीत कर दिया। अतः, ॥ ३६८० ॥

—अब आप लोग विजृंभित राक्षसों के साथ दशानन के नाश के उपाय का विचार कीजिए।" ऐसा बृहस्पति के कहने पर, वे सब बातें सुनकर, उन विबुधों (अमरों) से ब्रह्मा ने कहा—"मैंने उसे पूर्व में सुर, गरुड़, उरग, असुर, यक्षवरों से अवश्य अमृत्यु का वर दिया है। उसका प्रतिविधान भी सोचा है, सुनिए। दैत्य ने मनुजों की चर्चा नहीं की, अतः मैंने भी वरदान (करते) समय में चर्चा नहीं की। अतः रावण को

चे नैन जावमि सिद्धंबु गाग; । दीनिकि मारु चिंतिंचिति, विनुडु;
तडवडु मनुजुल दैत्युंडु; गान । दडव नेनुनु वरदान कालमुन;
गान रावणुनि संगर रंगमंदु । मानवु लोर्तुरु; मनुज लोकमुन
जनियिंप ब्रार्थिंप जनु डादि विष्णु । वनजनाभुनि लोकवंद्यु मुकुंदु"
ननवुडु सुर मुनुलट्ल काविंचि; । रनघुंडु हरियु मर्त्यबुंन बुट्टॆ"
ननि जॆप्पि नारदुंडरिगॆ दैत्येश । दिनकरकुलु डादि देवुंडु गानि
मनुजुंडु गाडु रामक्षितीश्वरुडु; । जनक नंदन निम्मु; शरणनु वेग; ३६९०
वनचरुलॆल्ल देवतलुगा दलपु; । दनुजेश ! नामाट तथ्यंबु; नम्मु"
मनिन माटलु विनि यद्दशाननुंडु । तनलोन नधिक संतापाग्नि गुंदि
यॊक कॊंततड वूरकुंडि निट्टूर्पु । प्रकटंबुगा बुच्चि बहु चिंत नॊंदि
वॆऱचियु वॆऱवनि विधमुन नप्पु । डऱिमुऱि गोपिंचि यनुजन्मु जूचि

रावणुडु कुंभकर्णुनि हितवुनु दिरस्करिंचुट

"सॊलवक यॆपुडु विष्णुडु विष्णुडनुचु । बलिकॆदु; नी किंत भयमेल पुट्टॆ
विष्णुडै युन्ननु वॆऱवनि नेनु । विष्णुंडु मानव वेषुडै युन्न
वॆऱतुने ? नन्नेल वॆऱपिंचॆ दिट्लु ?। वॆऱचॆ देनियु नीवु वॆऱतुगा केमि

संगर-रंग (युद्धभूमि) में मानव पराजित करेंगे। आदि विष्णु, वनजनाभ, लोकवंद्य, मुकुंद से प्रार्थना करने जाइए कि वे मनुजलोक में जन्म लें।" ऐसा कहने पर सुर-मुनियों ने वैसा ही किया। अनघ हरि भी मर्त्य (लोक) में जन्मा। ऐसा कहकर—नारद चला गया। हे दैत्येश ! दिनकरकुल वाला आदिदेव है, राम-क्षितीश्वर (राजाराम) मानव नहीं है। जनकनंदना को दे दो और शीघ्र शरण माँग लो ।। ३६९० ।।

समस्त वनचरों को देवता जान लो। हे दनुजेश ! मेरी बात सत्य है। विश्वास करो।" (ऐसा) कहने पर (वे) बातें सुनकर, वह दशानन अपने (मन) में अधिक-संताप-अग्नि से व्याकुल हो, थोड़ी देर चुप रहकर, प्रकट रूप से लम्बी-आह छोड़कर, अधिक चिंतित हो, भीत होकर भी भीत हुए जैसा न दीखकर, तब शीघ्र क्रुद्ध हो, अनुजन्म (अनुज) को देखकर (बोला)—

रावण का कुंभकर्ण के हितवचनों का तिरस्कार करना

"न थककर, बारबार 'विष्णु' 'विष्णु' क्यों कहते हो ? तुम्हें इतना भय क्यों होने लगा ? (साक्षात्) विष्णु से भी न डरनेवाला मैं विष्णु के

याराघवुडु विष्णुडौगाक ! येमि ?। यारामुनकु दम्मुडैन सौमित्रि
यारय शर्वुंडॆ यगु गाक; येमि? । यारविसुतु डिद्रु डगुगाक; येमि ?
सुरलयॆ युंडंग सॊरिदि ने वॆऱव; । निरवॊंद वीरिकि नेनेल वॆऱतु ?
३७००
नॆऱयंग नीवॆल्ल नीति शास्त्रमुलु । नॆऱुगुट निष्फलंबिटु विचारिंप;
नति विरोधमु गॊन्न यारामुतोड । नति हीन मैत्रिकि नास चेसॆदवु;
समरोर्वि मनलनु समयिंप, मुनुल । नमरुल रक्षिप ननि विचारिंचि
यंचित देवत्व मटु मानि वच्चि । वंचन निटु मानवत्वंबु नॊंदि
जगदेकरक्षकै सरसिजोदरुडु । जगतिपै रामुडै जन्मिंचि नाडु;
वैरंबु गॊनि मन वध कॊरकैन । यारामुतो संधि यदि येल पॊसगु ?
वालि दूलग बोयि वानराश्रितुनि । नीसमयंबुन नेमनि कांतु ?
बलिजन्नमुमकु नी पंकजोदरुडु । पॊलुचु वामन मूर्ति बॊंदि ता नरिगि
धरणि मूडडुगुलु दानंबु वेडि । यरुदारगा गॊनि यतनि बंधिचॆ;
नॊप्पार नुपकार मॊनरिंचु नतनि । कप्पुडॆ काविचॆ नपकार मितडु;
३७१०

मानव-वेष में रहने से डरूँगा ? मुझे ऐसा क्यों भयभीत करते हो ? (भले ही) तुम डरो तो डरो। वह राघव विष्णु ही होगा तो क्या ? उस राम का अनुज सौमित्र सोचने पर शर्व (इंद्र) ही होगा तो क्या ? रविसुत (सुग्रीव) इंद्र ही होगा तो क्या ? ये सब देवता ही थे तब भी क्रम से मैं इनसे नहीं डरता था। अब मैं इनसे क्यों डरूँगा ? ।। ३७०० ।।

तुम्हारा सभी नीतिशास्त्रों को जानना, विचार करने पर, निष्फल है। अति विरोध करनेवाले उस राम से अतिहीन मैत्री के लिए इच्छा करते हो ? समर-उर्वी (युद्ध-भूमि) में हमारा संहार करने, मुनियों और अमरों की रक्षा करने का विचार कर, अंचित (पूजनीय) देवत्त्व को उधर छोड़, वंचना से इधर मानवत्त्व को ग्रहणकर, जगदेकरक्षा के लिए सरसिजोदर (विष्णु) जगति पर राम हो जन्मा है। वैर को ग्रहणकर, हमारा वध करना चाहनेवाले उस राम से संधि कैसे संभव हो सकेगी ? (अपने) गर्व को छोड़, उस वानराश्रित (वानरों से आश्रित अथवा वानरों के आश्रय में रहनेवाले) को इस समय कैसे देखूँ (जाऊँ) ? बलि के यज्ञ में इस पंकजोदर ने शोभित वामन-मूर्ति (-आकार) को धारणकर स्वयं जाकर, तीन चरण धरणि का दान माँगकर, विरलरूप से बंदी बनाया। शोभा से उपकार करनेवाले का तभी अपकार किया है इसने ।। ३७१० ।।

पग गॊन्न मनलनु बरिमार्प केल । मगुडु ? नॆक्कडि संधि मनकु रामुनकु?
नेनुनु नीवु ना यिंद्र लोकंबु । पै नॆत्ति चनि भुजाबलमु लिपार
निबिड विक्रमुलैन निर्जरेंद्रादि । विबुधुल दोल ना विष्णु डॆंदरिगॆ?
निनु मेलुकॊल्पुट नीति नीचेत । विन गोरिये ? नीकु वॆऱपेल पुट्टॆ?
ब्राण भयंबुन बलुमाट लेल ? । प्राणंबु तीपैन ब्रदुकु नॆम्मदिनि;
घनमैन यायुवु गरमर्थि गंटि; । मुनुमिडि गॆलिचिति मूडु लोकमुलु;
ननुभविंचिति बॆक्कुलगु राज्य सुखमु। लनुपमंबगु तेज मंतंत कॆसग;
नति हीन विक्रमुडैन रामुनकु । नितरुल गति निक ने म्रॊक्क जाल;
बोरिकि जनु मन्न बोनोप किपुडु । वारक याडॆदु वक्रोक्तु लिट्लु;
निद्र वोवनॆ पॊम्मु नॆम्मदि नीवु; । निद्र वोयॆडि वानि निर्जिपररुलु;
३७२०
रामलक्ष्मणुलनु रवि तनूभवुनि । भीम विक्रमुलैव बिरुदु वानरुल
नेनॆ चंपॆद; बॆल्च नॆल्ल देवतल । नेनॆ चंपॆद; विष्णु नेनॆ चंपॆदनु;
नॊलि यव्विष्णुनि यॊद्‌द शूरुलनु। नालंबुलोपल नधिक दर्पमुन
नॆद्‌दॆस गदिसिन नेनॆ चंपॆदनु; । बॆद्‌दकालमु नीवु पिऱिकिवै मनुमु"

विरोध धारण कर यह हमारा संहार किए बिना क्यों लौट जाएगा ? हमारे और राम के मध्य कहाँ की संधि ? मैंने और तुमने उस इंद्रलोक पर धावा बोलकर, भुजबल के उत्कर्ष से निबिड-विक्रम वाले निर्जर, इन्द्र आदि विबुधों (देवताओं) को भगाया था । उस समय वह विष्णु कहाँ गया था ? तुम्हें जगाना क्या तुम्हारे मुख से नीति (की बातें) सुनने के लिए है ? तुम्हें भय क्यों हुआ ? प्राणभय के कारण अनेक बातें क्यों (कहते हो) ? प्राण प्रिय हैं तो शांति के साथ जीते रहो । बड़ी इच्छा से महान् आयु को प्राप्त किया है । क्रम से तीनों लोकों को जीता है । अनुपम तेज के सदा व्याप्त रहने पर अनेक राज्यसुखों का उपभोग किया है । अतिहीन विक्रम वाले राम को, अन्य जनों के समान, प्रणाम नहीं कर सकता । युद्ध के लिए जाने के लिए कहने पर, जाने में समर्थ न बन निरन्तर ये वक्रोक्तियाँ अब क्यों कहते हो ? तुम जाकर सुख से, सो ही जाओ । शत्रु सोनेवाले को नहीं मारते ॥ ३७२० ॥

रामलक्ष्मणों को, रवितनूभव को, भीमविक्रम वाले प्रसिद्ध वानरों को मैं ही मार डालूंगा । अतिशयता से समस्त देवताओं को मैं ही मार डालूंगा । विष्णु को मैं ही मार डालूंगा । क्रम से उस विष्णु के पास के शूरों को युद्ध में, अधिक दर्प से जिधर भी जावें, मैं ही मार डालूंगा । तुम चिरकाल कायर बन जीवित रहो ।" ऐसा कहकर फिर उस दशानन

अनि पलिक वेंडियु नद्दशाननुडु । कनुगोनि याकुंभकर्णुतो ननियै;
"जैलुवारगा निटु सीतयै लक्ष्मि । यिलकु जनिचुट ये नेऱुंगुदुनु;
अस्यंग रघुरामु डाविष्णु डगुट । परिर्ळिचि येऱुगुदु भावंबु लोन;
वलनोप्प देवतल् वानरुलगुचु । निलमीद जन्मिचुटे नेऱुंगुदुनु;
रामुचे मरणंबु रणमुलो नाकु । नीमेयि सिद्धिचुटे नेऱुंगुदुनु;
नेलमि गामंबुन ने सीत देनु; । बलिमि ग्रोधंबुन बट्टि ये देनु; ३७३०
रणमु लोपल रघुरामुचे नील्गि । प्रणुतिप विष्णुनि परम पदंबु
दक्कक पोंदंग दलचिये सीत । निक्कंबु देच्चिचति नीकेल दाप ?"
ननि पेक्कु भंगुल नाडु रावणुनि । गनुगोनि याकुंभकर्णुडिट्लनियै;
"ने नीकु गलुगंग नेल तूलेदवु ? । दानवनाथ ! मोदंबुन नुंडु;
पग यडंचेद" ननि पलिकि यास्थान । मोगि नंतयुनु जूचि युचित वाक्यमुल
"ने डिदुलो लेडु निर्मलाचारु । डेडि विभीषणुंडेट केगे" ननिन
"मनमीद रामलक्ष्मणुलेत्ति वच्चि । रनुवार्त विनि सभ नंदऱु गूडि
यालोचनमु सेय नंतलो नीवु । वालिन निद्रवो वडि नेगुटयुनु
निष्ठतो रघुरामुनिकि गाग वेंद्द । निष्टुरंबुलु नन्नु नेऱि नाटनाडे;

ने उस कुंभकर्ण को देख कहा—"इधर शोभा से लक्ष्मी का सीता बन धरती पर जन्म लेने की बात को मैं जानता हूँ। विचारने पर उस विष्णु का रघुराम बनना मैं आतमा से जानता हूँ। शोभा से देवताओं का वानरों के रूप में पृथ्वी पर जन्म लेना मैं जानता हूँ। राम के हाथ रण में मुझे इस प्रकार मरण की प्राप्ति को मैं जानता हूँ। मैं कामभाव से सीता को नहीं लाया हूँ। बलात् क्रोध के कारण नहीं लाया हूँ ।। ३७३० ।।

रण में रघुराम के हाथ मरकर, सराहनीय विष्णु के परमपद (मोक्ष) को अवश्य प्राप्त करने की इच्छा से ही सीता को सचमुच लाया हूँ। (अब) तुमसे क्या छिपाऊँ ?" ऐसा अनेक प्रकार से कहने पर रावण को देख कुंभकर्ण ने यों कहा—"मैं जब तुम्हारे पास हूँ तो क्यों विकल होते हो ? हे दानवनाथ ! मोद से रहो। शत्रुता को दमन कर दूँगा।" ऐसा कहकर समस्त सभा को क्रम से देखकर, उचित वाक्यों से (कहा)—"यहाँ निर्मल-आचारवाला विभीषण नहीं है। कहाँ गया ?" (ऐसा) कहने पर (कहा)—"हम पर रामलक्ष्मणों के आक्रमण के समाचार को सुनकर, सभा में सभी एकत्र होकर सोच-विचार कर रहे थे। इतने में तुम अधिक निद्रा के वशीभूत हो, शीघ्र चले गए थे। (तब विभीषण ने) रघुराम के प्रति निष्ठा से, मेरे मन में चुभ जाएँ ऐसे निष्ठुर वचन कहे

नाडिन दन्निति ना विभीषणुनि । गूडदु नाकनु कोपंबु पेर्मि; ३७४०
दन्नि यंतट बोक तालिमि दक्कि । "युन्न जंपुदु" ननि योटलेकंटि;
ननवुडु ननु बासि यारामु कडकु । जनि यिप्पु डाविभीषणुडुन्नवाडु"
अनि चेप्पुटयु "गार्यमदि तुद मुट्टें: ।ननिकि बोवुट युक्त" मनि विचारिंचि
"यिंक बोरा" दनि यिद्रारि येंदुट । नंककाडुनु बोलें नतडिच्चें बास;

कुंभकर्णुडु प्रगल्भमुलाडुट

"किट्टि भंजिचेंद गीनाशु नैन; । बट्टि मर्दिचेंद बद्मजु नैन;
जिऱ जिऱ द्रिप्पेंद शेषुनि नैन; । ग्रलमुन ग्रोलेंद ग्रलनिधि नैन;
वे पाऱ द्रोलेंद विष्णुवु नैन; । रूपऱ जेसेंद रुद्रुनि नैन;
गडगि खंडिचेंद ग्रव्यादु नैन; । मेंड नुल्चि वैचेंद मृत्युवुनैन;
वडिचेंड जेसेंद वरुणुनि नैन; । गड्डपु सिंचेंद नलकापति नैन; ३७५०
बिडिकिलिचेंद रविबिंबंबु नैन;। बडद्रोचि पुच्चेंद ब्रह्मांडमैन;

थे। कहने पर क्रोध के उत्कर्ष में 'ऐसा कहना उचित नहीं है' कहते (हुए मैंने) लात मारी थी ॥ ३७४० ॥

लात मारकर, उतने से न जाने देकर (संतुष्ट न होकर), सहनशीलता को खोकर, 'यहाँ रहोगे तो मार डालूँगा' कह दिया। ऐसा कहने पर मुझे छोड़ उस राम के पास जाकर, विभीषण अब वहीं है।" ऐसा कहने पर 'अब तो कार्य समाप्त हो गया है। युद्ध में जाना ही उपयुक्त है,' ,ऐसा विचारकर कि अब (घर) नहीं जाना चाहिए, (ऐसा) सोच, इंद्रारि (रावण) के समक्ष उसने जिद्दी व्यक्ति के समान वचन दिया।

कुंभकर्ण के प्रगल्भ वचन

(कहा)—"आक्रमण कर कीनाश (यमराज) को भी नष्ट कर दूंगा, पकड़कर पद्मज हो तो भी मर्दन कर दूंगा। शेष को भी घुमा दूंगा, विहगेंद्र हो तो भी भीत कर दूंगा, प्रलयाग्नि हो तो भी बरबस निगल जाऊँगा, हठकर जलनिधि को भी पी जाऊँगा, विष्णु हो तो भी शीघ्र भगा दूँगा, रुद्र हो तो भी नाश कर दूंगा, क्रव्याद (नैॠत) हो तो भी लगकर खंडित कर दूंगा, मृत्यु हो तो भी गला घोंट दूंगा, वरुण हो तो भी शीघ्र नष्ट कर दूंगा, अलकापति (कुबेर) हो तो भी पेट चीर डालूंगा, ॥ ३७५० ॥

—रविबिंब हो तो भी मुट्ठी में कस लूंगा, ब्रह्मांड हो तो ढकेल दूंगा। (ऐसे मुझ शक्तिशाली को) मेरी समरकेलि के समौद्धत्य के लिए कपियों

गोतुल बट्टि मिंगुदु ननुटेंत । लेत नासमर-केळी-समुद्धतिकि;
नामर्कटुल नॆल्ल नद्रुल कनिचि । यामनुजुल द्रुंतु नसुराधिनाथ !
नी मनंबलरंग नॆम्मदि नुंडु; । रामुडु नाचेत रणमुलो बडिन
सीत यनाथयै चिक्कु; नंतटनु । नी तलंचिन कोर्कि नीकु सिद्धिंचु"
ननिन महोदरुंडावाक्यमुलकु । घनभुजुंडगु कुंभकर्णुनो ननियॆ;
"सत्कुलंबुन नीवु जनियिंचिनाड; । वुत्कटंबगु गर्व मुचितमे नीकु ?
दगु नयानयमुलु दलपोय किट्लु । पगतु जंपुदु ननि पलुकुने घनुडु ?
कोपंबु दीपिंप घोर सिंहंबु । नेपुन नुन्न वाडॆसगु तेजमुन;
गेवलमानवाकृति गाडु रामु; । डाविष्णु डीरूपमै वच्चि नाडु; ३७६०
आवालि नॊक कोल नणचिन शूरु; । डावीरवरु गॆल्व नलविये नीकु ?
ब्रकट विक्रमुलैन पगवारि मीद । नॊकड पोवुट माकु नॊडबाटु गादु;
बलमुतो जनि महाबलुडैन रामु । गॆलु" मनि मऱि दशग्रीवुतो ननियॆ;
"नेमु गलगग नीकु नेल चिंतिप ? । नी मनोरथसिद्धि नॆरपंग लेमॆ ?
जानकि कॊऱकु विचार मेमिटिकि? । नेनु संपातियु नीद्विजिह्वुंडु

को पकड़कर निगलजाना कौन बड़ी बात है ? उन सभी मर्कटों को अद्रियों में भेजकर (भगाकर) उन मनुजों का संहार कर दूँगा, हे असुराधिनाथ ! तुम्हारा मन प्रसन्न हो, (ऐसा) शान्ति से रहो। राम मेरे हाथ रण में गिर (मर) जाए तो सीता अनाथ हो फँस जाएगी। और तुम्हारी मनोकामना तुम्हें सिद्ध हो जाएँगी।" (ऐसा) कहने पर महोदर ने उन वाक्यों को (प्रति-उत्तर देते हुए) घनभुजवाले कुंभकर्ण से कहा—"तुमने सत्कुल में जन्म लिया है। क्या तुम्हारे लिए उत्कट गर्व उचित है ? समुचित नय-अनय के बारे में सोचे बिना कोई महान् व्यक्ति शत्रुवध की (बात) कहता है ? कोप के दीप्त होने पर, विजृंभित तेज से युक्त हो, औन्नत्य में (राम) घोर सिंह के समान है। राम केवल मानवाकार वाला नहीं है, वह विष्णु ही इस रूप में आया है, ॥ ३७६० ॥

—उस वालि का एक ही बाण से दमन करनेवाला शूर है, उस वीरवर का दमन तुमसे हो सकेगा ? प्रकट-विक्रम वाले शत्रुओं पर (तुम्हारा) अकेले जाना हमारे लिए स्वीकार्य नहीं है। सेना के साथ जाकर, महा-बली राम को जीतो।" (ऐसा) कह (उसने) पुनः दशग्रीव से कहा—"हमारे रहते तुम्हें चिन्ता करना क्यों ? तुम्हारे मनोरथ को (हम) सफल नहीं बना सकेंगे ? जानकी के लिए विचार (चिंता) क्यों ? मैं संपाति और इस द्विजिह्व और गंभीर विक्रम से कलित बाहुओं वाला कुंभकर्ण, मिलकर जाकर, राम को आनन्द से किसी भी उपाय से जीत लें,

गंभीर विक्रम कलित बाहुंडु । कुंभकर्णुडु गूडि कौनिपोयि रामु
नेलमि गेल्चिति मेनि नेयुपायमुल । वलनोप्प सिद्धिंचु वैदेहि नीकु;
नटुकाक राम नामांकित बाण । चटुलोग्र पातंबु सैरिंप लेक
वडि भिन्न तनुलमै वच्चितिमेनि ?। नडरंग नेमु नीयडुगुल कैरगि
"प्रणुतोग्र वानर बलमुतो गूड । रणभूमि लोपल रामलक्ष्मणुल ३७७०
वधियिंचि भक्षिंचि वच्चिति" मनुचु ।नधिप जेप्पिन मम्मु नधिकमोदमुन
नालिंगनमु सेसि यर्थि मन्निंचि । पोलंग नीवार्त पुरमुन नेल्ल
नीवु सार्टिच्चिन निजमुगा सीत ।भाविंचि यटमीद बतियास विडिचि
मतिबूनि नी माट मरिचेयु" ननिन । नतनि गोपिंचि यय्यमरारि जूचि
"यी बौंकु लगु माट लेल्ल नेमिटिकि ?। नाबाहुबलमेचि ननुजूतु गाक !
निश्चयंबुग रामु निर्जितु नेनु; । निश्चितमुग नुंडु नीविट्टु मीद"
ननि कुंभकर्णुडुदग्रुडै पलुक । विनि रावणुडु गडुवेड्क दीपिंप
दनकु बुनर्जन्मतासिद्धि गलिगे । ननि चाल मोदिंचि यनुजन्मु जूचि
"चनि याजि रामलक्ष्मणुल निर्जितु । वनि नम्मिनाड नीयतुल सत्त्वंबु;
शौर्यंबु नंदु नी सरियैन वीर । वर्युलु लेरु; ध्रुवंबिव्विधंबु; ३७८०

तो वैदेही शोभा से तुम्हें प्राप्त होगी । ऐसा न होकर राम-नामांकित बाणों के चटुल-उग्रपात को सह न सक, झट भिन्न-तन (खंडित-शरीर घायल) वाले होकर भी यदि आएंगे तो सोत्कर्ष तुम्हारे चरणों में नत होकर (कहेंगे कि)—"प्रणुत (प्रशंसित)-उग्र वानर-बल (-सेना) के साथ रणभूमि में राम-लक्ष्मण का, ।। ३७७० ।।

—वधकर, भक्षणकर आए हैं ।' हे अधिप ! ऐसा कहने पर, अधिक मोद से आलिंगित कर, प्रेम से सम्मानकर, शोभा से इस समाचार की घोषणा समस्त नगर में घोषित करा दोगे तो सीता (उसे) सच मानकर, उसके बाद पति की आशा छोड़कर, मति (अच्छी बुद्धि) धरकर, तुम्हारे वचन के अनुसार करेगी ।" (ऐसा) कहने पर, उस पर क्रुद्ध हो, उस अमरारि (रावण) को देख कुंभकर्ण ने उदग्र हो कहा—"ये सब झूठी बातें क्यों ? विजृंभित बाहुबल से युक्त मुझे देख लेना । निश्चित रूप से मैं राम को परास्त कर दूंगा । अब आगे तुम निश्चिन्त होकर रहो ।" (इसे) सुन, रावण अति उत्साह के दीप्त होने पर, यह सोच कि मुझे पुनर्जन्म प्राप्त हुआ है, अधिक मुदित हो, अनुजन्म को देखकर (बोला)—"तुम्हारे अतुल सत्त्व के कारण यह विश्वास करके निश्चित हूँ कि तुम युद्ध में जाकर रामलक्ष्मणों को परास्त कर दोगे । शौर्य में तुम्हारी बराबरी करनेवाले वीरवर्य (अन्य) नहीं हैं । यह विधान ध्रुव (अटल सत्य) है ।। ३७८० ।।

मुनुकॊनि शूलंबु मॊदलुगा गलुगु । घनतरायुधमुल गय्यंबु सेयु”
मनि प्रीति रॆट्टिप नतनिकि निच्चॆ । ननुपम रत्न मयाभरणमुलु;
नारावणुनि तम्मु डाभूषणुमुलु । वारक तालिच प्रज्वलितांगुडगुचु
दनरारॆ बसिडि कत्तळमॊप्प दॊडिगि । विनुत संध्यंबुदावृत गिरिवॊलॆ;
बहु रत्न मेखलाबद्धुडै यॊप्पॆ । नहिराज बद्ध मंथाद्रि चंदमुन;
नॊप्पि रणोत्साह मुप्पॊंगि पॊंगि । यप्पुडु च्चनुदॆंचि यसुरपुंगवुडु
त्रिजगद्भयंकर दीप्तमै पर्व । विजय सूचक भेरि व्रेयंग बनिचि,

कुंभकर्णुडु युद्धमुनकु वॆडलुट

शूलि शूलमु कंटॆ सॊंपारि मॊनल । वालिन मंटलुज्ज्वलमुलै निगुड
निप्पुलु सॆंदर मानितमैन पूज । नॊप्पि रत्न प्रभ नुज्ज्वलंबगुचु
ब्रतिवीर शोणित भ्राजितंबैन । यतुल शूलमु बट्टि यन्नकु म्रॊक्कि ३७९०
यतनि दीवनलतो ना सभांतरमु । वितत समुद्योग वेगुडै वॆडलॆ
“नी कष्ट तनुवुलो नेमेल निलुत्तु । मोकुंभकर्ण ! रणोर्बर दीनि

—शूल आदि घनतर-आयुधों से युद्ध करो।” (ऐसा) कह प्रीति के द्विगुणित होने पर, उसे अनुपम रत्नमय आभरण दिए। उस रावण का भाई उन आभूषणों को अवश्य धारणकर, प्रज्वलित-अंग (-शरीर) वाला होता हुआ, स्वर्ण-कवच को पहनकर, विनुत-(-प्रशंसित) संध्यांबुद से आवृत-गिरि के समान शोभित हुआ। बहुरत्नों से युक्त मेखला से आबद्ध हो, अहिराज से बद्ध मंथाद्रि (मन्दराचल) के समान विराजमान हुआ। शोभित होकर, रणोत्साह से उमड़-उमड़कर, तब आकर असुर-पुंगव (-श्रेष्ठ) ने त्रिजगद् भयंकर-दीप्त होकर व्याप्त होने के लिए, विजय-सूचक भेरी ध्वनित कराने को (सेवकों को) भेजकर,

कुंभकर्ण का युद्ध के लिए निकल पड़ना

—शूली (शिव) के शूल से भी (अधिक) शोभित होकर, नोकों से निकलने वाली ज्वालाओं के उज्ज्वल हो, चिनगारियों को बिखेरते हुए, मान्य पूजा से विराजित होकर, रत्नप्रभावों से उज्ज्वल होते हुए, प्रतिवीर-शोणित से भ्राजित (प्रकाशमान) अतुल-शूल को धारणकर, अग्रज को प्रणाम कर, ॥ ३७९० ॥

—उसके आशीसों को लेकर, उस सभा के मध्य से विगत-समुद्योग के वेग से युक्त हो निकल पड़ा। मानों उसके प्राण यह कहते उसे

वैतुवु र''म्मनि वानि प्राणंबु । लातत गति नीड्व नरुगु चंदमुन;
नंत राक्षस कोटि याकुंभकर्णु । नंतंत गूडि कय्यंबुन करिगें;
दुरगंबु लेक्कि सिंधुरमुल नेक्कि । यरदंबु लेक्कि सिंहंबुल नेक्कि
काटुक कोंडलगति दनरारि । मेटि दंष्ट्रंबुल मेरुगुल सेंदर
ग्रौर्यमंतयु गूर्चि करुविड्डुकरणि । शौर्यंबु रूपुलै चरियिंचु भंगि
गय्यंबु सेतये कार्यंबु गाग । नय्यै तेरंगुल नाटोप मोप्प
बरिघ पट्टिस गदा प्रास कोदंड । करवाल कुंत मुद्गर भिंडिवाल
परशु चक्रादिक प्रथितायुधमुल । बरगि पदाति युद्भट वृत्ति नडचें;
३८००
नीचंदमुन गूडि येल्ल सैन्यमुलु । वे चनुदेर गर्वित चित्तुडगुचु
बुरकामिनीतति पुष्प वर्षमुलु । गुरिय रणोद्योगि कुंभकर्णुंडु
चंद्र मंडल निभच्छत्त्रंबु लोप्प । जंद्र बिंबास्यलु चामरल् वीव
दुरग हेषलुनु सिंधुर बृंहितमुलु । वररथ नेमि निस्वन परंपरलु
बटुतर निस्साण भांकारमुलुनु । बटहभेरीशंख पणवनादमुलु
घंटामृदंगढ़क्कारवंबुलुनु । मिंट दिक्कुल निंड मिगुल म्रोयंग

आततगति से खींच ले जा रहे हों कि "इस क्रूर तन में हम क्यों रहेंगे ? हे कुंभकर्ण ! रण-उर्वी (रणभूमि) में इसे त्याग दो, चलो।" तब राक्षसकोटि उस कुंभकर्ण के साथ मिलकर युद्ध के लिए चल पड़ी । (वे सब) तुरगों पर चढ़कर, काजल के पर्वतों के समान शोभित होकर, श्रेष्ठ दंष्ट्राओं की चमक के चारों ओर फैलने पर, समस्त क्रूरता को एक स्थान पर एकत्रित करने के समान, मानों शौर्य ही रूप धारण कर विचर रहा हो, युद्ध करना ही अपना कर्तव्य हो, (ऐसा समझ) अनेक प्रकारों से आडम्बर के विलसित होने पर, परिघ, पट्टिस, गदा, प्रास, कोदंड, करवाल, कुंत, मुद्गर, भिंडिवाल, परशु, चक्र आदि प्रथित (प्रसिद्ध) आयुधों से सज्जित होकर, पदाति (पैदल) सेना उद्भट वृत्ति से चल पड़ी ॥३८००॥

इस प्रकार से मिलकर समस्त सेनाओं के शीघ्र चल देने पर, गर्वितचित्त वाला होते हुए, पुर-कामिनीतति (-स्त्रीसमूह) के पुष्पवर्षा करने पर, रणोद्योगी (रण करने में प्रयत्नशील) कुंभकर्ण के चंद्रमण्डल के सम छत्रों के शोभित होने पर, चंद्रबिंबास्याओं (चंद्रमुखियों) के चामर डुलाने पर, घोड़ों की हिनहिनाहटों, सिंधुरों की चिंघाड़ों, वर रथों के नेमिस्वनों की परंपराओं, पटुतर निस्साणों के भाँकारों, पटह-भेरी-शंख-पणव के निनादों, घण्टा-मृदंग-ढक्का के रवों के आकाश तथा दिशाओं में अधिक व्याप्त होकर मुखरित होने पर (वह चल पड़ा ।)

कुंभकर्णुनकु दुश्शकुनमुलु पॊडसूपुट

वॆडलिन यपुडु पृथ्वीभाग मगलॆ; । जडधुलु गलगॆ; दिशावलि वगिलॆ;
गगनंबु वडकॆ; दिग्गजमुलु म्रोग्गॆ; । जगमुलु बॆगडॊंदॆ; शैलंबु लुरिलॆ;
"दौर्जन्यमुन दुष्टदानव ! नीवु । पर्जन्यु नॆचिन फलमॆल्ल गुडुवु"
मनि राघवुनकु दोडै वच्चि पॆर्चि । तनरार वानि नदल्चिन माड्कि
३८१०
गलयंग नप्पुडकालमेघमुलु । पलुमारु बिडुगुलु पर्गिचि म्रोसॆ;
"दोरंबुगा नार्चि त्रुळ्ळॆडु वीडु; । घोराहवक्षोणि गुपितुडैनट्टि
ताराधिपतिचेत दारुपरुटकु । नीराजवरुनिचे निट गूलुटकुनु
दारुसाक्षुल" मनि तग जॆप्पु करणि। दारलु मंडुचु धरणिपै बडियॆ;
"दनु मुन्नु नॊंचिन दानिकै ग्रनिलु। डनयंबु रामुनि यान नीयसुर
बडवैतु" ननि पॆर्चि परगिन माड्कि। वडिगॊनि प्रतिकूल वायुवुल् वीचॆ;
"रामुडु संप नीराक्षसाधमुडु । नामीद बडुनप्डु नाकॆंत व्रेगु
पुट्टनो" यनि भीति पुट्टि कंपिंचि । नट्टि चंदंबुन नवनि गंपिंचॆ;

कुंभकर्ण को दुःशकुन दिखाई पड़ना

चल पड़ने पर, पृथ्वीभाग उखड़ (विदीर्ण हो) गया, जड़धियाँ (समुद्र) आलोडित हुईं, दिशावली फट गई, गगन कंपित हो उठा, दिग्गज धँस गए, जग भयभीत हुए, शैल लुढक गये। 'हे दुष्ट दानव ! दुर्जनता से तुमने पर्जन्य को जो सताया था, उसका पूरा फल भुगतो' मानों ऐसा कहते राघव का साथ देते हुए आकर, विजृंभित हो शोभा से उसे डाँट रहे हों ॥ ३८१० ॥

—(ऐसा) चारों तरफ़ से तब अकालमेघ कई बार गाज गिराकर, गरज उठे। "अत्यधिक रूप से सिंहनाद कर दर्पित होनेवाला यह (राक्षस) घोर-आहव-क्षोणि (युद्धभूमि) में क्रुद्ध बने तारा के अधिपति (सुग्रीव) के हाथों नष्ट होने तथा इस राजवर से यहाँ मर जाने के साक्षी हैं" (ऐसा) ढंग से कहने के समान नक्षत्र जलते हुए धरणी पर गिर पड़े। 'पूर्व में उसका दमन किया था, उसके लिए (प्रतीकार रूप) अनल निरन्तर राम की शपथ लेकर इस असुर को गिरा देगा' ऐसा (अनल के) विजृंभित हो चलने के समान, झट से प्रतिकूल वायु चलने लगी। 'राम के मार डालने पर, इस राक्षसाधम के मेरे ऊपर गिर पड़ने पर, मुझे कितना बोझ मालूम होगा' मानों ऐसी भीति के उत्पन्न होने पर, कंपित होने के समान अवनि कंपित हो उठी। 'हे राक्षसाधम ! हमें पक्षपाती (पंखों के बल उड़नेवाले

“बक्षपातुल मनि परिकिंप वलदु । राक्षसाधम ! नीवु राघवेश्वरुनि
खगमुलचे जावगल” वनु करणि । खगमुलु सुडिवडगा बाऱ जॊच्चॆ;
३८२०

नवि यॆल्ल गॊनक साहसमु रॆट्टिप । सवरण युडुग कुत्साहंबु मिगुल
“जूपुल चेतने चूर्ण बॊनर्तु । गॊपिंचि वानर कुलमॆल्ल” ननुचु
मेटियॆ वच्चुचु मीऱि कन्गॊनियॆ । गोट यव्वलि कपि कोटुल नॆल्ल;
गपुलुनु नाकुंभकर्णुनि जूचि । विपरीत मारुत विहत मेघमुल
करणि बाऱग गुंभकर्णुँडु लंक । युरुवडि वॆडकि मिन्नु लिय्यंग नाचॆ;
नायार्पु विनि वानरावळि यॆल्ल । बायनि मूर्छ पाल्पडि भुवि द्रॆळ्ळॆ;
शरनिधि गलगॆ; भूस्थलि गंप मॊंदॆ; ।सुरलकु गडु भीति सॊच्चॆ जित्तमुल;

वानर कुंभकर्णुल युद्धमु

नंत वानरवीरु लंतलो दॆलिसि । यंतकाकृति गल याकुंभकर्णु
गिट्टि पादपमुलु गिरुल शृंगमुलु । पट्टि बॆट्टुग नॆदुर्पडि यार्चि पॆर्चि

और पक्षपात करनेवाले) मत समझो। तुम राघवेश्वर के खगों (बाणों) से अवश्य मर जाओगे' मानों (यह कहते हुए) खग (पक्षी) घिरकर उड़ने (मँडराने) लगे ।। ३८२० ।।

उन सबकी परवाह न कर, साहस के द्विगुणित होने पर, सुघड़ाई के कम न होकर, उत्साह के बढ़ने पर, 'क्रुद्ध होकर दृष्टियों से ही समस्त वानरकुल को चूर्ण कर दूँगा' (ऐसा) कहते श्रेष्ठ बन कर आते हुए, उत्कर्ष से उसने दुर्ग के उस पार के समस्त कपि-कोटियों को देखा। कपियों ने भी उस कुंभकर्ण को देखा, वे विपरीत-मारुत से विहत-मेघों के समान भाग निकले। कुंभकर्ण ने शीघ्र लंका से निकलकर सिंहनाद किया, जिससे आकाश फट जाए। उस सिंहनाद को सुनकर समस्त वानर-समूह अत्यधिक मूर्च्छित हो जमीन पर गिर पड़ा। शरनिधि (समुद्र) आलोड़ित हुआ, भूस्थली (पृथ्वी) कंपित हुई, सुरों के चित्तों में अधिक भीति ने प्रवेश किया।

वानरों और कुंभकर्ण का युद्ध

तब वानरवीर इतने में होश में आकर, अंतक-आकृति वाले उस कुंभकर्ण के निकट पहुँच पादप, गिरि (और) श्रृंग पकड़कर (हाथ में लेकर), भीकरता से सामना कर, विजृंभित हो सिंहनाद कर बार-बार (लगातार) युद्ध करने लगे। तो उन्हें जाने न देकर, पकड़कर, तरुचर से दानव सेना, ।। ३८३० ।।

पौंरि बौंरि बोरुचो बोनीक पौंदिवि। तरुचर सेनपै दानव सेन ३८३०
युरुवडि गदियनिट्लुभय सैन्यमुलु। बरवसंबुन दलपडियें नावेळ
ब्रळय कालमुनाटि पटु सागरमुलु।दलकौंनि यौंडौंटि दाकौंन्न करणि;
नौंडळुलु नेंम्मुलु नूरुलु बरुलु। बौंडि पौंडिगा जेसि पोनीक मर्रियु
दविलि प्रेवुलु मेंडल् दललु फालमुलु। नवियंग बेंट्टु रथ्यमुल द्रौंक्किचि
कडलगलिंचिन कत्तुलचेत। गडि कंडलुग जेसि कट्टल्क तोड
नंत बोवक भूनभोंतराळंबु। नंतयु गडुवाडि यम्मुल गप्पि
वडि बेंचि रथमुलवार लिब्भंगि। गडिमि जंपिरि महोग्रमुग वानरुल;
वानरुलुनु रथावळुलपै कुर्रिकि। पूनिचि वेंनुककु बोव दन्नियुनु
गडुनौंग ललमि ब्रग्गन नेल तोड। नडिचियु विर्रिचि यल्लंत वैचियुनु
भयदंबुगा वच्चि पादयुग्ममुल रयमुन। जदिय सारथुल द्रौंक्कियुनु
३८४०
बेंळ पेंळ नरमुलु पेंनचि रादिगिचि। तल लुरुवडि द्रेंचि धात्रि वैचियुनु
रथिकुलै पेर्चिन राक्षसाधिपुल। वृथुगति जंपिरि पेंक्कु चंदमुल;
नदि गनि राक्षसु लधिक रोषमुन। वदलक वानरावळि जुट्टु मुट्टि

—द्रुतगति से जूझ पड़ी। उस समय तत्परता से उभयसैन्य आपस में प्रलयकाल के समय के पटुसागरों के लगकर एक दूसरे से भिड़ जाने के समान, भिड़ गए। शरीरों, हड्डियों, ऊरुओं (तथा) पसलियों को चूर-चूरकर उतने से न जाने देकर, और भी तत्पर हो, आंतड़ियों, कण्ठों, सिरों (तथा) फालों (ललाटों) को भीकरता से रथ्यों (अश्वों) से कुचलवाकर, लहराती तलवारों से (तथा) अधिक क्रोध से (शत्रुओं को) खण्ड-खण्ड कर, उतने से न जाकर (तृप्त न होकर), भू-नभ के अंतराल (मध्यभाग) को अधिक पैने बाणों से आच्छादित कर, झट विजृंभित हो रथिकों ने इस प्रकार साहस से (तथा) महोग्ररूप से वानरों को मार डाला। वानरों ने भी रथावलियों पर कूदकर, जोर से लातें मारीं, जिससे वे पीछे की ओर चले जाएं। उनके लगामों को सरलता से पकड़कर, जमीन पर पटककर, तोड़कर, दूर फेंक दिया, भयद रूप से आकर, पदयुग्मों से झट दबाकर, सारथियों को कुचल डाला, ॥ ३८४० ॥

—नसों को पकड़ खींच सिरों को झट काटकर ज़मीन पर फेंक दिया, (इस प्रकार) रथिक बने, विजृंभित राक्षसाधिपों को पृथुगति से, अनेक प्रकार से मार डाला। उसे देख राक्षस अधिक रोष से, न छोड़कर, वानरावली को घेरकर, मद के उत्कर्ष से, बल के क्षीण होनेवाली करिघटाओं (मेघसम गजों) को, चरणों के संकेतों से, (वानरों पर)

मदमु पेंपुन बलमऱु गरिघटल । बदमुल सन्नल बै गदिर्यिचि
कडकाळु लोंडिर्यिचि करमुल वलन। नेंडपक नेलतो नेंत्ति व्रेयिचि
मेंदडुनु बुनुकल मेदिनि गलय । बदमुल द्रोक्किंचि भयदंबु गाग
नोलि जूर्णंबुलै युर्वि नंदंद । राल नुग्र प्रदरमुल नेसियुनु
गरुलपै नुन्न राक्षसु लेपु मीऱि । युरुवडि गेंडपि रत्युग्रत गपुल;
गपुलु नुग्रंबुगा गबिसि येंतंयुनु । गुपितुलै गजमुल कोंम्मुलु वट्टि
कुदिचि रूपणचियु गुंभस्थलमुलु । पदमुल बऱियलु वाऱ दन्नियुनु
३८५०
बललंबु रक्तंबु बहुळास्थिचयमु । गलय गाळ्ळोंगि पट्टि कडक व्रेसियुनु
ना येनुगुल मीद नलवु ज़लंबु । वेयु भंगुल जूपि वेगंबु मेंऱसि
पट्टिन विड्लुनु बाहुवुल् तललु । नट्टलु मऱुवुलु नवनि गूल्चियुनु
नसमुन गपुलु गजारूढुलैन । यसुरुल जंपि रत्यंत रौद्रमुन;
गूडि दट्टमु चेसिकोंनियु बीरंबु । लाडुचु हरुल ग्रोंव्वंडरंग दरिमि
पलुदेंरंगुल बाण पंक्तु लेसियुनु । नलि सेंलकट्रियल् नाट नेसियुनु
सुनिशित खड्ग विस्फुरण शोभिल्ल ।मोंन सोंच्चि कडिकंडमुलुग व्रेसियुनु

भिड़ाकर, पीछे के पैरों को दबाकर, सूंड़ों से उठवाकर, लगातार (वानरों को) ज़मीन पर पटकवा दिया। मस्तिष्क (भेजा) और हड्डियाँ मेदिनी पर व्याप्त हों, (ऐसा) कुचलवाकर (युद्धभूमि को) भयंकर बना दिया। क्रम से चूर्ण बन उर्वी पर जगह-जगह गिर पड़ें, (ऐसा) उग्रप्रदरों से प्रहार कर, करियों पर स्थित राक्षसों ने विजृंभित हो, शीघ्र अत्युग्रता से कपियों का संहार किया। (तब) कपि उग्रता से भिड़कर, अधिक कुपित हो, गजों के दांतों को पकड़कर, झकझोर कर, रूप को नष्ट कर, कुंभस्थल फट जाएँ, ऐसे लात मारकर, ।। ३८५० ।।

—मांस, रक्त, बहुल-अस्थिचय से युक्त लोधा बन जाएँ, ऐसा (उन गजों को) टाँगों से पकड़कर सप्रयत्न (ज़मीन पर) पटककर, उन हाथियों पर बल (तथा) हठ को सहस्रविधियों से दिखाकर, वेग से दीप्त होकर, (राक्षसों के) धारण किए धनुषों, बाहुओं, सिरों, धड़ों, कवचों को अवनि पर गिराकर, दर्प से कपियों ने गजारूढ़ बने असुरों को अतिरौद्रता से मार डाला। एकत्र हो, घने बन, डींग हाँकते हुए, हरियों (अश्वों) को, चर्बी (मद) के उत्कर्षित होने पर, दौड़ाकर, अनेक प्रकार से बाणपंक्तियाँ चलाकर, शोभा से बाण चलाकर जिससे वे चुभ जाएँ, सुनिशित-खड्ग के विस्फुरण के शोभित होने पर, युद्धभूमि में प्रवेशकर, खण्ड-खण्ड कर, शूरवीर राहुतों (घुड़सवार) ने निजृंभित होकर, गिरिचरों को अनारत

नुक्कलुलैन राहुतु लेपु मीऱि । तक्कक चंपि रॆंतयु गिरिचरुल;
गिरिचरवरुलुनु गिट्टि यश्वमुल । गरमुल दोकलु गाळुलु बट्टि
दॆसलकु वैचियु दिविकि वैचियुनु । वसुमति वैचियु व्रच्चि वैचियुनु
३८६०

बद घट्टनंबुल बगुल दाचियुनु । वदलक यामीद व्रालॆडु नट्टि
राहुतुलैन याराक्षसाधिपुल । साहसंबुन नेल जमरिरि कडिमि;
नप्पुडु राक्षसु लधिक दर्पमुन । निप्पुलु कन्नुल निव्वटिल्लंग
नम्मुल नेसियु नडरि कुंतमुल । ग्रुम्मियु सुरियल ग्रुच्चि त्रोचियुनु
शित खड्ग समिति व्रेसियु मुद्गरमुल । वितत चूर्णमुलु गाविंचियु मरियु
गल यायुधमुल नुग्रतलु सूपियुनु । शिलल बादपमुल जॆंदर द्रोचियुनु
गडिमि पॆंपुन निट्लु काल्वुरु गिट्टि । बॆडिदंबु गाग जंपिरि तरुचरुल;
दरुचरुलुनु ना पदातिपै गविसि । पॊरि बॊरि नायुधंबुलु विऱिचियुनु
नॆट्टन बदकर निकरंबु ललमि । चट्टलु वापियु जमरि वैचियुनु
निरुचेतु लंदुनु निरुवुर बट्टि । युरुवडि दाटिंचि युरुल वैचियुनु ३८७०
नट्टलु शिरमुलु नमरंग बट्टि । दिट्टतनंबुन द्रॆंचि वैचियुनु
नुडुगक चंपि रत्युग्र वेगमुन । गडिमि दीपिंप बॆक्कंड्र राक्षसुल;

मार डाला। गिरिचरवर भी (उनका) सामना कर अश्वों के पूंछ और पैरों को हाथों से पकड़कर, दिशाओं में फेंककर, आसमान की ओर फेंककर, वसुमति (धरती) पर पटककर, चीर-फाड़ डालकर, ॥ ३८६० ॥

—पदघट्टनों से फाड़ देकर, (उन्हें) न छोड़कर, उसके बाद विलसित (उन) घुड़सवार राक्षसाधिपों को साहस से मिट्टी में मिला दिया। तब राक्षसों के अधिक दर्प से, आँखों से चिनगारियों के निकलने पर, बाण चलाकर, विजृंभित हो भालों से भोंककर, छुरियाँ भोंक ढकेलकर, सित-खड्ग-समिति (-समूह) से काटकर, मुद्गरों से वितत-चूर्ण बनाकर, और भी अन्य आयुधों से उग्रता का प्रदर्शन कर, शिलाओं (और) पादपों को (वापस) बिखराकर और ढकेलकर, साहस के उत्कर्ष से राक्षसों ने सामना कर, भीकरता से तरुचरों को मार डाला। तरुचर भी उन (राक्षस) पदाति (पैदल) सैनिकों पर भिड़कर, बार-बार आयुधों को तोड़कर, जबरदस्ती चरण (और) कर-निकरों को दबाकर, छक्के छुड़ाकर, दबाकर, दोनों हाथों में दो-दो राक्षसों को पकड़कर, शीघ्रता से (एक-दूसरे से) टकराकर, ॥ ३८७० ॥

—लुढ़का देते, रुंड और मुंडों को ढंग से पकड़कर, सुघड़ता से काट देते, (इस प्रकार) अविलंब, साहस के दीप्त होने पर, अत्युग्र वेग से अनेक राक्षसों को मार डाला। इस प्रकार विजृंभित हो दोनों पक्षों के जूझने पर, (युद्धभूमि)

निव्विधंबुन बॆंचि यिरुवागु बोर । नव्वनचरुलंदु नसुरुल यंदु
निंडिन नॆत्तुरु नीळ्ळ भंगियुनु । गंडलु विरियु चॆंगलुवल माड्कि
मानितास्यमुलु दामरल चंदमुन । नानेत्रमुलु गुमुदावळि पगिदि
दोरंपु ब्रेवुलु तूडुल तॆऱगु । बेरिन मॆंदडुनु फेनंबु रीति
मॆंडु वॆंट्रुकलु तुम्मॆद पिंडु पोल्कि । दंडि शस्त्रंबुलु तरगल वडुवु
जामरावळुलु हंसंबुल ठेव । भूमि परागंबु पुष्पॊडि यॊप्पु
गौकॊनि यपुडु संगर महीस्थलमु । भीकरंबय्युनु बॆद्दयु नॊप्पॆ
ननिमिषारुलपालि यामृत्यु देवि । गॊनकॊनि वर्तिचु कॊलनि चंदमुन;
३८८०
गान गदा यिदि काकुत्स्थ रामु । नूनॆडु जयलक्ष्मि कुनिकिपट्टय्यॆ;
सुर खेचरुलु मॆच्चि सॊंपारि रपुडु; । दुरमुन निरुवागु दॊडरि पोराड
गपिकोटि नॊच्चिन गडगि यंदंद । कपि नायकुलु सूचि कपट राक्षसुल
गॆरलि क्रोधंबुन गिरि महीजमुल । दरमिडि नॊप्पिप दानवुल् बॆदरि
कडुवेगमुन गुंभकर्णुनि वॆनुक । कडरि पाऱिरि 'शर' णनु पल्कु लॊप्प;
नाकुंभकर्णुंडु नादैत्यवरुल । जेकॊनि दिक्कुलु सॆदर नार्चुचुनु
"नोड कोडकु" डनि यूऱडिंचुचुनु । गूडि पै पै वच्चु कोतुल नॆल्ल

वनचरों तथा असुरों के भरे रक्त के जल के समान, मांस-खण्डों के विकसित लाल कमलों की तरह, मान्य-आस्यों (-मुखों) के कमलों के समान, नेत्रों के कुमुद के समान, मोटे आँतों के कमलनालों के समान, घनीभूत बने भेजा के फेन की तरह, विपुल केश-समूह के भ्रमर-समूह की भाँति, बहुल शस्त्रों की तरंगों की तरह, चामरावलियों के हंसों की सुन्दरता सम, भूमि-पराग (धूल) के पुष्परज के समान होने पर, तब संगर-महीस्थली भीकर होते हुए भी अनिमिष-अरियों (राक्षसों) की मृत्युदेवता के सयत्न विहार करनेवाले सरोवर के समान शोभित हुई ।। ३८८० ।।

ऐसा होने से यह काकुत्स्थ राम की स्थिर-जयलक्ष्मी का आवास हुई। सुर (और) खेचर तब प्रशंसा कर शोभित हुए। (इस प्रकार) युद्ध में दोनों पक्षों के सयत्न जूझने पर, कपिकोटि पीड़ित हुई तो उसे देख कपि-नायक ने कपट-राक्षसों को विजृंभित क्रोध से गिरि-महीजों से शीघ्र पीड़ित किया। इस पर दानव भीत होकर, अतिवेग से कुंभकर्ण की आड़ में 'शरण-शरण' कहते दौड़ पड़े। वह कुंभकर्ण भी उन दैत्यवरों को ग्रहण कर, दिशाओं को विदीर्ण कर देनेवाला सिंहनाद करते हुए, 'मत डरो, मत डरो' कहते आश्वस्त करते हुए, 'एकत्र होकर आक्रमण करने के लिए आनेवाले समस्त बन्दरों को चितवनों से ही जला दूंगा' कहते हुए, क्रुद्ध हो, शूल धारण कर,

जूपुल चेतने चुरुवुत्तु ननुचु । गोपिंचि शूलंबु गौनि यार्चि पेर्चि
बलितंपु गपिकोटि पालिटि विधियौ, । कलुषत नेतेंचु कालुडो यनग
रावणु तम्मुडु राक्षसाधीशु । डावनचर कोटि नडगिंप जौच्चे; ३८९०
गऱकैन याकुंभकर्णुनि यैदुर । नॆऱवैन कडिमिनि निलुवलेकपुडु
वडि मूर्छ नौंदि युर्वर बडुवारु । गडुवडि नेत्तुरुल् ग्रक्कॆडुवारु
सेतुवु त्रोवकै चॆडिपारुवारु । वातूल गति दिवि वडि ब्राकुवारु
नगु वानरुल जूचि यडरि यंगदुडु । तग नप्पुडति बलोदग्रुडै पलिकॆ;
"नेल वानरुलार! यिटु चॆडिपाऱ । नेलिन पतिडिंचि येपु वोकार्चि!
वरकपींद्रुलु महावंश संभवुलु । कॆरलि पारुदुरॆ प्राक्तुल चंदमुन ?
रामुनि मुंदऱ रणमुलो बडिन । रामणीयक सुरराज्यंबु गलुगु;
नटुगाक ब्रदिकिन नति कीर्ति गलुगु; । निटु मगुडुडु; पाऱनेल मी" कनुचु
बुद्धुल सॆप्पुचु बुरिकौलिप यौक्क । ग्रद्दन मगुडिंचॆ गपिकोटि नॆल्ल;
नाकपु लंगदु नतुल वाक्यमुलु । गैकौनि यौप्प नाकर्णिंचि मिंचि ३९००

सिहनाद कर, विजृंभित होकर, मानों बली कपिकोटि के लिए विधि (नियति) हो, (अथवा) आकुलता से आनेवाला काल ही हो, रावण का अनुज राक्षसाधीश (कुंभकर्ण) उस वनचर-कोटि का दमन करने लगा ॥ ३८९० ॥

क्रूर उस कुंभकर्ण के समक्ष उपाययुक्त साहस से टिक न सक (वानर) झट मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिरनेवाले, अतिशीघ्र रक्त उगलनेवाले, सेतु के मार्ग की ओर भीत हो भागनेवाले, बातूल (पवन) के समान झट आकाश की ओर बढ़ जानेवाले हो गए । ऐसे वानरों को देखकर, विजृंभित हो अंगद ने तब अतिबल से उदग्र हो कहा—"रे वानरो! पालन करनेवाले पति को छोड़, उत्कर्ष को तजकर इस प्रकार परास्त होकर भागना क्यों ? वर कपीन्द्र होकर, महावंशसंभव होकर, संभ्रमित होते हुए, प्राकृतों (साधारण जनों) के समान भागते हो? राम के समक्ष रण में गिर पड़ोगे (मारे जाओगे) तो रमणीय सुरराज्य (स्वर्ग) प्राप्त होगा । ऐसा न होकर जीवित रहोगे तो अतिकीर्ति प्राप्त होगी । इधर लौट आओ । तुम्हें भागना क्यों ?" (ऐसा) कहते बुद्धि (नीतिवचन) कहते हुए, उत्साहित कर, शीघ्रता से समस्त कपिकोटि को लौटा लाया । वे कपि अंगद के अतुलित वाक्यों को ग्रहण कर, शोभा से सुनकर, उत्साहित हो, ॥ ३९०० ॥

“प्राणमु लित्तुमु रामुन; कतनि। प्राणंबु कंटॆ मा प्राण मे” मनुचु
गॊंडलु गॊनिवच्चि ‘को’ यनि यार्चि। कॊंड बोलिन दैत्यु गुंडॆ पै वॆव
शूलंबु गॊनि वडि जूर्णंबु सेसॆ। नालोन राक्षसुंडापर्वतमुल;
वदलक यंत बोवक रौद्र मॆसग। गद चेतगॊनि त्रिप्पि कडुवडि नेसि
पदियेडु कोटु लेबदियेडु लक्ष। लदन मुप्पदि वेलु नार्नूऱु कपुल
हुंकार रवमुल नुग्रत मॆऱय। गिकतो ना रणक्षिति गूल्चॆ;
जॆलगि यंतट बोक चेतुल गपुल। बलुविडि गबळिंचॆ बटु रौद्र मॆसग
गरुडुंड वॆस नुरगंबुल म्रिंगु। करणि नॆंतयु भयंकर वृत्ति तोड;
ना क्षणंबुन नॊक्क यार्नूऱु कपुल। वीक्षिंचि यिरुवदि वेवुरु कपुल
लक्षिंचि यॆनुबदि लक्षल कपुल। राक्षसाधीशुंडु रयमुन म्रिंगॆ; ३९१०
म्रिंगि यंतट बोक मिक्कुटंबगुचु। संगरांगणमुन जरियिंचु चुंडि
नर भोजनुंडु वानर भोजनुंडु। धरणिपै दान यै दर्पिंचॆ; नपुडु
घूर्णिल्लुचुनु मुकु गोळुल यंदु। कर्ण रंध्रमुलंदु गपिसेन वॆडलॆ;
वॆडळिन गबळिंचि वॆंडियु म्रिंगु। दडयक; मरियु मुंदटि तॆरंगुननु
जॆलगुचु वॆडलिन जॆंदरि पोनीक। सॊलवक पट्टि नज्जुग जेसि नमलु;

—यह कहते कि “राम के लिए प्राण देंगे। उसके प्राणों की अपेक्षा हमारे प्राणों का क्या (मूल्य) है।” पर्वत ले आकर ‘को’[1] कहते सिंहनाद कर, पर्वत के समान दैत्य के वक्ष पर डाल दिया। इतने में राक्षस ने उन पर्वतों को शूल लेकर झट चूर्ण कर दिया। न छोड़कर, उतने से न जाकर, रौद्र के विजृंभित होने पर, गदा हाथ में लेकर, घुमाकर, अतिवेग से फेंककर, सत्रह करोड़ सत्तावन लाख और अतिरिक्त तीस हज़ार छः सौ कपियों को, हुंकार-रवों से, उग्रता से दीप्त हो, क्रोध से उस रणक्षिति पर गिरा दिया। विजृंभित हो उतने से न जाने देकर, पटुरौद्र के उत्कर्ष से, हाथों से अतिशीघ्र कपियों को भयंकर वृत्ति से गरुड़ के झट उरगों को निगल जाने के समान, निगल गया। उसी क्षण एक छः सौ कपियों को देखकर, बीस हज़ार कपियों को लक्ष्य कर, अस्सी लाख कपियों को वह राक्षसाधीश शीघ्र निगल गया॥ ३९१०॥

निगलकर, उतने से न जाने देकर, उत्कटता से संगरांगण में विचरण करते हुए, धरणि पर स्वयं ही नर-भोजन (करनेवाला) और वानर-भोजन (करनेवाला) होकर दीप्त हुआ। तब नथनों और कर्णरंध्रों से घूर्णित होती हुई कपिसेना निकल पड़ी। निकलने पर विलंब किए बिना उन्हें फिर निगल जाता। फिर आगे जैसा पुनः निकल आने पर, न थककर,

---

[1] मल्लयुद्ध करते समय ‘को’ कहकर मल्ल एक दूसरे को ललकारते हैं।

सडलि कोऱल संधि जाऱि भूस्थलिनि । बडिन जूर्णंबुगा बदहति ब्रामु;
नंत नातनि गदाहति बड्डु कोतु । लॆंतयु दम मूर्छ लॆल्लनु दॆलसि
यार्पुलतो दरुलद्रुलु दॆच्चि । दर्पिंचि निलिचिरा दानवु नॆदुर;
गनलुचु द्विविदुंडु गंड शैलंबु । गॊनि यप्पुडसुर वक्षोवीथि वगुल
नडरिप नदि दाकि यल्लंत मिट्टि । पडियॆ रात्रिचर बलमुलु सदिय;
३९२०

हनुम, कुंभकर्णुल पोराटमु

नप्पुडु हनुमंतु डधिक रोषमुन । निप्पुलु रालॆडु नेत्रंबु लॊप्प
गिरि पादपंबुलु गिरिकॊनि वैव । नुरुवडि दैत्यु डत्युग्रशूलमुन
दुमुरु सेयुचुनु बै द्रॊच्चि रा मऱियु । नमरुलु मॆच्चंग नांजनेयुंडु
नसुरपै वैचॆ महा पर्वतंबु । नसमान बलुडितंडनि तन्नु बॊगड;
दानिचे ना दैत्यु तनुवु कंपिंचि । मॆनॆल्ल नॆत्तुरु सिक्कुटुंबय्यॆ;
दान नॆंतयु नॊच्चि दानवेश्वरुडु । मानक मॆऱुगुलु मंटलु ग्रुम्म
भूतलंबगल नभोभाग मविय । भीतिल्लि निर्जर-बृंदंबु वडक

पकड़कर, लोंधा बनाकर चबाता। फिसलकर दंष्ट्राओं के मध्य से भूस्थल पर गिरने पर पदाघात से चूर्णकर (ज़मीन पर) लीप देता। तब उसके गदा-आघात से गिरे सभी बन्दर अपनी मूर्च्छा से होश में आकर, सिंहनादों के साथ तरु और अद्रि लाकर, दर्प से उस दानव के सामने खड़े हो गए। क्रुद्ध होते हुए द्विविद ने गंडशैल को ले ऐसा फेंका कि उस असुर का वक्षस्थल विदीर्ण हो जाए। (किन्तु) वह (शैल) (असुर के वक्षस्थल से) लगकर टूक-टूक होकर ऐसा गिर पड़ा कि रात्रिचर (राक्षस)-सेना दब गई ॥ ३९२० ॥

हनुमान और कुंभकर्ण का युद्ध

तब हनुमान अधिक रोष से, चिनगारियाँ उगलनेवाले नेत्रों के शोभित होने पर, गिरि (और) पादपों को (राक्षस पर) घेरकर डालने पर, झट से दैत्य ने अत्युग्र शूल से उन्हें चूर्ण कर, ऊपर ढकेलकर आगे बढ़ा। तब अमरों के प्रशंसा करने पर, (राक्षस के) यह असमान बली है कहकर अपने को प्रशंसित करने पर आंजनेय ने महापर्वत को असुर पर डाल दिया। उससे उस दैत्य का तन कंपित हो उठा और समस्त शरीर अधिक रक्तयुक्त (लहूलुहान) हो गया। उस (आघात) से अधिक पीड़ित हो, दानवेश्वर न रुककर, चिनगारियों और ज्वालाओं के उमड़ने पर, भूतल के उखड़ने पर, नभोभाग के विदीर्ण होने पर, भीत होकर निर्जर-वृन्द के

गर मुग्रमैनट्टि घनतर शूल । मुरुवडि बून्चि समुल्लासि यगुचु
मडवक शक्ति गुमारुंडु पेंचि । वडि ग्रौंच गिरिमीद वैचिन करणि
हनुमंतु पै नेंत्ति यति रभसमुन । वनचरुल् बेंदरंग वैचें नय्यसुर;
३९३०
यटु वैव दान नय्यनिलजुनुरमु । पट पट बगुल नप्पावनि यपुडु
डरुकोपरस मेल्ल नुमियु चंदमुन । दुरमु लोपलनु नेंत्तुरुलु ग्रक्कुचुनु
ब्रळयकालमु नाटि पटुमेघ रवमु । बलुवुन नेंतयु बरग रोजुचुनु
गपुलु गंपिप राक्षसुलु मोदिंप । गपि शेखरुडु गूलें गल लावु दूलि;
यालंबुलो नप्पुड निलजु पाटु । नीलुडु गनुगोंनि नेंड्यु कोपमुन
गैकोंनि वैचें राक्षसुलेल्ल बेंदर । ना कुंभकर्णु महापर्वतमुन;
वडि तोड बै बड वच्चु पर्वतमु । बेंडिदंबुगा वाडु पिडिकिट बोंडिचें;
बोंडिचिन नदियु नद्भुतमुगा जेंदरि । येंडपक चिरुमंट लेंगसि नुग्गय्यें;
नमरारि पै नप्पुडाग्रहव्यग्रु । लमित बलोदग्रुलगु महा कपुलु
च्रलमुन ऋषभुंडु शरभुंडु बेंचि । कलुषत नीलुंडु गंधमादनुडु ३९४०
नग्गवाक्षुंडुनु नधिकरोषंबु । लग्गलिपग नप्पुडडरि पेंल्लार्चि

कंपित होने पर, अधिक उग्र बने घनतर-शूल को द्रुतगति से धारणकर, समुल्लसित होते हुए, निष्फल न बननेवाली अपनी शक्ति को कुमार (स्वामी) के विजृंभित हो क्रौंचगिरि पर डालने के समान, (उसे) हनुमान पर आक्रमण कर, अति रभस के साथ, वनचरों के भीत होने पर, असुर ने फेंक दिया ।। ३९३० ।।

ऐसा डालने पर, उससे अनिलज का उर 'फट-फट' की ध्वनि से फूट गया। तब पावनी (हनुमान) उरु-कोप रस को उगलने के समान, युद्ध (भूमि) में रक्त उगलते हुए, प्रलयकाल के समय के पटुमेघरव के समान अधिक हाँफते हुए, कपियों के कंपित होने पर (तथा) राक्षसों के मुदित होने पर, अपनी सामर्थ्य को खोकर कपिशेखर गिर पड़ा। युद्ध में तब अनिलज के पतन को नील देखकर, अधिक क्रोध से, समस्त राक्षसों के भीत होने पर, महापर्वत को लेकर कुंभकर्ण पर डाल दिया। झट से अपने पर आ गिरनेवाले पर्वत को भीकरता से उसने (राक्षस ने) मुष्टि से मारा। प्रहार करने पर वह अद्भुत रूप से बिखरकर अविलंब लघु ज्वालाओं के निकलने पर चूर-चूर हो गया। तब अमरारि (राक्षस) पर आग्रह (क्रोध) से व्यग्र तथा अमित बल से उदग्र बने हठ से महाकपि ऋषभ, विजृंभित हो शरभ, क्रोध से नील, गंधमादन, ।। ३९४० ।।

—अधिक रोष के उत्कर्ष से गवाक्ष आदि ने तब अधिकता से सिंहनाद कर,

तरमिडि वानिपै दरुलु वैचियुनु । गिरुलु व्रेसियु बिडिकिळ्ळ दाचियुनु
बदमुल नन्नियु बट्टुनखप्रतति । विदळिचियुनु बहुविधमुल नोंचि
येचिन नन्नियु नित गैकोनक । येचि यद्दानवुंडेसगु रौद्रमुन
बट्टुतरंबुग नेलबडि तन्नुकोनग । जट्टुलत बिडिकिट शरभुनि बोडिचे;
नुरुवडि ऋषभुनि नोडिसि रादिगिचि । करमुल गोनि मुद्दगा नोगिलिचे;
गुनिकल बडि तन्नुकोनि गुंडेलविय । घनुडैन नीलु मोकाल दाटिचे;
नसमुन निगुडि गवाक्षुनि गिट्टि । यसुरेशु डरचेत नदरंट नेसे;
ग्रम्मिन तेगुवमै गंधमादनुनि । बिम्मिट गोनि त्रेळ्ळ बेंडचेत वैचे;
रयमुन रणरागरसमुलु ग्रक्कु । क्रिय नेत्तुरुलु ग्रक्कि केडसिरेगुरुनु;
३९५०

शूलंबु द्रिप्पि यार्चुचु नट्टहास । लोलुडै यालंबुलोन ग्रुम्मरुचु
वितत वज्राभील वृत्रारि भंगि । नतुल दंडोद्दंड यमुनि चंदमुन
गडु भयंकर वृत्ति गाग बेल्लार्चि । मुडिवडु नेम्मोगंबुन निप्पुलुरल
ब्रळयकालमुनाटि पट्टु शूलरुचुलु । दोलुकाड नाडु रुद्रुनि तेरंगुननु
मेरसे बोम्मनुमाट मिक्किलि गाग । नेरवार नंदर निर्जिचे गान;

क्रम से उसपर तरु फेंककर, गिरि फेंककर, मुष्टियों से प्रहार कर, चरणों से लात मारकर, पटु-नख-प्रतति से खण्डित कर, (इस प्रकार) बहुविधियों से पीड़ित कर, सताया। उन सबकी बिलकुल परवाह न कर, विजृंभित हो उस दानव ने अधिक रौद्र से शरभ को चटुलता से मुट्ठी से मारा जिससे वह पटुतर रूप से ज़मीन पर गिरकर छटपटाने लगा। शीघ्रता से ऋषभ को खींच पकड़, हाथों से (मसलकर) पिण्ड जैसा बनाया। महान् नील को घुटने से ऐसा मारा कि वह नीचे गिरकर, कलेजे के टूक-टूक होने पर छटपटाने लगा। दर्प से तनकर गवाक्ष के पास पहुँच, असुरेश ने हथेली से मारा जिससे वह सहम गया। अधिक साहस से गंधमादन को बाएँ हाथ से ऐसा मारा कि वह बेहोश हो नीचे गिर पड़ा। शीघ्रता से रणराग रस को उगलने के समान पाँचों (कपि) रक्त उगलकर मर गए ।। ३९५० ।।

शूल को घुमाते हुए, अट्टहास करने में मग्न होते हुए, युद्धभूमि में घूमते हुए वितत-वज्र के कारण आभील (भयंकर) बने वृत्रारि (इन्द्र) के समान, अतुल दण्ड से उद्दण्ड बने यम के समान, अधिक भयंकर वृत्ति से अधिक सिंहनाद कर, तने हुए मुख से अग्निकणों के झरने पर, प्रलयकाल के समय पटुशूल की रुचियों (कांतियों) के विकीर्ण होते समय रुद्र के समान (कुंभकर्ण) प्रकाशित हुआ। शत्रुओं को निर्जित करने की बात अधिक वास्तविक हुई।

सुग्रीवड्डु कुंभकर्णु नितो बोरि मूर्छिल्लुट

नप्पुडु सुग्रीवु 'डनिसेय नाकु । निप्पुडु तरि' यनि यिच्च जिंतिचि
कुलशैलपतिमीद गोपिंचि वच्चु । बलभेदिपगिदि नप्रतिमविक्रमुडु
पोरि बोरि सर्वांगमुलु वेंचि पेर्चि । परुषरोषानल प्रभलुप्पतिल्ल
गोंडलकेल्लनु गोंडयैनट्टि । कोंडनानोक पेद्द कोंड सेपट्टि
कोतुल नेत्तुट गोमरोप्प दोगि । मूतियु दनुवुनु मुदुकयै तोचि ३९६०
वीक्षिप नरुदेन वेषंबुतोडि । राक्षसाधीशु पै रयमुन वच्चि
"नन्नेरुंगवे ? येनु नलिनाप्तसुतुड; । सन्नुतुंडगु रामचंद्रुनि बंट;
नीकु नाकुनु गाक निष्ठुरयुद्ध । मी कपिकोट्टुल नेल चंपेदवु ?"
अनि पेर्चि सुग्रीवुडाडु वाक्ययुलु । विनि कुंभकर्णुंडु विपुलकोपमुनु
"सुग्रीव ! कडु निन्नु शूरुंडवंदु; । राग्रहितुरे शूरुलनि वेलिगाग ?
शूरत रणमुन जूपुदु गाक । यूरक वेडमाटलोप्पुने नीकु ?"
ननिन राक्षुसुमीद नर्कनंदनुडु । किनिसि ता देच्चिचन गिरि येत्ति वैचे;
वैचिन नदि वानि वक्षंबु दाकि । चूचुनंतटिलोन जूर्णमै राले;
ना बेट्टिदंबुन कार्चे निर्वागु । ना बल्लिदुनि चेत नसुर स्त्रुक्कियुनु

सुग्रीव का कुंभकर्ण से लड़ते मूर्च्छित होना

तब सुग्रीव ने मन में यह चिंतन कर कि 'युद्ध करने का अब मेरे लिए अवसर (आया) है', कुलशैल-पति पर क्रुद्ध हो आनेवाले बलभेदी (इन्द्र) के समान, अप्रतिम विक्रमवाले (सुग्रीव) ने बार-बार सर्व-अंगों को बढ़ाकर, विजृंभित हो, परुष रोषानल-प्रभाओं के उमड़ने पर, पर्वतों के लिए पर्वत बने एक बड़े पर्वत को हाथ में ले, बन्दरों के रक्त में शोभा से ऊभचूभ होने से मुँह और शरीर के वृद्ध हो दीखकर, ।। ३९६० ।।

—देखने में विरल बने वेष से, शीघ्रगति से राक्षसाधीश पर आकर बोला—"मुझे नहीं जानते हो ? नलिनाप्त का सुत हूँ। सन्नुत रामचन्द्र का सेवक हूँ। तुम में और मुझ में निष्ठुर युद्ध होना चाहिए। इन कपि-कोटियों को क्यों मार डालते हो ?" ऐसा विजृंभित हो सुग्रीव के कहे वाक्यों को सुन कुंभकर्ण ने विपुल कोप से (कहा) "हे सुग्रीव ! तुम्हें लोग बड़ा शूर कहते हैं। शूर अनि (युद्ध) किए बिना ही क्रुद्ध होता है क्या ? शूरता को रण में दिखा देना। ये व्यर्थ की बातें तुम्हें शोभा देती हैं ?" (ऐसा) कहने पर अर्कनंदन ने राक्षस पर क्रुद्ध हो लाए हुए गिरि को उठाकर डाल दिया। डालने पर वह (पर्वत) उसके वक्ष से लगकर देखते-देखते चूर हो गिर गया। उस भयंकर (दृश्य) से दोनों पक्षवालों ने सिंहनाद किए।

दडयक यत्यंत धैर्यंबुतोड । गडु भयंकर वृत्ति गाग बॆल्लार्चि ३९७०
दिगुलॊंदि यगचराधिपुल गुंडियलु । वगुलंग निलुवुन ब्राणमुल् वोव
जगतीतलमु नाकसंबु दिक्कुलुनु । नगल राक्षसुंडट्टहासंबु सेसि
हुंकाररवमुन नुग्रत मॆरय । गिंकिणी घंटिकाघींकाररवमु
वासिकॆक्किन यिरुवदि वेल तलल । जेसि गंधाक्षतार्चित मूर्ति नॊप्पु
शूलंबु निर्जरासुरुलकुनैन । दालुप वॆगैनदानि नक्षणमॆ
सुग्रीवुमीद वैचुटयु बॆल्लेचि । युग्रंपुमंटल नुज्ज्वलंबगुचु
नेलयु निगियु निखिल दिक्कुलुनु । जालंग दरिकॊनि सागि मंडुचुनु
बदिवेल पिडुगुल पगिदि म्रोयुचुनु । वदलकर्कजुमीद वच्चुट सूचि
घनविषज्वालोरगप्रभु बट्टि । विनतात्मजुडु द्रुंचु दॆरवु दीपिंप
नॆडसॊच्चि हनुमंतु डेपार नॊडिसि । कडुबॆक्कु तुनियलुगा द्रुंचिवैचि
३९८०
कुप्पिंचि दाटि यॆक्कुडु पेर्मि नार्चॆ । नप्पुडु वानरुलंदरु बॊगड;
शूलंबु विरुगुट सूचि कोपिंचि । यालॊन वेग नय्यसुरेश्वरुंडु
कनलुचु वच्चि लंका मलयाद्रि । घन श्रृंगमॆत्ति यर्कजुमीद वैचॆ;

उस बलवान (सुग्रीव) के हाथ असुर ने कमज़ोर होकर भी, अविलंब, अत्यन्त धैर्य से, अधिक भयंकर-वृत्ति से अधिक सिंहनाद किया, ॥ ३९७० ॥

—जिससे भीत हो अगचराधिपों के हृदय विदीर्ण हुए, खड़े-खड़े उनके प्राण निकल गए। जगतीतल, आकाश और दिशाएँ विदीर्ण हो जाएँ, इस प्रकार राक्षस ने अट्टहास करके, हुंकार रव की उग्रता से दीप्त होकर, किंकिणी-घंटिका रव से प्रसिद्ध बने तथा बीस हज़ार सिरों की (आहुति) के बाद गंध-अक्षतों से अर्चित मूर्तिवाले तथा निर्जर (तथा) असुरों को भी धारण करने के लिए (अति) भारी शूल को उसी क्षण सुग्रीव पर फेंक दिया। अति विज़ृंभित हो उग्र ज्वालाओं से उज्ज्वल होते हुए, पृथ्वी और आकाश तथा समस्त दिशाओं में लगकर बढ़ते जलते हुए, दस हज़ार अशनियों के समान मुखरित होते हुए, दुर्निवार रूप से अर्कज पर आते देख, घनविष से उज्ज्वल बने उरग-प्रभु (सर्पराज) को पकड़, विनतात्मज (गरुड़) के तोड़ देने के विधान के प्रदीप्त होने पर, बीच में आकर, हनुमान ने उत्साह से (उस शूल को) पकड़ अनेक खण्ड-खण्ड करके, ॥ ३९८० ॥

—छलांग मार अधिक प्रेम से सिंहनाद किया। तब समस्त वानरों ने प्रशंसा की। शूल के टूट जाते देख, क्रुद्ध हो, इतने में झट उस असुरेश्वर ने जलते हुए (क्रोध से) आकर, लंका की मलयाद्रि के महाश्रृंग को उठाकर

नुग्रंबुगा नदि युरमु दाकुटयु । सुग्रीवुडपुडु रोजुचु नेल बडियें ।

मूर्छिल्लिन सुग्रीवुनि गुंभकणुंडु लंककु गोंपोवुट

नातडु वडुटकु नखिल राक्षसुलु । चेतोगतुलयंदु जेंलगि यावंग
गुंभकर्णुंडतिक्रूरुडै वच्चि । कुंभिनि बडियुन्न गुरुसत्त्व धनुनि
गनुगोंनि "तलपोय गपि बलंबुनकु । निनकुलेश्वरुनकु नीतंडै लावु;
ईतडु वडुटयें येंल्ल वानरुलु । नातत गति बडु; टदि सेंप्पनेल?
सुग्रीवु मायन्न सूचु गा" कनुचु । नुग्रुडै कोंनि पोयें नोंनर लंककुनु
गालानिलमु वच्चि काल मेघमुनु । गूलिचि गुहकुनु गोंनिपोवु करणि; ३९९०
नट सुरावळि येंल्ल "नकट! सुग्रीवु । डिटु पट्टुवडि पोवुने" यनि वगव
नक्कुंभकर्णुनि यलवु ज्रलंबु । दक्कक यंदंद दनुजुलु वोंगड
वेंनुकोंनि रविसुतु विडिपिंप लेक । वनचरुल् हाहारवंबुलु सेय,
गरुवलि सुतुडु नंगदुडु नीलुंडु । शरभुंडु ऋषभुंडु जांबवंतुंडु
गिरिभेदि सुतरुंडु गेसरि पृथुडु । हरिरोमुडुनु बावकाक्षुंडु हरुडु
द्विविदुंडु मैंदुंडु वेगवंतुंडु । गवयुंडु शतबलि गजुडु दुर्दमुडु

अर्कज पर डाल दिया। उग्रता से उसके उर पर लगने पर, तब सुग्रीव हाँफते हुए पृथ्वी पर गिर पड़ा।

मूर्च्छित सुग्रीव को कुंभकर्ण का लंका ले जाना

उसके गिरने पर समस्त राक्षसों ने चेतोगतियों (मन) में उत्साहित हो सिंहनाद किया। (तब) कुंभकर्ण ने अतिक्रूर हो आकर, कुंभिनी (पृथ्वी) पर पड़े हुए गुरु-सत्त्व-धनवाले (सुग्रीव) को देखकर (सोचा)—"सोचने पर कपि सेना को (तथा) इनकुलेश्वर की यही शक्ति (संबल) है। इसका गिरना ही समस्त वानरों का आतत-गति से गिरने के सम है। इसे (अलग से) कहना क्यों? मेरा अग्रज सुग्रीव को देख लेगा।" (ऐसा) सोचते, उग्र हो, कालानिल के आकर कालमेघ को गिराकर, गुफा में ले जाने के समान, शोभा से लंका में ले गया ॥ ३९९० ॥

उधर समस्त सुरावलि 'हाय ! सुग्रीव इस प्रकार पकड़ा जाकर, ले जाया गया न !' कहकर दुखी हुए, तो उस कुंभकर्ण की सामर्थ्य (और) हठ की जहाँ-तहाँ दानव प्रशंसा करने लगे। पीछाकर रविसुत को छुड़ा न सक वनचर हाहाकार करने लगे। तब पवनपुत्र, अंगद, नील, शरभ, ऋषभ, जांबवान, गिरिभेदी, सुतर, केसरी, पृथु, हरिरोम, पावकाक्ष, हर,

सुमुखुंडु वालपाशुडु गवाक्षुंडु । गुमुदुडु ज्योतिर्मुखुडु सुषेणुंडु
दधिमुखुंडुनु वेगदर्शि रंभुंडु । ग्रथनुंडु धूम्रुंडु गंधमादनुंडु
दारुंडु ग्रोधनतपन प्रजंघ । घोराक्षजंघाल गोमुख विमुख
पनस सन्नाथ संपातींद्रजाल । विनुत सुदंष्ट्रक श्वेत दुर्मुखुलु४०००
वीरादिगा गल वीरवानरुलु । दारुणाकारु लुद्दंड विक्रमुलु
धारुणीधरमुलु दरुवुलु गौनुचु । नारूढ़ भुज सत्त्वुलै मिटि कॅगसि
यट्टहासंबुल नार्पुल दिक्कु । लट्टिट्टु गाग ब्रह्मांडंबु वगुल
"निनसूति विडिपिंतु मॅट्लैन" ननुचु । दनुजुनिपै बड दर्मकिचुटयुनु
गरमॅत्ति 'वल' दनि करुवलिसुतुडु । वरनीति मति गान वारि
किट्लनियै;
"भानुतनूजुडुद्भटशूरवर्यु । डूनिन मूर्छचे नुन्नवाडिप्पु;
डामूर्छ बापिन नात्मलो दॅलिसि । यामहात्मुडु वच्चु; नट्टुगाक मनमु
विडुवकी यसुरचे विडिपिचुकोन्न । गडुलाघवंबुन गपिकुलेश्वरुडु
मदिलोन नॅप्पुडु मरुगुचुनुंडु; । निदि विचारमु कादु; यिचुक सैचि
यटु चूडु; डीलोन नतडु राकुन्न । गुटिलुलौ रावणकुंभकर्णुलनु४०१०
जटुल विक्रमुलैनन सकल राक्षसुल । बटु मुष्टि निहतुल भग्नंबुसेसि

द्विविद, मैंद, वेगवान, गवय, शतबलि, गज, दुर्दम, सुमुख, वालपाश, गवाक्ष, कुमुद, ज्योतिर्मुख, सुषेण, दधिमुख, वेगदर्शी, रंभ, क्रथन, धूम्र, गंधमादन, तार, क्रोधन, तपन, प्रजंघ, घोराक्ष, जंघाल, गोमुख, विमुख, पनस, सन्नाथ, संपाति, इन्द्रजाल, विनुत, सुदंष्ट्रक, श्वेत, दुर्मुख, ॥ ४००० ॥

—आदि वीर वानर जो दारुण आकारवाले (तथा) उद्दण्ड विक्रमवाले हैं, धारुणीधरों (पर्वत) (और) तरुओं को लेते हुए, आरूढ़-भुज-सत्त्व वाले होकर आकाश में उड़कर अट्टहासों और सिंहनादों से दिशाओं के कंपित होने पर, ब्रह्माण्ड के विदीर्ण होने पर, 'किसी भी तरह इनसूति को छुड़ाएंगे' कहते हुए दनुज पर टूट पड़ने के लिए उतावले हुए तो हाथ उठाकर 'रुको' कहते हुए पवनसुत ने, वरनीतिवान होने के कारण, उनसे यों कहा—"भानुतनूज उद्भट, शूरवर है, अब मूर्च्छा धारण किए ऐसा है। उस मूर्च्छा के हट जाने पर, होश में आकर, वह महात्मा (लौट) आएगा। ऐसा न होकर, हम लगकर इस असुर के हाथ से अतिलाघव से उसे छुड़ाएंगे तो कपिकुलेश्वर मन में सदा व्याकुल हो रहेगा। यह (ठीक) विचार नहीं है। थोड़ा सहन कर देखिए। इतने में वह (लौट) नहीं आएगा तो कुटिल रावण-कुंभकर्णों को, ॥ ४०१० ॥

—चटुल विक्रम वाले सकल राक्षसों को पटुमुष्टि-निहतियों (आघातों) से

हाटक दीप्तुल नलरॆंडु नेडु । कोटलु लंकयु गूलंग द्रोचि
प्रळयंबु नॊंदिचि भानुजु गूडि । च्रलमु गोपमु मीऱ जनुदॆंत मॆलमि"
ननि यिट्लु हनुमंतुडाडु वाक्यमुल । मनमुल नलरि यामर्कटेश्वरुलु
विनु वीथि नत्यंत वेगुलै दनुजु । वॆनुकॊनि पोव, नव्विध मॆरुंगकयॆ
यट गुंभकर्णुंडु नर्कजु गॊनुचु । बट्टुरयंबुन जॊच्चॆ बलियुडै लंक;

सुग्रीवुडु मूर्छ देरि कुंभकर्णुनि विरूपनि जेयुट

राजमार्गंबुल रा मेडलंदु । राजिल्लु नागोपुरंबुल यंदु
नॊप्पॆडि पुरकांत लॊगि पुष्पवृष्टि । यप्पुडु कुरियंग नर्कनंदनुडु
तॆलिसि यापुर वीथि दॆऱगॊप्प जूचि । वॆलवॆल नै कडु वॆऱगुन गुंदि
"यिट्टु पट्टु वडिति ने नी दैत्युचेत । बट्टुतर मूर्छं चे बडियित तडवु"
४०२०
ननियट्टु करमुल नादैत्यु चॆवुलु । पॆनचि तम्मॆल तोड वॆरिकि रा
दिगिचि
पुटमुलतो मुक्कु बोसिवो गऱचि । पट्टुगति मिंटिकि भानुजुंडैगय
निम्मुल बोनीक येचि राक्षसुडु । क्रम्मऱ नातनि काळ्ळॊगि बट्टि
नेलतो व्रेसिन नॆगसि सुग्रीवु । डेलिन पतिकड केगॆ वेगमुन;

भग्न करके, हाटक-दीप्तियों से विराजमान सात प्राकारों वाली लंका को ढहा देकर, प्रलय मचाकर, भानुज के साथ हठ (और) क्रोध के उत्कर्ष से (वापिस) आ जाएँगे।" (ऐसा) कहनेवाले हनुमान के वाक्यों से मन में प्रसन्न हो, वे मर्कटेश्वर, विनुवीथि में अत्यन्त वेग से दनुज का पीछा करते गए। उस विधान को न जानकर ही उधर कुंभकर्ण ने अर्कज को लेकर, अतिवेग से, बली हो, लंका में प्रवेश किया।

सुग्रीव का होश में आकर कुंभकर्ण को विरूप करना

तब राजमार्गों में, राजभवनों में, विराजमान उन गोपुरों में शोभायमान पुरकान्ताओं के क्रम से पुष्पवृष्टि करने पर अर्कनन्दन होश में आया। उस पुरवीथि को ढंग से देखकर, विवर्ण बन, अति आश्चर्य से विकल होकर, 'पटुमूर्च्छा के अधीन हो, इतनी देर इस दैत्य के हाथ पड़ा रहा', ॥४०२०॥ —(ऐसा) सोच, हाथों से उस दैत्य के कान मरोड़कर, कर्णभूषणों के साथ खींच लिये। नासिका शून्य हो जाएँ, ऐसा कुतर डाला (और) पटुगति से भानुज आकाश में उड़ चला। शोभा से उसे जाने न देकर, विजृंभित हो, राक्षस ने पुनः उसके पैर पकड़कर, ज़मीन पर पटक दिया तो उड़कर सुग्रीव

सुरलाकसंबुन जोद्यंबु नॊंद । दरुचरवरु लॆल्ल दनुजेरिम्रॊक्क;
वारुनु दानुनु वच्चि सुग्रीवु । डारामचंद्रुनि यडुगुल कॆरग
नालिंगनमु सेसॆ नंत राघवुडु । नालोन गपुलॆल्ल नानंद मंद;

कुंभकर्णुडु वानरुल जक्काडुट

नायसुरेशुडं नट्टु मुक्कु सॆवुलु । वोयिन नॆंतयु बुद्धिलो रोसि
"मुनु चॆलियलि बन्नमुनकु नै यात्म । नॆनसिन सिग्गुन नॆग्गोनरिप
वनजाप्तकुलुनितो वलवनि वैर । मुन मगंटिमि तोड बोराडुचुन्न ४०३०
नाकारि कडकु मानमु गोलुपोयि । यी कष्ट तनुवुतो नेमनि पोदु ?
बोरिकि नुचितंबु पोवुट" यनुचु । ना रक्तपूरंबु लंदंद क्रम्मि
तनुवुन निंड नुद्दंड वर्तनुडु । घनतर रोषंबु गडलुकॊनंग
जेवुरु चायल सॆलयेरु लडर । गा वच्चु नीलाद्रि कैवडि दोप
नट्टुगाक "वीडु युगांतंबु नाटि । चटुलाग्नि" यन रणस्थलि केगुदॆंचि
यर्रिमुर्रि गोपिंचि यगचर सेन । दर्रिमि दानवु डत्युदग्रुडै मॆर्रसि

अपने राजा के पास शीघ्रगति से पहुँचा। आकाश में सुरों के आश्चर्यचकित होने पर (तथा) समस्त तरुचरवरों के घेरकर प्रणाम करने पर, उनके साथ आकर सुग्रीव रामचन्द्र के चरणों में नत हुआ। समस्त कपि आनन्दित हों, ऐसा राघव ने तब उसका आलिंगन किया।

कुंभकर्ण का वानरों का सत्यानाश करना

वह असुरेश्वर वैसा नाक और कान के (कट) जाने पर मन में अधिक घृणा करके, "पूर्व के अनुजा के अपमान के कारण मन में उत्पन्न लज्जा के कारण, प्रतीकार करने के लिए वनजाप्तकुल वाले (राम) से दुर्निवार वैर लेकर, पौरुष से जूझते समय, ।। ४०३० ।।

—नाकारि (रावण) के पास (इस प्रकार) मान खोकर, इस क्रूरतनु को लेकर कैसे जाऊं? युद्ध के लिए जाना ही उचित है।" (ऐसा) सोचते, रक्तपूर के जहाँ-जहाँ प्रवहित होकर, शरीर को भर देने पर, उद्दंड-बर्तन (-आचरण) वाला (कुम्भकर्ण) घनतर रोष के (मन में) व्याप्त होने पर, गेरुए रंग के झरनों की अतिशयता से पूर्ण नीलाद्रि के समान दीखते हुए, अथवा 'यह युगांत के समय की चटुल-अग्नि है' ऐसा रणस्थल में आकर, शीघ्र कुपित होकर, अगचर-सेना को भगाकर, (वह) दानव अति-उदग्र हो प्रकाशित हुआ। अति उग्रता से (वानरों के) पैरों को क्रम से पकड़कर

कडुनुग्रमुग गडकळ्ळॊंगि बट्टि । वडि द्रिप्पि त्रिप्पि युर्वर मीद व्रेयु;
बिऱबिऱ ब्रेवुलु पिडिकिटि लोन । बॆऱिकि रा गॊंदऱ बिडिकिट बॊडुचु;
निब्बरंबुग दाचि नॆऱय गुंडियलु । दॊब्बलु नुऱुकंग द्रॊक्कु बादमुल;
बिड्गुल बॊलॆंडु पॆंडचॆतुलॆत्ति । कडु नुग्रमुग मन्नु गऱवंग नेयु;
४०४०

दनमीद ब्राकिन तरुचरावळुल । विन विस्मयंबुगा वॆस निग्रहिंचु;
नगपड्ड राक्षसु नैननु बट्टि । तिगिचि वेगमुन गुत्तिक लोन वैचु;
झंकाररवमुल शवमुलु सेयु; । हुंकार रवमुल नसुरुलु वापु;
दिविज विमानमुल् दिरुगुडुवडग । दिविचि मर्कटुल मीदिकि नॆत्तिवैचु
नॆगसिन कपुलतो नेट्टु दाकंग । नगचरावळि बट्टि यंदंद वैचु;
नॆम्मुलु नुऱुमुगा नेपार द्रिप्पि । यिम्मुल गॊंदऱ नॆंड गलग वैचु;
गॊंदऱ निरुगेल गुदियंग बट्टि । यंदंद ताटिंचि यल्लंत वैचु;
"नीवानरुल जूडुडॆपॆंड" ननुचु । लावुन गॊंदऱ लंकलो वैचु;
बॆंपार "दनुगट्टि पॆचिन कपुल । मुंपु मी" यनि यब्धि मुनुगंग वैचु;
निव्विधंबुन दानवेश्वरुडेचि । यव्वानरुल दिक्कुलंदॆल्ल वैव ४०५०
मेदिनि यंदुनु मिन्नुल यंदु । नेदिक्कुलंदुनु नॆडमु लेकुंड

झट घुमा-घुमाकर जमीन पर पटक देता, झट आंत मुष्टि में आ जाएँ ऐसा कुछ (वानरों) पर मुष्टि प्रहार करता, धैर्य से लात मारकर, उत्कर्ष से कलेजा और स्नायु चूर हो जायें ऐसा चरणों से कुचल देता, अशनियों के सम मरोड़ा हुआ हाथ (मुट्ठी) उठाकर ऐसा मारता कि वे (वानर) मिट्टी चाटने लगते, ।। ४०४० ।।

—अपने ऊपर रेंगनेवाले तरुचर-समूह को, सुनने में आश्चर्यप्रद रूप से, दबा देता, नज़र में आए राक्षस को ही सही, पकड़, खींच झट मुँह में डाल लेता, झंकार रवों से (उन वानरों को) शव बना देता, हुंकार रवों से प्राणों से विहीन कर देता, दिविज-विमान चक्कर खाएँ ऐसा खींचकर मर्कटों पर डाल देता, ऊपर उछले मर्कटों पर प्रहार कर, नगचर समूह को पकड़ जहाँ-तहाँ फेंक देता, कुछ को दोनों हाथों से सिकोड़कर, पकड़कर, जहाँ-तहां टकराकर दूर फेंक देता, 'इन वानरों को ढंग से देख लो' मानों ऐसा कहते, समर्थता से कुछ को लंका में फेंक देता, शोभा से 'तुम पर (सेतु) बाँधे कपियों को डुबो दो' कहते अब्धि में फेंक देता जिससे वे डूब जायें, इस प्रकार दानवेश्वर ने विजृंभित हो उन वानरों को समस्त दिशाओं में फेंक दिया, ।। ४०५० ।।

बडि चच्चु कपुलुनु बडि डॊल्लु कपुलु। बडि कूतलिडु कपुल् पडि पॊरल् कपुलु
बडि तन्नुकॊनु कपुलु पडि रोजु कपुलु। बडियुन्न कपुलुनु बडियॆडु कपुलु
नै रणस्थलि यॆल्ल नगचराक्रोश। माराक्षसुनि चेत नग्गलंबय्यॆ;
ना कुंभकर्णुनि यत्युग्र भीष-। णाकृति कालांतकाकृति यैन
नडगॆ दारापति; यलिकॆ नंगदुडु;। नडिकॆ गवाक्षु; डुन्नति दक्कॆ गजुडु
जलियिंचॆ ऋषभुंडु; शंकिंचॆ नलुडु;। बॆलुकुऱॆ नीलुंडु; बॆगिलॆ बृथुडु;
वॆऱगंदॆ शरभुंडु; वॆऱचॆ धूम्रुंडु; । नुरुकंपमुन बॊंदॆ नॊगि बनसुंडु;
गडुभीति नॊंदॆनु गंधमाधनुडु; । नडलुचु वडकॆ नय्यनिलनंदनुडु;
जूड भयंबंदॆ ज्योतिर्मुखुंडु; । जाड सेकॊनि पाऱॆ जांबवंतुंडु; ४०६०
नुलिकिरि वॆंडियु नुन्न वानरुलु। गलय नंतट गुंभकर्णुनि जूचि;
घन-बाहु-बलुडु लक्ष्मणुडु गोपिंचि। चनुमऱ नाटिंचॆ शरमु लेडिंट;
मऱियु बॆक्किट लक्ष्मण देवु डेय। गऱकु राक्षसुडु लक्ष्मणुनि गैकॊनक
बलुविडि राग नापाद-मस्तकमु। नलमि प्राकुचु गपु लादैत्यु मेन

—(फेंक देने पर) मेदिनी पर, आकाश पर, सभी दिशाओं में (वे वानर) भरकर गिर मरनेवाले कपि, लुढकनेवाले कपि, गिर चिल्लानेवाले कपि, गिरकर लोटनेवाले कपि, गिर छटपटानेवाले कपि, गिर हाँफनेवाले कपि, गिरे हुए कपि और गिरनेवाले कपियों से युक्त हो समस्त रणस्थल उस राक्षस के कारण अधिक अगचर-आक्रोश (आक्रंदन) से युक्त हो गया। उस कुम्भकर्ण की अत्युग्र-भीषण-आकृति के कालांतक-आकृति होने पर तारापति (सुग्रीव) दब गया, अंगद नत हो गया, गवाक्ष काँप उठा, गज औन्नत्य से हीन हो गया, ऋषभ विचलित हो गया, नल शंकित हो गया, नील विह्वल हो गया, पृथु चीख उठा, शरभ चकित रह गया, धूम्र भीत हुआ, पनस अधिक कंपन को प्राप्त हुआ, गन्धमादन अधिक भीत हुआ, वह अनिलनंदन उद्विग्न हो काँप उठा, (कुम्भकर्ण को) देखते ही ज्योतिर्मुख भीत हो गया, मार्ग पकड़कर जाम्बवान भाग गया, ॥ ४०६० ॥

—शेष सभी वानर अत्यन्त भीत हुए। तब सर्वत्र कुम्भकर्ण को देख घनबाहुबल वाले लक्ष्मण ने क्रुद्ध हो, स्तनाग्रभाग (वक्ष) पर सात बाण चलाए। उसके बाद लक्ष्मणदेव के और भी कई बाण चलाने पर, क्रूर राक्षस लक्ष्मण की परवाह न कर, समर्थ हो, आगे बढ़ा। उस दैत्य के शरीर पर, कपि आपाद-मस्तक रेंगते हुए, क्रुद्ध हो, मूँछें पकड़ झूलते हुए, क्रोध से अपनी पूँछों से उसके (शरीर को) घेर लेते हुए, झट से उसपर टूट गिरकर, (शरीर की) उन-उन संधियों में शोभा से मल्लबंध के विविध प्रकारों

नलिगि मीसमुल नुय्याल लूगुचुनु । गलुषत दोकलु कलय जुट्टुचुनु
नऱिमुऱि गविसि या या संधुलंदु । वऱलंग लागुलु वैचि हत्तुचुनु
जिदऱ वंदऱ सेसिन नसुर । डैंदंबु लोन गडिंदि कोपमुन
बटुसत्त्वुलै तन पैनुन्न कपुल । जटुल मत्तेभबु जाडिंचु करणि
जलकेळि दनिसिन समद सूकरमु । वैलय बिंदुलु राल विद्रिचिन भंगि
ब्रळय कालमु नाटि ब्रह्माण्डतलमु । डुलडुल जुक्कलु डुल्चु कैवडिनि
४०७०

दनमीद ब्राकिन तरुचरावळुल । दनुवु गदल्चि यद्धरिणिपै गूल्चै;
नप्पुडु विस्मितुंडै कुंभकर्णु । दप्पक कनुगौनि तन कन्नु गवल
निप्पुलु रालंग निगुडु कोपमुन । नप्पन्नगाधीशु नाकृति गलिगि
करमौप्पु कांचन कार्मुकंबैत्ति । निरुपम बाण तूणीरमुल् बिगिचि
भीम विक्रम कळाभेद्युडै पैरिगि । रामुडु नडचु संरंभबु जूचि
समर महारंभ चतुरु लौंडौंड । दमकंबु निंड नुद्दंड वर्तनुलु
परुषाद्रि पाषाण पादपावळुलु । धरियिंचि युग्रुलै तरुचरोत्तमुलु
मौंगि सप्त पाताळमुलुनु भेदिल्ल । नौंगि गूर्म मगलंग नुदधुलु गलग
दिगिभंबु लडरंग दिवि तल्लडिल्ल । नगचराधीशुल कतिधैर्यमौदव

से दबाते हुए, (उसे) तितर-बितरकर करने लगे। (ऐसा करने पर) असुर ने मन में अधिक क्रोध से, पटुसत्त्वशाली हो, अपने शरीर पर स्थित कपियों को, चटुल मत्तेभ के झटकाने के समान (तथा) जलकेलि से संतृप्त बने समद-सूकर के (अपने शरीर को) झटका देकर जलबिन्दुओं को नीचे गिराने के समान, प्रलयकाल के ब्रह्मांडतल के नक्षत्रों को टप-टप गिराने के समान ॥ ४०७० ॥

—अपने ऊपर रेंग आए तरुचर-समूह को (अपना) शरीर झटकाकर, धरणी पर गिरा दिया। तब विस्मित हो, कुम्भकर्ण को अवश्य देखकर, अपने नेत्रयुग्म से चिनगारियों के छूटने पर, अत्यन्त क्रोध के कारण पन्नगाधीश (आदिशेष) की आकृति से युक्त हो, अधिक शोभायमान कांचन-कार्मुक उठाकर (हाथ में ले), निरुपम बाण-तूणीर का संधानकर, भीम-विक्रम-कला से अभेद्य होते बढ़कर, राम के चलने के संरंभ को देखा, (देखकर) समर-महारंभ में चतुर और उद्दंडवर्तनवाले (वानर) आपस में औत्सुक्य से पूर्ण हो, परुष-अद्रि-पाषाण (तथा)- पादप-समूह को धारणकर, उग्र बन, तरुचरोत्तम क्रम से सप्त पाताल भी फट जाएँ, क्रम से कूर्म उखड जाए, उदधियाँ आलोड़ित हो जायें, दिक्-इभ (दिग्गज) कांप उठें, दिवि

नदिमि कुप्पिंचि मिन्नगल बेल्लेगसि । युदित क्रमंबुन नुरु विक्रमंबु ४०८०
सुरसिद्ध साध्युलु सोरिदि गीर्तिप । गरमेचि यपुडु राक्षसु मीद नडव
नापति मुंदर नाविभीषणुडु । कोपंबुतो गदगोनि शौर्यं मेसग
गडुवेगमुन गुंभकर्णुनि म्रोल । बुडमि चर्लिप नप्पुडु वच्चि निलिचे;
नाविभीषणु जूचि यनियें नव्वुचुनु । रावणु तम्मुडु राक्षसेश्वरुडु;

विभीषण, कुंभकर्णुल संवादमु

"विनु विभीषण ! नीदु विक्रमंबुनकु । ननुवैन तड़ियिदि यधिपति येदुर;
नन्न दम्मुल पाडि यनि स्रुक्क वलव; । दिन्नरनाथुनि हृदयंबे पट्टु;
पूनि येन्नडु निन्नु बोंद वापदलु । भानुवंश्युनि कृप बडसिति गान;
नारामु दयगल; दट्टु मीद नीवु । सारदयोदयश्लाघ्य चित्तुडवु;
लंक सद्गुण गणालंकृति नेल । निंक नेव्वरु गलरिट नीवे काक;
साहस बल महोत्साहंबु मिगिलि । याहवंबुन वेगमडरि नायेंदुर ४०९०

(आकाश) विचलित हो जाए, ऐसा नगचर-अधीशों को अति धैर्य प्राप्त हो, साँस को रोककर छलांग भरकर, आकाश फट जाए, ऐसा अधिक उछलकर उदितक्रम से तथा उरु-विक्रम से, ।। ४०८० ।।

—सुर-सिद्ध-साध्य क्रम से प्रशंसा करें, अधिक विजृंभित हो ऐसा तब राक्षस पर चल पड़े। उस पति (राम) के समक्ष वह विभीषण क्रोध से गदा ले, शौर्य के शोभित होने पर, अतिवेग से कुम्भकर्ण के समक्ष ऐसा आ खड़ा हो गया कि पृथ्वी विचलित हो जाए। उस विभीषण को (देख) हँसते हुए, रावण का अनुज (और) राक्षसेश्वर (कुम्भकर्ण) बोला—

विभीषण-कुम्भकर्ण का संवाद

"सुनो विभीषण ! अधिपति (राम) के समक्ष अपने पराक्रम के (प्रदर्शन के लिए) यह उचित अवसर है। अग्रज-अनुज के न्याय (न्याय-संगत संबंध) का विचार कर व्यथित मत होना। इस नरनाथ (राम) का हृदय ही (तुम्हारे लिए) आधार है। भानुवंशवाले की कृपा प्राप्त की है अतः कभी कोई विपत्ति तुम्हें छू न सकेगी। (तुम पर) उस राम की दया है। इस पर तुम दया के सार के उदय से श्लाघ्य (प्रशंसनीय) चित्तवाले हो। अब आगे तुम्हारे सिवा सद्गुणों के गणों (समूह) से अलंकृत बन, लंका पर शासन कर सकनेवाला और (कौन) है ? साहस (और) बल के महोत्साह के उत्कर्ष से आहव (युद्ध) में वेग से विजृंभित हो, मेरे समक्ष, ।। ४०९० ।।

मगंतनंबुनु बाडि मनसुन दलचि । तगनीवु नातोड दाकेदवनुचु
बलिकिति गानि यीपट्टुन निलुव । नलवियै ब्रह्मरुद्रादुलकैन ?
दॊलगुमु तम्मुडा ! त्वुंग; कीवैन । वलयु नीराक्षस वंशंबु मनुप"
ननिन विभीषणुंडन्नतो ननियॆ; । "दनुज कुलंबॆल्ल दग्धमै पोवु
ननु भयंबुन मन यन्नतो दॆलिय । घनमैन नीति प्रकारंबुलॆल्ल
जॆप्पिति नेनु नॆचिन यंत वट्टु; । चॆप्पिन नामाट जेकॊनडय्यॆ:
नट्टुगान निन्नुनु नन्ननु बासि । यिटु वच्चि श्रीरामुने बॊडगंटि"
ननि यनि चॆप्पुचु नंतरंगमुन । दनुजेशु नविनीति दलपोसि पोसि
कन्नीरु दॊरुगंग गड़ु दुःख मडर । नन्न जूडग लेक यव्वल दॊलगॆ;
नाराघवेश्वरु डनुजन्मयुक्तु । डै रणोद्योगुडै यगचरुल् दानु ४१००
घन रौद्ररसमु राक्षसरूपु दाल्चि । यनिकि नेतॆंचॆनोयनदगु वानि
जारु कोटीर भूषणमुल वानि । वीररसावेश वेशंबु वानि
धीरुडै कपुलनु दॆगजूचुवानि । दोरंपु नॆत्तुट दोगिन वानि
गनुगॊनि मदि लोन गड़ु वॆरगंदि । मनुकुलोत्तमुडु रामक्षितीश्वरुंडु
"नारिकै पुट्टिन नाकोप मॆल्ल । नारिचे जूपॆद नाकारि किपुडु;

—पौरुष-धर्म का मन में विचारकर, मेरे साथ उचित रूप से भिड़ जाओगे, यह सोच यों कहा; किन्तु क्या इस अवसर पर ब्रह्मा, रुद्र आदियों में भी (मेरे समक्ष) खड़े रहने की सामर्थ्य है ? हट जाओ अनुज ! इस राक्षस-वंश को जीवित बनाए रखने के लिए तुम्हारा मरे बिना (जीवित) रहना आवश्यक है।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने अग्रज से कहा—"इस भय से कि समस्त दानवकुल दग्ध हो जाएगा हमारे अग्रज से समस्त नीति प्रकारों को, भरसक, समझाया था। कहने पर मेरी बात नहीं मानी। अतः तुम्हें और अग्रज को छोड़, इधर आकर, मैं श्रीराम को देख पाया हूँ (शरण ली)।" ऐसा कहते हुए, अंतरंग में दनुजेश की अविनीति के बारे में सोच-सोचकर, आँसुओं के ढुलकने पर, अधिक दुख के बढ़ने पर, अग्रज को देख सक, वहाँ से हट गया। राघवेश्वर अनुजन्म (अनुज)- युक्त हो, रण-उद्योगवाला हो, अगचर और स्वयं (चल पड़ा) ॥ ४१०० ॥

—मानों घन-रौद्ररस राक्षस का रूप धारणकर युद्ध के लिए आया हो, जो चारु-कोटीर-भूषणों से युक्त था, जो वीररस के आवेश से युक्त वेष (आकार) वाला था, धीर बन कपियों को अत्यधिकता से देखनेवाला था, अत्यधिक रक्त में भीगा हुआ था, (ऐसे कुम्भकर्ण को) देखकर, मन में अधिक आश्चर्यचकित हो मनुकुलोत्तम रामक्षितीश्वर ने (यह सोच कि) —"नारी के कारण उत्पन्न मेरे समस्त क्रोध को नारी (प्रत्यंचा) पर,

नार्चुचु वच्चु नीयसुर कोपाग्नि । नार्चेंद शर वृष्टि'' ननि बिट्टु किनिसि
'करियान निज धर्मगति जेंदु' ननेंडु । करणि दिक्करुलु घींकारमुल् सेय
'निक नीरुग जेयु नीरामु नलुक । लंकेशु' ननुमड्कि लंक घूर्णिल्ल
नेंड्रयंग जगमु लन्नियु जेवुड्पडग । गुड्रिलेनि रवमुन गुणमु म्रोयिंचे;
ना गुणध्वनि विनि यलुकमै नेंदुरु । गा गर्वमुन गुंभकर्णुडेतेर ४११०
मानैन गरुवंपु माट लिपार । वानितो ननियें ना वनजाप्तकुलजु;
"डोरि राक्षस ! नीकु नोंदुगंगरादु; । धीरुंडवै यिक देंगुववाटिंचि
यमरुलु मेच्चंग नमरि नायेंदुड्र । समरंबु सेयंग जक्कगा निलुवु;
मट्टुगाक कपटुंडवै माय वन्नि । येंटुपोयिननु निन्नु नेल पोनित्तु''
'गाववे' यनि पोयि कमलजु गन्न । गाव; ना ब्रह्मलोकमु नाकु नेंदुरे ?
'कावव' यनि पोयि कड्रकंठु गन्न । गाव; ना रुद्रलोकमु नाकु नेंदुरे ?
'कावव' यनि पोयि कमलाक्षु गन्न । गाव; ना विष्णुलोकमु नाकु नेंदुरे ?''
यनि पेर्चि पलिकिन नारामु पलुकु । विनि कुंभकर्णुडु विपुलंबु गाग

अब नाकारि को दिखाऊंगा, सिंहनाद करते हुए आनेवाले इस असुर-कोपाग्नि को शरवृष्टि से बुझा दूंगा'' अधिक क्रुद्ध हो, मानों यह कहते हुए कि 'निशित शरों से (अथवा गजगमनवाला) (राक्षस) निजधर्मगति (मृत्यु) को प्राप्त करेगा' दिक्करियों के घींकार करने पर, मानो लंका के यह कहते 'अब इस राम का क्रोध लंकेश को भस्म कर देगा' घूर्णित होने पर, (तब राम ने) शोभा से समस्त जगों के बहरे कर देने वाले अनुपम रव से गुण (प्रत्यंचा) को मुखरित किया । उस गुणध्वनि को सुनकर क्रोध के मारे, दर्प से कुम्भकर्ण के समक्ष आने पर, ॥ ४११० ॥

—मान्य-गर्व-वचनों को शोभा से वनजाप्तकुलज ने उससे कहा—''रे राक्षस ! तुम्हें पीछे हट जाना नहीं चाहिए । धीर बनकर, अब साहस मानकर, देवता प्रशंसा करें, ऐसी शोभा से युद्ध करने के लिए (मेरे समक्ष) ठीक ढंग से खड़े हो जाओ । ऐसा न कर कपटी हो माया रचकर कहीं जाओगे तो भी मैं तुम्हें कैसे जाने दूंगा । 'रक्षा करो' ऐसा कह जाकर कमलज को देखोगे (शरण में जाओ) तो भी रक्षा नहीं करूँगा । वह ब्रह्मलोक मेरा सामना कर सकता है ? 'रक्षा करो' ऐसा जाकर नीलकण्ठ को देखोगे तो भी रक्षा नहीं करूँगा । वह रुद्रलोक मेरा सामना कर सकता है ? 'रक्षा करो' ऐसा कह जाकर कमलाक्ष को देखोगे तो भी रक्षा नहीं करूँगा । वह विष्णुलोक मेरा सामना कर सकता है ?'' ऐसा विजृंभित हो कहे गए उस राम के वचन सुनकर कुम्भकर्ण विपुलता से, अगचराधिपों के खेद के

दिगुलोंदि यगचरधिपुल गुंडियलु । वगिलि निल्वुल तोड ब्राणमुल् वोव
जगतीतलमु नाकसमु दिक्कुलेल्ल । नगल राक्षसुडट्टहासंबु सेसि ४१२०
नलुवोंद नाराम नरनाथु जूचि । पलिकें नुद्‌भट रणप्रौढ़ि दीपिप;
"वेंडगु मायलु वन्नि वेंरूचि नीचेत । मडियंग मारीच मनुजाशि गानु;
रयमुन नीचेत रघुरामचन्द्र ! । भयमुन जाव गबंधुंड गानु;
क्रममोप्प नीशर घट्टनचेत । रमणमै गूल विराधुंड गानु;
अनिमोन नोक कोल नवनिपै गूल । निनकुलाधीश्वर ! ये वालि गानु;
जेति विल्लिच्चि नीचे भंगमोंद । बूतात्मुडगु भृगुपुत्रुंड गानु;
रावणु तम्मुड; राक्षसेश्वरुड; । देवकंटकुडनु; दीप्त विक्रमुड;
नन्नेरुंगवे ? राम ! नगचर कोटि । क्रोन्नेत्तु रानिन कुंभकर्णुंड;
नेरुगक ब्रह्मयु निंद्रुंडु निन्नु । गरूपिन बेलवै गर्विंचि पुट्टि
यी तरुचरकोटि नेमनि नम्मि । नातोडि युद्धंबुनकु वच्चितीवु ?
४१३०
घनमैन यट्टि राक्षस भाषणमुलु । सनकादि योगींद्र सन्नुतुल् गावु;
उरुवडि बरूतेंचु नुग्र शस्त्रमुलु । परिवार चामर प्रततुलु गावु;

मारे कलेजे के टूक-टूक होकर खड़े-खड़े प्राण चले जायें (और) जगतीतल, आकाश (तथा) समस्त दिशाएँ विदीर्ण हो जाएं, ऐसा अट्टहास करके, ।। ४१२० ।।

—शोभा से उस रामनरनाथ को देखकर, उद्‌भट-रणप्रौढता के दीप्त होने पर बोला—"मूर्ख मायायें रचकर, भीत होकर, तुम्हारे हाथ मरने के लिए मारीच-मनुजासन (-राक्षस मैं) नहीं हूँ । हे रघुरामचन्द्र! झट तुम्हारे हाथ भय के कारण मरने के लिए कबंध नहीं हूँ । क्रम की शोभा से तुम्हारे शर-घट्टन से रमणीयता से मरने के लिए मैं विराध नहीं हूँ । युद्ध में एक बाण से अवनि पर गिर पड़ने के लिए हे इनकुलाधीश्वर ! मैं वालि नहीं हूँ । (अपने) हाथ का धनुष देकर, तुम्हारे हाथ अपमानित होने के लिए पूतात्मा (पवित्र) भृगुपुत्र नहीं हूँ । (मैं) रावण का अनुज हूँ, राक्षसेश्वर हूँ, देवकंटक हूँ, दीप्त विक्रमवाला हूँ । (ऐसे) मुझे नहीं जानते हो ? हे राम ! नगचर-कोटि के नूतन रक्त को पिया हुआ कुम्भकर्ण हूँ । (मुझे) न जानकर ब्रह्मा और इन्द्र के तुम्हें सिखाने पर, नादान बन, गर्वीले हो, जन्म लेकर, इस तरुचरकोटि पर कैसा विश्वास कर, मुझसे युद्ध करने तुम आए हो ? ।। ४१३० ।।

—राक्षसों के महान् भाषण (वचन), सनक आदि योगीन्द्रों की सन्नुतियाँ (स्तुति पाठ) नहीं हैं । वेग से आनेवाले उग्र शस्त्र, परिचारकों की

च्रलमुन नार्चु राक्षसभटोत्तमुलु । नलिबाडु तुंबुरु नारदुल् गारु;
व्रालुचु नीमीद वच्चु नागालि । यालवट्टंबुल यनिलंबु गादु;
युद्धरंगं बमृतोदधि गादु; । युद्धंबु नी कौलुवुंडुट गादु;
इट्टेल पुट्टिति ? वीयाजिलोन । नट्टि सौख्यंबु नीकवनीश ! कलदे ?
यदि चेप्पनेल ? निन्ननियेंडि देमि । यिदे चूडु नागद येट्टिदो राम !
दीनबो गैलिचिति देव संघमुल; । दीनिकि साटिये दिव्याधमुलु ?
बलमुनु शौर्यंबु बाहु विक्रमसमु । गलदेनि घोराजि गदियुमु नन्नु;
नेरय नीयंदलि निज शक्ति जूचि । मऱि निन्नु जंपेद मानवाधीश !"
४१४०

श्रीरामुनिचे गुंभकर्णुडु गूलुट

यनुटयु रघुरामु डलिगि वेगमुन । घनशिलीमुखमुलु गडु बेक्कुवेलु
नावालि नेसिन यट्टि बाणमुलु । देवकंटकु मीद दिविरि येयुटयु
जलबिंदुवुलु ग्रोलु चातकं बनग । बलुविडि नाबाण पंक्तुलु ग्रोलि
कर मुग्रमैन मुद्गरमु द्रिप्पुचुनु । बरुवडि वानरपतुल दोलुचुनु
नेदुरुगा जनुदेंचु निद्रारि जूचि । मदि लेक्कसेयक मानवेश्वरुडु

चामर-प्रततियाँ (-समूह) नहीं हैं। हठ से सिंहनाद करनेवाले राक्षस-भट-उत्तम (श्रेष्ठ भट), शोभा से गान करनेवाले तुंबुर-नारद आदि नहीं हैं। तुम पर आनेवाली मेरी जो वायु है, वह आलवट्टों (छाता अथवा कपड़े से बनाया हुआ वीजन) का अनिल नहीं है। युद्ध-क्षेत्र अमृत-उदधि नहीं है। युद्ध तुम्हारे दरबार लगाने के समान नहीं है। ऐसा क्यों पैदा हुए हो ? इस आजि (युद्ध) में वैसा सुख हे अवनीश ! कहाँ है ? वह (सब) कहना क्यों ? तुम्हें कहना ही क्यों ? हे राम ! यही देखो मेरी गदा कैसी है ? इसी से तो देवसंघों को जीता है। क्या दिव्य-आयुध इसकी बराबरी कर सकते हैं ? बल और शौर्य, बाहु-विक्रम (तुम में) हैं तो घोर युद्ध में मुझसे भिड़ जाओ। हे मानवाधीश ! शोभा से तुम्हारी अपनी शक्ति को देखकर फिर मैं तुम्हें मार डालूँगा ॥ ४१४० ॥

श्रीराम के हाथ कुम्भकर्ण का मरना

(उसके ऐसा) कहने पर, रघुराम ने क्रुद्ध हो, वेग से कई हज़ार शिलीमुखों को, उस बालि पर चलाये ऐसे बाणों को, देवकंटक पर शीघ्रता से डाला। मानों जलबिंदुओं को पीनेवाला चातक हो, ऐसा झट उन बाण-पंक्तियों को (कुम्भकर्ण) पी गया। अधिकता से उग्र मुद्गर को घुमाते हुए,

कविसि युद्भट गदा कलित हस्तंबु। नवलील देगनेसे ननिल बाणमुन
दानि पाटुनकु गोंदऱु तरुचरुलु। नाना विधंबुल नलुगडल् चनिरि;
अदि मीऱि पाऱंग नलवि गाकुन्न। जिदिसि वानरुलु सच्चिरि दानि
क्रिंद;
नुन्न दापलि चेत नोक पेद्द वृक्ष। मन्नरभोजनुंडवलील बेऱिकि
यिद्रादु लडरंग नेतेर रामु। डैंद्र बाणंबुन नदियुनु द्रुंचे; ४१५०
नाभूरितर बाहु वमरु लुप्पोंग। भूभाग मगल नद्भुतमुगादुनिसि
पेक्कंड्रु कपुलु निर्भिन्नुलै क्रिंद। नोक्कट बडि कूल नुर्विपै बडियै
निटु रेंडु भुजमुलु निनकुलेश्वरुडु। पटु बाणमुल द्रुंप बलभेदिचेत
गडिदि वज्रमुन ऱेक्कलु द्रुंप बडिन। नडगोंडयुनु बोले नलि नार्चि यार्चि
चेतुलु मुक्कुनु जेवुलुनु लेक। याततंबुग विकृताकारुडगुचु
नरुगु देंचुचुनुन्न याकुंभकर्णु। नुरुवडि गनुगोनि युर्वीश्वरुंडु
"दुरमुन नीनीचु द्रुंतु गा!" कनुचु। सरभसंबुन नर्ध चंद्र बाणमुलु
देग निड रेंडु संधिंचि खंडिंचे। जगमुलु मेच्च दच्चरणयुगंबु;

बार-बार वानरपतियों को भगाते हुए, समक्ष आनेवाले इन्द्रारि को देख, मन में परवाह न करके, मानवेश्वर ने उद्भट-गदा-कलित-हस्त को अनिलबाण से सहज ही काट दिया। उस (हाथ) के पतन के कारण कुछ तरुचर नाना प्रकार से चौतरफ चले गए, उससे बच भाग न सक, उसके नीचे दबकर वानर मर गए। शेष (बचे) वामकर से एक बड़े वृक्ष को उस नरभोजन (राक्षस) ने सरलता से उखाड़कर, इन्द्र आदियों के भीत होने पर, (समक्ष) आने पर राम ने ऐंद्र बाण से उसे भी काट दिया, ॥ ४१५० ॥

वह भूरितर-बाहु अमरों के फूलने पर तथा भूभाग के विदीर्ण होने पर अद्भुत रूप से कटकर, अनेकों कपियों के खंड-खंड हो एक साथ गिरने पर, उर्वि (पृथ्वी) पर गिर पड़ा। इस प्रकार दोनों भुजाओं के इनकुलेश्वर के पटुबाणों से कट जाने पर, बलभेदी (इन्द्र) के हाथ कठोर वज्र से पंख काट डाले गए जंगमपर्वत के समान होकर, सिंहनाद करके, हाथ, नाक, कानों के न होने पर, आततरूप से विकृत आकारवाला होते हुए आनेवाले उस कुम्भकर्ण को उर्वीश्वर (राजा-राम) ने झट देखा, (देखकर) यह सोच कि 'युद्ध में इस नीच का वध कर दूंगा' सरभसता (आटोप) से दो अर्द्धचन्द्र बाणों को पूरी तरह संधान कर, उसके चरणयुग्म काट डाले जिसे लोकों ने सराहा। चरणों के कटकर, बाहुओं के कटकर, न सिकुड़कर,

बदमुलु दॆंगियुनु बाहुवुल् दॆंगियु । गुदियक यत्युग्र कोपुडै नडचि
बडबाग्नि चक्रंबु पगिदि नाननमु । गडुनेचिविकृतंबु गार्विचु कॊनुचु
४१६०
बलुविडि भास्करु बट्टॆडु राहु । नलवाटु गैकॊनि यारामु गदिसॆ;
गदिसिन नाकुंभकर्णुनि नोर । बॊंदि लॊनि निष्ठुर भुरि बाणमुल
निनकुलेशरुडेसॆ नॆर्पड नॊक्क । दॊन कोल लिकॊक दॊन जॊन्पु करणि;
घनमैन यायंपगमि नोरु निंड । दनुजुंडु सिंह नादमु सेय राक
येपार विकृतंपु टॆलुगु हुंकृतुलु । जूपुल जंकॆलु सूपुचु वच्चॆ;
वच्चिन ना दैत्यवल्लभु मेन । नच्चुगा दृष्टिंचि यैंद्रास्त्र मेसॆ;
ब्रदर मिम्मॆयि रघुप्रवरुडेयुटयु । नदि घर्म मध्यंदिनादित्युपगिदि
दलपोय ना ब्रह्म दंडंबु रीति । बलितमै निगुडॆडु पवनंबु करणि
नॆड़य लोकमुलॆल्ल निंड नॊंडॊंट । नॆड़ मंट लॊलुकुचु नेपुतो वच्चि
कुंभकर्णुनि ड़ॊम्मु गॊनि युच्चि पाड़ि । कुंभिनि नाटॆ दिक्कुलु म्रोयुचुंड;
४१७०
नंतलो मड़ियुनु नाराघवेंद्रु । डंतकबाण मत्यंत वेगमुन
संधिंचि येसिन सकल दिक्कुलुनु । बंधुरंबुग म्रोय ब्रह्मांड मविय

अत्युग्रकोप से चलकर, (लुढ़कते हुए) बडबाग्नि के चक्र के समान आनन को अतिविजृंभित तथा विकृत करता हुआ, ।। ४१६० ।।

—झट से भास्कर को पकड़नेवाले राहु के समान (वह) राम के निकट पहुँचा । नियराए उस कुम्भकर्ण के मुख में (अपने) तूणीर के निष्ठुर बाणों को इनकुलेश्वर ने इस ढंग से चलाया मानों एक तूणीर के बाणों को दूसरे में डाल रहे हों । उस महान् बाण-समूह से मुख के भर जाने से दनुज सिंहनाद नहीं कर पाया, उत्कर्ष के साथ विकृत स्वर (तथा) हुंकृतियों से, दृष्टियों से भर्त्सना अथवा धमकी अभिव्यक्त करता आया । आने पर, उस दैत्य-वल्लभ के शरीर पर, ठीक ढंग से देखकर, ऐंद्रास्त्र डाल दिया । इस प्रकार रघुप्रवर के प्रदर चलाने पर, वह (बाण) धर्म (ग्रीष्म)-मध्यंदिन-आदित्य के समान, सोचने पर उस ब्रह्मदंड की तरह, प्रबल हो विलसित होनेवाले पवन के समान, शोभा से समस्त लोकों में भरकर, सर्वत्र अरुण ज्वालाओं को उगलते हुए, उत्कर्ष से आकर, कुम्भकर्ण के वक्ष में घुसकर, पार निकलकर, कुंभिनी में गड़ गया जिससे दिशाएँ प्रतिध्वनित हो उठीं ।। ४१७० ।।

इतने में राघवेंद्र ने फिर से आतंक-बाण का अत्यन्त वेग से संधान कर, डालने पर, समस्त दिशाओं के अधिकता से मुखरित होने पर, ब्रह्मांड

ब्रकटंबुगा भूमि पट पट बगुल । सकल भूतंबुल चैतन्य मेंडल
गलयंग शत कोटि काल चक्रमुलु । बलुपेक्कि यौक्कटै पऽतेंचु भंगि
वालिन बडबाग्नि वडि वच्चु करणि । गालकूटंबु मार्गणमैन पगिदि
विच्चलविडि बर्वि वेगंबु मेऽसि । वच्चि याबाणंबु वडिद्रुंचि वैचे
बटु नील गिरि श्रृंग भातितो नुन्न । कुटिल राक्षसु तल घोरंबुगाग;
बुडमिपै ना दैत्यपुंगवु शिरमु । पडक यालंक लोपल गनुपट्टु
पोंडवैन गोपुरंबुलुनु मेडलुनु । बौडि पौडियै रालि पोव दाकुचुनु
जनि महाध्वनि तोड जंतु संततुल । मुनुकौनि चदुपुचु मुनिगे नंबुधिनि;
४१८०

बदि कोटु लगचर पतु लोलि स्रग्ग । नुदधिलो जलचर यूथमुल् चदिय
वसुधपै सगमुनु वनधिलो सगमु । नसुर देहमु गूलै नद्भुतंबडर;
नारवंबुन नब्धुलन्नियु गलगे; । धारुणि वडकें; दिक्तटमुलु वगिलें;
लंकाधिनाथु नुल्लमु व्रय्यलय्यें; ।लंकलो नेल्ल गोलहलंबय्यें;
जगमुलु मोदिंचें; संतोष वार्धि । नगचराधिपु लोललाडि रंदंद;
रविकुलाधीश्वरु रघुरामचन्द्रु । विविध भंगुल सुरल् विनुतिंचि रपुडु;

के विदीर्ण होने पर, प्रकट रूप से भूमि के पट-पट फटने पर, सकलभूतों के चैतन्य के दूर होने पर, शोभा से शतकोटि कालचक्रों के समर्थता से एक बनकर आने के समान, निशित बडवाग्नि के शीघ्र आने के समान, कालकूट के मार्गण (बाण) बनने के समान, विश्रृंखलता से धाकर, वेग से दीप्त हो, आकर, झट पटुनीलगिरिश्रृंग के समान स्थित कुटिल राक्षस के सिर को घोर रूप से काट डाला। उस दैत्यपुंगव का सिर पृथ्वी पर न गिरकर, उस लंका में दीख पड़नेवाले लम्बे गोपुरों, सौधों को टकराकर, चूर-चूर करते जाकर, महाध्वनि के साथ जंतुसंततियों को दबा देते हुए, अंबुधि में डूब गया ॥ ४१८० ॥

असुर की देह अद्भुत रूप से वसुधा पर आधा और वनधि में आधा गिरी जिससे दस करोड़ अगचरपति क्रम से कुचले गए और उदधि का जलचर-यूथ (-समूह) सपाट हो गया। उस रव से सभी अब्धियाँ विलोड़ित हुईं, धारुणी कंपित हुई, दिक्तट फट गए, लंकाधिनाथ का हृदय टूक-टूक हो गया, लंका में सर्वत्र कोलाहल मच गया, जग मुदित हुए, नगचराधिप सर्वत्र संतोषवार्धि में ऊभचूभ हुए, तब सुरों ने रविकुलाधीश्वर रघुरामचन्द्र की विविध प्रकारों से स्तुति की। महान् राम कुम्भकर्ण के मृत होने पर अपने (मन) में मन्दहास के चमक उठने पर, यह सोच कि

घनुडु रामुडु कुंभकर्णु डीलगुटकु । दनलोन जिरुनव्वु दळुकॊत्तुचुंड
"दॆव संघमुलकु दिक्पालकुलकु । भाविप नॆक्कुडी पडिन राक्षसुडु;
इंक लोकमुलकु नॆन्नंडु नॊंडु । शंक ले" दनि मदि संतोष मंदि
यप्पुडु कर मर्थि नाहव लक्ष्मि । नुप्पॊंग गैकॊनि युज्ज्वलुंडय्यॆ ४१९०
गडुनुग्र राहुवु गबळिंचि पिदप । विडिचिन वॆलुगॊंदु विमलार्कु पगिदि
ददनंतरंब यादानव कोटि । मदिलोन नॆव्वग मल्लडि गॊनग
विन्ननै वदनमुल् वॆलवॆल बार । नुन्न रावणु गान नुरुवडि बोयि
"दॆव ! नी तम्मुडु त्रिदशांतकुंडु । वाविरि नगचरावळि नॆल्ल दोलि
दॆसलु भूभागंबु दिवियु दानगुचु । नसम साहस महाहवकेळि व्रालि
नॆलकॊनि दुग्धांबुनिधि मंदराद्रि । कलचि याडॆडु क्रिय गपिकुलांभोधि
निक्कडक्कड नॆसि यिद्रादुलॆल्ल । वॆक्कसपड बोरि विवशुडै तूलि
यंत श्रीरामुनि यधिक बाणाग्नि । नॆंतयु दग्धुडै यिलमीद द्रॆळ्ळॆ"
ननि कुंभकर्णु डय्यनिलोन बडुट । दनुजुलु सॆप्प नादानवेश्वरुडु
तन पाटु निक्क दथ्यंबन्नकरणि । गॊनकॊन्न बलु मूर्छ गुंभिनि वडियॆ;
४२००

'यह गिरा हुआ राक्षस देवसंघों के लिए तथा दिक्पालकों के लिए दुर्जेय रहा है। अब लोकों को किसी प्रकार की आशंका नहीं है।' (ऐसा) मन में मुदित हो, तब अधिक इच्छा से आहवलक्ष्मी के फूल उठने पर, (उसे) ग्रहणकर (ऐसा) उज्ज्वल हुआ, ।। ४१९० ।।

मानों अधिक उग्र राहु के निगलकर, बाद में छोड़ देने पर प्रकाशित होनेवाला विमल-अर्क हो। उसके अनन्तर, वह दानवकोटि मन में अधिक व्यथा से संतप्त होकर, विवर्ण हो, वदनों के कांतिहीन होने पर, रावण के पास शीघ्रगति से जाकर, (बताया कि)— 'हे देव ! तुम्हारा अनुज त्रिदशांतक (देवताओं का वध करनेवाला—कुम्भकर्ण) क्रम से समस्त नगचर-समूह को भगाकर, दिशाओं और भूभाग में स्वयं भरकर, असम-साहस से महाआहवकेलि से विजृंभित हो, स्थिरता से दुग्धांबुनिधि को मन्दराद्रि के आलोडित करने के समान, कपिकुलांबोधि को तितर-बितरकर, इन्द्र आदियों के आश्चर्यचकित होने पर, जूझकर, विवश हो, लड़खड़ाकर, तब श्रीराम की अधिक-बाणाग्नि से दग्ध हो पृथ्वी पर गिर पड़ा।' ऐसा कुम्भकर्ण के उस युद्ध में गिर जाने की बात के दनुजों के कहने पर, वह दानवेश्वर अधिक मूर्छा से कुंभिनी पर गिर पड़ा, मानों यह कह रह हो कि मेरा पतन भी अब तथ्य है ।। ४२०० ।।

नतिकायु डधिक शोकायत्तुडय्यै;। धृति दूलि शोकिंचॆ देवांतकुंडु;
दिक्कु दप्पिन माड्कि द्रिशिरुंडु नोरलॆ; ।दक्कक यानरांतकुडु
स्रान्पडियै;
दनुज वीरुलु महोदर महापार्श्वु। लुनु महाशोक विलुंठितुलैरि !

कुंभकर्णु नि मरणमुनकु रावणुडु शोकिंचुट

बलुमूर्छं नंतट बासि रावणुडु । पलुमारु दम्मुनि बलविंप दॊडगॆ;
"वडि बेंचि राघव-वैरांबुराशि । नॆंडपक येनिक ने तॆप्प गडतु ?
रामलक्ष्मणुलनु रणमुलो जंपॆ । देमॆयि ननि नम्मि येनुन्न चोट
जटुल राघव महाशर-वह्नि-शिखल। निट्टु नेल गूलिते येकांग-वीर !
निद्रारतुंडवु ने डिट्लु दीर्घ । निद्र गैकॊंटॆ निर्णिद्र-विक्रमुड !
कुलिशधारकु नैन गूलनि मेनु । निल नरु व्रेटुन निट्टु गूलवलसॆ;
नंतकुनकु नीव यखिलंबु नॆरुग । नंतकुंडन नुंटिवारूढ़शक्ति; ४२१०
नंतटि नीकु नीयनि मौन निप्पु । डंतकु डय्यॆने यकट ! राघवुडु ?
निद्र मेल्कॊनि नीवु निष्टुर वृत्ति । रुद्रुंडवै तम्मु - रूपडंतनुचु

अतिकाय अधिक शोकाकुल हुआ, धृति को खोकर देवांतक ने शोक किया, दिङ्मूढ़ बननेवाले के समान त्रिशिर विलाप कर उठा, वह नरांतक एकदम स्तंभित हो गया, महोदर महापार्श्व (आदि) दनुजवीर महाशोक से विलुंठित हो गए।

कुम्भकर्ण के मरण पर रावण का शोक करना

अधिक मूर्छा से तब होश में आकर रावण कई बार अनुज का स्मरण कर विलाप करने लगा—"वेग से विजृंभित हो राघव के वैर रूपी अंबुराशि को अब अविलंब किस नौका से पार कर सकूँगा ? मैं विश्वास किए था कि तुम किसी भी प्रकार से राम-लक्ष्मणों को रण में मार डालोगे। (ऐसी स्थिति में) हे एकांगवीर ! चटुल-राघव-महाशर-वह्नि की शिखाओं में इस प्रकार गिर गए न ! हे निर्निद्र विक्रमवाले ! निद्रारत रहनेवाले ! तुमने आज ऐसी दीर्घ निद्रा धारण की है न ! कुलिश-धारा से भी न गिरनेवाला (तुम्हारा) शरीर इस प्रकार नर के आघात से गिर पड़ा न ! समस्त (सृष्टि) जाने, इस प्रकार मैंने आरूढ़शक्ति से समझ रखा था कि तुम अंतक (यम) के लिए भी अंतक हो ॥ ४२१० ॥

—हाय, ऐसे तुम जैसे समर्थ के लिए युद्धभूमि पर अब राघव अंतक बने न ! निद्रा से जागकर तुम निष्ठुर-वृत्ति से रुद्र बनकर, 'हमें नष्ट-भ्रष्ट कर

नद्रि विद्रावणुं डादिगा सुरलु । निद्र पोरॅन्नडु नॅऱपिन भीति;
नीवाजि द्रुंगिति; निर्जरु लिक । नेविधंबुन नन्नु नेल कैकॉंड्रु ?
कुलमॅल्ल रक्षिंचु कॉऱकु नातोड । ज़लमुन बलुमाऱु सद्बुद्धि सॅप्प
विनक विभीषणु वॅस दन्नि 'वॅडलि । चनु' मन्न पापंबु सैचुने नन्नु ?
गडुकॉनि नीवादिगा बुद्धिमंतु । लुडुगक चॅप्पिन युचितोक्तुलेनु
नॅम्मितो विननैति; निन्नु गोल्पडिति; । नम्मिन जयलक्ष्मि नाकेल
कलुगु ?
बलिमि मै ना वलपलि मूपु भंगि । गलहरंगंबुन गडिमि वाटिंतु;
बटु बाहुबल मऱि पडिति वी वाजि; । निटमीद दिक्कु नाकॅव्वरु
गलरु ?" ४२२०
अनि कुंभकर्णुनि नंदंद तलचि । वनरि निट्टूर्पुलु वडि बुच्चि पुच्चि
परिताप मनियॅडि बडबाग्नि गलिगि । पॅरिगॅडु लालयन् फेनुंबु गलिगि
वॅडलु कन्नीरनु वॅल्लुव गलिगि । कडलेनि वगपनु करडुलु गलिगि
प्रकट रोदनमनु रावंबु गलिगि । चकितत्व मनियॅडि चलनंबु गलिगि
मुनुकॉनि शोकसमुद्रुडै पॅद्द । वॅनुबडि यॅंतयु विकलुडै युन्न
यारावणुनि जूचि यप्पु डॉक्किंत । धीरत वाटिंच त्रिशिरुंडु वलिकॅ;

दोगे,' इस भय से अद्रि-विद्रावण (इन्द्र) आदि सुर कभी सोते ही न थे। तुम युद्ध में गिर गए हो, अब निर्जर किस विध (क्योंकर) मेरी परवाह करने लगेंगे ? समस्त कुल की रक्षा करने के लिए मुझसे हठ करके कई बार सद्बुद्धि (नीति वचन) कहने पर, न सुनकर विभीषण को झट लात मारकर 'चले जाओ' कहा था, वह पाप मुझे छोड़ देगा ? (नहीं।) सप्रयत्न तुम और अन्य बुद्धिमानों की अनारत कही उचित-उक्तियों को मैंने प्रेम से सुना नहीं था। तुम्हें खो बैठा हूँ, जिस जयलक्ष्मी पर आशा की थी, वह मुझे क्यों मिलेगी ? बलयुक्त हो मेरे दाहिने स्कंध के समान तुम कलह-रंग (युद्ध-क्षेत्र) में साहस से डटे रहते थे। पटुबाहुबल को खोकर तुम युद्ध में गिर गए, अब आगे मेरे लिए अवलंब (देनेवाले) कौन है?" ॥४२२०॥

—इस प्रकार कुम्भकर्ण का बार-बार स्मरण कर, व्यथित हो, झट लम्बी आहें छोड़-छोड़, परिताप रूपी बड़वाग्नि से युक्त हो, विवर्द्धित होनेवाली लार रूपी फेन से युक्त हो, विनिर्गत होनेवाले आँसू रूपी बाढ़ से युक्त हो, अंतहीन वेदना रूपी तरंगों से युक्त हो, प्रकट रोदन रूपी रव से युक्त हो, चकितत्व रूपी संचालन से युक्त हो, लगकर शोकसमुद्र बन, अधिक शोक से अधिक विकल बने हुए उस रावण को देखकर, तब थोड़ा धैर्य धारणकर

"बदिलंबु दप्पि यिब्भंगि शोकिंचे; । दिदियेमि देव ! नीवितरुल भंगि ?
वनजासनुनि चेत वरमुनु गोन्न । घन शक्ति नीयंदु गलिगि युंडंग
नविरळ मंत्र पूतास्त्रमुल् वज्र । कवचंबु नीयंदु गलिगि युंडंग
नुरुतरगति गल युज्ज्वल रथमु । गरमोप्प नीकुनु गलिगि युंडंग
४२३०
शोकितुरे ! नन्नु जूडु मोक्किकत । नी केदुरेव्वरु निर्जर-वैरि !
वेवेग नवलील वेडलि राघवुनि । नीविक्रमंबुन नेल पै गूल्पु;
मिट शोक मुडुगु मी; वितिय चालु; । नट नेनु बोयि महाजिरंगमुन
नतुल विक्रम कळाहंकार वृत्ति । नति शूरुडितडन नंदंद पेंचि
गरुडुंडु पामुल खंडिचु माड्कि । दरुचरावळि नेल्ल धरणि गूल्चेदनु
सुरपति वृत्रुनि स्रुक्किचु भंगि । हरु डंधकासुरु नणगिंचु करणि
रामुनि द्रुंचेद रणमुलो निप्पु; । डीमेयि बोयेद, नेलमि नन्ननुपु"
मनिन रावणु तोड नप्पुडु कडगि । घन बाहुबलु डतिकायुंडु वलिके:
"नित शोकिपंग नेटिकि नीकु ? । बंतंबुतो दैत्य बलमुल गूडि
येने पोयेद; नंपु मिट; जित्रमुगनु । गाननंबुल नेर्चु कांचिच्चु पगिदि
४२४०

त्रिशिर ने कहा—"यह क्या ! तुम दूसरों के समान धैर्य खोकर इस प्रकार शोक करते हो ? वनजासन से वर-प्राप्त महान् शक्ति के तुम में (तुम्हारे पास) रहने हुए, अविरल-मन्त्र-पूत-अस्त्रों तथा वज्र कवच के तुम्हारे पास रहते हुए, उरुतरगति से युक्त उज्ज्वल रथ के अधिक शोभा से तुम्हारे पास रहते हुए, ।। ४२३० ।।

—शोक करना चाहिए ? (नहीं ।) थोड़ा मेरी ओर देखो । हे निर्जर-वैरी ! तुम्हारा सामना (कर सकने वाला) कौन है ? अधिक शीघ्रता से सरलता से निकल पड़कर, अपने विक्रम से राघव को धरा पर गिरा दो । तुम शोक को छोड़ दो, यही पर्याप्त है । मैं वहाँ जाकर महायुद्ध क्षेत्र में, सर्वत्र विजृंभित हो, 'अतुल-विक्रम-कला-अहंकार-वृत्ति से यह अति शूर है' ऐसा कहलाते हुए, गरुड़ के सर्पों का खंडन करने के समान, समस्त तरुचरावली को धरणी पर गिरा दूंगा । सुरपति के वृत्र को हराने के समान, हर के अंधकासुर का दमन करने की भाँति, अभी रण में राम का खंडन कर दूंगा । इसी प्रकार जाऊँगा, प्रेम से मुझे भेजो ।" (ऐसा) कहने पर, रावण से तब साहस कर, घनबाहुबल वाला अतिकाय बोला—"तुम्हें इतना शोक करना क्यों ? स्पर्धा के साथ दैत्य-सेनाओं के साथ मैं ही जाऊँगा ।

विपुल बाणंबुल विशदंबु गाग । गपुलतो रामलक्ष्मणुल द्रुंचॆदनु"
अनि पल्कुनपुडु नरांतकु गूडि । यनुपम बलुडु देवांतकु डनियॆं;
"ने मिद्दरमु बोयि यीक्षणंबुननॆं । रामलक्ष्मणुल मर्कटुल द्रुंचॆदमु"
अनिन माटलकु दैत्याधीश्वरुंडु । दन शोक मुडिगि मोदंबुन नुंडि
तनयुल तोडनु दद्दयु नॊप्पॆं । ननिमिषगण युक्तुडगु निंद्रु माड्कि;
नव्विधंबुन नुंडि यारावणुंडु । नव्वुचु गॊडुकुल नलुवुर बनिचॆ
"रामलक्ष्मणुल मर्कट सैन्यमुलनु । भीमास्त्रमुल जंपि पॆर्चिरं"डनुचु;
दन तम्मुलनु महोदर महापार्श्वु । लनु वीडुकॊलिपॆ नालमु सेयुटकुनु;
"माकतंबुननॆं यी मनुजाशनुंडु । चॆकॊनि सीतकै श्रीरामु दॊडरॆ"
ननि यरिषड्वर्ग मारावणुनकु । मुनुमुन्न रामु निम्मुल दाक बोवु ४२५०
पगिदि नायार्वुरु ब्रह्मांड भांड । मगलंग नार्चुचु ननि कॆगुनपुडु

अतिकाय महोदरादुलु युद्धमुनकु वॆडलुट

भूरि शारद घनस्फुरणंबु गलिगि । यैरावतेभंबु नंशंबु गलिगि

अब भेज दो। विचित्र रूप से काननों को जला देनेवाले दावानल के समान, ।। ४२४० ।।

—विपुल बाणों से विशद रूप से, कपियों के साथ राम-लक्ष्मणों का खंडन कर दूँगा। ऐसा कहते समय नरांतक के साथ मिलकर अनुपम बल वाले देवांतक ने कहा—"हम दोनों जाकर इसी क्षण राम-लक्ष्मणों को (और) मर्कटों का खंडन कर देंगे।" ऐसी बातों पर दैत्याधीश्वर अपने शोक को छोड़कर, मोद से रहकर, तनयों के साथ, अनिमिषगणयुक्त इन्द्र के समान अधिक शोभित हुआ। ऐसा रहकर उस रावण ने हँसते हुए (प्रसन्नता से) चार पुत्रों को यह कहते भेजा कि "राम-लक्ष्मणों को तथा मर्कट-सेनाओं को भीम-अस्त्रों से मार डालकर, विजृंभित होकर आओ।" अपने अनुजों को तथा महोदर, महापार्श्वों को युद्ध करने के लिए बिदा कर दिया। "हमारे कारण ही यह मनुजाशन (नरभोजी रावण) सप्रयत्न सीता के लिए श्रीराम का सामना कर रहा है," मानों यह कहते हुए अरिषड्वर्ग उस रावण से पहले ही राम के पास प्रेम से जा रहा हो, ।। ४२५० ।।

—इस प्रकार वे छः (राक्षस), ब्रह्मांड-भांड विदीर्ण हो जाए, ऐसा सिंहनाद करते हुए, युद्ध के लिए निकल पड़े।

अतिकाय, महोदर आदि का युद्ध के लिए निकल पड़ना

भूरि-शारद (शरत्कालीन) घन की समता से युक्त हो, ऐरावत-इभ

तनरारुचुन्न सुदर्शनेभंबु । निनुडस्त शिखरिपै नॆक्किन करणि
नॆक्कि महोदरु डेपारि नडचॆ; । दक्कक निशितायुधंबुलु वॆलुग
बटुजव-सत्त्व प्रभावमुल् गलिगि । चटुलंबुलैन यश्वंबुल बून्चि
यॆसगु चापंबुनु निंद्र चापंबु । पसमीऱ, सूर्युनि भंगि वॆलुंगु
नरदंबु मीद नीलाभ्रंबु बोलि । तिरमैन वेड्कतो द्रिशिरुंडु वॆडलॆ;
वितत धनुर्वेद विद्याढ्युडैन । यतिकायुडुनु नप्पुडधिक तेजमुन
शरचाप खड्गादि शस्त्रास्त्र समिति । गरमॊप्पु सूर्य प्रकाशमै वॆलुग
दनरारु कनकरथं बॆक्कि वॆडलॆ । घन भूषण द्युति गनकाद्रि यगुचु
४२६०
सुखर घोटक स्फुरण जॆन्नॊंदि । युरुभूषणप्रभ नुज्ज्वलंबैन
यवदात हयमु नरांतकुंडॆक्कि । प्रविमल तेजो विभासितुंडगुचु
शक्ति नुद्भट बाहु शक्ति मै दाल्चि । शक्ति पाणियु बोलि सन्नुति
वॆडलॆ;
दीपित गद दाल्चि देवांतकुंडु । रूपिप विष्णुनि रूपुन वॆडलॆ;
गुरुगदापाणियै गुह्यकेश्वरुनि । परुसुन नट महापार्श्वुंडु वॆडलॆ;
गालचक्रंबुल गति नुज्ज्वलंबु । लै लील बॆक्कैन यरदमुल् वॆडलॆ;

(हाथी) के अंश से युक्त हो शोभित होनेवाले सुदर्शन-(नामक) इभ (हाथी) पर, इन (सूर्य) के अस्तशिखरी पर आरूढ़ होने के समान, आरूढ़ होकर महोदर उत्कर्ष के साथ चल पड़ा। विलसित निशित आयुधों के प्रकाशित होने पर, पटु-जव-सत्त्व-प्रभाओं से युक्त, चटुल अश्वों से जुते हुए, शोभित चाप (धनुष) के इन्द्रचाप से अधिक शोभित होने पर, सूर्य के समान प्रकाशमान रथ पर नीलाभ्र के समान, स्थिर उत्साह से त्रिशिर निकल पड़ा। वितत-धनुर्वेद-विद्या में आढ्य बना अतिकाय तब अधिक तेज से, शर-चाप-खड्ग आदि शस्त्रास्त्र-समिति (समूह) से, अधिक शोभा से सूर्यप्रकाश की भाँति प्रकाशित और शोभित कनकरथ पर आरूढ़ हो, घनभूषणों की द्युति से कनकाद्रि (सम) होते हुए, चल पड़ा, ।। ४२६० ।। —सुरवरों के घोटकों के सम शोभायमान हो, उरुभूषण-प्रभा से उज्ज्वल बने अवदात (निर्मल, श्वेत)-हय पर आरूढ़ हो, नरांतक प्रविमल तेजोभासित होते हुए, शक्तिपूर्वक उद्भट बाहुशक्ति को धारणकर, शक्तिपाणि (कुमारस्वामी) के समान सराहनीय ढंग से निकल पड़ा। दीपित गदा को धारणकर देवांतक विष्णु के रूप से उपमित होते हुए निकल पड़ा। गुरु-गदा-पाणि हो गुह्यकेश्वर (कुबेर) की पुरुषता से तब महापार्श्व रवाना हुआ। कालचक्रों के समान उज्ज्वल बनकर लीला से अनेक रथ चल

गॊंडल वडुवुन गोटान कोट्लु । गंडु मीऱिन मदगर्वंबु मिगुल
दंडिमै वॆडलॆ नुद्दंडत हस्त । दंडंबु लॊप्प वेदंड संघमुलु;
हेषारवंबुल नॆल्ल दिक्कुलनु । घोषिंप जेयुचु गुऱ्ऱमुल् वॆडलॆ;
गालकिंकर समाकारंबु लमर । गालुबलंबु लुग्रत नेचि वॆडलॆ; ४२७०

जतुरंग बलमु ली चंदंबु नॊंदि । यतुलितंबगुटयु नप्पुडु नडुम
ब्रळयकालार्कुल भंगि नॆंतयुनु । वॆलुगॊंदि रादैत्य वीरु लार्वुरुनु;
नति शुभ्रमगु शरदभ्रंबु लॊप्पु । गति वारि पुंडरीकंबु लॊप्पारॆ;
“गडिमि मै गॆलुतुमु; कादेनि जत्तु;। मुडुग मॆब्भंगि रणोत्साह” मनुचु
नडचिरि कलनिकि नाना विधमुल। नॆडपक पंतंबु लिच्चुचु वार;
लप्पु डॊंडॊरुवुल याह्वानमुलनु । जॆप्प जोद्यंबैन सिंहनादमुल
रथघोषमुलनु दुरंग हेषलनु । बृथुल दंतावळ बृंहितंबुलनु
गर मुग्रमुगु पदघटन ध्वनुल । निरुपम ध्वज किंकिणीनिस्वनमुल
बटह भेरी शंख भयदरावमुल । बटुतर निस्साण भांकारमुलनु
दिक्कुलु घूर्णिल्लॆ; दिवि पॆल्लगिल्लॆ;। जुक्कलु डुल्लॆ; वासुकि यॊड्डुगिल्लॆ ४२८०

पड़े। पर्वतों के समान करोड़-करोड़ की संख्या में मदगर्व के उत्कर्ष से, उद्दंड-हस्तदंडों (सूँडों) से सुशोभित हो अधिक संख्या में वेदंड (हाथी) निकल पड़े। हेषारवों से समस्त दिशाओं को प्रतिध्वनित करते हुए अश्व निकल पड़े। कालकिंकर (यमदूतों) के सम आकार से शोभित हो पैदल सेना उग्रता से विजृंभित हो निकल पड़ी ॥ ४२७० ॥

—चतुरंग बल के इस प्रकार अतुलित होने पर तब बीच-बीच में प्रलय-काल के अर्क की भाँति वे छः दैत्यवीर अधिक प्रकाशित हुए। अतिशुभ्र शरदभ्रों (शरत्-मेघों) की शोभा के समान उनके पुंडरीक (छत्र) शोभित हुए। 'साहस से युक्त हो जीत लेंगे, नहीं तो मर जाएँगे। किसी भी प्रकार रणोत्साह को नहीं छोड़ेंगे' (यह) कहते हुए, वे लोग युद्धभूमि की ओर, नाना प्रकारों की प्रतिज्ञाएँ करते हुए चल पड़े। तब दोनों (पक्षवालों) के आह्वानों, विचित्र सिंहनादों, रथघोषों, तुरंग हेषाओं, पृथुल-दंतावलियों के बृंहितों, अधिक उग्र बने पदघट्टन की ध्वनियों, निरुपम ध्वजाओं के किंकणी-स्वनों, पटह-भेरी-शंख के भयद-रवों, पटुतर-निस्साणों के भांकारों के कारण दिशाएं घूर्णित हुईं, दिवि (आकाश) उखड़ गया, तारे टूट गिरे, वासुकि (एक ओर) झुक गया, ॥ ४२८० ॥

मेरुवु गंपिचॆं; मेदिनि वडकॆं: । भार मोवँक दिगिभमुलु सलिचॆं;
नट्टु दानवानीक माकोट वॆडल । बट्टु भयंकर वृत्ति ब्लवगवल्लभुलु
भूनभोंतरमु लास्फोटन ध्वनुलु । पूनि यॊक्कट निंड भूरि सत्वमुल
दलकॊनि गिरुलुनु दरुवुलु वैचि । चॆलगिंचि रप्पुडु सिंहनादमुलु;
च्रलमुन दैत्युलु चटुल बाणमुलु । बलुविडि गुरिसिरि प्लवगुल मीद;
नसुरावळिकि मुन्न याकपिवरुलु । नसुरुल जंपंग नडरि पॆल्लार्चि
कपुलकु मुन्न राक्षसुलुग्र वृत्ति । गपुल जंपुद मनि कडक वाटिंचि
यसमुन जलमु पॆंपार नॊंडॊरुल । वसुमति पै बडवैतुरु किनुक;
नसुरुल चेति शास्त्रास्त्रंबु लॊडिसि । वॆस बुच्चि पॆळ्ळनविरुतुरु कपुलु;
गपिकोटि चेति वृक्षंबुलु गिरुलु । गुपितुलै विरुतुरु क्रूर दानवुलु; ४२९०
गपुल काळ्ळनु बट्टि कडगि राक्षसुलु। कपुल तोडनॆ महोग्रमुग व्रेयुदुरु;
असुरुल कडकाळु ललमि वानरुलु । नसुरुल तोडन यडुतुरु बॆट्टु;
अट्टु पोरि जर्जरितांगुलै नेल । गुटिल दैत्युलु गपि कोट्टुलु द्रॆळ्ळि
दुरमुलो बडियु नॆत्तुरुलु ग्रक्कुचुनु । बॊरि बॊरि मूर्छलु पॊंदि; रंतटनु
दॆलिसि वानरुलुनु देव शात्रवुलु । गलिसि कय्यमु सेयगा नंदु गपुलु

—मेरु कंपित हो गया, मेदिनी काँप उठी, भार को सह न सक दिगिभ (दिग्गज) संचलित हुए। इस प्रकार दानवानीक के उस दुर्ग से निकलने पर, पटु-भयंकर-वृत्ति से प्लवग-वल्लभ (वानर-नायक) आस्फोटन (आस्फालन) की ध्वनियों से भू-नभ के अन्तर को एकदम भर देते हुए, भूरि सत्त्वों से, लगकर, गिरि और तरु फेंककर, सिंहनाद करते हुए विजृंभित हुए। हठ से दैत्यों ने बारबार प्लवगों पर चटुल बाण बरसाए। असुरावली से ही उन कपिवरों के, असुरों को मारने के लिए उत्कर्ष से अधिक सिंहनाद करने पर, कपियों से पहले ही राक्षसों ने उग्रवृत्ति से कपियों को मार डालने के लिए साहस धारण किया। दर्प से और हठ के विवर्द्धित होने पर क्रोध से एक दूसरे को वसुमति (ज़मीन) पर गिरा देते। असुरों के हाथ के शस्त्र तथा अस्त्रों को झट छीन-पकड़कर, तोड़ देते। कपिकोटि के हाथ के वृक्ष और गिरियों को कुपित हो क्रूर दानव तोड़ डालते ॥ ४२९०॥

कपियों को चरणों से पकड़कर, कपियों के साथ ही महोग्रता से टकराकर फेंक देते। असुरों को चरणों से दबा-पकड़कर, भीकरता से राक्षसों को दबा डालते। ऐसा जूझकर जर्जरित शरीर वाले होते हुए, कुटिल दैत्य और कपि-समूह ज़मीन पर गिर पड़े। युद्ध में गिरकर, रक्त उगलते हुए, बार-बार मूर्छित हुए। तब होश में आकर (पुनः) वानरों

दानवुतो नॆत्ति दानवु व्रेसि । येनुगु तो नॆत्ति येनुगु व्रेसि
तुरगंबुतो नॆत्ति तुरगंबु व्रेसि । यरदंबु तो नॆत्ति यरदंबु व्रेसि
यरदंबु गॊनि करि नदरंट व्रेसि । करि नॆत्तिकॊनि तुरंगमु बडव्रेसि
तुरगंबु नॆत्ति दैत्युनि डॊल्ल नेसि । युरुसत्त्वुलै पेर्चि युग्रत नार्चि
तरुचर वीरुलु दर्पंबु मॆरसि । पॊरि बॊरि निब्भंगि बॊरि
वुच्चुटयुनु ४३००
रयमुन गोपंबु रंजिल्ल दैत्य । चयमुनु वानर समितिपै गविसि
प्रदरंबु लेसि चक्रंबुल नेसि । गदल नॊप्पिंचि खड्गंबुल द्रुंचि
भिंडिवालम्मुल बीचम्मु लणचि । खंडिचि सुरियल गंडलु बरुलु
गुंत शूलम्मुल ग्रुच्चि वानरुल । नितलितलु सेसि यॆसग नार्चुटयु
नंतट बोवक यगचरु लार्चि । यंतंत कडरि दैत्यावळि गिट्टि
तरु षंडमुलु बर्वत प्रकरमुलु । तुरुवडि नॆत्ति यत्युग्रत वैव
बडियॆडि दैत्युलु बाऱु दैत्युलुनु । नुडुगक यंदंद यॊरलु .दैत्युलुनु
गलयंग नॆत्तुरु ग्रक्कु दैत्युलुनु । बॊलुपरि नेलपै बॊरलु दैत्युलुनु
नंदंद यट्टलै याडु दैत्युलुन । स्रंदि प्रत्यर्थुल मऱचु दैत्युलुनुः
नॆक्किन रौतुलु निट्टु नट्टु पडग । लॆक्क सेयक कराळिचु गुऱ्ऱमुलु
४३१०

और देव-शत्रुओं ने टकराकर युद्ध किया। उसमें कपियों ने दानव को उठाकर दानव पर फेंककर, हाथी को उठाकर हाथी पर फेंककर, तुरग (अश्व) को उठाकर तुरग पर मारकर, रथ उठाकर रथ पर डालकर, रथ को उठाकर करि को मर्मांतक रूप से मारकर, करि को उठाकर तुरंग को गिराकर, तुरंग को उठाकर दैत्य को लुढ़काकर, (इस तरह) उरुसत्त्व वाले हो विजृंभित हो, उग्रता से सिंहनाद कर, तरुचर वीर दर्प से दीप्त हो, बार-बार इस प्रकार मार डालने पर, ।। ४३०० ।।

—वेग से, क्रोध के रंजित होने पर, दैत्यसमूह ने भी, वानर समिति पर टूट पड़कर, प्रदर डालकर, चक्र डालकर, गदाओं से पीड़ित कर, खड्गों से काटकर, भिंडिवालों से छक्के छुड़ाकर, छुरियों से खंडित कर, स्नायुओं और पसलियों में बछियाँ और शूल चुभोकर, वानरों को इस प्रकार सता-सताकर, विजृंभित हो, सिंहनाद किया। उतने से न जाने देकर अगचरों ने सिंहनाद कर, अधिकाधिक विवर्द्धित हो, दैत्यावली के पास पहुँच तरुषण्ड (वृक्षसमूह), पर्वतप्रकरों को झट से उठाकर अति-उग्रता से डालने पर, गिरनेवाले दैत्यों, भाग निकलनेवाले दैत्यों, अविलंब जहाँ-तहाँ चीख-पुकारनेवाले दैत्यों, सर्वत्र रक्त उगलनेवाले दैत्यों, शोभा खोकर ज़मीन पर लोटनेवाले दैत्यों, जहाँ-तहाँ

बक्कॆर लूडंग बऱचु गुऱ्ऱमुलु । दिक्कुलु सुडिवड दिरुगु गुऱ्ऱमुलु
गीलॆंडलिन क्रिय गॆडयु गुऱ्ऱमुलु । गूलि काळ्ळनु दन्निकॊनॆंडु गुऱ्ऱमुलु
विकलंबुलै नोरु विच्चु गुऱ्ऱमुलु । नीकरूपु नेपंडकुंडु गुऱ्ऱमुलु;
गरमुलु दुनिसिन गंपिचु करुलु । वैरवार गौम्मुलु विऱिगिन करुलु
मरलि लंककु॰वेंस मगिडेंडु करुलु । दिरमेदि दिर्दिर दिरिगॆंडु करुलु
गौंडल कैवडि गूलॆंडि करुलु । गंडतुंडंबुलै क्रालॆंडि करुलु;
मदमुलु दिगजाऱि म्रग्गॆंडु करुलु । सदमदमै नेल जदिसिन करुलु;
रथिक सारथि रथ्य रहित रथमुलु । ब्रथितंबुगा भुवि बडु रथंबुलुनु
दोरगंड्लुग बड्ड दुनियु रथमुलु । नारग दल क्रिंदु लगु रथंबुलुनु
गीळ्ळॆल्ल दप्पि म्रग्गिन रथंबुलुनु । द्राळ्ळॆल्ल द्रैव्व बौंदनि रथंबुलुनु
४३२०

नालील नुग्गुनूचगु रथंबुलुनु । नालंबुलो दरुचगुटयु जूचि
सुरखेचरादिकस्तोमंबु 'चोद्य । तर' मनि यात्मल दद्दयु मैंच्च
नप्पुडु किनिसि नरांतकुंडार्पु । लौप्प निजाश्वंबु नुरुवडि बऱपि

रुंड बन हिलनेवाले दैत्यों, मरकर प्रत्यर्थियों (शत्रुओं) को भूलनेवाले दैत्यों (तथा) आरूढ़ अश्वारोहियों के इधर-उधर गिरने पर, ॥ ४३१० ॥

—(उनकी) परवाह किए बिना हिनहिनाने वाले घोड़ों, झूल के ढीले हो जाने पर भागनेवाले घोड़ों, दिशाओं के चक्कर खाने पर (स्वयं चकराकर) घूमनेवाले घोड़ों, अंगों की संधियों (जोड़ों) के उखड़ जाने पर गिरनेवाले घोड़ों, गिरकर पैरों से छटपटाने वाले घोड़ों, विकल हो मुँह खोल देनेवाले घोड़ों, रूप का पता ही न लगनेवाले घोड़ों, (तथा) सूँडों के कट जाने पर कंपित होनेवाले हाथियों, शोभायमान दाँतों के॰ टूटे हाथियों, लौटकर झट लंका की ओर जानेवाले हाथियों, स्थिरता खोकर झट चक्कर खानेवाले हाथियों, पर्वतों के समान गिरनेवाले हाथियों, खण्ड-खण्ड हो गिरनेवाले हाथियों, मद बहाते नष्ट होनेवाले हाथियों, तहस-नहस हो मिट्टी में मिलनेवाले हाथियों, (तथा) रथिक, सारथी, रथ्य रहित रथों, प्रथित (यशोयुक्त) रूप से ज़मीन पर गिरनेवाले रथों, एक ओर उलटकर गिरनेवाले रथों, पूरी तरह उलट जानेवाले रथों, संधियों (जोड़ों) के टूट जाने से गिरनेवाले रथों, रस्सों के कट जाने से अस्तव्यस्त बने रथों, ॥ ४३२० ॥

—इस प्रकार चूर-चूर बने रथों (आदि के) युद्धभूमि में प्रचुर मात्रा में होने पर, देखकर, सुर-खेचर-आदि का स्तोम (समूह) 'आश्चर्यंतर है', कहकर मन में अत्यन्त चकित हुआ। तब क्रुद्ध हो नरांतक ने सिंहनादों के शोभित होने पर, अपने अश्व को शीघ्र दौड़ाकर, असुरों को 'मत डरो' कहते (धैर्य

यसुरुल 'नोडकुं' डनुचु वानरुल । नसमुन गिट्टि बिट्टदलिंचि ताकि
नॆलकॊनि यॊक्कॊक्क निमिषंबुलोन । निल गूल्चॆ नेडु नूऱेसि वानरुल
सुरपति शौर्यंबु सॊंपारुचुंड । गिरुल खंडिंचि येगिन त्रोव वोलॆ
दरुचर कोट्टुलु दऱचुगा बडुट । निरवॊंद वाडु वोयिन त्रोव यॊप्पॆ;
नेवानरुंडैन नेचि कोपमुन । भावंबुलो दन्नु बरिमार्प दलचु
नंतरंगमु जॊच्चिनट्टि चंदमुन । नंतकु मुन्न ता नतनि गीटडुचु;
ने कपियैन दन्नॆदुरंग दलचि । भीकरुंडै गिरि बॆऱुकंग जूचु ४३३०
नंतलोननॆ चेरि यधिक रौद्रमुन । नंतकु मुन्न ताननतनि गीटडुचु;
ने वलीमुखुडैन ने पग्गलिंचि । ताबॆट्टु गाग बादप मॆत्त दलचु
नंतंत डग्गऱि यधिक शौर्यमुन । नंतकु मुन्न ताननतनि गीटडुचु;
नंतट बोवक हयमु बैबऱपि । यंतंत बॆनु गुंपुलैन वानरुल
प्रेवुलु दॊब्बलु बॆल्लुगा नुरुमु । गा विविधमुलैन गतुल द्रॊक्किंचि
गुंडॆलु वगुलंग गॊलॆम्मु लगल । नॊंडॊंट दाकिंचि युर्वर गूल्चि
नलुकतो ब्रळय कालानिलुपगिदि । दलकॊनि यॆंदुनु दानयै निंडि
वानर-वर-सैन्य-वनमुलु विऱुग । मान कुग्रत बलुमाऱु जर्रिचॆ;

देते हुए) वानरों पर दर्प से आक्रमण कर, भीकरता से धमकाकर, जूझकर, स्थिरता से एक-एक निमिष (क्षण) में सात सौ वानरों को ज़मीन पर गिराया। सुरपति (इन्द्र) का शौर्य से शोभित होकर, गिरियों को खंडित करते मार्ग बनाते जाने के समान, वह (नरांतक) जिस मार्ग से जाता था, तरुचरकोटियों के प्रचुर मात्रा से गिरने पर (वह मार्ग इन्द्र के गए मार्ग के समान) शोभित होता। कोई वानर विजृंभित हो क्रोध से मन में अपने वध करने की बात सोचता, (ऐसे वानर के) अन्तरंग में प्रवेश करने के समान (मन की बात जानने के समान) उसे पहले ही मार डालता। कोई कपि सामना करने की सोच, भीकर हो गिरि उखाड़ने की सोचता, ॥ ४३३० ॥

—उतने में ही (उसके पास) पहुँच अधिक रौद्रभाव से, स्वयं उसे मार डालता। कोई वलीमुख अधिक उत्कर्ष से, पादप उठाना चाहता हो तो तभी (उसके पास) पहुँच अधिक शौर्य से उसे स्वयं मार डालता। उतने से न जाने देकर, घोड़े को (उनपर) चलाकर, झुंड के झुंड बने हुए वानरों पर, विविधि गतियों से चलाकर, आँत और स्नायु को अधिकता से नष्ट करता, एक को दूसरे से टकराकर जिससे वक्ष फट जाए और अस्थिपंजर टूक-टूक हो जाए, ज़मीन पर डाल देता, क्रोध से प्रलयकाल के अनिल के समान (उसने) सप्रयत्न सर्वत्र स्वयं व्याप्त होकर, वानर-वर-सैन्यरूपी वनों

वानि शौर्यंबुनु वानि शक्तियुनु । वानरुलेल्ल नोर्वंग लेक यपुडु
विकलुलै युंडिरि विस्मितु लगुचु; । सकल देवतलुनु जलियिंचि रपुडु
४३४०
पटु भीति बोंदिन प्लवग सैन्यमुल । नट्टु वेचु चुन्न नरांतकु जूचि
यनयंबु गोपिंचि यंबुद पटल । मुन नुंडु सूर्युंडु मोनसिन माड्कि
गपिराज तनयु डंगद कुमारुंडु । कपिसेन लोनुंडि कडगि येतेंचि

अंगद, नरांतकुल द्वंद्वयुद्धमु

“योरि नरांतक ! युग्रत कपुल । नीरसंबुन बेंचि येल चंपेदवु ?
इंत सेसिननु नीविट बंट वैतें ? । यंत शूरुडवैन ननि दाकु नन्नु”
नन विनि नव्वि नरांतकुं “डोरि । वनचर ! नीवेंतवाडवु नाकु ?
नखिल दिक्पालुर नदटडंचितिनि; । निखिल देवतल मन्निप केंचितिनि
नट्टि नातोड नीवा येंदिरेंदवु ? । पट्टि चट्टलु चीरि पारु वैचेदनु;
नरयंग मुकु पच्च लारवु नेडु । बिरुदु पिच्चुकलतो बेनग जूचेदवु;
ननु जूतुगा” कन्न नगुचु नंगदुडु । “दनुज दशग्रीव दर्पंबु मान्पि४३५०

को गिरा देते हुए दुर्निवार रूप से उग्रता से कई बार उसने विहार किया। उसके शौर्य तथा उसकी शक्ति को सह न सक तब सभी वानर विकल हो, विस्मित होते रहे, तब सकल देवता विचलित हो गए, ।। ४३४० ।।
—अधिक भीत बने प्लवग सेनाओं को उस प्रकार सतानेवाले नरांतक को देख, अनारत क्रुद्ध हो, अंबुद-पटल (मेघसमूह) में रहनेवाले सूर्य के विनिर्गत होने के समान, कपिराजतनय अंगदकुमार कपिसेना के भीतर से सप्रयत्न निकल पड़ा। (और कहा)—

अंगद, नरांतक का द्वन्द्व युद्ध

“रे नरांतक ! उग्रता से कपियों को इस प्रकार विजृंभित हो क्यों मार डालते हो ? इतना करने पर भी यहाँ (महा) शूर बन सके क्या ? यदि इतने (महा) शूर हो तो युद्ध में मेरा सामना करो।” (ऐसा) कहने पर सुनकर, नरांतक ने (कहा)—“रे वनचर ! तुम मेरे लिए कितने हो (तुम्हारी हस्ती ही क्या है) ? अखिल दिक्पालकों के दर्प का दमन किया, निखिल देवताओं को क्षमा न कर, सताया है। ऐसे मेरा तुम सामना कर सकते हो ? पकड़कर छक्के छुड़ाकर फेंक दूँगा। सोचने पर दुधमुँहे हो, आज बिरुद वाले (प्रतापी) योद्धाओं से जूझना चाहते हो; मुझे देख लेना।” (ऐसा) कहने पर हँसते हुए अंगद ने (कहा)—“हे दनुज ! दशग्रीव के दर्प का दमनकर, ।। ४३५० ।।

पूनि याखर सूति बॊरि मालिच पिदप । ने नेगुनपुडु नी वॆऱुगवे नन्नु ?"
ननुडु दानवुडु कालाहि चंदमुन । मुनुकॊनि यार्पुलु म्रोयंग वच्चि
घनतर विस्फुलिंगंबुलु सॆदर । ननयंबु दन शक्ति नंगदु वैचॆ;
गरुडुनि वक्त्रंबु गदिसि नंतटनॆ । परिसिन काल सर्पंबुनु बोलॆ
नदि वज्र निभमैन यतनि वक्षंबु । गदिसिन यंतने खंडंबु लय्यॆ;
वज्रायुधंबुन वरशैल मडुचु । वज्रि चंदंबुन वालिनंदनुडु
नड़चेत वानि हयंबु मस्तकमु । पड़ियलु वाड़ निर्भर वृत्ति नेसॆ;
जॆच्चॆर व्रेयंग जेड्पडि नोरु । विच्चुचु नालुक वॆडल बॆट्टुचुनु
वॆरवड़ि काळ्ळनु वॆस दन्निकॊनुचु । धरमीद बडि चच्चॆ दत्तुरंगंबु;
नट्टु तुरंगमु वड्डु नन्नरांतकुंडु । चटुल कोपानलज्वलिताक्षुडगुचु ४३६०
'गॆडयु' मंचुनु बिडिकिट मस्तकंबु । बॊडिचि यंगदु मूर्छ बॊंदिचुटयुनु
नंतनॆ तॆलिसि "नरांतक ! नीकु । निंत शक्तियु गलदे" यनि पेर्चि
पॆरिगियु बिडुगैन पिडिकिट वानि । वर शैल निभमैन वक्षंबु वॊडिचॆ;
बॊडिचिन नॆत्तुरु पॊरि बॊरि दॊरुग । बॊडि पॊडियै धर बुनुकलु सॆदर

—सप्रयत्न उस खरसूत का वध करके मेरे (लौट) जाते समय, मुझे नहीं जाना था ?" (ऐसा) कहने पर दानव ने कालाहि के समान, आगे बढ़कर सिंहनाद करते हुए आकर, घनतर-विस्फुलिंगों को बिखेरनेवाली अपनी शक्ति को अंगद पर फेंक दिया। गरुड़ के वक्त्र (मुख) का स्पर्श होते ही, दमित होनेवाले कालसर्प के समान, वह (शक्ति) वज्रसमान उसके वक्ष का स्पर्श करते ही खण्ड-खण्ड हो गयी। वज्रायुध से वरशैल का दमन करने वाले वज्रि (इन्द्र) की भाँति वालिनन्दन ने हथेली से निर्भर (दुर्भर)-वृत्ति से, उसके (नरांतक के) हय के मस्तक पर दे मारा जिससे वह फूट गया, (और) वह अश्व झट मार खाकर, नष्ट हो, मुँह खोले, जीभ बाहर करते, शोभा खोकर, पैरों से छटपटाते हुए, धरा पर गिरकर मर गया। ऐसा तुरंग के गिरने पर वह नरांतक ने चटुल-कोपानल से ज्वलित अक्ष (नेत्र) वाला होता हुआ, ।। ४३६० ।।

—'मर जा' कहकर मुट्ठी से मस्तक पर प्रहार कर, अंगद को मूर्च्छित कर दिया। उतने में ही (अतिशीघ्र) होश में आकर 'रे नरांतक ! तुम्हारी इतनी भी शक्ति है ?' कह, विजृंभित हो, अशनिरूपी मुट्ठी से उसके (नरांतक के) वर-शैल-निभ (-समान) वक्ष पर प्रहार किया। प्रहार करने पर बार-बार रक्त के बहने पर, हड्डियों के चूर-चूर हो धरा पर गिरने पर, अति घोर संगर-भूमि में गिरकर नरांतक ने तब प्राण छोड़

गडु घोरमैन संगरभूमि लोन । बडि नरांतकुडंत ब्राणमुल् विडिचॆ;
नार्चिरि देवत लार्मिट नुंडि; । यार्चिरि वानरु लवनीतलमुन;

देवतंक त्रिशिरु लंगदुनितो दलपडुट

दनुजाधिनाथुनि तनयुनि पाटु । गनि महोदरु डुग्रकरि बुरि कॊल्पॆ
ननुजुंडु वडुटकु नडलुचु, वालि । तनयु डेचुटकु नुद्दंड कोपंबु
मुप्पिरि गॊनग निम्मुल बरिघम्मु । द्रिप्पुचु बऱतॆंचॆ देवांतकुंडु;
रवि मंडलमु बोलु रथ मुग्र भंगि । नवनि गंपिप नुद्धति दॊलुकॊनुचु
४३७०
द्रिशिरस्कुडगुचु नग्नि तॆऱगुन मॆऱसि । त्रिशिरुंडु गविसॆ नुद्दीप्त
कोपमुन
नप्पु डंगदुडु शाखायतंबगुचु । नॊप्पॆंडु नॊकवृक्ष मुरुवडि बॆऱकि
यडरंग नार्चि देवांतकु वैव । नडुमनॆ त्रिशिरुंडु नऱुमुगा नेसॆ;
नॆसिन मिंटिकि नॆगसि यंगदुडु । गासिल्लि शैल वृक्षंबुलु मिगुल
नर्डरिप नपुडु देवांतक त्रिशिरु । लॆंडबडगा द्रुंचि यॆंतयु मिंचि
पर्गिचि रतनिपै बट्टुतोमरंबु । लरुदारगा जेरि यत्युदग्रतनु;

दिए। आकाश पर से देवताओं ने सिंहनाद किए (और) अवनीतल पर वानरों ने सिंहनाद किए।

देवांतक और त्रिशिर का अंगद से जूझ पड़ना

दनुजाधिनाथ के पुत्र के पतन को देखकर, महोदर ने उग्रकरि को भड़काया। अनुज के गिरने पर व्याकुल होते हुए, बालितनय के विजृंभित होने पर उद्दंडकोप के तिगुना होने पर, शोभा से परिघा घुमाते हुए देवांतक आया। रविमंडल-समरथ को उग्रगति से, उद्धत रूप से ऐसे चलाते हुए कि अवनि कंपित हो जाए, ॥ ४३७० ॥

—त्रिशिर वाले अग्नि की तरह प्रकाशित हो, त्रिशिर ने उद्दीप्त कोप से आक्रमण किया। तब अंगद ने शाखायुत हो शोभित होनेवाले एक वृक्ष को अतिवेग से उखाड़कर, उत्कर्ष से सिंहनादकर, देवांतक पर फेंक दिया (तो उसे) त्रिशिर ने बीच में ही चूरकर दिया। करने पर आकाश पर उड़कर, अंगद के व्याकुल हो शैल-वृक्षों को प्रचुरता से फेंक देने पर, तब देवांतक और त्रिशिर ने क्रम से उन्हें काट देकर, उत्कृष्ट हो, उस पर अतिशयता से, अति उदग्रता से, पट्टु तोमर चलाए। उतने से न जाकर (संतुष्ट न होकर) सिंहनाद करते हुए और विचित्र रूप से (अंगद को)

नंतट बोवक यार्चुचु मड़ियु । वितगा वोंदुवुचु वेगंबु मेड़सि
यावालिसुतु मीद नधिक रोषमुन । देवांतकुडु वेंचें दीव्रत बरिघ;
दरमिडि सिंहनादंबु सेयुचुनु । देरलक शर वृष्टि द्रिशिरुंडु गुरिसें;
नुरुदंति गोलिपि महोदरुंडेचि । परगिंचें नतनिपै बटु तोमरंबु;
४३८०

नेनसि या मुव्वुरिट्लेपु सूपुटयु । घनरोष मेसग नंगदुडु मैवेंचि
दंभोळि क्रिय महोदरुनि येनुंगु । कुंभस्थलमु दाक गुधरशृंगंबु
गेरलि व्रेसिन नदि घींकार मेसग । नोरलि ग्रुड्डुलु वेलिकुड़िकि चच्चुटयु
जयलक्ष्मि राघवेश्वरु बोंद गोरि । प्रियमुन गैसेय बेट्टिय देड़चें
ननग नाकरितल यटु व्रस्सि योप्पें । ननुपमंबैन मुत्यंबुलु सेंदर;
नंतट बोक देवांतकु व्रेसें । दंति दंतमु बुच्चि तारासुतुंडु;
अटु व्रेटु वडि वातहति जलियिंचु । पटु साल वृक्षंबु पगिदि दूगाडि
नेत्तुरु ग्रक्किकयु नेड़ि साहसमुन । जित्त मोक्किकतगा जेसि यय्यसुर
परिघंबु गोनि व्रेसें बर्वत तटमु । करणि नोप्पारु नंगदु नुरस्थलमु;
नंगदुंडुनु दान नवनिपै स्रोगि । यंगमुतोड धैर्यमु सिक्कबट्टि ४३९०

घेर लेते हुए, वेग से दीप्त हो, उस बालिसुत पर अधिक रोष से, तीव्रता से देवांतक ने परिघा फेंक दी । क्रम से सिंहनाद करते हुए त्रिशिर ने निरंतर शरवृष्टि की । उरुदंति (बड़े हाथी) को भड़काकर विजृंभित हो महोदर ने उस पर पटु तोमर चलाया ॥ ४३८० ॥

—उन तीनों के मिलकर विजृंभित होने पर, घनरोष के बढ़ने पर अंगद ने शरीर को बढ़ाकर, दंभोलि (अशनि) के सम-महोदर के हाथी का कुंभस्थल फट जाए, ऐसा विजृंभित हो, कुधर (पर्वत) -श्रृंग को फेंक दिया । वह भी घींकार करके, चीखकर, आँखें बाहर निकल आने पर मर गया । जयलक्ष्मी ने राघवेश्वर को प्राप्त करना चाहकर, प्रेम से अलंकृत होने के लिए मंजूषा खोला हो, इस प्रकार उस हाथी के सिर के फूटने से अनुपम मोती बिखर पड़े । उतने से न जाकर दंति के दाँत को ले तारासुत ने देवांतक को दे मारा । ऐसा प्रहार खाकर, वातहति (हवा के झोंके) से विचलित होनेवाले पटुसाल-वृक्ष के समान हिलकर, खून उगलकर भी, अधिक साहस से अपने चित्त को एकत्र कर, उस असुर ने परिघा लेकर, पर्वततट के समान शोभायमान अंगद के वक्षस्थल पर मारा । अंगद भी उसके कारण अवनि पर झुककर, अंग (शरीर) में धैर्य को धारणकर, ॥ ४३९० ॥

कोपिंचि देवांतकुनि मीद नडव । दीपितास्त्रंबुल द्रिशिरुंडु मूट
ना वालितनयुनि नात्म गैकोनक । लावुन फालस्थलमु नाट नेसें;

हनुमदादुलु त्रिशिरादि राक्षस वीरुल जंपुट

नंत नीलुंडुनु ननिलनंदनुडु । बंतंबुतो दोड्डपडि रंगदुनकु;
नंदु नीलुंड महाशैल मेत्ति । यंदंद त्रिशिरुपै नार्चुचु वैव
नशनि चंदंबगु नस्त्रंबु दोडिगि । त्रिशिरुंडु नग्गिरि द्रेंगनेसें नपुडु;
धीरत वार्टिचि देवांतकुंडु । बारियै योप्पिन परिघ द्रिप्पुचुनु
बलियुडै चनुदेर बवमानसूनु । डलुकतो राक्षसु नौदल जूचि
बेंडिदंबुगा वेंस बिडिकिट बोडिचें; । बोडिचिन नप्पुडु पोरि बोरि बंड्लु
डुल्लंग नोरु बेंट्टुग देर्चुचुनु । द्रेळ्ळे दैत्युडु ग्रुड्लु दिरुग वैचुचूनु;
देवत लार्चिरि दिवि नुंडि यपुडु; । देवांतकुनि पाटु तेरगोप्प जूचि
४४००
त्रिशिरुंडु गोपिंचि तीव्रत नेसें । नशनि वेगास्त्रंबु लानीलु मीद;
दग वेंडियुनु महोदरु डप्पु डुग्र । मगु नोक्क करि नेक्कि यार्चुचु वच्चि
कुल गिरिपै वान गुरियु मेघंबु । नलवुन नतनिपै नस्त्रंबु लेसें;

क्रुद्ध हो देवांतक पर चल पड़ा तो त्रिशिर ने तीन दीप्त अस्त्रों को, उस बालितनय की परवाह न करके, समर्थता से फालस्थल (ललाट) पर गड़ जाएँ, ऐसा चलाया।

हनुमान आदि के त्रिशिर आदि राक्षस वीरों को मारना

तब नील और अनिलनन्दन, स्पर्धा के साथ अंगद के सहायक बने। उनमें नील ने महाशैल को उठाकर सर्वत्र सिंहनाद करते हुए त्रिशिर पर फेंका तो त्रिशिर ने अशनि समान अस्त्र का संधान कर, तब उस गिरि को काट दिया। धैर्य धारणकर देवांतक ने विशाल शोभित परिघा घुमाते हुए, बली हो आने पर, पवमानसून ने क्रोध से राक्षस के ललाट को देख (लक्ष्यकर) भीकरता से झट मुष्टि का प्रहार किया। प्रहार करने पर तब लगातार दाँतों के टूट गिरने पर, मुँह खोलते हुए, पुतलियों के घूम जाने पर दैत्य मर गया। तब दिवि से देवताओं ने सिंहनाद किया। देवांतक के पतन को ठीक तरह देखकर, ।। ४४०० ।।

—त्रिशिर ने क्रुद्ध हो, तीव्रता से अशनि-वेगवाले अस्त्र उस नील पर फेंके। फिर शोभा से तब महोदर एक उग्र करि पर आरूढ़ हो सिंहनाद करते आकर, कुलगिरि पर मेघ के वर्षा (पानी) बरसाने के समान उस पर अस्त्र

नानीलुड्नु वारि यस्त्र संततुल । दा नेंतयुनु भिन्नतनुडै नोच्चिच
यटु मूर्छं नोंदियु नंतन तेलिसि । पटु गति तोड नभंबुन केगसि
तरुवुलतोड नुद्धति मीदि कॆत्ति । धरणीधरमु महोदरुमीद वैचें;
वैचिन दानिचे वारण युक्तु । डै चच्चें दल व्रस्सि यम्महोदरुडु;
धरमीद नम्महोदरुडु गूलुटयु । दिरमैन कडिमतो द्रिशिरुंडु वेर्चि
'सरि गोंदु' ननि पेंक्कु शरमुलु गुरिसें । नरवायि गोनक या हनुमंतु मीद;
जेच्चेर बवंत शिखरंबु विड्रिचि । तेंच्चि यापावनि त्रिशिरुपै वैचें;
४४१०
नदि नडुमनें तुमुरै राल नेसें । द्रिदशुलु वेंड्रगंद द्रिशिरुंडु वेर्चि;
हनुमंतुडुनु वानि यरदंबु मीदि । कनुवारगा दाटि यत्युदग्रतनु
सिगंबु गजमुल जेंलरेगि व्रच्चु । भंगि रथ्यंबुल बटुगति व्रच्चें;
नातंडु गिनिसि याहनुमंतु मीद । नाततंबुग शक्ति यर्डरिचुटयुनु
बलुमंट लेंगयंग बड्रतेंचु दानि । बलुवडि बट्टि यप्पावनि द्रुंचें;
शक्ति द्रुंचिन भुज शक्ति वार्टिचि । शक्ति जिह्वयु बोलु चटुलासि
गोनुचु

चलाए। उस नील ने भी उनके अस्त्र-समूह के कारण स्वयं भिन्नतन (घायल शरीरवाला) हो, अधिक पीड़ित हो, मूर्छित होकर, फिर शीघ्र होश में आकर, पटुगति से नभ में उड़कर, उद्धत गति से, तरुओं के साथ धरणीधर (पर्वत) को ऊपर उठाकर महोदर पर डाल दिया। डालने पर, उससे वारण-युक्त, (हाथी के साथ) सिर फूट कर, महोदर मर गया। उस महोदर के धरा पर गिरते देखकर, स्थिर साहस से त्रिशिर ने विजृंभित हो 'मार डालूंगा' कहकर, कातर हुए बिना उस हनुमान पर अनेक शर बरसाए। अतिवेग से पर्वतशिखर तोड़ लाकर, पावनी (हनुमान) ने त्रिशिर पर डाल दिया ॥ ४४१० ॥

—उसे बीच में ही, त्रिदश (देवता) भीत हो जाएँ, ऐसा त्रिशिर ने विजृंभित हो, चूर कर दिया। हनुमान भी उसके रथ पर कूदकर, अति उग्रता से, सिंह के विजृंभित हो गजों को मार डालने के समान, उसके रथ्यों (अश्वों) को पटुगति से मार डाला। उसने क्रुद्ध होकर, उस हनुमान पर आततगति से शक्ति का प्रयोग किया। अधिक ज्वालाओं के प्रज्वलित होते आनेवाली उस (शक्ति) को झट से पकड़ पावनी ने तोड़ दिया। शक्ति के तोड़ देने पर (अपनी) भुजशक्ति का आधार मानकर, शक्ति की जिह्वा के समान चटुल-असि हाथ में लेते हुए, आश्चर्यप्रद वेग के शोभित होने पर, आकर, हनुमान के वक्ष पर चलाया। चलाने पर उसने

नच्चेरुवैन रयंबु सोंपार । वच्चि याहनुमंतु वक्षंबु व्रेसॆ;
व्रेसिन नतडुनु वेस नड्चेत । व्रेसॆ नाराक्षसु विपुल वक्षंबु;
नट्टु व्रेट्टु वडि तन यडिदंबु विडिचि । कुटिल राक्षसुडु ग्रक्कुन मूर्छ नोंदॆ;
ननिलजुंडट्टु पड्डु यदिदंबु बुच्चु । कोनि बिट्टुगा नार्चॆ गुंभिनि
वगुल; ४४२०

नालोन देप्पिरि यात्रिशिरुंडु । वालिन पिडिकिट वायुजु पोडिचॆ;
हनुमंतु डंत नत्यंत रोषमुन । दन कटंबुलु वोंग दर्प मुप्पोंग
रूपिचि याविश्वरूपु मस्तकमु । लेपुन द्रुंचु सुरेंद्रु चंदमुन
जेच्चेर दनुजुनि शिरमुलु मूडु । नच्चेरुवैन यायडिद मंकिचि
तेगनेसॆ नादैत्यु तीव्र कर्ममुलु । दग बुच्चुकोनि त्रुंचु दैवंबु करणि;
दिशलु भूभागंबु दिवियु गंपिप । द्रिशिरुंडु भूस्थलि द्रेळ्ळॆ; द्रेळ्ळुटयु
बट्टु रौद्रमुन महापाश्र्वुंडु गिनिसि । निटलंबु बोमलुनु नेरि मुडिवडग
नरुल नेत्तुट दोगि याशाकरींद्र । कर भीकरंबुनु गनक चक्रमुल
नुरुमणि प्रभल नत्युग्रमै यमुनि । परुषोग्र दंडंबु पाटिगा गलिगि
यरुण पुष्पंबुल नरुण गंधमुल । नुरु तरंबगुचु नयोमयंबगुचु४४३०
नुदयार्क भासमानोज्ज्वलं बगुचु । नोदवु गदादंड मुग्रुडै तालिच

भी झट हथेली से उस राक्षस के विपुल वक्ष पर प्रहार किया। ऐसा प्रहार खाकर अपनी तलवार को छोड़कर, कुटिल राक्षस झट से मूर्छित हो गया। अनिलज ने उस प्रकार गिरी हुई तलवार को लेकर भीकरता से सिंहनाद किया जिससे कुंभिनी (पृथ्वी) फट जाए।। ४४२०।।

—इतने में होश में आकर उस त्रिशिर ने कठोर मुष्टि से वायुज पर प्रहार किया। तब हनुमान अत्यन्त रोष से, अपने गंडस्थलों के फूलने पर, दर्प के उमड़ने पर, लक्ष्य करके, उस विश्वरूप के मस्तकों के औन्नत्य से काट डालनेवाले सुरेन्द्र के समान, आश्चर्यप्रद उस तलवार को चमकाकर, झट से दनुज के तीनों सिर काट डाले, मानों उस दैत्य के तीव्र कर्मों को काट देनेवाला दैव हो। दिशाएँ, भूभाग, आकाश के कंपित होने पर त्रिशिर भूस्थल (धरा) पर गिरकर मरा। (उसके) गिरते ही पटुरौद्र से महापार्श्व क्रुद्ध हो, ललाट तथा भौंहों में गाँठ पड़ने पर (तेवर बदलते हुए), नरों के रक्त से ऊभचूभ होकर, आशा (दिक्)-करींद के कर (सूंड) के समान भीकर, कनक-चक्रों की उरु-मणियों की प्रभाओं से अत्युग्र हो, यम के परुष-उग्र-दंड के समान, अरुण पुष्पों, अरुण गन्धों (चन्दन) से युक्त हो, महान् बन, अयोमय (लौह) बने हुए, ।। ४४३०।।

तनकोप शिखि मंड दर्प मुप्पॊंग । हनुमंतु मीद रयंबुन नडुव
नॆड सॊच्चि यॊक्क महीधरंबॆत्ति । यॆडपक दैत्युनि ऋषभुंडु वैचॆ;
नडरि यंतटिलोन नम्महीधरमु । दॊडि बड गद गॊनि तुमुरुगा नडिचि
चटुलत गदद्रिप्पि समदुडै ऋषभु । बटु सत्त्वमुन महापार्श्वंडु वैचॆ;
दानिचे वक्षंबु दाकि या ऋषभु । डूनिन मूर्छचे नॊय्यन सोलि
यालोन दॆलिसि महा पार्श्वु रॊम्मु । व्रालिन पिडिकिट व्रय्य दाटिंचॆ;
दाटिंचुटयु गदादंडंबु विडिचि । मेटि सत्त्वमु सॆडि मेदिनि बडियॆ;
नागदा दंडंबु ना ऋषभुंडु । वेगंबॆ कॊनि यार्चि व्रेसे नद्दैत्यु;
व्रेसिन वज्रंबु व्रेटुन गॊंड । तो सरियै तल तुमुरुगा गूलॆ ४४०
नटु महाध्वनितो महापार्श्वु डवनि । बटु भयंकर वृत्ति बडुटयु जूचि
करुवलिचे दूलु काराकु लनग । दिरिगि दैत्युलु नलु दॆसलकु जनिरि;

अतिकायुडु युद्धमु चेयुट

आचंदमुन वार लंदरु वडुट । जूचिन रोष विस्फुरण शोभिल्ल
मिडिकि लोकमुलॆल्ल म्रिंगॆद ननुचु । गडगिन क्रिय नतिकायुडु वॆर्चि

—उदयार्क के समान भासमान-उज्ज्वल होते हुए शोभित गदादंड को उग्रता से धारणकर, अपनी कोप-शिखि (क्रोधाग्नि) के बलने पर, दर्प के उमड़ने पर, हनुमान की ओर वेग से चल पड़ा। बीच में आकर एक महीधर को उठाकर, अविलम्ब दैत्य पर ऋषभ ने डाल दिया। विजृंभित हो इतने में वह महीधर लड़खड़ाकर चूर हो जाए, ऐसा गदा को चटुलता से घुमाकर, समद हो, पटुसत्त्व से महापार्श्व ने ऋषभ पर चलाया। उसके वक्ष पर लगने से ऋषभ एकदम मूर्छित हो गया। शीघ्र होश में आकर, महापार्श्व की छाती पर, कठोर मुष्टि से प्रहार किया जिससे वह फट जाए। प्रहार करते ही गदादंड को छोड़, श्रेष्ठ तत्त्व को खोकर, वह मेदिनी पर गिर पड़ा। उस गदादंड को शीघ्र हाथ में लेकर ऋषभ ने सिंहनाद कर उस दैत्य को दे मारा। मारने पर वज्र के प्रहार से पर्वत के समान सिर के चूर होने पर (वह) गिर गया ॥ ४४० ॥

—उधर महाध्वनि के साथ महापार्श्व के अवनि पर पटु-भयंकर-वृत्ति (-गति) से गिरते देख, पवन के कारण झड़नेवाले पके पत्तों के समान दैत्य चारों दिशाओं में भाग गए।

अतिकाय का युद्ध करना

—उस प्रकार उन सबके गिरते देखकर, रोष-विस्फुरण के शोभित होने पर, चमककर समस्त लोकों को निगल जाऊँगा, ऐसा प्रयत्नशील होने की तरह

वेयु सूर्युल भंगि वेलुगुचु मिगुल। नायतंबैनट्टि यरदंबु नेक्कि
तनरार सिंहनादमु सेलंगिंचि। तन पेरु सेप्पि युद्दंड कोदंड
निष्ठुरारावंबु निगुड गालाग्नि। काष्टंबु लडगिंप गवयु चंदमुन
गपि सेन पैं महोग्रंबुगा गविय। गपुलु निशाटु नाकारंबु जूचि
पटु रौद्र लील नप्पटि कुंभकर्णु। डिट वच्चेनो यनि येंतयु बेदरि
कोंदऱु मूर्छिल्ल गोंदऱु वेऱव। गोंदऱु वेऱगु चेकोनि चूचुचुंड ४४५०
गोंदऱु वापोव गोंदऱु गलग। गोंदऱु 'राम! चेकोनु' मनि म्रोक्क
बर्विन भीतिमै बऱतेंचु कपुल। नुर्वीश्वरुं 'डोड कोडकुं' डनुचु
गलय लोकमु लेल्ल गप्पि गर्जिंचु। प्रळयावसर मेघपटलंबु बोलें
बेडिदंबुगा नार्चि पृथुल वेगमुन। नडतेंचुचुन्न दानव-नाथ-तनयु
नग्गलिकयु लावु नधिक दर्पंबु। नग्गतियुनु दव्वुलंदे वीक्षिंचि
यनयंबु वेऱगंदि यप्पुडाराम। जननाथु डाविभीषणु जूचि पलिकें;
"बिडुगु म्रोसिन माड्कि बेडिदंपु म्रोत। यडरि वच्चुचु नुन्न यरदंबु मीद
निंद्रचापमु तोड नेनवच्चु नट्टि। सांद्र प्रभायत चाप मोप्पार
बरिघ गदा प्रास पट्टिस शूल। परशुतोमर भिंडिवाल चक्रादि

अतिकाय ने विजृंभित हो, सहस्र सूर्यों के समान प्रकाशित होते हुए, अधिक विशाल रथ पर आरूढ़ होकर, शोभा से सिंहनाद कर, अपना नाम लेकर, उद्दंडकोदंड का निष्ठुर रव करते हुए, कालाग्नि का काष्ठों (वनों) का दमन करने के लिए व्याप्त होने के समान, कपिसेना पर महोग्रता से टूट पड़ा। कपि, उस निशाट (राक्षस) के आकार को देखकर, पटु-रौद्र गति से उस समय का कुम्भकर्ण इधर आया हो, ऐसा समझकर, अतिभीत हो, कुछ मूर्छित हुए तो कुछ भीत हुए, कुछ आश्चर्यचकित होते देखते रहे, ॥ ४४५० ॥

—कुछ रोने लगे तो कुछ व्याकुल हुए तो कुछ 'हे राम! रक्षा करो' कहते प्रणाम करने लगे। (इस प्रकार) व्याप्त भीति से भाग आनेवाले कपियों को उर्वीश्वर (राजाराम) ने 'मत डरो' कहते हुए, मनोज्ञता से समस्त लोकों को आच्छादित कर, गर्जन करनेवाले प्रलयकाल के मेघपटल के समान, भीकरता से सिंहनाद कर, पृथुलवेग से आनेवाले दानवनाथ-तनय की प्रचंडता, सामर्थ्य, अधिक दर्प, उस विधान को दूर से देखकर, अनारत चकित हो, तब राजाराम ने विभीषण को देखकर कहा—"अशनि की गर्जना के समान भीकर ध्वनि के उत्कर्ष के साथ आनेवाले रथ पर, इन्द्रचाप की समता करनेवाले सांद्र-प्रभायत- (प्रभा से विशाल) चाप के शोभा देने पर, परिघा, गदा, प्रास, पट्टिस, शूल, परशु, तोमर, भिंडिवाल, चक्र आदि

वरदिव्य शस्त्र निर्वाहंबुतोड । नरुदैन सैंहिकेय ध्वजं बॊप्प४४६०
नलुवॊंद नार्चुचु नलुवुरु सार । थुल तोड नॊक वेयि तुरगमुल् पून्चि
मूडु कन्नुलु गल मूर्तियु बोलॆ । वेडिमि दिक्कुल वॆदचल्लु कॊनुचु
गपुल दोलुच्चुनु निक्कडनॆ चूचुचुनु । विपरीत गति वच्चु वी डॆव्व''डनिन

विभीषणुडु श्रीरामुन कतिकायुनि प्रभावमु दॆलुपुट

''देव! यीदैत्युडु देवारि सुतुडु; । रावणु कंटॆनु रण गरिष्ठुंडु;
चतुरंगमुल यंदु समरंबु सेय । नति निपुणुंडु वी डवनीशतिलक;
यरुदैन वेद शास्त्रादि विद्यलनु । बरिणतुं; डॆंतयु बरतत्त्व बेदि;
लंक यी वीरुनि लावुन जेसि । शंकले कॆपुडु निश्चल वृत्ति नुंडु
ननिमिषु ललिगिन ननि जावकुंड । वनजासनुनि चेत वरमु गॊन्नाडु;
दिव्यायुधंबुल दिव्य शस्त्रमुल । दिव्य मंत्रंबुल दीपिंचु वाडु;
मीऱि यिंद्राद्यनिमिषुलनु नूऱु । माऱुलु गॆलिचिन मगटिमि वाडु;
४४७०
वासवु वज्रंबु वरुणु पाशंबु । नासमवर्त्ति युदग्र दंडंबु

वर-दिव्य शस्त्र-निर्वाह के साथ, अद्वितीय सैंहिकेय (राहु)-ध्वज के शोभित होने पर, ।। ४४६० ।।

—शोभा से सिंहनाद करते हुए, चार सारथियों के साथ, एक हज़ार तुरगों के जुते हुए (रथ पर आरूढ़ होकर), तीन नेत्रोंवाले के आकार के समान, तेज को दिशाओं में बिखेरते हुए, कपियों को भगाते हुए, इसी ओर देखते हुए, विपरीत गति से आनेवाला यह कौन है ?'' (ऐसा) कहने पर (विभीषण ने कहा)—

विभीषण का श्रीराम को अतिकाय का प्रभाव बताना

''हे देव ! यह दैत्य देवारि का सुत है । रावण से भी रणगरिष्ठ है । हे अवनीशतिलक ! चतुरंगों के साथ समर करने में अति निपुण है । विरल वेद-शास्त्र आदि विद्याओं में परिणत है । अधिक परतत्त्ववेदी है । इस वीर की सामर्थ्य से ही लंका सदा निश्शंक हो, निश्चलवृत्ति से रहती है । अनिमिषों के क्रुद्ध होने पर भी, युद्ध में (उनके हाथ) न मरने का वनजासन से वर प्राप्त किया है । दिव्य-आयुधों, दिव्यशस्त्रों, दिव्यमन्त्रों, से दीप्त रहनेवाला है । उत्कर्ष को प्राप्त कर इन्द्र आदि अनिमिषों को सौ बार जीतनेवाले पौरुष से युक्त है ।। ४४७० ।।

—वासव (इन्द्र) का वज्र, वरुण का पाश, उस समवर्ती (यम) का उदग्र

धनपति गदयु नीतनि शस्त्र समिति। ननिशंबु गडु ब्रतिहतमुलै युंडु
मनुजाशनुडु धान्यमालिनि यंदु। गनिन पुत्त्रुं; डतिकायुंडु वीडु;
ई दानवुनि चेत नीकपुलेल्ल। मेदिनीनायक ! मेंदुगक मुन्ने
समरंबु लो वीनि जंपुट लेस्स। यमित विक्रम केळि'' ननि चेप्पु चुंड
वाडंत बटु गुणध्वनि दिक्कुलद्रुव। वाडिमिमै नट वच्चुट सूचि
खंडनोदग्रुंडु गवयुंडु गोमु। खुंडुनु ज्योतिर्मुखुडु गुमुदुंडु
मारुतात्मजुडुनु मैदुंडु नलुडु। शरभुंडु नीलुंडु शतबलि गजुडु
नादिगा गलुगु महा कपिवरुलु। मेदिनीजंबुलु मेटि शैलमुलु
वडि नेत्तिकोनि यप्डु वानिकि नेदुरु। नडवगा नटु जूचि नव्वि दानवुडु
४४८०

''कलह विक्रम कळा कठिन सत्त्वमुलु। गलुगवु, तोलगुडु कपुलार ! मीरु;
त्रिजगंबुलुनु मेच्च दिविरि वाराशि। निज शराग्रंबुन निलिपिन शूरु
डतडेव्वडिटु चूपु; डतनिपै गानि। यतुलितंबैन ना यस्त्रंबु विडुव;
दुरमुन निंद्रजित्तुडु गट्टिनट्टि। युरगपाशंबुल नूड्चुकोन्नट्टि
यतडेव्व ? डिटुचूपु; डतनिपै गानि। यतुलितंबैन ना यस्त्रंबु विडुव;

दंड, धनपति की गदा, इसकी शस्त्र-समिति (-समूह) द्वारा सदा प्रतिहत होते रहते हैं। मनुजाशन (राक्षस-रावण) के धान्यमालिनी द्वारा प्राप्त पुत्र है। यह अतिकाय (नामक) है। हे मेदिनी-नायक (राजा) ! इस दानव के हाथ समस्त कपियों के नष्ट होने से पहले ही, अमित विक्रम केलि से इसे समर में मार डालना अच्छा है।'' (ऐसा) कहते रहने पर, वह (अतिकाय) तब पटु-गुण ध्वनि से दिशाओं को विदीर्ण करते हुए, तेजोयुक्त हो उसके आते देख, खंडनोदग्र, गवय, गोमुख, ज्योतिर्मुख, कुमुद, मारुतात्मज, मैंद, नल, शरभ, नील, शतबलि, गज आदि महाकपिवीरों ने मेदिनीजों (वृक्ष), श्रेष्ठ शैलों को झट उठाकर, तब उसका सामना करने पर, उधर देख, हँसकर, दानव ने (कहा)— ॥ ४४८० ॥

—''हे कपियो ! तुम में कलह (रण)-विक्रमकला का कठिन सत्त्व नहीं है। अतः तुम हट जाओ। त्रिजगों की प्रशंसा करने पर, सप्रयत्न वाराशि (समुद्र) को निज-शराग्र-भाग पर स्थित किया था, वह शूर कौन है। दिखाइए। उसे छोड़ अन्य किसी पर मेरे अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा। युद्ध में इंद्रजित के बांधे उरगपाशों से विमुक्त बनने वाला वह कौन है ? इधर दिखाइए। उसे छोड़ अन्य किसी पर मेरे अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा। तीनों लोकों को क्रम से जीतकर, प्रचंड

मूडुलोकंबुलु मुनुमिडि गैलिचि । वाडि मगंटिमि वालिन शूरु
नलघुबलोदीर्णु नाकुंभकर्णु । दल द्रेंव्व नेसि युद्धति बेंचि युन्न
यतडेंव्व ? डिटु चूपु; डतनिपै गानि । यतुलितंबैन नायस्त्रंबु विडुव;
देव दानव यक्ष दिविजुल काजि । भाविप नेंक्कुडै परगिन यट्टि
रावणु नोर्चेंद रणमुलो ननुचु । नी विधंबुन लंक केतेंचु वीरु४४९०
इत डेंव्व ? डिटु चूपु; डतनिपै गानि । यतुलितंबैन नायस्त्रंबु विडुव"
ननि पेंक्कु गर्वंबु लाडुचु नुन्न । दनुजाधि-नाथुनि तनयुनि मीद
गडिदि कोपमुन वृक्षंबुलु गिरुलु । नुडुगक कपि नायकोत्तमुल् वैव
नवि यंत वट्टुनु नतिकायु डेंडनु । नविरळ मार्गणाहति द्रुंचि वैचि
गुरुतरास्त्रंबुल गुमुदुनि मूट । गरमुग्र शर पंचकंबुन द्विविदु
नरुदार मैंदुनि नम्मु लेंडिट । शरभुनि दोम्मिदि सायकंबुलनु
घनतर बाणाष्टकंबुन गजुनि । गिनिसि बेंट्टुग नालुगिंट गवाक्षु
गवयुनि नेंनिमिदि घनसायकमुल । दविलि ज्योतिर्मुखु दशमार्गणमुल
बलु कांडमुल शतबलि बदेंनिट । नेंलमितो नीलुनि निरुवदेंनिट
वेंडिदंबुगा नेय बृथिविपै नोंरगि । कडुमूर्छ नोंदिरा कपिवरुलेंल्ल
४५००

पौरुष से विराजमान शूर, अलघुबलोदीर्ण उस कुम्भकर्ण का सिर काट देकर, औद्धत्य से विजृंभित वीर कौन है ? इधर दिखाइए । उसे छोड़ अन्य किसी पर मेरे अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा । देव, दानव, यक्ष, दिविजों के लिए आजि (युद्ध) में दुर्जेय हो विलसित रावण का रण में सामना करूँगा, ऐसा सोचकर, इस प्रकार लंका को आनेवाला वीर, ।। ४४९० ।।

—वह कौन है ? इधर दिखाइए । उसे छोड़ अन्य किसी पर अपने अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा ।" ऐसी अनेक गर्वोक्तियाँ कहनेवाले दनुजाधिनाथ के तनय पर अधिक क्रोध से कपिनायकोत्तमों ने लगातार वृक्ष और गिरि फेंके । उन सबको अतिकाय ने मध्य में ही अविरल-मार्गण-आघात से काट देकर, कुमुद को तीन गुरुतर अस्त्रों से, द्विविद को अधिक उग्र शरपंचक से, मैंद को अद्वितीय सात बाणों से, शरभ को नौ सायकों से, गज को घनतर बाणाष्टक से, गवाक्ष को भीकरता से क्रुद्ध हो चार (बाणों) से, गवय को आठ घन सायकों से, लगकर ज्योतिर्मुख को दस-मार्गणों से, शतबलि को पन्द्रह बली कांडों से, नील को शोभा से पच्चीस से, (इस प्रकार) भीकरता से मारने पर (बाण चलाने पर) वे कपिवर पृथ्वी पर गिरकर अधिक मूर्छित हुए ।। ४५०० ।।

दिविजुलु वेँऱगंदि दिविनुंडि चूड । दविलि वेँडियुनु नुद्दंड कोपमुन
मृगमुल दोलेँडि मृगपति माड्कि । नगचरावळि दोलेँ नतिकायुडपुडु;
तोलुचु दन्नु नेँदुर्पनि कपुल । नेल पैँ गूल्पक निगुडि रामुनकु
“बगतोडि भक्ति नप्परमेशु वलन । दग मुक्ति गंदु नेँतयु” ननि तलचि
निगमार्थमुल रामुनिकि नतिकायु । डगलनि तेँगुवमै ननियेँ नव्वुचुनु
“राम! यी समर धरास्थलि लोन । नी मगटिमि जूपु निक्कंबु नाकु;
नेँतटि वाडवो, येँव्वरु निन्नु । नितटि वाडनि येँऱुग रेँन्नडुनु;
मातंड्रि कतमुन मानिसि वैति; । मातंड्रि कतमुन महिराजवैति;
वमरेन्द्र यमवरुणादि देवतल । गमिलोन नोँकडवु कावु नन्नेँदुर!
गड मुट्ट शूरुडै कदिसिन वानि । गडिमि मै नेँदुरंग गदियुदु गाक४५१०
येनु नी मगतनं बेँरुगने मुंदु; । मानाभि मानमुल् मऱि नीकु गलवेँ?
गणुतिंप नन्नेँऱुंगवु गाकनीवु ! । गुणहीनुलकु सत्त्वगुण मेँदु गलदु ?
ऐजाति गलवाड ? वेमि चेँप्पेँडिदि ? । राजकुलाचाररतुडवे नीवु ?
अनघ तापस मानसाटवुल् दूरु; । ननुजेरि पोराड नायीडु गावु;
गोँनकोँनि वेदाद्रि गुहललो नुंडु; । ननुजेरि पोराड नायीडु गावु;

—दिविजों के भीत होकर दिवि से देखते रहने पर, लगकर और अधिक उद्दंड कोप से मृगों को भगा देनेवाले मृगपति (सिंह) के समान तब अतिकाय ने वनचरावली को भगा दिया। भगाते हुए, अपना सामना न करनेवाले कपियों को ज़मीन पर न गिराकर, तनकर राम के (समक्ष) यह सोचकर कि 'वैरभाव की भक्ति से उस परमेश्वर के द्वारा मुक्ति प्राप्त करूँगा' निगमार्थों के (सार) राम से अतिकाय ने अतिशय साहस से हँसते कहा—“हे राम ! इस समर-धरास्थल (भूमि) में सचमुच अपना पौरुष मुझे बताओ। (तुम) अनन्त हो। कोई तुम्हारे बारे में कभी यह नहीं जानता कि तुम कितने हो। मेरे पिता के कारण (तुम) मनुष्य बने। मेरे पिता के कारण महिराजा (पृथ्वीपति) बने। मेरा सामना करने के लिए (तुम) अमरेन्द्र, यम, वरुण आदि देवता-समूह में एक नहीं हो। अत्यन्त शूर बनकर (मेरा) सामना करनेवाले का साहस से मैं सामना करूँगा ॥ ४५१० ॥

—मैं क्या पूर्व में तुम्हारे पौरुष को नहीं जानता ? तुम्हें मान और अभिमान हैं क्या ? गिनती करने पर तुम मुझे नहीं जानते हो। तुम जैसे गुणहीनों में सत्त्वगुण कहाँ है ? (तुम) किस जाति के हो ? कैसे कहूँ ? तुम राजकुलाचार-रत (-पालन करनेवाले) हो ? पुण्यात्मा तापसियों के मानस-रूपी अटवियों में प्रवेश करो। मुझसे जूझने के लिए मेरी जोड़ के

सनकादि मुनि योगि जलधुलु सॊरुमु; । ननुजेरि पोराडनायीडु गावु
काषाय वस्त्र संकलितुलै विगत । दोषुलै भवरोग दूरुलै पोयि
कूरलु गायलु गूळ्ळुगा गुडिचि । नीरसाहारुलै निष्टल डस्सि
घोराटवुललोन ग्रुम्मरुचुन्न । वारि लोपल बोयि वर्तितु गाक
कलह विक्रम शक्ति कडपट लेदु । तलपोसि यॆरुगुदु दगिलि नीलावु;
४५२०

नॊगि नॊंटिकाडवै युंडॆडि नीकु । जगतिपै नी कपि सैन्यंबु गलिगॆ;
दिक्कॆव्वरुनु लेक तिरिगॆडि नीकु । दिक्कय्यॆ निप्पुडी दिनकरात्मजुडु;
ऎक्कड गुरुडनि यॆरुगनि नीकु । नक्कटा ! गुरुडु विश्वामित्रुडय्यॆ;
नॊक देशमुनु लेक युंडॆडि नीकु । नकलंकमगु नयोध्यादेश मॊप्पॆ;
निवि नीकु बॆद्दगा निच्चलो नुब्बि । तिवुरकु नीविक धृति पॆंपु दूलि;
चलियिंचि मीनमै सकल वारिधुलु । सॊलवक चॊच्चिन जॊत्तुगाकेमि ?
तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । बलुकु लेटिकि ? निन्नु बट्टॆद वॆदकि;
नलुवॊंद गूर्ममै नगमु क्रिंदिकिनि । सॊलवक चॊच्चिन जॊत्तुगाकेमि ?

नहीं हो। सप्रयत्न वेदरूपी अद्रि की गुफाओं में रहो। मुझसे लड़ने के लिए मेरी जोड़ के नहीं हो। काषाय-वस्त्र-संकलित हो, विगत दोषवाले हो, भवरोगों से मुक्त हो, जाकर कंद-मूल फल आदि आहार रूप में ग्रहण कर, नीरस-आहार करते हुए, (आचार) निष्ठाओं के कारण थककर, घोर-अटवियों में संचरण करनेवालों के साथ जाकर रहो। (तुममें) कलह (रण) -विक्रम शक्ति नहीं है। सोच-सोचकर तुम्हारी सामर्थ्य को जानता हूँ ।। ४५२० ।।

अकेले रहनेवाले तुम्हें (ही) जगत में यह कपिसैन्य प्राप्त हुआ न। बिना किसी आश्रय (आधार) के घूमनेवाले तुम्हें अब यह दिनकरात्मज (सुग्रीव) आधार बन गया न। कहीं भी (और किसी भी) गुरु को न जाननेवाले तुम्हें हाय ! विश्वामित्र गुरु बन गया न। (अपना कहने के लिए) किसी भी देश से रहित रहनेवाले तुम्हें अकलंक अयोध्यादेश संप्राप्त हुआ न। इन्हें पाकर तुम मन में अधिक फूल रहे हो। अब धृति (धैर्य) के उत्कर्ष को खोकर, (अधिक) कोशिश मत करो। संचलित होकर, मीन बनकर सकल वारिधियों में अथक रूप से प्रवेश करो तो करो। (अब) तुम पर मेरा विचार मेरे (अपने) लिए आवश्यक है। (ये सब वृथा) बातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। खूबी से कूर्म बनकर, नग (पर्वत) के नीचे अथक रूप से प्रवेश करो तो करो। (अब) तुम पर मेरा विचार मेरे

तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । बलुकु लेटिकि ? निन्नु बट्टॆद वॆदकि;
यलिगि वराहंबवै रसातलमु । सॊलवक चॊच्चिन जॊत्तुगाकेमि ?
४५३०

तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । बलुकु लेटिकि ? निन्नु बट्टॆद वॆदकि;
च्रलमुन विकृतवेषमुन नॆंदैन । सॊलवक चॊच्चिन जॊत्तुगाकेमि ?
तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । बलुकुलेटिकि ? निन्नु बट्टॆद वॆदकि
कडुगुज्ज्वै नीवु कार्पण्यवृत्ति । पॊडवडकुव सेसि पॊदुगाकेमि ?
तलपु नीमीददि तप्पदुनाकु; । बलुकुलेटिकि? निन्नु बट्टॆद वॆदकि
धारुणीसुर वेषधारि कुठारि । वै राजसंहारि वगुदु गाकेमि ?
तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । बलुकुलेटिकि? निन्नु बट्टॆद वॆदकि
यच्चॆरुवैन रणांबुधिलोन । जॆच्चॆर निन्नु मोचियु देलियाड
बरिकिंप नल वट-पत्रंबु गादु; । करमु भीषणमु नाकंकपत्रंबु;
दुरमुन ननु नीकु दॊडरंग रादु । वर गर्वमुन नॆंदु वालिन वाड"
४५४०

ननि पेर्चि पलिकॆंडु नय्यतिकायु । घन गर्वमुनकु लक्ष्मणुडु नव्वुचुनु

(अपने) लिए आवश्यक है। (ये सब व्यर्थ) बातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़लूँगा। रुष्ट हो, वराह बन अथक रूप से रसातल में प्रवेश करो तो करो ॥ ४५३० ॥

(अब) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब) बातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। हठ से विकृत वेष से कहीं भी अथक रूप से प्रवेश करो तो करो। (अब) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब) बातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। अति बौना बनकर तुम कार्पण्यवृत्ति (कृपण स्वभाव) से औन्नत्य से अवनत हो जाओगे तो क्या ? (अब) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब कोरी) बातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। धारुणीसुर, (ब्राह्मण) वेषधारी बन, कुठार (परशु) धारणकर, राजाओं का संहार करोगे तो क्या ? (अब) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब) बातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। आश्चर्यप्रद रण-समुद्र में झट से तुम्हें ढोकर तैरते रहने के लिए सोचने पर यह वटपत्र नहीं है। मेरा कंकपत्र (बाण) अति ही भीषण है। युद्ध में तुम मेरा सामना नहीं कर सकते। (मैं तो) वर-गर्व से सुशोभित हूँ।" ॥ ४५४० ॥

—ऐसा विजृंभित हो कहनेवाले उस अतिकाय के महान् गर्व को (देख) लक्ष्मण हँसते हुए (बोला)—

लक्ष्मणातिकायुल द्वंद्व युद्धमु

"ओरि! निशाट ! येनुंड राघवुनि । तो रणंबोनरिंप दोरकोन नेल ?
ना देस जक्कनै नडतेम्मु; निन्नु । नादु बाणमुल भग्नंबु सेसेदनु"
अनि दानवुल गुंडे लविय नंदंद । घन गुणध्वनि सेसि कदिसिन वाडु
नारभसंबुन काश्चर्य मंदि । क्रूरास्त्र मोक्कटि गोनि यार्चि पट्टि
"निलु निलु लक्ष्मण ! नीवु बालुडवु ; । वल, दंतकुनि कंटे वालिन वाड;
ना वर शर घट्टनंबु सहिंप । नी वसुंधर योंडे, हिमगिरि योंडे,
रावणुंडेत्तिन रजताद्रि योंडे, । देवतलुन्न धात्री-धरं बोंडे
यंजक हरुनि विल्लडच्चि गर्वमुन । रंजिल्लु मीयन्न राघवुंडोंडे,
काक नन्ननि मोन गदिय शक्यंबे ?। नीकु नामुंदर निलुवंग दरमे ४५५०
यी वर सायकं बिप्पुडु गिट्टि । त्रावेडु नीदु रक्तंबु सौमित्रि!"
यनि दुरहंकृति नाडिन नतडु । "दनुजुड ! नीकु वृथा गर्वमेल ?
पोर नीलावु जूपुदु गाक नाकु !। नी रित्त माटलिकेल नायेदुर ?

लक्ष्मण और अतिकाय का द्वन्द्व युद्ध

"रे ! निशाट (राक्षस) ! जब मैं हूँ तब तुम्हें राघव (राम) से युद्ध करने का प्रयास क्यों ? ठीक ढंग से मेरी ओर आओ। तुम्हें अपने बाणों से भग्न (टुकड़े) कर दूँगा।" (ऐसा) कह दानव का हृदय विदीर्ण हो जाए, ऐसा सर्वत्र महा-गुण (ज्या)-ध्वनि करके नियराने पर वह उस आटोप से आश्चर्य-चकित हो, एक क्रूर-अस्त्र को पकड़, सिंहनाद कर, (बोला)— "रुक-रुक रे लक्ष्मण ! तुम बालक हो। मत (भिड़ो)। (मैं) अंतक (यमराज) से अधिक प्रतापशाली हूँ। मेरे वर-शर-घट्टन (श्रेष्ठ शरों के आघात) को सहने के लिए या तो यह वसुन्धरा, या हिमगिरि, या रावण द्वारा उठाया गया रजतपर्वत (कैलास गिरि), या देवताओं का निवास धात्रीधर (पर्वत), या भीत हुए बिना हर (शिव) के धनुष का खंडनकर गर्व से विराजमान तुम्हारा अग्रज राघव चाहिए। इन्हें छोड़ युद्धभूमि में मेरा सामना कर पाना (किसे) संभव है ? तुम्हारे लिए मेरे सामना टिक पाना क्या संभव है ? ॥ ४५५० ॥
—हे सौमित्र ! यह श्रेष्ठ बाण अभी तुम्हें लगकर तुम्हारे रक्त को पी जाएगा।" ऐसा दुरहंकार के कारण उसके कहने पर उसने (लक्ष्मण ने) कहा—"हे दनुज ! तुम्हें वृथा गर्व क्यों ? युद्ध में अपनी सामर्थ्य मुझे दिखा देना ! ये रिक्त (व्यर्थ की) बातें मेरे समक्ष क्यों ? हे निशाचर ! तुम भी शस्त्र-अस्त्र-निचय के साथ इस प्रकार रथ पर आरूढ़ हो, उद्वृति

नीवुनु शस्त्रास्त्र निचयंबु तोड । नीविधंबुन रथ मेक्कि युद्वृत्ति
मानक यिटु पोटु मगवाडु वोलें । बूनि युन्नाड विप्पुडु निशाचरुड !"
यनवुडु गोपिंचि यतनिपै नेसें । दनचेति बाण मुद्धति वाडु दोंडगि;
येसि यार्चिन दिवि निंद्रादि सुरुलु । ना समयंबुन नाश्चर्य पडग
वदलक राघवेश्वरु ननुजुंडु । नदि यर्ध चंद्र बाणाहति द्रुंचि
चेलुवार ब्रह्म व्रासिन व्रात यिक । वलदनि ता बुज वैचिन करणि
जटुलास्त्र मोक्कटि संधिंचि वानि । निटल स्थलमु गाड निपुणुडै येसें
४५६०

नेसिन रुद्रुनि येटुन वडकु । भासुरासुरपुर-प्रासाद मनग
जलिर्यिचि "नातोड समरंबु सेय । गलिगें वी" डनि यतिकायुंडु वेंत्रि
कडिमिमै नरदंबु गदिय दोलिंचि । तडयक यारामु तम्मुनि मीद
"ज्ञलमोक्कटियु दक्क जंपुदु" नन्न । चेलुवुन नोक्क निशित बाण मेसें;
"मूडंबकंबुल मूर्ति गाचिननु । बोडिमि दक्कितु वीं" म्मन्न करणि
जटुल वेगंबुन संधिंचि मरियु । बटुतरंबुग मूडु बाणंबु लेसें;
"ननयंबु बेरुकुदु नैदु प्राणमुलु" । ननु माड्कि वेंडियु नैदम्मु लेसें;
"नेडु वार्धुलु सोच्चि यीदि पोयिननु । दोंडनें चनि मीरि त्रुंतु" नन्नट्टि

को न छोड़ ऐसे वीर पुरुष के समान खड़े हो जाओ न !" ऐसा कहने पर अपने हाथ पर बाण का संधानकर उसने औद्धत्य से चलाया। चलाकर सिंहनाद करने पर, आकाश पर इन्द्र आदि सुरों के उस समय आश्चर्यचकित होने पर, राघवेश्वर के अनुज ने अवश्य ही उसे अर्द्धबाण के आघात से तोड़कर, शोभा से अब ब्रह्मा का लेख नहीं चलेगा, ऐसा उसे शून्य करने (मिटाने) के समान, एक चटुल अस्त्र का संधानकर, निपुण बन उसके निटल-स्थल (ललाट) पर गड़ जाए, ऐसा चलाया ।। ४५६० ।।

—चलाने पर रुद्र के आघात से कंपित होनेवाले भासुर-असुर-प्रासाद के समान, विचलित हो, 'यह सोच कि यह मुझसे समर करने में समर्थ बन गया न', अतिकाय ने विजृंभित हो, साहस से रथ को निकट चलाकर, अविलम्ब राम के अनुज पर 'हठ से मार डालूँगा' मानों इस शोभा से एक निशित-बाण चलाया। 'तीन नेत्रवाले मूर्ति (व्यक्ति) रक्षा करने आवें तो भी (तुम्हारी) सुघड़ता नष्ट कर दूँगा' इस प्रकार से चटुल-वेग से संधान कर पटुतर रूप से और तीन बाण चलाए। 'निरन्तर (तुम्हारे) पंचप्राणों को उखाड़ दूँगा' मानों ऐसे और पाँच बाण चलाए। 'सप्तसमुद्रों में पैठकर तैर जाओगे तो भी साथ ही आकर उत्कर्ष से मार डालूँगा' मानों

करणि नॆंतयु भुजागर्वंबु मीऱि । यिरवॊंदगा दॊडि येडम्मुलेसॆ;
नवि वेग लक्ष्मणुंडंत लोपलनॆ । विविध खंडमुलु गाविंचि पॆल्लार्चि
४५७०
यतिकायुपै नेसॆ नाग्नेय बाण; । मतडु माऱेसॆ सौरास्त्रंबु दॊडिगि;
यारॆंडु शरमुलु नडरि यॊंडॊंटि । तो रणंबॊनरिंचि तुनियलै रालै;
जेकॊनि दनुजु डैषिक बाण मेसॆ । गाकुत्स्थ तिलकु डाकंपंबु नॊंद;
नदि यैंद्रमुन द्रुंचॆ नडरि लक्ष्मणुडु;। अदि गनि दैत्युंडु याम्यास्त्र मेसॆ;
नदि द्रुंचॆ नतडु वायव्यास्त्र मेसि;। यदिगाक पॆक्कम्मु लसुरपै नेय
नवि वानि मैमऱु वट्टुताकि विऱिगि । भुवि मीद बडिन नप्पुडु लक्ष्मणुंडु
वॆंडियु बॆक्कॆय विरुगुट सूचि । "कांडंबु लेमॊको काडवु वीनि"
ननि यनि चिंतिंचि यलयुचुनुंडॆ;। "नॆन लेनि यीमर्म मॆऱिगितु" ननुचु
नप्पुडातनितोड ननिलुंडु वच्चि । चॆप्पॆ; "लक्ष्मण ! ब्रह्मचे वीडु वडसॆ
वरमु दा गोरि यी वज्र वर्मंबु । शरमु लॆव्वियु वीनि जालवु नाट;
४५८०
बलु तुनियलु गाग ब्रह्मास्त्र मेसि । पॊलियिंपु" मनवु डुप्पॊंगि लक्ष्मणुडु

ऐसा कहने के समान भुजगर्व से अधिक उत्कर्षित हो स्थिरता से संधान कर सात बाण चलाए। उन्हें इतने में ही शीघ्रता से लक्ष्मण ने अनेक खंड-खंड करके अधिक सिंहनाद कर, ॥ ४५७० ॥

—अतिकाय पर आग्नेय बाण चलाया। उसने सौरास्त्र का संधान कर प्रति-अस्त्र चलाया। वे दोनों शर उत्कर्षित हो एक दूसरे से जूझकर तिनके-तिनके बन गए। दनुज ने लगकर ऐषिक बाण चलाया जिससे काकुत्स्थतिलक (लक्ष्मण) आकंपित हो जाए। उत्कर्षित हो लक्ष्मण ने उसे ऐन्द्र से टुकड़े कर दिया। उसे देख दैत्य ने याम्यास्त्र चलाया। उसे वायव्यास्त डाल टुकड़े कर दिया। उसके अतिरिक्त असुर पर अनेक बाण चलाए। वे भी उसके कवच से लगकर, टूटकर जमीन पर गिर पड़े। तब लक्ष्मण ने और भी कई बाण चलाए, उनके भी टूटते देख 'बाण इसके शरीर में गड़ते ही नहीं। क्या बात है ?' ऐसा सोच चिंतित हो लक्ष्मण थका रह गया। 'इस अप्रतिम रहस्य को बताऊँगा' कहते हुए तब अनिल ने उसके पास आकर कहा—'हे लक्ष्मण ! इसने वर की इच्छा कर ब्रह्मा से वज्र-वर्म प्राप्त किया है। (इसके कारण) कोई भी शर इसके (शरीर) में गड़ नहीं सकता ॥ ४५८० ॥

—अनेक टुकड़े बन जाए ऐसा ब्रह्मास्त्र चलाकर संहार कर दो।' ऐसा

नदि समंत्रकमुगा नार्चुचु दॊंडगि । त्रिदशारि सुतु मीद दॆग गॊनि येसॆ;
नेसिन ब्रह्मांड मॆल्लनु बगुल । वासवुंडदर देवतलु गंपिप
धरणि वडंक दिक्तटमुलल्लाड । शरधुलु घूर्णिल्ल शैलमुल् वडक
धरणि चंद्रुलु गति दप्पंग जुक्क । लुरलंग रत्नपुंखोज्वलंबगुचु
ब्रळयकालमु नाटि पावकु भंगि । नॆलकॊनि लोकमुल् निंडि मंडुचुनु
यमदंडमुनु बोलॆ ननिल वेगमुन । ग्रममॊप्प नॆंतयु गडु रभसमुन
नम्मॆयि ब्रह्मास्त्र मरुदेर दैत्यु । डम्मुलु निगुडिप नवियु गैकॊनक
वच्चुटयुनु शक्ति वैचॆ; वैचुटयु । जॆच्चॆर ना शक्ति जॆकॊन कदियु
लावुन राग शूलंबुन बॊडिचॆ; । ना विधंबुनु गॊनकदि मीड़िराग
४५९०

गद व्रेसॆ; वेसिन गदयुनु द्रोचि । यदि वच्चुटयु जूचि यडिदान व्रेसॆ;
नदि दाटि रा बरश्वायुधं बॆत्ति । वदलक व्रेय दीव्रंबुन नदियु
गडचि येतेरंग गडक गटारि । बॊडिचॆ; नंदुन बोक बोरन राग
वलनॊप्प मॊल तुन्न वंकिनि बॊडिचॆ; । ज़लमुन नदि मीड़ि चटुल वेगमुन

कहने पर फूलकर लक्ष्मण ने सिंहनाद करते हुए उसका समंत्रक संधान कर, त्रिदशारि-सुत पर प्रचंडता से चलाया। चलाने पर, समस्त ब्रह्मांड विदीर्ण हो जाए, वासव सहम जाए, देवता कंपित हो जाएँ, धरणी काँप जाए, दिक्तट तड़प उठें, शरधियाँ आलोड़ित हो जाएँ, शैल काँप उठें, तरणि (सूर्य) और चंद्र पथभ्रष्ट हो जाएँ, तारे टूट गिरें, रत्न-पुंखों (-तीर की मूँठ) से उज्ज्वल बनते हुए, प्रलयकाल के पावक के समान, स्थिरता से (समस्त) लोकों में भरकर, प्रज्ज्वलित होते हुए, यमदंड के समान, अनिल वेग से, क्रम से अधिक रभस (वेग) से, उस प्रकार ब्रह्मास्त्र के आने पर दैत्य ने बाण चलाए तो उनकी परवाह न कर आने पर शक्ति को चलाया, चलाने पर झट उस शक्ति की भी परवाह न कर, समर्थता से आने पर (उसे) शूल से चुभोया। उस विधान की परवाह न कर उसके आगे बढ़ आने पर, ॥ ४५९० ॥

—गदा फेंक दी। डालने पर गदा को भी ढकेलकर उसके आते देख, करवाल से मारा। उसे भी पार कर आने पर परशु-आयुध उठाकर अवश्य डालने पर, उसे भी तीव्रता से पार कर आने पर, कटार से मारा, उससे भी न रुककर झट से आने पर, शोभा से अपनी कमर के वक्र कौक्षेयक से मारा। हठ से उसको भी पारकर चटुल वेग से,

अतिकायुडु लक्ष्मणुनिचे जच्चुट

बोव केतेंचिन बोंडिचें बिडिकिटनु;। देवतल् दललूप दिविरि याशरमु
मंडित कोटीर मंडलि तोड। गुंडलंबुलतोड गूल्चे दच्छिरमु;
नटु वज्रहति रोहणाद्रिशृंगंबु। चटुलत गूलिन चाड्पुन बडिन
यतिकायु तल जूचि यति भीति बोंदि। हत शेषुलैन दैत्याधमुल् पऱचि
लंक जोच्चुटयु गोलंकुल गपुलु। नंकिंचि रेंतयु; नारामु तम्मु
डरुदेंचि श्रीरामु नड्गुल कॆंऱग। गरमु संतोषिंचि कौगिट जेर्चि,
४६००

विनुत्तिंचि याकपिवीरुल तोड। ननयंबु हर्षिंचें नवनीशु; डंत
ना दैत्यनाथुंडु नय्यतिकायु। डादिगा गल दैत्यु लावृरु वडुट
विनि मूर्छ पालपडि वेगंबे तेलिसि। घनमुगा गन्नीरु ग्रम्म नंदंद
यति दुःखमुन जाल नडलुचु नुन्न। पति जेरि मयु पुत्रि पलिकें निट्लनुचु;
"नसुरेश! लोकंबु लन्निटिलोन। नसमान सत्त्वुडवैन नीकिट्लु
पाडिये शोकिंप? बंटवै नीवु। नाडेल तेंच्चिति नरनाथु देवि?
नोप्पिप नेरवै; तुचित कालंबु। दप्पे; नारामुनि दलपड्डु दैत्यु

अतिकाय का लक्ष्मण के हाथ मरना

—आ जाने पर मुष्टि से मारा। देवताओं के (प्रसन्नता से) सिर हिलाने पर, शीघ्रता से उस शर ने मंडित-कोटीर-मंडलि के साथ, कुंडलों के साथ उसके शिर को गिरा दिया। तब वज्र के आघात से रोहणाद्रि के शृंग के चटुलता से गिर पड़ने के समान, गिरे हुए अतिकाय के सिर को देख अतिभीत हो, हतशेष दैत्याधम भागकर लंका में घुस गए। (उसे) देख कपि अत्यन्त उल्लसित हुए। राम के अनुज ने आकर श्रीराम के चरण छुए। (उस पर) अधिक प्रसन्न हो, (उसे) गले लगाकर, ॥ ४६०० ॥

—विनुति (प्रशंसा) कर, उन कपिवीरों के साथ अवनीश (राजा राम) अनारत हर्षित हुए। तब वह दैत्यनाथ अतिकाय आदि छहों दैत्यों के गिरने (मरने) की बात सुनकर मूर्च्छित हुआ। शीघ्र होश में आकर, अधिकता से आँसुओं के घिर आने पर, जहाँ-तहाँ अति दुख से अधिक विकल बनने पर, पति के निकट जा मयपुत्री (मन्दोदरी) ने इस प्रकार कहा—"हे असुरेश! समस्त लोकों में असमान सत्त्ववाले हो। तुम्हें इस प्रकार शोक करना संगत है क्या? शूर के समान तुम नरनाथ की देवी क्यों लाए थे? (उसे) समझा नहीं सके। उचित समय भी बीत गया। उस राम का सामना करनेवाले दैत्यों के वापिस लौट आने की बात छोड़

लरुदेंतुरनु माट लवियु बोविडुवु; । सुरवैरि ! याजिलो जूपुं नी कडिमि"
ननु माट लालिंचि यात्म जिंतिंचि । वनित नंतःपुरवासंबु कनिचि
निनिचिन वगपुतो निट्टूर्पु वुच्चि । तन मंत्रिवरुलतो दशकंठु डनियें
४६१०

"गटकटा! तम्मुलु गादिलि सुतुलु । निटुवलॅ गूलि; रिंकेमन गलदु ?
विबुधुल कैनन्नु विडिपिंप रानि । प्रबलंबुलगु नागपाश बंधमुलु
पासिर मायनो बलिमिनो मनुजु; । लास सेसिन जॅल्ल ददि नाकु विजय
मारामु तम्मुनि नाजिलो गॅलुचु । वीरुनि नॅव्वनि वेंदकियु गान;
भयमॅन्नडुनु लेक परगु नीलंक । भयमुन बोंदे ना बलियुर वलन;
ना राम विभुनि पराक्रमंबुनकु । मेर यॅय्यदि ? यिट मीद नी लंक
यतनिचे बडकुंड नरसि येमरक । प्रति दिनंबुनु गाव बंपुडी" यनुचु
नंतःपुरंबुन करिगि योंक्कसड । नंतरंगमुन नडलुचु नुंडे;
नप्पुडु चनुदेंचि या मेघनाधु । डप्पंक्ति कंठुतो ननियॅ नोप्पार;
"ने नीकु गलुगंग निटु वगपेल ? । दानवाधीश्वर ! तगदु चिंतिंप;
४६२०
बटुतरंबैन नाबाण संहतिकि । नैंटु सहिंपग जालु नीश्वरुंडैन ?

दो। हे सुर-वैरी ! युद्ध में अपना साहस दिखाओ।" ऐसी बातें सुनकर, मन में चिंतन कर, वनिता को अन्तःपुर में भेजकर, पूर्ण दुख से लम्बी साँस छोड़, दशकंठ ने अपने मन्त्रिवरों से कहा— ॥ ४६१० ॥

—"हाय ! अनुज और लाड़ले पुत्र यों गिर गए। अब कहने को क्या है ? विबुधों (देवताओं) के लिए असाध्य और प्रबल नागपाश के बंधनों से, माया से हो या बल से हो, मनुज विमुक्त हुए। अब विजय की आशा मेरे लिए असंभव है। उस राम के अनुज को युद्ध में जीतनेवाले वीर को खोजने पर भी नहीं पा रहा हूँ। निर्भय हो शोभित होनेवाली लंका को उन बलवानों से भय उत्पन्न हुआ है। उस विभुराम के पराक्रम की सीमा कहाँ है ? अब आगे लंका उसके हाथ न पड़े, ऐसा प्रतिदिन सावधानी से रक्षा करते रहो।" (ऐसा) कहते अंतःपुर जाकर, एकांत में, मन ही मन व्याकुल होता रहा। तब मेघनाद आकर उस पंक्तिकण्ठ से मनोज्ञता से बोला—"मेरे रहते तुम्हें शोक करना क्यों ? हे दानवाधीश्वर ! (तुम्हें) चिंता नहीं करनी चाहिए ॥ ४६२० ॥

पटुतर मेरे बाण-संहति (आघात) को ईश्वर भी कैसे सहन कर सकेगा ? उधर देखो, राम को (और) उसके अनुज को चटुल-अंबकों से

नट्टु चूडु रामुनि नातनि तम्मु । जट्टु लांबकमुल जर्जरितुल जेसि
यसुवुलु वेंद्रिकि यय्यगचरावळुल । वसुमति पै गूल्चि वच्चेद गडिमि;
विबुध कंटक ! नेडु विनुमु ना प्रतिन;। विबुध लोकेशुंडु विष्णुंडु यमुडु
शिखियुनु रुद्रुंडु सितकरार्कुलुनु । नखिल साध्युलु बलि यज्ञ वाटमुन
नेचि विजृंभिचु नेंड द्रिविक्रमुनि। जूचिन गति नन्नु जूतुरु गाक" !

इंद्रजित्तु रेंडव मारु युद्धमुनकु वेडलुट

यनि वीडुकोंनि दिव्यमगु रथंबेक्कि। दनुजेन्द्र तनयु डेंतयु सोंपु मीरि
नडवंग नप्पुडु नाना मुखमुल । गडु वेगमुन नुर्वि गदलगा गदलि
वेडले रथंबुलु; वेडले नेनुगुलु; । वेडले गुर्रंबुलु; वेडले गाल्बलमु;
पुंडरीकंबुल बोलुपारु वारु । बुंडरीकाक्षुल बोलुपारु वारु ४६३०
बुंडरीकच्छाय बोलुपारु वारु । बुंडरीकोन्नति बोलुपारु वारु
बुंडरीकोग्रत बोलुपारु वारु । बुंडरीकमु शक्ति बोलुपारु वारु
नप्पुडुग्रत जतुरंग सैन्यमुल । नोप्पिरि दानवु लुग्राननमुल;
नार्पुलु बोब्बलु नतुल हुंकृतुलु । दर्पित सिंह नादस्फरणमुलु

जर्जरित कर, प्राण उखाड़कर (संहार कर) अगचर-अवलियों को, साहस से वसुमति पर गिराकर आऊँगा। हे विबुध-कंटक ! आज सुनो मेरी प्रतिज्ञा। विबुध-लोकेश (इन्द्र), विष्णु, यम, शिखि (अग्नि), रुद्र, सितकर (चंद्र), अर्क, अखिल साध्य (आदि) मुझे बलि की यज्ञशाला में विजृंभित होनेवाले त्रिविक्रम की भाँति देख लेंगे।"

इन्द्रजित का दूसरी बार युद्ध के लिए निकल पड़ना

—(ऐसा) कह बिदा लेकर, दनुजेन्द्रतनय दिव्य रथ पर आरूढ़ होकर, अधिक मनोज्ञता से चल पड़ा। तब नानामुखों से (चौरतफ़ से) रथ अतिवेग से चल पड़े जिससे उर्वी कंपित हो उठी। हाथी चल पड़े, घोड़े चल पड़े, पैदल सेना चल पड़ी। पुंडरीकों (कमल और श्वेतछत्र) के समान शोभित होनेवाले, पुंडरीकाक्ष (व्याघ्र और विष्णु) के समान शोभित होनेवाले, ॥ ४६३० ॥

—पुंडरीक (श्वेतछत्र) की छाया से शोभित होनेवाले, पुंडरीकों (के व्याघ्र के औन्नत्य से शोभित) होनेवाले, पुंडरीकों (आग्नेय दिशा का दिग्गज) की उग्रता से शोभित होनेवाले, पुंडरीक (व्याघ्र) की शक्ति से शोभित होनेवाले, ऐसे दानव तब उग्रता से, उग्र आननों से चतुरंगसेना में विलसित हुए। सिंहनाद, गर्जनाएँ, अतुल हुंकार, दर्पित सिंहनाद, नेमीरव,

नेमीरवंबुलु निस्साणरवमु । रामणीयकमु नुग्रंबुनै यमर
भासुर धावळातपत्र मॊप्पार । नासुधाकरु तोडि याकाश मनग
गमललोचनमुलु ग्राल नंदंद । प्रमदाजनमु चामरंबुलु वीव
बहु भूषण प्रभा पटलंबु वॆलुग । सहज वैभव महोज्ज्वलु डिंद्रजित्तु
चनुदॆंचि रण महीस्थलमुन निलिचि । घन भुजु डत्यंत कौतूहलमुन
रक्त वस्त्रंबुल रक्त माल्यमुल । रक्त गंधंबुल राजितुंडगुचु ४६४०
वर मंत्रमुल हुतवहु ब्रतिष्टिंचि । शरमुलु दोमर चयमुलु वरुस
बरिधुलु सेसि यॊप्पग स्रुक्स्रुवमुलु । कर मर्धि लोहमुल्गा संघटिंचि
तनलोन निष्ठ युदात्तमै यॊप्प । दनुजेन्द्र तनयु डथर्वणोक्तमुगा
जदुरुडै नॆय्यि लाजलु दाडि समिध । लोदवंग वेल्चुचु होमांत वेळ
गडगि कृष्णच्छाग कंठरक्तंबु । नडरॆंडु वह्नि बूर्णाहुति वेल्व
ननलुंडु वॊंडसूपि हव्यमुल् गॊनियॆ; । ननलुनि करुण ब्रह्मास्त्रंबु रथमु
धनुवुनु गवचंबु दद्दयु ब्रीति । गॊनि यार्चुकॊनुचु दिक्कुलु पॆल्लगिल्ल
दानवुंडर्कॆंदु तारका समिति । तो नभंबगलंग दुर्दांतुडगुचु
रथ रथ्य केतु सारथुलतो नॆगसि । प्रथित वेगमुन नंबर वीथि डागि

निस्साणरव—(ये सब) रमणीय तथा उग्र हो शोभित हुए। भासुर-धवल-आतपत्र के शोभित होने पर, मानों उस सुधाकर से युक्त आकाश के सम होनेपर, कमललोचनों से विराजित प्रमदाजनों के जहाँ-तहाँ चामर डुलाने पर, बहुभूषण-प्रभा-पटल के प्रकाशित होने पर, सहज-वैभव से महोज्ज्वल बना इंद्रजित आया और रण-महीस्थल पर खड़ा हो गया। वह घन-भुजाओं वाला अत्यन्त कुतूहल से रक्त-वस्त्र, रक्त-माल्य, रक्त-गंधों से विराजित होते हुए, ॥ ४६४० ॥

—वर मन्त्रों से हुतवह (अग्नि) को प्रतिष्ठित कर, शरों और तोमरचयों को क्रम से परिधियाँ बनाकर, शोभा से, बड़ी इच्छा से, लोहे के स्रुक और स्रुवों को एकत्रकर, अपने (मन) में निष्ठा के उदात्त हो शोभित होने पर, दनुजेन्द्रतनय ने अथर्वण के अनुसार, स्थित हो, घी, खील, ताड़ की समिधाओं का हवन करते हुए, होम की अन्तिम-वेला में, सयत्न कृष्ण-छाग (काले बकरे) के कंठरक्त को प्रज्वलित वह्नि में पूर्णाहुति के रूप में हवन करने पर, अनल ने दिखाई पड़कर हव्य ग्रहण किए। अनल की करुणा (अनुग्रह) से ब्रह्मास्त्र, रथ, धनुष, कवच को अधिक प्रीति से प्राप्त कर, दिशाओं को विदीर्ण करते, सिंहनाद करते हुए, दानव अर्क-इन्दु-तारक-समिति से आकाश विदीर्ण हो जाए ऐसा दुर्दान्त बनते हुए, रथ-रथ्य-केतु सारथियों के साथ उछलकर, प्रथितवेग से अंबर में छिपकर, अगणित

यगणित विक्रमुडै यॊप्प बलिकॆ । दगियॆडु बुद्धिगा दन सेनतोड ४६५०
“दरलक निलिचि युद्धमु सेयु चुंडु; । डुरक येनुनु दिवि नुंडि घोरमुग
रण मॊनरिंचि याराम लक्ष्मणुल । गणुतिप किंत वेगमुन जंपॆदनु”
अनिन युत्साहवाक्यमु विनि पॆंचि । दनुजुलु सेनावितानंबुतोड
दरुचर सेनल दाकि यंदंद । परवसंबुन बॆक्कु भंगुल बोर
ना समयंबुन नादानवुंडु । भासुरंबुग दन प्रभ गाननीक
यादिवि नुंडि दिव्यास्त्रंबु लेय । नादानवुनि दॆस कगचरु लॆगसि
यगमुलु वैवंग नवि द्रुंचि गुंडॆ । लगलिंचि पॆक्कंड्र नवनिपै गूल्चि
वेगंबॆ यॊक्कॊक्क विषम बाणमुन । नेगुर दॊम्मंड्र नेड्गुर नेसॆ;
मऱियुनु गडिमिमै मर्कटेश्वरुलु । नॆऱयंग गिरि धरणीजंबु लॆत्ति
या यिंद्रजित्तुपै नडरिप नतडु । सायकंबुल वानि जतुरुडै त्रुंचि ४६६०
पदियु नॆन्मिदि तीव्र बाणंबु लेसॆ । मद मॆल्ल जॆड गंधमादनु; गडिमि
दीपिंप नलु दॊम्मिदिट रूपुमापॆ; । नेपार मैंदुनि नेडिट नॊंचॆ;
गदिसि पंचकमुन गजु बॊलियिंचॆ; । बदियिंट भल्लूकपति गूलनेसॆ;

विक्रमवाला होता हुआ, उचित बुद्धि से विराजते हुए अपनी सेना से (यों) बोला— ।। ४६५० ।।

—“न हटकर, खड़े रहकर, यों ही युद्ध करते रहिए। मैं भी आकाश से घोर रूप में रण करके, उन राम-लक्ष्मणों की गिनती (परवाह) किए बिना, अतिशीघ्र मार डालूँगा।” (ऐसा) कहने पर (उस) उत्साह वाक्य को सुनकर, विजृंभित हो, दनुज सेनावितान के साथ तरुचर-सेनाओं पर टूट पड़कर, जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) परवश होकर, अनेक प्रकार से जूझते रहे। उस समय उस दानव ने भासुरता से (प्रकट रूप से) अपनी प्रभा को दिखाई पड़ने न देकर, उस आकाश से दिव्य अस्त्र चलाए। उस दानव की ओर अगचर उछलकर, अगों (पर्वतों) को डालने पर, उन्हें तोड़कर, वक्षों को विदीर्ण कर, अनेक (वानरों) को अवनि पर गिराकर, वेग से एक-एक विषम बाण से (एक साथ) पाँचों, नौओं, सातों को (मार) गिराया। तब साहस से मर्कटेश्वरों ने उत्कर्ष से गिरियों (और) धरणीजों को उठाकर उस इन्द्रजित पर फेंका तो उसने चतुर बन उन्हें सायकों (बाणों) से तोड़कर, ।। ४६६० ।।

—गंधमादन पर दश और आठ (अठारह) तीव्रबाण चलाये जिससे उसका समस्त मद चूर हो गया। साहस के दीप्त होने पर (इन्द्रजित ने) नौ (बाणों) से नल को विरूप कर दिया, उत्कर्ष से मैन्द को सात (बाणों) से

नूटनु हनुमंतु नौंप्पिंचि मिंचॆ; । मूट गवाक्षुनि मौगि गाड नेसॆ;
बदियिंट हरिरोमु प्राणमुल् गौनियॆ; । नद टणंगग रंभु नाऱिट नेसॆ;
दगिलि याऱिट वेगदर्शि भंजिचॆ । दॆंगि सुषॆणुनि नॆन्मिदिट नौंप्पिचॆ;
ननयंबु बदिट सूर्यप्रभु नौंचॆ; । बनसुनि यंगंबु बदुमूट ग्रुच्चॆ;
घनतर बाणाष्टकंबुन गुमुदु । नॆनसि नीलुनि मुप्पदिटनु मुंचॆ;
मसलक मऱि पॆक्कु मार्गणंबुलनु । रसिकत दूल दारातनूभवुनि
सुनिशितंबैन याशुगमुल मूट । दिनकर तनयु नैदिट निंद्रजालु ४६७०
गिरिभेदि रॆंटनु गॆडपि याऋषभु । निरुवदि शरमुल निल द्रॆळ्ळनेसॆ;
गेसरि बदुनालुगिंट दधिमुखुनि । भासुरंबगु बाणपंचकंबुननु
सुमुखुनि ग्रथनुनि सौरिदि नाऱिट । विमुखुनि नाऱिट द्विविदु नेडिट
शरभु नेडिटनु शतबलि बदिट । सरि नॆन्मिदिट हरु सन्नादु मूट
नरुदुगा दक्किन यखिल यूथपुल । वरदिव्य शस्त्रास्त्र-वर्षंबु गुरिसि
कडु भिन्न-गात्रुल गाविंचि नेल । बडवैचि मऱि गतप्राणुल जेसि
कौंदऱु नम्मुलु गौनि काड नेसि । कौंदऱु गद लॆत्तुकौनि बिट्टु ब्रेसि
कौंदऱु शूलमुल् गौनि तूरबौडिचि । कौंदऱु शक्तुलु गौनि निगुडिंचि

पीडित किया, नियराकर पंचक (पाँच बाणों) से गज का संहार किया, दस (बाणों) से भल्लूकपति को मार गिराया, सौ से हनुमान को पीड़ित कर शोभित हुआ, तीन (बाण) गवाक्ष पर क्रम से धाँस दिए, दस से हरिरोम के प्राण लिए, गव का दमन हो जाए ऐसे रंभ पर छः बाण चलाए, लगकर छः से वेगदर्शी को मारा, सुषेण को आठ से पीड़ित किया, अनारत दस से सूर्यप्रभ का दमन किया, पनस के शरीर में तेरह (बाण) घुसेड़ दिए, घनतर बाणाष्टक से कुमुद को (तथा) विवर्द्धित हो नील को तीस (बाणों) से डुबो दिया। बिना विश्राम किए अनेक मार्गणों को चलाकर रसिकता छूट जाए ऐसा तारातनूभव को, सुनिशित तीन आशुगों से दिनकरतनय को, पाँच से इन्द्राजात को, ।। ४६७० ।।

—गिरिभेदी को दो से गिरा देकर, उस ऋषभ को बीस शरों से पृथ्वी पर गिरा दिया। केसरी को चौदह से, दधिमुख को भासुर बाणपंचक से क्रम से सुमुख और क्रथन को छः से, द्विविद को सात से, शरभ को सात से, आठ से हर को, सन्नाद को तीन से, विरल रूप से शेष समस्त यूथपों (सेनापतियों) पर वर-दिव्य-शस्त्र-वर्षा बरसाकर, अधिक भिन्न (छिन्न)-गात्र वाले कर, पृथ्वी पर गिराकर, फिर (उन्हें) गतप्राण कर, कुछ पर बाण चलाकर, कुछ को गदाओं से खूब मारकर, कुछ को शूलों से भोंककर, कुछ पर शक्तियाँ खूब चलाकर, सबको इस प्रकार अवनी पर गिराकर, जहाँ-तहाँ

यंदऱ नीक्रिय नवनिपै गूल्चि । यंदंद पेर्चि तीव्रास्त्र घट्टनल
निग्रहिंचुचु नुंड नॆऱि निंद्रजित्तु । नुग्र बाणंबुल कोर्वनि कपुलु ४६८०
गलग बाऱॆडु कपुलू कंपिंचु कपुलु । दलकॆडु कपुलुनु दागॆडु कपुलु
गलिगि यप्पुडु चूड गपिसेन कॆल्ल । ब्रळय कालंबैन भंगियै तोचॆ;
दनुजेन्द्र तनयु डैंतयु ब्रतिलेक । तनरु ब्रह्मास्त्रमंत्र प्रभावमुन
नुन्न वानर सेनयुनु जंपि वैचि । युन्नत जयमुन नुग्रुडै यार्चॆ;
गपि कोटि नॊच्चिचन गडगि सौमित्रि । कुपितुडै यन्न गन्गॊनि विन्नविंचॆ
"देव ! ब्रह्मास्त्रंबु दीपिंप जेसि । रावण सहित मीराक्षस कोटि
नंतयु जंपॆद, नानति यिम्मु, । चिंतिंप नेटिकि जॆच्चॆर" ननुड
"वीनि मायल जेसि वीनि रूपंबु । गाननि यप्पुडु कडगि लोकमुलु
भस्मंबु सेयुचु ब्रह्मास्त्र मरुगु । विस्मयंबुग बलाविर्भाव मॊप्प;
गावुन वीनिकै कडगि लोकमुल । नीवेल काल्चॆदु निष्ठुर वृत्ति ?
४६९०
नीराक्षसुडु ब्रह्म यिच्चिन वरमु । कारणंबुन जेसि कपिकोटि जंपॆ;
ननयंबु मनर्मिक नाब्रह्म वरमु । मनमुन नॊककॊंत मन्निंप वलयु"

विजृंभित होकर, तीव्र अस्त्रों के आघातों से (वह प्रतिपक्षियों का) निग्रह करता रहा। क्रम से इन्द्रजित के उग्र बाणों को सह न सकनेवाले कपि, ।। ४६८० ।।

—विकल हो भागनेवाले कपि, कंपित होनेवाले कपि, तितर-बितर होनेवाले कपि, छिपनेवाले कपि—(इन सबसे) युक्त हो, देखने पर, वह समय समस्त कपि-सेना के लिए प्रलयकाल की भाँति दीख पड़ा। दनुजेंद्रतनय अत्यधिक अप्रतिम हो विजाजमान ब्रह्मास्त्र के मन्त्रप्रभाव से, वानरसेना का संहार कर, उन्नत-जय से उग्र बन सिंहनाद किया। कपिकोटि के पीड़ित होनेपर, सयत्न सौमित्र ने कुपित होकर, अग्रज को देख (यों) निवेदन किया—"हे देव ! ब्रह्मास्त्र को प्रदीप्त कर, रावण सहित इस समस्त राक्षसकोटि को मार डालूँगा। आदेश दीजिए झट से। चिंता करने की क्या आवश्यकता है ?" (ऐसा) कहने पर "इसकी मायाओं के कारण इसके स्वरूप के न दिखाई पड़ने पर, लगकर लोकों को भस्म करते हुए, बलाविर्भाव के शोभित होने पर ब्रह्मास्त्र चला जाएगा। अतः इस (एक राक्षस) के लिए तुम निष्ठुरवृत्ति से लोकों को क्यों जला दोगे ? ।। ४६९० ।।

—इस राक्षस ने ब्रह्मा के दिए वर के कारण से कपिकोटि का संहार किया। अब हमें उस ब्रह्मा के वर का थोड़ी देर तक मान करना चाहिए।"

इन्द्रजित्तु ब्रह्मास्त्रमुचे रामादुल मूर्छ नॊंदिंचुट

ननुचुंड निंद्रजित्तारघुकुलुल । गनुदॆऱवनि मूर्छ गदुरंग नॆसॆ;
गर्वितुंडगु दशकंठनंदनुडु । पर्विन नीलाभ्र पटलंबुगाग
नर्डरिंचु कार्मुकज्यानिनादंबु । लुडुगक वॆसम्रोयु नुरुमुलु गाग
वडि बून्चि दैत्युडु वैचुचुनुन्न । बॆडिदंपु शक्तुलु पिडुगुलु गाग
नगणित दिव्य शस्त्रावळि यंदु । मिगिलिन दीप्तुलु मॆऱुगुलु गाग
बॊरि बॊरि बुंखानुपुंखंबुलगुचु । नरुदॆंचु बाणम्मु लतिवृष्टि गाग
गऱुल नॊप्पिन सॆलकट्टिय लॆल्ल । दऱचुगा नाडु चातकमुलु गाग
गनक रत्न प्रभा कलितमौ चाप । मनुवॊंद निंद्र शरासंबु गाग ४७००
नसुरुलयंदुनु नगचरुलंदु । वॆसग्रम्मु नॆत्तुरु वॆल्लुव गाग
बंबि हारमुलकु बासिन मौक्ति । कंबुलु नॆऱि वडगंड्लुनु गाग
नुरलिन मकुट महोज्ज्वल मणुलु । परगिन यिंद्र गोपंबुलु गाग
लालितंबगु काहळा निनादमुलु । वालिन केकारवंबुलु गाग
समधिक पटहोग्र सन्नाह रवमु । रमणीय मंडूकरावंबु गाग
नसमुन रघुपति हालिकुडै पेर्चि । यसुरेशु विपुल देह क्षेत्रमुननु

इन्द्रजित का ब्रह्मास्त्र से राम आदियों को मूर्च्छित करना

—(ऐसा) कहते समय इन्द्रजित ने उन रघुकुलवालों को ऐसी मूर्च्छा में डाल दिया कि वे आँखें भी खोल न सके। (तब) गर्वित बने दशकंठ-नंदन के व्याप्त नीलाभ्र-पटल के समान होकर, उत्कर्षित कार्मुक-ज्या (धनुष की डोरी) का निनाद अनारत मुखरित होनेवाले मेघगर्जन होने पर, झट सप्रयत्न दैत्य की चलायी भयंकर शक्तियाँ अशनियाँ होने पर, अगणित दिव्य शस्त्रावली की अधिक दीप्तियाँ बिजलियाँ होने पर, बार-बार पुंखानुपुंख हो (लगातार) आनेवाले बाणों के अतिवृष्टि (सम) होने पर, पंखवाले बाणों के चातक होने पर, कनक-रत्न-प्रभा-कलित चाप के शोभा से इन्द्रशरासन (इन्द्रधनुष) होने पर, ।। ४७०० ।।

—असुरों तथा अगचरों (के शरीरों) से झट फूट निकलनेवाले रक्त की बाढ़ होने पर, परिव्याप्त हारों से छूटे मोतियों के ओले सरिस होने पर, लुढक पड़े मकुटों के महोज्ज्वल मणियों के शोभित इन्द्रगोप होने पर, लालित काहल के निनादों की शोभित मयूर-ध्वनियाँ होने पर, समधिक-पटह-उग्र सन्नाह-रव के रमणीय मंडूक-रव होने पर, वह समय, पहली वर्षा के समय के समान ऐसा शोभित हुआ मानों दर्प से रघुपति, हालिक (किसान) बन विजृंभित हो, असुरेश की विपुलदेह रूपी क्षेत्र में अवश्य बाण रूपी बीज

नडरि लोकंबेल्ल नलरंग मुट्टि । विडुवक यम्मुलु वेंदवेट्टु कोंड्कु
वच्चिन तोंलकरि वानकालंबु । नच्चुन नोंप्पारें ना समयंबु;
"कान गदा यिक गडगि राघवुडु । मानक बाहु समग्रत मेंड्रसि
कलनिकि नद्दशकंठुनि देंच्चि । तलकोत कोसि युद्दंडत नुड्रिय ४७१०
दलपोयु" ननिन चंदमुन जित्रंबु । वेंलय डेंब्बदि रेंडु वेंल्लुवलेंन
वनचरवरुल भूवरुल जयिंचि । घनतर ज्यानाद कलितुडैं मगुडि
यालंबु सालिंचि यायिंद्रजित्तु । डालंक लोनिकि नरिगें नव्वुचुनु;
मनुजेशु दुरवस्थ मदि विचारिंचि । कनुगोंन जालक कन्नुलु मोंगिचि
कोंनि तोंलंगिन माड्कि ग्रुंकें नर्कुडु । वनचरवर-मुख-वनजमुल् मुडुग;
गपि कोटिचे लंक गालुचो धूम । मुपमिप नीगति नुंडु नन्माड्कि
गडु नग्गलमुग लोकंबेल्ल निंडि । तडय केंतयु नंधतमसंबु ववेंं;

हनुमद्विभीषणुलु ब्रह्मास्त्रमु बारि बडक सैन्यमुनु बरीक्षिंचुट

नप्पुडु तोंडगि ब्रह्मास्त्र मंत्रंबु । नोंप्प जपिपंग नोंकटियु गाक
युन्न बिभीषणुंडुर्वर गूलि । युन्न सुग्रीवादि योधुल जूचि
"वनचरुलार ! गीर्वाणारिसुतुडु । वनरुह गर्भुनि वरमुन जेसि ४७२०

रोपने के लिए आया हो जिससे समस्त लोक हर्षित हों। ऐसा होने पर अब सयत्न राघव, न छोड़कर बाहु समग्रता (बाहुबल) से दीप्त हो, युद्ध-भूमि में उस दशकंठ को लाकर, उसका सिर काटकर, ।। ४७१० ।।
—उद्दंडता से दृढ़ता से दंवरी कराना चाहते हों। अतिविचित्र रूप से बहत्तर बाढ़ों के रूप में विलसित वनचर-वरों (तथा) भूवरों को जीतकर, घनतर-ज्या-नाद से कलित हो, युद्ध स्थगित कर, लौटकर वह इन्द्रजित हँसते हुए लंका में गया। मनुजेश (राम) की दुरवस्था के लिए मन में दुखी हो, न देख सक, आँखें मूंदकर, हट जाने के समान सूर्य अस्तंगत हुआ जिससे वनचर-वर-मुखी रूपी वनज मुरझा गए। कपिकोटि के हाथ लंका के जलते समय (उठने वाला) धुआँ मानों इस प्रकार फैलेगा, इस प्रकार अधिक अंधतमस (अन्धकार) समस्त लोक में घने रूप में व्याप्त हो गया।

हनुमान और विभीषण का ब्रह्मास्त्र का शिकार न बनकर, सेना का निरीक्षण करना

तब उपक्रम कर, ब्रह्मास्त्रमन्त्र को शोभा से जपने पर, (अपने को) कुछ भी (हानि) न होने पर विभीषण ने भूमि पर गिरे हुए सुग्रीव आदि योद्धाओं को देखकर (कहा) "हे वनचरो ! गीर्वाण-अरि-सुत के वनरुहगर्भ (ब्रह्मा) के वर के कारण से, ।। ४७२० ।।

पन्नियेयुटयुनु 'ब्रह्मास्त्र शक्ति। मन्निप दगु' ननि मनमुन दलचि
वंचिचि याराम वसुमतीनाथु। डिंचुक सैँचिनाडितियकानि
मऱि यॊंडुगा" दनि महित वाक्यमुल। वॆऱ्वॊप्प बलुकंग बिनि यंतलोन
वायुसूनुडु ब्रह्म वरमुन जेसि। या यिंद्रजित्तु दिव्यास्त्र संततुल
जावकुंडुट विभीषणु तोड ननियॆ। "भावित मिप्पुडु भंडन भूमि
निट्टु पड्डु वारिलो नॆव्वरु गलरॊ। पटु बाण हतुलय्यु ब्रतिकिन वार"
लनि यिद्दऱुनु गूडि यंधकारमुन। गॊनकॊनि मंडॆडु कॊऱ्वुलु वट्टि
कॊनि कलनॆल्लनु ग्रुम्मरुनपुडु। ननयंबु ना संगरावनिलोन
नंदंद युडुगक याडु नट्टलुनु। ग्रंदुगा मांसमुल् गऱचु भूतमुलु
बॆडिदंबुगा नार्चु बेताळमुलुनु। नडरॆडु रक्तंबुलानु डाकिनुलु ४७३०
गंडलु गबळिंचु कंक गृध्रमुलु। नॊंडॊंड यॆलुगिचु नुरु सृगालमुलु
गॆडसि नॆत्तुरुलु ग्रक्कॆडु भल्लूकमुलु। नुडुगक यंदंद यॊरलु कोतुलुनु
गुदिसि काळुलु दन्निकॊनु वलीमुखुलु। गदिसिन दंतमुल् गल प्लवंगमुलु
लावऱि वडिन गोलांगूलमुलुनु। भाविपरानि रूपमुल वानरुलु
गीलाल वारि दोगिन यद्रिचरुलु। गॆलिमै दूलि बृंगिन नगचरुलु

—चाहकर (ब्रह्मास्त्र) चलाने पर 'ब्रह्मास्त्र की शक्ति का मान करना चाहिए' ऐसा मन में सोचकर, (शत्रु की) वंचना कर, राम-वसुमतीनाथ ने थोड़ा उसको सहन किया है। इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।" ऐसे महित वाक्यों को शोभा से कहने पर, सुनकर, इतने में वायुसून ने ब्रह्मा के वर से उस इन्द्रजित के दिव्य-अस्त्र-समूहों से न मरने के कारण, विभीषण से कहा—"अब देखें कि भंडन (युद्ध)-भूमि में ऐसा गिरे हुए लोगों में, पटु बाणों से आहत होकर भी कितने लोग जीवित हैं ?" (ऐसा) कह दोनों मिलकर, अंधकार में, लगकर जलनेवाले अलावों को पकड़कर युद्धभूमि में घूमते रहे। तब सदा उस संगर-अवनी में जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) रुके बिना (निरन्तर) नाचनेवाले रुंड, खूब मांस खानेवाले भूत, भीकरता से सिंहनाद करनेवाले बेताल, अधिक रक्त का पान करनेवाली डाकिनियाँ, ॥ ४७३० ॥

—मांस-पेशियों को निगलनेवाले कंकगृद्ध, परस्पर शब्द करनेवाले बड़े शृगाल, नियराकर रक्त उगलनेवाले भल्लूक, न रुककर जहाँ-तहाँ चीखने (कराहने) वाले वानर, सिकुड़कर पैरों से छटपटानेवाले वलीमुख, गड़े दाँत वाले प्लवंग, सामर्थ्य को खो गिर पड़े गोलांगूल, कल्पना से अतीत (विकृत) रूपवाले वानर, रक्तप्रवाह में ऊभचूभ अद्रिचर, लीला से धूल

नौंदिगि यूरक पडियुन्न वानरुलु । बदमु लाडक तोंट्रुपडु वनचरुलु
बदुर नेबंड्रनु ब्रदर मोक्कटनु । गुदुलु ग्रुच्चिन क्रिय गूलिन कपुलु
नंतंत दुत्तुमुरैन शैलमुलु । निंतितलैन महीरुहमुलुनु
खंडंबुलैन राक्षसुल शूलमुलु । दंडिगा दुनुकलै धरबड्ड गदलु
निडंग सामजनिकरमुल समर । मंडलि बडियुन्न मऱिवेंऱगंदि ४७४०
कनुगोनि खिन्नुलै कडु दुःखमडर । ननिरि विभीषण हनुमंतु लपुडु;
“वलयु कार्यमु जांबवंतुनि नडुग । वलयु; गार्यंबुल वलनातडेऱुगु;
नतडुन्नयेड निक नरयुद; मरसि । यतडु सेप्पिन त्रोव नरुगुद मनुचु
गलनेल्ल वेदकुचु गनुगोनि रपुडु । बलितंपु शरशय्य बडियुन्न वानि
गनि जांबवंतु डग्गऱि दैत्यनाथु । डनियेनु बेद्दयु नार्तुडै यपुडु;
“ब्रतिकि युन्नाडवे ? पलुकंग गलवे ? । यिदे ऋक्षराज! मम्मेऱुगुदे ?”
यनिन
दानवु शरहति दर्पंबु दूलि । हीन स्वरमुन ऋक्षेशु डिट्लनियें:
“सर्व विशेषंबु विचारिंचि बुद्धि । बरिकिंचि नीवनि पलिकेद गानि
कन्नुल नम्मुलु गाडुट जेसि । सन्न दृष्टुलु, विभीषण! कानरावु;

में डूबे नगचर, सिकुड़कर यूँही पड़े हुए वानर, चल न सक लड़खड़ाते वनचर, एक ही प्रदर (बाण) से दसों, पचासों को झुंड में गूँथने के समान गिर पड़े कपि, जहाँ-तहाँ चूर-चूर बने शैल, छोटे-छोटे टुकड़े बने महीरुह, खंड बने राक्षसों के शूल, खूब तिनके बन धरा पर गिरी गदाएँ, सामजनिकर (गजसमूह) के समर-भूमि में खूब भरे रहने पर और भी चकित (अथवा भीत) होकर, ॥ ४७४० ॥

—देखकर, खिन्न हो, अधिक दुख के विवर्द्धित होने पर, तब विभीषण (तथा) हनुमान ने (यों) कहा—“होने वाले कार्य के बारे में जांबवान से पूछना चाहिए। आवश्यक कार्यों के विधान को वह जानता है। यह खोजें कि वह कहाँ है। उसे देख उसके कहे मार्ग (विधान) का अनुसरण करेंगे।” (ऐसा) कहते हुए, समस्त युद्धभूमि में खोजते हुए, भीकर शरशय्या पर पड़े हुए उस (जांबवान) को देखा। देखकर, जांबवान के निकट जाकर अधिक आर्त बन दैत्यनाथ (विभीषण) ने कहा—“जीवित तो हो ? बोल सकते हो ? हे ऋषभराज ! यह हमें जानते हो ?” (ऐसा) कहने पर, दानव (मेघनाद) के शराघात से दर्प को खोकर, हीन स्वर से ऋक्षेश ने यों कहा—“स्वर-विशेष का विचारकर, बुद्धि से देखकर कहता हूं कि तुम हो। आँखों में बाणों के गड़ जाने से हे विभीषण ! कुछ नहीं

चॆवुलकु निपुगा जॆप्पुमु नाकु; । बवमान सूनुंडु ब्रदिकि युन्नाडॆ?"
४७५०

यनवुडु वॆऱगंदि याजांबवंतु । कनियॆं विभीषणु डति संभ्रममुन;
"गडुवॆऱगय्यॆंडु; घनुडैन रामु । नडुगक, लक्ष्मणु नडुगक, यिनजु
नडुगक, यंगदु नडुगक, यतनि । नडुगुट येतलंपगु ? ऋक्षराजु!"
यनुडु "विभीषण! हनुमंतुडॊकडु । तनुवुतो नुंडिन दरुचरु लॆल्ल
ब्रदुकुदु; रातडु ब्रदुक डेनियुनु । ब्रदिकि युंडिननैन ब्रदुकरु कपुलु"
ननुमाट विनि मुदंबंदि वायुजुडु । दनपेरु सॆप्पि पादमुलकु म्रॊक्कॆ;
म्रॊक्किन नॆऱिगि यिम्मुल ऋक्षराजु। तक्वक यात्ममुदंबुनु बॊंदि
तनु बुनर्जातुगा दलपोसि यनियॆं । ननिल-नंदनु तोड नर्थि दीपिंप;
"दलपोय वायुनंदन! नीवु दक्क । गलुगुने यॊक्कडी कपुलकु दिक्कु!
अदि गान नी विप्पु डंबुधि दाटि । वदलक याहिमवंतंबु गडचि४७६०

हेम कूटंबुनु ऋषभ पर्वतमु । नामेरुवुनु रजताद्रियु गडचि
श्वेताचलमु दाटि शीघ्रत मॆऱसि । याततमगु लवणांबुधि गडचि
यरिगि शाकद्वीप मव्वलि कॆगि । तरगल नॊप्पु सुधा वार्धि दाटि
चन्द्रशैल द्रोण शैल मध्यमुन । सांद्रदीधितुल नुज्ज्वलत वॆंहिचि

देख पा रहा हूँ। कर्णप्रिय रूप में कहो कि क्या पवमानसून जीवित ही है?" ॥ ४७५० ॥

—ऐसा कहने पर चकित हो, अति संभ्रम से जांबवान से विभीषण ने कहा—"बड़ा आश्चर्य हो रहा है। महान् राम के बारे में न पूछकर, लक्ष्मण के बारे में न पूछकर, इनज के बारे में न पूछकर, अंगद के बारे में न पूछकर, उसके बारे में पूछने में हे ऋक्षराज ! तुम्हारा मतलब क्या है?" (ऐसा) कहने पर (जांबवान ने कहा) —" हे विभीषण ! एक हनुमान जीवित रहेगा तो समस्त तरुचर जीवित रहेंगे। वह जीवित नहीं रहेगा तो जीवित रहते हुए भी कपि जिन्दा नहीं रहेंगे।" यह बात सुनकर मुदित होकर वायुज ने अपना नाम बताकर, चरणों में प्रणाम किया। प्रणाम करने पर (हनुमान को) जानकर, प्रेम से ऋक्षराज, आत्मा में मोद को प्राप्तकर (कहा—) "न रुककर उस हिमवान को पार कर, ॥ ४७६० ॥

—हेमकूट और ऋषभपर्वत, उस मेरु को तथा रजताद्रि को पारकर, श्वेताचल को पारकर, शीघ्रगति से दीप्त होकर, आतत-लवणांबुधि को पारकर, शाकद्वीप के उस पार जाकर, तरंगों से शोभित सुधावारिधि को

तिरमैन यायौषधीशैल मक्कि । करमॊप्प संजीव करणि विशल्य
करणियु संधान करणि सौवर्ण । करणियु नानालु गलवौषधम्मु;
लवि तॆच्चि यीवानरावळि नॆल्ल । बवनतनूभव ! ब्रतुंकंग जेसि
रागंबु नॊंदिपु रामलक्ष्मणुल । वेगंबॆ" यनवुडु विनि वायुजुंडु

आंजनेयु डोषधीशैलमु दॆच्चि रामादुल मूर्छ दॆलिंचुट

ननि वीड्कॊनि सुवेलाचलं बॆक्कि । चतुरुडै पदमुलु सममुगा मॆट्टि
ललित शेषाभ वालमु मीदि कॆत्ति । नॆलकॊनि भुजमुलु निक्किचि पॊंगि
४७७०

रामुनि दलचुचु रयमुन नॆगय । नामहनीयाद्रि यवनिलो ग्रुंगॆ;
दॆसलु गंपिंचॆ; दिर्दिर धात्रि दिरिगॆ । नसमानमैनट्टि यारभसमुन;
नतडट्टु लॆगसि यय्याकाश वीथि । नति भीषणंबैन यंबुधि दाटि
हरि चक्रमुनु बोलॆ नरुगुचु नडुम । दरमिडि पॆक्कु चोद्यमुलु सूचुचुनु
सांद्र फेनामृत जलनिधि दाटि । चन्द्रशैल द्रोण शैल मध्यमुन
दिरमैन यायोषधीशैल मॆक्कि । यरयुचु वच्चुचो नायोषधुलुनु
गामरूपुलु गान गपि शेखरुनकु । नेमियु बॊडसूप नीवय्यॆ दम्मु;

पारकर, चन्द्रशैल और द्रोणशैल के मध्य, सांद्र-दीधितियों के कारण उज्ज्वल बन, स्थिर बने उस औषधीशैल पर चढ़कर, अधिक मनोज्ञ संजीवकरणी, विशल्यकरणी, संधानकरणी, सौवर्णकरणी नामक चार औषधियों को लाकर, इस समस्त वानरावली को हे पवनतनूभव ! जीवित कर, वेग ही राम-लक्ष्मणों का प्रिय करो।" ऐसा कहने पर, सुनकर वायुज,

आंजनेय का ओषधीशैल लाकर राम आदियों की मूर्च्छा दूर करना

—उससे बिदा लेकर, सुवेलाचल पर चढ़कर, चरणों को समान रूप से टेककर, ललित-शेषाभ-वाल को ऊपर उठाकर, स्थिरता से भुजाओं को उचकाकर, फूलकर, ।। ४७७० ।।

—राम का स्मरण करते हुए, शीघ्र उछल पड़ा तो उस असमान रभस के कारण वह महनीय अद्रि पृथ्वी में धँस गई, दिशाएं कंपित हो गई, धात्री चक्कर खा गई। वह उस तरह उड़कर आकाश-वीथि से अतिभीषण अंबुधि को पारकर, हरिचक्र के समान जाते हुए, बीच में क्रम से अनेक विचित्रताओं को देखते हुए सांद्र फेन से युक्त अमृत-जलनिधि को पारकर, चंद्रशैल और द्रोणशैल के मध्य में स्थिर बने उस, ओषधीशैल पर चढ़कर, खोजने पर उन ओषधियों ने कामरूपवाले होने से अपने आपको कपिशेखर

ननिलनंदनुडुनु नवि गानकुंडि । तनलोन नंदंद तलपोसि चूचि
यति विनयंबुन नापर्वतंबु । नतुल गुणोदात्तुडै वेड दोडगे;
"ब्रालेय गिरियुनु बर्जन्य गिरियु । गैलास गिरियुनु गैकोनकेनु ४७८०

ग्रन्नन वच्चिचति, गार्यातुरुंड, । निन्नु नुद्देशिचि निखिलाद्रि नाथ;
नीयंदु निर्जरुल् नेरि दाचियुन्न । यायौषधमु लेव्वि ? यवि नाकु जूपु;
माराघवुनकु गार्यमु वुट्टि युन्न; । देरूपमुन नैन निच्चुट लेस्स"
यनिन नग्गिरि यट्टहासंबु सेसि । यनिल नंदनुतोड ननियै गर्विचि;
"पेलुच नीविटु वच्चि पक्कुलाडेदवु; । तलकक यी यौषधमुलु नन्नडुग
नीवेंत वाडवु ? निन्नु देम्मनग । नेविधंबुन रामुडेंतटि वाडु ?
चेकोनि सुरलु दाचिन यौषधमुलु । नीकु निच्चुट कंटे नेरमि गलदे ?"
यनि गर्व माडिन ननिल नंदनुडु । किनुकतो ननियै नग्गिरि तोड बेचि;
"ये निन्नु वलेननि यिटु वेडुकोनिन । दानि विचारिंप दगदोको नीकु ?
नगलिचि ना भुजायत शक्ति निन्नु । नगम ! मूलोन्मूलनंबुगा बेरिकि
४७९०

यिदे कोनिपोयेद; नेरुगनि रामु । हृदयंबुलो नप्पु डेरिगेंदु गाक ?"

की नज़रों से बचाए रखा। अनिलनन्दन ने भी उन्हें देख न पाकर, अपने में निरन्तर सोचकर, अतिविनय से अतुलगुणोद्दात्त होकर उस पर्वत से निवेदन किया —"प्रालेय गिरि की, पर्जन्यगिरि की, कैलासगिरि की परवाह किए बिना, ॥ ४७८० ॥

—मैं झट से कार्यातुर होने से, तुम्हारे पास आया हूँ। क्रम से तुम में निर्जरों की छिपाई ओषधियाँ कहाँ हैं ? उन्हें मुझे बता दो। हमारे राघव को उनकी आवश्यकता पड़ी है। अत: किसी भी रूप से हो, दे देना श्रेष्ठ है।" (ऐसा) कहने पर उस गिरि ने अट्टहास कर, गर्वित हो अनिलनन्दन से कहा—"अतिशयता से तुम यहाँ आकर बढ़बढ़ कर बातें करते हो ? विकल हुए बिना इन ओषधियों को माँगने के लिए तुम हो कितने (बड़े) ? ले आने के लिए तुम से कहने के लिए वह राम ही कितना बड़ा है ? चाहकर देवताओं के छिपा लिए ओषधियों को तुम्हें देने से बढ़कर अपराध हो सकता है ?' ऐसा गर्व से बोलने पर अनिलदन्दन ने विजृंभित होकर क्रोध से उस गिरि से (यों) कहा—"मैंने चाहकर तुमसे निवेदन किया था तो तुमको उस पर विचार नहीं करना चाहिए ? हे नग ! अपनी भुजायत शक्ति से तुम्हें विदीर्ण कर, मूल दिखाई पड़े ऐसा उखाड़कर, ॥ ४७९० ॥

यनि भीषणंबुगा हनुमंतु डद्रि । ननुवारगा बट्टि यगिलिंचि पेर्चि
पेऱिकि गंधर्वुल बेदरंग द्रोलि । गुरु तिड राकुंड गोनिराग दोडगे;
ननिल नंदनुडु सहस्र धारलनु । घनमुगा वेलुगु चक्रमु तोडि विष्णु
करणि नेतेर राक्षस वीरमुक्त । शरहति नोच्चि मूर्छल नुन्न कपुलु
वर महौषध वात वशतचे देलिसि । करमु संप्रीतितो गडगि यार्चुचुनु
ननिमोन बडिन दैत्यावळि गिट्टि । वनधि लोपल बाऱ वैचिरि चेलगि
हनुमंतुडुनु सुवेलाद्रि वे कडचि । चनुदेंचि याकपि सैन्यंबु नडुम
महनीयमैनट्टि मंदुल कोंड । मिहिर प्रतापुडै मेल्लनडिंचि
तपन वंशजुलकु दपन सुतादि । कपि मुख्युलकुनु नोक्कट ब्रयोगिंप ४८००
धीयुक्ति नट मूर्छ देलिसिरि वारु । ना यौषधमुल महत्त्वंबु वलन;
ननिलोन दुनकलैनट्टि देहमुलु । घनमैन संधान करणिचे गदिसे;
शरपुंज मुरुशस्त्र चयमु विशल्य । करणिचे नपुडूडि गंटुलु पूडे;
सौवर्ण करणिचे सकलांगकमुलु । सौवर्ण कांति नुज्ज्वलमुलै मिंचे;
गलयंग संजीव करणिचे ब्राण । मुलु वच्चि चेलगुचु मुनुपटिकंटे

—यही ले जाऊँगा। जिस राम को नहीं जानते थे उस राम को अब हृदय से जान लोगे।' (ऐसा) कह भीषण रूप से हनुमान, अद्रि को ढंग से पकड़कर, विदीर्णकर, विजृंभित होकर, उखाड़कर, गन्धर्वों को धमका-भगाकर, साथ ले आने लगा, जिसे कोई पहचान न सके। अनिलनन्दन के सहस्रधाराओं से युक्त हो महत्तर रूप से प्रकाशित (सुदर्शन) चक्र के साथ विष्णु की भाँति आने पर, राक्षसवीरों के छोड़े बाणों के आघात से पीड़ित होकर, मूर्च्छित कपि, वर महौषध के वात-बश होश में आकर, अधिक संप्रीति से सिंहनाद करने लगे। युद्धभूमि में पड़े दैत्यसमूह के पास जाकर, विजृंभित हो (उन्हें) वनधि में फेंक दिया। हनुमान ने भी वेग से सुवेलाद्रि को पारकर, आकर, उस कपि-सैन्य के मध्य महनीय ओषधि-पर्वत को, मिहिर के समान प्रतापयुक्त होते हुए, धीरे से उतारा। तपन (सूर्य)-वंशवालों पर, तपनसुत (सुग्रीव) आदि कपिप्रमुखों पर एक साथ (ओषधियों का) प्रयोग करने पर, ॥ ४८०० ॥

—उन औषधों के महत्त्व से, धीयुक्ति से वे मूर्छा से होश में आ गए। युद्ध में टुकड़े-टुकड़े बने शरीर महान् संधानकरणी से जुड़ गए। शरपुंज तथा उरु-शस्त्र-चय विशल्यकरणी के कारण तब छूट गए और घाव भर गए। सौवर्णकरणी के कारण सभी अवयव सौवर्ण-कांति से उज्ज्वल हो भासित हुए। शोभा से संजीवकरणी से प्राणों के संचार से समस्त कपिवीर पूर्व

गडु नॊप्पिरॆंतयु गपि वीरुलॆल्ल । गडकतो निद्र मेल्कनिन चंदमुन;
नप्पुडु कपिवीरु लनिल नंदनुनि । नॊप्पार नग्गिचिरुत्साह मॊदव;
ननिमॊन जच्चिन यसुरुल गपुलु । वनधि नंतकु मुन्नॆ वैचुट जेसि
कदनंबुलोनि राक्षसु डॊक्कडैन । ब्रतुकुट लेद यप्पर मौषधमुल;
नंत सुग्रीवादुलैन वानरुलु । संतसंबुन सूर्य चंद्रुल भंगि ४८१०
गरमॊप्पु रामलक्ष्मणुलकु म्रॊक्कि । यरुदार नुतियिंचि रनिलनंदनुनि;
नप्पुडु म्रॊक्कॆडु नांजनेयुनकु । नुप्पॊंग विबुधाळि युर्वीशु डनियॆ;
“मनकु वासवु नाज्ञ मन्निप वलयु । ननयंबु; गावुन नमरुलु मॆच्च
नीयोषधीशैल मॆप्पटि चोट । वायूतनूभव ! वैचि र”म्मनुडु
मारुतात्मजु डसमान वेगमुन । नाराघवुडु मॆच्च नग्गिरींद्रंबु
नॆनय नॆप्पटि चोट निरवॊंद नुनिचि । चनुदॆंचॆ रयमुन संगर स्थलिकि;
नंत सूर्योदयंबय्यॆ; राघवुनि । चिंत तोडनॆ कूड जीकटि वासॆ;
नप्पुडु सुग्रीवु डारामचंद्रु । नॊप्पार गनुगॊनि युल्लास मॆसग
“वसुधेश! पॊलिसॆ रावणु बलंबॆल्ल । नसम साहस बलाहव केळि बालि;
गुदुलु ग्रुच्चिन क्रिय गुंभकर्णुंडु । मॊदलगु राक्षस मुख्युल वडिरि
४८२०

से अधिक शोभायमान हुए मानों निद्रा से जाग उठे हों। तब कपिवीरों ने उत्साह के उत्पन्न होने पर, शोभा से अनिलनन्दन की प्रशंसा की। युद्धभूमि में मरे हुए असुरों को इससे पूर्व ही कपियों के वनधि में डाल देने से, उन परम औषधों के बल से युद्धभूमि में एक भी राक्षस पुनर्जीवित नहीं हुआ। तब सुग्रीव आदि वानर प्रसन्नता से सूर्य और चन्द्र के समान, ।। ४८१० ।।

—अधिक मनोज्ञ बने रामलक्ष्मणों को प्रणामकर, अनिलनन्दन की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। तब प्रणाम करनेवाले आंजनेय से उर्वीश ने कहा जिसे सुन विबुधावली फूल उठी—“हमें सतत वासव की आज्ञा को मानना चाहिए। अतः हे वायुतनूभव! अमर प्रशंसा करें, ऐसा इस ओषधीशैल को यथास्थान रखकर आओ।” (ऐसा) कहने पर, मारुतात्मज असमानवेग से, राघव सराहें ऐसा उस गिरींद्र को शोभा से यथास्थान स्थिरता से रखकर, संगरस्थल को शीघ्र आ गया। तब सूर्योदय हुआ, राघव की चिन्ता के साथ ही अन्धकार भी दूर हो गया। तब सुग्रीव ने रामचन्द्र को मनोज्ञता से देख उल्लास से फूलकर (कहा)—“हे वसुधेश! असम-साहस-बल से आहव (युद्ध)-केली में दबकर रावण का समस्त बल नष्ट हो गया। कुम्भकर्ण आदि प्रमुख राक्षस झुंड के झुंड गिर (मर) गए ।। ४८२० ।।

यदिगान दन सत्त्वमंतयु दऱिगें; । त्रिदशारि कय्यंबु तेऱगोल्लडिक;
लंक गाल्पंग गोलांगूल बलमु । बंक जहित वंश ! पनुपु मीरात्रि”
यनुमाट विनि कपु लंदऱु गूडि । “यिन मंडलमु ग्रुंकु टेप्पुडो” यनुचु

वानरुलु लंक गाल्चुट

दमकिंचु चुंडंग दरणि ग्रुंकुटयु । दममुनु बैद्दयै दट्टमै पर्व
नप्पुडु कपिवीरु लधिक रोषमुन । नुप्पोंगि धीरत नुग्रुलै चैलगि
गुनिसि याडुचु मंडु कौऱवुलु वट्टि । कौनि जवंबुलु मीऱ गुप्पिचि दाटि
वडि लंक मुट्टि या वाकिळ्ळवारु । कडु भयंबुन बाऱगा लंक जौच्चि
“यारावणुनि पुरि यडरि काल्चुटकु । ना राम विभुनि कोपाग्नि येमिटिकि
नीयनलमु सालदे ?” यनु माड्कि । बायक लंक गाल्पंग जौच्चुटयु
ननलुडु दरिकौनि यंदंद येचि । विनुवीथि दाकि दिग्विवरमुल्
निंडे । ४८३०
नायग्नि बडबाग्नि यै धूम पटलि । तोयमै मिन्नंदि तोयधि बोलें;
विस्मयंबुग माणि बिततुलु सेंदर । भस्मंबुगा गालें ब्रासाद ततुलु;

अत: (रावण का) समस्त सत्त्व घट गया। त्रिदशारि (रावण) अब युद्ध करना भी नहीं चाहता। हे पंकजहितबंशवाले ! आज रात को लंका को जला देने के लिए गोलांगूल-बल (वानर-सेना) को भेजो।” यह बात सुनकर समस्त कपि मिलकर ‘इनमंडल कब अस्त होगा’ (ऐसा) सोचते,

वानरों का लंका जलाना

—चाहते रहने पर तरुणि (सूर्य) का अस्त होना और अन्धकार के अधिक निबिड होकर व्याप्त होने पर, तब कपिवीर अधिक रोष से फूलकर, धैर्य से उग्र हो, विजृंभित हो, नाचते हुए जलती हुई लूकाओं को पकड़कर, बड़े वेग से छलाँग भरकर, पारकर, झट लंका को घेरकर, उन द्वारों पर रहनेवालों के (द्वारपालकों के) अति भय से भाग उठने पर, लंका में घुस गये। “उस रावण की पुरी को अतिशायता से जलाने के लिए उस रामविभु की क्या आवश्यकता है ? यह अनल पर्याप्त नहीं है क्या ?” मानों इस प्रकार लंका को जलाने लगे। अनल लगकर जहाँ-तहाँ विजृंभित हो, विनुवीथि (आकाश) को छूकर दिक्-विवरों में भर गया ।। ४८३० ।।

—वह अग्नि बडवाग्नि होकर, धूमपटल के जल रूप होने पर आकाश तक फैलकर, तोयधि (समुद्र) के समान लगा। आश्चर्यप्रद रूप से

पॊडि पॊडिगा गालि पॊडवॆल्ल नडगि। पुडमि गंपिप गोपुरमुलु गूलॆ;
ग्रक्कुन मंटलुग्रंबुगा नॆगय । नक्कजंबुग गालि यट्टळ्ळु व्रालॆ;
महनीय कांचन मंटपंबुलुनु । बहु-रत्नमय-गृह-पंक्तुलु गालॆ;
निंडिन सॊम्मुलु निंडि नट्लुंड । भंडारगृहमुलु भस्मंबु लय्यॆ;
वॆललिडगा रानि विविधांबरमुलु । दलप बॆक्कैन गंध द्रव्यमुलुनु
बहुविध रत्न कंबळ चयंबुलुनु । महनीय मरकत मौक्तिकादुलुनु
नगरु कुंकुम मलयज घनसार । मृगमदंबादिगा मेलि वस्तुवुलु
दऱगनि बहुविध धान्य-रासुलुनु । मऱियुनु गलिगिन महित वस्तुवुलु
४८४०

गडु नॊप्पु करि तुरंगमुल पक्कॆरलु । नॆड-नॆड ब्रोवुगा निडिनट्टि जॊळ्ळु
दॊरल ननेक वस्तुवुलु दैत्युलकु । गरकरि जित्तमुल् गंदग गालॆ;
दडयक पैडि कत्तळमुलु दॊडिगि । वडि नायुधमुलु दुर्वारुलै पूनि
'कपुल जंपॆद' मनि कडुगॆडु वारि । गपुलपै बऱतॆंचि कदिसिन वारि
बॊलतुलतो सुखंबुन नुन्न वारि । दॊलगंग नेरक तूगॆडु वारि
बॊलिप गडुनिद्र पोयॆडु वारि । बालुर गॊनि भीति बाऱॆडु वारि
नालुगु दॆसलकु नलि नॆगुवारि । जाल रोदनमुलु सल्पॆडु वारि

मणि-विततियों के बिखर जाने पर, प्रासादततियों को भस्मकर जल उठा। चूर-चूर हो जलकर, औन्नत्य खोकर, पृथ्वी को कम्पित करते हुए गोपुर ढह गिरे। झट ज्वालाओं के उग्रता से फैलने पर, आश्चर्यप्रद रूप से जलकर मकान गिर पड़े। महनीय-कांचन-मंडप तथा बहुरत्नमय गृह-पंक्तियाँ जल गईं। भूरी सामग्री से भरे रहकर, भांडार-गृह भस्म हो गए। अमूल्य विविध-अम्बर (वस्त्र), सोचने पर अत्यधिक गंध-द्रव्य, बहुविधि-रत्न-कंबल (कालीन)-चय (समूह), महनीय मरकत-मौक्तिक-आदि, और अगरु-कुंकुम-मलयज (चन्दन), घनसार (कर्पूर), मृगमद (कस्तूरि) आदि श्रेष्ठ वस्तुएँ, अक्षय-बहुविध-धान्य-राशियाँ, और भी महित वस्तुएं, ॥ ८४० ॥

—अधिक शोभित करि (और) तुरंगों के ज़ीन (झूलें), जहाँ-तहाँ राशियों में रखे कवच, और भी अनेक वस्तुएँ क्रूरता से दैत्यों के चित्तों को पीडित करती हुई जल गईं। अविलम्ब स्वर्ण-कवच पहनकर, झट दुर्निवार हो आयुध धारणकर, 'कपियों को मार डालेंगे' ऐसा कहते यत्न करनेवालों, (शय्याओं से) न हट सक ऊँघनेवालों, अधिक निद्रा में रत रहनेवालों, बच्चों को ले भय से भागनेवालों, चौतरफ़ क्रम से भागनेवालों, अधिक रोदन

विडुवक धनमुलु वॆंडलंग बॆट्टि । कडु संभ्रमंबुन गदिसॆडु वारि
द्रोवलु गानक धूमंबु चेत । नावुलिचुचु वडि नलदुरु वारि
नार्पंग नुरु मंदिराग्रंबु लॆक्कि । नेर्पुन मऱि दिग नेरनि वारि ४८५०
गूडि निव्वॆऱ गंदि गुमुरुलु गट्टि । वाड वाडल यंदु वनरॆडु वारि
नप्पुडु चूड गालग्नि चंदमुन । निप्पुलु मंटलु नॆऱय नप्पुरमु
कालुचु नंदंद कडु रभसमुन । गालिचॆ नग्नि पॆक्कंड्र राक्षसुल;
ललनल मणि मेखलारवंबुलुनु । गलय जॆन्नॊंदु कंकण रवंबुलुनु
बॊलुपारु रत्न नूपुर रवंबुलुनु । जॆलगॆडु नाविपंची रवंबुलुनु
सुरुचिर मधुर वचोरवंबुलुनु । नरुदैन नृत्तगीतारवंबुलुनु
गर्रमिपु गुलुकु केकारवंबुलुनु । जरियिंचु चुंडु हंसल रवंबुलुनु
सॊंपारु पंजर शुकरवंबुलुनु । निपारुटॆंतयु निललोन गलिपि
सललितंबैनट्टि चंद्रिककंटॆ । दॆलुपुन नॊंदिन दीधितुल् दऱिगि
प्रणुतिकि नॆक्किन पद्मरागादि । मणुलचे नॊप्पिन महिमलु वासि ४८६०
कालॆडि रवमुल गप्पॆडि पॊगल । व्रीलि पॆल्लॆगसॆडि विस्फुलिंगमुल
नालंक लोपलि हर्म्यंबुलॆल्ल । जाल भीषणमुगा समसॆ नन्नियुनु

करनेवालों, न छोड़कर (घर के भीतर की) संपत्ति को बाहर निकालकर अति संभ्रम से नियरानेवालों, धूप के कारण मार्ग न पाकर, जंभाई लेते हुए झट दग्ध होनेवालों, (अग्नि को) बुझाने के लिए उरु-मन्दिरों के अग्र भागों पर चढ़कर, चतुरता से फिर उतर न सकनेवालों, ।। ४८५० ।।

—चकित हो झुंड बाँधकर मुहल्ले-मुहल्ले में दुखी होनेवालों, (ऐसे राक्षसों से युक्त लंका नगर को) तब देखने में कालाग्नि के समान, अंगारे और ज्वालाओं के व्याप्त होने पर, उस पुर को जलाते हुए, अतिरभस (आटोप) से अग्नि ने कई राक्षसों को जला दिया । ललनाओं के मणि-मेखलाओं की ध्वनियाँ, शोभा से विराजित कंकण-रव, शोभित रत्ननूपरों के रव, परिव्याप्त विपंची-रव, सुरुचिर-मधुर-वचनों के रव, विरल (अद्वितीय) नृत्त-गीतों के रव, अधिक मनोज्ञ बने केका (मयूर-) रव, विहार करते हंसों के रव, शोभित पंजरस्थ शुकों के रव, (आदि की) अधिक शोभा को मिट्टी में मिलाकर, सललित चन्द्रिका की अपेक्षा श्वेत बनी दीधितियों (कांतियों) को खोकर, प्रसिद्ध बनी पद्मराग आदि मणियों से शोभित महत्त्व को खोकर, ।। ४८६० ।।

—जलने की ध्वनियों, व्याप्त होनेवाले धूम्रों, टूटकर अधिक बिखरने वाले विस्फुलिंगों से (युक्त हो) लंका के भीतर के सभी हर्म्यों (भवनों)

गान सुखंबॆल्ल ग्रागि नीऱॆरि । मानिनीमणु लभिमानंबु दूलि;
चंड तरंबैन शब्दंबुतोड । मंडुचु नुंडॆडि मंटल तोड
नॆऱपैन तोरण निकरंबु लॊप्पॆ । मॆऱुगुल वॆलुगॊंदु मेघंबु लनग;
विनुवारि गुंडॆलु वीनुलु बगुल । ननयंबु बॆट्टुगा ना पुरंबंदु
दरमिडि यंदंद दंदह्यमान । वरवधूरोदनंबुलु विन वच्चॆ;
गालि कालनि तम कट्टुलु द्रॆंव्व । नीलिगि विडिवड नेरनि करुल
हयमुल क्रंदुन नालंक युंडॆ । रयमुन मुनु रघुरामु बाणाग्नि
दलकॊनि जलचर ततुलु सम्मर्द । मुल ब्रघोषिंचु समुद्रंबु वोलॆ; ४८७०
बाऱॆडु वारिनि बऱतॆंचुवारि । गूऱिन वगलतो गुंदॆडु वारि
नॊदिगॆडु वारिनि नॊक कॊंत गालि । विदिरिचि कॊनुचुनु वॆडलॆडु वारि
लंघिचु वारि विलापिंचु वारि । संघंबुलै नीरु सल्लॆडु वारि
बट्टि यामंटलो बड द्रोसि त्रोसि । नॆट्टन नार्तुरु नॆऱयंग गपुलु;
अट्टु लंक विकलत नंद राघवुडु । पटुतर कोदंड पाणियै कदिसि
त्रिपुरमुल् साधिंप द्रिणयनु डलिगि । विपुल पिनाकंबु वीक म्रोयिंचु
करणि निर्विक्र विक्रम शालि रामु । डुरुतर ज्याघोष मॊनरिंचुटयुनु
वसुधा तलंबुन वडि जुक्क लुरिलॆ; । वसुमति गंपिंचॆ; वार्धुलु गलगॆ;

के अति भीषणता से नष्ट होने पर, मानिनीमणियाँ (मानवती स्त्रियाँ), अभिमान के नष्ट होने पर राख बन गईं। चंडतर ध्वनि के साथ बलनेवाली ज्वालाओं के साथ विशाल तोरण-निकर ऐसा शोभित हुआ मानों वे चपलाओं से युक्त प्रकाशित मेघ हों। सुननेवालों के दिल और कान फट जाएँ, ऐसा लगातार भीकरता से उस पुर से क्रम से जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) दंदह्यमान (जल रहे) वर-वधुओं के रोदन सुनाई पड़े। जले-अधजले (पूरी तरह से न जले) अपने बंधनों से मुक्त न हो पानेवाले करि और हयों के क्रंदनों से वह लंका युक्त रही, मानों शीघ्रगति से पूर्व में रघुराम की बाणाग्नि से परेशान जलचरततियों की भीड़ से गरजनेवाला समुद्र हो ।। ४८७० ।।

—भागनेवालों, आनेवालों, अधिक वेदनाओं से व्यथित होनेवालों, सिकुड़नेवालों, कुछ हवा को हटाते हुए निकल पड़नेवालों, लाँघनेवालों, विलाप करनेवालों, झुंड बन पानी बिखेरनेवालों, (ऐसे राक्षसों को) पकड़कर उस अग्नि में ढकेल-ढकेलकर भीकरता से कपि सिंहनाद कर उठे। उस प्रकार लंका के विकल होने पर, राघव ने पटुतर-कोदंडपाणी हो, नियराकर, त्रिपुरों को जीतने के लिए त्रिनयन (शिव) के रुष्ट होकर, विपुल पिनाक के गर्व से मुखरित करने के समान, निर्वक्र विक्रमशाली राम ने उरुतर-ज्या-घोष

दॆस दप्पि रिन शशुलू; दिविजाद्रि यॊऱगॆं; । दॆसल संधुलु व्रीलॆं;
दिक्करुल् गूलॆं;
नसमाक्षु डति विस्मयंबंदॆं; भूत । विसरंबु घूर्णिल्लॆं; विधि तल्लडिल्लॆं; ४८८०

रयमुन रोदोंतराळंबु म्रोसॆं; । भयमंदि रॆंतयु बौलस्त्यु लॆल्ल;
गोदंड रवमु रक्षोभटसिंह । नादंबु वीर वानरुल यार्पुलुनु
दिक्कु लॊक्कट निंडॆं; दिविजारि पुरमु । दिक्कु गोपिंचुचु दीव्रवेगमुन
गैलास शिखरंबु करणि जॆन्नॊंदु । नालंक गोपुरं बैदु बाणमुल
वडि नूऱु तुनियलै वसुधपै गूल । बडनेसि मऱियुनु बहु सायकमुल
नेसॆं गेहमुलपै; नेसॆं सौधमुल; । नेसॆं देरुलमीद; नेयुट सूचि
याराक्षसुलु पोरि कायत्त पडग । नारात्रि वर्तिंचॆं नति घोर लील;
नप्पुडु सुग्रीवु डखिल वानरुल । दप्पक चूचि युदग्रुडै पलिकॆं;
“लावु नॊप्पारंग लंक वाकिड्ल । गावलि युंडु राक्षसु डव्वडैन
वॆडलिन जंपुडु; वॆऱचिति रेनि । गडु दप्पु; सैरिप गपि वीरुलार!”
४८९०

किया। (करने पर) झट वसुधातल पर नक्षत्र लुढक पड़े, वसुमति कंपित हुई, वारिधियाँ आलोड़ित हुईं, इन (सूर्य) और शशि दिशाओं में भटक गए, दिविज-अद्रि झुक गई, दिशाओं की संधियाँ टूट गईं, दिक्-करियाँ गिर पड़ीं, असमाक्ष (शिव) अति चकित हो गया, भूतसमूह घूर्णित हुआ, विधि (ब्रह्मा) विकल हो गया, ।। ४८८० ।।

—शीघ्रगति से रोदोन्तराल गूँज उठा, समस्त पौलस्त्य (रावण आदि राक्षस) अत्यधिक भीत हुए। कोदंड की ध्वनि, रक्षोभट-सिंहनाद, (तथा) वीर वानरों के गर्जन एक साथ दिशाओं में भर गए। दिविज-अरि (राक्षस) के पुर की ओर क्रुद्ध हो तीव्रवेग से, कैलास शिखर के समान सुशोभित उस लंका के गोपुर को पाँच बाणों से, झट सौ खंड कर वसुधा पर गिरा दिया और बहु-सायकों को गृहों पर चलाया, सौधों पर चलाया, रथों पर चलाया। (बाण) डालते (चलाते) देखकर राक्षसों के युद्ध के लिए सन्नद्ध होने पर, वह रात अतिघोर-लीला से प्रवर्तित हुई। तब सुग्रीव ने अखिल वानरों को अवश्य देखकर, उदग्र हो कहा—“सामर्थ्य के शोभित होने पर लंका के द्वारों की रक्षा करनेवाला कोई राक्षस (बाहर) निकल पड़े तो (उसे) मार डालो। भीत हो जाना बड़ा अपराध है। हे कपिवीरो ! (उसे) सहन नहीं करूँगा” ।। ४८९० ।।

यनवुडु गपिवीरु लंदऱु पेंचि । कनलुचु गुजमुलु घन शैलमुलुनु
जारु भीषण रणोत्साहुलै पूनि । वारक यक्कोट वाकिड्ल नुंडि
दर्पिंचि यार्चिन दरुचरावळुल । यार्पुलु सैरिप कसुर वल्लभुडु

कुंभ निकुंभुलु युद्धमुनकु वेडलुट

कुंभकर्णुनि कोंडुकुल ननि कनिचें । गुंभ निकुंभुल घोर विक्रमुल;
बनिचें वेंडियुनु गंपनुनि ब्रजंघु । ननिकि दोडुग शोणिताक्षु यूपाक्षु;
नाराक्षसुलुनु गजाश्वरथंबु । लारसि युद्धति नडरि तो नडव
बरिघ गदा प्रास पट्टिस शूल । करवाल कुंत मुद्गर भिंडिवाल
शरशरासनमुलुज्ज्वल भंगि दाल्चि । गुरु शक्ति दानव कोटुलु नडव
जारु पताका निचयमुलु ग्राल । भूरि भूषण दीप्तिपुंजमुल् वेलुग
नधिक मैनट्टि तूर्यंबुलु म्रोय । गुधरंबु लगल दिक्कुलु निंडनार्चि
४९००
परुवडि गल्पांत पवन संघमुलु । दरमिडि कालांबुदंबुल दाकि
विऱुचु तेंऱंगुन वीडेल्ल गाल्चि । यरिमुऱि विहरिंचु नगचरावळुल
नुरुवडि दाकि महोग्रुलै निलिचि । तेरलिचि नोंचि युदीर्ण विक्रमुलु

—कहने पर समस्त कपिवीर विजृंभित हो, क्रुद्ध होते हुए, कुज (वृक्ष) (तथा) घन-शैलों से चारु-भीषण-रण-उत्साह से युक्त हो, निरन्तर उस दुर्ग के द्वारों पर रहकर, दर्पित हो सिंहनाद करने लगे। तरुचर-समूह के सिंहनादों को सह न सक असुरवल्लभ ने—

कुम्भ-निकुंभ का युद्ध के लिए निकल पड़ना

—कुम्भकर्ण के पुत्र, घोर विक्रमवाले कुम्भ (और) निकुम्भ को युद्ध के लिए भेजा। (उनके अतिरिक्त) फिर कम्पन, प्रजंघ, शोणिताक्ष, यूपाक्ष को (उनके) साथ युद्ध में भेजा। वे राक्षस गज, अश्व, रथों के औद्धत्य के औन्नत्य से चल पड़े। परिघा, गदा, प्रास, पट्टिस, शूल, करवाल, कुंत, मुद्गर, भिंडिवाल, शर-शरासन (आदि) उज्ज्वलता से धारणकर, गुरु-शक्ति के साथ दानव-समूह चल पड़ा। चारु-पताका-निचयों के प्रकाशित होने पर भूरि-भूषणों के दीप्ति-पुंजों के दीप्त होने पर, अधिक (संख्या में) तूर्यों के बज उठने पर, कुधरों (पर्वतों) के विदीर्ण होने पर, दिशाओं को गर्जनाओं से भरकर, ।। ४९०० ।।

—क्रम से कल्पांत-पवन-संघों के अतीव रूप से कालांबुदों से टकराकर (उन्हें) तोड़ (बिखरा) देने के समान, समस्त गृहों को जलाकर, शीघ्रगति

वांकिड्ल यंदु दुर्वारुलै युन्न । याकपिसेनल नंदंद तोलि
यालंक वेंडलिंप नगचरसेन । लोलि वीगुट सूचि 'योडकुं' डनुचु
नुरु बाहु सत्त्वपयोधुलै पेंचि । हरि रोम केसरु लादिगा गल्गु
वानरु लादैत्य वर्गंबु तोड । मानक रोष समग्रुलै कदिसि
तरुलुनु गिरुलुनु दरुचुगा वैव । गरवालमुल नुरुगदल शूलमुल
बरिघ पट्टिसभिंडिवाल चक्रादि । वर शस्त्रमुल नोंचि वालिन नंत
वारु नखंबुल वक्षस्थलमुलु । जीरियु गर्ण नासिक लोलि द्रेंव्व ४९१०
गडिमिमै बंड्लनु गरचियु, दललु । पिडिकिळ्ळ बोंडिचियु बेकोंनि यप्पु
डोंक वानरुडु वच्चि योंक दैत्यु बोंडव । नोंक दानवुडु वानि नुद्धृति बोंडुचु;
नोंक राक्षसुडु वच्चि योंककपि जंप । नोंककपि या दैत्यु नुग्रत जंपु;
नोंक कपि सनुदेंचि योंक दैत्यु बट्ट । नोक दैत्यु डाकपि नुरुवडि बट्टु;
नोंक दैत्यु डोंक कपि 'युद्धमि'म्मनिन । नोंक कपि वानितो युद्धंबु सेयु
नेंडपक येड्गुरु नेनमंड्रु गूडि । पिडिकिळ्ळ नोंक्कनि बेरणगिप
नंदिदु गूलुदु रसुरुलु गपुलु; । नंदरु नुग्रुलै यार्चुचु बेंचि

से विहार करनेवाले नगचर-समूहों पर अविलम्ब आक्रमण कर, महोग्र हो टिककर, पीछे ढकेल, दबाकर, उदीर्ण विक्रमवाले बन, (दुर्ग) द्वारों पर दुर्निवार बने हुए कपि-सेनाओं को जहाँ-तहाँ भगाकर, उस लंका से निकाल (भगा) दिया। नगचर-सेनाओं के क्रम से हटते देख 'मत डरो' कहते हुए उरु-बाहुबलसत्त्व के पयोधि बन, विजृंभित हो, हरिरोम, केसरी आदि वानर, उस दैत्यवर्ग से रोषसमग्र हो भिड़ गए। (और) तरु और गिरि अधिकता से फेंके तो (राक्षस) करवालों, उरु-गदाओं, शूलों, परिघाओं, पट्टिसों, भिंडिवालों, चक्रों आदि वर शस्त्रों से उन्हें रोककर प्रकाशित हुए। तब वे नखों से (राक्षसों के) वक्षस्थलों को चीरकर, कान और नासिकाएं कट जाएँ, ।। ४९१० ।।

—ऐसा साहस से दाँतों से कुतरकर, सिरों पर मुष्टिघात करने लगे। तब एक वानर के आकर एक दैत्य पर प्रहार करने पर, एक दानव उसे (वानर को) औद्धत्य से मारता। एक राक्षस के आकर एक कपि को मार डालने पर, एक कपि उस दैत्य को उग्रता से मार डालता। एक कपि के आकर एक दैत्य को पकड़ने पर, एक दैत्य अतिशीघ्र उस कपि को पकड़ लेता। एक कपि से 'युद्ध हो' (लड़ने के लिए आओ) कहता तो एक कपि उससे युद्ध करता। न छोड़कर सात-आठ लोग मिलकर एक को मुष्टियों से मार डालते। (इस प्रकार) इस ओर और उस ओर

यिरुवागु बोरंग निंतितलैन । तरुमहीधर शृंग तरुचरांगमुल
गरिहयदनुजनिकाय कायमुल । वरशस्त्रमुल रणोर्वर घोरमय्यॆ;
गडिमिमै नप्पु डंगदुनितो बॆचि । कडगि कंपनु डुग्र गदयॆत्ति वैचॆ;
४९२०

नंगदुंडुनु नॊच्चि यंतलो दॆलिसि । तुंग शैलमुन दैत्युनि व्रेयुट्युनु
नाकंपनुडु चूर्णमै नेल गलिसॆ । नाकपि-नायकु डार्चुचु नुंड;
नतडु सच्चिन शोणिताक्षुंडु गिनिसि । गति दप्प नरद मंगदुमीद बऱपि
यक्षतास्त्रमु लेय नडरि यंगदुडु । राक्षसुडुन्न या रथमुपै कुऱिकि
विल्लु द्रुंचुटयुनु वैस नॊड्ड नम्मु । नुल्लसितासियु नुग्रत गॊनुचु
नाकाशमुनकु नय्यसुर लंघिप । नाकपिवीरुंडु नतनितो नॆगसि
याराक्षसुनि चेति यडिदबु बुच्चि । याराक्षसुनि व्रेय नतडु मूर्छिल्लॆ;
नंतकुडै राक्षसावळि दुनुम । नंतलोननॆ शोणिताक्षुंडु दॆलिसि
गद बुच्चिकॊनुचु नंगदु मीद बाऱ । गदिसॆ नप्पुडु तोडुगा ब्रजंघुंडु;
यूपाक्षुडुनुगूड नॊगि राग जूचि । येपुन द्विविदुंडु नेचि मैंदुंडु४९३०

असुर और कपि मर जाते । सभी उग्र हो सिंहनाद करते हुए, विजृंभित हो दोनों पक्षवालों के लड़ने पर, अत्यधिक तरु-महीधर-शृंग तथा तरुचर-अंग और करि-हय-दनुज-निकाय के काय और वर-शस्त्रों से रणभूमि घोर (भयंकर) हुई । साहस से विजृंभित तब कंपन ने लगकर उग्र गदा उठाकर अंगद पर डाल दिया ।। ४९२० ।।

—अंगद भी पीड़ित होकर, इतने में (शीघ्र) होश में आकर, तुंग-शैल लाकर दैत्य पर डाल दिया । उस कपिनायक के सिंहनाद करते समय अकंपन चूर्ण हो मिट्टी में मिल गया । उसके मरने पर शोणिताक्ष ने क्रुद्ध हो गतिहीन हो (अपने) रथ को अंगद पर चलाकर, अक्षत-अस्त्र चलाए । उत्कर्षित हो अंगद ने राक्षस के रथ पर छलांग भरकर, धनुष तोड़ दिया तो झट मेखला से उल्लसित-असि को उग्रता से लेकर, आकाश की ओर वह असुर उछल पड़ा । वह कपिवीर भी उसी के साथ उछलकर, उस राक्षस के हाथ के खड्ग को लेकर (उसी से) राक्षस को दे मारा तो वह मूर्च्छित हो गया । (अंगद) अंतक (यम) के समान राक्षसावली का संहार करने पर, इतने में ही शोणिताक्ष ने होश में आकर, गदा लेकर अंगद पर आक्रमण किया तो प्रजंघ ने उसका साथ दिया । क्रम से यूपाक्ष को भी आते देख, दर्प से द्विविद (और) विजृंभित हो मैन्द ।। ४९३० ।।

नायंगदुनकु दोडै कूडुकॊनिरि; । आ यार्वुरकु घोरमय्यॆ रणंबु;
नप्पुडु वानरुलगमुलु गुरिय । जप्परिपुचुनु ब्रजंघुंडु द्रुंचॆ;
मरियु ना मुव्वुरु मर्कटेश्वरुलु । दरुचुगा गिरुलुनु दरुलुनु नॆत्ति;
करिरथाश्वमुलपै गडु बॆट्टु ब्रेय । नरुदुगा नडुम यूपाक्षुंडु द्रुंचॆ;
विन विस्मयंबुगा द्विविद मैंदुलुनु । बॆनगॊनि वृक्षमुल् पॆरिकि वैचुटयु
नवि यन्नियुनु शोणिताक्षुंडु नडुम । गविसि चूर्णमुलुगा गदगॊनि ब्रेसॆ;
गलकल ध्वनि यॊप्प गरवाल मॆत्ति । जळिपिचु कॊनुचु ब्रजंघुंडु गदिय
मानैन योक नल्ल मद्दि म्रानॆत्ति । वानिपै नडरिंचि वारक मरियु
बिडिकिट वक्षंबु बॆट्टुगा बॊडुव । नडिदंबु वैचि ययसुर गॊपिंचि
पिडुगुन कैनयैन पिडिकिट बॊडिचॆ; । बॊडिचिन वॆस मूर्छं बॊंदियु
दलिसि ४९४०

समधिक मुष्टि ब्रजंघु मैंदुंडु । तर्मकिंचि पॊडिचिन धरणिपै गूलॆ;
बृथिविपै नट्टु तन पिनतंड्रि वडुट । प्रथितंबुगा जूचि रथ मट्टु डिग्गि;
यडिदंबु दाल्चि यूपाक्षुंडु नडव । विडुवनि यलुकतो द्विविदुंडु दाकि
वरमुष्टि चे वानि वक्षंबु बॊडिचि । गुरु सत्त्वुडै पट्टुकॊनुटयु नप्पु

—उस अंगद के सहायक हो जमा हो गए। उन छः लोगों में भयंकर रण हुआ। तब वानरों के पर्वत बरसाने पर, चुबलाते हुए प्रजंघ ने (उन्हें) तोड़ दिया। फिर उन तीनों मर्कटेश्वरों के अधिकता से गिरियों और तरुओं को उठाकर, करि, रथ अश्वों पर भीकरता से डालने पर, विरल रूप से बीच में ही (उन्हें) यूपाक्ष ने तोड़ दिया। सुनने में आश्चर्यप्रद रूप से द्विविद और मैंद के खींचातानी करके वृक्ष उखाड़कर डालने पर, उन सबको शोणिताक्ष ने बीच में गदा लेकर एक साथ चूर्ण कर दिया। कलकल ध्वनि के शोभित होने पर करवाल उठाकर, (उसे) चमकाते हुए प्रजंघ के नियराने पर, श्रेष्ठ काला शाल वृक्ष उठाकर, उत्कर्षित हो उस पर फेंककर मुष्टि से वृक्ष पर भीकरता से प्रहार करने पर, उस असुर ने क्रुद्ध हो तलवार चलाकर और अशनि-सम मुष्टि से प्रहार किया। प्रहार करने पर झट मूर्च्छित होकर भी होश में आकर, ।। ४९४० ।।

—समधिक मुष्टि से प्रजंघ को मैन्द ने चाहकर प्रहार किया तो वह धरणी पर गिर गया। इस प्रकार पृथ्वी पर अपने चाचा के प्रथित रूप से गिरते देखकर उधर रथ से उतरकर, खड्ग धारणकर यूपाक्ष चल पड़ा तो अनारत क्रोध से द्विविद के (उसका) सामना कर, वर-मुष्टि से वक्ष पर प्रहार कर, गुरुसत्त्व से पकड़ लेने पर, तब उसके अनुज शोणिताक्ष ने आकर, विततबल से शोभित हो, द्विविद की छाती पर मुष्टि से पीड़ित कर, अधिक

इतनि तम्मुडु शोणिताक्षुंडु वच्चि । वितत बलं बॊप्प द्विविदुनि रॊम्मु
बिडिकिट नॊप्पिंचि पॆनुमूर्छ बुच्चि । विडिपिंचुकॊनि पोयॆ वेग यूपाक्षु;
दॆलिसि मैंदुनि तोड द्विविदुंडु गूडि । सॊलवक यूपाक्ष शोणिताक्षुलनु
नट्टु ताकि वारितो ननि सेयुनपुडु । चटुलत द्विविदु डाश्चर्यंबु गाग
नलमि युद्धति शोणिताक्षुनि बट्टि । यिलवैचि प्रामॆ रूपेर्डपकुंड;
नडरि मैंदुंडु यूपाक्षुनि गिट्टि । बॆडिदंबुगा दन बिडिकिट बॊडिचि
४९५०

चलमुन धीरुडै चंपॆ नुग्रमुग । नलिय नॆम्मुलु मेनु नलि नलि गाग;
निल मीद गपुलचे निट्टि चंदमुन । नलुवुरु दानव नाथुलु वडिन
नेपऱि राक्षस लॆल्लनु बऱव । गोपिंचि यप्पुडु कुंभुंडु वारि

कुंभ, निकुंभुल युद्धमु

'वॆऱवकुं' डनि तन विटि लावॊप्प । मॆऱुगुटम्मुलतोड मॆऱुगुल तोडि
सुरचाप मन जाल शोभिल्लु विल्लु । परग ब्रत्यालीढ पादुडै निल्चि
तॆगगॊनि येयुडु द्विविदुंडु भूमि । नगमु कैवडि गूलॆ नति घोर लील;
मुंदऱ ननुगु दम्मुनि पाटु जूचि । यंदंद मैंदुंडु नसम वेगमुन

मूर्च्छित कर दिया और झट यूपाक्ष को छुड़ा ले गया। होश में आकर मैन्द के साथ द्विविद (दोनों) मिलकर, न थककर यूपाक्ष और शोणिताक्ष का सामना कर उनसे जूझते रहे। (उस समय) द्विविद ने आश्चर्यप्रद रूप से झट औद्धत्य से शोणिताक्ष को पकड़, धरती पर डाल ऐसा रौंद दिया जिससे उसका रूप ही नष्ट हो गया। उत्कर्षित हो मैन्द ने यूपाक्ष के निकट जा भीकरता से अपनी मुष्टि से प्रहार कर, ॥ ४९५० ॥

—हठ से धीर बन उग्रता से उसको मार डाला जिससे उसकी हड्डियाँ तथा शरीर चूर-चूर हो गये। पृथ्वी पर कपियों से इस प्रकार चारों दानवनाथों के गिरने पर, दर्प को खोकर समस्त राक्षसों के भाग उठने पर, क्रुद्ध हो तब कुम्भ ने उनसे,

कुंभ और निकुंभ का युद्ध

—'मत डरो' कहते अपने धनुष की सामर्थ्य से शोभित हो, प्रकाशमान बाण की कांतियों से सुरचाप (इन्द्र धनुष) सम अधिक शोभित धनुष को पकड़, प्रत्यालीढ़ पाद हो खड़े होकर, ज्या खींचकर (बाण) चलाने पर, द्विविद भयंकर रूप से नग (पर्वत) के समान गिर पड़ा। पहले प्रिय अनुज के पतन को देख, जहाँ-तहाँ से मैन्द ने असम-वेग से कुंभ पर एक पर्वत डाल दिया। कुंभ के सात बाणों से कुधर (पर्वत) को तोड़कर,

गुंभुनिपै नोक्क कोंड वैचुटयु । गुंभु डेनम्मुल गुधरंबु द्रुंचि
मड्रियु नोक्कम्मुन मैंदुनि नेय । नोड्रगें नय्यगचरुंडुर्वर मीद
धरमीद नी गति दन मेनमाम । लिरुवुरु गूलिन नेचि यंगदुडु ४९६०
कुंभुनिपै वैचें घोर भूधरमु । गुंभुडेंदम्मुल गुधरंबु द्रुंचि
नेड्रि बाणमुलु मूट निटलम्मु नेसि । मड्रि पेक्कु शरमुल मर्मंबु लेय
नेरियुचु गुंभुपै नेगसि यंगदुडु । तरुवेत्तिवैचें; नत्तरुवुनु द्रुंचि
याकुंभुडंगदु नंददं मड्रियु । भीकर बाण संपीडितु जेय
नतडु मूर्छिल्लिन नारामुकडकु । नति वेगमुन वानरावळि पाड्रि
यंतयु जेप्पिन नधिपति जांब- । वंतु डादिग गल वनचरोत्तमुल
बनिचिन वारलु बादप शिलल । दनुजुल नोंचुचु दरुम गुंभुंडु
वारि ननेक तीव्र प्रकांडमुल । वारक नोप्पिचि वारि वारिंचें;
नप्पुडु सुग्रीवु डाकपिवरुल । नप्परुसुन बड्डु यंगदु जूचि
कोपंबु मुडिवड गुंभुनि जूचि । येपारगा जोच्चि यॆन्न बेक्कैन ४९७०
घन शैलमुलु नश्वकर्णं वृक्षमुलु । वनचरु लार्वंग वैचि पेल्लाचें;
नवि यन्नियुनु गुंभु डंतलो द्रुंचि । रविजुनि बेक्कु मार्गणमुल नोंप;

और एक बाण को मैन्द पर चलाने पर, वह अगचर वीर भूमि पर गिर पड़ा। इस प्रकार अपने दोनों मातुलों को धरा पर गिरते देख, विजृंभित हो अंगद ने, ॥ ४९६० ॥

—कुम्भ पर घोर-भूधर को डाल दिया। कुम्भ ने पांच बाणों से कुधर को तोड़कर, तीन पैने बाण निटल पर चलाकर, और अनेक शर मर्मस्थानों पर चलाये। तप्त होते हुए अंगद ने कुम्भ पर उछलकर तरु उठाकर डाल दिया। उस तरु को तोड़कर, कुम्भ के अंगद को सर्वत्र भीकर बाणों से संपीडित कर देने पर, वह मूर्च्छित हो गया। तब वानरावली ने अतिवेग से उस राम के पास जाकर सब कुछ बता दिया। (कहने पर) अधिपति (राजा राम) ने जांबवान आदि वनचरोत्तमों को भेजा। वे पादप और शिलाओं से दनुजों को पीड़ित करते हुए, उनका पीछा करने पर कुम्भ ने उन्हें अनेक तीव्र प्रकांडों से अविलम्ब पीड़ित कर उनका निवारण कर दिया। तब सुग्रीव ने उन कपिवरों तथा परुषता से गिरे अंगद को देखकर, क्रोध के बढ़ने पर, कुम्भ को देखकर, उत्कर्ष से, गिनती में अधिक (असंख्य)— ॥ ४९७० ॥

—महाशैल, अश्वकर्ण वृक्ष फेंककर अधिक सिंहनाद किया, जिससे वनचरों ने भी सिंहनाद किया। उन सबको झट से कुम्भ ने तोड़ दिया और

स्रुक्ककातनि विल्लु सुग्रीवु डॊंडिसि। यक्कजंबुग बुच्चि यट्टु त्रुंचुटयुनु
दंतंबु दुनिमिन दऱिमि पैं वच्चु । दंति चंदबुन दऱिमि कुंभुंडु
कडु रोषमुन मंडि कडगि सुग्रीवु । बडवैतुननि पाऱि पट्टुकॊन्नप्पु
डिनजुंडु गुंभुंडु निभमुलु रॆंडु । पॆनगिन कैवडि बॆनगि रुद्धतिनि
गर लाघवमु लॊप्प घन शक्ति मॆऱसि । चरण घट्टनल भूस्थलमु ग्रक्कदल
बॊगल चंदमुन नूर्पुलु ग्रम्मुचुंड । मिगिलिन ताकुल मिन्नॆल्ल बगुल;
नप्पुडु सुग्रीवु डाकुंभु बट्टि । त्रिप्पि यंबुधि वैचॆ देवतलार्वं;
दनुजु डावारिधितलमु घोषंबु । दनरार बडियॆ मंदर शैल मनग;
४९८०

बडियु नादनुजुंडु भानुजु जेर । गडक तॊडुत महोग्रत नॆगुदॆंचि
बॆडिदंबुगा ऱॊम्मु बिडिकिट बॊडुव । नॆडयक व्रस्सि यायॆम्मुलु दाक
गडिदि वज्रमु दाक गनकाद्रि वॆडलु । मिडुगुरुलो यन मिडुगुरु लॆगसॆ;
दानिकि गॊपिंचि तरणि-नंदनुडु । दानवाधमु नुरस्स्थल मार जूचि
यच्चॆरुवुग मुष्टि नर्मरिंचि पॊडुव । जच्चॆ नुद्भट बाहु सत्त्वुंडु दूलि;

रविज को अनेक मार्गणों (बाणों) से पीड़ित करने पर, कमज़ोर न बनकर सुग्रीव ने उसके धनुष को आश्चर्यप्रद रूप से, झपट पकड़कर उसे तोड़ दिया। दाँत टूट जाने पर पीछा कर, आक्रमण करनेवाले दंति (गज) के समान, भगाकर कुम्भ ने अतिरोष से क्रुद्ध होकर, सप्रयत्न 'सुग्रीव को गिरा दूंगा' कह दौड़कर (सुग्रीव को) पकड़ लिया। इनज और कुंभ दो हाथियों के जूझने के समान औद्धत्य से जूझ पड़े। कर-लाघव से शोभित होकर, घन-शक्ति से दीप्त होकर, चरण-घट्टनों (पादाघातों) से भूस्थल के झट हिलने पर, धुएँ के समान लम्बी-साँसों के व्याप्त होने पर, अधिक आघातों से समस्त आकाश के विदीर्ण होने पर (जूझते रहे) तब सुग्रीव ने उस कुम्भ को पकड़कर घुमाकर अंबुधि में डाल दिया जिससे देवताओं ने सिंहनाद किया। उस वारिधि के तल में घोष (ध्वनि) के शोभित होने पर वह मन्दर शैल के समान गिर गया ।। ४९८० ।।

—गिरकर भी उस दनुज ने साहस से, महोग्र रूप से भानुज के पास आकर, भीकरता से वक्ष पर मुष्टिघात किया तो अविलम्ब हड्डियों पर लगने पर वे टूट गईं। कठोर वज्र के लगने से कनकाद्रि से निकलनेवाली चिनगारियों के समान चिनगारियाँ निकल पड़ीं। उस पर क्रुद्ध होकर तरणि-नन्दन द्वारा दानवाधम के उरस्थल को ताककर, (लक्ष्य करके) आश्चर्यप्रद रूप से मुष्टि साधकर, आघात करने पर, वह उद्भट बाहुसत्त्ववाला लड़खड़ाकर मर गया। उसके तब शान्त-पावक के समान, उष्णता (प्रताप)

वाडंत शांत पावकुडुनु बोले । वेडिमि चेंडि पड्डुवेऱचि राक्षसुलु
पऱचिरि दिवियु भूभागंबु वगुल । नेंऱि दप्पि येंतयु नीरधि गलग;
नप्पुडु दमयन्न यवनि गूलुटयु; । निप्पुलु सेंदरेंडु नेंऱि चूड्कु लडर
गौलदिकि मीऱिन कोपंबु तोड । नलि निकुंभुडु सिंहनादंबु सेसि
कनकरत्न प्रभाकलितमै तनरि । यनयंबु गंधपुष्पार्चितंबैन ४९९०

परिघ द्रिप्पुटयुनु ब्रह्मांड मेल्ल । नुरिलेंडु गति नुंडे नुग्रभागमुन;
नाश लेंल्लनु व्रीलि नट्लय्यें; वायु । पाशंबुलुनु देंगि पडु विधंबय्यें;
हनुमंतु डप्पु डुद्धति दैत्यु दाकि । यिनतनूभवुनकु नेंडसोच्चि पेच्चें;
घोराजि बरिघ निकुंभुंडु द्रिप्पि । मारुति वक्ष मुन्मत्तुडै व्रेसें;
व्रेसिन नत्युग्र विस्फुलिंगमुलु । भास मानंबुलै पर्वुचुनुंड
नुरमुलो बेंट्टिट्टिदो यन नपुडु । करमरुदुग बरिघमु तुमुरय्यें;
वालिन परिघंबु वाटुन नतडु । गालिचे दूलु वृक्षंबुनु बोलें;
दूलियु धैर्यंबु तोड निकुंभु । वालिन पिडिकिट वक्षंबु वोडिचें;
बोडिचिन नादैत्य-पुंगवु नुरमु । कडु व्रस्सि नेंत्तुरु ग्रम्मुदेंचुटयु
नतडु महानिलाहति महीजंबु । गति गंप मोंदियु ग्रम्मऱ देंलिसि ५०००

खोकर गिर पड़ने पर, भीत होकर राक्षस भाग उठे, जिससे दिवि और भूभाग विदीर्ण हुए और क्रमहीन नीरधि अत्यधिक आलोड़ित हुई। तब अपने अग्रज को अवनि पर गिरते देख, अंगारे बिखेरनेवाली चितवनों के उत्कर्षित होने पर, अत्यधिक क्रोध से, निकुम्भ ने सिंहनाद करके, कनक-रत्न-प्रभा-कलित हो शोभित तथा निरन्तर गंध-पुष्पों से अर्चित, ॥ ४८९० ॥

—परिघा घुमाई, उस उग्रभाव से लगा मानों समस्त ब्रह्मांड विदीर्ण हो जाएगा। लगा दिशाएँ विदीर्ण हो जाएंगी। ऐसा लगा वायुपाश भी टूट गिरेंगे। तब हनुमान औद्धत्य से दैत्य का सामना कर, इनतनूभव की सहायता के लिए पहुँच विजृंभित हुआ। घोर युद्ध में निकुंभ ने परिघा घुमाकर, उन्मत्त बनकर, मारुति के वक्ष पर डाल दिया। डालने पर अत्युग्र विस्फुलिंग भासमान हो विकीर्ण हुए (और) उरस्थल पता नहीं कितना कठोर है, कि आश्चर्यप्रद रूप से परिघा चूर-चूर हो गई। श्रेष्ठ परिघा के आघात से हवा (के झोंके) से कंपित वृक्ष के समान कंपित होकर भी, धैर्य से निकुंभ के वक्ष पर श्रेष्ठ मुष्ठि का प्रहार किया। आघात करने पर उस दैत्यपुंगव के अधिक टूक-टूक हुए उर से रक्त छूट निकला। महा-अनिल के आघात से महीज (वृक्ष) की तरह कंपित होकर भी उसके फिर होश में आकर, ॥ ५००० ॥

हनुमंतु बट्टि युद्धति मीदि कॆत्त । दनुजु लार्चिरि वियत्तल मॆल्ल नद्रुव
गडुवेगमुननॆ यक्कपिकुंजरुंडु । विडिपिंचु कॊनि रणोर्वीस्थलि कुरिकि
कडगि निकुंभ नुग्रत बिट्टु वॊडिचि । वडि बडवैचि यव्वसुमति मीद
विसरि यॆम्मुलु राल व्रेसि ड्रॊम्मॆक्कि । दॆस लद्रुवग दल द्रुंचि पॆल्लार्चॆ;
ना रभसंबुन नवनियु मिन्नु । वारिधुलुनु दिशावलयंबु म्रोसॆ;
हत शेषराक्षसु लालंकलोनि । कतिरयंबुन जनि यारावणुनकु
गुंभ निकुंभादि गुरुसत्त्व धनुलु । कुंभिनि मीद नार्गुरु दैत्यवरुलु
गूलट सॆप्पिन गोर्पिंचि यसुर । वालिन खरुनि यावरतनूभवुनि
मकराक्षु बिलिचि "समग्र सैन्यमुल । ब्रकटंबुगा गूर्चि परगंग नीवु
राम लक्ष्मणुल, मर्कटमुल जंपि । रा मगटिमि" ननि रावणु डाड
५०१०

मकराक्षुडु युद्धमुनकु वॆडलुट

विनि महोत्साहुडै वेगंबॆ वाडु । दनतंड्रि पग दीर्प दनकब्बॆ ननुचु
मुदमंदि तन रॆंडु मूपु लुप्पॊंग । द्रिदशारि कप्पुडु धीरुडै म्रॊक्कि
वीड्कॊनि रथमॆक्कि वॆडलि कय्यंबु । वेड्कतो दनयॊद्दि वीरुल जूचि

—हनुमान को पकड़कर, औद्धत्य से ऊपर उठाने पर, दनुजों ने सिंहनाद किया जिससे समस्त वियत्तल विदीर्ण हो जाए। अति वेग से ही उस कपिकुंजर ने (अपने को) छुड़ाकर, रणभूमि पर कूदकर, लगकर निकुंभ पर उग्रता से भीकरता से प्रहारकर, झट वसुमती पर गिरा देकर, ऐसा फेंक दिया जिससे हड्डियाँ टूट गईं तब छाती पर चढ़कर, दिशाओं के विदीर्ण होने पर, उसका सिर काट डालकर अधिक सिंहनाद किया। उस रभस को देखकर अवनि और आकाश, वारिधियाँ और दिशावलय मुखरित हुए। हतशेष राक्षस लंका में शीघ्र चले गए और रावण को कुंभ-निकुंभ आदि गुरु-सत्वधनियों तथा छः दैत्यवरों का कुंभिनी (धरती) पर गिरने की (बात) बताई तो असुर रावण ने क्रुद्ध हो, श्रेष्ठ खर के उस वर-तनूभव मकराक्ष को बुलाकर कहा "समग्र (समस्त) सैन्यों को प्रकट रूप से एकत्र करके शोभा से तुम पौरुष से रामलक्ष्मणों तथा मर्कटों को मारकर आओ।" ॥ ५०१० ॥

मकराक्ष का युद्ध के लिए निकल पड़ना

(रावण की बात) सुनकर महोत्साह से युक्त हो वह शीघ्र ही यह सोचते कि पिता के वध का प्रतिशोध लेने का अवसर मिला है, मुदित होकर, दोनों कन्धों के फूलने पर, त्रिदशारि को तब धीर बन प्रणाम कर,

"मीरु समग्रत मैंड़सि युग्रतनु । बोरुडु कपुलतो बौंरि-बौंरि; नेनु
राम लक्ष्मणुल, मर्कटमुल नादु । भीम शराग्नुल भिन्नुल जेसि
येचेंद" ननवुडु नेंलमि दानवुलु । द्रोचि तो नडवंग दुश्शकुनमुलु
गलिगें बै; क्कवि येंल्ल गनियु नय्यसुर । तलकक तूर्य नादंबुलु सेंलग
नलि नार्चि कविसें वानर सेन मीद । निलयु नाकाशंबु निट्टट्टु पडग;
दड़िमि वानरुलुनु दरुलुनु गिरुलु । दड़चुगा वैचिरि दैत्युल मीद;
दानवुलुनु गदादंड कोदंड । मानितखड्गादि महित शस्त्रमुल५०२०

वानि नन्निटिनि वडि द्रुंचि वैचि । वानरकोटि दीव्रत नौंचि यार्चि;
रा समयम्मुन नम्मकराक्षु । डा सर्व कपुलपै नति वेग रथमु
बड़पुचु गदिसि मुप्पदि नूड़िट । नरुवदिटनु मड़ि यरुवदेनिट
निरुवदिटनु वैस निरुवदाड़िट । बरग नाड़िटनु बंड्रेंट रेंट
बदिट बदेनिट बदुनेंन्मिदिट । बदुमूट नालिगट बदु नालुगिट
देंगगोंनि मूट नैदिट नेडिट । नगलिचि तोंम्मिदि यम्मुल नेसें;
नवि सहिपग लेक यखिलवानरुलु । भुवि तल्लडिल्ल नप्पुडु पारुटयुनु

बिदा लेकर, रथ पर आरूढ़ होकर युद्ध के प्रति उत्साह से निकल पड़ा, अपने पास के वीरों को देखकर (कहा)—"आप समग्रता (पूरी तरह) से दीप्त होकर, बार-बार कपियों से उग्रता से लड़िए। मैं रामलक्ष्मणों को, मर्कटों को अपने भीमशरों की अग्नियों से खंड-खंडकर पीड़ित कर दूंगा।" ऐसा कहने पर प्रेम से (एक दूसरे को) ढकेलते हुए दानव चल पड़े तो कई दुश्शकुन हुए, तब सबको देखकर भी वह असुर विकल हुए बिना तूर्यनादों के मुखरित होने पर, सिंहनाद कर वानरसेना पर टूट पड़ा जिससे भूमि तथा आकाश विचलित हो जाएँ। पीछाकर वानरों ने भी अधिकता से तरु और गिरि दैत्यों पर फेंके। दानवों ने भी गदादंड, कोदंड, मान्य खड्ग, महित शस्त्रों से, ॥ ५०२० ॥

उन सबको झट काट देकर, वानरकोटि को तीव्रता से पीड़ित कर, सिंहनाद किया। उस समय पर, उस मकराक्ष ने उन सभी कपियों पर अतिवेग से रथ चलाते हुए, नियराकर, तीसों, सैकड़ों, साठों, और पैंसठों, बीसों, झट छब्बीसों, शोभा से छहों, बारहों, दोनों, दसों, पन्द्रहों, अठारहों, तेरहों, चारों, चौदहों, तीनों, पाँचों, सातों, नौओं बाणों का संधानकर चलाया जिससे वे (वानर) उखड़ जाएँ। उन्हें सह न सक समस्त वानर, भुवि को कंपित करते हुए भाग निकले।

मकराक्ष संहारमु

“हो! मीरु वॆऱवकु; डोडकु” डनुचु। रामुडु विलुगॊनि राक्षसुल् बॆदर
जतुरंग बलमुल जंपुट जूचि। यति कोपमुन मकराक्षुंडु वॆंचि
यरदंबु वऱपिचि यारामुडासि। “खरसूति येनु राघव: मुन्नु नीवु ५०३०
पॆरिगि मातंड्रि जंपिन दान जित्त। मॊरियुचु नुंडॆ ना कितकालंबु;
नाकु नीतोडि रणंबब्बुटकुनु। जेकॊनि चिंतितु, जेकूरॆ नेडु;
तरलकु नीवु; मातंड्रि सूडुनकु। नॆरयंग बोराड निनु गॆंटि नेनु;
दुरमॊनरिंप नातो विट नैन। गरवालमुन नैन गदनैन” ननुडु
वानितो राघवेश्वरुडु गोपिंचि। “दानवाधम, यी वृथा गर्वमेल?
भासिल्लु नाबाहु बलमु सॊंपार। गा समरंबुन खंडितु निन्नु”
ननिन रामुनि मकराक्षुंडु गिट्टि। घनमैन निशितांबकंबुल नेसॆ;
नेसिन नवि रामुडॆड द्रुंचि वैचॆ;। नासमयमुन ब्रह्मांडंबु दिशलु
निंडॆ नायिद्दऱ निष्ठुर चाप। दंड महागुणध्वनुलु पॆल्लडरि;
सुर खेचरादुलु चोद्यंबु नॊंद। नरुदार नेयु रामास्त्रंबु लॆल्ल ५०४०

मकराक्ष का संहार

‘ओ हो ! तुम डरो मत, मत डरो’ कहते हुए राम ने धनुध धारण कर, राक्षसों के भीत होने पर, चतुरंग बल का संहार किया, (उसे) देख अतिक्रोध से मकराक्ष ने विजृंभित हो, रथ चलवाकर, उस राम के निकट जाकर (कहा—) “हे राघव ! मैं खर का पुत्र हूँ। पूर्व में तुमने, ॥ ५०३० ॥

—उन्नत बन हमारे पिता का वध किया था। उससे इतने समय से मेरा चित्त दुखी हो रहा था। तुम्हारे साथ युद्ध करने के अवसर की चिन्ता कर रहा था। (वह) आज प्राप्त हुआ है। तुम (सामने से) हटो मत। हमारे पिता के वैर का प्रतिशोध लेने के लिए आज तुमसे जूझ पा रहा हूँ। मुझसे धनुष से या करवाल से या गदा से ही सही, युद्ध करो।” (ऐसा) कहने पर राघवेश्वर ने क्रुद्ध हो उससे (कहा) “हे दानवाधम ! यह वृथा गर्व क्यों ? भासमान मेरे बाहुबल के शोभित होने पर, तुम्हारा समर में खंडन कर दूँगा।” (ऐसा) कहने पर राम के निकट आकर मकराक्ष ने महान-निशित-अंबक चलाए। चलाने पर उन्हें वहीं का वहीं राम ने तोड़ दिया। उस समय पर ब्रह्मांड और दिशाएँ, उन दोनों के निष्ठुर-चापदंडों की महागुण-ध्वनियों के उत्कर्षित होने पर, भर गईं। सुर खेचर आदियों

नतिवेगमुन मकराक्षुंडु द्रुंचि । यतुल बाणंबुल नडरिंचुटयुनु
नवि राघवुडु द्रुंचि यामकराक्षु । विविध निष्ठुर शरावृतु जेय नतडु
नवि यॆल्ल गडगि यत्यंत रोषमुन । विविध खंडमुलु गाविंचि पॆल्लाचॆं;
गोपिंचि काकुत्स्थकुलुडु नद्दैत्यु । चापंबु वॆस नॊक्क शरमुन द्रुंचि
सारथि नॆनिमिदि सायकंबुलनु । नारथंबुनु मरि यन्नि बाणमुल
विकलत्व मॊनरिप विरथुडै यपुडु । मकराक्षु डॊक्क समग्र शूलंबु
वैचिन नदि वेग वच्चुट विभुडु । चूचि मूडम्मुल जूर्णंबु सेसॆं;
ननिमिषु लारामु नग्गिंचि रपुडु; । दनुजुंडु गिनिसि यादशरथात्मजुनि
बिडिकिट बॊडुवंग बिट्टॆगुदेर । नडुमनॆ याराम नरनायकुंडु
ननलास्त्रमुन हृदयमु गाड नेय । ननि मॊन नम्मकराक्षुंडु गूलॆं;
५०५०
प्रथितारुण प्रभाभासियै यंत । प्रथमाद्रिपै दोचॆं पद्म-बांधवुडु;
हतशेष राक्षसु लालंक करिगि । यतडु सच्चुट सॆप्प नारावणुंडु
कोपंबु जितयु गूडि चित्तमुन । नेपार ननियॆ नय्यिंद्रजित्तुनकु;
"रणमुन गपुलनु रामलक्ष्मणुल । क्षणमात्रमुन जंपगा जालु वाड

के चकित हो जाने पर विलक्षण रूप से राम के चलाए समस्त अस्त्रों को ।। ५०४० ।।

—अतिवेग से खंडितकर, मकराक्ष अतुल बाणों से उत्कर्षित हुआ, (फिर) उन्हें राघव ने काट दिया, (और) मकराक्ष को विविध निष्ठुर शरों से आवृत कर दिया । उसने भी उन सबको सप्रयत्न अत्यन्त रोष से विविध खंड (टुकड़े-टुकड़े) कर अधिक सिंहनाद किया । क्रुद्ध हो काकुत्स्थकुल वाले ने उस दैत्य के धनुष को झट एक शर से काटकर, सारथी को आठ बाणों से, उस रथ को फिर उतने ही बाणों से विफल कर दिया, तो विरथ होकर तब मकराक्ष ने एक समग्र शूल को फेंक दिया, उस (शूल) के शीघ्रगति से आने पर विभु (राम) ने देखकर, तीन बाणों से चूर्ण कर दिया । तब अनिमिषों ने राम की प्रशंसा की । दनुज के क्रुद्ध हो दशरथात्मज पर भीकरता से मुष्टि प्रहार करने आने पर, बीच में ही राम-नरनायक ने अनलास्त्र को ऐसा चलाया कि वह हृदय में गड़ गया और युद्धभूमि में मकराक्ष गिर (मर) गया ।। ५०५० ।।

प्रथित-अरुण-प्रभाभासी होकर तब प्रथमाद्रि (पूर्वगिरि) पर पद्म-बांधव दिखाई पड़ा । हतशेष राक्षसों के लंका में जाकर उसके मृत होने की (बात) करने पर, रावण ने, क्रोध और चिन्ता के मिलकर चित्त में बढ़ जाने पर, इन्द्रजित से कहा—"रण में कपियों तथा रामलक्ष्मणों को क्षणमात्र

वीवेकाकिक ना कॆव्वरु गलरु? । नी विटु निज वाहिनी समेतमुग
जनि यंदरनु जंपि चनुदॆम्मु मुन्नु । ननिमिष कोटुल ननि जंपु करणि;
रणमुन गॆलिच संरंभंबु तोड । बणुतिप नेतॆम्मु प्रमद मॊप्पार"

इन्द्रजित्तु मूडवसारि युद्धमुन करुगुट

ननवुडु निंद्रजित्तु आरावणुनकु । विनयंबुतो म्रॊक्कि वीड्कॊनि कदलि
वायु वेगमु गल वाजुल बून्चि । यायितंबैनट्टि यरदंबु नॆक्कि
शरदभ्रसंवृत-शैलंबु करणि । गुरुभुजुंडै वॆलि गॊडुगुल नीड ५०६०
रमणीय कंकण रणितमुल् मॊरय । रमणु लिम्मुल जामरम्मुलु वीव
नॊलसि मोमुन संगरोत्साह लील । दळुकॊत्त नेतॆंचि तल्लिकि म्रॊक्कि
जननि दीविंपंग जनि तन पत्नि । दनयुल वीड्कॊनि तम्मुल चावु
दलपोसि कोपाग्नि दरिकॊन बेर्चि । यलघु दर्पंबुन नय्यिद्रजित्तु
मानक रोष समग्रत तोड । दानव कोटुलु दविलि सेविंप
घन काम रूपमुल् गल मंत्रिवरुलु । तनु गॊल्व नुत्तर द्वारंबु नंदु
नद्रुलगति देरु लरुवदि कोट्लु । भद्रगजंबुलु पदुमूडु कोट्लु
दुरगंबु लरयंग दुद नूरुकोट्लु । गुरुशक्ति नाल्गेसि कॊम्मुल करुलु

में मार सकनेवाला तुम्हारे अतिरिक्त अब मेरा कौन है? तुम अब निज-वाहिनी (अपनी सेना) के साथ जाकर, पूर्व में युद्ध में अनिमिष समूह को मार डालने के समान, सबको मारकर आ जाओ, रण में विजयी होकर, संरंभ से, प्रमोद के साथ; सराहनीय रूप से आ जाओ।"

इन्द्रजित का तीसरी बार युद्ध के लिए जाना

ऐसा कहने पर इन्द्रजित रावण को विनय से प्रणाम कर, बिदा लेकर चल पड़ा। वायुवेग से युक्त वाजियों को जुताकर, आयत (विशाल) रथ पर आरूढ़ होकर, शरदभ्र से संवृत शैल के समान, गुरु-भुजाओं वाला होता हुआ, श्वेत छत्रों की छाया में, ॥ ५०६० ॥

—रमणीय-कंकणों के रणितों के मुखरित होने पर, प्रेम से रमणियों के चामर डुलाने पर, मनोज्ञ-मुख पर संगरोत्साह-लीला के दीप्त होने पर, आकर, माता को प्रणाम किया। जननी के आसीसने पर, अपनी पत्नी तथा तनयों से विदा लेकर, अनुज की मृत्यु के बारे में सोचकर, कोपाग्नि के प्रज्वलित होने पर, अलघु (अधिक) दर्प से वह इन्द्रजित अनारत रोष-समग्रता से, दानवकोटियों के इच्छा से सेवाएं करने पर, घन-कामरूपवाले मन्त्रिवरों के सेवाएं करने पर, उत्तर द्वार से (निकल पड़ा।) पर्वत-सम साठ करोड़ रथों, तेरह करोड़ भद्र गजों, सौ करोड़ तुरगों, गुरु-शक्तियों से युक्त

नारय नौक कोटि यडरितो नडव । भेरुंडमुलु वोलै बेंपु वहिंचि
चिलुक वन्नियलतो जैलगु गुऱ्ऱमुलु । कौलदुलै नालुगु कोट्लु नडव ५०७०
वलुद निस्साणादि वाद्यमुल् म्रोय । गलनिकि वेडलि लंकापुरिनुंडि
तनचुट्टसंख्यमै दैत्युलु गौलुव । घनतर भीषणाकारंबुतोड
वानर वीर दुर्वार नादमुल । मानैन रण-मही-मध्यंबु जौच्चि

इंद्रजित्तु होममु जेसि कृत्ति यनु शक्ति बडयुट

यरदंबु डिगि धीरुडै काचि युंड । दिरिगिरा दैत्युल देऱगोप्प निलिपि
गुरुतर वेदि त्रिकोणमै पेद्द । परपोंदि दक्षिण प्रवणमै युन्न
भूरि श्मशानाग्नि पौलुपार दैच्चि । धीरुडै वेदिलो दीपिंप जेसि
रक्त वस्त्रंबुलु रक्तमाल्यमुलु । रक्त चंदन मनुरक्ति मै दाल्चि
दंडंबु नुपवीत ततियु मौंजियुनु । निंडु मनंबुतो नेऱयंग बूनि
यलवड नचट खट्वांग ध्वजंबु । निलिपि कपालंबु निष्ठतो नैक्कि
परगंग गंकाल परिधि गाविंचि । तिरमुगा दक्षिण दिश स्रुक्स्रुवम्मु ५०८०
लिनुप पात्रल नुंचि येर्पड गृष्ण । तनुडैन वानि रक्तमुनु मांसमुनु

तथा चार दाँतोंवाले एक करोड़ करियों के उत्कर्षित हो चल पड़ने पर, भेरुंडों के समान औन्नत्य से युक्त हो, तोते के रंग से शोभित चार करोड़ घोड़ों के चलने पर, ॥ ५०७० ॥

—अधिकता से निस्साण आदि वाद्यों के मुखरित होने पर, लंकापुरी से रणभूमि की ओर चल पड़ा। अपने चौतरफ़ (घेरे) असंख्य दैत्यों के सेवाएँ करने पर, घनतर भीषण-आकार से, वानर वीरों के दुर्वार-नादों के आकर (स्थान) रणभूमि के मध्य प्रवेश कर,

इन्द्रजित का होम करके कृति नामक शक्ति को प्राप्त करना

—रथ से उतरकर, धीर बन, पहरा देने के लिए दैत्यों को ढंग से खड़ा करके, त्रिकोणवाली, अधिक विशाल (तथा) गुरुतर-वेदिका (बनाई), दक्षिण दिशा में स्थित भूरि श्मशानाग्नि को शोभा से लाकर, धीर बन, वेदिका में प्रदीप्त कर, रक्त वस्त्र, रक्त माल्य, रक्त चन्दन को अनुरक्ति से धारण कर, दंड, उपवीत-तति, मौंजी को हृदयपूर्वक धारणकर, ढंग से वहाँ खट्वांग-ध्वज को स्थापित कर, निष्ठा से कपाल पर आरूढ़ (आसीन) होकर, शोभा से कंकाल की परिधि बनाकर, स्थिरता से दक्षिण दिशा में स्रुक्, स्रुव को ॥ ५०८० ॥

बौरि-बौरि नवि निंड बोसि मौनंबु । धरियिंचि यप्पुडथर्वणक्रममु
दप्पक युंड मंत्रम लुच्चरिंचि । चौप्पड नपुडु स्रुक्स्रुवमुलु वह्नि
कमिय बावकुडुनु गरसौप्प दाडि । समिधलु दिललुनु सर्षपंबुलुनु
होमंबु सेयंग नुरतरंबगुचु । ना महा धूम मजांडंबु निंडे;
नायग्नि लोनुंडि यप्पुडु वेग । नायितंबैनट्टि यरदंबु वेडले;
रयमुन नुग्र कराळ केशमुलु । भयदरूपंबु गपाल पात्रंबु
दळतळ मनु कोऱ दौडलु मेऱय । मलग कार्चुचु नस्थिमालिक लमर
नेऱमंट लौलिकेंडु नेत्रंबु लौप्प । नुऱक हासमु तोड नौककृत्ति वेडलि
"पंपुमु पंपु मे पनियैन नन्नु । सौपार जेसेद सुरवैरि!" यनुडु ५०९०
नाकृत्ति नेऱगि यिद्रारि शस्त्रमुलु । नाकृत्ति गौकौनि याकाशमुनकु
नरदंबु तोडन यरिगि वानरुल । दिरिगि येयुटकु नदृश्युडै युंडे;
नंतट ना रावणात्मजु सेन । यंतयु ग्रम्मऱि यरिगे लंककुनु;
नट निंद्रजित्तुंडु नाकपिसेन । बटुतरशर परंपरल नौप्पिप
वलिय दाकेंडि शिलावर्षंबु चेत । बलुदेस जैडि पारु पक्षुलो यनग
छिन्नाभिन्नांगुलै चेदरिरि कौंद- । रुन्नतगति दप्पि युंडिरि कौंद;

—लौह पात्रों में रख, कृष्ण तनु वाले (व्यक्ति) के रक्त तथा मांस को बार-बार उनमें भरकर, मौन धारणकर, तब अथर्वण क्रम से नियमित मन्त्रों का उच्चारण कर, ढंग से तब स्रुक-स्रुवों को पकड़, पावक (अग्नि) खूब प्रज्वलित हो उठे, ऐसा शोभा से ताड़ की समिधाएँ, तिल, सर्षप (सरसों) से होम किया। (तब) उरुतर (बहुत अधिक) होते हुए वह महाधूम अजांड में भर गया। तब उस अग्नि में से शीघ्र विशाल एक रथ निकल पड़ा। शीघ्र ही उग्र-कराल-केश, भयद रूप, कपाल पात्र (से युक्त तथा) चमकनेवाली डाढ़ों के दीप्त होने पर, लार टपकाते हुए, अस्थिमालाओं से सजकर, लाल अग्निज्वालाओं को उगलनेवाली आँखों के शोभित होने पर, निरन्तर (अट्ट) हास के साथ एक कृत्ति निकल पड़ी (और कहा)—'जो भी कार्य हो मुझे भेज दो। हे सुर-वैरी! शोभा से उसे संपन्न करूँगी।" (ऐसा) कहने पर, ॥ ५०९० ॥

—उस कृत्ति को जानकर, इन्द्रारि ने शस्त्र तथा उस कृत्ति को ग्रहण किया, आकाश की ओर रथ के साथ जाकर, वानरों पर पुनः आक्रमण करने के लिए अदृश्य हो रहा। तब रावणात्मज की समस्त सेना पुनः लंका में चली गई। तब इन्द्रजित ने उस कपिसेना को पटुतर-शर-परम्पराओं से पीड़ित किया तो चौतरफ़ से लगनेवाले शिलावर्ष के कारण, अनेक दिशाओं में भागनेवाले पक्षी हों, ऐसा छिन्न-भिन्न अंगवाले हो कुछ बिखर गए,

ऱैसगंग जेवुऱु टेरुलतोड । वसुमतीधरमुलु वडि गूलु करणि
बडिरि रक्तंबुलु पयि पयि दौरुग । गुडुसुगा नय्येंड गोंदऱु कपुलु;
नप्पु डायम्मुल नंधकारंबु । गप्पि यॆव्वरिकिनि गान राकुंडॆ;
नंत वानर वीरु लंतरिक्षमुन । नंतर्हितुंडगु नायिंद्रजित्तु ५१००

बौंडगान जालक भूनभोंतरमु । वडि निंड बऱतेंचु वाडि बाणमुल
नडुमुलु दॆगुवारु नऱुमैन वारु । गडि कंडलै नेल गलिसिन वारु
गडिमिमै नाजिकि गैकोन्न तरुलु । विडिचि यम्मुलु गाड वॆस जच्चुवारु
नडुनॆत्ति बडु घोर नाराच समिति । पुडमितो गीलिप बौंडवुलु सॆडक
निलुवु सच्चिन वारु निखिलांगकमुल । बलु बाणमुलु गाड बडि
पौरल्वारु
मातंग शवमुलु माटु गॊन्वारु । जेतुल गिरुलॆत्ति चेष्टिंचु वारु
दृष्टिकि दोपक तिरिगि विन्वीथि । दृष्टिंचि यौडुलु दीटॆडु वारु
नखिलाशुग प्रवाहमुलु पै दौरुग । मुख सरोजमुलकु मुरिय राकुंड
बौंदि मीदिकि नॆत्ति भूरि सेतुवुल । चंदंबुगा ब्रकोष्टमु लौड्डुवारु
जिच्चर पिडुगुल चॆलुवुन जदल । वच्चृ कोललु गेल वडि द्रुंचुवारु
५११०

कुछ औन्नत्य की गति को खोकर पड़े रहे। शोभा से लाल रंग के झरनों के साथ वसुमती-धरों (पर्वतों) के झट गिरने के समान, रक्त के बहते रहने पर, कुछ कपि वर्तुलीभूत हो गिर पड़े। तब उन बाणों से अन्धकार छाकर, किसी को (कुछ) दिखाई नहीं पड़ रहा था। तब वानर वीर अन्तरिक्ष में अन्तर्हित बने उस इन्द्रजित को, ॥ ५१०० ॥

--देख न सक, भूनभोंतर में झट भरकर आनेवाले पैने बाणों के कारण कमर टूटनेवाले, चूर-चूर बननेवाले, टुकड़े-टुकड़े हो मिट्टी में मिल जानेवाले, साहस से युद्ध करने के लिए ग्रहण किए तरुओं को छोड़कर, बाणों के धँस जाने से झट मरनेवाले, मध्यशिर पर गिरनेवाले घोर-नाराच-समिति के कारण पृथ्वी से सट जानेवाले, खड़े-खड़े मरनेवाले, निखिल अंगों में कई बाणों के लगने के कारण (जमीन पर) लोटनेवाले, मातंगों (गजों) के शवों की आड़ में छिपनेवाले, हाथों में गिरि उठाकर (बचने का) प्रयत्न करनेवाले, आँखों को (शत्रु के) न दीखने पर पुनः (पुनः) आकाश-वीथि की ओर देखकर, होंठ चबानेवाले, अखिल-आशुगों (बाणों) के प्रवाहों के ऊपर बह आने पर, मुख-सरोजों को बचाने के लिए, अपनी हथेलियों को उठाकर, भूरि-सेतुओं के समान (बाण-प्रवाह को) रोक लेनेवाले, प्रज्वलित

वालंपु बॊंडुपुल वाल घातमुल । द्रूलिचु वारु नॆत्तुट दोगु वारु
घोरांबकंबुलु गॊंनियु धैर्यंबु । लारंग निश्चलुलै युंडु वारु
ब्रेवुलु प्रोवुलै पृथिविपै बडग । नावुलितल तोड नधिक निद्रलनु
गनुमूयु वारुनु "गडगि रामुनकु । नवि ब्राण मीगंटि" मनि पल्कुवारु
"दुर्लक्ष्यु डित– डनि दॊंडरंग नेडु । दुर्लभं" बनि ब्रह्म दूषिचु वारु
"ब्रह्म इच्चिचन शक्ति बदिलुडै वीडु । ब्रह्मांडमुन गान बडकुन्न वाडु
ब्रह्म वरंबॆंत ? ब्रह्मांडमॆंत ? । ब्रह्म यॆंतटि वाडु पार्थिवेंद्रुनकु ?
दलपोय ननिलोन धरणीशु डेटि । कलुगडो" यनुवारु नै युंड मट्रियु
नुद्दंड कोदंड मॊकचोट मॊरयु; । नुद्दाम शरजाल मॊकचोट निगुडु;
नॊक चोट दनु जॆप्पु; नॊक चोट नार्चु; । नॊक चोट नर्दलिचु; नॊक
चोट नव्वु; ५१२०
नॊक चोट हुंकार मॊनर्रिचु; निट्लु । सकल भीकर लील जर्रियिप
नलिगि
युरुभुजुंडांजनेयुडु नंगदुंडु । शरभुंडु ऋषभुंडु जांबवंतुंडु

अशनि-पिंडों की भाँति आकाश से आनेवाले बाणों को हाथों से (पकड़कर) झट तोड़ देनेवाले, ॥ ५११० ॥

—वाल (पूँछ) को उठाकर, और वाल के आघातों (उन बाणों) का निवारण करनेवाले, रक्त में ऊभ-चूभ होनेवाले, घोर-अम्बकों (बाणों) से आहत होकर भी धैर्य से निश्चल बने रहनेवाले, आँतों के राशि होकर पृथ्वी पर पड़ने से जंभाइयों से अधिक (दीर्घ) निद्रा से आंखें मूँदनेवाले, 'लगकर राम के लिए युद्ध में प्राण दे सके' ऐसा कहनेवाले, 'यह दुर्लक्ष्य (दुर्जेय) है, आज (इसके साथ) युद्ध करना दुर्लभ (असाध्य) है', ऐसा कहते ब्रह्मा को कोसनेवाले, 'ब्रह्मा की दी हुई शक्ति से सुरक्षित होकर, यह ब्रह्मांड में दिखाई नहीं पड़ रहा है। ब्रह्मा का वर ही कितना ? ब्रह्मांड ही कितना ? पार्थिवेंद्र (राजाराम) के लिए ब्रह्मा ही कितना ? सोचने पर, युद्ध में धरणीश (राजाराम) क्रुद्ध क्यों नहीं हो रहे हैं ?' ऐसा सोचने वाले (बने हुए थे सभी वानर)। ऐसे समय में उद्दंड कोदंड एक जगह मुखरित हो उठता, उद्दाम शर-जाल और एक जगह बरस पड़ता। एक जगह अपना नाम कहता, एक जगह सिंहनाद करता, एक जगह डाँट बताता, एक जगह हँस उठता, ॥ ५१२० ॥

—एक जगह हुंकार करता। इस प्रकार सकल-भीकर-लीला से विचरण करने पर, क्रुद्ध हो उरु भुजाओंवाले आंजनेय, अंगद, शरभ, ऋषभ, जांबवान, गज, गवाक्ष, गंधमादन, विजय, नील, सुषेण, पनस आदि पटु

गजुडु गवाक्षुंडु गंधमादनुडु । विजयुंडु नीलुंडु वॆस सुषेणुंडु
बनसुंडु मॊदलुगा बटु पराक्रमुलु । वनचरु लंदऱु वडि दरुल् गिरुलु
निगुडि याकसमॆल्ल निड वैचुटयु । मॊगि वच्चु शरमुल मुरियलै चॆंदरि
जडिय शतानिल चटुल वेगमुन । नुडगनि स्रोततो नुरुवडि वच्चि
याशकलमुलु पै नंदंद तॊऱुग । नाशंबु गनिरि निगुडिचु निबिड
बाणमुल
मॆऱसिन कडिमिमै मेघनादुंडु । नॆऱयंग निगुडिचु निबिड बाणमुल
गॊंदऱु तुनियलै कूलिरि; भीति । नॊंदि कॊंदऱु वाऱि रॊंदिगि
दिक्कुलकु
ब्रदर परंपरल् पऱुपुचु निट्लु । पदि कोट्ल यगचरपतुल रूपणचि
५१३०
वॆंडियु नॆंदिरिन वीर वानरुल । खंडिचॆ नतिचंद कांडसंततुल;
नतुल विक्रमुडैन हनुमंतु वालि- । सुतु शतबलि गवाक्षुनि नीलु नलुनि
बंधुर बलुडैन पनसुनि गुमुदु । गंधमादनु ऋक्ष कपि यूथपतुल
मऱियु गॊंदऱ नुग्र मार्गणावळुल । नऱिमुऱि निश्चेष्टुलैयुंड नेसि
यादितेयुल गुंडॆ लविय नम्मेघ- । नादुंडु पटु सिंहनादंबु सेय
मनमुल भीतिल्लि मानमुल् दूलि । वनचरुल् दनवॆंक वच्चि चॊच्चुटयु

पराक्रमवाले समस्त वनचरों ने झट से तरु (और) गिरि फेंककर समस्त आकाश को भर दिया। (ऐसा फेंकने पर) क्रम से आनेवाले शर खंड-खंड होकर, शत-अनिल के चटुल वेग से, अत्यधिक ध्वनि से, शीघ्रगति से आकर, उन शकलों के जहाँ-तहाँ गिरने पर कई वानर नष्ट हो गए। दीप्त साहस से मेघनाद के चलानेवाले निबिड-बाणों से कुछ टुकटे-टुकड़े होकर गिर पड़े। भीत होकर कुछ भागकर दिशाओं में छिप गए। प्रदर-परम्पराओं को चलाते हुए इस प्रकार दस करोड़ अगचरपतियों के रूप का दमन कर, (संहार कर) ।। ५१३० ।।

—फिर सामना करनेवाले वीर वानरों को अति चंड कांड-संततियों से खंडित किया। अतुल विक्रमवाले हनुमान, बालिसुत, शतबलि, गवाक्ष, नील, नल, बंधुर बल वाले पनस, कुमुद, गन्धमादन, ऋक्ष (आदि) कपियूथपतियों को और भी कुछ (अन्यों) को उग्र-मार्गण-अवलियों से अतिशीघ्र निश्चेष्ट कर दिया। आदितेयों (सूर्यवंशीयों) के हृदय विदीर्ण हो जाएँ, ऐसा मेघनाद ने पटु सिंहनाद किया। मन में भीत होकर, मान खोकर, वनचरों के अपने पीछे आकर घुस जाने से, सौमित्र ने रामचन्द को देख (कहा)—

सौमित्रियुनु रामचंद्रुनि जूचि । "भूमीश! यीमाय पॊंदुन वीडु गर्विंचि
यिब्भंगि गपि वीर बलमु । सर्वंबु समयिंप समकट्टि नाडु;
मनमिंतलो वीनि मडियिंप वलयु" । ननवुडु श्रीरामु डनुजन्मु जूचि
"विनु ब्रह्म वरमुन विनुवीथि वीडु । तनुगान राकुंड दर्पिंचिनाडु; ५१४०

मनमॆंत गिनिसिन मनकु लो बडडु; । विनुमु लक्ष्मण; नेडु वीडसाध्युंडु;
अस्त्रंबुलेमियु नतनिपै गॊलुप; । वस्त्रमुल् सॆडिपोवु" ननि पल्कुचुंड
ना समयंबुन ननिलुंडु वच्चि । भासुर मृदुवच–फणिति निट्लनियॆ;
"विनु वीनि मायकु वॆरवु भूनाथ; । तनर नाग्नेय मंत्रमु जपियिंचि
नीवु बाणंबेय नॆरिदप्पि कृत्ति । देवारि बासि यदृश्यमै पोवु"

श्री रामुडाग्नेयास्त्रमुचे निंद्रजित्तुनि माय दॆरल्चुट

ननि यर्थि विनिर्पिंचि यनिलुंडु सनग । जननाथु डाहव संरंभ मॆसग
मानितंबगु नग्निमंत्रपूतंबु । गा नम्मु संधिंचि कडकतो नेय
गृत्ति यत्यद्भुत क्रिय निंद्रजित्तु । नत्तरि नॆंडबासि यरिगॆ नॆंदेनि;
नायिंद्रजित्तुंडु नवनि कॆतॆंचि । यायॆड गार्मुक ज्यानाद मडर

"हे भूमीश ! इस माया की सहायता से इसने, गर्वित होकर, इस प्रकार समस्त कपिवीर-बल का संहार करने का उपक्रम किया है। इतने में ही हमें इसका संहार कर देना चाहिए।" ऐसा कहने पर श्रीराम ने अनुजन्म को देख कहा—"सुनो, ब्रह्मा के वर से विनुवीथि पर यह अदृश्य हो दर्पित हुआ है।। ५१४०।।

—हम कितना भी रुष्ट हो जाएँ, यह वश में नहीं आएगा। सुनो लक्ष्मण ! आज यह असाध्य (दुर्जेय) है। अस्त्र उस पर कुछ भी प्रभाव नहीं दिखाएँगे। अस्त्र ही नष्ट हो जाएँगे।" ऐसा कहते समय, अनिल ने आकर, भासुर मृदुवचःफणिति (-विधान) से इस प्रकार कहा—"सुनो हे भूनाथ ! इसकी माया के कारण भीत मत बनो। शोभा से आग्नेय मन्त्र का जपकर तुम बाण चलाओगे तो, कृत्ति देवारी को छोड़ अदृश्य हो जाएगी।"

श्रीराम का आग्नेयास्त्र से इन्द्रजित की माया को दूर करना

ऐसा चाहकर सुनाकर, अनिल के चले जाने पर, जननाथ (राजाराम) ने आहव (युद्ध) -संरंभ के उत्कर्षित होने पर, मान्य अग्निमन्त्र से पूत बनाकर बाण का संधान कर, लगकर, चलाने पर, (वह) कृत्ति अद्भुत रूप से

गडगिन नंत नाकपिकुलोत्तंसु । लडरिन यामूर्छ लंदंद तेलिसि ५१५०
वडि गूडुकौनि वच्चि वानिपै गविसि । कडिदियौ शैल शृंगमुनु वायुजुडु
गंड शैलमुलु नंगदुडु मैंदुंडु । दंडिमै घन पर्वतमुनु गजुंडु
जय मूलमैन वृक्षमुनु नीलुंडु । रयमुन नश्वकर्णंबुनु नलुंडु
अवनीरुहंबुनु नर्क नंदनुडु । नविरळ शाखिनि नट बनसुंडु
गदिसि युग्रंबैन गद विभीषणुडु । गदुरुचु सालवृक्षमुनु संपाति
भूज महाशैलमुलु वलीमुखुलु । नाजांबवत्प्रमुखादि वीरुलुनु
नलि नार्चि मूडु बाणमुल लक्ष्मणुडु । गलयंग नूरंबकमुल राघवुडु
वानिपै नडरिप वाडंतवट्टु । नानांबकमुल जूर्णंबु गाविंचि
यनलोग्रघोरंबुलैन बाणमुल । वनचर सेन पै वडि बेट्टु पऱपि
करलाघवंबौप्प गंदमादनुनि । बरुषोग्र शरमुल बदु नेंम्मिदिंट ५१६०
नेडिंट मैंदुनि नेडिंट द्विविदु । नेडिंट हनुमंतु नेडिंट गुमुदु
वडि दौम्मिर्दिंट नव्वालिनंदनुनि । गडिमि नन्निय सायकम्मुल नलुनि
नैदिंट नीलु गवाक्षु नेडिंट । नादित्य नंदनु नऱुवदेनिंट
बनसुनि निरुवदि पट्टु सायकमुल । नैनयंग दधिमुखु नेडु बाणमुल

तब इन्द्रजित को छोड़ कहीं चली गई। इन्द्रजित के अवनि पर आकर, उस समय कार्मुक-ज्यानाद कर उत्कर्षित होने पर, तब कपिकुलोत्तंस (कपिवंश के शिरोमणि) अधिक मूर्छा से जहाँ-तहाँ होश में आकर, ॥ ५१५० ॥

—झट झुंड बाँधकर आकर, उसे घेरकर, महत्तर शैल-शृंग को वायुज ने, गंडशैलों को अंगद और मैन्द ने, महान् पर्वत को गज ने, जयमूल वृक्ष को नील ने, झट अश्वकर्ण (नामक वृक्ष) को नल ने, अवनीरुह को अर्कनन्दन ने अविरलशाखी (वृक्ष) को पनस ने, उग्रगदा को विभीषण ने, सालवृक्ष को सम्पाति ने, भूज (वृक्ष) (तथा) महाशैलों को (अन्य) वलीमुखों (तथा) जांबवान प्रमुख-आदि वीरों ने (उस पर) फेंका। सिंहनाद करके लक्ष्मण ने तीन बाण, शोभा से राघव ने सौ बाण उस पर चलाए। उसने उन नाना-अंबकों (बाणों) को चूर्ण करके, अनल-उग्र-घोर बाणों को वनचर सेना पर बड़ी भीकरता से चलाया। कर-लाघव की शोशा से गन्धमादन को अठारह परुष उग्र शरों से, ॥ ५१६० ॥

—सात से मैन्द को, सात से द्विविद को, सात से हनुमान को, सात से कुमुद को, नौ से उस बालिनन्दन को, साहस से उतने ही सायकों से नल को, पाँच से नील को, गवाक्ष को सात से, आदित्यनन्दन को पैंसठ से, पनस को बीस पट्टु-सायकों से, शोभा से दधिमुख को सात बाणों से, शोभा से लक्ष्मण को पचहत्तर अंबकों से, वसुधेश (राजा राम) को पाँच सौ वर-सायकों से,

नैसग लक्ष्मणु डेब्बदेनंबकमुल । वसधेशु नेनूरु वरसायकमुल
सायकत्नयमुन शतबलि नूरु । सायकंबुल विभीषणुनि नौप्पिंचि
मड़ियु दक्किन ऋक्ष मर्कट वरुल । गौड़ प्राणमुलतोड गूलनेयुटयु
नप्पुडु हनुमंत डचल शृंगंबु । नुप्पौंगि यंगदुंडुरुगंड शिलयु
बनस विभीषणुल् बलुगदल् बलिमि । दनर संपाति युत्तालतालमुनु
नलुडु सालाश्व-कर्णमुलु नंदंद । नलिनाप्ततनयुडु नग परंपरलु
५१७०

शक्ति विक्रम कळाशालि नीलुंडु । शक्तियु ननलुंडु सप्त पर्णमुनु
खदिरंबु लंदि तक्कटि प्लवंगमुलु । बदपडि शतबलि बदरिवृक्षमुनु
सौमित्रि मूडुग्र सायकंबुलुनु । भूमीशुडुरु शरंबुलु नूरु वड़प
शरभुंडु ऋषभुंडु जांबवंतुंडु । नुरु भुजुंडगु गवयुडु सुषेणुंडु
वेस गवाक्षुडु गज द्विविद मैंदुलुनु । नसमान विक्रमुलैन वानरुलु
गडु विक्रमंबुन घनगिरि तरुलु । नुडु वीथि गडवंग नौक्क पेल्लडर
दक्किन वारुनु दरु शैल ततुलु । नक्कजंबुग बेंचि यंदंद वैव
वानि दुत्तुमुरुगा वडि गूलनेसि । भानुनंदनु नौक्क भयद भल्लमुन
वक्षंबु नौप्पिप वडकें बेन्गालि । वृक्षंबु चलियिंचु विधमुन नतडु;
नालोन ऋषभु गवाक्षु सुषेणु । वालिनंदनु जांबवंतुनि गुमुदु ५१८०

सायकत्नय से शतबलि को, सौ सायकों से विषीषण को पीड़ित किया। और शेष ऋषभ (तथा) मर्कटवरों को म्रियमाण (मरणासन्न) बनाकर गिरा दिया। तब हनुमान ने अचल-श्रृंग को, फूलकर अंगद ने उरुगंडशिला को, पनस (तथा) विभीषण ने अनेक गदाओं को, बल से शोभित हो (लेकर), संपाति ने उत्ताल-ताल (वृक्ष) को, नल ने साल (तथा) अश्वकर्ण (वृक्षों) को, जहाँ-तहाँ नलिनाप्ततनय ने नग-समूह को,॥ ५१७० ॥

—शक्तिविक्रमकलाशाली नील ने शक्ति को, अनल ने सप्तपर्ण (वृक्ष) को, शेष प्लवंगों ने खदिर (वृक्षों) को लेकर, तदनन्तर शतबलि ने बदरी वृक्ष को, सौमित्र ने तीन उग्र सायकों को, भूमीश ने सौ उरु-शरों को चलाया। शरभ, ऋषभ, जांबवान, उरुभुजवाले गवय, सुषेण, गवाक्ष, गज, द्विविद, मैन्द तथा असमान विक्रमवाले वानरों ने अधिक विक्रम से महान् गिरियों-तरुओं को आकाशवीथि पर एक साथ उत्कर्ष से फेंका। शेष लोगों ने भी आश्चर्यप्रद रूप से विजृंभित हो तरु-शैल-ततियों को जहाँ-तहाँ फेंका। (फेंकने पर) उन्हें चूर-चूर बना गिराकर, भानुनन्दन को एक भयद-भल्ल से वृक्ष पर (मारकर) पीड़ित किया तो वह प्रचंड वायु के आघात से

मारुतसुतु गंधमादनु नलुनि । वीरादिगा गल बीर वानरुल
विवशुलगा जेसि विविध बाणंबु । लवनीशुपै नेसि हस्त लाघवमु
विलसिल्ल लक्ष्मणु विलु द्रेंव्व नेसि । यलुक विभीषणु नदरंट नेसि
विलय कालांबुद विधमुन जेंलगि । पलुमारु गर्जिंचि पलिकें नेंतयुनुः;
"जूचिते ! रघुराम! सुग्रीव मुख्यु । लीचंदमुन गूलिरे नलिग नपुडु;
नरनाथ तनय! निन् नम्मिन यट्टि । बिरुदु वानर जाति पीचंबु लडगें"
ननुचु वेंडियु बेंचि यन्निशाचरुडु । घन बाण ततुल नक्कपिसेन मीद
नडरिचें घन भूधराभदेहमुल । नेंड लेक युंड; ननेक मार्गणमु
लटु लेसि "गेंलिचिति" ननि यार्चिकोंनुचु । बटुगति लंक लोपलि केगि यंत
दन संगर क्रिय दशकंठु तोड । विनुतंबुगा जेंप्प विनि यतंडुब्बि ५१९०
"तनय! र"म्मनुचु दद्दयु गौगिलिंचि । कोंनि "नाकु नीयट्टि कोडुकु गलगं
बगवारिचे नाजि बडिन बांधवुल । पगनीग गांचिति; बासें नावगपु;
कडिदि वीरुडु कुंभकर्णुंडु मडिसें; । नडगें महाबलुंडगु प्रहस्तुंडु;
मृति बोंदें द्रिशिरुंडु मेटि वीरुंडु; । हतुडय्यें नतिकायुडालंबु लोन;

कम्पित होनेवाले वृक्ष के समान विचलित हो गया । इतने में ऋषभ, गवाक्ष, सुषेण, बालिनन्दन, जांबवान, कुमुद, ।। ५१८० ।।

—मारुतसुत, गन्धमादन, नल, नील आदि वीर वानरों को विवश बनाकर विविध बाण अवनीश पर चलाकर हस्त-लाघव से विलसित हुआ । लक्ष्मण के धनुष को तोड़ देकर, क्रोध से विभीषण पर मर्मांतक आघात कर, विलयकाल के अंबुद के समान विजृंभित हो, कई बार गरजकर यों बोला— "देखा है न ! रघुराम ! जब मैं क्रुद्ध हुआ तो सुग्रीव आदि प्रमुख इस प्रकार गिर गए न ! हे नरनाथतनय !" (ऐसा) कहते हुए और भी विजृंभित हो, उस निशाचर ने घन बाणसमूहों को उस कपिसेना पर चलाया जिससे उनके घनभूधर-सम देहों में कहीं जगह ही न रह गई । इस प्रकार अनेक मार्गण चलाकर 'जीत गया हूँ' ऐसा सिंहनाद करते हुए, पटुगति से लंका में जाकर तब अपनी संगर-क्रिया (युद्ध-विधान) दशकंठ को विनुत (सराहनीय) रूप से कही जिस पर, वह फूलकर, ।। ५१९० ।।

—'हे तनय ! आओ' कह अधिक आलिंगन कर (कहा–) 'मेरे तुम्हारे जैसा पुत्र होने से शत्रुओं द्वारा युद्ध में गिरे (मरे) बांधवों का प्रतिशोध ले सका । मेरा दुख दूर हो गया । साहसी वीर कुम्भकर्ण मृत हुआ, महाबलवाला प्रहस्त मर गया, श्रेष्ठवीर त्रिशिर मृत हो गया, युद्ध में अतिकाय निहत हो

नोगि महापार्श्व महोदरुल् वडिरि; । तेगिरि नरांतक देवांतकुलुनु;
गुंभकर्णुनि सुतुल् घोर विक्रमुलु । कुंभुंडु वडियె; निकुंभुंडु समसె;
मकराक्षु डनिलोन मडिसె दोड्तोन; सकल निशाचर सैन्यंबु वोलिसె;
लंक गाल्चिरि कपुल् लावुलु मेरसि । यिक नेटिकिवियेल्ल दलचि;
रयमुन जनि नीवु रामलक्ष्मणुल । भयद सायक परंपर लेसि चंपु;
रण दक्षुडवु नीवु; रणमुलो दोल्लि । तृण लील गेलिचिति तिविरि
देवेंन्द्रु; ५२००
नी वेचि नडचिन निकिल लोकमुलु । भाविप नप्पुडె भस्ममै पोवु;
नरुलेंत वारु, वानरु लेंतवारु । परिकिप नी" कनि पलिक वीड्कोलुप

इन्द्रजित्तु होममु जेसि शस्त्र समेतमुगा रथमुनु बडयुट

नेलमितो दन पुरोहितुनि दोड्कोनुचु । बोलुपारगा रणभूमि केतेंचि
चेन्नोंद होमंबु सेयंग बूनि । युन्नंत बरिचरु लोगि वेगमुननु
बरगंग नस्ति कपाल पत्रिकलु । सोरिदि नयोमय स्रुक्सुवंबुलुनु
शस्त्रंबुलुनु दाडि समिधलु रक्त । वस्त्र गंधादुलु वरुस देच्चुटयु
रक्तांबरंबुलु रक्तमाल्यमुलु । रक्त गंधंबुनु रयमोप्प नतडु

गया, क्रम से महापार्श्व-महोदर गिर (मर) गए, नरांतक-देवांतक कट गए, कुम्भकर्ण का सुत--घोर विक्रमवाला कुम्भ गिर गया, निकुंभ मर गया, साथ ही साथ युद्ध में मकराक्ष मर गया, समस्त निशाचर सैन्य नष्ट हो गया। सामर्थ्य से दीप्त होकर कपियों ने लंका को जला दिया, ये सब सोचकर अब बातें क्यों? शीघ्र जाकर तुम राम-लक्ष्मणों को भयद-सायक-परम्पराओं से मार डालो। तुम रणदक्ष हो, पूर्व में रण में चाहकर देवेन्द्र को तिनके के समान जीत लिया-- ।। ५२०० ।।

—तुम विजृंभित होकर चल पड़ोगे तो सोचने पर निखिल लोक तभी भस्म हो जाएँगे। देखने पर तुम्हारे लिए नर कितने और वानर कितने?' ऐसा कह, बिदा करने पर,

इन्द्रजित का होम करके शस्त्रसमेत रथ को प्राप्त करना

—प्रेम से अपने पुरोहित को साथ लेते हुए, शोभा से रणभूमि में आकर, मनोज्ञता से होम करना चाहने पर, परिचारकों ने क्रम से वेग से ढंग से अस्थि-कपाल पात्रिकाएँ, अयोमय (लौह) स्रुक्-स्रुव तथा शस्त्र तथा ताड़ की समिधाएँ, रक्त (लाल) वस्त्र-गंध आदियों को क्रम से लाने पर, रक्तांबर, रक्तमाल्य, रक्त-गंध को शीघ्रता से धारणकर, मारण-तन्त्र-मार्ग

धरियिंचि मारण तंत्र मार्गमुन । बरुवडि दोमर प्रास खड्गमुलु
सरि परिधुलु वैट्टि सप्राण कृष्ण । हरिणंबु मॅड गोसि यदि पुच्चुकॉनुचु
नक्तंचराधीश नंदनुंडॅलमि । युक्त क्रमंबुन होमंबु सेय ५२१०
दनरिन धूम प्रदक्षिण शिखल । ननलुंडु वॅलुगुचु हव्यमुल् गॉनग
जयनिमित्तंबुलु साल गन्गॉनुचु । जयशालि या निशाचर वीरुडलरि
नियति होममु दीर्चि निरुपमंबैन । हय चतुष्टयमुतो नति घोर लील
नुरु तर बाणासनोज्ज्वलं बगुचु । सुरुचिरालंकार शोभितंबगुचु
सरिनॉप्पु सिंहार्ध चंद्र चिह्नमुल । बरगुचु वैडूर्य भासुरंबैन
पडगचे नॉप्पुचु ब्रह्मास्त्र रक्ष । नडरुचु ननि नदृशंबै चरिंचु
नट्टि यारथ मॅक्कि यनिकि नेगुचुनु । गट्टल्क बल्कॅ राक्षसु लॅल्ल विनग;
"मीरॅल्ल जूडंग मीरि संग्राम । धारुणि गूल्चि या दशरथात्मजुल
बग दीर्चि मातंड्रि बंक्तिकंधरुनि । विगतशोकुनि जेसि विजय मेनित्तु;
भानु नंदन मुख प्लवग वल्लभुल । नेनेडु समयितु निमिषमात्रमुन ५२२०
मरियु दक्किन यट्टि मर्कटोत्तमुल । नॅड्रयंग जंपुदु ने डाजिलोन
दॅगुवतो" ननुचु नदृश्युडै यचट । नॉगि राक्षसुल नेयु चुन्न राघवुल

से, शीघ्र ही तोमर-प्रास-खड्ग की परिधियाँ बनाकर, सप्राण (सजीव) कृष्ण-हरिण का गला काटकर, उसे हाथ में लेते हुए, नक्तंचराधीश (राक्षसराज) -नन्दन के प्रेम से युक्तक्रम से होम करने पर, ।। ५२१० ।।

विराजित धूम-प्रदक्षिणाओं की शिखाओं से युक्त अनल ने प्रज्वलित हव्य स्वीकारे । जय-निमित्तों (विजय के शकुनों) को अधिकता से देखते हुए जयशील वह निशाचर-वीर प्रसन्न हो, नियम से होम संपन्न करके, निरुपमान हय-चतुष्टय से युक्त हो अतिघोर लीला से उरुतर बाणोज्ज्वल होते हुए, सुरुचिरालंकार-शोभित होते हुए, मनोहर सिंह तथा अर्द्धचन्द्र चिह्नों से शोभित होते हुए, वैडूर्य (मणियों) से भासित पताका से विराजित तथा ब्रह्मास्त्र की रक्षा के कारण उत्कर्षित होते हुए, अदृश्य हो विचरनेवाले उस रथ पर आरूढ़ होकर, युद्ध में जाते हुए, उत्कट क्रोध से बोला जिसे सभी राक्षस सुनें—"आप सब लोगों के देखते समय, उत्कर्षित हो, संग्राम-धारुणि (युद्ध-भूमि) में उन दशरथात्मजों को गिराकर, प्रतिशोध पूरा कर, हमारे पिता पंक्तिकंधर को विगतशोक बना, मैं (उन्हें) विजय प्रदान करूँगा । आज मैं निमिष मात्र में भानुनन्दन आदि प्लवग-वल्लभों को मार डालूँगा ।। ५२२० ।।

—और भी शेष मर्कटोत्तमों को आज मैं आजि में शोभा से साहस से मार डालूँगा ।" (ऐसा) कहते हुए अदृश्य बनकर, वहाँ क्रम से राक्षसों को

बॊडगनि भीकर भ्रुकुटियै विल्लु । वडि नॆक्कुवॆट्टि दुर्वार वेगमुन
ब्रळय कालमु नाडु बलु वृष्टि गुरियु । जलदंबु विधमुन शरवृष्टि गुरिसॆ;
गगनंबु निंड नाघनुलु राघवुलु । नॊगि नेसि रलुकतो नुग्र बाणमुल;
नमरारि यवि द्रुंचि यम्मुल सोन । दिमिरम्मु वरगिंचॆ दिक्कुलंदपुडु;
पृथु चंड कोदंड भीकर ध्वनियु । रथनेमि रवमुनु रथ तुरंगमुल;
खुरमुल स्रोतयु गुणमु निस्वनमु । नरुदार जरियिंचु नतनि रूपंबु
विन गान बडकुन्न विस्मयंबंदि । घन वीथि बरिकिंप ग्रम्मरॅ नात
डखिलांबकंबुल नादाशरथुल । निखिलांगकम्मुलु निंड नेयुटयु
५२३०

ना खरकरकुलुंडाराघवेन्द्रु । डा खर सूदनुं डपुडु कोपिंचि
वाडेयु मार्गणावळु लॆंदु वच्चु । वाडि भल्लमु लंदु वडि नेसि येसि
या बाण जालंबु लंदंद तुनुम । नाबाहु बलशालि यगु निंद्रजित्तु
बहु विधंबुल देरु वरॅपुचु नेसॆ । बहुशरंबुल; नंत बार्थिव सुतुलु
कमिय बूचिन किंशुकंबुल तोडि । समत नॊप्पिरि शरक्षत युतांगमुल;
गरमुग्रमैनट्टि कालमेघंबु । करणि नॊप्पिन तन घन शरीरंबु
तॆलिय कुंडग याम्य दिक्कुन नुंडि । पलिकॆ नय्यिंद्रारि पार्थिवेश्वरुल;

गिरा देनेवाले राघवों को देखकर, भीकर भ्रुकुटिवाला होता हुआ, धनुष का झट संधान कर, दुर्वार वेग से, प्रलयकाल के दिन अधिक वृष्टि करने वाले जलद के समान शरवृष्टि की। आकाश भर जाए, उन महान् राघवों ने क्रोध से ऐसे उग्र बाण चलाए। अमरारि ने उन्हें काट देकर, बाण-वर्षा से दिशाओं में तिमिर को फैला दिया। पृथु-चंड-कोदंड की भीकर ध्वनि और रथनेमी-रव, रथ-तुरंगों के खुरों की ध्वनि, गुण-निस्वन (धनुष-टंकार), अनुपम रूप से विचरनेवाला उसका रूप—(ये सब) सुनाई पड़कर, दिखाई न पड़ने से, विस्मित हो, आकाशवीथि पर निहारने से पुनः उसके अखिल-अम्बकों से दाशरथियों के निखिल-अंगकों को भर देने पर, ।। ५२३० ।।

—खरकर (सूर्य) -कुलवाले राघवेन्द्र ने उस खरसूदन पर तब क्रुद्ध होकर, जिधर से उसके चलाए मार्गण आते हों, उसी ओर पैने भाले फेंक-फेंककर उन बाण-जालों को जहाँ-तहाँ काट देने पर, उस बाहुबलशाली इन्द्रजित ने बहुविधों से रथ चलाते हुए बहुशर चलाए। तब पार्थिवसुत (राजकुमार) शरक्षतयुक्त-अंगों से, अत्यधिक पुष्पित किंशुकों के समान लगे। अति उग्र कालमेघ के समान शोभित अपने घन शरीर को दिखाई पड़ने न देकर,

“नॆक्कॆड बोयॆद ? डॆंदु डागॆदरु ? । चिक्कितिरिट; मिम्मु जेरि कावंग
दिक्कॆव्वरिट मीद? दिविजुलटन्न । जुक्कवाली वंक जूड नोड्डुदुरु;
बक्क कोतुल नम्मि बवरम्मुनकुनु । मॊक्कलम्मुन वच्चि मोस
पोयितिरि ५२४०

पटुतरंबैन नाबाणाग्नि शिखल । बॆट पॆट प्रेलक प्रिदिलि पो गलरॆ?
या बिभीषणुनि वाक्यमुलॆ निक्कुवमु । गा विनि ना शक्ति गान लेरैति;
रिदॆ मिमु दॆगटार्चि येचि यी प्रॊद्दॆ । कदलि ययोध्यलो गलवारि नॆल्ल
बरि मार्चि मिचि या भरत शत्रुघ्नु । लिरुवुर दॆगटार्चि येतॆंतु” ननग
गडु वॆऱगंदिरि कपुलु नाकपुलु; । नडरु कोपंबुन ना इंद्रजित्तु
पडुमट दन पेरु पंतंबुलाडु; । दडयकुदीचिनि धनुवु म्रोयिंचु;
धीरुडै यट दूर्पु दिक्कुन नुंडि । घोरंपु शर वृष्टि गुरियिंचु मिंचि;
दक्षिणंबुन केगि धरणि ग्रक्कदल । नक्षीणशक्तिमै नडरि पॆल्लार्चु;
निब्भंगि दिरिग यनेक मार्गमुल । नब्भानुसून्वादुलरुदंदि चूड
शरमुलु विंटितो संधिंचिकॊनुचु । बरुवडि वाडेयु बाणजालमुलु ५२५०

याम्यदिशा से उस इन्द्रारि ने पार्थिवेश्वरों से कहा—“कहाँ जाएँगे ? कहाँ छिपेंगे ? यहाँ फँस गए हैं। आपके पास आकर, रक्षा करनेवाला कौन है ? दिविज तो प्रतिकूल हो, इस ओर देख भी नहीं सकेंगे। दुर्बल वानरों पर भरोसा करके, युद्ध के लिए बड़े उमंग से आकर धोखा खा गए हैं। ॥ ५२४० ॥

—पटुतर मेरे बाणों की अग्निशिखाओं से पट-पट फूट न जाकर बच निकल सकेंगे ? उस विभीषण के वाक्यों को ही वास्तव मानकर मेरी शक्ति को देख (पहचान) न सके। यही तुम्हारा संहार करके विजृंभित हो आज ही निकल पड़कर, अयोध्या में स्थित सभी लोगों का संहार कर, उन भरत-शत्रुघ्न दोनों का संहार कर आऊँगा।” (ऐसा) कहने पर, —कपि और नाकप (देवता) अधिक चकित हुए। उत्कट कोप से वह इन्द्रजित पश्चिम में अपना नाम ले ललकारता, अविलम्ब उदीच्य (दिशा) में धनुष का टंकार करता, धीर बन तब पूर्व दिशा से घोर-शर वृष्टि कर विजृंभित होता, दक्षिण में जाकर धरणी अत्यधिक काँप उठे, ऐसा अक्षीण-शक्ति से विजृंभित हो अति सिंहनाद करता। इस प्रकार अनेक मार्गों से घूमकर, भानुसून आदि के आश्चर्य-चकित हो देखने पर, धनुष पर शरों का संधान कर, शीघ्रता से उसके द्वारा डाले जानेवाले बाणजालों को— ॥ ५२५० ॥

जनपतुल् द्रुंतुरु चटुलाबकमुल । ननिमिषुलाश्चर्यमंदि वीक्षिप;
नप्पुडु शतसंख्युलतनिचे गपुलु । कुप्पलु कुप्पलॆ कूलुट सूचि
सौमित्रि कॊपिंचि जनपतिकनियॆ; । "भूमीश! वीनिचे बॊलिसिरि कपुलु
इदि येमि ? देव ! नीविट्लूरकुनिकि ! । यदि चूडुमा भुवि नॆल्ल दिक्कुलनु
बडि पॊर्लुचुन्नारु भल्लूकपतुलु; । मडिसिरनेकुलु मर्कटेश्वरुलु:
जगतीश ! निनु नम्मि सकल वानरुलु । मिगिलिन भक्तितो मेकॊनि वच्चि
तगिलि यी यंद्रारि दारुणास्त्रमुल । नॊगिलि नी नाममॆ नॊडुवुचुन्नारु;
पगवाडु चेरि नी बलमॆल्ल जंपॆ; । दगदिक दॆगकुन्न द्रैलोक्यनाथ !
पग दॆग नलुगु नी बाणजालमुलु । गगनंबु दिक्कुलु गलयंग निंडि
निंडिन भक्तितो निजदिव्यतनुवु । लॊंडॊंड धरियिंचियुन्नवि; वानि ५२६०
गैकॊनि रिपु जंपु कमलाप्तवंश! । नीकॆदुरै पोर नेर्तुरे रिपुलु ?
इंत शांतमु दगुने नृपुलकुनु ? । जिंतिपवेल विचित्रंबु गाग ?
बरगिन नी बाहुबल पराक्रममु । दरुणार्कसमतेज! तलपोयवकट !

—जनपति चटुल-अंबुकों से ऐसा काट देते कि अनिमिष आश्चर्यचकित हो देखते। तब उसके द्वारा शतसंख्या में कपियों का ढेर के ढेर गिरते देखकर, सौमित्र क्रुद्ध होकर, जनपति से (यों) बोला—"हे भूमीश ! इसके हाथ कपि मर गए। यह क्या देव ! ऐसा चुप क्यों हैं ? यही देखो न, भुवि पर, समस्त दिशाओं में, गिरकर, भल्लूकपति लोट रहे हैं। अनेक मर्कटेश्वर मर गए हैं। हे जगदीश ! तुम पर भरोसा रखकर सकल वानर अति भक्ति से सहमत हो आकर, लगकर, इस इन्द्रारि के दारुण-अस्त्रों से विकल हो, तुम्हारा नाम ले रहे हैं। शत्रु ने लगकर तुम्हारे समस्त बल (सेना) का संहार कर दिया है। हे त्रैलोक्यनाथ ! अब साहस से काम न लेने पर लाभ नहीं होगा। शत्रुता को मिटाने के लिए क्रुद्ध बने तुम्हारे बाण-समूह गगन (और) दिशाओं में पूर्णरूप से भरकर, भरपूर भक्ति से सर्वत्र अपने दिव्य तनुओं को धारण किए हुए हैं। उन्हें— ।। ५२६० ।।

—ग्रहणकर, हे कमलाप्तवंश वाले ! रिपु का संहार करो। रिपु तुम्हारे समक्ष आकर लड़ सकते हैं ? (नहीं।) नृपों को इतनी शान्ति उचित है ? विचित्र है, जो तुम इस पर विचार नहीं करते ! हे तरुणार्क समतेजवाले !

परमेश ! नायट्टि बंटु नी सेव । चिरभक्तिमै जेय जित नीकेल ?
यी निशाचरकीट मी इंद्रजित्तु । नेन चंपॆद देव ! नी महत्त्वमुन;
निटमीद ब्रह्मास्त्र मे ब्रयॊगिंचि । कुटिलराक्षसकोटिकुलमॆल्लनडतु”
ननवुडु रघुरामुडनुजुनिकनियॆ: । “विनुमु लक्ष्मण ! यॊक्क वीनिकै पूनि
चनुनॆ पल्वुर जंप ? संग्राममुनकु । जनुदेनिवारल समयिंप दगुनॆ ?
यनिमिष ब्रह्म रुद्रादुलचेत । ननि जावडितडनि यब्जुंडिडिन
वरमु जॆल्लिपंग वलसिये वीनि । निरवंद गाचिति; निक नुंडॆनेनि ५२७०
वीनि जंपगजालु वीर वानरुल । नेन पंपॆद; वारॆ हिंसितुरितनि
नट्टुकाक तक्किन नम्मेघनादु । डट निंद्रलोकंबुनंदु डागिननु
नट ब्रह्मलोकंबुनंदु डागिननु । नट रुद्रलोकंबुनंदु डागिननु,
धरणि दूरिन रसातलमु सॊच्चिननु । शरधिलो मुनिगिन जमुडु गाचिननु
दन तात यगु धात तन वॆन्क बॆट्टु । कॊनिन ने बोनीक घोराजि द्रुंतु”
ननि पल्क रघुरामु नलुक वाडॆरिगि । यनि सेयनॊल्लक या लंक जॊच्चि

शोभायमान अपने बाहुबल-पराक्रम पर हाय, विचार ही नहीं करते ? हे परमेश्वर ! मुझ जैसा सेवक चिर-भक्ति से तुम्हारी सेवा करता रहे तो तुम्हें चिन्ता क्यों ? इस निशाचर-कीट इन्द्रजित को हे देव ! तुम्हारे महत्व के कारण मैं ही मार डालूंगा । अब आगे मैं ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर कुटिल-राक्षस-कोटि-कुल का दमन कर दूंगा ।” ऐसा कहने पर रघुराम ने अनुज से कहा—“सुनो लक्ष्मण ! एक इस (राक्षस) के लिए जानबूझकर अनेकों को मार डालना उचित है ? संग्राम में न आनेवालों को मार डालना चाहिए ? (नहीं) अनिमिष-ब्रह्मा-रुद्र आदियों से यह अनि (युद्ध) में नहीं मरेगा, ऐसा अब्जज (ब्रह्मा) के प्रदत्त वर का निर्वाह करना ही पड़ने से शोभा से इसे बचाए रखा है । अब (आगे) डटा रहेगा तो, ।। ५२७० ।।

—इसे मार डाल सकनेवाले वीर-वानरों को मैं ही भेज दूंगा । वे ही उसे हिंसित (पीड़ित) करेंगे । ऐसा न होकर, बचकर वह मेघनाद उधर इन्द्रलोक में छिप जाए, उधर ब्रह्मलोक में छिप जाए, उधर रुद्रलोक में छिप जाए, धरणि में घुस जाए, रसातल में पैठ जाए, शरधि (समुद्र) में डूबे, यम (उसकी) रक्षा करे, उसके दादा धाता (ब्रह्मा) अपने पीछे छिपा लें तो न जाने देकर, (उसे) घोर-युद्ध में मार डालूंगा ।” ऐसा कहने पर, रघुराम के क्रोध को वह (इन्द्रजित) जानकर, युद्ध करना न चाहकर, उस लंका में प्रवेशकर घोर निशाचर-कोटि (-समूह) के साथ जाकर, इन्द्रजित

घोर निशाचरकोटितो बोयि । या रावणुनितोड ननॆ निंद्रजित्तु;
“कट्टलक गपुलनु गय्यंबुनंदु । नॆट्टन नेसिति नेलपै गूल;
मनुजुलनिद्दऱ मानमुलगॊंटि” । ननवुडु रावणुंडतनि गोपिंचि
“यिदि येमिपोक नी ? विदि येमि राक ? । यिदियेमि सेतगा नॆन्नि
चॆप्पॆदवु ? ५२८०

ऒकपरियुनु जंपकूरक वच्चि । प्रकटिंचॆ ‘दंदऱु वडि’ रनि नीवु;
वीवेचि नडचिन निखिललोकमुलु । भाविंप नप्पुडे भस्ममै पोवु
नदिगान निदियॊक्क यधिकमटंचु । मदि दलंपकुमु सम्मदमुन नीवु;
मगटिमि रामलक्ष्मणुल वानरुल । दॆगटार्चि कानि ना दॆसकेगुदेकु”
मनवुडु “नौगाक!” यनि यिंद्रजित्तु । दनुजेंद्रु वीड्कॊनि तन मदिलोन
“नतिकाय कुंभकर्णादि दैतेय । पतुलॆल्ल मडिसिरिब्भंगि नुग्राजि;
गान ना रामलक्ष्मणुल ने रीति । नैननु गॆल्चॆद” ननि निश्चयिंचि

इंद्रजित्तु मायासीतनु दॆच्चिच तल दऱुगुट

सीतचंदमु गाग जॆलुवॊंद नॊक्क । नातिनि दन माय नाकेशवैरि
यट जेसि प्रीति मायासीत गॊनुचु । बटुबलसहितुडै पडुमट वॆडलॆ;
वानिकि गाक या वानरुलॆल्ल । नानाविधंबुल नलिकि पाऱुटयु ५२९०

ने उस रावण से कहा—“अधिक क्रोध से कपियों को युद्ध में झट ज़मीन पर गिरा दिया। दोनों मनुजों के मान (गौरव) का अपहरण किया।” ऐसा कहने पर रावण ने उस पर क्रुद्ध होकर (कहा)—“यह कैसा जाना? यह कैसा आना? यह कैसी करतूत है जो सराह कर कहते हो? ।। ५२८० ।।

—एक बार भी न मारकर लौट आकर तुम कहते हो कि ‘सब गिर गए हैं।’ ऐसा होने से इसे अतिशय कार्य मानकर मन में मुदित मत बनो। पौरुष से राम-लक्ष्मण (तथा) वानरों का संहार किए बिना मेरी ओर मत आओ।’ ऐसा कहने पर “ऐसा ही हो” कहकर इन्द्रजित ने दनुजेन्द्र से विदा लेकर, अपने मन में यह निश्चय किया कि “अतिकाय, कुम्भकर्ण आदि सभी दैतेय-पति इसी प्रकार उग्र-युद्ध में मर गए। अत: उन राम-लक्ष्मणों को किसी भी रीति से जीत लूंगा।”

इन्द्रजित का माया-सीता को लाकर सिर काट देना

नाकेश-वैरी (इन्द्र का वैरी) ने सीता के समान ही शोभायमान एक स्त्री को अपनी माया से बनाकर, प्रीति से उस माया-सीता को साथ लेते हुए, पटु बल सहित हो पश्चिम की ओर से निकल पड़ा। उसका सामना न करसक समस्त वानरों का नाना विधियों से भीत हो भागने पर ।। ५२९० ।।

हनुमंतुडपुडु महाशैलश्टृंग । मनुवारगा बट्टि यसुर माकोंनग
नरुदार नडचुचो नय्यिंद्रजित्तु । नरदंबु मीद मायासीत गनियें;
वेंक्कसंबुग रामविरहानलंबु । निक्किन नाहारनिद्रलु दोंरगि
कडलेनि वग बोंदुगति गानबडग । वेंडलु निट्टूर्पुल वेंलवेंल बारि
कडु गृशंबगु मेनु गमलपत्रमुल । नोंडुचु लोचनमुल नोलुकु बाष्पमुलु
जडगट्टि सीमंतसरणिं जिक्कोंदवि । यडगोंनि मलिनंबुलगु शिरोजमुलु
धरणिरजोलिप्ततनुतरांगमुलु । गरमु विन्ननि मोमु गरपल्लवंबु
गदिसिन चेंक्कुनै गालि चे जाल । गदलेंडु लतवोलें गंपिचुचुन्न
या महीसुत जूचि "यकट ! वीडिक । नेमिसेयुनो रामहृदय-वल्लभनु ?
नी दीनदश नाकु नीक्षिप वलसें । हा दैवमा !" यनि हनुमंतु डडरि ५३००
घोर वानर वीर कोटितो गूडि । दारुणाकृति बेंचि तनमीद ननिकि
नडचुचो नावायु नंदनु गांचि । कडु ग्रूरुडै दशकंठ-नंदनुडु
"इदि येल वच्चेंद वीसेन तोड ?। निदें चूडरा, सीत ! यी सीत कोंरकु
नलजडि वडियेंद; रटु कान दीनि । दल द्रेंव्व नेसेंद दविलि ये" ननुचु

—तब हनुमान ने महाशैल-श्टृंग को सुघड़ता से पकड़कर, असुर का सामना करने के लिए, शोभा से चलते हुए उस इन्द्रजित के रथ पर माया-सीता को देखा। अधिक बने राम-विरहानल से ऐंठकर, आहार-निद्राओं को छोड़कर, अपार-वेदना को पार करने का मार्ग दिखाई न पड़ने पर, निकलनेवाली लम्बी साँसों के कारण विवर्ण बनकर, अधिक कृश बने शरीर से, कमलपत्रों का धिक्कार करनेवाले लोचनों से उमड़नेवाले बाष्प (आँसू), जटाएं बनकर, सीमन्त-मार्ग में उलझकर, घनीभूत (तथा) मलिन बने शिरोज, धरणी के रज से लिप्त (धूलिधूसरित) तनुतर (श्रेष्ठ शरीर) के अंगों (अवयवों) से युक्त हो, अधिक विवर्ण बने मुख (तथा) करपल्लवों से युक्त कपोल के साथ, पवन के कारण अधिक हिलनेवाली लता के समान कंपित होनेवाली उस महीसुता को देखकर "हाय ! यह राम की हृदय-वल्लभा के साथ आगे और क्या करेगा ? हाय दैव ! मुझे यह हीन दशा देखना पड़ा न !" (ऐसा) सोच हनुमान विजृंभित हुआ ॥ ५३०० ॥

—घोर वानर वीर कोटि से युक्त होकर, दारुण आकृति से विजृंभित होकर, अपने पर युद्ध के लिए आनेवाले उस वायुनन्दन को देखकर, अतिक्रूर हो दशकंठनन्दन ने (कहा)—"इस सेना के साथ यह क्यों आ रहे हो ? यही देख रे सीता को। इसी सीता के लिए विकल बन रहे हैं न, अतः लगकर इसके सिर को झट काट दूंगा।" (ऐसा) कहते हुए, शार्दूल के पास

गलगि शार्दूलंबु कड नुन्न हरिणि । पौलुपुन नयनांबुपूरंबु लौलुक
"हाराम ! हाराम !" यनु नार्तरवमु । लारंग जेयु मायासीत नौडिसि
तल वेंड्रुकलु वट्टि दट्टिंचि यीड्व । नलिगि या दैत्युतो ननियें वायुजुडु;
"तगुनें दुरात्मक ! दनुजुंडवैन । नगुदुवु गाकेमि, याविश्रवसुनि
मनुमड; विब्भंगि मनुकुलेश्वरुनि । वनित मुंदल बट्टि वारक तिगुव"
ननवुडु गरवाल मंकिंचि यसुर । तनरु मायासीत तल द्रेव्वनेसि
५३१०

"चनु मिक रामलक्ष्मणुलकु जेप्पु"। मन खिन्नुडै ननिल-नंदनुडु;
वसुधातलंबुन वडि नेत्तुरौल्क । नसिधार दैगिन मायासीत जूपि
हनुमंतु तोड निट्लनें निंद्रजित्तुः । "वनचरोत्तम ! रामु वनित नी सीत
घनतरंबैन नाकरवालमुननु । दुनिमिति, मीरणोद्योगंबुलिक
जिक्कें बौ" म्मंचु विजृंभिचि वलिकि। दिक्कुंभि कर्णमुल् दिशलुनु बगुल
संहार-घनघन-स्तनितमो यनग । सिंहनादमु सेय जित्तमुल् गलग
नप्पुडु रणमुलो ना यिंद्रजित्तु । दप्पक कनुगौनि तनरिन भीति
वनचरुल् वाड्रंग वायुनंदनुडु । कनुगौनि पलिकें "नो कपिवीरुलार !

स्थित हरिणि के समान, नयनांबु-पूर (प्रवाह) के उमड़ने पर, 'हे राम ! हे राम !' कहते आर्तरव करनेवाली मायासीता के शिरोज खींच पकड़, डाँटकर खींचा। उस पर क्रुद्ध हो उस दैत्य से वायुज ने कहा—"हे दुरात्मक ! क्या (यह तुम्हारे लिए) उचित है ? दनुज हो तो सही किन्तु उस विश्रवसु के पौत्र हो। इस प्रकार मनुकुलेश्वर (राजाराम) की स्त्री के शिरोजों को पकड़ खींचने का साहस करते हो ?" ऐसा कहने पर, करवाल हिलाकर, असुर ने शोभायमान मायासीता के सिर को काट डालकर, ।। ५३१० ।।

—"जाओ, अब राम-लक्ष्मण से कह दो" कहने पर अनिलनन्दन खिन्न हो खड़ा रहा। असिधारा से कटकर वसुधातल पर गिरकर, रक्त से लथपथ माया-सीता को दिखाकर हनुमान से इन्द्रजित ने यों कहा—"हे वनचरोत्तम ! राम की स्त्री इस सीता को मेरे घनतर करवाल ने मार डाला। अब तुम्हारे रणोद्योग (रण के प्रयत्न) व्यर्थ हुए। जाओ।" ऐसा विजृंभित हो कहकर, दिक्कुंभि (दिग्गज) के कर्ण (तथा) दिशाएँ फट जाएँ, मानों संहार-घन-घन (प्रलयकाल-मेघ) का स्तनित (गरज) हो, ऐसा सिंहनाद किया। (तब) चित्तों के व्याकुल होने पर, रण में उस इन्द्रजित को अवश्य देखकर, व्याप्त भीति से वनचरों के भाग जाने पर वायुनन्दन ने (उन्हें) देखकर कहा—"हे कपि वीरो ! समर का विक्रम

समर विक्रममुलु सालिचि पारु । समयमे ? येरुगरे समरधर्मंबु ?
तलप बंधुल केल्ल दलवंपु गाग । गलन बारुट कंटे कष्टंबु गलदे ?
५३२०
नडचेंद ने मुन्नु; ननु गूडि मीरु । कडिमि वाटिंतुरुगा!" कंचु बलुक,
नंदरु दरुवुलु नद्रि श्रृंगमुलु । नंदंद कैकोनि हनुमंतु गूडि
रयमुन नार्चुचु राक्षस सेन । पयि वैचि; रंत ना पवमानसुतुडु
ज़लमुन नोक महाशैल मंकिंचि । यलुकतो वैवंग नानिशाचरुनि
सारथि रथ मौल जन दोल नदियु । दारुण ध्वनि तोड धर गृंग बडियें;
नालोन वेंडियु नगचरुल् दरुलु । शैल श्रृंगमुलु राक्षसुलपै वैव
दन सेन विरिगिन दशकंठसुतुडु । गनुगोनि कोपिंचि कपियूथ-पतुल
बट्टु शूल मुद्गर प्रास खड्गमुलु । जटुल वेगंबुन समर्यिचें; नपुडु
मारुतात्मजुडुनु मदिलोन गिनिसि । घोरविक्रम कळा कुशलुडै पेर्चि
कडिमिमै गवियु राक्षसुल रूपडचि । वडि शिलातरु घोरवर्षमुल् गुरिसि
५३३०
यानिशाचर सेन नवलील दोलि । वानरावलि जूचि वायुनंदनुडु
"वनचरपतुलार ! वसुधेशु देवि । दनुजाधमुडु संपे; दप्पे गायंबु;

छोड़कर, भाग जाने का समय है क्या ? समर-धर्म को नहीं जानते हो ? ऐसा युद्ध में भाग जाने की अपेक्षा जिससे सोचने पर समस्त सम्बन्धियों में अपमान हो, (अन्य) कोई कष्ट है क्या ? ।। ५३२० ।।

—मैं आगे-आगे चलूँगा । मेरे साथ आप भी साहस का प्रदर्शन कीजिए ।" ऐसा कहने पर सभी (वानरों) ने तरु, अद्रि-श्रृंगों को सर्वत्र हाथ में ले, हनुमान के साथ मिलकर, वेग से सिंहनाद करते हुए, राक्षस-सेना पर डाल दिया । तब उस पवमानसुत ने हठ से एक महाशैल को उठाकर, क्रुद्ध हो डालने पर, उस निशाचर के सारथी ने रथ को अलग हटकर चलाया, तो वह (महाशैल) भी दारुणध्वनि से ऐसा गिरा जिससे धरा धँस गई । इतने में तरुचरों के और भी तरु (तथा) शैल-श्रृंगों के राक्षसों पर डालने पर, अपनी सेना के टूट जाने पर (भीत हो भागने पर), उसे देख दशकंठ-सुतने क्रुद्ध हो, कपियूथ-पतियों को पट्टु-शूल, मुद्गर, प्रास, खड्गों से चटुलवेग से संहार कर दिया । तब मारुतात्मज ने मन में क्रुद्ध हो, घोर-विक्रम-कला-कुशल हो, विजृंभित हो, साहस से, बढ़ आनेवाले राक्षसों का दमन कर, झट शिला-तरु की घोर वर्षा कर, ।। ५३३० ।।

—उस निशाचर-सेना को सरलता से भगाकर, (पुनः) वानर-समूह को देख वायु-नन्दन ने (कहा)—"हे वनचरपतियो ! वसुधेश (राजा-राम) की देवी

समर मेटिकि निंक ? जनकज वार्त । कमलाप्तकुलुन कौक्कट नॆर्रिंगिप
नरिगॆद; नटमीद नारामु डॆद्दि । वॆरवानतिच्चु, नाविधमु सेयुदमु;
मीरंदरुनु संभ्रमिपक युंडु; । डी राक्षसुडु क्रूरु; डेमऱवलव"
दनि यटु मगुडिन हनुमंतु जूचि । तन मदि नप्पुडु दशकंठ-सुतुडु

इंद्रजित्तु निकुंभिळ यागमु सेयुट

"ई महाबलु डेगॆ; निट मीद दनकु । होम विघ्नमु सेय नोपरॆव्वरुनु"
ननि निकुंभिळ केगि यचट निशाटु । डॆनसिन निष्ठतो नेपु दीपिंप
गल्लु नॆत्तुरु पालु घन कच्छपमुल । बल्लुल बिल्लुल बलु सर्पमुलनु
गारु कोळ्ळनु मंचि गंधंबु दॆनॆ । नारिकेळंबुल नल्लनि कोळ्ळ ५३४०
सूकरंबुल मऱि सौरिदि केशमुल । गाकुल दॆल्लनि गर्दभंबुलनु
गारॆनुपोतुल घन मेषमुलनु । नारु नालुगु रॆंडु नरुवदि करुल
गॊंड गॊऱ्ऱॆलु वेयि कोटुल ळक्ष । मंडूकमुल गोटि माणिक्यमुलनु
मुत्यंपु जिप्पलु मूडर्बुदमुल । गात्यायनीदेवि कड निष्ठ निलिपि

को दनुजाधम ने मार डाला । कार्य बिगड़ गया है । अब समर (करना) क्यों ? जनकजा का समाचार कमलाप्तकुल को झट बताने जाऊँगा । उस पर वह किसी उपाय का आदेश देंगे । उस प्रकार करेंगे । आप सब बिना संभ्रमित हुए रहिए । यह राक्षस क्रूर है । असावधान मत बनिए ।" (ऐसा) कह, मुड़ने पर हनुमान को देख, अपने मन में तब दशकंठसुत ने (सोचा)—

इन्द्रजित का निकुंभिल याग करना

—"यह महाबली चला गया । अब आगे मेरे होम का कौन विघ्न (उत्पन्न) कर सकता है ?" (ऐसा) सोच निकुंभिला जाकर वहाँ निशाट ने अधिक निष्ठा से, औन्नत्य के दीप्त होने पर, मदिरा, रक्त, दूध, घन-कच्छपों, छिपकलियों, बिल्लियों, अनेक सर्पों, काले मुर्गों को (तथा) अच्छे चन्दन को, मधु को, नारिकेलों को, जंगली मुर्गों को, ।। ५३४० ।।

—सूकरों को, फिर क्रम से केशवाले कौवों को, सफेद गधों को, काले भैंसों को, घन-मेषों को, छ, चार, दो, साठ करियों, पहाड़ी भेड़ों को, हजार-करोड़-लाखों मंडूकों को, करोड़ माणिक्यों को (तथा) तीन अर्बुद सीपियों को कात्यायनी देवी के समक्ष निष्ठा के साथ रखकर, मन से

मनमुन निगमन मंत्रपूतमुग । ननलुनि रुधिर मांसादुल दनियि
होमंबु सेयुचु नुंडॆ; निय्यॆडनु । रामुडा पडुमटि रभसमंतयुनु
विनि जांबवंतुनि वेगंबॆ पिलिचि । "विनवच्चॆ बडुमट विपुल घोषंबु;
हनुमंतुनकु नॆट्टि हानियैनदियॊ ? । घनमैन यट्टि या कलकलं बरय
जनुमु रयंबुन सैन्यंबु तोड" । ननिन ऋक्षेशुंडु नतिशीघ्र वृत्ति
बलुविडि भल्लूकपतु लुग्रबलुलु । गॊलिचि यप्पुडु नूऱु कोट्टुलु राग
५३५०
वडिगॊनि पश्चिम द्वारंबु दॆसकु । नडचुचो गनियॆ नन्नडुम वायुजुनि;
वायुजुंडुनु जांबवंतुनि जूचि । या यिंद्रजित्तु कार्यं बॆऱिंगिचि
"यी वार्त रामुन कॆऱिंगिचि वत्तु; । ने वच्चु नंदाक ने नुन्न यॆडनु
गाचि यावाकिट गदलक युंडु; । मेचिन पगवानि नेमऱवलव"
दनि पंचि वच्चुचो ननति दूरमुन । हनुमंतु बॊडगनि याराघवुंडु
"इतनि मुख स्थिति येमॊकोः कार्य । गति दोचुचुन्नदि कनुगॊन निप्पु;
डिदि येतॆऱंगनि यिच्च जिंतिप । गदिसि वायुजुडु राघवुनकु म्रॊक्कि,
"देव ! येमॆल्लनु दॆंपुमै दान । वावलि तोड गय्यम्मॊनर्रिप

निगमन (वेद)-पूत मन्त्रों से अनल को रुधिर-मांस आदियों से तृप्तकर, होम करता रहा । यहाँ राम ने उस पश्चिम (दिशा) के समस्त रभस (संरंभ) के बारे में सुनकर जांबवान को शीघ्र बुलाकर (कहा)—"पश्चिम की ओर विपुल घोष सुनाई पड़ा है । पता नहीं हनुमान को क्या हानि हुई है ? उस महा कलकल (हलचल) को जानने के लिए शीघ्र ही सैन्य को साथ लेकर जाओ ।" (ऐसा) कहने पर ऋक्षेश (भल्लूकपति) अति-शीघ्र वृत्ति से, उसी क्षण सौ करोड़ उग्र बल वाले भल्लूकपतियों के सेवा करते आने पर, ।। ५३५० ।।

—पश्चिम द्वार की ओर झट चल पड़ा तो बीच में वायुज को देख लिया । वायुज ने भी जांबवान को देखकर, उस इन्द्रजित का कार्य बताकर, (कहा)—"यह समाचार राम को बताकर आऊँगा । मेरे आने तक, मैं जहाँ हूँ, वहीं (सावधानी से) रक्षा करते हुए, उस द्वार पर अविचल हो रहो । विजृंभित शत्रु को भूलो मत (असावधानी मत बरतो) ।" ऐसा आदेश देकर आते समय अनति (थोड़ी) दूर पर हनुमान को देखकर राघव ने कहा—"यह क्या इसकी मुख-स्थिति कार्य की गति (के बिगड़ने) को सूचित कर रही है । अब यह क्या विधान है ।" (उसे) देख मन में चिन्ता करते रहने पर, वायुज ने नियराकर, प्रणामकर (कहा)—"हे देव ! हम सबके साहस से दानव-समूह के साथ युद्ध करते रहने पर, हमारे समक्ष

मामुंदऱनॆ तॆंचिच मदि शंक लेक । भूमिजतल द्रुंचॆ बॊरि निंद्रजित्तु;
डावाकिटिकिनि ऋक्षाधीशु बॆट्टि । यी वार्त सॆप्पंग नेनु वच्चितिनि”
५३६०

ननु वार्त सॊवुललो नडरकमुन्नॆ । घनवात निहत वृक्षंबुनु बोलॆ
नतुलित शोकाग्नि यडरि दहिंप । धृति दूलि रविकुलाधिपुडु मूर्छिल्लि
यवनिपै बडियुन्न नतिभीति नॊंदि । प्लवगवल्लभुलॆल्ल बलविंचुचुंड
गैकॊनि यपुडु लक्ष्मणु डन्न दॊडल ।पैकि रादिगिच्चि संभ्रमचित्तुडगुचु

लक्ष्मणुनि शोकमु

“नक्कटा ! राम ! नी यट्टि युत्तमुन । किक्कळंकमु वुट्टॆने यिट्टि चोट
दल पोयग “जयंबु धर्मंबु नंदु ।गल” दनु माट निक्कमु गाकपोयॆ ?
नदियॆ निक्कंबैन नकट ! नी यट्टि । सदय चित्तुन केल संताप मॊदवु ?
नीचेत रावणुनिकि जावु लेक । यी चंदमुन नुंड नेटिकि वच्चु ?
जानकिकेल यीचावु सिद्धिंचु ? । गान धर्ममु कंटॆ घन मधर्मंबु;
त्याज्यंबु गादनि तलपोय कट्टि । राज्यंबु विडिचि यरण्यंबुलंदु५३७०

ही मन में किसी शंका के बिना, झट से इन्द्रजित ने भूमिजा के सिर को काट दिया । उस द्वार पर ऋक्षाधीश को रखकर, यह समाचार देने मैं आया हूं ।। ५३६० ।।

—ऐसा समाचार कानों में प्रवेश करने से पहले ही घन-वात (महान् वायु) से निहत वृक्ष के समान, अतुलित शोकाग्नि के बढ़कर, जला देने पर, धैर्य को खोकर, रविकुलाधिप मूर्च्छित हो, अवनि पर गिर पड़े। तब अतिभीत हो सभी प्लवग-वल्लभ रोते रहे। तब लक्ष्मण ने अग्रज को जांघों पर ले लेकर, संभ्रम से युक्त चित्त से (यों कहा)—

लक्ष्मण-शोक

—“हाय ! हे राम ! तुम जैसे उत्तम (व्यक्ति) को इस जगह ऐसा कलंक (अहित) उत्पन्न हुआ न ! सोचने पर यह बात यथार्थ सिद्ध नहीं हुआ न कि ‘धर्म में ही विजय है’। यदि वह बात सत्य है तो हाय ! तुम जैसे सदयचित्त (वाले) को संताप क्यों उत्पन्न होगा ? (और) तुम्हारे हाथ न मरकर रावण इस प्रकार कैसे रह सकेगा ? जानकी को ऐसी मृत्यु क्यों प्राप्त होगी ? अतः धर्म से अधर्म ही बड़ा है। त्याज्य नहीं है, ऐसा न समझकर, वैसे राज्य (अयोध्या) को छोड़कर अरण्यों में ।। ५३७० ।।

दिरुग वच्चिचति; मिंदु दिरिगेंडु मनकु । बुरुषार्थमुलु सिद्धि वोंदुने ?
याधिप ?
यवनीश ! 'निर्धनुलगुवारु सेयु । विविध यत्नंबुलु वेंस निदाघमुन
नडरेंडु सेंलयेरुलडगेंडु भंगि । जेंडिपोवु" ननि बुधुल् सेंप्पंग विनमें ?
धनमु लार्जिचिन धर्मकामादु । लनुपमस्थिति तोड नधिप ! सिद्धिचु;
नेंसगंग नर्थंबु लेंव्वानि कोंदवु, । वसुध वानिकि नेंल्लवारु जुट्टम्मु
लर्थंबु गलवाडें यरयंग बुरुषु; । डर्थंबु गलवाडें यधिकुंडु जगति;
नर्थंबें विद्ययु; नर्थंबें नेर्पु; । नर्थंबें कीर्तियु; नर्थंबें भूमि;
यर्थंबें बलमुनु; नर्थंबें कुलमु; । नर्थंबें बलगंबु; नर्थंबें गुणमु;
नर्थंबें शीलंबु; नर्थंबें प्राण; । मर्थंबें पुण्यंबु; नर्थंबें भूमि;
यर्थंबें रूपुनु; नर्थंबें नीति; । यर्थंबें ख्यातियु; नर्थंबें भूति; ५३८०
यर्थंबें गतियुनु; नर्थंबें मतियु; । नर्थंबें येंरुकयु; नर्थंबें सुखमु;
नर्थंबें शुचियुनु; नखिल काम्यमुलु । नर्थ-संपन्नुन करचेति वरयु;
नधिकुलु वेद वेदांग पारगुलु । बुधुलु दूर्वंबुल बूताक्षतमुल
नर्थंबु गलवानि नमर बूजितु; । रर्थि मोक्षार्थुलै यडवुल नुंडु

—विचरण करने आए । हे अधिप ! यहाँ हम-घूमनेवालों को पुरुषार्थों की सिद्धि कैसे होगी ? हे अवनीश ! बुधजनों को यह कहते नहीं सुनते हैं क्या कि 'निर्धन लोगों के द्वारा किए जानेवाले विविध प्रयत्न झट निदाघ में विलसित झरनों के दब (सूख) जाने के समान व्यर्थ हो जाएँगे ? हे अधिप ! धन का आर्जन करने पर अनुपम स्थिति से धर्म, अर्थ, काम आदि प्राप्त होंगे । शोभा से जिसे अर्थ प्राप्त होगा, वसुधा के समस्त जन उसके सम्बन्धी होंगे । सोचने पर जिसके पास अर्थ है, वह (सच्चे अर्थों में) पुरुष है । जगत में अर्थवान (धनी) ही अधिक (उत्तम) है । अर्थ ही विद्या है, अर्थ ही कुशलता है, अर्थ ही कीर्ति है, अर्थ ही विकास (वृद्धि) है, अर्थ ही बल है, अर्थ ही कुल है, अर्थ ही परिवार है, अर्थ ही गुण है, अर्थ ही शील है, अर्थ ही प्राण है, अर्थ ही पुण्य है, अर्थ ही भूमि है, अर्थ ही रूप है, अर्थ ही नीति है, अर्थ ही ख्याति है, अर्थ ही भूति (ऐश्वर्य) है, ॥ ५३८० ॥

—अर्थ ही गति है, अर्थ ही मति है, अर्थ ही ज्ञान है, अर्थ ही सुख है, अर्थ ही शुचिता है । सोचने पर अखिल काम्य (इच्छित विषय) अर्थ-संपन्न (व्यक्ति) की हथेली में रहते हैं । अधिक (श्रेष्ठजन), वेद-वेदांग पारंगत (जन), बुधजन, दूर्बाओं से, पूत-अक्षतों से अर्थवान की शोभा से पूजा करते हैं । चाहकर मोक्षार्थी हो जंगलों में रहनेवाले मुनिपुंगव कन्दमूल भेंटकर,

मुनिपुंगवुलु कंदमूलंबु लिच्चि । धनवंतु लगुवारि दर्शितु रेलमि;
बायक मंगळ पाठकानीक । गायक कुलमुलु गलवानि बोगडु;
नुन्नत कुचमुलु नुरु नितंबमुलु । नन्नुव नडुमुलु नलसयानमुलु
बिंबोष्टमुलु जंद्रबिंबाननमुलु । नंबुज ललितंबुलगु लोचनमुलु
रोलंबकुल नील रुचिर धम्मिल्ल । लीलालकंबुलु लेत-सिग्गुलुनु
नोय्यारिवगलुनु नोर चूपुलुनु । दिव्य माटलु गाम दीमंबुलनग ५३९०

नेलयिंचु नेर्पुलु नेल जव्वनमुलु । गल कांत लर्थंबु गल वृद्धु नैन
मनमार गोलुतुरु महित भोगेच्छ;। धनहीनु नोल्लरु तरुणुनि नैन;
लेमिये नरकंबु; लेमिये रुद्र । भूमियु; लेमिये भूरि शोकंबु;
लेमिये रोगंबु; लेमिये मृतियु; । लेमिये पापंबु; लेमिये जरयु;
लेमिये कष्टंबु; लेमिये करवु; । लेमिये दैन्यंबु; लेमिये वगपु;
लेमिये सकल मालिन्यंबु दलप; । लेमिये सर्वंबु लेमि; गावुनु
नच्चेरुवुग राज्यमंतयु विडिचि । वच्चिनप्पुडे कादे वच्चे नापदलु?
जानकि मरणंबु सैरिप जाल; । मानव-लोकेश ! मार्गणावळुल
विसुवक राक्षसान्वितमुगा लंक । मसलक यिक भस्मंबु सेसेदनु"

प्रेम से, धनवानों के दर्शन करते हैं। निरन्तर मंगल पाठ करनेवालों के समूह (तथा) गायक-कुल अर्थवान की प्रशंसा करते हैं। उन्नत-कुच, उरु-नितम्ब, स्निग्ध कटि, अलसगति, बिंबोष्ठ, चन्दबिंब-आनन, अंबुजसम ललित लोचन, रोलम्ब (भ्रमर)-कुल-सम-रुचिर-धम्मिल्ल-लीला-अलक, नूतन लज्जा, विलासयुक्त हाव, वक्र कटाक्ष, मधुर वचन, काम के धाम सम ।। ५३९० ।।

—आचरण करने का प्रावीण्य, नव यौवन (आदि) से युक्त कान्ताएँ, अर्थ से युक्त वृद्ध की भी महितभोग की इच्छा से सेवाएँ करते हैं। तरुण होने पर भी धनहीन को नहीं चाहते। अभाव (दारिद्र्य) ही नरक है, अभाव ही रुद्रभूमि (श्मशान) है, अभाव ही भूरि-शोक है, अभाव ही रोग है, अभाव ही मृत्यु है, अभाव ही पाप है, अभाव ही जरा (वृद्धत्व) है, अभाव ही कष्ट है, अभाव ही अकाल है, अभाव ही दैन्य है, अभाव ही रुदन है, सोचने पर अभाव ही सकल मालिन्य है, अभाव ही सब कुछ का अभाव है। अतः आश्चर्यप्रद रूप से समस्त राज्य को जिस समय छोड़ आए तभी तो सभी विपत्तियाँ आई हैं न ? हे मानवलोकेश ! जानकी के मरण को सहन नहीं कर सकता। अब विलम्ब किए बिना मार्गण (बाण)-समूह से राक्षसान्वित लंका को, अथक बन, भस्म कर दूंगा।"

विभीषणु डिंद्रजित्तुनि माय श्रीरामुलतो जॆप्पुट

अनि लक्ष्मणुडु वल्क ना विभीषणुडु । दन मदि नूहिंचि धरणीशु
कनियॆ; ५४००

"ना यिंद्रजित्तु माययॆ कानि सीत । के यपायंबुनु निट्टु कादु; नम्मु;
खलुडैन या पंक्तिकंठुंडु दलचु । तलपु नॆऱुगुदु धरणीश ! विनुमु;
'जानकि नॊप्पिंपु जनपति' कनुचु । ने नॆन्नि चॆप्पिन हितवुगा गॊनडु;
जनकनंदन नेल चंपिचु नतडु ? । मनुजेश यिदि वानि माय गावलयु;
नट्टिद यैन नो यवनीशवर्य ! । नॆट्टन बॊलियवे निखिल लोकमुलु ?
निदि बॊंकु; चिंतिप नेल ? यासीत । बदिलंबुगा जूचि प्रतिवार्त दॆत्तु"
ननि रामु ननुमति नव्विभीषणुडु । दन रूपमंतयु दाचि वेगमुन
नलि रूपु गैकॊनि यसुरेशु वनमु । दलकक चॊच्चि सीतनु गांचि मरलि
वच्चि या रामभूवरुनकु म्रॊक्कि । यच्चपु भक्तितो नंतयु जॆप्प
विनि "विभीषण ! यिट्टि विधमेल सेसॆ । ननि लोन निंद्रजि" त्तन
नातडनियॆ; ५४१०

विभीषण का इन्द्रजित की माया श्रीराम को बताना

ऐसा लक्ष्मण के कहने पर, वह विभीषण अपने मन में कल्पना कर धरणीश से बोला— ॥ ५४०० ॥

—"यह तो उस इन्द्रजित की माया है। सीता को कोई खतरा नहीं है। (मेरी बात पर) विश्वास करो। हे धरणीश ! खल उस पंक्तिकंठवाले के विचार को मैं जानता हूँ। सुनो। मैं यह कहकर कि 'जानकी को समझाओ, जनपति (राम) को दिलाओ' ऐसा कितना भी समझाऊँ (वह) नहीं मानता था। (वैसा) वह जनकनन्दना को क्यों मरवाएगा ? हे मनुजेश ! यह उसकी माया ही हो सकती है। (अगर सीता का संहार) सच ही हो तो हे अवनीश-वर्य (राजाओं में श्रेष्ठ) ! निखिल लोक झट से नष्ट नहीं हो जाएँगे क्या ? यह झूठ है। चिन्ता करना क्यों ? उस सीता को सुरक्षित देखकर, प्रति-समाचार लाऊँगा।" (ऐसा) कह, राम की अनुमति से विभीषण ने अपने समस्त रूप को छिपाकर, झट से सूक्ष्म रूप धारणकर, विकल हुए बिना असुरेश के वन में प्रवेशकर, सीता को देखकर, लौट आकर, राम-भूवर को प्रणामकर, स्वच्छ भक्ति से सब कुछ बताया। (बताने पर) सुनकर (राम ने पूछा)—"विभीषण युद्ध में इन्द्रजित ने इस प्रकार क्यों किया ?" उसने कहा— ॥ ५४१० ॥

"दनुजु डासुर होम तात्पर्य बुद्धि । जनुटकुनै यिट्टि चंदंबु सेसें;
हनुमंतु डादिगा नगचर कोटि । मनमुलु गलचि यिम्माड्कि बुत्तेंचि
'तन होम विघ्नंबु तग जेयु वार । लनयंबु लेरिक' ननि निकुंभिळकु
नरिगिन वाडु वा; डचट होमंबु । परिसमाप्तमु गाग बटु निष्ट नेडु
तन होम तंत्रमितयु जिक्ककुंड । मनु युक्ति नवधान मति जेसें नेनि
देव दानवुलैन दृष्टिचि निलिचि । या वीरवरु नेव्वरनि गेलव जाल;
रटु गान नीलोन नसुर वेलिमिकि । बटुगति विघ्न माापादिप वलयु;
जनियेद मेमिदे सैन्यंबु तोड; । मनुजेश ! पंपु लक्ष्मणु दोडु माकु;
सौमित्रि यनिलोन जंड कांडमुल । भूमि पै बडनेसि पोलियिचि मिचि
ने डिंद्रजित्तुनु नृपवर ! गेलुचु;। वाडु निकुंभिळ वनमु लोपलनु
५४२०

दपमु गैकोन्नाडु दशकंठ-सुतुडु; । तपमु निंडक मुन्न दंडिपकुन्न
ब्रह्म मेप्पिचि या परमेष्टि वलन । ब्रह्म शिरंबनु बाणंबु विल्लु
गवचंबु खड्गंबु गव दोनल् मरियु। नंविरळ मंत्र पूतास्त्रमुल् वडसि
कामगाश्वयुतंबु गमनीय केतु । भीमंबु मारुतस्फीत वेगंबु

—"दनुज ने आसुर होम की तात्पर्य-बुद्धि (करने की इच्छा) से जाने के लिए यह विधान किया है। हनुमान आदि नगचर-कोटि के मन को व्याकुलकर, इस प्रकार पठा देकर 'अब निरन्तर मेरे होम का विघ्न करने वाले कोई नहीं है' यह सोचकर वह निकुंभिला को गया हुआ है। वह आज पटुनिष्ठा से होम को परिसमाप्त करेगा, अपने होमतन्त्र को, किसी भी प्रकार पकड़ में आए बिना, युक्ति से (तथा) अवधान-मति से पूरा करेगा तो देव-दानव भी (उसे) देखते हुए (समक्ष) खड़े रहकर, उस वीरवर को कोई भी युद्ध में जीत नहीं सकेंगे। अतः इस बीच में ही असुर के होम (यज्ञ) में पटुगति से विघ्न उपस्थित करना चाहिए। हे मनुजेश! हम इसी सेना के साथ जाएँगे। लक्ष्मण को हमारे साथ भेजिए। युद्ध में चंड-कांडों (-बाणों) से सौमित्र (उसे) भूमि पर गिराकर, मार डालकर, विजृंभित हो आज इन्द्रजित को हे नृपवर! जीत लेगा। वह निकुंभिला वन में ।। ५४२० ।।

—तप में लीन है। दशकंठसुत के तप के पूर्ण होने से पहले (उसे) दंडित नहीं करेंगे, तो ब्रह्मा को प्रसन्नकर, उस परमेष्ठी से ब्रह्मशिर नामक बाण, धनुष, कवच, खड्ग, तूणीर-युग्म और अविरल-मन्त्र-पूत-अस्त्र प्राप्त कर, कामगामी-अश्वयुत, कमनीय-केतु से भीम (भयंकर बना), मारुत-स्फीत-वेग से युक्त रथ के उस अग्नि से निकलने पर, ढंग से उस रथ पर आरूढ़

नगु रथंबायग्नि यंदु वेल्वडिन । दग ना रथंबेक्कि धनुवंदे नेनि
ना वासवाराति नालंबु लोन । देवासुरादुलु दृष्टिपलेरु;
वानिकि निम्मुल वर मिच्चु नप्पु । डा नीरजासनुंडतनि नीक्षिच्चि,
"नीवु निकुंभिळ नेऽय होमंबु । गाविच्चितेनि नेगति नजेयुडवु;
काविचु होमंबु गडमगुनेनि । रावणात्मज ! नीवु रणमु लोपलनु
बगऽचे बडु" दनि पलिकिन वाडु । जगतीश! यटुकान समर यत्नंबु ५४३०
सेयिंचि ने डिंद्रजित्तु जंपिपु; । मायावि यगु वीडु मडिसिन जालु,
नमर कंटकुडगु नद्दशाननुडु । समरंबु लोपल जच्चिन वाडु"
अनि पल्क रघुरामुडपुडनुजन्मु । गनुगोनि "यनघात्म ! घनुडिद्रजित्तु
घनतिरोहित तिग्मकरु भंगि निगि । घन माय दनगति गानराकुंड
जरियिचु नव्वीरु शक्रादि सुरुलु । दुरमुन गडिमि मै दोडरंग जाल;
रिम्मंत्रिवरुलतो निव्विभीषणुडु । नेम्मि नय्यागंबु नीकु जूपेडिनि;
होम मध्यंबुन नुग्र राक्षसुनि । सौमित्रि ! नीवेगि समयिपु वेग;
पटुतर भल्लूक बलमुल गूडि । चटुल विक्रमुडैन जांबवंतुडु
घनतर विजय विक्रम धुरंधरुडु । हनुमंतुडुनु दोड नरुगुदेंचेदरु"

होकर, धनुष हाथ में लेगा तो उस वासव-आराति (इन्द्रारि) का युद्ध में देव-असुर आदि भी सामना नहीं कर सकेंगे। उसे प्रेम से वर देते समय, उस नीरजासन ने उसे देखकर ऐसा कहा था कि—तुम शोभा से निकुंभिल याग करोगे तो सब प्रकार से अजेय बनोगे। 'करने का होम पूरा न होगा तो हे रावणात्मज ! तुम रण में शत्रुओं से मारे जाओगे'। हे जगदीश ! यह ऐसा है, अतः समर-यत्न, ॥ ५४३० ॥

—करवाकर आज इन्द्रजित का संहार करवाओ। इस मायावी का मरना पर्याप्त है, समरकंटक उस दशानन वाले को समर में मरा जानो।" ऐसा कहने पर रघुराम ने अनुज को देखकर (कहा)—"हे अनघात्म ! इंद्रजित महान् है। घन-तिरोहित-तिग्मकर (सूर्य) के समान, आकाश में बड़ी माया से अपने विचरण की गति दिखाई न पड़े, ऐसा विचरनेवाले उस वीर का शक्र आदि सुर भी युद्ध में साहस से सामना नहीं कर सकते। इन मन्त्रिवरों के साथ यह विभीषण बड़े प्रेम से वह याग तुम्हें बताएगा। होम के मध्य में उग्र-राक्षस को हे सौमित्र ! तुम शीघ्र जाकर संहार कर दो। पटुतर-भल्लूक-सेनाओं को साथ लेकर चटुल विक्रमवाला जाम्बवान ओर घनतर-विजय-विक्रम-धुरन्धर हनुमान भी तुम्हारे साथ आएँगे।"

अनि पलिक रघुरामु डनुजन्मुनकुनु । वनधि यिच्चिन यट्टि वज्र
वर्मम्मु ५४४०

घनतर खड्गंबु गव दॊनल् विल्लु । बॆनुपॊंदगा निच्चि प्रीतितो मऱियु
वर भूषणंबुलु वलनॊप्प निच्चि । यऱुदॆन पेमि निट्लनुचु दीविंचॆ;
"ननिशंबु जयमु श्रीहरि यॊनगूर्चु; । घनतर शुभमु शंकरुँ डिच्चु; नजुडु
नीकायुवु घटिंचु; निखिल देवतलु । गॆकॊनि दिशलंदु गातुरु निन्नु;
ननलुंडु ननिलुंडु नभिरक्षणंबु । दनर जेयुदुरु मुंदऱ वॆन्क नीकु"
ननवुडु लक्ष्मणुंडप्पु डुप्पॊंगि । धनु वंदुकॊनि तनुत्राणंबु दॊडिगि
कव दॊनल् धरियिचि खड्गंबु दाल्चि । विविध भूषणमुलु विलसितुं
डगुचु
नारामु गनुगॊनि यति भक्ति म्रॊक्कि । धीर वाक्यंबुल दॆऱगॊप्प बलिकॆ;
"नलिनाकरमु लोन नलि मराळमुलु । गलगॊन बडुनट्टि गतिगान बडग
ना तॆल्ल गऱुल बाणमु लिंद्रजित्तु । वेतूरि चनि नेडु वॆस लंक बडुनु;
५४५०

विपुल तूलस्तोम विधमुन वानि । नृपवीर ! विशिखाग्नि नीऱु सेसॆदनु"
अनि यथोचितमुगा नारामुचन्द्रु । मनमार वीड्कॊनि महित तेजमुन

ऐसा कहकर रघुराम ने अनुज को वनधि (समुद्र) के दिए वज्रवर्म, ।। ५४४० ।।

—घनतर खड्ग, तूणीर-युग्म, धनुष को शोभा से देकर और प्रीति से वर-भूषणों को सुघड़ता से देकर, विरल (अनुपम) प्रेम से ऐसा कहते आसीसा—"श्रीहरि तुम्हें अनवरत जय प्रदान करेगा। शंकर घनतर-शुभ प्रदान करेगा, अज तुम्हें आयु प्रदान करेगा, निखिल देवता चाहकर सभी दिशाओं में तुम्हें बचाएँगे। अनल और अनिल आगे और पीछे तुम्हारा अभिरक्षण शोभा से करेंगे।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण खुशी से फूलकर, धनुष लेकर, तनुत्राण (ज्या) चढ़ाकर, तूणीर धारणकर, खड्ग धारणकर, विविध भूषणों से विलसित होकर, उस राम को देखकर, अतिभक्ति से प्रणामकर, धीर वाक्यों से ढंग से (यों) बोला—"नलिनाकर (सरोवर) में क्रम से मरालों के विकल हो विचरने के समान दीख पड़नेवाले मेरे श्वेत-पंख वाले बाण इन्द्रजित के शरीर में घुसकर जाकर झट लंका में गिरेंगे।।५४५०।।

—विपुल-तूल (-रुई)-स्तोम (ढेर) के समान उसे हे नृपवीर ! विशिखों की अग्नि से नष्टकर दूँगा।" ऐसा (कह) यथोचित रूप से उस रामचन्द्र से हृदयपूर्वक रीति से बिदा लेकर महित तेज से,

लक्ष्मणुडु युद्धमुनकु वॆडलुट

गरुडुनि नॆक्किन कमलाक्षु पगिदि । गरुवलिसुतु नॆक्कि करमॊप्पु मिगिलि
पंबि गोलांगूलबलमुलु गॊल्व । जांबवदादुलु सनुदेर गदिलि
बलुविडि नटकु मुप्पदि योजनमुलु । गल निकुंभिळ कॆगि घनतरंबुगनु
नुरु मदेभंबुलु नुत्तमाश्वमुलु । नरिदि रथंबुलु नलरु काल्बलमु
स्तोममै सवनंबु चुट्टुनु गाचि । भीममै यॆंदु नभेद्यमै तनरि
बलमुलन्नियु नलबलमॆल्ल नुडिगि । यललु लेनट्टि या यंबुधि करणि
नुन्न राक्षस सेन नॊप्पार जूचि । सन्नुत शस्त्रास्त्र संपन्नुडैन
सौमित्रितो विभीषणुडिट्टुलनियॆ: । "नी महा सैन्यंबु निषु परंपरल ५४६०
नॆडल नेसिन गानि यिंद्रारि मनकु । बॊडगानराडु; नी भूरि बाणमुल
दूलिपु मीसेन दॊलि तॊलि; पिदप । हालाहल भीलमैन शरालि
दॊरकॊन्न होमंबु दुदि मुट्टकुंड । दुरितात्मुडगु वानि द्रुंपुमु वेग"
मनवुडु सौमित्रि यत्युदग्रतनु । गनुगॊनलंदग्नि कणमुलु दॊरग
बलुतॆऱंगुल बाण पंक्तुलु वऱपॆ; । नलघु बलोदग्रुलै पॆल्लु रेगि

लक्ष्मण का युद्ध के लिए निकल पड़ना

गरुड़ पर आरूढ़ कमलाक्ष (विष्णु) के समान, पवनपुत्र (के कन्धों) पर आरूढ़ होकर, अधिक शोभा से, परिव्याप्त गोलांगूल (वानर)-सेना के सेवाएँ करने पर, जांबवान आदि के निकल पड़ने पर, चलकर, शीघ्रता से वहाँ से तीस योजन पर स्थित निकुंभिला को चल पड़ा। घनतर रूप से उरु-मद-गज, उत्तम-अश्व, विरल (असमान) रथ, विराजमान पैदल सेना के घेरकर सवन (यज्ञ) के चौतरफ पहरा देते हुए, भीम (भयंकर) हो, अभेद्य (और) शोभित हो, समस्त सेना के बिना हलचल के निस्तरंग समुद्र के समान स्थित राक्षस-सेना के शोभायमान रहते देखकर, सन्नुत शस्त्र-अस्त्र-सम्पन्न सौमित्र से विभीषण ने यों कहा—"इस महासैन्य को बाण-परम्पराओं से, ।। ५४६० ।।

—दूर भगाये बिना इन्द्रारि हमें दिखाई नहीं पड़ेगा। सर्वप्रथम अपने भूरि-बाणों से इस सेना को विचलित कर दो। (उसके) बाद हालाहल के सम आभील (भयंकर) शराली (शर-समूह) से प्रारम्भ किए होम के परिपूर्ण होने से पहले उस दुरितात्मा को झट से मार डालो।" ऐसा कहने पर सौमित्र ने अति उदग्रता से, आँख की कोरों से अग्निकणों के

तरुचराधिपुलुनु दरुलुनु गिरुलु । बॊरि बॊरि वैचिरप्पुडु सॊंपु मिगिलि;
यसुरुलु नत्युग्रुलै वनचरुल । वॆस बरिघंबुलु विसरि वैचियुनु
गदलचे मॊदियु गरवालमुलनु । विदळिंचियुनु बहु विधमुल जॆलगि
मरियुनु बॆक्कैन महित शस्त्रमुल । नुरक नॊप्पिंचिरि युग्रतनिट्लु
मार्पडु नसुरुल मर्कटेश्वरुल । यार्पुल नालंक यट्टिट्टु पडग; ५४७०
नंत बोवक राक्षसावलि दरिमि । यॆंतयु गडिमि ननेक मार्गमुल
गपुल नॊप्पिप्पंग गपुलुनु गविसि । कुपितुलै राक्षस कोटि नॊप्पिंप
विरिगि राक्षसुलॆल्ल वॆस निंद्रजित्तु । मरुगुन करिगिरि मदमॆल्ल दक्कि;
यालोन नॊक्कॊक्क याहुति बट्टि । यालोल कील महावह्नि नसुर
परगंग निन्नूट पदि याहुतुलकु । दॊरकॊनि यॊकनूट तॊम्मिदि वेल्चि
कडमयाहुतुलु नाकैवडि बट्टि । विडुवक निष्ठतो वेल्चुचु नुंडि
युरुतर सत्त्वुलै युग्रत बॆर्चि । धरणि गंपिंप नत्तरुचरवरुलु
बलुविडि नॆतॆंचि पै नार्चुटयुनु । गलुषत जित्तंबु गलगिन जेति
याहुति यटु वैचि यायिंद्रजित्तु । डाहवोन्मुखुडै महारोषमॆसग

उमड़ने पर, अनेक प्रकार की बाण-पंक्तियाँ चलाईं। अलघु-बल से उदग्र हो, अधिक विजृंभित हो, तरुचर-अधिपों ने तब अधिक शोभित हो, बार-बार तरु और गिरि फेंके। असुरों ने अत्युग्र हो, वनचरों पर झट परिघाएँ फेंककर, गदाओं से मारकर, करवालों से भगाकर, अनेक-विधियों से विजृंभित होकर, और भी अधिक महित शस्त्रों से (उन्हें) बहुत पीड़ित किया। इस प्रकार उग्रता से (परस्पर) मारनेवाले असुरों के तथा मर्कटेश्वरों के सिंहनादों से लंका कंपित हो उठी ॥ ५४७० ॥

—उतने से न जाने देकर राक्षसावली ने अधिक साहस से भगाकर, अनेक मार्गों से कपियों को पीड़ित किया तो कपियों ने भी कुपित हो टूट पड़कर राक्षसकोटि को पीड़ित किया। तब समस्त राक्षस हारकर, मद खोकर, इन्द्रजित की आड़ में गए। इस बीच एक-एक आहुति को हाथ में लेकर, आलोल-कीलाओं से युक्त महावह्नि में असुर ने शोभा से दो सौ दस आहुतियों में से लगकर एक सौ नौ का हवन कर, शेष आहुतियों को उस प्रकार पकड़ रख, एकाग्रता से, निष्ठा से, हवन करता रहा। तब उरुतर-सत्त्व से युक्त हो, उग्रता से विजृंभित हो, धरणी को कंपित करते हुए, उन तरुचरों के आकर, सिंहनाद करने पर, क्रोध से चित्त के विकल हो जाने पर, हाथ की आहुति को उधर डाल देकर, वह इन्द्रजित आहवोन्मुख हुआ। (होकर) महारोष के व्याप्त होने पर, नेत्रों में चिनगारियों के भर जाने

गन्नुल निप्पुलु ग्रम्मंग भीष । णोन्नति रथमॆक्कि युग्र कार्मुकमु ५४८०
धरियिंचि मिंचि युद्धति नेगुदेंचि । तरुचर सेनल दऱिमि नॊप्पिप
दनुजेशु तम्मुडत्तऱि रामु तम्मु । गॊनि पोयि वन मतिक्रूरुडै चॊच्चि
समधिकंबगु नील जलदंबु वोलॆ । गॊमराकुचुन्न न्यग्रोधंबु क्रिंद
दॊडरि यायिंद्रजित्तुडु सेय जेय । गडम जिक्किन होम कर्मंबु जूपि
"सौमित्रि! चूचिते समऱंबु कौऱकु । होम मिक्कड दैत्युडुग्रत जेसि
बलि भूतमुल किच्चि पावकु वलन । गल शक्ति सहितुल गडगि जयिंचु;
दॊल्लियु निट्टु चेसि दुर्मद वृत्ति । बल्लिदुडै यनि बर्जन्यु गॆलिचॆ;
निप्पुडु निट्टु चूडु, मी होम वह्नि । नॊप्पार वॆडलुचुनुन्नदि यरद
मरुण नेत्रंबुल नरुण केशमुल । नरुण बस्त्रंबुल नरुण माल्यमुल
जडिगॊन्न नल्लनि सारथि तोड । गड्डु नॆऱ्ऱनगु तुरंगंबुल तोड; ५४९०
वाडु ग्रम्मऱ वच्चि वरहोम शक्ति । वेडिमि नॆंतयु वॆडलिचि मिंचि
यी रथंबॆक्किन निंद्रादुलैन । नारावणात्मजु ननि गॆल्वलेरु;
कान नितटि लोन गडगि सौमित्रि! । वानि नी पटुशर व्रातंबु चेत

पर, भीषणोन्नति से रथ पर आरूढ़ होकर, उग्र कार्मुक को, ॥ ५४८० ॥
—धारणकर, औद्धत्य से आकर, तरुचर सेनाओं को भगाकर पीड़ित किया। (तब) दनुजेश के अनुज ने उस राम के अनुज को ले जाकर, अतिक्रूर हो वन में प्रवेशकर, समधिकता से नीलजलद के समान शोभायमान न्यग्रोध (बरगद) के नीचे उस इन्द्रजित के द्वारा किए जाते हुए, शेष बचे हुए होमकर्म को दिखाकर (कहा)—"हे सौमित्री! देखा न, समर के लिए यहीं पर दैत्य उग्रता से होम करके, भूतों को बलि देकर, पावक द्वारा प्राप्त शक्ति से अहितों (शत्रुओं) को लगकर जीत लेगा। पूर्व में भी ऐसा करके दुर्मद-प्रवृत्ति से बलवान बनकर पर्जन्य को जीत लिया। अब इधर देखो, इस होम-वह्नि से शोभा से रथ निकल रहा है जो अरुण नेत्र, अरुण केश, अरुण वस्त्र, अरुण माल्यों से उमड़ते काले सारथी के साथ, अधिक लाल तुरंगों से युक्त है ॥ ५४९० ॥

—वह (इन्द्रजित) पुनः लौटकर वर होमशक्ति के ताप से निकालकर, उद्धत बनकर, इस रथ पर आरूढ़ होगा तो इन्द्र आदि भी उस रावणात्मज को युद्ध में जीत नहीं सकेंगे। अतः इतने में ही हे सौमित्र! सप्रयत्न उसे अपने पटु शर-व्रात (-समूह) से मार डालो।" (ऐसा) कहने पर लक्ष्मण

बॊलियिपु" मनुडु नुप्पॊंगि लक्ष्मणुडु। तलकक कार्मुक ध्वनि सॆलंगिप
गरवाल हस्तुडै कवचंबु दॊडगि । यरुदार शिखिवर्णमगु रथंबॆक्कि
तनरूप सूपिन दशकंठु सुतुनि । गनुगॊनि सौमित्रि कडु नल्क बल्कॆ;

लक्ष्मण, इंद्रजित्तुल परस्पराधिक्षेपणमु

"मायल बनियेमि ? मगवाड वेनि। नायॆदुटिकि वच्चि ननुजूतु गाक!
निक्कंपु लावुन नीवु गय्यमुन । जक्क निल्वुमु; निनु जमु गूड बुत्तु
गपटंबु गैकॊन्न गैकॊनकुन्न । गपट राक्षस! निन्नु गडतेर्तु वेग"
मनवुडु लक्ष्मणु नायिंद्रजित्तु । गनुगॊनि रोषसंकलितुडै पलिकॆ;
५५००

"बालुंडवै यिट्टि पंतंबु लेल ? । यी लील निलुवु मीविंचुक दडवु;
लक्ष्मण ! निन्नु नालंबुन वीर । लक्ष्मिकि बॆड बापि लावॆडलिचि
यसुवुलु नादु बाणावलि बॆऱिकि । वसुमति पै गूल्चि वारक व्रच्चि
काकुल ग्रद्दल गंडल दनिपि । भीकराकारत बॆंपारु वाड;
नुऱक ना कट्टिन युरग पाशमुलु । मऱचिते लक्ष्मण ! मदिनितलोन"

फूलकर विचलित हुए बिना कार्मुक-ध्वनि को मुखरित करते हुए, करवाल को हाथ में ले, कवच पहनकर, विरल (असमान) शिखि (अग्नि)-वर्ण वाले रथ पर आरूढ़ होकर, अपना रूप दिखानेवाले दशकंठ-सुत को देखकर सौमित्र ने अति क्रोध से कहा—

लक्ष्मण-इन्द्रजित का परस्पर अधिक्षेपण

"मायाओं से क्या काम ? पुरुष हो तो मेरे सामने आकर मुझे देख लेना। सच्ची सामर्थ्य से तुम युद्ध के लिए ठीक ढंग से खड़े हो जाओ। तुम्हें यम के पास भेज दूंगा। हे कपटराक्षस ! कपट से काम लो या नहीं, तुम्हें झट मार डालूंगा।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण को देख इन्द्रजित ने रोष-संकलित हो कहा— ।। ५५०० ।।

—"बालक होकर यह स्पर्धाएं क्यों ? इसी प्रकार थोड़ी देर और ठहरो। हे लक्ष्मण ! तुम्हें युद्ध में वीरलक्ष्मी से दूर कर, सामर्थ्य से हीन कर, अपने बाण-समूह से प्राण छीन कर, वसुमति पर अवश्य गिराकर, कौवों और चीलों को (तुम्हारे) मांसखंडों से तृप्तकर, भीकर आकार से शोभित बनूंगा। हे लक्ष्मण ! सरलता से तुम्हें उरगपाशों से बाँध दिया था। क्या उसे अभी मन से भूल गए ?" ऐसा लक्ष्मण से कहकर, उस विभीषण को देखकर इन्द्रारि ने अधिक क्रोध से कहा—"तुम चाचा हो न ! मैं प्रिय

यनि लक्ष्मणुनि बलिक यव्विभीषणुनि । गनुगोनि यिंद्रारि कडुनल्कबल्के;
"बिनतंड्रि वट नीवु; प्रियमार नेनु । दनयुंड; ना केग्गु दलपंग दगुने?
दुर्मतिवै कुलद्रोहंबु सेयु । धर्मघातुक! नीकु दगवेल कलुगु?
नडरैन बंधुल नेट्टि नीचुंडु । विडिचि शत्रुल बोयि वेडुने शरणु?
तगवु दप्पिन नैन दन वारि बासि । पगवारि सेविंचि ब्रदुकुटे ब्रदुकु?
५५१०
आ निशाचरनाथु डधिक तेजुंडु । नी निष्ठुरोक्तुलु नीतिगा गोनुने?
यन्न कोपिंचिन नट यिंटि मूल । नुन्न नेमगु? नुंडकुन्न नेमगुनु?
नीलावु बलिमिने निखिल देवतल । नालंबुलो गेल्चेना दशाननुडु?
हितुडवै मर्ममहितुनकु जेप्पि । यतनि चेतन चेडु" मन विभीषणुडु
"ना वर्तनमु मेघनाद! यी वेरुगु; । दी वृथा जल्पंबुलेल याडेदवु?
आतंड्रि कोडुकैन यवनीति मतिकि । नीतियु धर्मंबु नीकेल कलुगु?
बोसग जे पट्टिन भुजगंबु पगिदि । वेस ग्रूरुडगु बंधु विडुवंग वलयु;
बापात्मुडगु नट्टि पंक्तिकंधरुडु । ना पलुकुलु विन्न ना डितलगुने?
परधनंबुलकुनु बर कांतलकुनु । बरितापमुन बोंदु पाप कर्मुलकु
दगवेल? मेलेल? धर्मंबु लेल? । जगदेक हितमैन चरितंबु लेल?
५५२०

पुत्र हूँ। मेरा अहित सोचना चाहिए? (नहीं।) हे धर्मघातक! दुर्मति बन कुलद्रोह करनेवाले तुम्हें न्याय क्यों सूझेगा? विपत्ति के आने पर संबंधियों को छोड़ कैसा भी नीच क्यों न हो, शत्रुओं के पास जाकर शरण माँगेगा? न्याय-धर्म से छूटने पर भी अपने लोगों को छोड़ शत्रुओं की सेवा करते जीना भी कोई जीना है? ।। ५५१० ।।

—वह निशाचरनाथ, अधिक तेजवाला (रावण) क्या तुम्हारी निष्ठुर उक्तियों को नीतियुक्त मान लेगा? अग्रज क्रुद्ध हो गया तो घर के किसी कोने में पड़े रहते तो क्या होता? न रहते तो क्या होता? तुम्हारी शक्ति और सामर्थ्य के कारण ही से तो दशानन ने युद्ध में निखिल देवताओं को जीता क्या? हितू बनकर, अहितू (शत्रु) को मर्म बताकर, उसी के हाथ नष्ट हो जाओ।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने कहा—"हे मेघनाद! मेरे आचरण को तुम जानते ही हो। यह वृथा-जल्प (-वचन) क्यों कहते हो? उस पिता के पुत्र (तथा) अवनीतिमतिवाले को नीति और धर्म क्यों होंगे? अनुकूलता से हाथ में पकड़े भुजंग के समान, क्रूर सम्बन्धी को झट छोड़ देना चाहिए। पापात्मा दशकंधर यदि मेरी बातें सुन लेता तो आज इतना होता क्या? परधन तथा पर-कान्ताओं के लिए परितप्त होनेवाले पापकर्मा

मग्नमौ नीमदि मदमु गर्वंबु । नग्नुलै कालपक यवियेल पोवु ?
दलकोनि यॆप्पु डधर्म वर्तनमे । कलिगि वर्तितुरु कडु ग्रॊव्वि मीरु;
सुरल बाधितुरु; सुव्रतुलैन । परममुनींद्रुल बट्टि चंपुदुरु;
कावुन ना दशकंठुनि तोड । नीवुनु लंकयु निखिल बंधुवुलु
मानकिच्चकमाडु मंत्रुलु गूडि । सेनलु रामुचे जॆडुट सिद्धबु;
बुद्धि शून्युडवैति; स्फुटकाल पाश । बद्धुंड; वेमैन बल्किन बल्कु;
मिट मीद नीमाय लॆक्कवु; नीकु । वटमु क्रिंदिकि होम वांछ बोरादु;
चनरादु लंककु सौमित्रि दॊडरि; । चनवच्चु निक वेग जमुपुरि" कनग
प्रथमाद्रि पै वच्चु भानुनि पगिदि । पृथुगात्रु हनुमंतु बॆंपार नॆक्कि
यमरिन लक्ष्मणु ना विभीषणुनि । समरार्थुलगु नगचरुल वीक्षिंचि
५५३०

या रावणात्मजुंडप्पुडिट्लनियॆ । वारक रोष दुर्वारुडै पॆर्चि;
"वीरुलै नाबाण वृष्टिकि मीरु । सैरिंचॆदरु गाक! समरोर्वि नेडु;
उडुगक नाविंट नॊदवु बाणाग्नि । यडरि मिम्मंदरु नाहुति गॊनुनु;

(व्यक्तियों) को नीति-न्याय क्यों ? हित क्यों ? धर्म क्यों ? जगदेकहित (करनेवाले) चरित्र (इतिहास अथवा कथाएँ) क्यों ? ।। ५५२० ।।

तुम्हारा हृदय मद और गर्व में मग्न है। नग्न करके जलाए बिना वे कैसे दूर होंगे ? जान-बूझकर, अधिक गर्वीले बनकर तुम लोग सदा अधर्म-आचरण ही करते हो। सुरों को पीड़ित करते हो, सुव्रतशाली परम मुनींद्रों को पकड़ कर मार डालते हो। अतः उस दशकंठ के साथ तुम और लंका के समस्त बाँधव, निरन्तर मीठी बातें करनेवाले मन्त्री सेनाएं (सबका) मिलकर राम के हाथ नष्ट होना तथ्य है। बुद्धिशून्य बन गए हो, स्फुट-कालपाशबद्ध हो, जो चाहे कह लो। अब आगे तुम्हारी मायाएँ काम नहीं देंगी। वट के नीचे होम (करने) की वाँछा से जाना नहीं चाहिए। लंका को नहीं जाना चाहिए। सौमित्र से जूझकर अब शीघ्र यमपुरी को जा सकते हो।" प्रथमाद्रि (पूर्वाद्रि) पर उदित होनेवाले भानु के समान पृथुगात्रवाले हनुमान पर शोभा से आरूढ़ होकर विराजमान लक्ष्मण को, उस विभीषण को, समरार्थी नगचरों को देखकर, ।। ५५३० ।।

—उस रावणात्मज ने तब रोष-दुर्निवार हो, विजृंभित हो यों कहा—"आज समरोर्वी (समरभूमि) में आप लोग वीर बनकर मेरी बाणवृष्टि को सहन कर लें। अक्षय रूप से मेरे धनुष से उत्पन्न होनेवाली बाणाग्नि विजृंभित

गरवाल पट्टिस घनभिंडिवाल । शरजालमुल मिम्मु समयिंतु'' ननुचु
रोदसी-कुहरंबु म्रोयंग सिह । नादंबु सेयुचु नानाशुगमुल
वेंस नेयुचुनु "बाहु विक्रम स्फूर्ति । नेंसगु ना मुंदऱ नेव्वंडु निलुचु?''
ननवुडु लक्ष्मणुं डादैत्यु तोंड । "दनुजाधमुड! यी वृथा गर्व मेल?
चेरक यडगि म्रुच्चिलि पोटु वोंडुचु। टेरणंबुन बाडि ? ये मगतनमु ?

इन्द्रजिल्लक्ष्मणुल द्वंद्व युद्धमु

नीमाय लन्नियु निरसिंचि निलुवु; । नामार्गणमुल ब्राणमुल हरिंतु''
ननवुडु गोपिंचि यतनिपै नेसें । घनकाल सर्प प्रकांड कांडमुल; ५५४०
नि लक्ष्मणुनि गाडि यव्वल वेंडलि । यवनी स्थलमु गाडें नद्भुतशक्ति;
मऱियुनु वाडु लक्ष्मणदेवु मेन । गऱुलाडगा बेंक्कु कांडंबु लेय
वडि वच्चि ताकि यव्वल नुच्चि पाऱ। वेंडलु रौद्ररसंबु वेंल्लिय पोलें
गडु बेंल्लु नेंत्तुरंगंबुल वेंडल । नडरंग राक्षसु लार्चुचु नुंड
जंकेंलु नट्टहासमुलु सेयुचुनु । लंकेंद्र-तनयु डा लक्ष्मणु जेरि,
"नरनाथ सुत; नेडु नन्नाजि गदिसि । बिरुदवै यिट्टु विजृंभिचिन निन्नु

हो तुम सब लोगों को आहुति के रूप में लेगी । करवाल, पट्टिस, घनभिंडिवाल, और शरजालों से तुम्हारा संहार करूँगा ।'' (ऐसा) कहते हुए रोदसीकुहर को मुखरित करनेवाला सिंहनाद करते हुए, नाना-आशुगों को झट डालते हुए कहा कि "बाहुविक्रम-स्फूर्ति से विजृंभित मेरे समक्ष कौन खड़ा रह सकता है ?'' ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने उस दैत्य से कहा—"हे दनुजाधम ! यह वृथा गर्व क्यों ? समक्ष न आकर चोरी-चोरी प्रहार करना किस रण में न्यायसंगत है ? कैसा पौरुष है ?

इन्द्रजित-लक्ष्मण का द्वन्द्वयुद्ध

—अपनी सभी मायाओं को छोड़ खड़े हो जाओ, मैं अपने मार्गणों से प्राणों का हरण कर दूँगा ।'' ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो उस पर घनकालसर्पप्रकांड कांडों को फेंका ॥ ५५४० ॥

—वे लक्ष्मण (के शरीर) में पैठकर, बाहर निकलकर, अद्भुत शक्ति से अवनीस्थल में घुस गए । फिर उसके लक्ष्मणदेव के शरीर विषम तीक्ष्ण धाराओं से अनेक कांड डालने पर, झट आकर, लगकर, उस पार निकल पड़े । रौद्ररस के बाढ़ के समान, अत्यधिक रक्त के (लक्ष्मण) के शरीर से निकलने पर विजृंभित हो राक्षस सिंहनाद करने लगे । भर्त्सनाएँ अट्टहास करते हुए, लंकेंद्रतनय ने उस लक्ष्मण के पास आकर (कहा)—"हे

दौलुत गत्तळमु दुत्तुनियलु सेसि । तल द्रुंचि वैचेद दारुणास्त्रमुल;
बेनुपेदि पडियुन्न प्रिय सहोदरुनि । निनु जूचु रामुडु ने डवश्यंबु"
ननि पल्क लक्ष्मणुं डा निशाचरुनि । गनुगोनि "यी वृथा गर्व मेमिटिकि?
बलुकुल बनियेमि बवरंबु लोन ? । दौलगक ना तोड दोडरुदु गाक:
५५५०

माट लाडक वह्नि मडियिंचु मड्कि । माट लाडक निन्नु मडियिंतु निपुडु
पनि लेनि पंतमुल् पलुकंगनेल" । यनुचु नुग्रास्त्रंबु लरि वोसि तिगिचि
घनतर भीषणाकारुडै पेर्चि । कनुगव गेंजाय गडलु कोनंग
नमरंग गोपिंचि यर्कदीधितुलु । गमियंग दिक्कुलु गलयंग बर्व
विलयाग्नि कीललु विस्फुलिंगमुलु । गलगोन देरलेंडु घनतर शक्ति
गलयम्मु संधिंचि करकु रक्कसुनि । यलघु वक्षस्स्थल मट्टु काड नेय
दान दैत्युंडु रक्तमु ग्रक्कि मूर्छं । नूनि यंतन तेलिव नोंदि पेल्लार्चि
वाडिमि मिगुल दीव्रंबुन नेसे । मूडु बाणमुल रामुनि तम्मुनुरमु;
नप्पुडु धीरुलै यधिक रौद्रमुन । निप्पुलु गन्नुल निव्वटिल्लंग
जेलगु नय्यिद्दर सिंहनादमुलु । बलुविडि बरतेंचु बाणघट्टनलु ५५६०

नरनाथसुत ! आज, आजि (युद्ध)में मेरे निकट आकर, शूर हो इस प्रकार विजृंभित तुम्हारा, पहले कवच को चकनाचूर कर, दारुणास्त्रों से सिर काट डालूँगा । विकास को खोकर गिर पड़े हुए तुम्हें प्रिय सहोदर राम आज अवश्य देखेगा ।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने उस निशाचर को देख कहा—"यह वृथा गर्व क्यों ? युद्ध में वचनों से क्या काम ? अलग न हटकर मेरा सामना तो करो ।। ५५५० ।।

---चुपचाप वह्नि के जला देने के समान, बिना बात किए तुम्हारा संहार कर दूंगा । व्यर्थ के गर्व-वाक्य कहना क्यों ?" (ऐसा) कहते उग्र-अस्त्रों का खूब संधान कर, खींचकर, घनतर-भीषण-आकारवाला हो विजृंभित हो, नेत्रयुग्म में अरुणिमा फैल पड़ने पर, ढंग से क्रुद्ध हो, अर्क (सूर्य) की दीधितियाँ (प्रकाश) समस्त दिशाओं में फैल उठने पर, विलयाग्नि की कीलाएं (तथा) विस्फुलिंगों की एकत्र बनी घनतर शक्ति से युक्त बाण का संधानकर, क्रूर राक्षस का अलघु (विशाल) वक्षस्थल फट जाए ऐसा चलाया तो उससे दैत्य ने रक्त उगलकर, मूर्च्छित हो, इतने में होश में आकर, अधिक सिंहनाद कर, अति तीव्रता से तीन पैने बाण राम के अनुज के उर पर चलाया । तब धीर हो अधिक रौद्र से आँखों से चिनगारियों के फूटने पर, विजृंभित उन दोनों के सिंहनाद तथा वेग से आनेवाली बाण-घट्टनाएं, ।। ५५६० ।।

नुरुगुण स्वनमुलु नोक्कट नेसग । नरय गालुनि यट्टहासंबु वोलें;
वेलसिन लावुन विक्रमंबुननु । बोलुपुन ज्रलमुन भूरि रौद्रमुन
ननिशंबु वेलुगु चंद्राकुंलु वोलें । दनरु चतुर्दंत दंतुलु वोलें
कोमरारु सिंगंपु गोंदमलु वोलें । ग्रममोप्प शंबर कामुलु वोलें
नमर द्रिनेत्रांधकासुरुल वोलें । रमण गुमार तारकुलुनु बोलें
नेपारु वृत्रासुरेंद्रुलु वोलें । रूपिंपगा गाल रुद्रुलु वोलें
बायनि जयकांक्ष ब्रबलुलै चेलगि । या यिद्दरुनु बोरि रप्पुडु चूड;
गोपंबु नुद्दंड गुणघोष मेसग । जापरथ ध्वज सहितंबु गाग
ना मेघनादुनि नम्मुल बिट्ट । सौमित्रि मुंचिन सैरिप कतडु
प्रति सायकमु लेय बलुविडि द्रुंचि । विततंबुगा बाण वृष्टि गप्पुटयु
५५७०
नायिंद्रजित्तुंडु नलवेल्ल बोलिसि । या अस्त्रमुलकु मारैन यस्त्रमुलु
नेरि नेयनेरक निट्टूर्पु वुच्चि । तरिगोनि चूड नत्तरि विभीषणुडु
सौमित्रि गनुगोनि "जननाथतनय ! । नी मार्गणंबुल निर्विण्णुडगुचु
दशकंठसुतुडुन्न दश जूडु मिपुडु; । दशरथात्मज! रणस्थलि नीवु गेल्वु"
मनवुडु नुग्रंबुलैन बाणमुलु । गोनि यंगकंबुलु ग्रुच्चि पोनेय

—उरु गुण-स्वन, एक साथ काल के अट्टहास के समान मुखरित हुए। विलसित सामर्थ्य, विक्रम, स्थिरता, हठ, भूरि रौद्र से सदा प्रकाशित होने वाले चन्द्र-अर्कों के समान, शोभायमान चतुर्दंतवाले दंतियों (हाथियों) के समान, तरुण सिंह-शावकों के समान, क्रम से शंबर और काम की भाँति, शोभा से त्रिनेत्र और अन्धकासुर की तरह, रमणीयता से कुमार और तारक (असुर) के समान, विजृंभित वृत्रासुर तथा इन्द्र की भाँति, तुलना करने में कालरुद्रों के समान, निरन्तर की जयकांक्षा से प्रबल हो, विजृंभित हो, तब उन दोनों ने युद्ध किया। क्रोध से उद्दंड गुण-घोष के मुखरित होने पर चाप-रथ-ध्वज सहित सौमित्र को मेघनाद के भयंकर बाणों के डुबो देने पर, उस (मेघनाद) ने भी सहन न कर प्रति बाण चलाए। झट से (लक्ष्मण द्वारा) उन्हें भग्नकर वितत रूप से बाणवृष्टि से ढँक देने पर, ॥ ५५७० ॥

—वह इन्द्रजित समस्त शोभा को खोकर, उन अस्त्रों के प्रति अस्त्र क्रम से चला न सक, लम्बी साँस छोड़, देखता रह गया। उस अवसर पर विभीषण ने सौमित्र को देख (कहा)—"हे जननाथतनय ! तुम्हारे मार्गणों (बाणों) से निर्विण्ण बने दशकंठसुत की दशा को अब देखो। हे दशरथात्मज ! रणस्थल में अब विजय प्राप्त करो।" ऐसा कहने पर उग्र बाणों को लेकर अंगकों में गाड़ दिया। एक मुहूर्त भर के लिए मूर्च्छित

नॊक मुहूर्तमु मूर्छ नॊंदि वे तॆलिसि । "यकट ! मुन् देवासुरादुल गॆलिचि
परिकिंप दैवंबु प्रतिकूलमैन । नरुनकु निट्टु नेडु ना कोडवलसॆ;
ननिलोन राक्षसु लंदरु बॊलिसि । रिन वंशजुल चेत; निकनेटि ब्रदुकु?"
अनुचु कोपमुन नय्यमरकंटकुडु । जननाथसुतु जूचि व्रल मग्गलिचि
"नरनाथ-नंदन ! ना विक्रमंबु । बरिकिंचि नी विक बंटवै निलुवु"
५५८०

मनुचु नेडम्मुल ननि नॊप्पिंचि । हनुमंतु बदियिंट नदरंट नेसि
वॆस विभीषणु मीद विशिखमुल् नूरु । मसलक निगुडिचि मरि विजृंभिचॆ;
गाकुत्स्थतिलकु डाकडिमि गैकॊनक । नाकेन्द्ररिपु जूचि नव्वुचु बलिकॆ;
"नधिकुंडु पंतंबु लाडक गॆलुचु; । नधमुंडु पंतंबु लाडियु नोडु;
ननुचितस्थिति शूरुलगु वारु डाग । रनिलोन; वंचिचु टदि बंटुतनमॆ?
कुटिल युद्धमु सेयु क्रूरात्म! नीकु । बटुगति निहमुनु बरमुले" दनुच
दिनकरकर जाल तीव्रार्चु लडर । गनक पुंखंबुलु गलुगु बाणमुलु
वानिपै निगुडिचि वडि जोडु द्रुंचि । मे नुच्चि चनग नम्मॊयिमरुवपुडु

होकर, झट होश में आकर (यह सोच कि) "हाय ! पूर्व में देव-असुर आदियों को जीतनेवाले मुझे, देखने पर दैव के प्रतिकूल होने पर, नर के हाथ से आज हारना पड़ा न ! इन-वंशजों के हाथ युद्ध में सभी राक्षस मृत हुए । अब जीना कैसा ?" क्रोध से उस अमरकंटक ने जननाथसुत को देख, अति हठ से (यों कहा)— "हे नरनाथनन्दन ! मेरे विक्रम को देख अब तुम शूर हो खड़े रहो ।" ।। ५५८० ।।

—(ऐसा) कहते सात बाणों से उसे (लक्ष्मण को) पीड़ित कर, दस (बाणों) से हनुमान के मर्म को बेधकर, झट विभीषण पर लगातार सौ बाण चलाकर उद्धत हो विजृंभित हुआ । काकुत्स्थ-कुलतिलक उस साहस की परवाह न कर, नाकेन्द्ररिपु को देख हँसते हुए बोला—"अधिक (शौर्यवान) वीर, वचन न कह, (युद्ध करके) जीतता है । अधम (व्यक्ति) वीर वचन बोलकर भी हार जाता है । अनुचित स्थिति में शूर (व्यक्ति) युद्ध में छिपकर नहीं रहते । धोखा देना भी कहीं शूरता है ? कुटिलयुद्ध करनेवाले हे क्रूरात्मा ! पटुगति से तुम्हारे लिए इह (लोक) और पर (लोक) नहीं हैं ।" (ऐसा) कहते हुए दिनकर-करजाल की तीव्र-अर्चियों से अधिक श्रेष्ठ (तथा) कनकपंखवाले बाणों का उस पर संधानकर चलाया । झट कवच तोड़कर, शरीर में घुसकर (उन बाणों के) चले जाने पर, वह कवच तब कालोग्र-सर्प के

कालोग्र सर्पंबु कंचुकं बनग । नालोकनाभीलमै नेल बडियें;
वाडु वेंडियु नोक्क वज्रांगि दोंडिगि । वाडि बाणंबुल वडि नेय नपुडु
५५९०

परुवडि नोंडोरु बाण घातमुल । नुरुवडि वेंलुवडु नुरु शोणितमुल
गैरिक निर्झर कलितंबुलैन । भूरि भूधरमुल पोलुपु गैकोनुचु
गरवेग शरवेग गतुल नेर्पुलनु । गरमोप्प बोरुचो गाराकु डुल्लि
पूचिन किंशुकंबुलु गनुपट्टु । ना चंदमुन नोप्पिरस्त्र घातमुल;
नमर गंधर्वादुलच्चेरुवंदि । समरंबु जूड ना समयंबु नंदु
गलभ वेष्टित मत्त गजलील मंत्रि । कलितुडै भीकरगति विभीषणुडु
विलु गुणध्वनि सेसि विपुल रोषमुन । वेंलुगु मंटल तोडि विशिखंबु लेय
बिडुगुलु सऱचिन पृथुल भूजमुल । वडुवुन राक्षसुल् वसुधपै बडिरि;
अनलुंडु मोदलुगा नतनि मंत्रुलुनु । घनशूल पट्टिस खड्‌ग घातमुल
नेंगडि राक्षस कोटि नेलपै गलिपि; । रग चरावळि जूचि यव्विभीषणुडु
५६००

“निक नीतनि जंपु डिदरु बोंदिवि; । लंकेशु बलमन्न लावन्न नितडें;

कंचुक (केंचुली) के समान आलोकन में आभील बनकर ज़मीन पर गिर पड़ा। उसने भी फिर एक वज्रांगी (कवच) धारण कर, पैने बाणों को शीघ्रता से चलाया। तब ॥ ५५९० ॥

—बार बार परस्पर के बाण-घातों से झट निकलनेवाले उरु-शोणित के कारण गैरिक (गेरुए वर्ण के)-निर्झरों से कलित भूरि-भूधरों की शोभा से युक्त हुए। करवेग और शरवेग की गतियों के कौशल के साथ अधिक शोभा से जूझते समय, पके पत्तों के झड़कर (बिना पत्तों के होकर) फूले हुए किंशुकों के दीख पड़ने की तरह वे अस्त्रघातों से दिखाई पड़े। अमर गन्धर्व आदि आश्चर्यचकित हो समर को देखते रहे। उस समय कलभ-वेष्टित (हाथी के बच्चों से घिरे हुए) मत्तगज के समान मन्त्रियों से युक्त हो, भीकरगति से विभीषण ने धनुष-टंकार कर, विपुल रोष से, बलती ज्वालाओं से युक्त विशिख चलाए तो अशनिपात के आघात से पृथुल-भूजों (बड़े वृक्षों) के समान राक्षस वसुधा पर गिर पड़े। अनल आदि उसके मन्त्रियों ने घन-शूल-पट्टिस-खड्ग के आघातों से विजृंभित हो राक्षस कोटि को मिट्टी में मिला दिया। अगचर-अवली को देख विभीषण ने (कहा)— ॥ ५६०० ॥

—“अब सब घेर कर उसे मार डालो। लंकेश का बल और सामर्थ्य तो

यनि नीतडील्गिन नद्दशाननुडु । दन सेनतो गूड दा नील्गि नाडु;
मुनु ब्रहस्तुनि वज्रमुष्टि ब्रजंघु । डनुवानि सुप्तघ्नु डनुवानि मऱियु
गुंभ निकुंभुल घोर विक्रमुल । गुंभ कर्णुनि महोग्रुनि नतिकायु
विकटु महा पार्श्वु वेलय धूम्राक्षु । मकराक्षु ग्रोधनु मऱि शोणिताक्षु
यूपाक्षु द्रिशिरु महोदरु नग्नि । कोपुनि देवांतकुनि नरांतकुनि
खरु जंबुमालि नकंपनु मऱियु । बरुष विक्रमुलैन पगतुर जंपि
याहव सागरं बवलील दाटि । बाहाबलंबुन बरगिति; रिंक
समयंबु मीकु लक्ष्मणुनकु दाट । नमरंग निंद्रजित्तनु गोष्पदंबु
गोडुकु जंपग नाकु गूडदु; वीडु । चेंडु नुपायमु मीकु जेप्पेद विनुडु;
५६१०

हिंस गाविंचिन नेंदिरिचे बंचि । हिंस सेयिंचिन निवि रेंडु सरियै;
इदि रामु कार्यार्थं; मिदि लोक हितमु; । नदि कान पातकंबैन गानिडु;
सौमित्रि चे नेनु जंपिंतु वीनि; । ने मायलुनु गोल्व विटमीद" ननिन
जांबवंतुडु ऋक्ष संघमुल् गोलुव । संबरं बगलंग नार्चि राक्षसुल
नग शृंग तरुषंड नख दंतमुलनु । बगतुर नवलील बालपडि जाच्चि
नोप्पिप गपुलचे नोंगिलि राक्षसुलु । निप्पुलु सेंदरंग नेरि दारु घोर

यही है। युद्ध में यह गया तो (समझ लीजिए) अपनी सेना के साथ वह दशानन भी मर गया। पूर्व में (इससे पहले) प्रहस्त को, वज्रमुष्टिवाले प्रजंघ नामक को, सुप्तघ्न नामक को, और घोर-विक्रमवाले कुम्भ और निकुंभ को, कुम्भकर्ण को, महोग्र को, अतिकाय को, विकट को, महापार्श्व को, शोभित धूम्राक्ष को, मकराक्ष को, क्रोधन को और शोणिताक्ष को, यूपाक्ष को, त्रिशिर को, महोदर को, अग्निकोप को, देवांतक को, नरांतक को, खर को, जंबुमालि को, अकंपन को, और भी परुष-विक्रम वाले शत्रुओं का संहारकर आहव-सागर को आसानी से पार कर, बाहुबल से विराजित हुए। अब शोभा से इन्द्रजित नामक गोष्पद को पार करने का आप तथा लक्ष्मण के लिए यह अवसर है। मुझे पुत्र को नहीं मारना चाहिए। सुनो, आपको इसके भंग होने का एक उपाय बताता हूँ ॥ ५६१० ॥

—हिंसा करना और दूसरे को आदेश देकर हिंसा कराना दोनों एक समान हैं। यह राम के कार्य के लिए है, यह लोकहित (कार्य) है, अतः पाप भी हो तो मैं इसे सौमित्र से मरवा दूँगा। अब आगे (इसकी) मायाएँ काम नहीं देंगी।" (ऐसा) कहने पर जाम्बवान ने ऋक्ष-समूहों के सेवाए करते रहने पर, ऐसा सिंहनाद कर कि अम्बर फट जाए, राक्षसों को नग-शृंगों (पर्वत की चोटियों) और तरुषंडों से तथा नख-दन्तों से शत्रुओं से सरलता

परशु मुद्गर शूल पट्टिस प्रास। परिघ शरासनपाणुलै बॆरय
बॊरि सुरासुरुलकु बॊलॆ नय्यद्रि। चर निशाचरुलकु संग्राममय्यॆ;
हनुमंतुडा समयम्मुन नलिगि। घनुनि लक्ष्मणु डिंचि कालुनि पगिदि
नॊक्कॊक्क वाटुन नॊक्कॊक्क माटु। पॆक्कंड्र दैत्युल बृथिविपै गूल्चि
५६२०

शैल शृंगंबुल साल वृक्षमुल। लीलमै जंपि बल्लिदुडुनै वेचॆ;
सरभसंबुन विभीषणु डंत नलुक। नुरुतर ज्याघोष मॊनरिंचि मिंचि
तन मंत्रुलुनु दानु दद्दयु गडिमि। दनुजुल बॆक्कंड्र दरमिडि चंपि
करमॊप्पु कनक पुंख प्रदरमुलु। दॊरिगिंचॆ निंद्रजित्तुनि मेनु गाड;
दरमिडि वाडु नुदग्रुडै किनिसि। यरिदिशरंबु लेयग नवि वच्चि
पॊरि विभीषणुनुरंबुन नुच्चि पारि। धर गाड धरणियु दल्लडपडियॆ–
दुरमु विभीषणुतो निंद्रजित्तु। करमुग्रगति निट्लु काविचु चुंड
गनुगॊनि यपुडु लक्ष्मणुडु गॊपिंचि। हनुमंतु नॆक्कि तीव्रास्त्र संततुलु
वडिमीरि राक्षसवरुनिपै नेय। गडु नॊच्चियुनु भयंकरमुगा नपुडु
मगुड वाडुज्ज्वल मार्गण पंक्ति। मिगुलंग लक्ष्मणुमीद बॆल्लेसॆ;
५६३०

से जूझकर, पैठकर, पीडित किया। कपियों से व्याकुल होकर, राक्षस, चिनगारियाँ बिखेर उठें ऐसा स्वयं भी घोर-परशु, मुद्गर, शूल, पट्टिस, प्रास, परिघा, शरासन (आदि) हाथ में लेकर विराजित हुए तो क्रम से सुर-असुरों के समान उन अद्रिचरों तथा निशाचरों में संग्राम हुआ। उस अवसर पर हनुमान क्रुद्ध हो, महान् लक्ष्मण को उतारकर, काल (मृत्यु) के समान, एक-एक प्रहार से, एक-एक बार अनेक दैत्यों को पृथ्वी पर गिराकर, ।। ५६२० ।।

—शैलश्रृंगों से तथा सालवृक्षों से सरलता से मारकर, बली होकर विजृंभित हुआ। रभस के साथ तब विभीषण ने क्रोध से उरुतर-ज्याघोष करके उद्धत बन, अपने मन्त्रियों के साथ स्वयं साहस से कई दनुजों को क्रम से मारकर, अधिक शोभायमान कनकपंख-प्रदरों को चलाया जो इन्द्रजित के शरीर में गड़ गए। क्रम से उसके भी उदग्र बन क्रुद्ध हो अनुपम शर चलाने पर, वे आकर क्रम से विभीषण के छाती से पार होकर धरा में गड़ गए जिससे धरणी कम्पित हो उठी। विभीषण से अति उग्रगति से इस प्रकार युद्ध करते समय (उसे) देखकर तब लक्ष्मण ने क्रुद्ध हो हनुमान पर आरूढ़ हो अधिक वेग से तीव्र अस्त्र-संततियाँ (-समूह) राक्षस-वर पर चलाए।

नडरि यय्यिद्दरु नतिकोपु लगुचु । गडिदि बाणंबु लुग्रत नेय नप्पु
डायंप तंडंबु लडरि यॊंडॊरुल । कायंबु लंदंद कप्पिन नप्पु
डंबु धारल तोडि यंबुदंबुलनु । नंबुदंबुल तोडि यर्क चंद्रुलनु
बोलि; रामार्गणंबुलु वच्चु चुन्न । यालोनि वेग मेमनि चॆप्प वच्चु?
दॊडिगिन शरमुलु तॊडिगिन यट्लु । विडुवरॊको यनु विधमुन नुंडॆ;
नारॆंडु तॆऱगुल यम्मुलु गगन । मारंग गप्पिन नडरॆ जीकट्लु;
वीर रसावेश विवशत नॆरुग । रॆरि यॊंडॊरुल महाजि रंगमुन;
नायवसरमुन नच्चॆरुवडर । वायुवु रणभूमि वर्तिपदय्यॆ;
ननलुंडु वॆलुगॊंदडय्यॆ; दिक्पतुलु । ननिमिष गंधर्व यक्ष किन्नरुलु
सकल देवतलुनु शरणंबु सॊच्चि । चकितात्मुलगुचु लक्ष्मणु ब्रशंसिचि
५६४०

या लक्ष्मणुनकु जयंबुगा नपुडु । चाल दीवनलिच्चि सम्मदंबुननु
“नति लोक कंटकुंडैन या दैत्यु । मृतुनिगा जेयु सौमित्रि! नी”वनुचु
बलुकुचु नुंड ना भानुकुलुंडु । पॆलुचु नार्चुचु गुणाभीलरावंबु
चॆलगंग नायिंद्रजित्तुनु गिट्टि । बलुकांडमुलु मीद बरगिचुटयुनु

अधिक पीड़ित होकर भी, भयंकर रूप से तब फिर से उसने अधिकता से लक्ष्मण पर उज्ज्वल मार्गण पंक्ति का प्रयोग किया ।। ५६३० ।।

—विजृंभित हो उन दोनों ने अतिक्रुद्ध होते हुए कठोर बाण उग्रता से चलाए । तब उन बाण-समूहों के विजृंभित हो एक दूसरे के शरीरों को सर्वत्र ढँक देने पर वे अंबुधाराओं से युक्त अंबुदों तथा अंबुदों से युक्त अर्क-चन्द्रों के सम थे । उन मार्गणों के आने के वेग के बारे में कैसे कहा जा सकता है ? वह विधान ऐसा था मानों शर का संधान करने और छोड़ने में अन्तर न हो । उन दोनों प्रकार के बाणों के गगन को ढँक देने से अन्धकार फैल गया । महाजि-रंग में वीररस के आवेश के वश होने के कारण वे एक दूसरे को जान न सके । उस अवसर पर आश्चर्यप्रद रूप से रण-भूमि में वायु का प्रसार नहीं हो रहा था । अनल प्रकाशित नहीं हुआ । दिक्पति, अनिमिष, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, (और) समस्त देवता भी, शरण में आकर, चकितात्मा होते हुए लक्ष्मण की प्रशंसाकर, ।। ५६४० ।।

—‘उस लक्ष्मण को जय हो’ ऐसा अनेक आशीर्वाद देकर, सम्मोद से ‘अति-लोककंटक उस दैत्य को तुम मृत कर दो हे सौमित्र !’ बोलते रहे। उस भानुकुलवाले ने अधिकता से सिंहनाद करते हुए गुण (ज्या) के आभील-रव के व्याप्त होने पर, उस इन्द्रजित के निकट जाकर, उस पर अनेक बाण

ना राक्षसुडु वेग यवि तुंचि वैचि । घोर नाराचमुल् गुरिसि पैल्लार्चे;
मदिलोन गोपिंचि मऱियु लक्ष्मणुडु । गदिसि याशाखामृगंबुलार्वगनु
ज़लमुन नौक यर्ध चंद्रबाणमुन । बलियुडै वानि चापमु द्रुंचि वैचि
पडग नेडिंटनु बडनेसि यौकट । दडयक सारथि तल द्रेंव्व नेसि
पदियिट वक्षंबु वगुलंग नेसि । यंदरंट नेसे रथ्यमुल नाल्गिट;
नारावणुनि सुतुंडप्पुडु ताने । सारथि रथियुनै सौमित्रि गिट्टि ५६५०
नैट्टन नेयुचु निगुडु कोपमुन । नट्टहासमु सेय ना लक्ष्मणुंडु
नरदंबु गडपुचु ननिसेयु दैत्यु । नरुदार वीक्षिंचि यदरंट नेसें;
नावाडि यम्मुल नधिकंबु नौच्चिच । रावणु सुतुडु मूर्छागति बौंदि
यंतलो देलिवौंदि यात्मलो बेंद्द । चिंतिंचि "यिदि येमि चित्रमो नरुडु
नन्नु नौप्पिंचें; नेन्नडु निट्टि देऱुग । मुन्नु नेयाहवंबुल बोरु नपुडु;
काल मेंव्वरिकिनि गडवरा" दनुचु । वालिन युष्ण निश्वासंबु लडर
जापंबु दिवियंग शरमु संधिप । नोपक परिपंथि नौप्पंग जूड
नेरक युंडिन निखिल देवतलु । नारामु तम्मुनि नर्गिगचि; रपुडु
वेल वैलनगु वानि विन्ननि मोमु । गलयंग गनुगोनि कपिवीरु लार्वे

चलाए । उस राक्षस ने उन्हें झट काट देकर, घोर-बाण बरसाकर, सिंहनाद किया । मन में कुपित होकर और भी निकट जाकर लक्ष्मण ने, शाखामृगों के सिंहनाद करते रहने पर, हठ से एक अर्द्धचन्द्र बाण से, बली हो, उसके चाप को तोड़ देकर, सात (बाणों) से केतन को गिराकर, एक से अविलम्ब सारथी के सिर को काट देकर, दस (बाणों) से वक्ष को फोड़ देकर, चार से रथ्यों का मर्मबेधन किया । तब रावणसुत ने स्वयं सारथी तथा रथी बनकर सौमित्र के निकट जाकर, ।। ५६५० ।।

—भीकरता से (बाण) डालते हुए, विजृंभित क्रोध से अट्टहास किया । उस लक्ष्मण ने रथ चलाते हुए युद्ध करनेवाले दैत्य को चकित हो देखकर, मर्मबेधन किया । उन पैने बाणों से अधिक पीड़ित होकर, रावणसुत मूर्च्छित होकर, उतने में ही होश में आकर, आत्मा (मन) में अधिक चिन्तित हो (उसने सोचा)—"यह कैसी विचित्रता है कि नर ने मुझे पीडित किया । पूर्व में किसी भी आहव (युद्ध) में जूझते समय ऐसा कभी नहीं हुआ । कोई भी काल का अतिक्रमण नहीं कर सकता ।" (ऐसा) सोचते समय अधिक उष्ण निश्वासों के निकलने पर, चाप निकालने (तथा) शर का संधान करने में असमर्थ हो, परिपंथी (शत्रु) को ठीक तरह देख न सका । तब समस्त देवताओं ने उस राम के अनुज की प्रशंसा की । तब हततेज बने उसके विवर्ण-मुख को पूरी तरह देखकर, कपिवीरों ने सिंहनाद

वीरुलु ग्रथनुंडु वेँस ब्रमाथियुनु । मेरु सन्निभुडगु मेघ निस्वनुडु ५६६०
शरभुंडु ऋषभुंडु शैल शृंगमुलु । नरुदार निंद्रारि यरदंबु विरुग
नटु वैचुटयुनु रथ्यंबुल तोड । विटताटमै कूल विपुलकोपमुन
नसुर-नायक सुतुंडंतट बेँचि । वेँस विभीषणु राम विभुननुजन्मु
नुदुरुनु वक्षंबु नोनाट नेसेँ । वदलक मूडेसि वाडि बाणमुल;
नेसि गुणध्वनि येँसकंबु गाग । जेसि चेँलंगिचेँ सिंहनादंबु;
नप्पुडु कोपिंचि यधिक रौद्रमुन । निप्पुलु कन्नुल निव्वटिल्लंग
रावणु सुतुनि युरंबुच्चि पारॅ । गा बिभीषणु डेसेँ गांडंबु लैदु;
आतडु गोपिंचि याग्नेय बाण । मा तंड्रि पयि नेय नदि राग जूचि
वारुणास्त्रंबेसेँ वडि लक्ष्मणुंडु; । नारेँडु नटु पोरि यवनिपै बडियेँ;
नुरागास्त्र मा दैत्यु डुग्रुडै येय । गरुडास्त्रमुन द्रुंचेँ गडगि लक्ष्मणुडु; ५६७०
तग गुबेरास्त्र मुद्धति नातडेय । नगणितंबुग द्रुंचेँ याम्य बाणमुन;
नतडु वेँडियुनु वायव्यास्त्र मेय । नतडदियुनु द्रुंचेँ नैंद्रास्त्र मेसि;
दानवुंडंपुडु गंधर्वास्त्र मेय । दानि लक्ष्मणुडु रौद्रंबुन द्रुंचेँ;

किया। वीर क्रथन ने झट प्रमाथी और मेरु-सन्निभ मेघ-निस्वन, ।। ५६६० ।।

—शरभ, ऋषभ, ने शैल-शृंगों से आश्चर्यप्रद रूप से इन्द्रारि के रथ को तोड़ देकर, फेंक दिया। वह रथ्यों के साथ तितर-बितर हो गिर गया। विपुल क्रोध से असुरनायक-सुत ने तब विजृंभित हो, झट विभीषण को तथा रामविभु के अनुजन्म के ललाट पर और वक्ष पर अविलम्ब तीन-तीन पैने बाण चलाए। चलाकर अधिक गुण-ध्वनि कर, सिंहनाद किया। तब क्रुद्ध हो, रौद्र से, आँखों से चिनगारियों के फूट पड़ने पर, रावणसुत के वक्ष पारकर जाएँ, विभीषण ने ऐसे पाँच बाण डाले। उसने क्रुद्ध हो उस पिता (पितृव्य) पर आग्नेय बाण चलाया, उसके आते देख झट लक्ष्मण ने वारुणास्त्र चलाया। वे दोनों (बाण) जूझकर (टकराकर) अवनी पर गिर गए। दैत्य के उग्र हो उरगास्त्र चलाने पर, सप्रयत्न लक्ष्मण ने गरुडास्त्र से उसे भग्न कर दिया। उद्धति से उसके कुबेरास्त्र चलाने पर, अगणित रूप से उसे याम्यबाण से खंडित कर दिया। उसने फिर वायव्यास्त्र चलाया, उसने उसे भी ऐंद्रास्त्र चलाकर खंडित कर दिया। दानव ने तब गन्धर्वास्त्र चलाया, उसे लक्ष्मण ने रौद्र (अस्त्र) से काट दिया।

ज्ञलमुन निट्टु वारु समरंबु सेय । ब्रळय कालमु नाटि भंगियै तोचॆं;
सौमित्रि रण परिश्रांति मान्चुटकु । ना मंदवायुवु लल्लन वीचॆं;
नंत लक्ष्मणुडु नायंतकु पगिदि । नंतकंतकु नुग्रुडै यिंद्र जित्तु

लक्ष्मणुनि चे निंद्रजित्तु मडियुट

नट्टु चूचि कार्मुकज्या निनादंबु । बट्टुशक्ति तो दिशा भागंबु वगुल
जॆलगिंचि मॆयि वॆंचि सिंहनादंबु । सॆलगिंचि देवेंद्रुचे गॊन्न यट्टि
यारूढि मीरु नैंद्रास्त्रंबु दॊडिगि । "यारामविभुडु धर्मात्मुडौनेनि,
देवि यासीत पतिव्रत येनि, । देवता करुण नादॆस गलगॆनेनि, ५६८०
निंद्रादुलकु नॆल्ल हितवगु नेनि । निंद्रजित्तुनि तल निम्महाशरमु
त्रॆंचु गावुत" मनि दृष्टि संधिंचि । मिंचि येयुटयुनु मिन्नॆल्ल निंडि
पृथु दीर्घ निर्घात भीषणंबगुचु । ब्रथन विकासन प्रारंभमगुचु
बहु रत्न पुंख शोभायुतंबगुचु । विहगेंद्र सम जवाविर्भावमगुचु
नहि मुखानलकण व्यालोल मगुचु । नहिमांशु बिंब प्रभाभीलमगुचु
मंडुचु रुचुलतो महियु नाकसमु । निंडुचु नत्युग्र निग्रहोदग्र

हठ से उनके इस प्रकार युद्ध करते समय, वह प्रलयकाल की भाँति लगा। सौमित्री के रण-परिश्रान्ति (-थकान) को दूर करने के लिए मन्द पवन मन्दगति से चला। तब लक्ष्मण ने अंतक (यम) के समान, शनैः शनैः उग्र हो इन्द्रजित—

लक्ष्मण के हाथ इन्द्रजित का मरना

—की ओर देखकर, कार्मुक-ज्या-निनाद की पटुशक्ति से दिशाभाग के फट जाने, विजृंभित हो, शरीर को बढ़ाकर, सिंहनादकर, देवेन्द्र से प्राप्त किए ऐंद्रास्त्र का औद्धत्य से संधान कर, (यह कह कि) "वह रामविभु धर्मात्मा है तो, देवी वह सीता प्रतिव्रता है तो, देवताओं की करुणा मेरी ओर है तो ॥ ५६८० ॥

—समस्त इन्द्र आदियों को हित हो तो इन्द्रजित के सिर को यह महाशर काट दे।" (यह) कहकर, दृष्टि का संधान कर, उन्नति से (अस्त्र) चलाने पर, (वह) समस्त आकाश में भरकर, पृथुदीर्घ-निर्घात-भीषण होते हुए, प्रथन-विकसन-प्रारम्भ से युक्त होते हुए, बहुरत्नपुंख से शोभायुत होते हुए, विहगेन्द्र के समान जब (वेग) के आविर्भाव से युक्त हो, अहि-मुख के अनलकणों से व्यालोल होते हुए, अहिमांशु (सूर्य)-बिंब की प्रभाओं से आभील (भयंकर) होते हुए, बलते हुए, रुचियों के साथ महि और आकाश

गतुलमै बऱचि राक्षस-लोकनाथु । सुतुगिट्टि यंदंद सुरलु मिन्नंद
दनरिन यम्महोद्दंडास्त्र मतनि । यनुपम मणि कुंडलांचितंबैन
ललितारुणाक्षतालंकृतंबैन । तल बॊमिडिकमुतो धर गूल द्रोचॆ
गलुष भावमुन लंका निधानंबु । ग्रलमुन नुग्रुडै साधिप गोरि५६९०
बलि यिच्चु कोऱकुनै पट्टु लुलायंबु । तल द्रुंचि वैचु विधंबच्चु वडग;
ननिलोन बडियुन्न यायिंद्रजित्तु । गनुगॊनि जयलक्ष्मि गैकॊनि दिशलु
गलयंग नपुडु शंखंबु पूरिंचि । विलु गुणध्वनि सेसि वॆस लक्ष्मणुंडु
नलुवॊप्प नुरु सिंहनादंबु सेय । जॆलुवॊंदॆ नप्सर स्त्रील लास्यमुलु;
वीनुलु सॊगयिंचॆ विश्रुत श्रुतुल । मानैन गंधर्व मधुर गानमुलु;
नंत विभीषणुं डंतंत कॆच्चु । संतोषमुन ग्रुच्चि सौमित्रि नॆत्ति
यालिंगनमु सेसॆ नालंबु लोन । नालोन वनचरु लंदंद चॆलग;
नंतलो हतशेषुलगु निशाचरुलु । नॆंतयु भीतिल्लि येपॆल्ल बॊलिसि
वनचरुल् दोलंग वडि धृति दूलि । तनरारु पदहति धरणि गंपिप
गलगॊनि चीकट्लु कन्नुल गविय । दललु वीडग नायुधंबुलु वैचि
५७००
चॆंदिन भयमुन जॆंडि पाऱि लंक । गॊंदऱु सॊच्चिरि; कुधरशृंगमुल

को भरते हुए, अत्युग्र-निग्रह-उदग्र-गतियों से गतिमान होकर राक्षसलोकनाथ के सुत के निकट पहुँच, जहाँ-तहाँ देवताओं के प्रसन्न होने पर, शोभित उस महा-उद्दंड-अस्त्र ने उसके अनुपम-मणि-कुंडलों से अंचित, ललित अरुण अक्षतालंकृत सिर को शिरस्त्राण के साथ धरा पर गिरा दिया, क्रूरभाव से लंका-निधान को हठ से उग्रता से प्राप्त करने के लिए, ।। ५६९० ।।

—बलि चढ़ाने के लिए पट्टु-लुलाय (महिष) का सिर काट डालने के समान था वह विधान । युद्ध में गिर पड़े हुए उस इन्द्रजित को देखकर जय-लक्ष्मी को ग्रहणकर शोभा से तब शंख बजाकर, धनुष की ज्याध्वनि कर झट लक्ष्मण के शोभा से महा-सिंहनाद करने पर, अप्सरस्त्रियों के लास्य सुशोभित हुए, विश्रुत-श्रुतियों में मान्य गन्धर्व मधुर गान कर्णपेय बने । तब विभीषण ने अधिकाधिक प्रसन्नता से निकट लेकर सौमित्र को, युद्ध-भूमि में ही, आलिंगन किया । इतने में (इस बीच) वनचर सर्वत्र विजृंभित हुए । इतने में हतशेष निशाचर अधिक भीत होकर, समस्त विकास को खोकर, वनचरों के भागने पर, धैर्य को खोकर, सुशोभित पद-हति से धरणी के कंपित होने पर, परिव्याप्त अन्धकार के आँखों में फैलने पर, शिरोजों के बिखरने पर, आयुध डाल देकर, ।। ५७०० ।।

गोंदरूैक्किरि; वार्धि गोंदरु वडिरि; । कोंदरु घनशैल गुहललो दूरि;
रनलुंडु तीव्रार्चु लडरंग वेलिगे; । दिनकरुंडुज्ज्वलदीप्ति जेन्नोंदे;
जलधुलेडुनु नति स्वच्छंबुलय्ये; । गलय दिक्कुल कप्पु काविरि विरिसे;
गगन प्रसन्नत गलिगे; निष्कंप । मगुचु भूतल मोप्पे; नप्पुडेंतयुनु
बवनसूनुडु शतबलियुनु नलुडु । जवशालि पनसुंडु शरभुंडु ऋषभु
डतुल विक्रमशालि या वालिसुतुडु । नुतबलुंडगु सुषेणुं डर्कजुंडु
गजुडुनु गवयुंडु गंधमाधनुडु । विजयु लैनट्टि याद्विविद मैंदुलुनु
दक्किन वानरोत्तमुलु नेतेंचि । म्रोक्कि कीर्तिचिरि मुदितात्मुलगुचु;
नप्पुडु लक्ष्मणु नखिल देवतलु । नोप्पार नुतियिंचि योगि बुष्प वृष्टि
५७१०
गुरिसिरि; वानर कोटि पेल्लार्चे; । बरिमळयुत मंद पवनंबु वीचे;
ना लक्ष्मणुडु विष्णु नंशंबु गान । नालंबु लोपल नतनिचे देगिन
कपट राक्षसुडुनु गायंबु बिडिचि । यपराब्धि ग्रुंकिन यर्कुंडु वोले
विष्णु सायुज्यंबु वेलयंग नंदे; । नुष्णांशुकुलु कीर्तु लोगि दिशल्निड
सौमित्रि यट जयस्तंभंबु निलिप । रामुनि योद्दकु रयमुन जनियें

—भयभीत हो, टूटकर, भागकर कुछ लंका में घुस पड़े, कुछ कुधर (पर्वत)-शृंगों पर चढ़ गए, कुछ वारिधि में कूद पड़े, कुछ घन-शैल गुफाओं में घुस पड़े। तीव्र-अर्चियों के विजृंभित होने पर अनल बल उठा, दिनकर उज्ज्वल दीप्ति से शोभित हुआ। सातों जलनिधि अतिस्वच्छ बन गए। दिशाओं को ढँकनेवाली कालिमा दूर हुई, गगन प्रसन्न बना, भूतल निष्कंप बन शोभित हुआ। तब पवनसून, शतबलि, नल, जवशाली पनस, शरभ, ऋषभ, अतुल विक्रमशाली वालिसुत, नुतबलवाला सुषेण, अर्कज, गज, गवय, गन्धमादन, विजयी बने वे द्विविद (तथा) मैन्द और अन्य वानरोत्तमों ने आकर प्रणाम कर, मुदित मनवाले होते हुए प्रशंसाएँ कीं। तब अखिल देवताओं ने लक्ष्मण की शोभा से प्रशंसा कर, क्रम से पुष्पवृष्टि ॥ ५७१० ॥

—की। वानरकोटि ने अधिक सिंहनाद किया, परिमल-युत मंद पवन चल पड़ा। उस लक्ष्मण के विष्णु के अंश होने पर, युद्ध में उससे मरे कपट राक्षस ने भी काया को छोड़कर, अपराब्धि में डूबे अर्क के समान, शोभा से विष्णुसायुज्य को प्राप्त किया। उष्णांशु-कुलवाले की कीर्तियाँ क्रम से दिशाओं में भर जाएँ, ऐसा वहाँ जयस्तम्भ की स्थापना कर, सौमित्र अतिशीघ्र राम के पास गया। सर्व वानर, विभीषण, वायुज अत्यधिकता से

सर्व वानर विभीषण वायुजुलुनु । बर्वि यॆंतयु दन्नु बलिसि येतेर;
वच्चिच रामुनि पादवनरुहंबुलकु । नच्चुगा नॆऱगिन नप्पुडुप्पॊंगि
यलरि कौगिट जेर्चि यानंद बाष्प । मुल तोड दॊडलपै मुदमॊप्प नुनिचि
पॊरि नंगमुल वीरपुलक लनंग । नरगरुल् सॊरबाऱिनट्टि बाणमुल
मुनुकॊनु ना दुःखमुन मेघनादु । डनिलोन गूलिन या संतसमुन ५७२०
नतिरयंबुन मूर्छ यंतलोपलनॆ । धृति नूलुकॊन दोन तॆलिवियु गलिगि
यावेळ रघुरामु डर्कसूनुनकु । ना विभीषणुनकु ननुजन्मु जूपि
"यायोधनंबुन नलवुमै नित । सेयुने यीतंडजेयुडै नेडु!
बहु दिव्य शस्त्रास्त्रपरुनिंद्रजित्तु । नहित भयंकरु ननिलोन जंपॆ;
नटुगान नाचेत ननि जच्चु निक । बटु शौर्य धनुडैन पंक्ति कंधरुडु;
नातनि विभवंबु नातनि बलिमि । यातनि सुतुनितो नट नेडु वॊलिसॆ;
निखिल शस्त्रंबुल निपुणुडै मॆऱसि । यखिल राक्षसुलकु नाधारमैन
कॊडुकु चावुन कॆल्ल कॊर्कुलु विडिचि । कडिमिमै नातोड गय्यंबु सेय
सर्वायुधोज्ज्वल सन्नद्धुडगुचु । गर्विंचि दुर्वार गति वच्चॆ नेनि
चतुरंग बल दैत्य संघंबु तोड । विततावहक्षोणि विशिखजालमुल
५७३०

उसे घेरे रहे । (इस प्रकार) आकर राम के पद-वनरुहों में नत होने पर तब (प्रसन्नता से) फूलकर, प्रसन्न हो, आलिंगित कर, आनन्द-बाष्पों से युक्त हो, (अनुज को) जाँघों पर बिठाकर, मानों शरीर के वीररस से पुलकित होने के समान, विषम तीक्ष्ण धाराओं से गड़े हुए बाणों के कारण दुख से तथा युद्ध में मेघनाद के गिर जाने के आनन्द से ।। ५७२० ।।

—झट मूर्च्छित हुए । उतने में ही धैर्य धारण कर, होश में आकर, उस समय रघुराम ने अर्कसून को (तथा) विभीषण को (अपने) अनुजन्म को दिखाकर (कहा)—"आयोधन (युद्ध) में यह अजेय होकर शोभा से इतना कर पाया न ! बहु दिव्य-शस्त्र-अस्त्र-परायण अहित (शत्रु)-भयंकर इन्द्रजित को युद्ध में मार डाला न ! यह ऐसा है, अतः अब पटु शौर्यधन वाला पंक्तिकंधर युद्ध में मेरे हाथ मरेगा । उसका वैभव, उसका बल, उसके सुत के साथ ही आज नष्ट हो गए । निखिल शस्त्रों से निपुण हो प्रकाशित होकर, अखिल राक्षसों के आधारभूत पुत्र की मृत्यु के कारण समस्त इच्छाओं को छोड़कर, साहस से मेरे साथ युद्ध करने के लिए सर्व-आयुधों से उज्ज्वल (तथा) सन्नद्ध हो, गर्व से, दुर्वार गति से आएगा तो चतुरंग बल (तथा) दैत्यसंघ के साथ, वितत-आहव-क्षोणि में विशिख जालों से तत्क्षण संहार कर, ।। ५७३० ।।

बलुविडि दुनुमाडि बलि भूतमुलकु । नलवड गाविंतु नद्दशाननुनि''
ननि सुषेणुनि जूचि यारामु डनियें । ''दनरु नोषधि शैल तटवनंबुननु
नुरुतर प्रभलतो नोप्पु विशल्य । करणि वे तेंच्चि लक्ष्मण विभीषणुल
वानरावळि शरव्रणवेदनलनु । वानरोत्तम! पापवलयु नी'' वनिन
नातंडु नत्तेऱंगटु सेय वारु । वीतक्षतांगुलै वेस नुल्लसिल्लि;
रिनसूनु पनुपुन नेल्ल वानरुलु । मनमार गेसेसि महिततेजमुन
जंद्र दिवाकर सदृशुलौ राम । चंद्र सौमित्रुल सरिगोल्व नपुडु
रामलक्ष्मणुलुनु रवितनूजुंडु । यामिनीचर-वरुडगु विभीषणुडु
नुतबलुंडनिलसूनुडु सुषेणुंडु । शतमन्युमनुमडु जाबवंतुंडु
नीलुंडु मोदलगु निखिल यूथपुलु । बौलस्त्युलकु नेल्ल बट्टुगोम्मैन
५७४०
या वीरवरुनि चावधिकसम्मदमु । गाविंप संपूर्णकामुलै; रिटनु

इन्द्रजित्तु मरणमुनकु रावणुनि शोकमु

नंत नाराक्षसुलट लंककरिगि । येंतयु शोकंबुलेसग नव्वेळ

—उस दशानन को भूतों के लिए शोभा से बलि कर दूंगा।'' (ऐसा) कह सुषेण को देख उस राम ने कहा—''शोभायमान ओषधी-शैल-तट के वन में, ।। ५७३२ ।।

वन में, उरु-तर प्रभाओं से शोभायमान विशल्यकरणि झट लाकर, लक्ष्मण, विभीषण तथा वानरावली की शर-व्रण-वेदनाओं को हे वानरोत्तम! तुम्हें दूर कर देना चाहिए।'' (ऐसा) कहने पर, उसके उस विधान से करने पर, वे वीत-क्षतांग (घावों से मुक्त) हो, झट उल्लसित हुए। इनसून के आदेश पर समस्त वानरों ने मनभर अलंकार कर, महिततेज से चन्द्र-दिवाकर सदृश बने रामचन्द्र (तथा) सौमित्र की उचित सेवाएँ कीं। तब राम, लक्ष्मण तथा रवितनूज, यामनीचर (राक्षस) -वर विभीषण, नुतबलवाला अनिलसून, सुषेण, शतमन्यु का पोता जाम्बवान, नील आदि समस्त-यूथपों (सेनापति) ने समस्त पौलस्त्यों के आधार-स्वरूप ।। ५७४० ।। —उस वीर-वर (मेघनाद) की मृत्यु को अधिक सम्मोद से मनाकर, इच्छा की पूर्ति कर ली। यहाँ (लंका में)

इन्द्रजित के मरण पर रावण का शोक

—तब वे राक्षस वहाँ लंका में जाकर अधिक शोक के बढ़ने पर, उस समय लोक-विद्रावण रावण को देखकर (बोले) —''हे देव! तुम्हारा पुत्र

रावणु लोकविद्रावणु गांचि । "देव ! नी पुत्त्रुंडु देवेंद्रवैरि
तन बाहुबलमुन दऱिमि वानरुल । दुनुमाडि पॅक्कंड्र दुरमुलोपलनु
दिविजुलच्चॅरुवंद दिव्यास्त्रकोटि । नविरळंबुग बॅर्चि यंतट बोक
बलुविडि लक्ष्मणु प्राणमुल् गलग । बलुसायकंबुल ब्रौढुडै येसि
या मेघनादु डुदग्रविक्रमुडु । सौमित्रिचे जच्चॅ समरमध्यमुन"
ननवुडु रावणुंडधिकशोकमुन । मुनिगि पॅद्दयु ब्रॊद्दु मूर्छिल्ल तॅलिसि
"हा वंशवर्धन ! हा महावीर ! । हा वीररणधुर्य ! हा शूरवर्य !
या शतमन्युनि नवलील गॅलुचु । ना शौर्यमॅव्वडुदग्रुडै यडचॅ ५७५०
बलसूदनादि दिक्पतुलु खेचरुलु । बलमऱि नीवन्न बाऱुचुंडुदुरु;
नी युग्रशक्तिकि निलिचि निन्नॆदिरि । यायोधनंबुन नडचॆने नरुडु !
चटुलकोपंबुन जंडकोदंड । पटुबाणपाणिवै बवरंबुलोन
निलिचिन जमुडैन नी कोडु; नट्टि । बलिमि यॅक्कडबोयॆ बरिकिंप नेडु!
वक्रमै दॆवंबु वलनुगाकुन्न । शक्रारि ! नीकंटॆ जमुडॆक्कुडय्यॆ;
नक्कजंबुग मंदराचलंबैन । व्रक्कलु सेयु नी वाडि बाणमुलु;
रणभूमिलो नीवु रामलक्ष्मणुल । दृणलील गॅलिचिति तिविरि पलमाऱु:

देवेन्द्र-वैरी (इन्द्रजित) अपने वाहुबल से वानरों को भगाकर, युद्ध में कइयों का संहार कर, दिविजों के आश्चर्य चकित होने पर, अविरल रूप से दिव्यास्त्र-कोटि से विजृंभित हुआ। उतने से न जाने देकर, झट से लक्ष्मण के प्राण विकल हो जाएँ, ऐसा प्रौढ बनकर कई बाण चलाकर उदग्र विक्रमवाला वह मेघनाद समर-मध्य में सौमित्र के हाथ मर गया।" ऐसा कहने पर रावण अधिक शोक में डूबकर, देर तक मूर्च्छा में रह, होश में आकर (बोला)—"हे वंशवर्द्धन ! हे महावीर ! हे वीर-रण-धुरीण ! हे शूरवर ! उस शतमन्यु (इन्द्र) को सरलता से जीतनेवाले उस शौर्य का किसने उदग्र हो दमन किया ? ॥ ५७५० ॥

—बलसूदन (इन्द्र) आदि दिक्पति और खेचर तुम्हारा नाम सुनकर, बलहीन हो भाग जाते रहते हैं। तुम्हारी उग्र शक्ति के समक्ष टिककर, तुम्हारा सामना कर, युद्ध में नर ने (तुम्हारा) दमन कर दिया ! चटुल-क्रोध से चंडकोदंड-पटु बाण-पाणि हो, युद्ध में (तुम) खड़े हो जाओ तो यम भी तुम से हार जाएगा। ऐसी तुम्हारी सामर्थ्य देखने (सोचने) पर आज कहाँ चली गई ? वक्र बन दैव (नियति) के प्रतिकूल होने पर हे शक्रारि (इन्द्र वैरी) ! तुम से यम अधिक (शक्तिशाली) हो गया न ! तुम्हारे पैने बाण आश्चर्यप्रद रूप से मंदराचल को बेध डालते हैं। रण-भूमि में तुमने सप्रयत्न कई बार, तृण के समान रामलक्ष्मणों को हरा दिया

ना महत्त्वमु दूलि, हा पुत्र! नीवु । सौमित्रिचे नेडु समसिते यकट !
यमरुलु मौनुलु नमरारि ! नीवु । समरोर्वि बडुटकु संतसिचेंदरु;
संहारघन घनस्तनितमैनट्टि । सिंहनादमु नीवु सेसिन बेंदरु ५७६०
निखिल लोकंबुलु; नीवजेयुडवु । निखिलनिर्जरुलकु; नी पेर्मि दक्कि
यल्पुनिगति गूलितक्कट! या ब्रह्म । कल्पन दप्पिपगा नेरवैति !
सचराचरमुलेन जगमुलीरेडु । सुचिर विक्रम! वीरशून्यमै तोचें;
नंदन ! नीलावु नम्मिन नन्नु । बृंदारकुलु नव्व बेंडबायदगुने ?
चेंवुलार राक्षसस्त्री विलापमुलु । विविधभंगुल नेडुविन नाकु वलसें;
नी यौवराज्यंबु नीदु लंकयुनु । नी यिष्टबंधुल नी तल्लि नन्नु
दनय ! नी पत्नुल दनयुल डिंचि । चनजालिते ? यॆंदु जनितिवीवकट!
नाडंतकुनि गॆलिचनाडवालमुन । नेडॆट्लु पोयितिवीवु तत्पुरिकि ?
बरलोककृत्यमुल् भक्तितो दनयु । डरय दंड्रिकि जेयुटदियॆल्ल बोयि
ये नीकु जेयंगनिट्टुनेडु वलसें; । नेनिकनेमंदु? नेमि चेयुदुनु ? ५७७०
रामलक्ष्मणुलुनु रवितनूजुंडु । यामिनीचरपालुडगु विभीषणुडु

था। उस महत्त्व को खोकर, हे पुत्र ! हाय, आज सौमित्र के हाथ (कैसे) मर गए ! हे अमरारि ! तुम्हारे समर-उर्वी (रणभूमि) में गिरने पर अमर और मौनी प्रसन्न हो जाएँगे। संहारघन (प्रलयकालीन मेघ) के घनस्तनित (भयंकर गर्जना) के समान तुम्हारे सिंहनाद करने पर, ॥ ५७६० ॥

—निखिल लोक भीत हो जाते हैं, समस्त निर्जरों के लिए तुम अजेय हो। अपने बडप्पन को खोकर अल्प के समान हाय ! गिरे न ! उस ब्रह्मा की कल्पना को निवारित न कर सके। हे सुचिर-विक्रमवाले ! सचराचर चौदह जग (आज) वीर-शून्य लग रहे हैं। हे नन्दन ! तुम्हारी सामर्थ्य पर विश्वास रखे मुझसे बिछुड़ना कहाँ उचित है ? इससे बृन्दारक (देवता) हँसेंगे। आज मुझे कानभर राक्षस-स्त्रियों के विलाप विविध प्रकारों से-सुनने पड़े न ! अपने यौवराज्य, अपनी लंका और अपने इष्ठ-बन्धुओं, अपनी माता तथा मुझे हे तनय ! अपनी पत्नियों, पुत्रों को छोड़कर कैसे जा सके ? हाय, कहाँ चले गए ? उस दिन अन्तक (यम) को युद्ध में जीता था। आज उसकी पुरी में कैसे गए ? सोचने पर भक्ति से तनय का पिता के लिए परलोक-कृत्य (उत्तर क्रियाएँ) करना चाहिए, वह सब छोड़कर आज मुझे तुम्हारी (उत्तर क्रियाएँ) करनी पड़ीं न ! अब मैं क्या कहूँ ? क्या करूँ ? ॥ ५७७० ॥

—रामलक्ष्मण, रवितनूज, यामनीचरपाल विभीषण और भीम-विक्रम-लीला

भीमविक्रमलील बेंपोंदु कपुलु । ना मर्ममुलु दूर नाटियुन्नार;
लट्टि हृदयशल्यंबुलो पुत्र ! नेट्टन पेरुकक नीवेंदु जनिति ?
नापालि जयमय्यु ना तेजमय्यु । ना पुण्यफलमय्यु ना भाग्यमय्यु
ना पेंपुगतियय्यु ना कीर्तियय्यु । नेपार नो पुत्र ! येंचिनवेंल्ल
नीववै युंडुदु; नीयट्टि कोंडुकु । चाव जूचिति; निंक जन्ममेमिटिकि ?
नी कष्ट-शोकाब्धि नेंडतेंगकीद । नाकु नेंय्यदि तेप नलिनाप्ततेज !
निनुगोनि रामुनि निर्जितु बोर । ननि नम्मियुंडिति; बोंलिसे;
नाशलन्नि दीरे; नकट ! येनिक । नी शोक दावाग्नि नेंरियंगजाल"
ननि यनि शोकिंचि यंदंद पोंगिलि । मनसुडिदकयु ग्रम्मरऩ मूर्छ नोंदि
५७८०

युन्न दशग्रीवु नुगुप्रभावु । नुन्नतात्मुलु मंत्रुलोय्यन देलुप
बलुरोषशोकमुल् बलिसि कन्बोमलु । पलुमरु मुडिवड बरवसंबोप्प
नेचिन किन्कमै नेदिक्कु सूचें । जूचिन दिक्कुन स्रुक्कि राक्षसलु
घनभीति बरव राक्षसलोकविभुड् । कनदुग्रदंतसंघट्टनरवमु
नतिभयंकर वृत्ति नप्पुडादिशलु । प्रतिरवंबोनरिपु बदिमुखंबुलनु

से उत्कर्षित कपियों ने मुझपर मर्मांतक बाण चलाए हैं। हे पुत्र ! ऐसे हृदयशल्यों को अनिवार्य रूप से उखाड़े बिना कहाँ चले गए ? मेरी जय, मेरा तेज, मेरा पुण्यफल, मेरा भाग्य, मेरे विकास की गति, मेरी कीर्ति हे पुत्र ! तुम्हीं हो। ये सब तुममें ही होकर (स्थित) रहते हैं। तुम जैसे पुत्र को मरते देखा है। अब यह जन्म (जीवन) किसलिए ? हे नलिनाप्त (सूर्य) -तेजवाले ! इस कष्ट-शोकाब्धि को निरन्तर पार करने के लिए मेरे लिए नौका कहाँ है ? विश्वास किए था कि तुम्हारे साथ (मिलकर) युद्ध कर राम को निर्जित कर सकूँगा। वह सब नष्ट हो गया। सभी आशाएँ नष्ट हो गईं। हाय, अब मैं इस शोक-दावाग्नि से निवृत्त नहीं हो सकूँगा।" ऐसा कह-कह शोक कर, सर्वत्र व्याकुल होकर, मन के कृशीभूत होने से फिर से मूर्च्छित हुआ। ॥ ५७८० ॥

—ऐसे उग्र प्रभाव वाले दशग्रीव को उन्नतात्मावाले मन्त्री झट होश में लाए। अधिक रोष-शोक के बढ़ने पर भौंहों में कई बार गाँठ पड़ने पर, बेबसी के बढ़ने पर, विजृंभित क्रोध से जिस दिशा में देखा, उस दिशा के राक्षस अधिक भीति से व्याकुल हो भाग उठे। तब राक्षसलोक-विभु ने, कनत् (ज्वालासम) -उग्र-दन्त-संघट्टन-रव (दाँत पीसने की ध्वनि) के अतिभयंकर-वृत्ति से तब दिशाओं में गुंजरित होने पर, दसमुखों के नेत्रद्वय से अग्निकणों के उमड़ने पर, अपने सभी मन्त्रिवरों को देखकर कहा—

गनुगवलंदग्निकणमुलु दॊरुग । दन मंत्रिवरुल नंदऱ जूचि पलिकॆ;
"विडुवनि तपमुन वेध मॆप्पिंचि । पडसिति शस्त्रास्त्रपंक्तुलु वॆक्कु;
लॆन्नडु नपजयंबॆऱुग युद्धमुल; । नॆन्नडु ने शोकमॆऱुग जित्तमुन:;
निरुपमस्थिति नॊप्पु नीलाभ्रमनग । बरमेष्टि मॆप्पिंचि पडसिन जोडु
गैकॊनि रथमॆक्कि कदलितिनेनि । नाकनायकुडैन ननु गॆल्वगलडै ?
५७९०
नलिनसंभवुचेत नाडेनुगॊन्न । विलुनम्मुलुनु मीरु वेगंब तॆंडु;
वाडिमि मीऱंग वडि गिट्टि कलन । नेडु ने गॆलुतु ना नृपुलनु गपुल"
ननि पलिक प्रळयकालाग्नियु बोलॆ । मनमुन जाज्वल्मानुडै मंडि
दिव्यवाद्यमुलतो दिक्कुलु म्रोय । नव्य बाहास्फालनंबु सेयुचुनु
ननिकि निट्लुग्रुडे यधिकरोषंबु । पॆनगॊन मऱियुनु बॆंचि यिट्लनियॆ;
"नेडु ना तम्मुल नेडु ना सुतुल । नेडु ना बंधुल नेडु ना भटुल
जंपॆनु सीतकै चनुदॆंचि कडिमि । पॆंपार रामुडभेद्युडै पॆंचि;
या यिंद्रजित्तु मायासीत जंपॆ । ना युपायंबु निरर्थकंबय्यॆ;

रावणुडु सीतनु दॆगवेय बोवुट

नॆनिक निजमुगा निप्पुड पोयि । जानकि दॆगटार्चि छलमु साधितु"

"अथक तप से वेधा (ब्रह्मा) को प्रसन्नकर कई शस्त्रास्त्र-पंक्तियों (समूह) को प्राप्त करके युद्धों में कभी अपजय को नहीं जानता। चित्त में कभी किसी शोक को नहीं जानता। परमेष्ठि (ब्रह्मा) को प्रसन्न कर प्राप्त, निरुपमस्थिति से शोभित नीलाभ्र के सम कवच ग्रहणकर, रथ पर आरूढ़ हो, चल पड़ूँ तो नाक (स्वर्ग) -नायक भी मुझे जीत सकेगा ? ।। ५७९० ।। —नलिनसम्भव से उस दिन मैंने जो धनुष-बाण प्राप्त किए थे, उन्हें आप शीघ्र लाइए। अधिक तेज से झट युद्ध में सामना कर, उन नृपों तथा कपियों को आज जीतूँगा।" (ऐसा) कह प्रलय-कालाग्नि के समान मन में जाज्ज्वल्यमान हो प्रदीप्त हो, दिव्य बाद्यों के दिशाओं को मुखरित करने पर, नव्य-बाहास्फालन करते हुए, युद्ध के लिए अतिउग्र हो, अधिक रोष के व्याप्त होने पर विजृंभित हो, यों बोला—"सीता के लिए आकर, साहस उत्कर्ष से, राम ने अभेद्य हो विजृंभित होकर, आज मेरे अनुजों, आज मेरे सुतों, आज मेरे सम्बन्धियों, आज मेरे भटों को मार डाला। उस इन्द्रजित ने मायासीता को मार डाला। वह उपाय निरर्थक हुआ।

रावण का सीता को मार डालने के लिए जाना

मैं अब सचमुच अभी जाकर, जानकी का संहार कर, (अपने) हठ

ननि हस्तमुन जंद्रहासंबु वूनि । तनरिन पदहति धरणि गंपिप ५८००
जनुचुंड वृद्धराक्षसमंत्रिवरुलु । दनरार नूहिंचि तमलोननिरि:
"दशरथात्मजुल नी दशकंधरुंडु । निशित बाणमुल निर्जिपलेडे ?
कैकोंनकीतंडु कडिमिमै सकल । लोकपालुर नाजिलो मुन्नु गेलिचे;
नोलि मरुत्तुल नुग्राहवमुन । दोलेनु; नलुवल दोम्मंड्र नोंडिचे;
नेनमंड्रु वसुवुल नेपडगिचे; । घनततो दोम्मंड्र ग्रहमुल नडचे;
देगुव बन्निद्द्रादित्युल नोंचे । बग गेल्चे रुद्रुल बदियुनोक्कंड्र;
नरुदार गंधर्वयक्षराक्षसुल । नुरगुल गरुडुल नुग्रदानवुल
नतिभीति बोंदिचे; नारसिचूड । नितनिकि नरुलन नेंतटिवारु ?
तर्मकिच्चि सति जंपदगदु" गा कनग । समवर्ति बोले ना समयंबुनंदु
लोकभयंकरालोकुडै तिविरि । नाकेशवैरि जानकि जंप गदिसे;
५८१०
नप्पुडप्पापात्मु नत्युग्रदृष्टि । कप्पुण्यवति स्रुक्कि यनद चंदमुन
नोंदिन भीतितो नुग्रग्रहंबु । मुंदरु निलिचिन मोदंबु दक्कि
पडियुन्न रोहिणि पगिदि नम्मुग्ध । पडियुंडि रावणु भावंबु जूचि

का पालन करूँगा।" (ऐसा) कह, हाथ में चन्द्रहास धारणकर, शोभित पदाघात से धरणि के कंपित होने पर, ॥ ५८०० ॥

—जाते समय वृद्ध-राक्षस-मन्त्रिवरों ने शोभा से सोचकर, अपने मन में यों कहा—"दशरथात्मजों को यह दशकंधर निशित बाणों से जीत नहीं सकता ? सकल लोकपालकों की परवाह न करके, साहस से इसने पूर्व में सबको जीता था। क्रम से मरुतों को उग्र-आहव (-युद्ध) में भगाया, नवब्रह्माओं का दमन किया, आठ वसुओं के उत्कर्ष का दमन किया, महत्ता से नौ ग्रहों का दमन किया, साहस से बारह आदित्यों को नत किया, स्पर्धा से एकादश रुद्रों को जीत लिया, अनुपम रूप से गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, उरग, गरुड़, उग्र दानव (आदि) को अतिभीत कर दिया। सोचकर देखने पर इसके लिए नर (की सामर्थ्य) ही क्या ? जानबूझकर सती को मारना नहीं चाहिए।" (ऐसा) सोचते समय, समवर्ती (यम) के समान, उस समय देखने में लोक-भयंकर बन, चाहकर, नाकेशवैरी (रावण) जानकी को मारने चल पड़ा ॥ ५८१० ॥

—तब उस पापात्मा की अत्युग्रदृष्टि से वह पुण्यवती (सीता) दुखी होकर, अनाथ की तरह, भीति को प्राप्त हो, उग्रग्रह के समक्ष खड़े होकर, मोद को खोकर पड़ी हुई रोहिणी के समान, वह मुग्धा पड़ी रही। रावण के भाव (विचार) को देख (जान) कर (उसने सोचा) —"हे दैव ! इस

“यी दुरात्मुनिचेत निटु चाववलसॆ । हा दैवमा!” यनि यतिभीति
बॊंदि
“दुरमुन निंद्रजित्तुडु सच्चुटॆऱिगि । सुरवैरि चंपवच्चुचुन्नवाडॊ ?
काक या रामलक्ष्मणुल जयिंचि । चेकॊनि ननु जंप जेरुचुन्नाडॊ ?
वीनिचे जावना विधि चॆऱ बॆट्टॆ ! । नेनेमिसेयुदु निलमीदनिक ?
नक्कटा ! दैवंब ! यतिपुण्यधनुल । बॆक्कुसंकटमुल बॆट्टते तॊंच्चि
रामाभिरामुल रामलक्ष्मणुल । नामीद पग!” नंचु नलिनायताक्षि
पलविंचि पलविंचि भावमध्यमुन । नॆलकॊन रघुरामु निजमूर्ति निलिपि
५८२०
परवशयै तूलिपडि मूर्छवोयॆ; । धरणिपै बडियुन्न धरणिज जूचि
धरणिजदॆस नलगु दशकंठु जूचि । करमु शोकिंचि राक्षसुलॆल्ल गलय
हाहानिनादंबु लर्डरिंचि यप्पु । “डोहो ! दुरंत मीयुग्रकृत्यंबु”
अनुचुंड नत्तऱि नमरारि जेरि । घनुडु सुपार्श्वुंडु घननीतिधनुडु
वॆऱवक दननीतिविभवंबु मॆऱसि । तॆऱगॊप्प ननतनि बोधिंचुचु
बलिकॆ;
“दात पुलस्त्युंडु; तंड्रि धर्मैक । नीतिज्ञुडुरुयशोनिधि विश्रवसुडु;
नीवु वेदागमनिधिवि; नी पॆंपु । भाविंपकेल दुर्भावुंडवयिति ?

दुरात्मा के हाथ यों मरना पड़ा न ।” ऐसा अति भीत होकर, “युद्ध में इन्द्रजित के मरने की बात जानकर, सुर-वैरी मारने के लिए आ रहा है ? अथवा उन रामलक्ष्मणों को जीतकर, लगकर मुझे मार डालने पहुँच रहा है ? इसके हाथ मरने के लिए क्या विधि ने मुझे बन्दी बनाया था ? पृथ्वी पर अब मैं क्या करूँ ? हाय ! दैव ! मुझपर शत्रुभाव के कारण (तुमने) अति पुण्यधनी, रामाभिराम रामलक्ष्मणों को अनेक संकटों में फँसा दिया न ?” (ऐसा) कहते नलिनायताक्षी रो-रोकर, भावमध्य (हृदय) में रघुराम की मूर्ति को सुस्थिर कर, ।। ५८२० ।।

—बेबस हो, लड़खड़ाकर, गिरकर मूर्च्छित हुई । धरणी पर पड़ी हुई धरणिजा को देखकर, धरणिजा के प्रति क्रुद्ध बने दशकंठ को देख, अधिक दुखी हो समस्त राक्षसों ने यह कहते कि ‘ओहो ! यह उग्रकृत्य दुरन्त है ।’ हाहकार किया । (ऐसा) कहते समय अमरारि के पास जाकर महान् तथा घननीतिधनवाले सुपार्श्व ने, भीत न बन, अपने नीति-वैभव से प्रकाशित होकर, ढंग से उसे बोध कराते हुए कहा—“(तुम्हारा) दादा पुलस्त्य था । (तुम्हारा) पिता धर्मैक-नीतिज्ञ तथा उरु यशोनिधि विश्रवसु था । तुम (स्वयं) वेद-आगम-निधि हो, अपने उत्कर्ष (बड़प्पन)

तगु नुत्तमस्त्रील दविलि वधिप । नगणितंबगु दोष; मटुगान वलव
दी कोपमंतयु नेंल्लि युद्धमुन । गैकोंनि रामलक्ष्मणुलपै जूपु''
मनि चेंप्पि या चंद्रहासंबु वुच्चि । कोंनि सुपार्श्वुंडु दोड्कोंनि वच्चे
मगुड; ५८३०

नंत ना दशकंठुडधिकरोषमुन । र्जितिचि विन्ननै चित्तंबुनंदु
मरपु वुट्टनि पुत्रमरणशोकमुन । मरुगुचु नास्थानमंटपंबुनकु
जनुदेंचि कोंलुवुंडि चटुलवेगमुन । तन मंत्रिबांधवततुल रप्पिचि
कोंदलमंदुचु गोंडुकुचंदंबु । मदि नुग्गडिचुक मौनत नुंडे ।

इन्द्रजित्तु भार्य सुलोचन शोकुमु

नंतःपुरंबुन नतिवलु गूडि । चिंतिपगा विनि शेषुनि पुत्रि
यैन सुलोचन यात्मेशु चावु । विनि चाल वगचुचु विवशत नोंदि
पोंलुपोंदगा बेट्टप्रोद्दुकु जेंलुलु । तेंलुपगा नोंक कोंत तेंलिवोंदि कुंदि
नानाविधंबुल नाथुनिगूंचि । याननंबदर ब्रलापिंपदोंडगेः
''हा प्राणनायक ! हा जीवितेश ! । हा प्राणनाथ ! नीवाजिलो नेंदिरि

के बारे में न सोच ऐसा दुर्भाववाले क्यों बने ? उत्तमस्त्रियों का चाहकर वध करने पर अगणित दोष होगा। अतः यह उचित नहीं है। यह सारा कोप कल युद्ध में रामलक्ष्मणों पर प्रदर्शित करो !'' ऐसा कहकर उस चन्द्रहास को लेकर, सुपार्श्व साथ लेकर (रावण को) लौटा लाया ॥५८३०॥ तब वह दशकंठ, अधिक रोष से चिन्तित हो, विषण्ण बने चित्त में, न भूल सकनेवाले पुत्र-मरण-शोक से परितप्त होते हुए, आस्थान (दरवार) मंडप में आया, सभा करके चटुलवेग से अपने मन्त्री-बांधव-ततियों को बुलाकर, व्याकुल होते हुए, पुत्र के आचरण का मन में उल्लेख करते हुए, मौन रहा।

इन्द्रजित की पत्नी सुलोचना का शोक

अन्तःपुर में स्त्रियों के मिलकर चिन्ता करते सुनकर (आदि-) शेष की पुत्री सुलोचना आत्मेश (पति) की मृत्यु (के बारे में) सुनकर, अधिक दुखी होते हुए, विवश (बेहोश) होकर, देर के बाद सखियों के होश में लाने पर, तनिक होश में आकर, क्षुब्ध हो, नाना विधियों से नाथ के बारे में प्रलाप (विलाप) करने लगी जिससे (उसका) मुख विचलित हो उठा। ''हे प्राणनायक ! हे जीवितेश ! हे प्राणनाथ ! युद्ध में तुम्हारा सामना

येपार निन्नु जयिंचेने नरुडु ? । चूपोप जालक जुलकगा जूचि
५८४०
पापपु ब्रह्म यी पट्ल निद्दरिनि । बापंग दगुने तात्पर्यंबुलेक ?
येप्पुडेक्कडिकैन नेगुचो बिलिचि । चेप्पिपोदुवु नन्नु सेममुप्पोंग;
नाकु जेप्पिन नीकु नाथ ! यी चावु । चेकूरुने शत्रुचेत नी लागु ?
मा तंड्रि नन्नु प्रेममु मीर नीकु । प्रीति रेट्टिपंग बेंड्लि गाविंचु
तरि 'नीवु जयकांक्ष दलचितिवेनि । सरवि गार्यंबुलु सतितोड देल्पि
यरिगिन नजहरादुलकजेयुडवु— । नरुलनगा नेंत नाकेशवैरि !'
यनुचु शिरोरत्नमपुडु ना चेति । कोनरंगनिच्चि नाकोक बुद्धि देल्पे;
'तनय! नी पति शत्रुतति मीद बोव । मानुगा दलपयि मणि निवाळिचि
पंपिन बगदीर्चु बगतुल नेल्ल'; । निपुगा जेप्पिन नी माम माट
मरचि यिप्पुडु नीवु मरि वैरिदिव्य । शरवह्निचे रणस्थलिनि
व्रालितिवि'' ५८५०
अनि तन प्राणंबुलात्मेशुनकुनु । मुनुकोनि मदि धारबोसि याक्षणमे
तनयुल जूचि या तरलायताक्षि । ''घनमैन शोकसागरमुन मुनिगि

कर शोभा से (एक) नर ने तुम्हें जीत लिया ? देख न सक (ईर्ष्यालु बन), हीन दृष्टि से, ।। ५८४० ।।

—पापी-ब्रह्मा को बिना मतलब के हम दोनों को इस प्रकार अलग करना चाहिए था ? कभी कहीं भी जाते थे तो प्रसन्नता के साथ कहकर जाते थे। हे नाथ ! (अबकी बार भी) मुझसे कहकर जाते तो इस प्रकार शत्रु के हाथ मरते क्या ? मेरे पिता ने प्रेम से मेरा विवाह तुम्हारे साथ करते समय कहा था 'हे नाकेशवैरी ! तुम विजय की कांक्षा रखते हो तो क्रम से कार्यों के बारे में सती (पत्नी) से कहकर जाओगे तो अज-हर आदियों के लिए भी अजेय बनोगे। नर की हस्ती-ही क्या है ?' ऐसा कहते तब (एक) शिरोरत्न शोभा से मेरे हाथ देकर, मुझे एक उपाय बताया कि 'हे तनये ! तुम्हारे पति के शत्रुतति पर जाते समय शोभा से सिर पर मणि की आरती उतारोगी तो (वह) समस्त शत्रुओं को जीत लेगा।' ऐसा मनोज्ञता से कही गई अपने ससुर की बात भूलकर, अब तुम वैरी के दिव्य-शर-वह्नि से रणस्थल में गिर गए न !" ।। ५८५० ।।

—(ऐसा) सोच प्रथमतः अपने प्राणों को मन में ही प्राणेश को समर्पित कर, उसी क्षण तनयों को देख उस तरलायताक्षी ने (कहा)—"महान् शोकसागर में डूबकर, जबकि विभीषण है, भीत होना क्यों ? वह अधिक तेजे से

भीतिलनेल ? विभीषणुंडुंड ? । नातडु मन्निचु नधिकतेजमुन:
वर्धिष्णुलै तनूभवुलार ! मीरु । वर्धिल्लुडॆप्पुडु वरगुणोन्नतिनि:
नाकिक नुंडुट न्यायंबु गादु— । प्राकटंबुग बोदु प्राणेशुकडकु"
ननि मुदमंदुचु नन्निट रोसि । मनमुन गल वांछ ममत रॆंट्टिप
नलयुचु सॊलयुचु नुसुरुसुरनुचु । ललि दूलि यजपुष्पलतिकचंदमुन
जनि दशकंठुनास्थानंबु जेरि । तन कन्नुलनु बाष्पततुलनु दॊरुग
मदिराक्षि येड्चुचु ममत रॆंट्टिप । नॊंदुगुचु मामतो नॊय्यन बलिकॆ—
"बतिवियोगंबैन पत्नि याक्षणमॆ । पतिनंटियेगुट परमधर्मंबु: ५८६०
अटुगान बतिनंटि यरुगंगवलयु— । बटुबुद्धितोड ना पतिकळेबरमु
तॆप्पिपुमिप्पुडु तीव्रंबुगानु । तप्पक मदि भटततुल बांधबुल"
ननिन ना माटल नल्ल जिंतिचि । मनुजाशनुंडु नामगुव किट्लनियॆ—
"विन्ननै याहवविमुखमध्यमुन । बन्नुगा बडियुन्न पडति! नी विभुनि
नेनु बो यडिगिन नित्तुरे वारु ? । कान नाचेतनु गादु मृगाक्षि !
नीमनसट्टुमीद— नेनेमि चॆप्प ? । भाम! नीवॆरुगनि पनियेमिकलदु ?
चॆप्पिति नाकु दोचिनविधं" बनिन । नप्पद्मलोचन यतनिकिट्लनियॆ—

(तुम्हारा) मान करेगा। हे वर्द्धिष्णु तनूभवो ! तुम सदा वर-गुणोन्नति से वर्द्धित होते रहो। मेरा अब (आगे यहाँ) रहना न्याय (समुचित) नहीं है। प्रकट रूप से प्राणेश के पास जाऊँगी।" (ऐसा) कह मुदित होते हुए, सबसे विरक्त हो, मन में (पति के प्रति) वांछा और ममता के द्विगुणित होने पर, थकते-विकल होते, परम व्याकुल होते हुए, लड़खड़ाते हुए, अजपुष्प-लतिका की तरह जाकर, दशकंठ की सभा पहुँच, अपनी आँखों से बाष्पततियों के प्रवाहित होने पर, (वह) मदिराक्षी (सुलोचना) रोती हुई, ममता के द्विगुणित होने पर, सिकुड़ती हुई भामा (अपने ससुर से) झट बोली—"पतिवियोग को प्राप्त पत्नी का उसी क्षण पति के साथ चला जाना परमधर्म है ॥ ५८६० ॥

—अतः पति के साथ (मुझे) जाना चाहिए। पटुबुद्धि से भटततियों तथा बाँधवों को भेजकर शीघ्र मेरे पति के कलेबर (शरीर) को मँगाओ।" (ऐसा) कहने पर उन बातों पर सोचकर, मनुजाशन (राक्षस रावण) ने उस नारी-से यों कहा—"हे नारी रणमुख-मध्य में (रणभूमि के मध्य) पड़े हुए तुम्हारे पति के लिए, विषण्ण बन मेरे जाकर माँगने पर, वे देंगे क्या ? अतः हे मृगाक्षी ! यह मुझसे नहीं हो सकेगा। अब तुम्हारी इच्छा। हे भामा ! मैं क्या कहूँ ? ऐसा कौन-सा काम है जो तुम नहीं जानती हो। मुझे जैसा लगा वैसा कह दिया है।" (ऐसा) कहने पर उस

"गैलासनगमु वेगमे केलनेति । फालाक्षुनकु नतिभयमु बुट्टिंचि
कडकमै मूडुलोकमुलनु गेलिच । कडिमि गलिगन महाघनुडवु नीवु
सुरनाथु गेलिचन शूरुनकिपुडु । नरुलेंतवारु ? वानरुलेंतवारु ?
५८७०

नरुललो हीन वानरुललो बडिन । गुरुसत्त्वशालि नीकोडुकु देहंबु
'तेलेनु ने' ननि धीरत्वमेडलि । यी लील नन गालहेतुवो" यनुचु
"गरमोप्पगा बाह्यकर्मंबुलकुनु । तरुणुलु पतिरहितंबैन नग्नि
सरवितो जन धर्मसरणियु गान । वेऱवक ने विन्नविंचिनमाट
नेग्गुगा गोन कानतिच्चि नन्ननुपु । दिग्गुन जनि पति देच्चुकोवलयु"
ननिनना दशकंठुडतिव वीड्कोलुप । मानिनियुनु दन मामकु म्रोक्कि,
मेलुपैन दोलकरि मेऱुपुचंदमुन । कलितमौ तन मेनि कांतिजालमुलु
तलकोनि भूनभोंतरमेल्लनिंड । जलरुहनेत्रि निश्चलबुद्धिचेत
विनुवीथि रा गपिवीरुलंदऱुनु । मनमुन नाश्चर्यमग्नुलै चूड
वेऱगोंदुचुन्न यी वेलदुल मेटि । सुरपुरिनुंडि यी सुदतीललालम
५८८०

पद्मलोचना ने उससे यों कहा—"कैलास-नग (-पर्वत) को शीघ्रता से हाथ से उठाकर, फालाक्ष (शंकर) को अति भीतकर, साहस से तीन लोकों को जीतकर, साहसवाले महान् व्यक्ति हो तुम। सुरनाथ को जीत लेनेवाले शूर के लिए अब नरों की क्या हस्ती ? वानरों की क्या हस्ती ? ॥ ५८७०॥

—नरों के मध्य, हीन-वानरों के मध्य पड़े हुए गुरु-सत्त्वशाली तुम्हारे पुत्र की देह को 'मैं नहीं ला सकता' ऐसा धीरता को खोकर (तुम्हारा) इस प्रकार कहना कालहेतु (दुर्दैव) से है।" कहकर "बड़ी शोभा से बाह्यकर्मों के लिए, पति रहित होने पर, तरुणियों का क्रम से अग्नि के साथ जाना धर्म की पद्धति है, अतः निर्भीकता से मैं जिस बात का निवेदन करूँ उसे दोष न मानकर, आदेश देकर मुझे भेजो। झट जाकर पति (के शरीर) को पा लेना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर उस दशकंठ ने नारी (सुलोचना) को बिदा किया, उस मानिनी ने भीं अपने ससुर को प्रणाम किया, प्रथम वर्षा की स्थिर बनी चपला के समान कलित अपनी देह के कांतिजाल के लगकर भू-नभ के समस्त अन्तराल में भर जाने पर, जलरुह-नेत्री, निश्चलबुद्धि से विनुवीथी (आकाश मार्ग) से चली आई। समस्त कपिवीर मन में आश्चर्यमग्न हो देखकर चकित हो रहे। 'यह नारीरत्न, सुरपुरी से यह सुदतीललामा ॥ ५८८० ॥

देवतलंपिन दिविलक्ष्मि राम । देवुनि कड केगुदेंचेनो काक !
तनयुडु मृतुडैन दशकंधरुंडु । मनमुन रोषंबु मरि यितलेक
कक्कसंबुडिगि वेगमें सीत रथमु । नेंक्किंचि मगुड नंपिंचेनो काक !
काक वेरोंक देवकांतयु निंदु । रा गारणंबेमि रयमुन ननुचु
नंगद सुग्रीवुलांजनेयुंडु । संगरस्थलिनुन्न तरुचराधिपुलु
वेरवोंप्प श्रीरामविभुडु लक्ष्मणुडु । दोरकोंनि चोद्यमंदुचुनुंडि; रपुडु
परमपावनुडैन पवमानसुतुडु । वेरवुन नाकाश वीथि नेतेंचु
भामिनीमणि जूचि परग रामुनकु । दार्मसिपक वेग दग विन्नविंचें;
"ई मानवति मदिनेंचगा देव । भाम कादिदि रामपत्नियु गादु;
मानुगा बतिलेनि मगुवये कानि । दानिकि नदिगो प्रत्यक्षंबु गलदु
५८९०
अप्पडतुकयुन्न यरदंबुमीद । गप्पिन धूळि राघव ! विलोकिंपु

सुलोचन श्रीरामुनि नुतिंचुट

मनि" चूपुचुंड नय्यब्जाक्षि वेग । चनुदेंचि यरदंबु चय्यन डिग्गि
पुत्तडिबोम्मयो पोंसगंग मोदल । क्रोंत्तगु मुत्तेमो कोंदमरायंचो

—देवताओं की भेजी यह दिविलक्ष्मी संभवतः रामदेव के पास आई हो। (अथवा) तनय के मृत होने पर दशकंधर ने संभवतः मन में रोष के तनिक भी न होने पर, कर्कशता को छोड़, शीघ्र ही सीता को रथ पर बिठाकर वापिस भेज दिया हो। नहीं तो किसी दूसरी देवकांता के शीघ्र यहाँ आने का क्या कारण है ?' (ऐसा) सोचते हुए अंगद, सुग्रीव, आंजनेय, और संगरस्थल में स्थित तरुचराधिप (और) ढंग से श्रीरामविभु, लक्ष्मण सयत्न चकित होते देखते रहे। तब परमपावन पवमान-सुत ने ढंग से आकाशवीथि से आनेवाली भामिनीमणि को देखकर, विलम्ब किए बिना झट उचितविधि से राम से निवेदन किया कि "यह मानवती मन में सोचने पर देवभामा नहीं है। यह राम की पत्नी भी नहीं है। यह तो पतिविहीन नारी ही है। उसके लिए वह प्रत्यक्ष (प्रमाण) है ।। ५८९० ।।
—उस नारी के धूलि से आच्छादित रथ को हे राघव ! देखो।"

सुलोचना का श्रीराम की स्तुति करना

ऐसा दिखाते समय वह अब्जाक्षी शीघ्र आकर रथ से झट उतरकर, मानों स्वर्णप्रतिमा हो, (अथवा) राजहंस का छौना हो, ऐसा पतली कमर के कंपित होते रहने पर, नेत्रद्वय से बाष्पकणों के झरने पर, सदा लड़खड़ाते

यनग सन्नपुनडुमसियाडुचुंड । गनुगवलनु बाष्पकणमुलु दोरुग
नंदंद तूलुचु नसुरुसुरनुचु । मंदयानंबुन मगुव राघवुनि
गदिसि सागिलि नमस्कारंबु सेसि । मुदितहस्तंबुलु मुकुळिंचि नुदुट
"रविकुलांबुधिसोम! रामाभिराम! । प्रविमलगुणधाम! परराजभीम!
जलदसन्निभगात्र! सारसनेत्र ! । विलसित चारित्र ! विततपवित्र !
कलशाब्धि गांभीर्य! कनकाद्रि धैर्य । ललितोक्तिमाधुर्य! लावण्यधुर्य!
जननाथ ! नी पादसंसेवकतन । नेनयु ना पापंबुलेल्लनु बासे" ५९००

नवि विन्नविंचुचु नरनाथुनेदुट । विनयंबुतोनुन्न वेलदि नीक्षिंचि
मानवेंद्रुनि यनुमति मीद जेरि । भानुतनूजुडापडतिकिट्लनियें
"नेलनाग! नीवेव्व? रिचटिकि निपुडु । वेलयंग वच्चिनविधमेमि नेडु?
वेलदि! नी पेरेमि? विभुडुनीकेवडु ? । पोलुपोंदनेव्वनि पुत्रिवि नीवु ?
चेप्पुमेर्पड नीदु चेय्दि" यटन्न । नप्पुडप्पडति ता नश्रुवुलोलुक
"भानुज! विनु; भोगिपति नादु तंड्रि; । येनु सुलोचन; यदिय नापेरु;
नाकु नाथुडु मेघनादु; डा पुण्य । प्राकट बहु भोग भाग्यशीलुंडु

हुए, परम विकल होते हुए, मन्दगमन से (उस) नारी ने राघव के पास जा साष्टांग नमस्कार कर, (उस) स्त्री ने ललाट पर हाथ जोड़कर (कहा)—"हे रविकुलांबुधि-सोम ! हे रामाभिराम ! हे प्रविमल गुणाधाम ! हे परराज-भीम ! हे जलद-सन्निभगात्र (वाले) ! हे सारस नेत्र (वाले) ! हे विलसित चरित्रवाले ! हे वितत-पवित्र ! हे कलशाब्धि-गांभीर्य (वाले)! हे कनकाद्रि-धैर्य! हे ललितोक्तिमाधुर्य! हे लावण्यधुर्य ! हे जननाथ ! तुम्हारी पाद-संसेवा से मेरे समस्त पाप दूर हो गए।" ॥ ५९०० ॥

ऐसा निवेदन करते हुए नरनाथ के समक्ष सविनय स्थित स्त्री को देखकर, मानवेन्द्र (राजा राम) की अनुमति पर, (उसके पास) पहुँच भानुतनूज ने उस स्त्री से यों कहा—"हे युवती ! तुम कौन हो ? अब यहाँ शोभा से आने का कारण क्या है ? हे नारी ! तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारा विभु (पति) कौन है ? शोभा से तुम किसकी पुत्री हो ? अपना विधान खुलकर बताओ ।" ऐसा कहने पर, तब उस नारी ने आँसुओं के झरने पर (कहा)—"हे भानुज ! सुनो, भोगीपति (सर्पराज) मेरा पिता है, मैं सुलोचना हूँ । यही मेरा नाम है । मेरा नाथ मेघनाद है । वह पुण्यी प्राकट-बहुभोग भाग्यशील है, अधिक बाहाटोप वाला है, अधिक तेज-

नधिक बाहाटोपु डधिकतेजुंडु । क्रथन भीकरुडु नाकप-भंजनुंडु
कडिदिशूरुडु दशकंठनंदनुडु । कडक मंदोदरी गर्भसंभवुडु''
अनि चेप्पि श्रीरामु नतिव वीक्षिंचि । मनमुन नतिशोकमग्नयै पलिके;
५९१०

''निट्टि शूरुनि राघवेंन्द्र! रणोर्वि । बट्टि चंपिति; कृपापरुलय्यु मीर
लेट्लु चंपितिरय्य इनकुलाधीश! । पुट्टुने यिट्टवंटि भूरि विक्रमुडु ?
पतिवियोगाग्निचे बडतुलु मदिनि । परितापमोंदरे पलुतेरंगुलनु ?
अेरुगवे सर्वज्ञ ! ये बति बासि । धरणि वैधव्यंबु दालपंग गलने ?
शरणार्थिरक्षक ! सदयांतरंग । परिपूर्णहृदय! शोभनकृपापांग !
मरुगुसोच्चिति गान मन्निचुनट्टि । बिरुदु नी बिरुदु रूपिप ना विभुनि
मरल ब्राणमुलिच्चि मन्निचुनाकु । पुरुषभिक्षमु वेट्टि भुवि नन्नु निलुपु''
मनुचु ब्रार्थिचिन नवनीश्वरुंडु । घनदयापरमूर्ति गान नय्यिंति
पुरुषुनि ब्रदिकिंप बुद्धि नूहिंचु । टेरिगि मारुतियुनु मरि विन्नविंचे;
''निदि येमि राघव! येरुगरे मीरु? । वदलक या ब्रह्म वरमु तप्पिप
५९२०

वाला है, क्रथन (युद्ध) -भीकर है, नाकप (इन्द्र) का भजन करनेवाला है, साहसी शूर है, दशकंठ का नन्दन है, साहस से मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न है।'' ऐसा कह वह स्त्री श्रीराम को देखकर, मन में अतिशोकमग्न हो बोली— ।। ५९१० ।।

—''हे राघवेन्द्र ! ऐसे शूर को पकड़ रणभूमि में मार डाला । हे इनकुलाधीश ! कृपालु होकर भी आपने कैसे मार डाला ? क्या ऐसा भूरिविक्रमवाला उत्पन्न हो सकता है ? पतिवियोगाग्नि से स्त्रियाँ मन में अनेक प्रकार से परितप्त नहीं होंगी ? हे सर्वज्ञ ! (इसे) नहीं जानते हो ? मैं पति से बिछुड़कर इस धरणी पर वैधव्य को सहन कर सकूँगी ? हे शरणार्थिरक्षक ! हे सदयांतरंग (वाले)! हे परिपूर्णहृदय ! हे शोभनकृपापांग ! शरण में आई हूँ । (शरणागत की) मान करने की बिरुद है । अतः ऐसे अपने बिरुद को सार्थक कर, मेरे विभु को पुनः प्राण देकर मान करो । मुझे पुरुष-भिक्षा प्रदान कर, मुझे भुवि पर (जीवित) रखो ।'' ऐसा प्रार्थना करने पर अवनीश्वर (राज राम) के महा-दयापर-मूर्ति होने के कारण उस स्त्री के पुरुष को जीवित करने की मन में सोचते जानकर, मारुति ने फिर निवेदन किया—''यह क्या राघव ! आप नहीं जानते क्या ? अनिवार्य उस ब्रह्मा के वर को निरर्थक करना ।। ५९२० ।।

नीतिये मीरु मानिनिकिनि जेप्प ?। धातनु मन्निपदगुनु भूनाथ !''
यनि मारुतात्मजुडाडु वाक्यमुलु । अनविनि तलपोसि यपुडिट्टुलनियॆ
''जलजाक्षि! यिकोक्क जन्मंबुनंदु । कलसेदु भुवि बेट्टकालंबुदाक
पेक्कु संपदलचे बेंपु सोंपार । नक्कजंबुग भोगमनुभवंबोंदि,
या मीद वैकुंठमंदु निर्वुरुनु । गामितारोन्नति गांतुरु गाक''
यनिन संतोषिंचि यतिदयापरुनि । विनयपूर्वकमुगा विनुतिप दोडगॆ—
''सदयांतरंग ! यो शरनिधिभंग । सदमलगुणधीर! साधु सांगत्य !
परग ना पतिकळेबरमु देप्पिचु । पुरमुन कतिवेग बोवंगवलयु''
ननवुडु सुग्रीवुडपुडिट्टुलनियॆ । ''वनजलोचन ! पतिव्रतवौदुवेनि
नी गब्बिपतितोड नी चंदमेल्ल । तग बल्कुमिप्पुडु तडयक'' यनिन
५९३०
गडुवेगमुन बोयि कदनरंगमुनु । दडयक चोच्चि या तरलायताक्षि
पडियुन्न तल जूचि पलुतेरंगुलनु । अडलुचु बति जेर नरिगियु दुःख
जलधिलो मुनिगि मूर्छयुबोंदि तेलिसि । पलुविधंबुल बडि प्राणेशुमीद
नेलुगेत्ति 'हा' यनि येड्चि धैर्यंबु । निलिपि सुस्थिरमुन निलिचि
या लेम

—नीति है क्या, जो आप मानिनी को कहने (वर देने) जा रहे हैं ? हे भूनाथ ! धाता (ब्रह्मा) का मान करना चाहिए।'' ऐसा मारुतात्मज के वाक्य सुनकर, सोचकर तब ऐसा कहा—''हे जलजाक्षी ! और एक जन्म में (अपने पति से) मिलोगी, भुवि पर चिरकाल तक, अनेक सम्पदाओं से उत्कर्ष को पाकर, आश्चर्यप्रद रूप से भोगों का उपभोग कर, उसके बाद वैकुण्ठ में (तुम) दोनों (अपने) कामितों (इच्छाओं) की पूर्ति पूरी तरह करोगी।'' (ऐसा) कहने पर, प्रसन्न होकर, (उस) अति दयालु (राम) की विनयपूर्वक विनुति (स्तुति) करने लगी—''हे सदयांतरंग (वाले) ! हे शरनिधि का भंग (करनेवाले) ! हे सदमलगुणधीर ! हे साधुसांगत्ये ! औचित्य से मेरे पति का कलेबर मंगाओ। अतिवेग से पुर में जाना है।'' ऐसा कहने पर सुग्रीव ने तब यों कहा—''हे वनजलोचने ! यदि पतिव्रता हो तो अब अविम्ब अपने गर्वीपति से यह सारा विधान उचित बिधि से कहो।'' (ऐसा) कहने पर ॥ ५९३० ॥

—अतिवेग से जाकर, अविलम्ब रणभूमि में प्रवेशकर, वह तरलायताक्षी कट गिरे सिर को देख, अनेक प्रकार से दुखी होती हुई, पति के पास पहुँचकर, दुखजलधि में डूबकर, मूर्च्छित हो, होश में आकर अनेक प्रकार से गिरकर, प्राणेश पर गिरकर, उच्चस्वर से 'हाय' कह रोकर, धीरज धारण कर,

पलिकॆं सत्यप्रभाभासितयगुचु । "वलनॊप्पु ना मनोवाक्कायकर्म
मुलयंदु बतिभक्ति मॊनसितिनेनि । सललित धर्मसंचारंबुनंदु
पतियॆ दैवंबनि भावंबुलोन । सततंबु व्रतमुगा सलुपुदुनेनि
चॆलगि न विभुनकु जीवंबु वच्चि । यलर नातो माटलाडुगा" कनुचु
अनि तमयात्म मर्यादलु कॊंत । यनिन गन्विच्चि दशास्यनंदनुडु
"नॆलत! चंपिनवाडु नी तंड्रि गाडॆ । तलपोय नॊरुलकु तरमॆ नन्गॆल्व ? ५९४०
निलिचि युद्धमु सेय निमिषमंदैन । बलुचिंतपड नीकु पनिलेदु विनुमु;
तनदु ऋणानुबंधमु गूडियुन्न । नॆनसियुंदुरु नरुलितुल गूडि;
वॆलयग योग वियोगमुल् ब्रह्म । वॆलयंग गल्पिचॆ वॆलदि! जीवुलकु
इटुगान मरि कालहेतुवु गान । कुटिलकुंतल ! यिट्लु कूलिति धरणि;
जनु" मनि कन्नुलु च्रय्यन मूय । गनि मदिलो जिंत गडलुकॊनंग
नप्पुडु बहुदु:खयै कॊंतसेपु । अप्पॊलतंदुंडकतिवेग वच्चि
श्रीरामविभुनकु जेतुलु मॊगिचि । या राम विनुतिचॆं नतिमोदमुननु;
नप्पुडु रघुरामु डंगदु बिलिचि । "यिप्पडुतुकपति निप्पिपु" मनिन

सुस्थिरता से खड़े होकर, उस स्त्री ने सत्यप्रभा-भासित होते हुए कहा—"शोभायमान अपने मनोवाक्-काय-कर्मों में पतिभक्ति से विलसित होऊं, सललित धर्म-आचरण में, मन में, पति को ही दैव (भगबान) मानकर, सतत व्रत करती रही होऊं तो उल्लसित हो, मेरा विभु जीवित होकर, मनोज्ञता से मेरे साथ बातें करेगा।" ऐसा कह अपनी आत्म-मर्यादाओं (आंतरंगिक विषयों) को कुछ-कुछ कहने पर दशास्यनन्दन ने आँख खोलकर (कहा), "हे युवती ! (जिसने मुझे) मारा है वह तुम्हारा पिता नहीं है क्या ? सोचने पर दूसरे मुझे जीत सकेंगे क्या ? ॥ ५९४० ॥

—निमिष भर भी खड़े रहकर युद्ध कर सकेंगे? अधिक चिन्ता करने की तुम्हें आवश्यकता नहीं है। सुनो। अपने ऋणानुबंध के कारण नर स्त्रियों से मिले रहते हैं। हे स्त्री ! ब्रह्मा ने जीवों के लिए योग-वियोग शोभा से कल्पित किए हैं। यह ऐसा है अत: काल के कारण हे कुटिलकुंतले ! इस प्रकार धरणी पर गिर पड़ा। जाओ" कह झट आँखें बन्द कर लीं। (तो उसे) देख मन में चिन्ता के स्थिर होने पर, तब बहुत दुखी होकर, थोड़ी देर के बाद वह स्त्री वहाँ रहना न चाहकर, अतिवेग से आकर, श्रीरामविभु को हाथ जोड़कर, उस रामा ने अतिमोद से विनुति की। तब रघुराम ने अंगद को बुलाकर कहा 'इस स्त्री के पति को दिला दो।'

तरमिडि या रामधरणीशुनाज्ञ । तलनिडि या यिंति धवुकळेबरमु
निच्चिन युरमुपै निडि राघवुनकु । नच्चपुभक्तितो नतिव वीड्कॊलुप
५९५०
नतिवेगमुन पुरि कप्पुडे पोयि । यतिव मंदिरमुन कप्पुडॆपोक
वामाक्षि पतिकळेबरमुंचदगिन । भूमिनि निल्पि कापुंडगा जेसि
यंतःपुरंबुन कट्टु चेर नरिगि । चिंतिंचि तनमदि जिंतिंचि मऱियु
दनपुत्रुलनु ब्रेम दग जेरदीसि । कनुगवलनु बाष्पकणमुलु दॊरुग
शिरमु मूर्कॊनि प्रेम जॆक्किलि नॊक्कि । करमर्थितो दन कौगिट जेर्चि
"सुतुलार ! मी मुद्दु चूडंग नाकु । हितवु मीऱग दैवमिय्यकपोयॆ;
महिमीदनुंड धर्ममुगादु तनकु; । सहगमनंबु निश्चयमुगा गूर्तु;
निक्कडनुंडुट यिदि बुद्धि कादु । तक्कक पॊंडु पाताळंबुनकुनु:
स्थिरबुद्धि मीरादिशेषुनिंयिंट । वॆऱवकुंडु" डटंचु वेगंबॆ पंपि,
कडुवेगमुन दशकंठु सन्निधिकि । गडगड वडकुचु गमलाक्षि पोयि
५९६०
विन्ननै वदनारविंदंबु वांचि । कन्नीरु विडिचि गद्गदकंठ यगुचु
गरमुलु मॊगिचि यग्गपुभक्तितोड । बुरपुर बॊक्कुचु बॊलति मामकुनु

क्रम से उस राम-धरणीश की आज्ञा को सिर पर धारणर, उस स्त्री के पति के कलेवर को दिया। देने पर उसे छाती पर रख, स्वच्छ भक्ति से उस स्त्री ने राघव से बिदा ली ॥ ५९५० ॥

—अतिवेग से पुरी को तभी जाकर, (वह) स्त्री तभी (अपने) मन्दिर (महल) में न जाकर, वामाक्षी (सुलोचना) ने पति-कलेबर को युक्त भूमि पर रख, पहरा रखवाया। फिर अंतःपुर में जाकर सोचकर, अपने मन में (पुनः) सोचकर, फिर अपने पुत्रों को प्रेम से निकट लेकर, नेत्रद्वय से वाष्पकणों के झरने पर, सिर सूँघकर, प्रेम से गाल दबाकर, अधिक इच्छा से आलिंगित कर (कहा)—"पुत्रो ! आप (लोगों) के लाड़-प्यार देखने का अवसर दैव न दे पाया। महि पर रहना मेरे लिए धर्म (-संगत) नहीं है। निश्चय ही सहगमन करूँगी। यहाँ रहना यह बुद्धि (की बात) नहीं है। निश्चय ही पाताल को जाइए। स्थिर बुद्धि से आप (लोग) आदिशेष के घर, बिना भीत हुए रह जाइए।" ऐसा कहते (उन्हें) शीघ्र भेज, अतिवेग से दशकंठ के समक्ष, थर-थर काँपती हुई कमलाक्षी गई ॥ ५९६० ॥

—विषण्ण हो, वदनारविंद को नतकर, आँसू बहा, गद्गद कण्ठ से, हाथ जोड़, अधिक भक्ति से, अनारत बिकल हो, स्त्री (सुलोचना) ने ससुर से

बोयिन वृत्तांतमुनु विन्नविंचि । कायमु दॆच्चिन क्रममॆऱिंगिंचि
“रामचंद्रुनि दयारसमु, लक्ष्मणुनि । प्रेमातिशयमु, विभीषणु कूर्मि,
कपिकुंजरुल पराक्रममु, नामहिम । विपरीत” मनि चॆप्प विनि रावणुंडु
विन्ननै मोमुन वॆडुक लेक । तिन्ननि स्वरमुन दॆलिसि तॆलियकयॆ
यायिंति तॆगुवकु नायिंति तॆलिवि । कायिंति समबुद्धि का महामहिम
कायिंति पतिभक्ति कायिंति वेग । गायमु दॆच्चिन क्रमशक्तियुक्ति
केमन जालक ये युत्तरंबु । कोमलिकीयक कौतुकुचुनुन्न
गनि सुलोचन “दैवकारणंबुनकु । मनमुन जिंतिचि मऱियेल यिंक ?
५९७०

नाकानतीवय्य ! नाकेशवैरि ! । येकचित्तंबुन नेगॆद निंक”
ननग व्याकुलचित्तुडै रावणुंडु । तनदु कोडलिमोमु तप्पक चूचि
या यिंति तॆगुवयु नायिंति तॆलिवि । पायक यिंक निल्व बट्टरादनुचु
“नेमि चॆप्पुदु नीकु निंदीवराक्षि! । नीमदि पूनिक नी तॆऱंगेदियॊ ?
प्रियु सुताग्रजु जंपि भीतुलचेत । भयदु:खवार्धिलो बडियुन्नवाड—
नाकेमि तोच्चदु; नाति! यीमीद । नीकु दोचिन जाड नीवेगु” मनिन

(अपने राम के पास) जाने का वृत्तान्त निवेदित कर, काया को लाने के क्रम के बारे में बताकर “रामचन्द्र का दयारस, लक्ष्मण का प्रेमातिशय, विभीषण की ममता, कपिकुंजरों का पराक्रम, वह महिमा विलक्षण है” ऐसा कहने पर, सुनकर रावण विषण्ण बने मुखपर बिना उत्साह के, स्पष्ट स्वर में, जानकर या अनजाने में उस स्त्री के साहस, उस स्त्री की समबुद्धि, उस महामहिमा का, उस स्त्री की पतिभक्ति, उस स्त्री की शीघ्रता, काया को लाने में (उसकी) क्रमशक्ति-युक्ति का कोई उत्तर उस कोमली को न दे सक, (रावण) हकलाता रहा। उसे देख सुलोचना ने (कहा) —“अब दैव कारण के लिए अधिक चिन्ता करना क्यों ? ।। ५९७० ।।

—हे नाकेशवैरी ! मुझे आज्ञा दे दो। अब एकाग्रचित्त से जाऊँगी।” (ऐसा) कहने पर व्याकुल चित्त (वाला) हो रावण ने अपनी बहू के मुख को अवश्य देख, उस स्त्री के साहस और उस स्त्री की बुद्धि के बारे में सोच और यह कह कि अब इसे रोका नहीं जा सकता, (कहा) —“हे इन्दीवराक्षी ! तुम से क्या कहूँ ? पता नहीं, तुम्हारे मन का प्रयत्न, तुम्हारा विधान क्या है ? प्रिय सुताग्रज को मरवाकर, भीत हो, भय-दुख-वार्धि में पड़ा हुआ हूँ। मुझे कुछ भी नहीं सूझ रहा है। हे नारी ! अब आगे जैसा तुम्हें सूझे उस मार्ग से जाओ।” (ऐसा) कहने पर—

सुलोचन सहगमनमु सेयुट

तरलाक्षि म्रोक्कि संतसमंदि मदिलि । "गरसोप्प दनकु भाग्यमु गल्गे"
ननुचु
गृहमुनकेगि कोकिलवाणि तनदु । सहवासुलौ पेक्कु सतुलु गोल्वंग
दशकंठुनानति दगु बांधवुलनु । दशदिशल् निंड मृदंग निस्साण
पटह भेरि शंख पटुकाहळादि । चटुलनादमुलु विच्चलविडि म्रोय
५९८०
सतत निश्चलकृतस्नानयै यपुडु । नतिवेगमुननु गार्यार्थियै यचट
सिरि पट्टुपुट्टंबु जेलुवोंदगट्टि । सरसत रत्नभूषणमुलु बेट्टि
पुव्वुलदंडलु बोलुपोंद वेसि । यव्वारिगा जुट्टि याणिमुत्तेमुल
सूचकंबोनरिंचि सुंदरि नोसल । ब्राचुर्यगंधलेपनमु गाविंचि
तिरमोप्पगा निंद्रजित्तु देहंबु । गरमोप्पगा नलंकारंबोनर्चि
मंचिवस्त्रंबुलु महितभूषणमु । लंचित श्रृंगार मलवड जेसि
वरविमानंबुपै वरु देच्चिपेट्टि । वर वाद्यतूर्य रावंबुलु सेलग
त्रेताग्नुलुनु गोंचु दिरमुगा दैत्यु । लाततंबुग वेंट नरुगुदेरंग
वेनुकोनि वेदोक्त विधिपूर्वकमुग । मोनसि युत्तरभागमुन जिति पेर्चि

सुलोचना का सहगमन करना

—तरलाक्षी ने प्रणामकर, मन में प्रसन्न हो, यह सोच कि 'अधिक शोभा से अपने को (पति के साथ जाने का) सौभाग्य प्राप्त हुआ', गृह जाकर, (वह) कोकिलवाणी अपने सहवासी अनेक सखियों के सेवाएँ करने पर, दशकंठ की आनति पर उचित बाँधवों को (साथ लेकर), मृदंग-निस्साण-पटह-भेरी-शंख, पटह-काहल-आदियों के चटुल-नादों के विश्रृंखलता से मुखरित होकर, दश दिशाओं में फैलने पर, ॥ ५९८० ॥

—तब सतत निश्चल कृतस्नाना हो, अतिवेग से कार्यार्थी हो, वहाँ श्रीयुक्त कौशेयवस्त्र को सुन्दरता से धारणकर, सरसता से रत्नभूषण धारणकर, पुष्पमालाएं शोभा से धारणकर; अपार श्रेष्ठ मोतियों को गूँथकर धारणकर, सुन्दरी ने ललाट पर प्रचुरता से गन्धलेपन कर, स्थिरता से इन्द्रजित की देह को मनोज्ञता से अलंकृत कर, श्रेष्ठ वस्त्र, महित भूषणों से अधिक अलंकार कर, वरविमान पर वर (इन्द्रजित) को लाकर रख, वर वाद्य-तूर्य-रवों के विवर्धित होने पर, त्रेताग्नियों को लेकर स्थिरता से दैत्यों के आतत रूप से चलने पर, (उनका) अनुगमन करती हुई, वेदोक्त विधि-पूर्वक,

यागतलैन मुत्तैदुलकपुडु । बागैन पसिडि शूर्पमुलु दानमुल ५९९०
निच्चि वस्त्रंबुलनेकंबुलोसगि । यच्चपु भक्तितो नाचितिमीद
बरग ब्रवेशिंचि प्राणेशुनुरमु । करमर्थितो दन कौगिट जेर्चि
यनलंबु संधिंप नार्यिति मेनु । पनिगोनि पतिसमर्पणमुगा जेसि
सकल देवतलुनु सन्नुतुल् सेय । ब्रकटंबुगा दन पतितोड गूडि
देवविमानंबु देरुगोप्प नेक्कि । देवताकोटिलो देजरिल्लुचुनु
गडुवेड्क बुण्यलोकंबुन जेरि । पडति युंडेनु दन पतितोड गूडि;

रावणुडु युद्धमुनकु वडलुट

यंतट रावणुंडधिकरोषमुन । नंतयु मूलबलाळि रप्पिंचि
च्रलमुनु बलमनु समरनैपुणियु । गल सैनिकुलनेल्ल गलय नीक्षिंचि
"कपुलनु रामलक्ष्णुल मीरेगि । नेपमार निर्जिचि नेरि बगदीर्चि
रंडु; पों" डनवुडु रभसंबुतोड । नोंडोरु गडचुचु नुद्दंडवृत्ति ६०००
सामजघोटक स्यंदन सुभट । सामग्रितो युद्धसन्नद्धुलगुचु
वज्रसमानेक वरसाधनमुलु । वज्रांगुलादिगा वलयु वर्ममुलु

सप्रयत्न उत्तरभाग में चिता की व्यवस्था कराई। (उस समय) आगत सुहागिनों को तब श्रेष्ठ स्वर्ण-सूपों का दान ॥ ५९९० ॥

—देकर, अनेक वस्त्र देकर, अकृत्रिम भक्ति से, उस चिता पर शोभा से प्रवेशकर प्राणेश के उर को अधिक इच्छा से अपने आलिंगन में लेकर, अनल का संधान करने पर, उस स्त्री ने चाहकर (अपने) शरीर को पति को समर्पित कर दिया। सकल देवताओं की स्तुतियाँ करने पर, प्रकट रूप से अपने पति के साथ ढंग से देव विमान पर आरूढ़ होकर, देवताकोटि में प्रकाशित होते हुए, अति उत्साह से पुण्यलोक पहुँच अपने पति के, साथ वह स्त्री रही।

रावण का युद्ध के लिए निकल पड़ना

तब रावण ने अधिक रोष से समस्त मूलबल-समूह को बुलाकर, हठ (दृढ़ता), बल तथा समर-नैपुण्य से युक्त सैनिकों को निहारकर (कहा) —"कपियों को, रामलक्ष्मणों को तुम लोग जाकर, दोष का उपशमन हो ऐसा निर्जित कर, प्रतिशोध लेकर आओ। जाओ" ऐसा कहने पर वे सरभस, एक दूसरे से बढ़ते हुए, उद्दंड-वृत्ति से ॥ ६००० ॥

—सामज (हाथी), घोटक, स्यंदन, सुभट, सामग्री से युद्ध-सन्नद्ध होते हुए, वज्रसम अनेक-वर-साधन वज्रांग आदि आवश्यक वर्म (कवच), अधिक

गरमौप्पगा भयंकरलील मेन । धरियिंचि मिंचि युद्धतुलयि पेंचि
करिघटाघींकार घंटिकानेक । तुरगोग्र हेषित दुंदुभिशंख
पटहढमामिका पणवादि वाद्य । पटुरभस ध्वज पट पटात्कार
रथनेमि शिंजिनीराव संकुलमु । मथितार्णव ध्वनि माड्कि घूर्णिल्ल
बलुधूळि जलराशिपट्टुगप्पंपु । गलनु सेयग नेगुकरणि बेल्लेगय
भूकंपमेसग नार्पुलुमिन्नुमुट्ट । भीकरगति नेचि पेंडबोब्बलिड्चु
बिकमुल् जंकेनल् पृथुतर घोर । हुंकारमुलुनु नोंडोरुल पंतमुलु
नंकिंचु नेलुगुलु नार्पुलु सेलग । नंकितमणिकुंडलानेकहार ६०१०
कंकण कोटीरकांतुलु निगुड लंकेशु । सैनिकुल् लंकवेल्वडिरि
घनसत्त्वमुल बेर्चु कपिकुलांबोधि । गनुगोनि बेगडोंदगा नुत्सहिंचि
कडकतो नपुडु लंका वार्धि वेडलु । बडबाग्निकोट्टुल भंगि शोभिल्लि;
यप्पुडु कपिवीरुलार्पुलु निगुड । नुप्पोंगि चेलगुचु नुडुपथंबविय
ग्रुंगि दिग्गजमुलु कुदिकिलबडग । निंगिकि लंघिंचि नेलकु दाटि
ब्रह्मांडमगलंग बाहुवुल् सरचि । ब्रह्मादि दिविजुलु परिकिंचि चूड

शोभा से, भयंकर विधान से शरीर पर धारणकर, बढ़-बढ़कर, उद्धत हो विजृंभित होकर, करिघटाओं के घींकार, अनेक घंटिकाओं का रव, उग्र तुरगों के हेषित, दुन्दुभि, शंख, पटह, ढमामिका, पणव आदि वाद्यों की ध्वनियाँ, पटु-रभस से युक्त ध्वजों के पटपट की आवाजें, रथनेमी तथा शिंजनी-रावों से संकुल बन, मथित-आर्णव की ध्वनि के समान घूर्णित होने पर, अधिक धूलि के युद्ध भूमि को जलराशि के समान करने के लिए खूब उड़ने पर, भू को (पृथ्वी) कंपित करते हुए, लम्बी सांसों के आकाश को स्पर्श कर लेने पर, भीकर गति से विजृंभित हो, सिंहनाद करते हुए, गर्वोक्तियाँ, धमकियाँ, पृथुतर घोर हुँकार, एक दूसरे से स्पर्धाएँ, चीख-पुकार, गर्जनाएँ (आदि) के व्याप्त होने पर, धारण किए मणिकुंडल, अनेक हार, ।। ६०१० ।।

—कंकण, कोटीर की कांतियों के फैलने पर, लंकेश के सैनिक लंका से निकल पड़े। घनसत्त्व से विजृंभित कपिकुल-अंबोधि को देख, भीत करने के लिए उत्साहित हो, साहस से लंकावार्धि से निकल पड़नेवाली बड़बाग्नि-समूह के समान तब (वे) शोभित हुए। तब कपिवीरों ने सिंहनादों के फैलने पर, उमड़कर, विजृंभित होते हुए, उडुपथ (आकाश) के फट जाने पर, दबकर दिग्गजों के सिर उठाए बैठ जाने पर, आकाश को लांघकर, जमीन पर कूदकर, बाहुओं का आस्फालन कर जिससे ब्रह्माण्ड फट जाए, ब्रह्मादि दिविजों के निहारने पर,

मूलबल युद्धमु

गाटुककोंडलगति दनरारु । मेटिदैत्युल जूचि मिगिलिन कडक
गोंडलु दरुवुलु गोटानुकोट्लु । गंडशैलंबुलु गडुवडि बैऱिकि
कौनि वच्चि ताकिरि क्रूरुलै; यंत । ननिलोन रघुरामुनस्त्रवैचित्रि
गनुगोनु वेडुक गमल बांधवुडु । जनुदेंचेनन बूर्वशैलाग्रमैक्कें; ६०२०
वननिधि वननिधि वडि दाकुनट्लु । दनुजबलम्मुनु दरुचरबलमु
नोंडोंटि दलपडि युग्रत मैऱय । मैंडुगा गपिसेन मिगुलंग जूचि
यरदमुल् वऱपुचु हरुल दोलुचुनु । गरुल डीकोलुपुचु गविसि राक्षसुलु
मुनुमिडि नोंप्पिप, मौक्कलंबुनु । वनचरुल् दरुलेति वैवंग नपुडु
वाटुल व्रेटुल वडि नंदुनिदु । बोटुल नेटुल बौरिं नंदुनिदु
गरवालमुल भयंकर वालमुलनु । गरदंडमुल गदाघनदंडमुलनु
बरशुल बरिघल बट्टिसंबुलनु । गिरुलनु दरुलनु गिरिश्रृंगमुलनु
दरुचरुल् वैवंग दनुजुलु वैव । धरणिपै शोणितधारलु दौरुग
गोंडलु वालयंत्रमुल । गोनि मीद वैव नाकोंडल नडुम
दुत्तुमुरै नेल दौरुग जक्कंबु । लैत्ति व्रेसियु गदलैत्ति मोदियुनु ६०३०

मूलबल का युद्ध

काजल के पर्वतों के समान शोभायमान श्रेष्ठ दैत्यों को देखकर, अधिक साहस से पर्वत, तरु, करोड़ों के करोड़ गंडशैल अतिशीघ्रता से उखाड़ लाकर, क्रूर बन (दैत्यों का) सामना किया। इतने में रघुराम के अस्त्र-वैचित्र्य को देखने के उत्साह से कमल-बांधव आकर पूर्वशैलाग्र पर आरूढ़ हुए (सूर्योदय हुआ) ॥ ६०२० ॥

मानों वननिधि (समुद्र) वननिधि से टकरा रहा हो, ऐसा दनुज सेना और तरुचरसेना एक दूसरे से जूझकर उग्रता से विलसित हुईं। कपिसेना के अधिक बढ़ने पर, रथ चलाते हुए, अश्व चलाते हुए, करियों को टकराते हुए, टूट पड़कर राक्षसों ने प्रथमतः (कपियों को) पीडित किया। (तब) निर्ममता से वनचरों ने वृक्ष उठाकर फेंके। सर्वत्र मार-पीट के शिकार बन सर्वत्र युद्ध के प्रहारों के क्रम से करवाल और भयंकर-वाल, करदंड और गदाघनदंड, परशुओं, परिघाओं, पट्टिसों से और गिरियों, तरुओं, गिरिश्रृंगों को वनचरों और दनुजों ने (एक दूसरे पर) फेंके। (फेंकने पर) धरणी पर शोणित की धाराएं प्रवाहित होने पर, वनचरों के पर्वत तथा वालयन्त्र ले ऊपर फेंकने पर, उन पर्वतों के बीच चूर-चूर हो (दनुज) जमीन पर गिर पड़े तो (कुछ दनुजों ने) चक्र उठा फेंककर तथा गदाएँ उठाकर मारकर, ॥ ६०३० ॥

सरि बौरिरौंडौरुल् ब्रलमुन गिट्टि । सुरलद्भुतंबंदि चूडंग; नपुडु
करुलनु हरुलनु घनरथंबुलनु । सरि दोलि कपुल राक्षसुलु नौप्पिप
वनचरेश्वरुडुनु वालिनंदनुडु । ननिलजुंडुनु नीलुडादिगा गलुगु
नगचर प्रमुखुलु नधिककरोषमुन । नगपादपमुल वानलु वेंस गुरिय
बरियलै पडियैंडु बहुरथंबुलुनु । गरमुग्रगति गूलु करिसमूहमुलु
नड्रिमुड्रि गैंडयु वाहनमुलु नेल । कौड्रगु दानुवुलुनै युंडंग गिनिस
रथरथ्यवेगंबु रथिकुलग्गिप । रथमुलु वड्रपि सारथुलु बिट्टार्वं
रथमुलु दम मनोरथमुलकरणि । बृथिवीतलंबैल्ल बैल्लुगा नद्रुव
गविसिन गडनौगल् करमुल बट्टि । यवलील विविकैंति यवनिपै वैचि
तुरगमुल् दोलिन दौलगक कपुलु । तुरगंबुतो नैत्ति तुरगंबु व्रेसि
६०४०
करुल डीकौलिपिन गरुलपै गवसि । करि गरि दाटिंचि गमुलकु नुड्रिकि
डाकाल नौक्कनि डाकेल नौकनि । नाकेल नौक्कनि नाकाल नौकनि
गुदिचि रादिगिचियु गूलदन्नियुनु । नदरंटनेसियु नंट द्रौक्कियुनु
नदिमि नौचियु वीक नदर व्रेसियुनु । नर्दलिचि दिविकैत्ति यवनि
वैचियुनु

—समान रूप से जूझकर, हठ से एक दूसरे का सामना किया, जिसे चकित हो सुरों ने देखा। तब करियों, हरियों, महारथों को ठीक से चलाकर कपियों को राक्षसों ने पीडित किया। (तब) वनचरेश्वर और वालिनन्दन, अनिलज और नील आदि नगचर-प्रमुखों ने अधिक रोष से नग (पर्वत), पादपों की झट वर्षा की तो टूक-टूक हो गिरनेवाले बहुल रथों, अति उग्रगति से गिर-पड़नेवाले करिसमूहों, शीघ्रगति से मरनेवाले वाहनों (अश्वों) तथा ज़मीन पर गिरनेवाले दानवों से (रणभूमि के) युक्त होने पर, क्रुद्ध हो रथ और रथ्यवेगों को रथिकों के तीव्र करने पर, रथ चलाकर, सारथियों के अधिक सिंहनाद करने पर, रथों को अपने मनोरथों के समान, समस्त पृथ्वीतल अधिक फट जाए, ऐसा टूट पड़े। चरणों को हाथों से पकड़कर अनायास आकाश पर उठाकर ज़मीन पर पटक देकर, तुरंगों को चलाने पर, न हटकर कपि तुरंग को उठाकर तुरंग पर दे मारकर, ॥ ६०४० ॥

—करियों से टकराने पर करियों पर टूटकर, करि को करि से टकराकर, (राक्षस) समूह पर कूद पड़कर, बाएँ पैर से एक को, बाएँ हाथ से एक को, उस हाथ से एक को, इस पैर से एक को, दबाकर, खींचकर, लात मार गिराकर, मर्मांतक प्रहार कर, कुचलकर, दबा झुकाकर, साहस छूट जाए ऐसा चपत मारकर, झकझोरकर आकाश में उठाकर, अवनि पर पटककर,

बॆक्कुविधंबुल बॆंचि राक्षसुल । निक्कडक्कड सेयुनॆड बॆच्चु पॆरिगि
तुरगरिंखोद्धूतधूळि गप्पुटयु । दरुचराधिपुलुनु दानवाधिपुलु
नरुदैन या निबिडांधकारमुन । गरवालरोचुलु गंदुवल् सूप
वीरु वारुनु बोर वॆडलिन रक्त । धारामरीचुलु दऱ्चुगा गविसि
बलु रेणुवनु तमःपटलंबु नडप । ज्रलमॆक्कि कय्यंबु संदडियैन
गुंजर रथकूल घोटकमकर । पुंजध्वजानेक भूरुह सुभट ६०५०
करकांड कल्लोल खड्गपाठीन । करिकरोरगखेटकच्छपनिकर
विकलभूषणरत्न विसरविकीर्ण । शकलसैकत केशजाल शैवाल
जनित चामर फेनचयरक्तनदुलु । वनचरुल् दनुजुलु वडिदाटि दाटि
ताकुदु; रालोन दरुचरुल् गिनिस । वीक गोलॆम्मुलु विऱुगनॊक्कियु
मोकाल मोचेत मुष्टिनंदंद । तार्किचि पडद्रोसि तललु द्रॊक्कियुनु
बॊट्टलु सीरियु बोनीकपट्टि । चट्टुल वापियु जदिय व्रेसियुनु
गऱ्चियु विऱ्चियु गडकाळ्ळुवट्टि । जिऱ्जिऱ् द्रिप्पियु जिदिय वैचियुनु
बलुविडि दललॊगि बट्टि वॆंड्रुकलु । पॆळपॆळमन बॆलच बॆऱ्किवैचियुनु
निरुचेतलंदुनु निरुवुर बट्टि । पॊरिबॊरि दार्किचि पोळ्ळुसेसियुनु

अनेक विधियों से विजृंभित होकर, राक्षसों को इधर-उधर कर देने पर, प्रचुरता से तुरग-रिंख-उद्धत-धूलि छा गई। (तब) तरुचराधिप और दानवाधिप विरल उस निबिड-अन्धकार में करवाल-रोचियों के मार्ग दिखाने पर, दोनों के जूझने पर उत्पन्न रक्त-धारा-मरीचियों के अधिकता से फैलकर रेणु रूपी तमःपटल को दूरकर दिया तो हठपूर्वक अधिक युद्ध करने लगे। कुंजर (तथा) रथ (रूपी) कूल (तट), घोटक (रूपी) मकरपुंज, ध्वज (रूपी) अनेक भूरुह (वृक्ष), ।। ६०५० ।।

—करकांडकल्लोल (सुभटों के कट हाथ रूपी कल्लोलों से युक्त), खड्ग रूपी पाठीन (मत्स्य), करिकर (सूँड रूपी) उरग (सर्प), खेट (ढाल रूपी) कच्छपनिकर, विकल-भूषण-रत्न-विसर-विकीर्ण-शकल (कण रूपी) सैकत (रेत), केशजाल रूपी शैवाल-जनित (उत्पन्न), चामर रूपी फेन-चय से युक्त रक्त-नदियों को वनचर और दनुज झट पारकर (एक दूसरे का) सामना करते हैं। इतने में तरुचरों ने क्रुद्ध हो साहस से (दनुजों के) अस्थिपंजर को तोड़ दबाकर, कुहनियों और घुटनों से, मुष्टियों से जहाँ-तहाँ मार गिराकर, सिर कुचलकर, पेट चीरकर, न जाने देकर पकड़कर (उनका) नाशकर, (ज़मीन पर) पटक-पटक देकर, कुतरकर, तोड़कर, टाँग पकड़कर गोल घुमाकर (ज़मीन पर) पटक चूर-चूरकर, झट सिर पकड़ बालों को खींच-खींच सिर फोड़कर, दोनों हाथों में दो (राक्षसों) को पकड़, क्रम से टकराकर चूर-चूरकर,

नॆऱसि रंध्रंबुल नॆत्तुरुल् वॆडल । नुरुवडि बडद्रोचि युरमुलु सऱचि
६०६०
नखरदंतंबुल नासिकाकर्ण । मुखफाल पट्टिकल् मुसरि त्रॆंचियुनु
नॊप्पिंचियुनु गपुल् नूर्वुरॊक्कानि । नुप्पॊंगि यॊक्कॊकंडॊनर नूर्वुरनु
बट्टि चंपियु जलपट्टि दानवुल । नट्टिट्टु पोनीक यवनिपै गूल्चि
चिदऱवंदऱ सेयंग, नप्पु । डंदऱु वॆस जूचि यधिकरोषमुन
धरणि गंपिंप दिक्तटमुलु वगुल । शरधुलु गलग मुज्जगमुलु बॆगड
दारुणाकारुलै तद्दयु बॆर्चि । भेरी मृदंग गंभीर वाद्यमुलु
सॆलर्गिंचियु यक्कपिसेनपै गविसि । बलसूदनादि दिक्पतुलु भीतिल्ल
विकृतमस्तकमुलु विकृतहस्तमुलु । विकृत प्रकोष्ठमुल् विकृतोषमुलुनु
विकृतनखंबुलु विकृतमुखमुलु । विकृतगात्रमुलुनु विकृतनेत्रमुलु
विकृतहासमुलुनु विकृतनासमुलु । विकृतवक्षमुलुनु विकृतकक्षमुलु
६०७०
विकृतकर्णमुलुनु विकृतवर्णमुलु । विकृतपादमुलुनु विकृतनादमुलु
गल सैनिकुलु लयकालाभ्रपंक्ति । बलुविडि विडिवडि पऱतॆंचुकरणि
बरिघगदाचक्रपट्टिस प्रास । परशुतोमर भिंडिवाल त्रिशूल

ऐसा गिराकर वक्षस्थल फोड़कर (शरीर के प्रत्येक) रंध्र से खून निकले, ॥ ६०६० ॥

—नख और दांतों से नासिका, कर्ण, मुख, फाल-पट्टिकाएं पकड़ विजृंभित हो कुतर डालकर, (ऐसा) पीड़ितकर सौ कपि एक को और एक-एक कपि सौ (राक्षसों) को पकड़ मारकर, हठ करके दानवों को (कहीं) जाने न देकर, अवनि पर गिराकर, तितर-बितर कर दिया। तब सब राक्षसों ने झट देख अधिक रोष से, धरणी कंपित हो, दिक्तट फट जाएँ, शरधियाँ (समुद्र) क्षुब्ध हो जाएँ, त्रिलोक विह्वल हो जाएँ, ऐसा दारुण-आकारवाले हो, अधिक विजृंभित हो, भेरी-मृदंग (आदि) गम्भीर वाद्य बजाकर, उस कपिसेना पर टूट पड़कर, बलसूदन आदि दिक्पति भीत हो जाएँ (ऐसा) विकृत मस्तक, विकृत हस्त, विकृत प्रकोष्ठ (मणिबंध-कलाई) विकृत ओष्ठ, विकृत नख, विकृत मुख, विकृत गात्र, विकृत नेत्र, विकृत हास, विकृत नास (नाक), विकृत वक्ष, विकृत कक्षाएँ (काँख) ॥ ६०७० ॥

—विकृत कर्ण, विकृत पाद, विकृत नाद से युक्त सैनिक लयकाल की अभ्रपंक्ति के वेग से छूटकर आने के समान, परिघ, गदा, चक्र, पट्टिस, प्रास, परशु, तोमर, भिंडिवाल, त्रिशूल, करपत्र, कुंत, मुद्गर, यष्टिकणय,

करपत्रकुंत मुद्गर यष्टिकणय। करवाल खेटक क्रकचासिनाग
मुखशिलीमुखचापमुसलायुधादि । निखिल साधनमुलु नेऱयंगबूनि
नऱकियु नडिचियु नलिय मोदियुनु। नुरुवडि जिम्मियु नोनर ग्रुम्मियुनु
व्रेसियु बोडिचियु वीक वैचियुनु। नेसियु गोट्टियु नीरीति ग़पुल
नोंप्पिप नेंतयु नोंच्चि भीतिल्लि। यप्पुडु तरुगिरुलवनिपैवैचि
"मनकेल युद्धंबु ? मनकेल व्रलमु ?। निनकुलेश्वरुडेल ? यिनसूनुडेल?
यडविलो गाय पंडाकुलु नमलि। कडुपु बोसुकयुंड गानक वच्चि
६०८०
मदि मदि निच्चट मडियंगनेल ?। पदपदं" डनि कपिपतुलु राघवुल
विडिचि, धैर्यंबुलु विडिचि, राक्षसुलु। विडुवक व्रलमुन वेनुवेंट दरुम
सेतुवु दिक्कुकै चेंडि पारुनपुडु। वातूलसुत नील वालिनंदनुलु
गनि, सेतुवटु दाटि ग्रक्कुननेंदु। जनकुंड मरलिप जनुदेंचि भीति
वनचरुल् दनवेंन्क वच्चि चोंच्चुटयु। गनुगोनि रामुडक्कपिवरुल् सेलग

श्रीरामुडु मूलबलमुपै मोहनास्त्रमु वेयुट

दनुजुल मनमुलु तल्लडंबंद। धनुवंदुकोनि गुणध्वनि सेसि यार्चि
करलाघवमु चित्रगतुलोंप्प मेऱयु। शरमुलु वऱप निशाचरुल् बेगडि

करवाल, खेटक, क्रकच, असिनागमुख, शिलीमुख, चाप, मुसल-आयुध-आदि समस्त साधनों को शोभा से धारणकर, काटकर, दबाकर, चूर-चूर हो ऐसा पीटकर, झट बिखेरकर, सींग मारकर, फेंककर, भोंककर मार-मारकर इस प्रकार कपियों को अधिक पीड़ित किया। (करने पर) अधिक पीड़ित हो, भीत होकर, तब तरु-गिरियों को अवनि पर फेंक देकर, (यह सोच कि) "यह हठ हमें क्यों ? इनकुलेश्वर क्यों ? इनसून क्यों ? जंगल में कच्चे फल (और) पके पत्ते चबाकर न रहकर (यहाँ) आकर ॥ ६०८० ॥

—जानबूझकर यहाँ मरना क्यों ? चलो चलो।" कह कपिपति राघवों को छोड़कर, धैर्य छोड़कर, राक्षसों के न छोड़ हठ से पीछा कर भगाने पर, सेतु की ओर, पराजित होकर दौड़ पड़े। (उसे) वातूलसुत, नील वालिनन्दन ने देखा, उधर सेतु को झट पारकर कहीं न जाने देकर, वापिस लौटा लाने आकर भय से (उन) वनचरों के अपने पीछे आकर खड़े देखकर राम ने, कपिवर उत्साहित हों,

श्रीराम का मूलबल पर मोहनास्त्र चलाना

(तथा) दनुजों के मन विकल हो जाएँ, (ऐसा) धनुष ग्रहणकर, गुणध्वनिकर, सिंहनाद कर, कर-लाघव (हस्त-कौशल) से चित्रगतियों से

तॆरुवुलु गानक तिरुगुडुपडुचु । दॆरलियु मरलियु दीव्रकोपमुन
धरणीशु गानराधरणीशुडॆयु । शरमुल तरुचुन समरांगणमुन
रविकुलतिलकुंडु रभसंबुतोड । विविधभंगुल दन विलुविद्य मॆऱसि
६०९०

येसिन शरमुलनेकंबुलगुचु । गासिसेयुचु दाकगा दैत्यवरुलु
नडुमुलु दॆगियु नॆन्नडिमिकि दॊडलु । गडकंडलय्यु वक्षमुलु व्रस्सियुनु
वदनमुल् गाडियु वर्णमुल् सॆदरि । पदमुलु दुनियलै बाहुवुल् विऱिगि
गळमुलु दुनिसियु गरमुलु दॆगियु । दललविसियु दनुत्राणमुल् दाकि
शरमुलु मॆयि नुच्चि चनग नॆत्तुरुलु । दॊरुग नंगमुल दुत्तुनियलै; रपुडु
कॆडयु राक्षसुलु बॆग्गिलॆडु राक्षसुलु । बुडमिपै मूर्छल बॊंदु राक्षसुलु
नॊगुलु राक्षसुलुनु नोरुलु दॆऱचि । दिगुलॊंदु राक्षसुल् धीरत सडलि
वारणंबुलवारु वाजुलवारु । देरुलवारुनै तिरुगुडुवडग
“नदॆ राघवुंडेसॆ; नदॆ रामुडेसॆ; । नदॆ डासॆ; निदॆ डासॆ; नदॆ यिदॆ”
यनुचु
वीक्षिपराकतिवेगंबु मॆऱसि । राक्षसबलमुलु रयमुन बऱव ६१००

शोभित हो कांतिमान शर चलाए। (उससे) निशाचर, मार्ग के न दीखने पर भटककर, फिर लौटकर तीव्रकोप से समरांगण में धरणीश (राजा राम) के चलाए बाणों की प्रचुरता से धरणीश को देख न पाए। रविकुल-तिलक ने रभस से विविध भंगिमाओं से अपनी धनुर्विद्या से प्रकाशित होकर, ॥ ६०९० ॥

—चलाए शरों के अनेक होकर, दैत्यवरों को पीड़ित करते लगने पर, (राक्षस) कमर टूटकर, जाँघ बीचों बीच कटकर, वक्ष कटकर, मुखों में (शर) धँसकर, वर्ण बिखरकर, चरण टूटकर, बाहु टूटकर, गले कटकर, हाथ कटकर, सिर चूर होकर, तनुत्राणों (कवचों) को लगकर, शरों के शरीर में घुस जाने पर, रक्त बह निकलने पर (राक्षसों के) अंग-अंग चकनाचूर हो गए। तब गिरनेवाले राक्षस, विह्वल बने राक्षस, पृथ्वी पर मूर्च्छित होनेवाले राक्षस, चिल्लानेवाले राक्षस, मुँह बाकर चिंतित होनेवाले राक्षस, धैर्य छूटे हाथियोंवाले, घोड़ों वाले, रथों वाले राक्षस चक्कर खा घूमने लगे। “यही राघव ने (बाण) चलाए, यही राम ने (बाण) चलाए, यही निकट आया, वही निकट आया, यही-वही” कहते (राम के) दीख न पड़, अतिवेग से प्रकाशित होने पर, राक्षस-बल वेग से भाग उठा ॥ ६१०० ॥

नंतलोनन राघवावनीनाथु । डेंतयु घनरोषमेंसग वेंडियुनु
सम्मोहनास्त्रंबु संधिंचि पऽप । दम्मु दामेऱुगक दानवुल् भ्रमसि
दानवुंडीतडु, तरुचरुंडितडु । दाननि तेंलियक दनुजुंडु दनुजु
गनि ताकुनप्पुडु गांधर्वशरमु । घनमहत्त्वमुन राक्षसुलकु जूड
नोक्कोक्कनिकि रामुडोक्कडे यगुचु । नोक्कोक्कनिकि रामुलोंगि बदुंड्रगुचु
नोक्कोक्कनिकि रामुलोंगि नूर्वुरगुचु । नोक्कोक्कनिकि रामुलोंगि वेवुरगुचु
नोक्कोक्कनिकि रामुलोंगि लक्षयगुचु । नोक्कोक्कनिकि रामुलोंगि गोटियगुचु
शतकोटियर्बुदसंख्यलु गडचि । यतुलितंबैन यय्याजिरंगमुन
मरि सर्वमुनु राममयमय्यें; नपुडु । गिऱिकोंनियुंड नीक्रिय नल्कतोड
वडिनेयुनप्पुडु वारक गुडुसु । पडियुन्न रघुरामु पसिडिविल् सूचि ६११०
“समरसमाभीलचक्रियुग्रतनु । नमुचिपै नेसिननाटि चक्रंबो ?
किरणजालंबुल गिरिकोन्न भानु । परिवेषचक्रमो परिकिंप” ननुचु
दम मनंबुल नेंचि दैत्युलय्यंप । गमुलकु निलुवक कलगोंनि पऽव
नमरारिसेनलो नप्पुडोक्कोक्क । निमुसंबुलोपल नेंत्तुरुवान

—इतने में राघव-अवनीनाथ ने अति घन-रोष के उमड़ने पर फिर सम्मोहनास्त्र का संधान कर चलाया। (उसके कारण) दानव अपने आपको न जानकर, भ्रमित हुए, यह दानव है, यह तरुचर है, ऐसा न जानकर, दनुज ने दनुज का सामना किया। गाँधर्वशर के घनमहत्त्व से देखने पर राक्षसों को एक (राक्षस) के लिए राम एक ही होते हुए, एक के लिए क्रम से दस राम होते हुए, एक के लिए क्रम से सौ राम होते हुए, एक के लिए क्रम से हजार राम होते हुए, एक के लिए क्रम से लाख राम होते हुए, एक के लिए क्रम से करोड़ राम होते हुए, शतकोटि-अर्बुद संख्याओं को पारकर, अतुलित उस युद्धभूमि में फिर सर्व (सबकुछ) राममय हो गया। तब घेरकर इस प्रकार क्रोध से झट (शर) चलाने पर, निरन्तर वर्तुलीभूत बने रघुराम के सुवर्ण धनुष को देखकर, ॥ ६११० ॥

“पता नहीं यह समर-समाभील बने चक्री (विष्णु) का उग्रता से नमुचि पर फेंका गया चक्र है ? (अथवा) किरणजालों से घिरे हुए भानु का परिवेषचक्र है”, (ऐसा) अपने मन में सोच, दैत्य उन अस्त्र-समूहों के

नानिन हरुलु पद्नालुगुवेलु । नेनुगुलोंक पदुनेंनिमिदिवेलु
लक्ष तेरुलु रेंडुलक्षल वीर । राक्षसवीरुलु रणभूमि गेंडय
शरमुलरंबुलै चापंबुनेमि । करणियै गुणरवक्वणितंबु मेंऽसि
किरणस्फुलिंगमुल् गिऽिकोन्न राम । करचापचक्रंबु कालचक्रंबु
गति नुल्लसिल्लंग गनुगोनि पेलुच । हतशेषदैतेयुलतिभीति बोंदि
कडुघोरमैन संगरभूमि विडिचि । वडि लंक जोच्चिचरि वनचरुलार्वः
६१२०

गालांतमुन गालकंधरुंडलुक । गेळि सलिपननाटि क्रियनुंडेरणमु-
वलनैनयट्टि रावणु मूलबलमु । ज्रलमुन रघुपति समर्यिचुनपुडु
पदिवेल करुलु निर्वेदिवेल हरुलु । बदिपदुलरदमुल् पद्मंबु बलमु
नालंबुलोपल नतिदारुणमुग । गूलिन नोंकयट्ट गुनियुचुनाडु;
नट्टलु कोटाड नट्टिविकेंगसि । बेट्टुगा नोंक तल पेंडबोंब्ब वेंट्टु;
नट्टिवि कोटाड नारामु विट । गट्टिन योंक गंट खणिलनि म्रोयु;
मरगंटलुनु नादमानकीरेंडु । मोंरसें नव्विभुचापमुन नरजामु;
भाविप राकुंड बदुनेडुगडिय । ला वीरवरुनि बाणासनविद्य

समक्ष ठहर न सक, व्याकुल हो भाग उठे। तब अमरारी की सेना में एक-एक निमिष में रक्त की वर्षा (धाराओं) में सने हुए चौदह हज़ार अश्व, अठारह हज़ार हाथी, लाख रथ, दो लाख वीर राक्षस वीर रणभूमि में मृत हुए। शर रथचक्र के पत्ते (अर) वन, चाप (धनुष) के नेमी के समान हो, गुणरव क्वणित हो प्रकाशित होकर, किरण-स्फुलिंगों से घिरा हुआ राम का चाप-चक्र कालचक्र के समान बिलसित हुआ। (उसे) देख हतशेष दैतेय अति भीत हो अतिभयंकर बनी संगरभूमि को छोड़, वनचरों के सिंहनाद करते रहने पर, झट लंका में प्रविष्ट हुए ।। ६१२० ।।

—कालांत में (प्रलयकाल के समय) कालकंधर के क्रोध से केलि करने के समय के (जग के) समान था रण (भूमि)। रावण के अति शोभायमान मूलबल को हठ से रघुपति के संहार करते समय दस हज़ार करि, बीस हज़ार हरि, सैकड़ों रथ, (एक) पद्म (की संख्या में) सेना युद्ध में अति दारुण रूप से गिरने पर, एक धड़ इठलाकर चलता, ऐसे करोड़ धड़ इठलाते तो एक सिर भीकरता से दिवि की ओर उठकर चिल्ला उठता। ऐसे करोड़ सिरों के चिल्लाने पर, उस राम के धनुष पर बंधी एक घंटी 'खन्' कहकर मुखरित होती। उस विभु के चाप से चौदह घंटियों का यह नाद लगातार आधे पहर तक मुखरित होता रहा। सत्रह घंटे तक उस वीरवर

गिन्नर गंधर्व खेचर यक्ष । पन्नगामरवरुल् प्रणु तिचिरेलमि;
ना रामचंद्रुंडु नप्पुडिपलर । शूरपुंगवुडैन सुग्रीवु जूचि ६१३०
"जगदेकभयदमीसम्मोहनास्त्र । मोगि ब्रयोगिपनु नुपसंहारिप
नेनोंडे दक्किन नीश्वरुंडोंडे । गानि नेर्परुलोरुल् गारु लोकमुल;
गौशिकुंडिच्चिन घनशस्त्र महिम । कौशिकादुलकैन गन नशक्यंबु"
अनिन विभीषणुंडारामु जूचि । विनयसंभ्रममुलु वेलयनिट्लनियें;
"देव ! यी बलमुलु देवेंद्रुडादि । देवतलकुनैन देरलवेन्नुडुनु;
बौलस्त्युनकु मूलबलमिदि नेल । पालय्यें; निक गूलु बंक्तिकंधरुडु;
तलकोनि नी पेंपु दलपुवुगाक ! । तलचि चूचिन नीकु दरमे येव्वरुनु ?"
ननिविभीषणुडाडिनट्टि वाक्यमुलु । विनियप्पुडारामविभुडात्मनलरे;

राक्षसस्त्रीलु रावणुनि निंदिंचुट

नंत नक्कड दानवांगनलेल्ल । नंतंत बेनुमूकलै लंकलोन
बोरि बोरि शोकाग्नि बोगुलुचु बलिकि । "ररय जगन्निंद्यमगु चरित्रंबु
६१४०

की बाणासन-विद्या की किन्नर, गन्धर्व, खेचर, यक्ष, पन्नग, अमरवरों ने क्रम से सराहना की। तब रामचन्द्र ने क्रम से शूरपुंगव सुग्रीव को देख (कहा)— ।। ६१३० ।।

—"जगदेक-भयद है यह सम्मोहनास्त्र क्रम, से इसका प्रयोग करने तथा इसका उपसंहार करने में मैं अथवा ईश्वर ही इन लोकों में कुशल हैं। कौशिक की प्रदत्त घन-शस्त्र-महिमा कौशिक (इन्द्र) आदि के भी कल्पनातीत है।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने उस राम को देख विनय-संभ्रमों के विलसित होने पर यों कहा—"हे देव ! ये सेनाएँ (मूलबल) देवेन्द्र आदि देवताओं से भी कभी क्षुब्ध नहीं होतीं। यह पौलस्त्य का मूलबल है। यह मिट्टी में मिल गया। अब पंक्तिकंधर गिर जाएगा। सोचकर अपने उत्कर्ष का विचार नहीं करते। सोच देखने पर कौन तुम्हारी बराबरी कर सकता है ?" ऐसा विभीषण के कहे वाक्य सुनकर तब रामविभु आत्मा से प्रसन्न हुआ ।। ६१३८ ।।

राक्षस स्त्रियों का रावण की निन्दा करना

तब वहाँ लंका में समस्त दानव-अंगनाएँ जहाँ-तहाँ झुंड बाँधकर, पुनः पुनः शोकाग्नि से संतप्त होती हुई, बोलीं—" सोचने पर जगन्निंद्य चरित्रवाली ।। ६१४० ।।

ब्रायिडि मोमुनु बलित रोमंबु । लैयुन्नशिरमु नत्यायतोदरमु
विकृतवेषंबुनु विकृतयौवनमु । ग्रकचोग्रदंष्ट्रलु गलुगु शूर्पणख
सकलगुणोज्ज्वलु सत्त्वसंपन्नु । सकुमारु नुरुतेजु सुमुख नारामु
गंदर्प सुरुचिराकारु गामिंचे; । नंडनि पंटिकि नरुसाप दगुनॆ ?
यीलंकलोगल यॆल्लराक्षसुलु । गालगोचरुलैन कारणंबुनन्नु
भानुवंशजुनकु बंक्तिकंठुनकु । ना निशाचरि सेसॆ नधिक वैरंबु;
तगवु चिंतिपक दानि माटलकु । बग गॊनि तॆच्चॆनी पंक्तिकंधरुडु;
तनचावुनकॆ कादु धरणीशुदेवि । गॊनिवच्चॆ राक्षसकुलमॆल्ल जॆरुप;
निंतट सिद्धिंचॆने सीत दनकु ! । नित तॆंपुनकु दा नितडेल तॊडगॆ ?
मारीचु नॊक्कोल मडियिंचॆ; दंड । कारण्यमुन जंपॆ गनलि विराधु; ६१५०
निदि यॆऱिंगियु रामु नॆरुगलेडय्यॆ । मदिलोन गर्विंचि मन रावणुंडु;
अनल समानंबुलगु सायकमुल । जननायकुडु जनस्थानंबुनंदु
बदनाल्गुवेवुर बरिमार्चि रोष । मॊदवंगनेचि यत्युग्रबाणमुल
द्रिशिरु दूषणु खरु दृणलील जंपॆ; । दशकंठुडदियुनु दलपोयडय्यॆ;

—दीनता-पूर्ण मुख, पलित-रोम से युक्त शिर, अति-आयत (-विशाल) उदर, विकृत वेष, विकृत यौवन, क्रकच (आरी के समान) -उग्र दंष्ट्राएँ, (आदि से) युक्त शूर्पणखा सकल-गुणों से उज्ज्वल, सत्त्व-संपन्न, सुकुमार, उरु-तेजवाले, सुमुख उस राम पर जो कंदर्प-सुरुचिराकार वाला है, आसक्त हुई। अनुपलब्ध फल के लिए हाथ पसारना (कहाँ) उचित है ? इस लंका में सभी राक्षसों के कालगोचर होने के कारण, उस निशाचरी ने भानुवंशज तथा पंक्तिकंठवाले के मध्य अधिक वैर (उत्पन्न) किया। न्याय (औचित्य) न सोचकर, उसकी बातों पर इस पंक्तिकंधर ने वैर मोल लिया। अपनी ही मृत्यु के लिए नहीं, समस्त राक्षस-कुल को नष्ट करने के लिए धरणीश की देवी को लाया। इतने पर भी (क्या) उसे सीता प्राप्त हुई ? (नहीं) इतना साहस करने के लिए वह क्यों उद्यत हुआ ? (राम ने) एक बाण से मारीच को मार डाला, क्रुद्ध हो दंडकारण्य में विराध को मार डाला, ॥ ६१५० ॥

—यह जानकर भी, मन में गर्वित हो हमारा रावण राम (की समार्थ्य) को जान न सका। अनल समान सायकों से जननायक (राम) ने जनस्थान में चौदह हज़ार (राक्षसों) का संहार कर, रोष के उत्पन्न होने पर, विजृंभित होकर अति-उग्र-बाणों से त्रिशिर, दूषण, खर को तृण के

रुधिराशनुनि नतिक्रूरविक्रमुनि । नधिकयोजन बाहु ना कबंधकुनि
ग्रौंचवनंबुन गडतॆंचि पुच्चि । रंचितविक्रमुलैन दाशरथु;
लिट्टि राक्षसुल चावॆर̱िगियु दॊंडरॆ । नट्टि रामुनि गॆलव; नलविये तनकु?
जगतीशुडगु रामचंद्रुतो बोर । मगटिमि गलिगिने मन रावणुनकु?
नवलील वालि नॊक्कम्मुन गूल्चि । रविजु गिष्किंधकुराजु गाविंचॆ;
गरिसहस्रंबुलग्गलमौ पॆक्कु । तुरगलक्षलु रथस्तोमकोट्लुनु ६१६०

गणनकु मिक्किलिगल कालुबलमु । नणुमात्रमुग जंपॆ नाजिरंगमुन;
नधिक पराक्रमु ना कुंभकर्णु । वधियिंचॆ नॆक्कटि वसुधेश्वरुंडु;
नट्टि पराक्रमंबदियॆल्ल गनियु । 'निट्टिवा' डनि रामु नॆर̱ुगलेडय्यॆ;
ना मेटि नतिकायु ना यिंद्रजित्तु । सौमित्रि यॊक्कडॆ समयिंचॆ नाजि;
निकनैननु रामुनिट शरणनडु । लंक निंटिंट विलापमुल् वुट्टॆ;
दम बंधुलील्गिरि; तम मगल् देगिरि; । तम सुतुल् मृतुलैरि; तम सहोदरुलु
हतुलैरि रणभूमि" ननि यॆल्लवारु । नतिशोकमुनु बॊंदि यडलुचुन्नारु;

समान मार डाला, दशकंठ इसका भी विचार कर न सका। रुधिराशन को, अतिक्रूर विक्रमवाले तथा योजनाधिक बाहुवाले उस कबंध को, क्रौंचवन में अंचित-विक्रमवाले दाशरथियों ने समाप्त कर दिया। ऐसे राक्षसों की मृत्यु के बारे में जानकर भी राम को जीतने के लिए (रावण) क्यों उद्यत हुआ? यह क्या अपने (रावण) के बस की बात है? हमारे रावण में जगदीश रामचन्द्र से लड़ने के लिए पौरुष है? (राम ने) सरलता से एक बाण से बालि को गिराकर, रविज को किष्किंधा का राजा बनाया। करि-सहस्रों को, अगणित लाखों तुरंगों को, करोड़ों रथ-स्तोमों को, ॥ ६१६० ॥

—अनगिनत पैदल सेना को अणु के समान युद्धभूमि में मार डाला। अद्वितीय अवधेश्वर ने अधिक पराक्रमवाले उस कुंभकर्ण का वध किया। ऐसे समस्त पराक्रम को देखकर भी, यह जान न सका कि राम 'ऐसे (व्यक्ति) हैं।' उस श्रेष्ठ अतिकाय का, उस इन्द्रजित्त का युद्ध में अकेले सौमित्र ने ही शमन कर दिया। अब भी (राम की) शरण में नहीं जाता। लंका के घर-घर में विलाप उत्पन्न हुए। 'अपने बन्धु (रिश्तेदार) मर गए, अपने पति कट गिरे, अपने पुत्र मृत हुए, अपने सहोदर रणभूमि में (नि) हत हुए।' ऐसा कह सब लोग अति शोक

दुर्मतियुनु नीतिदूरुंड ग्रूर । कर्मुंडुनै नाडु कपटरूपमुन
सीत नीपुरिकि दॆच्चिननाटनुंडि । तोतॆंचुचुन्नवि दुर्निमित्तमुलु;
दशकंठुंडिक नी दशरथसुतुनि । विशिखाग्नि गूलुट वॆलय सिद्धंबु;
६१७०

अक्कटा ! नीतिज्ञुडगु विभीषणुडु । पॆक्कुभंगुल जॆप्पॆ ब्रियमुन बुद्धि;
नतडु सॆप्पिन बुद्धुलन्नियु नाडु । हितवुगा गैकोन्न नी लंक सॆडुनॆ ?
कुलशैलपक्षमुल् गुलिशघातमुन । नलुकमै दुनुमाडुना पुरंदरुडो ?
मधुकैटभादुल मर्दिचुनट्टि । यधिकुडा विष्णुडो? यदयुडंतकुडो?
प्रळयकालमुनाटि फाललोचनुडो ? । यिल रामुडै पुट्टि यिटु
चंपदॊडगॆ;
दशरथतनयुंडु दर्पंबु मॆऱसि । दशकंठु ननिलोन दग जंपुनपुडु
घनुलगु सुरलैन गंधर्वुलैन । मुनुलैन वीनिकि मुनु वरंबिच्चु
वनजसंभवुडु शर्वाणीशुडयिन । विनुडु राक्षसुलैन विडिपिंपगलरॆ?
वरमिच्चुनप्पुडा वनजसंभवुडु । नरुलचे जाकुंड नाडीडु गान
बरिंकिपगा निजबंधुलतोड । धरणीशुचे जच्चु दशकंधरुडु; ६१८०

को प्राप्त कर उत्तप्त हो रहे हैं। दुर्मतिवाला, नीति-दूर तथा क्रूरकर्मा हो (रावण) कपटरूप से जिस दिन सीता को इस पुर में लाया था, तब से अपशकुन दिखाई पड़ रहे हैं। दशकंठ का इस दशरथसुत की विशिखाग्नि में गिर पड़ना निश्चित है ।। ६१७० ।।

—हाय! नीतिज्ञ विभीषण ने अनेक प्रकार से प्रेम से बुद्धि (की बातें) कही थीं। उसकी कही बुद्धि (की सभी बातों) को उस दिन हित के रूप में ग्रहण करता तो क्या आज यह लंका नष्ट होती ? (नहीं) पता नहीं यह (राम) क्रोध के मारे कुलशैलों के पक्षों को खंडित करनेवाला वह पुरन्दर (इन्द्र) है ? (अथवा) मधु-कैटभ आदि का मर्दन करनेवाला अधिक (बलशाली) वह विष्णु है ? सोचने पर (कहीं) अंतक (यम) तो नहीं है ? प्रलयकाल का फाललोचन है ? (इनमें से कोई संभवतः) पृथ्वी पर राम के रूप में जन्म लेकर इधर संहार करने लगा। दशरथ-तनय के दर्प से प्रकाशित होकर, युद्ध में दशकंठ को मार डालते समय, महान् सुर हों, गंधर्व हों, मुनि हों, इसे पूर्व में वर देनेवाला वनजसंभव शर्वाणीश ब्रह्मा हो, राक्षस हो, क्या वे बचा सकेंगे ? वर देते समय उस वनजसंभव ने नर के हाथ न मरने का वर नहीं दिया था अतः सोचने पर अपने बंधुजनों के साथ धरणीश के हाथ दशकंधर मर जाएगा ।। ६१८० ।।

इदि निजमेट्लन्न निंद्रादि सुरल । मदि दय लेक पल्मारु नोंप्पिप
नी रावणुनि चेत नेंतयु नोंच्चि । नीरजासनु गांचि निखिलदेवतलु
नभयंबु वेडिन ना चतुर्मुखुडु । शुभतरस्थिति वारि जूचि
यिट्लनियें--
"नेबाधलुनु जेंदविटमीद मीकु । मी बुद्धि वर्तिंचि मीरुंडुडेलमि"
ननि वारु दानु महादेवु कडकु । जनि प्रस्तुतिप ब्रसन्नुडें शिवुडु
कमलासनादुल गरुण वीक्षिंचि । 'यमररक्षार्थंमै यखिल राक्षसुल
समरंबुलोपल जंपिंचुकोंऱकु । नमर निंदिर वुट्टु; ना सतीमणिकि
बतिययि प्रजल नापदलोंदकुंड । सततंबु गाव दुर्जनुल राक्षसुल
जंपंग विष्णुंड जन्मिंचु बुडमि । निंपार' ननि यानतिच्चें; रामुंडें
यरयंग ना विष्णु; डा महीजात । परिकिंप निंदिर; भावंबु लोन
६११०
दलपोय शिवुमाट दप्पदु गान । मलगनि शोकंबु मनकु बाटिल्लें
मनकु दिक्कॆव्वरु ? मन रावणुंडु । मननेरडिक नेडु मरुगंगनेल ?
मनकंदऱकु दिक्कु मन विभीषणुडु । चनि रामचंद्रुनि शरणंबु सोंच्चें"
ननि पेंक्कु भंगुल नसुर कामिनुलु । पनवुचुंडग विनि पंक्तिकंधरुडु

—यह सच है। यह ऐसा है। मन में दयारहित होकर इन्द्र आदि सुरों को कई बार सताने पर, वे रावण से अधिक पीडित होकर, नीरजासन को देख समस्त देवताओं ने अभय का निवेदन किया तो उस चतुर्मुख (वाले) ने शुभतरस्थिति से उन्हें देख यों कहा—"अब आगे आपको कोई कष्ट नहीं होंगे। अपनी बुद्धि (के अनुकूल) से आचरण कर, आप प्रेम से रहिए।" (ऐसा) कहकर उनके साथ महादेव के पास जाकर प्रस्तुति की तो प्रसन्न हो शिव ने कमलासन आदियों को करुणा से देखकर—'अमरों की रक्षा के लिए, अखिल राक्षसों को समर में वध कराने के लिए, शोभा से इन्दिरा (लक्ष्मी) पैदा होंगी। उस सतीमणि के पति हो प्रजा को सतत आपत्तियों से बचाने के लिए, दुर्जन राक्षसों को मार डालने के लिए शोभा से पृथ्वी पर विष्णु जन्म लेंगे।' (ऐसी) आज्ञा दी। सोचने पर वह विष्णु ही राम है। विचारने पर मही-जाता (सीता) ही इन्दिरा है॥ ६११०॥

—मन में विचारने पर शिव का वचन दुर्निवार है। इसलिए हमें दुर्निवार शोक संप्राप्त हुआ है। हमारे लिए शरण्य कौन है! हमारा रावण जीवित नहीं रह सकता, अब हमें क्षुब्ध होना क्यों? हम सबके लिए गति (शरण्य), हमारा विभीषण है। (वह) चलकर, रामचन्द्र की शरण में गया।" ऐसा अनेक प्रकार से असुर-कामिनियों के विलाप करते सुनकर पंक्तिकंधर

ंचितसमाकुलचित्तुडै यपुडु । वंत नॊंदुचु गॊंतवडि यूरकुंडि
चंडकालव्याळसमलील दोप । निडुकोपंबुन निट्टूर्पु वुच्चिच
यवुडुलु दीटुचु नंदंद कन्नु । गवल निप्पुलु रालगा नुग्रुडगुचु
नुरुवडि नलिग युद्धोन्मत्तु मत्तु । सॊरिदि विरूपाक्षु जूचि 'मीरॆलमि
दंदडि सिंहनादमुलु दूर्यमुलु । नंदंद मॊरयंग ननिकि नेतेरु;"
डनि पल्कि भयमुन ना निशाचरुलु । विनि यूरकुन्न ना विधमु वीक्षिंचि
६२००

"यालंबुनकु बेग यत्नंबुसेयु; । डेल युत्साहंबुलिट्टु दक्कियुंड"
ननिन वाररिगि पुण्याहकर्मंबु । लॊनर्रिचि सन्नाहमॊप्प नेतॆंचि
याराक्षसेंद्रुनकु क्वनतुलैन । ना राक्षसुल जूचि यतडल्क बल्कॆ;
"नानाटिकिब्भंगि ना बलंबॆल्ल । हीनमय्यॆनु; भृत्युलॆल्ल जच्चुटयु,
नमरेंद्र विक्रमुडैन या खरुडु, । नमित बलोदग्रडुगु निंदजित्तु,
ना कुंभकर्णुंडु ना प्रहस्तुंडु । ना कुंभुडुनु शूरुडगु निकुंभुडु
भीमविक्रम विजृंभितुडतिकायु । डा महाकायुंडु ना महोदरुडु
ना सुरांतकुडुनु ना नरांतकुडु । भासुरयशुडकंपनुडु गंपनुडु
नाकाधिपतिनैन ननि नॊर्चुवारु । नाकुनै पोलिसिरि, ना गर्वमडगॆ;

चिन्ता-समाकुलचित्त वाला हुआ। तब चिंतित होते हुए, कुछ देर चुप रह कर, चंडकाल-व्याल सम लीला के दीखने पर, पूर्णक्रोध से लम्बी आह छोड़कर, ओंठ काटते हुए, सर्वत्र नेत्रद्वय से चिनगारियों के फूटने पर, उग्र बन, झट क्रुद्ध हो, क्रम से युद्धोन्मत्त, मत्त, विरूपाक्ष को देखकर (बोला) —"आप उत्साह से बहुल सिंहनाद, तूर्य के सर्वत्र मुखरित होने पर युद्ध के लिए चल पड़िए।" ऐसा कहकर, भय के मारे उन निशाचरों के सुनकर चुप रह जाने के विधान को देखकर, ।। ६२०० ।।

—(फिर बोला) —"युद्ध के लिए शीघ्र यत्न कीजिए। आज यह क्या निरुत्साह से हो ?" (ऐसा) कहने पर, वे जाकर, पुण्याह-कर्म कर, सन्नाह की शोभा से आकर, उस राक्षसेंद्र के समक्ष अवनत हो रहे। उन राक्षसों को देखकर वह क्रोध से बोला—"रोज-रोज (क्रमशः) मेरी समस्त सेना इस प्रकार क्षीण हो गई। समस्त भृत्यों का मरना, अमरेंद्र विक्रमवाला वह खर, अमित बलोदग्र इन्द्रजित, वह कुंभकर्ण, वह प्रहस्त, वह कुंभ, शूर निकुम्भ, भीम विक्रम से विजृंभित अतिकाय, वह महाकाय, वह महोदर, वह सुरांतक, वह नरांतक, भासुर-यश वाला अकंपन, कंपन (ये सब), नाकाधिपति को भी युद्ध में सामना कर सकनेवाले, मेरे लिए मृत हुए।

नटुगान शत्रुल नंदऱ दुनिमि । पटुपराक्रममुन बगनीगुवाड; ६२१०
मीऱि ना शरमुलु मिन्नुलु मुट्ट । नेऱुलु जलधुलु नेऱुगराकुंड
नखिलंबु गप्पुचु नच्चेरुवार । निखिल वानरुलनु नेडु निर्जितु;
नेपुन नल्क ने नेयु बाणम्मु । लापुंखमुग गाडि यगचरास्यमुलु
नाळमुल् गलिगिन नवपंकजमुल । बोलंग नेडाजिभूमिगैसेतु;
‘मगलु दनूजुलु मऱि सहोदरुलु । देंगि; रिक नेव्वरु दिक्कु मा’ कनुचु
लंकापुर स्त्रीलु ललि दूलि सोलि । यिंक नी शोकाब्धि नेट्टुलीदेदरु ?
मार्तुर बोलियिंचि मऱि पुरजनुल । यार्ति वापुदु; शोकमडचेद गडगि–
नेडाजि ब्रतिपक्ष निकरसैन्यमुल । वाडि बाणंबुल वडि द्रुंचिवैचि
करमोप्प फेरव कंक गृध्रमुलु । बोरि बिशाच प्रेत भूत जालमुलु
दनिवोव मांसरक्तंबुल दृप्ति यीनरितु” । ननुचु युद्धोन्मत्तु मत्तु ६२२०
नक्षीणबलु विरूपाक्षु वीक्षिंचि । “यी क्षणंबुन मीरु नेल्ल राक्षसुलु
ननिकि नेतेंडुः नाकरदंबु देर । बनपुडु, नेडु ना पटु सायकमुलु
घनुलैन रामलक्ष्मणुल प्राणमुलु । गोनि वारि रुधिरमुल् ग्रोल गोरेडिनि;

मेरा गर्व नष्ट हो गया। ऐसा होने पर समस्त शत्रुओं का संहार कर, पटु पराक्रम से बदला लूंगा ।। ६२१० ।।

—विजृंभित होकर, मेरे शरों के आकाश छू लेने पर, नदी-समुद्र जान न पड़े, ऐसा समस्त (सृष्टि) को आच्छादित करने पर, आश्चर्यप्रद रूप से आज समस्त वानरों को मार डालूंगा। विजृंभित हो, क्रोध से मेरे चलाए बाणों के आपुंख (अंतिम भाग तक) गड़कर, अगचरों के सिर, नालयुक्त नव-पंकजों के समान दीखें, आज युद्ध में ऐसा कर दूंगा। ‘पति, तनूज, फिर सहोदर मरे। अब हमारी गति कौन है ?’ ऐसा कहती हुई लंकापुर की स्त्रियाँ लड़खड़ाकर आज इस शोकाब्धि को कैसे पार करेंगी ? शत्रुओं का संहार कर, पुरजनों की आर्ति को दूर करूँगा। सप्रयत्न शोक को दूर करूँगा। आज युद्ध में प्रतिपक्ष के सैन्य-निकर को निशित बाणों से झट खंडित कर देकर, बड़ी शोभा से फेरव (सियार), कंक, गृध्र, फिर पिशाच, प्रेत, भूत-जालों को मांस और रक्तों से तृप्त कर दूंगा।” (ऐसा) कहते हुए, युद्धोन्मत्त, मत्त, ।। ६२२० ।।

—अक्षीण बलवाले विरूपाक्ष को देखकर (कहा) —“इसी क्षण तुम समस्त राक्षस युद्ध के लिए आ जाओ। मेरे लिए रथ लाने भेज दो। आज मेरे पटु-सायक (-बाण) महान् राम लक्ष्मणों के प्राण ले, उनके रुधिर का

शतसंख्यलोक्कोक्क सायकंबुननु । मृति बोंदु गपिकोटिमीद नेसेदनु;
ननिकि बलाध्यक्षुलगुवारि जूचि । कोनिरंडु सेनल गूर्चुक वेग"

रावणुडु रेंडवसारि युद्धमुनकु वेडलुट

नन वारु पिलिपिंप नखिल राक्षसुलु । विनुवीथि यद्रुवंग वीक नार्चुचुनु
गरवाल चक्र भीकर भिंडिवाल । परशु शूल प्रास पट्टिस गदलु
मुसलंबुलुनु गाढ मुद्गरंबुलुनु । नेसगेडु शक्तुलनेक विचित्र
विविधायुधंबुलु वेलुग नेतेंचि । रविरळोत्साहंबुलडरंग नंत;
दनुजुलु नानास्त्रततुलतो गूड । दिनकर प्रभगल तेरु देच्चुटयु
६२३०
रमणीय रत्नांशुराजि विराजि । तमुलैन कर्णावतंसंबुलमर
बदिकंठमुल रत्नपदकमुल् ग्राल । बदिमुखंबुल वितपंतमुल् दनर
महनीय केयूर मणिकंकणादि । बहुभूषणांकित बाहुदंडमुल
शरशरासन खड्ग चक्रासि परशु । परिघादि साधनप्रकरमुल् मेऱय
'दिवजारि चेऱबेट्टि दिनकरु नोकनि,। दिविनोक्क दिनमणि
दिरुगुचुन्नाडु;

पान करना चाहते हैं। एक-एक सायक से शतसंख्या में मर जाएँ, ऐसा कपिकोटियों पर वाण प्रयोग कर दूँगा। युद्ध के लिए बलाध्यक्षों को देख (चयन) कर, सेनाओं को समायत्त कर शीघ्र आओ"।

रावण का दूसरी बार युद्ध के लिए निकलना

—(ऐसा) कहने पर, उनके बुलवाने पर, अखिल राक्षस साहस से सिंहनाद करते हुए जिससे विनुवीथि (आकाश) फट जाए, करवाल, चक्र, भीकर भिंडिवाल, परशु, शूल, प्रास, पट्टिस, गदाएँ, मुसल, गाढ़-मुद्गर (तथा) अनेक विचित्र विविध-आयुधों के प्रकाशित होने पर, अविरल उत्साह से आए। तब दनुजों के नाना-अस्त्रततियों से युक्त हो, दिनकर-प्रभावाले रथ को लाने पर,॥ ६२३० ॥

—रमणीय रत्न-अंशु-विराजित कर्णावतंसों के विलसित होने पर, दसों कंठों में रत्नपदकों के शोभित होने पर, दसों मुखों से विचित्र अहंतापूर्ण वाक्यों के निकलते रहने पर, महनीय केयूर मणिकंकण आदि बहु भूषणों से अंकित (अलंकृत) बाहुदंडों में शर, शरासन, खड्ग, चक्र, असि, परशु, परिघा आदि साधन-प्रकरों के प्रकाशित होने पर, 'दिवजारि ने एक दिनकर को कारा में रखा, आकाश में एक दिनमणि घूम रहा है, सोचने पर मानों

तलप दक्किन भानुदशकमो' यनग । दलकॊनि कोटीर दशकंबु वॆलुग
नंत नादशकंठु डारथंबॆक्कि । दंतिरथाश्वपदातुल नडव
बट्टुतर निस्साण भांकार वीर । भट सिंहनादादि बहुनिनादमुल
विलयकालाभीलवेळ घूर्णिल्लु । जलराशितो लंक सरिवोलुचुंडॆ;
नविरळ वंदिजनावलि विनुत । रवमुतोडुत नुत्तरद्वारमुननु ६२४०

बलुवडि वॆलुवडि पौलस्त्यमुख्यु । डलुक युद्धोन्मत्तु ना विरूपाक्षु
मत्तुनि वीक्षिंचि महि व्रय्यवार । नॊत्तिलि यार्चुचु नोलि ना लंक
वॆडलंग रविदीप्ति वॆलवॆल बाऱॆ– । नडरि दिक्कुलु निंडॆ नंधकारंबु;
धरणि गंपिंचॆ: रथंबुलु विऱिगॆ, । दुरगंबुलॊऱग, नॆत्तुरु वान गुरिसॆ–
गडु गीडु शकुनमुल् गानंग बडिन । गडिमि डिपक दशकंधरुंडडरॆ–
लंकेशु नाना बलंबुल जूचि । पंकजगर्भांडभांडमुल् वगुल
निगुडु नार्पुलतॊड निखिल वानरुलु । नॊगि वीकतो दाकिरुग्रदानवुल–
गलुषिंचि यालोन गपिसेन गिट्टि । बलमुलु नॆऱयंग बंतमुल् मॆऱय
गऱकु राक्षसुलु नुग्रमुग नेयुदुरु । नॆऱकुलु दूरंग निशित बाणमुल–

शेष भानु-दशक हो' ऐसा लगकर दस किरीटों के चमकते रहने पर, तब वह दशकंठ वाला उस रथ पर आरूढ़ हो, दंति, रथ, अश्व, पदातियों के चल पड़ने पर, लंका (नगर) पट्टतर निस्साणों के भांकार, वीर भटों के सिंहनाद आदि बहु निनादों से युक्त हो विलयकाल के आभील वेला में घूर्णित होने वाले जलराशि (समुद्र) की समता कर रहा था। अविरल वंदि जनावली के विनुत (प्रशंसित) रवों के साथ, उत्तर द्वार से ।। ६२४० ।।

—बरज़ोरी निकलकर पौलस्त्य-मुख्य (रावण) के क्रोध से युद्धोन्मत्त, विरूपाक्ष (तथा) मत्त को देखकर, महि फटकर, अवनत हो जाए ऐसा सिंहनाद करते हुए, क्रम से उस लंका से निकलने पर रवि की दीप्ति विवर्ण हो गई, दिशाओं में फैलकर अंधकार भर गया, धरणि कंपित हो उठी, रथ टूट गए, तुरंग झुक गए, रक्त की वर्षा हुई, (इस प्रकार) अधिक अपशकुनों के दिखाई पड़ने पर भी, साहस न छोड़कर, दशकंधर विजृंभित हुआ। लंकेश के नाना बलों को देखकर, पंकज-गर्भांड-भांड टूट जाएँ, उद्धत सिंहनादों के साथ समस्त वानरों ने लगन के साथ, साहस से उग्र दानवों का सामना किया। क्रुद्ध हो, उतने में, कपिसेना के नियराकर, बल के विजृंभित होने पर, स्पर्धा के प्रकाशित होने पर, क्रूर राक्षस मर्मस्थानों में गड़ जाएँ ऐसा उग्रता से निशित बाण चलाते। अधिक विजृंभित हो साहस से मुसल, तोमर, शक्ति, मुद्गर, चक्र-विसर (समूह)

मुसल तोमर शक्ति मुद्गर चक्र । विसरमुल् वैतुरु वीक बैल्लेचि ६२५०
यंकुश कुंत शूलादुल बौडुतु । रंकिचि ब्रेयुदुराभील गदल;
नडिदमुल् जळिपिचि यलुक नंगमुलु। कडिकंडलुग जेसि कडिमि जूपुदुरु:
कपुलुनु गुपितुलै कडिमि वारिंचि । विपुल शैलंबुल वृक्ष-जालमुल
बददंतनख वाल पाशहस्तमुल । नदयुलै या राक्षसावलि नैल्ल
शिरलुमु नरमुलु जेतुलुमूतु । लुरमुल बाहुवुलोष्ठकंठमुलु
द्राचियु नौंचियु दीव्र वैखरुलु । जिंचियु वंचियु जिदिमियु नदिमि
तरमिडि निब्भंगि दनुजुल नौंप । दरुचरावळि जूचि दनुजेशुडपुडु
दारुणाकृति वत्स दंताश्वकर्ण । नाराच भल्लादि नानास्त्रवितति
नगचररुधिरंबु लवनिपै दौरुग । निगुडिंचि यौक्कौक्क निशित बाणमुन
गपिपंचकंबुनु गपिसप्तकंबु । गपिनवकंबुनु गदनरंगमुन ६२६०
गुदुलु ग्रुच्चिनक्रिय गूलनेसियुनु । बदलक तरुचरुल् वैचु शैलमुलु
घनतरुल् शकलमुल्गा जेसि मऱियु। गनलि येनम्मुल गंधमादनुनि
बदुनेन्मिदिटनु बनसुनि मऱियु । बदियिट नीलु नेबदियिट नलुनि

फेंक देते । अंकुश, कुंत, शूल आदि चुभोते, उल्लसित हो आभील गदाएँ फेंक देते ।। ६२५० ।।

—खड्ग हिला-चलाकर, क्रोध से, अंगों को टुकड़े-टुकड़े कर अपनी सामर्थ्य प्रदर्शित करते । कपि भी कुपित हो सामर्थ्य से विपुल शैलों से, वृक्ष-समूहों से, पद, दंत, नख, वालपाश, हस्तों से अदय (निर्दय) हो, समस्त राक्षसावली के शिर, नस, हाथ, मुख, उर, बाहु, ओष्ठ, कंठों को कुतर देकर, पीडित कर तीव्र विधान से फाड़कर, झुकाकर, मसल देकर, दबाकर, इस प्रकार क्रम से दनुजों को हरा देने पर, तरुचरावली को देख तब दनुजेश ने दारुण-आकृति से वत्सदंत, अश्वकर्ण, नाराच, भल्ल आदि नानास्त्र-वितति से नगचरों के रुधिर को अवनि पर प्रवाहित किया । एक-एक निशित बाण से कपि पंचक (पाँच कपियों) को, कपिसप्तक को, कपि-नवक (नौ) को, युद्ध भूमि में ।। ६२६० ।।

—ऐसा मार गिराया मानों बाण से गूँथ दिया हो । (तब भी) न छोड़कर तरुचरों द्वारा फेंके जानेवाले शैलों को, घन-तरुओं को शकल (टुकड़े) कर दिया । और भी क्रुद्ध हो पाँच बाणों से गंधमादन को, अठारह से

द्विविदु नारिंटनु विनतुनेडिंट । बवननंदनुनि डेब्बदिट गवाक्षु
नैदुनैदुल मैंदु नैदिंट गुमुदु । नैदिंट गोमुखु नैदिंट ऋषभु
नेडिंट शरभु बदेडिंट गजुनि । नेडिंट गवयुनि नेडिंट हरुनि
दरिमि योक्कुम्मडि दारुनि ग्रथनु । जेरि मूट सायकाशीति नंगदुनि
दक्किन वनचरतति नेल गूल । बेक्कु बाणंबुल बेचि युग्रतनु
बेसनेसि मगटिमि वीकतो मेऱय । नसुरेशु मुनुमुनु नंदंद कपुलु
नडुमुलु निशितबाणंबुल विऱिगि । पडुवारु नेलनु बडि तूलुवारु
६२७०

नुरमुलु व्रय्यलै योगि गूलुवारु । जरणमुल् दुनियलै सरि ऋग्गुवारु
जेतुलु देगुवारु शिरमुलु वगिलि । भूतलंबुन बडि पोरलेडिवारु
गळमुलूरुलुनु जंघलु द्रेव्व नोच्चि । बलुविडि मूल्गुचु बडि पोरल्वारु
नंगंबुलिवियवि यनि येंचराक । संगरांगणमुन जदिसिनवारु
बाणमुल् दाकिन बऱचुचु नडुम । ब्राणमुल् वोयि युर्वर बडुवारु
नय्युंडि; रप्पुडय्यसुरेशु जूचि । चय्यन रणमुन सैरिपलेक
वानरुल् बाऱिरि वसुध गंपिप । दानवेंद्रुडुनु दविलि वेन्वेंट

पनस को, दस से नील को, पचास से नल को, छः से द्विविद को, सात से विनत को, सत्तर से पवननन्दन को, पच्चीस से गवाक्ष को, पाँच से मैंद को, पाँच से कुमुद को, पांच से गोमुख को, सात से ऋषभ को, सत्रह से गज को, सात से गवय को, सात से हर को, पीछा कर एक साथ तार और ऋथन को तीन-तीन से (तथा) सायकाशीति (अस्सी बाणों) से अंगद को, (इस प्रकार) शेष वनचर-तति ज़मीन पर गिर जाए ऐसा विजृंभित हो, उग्रता से, झट (बाण) चलाकर पौरुष (तथा) साहस से प्रकाशित हुआ। (तब) असुरेश की सेना के अग्रभाग में जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) कपि ऐसे थे जो कि निशित बाणों से कमरों के टूट जाने पर गिरनेवाले, ज़मीन पर गिरकर तड़पनेवाले, ।। ६२७० ।।

—वृक्षों के फट जाने से क्रम से गिरनेवाले, चरणों के कट जाने से गिर पड़नेवाले, हाथ कट जाने वाले, शिरों के फट जाने से भूतल पर गिरकर लोटनेवाले, यह फलाना अंग है, ऐसा पता न चले, इस प्रकार समरांगण में मसल दिए गए, बाणों के लगने से भागते हुए बीच में प्राणों के निकल जाने से ज़मीन पर गिर पड़नेवाले (ऐसे थे वानर)। तब उस असुरेश को देखकर, रण में उसे झट सह न सक, वानर ऐसे भाग खड़े हुए जिससे वसुधा काँप उठी। दानवेन्द्र भी लगकर पीछा करते झट आने पर, "क्यों भागते हो ? रुको, रुको" कहने पर, न रुककर भागनेवाली सेनाओं की

बलुवडि नेतेर "बाऱ्नेमिटिकि ?। निलुनिलुं" डनि पल्कि निलुवक पाऱु
सेनल गाव सुषेणुनि नुनिचि। भानुसूनुडु वृक्षपाणियै नडचॆ
दरुशैलहस्तुलै तरुचरपतुलु। निरुगॆलंकुल वॆन्क नेपु दीपिंचि ६२८०
नडव नातडु सिंहनादंबु सेसि। तॊंडरि कालाग्निरुद्रुनिविधंबुननु
वृक्षताडनमुल वेॆस जंपि चंपि। वृक्ष शिलाघोर वृष्टि नंदंद
राक्षससेनपै रयमुन गुरिय। राक्षसवरुलु शिरंबुलु वगिलि
कुलिशोग्रहति भग्नकूटंबुलैन। कुलशैलमुल भंगि गूलिरिः मऱियु
रविनंदनुडु ग्रोधरक्ताक्षुडगचु। नवनिधराभीलहस्तुडै नडव

सुग्रीवुनिचे विरूपाक्षुडु मॊदलगु राक्षसवीरुलु मडियुट

नंत विरूपाक्षु डधिकरोषमुन। बंतंबु मॆऱयंग वयि देरु वऱपि
विलु-गुणध्वनि सेसि विपुलनिर्घात। तुलितंबुलगु वाडितूपुल नेय
नवि लॆक्कसेयक यरदंबु पैकि। रविजुंडु लंघिचि रथसूतहरुल
बृथिवीधरंबुन बृथुशक्तितोड। बृथिविपै बडनेय बृथिविकि नुऱिकि
विरथुडय्युनु दैत्यवीरुंडु विविध। शरमुलेयुचु बादचारियै निलुव
६२९०

रक्षा के लिए सुषेण को रख (नियुक्त) कर, भानुसून (सुग्रीव) वृक्ष हाथ में ले चल पड़ा। तरु (और) शैल हाथ में ले तरुचरपतियों के दोनों तरफ़ (और) पीछे औन्नत्य के दीप्त होने पर, ।। ६२८० ।।

—चलने पर, उसने सिंहनाद कर, लगकर कालाग्नि-रुद्र की भाँति, वृक्ष-ताड़नों से झट संहार करके, अति वेग से राक्षस-सेना पर सर्वत्र वृक्ष-शिलाओं की घोर-वृष्टि की। (तब) राक्षस-वर शिरों के फूटने पर, कुलिश (वज्र) के उग्र-आघात से भग्नकूट (टूटे शिखरों) वाले कुलशैलों के समान गिर पड़े। और भी (उसके बाद) रविनन्दन क्रोध से रक्ताक्ष होते हुए, अवनीधर (पर्वत) से युक्त होने से आभील (भयंकर) -हस्तवाला होता हुआ चलने पर,

सुग्रीव के हाथ विरूपाक्ष आदि राक्षसवीरों का मरना

—तब विरूपाक्ष ने अधिक रोष से, स्पर्धा से दीप्त हो (सुग्रीव) पर रथ चलाकर, धनुष के गुण (ज्या) की ध्वनि कर, विपुल-निर्घात (-कुलिश) -सम निशित बाण चलाए। उनकी परवाह न कर, रविज ने रथ पर लाँघकर, रथ-सूत-हरियों (-घोड़ों) को पृथ्वीधर (पर्वत) से पृथुशक्ति से पृथ्वी पर मार गिराया। (तब) पृथ्वी पर लाँघकर, विरथ होकर भी दैत्यवीर ने पैदल खड़े होकर शर चलाए ।। ६२९० ।।

नमरारि पनुपुन नखिलायुधमुलु । समकूर्चि मावतुल् समदसामजमु
दॆच्चिन वॆस नॆक्कि दीकॊल्पि कपुल । विच्चलविडि नेसि विक्रमंबॆसग
नुग्रदानवुलार्व नुग्रबाणमुल । नुग्रांशुतनयुपै नुग्रत नेसॆ,
नक्कजंबुग विरूपाक्षुंडु मऱियु । बॆक्कायुधंबुल बॆक्कु बाणमुल
वसमऱ नेयंग वसुध गंपिप । वॆस बाऱु तनवारि वॆऱवकुंडनुचु
नलुकतो सुग्रीवुडतनि निर्जिप । दलपोय ग्रथनुडन् तरुचरोत्तमुडु
विपुल विक्रममुन वृक्षंबु वॆऱिकि । कुपितुडै येनुगु कुंभंबु वैव
दऱुचुगा शोणितधारलु दॊरुग । बिऱिदिकि नॊकविंटि पॆट्टोसरिंचि
यदि स्रॊगग नेलकु नसुरुंडु दाटि । कदुरुचु खेटक खड्गमुल् गॊनुचु
मर्कटपति दाक माकॊनि वानि । नर्कसूनुडु वैचॆ नतुलशैलमुन
६३००

नक्कॊंड दॆगव्रेसॆ नडरि दानवुडु । रक्कसु बिडिकिट रविजुंडु वॊडिचॆ
नालोन गरवाल मंकिंचि यसुर । वालितम्मुनि नेसॆ वडि चॆंडकपुडु,
पिडिकिटि पोटुन बॆलुच दानवुडु । नडिदंबु व्रेटुन नर्कनंदनुडु

—अमरारी (रावण) के आदेश से अखिल-आयुधों से सज्जित कर माहूतों के समद-सामज (मस्त हाथी) को ले आने पर, झट उस पर सवार होकर, सामना कर, विश्रृंखलता से कपियों को मार कर (या बाण चलाकर) विक्रम के बढ़ने पर, उग्र दानवों के सिंहनाद करने पर, उग्रांशुतनय पर उग्र बाण चलाए। आश्चर्यप्रद रूप से विरूपाक्ष के और अनेक आयुधों, बाणों को मर्मांतक रूप से चलाने पर, वसुधा को कंपित करते हुए भागनेवाले अपने लोगों को अभय प्रदान करते हुए, क्रोध से सुग्रीव ने उसे निर्जित करने की सोची। क्रथन नामक तरुचरोत्तम ने विपुल विक्रम से वृक्ष को उखाड़कर, क्रुद्ध हो, हाथी के कुम्भ पर दे मारा। (तो) अनारत शोणित की धाराओं के प्रवाहित होने पर, पीछे की ओर धनुष से निकलकर बाण जितनी दूर जाता है, उतनी दूर जाकर वह झुक (बैठ) गया तो असुर (विरूपाक्ष) ने (उस पर से) लाँघकर, विजृंभित हो, खेटक (ढाल) और खड्ग ले मर्कटपति का सामना किया। (उसका) सामना कर अर्कसून ने उस पर अतुल शैल डाल दिया ॥ ६३०० ॥

—विजृंभित हो दानव ने उस पर्वत को खंडित कर दिया, राक्षस को रविज ने मुष्टि से मारा, इतने में करवाल हिलाकर असुर ने, तेज को न खोकर, वालि के अनुज को दे मारा। मुष्टिघात से बली दानव (और) करवाल के आघात से अर्कनन्दन एक साथ गिर गए और एक साथ होश में आकर,

नॊक्कट बडियंत नॊक्कट दॆलिसि । यॊक्कलागुन बोरि रोगि
नुक्कुमिगिलि;
यप्पुडु सुग्रीवुडऱचेत व्रेय । दप्पिचुकॊनि हेति दनुजुंडु व्रेसॆ,
गरवाल निहति कग्गति दप्प नुऱिकि । करहेति जडिसिपो गपिराजु
व्रेसॆ;
मगटिमि नंतलो मल्लयुद्धमुन । मिगिलिन वॆरवुन मॆऱसि पोरुचुनु
दिनवल्लभुल भंगि देजरिल्लुचुनु । गनलु कालाग्नुलकरणि मंडुचुनु
बलबिडौजुल माड्कि बाहुगर्वमुन । वॆलयुचु निरुवुरु विजयंबु गोर
नक्कजंबगु शक्ति नऱचेत निनजु । मॊक्कलंबुन वाडु मूर्छिल्ल नेसि
६३१०
करवालहस्तुडै कपुलपै बाऱ । दरणिजुडालोन दन मूर्छ दॆलिसि
पऱतॆंचि निर्घातपातंबु तॆलुपु । नऱचेत ना विरूपाक्षु वक्षंबु
नॆऱलावुतो नेय नॆत्तुरु ग्रक्कि । यॊऱलुचु धर गूलॆ नुग्रदानुवुडु,
तरुचरुल् सॆलगिरि; दानवुल् गलगि । तिरुगुडुवडिरंत दीनास्युलगुचु,
स्रुक्कि युद्धोन्मत्तु जूचि रावणुडु । तक्कनि कडकतो यॆंतयु दोप बलिक
"गंटॆ या सुग्रीवु कडिमि ? मीयन्न । गंटॆ विरूपाक्षु ? गदनरंगमुन

एक साथ अधिक वीरता से जूझ पड़े । तब सुग्रीव के हथेली से मारने पर बचकर दनुज ने तलवार चलाई । करवाल-निहति (आघात) से तब बच निकल कर, कपिराज ने कर-हेति (हाथ रूपी करवाल) से ऐसा मारा कि वह (राक्षस) भीत हो जाए । तब पौरुष से मल्लयुद्ध में श्रेष्ठ विधि से दीप्त हो जूझते हुए, दिन-वल्लभों (सूर्यों) की भाँति प्रकाशित होते हुए, प्रज्जलित कालाग्नियों के समान बलते हुए बल (और) बिडौज के समान बाहुगर्व से विलसित होते हुए दोनों विजय की इच्छा से (लड़ते रहे तब) आश्चर्यप्रद शक्ति से हथेली से इनज को निर्ममता से वह मूर्च्छित कर, ।। ६३१० ।।

—करवालधारी हो कपियों पर कूद पड़ा । तरणिज ने इतने में मूर्च्छा से होश में आकर, निर्घात-पात के समान हथेली से उस विरूपाक्ष के वक्ष पर बड़ी सामर्थ्य से प्रहार किया (तो) खून उगलकर, वह उग्रदानव चीखते हुए ज़मीन पर गिर पड़ा । तरुचर उत्साहित हुए, दानव दीनास्य (दीनमुख) वाले होते हुए, व्याकुल हो, लौट पड़े । कमज़ोर पड़ रावण ने युद्धोन्मत्त को देख दुर्निवार साहस के अधिकता से दीखने पर (यों) कहा—'देखा उस सुग्रीव के साहस को ? तुम्हारे अग्रज विरूपाक्ष को

बडिरनेकासुर भटुलुनु । बॆक्कु मडिसॆ गुंजरमुलु; अग्गॆ नश्वमुलु—
विऱिगॆ रथंबुलु विरिसॆ मूकलुनु । नुऱुकुचु कपुलदॆ युब्बुचुन्नारु;
समयंबु नीकिदि समरंबु सेय । समरांगणंबुन समयिंपु रिपुल''
नन विनि यनि गूलिन यखिलेशुडैन । मनुजेशु गलयंग मदि निश्चयिंचि
६३२०

तरुचरानीकंबु दरियंग जॊच्चि । शर गदा खड्गादि सकलायुधमुल
नडरि विरूपाक्षुननुजुंडु कपुल । गडिमिमै नॊंप्पिप गनि भानुसुतुडु
नगमॆत्तिवैचिन नडुमनॆ दानि । दॆगनेसॆ दनुजु; डादिनकरात्मजुडु
तनरु सालमुवैचॆ; दानि दानवुडु । दुनियलुगा मूडु तूपुल नेसि
लक्षिंचि बाणजालमुलेयुचुंड । राक्षसुलदरंग रथमुपै कुऱिकि
भानुसूनुडु वानि परिघायुधमुन । वानि केतुवु विल्लु वडि द्रुंचि वैचि
रथसूतु दॆगनेसि रथतुरंगमुल । बृथिविपै बडनेय बृथुलवेगमुन
बृथिविकि लंघिंचि पॆलुच दानवुडु । पृथुगदापाणियै पृथिविपै निलुव
निरुवुरु बोराडिरिल चलिंयिप । बरिघगदाभील बाहुवुल् मॆऱय

देखा ? अनेक असुर भट (सैनिक) कदनरंग (युद्धभूमि) में गिर गए, अनेक कुंजर मर गए, अश्व दब गए, रथ टूट गए, सेनाएँ तितर-बितर हो गईं, दौड़ते-भागते कपि फूल रहे हैं। समर करने के लिए यह तुम्हारे लिए समय है। समरांगण में रिपुओं का संहार कर दो।' (ऐसा) कहने पर सुनकर, युद्ध में गिर (मर) कर अखिलेश (समस्त सृष्टि के ईश) मनुजेश में लीन होने की मन में निश्चय कर, ॥ ६३२० ॥

—तरुचर-आनीक (-सेना) में घुस-पैठकर, शर, गदा, खड्ग आदि सकल आयुधों से विजृंभित हो, विरूपाक्ष के अनुज ने कपियों को साहस से पीड़ित किया। (उसे) देख भानुसुत ने नग (पर्वत) उठाकर डाल दिया तो उसे बीच में ही दनुज ने खंडित कर दिया। दिनकरात्मज ने शोभित साल (वृक्ष) (उठाकर) डाल दिया। तो उसे दानव ने तीन बाणों से टुकड़े कर दिया और लक्ष्य करके बाण चलाने लगा तो राक्षस भीत हो जाएँ ऐसा (उसके) रथ पर उछलकूद कर, भानुसून ने उसी के परिघा-आयुध से उसके केतु, धनुष को झट तोड़ देकर, रथ-सूत (सारथी) को काट देकर, रथ-तुरंगों को पृथ्वी पर पटक दिया तो पृथुलवेग से पृथ्वी पर लाँघकर बली दानव पृथु गदापाणि होकर पृथ्वी पर खड़ा हो गया। दोनों ऐसा लड़े जिससे पृथ्वी कंपित हो जाए। परिघा (तथा) गदा से आभील बने करों के दीप्त होने पर, कंठीरवों (सिंहों) के समान

गंठीरवंबुल करणि गर्जिलुचु । गंठमुल् वदनमुल् गरमुलंसमुलु ६३३०
जरणमुल् नखमुलु जानुजंघलुनु । नुरमुलु वॆन्नुलु नूरुलु व्रेळ्ळु
बरुलु बिरुदुलु जब्बलु मध्यमुलुनु । शिरमुलु जॆवुलु नासिकमुलोष्ठमुलु
वरुसतो नप्पुडु वडि दाकि ताकि । वॆरवुल् चित्रमुल् वॆस जॆल्लुचुंड
सरिगाग नत्यंत साहसलील । निरुवुरु बोरिरनेकमार्गमुल;
नालोन नॊंडॊरुकंटॆ मुन् दॆलिसि । वडि नार्तुरॆंतयु वसुध गंपिप;
दानुवुडुरुगदादंडंबु रॆंडु । सेनलवारु नच्चॆरुवंद द्रिप्पि
भानुजु बडवैव बडिलेचि वच्चि । भानुसूनुडु वैचै बरिघंबु द्रिप्पि:
दनुजांगनिहति दत्परिघंबु दुनिय । गनलुचु दनुजुंडु करवालमुननु
वनचरपतिवैव वडि दत्कृपाण । मिनजुंडु गॊनि दीप्तुलॆसग नंकिचि
६३४०

विकलमै घर डॊल्ल व्रेसॆ दैतेयु । मकरकुंडल दीप्तिमयमस्तकंबु;
गनुगॊनि बिड्गि राक्षसुलु रावणुनि । वॆनुककु लंककु वॆस बाड्रिपुडु,
बलगर्वमॆसग सुपार्श्वुडंगदुनि । बलुसेनपै गिट्टि पटुसायकमुल
वानरशिरमुलु वडि गूलनेसि । तोन हस्तंबुलु द्रुंचॆ गॊंदड्नु;

गरजते हुए, तब कंठ, वदन, कर, अंस (कंधे), ॥ ६३३० ॥

—चरण, नख, जानु, जंघा, उर, पृष्ठ, ऊरु, अंगुल, चूतड़, ऊर के ऊपर का भाग, कमर, सिर, कान, नासिका, ओष्ठ आदि को क्रम से झट मार-मार कर, विचित्र उपायों के विलसित होने पर, समविधि से अत्यन्त साहसलीला से अनेक प्रकार से दोनों लड़े। इतने में परिघा-गदा के आभील-आघात से वे एक साथ गिरते। गिरकर, उतने से साहस से एक दूसरे से पहले होश में आकर, झट ऐसा सिंहनाद करते कि वसुधा कंपित हो जाए। दानव ने उरु-गदा-दंड को ऐसा घुमाकर कि दोनों सेनाओं वाले चकित हो जाएँ, भानुज पर फेंक दिया। गिरकर, उठकर, आकर, भानुसून ने परिघा घुमाकर डाल दिया। दनुज के अंग-निहति से वह परिघा चूर-चूर हो गई। क्रुद्ध होते हुए दनुज ने करवाल से वनचर-पति को मारा। इनज ने झट उस करवाल को ले, दीप्त होते हुए, चमकाकर, ॥ ६३४० ॥

—विकल हो, धरा पर लोट जाए ऐसा दैतेय (राक्षस) के मकर कुंडलमय मस्तक को काट दिया। (उसे) देख, टूटकर, तब राक्षस झट रावण की आड़ में लंका को भाग गए। बलगर्व से विजृंभित हो सुपार्श्व ने अंगद

गोंदर बाहुवुल् घोर बाणमुल । नंदंद तुनुमाडेः नंत वानरुलु
ना निशाचरुनकु ननि बाऱ जूचि । वानि तेरिकि दाटि वालिनंदनुडु
पस येरुपड वानि परिघायुधंबु । वेंस बुच्चुकोंनि नेल विवशुडै तूल
वडि व्रेसें; नट जांबवंतुडु नोक्क । वेंडद पाषाणंबु वीकतो नेत्ति
यरुदार नंकिंचि यरदंबु विऱुग । हरुलु सूतुडु जाव नलुकतो वैचें;
दनुजुडालो देऱि दशसायकमुल । गनलुचु नंगदु घनभुजंबेसि ६३५०
यंबकत्रयमुन नधिकरोषमुन । जांबवंतुनि नेसि चलनंबु नोंद
नेसें गवाक्षुनि निषुपंचकमुन; । ना समयंबुन नंगदुंडलिगि
करयुगंबुन बरिघमु द्रिप्पिवैव । धरणिपै मूर्छिलिल दनुजुंडु वडिन
वानि चापमु द्रुंप वाडंत देंलिसि । वानर वीरुनि वक्षंबु वगुल
बरशुवु गोंनि व्रेय बलु मूर्छ नोंदि । सुरराजनंदनसूनुंडु देंलिसि
वज्रसन्निभमुष्टि वडि गिट्टि पोंडुव । वज्रंबुताकुन वसुधाधरंबु
वसुध गूलिनक्रिय वाडाजि गूलें । नेंसग देवतालार्चि रेचि मिन्नद्रुव;
नंत राक्षसबलंबतिभीति बाऱ । नंतयु जूचि दशाननुंडनियें;

की अधिक सेना के निकट जा, पटु सायकों से वानर-शिरों को झट गिरा देकर, साथ ही कुछ के हाथ काट दिए। घोर-बाणों से जहाँ-तहाँ कुछ के बाहु काट दिए। तब वानरों को उस निशाचर के युद्ध से भागते देख, उसके रथ पर लांघकर वालिनन्दन ने, सामर्थ्य दिखाई पड़े ऐसा, उसके परिघा-आयुध को झट (अपने हाथ में) लेकर ऐसा झट मारा कि वह विवश हो ज़मीन पर गिर पड़ा। तब जांबवान ने एक विशाल पाषाण को साहस से उठाकर, अनुपम रूप से हिलाकर, रथ टूट जाए, हरि (अश्व) (और) सूत मर जाए, ऐसा क्रोध से डाल दिया। इतने में दनुज ने होश में आकर क्रुद्ध होते हुए दश-सायकों को अंगद के घन-भुजा पर चलाया, ।। ६३५० ।।

—अधिक रोष से अंबक-त्रय से जांबवान को मारा, इषु-पंचक गवाक्ष पर चलाए, जिससे वह विचलित हो गया। उस पर अंगद ने क्रुद्ध हो, करयुग से परिघा को घुमाकर डाल दिया तो दनुज मूर्च्छित हो धरणी पर गिर पड़ा। गिरने पर (अंगद के) उसके धनुष को तोड़ देने पर, तब उसने होश में आकर परशु लेकर ऐसा चलाया कि वानर वीर का वक्ष फट गया। सुरराज-नन्दन (वालि) -सून ने अधिक मूर्च्छित हो, फिर होश में आकर, झट निकट जा, वज्र-सन्निभ-मुष्टि से मारने पर, वज्र की चोट से वसुधाधर (पर्वत) के वसुधा पर गिरने के समान, वह युद्ध में गिर पड़ा। विजृंभित हो देवताओं ने आकाश फट जाए, ऐसा सिंहनाद किया। तब

"बरुषविक्रमुडु सुपार्श्वुंडु मडिसें: । नुरुबाहुबलुडु युद्धोन्मत्तुडीलगें—
ननि गूलें ना विरूपाक्षुडु : मड़ियु । घनुलैन राक्षसुल् गडतेरिरिंक ६३६०
बलसमन्वितुलैन पार्थिवसुतुल । बलुविडि गेंलिचि ना बंधुलवलन
नेंलकौन्न शोकाग्नि नेंरियु नी लंक । गलवारि वगपेंल्ल गडकतो दीर्तु,
नविरळक्षत्रधर्मैकमूलंबु । नव जयोन्नत लक्ष्मण प्रकांडंबु
भानुनंदनमुख प्लवग शाखंबु । मानवपतिकीर्ति मंजरीकंबु
ब्रकट सीतानामफलभासुरंबु । सकलामराश्रितच्छायंबुनैन
रामद्रुमंबेनु रयमुन बेंड़िकि । ना मनोदु:खंबुनकु मंदुसेसि
येंसगेंद जगमुलो ने" नंचु नप्पु । डसुरेंशुडधिककरोषायत्तुडगुचु

रावणुडु रामलक्ष्मणुलपै गवियुट

सारथिकनियें—"नी चतुरत मेंड़सि । तेरु राघवुलपै दीव्रत बड़पु;
वारि जंपेंद नेडु; वाराजि बडिन । ता रेगुदुरु विच्चि तरुचरुल् सेंदरि"

राक्षस-सेना के अतिभीति से भागने पर, सब कुछ देखकर दशानन ने कहा—"परुष विक्रमवाला सुपार्श्व मर गया, उरु-बाहुबलवाला युद्धोन्मत मर गया, वह विरूपाक्ष युद्ध में गिर गया, और भी महान् राक्षस काम आए, ।। ६३६० ।।

—अब बल-समन्वित पार्थिव-सुतों (राजकुमारों) को बरज़ोरी जीतकर मेरे सम्बन्धियों के (मरण के) कारण स्थिर बनी-शोकाग्नि का शमन हो तथा लंका में स्थित सभी लोगों का दुख दूर हो, ऐसा साहस से बदला लूंगा। अविरल-क्षत्रधर्मैक मूलवाले, नव-जयोन्नत लक्ष्मण (रूपी) प्रकांडवाले, भानुनन्दन-मुख (-आदि) प्लवग (रूपी) शाखाओं वाले, मानवपति (राम) की कीर्ति (रूपी) मंजरीक से युक्त, प्रकट सीता नामक फल से भासुर, सकल अमरों को आश्रय देने वाली छाया से युक्त राम-द्रुम को मैं झट उखाड़कर, अपने मनोदु:ख की चिकित्सा कर, मैं जगत् में शोभित हो जाऊँगा।" (ऐसा) कहते हुए तब असुरेश ने अधिक रोष से पूर्ण होकर,

रावण का राम-लक्ष्मणों से लड़ना

—सारथी से कहा—"अपनी चतुरता से प्रकाशित होकर, तीव्रगति से रथ को राम लक्ष्मणों पर चलाओ। आज उन्हें मार डालूंगा। उनके युद्ध में गिर पड़ने पर, बिखर कर, टूटकर तरुचर (अपने आप) चले जाएंगे।"

यनविनि लाडट्ल यरदंबु वऱप । घननेमिरवमुलुत्कटमुगा जैलग ६३७०
सायकासन घन ज्यानिनादंबु । म्रोयंग निस्साणमुलु बोरुकलग
वंधिमागद सूत वरनुतुल् मिंच । नंदंद निजसेन नार्पुलुप्पोंग
दरुचरसेनपै दारुणास्त्रंबु । लरुदार निगुडिंचें नद्दशाननुडु;
अजनिर्मितंबुलौ ना बाणततुल । भुजबलंबुलु दूलि भूरेणुवेंसग
नेलगूलिरि पेल्लु निखिल प्लवंगु । ला लोन रघुरामुडनुजुंडु दानु
गोदंडपाणुलै कोपिंचि निलिचि; । रा दशाननुडुनु नलुक माकोंनग
नुडुवीथि यविंयग नुदधुलु गलग । गडुबेर्चि दिक्कुंभिकर्णमुल् वगुल
नडरु रामुनि धनुर्ज्याघोषमुनकु । गडुमानसंबुलु गलगि राक्षसुलु
गुपितदशग्रीव कोदंडयुक्त । तपनोग्रसायक ध्वनिकि वानरुलु
भयमंदि धरणिपै बडिरि युक्कडगि। रयमार नालोन रामलक्ष्मणुलु ६३८०
रविसुधांशुल भंगि रागिलि कदिय। दिविजारि राहुप्रदीप्तुडै कविसें,
नंत ना लक्ष्मणुंडतितीव्रविशिख। संततुलेसें दशग्रीवु मीद,

(ऐसा) कहने पर सुनकर, उसने वैसा ही रथ चलाया। घन-नेमि-रवों के उत्कट रूप से मुखरित होने पर, ।। ६३७० ।।

—सायकासन (धनुष) के घन-ज्या-निनाद के मुखरित होने पर, निस्साणों के बज उठने पर, वंदि-मागध-सूतों की वर प्रस्तुतियों के विवर्द्धित होने पर, सर्वत्र अपनी सेना के सिंहनादों के उमड़ने पर, दशानन ने तरुचर सेना पर अनुपम रूप से दारुणास्त्र चलाए। अज-निर्मित उन बाण समूहों से, भुजबल खोकर, भूरेणुओं (धूल) के उमड़ने पर निखिल प्लवंगों में अधिक (संख्यक) ज़मीन पर गिर गए। इतने में रघुराम अनुज के साथ कोदंडपाणि हो, क्रुद्ध हो, खड़े हो गए। उस दशानन ने क्रोध से सामना किया। आकाश फट जाए, उदधि क्षुब्ध हो जाएँ, दिक्कुंभि के कर्ण फट जाएँ, इस प्रकार विजृंभित राम के धनु:ज्या-घोष के कारण राक्षसों के मानस अधिक विकल हुए। कुपित-दशग्रीव के कोदंड से मुक्त तपन के समान उग्र-सायक-ध्वनि के कारण वानर पौरुष खोकर, भीत हो धरणी पर गिर गए। इतने में झट रामलक्ष्मणों ने, ।। ६३८० ।।

रवि (और) सुधांशु के समान उल्लसित हो नियराने पर, दिविजारि राहुप्रदीप्ति से शोभित हुआ। तब लक्ष्मण ने दशग्रीव पर अति तीव्र-विशिख-संततियाँ चलाईं। नाकेशवैरी ने उन क्रूर बाणों को बीच में ही

नडुमने तेगनेसे नाकेशवैरि । कडिदि बाणमुल: नुत्कटमुगा मड्रियु
नोक्कोक्क शरमेय नुग्रुडैवानि । नोक्कोक्क शरमुन नोगि द्रुंचिवैचि
मूडेसि शरमुलिम्मुल वडिनेय । मूडु मूडम्मुल मुरियलु सेसि
पद यम्मुलेसिन बदियिट वानि । जिदुरुपलै धर जेंदरिपोनेसि
नूरेसि येसिन नूतनगतुल । नूरुनूरम्मुल नुग्गु गाविंचि
सौमित्रि नटु रणस्थलि जिक्कु वड्रचि । रामचंद्रुनितोड रणमुसेयुटकु
दनुजाधिनाथुडुद्धति नेगुदेर । गनुगोनि समवर्ति गनि पारु करणि
गनुकनि बेंदरि मर्कटुलनि बाड्र । गनि कन्नुगव गेंपुगदुर राघवुडु
६३९०
विल्लंदि दिविजुलु विनुतिंप धरणि । दल्लडपड दाके दानवेश्वरुनि;
मुखमुल गोपंबु मुडिवड नतडु । नखिललोकातिभयंकरंबुगनु
रामुनि दाके ना रामरावणुलु । भीमाट्टहासमुल् बेरयिंचि मिंचि
सैन्यद्वयंबुन सरिनार्पुलेसग । नन्योन्य कार्मुक-ज्या-निनादमुलु
परुवडि दशदिशाभागंबुलंदु । मोरय बरस्परमुक्त बाणमुल
बरगंग नाकाशपथमेल्ल गप्पि । गुरुतरघोषमुल् घूर्णिल्ल जेय
नोंडोंटितो दाकु नुग्रबाणमुल । मंडु मंटलु नभोमंडलि निंड

काट दिया। और उत्कट रूप से एक-एक शर चलाने पर, उग्र हो उन्हें एक-एक शर से क्रम से खंडित कर, झट तीन-तीन शर चलाने पर, तीन-तीन शरों से उन्हें खंडित कर, दस बाण चलाने पर, दस (बाणों) से उन्हें टूक-टूककर धरा पर गिराकर, सौ (बाण) चलाने पर नूतन गतियों से सौ-सौ बाणों को चूरकर, सौमित्र को उधर रणस्थल में व्याकुल कर, रामचन्द्र से युद्ध करने के लिए दनुजाधिनाथ उद्धत गति से चल पड़ा। उसे देख समवर्ती (यमराज) को देखकर भागने की तरह, संभ्रम से भीत हो युद्ध (भूमि) से मर्कटों को भागते देख नेत्रद्वय में अरुणिमा के उमड़ने पर राघव ने, ॥ ६३९० ॥

—धनुष ले, दिविजों के प्रस्तुति करने पर, (और) धरणी के क्षुब्ध होने पर दानवेश्वर का सामना किया। मुखों पर क्रोध के बढ़ने पर उसने भी अखिल-लोक-अतिभयंकर रूप से राम का सामना किया। वे राम और रावण भीम अट्टहास कर, (एक दूसरे से) बढ़कर सैन्यद्वय में समान रूप से सिंहनादों के उमड़ने पर, अन्योन्य-कार्मुक-ज्मा-निनादों के शीघ्रता से दश-दिशाभागों में मुखरित होने पर, परस्पर-मुक्त (छोड़े गए)-बाणों के शोभा से समस्त आकाश मार्ग को आच्छादित कर गुरुतर-घोषों के घूर्णित करने पर, एक दूसरे से टकरानेवाले उग्रबाणों में बलने वाली ज्वालाओं के

सरिनॉप्पु निरुवुर शरलाघवमुल । गरलाघवंबुल करणि नॊंडॊरुल
मॆच्चुचु नॊंडॊरु मीरु वैचित्रि । कच्चॆरुवंदुचु ननि सेयुनपुडु
क्षोणीशुपै नॊक्क घोरतमिस्र । बाणंबु निगुडिचॆ बंक्तिकंधरुडु
६४००
आ कांडमरिन नखिल वानरुलु । जीकटि गप्पि निश्चेष्टितुलैरि;
अप्पुडु कन्नुल नलुक गॆंजाय । लॊप्पार रघुरामुडुग्रबाणमुलु
पदिपदुलेसिन बटुभल्ल समिति । द्रिदशारि वानिनि दॆगनेसि मऱियु
निशित बाणमुलेय नृपुडर्धचंद्र । विशिखंबुलर्डरिचि वेगंबॆ त्रुंचि
यसुरेशु निखिलावयवमुलु दूर । नसदृशंबुग ननेकास्त्रमुल् वऱपॆ;
रौद्रबाणंबंत रावणुंडेय । रौद्रबाणंबुन रघुरामुडेसॆं;
नवि रॆंडु नन्योन्यहतमुलै पडग । नवनीश दनुजेशुलालोन गिनुक
दिविरि यॊंडॊरुलेयु तीव्र बाणमुलु । दिवि निंड गप्पिन दिमिरंबु गप्पॆं;
रणमुलो नप्पुडु रयमुन म्रोयु । गुणरावमुलचेत घूर्लिलुचुन्न
युरुचापसागरयुगमुन नॆगयु । शरवीचुलॊगि बरस्परघट्टनमुल ६४१०
यिरियंग दैतेयविभुडु कोपिंचि । नरनाथुनुरमेसॆं नाराच-समिति;

नभोमंडलि में भर जाने पर, समरूप से शोभित होने वाले दोनों के शरलाघव, करलाघव के विधान को दोनों सराहते हुए, एक दूसरे से बढ़ जाने की विचित्रता पर चकित होते हुए, युद्ध किया (उस) समय, पंक्तिकंधर ने क्षोणीश पर एक घोर-तमिस्र-बाण चलाया, ।। ६४०० ।।

—उस कांड (बाण) के विजृंभित होने पर, अन्धकार से आच्छादित हो, अखिल वानर निश्चेष्टित हो (पथरा) गए। तब आँखों से क्रोध की लालिमा के शोभित होने पर रघुराम ने सौ उग्रबाण चलाए (तो) त्रिदशारी ने पटु-भल्लसमिति से उन्हें खंडित कर और भी निशित बाण चलाए। नृप (राजा राम) ने अर्द्धचंद्र-विशिख चलाकर, झट उन्हें काट देकर, असुरेश के निखिल-अवयवों में घुस जाएँ, ऐसे असदृश अनेक अस्त्र चलाए। तब रावण के रौद्र बाण चलाने पर रघुराम ने उस पर रौद्रबाण चलाया। वे दोनों अन्योन्य-हत हो (परस्पर टकराकर) गिर पड़े। (तब) अवनीश और दनुजेश इतने में क्रोध से लगकर, (दोनों के) परस्पर चलाए तीव्र बाणों ने आकाश को ढँक दिया, अन्धकार ने (सबको) ढँक दिया। रण में तब (उस समय) झट से मुखरित होने वाले गुणारवों से घूर्णित होने वाले उरु-चाप-सागर-युग में उठनेवाली शरवीचियाँ परस्पर-घट्टन (-टकराहट) से फैल गईं, ।। ६४१० ।।

—फैल जाने पर दैतेय-विभु ने कुपित हो नरनाथ के उर पर नाराच समिति

नदि यौप्पें नीलोत्पलावलि करणि। गदिसि रामुडु चंडकांडमुल् दोंडिगि
कवचंबु सिंचि वक्षमु गाडनेय। दिविजारि यप्पुडेंतेनियु नोंच्चि
यहिशिलीमुखमुल नर्डरिप दोन। यहिमांशुकुलनाथुडवि द्रेंव्वनेसें;
नासमयंबुन नमरेंद्रवैरि। या सुरसायकंबडरिप बेंक्कु
मुखमुल शार्दूल मुखमुलु नुष्ट्र। मुखमुलु सूकरमुखमुलु नुरग
मुखमुलु घनदंतिमुखमुलु गृध्र। मुखमुलु गरिवैरिमुखमुलु दनरु
घनशिलीमुखमुलु कडु बेंक्कु निगुड। गनि वानि दुनियलुगा नेसि मऱियु
जननाथु डाग्नेयसायकंबेय। गनुगोन नंदु नुल्कामुखास्त्रमुलु
महितविद्युन्मुख मार्गणंबुलुनु। ग्रहमुखंबुलु गलगु घनसायकमुलु
६४२०

मिहिर मुखंबुलु मेऱयु बाणमुलु। दहनमुखंबुलु दनरु शस्त्रमुलु
नगुचु नच्चेरुवुगा नडरंग वानि। देंगनेसि यपुडु दैतेयवल्लभुडु
मयुनिचे बडसिन मायाशरंबु। रयमुन संधिचि रामुपैनेसें;
नेसिन दानननेकंबुलगुचु। ब्रास तोमर गंदा परिघंबुलडरें;
गांधर्वशरमंत घनकार्मुकमुन। संधिचि निगुडिचें जनलोकविभुडु

(बाण-समूह) का प्रयोग किया। वह नीलोत्पल-अवलि की भाँति शोभित हुआ। सन्नद्ध हो राम ने चंड-कांडों का संधान कर, कवच फाड़ देकर, वक्ष में गड़ जाएँ, (ऐसा बाण) प्रयोग किया। तब दिविजारि के अधिक पीड़ित हो अहि-शिलीमुखों (सर्प-बाणों) से विजृंभित होने पर, एक साथ अहिमांशु-कुल (सूर्यवंश)-नाथ ने उन्हें खंडित कर दिया। उस समय अमरेन्द्र-वैरी ने आसुर सायक का प्रयोग किया। (करने पर) कई मुखों से, शार्दूलमुख, उष्ट्रमुख, सूकरमुख, उरगमुख, घन-दंतिमुख, गृध्रमुख, करि-वैरि (सिंह) -मुख (आदि) से शोभित अनेक घनशिलीमुख बहुत अधिक संख्या में विजृंभित हुए। (उन्हें) देख उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर फिर जननाथ ने आग्नेयसायक का प्रयोग किया। देखने पर उसमें से उल्कामुख वाले अस्त्र, महित विद्युन्मुखवाले मार्गण (अस्त्र), ग्रहमुख से युक्त घन-सायक, ॥ ६४२० ॥

—मिहिर-मुखों से प्रकाशित बाण, दहनमुखों से शोभित शस्त्र—होते हुए, आश्चर्य के बढ़ जाने पर, उन्हें खंडित कर तब दैतेयवल्लभ ने मय से प्राप्त मायाशर का झट संधानकर राम पर चलाया। चलाने पर वह अनेक होता हुआ प्रास, तोमर, गदा, परिघाओं के रूप में विजृंभित हुआ।

नादित्यतुलितंबुलैन चक्रंबु । ला दिव्यबाणंबुनंदनेकमुलु
जगमुलु भयमंद जनियिंचि रुचुलु । निगुडि याकसमेल्ल निंड बेल्लडरि
या मार्गणंबुन नडरि परिघ । तोमरादुलनेल्ल दुनियलु सेय
दशकंठुडंत ना धरणीशुमीद । निशित नाराचमुल् निगुडिंचें नलुक
बोरि बोरि बुंखानुपुंखमुल् गाग । बरगिंचें नृपुडुनु ब्रतिसायकमुलु;
६४३०
जगतीश दनुजेश शरपरंपरलु । गगन-भागंबेल्ल गप्पें: नालोन
नेंडसोंच्चिच लक्ष्मणुंडेडु बाणमुल । बडगयु विल्लोक्क पटुसायकमुन
सारथिशिरमोक्क शरमुन द्रुंचि । या रावणुनि वक्षमैदिंटनेसें;
नीलधराधर निभतुरंगमुल । गूलंग नेसें माकोंनि विभीषणुडु;
विरथुडै दैतेयविभुडंतलोन । धरणिकि लंघिंचि तरुचरुल् बेदर
भ्रूकुटि दशकविस्फुरितास्युडगुचु । भीकर शक्ति विभीषणुवैव
नडुमने मूडु बाणंबुल दानि । मिडुगुरुल् मंटलु मिंट बेल्लेगय
धरणि पै बडनेसें दरचरुलार्व । धरणीशुननुजुंडु दशकंठुडंत
गडुनलिग मयुनिचे गन्न या शक्ति । वडि विभीषणुमीद वैव नंकिंप

तब जनलोक-विभु ने घनकार्मुक पर गांधर्व शर का संधान कर प्रयोग किया। उस दिव्यबाण से आदित्य-सम अनेक चक्र उत्पन्न होकर, जिससे जग भीत हो जाएँ, रुचियों (कांतियों) से विजृंभित हो, समस्त आकाश में भरकर, अधिक विजृंभित हो, उस मार्गण (मय से प्राप्त बाण) से उत्पन्न परिघा, तोमर आदि सभी को विखण्डित कर दिया। तब दशकंठ ने क्रोध से उस धरणीश पर निशित-नाराच चलाए। क्रम से उनके पुंखानुपुंख होने पर नृप ने प्रतिसायक चलाए।। ६४३०।।

—जगदीश और दनुजेश की शर-परम्पराओं ने समस्त गगनभाग को आच्छादित कर दिया। इतने में बीच में आकर लक्ष्मण ने सात बाणों से केतन, एक पटुसायक से धनुष, एक शर से सारथी का सिर काट देकर, रावण के वक्ष पर पाँच (बाण) चलाए। विभीषण ने सामना कर नील-धराधर-निभ (-सम)-तुरंगों को गिरा दिया। इतने में विरथ हो दैतेयविभु ने धरणी पर कूदकर, तरुचर भीत हो जाएं, ऐसा दश-भ्रुकुटियों के विस्फारित बने आस्य (आनन) वाला होता हुआ, विभीषण पर भीकर शक्ति चलाई। बीच में ही उसे तीन बाणों से, चिनगारियों और ज्वालाओं के आकाश में अधिकता से बिखरने पर, तरुचरों के सिंहनाद करने पर, धरणीश के अनुज ने धरणी पर गिरा दिया। तब दशकंठ के अधिक क्रोध से, मय से गृहीत उस शक्ति को झट विभीषण पर डालने को उद्यत होने पर,

“शरणागतत्राण सद्धर्मपरुलु । शरणागतुल चावु सैतुरे “यनुचु ६४४०
दनुजेशु तम्मुनि दन वेन्क दिगिचि । कोनि रामुतम्मुडु क्रूरबाणमुलु
परगिंचे; नप्पुडु पंक्तिकंधरुडु । “बिरुदवै वच्चि विभीषणु वेनुक

रावणुनि शक्तिचे लक्ष्मणुडु मूर्छिल्लुट

निडुकोंटि लक्ष्मण! यी शक्ति हतिकि । गडिमिमै नीवोर्तु गाकंचु” बलिकि
प्रळयकालादित्य परिवेष घोर । वलयमै दीपिंप वडि द्रिप्पि वैचे;
नदि किंकिणीघंटिकानेक रवमु । लोंदवंग म्रोयुचु नुदधुलु गलग
वडि गुलाचलमुलु वडकाड दिशल । वेंडक दिवाकर-बिबंबु गदल
बिडुगुल दोरुगंग बृथिवि गंपिंप । नुडुपथंबवियंग नुडुपंक्ति सेदर
मिडुगुरुलेगयंग मिटबेन्मंट । लडरंग शेषजिह्वाकारमगुचु
रयमुन बरतेंचि, रामु ‘डा लोक । भयद साधनमुचे ब्राणभयंबु
समकोनकुंडेडु सौमित्र’ कनग । नमरुलु मिट हाहाकृतुल् सेय ६४५०

यह कहते कि ‘शरणागत-सद्धर्म-पर (शरणागत की रक्षा नामक सद्धर्म के पालन में रत) शरणागतों की मृत्यु को (कहीं) सहन कर सकेंगे?’ ।। ६४४० ।।

—दनुजेश को अपने पीछे खींच लेकर, राम के अनुज ने क्रूर बाण चलाए। तब पंक्तिकंधर ने ‘वीर बनकर विभीषण को (अपने) पीछे—

रावण की शक्ति के हाथ लक्ष्मण का मूर्च्छित होना

—रख (छिपा) लिया न हे लक्ष्मण! इस शक्ति के आघात को साहस से सहन कर लो’, ऐसा कहते हुए, प्रलय-काल के आदित्य के परिवेश के समान घोर-वलय रूप हो दीप्त होने पर, झट (उस शक्ति को) घुमाकर फेंक दिया। वह किंकणी-घंटिका (आदि) अनेक-रवों के उत्पन्न होने पर मुखरित होते हुए, उदधियों के क्षुब्ध होने पर, झट कुल-अचलों के कंपित होने पर, दिशाओं के कंपित होने पर, दिवाकर बिंब के विचलित होने पर बिजलियों के गिरने पर, पृथ्वी के कंपित होने पर, आकाश-पथ के विदीर्ण होने पर, उडु-पंक्ति के बिखर जाने पर, चिनगारियों के व्याप्त होने पर आकाश में बड़ी ज्वालाओं के विजृंभित होने पर, शेष के जिह्वा के आकार-युक्त हो, वेग से आकर राम के यह कहते रहने परक ‘इस लोक-भयद साधन से सौमित्र को प्राणभय संप्राप्त न हो’, (तथा) आकाश में अमरों के हाहाकार करने पर, ।। ६४५० ।।

नॆडनॆड वडिनेयु निषुपंक्ति जदिपि । वडिवच्चि लक्ष्मणु वक्षस्थलंबु
भीकरतरशक्ति बॆल्लुगा गाड । राकुमरुडु दूलि रणभूमि व्राल
गालावसानंबु गदिय बॆंपेदि कूलु । महामेरुकुधरंबु पगिदि;
धरणिपै बडियुन्न तम्मुनि जूचि । दरिकॊन्न शोकाग्नि दनचित्तमॆरिय
गनुगव बाष्पमुल् ग्रम्म बै निगुडु । दनुजेश पटुबाणततुलु गैकॊनक
पृथुतरवक्षंबु पॆल्लुगा नाटि । पृथिवि गाडिनयट्टि भीकर शक्ति
बऱ्तेंचि वनचरपतुलॆल्ल गूडि । पॆऱुक जालकयुन्न बॆऱिकि पोवैचि
यर्कजानिलसुतुलादिगा गलुगु । मर्कटेशुल जूचि मनुजेशुडनियॆ;
"शौर्यंबु सलिपॆडि समयंबुगानि । कार्यंबुलडचु शोकपुवेळ गादु;
घनुलार! मीरु लक्ष्मणु गाचिकॊनुडु । विनुडु ना पलिकॆडु वीर प्रतिज्ञ
६४६०

वॆनककु राज्यंबु विडुचुट, बंधु । जनुल बायुट, वनस्थलुल ग्रुम्मरुट
बाणबाणासनपाणिनै युंडि । प्राणंबु दानैन पत्नि गोल्पडुट;
कडिदि मायावि राक्षसुलतो ननिकि । दॊडरुट मॊदलैन दुःखंबुलॆल्ल
घोराजिलो बापुकॊनुवाड नॆडु । दारुणकर्मु नीदशकंठु दुनिमि;

—जब-तब डाले जानेवाले बाण-समूह को नष्टकर, झट आकर लक्ष्मण के वक्षस्थल में उस भीकरतर शक्ति के अधिकता से गड़ जाने पर, राजकुमार, लड़खड़ाकर रणभूमि में कालावसान के नियराने पर औन्नत्य को खोकर गिर पड़नेवाले महाकुधर के समान, गिर गया। धरणी पर गिर पड़े हुए अनुज को देख, परिव्याप्त शोकाग्नि से अपने चित्त के विदीर्ण होने पर नेत्रद्वय में बाष्पों के उमड़ने पर, ऊपर से आक्रांत करने वाले दनुजेश के पटु-बाण समूहों की परवाह न कर, पृथुतर वक्ष में अधिकता से गड़कर, पृथ्वी में गड़ गई भीकर शक्ति को (वहाँ) आए हुए सभी वनचरपतियों के सब मिलकर भी उखाड़ न सकने पर, (उस शक्ति को) उखाड़ फेंक अर्कज, अनिलसुत आदि मर्कटेशों को देख मनुजेश ने कहा—"शौर्य प्रदर्शित करने का यह समय है, कार्य (कर्तव्य) का दमन कर देनेवाले शोक का समय नहीं है। हे महान व्यक्तियो! आप लक्ष्मण की रक्षा कर लो। सुनो, यह मेरी वीर प्रतिज्ञा— ।। ६४६० ।।

—पूर्व में राज्य तज देना, बंधुजनों को छोड़ देना, वनस्थलियों में घूमना, बाण-बाणासन-पाणि होकर भी, प्राणसम पत्नी को खो देना, क्रूर मायावी राक्षसों से युद्ध के लिए उद्यत हो जाना आदि समस्त दुःखों का आज घोराजि (घोर युद्ध) में दारुण कर्म वाले इस दशकंठ का संहारकर बदला ले लूँगा। समर-उर्वी (युद्धभूमि) में इसका संहार करने के लिए अमित

समरोर्वि नीतनि जंपेंडिकोऽकु । नमित विक्रमुडैन या वालि गूल्चि
कपिसेनकै दिनकरतनूभवुनि । गपिराज्यपट्टबु गट्टिति ब्रीति;
जंडतरग्राहसंकुलंबगुचु । नोंडोंड मिन्नंदु नूर्मुलु गलिगि
कडलेनि वारधि गट्ट गार्विचि । कडच्चि वच्चिचति महाकपिसेनतोड;
वच्चि लंकापुरवरमु वेष्टिचि । यिच्चट सौमित्रिनिटु कोलुपडिति
ना दशाननुडेचि यालंबुलोन । ना दृष्टिमार्गंबुनकु वच्चेनेनि ६४७०

दृष्टिविषंबुन दीव्रसर्पंबु । दुष्टजंतुवु गाल्चु तेऽगु सूपेदनु;
ब्रदिकिपोनी निक बंक्तिकंधरुनि । ब्रदरपरंपर पालु सेसेदनु;
गिरुलेक्कि नेंडिक गिरिचरवरुलु । सौरिदि मारणकेळि जूतुर गाक;
लोकपालुर नेल्ल लोकमुल् नेडु । ना कार्मुक प्रौढि नलुवार जूचि
रणमुलोपल नेनु रघुरामुडगुट । प्रणुतविक्रमलील बरिकिंपनिडु;
सुरकंटकुडु डागि सुरलोकमुनकु । नरिगिन, नब्धिमध्यमुन ग्रुंकिननु,
धरणि दूरिन, रसातलमुन जोच्चिननु । बोरिवुत्तुगाकेल पोनित्तुनिक?
भुवि नर्ककुलमुन बुट्टितिनेनि । रवितेजुडगु दशरथु तनूजुंड
नैतिने, रामुडनैतिने निक । दैतेयपति रणस्थलि निलचेनेनि

विक्रमवाले उस वालि का वध, कपिसेना के लिए, कपिराज्य का दिनकर-तनूभव का, प्रेम से राजतिलक किया। चंडतर-ग्राह-संकुल होते हुए, सर्वत्र आकाशचुम्बी ऊर्मियों से युक्त अपार वारिधि पर सेतु बाँधकर, महाकपिसेना के साथ (उस समुद्र को) पार कर आया हूँ। आकर लंकापुर-वर को वेष्टित कर (घेरकर), यहाँ सौमित्र को इस प्रकार खो बैठा हूँ। वह दशानन विजृंभित हो, युद्ध में, मेरे दृष्टिमार्ग में आए तो, ॥ ६४७० ॥

—तीव्र सर्प के दृष्टि-विष से दुष्ट जन्तुओं को जला देने के विधान को प्रदर्शित करूँगा। अब पंक्तिकंधर को जीवित नहीं जाने दूँगा। प्रदर (बाण)-परम्परा का भागी बना दूँगा। गिरियों पर आरूढ़ हो आज अब गिरिचरवर क्रम से मारणकेलि को देखें। लोकपाल (तथा) समस्त लोक आज मेरी कार्मुक प्रौढ़ि को मनोज्ञता से देख, रण में मेरे रघुराम होने की प्रणुत (स्तुत्य)-विक्रमलीला को देखें। सुरकंटक छिपकर सुरलोक में चला जाए, अब्धिमध्य में डूब जाए, धरणि में घुस जाए, रसातल में पैठ जाए, तो भी वध कर दूँगा। जाने क्यों दूँगा? भुवि पर अर्ककुल में पैदा हुआ हूँ, रवितेज वाले दशरथ का पुत्र होऊँ, राम होऊँ तो अब दैतेयपति रणस्थल में खड़ा रहा तो किसी भी प्रकार से अब निर्जित कर

नॆविधंबुननैन निपुड निर्जितु; । रावणुंडय्यॆडि रामुडय्यॆडिनि ६४८०
निल रामरावणुलिरुवुरि युनिकि । गलुगंग नेरदी कदनरंगमुन"
ननुचु नाराचमुलंदंद तिगिचि । दनुजेशपै नेय दशकंधरुंडु
ब्रतिशिलीमुखपरंपरलु पैबऱप । नितरेतराशुगानेकसंघमुलु
मंडु मंटलु नभोमंडलि निंड । नॊंडॊंटितो दाकु नुग्ररावंबु
गुरुतर कोदंड गुणनिनादमुलु । बैरसॆ नॊक्कट लोकभीकर गतुल;

रावणुडु विभीषणादुल माट दलंचि चिंतिंचुट

नंत जर्जरितांगुडै रामु विशिख । संतानवेगंबु सैरिपलेक
गजवैरि गनि पाऱु गजमुचंदमुन । रजनीचरेंद्रुंडु रणभूमि विडिचि
कचभारमुलु वीड गमनीयरत्न । खचितभूषणमुलु गनुकनि बॆदर
जेरि यॊंडॊरुवुल जेतुलु सऱचि । बोरन नव्वुचु भूतंबुलार्व
घनपादहति नेल गंपिप बाऱि । वनचरुलार्वंग वडि लंक जॊच्चि
६४९०
कॊलुवुकूटंबुन गूर्चुंडि बुद्धि । दलपोसि तनकु मुंदर विभीषणुडु

दूंगा। रावण रहे (या) राम ! ।। ६४८० ।।
—अब कदनरंग में, भुवि में राम-रावण दोनों का अस्तित्व (एक साथ) नहीं रहेगा।" (ऐसा) कहते निरन्तर नाराचों का संधानकर दनुजेश पर चलाया (तो) दशकंधर ने प्रतिशिलीमुख-परम्पराएं (समूह) चलाईं। इतरेतर-अनेक-आशुग-संघों के कारण बलने वाली ज्वालाओं के नभोमंडलि में भर जाने पर, (उनके) एक दूसरे से टकराने वाले उग्र-रव (तथा) गुरुतर कोदंड-गुण-निनाद (आदि) एक साथ लोकभीकर गति से व्याप्त हुए।

रावण का विभीषणादि की बातें सोचकर चिंतित होना

तब जर्जरित-अंग वाला बन, राम के विशिख-संतान (-समूह) के वेग को सहन न कर सक, गज-वैरि (सिंह) को देख भागनेवाले गज के समान, रजनीचरेन्द्र रणभूमि को छोड़, कचभार के स्रस्त होने (खुल जाने) पर, कमनीय रत्न-खचित भूषणों के संभ्रम के कारण बिखर जाने पर, भूतों के मिलकर परस्पर हाथ (तालियाँ) बजाकर, अट्टहास करने पर, घनपादहति से भूमि के कंपित होने पर भागकर, वनचरों के सिंहनाद करते समय, झट लंका में घुसकर, ।। ६४९० ।।

—सभाभवन में बैठकर, मन में सोचकर, अपने को पूर्व में विभीषण

चॆप्पिन बुद्धलु चित्तंबुलोन । नप्पुडु तलचुचु ना रामुडेयु
नॆट्लु दलचुचु नॆल्लंदु सुभट । कोट्लु गॊनियाड गुंभकर्णुंडु
नतिकायुडुनु घनुडाइंद्रजित्तु । मृतुलौट दलपोसि मिगुल जित्तमुन
गविसिन शोकांधकारंबुवलन । नवशभावमु बॊंदि यालोन दॆलिसि
यंतःपुरंबुन कंत नेतॆंचि । यंतरंगमुन जिताक्रांतुडगुचु
दन सति रार्विचि तलवांचि पलिकॆ । "विनु रामु जगदेकविक्रमक्रमम
एमनि चॆप्पुदु ? निदॆ नाकुनॆदुर । रामसहस्रमुल् रमणि ! तोचॆडिनि
नॆक्कड जूचिन नीलंकलोन । नक्कड रघुरामुडै युन्नवाडु;
इंक जयोपायमेमियुलेदु । शंकरु चरणमुल् शरणंबु नाकु; ६५००
द्रिपुरंबु लेदेवु दिव्योग्र बाण । विपुलाग्नि नीऱय्यॆ विस्मयं बॆसग,
निंदुखंडंबुन ने देवु मकुट । मंदमै विलसिल्लु नभिनवस्फुरण,
दनर ने देवु हस्तमुल बिनाक । सुनिशित खड्ग त्रिशूलमुल् मॆऱयु,
ने देवुडखिललोकेशु, डे देवु, । डा दक्षु मर्दिंचि यागंबु सॆऱिचॆ,
नलुकतो नें देवु डंधकासुरुनि । बॊलियिंचॆ, ने देवु बॊगडु वेदमुलु
दॆलिय ने देवुंडु देवादिदेवु, । डॆलमि ना देवुनि ने भजियिंतु"

के बताए नीति-वचनों को चित्त में तब स्मरण करते हुए, उस राम के आघातों का स्मरण करते हुए, सर्वत्र सुभट-कोटियों के सराहने पर कुम्भकर्ण, अतिकाय, महान् इन्द्रजित के मृत होने की बात सोचकर, चित्त में अधिक परिव्याप्त शोकांधकार-भाव से (रावण) अवश हो गया। उतने में होश में आकर अन्तःपुर में तब आकर, अंतरंग में चिन्ताक्रांत होते हुए, अपनी सती को बुलाकर सिर झुकाकर बोला— "सुनो, राम के जगदेक-विक्रम-क्रम को कैसे कहूँ ? हे रमणी ! यहीं मेरे समक्ष हजार राम दिखाई पड़ रहे हैं। इस लंका में जहाँ देखो, वहीं रघुराम ही (अवस्थित) हैं। अब जय (प्राप्त करने का) कोई उपाय नहीं है। शंकर के चरण ही मेरे लिए शरण्य हैं ॥ ६५०० ॥

—जिस देव के दिव्य-उग्र-बाण-विपुलाग्नि से आश्चर्यप्रद रूप से त्रिपुर नष्ट हुए, जिस देव का मकुट (ललाट) इन्दुखंड के अभिनव-स्फुरण से सुन्दर हो विलसित है, जिस देव के हाथों में पिनाक, सुनिशित खड्ग, त्रिशूल शोभा से विराजमान हैं, जो देव अखिलेश है, जिस देव ने दक्ष का मर्दन कर याग को विनष्ट कर दिया, जिस देव ने क्रोध से अन्धकासुर का वध किया, वेद जिस की स्तुति करते हैं, जानने पर जो देव देवादिदेव है, प्रेम से उसी देव का भजन (भक्ति) करूँगा।" (ऐसा) कह कृत-स्नान हो, अग्रजन्म (ब्राह्मण) संतृप्त हों, ऐसा बहुविध दान देकर, मन से मद, दर्प, मान तजकर,

ननि कृतस्नानुडै यग्रजन्मुलकु । दनियंग बहुविध दानंबुलोसगि
मदि लोन मद दर्पमानमुल् विडिचि । पदिलुडै सात्विकभावंबु पूनि
रक्तांबरंबुलु रक्तमाल्यमुलु । रक्तोपवीतमुल् रक्तगंधंबु
रक्ताक्षसूत्रमुल् राजिल्ल बरम । भक्तितो मन्त्रजपंबु सेयुचुन ६५१०
नीश्वरालयमुनकेतेंचि राक्ष । सेश्वरुंडचलितहृदयुडै यचट
दग वेदि गाविंचि दर्भांकुरंबु । लोंगि जेर्चि तनकुगा नुग्रदानवुल
'नन्निदिक्कुल नुंडु' डनि पंचि वेल्व । नुन्नंत नेङिगि मन्दोदरि वच्चि
कनुगोनि "यो पंक्तिकंधर! नीकु । जनुनें दीनुनिभंगि शौर्यंबु विडुव?
नुङक नीवलिगिन नुदधुलु म्रोय । वेंङचु; समीरंबु वीवंग वेंङचु;
ननलंडु तीव्रार्चुलडरिप नोडु । विनुवीथि नर्कुंडु वेलुगु शंकिचु;
जगमुलु नीवन्न जलियिंचु; नेल । मगटिमि सेंडि यिट्टिमतमु गैकोंटि
नेंडित धैर्यंबु नीकु लेकुन्न । नाडेल तेंच्चिति नरनाथु देवि ?
मारीचु माटलु मदिलोन नाडु । नेरमुल्ग गोंटि; नीति गावंटि;
नीति विचारिंचि नी चेटु सैप । कातत धर्मात्मुडगु विभीषणुडु
६५२०
तोंडरि पल्मारुनु 'दोषाचरेंद्र! । चेंडुन्नोवलेटिकि ? सीत नीपैनि

स्वस्थचित्त हो, सात्त्विक भाव धारणकर, रक्तांबर, रक्तमाल्य, रक्त-उपवीत, रक्तगंध, रक्त-अक्षसूत्र (जपमाला) से विराजित होते हुए, परमभक्ति से मन्त्र जप करते हुए, ।। ६५१० ।।

—ईश्वरालय में आकर, राक्षसेश्वर अचलित (निश्चल) हृदय से, वहाँ समुचित विधि से वेदिका बनाकर, क्रम से दर्भांकुर रख, अपने लिए (रक्षार्थ) उग्रदानवों को सब दिशाओं में रहने का आदेश देकर, होम करनेवाला ही था कि सब कुछ जानकर मन्दोदरी आई और देखकर (यों) बोली—"हे पंक्तिकंघर ! दीन के समान शौर्य को खो देना तुम्हारे लिए समुचित है ? सामान्य रूप से ही तुम क्रुद्ध बनोगे तो उदधि गरजने से डरता है, समीर चलने में डरता है, अनल तीव्र-अर्चियों से विजृंभित होने में डरता है, सूर्य आकाश में प्रकाशित होने में शंकालु बन जाता है। तुम्हारा नाम लेने पर जग संचलित हो जाते हैं। पौरुष के भंग हो जाने पर ऐसा विचार क्यों धारण किया ? आज तुम्हें इतना धैर्य नहीं है तो उस दिन नरनाथ की देवी को क्यों लाए थे ? मारीच के वचनों को उस दिन अपराध माना था, नीति नहीं माना था। नीति का विचार कर, तुम्हारा बुरा न सह सक, आतत-धर्मात्मा विभीषण, ।। ६५२० ।।

विड्चुट गडुमेलु, विडु' मंचु नीकु । विडुवक चॆप्पडे? विनवैति गाक !
मातामहुडैन माल्यवंतुडु । नीतिगा जॆप्पिन नीवु गैकॊंटे ?
तप्पक मी तल्लि तगवु सिंतिंचि । चॆप्पिन माटलु सॆवियॊग्गि विंटे ?
'जननाथुतो नेल शात्रवं' बनिन । गनलवे मऱि कुंभकर्णु माटलकु ?
वलदनि चॆप्पिनवारि वाक्यमुलु । तलकूडॆने नेडु दनुजलोकेश !
भुजविक्रमंबॆल्ल बोवंग विडिचि । निजमुगा मुनिवृत्ति नीवु गैकॊंटि!
विद्रुंडॆ यनि नोडनॆऱुगवु राम । चंद्रु गॆल्वकयुन्न जनुलॆल्लनगरे ?
यनि चेसि गॆल्तुगाकसुरेश! नीवु । ननदचंदमुलेल" यनि तूलवलुक
नॆलकॊन्न सिग्गुन निट्टूर्पु वुच्चि । "नॆलत! नीमाटलु निजमगु : नैव ६५३०
रामचंद्रुनिकिक रमणि! ने वॆऱव । होमंबु गाविंचि युद्धरंगमुन
जननाथसुतुलनु जंपॆद : नीवु । चनु" मन्न म्रॊक्कि बाष्पंबुलंदंद
तॊरुग मंदोदरि दु:खिंचि लोनि । करुगुचो नाडिन यार्द्रवाक्यमुलु
विनि सिग्गुपडि वेल्मि विडिचि रावणुडु । चनियॆ सॆज्जकु : नंत
जननाथुडिचट

—का (तुम्हारे) समक्ष कई बार यह कह कि 'हे दोषाचरेन्द्र ! कुमार्ग क्यों ? आगे सीता को छोड़ देना अच्छा है, छोड़ दो, तुम्हें निरन्तर बुद्धि नहीं सिखाई थी ? (तुमने) सुना था ! मातामह माल्यवंत के नीति (की बातें) कहने पर तुमने स्वीकारा था ? तुम्हारी माता के न्याय का चिंतन कर कही बातों को कानों में जगह दी थी ? 'जननाथ से शत्रुता क्यों ?' कहने पर, कुम्भकर्ण की बातों पर क्रुद्ध नहीं हुए थे ? हे दनुजलोकेश ! (तुम्हें) मना करनेवालों के वाक्य आज बर आए न ! समस्त भुज-विक्रम को छोड़कर, तुमने सचमुच मुनिवृत्ति को ग्रहण किया न ! इन्द्र के हाथ भी हारना नहीं जानते थे, ऐसे तुम रामचन्द्र को नहीं जीतोगे तो लोग अपहास्य नहीं करेंगे ? हे असुरेश ! युद्ध कर जीतना चाहिए । अनाथ जैसा यह व्यवहार क्यों ?' ऐसा अपमान करते बोलने पर, स्थिर बनी लज्जा से लम्बी आह छोड़कर (लंकेश ने कहा) —"हे नारी ! तुम्हारी बातें सच हैं । फिर भी, ॥ ६५३० ॥

—हे रमणी ! अब रामचन्द्र से डरूँगा नहीं । होम करके युद्धरंग में जननाथ-सुतों का वध करूँगा । तुम चली जाओ ।" (ऐसा) कहने पर प्रणाम कर, निरन्तर बाष्पों के प्रवाहित होने पर, मन्दोदरी दुखी हो, भीतर चली गई । (उसके) कहे आर्द्र वाक्य सुन, लज्जित हो, हवन करना छोड़ रावण शय्या को गया । तब यहाँ जननाथ,

लक्ष्मणुनि मूर्छकु श्रीरामुडु शोकिंचुट

नौडलुनेत्तुट दोगि यूर्पुल सडलि । पडियुन्न शेषाहिपति बोलियुन्न
यनुगुदम्मुनि जूचि यालोन धृतिकि । जौनुपनि मतितोड शोकिंपदोडगे
"निब्भंगि सौमित्रि यिलमीद नुंड । नेब्भंगि ब्राणंबुलेनु निल्पुदुन ?
ललि रणंबोनरिंप लावेट्लु गलुगु ? । बलुमुष्टि विल्लेट्लु पट्टंगवच्चु ?
गन्नुल बाष्पमुल् ग्रम्मंगनेट्लु । पन्नि पैबड्तेंचु परिपंथि जूतु ?
ना कन्नलेदुटनु ना सहोदरुडु । ना कूर्मिबंधुंडु ना प्राणसखुडु ६५४०
नाकु ब्राणमुलिच्चि ननु डिंचिपोयें ? । नाकु सिग्गय्येंडि ना शौर्यमुनकु ?
नाकेल रणमिक? नाकेल जयमु ? । नाकेल राज्यंबु? नाकेल सीत ?
नाकेल शौर्यंबु? नाकेल ब्रदुकु ? । नाकु नीतोडिद नाकंबुगाक !
जयशालिवै मुन्नु शरभ शार्दूल । भयदाटवुललोन बाटिंचि तेंच्चि
यरुदैन तुच्छ दैत्याटविलोन । बरुनिकैवडि गाडुपरचिते नन्नु !
नुन्नतोन्नतशक्ति नोरंत प्रोद्दु । नन्नु गाचुटकु गाननभूमुलंदु
निद्रवोवेन्नडु नेडिट्लु दीर्घ । निद्रवोवुट नीकु नीतिये तंड्रि !

लक्ष्मण की मूर्च्छा पर श्रीराम का शोक करना

—शरीर के रक्त में लथपथ बन, साँसों से रहित हो, गिर पड़े हुए शेषाहिपति-सम प्रिय-अनुज को देख, उस अन्तर में धृतिहीन मति से यों शोक करने लगा—"इस प्रकार सौमित्र के ज़मीन पर पड़े रहते समय मैं किस प्रकार प्राणों को रख सकूँगा ? फिर रण करने के लिए सामर्थ्य कहाँ से आएगी ? दृढ़ मुष्टि से धनुष को कैसे पकड़ा जा सकेगा ? आँखों में बाष्पों के घुमड़ आने पर, व्यूह रचकर ऊपर आने (टूट पड़ने) वाले परिपंथी (शत्रु) को कैसे देख सकूँगा ? मेरी आँखों के सामने (मेरे देखते हुए) मेरा सहोदर, मेरा लाडला बन्धु, मेरा प्राणसखा, ।। ६५४० ।। —मेरे लिए प्राण दे, मुझे छोड़ चला गया न ! मेरे शौर्य पर मुझे लज्जा हो रही है। अब मुझे रण क्यों ? मुझे जय क्यों ? मुझे राज्य क्यों ? मुझे सीता क्यों ? (इन सबकी आवश्यकता नहीं है।) मुझे शौर्य क्यों ? मुझे जीवन क्यों ? मुझे तो तुम्हारे साथ ही नाक (स्वर्ग) चाहिए। जयशाली हो पूर्व में शरभ-शार्दूल (युक्त) -भयद-अटवियों का ध्यान रख, लाकर, अनुपम तुच्छ दैत्याटवि में अन्य (शत्रु) के समान मुझे क्षुब्ध कर दिया न ! उन्नत से उन्नत-शक्ति युक्त हो, दिन भर, मेरी रक्षा करने के

पलुमारु निब्भंगि बनवुचु बिलुव । नॆलुगॊत्ति 'यो' यनवेमि ? लक्ष्मणुड !
यिक नॆव्वरु गल ? रे नॆंदु जॊत्तु? । निंक बालयितिगा यी शोक वह्नि
शुभ लक्षणोपेत सुरुचिराकारु । डभिरामबलुडु नाकतिभक्तपरुडु ६५५०
प्रियसहोदरुडु गंभीरुंडु समर । जयशालि ना प्राणसखुडु लक्ष्मणुडु
इतडु नातो गानकेतॆंचॆ निप्पु । डितनितो नॆगॆद नॆनिंद्रपुरिकि
गलरॆंदु बंधुलु गलरॆंदु निंतु; । लिल निट्टिसोदरुलॆक्कड गलरु ?
यत्नंबु सेसिन नवनिजबोलु । पत्नि नॊंडॊकचोट बडय जॊप्पडुनु
निट्टि सद्गुणशीलुडिट्टि दयाळु । महाबलुंडिक नॆंदु गलडु ?
तम्मुडन्मात्रमे तलपोसि चूड ! । निम्मुल ननु गॊल्चु निम्महाभुजुडु;
इतडॆ ना पौरुषं; बितडॆ ना शांत;। मितडॆ ना कीर्तियु : नितडॆ ना स्फूर्ति;
यितडे ना शौर्यंबु: नितडॆ ना धैर्य : । मितडॆ ना नयमुनु; नितडॆ ना जयमु
भाविप ना पालि भाग्यंबु नितडॆ । पावनंबगु राज्यपदवियु नितडॆ"
यनि पॆक्कु भंगुल नडलुचुनुंड । विनि सुषेणुडु राम विभु जूचि पलिकॆ: ६५६०

लिए, कानन-भूमियों में कभी सोते ही नहीं थे। हे तात! आज ऐसी दीर्घ निद्रा तुम्हारे लिए उचित है ? कई बार इस प्रकार व्यथित होते हुए उच्च स्वर से तुम्हें बुलाने पर भी हे लक्ष्मण ! 'ओ' (जी) क्यों नहीं कहते हो ? अब मेरा कौन है ? मैं कहाँ जाऊँ ? अब तो शोकवह्नि का भागी बन गया हूँ। शुभलक्षण-उपेत (-युक्त), सुरुचिराकार वाला, अभिराम बली, मेरा अतिभक्तपर, ॥ ६५५० ॥

—प्रिय सहोदर, गम्भीर, समर (में) जयशाली, मेरा प्राणसखा, (ऐसा) यह लक्ष्मण मेरे साथ कानन में आया, अब इसके साथ मैं इंद्रपुरी जाऊँगा। (ऐसे तो) सर्वत्र बन्धु हैं, स्त्रियाँ हैं, किन्तु दुनियाँ में ऐसा सहोदर कहाँ है ? यत्न करने पर अवनिजा के समान पत्नी को किसी जगह प्राप्त किया जा सकता है। (किन्तु) ऐसा सद्गुणशील, ऐसा दयालु, ऐसा महाबली अब औरकहाँ है ? सोचकर देखने पर यह मात्र अनुज ही है ? (नहीं) यह महाभुज वाला प्रेम से मेरी सेवाएं करता रहता है। यही मेरा पौरुष है, यही मेरी शक्ति है, यही मेरी कीर्ति है, यही मेरा शौर्य है, यही मेरा धैर्य है, यही मेरा नय और यही मेरी जय है। विचारने पर यह मेरे प्रति भाग्य है, पावन राज्यपद भी यही है।" ऐसा अनेक प्रकार से (राम को) व्याकुल

"निदि येमि देव! नीकिंत शोकिंप? । हृदयंबु गुंदिप किदें चूडुमितनिः
नोंडल ब्राणमुलु लेकुन्न नाननमु । कडु नोंप्पियुंडने कळलु देरुचुनु ?
गन्नुलिंदीवर कमनीयकांति । जेन्नोंदि युंडुने चेंलुवंबु मिगिलि ?
यंदंबुलैयुन्न वऱचेतुलेंलमि । गेंदामरल भंगि गेंजाय मेंऱसि"
यनि पलिक रघुरामुनडलु वारिंचि । हनुमंतु गनुगोंनि यतनितो ननियें;
"मुनु जांबवंतुंडु मुदमुतो जेप्प । विनिनाड वौषधविधमेंल्ल देंलिय;
बोंलुचु महाद्रोण भूधरंबुननु । जेंलुवोंदु दक्षिण शिखरंबुनंदु
बरिंकिप दीप्तुल बरगु विशल्य । करणियु, सौवर्ण करणियु, मऱियु
संधानकरणियु, संजीवकरणि । बंधुरतर शुभप्रभ नोंप्पुचुंडु;
नालुगौषधमुलु नलि देंम्मु वेग । मी लक्ष्मणुनि प्राणमेंत्तंगवलयु;
६५७०

बंबि देवासुरुल् बलुविडि तोंलिल । यंबुधि मथियिंचि यमृतंबु वडसि
यंदु दाचुट जेसि यमृतंबुवलन । नंदु जनिंचें ना यौषधलतलु;
लवणसमुद्रंबु लंघिंचिपोयि । यवल गुश द्वीपमवलील गडचि
वडिनेगि दुग्धार्णवमु नाक्रमिंचि । तडयक पोयि चंद्रद्रोणगिरुल

होते हुए, सुनकर सुषेण ने रामविभु को देखकर कहा— ।। ६५६० ।।
"यह क्या देव ? तुम्हें इतना शोक क्यों ? हृदय को क्षुब्ध किए बिना इसे यहीं देखो। शरीर में प्राण न हों तो कलाओं से युक्त हो, आनन ऐसा शोभित रह सकेगा ? आँखें इंदीवर के समान कमनीय कान्ति से अधिक सौन्दर्ययुक्त हो शोभित रह सकेंगी ? हथेलियाँ शोभा से अरुण कमलों के सम ललाई से प्रकाशित होते हुए सुन्दर हैं।" ऐसा कहकर रघुराम की व्याकुलता का निवारण कर हनुमान को देख उससे कहा—"पूर्ब में जांबवान के मोद से कहते समय औषधियों के समस्त विधान को सुनकर जान लिया है। विराजमान महाद्रोण भूधर में सुशोभित दक्षिण शिखर पर देखने पर दीप्तियों से विलसित विशल्यकरणि, सौवर्णकरणि, और सन्धानकरणि, संजीवकरणि बंधुरतर शुभप्रभा से शोभित होती रहती हैं। चार औषधियों को झट ले आओ। इस लक्ष्मण के प्राणों का उद्धार करना चाहिए ।। ६५७० ।।

—विजृंभित हो देवासुरों के पूर्व में बरज़ोरी अंबुधि का मंथन कर, अमृत प्राप्त कर, उसमें (पर्वतशिखर में) छिपा रखने से अमृत के कारण वहाँ औषधलताएँ उत्पन्न हुईं। लवण-समुद्र लांघकर जाकर, आगे कुशद्वीप को सरलता से पारकर, झट जाकर, दुग्धार्णव को पारकर,

गंदु : देवेंद्रुनि यनुमतंबुननु । मंदरंबुनु बोलु महनीयतनुलु
गंधर्वुलॊगि वानि गाचियुंडुदुरु : । गंधर्वुलकु नीकु गलुगु गय्यंबु;
तॆरुवुन राक्षसुल् दिरुगुचुंडुदुरु; । वरुस मायावुलु : वारि नेमऱकु
द्रोणाद्रिकवलीलतो नेगि यितनि । प्राणमॆत्तुमु रघुपति संतसिप
निरुमूडुलक्षलु निरुवदिवेलु । बरिकिंप निन्नूटपदियोजनमुलु
वायुनंदन ! नीवु वायुवेगमुन । बॊयिरम्मिट ब्रॊद्दु पॊडुवक मुन्ने
६५८०;
भानुंडु वॊडिचिन ब्रभ दूलि शक्ति । हीनंबुलै पोवु नी यौषधम्मु
लटमीद लक्ष्मणु नायुवॆत्तुटकु । घटियिल्लनेरदु, गान ना लोन
वानरोत्तम! नीवु वडि बोयिरम्मु । वानि लक्षणमुलु वलयु नीकॆऱुग
हरित फलंबुलु नरुणपुष्पमुलु । नरुदार दॆल्लनि याकुल नमरु;
जननाथसुतु विभीषणु जांबवंतु । निनसूनु नंगदु नॆलमि वीड्कॊनुमु”
अनि सुषेणुडु वल्क “नॊगाक” यन्न । यनिलनंदनु जूचि यवनीशुडनियॆ
बडियुन्न लक्ष्मणु प्राणंबुलॆत्ति । पडयुमु त्रिभुवन प्रख्यात कीर्ति;
ननुजुलु मुनु मुव्वुररय नाकिप्पु । डनिलनंदन । नल्वुरैरि नी तोड ।”

अविलम्ब जाकर चन्द्रद्रोण गिरियों को देख सकोगे। देवेन्द्र की अनुमति से मन्दर-सम महनीय तनु वाले गन्धर्व क्रम से उसकी रक्षा करते रहते हैं। गन्धर्वों और तुममें युद्ध छिड़ जाएगा। मार्ग में राक्षस विचरते रहते हैं। क्रम से वे मायावी होते हैं। असावधान मत रहना। द्रोणाद्रि को सरलता से जाकर, इसके प्राणों का उद्धार करो जिससे रघुपति प्रसन्न हो जाएँ। हे वायुनन्दन ! सोचने पर तुम छः लाख बीस हजार दो सौ दस योजन वायुवेग से जाकर, सूर्योदय से पहले ही आ जाओ ।। ६५८० ।।

—भानु के उदय होने पर, प्रभा खोकर ये औषध शक्तिहीन हो जाते हैं। उसके बाद लक्ष्मण की आयु का उद्धार करना घटित नहीं हो सकता। अतः इतने में ही हे वानरोत्तम। तुम शीघ्र जाकर आओ। उन (औषधियों) के लक्षण तुम्हें जानने चाहिए। (वे) हरित फलों, अरुण पुष्पों, अनुपम श्वेत पत्रों से शोभित हो रहते हैं। जननाथसुत, विभीषण, जांबवान, इनसून, अंगद से प्रेम से बिदा लो।” ऐसा सुषेण के कहने पर ‘ऐसा ही हो’ कहनेवाले अनिलनन्दन को देख अवनीश ने कहा—“गिर पड़े हुए लक्ष्मण के प्राणों का उद्धार कर, त्रिभुवन-प्रख्यातकीर्ति प्राप्त करो। हे अनिलनन्दन ! पूर्व में मेरे तीन अनुज थे। सोचने पर तुम्हारे साथ चार हुए हैं।”

संजीवकरणिकै हनुमंतुडु द्रोणाद्रिकि बोवुट

नन विनि "नी बंटु हनुमंतुडुंड । निनकुलोत्तम ! नीकु नेल चिंतिप?
नी याज्ञ दलमोचि नृपसिंह वेग ! । ना येडुदीवुल कवल नुंडिननु ! ६५९०

निनुडुदयाद्रिकि नेतेरकमुनु । कौनिवत्तु नौषधकुधर मे" ननुचु
नडुगुलकेंड्रगिन हनुमंतुनेंत्ति । नडु ग्रुच्चि यालिंगनमु सेसि विभुडु
"इंद्रुडु नी शिर, मिनुडु नीमुखमु । जंद्रुडु नी मदि, शक्ति नी पिऱुदु,
लनिलुंडु नी वेंन्नु, हरुडु नी वाल । मनलुंडु नी यंघ्रु, लजुडु नी बुद्धि,
वरुणुंडु नी शक्ति, वाणि नी वाणि । गरुडकेतनुडु नी घन बाहुयुगमु,
गुंजराननुडु नी कुक्षि रक्षितु; । रंजनासुत! वेग यरिगिर" म्मनिन
सरवि नर्कज विभीषण ऋक्षराज । पुरुहूतपौत्रुलप्पुडु वीडुकोल्प
मेदिनि वडि व्रय्यमेंट्टिन नगमु । पादंबुलूदिन बलुवडि ग्रुंग
मेंयिगालि मुन्नेरु, मिन्नेऱु गलग । रयमुन लंकापुरमु गोपुरमुलु
वेंसगूल गुप्पिंचि विनुवीथि कैंगसि । लसित विद्युन्निभलांगूललतयु ६६००

संजीवकरणि के लिए हनुमान का द्रोणाद्रि जाना

(ऐसा) कहने पर सुनकर (हनुमान ने कहा) —"हे इनकुलोत्तम ! तुम्हारे सेवक हनुमान के रहते, तुम्हें चिन्ता करना क्यों ? हे नृपसिंह ! तुम्हारी आज्ञा को सिर पर धारण कर, झट (जाकर) चाहे सात द्वीपों के उस पार क्यों न हो, ॥ ६५९० ॥

—सूर्य के उदयाद्रि पर आने से पहले ही, मैं औषध-कुधर को ले आऊँगा।" (ऐसा) कहते हुए चरणों में नत होनेवाले हनुमान को उठाकर, कसकर आलिंगन कर, विभु (राम) (ने कहा) —"इन्द्र तुम्हारे सिर की, इन (सूर्य) तुम्हारे मुख की, चन्द्र तुम्हारे मन की, शक्ति तुम्हारे नितम्बों की, अनिल तुम्हारे पीठ की, हर (शिव) तुम्हारे वाल (पूँछ) की, अनल तुम्हारे अंध्रियों की, अज तुम्हारी बुद्धि की, वरुण तुम्हारी शक्ति की, वाणी तुम्हारी वाणी की, गरुडकेतनवाला (विष्णु) तुम्हारे घनबाहुयुग की, कुंजराननवाला (गणेश) तुम्हारी कुक्षि की रक्षा करेंगे। हे अंजनासुत ! शीघ्र जाकर आओ।" (ऐसा) कहने पर, क्रम से अर्कज, विभीषण, ऋक्षराज, पुरुहूत (इन्द्र) पुत्र के तब बिदा करने पर मेदिनी झट विदीर्ण हो जाए, बरजोरी चरण दबाने पर नग (पर्वत) के दब जाने पर, शरीर से निकले पवन से समुद्र और आकाश-गंगा

नुग्र बाहार्गळयुगळंबु नॆत्ति । युग्रांशुपटुमंडलोदग्रलील
वदनंबु गडु समुज्ज्वललील वॆलुग । बदकर्णसंकोचभंगि जॆन्नगुचु
बहुपर्वतंबुलु बहुदेशमुलुनु । बहुनदीनदमुलु बहुवनंबुलनु
बुरमुलु सागरंबुलु गनुंगॊनुचु । नरुदार दुहिनाद्रि नवलील गडचि
दॆरुलु घूर्णिल्लंग, दिग्भागमगल । नसहायशूरुडै हनुमंतुडरिगॆ ।
वेवुलवारलाविधमॆल्ल जॆप्प । गा विनि विघ्नंबु गाविंचुकॊरकु

कालनेमि वृत्तांतबु

नॊंटिमै रावणुडॊगि गालनेमि । यिंटिकि नडुरेयि नेगुदॆंचुटयु
भक्तितोडुत नर्घ्यपाद्यादुलिच्चि । नक्तंचरेश्वरुनुकु नातडनियॆ;
"नी मध्यरात्रि मीरिटकु विच्चेयु। टेमि कारण ? मानतिडु ना' कनिन
"ननि नेडु ना शक्ति हति मृतुंडैन । युनुजुनिकै रामुडटु तन्नु बनुप ६६१०
संजीवकरणिचे सौमित्र बडय । नंजनासुतुडिप्पुडरुगुचुन्नाडु;
चनि वेग हनुमंतु जंपु, कादेनि । विनु भानु गनुदाक विघ्नंबु सेयु,

---

के क्षुब्ध होने पर, शीघ्र लंकापुर के गोपुर ढह जाएँ ऐसा लाँघ कर, आकाश-वीथि में उड़कर, लसित-विद्युत्-निभ-गोलांगूल-लता को, (तथा) ॥ ६६०० ॥

—उग्र-बाहु-रूपी अर्गलायुग को ऊपर उठाकर, उग्रांशु के पटु-मंडल के समान उदग्रलीला से वदन के अधिक समुज्ज्वल लीला से प्रकाशित होने पर, पद (तथा) कर्णों को कुंचित कर बहुपर्वत, बहुदेश, बहुनद-नदियाँ, बहुवन, पुर, सागर (आदि) को देखते हुए, अनुपम रूप से तुहिनाद्रि को सरलता से पारकर, दिशाओं के घूर्णित होने पर, दिग्भाग के विदीर्ण होने पर, असहायशूर बन हनुमान चला। गुप्तचरों के वह समस्त विधान बताने पर, सुनकर, विघ्न (उत्पन्न) करने के लिए, ॥ ६६०६ ॥

कालनेमि का वृतान्त

—अकेले ही क्रम से रावण के आधी रात को कालनेमि के घर आने पर, भक्ति से अर्घ्य-पाद्य आदि देकर, नक्तंचरेश्वर से उसने कहा—"इस आधी रात को आपके यहाँ पधारने का क्या कारण है ? मुझे आज्ञा दीजिए।" (ऐसा) कहने पर "युद्ध में आज मेरी शक्ति के आघात से मरे अनुज के लिए राम के भेजने पर, ॥ ६६१० ॥

—संजीवकरणि से सौमित्र को प्राप्त करने (जीवित करने) अंजनासुत अब जा रहा है। जाकर झट हनुमान को मार डालो। नहीं तो

कलदु देवासुर कल्पितंबैन । नलिनाकारमु द्रोणनगसमीपमुन;
मदमुतो नॊक महामकरि यंदुंडु । नदि देवतल मिगु; नगचरुंडॆंत ?
या सरोवरमुन कनिलजुंडरुग । मोसपुच्चुमु: वेगमुग नेगु" मनिन
मनमुन नटनीतिमार्गंबु दॆलिय । दनुजेशुतो नाडे दग गालनेमि;
"माया मृगाकृति मारीचुडरिगि । मायमैपोडॆ ! या मतमु पो विड्वु;
घोराजि गूलिरि कुंभकर्णादि । वीर दानवुलॆल्ल; विनुमिकनैन;
मनुजेशुनकु सीत मरलंग निच्चि । दनुजेश ! लंक नी तम्मुनकिच्चि
यरिगि मृडावासमैन कैलास । धरणीधरमुनंदु दपसिवैयुंडु ६६२०
कादेनि बिरुदुवै गदनरंगमुन । मेदिनीपति चेत मृति बॊंदि मीद
नॊनरंग विष्णुसायुज्यंबु नॊंदु" । मनि पल्क गन्नुल नलुक गॆंपॆरुग
ना यॆड वॆस जंद्रहासंबु वॆडिक । व्रेय दलंचॆ; नाविध मातडॆरिगि,
'यिदॆ चनुचुन्नाड ने" नंचु नचटु । कदलि मनोवेगगति लावु मॆरसि
चनि चूत पुन्नाग चंपक क्रमुक । पनस चंदन जंबु पाटली वकुळ
कदलिका खर्जूर कर्पूर तरुलु । मॊदलुगा गल भूजमुल सॊंपु
मिगिलि

भानु को देखने तक विघ्न (उत्पन्न) करो। द्रोणनग के समीप देवासुर-कल्पित नलिनाकर है। उसमें मदयुक्त एक महामकरी है। वह देवताओं को निगल जाती है। (उसके लिए) नगचर कितना ? (उसकी गिनती ही क्या ?) उस सरोवर में जाने के लिए अनिलज को धोखे में डाल दो। शीघ्र जाओ।" (ऐसा) कहने पर, नीति-मार्ग (विधान) को जानते हुए, समुचित रूप से कालनेमि ने दनुजेश से कहा—"माया मृगाकृति से जाकर मारीच अदृश्य नहीं हो गया था ? उस मत (अभिप्राय) को छोड़ दो। कुम्भकर्ण आदि समस्त वीर दानव घोराजि में गिर गए (मरगए)। अब तो सुनो। हे दनुजेश ! मनुजेश को सीता लौटा देकर, लंका तुम्हारे (अपने) अनुज को देकर, जाकर मृड (शिव) के आवास कैलास-धरणीधर पर तपस्वी बनकर रहो ।। ६६२० ।।

—नहीं तो वीर हो कदनरंग में मेदिनीपति के हाथ मरकर शोभा से विष्णु-सायुज्य को प्राप्त करो।" ऐसा कहने पर आँखों में क्रोध की अरुणिमा के उमड़ने पर, उसके प्रति चन्द्रहास को निकालकर, मार डालना चाहा। उस विधि को वह जानकर 'यही मैं जा रहा हूँ' कहते हुए, वहाँ से निकल कर मनोवेग की गति की सामर्थ्य से प्रकाशित होकर, जाकर, आम्र, पुन्नाग, चम्पक, क्रमुक, पनस, चन्दन, जम्बु, पाटली, वकुल, कदलिका, खर्जूर, कर्पूर-तरु आदि भूजों (वृक्षों) की अधिक शोभा से युक्त हो, बहुशिष्यगणों

बहुशिष्यगण वेद पठनमुल् सॆलग । महनीय मणि दीप मालिकल् वॆलुग
भासुर मंजरी फलहोम धूम । धूसरीकृत लतादुल जॆन्नु मिगिलि
कलकंठ शुक नीलकंठ शारिकल । कलहंस कलरव कलकलंबॆसग
हुतदान मंत्र स्वरोदीर्णमॆन । कृतकाश्रममु द्रोणगिरि समीपमुन ६६३०

निर्मिचि मुनिवोलॆं नियतितो गपट । निर्मलाकृति दाल्चि नेत्रमुल् मॊगिचि
सन्नपुटॆलुगुन जपमाल पूस । लॆन्नुट मंत्रमै यॆदिरिकि दोप
ना वनंबुन नुंड नाकाशवीथि । बोवुचो मारुतपुत्रुडीक्षिचि
“यिदि यॊक्क मुनिवनं, बित यॊप्पगुनॆ? । मिदि नाडुले: दिप्पुडॆंदु वच्चितिनो ?
यक्कडि दुग्धाब्धि? यॆक्कडि मेरु । वॆक्कडि मुनिवनंबिदि त्रोव दप्पॆ;
दॆस विम्मुनींद्रुचे दॆलियंग नडिगि । यरिगॆद गा” कंचु नवनि केतॆंचि
वनपक्वफलमुलु वांछ बुट्टिप । मुनिशापभयमुन मुट्ट नोडुचुनु
मुनि जेर जनुदॆंचि म्रॊक्कि केल्मॊगिचि । “मुनिनाथ! दुग्धसमुद्रंबुकडकु
मनुज नायक-शिखामणियैन राम । जननाथु पनुपुन जनुचुन्नवाड;

के वेदपठनों के शोभित होने पर, महनीय मणि-दीप-मालिकाओं के प्रकाशित होने पर, भासुर-मंजरी-फलों (तथा) होम-धूम से धूसरीकृत लतादियों से अधिक शोभित हो, कलकंठ, शुक, नीलकंठ, सारिका, कलहंस (आदि) के कलरवों के कलकल के बढ़ने पर, हुत-दान-मन्त्र-स्वरों से उदीर्ण बने कृतकाश्रम को द्रोणगिरि के समीप, ।। ६६३० ।।

—निर्मित कर, मुनि की भाँति नियति से कपट-निर्मल-आकृति धारण कर, नेत्र मूँदकर, मन्द्रस्वर में जपमाला के मन के गिनना ही मन्त्र जैसा दीखे, ऐसा उस वन में (कालनेमि के) रहते (समय) आकाश-वीथि में जाते हुए मारुत-पुत्र ने देखकर (सोचा) —“यह एक मुनि-वन है, यह इतना शोभित कैसे है ? यह तब नहीं था। आज कहाँ से आ गया ? कहाँ का दुग्धाब्धि ? कहाँ का मेरु ? यह कहाँ का मुनिवन ? (मैं) रास्ता भटक गया हूँ। इस मुनीन्द्र से मार्ग जानकर (आगे) जाऊँगा।” (ऐसा) सोचते अवनि पर आकर, वन के पक्वफलों के वाँछा को उत्पन्न करने पर, मुनि के शापभय से (उन्हें) स्पर्श करने में डरते हुए, मुनि के पास पहुँच, नत होकर, हाथ जोड़कर, (कहा) —“मुनिनाथ ! दुग्ध-समुद्र के पास मनुज-नायक-शिखामणि राम-जननाथ के आदेश से जा रहा हूँ।

हनुमंतुडनुवाड; नधिकमौ तृष्ण। जनियिंचॆ; निच्चोट जलमुलु गलवॆ ? ६६४०
चॆप्पवॆ ?" यनवुडु जिरुनव्वु नव्वि। "डप्पिवो मा कमंडलुवु तोयमुलु
द्रावु: मी फलमुलु दनियंग नमलु। नीविक नी रात्रि निद्रिंपु मिचट;
नगचरोत्तम ! यतीतनागतंबु। लगु मेरेलॆरुगुदु नंतरंगमुन
रामु वंचिचि या रामुनि देवि। भूमिज जैरगौनिपोयॆ रावणुडु;
अवनीशुड्डुनु वालि नवलील जंपि। लवणांबुनिधि गट्टि लंकपै विडिसि
यनिलोन गुंभकर्णादि राक्षसुल। दुनुमाडि यिंद्रजित्तुनु द्रुंचिवैचॆ:
बुत्रशोकंबुन बुट्टिन यलुक। रात्रिचरेंद्रुडु रणभूमिलोन
मयुनिचे बडसिन महनीय शक्ति। रयुमुन गौनि सुमित्रापुत्रु वैचॆ;
बडिन या सौमित्रि प्राणमुल् बडय। वडि नौषधमुलकु वच्चितिवीवु;
विनुमु नीविप्पुडु वे योजनंबु। लनिलनंदन! वच्चि तनिल वेगमुन ६६५०
नन्नु नधर्मात्मुनकु गानरादु। निन्नु नुत्तमुनिगा निश्चयिंचितिनि;
जगदेकहितमुगा जनियिंचॆ गान। जगतीशु पनि माकु समकूर्पवलयु;

हनुमान नामक (व्यक्ति) हूँ। अधिक तृष्णा उत्पन्न हुई है। यहाँ जल है क्या ? बताओ न।" ॥ ६६४० ॥

—ऐसा कहने पर मुस्कुरा कर (मुनि ने कहा) —"प्यास बुझाने के लिए मेरे कमंडल का तोय (पानी) पी लो—ये फल कुतरकर तृप्त हो जाओ। तुम अब आज रात को यहाँ सो जाओ। हे नगचरोत्तम ! अन्तरंग से अतीत और अनागत की सीमाओं को जानता हूँ। राम को धोखा देकर, उस राम की देवी भूमिजा को बन्दी बनाकर रावण ले गया। अवनीश ने भी वालि को सरलता से मारकर, लवणांबुनिधि (पर सेतु) बाँधकर, लंका पर धावा बोलकर, युद्ध में कुम्भकर्ण आदि राक्षसों का वधकर, इन्द्रजित का संहार कर दिया। पुत्र-शोक से उत्पन्न क्रोध से रात्रिचरेन्द्र ने रणभूमि में, मय से प्राप्त महनीय शक्ति को झट (हाथों में) ले सुमित्रापुत्र पर डाल दिया। गिर पड़े उस सौमित्र के प्राणों को प्राप्त (उद्धार) करने तुम झट औषधों के लिए आए हो। सुनो हे अनिलनन्दन ! तुम अब अनिलवेग से हजार योजन आए हो ॥ ६६५० ॥

—मुझे कोई अधर्मी देख नहीं सकता। (तुम देख पाए अतः) मैंने तुम्हें उत्तम (पुरुष) मान लिया है। जगदेक-हित के लिए (राम) उत्पन्न हुआ

दिव्यौषधंबुलु दीपिंचुनट्टि । दिव्यमंत्रमुलुपदेशितु नीकु
गंजाप्तुनुदयंबु गनि शक्ति मिगुल । संजीवनीमुख्यसकलौषधमुलु
गलवु मा वनमुन: गनुगोनि यंदु । वलसिन यवि गोंचु वडि लंक करुग
कनुरेप्पवेट्टेडु कंटे वेगमुन । जनियेदु ना मंत्र सामर्थ्यमुनन्"
तनवुडु गपटसंयमि जूचि पवन । तनयुंडु वल्कें "नो तापसाधीश !
यक्कड लक्ष्मणुंडब्भंगि नुंड । निक्कड नुचितमे यिटु नाकु निलुव?
फलमुलु नाकेल पतिपंपु कार्य । फलमुगा सौमित्रि बडयक मुन्न!
निद्र वोवुट नाकु नीतिये ? दीर्घ । निद्र गैकोनि रामनृपुतम्मुडुंड !
६६६०

जलमु लल्पंबुलु सालबु; लेदे । नलिनाकरंबैन नदियैन" ननुडु
"नुन्नदि चेरुव नोक दिव्य सरसि । कन्नुलु मूसि या कमलाकरमुन
नमृतोपमानंबुलगु; निर्मलोद । कमुलु द्राविन दिव्य कायुंडवौदु:
दृग्गोचरमुलगु दिव्यौषधमुलु । दिग्गन जनु" मंचु देरुवु सूपुटकु
गपट संयमि शिष्यगणमु बंचुटयु । गपिवीरुडेतेंचि कनियें नक्कोलनु
माकंद मंदार माधवी वकुळ । शाकोट कुटज कुचंदन साल

है अत: हमें जगदीश का कार्य पूरा करना चाहिए। दिव्यौषधों को दीप्त करनेवाले दिव्यमन्त्रों का तुम्हें उपदेश देता हूँ। कंजाप्त (सूर्य) के उदय को देखकर, शक्ति के बढ़ जाने पर, संजीवनी-मुख्य (-आदि) सकलौषध जो हमारे वन में हैं, (उन्हें) देखकर, उनमें जो चाहिए उन्हें लेकर झट लंका में जाओ। मेरे मन्त्र-सामर्थ्य से पल भर में (तुम) पहुँच जाओगे।" ऐसा कहने पर कपटसंयमी को देख पवनतनय ने कहा—"हे तापसाधीश ! वहाँ लक्ष्मण के उस प्रकार रहते समय मेरा यहाँ रहना कहाँ उचित है ? पति (विभुराम) के आदेश-कार्य-फल रूपी लक्ष्मण को प्राप्त करने से पहले मुझे (अन्य) फल क्यों ? सो जाना (क्या) मेरे लिए नीति (-संगत) है जबकि रामनृप का अनुज दीर्घ निद्रा लेकर (पड़ा) है ? ।। ६६६० ।।

—अल्प जल पर्याप्त नहीं होंगे। कहीं नलिनाकार अथवा नदी नहीं है ?" (ऐसा) कहने पर (कपटमुनि ने कहा) —"निकट ही एक दिव्य सरसी है। आँख मूँदकर उस कमलाकर में अमृतोपमान निर्मल-उदक पान करने पर दिव्यकाय वाला बन जाओगे। दिव्यौषध दृग्गोचर हो जाएँगे। झट जाओ।" (ऐसा) कहते मार्ग दिखाने के लिए कपट-संयमि के (अपने) शिष्यगण को भेजने पर, कपिवीर ने आकर उस सरोवर को देखा। (वह) माकंद, मन्दार, माधवी, वकुल, शाकोट, कुटज, कुचंदन, साल,

नीपार्जुनाशोक निंब कदंब । तापिंछ तरुलसत्तटमुल दानि
गमनीय कोमल कमल कल्हार । विमल कैरवमुल विलसिल्लुदानि
ललित कल्लोल डोलाकेळि देलु । कलनाद कलहंसगतुलोप्पुदानि
बटुहंस चंचु चुंबक बक क्रौंच । पटल कारंड प्रततुल दानि ६६७०

वेनुकोनि तमु बिल्चि विरहुलमीद । बनिचिन गेल्चि निर्भर वृत्ति गोन्न
विपुलाभिमानार्थ विततुलीकुन्न । गुपितुडै रतिराजु कोर्रुल बेट्टि
नन बक्वबंधंबुलै वाडि मिगिलि । मोनसिन कैरव-मुकुळाग्रशिखल
मूगि चलिपनि मोकरि तुम्मेदल । बागोप्प नोप्पुल बलसिन दानि
मरिकोन्नि येडलनु मकरंदमुलकु । देऽपि सूपक तम्मु द्रिप्पुचुनुन्न
कमलगेहांतर कमलकु ब्रीति । समरीति मंगळाचार गीतमुलु
नलि बाडु गायक नायकुलनग । मेलपुन नंदंद मृदुरीति म्रोयु
मधुपान रसमत्त मधुकरततुल । बधिराब्जपुट समीपमुलोप्पुदानि
गामु नुग्राक्षुचे ग्रम्मऽ बडय । गामिंचि तीरमाकंद बृंदंबु
ललरु नग्नुललोन नाज्यहोममुलु । चेलुवोंद नंदंद चेयुचंदमुन ६६८०

नीप, अर्जुन, अशोक, निम्ब, कदम्ब, तापिंछ (आदि) तरुओं से लसित तटों से युक्त था, कमनीय कोमल कमल, कल्हार (तथा) विमल कैरवों से विलसित था, ललित-कल्लोल-डोला केलि में मग्न (और) कलनाद से युक्त कलहंसों की गतियों से युक्त था, पटुहंसों के चंचुओं का चुंबन करनेवाले वक-क्रौंच-पटल (-समूह) (तथा) कारंडव-प्रततियों (-समूहों) से युक्त था ॥ ६६७० ॥

—लगकर अपने को बुलाकर विरहियों पर भेजने पर (उन्हें) जीतकर, निर्भर-वृत्ति से प्राप्त किए विपुल-अभिमान रूपी अर्थ-विततियों को न देने पर कुपित हो रतिराज ने मानों सूली पर चढ़ाया हो, ऐसी थीं (उस सरोवर में स्थित) पक्वबंध हो पैने बनकर, परिव्याप्त कैरव के मुकुलों की अग्रशिखाएँ। उन्हें घेरकर, विचलित न होनेवाले पुंभ्रमरों की शोभाओं से युक्त और कुछ स्थानों पर मकरन्द पान न करने देकर, अपने को घुमाने पर, कमल-गेहांतर (में स्थित) -कमला को प्रेम से समरीति से मंगलाचार गीत गानेवाले गायक-नायक (-श्रेष्ठ) की शोभा से, मृदुरीति से मुखरित मधुपानरस से मत्त मधुकरततियों के कारण बधिर बने अब्जपुटोंवाला था (वह सरसी)। उग्राक्ष से काम (मन्मथ) को पुनः प्राप्त करने की कामना कर तीरस्थ माकन्द मानों अग्नियों में शोभा से आज्य-होम सर्वत्र कर रहे हों, ॥ ६६८० ॥

जिलुकलु चंचुल जिचिन दॊरुगु । फलरस धारलु पर्णाग्रवीथि
दॊलगक युरिलि चॆंदॊवललो दॊरुगु । पॊलुपॆंतयुनु जूड बॊसगॆडु दानि
फलरसंबुलु वच्चि पै बयि दॊरुगु । नॊलसि चॆंदॊवललो नुंडराकुन्न
दॊलगु नुज्ज्वल होम धूमंबुलनग । नलु लाकसंबुन नमरॆडु दानि
नाकंज पत्रंबुलनु पळ्ळॆरमुल । शीकराक्षतमुलु चॆलुवॊप्प नुनिचि
कॊलनप्पुडुत्फुल्ल कुवलय वलय । दळ विलोचनमुल दनराक कॆदुरु
चूचु तॆऱंगुन शोभिल्लुदानि । जूचि डग्गऱ वच्चि सुखकेळि देलि
यडरु सम्मदमुन नानंद मंदि । कडु विस्मयंबंदि कन्नुलु मूसि
यक्कॊलनिकि डिग्गि हनुमंतुडंत । नॆक्कॊन्न तृष्णतो नीरु द्रावंग
बॊलुपार संसार भूरि वाराशि । मलयुचु वर्तिचु मायावधूटि
६६९०

विषयरसंबुलु वेड्कतो ग्रोलु । तृषितुनि गबळिचु तॆऱगु दीपिप
तुरवडि नंदुंडि यॊक महामकरि । हरिनाथु पादंबुललमि पट्टुटयु
दगिलिन यंघ्रुलुद्धतशक्ति दिगिचि । तिगुवजालक चाल धीरुडै
निलिचि
यिदि येटिदो यनि येर्पड जूचि । मदि वायुसूनुंडु मकरिगा नॆऱिगि

—तोतों के चंचुओं से चीरे जाने के कारण झरनेवाली फलरसधाराएँ पर्णों के अग्र भाग पर से निरन्तर झरकर लाल कमलों पर गिरते रहने की शोभा से युक्त था (वह सरोवर)। फलरसों के आकर ऊपर झर पड़ने से, लाल कमलों में न रह सक, आकाश में उड़ने वाले भ्रमर मानों उज्ज्वल होम-धूम थे। कंजपत्र रूपी थालियों में शीकर रूपी अक्षतों को शोभा से रखकर, उत्फुल्ल-कुवलय-वलय-दल-विलोचनों से वह सरसी (हनुमान के) आगमन की प्रतीक्षा कर रही थी। इस प्रकार शोभायमान (सरसी को) देखकर, नियराकर, सुखकेलि में मग्न हो, अधिक सम्मोद से आनन्दित हो, अधिक आश्चर्यचकित हो, आँख मूँदकर, उस सरसी में उतरकर तब हनुमान ने अधिक उत्पन्न प्यास से जल पीना चाहा। शोभायमान संसार (रूपी) भूरि-वाराशि में विचरते हुए माया रूपी वधूटि- ॥ ६६९० ॥

—विषय रूपी रसों को उत्साह से पान करनेवाले तृषित (व्यक्ति) को निगल जाती है, ऐसे ही झट उस (सरोवर) में से एक महामकरी ने हरिनाथ (वानरपति) के चरणों को कसकर पकड़ लिया। (इस प्रकार) फंसे हुए अंघ्रियों को उद्धत शक्ति से खींचकर भी, खींच (छुड़ा) न सक, अति धीर हो खड़े रहकर, उसे ध्यान से देखकर, मन से उसे मकरी जान

यंतकंतकु मदि नलुक रेट्टिंप । नंतलो नतिनिष्ठुराकारुडगुचु
वेवेग रघुराम विजयवल्लरुल । कावालमै वालु ना वालमेत्ति
रागरसोद्रेक रावण योग । भोगसंचितपापमुलु डुल्चु पगिदि
वालमंकिंचि दुर्वारुडै विजय । लोलुडै मकरि पंडुलु डुल्लनेसें:

हनुमंतुनि मकरि म्रिंगुट

संतत मुनि वर शाप रोगमुन । कंत मीयौषधमनि म्रिंगु करणि
नड्रिमुड्रि मकरि महारोषमेत्ति । मेंड्रसि या हनुमंतु म्रिंग जोच्चुटयु
६७००

"नक्कटा! रामुकार्यमु निल्वबडियें। निक्कड दीनिचे निट्टि चंदमुन
देंगिपोदुनो! यिक देरगेदि?" यनुचु। दग विचारिंचि युद्धति वायुसुतुडु
"कडुपु लोपल जोच्चि कडतेर्तु" ननुचु। नोडिसि म्रिंगुचुनुन्न नूरकयुंडि
पदिलुडै यंधकूपमु बोनि मकरि। युदरंबु जोच्चें ना युरुबाहुबलुडु
नंत ना मकरियु नाहार बुद्धि। संतोषमुन बोयें जलमध्यमुनकु:

कर, मन में अधिकाधिक क्रोध के द्विगुणित होने पर, इतने अति निष्ठुर-आकारवाला होता हुआ, अति वेग से, रघुराम की विजय-वल्लरियों का आधार बन शोभित अपनी पूँछ को उठाकर, राग-रस के उद्रेक से रावण-योग-भोग-संचित पापों को झटका देकर गिराने के समान, पूँछ हिलाकर, दुर्वार हो, विजय लोल बन, मकरी के दाँतों पर मारा जिससे वे (टूट) गिर जाएँ।

हनुमान को मकरी का निगल जाना

—संतत-मुनिवर के शाप रूपी रोग के अन्त के लिए यह औषध है, ऐसा मानकर निगलने के समान, अतिशीघ्रता से मकरी महारोष से प्रदीप्त हो हनुमान को निगलने लगी ।। ६७०० ।।

—(तो) "हाय ! राम का कार्य रुक गया न ! यहाँ इसके कारण मर जाऊँगा क्या ? अब उपाय क्या है ?" (ऐसा) सोचते हुए, ठीक से विचार कर, औद्धत्य से वायुसुत ने ऐसा सोच कि "पेट में पैठकर, वध कर डालूंगा" पकड़ निगलते समय चुप रहकर, वह उरु-बाहुबल वाला सावधानी से अन्धकूप-सम मकरी के उदर में प्रविष्ट हो गया। तब वह मकरी भी आहार समझकर प्रसन्नता से जलमध्य में चली गई। तब वह वीरवर क्रोध से उसकी आँतों को ऐंठ कर, तोड़ देने लगा तो विजृंभित साहस से वह महामकरी उदर में स्थित विषकबल के समान जीर्ण न होने

ना वीरवरुडंत नलुकतो दानि । प्रेवुलु नरमुलु पॆनचि त्रॆंचुचुनु
नडरिन कडकतो नम्महामकरि । कडुपुलोपल विषकबळंबु वॊलॆ
नऱुगक तिरुगुचु ननलंबु भंगि । जुऱुवुच्च दॊडगिन स्रुक्कि यम्मकरि
वरुवट्लु वट्टॆडु वदनगह्वरमु । तॆऱचि निल्पुटयु नत्तॆऱुवुन वच्चि
६७१०

क्रूरनक्र ग्राह घोर प्रवाह । वारि पै बडुटयु वायुनन्दनुडु
पॆनचि त्रॆंचिन दानि प्रेवुलु मुद्द । गॊनि वच्चि चेच्चॆऱ गुत्तुक दुऱिमॆ;
नालोन मकरियु "नाहार मऱुग । बोलदु पॊ" म्मनि बुद्धि जिंतिचि
परवश यगुटयु बवननंदनुडु । दरि जेर्चि मकरिनुद्धति व्रच्चि वॆडलि
कोरि चूडग नॊप्पॆ घोरांधकार । दारुण निर्मुक्त तरुणार्कु पगिदि;
ब्रळयारुणोदग्र बडबाग्नि शिखलु । कलय बर्विन नाटि घन पयोराशि
करणि नम्मकरि रक्तमुलतो बॆरसि । यरुणमै कनुपट्टॆ नप्पुडासरसि;
यंत ना मकरियु नमरियै यमरि । यंतरिक्षमुन नुद्यद्विमानमुन
जलदंबु लोपल जपलत मानि । मॆलपॊंदु तिरमैन मॆऱपुचंदमुन
निलिचि मारुतिचेत निज शापमुक्ति । गलिगिन मुदमंदि कपिमुख्यु
जूचि ६७२०

पर, घूमते हुए, (पेट के भीतर) अनल की भाँति जला देने लगने पर, कमजोर बन गई। वह मकरी देह के भीतर के धैर्य को खोकर, प्यास की उत्कटता को सहन न कर सक, अधिक सूख जानेवाले वदन रूपी गह्वर को खोलकर रह गई। उस मार्ग से (बाहर) आकर, ॥ ६७१० ॥

—क्रूर नक्र-ग्राह घोर-प्रवाह-वारि के ऊपर आ गिरने पर वायुनन्दन ने, ऐंठकर तोड़ दी गई उस (मकरी) की आंतड़ियों का पिंड ले आकर झट से (उसके) गले में ठूँस दिया। इतने में मकरी भी 'संभवतः आहार जीर्ण नहीं हो रहा है' ऐसा मन में विचार कर, परवश (बेहोश) होने पर, पवन नन्दन ने उसे किनारे लगकर, औद्धत्य से मकरी को फाड़कर, घोर-अन्धकार की दारुणता से विनिर्मुक्त तरुणार्क के समान शोभित हुआ। प्रलय-अरुण-उदग्र-बडबाग्नि शिखाओं के परिव्याप्त होने के समय के घन-पयोराशि की भाँति, उस मकरी के रक्त से भरकर, वह सरसी अरुण (लाल) हो दिखाई पड़ी। तब वह मकरी भी अमरी (देवांगना) बन, शोभित हो, अन्तरिक्ष में उद्यत्-विमान में, जलद के भीतर चपलता को छोड़ स्थिर बन विलसित चपला की भाँति खड़ी होकर, मारुति के द्वारा निजशापमुक्ति पाकर, मुदित हो, कपिमुख्य को देख, ॥ ६७२० ॥

धान्यमालिनि तन शाप प्रकारमु हनुमंतुनितो देल्पुट

“यो कपिकुंजर ! यो वानरेंद्र ! । नी कतंबुन शापनिर्मुक्ति गंटिः
नेनिंक बोयेंद निंद्रलोकमुन । केनु नीकोक वार्त येंड्रिगिपवलयु”
ननि मुन्नु हनुमंतु ना कोलनिकि । बनिचिन कृतक तापसि जूपि
पलिकें;
“वानरोत्तम ! मुनिवरुडु गाडितडु । वीनि नम्मकुमय्य ! वीडु राक्षसुडु
व्रलमुन दानवेश्वरु नियोगमुन । बलियुडै निनु जंप बनिपूनि वच्चि
येनिंदुलो नुन्कि येंरिगि ना चेत । बूनि निन् जंपिप बुत्तेंचिनाडु;
वीडु वध्युडु नीकु वीनि नम्मकुमु । वीडोप्प डिट वीनि वेवेग चंपि
पोम्मौषधमुलकु भुजशक्ति मेंड्रसि । यिम्मुल द्रोणाद्रिकिदे त्रोव नीकुः”
नन विनि हनुमंतुडाश्चर्यमंदि । वनित गनुंगोनि वलनोप्प बलिकें
“मदिराक्षि! मुनु नीवु मकरिवै यिपुडु । त्रिदशभामिनिवैन तेंड्रगेमि ?”
यनिन ६७३०
“विनवय्य! पावनि ! वीराग्रगण्य! । कनकाद्रि समधैर्य! गांभीर्यधुर्य !
धान्यमालिनि यन दनरु गन्धर्व । कन्यक; ना पूर्वकथ यड्रिगितु;

धान्यमालिनी का अपना शाप विधान हनुमान को बताना

(बोली)—“हे कपिकुंजर ! हे वानरेन्द्र ! तुम्हारे कारण शापनिर्मुक्ति पाई है। अब मैं इन्द्रलोक जाऊँगी। मुझे तुम्हें एक बात बतानी है।” (ऐसा) कह, पूर्व में हनुमान को उस सरोवर में भेजने वाले कृतक-तापसी को दिखाकर कहा—“हे वानरोत्तम ! यह मुनिवर नहीं है। इसका विश्वास मत करो। यह राक्षस है। हठ से दानवेश्वर के नियोग से बली बन तुम्हें मार डालने के निश्चय से आकर, यहाँ मेरा रहना जानकर, मेरे हाथ तुम्हारा वध कराने के लिए (तुम्हें) भेजा है। यह तुम्हारे लिए वध्य है। इस पर विश्वास मत करो। यह योग्य (चरित्रवाला) नहीं है। यहाँ इसे अति शीघ्र मारकर, भुजशक्ति के प्रदीप्त होने पर औषधों के लिए जाओ। तुम्हारे लिए द्रोणाद्रि का मार्ग मनोज्ञता से यही है।” (ऐसा) कहने पर सुनकर हनुमान ने आश्चर्यचकित हो, (उस) नारी को देखकर औचित्य से (यों) कहा—“हे मदिराक्षी ! पूर्व में तुम मकरी थीं अब त्रिदश-भामिनी होने का विधान क्या है ?”, ॥ ६७३० ॥

—कहने पर (उसने कहा) —“सुनो हे पावनी ! हे वीराग्रगण्य ! कनकाद्रिसमधैर्यवाले ! गांभीर्यधुर्य ! (मैं) धान्यमालिनी नाम से शोभित

नखिल-लोकाराध्युडगु सदाशिवुडु। सुखगोष्ठि रजताद्रि शोभिल्लुचुंड
नरुदार ने बाडि याडि मेंप्पिचि । हरुचेत नसमानमगु विमानंबु
वडसि यिक्कोलनिलोपल जलक्रीड। लेंडपक काविप नेगुदेंचुटयु
शांडिल्युडनु मुनि चनुदेंचि नन्नु । निंडिन प्रेमंबु नेलकोन जूचि
यालोन दनलोन नानन्दकेलि । नालोकनालोलुडयि तेलि तेलि
कोनकोनि तूकोन्न कोर्कुल व्रालि । मनसिज ज्वरमुन मानंबु दूलि
"येनु बुण्यात्मुंड; ने दपोधनुड । नेनेड येंलनागलेड ? पों" म्मनक
यूनि नन् गामिंचुचुन्न कन्नेंड्रिगि । "येनेड? यी वेड ? यी दृष्टियेड ?
६७४०

नीवु तपस्विवि—नीवु पुण्युडवु । भाविप निदितपः फल विघ्नकारि"
यन विनि मुनिनाथुडतिकामुडगुचु । ननु जूचि मदिलोनि नान
वोविडिचि
"यिदि तप, फलसार मेंलनाग! नाकु । निदि पुण्यफलसारमेंलनाग !
नाकुः
निदि मोक्षसाधन मेंलनाग! नाकु ;। निदि स्वर्गसोपानमेंलनाग ! नाकु"
ननिन "रजस्वल, नट्टु गान नेडु । मुनिनाथ! ननु नीकु मुट्टगारादुः

गन्धर्वकन्या हूँ। अपनी पूर्वकथा सुनाती हूँ। अखिल लोकाराध्य सदाशिव के रजताद्रि पर सुखगोष्ठी से शोभित रहते समय, अनुपम रूप से मैंने गाकर-नाचकर प्रसन्न कर, हर से असमान विमान प्राप्त किया (और) इस सरसी में निरन्तर जलक्रीड़ाएं करने के लिए आई। शांडिल्य नामक मुनि (यहाँ) आकर मुझे पूर्ण प्रेम से देखकर, इतने में अपने मन में आनन्दकेलि से आलोकन में मग्न होकर, (मन में) घिरी इच्छा (काम-वासना) के वशीभूत होकर, मनसिज-ज्वर के कारण मान (आत्मगौरव) को खोकर, यह न सोचकर कि, मैं पुण्यात्मा हूं, मैं तपोधनी हूं, मैं कहाँ ? सुन्दरियाँ कहाँ ? जाने दो', स्थिरता से (उसके) मेरे उपभोग की इच्छा करने की जानकर, (मैंने कहा)—"मैं कहाँ ? तुम कहाँ ? यह (कु) दृष्टि कहाँ की ? ।। ६७४० ।।
—तुम तपस्वी हो, तुम पुण्यी हो, सोचने पर यह तपःफलविघ्नकारी है।" (ऐसा) कहने पर सुनकर मुनिनाथ ने अति कामुक होते हुए, मुझे देख मान-मर्यादा (आन) को छोड़ देकर, (कहा)—"हे युवती ! यही मेरे लिए तपःफलसार है। हे युवती ! यही मेरे लिए पुण्यफलसार है। हे युवती ! यही मेरे लिए मोक्ष साधन है। हे युवती ! यही मेरे लिए

इम्मूडु दिवसंबु लेनु मीयिंट। नेम्मितो वसियिंचि निजशुद्धि बोंद
मऱि पोंदु" मनि गंधमादनंबुनकु। नेऱि नेगि मुनियिंट निष्ठतो नुंड
दिक्कुलु साधिंचि तिविरि रावणुडु। नक्कोंड सबलुडै या रात्रि विडिसे:
ना पर्वताग्रंबुनंदु ने बाड। ना पाट विनि दशाननुडेगुदेंचि
तन सोंपु दन पेंपु दन प्रतापंबु। दन पेरु नेरिंगिचि तग
बुज्जगिंचि ६७५०

"वनित! नी रूप यौवन विलासमुलु। मुनुमिडि दुदमुट्ट मुट्टवे नन्नु"
ननिन 'बराधीन, नटुगान नीवु। ननु मुट्टदग" दन्न नरभोजनुंडु
"नरय रजस्वललैन कामिनुलु। बरभामिनुलु सूवे भाम! ना मेच्चु
वनत! नन् गारिपवलदु, र" म्मनुचु। ननु ब्रियोक्तुल देल्चि नातो रमिप
नतिकायुडुदयिंचे नंत ना पुत्रु। नति वेगमुन दानवाग्रणिकिच्चि
दिवसत्रयंबुनु दीऱिन पिदप। ब्रविमलतनुशुद्धि बाटिंचि येनु
मुनिगणाधीश्वरु मुंदऱ निलुव। गनुगोनि नायुन्न गति विवेकिंचि,
"ना यिंटिलो नुंडि ननु डागुरिंचि। पोयि नीवेव्वनि बोंदिति प्रीति ?

स्वर्ग-सोपान है।" कहने पर (मैंने कहा) —"हे मुनिनाथ ! आज मैं रजस्वला हूँ। अतः तुम्हें मेरा स्पर्श नहीं करना चाहिए। ये तीन दिन मैं प्रेम से तुम्हारे घर रहूँगी। निज शुद्धि के पश्चात् मेरा उपभोग करो।" (ऐसा) कह. गन्धमादन को जाकर, मुनि के घर निष्ठा से रहते समय, दिशाओं को जीतकर, उल्लसित हो, रावण ससैन्य उस पर्वत पर उस रात को ठहर गया (पड़ाव डाला)। उस पर्वताग्र पर मेरे गाने पर, मेरा गान सुनकर दशानन ने आकर अपनी शोभा, अपना औन्नत्य, अपना प्रताप, अपना नाम जताकर, उचित रूप से फुसलाकर, ॥ ६७५० ॥

—(कहा)—"हे नारी ! अपने रूप-यौवन-विलासों की पराकाष्ठा से मेरा स्पर्श करो न।" कहने पर (मैंने कहा) —"(मैं) पराधीन हूँ। अतः तुम्हें मेरा स्पर्श नहीं करना चाहिए।" कहने पर नर-भोजन (करने वाले राक्षस) ने कहा—"हे भामा ! सोचने पर रजस्वला कामिनियाँ तथा पर-भामिनियाँ मेरे लिए प्रिय हैं। हे वनिते ! मुझे सताओ मत, आओ।" (ऐसा) कहते हुए मुझे प्रिय-युक्तियों से प्रसन्न कर मेरे साथ रमण (संभोग) किया। तो अतिकाय का जन्म हुआ। तब उस पुत्र को अतिवेग से दानवाग्रणी को देकर, दिवस-त्रय के बीत जाने पर, प्रविमल-तनु-शुद्धि प्राप्तकर, मैं मुनि-गणाधीश्वर के समक्ष खड़ी हो गई (तो उन्होंने मुझे) देखकर मेरी स्थिति पर विचार कर (कहा) —"मेरे घर में रहकर, मुझे

तिंति! नी यौव्वनमेव्वंडु गोनियें? । जिंतिपकिट्लेल चेसितिवीवु ?
परम परिज्ञान भाव मार्गमुन । नरसि चूचिन नदि यट्टिद कादे
६७६०
परहितमेयूरु ? पडतुलेयूरु ? । गुरुशीलमेयूरु ? कोम्मलेयूरु ?
जलजाक्षुलेयूरु ? सत्यमेयूरु ? । कलकंठुलेयूरु ? करुण येयूरु ?
वनजाक्षुलेयूरु ? वरुसलेयूरु ? । ननबोडुलेयूरु ? नच्चिकेयूरु ?
तरलाक्षुलेयूरु ? तगवुलेयूरु ? । परिकिंप सतुलकु बासलेयूरु ?
गति दप्प नडचिन कांतल जमुडु । नतिबाधलनु बेट्टकतडेल मानु ?"
ननि तूल गोपिंचि यम्मुनीश्वरुडु । घनशापमिच्चेंनु गरुण वोविडिचि—
"यी सरोवरमुन नी विलासंबु । गासिगा बडि नीवु ग्राहिवै युंडु
मेंदुनु गडु बुण्यहीनुडै निन्नु । बोंदिनवाडुनु बुत्रमित्रादि
बलमुलतो गूड भस्ममै पोव । गलडिक नी पातकंबुन" ननुचु
शापमिच्चुटयुनु जलनंबु नोंदि । या पुण्यनिधि म्रोल हस्तमुल्
मोगिचि ६७७०
"यो मुनिवल्लभ! यो मुनिचंद्र! । यो मुनिसिंहम ! यो मुनिश्रेष्ठ !
यी शाप जलराशि नेतेप गडतु । नी शापदावाग्नि नेनीट नार्तु ?

धोखा देकर, तुम प्रेम से किसके साथ रहीं ? हे नारी ! तुम्हारे यौवन को किसने प्राप्त किया ? सोचे बिना तुमने ऐसा क्यों किया ? परम-परिज्ञान के भाव-मार्ग से विचार कर देखने पर यह ऐसा ही है न ! ॥ ६७६० ॥

—परहित कहाँ ? पड़तियाँ (स्त्रियाँ) कहाँ ? गुरु-शील कहाँ ? नारियाँ कहाँ ? जलजाक्षियाँ कहाँ ? सत्य कहाँ ? कलकंठियाँ कहाँ ? करुणा कहाँ ? वनजाक्षियाँ कहाँ ? रिश्ते-नाते कहाँ ? युवतियाँ कहाँ ? विश्वास कहाँ ? तरलाक्षियाँ कहाँ ? न्याय (औचित्य) कहाँ ? सोचने पर स्त्रियों के वचन का (महत्त्व) कहाँ ? (न्याय की) गति को छोड़ आचरण करने वाली कांताओं को यमराज अधिक कष्ट दिए बिना क्यों रहेगा ?" ऐसा निन्दा कर, क्रुद्ध हो उस मुनीश्वर ने करुणा को छोड़ महान् शाप दिया कि "इस सरोवर में अपने विलास को खोकर, ग्राही (मकरी) बन पड़ी रहो। तुम्हारे साथ जिसने संभोग किया वह इस पातक के कारण आगे अति पुण्यहीन होकर पुत्र, मित्र आदि परिवार के साथ नष्ट हो जाएगा।" (ऐसा) कहकर शाप देने पर विचलित होकर, उस पुण्यनिधि के समक्ष हाथ जोड़कर, ॥ ६७७० ॥

—(मैंने) कहा—"मुनि-वल्लभ ! हे मुनिचन्द्र ! हे मुनिसिंह ! हे मुनिश्रेष्ठ ! इस शाप-जलराशि को मैं किस नौका के सहारे पार करूँ ? इस

गरुणिपवे दयाकर! नन्नु" ननुचु । नुरुभीतिनोंदुचुनुन्न नन् जूचि
तिरमैन सुज्ञानदृष्टि नूहिंचि । परम कृपामूर्तिपरुडुनै पलिकै
"गामिनि! योंक कोंत कालंबुसनग । रामु कार्यार्थमै रानुन्नवाडु
हनुमंतुडिचटिकि; नतनिचे नीकु । घनशाप निर्मुक्ति गलुगु बो"
म्मनुच
बोयें गंगातीरमुनकु नम्मौनि; । पोयें शापं; बेनु बोयेंद निक"
ननि चेंप्पि दीविंचि या सरोजाक्षि । यनिलजु वीड्कोंनि यरिगें
नद्दिविकि;

कालनेमि हननमु

नेंडपनि कडकतो निटगालनेमि । कड वच्चि निलिचै ना
कपिकुलोत्तमुडु;
नप्पुडप्पापात्मुडचलसमाधि । दप्पक युन्नचंदमुन गूर्चुंडि ६७८०
योंडलि पूरंबुतो नुरमेंल्ल विच्चि । नडुमु निक्किकचि याननमोंप्प वंचि
कपट चिंतावृत्ति गन्नुलु मूसि । जपमाल वरुस बूसलु त्रोसि त्रोसि
निक्कंपु जपमुगा नेंरि नोरु गदल । नक्किलि गनुविच्चि हनुमंतु जूचि
"यी युन्न मडुवेड! यी तडवेड ! । पोयिन पनि येंत ! प्रोंद्दैंतवोयें!

शाप-दावाग्नि को किस जल से बुझाऊँ ? हे दयाकार, मुझ पर करुणा दिखाओ न।" (ऐसा) कहते अधिक भीत होनेवाली मुझे देख, स्थिर बनी ज्ञानदृष्टि से सोचकर, परमकृपामूर्तिपर होकर कहा—"हे कामिनी ! कुछ समय बीतने के बाद हनुमान यहाँ राम के कार्यार्थ आनेवाला है। उससे तुम्हें घन-शाप-विनिर्मुक्ति प्राप्त होगी, जाओ।" कहकर वह मुनि गंगा-तीर को गया। शाप दूर हो गया। अब मैं जाऊँगी।" ऐसा कह आसीस कर, वह सरोजाक्षि अनिलज से बिदा लेकर दिवि को गई।

कालनेमि का हनन

—अचंचल प्रयत्न से कालनेमि के पास आकर वह कपिकुलोत्तम खड़ा रह गया। तब वह पापातमा अचल समाधि में स्थिरता से रहने के समान बैठकर ।। ६७८० ।।

—कुम्भक-क्रिया से छाती फुलाकर, कमर को सीधीकर, आनन को शोभा से फुलाकर, कपट-चिन्तावृत्ति से आँखें मूँदकर, जपमाला को फेरने के समान मन को सरकाते हुए, सच्चे जप के समान मुंह (जीभ) हिलाते बैठा रहा। आँखें खोलकर, हनुमान को देख (कहा)—"वह तालाब कहाँ ? यह देरी

नीलसि नी मदिलोन नुपदेश वांछ । गलदेनि गुरुपूज गलदे येमैन
माकिप्पु" डनवुड्डु मारुतात्मजुडु । "नीकिदे गुरुपूज ! नेम्मि
गोम्म" नुचु
ब्रथन निष्ठुरुडु निर्भर वृत्ति वानि । पृथुबाहु मध्यंबुन बिडिकिट
बोडिचे;
नक्षणंबुन दैत्युडारूपमुडिगि । पक्षियै रणवीथि बावनि गदिसे:
गदियुटयुनु बट्टि कडिमि दीपिंप । जदिपि रेक्कलु रेंडु सरि द्रुंचिवैचे
ना रूपमुडिगि मायाशक्ति मेऽसि । धीरसिंहाकृति दिविरि लंघंचि
६७९०

गर्जिंचि दष्ट्रल गड्डुनुग्रुडगुचु । दर्जिंचि रणवीथि दर्पिंचे नसुर;
यलयक हनुमंतुडक्कालनेमि । तल बिट्टुवगुल नुद्धत मुष्टि बोडिचे
बोडिचिन ना रूपु वोनिच्चि यसुर। कडगि सुग्रीवुडै कदिय नेतेंचि
"यिदि येमि ? मारुति! यिचट नेमिटिक? । बदपद ! लक्ष्मणु
प्राणमुल् वच्चे;
दौलगक नीविंक द्रोणाद्रि करुग । वल: दौषधंबुलु वलदिक मनकु"

क्यों ? काम ही क्या (बड़ा) था ? कितना समय बीत गया ? यदि तुम्हारे मन में उपदेश की वांछा है तो हमारे लिए अब गुरुपूजा (की व्यवस्था) है क्या ?" ऐसा कहने पर मारुतात्मज ने कहा—"तुम्हारे लिए यही गुरुपूजा है। प्रेम से ले लो।" कहते हुए प्रथननिष्ठुर (युद्ध में भयंकर) (हनुमान ने) निर्भर-वृत्ति (दुर्निवार रूप) से उसके पृथु बाहुमध्य में मुष्टि से प्रहार किया। उसी क्षण दैत्य ने उस रूप को तजकर, पक्षी बन रणवीथि में पावनी का सामना किया। सामना करने पर साहस के दीप्त होने पर, (उसे) दबाकर दोनों पंख तोड़ दिए। उस रूप को छोड़, मायाशक्ति से प्रकाशित हो, धीर-सिंहाकृति को धारणकर, लांघकर, ॥ ६७९० ॥

—गरज कर, द्रष्टाओं के साथ अधिक उग्र बनते हुए, फटकारते हुए, असुर दर्प दिखाने लगा। न थककर हनुमान ने उस कालनेमि का सिर फट जाए ऐसा उद्धतमुष्टि से प्रहार किया। प्रहार करने पर, उस रूप को छोड़कर, असुर सयत्न सुग्रीव बनकर, नियराकर (बोला) —"यह क्या मारुती ! यहाँ क्यों (ठहरे हो) ? चलो चलो, लक्ष्मण के प्राण आ गए हैं। अब तुम्हें द्रोणाद्रि जाना नहीं है, हमें औषधों की आवश्यकता नहीं है।" ऐसा कहने पर, हनुमान ने उसे सुग्रीव मानकर, फिर नहीं है, ऐसा

ननवुडु हनुमंतुडतनि सुग्रीवु । डनि चूचि तॆलिसि काडनि निश्चयिंचि
मलिगि राक्षसुनुरमदरंट व्रेय । निल गूलि मूर्छिलिल यितलो दॆलिसि
यतडुनु शतश्रृंगुडै विल्लु दाल्चि । यतिशात शरमुल नडरि नॊप्पिप
मुष्टिघट्टनमुल मॊगि बादहतुल । नष्टसत्त्वुनि जेसि नलि जिक्कुवऱचि
यमितसत्त्वक्रीड नवलील दिगिचि । कमलनाळमु द्रॆंचु गंधसिंधुरमु ६८००

परुसुन राक्षसप्रवरु मस्तकमु । दॆरलिचि वॆस नुल्चि त्रॆंचिपोवैचि
नलि नेचि वेस सिंहनादंबु सेसि । तॊलगक मारुति द्रोणाद्रि करिगॆ
नरिगि या गिरिमीद नौषधलतलु । परिकिंचि परिकिंचि पवननंदनुडु
बहुदिव्यलतिका-विभा-भासमान । महिमयु निर्मलमणिगण-प्रभल
दीपवृक्षंबुल दीप्तुलु बर्वि । दीपिंचु नक्कॊंड द्रिम्मरि चूचि
"हितपुष्पगंधंबु लिवॆ लत" लनुचु । नतडु दग्गऱि पोव नवि डागिपोयॆ;
नंत ना हनुमंतुडंतरंगमुन । जिंतिंचि संतापचित्तुडै पलिकॆ;
"नो पर्वताधीश! यो यद्रिराज ! । यो पुण्यवर्तन ! यो गिरिचंद्र !
यनघुंडु रघुरामुडौषधंबुलकु । बनिचिन वच्चिति बनिपूनि येनु

निश्चयकर, क्रुद्ध हो, राक्षस के वक्ष पर मर्मांतक प्रहार किया तो धरती पर गिरकर, मूर्च्छित हो, इतने में (शीघ्र) होश में आकर, वह भी शतश्रृंगवाला होकर, धनुष धारण कर, अति-शात (-निशित) -शरों से विजृंभित हो, सताने पर, मुष्टिघट्टनों से क्रम से, पादहतियों (लातों) से नष्ट-सत्त्व (कमज़ोर) कर, उलझाकर, अमित-सत्त्व की क्रीड़ा से सरलता से पकड़, कमल-नाल को तोड़ देनेवाले गन्धसिन्धुर (मत्त गज) ॥ ६८०० ॥

—के समान, राक्षस-प्रवर के कण्ठ को ऐंठकर, तोड़कर फेंक दिया (और) विजृंभित हो, सिंहनाद कर, अविलम्ब मारुति द्रोणाद्रि गया। जाकर, उस गिरि पर औषधलताओं का परिशीलन करके पवननन्दन के बहु दिव्य-लतिका-विभा से भासमान महिमा (तथा) निर्मल मणिगण प्रभाओंवाले दीपवृक्षों की दीप्तियों से परिव्याप्त उस पर्वत पर घूम-घूमकर, 'हित-पुष्प-गन्ध यही है, (वे) लताएं ये ही हैं' ऐसा कहकर निकट जाने पर वे छिप जाते। तब हनुमान ने अन्तरंग से चिन्तित हो, संतप्त चित्तवाला हो कहा—"हे पर्वताधीश ! हे अद्रिराज ! हे पुण्यवर्तन (वाले) ! हे गिरिचन्द्र ! अनघ रघुराम के औषधियों के लिए भेजने पर, उस कार्य से

निन्निलोकमुलकु हितवैन पनिकि । नन्नेल वंचिप नगराज ! नीकु ?
६८१०
नडरि नीयंदुन्न यौषधलतलु । पौडसूपु : वेवेग बो बनि गलदु;
इम्मुल निदि लोकहित कार्यमगुट । मिम्मु वेडेंद मीरु मी प्रभावमुलु
दीपिंपुडी योषधीलतलार ! । चूपडी नाकु मी सुरुचिराकृतुल"
ननि पल्क वंचन नपुडु तेजमुलु । पौनुपड दनकवि पौडसूपकुन्न
"नगकुलोत्तम! नीवु ना राक सूचि । तगु ब्रियंबौनर्रिप दग दूरकुनिकि"
ननि तन्नु ब्रार्थिंचि यड्गुचुनुन्न । तनकु नौषधमुलु धरणीधरंबु
चूपकुंडुटयुनु जूचि यैंतेनि । गोपिंचि वानरकुल-वज्रपाणि
"येनैंत वेडिन नेल नी मनसु । नानदु नायेंड नगकुलाधमुड !
तलकौनि ड्रालकु दयगल्गुमन्न । गलुगुने गुणशून्य कठिनमूर्तुलकु"
ननि युग्रकोपाग्नुलंगरोममुल । गनदग्निकीललै क्रम्मनंदंद ६८२०
रामुतो नैदिरिन रावणाचलमु । नी मैयि बेरुकुदु निक ननुमाड्कि
दशयोजनमुल विस्तारंबु बंच । दशयोजनोन्नतत्वंबुनु गलुगु
नाभीलतर शैल मवलील बेड्रिकै । भूभागमगल नभोभागमद्रुव;

मैं आया हूँ। हे नगराज ! सभी लोकों का हित करनेवाले इस कार्य के लिए मुझे धोखे में क्यों डाल देते हो ? ॥ ६८१० ॥

औन्नत्य से तुममें स्थित औषध-लताओं को दिखा दो। अतिशीघ्र जाने का कार्य है। इस (कार्य) के प्रेम से, लोकहित कार्य होने से, तुम से निवेदन कर रहा हूँ। हे औषधी-लताओ ! तुम अपने-अपने प्रभावों से दीप्त हो जाओ। मुझे अपनी सुरुचिराकृतियाँ दिखा दो।" ऐसा कहने पर धोखे से, तेज के दीप्त होने पर, उनके अपने को दिखाई न पड़ने पर (फिर कहा) —"हे नगकुलोत्तम ! मेरे आगमन को देखकर उचित प्रिय (कार्य) किए बिना चुप रहना ठीक नहीं है।" ऐसा प्रार्थना कर मांगने पर भी, अपने को धरणीधर के औषधियाँ न दिखाने पर अत्यधिक क्रुद्ध हो वानरकुल-वज्रपाणि ने (कहा) —"हे नगकुलाधम ! मैं कितना भी विनय करूँ तुम्हारा मन मेरे प्रति क्यों नहीं पसीजता? गुणशून्य-कठिनमूर्ति शिलाओं में कहीं दया उत्पन्न होगी ?" (ऐसा) सोच अंग के रोम-रोम से उग्र-कोपाग्नियों के, बलती अग्नि की कीलाओं के समान, सर्वत्र व्याप्त होने पर, ॥ ६८२० ॥

—मानों यह कहते कि राम का सामना करनेवाले रावण रूपी अचल को इस प्रकार उखाड़ दूंगा, दस योजन विस्तार और पंचदशयोजन औन्नत्य से युक्त आभीलतर शैल को सरलता से उखाड़ा, जिससे भूभाग और नभोभाग विदीर्ण हो गए।

चित्रसेनादुलु हनुम नड्डगिंचुट

नपुडागिरि सुरेंद्रुननुमति गाचु । तपनतेजुलु त्रयोदशकोटि संख्य
गल चित्रसेनादि गंधर्वपतुलु । बलशौर्यमुलु मीऱ बावनि जूचि
"यिदि दिव्यगणवास मिदि मेरुतुल्य । मिदि जगज्जीवनं; बिदि नीकु वलदु
नीकिदि दक्कदु, नॆरि डिंचि पॊम्मु । पोकुन्न ब्राणमुल् पोकुंड" वनुडु
गदनोग्रसमवर्ति कपिवीरुडलिगि । वदलनि कडिमिमै वारि वीक्षिंचि
बंधुरंबगु वालपाशंबुतोड । बंधिंचि बंधिंचि बलुविडि द्रिप्पि
यलुकमै गॊंदर नब्धिलो वैचे । नलुकमै गॊंदऱ नडरि कारिंचॆ
६८३०

नलुकमै गॊंदऱ नदरंट व्रेसॆ । नलुकमै गॊंदर नवनिपै गूल्चॆ;
ना महावीरुनुद्धति शक्ति जूचि । सॊमिपरादनि स्रुक्कि केल् मॊगिचि
"यो कपिकुंजर ! यो वानरेंद्र ! । यी कॊंड गॊनियेगु मॆलमितो नीवु"
अनि वायुनंदनु नर्थिदीविंचि । विनुतिंचि गंधर्ववीरुलु दॊलग
नधिकसत्त्वंबुन ननिलनंदनुडु । कुधरंबु बिट्टॆत्तुकॊनि मिटि कॆगसि

चित्रसेनादियों का हनुमान को रोकना

तब सुरेन्द्र की अनुमति से उस गिरि की रक्षा करनेवाले तपन तेज (सूर्य तेज वाले) (और) त्रयोदशकोटि संख्या वाले चित्रसेन आदि गन्धर्वपति, बलशौर्यों के उभरने पर पावनी को देख (बोले) —"यह (पर्वत) दिव्यगणवास है, यह मेरुतुल्य है। यह जगज्जीवन है। यह तुम्हें नहीं चाहिए। तुम्हें यह प्राप्त नहीं होगा। उतार कर जाओ। नहीं तो प्राण नहीं बचेंगे।" कहने पर कदन में उग्र-समवर्ती सम कपिवीर ने क्रुद्ध हो अचंचल साहस से उन्हें देख, बंधुर वालपाश से (उन्हें) बाँध-बाँधकर बरज़ोरी घुमाकर, क्रोध से कुछ को अब्धि में डाल दिया, क्रोध से कुछ को खूब सताया, ॥ ६८३० ॥

—क्रोध से कुछ पर मर्मांतक प्रहार किए, क्रोध से कुछ को धरती पर गिरा दिया। उस महावीर की उद्धत शक्ति को देख, (इसे) जीता नहीं जा सकता, ऐसा (सोच और) कमज़ोर बन, (गन्धर्वों ने) हाथ जोड़ (कहा) —"हे कपिकुंजर ! हे वानरेन्द्र ! तुम इस पर्वत को लेकर मनोज्ञता से जाओ।" ऐसा वायुनन्दन को प्रेम से आसीस कर, विनुति (स्तुति) कर गन्धर्ववीर हट गए। (तो) अधिकसत्त्व से अनिलनन्दन ने कुधर को बलपूर्वक उठाकर, आकाश में उड़कर, अतिवेग से, भयंकर वृत्ति के दीख

नडरि जितारातियै सोंपु मिगिलि
कड्डुवेगमुन भयंकर वृत्ति दोप ।

भरतुनि स्वप्नमु

भूचर खेचराद्भुतवेगुडगुचु । नाचंदमुन बोवना मध्यरात्रि
भामित्र-मित्रुलु भरतु स्वप्नमुन । रामसौमित्रुलु रणमध्यमुननु
दलनूनियलतोड दनुवुलु डस्सि । बलहीनुलै क्रुस्सि पंकमध्यमुन
बडि पलविंचुचु बहुरोदनंबु । लुडुगक काविंचुचुन्न बिट्टुलिकि ६८४०
भरतुंडु मेल्कनि पापंपु गलकु । बरितपिंचुचु वैलुपलिकि नेतेंचि
कललोन रामलक्ष्मणुलुन्न तेऱगु । दलपोसि तलपोसि तलकुचुनुंड
दौडगि दानिकि दोड्डु दुर्निमित्तमुलु । गडगि पेक्कुलु दोपगा भीतिनोंदि
"यिदि येमि पापमो! यिदि तेऱगो! ।यिदियिंक निटमीदनेमिगागलदो!
राम सौमित्रु लरण्यमध्यमुन । नेमैरो ! जानकि येमैनयदियो!
यैन्नंग बदुनालुगेंड्लुनु निडु । चुन्नवि विनगरादोक वार्तयैन;
ना सत्यधनुलकु नायुदारुलकु । ना सदाचारुलकाकृतार्थुलकु
ने कीडु गाकुंड नेनु ना सुकृत । पाकमिच्चिचति" ननि भरतुंडु पलिकि

पड़ने पर, विजृंभित हो जित-आराति (विजित शत्रुओं वाला) होता हुआ, शोभा की अधिकता से,

भरत का स्वप्न

—भूचर (तथा) खेचरों के लिए अद्भुत वेग वाला होता हुआ उस प्रकार जा रहा था। उस मध्य रात्रि के समय, भरत को स्वप्न में भामित्र (सूर्य)-मित्र राम और सौमित्र रणमध्य में सिर पर तेल लगाए हुए, शरीरों से थककर, बलहीन बन, दबकर पंकमध्य में पड़े, निरन्तर बहुरोदन करते हुए दिखाई पड़े, तो अधिक चौंककर, ।। ६८४० ।।

—भरत जागकर दु:स्वप्न के लिए परिताप करते हुए, बाहर आकर, स्वप्न में राम-लक्ष्मण के विधान के बारे में सोच-सोचकर व्याकुल होता रहा। लगकर उसके साथ अनेक दुश्शकुनों के दिखाई पड़ने पर, भीत होकर, यह कह कि "यह कैसा पाप है ! यह कैसा विधान है ! अब आगे यहाँ क्या होने वाला है ! पता नहीं अरण्यमध्य में रामलक्ष्मणों का क्या हुआ ! जानकी का क्या हुआ ! गणना करने पर चौदह वर्ष पूरे होने को आ रहे हैं, एक भी समाचार (उनके बारे में) सुनने में नहीं आया है। उन सत्यघनों का, उन उदार (पुरुषों) का, उन सदाचार (-सम्पन्नों) का, उन कृतार्थों का कोई अनभला न हो, ऐसा मैंने अपना सुकृत-पाक (पुण्यफल)

भार्विचि वेदतत्परुल भूसुरुल । वेवेग रार्विचि वेदोक्तयुक्ति
सकलदानंबुल सकलधर्ममुल । सकलहोमंबुल शांति सेयिंचे
६८५०

नालोन हनुमंतुडाकाशवीथि । नालोल बालर्कुंडै वच्चि वच्चि
बलिसिन निष्ठतो भरतेशुडुन्न । पोलुचु नंदिग्रामपुरि जेर वच्चि
घन जटाभार वल्कलमुलतोड । घनघनश्यामुडै कमलाप्तकुलुडु
भरतुडारघुरामु भंगि दोचुटयु । गरमद्भुतंबंदि कपिमुख्युडपुडु
"सौमित्रि मृतुडैन जानकि डिंचि । रामुडोक्कडिट्टु राबोलु"
"नडुगुदुनो" यंचु "नडुग बो" म्मनुचु । गडकतो दलपोसि
कपिकुलोत्तमुडु
"शरणागत त्राण सद्धर्म निरतु । डरयंग रघुरामुडभिरामुडु
तन सूनृतमु डिंचि तन पेरु डिंचि । तन कुलसति डिंचि तन
तम्मु डिंचि
यंगद सुग्रीवुलादिगा प्लवग । पुंगवकोट्टुल बोरिलो डिंचि
मोनसि रावणु ब्राणमुलतोड डिंचि । तन मेनु देच्चुने दशरथात्मजुडु?
६८६०

दे दिया है।" ऐसा भरत ने कहकर, सोचकर वेदतत्पर भूसुरों को अतिशीघ्र बुलाकर वेदोक्त-युक्ति (-विधान) से सकल दान, सकल धर्म (कृत्य), सकल होम (आदि) शान्ति (कर्म) कराए ।। ६८५० ।।

—इतने में हनुमान आकाश-वीथि से आलोल (चंचल) -बालार्क (बाल सूर्य) के सम आ-आकर, दृढ़ निष्ठा से भरतेश जिस गाँव में शोभा से थे, उस नन्दिग्राम-पुरी आ पहुँचा, घन जटाभार-वल्कलों के साथ (तथा) घनाघन-श्याम हो कमलाप्तकुलवाले भरत का रघुराम की भाँति दिखाई पड़ने पर, अति चकित हो कपिमुख्य ने (सोचा) —"सौमित्र के मृत होने पर, जानकी को छोड़कर अकेला राम इधर कैसे आ सका।" (यह सोच कि) 'पूछूँ', फिर 'नहीं पूछूँगा' ऐसा धैर्य से सोचकर कपिकुलोत्तम ने (फिर सोचा) —"सोचने पर रघुराम शरणागत-त्राण-सद्धर्म-निरत है, अभिराम बलवाला है। अपने सूनृत (सत्य) को छोड़, अपने नाम (यश) को छोड़, अपनी कुलसती को छोड़, अपने अनुज को छोड़, अंगद-सुग्रीव आदि प्लवग-पुंगव-कोटियों (-समूहों) को युद्ध में छोड़, रावण को प्राणों के साथ छोड़, दशरथात्मज अपने शरीर को (यहाँ) लाएगा ? ।। ८६६० ।।

मानव सामान्य मति जेसि रामु । ने नेल चूचिति नी पिन्न चूपु ?
औलसि रामुनि बोलु नौक तपोधनुडु । कलिगिनाडितिय काबोलु" ननुचु
नतिवेगमुन लंक करिगेंडु त्रोव । नतुल बलोदात्तुडै पोव बोव
गलगन्न भरतुडाकशंबु जूचि । यलघुडै चनुचुन्न हनुमंतु गांचि
"यिट्टु तोपनेलौको! यी दुर्ग्रहंबु ? । पट्टु बाणमुल दीनि बडनेयवलयु"
ननि शरचापंबुलाटोपमोप्प । घनसत्त्वुडप्पुडु कैकोन्न जूचि
काकुत्स्थतिलकु डार्काणिचुकौलदि । नाकाशमुन नौक्क यशरीरि वलिकें
"नितनिदिक्कुन नीवु हितबुद्धि सेयु; । मीतडु मी बंधु: डीवल्गलव;"
दनि यौप्प बलिकिन यशरीरिपल्कु । विनि शरचापमुल् विडिचेना घनुडु
अंतना हनुमंतुडंबोधि गदिय । नंतलो राक्षसुलक्षीण बलुल ६८७०

माल्यवंतुडु हनुमंतुनितो बोरुट

नुदित बलोदग्रु लुग्रविक्रमुलु । पदिवेलकोट्टुलु बलिसि तन् गौलुव
रावणु पनुपुन रण जयस्फुरण । वाविरि नम्माल्यवंतुडु वच्चि

—मानव-सामान्य (साधारण मानव के समान) मति (बुद्धि) वाला मानकर मैंने राम को ऐसी छोटी नज़र से क्यों देखा ? संभवत: राम से मिलता-जुलता कोई दूसरा तपोधनी हुआ है। ऐसा ही है।" (ऐसा) सोचते हुए अतिवेग से लंका के मार्ग पर अतुल-बलोदात्त हो जाते रहने पर, स्वप्न से जागे भरत ने आकाश की ओर देख, अलघु हो जाते हुए हनुमान को देख, यह सोचा कि "न जाने यह दुष्टग्रह ऐसा क्यों दिखाई पड़ा ? पटु बाणों से इसे गिरा देना चाहिए।" आटोप के बढ़ने पर शर-चापों को उस घनसत्त्व वाले (भरत) को (हाथ में) लेते देख, काकुत्स्थकुल-तिलक सुने ऐसी एक अशरीरी (आकाशवाणी) आकाश से बोली —"इसकी ओर तुम हित-बुद्धि करो (मित्रभाव रखो)। यह तुम्हारा बन्धु (हितू) है, तुम क्रुद्ध मत बनो। ऐसा शोभा से कही गई अशरीरी के वचनों को सुनकर, उस महान् ने शरचाप छोड़ दिए। तब उस हनुमान के अंबोधि के निकट आने पर अक्षीण बल वाले राक्षस, ।। ६८७० ।।

माल्यवन्त का हनुमान से जूझना

जो उदित बलोदग्र थे, उग्रविक्रमवाले थे, ऐसे दस हज़ार करोड़ (राक्षसों) के दृढ़ता से सेवाएँ करते रहने पर, रावण के आदेश से, रण

व्रदल नेदुर्पडि जलधिमध्यमुन । बॊदिवि या हनुमंतु बोनीक कदिसॆ
गदिसिन नक्कॊंड घनबाहुशक्ति । बदिलंबुगा बट्टि पवननंदनुडु
दाकिन, भुजबलदर्पमुल् मॆऱय । वीकतो राक्षसवीरुलु गदिसि
परशु तोमर चक्र पट्टिस प्रास । करवाल शूल मुद्गर भिंडिवाल
ततुल नॊंप्पिप, नुद्धति बॆच्चु पॆरिगि । यतुल विक्रमदक्षुडवि लॆक्कगोनक
यमरुलच्चॆरुवंद ननिलनंदनुडु । समरलीलाभील चटुल वालमुन
गडकतो नॊंडिसि राक्षसवीरवरुल । वडि बट्टि चुट्टि यव्वनधिलो वैचॆ;
भंजिचॆ गॊंदऱ बटुवालहतुल । भंजिचॆ गॊंदऱ बरुषोग्रदृष्टि;
६८८०
गॊंदऱ बडद्रोसॆ गॊंदऱ व्रेसॆ । गॊंदऱ गारिचॆ गॊंदर नॊंचॆ;
नंत रोषायत्तुडै माल्यवंतु । डंतकाकारुडै हनुमंतुमीद
नॆनय बाणमुलु वेयेसि येयुटयु । धनवालमुन वानि खंडिचि वैचि
यलुक विल् विऱिचि यल्लटु पाऱवैचि । बलुतोकचे गाळ्ळु बंधिचि यॆत्ति
वडि वैचुटयु माल्यवंतुडु मगुडि । पॊंडिचॆ नम्मारुतपुत्रु शूलमुन;
नदि लॆक्कसेयक यतडुन्न जूचि । यदरुलु सॆदरंग नत्युग्रशक्ति
नुरमु नॊंप्पिचिन नुरुशोणितंबु । लुरुवडि दॊरुगंग नॊक्किकत निलिचि

में जय-स्फुरण (संभावना) से क्रम से माल्यवंत आकर, आकाश में सामना कर, जलधिमध्य में पकड़, उस हनुमान को जाने न देकर जकड़ लिया। निकट आने पर, उस पर्वत को घन बाहुशक्ति से सावधानी से पकड़ लेकर पवननन्दन ने सामना किया। राक्षसवीरों ने भुजबल-दर्प से प्रकाशित होने पर साहस से नियराकर, परशु, तोमर. चक्र, पट्टिस, प्रास, करवाल, शूल, मुद्गर, भिंडिवाल (आदि के) समूह से पीड़ित करने पर, औद्धत्य से बढ़कर, अतुल-विक्रम-में दक्ष (हनुमान) ने उनकी परवाह न कर, अमर चकित हो जाएँ ऐसा अनिलनन्दन ने समरलीला-आभील-चटुलवाल से सप्रयत्न राक्षस वीरवरों को झट पकड़-बाँध उस वनधि में डाल दिया। कुछ को पद-ताड़नों से मार डाला, कुछ को भयदनादों से मार डाला, ।। ६८८० ।।

—कुछ को पटु-वाल-हतियों से मार डाला, कुछ को परुष-उग्र-दृष्टि से मार डाला, कुछ को ढकेल गिरा दिया, कुछ पर प्रहार किए. कुछ को व्याकुल किया, कुछ को दबा दिया। तब माल्यवन्त ने रोषायत्त बन, अंतक सम आकारवाला होता हुआ, हनुमान पर हजारों बाण चलाए। (हनुमान ने) घन-वाल से उनका खंडन कर, क्रोध से धनुष तोड़ देकर, उधर फेंक देकर, बली पूँछ से चरण बाँधकर, उठाकर, झट पटक दिया। माल्यवान

यलुकतो गपिवीरुडसमुन वानि । तल दाचि चनि वियत्तलमुन निलिचें
दलकौंनि दिविजुलु तललूचि पौंगड । दलदन्नुटयु वानि तल बिट्टु
वगिलि ६८९०

योलि गीलालंबुलौंलुक लोदारि । यालोन मूर्छिल्लि यंतलो दें लिसि
"कदनरंगमुन निग्गद गदा नीकु । दुद" यंचु गद यल्लकतो बिट्टु वैचि
तडयक यदि ताकु तऱि मंटलेंगय । वडि जूचि यम्मालयवंतुडिट्लनियें
"नोरि वानरुड! यी युदधिलो नद्रि । बोरन बडवैचि पो निन्नु जंप;
मौंनसेसि तौंल्लि समुद्रमध्यमुन । विनतात्मजुनि नेंक्कि विष्णुंडुवच्चि
नातोड युद्धंबु नलि जेसि चेसि । भीतुडै चालक पेंनुपेदि पोडें ?
लोकंबुलेंऱुगु नुल्लोकमीकडिमि; । नी कोर्वगारादु नेंऱ बोर नन्नु"
ननवुडु हनुमंतुडामाल्यवंतु । गनुगौंनि पलिकें नुत्कटकोपुडगुचु
"युद्धमध्यमुन महोद्धति मेंऱसि । वृद्धराक्षस ! नीवु वेंऱवक नन्नु
गदिय नेंव्वड" वनि कदियु नव्वीरु । मदभाषलकु नलिग माल्यवंतुंडु
६९००

ने फिर उस मारुत-पुत्र को शूल से मारा। उसकी परवाह न कर, उसके स्थान को देखकर, मर्मांतक रूप से अत्युग्रशक्ति से उर को पीड़ित करने पर, बरबस उरु-शोणित के प्रवाहित होने पर, थोड़ी देर खड़े रहकर, क्रोध से कपिवीर रोष से उसके सिर पर प्रहार कर जा, वियत्तल में खड़ा रहा। चाहकर दिविजों के सिर हिलाकर प्रशंसा करने पर, सिर पर लात मारने से उसका सिर अधिक फूटकर, ।। ६८९० ।।

—क्रम से रक्त-प्रवाह के झरने पर, गिरकर उतने में मूर्च्छित हो, उतने में होश में आकर, यह कह कि 'कदनरंग में यह गदा ही तो तुम्हारा अन्त कर देगा न ?", गदा से अधिक क्रोध से प्रहार किया। अविलम्ब उसके लगने पर, ज्वालाओं के फूट पड़ते देख उस माल्यवान ने यों कहा—"रे वानर ! इस उदधि में झट अद्रि को डाल चला जा। (तब) तुझे नहीं मारूँगा। पूर्व में समुद्र-मध्य में विनतात्मज (गरुड़) पर आरूढ़ हो विष्णु आकर मेरे साथ युद्ध करके, भीत होकर शोभा खोकर चला नहीं गया था ? (इसे) लोक जानते हैं। मेरा साहस अलौकिक है। मेरे साथ तुम युद्ध नहीं कर सकते।" ऐसा कहने पर हनुमान ने उस माल्यवान को देखकर उत्कट कोप से कहा—"हे वृद्ध राक्षस ! युद्धमध्य महा-उद्धति से दीप्त हो निर्भीकता से मेरे साथ जूझने के लिए (तुम्हारी) बिसात ही क्या है ?" (ऐसा) कहते निकट आने वाले उस वीर के मद-वचनों से क्रुद्ध हो माल्यवान के, ।। ६९०० ।।

घन चंद्रहासोग्रखड्ग मंकिंचि । हनुमंतु वक्षमुद्धति शक्ति वैव
नदि वज्रनिभकायुडगु नांजनेयु । विदितंबुगा दाकि वॆस बॆल्लु
विरिगॆं;
ननिलजुडाखड्गहतिकिंत नॊच्चि । किनिसि निशाचरु गिट्टि
बिट्टलिगि
भूतभयंकराद्भुतवालमॆत्ति । यातनि मॆड जुट्टि यलुकतो बट्टि
चॆलगि याकसमुन जिरजिर द्रिप्पि । यलघुविक्रमशीलुडब्धिलो वैचॆ;
वैचिन बडि माल्यवंतुडात्रोव । वे चनि पाताळ विवरंबु जॊच्चॆ
हतशेषराक्षसुलन्निदिक्कुलकु । धृतिदूलि परचिरि दिविजुलुप्पॊंग
गॊंडंत गॆलुपुतो गॊंडंतो नमर । मंडलि वॊगड धीमंडनुंडरिगॆं;

श्रीरामुडु लक्ष्मणुनिकै परितपिंचुट

बवंतदीप्ति प्रभातविभ्रांति । बर्विन भीतिमै भानुवंशजुडु
समर-लक्ष्मी-रति-श्रम निद्र नॊंदु । क्रममुन जॆलुवुडै रणशय्यनुन्न
६९१०
तम्मुनि गनुगॊनि "तम्मुडा! नीवु । तम्मुडवैयुंड दपमूननैति;
निल जीवुलकु नॆल्ल निदॆवेगॆ ब्रॊद्दु । पॊलुपेदि ना पालि प्रॊद्दस्तमिंचॆ

—घन चन्द्रहास को उग्रता से चमकाकर, हनुमान के वक्ष पर उद्धत शक्ति से डालने पर, वह वज्रनिभ कायावाले आजनेय से लगकर झट टूट गया। उस खड्ग-प्रहार से अनिलज थोड़ा पीड़ित होकर क्रुद्ध हो निशाचर के निकट जाकर, अधिक क्रोध से, भूत-भयंकर-अद्भुत-वाले को उठाकर, उसके कंठ से लपेट कर, क्रोध से पकड़, विजृंभित हो, आकाश में (उसे) घुमा-घुमाकर, अलघुविक्रमशीलवाले ने अब्धि में डाल दिया। डालने पर गिरकर माल्यवान उसी मार्ग से झट जा पाताल-विवर में प्रविष्ट हुआ। हतशेषराक्षस, धृति खोकर सभी दिशाओं में भाग गए जिससे दिविज फूल उठे। पर्वत-सम विजय के साथ (तथा) पर्वत के साथ अमर-मंडली के प्रशंसा करने पर धीमंडन चला गया।

श्रीराम का लक्ष्मण के लिए परिताप करना

—पर्वत की दीप्ति से प्रभात होने की विभ्रांति के परिव्याप्त होने पर, भय से, भानुवंशज (राम) ने समर-लक्ष्मी-रति-श्रान्त हो सोए हुए (व्यक्ति) के समान शोभा से रण-शय्या पर स्थित, ।। ६९१० ।।

—अनुज को देखकर (कहा) —"हे अनुज ! तुम्हारे जैसे अनुज के रहते मैं तप की निष्ठा नहीं ले सका। यह देखो, संसार के समस्त जीवों के

नड्रिमुड्रि नडविलो नालि गोलपडिति। नेँड्रय नेडाजिलो निन्नु गोलपडिति;
गेँडनाकुनैन दुष्कीर्तिपंकंबु । गडुग दिक्केव्वरु गलरु सौमित्रि !
मानपयोनिधि महनीयशीलु । ना नोचि कन्न युन्नतपुण्यशीलु
नेनु नीचे नम्मि यिच्चिन नकट ! । कानल गोँनिपोयि कडतेर्चितन्न !
ये नेमि चेयुदु निटमीद' नन्न । नेनु सुमित्रतो नेमन नेर्तु ?
दुदि बोयि भरतशत्रुघ्नुलु नन्नु । गदिय नेतेँचि 'लक्ष्मणुडेडि' यनिन
नेमनि चेँप्पुदु ? नेमनि पोदु । ना मुखंबुननु दैन्यमु दोप निक ?
देनिकि जिंतिप; देनिकि वगव । नेनु जिंतिचेद निनु दीर्घचित; ६९२०
खलुडैन रावणुगतुलकु जेसि । तलपोसि मदि रोसि तमयन्न बासि
हितभृत्यवृत्तिमै नी विभीषणुडु । चतुरुडै ननु वच्चि शरणंबु सोँच्चे
जोँच्चिन ब्रोति 'रक्षराज्यमेल्ल । निच्चिचति नीं' कनि ये नूड्रिंडिचि
पट्टंबु गट्टिति ब्रतिनतो, बलुकु । नेँट्टन निंडिप नेर्पुलेदय्ये;
निदे वेगुचुनु वच्चे; निक लक्ष्मणुडु । ब्रदुकडु नाकिक ब्राणमुल् वलदु;

लिए दिन निकल रहा है, शोभा रहित हो मेरे लिए दिन ढल रहा है। जल्दबाजी में वन में पत्नी को खो बैठा, आज युद्ध में तुम्हें खो दिया। हे सौमित्र ! मुझे संप्राप्त दुष्कीर्ति रूपी पंक को धो डालने के लिए मेरा कौन है ? माता सुमित्रा मुझे देखकर कहे कि 'मान-पयोनिधि, महनीय शीलवाले, तपस्या कर प्राप्त किए उन्नतपुण्यशीलवाले (लक्ष्मण) को तुम पर भरोसा रखकर (छोड़) दिया है। हे तात ! काननों में ले जाकर उसका काम तमाम कर दिया न। अब आगे मैं क्या करूँ ?' तो मैं क्या जवाब दूँ ? अन्त में (अयोध्या) जाने पर भरत-शत्रुघ्न मेरे पास आकर पूछें कि 'लक्ष्मण कहाँ ?' तो क्या कहूँ (उत्तर दूँ) ? मुख पर दैन्य (भाव) के झलकने पर अब मैं (अयोध्या) कैसे जाऊँ ? किसी के लिए चिन्ता नहीं करता, किसी के लिए दुखी नहीं होता, (किन्तु) तुम्हारे लिए दीर्घ चिन्ता करता हूँ ।। ६९२० ।।

—खल रावण के आचरण का विचार कर, मन में घृणा होने से, अपने अग्रज को छोड़, हित-भृत्य वृत्ति से यह विभीषण ने चतुरता से मेरे पास आकर मेरी शरण ली। (शरण में) आने पर मैंने प्रेम से यह कह 'समस्त रक्षोराज्य तुम्हें प्रदत्त किया है' उसे ढाढ़स बँधाया (और) प्रतिज्ञा कर (उसका) राजतिलक किया। उस वचन को पूरा करने की सामर्थ्य नहीं रही न ! यह दिन निकल रहा है। अब लक्ष्मण जीवित नहीं

दुरितदूरुडु वीनितोडिदॆ लॊक । मरसि चूचिन निकनडलोर्वरादु;
शरणन्नवारि नॆच्चट वीडरादु । धरणिपै क्षत्रियधर्मंबु गादु
तारु नॊच्चिननैन दम्माश्रयिंचु । वारल रक्षिंपवलयु राजुलक;
नी विभीषणु गॊंचु नी वेगि पुण्य । भावुडैनट्टि मा भरतुनितोड
नरय निक्कडिकार्यमंतयु जॆप्पि । ‘परगंग लंककु ब्रतिगाग नितनि
६९३०

वॆलय नयोध्यकु विजयलग्नमुन । फलसिद्धि सॊंपार पट्टंबु गट्टु
मनि येनु जॆप्पिति’ ननि यॊप्प जॆप्पि । यॊनरंग नंदुंडि युचितंबुतोड
वानरेश्वर ! नीवु वालिनंदनुडु । सेनलगॊंचु गिष्किधकु नरुगु”
डनि दैन्यपाटुतो नाड भीतिल्लि । वनचराधीशुंडु वलनॊप्प गदिसि
“परिकिंचि चूड ब्रभातंबु गादु । नरनाथ ! यिप्पुडु नालव जामु
सॊच्चॆ निंतिय, वायुसूनुंडु निपुड । वच्चु; संतापिंपवलदंचु देर्चॆ;
दॆर्चिन नॆंतयु दॆलियक मऱियु । बॆर्चिन शोकाग्नि पॆल्लुन मिगुल
बॊरि बॊरि भूमिपै बॊरलुचु वगल । बुरपुर बॊक्कचु भूवरतनयु

रहेगा। मुझे अब प्राण नहीं चाहिए। दुरित-दूर (पुण्यात्मा) इसी के साथ मेरा लोक है। सोच देखने पर अब अधिक व्यथा सही नहीं जाती। शरण में आए हुए को छोड़ना नहीं चाहिए। वह धरती पर क्षत्रिय धर्म नहीं है। राजाओं को स्वयं पीड़ित होकर भी आश्रय में आए हुए जन की रक्षा करनी चाहिए। हे वानरेश्वर ! इस विभीषण को लेकर तुम शीघ्र जाकर, पुण्य-स्वभाववाले हमारे भरत के साथ, यहाँ का समस्त कार्य बताकर, मेरे वचन कह दो कि ‘लंका की जगह इसे, ।। ६९३० ।।

—शोभा से अयोध्या (राज्य देकर), विजयलग्न पर, फल-सिद्धि की संप्राप्ति हो, ऐसा राजतिलक करे। ऐसा (विभीषण को) सौंप देकर शोभा से वहाँ रहकर, औचित्य से तुम और वालिनन्दन सेनाओं को लेकर किष्किन्धा में जाओ।’ ऐसी दीनता से बात करने पर भीत हो, वनचराधीश ने प्रेम से पास जाकर (कहा) “परिशीलन करने पर (यह) प्रभात नहीं है। हे नरनाथ ! अब तो मात्र चौथे पहर का प्रवेश (प्रारम्भ) हुआ है। वायुसून अभी आएगा। सन्ताप मत करो” कहकर सांत्वना दी। सांत्वना देने पर भी न जानकर, और अधिक बनी शोकाग्नि के कारण बार-बार भूमि पर लोटते हुए अधिक विकल होते हुए भूवरतनय (राजकुमार-राम कहने लगे) —“हे तात ! जनक की आज्ञा से मेरे अटवि में आते समय, तुम्हें आदेश न देने पर भी, मेरे पीछे आकर

"डन्न ! ने जनकाज्ञ नडविकेतेर । निन्नु बोम्मनकुन्न नीवु ना वेनुक
जनुदेंचि यिड्डुमुल जालंग बडग । गनुगोनि मनमुन गरमु शोकितु;
६९४०

नेडु नीवोरुचेत नीलावु दूलि । पोडिमि चेंडि यिट्लु भूमिपै नुंड
नेनेंट्लु ब्रदुकुदु ? नेमनि वगतु ? । ने निनु डिच्चि येट्लेगुदु बुरिकि
सीत नाकेटिकि ? जीवमेमिटिकि । नो तंड्रि ! नाकिक नुर्वि
येमिटिकि ?

ना तंड्रि पंचिन नाटनुंडियुनु । ना तंड्रिक्रिय नन्नु नरयुचुंडुदुवु;
ना विधि निनु नेडु नाकारिचेत । नीविधि निट्टु चेसे नीरसंबेति
देशदेशमुल सतीजनंबुलुनु । देश देशमुलंदु दिविरि बांधबुल
नरसि कानगवच्चु नट्टि देशमुल । बरग दम्मुनि नेंदु बडयंगवच्चु ?"
ननि यचेतनुडगु ननुजुपै ब्रालि । कनुगोनि दिक्कुलु कडुधैर्यमेडलि
"यन्नरो! नीवु न 'न्न' न्ननि पिलुव । नेन्नडु विनगलगुनिक वीनुलकु ?
सीत सुमित्र गा स्थिरमति जूतु; । चूतु नन् दशरथक्षोणीशुगाग;
६९५०

नाततविषम घोरारण्य भूमि । ब्रीति नयोध्यग बेंपुन जूतु;

अनेक कष्टों को भोग, उसे सोच मन में अधिक दुखी होता हूँ। आज तुम अन्य (शत्रु) के हाथ सामर्थ्य खोकर, ऐसा भूमि पर पड़े रहोगे तो मैं कैसे जीवित रहूँ ? ।। ६९४० ।।

—क्या-क्या कहकर व्यथित बनूं ? तुम्हें छोड़ पुरी को कैसे जाऊं ? मुझे सीता किसलिए ? प्राण किसलिए ? हे तात ! अब उर्वि (राज्य) ही किसलिए ? मेरे पिता के भेजने के समय से लेकर मेरे पिता के समान मेरा लालन-पालन करते रहे। मेरी विधि (नियति) ने आज तुम्हारी विधि (गति) नाकारि के हाथ ऐसी कर दी है। देश-देशों में स्त्रीजनों को, देश-देशों में ढूंढ़कर बन्धुजनों को प्राप्त कर सकते हैं। (किन्तु) उन-उन देशों में अनुज को कहाँ प्राप्त किया जा सकता है ?" ऐसा कह अचेतन बन अनुज पर गिरकर, (सभी) दिशाओं में देखकर, अति धैर्य को खोकर (बोले) —"हे भाई ! तुम्हारे मुख से 'अग्रज' का सम्बोधन इन कानों से कब सुनूंगा ? सीता को स्थिरमति से सुमित्रा मानते थे, मुझे दशरथ-क्षोणीश (राजा) ही मानते थे ।। ६९५० ।।

—आतत-विषम-घोर-अरण्यभूमि को प्रेम से अयोध्या के समान मानते थे। कभी मुझसे अलग नहीं रहते थे। अब मुझे छोड़ जाना न्याय-संगत है

वेॅप्पुडु नातोड नेॅडबायकुंडु । दिप्पुडु पाडिये येॅडबाय नन्नु ?
बूवुलपान्पुन बॊंदिंचु मेनु । नीवॆंट्लु चेर्चित नेडु ऱा नेल ?
बडियु निद्रिंचेॅदु परिणाममॊंदु । पुडमिपै नंदन पॊलुपॊंद नीवु
पदुनालुगेॅंड्लुनु बायक निद्र । पदिलंबुगा डिंचि परुवडि नडवि
नरसि नन् रक्षिंचि याजिमध्यमुन । नरुल जंपक पोव नगुनय्य! निद्र?
निद्र नीविट्लुन्न निजमय्येॅ दीर्घ । निद्र मी यन्नकु नृपनंदनुंड !
मी यन्न कॆप्पुडु मिक्किलि भक्ति । सेयुदु नेडेल चिंतिंपवकट !
मन्नन सेयुदु ममत ना माट । लिन्नियूहंबुलु नेल पॆट्टेॅदवु ?
"रावणासुरु बट्टि रणमुलॊ गूल्चि । भूवर! येॅंतयु भूसुत गूर्तु" ६९६०
ननि नादु वीनुल कनलार बलुक । कुनिकिकि गतमेमि योपुण्यमूर्ति!
यिप्पुडु मेल्कनि "येमि श्रीराम! । तप्प बल्कग नीकु दगुनय्य" यनुचु
नॊप्पेॅडि माटल नूऱड जेसि । तप्पक कनुविच्चि तग जूडु" मनुचु
रासुतु कॆंगेलु रमणमै दिगिचि । भासुरंबुग गंडपाळिक जेर्चि
"नन्नु देर्पवे" यनि नरनाथुडपुडु । मनमुन दॆलियक महिमीद बडियॆ;
बडियुन्न या रघुपति मूर्छ दॆलिपि । यडलु वारिंचि रय्यगचराधिपुलु;

क्या ? पुष्पशय्या को प्राप्त करने (योग्य) शरीर को आज पत्थरों पर कैसे रख सके ? हे नन्दन ! गिरकर भी सोनेवाले परिणाम को प्राप्त तुम सुशोभित हो । चौदह वर्ष तक सावधानी से निरन्तर निद्रा को छोड़कर क्रम से अरण्य में ध्यान से मेरी रक्षाकर, युद्ध-मध्य में शत्रुओं का संहार किए बिना सो जाना उचित है ? हे नृपनन्दन ! तुम इसी प्रकार निद्रित रहोगे तो तुम्हारे अग्रज को सचमुच दीर्घनिद्रा (मृत्यु) प्राप्त होगी । अपने अग्रज के प्रति सदा भक्ति-भाव से रहते थे । हाय, आज उसकी चिन्ता क्यों नहीं करते ? ममता से मेरे वचन का सम्मान करते थे । आज इतना क्यों सताते हो ? 'रावणासुर को पकड़, रण में गिराकर, हे भूवर ! भूसुता को (तुम्हें) दिला दूँगा ।' ।। ६९६० ।।

—मेरे कानों को मधुर लगे, ऐसे वचन क्यों नहीं कहते हो हे पुण्यमूर्ति ! अब जागकर 'हे श्रीराम ! यह क्या ? ऐसे अनुचित वचन कहना उचित है ?' कहते हुए, मनोज्ञ वचनों से (मुझे) सांत्वना देकर, अवश्य आँख खोलकर देखो ।" (ऐसा) कहते हुए, राजकुमार की हथेली को भासुर-रूप से अपनी गंड-पालिका (गंड-स्थल) पर रख, 'मेरा उद्धार करो न' कहते हुए, तब नरनाथ बेहोश हो धरती पर गिर पड़ा । गिरे हुए रघुपति की मूर्च्छा दूरकर, अगचराधिपों ने व्याकुलता दूर की ।

हनुम द्रोणाद्रि गोनिवच्चुट

अंत प्रभामंडलाभीलुडगुचु । नंतलो हनुमंतुडरुगुदेंचुटयु
देजंबु पेंपुन दृष्टिपराक । तेजोदिवाकर दीप्तुडैयुन्न
गपुलेल्ल गलगि युत्कट भीति बोंदि । विपुलतर भ्रांति विवशुलै तूल
नालोन गमलाप्तुडनि चूचि विभुडु । कालकालोदग्रगति निड मंडि
६९७०

कपिवल्लभुनि नेल्ल कपुल वीक्षिंचि । "कपुलार! सूर्युनि गंटिरे मिट!
जेकोनि बहुपुण्यशीलंबुलंदु । माकुलंबुनकेल्ल महि गर्तयैन
यंधकारारातियकट ! यी पद्म । बंधुंडु नेडु ना पगवानि गूडि
युदयिंचुचुन्नवाडुग्रत मिगिलि । यिदॆपडि सौमित्रि यिब्भंगि नुंड;
नी सूर्यमंडलंबिलसीद गूल । नेसॆद" ननुचु नहीनसाहसुडु
ब्रह्मांडकोट्लु भंगिप बूनि । ब्रह्मादुलदरंग ब्रळयकालंबु
नाडुग्रवृत्ति बिनाकि बिल्लंदि । वाडिमि मेऱयु ना वडुवु दीपिंप
नापूर्ण-भुज-नैपुणाटोपुडगुचु । ना पिनाकियु दानै यगुट देल्पुचुनु
विल्लंदि भुज बलविस्फूर्ति मेऱय । बेल्लु कोपिंचि संभृतवेगुडगुचु

हनुमान का द्रोणाद्रि ले आना

तब प्रभा-मंडल के समान आभील (भयंकर) बनकर, इतने में हनुमान आए। तेज की अधिकता से, तेजोदिवाकर-सम दीप्त उसे देख न सक सभी कपि विकल हो, अधिक भीत हो, विपुलतर रूप से भ्रान्ति-विवश हो लड़खड़ा उठे। इतने में विभु ने उसे देख, कमलाप्त (सूर्य) समझ, काल-कालोदग्रगति से पूर्ण हो, (क्रोध से) बलकर, ।। ६९७० ।।

—कपिवल्लभ को (तथा) समस्त, कपियों को देखकर (कहा) —"हे कपियो ! आकाश पर सूर्य को देखा न ? बहु पुण्यशील से सम्पन्न हमारे समस्त कुल (वंश) का महि पर कर्ता होकर भी यह अन्धकार-आराति (-शत्रु), यह पद्मबन्धु आज मेरे शत्रु का साथ देते हुए, सौमित्र के इस प्रकार पड़े रहने पर, उग्रता की अधिकता से उदित हो रहा है। इस सूर्यमंडल को आज पृथ्वी पर गिरा दूंगा।" (ऐसा) कहते हुए अहीन-साहस वाले (राम) ने ब्रह्मांड-कोटियों का भंजन करने, ब्रह्मा आदि के भीत हो जाने पर, प्रलयकाल के दिन पिनाकी (शिव) के उग्रवृत्ति से धनुष ग्रहणकर, पौरुष से दीप्त होने के विधान से प्रकाशित होकर, आपूर्ण-भुज-नैपुण्य के आटोप से, स्वयं पिनाकी होने की विधि को जताते हुए, धनुष हाथ में ले, भुज-बल-विस्फूर्ति से प्रकाशित होकर, अधिक क्रुद्ध हो,

जटुलरौद्रास्त्रंबु संधिप दिवुरु । पटुवृत्ति गनुगोंनि भयमंदि कलगि
६९८०
यसमानसत्त्वुडै यलुकतोनुन्न । वसुधेशुतो जांबवंतुडिट्लनियें:
"नगणितशक्तिमै नलुक दीपिंप । जगतीश ! नीविटु शरमु संधिप
धृतिदूलि नलुगड देवगंधर्व । पतुलेल्ल भीतुलै पारुचुन्नार
लिदियेमि राघव! यिच्चलोनीवु । पदिलुंडवै चूचि भाविंपलेवु
वेलुगोंदु बहुदीपवृक्षदीधितुल । दोलुकाडु नुज्ज्वल द्रोणाचलंबु
गोंनिवच्चुचुन्नाडु गुरुसत्त्वुडैन । यनिलसूनुडु गानि यर्कुंडु गाडु;
भानुसन्निभुनकु बवनसूनुनकु । भूनाथ ! यॆदुरुगा बुच्चु वानरुल"
ननुटयु रघुरामुडानतिच्चुटयु । हनुमंतुनकु नेंदुररिगिरि कपुलु;
नाकाशमुननुंडि हनुमंतुडंत । नाकोंड गोंनिवच्चि यवनिपैं डिंचि
जननाथुडगु रामचंद्रुनकर्थि । विनतुडै करमुलु वेरवोप्प मोंगिचि ६९९०
"युर्वीश! ने बोयि योंगि नौषधमुलु । पर्वतंबुन बेक्कुभंगुल वेदकि
पनिवडि कानक पर्वतंबेल्ल । गोंनि यिटु वच्चिति गुवलयाधीश!
यडरि मी यानति नटु पोवुनपुडु । नेंडपनि कडकतो निटुवच्चुनपुडु
गडगि विघ्नमुलनेकमुलय्यें नडुम । दडयुट दप्पुगा दलपोय वलव"

संभृत-वेगवाला होते हुए, चटुल-रौद्रास्त्र का संधान करने उद्यत होने वाले उनकी पटुवृत्ति को देख, भीत हो, व्याकुल हो, ॥ ६९८० ॥

—असमान सत्त्व से क्रोध से युक्त वसुधेश से जांबवान ने यों कहा—"हे जगदीश ! अगणित शक्ति से क्रोध के दीप्त होने पर तुम्हारा इस प्रकार शर का शंधान करने पर, धैर्य खोकर चौतरफ समस्त देवगन्धर्वपति भीत हो भाग रहे हैं। यह क्या राघव ? सावधानी से देखकर मन में सोच-विचार नहीं कर सकते हो ? प्रकाशमान बहुदीप वृक्षों की दीधितियों से विलसित उज्ज्वल द्रोणाचल को गुरुसत्त्ववाला अनिलसून ला रहा है, वह अर्क नहीं है। हे भूनाथ ! भानुसन्निभ पवनसून की अगवानी के लिए वानरों को भेजो।" (ऐसा) कहने पर, रघुराम की अनुमति देने पर, हनुमान की अगवानी करने कपि गए। हनुमान ने आकाश से तब उस पर्वत को लाकर, भूमि पर उतारकर, जननाथ रामचन्द्र के समक्ष प्रेम से विनत हो, ढंग से हाथ जोड़कर ॥ ६९९० ॥

—(कहा) —"हे उर्वीश ! हे कुवलयाधीश ! मैं जाकर क्रम से पर्वत पर औषधियों के लिए कई प्रकार से ढूंढ़कर, (उन्हें) न पाकर, समस्त पर्वत को उठा लाया हूँ। विजृंभित होकर आपकी आनति (आदेश) से उधर जाते समय और दुर्निवार साहस से इधर आते समय बीच में कई विघ्न

दनवुडु रामुडा हनुमंतु जूचि । घनतरसंतोषकलितुडै पलिकें
"नीकेटि तप्पुलु ? नीचेत निलिचें । गाकुत्स्थतिलकुल गौरवोन्नतुलु;
सुरुचिरशक्तिमै सुरलकुनैन । नरुदैनपनि सेसि" तनि प्रीतिनोंदे

संजीवकरणि चे लक्ष्मणुडु मूर्छ देरुट

ना समयंबुन नर्कतनूजु । डा सुषेणुनि जूचि यर्थि दीपिंप
"निक्कौड दडयक यीवु वानरुलु । नेंक्कि महौषधुलेपंड देंच्चि
भार्विंच्चि लक्ष्मणु प्राणमुल् वडयु । वेवेग" ननवुडु विनि सुषेणुंडु७०००
पनि बूनि यप्पुडु परवसंबोंप्प । वनचरसहितुडै वडि गोंड नेंक्कि
"यमरेंद्रुडिक्कड नर्थितो दोंल्लि । यमृतपानमु सेसें नमरुलु दानु;
निचट विष्णुडु जगद्धितवृत्ति बूनि । यचलुडै निजचक्रहति द्रुंचि वैचें
तुरु राहु मस्तकंबुग्रुडै" यनुचु । दरुचरवरुलुकु दविलि चूपुचुनु
नोंगि बर्वतमुन महौषधुल् देंच्चि । तग ब्रयोगिंप नंतन वानि शक्ति
तगिलि नाटिन बाणततुलोलिवेंडलि । मगुडै ब्राणमुलु लक्ष्मणकुमारुनकु
नप्पुडु वानरु लानंदमंदि । नेंप्पटि पेंमितो निनवंश्युकडकु

उपस्थित हुए । विलम्ब को दोष मत मानिए ।" ऐसा कहने पर राम उस हनुमान को देख घनतर-सन्तोष-कलित होते हुए कहा—"तुम में दोष कैसे ? तुम्हारे कारण काकुत्स्थकुलतिलकों के गौरव और औन्नत्य स्थिर बने रहे । सुरुचिर शक्ति से तुमने सुरों के लिए भी असम्भव काम किया है ।" (ऐसा) कह (राम) प्रसन्न हुआ ।

संजीवकरणि से लक्ष्मण का होश में आना

उस समय अर्कतनूज ने सुषेण को देख इच्छा के प्रदीप्त होने पर, (कहा) —"तुम वानरों के साथ इस पर्वत पर अविलम्ब चढ़कर, महौषधियों को शोभा से लाकर, अतिशीघ्र लक्ष्मण के प्राणों का उद्धार करो ।" ऐसा कहने पर सुनकर सुषेण ने, ।। ७०० ।।

—सप्रयत्न तब उत्साह से वनचर-सहित हो झट पर्वत पर चढ़कर, यह कहते, 'अमरेन्द्र ने यहाँ पूर्व में प्रेम से अमरों के साथ अमृतपान किया था । यहाँ विष्णु ने जगद्धित वृत्ति धारण कर अचल हो निज-चक्रहति से उस राहु के मस्तक को उग्रगति से खंडित कर दिया ।" तरुचरों को प्रेम से दिखाते हुए, क्रम से पर्वत की महौषधियाँ लाकर, समुचित रूप से प्रयोग करने पर तब उनकी शक्ति से, लगकर (सप्रयत्न), गड़े बाण समूह निकालकर लक्ष्मणकुमार के प्राण पुनः स्थापित हुए । तब वानरों के आनन्दित

जनुदेर गौगिट सौमित्रि जेर्चि । कनुगव हर्षाश्रुकणमुलु दौरुग
ना समीरजु जूचि "यतुलपुण्यात्म! । यी सुमित्रापुत्रु निच्चिति नाकु;
गाकुत्स्थकुलमित्रु गमनीयगात्रु । नीकतंबुन गंटि नेडु लक्ष्मणुनि;
७०१०
बडिन ना तम्मुनि प्राणंबुलेत्ति । पडसिति ना प्राणमुल् मगुड
ब्राणंबुलन नाकु बरिकिंप नितडे; । प्राणबंधुड वीवु परिकिंप नाकु;
दरुचरोत्तम! नीवु तलकौनिचेयु । पुरुषार्थ मौरुलकु बोलुने चेय ?
नुपकारमुनकु ब्रत्युपकारमेलम्मि । गपिवीर ! चेयुट गडुनुत्तमंबु;
नीकु ब्रत्युपकृति ने जेयनेर; । नी कापदलु लेवु निखिल लोकमुल"
ननि पल्कि रघुरामुडंत सुषेणु । गनुगौनि कौनियाडि कौगिट जेर्प
मुदितात्मुडगुचु निम्मुल सुषेणुडु । नुदधि पौंगिन क्रिय नुब्बि या रामु
ननुमति रणमुलो नट बडियुन्न । वनचरोत्तमुल जीवमुलुनु बडसे;
नंत वानर वीरुलंतरंगमुल । संतोषमैसग ना शैलंबु गदिसि
सकल रत्नोज्ज्वल सानु शृंगमुल । नकलंकरुचि बौल्चु ना सौंपु सूचि
७०२०

होकर, यथापूर्व औन्नत्य से इनवंशवाले (राम) के पास आने पर, सौमित्र का आलिंगन कर, नेत्रद्वय से हर्ष-अश्रु-कणों के झरने पर, उस समीरज को देख (बोले) —"हे अतुल पुण्यात्मा ! मुझे इस सुमित्रापुत्र को दिया है। काकुत्स्थकुल के मित्र (सूर्य) (तथा) कमनीय गात्र वाले लक्ष्मण को आज तुम्हारे कारण (जीवित) देखा है, ॥ ७०१० ॥

—गिरे हुए अपने अनुज के प्राणों का उद्धार कराकर, अब मैंने अपने प्राण पुनः प्राप्त किए हैं। यह (लक्ष्मण) तो सोचने पर मेरे लिए प्राण है। सोचने पर तुम मेरे प्राण-बन्धु हो। हे तरुचरोत्तम ! सप्रयत्न तुम जो पुरुषार्थ करते हो क्या वे अन्यों के लिए सम्भव हैं ? हे कपिवीर ! उपकार का प्रेम से प्रत्युपकार करना बहुत उत्तम है। मैं तुम्हारा प्रत्युपकार नहीं कर सकता। (फिर भी) 'तुम्हारे लिए निखिल लोकों में आपदाएँ (विपत्तियाँ) नहीं हों।' ऐसा कहकर, तब रघुराम ने सुषेण को देखकर, सराहना कर, आलिंगन किया। मुदित-आत्मा वाला होता हुआ प्रेम से सुषेण ने, उदधि के उमड़ने की तरह उमड़कर, उस राम की अनुमति से, उधर रण (भूमि) में पड़े हुए वनचरोत्तमों को पुनर्जीवित किया। तब वानरवीर अन्तरंगों में आनन्द के उमड़ने पर, उस शैल के पास जाकर, सकल-रत्नों से उज्ज्वल-सानु-शृंगों से युक्त अकलंक-रुचि से विराजमान उसके सौन्दर्य के देखकर, ॥ ७०२० ॥

यवनीशुननुमति नग्गिरि यॆक्कि । विविधस्थलंबुल वेड्कतो दिरिगि
परिपक्वफलमुल बरितृप्ति नॊंदि । पॆरलतेनियलानि पॆन्नीरु ग्रोलि
यवरोहणमु सेसि रंदऱु; नंत । बवननंदनु जूचि पलिकॆ राघवुडु;
"ऎप्पटि चोटनॆ येर्पड बॆट्टु । मिप्पर्वताधीशु निक नी" वनुचु
रामुडु वनुप संरंभंबु मॆरसि । या महाशैलंबु ननिलनंदनुडु
नलघुडै कॊनिपोव नाकाशवीथि । जलधिमध्यमुन राक्षसुलु वीक्षिंचि
पऱचि यत्तॆऱगॆल्ल बरुवडि दनकु । नॆऱिंगिप नेर्पड नॆऱिगि कोपिंचि
लंकाधिपति जयालंकारधनुल । शंकुकर्ण स्थूलजंघुलतोड
नट महानादुनि नट महावक्तृ । नट जतुर्वक्तृनि नट मेघजित्तु
नट हस्तिकर्णु महावीर जैत्रु । गट्टुवाक्यशालि नुल्कामुखु बिलिचि
७०३०
"यलवु सॊंपुन मीरलड्डंबु दाकि । बलियु ना हनुमंतु बट्टितॆंडॊंडे;
गॊनिपोवुचुन्न या कुधरंबु वुच्चि । वनधिलोपल बाऱु वैचि रंडॊंडे;
नी रॆंडु तॆऱगुल नेर्पड नॊकटि । धीरुलै चेसि यॆतॆंचिन जालु;
नच्चुगा नतनिकि नॆमिलि वॆलय । निच्चमै सवराज्यमिच्चॆद निपुडे"
ना विनि विपुलसेना सहस्रमुल । तो वारु वॆडलि बंधुर सत्त्वधनुलु

—अवनीश की अनुमति से, उस गिरि पर चढ़कर, उत्साह से विविध-स्थलों में घूमकर, परिपक्व-फलों से परितृप्त होकर, मधुकोश के मधु का पानकर, स्वच्छ जल पीकर, सभी उतर पड़े। तब पवननन्दन को देख राघव ने कहा—"अब तुम इस पर्वताधीश को यथास्थान रख दो।" ऐसा कहते राम के भेजने पर संरंभ से प्रकाशित हो, अनिलनन्दन ने उस महाशैल को (उठा) अलघु (महान्) हो आकाश-वीथि से उड़ चला। (उसे) जलधिमध्य से राक्षसों ने देखा। दौड़कर, वह सारा विधान शीघ्र (रावण को) बताया। (उसे) खूब जानकर, क्रुद्ध हो, लंकाधिपति ने जयालंकराधनी शंकुकर्ण (और) स्थूलजंघ को, महानाद, महावक्त्र, चतुर्वक्त्र, मेघजित, हस्तिकर्ण, महावीर जैत्र, कटुवाक्यशाली उल्कामुख को बुलाकर, ॥ ७०३० ॥

—(कहा) —"शक्ति की सुघड़ता से तुम लोग मार्ग रोककर, बली उस हनुमान को पकड़ लाओ अथवा ले जानेवाले उस कुधर (पर्वत) को लेकर, वनधि में फेंककर आओ। इन दोनों विधानों में कोई एक (कार्य) कर धीर बन आओ, बस है। ऐसा करके आनेवाले को प्रेम से अभी राज्य दे दूंगा।" ऐसा कहने पर सुनकर, विपुल-सेना-सहस्रों से निकल पड़कर वे बंधुर-सत्त्व-धनी दानव अमर वेषधारी हो, क्रोध से रणोदग्र (तथा) उग्रविक्रम वाले, क्षुरिका-असि-तोमर-शूल-कोदंड-परशु-कुंत आदि

दानवामर वेषधारुलै किनुक । नूनि रणोदग्रुलग्रविक्रमुलु
क्षुरिकासितोमर शूल कोदंड । परशु कुंतादि प्रमुख शस्त्रमुलु
धरियिंचि मिंचिन दर्पंबु मेंऱसि । युरुतराहंकारहुंकारुलगुचु
गनुकनि गर्जिचि कालमेघमुलु । पोंनुपड सूर्युनि बोंदुवु चंदमुन
बोंदिवि या हनुमंतु बोनीक कदिसि । मदमुन बेंचि दुर्मतुलु बिट्टाचि
७०४०

"देवासुरुल मम्मु दृष्टिपकोरि! । पोवुचुन्नाडवु भुजशक्ति मेंऱसि;
यी कोंड गोंनुचु नीवेंट बोयें" दनिन । नाकपिवीरुडायसुरुल जूचि
विलय कालानल विस्फुलिंगमुलु । दोंलकाड नुज्ज्वल दुर्जयाभील
कालचक्राकार घनवज्रकठिन । वालचक्रमु द्रिप्पि वडि व्रेय दोंडगें;
नप्पुडा राक्षसुलडरि येंतयुनु । नोंप्पिप वायुतनूभवुंडलिगि
भंजिचें गोंदऱ बटुवालनिहति । भंजिचें गोंदऱ बरुषोग्रदृष्टि;
घनसत्त्वुडिब्भंगि गय्यंबुसेसि । विनुतविक्रम जयवृद्धि बेंपोंदि
तोयजाप्तुडु पेंचि तुप्पल दूल । दोयदंबुल दोंलगद्रोचु चंदमुन
राक्षसवीरुल रणवीथि नोंडिचि । नक्षत्रवीथि नुन्नतशक्ति मेंऱसि
७०५०

शस्त्र धारण कर, अधिक दर्प से प्रकाशित हो, उरुतर-अहंकार से युक्त हुंकार करते हुए, सप्रयत्न गर्जन कर, ढंग से कालमेघों के सूर्य को आच्छादित करने के समान, घेरकर उस हनुमान को जाने न देकर, नियराकर, मद से विजृंभित हो, दुर्मतियों ने अधिक सिंहनाद कर (कहा—) ॥ ७०४० ॥

—"रे ! भुजशक्ति से प्रकाशित हुए (तुम), हम देवासुरों को देखे बिना जा रहे हो। इस पर्वत को लेकर तुम कहाँ जाओगे ?" ऐसा कहने पर, वह कपिवीर, उन असुरों को देखकर, विलय-काल अनल-विस्फुलिंगों के झरने पर, उज्ज्वल-दुर्जय-आभील-कालचक्र आकार वाले (तथा) घन-वज्र-कठिन वालचक्र को घुमाकर झट से (उन असुरों को) मार डालने लगा। तब उन राक्षसों के विजृंभित हो अधिक सताने पर, वायुतनूभव ने क्रुद्ध हो कुछ को पटुवाल-निहति से मार गिराया, कुछ को परुष-उग्रदृष्टि से मार गिराया, कुछ को पद-ताड़नों से मार गिराया, कुछ को भयदनादों से मार गिराया। घन-सत्त्व वाला (हनुमान) इस प्रकार रण करके, विनुत विक्रम की जयवृद्धि से शोभित हो, तोयजाप्त (सूर्य) के विजृंभित हो, तोयदों को बिखेर देने के समान, राक्षसवीरों का रणभूमि में दमनकर, नक्षत्र-वीथि में उन्नतशक्ति से प्रकाशित हो, ॥ ७०५० ॥

पोवुचुनुंड ना भुजशक्ति जूचि । देवगंधर्वुलु दिविनुंडि यपुडु
पौरि बौरि नतनिपै बूवुल वान । गुरियुचुनुंडिरि कौलदिकग्गलमु
नंतलो हनुमंतु डतिवेगुडगुचु । नंतरिक्षंबुन नरिगि यक्कोंड
मुन्नुन्न चोटने मुदमोप्प बेट्टि । क्रन्नन रघुरामुकडकु नेतेंचि
विनतुडै तनपोवु वृत्तांतमेल्ल । विनुपिंप श्रीराम विभुडु हर्षिंचि
या वायुनंदनु नालिंगनंबु । गाविंप गनुगोनि कपिवीरुलपुडु
वच्चिच लंकापुरवरमेल्ल गलय । जेच्चेरु जेसिरि सिंहनादमुलु
भूरिदशाननु पुण्य चिह्नमुलु । बोरन नंदंद पोवुचंदमुन
दरिगि याकसमुन दारलोंडोंड । यडिगि पोवग जोच्चे; नट वेगे ब्रोद्दु;
दारुणस्फुटरोष दैत्यगर्वांध । कारंबुतो नंधकारंबु विरिसें; ७०६०
नलि मीरु वानरानन सरोजात । मुलतो सरोजातमुलु विकसिंचें;
दनुपेंपु पो दूलु दनुजास्य कैर । वमुलतो भुवि गैरवम्मुलु मोगिडें;
भानुवंशधीशु बहुळ प्रताप । भानुतो भानुंडु प्राग्दिश दोचें;
जानकी-विभुडंत सौमित्रि जूचि । यूनिन संतोषमुल्लंबु निंड
"सदमलगुणशील ! सौमित्रि! नीवु। ब्रदिकिति; ना पालि
भाग्यमेट्टिदियो !"

—जा रहा था। उसकी भुजशक्ति देखकर, देवगंधर्वों ने तब अधिकता से पुनः पुनः पुष्पवृष्टि की। तब अतिवेग वाला होता हुआ हनुमान ने अंतरिक्ष से जाकर, उस पर्वत को पूर्वस्थान पर ही मोद के साथ रख, झट रघुराम के पास आकर, विनत हो, गमन का पूरा वृत्तांत सुनाया (तो) विभु श्रीराम के हर्षित हो, उस वायुनन्दन का आलिंगन करने पर, समस्त कपिवीरों ने उसे देखा। फिर समस्त लंकापुर-वर क्षुब्ध हो, ऐसा झट सिंहनाद किया। भूरि (महान्) दशानन के पुण्यचिह्न झट सर्वत्र मिट रहे हों, इस प्रकार कुंचित हो आकाश में नक्षत्र क्रमशः मिट जाने लगे। तब पौ फटी। दारुण-स्फुट-रोष-युक्त दैत्य-गर्वांधकार के साथ अंधकार भी छँट गया, ॥ ७०६० ॥

—शोभायुक्त वानर-आनन-सरोजातों के साथ सरोजात विकसित हुए। अपने गौरव का तिरस्कार करनेवाले दनुज-आस्य-कैरवों के साथ भुवि पर कैरव मुरझा गए। भानुवंशाधीश के बहुल-प्रताप-भानु-सा प्राग्दिशा में भानु दिखाई पड़ा। तब जानकी-विभु ने सौमित्र को देखकर स्थिर आनन्द के हृदय में भर जाने पर (कहा)—"हे सदमलगुणशील वाले ! सौमित्र ! तुम जीवित हो गए। यह मेरा सौभाग्य है।" (ऐसा) कहकर प्रशंसायुत-अतुल वाक्यों को सुनकर लक्ष्मण ने विभुराम को प्रणाम कर

यनि यनि कौनियाडु नतुल वाक्यमुलु। विनि लक्ष्मणुडु रामविभुनकु म्रौक्कि
“देव! प्राकृतुडवे ? देव! दीनुडवे ?। देव ! निर्धनुडवे ? देव ! यल्पुडवे ?
यी भंगि नानति यीनेल नीकु । ब्राभवंबुनु बेंपु बरकिप मरचि ?
मुनु दंडकारण्य मुनुलकु साधु । जनुलकिच्चिन प्रतिज्ञलु विचारिंचि,
यिच्चलो मिमु नम्मि यी विभीषणुडु । वच्चिन निच्चिन वरमु जिंतिचि ७०७०
यिनुडस्तशिखरिकि नेगकमुन्न । यनि रावणुनि जंपु मखिललोकेश!”
यनवुडु रघुरामु “डौगाक” यनुचु । घनरण विक्रम क्रम शक्ति मॆरसॆ;
नंत नावृत्तांतमंतयु नॆरिगि । यॆंतयु जिंतिचि यिच्चलो गलगि

रावणुडु शुक्रुनिवद्द मॊरवॆट्टुट

विक्रम क्रम शक्ति विडिचि रावणुडु। शुक्रु सन्निधि केगि स्रुक्कुचु म्रौक्कि
“चुट्टाल भृत्युल सुतुल सोदरुल । नॆट्टन रघुरामु निशित बाणाग्नि
दरिकौनि कालिचि दग्धुल जेसि । परगि यमोघमै प्रळयाग्नि पगिदि

(कहा)—“हे देव ! तुम प्राकृत (जन) हो क्या ? हे देव ! तुम दीन हो ! हे देव ! तुम निर्धन हो ? हे देव ! तुम अल्प (क्षुद्र) हो ? (नहीं) अपने प्राभव (प्रतिभा) और गौरव को भूलकर इस प्रकार क्यों कहते हो ? पूर्व में दंडकारण्य के मुनियों (तथा) साधुजनों को प्रदत्त प्रतिज्ञाओं के बारे में विचार कर, मन में आप पर विश्वास कर इस विभीषण के आने पर प्रदत्त वर का विचारकर, ॥ ७०७० ॥

—हे अखिललोकेश ! इन (सूर्य) के अस्तगिरि जाने से पहले युद्ध में रावण का संहार करो ।” ऐसा कहने पर रघुराम ‘ऐसा ही हो’ कहते हुए घनरण-विक्रमक्रम-शक्ति से प्रकाशित हुए। तब वह समस्त वृतांत जानकर, अधिक चिन्ता कर, मन में व्यथित हो,

रावण का शुक्र से निवेदन करना

—विक्रमक्रम-शक्ति को छोड़ रावण शुक्र के पास जाकर, दुखी होते हुए, प्रणाम कर (बोला) —“रघुराम की निशित-बाणाग्नि, मेरे सम्बन्धियों, भृत्यों, सुतों (तथा) सहोदरों को जलाकर, दग्ध करके, व्याप्त हो, अमोघ प्रलयाग्नि के समान है। (वह) दुर्निवार है। युद्ध में सब

तुन्नदि; मान्पराकुन्नदि; पोर । नन्नियु दॆगटारॆ; नन्नियु बॊलिसॆ;
नॆनु ब्राणमुलतो नॆब्भंगि निलुतु ? । नानति यि" म्मन्न नाशुक्रुडनियॆ;
"नलघुसंगरमुन नरुल साधिप । गल वुपायंबुलु; गलगनेमिटिकि?
ने विघ्नमुलुलेक यीवु होमंबु । गाविंचु पुण्यंबु गलिगिन जालु; ७०८०
भीमसंग्राम गंभीरमुलगुचु । होमाग्निमुखमुन नुंडि नीकडकु
नुरु रथाश्वंबुलु नुग्रखड्गमुलु । शरचापकवचमुल् चनुदॆंचु वेग;
नवि साधनमुलुगा नरुल साधिपु । मवि नीकु जयसिद्धु" लनुचु नातनिकि
होममंत्रमुलॆल्ल नुपदेशमिच्चि । होमकृत्यमुलॆल्ल नॊगि नॆपँऱिंचि
पॊ "म्मन वीड्कॊनिपोयि रावणुडु । क्रम्मिन कडकतो गडुनुग्रुडगुचु
बुरवप्ररक्षकु भूरिसत्त्वुलनु । बरिकिंचि चतुरंग बलमुल बनिचि
यवधानतत्परुडयि वेग लंक । गवनुलु वॆयिंचि कलय शोधिंचि
यंत विद्युज्जिह्वुडनु महावीरु । नंतकाकारु नुद्गत शूरु बिलिचि
"नीवु नी बलमुतो नॆलकॊनि नगरु । गावु; मेमरकुमु; कदलकु" मनुचु
बनिचि यनुष्ठानपद्धति बॊंदि । चनि मृत्युवक्त्रबु जन जॊच्चु भंगि ७०९०

समाप्त हो गए, सब कुछ नष्ट हो गया। मैं प्राणों के साथ किस प्रकार रह सकूँगा ? आज्ञा दीजिए (बताइए)।" कहने पर उस शुक्र ने कहा—"अलघु (बड़े) संगर में नरों को जीतने के उपाय हैं। व्याकुल क्यों होते हो ? बिना किसी विघ्न के, तुम्हें होम करने का पुण्य मिल जाए तो पर्याप्त है। ॥ ७०८० ॥

—होमाग्नि-मुख से झट तुम्हारे पास भीम-संग्राम में गम्भीर-उरु रथाश्व, उग्र खड्ग, शर-चाप-कवच आएँगे। उनको साधन बनाकर, नरों को जीत लो। वे तुम्हें विजय प्रदान करेंगे।" (ऐसा) कहते हुए उसे समस्त होम मन्त्रों का उपदेश देकर, समस्त होमकृत्यों की व्यवस्था बताकर, 'जाओ' कहने पर, रावण (उनसे) बिदा लेकर चला गया। (फिर) व्याप्त साहस से अति उग्र होते हुए, पुर-वप्र-रक्षकों को जो भूरि सत्त्ववाले थे, सावधान कर, चतुरंग-सेनाओं को भेजकर, अवधान-तत्पर हो, झट लंका के पुरद्वारों (की रक्षा) की व्यवस्था कर, सब कुछ शोध (परीक्षण) कर, तब विद्युज्जिह्व नामक महावीर को जो आतंक-आकार वाला था, उद्धत-शूर था, बुलाकर (कहा) —"तुम अपनी सेनाओं के साथ स्थिरता से नगर की रक्षा करो। मत हटो।" (ऐसा) कहते हुए भेजकर, अनुष्ठान की पद्धति को अपनाकर, जाकर मृत्यु-वक्त्र में प्रविष्ट होने के समान, ॥ ७०९० ॥

रावणुडु पाताळ होममु चेयुट

बातालगुह जॊच्चि पदिलुडै निलिचि। याततहोमकृत्यमुनकु दगिन
रक्तवस्त्रंबुलु रक्तमाल्यमुलु । रक्त चंदन मनुरक्तुडै तालिचि
बंधुर दक्षिण प्रवणवेदिककु । गंधपुष्पाक्षतल् गरमॊप्प निच्चि
या होमवेदिलो नग्नि संधिंचि । होममंत्रमुलॆल्ल नॊगि नुच्चरिंचि
वॆरवॊप्प ना होमवेदिलो गलय । बरिकिंचि निशितास्त्रपरिधुलु जेर्चि
श्रीवृक्षभल्लात सितमुख्य समिध । ला वृत्ति गैकॊनि यंतट मड्रियु
नोज सर्षपमुलु नॊनर दूर्वमुलु । लाजलु दग गुग्गिलंबुनु नगरु
नेयि देनिय गल्लु नॆत्तुरु बॆरुगु । बायसान्नमुलु दर्भलु ब्रवाळमुलु
दगरुलु मीलु ग्रद्दलु वराहमुलु । नॊगि निवि मॊदलुगा नॊप्प वेल्चुचुनु
नाश्चर्यकरमैन या महावेदि । निश्चलित ध्याननिरतुडै युंडॆ; ७१००
बलुविडि रावणु पापंबुलॆल्ल । गलसि पॆल्लॆगसिन कैवडि दोप
ना महागुहनुंडि यप्पुडत्युग्र । धूमंबुलुरुतरस्तोमंबुलगुचु
बटुतर निर्घात पवन संघात । चटुलंबुलै निक्कि ब्रदल बर्वुटयु

रावण का पाताल होम करना

—पातालगुफा में प्रवेशकर, सावधान हो रहकर, आतत-होमकृत्य के लिए उचित रक्तवस्त्र, रक्तमाल्य, रक्तचंदन को अनुरक्ति से धारणकर, बंधुर-दक्षिण-प्रवण-वेदिका को अधिक शोभा से गन्ध-पुष्प-अक्षत देकर (अलंकृत कर) उस होमवेदी में अग्नि का संधान कर, समस्त होम मंत्रों का क्रम से उच्चारण कर, ढंग से उस होमवेदी का अच्छी तरह परिशीलन कर, निशित-अस्त्रों की परिधाएँ संवार कर, श्रीवृक्ष, भल्लात, सित आदि समिधाओं की आवृत्ति लेकर, तब क्रम से सर्षप, शोभा से दूर्वाएँ, लाजा (खील), उचित गुग्गिल और अगरु, घी, मधु, ताड़ी, रक्त, दही, पायसान्न (खीर), दर्भ, प्रवाल, भेड, मछली, गीध, वराह आदि का शोभा-क्रम से हवन करते हुए, आश्चर्यप्रद उस महावेदी के (समक्ष) निश्चल-ध्यान-निरत हो रहा । ॥ ७१०० ॥

—बरजोरी रावण के समस्त पाप मिलकर अधिकता से ऊपर उठे हों, ऐसा उस महागुफा से तब अत्युग्र धूम उरुतरु-स्तोम (समूह) होते हुए, पटुतर-निर्घात-पवन-संघ-चटुल हो ऊपर उठकर, आकाश में व्याप्त हुआ तो दिविज भीत हुए, मुनि भीत हुए, दिक्पति भीत हुए, कपि भीत हुए । उन महाधूमों को तब देखकर रावणानुज (विभीषण) ने राम से कहा—"युद्ध-भूमि में तुम्हारा सामना कर, ठहर न सक पाकर आज रावण ने शुक्र की

वॆऱचिरि-दिविजुलु वॆऱचिरि मुनुलु। वॆऱचिरि दिक्पतुल्; वॆऱचिरि कपुलु
ना होमधूमंबुलप्पुडु चूचि । रामुतो ननियॆ ना रावणानुजुडु;
"नॆलकॊनि यनिमीन निनुदाकि यॆदुट। निलुवनेरक पोयि नेडु रावणुडु
शुक्रानुमति निट्लु सुरुचिर गरिम । विक्रमशालियै वेवेग निपुडु
कपट कर्मारंभ गंभीर वृत्ति। विपुलजयार्थियै वेल्चुचुन्नाडु;
अवधरिंचितॆ पॊगलाकसंबुननु । निवुडुचुनुन्नवि निंडि यॊंडॊंड;
होमंबु निर्विघ्नयोगमै यितडु । कामिचुतॆऱगुन गडमुट्टॆनेनि ७११०
रावणु लोकविद्रावणु बोर । देवासुरुलकैन दॆगि गॆल्वरादु;
कावुन होमविघ्नमु सेयवलयु । वे वेग वानरवीरुल बनुपु;"
मनवुडु रघुरामु "डगुगाक" यनुचु। बनिचिन बनिपूनि बलुविडि गडगि
गुरुबलाढ्युडु गवाक्षुंडु दारुंडु । शरभुडु ग्रथनुंडु शतबलि नलुडु
गवयुंडु मैंदुंडु गंधमादनुडु । बवमानसूनुंडु बनसुडंगदुडु
गुमुदुंडु ज्योतिर्मुखुंडु गोमुखुडु । ग्रममुन बीरादिगा गल कपुलु
पदिकोट्टुलुद्भट प्रथन विक्रमुलु । विदित प्रतापुलु विपुलकोपनुलु
गगनमार्गमुन लंककु नॆगुदॆंचि । यगणिताहंकारुलै पॆच्चु पॆरिगि
पदघट्टनमुल भूभागंबु वगुल । जदिय दिग्गजमुलु ग्रदलु ग्रक्कदल
नार्पुलु बॊब्बलु नदर बॆल्लडरि । दर्पितनिर्भरोत्साहसाहसुलु७१२०

अनुमति से इस प्रकार सुरुचिर-गरिमा (तथा) विक्रमशाली हो अति शीघ्रता से अब कपट-कर्म की आरम्भ-वृत्ति से विपुल जयार्थी हो हवन कर रहा है। देखा है न, आकाश में सर्वत्र व्याप्त हो धुआँ फैल रहा है। (यह) होम निर्विघ्नयोग से, इसकी इच्छा के अनुसार समाप्त हुआ तो, ॥ ७११० ॥

—लोक-विद्रावण रावण को युद्ध में देवासुर भी जीत नहीं सकते। अतः होम का विघ्न करना चाहिए। अति शीघ्रता से वानर वीरों को भेजो।" ऐसा कहने पर रघुराम ने 'ऐसा ही हो' कहते (कपियों को) भेजा। कार्य-व्यस्त हो, बरजोरी प्रयत्नशील हो, गुरु-बलाढ्य गवाक्ष, तार, शरण, क्रथन, शतबली, नल, गवय, मैंद, गन्धमादन, पवमान-सून, पनस, अंगद, कुमुद, ज्योतिर्मुख, गोमुख, आदि दस करोड कपि, जो उद्भट-प्रथन-विक्रमशाली थे, विदित प्रताप वाले थे, विपुल कोप वाले थे, गगनमार्ग से लंका में आकर, अगणित-अहंकारी हो, अधिक विजृंभित हो, पद-घट्टनों से भूभाग के विदीर्ण होने पर, दिग्गजों के दब जाने पर, आकाश के हिल जाने पर, सिंहनाद और गर्जनाओं के अधिक विजृंभित होने पर, उन दर्पित-निर्भर-उत्साह तथा साहस वालों ने, ॥ ७१२० ॥

नलिदाकि रावणुनगरि कापुन्न । बलियुर बेंक्कंड्र बट्टि चेंडाडि
क्रूरुलै दौवारिकुल बट्टि चंपि । भूरिसत्त्वमुन दल्पुलु वीडदन्नि
नगरुट्टविडि जौच्चि नगरूपधरुलु । नगचरुल् वडि दशाननु रोयुवारु
बृथुरथशाललु बिरुदुलै चौच्चि । रथमुलु विऱुग नुर्वर व्रेयुवारु
गजशाललौगि जौच्चि घनमुष्टिहतुल । गजमस्तकमुलु व्रक्कलु सेयुवारु
हयशाललौगि जौच्चि हयशरीरमुलु । भयदोग्रखमुल बडव्रच्चुवारु
सौरिदि शालल जौच्चि जोडुपक्करलु । दरमिडि चिच्चि चिदऱलाडुवारु
ज़लमौप्प नायुधशालल जौच्चि । कलय शस्त्रास्त्रमुल् खंडिचुवारु
नेचि बंडारपुटिड्लो जौच्चि । राचि यर्थमुलु सूऱलु सल्लुवारु
नुरुसत्त्वगतुलौप्प नुप्पौंगि पौंगि । वरुस दोरणमुलु वडि द्रेंचुवारु
७१३०
बसिडि गोपुरमुलु भर्महर्म्यमुलु । वेंस नुर्वि गूल बलिवडि द्रोयुवारु
गट्टल्क गोंदऱ गनि "जगद्द्रोहि । बट्टितें" डनि पट्टि बाधिचुवारु
वनितलु सुतुलुनु वापोव गन्न । जननुलड्डमुराग सदनमुल् सौच्चि
नेट्टन वेलिकीड्चि नेऱसि राक्षसुल । दट्टिचि तललूड दाटिचुवारु
वासिमै निब्भंगि वनचरुल् गूडि । गासिवेंट्टुचुनुंडगा भीतिनौंदि

आक्रमण कर रावण की नगरी की रक्षा करनेवाले कई बली (राक्षसों) को पकड़ छिन्न-भिन्न कर दिया, क्रूर बन दौवारिकों (द्वारपालों) को पकड़ कर मार डाला, भूरिसत्त्व से लात मारकर दरवाजे तोड़ दिए। नगर में शीघ्र प्रवेश कर, नगरूप-धारी नगचरों में कुछ ऐसे थे जो झट दशानन को खोज रहे थे, पृथुरथशालाओं में वीर बन प्रवेश कर रथों को ज़मीन पर पटक दे रहे थे, क्रम से गजशालाओं में प्रवेश कर, घन-मुष्टि-हतियों (आघातों) से गजमस्तकों को टुकड़े कर रहे थे, क्रम से हय-शालाओं में प्रवेश कर, हय-शरीरों को भयद-उग्र-नखों से फाड़ दे रहे थे, क्रम से शालाओं में प्रवेश कर, कवचों को क्रम से फाड़ कर बिखेर दे रहे थे, हठ से आयुधशालाओं में प्रवेशकर शस्त्र-अस्त्रों को खंडित कर दे रहे थे। विजृंभित हो भांडार-गृहों में प्रवेश कर वहाँ की सामग्री को बिखेर डाल रहे थे, उरु-सत्त्वगतियों से शोभित हो उमड़-उमड़ कर, क्रम से तोरणों को झट तोड़ दे रहे थे, ।। ७१३० ।।

—स्वर्ण-गोपुरों, भर्म्य (स्वर्ण) हर्म्यों (सौधों) को झट बलपूर्वक ज़मीन पर गिरा दे रहे थे, अतिक्रोध से कुछ (राक्षसों) को देखकर यह कह कि 'जगद्रोही को पकड़ लाओ' पकड़कर सता रहे थे, नारियों और सुतों के रोदन करने पर, जननियों के मार्ग रोकने पर घरों में प्रवेश कर, झट बाहर

दीनदशातुरस्थिति दूलपोयि । दानवु वीडु विध्वस्तमै कलगे;
हरिपीडितानेकहयहेषितमुलु । गरिघटानेक भीकर बृंहितमुलु
वृद्ध बालांगनाविल विलापमुलु । सिद्ध विक्रम कपिसिंहनादमुलु
गलय बर्विन लंक कल्पांतकाल । मुल बेर्चु बडबाग्निमुखमुखार्चुलकु
नुलिकि वापोवु पयोधि चंदमुन । गौलदि कग्गलमुगा घूर्णिल्ल
दौडगे; ७१४०
नंत सूर्योदयंबय्ये; रावणुनि । नंतट बरिकिंचि यतडुन्नचोटु
कानक चिंतिचि कडुसंभ्रममुन । वानरुलू वेदकंग वारि वीक्षिंचि
चतुरतमै विभीषणु पत्नि सरम । पतिहितंबात्मलो भाविंचि यपुडु
विडिनंगदुनकु रावणुडुन्नचोटु । चिडिमुडिपाटुतो जेसन्न जूपे;
जूपुटयुनु जूचि सुभटदंभोळि । कोपिंचि यप्पुडग्गुहवातनुन्न
शिलनुग्गुगा दन्नि चैच्चैर जौच्चि । यलघुविक्रमकळायतकेलि वालि
पौलुपोंद भुजसत्त्वमुन बेंपु मीरि । कलगि राक्षसुलेल्ल गडुभीति बोंद
जनि होमनियति निश्चलुडैन वानि । घनमंत्रतंत्रसंगतुडैन वानि
रावणु समरविद्रावणु गांचि । "रावणु बौडगंटि; रंडु रं"डनिन

निकालकर राक्षसों को फटकार कर, सिर काट डाल रहे थे। इस प्रकार वनचरों के एक साथ सताते रहने पर, दानव का स्थान (लंकानगर) भीत हो, दीन-दशातुर-स्थिति से अपमानित हो, विध्वस्त हो व्यथित हो गया। हरि (कपि)-पीडित-अनेक-हय-हेषित, करिघटाओं के अनेक भीकर-बृंहित, वृद्ध (तथा) बाला-अंगनाओं के अखिल-विलाप, सिद्ध-विक्रमवाले कपियों के सिंहनाद (आदि) के खूब व्याप्त होने पर लंका, कल्पांत-काल में विजृंभित बड़बाग्नि मुख के मुखार्चियों के कारण तप्त होने वाले पयोधि के समान अधिकता से घूर्णित होने लगी ।। ।। ७१४० ।।

—तब सूर्योदय हुआ। सब जगह परिशीलन कर भी, रावण जहाँ था, उस स्थान को न जानकर चिंतित होकर, अरि-संभ्रम से वानरों के खोजते रहने पर, उन्हें देखकर, चतुरता से विभीषण की पत्नी सरमा ने पतिहित को मन में सोचकर, तब झट अंगद को इशारा करके सकपकाकर वह स्थान बताया जहाँ रावण था। दिखाने पर देखकर, सुभट-दंभोली (-इन्द्र) ने क्रुद्ध होकर तब उस गुफा के पास स्थित शिला चूर हो जाए, ऐसा लात मारकर, झट से प्रविष्ट होकर, अलघु-विक्रम-कलायत-केली से विराजमान होकर भुजसत्त्व से विजृंभित होकर, व्याकुल हो समस्त राक्षसों के भीत होने पर, जाकर, होम-नियति में निश्चल बने हुए (तथा) घन-मन्त्र-तन्त्र-संगत (-मग्न) बने हुए अमर-विद्रावण रावण को देखा। (देखकर) "रावण

ननिलतनूभवुंडादिगा गलुगु । वनचराधिपुलॆल्ल वडि गूड मुट्टि ७१५०
यग्गुहारक्षकुलैन राक्षसुल । नुग्गुनूचमु सेसि नुतशक्ति मॆऱसि
यॊक्कड वेल्चुचुनुन्न यद्दनुजु । नक्कड बॊडगनि यलुक दीपिंप
"दॊडॆव्वरुनु लेक तुदि नॊंटिपडियॆ । दोडु वेलुत" मनि दॊरकॊनि कपुलु
सॊरिदि नव्वेदिक चुट्टुलनुन्न । परिधुलु समिधलु बहुकलशमुलु
हस्तिकुक्कुट जंबुकाश्वोष्ट्र शुनक । मस्तकंबुलु घृतमधुपात्रततुलु
नऱिमुऱि बुच्चिच होमाग्निलो वैचि। नॆऱसि यार्चिरि दैत्यनिकरंबु बॆदर;
नप्पुडु पापात्मुनंगंबुलंदु । निप्पुलु सल्लियु निगुडि यंदंद
गुंडबुलो मंडु कॊऱवुलु बट्टि । यॊंडॊंड व्रेयुचु नुंडिरि कपुलु;
चेति स्रुक्सृवमुलु चॆनसि रा दिगिच । वातूलसुतुडु रावणुनेसि डासॆ;
नित्तॆऱंगुन गपुलेचि कारिंप । जित्तंबुलो निष्ठ चॆदरंगनीक ७१६०
किनियक कदियक कृतनिष्ठ नुंडॆ । गॊनकॊनि निद्रिंचु कॊंडचंदमुन;

अंगदुडु मंदोदरिनि रावणुनॊद्द कीड्चुकॊनि वच्चुट

संगरक्रमकलासंगुडभंगु । डंगदुंडंगद नंचितांगदुडु

को देख लिया। आओ आओ।" कहने पर अनिल तनूभव आदि समस्त वनचराधिप झट एकत्र हुए, ।। ७१५० ।।

—उस गुफा के रक्षक राक्षसों को चूर-चूरकर, नुत (प्रशंसित) शक्ति से प्रकाशित होकर, निरन्तर हवन करनेवाले उस दनुज को वहाँ देखकर, क्रोध के दीप्त होने पर, 'किसी के साथ न होने पर अन्त में अकेला पड़ गया है। इसका भी हवन कर देंगे।" कहते लगकर, क्रम से उस वेदिका के चौतरफ स्थित परिधियाँ, समिधाएँ, अनेक कलश, हस्ति-कुक्कुट-जंबुक-अश्व-उष्ट्र-शुनक के मस्तक, घृत (तथा) मधुपात्रों के समूह को शीघ्र लेकर, होमाग्नि में डालकर सिंहनाद किया जिससे दैत्य-निकर (-समूह) भीत हो जाए। तब उस पापात्मा के अंगों पर अंगारे फेंककर, विजृंभित हो सर्वत्र (होम-) कुंड में जलते हुए मुराड़ों को लेकर कपि (रावण को) सर्वत्र मारते रहे। हाथ के स्रुक्सृवों को बलात् खींच लेकर, वातूलसुत ने उसे दे मारा। इस प्रकार कपियों के विजृंभित हो सताने पर भी, चित्त में निष्ठा को विचलित न होने देकर, ।। ७१६० ।।

—क्रुद्ध न होकर, संकुचित हुए बिना निष्ठा लिए रहा, मानों सप्रयत्न सोया हुआ पर्वत हो।

अंगद का मन्दोदरी को रावण के पास खींच लाना

संगर-विक्रम-कला-संग (-मग्न), अभंग (दुर्जेय) (तथा) (बाहुओं)

तंतःपुरंबुन करिगि या दैत्यु । कांतानिवासंबु गरमर्थि जौँच्चि
परिकिंचि रोहिणि बासिन चंद्रु । दरुणपल्लवशय्य दग जेर्चु करणि
गंदिन मुखचंद्रु गरपल्लवमुन । बौँदिचि वगलचे बोगिलेँडिदानि
"घोरावहंबुन गुंभकर्णादि । वीरुलु सुतुलुनु विषमविक्रमुलु
नुक्किरंदरु; विभुँडौँक्कड चिक्कँ । नेँक्कटि रघुरामुनितडेमि गेँलुचु ?"
ननि यनि रावणु नपजयंबुनकु । दन बंधुवुलु दानु दलकेँडुदानि
जित्तंबुलो निंद्रजित्तु चावुनकु । नौँत्तिलि येड्चुचुन्नट्टिदानि
रमणीयमणिमंदिरमुन गौँल्वुन्न । रमणि मन्दोदरि राजास्य गदिसि
७१७०
यौँलसिनगति राहुवौँडिसि पट्टुटकु । जलदिंदुमंडलचंद्रिक वोलेँ
दिगिचिन बेँडमरॅ दिरुगु वेगमुन । मृगनेत्रमोँगमुन मेँरुगुलु सेँदर
नेँरुगमितो गूड हृदयंबु गलगु । तेँरुगुन नलिवेणि दिगिचि पट्टुय्यु
गम्म सौरभमुलु गलुगु संफुल्ल । धम्मिल्लमल्लिकादाममुल् नलग
गेँडगूडि रावणु कीर्तिपुष्पमुलु । गडिबोयि भुवि रालु केँवडि दोप
सेसमुत्तियमुलु सेँलुवंबु वासि । गासिल्लि वसुधपै गनुकनि राल

में अंचित अंगद (भूषण) वाला अंगद अन्तःपुर में जाकर, उस दैत्य के कान्ता-निवास (स्थान) में इच्छा से प्रविष्ट हुआ। वहाँ रोहिणी से बिछुड़े चन्द्र को तरुण-पल्लव शय्या पर औचित्य से पहुँचा दिया हो, इस प्रकार सूजकर लाल बने मुखचन्द्र को, करपल्लव पर टिकाकर, वेदनाओं से व्यथित होनेवाली, "घोर-आहव (युद्ध) में कुंभकर्ण आदि वीर, विषम-विक्रम वाले सभी सुत मर गए। विभु (पति) अकेला फँस गया। अद्वितीय रघुराम को यह क्या जीतेगा ?" ऐसा सोच-सोच रावण की अपजय को (जानकर) अपने संबंधियों के साथ व्याकुल होनेवाली, मन में इन्द्रजित की मृत्यु के कारण अधिक रोदन करनेवाली, रमणीय-मणि-मंदिर (-भवन) में विराजमान रमणी मन्दोदरी को देखा। (देखकर) (उस) राजास्या (चन्द्रमुखी) के निकट जाकर, ॥ ७१७० ॥

—अलिवेणी (सुन्दर वेणी वाली) को पकड़ खींचने पर उस (मन्दोदरी) का, राहु के हाथ ग्रस्त चलत्-इन्दु-मंडल-चन्द्रिका के समान, उलटा घूम जाने के वेग में, मृगनेत्री के मुख के चमत्कृत हो जाने पर, अज्ञात (विपत्ति) के कारण हृदय विकल हो गया। (मन्दोदरी के) सुगन्ध से युक्त संफुल्ल-धम्मिल्ल के मल्लिका-दाम भुवि पर ऐसे गिरने लगे मानों रावण के कीर्तिपुष्प सौभाग्य खोकर गिर रहे हों। मांग के मोती सौन्दर्य खोकर पीडित हो, वसुधा पर संभ्रम से गिरने लगे, मानों शोभा खोकर रावण की

वलनेदि चॆंडिन रावणु राज्यलक्ष्मि । चॆलुवुन नॆऱि दप्पि सीमंतवीथि
गृतकंपु दैत्यलक्ष्मी-मुखांभोज । श्रितचंचरीकमुल् सॆदरु चंदमुन
नालोल - लोलमुखांभोजनील । नीलालकंबुलु नॆऱि दप्पि चॆंदर
नुरुमंगळंबुलै यॊप्पॆडि नात्म । वरभूषणमुलु रावणु लक्ष्मि चॆवुल
७१८०
नुंडनि कॆवडि नॊडॊंड कर्ण । कुंडलंबुलु विडि कुंभिनि बडग
दनुजेशुनपकीर्तिधारलो यनग । गनुगव गाटुक कन्नीरु दॊरुग
नॊगि दैत्यपतिकि महोल्कलु डुल्लु । पगिदि भूषणमणिप्रकरमुल् डुल्ल
वरधर्म निर्मलावरणंबु दॊरुग । निरवॆदि रावणु निहपरोन्नतुलु
चलियिचु तॆऱगुन जनुकट्टु दॊलगि । चलियिप नुन्नत स्तनकलशमुलु
कॊमरेदि सुरवैरिगुणवल्लि नुलियु । क्रममुन नॆंतयु गौदीगॆ नुलिय
निर्मलुडगु रामनृपतिचे दॆगिन । कर्मबंधमुलु राक्षसलोकपतिकि
वदलु नीक्रियननु वडुवुन नीवि । वदलुचु मेखलावलि वीडुचुंड
ब्रमदराक्षसराज्य पदसंधि रोसि । विमलवर्णावलि वीडुचंदमुन
नुदितरावंबुलै यॊंडॊंटि गडव । बदनूपुरमुलूडिपडि म्रोयुचुंड ७१९०

राज्यलक्ष्मी की शोभाहीन सीमंतवीथि से गिर रहे हों। कृतक (कपटी) दैत्यलक्ष्मी के मुखांभोज (मुख कमल) के आश्रित चंचरीकों के बिखरकर उड़ जाने के समान (मन्दोदरी के) आलोल-लोल-मुखांभोज के नील-नील-अलक बिखर गए। उरु-मंगलप्रद शोभित होनेवाले वर-भूषण रावण की लक्ष्मी के कानों में, ।। ७१८० ।।

—रहना न चाहने के समान (मन्दोदरी के) कर्ण-कुण्डल टूटकर गिर पड़े। नेत्रद्वय से काजलयुक्त अश्रु ऐसे ढरक रहे थे मानों दनुजेश की अपकीर्ति की धाराएं हों। मानों दैत्यपति के लिए महा-उल्काएँ गिर रही हों, इस प्रकार भूषणों के मणि-प्रकर (अपशकुन सूचक) गिर रहे थे। वर-धर्म का निर्मल-आवरण हट जाने पर, शोभा को खोकर रावण की इह-परलोक की उन्नतियाँ विचलित हो गईं हों, ऐसा कंचुक के हट जाने पर (मन्दोदरी के) स्तन-कलश विचलित हुए। मनोज्ञता खोकर सुर-वैरी की गुणवल्ली (गुण-लता) मसल दी गई हो, ऐसा (मन्दोदरी की) तनुलता मसल गई। निर्मल राम-नृपति के कारण कटकर (राक्षसलोकपति के) कर्मबंधन मानों मुक्त हो जाएंगे, ऐसा नीवि के ढीली हो जाने पर मेखलावली छूट पड़ी। प्रमद-राक्षस-राज्य-पदसंधि चटककर विमल-वर्णावली को छोड़ देने के समान, (मन्दोदरी के) चरण-नूपुर छूटकर गिरकर मुखरित हुए ।। ७१९० ।।

वेँऱचि राक्षसवधूवितति शोकिंप । जेऱनुन्न निर्जरस्त्रीलुत्सहिंप
नीरसंबुन बट्टि यीडिचि तेँच्चेँ । वारक राक्षसेश्वरुनि मुंदऱकि
नंत मंदोदरि यात्मेशु जूचि । यंतरंगमुन शोकाग्नुलु निगुड
"निंद्रु गेँल्चिन सत्वमेँक्कड बोयेँ? । जंद्रहासमु वाडि समसेँने नेडु ?
फाल लोचनुतोड ब्रमथुलतोड । गैलासमेँत्तिन गर्वमेँंदडगेँ ?
मूडुलोकंबुलु मुनुमिडि गेँलिचि । नेडेल तूलेँदु नी पेँम्मि विडिचि ?
यिंद्रजित्तुडु नन्नु निट बाऱवैचि । यिंद्रलोकंबुन केगक युन्न
नन्निट्लु चूचुने ? ना कोँडुकुन्न । निन्नीचदुर्दश येनु बोँदुदुनेँ ?
सिग्गु लज्जयु लेनि चेँनटिवो! नन्नु । बंगिचुचुन्नारु पगतुलिब्भंगि !
नी होममेटिकि? निष्ठ येम्मिटिकि । नाहुतुलू निन्नु बूर्णाहुति जेसेँ
७२००
बटुबुद्धिवै रामु बाणाग्नि बडुमु । कुटिल क्रियलकिक गोँलदिगादुडुगु"
मन विनि दशकंठुडलुक दीपिंप । दन चेति याहुति धरणिपै वैचि
युत्तरंबगु निष्ठुरकोपाग्नि । बोँरि धूमतोरणंबुलु वोनि बोमलु
मुडिवड समवर्ति मूर्तियै पेँर्चि । कडकमै नत्युग्रखड्गमंकिंचि

—भीत हो राक्षस-वधू-वितति (राक्षस-स्त्री-समूह) के शोक करने पर, बन्दी बनी निर्जर-स्त्रियों के उत्साहित होने पर, अंगद क्रोध से राक्षसेश्वर के समक्ष, अवारित रूप से (मन्दोदरी को) घसीट लाया। तब मन्दोदरी ने आत्मेश को देखकर, अन्तरंग में शोकाग्नियों के प्रज्वलित होने पर (यों कहा)—"इन्द्र को जीतनेवाला (वह) सत्त्व कहाँ गया ? क्या आज चन्द्रहास (की धार) कुंठित हो गई ? फाललोचन के साथ (और) प्रमथों के साथ कैलास को उठाया था, वह गर्व कहाँ गया ? पूर्व में तीनों लोकों को जीता था, आज अपने गौरव को खोकर क्यों अपमानित होते हो ? यदि इन्द्रजित मुझे यहाँ ऐसा छोड़ इन्द्रलोक न जाता तो क्या वह मुझे ऐसा (इस दशा में) देख सकता था ? यदि मेरा पुत्र होता तो मैं इस नीच-दुर्दशा को प्राप्त होती ? लज्जा और अभिमान से रहित दुष्ट हो क्या ? शत्रु इस प्रकार मेरा अपमान कर रहे हैं न ? तुम्हारा होम किस लिए ? निष्ठा किस लिए ? आहुतियों ने तुम्हारी पूर्णाहुति कर दी है।। ७२०० ।।

पटु-बुद्धिशाली होकर राम की बाणाग्नि में जा गिरो। कुटिल क्रियाओं का अवसर नहीं है। (इन्हें) छोड़ दो।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, दशकण्ठ क्रोध के दीप्त होने पर, अपने हाथ की आहुति को पृथ्वी पर फेंककर, उरुतर-निष्ठुर-उग्र-कोपाग्नि के कारण धूमतोरण के समान गाँठ पड़ी (तनी हुई) भौंहों के साथ, समवर्ती के रूप से विजृंभित हो,

यतुलरत्नांगदु नंगदु व्रेसि। विततविक्रमुडिति विडिपिंचि पुच्चॆं;
वीडिन नॆड़्रिवेणि वॆन्नुन जार। वाडिन मोमुतो वगलु दूलुचुनु
नंतःपुरंबुन करिगॆं दैत्येशु। कांत चिंतिंचुचु गडु जिन्नवोयि;
यप्पुडु हनुमंतुडत्युग्रमुष्टि। दप्पक दशकंठु तल बिट्टु वॊडिचॆं;
ना वालिसूनुडु नंतलो दॆलिसि। रावणु व्रेसि विक्रमकेलि व्रालॆं;
दोरंपुनॆत्तुट दोगि यॆंतयुनु। ग्रूरुडै जेवुरु गॊंड चन्दमुन ७२१०
नतिघोर कोपाट्टहासंबु लेसग। नतुलसत्त्वोदात्तुडै दशाननुडु
नंगदु गदव्रेसॆं; ननिलनंदनुनि। भंगिचॆं निशितासि बटुशक्ति मॆड़्रसि;
नलुनि नारसमुन नलुवॊप्प नॊंचे; । नलवुन गजु नॊंचॆ नंकुशनिहति;
मॊगि नीलु दंडिचॆं मुसलघातमुन। दग शक्ति शतबलिदर्पंबु मापॆ;
बवितुल्यमुद्गरप्रदरमुल् वुच्चि। द्विविदुनि मैंदुनि व्रेसॆं; व्रेयुटयु
वानरवरुलु दुर्वारुलै तमदु। सेनल जॊच्चिरच्चॆरुवुगा; नप्पु
डनिलसूनुडु राघवाधीशुकडकु। जनि म्रॊक्कि हस्तांबुजंबुलु मॊगिचि
"रामावनीश्वर! राक्षसेश्वरुनि। होमंबु जॆड़्रिचिति; मॊप्प
वच्चितिमि"

साहस से अत्युग्र-खड्ग खींचकर, अतुल-रत्नांगद वाले अंगद को मारकर, वितत विक्रम वाले ने स्त्री (मन्दोदरी) को छुड़ा दिया। खुली हुई काली वेणी के पीठ पर फैल जाने पर, उदास मुख के साथ व्यथित होती हुई दैत्येश की कान्ता चिंतित होती हुई, मुंह छोटा करके अन्तःपुर में चली गई। तब हनुमान ने अत्युग्र मुष्टि से दशकण्ठ के सिर पर कठोर प्रहार किया। उस वालिसून ने भी उतने में होश में आकर, रावण पर प्रहार कर विक्रम-केलि से विराजमान हुआ। अत्यधिक रक्त में ऊभचूभ हो, अधिक क्रूर बन, गेरुए पर्वत के समान, ।। ७२१० ।।

—अति-घोर-कोप के अट्टहास के साथ उमड़ने पर, अतुल-सत्त्वोदात्त बन दशानन ने अंगद पर गदा का प्रहार किया। निशित-असि की पटुशक्ति से प्रकाशित होकर अनिलनन्दन को पीड़ित किया। शोभा से नाराच से नल का दमन किया, अंकुश-निहति से गज का दमन किया, मुसल-घात से नील को दण्डित किया, उचित शक्ति से शतबलि के दर्प को मिटा दिया, पवि-तुल्य मुद्गर-प्रदर डालकर द्विविद और मैंद को मारा। मारने पर वानर-बर दुर्वार बन अपनी सेनाओं में जा प्रविष्ट हुए। तब अनिलसून ने राघवाधीश के पास जाकर, प्रणामकर, हस्तांबुज जोड़कर (कहा)—"हे राम-अवनीश्वर! राक्षसेश्वर के होम को बिगाड़ दिया। शोभा से (लौट) आए हैं।" ऐसा कहते सुन राम अंतरंग में निरन्तर हर्षित हुए। वहाँ दैत्यपति भी

यनवुडु विनि रामुडंतरंगमुन । ननयंबु हर्षिचें; नट दैत्यपतियु
गडुवेगमुन बोयि घनशोकवह्नि । नुडुकुचुनुन्न मन्दोदरि जूचि ७२२०
"यतिव! नी मनमुन नक्कटा! दैव-। कृत्यमुनकिंत शोकिंपनेमिटिकि ?
ननिमौन नेडु रामावनीनाथु । दुनिमेद; नटुगाक दुरमुलो नतडु
ननु समयिंचिन नलिनायताक्षि! । जनकनन्दन जंपि, साहसंबौप्प
वेवेग नग्नि प्रवेशंबु सेयु; नी" । वनुटयु निंति निजनाथु जूचि;

मन्दोदरि रावणुनिकि श्रीरामुनि माहात्म्यमु देल्पुट

"यो दशानन! नीकु युद्धमध्यमुन । रादु जयिंपग रघुरामदेवु;
नी वौक्कडवे येल ? नेरसि राघवुनि । देवासुरुलकैन दीरदु गैलुव;
नीमदि राजुगा निर्णयिंपकुमु । रामचंद्रुडु पुराणपूरुषुडु;
आमेटि तौल्लि मत्स्यावतारमुन । सोमकु निर्जिंचि श्रुतुलुद्धरिंचें;
घनमंथशैलंबु गमठमै यतडु । दनवीपु गुदुरुगा धरियिंचें दौल्लि;
भूमि वराहमै पौलुपौंदनैत्ति । रामुडु मुन्नु हिरण्याक्षु जंपे ७२३०
नतडु नृसिंहुडै यलुकमै दौल्लि । पतितु दैत्युनिजंपि प्रह्लादु गाचें;

अतिवेग से जाकर, घन-शोक-वह्नि में तप्त होती हुई मन्दोदरी को देखकर, ॥ ७२२० ॥

—(बोला)—"हे नारी ! हाय ! दैवकृत के लिए मन में इतना शोक करना क्यों ? युद्धभूमि में आज राम-अवनीनाथ को मार डालूंगा। ऐसा न होकर युद्ध में वह मेरा संहार करेगा तो हे नलिनायताक्षी ! जनकनन्दना को मार डालकर, साहस के शोभित होने पर, तुम अग्नि-प्रवेश करो।" (ऐसा) कहने पर नारी ने निजनाथ को देखकर,

मन्दोदरी का रावण को श्रीराम का माहात्म्य बताना

—(कहा)—"हे दशानन ! युद्ध-मध्य में तुम रघुराम-देव को जीत नहीं सकोगे। तुम एक ही क्यों ? देवासुर भी राघव को जीत नहीं सकते। अपने मन से राम को (केवल साधारण) राजा मत समझो। रामचन्द्र पुराण-पुरुष है। उस श्रेष्ठ व्यक्ति ने पूर्व में मत्स्यावतार में, सोमक का संहार कर, श्रुतियों का उद्धार किया। पूर्व में कमठ बन घन-मन्थ-शैल को अपनी पीठ पर सुघड़ता से धारण किया। शोभा से वराह बन भूमि को उठाकर, राम ने पूर्व में हिरण्याक्ष का वध किया ॥ ७२३० ॥

—वह पूर्व में क्रोध से नृसिंह बन, पतित-दैत्य का वध कर प्रह्लाद की रक्षा की। रूठकर उसने वामनावतार में, चाहकर बलि से निवेदन (याचना)

नलिगि यातडु वामनावतारमुन । बलि नर्थिमै वॆडि बंधिचॆ दॊलि;
जमदग्निरामुडै जन्मिचि यतडु । विमलशौर्युनि गार्तवीर्युनि द्रुंचॆ;
लोलंबु लॆरुग भूलोकमंतयुनु । ना कश्यप ब्रह्मकर्थितो निच्चॆ;
सन्नुतगति विरोचनु जंपिवैचॆ । मुन्नु मायारूपमुखुनि निर्जिचॆ;
जलधिमध्यंबुन जरणघातमुन । बलुविडि राक्षसपतुल रूपडचॆ;
लवणासुरुनि जंपॆ ललि बार्ष्णिहतुल । जवमार नी रामचंद्रुडु मॊदल;
नधिकुडै यातड यादिकालमुन । मधुकैटभादुल मर्दिचॆ नॆसगि;
तनसत्त्वमंतयु दलकॊन वच्चि । निनु जंपनिप्पुडु निष्ठमै बूनि
दिशल देजंबुलु दीपिंप मॆऱसि । दशरथेश्वरुनकु दनयुडै पुट्टे; ७२४०
ना महामहिमु नत्यद्भुत क्रियल । नेमनि चॆप्पुदु नेनु वाक्रुच्चिच ?
यलघु विक्रम कळायतशक्ति मॆऱसि । बलियुडै यातडु बाल्यंबुनंदु
गौशिक प्रमुखदिक्पतुलॆल्ल बॊगड । गौशिकुंडॊनर्रिचु क्रतुवु रक्षिचे;
शतसहस्रायुत संख्यलु गडव । नतनिचे बडसॆ दिव्यास्त्रसंततुलु;
जनकुडु मॆच्च नार्जवमॊप्प निलिचि । घनशक्ति विऱिचॆ शंकरु
शरासनमु;
दैवयोगंबुन दनकु बट्टंपु । देविगा बूनि वैदेहि गॆकॊनियॆ;

कर, उसे बाँध डाला। जमदग्नि-राम (परशुराम) हो जन्म लेकर उसने विमलशौर्य वाले कार्तवीर्य का वध किया। लोक जान लें ऐसा समस्त भूलोक, उस कश्यप ब्रह्मा को प्रेम से दे दिया। सन्नुतगति से विरोचन को मार डाला। पूर्व में (उसने) मायारूपमुख का वध किया। जलधिमध्य में चरण के आघात से बरजोरी राक्षसपतियों को मिटा दिया। इस रामचन्द्र ने पूर्व में अतिशक्ति से बार्ष्णिहतियों से लवणासुर का वध किया। समधिक (शक्तिशाली) बन, उसी ने आदिकाल में विजृंभित हो मधु-कैटभ-आदियों का मर्दन किया। अपने समस्त सत्त्व को एकत्र कर, तुम्हारा वध करने के लिए, अब निष्ठा धारण कर, दिशाओं को तेज से दीप्त करते हुए, दशरथेश्वर का पुत्र हो जन्म लिया॥ ७२४०॥

उस महामहिम की अद्भुत क्रियाओं का मैं कहाँ तक वाक् से वर्णन करूँ? अलघु-विक्रम-कला की आयत शक्ति से दीप्त हो, बली बन उसने बाल्य में कौशिक (इन्द्र) आदि समस्त दिक्पतियों के प्रशंसा करने पर, कौशिक के क्रतु (यज्ञ) की रक्षा की। शतसहस्र संख्याओं से परे दिव्य-अस्त्र-संततियाँ उससे (कौशिक से) प्राप्त कीं। जनक के सराहने पर, आर्जव (ऋजुता) की शोभा से खड़े होकर, घन-शक्ति से शंकर शरासन को तोड़ दिया। दैवयोग से अपनी राजमहिषी के रूप में वैदेही को ग्रहण

सोमिंचि निजबल स्फुरणंबु सूपि । रामुडाभार्गवरामु भंगिंचें;
दन तंड्रि पनुपुन दपमोंप्पबूनि । मुनिवृत्ति वनवासमुनकु नेतेंचें;
सन्नुतशक्तिमै जंपें विराधु । बन्नुगा बेंचि शूर्पणख शिक्षिंचें;
नड्गुल ना दंडकारण्य भूमि । गडु बुण्यभूमिगा गाविंचें नतडु;
७२५०

खरदूषणादि राक्षसवीरवरुल । धर गूल्चें मरि चतुर्दशसहस्रमुल;
मारीचु दुनुमाडें माय बोनीक । घोररूपु गबंधु गूलंग नेसें;
नी गोंटुतनमेंल्ल निलिपि धट्टिंचि । लागोंप्प निन्नु वालमुन बंधिंचि
चतुरब्धि जलमुल ज्रलमुन मुंचि । यतुलसत्त्वक्रीड नडरि कारिंचि
विडिचिन या वालि वेंस नोक्ककोल । बडनेसि सुग्रीवु बट्टंबु गट्टें;
नलवुमै दनदु बाणाग्निकीललनु । जलनिधि निंकिचें जगमुलु मेंच्चें;
गलनिलोपल गुंभकर्णु खंडिचें । ज्रलमुन नखिलराक्षससमेतमुग;
समरंबुलोपल जंपें लक्ष्मणुडु । नमर नय्यतिकायु नय्यिंद्रजित्तु;
नलुगडेन्नडुनु रामावनीनाथु; । डलिगिन निलुवरिंद्रादुलु नेंदुट;
मदिमदि नुंडि या मनुजेशुदेवि । द्रिदशारि! वंचन दे नीकु जनुनें ?
७२६०

किया। बढ़कर, निजबल-स्फुरण (स्तूर्ति) को प्रदर्शित कर, राम ने उस भार्गवराम (परशुराम) को विजित किया। अपने पिता के आदेश से शोभा से तप को स्वीकार कर मुनिवृत्ति से वनवास के लिए आया। सन्नुत शक्ति से विराध का वध किया, ढंग से विजृंभित हो शूर्पणखा को दण्डित किया। चरणों (चरण-स्पर्श) से दण्डकारण्य को उसने अतिपुण्य भूमि बनाया ॥ ७२५० ॥
—खरदूषण आदि चतुर्दशसहस्र राक्षस वीर-वरों को धरा पर गिरा दिया। माया के प्रभाव से जाने न देकर मारीच का संहार किया। घोर रूप वाले कबन्ध को गिरा दिया। तुम्हारे समस्त पौरुष को कुंठित कर, शोभा से तुम्हें अपनी पूंछ से बाँधकर, चतुरब्धि-जल में हठ से डुबोकर, अतुलसत्त्व-क्रीड़ा से विजृंभित हो (तुम्हें) सताकर छोड़नेवाले उस वालि को झट एक बाण से गिराकर, सुग्रीव का राजतिलक किया। जग सराहे, ऐसा अपनी बाणाग्निकीलाओं से सरलता से जलनिधि को सुखा दिया। युद्ध में कुंभकर्ण को हठ से अखिल राक्षसों के साथ खण्डित कर दिया। युद्ध में लक्ष्मण ने शोभा से उस अतिकाय को (तथा) उस इन्द्रजित को मार डाला। राम-अवनीनाथ कभी क्रुद्ध नहीं होता। क्रुद्ध हुआ तो इन्द्र आदि उसके समक्ष टिक नहीं सकते। हे त्रिदशारि! उस मनुजेश की देवी को धोखे से लाना क्या तुम्हारे लिए उचित था ? ॥ ७२६० ॥

नीवॆऱुंगवॆ रामु नित्यसत्त्वम्मु ! । नीवॆऱुंगवॆ रामनृपु महत्त्वम्मु ?
रामु सत्त्वस्थिति रावण ! नीकु । नेमि पापमुननो यॆऱुग जॊप्पडदु;
नीविक रघुरामु निष्ठुर बाण । पावक ज्वालल भस्ममै पडक
जनकनंदनतॊड सकलराज्यंबु । नॆनय राघवुनकु निम्मु वेवेग;
मरलि तपोवृत्ति मनमरण्यमुल । जरियिंत; मिंतिय चालु
भोगमुलु;
नीवु दीऱिन नाकु नीतोड गूड । बावकु मुखमुन बडि कालरादु;
मुन्नु मा जनकुंडु मुदिमियु जावु । नन्नु बॊंदकयुंड नाकिच्चॆ वरमु;
वरभोगमेनॊल्ल; वलवदीत्रोव । तरमु गादिक, दुस्तरमु तद्वरमु;
सरमकु नॊंडे, ना जनकजकॊंडे । वरुवुडनै येनु वर्तिप वलसॆ”
ननवुडु दशकंठुडा कलकंठि । गनुगॊनि पलिकॆ नुत्कटकोपुडगुचु
७२७०
“निंतेल चिंतिप नॆलनाग! नीकु ? । निंतकु वच्चितिने येनु नेडु ?
चुट्टाल भृत्युल सुतुल सोदरुल । नॆट्टन जंपिंचि नेडिक नाकु
दॆवदानवभयोद्वृत्ति बोनाडि । यी वट्टि प्राणंबुलेल रक्षिंप ?
दुरमुन निंद्रजित्तु वंटि कॊडुकु । बरुलचे जंपिंचि ब्रदुकनेमिटिकि ?
गरुडोरगामर गंधर्ववरुल । बॊरिगॊंटि; जॆऱिचिति बुण्यगेहिनुल;

—राम के नित्यसत्त्व को तुम नहीं जानते हो ? राम-नृप के महत्व को तुम नहीं जानते हो ? हे रावण ! पता नहीं तुम्हें किस पाप के कारण राम की सत्त्वस्थिति समझ में नहीं आती । आगे रघुराम के निष्ठुर बाणों की पावक ज्वालाओं में भस्म होकर गिरने से पहले तुम जनकनन्दना के साथ सकल राज्य राघव को अतिशीघ्र दे दो । हम अरण्यों में फिर तपोवृत्ति के लिए चले जाएँगे । ये भोग अब पर्याप्त हो गए हैं । यदि तुम्हारा अन्त हो जाए तो मुझे तुम्हारे साथ अग्नि में गिर नहीं मरना चाहिए । पूर्व में मेरे पिता ने मुझे वर दिया था कि जरा और मृत्यु मुझे प्राप्त नहीं कर सकेंगे । वर-भोगों को मैं नहीं चाहती । यह मार्ग समुचित नहीं है । उनका वर दुस्तर है । (मुझे) या तो सरमा की अथवा उस जनकजा की सेविका बन रहना पड़ेगा ।” ऐसा कहने पर दशकण्ठ ने उस दशकण्ठी को देखकर उत्कट कोप वाला होता हुआ कहा—।। ७२७० ।।

—“हे सुन्दरी ! अब तुम्हें चिन्ता करना क्यों ? क्या मेरी दशा इतनी (हीन) हो गई है ? सम्बन्धियों, भृत्यों, सुतों, सहोदरों को क्रूरता से मरवाकर, आज आगे मुझे देव-दानवों को भय उत्पन्न करनेवाली वृत्ति को छोड़कर, इन अल्प प्राणों की रक्षा करना क्यों ? युद्ध में इन्द्रजित जैसे पुत्रों

दपसुल जंपिति; दरुणि ! येंनिक । दपसिनै पोयिन दपसुलु नगरे ?
कावु नी माटलु; कार्यंबु तैऽगु । भाविंपनेरवु पद्मायताक्षि !
ये नेंल्लभंगुल निंक राघवुल । बोनीक चंपुदु; भूमिज नीय
नारूढबलुडनै; यट्टुगाक येनु । श्रीरामु शरमुलचे जत्तुनेनि
नाकवासुलु मेंच्च ना कोरुचुन्न । वैकुंठमेंदुरुगा वच्चुनिच्चटिकि; ७२८०

ललन! नीवेटिकि ? लंकयेमिटिकि । दलकोंन्न मुक्तिसत्पथमु गैकोंदु;
नेंलनाग ! नीविंक नेनु लेकुन्न । गल पुण्यलक्षण कळलेंल्ल बासि
कमलबंधुडु लेनि कमलिनि बोलें । गोमरारु शशिलेनि कुमुदिनि बोलें
रेराजु लेनट्टि रेयुनु बोलें । शारिक लेनि पंजरमुनु बोलें
नेंनयु गोयिल लेनि येंलमावि बोलें । दिनमणिलेनि या दिनमुनु बोलें
नुंडुमु नी" वन्न नोंडाड वेरचि । युंडे मन्दोदरि युदरि लज्जिंचि;

रावणुडु मूडव सारि युद्धमुनकु वेंडलुट

यंत दशग्रीवुडाहवोद्योग । संतोष पोषितोत्साहुडै मेंऽसि

को अन्यों से (शत्रुओं से) मरवाकर जीना क्यों ? गरुड-उरग-अमर-गन्धर्व-श्रेष्ठों को जीत लिया है, पुण्य-गृहिणियों को भ्रष्ट किया है, तपस्वियों को मार डाला है। हे तरुणी ! (ऐसा) मैं आगे तपस्वी बनकर जाऊँ तो तपस्वी (मेरा) उपहास नहीं करेंगे ? ये बातें नहीं होने की। हे पद्मायताक्षी ! (तुम) कार्य के विधान को नहीं सोच सकतीं ! अब मैं सब विधियों से राघवों को जाने न देकर आरूढ़ बलवाला मैं मार डालूंगा। भूमिजा को नहीं दूंगा। ऐसा न होकर, मैं श्रीराम के शरों से मर जाऊँगा तो नाकवासियों के सराहने पर, मैं जिस वैकुंठ की इच्छा कर रहा हूँ, वह यहाँ समक्ष आ जाएगा ॥ ७२८० ॥

हे नारी ! (उस हालत में) तुम क्यों ? लंका क्यों ? (आवश्यकता नहीं रहेगी।) इच्छित मुक्तिसत्पथ को प्राप्त करूँगा। हे सुन्दरी ! आगे मैं नहीं रहा तो तुम समस्त पुण्यलक्षण-कलाओं (सौभाग्य-चिह्नों) से रहित हो, कमलबन्धु (सूर्य-) हीन कमलिनी की तरह, सुशोभायमान शशिहीन कुमुदिनी की तरह, निशानाथ से रहित रात्रि के समान, शारिका से रहित पिंजड़े के समान, कोयल से रहित आम्रवृक्ष के समान, दिनमणि से रहित दिन के समान, रह जाना।" (ऐसा) कहने पर प्रत्युत्तर देने में डरकर, मन्दोदरी तप्त होकर, लज्जित हो रह गई।

रावण का तीसरी बार युद्ध के लिए निकल पड़ना

तब दशग्रीव ने आहव-उद्योग के सन्तोष से पोषित उत्साह से दीप्त हो,

यादित्युलडर ब्रह्मांडभांडंबु । भेंदिल्ल बटुरणभेरि वेयिंचि
कलह विक्रम कळाकलितुडै तिविरि । बलमुल बन्निप बडवाळ्ळ बनिचि
युदयार्कबिब समुज्ज्वल प्रभल । बदिकिरीटंबुलु पदिलमै योप्प
७२९०
विनुतरत्न प्रभा विद्योतमान । घनकुडलंबुल गर्णंबुलडर
नायतभुजशाखलन्नियु रत्न । केयूर कंकणांकितमुलै तनर
निरवोंद डाकाल निद्रादिभयद । बिरुद भीषण गंडपेंडरमोप्प
गरमुलन्निट भीकर चन्द्रहास । शर शरासन गदा चक्रादुलमर
बटुरोषदृष्टि प्रभावह्नुलेंदु । जटुलंबुलै पर्व जनुदेंचि यपुडु
स्फुट बंधबंधुर षोडशचक्र । घटितकोटि द्वयघंटिकाराव
भयदोग्रसंफुल्ल भल्लूकचर्म । हयसहस्रोदग्रमगु रथंबेक्कि,
काकुत्स्थु शरमुल गडतेऱि मीद । वैकुंठरथ मेक्कु वडुवु दीपिप
नेलकोनि रथकळानिधि कालकेतु । डलघुबलोदारु डातेरु गडप
दीपिचु वेन्नेलतेटलै मीद । नेपारु गोडगुलनेकंबुलोप्प, ७३००
मंडित मार्तांडमंडल चंद्र । मंडलकबळनोन्मद समुद्योग

आदित्य त्रस्त हो जाएँ, ब्रह्मांड-भांड विदीर्ण हो जाएँ, ऐसा पटु रणभेरी बजवाकर, कलह-विक्रम की कला से कलित हो, चाहकर सेनाओं को एकत्र करने के लिए भटों को भेजा। उदयार्क बिंब के समान समुज्ज्वल प्रभाओं वाले दस किरीटों को सावधानी से रखकर, ।। ७२९० ।।

—विनुत-रत्नों की प्रभाओं से विद्योतमान-घन कुण्डलों के कर्णों में विलसित होने पर, आयत (विशाल) भुजारूपी समस्त शाखाओं के रत्न-केयूर-कंकणांकित हो विराजने पर, शोभा से इन्द्र आदि के लिए भयद-बिरुद भीषण वीरकंकण के बाएँ पैर में शोभित होने पर, सभी हाथों में भीकर चन्द्रहास, शर, शरासन, गदा, चक्रादियों के सजने पर, पटु रोष दृष्टि की प्रभा-वह्नियों के सर्वत्र चटुलता से व्याप्त होने पर, आकर, तब स्फुट-बन्ध-बन्धुर-षोडश चक्र, कोटि-द्वय घंटिकाराव से युक्त भयद-उग्र-संफुल्ल भल्लूक चर्म (की जीन) से युक्त उदग्र सहस्र हयों वाले रथ पर आरूढ़ हुआ मानों काकुत्स्थ के शरों से समाप्त होकर (मरकर) वैकुंठ के रथ पर आरूढ़ होने की गति-दीप्ति प्राप्त कर रहा हो। स्थिरता से रथ-कलानिधि कालकेतु अलघु बलोदार हो, उस रथ को चला रहा था। दीप्त निर्मल चन्द्रिकाएँ हों ऐसा शोभित अनेक छत्र विराज रहे थे ।। ७३०० ।।

मंडित-मार्तांड-मंडल (तथा) चन्द्रमण्डल को कवलित करने के उन्मद-समुद्योग वाले राहुत्रय के समान वैभव से आकाश को चूमते हुए साहसी राहु

राहुत्रयमु वोलॆ रहि मिन्नुमुट्टि । साहसराहुमस्तक सुप्रशस्त
बिरुदध्वजंबुलाभीलमै मूडु । दरलंग बटपट ध्वनुलतो वॆडलॆ;
भेरि मृदंगादि भीमगंभीर । भूरिभांकृतुल नंभोधुलुप्पॊंग
नुप्पॊंगु कडकल नुर्वि गंपिप । नप्पुडु करुलुनु हरुलु देरुलुनु,
बलसमुद्‌भट महाभटकदंबमुलु । बलुविडि वॆडलॆ दिग्भागंबु निंड;
ब्रळयकालमु नाटि भानुलभंगि । दलकॊनि वॆडलिरुदग्रुलै खड्‌ग
रोमुंडु वृश्चिकरोमुंडु सर्प । रोमुंडु नग्निवर्णुडु गय्यमुनकु;
नप्पुडंभोनिधुलन्नियु गलगॆ; । नप्पुडु लोकंबुलन्नियु बॆदरॆ;
नप्पुडु दिग्दंतुलन्नियु व्रालॆ; । नप्पुडु कुलगिरुलन्नियु वडकॆ; ७३१०

नॆडपनि कडकतो निब्भंगि वॆडल । नुडुवीथि सुरलु दारॊंडॊंड निंडि
रावणोद्यगसंरंभंबु सूचि । "देवारि यिट क्रिद देवदेवारि
योधुलपै बॆंचि युद्‌वृत्ति नॆत्ति । क्रोधिंचि मिंचि पेर्कॊनि पोवुनाडु
नीरीति यी भावमीरणोद्योग । मी रोष मीवेषमॆन्नडु लेदु;
नेडु लक्ष्मणसमन्वितुनि राघवुनि । बोडिमितो दाकि पोराडकुन्नॆ !"
यनि रत्नमय विमानारूढुलगुचु । ननिमिषुलनिमिषुलै चूचुचुंड

के मस्तक (के चिह्न) से सुप्रशस्त बने तीन बिरुद ध्वजों के आभील बन फट-फट (की ध्वनियों से फहराने का अनुकरण) (रथ) चल पड़ा। भेरी-मृदंग आदि भीम गम्भीर भूरि-भांकृतियों से अंबोधियों के उमड़ने पर, उमड़ते साहस से उर्वी को कंपाते हुए तब करि, हरि (हय), रथ और बल-समुद्‌भट-महाभट-कदंब (समूह) बरज़ोरी दिग्भागों को भरकर निकल पड़े। प्रलयकाल के समय के भानुओं के समान अधिक उदग्र बन खड्‌गरोम, वृश्चिकरोम, सर्परोम, अग्निवर्ण युद्ध के लिए निकल पड़े। तब समस्त अंबोधियाँ क्षुब्द हुईं, तब समस्त लोक भीत हुए, तब समस्त दिग्दन्तियाँ झुक गईं, तब समस्त कुलगिरियाँ काँप उठीं ।। ७३१० ।।

—दुर्निवार साहस से इस प्रकार (रावण के) निकलने पर, उडुवीथि (आकाश) में देवता सर्वत्र भर गए और रावण के (युद्ध के लिए) उद्योग-संरंभ को देखकर (सोचा)—"देवारि के पूर्व में देवदेवारि (इन्द्र) के योद्धाओं पर विजृंभित हो उद्‌वृत्ति से, क्रोध के बढ़ जाने पर, चढ़ जाते समय भी यह रीति, यह भाव, यह रणोद्योग, यह रोष, यह वेष कहीं नहीं (देखा) था। आज लक्ष्मण समन्वित राघव का साहस से सामना कर (क्यों) नहीं लड़ेगा !" (ऐसा) सोचते हुए रत्नमय विमानों पर आरूढ़ हो, अनिमिष (देवता) अनिमिष (अपलक) बन देखते रहे। (तब) निकट आकर वानर-बल (-सेना)

रासि वानर बलारण्यंबु गाल्प । गा सोंपुतो वच्चु कार्चिच्चु पगिदि
नडतेंचु नसुर सेनासहस्रमुल । बोंडगनि कपिवीरपुंगवुलेल्ल
नंगदुतो गूडि यट्टहासमुलु । वोंग नुप्पोंगि यूर्पुलु निगि मुट्ट
दरमैन तरुलु नुद्धतमैन गिरुलु । गिरिशृंगमुलु गोनि गिरिसमाकृतुल
७३२०

दरमिडि बलुवडि दनुजसैनिकुल । दरुम नयियरुवागु दार्के नोंडोंटि
नक्षीणबलमु लेपारंग दाकु । दक्षिणोत्तरसमुद्रमुल चंदमुन;
नप्पुडु दानवुलासेनमीद । मुप्पिरिगोनि रोषमुलु मंडुचुंड
नार्पुलु जंकेलु नतुल हुंकृतुलु । नेर्पुलु गडकलु निंड नोंडोंड
कटमदोत्कट दंतिघटल डीकोलिप । पटु जवाश्वंबुल बलुविडि दोलि
यलवोप्प नरदंबु लडि्मुडि् बड़पि । नलुगड गाल्वुर नलि गर्वियिचि
करवाल मुसल मुद्गर भिंडिवाल । परशु तोमर शर प्रास चक्रमुल
गनुकनि वेंचियु गाडु बोंडिच्चियु । दुनिमियु मेरमियु दूलनेसियुनु
व्रच्चियु मोदियु वसुध गूल्चियुनु । ग्रुच्चियु गपुल बेकोंनि विदळिप
मोनसि वानर वीरमुख्युलु गडिमि । गिनिसि युद्भट रणक्रीडमै गदिसि
७३३०

युडि्कि समीपमंदुन्न शैलमुलु । दरुचैन गिरिशृंगततुलु वृक्षमुलु

रूपी अरण्य को जला देने के लिए शोभा से आनेवाले दावानल के समान आनेवाले असुर-सेना-सहस्रों को देखकर समस्त कपिवीर-पुंगवों ने अंगद के साथ अट्टहासों से उमड़कर, सिंहनादों के आकाश को छू लेने पर, बड़े-बड़े वृक्षों, उद्धत गिरियों-गिरिशृंगों को लेकर गिरिसम-आकृतियों से, ।।७३२०।।

—क्रम से बरज़ोरी दनुजसैनिकों का पीछा किया । वे दोनों पक्ष सर्वत्र अक्षीण बलों के विजृंभित होने पर दक्षिण-उत्तर समुद्रों के समान जूझ पड़े। तब दानवों ने उस सेना पर त्रिगुणित रोषों से जलते हुए, सिंहनादों, धमकियों, अतुल हुंकृतियों, चतुरताओं, साहस से भरकर, सर्वत्र कट-मदोत्कट दंति-घटाओं को टकराकर, पटुजवाश्वों को बरज़ोरी चलाकर, शोभा से रथों को जल्दबाज़ी से चलाकर, चारों तरफ़ पैदल (सेनाओं) को (आक्रमण के लिए) भेजकर, करवाल-मुसल-मुद्गर-भिंडिवाल-परशु-तोमर-शर-प्रास-चक्रों को फेंककर, चुभ जाएँ ऐसा चलाकर, काटकर, रौंदकर, गिराकर, चीरकर, प्रहारकर, वसुधा पर गिराकर, चुभोकर, (इस प्रकार) कपियों को विदलित किया । तब वानरवीर-मुख्य, साहस से क्रुद्ध हो, उद्भट-रण-क्रीड़ा से (राक्षस सेना के) निकट पहुँचकर, ।। ७३३० ।।

शिललु मेंडुगबट्टि चेलरेगि व्रेसि । तलमीरि गुर्ऱपुदळमुल कुऱिकि
युदितोग्रसत्त्वंबुलोप्प गुप्पिचि । कुदियंग रोतुल गूलदन्नियुनु
गरमुग्रुलै करिघटलपै गविसि । सोरिदि शैलमुलेत्ति जोदुलु बेलुच
गुंभमध्यंबुल ग्रुंग नेनुगुल । गुंभिनि नोक्कट गूलनेयुदुरु;
रथमुलतोड सारथुल रथ्यमुल । रथुल नोक्कट नेत्ति रणमध्यवीथि
बेलुकुऱ् नंदंद पृथिवि गंपिप । नलुवुन नट्टु व्रेसि नलिय जेयुदुरु;
धरणीधरंबुल दरुकदंबुमुल । नुरुवडि गाल्वुर नुऱुक मोदुदुरु;
कऱतुरु पंड्लनु; गरतलाग्रमुल । जऱतुरु; पदमुल जदिय ब्रामुदुरु;
व्रत्तुरुज्ज्वलनखावलुल; वालमुल । मोत्तुदुः रलतुरु मुष्टिघट्टनल;
७३४०

बनस नीलांगद प्रमुखुलु मऱियु । वनचरवरुलु दुर्वारुलै येंगसि
तनियनि कडिमि नुद्दंड दानवुल । मोनलपै नाकसंबुन नुंडि निंडि
भूरिधाराधरंबुलु लयवेल । घोरनिर्घातमुल् गुरियुचंदमुन
गुरुशैलपाषाणकोट्टुलंदंद । कुरिय नुद्भट रणक्षोणि नेल्लेडल
गूलु नेनुंगुलु गुंभमध्यमुल् । व्रालु मावुतुलु बेव्रालु टेक्केमुलु
विऱुगु विड्लुनु गूलु वीरराक्षसुलु । नोऱलु नश्वमुलु बेनोऱगु रावुतुलु

दौड़कर, समीपस्थ शैलों, विरल गिरि-शृंगततियों, वृक्षों, शिलाओं को खूब पकड़कर, विजृंभित हो प्रहारकर, अश्वदल पर छलांग मारकर, उदित-उग्र सत्त्वों के शोभित होने पर कूदकर, घुड़सवारों को ऐसा लात मारते कि वे सिकुड़कर नीचे गिर जाते। अधिक उग्र बन करिघटाओं पर टूटकर, क्रम से शैलों को उठाकर (वे) योद्धा अधिकता से कुंभमध्यों पर ऐसा डाल देते कि हाथी एक दम कुंभिनी पर गिर पड़ते। सारथियों, रथ्यों, रथियों के साथ एकदम उठाकर रणमध्यवीथि में सर्वत्र भूमि के कंपित हो जाने पर पटककर मार डालते। धरणीधरों (पर्वतों) से तरु-कदंबों (समूहों) से झट पैदल सैनिकों (पर प्रहार करते), दाँतों से नोच लेते, करतलाग्रों से चपेटा मारते, चरणों से कुचलकर पीस डालते, ॥ ७३४० ॥

—उज्ज्वल नखावलियों से चीर डालते, पूँछों से प्रहार करते, मुष्टिघट्टनों से मारते। पनस, नील, अंगद आदि और अन्य वनचर वीर दुर्निवार हो, ऊपर उठकर, आकाश में व्याप्त होकर, अपार साहस से उद्दण्ड दानवों की सेनाओं पर, लयकाल के निर्घातों के बरसने के समान भूरि-धराधरों (बड़े पर्वतों) को बरसाते। गुरु-शैल (तथा) पाषाण कोटियों के सर्वत्र बरसने पर, उद्भट-रण-क्षोणि में सर्वत्र गिरनेवाले हाथी, कुंभमध्य में गिर पड़नेवाले

जदियु रथंबुलु समयु सारथुलु । जिदियु पीनुंगुलु जॆदरु मांसमुलु
बडु किरीटंबुलु बगुलु मस्तकमु । लडरु नॆत्तुरुलु बॆल्लवियु गात्रमुलु
दॊलकाडु प्रेवुलु दुनियु खड्गमुलु । गलिगि यप्पुडु रणांगणमॊप्पॆ जूड
बहुभोगपर्जन्य भाग्यंब पोलॆ । महिताभ्र - मातंगमदसिक्तमगुचु
७३५०

नतिरौद्र रुद्रविहारंबपोलॆ । हतगजासुर पिशाचानंदमगुचु
नक्षीणरामकटाक्षंब पोलॆ । ब्रेक्षण हृष्ट विभीषणंबगुचु
गलियुगांत्योद्यग्रकालंब पोलॆ । बलशून्य विध्वस्तबहुधर्ममगुचु
गतदोषसंफुल्लकमलिनि वोलॆ । श्रितशिलीमुखपुंडरीकौघमगुचु
जारु शुभोदारु सदनंब पोलॆ । नारक्तघनमार्गणाकीर्णमगुचु
स्थिरपुण्य - मूलनदीभर्त बोलॆ । हरिसत्त्वनिर्मंथिताभीलमगुचु
ननघक्रमागम यागंब पोलॆ । ननिमिषलोकचिंताभीष्टमगुचु

महावत, उन पर टूट गिरनेवाले ध्वज, टूटनेवाले धनुष, गिर मरनेवाले वीर राक्षस, लोटनेवाले अश्व, उन पर गिरनेवाले अश्वारोही, पिस जानेवाले रथ, मृत होनेवाले सारथी, रौंदे जानेवाले शव, बिखरनेवाले मांस (के खण्ड), गिरनेवाले किरीट, फूटनेवाले मस्तक, फूट बहनेवाला रक्त, अधिक छिन्न-भिन्न होनेवाले शरीर, छितरनेवाली आँतें, टूटनेवाले खड्ग, (आदि) भरे हुए थे। (इनसे) युक्त हो तब रणांगण देखने में (ऐसा) शोभित हुआ मानो बहुभोग (विलसित) पर्जन्य (इन्द्र और मेघ) के भाग्य (संपत्ति) के समान महित-अभ्र-मातंग (ऐरावत, श्वेत गज) के मद से सिक्त था ।। ७३५० ।।

अतिरौद्र रुद्र-विहार (कैलास और श्मशान) की भाँति हत (मृत) गजासुर (एक राक्षस और गज एवं असुर) तथा पिशाचों को आनन्द दे रहा था। अक्षीण-राम-कटाक्ष के समान प्रेक्षण-हृष्ट-विभीषण (देखने में भयंकर, देखकर सन्तुष्ट बना विभीषण) था। कलियुग के अन्त के उदग्र-काल के समान बलशून्य-विध्वस्त-बहुधर्मवाला था। गतदोष-(निर्मल)-संफुल्ल कमलिनी के समान आश्रित शिलीमुख (भ्रमर और बाण)-पुंडरीक (कमल और श्वेत-छत्र)-ओघ (-समूह) था। चारु शुभोदार सदन की भाँति आरक्त (अनुरक्त और रक्त- से सींचा हुआ) घन-मार्गणों (-बाण और याचक) से आकीर्ण (पूर्ण) था। स्थिर-पुण्यमूल-नदीभर्ता (समुद्र) के समान हरि (साँप और कपि)-सत्व से निर्मथित होने के कारण आभील था। अनघ क्रम के आगम (वेद विहित)-याग की भाँति अनिमिष (देवताओं के)-आलोक (अवलोक) की चिन्ता का अभीष्ट (इच्छित)

नॊप्पु ना रणमुलो नुग्रभावमुन । कुप्पतिल्लुचु सुरलॊगि जूचुचुंड
दॊडगि नॆत्तुट दॊप्पदॊगि लो गलय । बड़ियुन्न प्रेवुलु पवडंपु बॊदलु
रथमुलु यानपात्रमु; लूडिपडिन । रथ चक्रततुलु गूर्ममुल मॊत्तमुलु;
७३६०

मॊगिनुन्न शवमुलु मॊसळ्ळुलु; गलय। दॆगिपड्ड भुजमुलु दीर्घसर्पमुलु;
नायुधरजमिस्मु; हस्तिसमूह । मायतशैलंबु; लतुलदंष्ट्रमुलु;
तिमितिर्मिगिलमुलु; दीर्घघोटकमु । गमुलु समुल्लोक कल्लोलततुलु;
विविधाश्वलाललु वॆलिनुर्वुलंदुः । धवळातपत्रसंततुलु हंसमुलु;
बहुकिरीट प्रभल् बडबाग्निशिखलु। महिमीद जॆदरिन मांसमुल्
मणुलु;
ब्रीत निशाचर प्रेतभेताळ । भूताट्टहासमुल् भूरि घोषमुलु
जंद्रुडु रघुरामचंद्रुडव्विभुनि । सांद्रहासद्युतुल् चंद्रिकलगुचु
नडरॆडु रक्ताब्धि यब्धितो दॊरसि । युडुवीथितो रासि युप्पॊंगुचुंडॆ;
नप्पुडु हनुमंतु डसुरेशुमीद । नुप्पॊंगि कवियु नुद्योगंबु सूचि
यचल निभाकारु डतिबलोन्नतुडु । रुचिर खड्गुडु खड्गरोमुंडु
गिनिस ७३७०

था। ऐसा शोभित उस रण में उत्पन्न उग्रभाव को देवताओं के क्रम से देखते रहने पर, रक्त में ऊभचूभ हो, (रक्त-प्रवाह के भीतर) पड़ी हुई आंतिड़ियाँ प्रवालों की झाड़ियाँ थीं, रथ नावें थीं, छूटकर गिर पड़े हुए रथ-चक्र-समूह कूर्मों के समूह थे, ।। ७३६० ।।

—क्रम से पड़े हुए शव मकर थे, कट पड़े हुए दीर्घभुज सर्प थे, आयुधों का चूर्ण सैकत था, हस्तिसमूह आयत (विशाल) शैल था, अतुल दंष्ट्राएँ तिमि और तिमिंगल थीं, दीर्घ-घोटकों के समूह समुल्लोक-कल्लोल (चंचल तरंगों की)-ततियाँ (समूह) थीं, विविध अश्वों की लार सफ़ेद फेन थी, धवल-आतपत्र (-छत्र)-संततियाँ (समूह) हंस थीं, बहुकिरीट-प्रभाएँ बाड़बाग्नि की शिखाएँ थीं, महि पर बिखर पड़े मांसखंड मणि थे, प्रीत निशाचर-प्रेत-बेताल-भूतों के अट्टहास भूरि गर्जनाएँ थीं। रघुरामचन्द्र ही चन्द्र था, उस विभु की सांद्र-हास की द्युतियां ही चन्द्रिका थी। (इस प्रकार) विलसित रक्ताब्धि अब्धि (समुद्र) की समता करते हुए, उडुवीथि (आकाश) को छूकर उमड़ रहा था। तब हनुमान के उमड़कर असुरेश पर टूट पड़ने का उद्योग करते देख अचल निभाकार, अतिबलोन्नत, रुचिर खड्ग वाले खड्गरोम ने क्रुद्ध होकर, ।। ७३७० ।।

खड्गरोमादि राक्षसुलु वानर वीरुलतो बोरि मडियुट

"यंदेंदु गडगेंद ? वंदेलनीकु ? । निंदुरमनिलज ! येनुन्नवाड !"
ननवुडु गुप्पिचि यतनिपै कुप्पिकि । तनुरोमशितखड्गधारल मुनिगि
योक भंगि वेंडलि महोग्रुडै निगुडि । प्रकट सत्त्वोन्नति बवमानसुतुडु
कुलशैलमुनु बोलु कोंड जे बूनि । पेलुच नार्चुचु वच्चि पृथिवि गंपिप
वानिपै नुरुवडि वैचें; वैचुटयु । दानि वाडुरुरोमधाराभिहतिनि
खंडिचि प्लवगुल खंडिचिकोनुचु । दंडि नप्पवमानतनयु दाकुटयु
बावनियुनु महापर्वतंबेत्ति । वेवेग दानववीरुपै वैव
गुलिशधाराहति गूलु शैलंबु । पोलुपुनु गूलें नप्पुडु रक्कसुंडु;
सर्परोमुडु तीव्रसर्पोग्रुडगुचु । दर्पिचि कडकमै दाकि यंगदुनि
दनुरोमसर्पसंततुल नोंप्पिप । घनमैन कडिमि नंगदुडु गोपिंचि ७३८०

ग्रद्दन लयकालकालुडै मंडि । यद्दैत्यु मस्तकंबरचेत व्रेय
दनुजुनि शिरमट्टु तद्दयु बगिलि । घनरक्तधारलोक्कट ग्रम्मुचुंड
रोषाग्नुलोलुकुचु रोमसर्पमुल । भीषणाकारुडै पेंचि यद्दनुजु

खड्गरोम आदि राक्षसों का वानर-वीरों से लड़कर मर जाना

—(कहा), "उधर किधर प्रयत्न कर रहे हो ? उधर तुम्हें क्यों ? हे अनिलज ! इधर आओ । मैं हूं।" ऐसा कहने पर छलांग भरकर, उस पर कूदकर, (उसके) तनुरोमों की शित (पैनी) खड्गधाराओं में डूबकर, एक (किसी) प्रकार से निकलकर, महोग्र हो तनकर प्रकट-सत्त्वोन्नति से पवमानसून ने कुलशैल-सम पर्वत को हाथ में लेकर, अधिक सिंहनाद करते हुए आकर, पृथ्वी के कंपित होने पर उस पर झट डाल दिया । डालने पर वह, उरु-रोम-धाराभिहति से (उस पर्वत को) खण्डित कर, प्लवगों को खण्डित करते हुए तीव्रता से उस पवमानतनय से टकराया । पावनी के भी महापर्वत को उठाकर अतशीघ्रता से दानववीर पर डाल देने से, कुलिश-धारा-हति से गिरनेवाले शैल के समान तब राक्षस गिर गया । सर्परोम, ने तीव्र-सर्पों से उग्र बनता हुआ, दर्पित हो साहस से सामना कर अंगद को तनुरोम-सर्प-संततियों से पीड़ित किया । महान् साहस से अंगद क्रुद्ध होकर, ॥ ७३८० ॥

—झट लयकाल का काल (पुरुष) बन, जलकर, उस दैत्य के मस्तक को हथेली से मारा तो उधर दनुज का शिर फूटकर घन-रक्त-धाराएँ एकदम प्रवाहित हुईं । रोषाग्नियों के उमड़ने पर रोमसर्पों से भीषणाकार हो विजृंभित हो उस दनुज ने अंगद के अंग पर मर्मांतक रूप से प्रहार किया ।

डंगदुनंगंबुलदरंट नेय । नंगदुंडधिकरोषायत्तुडगुचु
नसुर शिरोमध्यमतिघोरमुष्टि । बसचेंड दाटिंचि पडवैचि त्रोक्कि
तल द्रुंचि वैचि युद्धतशक्ति वानि । बलुविडि निर्गतप्राणु गाविचें;
भीषणरणकळाभीलु नन्नीलु । रोषिंचि वृश्चिकरोमुंडु दाकि
घनविष ज्वाललॉक्कट बिक्कटिल्ल । दनुरोम वृश्चिकततुल नंदंद
येचि नॉप्पिप सहिंपक नीलु । डाचि यद्दानवुनात्म गैकॉनक
विरथुलै राक्षसवीरुलु पऱव । नुरुसालतरुवुन नुरवडि व्रेसें; ७३९०

व्रेसिन ननुजुडावृक्षंबु द्रुंचें । गासिल्लि विषरोमकंटकाग्रमुल;
द्रुंचिन गनुगॉनि तोरंपु गडिमि । नंचित जयशीलु डा नीलुडलिगि
घोर बाहाशक्ति गुशलुडै पेर्चि । भूरिशाखल नॉप्पु भूजंबु वॅडिकि
कॉनि वच्चि वानि वक्षोवीथि व्रेसि । यनिमिषुलुप्पांग हतजीवु जेसें;
भग्नारि वीरु डभग्नप्रतापु । डग्निवर्णुडु कडु नाग्रहवृत्ति
वडि महाटवुल दुर्वारत बेंचि । कडगि युग्रत नेर्चु कार्चिच्चु करणि
नगणितस्फुट वह्नुलंगंबुलंदु । निगुडिंचि कोतुल नीऱु सेयुचुनु
ब्रळयाग्नियुनु बोलि पऱतेंचुचुंड । नलुकमै वीक्षिचि यवनीश्वरुंडु

अंगद ने अधिक रोषायत्त (चित्त वाला) होता हुआ, असुर के शिरोमध्य भाग पर अति-घोर-मुष्टि से प्रहार कर, गिराकर, कुचलकर, सिर तोड़ देकर, उद्धत-शक्ति से बहिर्गत-प्राण (निर्जीव) कर दिया। भीषण-रण-कला में आभील उस नील पर रुष्ट होकर वृश्चिकरोम ने आक्रमण किया (और) एकदम घन-विष-ज्वालाओं के व्याप्त होने पर, तनु-रोम वृश्चिक-ततियों से जहाँ-तहाँ पीड़ित करने पर, सहन न कर नील ने उस दानव की परवाह न कर, विरथ हो राक्षस भाग जाएँ, ऐसा उरु-साल तरु को झट फेंक दिया ।। ७३९० ।।

—फेंकने पर दानव ने उस वृक्ष को विषरोमकंटकाग्रों से तोड़ दिया। तोड़ देने पर देखकर, अधिक साहस से अंचित-जयशील नील ने रुष्ट होकर, घोर-बाहुशक्ति से कुशल बन, विजृंभित हो, भूरिशाखाओं से शोभित भूज (वृक्ष) को उखाड़कर ले आकर, उसके वक्षस्थल पर डालकर, उसे हतजीव कर दिया, जिससे अनिमिष फूल उठे। भग्नारि-वीर (शत्रुभंजक), अभग्न (अकुंठित)-प्रतापवाले अग्निवर्ण के अधिक आग्रह (क्रोध)-वृत्ति से, झट महाटवियों में दुर्वारता से विजृंभित हो, लगकर उग्रता से जला देनेवाले दावानल की भाँति, अंगों में अगणित-स्फुट-वह्नियों के फैलकर, कपियों को भस्म कर देते हुए प्रलयाग्नि के समान आते देखकर, क्रोध से देखकर

बलिमुख प्रमुखुल परिभवक्रममु । दिलकिंचि करुणाविधेयुंडु गान
दलपुन नोर्वक दनुजुनुग्रतकु । दलयूचि दशकंठु तम्मुन कनियें; ७४००
'नो विभीषण! नाकु नूहिंप दैलिय । दी वच्चुचुन्नवाडेव्वडो चूड;
ना रावणु बंप ननिसेय गोरि । धीरुडै यनलुडेतेंचुचुन्नाडो ?
वीडोक राक्षसवीरुडो ? काक । वीडेव्व ? डेपंड विनुपिपु नाकु!"
ननवुडु "देव ! वीडग्निवर्णुडु; । दनमेनि मंटलु दरिकोल्पि वीडु
पर्वतंबुलनैन भस्मंबु सेयु; । गर्व दुर्वारु; डखंडविक्रमुडु"
ननिन नच्चेरुवंदि यर्कवंशजुडु । घनमैन वानि युग्रत जूचि यलिगि
वासवसुतुडंत वरुणास्त्रमेसें; । नेसिन नदि मिंट नेंडमीक निंडि
कप्पारु मेघमुल् गप्पि यार्भटमु । लुप्पोंग जडिवानलुडुगक कुरिसि
यलवेदि मंटल नार्चि पेल्लार्चि । खलु नग्निवर्णु नोक्कट नेल गूल्चें;
नालंबुलो नप्पुडग्निवर्णुँडु । गूलुट गनुगोनि क्रूरुडै पेर्चि ७४१०
कोपंबु पेर्मि नक्षुल निप्पुलुरल । जूपुल लयकाल सूर्युडै मंडि
रामु गनुंगोनि राक्षसेश्वरुडु । "राम! नन्नेरुगवे ? रणमध्यवीथि

अवनीश्वर ने बलि आदि (राक्षस) प्रमुखों के परिभव-विक्रम को देखनेवाला करुणा-विधेय होने के कारण, मन से सहन न कर दनुज की उग्रता के कारण सिर हिलाकर, दशकण्ठ के अनुज से कहा— ।। ७४०० ।।

—"हे विभीषण ! मुझे सोच-देखने पर भी समझ में नहीं आ रहा है कि यह आनेवाला कौन है । उस रावण के भेजने पर युद्ध करना चाहकर, धीर बन, वह अनल ही तो नहीं आ रहा है ? यह क्या कोई राक्षस वीर है ? नहीं तो यह कौन है ? मुझे सविवरण सुनाओ ।" ऐसा कहने पर (विभीषण ने कहा)—"हे देव ! यह अग्निवर्ण है । अपने शरीर पर आग उभाड़कर यह पर्वतों को भी भस्म करता है । गर्व-दुर्वार है, अखण्ड-विक्रम वाला है ।" (ऐसा) कहने पर अर्कवंशज (राम) चकित हुए । उसकी महान् उग्रता को देख रुष्ट हो वासवसुत (सुग्रीव) ने वरुणास्त्र डाल दिया। चलाने पर उसने (अस्त्र ने) आकाश में अन्तर दिए बिना भरकर, छत के समान मेघों को आच्छादित कर, संभ्रम के व्याप्त होने पर, निरन्तर मूसलधार वर्षा की । शोभा दूरकर, ज्वालाओं को बुझाकर, अधिक सिंहनाद कर, खल अग्निवर्ण को एकदम जमीन पर गिरा दिया । युद्ध में तब अग्निनर्ण के गिरते देख, क्रूर हो, विजृंभित हो, ।। ७४१० ।।

—क्रोध की अधिकता से, आँखों से अंगारों के उमड़ने पर, देखने में लयकाल सूर्य के समान बलकर, राम को देखकर, राक्षसेश्वर ने (कहा)—"हे राम !

ग्रूर निष्ठुर वज्र घोर दुर्वार । धारा विदारितोद्धतकुलाचलुडु
देवेंद्रुडुद्वृत्ति देवसंघमुल । तो वच्चि यॆदिरिन द्रुंतु नेनाजि !
निन्नॆल कॆकॊंदु ? नीचकापेय । सन्नाहमॆ नन्नु साधिंचु नहह !
पदिलुडै मगपाडि पाटिंतु गाक! । तुदिमुट्ट नन्नु नॆदकॊंदुं गाक !
त्रोचि शस्त्रास्त्रपंक्तुल नॊंतुगाक! । येचि नी लावु नाकॆऱिंगितु गाक!"
यनवुडु रघुरामु डादुरात्मकुनि । चॆनटिमाटलु विनि चिरुनव्वु नव्वि
गंधसिंधुरमु घींकारमालिंचु । सिंधुरांतकमत्तसिंहंब पोलॆ
नूरकुंडुंटयु महोग्रुडै किनिसि । या रामु तम्मुडय्यमरारि दाकि
७४२०

घोर नाराचमुल् गुरिय दद्बाण । धारल द्रुंचि यातनि लॆक्कगॊनक
यॆंतयु द्रोचि पॆल्लेचि लंकेंद्रु । डंतकाकारुडै यऱिमि पै दऱिमि
भानुपै नडचु स्वर्भानुचंदमुन । भानुवंशाधीशुपै नप्पुडडरि
दारुण स्फुट वज्रधारानुकारि । नाराच ततुल नन्नरनाथु गप्पॆ;
गप्पिन नप्पुडाकाकुत्स्थुडलिगि । निप्पुलु रालॆडु निष्ठुरास्त्रमुल

मुझे (मेरी सामर्थ्य को) नहीं जानते हो ? रणमध्यवीथि में क्रूर-निष्ठुर-वज्र की घोर-दुर्वार-धारालों से विदारित-उद्धत-कुलाचल (कुल पर्वतों) वाले देवेन्द्र के उद्वृत्ति से देवसंघों के साथ आकर सामना करने पर भी युद्ध में (उसका) संहार कर दूँगा । तुम्हारी परवाह क्यों करूँगा ? अहह, नीच कापेय (कपियों का)-सन्नाह (संरंभ, तैयारी) मुझे विजित करेगा ? सावधानी से पौरुष से काम लो । अन्त तक मेरा सामना करो । दबाकर शस्त्रास्त्र-पंक्तियों से पीड़ित करो । विजृंभित हो अपनी सामर्थ्य मुझे बताओ ।" ऐसा कहने पर रघुराम उस दुरात्मा के दुष्ट वाक्यों को सुनकर, मुस्कुराकर, गन्धसिंधुर (मत्तगज) के घींकार को सुननेवाले सिंधुरांतक-मत्त-सिंह के समान, चुप रहा । (तब) महोग्र हो, क्रुद्ध बन, उस राम के अनुज ने अमरारि का सामना कर, ॥ ७४२० ॥

—घोर नाराच बरसाए । (बरसाने पर) तद्वाण-धाराओं को खण्डित कर, उसकी (लक्ष्मण की) परवाह न कर, (उसे) अत्यधिक दबाकर, अधिक विजृंभित हो, लंकेंद्र ने अन्तक-आकारवाला बन, दबाकर-पीछाकर, भानु पर आक्रमण करनेवाले स्वर्भानु (राहु) की भाँति, भानुवंशाधीश (लक्ष्मण) पर अत्यधिकता से, दारुण-स्फुट-वज्र-धाराओं की-सी नाराचततियों से उस नरनाथ (लक्ष्मण) को ढक दिया । ढक देने पर, तब काकुत्स्थ (लक्ष्मण) ने रुष्ट हो, अंगारे

नुग्रुडै येयंग युद्ध मध्यमुन । निग्रहिंपग जौच्चे नैऽसि रावणुडु;

इंद्रुडु मातलिचे श्रीरामुनकु रथमु बंपुट

ना समयंबुन ननियै मातलिकि । वासवुडारामवल्लभु जूचि
“देवहितार्थमै तिविरि राघवुडु । पोवक दनुजुतो बोरुचुन्नाडु;
वाडे पदातियै वसुधनुन्नाडु । वाडु रथस्थुडै वालु चुन्नाडु;
ऎंदु लोकोन्नतुंडितडु दु:खमुल । डिदि यक्कुमतिकि दिगुवनुन्नाडु
७४३०
वेद पल्लवमुल विहरिंचु सौख्य । वेदि कर्कश रणवीथि नुन्नाडु;
कमला मनोरथगतुल नुन्नतुल । नैमकेंडु सुखि नेल निलुचुन्नवाडु
इनकुलाधिपुनकु नी दिव्यरथमु । गौनिपौम्मु वेवेग गुंभिनि” कनुडु
ननिलमनोवेगमलरु नश्वमुल । गनकदंडाबद्ध घनकेतनमुल
महनीय रुचिरोरुमणि कदंबमुल । महितमै बालार्कमहिम दीपिप
दनरारु रथमु मातलि यौप्पु मिगुल । गौनि वच्चि वेड्कतो गुंभिनि
निलिपि,
या रामु मुंदऽ हस्तमुल् मौगिचि । यारूढ बलशालियै विन्नविंचे;

बरसानेवाले निष्ठुर अस्त्रों को उग्रता से चलाया। (चलाने पर तब) प्रकाशित हो रावण युद्धमध्य में निग्रह करने लगा।

इन्द्र का मातलि द्वारा श्रीराम के लिए रथ भेजना

उस रामवल्लभ को देखकर उस समय वासव (इन्द्र) ने मातलि से कहा—“देव-हितार्थ राघव दनुज के साथ जूझ रहा है। वह पदाति (पैदल) बन वसुधा पर खड़ा है। वह (रावण) रथ में विराजमान है। सब तरह लोकोन्नत है यह (राम)। यह दुखी बन उस कुमति से निम्न (स्थान) पर है ॥ ७४३० ॥

वेद-पल्लवों पर विहार करनेवाला सौख्यवेदी कर्कशरणवीथि पर है। कमला के मनोरथ की गतियों के औन्नत्य को खोजनेवाला सुखी (अब) ज़मीन पर खड़ा है। अपने दिव्यरथ को इनकुलाधिप के लिए अतिशीघ्र कुंभिनी पर ले जाओ।” (ऐसा) कहने पर अनिल-मनोवेग से शोभित अश्वों, कनकदण्ड से आबद्ध-घन-केतनों, महनीय-रुचिर-उरु-मणि-कदंबों (समूहों) से महित बन, बालार्कमहिमा से दीप्त हो विराजित रथ को मातलि ने बड़ी शोभा से ले आकर, कुंभिनी पर ठहराकर, उस राम के समक्ष हाथ जोड़कर, आरूढ़ बलशाली हो निवेदन किया—“हे देव! हे

"देव! राघव! धराधीश! समस्त। -देवताराध्य! वंदित भक्तसाध्य!
शर चाप कवचादि सन्नाह रथमु। बुरुहूतुडिदे नीकु बुत्तेंचिनाडु;
काकुत्स्थ! नीविक गौशिकु पनुपु। गैकोनि यी वज्रकवचंबु वूनि
७४४०

यी दिव्यरथमेक्कि यी यायुधमुल। नी दुर्मदांधुनि नेदिरि सांधिपु;
मेनु सारथिगाग निद्रुंडु सकल। दानवावलि गेल्चे धरणीश! तोल्लि"
यनवुडु विनि रामुडव्विभीषणुनि। यनुमतितो गूड नारथंबुनकु
वलगोनि वच्चि युज्ज्वलतनुप्रभलु। पोलयंग, नीरेडु भुवनंबुललर,
ज्रदल नोक्कट बर्व जयजयध्वनुलु। पोदिवि शाखामृगंबुलु
नुरुवडि गमलाप्तु डुदयाद्रि जेक्कु। करणि ना रथमेक्के गमलाप्तकुलजु
डप्पुडु नभमेल्ल नल्लाडुचुंड। नुप्पतिल्लुचुनुंडे नोंडोंड निंडि
शरदभ्र-संध्याभ्र-चय समानमुलु। गरुडोरगामरगण - विमानमुलु;
सरिचूचु सुरलु खेचरुलु गिन्नरुलु। परमसम्मदमुनु भयमु नुप्पोंग
"निदि पर्वतद्वंद्व; मिदि यब्धियुगळ। मिदि पावकद्वय; मिदि
नभोयुगमु; ७४५०

राघव ! हे धराधीश ! हे समस्त देवताराध्य ! हे वंदित भक्त साध्य ! शरचाप कवच आदि के सन्नाह (संरंभ) से युक्त रथ को पुरुहूत (इन्द्र) ने यही तुम्हारे लिए भेजा है। हे काकुत्स्थ ! अब तुम कौशिक के आदेश को स्वीकार, यह वज्रकवच धारण कर, ॥ ७४४० ॥

—इस दिव्य रथ पर आरूढ़ होकर, इन आयुधों से इस दुर्मदांध का सामना कर जीत लो। हे धरणीश ! मेरे सारथी बने रहने पर इन्द्र ने पूर्व में सकल दानवावली को जीता था।" ऐसा कहने पर सुनकर राम ने उस विभीषण की अनुमति से, उस रथ के पास शोभा से आकर, उज्वल-तनु प्रभाओं के विलसित होने पर, चौदह भुवनों के प्रसन्न होने पर, आकाश में एक साथ जयजय ध्वनियों के व्याप्त होने पर, शाखामृगों के आकाश छूते उछलकूद (हर्ष की अभिव्यक्ति) करने पर, शीघ्रता से कमलाप्त (सूर्य) के उदयाद्रि पर आरूढ़ होने के समान कमलाप्त-कुलज उस रथ पर आरूढ़ हुआ। तब समस्त आकाश के कंपित होने पर सर्वत्र भरकर, शरदभ्र-संध्याभ्र-चय (समूह) सम गरुड़-उरग-अमर-गण के विमान झुंड बाँधे हुए थे। ठीक तरह से देखनेवाले सुर, खेचर, किन्नर अधिक सम्मोद तथा भय के उमड़ने पर (सोचने लगे कि)—"यह पर्वतद्वन्द्व है, यह अब्धियुगल है, यह पावकद्वय है, यह नभोयुग (युग्म) है, ॥ ७४५० ॥

कदिसि पोराडंग गविसैंबो नेडु; । इदि समानस्कंध; मैट्लौको !" यनुचु
गंपिप जगमुलाकंपिप गिरुलु । गंपिप निरुवागु गंपिप गडगि
रण जयोदग्रुलै रामरावणुलु । रणजय व्यग्रुलै रामरावणुलु
कदिसिन, दृष्टि निर्घातपातमुल । जदिसिन मैऱुगुलु च़दलिपै जेंदर
जेलगें सेनल रेंट सिंहनादमुलु; । गलगें नाकादि लोकंबुलन्नियुनु;
ना मेटि विलुकांड्रु नन्योन्य विजय । कामुलै रथचित्रगतुलोप्पु मैऱय
दिनकरानलकल्प दीर्घ निर्घात । घनशातशरसमुत्करपरंपरल
गरमुलु गळमुलु गक्षमुलु भुजमु । लुरमुलु निटलंबु लूरुलु बरुलु
नेसि नौप्पिंचुचु निरुवुरु गदिसि । त्रासुलै दौरसि वित्रासुलै बैरसि
यंपकय्यमु सेयुनप्पुडौंडोरुल । सौंपु बेंपुनु देंपु जूड नच्चैरुवु; ७४६०
फलित विक्रम सम प्रारंभुलगुचु । 'दौलगक चेतुलु दौनलयम्मुलकु
जाचिरि तिविचिर संधिचिरेय । बूचिरि येचिरि पौम्मंचु दैलिय
राकुंडे; नप्पुडारामरावणुल । भीकर कर शराभीलवेगमुलु
गणनल क्रममुलु गडचि यंदंद । रणचंड कोदंड रवि मंडलमुल
ब्रेंखच्चरांशुल बेंचि पुंखानु । पुंखंबुलगुटयु बौंकु गाविंचि

—आज मिलकर जूझने आये न! यह समान स्कंध है। पता नहीं क्या होनेवाला है !" (ऐसा) कहते हुए वे कंपित हुए। जगत् के आकंपित होने पर, गिरियों के कंपित होने पर, दोनों पक्षवालों के कंपित होने पर, लगकर, रण-जयोदग्रबन राम (और) रावण, रण-जय-व्यग्र बन राम-रावण, जूझ पड़े। दृष्टि रूपी निर्घात-पातों से निकले अंगारों के आकाश पर बिखर पड़ने पर, दोनों सेनाओं में सिंहनाद परिव्याप्त हुए। नाक (स्वर्ग) आदि सभी लोक क्षुब्ध हुए। वे श्रेष्ठ धनुर्धारी, अन्योन्य-विजय के कामी (इच्छुक), रथचित्रगतियों की शोभा के प्रकाशित होने पर, दिनकर (तथा) अनल-कल्प (सम) दीर्घ-निर्घात (वज्र)-घन-शात-शर-समुत्कर परंपराओं से कर, कंठ, कक्षा, भुज, उर, निटल, ऊरु, पसलियाँ (आदि को) पीड़ित करते हुए, दोनों भिड़ते हुए, त्रस्त हो, (दूसरे को) त्रस्त करते हुए, बाणयुद्ध करते समय दोनों की मनोज्ञता, औन्नत्य, साहस देखने में आश्चर्यप्रद थे।। ७४६०।।

—फलित-विक्रम-सम-प्रारंभ वाले होते हुए (जब वे बाण चलाते तो) यह समझ में नहीं आ रहा था कि "कब हाथ तरकस में रखते, कब बाण निकालते, कब संधान करते, कब बाण छोड़ते।" तब उन राम-रावणों के भीकर-कर-शरों का आभील-वेग गणना के क्रम को पार कर गया। वे

बाणबाणासन प्रौढुलक्षीण । तूणीरुलेयुचो दोंडरि योंडोरुल
ब्रतिसेसि योंकटिकि बदियिटि वेंनुक । नुतशक्ति दानिकि नूऱिटि वनुक
वेंनुकोंनि दानिकि वेयिटि वेंनुक । बनुगोंनि दानिकि बदिवेलु वेंनुक
तुडुगक दानिकि नोंक लक्ष वेंनुक । मुडुवक दानिकि मऱि कोटि वेंनुक
नेसिन शरमु मुन्नेसिन शरमु । रासि योंक्कट दाकु रामरावणुल;
७४७०

रावणुनि बाणमुलकु रामुडु प्रतिबाणमुलु वेयुट

नलिनप्पुडमरारि नारि सारिंचि । तलकोंनि देवगंधर्वबाणमुलु
परुवडि नेयंग बरतेंचुचुनिकि । बरिकिंचि चूचि यप्परमास्त्रवेदि
तडयक देवगंधर्वबाणमुलु । वडिनेसि पोंडिसेसें वसुधेशु; डंत
नलुकमै रावणुंडा रामुमीद । बलुविडि राक्षसबाणमेयुटयु
मिडिग्रुड्लु निड्डुदलै मेऱयु कोऱलुनु । सुडिगोंन्न कऱकु जुंजुरु वेंड्रुकलुनु
नसदृशोन्नति मिंचुनट्टि कायमुलु । बोंसग दानवरूपमुलतोड निगुड
गनुगोंनि रघुकुलाग्रणि यल्क मदिनि । दनरंग वैष्णवास्त्रमु ब्रयोगिंचि
तरणिदीधिति यंधतमसंबुनडचु । करणि राक्षसबाणगौरवंबडचें;

(बाण) रणचंड-कोदंड रूपी रविमंडल से लगातार किरणों के निकलने की बात को असत्य सिद्ध करते । बाण-बाणासन-प्रौढ तथा अक्षय-तूणीर वाले वे बाण-प्रयोग करते तो दोनों बराबरी से एक के पीछे दस (शर), नुतशक्ति से उसके पीछे सौ (शर), लगकर उसके पीछे हजार, चाहकर उसके पीछे दस हजार, न छोड़कर उसके पीछे एक लाख, न रुककर उसके पीछे एक करोड़ (इस प्रकार प्रतिशर) चलाते । ये सभी शर एक साथ राम-रावणों को लगते ।। ७४७० ।।

रावण के बाणों का राम द्वारा प्रतिबाण चलाना

तब अमरारि ने प्रत्यंचा साधकर, देवगंधर्व बाण चलाए । (उन बाणों के) आने की गति का परिशीलन कर, देखकर, उस परमास्त्र-वेदी ने अविलंब झट देवगंधर्व-बाण चलाकर वसुधेश ने (रावण के बाणों को) चूर कर दिया । तब क्रोध से रावण ने राम पर बरजोरी राक्षसबाण चलाया । वह उभरी आँखें, विशाल प्रकाशमान दाढ़ें, खुरदरे तथा घुंघराले बालों तथा असदृशता से उन्नत शरीरों से मुक्त दानव-रूपों से उभर पड़ा । (तो उन्हें) देखकर रघुकुलाग्रणी ने मन में क्रोध के व्याप्त होने पर वैष्णवास्त्र का प्रयोग कर, तरणि (सूर्य) की दीधिति (प्रकाश)

नंत रावणुडुरगास्त्रंबु विंट । नेंतयु संधिंचि येसें; नेयुटयु
ना महाबाणमुनंदु बाणमुलु । भीमसर्पंबुलै पेर्चि यंदंद ७४८०
पदियु निर्वदियुनु बंड्रेंडु रेंडु । बदुमूडु मूडुनु बदुनेनु नेनु
दललतो दललपै दळतळरुचुलु । गल महामणुलतो गडकमै बेर्चि
गरुडवाहनुडनि काकुत्स्थुमीद । बरवसंबुन वच्चु पापदंडनग
ज्रदल नत्युज्ज्वलज्वाल लेल्लेडल । वेंदचल्लुचुनु वच्चु विधमु वीक्षिंचि
काकुत्स्थकुल - भर्त गारुडास्त्रंबु । गैकोनि संधिंचि कडिमि नेयुटयु
गडुकोनि गारुडाकार बाणमुलु । वडिनंदु ब्रभविंचि वसुध गंपिंप
वरपक्षसंघात वात विधूत । धरणीधरंबुलै तडयक निगुडि
नडुमन तुंचे नन्नागबाणमुल । नुडुवीथि सुरलुंडि युप्पोंगि यार्व;
वेंडियु ना दैत्यविभुनिपै नग्नि । कांडंबु निगुडिंचे गाकुत्स्थुडलिगि;
यदि धूमविस्फुलिगाक्रांतदिशमु । नदि शिखादग्धासुराधीशवनमु
७४९०
नगुचु नेतेर सुरारातिं युग्र । मगु वारुणास्त्रमुद्धति नेयुटयुनु

के अंधतमस का दमन करने के समान, राक्षसबाण के गौरव का दमन किया। तब रावण ने उरगास्त्र (सर्पबाण) का धनुष पर संधान कर चलाया। चलाने पर उस महाबाण से निकलकर बाण भीमसर्प बन विजृंभित हो सर्वत्र, ।। ७४८० ।।

—दस भी, बीस भी, बारह, दो, तेरह, तीन, पन्द्रह, पाँच सिरों (फणियों) से, फणियों पर उज्ज्वल कांतियुक्त महामणियों के साथ सप्रयत्न विजृंभित हो, काकुत्स्थ को गरुडवाहन मान कर अतिरोष से (उसपर) टूट पड़ने वाला सर्प-समूह हो, ऐसा आकाश में अत्युज्ज्वल ज्वालाओं को सर्वत्र बिखेरते हुए आनेवाले विधान को देखकर, काकुत्स्थकुल-भर्ता ने गारुडास्त्र को लेकर, संधान कर समर्थता से चलाया। उसमें से झट गरुड-आकार के बाण उद्भूत हो, वसुधा कंपित हो ऐसा वर-पक्ष-संघात (श्रेष्ठ पंखों के संघर्ष) से वात-विधूत (पवन से विचलित) धरणीधर (पर्वत) वाले बन, अविलंब तनकर, बीच में ही उन नागबाणों को, आकाशवीथि में, देवताओं के फूलकर सिंहनाद करने पर, खंडित कर दिया। और भी क्रुद्ध होकर काकुत्स्थ ने उस दैत्यविभु पर अग्निकांड (अग्निबाण) चलाया। वह (बाण) धूम-विस्फुलिंगों से दिशाओं को आक्रांत करनेवाला, वह शिखाओं (ज्वालाओं) से दग्ध किए असुराधीश-वन वाला था, ।। ७४९० ।।

—(ऐसा) होते हुए आने पर सुराराति (रावण) ने उग्र वारुणास्त्र को उद्धति से चलाया। (चलाने पर) घन-समूह (मेघ-समूह) ने आकाश को आच्छादित

घनसमूहंबुलाकसमॆल्ल गप्पि । पॊनर शंपाजालमुल वान गुरिसि
यनल सायकमु पॆंपडचि गर्जिल्ल । गनुगॊनि रामु डाकांडंबु मीद
वायव्यशरमेसि वारिंचॆ; दनुजु । डायॆड दंतिमुखास्त्रंबु बरपॆ;
दान बॆक्कगु दंतिततिगळद्बहुळ । दान जंबालित धात्रियै कदिय
श्रीरामुडुनु नारसिंहास्त्रमेसॆ; । बोरन दद्बाणमुन सिंहचयमु
दारुणतर सटाधारितसकल । नीरद निवहमै निजघोरनाद
चलितदिग्विरदमै चटुलत निगुडि । कुलिशोग्रनखमुल गुंभमुल् व्रच्चि
हस्तिसंतति द्रुंचॆ; नय्यॆड सुरलु । प्रस्तुति सेसि रा पार्थिवोत्तमुनि;

रावणुडु श्रीरामुनिपै शूलमु वेयुट

गलुषिंचि यप्पुडु कल्पांतवह्नि । तुलितमै मंटलु दॊलकाडुचुंड,
७५००
नालोक लोकभयंकराकार । शूलंबु गॊनि रामु जूचि रावणुडु
वसुमति गंपिंप वारिधुल् गलग । दॆसल नॆल्लंदु ब्रतिध्वनुल् सॆलग
बिट्टुलिक भूतमुल् बॆदर गट्टलक । दट्टिंचि सिंहनादमु सेसि पलिकॆ;

कर, शोभा से शंपाजालों को बरसाकर, अनल-सायक के प्रताप का दमन कर, गरज उठा। (उसे) देख राम ने उस कांड (बाण) पर वायव्यशर चलाकर, निवारण किया। उस अवसर पर दनुज ने दंति-मुखास्त्र चलाया। उससे अनेक दंति-तति (-समूह) (अपने) गंड-स्थलों से (निकले) दान (मद-जल) से धात्री को जंबालित (कीचड से युक्त) करते हुए (श्रीराम पर) आक्रमण करने चली। श्रीराम ने भी नारसिंहास्त्र चलाया। उस बाण से (उद्भूत) सिंह-चय ने दारुणतर रूप से विदारित-सकल-नीरद-निवह (समूह) बन, अपने घोर-नाद (गर्जना) से दिग्विरदों (दिग्गजों) को विचलित करते हुए, चटुलता से बढ़कर, कुलिश-उग्र-नखों से कुंभस्थल चीरकर हस्ति-संतति का संहार किया। उस अवसर पर देवताओं ने उस पार्थिवोत्तम की प्रस्तुति की।

रावण का श्रीराम पर शूल चलाना

—क्रुद्ध हो तब कल्पांत-वह्नि सम बन, ज्वालाओं के छलकते रहने पर, ॥ ७५०० ॥

—आलोक-लोक-भयंकराकार वाले शूल को ले राम को देखकर, रावण ने वसुमति के कंपित होने पर, वारिधियों के क्षुब्ध होने पर, दिशाओं में सर्वत्र प्रतिध्वनियों के व्याप्त होने पर, अधिक चौंककर भूतों के भीत होने

"बन्नुगा राम! यी पट्टुशूलवह्नि। निन्नु नी तम्मुनि नीऱु गाविंचि
पोर निन्नॆदिरिंचि पोराडिचन्न। वारि नारुल बाष्पवारि वारिंतु;
जूडुमु नी" वंचु शूलमंकिंचि। योडक रामुपै नंकिंचि वैव
दानिपै रामुडुदग्रुडै किनिसि। वानलु कल्पांतवह्नि पै गुरियु
पुरुहूतुपगिदि नद्भुतशितास्त्रमुलु। गुरियंग नदि दान गुदियक वानि
नुऱक नीऱुग जेसि युग्रवेगमुन। बऱतेंचुगति जूचि भानुवंशजुडु
देवेंद्रुडर्थि बुत्तेंचिन शक्ति। वाविरि गैकॊनि वैचॆ; वैचुटयु ७५१०
नदि निर्गणद्घंटिकारावमगुचु। नदि विस्फुरत्पावकारंभमगुचु
नदि यक्षसुरखेचरानंदमगुचु। नदि राक्षसालोकनाभीलमगुचु
वऱलु मनोवेग-वायुवेगमुल। बऱतेंचु शूलंब भस्मंबु सेसॆ;
नप्पुडु रावणुंडलुक चित्तमुन। मुप्पिरि गॊनग गार्मुकदशकंबु
धरियिंचि पेर्चि युदग्रुडै यार्चि। शरवृष्टि मुंचिन जननाथसुतुडु
तानेक कोदंडधरुडय्यु दुनिमॆ। वानि यस्त्रमुलॆल्ल वारनि कडिमि;
मदमु मत्सरमुनु मानंबु ज्वलमु। गदुर गन्नुल निप्पुकलु निव्वटिल्ल
रावणुडेंतयु रघुरामुमीद। वाविरि नम्मुल वानलु गुरिसि

पर, अधिक क्रोध से फटकार कर सिंहनाद कर, कहा— "ठीक ढंग से हे राम! इस पट्टशूल-वह्नि से तुम्हें और तुम्हारे अनुज को भस्म कर, युद्ध में तुम्हारा सामना कर, लड़कर, मरे हुए (मेरे) लोगों की नारियों की बाष्प-वारि का निवारण करूँगा। देख लो तुम।" कहते हुए, शूल को उठाकर, भीत न होकर, राम पर फेंक दिया। उस पर राम ने उदग्र बन क्रुद्ध हो कल्पांत-वह्नि पर वर्षा बरसानेवाले पुरुहूत (इंद्र) की भाँति अद्भुत-शित-अस्त्र बरसाए। वह (शूल) उससे संकुचित न होकर, उन्हें सरलता से भस्म कर, उग्रवेग से आने लगा। उस गति को देख भानुवंशज ने देवेंद्र के प्रेम से भेजी शक्ति को लेकर क्रम से फेंका। फेंकने पर, ।। ७५१० ।। —वह निर्गल[1] (बेरोकटोक)-घंटिकाओं का आरव (ध्वनि) करते हुए, वह विस्फुरत्-पावक-आरंभ वाली होती हुई, वह यक्ष-सुर-खेचरों को आनन्द प्रदान करती हुई, वह राक्षसों के आलोकन में आभील होती हुई, (उस शक्ति ने) मनोवेग तथा वायुवेग से आनेवाले शूल को भस्म कर दिया। तब रावण ने मन में क्रोध के त्रिगुणीभूत होने पर, कार्मुक-दशक धारण कर विजृंभित हो, उदग्र हो, सिंहनाद कर, (राम को) शर-वृष्टि में डुबो दिया। जननाथ ने स्वयं एक कोदंड को धारण करने पर भी, उसके सभी अस्त्रों को दुर्निवार साहस से खंडित कर दिया। मद, मत्सर, मान, हठ के बढ़ने पर, आँखों से चिनगारियों के फूटने पर, रावण ने अधिकता

---

[1] अर्गला-रहित।

कुदियनि कोपंबु कॉलदिकि मिगुल । बदियिट मातलि बदियिट हरुल
विकलसत्त्वुल जेसि विषमास्त्रमॊकट । ब्रकटंबुगा द्रुंचॆ बटुकेतनंबु;
७५२०
विपुल चिंताभर विवशुलै तूलि । कपुलु नाकपुलु नॊक्कट विन्ननॆरि;
भुवनमुल् शंकिंचॆ; बुधुडु वेधिंचॆ । जवमुन रोहिणीशकटंबुनंदु;
बटुतर तेजंबु भयदंबुगाग । नट विशारवकु वच्चॆ नंगारकुंडु;
चटुलोग्रतर भंगि जलधुलुप्पॊंग । नटदूर्मिमालिकल् नभमंदि पॊरलॆ;
नॆगयु नौवनिल निष्ठुर शिरवलु । पॊगल चंदमुगाग बॊगयंग दॊडगॆ;
नुग्रांशु बिबंबु नॊरयुचु वच्चि । युग्रदीप्तुलतो महोल्कलु डुल्लॆ;
नविरळतरतेज मट्टु मारुपडग । रवियुनु गड्डु मंदरश्मियै तोचॆ;

श्रीरामुन कगस्त्युडादित्य हृदय मुपदेशिंचुट

नलि नप्पुडेचि मैनाकंबुवोलॆ । दलगक यंदंदु दशकंठुडेयु
शरवेगगति जूचि जनलोकनाथु । डरुदंदि चिंतिप नट नगस्त्युंडु
चनुदॆंचि या रामचंद्रु नीक्षिंचि । "विनु महाभुजबलवीर !
यो राम ! ७५३०

से रघुराम पर क्रम से बाण-वर्षा की। कम न बने क्रोध से अधिक समर्थ बन दस (बाणों) से मातलि, दस से हर (अश्व) को विकल-सत्त्व बनाकर, एक विषम-अस्त्र से प्रकट रूप से पटुकेतन को खंडित कर दिया ॥ ७५२० ॥

—(उससे) कपि और नाकप विपुल-चिंता-भार से विवश हो लड़खड़ाकर, एकदम विवर्ण बने। भुवन शंकित हुए। बुध रोहिणी में पहुँचकर व्यथित करने लगा। पटुतर तेज के भयद बनने पर अंगारक तब विशाखा में आया। चटुल-उग्रतर भंगिमा से जलधियों के उमड़ने पर नटत् (नाचने वाली) ऊर्मि-मालिकाएँ नभ को छूकर व्याप्त हुईं। ऊपर उठनेवाले और्वानल-निष्ठुर-शिखाओं के धूम्र के समान अग्नि व्याप्त होने लगी। उग्रांशु (सूर्य)-विष से टकराती हुई, उग्रदीप्तियों के साथ महान् उल्काएँ गिरने लगीं। अविरलतेज की आड़ में पड़ जाने पर रवि भी अधिक मंद-रश्मि वाला (तेजोहीन) हो दिखाई दिया।

श्रीराम को अगस्त्य का आदित्यहृदय का उपदेश देना

—तब विजृंभित हो मैनाक की तरह न हटकर दशकंठ के द्वारा निरंतर चलाए जानेवाले शरों की वेग-गति को देखकर जनलोकनाथ चकित हो, चिंतित हुआ। तब अगस्त्य आए, रामचंद्र को देखकर कहा— "सुनो, महाभुजबल-वीर! हे राम! ॥ ७५३० ॥

विततंबुगा नाजि विजयंबु सेयु। नतिगोप्यमगुचुन्नयट्टि मंत्रंबु
नॆलमितो नादित्यहृदयंबु हृदय। मलर ननुष्टिंपुमवनीशतिलक!
यिम्महाजपमुन निप्पुडे नीवु। सम्मदंबडरंग शत्रुगॆल्चॆदवु;
इदियायुवॊनरिंचु; निदि दुःखमणचु। निदि सर्वमंगळहेतुभूतंबु;
वॆलय सुरासुरविनतुडै पॊलुचु। जलजाप्तु बूजिप जनु नीकु नधिप!
यी लोकलोचनुंडॆल्ललोकमुल। जाल रश्मुलु निंड जरियिंचुचुंडु;
ब्रह्मयु विष्णुंडु फाललोचनुडु। ब्रह्मकल्पादिनि भानुडैनाडु;
मदि सर्वदेवतामयुनिगा नॆऱिंगि। कदनंबुनंदु नी कमलबांधवुनि
नॆव्वडु कीर्तिंचु निपुसॊंपार,। नव्वीरुनकु गल्गु नाहव विजय”
मनुचु नम्मुनिवरुंडाश्रमंबुनकु।जनुटयु ना सौरजपमाचरिंचि ७५४०
यप्पुडत्युन्नतुडै राघवेंद्रु। डुप्पॊंगि रावणोद्योगंबु सूचि
घोरावलोकनाग्नुलु मंडुचुंड। भूरि धूम्रायत भ्रुकुटि निक्किंचि
पॆरिगि रावणुरथाभीलघोटमुल। नुरुतरास्त्रंबुल नुरुक नॊप्पिंचि
वरशरत्रयमु रावणु ललाटमुन। सरि ग्रुच्चि युरुरक्तसंसिक्तु जेसॆ;
नप्पुडु रक्तसिक्तांगुडै चूड। नॊप्पॆ लंकेश्वरुंडॊंगि रामचंद्र

—वितत रूप से युद्ध में विजय प्रदान करनेवाला अतिगोप्य मंत्र, आदित्य-हृदय का प्रेम से, हृदय प्रसन्न हो, ऐसा हे अवनीशतिलक! अनुष्ठान करो। इसके महाजप के कारण अभी तुम सम्मोद की अधिकता से शत्रु को जीत लोगे। यह आयुप्रद है, यह दुख का दमन करता है, यह सर्वमंगलहेतुभूत है। हे अधिप! सुरासुर-विनत बने शोभित जलजाप्त की पूजा करना तुम्हारे लिए उचित है। यह लोकलोचन वाला (सूर्य) समस्त लोकों में अधिक रश्मियाँ भरते हुए विचरण करता है। ब्रह्मा और विष्णु (तथा) फाललोचन ब्रह्मकल्पादि में भानु हुए हैं। मन में (सूर्य को) सर्वदेवतामय जानकर, युद्ध में इस कमलबांधव का, शोभा से जो कीर्तन करता है, उस वीर को आहव-विजय प्राप्त होता है।” (ऐसा) कहते हुए वह मुनिवर आश्रम को गए। (तब) वह सौरजप करके, ॥ ७५४० ॥

—तब अत्युन्नत हो, राघवेंद्र फूल उठे। रावण के उद्योग (प्रयत्न) को देख, घोर-अवलोकन रूपी अग्नियों के बलते रहने पर, भूरि-धूम्र-आयत रूपी भ्रुकुटि को तानकर, बढ़कर (शक्तिसंपन्न बन), रावण के रथ के आभील-घोटकों को उरुतर अस्त्रों से पीडित कर, वर शरत्रय को रावण के ललाट पर ठीक गाड़कर (उसे) उरु-रक्त-संसिक्त किया। तब रक्तसिक्त-अंग वाला हो लंकेश्वर देखने में (ऐसा) शोभित हुआ मानों रामचन्द्र के

शर-वसंतागम-समय-संफुल्ल । तरुणारुणाशोक तरुव चंदमुन;
गुपितुडै यंत रक्षोभर्त रामु । विपुलवक्षंबॆसॆ वेयि बाणमुल;
“नधम प्रयुक्तंबुलै सुरद्रोह । विधि कॊसरिपक विषशक्ति मॆरसि
निर्मलगुणयुक्ति नॆऱि बॆडबासि । धर्मंबु विडिचि युद्धतशक्ति निगुडि
चनुदॆंचि राघवेश्वरुनि नॊप्पिंचि । चन नधोगति गाक सद्गति
गलदॆ ?” ७५५०

यनिन चंदंबुन नद्दशाननुनि । धनबाणमुलु वच्चि काकुत्स्थु गाडि
जगदद्भुतंबुगा जनि भूमि दूरि । तगुलक निगुडि पाताळंबु सॊच्चॆं;
नुरुशरक्षतमुल नुऱक पॆल्लुब्बि । तॊरुगु नॆत्तुट दॊप्पदोगि राघवुडु
ब्रळयकालाभील-पावक-ज्वाल । ललवुमै निट्लुंडु नन निंडि मंडि
मंडु चिच्चऱकंटि मंटलुमिंट । नॊंडॊंड पर्वु कालोग्रुडो यनग
जंडतेजमुन ब्रचंडमार्तांड । मंडलकिरण समानासमान
मानित शरपरंपर लोलि बऱपि । मानगर्वमु दॊंटि मदमुनु नुडिपि
यॆनिसॆय गालुसेयाडकयुंड । दनुवॆल्ल जर्जरितंबुगा जेसि
पर्वॆंडु रघुरामु बाणवेगमुन । निर्विण्णुडै युंडॆ निल्चि रावणुडु;

शर रूपी वसंतागम के समय संफुल्ल-तरुण-अरुण-अशोक-तरु हो। तब रक्षोभर्ता (राक्षसराज) ने कुपित हो राम के विपुलवक्ष पर हज़ार बाण चलाए। “अधम (व्यक्ति) से प्रयुक्त होकर, सुरद्रोह की विधि से विचलित न होकर, विषम शक्ति से दीप्त होकर, निर्मलगुण (गुण, प्रत्यंचा)-युक्ति से बिछुड़कर, धर्म को छोड़, उद्धत शक्ति से तनकर, आकर, राघवेश्वर को पीडित करने पर, अधोगति के अतिरिक्त (कहीं) सद्गति हो सकती है ?” ॥ ७५५० ॥

—मानों इस प्रकार उस दशानन के महान् बाण आकर, काकुत्स्थ के (शरीर में) गड़कर, जगदद्भुत रूप से बाहर निकलकर, भूमि में प्रवेशकर, न रुककर, तनकर, पाताल में घुस गए। उरु-शर-क्षतों से अधिकता से उमड़ने वाले रक्त में ऊभचूभ हो राघव, ऐसा बलकर यह बता रहे हों कि प्रलयकाल की आभील-पावक-ज्वालाएँ ऐसी होती हैं। अरुण नेत्रों में बलने वाले अग्निकणों के आकाश में भर जाने पर वे उग्र-काल के समान थे। (तब) चंडतेज से प्रचंड-मार्तंड-मंडल की किरणों के समान-असमान (तथा) मान्य शरपरंपराओं को क्रम से चलाकर मानगर्व (तथा) पूर्व के मद को दूर कर युद्ध किया तो (रावण) हाथ पैर हिला न सका। समस्त शरीर को जर्जरित कर जानेवाले रघुराम के बाणवेग के कारण रावण निर्विण्ण हो

दशरथसुतुडु प्रतापभास्करुडु । दशकंठु जूचि युदग्रुडै पलिकें; ७५६०

रामरावणुल परस्पराधिक्षेपणमु

“नेलरा! रावण! यिट्लु निर्विण्ण । शीलुडवै युंड जेष्टलु मऱचि ?
‘योडनेन्नडु’ ननि युग्राहवमुल । नाड्डु बीरंबु, लवि येंदु बोयें ?
बेरिगि मी यन्न गुबेरु गारिंचि । पऱुनि चंदमुन बुष्पकमु देच्चुटयु
मऱि यरण्यमुलंदु ममु डागुरिंचि । चेऱगोनि लंककु सीत देच्चुटयु
निवि वीरकृत्यंबुले दशग्रीव ! । यवि पौरुषमुलनि येल गर्विप ?
वडि बुराकृतदोषवशुडवै चिक्कु । पडि नेडु ना दृष्टिपथमुन बडिति;
पडितिगाकिक नी प्राणमुल् गोनक । विडुतुने ? निन्नेल विडुतुने लंक ?
हरिहर ब्रह्मादुलड्डमैरेनि । बोरिगोंदु; बोनीनु; बोर साधितु;
रावण ! नेडु नी रक्तमांसमुलु । सेविप जेयुदु जैलगि भूतमुल;
गष्टचित्तुड वतिकामातुरुडवु । दुष्टबुद्धिवि सुरद्रोहिवि गान ७५७०
वदिलमै निलुवक पाऱितेनियुनु । बोदिवि निन जंपुट पुण्यंबु नाकु;
नासन्नमृत्युडवैन नीतोड । नीसुमाटलु वल्क निंक नेमिटिकि ?

(निर्वेद को प्राप्त हो) खड़ा रहा । (तब) प्रतापभास्कर दशरथसुत ने दशकंठ को देखकर उदग्र हो, कहा— ॥ ७५६० ॥

राम-रावणों का परस्पर अधिक्षेपण

—“क्यों रे रावण ! इस प्रकार चेष्टाएँ (अंग-संचालन) भूलकर निर्विण्ण-शील हो क्यों खड़े हो ? ‘कभी नहीं हारता’ ऐसा उग्र-आहवों (युद्धों) में जो दंभपूर्ण वाक्य कहे थे, वे कहाँ गए ? बढ़कर अपने अग्रज कुबेर का अपमान करके, पराए (व्यक्ति) के समान पुष्पक लाना और अरण्यों में हमें धोखा देकर सीता को लंका में लाना, क्या ये वीरकृत्य हैं ? हे दशग्रीव ! इन्हें पौरुष (पूर्णकृत्य) मानकर क्यों गर्व करते हो ? झट पुराकृत दोष-वश हो, फँसकर आज मेरे दृष्टिपथ में आए हो । आए हो न! अब तुम्हारे प्राण लिए बिना छोड़ूँगा क्या ? तुम्हें और लंका को क्यों छोड़ूँगा ? हरि-हर-ब्रह्मा भी बीच में आएँ तो भी मार डालूँगा, जाने नहीं दूँगा । युद्ध में जीत लूँगा । हे रावण ! आज विजृंभित भूतों को तुम्हारे रक्तमांस खिला दूँगा । क्रूरचित्त वाले हो, अतिकामातुर हो, दुष्टबुद्धि हो, सुरद्रोही हो अतः, ॥ ७५७० ॥

—सावधानी से खड़े न रहकर, भाग जाओगे तो भी पकड़कर तुम्हें मार डालना मेरे लिए पुण्य (का कार्य) है । आसन्न-मृत्यु बने

नी विक्रमंबुनु नी भुजाबलमु । नी वैभवंबुनु नेडु वापॆदनु;
गलन नी तम्मुनि खरुडनुवानि । बॊलियिंचुटॆऱुगवे भुवनभीकरुनि ?
निंक नॊक्कटि नीकु नॆऱिंगितु विनुमु । शंकिप वलवदु; जनकज निच्चि
शरणनु गाचॆद समरंबु सेय । नुरुजयंबेदि ? नीकोटमि गाक !
यायुवु वरशक्ति नधिकंबु वडसि । मायाविधंबुलु मऱि पॆक्कुलॆऱिगि
समरोग्र शस्त्रास्त्र सामग्रि गलिगि । यमरेंद्रुडादिगा नखिल दिक्पतुल
मूडुलोकम्मुलु मुनु गॆलिचयुन्न । वाडि वीरुनि निन्नु वधियिंतु नेडु ।”
अनुचुन्न रघुरामु नत्युग्रभाष । लवलार्चुलै तन्नु नडरि काल्चुटयु
७५८०

नलुकमै नुलुकुचु नद्दशाननुडु । बलियुडा जानकीपति जूचि पलिकॆ;
“दुरमुन गॊंदरु तुच्छराक्षसुल । बॆरिगि चंपितिननि पेचॆंदु कडगि
नन्नॆऱुंगवु नीवु; ना लावुकॊलदि । मुन्नॆऱुंगवु; नेनु मुनुमिडि तॊल्लि
यतिलोक कृतुलैन यक्ष गंधर्व । पतुल देवतल दिक्पतुल बॆक्कंड्र
बलुविडि गार्रिचि भंगिंचि नॊंचि । चॆलगि वर्तितु विशृंखलवृत्ति;
समबल प्रौढि विचारिंपकेनु । समरंबुलो निन्न सरकु सेयुदुनॆ ?

(मरने ही वाले) तुम्हारे साथ अब मुझे ईर्ष्यायुक्त वचन कहना क्यों ? तुम्हारे विक्रम को, तुम्हारे भुजबल को, तुम्हारे वैभव को आज नष्ट कर दूँगा। युद्ध में तुम्हारे अनुज खर नाम वाले का, भुवन भीकर का वध करना नहीं जानते हो ? अब एक और (बात) तुम्हें बताता हूँ, सुनो। शंका मत करो। जनकजा देकर शरण मांग लो, रक्षा करूँगा। समर करोगे तो तुम्हें अपजय के अतिरिक्त विजय कहाँ ? आयु, वरशक्ति (श्रेष्ठ शक्ति या वरों से प्राप्त शक्ति) अधिकता से प्राप्त कर, फिर अधिक माया-विधानों को जानकर, समर में उग्र शस्त्र-अस्त्र-सामग्री से युक्त हो। पूर्व में अमरेंद्र आदि अखिल दिक्पतियों को, तीन लोकों को जीतेनेवाले श्रेष्ठ वीर हो न, (ऐसे) तुम्हारा आज वध कर दूँगा।” (ऐसा) कहनेवाले रघुराम की भाषाएँ (वचन) अनल की अर्चियाँ बन, बढ़बढ़ कर (अपने को) जला देने पर, ॥ ७५८० ॥

—क्रोध से आशंकित होते हुए उस दशानन ने बली जानकीपति को देखकर कहा— “युद्ध में कुछ तुच्छ राक्षसों का अतिशयता से वध किया, यह कह सप्रयत्न विजृंभित होते हो। तुम मुझे नहीं जानते हो। मेरी सामर्थ्य के आधिक्य को नहीं जानते हो। मैंने पूर्व में अतिलोक-कृति अनेकों यक्ष-गंधर्वपतियों, देवताओं, दिक्पतियों को बरजोरी अपमानित कर, भंग कर, पीडित कर, विजृंभित हो विश्रृंखलता से आचरण किया है।

निन्नु नीतम्मुनि नेडाजि जंपि । कन्नुलपंडुवुगा जूचि कानि
यी लंक जौरनेनिंक ने" नंचु मिंचि । कालाग्निकल्पुडै कडगि रावणुडु
महियु नाकसमुनु मंड राघवुनि । बहुदिव्य शस्त्रास्त्रपंक्तुल बौदिवें;
बौदिविन गोपिंचि भूपालुडेसें । बौदिगौनि प्रतिबाणमुलु सहस्रम्मु
७५९०
लप्पुडु रघुरामुडधिकसंतोष । मुप्पौंग रट्टिंचि युरुपराक्रममु
चेंनटियौ ताटक जीड्रिननाडु । मुनि यिच्चु दिव्यास्त्रमुल मदि दलप
दलपुलोननें वच्चि तम मूर्तुलौप्प । विलसित जयलिंग विस्फुलिंगमुल
नमरदिव्यास्त्रंबुलवि वेलुंगुटयु । समुचितस्थिति वानि संधिंचि मिंचि
कौंडपै बिड्गुलु गुरियुचंदमुन । जंडत सव्यापसव्यंबुलेसि
तनियक मड्रियु नुद्धतशक्ति मीड्र । घनबाणचय वृष्टि गप्पि नौंप्पिंचि
कडकमै बोराडगा बोडसूड । नडुमीक दशकंठु नलि जिक्कु वड्रिचें;

रावणुडु मूर्छिल्लुट

ना रामु शरहति नवशुडै दनुजु । डा रथमध्यंबुनंदु व्रालुटयु

समबल-प्रौढता का विचार न करके क्या मैं समर में तुम्हारी परवाह करूँगा ? तुम्हें (और) तुम्हारे अनुज को आज युद्ध में मार डालकर, नेत्रपर्व रूप में देखे बिना इस लंका में अब प्रवेश नहीं करूँगा।" (ऐसा) कहते हुए, बढ़कर, कालाग्नि-कल्प (-सम) हो, सप्रयत्न रावण ने महि तथा आकाश के जल जाने पर राघव को बहुदिव्य शस्त्र-अस्त्र-पंक्तियों से परिवेष्टित कर दिया। कर देने पर क्रुद्ध हो भूपाल (राम) ने सहस्र प्रतिबाण चलाए ।। ७५९० ।।

—तब रघुराम ने अधिक संतोष (आनंद) के उमड़ने पर, द्विगुणित-उरु-पराक्रम से दुष्ट ताडका का संहार करने के दिन मुनि (विश्वामित्र) के दिए दिव्यास्त्रों का मन में स्मरण किया। स्मरण करते ही आकर वे अपने-अपने रूपों में शोभित हो, उन अमर दिव्यास्त्रों के विलसित जयलिंग-विस्फुलिंगों के साथ प्रकाशित होने पर, समुचित स्थिति से उनका संधान कर, बढ़कर, पर्वत पर गाज गिरने के समान चंडता से सव्य-अपसव्यों से (बाण) चलाकर, संतृप्त न होकर और भी उद्धत शक्ति के बढ़ने पर घन-बाण-चय-वृष्टि से आच्छादित कर, पीडित कर, साहस से युद्ध किया। देखने के लिए भी अवकाश न देकर दशकंठ को उलझा दिया।

रावण का मूर्च्छित होना

उस राम के शरहति (बाणों के आघात) से अवश बन दनुज रथमध्य में गिर गया। (उसे) देख, भीत हो कालकेतु घोराजि (भयंकर

गतुगॊनि भीतुडै कालकेतुंडु। गॊनिपोयॆ नरदंबु घोराजि वॆडल;
सुरलप्पुडॆंतयु जूचि यार्वॆग। दरुचरयूथमुल् दग नुत्सहिंप ७६००
नॊलसिन लावुमै नॊककॊंत वडिकि। बलशालि राक्षसपति मूर्छदेरि
प्रथन विक्रम सम प्रारंभुडगुचु। रथमुपै निलिचि सारथि जूचि पलिकॆ;
“ओरि! रामुडु नव्व उरुकीर्ति द्रॆव्व। दॆरितयॆड दव्वु दॆत्तुरे” यनिन
“नोडिन वाडनै यॊंडॆ नी पगतु। गूडिनवाडैन कॊनिराक गादु;
रथिकुसंकटमु सारथि गन्नचोट। रथमु मऱल्चुट रणधर्ममॆंदु;
नटुगान दॆच्चिचति” ननवुडुवानि। पटुविवेकमुनकु बलुमाऱु मॆच्चि
परमसम्मदमुन बसदनंबिच्चि। सुरवैरि यप्पुडु सूतु नीक्षिंचि
“रामुडुन्नाडदॆ! रणमध्यवीथि। रामुनि रथमुपै रथमु बोनिम्मु”
नावुडु नरदमन्नरनाथु गदिय। द्रोव नक्कालकेतुडु बिट्टु वऱपॆ;
दशकंठु दरनमुद्धति राग जूचि। दशरथसुतुडु मातलि जूचि पलिकॆ; ७६१०
“नदॆ! रावणुनि रथमरुदॆंचुचुन्न; । ददॆ ! मनरथमुनुनट बोवनिम्मु;
दृष्टि चलिंपक तीव्र बाणमुल। दृष्टिंचि वॆऱवक तिरुगुडु वडक

युद्ध) से निकालकर रथ को ले गया। तब सुरों ने अधिक सिंहनाद किए और तरुचर-यूथ (समूह, सेना) अति उत्साहित हुआ ॥ ७६०० ॥

उत्तम सामर्थ्य के कारण थोड़ी देर के बाद बलशाली राक्षसपति होश में आया। प्रथन (युद्ध)-विक्रम के सम-प्रारंभवाला होता हुआ रथ पर खड़े होकर सारथी को देखकर बोला— “रे! राम के उपहास करने पर, (मेरी) उरु-कीर्ति के नष्ट होजाने पर, रथ को इतनी दूर क्यों लाया है?” (ऐसा) कहने पर (उसने कहा)— “(युद्ध में) हारकर अथवा तुम्हारे शत्रु से मिलकर (स्वामीद्रोह करके) मैं ऐसा (रथ) नहीं लाया हूँ। रथिक के संकट को सारथी जब देख लेता है तब रथ को लौटा लेना सर्वत्र रणधर्म है। ऐसा होने से (रथ) यहाँ लाया हूँ।” ऐसा कहने पर उसके पटु-विवेक की कई बार सराहना कर, परम सम्मोद से पुरस्कार देकर, सुरवैरी ने तब सूत को देखकर (कहा)— “वही राम है न! रणमध्य-वीथि में राम के रथ के पास अपना रथ जाने दो।” ऐसा कहने पर रथ को कालकेतु ने बड़ी शीघ्रता से नरनाथ (राम) के पास चलाया। दशकंठ के रथ को उद्धत गति से आते देख, दशरथ-सुत ने मातली को देख कहा— ॥ ७६१० ॥

—“वही रावण का रथ आ रहा है। हमारे रथ को भी उधर ही जाने दो। दृष्टि को विचलित किए बिना, तीव्र बाणों को देख भीत हुए बिना,

वदलक कुदियक वरुस बग्गमुलु । पदिलंबुगा बट्टि पऱपु रथ्यमुल;
मातलि! हयमुल मनसु नीवॆऱुगु; । दाततरथवेग मति विचित्रमुग
सारथ्यमॊनर्परिपु; सकलंबु नीवु । नेरनियदि लेदु; नीकेमि चॆप्प ?"
ननवुडु नपसव्यमगुत्रोव नात । डनिमिषारातिपै नरदंबु वऱप
लोककंटकुडु त्रिलोक भीकरुडु । भूकंपमॆसग नद्भुतशितास्त्रमुलु
रथमुपै गप्पि सारथि जिक्कु वऱिचि । रथवाहमुल नॊंचि रौद्रंबु मिंचि
कांडमॊक्कट विल्लु खंडिचि पॆक्कु । कांडंबुलेसि राघवुनि नॊंप्पिचॆं;
नॊंप्पिप नॊंचिच मनोवीथि नलुक । मुप्पिरिगॊन नुग्रमूर्तियै कडगि
७६२०

देवेंद्रुडर्थि बुत्तेंचिन विल्लु । वाविरि रामभूवरुडॆक्कुवॆट्टि
नॆऱसिन घनशिंजिनीनादमुल । बऱियलै ब्रह्मांडभांडंबु वगुल
दानवगर्वांधतमसंबुलणप । भानुभासुरमुलै परगु बाणमुलु
शतमुलु वेलु लक्षलु गोट्लु मऱियु । शतकोट्लुलर्बुदसंख्यलु गडचि
वासव प्रमुखगीर्वाणुलुप्पॊंग । नीसुन निंद्रारि नेसॆं; नेयुटयु
"गडु बापकर्मुंडु गष्टुडस्थिरुडु । वॆडमायमुल प्रोवु; वीनिलो नुनिकि

न भटककर, न छोड़कर, संकुचित हुए बिना लगाम को, क्रम से सावधानी से पकड़कर रथ्यों (अश्वों) को चलाओ । हे मातली ! हयों के मन को तुम जानते हो । आतत-रथ-वेग के साथ अतिविचित्र रूप से सारथ्य करो । ऐसा कुछ नहीं जो तुम नहीं जानते हो । तुम्हें क्या बताऊं ?" ऐसा कहने पर अपसव्य मार्ग से उसने अनिमिष-आराति (देवताओं के शत्रु-रावण) पर रथ चलाया । लोक-कंटक, त्रिलोक-भीकर (रावण) ने, भूकंप उत्पन्न हो ऐसा अद्भुत-शित-अस्त्र चलाकर, (राम के) रथ को आच्छादित कर, सारथी को उलझाकर, रथवाहों (अश्वों) को पीडित कर, रौद्र में अधिक बन, एक बाण से धनुष को खंडितकर, अनेक बाण चलाकर, राघव को पीडित किया । पीडित करने पर, पीडित होकर, मनोवीथि (मन) में क्रोध के त्रिगुणीभूत होने पर, उग्रमूर्ति बन, सप्रयत्न, ।। ७६२० ।। —देवेंद्र के प्रेम से भेजे धनुष का राम-भूवर ने संधान किया । (करने पर) उत्पन्न घन-शिंजनी-नादों से दरारें पड़कर ब्रह्मांड-भांड विदीर्ण हो गया, दानवगर्व के अंधतमस का दमन करने के लिए भानुभासुर (सूर्य के समान प्रकाशमान) हो विलसित बाणों को जो शत, सहस्र, लाख, करोड़ और शतकोटि, अर्बुद-संख्याओं को पारकर चुके थे, वासव आदि गीर्वाणों के फूलने पर, ईर्ष्या से इंद्रारि पर चलाए । चलाने पर, यह सोचकर कि 'यह अधिक पापकर्म वाला है, क्रूर है, अस्थिर है, वक्र मायाओं की राशि है,

धर्मप्रयुक्तमै दनरेंडि मनकु । धर्मंबुगा" दनि तलपोसि रोसि
पोवुपोलिक नुच्चि पोवुचुनुंडु । रावणु गौनि काडि रामु बाणम्मु
"लेंडलेदु; रावणुंडिलगूलुनिक; । नडलकुंडिटमीद" ननि मुदंबोदव
धरणिकि सुरलकु धरणिनंदनकु । बौरि बौरि नेऱ्ऱिगिप बोवुचंदमुन
७६३०
नौक कौन्नि धरणिकि नौक कौन्नि दिविकि । नौक कौन्नि लंककु
परुवडि बोवु
बावकोग्र प्रभाभासमानमुलु । रावणु गौनि काडि रामुबाणमुलु
नेऱ्ऱसि यित्तेंऱ्ऱगुन निबिडंबुलगुचु । नऱ्ऱिमुऱ्ऱि जडिगौन्न यंपवानलकु
देरलक मरलक दिविजारि दिविरि । धरणीशु नुरुशरोत्करमुल नौंचे;
घनबाहु विक्रमक्रम कलापमुल । बेनगिरिभंगि नभेद्यविक्रमुलु
समसत्त्व समवेग समबाणविभव । समसमरारंभ चतुरुलै कदिसि;
बलमुल नेर्पुल बाहुगर्वमुल । दुलदूगि यिद्दरु दुरमुलोपलनु
नेऱ्ऱसिन किनुकलु निंडि यौंडौंड । चेंऱ्ऱविडि पोराडु सिंगंबुलनग
नेडहोरात्रंबुलेपु दीपिंप । रूढि बोराडिरारूढ विक्रमुलु;
अत्तऱ्ऱि रावणुनरदंबु मीद । नेंत्तुरु वर्षिंचे निल्चि मेघमुलु ७६४०

इस (के शरीर) में रहजाना धर्मप्रयुक्त हो शोभित होने वाले हमारे लिए धर्म (उचित) नहीं है' घृणा कर, चले जाने के समान, रावण के शरीर में घुसकर, राम के बाण पार निकल जाते। (ऐसे निकल जाते) मानों यह कह कि "अब देर नहीं है, अब रावण धरा पर गिर जाएगा, अब आगे भीत मत बनो" धरणी को, सुरों को, धरणीनंदना (सीता) को पुनः पुनः बताने जारहे हों ।। ७६३० ।।

—(इस प्रकार) राम के पावक-उग्र-प्रभा-भासमान बाण रावण के आर-पार हो कुछ धरणी में, कुछ दिवि को, और कुछ लंका को शीघ्रता से निकल जाते। इस प्रकार घने बनकर, शीघ्रता से मूसलधार बाण-वर्षा से घिरकर, क्षुब्ध न बनकर, पीछे न लौटकर, दिविजारि ने लगकर धरणीश को उरु-शरोत्करों (प्रचंड बाणों) से पीड़ित किया। इस प्रकार अभेदविक्रम वाले (राम-रावण) घन-बाहु-विक्रम-क्रम-कलाप से जूझकर, समसत्त्व, समवेग, सम-बाण-विभव, सम-समरारंभ-चतुर हो लड़ते रहे। बल, चातुर्य, बाहुगर्व में सम बन दोनों आरूढ-विक्रम वाले युद्ध में अधिक क्रोध से पूर्ण हो, सर्वत्र मानों क़ैद से मुक्त सिंह हों, ऐसा उत्कर्ष के दीप्त होने पर, सात अहोरात्र (दिन रात) स्थिरता से लड़ते रहे। उस अवसर पर, खड़े रहकर मेघों ने रावण के रथ पर रक्त की वर्षा की ।। ७६४० ।।

घनरथाश्वमुल तोकल निप्पुलुरिलेॅ; । निनरुचिच्छायलनेकंबुलय्येॅ;
"निलुववु, चच्चेॅदु नेडु नी" वनुचु । बलिकेॅ रावणु जूचि बलिसि भूतमुलु;
"गेॅलिचेॅदु राघवक्षितिप! नी' वनुचु । वलनोॅप्प नाकाशवाणि भाषिंचेॅ;
दनकैन दुर्निमित्तमुलट्टु चूचि । यनिमिषारातियु नास वोविडिचि
धृतिपेॅंपु दीपिंप दिविरि काकुत्स्थु । नतिशातशरमुल नडरि नोॅप्पिंचि
करवालमुलु महागदलु शूलमुलु । बरिघलु शक्तुलु ब्रासमुल् वैचेॅ;
वैचिन वानिपैं वज्रसन्निभमु । लै चंडकालानलाकृतुलैन
सांद्रार्धचंद्रास्त्रचय मेसि राम । चंद्रुंडु नडुमन चक्कु गाविंचेॅ;
ना रावणुंडप्पत्युदग्रतनु । घोर नाराचमुल् गुरियिंचें मरियु;
ज्ञलमुन राघवेश्वरुडुनु वानि । नलि नर्धचंद्र बाणमुलेसि त्रुंचेॅ; ७६५०
नारीति निरुवुरु नन्योन्यसमर । धीरुलै जयकांक्ष देॅगि पोरुचुंड
समरंबुलो नद्रिचर निशाचरुलु । दमतम युद्धसाधनमुलु गोॅनुचु
रणविचक्षणुलैन रामरावणुल । रणकेळि गनुगोॅंचु रणकेळि मरचि
परुवडि जित्ररूपंबुलो यनग । नरुदंदि चूडंग नद्दशाननुडु

—घन-रथाश्वों की पूँछों से अंगारे झर उठे, इन-रुचि (सूर्य-प्रकाश) की अनेक छायाएँ हुईं। भूतों ने बली बनकर रावण को देखकर कहा— "बच नहीं सकोगे, आज तुम मर जाओगे।" आकाशवाणी ने प्रेम से कहा— "हे राघव-क्षितिप (-राजा)! तुम जीतोगे।" अपने लिए हुए दुर्निमित्तों (अपशकुनों) को उधर देख, अनिमिष-आराति ने भी आशा छोड़कर, धृति के आधिक्य के दीप्त होने पर, सप्रयत्न काकुत्स्थ को अतिशात शरों से विजृंभित हो सताया। करवाल, महागदाएँ, शूल, परिघाएँ, शक्तियाँ, प्रास (आदि) फेंके। फेंकने पर उन्हें वज्र-सन्निभ और चंडकालानल आकृतियों वाले सांद्र-अर्द्धचंद्र-अस्त्र-चय चलाकर, रामचंद्र ने बीच में ही चूर कर दिया। उस रावण ने तब अति-उदग्रता से घोर-नाराच बरसाए और हठ से राघवेश्वर ने उन्हें क्रम से अर्द्धचंद्र बाण चलाकर खंडित कर दिया ॥ ७६५० ॥

इस प्रकार दोनों के अन्योन्य-समर में धीर बन जयकांक्षा से लगकर युद्ध करते समय, समर (भूमि) में अद्रिचर (और) निशाचर अपने-अपने युद्ध-साधनों को (हाथ में) लेकर, रण-विचक्षण राम-रावणों की रणकेलि को देखते हुए (स्वयं) रणकेलि को भूलकर, पुनः पुनः आश्चर्य से ऐसे दिखाई पड़ रहे थे मानों चित्र रूप थे। वह दशानन अपनी मृत्यु को

तन चावु निक्कंबु दानेरिंगियुनु । गिनिसि रामुडु दन गेलुपेरिंगियुनु
नैंतयु गडकतो निरुवुरु ज्ञलमु । लंतकंतकु नेक्कुडै पोरुतड्रिनि
गनलि कालानलकल्पुडै रोष । मुन गन्नुगवल निप्पुकलुप्पतिलग
निंद्रारि रथकेतुविल गूल्चे राम । चंद्रुंडु निशितार्धचंद्रबाणमुन;
ना रावणुंडुनु नधिकरोषमुन । घोर बाणमुल नेक्कोनि रथाश्वमुल
मातलि नेयु ना मार्गण निहतु । लातताबुज नाळहतुल चंदमुन ७६६०
ना राघवेंद्रुनि ना तुरंगमुल । सारथि नोंप्पिप जालकयुंड
हासंबुलुनु नट्टहासमुल् सेलग । वासिग गपुलु रावणुनि मार्कोनिन
दरुचरसेनपै दनमाय मेंड्रसि । सुरकंटकुडु महाशुगवृष्टि गुरिसे;
गुरिसिन दद्बाणकोटुलचेत । दरुचरुल् जडिसि; रत्तड्रि रामविभुडु
सारथि रथ रथ्यसहितुगा दैत्यु । भूरिमार्गणमुल बोंदिवि नोंप्पिप
दशरथसुतुनिपै दशकंधरुंडु । विशिख जालंबुल वृष्टिगा नपुडु
कुरिसिन गनुगोनि घोर बाणमुल । नरुदुगा संधिंचि यमरुलु वोगड
नतनि नाकाशंबु नवनीतलंबु । नतिरयंबुन रामुडम्मुल गप्पे;
बगलेल्ल नम्मुल पंदिरि नीड । नोंगि रात्रि शरदीप्ति नुडुगक युंडि

स्वयं तथ्य मान कर, क्रुद्ध राम अपनी विजय को जानकर, अत्यधिक प्रयत्न से दोनों के अधिकाधिक हठ के साथ लड़ते समय, क्रुद्ध हो कालानलकल्प बन, रोष के कारण नेत्रद्वय में चिनगारियों के उत्पन्न होने पर रामचंद्र ने निशित-अर्द्धचंद्र बाण से इंद्रारि के रथ के केतन को धरा पर गिरा दिया । वह रावण भी अधिक रोष से घोर बाणों का संधान कर, रथ के अश्वों तथा मातलि पर (बाण) चलाने लगा । वे मार्गण-निहतियाँ (बाण-प्रहार) आतत-अंबुज-नाल-हतियों (-प्रहारों) के समान होकर, ॥ ७६६० ॥

—राघवेंद्र के तुरंगों (तथा) सारथी को पीड़ित न कर सके । हास और अट्टहास के विजृंभित होने पर शोभा से कपियों ने रावण का सामना किया तो तरुचर सेना पर अपनी माया से दीप्त होकर सुरकंटक (रावण) ने महा-आशुग-वृष्टि की । बरसाने पर तद्बाण-कोटियों से तरुचर भीत हुए । उस अवसर पर रामविभु ने सारथी-रथ-रथ्यों के साथ दैत्य को भूरि-मार्गणों से घेर कर पीड़ित किया । (तब) दशरथसुत पर दशकंधर ने विशिख-जालों की वृष्टि की । तब (उसे) देखकर घोर-बाणों का अनुपम रूप से संधान कर, अमरों की प्रशंसा करने पर, उसके (रावण के) आकाश और अवनीतल को अतिशीघ्र राम ने बाणों से ढँक दिया । सारा दिन बाणों के वितान की छाया में, रात को शरदीप्ति के अनारत

तनरु महेंद्रमंदरमहीधरमु । लौनरु धैर्यंबुन नौप्पुचंदमुन ७६७०
नलि दिरंबै निल्चि नभमुतो नभमु । जलधितो जलधियु सरि बोरु करणि
"रामरावणुल संग्रामंबुतोड । रामरावणुल संग्रमंबे पोलु"
ननुटकु दगि महोदग्रकोपमुलु । दनरार निरुवुरु दर्मकिंचि पोर
जलद-गर्जित-धनुर्ज्याघोषमुलनु । गलहनिष्ठुर-शर-घट्टनध्वनुल
जितवर्मसमरोग्रसिहनादमुल । जतुररथाश्वहेषाविरावमुल
नुदधुलु घूर्णिल्लॆ; नुल्कलु डुल्लॆ; । द्रिदशुलुप्पोंगिरिः दिक्कुलल्लाडॆ;
बेंगडॆ भूतंबुलु; पृथिवि गंपिचॆ; । दिगिभंबुलूटाडॆ; दिरिगॆ लोकमुलु
नगमुलु वडकॆ; बन्नगभर्त दलकॆ; । नगणित प्रौढि निट्लरि़मि पोराडि
कडकलु विडिचि युग्रतलुड़्गि कौंत । दडविद्दरुनु बाहुदर्पमुल् सडलि
घनबाणसंधानगतुलुज्ज्रगिंचि । कनुगौनुचुंडिरि कलय नौंडोरुल; ७६८०
देमलि पैपयिनि फूत्कृतुलु नार्पुलुनु । जॆमटल वरदलु जिरुतहुंकृतुलु
नलयिकयुनु घटिकार्धान देरि । मलुगनि व्रलमुलु मऱियु ब्रेरेप

रहकर, शोभित महेंद्र और मंदर महीधरों के धैर्य की शोभा के समान, ।। ७६७० ।।

—स्थिर हो खड़े आकाश के साथ आकाश, जलधि के साथ जलधि के जूझने की तरह, 'राम-रावण के संग्राम के साथ राम रावण का संग्राम ही तुलनीय है'[1] कहने योग्य महोदग्र क्रोध के साथ दोनों के औत्सुक्य के साथ लड़ने पर, जलद-गर्जन सम धनुर्ज्याघोष, कलह-निष्ठुर-शर-घट्टन की ध्वनियाँ, जितवर्म-समर-उग्र सिंहनाद, चतुर-रथाश्व-हेषाविराव (हिनहिनाहट की ध्वनि) के कारण उदधियाँ घूर्णित हुईं, उल्काएँ टूट गिरीं, त्रिदश फूल उठे, दिशाएँ विकंपित हुईं, भूत भीत हुए, पृथिवी कंपित हुई, दिगिभ चकराने लगे, लोक घूम उठे, नग कंपित हुए, पन्नग-भर्ता (आदिशेष) क्षुब्ध हुआ। इस प्रकार अगणित प्रौढ़ता के साथ लड़-लड़कर, साहस छोड़, उग्रता छोड़, थोड़ी देर दोनों बाहुदर्प के ढीले पड़ जाने पर, घन-बाण-संधान-गतियों को छोड़कर, एक दूसरे को निहारते रहे ।। ७६८० ।।

—फुरसत पाकर (थोड़ी देर बाद) बाहरी फूत्कार, सिंहनाद, श्रमजल की बाढ़, अल्प हुंकार, थकान (आदि) से अर्द्ध-घटिका के समय में (फिर)

---

[1] रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव

नत्युग्रनिग्रह व्यग्रुलै कदिसि । रत्यंत कालकालाकृति नप्पु;

श्रीरामुडु रावणुनि करशिरंबुल देगनेयुट

डलवु धैर्यंबुनु नलुक दीपिंप । ब्रळयकालमुनाटि फालाक्षुपगिदि
घनशातकर्तरी क्रकच भल्लंबु । निनवंशवल्लभुंडेसग संधिचि
'यरुदरु' दन द्रुंचेनद्दशाननुनि । शिरमुलु पदियुनु जेतुलिवंदियु;
'द्रुंचुट बोंकोको! त्रुंचिति! ' ननुचु । द्रुंचिन रामुडद्‌भुतमंदि चूड
गरवाल मुसल मुद्‌गर भिंडिवाल । शरचाप केयूर चयमुल दनरु
करमुलिवंदियुनु घनकिरीटमुल । शिरमुलु पदियुनु जेंच्चेर मोलचें;
मोलचिन गोपिंचि मोगि द्रुंचे मरियु । दललु जेतुलु बेंचि दशरथात्मजुडु
७६९०

तललुद्धविडि द्रुंचु तरि ग्रिंद मोलचु । दलल किरीटमुल् तद्‌बाणततुलु
दाकि म्रोयुट चेंवि दाकक मुन्न । ताकु नत्तललनुदग्रहासमुलु;
तरमिडि त्रेंव्विन तललोलि मोलव । बरमेष्ठिचे दोल्लि पडयुचो वरमु
गलकरंबुलतोड गनुकनि मोलव । बलियुडे यीतडु वडसेनो यनग

स्वस्थ होकर, कम न होने वाले हठ के और अधिक प्रेरित करने पर अत्युग्र-निग्रह में व्यग्र हो, अत्यंत-काल-कालाकृति से भिड़ गए। तब,

श्रीराम का रावण के कर-शिर खंडित कर डालना

—सामर्थ्य, धैर्य और क्रोध के दीप्त होने पर, प्रलयकाल के फालाक्ष (शिव) के समान घन-शात-कर्तरी-क्रकच-भल्ल का इनवंश-वल्लभ ने सुघड़ता से संधान कर, 'अनुपम अनुपन' कहने पर उस दशानन के दस सिर, बीस हाथ काट डाले। काट डालने पर राम के यह कहते कि 'काट तो डाला था। क्या काटना झूट था ?' चकित हो देखते रहने पर, करवाल, मुसल, मुद्‌गर, भिंडिवाल, शर, चाप, केयूर-चय (-समूह) से शोभित बीसों कर और घन-किरीटों वाले सिर झट से उग आए। उग आने पर क्रुद्ध हो फिर विजृंभित हो दशरथात्मज ने सिर और हाथ काट डाले ॥ ७६९० ॥

वेग से सिर काटते समय नीचे से उग आने वाले सिरों के किरीटों के तद्‌बाणततियों से लगकर मुखरित होना कानों में आने से पहले ही उन सिरों के उदग्रहास कानों में पड़ता। क्रम से काट डाले गये सिरों के क्रम से उग आने पर, पूर्व में परमेष्ठी (ब्रह्मा) से प्राप्त वर के कारण कोलाहल के साथ उग आने पर, ऐसा लगता कि बली हो इसने (पुनः सिर) प्राप्त

दल लोलि मौलतेर दडव गुत्तुकल । नलि गाडि रामु बाणमुलुंडे नोलि;
मौगि द्रेंचु तललु नम्मुलतोन मीदि । कॅगय द्रोचुचु दिविकॅगयु नत्तललु
दोंतुल कुत्तुकल् द्रुंचुनस्त्रमुलु । नेंतयु रम्यमै येंसगॅ जूपरकु
फलित सौरभ राम बाणोत्पलमुल । गलय रावण शिरःकमलसंततुलु
रमणमै रक्त धारासूत्रततुल । ग्रममौप्प नेत्तुलु गट्टि वेल्पुलकु
बौलुपोंद नाकाश पुष्पलाविकुडु । सोलवक पलुमरु जूपुचंदमुन; ७७००

दनुजाधिपति गौंतदडवु चूड्कुलकु । निनकुलाधीश्वरुंडेयुचो म्रव्रियु
द्रेंव्वि रालेंडु नेंड त्रेंव्वनि तललु । ग्रुव्वनिपेरुलै कौमरौप्प नप्पु
डनिमिषावलि येल्ल नच्चेरुवंदि । कनुगोंन नद्दशकंधरुंडमरें;
ललि शिरोमालिकालंकृतुंडैन । प्रलयावसरघोर भैरवु पगिदि;
ना वेळ रघुरामुडाग्रहव्यग्र । भावुडै रणबलप्रौढि दीपिप
लक्षिचि दृढमुष्टि लाघवगतुल । दक्षुडै रावणु तललु बाहुवुलु
दैंचु ग्रम्मरु मौलतेंचु वेंडियुनु । द्रेंचु ग्रम्मरु मौलतेंचु; निब्भंगि

किए हों। सिरों के क्रम से उग आने पर कंठों में क्रम से राम के बाण गड़े हुए थे। क्रम से काट डाले गए सिरों को बाणों के ऊपर उठा देते समय, आकाश में उठने वाले वे सिर, कंठों की पंक्तियों को काट डालने वाले अस्त्र, ये देखने वालों को अत्यंत रम्य दीख रहे थे, मानों फलित-सौरभ से युक्त राम-बाण रूपी उत्पलों के साथ रावण के शिर रूपी कमल-संततियाँ (समूह) रमणीय होकर रक्तधारा रूपी सूत्र-ततियों के साथ क्रम की शोभा से युक्त थीं। इनकी राशियाँ बनाकर शोभा से आकाश रूपी पुष्प-लाविक मानों न थककर कई बार देवताओं को दिखा रहा हो।॥ ७७०० ॥

—कुछ देर तक दनुजाधिपति ऐसा दिखाई पड़ा। इनकुलेश्वर के बाण चलाते रहने पर कट गिरनेवाले अनंत सिरों के, न गूँथी मालाओं के सम (हार में न गूंथे फूलों के समान) मनोहर होने पर, समस्त देवता समूह के आश्चर्यचकित हो देखने पर, तब दशकंधर शिरोमालिकालंकृत (मुंडमाल से अलंकृत) प्रलय के अवसर के घोर भैरव की भाँति शोभित हुआ। उस समय रघुराम आग्रह (क्रोध) की व्यग्रता से युक्त भाव वाला होकर, रणबल-प्रौढ़ता के दीप्त होने पर, लक्ष्य कर (निशाना बाँधकर) दृढ़ मुष्टि से लाघव गतियों से दक्ष (समर्थ) हो, रावण के सिर (तथा) बाहु काट देते, (वे) फिर उग आते, फिर काट देते, (वे) फिर

गरमुलु शिरमुलु गाकुत्स्थतिलकु । शरपरंपरलचे जटुलवेगमुन
दॆगुटलु मॊलुचुटल् दॆलियराकुंडॆ । नगचरावलिकि नय्यनिमिषावलिकि,
नालोन रघुरामुनम्मुल द्रॆस्सि । रालुचुनुन्न या रावणु तलल् ७७१०

आवुलिपवु; नॊव्व; वलसमुल् गावु; । लावु दूलवु; निजोल्लासमुल्
सॆडवु;
गाजुवारवु; मिडुकवु; रॆप्पवेय; । वोजदप्पवु; वैरमुडुगवॆंतयुनु;
बगयॊंडॆ बोममुडिपाटॊंडॆ निडु । नगवॊंडॆ नापॊंडॆ नलुवुचूपॊंडॆ
बलुकॊंडॆ मॆच्चॊंडॆ बॆवडि बोरु । नलवॊंडॆ धृतियॊंडॆ हंकृतियॊंडॆ
गलुगनि तललेदु घनरणभूमि । तलमुन बडियुन्न तललो नॆंदु;
नेनग वेगर्वमेरोषदृष्टि । यानग वागर्वमारोषदृष्टि
मॊलतॆंचु तललंदु मॊगि नुर्वि गूलु । तललंदु सममुलै तलकॊनुचुंड
दानवाधीश्वरु तललु बाहुवुलु । भूनभॊंतरमुलद्भुतमुगा निंडॆ;
निंडुट गनुगॊनि निंड गोपिंचि । वॆंडियु ना रामविभुडेयुचुंडॆ;
द्रॆंचिन करमुलु द्रॆव्विन तललु । द्रुंचिन करमुलु दुनिगिन तललु
७७२०

उग आते। इस प्रकार करों (और) सिरों का काकुत्स्थतिलक की शर परंपराओं से चटुलवेग से कटना और उग आना अगचरावली तथा अनिमिषावली की समझ में नहीं आ रहा था। इतने में रघुराम के बाणों से कटकर, गिरनेवाले रावण के वे सिर, ।। ७७१० ।।

—न जंभाते हैं, न पीड़ित होते हैं, न थकते हैं, न सामर्थ्य खोते हैं, न निज-उल्लास से हटते हैं, न कांतिहीन होते हैं, न परितप्त होते हैं, न पलक मारते हैं, न उत्साह खोते हैं, (और) वैर को बिलकुल नहीं तजते हैं। घन-रणभूमि-स्थल में पड़े हुए सिरों में ऐसा कोई सिर नहीं था जिसमें वैर अथवा तनी हुई भौंहें अथवा पूर्णहास्य अथवा सिंहनाद अथवा अनुग्रहपूर्ण दृष्टि अथवा वाणी अथवा प्रशंसा अथवा युद्ध की सुघड़ता अथवा धृति अथवा हुंकृति न हो। जो हास, जो गर्व, जो रोषदृष्टि उदित होनेवाले सिरों पर थी, वही हास, वही गर्व, वही रोषदृष्टि क्रम से गिरनेवाले सिरों पर भी समरूप लक्षित हो रही थी। (ऐसे समय) दानवाधीश्वर के सिर और बाहु अद्‌भुत रूप से भू-नभोंतर में भर गए। (इस प्रकार) भर जाते देख अधिक क्रुद्ध हो वह रामविभु और भी (बाण) चलाता रहा। कटे हाथ, कटे सिर (फिर) कटे हाथ, कटे सिर, ।। ७७२० ।।

बलुवडि पुट्टिन बाहुदंडमुल । नलमि यप्पुडु वट्टि यद्दशाननुडु
गणुतिपरानि वेगमु लावु मेऱसि । रणरोषदृष्टिमै रामुपै वैचे
नऱिमुऱि दशकंठुडंदंद वैव । बऱतेंचि शिरमुलु बाहुदंडमुलु
गुवलयहितवृत्ति कुशलुडै कळल । नविरलाकृति जगदानंदुडगुचु
गमनीय वानर ग्रह मध्यवीथि । रमणमै नोप्पेंडु रघुरामचंद्रु
गनि चंद्रुडनुबुद्धि गमलषंडमुलु । घनराहुकोट्टुल गडकतो गूडि
यडरि यन्योन्यसहायमुल् वडसि । वडि बेचि ताकु कैवडि दाकुचुंडे;
शिरमुलु गरमुलु जेलगि येतेंचु । वरुसलु चूडंग वर्णिप नोप्पे;
श्रीराम-विजयलक्ष्मी विवाहमुन । कारणदेवतलर्थि शोभिल्लु
बल्लवरत्न दर्पणतोरणमुलु । तेल्लमै कट्टिन तेऱगु दीपिप; ७७३०

दरिगेडु तललु नुद्दाम बाहुवुलु । गुरिसेडि शरमुलु घूककाकादि
खगमुलु जगमुलाकंपिप बेचि । गगनमंडलमेल्ल गलगोन निंडे
गुरुतरंबै जमुकोलुवुकूटमुन । गरमुग्रमगु मेलुकट्लन बरगि;

—(और) बरजोरी उदित बाहुदंडों को दबाकर पकड़, उस दशानन ने अगणित वेग (तथा) सामर्थ्य से प्रकाशित हो, रणरोषदृष्टि से राम पर (उन करों तथा सिरों को) फेंका। जल्दबाजी से दशकंठ के सर्वत्र फेंकने पर, आए हुए सिर (और) बाहुदंड झट विजृंभित हो ऐसे लग रहे थे मानों कुवलय-हितवृत्ति में कुशल हो, (समस्त) कलाओं से अविरल-आकृति से जगदानन्दकर होते हुए, कमनीय-वानर-ग्रह-वीथि के मध्य रमणीयता से विराजमान रघुराम-चंद्र को देख, चंद्र ही समझकर कमल-षंड (रावण के मुख), घन-राहु-कोटियाँ (रावण के बाहु)[1] सप्रयत्न एकत्र होकर, अन्योन्य-सहाय्य प्राप्त कर, आक्रमण कर रहे हों। सिरों और करों के विजृंभित हो आने का क्रम देखने में वर्णनीय हो विलसित हुआ। वह क्रम ऐसा लगा मानों श्रीराम और विजयलक्ष्मी के विवाह के अवसर पर कारण-देवताओं के प्रेम के शोभित होने पर पल्लव-रत्न तथा दर्पण-तोरणों को स्वच्छता से बांधने का विधान हो।॥ ७७३० ॥

—कटते हुए सिर, उद्दाम बाहुओं से बरसने वाले शर, घूक (उल्लू), काक आदि खग जगों को आकंपित करते हुए समस्त गगन मंडल में शोभायमान रूप से ऐसे भर गए मानों गुरुतर बनी यम की सभा का अधिक उग्र बन

---

[1] केतु और राहु के एक साथ

यिदि दिव, मिदि रात्रि, यिदि संध्य यनुट । त्रिदशुलकैननु देलियराकुंडे;

रावणुनि करशिरमुलु मरल मोलचुटकै श्रीरामुडु चिंतिचुट

प्रथित बाणासन बाणदीप्तुलनु । प्रथनंबुलो बट्टपगलयि तोचें;
नप्पुडु रघुरामुडादैत्यु गैलुचु । चौप्पितयैननु जौप्पडकुनिकि
गनुगौनि शरसंधिगतुलु पालिचि । तनलोन बलुमारु दलपोय दौडगे;
"देरलक शिरमुलु त्रेंचि वेसरिति, । दौरकौनि् करमुलु द्रुंचि वेसरिति;
नेसगु मर्मंबुल नेसि वेसरिति; । विसुवक पलुमारु व्रेसि वेसरिति;
नेंभंगि देगटारडी दुष्ट चित्तु; । डेंभंगि देगटार्तु निद्दुरात्मकुनि?" ७७४०
ननि यनि तलपोसि यलयुट सूचि । जननाथु तो विभीषणुर्डथि वलिकें;
"वनजात-जातुनि वरमुन जेसि । यिनकुलाधीश्वर ! यीतनि नाभि
नमृतमुन्नदि कुंडलाकृति गलिगि । यमृतत्त्वमूलमै यदि चंपनीदु;
दानवुतललु नुद्दंडबाहुवुलु । मानक नीवेंन्नि मारुलेसिननु

बन (फैला हुआ) वितान हो । त्रिदशों को भी यह समझ में नहीं आ रहा था कि यह दिव (दिन) है, यह रात है अथवा यह संध्या है ।

राबण के करशिरों के पुनः उग आने पर श्रीराम का चिंतित होना

प्रथित (प्रख्यात)-बाणासन के बाणों की दीप्तियों के कारण प्रथन (युद्धभूमि) में दिन-दहाड़े के समान लगा । तब रघुराम उस दैत्य को जीतने का किंचित् भी उपाय न सूझने के कारण, वेखकर, शर-संधि-गतियों (शर-संधान करने के विधान) से विरत होकर, अपने आप में कई बार सोचने लगा— "अविराम गति से सिर काट कर तंग आ गया, लगकर कर काट कर ऊब गया, शोभित मर्मों (स्थानों) पर (बाण) चलाकर ऊब गया, न थककर कई बार (बाण) चलाकर ऊब गया हूँ । किसी भी प्रकार से यह दुष्टचित्त वाला मरता नहीं है । इस दुरात्मा को किस प्रकार मारूँ ?" ।। ७७४० ।।

—ऐसा कह सोचकर, (राम के) थक जाते देख जननाथ से विभीषण ने चाहकर कहा— "हे इनकुलाधीश्वर ! वनजात-जात (ब्रह्मा) के वर के कारण से, इसकी नाभि में अमृत है । कुंडलाकृति से युक्त, अमृतत्त्व का मूल है वह, जो इसे मरने नहीं देता । न छोड़ तुम कितने ही बार बाण चलाओ (फिर भी) दानव के सिर तथा उद्दंड बाहु उग आते रहेंगे, (वे)

मौलतेंचुचुंडु; नुन्मूलमुल् गावु; । तलकडु दीन नद्दनुजवल्लभुडु;
तरिमि यिम्मेयि नीवु तललु बाहुवुल । नरुकुचुन्नाडवु नरनाथ! कडगि;
तुदियेदि दीनिकि ? दोरकोनि नीवु । चदुरोप्प नाग्नेयशरमेयुमिक;
ना नाभिविवरमूलामृतंबिगुरु; । दान दानवपति दानु लोदारु;
निगिडेडु भवदीय निष्ठुरास्त्रमुल । देगि मरि चेतुलु द्रिदशारितललु
दुरमुलोपल नूटतोम्मिमदिमारु । लरुदुगा मौलतेंचु नंतट बोलियु"
७७५०

ननवुडु विनि लक्ष्मणाग्रजुंडतनि । विनय नयज्ञान विश्वास भक्ति
भावशुद्धिकि नात्म बलुमारु मेच्चि । देवतलुप्पोंग दिविजारि ग्रुंग
ग्रुंगनि धर्मंबु गोनलु सागंग । गंगादि नदुलेल्ल गलक देरंग
देरनि चित्तंबु देरि राघवुडु । घोरंबुगा धनुर्गुणमु म्रोयिंचि
कनलेडि दीर्घनिर्घातमुल् गुरियु । ननलास्त्रमरिवोसि यलवोप्प नेसि
या रावणुनि नाभियंदुन्न यमृत । मारूढ शरवह्नि काहुति सेसि:
मरि नूटतोम्मिदि मारुलु द्रुंचे । दरिगोनि रावणु तललु बाहुवुलु;
निरुपमास्त्रंबुन नृपकुलाधिपुडु । परिकिंप मरि नूटपदियवमारु
ओक्कशिरंबुनु नोंगि गरद्वयमु । दक्कंग दक्किन तललु बाहुवुलु

उन्मीलित नहीं होंगे। इससे यह दनुज-वल्लभ विचलित नहीं होता। हे नरनाथ! इस प्रकार तुम सप्रयत्न सिर (और) बाहु काट डाल रहे हो। इसका अंत कहाँ? अब लगकर तुम ढंग से आग्नेय शर चलाओ। (उससे) उस नाभि-विवर के मूल का अमृत सूख जाएगा। उससे दानवपति स्वयं परास्त हो जाएगा। विजृंभित आपके निष्ठुर अस्त्रों से त्रिदशारि के सिर और हाथ युद्ध में एकसौ नौ बार कटकर अनुपम रूप से उग आएंगे। तब वह मृत होगा।" ॥ ७७५० ॥

—ऐसा कहने पर सुनकर लक्ष्मणाग्रज ने उसके विनय-नय-ज्ञान-विश्वास-भक्ति (आदि) की भाव-शुद्धि के कारण आत्मा (मन) में कई बार सराह कर, चित्त में स्वस्थ बनकर घोर रूप से धनुष के गुण को निनादित किया जिससे देवता फूल उठें, दिविजारि दब जाए, न दबनेवाला धर्म अंकुरित हो जाए, गंगा आदि नदियाँ निथर जाएँ। प्रज्वलित दीर्घ निर्घातों को बरसनेवाले अनलास्त्र का संधान करके शोभा से चलाकर, उस रावण की नाभि में स्थित अमृत को आरूढ-शर-वह्नि की आहुति बनाकर, फिर रावण के सिर (और) बाहु एकसौ नौ बार काट डाले। निरुपम-अस्त्र से नृपकुलाधिप ने, देखने पर, फिर एकसौ दसवें बार एक सिर और क्रम से कर द्वय के अतिरिक्त शेष सिर और बाहु काट डाले।

दॆगनेसॆ; नेसिन द्रिदशुलु सॆलगि । रगचरवरु लार्चिरंदंद पेर्चि; ७७६०
तललॊगि दॆगि रक्तधारलु धात्रि । नॊलुकग दिवि कुब्बि यॊप्पॆ रावणुडु
लोकमुलु गालिच यालोल कीलमुलु । पॆकॊनि मंडॆडि प्रळयाग्नि पगिदि;
दनुवुन घनरक्तधारलु निंड । दनुजेशु तनुवुपै दलयॊप्पॆ जूड
नरुणातपच्छायलडरु नस्ताद्रि । बरगॆडु भानुबिंबुंबु चंदमुन;
नप्पुडु रावणुंडा विभीषणुनि । दप्पक चूचि युदग्रुडै यलिगि
"यॆव्वरु नॆरुगनि यिट्टि ना मर्म । मिव्वसुधेशुनकॆऱिगिचॆ वीडु;
वीनि द्रुंचॆद" नंचु विपुलोग्रशक्ति । पूनि वैचुटयु नभोवीथिनुंडि
यऱिमुऱि निगुडि कालाग्नि चंदमुन । नॆऱमंट लुमियुचु नेतॆंचुचुंड
ना रामवल्लभुंडचलुडै घोर । नाराचमुल दानि नडुमने त्रुंचॆ;
जडिगॊनि रघुरामु शरवृष्टि पर्वि । युडुगकुंडुटयु नंदुंडराकुन्न ७७७०
वलनेदि राक्षसेश्वरु कोपवह्नि । पॊलुपऱ बॆडबासि पोवुचंदमुन
बोयॆ रावणु देहमुन नुन्नतेज । मायवसरमुन नद्भुतंबगुचु;

काट डालने पर त्रिदश ओर नगचरवरों ने विजृंभित हो सर्वत्र सिंहनाद किया। ।। ७७६० ।।

—क्रम से सिरों के कटकर रक्तधाराओं के धात्री पर गिरते समय दिवि तक फूलकर रावण, लोकों को जलाकर आलोल-कीलाओं से बढ़-बढ़कर बलने वाली प्रलय-अग्नि के समान (और) अरुण-आतप-छायाओं से प्रकाशित होकर अस्ताद्रि पर विराजमान भानुबिंब के समान, शोभित हुआ। तब रावण ने उस विभीषण को अवश्य देख उदग्र बन, क्रुद्ध हो (यह सोच कि) "मेरे मर्म को जिसे कोई नहीं जानता था, इसने इस वसुधेश को बताया। इसका संहार कर दूंगा", विपुल-उग्रशक्ति को धारण कर फेंका। (वह शक्ति) नभोवीथि से शीघ्रगति से तनकर, कालाग्नि के समान लाल ज्वालाओं को विकीर्ण करते, आती रही। राम-वल्लभ ने अचल बन घोर-नाराचों से उसे बीच में ही खंडित कर दिया। झड़ी बांधकर रघुराम की शरवृष्टि के बरसकर, न रुकने पर, वहाँ (रावण के शरीर में) न रह सककर, ।। ७७७० ।।

—शोभा खोकर, राक्षसेश्वर की कोप-वह्नि-शोभा खोकर छोड़ जाने के समान रावण की देह में स्थित तेज, उस अवसर पर अद्भुत रूप से निकल गया। सिर और हाथों के कट जाने पर दशकंठ, एक सिर और

दलल जेतुलु द्रैंवि दशकंठुडोक्क । तलयु जेदोयियै दर्पिंचि यपुडु
वीररसंपु बैन्वैल्लिचंदमुन । दोरमै तोरुगु नेत्तुट दोप्प दोगि
तडबड नेत्तुट दडिसि रणोर्वि । बडियुन्न तललुनु बाहुदंडमुलु
वानि जंचुल जिचु वरपक्षिगणमु । बूनि योक्कट जूचि भूनाथु जूचि,
जङ्गिंगोनि तनदैन सटलेल्ल बेरुक । गोपिंचि पैवडु घोराहिकरणि
मीसंबुलूचिन मिगुल गोपिंचि । शासिप गडगिन जमुनि चंदमुन
मेऱसि लोकमुलेल्ल मिग्रेडि रीति । नुङक कोपिंचि महोग्रुडै तोंटि
७७८०

यन्निचेतुल गल या सत्त्वमेल्ल । नुन्न चेतुल रेंट नुग्रमै तोप
नासुरवरुडट्टहासंबु सेसि । प्रास तोमर शूल परशु खड्गमुल
शरमुल सुरियल शक्तुल गदल । नुरुवडि व्रेसियु नुङक वैचियुनु
बोंडिचियु नडिचियु बोनीक रामु । नुडुगक नोंप्पिंचि युग्रुडै येचि
देवतल् भयमंद देंगि महारणमु । गाविंचुचुंडै नक्कजमैन कडिमि;
गडकयु लावुनु गर्वंबु मिगुल । नडरि धीरत बोरु नमरारि जूचि
मातलि भीतुडै मऱि रामु ननियें । "नी तडवेटिकि निनकुलाधीश!

हस्त-द्वय से दर्पित होकर तब वीररस के महान प्रवाह के समान, अधिकता से बहनेवाले रक्त में ऊभचूभ होकर, लड़खड़ाकर रक्त में भीगकर, रणोर्वी (रणभूमि) में पड़े हुए सिरों और बाहुदंडों को, उन्हें चंचुओं से चीर डालनेवाले वर-पक्षिगणों को ध्यान से देखकर, भूनाथ को देखकर, निरंतर अपने सभी केशों (अयाल) को नोचने पर, बंधनों से मुक्त हो गरजनेवाले सिंह की भाँति, शोभायमान अपनी समस्त दाढ़ों को उखाड़ने पर, क्रुद्ध हो आक्रमण करनेवाले घोर-अहि के समान, मूँछें खींचने पर अधिक क्रुद्ध हो, दंडित करनेवाले यम के समान दीप्त हो, समस्त लोकों को निगल जाने की रीति से क्रुद्ध हो, महोग्र हो, पूर्व में— ।। ७७८० ।।

—समस्त हाथों में स्थित सत्त्व के दो हाथों में ही उग्र हो दीखने पर, आसुर-वर ने अट्टहास कर, प्रास-तोमर-शूल-परशु-खड्गों से, शरों, कटारों, शक्तियों, गदाओं को झट से चलाकर, फेंककर, चुभोकर, दबाकर, राम को न जाने देकर, अनारत पीडित कर, उग्र बन विजृंभित हो, देवता भीत हो जाएं ऐसा आश्चर्यप्रद साहस से महारण करता रहा। साहस, सामर्थ्य, गर्व के अधिक विवर्द्धित होने पर, धैर्य से जूझनेवाले अमरारि को देखकर मातलि ने भीत हो फिर राम से कहा—"हे इनकुलाधीश!

तललु बाहुवुलु निद्दनुजाधिपतिकि । मोलचुनो! क्रम्मऱ मौलवक मुन्ने
यॆडपक ब्रह्मास्त्रमेसि यी नीचु । बडवैतु काक! दोर्बल शक्ति मॆऱसि''
यनवुडु विनि रामुडभिरामबलुडु । विनुत विक्रम भुजाविभव निर्भरुडु
७७९०
विदितमौ शस्त्रास्त्रवेदियु गान । ''निदि वेळ ब्रह्मास्त्रमेत्तंग'' ननुचु
भूदेवदेव तपोधनवेद । वैदिककर्म प्रवर्तनल् दलचि
तन प्रतापंबुनु दर्पंबु मॆऱसि । धनुवु म्रोयिंचुचु धरणि गंपिंप
गौशिककृतमैन क्रतुवेळकु दनकु । गौशिकुडिच्चिन गैकॊन्नयट्टि
यक्षयब्रह्मास्त्रडुप्पुम दलचि । दक्षत वेदमंत्रमुलुच्चरिंचि
तिरमुगा नरिवोसि तॆग निड दिगिचि । परग ब्रत्यालीढपादुडै निलिचि
देवेंद्रुडादिगा दिविजुलुप्पॊंग । देवारियुरमुपै दृष्टि संधिचि
येसॆ; नेयुटयु बॆल्लेचि या बाण । मासुरालोककीलाभीलमगुचु
वसुवुलु कॆलकुल वनजात-मित्र । वसुवुलग्रंबुन वासवादुलुनु
बिऱुद मुंदऱ महापृथुलमारुतमु । गऱुल नुज्ज्वलदिव्यकळलॆल्ल
वॆलुग ७८००

यह विलम्ब क्यों ? पता नहीं, कहीं इस दनुजाधिपति के फिर से सिर और बाहु उग आएँ। फिर से उग आने से पहले ही, न छोड़, दोर्बल-शक्ति से दीप्त होकर, ब्रह्मास्त्र चलाकर इस नीच को गिरा दो न।'' ऐसा कहने पर सुनकर राम अभिराम बल से युक्त, विनुत विक्रम-भुजा-विभव-निर्भर, ।। ७७९० ।।

—(तथा) विदित शस्त्रास्त्रवेदी होने के कारण यह सोच कि 'यह ब्रह्मास्त्र चलाने का समय है' भूदेव, देव, तपोधन (तथा) वेद, वैदिक-कर्म-कृत्यों का स्मरण कर, अपने प्रताप तथा दर्प से प्रकाशित हो, धनुष का टंकार करते हुए, धरणी को कंपित करते हुए, कौशिक-कृत क्रतु के समय कौशिक के देने पर ग्रहण किए गए अक्षय ब्रह्मास्त्र का तब स्मरण कर, दक्षता से वेदमंत्रों का उच्चारण कर स्थिरता से (अस्त्र का) संधान कर, पूरी-तरह से खींचकर, प्रत्यालीढ पाद वाला हो खड़े रहकर, देवेन्द्र आदि दिविजों के फूलने पर, देवारि के उर पर दृष्टि साध कर, चलाया। चलाने पर, अधिक विजृंभित हो वह बाण आसुरलोक को कीलाओं से आभील करते हुए, वसुओं को पार्श्वभाग में, वनजातमित्र (सूर्य) (तथा) वसुओं को अग्रभाग में, वासव आदियों को पृष्ठ भाग में, महापृथुल मारुत को आगे कर, पंखों में उज्ज्वल दिव्यकलाओं के प्रकाशित होने पर— ।। ७८०० ।।

सहजंबुलै पेर्चि संततामोघ । महितमै देदीप्यमानमै सकल
शाखामृगाभीष्ट सफलमै चतुर । लेखावलोकनालीढमै निगुडि
निलुवक विलयाभ्रनिर्घोष घोष । मुलु पर्व राक्षसमुख्युलु बेंदर
जयजय ध्वनुलतो ग्रदलग्रक्कदल । रयमुन रावणोरस्थलि गाडि

ब्रह्मास्त्रमुचे रावणुडु मडियुट

यय्यिंद्रयमवरुणादुलचेत । व्रय्यनि मर्ममुल् व्रच्चि रावणुनि
प्राणमुल् गोनि युच्चि पाऱि या दिव्य । बाणंबु वेस महीभागंबु गाडे;
"नी कूतु जेऱपट्टि नीचभावमुन । गैकोन दलचिन खलुनि प्राणमुलु
कैकोंटि नें" ननि कदिसि भूस्थलिकि । ब्राकटंबुग जेप्प बऱचेनो यनग
महि गाडि पऱतेंचि मगुडि राघवुनि । महित तूणीरमुन्मदवृत्ति जोच्चे;
नलि ब्रह्ममनुमनि नाटि चंपुटकु । गलिगिन दोषंबु गडतेर्चुकोनग
७८१०

नेचंदमुन नेंदु नितरंबु लेमि । चूचि राघवुमवु सोच्चेनो यनग
राघवास्त्राक्षतरक्तांबुधार । लोघंबुलै पर्व नोऱलुचु नंत
गुलिशधाराहति गुंभिनि गूलु । कुलशैलमुनु बोलि कूलॆ रावणुडु;

—सहज ही विजृंभित हो, सतत-अमोघ-महित हो, देदीप्यमान बन, सकल शाखामृगों के अभीष्ट को सफल करते हुए, चतुर लेखावलोकन-आलीढ़ होते हुए तनकर, न रुककर, विलय-अभ्र के निर्घोषों के व्याप्त होने पर, राक्षस-प्रमुखों के भीत होने पर, जय-जय-ध्वनियों से आकाश के विचलित हो जाने पर शीघ्रता से रावण के उरस्थल में गड़कर,

ब्रह्मास्त्र से रावण का मरना

—उस इंद्रयम वरुण आदियों से न बिधे मर्मों को बेधकर, रावण के प्राणों को लेकर, जाकर, वह दिव्य बाण झट महीभाग में गड़ गया । महि (भूमि) में गड़कर मानो निकट जाकर भूस्थली (भूमाता) को प्रकट रूप से यह कहने गया हो कि 'तुम्हारी पुत्री को बन्दी बनाकर नीच भाव ग्रहण करना चाहनेवाले खल के प्राण मैंने लिए हैं' और फिर वापिस लौटकर राघव के महित-तूणीर में उन्मद-वृत्ति से प्रविष्ट हुआ । (यह ऐसा था) मानों ब्रह्मा के पौत्र को मार डालने से प्राप्त दोष को दूर कर लेने का, ॥ ७८१० ॥

—किसी भी प्रकार से अन्य (उपाय) के न होने से राघव की आड़ में प्रविष्ट हुआ हो । राघव के अस्त्र के क्षतों (घावों) से रक्तांबुधाराओं के

ना दैत्यु भूरिदेहातिपातमुन । भूदेवि यप्पुडद्भुतमुगा ग्रुंगें;
ग्रुंगें शैलंबुलु; ग्रुंगें दिक्करुलु; । ग्रुंगें भुजंगंबु; ग्रुंगें गूर्मंबु;
दलकिरि सप्तपातालवल्लभुलु; । दलकिरि हतशेषदनुजपुंगवुलु;
गिरिचरुलार्चिरि; कीर्तिंचि रमर । वरुलु गिन्नरुलु दिग्वरुलु खचरुलु;
ना रघुरामुपैं नप्सरस्त्रीलु । बोरन गुरिसिरि पुष्पवर्षमुलु;
दिव्यदुंदुभुलुनु दिव्यकाहळुलु । दिव्यशंखंबुलु दिवि निंड म्रोसें;
शीतलपरिमळाश्लिष्टवायुवुलु । वीतेंचें; दिक्कुलु विमलंबुलय्यें; ७८२०
सुरमुनिखेचर शोकंबडंचि । परिकिंचि सकल भूभारंबु डिंचि
यभिमतजयशीलुडै पेंचि राम । विभुडंत दनचेति विल्लेक्कुडिंचि,
यानंदमयचित्तुडगुचु ना विल्लु । जानकीविभुडु लक्ष्मणु चेतिकिच्चें;
सकल वानरुलुनु सकलखेचरुलु । सकलदिक्पतुलुनु सकल भूपतुलु
सकलभूतंबुलु सकल देवतलु । सकल गंधर्वुलु सकलसन्मुनुलु
सकलपन्नगुलुनु सकल सिद्धुलुनु । सकललोकंबुलु सन्नुतुल् सेय
ननिमीन गर्वांधु नंधकासुरुनि । दुनुमाडि विलसिल्लु धूर्जटिवोलें
रामुडु लोकाभिरामुडै विजय । धामुडै नवसुधाधामुडै योप्पें;

ओघ (बाढ़) बन प्रवहित होने पर, तब कुलिश-धाराहति से कुंभिनी पर गिरनेवाले कुलशैल के समान रावण चिल्लाते हुए गिर गया। उस दैत्य के भूरिदेह के अतिपात से तब भूदेवी अद्भुत रूप से दब गई, शैल दब गए, दिक्करि दब गए, भुजंग (आदिशेष) दब गया, कूर्म दब गया, सप्त पातालों के वल्लभ (अधिपति) क्षुब्ध हुए, हतशेष-दनुजपुंगव क्षुब्ध हुए, गिरिचरों ने सिंहनाद किए, अमरवरों, किन्नरों, दिग्वरों, खेचरों ने कीर्तन किया (प्रशंसा की), उस रघुराम पर अप्सरा-स्त्रियों ने झड़ी बाँधकर पुष्पवर्षा की। दिव्यदुंदुभियाँ और दिव्यकाहल, दिव्यशंख आकाश भर में मुखरित हुए। शीतल-परिमल से आश्लिष्ट वायु वह उठी, अर्थात् रावण की मृत्यु से प्रकृति भी प्रसन्न हुई। दिशाएं विमल बनीं, ॥ ७८२० ॥

—सुर-मुनि-खेचरों के शोक का दमन कर, सकल भूभार को उतार कर, अभिमत (अभीष्ट) जयशील होकर, विजृंभित होकर, रामविभु ने तब अपने हाथ के धनुष की प्रत्यंचा ढीली कर, आनन्दमयचित्त वाला होता हुआ तब उस धनुष को जानकी-विभु ने लक्ष्मण के हाथ में दिया। सकल वानर और खेचर, सकल दिक्पति ओर सकल भूपति, सकल भूत, सकल देवता, सकल गंधर्व, सकल सन्मुनि, सकल पन्नग और सकल सिद्ध (पुरुष) और सकल लोकों के सन्नुतियाँ करते रहने पर, युद्धभूमि में

नंत विभीषणुंडधिकशोकमुन । संतापमंदुचु समरमध्यमुन
नलघुडै पडियुन्न यग्रजु जूचि । पलुमारु नेलुगेत्ति पलविप दोडगे;
७८३०

"नाहवोदग्र सुरासुर भयद । बाहुवुल् पक्षुलपालय्ये नेडु;
सुरुचिर मृदुशय्य सोंपोंदु मेनु । परुषसंगरभूमि बडियेने नेडु !
अहितांधकार बालार्क बिंबमुलु । महिगूलेने नेडु मणिकिरीटमुलु!
विनय विक्रमनय विख्यातुलंदु । निनु बोलरेव्वरु; नीयंतवाडु
कडपट नरयंग 'गष्टुंडु खलुडु । बेडिदुंड वी' डन बृथिवि बेर्पडिति;
तप्पुट तप्पनि तलपोयवैति; । चेप्पिनमाटलु चेवि बेट्टवैति;
विम्मैन नयमार्गमेरुगलेवैति; । विम्मन्न जानकि नी नेरवैति;
मतनंबुन 'ना रामु मर्त्युगा नीवु । चिंतिपवलदन्न' जेकोनवैति;
नी मानगर्वमुल् निन्निंत चेसे; । नेमनि शोकिंतु नेनिंक नीकु ?
वलदु रामुनि तोडि वैरंबु; विडुवु । म्रलमोप्पदन नीकु जाटने तोल्लि?
७८४०

निरुपमनयनिधी ! नी यट्टि सुकृति । परसति दल्लिगा भाविंप बलदे ?

गर्वांध अंधकासुर का संहार कर विलसित धूर्जटि की भाँति राम लोकाभिराम बन, विजयधाम बन, नवसुधाधाम बन शोभित हुए । तब विभीषण अधिक शोक से संतप्त होते हुए, समरमध्य (स्थल) में ।।७८३०।।

—अलघु हो पड़े हुए अग्रज को देखकर कई बार उच्चस्वर में विलाप करने लगा— "आहव में उदग्र (तथा) सुरासुरों के लिए भयद बाहु आज पक्षियों के हाथ पड़े न ! सुरुचिर-मृदु शय्या पर शोभित होने वाला शरीर आज परुष संगर भूमि में गिर गया न ! अहित (शत्रुरूपी)-अंधकार के लिए बालार्क-बिंब सम मणिकिरीट महि पर गिर गए न ! विनय-विक्रम-नय विख्याति में कोई तुम्हारा सानी नहीं है । तुम जैसा व्यक्ति अंत में सोचने पर, पृथ्वी पर 'क्रूर, खल, उद्धत' कहलाया न ! (नीति से) च्युत होने को गलत नहीं सोचा, (मेरी) कही बातों को कान में नहीं धरा न ! मनोज्ञ नय-मार्ग को जान न पाए न ! 'दे दो' कहने पर जानकी को नहीं दे सके न ! मंत्रणा के समय कहने पर कि 'तुम राम को मर्त्य मत समझो' नहीं माना । तुम्हारे मान (अभिमान) (तथा) गर्व ने तुम्हारी यह दशा की । अब तुम्हारे लिए क्या कहकर शोक करूँ ? तुमसे पहले ही प्रकट रूप में कहा था न कि 'राम से वैर उचित नहीं है, (वैर) छोड़ दो, हठ मत करो । ।। ७८४० ।।

जगतिलो दगवु विचारिंपबैति; । तगिलि ना माटलु तलकूडे नेडु?”
अनि यनि शोकिंचु; नन्न नेरमुलु । मनमुन जिंतिचु; मऱियु शोकिंचु;

पडियुन्न पतिवद्दकु रावणांगनल आगमनमु

नंत मंदोदरि यादिगा दनुज । कांतलु गूडि लंकापुरि वेंडलि
यडुगुल कैंजायलवनिपै दोरुग, । दडबडि मेखलादाममुल् सडल,
नऱगौनुलसियाड, नलसयानमुलु । मैऱय, लोयलतल मैयिदीगेलुलिय,
हारमुल् देंगिराल, नश्रुपूरमुलु । तोरंबुलै यौल्क, दौलग बय्येदलु,
वीडिन वेणुलु वेन्नुल नौरय, । वाडिन मोमुलु वऱुवट्लु वट्ट
मौकमुलु नुरमुलु मौगि मोदिकौनुचु। ब्रकटरोदनमुलु बहुविलापमुलु
गुदियक रोदसीकुहरंबु निंड । गदिरेंडि शोकाग्नि ग्रागुचु वच्चि ७८५०
विऱिगिन रथमुलु विकलभावमुन । बऱियलै पडिन कपालकुंभमुलु
दुनिसिन चेतुलु दुनियलै पडिन । तनुवुलु नुरुमैन दंतिदंतमुलु
जिदिसिन तललु विच्छिन्नंबुलैन । गदलुनु बौडियैन घनकंकटमुलु

—हे निरुपम नयनिधी ! तुम जैसे सुकृति को परस्त्री को माता के समान मानना चाहिए न ? जगत में न्याय (औचित्य) का विचार नहीं कर सके । लगकर आज मेरी बातें सार्थक हुईं ।” ऐसा कहते शोक करता, अग्रज के अपराधों का मन में विचार करता और फिर शोक करता ।

गिर पड़े हुए पति के पास रावण की अंगनाओं का आगमन

तब मंदोदरी आदि दनुज-कांताएँ मिलकर, लंकापुरी से निकलकर, (अपने) चरणों की अरुण-छायाओं (कांतियों) के अवनि पर बिखरने पर, लड़खड़ाकर मेखलाओं के दामों (हारों) के ढीले पड़ जाने पर, पतली कमरों के विचलित होने पर, अलसयान (मंदगमन) के दीप्त होने पर, तराई पर स्थित लताओं के समान तनुलताओं के हिलते रहने पर, हारों के टूट गिरने पर, अश्रुपूरों के मालाओं के समान झरने पर, आंचलों के खिसक जाने पर, बिखरी वेणियों के पीठ पर फैलने पर, मुरझाए मुखों के और अधिक सूख जाने पर, क्रम से मुख और उर पीट लेते हुए, प्रकट रोदन (और) बहुविलापों के, संकुचित न हो (प्रचुरता से) रोदसी-कुहर में भर जाने पर, व्याप्त शोकाग्नि से तप्त होती हुई आईं । ॥ ७८५० ॥

—आकर, टूटे रथ, विकलभाव से खंड-खंड बन पड़े हुए कपालकुंभ, कटे हाथ, कट कर पड़े हुए तनु, चूर बने हाथी-दाँत, टूटे सिर, विच्छिन्न बनी गदाएँ, चूर बने बड़े कंकट (कवच), कटे कलेजे, उद्धत मस्तक, फूटे गले,

दैंगिन गुंडियलु नद्धृतमस्तकमुलु । बगिलिन गळमुलु भग्नशस्त्रमुलु
ब्रेवुल प्रोवुलु बिशितखंडमुलु । जीवमुल् विडिचियु जेलुवौंदु करुलु
हयमुल चिद्रुपलु नद्रि शृंगमुलु । बयिबयि बडिन कबंध बृंदमुलु
निलुवक पारेंडि नेत्तुरुटेर्ल । गलिसि मेंडुग बारु करटितुंडमुलु
नड्डंबु निडुपुलै यद्रुल क्रिंद । ग्रुड्डुलु वेलुवड गूलिन भटुलु
जेकोनि शवमुल जिरुमुराडु । काकघूकानेक कंक गृध्रमुलु
रामशरक्षतरक्तपानमुलु । सोमपानमुलनि सोलु भूतमुलु ७८६०

रामुनि गिकुर्रिंचि राक्षसेश्वरुडु । भूमिज देच्चुट बोंगडु भूतमुलु
शिरमुलु पदिगुनु जेतुलिर्वदियु । नरुदार नोक रित्त यट्ट बोंदिचि
"दैतेयकुलनाथ ! तगदु रामनुकु । सीतनि'म्मनि बुद्धि चेप्पु भूतमुलु
गोति बोंदुलु सोच्चि कोतुलै वच्चि । ब्रातिगा गरटि कबंधमुल् देच्चि
वडि बेर्चि घनरक्त वार्धिलो वैचि । कडकतो सेतुवु गट्टु भूतमुलु
"नारायणुड नेनु; नाकुलु मीरु; । मीरु राक्षसु"लनि मेरलु सेसि
पनिवडि करटकबंधंबु देच्चि । घनत ब्रेवुलु शेषुगा जेसि चुट्टि
कोरि रक्ताब्धिलो गोनि तेच्चि वैचि । धीरतमिंचि मथिंचु भूतमुलु

भग्न शस्त्र, आंतड़ों की राशियाँ, पिशित-खंड, प्राण छोड़कर भी मनोज्ञ बने हाथी, हयों के टुकड़े, अद्रि-शृंगों के नीचे पड़े हुए कबंध-बृंद, न रुककर बहनेवाली ख़ून की नदियों में प्रचुरता से बहनेवाले हाथी के सूंड, पर्वतों के नीचे चौड़े और लंबे बन (दब जाने के कारण), आँखों के बाहर निकल आने पर गिरे सिपाही, लगकर शवों को नोच खाने के लिए खींचातानी करनेवाले अनेक काक, घूक, कंक (और) गृध्र, राम के शरों (के आघात से हुए) क्षतों के रक्तपान को सोमपान मानकर, मस्त बने भूत, ॥ ७८६० ॥

—राम को धोखा देकर, राक्षसेश्वर के भूमिजा को ले आने की प्रशंसा करनेवाले भूत, दस सिर और बीस हाथों को अनुपम रूप से एक खाली रुंड को लगाकर, यह कह कि "हे दैतेयकुलनाथ ! उचित नहीं है, राम को सीता दे दो" नीति जतानेवाले भूत, मर्कटों के शरीरों में प्रवेशकर, मर्कट बन आकर, क्रम से हाथी के सूंड लाकर, शीघ्र विजृंभित हो महान्-रक्त-वारिधि में डालकर, सप्रयत्न सेतु बाँधनेवाले भूत, "मैं नारायण हूँ, आप देवता हैं, आप राक्षस हैं" ऐसा नियम बनाकर, सप्रयत्न हाथी के सूंड लाकर, प्रचुरता से आँतों को आदि शेष के समान लपेटकर, चाहकर रक्त-अब्धि में डालकर, धैर्य से बढ़कर मंथन करने वाले भूत, इंद्र की तरफ़ देखकर यह कह कि "हमारे राम के बाणों से

"मा रामु बाण निर्मथित मांसमुल । कीरादे नीनाक ? मेल यिच्चेंदवु
सौलवक मेकनंजुळ्ळकु" ननुचु । नलि निद्रुदेस जूचि नव्वुभूतमुलु;
७८७०

"मदि जेव गलिगि कुमार तारकुलु । गदिसिन संगरांगणमु जूचितिमि;
अदयुलै विषकंधरांधकासुरुलु । गदिसिन संगरांगणमु जूचितिमि;
त्रिदशेंद्रवृत्रुलु देगुवमै मेरसि । कदिसिन संगरांगणमु जूचितिमि;
ई मांसखंडंबु ली कबंधंबु । ली महारक्तंबु ली वितचवुलु
बौडगान मे" मनि पौंगि योंडोंड । यडरुचु दौडरुचु नाडु भूतमुलु
रविकुलाधिपुडैन रामु विक्रममु । दिवुटमै गडगि कीर्तिचु भूतमुलु
"नी रामु विक्रमंबेटि विक्रममु ? । घोराहवंबुलु कोट्लु सलिपि
वरमांस रक्तप्रवाहमुल् वरपि । परितृप्ति गाविंचु पंक्तिकंधरुनि
ननिमौन देगटाचें; नाचवुलिक । मनकेंदु गल" वनि मरुगु भूतमुलु
नुरुतर ध्वजदंडयुगळमुल् निलिपि । पौरि बौरि व्रेवुलु पौंदौंद मुडिचि
७८८०

परम सम्मदमुन ब्रमदलु दारु । सरसडोलाकेळि सलुपु भूतमुलु
नेम्मुलु नम्मुलु नेडगलग द्रोसि । यिम्मैन चोट्टुल नेलमितो निलिचि

निर्मथित मांस (खंडों) के लिए अपना स्वर्ग दे दो न? न थककर बकरी के मांस-खंडों के लिए क्यों देते हो ?" हँसने वाले भूत, ।। ७८७० ।।

—"मन में पौरुष से युक्त कुमार और तारकासुर के भिड़े संगरांगण को देखा है। अदय बन विषकंधर (शिव) और अंधकासुर के भिड़े संगरांगण को देखा है। त्रिदशेंद्र तथा वृत्र के साहस से दीप्त होकर भिड़े संगरांगण को देखा है। (किन्तु) ये मांसखंड, ये कबंध, यह महारक्त, ये विचित्र रुचियाँ कहीं देखा नहीं है।" ऐसा कहते फूलकर सर्वत्र विजृंभित होते खेलनेवाले भूत, रविकुल के अधिप राम के विक्रम का चाहकर, लगकर गान करनेवाले भूत, "इस राम का विक्रम भी कैसा (जो) करोड़ों घोर-आहव (युद्ध) कर, श्रेष्ट मांस-रक्त के प्रवाहों को बहाकर, (हमें) परितृप्त करनेवाले पंक्तिकंधर को युद्ध-भूमि में मार डाला। वे स्वाद अब हमें कहाँ प्राप्त होंगे" यह कहते विकल होनेवाले भूत, उरुतर-ध्वजों के दंड-युगल खड़ा करके, पुनः पुनः आंतड़ों को मनोज्ञता से (रस्सियों के समान) बांधकर, ।। ७८८० ।।

—परम-सम्मोद से (अपनी) प्रमदाओं के साथ स्वयं सरस डोलाकेलि करनेवाले भूत, हड्डियाँ और बाणों को अलग करके, मनोज्ञ स्थानों में

प्रियमौप्प ब्रियुलुनु ब्रियलुनु गूडि । प्रियरक्तपान संभृतकेलि देलि
"चेलुवौप्प रामुडु सीततो गूलि । वेलयुगा" कंचु दीविंचु भूतमुलु
गलिगि भयंकराकारमैयुन्न । कलहरंगमु जौच्चि कडुजोद्यमंदि
पनवुचु नेड्चुचु बति बेरुकौनुचु । जनुदेंचि यंदु राक्षसवधूजनमु
तुनिसि नेत्तुट दौप्प दोगिन केलु । तनुपारु किसलयतल्पंबु गाग
नकलंकतरमुलै यडरि पै बर्वु । मकुट रत्नारुण मंडल प्रभलु
तनुवेक्क गप्पिन दद्दयु नौप्पु । घनधातुवस्त्रनिकायंबु गाग
नलवड बर्वि सर्वांगंबुलंदु । दलकौन्न मेदडु चंदनचर्च गाग ७८९०

जतुरसंघट्टनजातास्थिरजमु । प्रतिलेनि पुष्पपरागंबु गाग
दाल समुत्तालदंडमुल् विरिगि । व्रालि तूलेंडु रथध्वजसमूहमुलु
गोमल विमल दुकूलखंडमुलु । वेमरु बैवीचु वीवनल् गाग
नंतंत जुट्टुनु नवनिपै नुन्न । दंतावळोरुमुक्ताफलावळुलु
वरुसतो बडिसिपो वैचिन जेंदरि । करमौप्प मल्लिकाकळिकलु गाग
नरुदुगा बर्विन या रामचंद्रु । शरचंद्रिकलचेत संतापमंदि

प्रेम से खड़े रहकर, प्रेम से प्रिय और प्रियाओं के मिलकर, प्रियरक्तपान-संभृत-केलि में ऊभचूभ होकर, (यह कहते कि) "शोभा से राम सीता के साथ मिलकर विराजमान हो" आसीसने वाले भूतों से युक्त बने (और) भयंकराकार वाले कलहरंग (युद्धभूमि) में प्रवेश कर, अति आश्चर्य-चकित हो, विकल होती हुई, रोती हुई, पति का नाम लेती हुई आकर वहाँ राक्षस-वधूजनों ने धारुणी पर पड़े हुए दशकंधर को देखा जो कटकर खून में लथपथ बने हाथ के शोभायमान किसलय-तल्प बनने पर, अकलंक-तर हो प्रचुरता से (शरीर के) ऊपर व्याप्त मकुट के रत्नारुण-मंडल की प्रभाओं के शरीर को आच्छादित कर, शोभित घन-धातुवस्त्र (कवच)-निकाय होने पर, शोभा से व्याप्त हो, सर्व-अंगों में लगी हुई मज्जा के चंदन-चर्चा (-लेप) होने पर, ॥ ७८९० ॥

—चतुर-संघट्टन से जात (उत्पन्न)-अस्थिरज के अनुपम पुष्पपराग होने पर, ताल-समुत्ताल (ताड़ के समान ऊँचे)-दंडों के टूटने पर, झुककर नीचे गिरनेवाले रथ-ध्वज-समूह के कोमल (तथा) विमल दुकूल-खंडों के कई बार झलनेवाले व्यजन होने पर, सर्वत्र चौतरफ़ धरती पर स्थित उरु-दंतावलियों के मुक्ता-फल-समूह के क्रम से बिखेर देने पर, व्याप्त सुंदर मल्लिका-कलिकाएँ होने पर, अनुपम रूप से व्याप्त रामचंद्र की शर-चंद्रिकाओं से संतप्त होकर, वीरलक्ष्मी की घन-विरहाग्नि से विकल

वीर लक्ष्मी-घन-व्रिरहाग्नि ग्रागि । धारुणि बडियुन्न दशकंठु गनिरि;
कनियंत शोकाब्धि करडुल देलि । दनुजेशुपै बडि दानवांगनलु

मंदोदरी विलापमु

पनव मंदोदरि पतिमीद व्रालि । तनरिन शोकाब्धि दरियिंपलेक
कलसि बाष्पंबुलु कन्नुल दॊरुग । बलुमारु नॆलुगॆत्ति पलविंप दॊडगॆ; ७९००
"हा राक्षसेश्वर! हा वीरवर्य ! । हा रणालंकार! हा नाथ!" यनुचु
नलतयु बलुवगलडलु दीपिंप । बलुमारु बलविंचि पति जूचि पलिकॆ;
"लंकेश! नेडु नी लंकलोपलिकि । शंकिंप किनरश्मिजालमुल् सॊच्चॆ;
'नॆडरय्यॆनिपुड' नि यिद्रादिसुरलु । नुडुवीथि जॆलरेगि युब्बुचुन्नारु;
अमराधिपति गॆल्चि यनलुनि गॆल्चि । शमनुनि गॆल्चि राक्षसराजु गॆल्चि
पाशहस्तुनि गॆल्चि पावमानु गॆल्चि । यीशानसखु गॆल्चि यीशानु गॆल्चि
नी लावु लावुगा निखिल लोकमुल । वालुदु; वॆंदु दुर्वारुंडवीवु;

बना हुआ था। देखकर तब शोकाब्धि की तरंगों में डूबकर, दनुजेश पर गिरकर दानवांगनाओं ने,

मंदोदरी का विलाप

—विलाप किया। मंदोदरी पति पर गिरकर, व्याप्त शोकाब्धि को पार न कर सक, आँखों से बाष्पों के झरने पर, ऊँचे स्वर से कई बार (यों) विलाप करने लगी, ॥ ७९०० ॥

—"हे राक्षसेश्वर! हे वीरवर! हे रणालंकार! हे नाथ!" कहते हुए थकान तथा अधिक व्यथाओं के (तथा) विकलताओं के दीप्त होने पर विलाप कर पति को देख कहा— "हे लंकेश! आज तुम्हारी लंका में बिना किसी शंका के इनरश्मिजाल ने प्रवेश किया। 'अब अवसर प्राप्त हो गया (बला टल गई)' कहकर इंद्र आदि सुर उडुवीथि पर विजृंभित हो फूल रहे हैं। अमराधिपति को जीतकर, अनल को जीतकर, शमन को जीतकर, राक्षसराज को जीतकर, पाशहस्त वाले को जीतकर, पवमान को जीतकर, ईशान-सखा को जीतकर, ईशान को जीतकर, अपनी सामर्थ्य को ही सामर्थ्य मानकर निखिल लोकों में विराजमान होते थे। सर्वत्र तुम दुर्वार रहे। आज तुम्हें ऐसी दुर्दशा क्यों हुई? तुम से बली उत्पन्न

नीकिट्टि दुर्दश नेडेल कलिगें ? । नीकंटें बलियुरु नेंचिरे कलुग ?
‘धारुणीसुत निम्मु; तगदु; राघवुडु। नारायणुडु गानि नरुडु गाडात’
डनि नीकु जेंप्पिति; नकट! ना पलुकु । विनवैति! नी विधि विननेल यिच्चु ? ७९१०

दपमाचरिंचुचु दशकंठ! तोंलिल । विपुलैकनिष्ठतो विदितंबुगाग
नीविंद्रियंबुल नेंरि निग्रहिंचि; । ता वैरमुन निप्पुडवि येमरिंचि
जनकज देंप्पिच समरंबुलोन । निनवंश्युचे निन्नु निट्लु चंपिचें;
सुरलकु नेंब्भंगि जोंररानि लंक । नुरुवडि हनुमंतुडोक्कडे चोंच्चें;
गलगक जलराशि गट्ट वानरुल । कलविये ? सुरलु वीरंटि नेनपुडें;
तरमिडि या जनस्थानंबुनंदु । खरदूषणादि राक्षसुल बेंक्कंड्र
बलुविडि नोंक्कंडें पटुबाहुशक्ति । नलि रेगि चंपिनाटिनुंडियुनु
दलकुदु रामुनि दलचि निन् जूचि; । तलकुटलेंल्लनु दलकूडें नेडु;
धर्मतत्पर यरुंधति कंटें नित्य । निर्मलमति रोहिणीदेविकंटें
भूरिगुणोज्ज्वल भूदेविकंटें । सैरणगल पुण्यसाध्वि जानकिनि ७९२०

हो सका क्या ? ‘धारुणीसुता (सीता) को दे दो। (सीता को बंदी बनाना) उचित नहीं है। राघव तो नारायण है, वह (मात्र) नर नहीं है।’ ऐसा तुमसे कहा था। हाय! मेरी बात नहीं सुनी। तुम्हारी नियति (तुम्हें) कैसे सुनने देती ? ।। ७९१० ।।

—हे दशकंठ! पूर्व में तप करते हुए विपुलैक-निष्ठा से, विदित रूप से इन इंद्रियों का क्रम से निग्रह किया था। उस वैर को मन में रखकर, अब उन्होंने तुम्हें असावधान बनाकर, जनकजा को (तुम से) लिवा लाकर, समर में इन-वंश के हाथ तुम्हें इस प्रकार मरवा डाला है। किसी भी प्रकार से सुर भी प्रवेश न कर सकें, ऐसी लंका में शीघ्रता से हनुमान ने अकेले ही प्रवेश किया। व्याकुल हुए बिना जलराशि (पर पुल) बाँधना वानरों के बस की बात है ? तभी मैं ने कहा था कि ये सुर हैं। क्रम से उस जनस्थान में खरदूषण आदि कई राक्षसों को बरज़ोरी अकेले ही पटु बाहुशक्ति से विजृंभित हो जिस दिन मार डाला था, तभी से राम का विचार कर और तुम्हें देख विकल बन जाती थी। मेरी समस्त व्याकुलता आज बर आई न! धर्मतत्परमति वाली अरुंधती की अपेक्षा, नित्यनिर्मलमति वाली रोहिणीदेवी की अपेक्षा, भूरि-गुणोज्ज्वला भूदेवी की अपेक्षा, सहनशीला पुण्यसाध्वी जानकी को, ।। ७९२० ।।

दॆगि तॆच्चिनप्पुडे देवि कोपाग्नि । बॊगिलिनाडवु गदे भुवनंबुलॆऱुग?
गैकॊनि यॆव्वडेकर्मंबु सेयु । ना कर्मफलमु वाडंदकपोव;
डतिनीतिपरुडैन या विभीषणुन । कतुलसौख्यमु गलॆ ननघात्मुडगुट
नेपुन लोकंबुलॆल्ल गारिंचु । पापिकि दुरवस्थ पाटिल्लॆ नीकु;
गलदु सीतादेविकंटॆ सौभाग्य । कलितलु बॆक्कंड्रु कामिनीमणुलु;
कामांधकारंबु कन्नुल गप्पि । नी मदि दॆलियंग नेरवु गाक !
कुलरूप दाक्षिण्यगुणगणाकेळि । दलप वैदेहि ना तरमु गादॆंदु;
नाकंटॆ नॆक्कुडो, नातोड सरियॊ; । नी कानमिकि जॆप्पनेरगाकॆनु;
मृत्युवॊक्कोक्क निमित्तंबु वलन । सत्यंबुगलुगुट सकलजीवुलकु;
नॆडरैन मृत्युवु निट जेर दॆच्चु । वडुवुन दॆच्चिति वैदेहि नीवु; ७९३०

भाग्यंबुगल सीत पति तोड गूडि । योग्यमौ सुखलीलनॊंदि पॆंपॊंदॆ;
नाथ! भाग्यमु लेनि ननु जूडु दुःख । पाथोधिलोपल बडि मुनिगॆदनु;
बॊलुपार नी तोड बुष्पकंबॆक्कि । ललितंबुलैन लीलाविहारमुलु
सलिपिति मंथर शैलंबुनंदु । गलधौतगिरियंदु गनकाद्रियंदु

—जिस समय लाए थे, (उसी समय उस) देवी की कोपाग्नि से, जगत्-जाने ऐसा, दग्ध हो गए थे न? चाहकर जो (व्यक्ति) जो कर्म करेगा, उस कर्मफल को वह पाए बिना नहीं रहेगा। अनघात्मा वाला होने के कारण अतिनीतिपर उस विभीषण को अतुलसौख्य प्राप्त हुआ। प्रचुरता से समस्त लोकों को सतानेवाले पापी को मिलनेवाली दुस्थिति तुम्हें प्राप्त हुई। सीतादेवी की अपेक्षा सौभाग्य-कलित कई कामिनीमणियाँ हैं। (इस बात को) कामांधकार से, आँखें बंद हो जाने से तुम अपने मन से नहीं जान सके थे। कुल, रूप, दाक्षिण्यगुण-गण की केलि (लीला) से सोचने पर वैदेही मेरी समता नहीं कर सकती। मुझसे अधिक है (अथवा) मुझसे समान है, तुम्हारी दृष्टि के लिए मैं कुछ नहीं कह सकती। एक एक निमित्त (कारण) से सकल जीवों का मृत्यु होना सत्य है। दूर बनी मृत्यु को यहाँ लाने के समान तुम वैदेही को यहाँ लाए हो। ॥ ७९३० ॥

—भाग्यवाली सीता, पति के साथ मिलकर योग्य-सुखलीला को प्राप्त हो वर्द्धित हो रही है। हे नाथ! भाग्यहीन मुझे देखो, दुख-पाथोधि (दुख रूपी समुद्र) में गिर डूब रही हूँ। मनोज्ञता से तुम्हारे साथ पुष्पक पर आरूढ हो मंथरशैल पर, कलधौतगिरि पर, कनकाद्रि पर, आतत-नंदन-उद्यान में, प्रीति से अनेक और देशों में ललित-लीलाविहार कर चुकी हूँ। हाय! उन सब लीलाओं को मुझे निगल जानेवाली विधि (नियति) ने

नाततनंदनोद्यानंबुनंदु । ब्रीतिमै मऱियुनु बॆक्कु देशमुल;
नक्कटा ! या लीललन्नियु नन्नु । द्रॆक्कॊन्न विधि कडतेर्चॆने नेडु !
‘मयुडु ना तंड्रि; ना मगडु रावणुडु;। प्रियपुत्रुडाहवप्रियुडिंद्रजित्तु’
डनि गर्वमुननुंटि; ननिलोन राम । जननाथुचे नीवु सच्चुटेनॆऱुग;
बिडुगडर्चिन गूलु पृथ्वीधरंबु । वडुवुन जूर्णमै वसुधपै बडिति;
मृत्युवुनकु नीवे मृत्युवैयुंडि । मृत्युवु पालैते मेदिनि गूलि ? ७९४०
वैरुल सतुलकु वैधव्यमित्तु; । नी रामलकु गल्गे नेडाफलंबु”
अनि येड्चु; बलविंचु; नसुरेशु मोमु । गनुगोनि वर्णिंचु; गन्नीरु निंचु;
दॊडलपै दलयिडु; दॊरुगु कन्नीट । गडुगु नाननधूळि; गडु जिन्न बोवु;
गोलिचि केलु कॆंगेलिलो दार्चु । वालु डॆंदमु गंद वगचु; नात्मेशु
तलयॆत्ति डाकेल धरियिंचि चूचु; । दलयूचु; वलचेयि धरणि बॊरल्चु;
‘बोयॆ बो’ म्मनु; ‘रामभूपालुडित । सेयुने ? नेनेमि सेयुदुनिक ?”
ननि यलमट बॊंदु; नवनिपै बॊरलु; । दन दिक्कुलेमिकि दद्दयु वगचु;

आज पूरा (समाप्त) कर दिया न ! ‘मय मेरा पिता है, मेरा पति रावण है, प्रिय पुत्र आहव-प्रिय इंद्रजित है’ ऐसा सोच गर्व से थी। युद्ध में राम जननाथ के हाथ तुम्हारे मरने की बात नहीं जानती थी। गाज के दबाने पर गिरने वाले पृथ्वीधर (पर्वत) के समान चूर्ण हो वसुधा पर गिर पड़े न ! मृत्यु के लिए तुम्हीं मृत्यु बने रहे थे, (आज) मेदिनी (धरती) पर गिरकर मृत्यु के वश में हो गए न ! ॥७९४०॥

—वैरियों की सतियों को वैधव्य देते थे, तुम्हारी रामाओं को आज वह फल मिला न।” (ऐसा) कहते रोती, प्रलाप करती, असुरेश के मुख को देख वर्णन करती, आँसू भरती, जांघों पर सिर रखती, झरने वाले आँसुओं से (रावण) के आनन की धूल धो डालती, अधिक खिन्न हो जाती, (रावण का) हाथ अपने अरुण हाथ में लेती, हृदय व्यथित हो जाए, ऐसा रो उठती। आत्मेश का सिर उठाकर, बाएँ हाथ में धरकर देखती, सिर हिलाती, दाहिना हाथ धरणी पर पटकती, “चल बसे न !” “रामभूपाल ने इतना किया न ? अब मैं क्या करूँ ?” कहकर व्यथित होती, धरती पर लोटती, अपनी अनाथदशा पर अधिक विलाप करती, अपार शोकाग्नि में लगकर इस प्रकार निरंतर दग्ध होने वाली भाभी[1] को देखकर (उनके) चरणों

---

[1] तेलगु में, बड़ी साली को, और अपने से बड़े भाई व बड़े साले की पत्नी को भाभी ही कहते हैं।

दुदिलेनि शोकाग्नि दोंडरि यिब्भंगि। वदलक कालेंडि वदिनेंनु जूचि
यड्गुलपैं बडि यंतलो नप्पु। डडलिन्मडिंपग ननें विभीषणुड्डु;
"वडितोड बेर्चु रावण पयोराशि। पडतुक ! रघुरामु बाणाग्नि
निगिरें; ७९५०

बऱतेंचि राघवप्रळयमारुतमु। सरस रावणपारिजातंबु गूल्चें;
गमि विच्चिच पाऱ राघव-नागवैरि। समद-रावण-सामजंबुनु जंपें;
नतुलित-निशित-रामामोघ बाण। शतकोटि रावणशैलंबु दुनिमें;
बलुविडि राघव भयददावाग्नि। नलि दशाननकाननमु नीऱु सेसें;
बडतुक ! राघवापरपयोराशि। गडगि रावणदिवाकरुडस्तमिंचें;
खरतरामोघ-राघव नीलमेघ। शरवृष्टि रावणसप्तार्चि नार्चें"

श्रीरामुडु विभीषणुनोदार्चि रावणुनकु प्रेतकृत्यंबुल जेयिंचुट

ननि पेंक्कुभंगुल नडलुचुनुन्न। घनु विभीषणु जूचि काकुत्स्थुडनियें;
"नी वनितल येड्पुलिक वारिंपु;। मीवुनु शोकिंपनिटमीद नुड्गु;
परिगोंनि शूरुलु बवरंबुलोन। बरुलचे जत्तुरु; परुल जंपुदुरु;

पर गिरकर, तब मन में वेदनाओं के बढ़ने पर विभीषण ने कहा—"हे नारी ! पौरुष से विजृंभित रावण-पयोराशि रघुराम की बाणाग्नि से सूख गया। ।। ७९५० ।।

—आकर राघव-प्रलयमारुत ने रावण-पारिजात (वृक्ष) को गिरा दिया। समूह बिखरकर भाग जाए ऐसा राघव-नागवैरी (सिंह) ने समद-रावण-समाज (गज) को मार डाला। राम के अतुलित-निशित-बाण (रूपी) शतकोटि (वज्र) ने रावण-शैल का वध कर दिया। बरज़ोरी राघव (रूपी) भयद दावाग्नि ने दशानन-कानन को भस्म कर दिया। हे नारी ! राघव (रूपी) अपर-पयोराशि (दक्षिण समुद्र) में सप्रयत्न रावण-दिवाकर अस्त हुआ। खरतर-अमोघ-राघव-नीलमेघ की शरवृष्टि ने रावण रूपी सप्तार्चि को बुझा दिया।"

श्रीराम का विभीषण को सान्त्वना देकर रावण के लिए प्रेतकृत्य (उत्तर क्रियाएं) करवाना

—ऐसा अनेक प्रकार से विकल बनने वाले महान् विभीषण को देख काकुत्स्थ ने कहा— "इन स्त्रियों के रोदन का निवारण करो। तुम भी अब आगे शोक मत करो। प्रतिरोधकर शूर युद्ध में अन्यों (शत्रुओं) के हाथ

जयमिद्दरिकि लेदु समरंबुलोन; । जयपराजयमुलस्खलितमुल् गावु;
७९६०
सकल सुपर्वुल सांधिचेँनितडु; । सकल दिक्पालुर साधिचेँनितडु;
एकांगवीरु; डहीनसाहसुडु; । लोकैकजितुडु; त्रिलोकभीकरुडु;
नी यन्न रणमुन मिक्किलि कडिमि । जेयुट देँलिय जूचिति कादे येनु ?
नी चंदमुन निल्चि येँव्वंडु पोरु! । नी चंदमुन दुदि नेँव्वंडु चच्चु !
नी लावु नी चावु नेँव्वरु वडय । जालुदुरक्कटा ! जयमेमिसेयु ?
ननघ! मीयन्न कृतार्थुंडु; वगव । बनिलेदु; धैर्यंबु पाटिंचि नीवु
कडकतो नग्निसंस्कारादिविधुलु । तडयक जेयु मी दनुजाधिपतिकि"
ननवुडु भीतुडै या विभीषणुडु । घनभक्तियुक्तिमै गरमुलु मोँगिचि
"येक्कडि संस्कार? मीतडु नाकु । नेँक्कडि तोबुट्टु? वितडुना पगर;
नी देवि देँच्चिचन नीचुंडु, कष्टु; । डी दुष्टचित्तुनकेँक्कडि विधुलु ?
७९७०
परवधूजनुल संस्पर्शंबुसेयु । पुरुषुलधोगति बोँदि कूलुदुरु;
अट्टिवारल मुट्ट नर्हंबु गादु । गट्टिगा गनुगोँनगा; दट्टुगान

मरते हैं, अन्यों को मार डालते हैं। दोनों के लिए समर में विजय नहीं है। जय (और) पराजय अस्खलित नहीं हैं। ॥ ७९६० ॥

—इसने सकल-सुपर्वों को जीत लिया था। इसने सकल दिक्पालकों को जीत लिया था। (यह) एकांग वीर है, अहीन-साहस वाला है, लोकैक-विजयी है, त्रिलोक-भीकर है। तुम्हारे अग्रज का रण में अधिक साहस प्रदर्शित करते मैंने देखा नहीं? इस प्रकार टिककर कौन लड़ सकता है? इस प्रकार अंत में कौन मरता है? हाय, ऐसी सामर्थ्य, ऐसी मृत्यु को कौन प्राप्त कर सकता है? (इस दशा में) विजय क्या कर सकता है? हे अनघ! तुम्हारा अग्रज कृतार्थ है। शोक करने की आवश्यकता नहीं है। धैर्य धारण कर तुम सप्रयत्न इस दनुजाधिपति के अग्नि-संस्कार आदि विधियों को अविलंब करो।" ऐसा कहने पर भीत होकर, उस विभीषण ने घन-भक्ति-युक्ति से हाथ जोड़कर (कहा)— "कहाँ का संस्कार? यह कहाँ का मेरा सहोदर है? यह मेरा शत्रु है, तुम्हारी देवी को लाने वाला नीच है, क्रूर है। इस दुष्टचित्त वाले को कहाँ की (उत्तर-) विधियाँ? ॥ ७९७० ॥

—पर-वधूजनों का संस्पर्श करनेवाले पुरुष अधोगति को प्राप्त कर पतित हो जाते हैं। ऐसे लोगों का स्पर्श नहीं करना चाहिए। ठीक ढंग से देखना भी नहीं चाहिए। अतः मैं इस पापकर्मा को छू नहीं सकता।

नी पापकर्मुनि ने मुट्टुटकुनु । नोप; वैदिक विधिकुचितुंडु गाडु;"
अनुटयु नम्माटलंतरंगमुन । जोनिपि विभीषणु जूचि राघवुडु
"अनघ! नी चेप्पिनदंतयु निजमु; । दनुजाधिपति निक दगदु दूषिप;
गडकतो समरगंगा प्रवाहमुन । गडिगिकोन्नडोगि गल कल्मषमुल;
तच्चुगा ना पनुलन्नियु नय्यॅ; । जच्चिननपिम्मट जनदु वैरंबु;
परुवडि नितनिकि बरलोकविधुलु । करमर्थि जेयुमु कडकतो नीवु"
अनवुडु 'नौगाक' यनि विभीषणुडु । तन बुद्धि वैदिक धर्मंबु बूनि
यचटिकि नग्नित्रयंबु देप्पिचि । यचलमानसुडयि यग्रजन्मुनकु ७९८०
गरमोप्प नग्निसंस्कारादुलैन । परलोकविधुलेल्ल भक्तितो जेसि
चनुदेंचि या रामचंद्रु नंघ्रुलकु । विनतुडैयुन्न नव्विमलात्मु जूचि
प्रियभाषणंबुल बेद्द मन्निंचि । दय पेंपु मीऱ नातनि नूऱडिंचि
धरणीशुडप्पुडु तम्मुनि जूचि । निरुपमकारुण्यनिरतुडै पलिके;

विभीषणुनि लंकापट्टाभिषेकमु

"नीविक लंकलोनिक बोयि पुण्य । भावु विभीषणु बट्टंबु गट्टि

यह वैदिक विधियों के लिए उचित नहीं है।" कहने पर उन बातों को अंतरंग में रखकर, विभीषण को देखकर राघव ने कहा— "हे अनघ! तुम ने जो कहा, वह सब सच है। अब आगे दनुजाधिपति का दूषण नहीं करना चाहिए। समर-गंगा प्रवाह में (इसने) सप्रयत्न अपने कल्मषों को धो डाला है। ठीक तरह से मेरे सभी काम पूरे हो गए। मरने के बाद वैर उचित नहीं है। तुम सप्रयत्न शीघ्रता से इसके लिए अधिक चाह से परलोक-विधियों (उत्तरक्रियाओं) को संपन्न करो।" ऐसा कहने पर "ऐसा ही हो" कहकर विभीषण ने अपने मन में वैदिक धर्म को अपना कर, वहाँ अग्नित्रय को मँगवाकर, अचल-मानस वाला हो (निष्ठा से), अग्रजन्म को, ॥ ७९८० ॥

—अधिक शोभा से अग्नि-संस्कार आदि समस्त परलोक-विधियों को भक्ति से करके, आकर, रामचंद्र की अंघ्रियों (चरणों) में विनत हुआ। उस विमलात्मा वाले को देख, प्रियभाषणों से अधिक सम्मानित कर, अधिक दया से उसे सान्त्वना देकर, धरणीश ने तब अनुज को देखकर, निरुपम-कारुण्य-निरत हो कहा—

विभीषण का लंका पर पट्टाभिषेक

—"तुम अब लंका में जाकर, पुण्यभाव वाले विभीषण का राजतिलक कर आओ। जाओ।" ऐसा कहने पर राघवानुज प्रेम से लंका में जाकर

रम्मु; पौ'' म्मनवुडु राघवानुजुडु । नेंम्मितो लंकलोनिकि बोयि यपुडु
तडयक तरुचरोत्तमुलनु बनिचि । कडक समुमुद्रोदकमुल देंप्पिचि
वारि पुरोहितवरुल रप्पिचि । वारि सज्जनमंत्रिवरुल रप्पिचि
भूरि मंगळतूर्यमुलु म्रोय नतनि । नारूढ नियतितो नभिषिक्तु जेसि
नंचित मंगळाचारमुल् मेऽय । नंचित सिंहासनासीनु जेसि ७९९०
करमौप्प नतनि लंकाराज्यमुनकु । बरमसम्मदमुन बट्टंबु गट्टि
"येंदाक रविचंद्रु, लेंदाक धरणि, । येंदाक गुलगिरु, लेंदाक नभमु:
नेंदाक जलनिधु, लेंदाक दिशलु, । नेंदाक राघवाधीशु कीर्तनमु
नारूढमुग जेल्लु नंदाक नेलु । मी राज्य'' मनि यप्पुडेलमि दीविंचि,
"परग रक्षोराज्यभरणमेंव्वरिकि । बरिकिंचि नडपुट परमदुर्लभमु,
दीनि नेमऽक वर्तिपुमु; नित्य । मैन धर्ममुसेयु'' मनि यौप्प बलिकें;
नंत विभीषणुंडक्षीण राज्य । संतोषमुनु बौंदि चतुरमानसुडु
तडयक मंगळद्रव्यमुल् मंचि । तौडवुलंबरमुलु दोरंपुमणुलु
गौनि लक्ष्मणुनि गौलिच कौमरौप्प वच्चि । जननाथुनकु निच्चि
सद्भक्ति म्रोक्कें;
नलवुमै रघुरामुडवियेंल्ल बुच्चि । येंलमितो मातलिकिच्चि
वीड्कौंलिपें; ८०००

तब, विलंब किए बिना, तरुचरोत्तमों को भेजकर, सप्रयत्न समुद्रोदकों को मँगवाकर, उनके (राक्षसों के) पुरोहितवरों को बुलवाकर, उनके सज्जन-मंत्रिवरों को बुलवाकर, भूरि-मंगल-तूर्यों के बजने पर, उसे (विभीषण को) आरूढ नियति से अभिषिक्त कर, अंचित (पूज्य) मंगलाचारों के दीप्त होने पर, अंचित सिंहासानासीन कर, ।। ७९९० ।।

—बड़ी शोभा से उसे लंका राज्य के लिए परम सम्मोद से राजतिलक कर, "जब तक रवि चंद्र, जब तक धरणी, जब तक कुलगिरियाँ, जब तक नभ, जब तक जलनिधियाँ, जब तक दिशाएँ, जब तक राघवाधीश का कीर्तन (गुणगान) आरूढरूप से अवस्थित रहेंगे तब तक तुम राज्यपालन करते रहो ।" ऐसा प्रेम से आसीस कर, "रक्षोराज्य का भरण सोच देखने पर किसी के लिए भी परमदुर्लभ है । इसे असावधान हुए बिना चलाओ, नित्य-धर्म का आचरण करो" ऐसा शोभा से बोला । तब विभीषण ने अक्षीण राज्य (प्राप्ति के)-आनन्द को प्राप्त कर, (उस) चतुर मानस वाले ने अविलंब मंगलद्रव्य, श्रेष्ठ आभरण, अंबर, बड़ी-बड़ी मणियाँ लेकर, लक्ष्मण की सेवा कर, शोभा से आकर, जननाथ को

मातलि रथमॆक्कि महनीय महिम । नाततरथवेगुडै पोयॆ दिविकि;
ददनंतरंब यद्धरणिवल्लभुडु । मदिलो विचारिंचि मारुति जूचि
“जनकपुत्रिकि मन जयमु सेमंबु । विनुपिंपु लंककुवेग वॊ” म्मनुडु
चनि हनुमंतुडु संतोषमॊदव । घनवेगमुन लंक गडकतो जॊच्चि
या रामु विजयंबु नात्म जिंतिचु । ना रामु सति नशोकारामवीथि
गनि, म्रॊक्कि “वच्चिति गल्याणि!” यनुचु । विनतुडै पलिकॆनु
विनयंबु तोड;
“संतोषमॆंतयु जानकि ! नीवु । चिंतिंचुपगिदिने सिद्धिंचॆ नीकु;
देवि! नी पति रामदेवुंडु वच्चि । रावणु लोक विद्रावणु जंपॆ;
दॊडरि यनेकुल दुष्ट राक्षसुल । बॊडिसेसि समरमद्‌भुतमुगा जेसि,
तम्मुडु सौमित्रि तनुगॊलव बरम । सम्मदंबुन रामचंद्रुडुन्नाडु” ८०१०
अनि चॆप्पि या देवि यडलार्चि तॊल्लि । पनिवच्चि याडिन बासलु
दलचि,
“जलजाक्षि! नी पति जलधि बंधिचु; । ललन ! नी नाथुंडु लंकपै
विडियु;

प्रदान कर, सद्‌भक्ति से प्रणाम किया। शोभा से उन सबको लेकर, प्रेम से उन्हें मातलि को देकर विदा कर दिया, ॥ ८००० ॥

—मातलि रथ पर आरूढ होकर, महनीय महिमा से, आततरथ-वेग से दिवि को चला गया। तदनंतर उस धरणीवल्लभ ने मन में विचार कर मारुति को देखकर (कहा)— “जनकपुत्री को हमारी विजय (और) कुशल सुनाओ। शीघ्र लंका में जाओ।” (ऐसा) कहने पर, जाकर हनुमान (मन में) हर्ष के उत्पन्न होने पर, महान् वेग से सप्रयत्न लंका में प्रवेश कर, उस राम की विजय का मन में चिंतन करनेवाली उस राम की सती को अशोकाराम-वीथि में देखकर, प्रणाम कर, “आया हूँ कल्याणी !” कहकर, विनत हो, विनय से (यों) बोला— “हे जानकी ! तुम जैसा सोच रही थीं, वैसा ही तुम्हें आनन्द प्राप्त हुआ। हे देवी ! तुम्हारे पति रामदेव ने आकर लोक विद्रावण रावण को मार डाला है। लगकर अनेक दुष्ट राक्षसों को चूर्णकर, अद्‌भुत रूप से समर कर, अनुज सौमित्र के सेवा करने पर परम सम्मोद से रामचंद्र अवस्थित हैं।” ॥ ८०१० ॥

—ऐसा कहकर उस देवी की वेदना को दूरकर, पूर्व में काम पर आकर कहे वचन को स्मरण कर, (कहा)— “हे जलजाक्षी ! तुम्हारा पति जलनिधि को बाँधेगा, हे ललना ! तुम्हारा नाथ लंका पर आक्रमण

रमणि! नी रमणुंडु रावणु द्रुंचु; । गमलाक्षि ! नी भर्त गैकोनु निन्नु
ननि विन्नविंचिति नर्थि नाडिचट, । वनित ! ना वचनमुल्
वच्चेनन्नियुनु;
बनिविनियेद निंक बतिपालिकेनु; । बनुलाननति” म्मन्न बवनजु जूचि
रावणु मरणंबु रघुरामु जयमु । भाविंचि भाविंचि पडति हर्षिंचि
“तेंगि नी प्रतापंबु दीपिंप राम । जगतीश्वरुडु वच्चि साधिंचे गाक!
घनदैत्यगर्वांधकारमीलंक । जनजोच्चि परुलकु साधिंप दरमे?
नी धैर्यगांभीर्यं निरवद्य शौर्यं । माधुर्यपर्यायमहिमलेमंदु ?
नेमनि वर्णिंतु नेनु नी चरित ? । मेमनि पोगडुदु नेनु नी कडिमि ?
८०२०

नूत्नभूषण-जगन्नुत वस्त्र-हेम । रत्नसंपदलतो राज्यमिच्चिननु
बरग नी चेसिन पौरुषंबुनकु । बरिकिंप सरिगादु पवमान-तनय!
संतोषमंदिति जाल नी वलन । नंतरंगबुन” ननि सीतवलुक,
हनुमंतुडत्यंतहर्षंबु दनदु । मनमुन बेनगोन मरियु निट्लनिये;
“नन्नु मीरिटु करुणादृष्टि जूचि । मन्निंचि याडिन माटले चालु;

करेगा, हे रमणी ! तुम्हारा रमण रावण का वध करेगा, हे कमलाक्षी ! तुम्हारा पति तुम्हें स्वीकारेगा । ऐसा उस दिन यहाँ चाहकर निवेदन किया था । मेरे सभी वचन वर आए । अब मैं पति के पास जाऊँगा । काम हो तो आज्ञा दो ।” (ऐसा) कहने पर पवनज को देखकर रावण के मरण, रघुराम की विजय को सोच-सोचकर, नारी (सीता) हर्षित हुई (और कहा)— “साहस कर तुम्हारे प्रताप के दीप्त होने पर राम-जगदीश्वर ने आकर (कार्य को) सिद्ध किया न ! घन-दैत्त-गर्व-अंधकार वाली इस लंका में प्रवेश कर विजय प्राप्त करना अन्यों के बस की बात है ? तुम्हारे धैर्य-गांभीर्य, निरवद्य-शौर्य, माधुर्य-पर्याय की महिमाओं का कैसे वर्णन करूँ ? तुम्हारे चरित्र का मैं क्या वर्णन करूँ ? तुम्हारे साहस की मैं कैसे प्रशंसा करूँ ? ॥ ८०२० ॥

—हे पवमानतनय ! नूत्न-भूषण, जगन्नुत वस्त्र, हेम, रत्न, संपदाओं से युक्त राज्य देने पर भी, सोचने पर वह तुम्हारे किए पौरुष (-युक्त कार्य) के समान नहीं हो सकता । तुम्हारे कारण अंतरंग में अत्यंत आनंदित हुई हूँ ।” ऐसा सीता के कहने पर, हनुमान ने अपने मन में अत्यंत हर्ष के बढ़ जाने पर यों कहा— “आपका इस प्रकार करुणा (पूर्ण) दृष्टि से देखकर, समादर कर कहे वचन ही पर्याप्त हैं । सोचने पर देवेंद्रपद

भाविंप देवेंद्रपदमुनकंटें । ने वस्तुवुलकंटें निदि घनंबरय''
ननि पल्क मरियुनु नम्महीपुत्रि । हनुमंतु गनुगोनि यतनितो ननियें;
''बलमुनु शौर्यंबु बाहुविक्रममु । नलघुतेजंबुनु नंचित क्षमयु
श्रुतमु नौदार्यंबु सुस्थिरत्वंबु । सततंबु निश्चलस्वामिभक्तियुनु
विनयंबु मोंदलैन विश्रुतगुणमु । लनुपमस्थितिनोप्पु ननघ ! नी''
कनिन ८०३०
गडुभीकराकृतुल् गलिगि यद्देवि । कडनुन्न राक्षसांगनल नीक्षिंचि
''या पापकर्मुनि याज्ञ वाटिंचि । यी पापमतुलु नीकेंग्गुसेयुदुरु;
घनमुष्टिनिहतुल गडतेंर्चिपुत्तु'' । ननवुडु जानकि हनुमंतु जूचि
''येसिनवाडुंड निषुवेमि सेयु ? । दासीवधंबेंदु दगदु चिंतिंप;
दोंलिल ने जेसिन दुष्कर्मफलमु । लैल्लनु गंटि; वीरेमि सेयुदुरु ?
अनघचारित्र ! पापात्मुलंदैन । घनुलु दयाबुद्धि गलिगि युंडुदुरु;
गान नी राक्षसकांतल जंप । वानरोत्तम! नीकु वल'' दन्न नलरि
''निर्मलगुणरत्ननिधिवि नीवरय । धर्मपत्निवि गागदगुदु रामनकु;
भूनाथुकडकिक बोवंग नाकु । नानति यि'' म्मन्न नद्देवि पलिकें
''भावंबु दाननि पट्टिति ब्राण । मे वानरोत्तम! यितकालंबु; ८०४०

की अपेक्षा (तथा) अन्य वस्तुओं की अपेक्षा यही बढ़कर है।'' ऐसा कहने पर और उस महीपुत्री ने हनुमान को देखकर, उससे कहा— ''हे अनघ! बल, शौर्य, बाहुविक्रम, अलघुतेज, अंचित क्षमा, श्रुत, औदार्य, सुस्थिरतेज, सतत-निश्चल स्वामि-भक्ति, विनय आदि विश्रुतगुण अनुपमस्थिति से तुम्हें प्राप्त हों।'' (ऐसा) कहने पर, ।। ८०३० ।।
—अधिक भीकर आकृतियों से युक्त हो, उस देवी के पास स्थित राक्षस-अंगनाओं को देखकर, (कहा—) ''उस पापकर्मा की आज्ञा मानकर, इन पापमति वालों ने तुम्हें हानि पहुँचाई है। घन-मुष्टि-निहतियों से मार डालूँगा।'' ऐसा कहने पर जानकी ने हनुमान को देखकर (कहा)— ''चलाने वाले के रहने पर इषु (बाण) क्या करेगा? सोचने पर दासीवध कदापि उचित नहीं है। पूर्व में अपने किए सभी दुष्कर्मों का फल पाया है। इन्होंने क्या किया है? हे अनघ चरित्र वाले! पापात्माओं पर भी महान् (व्यक्ति) दयाबुद्धि से युक्त हो रहते हैं। अतः हे वानरोत्तम! तुम्हें इन रासक्षकांताओं को नहीं मारना चाहिए।'' (ऐसा) कहने पर प्रसन्न हो (हनुमान ने कहा)– ''निर्मलगुणरत्ननिधि वाली तुम सोचने पर राम के लिए धर्मपत्नी होने उपयुक्त हो। भूनाथ के पास जाने के लिए अब मुझे आज्ञा दे दो।'' कहने पर वह देवी

तन्नु जूडक यिक दडवोर्वजाल । नुन्नरूपनि तॆलपु मुर्वीशुनकुनु;
बॊ” म्मनि दीविंप भूमिनंदनकु । नॆम्मितो म्रॊक्कुचु निपुणमानसुडु
चनुदॆंचि या रामजगतीश्वरुनकु । विनतुडै पावनि वॆस विन्नविंचॆ;
“देव! नी सेमंबु, देव! नी जयमु । देवितो जॆप्पिन देवि हर्षिंचॆ;
वनजातनेत्र ‘देवर जूडवलयु । नदि विन्नपमु सेयु’ मनिपंचॆ नन्नु”

रामाज्ञ चे विभीषणुडु सीतनु दोड्कॊनि वच्चुट

ननिन निंचुकतडवात्म र्जितिंचि । जननाथुडाविभीषणु जेर बिलिचि,
“जनकज मंगळस्नानंबु सेय । बनिचि दिव्यांबराभरणमाल्यमुलु
वॆलय गैसेयिंचि वेड्क निक्कडिकि । बॊलतुक दोड्तॆम्मु पो” म्मन्न नतडु
संतसंबुन नेगि सरमादुलैन । यंत:पुरस्त्रीलकंतयु जॆप्पि
“जनकज दॆंड”न्न संप्रीति वारु । चनि भूमिजकु म्रॊक्कि सद्भक्ति
तोड ८०५०
“देवि! नी पति रामदेवुंडु पिलिचि । या विभीषणुतोड नानति यिच्चि

बोली— “हे वानरोत्तम ! (राम को ही) अपना भाव (आत्मा) मानकर, इतने समय तक प्राणों को रोक रखा है । ।। ८०४० ।।

—उर्वीश (राजा राम) को बता दो कि अब अधिक देर तक उन्हें देखे बिना मुझसे रहा नहीं जाता (अब) जाओ ।” कहकर आसीसने पर, भूमिनन्दना को प्रेम से प्रणाम करते हुए, निपुण-मानसवाला (हनुमान) (वहाँ से) आया, उस राम-जगदीश्वर को विनत हो, पावनी ने झट से निवेदन किया— “हे देव ! तुम्हारा कुशल, हे देव ! तुम्हारी जय (का समाचार) देवी को बताने पर देवी हर्षित हुईं। वनजात-नेत्र वाली (जानकी) ने यह कह मुझे भेजा कि ‘प्रभु के दर्शन करने चाहिए’ यह निवेदन करो ।”

राम की आज्ञा से विभीषण का सीता को ले आना

—(ऐसा) कहने पर, थोड़ी देर आत्मा (मन) में विचार कर, जननाथ ने विभीषण को निकट बुलाकर (कहा)— “जनकजा को मंगलस्नान करने भेज कर, दिव्य-अंबर-आभरण-माल्यों से शोभा से अलंकृत कर, उत्साह से यहाँ (उस) नारी को लिवा लाओ, जाओ ।” कहने पर वह आनन्द से जाकर, सरमा आदि अंत:पुर की स्त्रियों को सबकुछ बताकर, (कहा)– “जनकजा को लाओ ।” कहने पर उन्होंने संप्रीति से जाकर भूमिजा को प्रणाम कर, सद्भक्ति से (कहा)— ।। ८०५० ।।

पुत्तेंचुटयु मम्मु बुत्तेंचे; नीवु । चित्तंबुलोपल जेंल्वु वाटिंचि
यभिमतमंगळायतुडैन राम । विभुडुन्न चोटिकि वेंचेयवलयु;
नी वेषमेटिकि नेंलनाग! नीकु? । नोवु कल्याणिवि नीरेरुहाक्षि!"
यनि मंगळस्नानमर्थि जेयिंचि । तनुलतातन्विकि दडियोंत्तुलोंत्ति,
दिव्यांबरंबुल, दिव्यमाल्यमुल । दिव्यभूषणमुल देवि गैसेसि,
यसमानमहिमतो नसुर कामिनुलु । पसिडिपल्लकियंदु बडतुक नुंचि
तोडितेंच्चुटयु जूचि तोरंपुभक्ति । गडुनोंप्पुमिगुल राक्षसकुलेश्वरुडु
प्रकटराज्यमुनकु फालपट्टमुनु । नकलंकनियतिकि हस्तवेत्रमुनु
धरियिंचि यत्यंत धन्यत बोंदि । परमानुरक्तुडै बंटुनै कडगि ८०६०
मुंदर राक्षसमुख्युलु नडव । संदडि जडियुचु जतुरुडै वच्चि
यनतिदूरंबुन नद्देवि नुनिचि । चनुदेंचि या विभीषणुडु रामुनकु
जेंच्चेंर विनतुडै चेतुलु मोंगिचि । "तेंच्चिचति, विच्चेसे देवि" नावुडुनु
अतिहर्षरोषदैन्याविष्टुडगुचु । मतिनित चिंतिंचि मनुजवल्लभुडु
"पिलिचि तें" म्मनुडु विभीषणुंडरिगि। योंलसिन कडकतो
नुचितसंवेदि

"हे देवी ! तुम्हारे पति रामदेव ने बुलाकर, उस विभीषण को आदेश देने पर, उन्होंने हमें भेजा। तुमको चित्त में प्रसन्नता मानकर, अभिमत-मंगलायत रामविभु जहाँ हैं, वहाँ पधारना चाहिए। तुम्हें यह वेष क्यों ? हे लतांगी। हे नीरोरुहाक्षी ! तुम तो कल्याणी हो।" (ऐसा) कह प्रेम से मंगलस्नान कराकर, तन्वी की तनुलता (शरीर) को पोंछकर, दिव्यांबर, दिव्यमाल्य, दिव्यभूषणों से देवी को अलंकृत कर, असमान महिमा से असुरकामिनियों के सुवर्ण-पालकी में स्त्री (सीता) को बिठाकर, साथ ले आने पर, (उन्हें) देख, स्थिर भक्ति से अधिक शोभित हो, राक्षस-कुलेश्वर ने राज्य के चिह्न रूपी फालपट्ट तथा अकलंकनियति के चिह्न रूपी वेत्र को हाथ में धारण कर, अत्यंत धन्यता को प्राप्त कर, परम-अनुरक्त हो, सेवक बन, सप्रयत्न, ॥ ७८६० ॥

—आगे-आगे रासक्ष-प्रमुखों के चलने पर, कोलाहल होने से भीत होते हुए, चतुर हो आकर, अनति-दूर पर, उस देवी को ठहराकर, (अकेले) आकर, उस विभीषण ने झट राम के (समक्ष) विनत हो, हाथ जोड़कर (कहा)—"लाया हूँ, देवी पधारी हैं।" ऐसा कहने पर अतिहर्ष-रोष-दैन्य से आविष्ट होते हुए, मन में थोड़ा विचार कर, मनुजवल्लभ ने (कहा)— "लिवा लाओ।" कहने पर उचित संविद्वाला वह परमपावन विभीषण जाकर शोभित प्रयत्न से उस पावन-चरित्र वाली देवी

पावनचरित नप्परमपावनुडु । देवि जानकि दोडितॆच्चुचो गदिसि
घनवेत्रहस्तुडै कपुल राक्षसुल । गनुगॊनि यदयुडै ऋंद व्रेयुटयु
ना महाकलकलंबप्पुडालिंचि । रामुडु राक्षसराजु नीक्षिंचि,
"योहो विभीषण! युचितमे नीकु । नूहिंपगा निट्टियुग्रकृत्यमुलु ?
वितवारॆव्वरु वीरिलो मनकु ? । नित नॊप्पितुरे यिब्भंगि गडगि ?
८०७०

वलवदु वारिंप; वच्चि यंदरुनु । गलसि चूतुरु गाक! कलदॆ यिदॆग्गु?
कालदेशांतर क्रममुन जॆडनि । यीलु बॊक्कटि मरु; गिंतिय काक
यॆनसिन कोटलु निड्लुनु दॆरलु । वनितल कॆंदु नावरणमुल् गावु;
व्यसनंबुलंदु विवाहंबुलंदु । नॆसगु कय्यमुलंदु निष्टुलयंदु
दलकॊनि चॆल्लु नुत्सवमुलयंदु । वलवदावरणमुल् वारिजाक्षुलकु;
नेनिदुनुन्नाड; निदि रणभूमि; । गान नॆग्गेमियु गादु; रानिम्मु;"
अनिन विभीषणुंडाराघवुंडु । पनिचिन तॆऱगुन बद्माक्षि दॆच्चॆ;
नप्पुडु कल्याणि कवनीतनूज । कुप्पॊंगु संतोषमुल्लंबु निंडि
वॆलिकि नेतॆंचिन विधमुन जॆमट । गलय दनूलत ग्रम्मि दैवाऱ,
राकासुधाकर रामचंद्राव । लोकनामृत पावनलोलयै, तेलि ८०८०

जानकी को साथ ले आने लगा तो निकट घेर लेने वाले कपियों (तथा) राक्षसों को घन-वेत्र को हाथ में लेकर, अदयता से रुलाते मारने पर उत्पन्न महा कल-कल को तब सुनकर राम ने राक्षसराज को देखकर (कहा)— "ओहो विभीषण! सोचने पर ऐसे उग्रकृत्य तुम्हारे लिए उचित हैं ? इनमें हमारे लिए अजनबी व्यक्ति कौन हैं ? इस प्रकार इन्हें सताना चाहिए था ? (नहीं) ॥ ८०७० ॥

—(उन्हें) निवारित नहीं करना चाहिए । सभी लोग मिलकर (सीता को) देख लें। इसमें क्या हानि है ? काल-देशान्तर-क्रम में नष्ट न होनेवाला पातिव्रत्य ही गोपन की वस्तु है। इतना ही है, विलसित दुर्ग, गृह, परदे (आदि) वनिताओं के लिए कदापि आवरण नहीं हैं। व्यसनों में, विवाहों में, युद्धों में, इष्टों (मित्रों) में, उत्सवों में वारिजाक्षियों को आवरण नहीं चाहिए। मैं यहाँ हूँ, यह रणभूमि है। अतः कोई हानि (बुरा) नहीं है। आने दो।" (ऐसा) कहने पर विभीषण उस राघव के आदेशानुसार पद्माक्षी को लाया। तब कल्याणी अवनी-तनूजा (सीता) ने, उमड़ने वाले आनन्द के हृदय में भरकर, बाहर निसृत होने के समान, समस्त तनुलता पर स्वेद के फैल जाने पर, राकासुधाकर

चिर विरहाग्नुल जॆच्चॆर नार्चि । परमानुरागसंभरितात्म यगुचु
नॆचिन कोर्कुल नॆलमि दीपिंप । जूचॆ जूडदनाक; चूचि राघवुनि
नवनत - वदनयै, यश्रुपूरमुलु । धवळविलचनोत्पलमुल दोरुग,
भयमुन ब्रियमुनु बैपाटु सिग्गु । बयिबडुचुंड नप्पडतुक युंडॆ;
नप्पुडु रघुरामुडात्मलो गोप । मुप्पोंग दप्पक युग्मलि जूचि,
“मानंबॆ प्राणंबु महितवृत्तुलकु; । मानाभिरक्षण मति जित सेसि,
मानिनि! विनुमु ना महित वर्तनकु । ने निन्नु दॆच्चिति; नितियै कानि,
यिति! नी दॆस नाकु नितकु मिगुल । नंतरंगंबुन नासक्ति लेदु;
काकुत्स्थ कुलजुलु गांभीर्यधनुलु । लोकरक्षणक्रतुलु लोकैकनुतुलु;
वारि वंशंबुन वच्चि जन्मिचि । भूरि वृत्तोन्नति बोकाचॆनंड्रु; ८०९०
पगवानियिंटिलोपल नुन्ननिन्नु । दगिलि वरिंचुट धर्मंबु गादु;
‘आलि गोल्पडिपोयि यक्कटा ! । मगुडु देलेडितं’ डनु तिट्टुपाटुनकु
वॆरचि तॆच्चिति गानि वॆलदि! निन्नॊल्ल; नॊरपैन चोटुल नुंडु पो”
म्मनिन

रामचन्द्र के अवलोकन के अमृतपान में लीन होकर, ऊभचूभ होकर, ॥ ८०८० ॥

—चिर-विरहाग्नियों को झट बुझाकर, परम-अनुराग से संभरित हृदय वाली हो, उत्कट इच्छाओं के प्रदीप्त होने पर, यह न सोच कि ऐसा नहीं देखना चाहिए, (राम को) देखा। राघव को देखकर, अवनतवदन वाली होकर, धवल-विलोचन-उत्पलों से अश्रुपूर के झरने पर, भय, प्रीति, लज्जा से अभिभूत होकर, वह नारी खड़ी रही। तब रघुराम ने मन में क्रोध के उमड़ने पर, रमणी को अवश्य देखकर (कहा)— “महित-वृत्ति वालों के लिए मान (आत्मसम्मान) ही प्राण है। मान के अभिरक्षण का मन में चिंतन कर, हे मानिनि ! सुनो, अपने महित-वर्तन (आचरण) के कारण मैं तुम्हें लाया हूँ। इतना ही है, किंतु हे नारी ! तुम्हारे प्रति मेरे अंतरंग में किंचित् भी आसक्ति नहीं है। काकुत्स्थकुलज गंभीरता के धनी हैं, लोक-रक्षण-तत्पर हैं, लोकैक-विनुत (-प्रशंसित) हैं। उनके वंश में जन्म लेकर, (यदि मैं तुम्हें ग्रहण करूँ तो) लोग कहेंगे कि भूरि-वृत्ति के औन्नत्य को छोड़ दिया है, ॥ ८०९० ॥

—शत्रु के घर में रही हुई तुम्हारा चाहकर वरण करना (स्वीकारना) धर्म नहीं है। ‘हाय, पत्नी को खो बैठकर पुनः उसे ला न सका’ इस निंदा से भीत होकर हे नारी ! तुम्हें लाया (छुड़ाया) हूँ। (मैं)

जननाथु परुषभाषासायकमुलु । गौनि काडि नोंप्पिप गुवलयनेत्र
यप्पटि संतोषमंतयु मऱचि । चेंप्प नोराडक चेष्टलु दक्कि
तापंबु बोंदि युत्तलमंदि कुंदि । कोपिंचि वगचि डग्गुत्तिक वेंट्टि,
जलजाप्तकुलु रामचंद्रु जूचि । येलनाग येड्चुचु निट्लनि पलिकें;
"देव! नाचित्तंबु देंलियदे नीकु? । नीवु सर्वज्ञ मनीषिवि गावे ?
ननु देंच्चि ना पिन्ननाटनुंडियुनु । बेंनिचि रक्षिचि गांभीर्यंबु निंचि
यी नीचभाषल नेल नोंप्पिप ? । नेनेड? नीवेड? यीमाटलेड? ८१००
भूदेविकडुपुन बुट्टिति; जनकु । डादट ननु बेंचें; नंतटिमीद
नृपशिरोमणिवैन नी देविनैति; । जपलवधूवृत्ति सैचुने नाकु ?
मगवारु नम्मनि मगुवल नाडु । तगवुन नाडेंदु तगवु वोविडिचि;
नम्मनिवाडवु नाडुनन्नरय । बोंम्मनि हनुमंतु बुत्तेंचुनपुडे
चेंप्पि पुत्तेंचिन जैनटि प्राणमुल । नप्पुडे विडुवने यडियासलुडिगि"
यनि लक्ष्मणुनि जूचि "यनघ ! मीयन्न । यनुमानमुडिगि नन्नाडुचुन्नाडु
तगुने यीक्रिय नाड दरमे न तरमे । तगनिमाटलु नीकु दगदनदगदे ?
कलपुण्यगुणमुल गडचन्न प्रोड; । वोलसि नीयेंरुगनि युचितंबु लेदु

तुम्हें नहीं चाहता। उचित स्थानों पर जाकर रह जाओ।" (ऐसा) कहने पर जननाथ के परुष-भाषा (वचन) रूपी सायकों के गड़कर पीड़ित करने पर, कुवलयनेत्र वाली (सीता) उस समय के समस्त आनन्द को भूलकर, अवाक् (एवं) स्तंभित हो, तप्त होकर, बिलख कर, क्रुद्ध हो, रोदन कर, गद्गदकंठ से जलजाप्तकुल वाले रामचंद्र को देखकर, तन्वंगी रोती हुई यों बोली— "हे देव ! मेरे चित्त को तुम नहीं जानते हो ? तुम सर्वज्ञ मनीषी नहीं हो ? मुझे लाकर मेरे बचपन से पालकर, रक्षाकर, गंभीरता को भरकर, इन नीच भाषाओं (वचनों) से पीड़ित करना क्यों ? मैं कहाँ ? तुम कहाँ ? ये बातें कहाँ ? ॥ ८१०० ॥

—भूदेवी के गर्भ से उत्पन्न हुई हूँ। जनक ने लाड़ से मुझे पाला-पोसा। उस पर नृपशिरोमणि तुम्हारी पत्नी बनी। मैं चपल वधू वृत्ति को सहन कर सकूँगी ? स्त्रियों पर विश्वास न रखनेवाले पुरुषों के समान, न्याय तजकर, क्यों ऐसा बोलते हो ? विश्वास न करते तो उसी दिन जब मुझे खोजने के लिए हनुमान को भेजा था, तभी कहलाकर भेजते तो तभी दुराशाओं को छोड़, इन दुष्ट प्राणों को छोड़ देती।" (ऐसा) कह लक्ष्मण को देख (कहा) —"हे अनघ ! तुम्हारा अग्रज संदेह छोड़ (निस्संकोच भाव से) मुझे दूषित कर रहा है। इस प्रकार कहना उचित है ? क्या मैं इन्हें सह सकती हूँ ? मना करना तुम्हारे लिए उचित नहीं है ? समस्त

ना वर्तनमु जूड ना यंदु गलदे । भाविप गल्मषभावमितैन ?

सीत यग्निप्रवेशमु

शंकिपवलदु; विचारंबुसेसि । यिक मीनिश्चयमिट्टिदयेनि ८११०
यिक्कड सौदवेर्चु; डिंदरु जूड । स्रुक्कक यनलंब सौच्चेद; जौच्चि
पावकुमुखमुन बतिकिक बरम । पावनुरालनै ब्रह्मादिसुरल
मेंच्चिचि मिम्मेल्ल मेंच्चिचि भूमि । जौच्चेद" ननवुडु स्रुक्कि लक्ष्मणुडु
रामु गनुंगोनि रामुकन्नेंङिगि । भूमिज कप्पुडद्भुतमुगा देंच्चि
सौद वेर्चुटयु महीसुत सीत ब्रीति । सौदजूचि प्रणमिल्लि सौदचुट्टु-
दिरिगि
यभिनुतुलोनरिंचि यग्निदेवुनकु । नभिमुखियै निल्चि हस्तमुल् मोगिचि
"धर्मदेवतलार ! धर्मंबुलार ! । निर्मलमतुलार ! नियतात्मुलार!
जगदधिपतुलार ! चंद्रार्कुलार ! । निगमसाधकुलार ! निगमंबुलार !
संचितोन्नतुलार ! सर्वज्ञुलार ! । पंचभूतमुलार ! परहितुलार !
नरवरुलार ! किन्नरवरुलार ! । सुरवरुलार ! भूसुरवरुलार ! ८१२०

पुण्यगुणों से युक्त प्रौढ हो । ऐसा कोई औचित्य नहीं जो तुम नही जानते हो । मेरे वर्तन (आचरण) को देखने पर, सोचने पर मुझमें तनिक भी कलमषभाव है क्या ?

सीता का अग्निप्रवेश

—शंका मत करो । विचार कर, यदि ऐसा ही तुम्हारा निश्चय (निर्णय) है तो ॥ ८११० ॥

—यहाँ चिता जलाओ । इतने लोगों के देखते हुए, व्याकुल हुए बिना अनल में प्रवेश करूँगी । प्रवेश कर पावक के मुख से पति के लिए परम पावन बन, ब्रह्मा आदि सुरों को प्रसन्न कर, आप सबको प्रसन्न कर, भूमि में प्रवेश कर जाऊँगी ।" ऐसा कहने पर व्याकुल होकर लक्ष्मण ने राम को देख, राम की दृष्टि (संकेत) को जानकर, भूमिजा के लिए तब अद्भुत रूप से लाकर चिता लगाई । महीसुता सीता प्रीति से चिता को देखकर, प्रणाम कर, चिता की प्रदक्षिणा कर, अभिनुतियाँ कर, अग्निदेव के अभिमुख हो खड़ी रहकर, हाथ जोड़कर, (बोलीं) —"हे धर्मदेवताओ ! हे धर्मो ! हे निर्मलमतिवालो ! हे नियतात्माओ ! हे जगदधिपतियो ! हे चन्द्रार्को ! हे निगमसाधको ! हे निगमो ! हे संचित-उन्नतिवालो ! हे सर्वज्ञो ! हे पंचभूतो ! हे परहित करनेवालो ! हे नरवरो ! हे किन्नरवरो ! हे सुरवरो ! हे भूसुरवरो! ॥ ८१२० ॥

करुणाढ्युलार! दिक्पतुलार! विमत । हरुलार ! पापसंहरुलार !
येनु
घन मनोवाक्काय कर्मंबुलंदु । बनिगोँन रामभूभर्तकु दप्प;
दप्पिन नी यग्नि धरियिंपलेक । यिप्पुड नीरोँदु निदस्र जूड;”
ननियोँप्प बलुकुचु नम्महीपुत्रि । तनचित्तमुननुन्न तात्पर्यमोँप्प
गनुगोँनि ब्रह्मांडकटकंबु निंडि । यनुपमाकारंबुलै पेँचि पेँचि
योँडोँट शिखल महोदग्रमगुचु । मंडेँडु नग्निलो मानिनि सोँच्चे;
नावंतयुनु गंददा पूवुबोडि । पावकसरसिलो बदिलमै निलिचि;
करचरणाननकमलंबुलोँप्प । वरकुचद्वय चक्रवाकंबुलोँप्प
नवबाहुवल्ली मृणाकंबु लोँप्प । ब्रविमल त्रिवळीतरंगंबुलोँप्प
महितलोलन्नेत्रमत्स्यंबुलोँप्प । सहज नीलालक शैवालमोँप्प ८१३०
गमलिनि तेँऱगुन गरमोँप्पुचुन्न । कमलाक्षि गनुगोँनि कपुलु राक्षसुलु
शोकिंप दोँडगिरि; सुरसिद्धसाध्य । लोकंबुलेँल्ल नाक्रोशिपदोँडगेँ;
ना मरुत्तनयुंडु नर्कनंदनुडु । सौमित्रियुनु विभीषणुडंगदुंडु
दरुचरयूथपुल् दानवाधिपुलु । सरमादुलैन राक्षसवधूजनुलु

—हे करुणाढ्यो ! हे दिक्पतियो ! हे विमत को हरनेवालो ! हे पापसंहारको ! मैं घनमनोवाक्-कार्य-कर्मों में, चाहकर रामभूभर्ता को नहीं भूलती । यदि भूली होऊँ तो इस अग्नि को धारण (सहन) न कर सक, इतने लोगों के देखते हुए अभी भस्म बन जाऊँगी ।” ऐसा शोभा से कहती हुई, वह महीपुत्री अपने चित्त के तात्पर्य (भाव) के व्यक्त होने पर, देखकर, ब्रह्मांड-कटक में भरकर, अनुपमाकार हो विजृंभित होकर, सर्वत्र शिखाओं से महोदग्र होते हुए बलने वाली अग्नि में मानिनी ने प्रवेश किया । पावक-सरसी में खड़ी रहकर भी वह पुष्पांगी तनिक भी नहीं मुरझाई । कर-चरण-आनन (रूपी) कमलों के शोभित होने पर, वर-कुच-द्वयरूपी चक्रवाक के शोभित होने पर, नव-बाहु-वल्लीरूपी मृणालों के शोभित होने पर, प्रविमल त्रिवली रूपी तरंगों के शोभित होने पर, महित-लोल-नेत्ररूपी मत्स्यों के शोभित होने पर, सहज-नील-अलक-रूपी शैवाल के शोभित होने पर, ।। ८१३० ।।

—कमलिनी के समान अधिक शोभित होनेवाली कमलाक्षी को देखकर कपि और राक्षस शोक करने लगे । समस्त सुर-सिद्ध-साध्य-लोक आक्रोश करने लगा । वह मरुत्-तनय, अर्कनन्दन, सौमित्री और विभीषण, अंगद, तरुचर-यूथप (-सेनापति), दानवाधिप, सरमा आदि राक्षस वधूजन अधिक शोक से संतप्त होते रहे । अधिपति निर्विण्ण बना रहा । तब हर, वाग्वर

नधिकशोकंबुन नडलुचुनुंडि; । रधिपति निर्ण्णुडै युंडै; नंत
हरुडु वाग्वरुडुनु नखिलदिक्पतुलु । गरुडगंधर्वुलु खचरवल्लभुलु
वरविमानस्थुलै वच्चिरंदरुनु । बरग ब्रत्युत्थानपरुडैन रामु
वीक्षिचि, "वेदांतवेद्युंड, वखिल । साक्षिवि, कर्तवु, संविदाकृतिवि,
निर्वाणपरुडवु, नित्यपूर्णुडवु, । सर्वसंवेदिवि, जगदेकनिधिवि,
यक्षीणपुण्युंड, वव्यक्तपरुड, । वक्षरत्रयमूर्ति, वाद्यंतपतिवि, ८१४०

भुवनंबुलब्धुलु भूतमुल् नदुलु । सवनंबुलद्रुलु जंतुसंततुलु
दरुवुलु दॅरुवुलु दंत्रमुल् विधुलु । सुरलु नक्षत्रमुल् श्रुतुलु शास्त्रमुलु
गनुगॉन वेलु लक्षलु गोट्लु गणन । ननुपम शतकोट्लरसि यॅव्वरुनु
गडगानरॉक्कॉक्क कमलजांडमुन । बडि; यट्टि ब्रह्मांडपंक्तुलु गलसि
नीकुक्षिनुंडु; वानिकि लॅक्कलेदु; । नीकड गानंग नेर्तुरे यॉरुलु ?
भवदीयमायाप्रभावंबु दॅलिय । भवदीयुलकु गाक परुलकु वशमॅ ?
यॉकनि जंपिति; गॅलिच; तॉकडु निन् गॅलिचॅ; ।

नॉकडु साध्युडु; नीकु नॉकडॅक्कुडनुचु
स्तुतिनिंदलवि निन्नुसोकवॅन्नडुनु; । नतिमहत्त्वोन्नतुलट्टिवि नीकु;
दासभावंबुन दक्क नॉडॉकट । नी संविदाकृति नित्यदुर्घटमु;

(ब्रह्मा), अखिल-दिक्पति, गरुड़-गन्धर्व, खचर-वल्लभ सभी वर विमानस्थ हो आए। शोभा से प्रत्युत्थान करनेवाले राम को देखकर (बोले) —"(तुम) वेदांतवेद्य हो, अखिलसाक्षी हो, कर्ता हो, संविदाकृतिवाले हो, निर्वाणपर हो, नित्यपूर्ण हो, सर्वसंवेदी हो, जगदेकनिधि हो, अक्षीणपुण्य वाले हो, अव्यक्तपर हो, अक्षरत्रयमूर्ति हो, आद्यंतपति हो, ॥ ८१४० ॥

—भुवन, अब्धियाँ, भूत, नदियाँ, सवन, अद्रियाँ, जंतु-संततियाँ, तरु, मार्ग, तंत्र, विधियाँ, सुर, नक्षत्र, श्रुतियाँ, शास्त्र (आदि) देखने में सहस्त्र, लक्ष, कोटियाँ, गणना में अनुपम शतकोटियाँ-सोचकर कोई जिनका एक-एक कमलजांड (ब्रह्मांड) में अन्त नहीं पा सकते, ऐसी ब्रह्मांड-पंक्तियाँ (समूह) मिलकर तुम्हारी कुक्षि में रहते हैं। उनकी कोई गिनती नहीं है। अन्य कोई तुम्हारा अन्त (पार) पा सकते हैं? भवदीय-मायाप्रभाव को जानना भवदीयों के अतिरिक्त अन्यों के वश में है? (नहीं)। एक को मारा, (एक को) जीता, किसी ने तुम्हें जीता, कोई (तुम्हारा) साध्य (बस में) है, तुमसे कोई बढ़कर है, ऐसी स्तुति-निंदाएँ तुम्हारा स्पर्श ही नहीं कर सकती हैं। ऐसी हैं तुम्हारी अतिमहत्त्व-उन्नतियाँ। दासभाव के अतिरिक्त और किसी से तुम्हारी संविदाकृति को जानना दुर्घट (कठिन)

नरनाथ ! नीवादिनारायणुंड; । वरय ना जानकि यय्यादिलक्ष्मि; ८१५०
लोकैकरक्षणलोलत नीवु । काकुत्स्थुडनग ब्रख्यातुंडवैति;
निन्नेल मऱचिति ? निष्ठुरवह्नि । नुन्न जानकि जूचुचुंडुट दगदु;
पिलिपिंचि कैकॊम्मु; प्रीति मन्निंपु; । वलवदुपेक्षिंप वनजाक्षि निंक”

अग्निदेवुडु सीतनु श्रीरामुनि कॊप्पगिंचुट

ननि पॆक्कुभंगुल नखिलदेवतलु । गनुगॊनि पलुकुचो गडगि पावकुडु
“वनित सॆमर्पदु; वाडदुमोमु; । तनुवल्लि गंददु; तलकदिंतयुनु;
बॊलति धरिंचिन पुष्पमालिकलु । नलगवु; तॆरलदु नाति मैपूत”
यनुचु दैत्युलु गपुलंदंद निक्कि । कनुगॊंचु नडलुचु गळदश्रुलगुचु
“जगतीशुडीपुण्यसति निंत पलुक । दग” दंचु “नी तॆंपु तग” दंचुनुंड
गोमलि दगनॆत्तिकॊनि वच्चि प्रीति । रामसन्निधि निलिप रामुतो ननियॆ;
“नीवॆ दैवंबुनु; नीवॆ प्राणंबु; । नीवॆ चुट्टंबुनु; नीवॆ सर्वंबु ८१६०
गा नुंडु; नॊंडोकगति जित्तवृत्ति । गानदी कल्याणि; कडुमद्दरालु;

है। हे नरनाथ ! तुम आदिनारायण हो, सोचने पर यह जानकी आदि-लक्ष्मी है। ॥ ८१५० ॥

—लोकैक-रक्षण-लोलता (तत्परता) से तुम काकुत्स्थ के रूप में प्रख्यात हुए हो। अपने आपको क्यों भूल गए ? निष्ठुर-वह्नि में स्थित जानकी को देखते रहना उचित नहीं है। बुलवाकर स्वीकारो। प्रीति से आदर करो। (अब) आगे वनजाक्षी की उपेक्षा करना उचित नहीं है।”

अग्निदेव का सीता को श्रीराम को सौंपना

—ऐसा अनेक भाँतियों से अखिल देवताओं के (राम को) देख, कहते समय पावक के सयत्न (यह कहने पर कि) “वनिता स्वेदित नहीं हो रही है, मुख कुम्हला नहीं रहा है, तनुलता नहीं मुरझा रही है, किंचित् भी विकल नहीं हो रही है, स्त्री (सीता) के धारण किए पुष्पमालिकाएँ चूर-चूर नहीं हुई हैं, नारी का अंगराग नहीं छूटा है”, दैत्य (और) कपियों के सर्वत्र उचक कर देखते हुए, संतप्त होते हुए, गलदश्रुवाले होते हुए, (यह कहते रहे कि) ‘जगदीश को इस पुण्यसती के प्रति ऐसा नहीं कहना चाहिए,’ “यह साहस उचित नहीं है,”। (पावक ने) कोमली (सीता) को उचित रीति से उठाकर, प्रीति से राम की सान्निधि (पास) में रख, राम से (यों) कहा—“(यह नारी) तुम्हीं को दैव, तुम्हीं को प्राण, तुम्हीं को सर्वस्व, ॥८१६०॥

रावणुपनुपुन राक्षसस्त्रीलु । वेवुरु वेवेल विधमुल वच्चि
तऱिमि नॊप्पितुरु; दारुणक्रियल । वॆऱपितु; रलतुरु; वॆड्डु पॆट्टुदुरु;
इन्नियुनु जेयंग नॆंतयु साध्वि । तन्नित मऱवदु; तलकदॆंतयुनु;
नीयंदॆ चित्तंबु निलिपि सर्वंबु । नीयधीनमु सेसि निल्चॆ नी यिंति;
कैकॊम्मु नॆम्मि नीकमलाक्षि निंक;। गैकॊनकुंडुट गादु धर्मंबु”
अनि पावकुडु पल्क ना रामविभुडु । दनमदि नॊक्कित तडवु चिंतिचि
यादिदेवुंडु ब्रह्मादुलु विनग । ना देवसभलोन नप्पुडिट्लनियॆ;
“नी यिंति दॆस बापमितयु लेदु; । नायॆड दप्पदुन्नतचित्तुरालु;
वॆऱपुनु भक्तियु विमलशीलंबु । नॆऱुकयु धैर्यंबु नीयिंतियंदु ८१७०
गल; दॆऱुंगुदु; नट्टुगाक दैत्युनकु । मॆलतुक गदियरामियु नॆऱुंगुदुनु;
‘अधिगत बहुदोषुडगु दशग्रीवु । डधिक बलोन्मत्तुडै कॊनिपोयि
तन विनोदारामतरुमध्यसीम । नुनिचिन जानकि नूरक तॆच्चॆ
निलसीद रघुरामु; डिट्टिकामुकुडु । गलडॆ ? दुष्कीर्तिकि गलगडेमियुनु’
ननि लोकमुन बुट्टु नपवादमुनकु । जनकज निब्भंगि शासिपवलसॆ;

—मानकर रहती है। यह कल्याणी अन्य प्रकार की चित्तवृत्ति को नहीं जानती, अति मुग्धा है। रावण के आदेश पर, हज़ारों राक्षसस्त्रियाँ, हज़ारों विधियों से दबाकर सताती हैं, दारुण क्रियाओं से भीत करती हैं, थका देती हैं, वंचना करती हैं, इतना करने पर भी साध्वी अपने को तनिक भी नहीं भूलती है, तनिक भी विकल नहीं होती है। यह नारी तुम्हीं में चित्त को स्थिर करके, सर्वस्व तुम्हारे अधीन करके रह गई है। अब प्रेम से इस कमलाक्षी को ले लो। न स्वीकारना धर्म नहीं है।” ऐसा पावक के कहने पर उस रामविभु ने अपने मन में थोड़ी देर सोचकर, आदिदेव, ब्रह्मा आदि सुनें, ऐसा उस देवसभा में तब यों कहा— “इस नारी में कोई पाप नहीं है। यह उन्नतचित्त वाली मेरे प्रति दोष नहीं करती है। इस नारी में भय, भक्ति, विमलशील, ज्ञान, धैर्य, ।। ८१७० ।।

—(आदि गुण) हैं। (यह मैं) जानता हूँ। यही नहीं, दैत्य का इस नारी के निकट न आ सकना भी जानता हूँ। ‘अधिगत बहुदोषवाला दशग्रीव ने अधिक बलोन्मत्त हो ले जाकर, अपनी विनोदाराम-तरु-मध्यसीमा (मध्यप्रांत) में रख लिया। उस जानकी को पृथ्वी पर रघुराम ने यूंही (परीक्षा किए बिना) ले लिया। ऐसा कामुक भी कहीं है? दुष्कीर्ति के कारण बिलकुल क्षुब्ध नहीं होता।’ ऐसा लोक में उत्पन्न होनेवाले अपवाद (अफ़वाह) के कारण जनकजा को इस प्रकार शासित (दंडित)

गल शंकलन्नियु गडतेऱॆ; निक । मॆलतुक गैकॊंटि; मी माट विंटि;"
ननि समीपंबुन ना देवि नुंड । बनिचि राघवुडु चूपऱु सूडनॊप्पॆ
दिविनुंडि रोहिणिदेवियुयु दानु । नविरळप्रभ नॊप्पुनमृतांशु भंगि;
नप्पुडु सकललोकारध्यचरणु । डॊप्पु महोल्लासमुल्लंबु निंड
श्रीमहादेवुडाश्रितकल्पतरुवु । रामु गनुंगॊनि रागिल्लि पलिकॆ;
८१८०

"नॆव्वडुद्योगिंचु नितटिपनिकि ? । नॆव्वडु साधिंचु नी जगद्धितमु ?
लोककंटकुडु द्रिलोकभीकरुडु । नाकादिलोक प्रणामसाधकुडु
रावणु डखिल विद्रावणबलुडु; । रावणु मर्दिपरादॆव्वरिकिनि;
वीनितो बगगॊनि वीनिपै विडिसि । वीनि निव्विधि जंपि वीनि
गाल्पिचि
बलविक्रमक्रमप्रौढिम मॆऱय । गलरॆ लोकमुन नॆक्कडनैन मगलु ?
आ रावणुनि जंपितनघ ! नीवलन । नीरॆडु भुवनमुलिटमीद ब्रदिकॆ;
मी तंड्रि दशरथमेदिनीनाथु । डॆतॆंचॆ दिविनुंडि यी यॊप्पुसूड;
नदॆ विमानारूढुडै युन्नवाडु । त्रिदशगणाधीशदीप्तुडै वाडॆ;

करना पड़ा। अवस्थित सभी शंकाएँ दूर हुई हैं। अब नारी को ग्रहण किया है। आपकी बात सुनी (मान ली) है।" (ऐसा) कह देवी को समीप रहने का आदेश देकर राघव देखने वालों के लिए ऐसा शोभित हुआ मानों आकाश में रोहिणीदेवी के साथ अविरल प्रभाओं से शोभित अमृतांशु (चन्द्र) हो। तब सकल लोकाराध्य चरणवाले श्रीमहादेव ने हृदय में महोल्लास के भर जाने पर, आश्रित-कल्पतरु राम को देखकर राग से कहा— ॥ ८१८० ॥

—"किसने इतने (महान्) कार्य का उद्योग किया है ? कौन (इस प्रकार) जगत्-हित की सिद्धि (सम्पन्न) करेगा ? लोककंटक, त्रिलोक भीकर, नाकादि लोकों के प्रणाम का साधक, (और) अखिल-विद्रावण बलवाला है रावण। (ऐसे) रावण का मर्दन करना किसी के बस की बात नहीं है। इससे वैर (मोल) लेकर, इस पर चढ़ाई कर, इसे इस प्रकार मारकर, इसे जलाकर, कहीं लोक में (अन्य) पुरुष बलविक्रम-क्रम-प्रौढता में प्रदीप्त हो सकते हैं ? हे अनघ ! उस रावण को मार डाला है। तुम्हारे कारण अब आगे चौदह भुवन जी उठे। इस शोभा को देखने के लिए आपके पिता दशरथ-मेदिनीनाथ (-राजा) दिवि से पधारे हैं। वही विमानारूढ़ होकर हैं, वही त्रिदश-गणाधीशों से दीप्त हैं। उस जगद्धितकृत्यवाले सत्यनिधि

या जगद्धितकृत्युडगु सत्यनिधिकि । बूजानमस्कारमुलु सेय बौम्मु”
अनबुडु रघुरामुडभिरामशीलु । डनुजन्मयुक्तुडै यवनीशुनकुनु ८१९०
निंडिन प्रेमंबु निष्ठयु निगुड । दंडप्रणाममुल् दग जेयुटयुनु
जित्तसम्मदमुन जेर्निड ग्रुच्चि । यॆत्ति कौगिट जेर्चि यिनवंशुडनियॆ;
“गैकेयिमाटलाकर्णिंचि निन्नु । लोकरक्षणकळालोलु गानलकु
बुच्चिति; दगविंत पोलिपनैति; । निच्चलो शुभकर्ममॆरुगलेनैति;
निन्नु बट्टमुगट्टि नीवु राज्यंबु । कन्नुलपंडुवुगा जेयुचुंड
जूचि लोकंबुलु सुखियिंचुचुनिकि । जूचु पुण्यमु नाकु जौप्पडदय्यॆ;
बुत्रशोकंबुन बोयिन नाकु । सुत्रामलोकंबु सोर बूट गलदॆ ?
या तापमॆप्पुडु नंतरंगमुन । नाततस्फुटवह्निनयै मंडुचुंडु;
नमरलोकंबुन नाऽऽनिचिच्चु । शमियिंचॆ नेडु नी सन्निधि जेसि;
कमलाप्तसमतेज ! कमलाभिराम !। कमलाप्तवंशमक्षरकीर्तुलोप्प
८२००
नीवयोध्यकु बोयि निखिलधर्ममुलु । भाविंचि मदिबॆट्टि पट्टंबु बूनि
‘रामुडु लोकाभिरामु’ डन् नुतुल । तो महियेलुमु तुदमुट्ट” ननुचु
सौमित्रि गनुगौनि “सौमित्रि ! नीवु । रामुनि वॆनुक नरण्यभूमुलकु

को पूजा (तथा) नमस्कार करने जाओ ।” ऐसा कहने पर अभिरामशीलवाले रघुराम ने अनुजन्मयुक्त हो, अवनीश (राजा-दशरथ) को ॥ ८१९० ॥

—पूर्ण प्रेम और निष्ठा के प्रकाशित होने पर, उचितरीति से दंड-प्रणाम किया। (करने पर) चेतोसम्मोद से हाथभर उठा लेकर, आलिगन में लेकर इनवंशवाले ने कहा—“कैकेई की बातें सुनकर, तुम्हें लोकरक्षणकलाकुशल को काननों में भेजा। न्याय का विचार नहीं किया। मन में शुभ कर्म को जान न सका। तुम्हारा राजतिलक कर, नेत्रपर्व के रूप में तुम्हारे राज्य करते देखकर, लोकों के सुखी बनते देखने का पुण्य मुझे प्राप्त नहीं हुआ। पुत्र शोक से जाने वाले मुझे सुत्राम (इन्द्र) -लोक में प्रवेश करने का अधिकार कहाँ ? वह ताप सर्वदा अंतरंग में आतत-स्फुट-वह्नि होकर जलता रहता है। अमरलोक में न बुझने वाली ज्वाला आज तुम्हारी सन्निधि के कारण बुझ गयी। हे कमलाप्ततेजवाले ! हे कमलाभिराम! कमलाप्त-वंश की अक्षर-कीर्तियों की शोभा बढ़े, (ऐसा) ॥ ८२०० ॥

—तुम अयोध्या को जाकर, निखिल धर्मों की सोचकर, मन रखकर, राजपदग्रहणकर, ‘राम लोकाभिराम है’ ऐसी प्रस्तुतियों के साथ अन्त तक मही पर शासन करो।” (ऐसा) कहते हुए सौमित्र को देखकर (कहा) —“हे

जनुदेंचि युत्तमसाहसक्रियल । ननघुडै वर्तिंचि; ततुलपुण्युडवु;
मेलकुव निटमीद मीयन्न मनसु । नलगकुंडग नीवु नडवुमी" यनुचु
दनकर्थि म्रोक्कि यौदल वांचियुन्न । जनकनंदन जूचि जननाथुडनियै;
"बरम पातिव्रत्यपदशुद्धि नीकु । सरियेव्व ? रुत्तमसाध्विवि नीवु;
विनु रामुडाडिन निष्ठुरोक्तुलकु । गिनियकु; नोव्वकु; कीड्पडियुंडु;
घनकीर्तियुतुल राघवु बोलु सुतुल । गनुमु; पुण्यमुलेल्ल गैकोनिमनुमु;"
अनि मुव्वुरनु मेप्पुललर दीविंचि । तनलोन मोदिंचे दशरथेश्वरुडु;
८२१०

चंद्रशीतलु रामजननाथचंद्रु । निंद्रादिदेवतलेल्ल वीक्षिंचि
"मनुजुंडवै नीवु माकुगा वच्चि । जनियिंचि राक्षसक्षयमु गाविंचि,
यी भंगि दु:खंबुलिन्नियु नोर्चि । भूभारमेंतयु बुच्चि पोवैचि,
मम्मिट रक्षिंचि मा जीवनमुलु । नेम्मितो माकिच्चि निलुकडलोसगि
पुच्चुचुन्नाडवु; पुण्यात्म ! वरमु । लिच्चेद; मडुगुमभीष्टंबुलेलमि"
ननवुडु रामु डायमरवरुल जूचि । तनलोन जिरुनव्वु दळुकोत्तबलिकॆ;
"निंपोंद मीकृप नेल्ल काम्यमुलु । संपूर्णमुलु माकु जगमुलयंदु;

सौमित्र ! तुमने राम के पीछे-पीछे अरण्यभूमियों में आकर उत्तमसाहसक्रियाओं से अनघ हो आचरण किया। (तुम) अतुलपुण्यवाले हो। सावधानी से आगे भी तुम्हारे अग्रज के मन को दुखी बनाए बिना तुम आचरण करते रहो।" कहते हुए, अपने को चाहकर प्रणामकर, सिर झुकाए खड़ी जनकनन्दना को देखकर जननाथ ने कहा—"परम-पातिव्रत्य-पदशुद्धि में तुम्हारे समान कौन है ? तुम उत्तम साध्वी हो। राम ने तुम्हारे प्रति जो निष्ठुर-उक्तियाँ कही हैं, उनसे रुष्ट मत होना, पीड़ित न होना, अपमानित हुए बिना रहना। घन-कीर्तियुत (तथा) राघव के सम पुत्रों को जन्म दो। समस्त पुण्यों को लेकर जीवित रहो।" ऐसा तीनों को प्रशंसायुक्त रूप से आसीसकर, अपने में दशरथेश्वर मुदित हुआ ॥ ८२१० ॥

—चन्द्र-शीतल राम-जननाथ-चन्द्र को इन्द्र आदि समस्त देवताओं ने देखकर (कहा)—"मनुज बन तुम हमारे लिए आकर, जन्म लेकर, राक्षसक्षय करके, इस प्रकार इतने दुखों को सहकर, समस्त भूभार को दूरकर, यहाँ हमारी रक्षाकर, हमारे जीवन प्रेम से हमें देकर, प्रेम से हमें अस्तित्व प्रदान कर, भेज रहे हो। हे पुण्यात्मा ! वर देंगे, प्रेम से अभीष्ट माँग लो।" ऐसा कहने पर राम ने उन अमरों को देखकर, अपने मन्दहास के झलकने पर कहा—"शोभा से आपकी कृपा से जगों में समस्त काम्य हमारे लिए

दमतम भूमुल दम मंदिरमुल । दम बंधुजनमुल दम तनूभवुल
दम कळत्रादुल दगवॊप्प विडिचि । समरंबुलोपल सकल वानरुलु
दॆगि तम्मुडापक तिविरि ना कॊऱकु । बगऱतो बोराडि प्राणमुल् विडिचि ८२२०
युन्नारु; कपिवीरुलुन्नतात्मकुलु; । नन्नु मन्निंचुट नाकिडु वीरि"
ननवुडु विनि दिव्यु "लौगाक" यनुचु। "वनचर प्राणमुल् वच्चु गा"
कनिरि,
अनि महादेवुंडु नब्जसंभवुडु । ननघुलय्यिंद्रादुलैन दिक्पतुलु
मुनुलुनु सुरलु निम्मुल नुतिंचुचुनु । जन दशरथुडुनु जनियॆ नद्दिविकि;
ननिलोन दॆगिपड्ड यगचरुलॆल्ल । घननिद्र मेल्कनु कैवडि दोप
नमरुल वरशक्ति नद्भुतंबॆसग । समरोर्विनप्पुडु सप्राणुलगुचु
जनुदॆंचि या रामचंद्रुनि वेड्क । गनुगॊनि हर्षिंचि कलयम्रॊक्कुटयु
दनरार नंदऱ दयतोड जूचि । जनलोकनाथुडु संतोषमॊंदॆ;
नंत विभीषणुंडारामुतोड । नॆंतयु भक्तितो नेर्पड बलिकॆ;
"देव ! राघव ! धराधीश ! नीविक। वेवेग लंककु वेंचेसि, यचट ८२३०
नविरळमतितोड नभिषेकमिप्पु । डवधरिंपग वेळ" यनिन राघवुड़

संपूर्ण हैं। अपनी-अपनी भूमियों (देशों), अपने मन्दिरों, अपने बन्धुजनों, अपने तनूभवों, अपने कलत्र-आदियों को औचित्य रहित हो छोड़कर, समर में सकल वानर, साहस से, अपनी परवाह न कर, मेरे लिए शत्रुओं से लड़कर प्राण छोड़े हुए हैं ॥ ८२२० ॥

—कपिवीर उन्नत-आत्मावाले हैं। मेरा आदर करना अर्थात् इन्हें मुझे (वापिस) दीजिए।" ऐसा कहने पर सुनकर दिव्यों ने "ऐसा ही हो" कहकर, कहा कि "वनचरों के प्राण आ जाएँ'। (ऐसा) कह महादेव, अब्जसम्भव, अनघ इन्द्र आदि दिक्पति, मुनि, सुर प्रेम से स्तुति करते हुए गए, दशरथ भी दिवि को गया। युद्ध में कट गिरे समस्त अगचर महान् निद्रा से जाग उठने के समान दीखने पर, अमरों की वरशक्ति के अद्भुत (तत्त्व) के व्याप्त होने पर, समर-उर्वी में तब सप्राण हुए। (होकर) आकर उस रामचन्द्र को उत्साह से देखकर, हर्षित हो, मिलकर (एक साथ) प्रणाम किया। शोभा से सबको दयापूर्ण दृष्टि से देखकर जननाथ प्रसन्न हुआ। तब विभीषण ने उस राम से अधिक भक्तिभाव प्रकट होने पर कहा—"हे देव ! हे राघव ! हे धराधीश ! तुम्हारा अब लंका में झट पधार कर, वहाँ ॥ ८२३० ॥

वर जटाघनभार वल्कलयुतुडु । भरतुडक्कड दपोभरमुन नुंड
ततनि जूडक माकु ननुचितंबिचट । जतुरभोग क्रमसमुचित क्रियलु''
अनुटयु नुचितज्ञुडगु विभीषणुडु । घनभक्तियुक्तिमै गडक दीपिंप
गनकपात्रंबुल गंधाक्षतमुलु । घनरत्नभूषण कनकांबरमुलु
बुण्यनादमुलतो बुण्युलतोड । बुण्यचिह्नमुलतो बुण्यभामिनुल
बनिचि तौंप्पिचि निर्भरभाग्यधनुडु । विनयाभिरति विनुवीथि नंदंद
सुरदुंदुभुलु म्रोय सुरलु नुतिंप । सरस नच्चरलु सेसलुनिड जल्ल
रामलक्ष्मणुलकु राजीवनेत्र । भूमिनंदनकु नप्पुडु गट्टनिच्चै;
नंत रामुडु निश्चलानंदुडगुचु । नैंतयु ब्रियमंदि यिपौंद बलिकैं; ८२४०

"गडु बैद्दकार्यमुल् गलवु मार्किक । दडयुट गा; दयोध्यकु बोववलयु"
ननुटयु रामुनि नाविभीषणुडु । गनुगौनि भक्तितोगरमुलु मौगिचि,
"भीषणरणकेळि बेर्चि रावणुडु । रोषिंचि मुनु गुबेरुनि गैल्चिकौन्न
पुष्पकंबुन्नदि; पुरुहूतलोक । पुष्पकक्रममहाद्भुतवेगमदियु;
नैलमि ना पुष्पकमैक्कि सम्मदमु । वैलय नयोध्यकु वैंचेयवलयु;"

—अविरलमति से अब अभिषिक्त होने की वेला (समय) है।" कहने पर राघव ने कहा—"वर-जटा-घनभार-वल्कलयुत भरत के वहाँ तपोभार से रहते समय, उसे देखे बिना यहाँ चतुर भोगक्रम की समुचित क्रियाओं से रहना हमारे लिए अनुचित है।" कहने पर उचितज्ञ विभीषण ने घनभक्ति-युक्ति से प्रयत्न के दीप्ति होने पर, कनकपात्रों में गंधाक्षत, घनरत्नभूषण-कनकांबर पुण्यनादों, पुण्य (पुरुषों) के साथ, पुण्यचिह्नों के साथ पुण्यभामिनियों को बुलवाकर, निर्भर भाग्यधनी (विभीषण) ने विनयाभिरति से विनुवीथि में सर्वत्र सुरदुंदुभियों के मुखरित होने पर, सुरों के प्रशंसा करने पर, समीप से अप्सराओं के लाजाएँ (खील) बिखेरने पर, राम लक्ष्मण को, राजीवनेत्र वाली भूमि-नन्दना को तब धारण करने के लिए दिया। तब राम ने निश्चलानन्दवाला होता हुआ, अधिक प्रीत होकर प्रेम से कहा— ।। ८२४० ।।

—"हमारे लिए अधिक महान् कार्य करने हैं। अब हमें विलम्ब नहीं करना चाहिए, अयोध्या को जाना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर राम को देखकर उस विभीषण ने भक्ति से हाथ जोड़कर, (कहा)—"भीषण रणकेलि में विजृंभित हो रावण ने रुष्ट होकर, पूर्व में कुबेर को जीतकर पुष्पक प्राप्त किया है। पुरुहूतलोक (इन्द्रलोक) के पुष्पक-क्रम (समान) से महाद्भुत वेगवाला है वह। प्रेम से उस पुष्पक पर आरूढ़ होकर,

ननविनि रघुरामुडनुमतिचुटयु । जनि महासंभ्रमसंप्रीतुलॊप्प
नरिदि वैभवमुल नमरु पुष्पकमु । गरमर्थि दॆच्चॆ राक्षसकुलेश्वरुडु;
"रावणु लोकविद्रावणु शक्ति । भाविंचि यॆंतयु भयमुन बॊंदि
यरिमुरि गदलुपननिलुंडु गदिय । वॆरचुनो दीपमुल् वॆरचुनो कदल !"
नन रत्नदीपंबुलचलरूपमुल । बॊनर मंदानिलंबुलनॊप्पुदानि ८२५०
घनविमानोदर कलित पुष्पमुल । गॊनकॊन्नगंधमुल् ग्रोल नेतॆंचि
युलिकि लोपलजॊरकुन्न तुम्मॆदल । चॆलुवुन दीप्तुल चॆन्नगगलिचु
ना विमलद्वार हरिनीलमणुल । भाविंप नॆंतयु भासिल्लु दानि,
दलकॊनि तोटल दमपिन्ननाडु । वलपिंचि तमु बासि वच्चिचन जूचि,
पॊगुलुचु षट्पदंबुलतोड वच्चि । मॊगिनुन्न मल्लिकामुकुळंबुलनग,
ना नीलमणुलतो नलवड ग्रुच्चि । माननॆ मौक्तिकमणुलॊप्पुदानि,
त्रिभुवनंबुलयंदु दिरिगॆडिगंग । यभिमतविश्रांतिकै युन्नकरणि
खचित हंसावळि कमलदुकूल । रचित वितानंबु राजिल्लुदानि,
"नॆप्पुडु वच्चुनो यिंदु श्रीरामु ? । डॆप्पुडु चूतुमो येमु राघवुनि ?"

सम्मोद के विलसित होने पर, अयोध्या को पधारना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, रघुराम के अनुमति (स्वीकृति) देने पर, जाकर, महासंभ्रम (तथा) संप्रीतियों के विराजने पर, अनुपम वैभवों से शोभित पुष्पक को अधिक प्रेम से राक्षसलोकेश्वर लाया। (पुष्पक में) मानों रावण की लोक विद्रावण शक्ति को सोचकर, अधिक भीत होकर, जल्दबाजी से चंचल बनाने में अनिल भीत हुआ हो या दीप ही हिलने में भीत हुए हों, इस प्रकार रत्नदीप अचल रूप में विराजमान थे, वह मन्दानिलों से शोभित था, ।। ८२५० ।।

—(उस) घन-विमान के उदर के कलित पुष्पों की विलसित गन्धों का पान करने आकर, आशंकित हो भीतर प्रवेश न करनेवाले भ्रमरों की मनोज्ञ दीप्तियों के सौंदर्य से विवर्द्धित थीं, (ऐसी थीं) उन विमल द्वारों पर की हरि-नील-मणियाँ। उनसे वह अधिक भासित (प्रकाशित) था। चाहकर उद्यान-वनों में अपने (मल्लिकाओं के) बाल्यकाल में प्रेम उत्पन्न कर, अपने को छोड़कर आने पर, देखकर, व्यथित होते हुए, षट्पदों (छः पैरों से अथवा भ्रमरों के रूप में) से घिरे हुए मल्लिका-मुकुल हों, (इस प्रकार) उन नीलमणियों से शोभा से गूँथकर सुशोभित मौक्तिक-मणियों से विराजित था वह। मानों त्रिभुवनों में घूमने वाली गंगा अभिमत (अभीष्ट) -विश्राम ले रही हो, इस प्रकार हंसावली से खचित विमल दुकूलों से रचित वितानों से विराजित था वह। 'इसमें श्रीराम कब पधारेंगे? हम कब राघव को

ननि यनि चिंतिंचि यमरकन्यकलु । तनुवुलुज्ज्वल मणिस्तंभमुल् सेर्चि ८२६०
निलिचिन चेलुवुन निर्मलस्तंभ । मुल मणिपुत्रिकल् मोगिनुन्नदानि,
जेकोनि वसुधपै सृष्टि रक्षिप । वैकुंठपति रामवल्लभुडैन
बोलुचु वैकुंठंबु पुष्पकंबैन । चेलुवुन नेंतयु जेलगेंडि दानि
गनुगोनि, यप्पुडा काकुत्स्थतिलकु । डनुरक्तितो राक्षसाधीशु जूचि,
“रा विभीषण ! वीरु रावणेदग्र । पावकु नार्चिन पटुपयोदमुलु;
वीरि नाराधिपु; वीरि बूजिपु; । वीरि संभाविपु विपुलसंपदल”
ननि वानरुल जूपि यर्थि दीपिंप । बनिचिन राक्षसपति विभीषणुडु
धनमुलंबरमुलु दगुभूषणमुलु । गनकमुल् देप्पिंचि कडुब्रीति मेरसि
जनपति सन्निधि संभ्रमंबोप्प । वनचरपतुलकु वरुसतो निच्चे;

श्रीरामुडु पुष्पकविमानमेक्कि ययोध्यकु जनुट

बति रामुडपुडु पुष्पकमु नर्चिंचि । सतियु दम्मुडु दानु सद्भक्तियुक्ति ८२७०

देखेंगे ?’ ऐसा सोचकर, अमर-कन्यकाएँ (अपने) शरीरों को उज्ज्वल मणिस्तंभों से टिकाकर, ।। ८२६० ।।

—सुन्दरता से खड़ी हों, ऐसी थीं निर्मल स्तम्भों की मणि-पुत्रिकाएँ (स्तम्भ स्त्रियों के रूप में खचित थे) । सप्रयत्न वसुधा पर सृष्टि की रक्षा करने के लिए वैकुंठपति के रामवल्लभ बनने पर, मनोज्ञ वैकुंठ ही पुष्पक बना हो, ऐसी मनोज्ञता से युक्त था वह । (ऐसे पुष्पक को) देखकर, तब उस काकुत्स्थकुल-तिलक ने अनुरक्ति से राक्षसाधीश को देखकर (कहा)—“आओ विभीषण ! ये (वानर) रावणरूपी उदग्र-पावक को बुझानेवाले पटु-पयोद हैं । इनकी आराधना करो, इनकी पूजा करो, इन्हें विपुल संपदाओं से संभावित (सम्मानित) करो ।” (ऐसा) कह वानरों को दिखाकर, इच्छा के दीप्त होने पर, भेजने पर, राक्षसपति विभीषण ने धन, अम्बर, उचित भूषण, कनक मँगवाकर, अधिक प्रीति के प्रकाशित होने पर, जनपति की सन्निधि में, संभ्रम से शोभित होकर, वनचरपतियों को क्रम से दिया ।

श्रीराम का पुष्पक विमान चढ़कर अयोध्या को जाना

पति राम तब पुष्पक की अर्चना कर, सती और अनुज के साथ सद्भक्तियुक्ति से कृतकृत्य होकर, ।। ८२७० ।।

—प्रदक्षिणापूर्वक आकर, अतिहर्ष से उस विमान पर आरूढ हुआ । आरूढ होकर, सुग्रीव आदि हितुओं (तथा) वानरों को अवश्य

गृतकृत्युडै प्रदक्षिणमुगा वच्चि । यतिहर्षमुन नेक्के नव्विमानंबु;
नेक्कि सुग्रीवादि हितुल वानरुल । दक्कक वीक्षिचि दशरथात्मजुडु
"मीरु सेसिनयट्टि मित्रकार्यमुलु । नेररु सुरलैन निष्ठतो जेय;
नेल्लतेजंबुलु नेल्लसौख्यमुलु । नेल्लयशंबुलु नेनु मी वलन
बडसिति; बुण्युलु बरमपावनुलु । गडुधन्युलगुदुरु; कपुलार! यिक
बोंडु मी मी देशमुलकु" नावुडुनु । निंडारु वेडुक नृपु जूचि कपुलु
"धरणीश! मेमयोध्यकु गोल्चि वच्चि । परमानुरक्ति मी पट्टंबु जूचि,
निरुपमचरितुल नी सहोदरुल । भरतशत्रुघ्नुल बरमपावनुल
जूचि, मी तल्लुल जूचि, मी पुरमु । चूचि, भागीरथि जूचि वच्चेदमु"
अनवुडु विनि रामुडंतरंगमुन । ननयंबु हर्षिचि या विभीषणुनि ८२८०

भानुजु नंगदु बवनजु नीलु । माननीयात्मुल मरियु बेक्कंड्र
वनचर-मुख्युल वात्सल्यमोप्प । नेनय नापुष्पकमेक्क बंचुटयु
धरणीशु मन्नन दग नुत्सहिंचि । परमपावनुलु पुष्पकमेक्किरंत;
त्रिजटादिसतुलु धात्रीजकु म्रोक्कि । निजगृहंबुलकंत नेम्मितो जनिरि;
दशरथात्मजु जूचि दानवेश्वरुडु । विशदंबुगा बल्के "विनुमु श्रीराम!

देखकर दशरथात्मज ने (कहा)—"आपने जो मित्र कार्य किए हैं, वे सुर भी निष्ठा के साथ नहीं कर सकते। समस्त तेज, समस्त सुख, समस्त यश मैंने तुमसे पाए हैं। (हम) पुण्यी, परमपावन (और) अधिक धन्य बने हैं। हे कपियो! अब अपने-अपने देशों में जाइए।" ऐसा कहने पर पूर्ण उत्साह से नृप को देख कपियों ने (कहा)—"हे धरणीश! हम अयोध्या में आपकी सेवा कर, परम-अनुरक्ति से आपके राजतिलक को देखकर, निरुपम-चरित्रवाले आपके सहोदर, परम पावन भरत-शत्रुघ्न को देखकर, आपकी माताओं को देखकर, आपके पुर को देखकर, भागीरथी को देख आएंगे।" ऐसा कहने पर सुनकर राम अंतरंग में अनारत हर्षित होकर, उस विभीषण को, ॥ ८२८० ॥

—भानुज, अंगद, पवनज, नील, माननीयात्मावाले अन्य कई वनचर-प्रमुखों को, वात्सल्य के शोभित होने पर उस पुष्पक में चढ़ने के लिए आदेश देने पर, धरणीश की मान्यता से उचित रूप से उत्साहित होकर, (वे) परम-पावन (वानर) तब पुष्पक में आरूढ़ हुए। त्रिजटा आदि सतियाँ धात्रीजा को प्रणामकर तब अत्यन्त प्रेम से निजगृहों में गईं। दशरथात्मज को देख दानवेश्वर ने विशद रूप से कहा—"सुनो हे श्रीराम! हम लोगों में से इस पुष्पक में कितने ही (लोग) चढ़ें, सललित रूप से पर्याप्त स्थान है।

यॆलमि नी पुष्पकमॆंदरॆक्किननु । सललितंबुग जोटु चालि वॆंडियुनु
नॊकमूल गडमयै युंडु नेनूटि । ककलंक महिमतो" नन मुदंबंदि
धरणीशुडप्पुडु तरुचरासुरुल । गरुण बुष्पकमॆक्कगा नानतिच्चॆं;
नप्पुडापुष्पकंबाकाशवीथि । नॊप्पॆडि वेडुक युप्पोंग नॆगसि
घनमनोवेगंबु गैकॊनि निगुडि । घिनुवीथि दिव्युलु विनुतिंप बॆर्चि ८२९०
पर्विन प्रभलतो भानुबिंबंबु । पूर्वपश्चिमपथंबुल बोक मगुडि
दक्षिणंबुननुंडि तगनुतरमुन । कक्षीणगति बोवु नाकृति दोप
बोवनप्पुडु नित्यपुण्युंडु राम । देवुंडु जानकीदेवितोननियॆं;

श्रीरामुडु सीतकु राक्षसवीरुल विक्रमसु दॆल्पुट

"शुकवाणि! जानकि! चूचितेलंक । यकलंकलक्ष्मुल नमरुचुन्नदियु;
गमलाक्षि! यिदि विश्वकर्म निर्मिंप । गॊमरु दीपिंचॆं द्रिकूटमध्यमुन;
नीलंक निम्मुल नेलु पुण्यंबु । चालक पोलिसॆ दुर्जनुडु रावणुडु"
अनि रक्तमांसमज्जास्थितंडमुल । घनमैन समरभागमु जूपि विभुंडु
"कदन विक्रमशक्ति गडगि येतॆंचि । मदिराक्षि ! यिक्कड मडिसॆ
रावणुडु;

और भी एक कोने में अकलंक महिमा से पाँच सौ के लिए जगह रहती है।" (ऐसा) कहने पर मुदित होकर, धरणीश ने तब तरुचर (और) असुरों को करुणा से पुष्पक में चढ़ने की अनुमति दी। तब वह पुष्पक आकाश-वीथि में, शोभायमान उत्साह के उमड़ने पर, उड़कर, घन-मनोवेग को धारण कर, ऊँचे तनकर, विनुवीथि में दिव्यों (देवताओं) के विनुतियाँ करने पर, विजृंभित हो, ॥ ८२९० ॥

—व्याप्त प्रभावों से, भानुबिंब के पूर्व से पश्चिम पथ में न जाकर, फिर दक्षिण से उत्तर (दिशा) की ओर अक्षीणगति से जाने की आकृति (विधान) के दीखने पर, (चलता) गया। तब नित्य पुण्यवाले रामदेव ने जानकी देवी से कहा—

श्रीराम का सीता को राक्षसवीरों का विक्रम बताना

—हे शुकवाणी ! जानकी ! देखा है लंका को जो अकलंक-लक्ष्मियों (संपदाओं) से विराज रही है। हे कमलाक्षी ! यह विश्वकर्मा के निर्मित करने पर त्रिकूट (पर्वतों) के मध्य शोभित हुई है। इस लंका पर मनोज्ञता से शासन करने का पुण्य न होने से दुर्जन रावण मर गया।" (ऐसा) कह रक्त-मांस-मज्जा-अस्थि-तंडों (समूहों) से घने बने

घनसत्त्वुडै कुंभकर्णुंडु दौडरि । यनि घोरमुग जेसि यक्कड गूलें;
नहितुडै नीलु ब्रहस्तुंडु दाकि । बहुसत्त्वुडिक्कड भस्ममै पौलिसें; ८३००
शूरत बवमानसुतुडु धूम्राक्षु । नारूढबलु द्रुंचें नतिव! यिक्कडनु;
भेदिंचियिचट नभेद्युडै मेघ । नादुंडु ममुगट्टे नागपाशमुल;
धृतियु लावुनु बेंचि तेगुवमै बोरि । यतिकायु सौमित्रि यक्कड गूल्चें;
नलघुडु मकराक्षुडक्षीणबलुडु । बलमेदि यिक्कड बडियें बोराडि;
भग्नारिवीरु डभग्नप्रतापु । डग्निवर्णुडु गूलें नय्येड नतिव !
कडिमिमै बोराडि गर्वंबु लावु । नेंडलि यकंपनुंडिक्कड गूलें;
नलुकमै सौमित्रि या यिंद्रजित्तु । नलवौप्प देगटाचें नय्येड नबल !
यनुपमबलुडगु नम्महाकायु । दुनिमें निय्येड नंगदुडु सरोजाक्षि !
तऱिमि यिय्येड महोदर महापार्श्वु । लऱिमि चच्चिरि महोदग्रविक्रमुलु;
क्रूरुलै देवांतकुडु नरांतकुडु । पोराडि यिक्कड बौलिसिरिद्दऱुनु; ८३१०
इदे पयोनिधिमीद नेपुदीपिंप । गदिसि माकट्टिन घनसेतुवबल !
इदे गंधमादनं; बिदे पुण्यतीर्थं; । मिदे सदाशिवसमाहित निवासंबु;

समरभाग को दिखाकर विभु ने कहा—"कदन-विक्रमशक्ति से प्रयत्नशील बन आकर हे मदिराक्षी ! यहाँ रावण मर गया । घन-सत्त्ववाला होकर कुंभकर्ण लगकर घोर रूप से युद्ध करके यहाँ गिर गया । अहितू बन नील से टकराकर बहुसत्त्ववाला प्रहस्त यहाँ भस्म हो मर गया । ॥ ८३०० ॥

—शूरता से पवमानसुत ने आरूढ़बलवाले धूम्राक्ष का हे नारी ! यहाँ संहार किया । बेधकर यहाँ अभेद्य बन मेघनाद हमें नागपाशों से बाँध डाला । धृति तथा सामर्थ्य से विजृंभित होकर, साहस से लड़कर, अतिकाय को सौमित्र ने वहाँ (मार) गिराया । अलघु, अक्षीणबलवाला मकराक्ष बल खोकर, लड़कर यहाँ गिर गया । हे नारी ! भग्नारिवीर, अभग्न-प्रतापवाला अग्निवर्ण वहाँ गिर गया । साहस से लड़कर गर्व और सामर्थ्य को खोकर अकंपन यहाँ गिर गया । हे अबला ! क्रोध से सौमित्र ने उस इन्द्रजित को उचित विधि से उस स्थान पर मार डाला । हे सरोजाक्षी ! अनुपम बलवाले उस महाकाय को इस स्थान पर अंगद ने मार डाला । इस स्थान पर महोदग्र विक्रमवाले महोदर, महापार्श्व आक्रमण कर मर गए । क्रूर बन देवांतक और नरांतक दोनों यहाँ लड़कर मर गए । ॥ ८३१० ॥

—हे अबला ! यही पयोनिधि पर शोभा के दीप्त होने पर, लगकर हमारा बनाया सेतु है । यही गन्धमादन है । यही पुण्यतीर्थ है । यही सदाशिव-समाहित निवास है । हे कमलाक्षी ! यह दिखाई पड़नेवाला

कमलाक्षि ! यी तोचु कांचनाचलमु । रमणीयमिदिय हिरण्यनाभंबु;
पवमानसूनुंडु पडति! निन् वेंदक । जवमोप्प लंककु जनुदेंचुनप्पु
डतनिकि नातिथ्यमर्थि गाविंचु । मति नब्धि वेंडलें नी महितशैलंबु”
ननि चेप्पुचुनु राग ना राघवुनकु । घनतरभीषणाकारंबुतोड
नेतेंचि दशकंठुडेदुट दोचुटयु । भीतिल्लि यपुडु विभीषणुकनियें;
“जलजजुंडादिगा सकलदेवतलु । पलुमाऱु गोनियाड बंक्तिकंधरुनि
दुनिमिति नाजिलो दोर्बलशक्ति । नेनय ना रावणुडेतेंचि यिचट
कदियुचु ना कन्नुगवक्रोलनिलिचें;। निदिचित्र ! मेर्पड नेंड्रिंगिपु”
मनुडु ८३२०

“जननाथ ! या ब्रह्मसंततियंदु । जनियिंचनट्टि दुर्जनुनि रावणुनि
देगटार्चि; तट्टुगान देव ! या हत्य । दगिलि येतेंचि मुंदट दोचें मीकु;
गडक नी पापमिक्कड बापि वेग । कडचिपोयिन गानि कादु कार्यंबु;
अवनीश ! नीयात्म नब्जसंभवुनि । दविलि तलंपुमु; तलचिन नतडु
नतिमुदंबुन वच्चि यमरुलु दानु । मतमेंड्रिंगिचेंडि मनुवंशतिलक !”
यनवुडु बुष्पकमवनिकि डिंचि । तन मदिलोपल दात्पर्यमोप्प,
भूमीशुडप्पुडंबुजभवु नेंलमि । गामिंचि तलप नक्कडिकेगुदेंचें

रमणीय कांचनाचल है। यही हिरण्यनाभ है, हे नारी ! पवमानसून के तुम्हें खोजने के लिए वेग से लंका को आते समय, उसे प्रेम से आतिथ्य प्रदान करने के लिए अब्धि से यह महितशैल बाहर निकल आया था।” ऐसा कहते हुए आते समय उस राघव को घनतर-भीषण-आकार से आकर दशकंठ के समक्ष दिखाई पड़ने पर, भीत हो तब विभीषण से कहा—“जलजज (ब्रह्मा) आदि सकल देवताओं के कई बार प्रशंसा करने पर पंक्तिकंधर को युद्ध में दोर्बल-शक्ति से मार डाला। शोभा से वह रावण आकर यहाँ नियराते हुए मेरे नेत्रद्वय के समक्ष खड़ा रह गया। यह विचित्र है। समझाकर बताओ।” कहने पर ॥ ८३२० ॥

—“हे जननाथ ! उस ब्रह्मा की संतति में उत्पन्न दुर्जन रावण को मार डाला था। ऐसा होने से हे देव ! उस हत्या का फल लगकर यहाँ आपके समक्ष दिखाई पड़ा है। प्रयत्न से इस पाप से यहाँ (मुक्त) होकर, शीघ्र (यहाँ से) गए बिना काम नहीं बनेगा। हे अवनीश ! अपने मन में लगकर अब्जसंभव का स्मरण करो। स्मरण करने पर वह अतिमोद से आकर, देवताओं के साथ हे मनुवंशतिलक ! उपाय बताएगा।” ऐसा कहने पर पुष्पक को अवनी पर उतारकर अपने मन में तात्पर्य के शोभित

नखिल दिक्पालुरु नखिलदेवतलु । नखिल संयमुलुनु नंदंद कौलुव;
ब्रेम नट्लेतेंचि प्रियपूर्वकमुग । रामुतो बलिकें ना राजीवभवुड्;
"देव ! राघव ! येमि तेंड्गुन नन्नु । राविचि" तनवुडु रघुवल्लभुंडु
८३३०
तन मनंबुन दोचु तत्क्रमंबेल्ल । विनिपिंप नातडु विस्मयंबंदि,
"देव ! दैत्युडु नादु तेजंबुनंदु । नी वसुमति बुट्टि यिन्नि पापमुलु
नुरुतरंबुग जेसि युग्रत मेंड्सि । परिकिंप बिदप निष्पापुडै पोलिसे;
धरणिपै विप्रुंडु दन कुलक्रममु । लरसि ता निलुवक यन्यवर्तनमु
लरयुचु नतुल दोषाचारुडैन । गुरुदूषकुंडैन गुलशिक्षुडैन
नारय गोब्रह्मह‌त्यादि घोर । दारुणकर्मुडै तनरुवाडैन
वधकु नहुंडु गाडु वसुधपै नेन्नि । विधमुलनैननु विवरिंचि चूड;
नट्टि दुर्जनुनकु नट्टि क्रूरुनकु । नट्टि पापात्मुनकाज्ञयेमनिन
नतनि कुलंबुनकंत्यंबु सेसि । पति तन भूमिलोपल नुंडनीक
तग वेंडलिंचुटे दंडंबु सुम्मु । जगतीश ! यिपुडु विश्रवसुपुत्रुंडु ८३४०
मोक्षंबु गोरि नी मुंदड् निलिचें; । मोक्षकामुनि जेयु मुदमु दीपिंप;

होने पर, भूमीश ने तब अंबुज-भव (ब्रह्मा) का, प्रेम से कामना कर स्मरण किया तो अखिल दिक्पाल, अखिल देवता, अखिल संयमियों के सर्वत्र सेवाएँ करने पर, (ब्रह्मा) वहाँ आया। प्रेम से ऐसा आकर, उस राजीव-भव ने प्रेमपूर्वक राम से कहा—"हे देव ! राघव ! किस विधान से मुझे बुलवाया है ?" ऐसा कहने पर रघुवल्लभ के, ॥ ८३३० ॥

—अपने मन में भासित होनेवाले तत् समस्त क्रम को सुनाने पर वह (ब्रह्मा) विस्मित हुआ (और बोला)—"हे देव ! दैत्य (रावण) मेरे तेज से इस वसुमति पर जन्म लेकर, उरुतर रूप से इतने पाप करके, उग्रता से प्रकाशित होकर, देखने पर बाद में निष्पाप हो (राम बाण के कारण) मर गया। सोचने पर अतुल-दोषाचारवाला होने पर (अथवा) गुरु दूषक होने पर (अथवा) कुल में शिक्षा (दंड) के पात्र होने पर (अथवा), सोचने पर गो-ब्रह्महत्या-आदि घोर-दारुण कर्म कर विराजित होने पर भी, वसुधा पर कितने ही प्रकार से विवरण कर देखने पर, ब्राह्मण वध के लिए अर्ह नहीं है। वैसे दुर्जन को, वैसे क्रूर को, वैसे पापात्मा को आज्ञा यह है कि उसके कुल का अन्त करके, पति (राजा) को अपनी भूमि (देश) में रहने न देकर, उचित रूप से निष्कासित करना ही दंड है। हे जगदीश ! अब विश्रवसु का पुत्र, ॥ ८३४० ॥

भाविंचि नीपेर भवुनि प्रतिष्ठ । गाविंपु मुन्नीटिकट्टपै नोप्प
रमणमै नोक मुहूर्तमुलोन" ननुचु । ग्रमसोप्प देलिपि याकमलजुंडरिगॆ

श्रीरामुड्डु लिंग प्रतिष्ठ सेयुट

नावेळ रघुरामुडासन्नुडैन । पावनि वीक्षिचि पलिकॆ निट्लनुचु;
"सन्नुत बलशौर्य ! साहसधुर्य ! । पन्नगाशनवेग ! परमानुराग !
मा कार्यमीडेर्चि ममु नुद्धरिंचि । मा कीर्ति नॆगडिंचि ममु ब्रोचितीवु;
विनयविक्रमधैर्य विख्यातुलंदु । निनु बोलरॆव्वरु निखिललोकमुल;
गावुन निपुडोक्क कार्यमीडेर्पु; । माविधमॆट्लन नदि यॆरिंगितु;
नगचराधीश ! यत्यंत वेगमुन । नगणित फलराशियगु काशि डासि
करमोप्प नोक्क लिंगमु गोनि तॆम्मु; । परगंग निन्नूटपदियोजनमुलु ८३५०

गलदिच्चटिकि; रॆंडु गडियललोन । निलुवक चनुदॆम्मु; नीवाहवमुन
धरमीद बडिन ना तम्मुनि कोरकु । निरुमूडुलक्षलु निरुवदिवेलु

—मोक्ष की कामना करके तुम्हारे सामने खड़ा है। मोद के दीप्त होने पर (उसे) मोक्षकाम कर दो। सोचकर अपने नाम पर समुद्र की वेला पर, एक रमणीय मुहूर्त में, शोभा से भव (शिव) की प्रतिष्ठा कर दो।" (ऐसा) कहते हुए शोभा से (लिंग प्रतिष्ठा के) क्रम को बताकर वह कमलज चला गया॥ ८३४३॥

श्रीराम का लिंगप्रतिष्ठा करना

उस समय रघुराम ने आसन्न बने (निकट स्थित) पावनी को देखकर इस प्रकार कहा—"हे सन्नुत बलशौर्यवाले ! हे साहसधुर्य ! हे पन्नगाशन (वायु अथवा गरुड़) -वेगवाले ! हे परम-अनुरागवाले ! हमारे कार्य को सम्पन्न करके हमारा उद्धार करके, हमारी कीर्ति की वृद्धि करके, तुमने हमारी रक्षा की। विनय-विक्रम-धैर्य की विख्याति में निखिल लोकों में कोई तुम्हारा सानी नहीं है। अतः अब एक कार्य संपन्न करो। वह विधि (पद्धति) कैसी है, वह समझाऊँगा। हे नगचराधीश ! अत्यन्त वेग से अगणित-फल-राशि काशी के निकट जाकर, अधिक शोभा से एक (शिव) लिंग को ले आओ। दो सौ दस योजन, ॥ ८३५०॥

—है यहाँ से। दो घड़ियों में, (वहाँ) रुके बिना आ जाओ। तुम आहव में धरा पर गिर पड़े मेरे अनुज के लिए छः लाख बीस हज़ार दस योजन पवनवेग से जाकर औषध-पर्वत को झट लाकर, फिर यथास्थान पर स्थिरता

बदियोजनंबुलु बवनवेगमुन । गदलि मंदुलकोंड ग्रक्कुन देंच्चि
तिरुग नेंप्पटि चोट दिरमुगा नुनिचि । यरुगुदेंचितिवप्पुडरजामुलोन;
नदिगान नीकिदि यधिकमे'' यनिन । मुदमुन नुप्पोंगि म्रोक्कि वीड्कोनुचु
नरिगि यप्पुडु महेंद्राचलंबेक्कि । युरुतरशक्तिमै युंकिचि येगसि
घनतरंबगु काशिकापुरिडासि । यनघतरंगिणि ना गंग ग्रुंकि
काशिकानिलयुनि घनु विश्वनाथु । नीशु दयालोलु हितपरिपालु
गनि म्रोक्कि नुतिसेसि कदलि या घनुडु । घनबुद्धि नोक्क लिंगमुनु गेकोनुचु
नधिकवेगंबुन नरुदेंचुचुंडे । बुधजनविनुतुडाभूमीशुडपुडु ८३६०
हनुमंतु राककु नट्टु चूचि चूचि । "तनरंग निट मुहूर्तमु चेर वच्चे;
जनुदेरडदेमो ? राक्षसुडेव्वडेन । जेनकिन जगडंबु सेयुचुन्नाडो ?
येमि कार्यमो ?'' यनियिच्च जिंतिचि । "यी मुहूर्तमुदप्पकिट लिंग- मोकटि
नेनय ब्रतिष्ठितुनिसुकचे'' ननुचु । जननाथुडट समस्थलमुन करिगि
करमुल नोक्कलिगमु गाग निसुक । गरमोप्प जेसिन गंजाक्षि सीत

से रखकर, तब आधे पहर (समय) में आए थे। अतः यह तुम्हारे लिए बड़ा (काम) है क्या ?'' (ऐसा) कहने पर, मोद से फूलकर, प्रणामकर, बिदा लेकर, जाकर, तब महेन्द्राचल पर चढ़कर, उरुतर शक्ति से तैयार होकर, उड़कर, घनतर काशिकापुरी के निकट पहुँच, अनघ-तरंगिणी उस गंगा में डुबकी लगाकर, काशिका-निलयवाले महान् विश्वनाथ, ईश, दयालोल, हितपरिपालक को देख, प्रणामकर नुति (प्रस्तुति) कर, निकल कर, वह महान् (हनुमान) घन-बुद्धि (महित बुद्धि) से एक (शिव) लिंग को लेकर अधिक वेग से आता रहा। बुधजन-विनुत उस भूमीश ने (राम) तब, ॥ ८३६० ॥

—हनुमान के आगमन के लिए उधर देख-देख (प्रतीक्षा कर) (सोचा)—'शोभा से यहाँ मुहूर्त निकट आ रहा है। पता नहीं क्यों नहीं आ रहा है ? किसी राक्षस के छेड़ने पर झगड़ा तो नहीं कर रहा है ? पता नहीं क्या कार्य है ?'' ऐसा मन में विचार कर "यह मुहूर्त टल न जाए ऐसा शोभा से सिकता से एक लिंग की प्रतिष्ठा करूँगा।'' (ऐसा) सोचते हुए, जननाथ तब समस्थल पर जाकर, हाथों से सिकता का एक लिंग शोभा से बनाया (राम के लिंग बनाने पर) कंजाक्षी-सीता ने उस नगजा-अधिनाथ

नंदि गाविंचे ना नगजाधिनाथु । मुंदऱ निसुकचे; मोगि रामविभुडु
ना येंड बूज सेय गडंगुनंत । वायुवेगंबुन वायुनंदनुडु
नरुदेंचि रघुरामुनडुगुलकेंऱगि । धरणीशुडुंचिन दर्पकाराति
गनुगोनि खिन्नुडै कळवळंबंदि । तनुवु गंपिप गद्गदकंठुडगुचु
नंजनासुतुडप्पुडनियें रामुनकु । “कंजाप्तकुलनाथ! काशिकि नन्नु
८३७०

बनिचिनि बनिपूनि ब्रह्मादिसुरलु । गनुगोन नचटि लिंगमुनु
देंच्चितिनि;
ननु बंपि यिच्चट नगजाधिनाथु । नुनुपंग नीतिये युर्वीशचंद्र !
यनुवोंद ने देर नर्हुंडगानो ? । मनमुन ना मीद मक्कुव लेदो ?”
यनुडु रामुडु मंदहासंबु सेसि । हनुमंतु जूचि यिट्लनियें “नाकरय
दम्मुललो नोक्क तम्मुडवीवु; । नेंम्मितो नीमीद नेय्यंबु घनमु;
‘ई मुहूर्तमु दप्प नी’ ननि शिवुनि । गामिंचि यिसुकचे गाविंचितेनु;
नंतलोनन नीवु नरुगुदेंचितिवि; । संतोषमय्यें; नीश्वरु नव्वलिकि
देंमलिचि नी तेंच्चु देवुनि निलुपु । समरुलु वोगडंग” ननिन वायुजुडु
मुदमंदि तनवालमुन नीशुजुट्टि । कदलिंचि कदलिंचि कदलिपलेक,

(शिव) के समक्ष सिकता से एक नन्दि बनाया। उस अवसर पर क्रम से राम-विभु के पूजा करने लगने पर, वायुवेग से वायुनन्दन आकर, रघुराम के चरणों में विनत होकर, धरणीश के बनाए दर्पक-आराति (मन्मथ का शत्रु-शिव) को देख, खिन्न बन, विकल होकर, तनु के कंपित होने पर गद्गद कंठवाला होता हुआ अंजनासुत ने तब राम से कहा— “हे कंजाप्तकुलनाथ ! काशी को मुझे ॥ ८३७० ॥

—भेजने पर सप्रयत्न, ब्रह्मादि सुर देखें, ऐसा वहाँ के लिंग को लाया हूँ। हे उर्वीशचन्द्र ! मुझे भेजकर यहाँ नगजाधिनाथ की प्रतिष्ठा करना नीति है ? शोभा से मैं (लिंग) लाने में अर्ह नहीं हूँ ? मन में मुझपर ममता नहीं है ?” (ऐसा) कहने पर राम ने मन्दहास कर, हनुमान को देखकर यों कहा—“सोचने पर मेरे अनुजों में तुम एक अनुज हो। प्रेम से तुम पर स्नेह अधिक है। ‘इस मुहूर्त को टलने नही दूंगा’ ऐसा शिव के प्रति इच्छा रख, मैंने सिकता से (लिंग) बनाया। इतने में तुम आ गए। प्रसन्नता हुई। ईश्वर को हटाकर तुम्हारे लाए देव (शिवलिंग) को प्रतिष्ठित करो जिसकी अमर प्रशंसा करें।” (ऐसा) कहने पर वायुज ने प्रसन्न होकर, अपने वाल से ईश को लपेट कर, हिला-हिलाकर, हिला न

मदिलोन शंकिंचि मरियु नुंकिंचि । मेंदलिप जालक मिगुल जिंतिंचि
८३८०
"यक्कटा ! मुन्नु द्रोणाचलंबेनु । दक्कक यगलिंचि तनर देच्चितिनि;
भुजगकंकणुतोड भूतालितोड । रजताद्रिनेत्तिन रावणुनकुनु
नेत्तंग नलविगाकेसगु सौमित्रि । नेत्तिति निंद्रादुलेल्ल गीर्तिंप;
दट्टुकुन मेरुमंदरमुलनैन । बोटव्रेल जिम्मुदु भूरिसत्त्वमुन,
निदि कडु व्रेगय्ये नी रीति; नाकु । बदिलंबु दप्पेनो ? भानुवंशजुनि
गिनिसि ये दूऱ बल्किन पापमुननो ? । कनुगोन नट्टुगाक काशीशु निटकु
जेकोनि येनु देच्चिन पापमुननो ? । काकुन्न निदियेल घनमगु" ननुचु
बदिलंबुगा दनबलमेल्ल गूर्चि । त्रिदशुलु वेऱगंद दिविरि वेंडियुनु
नगचरेश्वरुडु दैन्यमुतोड नभवु । नगलिंपलेक बाहासत्वमेडलि
पट्टुरक्तमुलु ग्रक्कि प्राणमुल् गलगि । यट मूर्छतोड नय्यवनिपै द्रेळ्ळे;
८३९०
ना समयंबुन ना रामविभुडु । भासुर मृदुकर पद्ममुल् साचि
हनुमंतुनेत्त नोय्यन मूर्छदेलसि । जननाथवरुनकु साष्टांगमेऱगि

सक, मन में शंकित हो और भी सन्नद्ध हो, हिला न सक, अधिक चिंतित हो, ।। ८३८० ।।

—(सोचा)—"हाय ! पूर्व में मैं द्रोणाचल को अवश्य उखाड़कर शोभा से लाया था । भुजगकंकण (शिव) के साथ, भूताली के साथ रजताद्रि को उठानेवाले रावण के लिए भी उठाने में असाध्य हो शोभित सौमित्र को उठाया था जिसका इन्द्र आदि समस्त (देवताओं) ने कीर्तन (प्रशंसा) किया । भूरिसत्त्व से झट से मेरु-मन्दरों को भी अंगूठे से फेंक दे सकता हूँ । यह इस प्रकार अति भारी बन गया । क्या मेरी जागरूकता नष्ट हो गई (अथवा) यह भानुवंशज (राम) को रुष्ट हो दूषित करने का फल है ? समझ नहीं पाता अथवा काशीश (शिव) को मेरे सप्रयत्न यहाँ लाने का पाप है ? नहीं तो यह (मेरे लिए) भारी क्यों पड़ेगा ?" (ऐसा) कहते हुए सावधानी से अपने समस्त बल को जुटाकर, त्रिदश चकित हो जाएँ, सप्रयत्न पुनः नगचरेश्वर अभव (शिव) को उखाड़ न सक, दैन्य के साथ, बाहुसत्त्व को खोकर, पट्टुरक्त उगलकर, प्राणों के क्षुब्ध होने पर, उधर मूच्छित होकर अवनी पर गिर पड़ा ।। ८३९० ।।

—उस समय उस रामविभु ने भासुर-मृदु-करपद्म फैलाकर हनुमान को उठाने पर धीरे से मूर्च्छा से होश में आकर, जननाथ को साष्टांग प्रणाम कर,

"जय भूमिजास्वांत-जलज-षट्चरण ! । जय घोरकुटिलराक्षसचय-हरण !
जय खंडितोद्दंडशर्वकोदंड ! । जय शोषिताब्धि प्रचंडोरुकांड !
जय रावणोन्नतशैलामरेंद्र ! । जय भक्तहितपूर्णसत्कृपासांद्र !
जय निर्मलात्म ! सज्जनकल्पभूज ! । जय पद्मबांधवशतकोटितेज !
नी महिमंबुलु नेर्तुरे तॆलिय । नामहेश्वरुडैन नमरेज्युडैन
नागेंद्रुडैन ना नाकेंद्रुडैन । वागीशुडैनन‍ु वसुधातलेंद्र !
ए निन्नु नॆऱुगंग नॆंतटिवाड ! । नेनिन्नु गॊनियाड नॆंतटिवाड !
बेलनै मीरुनिलिपन यीशु नॆऱुग । कीलील दॆर्मलिप नॆंचिनयट्टि ८४००

ना तप्पुलोगॊनि नन्नुमन्निंचि । यी तऱि मी याज्ञ ने दॆच्चिनट्टि
यी यीशुनकु वॆरवॆऱिगिंपु" मनुचु । बायनि भक्तितो ब्रणुतिचुचुन्न
हनुमंतु जूचि यिट्लनियॆ राघवुडु; । "मनमुन नीवेल मऱिगॆंदविट्लु ?
नीवु दॆच्चिन काशिनिलयु निच्चोट । बावनि ! युनुपु; मी भवुनकु मुनुपु
प्रीति बूज नॊनर्चि पिदप ना यीशु । नाततभक्तितो नर्चितु; सकल
भूजनंबुलु निट्लु पूज गाविंतु; । रा जाह्नवीजलंबवनिलो जनमु

(हनुमान ने कहा)—"जय भूमिजा-स्वान्त-जलज-षट्चरणे ! जय घोर-कुटिल राक्षस-चय का हरण करनेवाले ! जय खंडितोद्दंड-शर्वकोदंड वाले ! जय शोषिताब्धि-प्रचंड-उरु-कांडवाले ! जय रावणरूपी उन्नत-शैल के लिए अमरेन्द्र ! जय भक्तहित-पूर्ण-सत्कृपासांद्रा ! जय निर्मलात्मा! सज्जन कल्पभूजा ! जय पद्म-बांधव-शतकोटितेज ! हे वसुधातलेन्द्र (राजा) ! तुम्हारी महिमाओं को वह महेश्वर अथवा अमरेज्य अथवा नागेन्द्र अथवा नाकेन्द्र अथवा वागीश भी जान सकते हैं क्या ? मैं जानने में कितना हूँ ? (मेरी सामर्थ्य क्या है ?) मैं तुम्हारी प्रशंसा करने में कितना हूं ? नादान हो आपके द्वारा प्रतिष्ठित ईश को न जानकर, इस प्रकार उखाड़ना चाहने वाले ।। ८४०० ।।

—मेरे दोष को मन में रख लेकर, मुझे क्षमाकर, इस अवसर पर आपकी आज्ञा से मेरे लाए इस ईश (शिवलिंग) के विधान को बताओ।" (ऐसा) कहते हुए अचलभक्ति से प्रणुति करनेवाले हनुमान को देखकर राघव ने यों कहा—"मन में तुम इस प्रकार क्यों क्षुब्ध होते हो ? तुम्हारे लाए काशी-निलय (शिव) को हे पावनी ! यहाँ रखो (प्रतिष्ठित करो) । इस भव (शिवलिंग) को प्रथमतः प्रीति से पूजा करने के बाद मेरे ईश

तेॅच्चि नीतेॅच्चिनदेवुन कर्थि । जेॅच्चेॅर निट नभिषेकंबु सेय
नतडोॅनर्चिन ब्रह्महत्यादुलघमु । लतनि बोॅंदवु; कीर्तुललर सिद्धिचु;
नतुलित - पुत्र - पौत्राभिवृद्धियुनु । नतुलभोगंबुलु नमरंग गलुगु"
ननि पल्क हनुमंतुडतिमुदंबंदि । मनमुन संतोषमग्नुडै पोॅंगे; ८४१०
बरमात्मुडट नुमापति ब्रतिष्टिंचि । युरुभक्ति दग षोडशोपचारमुल
गरमोॅप्प मुनुमुन्न काशिकावासु । दरणिवंशयुडु सोॅंपु दनरार बूज
गाविंचि पिदप दा गाविंचु शिवुनि । भाविंचि यर्चिचें बरमहर्षमुन,
रमण बूवुलवान रघुरामु मीद । नमरुलु गुरिर्यिचिरगचरुल् चेॅलग;
नंत विभीषणुंडधिपतिकनियें । संतोषमुप्पोॅंग "जगदीश ! यिप्पु
डी कट्टतेॅरुवुगा नेॅव्वरिकैन । राकुंड जेयुमो राम ! लंककुनु"
नावुडु हर्षिचि नलिनाप्तकुलजु । डा विभीषणु जूचि "यौगाक" यनुचु

श्रीरामुडु सेतुमहिमनु देॅलुपुट

नडरंग नट गोॅन्नि यडुगुलु मरलि । नडुसेतुमीद नुन्नतितोड निलिचि

की आतत-भक्ति से (लोग) अर्चना करेंगे। सकल भूजन इस प्रकार पूजा करेंगे। अवनी में वह जाह्नवीजल लाकर, तुम्हारे लाए देव (शिव जी) को प्रीति से झट यहाँ अभिषेक करने पर, उस (व्यक्ति) के किए ब्रह्महत्या आदि अघ प्राप्त नहीं होंगे। शोभा से कीर्तियाँ प्राप्त होंगी। अतुलित पुत्र-पौत्र-अभिवृद्धि और अतुल भोग शोभा से प्राप्त होंगे।" ऐसा कहने पर हनुमान अति मुदित होकर, मन में आनन्द-मग्न हो फूल उठा ॥ ८४१० ॥

परमात्मा (राम) ने वहाँ उमापति की प्रतिष्ठा की, उरुभक्ति से उचित षोडशोपचार अधिक शोभा से पहलेपहल काशिकावास (शिव जी) की तरणिवंशज ने मनोज्ञता के शोभित होने पर पूजा करके बाद में अपने प्रतिष्ठित शिव की भावना का परमहर्ष से अर्चना की। रमणीयता से रघुराम पर अमरों ने पुष्पवृष्टि की जिससे अगचर उल्लसित हुए। तब विभीषण ने आनन्द के उमड़ने पर अधिपति से कहा—"हे जगदीश ! अब इस बाँध को मार्ग बनाकर कोई लंका में न आ सके, हे राम ! ऐसा करो।" ऐसा कहने पर हर्षित होकर नलिनाप्तकुलज ने उस विभीषण को देख कहा "ऐसा ही हो"।

श्रीराम का सेतुमहिमा बताना

विशिष्टता से वहाँ कुछ कदम पीछे लौटकर, मध्यसेतु पर उन्नति से खड़े होकर, पूर्व में उग्रता से कपियों के बनाए विपुल बंधन (जोड़) मानों

कपुलुग्रमुग मुनु गट्टिनयट्टि । विपुलबंधमुलॆल्ल वीडॆनो यनग
दन सहोदरु चेति धनुवंदि पुच्चु । कॊनि वेगमुन धनुष्कोटि गाविंचि
८४२०

"परदारागमनंबु ब्रह्हत्ययुनु । गुरुजनद्रोहंबु गोगणवधयु
सोदरीरतियुनु सुर ग्रोलुटयुनु । वेददूषणमुनु वित्तापहृतियु
सुंदरीच्छेदंबु जोरसंगममु । मंदिरदहनंबु मांसभक्षणमु
मॊदलैन पातकंबुलु सेसियैन । गदिसि यिच्चट नवगाहंबु सेय
बुरुषमुख्युनकब्बु बुण्यसंघंबु; । नरुदार नायुवु नारोग्यमॆपुडु
बरहिताचार सौभाग्यसंपदलु । जिरकीर्तुलुनु वेग चेकूरु" ननुचु
ना राघवेश्वरुंडपुडु पुष्पकमु । नारूढगतिनॆक्कि यधिकमोदमुन
नमरुलु दीविंप नगचरुल् वॊगड । नमरंग नॆप्पटियट्ल पुष्पकमु
घनवेगमुन जन गगनमार्गमुन । मनुकुलेश्वरुडंत महिपुत्रिकनियॆ;
"हिमकर-बिबास्य ! यिदॆविभीषणुडु । ममु गन्नचोटु सम्मदमुन वच्चि;
८४३०

इक्कड गुशतल्पमेनु गैकॊंटि; । निक्कडनुंडिति नेकतंबुगनु;
पूनि ब्रह्मास्त्रमद्भुतशक्ति मॆरसि । येनु बयोधिपै निक्कड दॊडुग
नदुलतो नन्नदीनाथुंडु वच्चि । मुदमुतो ननु गांचि म्रॊक्किन चोटु;

छूट जाएँ ऐसा, अपने सहोदर के हाथ से धनुष को ग्रहणकर, वेग से धुष्नकोटि का निर्माण किया (और कहा)— ॥ ८४२० ॥

—"परदारागमन, ब्रह्महत्या और गुरुजनद्रोह, गोगणवध और सहोदरी के साथ रति और सुरापान करना और वेद दूषण, अन्य वित्त का अपहरण, सुन्दरी (-हत्या), चोर-संगम, मन्दिर- (गृह) दहन, मांस-भक्षण आदि पातक करके भी, यहाँ आकर अवगाहन (स्नान) करने पर (उस) पुरुषमुख्य को पुण्यसंघ प्राप्त होंगे। विरल रूप से सदा आयु, आरोग्य, परहित-आचार, सौभाग्यसंपदाएँ, चिरकीर्तियाँ वेग से उपलब्ध होंगी।" ऐसा कहते हुए उस राघवेश्वर ने तब पुष्पक पर आरूढगति से चढ़कर, यथापूर्व रूप से पुष्पक के घनवेग से गगनमार्ग से जाने पर, मनुकुलेश्वर ने तब महीपुत्री से (यों) कहा—"हे हिमकर-बिब (चन्द्र)-आस्ये (आनन वाली) ! यही वह स्थान है जहां विभीषण ने सम्मोद से आकर हमें देखा था, ॥ ८४३० ॥

—यहाँ मैंने कुशतल्प ग्रहण किया था। यहाँ अकेले (लेटा) था। सयत्न अद्भुत शक्ति से दीप्त होकर ब्रह्मास्त्र का मैंने यहाँ पयोधि पर सन्धान

अलघुविक्रमशक्ति नम्मु संधिंचि । जलजास्य ! यिक्कड जंपिति वालि;
बुष्कल बहुफलाद्भुतकाननंबु । गिष्किंध गंटे सुग्रीवु पट्टणमु,"
अनि यनि तेल्पुचो नालोलनेत्र । जनकनंदन रामचंद्रुतो ननियें;
"जननाथ! सुग्रीवु सतुलतो गूड । विनुडयोध्यकु बोव वेड्क वुट्टेडिनि"
ननवुडु पुष्पकंबय्येड निलिपि । जनपति यनिचिन जतुरुडै यरिगि
ताराधिनाथुंडु ताराद्रिकीर्ति । तारापथंबुन दारादिसतुल
जेलुवोंद दोड्तेर सीतकु म्रोक्कि । येलमि बुष्पकमेक्किरिपार वारु; ८४०
नेंतयु बदिलमै येपु दीपिंप । नंत नेप्पटि माड्कि नरिगे बुष्पकमु;
नालोन रघुरामुडा ऋश्यमूक । शैलंबु डग्गरि जानकि जूचि
"हितवानरानीकमी ऋश्यमूक । मतिलोक; मीगिरिनर्थितो दोल्लि
यलवड मर्मंबुलरसि लो मैत्रसि । चेलुव ! सुग्रीवुतो जेलिमि सेसितिनि;
आसन्न रविकिरणासक्त कमल । भासुरोदरमु बंपा सरोवरमु
निदे चूचिते ! योप्पु नी पुण्यसरसि । मृदुलतीरंबुन मेलत निन् बासि
बहु दुःखमुल बोंद बवमानसुतुडु । महितपुण्यात्मुंडु ममु वच्चिकांचि

किया था (तो) नदियों के साथ नदी-नाथ ने आकर, मोद से मुझे देखकर प्रणाम किया था, यह वह स्थान है। अलघु विक्रमशक्ति से बाण का सन्धान कर हे जलजास्ये ! यहाँ वालि को मार डाला था। देखा है न किष्किंधा को, सुग्रीव के पट्टण को जो पुष्कल-बहुफलों से अद्भुत कानन वाला है।" ऐसा बताते समय आलोलनेत्र वाली जनकनन्दना ने रामचन्द्र से कहा—"हे जननाथ ! सुनिए, सुग्रीव को सतियों के साथ अयोध्या जाने का उत्साह उत्पन्न हुआ है।" ऐसा कहने पर पुष्पक को उस स्थान पर खड़ा करके, जनपति के भेजने पर चतुर हो जाकर, ताराधिनाथ (सुग्रीव) ताराद्रिकीर्ति से तारापथ (आकाशमार्ग) से तारा आदि सतियों के शोभित होने पर, साथ लाने पर, वे सीता को प्रणाम कर, प्रेम से पुष्पक पर शोभा से आरूढ हुईं ।। ८४० ।।

—अधिक सुरक्षित हो औन्नत्य के दीप्त होने पर, तब यथापूर्व रूप से पुष्पक गया। इतने में रघुराम ने उस ऋष्यमूक शैल के निकट जाने पर, जानकी को देखकर (कहा)—"यह ऋष्यमूक हितवानरानीक (हितू-वानर-सेना से युक्त) (और) अतिलोक (अलौकिक) है। इस गिरि पर चाहकर पूर्व में शोभा से मर्मों को अंतरंग में जानकर हे सुन्दरी ! सुग्रीव से मैत्री की। यहां देखा न, आसन्न-रविकिरण-आसक्त कमल भासुरोदरवाले पंपा सरोवर

हृदयपद्ममुनकु निंपु वुट्टिंचि । मदिराक्षि ! कान्पिचॆ मर्कटेश्वरुनि;
नॊंदवुकाननमुलु नॊप्पुचुनुन्न । ददॆ शबर्याश्रम मब्जायताक्षि !
यलिगि यिक्कड महाहवकॆळि व्रालि । बलशालियैन कबंधु जंपितिनि;
८४५०

निनु जॆऱगॊनिपोवु नीचु रावणुनि । गनुगॊनि पोनीक कडिमिमै दाकि
मिन्नकय्यसुरतो मॆऱसि पोराडि । युन्नतायुवु जटायुवु गूलॆ निचट;
नदॆ या जनस्थानमब्जायताक्षि ! । पॊदलु वनंबुल बॊलुपॊंदॆ जाल;
नदॆ शूर्पणख नुग्रुडै मुक्कु सॆवुलु । गुदियग सौमित्रि गोसिन तावु;
अदॆ चूडु खरदूषणादिराक्षसुलु । मदमॆत्ति चनुदॆंचि मडिसिन चोटु;
नीयॆड नन्नॊगि नॆलयिंचुचुंडॆ । मायामृगाकृति मारीचुडॆंचि;
मदिराक्षि! यिक्कड मऱि वाडु मडिसॆ । निदॆ पंचवटि सूडुमिदॆ पर्णशाल;
पटुमाय निक्कड बंक्तिकंधरुडु । कुटिलुडै म्रुच्चिचलि कॊनिपोयॆ निन्नु;
नदॆ सुतीक्ष्णाश्रममाश्रमरत्न; । मदॆ यगस्त्याश्रमंबब्जायताक्षि !
यदॆ शरभंगुनि याश्रमंमिति ! । यदॆ यत्रिमौनि पुण्याश्रमभूमि; ८४६०

को। शोभायमान इस पुण्यसरसी के मृदुलतीर पर हे नारी ! तुमसे बिछुड़कर बहुदुखों को प्राप्त किया था। (तब) महित पुण्यात्मा पवमान-सुत ने आकर हमें देख, हृदयपद्म में मनोज्ञता (आनन्द) उत्पन्न कर, हे मदिराक्षी ! यहाँ मर्कटेश्वर (सुग्रीव) से भेंट कराई। हे अब्ज-आयत-अक्षियोंवाली ! विलसित काननों से शोभायमान वही शबरी-आश्रम है। रुष्ट हो यहाँ महा-आहव-केलि में विराजित होकर, बलशाली कबंध को मार डाला ॥ ८४५० ॥

तुम्हें बन्दी बनाकर ले जानेवाले नीच रावण को देख, (उसे) जाने न देकर, साहस से आक्रमण कर, चुप न रहकर, उस असुर से, दीप्त हो, लड़कर, उन्नत-आयुवाला जटायु यहीं मर गया। हे अब्जायताक्षी ! यह वह जनस्थान है जो विलसित वनों से मनोज्ञ बना था। यह वही स्थान है जहाँ सौमित्र ने उग्रता से शूर्पणखा के नाक-कान काट दिए थे। वह देखो, खरदूषणादियों के मस्त बन आकर मरने का स्थान। इसी स्थान पर मुझे क्रम से मायामृगाकृति से मारीच विजृंभित हो सताता रहा। हे मदिराक्षी ! यहाँ फिर वह मर गया। यही है पंचवटी, यही है देखो पर्णशाला। पटु माया से यहाँ पंक्तिकंधर ने, कुटिल बन, धोखा दे तुम्हें ले गया। वह सुतीक्ष्णाश्रम है जो आश्रमरत्न है। हे अब्जायताक्षी! वही अगस्त्याश्रम है। हे नारी ! यही शरभंग का आश्रम है। यही अत्रिमौनी का पुण्याश्रम भूमि है ॥ ८४६० ॥

यदॆ नीकु ननसूय यंगरागमुलु । हृदयरागमुतोड निच्चिन चोट्टु;
अदॆ चित्रकूटाद्रि; यक्कड नन्नु । बदिलुडॅ भरतुंडु प्रार्थिंचि चनियॆ;
बिमलकाननमुल विलसिल्लुचुन्न । यमुन यल्लदॆ कंटॆ यनतिदूरमुन;
मुदमॊप्प बहुदिव्यमुनुलु सेविंप । नदॆ चूचिते गंग यमलतरंग;
यॊदविन कॊलकुल नुद्यानततुल । नदॆ श्रृंगिबेरमॊप्पारुचुन्नदियु;
नदॆ गुहुंडेतॆंचि यर्थितो मनल । गदिसि कांचिनयट्टि कमनीयभूमि;
नदॆ सरयूनदि यधिकयूपमुल । बॊदिगॊन्न तटमुल बॊदलुचुन्नदियु;
नदॆ ययोध्यापुरमब्जाक्षि ! म्रॊक्कु; । मदॆ कानवच्चॆ नायतपुण्यराशि"
यनि भूमिजकु रामुडर्थितो जूप । घनमैन वेड्कल गपुलु राक्षसुलु
बहुरत्नकांचन प्रासादततुल । बहुतोरणंबुल बहुपताकलनु ८४७०

बहुवारणंबुल बहुतुरंगमुल । बहुरथोत्करमुल भटकदंबमुल
नमितवैभवमुल नतुलमै यॊप्पि । यमरावतियु बोलॆनमरु नप्पुरमु
निनिचिन वेड्कल नॆंड्रि निक्कि निक्कि । कनुगॊन दॊडगिरि कडकतो;
नंत

—यही वह स्थान है जहाँ तुमको अनसूया ने अंगरागों को हृदयराग के साथ दिया था। वही चित्रकूटाद्रि है। वहाँ सावधान हो, मेरी प्रार्थना कर भरत चला गया था। वही थोड़ी दूर पर देखा है न विमल काननों से विलसित यमुना को। वही देखा न अमलतरंगवाली गंगा को, जिसकी मुदित हो बहुदिव्य मुनि सेवा कर रहे हैं। वही विवर्द्धित सरसियों तथा उद्यानततियों से श्रृंगिबेरपुर शोभित हो रहा है। वही कमनीयभूमि है जहाँ गुह (केवट) ने आकर इच्छा से हमारे निकट आकर, (हमारे) दर्शन किए हैं। वही सरयूनदी है जो अधिकयूपोंवाले तटों से विलसित हो रही है। हे अब्जाक्षी ! वही अयोध्यापुर है। वही आयतपुण्यराशि (अयोध्या) दिखाई पड़ रही है, प्रणाम करो।" ऐसा भूमिजा को राम ने चाहकर दिखाने पर, अधिक उत्साह से कपि, राक्षस बहुरत्न-कांचन (निर्मित) प्रासादततियों, बहुतोरणों, बहुपताकाओं को, ॥ ८४७० ॥

—बहुवारणों, बहुतुरंगों, बहुरथोत्करों, भट-कदंबों (समूहों) (के साथ) अमित वैभवों से अतुल (अतुलनीय) हो, शोभित होकर, अमरावती के समान विराजमान उस पुर को विजृंभित उत्साहों से क्रम से उचक-उचक कर, सप्रयत्न देखने लगे। तब,

भरद्वाजुनि आतिथ्यमु

बदुनालुगेंड्लुनु बरिपुर्णमैन । वदलकण्डु शुभकृद्वत्सरमंदु
मदिलोन नुप्पोंगि माघमासमुन । बदपडि या शुद्ध पंचमिनाडु
अश्रांतशुभतेजुडगु भरद्वाजु । नाश्रमोपरिवीथि ना विमानंबु
धीयुक्ति रामुंडु दिवि निलिप डिग्गि । मायाश्रमंबुनकर्थि नेतेंचि,
यम्मुनिपादंबुलंदु मोदंबु । ग्रम्म फालस्थलि गदियिंचि म्रोंक्कि
मुनिचेत दीवनल् मुदमोप्प बडसि । विनयरसावेशविवशुडे पलिकें;
"नेनु मीदगु सेममेमियु नरय । गान; गानकु बोयि कालंबु दडसें;
८४८०

गलवु कदा मीकु गंदमूलमुलु । फलमुलु जलमु; लपायंबुलेक
येंल्ल तेंरंगुल नेंप्पुडु चेंडक । चेंल्लुगदा मीकु शिष्टकृत्यमुलु ?"
अनवुडु मुनिनाथुडारामचंद्रु । विनयवाक्यंबुलु विनि संतसिल्लि
"निखिललोकाराध्य ! नीवु जन्मिचि । निखिललोकंबुलु निष्ठ बालिप
गलवें संकटमुलु, गलवें दुःखमुलु, । गलवें बाधलु पुण्यकर्मुलकेंदु ?
नित्यसत्योन्नत ! नी प्रसादमुन । नत्यंतसुखुलमै यखिलधर्ममुलु

भरद्वाज का आतिथ्य

चौदह वर्षों के परिपूर्ण होने पर, न छोड़कर (लगकर) तब शुभकृत वत्सर में, मन में फूलकर माघमास में, तदनन्तर उस शुद्ध पंचमी के दिन, अश्रांत-शुभतेजवाले भरद्वाज के आश्रम के उपरि-वीथि पर उस विमान को धीयुक्ति से राम ने दिवि (आकाश) पर रोककर, उतरकर, उस आश्रम में इच्छा से आकर, उस मुनि के पादों (चरणों) में, मोद के व्याप्त होने पर, फालस्थल को रखकर, प्रणाम किया, मुनि द्वारा आसीसों को मोद की शोभा से प्राप्तकर, विनयरस के आवेश से विवश हो बोला— "मैं आपके क्षेम (कुशल) के बारे में कुछ ध्यान न दे सका। काननों में जाकर बहुत विलम्ब हो गया ।। ८४८० ।।

—आपके लिए कन्दमूल, फल और जल (पर्याप्त) है न ? आपके शिष्टकृत्य किसी अपाय (खतरे) के बिना, सब तरह से, सर्वदा, भ्रष्ट हुए बिना, संपन्न हो रहे हैं न !" ऐसा कहने पर मुनिनाथ ने उस रामचन्द्र के विनयवाक्यों को सुनकर प्रमुदित होकर, (कहा)— "हे निखिल लोकाराध्य! तुम्हारे जन्म लेकर, निखिल लोकों को निष्ठा से पालन करने पर, संकट (विपत्तियाँ) हो सकते हैं ? दुख हो सकते हैं ? पुण्यकर्मवालों को बाधाएँ (कष्ट) हो सकती हैं ? हे नित्यसत्योन्नतिवाले ! तुम्हारे प्रासाद से

सलुपुचु वेदोक्तसमुचित क्रियलु । सलुपुचु दपमुलु सलुपुचुंडुदुमु;
नीविदु विच्चेसि नेॅम्मि ने बनुप । गा वीडुकोॅनिपोयि क्रम्मऱ निदु
विच्चेयु नीलोनि वृत्तांतमेॅल्ल । नच्चुगा बोॅडगंटि नध्यात्मदृष्टि;
नरय नीचेसिन यद्भुतक्रियल । नरिदि यनुष्ठिंप नादिव्युलकुनु; ८४९०
नीवरण्यमुलकु निष्ठ दीपिंप । बोवुट मोदलुगा भोगंबुलुडिगि
घनजटाभार वल्कलमुलु दाल्चि । पनिवडि भरतुंडु भक्ति वाटिंचि
नी पादुकलयंदु निखिलराज्यंबु । रूपिंचि निलिपेॅ नारूढमानसुडु;
चेॅप्प नक्कजमैन चित्तानुरक्ति । नेॅप्पुडु नी राककेॅदुरु वीक्षिचु;
नीवु नी तम्मुनि नेॅय्यंबु दलचि । वेवेग पोयि भाविपगावलयु;
वनवासमुन डस्सि वच्चिनवाड । वनघ ! मा याश्रमंबंदु नेडुंडि
भूपाल ! नीवेॅल्लि प्रोॅद्दुन गदलि । मापंपु गैकोॅनि मऱि पोॅम्मु; विदु
गाविंतु" ननि चेॅप्पि घनतपोमहिम । नावेळ रामुडत्याश्चर्यमंद
ना महामुनिवरुंडात्मलोपलनु । गामधेनुवु गुतुकमुतोड दलप
मिलमिल मेॅदलेॅडि मृदुतरान्नमुनु । फलमुलु घृतमु सूपमुलपूपमुलु
८५००

(हम) अत्यन्त सुखी बन, अखिल धर्मों का आचरण करते हुए, वेदोक्त समुचित क्रियाएँ करते हुए, तप करते रहते हैं। तुम यहाँ पधार कर, प्रेम से मेरे भेजने पर, बिदा लेकर, जाकर. पुनः यहाँ पधारने के मध्य (काल) के समस्त वृतान्त को अध्यातम -(दिव्य) दृष्टि से ठीक ढंग से देख लिया है, सोचने पर तुमने जो अद्भुत-क्रियाएँ (-कार्य) की हैं, वे उन दिव्यों के लिए भी करने में असाध्य हैं ॥ ८४९० ॥

—तुम्हारे, निष्ठा के दीप्त होने पर, अरण्यों को जाने से लेकर, भोगों को छोड़कर, घन-जटा-भार-वल्कल धारणकर, लगकर भरत ने भक्ति मानकर, तुम्हारी पादुकाओं में निखिल राज्य को रूपित कर, आरूढ मानसवाले ने (मन को) स्थिर किया। कहने में अद्भुत चित्तानुरक्ति से सदा तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा करता रहता है। तुम्हें अपने अनुज के स्नेह की सोचकर, अतिशीघ्र जाकर (उसका) सम्मान करना चाहिए। हे अनघ! वनवास से थककर आए हो। हमारे आश्रम में आज रहकर हे भूपाल! तुम परसों प्रातः निकलकर, हमारा आदेश लेकर फिर निकल जाओ। भोज (की व्यवस्था) करूँगा।" ऐसा कह घनतपोमहिमा से उस समय राम अत्याश्चर्य (चकित) हो जाएँ, ऐसा उस महामुनिवर ने आत्मा (मन) में कामधेनु का कौतुक से स्मरण किया (तो) टिमटिमाते चमकनेवाला मृदुतर-अन्न, फल, घृत, सूप, अपूप, ॥ ८५०० ॥

सरवितो शाकमुल् शर्करल् पॆरुगु । बरमान्नमुनु नानबालुनु जुटि
तेनियल् शिखरुलु दिय्यजारुलुनु । बानकंबंबळ्ळु बच्चळ्ळु जुन्नु
वरुगुलु वडियमुल् वासनोदकमु । लुरुतररुचि नॊप्पु नूरुगायलुनु
मॊदलैन वावेल्पुमॊदवु गल्पिप । मुदमुन गपिदैत्यमुख्युलतोड
नच्चपु भक्तिमै ना रामचंद्रु । डिच्च मॆच्चुचु भुजियिंचियुन्नंत,
ना भरद्वाजुडिट्लनियॆ रामुनकु; । "शोभनगुणधाम ! सुगुणाभिराम !
येमु नीकॊकवरंबिच्चॆदमिपुडु; । कामिपु" मनुटयु गरमुलु मॊगिचि
"पोडिगा साकेतपुरमु चुट्टुननु । मूडुयोजनमुलु मुनिनाथ ! विनुडु,
एचि तलिर्चुचु नॆल्लकालमुनु । बूचुचु बंडुचु भूजंबुलुंड
वरमिडु; मऱियॊंडु वरमु नेनॊल्ल; । गरुणिपु" मनवुडु गरुणिचॆ मौनि; ८५१०

या यीगि जरितार्थुलैरि वानरुलु । मायनि हृदयसम्मदमुन बॊदलि;
यप्पुडु रघुपति यनिलनंदनुनि । दप्पक चूचि युदात्तुडै पलिकॆ;

—क्रम से शाक, शर्कराएँ, दही, परमान्न (खीर) और जलसिक्त तंडुल, ताजा शहद, शिखरियाँ, मधुर रसम्, पानक (गुड़, काली मिर्च और इलायची का चूर्ण मिला पानी), कांजी, चटनियाँ, पनीर, सूखा साग[1], वटक[2], सुगन्धित उदक, उरुतर रुचि (स्वाद) से शोभित अचार आदि के उस सुरधेनु के कल्पित करने पर, मोद से कपि (और) दैत्य मुख्यों के साथ, स्वच्छ भक्ति से रामचन्द्र मन में प्रशंसा करते हुए भोजन करके (वहीं) रहा। उस भरद्वाज ने राम से यों कहा—"हे शोभनगुणधाम ! हे सुगुणाभिराम ! हम तुम्हें एक वर अब देंगे। कामना करो।" (ऐसा) कहने पर हाथ जोड़कर (कहा) —"शोभा से साकेतपुर के चौतरफ़ तीन योजन तक हे मुनिनाथ ! सुनिए (ऐसा) वर दीजिए कि प्रचुरता से कोंपले भरते हुए, सदा फूलते हुए, फलते हुए भूज (वृक्ष) रहें। और कोई वर मैं नहीं चाहता। करुणा कीजिए।" ऐसा कहने पर मौनि ने करुणा की (वर प्रदान किया) ॥ ८५१० ॥

—उस उदारता से वानर, कभी न मिटनेवाले हृदय सम्मोद से विलसित हो, चरितार्थ हुए। तब रघुपति ने अनिलनन्दन को अवश्य देखकर, उदात्त

---

[1] बैंगन, ककड़ी आदि के टुकड़ों को खूब सुखाकर, बाद में उनसे साग बनाते हैं। उन्हें 'वरुगु' कहते हैं।

[2] कूष्मांड आदि के टुकड़ों को भिगोए उड़द के आटे में मिलाकर, भक्ष्य विशेष बनाकर सुखा देते हैं। बाद में उन्हें तेल में तल लेते हैं। इन्हें 'वडियमु' कहते हैं।

"नतुलसत्त्वोन्नति नत्यंतवेग । रति श्रृंगिबेरपुरंबुन करिगि
भूरिमानसु गुहु बुण्यात्मु गांचि । मा राक यतनिकि मानुगा दैलिपि
या युन्नतात्मुचे नट बोवु त्रोव । धीयुक्ति नैंरिगि नंदिग्रामपुरिकि
नरिगि मा भरतुन कतिशुभव्रतुन । कुरुदयारतुनकु नुन्नतात्मुनकु
नेमु वच्चितिमनि यैरिंगिंचि रम्मु; । पो मारुतात्मज ! पौम्मु"
नावुडुनु
मारुतात्मजुड्नु मानुषवेष । धारियैं यरिगि यत्यंतवेगमुन
गंगातरंगिणि गडकतो दाटि । श्रृंगिबेरमुनकु जेंच्चैर बोव
बरहितात्मकुडैन परमेशुराक । यरसि कानक गुहुंडात्मलोपलनु ८५२०
"नन्नेलु श्रीराम नरलोकविभुनि । सन्नुतपदपंकजंबुलु गौलिचि
पोलेक निलिचिति भूरिदुर्गमुल । नेलील मैलगिरो ? येंदुन्नवारौ ?
शरभ भेरुंड राक्षस वह्नि भुजग । गरळबाधलचेत ग्रागिरो काक ?
लेकुन्न व्रतमु सैल्लिनमीद मगुडि । राकयुंडुनैं रघुरामुंडु ! वलिकि
तप्पुनैं ! कार्यंबु दप्पै; नेंनिक । निप्पुडे सोद जौच्चि यैनयुदु रामु"
ननि मनंबुन नुन्न यांदोळमुडिगि । तनसतुल् सुतुलुनु दम्मुलु दानु

बन कहा—"अतुल-सत्त्वोन्नति से अत्यन्त वेगरति से श्रृंगिबेरपुर जाकर, भूरि-मानसवाले पुण्यात्मा गुह को देखकर, हमारे आगमन (की बात) उसे श्रेष्ठता से बताकर, उस उन्नतात्मावाले से वहाँ से जाने के मार्ग को धीयुक्ति से जानकर नन्दिग्रामपुर जाकर, हमारे भरत को अतिशुभव्रत को, उरुदयारत को, उन्नतात्मावाले को यह बताकर आओ कि हम आ गए हैं। जाओ मारुतात्मज ! जाओ।" ऐसा कहने पर मारुतात्मज मानुष-वेषधारी हो, अत्यन्त वेग से, गंगातरंगिणी को सप्रयत्न पारकर, श्रृंगिबेरपुर को झट गया। (जाने पर) परहितात्मक परमेश (राम) के आगमन की प्रतीक्षा कर, (उन्हें) न पाकर गुह (केवट) ने आत्मा (मन) में, ।। ८५२० ।।

—(सोचा)—"मेरा पालन करनेवाले श्रीराम-नरलोकविभु के सन्नुत-पद-पंकजों की सेवा करते हुए, (उनके साथ) जा न सक, रुक गया। पता नहीं भूरि-दुर्गों में किस प्रकार विचरण किया ! पता नहीं, कहाँ (स्थित) हैं ? नहीं तो शरभ-भेरुंड-राक्षस-वह्नि-भुजग-गरल-बाधाओं (कष्टों) से व्यथित हुए होंगे ? नहीं तो व्रत की पूर्ति होने के बाद रघुराम लौट आए बिना रहेगा ? बोलकर (वचन देकर) टाल देगा ! कार्य बिगड़ गया है। मैं अभी चिता में प्रवेश कर राम को प्राप्त करूँगा।" ऐसा मन की विकलता को छोड़, अपनी सतियों, सुतों, अनुजों के साथ स्वयं क्रम से गुंड

सोरिदि गुंडमुनंदु सोंद बेर्चि मिगुल। दरिकोल्प ननलमुदग्रमै मंड
नरलेनि भक्तितो ना गुहुंडपुडु । धरणीशुडगु रामु दलपुलो निलिपि
यय्यग्निलो जोर नरुगुदेरंग । नय्येंड हनुमंतुडड्डमै निलिचि
"युडुगक तन व्रतंबोनर जेल्लिचि । पुडमिऱेडिदे वच्चु, बोंकुगादेल्लि;
८५३०
पदपडिनग्निलो बडिन श्रीरामु । पदमुलया' नंचु बलिकिन नात
डनिलजुनकु म्रोक्कि या रामुराक । कनुचर - सहितुडै हर्षंबु नोंदे;
बरग नग्गुहुडु संभाविप नरिगि । युरुपुण्यनिधि सरयूनदि दाटि
पोव नंदिग्रामामुन भरतुंडु । पावनचरितुंडु भावंबुलोन
"ना रामलक्ष्मणु लवनिनंदनयु । नेरीतिनुन्नारो ? येमैनवारो ?
येंन्निन पदुनालुगेंड्लुनुनय्ये; । ग्रन्नन रामुडिक्कडिकि राडेमो ?
मोसपोयिति; नाडे मुनिवृत्ति रामु । भासुरकोमलपादपद्ममुलु
ना सुमित्रापुत्रुडर्थितो गोलिचि । यासमीऱग दोन यरिगिनरीति
नरुगलेनैति ! ने नारामुबासि । धरणि ने विधमुन दनुवु धरितु ?
'बदुनालुगेंड्लुनु बरिपूर्णमैन । सदयुडै रघुपति सनुदेकयुन्न ८५४०

(गर्त) में चिता सजाकर, (उसे) अधिक प्रज्ज्वलित कर, अनल के उदग्र हो बलने पर, निष्कलंक भक्ति से उस गुह ने तब धरणीश राम को मन में स्थित कर, उस अग्नि में प्रवेश करने आने पर, उस अवसर पर हनुमान बीच में आ खड़े हुए (और कहा)— "न छोड़कर अपना व्रत शोभा से पूरा करके पृथ्वीपति अभी आ रहा है। यह झूठ नहीं है ।। ८५३० ।। —इसके बाद भी अग्नि में प्रवेश करोगे तो श्रीराम के चरणों की क़सम।" ऐसा बोलने पर उसने अनिलज को प्रणाम किया, उस राम के आगमन पर, अनुचरसहित हर्षित हुआ। शोभा से उस गुह के संभावित करने पर जाकर, उरु-पुण्यनिधि (हनुमान) सरयू नदी पारकर गया। (उस समय) नन्दिग्राम में पावन चरित वाला भरत भाव (मन में) (सोच रहा था कि)—"पता नहीं, वे राम-लक्ष्मण और अवनिनन्दना किस रीति से हैं ? (उनका) क्या हो गया होगा ? गिनती करें तो चौदह वर्ष पूरे हो गए। झट से राम यहां क्यों नहीं आता ? धोखा खा गया। उसी दिन मुनिवृत्ति से राम के भासुर कोमल-पाद-पद्मों की इच्छा से सेवा करते, बड़ी आशा के साथ, (राम के) साथ जिस तरह वह सुमित्रा-पुत्र गया था, (उस तरह) जा न सका। मैं राम से बिछुड़कर धरणी पर किस प्रकार शरीर को धारण करूँगा ? 'चौदह वर्ष परिपूर्ण होने के बाद सदय होकर रघुपति न आवें तो ।। ८५४० ।।

घनमैन सौंद बेर्चि कडकतो जौत्तु’ । ननि निश्चयंबुगा नाडिन प्रतिन
हितमति रित्तवोनित्तुने” यनुचु । मतिनिश्चयमुसेसि मंत्रुलकनियें;
“शात्रव मदहारि शौर्यसंपन्नु । बात्रु शत्रुघ्नुनि बट्टंबुगट्टु;
डेनग्निलो जौच्चि येगेंद रामु । गानंग” ननिन नाघनु जूचि यपुडु
शत्रुघ्नुडिट्लनु; “जगतीतलेश ! । धात्रि नाकेल ? यी तनुवु नाकेल ?
नी पादमुलु गौल्चि नीतोड गूडि । येपारगा नेनु नेगुदेंचेंदनु”
अनि कृत निश्चयुलैन वारलनु । गनुगौनि भीतुलै कलगिरंदरुनु;

हनुम भरतुनकु राघवुलसेममेंरिंगिचुट

ना समयंबुन नधिकवेगमुन । ना समीरात्मजुंडरुदेंचि भरतु
गनुगौनि विनतुडै करमुलु मोगिचि । कौनि निल्व गाकुत्स्थकुलुडिट्टु-
लनियें;
“नीकुलंबेय्यदि ? नीकु बेरेमि ? । चेकौनि यिटकु वच्चिनपनियेमि ?
८५५०
येव्वंड ? वेंदुंडि येंट केगेंद” निन । नव्वसुधेशुतो ननिलजुंडनियें;
“गपि नेनु, रघुरामु गादिलिबंट; । दपनकुलांभोजतपनुडुन्नतुडु

—बड़ी चिता जलाकर सप्रयत्न (उसमें) प्रवेश करूँगा’ ऐसा निश्चित रूप से कही प्रतिज्ञा को हितमति से खाली जाने दूँगा ?” (ऐसा) कहते हुए मति से निश्चय कर मन्त्रियों से बोला—“शत्रुओं के मद का हरण करने वाला, शौर्यसम्पन्न, पात्र (योग्य) शत्रुघ्न का राजतिलक करो। मैं अग्नि में प्रवेश कर राम को देखने जाऊँगा।” (ऐसा) कहने पर उस महान् (व्यक्ति) को देखकर तब शत्रुघ्न यों बोला—“हे जगतीतलेश ! (यह) धात्री मुझे क्यों ? यह शरीर मुझे क्यों ? तुम्हारे चरणों की सेवाकर, तुम्हारे साथ मिलकर शोभा से मैं भी आ जाऊँगा।” ऐसा कृतनिश्चय बने उन्हें देख सभी भीत हो व्याकुल हुए।

हनुमान का भरत को राघवों का कुशल बताना

—उस समय अधिक वेग से उस समीरात्मज के आकर भरत को देखकर, विनत हो, हाथ जोड़कर, खड़े रह जाने पर काकुत्स्थकुलवाले (भरत) ने यों कहा—“तुम्हारा कुल क्या है ? तुम्हारा नाम क्या है ? चाहकर यहाँ आने का क्या काम है ? ।। ८५५० ।।

—कौन हो ? कहाँ से कहाँ जाओगे ?” (ऐसा) कहने पर उस वसुधेश से अनिलज ने कहा—“मैं कपि हूँ। रघुराम का लाडला सेवक हूँ। तपनकुल

तन पुण्यचरितमुत्तमुलॆल्लमॆच्च । वनवाससमयंबु वलनॊप्प दीर्चि
सौमित्रियुनु दानु जनकनंदनयु । रामुंडु वच्चि यरण्यमुल् विडिचि
नॆम्मितो मुंदऱ नी सेममरसि । रम्मन्न वच्चिचन राक यी राक !”
यनवुडु भरतुडत्यंतहर्षमुन । गॊनकॊनि पुलकिंचि कोर्कि दीपिंप
“रा पुण्यवत्सल ! रा कपिश्रेष्ठ !। रा पवनात्मज ! र” म्मंचु दिगिचि
नरनाथसुतुडु वानरनाथसुतुनि । गरमु सम्मदमुन गौगिट जेर्चि
गजमाल्यमणुलिच्चि गजमुलनिच्चि । गजराजगमनल गरमर्थिनिच्चि
कनकांबरंबुल गडु वेड्क निच्चि । विनुतभूषणमुलु वॆलयंग निच्चि ८५६०
तगु पट्टणमुलिच्चि धनकोटुलिच्चि । यगणितगुणधीरुडनियॆ मारुतिकि;
“नडवुलकरिगि रामावनीविभुडु । दडसिनकालंबु दलपनच्चॆरुवु !
ऎंदॆंदु वर्तिंचॆ ? नॆंदॆंदु बोयॆ ? । नॆंदुन्नवाडिप्पुडिनकुलेश्वरुडु ?
नीवु राघवुनकु निजदूतवगुट । नीविधंबंतयु नॆऱिगिंपुमनघ !
यिच्चलोपल नम्म नीपलुकेनु; । वच्चुट् निक्कमा वनचराधीश!”

(सूर्यवंश) (रूपी) अंभोज के लिए तपन (सूर्य) (राम) (और) उन्नत (मनवाले) ने अपने पुण्य चरित्र को सभी उत्तमजन सराहें, (ऐसा) वनवास समय को शोभा से पूर्णकर, सौमित्रि, जनक-नन्दना के साथ स्वयं राम ने आकर जंगलों में पड़ाव डालकर प्रेम से कहा प्रथमतः तुम्हारा (भरत का) कुशल जानकर आओ। कहने पर, यह मेरा आगमन है।” ऐसा कहने पर भरत ने अत्यन्त हर्ष से, सयत्न पुलकित होकर इच्छा के प्रदीप्त होने पर कहा—“आओ हे पुण्यवत्सल! आओ कपि श्रेष्ठ! आओ पवनात्मज! आओ” कहते हुए, निकट लेकर, नरनाथसुत ने वानरनाथसुत को अधिक सम्मोद से आलिंगित कर, गजमाल्यमणियाँ देकर, गजों को देकर, गजराज-गमनाओं को प्रेम से देकर, अधिक उत्साह से कनकांबर (स्वर्ण वस्त्र) देकर, विनुत भूषणों को शोभा से देकर, ॥ ८५६० ॥

—उचित पट्टण (नगर) देकर, धन-कोटियाँ देकर, अगणित गुणधीर (भरत) ने मारुति से कहा—“जंगलों में जाकर राम-अवनीविभु ने जो विलम्ब किया, वह सोचने में आश्चर्यप्रद है। कहाँ-कहाँ विचरण किया? कहाँ-कहाँ गया? अब इनकुलेश्वर कहाँ है? हे अनघ! तुम राघव के निजदूत होने से यह सारा विधान बताओ। मन में मैं तुम्हारी बात पर विश्वास नहीं करता। हे वनचराधीश! क्या राम का आना सत्य है?” ऐसा कहने पर सुनकर, हँसकर, उस विमलात्मा (वाले) (हनुमान) ने श्रेष्ठ

यनवुडु विनि, नव्वि यव्विमलात्मु । डेनसिन भक्तितो नेर्पड बलिकै;
"मी तंड्रि दशरथमेदिनीश्वरुडु । भूतल राज्यप्रभुत्वंबु मान्पि
यडविकि जनुमन्न नन्नरेश्वरुडु । जडलु वल्कलमुलु शांतुडै तालिच
भानुप्रभाभासि पादचारमुन । जानकी लक्ष्मण सहितुडै वेडलि
चित्तसम्मदमुन जित्रकूटाद्रि । नुत्तममुनि गोष्टि नुन्नचो नीवु ८५७०
भूराज्यमोल्लक पोयि मी यन्न । नाराधनमु सेसि यधि बिल्चुटयु
बति राकयुन्न दत्पादुकायुगळ । सतिभक्ति युक्तिमै ननुरक्ति नडिगि
तलमोचिकोनि वच्चि धारुणीराज्य । फलभोगमुडिगि तपस्विवैतिचट!
गुटिल दानव बल क्रूर दुर्गमुन । कट राघवुडु दंडकारण्यमुनकु
जनि शरभंगुनाश्रम भूमि निलिचि । मुनुलु नूरड बलिक मुदमोप्प
बोयि
या जनस्थानंबुनंदुन्न दैत्य । राजु चेल्लेलि बट्टि राजसंबोप्प
नलिमीर ना शूर्पणख मुक्कुसेवुलु । गोलदिकि मोदलंट गोसिपोवैचि,
खरदूषणादि राक्षसुल बेक्कंड्र । नरभोजनुल बदुनाल्गुवेवुरनु
जंपि यक्कड बर्णशाललोनुंड । दैंपुमै राक्षसाधिपुडु प्रेरेप
मारीचुडनियेडि मायावि योकडु । भूरिमृगाकृति बोंडसूपुटयुनु
८५८०

भक्ति के प्रकट होने पर कहा—"आपके पिता दशरथ-मेदिनीश्वर के भूतल के राज्यप्रभुत्व से मनाकर जंगल जाने के लिए कहने पर, वह नरेश्वर (राजा-राम) जटाओं, वल्कलों को शांत हो धारण कर, भानु-प्रभाभासी (राम) पैदल ही जानकी और लक्ष्मण सहित हो निकलकर, चित्त के सम्मोद से चित्रकूटादि में उत्तम मुनिगोष्ठि में रहा। रहने पर तुम ॥ ८५७० ॥ —भूराज्य को न चाहकर, जाकर अपने अग्रज की आराधना कर, प्रेम से बुलाने पर, पति (राम) के न आने पर, तत्-पादुकायुगल को अति-भक्ति-युक्ति से अनुरक्ति से माँगकर, सिर पर धारणकर आकर धारुणीराज्य-फलभोग को छोड़कर यहाँ तपस्वी बने रहे। वहाँ राघव कुटिल दानव बल से क्रूर बने दुर्ग (वन) दंडकारण्य को जाकर, शरभंग की आश्रमभूमि में ठहरकर, मुनियों को सान्त्वना देकर, मुदित हो जाकर, उस जनस्थान में स्थित दैत्यराज की अनुजा को पकड़ राजस के शोभित होने पर, उस शूर्पणखा के नाक-कान को बलपूर्वक जड़ तक काट देकर, खर दूषण आदि कई राक्षसों को, चौदह हज़ार नरभोक्ताओं को मारकर, वहाँ पर्णशाला में रहते समय, साहस से राक्षसाधिप के प्रेरित करने पर, मारीच नामक एक मायावी, भूरि मृगाकृति से दिखाई पड़ा ॥ ८५८० ॥

मृगनेत्र सीत या मृगमु वीक्षिंचि । "मृगमोप्पु; नाकु नी मृगमु-
देवलयु"
ननवुडु शरचापहस्तुडै दानि । वेंनुकोंनि रामभूविभुडोंगिनेय
गूलेंडुनप्पुडाकुटिलराक्षसुडु । "हा लक्ष्मणा!" यनु नार्त रावमुन
नारूढि जीर्रिन नतिव भीतिल्लि । या राघवानुजु ननुप नच्चटकु
मुनिवेषधारियै मुद्दिय नेत्ति । कोंनिपोवु रावणु गूडि पोनीक
घनुडु जटायुवु गनि यड्डपडिन । ननिमोन भंजिंचि यतनि निर्जिंचि
दनुजाधिपति समुद्रमु दाटिपोयि । तन लंकलोनि युद्यानंबुनंदु
सीता महादेवि जेच्चेर्र नुनिचि । याततजयशालियै युंडे; नंत
मायामृगमु जंपि मर्रि रामचंद्रु । डायासपडि खिन्नुडै वच्चिवच्चि
सौमित्रि बोंडगोंनि "जानकि डिंचि। येमिटिकिट वच्चिती" वंचु
वगचि ८५९०
यतडु दानुनु गूडि या पर्णशाल । कतिभयंबुन वच्चि यंदुलो सीत
बोंडगानकिरुवुरु भूरिशोकमुन । बडि यिंति वेंदकुचु बहुदुर्गमुलनु
बोवुचो रावणु भुजशक्ति दूलि । वाविरि लो दार्रि वसुधपै गूलि
युन्न जटायुवु नोंय्यन गदिसि । यन्नीचदुर्दश नद्दशाननुडु

—(दिखाई पड़ने पर) मृगनेत्रवाली सीता ने उस मृग को देखकर (कहा)—"यह मृग शोभायमान है। मेरे लिए इस मृग को लाना चाहिए।" ऐसा कहने पर शरचाप-हस्तवाला हो, उसके पीछे पड़, रामविभु के क्रम से (बाण) डालने पर, गिरते समय उस कुटिल राक्षस ने "हा लक्ष्मणा!" कहते आर्तराव से आरूढि से बुलाने पर, नारी (सीता) ने भीत होकर, उस राघवानुज को भेजा। वहाँ पर (पर्णशाला में) मुनिवेषधारी बन, मुग्धा (सीता) को उठा ले जानेवाले रावण को जाने न देकर महान् जटायु ने उसे रोका। (रोकने पर), युद्ध में पीड़ित कर, उसे जीतकर, दनुजाधिपति समुद्र को पारकर जाकर, अपनी लंका के उद्यान में सीता महादेवी को झट रख, आतत जयशाली हो रहा। तब मायामृग को मारकर फिर रामचन्द्र थककर, खिन्न हो आकर, सौमित्र को देखकर, "जानकी को छोड़ तुम यहाँ क्यों आए हो ?" कहते दुखी होकर ॥ ८५९० ॥

—उसके साथ स्वयं, उस पर्णशाला में अति शीघ्र आकर, उसमें सीता को न पाकर, दोनों भूरिशोक में डूबकर, नारी को खोजते हुए, बहुदुर्गों (वनों) में से जाते समय, रावण की भुजशक्ति के कारण डगमगाकर, क्रम से हारकर, वसुधा पर गिर पड़े हुए जटायु के पास झट पहुँचकर, उस दशानन के (उसकी) वह नीच दुर्दशा कर, सीता को लंका ले जाने की बात उससे

गार्विचि सीत लंककु नैत्तिकौनुचु । बोवुट यतनिचे बोलंग नैरि़गि
या विहंगाधीशु नचट दहिंचि । पोवुचु वनदुर्गभूमुलु गडचि
मुंदट ना ऋश्यमूकंबुगांचि । यंदु सुग्रीवुनकै वालि जंपि
तारतो नाचंद्रताराकंमुगनु । ना राज्यमंतयु नातनिकिच्चें;
निच्चिन सुग्रीवुडेंतयु मैच्चि । विच्चलविडि सीत वैदकैंडिकौऱकु
लक्षल रैंडेसि लक्षल गपुल । नक्षीण बलुल महायशोधनुल ८६००

बदिदिक्कुलकु बंप बऱचि वानरुलु । वदलक वैदकंग वच्चि संपाति
''सीतयुन्नदि लंक; जिंतिपवलव; । दीतेऱंगिट्टुसेयुडिटमीद'' ननिन
जलराशि नूऱु योजनमुलेदाटि । नलिगि यशोकवनंबुलोनुन्न
वैदेहिगनि यानवालु नेनिच्चि । या देवि माणिक्यमर्थि निच्चुटयु
नदि देच्चि यिच्चिन नवनिवल्लभुडु । मुदमंदि विस्मयंबुनु बौंदि यपुडु
सकल शाखामृगसहितुडै पोयि । यकलंकविक्रमुंडब्धि बंधिच्चि
लंकपैविडिसि यलंकृतशक्ति । लंकेशु जंपि कळंकंबुलुडिपि
यव्यय श्रीयुक्ति ना लंक बुण्य । भव्यु विभीषणु बट्टंबु गट्टि,
पावनात्मकुलैन ब्रह्मादिसुरल । चे वरंबुलु गौनि चैलुवग्गलिंचि

स्पष्ट रूप से जानकर, उस विहंगाधीश का वहाँ दहन (-संस्कार) किया, (करने के बाद) जाते हुए वन-दुर्गभूमियों को पारकर, पहले उस ऋश्यमूक को देखकर, उसमें सुग्रीव के लिए वालि का वधकर, तारा के साथ वह समस्त राज्य आचंद्र-तारार्क (जब तक चन्द्र, तारा और अर्क रहें तब तक-सदा के लिए) उसे देदिया । देने पर सुग्रीव अधिक प्रसन्न होकर, मनमाने ढंग से सीता को खोजने के लिए, लाखों, दो लाखों कपियों को जो अक्षीण बलवाले थे, महायशोधन थे, ।। ८६०० ।।

—दसदिशाओं में भेजा । (भेजने पर) जाकर वानर, न छोड़कर खोजने पर (चप्पा-चप्पा छान मारने पर), आकर संपाति के 'सीता लंका में है, चिन्ता मत करो, अब आगे इस तरह करो' कहने पर सौ योजन जलराशि को शीघ्र पार कर, कृश बन अशोकवन में स्थित वैदेही को देखकर, मेरे चिह्न (अभिज्ञान) को देने पर, उस देवी के चाहकर माणिक्य देने पर, उसे ला देने पर अवनि-वल्लभ (राजा-राम) मुदित हो, विस्मय को भी प्राप्तकर, तब सकल-शाखामृग सहित हो आए, अकलंक-विक्रमवाले (राम) ने अब्धि को बाँधकर, लंका पर आक्रमण किया, अलंकृत शक्ति से लंकेश का वध कर, कलंकों को दूरकर, अव्यय-श्रीयुक्ति से उस लंका पर पुण्य-भव्य विभीषण का पट्टाभिषेक किया, पावनात्मक ब्रह्मा आदि सुरों से वर

हितमति सुरलतो नेगुदॆंचुटयु । नतिभक्ति मी तंड्रि यडुगुल कॆरगि ८६१०

यनलमुखंबुन नतिशुद्धयैन । जनकज गॆकॊनि सम्मदंबॊप्प
ख्याति पॆंपॊंद ना कपुलु राक्षसुलु । ब्रीति सुग्रीव विभीषणांगदुलु
बलसि तन् गॊलुव बुष्पकमॆक्कि वच्चि । फलितविक्रमयशोभरितुडै विभुडु
आ भरद्वाज संयमि याश्रममुन । ब्राभव स्फुरण मॊप्पग नुन्नवाड
चंदन चंद्रिका सम चारुकीर्ति; । यिदॆल्लभंगुल नॆल्लि विच्चेयु"
ननवुडु भरतेशुडतनि वाक्यमुल । जनितानुरागुडै शत्रुघ्नु जूचि
"तडयक नीवयोध्यापुरंबुनकु । गडुवेगमुन बोयि कडक दीपिंप
नायत मंगळायतनमै योप्पु । नी युत्सवमु वीट नॆल्ल जाटिंपु;
गॊनकॊनि मन रामु कॊलुवुकूटमुन । घनसेतुबंधादि कथलु व्रायिंपु;
देवगेहमुलु भूदेवगेहमुलु । नीवु सन्निधिनुंडि नॆऽय बाटिंपुदु ८६२०
वर रत्न तोरणध्वज परंपरलु । पुरवीथुलंदॆल्ल भूषिप बंपु;
तरुणुल बिलिपिंचि तगिन मुत्तॆमुल । वॆरवार म्रुग्गुलु वॆट्टिंप बंपु;

प्राप्त कर, शोभा से विवर्द्धित होकर, हितमति से सुरों के साथ आने पर, अति भक्ति से आपके पिता के चरणों में अवनत हो, ।। ८६१० ।।

—अनलमुख में अतिशुद्ध बनी जनकजा को स्वीकार कर, सम्मोद के शोभित होने पर, ख्याति के बढ़ने पर, प्रीति से नाकप (देवता), राक्षस, सुग्रीव, विभीषण, अंगद आदि के घेरकर अपनी सेवाएँ करते रहने पर, पुष्पक पर आरूढ़ हो आकर, फलित (सफल बने)-विक्रम तथा यश से संभरित हो हो विभु (राम) उस भरद्वाज-संयमी के आश्रम में प्राभव-स्फुरण की शोभा से चंदन-चन्द्रिका-सम चारुकीर्ति युक्त हो स्थित है। परसों हर प्रकार से यहाँ पधारेगा।" ऐसा कहने पर भरतेश ने उसके वाक्यों से अनुराग के उत्पन्न होने पर शत्रुघ्न को देखकर (कहा)—"अविलम्ब तुम अयोध्यापुर को अतिशीघ्र जाकर, साहस के दीप्त होने पर, आयत-मंगलायतन हो शोभित इस उत्सव की समस्त नगर में घोषणा कर दो। सप्रयत्न हमारे राम के सभामन्दिर में सेतुबंधन आदि कथाएँ लिखवा दो। देवगेहों, भूदेवगेहों को तुम सन्निधि (निकट) में रहकर अलंकृत करो ।। ८६२० ।।

—समस्त पुरवीथियों को वर-रत्न-तोरण-ध्वज-परम्पराओं से विभूषित करने भेजो। तरुणियों को बुलाकर उचित मोतियों से उचित विधि से

ललित वस्तुवुल निड्लकु नेल्लबंपु । कलय बौरुल नेल्ल गैसेय बंपु;
श्रीरामविभुडु वेंचेसिन शुभमु । चेरुव नृपुलकु जेप्पंग बंपु;
करितुरगादुल क्रंदु गानीक । परुवडि जतुरंग बलमुलु गोलुव,
नेम्मि मंत्रुलतोड नीवु वेगमुग । नम्मल गोलिचि र" म्मनि पनुचुटयु
ननघुडु शत्रुघ्नुडत्यंतवेग । मुन नयोध्यकु बोयि मुदमु दीपिप
गरमोप्प राघवागमन मंगळमु । वरुसतो निज बंधुवरुलकु जेप्पि
कौसल्यतो जैप्पि कैकतो जेप्पि । या सुमित्रादेवि कर्थितो जेप्पि
भरतुंडु दनुबिल्चि पनिचिन भंगि । बुरमु सर्वंबुनु भूषिपजेसि ८६३०
'यदि यिदिलेदु का' दनकुंड निडु । चदुरोप्प नगरुलु चक्क जेयिंचि
चंदनकर्पूर जलमुलु गूर्चि । यंदंद मुंगिळ्ळ नर्थि जल्लिचि
पुरवीथुलंदु नोप्पुग नवरत्न । वरतोरणंबुलु वरुस गट्टिंचि

भरतुडु वसिष्टादुलतो श्रीरामु नेदुरुकोनुट

यनघमानसुलैन या वसिष्टादि । मुनुलु बुरोहितुल् मुनिपुण्यसतुलु
जननुलु बंधुलु सचिवुलु हितुलु । वनितलु बौरुलु वरवृद्ध - जनुलु

रंगोलियाँ सजाने भेजो। समस्त गृहों में ललित वस्तुओं को भेजो। शोभा से समस्त पुरजनों को अलंकृत होने के लिए भेज दो। श्रीराम विभु के पधारने के शुभ (समाचार) को निकटस्थ नृपों को जताने (दूतों को) भेजो। करि तुरगादियों को विकल न बना, झट चतुरंग-बलों (सेनाओं) के सेवाएँ करने पर, प्रेम से मंत्रियों के साथ तुम वेग से माताओं के दर्शन कर आओ।" ऐसा भेजने पर अनघ शत्रुघ्न अत्यन्त वेग से अयोध्या को जाकर मोद के दीप्त होने पर, अधिक शोभा से राघव के आगमन के मंगल (समाचार) को क्रम से अपने बन्धु (संबंधी) -वरों को बताकर, कौसल्या को बताकर, कैकेई को बताकर, सुमित्रादेवी को प्रेम से बताकर, भरत के अपने को बुलाकर भेजे (आदेश दिए) विधान से समस्त पुर को विभूषित कर, ॥ ८६३० ॥

—'यह नहीं, वह नहीं' ऐसा न कहकर पूर्ण सुन्दरता से अन्त:पुरों को अलंकृत कराकर, चन्दन-कर्पूर-जल को एकत्र कर, सर्वत्र आँगनों में चाहकर जल बिखेरवाकर, पुर-वीथियों में शोभा से नवरत्न-वरतोरणों को क्रम से बँधवाकर,

भरत का वसिष्ठादियों के साथ श्रीराम की अगवानी करना

—अनघमानसवाले वसिष्ठादि मुनि-पुरोहित, मुनियों की पुण्यसतियाँ, जननियाँ, बन्धु,[१] सचिव, हितू, वनिताएँ, पौर (नागरिक), वर वृद्धजन

---

[१] रिश्तेदार

गॊंदऱंदलमुल गॊंदऱश्वमुल । गॊंदऱु रथमुल गॊंदऱेनुगुल
नॆक्कि येतेर बॆंपॆक्कि शत्रुघ्नु । डॆक्कुडु महिमतो नॆलमि दीपिप
बंचमहावाद्यपटुरवंबॆसग । नंचितगति वच्चॆ नन्न युन्नॆडकु;
दल्लुलु दम्मुडु दानु सेनयुनु । वॆल्लियै भरतुंडु वेड्कतो गदलि
यॆनय राघवुनकु नॆदुरेगुचोट । हनुमंतुडनियॆ नुदात्तुडै भरतु ८६४०
“नदॆ चूडु राघवुंडाभरद्वाजु । सदनंबुनंदुंडि चनुदॆंचुवाडु;
अदॆ चूडु पुष्पकं; बदॆ चूडु रामु; । डदॆ चूडु कपिसेन; यदॆवच्चॆ जूडु;
सरयू प्रवाह मुज्ज्वलशक्ति दाटु । तरुचरकलकलोद्धतपटुध्वनुलु”
नन विनि भरतेशुडव्विमानंबु । गनुगॊनि युब्बि गद्गदकंठुडगुचु
गन्नंत दव्वुल गडुभक्ति म्रॊक्कि । यन्नकु साष्टांगमक्कड नॆऱगि
युदयाद्रिपैनुन्न युदयार्कुपगिदि । बदिदिक्कुलनु ब्रभापटलंबु बर्वॆ
बुष्पकारूढुडै पॊलुपारुचुन्न । निष्पापु रघुरामु नॆऱिजेरि म्रॊक्कॆ;
नंत ना पुष्पकं बवनिकि डिंचि । यॆंतयु हर्षिंचि यिनकुलेश्वरुडु
नॊंडॊंड काविंचॆ नॊनर दल्लुलकु । दंडप्रणाममुल् दानु लक्ष्मणुडु;
बरुवडि वारुनु बरग दीपिंचि । परिरंभणमुल संभाविंचिरॆलमि
८६५०

(आदि) के कुछ पालकियों, कुछ अश्वों कुछ रथों, कुछ हाथियों पर आरूढ़ होकर, आने पर, अधिक शोभित हो, शत्रुघ्न अधिक महिमा की वृद्धि के दीप्त होने पर, पंचमहावाद्यों के पटुरवों के व्याप्त होने पर, अंचितगति से अग्रज के पास आया। जननियाँ, अनुज के साथ (और) स्वयं सेना के महाप्रवाह होने पर भरत के उत्साह से निकलकर, शोभा से राघव की अगवानी करने जाते समय, हनुमान ने उदात्त बन भरत से कहा— ॥ ८६४० ॥

“वह देखो, राघव उस भरद्वाज के सदन से निकल रहा है। वह देखो पुष्पक, वह देखो राम, वह देखो कपिसेना, वे ही (सुनने में) आयीं देखो, सरयू प्रवाह को उज्ज्वल शक्ति से पार करनेवाले तरुचरों के कलकलोद्धत पटु ध्वनियाँ।” (ऐसा) कहने पर सुनकर भरतेश ने उस विमान को देखकर, फूलकर, गद्गद् कंठवाला होता हुआ, दूर से देखते ही अधिक भक्ति से प्रणामकर, वहीं अग्रज को साष्टांग (प्रणाम) कर, उदयाद्रि पर स्थित उदयार्क की तरह दस दिशाओं में प्रभा-पटल के व्याप्त होने पर, पुष्पकारूढ़ हो विराजमान होनेवाले अनघ रघुराम के निकट पहुँच प्रणाम किया। तब उस पुष्पक को अवनि पर उतारकर, अधिक हर्षित हो, इनकुलेश्वर ने स्वयं लक्ष्मण के साथ माताओं को शोभा से दंडप्रणाम

भरतशत्रुघ्नुलु भक्तितो राम । धरणिवल्लभुनकु धरणिनंदनकु
जतुरतवॆलय लक्ष्मणुनकु ब्रीति । गृतमतुल् मऱियु म्रोक्किरि
पुण्यधनुलु;
भरतशत्रुघ्नुल बरग दीविंचि । परिरंभणमुल संभाविचिरौप्प;
नत्तरि सीतामहादेवि प्रीति । नत्तलकॆल्ल नायत भक्ति म्रौक्कॆ;
म्रौक्किन कोडलि मौगि गौगलिंचि । यौक्कट दीविंचिरोलि नंदऱुनु;
रामलक्ष्मणुलुनु रागिल्लि म्रौक्कि । रा महामुनिवर्युडगु वसिष्ठुनकु;
नम्मुनि दीविंचि यालिंगनंबु । नॆम्मि गाविंचॆ ना नृपनंदनुलनु;
रूपिंचि भरतशत्रुघ्नुलु प्रीति । नापूर्णहृदयुलै यप्पुडु वच्चि
तम तल्लुलकु म्रौक्कि तगुभक्ति दौलक । विमलात्मुलै रामुवॆनुकनुन्नट्टि
या विभीषणुनकु नर्कसूनुनकु । ना वालिसुतुनकु नट मुख्युलैन ८६६०
कपुलकु ब्रियमुलु गाविंचि वारि । विपुलसम्मदमुन वॆसगौगिलिंचि
"यनघुलु निजभृत्युलै मीरु गलुग । घनकीर्ति जयमुलु गनियॆ राघवुडु;
जॆलुलु भृत्युलुनुनै चित्तंबुलित । गलसिन बंधुवुल् गलरॆ मा" कनुचु,
नॆकौलंदुलु गानि हृदयसम्मदमु । गैकौनुचुंडिरि; कडकतो नंत

किया । शोभा से उन्होंने भी बार-बार आसीस कर, प्रेम से परिरंभण कर संभावित किया ।। ८६५० ।।

—भक्ति से राम-धरणिवल्लभ को, धरणिनन्दना को, चतुरता के विलसित होने पर, कृतमति और पुण्यधनी भरत-शत्रुघ्न ने प्रीति से प्रणाम किया । (उन्होंने भी) भरत शत्रुघ्नों को शोभा से आसीस, शोभा से परिरंभणों से संभावित किया । उस अवसर पर सीता-महादेवी ने आयत भक्ति से सभी सासों को प्रणाम किया । प्रणाम करनेवाली बहू को क्रम से गले लगाकर, सभी ने एक साथ आसीसा । रामलक्ष्मणों ने अनुराग से महामुनिवर्य (मुनिवर) वसिष्ठ को प्रणाम किया । उस मुनि ने आसीस कर प्रेम से उन नृपनन्दनों का आलिगन किया । सुन्दरता से भरत-शत्रुघ्न प्रीति से आपूर्ण हृदय वाले बनकर तभी आकर अपनी जननियों को प्रणाम कर, उचित भक्ति से युक्त होकर राम के पीछे खड़े उस विभीषण को, अर्कसून को, उस वालिसुत को (और) वहाँ प्रमुख, ।। ८६६० ।।

—कपियों को प्रिय करके, उन्हें विपुलसम्मोद से झट गले लगाकर (बोले)— —"(आप जैसे) अनघ निजभृत्यों के होने पर राघव ने घन कीर्ति और विजय को प्राप्त किया । सखा और भृत्य होकर, इतने आत्मीय बने अन्य और कौन रिश्तेदार हैं हमारे लिए ?" (ऐसा) कहते हुए अपार हृदय सम्मोद

दल्लुलु बांधवुल् दम्मुलु गपुलु । वॆल्लियै बलमुलु वेड्क दो नडव
देजंबु मॆऱय नन्दिग्रामपुरमु । राजशिरोमणि रामुंडु सॊच्चॆ;
नंत बुष्पकमुनकर्चनलिच्चि । यॆंतयु भक्तितो निनकुलेश्वरुडु
"तलचिनप्पुडु रम्मु; धननाथुनॊद्द । नलकलोपलनुंडु" मनुचु
वीड्कॊलिपॆ;
भरतुडप्पुडु रामुपज्जकु जेरि । करमॊप्प गरमुलु गडुभक्ति मॊगिचि
"मी पादुकलयंदु मेदिनीभार । मेपार नुनिचि येनित गालंबु ८६७०
नवधानमतितोड नालस्यमुडिगि । यवनीश! यी राज्यमरसिति नॊप्प"
ननि चॆप्पि पादुकलर्थि नॊप्पिचि । विनतुडै यत्यंतविनयंबु मॆऱसि
"वॆलय नयोध्यकु वेंचेयवलयु; । नॊलसिन मुनिवेषमुचितंबु गादु;
राजमंडनमुलु रमणमै बूनु; । डी जटाभारंबु लीवल्कलमुलु
मानुडु मी" रन्न मनुजवल्लभुडु । पूनिक निडुट बुद्धिलो दलचि
"यगुगाक" यनवुडु नप्पुडु गदिसि । तगु नेर्परुलु वच्चि तात्पर्यमॊप्प
नॊलसिन कडकतो नुरुजटाबंध । मुलु वीड्व नभ्यंगमुलु नार्चरिंचि
तम्मुलु दानु नुत्सवजलस्नान । मिम्मुल गाविंचि यिनकुलेश्वरुडु

को प्राप्त किया। सप्रयत्न तब माताएँ, बांधव, अनुज, कपि प्रवाह बन, सेनाओं के उत्साह से साथ चलने पर, तेज के प्रकाशित होने पर, राजशिरोमणि राम ने नन्दिग्रामपुर में प्रवेश किया। तब पुष्पक की अर्चनाएँ कर अधिक भक्ति से इनकुलेश्वर ने (यह) कहते विदा किया कि "स्मरण करने पर आ जाओ। धननाथ के पास अलका (नगरी) में रह जाओ।" तब भरत राम के निकट पहुँचकर, अधिक शोभा से, अतिभक्ति से हाथ जोड़कर (बोला)—"आपकी पादुकाओं पर मेदिनीभार को शोभा से रखकर मैंने इतने समय तक, ॥ ८६७० ॥

—अवधानमति से, आलस्य को छोड़ हे अवनीश! इस राज्य की देखभाल की।" ऐसा कहकर चाहकर पादुकाएँ सौंपकर, विनीत हो, अत्यन्त विनय से प्रकाशित होकर, (कहा)—"शोभा से अयोध्या को पधारना चाहिए। शोभित यह मुनिवेष उचित नहीं है। राज-मंडनों (-अलंकार) को रमणीयता से धारण कीजिए। आप इस जटाभार को, इन वल्कलों को छोड़ दीजिए।" (ऐसा) कहने पर मनुज-वल्लभ ने प्रयत्न के पूर्ण होने पर, मन में सोचकर "ऐसा ही हो" कहने पर तब उचित कुशल (व्यक्तियों) ने निकट आकर विलसित यत्न से उरु जटा बन्ध को दूरकर, अभ्यंग (स्नान) कराकर, अनुजों के साथ स्वयं उत्सव-जल-स्नान इच्छा से कराया, इनकुलेश्वर ने अकलंकचित्त हो प्रकट

प्रकट दिव्यांबराभरणमाल्यमुलु । नकलंकचित्तुडै यमर गैसेसे;
धरणीतनूजकु दशरथांगनलु । करमु ब्रियंबुन गैसेसिरेलमि ८६८०
सुदतुलु दारादि सुग्रीवसतुलु । मुदमोप्प शृंगारमुलु सेसिरप्पु;
डालोन हनुमंतुडर्थि दोड्तेर । वेलसंख्यलु चेंचु विलुकांड्रु गोलुव
ललित जटावल्कलंबुलतोड । गोलदिमीरिन वेड्क गुहुडेगुदेंचि
जव्वादिपिल्लुलु जमरवालमुलु । मव्वंपुगजदंतमौक्तिकंबुलनु
गिटिदंत वेणु मौक्तिकमुलु सर्प । निटलसंभवमणुल् निबिड शार्दूल
नखमुलु भेरुंडनखमुलु सिंह । नखमुलु कृष्णाजिनंबुलु मिगुल
नाणेमौ गोरोचनमुनु गस्तूरि । वीणेलु देनियल् विविधंबुलैन
फलमुल कावळ्ळु भयभक्तुलात्म । मौलव गानुकलुगा मुंदर बेट्टि
पौडगांचि यानंदमुन राघवुनकु । दडयक साष्टांगदंडंबु वेट्टि,
निटलाग्रहस्तुडै निलुचुन्न गुहुनि । जटिलत्वमीक्षिंचि जनलोक विभुडु
८६९०
तनकृपाजलनिधि नातनि नोललार्चि । चनविच्चि,
यमृतभाषलनिट्टुलनियै;
"सुरुचिरतेज ! चेंचुलराज! नीदु । पिरिगौन्न भक्तियु बेंपुनु देंपु

दिव्यांबर-आभरण-माल्यों से शोभा से अलंकृत कर लिया। धरणीतनूजा का दशरथ की अंगनाओं ने अधिक प्रेम से शोभा से अलंकार किया ॥ ८६८० ॥

—इतने में हनुमान के इच्छा से साथ ले आने पर, हजार संख्याओं में चेंचु[1] धनुर्धरों के सेवा करने पर, ललित-जटा-वल्कलों के साथ, अधिक उत्साह से गुह आया। गन्ध बिलाव, चमरवाल, श्रेष्ठ गजदंतमौक्तिक, किटि-दन्त, वेणुमौक्तिक, सर्प-निटल-सम्भव मणियाँ, निबिड शार्दूल के नख, भेरुंड-नख, सिंह-नख, कृष्णाजिन, अधिक स्वच्छ गोरोचन और कस्तूरि, वीणाएँ, शहद, विविध फलों के कावड, (आदि) को आतमा में भय-भक्तियों के अंकुरित होने पर, उपहार-स्वरूप समक्ष रखकर, देखकर, आनन्द से अविलम्ब राघव को साष्टांग प्रणामकर, निटलाग्र पर हाथ रख खड़े गुह के जटिलत्व को देख जनलोक विभु ने, ॥ ८६९० ॥

—अपनी कृपा जलधि में उसे ऊभचूभकर, लाड़कर, अमृत भाषाओं (वचनों) से यों कहा—"हे सुरुचिर तेजवाले ! चेंचुओं के राजा ! तुम्हारी घनीभूत भक्ति और औन्नत्य, साहस को शोभा से इस वायुसुत के द्वारा सुना

---

[1] एक जंगली जाति।

सौंपार नी वायुसुतुनिचे विंटि; । निपुगा मालोन नीवु नौक्कडवु;
गान ना जडलु वल्कलमुलु विडिचि । पूनुमु मायट्ल भूपचिह्नमुलु''
अनि यानतिच्चिन नरिगि वल्कलमु। लुनु जटापटलंबुलुनु वेग विडिचि,
सुमहितोदकमुल सुस्नातुडगुचु । विमलांगुडै रामविभुनि सन्निधिकि
वच्चिन जूचि दिव्यमुलैनयट्टि । मेंच्चुलसोम्मुलु मेलिमवस्त्रमुलु
नैट्टन नौसगिन नैरय गैसेसि । दट्टंपुभक्ति भूधवु गौल्चियुंडे;
नंत शत्रुघ्नुनि याज्ञ सुमंत्रु । डैंतयु रयमुन हितसमाहितुडु
बहुरत्न निर्मलप्रभ नौप्पुमिगुल । महितार्क बिंब समंचितरथमु
८७००
गौनिवच्चि यट रघुकुलभर्त यैदुर । नुनिचिन श्रीरामुडुन्नतात्मकुडु

श्रीरामुडयोध्या जेरुट

तल्लुल चरणपद्ममुलकु म्रौक्कि । यैल्लवारुनु नैलुगैत्ति दीविंप
ननघुंडु सुमुहूर्तमगुट भाविंचि । मुनिवसिष्ठुडु दनमुंदट नैक्क
बृथुकीर्तुलिपैक्क पृथिवि पेंपैक्क । रथमैक्कै जनमनोरथमैक्कु करणि;
निरुपमतर भक्ति निरतुडै चेरि । भरतुंडु धवळातपत्रंबु बट्ट
ना सुमित्रा - पुत्रुलर्थि निद्दरुनु । नासन्नुलै पट्ट नालवट्टमुलु

है। शोभा से तुम हममें एक हो। अतः उन जटाओं (तथा) वल्कलों को छोड़, हमारी तरह भूप-चिह्न धारण करो।'' ऐसा आदेश देने पर जाकर, वल्कल और जटापटल को शीघ्र छोड़, सुमहितोदकों से सुस्नात होते हुए, विमलांग वाला हो रामविभु की सन्निधि में आने पर, (उसे) देखकर, दिव्य और प्रशंसनीय आभरण, श्रेष्ठ वस्त्र झट प्रदान करने पर, शोभा से अलंकृत होकर, घनीभक्ति से भूधव की सेवा करता रहा। तब शत्रुघ्न की आज्ञा से हितसमाहित सुमन्त अतिशीघ्र बहुरत्न निर्मल प्रभा से अधिक शोभायमान, महित-अर्क-बिंब- समंचित रथ को, ।। ८७०० ।।
—ले आकर, वहाँ रघुकुलभर्ता के समक्ष रखने पर उन्नतात्मक श्रीराम

श्रीराम का अयोध्या पहुँचना

—माताओं के चरण-पद्मों को प्रणाम कर, सभी के उच्चस्वर से आसीसने पर अनघ ने सुमुहूर्त होने की सोचकर, मुनिवसिष्ठ के अपने से पहले (रथ पर) आरूढ़ होने पर, पृथु कीर्तियों के विवर्द्धित होने पर, पृथ्वी के उन्नत होने पर, जनमनोरथ पर आरूढ होने की तरह रथ पर आरूढ हुआ। निरुपमतर-भक्ति-निरत हो निकट रह, भरत के धवल-आतपत्र के धारण करने पर,

नारूढ पंच महावाद्यरवमु । तो रासि देवदुंदुभुलोलि म्रोय
विनुवीथि सुरपुष्प वृष्टुलु गुरिय । जनुलैल्ल जय जय शब्दंबुलिडग
नतुल रथारूढुडै महोदार । गतुलौप्प वैनुक राक्षस-भर्त नडव
बरुवडि जतुरंग बलमुलु नडव । वरुसतो निजबंधुवर्गंबु नडव ८७१०
गैलकुल गदिसि सुग्रीवादिकपुलु । बलुवारणमुलैक्कि पदिलुलै नडव
घनसेतुबंधादि कथलुग्गडिंचि । पैनुपौंद वरवंदिबृंदमुल् नडव
जननुलु दारादिसतुलु जानकियु । घनरथंबुलमीद गरमौप्प राग
नडचै नयोध्यकानन्द कंदळितु । लैडनैड दीविंप हितपुरोहितुलु;
करि बृंहितंबुलुत्कटतरध्वनुलु । दुरगहेषितमुलु दोरंबुलैन
भेरिरवंबुलु बृथुलखड्गोग्र । धाराघट्टनध्वनुलु बैल्लैसग
नक्षीणकल्याणुडगु रामविभुडु । नक्षत्रपरिवृत नवचंद्रु भाति
दिय्यंबु दीपिंप देजंबु मैरसि । यय्योध्यापुरंबर्थितो जौच्चै;
नप्पुडु संतोषमंतरंगमुल । नुप्पौंग बहुमंगळोन्नतुल् मैरसि
पल्लवहस्तलु बल्लवाधरलु । बल्लवारुण पाद पल्लवोज्ज्वललु ८७२०

उन दोनों सुमित्रापुत्रों के चाहकर, निकट रह, छत्र धारण करने पर, आरूढ़ पंचमहावाद्यों के रव के साथ मिलकर क्रम से देवदुंदुभियों के मुखरित होने पर, विनुवीथि से सुरके-पुष्पवृष्टियों के बरसने पर, समस्त लोगों के जय-जयकार करने पर, अतुल-रथारूढ़ होकर, महोदार-गतियों के शोभित होने पर, पीछे-पीछे राक्षस-भर्ता के चलने पर, बार-बार चतुरंग-सेनाओं के चलने पर, क्रम से निज बन्धुवर्ग के चलने पर, ।। ८७१० ।।

—पार्श्वों में निकटता से सुग्रीव आदि कपियों के कई वारणों पर आरूढ़ हो, ढंग से चलने पर, घन सेतुबन्ध आदि कथाओं का उल्लेखकर अधिक शोभा से वर-वंदिवृंदों के चलने पर, माताएँ, तारा आदि सतियाँ और जानकी के घनरथों पर अधिक शोभा से आने पर, स्थान-स्थान पर हित पुरोहितों के आनन्द-कन्दलित (हृदयवाले) हो आसीसने पर (राम) अयोध्या के लिए चल पड़ा । करियों के बृंहित, उत्कट-रथ-ध्वनियाँ, तुरग-हेषित के अधिक होने पर, भेरी रव, पृथुल-खड्ग-उग्र-धाराग्र-घट्टन की ध्वनियों के अधिक परिव्याप्त होने पर, अक्षीण कल्याणवाला रामविभु ने नक्षत्र परिवृत नवचन्द्र की भाँति, माधुर्य के दीप्त होने पर, तेज से प्रकाशित होकर, उस अयोध्यापुर में प्रेम से प्रवेश किया । तब अन्तरंगों में आनन्द के उमड़ने पर, बहुमंगलोन्नतियों के प्रकाशित होकर, पल्लव से हाथोंवाली, पल्लव-अधरोंवाली, पल्लव जैसे अरुण पाद-पल्लवों से उज्ज्वल बनी (नारियाँ) ।। ८७२० ।।

हरिमध्य सममध्यलमृतांशुमुखुलु । गरिराजगमनलु गमललोचनलु
नलिनीलकुंतललंबुजगंधु । लैलदीगबोडु लिपैक्क नंदंद
कैसेसि चनुदेंचि कामिनीमणुलु । प्रासादगोपुर प्रततुल नुंडि
पुण्यावलोकनंबुल बुण्यसतुलु । पुण्यपुष्पाक्षतंबुलु सल्लुचुंड
मेडलपैनुन्न मीनाक्षुलोलि । ब्रोडलै तमतम बोटुलतोड
"नीसुन बिन्ननाडीपुण्यधनुडु । सेसिन चेतलु सेप्प नच्चेरुवु !
तनु नैदिर्चिन मात्र दाटक जंपे; । ननघुडै कौशिकु यागंबु गाचे;
सर्पकंकणु महाचापंबु विडिचे; । दर्पिचि जमदग्नितनयु भंगिचे;
नहितलोकांतकुंडंतटिपनुलु । सहजशूरुडु गान जनें गाक चेय!
नम्मुद्दु प्रायंबुनंदु गानलकु । बोम्मन्न दपसियै पोयें वेडुकनु; ८७३०
बोयि जगद्धितपुण्यकृत्यमुलु । सेयनेव्वडु चालु जेव दीपिंप ?
वनधि बंधिंचि रावणु बोर द्रुंचि । दनुजुल बेक्कंड्र धरणिपै गूल्चे;
दनतंड्रिपनुपुन दविलि कानलकु । मुनिवृत्ति जनुनाटि मुद्दुचंदंबु
नी पेद्दचंदंबु निन्नि चंदमुल । दीपिंचुचुन्नवि तेलिय जूचितिरे ?
पर्जन्यु नवलील भंजिचि सुरल । दर्जिचि भुजशक्ति दर्पिचिनट्टि

—हरिमध्य (सिंह की कटि)-सम मध्य (कमर) वाली, अमृतांशु जैसे मुखवाली, करिराज-गमनाएँ, कमललोचनवाली, अलिनीलकुंतलवालियाँ, अंबुजगंधियाँ, लतांगियाँ, शोभा से सर्वत्र अलंकृत हो आकर, कामिनीमणियों के प्रासादों की गोपुर प्रततियों से, पुण्यावलोकनों से पुण्यसतियों के पुण्य-पुष्प-अक्षतों के बिखेरते रहने पर, अट्टालिकाओं पर स्थित मीनाक्षी क्रम से प्रौढाएँ होकर, अपनी-अपनी सखियों के साथ (बोलने लगीं) —"स्पर्धा भाव से बचपन में इस पुण्यधनी के किए कार्यों का वर्णन करना आश्चर्यप्रद है। अपना सामना करने मात्र से ताड़का का संहार कर दिया, अनघ हो कौशिक के याग की रक्षा की। सर्पकंकणवाले (शिव) के महाचाप को खंडित कर दिया, दर्पित हो जमदग्नितनय को अपमानित किया। अहितलोक के अंतक सहजशूर होने के कारण ऐसे काम कर सका, नहीं तो कर सकेगा क्या ? उस प्यारी अवस्था में (किशोर प्राय में) जंगलों में जाने के लिए कहने पर तपस्वी बनकर उत्साह से गया ।। ८७३० ।।

—जाकर, जगद्धित कृत्यों को सामर्थ्य के दीप्त होने पर कौन कर सकता है ? वनधि को बाँधकर, युद्ध में रावण का संहार कर, कई दनुजों को धरणी पर गिरा दिया। अपने पिता के आदेश पर लगकर जंगलों में मुनिवृत्ति से जाने के समय वह प्यारा विधान, यह बड़प्पन इतने प्रकारों से दीप्त हो रहे हैं। ठीक तरह से देख लिया है न ? पर्जन्य को सरलता से

या मेघनादु नुग्राजिलो जंपॆ । सौमित्रि गंटिरे चपलाक्षुलार !
पडति ! रावणुडतिपापात्मुडैन । विडिचि लंकापुरीविभुडय्यॆ नितुडु;
वनजाक्षि! यीतडु वालिसोदरुडु; । वनित ! यी पुण्युंडु वालिनंदनुडु;
तडयक यंबुधि दाटि या सीत । बॊडगांचि वच्चिन पुण्यात्मुडितडु;
कलकंठि! यवलील गंधि बंधिंचि । नलि लंकपै रामु नडपिंचॆ नितडु;
८७४०
नीरेरुहासन ! निखिलौषधमुल । बोर लक्ष्मणुप्राणमुलु दॆच्चॆनितडु"
अनि तन्नु दम्मुनि नसुरनु गपुल । गॊनियाडुचुन जॆप्पिकॊनुचुंड वच्चि
नगरु ब्रवेशिंचि नलिनाप्तकुलुडु । जगदेकनिधि रामचंद्रुडु दानु
भरत शत्रुघ्नुल बनिचि दैत्येंद्र । तरुचर प्रमुखुल दगु मंदिरमुल
विडियिंचि यिष्टान्न विविधभोज्यमुलु । कडकतो बुत्तॆंचॆ गारुण्यमॊप्प;
सुरुचिरमति नंत सुग्रीवुतोड । बरमसम्मदमुन भरतुडिट्लनियॆ;
"नॆल्लि रेपभिषेकमिनवंशमणिकि । नॆल्लतॆरंगुलायितमु चेसितिमि;
संगति जतुरब्धि जलमुलु वलयु; । गंगादितीर्थोदकंबुलु वलयु;
दॆप्पिपु" मनवुडु दिननाथतनयु । डप्पुडु परमहर्षांचितुडगुचु

पीड़ित कर, सुरों को धमकाकर, भुजशक्ति से दर्पित होनेवाले उस मेघनाद को उग्र-आजि (-युद्ध) में मारनेवाले सौमित्र को हे चपलाक्षियो ! देखा है न ! हे नारी ! रावण के अति पापात्मा होने के कारण उसे छोड़ यह (विभीषण) लंकापुरी का विभु बन गया है । हे वनजाक्षी ! यह वालि का सहोदर है । हे वनिता! यह पुण्यी वालिनन्दन है । अविलम्ब अंबुधि पारकर उस सीता को देख आने वाला पुण्यात्मा यह है । हे कलकंठी ! अनायास समुद्र को बाँधकर, क्रम से लंका पर राम को चलाया इसने ॥ ८७४० ॥
—हे नीरेरुहासने ! युद्ध के समय निखिलौषधों से लक्ष्मण के प्राण लाए इसने ।" ऐसा अपनी और अनुज की, असुर की, कपियों की सराहना करते, वर्णन करते समय आकर नगर में प्रवेश कर, नलिनाप्तकुलवाले जगदेकनिधि रामचन्द्र ने स्वयं भरत-शत्रुघ्न को भेजकर, दैत्येंद्र-तरुचर-प्रमुखों को उचित मन्दिरों में ठहराकर, कारुण्य की शोभा से, इष्टान्न-विविध भोज्यों को सयत्न भेजा । तब सुरुचिरमति से परमसम्मोद से सुग्रीव से भरत ने यों कहा—"इनवंशमणि के परसों या कल के अभिषेक के लिए सब तरह से व्यवस्था की है । औचित्य से चतुरब्धि-जल चाहिए, गंगा आदि के तीर्थोदक चाहिए । मंगाओ ।" ऐसा कहने पर दिननाथ-तनय ने तब परमहर्षांचित होते हुए उचित विधान से गज, जांबवान, सुषेण, अलघुविक्रमवेगवाले वेगदर्शी को, ॥ ८७५० ॥

वलनॉप्प गजु जांबवंतु सुषेणु । नलघुविक्रमवेगुडगु वेगदर्शि ८७५०
गमनीय नवरत्न कलशंबुलिच्चि । क्रममुन दीर्थोदकमुलु दे बनिचे;
नलु गवाक्षुनि वायुनंदनु ऋषभु । गलय समुद्रोदकमुलु दे बनिचे;
बनिचिन गडिमिमै बलवग वल्लभुलु । विनुवीथि नत्यंतवेगुलै पोयि

श्रीराम पट्टाभिषेकमु

युरुवडि मरुनाटि युदयकालमुन । 'करुदरु' दन देंच्चिरखिलोदकमुलु;
चेतोविनिर्मलशिष्टु वसिष्टु । गौतम जाबालि कश्यप कण्व
वाम देवादुलौ वरमुनीश्वरुल । सामादि बहुवेद चतुरबोधकुल
भरतुंडु रप्पिचि भयभक्तुलॉप्प । बरमसम्मद वचोभंगुलु मॅरय
"श्रीरामुनकु नभिषेकंबु सेयु । डारूढनियतितो" ननि पल्क वारु
बूनि मंगळतूर्यमुलु म्रोयुचुंड । जानकीरामुल ज्ञदुरॉप्प देंच्चि
रमणीयतरमैन रत्नपीठमुन । गौमरौप्प निरुवुर गूर्चुं'ड बनिचि ८७६०
मानित वेदोक्त मंत्रपूर्वकमु । गा नभिषेकंबु गरमर्थि जेय
ना रामुनौदल नापूर्ण वारि । धार डग्गरुनप्डु तग जूडनॉप्पे;
गीर्वाणमुख्युलु गीर्तनल् सेय । बार्वतीसहितुडै प्रणुतिप नॉप्पु

—कमनीय-नवरत्न-कलशों को देकर, क्रम से तीर्थोदक लाने भेजा। नल, गवाक्ष, वायुनन्दन, ऋषभ को मनोज्ञता से समुद्रोदक लाने भेजा। भेजने पर साहस से प्लवगवल्लभ विनुवीथि से अत्यन्त वेगवाले हो जाकर,

श्रीराम का पट्टाभिषेक

—बहुलता से, दूसरे दिन उदयकाल में 'अनुपम है, अनुपम है' (ऐसा लोगों के) कहने पर अखिल-उदक लाए। चेतस्-विनिर्मल-शिष्ट वसिष्ठ, गौतम, जाबालि, कश्यप, कण्व, वामदेव आदि वर मुनीश्वरों, सामादि-बहुवेद-चतुर-बोधकों को भरत ने बुलाया (और) भय-भक्तियों के शोभित होने पर, परम-सम्मद (मोदयुक्त) वचनों की भंगिमाओं के प्रकाशित होने पर, कहा कि "श्रीराम का आरूढ़नियति से अभिषेक कीजिए।" कहने पर वे सप्रयत्न मंगलतूर्यों के मुखरित होते समय, जानकी और राम को ढंग से लाकर, रमणीयतर-रत्नपीठ पर शोभा से बैठने के लिए दोनों को आदेश देकर, ॥ ८७६० ॥

—मानित (मान्य) वेदोक्त मंत्रपूर्वक अभिषेक को अधिक इच्छा से करने पर उस राम के मस्तक पर आपूर्ण-वारि की धारा आ पड़ते समय देखने में बहुत उचित लगा, वह गीर्वाण-प्रमुखों के गान करने पर, पार्वती सहित हो

नंगजहरुमौळि नमलमै तौरुगु । गंगानदियु बोलें गमनीयमगुचु;
ना तीर्थधारलु नंघ्रुल कौलिकि । भूतलंबुन निंडि पौलुपारें जूड
हरिपादमुन बुट्टि यय्यादिगंग । धरणिपैं बरगुविधंबच्चुपडग;
बरिकिप रामभूपालकुंडपुडु । हरुडु विष्णुडु दान यन माड्कि नुंडें;
मरि पट्टभद्रुंडें मनुजबल्लभुडु । नेंऱय बट्टमुतोडि निटलंबुतोड
सरस जटारुणच्छायल मानि । करमौप्पु शशिरेख गंगवीचिकल
सरिदाटि नुदुटिकि जारिन नौप्पु । हरुनिचंदमुन नलरें जूपऱकु;
८७७०

गरुड वियच्चर गंधर्ववरुलु । सुरसिद्ध साध्युलु सौरिदिमै नपुडु
व्रदल नुत्सव पटु जय जय ध्वनुलु । गुदियक यंदंद घोषिचिरैलमि;
नप्पुडच्चर लोलि नाडिरि प्रीति; । नप्पुडु पुत्तेंचें नमरवल्लभुडु
पारिजातामल प्रसवमालिकयु । हारंबु ब्रियमुन ननिलुनिचेत;
नमित मंगळमूर्तियैन राघवुडु । गौमरौप्प वानि गैकौनियें वीक्षिचि;
वसुधयेंतयु सस्यवतियय्यें नपुडु; । गुसुमफलंबुलु गौमरौप्पें दरुलु;
घनतरगंधमुल् गांचें बुष्पमुलु । विनुतिप दिक्कुलु विमलंबुलय्यें;

प्रशंसनीय बने अंगज-हर (शिव) की मौलि पर से झरनेवाली गंगा नदी के समान कमनीय लग रहा था। वे तीर्थ-धाराएँ चरणों से झरकर, भूतल में भरकर प्रवाहित हुईं। वह देखने में ऐसा लगा मानों हरि के पाद (चरण) में उत्पन्न उस आदिगंगा के धरणी पर प्रवाहित होने के विधान का रूप हो। फिर पट्टभद्र (पट्टभिषिक्त) हो, मनुज-वल्लभ शोभित पट्ट से युक्त निटल (ललाट) से देखने वालों को, सरसता से जटा-अरुण-छायाओं (आभाओं) को छोड़, अधिक शोभित शशिरेखा के, गंगा की लहरियों को ढंग से पारकर, ललाट पर खिसक आने पर शोभित हर के समान शोभित हुए ॥ ८७७० ॥

—तब क्रम से गरुड़-वियच्चर-गन्धर्व-वरों, सुर-सिद्ध-साध्यों (आदि) ने आकाश पर, उत्सव-पटु-जय-जय- ध्वनियों को विपुल रूप से, सर्वत्र, शोभा से मुखरित किया। तब क्रम से अप्सराओं ने नृत्य किया। तब अमर-वल्लभ ने अनिल के हाथ पारिजात-अमल-प्रसव-मालिका और हार प्रेम से भेजा। अमित-मंगलमूर्ति वाले राघव ने शोभा से उन्हें देखकर स्वीकारा। तब वसुधा अधिक सस्यवती हुई। तरुओं पर कुसुम और फल अधिक शोभित हुए। पुष्पों ने घनतर-गन्धों को प्राप्त किया। सराहनीय रूप से दिशाएँ विमल बन गईं। तब रघुराम ने अक्षीण वैभव के

नप्पुडु रघुरामुडक्षीणविभव । मोप्प भूसुरुलकु नुन्नतात्मुलकु
ननुपमतरभक्ति यंतरंगमुन । गोनकोनि मुप्पदिकोट्टुल धनमु
लक्षगुर्रंबुलु लक्षयेनुगुलु । लक्षगोवुलु निच्चें ललि सोंपुमीऱ; ८७८०
ललित दिव्यांबरालंकारततुलु । बोलुपोंदु कांचन पुष्पमालिकयु
गोलदि मीऱिन प्रियोक्तुल जेर बिल्चि । येलमि सुग्रीवुनकिच्चें बेंपोंद;
घनवज्रवैडूर्य कलितांगदंबु । लनघुडंगदुनकु नर्थितो निच्चें;
महितोरुकेयूरमकुटंबुलोप्प । सहजपुण्युडु विभीषणुनकु निच्चें;
नमित बलोदात्तुडगु वायुजुनकु । गमनीयरत्नकंकणयुगंबिच्चें;
नालोलरुचिनिचयानूनमैन । नीलहारमु ब्रीति नीलुनकिच्चें;
वलनोप्प नवरत्नवरहारमोकटि । नलुनकु निच्चें नानंदमुप्पोंग;
नंबर मणि भूषणादि वस्तुवुलु । जांबवंतुनकिच्चें सम्मदंबोंदव;
नभिमतवेदियें यंदऱ जूचि । विभुडु वानरुलकु वीरु वारनक
प्रकट दिव्यांबराभरण माल्यंबु । लकलंकमहिमतो नंदऱकिच्चें; ८७९०
शारद निर्मल चंद्रिकानून । हारंबु सीतकु नर्थितो निच्चें;
धरणिज हारंबु दा वैचिकोनक । करमुल धरियिंचि काकुत्स्थमोमु

विलसित होने पर भूसुरों तथा उन्नत-आत्मावालों को अन्तरंग में अनुपमतर भक्ति के अंकुरित होने पर तीस करोड़ धन, लाख घोड़े, लाख हाथी, लाख गाएं शोभा से प्रदान किया ॥ ८७८० ॥

—सुग्रीव को प्रिय-उक्तियों से निकट बुलाकर, प्रेम से ललित-दिव्य-अम्बर-अलंकार-ततियाँ (तथा) शोभित कांचन-पुष्प-मालिका दी। अनघ अंगद को प्रेम से घन वज्र-वैडूर्य-कलित अंगद (कवच) दिया। सहज पुण्यवाले विभीषण को शोभा से महित-उरु-केयूर (तथा) मुकुट दिए। अमित बलोद्दात्त वायुज को कमनीयरत्न-कंकण-युग (जोड़ी) दी। प्रीति से नील को आलोल-रुचि-निचय से आनून (सम) बना नीलहार दिया। नल को आनन्द के उमड़ने पर ढंग से एक नवरत्नवरहार दिया। सम्मद के उत्पन्न होने पर जांबवान को अंबर-मणि-भूषणादि वस्तुएँ दीं। अभिमतवेदी (अभिलाषा को जानकर) बन, सबको देखकर विभु ने वानरों को यह-वह न कह, प्रकट-दिव्य-अम्बर-आभरण-माल्यों को अकलंकमहिमा से सबको दिया ॥ ८७९० ॥

—सीता को चाहकर शारद-निर्मल-चन्द्रिका-आनून (-सम) हार दिया। धरणिजा ने उस हार को स्वयं न पहनकर, हाथों में धारण कर काकुत्स्थ के मुख को देखा। देखने पर नारी की दृष्टि को जानकर, उस चतुरात्मक

जूचें; जूचुटयुनु सुदति चूपेंड्रिगि । या चतुरात्मकुंडनुमतिचुटयु
दन कृपारसधार दनर हार । मनिलजु कंठंबुनदीप्प बेट्टे;
ना निर्मलोदारहारंबु बूनि । या निर्मलात्मकुडनिलनंदनुडु
शारदाभ्रावलि सरि जुट्टियुन्न । मेरुवु तेंड्रगुन मेंड्रसें जूड्कुलकु;
नंत वसिष्ठुनियनुमति रामु । डंत:पुरंबुन करिगि तल्लुलकु
वरुसतो म्रोक्क दीवनलिच्चि; रपुडु । धरणीतनूज यत्तलकेल्ल भक्ति
सेंलगंग म्रोक्किन "श्रीदेविठेव । नल सरस्वति भाति नगजात रीति
बतिभक्तिमतियु सौभाग्यंबु गांति । यतुलकीर्तियुनु बेंपलरंग गलिगि
८८००
यिनचंद्रुलन गांति नेंनयु पुत्रुलुनु । गनुमु नी" वनि प्रेम गौगिट जेर्चि
दीविप रघुकुलाधिपुडु वेडुकलु । गाविचु भोजनागारंबुनकुनु
जनुदेंचि हितुलनु सकल बांधवुल । ननुजुल रविजादुलैन वानरुल
ना विभीषणमुख्युलगु दैत्यवरुल । बावनात्मकु गुहु बरग रांविचि
युचितासनंबुल नुंडंग बनिचें । सुचरित्रु नंजनासूनुनि दनदु
पोत्तुन वेडुक भुजियिंपुमनियें । नत्तड्रि जाल नेय्यमु दिय्यममर;

के अनुमति देने पर, अपनी कृपा रस-धारा से शोभित होने पर वह हार अनिलज के कंठ में शोभा से डाला। वह निर्मल-उदार हार धारणकर, वह निर्मलात्मा वाला अनिलनन्दन देखने में ऐसे प्रकाशित हुआ कि शारदाभ्रावलि से ठीक तरह से घिरे हुए मेरु (पर्वत) के समान हों। तब वसिष्ठ की अनुमति से राम अन्त:पुर में जाकर माताओं को क्रम से प्रणाम करने पर (उन्होंने) आसीसा, तब धरणी-तनूजा के सभी सासों को भक्ति (-भाव) के विलसने पर प्रणाम करने पर (यह कह कि) "श्रीदेवी के समान, उधर सरस्वती की भाँति, नगजाता की तरह, पतिभक्तियुतमति, सौभाग्य, काँति, अतुलकीर्ति और औन्नत्य की शोभा से युक्त हो, ॥ ८८०० ॥

—इन-चन्द्र हों ऐसी कांति से विराजमान पुत्रों को जन्म दो" प्रेम से गले लगाकर आसीसा। (तब) रघुकुलाधिप उत्सवप्रद भोजनागार को आकर, हितुओं, सकल-बाँधवों, अनुजों, रविज आदि वानरों, उस विभीषण-प्रमुख दैत्यवरों, पावन आत्मावाले गुह को ढंग से बुलाकर, उचित आसनों पर रहने (बैठने) का आदेश दिया। सुचरित्रवाले अंजनासून को अपने पार्श्व में बैठकर खाने को कहा। उस अवसर पर अधिक स्नेह और माधुर्य के विलसित होने पर, शोभा से उस अवसर पर, युवतियों के सोने

नेनयंग नव्वेळ नेलतलु देच्चिच । कनकपु बळ्ळेमुल् ग्रममॊप्प
नुनिचि
परग बायसमु सूपमुलपूपमुलु । वरुगुलु वडियमुल् वांछ बुट्टिंचु
कूरलु बच्चळ्ळु गॊमरॊंदुसिगर । लूरुगायलुनु शाल्योदनंबात्म
दनिपेंडु सद्योघृतमु वितरुचुल । बेनुपॊंदु फलमुलु पेमितो निडग
८८१०

निनकुलाधीश्वरुंडिपुरेट्टिप । "ननिलज! भुजियिंपु" मनुचु दानॊक्क
कबळंबु गॊनिन नक्कपिकुलोत्तमुडु । प्रबलमौ भक्ति नप्पळ्ळेरंबेत्ति
तलमीद निडुकॊनि तनर नाडुचुनु । जेलगुचु "नो कपिशेखरुलार !
रंडु; रामुनि पळ्ळेरमु प्रसादंबु । दंडिगा दॊरकॆ नंदरकु ने" डनुचु
मुनिवृक्ष मॆक्कि यिम्मुल दानि दळमु । लनुवॊंदगा द्रुंचि या प्रसादमुन
नॊनरिंचि संतोषमुल्लंबुनिंड । घनभक्ति नॊसगॆ ना कपिनायकुलकु;
वारुनु दानुनु वांछलुदीर । नारूढि दृप्तुलैरा प्रसादमुन;
ननिशंबु नदिमॊदल् हरि वासरमुन । मुनिवृक्षपर्णमुल् मुख्यबुलय्यॆ;
नंत ना रघुरामु डंजनासुतुनि । संततभक्तिकि संतोषमंदि
परपैन वेड्रॊक पळ्ळेरंबुननु । धरणीशचंद्रुंडु दानारगिंचि ८८२०

की थालियों को लाकर क्रम से रखने पर, शोभा से पायस (खीर), सूप, अपूप, सूखे साग, बटक, वांछा को उत्पन्न करनेवाले साग, चटनियाँ, शोभायमान शिखरियाँ और अचार, शाल्योदन, आत्मा को तृप्त करनेवाला सद्योघृत, विचित्र रूचियों (स्वादों) से विवर्द्धित फल (इन सबको) प्रेम से देने पर, ।। ८८१० ।।

—इनकुलाधीश्वर ने प्रेम के द्विगुणित होने पर "हे अनिलज ! खाओ" कहते हुए, स्वयं एक कबल (निवाला) लिया। (लेने पर) उस कपिकुलोत्तम ने, प्रबल भक्ति से उस थाली को उठाकर सिर पर रखकर, शोभा से नाचते हुए, उल्लसित होते हुए, (कहा)— "हे कपिशेरवरो ! आओ, राम की थाली में, सभी के लिए, प्रचुरता से प्रसाद मिल गया है।" मुनि (अगस्त्य) वृक्ष पर आरूढ़ होकर प्रेम से उसके दलों (पत्तों) को शोभा से तोड़कर, उसमें प्रसाद रख (बाँटने के लिए), आनन्द के हृदय में भर जाने पर, उन कपिनायकों को घनभक्ति से दिया। उस प्रसाद से उनके साथ स्वयं भी, वाँछाएँ बर आवें, आरूढ़ि से तृप्त हुए। तब से लेकर अनिश (सदा) हरि वासर (पारण के दिन) पर मुनिवृक्षपर्ण प्रधान बने। तब वह रघुराम अंजनासुत की संतत भक्ति के कारण संतुष्ट हुआ,

जलमुल नौगि वार्चि जतनंबु मीर । ललितसुगंधमाल्यमुलौप्प मुडिचि
कर्पूरतांबूल गंधाक्षतंबु । लर्पिप दयमीऱ नंदऱ कप्पु
डिनकुलोत्तमुडिच्चॆ नॆल्लवस्तुवुलु; । मनमार नप्पुडु महिम पॆंपलर
सकलभृत्यामात्यसहितुडै वेड्क । नकलंकचित्तुडै यट गौलुवुंडॆ
नप्पुडु सौमित्रि ननुरक्तितोड । नौप्प निद्रादेवि यौगि बौंदुटयुनु
गौलुवुलोपलनु गाकुत्स्थुनि येदुट । गलकल नव्विन गमलाप्तकुलुडु
जनकजयुनु विभीषणुडु सुग्रीवु । डुनु मारुतात्मजुडुनु वालिसुतुडु
नल नील शरभ सन्नाद तारादि । बलिमुखुल् शत्रुघ्न भरतुलु भीति
दललु वंचिरि यप्डु तमयंदु जॆंदि । ललि मीऱिनट्टि कळंकमुल् दलचि;
यंदऱु नट्लुंड नलुक चित्तमुन । जॆंद लक्ष्मणु जूचि श्रीरामुडनियॆ; ८८३०
“दगवु वोविडिचि यास्थानंबुनंदु । नगुटेमि निष्कारणमुग सौमित्रि?”
यनवुडु भयमंदि या लक्ष्मणुंडु । तन करंबुलु मोड्चि तगनिट्टुलनियॆ;
“वनवासमुनकु देवर गौल्चि वच्चि । वनमुल नुन्नचो वच्चॆ नी निद्र;
वच्चिन ‘बदनाल्गु वत्सरंबुलुनु । नच्चुगा जेरकु” मन निद्र सनियॆ;

विशाल एक और थाली में घरणीशचन्द्र (राजाओं में चन्द्र) ने स्वयं भोजन किया ।। ८८२० ।।

—(भोजन करके) क्रम से जल से आचमन कर, प्रयत्न के दीप्त होने पर, ललित-सुगन्ध-माल्यों से शोभा से (अपने आपको) सजाकर, कर्पूर-तांबूल गन्धाक्षत समर्पित करने पर तब दया की अधिकता से सबको इनकुलोत्तम ने सभी वस्तुएँ दीं। मन भर तब महिमा के औन्नत्य के व्याप्त होने पर सकल-भृत्य-अमात्य-सहित हो, उत्साह से, अकलंक चित्त वाला हो, सभा जमाए रहा । तब सौमित्र के अनुरक्ति से निद्रादेवी के वश में हो जाने पर, सभा में, काकुत्स्थ के समक्ष (लक्ष्मण) खिलखिलाकर हँस पड़ा । (हँसने पर) कमलाप्त कुलवाले ने और जनकजा भी, विभीषण, सुग्रीव, मारुतात्मज और वालिसुत, नल, नील, शरभ, सन्नाद, तारा आदि वलिमुख (वानर), शत्रुघ्न-भरत ने भीति से तब अपने में अति को प्राप्त कलंकों के बारे में सोच सिर झुका लिया । सबके ऐसा रहने पर मन में रुष्ट हो लक्ष्मण को देख श्रीराम ने कहा— ।। ८८३० ।।

—“हे सौमित्र ! न्याय (औचित्य) को छोड़ सभा में, निष्कारण हँसने का क्या कारण है ?” ऐसा कहने पर भीत होकर उस लक्ष्मण ने अपने हाथ जोड़कर उचित रूप से यों कहा—“वनवास के समय प्रभु की सेवा करते आकर वनों में रहते समय यह निद्रा आई । आने पर ‘ठीक ढंग से चौदह वर्ष

बदुनालुगेंड्लुनु बरग निडुटयु । वदलक यिप्पुडु वच्चे ना निद्र,
यदि कारणंबुगा नवनीशतिलक! । यिदि येनु नव्विति; निदियें नातप्पु;
नीवु सहिंपुमो निखिलाधिनाथ ! । देव देवेश ! यो दीनमंदार !”
यनवुडु नंदऱु नात्मललोन । ननुमानमुलु वासि यलरिरेंतयुनु;
निर्मलकारुण्यनिधि रामुडंत । नर्मिलि निडार नंदऱ जूचि
“येल्ल तेऱंगुल नेल्ल कार्यमुल । नेल्ल धर्मंबुल नेमऱकैपुडु ८८४०
गोनकोनि चेयुडी कोर्कि दीपिंप । ननुवोंद” ननुचु नत्यादरंबोप्प
“बों’ डनि कडकतो बुद्धुलु गऱपि । योंडोंड प्रियमुल नूऱड बलिकि
यनिलज सुग्रीवुलादिगा गपुल । दनुजु विभीषणुदग वीडुकोलुप
गिर्ष्किधकेलमि सुग्रीवादि कपुलु । निष्कळंकात्मुलै नेम्मितो जनिरि;
चनियें लंककु विभीषणुडर्थि दन्नु । दनुजुलु गोलुव नुत्सवकेळि देलि
रामुडु मऱि यौवराज्यंबुनंदु । सौमित्रि भरतुल जतुरमानसुल
दग ब्रतिष्ठिंचि याततराज्यभूति । दगिलि सुखिंचुचु दान सीतयुनु
सकल भोगंबुल सौख्यंबु नोंदि । यकलंकचित्तुडै यनवरतंबु
वेदोचिताचार विमलमार्गमुन । नादि राजन्युल नंदऱ गडचि

मुझे संप्राप्त मत करो’ कहने पर निद्रा चली गई। चौदह वर्षों के पूरी तरह पूर्ण होने पर अब वह निद्रा पुनः आई। हे अवनीश तिलक! उस कारण से मैं हँस पड़ा। यही मेरा दोष है। हे निखिल-अधिनाथ! हे देवदेवेश! हे दीनमंदार! तुम (इसे) सहन (क्षमा) करो।” ऐसा कहने पर सभी, आत्माओं में सभी संदेहों से मुक्त हो, अधिक प्रसन्न हुए। निर्मल कारुण्यनिधि राम ने तब प्रेम से भरकर, सबको देखकर (कहा) “सब तरह से, सब कार्यों को, समस्त धर्मों को, असावधान बने बिना, ।। ८८४० ।।

—लगकर इच्छाओं के दीप्त होने पर उचित विधि से कीजिए।” (ऐसा) कहते हुए अति-आदर के शोभित होने पर, ‘जाओ’ कहकर सप्रयत्न बुद्धियाँ (नीति की बातें) सिखाकर, जब-तब सान्त्वनाप्रद प्रिय-वाक्य कह, अनिलज, सुग्रीव आदि कपियों, दनुज विभीषण को उचित ढंग से बिदा करने पर, सुग्रीव आदि कपि निष्कलंक आत्मावाले हो, प्रेम से किष्किंधा को गए। उत्सव-केलि में ऊभचूभ हो, चाहकर दनुजों के अपनी सेवाएँ करने पर विभीषण लंका को गया। फिर राम यौवराज्य (पद) पर चतुर मानसवाले सौमित्र-भरतों को उचित रूप से प्रतिष्ठित कर, आतत-राज्य-भूति में लग्न होकर सुखी होते हुए, सीता के साथ स्वयं सकलभोगों के सौख्य को प्राप्तकर, अकलंकचित्त से अनारत वेदोचित विमलमार्ग पर,

पूजितानुष्ठानमुलु नश्वमेध । वाजपेयादिक वरयागततुलु ८८५०
सौलवक चेयुचु सुरल भूसुरुल । नॆलमि रक्षिचुचु नेपु दीपिंप
निंडारु धर्मैकनिष्ठतो बदुनों । कोंडु वेलेंड्लु दा नुर्वि बालिचॆ;
बालिचि येलुचो ब्रजलु दुःखमुल । दूलरु; दुरितमुल् दुर्भिक्षततुल
गलुग वॆय्यॆडलनु; गालदोषमुल । जलियिपवॆन्नडु सत्यधर्ममुलु;
परहिताचार तात्पर्यबुलॆल्ल । बुरुषुलयंदुनु बॊलुपारुचुंडु
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुतकाव्यागम विमलमानसुडु
पालिताचारुडपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
दम तंड्रि विट्ठलरधणीशुपेर । गमनीयतरधैर्यकनकाद्रि पेर
बनुगोन नरिगंडभैरवु पेर । घनु पेर, मीसरगंडनि पेर
नलघु निश्चलदयायत बुद्धि पेर । ललितसद्गुणगणालंकारु पेर ८८६०
नाचंद्रतारार्कमै यॊप्पुमिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वॆलय
नसमानललितशब्दार्थसंगतुल । रसिकमै चॆलुवोन्द रामायणमुन
बरग नलंकारभावनल् निंड । गरमॊप्पु नी युद्धकाडंबु जॆप्पॆ:
नारूढि नार्षॆयमै यादिकाव्य । मै रसिकानन्दमै यॆल्लनाडु

पूर्व के समस्त राजन्यों से बढ़कर, पूजित-अनुष्ठान, अश्वमेध-वाजपेय-आदि वर-याग-ततियों को, ।। ८८५० ।।

—अथक रूप से करते हुए, सुरों-भूसुरों की प्रेम से रक्षा करते हुए, औन्नत्य के दीप्त होने पर, पूर्ण धर्मैकनिष्ठा से ग्यारह हज़ार वर्ष उर्वी पर शासन किया। शासन कर, पालन करते समय प्रजा दुःखों से विकल नहीं होती, कहीं भी दुरित, दुर्भिक्षततियाँ नहीं होतीं, सत्यधर्म कालदोषों से कभी विचलित नहीं होते। सभी पुरुषों में परहित-आचार के तात्पर्य शोभित होते रहते हैं।

इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्यागम-विमल-मानस (श्रेष्ठ काव्य और शास्त्रों के ज्ञाता), आचारवान्, अपार-बुद्धि-सिन्धु, भूलोक-निधि गोन बुद्ध-भूपति ने, अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, जो कमनीयतर धैर्य के कनकाद्रि हैं, ।। ८८६० ।।

—दृढ़ता से अरिगंडभैरव (शत्रुभयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रताप-शाली), अलघु-निश्चल-दया के आयतबुद्धिवाले हैं, ललित सद्गुणगणालंकार हैं, आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगति से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस युद्धकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द

निव्वसुमति नॊप्प नी पुण्यचरित । मॆव्वरु सदिविन नॆव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधामराम । नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु
नायुरारोग्यंबु लधिकसंपदलु । बायक पाटिल्लु; बापक्षयंबु
वरपुत्रलाभंबु वैरिनाशनमु । सरिनॊप्पु; धनधान्यचय समृद्धियुनु ८८७०

ने विघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक । लावण्यवतुलैन ललनल पॊन्दु
गॊडुकुलतो नॆप्डु गूडियुंडुटयु । नॆडगाग नापदलॆल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लॆडकुंडुटयु
नन्नलुदम्मुलु नभिवृद्धि बॊन्दि । मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु
सततंबु देवतासंतर्पणंबु । बितृगणतृप्तियु बॆम्पॊन्दुचुंडु;
निदि मोक्षसाधनं, बिदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदिभव्य, मिदियु श्रीकरमु;
रमणीयलील नी रामायणंबु । ग्रममॊप्प बूजिप गल्गु बुण्यमुलु;

देने वाले (तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ें, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकटराज्य (सुख), निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, ।। ८८७० ।।

—आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश समुचित रूप से होगा। बिना किसी प्रकार की विघ्न-बाधाओं के धनधान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ बन्धुजनों से मिले रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों की अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर बड़े स्नेह के साथ मिलजुल कर रहना, सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) से वे सम्पन्न होंगे। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापाहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीयलीला (विधान) से इस रामायण को नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा। लिखने वालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा।

व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु। वासवलोकनिवासंबु गलुगु;
नॆन्दाक गुलगिरु लॆन्दाक जलधु। लॆन्दाक रविचंद्रुलॆन्दाक दार
लॆन्दाक वेदंबु लॆन्दाक दिशलु। नॆन्दाक भुवनंबु लेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानन्द। संदोह-दोहळाचारमै परगु ८८८१

युद्धकाण्डमु समाप्तमु

जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रविचन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएं, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर विराजमान रहेगी ॥ ८८८१ ॥

॥ युद्धकाण्ड समाप्त ॥

‘ प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी ।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ।। ’

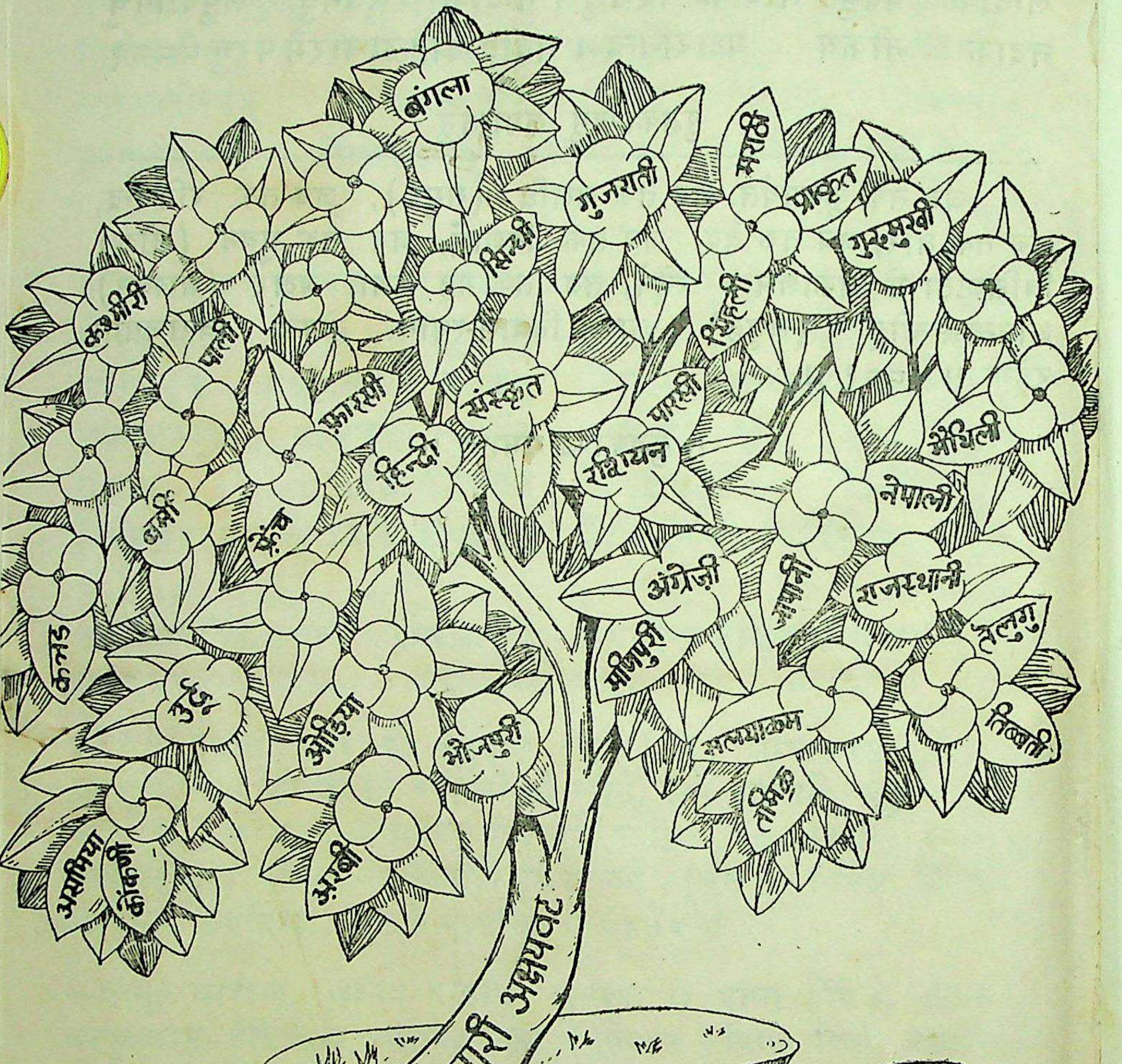
बंगला
मराठी
गुजराती
प्राकृत
गुरुमुखी
सिन्धी
कश्मीरी
पाली
सिंहली
संस्कृत
फ़ारसी
पारसी
मैथिली
हिन्दी
रशियन
बर्मी
फ्रेंच
नेपाली
अंग्रेज़ी
जापानी
राजस्थानी
भोजपुरी
तेलुगु
कन्नड
उर्दू
ओड़िया
भोजपुरी
मलयालम
तिब्बती
तमिळ
असमिया
कोंकणी
अरबी
देवनागरी अक्षयवट
भुवन वाणी ट्रस्ट
लखनऊ-३

प्रतिष्ठाता— नन्दकुमार अवस्थी

ताज़ी विज्ञप्ति

प्रकाशित हो चुके हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण ग्रन्थ:—

१ गुजराती—गिरधर रामायण (रचनाकाल-१८३५ ई०) हिन्दी अनुवाद,
नागरी लिप्यन्तरण पृष्ठ संख्या १४६० मूल्य ६०·००
२ ,, प्रेमानन्द रसामृत—
ना० लिप्य० हिन्दी अनुवाद पृ० संख्या ४९६ मूल्य ३५·००
३ मलयाळम—अध्यात्म रामायण (एळुत्तच्छन् कृत) १५वीं शती हिन्दी
अनुवाद, नागरी लिप्यन्तरण पृ०सं० ७५२ मू० ४०·००
४ ,, —महाभारत-एळुत्तच्छन्(१५वीं शती) पृ० १२१६ मू०६०·००
५ बँगला— कृत्तिवास रामायण (पाँचकाण्ड)—१५वीं शती।
हिन्दी पद्या० सहित नागरी लिप्य० पृ० ६२४ मू० २५·००
६ ,, कृत्तिवास लंकाकाण्ड— ,, गद्यानुवाद पृ० ४८८ मू० २५·००
७ ,, ,, उत्तरकाण्ड ,, ,, मूल्य २५·००
८ कश्मीरी—रामावतारचरित-प्रकाशराम कुर्यग्रामी कृत पृ०४८९ मू०२०·००
९ ,, ललद्यद—(नागरी) हिन्दी गद्य संस्कृत पद्यानु० पृ०१२० ,, १०·००
१० राजस्थानी—रुक्मिणी मंगल पदमभगत कृत। पृ० ३०० मू० १५·००
११ तमिळ्— तिरुक्कुरळ्-तिरुवळ्ळुवर कृत। २००० वर्ष से अधिक प्राचीन;
नागरी लिप्यन्तरण, गद्य-पद्य हिन्दी अनुवाद, पृ०३५२मू०२०·००
१२ ,, कम्ब रामायण बालकाण्ड(९वीं शती) पृ०६५२ मूल्य ४०·००
१३ ,, ,, अयोध्या-अरण्य पृष्ठ १०२४ मूल्य ७०·००
१४ ,, ,, किष्किन्धा-सुन्दर ,, १०१६ मूल्य ७०·००
१५ ,, ,, युद्धकाण्ड पूर्वार्ध ,, १०१६ मूल्य ७०·००
१६ ,, ,, ,, उत्तरार्ध ,, ८४० मूल्य ७०·००
१७ कन्नड— रामचन्द्रचरित पुराणं, अभिनव पम्प विरचित (जैन-मतानुसार
रामचरित्र ११वीं शती) पृ० ६९० मूल्य ४०·००
१८ तेलुगु— मोल्ल रामायण (१४वीं शती) पृ० ४०० मूल्य २०·००
१९ ,, रंगनाथ रामायण (१३वीं शती) अनु. पृ. १३३५ मू० ६०·००
२० ,, श्री पोतन्न महाभागवतमु १-४ स्कन्धपृ० ८५६ मूल्य ७०·००
२१ ,, ,, ,, ५-९ ,, मूल्य ७०·००
२२ ,, ,, ,, १०-१२ स्कन्ध मूल्य ७०·००
२३ मराठी—श्रीरामविजय-श्रीधरकृत(१७वीं शती) पृ० १२२८ मू०६०·००
२४ ,, श्रीहरि-विजय (श्रीधर कृत) पृष्ठ १००४ मू० ७०·००
२५ फ़ारसी—सिर्रे अक्बर (दाराशिकोह कृत उपनिषद-व्या०) २८०मू०२०·००
२६ उर्दू— शरीफ़ज़ादः (मिर्ज़ा रुस्वा कृत) पृ० १३६ मूल्य ८·००
२७ ,, गुज़श्तः लखनऊ (मौ० शरर) पृ० ३१६ मूल्य २०·००

२८ गुरमुखी—श्री गुरूग्रन्थ साहिब पहली सैंची पृ० ९६८ मूल्य ४०·००
२९ ,, ,, ,, दूसरी सैंची पृ० ९९२ मूल्य ५०·००
३० ,, ,, ,, तीसरी सैंची पृ० ९६४ मूल्य ५०·००
३१ ,, ,, ,, चौथी सैंची पृ० ८०० मूल्य ५०·००

३२ ,, श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब प्रथम सैंची पृ० ८२० मू० ५०·००
३३ ,, ,, ,, ,, दूसरी सैंची पृ० ७०४ मू० ५०·००
३४ ,, ,, ,, ,, यंत्रस्थ मूल्य ५०·००
३५ ,, ,, ,, ,, ,, मूल्य ५०·००
३६ ,, श्रीजपुजी सुखमनी साहब गुरमुखी पाठ तथा ख्वाजः दिलमुहम्मद
कृत उर्दू पद्यानुवाद—दोनों नागरी लिपि में; पृ० १६४ मू० १०·००
[illegible] ,, सुखमनी साहिब मूल गुटका नागरी लिपि। मूल्य ४·००
३८ सिन्धी— सामी, शाह, सचल की त्रिवेणी पृष्ठ ४१५ मू० २०·००
३९ नेपाली—भानुभक्त रामायण पृ० ३४४ मूल्य २०·००
४० असमिया—माधवकंदली रामायण (१४वीं शती) पृ० ९४३ ,, ६०·००
४१ ओड़िआ—बैदेहीश-बिळास उपेन्द्रभञ्ज (१८वीं शती) पृ० १०००,, ६०·००
४२ ,, तुलसी-रामचरितमानस—ओड़िआ लिपि में मूलपाठ तथा
ओड़िआ गद्य-पद्य अनुवाद। पृ०सं० १४६४ मू० ६०·००
४३ संस्कृत—मानस-भारती रामचरितमानस-सहित
संस्कृत पंक्ति-अनुपंक्ति पद्यानुवाद। पृ० ७४० मू० ५०·००
४४ ,, अद्भुत रामायण हिन्दी अनुवाद सहित पृ० २४४ मूल्य २०·००

प्रचारित प्रकाशन (ल.कि.घ.)

४५ अरबी क़ुर्आन शरीफ़ मूलपाठ अरबी तथा नागरी लिपि में
तथा हिन्दी अनुवाद सहित पृ० १०२४ मू० ४६·००
४६ ,, ,, केवल मूल; अरबी, नागरी दोनों लिपि में पृ० ५२० मू० २३·००
४७ ,, ,, केवल हिन्दी अनुवाद पृ० ५३० मूल्य २३·००
४८ ,, क़ौरानिक कोश (पठनक्रम) पृ० १९२ मूल्य १०·००
४९ ,, ज़ादें सफ़र (रियाज़ुस्सालिहीन) भाग १ पृ० ३३६ मू० १५·००
५० ,, तफ़्सीर माजिदी (पारः १ से ५) क़ुर्आन शरीफ़
अरबी व नागरी, दोनों में मूल पाठ, तथा स्व० मौलाना
अब्दुल् माजिद दर्याबादी का अनुवाद एवं
वृहत् भाष्य हिन्दी में पृ० ५१२ मूल्य ५०·००
५१ बहुभाषाई— 'वाणी सरोवर' त्रैमासिक पत्र वार्षिक मूल्य १५·००

प्राप्ति-स्थान— भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

भुवन वाणी ट्रस्ट,

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ–३

वह ग्रन्थ सम्पूर्ण हो चुके हैं (सानुवाद देवनागरी लिप्यन्तरण):—

१—(बंगला) कृत्तिवासरामायण-पाँचकांड नागरी लिप्य०, अवधी पद्यानुवाद	मूल्य	२५·००
२—(बंगला) कृत्तिवास रामायण लंका काण्ड ,, गद्यानुवाद	,,	१५·००
३—(मलयाळम) अेळुत्तच्छन्‌कृत महाभारत हिन्दी अनु० नागरी लिपि०	,,	४०·००
४—(,,) ,, अध्यात्मरामायण, उत्तररामायण ,,	,,	४०·००
५—(कश्मीरी) रामावतारचरित—प्रकाशराम कुर्यग्रामी कृत ,,	,,	२०·००
६—(,,) लल्‌द्यद—हिन्दी, संस्कृत अनुवाद सहित	,,	७·००
७—बाइबिल सार (सालोमन के नीतिवचन) संस्कृत उद्धरणयुक्त	,,	१·००
८—(उर्दू) श्री 'रुस्वा' कृत शरीफ़ज़ादः (आर्यपुत्र) नागरी लिपि में	,,	५·००
९—(गुरमुखी) जपुजी तथा सुखमनी साहब—गुरमुखी मूल पाठ तथा ख्वाजः दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानु०—दोनों देवनागरी लिपि में—	मूल्य	५·००
१०—(फ़ारसी) सिर्रे अक्बर (दाराशिकोह कृत ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय, श्वेताश्वतर) की फ़ारसीव्याख्या हिन्दी में–	,,	२०·००
११—(अरबी) रियाज़ुस्सालिहीन ज़ादे सफ़र (इस्लामी ह़दीस) प्र० खण्ड	,,	१२·००
१२—(तमिळ) तिरुक्कुऱळ् नागरी में मूल, हिन्दी गद्य-पद्यानुवाद—	,,	२०·००
१३—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर कृत, हिन्दी अनुवाद सहित	,,	४५·००
१४—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत सानुवाद	,,	२०·००
१५—(तेलुगु) मोल्ल रामायण सानुवाद लिप्यन्तरण	,,	२०·००
१६—(,,) रंगनाथ रामायण ,, ,,	,,	६०·००
१७—(कन्नड) रामचन्द्र चरित पुराणं—जैनसाहित्य (अभिनव पम्प नागचन्द्रकृत)	,,	४०·००
१८—(राजस्थानी) रुक्मिणीमंगल—पदम भगत कृत	,,	१५·००
१९—(गुजराती) गिरधर रामायण हिन्दी अनुवाद सहित (नागरी लिपि.)	,,	६०·००
२०—(रामचरितमानस) ओड़िया लिपि में लिप्यन्तरण एवं ओड़िया गद्य-पद्यानुवाद	,,	५०·००
२१—(सिंधी) स्वामी, शाह, सचल की त्रिवेणी	,,	२०·००
२२—(वाणी सरोवर)—उपर्युक्त अनुपम ग्रंथों का सानुवाद धारावाहिक देवनागरी लिप्यन्तरण का त्रैमासिक पत्र—वार्षिक	,,	१०·००

ट्रस्ट के अतिरिक्त, सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण के अन्य कार्य, जो अन्यत्र हो चुके हैं:—

२१—(अरबी) क़ुर्आन (मूल आयतें अरबी व देवनागरी लिपि में, अनुवाद, टिप्पणी सहित)—इस्लामी धर्माचार्यों द्वारा प्रतिपादित—	मूल्य	४०·००
२२—(,,) क़ौरानिक कोश क़ुर्आन के पठनक्रम से शब्दार्थ	,,	१०·००

ट्रस्ट में प्रकाशित हो रहे सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण ग्रन्थ (यन्त्रस्थ):—

१—(तमिळ) कम्ब रामायण २—(तेलुगु) पोतन्न भागवतमु
३—(असमिया) माधवकंदली रामायण ४—(बंगला) कृत्तिवास उत्तरकाण्ड
५—(हिब्रू) बाइबिल ओल्ड टेस्टामेण्ट हिन्दी अनु० सहित हिब्रू तथा अंग्रेज़ी मूल नागरी
६—(ग्रीक) ,, निउ ,, ,, ,, ,, ग्रीक ,, ,, लिपि में
७—(गुरमुखी) श्रीगुरुग्रंथ साहब ८—(ओड़िआ) बैदेहीशबिळास—उपेन्द्र भञ्जकृत
९—(मराठी) श्रीहरि-विजय—श्रीधर कृत मूलपाठ हिन्दी अनुवाद सहित
१०— ,, संत एकनाथ भावार्थ रामायण ११—(कोकणी) ख्रीस्त पुराण
१२—(गुजराती) प्रेमानन्द भजनमाला १३—(उर्दू) गुज़श्तः लखनऊ—मौ० शरर
१४—(,,) आबा १५—(फ़ारसी) दाराशिकोह कृत ५० उपनिषद (द्वि० खण्ड)
१६—(अरबी ह़दीस)—(ज़ादे सफ़र) द्वि० खण्ड १७—(अरबी) बुख़ारी शरीफ़
१८—रामचरितमानस (तुलसी)—संस्कृत पद्यानुवाद सहित